हिन्दी

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

तृतीय भाग

[इ—कपिरोमा]

THE
ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. III.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārnava,

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnākara, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sāhitya Parishad and Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by R. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1919.

हिन्दी विश्वकोष

इ

इ—१ संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका तृतीय स्वर। इकारका उच्चारणस्थान तालु है। संस्कृतव्याकरणके मतसे इसे अट्ठारह प्रकार बोलते हैं। प्रथम ह्रस्व दीर्घ और प्लुत तीन भेद हैं। फिर उनमें प्रत्येक उदात्त, अनुदात्त और स्वरित रहता है। यथा,—१ ह्रस्व उदात्त, २ ह्रस्व अनुदात्त, ३ ह्रस्व स्वरित, ४ दीर्घ उदात्त, ५ दीर्घ अनुदात्त, ६ दीर्घ स्वरित, ७ प्लुत उदात्त, ८ प्लुत अनुदात्त, ९ प्लुत स्वरित। उपरोक्त नौ उच्चारण अनुनासिक और निरनुनासिक होनेसे अट्ठारह रूप धारण करते हैं। इकारके पर्याय यह हैं—सूक्ष्म, शाल्मली, विद्या, चन्द्र, पूषा, सुगुह्यक, सुमित्र, सुन्दर, वीर, कोटर, पद्म, भ्रूमध्य, माधव, तुष्टि, दक्षनेत्र, नासिका, शान्त, कान्त, कामिनी, काम, विघ्नविनायक, नेपाल, भरणी, रुद्र, नित्या, क्लिन्ना, पावका। (वर्णाभिधान) इकार सुगन्ध-युक्त, कुसुमसदृश और हरि, ब्रह्मा, शक्ति, परमब्रह्म एवं रुद्रमय है। यही मूर्तिमान् कुण्डली मालूम पड़ता है। (कामधेनुतन्त्र)

(सं० पु०) अस्य विष्णोरपत्यम्, आ-इञ्। २ विष्णुके अपत्य कामदेव। यह रुक्मिणीके गर्भसे उत्पन्न रहे। (हरिवंश १६२ अ०) (अव्य०) नञर्थकस्य इदम्, अ-इञ्। ३ खेद! अफ़सोस! हाय! ४ प्रकोपोक्ति! गुस्सेकी बात! ५ निष्ठुर वाक्य! सख़्त बात-चीत! ६ दया! रहम! रामराम! ७ निराकरण! दूर! ८ प्रत्यक्ष! आंखके सामने! ९ सन्निधि! नज़-दीकी! १० दुःखभावन! तकलीफ़दिही! ११ क्रोध! ग़ुस्सा! १२ विक्रोध! झुंझलाहट! १३ विस्मय! ताज्जुब! १४ सम्बोधन! पुकार! १५ माधव! १६ सूक्ष्मयज्ञ! १७ विद्या! इल्म। १८ दक्षिण लोचन! दाहनी आंख! १९ गन्धर्व। २० पाञ्चजन्य। २१ मथाङ्कुर।

इंगुरौटी (हिं० स्त्री०) ईंगुर रखनेकी डब्बी।

इंगुवा (हिं०) इङ्गुद देखो।

इंचना (हिं० क्रि०) आकर्षित होना, खिंचना, तनना।

इंटकोहरा (हिं० पु०) ईंटका चूर।

इंटाई (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, किसी क़िस्मकी पेड़की।

इंडहर (हिं० पु०) भक्ष्य द्रव्य विशेष, किसी क़िस्मका सालन। उड़द और चनेकी दाल साथ-साथ भिगोकर बारीक-बारीक पीस डालते और लम्बे-लम्बे

टुकड़े उतारते हैं। वह टुकड़े अदहनमें उबाले जाते हैं। अच्छीतरह पक जानेपर टुकड़ेंको काटकर छोटा-छोटा बना लेते हैं। अखीरको उन्हें घी या तेलमें तल और सुर्ख़ पड़ जानेसे रसामें छोड़ धीमी आगपर पकाते हैं। इंडहर खानेमें बहुत अच्छा लगता है।

इंडुरी (हिं० स्त्री०) कुण्डली, चक्कर, गुंडरी।

इंडुवा (हिं० पु०) कुण्डल, दायरा, गेंडुरी। यह कपड़ेसे गोल-गोल बनाया और बोझ उठाते समय नीचे लगाया जाता है।

इंदारा (हिं० पु०) कूप, कूवा।

इंदारुन (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी देखो।

इंदुवा, इंडुवा देखो।

इंधरौड़ा (हिं० पु०) इन्धन रखनेका स्थान, जिस जगहपे जलानेकी चीज़ रहे।

इक (हिं०) एक देखो।

इक-आंक (हिं० क्रि० वि०) १ निःसन्देह, अवश्य। २ अनवरत, लगातार।

इकइस, इक्कीस देखो।

इकछत राज करना (हिं० क्रि०) विश्वका स्वामित्व रखना, कुल्लिया बादशाहतका मालिक होना।

इकटक (हिं० वि०) स्थिर, अचल, साकिन, क़ायम।

"इकटक लोचन टरहिं न टारे।" (तुलसी)

इकट्ठा (हिं० वि०) १ एकत्र, मिला हुवा। (क्रि० वि०) २ साथ-साथ मिलकर।

इकडाल, एकडाल देखो।

इकतर (हिं०) एकत्र देखो।

इकतरफा (हिं० वि०) एक ओरसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो एक ही तर्फ़को झुका हो। (क्रि० वि०) २ एक ओरसे, दूसरी तर्फ़से ताल्लुक़ छोड़कर।

इकतरा (हिं० पु०) एक दिनके अन्तर आनेवाला ज्वर, अंतरा, जो बुखार एक दिनके फ़र्क़से चढ़ता हो।

इकता (हिं०) एकता देखो।

इकताई (हिं०) एकता देखो।

इकताना (हिं० वि०) सदृश, अभिन्न, एकसा, एक होमें मिला हुवा।

इकतार, इकताना देखो।

इकतारा (हिं० पु०) १ वाद्यविशेष, एक ही तारसे बजनेवाला बाजा। बांसकी डण्डीके छोरमें एक तोंबीको लगा चमड़ेसे मढ़ देते हैं। चमड़ेपर घोड़िया रहती है। तोंबीके नीचे बांसमें एक तारको बांधते और घाड़ियेपर चढ़ा ऊपरकी ओर लगी हुयी खूंटीमें लपेटते हैं। इसी खूंटीको चढ़ाने उतारनेसे तार ढीला या कड़ा पड़ता है। तर्जनीके आघातसे तार बजानेपर बोल निकलता है। साधु इसे बजा बजाकर भिक्षा मांगा करते हैं।

२ वस्त्रविशेष, किसी क़िस्मका कपड़ा। यह भारतमें हाथसे बुना जाता है।

इकताला, एकताला देखो।

इकतालीस (हिं० वि०) एकचत्वारिंशत्, चालीस और एक, ४१।

इकतीस (हिं० वि०) १ एकत्रिंशत्, तीस और एक, ३१।

इकत्तीस, इकतीस देखो।

इक़दाम (अ० पु०) १ अपराध करनेकी चेष्टा, क़सूर करनेकी कोशिश। २ सङ्कल्प, क़स्द।

इकपेचा (हिं० पु०) एक पगड़ी या दस्तार। इसका प्रचार दिल्ली और आगरेमें अधिक है। इकपेचा मस्तकका आभूषण है।

इकबारगी, एकबारगी देखो।

इक़बाल (अ० पु०) १ अङ्गीकार, मञ्ज़ूरी। २ आदान, रज़ामन्दी। ३ भाग्य, क़िसमत।

इक़बाल-उद्-दौला—लखनऊ नवाब सादत अली खान्के पौत्र। इनका पूरा नाम इक़बाल-उद्-दौला मुहसिन अली खान् रहा। १८३८ ई०के जनवरी मास यह अवधकी नवाबीपर अपना स्वत्व प्रमाणित करने इङ्गलेण्ड गये थे। किन्तु जब किसीने इनकी बात न सुनी, तब इन्होंने तुर्की अरबस्थानमें अपनी बाक़ी ज़िन्दगी भजनभावसे काटनेकी ठानी। 'इक़बाल-फिरङ्ग' नामक पुस्तकके यह रचयिता रहे।

इक़बाल् खान्—फ़ीरोज़शाह तुग़लक़के पौत्र और ज़फ़र खान्के पुत्र। १४०० ई०को यह नसरत अली खान्का हरा दिल्लीके सिंहासनपर बैठे थे। किन्तु १४०५

ई०को मूलतानके शासक ख़िज़र् ख़ान्से जो युद्ध हुवा, उसमें इनका वध किया गया। इनके मरनेपर सुलतान् महमूद शाहने दिल्लीका साम्राज्य पाया था।

इक़बालदावा (अ० पु०) दण्डाज्ञा-ग्रहण, हुक्म मान लेनेकी बात।

इक़बालमन्द (अ० वि०) १ भाग्यशाली, क़िस्मती। २ शुभ, मुबारक, अच्छा।

इक़बालमन्दी (अ० स्त्री०) सौभाग्य, नेकबख़्ती, लहर-बहर।

इक़राम (अ० पु०) १ उपहार, भेंट। २ सम्मान, क़दर्, इज़्ज़त।

इक़राम-उद्-दौला—लखनऊ नवाब वाजिद अली शाहके प्रधान मन्त्री। १८७९ ई०को इनकी मृत्यु हुयी थी।

इक़रार (अ० पु०) १ स्वीकार, मन्ज़ूरी। २ प्रतिज्ञा, वादा। ३ क्रयविक्रय-नियम, बातचीत, ठेका। ४ स्वीकारपत्र, रसीद।

इक़रार करना (हिं० क्रि०) वचन देना, वादा बदना। २ कहना, सुनाना। ३ स्वीकृत होना, मान लेना। ४ नियुक्त करना, लगाना।

इक़रारनामा (अ० पु०) १ निर्धारण, फैसला। २ प्रतिज्ञापत्र, तमस्सुक, टीप।

इक़रारनामा-बन्दोबस्त (अ० पु०) १ शासनपत्र, इन्तज़ामका काग़ज़। २ सरकारके साथ मालगुज़ार और गांवके हिस्सेदारका तमस्सुक।

इक़रारनामा सालिसी (अ० पु०) मध्यस्थ-प्रतिज्ञापत्र, पञ्चायती तमस्सुक।

इक़रारी (अ० वि०) १ सम्मत, राज़ी। २ अनुमोदनकारी, मान लेनेवाला।

इकलड़ा (हिं० वि०) एक गुणविशिष्ट, जो एकही डोरीसे बना हो। यह शब्द 'हार'का विशेषण है।

इकला, अकेला देखो।

इकलाई (हिं० स्त्री०) १ वस्त्रविशेष, किसी किस्मका कपड़ा। एक पाटकी बारीक गोटा-किनारी लगी चादरको इकलाई कहते हैं। २ निर्द्वन्द्वता, तनहायी, अकेलापन।

इकलोई (हिं० वि०) एक ही लोई रखनेवाली, जो एकही तवेसे बनी हो। जिस कड़ाहीके पेटेंमें एकही तवा होनेसे जोड़ नहीं लगता, उसका नाम इकलोई पड़ता है।

इकलौता (हिं वि०) एकाकी, अपने मा-बापका अकेला, भाई-बहन न रखनेवाला।

इकल्ला, अकेला देखो।

इकवाई (हिं० स्त्री०) स्थूणी विशेष, किसी किस्मकी निहायी। यह अरन-जैसी बनती और एक ही ओर कोर लगती है।

इकसठ (हिं० वि०) एकषष्टि, साठ और एक, ६१।

इकसर (हिं० वि०) १ दूसरा पर्त न रखनेवाला। २ अकेला। (क्रि० वि०) ३ प्रायः, अकसर।

इकसार (हिं० वि०) १ समतल, हमवार, जो ऊंचा-नीचा न हो। २ समान, हमसर, बराबर। ३ सदृश, मिलता-जुलता।

इकसार करना (हिं० क्रि०) १ समतल बनाना, हमवार निकालना, ऊंचा-नीचा मिटाना। २ खोदना और जोतना।

इकसूत (हिं० वि०) एकत्र, इकट्ठा, मिला हुवा।

इकहत्तर (हिं० वि०) एकसप्तति, सत्तर और एक, ७१।

इकहरा (हिं० वि०) १ केवल, अकेला, एकही टुकड़ा रखनेवाला। २ एक विधानविशिष्ट, एक परदा रखनेवाला।

इकहरी लाग (हिं० स्त्री०) त्रैराशिक, अरबा-मुतनासिबा।

इकहाई (हिं० क्रि०-वि०) १ साथ-साथ, एकही बारमें, सब मिलकर।

इकाई (हिं० स्त्री०) एकाङ्क, वारिद, इकन।

इकादशी (हिं०) एकादशी देखो।

इकान्त (हिं०) एकान्त देखो।

इका पण्डित—आगरा दुर्गके एक महाराष्ट्र सूबेदार। शाह आलम और माधवराव सेंधियाके समय यह विद्यमान रहे।

इकेला, अकेला देखो।

इकैठ, इकट्ठा देखो।

इकोत्तर (हिं०) एकोत्तर देखो।

इकौंज (हिं० स्त्री०) काकवन्ध्या, एक ही बार सन्तान उत्पन्न करनेवाली स्त्री, जिस औरतके दूसरी बार बच्चा न निकले। "बांझ अच्छी इकौंज बुरी।" (लोकोक्ति)

इकौता (हिं० पु०) पादपर उत्पन्न होनेवाला स्फोट, पैरका फोड़ा।

इकौना (हिं० पु०) १ मिश्रित अन्न, जो अनाज छंटा न हो।

२ युक्तप्रान्तके बहराइच ज़िलेका परगना। फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़के समयतक इस प्रान्तपर लूट-मार मचानेवाले बढ़इयोंका राज्य रहा। १३७४ ई०को जंवार राजपूत बरियार शाहने उक्त डाकूवोंको दबाया और शान्ति रखनेकी शर्तपर इस प्रान्तका दानपत्र सरकारसे लिखाया था। किन्तु सिपाही विद्रोहमें योग देनेसे यह राज्य ज़ब्त किया और कपूरथलाके महाराज तथा बलरामपुरके नवाबको सौंप दिया गया। १७१६ ई०को राजा प्रतापसिंहके समय इसी परगनेमें जो गंगवाल राज्य निकला, उस-पर आज भी उनके वंशजोंका अधिकार बना है। रापती, सिंधिया और कोहानी प्रधान नदी है। क्षेत्र-फल २५८ वर्गमील लगता है। ब्राह्मण, अहीर और कुनबी अधिक रहते हैं। सीताग्राममें शाक्य-बुद्ध-माताकी मूर्ति पुजती है। ३ अपने परगनेका शहर। यह नगर बहराईचसे २२ मील दूर बलरामपुरको जानेवाली सड़कपर अक्षा० २७° ३३´ ११´´ उ० तथा द्राघि० ८१° ५८´ ३८´´ पू० पर अवस्थित है। सिपाही विद्रोहके समय तक इकौनाके राजावोंका यही वास-स्थान रहा।

इकौसो (हिं० वि०) पृथक्, निराला, अलग।

इक्कट (सं० पु०) ईयते, इ-क्विप्-इत्-सिध्य-कटो यस्मात् पृषोदरादित्वात् तस्य कः। १ कट साधन तृण विशेष, चटाई वग़ैरहके काम आनेवाली घास। २ वदरवृक्ष, बेरका पेड़।

इक्कबाल (सं० पु०) सौभाग्यप्रद योगविशेष। ताजकके मतानुसार नवग्रहके केन्द्र (१, ४, ७, १०) अथवा पणफर (२, ५, ८, ११) में पड़ने और दूसरे स्थान (३, ६, ९, १२) ख़ाली रहनेसे इक्कबाल योग आता है।

इक्कस (हिं० स्त्री०) ईर्ष्या, हसद, डाह।

इक्कस करना, इक्कस रखना देखो।

इक्कस रखना (हिं० क्रि०) ईर्ष्या मानना, डाह करना।

इक्का (हिं० वि०) १ केवल, अकेला, दूसरेको साथमें न रखनेवाला। २ अद्वितीय, अनोखा, निराला। (पु०) ३ कानकी बाली। इसमें एक ही मोती पड़ता है। ४ योद्धा विशेष, सिपाही। यह युद्धमें अकेले ही लड़ता है। ५ पशुविशेष, कोई जानवर। यह अपने साथियोंको छोड़ अकेले घूमता है। ६ यान विशेष, एक घोड़ेकी गाड़ी। ७ एक बूटीका ताश। यह सबसे बढ़कर रहता और किसीसे कट नहीं सकता।

इक्का-दुक्का (हिं० वि०) दो-एक, बहुत कम।

इक्कावन, इक्यावन देखो।

इक्कासी, इक्यासी देखो।

इक्की (हिं० स्त्री०) एक बूटीका ताश। इसे इक्का भी कहते हैं।

इक्कीस (हिं० वि०) एकविंशति, दो दहाई और एक एकाई रखनेवाला, बीस और एक, २१।

इक्कीस रहना (हिं० क्रि०) किंचित् उत्तम होना, बढ़कर निकलना, जीतना।

इक्केरी—महिसुर राज्यके शिमोगा ज़िलेका गांव। यह अक्षा० १४° ७´ २०´´ उ० तथा द्राघि० ७५° ३´ ४५´´ पू० पर अवस्थित है। १५६० से १६४० तक इक्केरीमें लिङ्गायत वंशके केलादी राजावोंकी राजधानी रही। उनका सिक्का भी इक्केरी पगोडा कहाता है। १७६३ ई०को हैदर अलीने केलादी राजावोंका राज्य छीन महिसुरमें मिला लिया था। इक्केरीकी दीवारें बहुत लम्बी-चौड़ी और तीन ओरसे घिरी रहीं। बीचमें राजप्रासाद और दुर्ग खड़ा था। नक़्क़ाशी और सोनेके कामकी झलक बहुत अच्छी रही। किन्तु अब कुछ नहीं, केवल अघोरेश्वरका मन्दिर देख पड़ता है।

इक्कैड़ (हिं० पु०) दारुखण्डको आघातसे प्रति-द्वन्द्वीकी सीमामें पहुंचाना, गेंड़ीको मारकर मुखा-लिफ़की हदमें रखना।

इक्यानवे (हिं॰ वि॰) एकनवति, नव्वे और एक, ९१।

इक्यावन (हिं॰ वि॰) एकपञ्चाशत्, पचास और एक, ५१।

इक्यासी (हिं॰ वि॰) एकाशीति, अस्सी और एक, ८१।

इक्षव (सं॰ पु॰) इक्षु साधारण, मामूली नायशकर या गन्ना।

इक्षाणिका (सं॰ स्त्री॰) अनिक्षु, किलक, सरकण्डा। यह वृक्ष भी बिलकुल गन्ने-जैसा ही मीठा होता है। बालक इसका कलम बनाते हैं। प्राय: इक्षाणिका जलके निकट होती है।

इक्षु (सं॰ पु॰) इष्यते, मधुरत्वात्, इष-क्सु:। वाञ्छे इषे: क्सु:। उण् ३।१५७। १ मधुर रसयुक्त स्वनामख्यात वृक्षविशेष, नायशकर, ईख, गन्ना। (Saccharum officinarum) हिन्दुस्थानमें प्राय: इसे ऊख या पौंड़ा कहते हैं। इक्षु शब्दके पर्याय यह हैं,—रसाल, कर्कोटक, वंश, कान्तार, सुकुमारक, असिपत्र, मधुतृण, वृष्य, गुड़तृण, मृत्य पुष्प, महारस, असिपत्र, कोशकार, इक्षव और पयोधर। रक्तेक्षुको सूक्ष्मपत्र, शोण अथवा लोहित कहते हैं।

इक्षु सुदृढ़ वेत्र जैसा उच्छल रहता और दसे १२ फीट तक बढ़ता है। पुष्पोंकी चूड़ा पक्षतुल्य होती है।

इक्षुमूल शामक और मूत्रवर्धक है। बाज़ारमें गन्ना खानेके लिये बिकता है। कोयी-कोयी इसके टुकड़े उतार कर रखता है। गन्नेको छीलकर जो आंवले जैसा खण्ड किया, वह गंडेरी कहा और भोजनोपरान्त खानेका मुख्य द्रव्य गिना जाता है। पक्षी पशुके चारेका काम देती है।

इक्षु प्राय: सकल पृथिवीके देशमें उपजता है। भारतवर्षके अनेक स्थानमें इसकी कृषि करते हैं। इक्षुके फोकसे कागज़ बनता है। पत्रसे चटायी तैयार कर सकते हैं।

इक्षु बारह प्रकारका होता है,—१ पौण्ड्रक, २ भीरुक, ३ वंशक, ४ शतपोरक, ५ कान्तार, ६ तापसेक्षु ७ काष्ठेक्षु, ८ सूचिपत्रक, ९ नेपाल, १० दीर्घपत्रक, ११ नीलक और १२ कोशकृत्। पौण्ड्रक एवं भीरुक वायु और पित्तको मिटाता है। इसका रस और गुड़ मधुर, अति शीतल तथा बलवर्धक है। कोशकृत्—गुरु, शीतल और रक्त तथा पित्तको नाश करनेवाला निकलता है। कान्तार गुरु, बलकारी, श्लेष्मावर्धक, स्थूलतासम्पादक और रेचक है। दीर्घपत्र अति कठिन होता है। वंशक क्षारलवणाक्त है। शतपोरक कुछ-कुछ कोशकृत्का गुण रखता; किन्तु अल्प उष्ण, लवणाक्त और वायुनाशक ठहरता है। तापसेक्षु मृदु मधुर, श्लेष्मावर्धक, प्रीतिप्रद, रुचिजनक, शक्तिवृद्धिकारक और बलकर है।

सामान्य इक्षु खानेसे रक्तपित्त घटता और बल, शुक्र तथा कफ बढ़ता है। पका लेनेसे यह मधुर, स्निग्ध, गुरु, अतिशय शीतल और मूत्रको परिष्कार करनेवाला है। इक्षुका मध्य तथा मूल मधुर और स्वादु होता है। गांठ, छाल और अग्रभाग लवणाक्त है। मूलके ऊपरका भाग सुमिष्ट और मध्यभाग अति मधुर लगता, फिर क्रमसे आगे नीरस एवं लवणाक्त निकलता है। भोजनसे पहले चूसनेपर इक्षु पित्त और पीछे वायुको बढ़ाता है। रोटी खाते समय लेनेपर यह गुरुपाक हो जाता है। दांतसे छीलकर खानेपर इक्षु क्षुधा बढ़ाता, मुखको तृप्त करता और जीवनका हित साधता है। इससे वायु, रक्त और पित्त नष्ट होता है। यह अधिक मिष्ट और प्रीतिजनक है। रक्त और धातु बढ़ता है। रक्तदोष और भ्रम दूर होता है। अल्प परिमाण श्लेष्मावर्धक, मनस्तुष्टिकर एवं मुख-रुचिजनक है। शरीरमें कान्ति और बलकी वृद्धि होती है। खानेमें यह अमृततुल्य निकलता, अथच त्रिदोषनाशक रहता है। यन्त्रसे निकाल कर पीनेपर रस अति शीतल, कोष्ठपरिष्कारक, मुखरुचिकर और गात्रदाहकर है। बासी इक्षुका रस अच्छा नहीं होता। वह अम्ल एवं वातनाशक तथा गुरु, पित्तकर, शोषकर, भेदक और अतिमूत्रकर है। गर्म करनेसे रस चिक्कण, गुरु, अत्यन्त तीक्ष्ण, आनाह और कफ तथा किञ्चित् पित्तनाशक होता है। अतिपाकमें विदाह, पित्तदोष

और रक्तदोष उपजता है। कच्चा इक्षु खानेसे कफ, मांससार और मेद बढ़ता है। युवा वातहारक, स्वादु, ईषत् तीक्ष्ण और पित्तनाशक है। पक्का रक्त तथा पित्तको दूर करता, क्षत मिटाता और वीर्य उपजाता है। साधारण इक्षु उत्कृष्ट रसायनकारी, बलकर, रोगनाशक, स्निग्ध, तृप्तिजनक, स्थूलत्वसम्पादक, शक्तिजनक, आयुष्कर और श्लेष्माकर है। अत्यन्त स्वादु होनेसे यह वात और पित्तको नष्ट करता, किन्तु शक्तिजनक रहते भी अन्तर्विदाह उपजाता है। काला इक्षु शोषापहारक और शोफ तथा व्रणजनक है।

इक्षुविकार अर्थात् ऊखके रससे बनी चीज़को लसीका, फाणित, गुड़, खण्ड, मत्स्याण्डी और सिता कहते हैं। यह द्रव्य निर्मल होनेसे लघु, शीतल और वीर्यकर होता है। पक्क और गाढ़ रसका नाम फाणित है। यह धातुवर्धक, वातपित्त एवं भ्रमनाशक और मूत्र तथा वस्तिशोधक होता है। मत्स्याण्डी गाढ़ और अल्प शिरा-युक्त रहती है। यह भेदक, बलकर, लघु, पित्त तथा वातनाशक, धातुवर्धक, पुष्टिकर और रक्तदोषनाशक है। गुड़, खण्ड, फाणित प्रभृति शब्द द्रष्टव्य है।

२ कोकिलाक्ष वृक्ष, तालमखानेका पेड़। ३ नदी विशेष। मत्स्यपुराणमें दो इक्षु नदीका नाम मिलता है। एक जम्बूद्वीप और अपर शाकद्वीपमें बतायी गयी है। जम्बूद्वीपकी इक्षुनदी अक्षस (Oxus) और ऋग्वेदमें 'अक्षु' नामसे प्रसिद्ध है। आर्यावर्त्त देखो।

इक्षुक (सं॰ पु॰) इक्षु प्रकारार्थे कन्। स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन्। पा ५।४।३। १ एक प्रकार इक्षु, किसी क़िस्मकी ऊख। २ इक्षुगन्धा, कुस, कांस। ३ भूमिकुष्माण्ड, बिलायीकन्द। ४ काकोली।

इक्षुकण्डिका (सं॰ स्त्री॰) १ इक्षुकाण्ड, मूंज, कांस। २ काकोली। ३ भूमिकुष्माण्ड, बिलायीकन्द।

इक्षुकन्दा (सं॰ स्त्री॰) श्वेतभूमिकुष्माण्ड, सफ़ेद बिलायीकन्द।

इक्षुकाण्ड (सं॰ पु॰) इक्षोः वृक्षस्य काण्डः दण्ड इव काण्डो यस्य, बहुव्री॰। १ काशवृक्ष, कुस, कांस। २ मुञ्ज, मूंज। इक्षुः काण्डइव। ३ इक्षुदण्ड, पौंड़ेका डण्ठल।

इक्षुकाश (सं॰ पु॰) काशतृण, कांस, कुस।

इक्षुकीय (सं॰ त्रि॰) इक्षुयुक्त, ऊखसे भरा हुवा।

इक्षुकीया (सं॰ स्त्री॰) इक्षुयुक्त देश, ऊखसे भरी ज़मीन्, जिस जगहपे पौंड़ा ज़्यादा उपजे।

इक्षुकुट्टक (सं॰ पु॰) इक्षून् कुट्टयति, इक्षु-कुट्ट-ण्वुल् ६-तत्। १ इक्षुसंग्राहक, ऊख काटनेका हंसला।

इक्षुगण्डिका (सं॰ स्त्री॰) काशतृण, कांस।

इक्षुगन्ध (सं॰ पु॰) इक्षोः गन्धइव गन्धो यस्य, बहुव्री॰। १ काशतृण, कांस। २ क्षुद्र गोक्षुरक वृक्ष, छोटा गोखरू।

इक्षुगन्धा (सं॰ स्त्री॰) इक्षु-गन्ध-टाप्। १ कोकिलाक्ष, तालमखाना। २ गोक्षुरक, छोटा गोखरू। ३ क्षीरविदारी, सफ़ेद बिलायीकन्द। ४ वाराहीकन्द, रामशर। ५ शृगाली, मादा गीदड़। ६ श्वेत भूमिकुष्माण्ड, सफ़ेद भुयिंकुम्हड़ा।

इक्षुगन्धिका, इक्षुगन्धा देखो।

इक्षुज (सं॰ त्रि॰) इक्षु-जन-ड। इक्षुसे उत्पन्न, गन्नेसे निकला हुवा। यह शब्द फाणित, मत्स्याण्डी, खण्डक, सिता और सितोपलका विशेषण है।

इक्षुजटा (सं॰ स्त्री॰) इक्षुमूल, ऊखकी जड़।

इक्षुतुल्या (सं॰ स्त्री॰) इक्षोः इक्षुणा वा तुल्या। १ इक्षुविशेष, एक ऊख। २ काशतृण, कांस। ३ यावनाल, ज्वार।

इक्षुदण्ड (सं॰ पु॰) इक्षुः दण्डइव, उप॰ कर्मधा॰। ऊख, सांटा।

इक्षुदर्भा (सं॰ स्त्री॰) इक्षोरिव दर्भो गन्धो यस्याः, बहुव्री॰। तृणविशेष, किसी क़िस्मकी घास। यह सुमधुर, शीतल, अल्प कषाय, कफपित्तहारक, रुचिकर, लघुपाक और तृप्तिजनक होती है। (राजनिघण्ट)

इक्षुदा (सं॰ स्त्री॰) इक्षुं तदास्वादं ददातीति, इक्षु-दा-क। नदीविशेष, एक दरया (Oxus)। यह इन्द्रपर्वतसे निकली है।

इक्षुनेत्र (सं॰ क्ली॰) इक्षोर्नेत्रमिव, ६-तत्। इक्षुग्रन्थि, ऊखकी गांठ।

इक्षुपत्र (सं॰ पु॰) इक्षोः पत्रमिव पत्रं यस्य, बहुव्री॰। यावनाल, ज्वार।

इक्षुपत्रक, इक्षुपत्र देखो।

इक्षुपत्रा (सं० स्त्री०) इक्षुपत्र देखो।

इक्षुपत्री (सं० स्त्री०) १ वचा, वच। २ शुक्ल भूमिकुष्माण्ड, सफ़ेद भुयिंकुम्हड़ा।

इक्षुपर्णी, इक्षुपत्री देखो।

इक्षुपाक (सं० पु०) इक्षोः पाकः, ६-तत्। गुड़।

इक्षुपुष्पा (सं० स्त्री०) शरपुङ्खा, सरफोंका।

इक्षुप्र (सं० पु०) इक्षुरिव पूर्यते इक्षु पृषोदरादित्वात् कः। शरतृण, रामशर।

इक्षुप्रमेह, इक्षुमेह देखो।

इक्षुबालिका (सं० स्त्री०) इक्षोर्बाल इव बालः केशः शीर्षस्थपत्रादिर्यस्याः। १ इक्षुतुल्या, एक जख। २ कोकिलाक्ष, तालमखाना। ३ काशतृण, कांस।

इक्षुभक्षिका (सं० स्त्री०) इक्षुरसनिष्काषणयन्त्र, ऊख पेरनेका कोल्हू।

इक्षुमती (सं० स्त्री०) इक्षुस्तद्द्रसो विद्यतेऽस्यां नद्याम्, मतुप्। कुरुक्षेत्रप्रवाहित नदीविशेष। इसी नदीके तीर साङ्काश्या नगरी रही। (रामायण २।७०।३)

इक्षुमद्य (सं० क्लो०) इक्षुविकारज मद्य, ऊखके रससे बनी शराब। इक्षुरस, मरिच, बदर, तथा दधि और अन्तको लवण मिलानेसे यह बनता है। (वैद्यकनिघण्ट)

इक्षुमालवी, इक्षुदा देखो।

इक्षुमालिनी, इक्षुदा देखो।

इक्षुमूल (सं० क्लो०) इक्षोर्मूलं ग्रन्थिरिव मूलं यस्य १ इक्षुविशेष, किसी क़िस्मकी ऊख। २ इक्षुका मूल, ऊखकी जड़।

इक्षुमेद (सं० पु०) इक्षुवाटिका, ऊखका बाग़।

इक्षुमेह (सं० पु०) इक्षुरसतुल्यो मेहः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। कफज मूत्रदोष, इक्षुरस-जैसे मूत्रका होना। इक्षुमेहमें मूत्रके साथ मधु गिरता है। इक्षुमेहीके मूत्रपर मक्खी बैठती और चींटी चढ़ती है। दिवानिद्रा, व्यायाम तथा आलस्यमें आसक्त रहने और शीतल, स्निग्ध, मधुर एवं मद्य-द्रव्य-युक्त अन्न खानेसे यह रोग लग जाता है। सुश्रुतने इक्षुमेहपर जरन्तीकषायके सेवनकी व्यवस्था बतायी है। मेह देखो।

इक्षुमेहिन् (सं० त्रि०) इक्षुमेह-युक्त, सिलसिलबीलका मरीज़, जिसके कुलक-मुत्तीका रोग रहे।

इक्षुयन्त्र (सं० क्लो०) इक्षोः निष्पीड़नं यन्त्रम्, शाकतत्। ऊखके रसको निकालनेका कोल्हू।

इक्षुयोनि (सं० पु०) इक्षोर्योनिः जन्म यस्मात्। पुण्ड्रेक्षु, पौंड़ा। २ कारङ्कशालि, किसी क़िस्मकी ऊख।

इक्षुर (सं० पु०) इक्षुं तद्द्रसं राति, इक्षु-रा-क। १ कोकिलाक्ष, तालमखाना। २ इक्षु, ऊख। ३ गोक्षुरक, गोखुरू। ४ काशतृण, कांस। ५ शरतृण, रामशर। ६ कृष्णेक्षु, काली ऊख।

इक्षुरक, इक्षुर देखो।

इक्षुरबीज (सं० क्लो०) कोकिलाक्ष बीज, तालमखानेका तुख़्म।

इक्षुरस (सं० पु०) इक्षोरस इव रसो यस्य सः। १ काशतृण, कांस। ६-तत्। २ इक्षुका रस, ऊखका निचोड़। ३ गुड़।

इक्षुरसक्काथ (सं० पु०) इक्षुरसस्य क्काथः, ६-तत्। इक्षुगुड़, ऊखका गुड़।

इक्षुरसवल्लरी (सं० त्रि०) क्षीरविदारी, सफ़ेद विलायीकन्द।

इक्षुरसविकार (सं० पु०) इक्षुगुड़, ऊखका गुड़।

इक्षुरसशुक्त (सं० क्लो०) तैल, कन्द, शाक और फल पड़नेसे खट्टा हो जानेवाला इक्षुरस, सिरका। यह गुरु और अनभिष्यन्दि होता है। (सुश्रुत)

इक्षुरसोद (सं० पु०) इक्षुरसवत् मिष्टमुदकं यस्य, बहुव्री० उदकशब्दस्योदादेशश्च। इक्षुसमुद्र, शर्बती बहर। पुराणानुसार लवण, इक्षु, सुरा, सर्पि, दधि, दुग्ध और जल सात वस्तुका समुद्र होता है।

इक्षुरालिका, इक्षुबालिका देखो।

इक्षुला, इक्षुदा देखो।

इक्षुवाटिका (सं० स्त्री०) इक्षुयोनि देखो।

इक्षुवण (सं० क्लो०) इक्षुका वन, ऊखका जङ्गल।

इक्षुवल्लकी, इक्षुवल्ली देखो।

इक्षुवल्लरी, इक्षुवल्ली देखो।

इक्षुवल्ली (सं० स्त्री०) इक्षुरिव सुस्वादु वल्ली वल्लरी वा। कृष्णक्षीरविदारी, काला विलायीकन्द।

इक्षुवाटिका, इक्षुवाटी देखो।

इक्षुवाटी (सं० स्त्री०) इक्षोर्वाटीव। १ पुण्ड्रक, पौंढ़ा। २ करङ्कशालीक्षु, मामूली ऊख।

इक्षुवारि, इक्षुरसोद देखो।

इक्षुविकार (सं० पु०) इक्षोर्विकारः, ६-तत्। गुड़ प्रभृति ; शीरा, राब, गुड़, चीनी, मिसरी वग़ैरह।

इक्षुविकृति (सं० स्त्री०) खण्ड, खांड़।

इक्षुविदारिका (सं० स्त्री०) भूमिकुष्माण्ड, भूयिं-कुम्हड़ा।

इक्षुविदारी, इक्षुविदारिका देखो।

इक्षुवेष्ट, इक्षुवेष्टन देखो।

इक्षुवेष्टन (सं० पु०) इक्षोरिव वेष्टनमस्य, बहुव्री०। मुञ्जतृण, मूंज।

इक्षुवेष्टल, इक्षुवेष्टन देखो।

इक्षुशर (सं० पु०) इक्षुरिव शृणाति, इक्ष-शृ-अच्। काशतृण, रामशर।

इक्षुशाकट (सं० क्ली०) इक्षूणां भवनम्, इक्षु-शाकट। इक्षुका क्षेत्र, ऊखका खेत।

इक्षुशाकिन, इक्षुशाकट देखो।

इक्षुसमुद्र, इक्षुरसोद देखो।

इक्षुसार (सं० पु०) इक्षोः सारः, ६-तत्। गुड़।

इक्षूरक (सं० क्ली०) कोकिलाक्षवीज, तालमखानेका तुख़्म।

इक्षूरकवीज, इक्षूरक देखो।

इक्ष्वाकु (सं० पु०) १ वैवस्वत मनुके पुत्र। सूर्यवंशीयोंमें यह अयोध्याके प्रथम नरेश रहे। इनके एक शत पुत्रोंमें विकुक्षि ज्येष्ठ थे। रामचन्द्रजीने इन्हींके कुलमें जन्म लिया। २ वाराणसीके एक राजा। बौद्धोंके महावस्तुवदान नामक संस्कृत ग्रन्थमें इनके सम्बन्धपर अद्भुत गल्प लिखा है। एकदिन वाराणसीके राजा सुबन्धुने स्वप्न देखा, कि उनके शयनागारमें इक्षुदण्ड भर गया था। नींद टूटनेपर स्वप्न प्रकृत निकला। क्रमसे सकल इक्षुदण्ड सूखा, केवल एक वृक्ष बचा था। सुबन्धुने दैवज्ञोंको बुला इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा,—इस इक्षुके मध्यसे उपजनेवाला बालक ही आपका पुत्र होगा। दैवज्ञोंकी बात ठीक निकली। इक्षुको तोड़कर एक बालक उत्पन्न हुवा था। इक्षुके मध्य रहनेसे उसका नाम इक्ष्वाकु पड़ा। सुबन्धुके मरनेपर वही वाराणसीका राजा बना था। इक्ष्वाकुकी प्रधान महिषीका नाम अलिन्दा रहा। उनके ही गर्भसे कुशने जन्म लिया था। (कुशजातक) (सं० स्त्री०) ३ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी।

इक्ष्वाकुकुलज (सं० त्रि०) इक्ष्वाकुके वंशमें उत्पन्न।

इक्ष्वाद (सं० त्रि०) इक्षुभक्षक, ऊख चूसनेवाला।

इक्ष्वारि (सं० पु०) इक्षोः अरिः, ६-तत् वा इक्षुरिवालति, इक्षु-ऋ-इन्। काशतृण, कांस।

इक्ष्वालि, इक्ष्वालिक देखो।

इक्ष्वालिक (सं० पु०) इक्षुरिव अलति व्याप्नोतीति, इक्षु-ण्वुल्। १ काशतृण, कांस। २ इक्षुविशेष, किसी क़िस्मकी ऊख। ३ वनखड़िका, नरकुल।

इक्ष्वालिका (सं० क्ली०) इक्ष्वालिक देखो।

इकट्ठा (हिं० क्रि० वि०) १ एकत्र होकर, मिलके। २ एककाल, मान, उसी वक़्त। ३ अधिक, ज़्यादा।

इकट्ठा करना (हिं० क्रि०) १ बटोरना, संगेरना। २ बुला भेजना। ३ जोड़ना, मीज़ान् लगाना। ४ मिलाना।

इकट्ठा होना (हिं० क्रि०) १ जमना, मिलना, आना। २ भीड़ लगना, गोल बंधना। ३ जुड़ना, शुमारमें आना।

इखद (हिं०) ईषत् देखो।

इख़फ़ा-वारदात (फ़ा० पु०) अगोप्य विषयका गोपन, न छिपाने लायक़ बातका छिपाना।

इख़राज (अ० पु०) १ अपसारण, बेदख़ली, निकाला। २ आहरण, बदर, निकासी। ३ निर्हरण, खिंचाव।

इख़राजात् (अ० पु०) व्यय, ख़र्च। यह शब्द 'इख़राज'का बहुवचन है।

इख़लास (अ० पु०) १ बेमल्य, पाकीज़गी, सफ़ायी। २ अनुराग, वफ़ादारी, खरापन।

"इख़लाससे इख़लास पैदा होता है।" (लोकोक्ति)

३ प्रणय, आशनापरस्ती, मेहरबानी।

इख़लास ख़ान्—१ सम्राट् शाहजहान्के समयवाले एक सम्भ्रान्त पुरुष। सन् १६३८ ई०को इनकी मृत्यु हुयी। २ सम्राट् औरङ्गज़ेबकी सेनाके एक सरदार।

१६८८ ई०को इन्होंने अपने पिता तकरीब खान्के साथ महाराष्ट्र-नृपति सम्भाजीको कैद किया और तुलापुरमें औरङ्गजेबके सामने ला फांसीपर चढ़ाया था।

इख़लास जोड़ना (हिं० क्रि०) मैत्री उत्पन्न करना, दोस्ती लगाना।

इख़लासमन्द (अ० वि०) १ निर्व्याज, बेरिया, साफ़। २ हितकाम, मुशफ़िक़, मेहरबान। ३ प्रियतम, आशना, हिला-मिला।

इख़लास रखना (हिं० क्रि०) १ निर्व्याज होना, साफ़ रहना। २ प्रीति पालना, प्यार करना।

इखु (हिं०) इक्षु देखो।

इख़्तियार (अ० पु०) १ रुचि, पसन्दीदगी, मर्ज़ी। २ इच्छा, खुशी। ३ स्वतन्त्रता, आज़ादी। ४ संयम, ज़ब्त। ५ स्वत्व, हक़। ६ अधिकार, क़ब्ज़ा। ७ नियम, क़ायदा। ८ अधिकारपद, ओहदा।

इख़्तियार अदालत (अ० पु०) न्यायप्रभुत्व, हुक्म।

इख़्तियार अमलमें लाना (हिं० क्रि०) नियम बांधना, क़ायदा लगाना।

इख़्तियार आम (अ० पु०) साधारणाधिकार, मामूली हुकूमत।

इख़्तियार-आमद-रफ़्त (अ० पु०) गमनागमन-का स्वत्व, आने-जानेका हक़।

इख़्तियार-इबतिदायी (अ० पु०) प्रथमाधिकार, औवल हुक्म।

इख़्तियार-उद्-दीन—एक मुसलमान वीर। १२५६-५७ ई०को इन्होंने आक्रमण कर आसामदेशके काम-रूप प्रान्तकी राजधानी छीनी। राजा पर्वतपर जा छिपे थे। इन्होंने वहां मसजिद बनवायी और बङ्गाल एवं कामरूपकी शाही पायी। किन्तु १२५७ ई०को हिन्दुवोंने पर्वतसे उतर इख़्तियार-उद्-दीन मलिक उस-बेगको घोर रूपसे आहत किया और समग्र सैन्यको बन्दी बनाया था।

इख़्तियार करना (हिं० क्रि०) १ चुनना, छांटना। २ करनेको ठानना, इरादा बांधना। ३ अपने ऊपर लेना, हिम्मत बांधना, उठाना। ४ अवलम्ब पकड़ना, सहारे बैठना।

इख़्तियार क़ानून (अ० पु०) नियमाधिकार, क़ानून-का ज़ोर।

इख़्तियार कामिल (अ० पु०) पूर्णाधिकार, पूरी हुकूमत।

इख़्तियार जायज़ (अ० पु०) स्वत्व, हक़, क़ानूनी क़ुवत।

इख़्तियार-तजवीज़-क़ानून (अ० पु०) व्यवस्थापक अधिकार, इजतिहादी ताक़त।

इख़्तियार-तजवीज़-मुक़दमा (अ० पु०) व्यवहारा-धिकार, इनसाफ़ी ज़ोर।

इख़्तियार-नाजायज़ (अ० पु०) अधर्म्याधिकार, खिलाफ़-क़ानून हुकूमत।

इख़्तियार नाफ़िज़ करना, इख़्तियार अमलमें लाना देखो।

इख़्तियारपुर—युक्तप्रान्तके रायबरेली जिलेका एक नगर। इसे जहांनाबाद भी कहते हैं। इख़्तियारपुर रायबरेली नगरके निकट अक्षा २६° १३′ ५०″ उ० तथा द्राघि० ८१° १६′ १५″ पू० पर अवस्थित है। इस नगरको जहान्-खान्ने प्रतिष्ठित किया था। इमा-रतमें रङ्गमहल, रौज़ा, बाज़ार और सराय प्रधान है। यहां गाढ़ा नामक स्थूल वस्त्र बहुत अच्छा बनता है।

इख़्तियार मिलना (हिं० क्रि०) अधिकार प्राप्त करना, हुकूमत पाना।

इख़्तियार मुतलक़ (अ० पु०) पूर्णाधिकार, पूरी पूरी हुकूमत।

इख़्तियार मुनसिफ़ी, इख़्तियार-तजवीज़-मुक़दमा देखो।

इख़्तियार मुनासिब (अ० पु०) योग्याधिकार, वाजिब हुक्म।

इख़्तियारमें होना (हिं० क्रि०) अपने अधिकारमें रहना, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलना।

इख़्तियार रखना (हिं० क्रि०) १ स्वत्व पाना, हक़ हासिल करना। २ योग्य होना, लायक़ बनना।

इख़्तियार-शौहरी (अ० पु०) पति-विषयक अधि-कार, खाविन्दका ज़ोर।

इख़्तियार सरसरी (अ० पु०) संक्षिप्ताधिकार, मुख-तसर हुकूमत।

इख़्तियारसे (हिं० क्रि० वि०) स्वेच्छापूर्वक, दिलसे, खुशी-खुशी।

इख़्तियारसे बाहर होना (हिं० क्रि०) अपने अधिकारकी सीमाको उल्लङ्घन करना, अपनी हुकूमतकी हद छोड़ना।

इख़्तियार हासिल होना, इख़्तियार रखना देखो।

इख़्तियार होना, इख़्तियार रखना देखो।

इख़्तिरा (अ० पु०) १ आविष्कार, ईजाद। २ प्रकाशन, फैलाव।

इख़्तिलात (अ० पु०) १ मेलन, मेल। २ परिचय, जानपहचान। ३ अनुराग, प्यार।

इख़्तिलाफ़ (अ० पु०) १ अन्तर, फ़र्क़। २ विरोध, अनबन। ३ स्फोटन, बिगाड़।

इख़्तिलाफ़ रखना (हिं० क्रि०) असम्मत होना, फ़र्क़ पड़ना।

इख़्तिलाफ़-राय (अ० पु०) सम्मतिभेद, खयालका फ़र्क़।

इख़्तिसार (अ० पु०) १ अविस्तार, इजमाल, कोताही। २ संक्षेप, खुलासा।

इख़्तिसार करना (हिं० क्रि०) १ संक्षिप्त बनाना, छांटना। २ सार निकालना, खुलासा बनाना। ३ गणित शास्त्रानुसार न्यूनता लाना, उतारना।

इगतपुरी—१ बम्बई प्रान्तके नासिक जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ३७६ वर्गमील है। उत्तर-पश्चिम और दक्षिणकी भूमि प्रस्तरमय, अल्पजल और परिक्षीण है। जलवायु शीतल तथा स्वास्थ्यकर रहता है। २ अपनी तहसीलका शहर। अप्रेल और मई मास युरोपीय यहां हवा खाने आते हैं; ग्रेट-इण्डियन-पेनिन-सुला रेलवेका ष्टेशन बना है। पिम्प्री ग्राममें सदर-उद्-दीनकी क़ब्र देखते हैं।

इगलास—१ युक्तप्रान्तके अलीगढ़ जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल २१३ वर्गमील है। इसमें हंसगढ़ और गोरायीका परगना लगता है। भूमि समतल और उपजाऊ है। २ अपनी तहसीलका नगर। यह अलीगढ़से १८ मील दूर मथुराको जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। १८५७ ई०को सिपाही विद्रोहके समय जाटोंने इस नगरपर आक्रमण मारा था, किन्तु साफल्य न पाया।

इगारह (हिं० वि०) एकादश, याज़्दा, दश और एक, ११।

इग्गली—महीसुर राज्यका एक प्राचीन स्थान। यहां जो शिलालेख मिला, उसमें सत्यवाक्य-कोंगुनीवर्मा परमानड़ी और यरेयप्पाका नाम तथा सत्यवाक्यके इक्कीसवें वर्षका वृत्तान्त लिखा है।

इग्गुतप्पाकुण्ड—बम्बई प्रान्तके कुर्ग जिलेका एक पहाड़। पश्चिम घाटकी पर्वतश्रेणीमें इग्गुतप्पा कुण्डका शेखर सबसे ऊंचा है। ऊपर दुर्ग और मन्दिर बना है। पर्वतका पार्श्व अभेद्य वनसे परिपूर्ण है।

इग्यारह, इगारह देखो।

इङ्क (अं० स्त्री० = Ink) मसि, रोशनायी, स्याही। स्याही दो तरहकी होती है। लिखनेकी कसीस, हड़, माजू प्रभृतिको औंट और छपनेकी राल, तेल, काजल वगैरहको घोंटकर बनती है।

इङ्कटेबुल (अं० पु० = Ink-table) मुद्रण-यन्त्रालयमें मसि लोढ़नेकी चौकी। यह मेज़ दो प्रकारकी होती है, मामूली और बेलनदार। मामूली चिकनी साफ़ और ढली रहती है। बेलनदारमें एक ओर लोहेका लोढ़ा लगता और उसके पीछे स्याही भरनेका नल रहता है। उसमें कुछ पेंच जड़े जाते, जिनको कसनेसे अधिक और ढीला करनेसे अल्प स्याही आती तथा कुट-पिसकर समान बन जाती है। इसमें स्याहीवान्‌को अधिक काम करना नहीं पड़ता।

इङ्कमेन (अं० पु० = Ink-man) यन्त्रालयमें मसी देनेवाला मनुष्य, छापेखानेका स्याहीवान्।

इङ्क-रोलर (अं० पु० = Ink-roller) मसीवर्तिनी, स्याहीका बेलन। छापेखानेमें इसीसे स्याही कागज़पर चढ़ती है। यह तीन प्रकारका है,—१ लकड़ीके बेलनपर ऊनी कपड़ा लगा चमड़ा चढ़ानेसे यह प्रस्तुत और प्रस्तरमय यन्त्रमें व्यवहृत होता है। २ यह लकड़ीके बेलनपर रबर लगानेसे बनता, किन्तु अधिक व्यवहारमें नहीं आता। ३ गराड़ीदार लकड़ीपर गलित गुड़ तथा सरेस लगाकर यह बनता और अधिक काम देता है।

इङ्ग (सं० पु०) इग-क-नुम्। १ अद्भुत, ताज्जुब। २ ज्ञान, इल्म। भावे घञ्। ३ इङ्गित, इशारा। ४ जङ्गम, चलने-फिरनेवाली चीज़। ५ चराचर, दुनिया। (त्रि०) ६ गतिविशिष्ट, हिलने-डुलनेवाला। ८ आश्चर्यमय, अनोखा।

इङ्गन (सं० क्ली०) इगि भावे लुग्ट्। १ हृद्गत भाव, दिली मतलब। २ चलन, चलफिर। ३ ज्ञान, समझ। ४ सङ्केत, इशारेबाज़ी। ५ चालन, हेरफेर। ६ व्याकरणानुसार समासान्त पदके एक शब्दको दूसरेसे पृथक् करनेका विधान।

इङ्गनी (हिं० स्त्री०) धातु सम्बन्धी रसायन पदार्थ। (Manganese) पहले लोग इसके सारको लोहेका आकर्षणशील सार समझते थे। किन्तु अन्तको प्रमाणित हुआ, कि इसमें लोहेका नाम नहीं, लवणका लेश रहा। इङ्गनी प्रकृतिमें विस्तृत रूपसे व्याप्त है। सूर्याकाश, समुद्रजल और अनेक धातुद्रव्यमें इसका अंश मिलता है। रसज्ञोंने बड़े यत्नसे तपा और अन्य द्रव्य मिला इसे विशुद्ध बनाया है। इङ्गनी फ़ौलाद तैयार करनेमें काम आती है। मध्यप्रदेश, मध्यभारत, महिसुर राज्य और मन्द्राजमें खानि है। यह काचका हरितत्व निकालती और उसपर कान्ति चढ़ाती है।

इङ्गल (सं० पु०) १ इङ्गुदीवृक्ष, देशी बादाम।

इङ्गला, (हिं०) इड़ा देखो।

इङ्गलिश (अं० वि० = English.) १ इङ्गलेण्ड देश सम्बन्धी, अंगरेज़ी। (स्त्री०) २ पेन्शन, वज़ीफ़ा। ३ छुट्टी। सिपाही वज़ीफ़ा और छुट्टीको इङ्गलिश कहते हैं। ४ अंगरेजोंकी भाषा, जिस ज़बान्में अंगरेज़ बोलें। इङ्गलिश कहनेसे केवल इङ्गलेण्डके प्राचीन अधिवासी एङ्गलोंकी ही भाषाका बोध नहीं होता। यह लाटिन, ग्रीक, हिब्रू, केलटिक, दानिश, साक्सन, फ्रान्सीसी, स्पेनीय, इटलीय, जर्मन्, संस्कृत, हिन्दी, मलय, चीन प्रभृति नाना भाषाके संमिश्रणसे बनी है। संस्कृतकी तरह इङ्गलिशको पूर्ण भाषा कह नहीं सकते। इस भाषामें अनेकानेक शब्दकी सृष्टि हुवा करती है। इङ्गलिशका सम्पूर्ण व्याकरण आज भी प्रस्तुत नहीं।

इस भाषाको चार अंशमें बांटा जाता है,—१म एङ्गलो-साक्सन (४४८ से १०६६ ई०), २य अर्ध साक्सन (१०६६ से १२५०), ३य प्राचीन (१२५० से १५५० ई०) और ४र्थ वर्तमान काल (१५५० से आजतक)। इस समयके मध्य इङ्गलिश भाषामें अनेक रूपान्तर पहुंचा है। पहले यह भाषा जिस प्रकार चलते रही, आज वह बात देख नहीं पड़ती। इङ्गलिश भाषामें २६ अक्षर हैं। २६ अक्षरमें विजातीय शब्दसमूह प्रकृतरूपसे लिखा जा न सकनेपर उच्चारणके लिये नूतन-नूतन वर्ण बना करता है।

इङ्गलिस्थान (हिं० पु०) इङ्गलेण्ड, अंगरेजोंके रहनेका देश। इङ्गलेण्ड देखो।

इङ्गलिस्थानी (हिं० वि०) इङ्गलिश, अंगरेज़ी, इङ्गलेण्डसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

इङ्गलेण्ड (अं० स्त्री० = England.) देशविशेष, ग्रेटब्रटेन द्वीपका दक्षिणांश। इङ्गलेण्डका प्राचीन इतिहास अधिक नहीं मिलता। पुराकालमें टीन लेनेको फिनिकीय जाति इस देशको आते और प्राचीन रोमक ब्रटेनिया नाम बताते थे। ग्रेटब्रटेन शब्दमें पुरातत्त्व देखो। एङ्गल नामक जातिके वास करनेसे इस स्थानका नाम इङ्गलेण्ड पड़ा है।

एडवार्ड नामक नृपतिने नरमाण्डीके विलियमको इङ्गलेण्डका राज्यभार सौंपा था। किन्तु विलियम जब यहां आये, तब लोगोंके बनाये हेरल्ड नरेशको राज्य करते देख बहुत घबराये। विलियम और हेरलडमें घोर युद्ध हुआ था। १०६६ ई०को इङ्गलेण्ड नरमानोंके अधिकारमें जा पड़ा। नरमानों और तत्कालीन साक्सनोंके सम्मिलनसे वर्तमान अंगरेज़ी जाति तथा भाषाकी उत्पत्ति हुई है। निम्नलिखित राजावोंने इङ्गलेण्डमें राजत्व किया है,—

एङ्गलो-साक्सनवंश।

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
आलफ्रेड (ओयेसेक्सके राजा)	८७१	३०
एडवार्ड (१म)	९०१	२४
एथेलष्टन (इङ्गलेण्डके राजा)	९२५	१५
एडमण्ड (१म)	९४०	६
एद्रेद	९४६	६

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
एडवी	९५५	४
एडगार	९५९	१६
एडवार्ड (२य)	९७५	३
एथेलरेड	९७८	३८
एडमण्ड (२य)	१०१६	१
दानिश-वंश।		
कानिउट	१०१८	१९
हैरल्ड (१म)	१०३६	३
हार्डिकानिउट	१०३९	२
साक्सन-वंश।		
एडवार्ड (३य)	१०४१	२५
हैरल्ड (२य)	१०६६	
नरमान-वंश।		
विलियम (१म)	१०६६	२१
,, (२य)	१०८७	१३
हेनरी (१म)	११००	२५
ष्टेफेन (ब्लुइस वंशीय)	११३५	१९
प्लाण्टजेनेट-वंश।		
हेनरी (२य)	११५४	३५
रिचार्ड (१म)	११८९	१०
जन	११९९	१७
हेनरी (३य)	१२१६	५६
एडवार्ड (१म)	१२७२	३५
,, (२य)	१३०७	२०
,, (३य)	१३२७	५०
रिचार्ड (२य)	१३७७	२२
लङ्कास्टार-वंश।		
हेनरी (४र्थ)	१३९९	१४
,, (५म)	१४१३	९
,, (६ष्ठ)	१४२२	३९
इयर्कका-राजवंश।		
एडवार्ड (४र्थ)	१४६१	२२
,, (५म)	१४८३	
रिचार्ड (३य)	१४८३	२

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
तूदरका राजवंश।		
हेनरी (७म)	१४८५	२४
,, (८म)	१५०९	३८
एडवार्ड (६ष्ठ)	१५४७	६
मेरी	१५५३	५
एलिजाबेथ	१५५८	४५
ष्टुयार्ट-वंश।		
जेम्स (१म)	१६०३	२२
चार्लस (१म)	१६२५	२४
साधारणतन्त्र	१६४९	१०
ष्टुयार्ट-वंश।		
चार्लस (२य)	१६६०	२५
जेम्स (२य)	१६८५	३
अरेञ्जका राजवंश।		
विलियम (३य) और मेरी	१६८८	१४
ष्टुयार्ट-वंश।		
आनी	१७०२	१२
वर्णसुइक-वंश।		
जर्ज (१म)	१७१४	१३
,, (२य)	१७२७	३३
,, (३य)	१७६०	६०
,, (४र्थ)	१८२०	१२
विलियम (५म)	१८३०	७
विक्टोरिया	१८३७	६४
एडवार्ड (७म)	१९०१	१०
जर्ज (५म)	१९१०	ब्रटेन देखो।

इङ्गालकर्म (हिं० पु०) अङ्गारकर्म, आगसे बननेवाला काम। जैनमतमें लोह, स्वर्ण, इष्टक आदिका कर्म जो अग्निसे बनता वही इङ्गालकर्म कहलाता है।

इङ्गिड़ (सं० पु०) इगि-इलच्। इङ्गुदवृक्ष, जङ्गली बादाम, बादामी।

इङ्गित (सं० क्ली०) इङ्ग-क्त। स्पन्दन, अभिप्राय-मत चेष्टाका प्रकाशन, धड़क, आवाजकी तबदीली, अन्दरूनी हरकत। २ सङ्केत, इशारा। ३ अन्वेषण, तलाश, खोज। ४ चेष्टा, कोशिश। ५ अभिप्राय, मतलब।

इङ्गितकोविद, इङ्गितज्ञ देखो।

इङ्गितज्ञ (सं॰ त्रि॰) इङ्गितं जानातीति, इङ्गित-ज्ञा कर्तरि कः। सङ्केत समझनेवाला, जो इशारेको पहचानता हो।

इङ्गु (सं॰ पु॰) इङ्गति कम्पते येन, इगि बाहुलकात् उण्। रोग, जिस्मको हिला देनेवाली बीमारी।

इङ्गुद (सं॰ पु॰) इङ्गुं रोगं द्यति, इङ्गु-दो कर्तरि कः। १ तापसवृक्ष, हिंगोटका पेड़। २ ज्योतिष्मती लता, मालकंगनीका दरख़्त। यह मदगन्धि, कटु, उष्ण, फेनिल, लघु, रसायन और कृमि-वात-कफ-व्रणघ्न होता है। (राजनिघण्टु) इङ्गुद कुष्ठ, भूतग्रह, व्रण, विष एवं कृमिको खोता और उष्ण, श्वित्र एवं शूलघ्न, तिक्त तथा कटु होता है। (भावप्रकाश) इसका पुष्प मधुर, स्निग्ध, उष्ण तथा तिक्त लगता और उसके सेवनसे वात एवं कफ भगता है। (देयकनिघण्टु) फल स्निग्ध, उष्ण, तिक्त, मधुर और वातश्लेष्मघ्न है। (सुश्रुत)

इङ्गुदी (सं॰ स्त्री॰) इङ्गुद देखो।

इङ्गुदीक्षार (सं॰ पु॰) इङ्गुद वृक्षका क्षार, हिंगोटका नमक।

इङ्गुदीतैल (सं॰ क्ली॰) इङ्गुदी-फलोत्थ तैल, हिंगोटका तेल। यह स्निग्ध, मधुर, पित्तघ्न, शीतल, बल्य, कान्तिद, श्लेष्मल और केशवर्धन होता है। (राजनिघण्टु) पहले मुनि लोग प्रस्तरादिसे तोड़ फलका तैल व्यवहार करते थे।

इङ्गुर, ईंगुर देखो।

इङ्गुल, इङ्गुद देखो।

इङ्गुली (सं॰ स्त्री॰) इङ्गुद देखो।

इङ्ग्य (सं॰ त्रि॰) इगि-यत्। गमनयोग्य, चल सकनेवाला। प्रातिशाख्यमें इङ्ग्य उस शब्द अथवा समासान्त पदके उस अंशके लिये आता, जो किसी व्याकरण-सम्बन्धी कार्यको अपने पूर्व भागसे पृथक् किया जा सकता है। पदपाठमें इङ्ग्य शब्द अवग्रहसे विभक्त होता है।

इङ्ग्रेज (सं॰ पु॰) इङ्गलेण्ड देशजात लोक सकल, अंगरेज, इङ्गलिस्थानमें पैदा होनेवाला शख़्स।

"पूर्वाम्नाये नवशतं षडशीतिः प्रकीर्तिता।
फिरङ्गभाषया मन्त्रास्तेषां संसाधनात् कलौ॥
अधिपा मण्डलानाञ्च संग्रामेष्वपराजिताः।
इङ्ग्रेजा नव षट् पञ्च लण्ड्रजाश्चापि भाविनः॥" (मेरुतन्त्र)

इचक—हज़ारीबाग ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा॰२४° ५´ २४´´ उ॰ और द्राघि॰ ८५° २८´ २३´´ पू॰पर अवस्थित है। इसमें एक गढ़ या क़िला बना, जिसमें बहुत दिन तक रायगढ़के राजाका परिवार रहा है। स्थान विचित्र है।

इचकना (हिं॰ क्रि॰) क्रोधसे दांत देखाना, खीस काढ़ना।

इचकिल (सं॰ पु॰) तड़ाग, तालाब, चहला।

इचावर—मध्यभारतके भूपाल राज्यका एक परगना और सहर। यह एक फ़्रान्सीसी महिलाको जागीरमें मिला था। वार्षिक आय प्रायः पौन लाख है। कुछ ईसायी भी इचावरमें रहते हैं।

इचौली—युक्तप्रान्तके बाराबङ्की ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° ५८´ उ॰ और द्राघि ८१° ३७´ पू॰पर बाराबङ्की नगरसे साढ़े बारह कोस पूर्व-उत्तर अवस्थित है। महमूद गजनवीने भर-सरदार भगा इचौली नगर अपने सेनापतियोंको जागीरमें दे दिया था। उन्होंने भरोंका क़िला तोड़ा और अपने अनुयायियोंका दल जोड़ा। आसफ़-उद्दौलाके प्रधान मन्त्री महाराज टिकाइतरायने इसी नगरमें जन्म लिया था। उनका बनवाया पक्का तड़ाग अभी विद्यमान है। पुराने जागीरदारोंका अधिकार उठा नहीं।

इच्छुक (सं॰ पु॰) इच्छा अस्ति अस्मिन्निति, मत्वर्थीय अच् ततः कप् स्वार्थे कन् वा। १ जम्बीर वृक्ष, तुरञ्जका दरख़्त, बिजौरेका पेड़। २ इच्छायुक्त व्यक्ति, चाहनेवाला शख़्स। ३ प्रश्न, सवाल। (त्रि॰) ४ अभिलाषी, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छुत् (सं॰ त्रि॰) इच्छायुक्त, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छुता (हिं॰ स्त्री॰) अभिलाष, ख़्वाहिश, चाह।

इच्छुत्व (सं॰ क्ली॰) इच्छुता देखो।

इच्छना (हिं॰ क्रि॰) इच्छा रखना, ख़्वाहिश करना, चाहना।

इच्छा (सं॰ स्त्री॰) इष-भावे श-टाप्। १ मनका

धर्म, दिलका जाविता। २ वाञ्छा, खाहिश, चाह। ३ स्पृहा, लालच। ४ उत्साह, हौसला। सत् और असत् भेदसे इच्छा दो प्रकार होती है। दानध्याना-दिकी सत् और मद्यपान चौर्यादिकी इच्छा असत् है। आत्मासे इच्छा, इच्छासे कृति, कृतिसे चेष्टा और चेष्टासे क्रिया निकलती है। (न्यायसिद्धान्त)

इच्छाकृत (सं० त्रि०) इच्छया कृतम्, ३-तत्। अभि-लाषसे क्रिया हुआ, जो खाहिशसे किया गया हो।

इच्छादान (सं० क्ली०) अभिलाषोपहार, खाहिशकी बखशिश, मुंहमांगी या मनमानी चीज़का देना।

इच्छानिमित्तक (सं० त्रि०) इच्छा इव निमित्तं यस्य, बहुव्री०। अभिलाषके कारण होनेवाला, जो खाहिश-के सबब हो। मनुष्य अपनी इच्छाके निमित्त ही चोर या साधु बन जाता है।

इच्छानिवृत्ति (सं० स्त्री०) इच्छायाः निवृत्तिः, ६-तत्। वाञ्छाका दमन, खाहिशका दफ़ा, चाहका दबाव। इच्छानिवृत्तिसे ही प्रकृत आनन्द आता है।

इच्छानुगत (सं० त्रि०) इच्छाया अनुगतम्, ६-तत्। स्वतन्त्र, आज़ाद, मनमाना, खाहिशके मुवाफ़िक़ रहनेवाला।

इच्छानुरूप (सं० त्रि०) इच्छाया वा इच्छया अनु-रूपम्, ६-तत् वा ३-तत्। इच्छामत यथासाध्य, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़।

इच्छानुसारिणी क्रियाशक्ति (सं० स्त्री०) अभिलाषके अनुरूप कार्य करनेका बल, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ काम करनेकी ताक़त। जैनशास्त्रके मतानुसार यह शक्ति योगसे प्राप्त होती है। योगी अपनी इच्छाके अनुसार विना कारण कार्यसम्पादन कर सकता है। मट्टी न रहते भी घड़ा बनता और बीज न पड़ते भी पेड़ उगता है।

इच्छान्वित (सं० त्रि०) इच्छायुक्त, खाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छाफल (सं० क्ली०) इच्छायाः फलम्, ६-तत्। इच्छाका परिणाम वा उद्देश्य, खाहिशका नतीजा या मक़सद। गणितमें प्रश्नकी उपपत्तिको इच्छाफल कहते हैं।

इच्छावत् इच्छान्वित देखो।

इच्छाभेदीरस (सं० पु०) भेदक रस विशेष, जुलाबका एक दवा। टङ्कण, पारद, मरिच तथा गन्धक बराबर, विश्वा द्विगुण और जयपालचूर्ण नवगुण डालनेसे इच्छाभेदी रस बनता है। एक गुञ्जाके बराबर यह रस खानेसे रेचन होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इच्छाभेदीगुड़िका (सं० स्त्री०) भेदक रसभेद, जुलाबकी दवा। पारद, गन्धक, सोहागा तथा पिप्पली समान एवं सबके बराबर जयपालचूर्ण मिलानेसे यह गोली बनती और शीतल जलके साथ खानेसे खासा दस्त लाती है। किन्तु उष्ण जलके साथ इच्छाभेदीगुड़िका सेवन करनेसे दस्त बन्द हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इच्छाभोजन (सं० क्ली०) १ इच्छानुरूप अदन, मर्ज़ी-के मुवाफ़िक़ खवायी। २ इच्छानुरूप खाद्य, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ खानेकी चीज़।

इच्छावती (सं० स्त्री०) इच्छा विद्यतेऽस्याः, इच्छा-मतुप् मस्य वः। कामुकी, दौलत वग़ैरहकी खाहिश रखनेवाली औरत।

इच्छावसु (सं० पु०) इच्छया एव वसु धनोत्पत्ति-र्यस्य, बहुव्री०। कुवेर।

इच्छासम्पद् (सं० स्त्री०) वाञ्छासिद्धि, खाहिशकी तहसील

इच्छित (सं० त्रि०) इच्छा अस्य जाता, इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। वाञ्छित, कामना किया हुआ, जो चाहा गया हो।

इच्छु (सं० त्रि०) इच्छतीति, इष-उ निपातनम्। विन्दुरिच्छुः। पा ३।२।१६९। १ इच्छाशील, खाहिशमन्द, चाहनेवाला। (हिं० पु०) २ इक्षु, ऊख।

इच्छुक (सं० त्रि०) इच्छु स्वार्थे कन्। १ इच्छा-शील, खाहिशमन्द। (पु०) २ मातुलुङ्ग वृक्ष, बिजौरे नीबूका पेड़।

इच्छुरस (हिं० पु०) इक्षुरस, ऊखका अर्क।

इछाखादा—बङ्गाल प्रान्तके यशोर ज़िलेका एक ग्राम। यह मागुरासे पश्चिम दो कोस पड़ता है। पहले नवाब की यहां छोटीसी छावनी रही। आजकल इछाखादेमें सड़ककी बग़ल बाजार लगता और गुड़, आलू तथा अनन्नास खूब बिकता है।

इच्छापुर (इच्छापुर)—१ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिले-का एक नगर। यह अक्षा० १९° ६´ ४०´´ उ० और द्राघि० ८४° ४४´ १०´´ पू० बरहामपुरसे आठ कोस दक्षिण-पश्चिम बड़ी सड़कपर अवस्थित है। नगरकी भूमिका क्षेत्रफल ३७२० एकर है। तीन कोस दक्षिण-पश्चिम बोदागिरि (बौद्धगिरि) पर्वत विद्य-मान है। पहले यहां मुसलमानी नायब रहते थे।
२ बङ्गाल प्रान्तके चौबीस-परगने जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° २६´ उ० और द्राघि० ७८° २३´ पू०पर अवस्थित है। इस नगरमें सरकारी युद्धास्त्र-निर्माणशाला बनी है। कलकत्तेसे इष्टर्न बङ्गाल रेल-वेका इच्छापुर ष्टेसन पौने नौ कोस पड़ता है।

इच्छामती—१ बङ्गाल प्रान्तके पाबना जिलेकी एक नदी। यह पद्मा वा गङ्गाकी शाखा लगती और पाबना शहरसे सात मील दक्षिण-पूर्व दोगाछी ग्रामके पास बहती है। पाबना शहर पहुंच कर इच्छामती बड़ाल नदी सङ्गमके नीचे हुड़ासागरमें जा गिरती है। यह बत्तीस मील लम्बी है। वर्षाऋतुमें इच्छामती प्रशस्त एवं सुन्दर देख पड़ती, किन्तु आठ मास सूखी ही-जैसी रहती है।

२ बङ्गाल प्रान्तके नदीया जिलेकी एक नदी। यह माथाभंगा नदीकी शाखा है। कृष्णगञ्जसे निकल नदीया जिलेमें बहती हुयी, जब इच्छामती चौबीसपरगना जिले आती, तब यमुना नाम पाती है। नदी बहुत गहरी है। बारहो महीने व्यापारके बड़े-बड़े नौका आ-जा सकते हैं।

इजतिनाब (अ० पु०) १ त्याग, वर्जन, परहेज़, बचावा। २ स्वार्थत्याग, इनहिराफ़ नाहं। ३ व्रत, फ़ाका। ४ संयम, परहेजगारी। ५ वैराग्य, दरवेशी।

इजपुर—गुजरात प्रान्त महीकण्ठा-जिलेका अन्तर्गत एक राज्य। वार्षिक आय प्रायः छः हज़ार रुपया है। बड़ोदेके गायकवाड़को कोयी ढायी सौ रुपया वार्षिक कर देना पड़ता है। इजपुर राज्य सप्तम श्रेणीमें परिगणित है।

इजमाल (अ० पु०) १ संक्षिप्त वर्णन, मुख़्तसर बयान, संक्षेप, निचोड़। २ संयुक्ताधिकार, मिला हुआ क़ब्ज़ा।

इजमाली (अ० वि०) १ परिमित, सारभूत, मुख़्तर, खुलासा। २ संयुक्ताधिकार-भुक्त, जो कयी लोगोंके क़ब्ज़ेमें हो।

इजरा (हिं० स्त्री०) भूमिविशेष, कोई ज़मीन्। जो भूमि जोतने-बोनेसे बिगड़ और कृषिके योग्य बनानेको परती पड़ जाती वही इजरा कहलाती है।

इजराय (अ० पु०) १ प्रचार-प्रतिपादन, गर्दिश देनेका काम। २ निर्गम, निःसरण, बरामद, निकास।

इजलाफ़ (अ० पु०) नीचलोक, कमीने। यह शब्द 'ज़ल्फ़'का बहुवचन है।

इजलास (अ० स्त्री०) १ उपवेशन, बैठक। २ न्याया-लय, अदालत, कचहरी।

इजलास करना (हिं० क्रि०) सभापति बनना, न्याया-लयमें बैठना, कचहरी लगाना, हुकूमत चलाना।

इजलासमें (हिं० क्रि० वि०) न्यायालयके मध्य, बर-सर-इजलास, कचहरीमें बैठे-बैठे।

इज़्हार (अ० पु०) १ निवेदन, बयान्। २ समा-चार, आगाही, जतावा। ३ साक्ष्य, गवाही।

इज़्हार करना (हिं० क्रि०) १ निवेदन सुनाना, अर्ज़ लगाना। २ प्रकाशमें लाना, बताना। ३ प्रकाश्य रूपसे कहना, देखाना। ४ वर्णन निकालना, बयान् देना।

इज़्हार-क़ानूनी (अ० पु०) अदालती बयान्, न्याया-लयमें दिया जानेवाला साक्ष्य।

इज़्हार ज़बानी (अ० पु०) वाचिक साक्ष्य, तक़रीरी गवाही, जो बात लिखी न गयी हो।

इज़्हार तहरीरी (अ० पु०) लिखित साक्ष्य, क़लमी बयान्, जो बात लिखी गयी हो।

इज़्हार देना (हिं० क्रि०) वर्णन करना, शहादत सुनाना।

इज़्हारनवीस (अ० पु०) साक्ष्यलेखक, गवाही लिखनेवाला शख़्स।

इज़्हारनामा (अ० पु०) विज्ञापन, साक्ष्यपत्र, इत्तिला-नामा, एलान।

इज़्हारनामा तहरीरी (अ० पु०) लिखित साक्ष्य-पत्र, क़लमी एलान, लिखी हुयी गवाहीका काग़ज़।

इज़हार लादावी (अ० पु०) स्वत्वप्रतिपादन-निषेध, मुतालबेका इनकार।

इज़हार लेना (हिं० क्रि०) साक्ष्यग्रहण करना, गवाह जांचना।

इज़हारसलामी (अ० पु०) साक्ष्यलेखकको दिया जानेवाला अन्याय्य पारितोषिक, नाजायज़ तौरपर इज़हार नवीसको दिया जानेवाला मेहनताना।

इजाज़त (अ० स्त्री०) १ अनुज्ञा, परवानगी। २ आज्ञा, रज़ामन्दी। ३ प्रत्यादेश, रज़ा, बिदा। ४ अनुमति-पत्र, हुक्मनामा, परवाना।

इजाज़तख्वाह (अ० पु०) याचक, निवेदक, सायल, अर्ज़ी देनेवाला।

इजाज़त चाहना (हिं० क्रि०) जानेके लिये आज्ञा मांगना, रवाना होनेकी छुट्टी मिलनेकी दरख्वास्त करना।

इजाज़त देना (हिं० क्रि०) १ आज्ञा करना, हुक्म निकालना। २ अनुमति प्रदान करना, छुट्टी बख्शना। ३ गमनार्थ अनुमोदन करना, जानेके लिये छुट्टी बख्शना। ४ स्वीकार करना, मान लेना। ५ अधिकार प्रदान करना, मुख्तार बनाना।

इजाज़तनामा (अ० पु०) आज्ञापत्र, हुक्मनामा।

इजाज़त-फ़रोख्त (अ० पु०) विक्रय करनेकी अनुमति, बेचनेका हुक्म।

इजाज़त मिलना (हिं० क्रि०) आज्ञा प्राप्त करना, हुक्म पाना।

इजाज़त वापस लेना (हिं० क्रि०) अनुज्ञा फेरना, हुक्म लौटाना।

इज़ाफ़ा (अ० पु०) वृद्धि, बढ़ती।

इज़ार (फ़ा० स्त्री०) जङ्घात्राण, पायजामा, सुतना।

"लम्बी लम्बी टांगें फटी इज़ार।
बगलमें हुक्का चली बाज़ार॥" (लोकोक्ति)

इज़ारबन्द (फ़ा० पु०) जङ्घात्राणका गुण, नारा, पायजामेकी डोरी।

इज़ारबन्दका ढीला (हिं० वि०) कामासक्त, नफ़्स-परस्त, मस्त। (स्त्री०) इज़ारबन्दकी ढीली।

इज़ारबन्द न खुलना (हिं० क्रि०) कामासक्तिसे दूर रहना, लंगोटा सच्चा रखना।

इज़ारबन्द पे हाथ डालना (हिं० क्रि०) जङ्घात्राण-का गुण पकड़ना, नाड़ा खोलना।

इज़ारबन्दी रिश्ता (फ़ा० पु०) स्त्रीस्पृहा, लहंगेका लगाव।

इजारा (अ० पु०) १ नियत धनपर बेचा या उठाया हुआ स्वाधिकार, मुक़र्रर क़ीमतपर फ़रोख्त किया या किराये दिया हुवा हक़। २ पट्टा, ठेकेपर ली हुयी ज़मीन्। ३ एक व्यापार, बयका इख़्तियार-खास।
"तोड़न आये चारा खैंचपे इजारा।" (लोकोक्ति) ४ ग्राम वा प्रान्तकी आयका पट्टा, गांव ज़िलेकी आमदनीका ठेका।

इजारा करना (हिं० क्रि०) अपने ऊपर लेना, जवाबदेह बनना।

इजारादार (अ० पु०) पट्टोलिकाधारी, पट्टेदार। २ एकाधिकारी, पूरा मालिक।

इजारा देना (हिं० क्रि०) पट्टोलिका सौंपना, ठेकेदार बनाना।

इजारानामा (अ० पु०) पट्टोलिका सरखत, ठेका।

इज़ाला (अ० पु०) १ विचालन, तग़ैयुर, सरकाव। २ व्याकरणानुसार लोप, इज़्फ़, अक्षरगिराव।

इज़ाला-अमान् (अ० पु०) दण्डदान, जब्ती, कुर्की।

इज़ाला करना (हिं० क्रि०) अपसरण, पहुंचाना, हटाना।

इज़ाला विक्रय करना (हिं० क्रि०) कौमारीत्व उतारना, क्वारपत बिगाड़ना।

इज़ाला-हैसियत-उर्फ़ी (अ० पु०) अपभाषण, हतक, लालीका बिगाड़ना।

इज़्ज़त (अ० स्त्री०) सत्कार, वक्र, बड़ायी।
"अपनी इज़्ज़त अपने हाथ है।" (लोकोक्ति)

इज़्ज़त उतारना, इज़्ज़त बिगाड़ना देखो।

इज़्ज़त करना (हिं० क्रि०) आदर देना, बड़ायी बताना।

इज़्ज़तका लागू होना (हिं० क्रि०) अपमान करनेपर कमर बांधना, आबरू लेनेकी ठानना।

इज़्ज़तके पीछे पड़ना, इज़्ज़तका लागू होना देखो।

इज़्ज़तदार (अ० वि०) सम्मानित, आबरू रखनेवाला।

इज़्ज़त देना (हिं० क्रि०) आदर खोना, छोटा बनना।

इज़्ज़त बनाना (हिं॰ क्रि॰) प्रतिष्ठा प्राप्त करना, आबरू बढ़ानेकी कोशिशमें लगना।

इज़्ज़त बिगाड़ना (हिं॰ क्रि॰) मान घटाना, आबरू उतारना।

इज़्ज़तमें फ़र्क़ आना, इज़्ज़तमें बट्टा लगना देखो।

इज़्ज़तमें बट्टा लगना (हिं॰ क्रि॰) मानभङ्ग होना, बेआबरू बनना।

इज़्ज़तवाला (हिं॰) इज़्ज़तदार देखो।

इज्जल (सं॰ पु॰) एति गच्छतीति, इ-क्विप्-तुक्-च, इत् सन्निकृष्टतया गच्छत् जलमस्य, बहुव्री॰। इज्जल-वृक्ष, समुद्रफल। यह शीतल, संग्राही, वातकोपन और विशेषत: विषघ्न होता है। (मदनपाल) इज्जल कुष्ठहृत् और वातकोपन है। (भावप्रकाश)

इज्य (सं॰ पु॰) इज्या याग: विद्यतेऽस्य, इज्या-अच्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। १ बृहस्पति, देवगुरु। २ पुष्यानक्षत्र। ३ विष्णु। ४ परमेश्वर। ५ शिक्षक। ६ पूजनीय व्यक्ति।

इज्या (सं॰ स्त्री॰) यज भावे क्यप्-टाप्। १ यज्ञ। २ दान। ३ सङ्गम, मिलन। कर्मणि क्यप्। ४ प्रतिमा, तस्वीर। ५ गो, गाय। ६ पूजा, परस्तिश। ७ दूती, दल्लाला, कुटनी।

इज्याशील (सं॰ पु॰) इज्या एव शीलं यस्य, बहुव्री॰। अथवा इज्यां शीलयति; इज्या-शील-अच्। पुन:पुन: यागकारी, बार-बार यज्ञ करनेवाला।

इञ्च (अं॰ क्ली॰=Inch) अङ्गुल, तसू, गजका छत्तीसवां या फुटका बारहवां हिस्सा।

इञ्चाक (सं॰ पु॰) इञ्चा दीर्घा अस्ति यस्य। जल-वृश्चिक, झींगा मछली।

इञ्चुक, इञ्चाक देखो।

इञ्जन (अं॰ क्ली॰=Engine) १ यन्त्र, आला, कल। २ उपकरण, औज़ार, हथियार। ३ साधन, वसीला।

इञ्जीनियर (अं॰ पु॰-स्त्री॰=Engineer) १ यन्त्र-कार, कलसाज़, गढ़ कपतान। २ यन्त्रकलाभिज्ञ, कल चलानेवाला। ३ वास्तुविद्याविशारद, माहिर-फ़न-मेमारी; सड़क, मकान और पुल बनवानेवाला अफ़सर।

इञ्जीनियरिङ्ग (अं॰ क्ली॰=Engineering) १ यन्त्र-कारका व्यापार, कलसाज़ीका हुनर। २ वास्तुविद्या, इल्ममेमारी।

इञ्जील (यू॰ स्त्री॰) १ सुसमाचार, ख़ुशख़बरी। २ धर्मग्रन्थ, ईसाके दीन और हालकी किताब।

इट् (सं॰ स्त्री॰) इष-क्विप्। इच्छा, मर्ज़ी, तबीयत।

इट (दे॰ पु॰) १ वेत्र वा तृण, बेंत या घासकी चटायी।

इटचर, इट्चर देखो।

इटत (सं॰ पु॰) ऋग्वेदीय सूक्तप्रकाशक भार्गव।

इटली (इटाली=Italy) युरोप महादेशके दक्षिणांशस्थित एक प्रायद्वीप। इटलीसे उत्तर अष्ट्रीया तथा स्विटजर-लेण्ड, पश्चिम फ्रान्स एवं भूमध्यसागर, दक्षिण भूमध्य-सागर और पूर्व योनियान एवं आद्रियातिक समुद्र पड़ता है। इसमें अंशश: द्वीप और मध्यभूमि सम्मिलित है। इटली अक्षा॰ ३६° ३८′ से ४६° ४०′ उ॰ और द्राघि॰ ६° ३०′ से १८° ३०′ पू॰के मध्य अवस्थित है। अधिकसे अधिक दैर्घ्य ७०८ और आयाम ३१० मील लगता है। किन्तु केन्द्रमें यह १५० मील ही विस्तृत है। सागरतटकी रेखा २००० मील दीर्घ समझी जाती है। पश्चिममें गाएता, जिनोआ, नेपल्स, सालेर्नो एवं पोलिकास्त्रो, दक्षिण-पूर्वमें स्कुइल्लेस तथा तारान्तो और आद्रियातिकमें मानफ्रेदोनिया, वेनिस, तथा त्रीस्त प्रधान उपसागर है। मेस्सिना वा बोनिफे-सिओ और फारो खाड़ी विद्यमान है। काम्पानेल्ला, स्पार्तिवेन्तो, दी लिउका, पस्सारो, कोर्सो और कारबो-नारा प्रधान अन्तरीप है। सिसिली तथा लिपारि, इसचिया, एलबा और सारदिनिया प्रधान द्वीप है। भूमितल सर्वत्र एकप्रकार देख नहीं पड़ता। उत्तरमें लोम्बार्डीका समतल क्षेत्र शस्यप्रद है। दक्षिणमें वेनिस, काम्पो-फेलिस और वासिलिकाता समस्थली विस्तृत है। रोम एवं समुद्रके बीच पोण्टाइन झील और त्रीस्त तथा वेनिस-खाड़ीके मध्यकी समभूमिमें दलदल पड़ता है। आल्प्स एवं अपेनाइन पर्वतकी शोभा देखते ही बन आती है। नेपल्सके निकट वेसूवियस आग्नेय-गिरि भड़का करता है। उत्तरमें जलवायु साधारणत:

मनोज्ञ, नियत तथा स्वास्थ्यकर और केन्द्रस्थलमें सविशेष सुखप्रद है। किन्तु दक्षिणकी ओर उष्णता अधिक रहती और प्रायः अफ्रीकाकी उत्तप्त वायु आनेसे बढ़ जाती है। वसन्त और ग्रीष्म ऋतुमें मलेरियाके प्रकोपसे कितने ही स्थानका स्वास्थ्य बिगड़ता है। कारण—आबद्ध कच्छसे जो वायु उठता, वह मारात्मक होता है। पो प्रधान और चिसोन, मैरा, ग्रना, दोरा-रिपारिआ, दोरा बालतिआ, बोरमिदा, तनारो, सेसिआ, तिसिनो, अद्दा, ओग्लिओ, मिनसिओ, ट्रेब्बिआ, परमा एवं पनारो शाखा नदी है। उत्तरपश्चिममें आडिज, ब्रेन्ता, पिआव और तगलिआमेन्तो आल्पससे निकल दक्षिणको बहती है। मध्यस्थलको प्रधान नदी ताइबेर भूमध्यसागरमें जाकर गिरती है। किन्तु अनेक नदीमें जहाज चल नहीं सकता। इस अभावको दूर करनेके लिये तिकिनो और मिलनके बीच २८ मील लम्बी नहर निकली, जिसमें बड़ीसे बड़ी नाव चली है। दूसरी नहर एदिज और पोको मिलाती है। उत्तरमें सब मिलाकर ५१०से अधिक नहरें हैं। गार्दा और लागो माग्गिओर वा लोकारनो ह्रद प्रधान है। लुगानो, कोमो, लेको, इसको, पेरुजिआ, बोलसेना, कास्तेल, गानडोलफो, ब्रेस्सिआनो, सेलानो, वारानो और आवार्नी छोटा ह्रद है। विचित्र दृश्यके लिये इनमें कितने ही ह्रद प्रशंसनीय हैं। मेग्गिओर परमसुन्दर और कोमो अत्यन्त चित्ताकर्षक है।

द्राक्षा, जितवृक्ष, जम्बीर, न्यग्रोध, तरम्बुज, पिस्ता, सुपारी तथा कितने ही दूसरे फल होते और स्वादु लगते हैं। उत्तर प्रान्तमें दाल, चावल, ज्वार और दूसरे शाक उपजते हैं। लोमबार्डीमें रेशमके कीड़े पालनेको लाखों शहतूतके पेड़ लगाये जाते हैं। पो नदीके मैदानमें सहस्र-सहस्र गो चरा करती हैं। इटलीका वना पणीर अनोखा होता और पृथिवीके प्रत्येक प्रान्तमें बिकने जाता है। उत्तर जर्मण-सीमान्तके समीप और वेनिस, जिनोआ और तासकेनीमें मरमरपत्थरकी खानि है। अपेनाइनसे जराइत, सूर्यकान्त, मरकत, शिलास्फटिक, वैदूर्य और अपर रत्न निकलता है। उपरोक्त पर्वतमें चार, घनीभूत आग्नेयोद्गार, गन्धक, बालुका प्रभृति पदार्थ भरा है। ताम्र, लौह और फिटकरीकी भी खानि है। विभिन्न प्रान्तमें उष्ण तथा शीतल जलके प्रस्रवण मिलते हैं।

पर्वत और वनमें शूकर, हरिण, वृक, बिज्जू, बातप्रमी और अज, आरण्यपशु रहते हैं। आबरुज्जो पर्वतमें वनमार्जार और दक्षिणांशमें शिखायुक्त शल्लकी देख पड़ता है। शशक, शृगाल और वन्यपक्षीकी कोई कमी नहीं। दक्षिण सागरतटपर अफ्रीकाके जलचर पक्षी प्रायः वर्तमान रहते हैं। कहीं कहीं समुद्रमें विद्रुम भी विद्यमान है। नदीमें अनेक प्रकारके मत्स्य तैरते हैं।

इटलीमें रेशमका काम बहुत बनता है। सन और ऊनकी चीज भी तैयार होती है। कितना ही मद्य टपकाया जाता है। फ्रान्स, ग्रेटब्रटेन, ग्रीस और स्विटजलेण्डके साथ प्रधानतः व्यवसाय चलता है। फ्रान्सके साथ प्रति वर्ष करोडो रुपयेका लेन-देन होता है। अन्न और रुई बाहरसे मंगाते हैं। रेशम, शराब और तेल दूसरी जगह भेजा जाता है। क्षेत्रफल ११०६२३ वर्गमील है। १९०१ ई०की मनुष्य-गणनाके अनुसार लोकसंख्या ३२९६५५०४ रही। इटलीमें सैकड़े पीछे ९७·१२% लोग रोमन काथलिक हैं। प्रायः २०००० प्रोटेष्टाण्ट और ४०००० यहूदी निकलेंगे। तीन-चौथायी आदमी लिख-पढ़ नहीं सकते। दश-बीस प्राचीन प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय विद्यमान हैं।

प्रायः ५००० मील रेलवे और १५००० मील टेलीग्राफ विस्तृत है। इटलीका प्रान्तीय विभाग यह है,—मोदेना, पार्मा, बेलुनो, पादुआ, रोविगो त्रेविसो, उदाइन, बेनेजिआ, वेरोना, विसेञ्जा, आरेञ्जो, फ्लोरेन्स, ग्रोस्सेतो लेघोरन, लुक्का, पिसा, सीना, अनकोना, अर्कोली, पिकेनो, बोलोना, फेरारो, कोर्ली, माकेराता, पेसारो, उर्बिनो, रावेन्ना, रोम, तेसमो, एक्विला, बासिलिकाता, कालेब्रिया, कितेरिओर, रेग्गिओ, काटनजरो, केपितानाता, मोलिस, नापोली, प्रिन्सिपाती कितेरिओर, प्रिन्सिपाती उलतेरिओर, तेरा दी बरी, तेरा दी लिवोरो, तेरा दी ओत-

रांतो, कालतानीसेत्ता, कातानिश्रा, गिरगेंती, मेस्सिना, पालेर्मो, सिराकुसा, भपानी, जिनोवा, कागलिआरी, सस्सारी अलेस्सन्द्रिश्रा, वेनेवेन्तो, वेर्गामो, कोमो, क्रेमोना, कुनेओ, मानतुआ, मिलन, नोवारा, पेविश्रा, पिश्रासेनजा, पोर्तो मॉउरिजिओ, रेग्गिओ, एमिलिश्रा, सोन्द्रिओ, तूरिन और उम्ब्रिआ। नेपिल्स, मिलन, रोम, पालेर्नो, तूरिन, फ़्लोरेन्स, जिनोआ, वेनिस, बोलोना, मेस्सिना, लेघोरन, और कातानिया, बड़ा नगर है।

इटलीमें श्रमजीवियोंका वेतन अधिक और खाद्य वस्तुवोंका मूल्य न्यून है। व्यापारके केन्द्र लोमबार्डी और पीडमोण्टमें हड़ताल बहुत पड़ती है। किन्तु कितनी ही सेविङ्गबङ्क, बीमा कम्पनी और परस्पर-साहाय्य-समिति खुली हैं। को-आपरेशन वा सम्भूय व्यवसायका भी बड़ा वैभव है। उसमें छोटे-छोटे व्यवसायी और कृषक योग देते हैं। अब लोगोंको अधिक व्याज देनेका कष्ट उठाना नहीं पड़ता।

पाठशाला सरकारके हाथ है। विनामूल्य शिक्षा मिलती है। सरकार और व्यवसायी पर पाठशालाके व्ययका भार पड़ता है। पढ़े-लिखोंकी संख्या दिन दिन बढ़ती जाती है। पुस्तकालय बहुत हैं। हस्तलिखित और बहुमूल्य पुस्तकोंकी कोई कमी नहीं। थोड़े दिन हुये, कोई दो सहस्र पुस्तकालय गिने गये थे। स्थानीय इतिहासका अन्वेषण हुवा करता है। शिल्पसम्बन्धीय पुस्तक खरीदनेको करोड़ो रुपया जमा है।

दरिद्रोंको अन्न-वस्त्र देनेके लिये सार्वजनिक संस्थायें प्रतिष्ठित हैं। रोगियोंके लिये औषधालय, अनाथोंके लिये निवासस्थान और लूलों, लंगडों, बहरों तथा अन्धोंके लिये विद्यालय और विश्रामालय बनाये गये हैं।

इटली राज्य एक राजाके अधीन है। वही लोगोंको पदाधिकार देते और पार्लियामेण्टको एकत्र कर लेते हैं। अदालतका काम फ्रान्सकी तरह चलता है। विचारपतिका वेतन कम है। मुक़दमा जल्द नहीं निबटता।

सेनाविभागमें विभिन्न प्रान्तके लोग एकत्र भरती कर लिये जाते हैं। सिपाही बननेसे कोई इनकार कर नहीं सकता। शान्तिके समय सेनाकी संख्या ढायी या तीन और युद्धके समय साढ़े सात लाख रहती है। स्पेजिया, नेपल्स, वेनिस, तारान्तो और मड्डालेनाद्वीपमें जङ्गी जहाजोंका अड्डा है। इटलीका आय-व्यय बढ़ते जाता है। सोने, चांदी रूपे और कांसेका सिक्का चलता है। कर अधिक लगता है।

इतिहास—अतिशय रमणीय देश होने और जलवायु स्वास्थ्यप्रद रहनेसे पुराकाल उत्तरसे कितने ही लोगोंने इटलीपर आक्रमण किया था। इसीसे नाना प्रकारकी भाषाका प्रचार हुवा। रोमक ऐतिहासिकोंके कथनानुसार ई०से ३९० वर्ष पहले गालोंका दल रोमनगर मारते-काटते पहुंचा था। रोमकोंने इटलीकी जीत अच्छी-अच्छी सड़कें बनवायीं। ४७६ ई०को हेरूदलीयोंके राजा ओडोआकर रोमुलस्‌को सिंहासनच्युत कर सम्राट् बने थे। ४८८ ई०को ग्रीक-सम्राट् जेनोकी आज्ञासे पूर्व गालोंके नरेश थिसोडोरिकने ओडोआकरको हराया और ४९३ ई०को जानसे मार डाला। फिर गालों और यूनानियोंमें ५३९से ५५३ ई० तक खूब युद्ध हुवा था। अन्तको गालीय नृपति टेइगा वेसुविअस्‌के पास यूनानियोंसे हार गये और यूनानी इटलीके अधिपति बने। ५६८ ई०को लोमबार्डोंने गालोंको मार भगाया था। ५९०से ६०४ ई० तक ग्रिगोरीने लोमबार्डोंको मूर्तिपूजक बनाया और ७२६ ई०को द्वितीय ग्रिगोरीने रोममें स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित किया। ७५६ ई०को फ्रान्स-सरदारने इटलीका कितना ही उत्तरांश जीत पोपको सौंप दिया था। ७७४ ई०को चार्लस अपने श्वशुर देसीदेरिअस्‌को सिंहासनसे उतार इटलीके सम्राट् बने। चार्लस वंशके आठ नरेशोंने इटलीमें राज्य किया था। ८८८ ई०को चार्लस दी फ़ाट (मोटे) सिंहासन-च्युत हुये। ९६१ ई०को इटलीय नृपति द्वितीय वेरेङ्गरने अपना राज्य ओटोको दिया था। चार्लस और ओटोके समय अराजकताकी धूम रही। चारो ओर लूट-मार होनेसे किले बहुत बने

थे। ९७३ को द्वितीय और ९८६ ई०को तृतीय ओटो सिंहासन पर बैठे। १००२ ई०को तृतीय ओटोके मरनेपर इवरियाके अधिपति आरडोइन लोम्बार्डीके राजा हुये और १०१५ ई०को मर गये। बेनेरियाके हेनरीने अपने वैरी पेवियाको विनष्टकर रोममें सिंहासन पाया था, किन्तु १०२४ ई०को परलोक गमन किया। बाकी इटलीके राजाओंका शासन-समय नीचे लिखते हैं,—

नाम	ईसवी
हेनरी	१०२४
४र्थ हेनरी	१०५६
७म ग्रेगोरी	१०७३
पोपाधिकार	१०७७
लोथर साक्सन	११२५—११३७
कोनराड स्वावीय	११३८—११५२
फ्रेडरिक	११५४
६ष्ठ हेनरी	११९४
२य फ्रेडरिक	१२२०
कोनराड	१२५०
कोनराडिन	१२५४
पादरी युद्ध और जनप्रकोप	१२५९—१३०३
रबार्ट	१३०९
जोन	१३४३
चार्लस	१३८२
लाडिसलाउस	१३८७
२य जोन	१४१४
आलफोन्सो	१४३५
स्वतन्त्र शासन	१४५३—१४९२
३य चार्लस्	१४९२—१४९५
१२श लुइ	१४९९
१०म लिओ	१५१३
आलेसाण्ड्रो	१५३०
कोसिमो	१५३७
फरडीनण्ड	१५५७
विक्टर आमीडेउस	१७१३
३य एम्मानुएल	१७३०
परमाकोन कारलोसकोरानी	१७३७
२ जोसेफ	१७८०
लिओपोल्ड	१७९०
प्रजातन्त्र	१७९६
७म पायस	१८००
नेपोलियान-शासन	१८०२
मूरट	१८०८
आष्ट्रीय अधिकार	१८१५—१८७०
इटलीय शासनतन्त्र	१८७१ ई०से आरम्भ

ई०के १६वें शताब्द पहले इटली देश भीषण युद्ध और स्व-स्व जातीय उन्नतिके लिये स्पेन, फ्रान्स तथा जर्मनीके विग्रहसे प्रायः जनशून्य हो गया था। १५२५ ई०को पेवियाके युद्धने जर्मन-सम्राट्का प्रभुत्व प्रतिष्ठित किया, किन्तु ई०के १८वें शताब्दारम्भ अष्ट्रीयाका आतङ्क जम गया। १७९७-९८ ई०को नेपोलियानका विजय होनेसे शासन बदला और कयी वर्षतक इस प्रायद्वीपका अधिकांश फ्रान्सके अधीन रहा। १८१४ ई०को सन्धि होनेपर लोम्बार्डो-वेनिशीय प्रान्त अष्ट्रीया और सारदिनिया राज्य तथा गेनोइस प्रदेश सेवायके राजपरिवारने पाया था। लुका नव्वाबी बना और तासकनीकी नव्वाबीका पुनरुद्धार हुवा। बोरबोंनोको नेपल्स, पोपको अपने राज्य और इष्ट वंशको मोडेने तथा अन्य प्रान्तका पुनरधिकार मिला था। १८४८ ई०को मिलानीसों और वेनिशीयोंने अष्ट्रीयाके विरुद्ध व्यर्थ विप्लव बढ़ाया। १८५९ ई०को पीडमोण्ट और अष्ट्रीयामें जो युद्ध हुवा, उसमें पीडमोण्ट हार गया। १८६१ ई०को पीडमोण्ट-नरेशके अधीन इटली एक राज्य बना था। १८६६ ई०को अष्ट्रीयाने नये राज्यके हाथ वेनशिया सौंपा। १८७० ई०को ११ वीं सितम्बरको इटलीय सेनापति कादोरनाने ६०००० फौजके साथ पोपके अधिकृत रोमराज्यमें प्रवेश किया था। पोपने नाममात्र बाधा डाली। अवशेषको रोम इटलीय शासनतन्त्रके अधीन हुवा था। वाटिकान (Vatican) मात्र पोपके अधिकारमें रहा। १८७१ ई०को २२ वीं जुलायीको राजा विक्टर एम्मानुएलने जयोल्लाससे सदलबल पहुंच रोम नगरको इटलीकी राजधानी बनाया था। अर्ध शताब्दकी चेष्टाके बाद इटली फिर स्वाधीन हुवा।

१८७८ ई०को ९वीं जनवरीको विक्टर एम्मानुएल

(२य) कालग्रासमें पड़े और उनके पुत्र हामबर्ट राजसिंहासनपर बैठे। १८८१ ई०को राजा हामबर्ट अष्ट्रीया-सम्राट्‌के आमन्त्रणसे सस्त्रीक वियाना गये थे। २७वीं से ३१वीं अक्तोबरतक अष्ट्रीया-राजधानीमें वह ठहरे। उससे जर्मनी और अष्ट्रीयाके साथ इटलीका सद्भाव स्थायी हुआ था। १८८२ ई०की २०वीं मईको तीनों राज्यके मध्य (Triple Alliance) सन्धिपत्र लिखा गया। इस सन्धिपत्रके अनुसार रूस, फ्रान्स या कोई दूसरा राज्य जर्मनी, अष्ट्रीया वा इटलीसे लड़नेपर उक्त तीनों राज्य उसके विरुद्ध अस्त्र धारण करनेपर सम्मत हुये थे। इस सन्धिसे इटलीको राज्यकी उन्नति करने और सेना तथा नौ विभागमें बल बढ़ानेका बहुत सुभीता पड़ा है।

१८९१ ई०के जून मास जर्मन और इटलीय मन्त्रीकी चेष्टासे वाणिज्यवृद्धिके अभिप्राय फिर उक्त सन्धिपत्र गृहीत हुआ। १९०० ई०को २९वीं जुलाई-को ब्रेस्की नामक किसी राजद्रोहीने इटलीराज हाम-बर्टको गोलीसे मार डाला। पीछे उनके एकमात्र पुत्र ३य विक्टर एम्मानुएल इटलीके राजा हुये। यह अति शान्तिप्रिय नृपति हैं। इन्हींके समय १९०८ ई०की २८वीं दिसम्बरको सवेरे पांच बजे अतिहृदय-विदारक भूमिकम्पसे समग्र दक्षिण कलब्रिया और सिसिलीका पूर्वांश विध्वस्त हो गया था। उससे बहुतसे जनपद टूटे और अकेले मसीना नगरमें डेढ़ लाख मनुष्य मरे।

१९०३ ई०के अक्तोबर मास राजा एम्मानुएल सपत्नीक फ्रान्स-राजधानी पारिस गये थे। उससे दोनो राज्यके मध्य यथेष्ट, सद्भाव स्थापित हुआ। १९०८ ई०के अक्तोबर मास अष्ट्रीय-सम्राट् फ्रान्सिस् जोसेफने बोसनियाको अपने राज्यमें मिला लिया था। इस संवादसे राजा एम्मानुएल और अपरा पर नृपति विचलित हुये। उसी समयसे अष्ट्रीयाके साथ इटलीका मनोमालिन्य बढ़ा। जर्मनी एवं अष्ट्रीयाके साथ रूस, फ्रान्स और इङ्गलैण्डके लड़ते भी कुछ दिन इटली-नरेश निरपेक्ष रहे। किन्तु अपनी स्वार्थहानि भयानक रूपसे होते देख १९१५ ई० इटलीकी फौज आगे बढ़ी और अष्ट्रीयासे लड़ बैठी। इटली बड़े बलविक्रमसे आजकल अष्ट्रीयाके साथ युद्ध कर रहा है।

राम, पोप, नेपोलियान्, गारिबल्डी, माजिनि, अष्ट्रीया प्रभृति शब्दमें और विवरण देखो।

इटसून (वै० क्ली०) इट-क-श्वि-क्त पृषोदरादित्वात् शस्य सः। शाखामय कट, बेंतकी चटाई। "वैतसे इटसूनेउत्तरतोऽश्वस्यावद्यन्ति।" (शतपथब्राह्मण १३।२।२।१९।) 'इटसून तस्मिन्ने व शाखामये कटे।' (हरिस्वामी)

इटालिक (अं० पु० = Italic) वङ्काक्षर, टेढ़े छापेके हर्फ।

इटालियन (अं० पु०) १ इटलीवासी। २ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। प्रथमतः इटलीमें बननेसे ही इस वस्त्रको इटालियन कहते हैं। वृक्षवल्कसे इटालियन बनता और खूब चमकदार निकलता है। रङ्ग काला होता है।

इट्चर (सं० पु०) इष भावे क्विप्-चर-अच, इषा कामेन चरतीति। षण्ड, स्वतन्त्र घूमनेवाला सांड़।

इठलाना (हिं० क्रि०) १ साहङ्कार गमन करना, गु.रूरके साथ चलना। २ अव्यक्त भाषण करना, तुत-लाना, साफ्-साफ् न बोलना। ३ वक्रोत्तर प्रदान करना, टेढ़े जबाब देना। ४ तिर्यक् सम्भाषण करना, गुस्ताखीके साथ बोलना, उलटी बात बताना। ५ छद्म देखाना, मटियाना, नावाफिक् होनेका बहाना करना। ६ विरोध करना, झगड़ा लगाना।

इठलायी (हिं० स्त्री०) साहङ्कार गमन, ठसककी चाल, इठलाहट।

इठलाहट, इठलायी देखो।

इठायी (हिं० स्त्री०) अभिलाष, खाहिश, चाह, प्यार।

इठिमिका (सं० स्त्री०) काठक शाखाभेद, यजुर्वेद-की एक शाखा।

इड़ (सं० स्त्री०) इल-क्विप् वा लस्य डः। १ भूमि, ज़मीन्। २ अन्न, अनाज। ३ वर्षाकाल, बरसात। ४ तृतीय प्रयाज। ५ यज्ञाङ्ग। ६ षष्ठ प्रयाज। (वै० त्रि०) ७ स्तुतियोग्य, तारीफके का.बिल।

"परिधिरस्यग्निरिड़इडितम्।" (वाजसनेयसं० २।३)
'इड्यते स्तूयते इतीड़: स्तुतियोग्य:।' (महीधर)

इडरहर, इंडहर देखो।

इड़स्पति (सं० पु०) विष्णु।

इड़हर, इंड़हर देखो।

इड़ा (सं० स्त्री०) इल-क-टाप्, डस्य लत्वं वा। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ धेनु, गाय। ३ त्वरा, शिताबी, जल्दी। ४ सरस्वती। ५ हविः, अन्न। ६ देवी। ७ दुर्गा। ८ स्तुति, तारीफ्। ९ यज्ञपात्रविशेष। १० सन्तोष, तसल्ली। ११ भोजन, खु,राक। १२ आहुति विशेष। यह आहुति प्रयाज अनुयाजके बीच होती है। इड़ापर चार प्रकारका दूध तैयारकर जलमय पात्रमें डालते और फिर होता और यजमान मिलकर पी जाते हैं। १३ अप्रिय देवता विशेष। यह असोमपा हैं। १४ आकाशदेवता। १५ मनुकी कन्या, बुधपत्नी। शतपथब्राह्मण-(१।८।१।१—१३)में मनुकन्या इड़ाके उत्पत्ति-सम्बन्धपर इस प्रकार गल्प कहा है,—मनुने प्रजासृष्टि करनेके लिये पाकयज्ञका अनुष्ठान किया था। घृत,नवनीत और आमिक्षा जलमें छोड़नेसे संवत्सरके मध्य एक कन्या उत्पन्न हुयी। बालिका सुस्निग्ध जलसे उठी थी। मित्रावरुण निकट आये। उन्होंने प्रश्न किया,—तुम कौन हो। जवाब मिला—मनुकी कन्या। उन्होंने फिर कहा,—तुम हमारी हो। इड़ाने उत्तर दिया—नहीं, हम अपने जन्म देनेवालेकी ही हैं। किन्तु मित्रावरुणने पुनः इनकी ओर प्यारसे देखा। यह कुछ उत्तर न दे मनुके समीप जा पहुंचीं। मनुने भी पूछा,—तुम कौन हो। इड़ाने कहा,—हम आपकी कन्या हुयी, आपके घृत, नवनीत तथा आमिक्षा प्रदानसे निकली हैं। हमें यज्ञमें अर्पण कीजिये। आपकी मनस्कामना पूर्ण होगी। मनुने इड़ाके साथ कठोर यज्ञका अनुष्ठान किया। अन्तको मनु प्रजापति बन गये। इला देखो। १६ वामपार्श्वस्थ रक्तवाही नाड़ी। मेरुदण्डके वहिर्भाग वाम तथा दक्षिण पार्श्वपर चन्द्रसूर्यात्मक इड़ा पिङ्गला नामक दो नाड़ी होती, जो चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनोंका गुण रखती हैं। साधकके पक्षमें इड़ा नाड़ी गङ्गा और पिङ्गला यमुनाका स्वरूप है। इन दोनो नाड़ीके मध्य सुषुम्णा सरस्वती-जैसी रहती है। इड़ा पिङ्गला और सुषुम्णा तीनो नाड़ीके मिलनको त्रिवेणी कहते हैं। योगी इस त्रिवेणीके सङ्गमपर स्नानकर सर्वपापसे छूट जाते हैं। प्राणायाममें पूरक करते समय इड़ा नाड़ीसे ही वायुको ऊपर चढ़ाते हैं। जब इड़ा नाड़ीसे स्वर चलता तब प्रत्येक शुभकार्य करनेमें साफल्य मिलता है। सुषुम्णा ब्रह्मनाड़ी है। उसीमें जगत् प्रतिष्ठित है। इड़ा, इरा और इला तीनो रूप सिद्ध हो सकते हैं।

इड़ाचिका (सं० स्त्री०) इड़ेव आचति सूक्ष्मं मध्यभागम्, इड़ा-अच्-ण्वुल्-टाप्, अत इत्। १ वरटा, वर। २ गन्धोली, ककड़ी।

इड़ाजात (सं० पु०) भूमिज गुग्गुल, जमीन्से पैदा गूगुर।

इड़ावत् (वै० त्रि०) १ इड़ा-मतुप्। इड़ानाड़ीविशिष्ट, जो इड़ाको रखता हो। २ आनन्दप्रद, फ़रहत बख़्श। ३ आप्यायित, तरोताज़ा बना हुआ। ४ हविःविशिष्ट।

इड़िक, इड़िक्क देखो।

इड़िका (सं० स्त्री०) इड़ा स्वार्थे क, इत्वञ्चाकारस्य। पृथिवी, ज़मीन्।

इड़िक्क (सं० पु०) इड़िक् इति कायति शब्दायते, इड़िक्-कै-ड। १ वन्य छागल, जङ्गली बकरा। २ वानर, बन्दर।

इड़ीय (सं० त्रि०) इड़ाया अन्नस्य अदूरदेशः, इड़ा-छ। उत्करादिभ्यश्छ। पा ४।२।९०। अन्न-सम्बन्धीय, अनाजसे भरा हुआ।

इड्देवता (सं० स्त्री०) उदकदानकी देवी।

इड्वर (सं० पु०) इत्कृति वृषमिति, इष-क्विप्-इट् वृषस्यन्तीतया व्रियते, इट् वृ कर्मणि अच्। वृष, छोड़देने लायक सांड़।

इण्ट्रेन्स (अं० स्त्री० = Entrance) १ प्रवेश, दख़्ल, पैठ। २ प्रवेशाज्ञा, पैठका हुक्म। ३ द्वार, दरवाज़ा, पौली। ४ आरम्भ, शुरू। ५ अंगरेजी पाठशालाकी एक कक्षा, अंगरेज़ी मदरसेका एक दरजा।

इण्डरी (सं० स्त्री०) पक्वान्नविशेष, किसी क़िस्मके पके अनाजकी बनी चीज़।

इण्डिया (अं॰ स्त्री॰ = India) भारतवर्ष, हिन्दुस्थान।

इण्डोन्य (सं॰ पु॰) छुरी, चाकू।

इण्डु (वै॰ क्ली॰) मुञ्जापत्र, मूंजकी चद्दर। कड़ा हो चूल्हेसे उतारते समय यह हाथमें लपेट लेनेके काम आता है।

इण्डेरिका (सं॰ स्त्री॰) वटिका, बाटी, भौंरिया।

इत् (सं॰ त्रि॰) एतीति, इ-क्विप्। देखते-देखते चला जानेवाला, जो बातकी बातमें उड़ जाता हो। व्याकरणका प्रयोग साधनेके लिये जो अक्षर आते हो चल जाता, वह इत् कहाता है।

इत (सं॰ त्रि॰) इ-क्त। १ गत, गुज़रा हुआ, गया-बीता। (क्ली॰) भावे क्यप्। २ गमन, चाल। ३ ज्ञान, समझ। ४ प्राप्ति, याफ़्त। (हिं॰ क्रि॰ वि॰) ५ इस ओर, इधर, यहां।

इतः, इतस् देखो।

इतःपर (सं॰ अव्य॰) इसके पीछे, इसके बाद, इसपर।

इत-उत (हिं॰ क्रि॰-वि॰) १ इधर-उधर, जहां-तहां। (पु॰) २ छल फ़रेब।

इत ऊति (वै॰ त्रि॰) इस ओरसे लम्बायमान, जो इधरसे फैला या पहुंचा हो। २ भविष्यत्, वर्तमान समयसे अधिक स्थायी, आयिन्दा, जो ज़माना-हालसे ज़्यादा ठहरता हो।

इतना (हिं॰ वि॰) एतावत्, इस क़दर, इत्ता, इतेक।

इतनो, इतना देखो।

इतम (सं॰ त्रि॰) अन्य, दूसरा, और।

इतमाम (अ॰ पु॰) पूर्णता, कमाल, पूरापन।

इतमीनान् (अ॰ पु॰) १ सन्तोष, आराम, ढारस। २ बन्धक, ज़मानत।

इतमीनान् करना (हिं॰ क्रि॰) विश्वास मानना, खुश रहना।

इतमीनान् खातिर होना (हिं॰ क्रि॰) सन्तुष्ट रहना, यक़ीन् रखना।

इतमीनान् न करना (हिं॰ क्रि॰) सन्देह रखना, यक़ीन् न लाना।

इतमीनान् होना (हिं क्रि॰) सन्तुष्ट रहना, खुशी मनाना।

इतमीनानी (अ॰ वि॰) विश्वस्त, एतबारी, जिसमें यक़ीन् रहे।

इतर (सं॰ त्रि॰) इना कामेन तरति तीर्यते, इतं प्राप्तं रातीति; इत-रा-क, इ-तृ-अप् वा अच्। १ नीच, कमीना। २ अन्य, दूसरा। ३ अवशेष, बाक़ी।

इतरजन (सं॰ पु॰) इतरश्चासौ जनश्चेति, कर्मधा॰। जन साधारण, आम लोग।

"कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिता श्रुतम्।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति मिष्टान्नमितरे जनाः॥" (शुक्रनीति)

इतर जाना (हिं॰ क्रि॰) दस्युके विरुद्ध प्रथम हो समाचार पाना, डाकुवोंको खबर पहले ही लगना।

इतरतः (सं॰ अव्य॰) विभिन्न रीतिसे, दूसरे तौरपर।

इतरथा (सं॰ अव्य॰) इतर-थाल्। प्रकारवचने थाल्। पा ५।३।२३। विपरीत, बरक्स, ज़िदसे।

इतरविशेष (सं॰ पु॰) इतरस्मात् विशेषः, ५-तत्। अन्य प्रभेद, दूसरा फ़र्क़।

इतरा (सं॰ स्त्री॰) ऐतरेयकी माता। ऐतरेय देखो।

इतराजी (हिं॰ स्त्री॰) विरोध, एतराज़, अनबन।

इतराना (हिं॰ क्रि॰) अभिमान देखाना, ठसक करना, अपनेको बड़ा समझना।

इतराहट (हिं॰ स्त्री॰) अभिमान, गुरूर, ठसक।

इतरीफल (हिं॰ पु॰) अवलेह विशेष। इसमें आंवला, धनिया और शहद डालते हैं।

इतरेतर (सं॰ त्रि॰) इतरं इतरं निपातनात् द्वन्द्वम्। अन्योन्य, मुतफ़रिक़, अलग, दो-चार।

इतरेतरकाम्या (सं॰ स्त्री॰) १ अन्योन्य वासना, मुतफ़रिक् खयाल।

इतरेतरयोग (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ परस्पर सम्बन्ध, आपसका ताल्लुक। २ द्वन्द्वनामक समास, इसमें परस्पर पदार्थका योग रहता है।

इतरेतराभाव (सं॰ पु॰) अन्योन्याभाव, एकका दूसरेसे न मिलना। घटका पट और पटका घट न होना इतरेतराभाव है। अन्योन्याभाव देखो।

इतरेतराश्रय (सं॰ पु॰) इतरेतरं आश्रयति, आ-श्रि-अच्। अन्योन्याश्रयरूप न्यायका दोषविशेष। अन्योन्याश्रय देखो।

इतरेद्युस् (सं० अव्य०) इतर-एद्युस्। सद्यःपरुदित्यादिना। पा ५।३।२२। अन्य दिन वा समय, दूसरे रोज या वक्त।

इतरौंहा (हिं० वि०) सगर्व, मग़रूर, इतरानेवाला।

इतलाक (अ० पु०) प्रार्थना, अनुसन्धान, अर्ज़, हवाला।

इतलाक रखना (हिं० क्रि०) लगना, मिलना।

इतली, इटली देखो।

इतवरी (हिं०) इतवरी देखो।

इतवार (हिं० पु०) आदित्यवार, एकशम्बा, एतवार।

इतश्चेतश्च (सं० अव्य०) इतश्च इत्थम्। इधर-उधर, इस तर्फ़ उस तर्फ़।

"सन्तोषामृततृप्तानां यत् सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्॥" (हितोपदेश)

इतस् (सं० अव्य०) इदम् तसिल्। १ इस स्थानसे यहां, इस जगह। २ इहलोकसे, इस दुनियासे।

इतस्ततः (सं० अव्य०) इदम्-तद्-त्रसिल्। नाना स्थानपर, इधर-उधर, यहां वहां।

इताति (हिं०) इतायत देखो।

इताब (अ० पु०) १ क्रोध, गुस्सा। २ निन्दा, मलामत, भिड़की।

इताब-खिताब (अ० पु०) क्रोधयुक्त शब्द, गुस्सेकी बात।

इतायत (अ० स्त्री०) अधीनता, मातहती।

इतायत करना (हिं० क्रि०) १ आज्ञा मानना, हुक्म बजा लाना। २ आदर देना, भुकना।

इताली, इटली देखो।

इति (सं० अव्य०) इ-क्तिन्। १ अतएव, इससे। २ इसी हेतु, इसी सबबसे। ३ प्रकाश्य रूपसे, खुले तौर पर। ४ निदर्शनपूर्वक, देख-सुनकर। ५ प्रकार, तरह। ६ अनुकर्षसे, पहली बातके मुवाफ़िक़। ७ समाप्तिमें, पूरा होनेपर। ८ स्वरूप, जैसे। ९ प्रकरणपूर्वक, हिकायतसे। १० सान्निध्यमें, नज़दीक। ११ नियमपूर्वक, क़ायदेसे। १२ मतमें, रायसे। १३ प्रत्यक्ष, सामने। १४ अवधारणपूर्वक, सोच-समझके। १५ व्यवस्थासे, तजवीज़ करके। १६ परामर्श द्वारा, नसीहतसे। १७ मानपूर्वक, इज़्ज़तसे। १८ इसी प्रकार, इस तरह। १९ प्रकर्षमें, ज़ोरसे। २० उपक्रमपूर्वक, सिलसिलेमें। प्रकृत रूपसे इति शब्द कहे या विचारे हुये विषयको बताता और पूर्वगामी शब्दपर प्रभाव डालता है। ब्राह्मणमें यह श्रोताको समझी हुयी रीतिका स्मरण दिलाता है। उद्धृत वाक्यमें इससे प्रमाणित होता, पूर्व विषय किसी अन्य लेखक या ग्रन्थकारका कहा है। कभी-कभी इति एक ही विषयके विभिन्न शब्द जोड़ता है। किसी ग्रन्थकारके नाममें लगनेसे यह क्रियाविशेषण हो जाता है।

(क्ली०) भावे क्तिन्। २१ गमन, चाल। २२ ज्ञान, समझ। २३ मुनिविशेष।

इतिक (सं० त्रि०) इतं गतिरस्त्यस्येति, ठन्। १ गमनविशिष्ट, चलनेवाला। (पु०) २ जातिविशेष।

इतिकथ (सं० त्रि०) इति इत्थं कथा यस्य, बहुव्री०। १ अश्रद्धेय, न मानने लायक़। २ नष्ट, बरबाद। अर्थशून्य वाक्यका वक्ता इतिकथ कहाता है।

इतिकथा (सं० स्त्री०) इति इत्थं कथा। अर्थशून्य कथा, बेहूदी बात।

इतिकरण (सं० क्ली०) इति शब्द।

इतिकर्तव्य (सं० त्रि०) इति इत्थं कर्तव्यम्, सुप्सुपा समा०। १ नियमानुसार करने योग्य, क़ायदेके मुवाफ़िक़ किया जानेवाला। (क्ली०) २ धर्म, फ़र्ज़।

इतिकर्तव्यता (सं० स्त्री०) इतिकर्तव्यस्य भावः, इति-कर्तव्य-तल्-टाप्। धर्म, फ़र्ज़, वाजिबात्।

इतिकर्तव्यतामूढ़ (सं० त्रि०) आकुल, गूंगा बना हुआ, जिसे अपना काम बिलकुल समझ न पड़े।

इतिकार्यता, इतिकर्तव्यता देखो।

इतिकृत्यता, इतिकर्तव्यता देखो।

इतिथ (वै० त्रि०) ऐसा-वैसा, एक न एक।

इतिमात्र (सं० त्रि) इति स्वार्थे मात्रच्। केवल इतना ही, इससे कम न ज़्यादा।

इतिवत् (सं० अव्य०) एक ही प्रकार, एक ही तरह।

इतिवृत्त (सं० क्ली०) इत्थं वृत्तम्, सुप्सुपा समा०। १ पुराणशास्त्र। २ ऐसा ही चरित्र, इसी क़िस्मका हाल। ३ इतिहास, तवारीख़। इतिहास देखो।

इतिश (सं० पु०) एक ऋषि। इनके गोत्रापत्यको ऐतिशायन कहते हैं।

इतिह (सं० अव्य०) एवं ह किल, द्वन्द्व-समा०। पुराणानुसार, निःसन्देह इस प्रकार, हकीकतमें इसी तरह।

इतिहास (सं० पु०) इतिह पुरावृत्तं आस्ते अस्मिन्; इतिह-आस-घञ्, ६-तत्। पुरावृत्त, प्राचीन आख्यान, तवारीख। पुरावृत्तकथा ही इतिहास है। इसे अष्टादश शास्त्रके अन्तर्गत मानते हैं। "ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि।" (यजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण १४।५।४।१०)

उपरोक्त ब्राह्मण और अपरापर प्राचीन ग्रन्थमें इतिहास और पुराण वाक्यका उल्लेख देख अति प्राचीन कालसे इतिहास और पुराण नामके स्वतन्त्र ग्रन्थकी विद्यमानता समझ पड़ती है।

अथर्व-संहिता (१५।६।४), और छान्दोग्योपनिषद् (७।१।१) मध्य इतिहासका उल्लेख पाते हैं। छान्दोग्योपनिषत् तथा कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें इतिहास पञ्चमवेद कहकर निर्दिष्ट हुआ है। महाभारतकार कृष्णद्वैपायनने कहा है—

"धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते॥"

जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका उपदेश एवं पुरावृत्त कथा रहता, वह इतिहास कहाता है।

विष्णुपुराणकी टीकामें (३।४।१०) श्रीधरस्वामीने भी ऐसा और एक प्राचीन वचन उद्धृत किये हैं—

"आर्षादि बहुव्याख्यानं देवर्षिचरिताश्रयम्।
इतिहासमिति प्रोक्तं भविष्याद्भुतधर्मयुक्॥"

ऋषिप्रोक्त बहु व्याख्यान, देवर्षिचरित तथा अद्भुत धर्मकथादि जिसमें हो वह इतिहास है।

महात्मा चाणक्यने निर्देश किया है—"पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं धर्मशास्त्रं अर्थशास्त्रं चेतिहासः।" (कौटिलीय अर्थशास्त्र) पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र यह सब ही इतिहास हैं।

इतिहासमें चतुर्वर्ग फल-लाभकी कथा है; अतएव इतिहास पञ्चमवेद श्रुतिमें कीर्तित हुआ और इसी लिये स्मरणातीत कालसे भारतमें इतिहासका समादर भी होता आया। गृह्यसूत्र तथा मन्वादि धर्मशास्त्रमें श्राद्धादि पितृकार्यमें इतिहास और पुराण सुनानेकी जो व्यवस्था लिखी, उसका कारण भी यही है। यथा—

"आयुष्मतां कथाः कीर्तयन्तो माङ्गल्यानीतिहासपुराणानीत्याख्यापयमानाः।" (आश्वलायनगृह्यसूत्र ४।५)

"स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्रे धर्मशास्त्राणि चैव हि।
आख्यानानीतिहासांश्च पुराणान्यखिलानि च॥" (मनु ३।२३२)

महाभारतमें लिखा है—

"आरण्यकञ्च वेदेभ्यो ओषधिभ्योऽमृतं यथा।
ह्रदानामुदधिः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठो चतुष्पदां॥
यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते।
यश्चैनं श्रावयेच्छ्राद्धे ब्राह्मणान् पादमन्ततः॥
अक्षय्यमन्नपानं वै पितॄंस्तस्योपतिष्ठते।
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्॥" (आदिपर्व, १अ०)

अर्थात् वेदोंमें जैसे आरण्यक, ओषधियोंमें अमृत, जलाशयोंमें समुद्र और चतुष्पदोंमें गो श्रेष्ठ है, वैसा ही इतिहासोंमें भारत श्रेष्ठ है। जो व्यक्ति श्राद्धके समय ब्राह्मणसे इस भारतका अन्ततः एक चरण भी सुन पाता उसका दिया अन्नपान पितृलोकमें अक्षय होता है। इतिहास और पुराणोंके द्वारा वेदका ही अर्थ प्रकाशित होता है।

उद्धृत महाभारतीय श्लोकसे जान पड़ता, कि महाभारत हमारा इतिहास है, इसके पूर्व भी बहु इतिहास रहा उनमें भारत श्रेष्ठ इतिहास कह परिचित हुआ था। आश्वलायन-गृह्यसूत्रके (३।४।४) "भारत-महाभारत-धर्माचार्याः" इत्यादि वचनसे मालूम होता है, उस समय 'भारत' और 'महाभारत' नाममें विभिन्न इतिहास प्रचलित था। हम प्रचलित महाभारतसे भी जान सकते, कि पहले लक्ष श्लोकी महाभारत प्रचलित नहीं रहा, महाभारतमें ही है—

"चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहितां।
उपाख्यानैर्विना तावद्भारतं प्रोच्यते बुधैः॥"

व्यासदेवने प्रथम २४००० श्लोकमयी भारत-संहिता बनायी थी। वास्तविक वर्तमान प्रचलित संस्करण-समूहमें उस आदि संहिताकी अनेक कथा रहते भी

उपाख्यान प्रभृतिके साथ बहुत अवान्तर विषय प्रविष्ट हो जानेसे आज महाभारतको कितने ही लोग इतिहास माननेसे हिचकते हैं। किन्तु जिन युरोपीय ऐतिहासिकोंके आदर्शपर हम वर्तमान कालके इतिहासका उपादान मानते, वह जानते हैं,—

"* * * * It is evident that Freeman's definition of history as 'past politics' is miserably inadequate. Political events are mere externals. History enters into every phase of activity, and the economic forces which urge society along are as much its subject as the political result. In short the historical spirit of the age has invaded every field." *Encyclopædia Britannica*, 11th Ed. (1911), Vol. XIII, p. 527.

'फ्रीमैनकी यह परिभाषा अतिशय अपर्याप्त आती, कि इतिहासकी गणना 'गत राजनीति'में जाती है। राजनीतिक काण्ड केवल बहिरङ्ग होते हैं। इतिहास व्यापारके प्रत्येक अंशको छूता है। निर्वाहसम्बन्धी बल राजनीतिक फलकी भांति इतिहासका विषय बन जाता है। संक्षेपमें कहनेसे सामयिक इतिहासकी शक्तिने प्रत्येक क्षेत्रपर अपना प्रभाव डाला है।'

सुतरां पाश्चात्य वर्तमान ऐतिहासिकोंके मतसे महाभारतको भी इतिहास माननेमें कोई आपत्ति न पड़ेगी। हमारे आदि इतिहासके सार महाभारतमें ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिसे स्थावर-जङ्गम सकल प्रकार सृष्टितत्त्व, देव ऋषि पितृ प्रभृति जीवका संक्षिप्त परिचय, भारतके प्राचीन राजवंशका विवरण, दुर्ग नगर तीर्थक्षेत्र प्रभृति समुदाय जीवस्थान, धर्मरहस्य, कामरहस्य, वेदचतुष्टय, योगशास्त्र, विज्ञानशास्त्र, धर्मार्थकामविषयक नाना शास्त्र और लोकयात्राविषयक आयुर्वेद धनुर्वेद आलोचित है। कहनेसे क्या! वर्तमान पाश्चात्य इतिहासविद् इतिहासका जैसा व्यापकत्व और विषयनिर्धारण ठहराते, महाभारतरूप भारतके प्राचीन इतिहासमें, वैसा ही आयोजन पाते भी हैं।

जो विषय ध्रुव सत्य रहता और प्रत्यक्ष वा परोक्ष प्रमाण द्वारा प्रतिष्ठित होता, वही इतिहास बजता है। इसीसे भगवान् शङ्कराचार्यने इतिहासका प्रामाण्य मान बता दिया है,—"इतिहासपुराणमपि पौरुषेयत्वात् प्रमाणान्तरमूलतामाकाङ्क्षते।" (शारीरकभाष्य १।३।३२)

अर्थात् इतिहास पुराणको भी पौरुषेय समझकर प्रमाणान्तरमूलता वा वेदके बाद गौणप्रमाण मानना पड़ेगा कैसे स्वीकार करेंगे। उत्तरमें शङ्कराचार्यने कहा है,—

"इतिहासपुराणमपि व्याख्यातेन मार्गेण सम्भवन् मन्त्रार्थवादमूलत्वात् प्रभवति देवताविग्रहादि प्रपञ्चयितुम्। प्रत्यक्षमूलमपि सम्भवति। भवति हि अस्माकमप्रत्यक्षमपि चिरन्तनानां प्रत्यक्षम्। तथा च व्यासादयो देवताभिः प्रत्यक्षं व्यवहरन्तीति स्मर्यते।"

अर्थात् इतिहास और पुराण जिस भावसे व्याख्यात हुआ, मन्त्र और अर्थवाद होनेसे वह देवता विग्रहादिके प्रपञ्चनिर्णयमें समर्थ है। इसका प्रत्यक्षमूलक होना भी सम्भवपर है। हमारे पक्षमें अप्रत्यक्ष रहते भी प्राचीनोंके लिये यह प्रत्यक्ष हुआ। इसीसे स्मृतिमें कहा, कि व्यासप्रभृतिने देवताओंके साथ प्रत्यक्षरूपसे व्यवहार किया था।

भारतका प्राचीन ऋषिगण समझते, जो प्रत्यक्षमूलक वा समसामयिक लोगोंके रचित रहता और जिसको मौलिकताके सम्बन्धपर कुछ सन्देह उठने न पाता वही प्रकृत इतिहास कहाता था।

हमारे महाभारतीय इतिहासको मौलिकता और प्रामाणिकता आजकलकी अवस्था देख विचारनेसे नहीं बनता। उसे भगवान् शङ्कराचार्य ही अच्छी तरह देखा गये हैं। समसामयिकी घटना समसामयिक मनीषी द्वारा लिपिबद्ध हुयी थी। पुराकालकी सकल विक्षिप्त कथाको जिसने परवर्ती कालमें एकत्र सङ्कलन किया, उसीने व्यासदेव वा संग्रहकार नाम कमा लिया। हमारे प्राचीन इतिहासका अधिकांश विलुप्त वा विकृत पड़ जाना अत्यन्त दुःखका विषय है। अतिप्राचीन भारतका विशुद्ध इतिहास ढूंढ निकालना एकप्रकार दुःसाध्य व्यापार हो गया है। इसीसे वर्तमान ऐतिहासिक 'महाभारत'को इतिहास नहीं समझते। तथापि कितनी ही मिलावट रहते और प्रक्षिप्त उपकरण बढ़ते भी भारतवर्षीय पण्डित समाजमें महाभारत इतिहास ही कहाता है।

महाभारतीय युगके बाद भी लगातार इतिहास

अपने-अपने राजवंशके चरिताख्यायक वा सूतमागधादि द्वारा लिपिबद्ध होता था। किन्तु राष्ट्रविप्लवसे वह समुदाय बिगड़ गया। हमारे पुराणोंमें राजवंशके प्रसङ्गपर राजगणका नाम और राज्यशासनकाल मात्र मिलता है। विस्तृत इतिहास विलुप्त होते भी हमारे श्राद्धादि कार्यमें इतिहासपुराण अवश्यपाठ करनेसे अवधारित रहनेपर एककाल वह मिट नहीं सका। इसी कारण पुराणसे प्रकृत ऐतिहासिक युगके क्षीण कङ्कालका सन्धान लगता है।

पाश्चात्य पुराविद् बताते, कि मकदुनिया-वीर अलेक्सन्दरके समयसे ही प्रकृत प्रस्तावपर वैज्ञानिक प्रणालीमें भारतीय इतिहास-रचनाकी सूचना पाते हैं। तदनुसार अनेक ही मौर्याधिपत्यकालसे हमारे भारतके प्रकृत ऐतिहासिक युगका आरम्भ समझते हैं। समसामयिक लिपिसे इसका प्रमाण यथेष्ट मिला, कि उस समय वास्तविक पाश्चात्य और प्राच्य जगत्‌में धारावाहिक इतिहास रचनाका समादर बढ़ा था। बहुतसे लोग सोचते, कि भारतमें यवन वा ग्रीक-प्रभावके फल और आदर्शसे ही नाना शिलालेखका उत्कीर्ण होना देखते हैं। प्रवादानुसार उपाख्यान वा कल्पनाके हाथसे निष्कृति ले उसी समय प्रकृत घटना खोदी जाने लगी और साथ ही साथ भारतमें विज्ञान-सम्मत इतिहासकी भित्ति पड़ी। किन्तु पिपरावेमें एक खोदित शिलालेख निकला है। उसमें शाक्यबुद्धके भस्माधारपर निर्वाणके बाद जो लिखा गया, उससे भारतमें पारसिक वा यवन-प्रभाव-विस्तारके बहुत पहले समसामयिक घटना पत्थरपर खुदनेको पद्धतिके प्रचारका निदर्शन स्पष्ट हाथ लगा है। अलेक्सन्दरसे बहुत पहले नाना भावमें विभिन्न देशका इतिहास लिखा जाता था। उक्त विषय महापुराण-वर्णित राजवंशके विवरणसे ही प्रमाणित होता। अलेक्सन्दरके समय जिन सकल महात्माओंने भारत आकर यहांकी कथा लिखी उनकी विवरणीसे भी कितनी ही बात चली है। अलेक्सन्दरके तिरोधान बाद ही मेगस्थेनिस दौत्यकार्यपर पाटलिपुत्रकी राजसभामें उपस्थित रहे। उन्हीं मेगस्थेनिस पर निर्भर कर प्राचीन पुराविद् आरियानने लिखा है,—"डाइओनिसससे चन्द्रगुप्त पर्यन्त भारतीय राजन्यवर्गने ६०४२ वर्ष राजत्व रखा था। राजाओंकी संख्या एक-सौ तिरपन रही। फिर भी उक्त समयके मध्य तीन बार साधारणतन्त्र चला।"* इस विवरणीसे अच्छीतरह समझते—जिस समयसे विज्ञानसम्मत ऐतिहासिक युगका सूत्रपात मानते, उससे छः हजार वर्ष पूर्वकाल होते भी धारावाहिक रूपमें भारतका इतिहास लिखा देखते हैं। आजकल उसका अधिकांश विलुप्त है। महाभारत और पुराणमें क्षीण स्मृतिमात्र मिलता है। इसी कारण, महाभारत और पुराण हमारे भारतके प्राचीन इतिहासका अङ्ग समझा जाता है। परवर्ती काल नाना स्थानसे विभिन्न सम्प्रदायके जो शत-शत शिलालेख, ताम्रपत्र वा सामयिक इतिवृत्त निकला, उससे भारत-पुराणका प्रभाव सुस्पष्ट झलका है।

प्रारम्भमें ही कहा इतिहासकी व्यापकता अति विशाल और विस्तृत है। स्थावर-जङ्गम, जीव-अजीव और मूर्त-अमूर्त क्या—ऐसा कौन पदार्थ होता, जिसका इतिहास नहीं रहता। साहित्य, विज्ञान, दर्शन, तथा शिल्पकलादि सभीका इतिहास विद्यमान है। इसीसे आधुनिक पाश्चात्य ऐतिहासिक डाक्टर जे, टि, सोटओयेलने कहा है,—

"History in the wider sense is all that has happened, not merely all the phenomena of human life, but those of the natural world as well. It includes everything that undergoes change; and as modern science has shown that there is nothing absolutely static, therefore the whole universe and every part of it, has its history. * * * Solids are solids no longer. The universe is in motion in every particle of every part, rock and metal merely a transition stage between crystallization and dissolution. This idea of universal activity has in a sense made physics itself a branch of history. It is the same with the other sciences—especially the biological division, where the doctrine of evolution has induced an attitude of mind which is distinctly historical."†

---

* Arrian's Indica.

† *Encyclopaedia Britannica*, 11th ed Vol. XIII, p. 527.

पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें जगत्‌की अतीत और वर्तमान घटनाकी वर्णन द्वारा साधारणको उपदेश देना ही इतिहास है। बेकन साहबने दर्शन और काव्यको नीचे डाल इतिहासका प्राधान्य माना है। उनके मतमें इतिहास ही भूतपूर्व मानव-जगत्‌की आन्तरिक और बाह्य वृत्ति समझनेकी मूल स्मृति है। आर्नल्ड साहब समाजकी जीवनीको ही इतिहास कहते हैं—

"The general idea of history seems to me to the that it is the biography of a society * * * History is to the common life of many, what biography is to the life of an individual." (Arnold's *Lectures on history*,)

इतिहास जगत्‌के समग्र पदार्थोंके परिवर्तनका वर्णन है। केवल मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी, कीट-पतङ्ग—यहांतक, कि जड़ पदार्थ भी अपना-अपना इतिहास रखते हैं। भूतपूर्व राजनीतिको ही इतिहास मानना भूल है। 'इतिह'का 'पुरावृत्त' और 'आस'का अर्थ 'रहता' है। जिस पुस्तकमें किसी वस्तुका पुराना वृत्तान्त रहता, उसे ही मनुष्य इतिहास कहता है।

इतिहास लेखकको मित्रकी निन्दा और शत्रुकी प्रशंसा करना पड़ती है। क्योंकि इतिहास सच्चा न होनेसे किसी अर्थका नहीं निकलता। चीनीयों, रोमकों, यूनानियों और इसलामीयोंने इतिहास लिखनेमें बड़ा श्रम उठाया है।

प्राचीन आर्यसमाज अच्छीतरह समझता— इतिहास क्या होता, उससे कौन लाभ मिलता और वह किस काम आता था। महर्षि कृष्णद्वैपायनने अपनी अमृतनिस्यन्दिनी भाषामें कहा है,—

"इतिहासप्रदीपेन मोहावरणघातिना।
लोकगर्भगृहं कृत्स्नं यथावत् संप्रकाशितम्।" (महाभारत १।१।८३)

अर्थात् इतिहास ही हमारा मोहान्धकार दूर करता और ज्ञानचक्षु खोल देता है।

इतोक (सं॰ पु॰) जातिविशेष, एक कौम।

इतेक, इतना देखो।

इती, इतना देखो।

इत्कट (सं॰ पु॰) इतं गन्तारं समीपस्थं वा कटति आवृणोति स्वशिखाग्रफलेनेति; इत्-कट्-अच्, ६-तत्। स्वनामख्यात क्षुपविशेष, किसी किस्मका सर।

इत्कटा (सं॰ स्त्री॰) सूक्ष्मपत्रिका एवं दीर्घलोहित यष्टिका काष्ठविशेष, किसी किस्मकी लकड़ी। इसका पत्र छोटा और डण्ठल बड़ा तथा लाल होता है। (वाग्भट)

इत्कर, इत्कट देखो।

इत्किला (सं॰ स्त्री॰) किल शौक्ल्ये किल-क किलः, इत् गतः किलः शौक्ल्यं यस्याः। रोचना नामक सुगन्धि द्रव्य, एक किस्मकी खुशबूदार चीज।

इत्ता, इतना देखो।

इत्तिफ़ाक़ (अ॰ पु॰) १ समय, वक्त। २ स्वरैक्य, एकदिली। ३ सङ्ग, साथ। "इत्तिफ़ाक़ बड़ी चीज है।" (लोकोक्ति) ४ सम्मति, रज़ा। ५ समवाय, मेल। ६ पक्षपात, साज़िश। ७ मैत्री, दोस्ती। ८ दशा, हालत। ९ कार्य, काम। १० अवसर, मौक़ा। इसका बहुवचन इत्तिफ़ाक़ात् है।

इत्तिफ़ाक़ करना (हिं॰ क्रि॰) १ सम्मत होना, मिल-जुलके चलना। २ मैत्री लगाना, दोस्ती जोड़ना।

इत्तिफ़ाक़न् (अ॰ क्रि॰ वि॰) १ अवसरवश, मौकेसे। दैवयोगसे, एकायेक।

इत्तिफ़ाक़ बनना (हिं॰ क्रि॰) आनन्द रहना, बखेड़ा न पड़ना।

इत्तिफ़ाक़ रखना (क्रि॰ क्रि॰) शान्तिपूर्वक रहना, दोस्ताना तौरपर चलना।

इत्तिफ़ाक़राय (अ॰ पु॰) सम्मति, मेल-जोल।

इत्तिफ़ाक़ होना (हिं॰ क्रि॰) १ सम्मति बैठना, राय पड़ना। २ मिलना, एक-जैसा देख पड़ना। ३ मित्र बनना, दोस्ती जुड़ना।

इत्तिफ़ाक़िया, इत्तिफ़ाक़ी देखो।

इत्तिफ़ाक़ी (अ॰ वि॰) आकस्मिक, अप्रकृत, नागहानी, आसमानी।

इत्तिला (अ॰ स्त्री॰) विज्ञापन, वृत्तान्त, मुखबिरी, खबर, चितावनी।

इत्तिला करना (हिं॰ क्रि॰) १ निवेदन सुनाना, हवाला देना कहना। २ सूचना निकालना, इश्तेहार देना, जताना।

इत्तिलानामा (अ० पु०) लिखित आख्यान, तलबीनामा, दस्तक।
इत्तिहाम (अ० पु०) अपराध, क़ुसूर, खोट।
इत्तो, इतना देखो।
इत्थं (सं० अव्य०) इदं प्रकारे थमुः, इदमः इदादेशः। इस प्रकार, इस तरह, ऐसे, यों।
इत्थंविध (सं० त्रि०) ऐसा, ऐसे गुणवाला, जिसमें ऐसे औसाफ़ रहें।
इत्थङ्कार (सं० अव्य०) इस रीतिसे, ऐसे तौरपर।
इत्थमेव (सं० त्रि०) १ ऐसा ही, इसी हालतमें रहनेवाला। (अव्य०) २ इसीप्रकार, इसीतरह।
इत्थम्भाव (सं० पु०) इत्थं भावः, ६-तत्; भू प्राप्तौ घञ्। ऐसी अवस्था, यह हालत।
इत्थम्भूत (सं० त्रि०) इत्थं कमपि प्रकारं भूतः प्राप्तः, इत्थम्-भू प्राप्तौ कर्तरि क्त। ऐसा बना हुआ, जो ऐसी हालतमें पड़ गया हो।
इत्थशाल (सं० पु०) ज्योतिषोक्त तृतीय योग। जब शीघ्र चलनेवाला ग्रह अंशमें कम पड़ते भी मन्दगामी ग्रहको देखता, तब इत्थसाल योग होता है। यह शब्द सम्भवतः अरबीके 'इत्तसाल'का अपभ्रंश है।
इत्था (वै० अव्य०) इदम् थाल् इदादेशः। १ सत्य! बेशक। २ इस प्रकार, इसीतरह।
इत्थात् (वै० अव्य०) ऐसे, इसप्रकार, यों।
इत्थाधी (वै० त्रि०) इत्था सत्या धीः यस्य, बहुव्री०। सत्यपरायण, दृढ़बुद्धि, सुधी, सच्चा, खासी समझ रखनेवाला।
इत्य (सं० त्रि०) इण् कर्मणि क्यप् तुगागमश्च। १ गमनके योग्य, जाने क़ाबिल, जहां जा सकें। (क्लो०) भावे क्यप्। २ गमनकार्य, रवानगी।
इत्यक (सं० पु०) इत्याय कायति, इत्य-कै-क। १ गमन, चाल। २ द्वारपाल, दरवान्।
इत्यर्थं (सं० अव्य०) इस निमित्त, इसलिये।
इत्या (सं० स्त्री०) इण्-क्यप्-तुक्-टाप्। १ शिविका, पालकी। २ गमनकार्य, रवानगी। ३ बङ्गाल-प्रान्तके यशोर जिलेका एक ग्राम। यहां खजूरका गुड़, चीनी और तम्बाकू तैयार होता है।

इत्यादि (सं० त्रि०) इति आदिः यस्य, बहुव्री०। यही सकल, यही सब, वग़ैरह।
इत्यादिक, इत्यादि देखो।
इत्युक्त (सं० त्रि०) इति अनेन उक्तम्। इसीप्रकार कथित, ऐसे ही कहा हुआ।
इत्र (अ० पु०) १ गन्ध द्रव्य, अतर। अतर देखो। २ सौरभ, ख़ुशबू।
इत्र खेंचना (हिं० क्रि०) सौरभ निकालना, ख़ुशबू उतारना।
इत्रदान अतरदान देखो।
इत्रफ़रोश (अ० पु० स्त्री०) परिमल विक्रेता, अतर बेचनेवाला।
इत्र लगाना (हिं० क्रि०) परिमल मलना, अतर डालना।
इत्रीफल, इतरीफल देखो।
इत्वन् (सं० त्रि०) इ-क्वनिप्। गमनकारी, चलनेवाला।
इत्वर (सं० त्रि०) इ-क्वरप्। १ इच्छामत गमनकारी, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलनेवाला। २ पथिक, राहगीर। ३ नीच, कमीना। ४ निष्ठुर, बेरहम। ५ षण्ड। ६ नपुंसक, नामर्द।
इत्वरी (सं० स्त्री०) एति परपुरुषं प्राप्नोति, इ-क्वरप्-ङीप्। इण्नशजिसर्तिभ्यः क्वरप्। पा ३।२।१६३। असती स्त्री, छिनाल।
इद् (वै० अव्य०) केवल, एव, ठीक, भी। यह शब्द ऋग्वेदमें प्रायः, किन्तु ब्राह्मणमें कभी-कभी आता है।
इदं (सं० त्रि०) इन्द्-कमिन्। १ सम्मुखस्थ, बुद्धिके विषययोग्य, सामने रहनेवाला, यह। (वै० अव्य०) २ इस स्थानको, यहां। ३ इस समय, अब। ४ उस स्थानपर, वहां। ५ इन शब्दोंके साथ।
इदंयु (सं० त्रि०) इसका अभिलाषी, यह चाहनेवाला।
इदंरूप (वै० त्रि०) इदं च रूपं च। इस आकारवाला, जो ऐसी शक्ल रखता हो।
इदंविद् (सं० त्रि०) इदं वेत्ति, इदम्-विद्-क्विप्। यह समझनेवाला, जो इसे जानता हो।

इदङ्कार्या (सं० स्त्री०) दुरालभा लता, जवासा।

इदद्वसु (वै० त्रि०) इसमें और उसमें समृद्ध, इसका और उसका अमीर।

इदन्तन (सं० त्रि०) अस्मिन् काले भवः, निपातनात् ख्युल् तुट् च। इदानीन्तन, आधुनिक, नया।

इदन्ता (सं० स्त्री०) अस्य भावः, इदम्-तल्। अङ्गुल्यादि द्वारा बतानेका विषय, शिनाख़्त, पहचान।

इदम्प्रकार (सं० अव्य०) इस रीतिसे, ऐसे तौरपर।

इदम्प्रथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहले-पहल काम करनेवाला।

इदम्मय (सं० पु०) इदम्-मयट्। इसके द्वारा प्रस्तुत, जो इससे बना हो।

इदा (वै० अव्य०) इदम्-दाच् वेदे निपातनात्। इस समय, अब।

इदानीं (सं० अव्य०) इदम्-दानीम्। दानीं च। पा ५।३।१८। अधुना, सम्प्रति, अब, इस समय।

इदानीन्तन (सं० त्रि०) वर्तमान, मौजूद, नापायदार।

इदावत्सर (सं० पु०) इदा इति वत्सरः, शाकतत्। पांच संवत्सरादिके मध्य एक। संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और उदावत्सर पांच वर्ष होते हैं। संवत्सरमें तिल, परिवत्सरमें यव, इदावत्सरमें अन्न एवं वस्त्र, अनुवत्सरमें धान्य और उदावत्सरमें रौप्य दान करनेसे अधिकतर फल मिलता है। नभोमण्डल सूर्य और चन्द्रमण्डलके साथ जो समग्रकाल बिताता, उसमें शुक्ल प्रतिपत्को सूर्यसंक्रान्ति पड़ने और सौर तथा चान्द्रमासका एककालीन उपक्रम लगनेसे संवत्सर आता है। फिर सौर मास पड़नेसे वत्सरमें छः दिन बढ़ते और चान्द्र मास आनेसे छः दिन घटते हैं। इसी प्रकार बारह दिनके व्यवधानसे दोनोका अग्र पश्चात् भाव कम हो जाता है। ऐसे ही पांच वत्सर बीतनेपर दो मलमास पड़ते हैं। फिर षष्ठ वत्सर संवत्सर होता है। समकालमें लगने और सौर तथा चान्द्रमासयुक्त रहनेवाले वत्सरको संवत्सर कहते हैं। सौर तथा चान्द्रमास आरम्भ होते जिस वत्सर विषम मास आता, वह परिवत्सर कहाता है।

इदावत्सरीय (सं० त्रि०) इदा वत्सर-सम्बन्धीय, इदावत्सरवाला।

इदुवत्सर, इदावत्सर देखो।

इद्दत (अ० स्त्री०) शास्त्रविहित परीक्षाका समय, क़ानूनी जांचका वक़्त। पतिकी मृत्यु होनेपर स्त्रीको दूसरा विवाह करनेके लिये चालीस दिन राह देखना पड़ती है। इसीको इद्दत कहते हैं। इद्दतसे स्त्रीके गर्भ रहने या न रहनेका पता लगता है।

इद्दतमें बैठना (हिं० क्रि०) एकान्तमें रहना, किसी पुरुषसे न मिलना।

इद्ध (सं० क्ली०) इन्ध भावे क्त। १ रौद्र, धूप। २ दीप्ति, चमक। ३ आश्चर्य, ताज्जुब। (त्रि०) ४ निर्मल, साफ़। ५ दग्ध, जला हुआ। ६ प्रदीप्त, रौशन। ७ आश्चर्यमय, अनोखा। ८ अप्रतिहत, आज़ाद, जो रुका न हो।

"तमिद्धमाराधयितुं सकर्णकः।" (माघ)

इद्धमन्यु (सं० त्रि०) क्रुद्ध, ग़ुस्सेमें आया हुआ, जिसके ग़ुस्सा सुलग उठे।

इद्धा (सं० अव्य०) प्रकाश्य, खुले तौरपर।

इद्धाग्नि (वै० त्रि०) प्रदीप्त अग्नियुक्त, जिसके आग जले।

इद्वत्सर, इदावत्सर देखो।

इद्वत्सरीय, इदावत्सरीय देखो।

इध् (सं० त्रि०) प्रदीप्त, चमकता हुआ। यह शब्द समासके अन्तमें आता है, जैसे—अग्नीध।

इधर (हिं० क्रि० वि०) १ अत्र, यहां, इस तर्फ़, इस राह, इस जगह। २ इहलोकमें, इस दुनियापर।

इधर-उधर (हिं० क्रि० वि०) १ इतस्ततः, जहां-तहां। २ चारो ओर, सब तर्फ़, नीचे ऊपर। ३ दाहने-बायें, आगे-पीछे।

इधरसे उधर करना (हिं० क्रि०) स्थानमें परिवर्तन डालना, सरकाना, बेजगह रख देना।

इधरसे उधर होना (हिं० क्रि०) १ खो जाना, चल पड़ना, लम्बो लेना। २ स्थानच्युत किया जाना, बेतरतीबीमें पड़ना। ३ लुढ़कना, उलट जाना।

इध्म (सं० क्ली०) इध्यतेऽग्निरनेनेति, इन्ध-मक्।
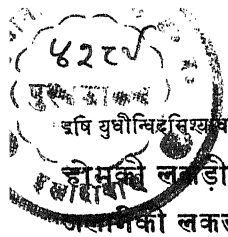
इषि युधीन्धिदसिश्याधूसूभ्यो मक्। उण् १।१४४। १ यज्ञीय समिध्, होमकी लकड़ी। (पु०) २ अग्निदीपनकाष्ठ, आग जलानेकी लकड़ी। ३ प्रियव्रतके पुत्र। (भागवत)

इध्मजिह्व (सं० पु०) इध्मं काष्ठं जिह्वेव यस्य, बहुव्री०। १ अग्नि, लकड़ीकी जीभ रखनेवाली आग। २ प्रियव्रतके एक पुत्र।

इध्मप्रव्रश्चन (सं० पु०) वृक्षादनी, लकड़ी काटनेका कुल्हाड़ा।

इध्मवाह (सं० पु०) इध्मं समिधं वहति, इध्म-वह-णिण्। अगस्त्यके पुत्र दृढ़स्यु। महातेजा अगस्त्यके पुत्रने बाल्यकाल हीसे पितृभवनमें रहने और पिताके होमकाष्ठका भार उठानेसे इध्मवाह नाम पाया है।

इध्या (सं० स्त्री०) प्रकाशन, सुलगाव।

इन् (सं० पु०) इनोति गच्छतीति, इन्-नक्। इणषिजि-दीङुष्यविभ्यो नक्। उण् ३।२। १ राजा, बादशाह, नवाब। २ प्रभु, मालिक। ३ सूर्य। ४ हस्तानक्षत्र। ५ ईश्वर (वै० त्रि०) ६ योग्य, लायक्। ७ शक्तिशाली, ताक़तवर। ८ प्रथित, मशहूर।

"इनो राजानां पतिरिनः पुष्टीनां सखा।" (ऋक् १०।२६।७)

(हिं० सर्व०) ९ 'इस'का बहुवचन।

इनकम (अं० स्त्री०=Income) अर्थप्राप्ति, आमदनी, कमायी।

इनकम टैक्स (अं० स्त्री०=Incom-tax) अर्थप्राप्तिका शुल्क, आमदनी पर लगनेवाला महसूल।

इनकार (अ० पु०) १ निषेध, नहीं। २ प्रत्याख्यान, खिलाफ़ बयानी। ३ मतिभेद, नाराज़ी। ४ निवर्तन, दस्तबरदारी। ५ आक्षेप, एतराज़।

इनकार करना (हिं० क्रि०) १ निषेध निकालना, न मानना। २ प्रत्याख्यान पहुंचाना, झुटलाना। ३ निवारण लगाना, इजाज़त न देना। ४ अपह्नव अड़ाना, दस्तबरदार होना। ५ विरोध बढ़ाना, बात काटना। ६ परित्याग देना, छोड़ना।

इनकार करनेवाला (हिं० पु०) बाधक, अपवाधक, मुनकिर, सरकश।

इनकार दावा (अ० पु०) स्वत्वप्रतिपादननिषेध, मुतालबेसे दस्तबरदारी।

इन्फिकाक (अ० पु०) परिक्रय, उद्धार, खलासी, छुटकारा। क़ानूनमें यह शब्द बन्धक छोड़नेका अर्थ रखता है।

इनफ़िसाल (अ० पु०) निर्णय, निष्पत्ति, फैसला, चुकौता।

इनफ्लुयेञ्जा (अं० पु०=Influenza) प्रबल श्लेष्मा, गहरा ज़ुकाम। यह एकाएक उत्पन्न हो जाता और साथ ही अशक्त बना देनेवाला ज्वर चढ़ आता है। इनफ्लुयेञ्जा प्रायः महामारीका रूप बनाता और समाजके अनेक व्यक्तियोंपर शीघ्र अपना प्रभाव जमाता है।

इनशा (अ० स्त्री०) १ लिपि, लिखावट। २ भाषासरणि, इबारत।

इनष्टिट्यूट (अं० स्त्री०=Institute) १ विधि, नियम, क़ायदा। २ समाज, अञ्जुमन।

इनष्ट्रूमेण्ट (अं० पु०=Instrument) १ यन्त्र, आला, हथियार। २ कारण, सबब। ३ कारक, शख़्स-दरमियानी, बिचौलिया। ४ लेखपत्र, क़बाला।

इनसाफ़ (अ० पु०) धर्म, न्याय, अदल, दियानतदारी।

इनसाफ़ करना (हिं० क्रि०) न्याय निकालना, दाद देना।

इनसाफ़ चाहना (हिं० क्रि०) न्याय मांगना, दावेदार होना।

इनसाफ़से (हिं० क्रि० वि०) न्यायपूर्वक, ब-इनसाफ़, ठीक-ठीक।

इनस्पेक्टर (अं० पु०=Inspector) निरीक्षक, निगहवान्, देखने-सुननेवाला अफ़सर।

इनानी (सं० स्त्री०) वटपत्री वृक्ष।

इनाम (अ० पु०) १ पारितोषिक, कामका फल। २ प्रीतिदान, शुकराना, भेंट।

इनाम-इकराम (अ० पु०) दान-दाक्षिण्य, मान-पान।

इनामका पैसा (हिं० पु०) पारितोषिक वृत्ति, पलटेका भत्ता।

इनामदार (अ० पु०) निष्कर भूमिका अधिपति, बेलगान जमीन्‌का मालिक।

इनाम देना (हिं० क्रि०) पारितोषिक बांटना, पलटा पहुंचाना।

इनाम पाना (हिं० क्रि०) पारितोषिक मिलना, कामका नतीजा निकलना।

इनायत (अ० स्त्री०) १ अनुग्रह, मेहरबानी। २ साहाय्य, मदद।

इनायत करना (हिं० क्रि०) १ देना, बख्शना। २ कृपा देखाना, मेहरबानी लाना।

इनायत रखना (हिं० क्रि०) कृपा देखाना, मेहरबानीकी नजर डालना।

इनायती (अ० वि०) दिया हुआ, जो बख्शा गया हो।

इनारा, इंदारा देखो।

इनु (सं० पु०) गन्धर्व विशेष।

इने-गिने (हिं० क्रि०) अल्प, परिमित, चन्द, थोड़े, भूले-भटके।

इन्तिक़ाम (अ० पु०) प्रत्यपकार, बदला।

इन्तिक़ाम लेना (हिं० क्रि०) प्रत्युपकार पहुंचना, बदला चुकाना।

इन्तिक़ाल (अ० पु०) १ स्थानान्तर प्रापण, तहवील। २ प्रवासन, जलावतनी, देशनिकाला। ३ उत्सारण, सरकाव। ४ समर्पण, पहुंचाव। ५ मृत्यु, मौत।

इन्तिज़ाम (अ० पु०) १ रचना, आरास्तगी, सजावट। २ प्रणयन, काररवायी। ३ उपाय, तदबीर, ढङ्ग। ४ राजव्यवस्था, क़ानून। ५ विधि, क़ायदा।

इन्तिज़ाम ख़ानगी (अ० पु०) गृहरचना, घराव सजावट।

इन्तिज़ार (अ० पु०) अपेक्षा, भरोसा।

इन्तिज़ार करना (हिं० क्रि०) अपेक्षा रखना, राह देखना।

इन्तिहा (अ० स्त्री०) अत्यन्तता, परमावधि, अखीर, किनारा, छोर।

इन्थिहा—ताजकोक्त मुथहा। इसका आनयन प्रकारादि नीलकण्ठ-ताजकमें लिखा है—मुथहा अपने-अपने जन्म लग्नसे प्रतिवत्सर क्रमशः एक-एक स्थान भोग करती है। सूर्य तष्टगत एवं शरद्युक्त हो स्व-स्व जन्म लग्नमें व्याप नक्षत्रगणसे प्रथम पड़ता है। इन्थिहा प्रत्यह अनुपाद क्रमसे शरलिप्तके साथ बढ़ती है। किसी-किसीके मतानुसार यह मासमें डेढ़ अंशपर व्यापृत होती है। स्वामिसौम्यतामें सौम्यता रहती और क्षुत दृष्टिसे भय तथा रोगकी वृद्धि लगती है। इसके भावावलोकनका फल वर्षलग्नमें सुखप्रद और अन्त्यरिपुरन्ध्रमें अशुभ निकलता है। पुण्यकर्म एवं आयगामी होनेसे मुथहा स्वामित्व और अपुण्यकर्म पड़नेसे उद्यमवश धन देती है। यह शरीरस्थ होनेसे शत्रुक्षय, मनस्तुष्टि लाभ, प्रतापवृद्धि, राजप्रसाद, शरीर पुष्टि, विविध उद्यम और सुखप्रदान करती है। अर्थ-भावमें पड़नेसे मुथहा उत्साहके साथ अर्थ लाती, यशः फैलाती, बन्धु मिलाती, मान बढ़ाती, उत्तम खाद्य पहुंचाती और सुख प्रभृति उपजाती है। पराक्रम हेतु वित्त, यशः एवं सुखप्राप्ति और सौन्दर्यसुख, देवता-ब्राह्मणभक्ति तथा दूसरेके उपकारकी प्रवृत्ति होती है। इसके तृतीय लग्नमें जानेसे शरीर पुष्ट पड़ता, कान्तिका प्रभाव बढ़ता और राजाश्रय हाथ पड़ता है। इन्थिहाके सुखभावमें पहुंचनेसे शत्रुभय, आत्मीय विरोध, मनस्ताप, निरुद्यम, लोकापवाद, पीड़ाभार और दुःखकी वृद्धि होती है। जब यह पञ्चम स्थानमें आती; तब सद्बुद्धि सौख्य, पुत्र, धन, प्रताप, विविध विलास, देवता-ब्राह्मण-भक्ति एवं राजप्रसाद बढ़ाती है। मुथहाके अरिगत होनेसे अङ्गमें क्लम पैठता, शत्रु बढ़ता, भय लगता, रोग उपजता, और चढ़ता, राजा भड़कता, कार्य बिगड़ता, अर्थ घटता, दुर्बुद्धिका प्रभाव पड़ता और अनुताप उठता है। स्मरमें आनेसे यश स्त्रीपुत्रादि व्यसन लगाती, शत्रुभय देखाती, उत्साह घटाती, धन एवं धर्म बिगाड़ती, शारीरिक पीड़ा उपजाती और मोह तथा विरुद्ध चेष्टा लगाती है। मुथहाके मृत्युस्थ होनेसे शत्रु तथा चोरका भय लगता, धर्म एवं अर्थ घटता, अत्यन्त शोक उपजता, पीड़ाका प्रभाव बढ़ता, सैन्य बिगड़ता और दूरदेश जाना पड़ता है। भाग्यगत होनेसे यह प्रभुत्व बढ़ाती, धनोपार्जन कराती, राजाके निकट आनन्द उठाती, स्त्रीपुत्र सुखलाभ देती,

देवादि-भक्ति उपजाती, यश: फैलाती और धन दिलवाती है। अम्बरस्थ मुथहामें राजप्रसाद, लोकोपकार, सत्कर्मलाभ, देवादि-अर्चन, यश: और धन होता है। इसके लाभगत होनेपर विलास, सौभाग्य, आरोग्य, सन्तोष, राजसेवामें धन, सद्बन्धु और पुत्रादि मिलता है। मुथहाके व्ययमें आनेसे अधिक व्यय, कुसंसर्ग, रोग, कार्यनाश, धर्म एवं अर्थक्षय और सद्व्यक्तिके साथ वैर बढ़ता है। इसी प्रकार क्रूर तथा क्षुत दृष्टिसे भी इन्थिहाका फल शुभाशुभ होता है। रविसे युक्त वा दृष्ट होनेपर यह राज्य, मङ्गल और अतिशय गुणप्राप्ति करती है। मङ्गलसे मुथहाके युक्त वा दृष्ट होनेपर पित्त एवं उष्ण बढ़ता, अस्त्राघात लगता और रक्तप्रकोप उठता है। शनिके विषयमें भी उक्त ही फल मिलता है। सोमसे युक्त वा दृष्ट होनेपर यह धर्म, यश:, आरोग्य, और सन्तोष बढ़ाती है। पापग्रहके साथ मुथहा रहते दु:ख उपजता है। बुध वा शुक्र युक्त अथवा दृष्ट होनेपर यह स्त्री, सद्बुद्धि, सुख, धर्म और अतुल यशोलाभ करती है। वृहस्पतिके साथ मुथहा आने वा तद्युक्त नक्षत्रसे देखे जानेपर स्त्री, सद्बुद्धि, पुत्र, सुख, स्वर्ण, रौप्य, वस्त्र, मणि और मुक्तादि लाभ होता है। शनिके गृहमें पड़ने अथवा उसके द्वारा देखे जानेपर यह वातरोग, मानभङ्ग और अग्नि धनक्षयादि करती है। किन्तु गुणयोगसे धन मिलता है। राहुसे युक्त वा दृष्ट होनेपर मुथहा धन, यश:,सुख,धर्म और उन्नत भाव बढ़ाती है। चन्द्रयोगसे सत्पद और स्वर्ण रत्नादि प्राप्त होता है। राहुके भोग्य एवं पृष्ठगत लव और सप्तम नक्षत्रयुक्त पुच्छको देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। मुथहाके शुभपृष्ठ एवं राहुपुच्छ गत होनेसे आपद् आती और शत्रुभय तथा दु:खकी मात्रा बढ़ जाती है। पापयोगमें दर्शनसे अर्थ और सुख बिगड़ता है। जो जन्मकालमें बली और वत्सरान्तमें दुर्बल होता, उसके लिये एक ही अशुभ ठहरता है। जिसकी दोनो ओर समान पड़ती, उसके फलकी मीमांसा भी नहीं घटती-बढ़ती। षष्ठ, अष्टम वा शेष अथवा इसी पृथिवीपर इन्थिहाधिपतिके जन्तुगत किंवा क्रूर होनेसे अदृष्ट अशुभ मिला करता है। यह क्रूरतावश चतुर्थ यदि अस्तगत मङ्गलजनक नहीं पड़ती, तो रोगवृद्धि और धनहानि होती है। अष्टमाधिपके साथ मुथहा युक्त और अदृष्ट क्षुताख्य दृष्टिसे शुभ न होनेपर दोनोमें मरण तथा एक योगमें मरणतुल्य क्लेश मिलता है। मुथहा वा उसका अधिप जन्ममें शुभलक्षणयुक्त पड़नेसे वर्षारम्भ पर शुभदायक और वर्षके पीछे अशुभ है।

इन्दम्बर (सं० क्ली०) नीलपद्म, आस्मानी कमल।

इन्दर (हिं०) इन्द्र देखो।

इन्दव (हिं०) ऐन्दव देखो।

इन्दाम्बर (सं० क्ली०) इन्दं बहुमूल्यं अम्बरं नीलवस्त्रमिव, उप० कर्मधा०। १ नीलपद्म, आस्मानी कमल। (पु०) २ भ्रमर, भौंरा।

इन्दि (सं० स्त्री०) इदि-इनि वा ङीप्। लक्ष्मी, दौलत।

इन्दिन्दिर (सं० पु०) इन्दि-किरच् निपातनात्। मधुप, भौंरा।

इन्दिया (अ० पु०) १ मत, राय। २ मनोयोग, मनशा, इरादा। (अं० स्त्री० = India) ३ भारतवर्ष।

इन्दिरा (सं० स्त्री०) इदि-किरच्-टाप्। लक्ष्मी, विष्णुप्रिया।

इन्दिरामन्दिर (सं० पु०) १ इन्दिरायां मन्दिरं आश्रय-इव। विष्णु, लक्ष्मीपति, भगवान्। (क्ली०) २ लक्ष्मीगृह।

इन्दिरालय (सं० क्ली०) १ इन्दिराया: आलय:, ६-तत्। नीलोत्पल,लक्ष्मीके रहनेका स्थान पद्म। २ लक्ष्मीगृह।

इन्दिरावर (सं० क्ली०) इन्दिराया: श्रीया: वरं प्रियम्। नीलपद्म, आसमानी कमल।

इन्दी, इन्दि देखो।

इन्दीवर (सं० क्ली०) इन्दि-ङीप् इन्दी तस्या: वरं वरणीयं प्रियम्। १ नीलपद्म, आसमानी कमल। २ साधारण उत्पल, मामूली कमल। ३ पद्मलता, गुलाबका झाड़।

"इन्दीवरघनश्यामं रामं कमललोचनम्।" (रामायण)

इन्दीवरा, इन्दीवरी देखो।

इन्दीवरिणी (सं० स्त्री०) इन्दीवराणां समूह:, इनि-ङीप्। पद्मलता, कमलकी बेल।

इन्दोवरी (सं० स्त्री०) इन्दीवरमस्त्यस्याः, अच्-ङीष्। १ शतमूली, सतावर। नीलपद्म सदृश पुष्प निकलनेसे शतमूलीका नाम यह पड़ा है। २ अज-शृङ्गी, मेढ़ासींगी। ३ इन्द्रचिर्भटी, कुंदुरू। ४ कदली-वृक्ष, केला।

इन्दोवार (सं० पु०) नीलपद्म, आसमानी कमल।

इन्दु (सं० पु०) उनत्ति अमृतधारया भुवं क्लिन्नां करोति, उन्द्-उ। उन्दे रिच्चादेः। उण् १।१३। १ चन्द्र, चांद। "वसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय।" (शृङ्गारतिलक) २ मृग-शिरा नक्षत्र। इस नक्षत्रका देवता चन्द्र है। ३ एक संख्या, एकायी। ४ कपूर, काफूर।

इन्दुक (सं० पु०) इन्दु स्वार्थे क। अश्मन्तक वृक्ष। इसके तन्तुसे ब्राह्मण अपनी मौञ्जी-मेखला बनाते हैं।

इन्दुकक्षा (सं० स्त्री०) इन्दोश्चन्द्रस्य कक्षा। राशि-चक्रस्थ चन्द्रमण्डल। चन्द्रकक्षाका परिमाण ३२४००० योजन है। चन्द्र देखो।

इन्दुकमल (सं० क्लो०) इन्दुरिव शुक्लं कमलम्, उप० कर्मधा०। शुक्लकमल, कुमुद, बघोला, कोका-बेली।

इन्दुकर (सं० पु०) चन्द्रकिरण, चांदनी।

इन्दुकला (सं० स्त्री०) इन्दोः कला अंशः। चन्द्र-रेखा, चांदका सोलहवां हिस्सा। इन्दुकी सोलह कला यह हैं,—१ पूषा, २ यशा ३ सुमनसा, ४ रति, ५ प्राप्ति, ६ धृति, ७ ऋद्धि, ८ सौम्या, ९ मरीचि, १० अंशुमालिनी, ११ अङ्गिरा, १२ शशिनी, १३ छाया, १४ सम्पूर्णमण्डला, १५ तुष्टि और १६ अमृता।

चन्द्रकी प्रथम कला अग्नि, द्वितीय सूर्य, तृतीय विश्वेदेवगण, चतुर्थ वरुण, पञ्चम वषट्कार, षष्ठ इन्द्र, सप्तम स्वर्गीय ऋषि, अष्टम विष्णु, नवम यम, दशम वायु, एकादश उषा, द्वादश अग्निष्वात्तादि पितृगण, त्रयोदश कुवेर, चतुर्दश शिव और पञ्चदश ब्रह्मा पी जाते हैं। किन्तु षोड़स कला सर्वदा ही जलमें प्रविष्ट रहती है। ओषधिमें परिणत होनेसे अमावस्याको चन्द्र देख नहीं पड़ता। फिर उक्त ओषधि गोचर लेती हैं। इससे दुग्ध और घृत उपजता है। उसी दुग्धघृतादिसे ब्राह्मण यज्ञ करते हैं। यज्ञके फलसे अमृत निकलता है। अमृतसे फिर चन्द्रकला पूर्ण हो जाती है। (कालमाधव)

इन्दुकलावटिका (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, दवाकी एक गोली। शिलाजतु, लौह एवं स्वर्ण समभाग डाल तुलसीके रसमें घोंटे और रत्ती-रत्तीकी गोली बना डाले। यह मसुरिका, विस्फोटक, लोहितज्वर, सर्वप्रकार व्रण और शीतला रोगके लिये विशेष उपकारी होती है।

इन्दुकलिका (सं० स्त्री०) इन्दुरिव शुभ्रा कलिका यस्याः, बहुव्री०। १ केतकी वृक्ष, केवड़ेका पेड़। २ श्वेत केतकी।

इन्दुकान्त (सं० पु०) इन्दुः कान्तः मनोज्ञः यस्य, बहुव्री०। चन्द्रकान्त मणि, हजर-उल्-कमर, चन्दर-गांठ। २ चन्द्रकला।

इन्दुकान्ता (सं० स्त्री०) इन्दुः कान्तः पतिः यस्याः, बहुव्री०। १ रात्रि, रात। इन्दुः कान्तइव प्रकाशक-त्वात् यस्याः। २ केतकी, केवड़ा। ३ चन्द्रप्रिया, रोहिणी।

इन्दुखण्डा (सं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

इन्दुचन्दन (सं० क्लो०) हरिचन्दन।

इन्दुज (सं० पु०) इन्दोः जायते, इन्दु-जन-ड। ताराके गर्भसे चन्द्र कर्तृक उत्पादित बुधग्रह, दवीर-फलक। चन्द्रने राजसूययज्ञ करनेपर विवेकशून्य बन वृहस्पति-की स्त्री ताराको हरण किया था। देवतावोंके यह बात बतानेपर ब्रह्माने स्वयं ताराको ले जाकर वृह-स्पतिके हाथ सौंपा। वृहस्पतिने ताराको गर्भवती देख कहा था,—हमारे घरमें रहकर तुम इस गर्भको कभी रख न सकोगी। ताराने स्वामीके वाक्यानुसार तत्क्षण गर्भस्थ पुत्रको निकाल जलस्तम्भपर फेंक दिया। सद्यप्रसूत कुमार शरस्तम्भपर पड़ते ही ज्वलन्त अग्निके समान चमकने लगा था। उसका रूप देख देवतावोंने भी हार मानी। ब्रह्माने तारासे पूछा, कि वह पुत्र किसका था—चन्द्र या वृहस्पतिका। ताराने अतिकष्टसे शिरः झुकाकर कहा, कि पुत्र चन्द्रका रहा। उस समय चन्द्रने पुत्रको गोदमें ले बुध नाम रखा था। (हरिवंश २६ अ०)

इन्दुजनक (सं० पु०) इन्दोश्चन्द्रस्य जनकः। १ अत्रि-मुनि। अत्रिजात शब्द देखो। २ समुद्र। समुद्रमन्थनसे चन्द्र निकला है। (भारत आदि १८ अ०)

इन्दुजा (सं० स्त्री०) इन्दोर्जाता, इन्दु-जन-ड-टाप्। नर्मदा नदी।

इन्दुदल (सं० पु०) चन्द्रकला, चांदका सोलहवां हिस्सा।

इन्दुपत्र (सं० पु०) भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पेड़।

इन्दुपुत्र, इन्दुज देखो।

इन्दुपुष्पिका (सं० स्त्री०) इन्दोरिव शुक्लं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। लाङ्गलीवृक्ष, नारियलका पेड़।

इन्दुपोदकी (सं० स्त्री०) वेल्लिका, किसी किस्मकी बेल।

इन्दुफल (सं० पु०-क्ली०) आम्रातक, आमड़ा।

इन्दुभ (सं० क्ली०) ६-तत्। १ मृगशिरा नक्षत्र। २ मृगशिरा नक्षत्रका स्वामी चन्द्र। ३ कर्कटराशि।

इन्दुभा (सं० स्त्री०) इन्दुना भाति, इन्दु-भा-ड-आप्। १ कुमुदिनी, कोकाबेली। २ चन्द्रकिरण, चांदनी।

इन्दुभूषण (सं० पु०) इन्दुना भूषति, ३-तत्। नील-पद्म, आसमानी कमल।

इन्दुभृत् (सं० पु०) इन्दुं बिभर्ति, इन्दु-भृ-क्विप्। महादेव, चन्द्रको सर्वदा कपालपर धारण करनेवाले शङ्कर।

इन्दुमणि (सं० पु०) इन्दुप्रियो मणिः, शाक-तत्। १ इन्द्रकान्त, हजर-उल्-कमर, चन्दरगांठ। इन्दुरिव शुभ्रा मणिर्वा। २ मुक्ता, मोती।

इन्दुमण्डल (सं० क्ली०) इन्दोर्मण्डलम्, ६-तत्। चन्द्रबिम्ब, चांदका घेरा। चन्द्रमण्डलका परिमाण ४८० योजन है। (सिद्धान्त शिरोमणि)

इन्दुमत् (सं० पु०) इन्दुर्विद्यतेऽत्र, इन्दु-मतुप्। १ रात्रि, रात। २ शिव। ३ मयूर। ४ पूर्णिमा। (वै०) ५ अग्नि।

इन्दुमती (सं० स्त्री०) प्रशस्तः इन्दु विद्यतेऽस्याः। १ पूर्णिमा। २ अजराजकी पत्नी और विदर्भराजकी भगिनी।

इन्दुमुखी (सं० स्त्री०) पद्मिनी, कमलकी बेल।

इन्दुमौलि (सं० पु०) इन्दुः प्रीतिजनकतया मौलौ शिरसि यस्य, बहुव्री०। महादेव। तपस्यासे तुष्ट हो शङ्कर सर्वदा ही इन्दुकलाको अपने मस्तकपर धारण किये रहते हैं। (काशीखण्ड)

इन्दुर (सं० पु०) मूषिक, चूहा। इन्दुर बिलेशय अर्थात् बिलका रहनेवाला है। बिलमें रहनेसे इसका मांस वातघ्न, मधुर, बृंहण, बद्धविण्मूत्र और वीर्योष्ण होता है। (भावप्रकाश) इन्दूर देखो।

इन्दुरत्न (सं० क्ली०) ६-तत् वा इन्दुरिव शुभ्रं रत्नम्, कर्मधा०। मुक्ता, मोती। देवता चन्द्र होने और चन्द्र-जैसा शुभ्र रहनेसे मुक्ताका नाम इन्दुरत्न पड़ा है।

इन्दुरसा (सं० स्त्री०) पिष्टकभेद, अंदरसा। चावल-को पीस दो हिस्से चीनी मिलाते और दहीका मोवन डाल दूसरे दिन घीमें उसके छोटे-छोटे पूवे सावधानसे पकाते हैं। यह अति शीत, हृद्य और बलपुष्टिकर होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

इन्दुरा (सं० स्त्री०) सोमराजी, बाकची।

इन्दुराज (सं० पु०) इन्दुना राजते, ३-तत्। १ चन्द्र-कान्तमणि, चन्दरगांठ। २ कुमुद, कोकाबेली।

इन्दुराजि, इन्दुरा देखो।

इन्दुराजी, इन्दुरा देखो।

इन्दुरेखा (सं० स्त्री०) इन्दोर्लेखेव लेखा, रस्य लत्व ६-तत्। चन्द्रकला, चांदका सोलहवां हिस्सा। २ सोमलता। ३ सोमराजी, बाकची। ४ गुडूची, गुर्च। ५ यमानी, अजवायन।

इन्दुलेखा, इन्दुरेखा देखो।

इन्दुलोक (सं० पु०) इन्दोर्लोकः, ६-तत्। चन्द्रलोक।

इन्दुलोह, इन्दुलोहक देखो।

इन्दुलोहक (सं० क्ली०) इन्दोर्लोहम्, स्वार्थे कन्। रौप्य, चांदी। चन्द्रदोषकी शान्तिके लिये इन्दुलोहक दान करना पड़ता है।

इन्दुलौह (सं० क्ली०) ६-तत्। लोह-धातु, आहन, लोहा।

इन्दुवटी (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। शिलाजतु, अभ्र एवं लौह एक-एक और स्वर्ण चौथायी भाग कूट-पीस वढ़न्ते, शतमूली, आमलकी

तथा पद्मरसकी भावनासे २ रत्ती प्रमाण वटिका बनाये। आमलकीके रस या क्वाथसे प्रत्यह प्रातः-काल एक वटिका खाना चाहिये। इस औषधके सेवनसे कर्णनासादिका रोगसमूह, नानाप्रकार वातज व्याधि और बीस तरहका प्रमेह दूर हो जाता है।

इन्दुवदना (सं० स्त्री०) छन्दः विशेष, चौदह अक्षर और चार चरणका एक छन्द। "इन्दुवदना भजसनैः सगुरुयुग्मैः।" (वृत्तरत्नाकर) जिस छन्दःमें एक भगण, एक जगण, एक सगण, एक नगण और शेषमें दो गुरु अक्षर रहता, उसे सब कोई इन्दुवदना कहता है।

इन्दुवल्लिका, इन्दुवल्ली देखो।

इन्दुवल्ली (सं० स्त्री०) इन्दोर्वल्ली, ६-तत्। १ सोमलता। २ गुड़ूची, गुर्च। ३ सोमराजी, बाकची। ४ यवानी, अजवायन।

इन्दुवार (सं० पु०) इन्दोः वारः, ६-तत्। नीलकण्ठताजकोक्त वर्षलग्नसे तीसरे, छठें, नवें और बारहवेंको छोड़ अन्यस्थान, समस्त ग्रहगणका अवस्थानरूप योग-विशेष।

इन्दुव्रत (सं० क्ली०) इन्दुलोकार्थं व्रतम्, शाक-तत्। चान्द्रायण, चन्द्रलोक प्राप्त होनेके लिये किया जानेवाला व्रत। इसमें एक पक्ष वा मास पर्यन्त प्रति दिन कुछ-कुछ भोजन घटाते चले जाते हैं। इन्दुव्रत करनेसे चन्द्रलोक मिलता और सर्वपाप मिटता है।

इन्दुशकला (सं० स्त्री०) सोमराजी, बाकची।

इन्दुशफरी (सं० स्त्री०) अश्मन्तक वृक्ष।

इन्दुशेखर (सं० पु०) इन्दुः शेखरे यस्य, बहुव्री०। महादेव, इन्दुको मस्तकपर धारण करनेवाले शङ्कर।

इन्दुशेखररस (सं० क्ली०) औषध विशेष, एक दवा। शिलाजतु, अभ्र, रससिन्दूर, प्रवाल, लौह, स्वर्णमाक्षिक एवं हरितालको समभागमें एकत्र मिला भृङ्गराज, अर्जुनत्वक्, निसिन्धु, वासक, स्थलपद्म, पद्म तथा कुरथीके रसकी भावना देते हुये मटर-जैसी वटिका बना ले। इसके सेवनसे गर्भिणीका ज्वर, श्वास, कास, शिरःदुःख, रक्तातिसार, ग्रहणीरोग, वमन, क्षुधामान्द्य, आलस्य और दौर्बल्य दूर होता है।

इन्दूर (सं० पु०) मूषिक, चूहा। इन्दूर या चूहा नानाजातीय होता है। देशभेदसे भिन्न-भिन्न प्रकारका इन्दूर देख पड़ता है। भारतवर्षमें प्रायः पचास प्रकारका इन्दूर होता है। उसमें जिस-जिस इन्दूरकी संख्या अधिक आती, उसकी बात नीचे लिखी जाती है।

१ जङ्गली चूहे या घूंस (Mus bandicota)के गात्रका ऊपरी भाग कुछ-कुछ पिङ्गलवर्ण लगता, बीच-बीच दो-एक काला-काला बाल भी रहता और नीचेका अंश धूसर देख पड़ता है। लाङ्गुल व्यतीत देहका पन्द्रह और लाङ्गुलका आयतन तेरह इञ्च बैठता है। इस जातिकी स्त्रीके बारह स्तन होते हैं। सिंहल, भारतवर्ष, मलय और अष्ट्रेलियामें यह बहुत देख पड़ता है। जङ्गली चूहा दीवारमें गड्ढा बना घरका अनिष्ट बहुत करता और उद्यानको भी विस्तर क्षति पहुंचाता है। इसका प्रधान खाद्य अन्न और शाक है।

२ काला चूहा (Mus rattus)—इसकी ऊपरी धूसर और निचली दिक् पांशुवर्ण होती है। देहका आयतन प्रायः सात इञ्च बैठता और लाङ्गुल तदपेक्षा भी बड़ा निकलता है। फिरङ्गियोंके कथनानुसार काला चूहा युरोपसे जहाज़ द्वारा इस देशमें आया है। क्योंकि जहां-जहां जहाज़ आकर ठहरता, वहां-वहां यह बहुत देख पड़ता है। किन्तु हमें काला-चूहा एतद्देशीय ही मालूम देता है। महर्षि सुश्रुतने सम्भवतः काले चूहे को ही कृष्ण वा महाकृष्ण मूषिक कहा है।

३ दंशक इन्दूर (Mus decumanus)—ऊपरसे पांशुयुक्त कपिलवर्ण और बीच-बीच पीला होता है। छोटे-छोटे कानोंमें पीली धारियां पड़ी रहती हैं।
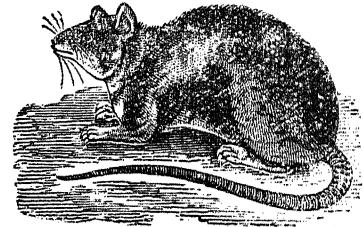
निम्नभाग पांशुवर्ण है। यह चूहा भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही रहता है। पारस्य वा ईरानमें भी शायद

इसका उपद्रव बढ़ गया है। पहले यह इन्दूर विलायतमें न रहा। आजकल जहाज, द्वारा वहां भी जा पहुंचा है। इस इन्दूरके प्रवेशसे विलायतका काला चूहा बिलकुल ध्वंस जैसा हो गया है। यह सब कुछ खाता है। कबूतर, छोटो-छोटी मुर्गी और चिड़ियेके अण्डे खाना इसे बहुत अच्छा लगता है।

४ नेपाली चूहा—केवल नेपालमें ही होता है। ऊपरी भाग पिङ्गलवर्ण रहता और बीच-बीच लाल रङ्ग झलकता है। लोम बहुत कोमल होता है। देह और लाङ्गूलका आयतन प्राय: छ: इञ्च बैठता है।

५ पेड़का चूहा—ऊपरसे देखनेमें पिङ्गलवर्ण रहता, निम्नभाग सादा होता और बीच-बीच काला धब्बा पड़ता है। भारतवर्षमें अनेक स्थानपर यह मिलता है। देहका आयतन प्राय: साढ़े सात इञ्च बैठता और लाङ्गूल कुछ उससे भी अधिक निकलता है। यह अधिकांश पेड़पर रहता और किसी-किसी स्थानपर कड़ी-बरंगेमें गड्ढा खोद घुस जाता है।

६ सादे पेटका चूहा (Mus niviventer)—इसका देह प्राय: सात इञ्च पर्यन्त और लाङ्गूल उससे भी अधिक बड़ा होता है। नेपाल और पूर्ववङ्गके घर-घर यह देखनेमें आता है।

७ पहाड़ी चूहा (Mus homourus)—इसका ऊपरी भाग पिङ्गलवर्ण होता, बीच-बीच काला रङ्ग झलकता और निम्न अंश सादा रहता है। देह और लाङ्गूलका आयतन साढ़े तीन इञ्च बैठता है। इस जातिकी स्त्रीके आठ स्तने निकलते हैं। यह पञ्जाब और पूर्ववङ्गके मध्य समुदय हिमालय प्रदेशमें रहता है।

८ चिक्किर इन्दुर—वङ्गदेश और युक्तप्रदेशके स्थान-स्थानपर रहता है। इसके गात्रसे छछूंदरकी तरह दुर्गन्ध उठता है। छछूंदर देखो।

९ खेतका चूहा (Gerbillus Indicus)—इसका ऊपरी भाग देखनेमें मृगशावकके गात्र-जैसा होता, दोनो पार्श्व काला रहता और निम्न अंश सादा लगता है। मस्तक तथा देह एकत्र सात और लाङ्गूल आठ इञ्च बैठता है। यह चूहा भारतवर्ष, अफ़ग़ानस्थान और सिंहलमें देख पड़ता है। भारतवर्षमें ही इसकी संख्या अधिक रहती है। लम्बे-चौड़े मैदान या रेतीली जगह पर यह प्राय: गर्त खोदा करता है। गर्त ज़मीनसे दो-तीन फीट ही नीचे पड़ता और मध्यमें कोई एक फ़ुट प्रशस्त शुष्क तृणयुक्त वासस्थान रहता है। यह चूहा शस्य, बीज, तृण और वृक्षमूल खाता है। इस जातिकी स्त्री एक काल आठसे बीस पर्यन्त बच्चे देती है।

महर्षि सुश्रुतने अट्ठारह प्रकारके इन्दुरका उल्लेख किया है,—

"लालन: पुत्रक: कृष्णो हंसिरश्चिक्किरस्तथा।
कुकुन्दरोलसश्चैव कषायदशनोऽपि च॥
कुलिङ्गश्चाजितश्चैव चपल: कपिलस्तथा।
कोकिलोऽरुणसञ्ज्ञश्च महाकृष्णस्तथेन्दुर:॥
श्वेतेन महता सार्धं कपिलेनाखुना तथा।
मूषिकश्च कपोताभस्तथैवाष्टादश स्मृता:॥"

(सुश्रुत कल्पस्थान ६अ०)

अर्थात् इन्दूर अष्टादश प्रकारका होता है—१ लालन, २ पुत्रक, ३ कृष्ण, ४ हंसिर, ५ चिक्किर, ६ कुकुन्दर, ७ अलस, ८ कषायदशन, ९ कुलिङ्ग, १० अजित, ११ चपल, १२ कपिल, १३ कोकिल, १४ अरुणसङ्ग, १५ महाकृष्ण, १६ श्वेत, १७ महाकपिल और १८ कपोत। सुश्रुतने उपरोक्त अट्ठारहो प्रकार इन्दूरके विषकी बात यों कही है,—

१ लालनके विषसे लालास्राव, हिक्का और वमनका वेग बढ़ता है। इसमें नटशाकका कल्क मधुके साथ सेवन करना चाहिये।

२ पुत्रकके विषसे शरीर अवसन्न एवं पाण्डुवर्ण पड़ जाता है। पीछे चुहिये-जैसी ग्रन्थि भी निकलती है। इसमें शिरीष और इङ्गुदीको पत्थरपर पीसकर मधुयोगसे खिलाते हैं।

३ कृष्ण इन्दुरके विषसे सचराचर—विशेषत: मेघाच्छन्न दिन रक्तवमन होता है। इसमें शिरीषफल और कुष्ठरस किंशुक भस्मयोगसे पिलाना चाहिये।

४ हंसिके विषसे अन्नमें विराग, जृम्भण, शरीर-लोमाञ्च और दन्तहर्षण होता है। रोगीको पहले वमन कराके आरग्वधादि पिलाते हैं।

५ चिक्किरके विषसे मस्तकमें यातना, शोफरुक्, हिक्का और वमि होती है। इसमें तरोयी, मैनफल और अङ्कोटका क्काथ पिला वमि तथा पूर्ववत् चिकित्सा कराना चाहिये।

६ कुकुन्दरके विषसे मलभङ्ग तथा ग्रीवास्तम्भन होता और सर्वदा दीर्घश्वास निकलता है। इसमें गोरच, यव और वृहतीका चार खिलाते हैं।

७ अलसके विषसे ग्रीवास्तम्भ, वायुका ऊर्ध्वगमन एवं दष्टस्थानमें दुःख होता और ज्वर चढ़ता है। इसमें घृत और मधुके सहयोगसे महागद चटाना चाहिये।

८ कषायदन्तके विषसे निद्राका वेग बढ़ता, हृदयमें शोष होता और शरीर कृश पड़ जाता है। इसमें शिरीषका सार, फल और वल्कल मधुसे चटाते हैं।

९ कुलिङ्गके विषसे दंशस्थानमें व्यथा, स्फीति और दीर्घरेखा उठती है। इसमें श्वेत एवं कृष्ण निसिन्धु, मुद्गपर्णी और माषपर्णीको मधुके साथ खिलाना चाहिये।

१० अजितके विषसे वमि, मूर्छा, एवं हृदयमें वेदना होती और चक्षुःपर श्यामता चढ़ती है। मनसा वृक्षके दूधमें काली हिरनपद्दीको पीस मधुसंयोगसे सेवन कराते हैं।

११ चपलके विषसे तृष्णा, वमि और मूर्छा होती है। इसमें देवदारु और त्रिफलाचूर्णको मधुके साथ चटाना चाहिये।

१२ कपिलके विषसे दंशित स्थानपर चत पड़ता, शरीरमें ग्रन्थि उठता और ज्वर चढ़ता है। इसमें त्रिफला, अपराजिता और पुनर्णवा मधुके साथ सेवन कराते हैं।

१३ कोकिलके विषसे शरीरमें उग्र गन्धि उठता, अतिशय ज्वर चढ़ता और भीषण दाह पड़ता है। इसपर भेक और नीलवृक्षके क्काथमें घृतको पकाकर पिलाना चाहिये।

१४ अरुणके विषसे वायु कुपित होने, १५ महाकृष्णके विषसे पित्त बढ़ने, १६ श्वेतके विषसे कफ बिगड़ने, १७ महाकपिलके विषसे रक्त खौलने और १८ कपोतके विषसे उक्त चारो दोष लगनेपर नानाप्रकारकी पीड़ा उठती है। इन पांचो प्रकारके इन्दुरोंका विष शान्त करनेको निम्नलिखित औषधकी व्यवस्था की गयी है,—दधि, दुग्ध एवं घृत दो-दो सेर, करञ्ज, आरग्वध, त्रिकटु तथा वृहती एक-एक और शालपर्णी दो भाग डाल सबका क्काथ बनाये। फिर तिल, गुलञ्च, वङ्ग, मृत्तिकायुक्त गुग्गुल, कपित्थ एवं दाड़िमत्वक्को पीस पूर्वोक्त क्काथमें चतुर्थांश रहनेपर डालना और मृदु अग्निपर पकाना चाहिये। यह औषध उक्त पांचो प्रकारके इन्दूरोंका विष शान्त करनेको अमोघ है।

बार्बरीका इन्दूर देखनेमें बहुत अच्छा लगता है। इसके कृष्णवर्ण शरीरमें श्वेत रेखा खिंची होती है।

बार्बरीका चूहा।
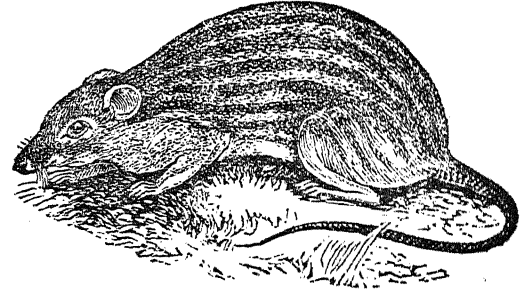
इन्दूरके शुक्रमें विष रहता है। वस्त्र वा शरीर मूत लगनेसे सड़ उठता है।

इन्दूरको सामान्य जन्तु समझ अवज्ञा करना उचित नहीं। जिस वाणिज्य और कृषिकार्यके लिये प्रति वर्ष कितने ही प्रकारका नियम निकलता, इसी सामान्य जन्तुसे उसपर कहा जा नहीं सकता—कितना अनिष्ट हुवा करता है।

इस सामान्य जीवकी भयङ्कर हिंसक प्रकृतिका प्रमाण भी मिला है। इन्दूर अपने स्वजातीयके साथ विवाद बढ़ा परस्पर लड़ता और युद्धमें मरनेसे दूसरेका भक्ष्य बनता है। शत-शत इन्दूर एकत्र लड़ते देख पड़े हैं। नारवे देशका एक जातीय इन्दूर बहुत ही भयानक होता है। यदि लोग चूहादान लगाकर फांस लेते, तो दूसरे चूहे धृत इन्दूरको मार डालते और समस्त रक्त पी जाते हैं। पकड़नेवाला किसी प्रकार उस इन्दूरको बचा नहीं सकता। बिड़ाल,

कुक्कुर और नकुलसे भी इन्दूर युद्ध करता है। किसी-किसी स्थलमें यह उन्हें मार भी डालता है। विलायतमें एक प्रकारका इन्दूर होता, जो सोते शिशु-का रक्त पीता है।

एक बार विलायतके न्यूगेट कारागारसे चार कैदियोंने गभीर रात्रिको भागनेकी चेष्टा लगायी थी। भागते समय कितने ही इन्दूरोंने उनपर आक्रमण किया। किसीने किसीका पैर पकड़ा और कोई इन्दूर किसीके गात्रपर जा चढ़ा था। इसी प्रकार चूहोंने कैदियोंको पकड़ लिया। वह कहां चुपके-चुपके भागे जाते थे, कहां विषम विभ्राट्में पड़ गये और परित्राहि परित्राहि चिल्लाने लगे। प्रतिवासियोंने आकर उन्हें बचा लिया था। उस समय वह फिर कारागार जानेसे कुछ न हिचके।

इन्दूर मारनेका उपाय—थोड़ेसे सड़े आटेमें मधु मिला तथा अल्प परिमाण सांड़का गोबर छोड़ लेयी बनाते, फिर छोटी-छोटी टिकिया उतार इन्दूरके गर्तमें डालते हैं। इससे निश्चय इन्दूर मर जाते हैं। अथवा अच्छी संखियेका चूर्ण नवनीत, तथा मधु मिला लेयी बनाते और जहां इन्दूर सर्वदा आते-जाते, वहां उसे लगा देते हैं। इन्दूर लेयीको प्रेमसे खाते और साथ ही साथ पञ्चत्व भी पाते हैं। किन्तु लेयी बनाकर हाथ धो डालना चाहिये। क्योंकि इस विषाक्त वस्तुसे सहज ही अनिष्ट आ सकता है। नक्सवमिकाको आटेमें मिला खिलानेसे भी निश्चय इन्दूर मरता है। गन्धकका धूम यह सह नहीं सकता। इसीसे अनेक लोग गर्तमें गन्धक जला इन्दूर मारा करते हैं।

औषध—एक छटांक इन्दूरमांस और एक पाव सर्षप तैलको साथ ही आगपर चढ़ाये। मांस तला-जैसा हो जानेपर उतार लेना चाहिये। इस तैलको मलनेसे गुदभ्रंश रोग सत्वर आरोग्य होता है।

वाणिज्य—इन्दूरके चमड़े और दांतका वाणिज्य चलता है। चमड़ेके दस्ताने स्त्रियां अपने लिये बनाती हैं। दांतके छोटे-छोटे बटन तैयार होते हैं। लोमको बड़े-बड़े साहब टोपीमें लगाते हैं। एकबार पारिस नगरके किसी नाबदानमें एकपक्ष मध्य ही छः लाख इन्दूर मारे गये थे।

इन्दूरका घर—बबयी पक्षी जैसे अपना घोंसला लगाता, एक प्रकारका विलायती क्षुद्र इन्दूर भी वैसे ही वृक्षपर लतापत्रका गोलाकार घर बनाता है। घरका पथ कोई ढूंढ नहीं सकता। बालक किसी प्रकारका फल वा अन्य पदार्थ समझ उसे तोड़ लाते और भूमिमें

घोंसले-जैसा घर।

गाड़कर खेल मचाते हैं। घर टूटनेसे देख पड़ता, कि उसमें पर-पर अनेक स्थान रहता है। प्रत्येक स्थानमें चक्षुहीन शिशु सोया करता है। घरके बीच एक पथ चलता है। बोध होता, कि उसी पथसे यातायात लगा रहता है।

नाना देशके लोग इन्दूर खाया करते हैं। हमारे देशके सन्ताल और भील चूहेको चबा डालते हैं। चीन, नेपाल, कालिफारनिया, फ्रान्स, मालटा और इङ्गलेण्डमें भी कोई-कोई इन्दूर खाता है। फ्रान्सके पारिस नगरमें किसी-किसी श्वेताङ्गिनीको चूहेका शोरबा बहुत अच्छा लगता है।

इन्दौर—मध्यभारतके मालवा प्रान्तका एक विशाल राज्य। यह अक्षा० २१° २४´ तथा २४° १४´ उ० और द्राघि० ७४° २८´ एवं ७८° १०´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ८४०० वर्गमील है। वार्षिक आय प्रायः एक करोड़ रुपयेसे अधिक है। राज्यका राजनैतिक सम्बन्ध बड़ेलाटके मध्यभारतस्थ एजण्टसे सीधा लगा है। इन्दौर राज्य चार भागमें विभक्त है। प्रथम भागसे उत्तर ग्वालियर-राज्य; पूर्व देवास, धारराज्य तथा नीमाड़, दक्षिण बम्बई प्रान्तका खान्देश जिला और पश्चिम बरवानी तथा धार पड़ता

है। यह उत्तरसे दक्षिण १२० मील लम्बा और ८२ मील चौड़ा है। बीचो बीच नर्मदा नदी बहती है। राज्यका दूसरा बड़ा भाग अक्षा० २४° ३´ एवं २४° ४०´ उ० और द्राघि० ७५° ६´ तथा ७६° १२´ पू०के बीच पड़ता है। यह प्रदेश पूर्वसे पश्चिम ७० मील लम्बा ४० मील चौड़ा है। प्रधान नगर रामपुरा, भानपुरा और चंदवाड़ा है। तीसरा भाग अक्षा० २३° २६´ उ० तथा द्राघि० ८५° ४२´ पू०पर अवस्थित और महीदपुर नगरसे संयुक्त है। चौथे भागमें अक्षा० २२° १०´ उ० और द्राघि० ७४° ३६´ पू०पर धौनगर विद्यमान है। कई छोटे-छोटे राज्य इन्दौरके अधीन हैं। सिवा इसके खासगी या सरकारी १५०से भी अधिक ग्राम लगते हैं। ग्राम समृद्ध हैं। प्राय: दश लाख रुपये वार्षिक ग्रामोंका आय है।

उत्तरमें चम्बल और दक्षिणमें नर्मदा नदी बहती है। दक्षिण दिक् विन्ध्याचल पर्वत खड़ा है। राज्यके मध्यको मन्देसोर उपत्यका समुद्रतलसे छ:-सात हज़ार फीट ऊंची है। ढाक, बबूल और दूसरे झाड़का जङ्गल पड़ता है। भूमि उर्वरा है। प्रधानत: गेहूं, चावल, बाजरा, दाल, राई, सरसों, गन्ना और रुईकी फसल होती है। अहिफेनकी कृषिके लिये भूमि अतिशय उपयुक्त है। उमदा तम्बाकू भी बहुत पैदा होती है। जङ्गलमें साखूको बोड़ लगायी जाती है। वन्य पशुमें सिंह, चित्रव्याघ्र, विडाल, तरक्षु, शृगाल, नीलगाव, और जङ्गली भैंसा मिलता है। नक्र और विषाक्त सर्पकी कोई कमी नहीं।

इन्दौरमें राजवंशीय महाराष्ट्र, हिन्दू, कुछ मुसलमान और बहुतसे गोंड तथा भील रहते हैं। सेनामें युक्तप्रदेश और पञ्जाबके लोग अधिकांश हैं। भील वन्यद्रव्य खा, आखेट मार और सभ्य प्रतिवासीको लूट अपना निर्वाह करते हैं। किन्तु अब युद्धपाठशालामें शिक्षा पानेसे वह पुलिस और पलटनमें अच्छा काम देने लगे हैं। लोकसंख्या दश लाखसे अधिक है।

बम्बईसे ३५३ मील दूर खंडवा जङ्क्शनसे होलकर-ष्टेट-रेलवे मवूको राह इन्दौर नगरको जाती है। महाराजको अतिरिक्त लाभका अर्धांश मिलता है। १८७६ ई०को नर्मदापर पुल बंधा था। इन्दौरसे नीमचको जानेवाली पक्की सड़कपर ही मवू नगर पड़ता है। इन्दौरसे खंडवेको भी पक्की सड़क निकली है।

इन्दौर नगरमें महाराज रुईका एक पुतलीघर चलाते हैं। अफीम धड़ाधड़ बाहर भेजी जाती है। अन्नका चालान अधिक नहीं होता।

इतिहास—होलकर वंश गड़रिये महाराष्ट्रोंसे सम्बन्ध रखता है। किसी गड़रियेके लड़के मल्हार रावने इस वंशकी प्रतिष्ठा की है। वह १६९३ ई०को दक्षिणमें नीरा नदीपर होल नामक ग्राममें उत्पन्न हुये थे। करका अर्थ अधिवासी है। इसीसे इस वंशका उपाधि होलकर अर्थात् होल ग्रामका अधिवासी पड़ गया है। युवावस्था पर मल्हार राव अपने घरका काम छोड़ किसी महाराष्ट्र पदाधिकारीकी अश्वारोही सेनामें भरती हुये थे। १७२४ ई०को वह पेशवाके अधीन पांच सौ सवारोंके नायक बने। थोड़े ही दिनमें मल्हार रावको कितनी ही भूमि पुरस्कार स्वरूप मिली थी। १७३२ ई०को उन्होंने पेशवाके प्रधान सेनापति बन मालवेके मुगल सूबेदारको युद्धमें नीचा देखाया, इस विजयके उपलक्षमें मल्हाररावको इन्दौर और जीते प्रान्तका अधिकांश सैनिक व्ययके लिये दिया गया था। १७३५ ई०को वह नर्मदासे उत्तर रहनेवाली महाराष्ट्र-सेनाके अध्यक्ष बने। फिर बारह वर्षतक मल्हारराव मुगलोंसे लड़ने और वसरेसे पोर्तगीजोंको निकालने तथा रुहेलोंसे लखनऊकी नवाबी बचानेमें सहायता पहुंचाते रहे। इसी बीच अधिकार और प्रभाव बढ़नेसे वह भारतीय नरेशोंमें अग्रगण्य हो गये थे। १७६१ ई०को पाणिपथ युद्धसे मल्हारराव सकुशल पीछे हट आये। वह मध्य-भारत पहुंचते ही अपने विशाल राज्यको घटा सम्बद्ध और नियमित बनानेमें लगे। १७६५ ई०को मल्हारराव स्वर्गवासी हुये। मल्हाररावके पुत्र मालीरावको राज्यका उत्तराधिकार मिला था। किन्तु वह सिंहासनपर बैठनेके नौ मास बाद ही पागल होकर मर गये। मालीरावके बाद सुप्रसिद्ध अहल्या-बाईने सेनापति तुकाराव जीके साथ

राज्यका प्रबन्ध अपने हाथ ले शान्तिपूर्वक ३० वर्षतक शासन चलाया था। १७९५ ई०को अहल्या-बाईके मरनेपर गृहविवादसे होलकर वंशका बल घटा। किन्तु तुकारावजीके जारजपुत्र यशोवन्त-रावने बिगड़ा काम बनाया था। एकबार भीषण रूपसे सेंधियाके साथ हारते ही उन्होंने अपनी सेना सुधारनेके लिये युरोपीय अफसर नौकर रखे। १८०२ ई०को यशोवन्त-रावने पेशवा और सेंधियाकी संयुक्त सेना हरा पूना नगर अधिकार किया था। किन्तु बसईमें जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार यशोवन्त-रावकी सवारी इन्दौर वापस आयी और पेशवाको उनकी राजधानी मिल गयी। १८०३ ई०के महाराष्ट्र-युद्धसे यशोवन्त-राव अलग रहे। अन्तको वह अंगरेज सरकारसे लड़ गये थे। पहले तो उन्होंने करनल मोनसनको पीछे हटाया और अंगरेज राज्यपर आक्रमण मारा, किन्तु अन्तको लार्ड लेकसे हारनेपर १८०५ ई०के दिसम्बर मास बियास नदी किनारे आत्मसमर्पणकर सन्धिपत्र लिख दिया। सन्धिके अनुसार युद्धमें जीता प्रान्त अंगरेजोंको मिला था। किन्तु दूसरे वर्ष अंगरेजोंने उनका अधिकार वापस किया। १८११ ई०को यशोवन्तराव पागल होकर मर गये। उनके लड़के मल्हार-राव रहे, जो तुलसी-बाई नामक रानीसे पैदा हुये थे। कुछ वर्षतक राज्यमें कितना ही झगड़ा चला और पिण्डारी डाकुवोंका उपद्रव बढ़ा। सेनाके विप्लव मचाने पर रानीने अपनी और मल्हार रावकी रक्षाके लिये अंगरेज सरकारसे सहायता मांगी थी। इसी बीच पेशवा और अंगरेज सरकारमें युद्ध लग गया। इन्दौरने भी पेशवाके साथ योग दिया था। रानीका वध हुआ और महीदपुरमें इन्दौरकी सेनाको पूर्ण रीतिसे नीचा देखना पड़ा। १८१८ ई०को मन्दसोरमें जो सन्धि हुयी, उससे कितनी ही भूमि राज्यसे निकल गयी थी। १८३३ ई०को मल्हाररावके मरनेपर उनकी विधवा रानीने मार्तण्ड-रावको गोद लिया। किन्तु कुछ सप्ताह बाद मार्तण्ड-रावको निकाल हरिरावने राज्यका भार अपने हाथ उठाया था। हरिरावके समय समस्त राज्यमे अराजकताकी धूम रही। १८४३ ई०को हरिराव मरे और उनके दत्तकपुत्र भी कुछ मास बाद चल बसे। १८५१ ई०को तुकारावजी सिंहासनारूढ़ हुये थे। १८५७ ई०को इन्दौरकी सेनाने अंगरेजी पोलिटिकल रेसिडेण्ट सर हेनरी डूरण्डको घेर लिया। मुश्किलसे वह अपने बालबच्चोंको ले भूपाल पहुंचे थे। किन्तु सेनाके कुछ सप्ताह बाद हथियार रख देनेसे फिर शान्ति हो गयी।

१८९९ ई०को इन्दौरमें वृटिश रेसिडेण्ट नियुक्त हुआ। उस समय राज्य-शासन-संक्रान्त कितने नियम परिवर्तित और मन्त्रिसभा स्थापित हुई। १९०३ ई० महाराज शिवाजीराव होलकर अपने १२ वर्षके अवस्थावाले पुत्र तुकाजी रावको राज्यभार सौंपा। बाद १९०८ ई०को महाराज शिवाजीका परलोक हुआ। महाराज तुकारावजी इस समय वर्तमान महीप हैं। होलकर देखो।

इन्दौर राज्यकी लोकसंख्या नौ लाखसे ऊपर है। अंगरेज इन्दौरकी रक्षा करते और दूसरे राज्यसे विवाद बढ़नेपर मिटा देते हैं। इन्दौरके महाराज दूसरे राज्यसे सीधे पत्रव्यवहार न चलाने, अधिक सेना न रखने, किसी युरोपीय या अमेरिकनको अपने राज्यमें नौकरी न देनेपर वाध्य हैं। उन्हें गोद लेनेकी सनद दी गयी है। अंगरेजोंमें १९ और अपने राज्यमें २१ तोपोंकी सलामी वह पाते हैं। ३१०० मामूली तथा २१५० गैरपाबन्द पैदल और २१०० मामूली एवं १२०० गैरपाबन्द सवार रहते हैं। २४ तोपोंमें ३४० आदमी लगते हैं। महाराजको फांसी देनेका अधिकार प्राप्त है।

राज्यका आय: बढ़ते जाता है। इन्दौरकी रेसिडेन्सीमें मध्य-भारतीय राजावोंके लड़कोंको शिक्षा देनेके लिये राजकुमार-कालेज बना है। किन्तु वह राज्यसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता, समस्त व्यय अंगरेज-सरकारसे मिलता है। १२से २० पर्यन्त राजकुमार शिक्षा पाते हैं। महाराजके स्कूलमें केवल दाक्षिणी ब्राह्मण पढ़ते हैं। मन्दसोर और खारगांवमें भी अंगरेजी स्कूल हैं।

२. इन्दौर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२°

४२´ उ० और द्राघि० ७५° ५४´ पू०पर अवस्थित है। इन्दौरमें महाराज और बड़ेलाटके पोलिटिकल एजगट रहते हैं। अहल्या-बाईने मल्हार-रावके मरनेपर यह नगर बनवाया था। राजप्रासाद, लालबाग, टकसालघर, हायीस्कूल, बाजार, पुस्तकालय, अस्पताल और रूईका पुतलीघर देखने योग्य है। नगरसे मिली अंगरेजी रेसीडेन्सीका अस्पताल बहुत बढ़िया है। कृत्रिम नाक प्रस्तुत होती है।

इन्द्र (सं० पु०) इदि परमैश्वर्ये रन्। ऋजेन्द्राग्र...... वज्रविप्रकुब्जचिपक्षुररवपिपलाम्रसोमाखेमाधवकाः।" उण् २।२८। १ शक्र, देवराज। यह वेदोक्त प्राचीन देवता हैं। वैदिक ऋषि जिन देवताओंकी आराधना करते, उनमें इन्द्र ही प्रधान रहे। ऋक्संहिताके मतमें इन्द्र निष्टिग्रीके पुत्र हैं। "निष्टिग्रः पुत्रमाच्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह।" (ऋक् १०।२०१।१२) माताने इनको सहस्र मास और अनेक वर्ष गर्भमें रखा था। उसके बाद इन्द्रने वीर्यपूर्ण हो स्वयं जन्मग्रहण किया। उस समय इनकी माता प्रमत्त हो गयीं थीं। (ऋक् ४।१८।५—८) इन्द्रने अपने पिताका पादद्वय ग्रहणकर उनको मार डाला। (ऋक ४।१८।१३, तै० सं० ६।१।३।६)

इन्द्रकी माताका नाम एकाष्टका रहा—

"एकाष्टका तपसा तप्यमाना
जजान गर्भम्महिमानमिन्द्रम्।
तेन देवा अस्हन्त शत्रून्
हन्ता दस्यूनामभवत् शचीपतिः॥" (अथर्व ३।१०।१२)

एकाष्टकाने घोरतर तपस्या करके महिमान् इन्द्रको उत्पन्न किया था। इन्होंके द्वारा देवताओंने शत्रुवोंपर आक्रमण मारा। शचीपति दस्युवोंके हन्ता हुये थे। सोम इन्द्रके जनक हैं। "सोम...जनिता इन्द्रस्य" (ऋक् ९।९६।५) इन्द्रने अग्नि सहित पुरुषके मुखसे जन्मग्रहण किया। "मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत।"(पुरुषसूक्त) ऋक्संहिताके मतमें इन्द्र एक आदित्य होते भी द्वादश आदित्यसे भिन्न हैं। इन्द्र प्रजापतिसे भी उत्पन्न माने गये हैं। (शतपथ १।१।१।१५) कहते हैं,—

"प्रजापतिर्देवासुरानसृजत। स इन्द्रमपि न असृजत। तं देवा अब्रुवन्निन्द्रं नो जनय इति। सो अब्रवीद् यथा अहं युष्मांस्तपसा असृचि एवमिन्द्रं जनध्वमिति। ते तपो अतप्यन्त ते आत्मनीन्द्रमपश्यन्। तमब्रुवन् जायस्व इति। अब्रवीत् किम् भागधेयमभिजनिष्ये इति। ऋतून् संवत्सरान् प्रजाः पशून् लोकानित्यब्रुवन्।" (तैत्तिरीय ब्राह्मण)

प्रजापतिने देवों एवं असुरोंकी सृष्टि की, किन्तु इन्द्रकी उत्पत्ति न हुयी। देवगणने उनसे इन्द्रको भी उत्पादन करनेको कहा था। उन्होंने उत्तर दिया,—हमारी तरह तपोबलसे तुम भी इन्द्रको उत्पादन करो। इसके बाद देवता तपस्यामें प्रवृत्त हुये थे। देवताओंने इन्द्रको अपने आत्मामें देख जन्म लेनेको प्रार्थना की इन्द्रने कहा—किस भाग्यमें जन्मग्रहण करें। देवताओंने ऋतु, वत्सर, प्रजा, पशु एवं इह लोकादिका नाम ले दिया था।

उक्त श्रुतिके अन्यस्थलमें, प्रजापति द्वारा इन्द्रका उत्पादन किया जाना भी लिखा है। (ऐतरेयब्राह्मण २।१) इन्द्रकी पत्नी इन्द्राणी हैं (ऋक् १।१२।१२)। स्त्रीका नाम प्रसहा भी लिखा है। (ऐतरेयब्राह्मण ३।२)

वैदिक देवताओंमें इन्द्र प्रधान योद्धा एवं श्रेष्ठ शक्तिसम्पन्न थे। ऋक्संहितामें इनके असीमगुणका परिचय पाया जाता है।

सामार्चिकमें भी लिखा है—

"इन्द्रस्य बाहू स्थविरौ युवान्वाधृष्यौ सुप्रतिकावसह्यौ।
तौ युञ्जीत प्रथमौ योगे आगते याभ्यां जितमसुराणां सह्यो महत्॥"

समय आनेपर (युद्धकालमें) इन्द्रने स्थविर, युवा, अनाधृष्य, सुप्रतीक और शत्रुके असह्य बाहुद्वयको पहले ही योजना कर डाली, जिसके प्रभावसे असुरोंकी शक्ति पराजित हो गयी। यह सुवर्णमय कोड़ाधारण करते और सूर्यके अश्व या कभी हिरण्यमय रथपर चढ़ते थे। वायु इनके सारथी रहे। (ऋक् ८।३३।११, १०।४९।७, ८।१।२४, ८।४८।३)

अस्त्रोंमें वज्र और अङ्कुश ही इन्द्र सदा व्यवहार करते थे। उस समय वृत्र नामक एक असुर देवताओंका सर्वदा अनिष्ट करता था। देवताओंने जाकर अपना दुःख इनसे कहा। इन्द्र देवताओंके साथ वृत्र-संहारमें अग्रसर हुये थे। इस युद्धमें सब देवता भागे, केवल मरुद्गण और विष्णु साहाय्यार्थ रह गये। इन्द्रने वज्रके द्वारा वृत्रको विनाश किया।

एतद्भिन्न अहि, शुष्ण, नमुचि, पिप्रु, शम्बर, उरण,

पणि वत्स प्रभृति प्रधान प्रधान असुरोंको भी इन्द्रने मारा था। (ऋक् १।१२।१९, १।१२।९-१०, ४।१८।१२ इत्यादि) नमुचि-वधके समय अश्विद्वय एवं सरस्वतीने इन्द्रको साहाय्य दिया।

इस सम्बन्धपर एक गल्प है—

"इन्द्रस्य इन्द्रियमन्नस्य रसं सोमस्य भक्षं सुरया आसुरो नमुचिरहरत्। सोऽश्विनौ च सरस्वतीञ्च उपधावत्। शेपानोऽस्मि नमुचये न त्वा दिवा न नक्तं हनानि न दण्डेन न धन्वना न पृथेन न मुष्टिना न शुष्केण न आर्द्रेण अथ मे इदमहार्षीत्। इदं मे आजिहीर्षथ इति। तेऽब्रुवन्नस्तु नाऽत्राप्यथ आहराम इति। सह न एतदथ आहरत इत्यब्रवीदिति। तावश्विनौ च सरस्वती च अपांफेनं वज्रमसिञ्चन् न शुष्को न आर्द्रः इति। तेन इन्द्रो नमुचिरासुरस्य व्युष्टायां रात्रौ अनुदिते आदित्ये न दिवा न नक्तमिति शिर उदवासयत्। तस्य शीर्षच्छिन्ने लोहितमिश्रः सोमोऽतिष्ठत्।" (शतपथ-ब्राह्मण १२।७।३।१)

नमुचि नामक असुर इन्द्रका इन्द्रिय, अन्नरस और सुराके साथ सोमपात्र अपहरण कर ले गया। पीछे उन्होंने अश्विद्वय एवं सरस्वतीके निकट जाकर कहा, मैंने नमुचिको दिवा अथवा रात्रिमें यष्टि, धनुः, चपेटिका मुष्टिसे शुष्क अथवा आर्द्र स्थानपर न मारनेका शपथ किया है। इस समय मेरी सर्व शक्ति हरण कर ली है। क्या आपलोग मेरा उद्धार कर सकते हैं?" उसके बाद अश्विद्वय एवं सरस्वतीने जलके फेनसे वज्रको सिञ्चन कर उत्तर दिया, 'यह शुष्क वा आर्द्र नहीं है'। इन्द्रने उसी वज्रसे नमुचिका मस्तक खण्ड खण्ड कर डाला। उस समय रात्रि बीतनेपर भोर हो रहा था। सूर्योदय न होनेसे वह समय रात्रि दिन कैसे समझा जा सकता था। नमुचिके मस्तक-छेदन काल सोम रक्त मिश्रित होनेपर अवज्ञा करने लगी, किन्तु पीछे सब कोई पी गये।

अथर्वसंहितामें लिखते,—इन्द्र असुरनारीके प्रेममें मुग्ध हुये थे। काठकके (१३.५) मतसे यह विलिस्तेङ्गा नामक दानवीपर अनुरक्त रहे। ऋक्-संहितामें इन्द्रके अतिशय सोमप्रिय होनेका विस्तर प्रमाण मिलता है।

इन्द्र वारिवर्षण करते और वज्र एवं विद्युत् चलाते हैं। इन्होंने असुरोंके लोहनिर्मित नगर तोड़ असंख्य दस्यु वा दास जातिको विनाश किया था।

पौराणिकके मतमें इन्द्रके पिता कश्यप रहे। माताका नाम अदिति था। इन्होंने वृत्रादि असुरोंका वध करनेसे वृत्रहा नाम पाया। इन्द्र पूर्वदिक्के पालक और सबको जलदान करनेवाले हैं।

तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें लिखा, इन्द्रको अपर किसी देवीके रूपपर मोह नहीं हुआ। इन्होंने केवल इन्द्राणीको ही रूपपर मोहित हो पत्नी बनाया था। किन्तु पौराणिक मतसे इन्द्रने पुलोमा दैत्यको मार उसकी कन्या ग्रहण की थी। वही कन्या इन्द्राणी हुई। इन्होंने दितिके गर्भस्थ पुत्रको नाश करनेके लिये खण्ड खण्ड किया, उसीसे मरुद्गणने जन्म लिया। दिति और मरुद देखो।

पारिजातके लिय इन्द्रके साथ कृष्णका विवाद हुआ था। कृष्ण और पारिजात देखो। व्रजके गोप इन्द्रकी पूजा करते रहे। किन्तु पीछे कृष्णने उस पूजाको उठा दिया था। इन्द्र क्रुद्ध हो अनवरत जल बरसाने और व्रज डुबाने लगे। कृष्णने गोवर्द्धन धारणकर व्रजवासियोंकी रक्षा की। (हरिवंश) इन्द्रके पुत्र जयन्त, ऋषभ और मीढ़ रहे। तृतीय पाण्डव अर्जुन भी इन्द्रपुत्र कहे जाते हैं। राज्यका अमरावती, उद्यानका नन्दन, अश्वका उच्चैःश्रवा, हस्तीका ऐरावत, रथका विमान, सारथिका मातलि, धनुःका इन्द्रधनुः और असिका नाम परञ्ज है। इन्द्र सब देवताओंके राजा हैं। गुरुपत्नी अहल्याको हरण करनेसे इनके सहस्र चक्षुः हुआ। अहल्या देखो। प्रधान अस्त्र वज्र है। एक एक मनु पर्यन्त इन्द्रका अधिकार रहता है। राजत्वके बाद यह १०० वर्ष पर्यन्त ब्रह्माके निकट ब्रह्मविद्या अध्ययन करते, उसके बाद कैवल्य पाते हैं। इन्द्र त्वष्टृपुत्र विश्वरूपके वध पापसे राज्यच्युत हुये। अनन्तर इन्होंने पाप भोग करनेपर फिर अपना राज्य प्राप्त किया था। इन्होंने पर्वतोंका पक्ष छेदनेसे गोत्रहा और १०० शत अश्वमेध यज्ञ करनेसे शतक्रतु नाम पाया है। इन्द्रजित देखो। इन्द्रके नाम अनेक हैं—महेन्द्र, शक्रधनु, ऋभुक्ष, अर्ह, दत्तेय, वज्रपाणि, मेघवाहन, पाकशासन, देवपति, दिवस्पति, स्वर्गपति, उलूक, जिष्णु, मरुत्वान्,

उग्रधन्वा इत्यादि है। प्रति मन्वन्तरमें इन्द्रके नाम पृथक् पृथक् पड़ते हैं—१ यज्ञ, २ रोचन, ३ सत्यजित्, ४ त्रिशिख, ५ विभु, ६ मन्त्रद्रुम, ७ पुरन्दर, ८ वलि, ९ श्रुत, १० शम्भु, ११ वैधृत, १२ ऋतधाम, १३ दिवस्पति और १४ शुचि।

२ परमात्मा। ३ योगविशेष। ४ श्रेष्ठ। ५ कुटजवृक्ष। ६ रात्रि। ७ प्रथम। ८ राजा। ९ ज्येष्ठानक्षत्र। १० धनवान्। ११ अन्तरात्मा। १२ धन। १३ इन्द्रिय। १४ छन्दोविशेष, चौदह संख्या। १५ बङ्गालमें दक्षिणराढ़ीय और बङ्गज कायस्थोंका एक उपाधि।

इन्द्रऋषभ (वै० त्रि०) इन्द्रको वृषभकी भांति रखनेवाली, जिसे इन्द्र हामला बनाये। यह शब्द पृथिवीका विशेषण है।

इन्द्रक (सं० क्ली०) इन्द्रस्य धनिनः कं सुखं यत्र, बहुव्री०। १ सभागृह, बैठकखाना। २ इन्द्रका सुख। ३ मन्दरगिरि।

इन्द्रकर्णक (सं० पु०) रक्तैरण्ड, लाल रेड़का पेड़।

इन्द्रकर्मन् (सं० पु०) इन्द्रस्येव ऐश्वर्यान्वितं कर्मास्य। विष्णु, इन्द्रका काम करनेवाले भगवान्।

इन्द्रकर्मा इन्द्रकर्मन् देखो।

इन्द्रकील (सं० पु०) इन्द्रस्य कील इव। १ मन्दरपर्वत। यह बड़ा पहाड़ है। नाना प्रकार मणिमुक्ता विद्यमान है। शिशुपाल-वधके समय श्रीकृष्णने पहले यहां क्रीड़ा की थी। २ पर्वत, पहाड़।

"न विघ्नमिन्द्रकीलचतुष्पथश्वभ्राणामुपरिष्टात्।" (सुश्रुत)

इन्द्रकुञ्जर (सं० पु०) ऐरावत, इन्द्रका हाथी। समुद्रमन्थनके समय इन्द्रने इसे पाया था।

इन्द्रकूट (सं० पु०) इन्द्रः ऐश्वर्यवान् कूटोऽस्य, बहुव्री०। एक पर्वत। यह कैलासके निकट विद्यमान है। "महागिरिः सकैलास इन्द्रकूटश्च नामतः।" (हरिवंश १७०।१५)

इन्द्रकृष्ट (सं० त्रि०) कृष भावे क्त तत् अस्ति अस्मिन्, अर्श आदित्वात् अच्; इन्द्रेण इन्द्रहेतुकं कृष्टम्। इन्द्रकर्षित, जङ्गलमें पैदा होनेवाला। वृष्टिपड़नेसे जो धान्यादि स्वभावतः उपजता, वह इन्द्रकृष्ट बजता है।

"इन्द्रकृष्टैर्वर्तयन्ति धान्यै ये च नदीमुखैः।" (महाभारत सभा० ५१।९)
'इन्द्रकृष्टैः इन्द्रेणैवाकृष्टैर्न तु कर्षणादि हेवियक यत्नापेक्षैः।'(नीलकण्ठ)

इन्द्रकेतु (सं० पु०) इन्द्रका ध्वज, विमानकी पताका।

इन्द्रकोश, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रकोष (सं० पु०) ६-तत्। १ मञ्च, मचान। २ खट्वा, खाट। ३ निर्यूह, फलोंका काढ़ा। ४ निर्यास, पेड़का दूध। ५ तमङ्गक, छज्जा।

इन्द्रकोषक, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रगिरि (सं० पु०) इन्द्रनामा गिरिः, शाक-तत्। महेन्द्रपर्वत।

इन्द्रगुप्त (सं० क्ली०) १ उशीर, खस। (वै० त्रि०) २ इन्द्रद्वारा रक्षित, जिसके इन्द्र हिफाज़त रखे।

इन्द्रगुरु (सं० पु०) १ वृहस्पति। २ कश्यप।

इन्द्रगोप (सं० पु०) इन्द्रः गोपः रक्षकः यस्य, बहुव्री०। १ शक्रगोप, वीरबहूटी। यह श्वेत और रक्तवर्ण दोनो प्रकारका होता है। (वै० त्रि०) २ इन्द्रकर्तृक रक्षित। (ऋक् ८।४६।३२)

इन्द्रघोष (सं० पु०) इन्द्र इति स्पष्टं घुष्यते, घुष्-घञ्। इन्द्र।

इन्द्रचन्दन (सं० क्ली०) इन्द्रस्य इन्द्रप्रियं वा चन्दनम्, ६-तत् वा शाक-तत्। १ हरिचन्दन, श्वेतचन्दन। २ रक्तचन्दन, लाल चन्दन।

इन्द्रचाप (सं० पु०) इन्द्रे इन्द्रस्वामिके मेघे चाप इव, शाक-तत्। १ इन्द्रधनुः। ६-तत्। २ इन्द्र-शरासन।

इन्द्रचिर्भिटा, इन्द्रचिर्भिटी देखो।

इन्द्रचिर्भिटी (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया चिर्भिटी, शाकतत्। एक लता। वैद्यशास्त्र-मतसे इसके पर्याय हैं,—इन्दीवरा, युग्मफला, दीर्घवृन्ता, उत्तमारणी, पुष्पमञ्जरिका, द्रोणी, करम्भा और नलिका। इन्द्रचिर्भिटी तिक्त, शीतल और श्लेष्मनाशक होती है। यह पित्त, कास, व्रणदोष और कृमिको नष्ट करती है। चक्षुरोगमें इन्द्रचिर्भिटी विशेष उपकारी है। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रच्छन्द (सं० क्ली०) इन्द्र-इव सहस्रनेत्रेण सहस्रगुच्छेन छाद्यते, छद-असुन्-ल्युट् निपातनात्। सहस्रगुच्छ-हार, हज़ार लड़ोंकी माला।

इन्द्रज (सं० पु०) १ इन्द्रयव। २ कुटजवृक्ष।

इन्द्रजतु (सं० क्ली०) शिलाजतु।

इन्द्रजनन (सं० क्ली०) इन्द्रस्यात्मनः जननः देह-

सम्बन्धः, कः। १ इन्द्रका जन्म। २ परमात्माका देह-सम्बन्ध विशेष।

इन्द्रजननीय (सं॰ वि॰) इन्द्रजन्म-सम्बन्धीय, इन्द्रकी पैदायशका हाल बतानेवाला।

इन्द्रजम्बूकवत्पत्रा (सं॰ स्त्री॰) कृष्णसारिवा, काली सतावर।

इन्द्रजव (हिं॰) इन्द्रयव देखो।

इन्द्रजा (वे॰ त्रि॰) इन्द्रसे उत्पन्न, जो इन्द्रसे पैदा हो।

इन्द्रजानु (सं॰ पु॰) वानरविशेष, किसी बन्दरका नाम।

इन्द्रजाल (सं॰ क्ली॰) इन्द्राणां इन्द्रियाणां जालं आवरकं यद्वा इन्द्रस्येश्वरस्य जालं मायेव। १ इन्द्रका पाश। २ युद्ध-कल्पना, जङ्गका फरेब। ३ छल, धोखा। ४ माया, हस्तलाघव, तिलस्म, बाजीगरी। ५ तन्त्रशास्त्र विशेष।

मन्त्र एवं द्रव्य द्वारा किसी वस्तुको अन्य प्रकार बनाना इन्द्रजाल नामक स्वतन्त्र शास्त्र तन्त्रके अन्तर्गत है। गुरु उपदेश विना इसकी शिक्षा नहीं मिलती। इन्द्रजालमें नाना विषय वर्णित हैं। उसे दृष्टान्त स्वरूप कुछ नीचे लिखते हैं,—

१, एक प्रस्थ (२ सेर परिमाण) महाकाल या लाल इन्द्रायणके वीजमें धात्रीरसकी सात भावना दे और उसे गोली-जैसा बना मुखके भीतर रखें तो मनुष्य कपोत बन जाता है। २, छागलके मस्तकपर काली मट्टी रखनेसे और उसमें धतूरेका वीज बोनेसे जो फूल आता है,उसको गात्रमें लगाते ही मनुष्य बकरा बन जाता है। ३, कृष्णचतुर्दशीको मयूरके मस्तक-पर काली मट्टी चढ़ा सनका वीज डालनेसे जब फल-फूल उतरे, तब उसको गलेमें बांधते ही मनुष्य मयूरका रूप धारण कर लेता है। ४, कृष्णचतुर्दशीको मयूरके मस्तकपर काली मट्टी लगा कपासका वीज बोनेसे जब फल-फूल लगें, तब उसे कूट-पीसकर गात्रपर मलनेसे मनुष्य पानीमें नहीं डूबता और भूमिकी तरह जलपर खड़ा रहता है। ५, काले कौवेके मस्तक-पर मट्टी डाल वृहती या बढ़न्तेका वीज बोये। और उसके फलको मुखमें दबा लेनेपर मनुष्य कौवेकी तरह उड़ता है, किन्तु उसे उगल देनेसे वह फिर मनुष्य हो जाता है। ६, कृष्णचतुर्दशीको कबू-तरके मत्थेपर मट्टी डाल तिल बोये और दूधमें पानी मिला उसे सीं-चता रहे। फूल निकलनेपर उसे मुखमें रखनेसे कोई उस मनुष्यको देख नहीं सकता। और उस तिलके फलको कूटपीस गात्रमें लगा देनेसे मनुष्य किङ्कर बन जाता है। तथा समग्र धन-सम्पत्ति स्वेच्छाक्रमसे छोड़ बैठता है। ७, फिर उसी तिलको कपिलाके दूधमें पीस गोली बनावे और सात राततक पकाता रहे। पीछे गोली मुखमें दबा लेनेसे देवता भी उस मनुष्यको देख नहीं सकते। किन्तु गोली उगल देनेसे उसको सब लोग फिर देख सकते हैं। वह सौ वर्षतक जीता है और क्या स्त्री क्या पुरुष सब कोई उसके वश हो जाते हैं। ८,कृष्ण-चतुर्दशीको शकुनिके मस्तक पर मट्टी डाल लहसुन लगायिये और फूल आनेपर पुष्यानक्षत्रमें तोड़ कपिलाके घृतसे काजल पारिये। उस फूलको उक्त काजलमें मिला आंखमें लगानेसे सौ योजन पर्यन्त दीख पड़ता है। दिनके समय नक्षत्र दृष्टिगोचर होते हैं। ऊंट, गर्दभ, महिष प्रभृति बड़े-बड़े जन्तुके मस्तकपर यदि लहसुन बोवे और फल-फूल तोड़ रखे तो फिर इस फल-फूलको मुंहमें डालनेसे उक्त जन्तुके जीवित हो जानेमें कोई सन्देह नहीं रहता।

उक्त सकल धारणाका मन्त्र 'ॐ ह्रीं ह्रों ह्रं ऐं लं लं ॐ भी स्वाहा' लक्षजप करनेसे पुरश्चरण और सहस्र जप करनेसे होम होता है। घृत द्वारा तर्पण और मार्जन करना चाहिये। ब्राह्मणभोजनादि करानेसे सिद्धि मिलती है।

उल्लूकी खोपड़ीमें घृतसे कज्जल पार उसे आंखमें आंजनेपर अन्धकारमें भी पुस्तक पढ़ सकते हैं। 'ॐ नमो नारायणाय विश्वम्भराय इन्द्रजाल-कौतुकानि दर्शय सिद्धिं कुरु स्वाहा' मन्त्र १०८ बार जपनेसे कार्यसिद्धि होती है। उक्त मन्त्र सिद्ध न होनेसे कार्यमें सफलता नहीं मिलती।

'ॐ नमः परब्रह्म परमात्मने मम शरीरं पाहि पाहि कुरु कुरु' रक्षामन्त्र है। इसी मन्त्रसे रक्षा बांध कार्य करना चाहिये।

वृहस्पतिवारकी हाथीकी खोपड़ीमें अङ्कोलका बीज बो मन्त्रपाठपूर्वक जलसेचन करे और फल लगनेपर एक बीजको त्रिलौहसे लपेट मुखमें दबा ले। इस प्रक्रियासे मनुष्य हस्ती-जैसा बलवान् और वायु-तुल्य पराक्रमी हो सकता है। त्रिलोह सकल कार्यमें प्रसिद्ध है। दश भाग सोना, बारह भाग तांबा और सोलह भाग रूपा मिलानेसे त्रिलोह बनता है। महादेवका वाक्य मिथ्या नहीं,—किसी बीजको अङ्कोलके बीजमें मिला मट्टीमें बोवे और फिर मन्त्र पढ़कर त्रिलौहसे लपेट उसे मुखमें रखे तो साधक बिलकुल वैसा ही बन सकता है। कई बीज अङ्कोलमें मिलाकर बोनेसे उसी समय वृक्ष उगता है। अङ्कोलके फलका तेल एक विन्दु मुखमें डालनेसे मुर्दा प्रहरके मध्य ही जी उठता है।

शोभाञ्जनाका तेल, कपोतकी विष्ठा, शूकर तथा गर्दभकी चर्बी, हरिताल और मनःशिला एकमें मिला टीका लगानेसे मनुष्य वारण-जैसा बन सकता है।

पेचककी विष्ठा एरण्डतेलके साथ रगड़ गात्रमें लगाते ही लोग पागल हो जाते हैं।

सर्पका दन्त, काले बिच्छूका कण्टक और छिपकली (कृकलास) का रक्त एकमें पीस गात्रपर लगाते ही मनुष्य मरता है।

सिन्दूर, गन्धक, हरिताल तथा मनःशिलाको एकत्र पीस वस्त्रपर डालने और पीछे उसी वस्त्रको मस्तक पर बांधनेसे समस्त जगत् अग्निमय दीख पड़ता है।

विकीरण, वट और उडुम्बरका दुग्ध किसी पात्रके मध्य लगा कर जल डालनेसे दूध निकलता है।

अङ्कोलके फलका तेल अङ्गमें मलनेसे मनुष्य राक्षस-जैसा लगता है और उसे देखते ही सब कोई भय खाकर भागते हैं।

अङ्कोलके फलका तेल रात्रिको प्रदीपमें जलानेसे आकाशका भूत सकल भूमिपर दीख पड़ता है।

बुध वा शनिवारको कृकलास मारकर शत्रुगणके मूत्रोत्सर्ग-स्थानमें गाड़ दे। पीछे उसे न उखाड़नेसे शत्रु क्लीब हो जाते हैं।

गन्धक, हरिताल, गोमूत्र और विष एकत्र पीस अग्निमें छोड़नेसे समस्त विघ्न मिटता है। (दत्तात्रेयतन्त्र)

वशीकरण एवं आकर्षण वसन्त, विद्वेषण ग्रीष्म, स्तम्भन वर्षा, मारण शिशिर, शान्तिकर्म शरत् और उच्चाटनकार्य हेमन्तकी पूर्णिमाको करना चाहिये। वशीकरण देखो। दिनके पूर्वाह्न वसन्त, मध्याह्न ग्रीष्म, अपराह्न वर्षा, सन्ध्या शिशिर, अर्धरात्र हेमन्त और फिर शरत् ऋतुका समय आता है।

पक्षादि निर्णय—मारणादि अभिचार कृष्णमें, और शान्ति प्रभृति मङ्गलकर्म शुक्लपक्षमें करना उचित है। द्वादशी तथा एकादशीको मारण; तृतीया एवं नवमीको वशीकरण; चतुर्दशी, चतुर्थी तथा प्रतिपत्को स्तम्भन और द्वितीया, षष्ठी एवं अष्टमीको शान्तिकर्म होता है।

अश्विनी, मृगशिरा, मूला, पुष्या तथा पुनर्वसुमें वशीकरण और अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा एवं रोहिणी नक्षत्रमें मारण, विजय, शान्ति तथा स्तम्भन किया जाता है। इस सकल कार्यमें तिथि और नक्षत्रकी विवेचना आवश्यक होती है, नहीं तो मन्त्रादिकी सिद्धि बिगड़ जाती है।

जय—पुष्या नक्षत्रमें गोजिह्वा और अपामार्गका मूल उखाड़ मस्तकपर रखनेसे सकल विवादमें जय मिलता है।

सौभाग्य—पुष्यानक्षत्रमें श्वेत विकीरणका मूल उखाड़ दक्षिण बाहुपर बांधनेसे सौभाग्य बढ़ता है।

क्रोधोपशम—'ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रोधोपशमनी स्वाहा' मन्त्र इक्कीस बार जपकर जो मनुष्य मुख धोता है, उसके प्रति किसीको क्रोध नहीं होता।

श्वेत अपराजिताका मूल हस्तपर बांधने और शिवजटाका मूल मुखमें डालनेसे हस्ती निकट नहीं आ सकता।

वृहतीमूल हस्त और मुखमें धारण करनेसे व्याघ्रका भय छूट जाता है।

'क्रीं क्रीं क्रीं श्रीं श्रीं श्रीं स्वाहा' मन्त्र पढ़कर पत्थर फेंकनेसे व्याघ्र नतो मुख झुका सकता है और न चल ही सकता है। नारिकेलमूल कृष्णाचतुर्दशीको धारण करनेसे व्याघ्रका भय नहीं होता। (इन्द्रजालतन्त्र)

स्तम्भन—जिस व्यक्तिके मुखमें सफेद चिरमिटीकी जड़ रहती है उसके सामने किसीकी बात नहीं चलती।

'ॐ ह्रीं ह्रीं रक्ष रक्ष चामुण्डे कुरु कुरु अमुकं मे वशमानय वशमानय स्वाहा' मन्त्रसे कार्यसिद्धि होती है। रविवारको पुष्यानक्षत्रमें यष्टिमधुका मूल उखाड़ सभामें फेंक देनेसे सबका मुंह बन्द हो जाता है।

मेघस्तम्भन—एक ईंटपर चार चतुष्कोण रेखा खींच दूसरी ईंटसे दबावे और 'ॐ मेघान् स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा' मन्त्र पढ़कर किसी बागमें गाड़ देवे तो मेघकी वृष्टि रुकती है।

भरणीनक्षत्रमें उदुम्बर प्रभृति क्षीरीवृक्षके मूलको और पांच अङ्गुल परिमाण एकखण्ड काष्ठको नौकामें डाल देनेसे उसकी चाल रुक जाती है।

निद्रास्तम्भन—यष्टिमधु और वृहतीका मूल बारीक पीसकर सूंघनेसे निद्रा नहीं आती।

अस्त्रस्तम्भन—कपित्थका मूल कृत्तिका-नक्षत्रमें उखाड़ धारण करनेसे देवगणका अस्त्र भी स्तम्भित होता है।

गुलञ्चका मूल उखाड़ हस्तपर धारण करनेसे शस्त्र-भय छूट जाता है।

'ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस निकषागर्भसम्भूत परसैन्यस्तम्भन महाभय रणरुद्र आज्ञापय स्वाहा' मन्त्र १०८ बार जप करने और अपामार्गमूल शुभ नक्षत्रमें उखाड़ शरीरपर मलनेसे समस्त शस्त्रका स्तम्भन होता है।

पेटकी हड्डी गोष्ठकी चारों ओर भूमिमें गाड़ देनेसे गो, मेष, महिष, अश्व प्रभृति स्तम्भित हो जाते हैं।

भृङ्गराज, अपामार्ग, श्वेत सर्षप, सहदेविका, अर्शघ्न, वच और श्वेत विकीरणका मूल उखाड़ लौह पात्रमें रखे और दो दिनके बाद निकाले। फिर उसका तिलक लगावे और 'ॐ नमो भगवते विश्वामित्राय नमः सर्वसुखीभ्यां विश्वामित्र आगच्छ स्वाहा' मन्त्रका जप करे तो सब प्राणियोंकी बुद्धि स्तम्भित होती है।

'ॐ ब्रह्मवेशिनि शिरे रक्ष रक्ष स्वाहा' मन्त्र पढ़कर सात पांसे उठायिये। उनमेंसे तीन कटिमें बांधने पर और बाकी हाथमें रखनेपर चौरगति रुक जाती है।

देहरञ्जन—कदम्बपत्र, लोध्र और अर्जुनपुष्पो एकत्र पीस अङ्गमें लगानेसे दुर्गन्ध दूर होती है।

एला, शटी, तेजपत्र, रक्तचन्दन, हरीतकी, शोभाञ्जन, मुस्तक, कुष्ठ और अन्यान्य सुगन्ध द्रव्य पीस गात्रमें मलनेसे जो सौरभ उठता है, उससे सकल ही मोहित हो जाते हैं।

आम्र एवं जम्बुकी आठी तथा पद्ममूल पास मधुके साथ रात्रिको मुखमें रखनेसे पुरुषके मुखका दुर्गन्ध दूर होता है और सुगन्ध आने लगती है। मुरामांसी, नागकेशर एवं कुष्ठको बांटकर पन्द्रह दिन तक प्रातः तथा सन्ध्याकाल चाटनेसे स्त्रीके मुखमें कर्पूरकी गन्ध भर जाती है।

लोहका मल, जवापुष्प और आमलको बांटकर शिरःपर लगानेसे तीन मासके मध्य सफेद बाल काले हो जाते हैं।

छागीके दुग्ध द्वारा सात दिन पर्यन्त भावना दे तिलका तेल निकाले और फिर उसे शिरःमें लगावे तो काले बाल सफेद हो जाते हैं।

अश्विनी नक्षत्रमें वटकी जीवन्तिका दुग्धके साथ खानेसे पुरुष बलवान् बनता है। पुष्यनक्षत्रमें विकीरणका मूल उखाड़ गोदुग्धसे बांटकर खानेपर सात दिनमें वृद्ध भी युवाके समान कूदने लगता है।

जन्मवन्ध्या-चिकित्सा—रविवारको मूलपत्र तथा शाखा सहित गन्धनाकुली उखाड़ एकवर्ण गौके दुग्धमें अविवाहित कन्यासे पिसा ऋतुकालमें चार तोले परिमाण सात दिन पर्यन्त खावे और दुग्ध एवं मूंगकी दाल प्रभृति लघु पथ्य खावे तो वन्ध्याके गर्भ रह जाता है। इस औषधको खाकर उद्वेग, भय, शोक और दिवानिद्रा त्याग कर देना चाहिये। परिश्रमका कार्य करना भी मना है। केवल पतिका सहवास रखना कहा है। अन्यथा होनेसे गर्भ नहीं रहता।

कृष्ण अपराजिताका मूल छागीके दुग्धमें बांटकर ऋतुकालपर पीनेसे वन्ध्या गर्भधारण करती है।

गोक्षुरका वीज निसिन्धुके रसमें बांटकर तीन या सात दिन सेवन करनेसे वन्ध्या गर्भवती होती है।

काकवन्ध्या-चिकित्सा—रविवारको पुष्यानक्षत्रमें अश्वगन्धाका मूल महिषीके दुग्धमें बांटकर ४ तोले परिमाण सात दिन खानेसे काकवन्ध्याको गर्भ रह जाता है।

मृतवत्सा-चिकित्सा—कृत्तिकानक्षत्रमें पूर्वमुख हो पीतघोषा लताका मूल जलके साथ पीस दो तोले परिमाण खानेसे मृतवत्सा दोष दूर होता है।

दाड़िमका मूल दुग्धके साथ बांट पीने और निज पतिसहवास करनेसे मृतवत्सा दीर्घायु पुत्र प्रसव करती है।

मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु, कुष्ठ, त्रिफला, शर्करा, मेदा लता, क्षीरयुक्त भूमिकुष्माण्ड, काकोली, अश्वगन्धा-मूल, यमानी, हरिद्रा, क्षीरकाकोली, श्वेतचन्दन, दारु-हरिद्रा, हिङ्गुल, कटुकी, नीलोत्पल, कुमुद एवं द्राक्षाको दो-दो तोले ले चार सेर घृतमें पकाइये और पाकके समय शतमूलीका रस तथा दुग्ध छः-छः सेर डाल दीजिये। नियमपूर्वक पकाकर इस घृतको जो नारी पीती है, वह सुन्दर पुत्र प्रसव करती है। अल्पायु सन्तान और केवल कन्या प्रसव करनेका दोष इस घृतसे छूट जाता है। योनि एवं रजोदोष और गर्भस्रावमें यह विशेष उपकार पहुंचाता है। इसके पानसे प्रजा तथा आयुर्वृद्धि और ग्रहदोषकी शान्ति होती है। इसे फलघृत कहते हैं। यह अति आयुष्कर है। वैद्य इस घृतमें श्वेत कण्टकारी भी डालनेकी व्यवस्था देते हैं। जङ्गली वेरकी आगसे इसे पकाना पड़ता है।

गर्भस्राव-चिकित्सा—प्रथम मासके गर्भस्रावपर पद्मकेशर और रक्तचन्दन समभाग गोदुग्धके साथ बांट कर खानेसे दोष दूर हो जाता है। अथवा यष्टिमधु, देवदारु, शरवीज और क्षारकाकोली गोदुग्धमें पीस कर पीनेसे गर्भस्राव रुकता है।

द्वितीय मास नीलोत्पल, पद्ममृणाल, यष्टिमधु और कर्कटशृङ्गी गोदुग्धके साथ बांट कर पीनेसे वेदना मिटती है।

तृतीय मास रक्तचन्दन, तगर, कूट, मृणाल और पद्मकेशर शीतल जलमें पीसकर पीनेसे पीड़ा छूटती है। अथवा क्षीरकाकोली, बला और अनन्तमूलको दुग्धमें रगड़कर पीना चाहिये।

चतुर्थ मास श्वेत उत्पल, मृणाल, गोक्षुर और केशरको दुग्धमें बांटकर सेवन करनेसे गर्भस्राव रुकता है। अथवा यष्टिमधु, रास्ना, श्यामालता, ब्राह्मणयष्टिका और अनन्तमूल गोदुग्धमें पीसकर पीना चाहिये।

पञ्चम मास पुनर्नवा, काकोली, तगर तथा नीलोत्-पल अथवा वृहती, कण्टकारी, उडुम्बर, कायफल, दारुचीनी और गव्यघृत दुग्धके साथ पीसकर खानेसे उपकार होता है।

षष्ठ मास सिता, ह्रीबेरका मूल एवं आम्रमज्जा शीतल जलमें बांट गोदुग्धके साथ अथवा गोक्षुर, शोभाञ्जनवीज, यष्टिमधु, पृश्निपर्णी तथा बला दुग्धमें पीसकर पीनेसे गर्भ नहीं गिरता।

सप्तम मास पद्मका काष्ठ एवं मूल, शृङ्गाटक और नीलोत्पल दुग्धमें बांटकर सेवन करना चाहिये। अथवा किशमिश, शृङ्गाटक और पद्मका केशर गोदुग्ध-के साथ सेवन करनेसे गर्भस्राव रुक जाता है।

अष्टम मास यष्टिमधु, पद्मकाष्ठ, विभीतक, विकी-रणमूल, मुस्तक, नागकेशर, गजपिप्पली और नीलपद्म बांटकर दुग्धके साथ खिलानेसे गर्भ-स्राव नहीं होता। अथवा विल्व मूल, कपित्थ, वृहती और शमीकाष्ठ सहित दुग्ध पकाकर देना चाहिये।

नवम मास गोरक्षतण्डुलका वीज और कक्कोल मधु सहित पीस लेप करनेसे वेदना दूर होती है। अथवा यष्टिमधु, श्यामालता, अनन्तमूल और क्षीर-काकोली सहित दुग्ध पकाकर खिलाते हैं।

दशम मास सिता, अङ्गूर, किशमिश, मधु और नीलपद्म गोदुग्ध सहित खिलानेसे गर्भस्राव रुकता है। अथवा केवल दुग्ध पकाकर हो दे सकते हैं। यष्टिमधु और देवदारु दुग्ध सहित देनेसे भी उपकार होता है।

मधु, वासक, रक्तचन्दन, सैन्धव और महेन्द्रवीज गोदुग्धमें बांटकर खिलानेसे सर्वप्रकार गर्भस्रावदोष नष्ट होता है।

गर्भशुष्क-चिकित्सा—गर्भशुष्कता दोषकी शान्तिके लिये सिता मिलाकर गोदुग्ध पिलाना चाहिये। अथवा यष्टिमधु और गम्भारीफल समभाग बांटकर गोदुग्ध सहित खिलाना योग्य है।

सुखप्रसव-योग—श्वेत पुनर्णवाके मूलका चूर्ण बना योनिमध्य डालनेसे तत्क्षणात् गर्भप्रसव होता है। वासक वृक्षका उत्तरदिक्‌स्थित मूल उखाड़ और सप्तगुण सूत्र द्वारा लपेट कटिपर धारण करनेसे प्रसवमें कष्ट नहीं पड़ता। सहदेवीका मूल कक्षमें बांधनेसे भी सुखप्रसव होता है।

चार अङ्गुल अपामार्गका मूल योनिद्वारमें डालनेसे प्रसवमें विलम्ब नहीं लगता।

अश्वगन्धाका मूल 'ॐ फट्' मन्त्रसे अभिमन्त्रित कर एक तोला घृत मिला खिलाने और 'क्लीं' मन्त्र पढ़ ३२ तोले दुग्ध एवं २ तोले मरिच पका सहस्रपरिमित 'ऐं' मन्त्र जपकर पिलानेसे मूत्र स्तम्भित होता है।

इन्द्रजालविद्या (सं॰ स्त्री॰) मायाकर्म समझनेका शास्त्र, जिस इल्ममें बाजीगरीकी बात देखें।

इन्द्रजालिक (सं॰ पु॰) १ कुहककारी, बाजीगर। (त्रि॰) २ भ्रान्तिजनक, जाहिरी।

इन्द्रजालिन् (सं॰ पु॰) १ कुहककारी, जादूगर। २ बोधिसत्व-विशेष।

इन्द्रजित् (सं॰ पु॰) इन्द्रं जितवान्, इन्द्र-जि-क्विप्। १ मेघनाद, रावणका बड़ा बेटा। एक समय मेघनादको साथ ले रावण स्वर्गमें इन्द्रसे लड़ने पहुंचा था। इन्द्र रावणसे युद्ध करनेको आगे बढ़े। किन्तु मेघनाद बहुत पहिले इच्छानुसार अदृश्य होनेका वर शिवसे प्राप्त कर चुका था। अदृश्य भावमें लड़ और जीत यह इन्द्रको बन्दी बना लङ्का पकड़ लाया। ब्रह्माने जाकर इन्द्रको छुड़ाया था। इन्द्रको जीतनेसे ही मेघनादका नाम इन्द्रजित् पड़ा। लक्ष्मणने निकुम्भिला यज्ञागारमें इन्द्रजित्‌को मारा था।

"चला इन्द्रजित् अतुलित योधा।" (तुलसी)

२ दानवविशेष। ३ रावणके पिता और काश्मीरके राजा। ४ खृः सत्रहवें शताब्दके एक ग्रन्थकार।

इन्द्रजित् सिंह—बुंदेलखण्डके एक राजा। इनके पिताका नाम मधुकर था। इन्द्रजित्‌सिंह ओरछा नगरमें निवास करते थे। ये एक अच्छे कवि थे। इनकी सभाकी शोभा केशवदास और प्रवीणराय नामक दो कवि बढ़ाते थे। प्रवीणराय एक रण्डीका नाम था। वह सुमधुर कविता बना सकती थी। एकबार दिल्लीके सम्राट्‌ने गुणकी प्रशंसा सुन उसे बुलाया, किन्तु राजा इन्द्रजित्‌सिंहने न जाने दिया। उसे अकबर बादशाह बहु क्रुद्ध हुये उन्होंने इससे विद्रोही समझकर इनपर दश लाख रुपयेका जुर्माना बोला था। केशवदास इन्द्रजित् सिंहसे बहुत ही उपकृत थे। इसलिये उनका जुर्माना माफ करानेको दिल्ली पहुंचे। उन्होंने अपने कवितागुणसे अकबरके मन्त्री बीरबलको मुग्ध बना दिया था। बीरबलके द्वारा ही इन्द्रजित्‌सिंहने छुटकारा पाया। इन्होंने 'धीराज नरिन्द्र' नामक एक काव्य लिखा था। १५८० ई॰में इन्द्रजित् सिंह विद्यमान थे।

इन्द्रजिद्विजयी (सं॰ पु॰) इन्द्रजितः विजयी, ६-तत्। इन्द्रजित्‌को हरा देनेवाले लक्ष्मण।

इन्द्रजिद्धन्तृ (सं॰ पु॰) इन्द्रजित्-हन-तृच्, ६-तत्। इन्द्रजित्‌को मार डालनेवाले लक्ष्मण।

इन्द्रजिह्वा (सं॰ स्त्री॰) लाङ्गलीवृक्ष।

इन्द्रजीत (हिं॰) इन्द्रजित् देखो।

इन्द्रजूत (वै॰ त्रि॰) इन्द्र-जु इति सौत्रोधातुर्गत्यर्थः। इन्द्रदत्त, इन्द्रका दिया हुवा। "युवं श्वेतं पेदव इन्द्रजूतमहिहनम्।" (ऋक् १।११८।९) 'इन्द्रेण युवाभ्यां गमितं दत्तमित्यर्थः।'(सायण)

इन्द्रज्येष्ठ (वै॰ त्रि॰) इन्द्रमुख्य 'इन्द्रज्येष्ठाः इन्द्रो जेष्ठो मुख्यो येषु ते' (ऋक् १।२३।८)

इन्द्रतम (वै॰ त्रि॰) इन्द्रसदृश। शक्तिशाली, ताकतवर।

इन्द्रतरु (सं॰ पु॰) अर्जुन वृक्ष।

इन्द्रता (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रका बल एवं पद, इन्द्रकी ताकत और हैसियत।

इन्द्रतापन (सं॰ पु॰) इन्द्रं तापयति, इन्द्र-तप-णिच्-ल्यु। १ वातापी असुर। २ इन्द्रजित्।

इन्द्रतूल (सं॰ क्ली॰) १ आकाशमें उड्डीयमान सूत्र, आस्मान्‌में उड़नेवाला सूत। २ कार्पास, कपास। ३ अर्कवृक्षतूलक, मदारकी रूई।

इन्द्रतूलक, इन्द्रतूल देखो।

इन्द्रतोया (सं० स्त्री०) इन्द्रं ऐश्वर्यान्वितं तोयं यस्याः वा इन्द्रेण पूरितं तोयं यस्याः, बहुव्री०। गन्धमादन पर्वतके निकट बहनेवाली नदी।

इन्द्रत्व (सं०क्ली०) १ इन्द्रका बल और वैभव, इन्द्रकी ताक़त और हैसियत। २ राजत्व, बादशाही।

इन्द्रत्वोत (वै० त्रि०) हे इन्द्र! तेरे द्वारा रक्षित।

इन्द्रदत्त (सं० पु०) एकजन ग्रन्थकार। इनकी उपाधि 'उपाध्याय' थी। इन्द्रदत्तने 'सिद्धान्तकौमुदी-गूढ़-फक्किका-प्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया था।

इन्द्रदमन (सं० पु०) १ बाणासुरका पुत्र। (हरिवंश ३ अ०) २ पर्वविशेष। जलप्लावनके समय कुण्ड, तड़ाग, वट वा पिप्पलवृक्ष पर्यन्त जल बढ़कर पहुंचनेसे यह पर्व पड़ता है। ७ मेघनाद, इन्द्रजित्।

इन्द्रदारु (सं० पु०) १ देवदारु। २ तैल-देवदारु वृक्ष।

इन्द्रदेवी (सं० स्त्री०) काश्मीरराज मेघवाहनकी पत्नी। इन्होंने इन्द्रदेवीभवन नामक विहार बनवाया था। (राजतरङ्गिणी)

इन्द्रद्युति (सं० क्ली०) चन्दन, सन्दल।

इन्द्रद्युम्न (सं० क्ली०) १ ह्रद विशेष, एक झील। (पु०) २ एक राजा। स्कन्दपुराणके उत्कलखण्डमें लिखा है, कि मालव देशमें इन्द्रद्युम्न नामक एक राजा था। उन्होंने ही उत्कलस्थ पुरुषोत्तम देवका मन्दिर बनवाया था। उसमें विश्वकर्मा स्वयं आ दारुमयी मूर्ति निर्माण कर गये थे। (कपिलसंहिता और पुरुषोत्तममाहात्म्य)। मुकुन्दरामकृत जगन्नाथमङ्गलमें लिखा है, कि इन्द्रद्युम्न एक मन्दिर बनवा ब्रह्माके निकट मूर्तिस्थापनके लिये उपदेश लेने पहुंचा था। ब्रह्मलोक पहुंचने और अनेक स्तव-स्तुति सुनानेपर इन्द्रद्युम्नसे ब्रह्माने सन्तुष्ट हो एक मुहूर्त ठहरने तथा सन्ध्यावन्दनके बाद वर देनेको कहा। ब्रह्माके एक मुहूर्तमें मनुष्यके साठ हजार वर्ष बीतते हैं। किन्तु वहां यह कुछ समझ न सके थे। जब ब्रह्मा सन्ध्या करके आये, तब इन्द्रद्युम्नसे कहने लगे—अपने राज्य एकबार जाकर वापस आओ तब हम आपको मूर्ति देंगे। ये अपने राज्य वापस आये, किन्तु उसके चिह्न भी कहीं न पाये। समयके फेरसे समस्त ध्वंस हो गया था। इन्द्रद्युम्न अपने राज्यको पहंचान भी न सके। जिसीको देखते, उसीसे पूछते थे—इस राज्यका नाम क्या है। अवशेषमें एक पेचक और कूर्मने इनकी पूर्वकथा बतायी थी। इन्द्रद्युम्न फिर राजा हुये और कौमाद्य राजाकी कन्या मालावतीके साथ व्याहे गये। उसके बाद इन्होंने प्रस्तरमय जगन्नाथका मन्दिर बनवाया था। किसी दिन एक दूतने आकर कहा, समुद्रके तीरपर एक काष्ठ तैर रहा है। इन्द्रद्युम्नने उससे पहले ब्रह्माके मुख सुनसे रक्खा था—भगवान् कृष्ण निम्ब वृक्षपर प्राण छोड़ेंगे और बहकर समुद्रतीर पहुंचेंगे। इसलिये दूतकी बात कानमें पड़ते ही वे महासमारोहके साथ उस काष्ठको समुद्रसे जाकर उठा लाये। विश्वकर्माने आकर उसी काष्ठसे जगन्नाथकी मूर्ति बनायी थी। जगन्नाथ देखो। इन्द्रद्युम्नने जगन्नाथ देवसे अपनी कन्या सत्यवतीका विवाह कर दिया। ३ अन्य एक गङ्गवंशीय नृपति। ११९८ ई०को इन्होंने जगन्नाथ देवके मन्दिरका पुनः संस्कार कराया था। ३ एक असुरका राजा। कृष्णने इन्हें मार डाला था। (महाभारत वन० १२ अ०) ४ ऋषि-विशेष। शतपथब्राह्मणमें इन्हें भाल्लवेय कहा है। ५ राजर्षि विशेष। (महाभारत वन० १९८ अ०) ६ मगधके पालवंशीय शेष राजा।

इन्द्रद्रु (सं० अ०) इन्द्रस्य द्रुः, ६-तत्। १ अर्जुनवृक्ष। २ कुटजवृक्ष। ३ देवदारु वृक्ष।

इन्द्रद्रुम (सं० पु०) इन्द्रस्य द्रुमः, ६-तत्। अर्जुन वृक्ष।

इन्द्रद्वीप (सं० पु०-क्ली०) पौराणिक मतसे भारतके नौ विभागोंमेंसे एक विभाग। वर्त्तमान अष्ट्रेलिया।

इन्द्रधनुस् (सं० क्ली०) इन्द्रे तत्स्वामिके मेघे धनुः इव, ७-तत्। इन्द्रायुध, कौस-कुज़ा। वर्षाकालके उदय वा अस्त होनेके समय सूर्यकी विपरीत दिशामें यह प्रायः देख पड़ता है। वृष्टिजल-कणोंकी आणविक शक्तिके प्रभावसे नाना वर्ण बन उक्त नैसर्गिक काण्ड उत्पन्न होता है। इसी प्रकार चन्द्रकी आभासे कभी-कभी रामधनुः निकलता है, किन्तु वह बहुत कम देख पड़ता है।

इन्द्रध्वज (सं० पु०) इन्द्रार्थो ध्वजः, शाक-तत् ६-तत् वा। भाद्र शुक्लाद्वादशीके दिन इन्द्रतुष्टिके निमित्त ध्वज-दान। इस दिन प्रजाके मङ्गलके लिये राजा ध्वज बना द्वारपर गाड़ते हैं और इष्टदेवको पूजते हैं। इससे प्रचुर वृष्टि और सुचारुरूप शस्यादिकी उत्पत्ति होती है। बृहत्संहिताके मतमें असुरों द्वारा अधिक पीड़ित होनेसे देवगणने ब्रह्मासे कहा था,—असुरोंसे हम लड़ नहीं सकते; आपके शरण आये हैं, कोई प्रतिविधान कर दीजिये। ब्रह्माने उत्तर दिया,—तुम क्षीरोद-सागर जा नारायणका स्तव करो; वह जो केतु तुम्हें देंगे, उसे देखते ही असुर अपनी राह लेंगे। इन्द्र और अन्यान्य देवगणने वही किया। विष्णुने स्तवसे तुष्ट हो उक्त केतु (ध्वज) देवताओंको दिया और इन्द्रने उससे दुर्दान्त अरिकुलको मार अपना बदला चुका लिया। चेदिराजके वेणुमय यष्टि गाड़ यथा-विधि पूजा करनेसे इन्द्रने अतिशय तुष्ट हो कहा था,—जो राजा इसी प्रकार इन्द्रध्वज पूजेगा, उसके राज्यमें प्रजा एवं शस्यादिका आधिक्य होगा और कोई रोग न रहेगा।

इन्द्रनक्षत्र (सं० क्लो०) इन्द्रस्वामिकं नक्षत्रम्, शाक-तत्। १ जेष्ठानक्षत्र। इन्द्रनामकं नक्षत्रम्। २ फल्गुनी नक्षत्र।

इन्द्रनील (सं० पु०) इन्द्रइव नीलः श्यामलः। मरकत मणि, नीलम। इन्द्रनील डाल देनेसे दूधका रङ्ग काला पड़ जाता है। संस्कृत भाषामें सौरिरत्न, नीलाश्म, नीलोत्पल, तृणग्राही, महानील प्रभृति अनेक इसके नाम हैं। इन्द्रनील शनिग्रहको प्रिय है। इससे शनिदोष शान्त हो जाता है। इन्द्रनीलका वर्ण निविड़ मेघ-जैसा रहता है। यह मध्यम रत्न है। (शुक्रनीति) मानसोल्लासके मतमें अतसी पुष्प-जैसा इन्द्र-नीलका वर्ण होता है, जो कि छाया और रोहिणाद्रिसे उपजता है। सिंहल और कलिङ्ग देशमें इसकी खानि है। (अगस्त) जहां-जहां महादानवकी आंख चुयी, वहां-वहां इसकी उत्पत्ति हुयी। सिंहलोत्पन्न महानील और तद्भिन्न मणि इन्द्रनील कहाता है। इसमें कोयी नीलपद्म, कोयी नीलाम्बर, कोयी खड्ग-धारा, कोयी शिवनीलकण्ठ वा नीलकण्ठ पक्षीके गले, कोयी उड़दके फूल, कोयी गिरिकर्णिका, कोयी निर्मल समुद्रके जल, कोयी मयूर तथा कोकिलके कण्ठ और नीले रङ्गके बुलबुल-जैसा होता है।

दोष और गुण—मृत्तिका, पाषाण, शिला, वज्र, कङ्कड़, अभ्रिका, पटलाख्य छायादि और वर्णदोषसे मणि बिगड़ जाता है। व्यवहार्य पद्मरागका गुण इन्द्रनीलमें भी मिलता है। पद्मराग देखो।

परीक्षा—पद्मरागके समस्त करण और उपकरण द्वारा इन्द्रनील परीक्षित होता है। पयःस्थ पद्म-रागकी अपेक्षा यह अधिक उत्ताप सह सकता है। होती रहती भी अग्निसे इसकी परीक्षा करना न चाहिये। क्योंकि अग्निका परिमाण समझ न सकने पर दाहदोषसे बिगड़ इन्द्रनील धारणकारी, परीक्षक और अनुमति देनेवाले सकलके अनिष्टका कारण बन जाता है।

वैजात्य निर्णय—काच, उपल, करवी, स्फटिक और वैदूर्य देखनेमें बिलकुल इन्द्रनील-जैसा ही होता है। किन्तु अल्प ताम्रवर्ण धारण करनेवाला इन्द्रनील रखने योग्य है। फिर जिसमें रामधनुःका रङ्ग झलकता हो, वह दुर्लभ और महामूल्य निकलता है। अधिक रङ्ग-वाले और डाल देनेसे समस्त दुग्धको नीलवर्ण बनाने-वालेको महानील कहते हैं।

मूल्य—महागुण पद्मराग और इन्द्रनीलका मूल्य एक एकसा होता है। (गरुड़पुराण)

इन्द्रनीलक (सं० पु०) हरिन्मणि, पन्ना।

इन्द्रनेत्र (सं० पु०) इन्द्रस्य नेत्रम्, ६-तत्। इन्द्रका चक्षुः, हज़ार संख्या।

इन्द्रपति (महामहोपाध्याय)—१ मीमांसापल्वल नामक ग्रन्थके रचयिता। २ रीवां प्रदेशस्थ इस्तोगी जातिकी एक शाखा।

इन्द्रपत्नी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य पत्नी, ६-तत्। १ शची-देवी। इन्द्रस्य पतिः पालयित्री, इन्द्र-पति ङीप्-णुक्, नकारादेशः। विभाषा सपूर्वस्य। पा ४।१।३४। २ इन्द्रकी पाल-यित्री, जो इन्द्रकी परवरिश करती हो।

इन्द्रपर्णी (सं० स्त्री०) इन्द्रवत् नीलं पर्णं यस्याः,

बहुव्री०। १ इन्द्रवारुणी, कुंदरू। २ लाङ्गलिका, कलिहारी।

इन्द्रपर्वत (सं० पु०) इन्द्रनामकः वा इन्द्रवर्णः पर्वतः, शाक-तत्। १ महेन्द्रपर्वत। २ नीलपर्वत।

इन्द्रपातम (वै० त्रि०) दूसरेकी अपेक्षा अधिक प्रीतिसे इन्द्र द्वारा पान किया हुआ।

इन्द्रपान (वै० त्रि०) इन्द्र द्वारा पान किया हुवा।

इन्द्रपीत, इन्द्रपान देखो।

इन्द्रपुत्रा (सं० पु०) इन्द्रः पुत्रो यस्याः, बहुव्री०। अदिति।

इन्द्रपुरी (सं० स्त्री०) अमरावती।

इन्द्रपुरोगम (सं० त्रि०) इन्द्रको आगे रखनेवाला, जिसके इन्द्र रहनुमा रहे।

इन्द्रपुरोहित (सं० पु०) वृहस्पति।

इन्द्रपुरोहिता (सं० स्त्री०) पुष्या नक्षत्र।

इन्द्रपुष्प (सं० क्ली०) लवङ्ग, लौंग।

इन्द्रपुष्पा (सं० स्त्री०) १ लाङ्गलीवृक्ष, कलिहारी। २ पूतीकरञ्ज, वनकरेला।

इन्द्रपुष्पिका, इन्द्रपुष्पा देखो।

इन्द्रपुष्पी, इन्द्रपुष्पा देखो।

इन्द्रप्रमति (सं० पु०) इन्द्रः प्रमतिः प्रकृष्टा मतिः यस्याः, बहुव्री०। १ ऋङ्मन्त्रद्रष्टा एक पृथक् वसिष्ठ ऋषि। (ऋक् ८।९७।४—६)। २ व्यासशिष्य पैल ऋषिके शिष्य। (अग्निपुराण तथा भागवत)

इन्द्रप्रसूत (वै० त्रि०) इन्द्र द्वारा उत्पादित वा प्रोत्साहित, जिसे इन्द्र निकाले या बढ़ाये।

इन्द्रप्रस्थ—एक प्राचीन नगर। इन्द्रप्रस्थ खाण्डवारण्यके मध्य था। महाराज युधिष्ठिरने इस नगरमें राजधानी स्थापित की थी। उस समय इन्द्रप्रस्थ समुद्र-सदृश परिखा द्वारा अलङ्कृत और गरुड़की तरह द्विपक्ष द्वार तथा परम रमणीय सौधसमूहसे समाकीर्ण था। इसके परम रमणीय प्रदेशमें कुवेरागार-सदृश कौरव-गृह बना था। चारो ओर उद्यानमें नानाजातीय फलशाली वृक्ष थे। (महाभारत आदि)

इन्द्रप्रस्थ एक पवित्र तीर्थ माना गया है,—

"इन्द्रप्रस्थमिदं चैवं स्थापितं दैवतैः पुरा।
पूर्वपश्चिमयोस्तात एकयोजनविस्तृतम्॥ ७५॥
कलिन्द्या दक्षिणे यावद्योजनानां चतुष्टयम्।
इन्द्रप्रस्थस्य मर्यादा कथितैषा महर्षिभिः॥ ७६॥"
(सौभरिसंहिता २४ अ०)

अर्थात् पूर्वकालमें देवगणने इस इन्द्रप्रस्थको स्थापन किया था। यह पूर्व-पश्चिम एक और यमुनाके दक्षिण तक चार योजन विस्तृत था। महर्षियोंने इन्द्रप्रस्थकी मर्यादा इसीप्रकार बतायी है।

हमारी समझमें पूर्वसमयमें इन्द्रने विष्णुकी पूजाकी इससे इस स्थानका नाम इन्द्रप्रस्थ पड़ा है। इन्द्रप्रस्थमें देहत्याग करनेसे मनुष्य विष्णुतुल्य हो जाता है,—

"इन्द्रप्रस्थाख्यमेतद्धि चैत्रमिन्द्रस्य पावनम्।
तेनात्र पूजितो विष्णुः क्रतुभिर्बहुदक्षिणैः॥ २४॥
तुष्टेन विष्णुना तस्मै वरो दत्तो निशम्यताम्।
भो शक्र तावते चैत्रे सर्वतीर्थमया जनाः॥ २५॥
तनुं त्यजन्ति ये ते वै मत्तुल्या हिंसका अपि॥" (२ अ०)
"इन्द्रस्य खाण्डवारण्ये इन्द्रप्रस्थाभिधं शुभम्।"
(सौभरिसंहिता ८ अ०)

वर्तमान दिल्लीमें ही यह प्राचीन नगर था। अब इसका सामान्य ध्वंसावशेष मात्र बचा है। 'इन्दरपत' नाम चला जाता है। सुना जाता है, कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके समय यहां एक गढ़ बना हुआ था। चन्द कविने कहा है,—

"गढ़ इन्दपत्थं सहायं सुकज्जै।
उभै दीन जुट्टै करै यग्ग धज्जै॥" (पृथ्वीराजरायसा २०।७५)

आज भी दिल्लीमें 'पुराना किला' नामक प्राचीन दुर्ग देख पड़ता है। उसे कोई-कोई 'इन्दरपत' कहते हैं। यद्यपि यह मुसलमानोंका बनाया है तो भी वह किसी हिन्दू द्वारा निर्मित दुर्गपर रचित है। (Archaeological Survey Reports of India, Vol. IV. p. 2.)

इन्द्रप्रहरण (सं० क्ली०) वज्र। यह दधीचि मुनिकी हड्डीसे बना था।

इन्द्रफल, इन्द्रयव देखो।

इन्द्रभाष (हिं० स्त्री०) तालविशेष। इसमें बादलके गर्जन-जैसा शब्द निकलता है।

इन्द्रब्रह्मवटी (सं० स्त्री०) अपस्मारनाशक वटी विशेष, मृगी रोगकी गोली। रससिन्दूर, अभ्र, लौह, रौप्य, स्वर्णमाक्षिक, विष एवं पद्मकेशर समभाग ले स्वच्छ,

अग्नि, विजया, एरण्ड, वचा, निष्पाव, शूरण तथा निर्गुण्डीके द्रवमें घोंटे। फिर सबको कङ्गुनी सर्षपोंके तेलमें पकाते और चणमात्र वटी बनाते हैं। आर्द्रकके रसमें देनेसे इन्द्रप्रस्थवटी अपस्मार रोगको नाश करती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इन्द्रभगिनी (सं० स्त्री०) शिवपत्नी। यह इन्द्रकी बहन थी।

इन्द्रभूति (सं० पु०) गणधरभेद। जैनियोंके चौबीसवें तीर्थङ्कर महावीर स्वामीके ११ गणधर थे। सर्वज्ञ तीर्थङ्करकी दिव्य ध्वनिका जो अर्थ समझकर लोगोंके लिये उपदेश देते हैं वे श्रावक, श्राविका, मुनि और आर्यिका रूप चारप्रकारके गणके धारक-स्वामी गणधर वा गणेश कहलाते हैं। गणधर भिन्न भिन्न तीर्थङ्करोंके भिन्न भिन्न होते हैं। तदनुसार अन्तिम तीर्थङ्कर महावीर भगवान्‌के इन्द्रभूति प्रथम और मुख्य गणधर थे। इनके जीवनका वृत्तान्त जैनशास्त्रोंमें यों लिखा है,—

इन्द्रभूति जातिके गौतम ब्राह्मण थे। इनका जन्मस्थान गोतम नामक नगर था। ये अपने मा बापके इन्द्रभूति, वायुभूति और अग्निभूति नामके तीन पुत्र थे। ये तीनो ही भाई वैदिक धर्मानुयायी महाविद्वान् थे। इनके पास देशदेशान्तरोंसे अनेक छात्र शास्त्राध्ययन करने आया करते थे। इन्द्रभूतिकी जिह्वापर समस्त वेद और शास्त्र नृत्य किया करते थे। इस कारण इनको अपनी विद्यावत्ताका बड़ाही घमण्ड था। ये उस समय अपने शास्त्रज्ञानके सामने संसारके विद्वानोंको तुच्छ समझते थे।

जब महावीर स्वामी चार घातिया (आत्माकी अनन्त-ज्ञानशक्ति, अनन्त-दर्शनशक्ति, अनन्त-सुखशक्ति और अनन्त वीर्यशक्तिको आच्छादन कर देनेवाले कर्म) कर्मोंको नष्टकर वैशाख शुक्लदशमीके दिन सर्वज्ञ हो गये और इन्द्रकी आज्ञानुसार कुबेरने भगवान्‌का समवशरण (व्याख्यानसभा) रचकर तयार कर दिया, तो उनके व्याख्यानको सुननेके लिये देशदेशान्तरोंसे मनुष्य, तिर्यञ्च और स्वर्गोंसे देवता आने लगे। जब सभाके बारहो प्रकोष्ठ भर गये और सम्पूर्ण आगन्तुक जीव व्याख्यान सुननेकी प्रतीक्षा करने लगे, तो भगवान्‌की दिव्यध्वनि ही न निकली (तीर्थङ्करोंकी वाणी ओष्ठ, तालु और जिह्वाके संसर्गसे नहीं निकलती, बल्कि मेघके गर्जनके समान मूर्धासे स्वरव्यञ्जनरहित निकलती है। उसमें तपके प्रभावसे ऐसा अतिशय होता है कि सब देशवासी सब जातिके मनवाले प्राणी अपनी अपनी भाषामें उसे समझने लगते हैं।) दिव्यध्वनिकी प्रतीक्षा करते करते एक दिन दो दिन यहांतक कि छ्यासठ दिनतक बीत गये, परन्तु भगवान्‌की उपदेश वृष्टि न हुई। जब यह सब वृत्तान्त इन्द्रने देखा, तो उसने अपने अवधिज्ञानसे (अवधिज्ञान शब्द देखो) निश्चय किया कि "भगवान्‌का कोई गणधर तो है ही नहीं, जो उनके दिव्य उपदेशको धारणा रख लोगोंको समझा सके, इसलिये ही वाणी नहीं निसृत हुई है।" अब तो इन्द्रको गणधरके खोजनेकी आवश्यकता हुई। उसने अपने अवधिज्ञानसे जब इन्द्रभूतिको भावी गणधर जाना, तो वह सीधा एक विद्यार्थीका वेशधारण कर उनके पास गया। उस समय इन्द्रभूति अपने छात्रोंको पढ़ा रहे थे। इसलिये इन्द्र भी उन छात्रोंमें जा कर ही बैठ गया और उनका व्याख्यान सुनने लगा।

उस समय किसी विषयका प्रतिपादन करके इन्द्रभूतिने अपने विद्यार्थियोंसे पूछा—"क्यों! तुम सब लोगोंकी समझमें आ गया न?" उत्तरमें अन्य विद्यार्थियोंने तो 'हां' कह दिया, परन्तु छात्रवेशधारी इन्द्र अपनी नाक भौं सिकोड़ अरुचि प्रकट करने लगा। उसके इस व्यापारसे असन्तुष्ट हो छात्रोंने इन्द्रभूतिसे कहा—"महाराज! यह नवीन छात्र आपकी अवज्ञा करता है।" यह सुन इन्द्रभूतिने कहा—"क्यों! मैं समस्त शास्त्रोंका वेत्ता हूं। मेरे व्याख्यानको सब लोग पसन्द करते हैं फिर क्या कारण है कि वह तुम्हें नहीं रुचा?" उत्तरमें इन्द्रने कहा—"यदि आप सम्पूर्ण शास्त्रोंके ज्ञाता हैं, तो मेरे एक आर्याछन्दका ही अर्थ कह दीजिये वह आर्या यह है—

"षड्द्रव्य नवपदार्थ त्रिकाल-पञ्चास्तिकाय-षट्कायान्।
विदुषां वरः स एव हि यो जानाति प्रमाणनयैः॥"* (कथाकोष)

इस जैनधर्मके मर्मको कहनेवाले अश्रुतपूर्व विषम आर्याको देखकर इन्द्रभूति बड़े चकराये। उन्होंने क्रोधमें आकर इन्द्रसे कहा कि "तेरा कौन गुरु है? मैं उसीसे शास्त्रार्थ करूंगा। तुझ छात्रके साथ वाद विवाद करनेसे मेरी प्रतिष्ठामें क्षति पहुंचती है।" इसके उत्तरमें इन्द्रने कहा—"मेरे जगद्पूज्य महावीर भगवान् गुरु हैं।" इन्द्रभूति बोले—"क्या वही अपने इन्द्रजालसे आकाशमें देवोंको दिखानेवाला सिद्धार्थ राजाका पुत्र महावीर? क्या तू उसीका शिष्य है! अच्छा चल! उसीके साथ शास्त्रार्थ करूंगा।" इन्द्र अपने प्रयोजनको सिद्ध हुआ जान प्रसन्नतासे बोला—"आइये! मेरे साथ आइये। मैं आपको अपने गुरुके साथ मुलाकात करा दूंगा।" अपने वचनानुसार इन्द्रभूति इन्द्रके साथ चल दिये। यह देख उनके अन्य दो भाई अग्निभूति, वायुभूति और अनेक शिष्य भी साथ साथ हो लिये। चलकर वे लोग महावीर भगवान्के समवसरणके पास आये। समवसरणमें जो चारो दिशाओंमें चार बहुत विशाल स्तम्भ (मानस्तम्भ) होते हैं, (जिन्हें देखकर मानियोंका मानभङ्ग हो जाता है।) उन्हें देखते ही उन सब लोगोंका मान गलित हो गया, वे लोग स्पर्धा छोड़ भगवान्की प्रदक्षिणा दे उनकी स्तुति करने लगे। उनमेंसे इन्द्रभूति तत्काल ही समस्त परिग्रह (धन धान्य वस्त्र आदि) छोड़ मुनि हो गये।

ये ही इन्द्रभूति बादको तपस्याके बलसे अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके (दूसरेके मनकी बातको जाननेवाला ज्ञान) स्वामी हो गये। सात ऋद्धि प्रकट हो गई और समस्त तपस्वियोंमें मुख्य हो ये भगवान्के प्रधान गणधर हो गये। बस! इनके गणधर होते ही महावीर स्वामीका दिव्य उपदेश होने लगा। उसे इन्द्रभूति गणधरने धारण कर आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग आदि बारह अङ्गोंमें रचा और उसका भव्योंको ज्ञान कराया।

जब तक महावीर स्वामी इस संसारमें रहे, तब तक तो ये उनके गणधर रहे, बादको जब वे मोक्षधाममें पधार गये, तब इन्हें भी सर्वज्ञता हुई। इन्होंने १२ वर्ष तक इस पृथ्वीमण्डलपर जैनधर्मका प्रसार किया। अन्तमें अविनाशी पदप्राप्तकर सर्वदाके लिये अनन्त सुखका अनुभव करने लगे।

इन इन्द्रभूतिका गोत्र गौतम था, इसलिये इनको लोग गौतम नामसे भी कहते हैं। बहुतसे लोग बौद्धधर्मके नेता गौतमको और इन गौतमको नामसाम्यसे एक ही समझते हैं, परन्तु यह ठीक नहीं। ये दोनो भिन्न भिन्न मतके प्रचारक भिन्न भिन्न व्यक्ति थे।

* जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छः द्रव्य, जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जर, मोक्ष, पाप और पुण्य ये नौ पदार्थ, अतीत, अनागत, और वर्तमान ये तीनकाल, जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, और आकाश ये पांच अस्तिकाय, एवं पृथ्वी, जल, तेज, वायु और वनस्पति जातिके शरीरवाले पांचप्रकारे जीव और शेषकाय (त्रसकाय)के धारी जीव ये षट्-काय इनको जो प्रमाण और नयोंसे जानता है वह ही विद्वानोंमें श्रेष्ठ है।

इन्द्रभेषज (सं॰ क्लो॰) इन्द्रं महत् भेषजमौषधम्, कर्मधा॰। शुण्ठी, सोंठ।

इन्द्रमख (सं॰ पु॰) इन्द्रकी प्रीतिके लिये होनेवाला यज्ञ।

इन्द्रमण्डल (सं॰ पु॰) नक्षत्रमण्डलविशेष। इसमें अभिजित्‌से अनुराधातक नक्षत्र रहते हैं।

इन्द्रमद (सं॰ पु॰) तरुगुल्म-ज्वर, पेड़पौधेको लगनेवाला बुखार। यह एक प्रकारका विष होता है और प्रथम वृष्टिके जलसे उपजता है। इन्द्रमदसे तरु तथा गुल्म झुलस जाते हैं और मीन एवं जलौकादि मर जाते हैं।

इन्द्रमह (सं॰ क्लो॰) इन्द्र-प्रीतिजनक उत्सव-यज्ञादि। यह यज्ञ 'इन्द्रं मह' प्रभृति शब्दसे आरम्भ होता है।

इन्द्रमहकामुक (सं॰ पु॰) इन्द्रमहं कामये, इन्द्रमह-कम-उकञ्। कुक्कुर, कुत्ता।

इन्द्रमादन (वै॰ त्रि॰) इन्द्रको प्रसन्न करनेवाला।

इन्द्रमार्ग (सं॰ पु॰) इन्द्रलोकप्राप्त्यर्थी मार्गः, आकतत्। बदरीपाचनका निकटवर्त्ती तीर्थ। इस स्थानमें वशिष्ठका आश्रम था। (भारत, वन ९५ अ॰)

इन्द्रमेदिन् (वै॰ त्रि॰) इन्द्रसे मित्रता रखनेवाला।

इन्द्रयव (सं० पु०) इन्द्रस्य कुटजवृक्षस्य यवः वीजमिव, उप० ६-तत्। कुटजवीज, कोरैयाका तुख्म, कुड़ा। (Wrightia antidysenterica) इन्द्रशब्द पर्यायमात्र और कुटज-वाचक है। यह त्रिदोषघ्न, धारक, कटु, शीतल, दीपन और ज्वर, अतीसार, रक्तार्शः, वमि, वीसर्प, कुष्ठ, वातरक्त, कफ एवं शूलको नाश करनेवाला है। (भावप्रकाश) मध्यभारत, पश्चिमप्रायद्वीप और ब्रह्ममें इन्द्रयव पाया जाता है। वृक्ष पतनशील है। लकड़ी हाथी दांत-जैसी सफेद, कड़ी और दानेदार होती है। तराश और खराद कर उसे इमारतमें लगाते हैं। पत्तीदार सींकेमें दो-दो फलियां निकलती हैं, जो एक २ हाथ लम्बी होती हैं। फलियोंका मुख दोनो ओर एक दूसरेसे मिला रहता है और भीतरके घूवेमें वीज पड़ता है। बम्बईमें कोमल पत्तियां और फलियां खाई भी जाती हैं। सफेद और सुन्दर फूलोंके गुच्छोंमें चमेलीको तरह खुशबू आती है। अतिप्राचीन कालसे दाक्षिणात्यके लोग इन्द्रयवको पत्तियोंका नीला रङ्ग बनाते चले आते हैं।

इन्द्रयु (वै० त्रि०) इन्द्रके समीप पहुंचनेका अभिलाषी।

इन्द्रयोग (वै० पु०) इन्द्रका संयुक्त बल।

इन्द्रराज (सं० पु०) १ देवराज। इन्द्र और इन्द्रलोक देखो।

२ कान्यकुब्जका एक प्राचीन नृपति, ई०के ८म शतकमें समस्त उत्तरभारतमें कुछकाल तक इसका अधिकार था। यह गौड़ाधिप धर्मपाल कर्तृक परास्त और राज्यच्युत हुआ था। कान्यकुब्ज देखो। ३ लाटदेशके राष्ट्रकूटवंशीय एकाधिक नृपतिका नाम। राष्ट्रकूट शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

इन्द्रलाजी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य कुटजस्य लाजा इव लाजा यस्याः। ओषधि वृक्षभेद।

इन्द्रलाह्व, इन्द्रयव देखो।

इन्द्रलुप्त (सं० पु०) इन्द्राणां तद्दर्णानां केशानां लुप्तं लोपः यस्मात्, बहुव्री०। श्मश्रुकेशघ्न रोग, बालखोरा, गञ्ज। (Alopecia, baldness) पहले मूर्च्छित पित्त वातके साथ रोमकूपोंमें पहुंच रोमोंको उखाड़ डालता है, फिर सशोणित श्लेष्मा रोमकूपोंको रूंध देता है। इससे दूसरोंका जन्म असम्भव हो जाता है। (सुश्रुत) यह रोग सर्वाङ्गीन दुर्बलता, ज्वर, पारददोष, उपदंशविष एवं रक्तस्राव प्रभृति कारणोंसे उपजता है। केशग्रन्थि सम्पूर्णरूपसे रुग्ण वा विनष्ट होने पर भी इन्द्रलुप्त प्रायः नहीं मिटता।

अवधीत मतसे कड़वी तरोयीके पत्तेका रस रगड़ देनेपर यह रोग अच्छा हो जाता है। हस्तिदन्तभस्म और रसाञ्जन छागीके दुग्धमें घोल लेपन करनेसे शीघ्र केश निकलते हैं। आलपीन या सूई द्वारा रुग्ण स्थानको छेद प्याज काटकर रगड़नेसे भी बाल आनेमें देर नहीं लगती। गोक्षुर, तिलपुष्प, मधु एवं घृत एकत्र पीस मरहमकी तरह चढ़ानेपर उपकार होता है। श्वेत वृश्चिकपालीका वीज घिसनेसे एक सप्ताहके मध्य ही लोम निकलता है। भिलावें, वृहतीफल और घुंघचीके फल तथा मूलको मधुके साथ पीसकर इन्द्रलुप्त पर चढ़ाना चाहिये। यष्टिमधु, नीलोत्पल, चूंगकी जड़, तिल, घृत, दुग्ध एवं भृङ्गराज एकसाथ पीसकर लगानेसे घन, दृढ़मूल तथा वक्र केश उपजते हैं। इस रोगमें बार-बार शिरका मुंडाना और गर्म पानीसे धो डालना अच्छा है।

होमियोपाथिक डाक्टर कोयी कठिन रोग अच्छा होने वा सर्वाङ्गीन दुर्बलता रहनेसे एसिडाम फसफरिकाम्, स्नायवीय ज्वरसे एसिडाम् क्लारिकम, हिपार एवं सालफर, उपदंश किंवा पारद दोषसे आर्सेनिक, नेट्राम म्यूरोटिकम्, केलकेरिया, हिपार तथा फसफरस और प्राचीन शिरःपीड़ासे केश गिरनेपर सालफरका व्यवहार करते हैं। किंवदन्ती है कि खल्वाट निर्धन नहीं रहते।

इन्द्रलोक (सं० पु०) इन्द्रस्य लोकः भवनम्, ६-तत्। १ अमरावती, स्वर्ग। २ इन्द्रका स्थान।

इन्द्रलोकगमन (सं० क्ली०) इन्द्रलोकको अर्जुनका जाना।

इन्द्रलोकेश (सं० पु०) १ इन्द्र। २ विभिन्न भवनका राजा।

जैन-शास्त्रानुसार इन्द्र सौ हैं। और वे इस प्रकार हैं—

"भवणालय चालीसा वितरदेवाण होंति वत्तीसा।
कप्पामर चउवीसा चन्दो सूरो णरो तिरियो॥" (द्रव्यसंग्रहटीका)

अर्थात् भवनवासी देवोंके चालीस, व्यन्तरोंके बत्तीस कल्पवासियोंके चौबीस, ज्योतिषियोंके दो (चन्द्र और सूर्य), मनुष्योंका एक (चक्रवर्ती) और तिर्यञ्चोंका एक (सिंह) इस तरह सब मिलाकर सौ इन्द्र होते हैं।

देव चार प्रकारके होते हैं—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक। इस पृथ्वीके नीचे रत्नप्रभा नामकी एक पृथ्वी है। उसके खरभाग, पङ्कभाग और अब्बहुलभाग ये तीन भाग हैं। उनमें आदिके जो दो भाग हैं उनमें असंख्य देवोंके भवन हैं उनमें जो देव रहते हैं, वे भवनवासी कहलाते हैं। इनके दश भेद हैं—असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, उदधिकुमार, स्तनितकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार। हर एक भेदमें दो दो इन्द्र और उनके दो दो प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल इनमें चालीस इन्द्र हैं। इन्द्रोंके समान प्रतीन्द्रोंकी विभूति होती है, अत: प्रतीन्द्रोंको भी इन्द्र कहा है।

पहाड़ नदी शून्यगृह वृक्ष और विविध देशदेशान्तरोंमें जो देव रहते हैं, उन्हें व्यन्तर देव कहते हैं। उनके आठ भेद हैं—किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, और पिशाच। इनके भी हर एक भेदमें दो इन्द्र और दो प्रतीन्द्र होते हैं। इसलिये बत्तीस इन्द्र हैं।

सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतिषी देव कहलाते हैं। इनके पांच भेद हैं—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारागण। इनके दो ही सूर्य और चन्द्रमा इन्द्र हैं।

विमानोंमें रहनेवाले देव वैमानिक देव कहलाते हैं। उनमें प्रथम दो भेद हैं—कल्पवासी और कल्पातीत। कल्पवासियोंके बारह भेद हैं। ये कल्पवासी देव सोलह स्वर्गोंके पटलोंमें रहते हैं और इनके बारह इन्द्र और बारह प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल चौबीस इन्द्र हैं। सोलह स्वर्गोंके ऊपर जो विमान हैं उनके रहनेवालोंको कल्पातीत कहते हैं। उनमें इन्द्र और सामान्यदेवोंकी कल्पना नहीं है। वे सब समान होते हैं। मनुष्योंमें सबसे बड़ा राजा चक्रवर्ती इन्द्र है। और तिर्यञ्चोंमें सबसे श्रेष्ठ सिंह इन्द्र है। (जैनग्रन्थ)

२ अतिथि, मेहमान्।

इन्द्रलोहक (सं० क्लो०) रौप्य, चांदी।

इन्द्रवंशा (सं० स्त्री०) वृत्तविशेष, एक छन्द। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें बारह वर्ण रहते हैं। इन्द्रवंशाके तृतीय, षष्ठ, सप्तम, नवम एवं एकादश वर्ण लघु तथा अवशिष्ट गुरु होते हैं।

"स्यादिन्द्रवंशा ततजैरसंयुतैः।" (वृत्तरत्नाकर)

इन्द्रवचा (सं० स्त्री०) इन्द्रयव।

इन्द्रवज्रा (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें ग्यारह अक्षर होते हैं। तृतीय, षष्ठ, सप्तम एवं नवम लघु तथा अवशिष्ट वर्ण गुरु होते हैं।

"स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौग:।" (वृत्तरत्नाकर)

इन्द्रवटी (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, एक दवा। मृत सूत तथा वङ्ग और अर्जुनकी त्वक्को तुल्यांश ले शाल्मली-मूलज द्रवमें घोटे और रत्ती प्रमाण वटिका बनाये। मधु तथा शाल्मलीमूलचूर्ण अथवा शर्कराके साथ खानेपर इन्द्रवटी प्रमेहको दूर कर देती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इन्द्रवधू (सं० स्त्री०) वीरबहूटी, रामकी गुड़िया। यह कीड़ा प्राय: लाल होता है और वृष्टि पड़नेपर अपने आप भूमिसे उपजता है।

इन्द्रवल—मध्यप्रदेशका एक प्राचीन शवर राजा। यह उदयनका पुत्र था। शवर होते भी इसने अपनेको पाण्डुवंशीय बताया है।

इन्द्रवल्लरी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्यासौ वल्लरी चेति, कर्मधा०। इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायन। इस लताका रस तिक्त, पुष्प पीतवर्ण और मूल शुभ्र होता है।

इन्द्रवल्लिका,वि इन्द्रवल्ली देखो।

इन्द्रवल्ली (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया वल्ली लता, शाक० तत्। १ पारिजात लता। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रवस्ति (सं० पु०) इन्द्रस्यात्मनो वस्तिरिव। जङ्घाका मध्य भाग, साक, पिंडली। प्रति पार्ष्णि-जङ्घाके स्थानको इन्द्रवस्ति कहते हैं। (सुश्रुत)

इन्द्रवायु (सं० पु०) इन्द्र और वायु।

इन्द्रवारुणि (हिं० पु०) इन्द्र वारुणी देखो।

इन्द्रवारुणिका, इन्द्रवारुणी देखो।

इन्द्रवारुणी (सं० स्त्री०) इन्द्रवरुणयोरियं वा इन्द्रवरुणौ देवते अस्याः इत्यण्-ङीप्; इन्द्रस्य आत्मनो वारुणीव प्रिया। १ लताविशेष, इन्द्रायन। (Citrallus Colocynthis) वैद्यशास्त्रके मतसे इसके पर्याय वाचक ये शब्द हैं,—विशाला, ऐन्द्री, इन्द्र, अरुण, गवादनी, क्षुद्रसहा, इन्द्रचिर्भिटी, सूर्या, विषघ्नी, गजकर्णिका, अमरा, माता, सुकर्णी, सुफला, वारुणी, बालकप्रिया, रक्तैर्वारु, तारका, वृषभाक्षी, पीतपुष्पा, इन्द्रवल्लरी, हेमपुष्पी, क्षुद्रफला, वल्ली, चित्रफला, चित्रा, गवाक्षी, गजचिर्भिटी, मृगेर्वारु, पिटङ्कोकी और मृगादनी। इन्द्रवारुणी उत्तमाशा अन्तरीप, मिस्र, तुर्किस्तान, भूमध्य-सागरके द्वीपसमूह और भारतवर्षमें स्वयं उत्पन्न होती है। गुणमें यह तिक्त, कटु, शीतल, रेचन और गुल्म, पित्त, श्लेष्मा, क्रमि, कुष्ठ तथा ज्वरको नाश करनेवाली है। (राजनिघण्टु) आलोपाथिक मतसे इन्द्रवारुणी अति विरेचक होती है, क्योंकि यह अन्त्रकी श्लैष्मिक झिल्लीको उग्रता प्रदान करती है। इसको अधिक मात्रामें सेवन करनेसे यह प्रदाहिक विषक्रिया फैलाती है। शोथ, उदरी, कोष्ठबद्ध एवं सन्न्यास प्रभृति रोगमें विरेचन और प्रत्युग्रता लानेके लिये इन्द्रवारुणीका व्यवहार किया जाता है। इसके सेवनसे कभी-कभी उदरमें वेदना उठती है, तबीयत मिचलाती और कै आने लगती है। ऐसी अवस्थामें कपूर किंवा कोनारम देनेसे पीड़ा मिटती है। आलोपाथिक मात्रामें इन्द्रवारुणी खानेसे अनेक समय नाना रूप विघ्न पड़ सकता है। इसलिये हरसमय इसे कोई व्यवहारमें नहीं लाता। विशेष आवश्यक होनेसे विवेचनापूर्वक इन्द्रवारुणीको खाना चाहिये। इसका सार और वटिका व्यवहार्य है। मात्रा दो से दश ग्रेन तक होती है। होमिओपाथिक मतसे यह सरल अन्त्रके प्रदाह, अतिसार, रक्तातिसार, गृध्रसी, अर्धशिरःशूल, स्नायुशूल, अन्त्रशूल, वात, सन्धिवात, डिम्बाशयके स्नायवीय रोग और नाना-प्रकारकी पीड़ाओंमें दी-जाती है। अत्यन्त उदर-वेदना-संयुक्त, विशेष कष्टदायक रक्तातिसार, मारक्यूरियस करोसाइवास और इन्द्रवारुणीके यथाक्रम सेवनसे निवृत्त हो जाता है। डाक्टर ह्यूसने शूलरोग पर इस औषधका व्यवहार किया था। उदर ढोल-जैसा फूलने, तीव्र वेदनाविशिष्ट पैत्तिक विवमिषा तथा वमन लक्षण झलकने और वृहत् एवं सरल अन्त्रमें प्रदाह उठनेपर इन्द्रवारुणी देते हैं। डाक्टर ह्यूसके मतसे यह तरुण गृध्रसीपर पुरातन रोगकी अपेक्षा अधिक उपकार करती है। व्यथित अङ्गके उत्तोलनसे वेदना बढ़ने एवं क्रमागत सञ्चालनसे उपशम आने और साथ ही उदरामय तथा अन्त्रशूल उठनेपर इन्द्रवारुणी अत्यन्त लाभदायक है। पहले जलवत् एवं आमसिश्रित, पीछे पित्त तथा रक्तमिश्रित और प्रस्तरखण्डके मध्य प्रेषित अन्त्र जैसी उदरवेदनाविशिष्ट रक्त आमाशयमें केलोसिन्थ उपयोगी है। मस्तक भारी पड़ने, चक्षुः तथा कपालके मध्य अत्यन्त ज्वाला उठने, और सूच या आलपीन विद्ध-जैसी यन्त्रणासे विशिष्ट अर्धशिरःशूल होनेपर इन्द्रवारुणीका प्रयोग करना चाहिये। इसका फल नारङ्गी-जैसा पीला या लाल होता है। उसपर खरबूजाकी तरह फांक होती है। खानेमें वह अतिशय कटु लगता है। इसके गूदेसे औषध बनती है। और महिष एवं उष्ट्रपक्षी उसे खाते हैं। अफ्रीकामें कोई-कोई इसके बीजको भी खाते हैं। इन्द्रवारुणीका ताज़ा मूल दन्तमार्जनमें काम आता है। अफ्रीकाके नीलनद-तीरवर्ती कोयी-कोयी लोग इसके फलसे एकप्रकारका रस निकालते हैं और उसे पानी भरनेकी मशकमें लगाते हैं। इसके गन्धसे ऊंट मशकको काट नहीं सकते। २ गोरक्षकर्कटी, फूट।

इन्द्रवाह (वै० पु०) इन्द्रको ले जानेवाला।

इन्द्रविद्धा (सं० स्त्री०) व्रणरोगविशेष, किसी किस्मकी फुन्सी। यह वात-पित्त बिगड़नेसे त्वक्‌पर जल-पूर्ण क्षुद्र-क्षुद्र किंवा वृहत् वृहत् स्तवकमें पड़ जाती है। इन्द्रविद्धाका उद्भेद (खाज)की तरह एकत्र न हो स्वतन्त्र भावमें अवस्थित रहती है। इस रोगमें प्रथम परिष्कार जल वा दुग्धके समान स्राव निकलता है। उसके सूखनेसे चिपचिपी चिपिटिका उपजती है। चिकित्सकोंके मतसे इन्द्रविद्धा चार प्रकारकी होती है,—विम्बाकार (Herpes-phlyctenoæs), चक्राकार (Herpes-circinatus), राम-

धनुषाकार (Herpes-zoster) और कटिवन्धाकार (Herpes-iris)। सिवा इसके यह रोग (Herpes-prepulacis), शिश्नत्वक् और (Herpes-labialis) ओष्ठमें भी उपजता है। स्नायुमें उपदाह उठना ही इन्द्रविद्धाका प्रधान कारण है। इस रोगमें शरीर ग्लानिसे भरा रहता, शिर: दुखता, पार्श्वमें शूल उठता और ईषत् ज्वर चढ़ आता है। दश-बारह दिनमें ही इन्द्रविद्धा आरोग्य हो जाती है। यह दद्रुजातीय रोग है।

वैद्योंके मतसे पित्तजन्य विसर्पकी भांति इन्द्रविद्धाकी चिकित्सा करना और सकल फुंसियोंके पकने पर काकोल्यादि गणोक्त द्रव्यको घृतपाक करके लगाना चाहिये। होमिओपाथिक डाकर युवकके यह रोग होनेपर रसटक्सका और वृद्धके होनेपर मेजेरियमका प्रधानत: व्यवहार करते हैं। सामान्य इन्द्रविद्धापर सलफर और सिपियाको,उपद्रवरहितपर माकुंरिसको, लिङ्गचर्मके पूययुक्तरोगपर फाइटो और आफाइटोसको, अत्यन्त पीड़ादायकपर आर्सेनिकको और दुर्बल एवं शूलग्रस्तपर टेलुरियम्को लगाते हैं।

इन्द्रवीज (सं० पु०) इन्द्रस्य कुटजस्य वीजम्। इन्द्रयव, कुड़ा।

इन्द्रवृक्ष (सं० पु०) इन्द्रस्य वृक्षः। १ देवदारु। इसपर लोग इन्द्रध्वज लगाते हैं इसलिये इसका नाम इन्द्रवृक्ष पड़गया है। २ श्वेत कुटजवृक्ष। ३ अर्जुनवृक्ष।

इन्द्रवृद्ध (सं० पु०) १ सुश्रकवर्जित कुलक्षणाश्व विशेष, किसी किस्मका खराब घोड़ा।

इन्द्रवृद्धा, इन्द्रविद्धा देखो।

इन्द्रवृद्धिक, इन्द्रवृद्ध देखो।

इन्द्रवैदूर्य (सं० क्लो०) बहुमूल्य रत्नविशेष, किसी किस्मका कीमती पत्थर।

इन्द्रव्रत (सं० क्लो०) इन्द्रस्येव व्रतम्। व्रतविशेष। इन्द्र जैसे लोकका उपकार करनेके लिये चार मास तक जल बरसाते हैं, वैसे ही राजा भी अपनी प्रजाको सुख देनेके लिये धनादि प्रदान किया करते हैं। इसी नियमका नाम इन्द्रव्रत है।

इन्द्रशक्ति (सं० स्त्री०) इन्द्राणी, इन्द्रकी पत्नी।

इन्द्रशत्रु (सं० पु०) इन्द्रः शत्रुः यस्य, बहुव्री०। वृत्रासुर। "इन्द्रोऽस्य शमयिता वा तस्मात् इन्द्रशत्रुः।" (निरुक्त)

इन्द्रशैल (सं० पु०) इन्द्राभिधः शैलः, शाक-तत्। इन्द्रकील-पर्वत।

इन्द्रश्रेष्ठ (वै० त्रि०) इन्द्रको प्रधानकी भांति रखनेवाला।

इन्द्रसन्धा (सं० स्त्री) इन्द्रके साथ संसर्ग।

इन्द्रसारथि (सं० पु०) इन्द्रस्य सारथिः। १ मातलि, इन्द्रका रथचालक। २ वायु, हवा। (ऋक् ४।४५।२)

इन्द्रसावर्णि (सं० पु०) इन्द्रस्य सावर्णिः। चतुर्दश मनु।

इन्द्रसुत (सं० पु०) १ जयन्त। २ अर्जुन। ३ वानरराज वाली। ४ अर्जुनवृक्ष।

इन्द्रसुरस (सं० पु०) इन्द्रः कुटजः इव सुरसः, उप० कर्मधा०। निर्गुण्डी वृक्ष, संभालू।

इन्द्रसुरसा (सं० स्त्री०) इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसुरा (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य आत्मनः सुरा इव प्रिया। गोरक्षकर्कटिका, फूट।

इन्द्रसुरिष, इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसुरिस, इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसूक्त (सं० क्लो०) इन्द्र-देवतं सूक्तम्, शाक० तत्। इन्द्रदैवत मन्त्र सूक्त। इसी मन्त्रसे इन्द्रका स्तव करते हैं।

इन्द्रसूनु (सं० पु०) १ वानरपति बालि। २ अर्जुन वृक्ष।

इन्द्रसेन (सं० पु०) इन्द्रस्य सेनेव महती सेना यस्य, बहुव्री०। १ परीक्षितके स्वनाम-प्रसिद्ध पुत्र। २ युधिष्ठिरके पुत्र। ३ नलके पुत्र। ४ किसी नागका नाम।

इन्द्रसेना (सं० स्त्री०) १ इन्द्रसैन्य, इन्द्रकी फौज। २ मौद्गल्यकी ज्येष्ठ पुत्रवधू और ब्रध्नकी माता। ३ नलकी कन्या।

इन्द्रसेनानी (सं० पु०) सेनां नयति सेनानी क्विप्, ६-तत्। कार्तिक। इन्द्रने कार्तिकका बल-पराक्रम देख कहा था,—'आप इन्द्रत्व लीजिये। हम आपके आदेशपर चलेंगे।' किन्तु इन्होंने उत्तर दिया,—'हमें इन्द्रत्व न चाहिये। आप ही उसे अपने हाथमें रखिये। हम आपकी आज्ञानुसार सर्वथा कार्य

करेंगे।' इन्द्रने तब इन्हें सेनापति बननेको कहा। इन्होंने उसे मान लिया। (भारत, आदि, ९४ अ०)

इन्द्रस्तुत् (सं० पु०) इन्द्रः स्तूयते यस्मिन्, इन्द्र-स्तु-क्विप्। इन्द्रयज्ञ। इस यज्ञमें इन्द्रकी आराधना होती है।

इन्द्रस्तोम (सं० पु०) इन्द्रस्य स्तोमः स्तुतिः यस्मिन्। अतिरात्राङ्गभूत यागविशेष। राजाका अनुष्ठेय यज्ञ। इसकी दक्षिणा १००००) रु० है। (कात्यायन ४।४।६)

इन्द्रस्वरस (सं० पु०) वृष्टिजल, बारिशका पानी।

इन्द्रस्वत (वै० त्रि०) इन्द्रकी समता करनेवाला, इन्द्र-जैसा।

इन्द्रह्व (वै० पु०) इन्द्रका आह्वान।

इन्द्रहु (सं० स्त्री०) इन्द्रः ह्वयतेऽनया, इन्द्र-ह्वे-क्विप् सम्प्रसारणम्, ६-तत्। इन्द्रकी आराधनाका मन्त्र।

इन्द्रा (सं० स्त्री०) १ इन्द्रकी पत्नी शचीदेवी। २ फणिज्झक वृक्ष। ३ इन्द्रवारुणी।

इन्द्राग्निदेवता (सं० स्त्री०) अनुराधा नक्षत्र।

इन्द्राग्निधूम (सं० पु०) इन्द्राग्नेः मेघानलस्य धूम इव, उप० ६-तत्। १ हिम, बरफ़। २ अग्निविशेष। यह अग्नि प्रति वर्ष वैशाख और ज्यैष्ठ मासमें प्रायः पृथिवीपर गिरती है। इससे महिष, गो, वृक्ष तथा गृह आदि जल जाते हैं।

इन्द्राणिका (सं० स्त्री०) १ निर्गुण्डीवृक्ष, संभालू। २ नीलसिन्दुवार, काला संभालू।

इन्द्राणिकापत्र (सं० क्ली०) निर्गुण्डीपत्र, संभालूका पत्ता।

इन्द्राणी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य पत्नी, ङीष्। आनुक् च। पा ४।१।४९। १ इन्द्रकी स्त्री शची। इनके परम ऐश्वर्य है। २ दुर्गाशक्ति। देवदानव इनके अधीन रहते हैं। ये सकलकी मङ्गलदात्री हैं। "ऐश्वर्यं परमं यस्याः वशे देव सुरासुराः। इदि परमैश्वर्यं च इन्द्राणी तेन सा शिवा।" (देवीपुराण) ३ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ४ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ५ स्त्रीन्द्रिय। ६ सिन्धुवार, संभालू। ७ इन्द्रायन।

इन्द्रादृश (सं० पु०) इन्द्रस्येवादर्शनमस्य, इन्द्र-आ-दृश-ढक्, ६-तत्। इन्द्रगोप कीट।

इन्द्रानुज (सं० पु०) वामनावतारी भगवान्। इन्द्रके बाद अदितिके गर्भ और कश्यपके औरससे वामनने जन्म लिया था। इसलिये इनका यह नाम पड़ा है। जन्मविवरण वामन शब्दमें देखो।

इन्द्राभ (सं० पु०) इन्द्रस्यैवाभा यस्य अथवा इन्द्र इवा-भाति, इन्द्र-आ-भा-क। कुरुवंशीय धृतराष्ट्रके सप्तम पुत्र।

इन्द्राभा (सं० स्त्री०) कङ्कपक्षिभेद, किसी क़िस्मका बगला।

इन्द्रायन (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी देखो।

इन्द्रायुध (सं० क्ली०) इन्द्रस्यायुधमिव, ६-तत्। १ इन्द्रका अस्त्र वज्र। २ रामधनुः। इसकी उत्पत्तिका विवरण इन्द्र शब्दमें देखो। आकाशमें रामधनुष देखकर वह किसीको न दिखाना चाहिये,—"न दिवीन्द्रायुधं दृष्ट्वा कस्यचिद्दर्शयेत् बुधः।" (मनु) किन्तु किसी-किसीके मतानुसार पर्वतपर खड़े होकर देखनेसे दिखा देनेमें कोई दोष नहीं लगता,—"केचित्तु पर्वतादिस्थस्य दर्शने न दोषः।" (मेधातिथि) ३ वज्रकमणि, हीरा। ४ स्थावर विषान्तर्गत कन्दविष। ५ कान्यकुब्जका एक पराक्रान्त नृपति। कान्यकुब्ज देखो।

इन्द्रायुधशिखिन् (सं० पु०) किसी नागका नाम।

इन्द्रायुधा (सं० स्त्री०) इन्द्रायुधवत् ऊर्ध्वराज सविष जलायुका, किसी क़िस्मकी ज़हरीली जोंक। इसकी पीठ इन्द्रधनुष-जैसी चमकती है।

इन्द्रारि (सं० पु०) असुर, राक्षस। सर्वदा ही असुर इन्द्रके यज्ञमें विघ्न डाला करते हैं।

इन्द्रार्घपादप (सं० पु०) क्रमुकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

इन्द्रालिश (सं० पु०) इन्द्रं आलिशति, इन्द्र-आ-लिश-क। इन्द्रगोप कीट, एक कीड़ा।

इन्द्रावरज, इन्द्रानुज देखो।

इन्द्रावसान (सं० पु) इन्द्रस्यावसानः यत्र बहुव्री०। मरुभूमि, रेतीली ज़मीन्।

इन्द्राशन (सं० पु०) १ सिद्धि, भांग। २ गुञ्जा, घुंघची।

इन्द्राशनक, इन्द्राशन देखो।

इन्द्रासन (सं०-पु०-क्ली०) इन्द्र आत्मा अस्यते क्षिप्यते येन, इन्द्र-अस करणे ल्युट्। १ इन्द्रका सिंहासन। २ राजाका सिंहासन। ३ पञ्चमात्रिक प्रस्तावविशेष।

इन्द्राह्वा (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी लता, इन्द्रायण।

इन्द्रिय (सं० क्ली०) इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमणुमापकम्, इन्द्र-घ। इन्द्रलिङ्गेत्यादि। पा ५।२।९३। १ बल, ज़ोर। २ शुक्र, मनी। ३ शारीरिक शक्ति, जिस्मानी ताक़त। ४ पांचकी संख्या। ५ ज्ञानसाधन, कुव्वत-मुदरिक।

इन्द्रिय तीन प्रकारकी होती हैं,—ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय और अन्तरेन्द्रिय। चक्षुः, कर्ण, जिह्वा, नासिका और त्वक्को ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं। वाक्य, पाणि, पाद, पायु और उपस्थका नाम कर्मेन्द्रिय है। मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको अन्तरेन्द्रिय समझना चाहिये। इस प्रकार सब मिलाकर चौदह इन्द्रिय हैं। मनः सकल इन्द्रियका नियामक है। कर्णके दिक्, चर्मके वायु, चक्षुःके सूर्य, जिह्वाके वरुण, नासिकाके अश्विनीकुमार, वाक्यके अग्नि, हस्तके इन्द्र, चरणके विष्णु, पायुके मित्र, उपस्थके प्रजापति, मनःके चन्द्र, बुद्धिके ब्रह्मा, अहङ्कारके शङ्कर और चित्तके देवता अच्युत हैं। न्यायमतसे पृथिवीका नासिका, जलका जिह्वा, तेजःका चक्षुः, वायुका चर्म और आकाशका इन्द्रिय कर्ण होता है। सुश्रुतने बुद्धिका ब्रह्मा, अहङ्कारका ईश्वर, मनःका चन्द्र, गात्रका दिक्, चर्मका वायु, चक्षुःका सूर्य, जिह्वाका जल, नासिकाका पृथिवी, वाक्यका अग्नि, हस्तका इन्द्र, चरणका विष्णु और पायुका देवता मित्रको माना है।

इन्द्रियका व्यापार सकल कर्ताके अधीन रहता है, इसलिये इन्द्रियका अपर नाम करण है,—

"ह्यत्रधीनः कर्ता कर्त्रधीनं करणम्।" (पद्मनाभ)

नैयायिकोंके कथनानुसार मन कभी कर्ता और कभी करण बन जाता है। क्योंकि किसी रूपको देखनेके पहले मन चले, फिर दृष्टि डालनेपर दर्शनजन्य सुखको भी वही अनुभव करेगा। दूसरे मनःके द्वारा आत्मा भी दर्शनसुख पाता है। ज्ञानका कार्य मन है। कारणसे भिन्न वेदान्तिक मनको इन्द्रिय नहीं समझते और बुद्धिको भी इन्द्रियसे पृथक् मानते हैं। कर्ण द्वारा बाहरी शब्द सुन पड़ता है, फिर ढांक देनेपर भी भीतर ही भीतर आया करता है।

चर्म द्वारा स्पर्शका अनुभव होता है। चक्षुःसे रूप दीख पड़ता है। नासिकासे गन्धको ग्रहण करते हैं। वाक्येन्द्रियसे बात करते हैं। हस्त द्वारा समस्त वस्तु उठायी जाती हैं। चरण यातायातका कार्य चलाता है। पायु मल और उपस्थ मूत्रको त्याग करता है।

अन्तःकरण तीन प्रकारका होता है,—बुद्ध्यात्मक, अहङ्कारात्मक और मनसात्मक। शरीरके मध्य कार्य होनेसे ही मन, बुद्धि और अहङ्कारको अन्तःकरण कहते हैं। कोई दश, कोयी ग्यारह, कोयी बारह, कोयी तेरह और कोई कोई चौदह इन्द्रियतक मानते हैं।

जैन-शास्त्रानुसार इन्द्रियके दो भेद हैं द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय। द्रव्येन्द्रिय स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्रके भेदसे पांच प्रकार है। द्रव्येन्द्रियोंके निर्वृत्ति और उपकरण ये दो और उत्तर भेद हैं। शरीरकी रचना करनेवाले नाम कर्मकी सहायतासे जो रचना विशेष हो उसे निर्वृत्ति कहते हैं और जो निर्वृत्तिका उपकार (रक्षण) करे वह उपकरण है। निर्वृत्ति और उपकरणके भी दो दो भेद हैं—बाह्य और आभ्यन्तर। आत्माके प्रदेशोंका इन्द्रियोंके आकाररूप होना सो आभ्यन्तर-निर्वृत्ति है। पुद्गल (जिस द्रव्यमें स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण पाये जांय उसे पुद्गल कहते हैं। यह मूर्तिक है और सब लोकमें देखा जाता है) परमाणुओंकी इन्द्रियरूप रचना होना सो बाह्यनिर्वृत्ति है। जैसे नेत्र इन्द्रियमें नेत्र इन्द्रियके आकाररूप आत्माके जितने प्रदेश मसूरके समान फैले हैं, वे आभ्यन्तर-निर्वृत्ति हैं। और उसमें जितने पुद्गल परमाणु मसूरके आकारमें परिणत हुये हैं वे बाह्य निर्वृत्ति हैं। नेत्र इन्द्रियमें कृष्ण शुक्ल मण्डलकी तरह सब इन्द्रियोंमें जो निर्वृत्तिका उपकार करे उसको आभ्यन्तर उपकरण कहते हैं। और उसी नेत्रमें पलक आदिके समान जो निर्वृत्तिका उपकार करे उसको बाह्योपकरण कहते हैं।

भावेन्द्रिय दो प्रकारकी है—लब्धि और उपयोग। जिसके होनेसे आत्मा द्रव्येन्द्रियकी रचनामें प्रवृत्ति करे ऐसी ज्ञानावरणीय कर्म (आत्माके ज्ञान गुणको आच्छादन करनेवाले कर्म) की क्षयोपशम रूप

शक्ति विशेषको लब्धि कहते हैं। क्षयोपशम शब्द देखो। और क्षयोपशम लब्धिके निमित्तसे आत्माका पदार्थोंके प्रति परिणमन होनेसे जो आत्मामें ज्ञान उत्पन्न होता है वह उपयोग है। जैसे कोई जीव सुनना तो चाहे परन्तु सुननेकी क्षयोपशमरूप शक्ति न हो तो वह सुन नहीं सकेगा। इसलिये ज्ञानका कारण होनेसे ज्ञानावरणीय कर्मकी क्षयोपशम शक्तिरूप लब्धिको इन्द्रिय माना है। एवं उपयोग इन्द्रियका फल वा कार्य है इसलिये कार्यमें कारणका उपचारकर उसे इन्द्रिय कहा है। अथवा जिस प्रकार चक्षु आदिक इन्द्रियां आत्माके परिचय करानेमें हेतु हैं उसीप्रकार उपयोग भी उसमें मुख्य हेतु है इस कारण उपयोगको इन्द्रिय (इन्द्र-आत्माका परिचायक) कहा है।

ऊपर कही गई स्पर्शन आदिक पांचों इन्द्रियां हर एक जीवमें समान नहीं होतीं। वे किसीमें एक, किसीमें दो, किसीमें तीन किसीमें चार और किसीमें पांच तक होती हैं। पृथ्वीकायिक (जिनका पृथ्वी ही शरीर है), जलकायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, और वनस्पतिकायिक जीवोंके एक स्पर्शन ही इन्द्रिय रहती है। कृमि आदि जीवोंके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां होती हैं। पिपीलिका (चिंवटी) आदि जीवोंके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रियां होती हैं। भ्रमर मकरी वगैरहके श्रोत्रके सिवाय चार इन्द्रियां होती हैं। और घोड़े आदि पशु मनुष्य देव और नारकी जीवोंके पांचों इन्द्रियां होती हैं।

मन भी आत्माका परिचायक होनेसे इन्द्रिय है। परन्तु उसे शास्त्रोंमें अनिन्द्रिय कहा है। क्यों कि जिस प्रकार ईषत् कृश उदरवाली कन्याको अनुदरी कन्या कहते हैं उसीप्रकार ईषत् इन्द्रियोंके समान होनेसे मन भी ईषत् इन्द्रिय अनिन्द्रिय कहा गया है। इन्द्रियोंका जिस प्रकार विषय परिमित है—ये देश काल क्षेत्रकी मर्यादामें स्थित हो पदार्थोंका ग्रहण कर सकती हैं उस प्रकार मन पदार्थोंका ग्रहण नहीं करता। मनका विषय क्षेत्र अपरिमित है। परन्तु आत्माका परिचायक है इसलिये अन्य इन्द्रियोंके साथ सौसादृश्य न होनेसे ईषत् इन्द्रिय है। (तत्त्वार्थसूत्रानुसार)

(हिं०) ६ कुश्तीका एक पेंच। जब एक पहलवान् दूसरेको नीचे गिरा देता है और उसके हाथको कलायी पकड़ उलटे तौरपर घुमा ऊपरको खींचता है, तब इन्द्रिय चढ़ानेका पेंच काममें आता है। इस पेंचसे नीचेवाले पहलवान्का हाथ उखड़ जाता है।

इन्द्रियकर्म. इन्द्रियकार्य देखो।

इन्द्रियकाम (हिं० त्रि०) शक्ति पानेका अभिलाषी, जो ताकत हासिल करना चाहता हो।

इन्द्रियकार्य (सं० क्ली०) चक्षुः प्रभृतिका कर्म, आंख वगैरहका काम। शब्दाकर्षण, स्पर्शग्रहण, रूपदर्शन, रसास्वादन, गन्धग्रहण, वचनादान, विसर्ग, गमन, और आनन्दको इन्द्रियकार्य कहते हैं। (सुश्रुत)

इन्द्रियगोचर (सं० त्रि०) उपलभ्य, व्यक्त, ज़ाहिर समझ पड़ने क़ाबिल। चक्षुः, कर्ण, जिह्वा, नासिका, त्वक् और मनः इन्द्रिय द्वारा छः प्रकारका ज्ञान उपजता है। प्रथमतः इन्द्रिय और वस्तुका संयोग होता है, फिर आत्मामें उसका ज्ञान आता है। इसलिये इन्द्रियां ज्ञानका मार्ग हैं। और उस ज्ञानपथमें पतित वस्तु इन्द्रियगोचर कहाती है—

"घ्राणजादिप्रभेदेन प्रत्यक्षं षड्विधं मतम्।
घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः॥
उद्भूतस्पर्शवद्द्रव्यं गोचरं सोऽपि च त्वचः।" (भाषापरिच्छेद)

घ्राणज आदि छः प्रकारका प्रत्यक्ष होता है। गन्ध एवं गन्धत्वकी भांति गन्धगत सकल धर्म घ्राणके और उद्भूत अर्थात् प्रत्यक्ष होनेवाला स्पर्श, स्पर्शविशिष्ट द्रव्य तथा स्पर्शका धर्म स्पर्शत्व प्रभृति सकल पदार्थ त्वक्के गोचर हैं।

"तथा रसो रसज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतेः।"

अम्ल-तिक्त-कटु-कषायादि रस एवं रसगत धर्म रसत्वादि रसनाके और शब्द तथा शब्दगत धर्म शब्दत्व प्रभृति सकल पदार्थ श्रवणके गोचर होते हैं।

"उद्भूतरूपं नयनस्य गोचरो द्रव्याणि तद्वन्ति पृथक्त्वसंख्या।
विभाग-संयोग-परापरत्वं स्नेहद्रवत्वं परिमाणयुक्तम्॥"

रूप रस प्रभृति सकल गुण उद्भूत और अनुद्भूत भेदसे दो प्रकारके होते हैं। दीख पड़नेवालेको उद्भूत और छिपे रहनेवालेको अनुद्भूत कहते हैं। जैसे घटादिका

रूपतो स्पष्ट दीख पड़नेसे उद्भूत है और भर्जन-कपालस्थ अग्निका रूप 'यदि इस कपालमें अग्नि न होती तो किसी तरह भी जौ आदिका भुंजना न होता' इस अनुमानसे गम्य होनेके कारण, अनुद्भूत है। इसी प्रकार रस गन्धादिको भी समझना चाहिये। इसमें उद्भूत रूप, उद्भूत रूपविशिष्ट द्रव्य, पृथक्त्व (विभिन्नता), संख्या (एकत्व द्वित्वादि), विभाग (बांध), संयोग (मेल), परत्व (दूरत्व), अपरत्व (निकटत्व), स्नेह (तैल जलादिमें रहनेवाले मिश्रकरण-समर्थ पदार्थ), द्रवत्व (तरलत्व) और परिमाण (मिकदार) ये समस्त पदार्थ चक्षुः द्वारा ग्राह्य हैं।

"क्रियां जातिं योग्यवृत्तिंसमवायञ्च तादृशम्।
गृह्णाति चक्षुः सम्बन्धादालोकोद्भूतरूपयोः॥"

उत्क्षेपण, अवक्षेपण, गमन प्रभृति क्रिया, मनुष्यत्व पशुत्व प्रभृति जाति और सम्बन्धविशेष समवायको योग्यवृत्ति होनेपर चक्षुः आलोक और उद्भूत रूपके सहारे ग्रहण करता है। चक्षुः द्वारा किये गये प्रत्यक्षको चाक्षुष-प्रत्यक्ष कहते हैं।

"उद्भूतस्पर्शवद्द्रव्यं गोचरः सोऽपि च त्वचः।
रूपान्यच्चक्षुषो योग्यं रूपमत्रापि कारणम्॥"

पहले जिस स्पर्श शैत्य उष्ण एवं रूपका वर्णन कर आये हैं, वही स्पर्श उद्भूत होनेपर त्वक् द्वारा ग्राह्य होता है। एवं इसप्रकारके स्पर्शसे विशिष्ट द्रव्य भी त्वक्के गोचर होता है। रूपके सिवाय चक्षुःगोचर वस्तुमात्र त्वक्के ग्राह्य है। इस त्वाच प्रत्यक्षमें भी रूप कारण होता है। क्योंकि जिस वस्तुमें उद्भूत रूप नहीं रहता, उसका त्वाच प्रत्यक्ष भी नहीं होता। अतएव उद्भूत रूप होनेसे ही वह होता है।

इन्द्रियग्राम (सं० पु०) १ शरीर, जिस्म। २ इन्द्रियसमूह, हवास।

इन्द्रियघात, इन्द्रियवध देखो।

इन्द्रियघ्न (सं० पु०) इन्द्रियं हन्ति, इन्द्रिय-हन-क। १ रोग, पीड़ा। २ चक्षुरोग-विशेष, आंखकी बीमारी।

इन्द्रियज (सं० त्रि०) इन्द्रियेभ्यो जायते, इन्द्रिय-जन-ड, ५-तत्। इन्द्रियसे उत्पन्न होनेवाला। जिसप्रकार विना पीये दूधका स्वाद नहीं जाना जा सकता और पीने मात्रसे तो उसका ज्ञान प्रत्यक्ष हो जाता है उसीप्रकार विषय-सन्निकर्ष द्वारा समस्त अनुभव प्राप्त होता है इसीसे सकल इन्द्रियां ज्ञानमें कारण मानी गयी हैं। विषय-सन्निकर्ष उसका व्यापार होनेसे जनक और ज्ञान जन्य है।

इन्द्रियजित् (सं० त्रि०) इन्द्रियको जीतनेवाला, जो इन्द्रियके वशमें न हो।

इन्द्रियज्ञान (सं० क्लो०) इन्द्रियजन्य वा प्रत्यक्ष ज्ञान, देखी-सुनी बात।

इन्द्रियदमन (सं० पु०) इन्द्रियगणको निग्रह करनेका कार्य, इन्द्रियकी वृत्ति घटानेका काम।

इन्द्रियदोष (सं० पु०) इन्द्रिय-जन्य दोष। परस्त्रीगमन, चौर्य प्रभृतिको इन्द्रियदोष कहते हैं।

इन्द्रियनिग्रह (सं० पु०) स्वेच्छाचार-प्रवृत्त इन्द्रियगणका निज-निज विषयमें स्थापन अर्थात् इन्द्रियके अधीन न हो उनका दमन करना। यह समस्त धर्मोंमें साधारण धर्म है। सन्तोष, क्षमा, दया, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सद्बुद्धि, विद्या, सत्यपालन और क्रोधपरित्याग ये दश धर्म मनुने कहे हैं। योग-साधनके समय भी नासिका, कर्ण, वाक्य, मनः प्रभृति इन्द्रियोंको अपने-अपने विषयसे रोकना पड़ता है। इन्द्रियगणके मध्य कोई भी इन्द्रिय यदि स्वेच्छाचारिणी रहेगी तो योगसाधनादि धर्मकार्य कुछ नहीं बन सकते। मन रोकनेसे ही सब इन्द्रियां वशमें रहती हैं। इसलिये मननिरोध न होनेसे योगीको किसी भी कर्ममें सफलता नहीं होती।

इन्द्रियप्रयोग (सं० पु०) विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध।

इन्द्रियवध (सं० पु०) अपने-अपने विषयमें इन्द्रियकी शक्तिका प्रतिघात अर्थात् आघात।

इन्द्रियवृद्धि (सं० स्त्री०) इन्द्रियज्ञान देखो।

इन्द्रियबोधन (सं० त्रि०) इन्द्रियं बोधति, इन्द्रिय-बुध-णिच्-ल्यु। १ इन्द्रियको चेतन करनेवाला, जो रुकको जगाता हो। (क्लो०) २ इन्द्रियका उत्तेजन, रुकका जोश। ३ पानसाध्य विकलताबोध मद्य, किसी किस्मकी शराब। इसको पी लेनेसे सकल इन्द्रियां स्व-स्व कार्यमें उत्तेजित हो जाती हैं।

इन्द्रियवज्री (हिं० स्त्री०) वाजीकरण-भेद, नामर्दी दूर करनेकी एक तदबीर।

इन्द्रियवत् (सं० त्रि०) प्रशस्तं वा वश्यं इन्द्रियं अस्त्यस्य, इन्द्रिय-मतुप्, मस्य वः। १ इन्द्रियको वशमें रखनेवाला। २ प्रशस्त इन्द्रिययुक्त, अच्छे रुक्नवाला।

इन्द्रियवर्ग (सं० पु०) एकादशेन्द्रिय, इन्द्रियसमूह, ग्यारहो रुक्न।

इन्द्रियविप्रतिपत्ति (सं० स्त्री०) इन्द्रियकी विकृति, रुक्नका बिगाड़।

इन्द्रियवृत्ति (सं० स्त्री०) शब्द, स्पर्श प्रभृति विषयमें बहिरेन्द्रियकी आलोचना, रुक्नका काम। वचन, आदान, विहार, त्याग एवं आनन्द ये पांच कर्मेन्द्रियों की और सङ्कल्प, विकल्प तथा अध्यवसाय ये मनःकी वृत्ति हैं।

इन्द्रियवैकल्य (सं० क्ली०) इन्द्रियदुर्बलता, रुक्नकी कमज़ोरी।

इन्द्रियसन्ताप (सं० पु०) इन्द्रियवैकृति, रुक्नकी बीमारी।

इन्द्रियसन्निकर्ष (सं० पु०) स्व स्व विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध, प्रत्यक्ष-जनक व्यापार, अपने-अपने काममें रुक्नका लगाव। इन्द्रियसन्निकर्ष कार्यमात्र दो प्रकारके कारणसे उपजता है। एक करण-विधायक अर्थात् परम्परासे सम्बन्ध रखनेवाला और दूसरा व्यापार-विधायक अर्थात् साक्षात्कारण होता है। जैसे—काष्ठछेदन कार्यमें, कुठार करण-विधायक और चीरनेवाली संयोजना क्रिया व्यापार-विधायक कारण है।

हमें नासिका, कर्ण, चक्षुः, जिह्वा, त्वक् और मनः इन छः इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष होता है। इस छहो तरहके प्रत्यक्षका सन्निकर्ष-व्यापार साक्षात् कारण है। तथा वह संयोग, संयुक्तसमवाय, संयुक्त समवेतसमवाय, समवाय, समवेतसमवाय और विशेषणविशेष्यभावके भेदसे छः प्रकारका है। वस्तुके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध संयोग व्यापार कहाता है। क्योंकि प्रत्यक्षमें द्रव्यके साथ इन्द्रियका संयोग होते ही उसका ज्ञान हो जाता है। जैसे—त्वक्के संयोगसे स्पर्शयुक्त द्रव्यका वा स्पर्शका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवाय व्यापार कारण होता है। जैसे—किसी द्रव्यके दृष्टिगोचर होनेसे उसका गुण रूप प्रभृति भी देखनेमें आता है। वहां उस गुणके साथ इन्द्रियका संयोग हो नहीं सकता। क्योंकि गुणसे गुण कभी नहीं मिलता अर्थात् रूप और इन्द्रियसंयोग दोनो गुण हैं। और गुणमें इन्द्रियसंयोग कभी रह नहीं सकता। इसलिये इन्द्रिय-संयोगको गुणका प्रत्यक्ष कारण कह नहि सकते इसीसे संयुक्त-समवाय व्यापार माना है। संयुक्त वस्तु होती है, क्योंकि उसमें इन्द्रियका संयोग रहता है। इन्द्रियसंयुक्त रहनेसे ही वस्तु नाम पड़ा है। उस संयुक्त वस्तुमें रहनेवाले गुणादिमें समवाय है। अतः इन्द्रियसंयुक्त समवाय सम्बन्धसे द्रव्यमें रहनेवाले गुणक्रिया जाति प्रभृति पदार्थका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें समवेत-समवाय सम्बन्धसे रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवेत-समवाय संबंध कारण है। इसलिये द्रव्यमें समवेत-रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें संयुक्त-समवेत-समवायको व्यापार माना है। द्रव्यमें समवेत गुणक्रिया और उसमें रहनेवाली जाति है। इसलिये उसका प्रत्यक्ष इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवायसे होता है। इन्द्रिय-संयुक्त द्रव्य होता है। उसमें समवेत गुणक्रिया इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत है। गुणक्रियामें गुणत्व-कर्मत्व जातिका समवाय है अत इन्द्रिय-संयुक्त समवेत समवाय-सम्बन्धसे जातिके प्रत्यक्ष होनेमें इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवाय कारण अवश्य स्वीकार करना चाहिये।

शब्दके प्रत्यक्षमें समवाय-व्यापार कारण है। शब्द गुण और कर्ण द्रव्य पदार्थ है। कर्णमें शब्द समवाय सम्बन्धसे रहता है। सुतरां कर्णके समवाय सम्बन्धसे शब्दका प्रत्यक्ष होता है। अतएव शब्दके प्रत्यक्षमें कारण समवाय सन्निकर्ष है।

शब्द-समवेत शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें कारण समवेत समवाय व्यापार है। शब्द कर्णमें समवेत है। उसमें शब्दत्व जातिका समवाय हैं। इसलिये शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें समवेत समवाय कारण माना है।

अभाव भी एक पदार्थ है। उसके प्रत्यक्षका कारण इसप्रकार है।

सारांश—जहां जिस वस्तुका स्वरूप बिलकुल दीख नहीं पड़ता, वहां उसका एक विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध माना है।

अभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध व्यापार है। जैसे जलमें अग्नि नहीं, किन्तु अग्निका अभाव रहता है। फिर अग्निके अभावका कोई आकार नहीं होता। हम जलमें अग्निके अभावको कैसे देख सकते हैं। परन्तु जलमें अग्निका अभाव देख न पड़ते भी विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध से उसका ज्ञान होता है। अर्थात् जल विशेष्य है और अग्निका अभाव विशेषण है इसलिये विशेषणता-विशेष रूप सम्बन्धसे अभावका प्रत्यक्ष होता है। नहीं तो जलपर चक्षुः जाते ही अभाव कैसे समझ सकते हैं। अतएव अभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता-विशेष रूप सन्निकर्षको ही व्यापार अर्थात् साक्षात् कारण माना है।

जैनसिद्धान्तमें नैयायिक मतके समान इन्द्रिय-सन्निकर्षको प्रत्यक्षमें कारण नहि माना है, क्योंकि यदि समस्त इन्द्रियोंका सन्निकर्ष होता अर्थात् यदि समस्त इन्द्रियां विषयोंसे सन्निकृष्ट हो ज्ञान करातीं तब तो स्वीकार भी कर लिया जाता कि इन्द्रिय-सन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण है सो तो है नहीं क्योंकि यह स्पष्टरूपसे देखनेमें आता है कि नेत्र असन्निकृष्ट होकर ही पदार्थ ज्ञान कराता है। यदि कहोगे कि जिसप्रकार स्पर्शन आदि इन्द्रियां पदार्थसे संयुक्त होकर ज्ञान कराती हैं उसीप्रकार नेत्र भी संयुक्त होकर ही ज्ञान कराता है! सो ठीक नहीं, क्योंकि यदि ऐसा माना जायगा तो जिसप्रकार स्पर्शन इन्द्रियसे बिलकुल सन्निकृष्ट शीत वा उष्ण पदार्थ जाना जाता है उसीप्रकार चक्षु इन्द्रियसे भी उसमें लगी हुये काजलका ज्ञान होना चाहिये क्योंकि कज्जल नेत्रके बिलकुल सन्निकृष्ट है।

यदि यह कहा जायगा कि (चक्षुरप्राप्यकारि—आवृतानवग्रहात्) अर्थात् स्पर्शन इन्द्रिय जिसप्रकार ढके हुये पदार्थके शीत उष्णका ज्ञान नहि करा सकती क्योंकि वह सन्निकृष्ट नहीं है उसीप्रकार चक्षु भी व्यवहित पदार्थको नहीं जनाता क्योंकि व्यवहित पदार्थके साथ उसका सम्बन्ध नहीं है! सो भी अयुक्त है क्योंकि ऐसा माननेसे हेतुको अव्यापक और सन्दिग्ध मानना पड़ेगा अर्थात् यह स्पष्ट रूपसे देखनेमें आता है कि चक्षु, स्वच्छ कांचके भीतर रक्खे हुये पदार्थको और स्वच्छ जलके भीतर पड़े हुये भी व्यवहित पदार्थको देख लेता है। इसलिये पक्षमें साध्यके रहनेसे और साधनके अभावसे वह अव्यापक हो जाता है तथा लोहकान्त मणि लोहके पास न भी जाकर लोहसे संबद्ध हो जाती है। इसलिये उपर्युक्त हेतु संदिग्ध है अर्थात् लोहकान्त मणिद्वारा व्यवहित पदार्थका ग्रहण न होनेसे हेतु की सत्ताका तो निश्चय हो जाता है। परन्तु वह "प्राप्त होकर लोहको ग्रहण नहि करती" इसलिये साध्यके अभावसे वहां यह सन्देह हो जाता है कि चक्षु भी व्यवहित पदार्थको ग्रहण नहि करता इसलिये वह सन्निकृष्ट होकर पदार्थका ग्रहण करता है वा असन्निकृष्ट, इसलिये उपर्युक्त अनुमानमें हेतुके दुष्ट हो जानेसे चक्षु सन्निकर्ष सिद्ध नहीं हो सकता।

यदि मानोगे कि अग्निके समान चक्षु भौतिक पदार्थ है इसलिये जिसप्रकार अग्निका प्रकाश संबद्ध हो पदार्थका ज्ञान कराता है। उसीप्रकार चक्षुकी किरण भी पदार्थसे संबद्ध होकर ही ज्ञान कराती हैं। इसलिये चक्षुसन्निकर्ष युक्त है? सो भी ठीक नहीं, क्योंकि लोहकान्त मणिसे ही यहां व्यभिचार आता है अर्थात् लोहकान्त मणि भी भौतिक पदार्थ है परन्तु वह पदार्थके पास जाकर संबद्ध नहीं होती उसीप्रकार मान भी लो कि चक्षु भौतिक पदार्थ है तथापि वह पदार्थसे सन्निकृष्ट हो ज्ञान नहीं करा सकता।

यदि कहोगे चक्षु बाह्य इन्द्रिय है। इसलिये जिस प्रकार स्पर्शन आदि इन्द्रियां पदार्थसे सन्निकृष्ट हो उसका ज्ञान कराती हैं। उसीप्रकार चक्षुभी पदार्थसे सन्निकृष्ट होकर ही ज्ञान कराता है? सो भी ठीक नहीं। क्योंकि इन्द्रियां (इन्द्रिय शब्द देखो) दो प्रकारकी

मानीं है एक द्रव्येन्द्रिय जो बिन्नी पलक गोलक आदि हैं और दूसरी भावेन्द्रिय जो ज्ञानात्मक हैं उनमें भावेन्द्रियां प्रधान हैं और द्रव्येन्द्रियां गौण हैं इसलिये चक्षु आदि इन्द्रियां सर्वथा वाह्य इन्द्रियां ही हैं यह वात मिथ्या है और चक्षु सर्वथा वाह्य इन्द्रिय नहीं इस वातके सिद्ध हो जानेपर वह सन्निकृष्ट होकर ही पदार्थको दिखाता है यह वात भी सर्वथा अयुक्त है।

यदि यह कहा जायगा कि चक्षु 'असन्निकृष्ट पदार्थका जनानेवाला है' अर्थात् चक्षुरिन्द्रिय और पदार्थका सन्निकर्ष न हो तो व्यवहित जो जमीन आदिके भीतर रहनेवाले पदार्थ हैं और मेरु कैलास आदि पदार्थ जो अत्यन्त दूर हैं उनका भी चक्षुसे दर्शन होना चाहिये क्योंकि उनके न देखनेमें कोई प्रतिबन्धक कारण नहिं जान पड़ता। और हमारे (प्रतिवादियोंके) मतमें तो कोई दोष नहि आता क्योंकि हम चक्षुको तैजस पदार्थ और उससे सूर्य आदि तेजस्वी पदार्थोंके समान रश्मि निकलतीं हैं ऐसा मानते हैं इसलिये जहांतक रश्मिका संबन्ध रहता है वहां तकका पदार्थ दीखता है और जिस पदार्थके साथ रश्मिका संबध नहीं होता वह पदार्थ नहीं दीखता तथा कठिन मूर्तिक पदार्थमें रश्मियां प्रतिबद्ध भी हो जाती हैं इसलिये हमारे मतमें मेरु वा कैलास पर्वतके अन्तरालमें स्थित बहुतसे वन पर्वत आदिसे स्खगित हो जानेसे नेत्रोंकी रश्मियां आगे नही वढ़ पातीं अत: मेरु कैलास आदिका ज्ञान नहीं होता? सो भी सर्वथा अयुक्त है, क्योंकि इस शङ्काका समाधान लोहमणिसे ही होजाता है अर्थात् जिसप्रकार लोहमणि लोहेको यद्यपि खींचती है परन्तु वह व्यवहित लोहेको वा अधिक दूरपर पड़े हुये लोहेको नही खींचती उसी-प्रकार चक्षु भी पदार्थको दिखाता है परन्तु अयोग्य व्यवहित और अधिक दूरवर्तीको नहीं। तथा प्रतिवादियोंने जो चक्षुको तैजस पदार्थ मानकर उसकी रश्मिकी कल्पना और उनका व्यवधान माना है वह प्रमाणबाधित है—कोई भी प्रमाण इस वातको सिद्ध नहि कर सकता।

कहोगे कि चक्षु सन्निकृष्ट होकर पदार्थको नहीं दिखाता इसमें संशय और भ्रान्ति है अर्थात् यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि चक्षु असन्निकृष्ट होकर ही पदार्थको दिखाता है! सो भी ठीक नही, क्योंकि 'चक्षु सन्निकृष्ट हो करही पदार्थोंका ज्ञान कराता है' इस सिद्धान्तमें भी उपर्युक्त दूषण मोजूद है अर्थात् चक्षु सन्निकृष्ट हो पदार्थका दर्शन कराता है वा असन्निकृष्ट ही यह संशय वा असन्निकृष्ट होकर ही कराता है यह विपर्यय वहांपर भी निर्विघ्नरूपसे विद्यमान है।

यदि कहोगे कि जिसप्रकार अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें रश्मियां विद्यमान रहती हैं उसी प्रकार चक्षु भी तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें भी रश्मियां विद्यमान है तथा रश्मियुक्त अग्नि जिसप्रकार सन्निकृष्ट हो पदार्थोंका प्रकाशन करती है उसीप्रकार चक्षु भी सन्निकृष्ट हो पदार्थोंका प्रकाशन करता है सो भी ठीक नहीं, क्योंकि जैनसिद्धान्तमें चक्षुको तैजस नही माना तथा जिसमें तेज रहता है वह उष्ण होता है इसरीतिसे चक्षुका स्थान भी उष्ण मानना पड़ेगा और वह प्रत्यक्षबाधित है क्योंकि यह कोई नहीं कह सकता कि चक्षुका स्थान अग्निके समान उष्ण है। तथा तैजका भासुरशुक्लरूप माना है यदि चक्षुको तैजस माना जायगा तो उसमें भासुरशुक्लरूप दीखना चाहिये।

कहोगे अदृष्टकी कृपासे चक्षुमें अनुष्णपना और अभासुरपना है सो भी ठीक नही, क्योंकि अदृष्टको गुण माना है और वह निष्क्रिय है इसलिये उससे स्वरूपका नाश नहीं हो सकता—भासुरपना वा उष्ण-पना नहीं मिट सकता।

यदि कहोगे नक्तंचर मार्जार आदिके नेत्रोंमें रश्मि देखनेमें आती हैं इसलिये अवश्य चक्षु तैजसपदार्थ है। सोभी ठीक नहीं क्योंकि किसी किसीके पुद्गलमय चक्षु भासुररूप भी परिणत हो जाते हैं पुद्गलशब्द देखो। इसलिये नक्तंचर जीवोंके चक्षुओंमें रश्मि देखकर सब जीवोंके चक्षुओंमें रश्मिका निश्चय करनेसे कभी चक्षु तैजस पदार्थ सिद्ध नही हो सकता।

तथा यह निश्चय है कि जो पदार्थ गतिमान होता है वह समीपवर्ती दूरवर्ती पदार्थको एक साथ नही देख सकता। चक्षुकी रश्मि भी गमनशील हैं इसलिये उनसे भी दूरवर्ती वा समीपवर्ती पदार्थका एकसाथ ज्ञान न होना चाहिये किन्तु देखनेमें आता है कि जिस समय वृक्षके नीचे खड़े होकर चन्द्रमाको देखते हैं उस समय वृक्षकी शाखा और चन्द्रमा एकसाथ दीख पड़ते हैं इसलिये मालूम पड़ता है कि चक्षुमें रश्मियां नहीं, रश्मियोंके अभावसे वह तैजस नही, और तैजस न होनेसे वह पदार्थोंको सन्निकृष्ट होकर नही जनाता।

यदि चक्षुको सन्निकृष्ट होकर पदार्थको जाननेवाला ही माना जायगा तब 'जब कि रात्रिमें बहुत दूर जलती हुई अग्नि दीखती है और उसके पासके पदार्थ नहिं दीखते हैं उसी प्रकार जहांपर प्रकाश नही रहता वहांके पदार्थ भी दीखने चाहियें क्योंकि चक्षुरश्मियोंकी सन्तति तो बराबर अग्नितक विद्यमान रहती है इसलिये जान पड़ता है कि चक्षुमें रश्मि नहीं इसलिये उसका पदार्थोंके साथ सन्निकर्ष भी नहीं होता।

यदि कहोगे जहांपर अग्नि है वहींके पदार्थ दीख सकते हैं क्योंकि वहांपर प्रकाश रहता है बीचके पदार्थोंपर प्रकाश नहीं रहता इसलिये उन्हें चक्षु नहीं देख सकता। सो भी ठीक नहीं क्योंकि अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसको जिसप्रकार पदार्थोंके प्रकाशनमें अन्य प्रकाशकी अपेक्षा नहीं करनी पड़ती उसीप्रकार चक्षु भी तैजसपदार्थ है इसलिये उसके लिये भी अन्य प्रकाशकी अपेक्षाकी आवश्यकता नहीं इसलिये यह बात सिद्ध हुई कि चक्षु और पदार्थका सन्निकर्ष नहीं होता अत: इन्द्रियसन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं हो सकता। किन्तु पदार्थोंके नियमित रूपसे और स्पष्टतासे जनानेवाली क्षयोपशम रूप शक्ति कारण है अर्थात् जिस पदार्थका हम ज्ञान वा दर्शन करते हैं उस पदार्थके ज्ञान वा दर्शनमें जो ज्ञानावरण वा दर्शनावरण रूप प्रतिबन्धक हैं वे जिस समय क्षय और उपशमरूप अवस्थाको प्राप्त हो जाते हैं उससमय उस पदार्थका स्पष्ट ज्ञान वा दर्शन होता है। तथा यहांपर यह भी समझ लेना चाहिये कि जिसप्रकार इन्द्रिय सन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं उसीप्रकार पदार्थ और प्रकाश भी कारण नहीं क्योंकि अन्वय व्यतिरेक व्यभिचार आदि दोषोंसे उनमें भी कारणता सिद्ध नहीं हो सकती। (तत्त्वार्थवार्तिकालङ्कार)

इन्द्रियस्वाप (सं॰ पु॰) १ सुषुप्ति, नींद। सोते समय इन्द्रियवर्गके उपरम अर्थात् विरामका समय रहता है, अत: न कुछ दीख पड़ता है, और न अनुभव होता है। २ प्रलय। मरणकालमें इन्द्रियोंका प्रलय होता है। ३ चेष्टानाश, घबराहट।

इन्द्रियागोचर (सं॰ त्रि॰) अतीन्द्रिय, जो समझ न पड़ता हो।

इन्द्रियात्मन् (सं॰ पु॰) इन्द्रियमेवात्मा, कर्मधा॰। १ विष्णु। २ इन्द्रिय, अजो।

इन्द्रियादि (सं॰ पु॰) इन्द्रियका कारण-रूप अहङ्कार, घमण्ड।

इन्द्रियाधिष्ठातृ (सं॰ पु॰) अचेतन इन्द्रियोंको निज-निज कार्यमें व्यापृत करनेके लिये ईश्वर द्वारा नियुक्त देवता। इन्द्रिय शब्द देखो।

इन्द्रियायतन (सं॰ क्ली॰) १ शरीर, जिस्म। चक्षु:, कर्ण प्रभृति इन्द्रियगणका आधार होनेसे शरीरको इन्द्रियायतन कहते हैं। २ आत्मा, रूह। नैयायिकोंके मतसे स्थूल देह और वेदान्तिकोंके कथनानुसार सूक्ष्म शरीर इन्द्रियायतन है।

इन्द्रियाराम (सं॰ पु॰) इन्द्रियेषु आरमति, इन्द्रिय-आ-रम-घञ्। इन्द्रियोंको चरितार्थ करनेके लिये भोगासक्त व्यक्ति, रिन्द मस्त।

इन्द्रियार्थ (सं॰ पु॰) रूप रस स्पर्श प्रभृति इन्द्रियोंके विषय रूककी चीज़। जैसे—मनोहर युवती, वंशीगीत, स्वादुविशिष्ट रस, कर्पूरादि गन्ध और अनुरागान्वित स्पर्श। इन्द्रियार्थमें लोलुपी हुये लोग प्रायश्चित्त करने योग्य हो जाते हैं,—

"इन्द्रियार्थेषु सर्वेषु न प्रसज्येत कामत:।" (मनु ४।१६)

इन्द्रियावत् (सं॰ त्रि॰) इन्द्रिय-मतुप् मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रिय-

विश्वदेव्यस्य मतौ। पा ६।३।१२१। इति दीर्घः। इन्द्रियविशिष्ट, रुक्त या ताकत रखनेवाला।

इन्द्रियाविन् (सं० त्रि०) इन्द्रियं-प्राशस्त्येन वास्त्यस्य बहु०, विनि। प्रशस्त इन्द्रिय-विशिष्ट, अच्छे रुक्त रखनेवाला।

इन्द्रियासङ्ग (सं० पु०) आत्मसंयम, खुशी और रामसे बेपरवायी।

इन्द्रियेश (सं० पु०) १ जीव, जान्। २ इन्द्रियका देवता।

इन्द्री (हिं) इन्द्रिय देखो।

इन्द्रीजुलाब (हिं० पु०) मूत्र लानेवाला औषध, पेशाबर दवा। भारतमें प्रायः आधा जल और आधा दुग्ध मिलाकर इन्द्रीजुलाब लिया जाता है। शोरा वगैरह खानेसे भी पेशाब बहुत उतरता है। इसमें ठण्डी ही चीज पड़ती है। मूत्र रुकनेपर भात या खिचड़ी खाना चाहिये।

इन्द्रेज्य (सं० पु०) बृहस्पति।

इन्द्रेश्वर (सं० पु०) इन्द्रेण स्थापितः ईश्वरः शिव-लिङ्गम्। शिवलिङ्गविशेष।

इन्द्रोक्तरसायन (सं० क्ली०) १ इन्द्रकथित रसायनवर्ग। २ ऐन्द्री, कुंदरू। ३ महाश्रावणी।

इन्द्रोपल (सं० क्ली०) नीलहीरक, काला हीरा।

इन्ध (सं० पु) इन्ध करणे घञ्। १ दीप्ति, चमक। २ ऋषिविशेष। ३ प्रदीप, चिराग़। (त्रि०) ४ सुलगा देनेवाला, जो जलाता हो।

इन्धन (सं० क्ली०) इन्धे दीप्यतेऽनेन, इन्ध करणे ल्युट्। १ काष्ठ, लकड़ी। २ अग्निके ज्वालनार्थ तृणकाष्ठ, आग जलानेकी लकड़ी। (त्रि०) ३ अग्निको चैतन्य करनेवाला, जिससे आग जले।

इन्धनवत् (सं० त्रि०) इन्धनं प्रज्वालनं विद्यते-ऽस्मिन्, मतुप्। ज्वालायुक्त, जलता हुवा।

इन्धन्वन् (वै० त्रि) इन्धनमत्यस्यीयः, वेदे वनिप् निपातनात् अलोपः। ज्वालायुक्त, जो जल रहा हो।

इन्नर (हिं० पु०) मसाला मिला हुवा गायका दूध। यह गाय व्यानेसे दश दिनके भीतर ही बनता है।

इन्वका (सं० स्त्री०) इन्व इव काययति, इन्व-अक्-के-क। इन्वल, मृगशिरा नक्षत्रके उपरिस्थित पांच तारा।

इन्साफ़, इनसाफ़ देखो।

इबरायनामा (फ़ा० पु०) त्यागपत्र, जिस काग़ज़में अपने हक़ छोड़नेकी बात लिखी जाय।

इबरानी (अ० वि०) १ यहूदी, यहूद जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री०) २ यहूदियोंकी भाषा।

इबलीस (अ० पु०) पिशाच, शैतान्, खबीस।

इबादत (अ० स्त्री०) पूजा, अर्चना, बन्दगी।

इबादतगाह (अ० स्त्री०) मन्दिर, पूजा करनेकी जगह।

इबारत (अ० स्त्री०) १ प्रबन्ध, वाक्य-रचना, जुमलेकी बनावट। २ भाषा, लेख, ज़बान्, तर्ज़-तहरीर। सालङ्कारको रङ्गीन, प्रबलको ज़ोरदार, विस्तीर्णकी तूल-तवील और शिथिल भाषाको लचर इबारत कहते हैं।

इबारत-आरायी (अ० स्त्री०) शब्द चित्र, लफ़्ज़ोंकी सजावट।

इबारती (अ० वि०) लेखसम्बन्धीय, लिखावटके मुताल्लिक़। जो सवाल लिखकर लगाया जाता हो, वह इबारती कहाता है।

इब्तिदा (अ० स्त्री०) १ आदि, आरम्भ, शुरू। २ उत्पत्ति, पैदायश, निकास।

इब्तिदायी (अ० वि०) १ प्रस्तावना-रूप, तमहीदी। २ अग्र, आद्य, साबिक़, पहला।

इब्न आबू उसैबिया—एक मुसलमान् ग्रन्थकार। इन्हें मुवफ़्फ़िक़-उद्-दीन अबू अब्बास अहमद भी कहते थे। इन्होंने ई०के १३वें शताब्दमें संस्कृतसे अरबीभाषामें 'अयून्-अल्-अम्बा-फ़ि-तबकात-उल्-अतिब्बा (अर्थात् वैद्यसम्प्रदाय-सम्पर्कीय संवाद-निर्झर) नामक ग्रन्थका अनुवाद किया था। भारतवर्षीय जो-जो प्राचीन वैद्य विदेशमें पहुंचते, उन सबका कुछ-कुछ विवरण इस ग्रन्थमें लिखा जाता था। १२६९ ई०में इनकी मृत्यु हुई थी।

इब्नबतूता—अरबके एक भ्रमणकारी। मुहम्मद तुग़लकके समय यह भारतवर्षमें ही थे। मुहम्मदने इन्हें दीलीका विचार-पति बनाया था। इन्होंने

अपना भ्रमण-वृत्तान्त पुस्तकाकारमें लिखा है। उक्त ग्रन्थमें भारतवर्षके तत्सामयिक भाव, इतिहास, भूतत्त्व प्रभृतिका खासा विवरण मिलता है। १३३२ ई०में ये मक्केकी तीर्थयात्रा करने गये थे।

इब्राहीम-आदिल शाह (१म)—ये स्मायिल आदिलशाहके पुत्र, दक्षिण विजयपुरके सुलतान् थे। १५३५ ई०में इब्राहीम विजयपुरके सिंहासनपर बैठे थे। १५४३ ई०को इन्होंने अला उद्दीन इमाद शाहकी कन्या रबिया सुलतानासे विवाह किया था। और २४ वर्ष तक राजत्व किया था एवं १५५८ ई०में ये परलोक सिधारे थे।

इब्राहीम आदिलशाह (२य)—तहमास्पके पुत्र। इनका दूसरानाम अबुल मुज़फ्फ़र था। १५८० ई०के अप्रेल मासमें ८ वर्षकी अवस्थामें ये दक्षिण-विजयपुर (बीजापुर)के सिंहासनपर बैठे थे। इनकी नाबालिगीमें कमाल खान् और चांद बीबी सुलतानाने रक्षककी भांति इनके राज्यका कार्य चलाया था। प्रथम तो कमाल खां सरल भावसे ही रहते थे, किन्तु पीछे चांद बीबीसे बिगड़ पड़े उस समय चांद बीबीके समान बुद्धिमती रमणी बहुत थोड़ी थीं। इन्होंने हाजी किशवर खांको अपने पास रख कमाल खान्का प्राणवध कराया था। इसके बाद किशवर खान् राज्यके संरक्षक बने। किन्तु उनके भी मारे जानेपर अखलास खान्को राजकीय पद मिला था। कुछ दिन पीछे दिलावर खान्ने अखलास खान्की आंखें निकाल साम्राज्यका कर्तृत्व अपने हाथ में लिया था। १५९० ई०में इब्राहीमने दिलावरको राजकीय पदसे हटाया था और १५९२ ई०में आंखें खिंचा उसको क़ैदखाने पहुंचाया था। १६२६ ई०में ३८ वर्ष राजत्व करने बाद इनकी मृत्यु हुई। इब्राहीम रौज़ा नामक इनकी क़ब्र विजयपुरमें बहुत अच्छी बनी है। पत्थरकी दीवार पर कुरान्की आयतें अरबी हर्फोंमें खुदी हैं। इनके पुत्र मुहम्मद आदिलशाहको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

इब्राहीम कुतुब शाह—गोलकुण्डाके राजा कुली कुतुब शाहके पुत्र। कुली कुतुब शाहके भ्राता जमशेद कुतुब शाहका जब देहान्त हो गया, तब अमात्यवर्गने तत्पुत्र सुभान कुलीको राजा बना दिया। उस समय सुभानकी उम्र केवल बारह वर्षकी थी। इसलिये राजभार ग्रहण करनेमें इसको बिलकुल अक्षम देख सब लोगोंने इब्राहीमको राज्यके लिये पसन्द किया। ये विजयनगरमें रहते थे। १५५० ई०को २८वीं जुलायीको गोलकुण्डेमें इन्हें राजपद मिला। इन्होंने अपर मुसलमान् राजगणके साथ योग लगा विजयनगराधिप रामराजसे युद्ध किया और उन्हें मारकर समग्र देश आपसमें बांट लिया। १५८१ ई०को ५वीं जूनको ३२ वर्ष राजत्व करने बाद ये अकस्मात् मर गये। इनके पुत्र मुहम्मद कुतुब शाह पीछे राजा हुये थे।

इब्राहीम खान्—अमीर-उल्-उमरा अली मर्दान् खान्के पुत्र। १६५८ ई०के समय बादशाह आलमगीरने इन्हें पञ्चहज़ारी बनाया था। पीछे इब्राहीम खांने काश्मीर, लाहोर, विहार, बङ्गाल प्रभृति स्थानके शासनकर्ताका भी पद पाया था। बहादुरके राजत्वकालमें इनकी मृत्यु हुयी थी।

इब्राहीम खान् फतेहजङ्ग—नूरजहां बेगमके मौसा। १६१६ ई०को क़ासिम खान्के पदच्युत होनेपर जहांगीर बादशाहने इन्हें चार हज़ार सिपाही सौंप विहारका शासनकर्ता बनाया था। शाहजहांके अपने पिता जहांगीरसे विरोध करनेपर यह ढांकेमें लड़े और अन्तको कट मरे।

इब्राहीम खान् सूर—बयान शासनकर्ता ग़ाज़ी खान्के पुत्र और मुहम्मद शाह आदिलीके भगिनीपति। १५५५ ई०में इन्होंने बहुसंख्यक सैन्य संग्रहकर यद्यपि दिल्ली और आगरा नगर जीत लिये थे तो भी सिंहासनपर जमकर बैठ न सके। अहमद खान्ने पञ्जाबमें बल बढ़ाकर युद्धमें इन्हें हरा शम्भलकी भगा दिया और दिल्ली तथा आगरे पर अपना अधिकार जमा लिया। १५६७ ई०को उड़ोसेमें एक युद्ध हुवा था। उसीमें बङ्गालके नवाब सुलेमान्ने इन्हेंको मार डाला था।

इब्राहीम निज़ामशाह—बुरहान् निज़ाम शाहके पुत्र। १५९५ ई०के अपरेल मासमें इन्हें दक्षिण-अहमद-

नगरका राजत्व मिला था। चार मास राजत्व करनेके बाद इन्हें (निज़ाम-शाहको) बीजापुरके नवाब इब्राहीम आदिलशाहसे लड़ना पड़ा। इसी युद्धमें ये मारे गये।

इब्राहीम शाह शरकी—युक्तप्रदेश जौनपुरके एक नवाब। १४०२ ई०में अपने भ्राता मुबारिक शाहके मरनेसे ये गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने अराजकता रहते भी साहित्य-की बड़ी उन्नति की। उस समय हिन्दुस्थानमें जौनपुर विद्याका भवन बन गया था। १४४० ई०को शरकीकी मृत्यु हुयी। प्रजा इनसे बहुत सन्तुष्ट रहती थी।

इब्राहीम हुसेन लोदी—सिकन्दर शाह लोदीके लड़के। १५१० ई०के फरवरी मासमें पिताकी मृत्यु होनेसे आगरेमें ये सिंहासनपर बैठे। इन्होंने सोलह वर्ष राजत्व किया था। १५२६ ई०की २०वीं फरवरीको पानीपतमें बाबर शाहसे लड़ने पर ये मारे गये।

इब्राहीमी (अ० पु०) मुद्राविशेष, एक सिक्का। यह इब्राहीम लोदीके समय प्रचलित था।

इभ (सं० पु०) इ-भन्। इणः कित्। उण् ३।१५३। १ हस्ती, हाथी। २ आठकी संख्या। आठों दिशाओंमें एक-एक दिग्गज रहता है इसलिये इभ शब्द आठकी संख्याका बोधक है। ३ नागकेशर। (वै० पु०) ४ अनुचर, नौकर। ५ निर्भय शक्ति। (त्रि०) ६ अनुचर द्वारा आवृत, जो नौकरोंसे घिरा हो।

इभकणा (सं० स्त्री०) इभोपपदा कणा पिप्पली, शाक० तत्। गजपिप्पली, गजपीपर।

इभकुम्भ (सं० पु०) हस्तीका मस्तक, हाथीका सर।

इभकृष्ण (सं० पु०) इभकणा देखो।

इभकृष्णा, इभकणा देखो।

इभकेशर (सं० पु०) इभमद इव केशरः यस्य, बहुव्री०। १ नागकेशर वृक्ष। यह वृक्ष ठीक बबूल-जैसा होता है। इसके पुष्पकी सुगन्ध एक कोसतक पहुंचती है। २ नागकेशर पुष्प।

इभकेसर, इभकेशर देखो।

इभगन्धा (सं० स्त्री०) इभस्य गन्ध एकदेशो दन्त इव पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। नागदन्ती वृक्ष, हत्याजोरी, सरियारी। इस वृक्षके फल, पुष्प, पत्र, वल्कल प्रभृति समस्त अङ्ग ही विषैले होते हैं। नागदन्ती देखो।

इभगन्धिका, इभगन्धा देखो।

इभदन्ता (सं० स्त्री०) इभस्य दन्तवत् शुभ्रं पुष्पमस्याः। १ हस्तिशुण्डीवृक्ष, हाथीसूंड़। २ नागदन्तीवृक्ष, सरियारी।

इभदन्ताह्वा (सं० स्त्री०) नागदन्ती, सरियारी।

इभनिमीलिका (सं० स्त्री०) इभस्येव निमीलिका, इभ-निमील-क-टाप्, ६-तत्। १ सिद्धि, भाग। इस वृक्षके पत्र वा बीज खानेसे नशा चढ़ता है और चक्षुः हाथीकी तरह बैठ जाते हैं। इसीसे भांगको इभ-निमीलिका कहते हैं। २ पटुता, रसिकता, होशियारी, क़द्रदानी।

इभपत्रिका (सं० स्त्री०) चिल्लीशाक, एक सब्ज़ी।

इभपालक (सं० पु०) हस्तिपक, महावत।

इभपुष्प (सं० क्ली०) नागकेशर।

इभपोटा (सं० स्त्री०) पोटा पुंलक्षणा इभी, जाति-त्वात् पूर्वनिपातनात् पुंवद्भावश्च। १ पुरुषहस्तीकी भांति चिह्नयुक्त हस्तिनी। २ करिशावक, हाथीका बच्चा।

इभबला (सं० स्त्री०) नागबला, पान।

इभभर (सं० पु०) हस्तिसमूह, हाथीका झुण्ड।

इभमञ्जक (सं० पु०) पुत्रदात्री लता, बेटा देनेवाली बेल।

इभमाचल (सं० पु०) इभमाचलयति, इभ-आ-चल् बाहुलकात् णिच्। सिंह, शेर। पर्वतोंपर सर्वदा रक्तपानके लिये हाथियोंको मारता फिरता है इस-लिये सिंहका नाम यह पड़ा है।

इभमूलक (सं० क्ली०) १ हस्तिमूलक। २ गन्ध-वृक्ष।

इभया (सं० स्त्री०) इभैर्यायते भक्ष्यते, इभ-या कर्मणि घञर्थे क, ३-तत्। स्वर्णक्षीरी वृक्ष। हाथीके खानेसे इस वृक्षका नाम यह पड़ा है।

इभयुवति (सं० स्त्री०) युवतिः इभी, पूर्वनिपातनात् पुंवत् च। १ युवति हस्तिनी, नौजवान् हथिनी। २ करिशावक, हाथीका बच्चा।

इभराज (सं० पु०) ऐरावत हस्ती। यह संपूर्ण हस्तियोंका राजा होता है।

इभराट्, इभराज देखो।

इभशुण्डी (सं० स्त्री०) हस्तिशुण्डी, हाथीसूंड।

इभषा (सं० स्त्री०) इभ-षा-क-टाप्। स्वर्णक्षीरी वृक्ष।

इभाख्य (सं० पु०) इभआख्या नाम यस्य वा यस्मिन्। नागकेशर वृक्ष।

इभानन (सं० पु०) इभाननमिवाननं यस्य। गणेश, गजानन।

इभारि (सं० पु०) हस्तीका शत्रु, सिंह, शेर।

इभावती (सं० स्त्री०) वटपत्री वृक्ष।

इभी (सं० स्त्री०) हस्तिनी, हथिनी।

इभोषणा (सं० स्त्री०) इभोपपदा उषणा, शाक-तत्। गजपिप्पली, बड़ी पीपर।

इभ्य (सं० पु०) इभ-य। १ शत्रु, दुश्मन्। २ हस्तिपालक, हाथीका महावत। (वै० त्रि०) ३ भृत्यसम्बन्धीय, नौकरके मुतालिक़। ४ धनवान्, दौलतमन्द, जिसके बहुत नौकर रहें।

इभ्यका (सं० स्त्री०) इभ्य स्वार्थे कन्-टाप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शल्लकी वृक्ष, लोबानका पेड़।

इभ्यतिल्विल (वै० त्रि०) इभ्यः तिल्विव इव। अनेक हस्ती और अश्व रखनेवाला, जिसके कितने ही हाथी-घोड़ा हों।

इभ्या (सं० स्त्री०) इभमर्हतीति यत्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शल्लकी वृक्ष, लोबानका पेड़।

इभ्यिका, इभ्यका देखो।

इम, इदं देखो।

इमक, इदं देखो।

इमकान (अ० पु०) १ सम्भव, एहतिमाल। २ अंश, वजूद। ३ शक्ति, मजाल, बस।

इमकोस (हिं० पु०) असिगृह, तलवारका म्यान।

इमचार (हिं० पु०) गुप्तचर, छिपा जासूस।

इमथा (वै० अव्य०) इदं इवार्थे थाल्, इमादेशश्च निपातनात् वेदे। प्रत्न-पूर्व-विश्व-मात्थाल् छन्दसि। पा ५।३।१११। इदानीन्तन तुल्य, इसतरह।

इमदाद (अ० स्त्री०) १ साहाय्यकार्य, मदद देनेका काम। २ दान, बख़्शिश।

इमदादी (अ० वि०) साहाय्यप्राप्त, जिसे मदद मिले।

इमरती (हिं० स्त्री०) मिष्टान्नविशेष, एक मिठायी। पहिले उड़दकी पीठी को खूब बारीक बांट चौरेठा मिलाते हैं और दोनोंको खूब फेंट डालते हैं। फिर छोटेसे चौखुण्टे कपड़ेमें वह फेंटी हुयी चीज़ रख दी जाती है और घी तवेमें डाल गर्म किया जाता है। कपड़ेके बीचमें एक छेद रहता है। चारों खूंट समेटकर उसे उठाते हैं और खौलते घीमें फेंटी हुयी चीज़ घुमा-घुमाकर चुआते हैं। गोल-गोल घेरा बन जानेपर उस पर फिर छल्ले छोड़ देते हैं। जब यह छल्लेदार घेरा पककर लाल हो जाता है तब चीनीकी चाशनीमें डुबोया जाता है। इसतरह अन्तमें इमरती बन जाती है और खानेमें बहुत अच्छी लगती है।

इमली (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह वृक्ष बड़ा होता है और सदा हरा-भरा रहता है। इसकी लम्बायी ८० और चौड़ायी २५ फीटतक होती है। सम्भवतः अफ्रीका और दक्षिण भारतमें इमली अपने आप उपजती है इसकी पत्ती पतली और बहुत छोटी होती है। लम्बी-लम्बी फली बारीक और कड़े गूदेसे ढकी रहती है। काला और मैला इसका गोंद किसी काममें नहीं आता। फल,फूल और पत्तीमें खूब खटायी होती है। पत्तियोंके भिगोनेसे लालरङ्ग उतरता है।

इसके बीजको चीया कहते हैं। चीयायोंके पेरनेसे जो तेल निकलता है,वह न तो सूंघनेमें किसी क़िस्मकी गन्धही देता है और न खानेमें मीठा ही लगता है।

भारतवर्षमें अनादिकालसे इमलीका औषधार्थ व्यवहार किया जाता है। हिन्दुवोंने ही अरबोंको इसका उपयोग बताया था। वैद्यमतसे इमली— दाहहर, पाचन, अग्निवर्धक तथा रेचक होती है और पित्तज व्याधिमें अधिक लाभ पहुंचाती है। इसके खानेसे धतूरे और शराबका नशा उतर जाता है।

दाल, तरकारी और चटनीमें इमली पड़ती है। नमक, मिर्च, मसाला और तेल मिलाकर इसकी खटायी भी बनाते हैं। लड़के कोमल-कोमल पत्तियों और फूलोंको बड़े चावसे खाते हैं।

विवाहादि उत्सवों पर बारी इमलीकी पत्तियोंसे बड़ी-बड़ी पत्तरें बना लोगोंको दिखाता है और पुरस्कार पाता है।

इमाद्-उल्-मुल्क—दक्षिणापथमें इमाद्-शाही राजवंशके स्थापयिता। विजयनगरवाले किसी मुसलमान्‌के घर इनका जन्म हुवा था। बाल्यकालमें ये बन्दी बन बरार आये थे। कुछ दिन बाद बरारके सेनापति और शासनकर्ता जहान् खान्‌ने इन्हें अपने शरीररक्षीके पद पर नियुक्त किया था। मुहम्मद शाह बहमानीके राजत्व कालमें इन्होंने इमाद्-उल्-मुल्‍ककी उपाधि और बरार-सेनानायकका पद पाया था। अपने परिपोषक ख्वाजा महमूदके मरनेपर ये बरारके शासनकर्ता बने। जब सुलतान् महमूद बहमानी बरारके नवाब हुये, तब यह मन्त्रीके पदपर बैठे थे। किन्तु अपरापर अमात्यके वैभव देख न सकनेसे इन्होंने रक्षिपद छोड़ दिया। पीछे ये स्वतन्त्र नवाब हो गये। एलिचपुर इन्होंने अपनी राजधानी बनाई थी। १५१३ ई०की इनकी मृत्यु हुयी। बादमें इनके ज्येष्ठपुत्रको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

इमाम (अ० पु०) प्रधान याजक, स्तुतिपाठ करनेवाला। मुसलमानोंका शीया सम्प्रदाय, मुहम्मदके जामाता अलीको और उनके परा-पर वंशधरोंको इसी नामसे पुकारते आया है। सब मिलाकर १२ इमाम हुये हैं,—

१	इमाम	अली
२	,,	हसन
३	,,	हुसैन
४	,,	जैन-उल्-आबिदीन्
५	,,	मुहम्मद बाकि़र
६	,,	जाफ़र सादिक़
७	,,	मूसा का़ज़िम
८	,,	मुहम्मद तक़ी
९	,,	अली नक़ी
१०	,,	हुसैन अस्करी
११	,,	महदी
१२	,,	अली मूसा रज़ा

किसी-किसीके मतमें जन्म लेनेपर भी इमाम महदी छिपे हुये हैं। वेही जगत्‌में इसलाम धर्मका प्रचार करेंगे। कितने ही वर्ष पहिले मिश्रमें युद्ध होते समय एक इमाम महदी देख पड़े थे। वे अपनेको बारहवें इमाम बताते थे। चारो ओरसे मुसलमानोंने अफ्रीका पहुंच उन्हें साहाय्य दिया। धर्मयुद्धमें विधर्मियोंको हराना और मुसलमान्‌को बचानाही उनका उद्देश्य था।

सुन्नी सम्प्रदायका मत स्वतन्त्र है। उसके कथनानुसार प्रत्येक भजनमन्दिरमें रहनेवाले साक्षात् बुद्ध ही इमाम कहला सकते हैं। वह चार इमाम मानता है,—हनीफ़, मालिक़, शफ़ी और हनबल।

इमामदस्ता (हिं० पु०) उलूखल-मुसल, खरल और खुटका। यह लोहे, पत्थर या पीतलका बनता है और मसाला तथा दवा कूटनेके काममें आता है।

इमामबाड़ा (हिं० पु०) १ ताज़िया रखने और गाड़नेकी जगह। यहां मुसलमान् अवपर भेंट चढ़ाते हैं। २ मुहरम त्योहार सम्पन्न करनेका भवन। इमामबाड़ेमें मुहरमके समय अली और तत्पुत्र हसन तथा हुसैनके स्मरणार्थ उपासना की जाती है।

इमारत (अ० स्त्री०) १ अमीरके राज्यका ज़िला। २ शासन, हुकूमत। ३ वैभव, रुतबा। ४ चमत्कार, रौनक़। ५ विशाल भवन, आलीशान् मकान्।

इमि (हिं०-क्रि०-वि०) एवम्, इसतरह, ऐसे।

इम्तिहान् (अ० पु०) १ विचार, परख। २ परीक्षा, जांच, पूछताछ।

इम्ला (अ० पु०) लेखनप्रणाली, हिज्जे।

इयक्षु (वै० त्रि०) यज-उ वेदे निपातनात् सम्प्रसारणम्। यज्ञ करनेकी इच्छा रखनेवाला। (ऋक् १०।४।१)

इयत् (वै० त्रि०) इदं परिमाणमस्य, वतुप् घादेशश्च। किमिदम्भ्यां वो घः। पा ५।२।४०। एतावत्, इसक़दर, इतनासा।

इयत्तक (वै० त्रि०) इयत्ता इति कुत्सितार्थे कन् ह्रस्वश्च। निन्दित इयत्ता, अल्प-प्रमाण, बहुत छोटा।
'इयत्तकः कुत्सितेयत्तः अल्पप्रमाणः।' (सायण)

इयत्ता (सं० स्त्री०) इयतो भावः इति तल्। एतावत्व, इतना परिमाण, मुक़र्रर मिक़दार, आन्दाज़।

इयम् (वै० त्रि०) कर्तरि असुन् किच्च। १ गन्ता, चलनेवाला। (क्ली०) भावे असुन्। २ गमन, चाल।

इर (सं० पु०) इर-क। उर्वरा भूमि, उपजाऊ ज़मीन्।

इरंमद (वै० पु०) इरया जलेन माद्यति, इरा-मद-खच् निपातनात् ह्रस्वः। उग्रम्पश्येत्यादि। पा ३।२।३९। १ वज्रानल, बिजलीकी आग। २ बड़वानल।

इरज्यु (वै० पु०) पृथिवीका ईश्वर। 'इरज्यो भुवनाना-मीश्वरः।' (सायण)

इरण (सं० क्ली०) इरण ईरिण, ऋ-अण् पृषोदरा-दित्वात्। ऊषर भूमि, रेगस्तान, जिस ज़मीन्पर कुछ न उगे।

इरशाल (अ० पु०) १ प्रशासन, हिदायत। २ आदेश, हुक्म। ३ इच्छा, मरज़ी।

इरसाल (अ० पु०) १ वाचिकपत्र, ज़रूरी चिट्ठी। २ मासिक राजस्व, माहवार आमदनी। छोटा अफसर बड़े अफ़सरके पास प्रत्येक मास इरसाल पहुंचाता है।

इरसी (हिं० स्त्री०) चक्रध्रुव, पहियेका मद्दवर।

इरा (सं० स्त्री०) इ-इन् गुणभावश्च निपातनात् अथवा इ कामं राति, इ-रा-क-टाप्। १ भूमि, ज़मीन्। २ रात्रि, रात। ३ जल, पानी। ४ अन्न, अनाज। ५ सुरा, शराब। ६ वाक्य, बात। ७ सर-स्वती। ८ कश्यपकी स्त्री। इरादेवी वृक्षलता, वल्ली और समस्त तृणजातिको पैदा करती है। ९ आनन्द, खुशी।

इराक़—१ पारस्यस्थ प्रदेश-विशेष, ईरान्का एक भाग। यह खुरासान्से पूर्व अवस्थित है। इराक़ उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्व ६०० मील लम्बा और उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिम ३०० मील चौड़ा है। मुसलमान् नवाबोंके समय इराक़ी भारतवर्ष आ सैनिक कार्य करते थे। २ एशियायी तुर्कस्थानका एक प्रदेश। यहांके लोग अरबी बोलते हैं। यह देश दो भागोंमें विभक्त है,—सूखा और गीला। सूखेका जलवायु अच्छा और गीलेका ख़राब है। किन्तु गीले भागमें कृषिकार्य अधिक होता है। यहां तिगरिस और युफ्रेतस दो नदी बहती हैं। उनके किनारे-किनारे खजूरके पेड़ लगे हैं। गीले भागमें दलदल बहुत है। वहां हबशी रहते हैं यहांके राजाओंके क़िले मिट्टीके होते हैं। जो चावल बोते और चटायी बुनते हैं। मतुल-स्थायीके लोग बड़े उपद्रवी हैं। यहां यात्री प्रायः लुट जाते हैं। उत्तरसे शमार आकर और भी अधिक उपद्रव उप-स्थित किया करते हैं। किन्तु तुर्क-सरकार अब धीरे-धीरे तिगरिस पर अपना प्रभाव बढ़ा रही है। युफ्रेतसकी बाढ़ रुकने और दलदल सूखनेका प्रबन्ध भी हुवा है। यहांके अधिवासी अधिकतर शीया हैं। इनकी बुद्धि तीक्ष्ण होती है। गर्मीमें यहांके अमीर लोग हिन्दुस्थानी पङ्खा व्यवहार करते हैं।

बग़दाद और बसरा दोनो स्थान इराक़में ही हैं। यहांसे खजूर, अनाज, चावल और ऊन बाहर भेजा जाता है। बाहरसे आनेवाले मालमें कपड़ा, मट्टीका तेल और पत्थरका कोयला प्रधान है। तिगरिसमें व्यापारी जहाज़ चलते हैं। युफ्रेतसमें यात्रियोंकी नौका रस्सीसे आदमी खींचते हैं। यहां पक्की सड़कें नहीं हैं। इसलिये बाढ़ आ जाने और दल-दल रहनेसे ऊंटपर लादकर माल भेजनेमें असुविधा होती है।

ई०के ७वें शताब्दमें ईराक़की अधिक श्रीवृद्धि हुयी थी। अब्बासी खलीफ़ोंकी अधीनतामें यहां कृषिकार्य बड़े ज़ोर शोरसे चला था। किन्तु उनका अधिकार उठजानेसे फिर यह देश पूर्ववत् वन्य हो गया। अब अंगरेज़ोंने बग़दाद जीत लिया है। अंगरेज़ी होनेसे फिर यहां धनधान्य बढ़नेकी आशा होती है। इराक़में बाबि-लन, सिल्यूकिया, तेसिफोन प्रभृति प्राचीन नगरोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। ३ सिन्धुप्रदेशकी एक नदी। यह अक्षा० २५° २०′ उ० तथा द्राघि० ६७° ४५′ पू० पर इट्टुल पर्वतके नीचेसे निकलती है और दक्षिणपूर्व ४० मील बहकर कच्छड़ झीलमें जा गिरती है।

इराक़ी (अ० त्रि०) इराक़ देशीय, इराक़ मुल्कके मुताल्लिक़।

इराचीर (सं० पु०) इरा जलं क्षीरमिव यस्य, बहुव्री०। क्षीरसमुद्र। इस समुद्रके जलमें दूधका स्वाद है।

इरावर (सं० क्लो०) इरायां चरति, इरा-चर-ट। चरेष्ट। पा ३।२।१६। १ करका, ओला। चैत्र-वैशाख मासमें मेघ बरसनेसे प्रायः ओले पड़ते हैं। २ भूचर, जमीन्का जानवर। ३ खेचर, आस्मानी लोग—जैसे देवता भूतप्रेतादि।

इराज (सं० पु०) इराया जायते, इरा-जन-ड। कन्दर्प, काम।

इरादा (अ० पु०) १ इच्छा, मरजी। २ अभिप्राय, मतलब। ३ सङ्कल्प, क़स्द। ४ विचार, तजवीज़। ५ निर्दिष्ट स्थान, ठिकाना। ६ अर्थ, मुराद।

इरामुख (सं० क्लो०) १ असुरनगर विशेष। यह मेरुके निकट था। २ प्रदोष, सन्ध्या, शाम पड़नेका वक्त।

इरावत् (सं० पु०) इरा विद्यतेऽत्र, इरा भूम्नि मतुप् मस्य च वः। १ समुद्र, बहर। २ मेघ, बादल। ३ राजा, नवाब। ४ अर्जुनके एक पुत्र। इन्होंने नागराजकी कन्या उलूपीके गर्भ और अर्जुनके औरससे जन्म लिया था। अर्जुनसे क्रुद्ध हो इरावान्को पितृव्यने छोड़ दिया, इसलिये ये जननी द्वारा नागलोकहीमें प्रतिपालित हुये थे। एक दिन अर्जुन नागलोक गये और इन्होंने उन्हें वह अपना सकल वृत्तान्त बताया। पिताकी आज्ञासे ये रणमें पहुंचे और आर्ष्यशृङ्ग राक्षस द्वारा मार डाले गये। (वै० त्रि०) ५ सुखद, जिससे आराम मिले। ६ खाद्य-सम्पन्न, जिसके पास खानेका सामान रहे। ७ आश्वासक, तसल्ली देनेवाला।

इरावती (सं० स्त्री०) इरा वनं तदस्या अस्ति, इरा-मतुप् वत्वं ङीष्। १ नदी, दरया। २ नदीविशेष, पञ्जाबका एक दरया। अब इसे रावी कहते हैं। रावी देखो। ३ वटपत्री, पथरचटा। ४ रुद्रपत्नी। ५ ब्रह्मदेशस्थ एक नदी। इरावदी देखो।

इरावदी—ब्रह्मदेशकी प्रधान नदी। यह ब्रह्मदेशके पेगू और इरावदी विभागमें उत्तरसे दक्षिणको बहती है। इसकी उत्पत्तिका स्थान अनिश्चित है। सम्भवतः इरावदी पतकोयी पर्वतकी दक्षिण-घाटीसे निकली है। छोटी और बड़ी दो शाखा मिलकर यह नदी बनी है। इरावदीमें कितनी ही नदी आ कर गिरती हैं। मोगाङ्गके सङ्गमपर यह ५०से २५० गज तक चौड़ी हो जाती है। वहां इसकी धारा बहुत ही तीव्र बहती और पानीमें घूम-घूमकर लहर उठती है। भामोमें जहां तापिङ्ग मिली है, वहां इसकी अपूर्व शोभा खिली है। मन्दालयसे थोड़ी दूर इरावदीके किनारे सब्ज़ी खूब जगती है। इसकी उपत्यकामें चावलकी कृषि की जाती हैं। मैदानमें प्रतिवर्ष बाढ़ आती है। नदी ९०० मील लम्बी है। अकाकताङ्ग तक तो इसका तल पथरीला पड़ता, उसके बाद रेत तथा दलदल मिलता है। बारहो मास इसमें छोटे-छोटे जहाज़ चला करते हैं। वर्षामें रंगूनसे बड़े २ जहाज भी आते जाते हैं। रंगूनसे बासिन और मन्दालयको सप्ताहमें दो बार जहाज़ छूटता है।

इराविल्लिका, इरिविल्लिका देखो।

इरिका (सं० स्त्री०) इरेव, इरा-कन् अत इत्वम्। जल, पानी।

इरिकावन (सं० क्लो०) इरिका प्रधानं वनम्, शाक-तत् वा ६-तत्, णत्वं बाहुलकात्। विभाषौषधिवनस्पतिभ्यः। पा ८।४।५। जलके निकटस्थ वन, पानीके पासका जङ्गल।

इरिकील (सं० पु०) अङ्कोलवृक्ष, ढेरेका पेड़।

इरिण (सं० क्लो०) ऋ अर्त्तेः किदिच्च इनन्। १ ऊषर भूमि, बञ्जर ज़मीन्। २ जलप्रवाह, नाला, कुआं। ३ भूमिच्छिद्र, खन्दक। ४ मरुभूमि, रेगस्तान। ५ वेदोक्त प्राचीन जनपद। आर्यावर्त्त देखो।

इरिण्य (वै० त्रि०) १ मरुभूमिसम्बन्धीय, रेगस्तानके मुताल्लिक़। (क्लो०) २ ऊषर क्षेत्र, बञ्जर खेत। (सायण-कृत शतपथब्राह्मणभाष्य ५।२।३।३)

इरिन् (वै० त्रि०) इरि कण्ड्वादित्वात् णिनि यलोपः। १ प्रेरक, भेजनेवाला। 'इरी ईरीता प्रेरिता।' (ऋग्भाष्ये सायण ५।८७।३) २ ईर्ष्यक, हसदी।

इरिमेद (सं० पु०) इरी व्याधिजनकतया ईर्ष्यकः मेदो निर्यासो यस्य, बहुव्री०। अरिमेद, विट्खदिर। यह एक प्रकारका खैर होता और गुणमें कषाय तथा उष्ण रहता है। इससे मुख एवं दन्तरोगका औषध बनता है और रक्त गिरना बन्द हो जाता है। कण्डू, विष, श्लेष्मा, कृमि, कुष्ठ और विषाक्त व्रणको इरिमेद शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

इरिम्बिठि (सं० पु०) काखवंशीय एक व्यक्ति।

इरिविल्ला (सं० स्त्री०) इरिणी चासौ विल्ला चेति। मस्तकका एक क्षुद्र व्रण।

इरिवेल्लि, इरिवेल्लिका देखो।

इरिवेल्लिका (सं० स्त्री०) त्रिदोष-लक्षणाक्रान्त मस्तककी गोलाकार पिड़काविशेष, (Carbuncle of head) माथेका एक फोड़ा। इसके होनेसे बड़ी ही वेदना होती है। कभी कभी तो ज्वर तक चढ़आता है। पित्तजन्य विसर्प रोगकी तरह वैद्य इसकी भी चिकित्सा करते हैं। होमिओपाथिकके मतमें ऐसे रोगपर हिपार सलफर लगानेसे विशेष फल मिलता है। कोई-कोई चिकित्सक सिलिसिया, वेलेडोना प्रभृति अन्यान्य औषधियोंको भी प्रयोग करना अच्छा समझते हैं।

इरेश (सं० पु०) १ विष्णु। २ वरुण। ३ राजा। ४ वागीश।

इर्द-गिर्द (हिं० क्रि० वि०) समन्ततः, चारो ओर, दाहने-बायें।

इर्म (सं० क्ली०) १ व्रण, फोड़ा। २ क्षत, ज़ख्म, घाव।

इर्य (वै० त्रि०) इरस्-यक् वेदे निपातनात्। प्रेरक, भेजनेवाला।

इर्वारु (सं० पु०) इरुं बीजं इयर्त्ति व्याप्नोति, इरु-ऋ बाहुलकात् उण्। कवँटी, ककड़ी।

इर्वारुक (सं० पु०) मृगविशेष, एक जानवर। यह पर्वतकी गुहाओंमें रहता है।

इर्वारुशुक्ति, इर्वारुशुक्तिका देखो।

इर्वारुशुक्तिका (सं० स्त्री०) इर्वारुः शुक्तिका इव, उप० कर्मधा०। निर्भिन्नकर्कटी, फूट।

इर्वालु, इर्वारु देखो।

इर्शाद, इरशाद देखो।

इर्षना (हिं०) एषण देखो।

इल (सं० पु०) इल-क। कर्दम प्रजापतिके पुत्र।

इलज़ाम (अ० पु०) १ कलङ्क, बदनामी। २ अपराध, जुर्म। ३ निन्दा, हिक़ारत।

इलविल (सं० पु०) दशरथके एक पुत्र।

इलविला (सं० स्त्री०) कुबेरकी माता, पुलस्त्यकी पत्नी और तृणविन्दुकी कन्या।

इलहाक (अ० पु०) १ योग, जोड़। २ वादी तथा प्रतिवादीसे लिया जानेवाला शुल्क, जो मेहनताना मुद्दयी और मुद्दाइलसे मिलता हो।

इलहाम् (अ० पु०) १ सुश्राव्य शब्द, अच्छी आवाज़। २ आकाशवाणी, परमेश्वरकी बात।

इला (सं० स्त्री०) इल-क-टाप्। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ वाक्य, बोली। ३ गो, गाय। ४ स्वप्नशीला, ख़्वाब देखने या ज्यादा सोनेवाली औरत। ५ जम्बूद्वीपके नव वर्षमें एक वर्ष। ६ वैवस्वत मनुकी कन्या। यह विष्णुके वरसे पुरुष हो सुद्युम्न कहायी थीं। अनन्तर महादेवके अभिशप्त कुमारवनमें घुसनेसे यह फिर स्त्री हो गईं। बुधने इनसे विवाह कर पुरुरवा नामक पुत्र उत्पन्न किया था। किन्तु इनके पुरोहित वशिष्ठदेवने शिवकी उपासना कर इनके एकमास पुरुष और एक मास स्त्री रहनेका वर प्राप्त कर लिया था। ७ कर्दम प्रजापतिके पुत्र इल। कार्तिकेयके जन्मस्थानमें जानेसे ये स्त्री हुये और इला नामसे प्रसिद्ध रहे। पीछे इन्होंने भगवतीकी आराधनासे एकमास स्त्री और एक मास पुरुष रहनेका वर पा लिया था। इड़ा देखो।

इलाक़ा (अ० पु०) १ सम्पर्क, ताल्लुक़, लगाव। २ नियोग, सरोकार। ३ उद्देश, ज़िक्र। ४ ग्रहण, क़ब्ज़ा, पकड़। ५ राज्य, रियासत। ६ विभाग, हिस्सा। ७ न्यायप्रभुत्व, हुक्मरानी। ८ पद, ओहदा।

इलाक़ाबन्द (अ० पु०) दीर्घपट्टकार, पटवा।

इलाक़ाबन्दी (अ० स्त्री०) १ दीर्घपट्टकारकी वृत्ति, पटवेका काम। २ वस्त्राभरणक्रिया, गोटे-किनारीका काम।

इलाची (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, किसी क़िस्मका कपड़ा। इसमें रेशम और सूत दोनो चीजें मिली रहती हैं।

इलागोल (सं० क्ली०) पृथिवी, ज़मीन्।

इलाची, इलायची देखो।

इलाज (अ० पु०) १ उपाय, तदबीर, दौड़-धूप। २ निवृत्ति, छुटकारा। "अपन कियेका क्या इलाज।" (लोकोक्ति) ३ चिकित्सा, दवा-मालजा। ४ दण्ड, सज़ा।

इलातल (सं० क्ली०) १ राशिचक्रका चतुर्थ स्थान। २ पृथिवीतल, सतह-ज़मीन्।

इलादध (सं० पु०) यज्ञविशेष।

इलान्द (सं० क्ली०) १ उत्सव वा छन्दोविशेष, बक खास जलसा या बहर। २ एक सामन्।

इलापत्र (सं० पु०) नागविशेष।

इलाम (हिं०) ऐलान् देखो।

इलायची (हिं० स्त्री०) एला, इलाची। (Cardamom) संस्कृतमें इसे बहुलगन्धा, ऐन्द्री, द्राविड़ी, कपोतपर्णी, बाला, बलवती, हिमा, चन्द्रिका, सागरगामिनी, गान्धालीगर्भा, एलीका और कायस्था कहते हैं। इलायची छोटी और बड़ी या गुजराती और पूर्वी दो प्रकारकी होती है। छोटीका संस्कृत नाम उपकुञ्चिका, तुत्था, कोरङ्गी, त्रिपुटा, त्रुटिवयस्था, तीक्ष्णगन्धा, सूक्ष्मैला तथा त्रिपुटि और बड़ीका पृथ्विका, चन्द्रबाला, निष्कुटि, बहुला, स्थूलैला,

इलायचीका वृक्ष।

मालेया एवं ताड़काफल आदि है। छोटी और बड़ी दोनो इलायची वैद्यकमतसे शीतल, तिक्त, उष्ण, सुगन्धित, हृद्रोगकारक और पित्तरोग, कफ, मलभेद, वमन एवं शुक्रको नाश करनेवाली हैं। बड़ी विशेषतः शूल, कोष्ठबद्ध, पिपासा, छर्दि एवं वायु और छोटी कफ, श्वास, काश, अर्शः तथा मूत्रकृच्छ्रको मिटाती है।

इसका पौदा चारसे आठ फीटतक ऊंचा होता और सदा हरा-भरा रहता है। इसकी मोटी लकड़ीकी जड़ ज़मीन्में जमती और उसके ऊपरी भागसे इधर उधर खड़ी डाली निकलती है। इलायची पर फल-फल दोनो लगते हैं। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें इलायची उपजती है। दक्षिणकी ओर कनाड़े, महिसुर, कोड़ग, तिरुवाङ्कोर और मदुराको पार्वत्यभूमिमें इसका जङ्गल खड़ा है। इसका वृक्ष चार वर्षमें बढ़ता और सातमें फलता है। फल आनेपर कृषक शाखा-प्रशाखासे बीजकोष तोड़ लाते हैं। भुरभुरे पत्थरकी भूमि इसके लिये उपयुक्त है।

युरोपमें पहले इलायची न होती थी। पीछे भारतवर्षसे वहां लोग इसे ले गये। मुसलमान् वैद्य छोटीको स्त्री और बड़ीको पुंजातीय समझते हैं। छोटी इलायची सफ़ेद रहती, दाक्षिणात्यमें उपजती और पान तथा मिठायीमें पड़ती है। यह भी कयी तरहकी होती है—काग़ज़ी, मालाबरी, गुजराती और सिंहली आदि। बड़ी नेपाल तथा बङ्गालमें उपजती और दालतरकारीके काम आती है।

इलायचीको कन्दमूल और बीज दो प्रकारसे तैयार करते हैं। भूमि चिक्कण और उर्वर रहना चाहिये। अधिक वायु वा ताप लगनेसे वृक्ष मर जाता है। खेतमें इधर-उधर कुछ दूसरे बड़े बड़े वृक्षोंके रहनेसे लाभ होता है। दो तीन वर्षके वृक्षका कन्दमूल भी लगा सकते हैं। गड्ढा एक फुट गहरा और अट्ठारह इञ्च चौड़ा होना चाहिये। इसके पौदोंके बीच १२ फीटतक अन्तर रखते हैं। खेतका घासफूस, कङ्कड़-पत्थर और कूड़ाकर्कट साफ़ कर दिया जाता है। किन्तु पौदा निकल आनेपर निरानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। क्योंकि इलायचीके नीचे दूसरी चीज़का उगना असम्भव है। सावधानतासे बीजको डालते हैं। किन्तु बीजको गहरेमें बोना अच्छा नहीं। ६से ८ इञ्च बढ़नेपर पौदेको उखाड़कर दूसरी जगह लगा देना चाहिये।

इङ्गलेण्ड, अरब, जर्मनी, आदन और ईरान्‌को भारतवर्षसे इलायची जाती है। इसका तेल पीला होता और मन्द्राज प्रान्तमें बहुत खिंचता है। यह लगाते-लगाते ही चक्षुःको शीतलकर देता है।

इलायची-दाना (हिं० पु०) १ एलाबीज, इलाचीका तुख़्म। २ किसी क़िस्मकी मिठायी। इलायची छीलकर दाना निकालते और उसे चीनीमें पागते हैं। इसी मिठायीका नाम इलायची-दाना है।

इलायचीपराड़् (हिं० पु०) वन्यफल-विशेष, एक जङ्गली मेवा।

इलावर्त (सं० पु०) जम्बूद्वीपका एक खण्ड। इलावृत देखो।

इलावृत (सं० क्ली०) इला पृथिवी वावृतः। १ जम्बूद्वीपके नववर्षमें चतुर्थ। इलावृतवर्ष मेरुपर्वतको लपेटे है। इससे उत्तर नील, दक्षिण निषध, पश्चिम माल्यवान् और पूर्व गन्धमादन पर्वत है। २ बुधग्रह। ३ अग्नीध्रके पुत्र। इन्हें पितासे इलावृत वर्ष मिला था।

इलाही (अ० पु०) १ परमेश्वर। २ शेख़ इलाही नामक एक मुसलमान् दार्शनिक। ये बयानाके अधिवासी रहे। दिल्लीपति सलीमशाहके समय इन्होंने एक नया धर्म निकाल बड़ी हलचल डाल दी थी। इलाहीने अपनेको इमाम महदी बताया था। साम्राज्यमें उपद्रव बढ़ते देख १५४७ ई०को उक्त बादशाहने इन्हें मरवा दिया था। (त्रि०) ३ ईश्वरसे सम्बन्ध रखनेवाला।

इलाही-खर्च (अ० पु०) अतिशय व्यय, ज़्यादा ख़र्च।

इलाही गज़ (अ० पु०) एक प्रकारका गज़। यह ४१ अङ्गुल होता और मकान् नापनेके काममें आता है। अकबर बादशाहने इलाही गज चलाया था।

इलाही मीर—हमदान् रशीदाबादवासी सैयदोंके गोत्रापत्य। ये जहांगीरके अन्तिम राजत्वकालमें भारतवर्ष आये और फिर शाहजहांके नौकर बने। इन्होंने 'ख़ज़ीनुगञ्ज इलाही' नामक जीवनवृत्तान्त और सकाम गीतयुक्त एक दीवान् बनाया है। कोई १६४८ और कोई १६५४ ई० इनकी मृत्युका समय बताते हैं।

इलाहीमुहर (अ० वि०) अखण्ड, अविकल, अछूता जो बिगड़ा न हो। (स्त्री०) २ आधि, अमानत, धरोड़।

इलाहीरात (हिं० स्त्री०) जागरणकी निशा, नींद न लेनेकी रात।

इलि, इली देखो।

इलिका (सं० स्त्री०) इला स्वार्थे कन्, आकारस्येकारः टाप् च। पृथिवी, ज़मीन्।

इलिनी (सं० स्त्री०) इला अस्त्यर्थे इलि-ङीप्। चन्द्रवंशीय राजा मेधातिथिकी कन्या। (हरिवंश ३२अ०)

इलिय, इलीश देखो।

इली (सं० स्त्री०) इल-क-ङीष्। करपालिका, कटारी।

इलीविश (व० पु०) असुर-विशेष। इसे इन्द्रने जीता था। (निरुक्त ६।१९)

इलीश (सं० पु०) मत्स्यविशेष, हिलसा नामकी मछली। (Clubea Ilisha) संस्कृतमें इसे गाङ्गेय, वारिकपूर, शफराधिप, जलताल, राजशफर, इलीश और जलतापी भी कहते हैं। यह मत्स्य पारस्योपसागर, सिन्धुनदके उपकूल और भारतवर्ष, ब्रह्मदेश एवं मलयद्वीपकी बड़ी-बड़ी नदीमें रहता है। कृष्णामें आश्विन, गोदावरीमें कार्तिक, कावेरीमें ज्येष्ठ, सिन्धुनदमें फाल्गुन-चैत्र और ब्रह्मदेशकी इरावती नदीमें कार्तिक मास यह अधिक देख पड़ता है। गात्र चांदी-जैसा श्वेत होता, जिसपर सुनहला रङ्ग चढ़ा रहता है। बीच-बीचमें कुछ-कुछ लाली भी झलका करती है। इलीश डेढ़ हाथ तक लम्बा होता और खानेमें बहुत अच्छा लगता है। इसके शरीरमें तैलपदार्थ अधिक रहता है। वैद्यमतसे यह मधुर, स्निग्ध, रोचक, अग्निवर्धक, पित्तकर, किञ्चित् लघु, वृष्य और वायुनाशक है।

इलूष (वै० पु०) कवषके पिताका नाम।

इलेक्ट्रिक (अं० वि०=Electric) विद्युत्-सम्बन्धीय, बिजलीसे ताल्लुक रखनेवाला। ताड़ित देखो।

इलोरा (एलूरा)—बम्बई द्वीपके पूर्वांश दौलताबादसे मिला हुवा एक पार्वत्य स्थान। गुहामन्दिरोंके लिये यह बहुत दिनोंसे प्रसिद्ध है। यहां स्थानीय पर्वत खोद-खोद कर मन्दिर बनाये गये हैं। बौद्ध, हिन्दू और जैन इन पृथक् पृथक् धर्मावलम्बियोंकी देवमूर्तियां इसकी समस्त गुहाओंमें प्रतिष्ठित देख पड़ती हैं।

प्राचीन हिन्दूशास्त्रमें इसे घ्रोष्मे श्वर नामक शिवका तीर्थ बताया है। इसे देखनेके लिये लाखों बौद्ध, जैन और हिन्दू लोग यहां पहले आया करते थे।

भारतवर्षमें अनेक स्थानपर गुहामन्दिर विद्यमान हैं। किन्तु उन सबमें इलोराके गुहामन्दिर ही सर्वापेक्षा विस्तृत बने हुये हैं। अर्धचन्द्राकृति-पर्वतके दक्षिण भुजपर बौद्धमन्दिर, उत्तर भुजपर इन्द्र-सभा अथवा जैन-मन्दिर और मध्यस्थलपर हिन्दू-देवदेवियोंके मन्दिर हैं।

दक्षिण-भागकी गुहायें अतिप्राचीन हैं। किसी-किसीके अनुमानसे ये सन् ३५० और ५५० ई०के बीचमें बनाई गई थीं। इस भागको यहांके लोग ढेरावाड़ कहते हैं। प्रथम गुहा एक बौद्ध-विहार है। इसमें बड़े-बड़े आठ घर बने हैं। दूसरी नाट्यमन्दिर जैसी है। यह लोगोंके उपासना करनेका स्थान मालूम होता है। इसके बरामदेमें बहुतसी बौद्ध देवदेवियोंकी मूर्तियां हैं। तृतीय गुहा प्रथम ही जैसी है। किन्तु वह प्रथम और द्वितीय दोनोंसे अधिक प्राचीन मालूम होती है। अवशेष पांच गुहायें बिलकुल खण्डहर हैं। एकमें बृहदाकार लोकेश्वरकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। इसके भैरववेश देखनेसे मनमें भक्ति और भयका सञ्चार होता है।

उक्त गुहावोंको लांघकर कुछ ऊपर चढ़नेसे महारवाड़ा गुहा मिलती है। यह एक विस्तीर्ण विहार है। यह प्राय: ११७ फीट गहरी और साढ़े अट्ठावन फीट चौड़ी है। इसका छज्जा २४ खम्भोंपर खड़ा है। इसी गुहाविहारमें बौद्ध दरबार लगता था, ऐसी किम्वदन्ती है। इसके वाम प्रवेशद्वारपर ध्यानावस्थामें एक पद्मासन बुद्धमूर्ति विराजमान है। इसके चारो ओर पद्मछत्रधारी स्त्री-पुरुषोंकी मूर्तियां खड़ी हैं। ये लोग अनुमानसे बुद्धकी परिचर्यामें नियुक्त किये गये मालूम पड़ते हैं। इससे दक्षिण दूसरा मन्दिर है। इसमें भी उपविष्ट बुद्ध और अनेक पद्मगुच्छधारी नरनारियोंकी मूर्तियां हैं। इस मन्दिरके बाद अनेक विहार और जलाशय देख पड़ते हैं। उक्त गुहासे आगे कुछ ऊपर जानेसे विश्वकर्माकी गुहा मिलती है। यहां विश्वकर्मारूपी बुद्धमूर्ति प्रतिष्ठित है। इस मूर्तिको पूजने नाना स्थानके बढ़यी यहां आया करते हैं।

इस गुहासे आगे कुछ ऊपर द्वितल नामक एक गुहा है। पहले केवल इसका एकतल दीख पड़ा था, जो मट्टीसे भरा था। १८७६ ई०में मट्टी खोदते खोदते नीचेके तलकी सिड़ी निकलीं। पीछे स्थान परिष्कार करनेसे मन्दिर और गुहाका उद्धार हुवा। यहां बुद्धदेव, पद्मपाणि, वज्रपाणि प्रभृति बोधिसत्त्व और दूसरी भी अनेक मूर्तियां विद्यमान हैं। इसके बाद त्रितल गुहा दिखाई पड़ती है। इसकी कारीगरी बहुत भड़कीली है। दीवार पर फूल कढ़े हैं और नानाप्रकारके मनुष्य बने हैं। एक स्थानमें बुद्धमूर्ति सिंहासनपर बैठी है। यह समासीन मूर्ति प्राय: आठ हाथ ऊंची है। अन्यस्थलपर सात ध्यानावस्थ बुद्ध उपविष्ट हैं। उनके देखते ही ऐसा मालूम पड़ता है मानो पाषाणके मध्य भी जीवन है। प्रकृत ही वे अपार्थिव ध्यानमें निमग्न हैं। इसके सिवा लोचना, तारा, मामुखी प्रभृति बोधिसत्व-रमणियोंकी मूर्तियां भी उसी स्थानपर अलङ्कृत की गयी हैं। यह गुहा बौद्धोंके महायान सम्प्रदाय द्वारा बनायी गई मालूम होती है।

पर्वतके मध्यस्थलपर त्रितल गुहाके निकटसे हिन्दू-देवदेवियोंके मन्दिर आरम्भ हुए हैं। ये गुहामन्दिर प्राय: १५।१६ बने हैं। बौद्ध-निर्मित गुहाओंकी तरह इन मन्दिरोंमें भी विस्तर शिल्पनैपुण्य और असाधारण भास्करकार्यका परिचय मिलता है। विशेषत: बौद्धोंकी गुहाओंसे हिन्दुवोंके मन्दिर अधिक सुसज्जीभूत हैं। उनमें रावणकी खाई, कैलास, रामेश्वर, नीलकण्ठ, तेलीका गण, कुंभारवाड़ा, जनवास और गोपी-मन्दिरके दृश्य प्रधान हैं।

'रावणको खायी' गुहाके चारो ओर प्रदक्षिणा है। मन्दिरके मध्य महिषमर्दिनी, हरपार्वती, शिव-ताण्डव प्रभृति सुन्दर सुन्दर देवोंकी मूर्तियां शोभित हैं। इसमें किसी स्थानपर दशस्कन्ध रावणके कैलास उठानेका दृश्य है; तो कहीं एक हस्तमें असि और दूसरे हस्तमें पात्र लिये करिचर्मसे आवृत भयङ्कर भैरवमूर्ति रक्तासुरका विनाश कर रही है। कहीं यदि ऐरावतपर इन्द्राणी विराजमान है तो कहीं शूकरपर वाराही बैठी है। कहीं यदि गरुड़पर कौमारी शोभित हैं तो कहीं वृषभपर माहेश्वरी मूर्ति स्थित है और कहीं यदि हंसपर सरस्वती बैठी हैं, तो कहीं निर्जनस्थानमें बैठकर शङ्कर डमरू बजा रहे हैं। इस प्रकार इस निर्जन पार्वत्य प्रदेशमें नाना देवदेवी मूर्तियोंके देखनेसे हिन्दूमात्रके हृदयमें भक्तिका सञ्चार हो जाता है।

'दश-अवतार-गुहा' और भी चमत्कारिणी है। दशावतार और उनके लीलाचित्रके सिवा गणपति, पार्वती, सूर्य, अर्धनारीश्वर प्रभृति अनेक देवमूर्तियां यहां बनी हैं। इस मन्दिरमें अस्पष्ट शिलालेख विद्यमान है। अनुमानसे मन्दिरकी प्रतिष्ठाका विवरण उक्त प्रस्तरखण्डपर लिखा गया होगा। परन्तु काल पाकर वह अस्पष्ट हो गया है। खेद है कि कोटि-कोटि मुद्रा व्ययसे इस अमानुषी कीर्तिको प्रतिष्ठित करनेवालोंके नामका परिचय देनेवाला निदर्शन भी आज कोई हमें नहीं मिलता।
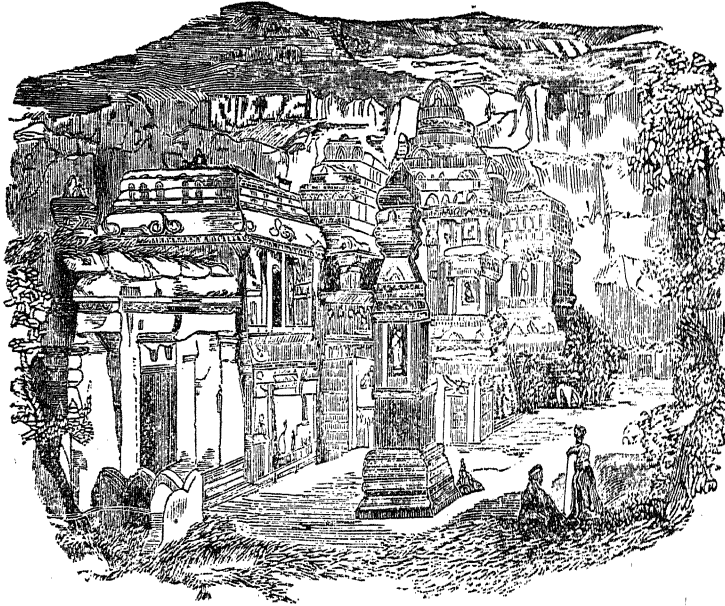
कैलास।

इलोरेका कैलास वा रङ्गमहल भारतवर्षके मध्य गुहामन्दिर-निर्माणकी पराकाष्ठा दिखाता है। पर्वत खोदकर ऐसे सुवृहत् देवालय अति अल्प ही बने हैं। कैलास देखनेसे समझ पड़ता है कि, प्राचीन भारतीय शिल्पी, भास्कर और स्थपतिगणोंने किस प्रकार अपनी असाधारण क्षमतासे कैलासका परिचय दिया है। इस निर्जन-वनराजि-वेष्टित कैलासभवनमें पहुंचनेसे देवादिदेव महादेवके कैलासमें पहुंचने-जैसा आनन्द आता है। जो लोग मिशरके पिरामिडकी बात सुनकर चकराते हैं, चीना प्राचीरकी प्रशंसा सुनाते हैं और आगरेके ताजमहलपर लट्टू हो जाते हैं, उन्हें हम एकबार उक्त कैलास देख आनेका आग्रह करते हैं। इसके देखनेसे हृदयमें धर्म, भक्ति एवं शान्तिका उदय होगा। प्राचीन हिन्दू-राजगणकी असाधारण देवभक्ति, स्वधर्मानुराग, निःस्वार्थपरोपकारिता और अलौकिक कीर्ति देख परितृप्ति हो जाती है।

पाश्चात्य पुरातत्त्ववित् कैलासमन्दिरको राष्ट्रकूटाधिपति दन्तिदुर्गकर्तृक ई० ७म शतकमें निर्मित बतलाते हैं। किन्तु इस मन्दिरका उसकी अपेक्षा पूर्वकालमें निर्माण होना भी सम्भव है। दन्ति-

दुर्गने इसे पुनः सज्जित और संस्कृत किया होगा। कैलासके मध्य हमारी प्रधान देवदेवियोंकी तथा रामायण एवं महाभारतके वीरोंकी मूर्तियां और देवलीलायें खुदी हैं। चित्रविचित्र चित्रित रहनेसे इसे रङ्गमहल भी कहते हैं।

सिवा कैलासके रामेश्वर और नीलकण्ठ प्रभृति गुहायें भी दर्शनीय हैं। इन गुहावोंमें भी नाना प्रकार खोदाईका काम और देवदेवियोंकी मूर्तियां हैं।

इलोरा-पर्वतकी उत्तरभुजके प्रान्तमन्दिरका नाम पार्श्वनाथ है। यह भूमिसे ४८० हस्त ऊर्ध्व, अप्राचीन और इष्टक-निर्मित है। ई०के १८वें शताब्दमें औरङ्गाबादस्थ किसी जैन सेठने यह मन्दिर बनवाया था। इसमें पार्श्वनाथ भगवान्‌की ६॥ हाथ ऊंची दिगम्बर मूर्ति ध्यान लगाये विराजमान है। गुजरातके जैन भाद्रमासमें शुक्ल चतुर्दशीको इलोरा आ कर इस मूर्तिकी पूजा करते हैं। उस समय इसका अभिषेककार्य एक मन घृतसे किया जाता है।

पार्श्वनाथके मन्दिरसे दक्षिण इन्द्रसभा है। यह तीन गुहाओंमें विभक्त है। पहली ४० हस्त दीर्घ और २० हस्त विस्तृत है। इसमें १६ खम्भा और १२ कड़ी हैं। प्राचीरके चारो ओर जैन देवदेवियोंकी मूर्तियां अङ्कित हैं। रचनाचातुर्य प्रशंसनीय है। दूसरी जगन्नाथ-सभा है। इसके मध्यमें प्रकाण्ड गर्भगृह बना है। पार्श्वनाथ, महावीरप्रभृति जैन तीर्थङ्करों और अम्बिका प्रभृति जैन देवियोंकी मूर्तियां विद्यमान हैं। तीसरी गुहा रणछोड़जीका मन्दिर है। इसके गर्भगृह एवं प्राचीरमें सर्वत्र तीर्थङ्कर और गणधर प्रभृतिकी मूर्तियां उल्लिखित हैं। इन समस्त मूर्तियोंको लोग आजकल रणछोड़जी कहते हैं। इसके सामने बरामदेमें एक पुरुष तथा एक स्त्रीकी मूर्ति हस्तिपृष्ठपर आरूढ़ है। ब्राह्मण लोग इन दोनोंको इन्द्र और इन्द्राणीकी मूर्ति समझते हैं। उनके मतमें इन्हीं दोनों मूर्तिके नामानुसार इस गुहाको इन्द्रसभा कहते हैं। वस्तुतः इन्द्रदेवकी पूजाके लिये यह मन्दिर न बना था।

सिवा इसके इलोरेकी दुमारलेना वा विवाह-सभा, सीताका नानी, एहरभद्र-गुहा प्रभृति भी देखने योग्य वस्तु हैं। इसकी उत्पत्तिके विषयमें अनेक तरहका वादप्रतिवाद सुनाई पड़ता है,—

कोई कहते हैं, कि बुधपत्नी इलाके नामानुसार इस नगरका नाम इलोरा हुवा है। यहां भुवनाश्व, दण्डक, इन्द्रद्युम्न, दशरथ, राम प्रभृति राजा राजत्व करते थे।*

मुसलमान् इसे राजा इलकर्टक स्थापित बताते हैं। पूर्वकालमें उन्होंने पर्वत खोदकर ये समस्त मन्दिर बनवाये थे। आजसे नौ सौ वर्ष पहले ये जीवित थे।

इधर ब्राह्मण कहते हैं कि १८४४ वर्ष पहले एलिचपुरमें इलुनामक एक राजा राज्य करते थे। दैवदुर्विपाकसे उनके सर्वशरीरमें कोड़े पड़ गये। उन्होंने इलाराशृङ्गस्थ शिवालय-सरोवर नामक तीर्थमें स्नान करनेकी इच्छासे यात्रा की थी। यह तीर्थ पहले साठ धनुष परिमित था, किन्तु यमकी प्रार्थनासे विष्णुने पीछे गोष्पदतुल्य खर्व बना दिया। इलु राजाने यहां पहुंचकर और तीर्थजलमें वस्त्र भिगोकर अपना क्षत शरीर धो डाला। इससे उनकी व्याधि चली गई थी। इसलिये कृतज्ञता चिरस्मरणीय रखनेके अभिप्रायसे इलोरेका पर्वत उन्होंने खुदाया और गुहाओंमें नानाप्रकारकी देवमूर्तियां प्रतिष्ठित करायीं।†

इल्य (सं० पु०) स्वर्गस्थ आश्चर्य वृक्ष, बिहिश्तका अजीब दरख़्त।

इल्म (अ० पु०) १ विद्या, जानकारी। २ विज्ञान, हिकमत। ३ मन्त्र, जादू। अरबीमें उपदेश-विद्याको इल्म-अख़लाक़, साहित्यको इल्म-अदब, जलविद्याको इल्म-आब, शब्दविद्याको इल्म-आवाज़, ब्रह्मविद्याको इल्म-इलाही, छन्दःशास्त्रको इल्म-उरूज़, सामुद्रिकको इल्म क़याफ़ा, अलङ्कारशास्त्रको इल्म-कलाम, रसायन-विद्याको इल्म-कीमिया, गूढार्थको इल्म-गैब, आत्मविद्याको इल्म-जान, धातुविद्याको इल्म-तबयी, इतिहास-शास्त्रको इल्म-तवारीख, शरीरव्यवच्छेद-शास्त्रको इल्म-तशरीह, धर्मशास्त्रको इल्म-दीन, उद्भिद्विद्याको

* Wilson's Analysis of the Mackenzie Manuscripts, Vol. I. p. civ.

† Asiatic Researches, Vol. VI, p. 385.

इल्म-नबातात, ज्योतिषशास्त्रको इल्म-नजूम, न्याय-शास्त्रको इल्म-बहस या इल्म-मन्तिक, लोहकान्तधर्मको इल्म-मक़नातीस, विनयरीतिको इल्म-मजलिस, दृग्विद्याको इल्म-मनाजिर, राजनीतिको इल्म-मुदन, त्रिकोणमितिको इल्म-मूसोकी, वायुविद्याको इल्म-हवा, रेखागणितको इल्म हिन्दसा, खगोलविद्याको इल्म-हैयत और पशुविद्याको इल्म-हैवानात कहते हैं।

इल्लत (अ० स्त्री०) १ कारण, बायस। २ अभियोग, इलज़ाम। ३ दुर्व्यसन, बुरी आदत। ४ अपराध, क़ुसूर। ५ मल, कूड़ा।

इल्लती (अ० वि०) दुर्व्यसनमें फंसा हुवा, जो बुरी आदत रखता हो।

इल्लल (सं० पु०) पक्षिभेद, एक चिड़िया।

इल्ला (हिं० अव्य०) १ परन्तु, लेकिन। (स्त्री०) २ पिटका विशेष, एक फुन्सी। यह त्वक्के ऊपर उठती है और कठिन तथा मस्से-जैसी होती है।

इल्लिश (सं० पु०) मत्स्यभेद, इलीश। इलीश देखो।

इल्वका, इल्वला देखो।

इल्वड़, इल्वल देखो।

इल्वल (सं० पु०) इल्-वल वा इल-क्विप्-वलच्। १ मत्स्यभेद, बाम मछली। २ दैत्यविशेष। यह सिंहिकाके गर्भ और विप्रचित्तिके औरससे उत्पन्न हुवा था। इसका अपर नाम सैंहिकेय था। व्यंश्य, शल्य, नभ, वातापि, नमुचि, खसुम, आञ्जिक, नरक, कालनाभ और राहु (शुक, पौतरण, वज्रनाभ) इसके भ्राता थे। इसका वासस्थान मणिमतीपुर था। कनिष्ठ भ्राता वातापिने किसी तपस्वी ब्राह्मणसे इन्द्र-तुल्य पुत्र पानेका वर मांगा था। किन्तु अभिमत वर न मिलनेसे वातापि और इल्वल दोनों उस ब्राह्मण-पर क्रुद्ध हो गये। उसी समयसे इल्वलने ब्रह्महत्यापर कमर बांधी थी। अपने कनिष्ठ भ्राता वातापिको यह भेड़ बनाकर ब्राह्मणके सामने लाता और अच्छीतरह बना-चुना मांस रांधकर खिला देता। फिर बाहर बैठ वातापिको बुलाता था। वह आवाज पाते ही ब्राह्मणका पेट फाड़ निकल आता और बेचारा ब्राह्मण उसी समय मर जाता। इल्वल अपने मायाबलसे मृत-व्यक्तिको सशरीर यमके सदनसे बुला सकता था। किसी दिन अनेक राजर्षि मुनिगणके साथ इसके मकानपर आये। इल्वलने अति समादरसे उनकी अभ्यर्थना की और फिर भेड़का रूप रखनेवाले वातापिको काटकर इसने मांस बनाया। उसे देख ऋषि चकराये। किन्तु अगस्त्यने कहा,—'कोयी भय नहीं, हमीं यह मांस खायेंगे। आप ठहर जायिये।' इल्वल उन्हें मांस खिला जब वातापिको पुकारने लगा, तब अगस्त्यका वायु निकल पड़ा। उन्होंने उत्तर दिया,—'आपका वातापि कहां है? उसे तो हमने पेटमें पचा डाला।' उसपर यह धमकी देने लगा। अवशेषको इल्वल भी अगस्त्यके नेत्रसे निर्गत अग्नि द्वारा जल गया। (रामायण और महाभारत)

इल्वला (सं० स्त्री०) मृगशिरानक्षत्रके शिर:पर स्थित पांच क्षुद्र तारा।

इव (सं० अव्य०) १ सदृश, मानिन्द, बराबर। २ जिसप्रकार, जैसे। ३ किसीप्रकार, शायद, कुछ-कुछ। ४ प्राय:, क़रीब-क़रीब। ५ इसप्रकार, ठीक तौरपर।

इवीलक (सं० पु०) लम्बोदरके पुत्र। (विष्णुपुराण)

इवेपोरेशन (अं० पु० = Evaporation) बाष्पभाव, तबख़ीर, पानीका भाप बनना। वाष्प देखो।

इशरत (अ० स्त्री०) सन्तोष, तुष्टि, खुशी, आराम, चैन। आनन्द-भवनको इशरत-कदा, इशरत-खाना या इशरतगाह कहते हैं।

इशारा (अ० पु०) १ सङ्केत, रम्ज़, सैन। २ चिह्न, निशान्। ३ मूकदर्शन, गूंगा देखाव। ४ प्रेम, प्यार।

"आक़िलको इशारा। मूरखको फटकारा॥" (लोकोक्ति)

इशिका, इशीका देखो।

इशीका (सं० स्त्री०) १ हस्तीका चक्षु:गोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ शरकाण्ड, रामशरका तना।

इश्क़ (अ० पु०) १ अनुराग, प्यार।

"इश्क़में शाह और गदा बराबर।" (लोकोक्ति)

२ महाव्यसन, ख़ब्त, दीवानगी।

३ सुप्रसिद्ध मुसलमान कवि शाह रुक्न-उद्-दीनका उपनाम। ये शाह आलम्के समयमें वर्तमान थे।

इश्कपेचा (हिं० पु०) मल्लिका विशेष, अमरीकाकी चमेली। (Quamoclit vulgaris) यद्यपि यह प्रधानतः अमेरिकामें उपजता है, तो भी इस वृक्षकी भारतमें कोई कमी नहीं। यह दो प्रकारकी होती है। एकमें लाल और दूसरेमें सफेद फूल आते हैं। इसका पत्र सूत्र-जैसा सूक्ष्म रहता है। इश्कपेचा ठण्डा है। आघात लगनेसे क्षतपर इसकी पत्तीका पुलटिस चढ़ाते और रस गर्म घीमें मिला रोगीको पिलाते हैं। विस्फोटपर पत्रका लेप भी लगाया जाता है।

इश्कबाज़ (अ० पु०) कामुक, रसिया, छैला।

इश्कबाज़ी (अ० स्त्री०) कामचेष्टा, हुस्नपरस्ती।

इश्कमजाज़ी (अ० पु०) सांसारिक प्रेम, दुनियावी मुहब्बत।

इश्कहक़ीक़ी (अ० पु०) ईश्वरीय प्रेम, सच्ची मुहब्बत।

इश्क है (हिं० अव्य०) धन्य धन्य! क्या खूब! शाबाश!

इश्की—१ एक प्रसिद्ध कवि। यह मुहम्मद शाहके समयमें वर्तमान थे। १७२८ ई०में इनकी मृत्यु हुई। २ पटनाके रहनेवाले एक मुसलमान कवि, शाह शेख़ मुहम्मद वजीहका उपनाम। इनके पिताका नाम गुलाम हुसैन मुजरिम था। इश्कीने अंगरेज सरकारके अधीन दश वर्ष खरवारमें तहसीलदारी की। १८०८ ई०में यह जीवित थे।

इश्तहार (अ० पु०) १ घोषणा, इत्तिला, व्योरा। २ प्रकाशन, तशहीर, फैलावा। ३ विज्ञापन, एलान। ४ जवाब, हरकारा।

इश्तहारी (अ० पु०) पलायित व्यक्ति, भागा हुआ शख्स।

इश्तियाक़ (अ० पु०) १ अभिलाष, चाह। २ प्रबलेच्छा, लालच। ३ प्रेम, प्यार।

इश्तियालक (अ० स्त्री०) १ उत्तेजना, भड़क। २ दीपकमें बत्ती सरकानेकी सींक।

इष् (सं० त्रि०) इष इच्छार्थे क्विप्। १ इच्छायुक्त, ख़ाहिशमन्द। कर्मणि क्विप्। २ अभिलषित, ख़ाहिश किया हुआ। ३ खाद्य, खाने-लायक़। ४ अभिलाषके योग्य, जिसे चाहें। (स्त्री०) भावे क्विप्। ५ यात्रा, रवानगी। ६ अभिलाष, ख़ाहिश।

इष (सं० पु०) इष यात्रा विद्यते यस्मिन् मासे, इष गत्यर्थे क्विप्-इट्-अच्। १ सौर एवं चान्द्र आश्विनमास।

"इषे मास्यसिते पक्षे नवम्यामार्द्रयोगतः।"
(तिथितत्त्वधृत देवीपुराण)

२ प्रेषण, भेजना। ३ अन्न।

इषण (हिं०) एषण देखो।

इषणि (वै० स्त्री०) इष निपातनात् अणि। १ प्रेषण, प्रेरण, भेजनेका काम। २ इच्छा, ख़ाहिश।

इषण्य (सं० स्त्री०) इषणिमिच्छतीति, इषणि-क्यच्-अङ् भावे टाप्। प्रेरण, ख़ाहिश, चाह।

इषव्य (सं० त्रि०) इषुणा विध्यति इषौ कुशलो वा, इषु-यत्। १ शरलक्ष्य, जिसपे तीरका निशाना लगे। २ सम्यक्रूपसे वाण चला सकनेवाला, जो तीर मारनेमें होशियार हो।

इषिका (सं० स्त्री०) इष-वुन्। कृञादिभ्यो वुन्। उण् ५।३५। १ गजाक्षिगोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ चित्रकर्मका यन्त्रविशेष, बालोंका क़लम। यह घोड़े या सूअरके बालसे बनता है।

इषित (सं० त्रि०) १ चलित, प्रेरित, जो सरकाया या पहुंचाया गया हो। २ उत्तेजित, भड़काया हुआ। ३ चपल, तेज़।

इषिर (सं० त्रि०) इष-किरच्। इषिमदीत्यादिना। उण् १।५२। १ गमनशील, चल सकनेवाला। (पु०) २ अग्नि, आग।

इषीक (सं० पु०) जातिविशेष, एक क़ौम।

इषीकतूल (सं० क्ली०) शरतृणका उपरिभाग, रामशरका ऊपरी हिस्सा।

इषीका (सं० स्त्री०) ईष-इकन्। ईषेः किद् ह्रस्वश्च। उण् ४।२१। १ गजाक्षिगोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ काशतृण, मूंज। ३ मुञ्जामध्यवर्ती तृण, मूंजके बीचकी सींक। इसीपर जीरा लगता है। ४ शरकाण्ड, रामशरका तना। ५ वेणाका काण्ड, वेणाका तना। इस तृणसे एक प्रकारका अस्त्र बनता है।

"तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रम्।" (रघुवंश)

इषु (सं० पु०-स्त्री०) ईष-उ। ईषेः किच्च। उण् १।१४। १ वाण, तीर। २ संख्या, अदद। ३ वृत्तक्षेत्रके मध्यकी

रेखा, दायरेके बीचकी सतर। ४ सामवेदविहित यज्ञ विशेष।

इषुक (सं० त्रि०) वाण सदृश, तीरके मानिन्द।

इषुका (सं० स्त्री०) वाण, तीर।

इषुकामशमी (सं० स्त्री०) इषौ कामः इषुकामः स शम्यते यत्र, इषुकाम-शम अधिकरणे घञ्-ङीप्। ग्रामविशेष, एक बसती।

इषुकार (सं० पु०) इषुं करोतीति, इषु-कृ-अण्, उप० समा०। वाण बनानेवाला, जो शख्स तीर तैयार करता हो।

इषुकृत् (सं० पु०) इषु-कृ-क्विप्। कर्मकार, लोहार, तीर तैयार करनेवाला।

इषुगोलक (सं० पु०) कोकिलाक्ष वृक्ष, तालमखानेका पेड़।

इषुधर (सं० पु०) इषु-धृ-अच्, ६-तत् वा उप-तत्। वाणधारी, तीरन्दाज़। इषुभृत् प्रभृति शब्दोंका अर्थ भी वाणधारी ही है।

इषुधि (सं० पु०-स्त्री०) इषु-धा अधिकरणे कि। वाणाधार, तूण, तरकश।

इषुधिमत् (वै० त्रि) तूणयुक्त, तरकश रखनेवाला।

इषुधी (हिं०) इषुधि देखो।

इषुध्या (वै० स्त्री०) इषुधि कण्ड्वादित्वात् यक्-अ-टाप्। प्रार्थना, अर्ज़।

इषुध्यु (वै० त्रि०) १ प्रार्थी, अर्ज़ लगानेवाला। २ गमनशील, जानेवाला। (सायण)

इषुप (सं० पु०) इषु-पा-क, उप-तत्। असुरविशेष। यही असुर अंशरूपसे अवतीर्ण हो नग्नजित् नामक राजा बना था।

इषुपत्रिका, इषुपत्री देखो।

इषुपत्री (सं० स्त्री०) अर्कमूला, ईश्वरमूल।

इषुपथ (सं० पु०) वाणका पथ, तीरका टप्पा।

इषुपुङ्खा, इषुपुङ्खिका देखो।

इषुपुङ्खिका (सं० स्त्री०) शरपुङ्खा, सरफोंका।

इषुपुष्पा (सं० स्त्री०) इषुरिव पुष्पं यस्याः, दूर-विसारिगन्धत्वात् बहुव्री०। शरपुष्पा वृक्ष। इस वृक्षके पुष्पका गन्ध वाणकी तरह बहुत दूरतक पहुंचता है।

इषुबल (वै० त्रि०) वाणका बल रखनेवाला, जिसका तीरकी ताकत हो।

इषुभृत् (सं० त्रि०) इषु-भृ-क्विप्। वाणधारी, जो तीर लिये हो।

इषुमत् (वै० त्रि०) इषु अस्त्यर्थे प्राशस्त्ये मतुप्, मस्य च वः। प्रशस्त वाणधारी, तीरन्दाज़।

इषुमात्र (सं० त्रि०) इषुः प्रमाणमस्य, इषु-मात्रच्। प्रमाणे द्वयसज्दघ्नमात्रचः। पा ५।२।३७। १ वाणप्रमाण, तीरके बराबर, जो तीन फीट हो। (अव्य०) २ वाणके प्रमाण पर्यन्त, तीरके टप्पे तक। (पु०) ३ ऋग्वेदियोंका कुण्ड।

इषुमान्, इषुमत् देखो।

इषुविक्षेप (सं० पु०) वाण मारनेका स्थान, तीर छोड़नेकी जगह। १५० हस्त परिमाण-विशिष्ट प्रदेशको इस नामसे पुकारते हैं।

इषुस्त्रिकाण्डा (सं० स्त्री०) मृगशिरा नक्षत्रका तारा-मण्डल। इसमें तीन तारे होते हैं।

इषुहस्त (सं० त्रि०) वाण हाथमें लिये हुआ, जिसके हाथमें तलवार रहे।

इषूपल (सं० पु०) अस्त्रशस्त्र विशेष, एक तोप। यह दुर्गके द्वारपर रहता और प्रस्तरादि विक्षेप करता है।

इषेत्वाक (सं० पु०) इषेत्वा इति अस्ति यस्मिन्, इषेत्वा-वुन्। गोषदादिभ्यो वुन्। पा ५।२।६२। इषेत्वा शब्द-युक्त अनुवाक्य वा अध्याय। यजुर्वेदके प्रथम अध्यायको इस नामसे पुकारते हैं।

इष्कर्तृ (वै० त्रि०) निस्-कृ-तृच्। निशब्दो बहुलमिति। प्रातिशाख्य सूत्रेण नलोपः। निष्कर्ता, निष्पादनकारी, बनानेवाला।

इष्कृति (वै० स्त्री०) निष-कृ-क्तिच् इष्कर्तृवत् नलोपः। जननी, धात्री, मा, धाय।

इष्ट (सं० त्रि०) यज वा इष कर्मणि क्त। १ अभि-लषित, ख़्वाहिश किया हुआ। २ प्रिय, प्यारा। ३ पूजित, परस्तिश किया हुआ। ४ हित, फ़ायदेमन्द। ५ अन्वेषण किया हुआ, जो ढूंढा गया हो। ६ अभि-मत, खुशगवार। ७ ईप्सित, पसन्द किया हुआ। ८ सबल, ज़ोरदार। (क्ली०) भावे क्त। १० यज्ञादि-

कर्म। ११ संस्कार, सुधार। १२ श्रौतकर्म, वेदका ढङ्ग। १३ जातूकर्णोक्त धर्मकार्य। १४ व्रत, एहसान्। (पु०) १५ एरण्ड वृक्ष, रेड़का पेड़। १६ उशीर, खस। १७ यज्ञद्वारा तुष्ट परमात्मा। १८ विष्णु। १९ पति, खाविन्द। (अव्य०) २० इच्छापूर्वक, राज़ीसे।

इष्टक (सं० पु०) दग्ध मृत्तिकाखण्ड, ईंट।

इष्टकचित (सं० त्रि०) ३-तत्, अकारस्य ह्रस्वत्वम्। इष्टकेषीकामालानां चिततूलभारिषु। पा ६।३।६५। इष्टक द्वारा व्याप्त, ईंटसे भरा हुआ।

इष्टकर्मन् (सं० क्ली०) इष्ट प्रसिद्धार्थं कर्म, शाकतत्। गणित विशेष, फ़र्ज़ी अददसे हिसाब लगानेका क़ायदा।

"उद्दिष्टकालापवदिष्टराशिः क्षुण्णो हृतोऽंशैः रहितो युतो वा।
इष्टाहतं दृष्टमनेन भक्तं राशिर्भवेत् प्रोक्तमितीष्टकर्म॥" (लीलावती)

इष्टका (सं० स्त्री०) १ गृहादिके निर्माणार्थ दग्ध मृत्खण्ड, ईंट। २ संग्रह, ढेरी।

इष्टकागृह (सं० क्ली०) दग्ध मृत्खण्ड द्वारा निर्मित भवन, पक्का मकान्, ईंटका घर।

इष्टकाचित (सं० त्रि०) दग्ध मृत्खण्ड द्वारा निर्मित, पक्की ईंटसे बना हुआ।

इष्टकान्यास (सं० पु०) गृहके भित्तिमूलका संस्थापन, मकान्की नोवका डालना।

इष्टकापथ (सं० क्ली०) इष्टकायामपि पन्था यस्य इष्टं कापथं अगम्यवर्त्म यस्य इष्टकेव सुदृढ़ः पन्थाः यस्येति वा, सर्वत्र अच् समासान्तः। ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। १ वीरणमूल, खस। २ इष्टकनिर्मित पथ, ईंटकी बनी राह, पक्की सड़क।

इष्टकापथक, इष्टकापथ देखो।

इष्टकामदुह् (सं० स्त्री०) इष्टं प्रियं काममभिलषितम्, इष्ट-काम-दुह-क। अभिलषित प्रियकार्य सम्पादन करनेवाली, जो मन मांगी मुराद बख़्शती हो।

इष्टकामधुक्, इष्टकामदुह् देखो।

इष्टकाराशि (सं० पु०) दग्ध मृत्खण्डनिचय, ईंटका ढेर।

इष्टकारिन् (सं० त्रि०) इष्टं करोतीति णिनि। हितैषी, भलायी करनेवाला।

इष्टकाल (सं० पु०) ज्योतिष मतसे सन्तान उपजने वा अन्यकार्य लगनेका निर्दिष्ट समय।

इष्टकाव (सं० त्रि०) इष्टका विद्यतेऽत्र, इष्टका-वः। इष्टकयुक्त, पोख़्ता, पक्का।

इष्टकावत् (सं० त्रि०) इष्टका-मतुप् मध्वादित्वात्, मस्य च वः। चतुरर्थ्याम्। पा ४।२।८६। दग्ध मृत्खण्ड-सम्पन्न, ईंट रखनेवाला।

इष्टगन्ध (सं० त्रि०) इष्टो गन्धो यस्य, बहुव्री० इष्टश्चासौ गन्धश्चेति वा कर्मधा०। १ सुगन्ध, ख़ुशबूदार। (पु०) २ सुगन्धिद्रव्य, ख़ुशबूदार चीज़। (क्ली०) ३ वालुका, बालू, रेत।

इष्टजन (सं० पु०) इष्टश्चासौ जनश्चेति, कर्मधा०। १ प्रियव्यक्ति, प्यारा शख़्स। २ प्रियतम, माशूक़।

इष्टतम (सं० त्रि०) अयमेषां अतिशयेन इष्टः, इष्ट-तमप्। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। १ अतिशय प्रिय, निहायत प्यारा। गृहस्थको स्त्रीपुत्रादि और उदासीनको ब्रह्म इष्टतम है। २ अत्यन्त मनोमत, निहायत मुवाफ़िक़।

इष्टतर (सं० त्रि०) अधिक प्रिय, ज़्यादा प्यारा।

इष्टता (सं० स्त्री०) इष्टत्व देखो।

इष्टत्व (सं० क्ली०) स्पृहणीयता, पसन्दीदगी, प्यार या परस्तिश किये जानेकी हालत।

इष्टदेव (सं० पु०) इष्टदेवता देखो।

इष्टदेवता (सं० स्त्री०) उपास्यदेवता, जो देव बराबर पूजा जाता हो।

इष्टप्रयोग (सं० पु०) शिष्टप्रयोग, महत्का वाक्य।

इष्टमूलांशजाति (सं० पु०) लीलावती-कथित मूलांश जाति विशेष। मूलांशजाति देखो।

इष्टयजुः (वै० त्रि०) जिसके लिये याज्ञिक गीत निकले।

इष्टयामन् (वै० त्रि०) इच्छानुकूल गमनशील, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलनेवाला।

इष्टरश्मि (वै० त्रि०) ईप्सित प्रग्रहसे सम्पन्न, जो पसन्दीदा लगाम रखता हो।

इष्टवत् (सं० त्रि०) यज वा इष-क्त-वतु। १ यज्ञकारी। २ इच्छाविशिष्ट, ख़ाहिशमन्द। ३ इष्टकर्मकारी, वेदादिका अध्ययन करनेवाला।

इष्टव्रत (सं० त्रि०) अपनी इच्छाका आज्ञाकारी, जो अपनी मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलता हो।

इष्टसाधन (सं० क्लो०) अभीष्टसिद्धि, मुरादका बर आना।

इष्टा (सं० स्त्री०) यज करणे क्त टाप्। शमीवृक्ष, होममें लगनेसे समिधका नाम यह पड़ा है।

इष्टादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। इस गणमें इष्ट, पूर्त, उपसादित, निगदित, परिगदित, परिवादित, निकथित, निषादित, निपठित, सङ्कलित, परिकलित, संरचित, परिरचित, अर्चित, गणित, अवकीर्ण, आयुक्त, गृहीत, आम्नात, श्रुत, अधीत, अवधान, आसेवित, अवधारित, अवकल्पित, निराकृत, उपकृत, उपाकृत, अनुयुक्त, अनुगणित, अनुपठित और व्याकुलित शब्द पड़ता है।

इष्टापत्ति (सं० स्त्री०) अभिलषित-प्राप्ति, इष्टसिद्धि, लाभ, फ़ायदा।

इष्टापूर्त (सं० क्लो०) समाहारद्वन्द्वः पूर्वपददीर्घश्च। १ अग्निहोत्रादि यज्ञ। २ साधारणके उपकारको यज्ञ एवं कूपखननादि कर्म। तालाव, कूआं, बावड़ी आदि बनाने और उपवन लगानेको पण्डित पूर्त कहते हैं। एकाग्नि कर्म होमादि त्रेतामें जो डाला और वेदीके मध्य दिया जाता, वह इष्ट कहाता है। उपरोक्त दोनोंका नाम इष्टापूर्त है।

इष्टार्थ (सं० पु०) ईप्सित अथवा प्रियवस्तु, मनभावी चीज़।

इष्टार्थोद्युक्त (सं० त्रि०) उत्साहयुक्त, अभीष्टवस्तुके लिये त्वरायित, मनभावी चीज़के लिये जी-जान्से कोशिश करनेवाला।

इष्टालाप (सं० पु०) सदालाप, परस्पर भद्रालाप, मेलकी बातचीत।

इष्टाश्व (दे० त्रि०) अभिलषित अश्व रखनेवाला, जो बहुत अच्छे घोड़े रखता हो।

इष्टि (सं० स्त्री०) यज वा इष-क्तिन्। १ यज्ञ। २ इच्छा, मर्ज़ी। ३ अभिलाष, ख़ाहिश। ४ श्लोक-संग्रह। ५ दानसंग्रह। ६ निमन्त्रण, बुलावा। ७ अन्वेषण, तलाश। ८ अभिलषित वस्तु, ख़ाहिशकी चीज़। (पु०) ९ पश्चाद्गमन, हिफ़ाज़त।

"इष्टीः पार्वायनान्तीयाः केवला निर्वपेत् सदा।" (मनु)

इष्टिका (सं० स्त्री) इष्टका, ईंट।

"उद्‌घर्ष णमिष्टिकया कण्डुकोठविनाशनम्।" (सुश्रुत)

इष्टिकापथिक, इष्टकापथ देखो।

इष्टिकृत् (सं० त्रि०) इष्टि-कृ-क्विप्-तुक्। यज्ञकारी, यज्ञ करनेवाला।

इष्टिन् (सं० त्रि०) इष्टमनेन, इष्ट-इनि। इष्टादिभ्यश्च ति। पा ५।२।८८। यज्ञकारी, जो यज्ञ कर चुका हो।

इष्टिपच (सं० पु०) इष्टये पचति, इष्टि-पच्-अच्। १ कृपण, कञ्जूस। २ असुर, दानव। असुर अपने ही लिये पाक बनाता है, यज्ञके लिये नहीं; इसीसे उसका नाम इष्टिपच पड़ा है।

इष्टिमुष् (सं० पु०) इष्टिं मुष्णति, इष्टि-मुष-क्विप्। दैत्य, राक्षस।

इष्टीकृत (सं० क्लो०) नेष्टमिष्टं कृतम् इष्ट-कृ-च्वि:। कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः। पा ५।४।५०। १ न चाही जानेवाली वस्तुकी इच्छाका करना। २ यज्ञविशेष।

इष्टु (सं० स्त्री०) इष-तुन्। इच्छा, मर्ज़ी।

इष्ट्ययन (सं० क्लो०) इष्टिभिरयनं गमनं यत्र, बहुव्री०। यागविशेषका अनुष्ठान, सांवत्सरिक श्राद्धादि। अग्निदैवत्य प्रभृति अनेक प्रकार इसका भेद होता है।

इष्म (सं० पु०) इष-मक्। इषियुधीन्धित्यादिना मक्। उण् १।१४४। १ कामदेव। २ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ गमन, रवानगी।

इष्य (सं० पु०) इष करणे क्यप्। वसन्तकाल, मौसम-बहार।

इष्व (सं० पु०) इष-वन्। सर्वनिघृष्वेत्यादिना। उण् १।१५३। आचार्य, मुर्शद।

इष्वग्र (सं० क्लो०) बाणका अग्रभाग, तीरकी नोक।

इष्वग्रीय (सं० त्रि०) बाणके अग्रभागमें उत्पन्न होनेवाला, जो तीरकी नोकसे निकला हो।

इष्वनीक (सं० क्लो०) बाणका अवयव, तीरका अज़ो।

इष्वसन (सं० क्लो०) इषु-अस करणे ल्युट्। धनुः, कमान्।

इष्वस्त्र (सं० क्लो०) इषुरेवास्त्रम्। वाणास्त्र, तीर हथियार। "इष्वस्त्रे ज्येष्ठो बभूव।" (रामायण)

इष्वास (सं० वि०) इषवोऽस्यन्ते अनेन, इषु अस करणे घञ् कर्तर्यण् वा। १ वाणक्षेपक, तीरन्दाज़। (क्लो०) २ चाप, कमान्।

इस् (सं० अव्य०) १ कोप! गुस्सा! मारो! पकड़ो! २ सन्ताप! जलन! ३ दुःख! अफसोस! हाय! ४ भावना! खयाल! देखो!

इस (हिं० सर्व०) 'यह' शब्दका रूप विशेष। विभक्ति जुड़ते समय 'यह' शब्द बदल कर 'इस' हो जाता है। जैसे—इसने, इसको, इससे, इसके लिये, इसमें, इसका, इसपर।

इसकन्दर—सिकन्दर बादशाह। अलिक्सन्दर देखो।

इसपञ्ज (अं० पु०=Sponge) इसफञ्ज, मुवा-बादल। यह समुद्रमें रहनेवाला एक प्रकारका जीव है। यूनानी शूरवीर इसे अपनी टोपीपर लगाते थे। कोई इसपञ्ज बहुत छोटा और कोई बड़ा होता है। इसके भीतर चक्कर और ऊपर छेद रहते हैं। इन्हीं छेदोंसे जल और वायु इसपञ्जके भीतर पहुंचता और बाहर निकलता है। यह बहुत कोमल और प्रायः तीन प्रकारका है। इसपञ्ज भूमध्यसागर, फ्लोरिडा-सागरतट और बहामा द्वीपसे आता है। स्नानका इसपञ्ज उथले जलमें उपजता है। लोग गोता या कांटा लगा इसे समुद्रसे निकालते हैं।

इसपञ्जका रेशा पानीसे अलग होते ही छूट जाता है। फिर इसे धो कूटकर साफ़ करते और डोरीमें लटका सुखा लेते हैं। इसपञ्जका भार बढ़ानेके लिये नमक, गुड़, शीशा, कङ्कड़, बालू और पत्थर भर देते हैं। यह बहुत जल्द बढ़ा करता है।

इसपात (हिं० पु०) अयस्सत्व, फौलाद, कड़ा लोहा। आजकल कितने ही बड़े-बड़े मकान् इससे बनाये जाते हैं। वह बहुत मज़बूत होते और आग लगनेसे भी खड़े रहते हैं। लौह देखो।

इसपार (हिं० क्रि० वि०) इस ओर, इस तर्फ़।

इसपिरिट (अं०=Spirit) १ प्राण, जान्। २ आत्मा, रूह। ३ चित्त, तबीयत। ४ उत्साह, हौसला। ५ भावार्थ, मतलब। ६ सार, निचोड़। ७ प्रकृति, क़ुदरत। ८ भूत, शैतान्। ९ रस, अर्क़। १० सुरा, शराब। चीन और भारतवर्षमें इसपिरिट बहुत प्राचीन समयसे बनते आयी है। यह विशुद्ध सुरा होती, जो आग लगते ही भड़क उठती है। मद्य, सुरा और सुरासार देखो।

इसपेशल (अं०=Special) १ असामान्य, ग़ैर-मामूली। (स्त्री०) २ असामान्य रेलगाड़ी, ग़ैर-मामूली ट्रेन। यह किसी समय विशेष वा व्यक्ति विशेषके लिये छूटती है। प्रायः बड़ेलाट, छोटेलाट और राजा-महाराज इसपेशल पर ही आते-जाते हैं। कहीं बड़ा मेला लगनेसे रेलवे-कर्मचारी इसे समय-समयपर छोड़ा करते हैं।

इसबगोल (फ़ा० पु०) एक प्रकारका वृक्ष, कोई दरख़्त (Plantago ovata) यह पौदा पञ्जाबमें सतलजसे पश्चिम सिन्धतक उत्पन्न होता है। प्रथमतः ईरानसे इसे लोग भारतवर्ष लाये थे। बीज ही व्यवहारमें आता, जो तिल जैसा, भूरा और गुलाबी होता है। इसबगोल शीतल एवं कोमल है। यह प्रदाह तथा पित्तको बढ़ाता और पाकयन्त्रीय रोगमें विशेष उपकार देखाता है। बीजको तिलके साथ कूट-पीस और तेल मिला पुलटिस चढ़ानेसे ग्रन्थिवातका स्फीत स्थान अच्छा हो जाता है। पुरातन उदरामयपर इसबगोल बहुत हितकर है। इसका क्वाथ कासरोग पर चलता है। ईरानसे कितना ही बीज बम्बई शहर आता है। यूनानी हकीम इसे बहुत व्यवहार करते हैं। यह चिपचिपा, शीतल एवं सङ्कोचक होता और मूत्रकृच्छ्र, मूत्ररोध, मूत्राघात, आमरक्त, रक्तातिसार, उन्माद, दाह प्रलाप, तथा मादकताको खोता है।

इसबन्द (फ़ा० पु०) कालादाना, राई।

इसमाईल—१ प्रथम इब्राहीमके पुत्र। २ एक मुसल्मिम योगी। बाजीगर खेल देखाते समय इसमाईलका नाम ले लेते हैं। ३ ईरानके एक सम्राट्। इनके पूर्वज साधु समझे जाते थे। यह १४८७ ई०को उपजे और १५२४ ई०को मर गये।

इसमाईल-आदिलशाह—दक्षिणविजयपुरके एक नवाब। यह यूसफ-आदिलशाहके लड़के थे। १५१० ई०में इन्हें राजसिंहासन मिला था। पच्चीस वर्षतक शान्ति पूर्वक शासनकर १५३४ ई०को २७वीं अगस्तको इनकी मृत्यु हुई।

इसमाईल निज़ामशाह—बुरहान शाहके लड़के। इनके पिता अपने भाई मुर्तजा निज़ाम शाहसे लड़ अकबरके पास भाग कर जा रहे थे। उसी समय ये और इनके बड़े भाई इब्राहीम लोहागढ़के क़िलेमें क़ैद किये गये। १५८८ ई०के मार्च मासमें मीरान् हुसैन शाहके मरनेपर जमाल-ख़ान्ने इन्हें अहमद-नगरका राजसिंहासन सौंपा था। अकबरसे साहाय्य पा इनके पिता इनसे लड़ने आये, किन्तु हार गये। दूसरी बार उन्होंने राजमन्त्री जमालख़ान्का वध किया था। बुरहान् निज़ाम शाहने अन्तको इन्हें बन्दी बना राज्य अपने हाथमें ले लिया। इन्होंने प्रायः दो वर्ष शासन चलाया था।

इसर—विहारस्थ दोसाद और बांसफोड़ डोमोंकी एक शाखा।

इसरार (अ० पु०) १ गोपनकार्य, छिपाव। २ भेद। ३ प्रेतबाधा, शैतानका साया। ४ वादित्र विशेष, एक बाजा। यह सितार-जैसा रहता और गजसे बजता है।

इस्राएल—उत्तर पालेस्तिन वा सामारियावासी प्राचीन जाति। खृष्टधर्म-प्रचारक ईसा इसी जातिमें आविर्भूत हुए थे। ईसा और यहूदी देखो।

इसलाम (अ० पु०) मुहम्मद द्वारा प्रवर्तित धर्म, मुसलमानोंका शास्त्रमार्गावलम्बन।

मुसलमान और इसलाम ये दोनों शब्द अरबी भाषाके 'सलम्' धातुसे बने हैं। इसका अर्थ "विपत्तिरहित मुक्तिसुखको देना" है। जिस धर्मके धारण करनेसे संसारयात्रा निर्विघ्नरीतिसे परिसमाप्त हो जाय और अन्तमें निर्वाध सुख प्राप्त हो सके, उस धर्मको मुहम्मदने इसलामधर्म कहकर प्रसिद्ध किया। सलाम, तसलीम, सलामत, और मुसल्लीम आदि शब्द उपर्युक्त धातुके ही भिन्न भिन्न प्रत्ययोंसे बने हैं। मुसल्लिम और ईमान् शब्दके योगसे मुसलमान् शब्द बनता है। भारतमें जो मुसलमान् पाये जाते, वे दो तरहके हैं। एक तो मुसल्लीम अर्थात् आदि मुसलमान् और दूसरे नवमुसल्लीम (नवमुक्त) अर्थात् अपने अपने पूर्व धर्मोंको छोड़कर इसलामधर्म धारण किये हुये मुसलमान्। ये लोग अपनेको महम्मदी वा मोमिन् भी कहते हैं। ये लोग जिस धर्मका आचरण करते हैं, वह 'दीन-इसलाम' नामसे प्रसिद्ध है।

इस धर्मके प्रवर्त्तक मुहम्मदने ५८३ खृष्टाब्दमें अरब देशके मक्का नगरमें जन्मग्रहण किया था। उन्होंने अपने बाल्यकालमें उपयुक्त शिक्षा पाई। जिस समय उनका जन्म हुआ, उस समय अरब देशमें सेविय, मगी और खृष्टानादि मतोंका प्राबल्य था। भिन्न भिन्न मतोंके अभ्युदयसे देशमें विशृङ्खलताके सूत्रपात और धर्मविप्लवकी आशङ्का कर उन्होंने दुःखोंसे निर्मुक्त करनेके लिये एक नवीन धर्मका आविष्कार करना उपयुक्त समझा। जिस समय उनकी उम्र ४० वर्षके क़रीब हुई, उस समय उन्होंने अपने नवीन आविष्कृत मतके विचार सर्वसाधारणमें प्रकट किये और अपनेको ईश्वरका प्रेरित पैग़म्बर बताया।

मक्कावासी लोगोंने और उनमें भी विशेषतः कोराइस् जातिने मुहम्मदके इस नव्य मतको पुरातन प्रथाका विरोधी समझा और उनके विरुद्ध खड़े हो मार डालनेतकका प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। मुहम्मदने जब अपने विरुद्ध यह सब चरित्र देखा और अपने बलको पुरातन प्रथावलम्बियोंसे हीन समझा, तो वह मक्का छोड़ देनेके लिये लाचार हुये। मक्का छोड़ देनेके बाद १५ दिन तक बराबर चलकर वह 'याथ्रेब' नगरमें पहुंचे और वही नगर फिर 'मदीना' नामसे लोकमें प्रसिद्ध हुआ।

६२२ ई०की १६वीं जुलाईके दिन मुहम्मद मक्का छोड़ 'मदीनात्-अल्-नबी'में पहुंचे थे। फिर इसी दिनसे इसलाम धर्मकी अभिव्यक्ति प्रतिष्ठित हुई। इसलिये खलीफ़ा और उमर लोग उसी दिनको मुसलमानोंका अभ्युदय दिन समझ कर तबसे ही हिजरी अब्दकी गणना करते हैं। फिर उसके अनुसार

हो तबसे आजतक मुसलमानोंका चान्द्रवत्सर गणित होता आता है।

मदीनामें आकर मुहम्मद अपनी शिष्यमण्डलीके उपदेष्टा, पुरोहित, दलपति वा राजा नियुक्त हुये। इस जगह उन्होंने अपने सदस्यों और शिष्योंकी सहायतासे जिसप्रकार इसलामधर्मको पुष्टि और उन्नति की, उसे यथास्थान हमने लिखा है। मुहम्मद देखो। ६३२ ई०में अरब देशके मुक्तिपथप्रदर्शक महात्मा मुहम्मदने अपना चौसठ वर्षका आयु समाप्त और संसारमें शान्तिधर्म स्थापितकर ऐहिक लीला संवरण की। जब उनका तिरोधानसमय निकट आया, तब वह अपनी प्रियपत्नी आयेसाके बाहुभागमें शिर रखकर आकाशकी तरफ शान्तिपूर्णहृदयसे देखने लगे और अस्फुट स्वरमें "स्वर्गके सर्वश्रेष्ठ सङ्गी"को उद्देश्यकर अपने प्राणोंका अभाव बतलाते हुये इस लोकको छोड़ चल बसे। इस घटनासे ऐसा स्पष्ट मालूम होता है कि मुहम्मद अपने अन्तसमयमें स्वर्गप्राप्तिकी प्रत्याशासे प्रफुल्लित हो गये थे।

मुहम्मद जिस दिन मक्काको छोड़ मदीना आये थे अर्थात् जिस दिन हिजरी संवत्‌की प्रतिष्ठा हुई थी, उस दिनसे लेकर महम्मदकी मृत्युपर्यन्त अर्थात् हिजरी संवत्‌के १० वर्ष भीतर भीतर मुसलमानधर्म और मुसलमान जाति एसियाप्रदेशमें इस रूपसे दृढ़ संघटित हो गई, कि उसे वहांके राजधर्म, जातिविप्लव आदि कोई भी विघ्न कम्पित न कर सके। इस समय भी यह मुहम्मदप्रचारित इसलामधर्म चौदह करोड़ मनुष्योंके हृदयमें अपने शक्तिमय अनुशासनके प्रभावसे अप्रतिहत रूपमें अवस्थिति कर रहा है।

जब मुहम्मद मदीनामें आ गये, तब उनके अनुचर लोग वहां ही जाकर रहने लगे और उन सबके मध्यमें मुहम्मदी सम्प्रदायका प्रथम मुसलमानतनय जाबिरका पुत्र अबदुल्ला हुआ। फिर उसके बाद क्रम क्रमसे मुसलमानजाति मुहम्मदकी शक्तिके प्रभावसे तलवार और कुरानको हाथमें लेकर 'दीन, दीन' शब्द बोलते यूरोपके समस्त दक्षिण भागमें विस्तृत हो गई।

इतिहास-पाठक प्रायः सबलोग ही इस बातसे सुपरिचित हैं कि मुहम्मदी इसलामधर्मकी उत्पत्तिसे पहिले अरबमें सूर्योपासक मगी, पौत्तलिक और खृष्टान सम्प्रदायका प्रादुर्भाव था। भिन्न भिन्न सम्प्रदायावलम्बी जब एकत्र होते हैं, तब प्रायः वैरका अङ्कुर फूट निकलता है। इसी नियमके अनुसार जब अरबमें दो भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंका सङ्गम हुआ, तब वहां भी सूर्योपासक मगोंके साथ वैजयन्ती (Byzantine) साम्राज्यकी आत्मश्लाघामें तत्परता होनेसे विरोध खड़ा हो गया। परस्परमें झगड़ा होनेसे दोनों पक्षोंका बल घटता है, इसलिये करकी अधिकता और मनुष्योंकी न्यूनतासे पारससाम्राज्य धीरे धीरे हीनशक्ति होने लगा। पारस देखो।

सुप्राचीन जरथुस्त्र (Zoroaster)के मतानुयायी पारसिक लोग परस्परमें एकता न रखनेके कारण नवोत्थित महम्मदी सम्प्रदायकी शक्तिके सामने अपने धर्मकी यथावत् रक्षा न कर सके। इसलिये अचिरोत्थित अरब जातिके राज्यजयके साथ ही पासके दो हीनशक्ति साम्राज्य मुसलमानोंके हाथ लग गये। अब तो महम्मदी सम्प्रदायका विस्तार अनिवार्य हो गया और अपनी तलवारकी सहायतासे अपने मतका प्रचार करने लगा। जो मनुष्य उसके कथनानुसार इसलामधर्मको न स्वीकार करता वह उसे अपनी तलवारकी पैनी धारसे, उड़ा दिया करता था फिर जो भयभीत हो उसका अनुयायी हो जाता था, उसे ससम्मान अपनेमें परिगणित करता था। परन्तु ऐसे समयमें भी बहुतसे यहूदी और खृष्टान अपने सम्मानकी कुछ भी परवा न कर अधिक करप्रदान कर किसी तरह अपनी रक्षाकर बच गये।

जिस समय यह समस्त परिवृद्धि चरित्र अरब देशमें हुआ, उस समय वहां मुसलमान जातिके अधिनायक, साम्राज्यके अधीश्वर स्वयं इसलामधर्मप्रवर्त्तक मुहम्मद ही थे। उनकी मृत्युके बाद खलीफा लोगोंने मुसलमान समाजका नेतृत्व ग्रहण किया। उनकी राजशक्ति धर्मप्रणोदित होनेका कारण जातीय एकता द्वारा शासन करनेसे अक्षुण्णरीत्या देशदेशान्तरोंमें विस्तृत हो गई।

खलीफा वंशके प्रथम शताब्दका इतिहास पढ़नेसे यह बात जानी जाती है, कि मुसलमान सम्प्रदायने शृङ्खलाबद्ध विजयाभिमान द्वारा अपने साम्राज्यको समृद्धिरूपी भूषणसे अलङ्कृत किया था। अबूबकरके राजत्वकालमें वीरवर खालिदने समग्र सिरिया और मिसोपोटमिया राज्यको तथा उमरके प्रधान सेनापति अमरूबिन्-लैसने समग्र मिस्र राज्यको अरब साम्राज्यके अधीन कर दिया था। इसके बाद उन्होंने १४ महीने तक अवरुद्ध होकर अलेकजेन्ड्रिया और मेंफिसका जय तथा फोस्तात् (प्राचीन कायारो) नगरका स्थापन किया था।

मिस्रराज्य विजय करनेके बाद ही मुसलमान-सेनादलने भूमध्यसागरके तीर साहेरणिका प्रभृति क्षुद्र क्षुद्र राज्य अपने वश कर लिये। इसी समय अफ्रीकाके हवशी लोगोंके साथ अरब देशीय मरूपुत्र लोगोंकी मित्रता स्थापित हुई और इससे मुसलमान सम्प्रदायकी शक्ति और भी दृढ़ हो गई।

सैयद बिन आबि बखूशने ६३५ ई०के समय कादेसियाके युद्धमें। ६३७ ई०के समय जलूला रणक्षेत्रमें, और ६४२ ई०के समय हालिवन और नेहवन्दके रण-प्राङ्गणमें एकके बाद एक पारसिक सेनाको परास्त किया और पारस्य सिंहासनपर मुसलमान अधीश्वर की स्थापना की। उस्मानके राजत्वकालमें ६४२ ई०के समय साइप्रासद्वीप लुण्ठित हुआ था। इसके बाद अबदुल्ला बिन-अमर खूरासानने अपने अधिकार की विस्तृति वाल्हिकराज्य पर्यन्त कर मुसलमान साम्राज्य का पत्तन किया।

अली-बिन-आबी-तालेवरके राज्यकालमें गृहविवाद होनेसे राष्ट्रविप्लव खड़ा हो गया। उन्होंने उस विप्लवके शान्त होनेकी चेष्टा की, तो भी वे अबदुर-रहमान बिन मुलजिम नामक प्रबल विद्रोहीके हाथ मार डाले गये। बस! इन्होंके राजत्वकी समाप्ति होते ही महम्मदी खलीफा-वंशके शासन की भी समाप्ति हो गई। फिर इनका सिंहासन उमैयदगणने सुशोभित किया।

इसी उमैयद वंशके प्रथम खलीफा मुयावियाने यूफ्रेटिस तीरवर्ती किडियग नगरीसे उठाकर दमास्कास नगरीमें अपनी राजधानी स्थापित की। उसके राजत्व-कालमें मुसलमान-सेनापति उकबा-बिन-नफ़ीरके उद्योगसे ६७५ ई०में कैरवान नगरकी स्थापना हुई। इसके बाद उकबा ताञ्जियारसे लेकर अतलान्तिक महासागरके तीर पर्यन्त मुसलमान साम्राज्यकी प्रभुता फैल गई। यहांसे जब इन्होंने समुद्रपारकर स्पेन राज्यमें जानेका उद्योग किया, तब इनकी यहां मृत्यु हो गई। इसलिये किसी प्रधानके न होनेसे मुसलमानोंकी शक्ति छिन्न भिन्न हो गई और सुदूर अफ्रीकाके पश्चिम भूभागमें मुसलमानों द्वारा विध्वस्त समस्त राज्य फिर स्वतन्त्र हो गये।

इसके बाद फिर ६८८ ई०में जिब्राल्तार-प्रणाली पर्यन्त समग्र उत्तर अफ्रीका अरबजातिके हस्तगत हो गया। खलीफा प्रथम वालिदके राज्यकालमें (७०५—७१५ ई०) अरबके साम्राज्यकी खूब ही विस्तृति हुई। इसी समय स्पेनराज रेडाविक-किउटारने शासनकर्ता जुलियानासकी कन्याको विशेषरूपसे लाञ्छित और अपमानित किया, इसलिये जुलियानास उनसे विरुद्ध हो गया। उसने अफ्रीकाके तात्कालिक प्रतिनिधि मूसाबिन नौशैरको स्पेनराजके विरुद्ध उभाड दिया। तदनुसार अरब-सेनापति तारीख बिन-जियाद समुद्रको पारकर स्पेनराज्यमें पदार्पण किया, उनके नामानुसार तबसे उस स्थानका नाम 'जेब्रेल तारीख' (तारीख पर्यन्त) पड़ा। एवं क्रमसे अपभ्रंश होते होते ही वह अब जिब्रालतार (Gibraltar) अन्तरीप कहलाने लगा है।

तारीख-बिन-जियादने स्पेनराज्यमें पहुंच कर ७११ ई०की १८ वीं जुलाइको जेरेज डिला फ्रंण्टेरके युद्धमें स्पेनराज रेडाविकको पराजित किया और स्वयं वहांके राजा बने। इसके थोड़े ही दिन बाद आदालसिया, ग्राणाडा और मासिया प्रभृति स्थानोंमें भी उन्होंने मुसलमान शक्तिका प्रभाव विस्तृत कर दिया। इस तरफ पूर्वाञ्चलमें खुरासानपति कोतिवा बिन्-मुसलिम मवराल-नहरने वोखारा तुर्कस्थान और खारिजम् राज्यपर अपना अधिकार कर लिया एवं

वहां मुसलमान साम्राज्यकी परिवृद्धि की। इसके ही राजत्वकालमें मुहम्मद बिन्-कासिमने ७१२ ई०में सिन्धुप्रदेशपर आक्रमण किया। इसके बाद गुर्जर जयकर चित्तोर पर धावा मारा, किन्तु उसमें बप्प-रावसे उन्हें पराजित होना पड़ा।

७१४ ई०में मुसलमान साम्राज्यके कलेवरकी जिस प्रकार वृद्धि हुई, उसका वृत्तान्त इतिहासमें उल्लिखित है। इस समय मुसलमान वीरोंने एसिया और युरोप इन दोनों महादेशोंमें अपने साम्राज्य और इसलाम धर्मकी यथेष्ट श्रीवृद्धि की थी। इन दोनों देशोंके मध्य-भागमें एक समुद्रसे दूसरे समुद्र पर्यन्त मुसलमानोंकी विजय-पताका उस समय फहिरायी थी। पश्चिममें अत-लान्तिक महासागर, उत्तरमें पिरिनिज् पर्वतमाला, दक्षिणमें साहारा मरु पर्यन्त विस्तृत समग्र उत्तर अफ्रीकाके राज्य (इजिप्त और आबिसिनिया राज्य) और पूर्वमें अर्थात् एसिया खण्डमें समग्र सिनाइ प्रायोद्वीप (अरब), पालेस्तिन, सिरीया, आर्मेनियाका कुछ अंश, एसिया-माइनर, मिसोपोटेमिया, पारस्य, काबुल और सिन्धुनदके पश्चिमदिग्वर्ती समस्त प्रदेश मुसलमान साम्राज्यके अधिकारभुक्त और इसलाम धर्ममें दीक्षित हो मुसलमान संप्रदायकी परिपुष्टि करनेमें सहायक हुये थे।

इसी समय मुसलमान लोग भारतके विजय करनेमें भी उद्यत हुये। इसके बाद तातार जातिको भी शक्तिशाली संप्रदायमें सम्मिलित कर इन्होंने अपने संप्रदायके कलेवरकी वृद्धि की थी। इसी सुविस्तृत मुसलमान-साम्राज्यमें परवर्ती ११श शताब्दमें और भी अनेक क्षुद्र क्षुद्र राज्य सन्निविष्ट हो गये, जिससे इसलामकी शक्ति और भी बढ़ गई। किन्तु बहुत काल पर्यन्त मुसलमान शासनाधीशों द्वारा परिचालित इस समस्त साम्राज्यमें एकमात्र स्पेनराज्यको छोड़कर अन्य कोई भी राज्य इसलामधर्मकी छायाको दूर करनेमें समर्थ न हुआ।

सुलेमान्‌के राजत्वकालमें (७१५—७१७ई०) एसिया-माइनर तथा कनस्तान्तिनोपल, और उमर बिन्-अब्द्-अल् अजीज्‌के शासन समयमें (७१७—७२०ई०) जोर्जन और तबरिस्तान राज्य मुसलमानोंके शासन-से शासित हुये। उमरके वंशधर २रे यजीद (७२०—७२५ ई०) एवं परवर्ती खलीफ़ागणकी शासनशक्तिके नष्ट हो जानेसे और हिसामकी बढ़ती हुई तीव्र राज्यप्राप्तिकी अभिलाषसे मुसलमानराज्यमें अन्तर्विप्लव उपस्थित हुआ। विशृङ्खल शासन होनेसे प्रजा विद्रोही हो गई और खलीफा पदाकाङ्क्षी नूतन नेताओंको मुसलमान् साम्राज्य प्रदान कर सन्तुष्ट हुई। ७२४ ई०से ७४३ ई०तक खलीफ़ा हिसामके राजत्वकालमें मुसलमानोंका विजयी बाहु सबसे प्रथम पराभूत हुआ। ७३२ ई०को पइटियेके युद्धमें मुसल मान्‌सेनापति अब्दुर-रहमान् बिन् अब्दुल्ला चार्लस माटेलसे पराजित हुये। इसी युद्धके बाद युरोप महादेशमें अरबी लोगोंका अक्षुण्ण प्रताप क्रमशः लुप्त होने लगा।

इसके बाद ७४९ ई०में जिस समय अब्बासवंश धर्मप्राण मुसलमान-समाजका नेता बना था, उस समय उमैयद वंशके लोग अति निष्ठुरभावसे निहत हुये थे। इसी वंशके एकमात्र राजा अब्दुर-रहमान्-बिन्-मुयावियाने स्पेनराज्यमें भाग कर अपना प्राण बचाया और कर्डोभा नगरमें ७५८ ई०को उमैयाद-राजपाटकी स्थापना कर स्वयं खलीफापद ग्रहण किया था।

अब्बासवंशके अधिकारके समय बगदाद नगरमें राजपाट परिवर्तित हुआ था। उसीके यत्नसे उस समय कई मुसलमान राज्य स्थापित हुये। भूमध्य-सागरके क्रीट, कर्सिका, सार्डिनिया और सिसिली द्वीप भी अफ्रीकाके मुसलमानोंके अधिकारमें आ गये थे।

पूर्ववर्ती खलीफ़ावोंने अपने अपने वीर्यके प्रभावसे सभ्य जगत्‌में राज्यप्रतिष्ठा-प्रसङ्गपर जैसा सुयश कमाया था, वैसा ही अब्बासियोंने भी शिल्पविद्या और साहित्य सम्बन्धपर अपना विशेष आग्रह एवं अनुराग दिखा विद्वन्मण्डली तथा सभ्यसाधारणमें अपना गौरव जमाया। मन्सूर, हारून् अल् रसीद और मामून् प्रभृति खलीफा-वोंने उससमय साहित्य-जगत्‌में शीर्षस्थान पाया था।

उनका राज्यकाल भी मुसलमानोंकी शक्तिसमृद्धिका उज्ज्वल निदर्शन है।

मानसिक एवं ऐकान्तिक चित्तवृत्तिके उन्नति-साधनकी आसक्तिसे अब्बास-वंशीय लोग क्रमशः निर्जनताप्रिय और विलासी बन गये थे। सुतरां राजकार्यमें अवश्यम्भावी अमनोयोग देख मुसलमान प्रतिनिधियोंने गृहविच्छेद बढ़ाया। धीरे-धीरे राजद्रोहिता फैलने लगी। बग़दादकी राजशक्ति उस समय बाह्यतः अक्षुस थी तो भी वस्तुतः अन्तरङ्गमें वह घट रही थी। यह विद्रोहवह्नि साम्राज्यके एक सुदूर प्रान्तमें प्रथम भड़की। अबदुर-रहमान्‌का स्पेनराज्यमें स्वतन्त्र एवं स्वाधीन उमैयद राज्य स्थापन इसका प्रारम्भ था। इस दृष्टान्तको देखकर अपरापर स्थानके मुसलमान-प्रतिनिधियोंने भी स्वाधीन बननेका प्रयास उठाया।

विद्यानुरक्त एवं विलासी अब्बासवंशीय ख़लीफ़ावोंने इस राष्ट्रविप्लवके समय अपना अवस्थान विपज्जनक विचारा इसलिये उन्होंने सिंहासनका तथा अपनी रक्षा करने लिये वेतनभोगी तुर्कप्रहरी नियुक्त किये और नियमातिरिक्त क्षमता प्रदान कर प्रधान-प्रधान अमात्योंके (अमीर-उल्-उमरा) हाथ राज्यपरिचालनके कार्य सौंप दिये।

राज्य-शासनहेतु एतादृश व्यवस्थाके निर्देश, सलजूकी तुर्कवंशके उपर्युपरि आक्रमण और सरकार-दरबारमें तुर्कोंके प्राधान्य-विस्तारसे ख़लीफ़ा नाममात्र मुसलमान् समाजके नेता माने जाते थे। १२५८ ई०में हलाकूके बग़दाद आक्रमण तथा अधिकार करते ही अब्बास वंशका अवसान हुआ।

उमैयद-वंशीय ख़लीफ़ा मुयावियाके दामास्कस नगरमें राजधानी जमाने और परवर्ती अब्बासवंशके बग़दाद नगरमें प्रतिपत्ति कमाने पर्यन्त मुसलमान् जातिका अभ्युदयक्षेत्र अरब-राज्य समग्र साम्राज्यसे नगण्य प्रदेश समझा जाता था। अविलम्ब ही वह विभिन्न सामन्तराज्यमें बंट गया। इस सकल विभागके मध्य एकमात्र यमन प्रदेशने मुहम्मदके जन्मसे ई०के १५वें शताब्द पर्यन्त विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। प्रतिवत्सर पवित्र नगरमें तीर्थयात्रियोंके समागम, बहु सरदारोंके परस्पर विरोध और नेजद प्रदेशमें वहहावी राजवंशके अभ्युत्थान एवं अवसानके सिवा अरबी राज्यमें दूसरी किसी इतिहास-प्रसिद्ध घटनाका उल्लेख नहीं मिलता।

सीरिया, फ़ारस, मोरिटोनिया और स्पेन राज्य जीतनेपर अरब जातिका वाणिज्य बढ़ा था। एकमात्र इसलामधर्म और अरबी भाषाका प्रचलन रहनेसे तथा पर्यटक वणिकोंके यातायातकी विशेष सुविधा पड़नेसे विस्तीर्ण मुसलमान-साम्राज्यमें एक वाणिज्य-साम्राज्यके स्थापनका भी सुन्दर सुयोग लगा। बग़दाद-राजवंशकी विलासिता एवं अब्बास-वंशीय ख़लीफ़ावोंकी सुखसमृद्धि तथा विलासवासना परिपूरणके निमित्त मुसलमान वणिकोंको भारतीय उत्तम द्रव्य ले जानेके लिये पैदलकी राह भारत आना पड़ता था। ई० ८म शताब्दके प्रारम्भमें अरब भारतके नाना स्थानमें पहुंच बसने लगे और उसी समयसे बहुसंख्यक भारतीय राजन्य अपने धर्मका आश्रय छोड़ इसलाम धर्ममें दीक्षित होने लगे। अतःपर अरबोंने भारतीय द्वीपपुञ्ज, सिंहल, सुमात्रा, यव, सिलेबिश प्रभृति द्वीपराज्य और सुदूर चीनसाम्राज्यमें भी वाणिज्यके व्यपदेशसे इसलाम धर्मका प्रभाव जा फैलाया।

पदव्रजसे गमनकारी अरबी वणिक्‌सम्प्रदाय इसी प्रकार स्थलपथ द्वारा तातार राज्य और साइबेरियाके उत्तरांश पर्यन्त पहुंचकर अबाध वाणिज्य-कार्य चलाता था। अफ़रीका-खण्डमें वह नाइगार पर्यन्त अग्रसर हुआ था। यहां ई० १०वें शताब्दसे मुसलमानोंके प्रभाव द्वारा घाना, बङ्गरा, तोक्रूर, कुकू, सेन्नायार, दफूर, बुरनू, तिम्बाकतू और मेल्ली प्रभृति अनेक सामन्त राज्य जम गये। अफ़रीकाके पूर्वोपकूलमें बाबेलमान्देब प्रणालीसे जञ्जीबार तक समुद्रतटपर उनके यत्नसे मकादाशुया, मेलिन्दे, सोफला, केलू और मोजाम्बिक बन्दर बसे थे। यहांसे वह मादागास्करवासी लोगोंके साथ वैदेशिक वाणिज्य चलाते थे। लुसितानियावासी वाणिज्यप्रिय वणिक् जलपथसे पण्यद्रव्य ले ई० ११वें शताब्दकी सुदूर अमेरिका-खण्डमें जा पहुंचे। साधा-

रणको विश्वास होता है, कि अरब सम्प्रदाय ही प्रकृत पक्षमें अमेरिका महादेशका आविष्कर्ता है।

वसुन्धराके भोगविलासकी भूमि भारत ही मुसलमान सम्प्रदायके साम्राज्य-विस्तारका सर्वशेष निदर्शन है। किन्तु प्रकृतपक्षमें ई० ७वें शताब्दके अन्त और ८वें शताब्दके आरम्भसे भारतवक्षपर मुसलमान सम्प्रदायका अधिष्ठान हुआ था। खलीफावोंकी भोगलालसा पूरी करनेको ही मुसलमान् वणिकोंने भारतके साथ संस्रव जमाया। मीरकासिमके सिन्धुपर आक्रमण करनेसे भारतमें मुसलमानोंका समागम हुआ और इसलामधर्म फैला। उसके बाद १० और ११ वें शताब्द ग़ज़नीपति मह्मूदकी चेष्टासे भारतमें मुसलमानी शक्ति प्रतिष्ठित हुई। उक्त मुसलमान पुङ्गवने सप्तदश बार भारतपर आक्रमण मार बहु अर्थ लुण्ठनपूर्वक स्वदेशको पलायन किया था। विख्यात सोमनाथ-मन्दिर और वहांकी देवमूर्ति दोनोंही उनके द्वारा धूलिमें मिल गये। मह्मूद ग़ज़नवीने ईरान्से भारतके उत्तर-पश्चिम पञ्जाब प्रदेश पर्यन्त अपना राज्य बढ़ाया था। इससे प्राय: दो शताब्द बाद ११९३ ई०को मुहम्मद घोरीने दिल्ली अधिकारपूर्वक भारतकी सर्वप्राचीन राजधानीमें मुसलमानी शासन चला दिया। १८५७ ई०के सिपाही-विद्रोह पर्यन्त दिल्ली मुसलमान् बादशाहोंकी राजधानी गिनी जाती थी। यहां पठानोंका प्रादुर्भाव मिटनेपर ई० १४वें शताब्दमें मुग़ल वंशका अभ्युदय हुआ। मुगल सम्राट् अकबर और उनके प्रपौत्र औरङ्गजेबके समय भारतमें मुसलमानी प्रभावने पराकाष्ठा पायी थी।

भारतवासी इसलाम धर्मावलम्बी मुसलमान् विभिन्न जातिसे समुद्भूत हैं। उनमें कितने ही विभिन्न शाखायुक्त अरब जातिके सन्तान हैं। कितने ही पारस्यवासी ईरानियों, शकों, तातारों मुगलों, तुर्कों, बलूचियों, अफगानों, अग्निकुल-राजपूतों, जाटों और आर्योपनिवेशके पूर्ववर्ती भारतसमागत मोङ्गलीय शाखा जातिके लोगोंसे इसलामी धर्मान्तर लेने बाद भारतीय विभिन्न मुसलमान् सम्प्रदाय परिपुष्ट हुआ है। आर्यावर्त भूमिमें मोङ्गलीय सम्प्रदायके मुग़ल, अफगान, पाठान और विशुद्ध अरबी मुसलमान शेख कहाते हैं। मुहम्मद, मुसलमान, खलीफा प्रभृति शब्द देखिये।

इसलामखान्—१ मीर जिया-उद्-दीन बदख्शीका उपाधि। कवितामें इनका उपनाम वाला रहा। बादशाह आलमगीरके अधीन इन्होंने कार्य किया था। १६६३ ई०को आगरेमें इनकी मृत्यु हुयी। नवाब हिम्मत खान्, सैफखान् और अबदुर-रहीम खान् इनके बेटे थे।

२ सफी ख़ान्के पुत्र और इसलाम खान् मशहदीके पौत्र। बादशाह फ़रुख़-सियारके समय यह लाहोरके सूबेदार थे। मुहम्मद शाहने इन्हें सात हज़ार सवार रखनेका अधिकार दिया था।

इसलाम खान् मशहदी—बङ्गालके एक सूबेदार। प्रथम यह मशहदमें रहते थे। उस समय इनका नाम मीर अबदुस्सलाम रहा। जहांगीरके राजत्वकालमें ये पांच हज़ार, मनसबदार और बङ्गालके सूबेदार बने थे। सम्राट् शाहजहान्ने भी इन्हें छ: हज़ारी मनसबदार किया और मोतमद्-उद्-दौलाकी उपाधि तथा दक्षिणापथके शासनकर्ताकी पदवी दी। शाहजहान् इन्हें बहुत चाहते थे। मृत्युसे कई वर्ष पहले इन्हें सात हज़ारी मनसबदार और मन्त्रीका पद मिला। १५८७ ई०में यह दक्षिणापथमें मरे थे। औरङ्गाबादमें इनकी कब्र बनी है। कोई-कोई भूलसे इन्हें इसलाम खान् रूमी भी कहते हैं।

इसलाम ख़ान् रूमी—अली पाशाके लड़के। इनका प्रकृत नाम हुसेन पाशा था। यह बसराके शासनकर्ता थे। अपने चाचा द्वारा उक्त पदसे निकाले जानेपर इन्हें भारतवर्ष आना पड़ा। आलमगीर बादशाहने इन्हें पांच हज़ारी मनसबदार बनाया था। १६७६ ई०को १३ वीं जूनको यह विजयपुरके युद्धमें मारे गये। इन्होंने आगरा दुर्गके समीप यमुना किनारे अपना गृह बनाया और उद्यान लगाया था।

इसलाम खान् शेख—शेख सलीम चिश्तीके पौत्र। १६०८ ई०को बादशाह जहांगीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बनाया था। इनके पुत्रका नाम इकराम खान् और भ्राताका नाम कासिम खान् था। १६१३ ई०में इस-

लाम खान् मरे और इकराम खान् बङ्गालके सूबेदार बने। आगरेके पास फ़तेहपुर-सीकरीमें इनकी कबर है।

इसलामगढ़—राजपूताना प्रान्तभागमें भावलपुरके अन्तर्गत एक दुर्ग। खान्पुरसे जैसलमेर जानेके पथपर यह दुर्ग खड़ा है। पहले इसपर जैसलमेरके राजपूतोंका अधिकार था, किन्तु भावलपुरके खानोंने उनके हाथसे छीन लिया।

इसलामनगर—युक्तप्रदेशस्थ बदायूं ज़िलेके अन्तर्गत बिसौली परगनेका एक नगर। यह अक्षा० २८° १९´ ४५´´ उ० और द्राघि० ७८° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है। इस नगरके चारो ओर आमका बाग़ लगा है।

इसलामाबाद—१ बङ्गालके चट्टग्राम ज़िलेका एक प्रधान नगर। चट्टग्राम देखो। २ काश्मीरका एक नगर। यह अक्षा० ३३° ४१´ उ० तथा द्राघि० ७५° १७´ पू०के मध्य झेलम नदी किनारे गिरिशृङ्गपर अवस्थित है। गिरिके नीचे प्रस्रवण है। सुननेमें आता है, कि विष्णुने उक्त प्रस्रवण बनाया था। इसका प्राचीन नाम अनन्तनाग है। अम्बरनाथ जानेवाले यात्री इसी स्थानसे आहार्य संग्रह करते हैं। ई०के १८वें शताब्दमें मुसलमानोंने इस नगरका नाम इसलामाबाद रक्खा था। यहां काश्मीरी शाल और नानाप्रकार रूई एवं ऊनका कपड़ा बिकने आता है। केसर खूब मिलती है।

इसलाह (अ० स्त्री०) १ संशोधन, दुरुस्ती, सुधार। २ चिवुककेश, ठुड्डीका बाल।

इसहाव.खान्—दिल्ली-सम्राट् मुहम्मद शाहके एक अति प्रियपात्र बन्धु। इनकी उपाधि मोतमिन-उद्-दौला और प्रकृत नाम मिर्ज़ा गुलाम अली था। ये अच्छी कविता बनाते थे। १७४० ई०में इनकी मृत्यु हुई। १७४६ ई०में इनकी कन्याका विवाह सफदर-जङ्गके पुत्र शुजा-उद्-दौलाके साथ धूमधामसे किया गया था।

इसहाक मौलाना—पञ्जाब प्रान्तस्थ मूलतान ज़िलेवाले उच्छा स्थानके एक पढ़े-लिखे मुसलमान्। युवावस्थामें इन्होंने अपनेको चाचा सैयद सदर-उद्-दीन राजू कत्तालकी देख रेखपर छोड़ रक्खा था। १४५६ ई०में इनकी मृत्यु हुयी। सहारनपुरमें अपने मकान्पर ही मौलानाकी कबर बनी है।

इसायी, ईसाई देखो।

इसीका (हिं०) १ 'यह'का सम्बन्ध कारक। इसीका देखो।

इसे (हिं० सर्व०) इसको, इसके लिये। 'इसे' यह शब्दके कर्मकारक और सम्प्रदानकारकका रूप है।

इस्क़ात (अ० पु०) पतन, गिराव।

इस्क़ात-हमल (अ० पु०) गर्भपात, पेटका गिराना।

इस्क़ातर (=पोर्त्तुगीज Escritoire) सम्पुटविशिष्ट लेखनमञ्च, खानेदार लिखनेका मेज़।

इस्कार्दो (स्कार्द)—काश्मीर-राज्यान्तर्गत बलती नामक प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० ३५° १२´ उ० और द्राघि० ७५° ३५´ पू०के मध्य अवस्थित तथा पर्वतमाला द्वारा वेष्टित है। नगरमें एक दुर्ग बना है, जो पर्वतपर निकटस्थ सिन्धुनदीसे ८०० फीट ऊंचा खड़ा है। काश्मीरराज गुलाबसिंहने स्थानीय राजा अहमद-शाहसे इसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया था।

इस्तमरार (अ० पु०) १ सनातनत्व, क़याम, ठहराव। २ एकाधिकार, बेरोक कब्ज़ा। कानूनमें नियत और अपरिवर्तनशील करको इस्तमरार कहते हैं।

इस्तमरारदार (अ० पु०) चेत्र वा पट्टका सनातन अधिकारी, जो शख्स खेत या पट्टेपर हमेशाके लिये कब्ज़ा रखता हो।

इस्तमरारी (अ० वि०) १ सनातन, क़ायम, कभी न बदलनेवाला। (स्त्री०) २ नियत पट्टेकी भूमि, क़ायम पट्टेकी ज़मीन्।

इस्तिक़बाल (अ० पु०) १ स्वागत, अगवानी। २ भविष्यत्काल, ज़माना आइन्दा।

इस्तिक़लाल (अ० पु०) १ दृढ़ता, मज़बूती। २ स्थिरता, क़याम।

इस्तिङ्गी (हिं० स्त्री०) जहाजी रस्सी। यह चित्रोंमें लगती है। पालको इसीसे तानते और खींचते हैं। यह अंगरेजी string शब्दका अपभ्रंश है।

इस्तिञ्जा (अ० पु०) १ मूत्रोत्सर्ग, पेशाब करना, मुतायी। २ मूत्रपुरीषोत्सर्गके पश्चात् करशुद्धि, हाथ-पानीका लेना। ३ मूत्रोत्सर्गके पश्चात् मृत्तिका-

खण्डसे मूत्रके विन्दुका सुखाना, मूतनेके बाद मट्टीके ढेलेसे पेशाबके बूंदका जज़्ब करना। किसी तुच्छ वस्तुको 'इस्तिञ्जेका ढेला' कहते हैं।

इस्तिरजा (अ० स्त्री०) स्वीकृति, रज़ामन्दी।

इस्तिरी (हिं० स्त्री०) १ स्तरी, कपड़ेकी बराबर और कड़ा करनेका औज़ार। यह लोहेकी बनती और खोखली होती है। नीचेकी ओर पीतल लगाते हैं। खोखली जगह गर्म कोयला भरा जाता है। जब कपड़ा धुलकर साफ होता, तब धोबी इस्तिरीको उसपर फेरता है। इससे कपड़ेका शिकन मिट और तह बराबर जम जाता है। दरज़ी भी इससे काम लेते हैं। किसी-किसीके मतानुसार यह अंगरेजी steel शब्दका अपभ्रंश है। २ स्त्री, लोगाई। ३ पत्नी, जोड़ू।

इस्तिसना (अ० पु०) १ वर्जन, इखराज, छूट। २ निराकरण, नामञ्ज़ूरी, इनकार।

इस्तेदाद (अ० स्त्री०) १ योग्यता, लियाक़त। २ बुद्धि, समझ। ३ अंश, हिस्सा। ४ विज्ञान, हुनर।

इस्तेफ़ा (अ० पु०) उत्सर्ग, तर्क, छोड़।

इस्तेमाल (अ० पु०) १ अभ्यास, रब्त। २ व्यवहार, चाल। ३ कार्य, काम।

इस्तेमाली (अ० वि०) १ व्यवहृत, पुराना। २ साधारण, मामूली। (पु०) ३ उत्तम शालि, बढ़िया चावल।

इस्म (अ० पु०) १ अभिधान, लक़ब, नाम। २ व्याकरणमें—संज्ञा।

इस्मनवीसी (अ० स्त्री०) १ नाम लिखनेका काम। २ नामका रजिष्टर। ३ नामसूची, लक़बनामा।

इह (सं० अव्य०) इदं-ह। इदमो हः। पा ५।३।११। १ इस स्थानपर, इस जगह, यहां। २ इस स्थानको, इस जगहके तईं। ३ इस लोकमें, इस दुनियाके बीच। ४ इस पुस्तकमें, इस क़ायदेमें। ५ इस अवस्थामें, इस हालतमें। ६ सम्प्रति, अब।

इहकाल (सं० पु०) इदम्-हः, कर्मधा०। इतराभ्योऽपि दृश्यते। पा ५।३।१४। वर्तमान समय, ज़माना हाल, यह ज़िन्दगी।

इहक्रतु (वै० त्रि०) इस लोक वा स्थानका ध्यान रखनेवाला, जिसे इस दुनिया या जगहका खयाल रहे।

इहचित्त, इहक्रतु देखो।

इहतन (सं० त्रि०) इदम् भावार्थे ट्युल् तुट्च। इस जगत्में जन्म लेनेवाला, जो इस दुनियामें पैदा हो।

इहतियात (अ० स्त्री०) १ सावधानता, खबरदारी, चौकसी। २ अप्रमाद, होशियारी।

इहत्य (सं० त्रि०) इह भवम्, सप्तम्यन्तात् त्यप्। अव्ययात् त्यप्। पा ४।२।१०४। इहकालमें होनेवाला, जो इस वक्त हो।

इहत्र (सं० अव्य०) इस स्थानपर, इस दुनियामें, यहां।

इहभोजन (वै० त्रि०) जिसके वस्तु और दान यहां पहुंचे, जिसके चीज़ और बख़्शिश यहां आये।

इहद्वितीया (सं० स्त्री०) इस कालकी द्वितीया, इस वक्तकी दूज।

इहपञ्चमी (सं० स्त्री०) इस समयकी पञ्चमी।

इहलोक (सं० पु०) इदम् प्रथमाया हः, कर्मधा०। १ यह जगत्, यह ज़िन्दगी। (अव्य०) २ इस लोकमें, इस दुनियामें।

इहवां (हिं० क्रि० वि०) इस स्थानपर, यहां।

इहसान्, एहसान् देखो।

इहस्थ (सं० त्रि०) इस स्थानपर उपस्थित, जो यहां खड़ा हो।

इहस्थान (सं० क्लो०) १ यह जगत्, यह दुनिया। (त्रि०) २ पृथिवीपर निवास करनेवाला, जो इस दुनियामें रहता हो। (अव्य०) ३ इस स्थानपर, इस जगह।

इहां, यहां देखो।

इहागत (सं० त्रि०) इस स्थानपर आ पहुंचनेवाला, जो यहां आ गया हो।

इहामुत्र (सं० अव्य०) इहलोक और परलोकमें, इस दुनिया और उस दुनियामें, यहां और वहां।

इहेह (सं० अव्य०) अत्र-तत्र, अवन्तत्र, बारबार।

इहेहमात्र (वै० त्रि०) जिसके सर्वत्र माता रहे, जो अपनी माको सब जगह रखता हो।

ई

ई—हिन्दी वर्णमालाका चतुर्थ स्वरवर्ण। यह इकारका दीर्घ रूप है। तालुसे निकलनेके कारण इसे तालव्य वर्ण कहते हैं। ईका उच्चारण कभी दीर्घ और कभी प्लुत होता है। तन्त्रके मतसे यह कुण्डलिनी है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव प्रभृति देव इसमें रहते हैं। इसको उपासनासे चतुर्वर्ग फल मिलता है। (कामधेनुतन्त्र)

वर्णोद्धारतन्त्रके मतसे ई लिखनेका नियम यह है,—ऊपर-नीचे और मध्यदिक पर यह कुञ्चित होता है। अधोगत तीन कोण रहते, जो दक्षिण दिक्से ऊपरको सिकुड़ते हैं। ऊपरी दक्षिण कोणपर कोणयुक्त एक दूसरी रेखा कुञ्चित भावसे खींचना पड़ती है। ईमें चन्द्र, सूर्य और अग्नि विद्यमान हैं। इसकी मात्रा शक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र) ईको तन्त्रमें त्रिमूर्ति, महामाया, लोलाक्षी, वामलोचन, गोविन्द, शेखर, पुष्टि, सुभद्रा, रतिसंज्ञा, विष्णु, लक्ष्मी, प्रहास, वाग्विशुद्ध, परापर, कालोत्तरीय, भेरुण्डा, रीति, पौण्ड्रवर्धन, शिवोत्तम, शिवा, तुष्टि, चतुर्थी, विन्दु, मालिनी, वैष्णवी, वैन्दवी, जिह्वा, कामकला, सनादका, पावक, कोटर, कीर्ति, मोहिनी, कालकारिका, कुचद्वन्द्व, तर्जनी, शान्ति और त्रिपुरसुन्दरी भी कहते हैं। मातृकान्यासमें इसका स्थान वामचक्षु है। (ईं नमो वामचक्षुषि)

हिन्दीमें ई प्रत्ययका काम भी देती है। इसके सहारे विशेष्य और विशेषण दोनो बनते हैं। जैसे—बेटासे बेटी और लेटासे लेटी। कभी-कभी विशेष्यके अन्तमें लगनेसे विशेषण और विशेषणके अन्तमें ई लगनेसे विशेष्य हो जाता है। जैसे—चालसे चाली और लालसे लाली।

ई (सं० अव्य०) १ विषाद! अफसोस! हाय! २ अनुकम्पा! रहम! ३ क्रोध! गुस्सा! ४ दुःखानुभव। तकलीफ! ५ प्रत्यक्ष! आंखके सामने! ६ सन्निधि! नजदीकी! (स्त्री०) अस्य विष्णोः पत्नी, अ-ङीप्। ७ लक्ष्मी। ८ माया। (पु०) ९ शान्ति। १० कामदेव। ११ गोविन्द। १२ त्रिमूर्तीश। १३ वामलोचन। १४ नृसिंहास्त्र। १५ सुरेश्वर। १६ कन्यायुग्म। १७ कर्कट।

ईंगुर (हिं० पु०) सिन्दूर, शिङ्गरफ, लालसोस। यह भारतमें बनता और बाहरसे भी आता है। गलते सीसको वायुप्रवाहमें रखनेसे ईंगुर तैयार होता है। यह विशेषतः महावीर पर चढ़ता है। सौभाग्यवती स्त्री अपनी मांग इससे भरती हैं। ईंगुरसे पारा भी निकालते हैं। सिन्दूर और हिङ्गुल देखो।

ईंधे (हिं० क्रि० वि०) इधर, यहां, इस ओर।

ईंचना (हिं० क्रि०) १ अञ्जन करना, खींचना। २ लिखना, घसीटना। ३ असि निकालना, तलवारको म्यानसे बाहर करना। ४ फांसी चढ़ाना। ५ शोषण करना, सोख लेना। ६ पान करना, दम लेना, पीना। ७ ग्रहण करना, ऐंठ लेना। ८ रख छोड़ना, दाब रखना। ९ बांधना, अंगेजना।

ईंचमनौती (हिं० स्त्री०) भूमिपतिका अपने कृषकके महाजनसे कर ग्रहण करना। कृषक भूमिकर देनेमें असमर्थ होनेसे ज़मीन्दार महाजनसे वह धन लेता है और उसके खातेमें कृषकके नाम जमा करा देता है। इसीका नाम ईंचमनौती है।

ईंट (हिं० स्त्री०) १ इष्टका, मट्टीका टुकड़ा। यह चौखूंटी और लम्बी रहती तथा सांचमें ढलती है। ईंट कच्ची और पक्की दो तरहकी होती है। पक्की ईंट पजावेमें पकती है। इसे लखौरी, नम्बरी और पुट्ठी कहते हैं। लखौरी पतली और छोटी होती है। इसका चलन अब बन्द हो गया है। पुराने समय

इसे घिस घिस कर सुन्दर गृह बनाये जाते थे। नम्बरी मोटी और लम्बी होती है। आजकल पक्के मकान्में यही लगती है। पुट्ठीको गण भी कहते हैं। यह चौड़ी और परिधिके खण्ड जैसी रहती है। कूएंको जोड़ायी इसीसे होती है। क्योंकि दूसरी ईंट लगनेसे गोलायी आ नहीं सकती। तामड़ा, फररा, ककैया, ननिहारी, नौतेरही और मेज़ां आदि अन्य प्रकारकी होती है। ईंट सोने, चांदी, तांबे, पीतल और जस्ते आदिकी भी बनती है।

मोरीकी ईंट चौबारे चढ़ी। (लोकोक्ति)

२ ताशका एक रङ्ग।

ईंटका घर मट्टी होना (हिं क्रि०) विनष्ट होना, बिगड़ना। "ईंटका घर मट्टी हो गया।" (लोकोक्ति)

ईंटकारी (हिं० स्त्री०) इष्टका-स्थापन, ईंटकी जोड़ाई।

ईंटमार चट्टाकड़ा (हिं० पु०) क्रीड़ाविशेष, लड़कोंका एक खेल। कितने ही लड़के इकट्ठे होकर यह खेल खेलते हैं। कोई लड़का एक ईंट दूर फेंक देता और दूसरोंसे उसपर निशाना लगानेको कहता है। जो अपने ढेलेसे फेंकी हुयी ईंटको मारता, वह ईंट फेंकनेवाले लड़के पर चढ़कर ईंटकी जगह तक जाता है।

ईंटा (हिं० पु०) ईंट देखो।

ईंडवा (हिं० पु०) १ गोलाकार पुट विशेष, चक्करदार तह, इंडुरी। इसे शिरपर रख जलकुम्भ उठाते हैं।

ईंडवी (हिं० स्त्री०) शिरोवेष्टन, पगड़ी।

ईंढ (हिं० वि०) सदृश, बराबर।

ईंत (हिं० पु०) ईंटका टुकड़ा। यह औज़ारको धार पैनानेके लिये सानके नीचे रखा जाता है।

ईंदर (हिं० पु०) किदार, नये दूधकी मिठाई। गाय या भैंस व्यानेपर आठ-दश दिनके अन्दर दूधको औट कर जो मिठाई बनती, वह ईंदर बजती है।

ईंदूर (हिं० पु०) इन्दूर, चूहा। इन्दूर देखो।

ईंधन (हिं० पु०) १ इन्धन, जलानेकी लकड़ी। २ तृण, घास-फूस। "बापको आटा न मिले, जो ईंधनको भेजे।" (लोकोक्ति)

ईकार (सं० पु०) ई स्वार्थे कार। चतुर्थ वर्ण ई।

ईक्षक (सं० पु०) ईक्ष-कन्। दर्शक, नाज़रीन्, देखनेवाला शख़्श।

ईक्षण (सं० क्ली०) ईक्ष भावे लुग्रट्। १ दर्शन, नज़र, देखावा। करणे लुग्रट्। २ चक्षुः, आंख। ३ पर्यावेक्षण, ख़बरदारी, चौकसी।

"शौचे धर्मेऽन्नपक्त्याञ्च पारिणाह्यस्य वीक्षणे।" (मनु ९।११)

ईक्षणिक (सं० पु०) ईक्षणं हस्तपादादि रेखा शुभाशुभं अस्ति अस्मिन्, ईक्षण-ठन्। दैवज्ञ, पेशीनगो, हाथ-पैरके निशान् देखकर भला-बुरा बता देनेवाला शख़्स। "भद्राश्चेक्षणिकैः सह।" (मनु ९।२५८)

ईक्षणिका (सं० स्त्री०) ईक्षणिक-टाप्। गणककी स्त्री, नजूमीकी औरत।

ईक्षमाण (सं० त्रि०) पर्यावेक्षक, जांचनेवाला।

ईक्षा (सं० स्त्री०) ईक्ष दर्शने क्त टाप् च। दर्शन, नज़र, देख-रेख।

ईक्षित (सं० त्रि०) पर्यावेक्षित, देखा हुआ, जो समझा गया हो।

"एकोऽहमस्मीत्यात्मानं यत् त्वं कल्याणमन्यसे।
नित्यं स्थितस्ते हृद्येष पुण्यपापेक्षिता मुनिः॥" (मनु ८।९१)

ईक्षितृ (सं० त्रि०) द्रष्टा, देखनेवाला।

ईक्षेण्य (वै० त्रि०) अद्भुत, अनोखा, देखने लायक।

ईक्ष्यमाण (सं० त्रि०) देखा जानेवाला, जो जांचा जा रहा हो।

ईख (हिं० स्त्री०) इक्षु देखो।

ईखना (हिं० क्रि०) ईक्षण करना, देखना।

ईखराज (हिं० पु०) इक्षु वपन करनेका प्रथम दिवस, जिस दिनको पहले पहल जख बोई जाती हो।

ईछन (हिं०) ईक्षण देखो।

ईछना (हिं० क्रि०) इच्छा रखना, ख़ाहिश करना, चाहना।

ईछा (हिं०) इच्छा देखो।

ईज़ा (अ० स्त्री०) दुःख, मुसीबत, तकलीफ़।

ईजाद (अ० स्त्री०) आविष्कार, सृष्टि, उत्पादन, दरियाफ़्त, बनावट।

ईजान (सं० त्रि०) यजमान, जो यज्ञ करता हो।

ईजाब (अ० पु०) १ स्वीकार, मञ्जूरी। २ प्रथम

प्रस्ताव, पहली तजवीज़। इसे दोमें एकदल कोयी कार्य हाथमें लेनेसे प्रथमत: उपस्थित करता है।

ईजिक (सं० पु०) जनपद विशेष, एक गांव। कहीं-कहीं ईजक भिन्न पाठ भी मिलता है। यहां अनेक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य प्रभृति रहते हैं। (भीष्मपर्व)

ईज्या (सं० स्त्री०) १ भूमि, ज़मीन्। २ गो, गाय।

ईट (हिं०) इष्ट देखो।

ईठि (हिं०) इष्टि देखो।

ईठी (हिं० स्त्री०) बरछी, भाला।

ईठीदाड़ (हिं० पु०) चौगानका डण्डा। इससे हाके या पोलो खेलते हैं।

ईड् (वै० स्त्री०) उदकदान, देवतापर धारका चढ़ाना।

ईडन (सं० क्ली०) प्रशंसाकार्य, तारीफ़का करना।

ईड़ा (सं० स्त्री०) ईड-अ-टाप्। १ स्तुति, तारीफ़। २ नाड़ी, नब्ज़। नाड़ी देखो।

ईड़ित (सं० त्रि०) ईड कर्मणि क्त। स्तुत, जो तारीफ़ पा चुका हो। ईलित रूप भी होता है।

इडेन्य, ईड्य देखो।

ईड्य (वै० त्रि०) ईड-ण्यत्। ईड़वन्दवृशंसदुहां ण्यत:। पा ३।१।२१४। स्तवके योग्य, जो तारीफ़के क़ाबिल हो। ईलेन्य रूप भी बनता है।

ईड्यमान (सं० त्रि०) प्रशंसा पानेवाला, जो तारीफ़ किया जा रहा हो।

ईद्या (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भूइं आंवला।

ईढ़ (हिं० स्त्री०) हठ, ज़िद।

ईढ़ी (हिं० वि०) हठी, ज़िद्दी।

ईत (हिं० स्त्री०) वनमक्षिका, डांस।

ईतर (हिं० पु०) १ आत्मश्लाघी, शेखीबाज़, जो शख़्स इतराता हो।

"ईतरकी घर तीतर बाहर बांधें कि भीतर।" (लोकोक्ति)

(वि०) २ इतर, मामूली, छोटा।

ईति (सं० स्त्री०) ईयते गम्यते, ई भावे क्तिन्। १ डिम्ब, झगड़ा। २ प्रवास, डेरा। ३ सांसर्गिक रोग, लगनेवाली बीमारी। ४ राजोपद्रव विशेष, आफ़त, स्मृतिमें छ: प्रकारकी ईति कही है,—

"अतिवृष्टिरनावृष्टि: शलभा मूषिका: खगा:।
प्रत्यासन्नाश्च राजान: षडेता ईतय: स्मृता:॥" (कामन्दक)

अर्थात् अधिक वर्षा होना, बिलकुल पानी न बरसना, टिड्डी आना, चूहे लगना, पक्षी बढ़ना और शत्रु राजाका चढ़ना ईति कहाता है। उक्त छ: प्रकार उपद्रव उठनेसे शस्य नहीं उपजता और प्रजाको बड़ा ही कष्ट मिलता है।

ईथर (अं०=Æther) १ पदार्थविज्ञानके अनुसार अधिक स्थितिस्थापकता और अत्यन्त क्षीणताका कल्पित साधन। यह पदार्थ समस्त स्थानमें भरा है। घन द्रव्यका भीतरी भाग भी इससे खाली नहीं होता। प्रकाश और उष्णताके सञ्चारणका द्वार ईथर ही है। २ रसतत्त्वानुसार अत्यन्त लघु, वायु-परिणामशील और दाहात्मक द्रव पदार्थ। यह गन्धकके अम्ल साथ सुरासार चरण करनेसे बनता है। सुरासारकी अपेक्षा ईथर अल्पभार होता और अद्भुत भेदक गन्ध तथा प्रखर, शीतल एवं सुगन्धि स्वाद रखता है। यह दश अंश जलमें हल पड़ और वायु लगनेसे उड़ जाता है। अधिक शीतल रहनेसे ईथर बरफ़ जमानेके काम आता है। इसे सूंघनेसे अवसन्नता भी बढ़ती है। ३ वायुके ऊपरका कल्पित पदार्थ। यह अतिसूक्ष्म होता है और चक्षु:से देख नहीं पड़ता। शून्य स्थानमें इसकी स्थिति समझी जाती है। तारागण इसीमें घूमता और हमारे एक अङ्गका अनुभव दूसरेको इसीके सहारे मिलता है। प्रकाशके आने-जानेका द्वार ईथर ही है। निकटस्थ द्रव्यके चलते-फिरते भी इसमें गतिसञ्चार नहीं होता।

ईद (अ० स्त्री०) १ मुसलमानोंके धर्मोत्सवका दिन। यह रमज़ान् महीनेके अन्तमें पड़ती है। ईदसे पहले मुसलमान् तीस दिन रोज़ा रखते यानी दिनको भूखे-प्यासे रह शाम पड़ते ही भोजन करते हैं। वर्षमें चार ईद होती हैं—आख़िरी चहार शम्बा, शाबन, रमज़ान् और बक़रीद। इनमें ईद्-उल्-फ़ितर् और ईद्-उज़्-ज़ुहा या बक़रीद बड़ी है। उक्त अवसर पर विद्वान् और मूर्ख सभी मुसलमान् ईदगाहमें नमाज़ पढ़ने जाते हैं। सिवा इनके अशूर और

शबरात भी एक प्रकारकी ईद है। किन्तु इसमें सिर्फ़ प्रधान साधुवोंके नामपर फ़ातिहा पढ़ा जाता है।

नौरोज़ भी कोई छोटी ईद नहीं होती। सूर्यके मेषराशिपर आनेसे यह उत्सव मनाया जाता है। सब लोग क़रीब काले या किरमिज़ी रङ्गका कपड़ा पहनते हैं। राजा अपने सिंहासनपर बैठते हैं और अमीर-उल्-उमरा, दरबारी तथा नौकर चाकर नज़र गुज़ारते तथा मुबारक बाद देते हैं। 'मुबारक नौरोज़' कहकर सलाम किया जाता है। इस दिन खेल-तमाशा होता है, नज़राना दिया जाता और दरबारमें खानेके लिये नाश्ता मिलता है। लोग आपसमें एक दूसरेसे मुलाक़ात करने भी जाते हैं।

२ उत्सव, जलसा।

ईद-उज़्-ज़ुहा (अ० स्त्री०) बक़रीद, मुसलमानोंका एक उत्सव। यह ज़िलहज महीनेमें होती है।

ईद-उल्-फ़ितर (अ० स्त्री०) उत्सव विशेष, मुसलमानोंका एक जलसा। यह शव्वाल महीनेमें पड़ती है।

ईदगाह (अ० स्त्री०) उन्नतस्थान विशेष, एक चबूतरा। मुसलमान प्रधानतः ईद या दूसरे धर्मोत्सवके दिन इस जगह नमाज़ पढ़नेको इकट्ठा होते हैं।

ईदी (अ० स्त्री०) १ उत्सवोपहार, ईद या किसी जलसेकी भेंट। २ उत्सव-सम्बन्धीय कविता, ईद या किसी जलसेकी शायरी। ३ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पत्र, जिस काग़ज़में ईद या किसी जलसेकी शायरी लिखी जाय। ४ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पारितोषिक, ईदकी शायरी बनानेका इनाम। इसे छात्र अपने मुसलमान गुरुको देते हैं। ५ उत्सवके दिन बालकोंको दिया जानेवाला धन, जो रुपया-पैसा ईदके दिन लड़कोंको खाने और खेलनेको दिया जाता हो।

ईदृक् (सं० त्रि०) इदमिव दृश्यते, इदम्-दृश्-क्विप्, इदं किमोरीश्की। पा ६।३।९०। इति ईश् इत्यादेशः। १ एवम्भूत, ऐसा। (क्ली०) २ एवम्भूत अवसर, ऐसी हालत।

ईदृक्ता (सं० स्त्री०) ईदृशो भावः, ईदृश्-तल्-टाप्। इस प्रकारका भाव, ऐसी हालत।

"विष्णोरिवास्यानवधारणीयमीदृक्तया रूपमियत्तया वा।" (रघु १३।५)

ईदृश, ईदृक् देखो।

ईदृश (सं० त्रि०) इदम्-दृश्-घञ्। १ एवम्भूत, ऐसा। (अव्य०) २ इसप्रकार, इसतरह, ऐसे।

ईप्सन (सं० क्ली०) ईप्सा देखो।

ईप्सा (सं० स्त्री०) आप्-सन्-अङ्-टाप्। वाञ्छा, ख़्वाहिश, चाह।

ईप्सित (सं० त्रि०) आप्तुमिष्टम्, आप्-सन् कर्मणि क्त। वाञ्छित, ख़्वाहिश किया हुआ, जो चाहा गया हो।

ईप्सितफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

ईप्सु (सं० त्रि०) आप्-सन्-उ। १ प्राप्तिकी चेष्टा करनेवाला, जो हासिल करनेकी कोशिशमें लगा हो। २ प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला, जो हासिल करना चाहता हो।

"धर्मेप्सवस्तु धर्मज्ञाः सतां वृत्तिमनुष्ठिताः।" (मनु १०।१२७)

ईप्सुयज्ञ (सं० पु०) सोमयज्ञ विशेष। सोमयाग देखो।

ईफ़ा (अ० पु०) निष्पत्ति, साधन, अञ्जामदिही, नबेड़ा। यह यौगिक शब्दोंमें लगता है।

ईफ़ा-डिगरी (अ० और अं० मिश्रज) डिगरीके रुपयेकी निष्पत्ति, डिगरीका रुपया दे देना।

ईफ़ावादा (अ० पु०) प्रतिज्ञा साधन, इक़रारकी अञ्जामदिही, बातका पूरा करना।

ईबीसीबी (हिं० स्त्री०) सम्भोगजनित शब्द विशेष, सीसीकी आवाज़, सिसकारी।

ईब्नबतूता (इब्नबतूता)—एक अरब पर्यटक। इन्हें मुहम्मद तुग़लक़ने दिल्लीका विचारपति बना दिया था। 'सफ़र इब्नबतूता' नामक ग्रन्थ इन्होंने लिखा है। १३३२ ई०में ये मक्के तीर्थयात्रा करने गये थे। इनके उक्त ग्रन्थमें अरबका विशेष वर्णन नहीं मिलता। मक्काके विषयमें इन्होंने इतना ही कहा है,—"परमेश्वर इसे बड़ा बनाये।"

ईम् (वै० अव्य०) १ अच्छा! हां! ठीक है! २ बस! ठहरो! यह प्रायः छोटे शब्दोंके अन्तमें वाक्य आरम्भ होते समय अथवा सम्बन्धवाचक सर्वनाम, यद् अव्यय, उपसर्ग और आत्, उत् तथा अथ आदि निपातोंके पीछे लगता है।

ईमन (हिं॰ पु॰) एक रागिणी, एमनी। यह श्रीरागकी स्त्री है। (सङ्गीतसार) कोई कोई इसे भूपाल रागकी स्त्री बताते हैं। इसे रात्रिके प्रथम याममें गाते हैं।

ईमनकल्याण (हिं॰ पु॰) ईमन और कल्याणमिश्रित राग।

ईमा (अ॰ पु॰) सङ्केत, इशारा, सैन।

ईमान् (अ॰ पु॰) १ धर्म, दीन्, मानता।

"जाये जान् रहे ईमान्।" (लोकोक्ति)

२ सत्य, सचाई। "जान्की जान् गई ईमान्का ईमान्।" (लोकोक्ति) सच्चे लेनदेनको 'ईमान्का सौदा' कहते हैं।

ईमान्दार (अ॰ वि॰) विश्वासपात्र, सच्चा, जो झूठा न हो।

ईमान्दारी (अ॰ स्त्री॰) सत्य, सचाई।

ईयंमृग (सं॰ पु॰) १ वृक्ष, पेड़। २ मृग, जानवर।

ईयचक्षुस् (वै॰ त्रि॰) चारो ओर देखनेवाला, जो हरजगह आंख फेंकता हो।

ईयिवस् (सं॰ त्रि॰) ई लिटः क्वसु निपातनात् साधुः। गत, गुज़रा हुआ, जो चला गया हो।

ईरण (सं॰ त्रि॰) १ ऊषर, वीरान्, जो कोई चीज़ पैदा करनेके लायक़ न हो। २ शून्य, खाली। ३ क्षोभक, घबरा देनेवाला। (पु॰) ४ वायु, हवा।

ईरान् (फ़ा॰ पु॰) देशविशेष, फ़ारस (Persia)का अंश। यह अक्षा॰ ३७° से ८०° उ॰ और द्राघि॰ ८६° से १०° पू॰के मध्य अवस्थित है। प्राचीन पारसिकोंके 'वन्दीदाद' नामक धर्मपुस्तकमें 'ऐर्यन-वएजो' आर्य जातिके आदिम स्थानका नाम मिलता है। पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे उक्त आदिम स्थान पामीर और बेलूरताघके निकट था। आर्य शब्दमें आर्य जातिके आदि-निवासका विवरण देखो। इसी स्थानको अनेक लोग ईरान् कहा करते हैं। कोई कोई कास्पीय सागरसे दक्षिण-पूर्व ईरान राज्यका होना बताते हैं। प्रिचार्ड साहबने इसी स्थानको आर्यजातिका आदिम वासस्थान माना है। आर्य शब्दमें प्रकृत विवरण देखो। ईरान्राज कै़सरके पुत्रने किसी दिन कहा था,—हमारे पिताके राज्यमें एक ओर लोग जैसे शीतसे, वैसे ही दूसरी ओर ग्रीष्मसे कातर रहते हैं। इससे विदित होता है कि पूर्वकालमें ईरान् एक विस्तृत राज्य था। ईरान्की भूमि यूफ्रेतिस् नदीतीरस्थ सुमेसात्से भारतवर्षकी तक्षशिला पर्यन्त कुल १२८० मील लम्बी और गेद्रोसियासे अक्षस नदी तीर पर्यन्त ८०० मील चौड़ी थी।

पहिले ईरान्में अरमिय और एलाम नामक जातिका अधिकार था। पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें पश्चिम भागकी अरमिय जातिसे अहमरी, सिरीय एवं हिब्रू प्रभृति और पूर्वभागकी अरमिय जातिसे असुरीय, बाबिरुष (बाबिलनीय) तथा कालदीय भाषाओंकी उत्पत्ति हुई है। पारस्य शब्दमें अपर विवरण देखो। प्राचीन ईरानियोंमें विवाहकी भयानक कुप्रथा प्रचलित थी। किसी रक्तकी स्त्री उसी रक्तके पुरुषसे व्याह दी जाती थी। कहते है कि पहिले ईरानी अपरापर सहो-दरा भगिनी और अपनी विमातासे भी विवाह कर लेते थे। विवाह शब्द और Journal Bombay Branch of R. As. Soc., Vol. XVII. p. 97—136 देखो।

ईरामा (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष। (भारत वन)

ईरिका (सं॰ स्त्री॰) ईर्-ण्वुल्-अत-इत्-टाप्। वृक्ष-विशेष, एक दरख़्त।

ईरिण (सं॰ क्ली॰) १ शून्य, खाली जगह। २ ऊषर-क्षेत्र, बञ्जर ज़मीन्। वृक्षलतातृणादि शून्य स्थानको ऊषर कहते हैं।

ईरित (सं॰ त्रि॰) ईर्-क्त। १ क्षिप्त, छोड़ा हुआ। २ प्रेरित, भेजा हुआ। ३ कम्पित, कंपा हुआ। ४ गत, गया गुज़रा। ५ कथित, कहा हुआ। ६ विसर्जित, रखा हुआ। ७ विक्षिप्त, बिगड़ा हुआ। ८ चालित, जो सरकाया गया हो।

ईरिताकूट (सं॰ क्ली॰) प्रकाशित आशय, बताया हुआ मतलब।

ईरिन् (सं॰ पु॰) ईर्-इनि। गमनशील व्यक्ति, चलनेवाला आदमी।

ईर्म (सं॰ पु॰-क्ली॰) ईर् बाहुलकात् मक्। १ व्रण, फोड़ा। २ क्षत, ज़ख़्म। व्रण दो प्रकारका है— शारीरिक और आगन्तुक। रक्तादिके दोषसे शारीरिक और अस्त्राघातादिसे आगन्तुक व्रण उत्पन्न होता है। (वै॰ अव्य॰) ३ इस स्थानमें, इस जगह, यहां।

ईर्मान्त (व० त्रि०) १ परिपूर्ण नितम्ब-युक्त, पूरा पुट्ठा रखनेवाला। २ अस्थूल नितम्बयुक्त, पतले पुट्ठेवाला। ३ जोड़ीके दोनो बहुत बड़े घोड़े रखनेवाला। यह शब्द सूर्यके अश्वोंका विशेषण है।

ईर्य (सं० त्रि०) उत्तेजित किया जानेवाला, जो भड़काया जाता हो।

ईर्यता (सं० स्त्री०) भड़काये जानेवालेकी स्थिति, जिस हालतमें लोग भड़काये जायें।

ईर्या (सं० स्त्री०) ईर्यते गुरोः शास्त्रोपासनया ज्ञायते, ईरि गतौ याचने च खत्-टाप्। १ भिक्षुव्रत, मज़हबी फ़कीरकी तरह घूमनेकी हालत। गुरुके निकट रहकर इसका अभ्यास बढ़ाना पड़ता है। २ शरीरके चार संस्थान, जिस्मकी चार सूरतें।

ईर्यापथ (सं० पु०) १ ध्यान धारणादि सीखनेका उपाय, मज़हबी फ़कीरका दस्तूर।

ईर्यापथ आस्रव—जैनमतमें मन वचन और कायकी सहायतासे आत्मप्रदेशोंका हलन चलन होना योग है। और इसी योग द्वारा आत्मामें कर्मकी पुद्गलवर्गणाओंका सम्बन्ध होता है सो आस्रव है। (वर्गणा देखो) इस आस्रव-के दो भेद हैं। एक सांपरायिक आस्रव, दूसरा ईर्यापथ आस्रव। शरीरधारी आत्माओंमेंसे कोई भी ऐसी आत्मा नहीं है जिसके ज्ञानावरणादि कर्मोंका (आयु-कर्मको छोड़कर) प्रति समय बन्ध न होता हो। इसलिये जो क्रोध मान माया लोभ आदि कषायवाली आत्मायें हैं उनके तो सांपरायिक आस्रव (शुभ अशुभ फल देनेकी शक्तिवाले कर्मोंका आना) होता है और जो क्रोधादि रहित हैं उनके ईर्यापथ आस्रव (फल न देनेकी शक्तिवाले कर्मोंका आना) होता है।

ईर्यापथक्रिया—सांपरायिक आस्रवके ३८ भेदोंमेंसे एक भेद। गमनके लिये जो क्रिया की जाय उसे ईर्यापथ-क्रिया कहते हैं। (जैनशास्त्र)

ईर्यासमिति (सं० स्त्री०) निरीक्षणके साथ गमन, देख-देखकर चलना। जैनमुनियोंको सूर्योदयके पश्चात् लोगोंके आवागमनसे मर्दित मार्ग होनेपर साढ़े तीन हाथ आगे देखकर चलनेका नियम है। इससे पैरके नीचे पड़नेवाले कीड़े मकोड़े देख पड़ते हैं और कुचल जानेसे बचते हैं।

ईर्वारु (सं० पु०-क्लो०) ईरुं बीजमियर्ति, ईरु-ऋ बाहुलकात् उण्। १ कर्कटी, ककड़ी। २ स्फुटी, फूट।

ईर्षणा (हिं०) ईर्षा देखो।

ईर्षा (सं० स्त्री०) ईर्ष्यणम्, ईर्ष्य-वञ्, हसात् यलोपः। १ क्रोध, गुस्सा। २ अन्य स्त्री सहवासजनित पतिके चिह्नादि देखनेसे उत्पन्न पत्नीका अभिमानविशेष, रश्क। ३ परश्रीकातरता, हसद, डाह। जो पुरुष स्वयं सम्भोग कर नहीं सकता और दूसरोंको करते देख जलता है, वह ईर्षाषण्ढ कहलाता है।

ईर्षालु (सं० त्रि०) ईर्षास्त्यस्येति, ईर्ष्य-आलुच्। ईर्ष्यस्पृहि गृहीति। पा ३।२।१५८। परश्रीकातर, हसदी।

ईर्षित (सं० त्रि०) ईर्षास्य संजाता, ईर्षा-इतच्। १ सञ्जातेर्षा, देख न सका गया। (क्लो०) २ ईर्षा, हसद। "पत्युर्वार्थकमीर्षितं प्रसवनं नाशस्य हेतुः स्त्रियाः।"(हितोपदेश)

ईर्षितव्य (सं० त्रि०) ईर्षा किये जाने योग्य, जो हसद किये जाने क़ाबिल हो।

ईर्षी (सं० त्रि०) ईर्षा-ईर्ष्य-क्त-इनि। ईर्षाशील, देख न सकनेवाला।

ईर्षु, ईर्षालु देखो।

ईर्ष्यक (सं० पु०) दृष्टियोनि नामक क्लीव, हिस्सी टट्टू। (त्रि०) २ ईर्षालु, हसदी।

ईर्ष्यमाण, ईर्षालु देखो।

ईर्ष्या, ईर्षा देखो।

ईर्ष्यालु, ईर्षालु देखो।

ईर्ष्यी, ईर्षी देखो।

ईर्ष्यु, ईर्षु देखो।

ईल (सं० पु०) १ वन्यजन्तुविशेष, एक जङ्गली जानवर। २ मत्स्यविशेष, किसी क़िस्मकी मछली, बांग।

ईलि (सं० स्त्री०) ईड्यते स्तूयते, ईड्-कि डस्य च लः। खड्गाकार छुरिका विशेष, तलवार-जैसा चाकू। इसे ईलिका, ईली, करपाली, करपालिका और गुप्तिका भी कहते हैं।

ईलिका, ईलि देखो।

ईलित (सं॰ त्रि॰) ईड्-क्त, डस्य च लः। स्तुत, जो तारीफ़ या चुका हो।

ईलिन (सं॰ पु॰) तंसुके पुत्र और दुष्यन्तके पिताका नाम।

ईली, ईलि देखो।

ईवत् (वै॰ त्रि॰) इसप्रकार सप्रताप, ऐसा शान्दार।

ईश्—१ अदा॰ आत्म॰ अक॰ सेट। यह धातु अधिकार, आज्ञा और शासन अर्थमें आता है। (वै॰ पु॰) २ प्रभु, मालिक।

ईश (सं॰ त्रि॰) ईश्-क। १ अधिकारयुक्त, क़ाबिज़, हिस्सेदार। २ योग्य, क़ाबिल। ३ एकाधिकारी, पूरी मिलकियत रखनेवाला। ४ प्रधान, बड़ा। (पु॰) ५ स्वामी, मालिक। ६ शिव, महादेव। ७ विष्णु। ८ रुद्र। ९ नेता, राह देखानेवाला। १० एकादश संख्या, ग्यारह हिन्दसा। ११ आर्द्रा नक्षत्र। १२ ईशावास्य उपनिषद्। १३ पारद, पारा। १४ अञ्जनरस। १५ पञ्चवक्त्ररस।

ईशता (सं॰ स्त्री॰) ईशत्व देखो।

ईशत्व (सं॰ क्ली॰) ईशस्य भावः, त्व। प्राधान्य, बड़ाई।

ईशन (सं॰ क्ली॰) ईश-ल्युट्। शासन, हुकूमत।

ईशसखि (सं॰ पु॰) ईशस्य सखा, ततष्टच् समासान्तः। शिवके मित्र कुवेर।

ईशलिङ्गिनी, ईशलिङ्गी देखो।

ईशलिङ्गी (सं॰ स्त्री॰) विष्णुक्रान्ता लता, एक बेल।

ईशा (सं॰ स्त्री॰) ईश-अ-टाप्। १ लाङ्गलदण्ड, हलका डण्डा। ईशस्य भार्या, आप्। २ शिवपत्नी, दुर्गा। ३ स्वामीकी स्त्री, मालकन। ४ शक्ति, ताक़त।

ईशादण्ड (सं॰ पु॰) शकट प्रभृतिके चक्रमें लगनेवाला दण्ड, पहियेका डण्डा।

"योजनानां सहस्राणि भास्करस्य रथो नव।
ईशादण्डस्तथैवास्य द्विगुणो मुनिसत्तम॥" (विष्णुपुराण २।८।२)

अर्थात् नव योजन पर्यन्त सूर्यरथ और उससे द्विगुण ईशादण्ड विस्तृत है।

ईशादन्त (सं॰ पु॰) ईशेव दीर्घो दन्तोऽस्य, बहुव्रो॰। १ उदग्रदन्ती, बड़े दांतका हाथी। २ हस्तिदन्त, हाथीदांत।

ईशाध्याय (सं॰ पु॰) ईशोपनिषत्।

ईशान (सं॰ क्ली॰) ईश-चानश्। ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्। पा ३।२।१२९। १ ज्योतिः, रोशनी। (पु॰) २ महादेव। ३ एकादशके मध्य रुद्रविशेष। ४ शिवकी अष्टमूर्तिमें सूर्यमूर्ति। ५ रुद्रसंख्या, ११। ६ आर्द्रा नक्षत्र। ७ साध्य विशेष। ८ विष्णु। ९ व्यक्तिविशेष, किसी शख़्सका नाम। १० प्रभु, मालिक। ११ जैन मतमें माने गये १६ स्वर्गोंमें दूसरा स्वर्ग।

ईशानकृत् (वै॰ त्रि॰) अपने अधिकारको काममें लानेवाला, जो अपनी लियाकत इस्तेमाल करता हो।

ईशानकोण (सं॰ पु॰) ईशानाधिष्ठितः कोणः, शाक॰ तत्। पूर्व तथा उत्तरके मध्यका दिक्कोण। इस कोणके अधिपति शिव हैं।

ईशानज (सं॰ पु॰) ईशाने इन्द्रस्य कल्पे जातः, ईशान-जन-ड। ईशान कल्पभव एक प्रकारके देवता।

ईशानवर्मा—एक प्राचीन मौखरिराज। इनकी महिषीका नाम लक्ष्मीवती था। मगधराज कुमारगुप्तने इन्हें पराजित किया था। मौखरि राजवंश देखो।

ईशानवायु (सं॰ पु॰) पूर्व और उत्तर मध्यवर्ती दिक्कोणसे चलनेवाला वायु। यह कटु होता है। (वैद्यकनि॰)

ईशाना, ईशानी देखो।

ईशानादिपञ्चमूर्ति (सं॰ स्त्री॰) ईशान आदिर्यस्यां तादृशः पञ्चमूर्तयः। महादेवकी पांच मूर्ति अर्थात् ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात।

ईशानाध्युषित (सं॰ पु॰) ईशानेन अध्युषितः। तीर्थविशेष। (भारत ३।८४।८)

ईशानी (सं॰ स्त्री॰) ईशानस्य पत्नी, ङीप्। १ दुर्गा। २ शमीवृक्ष, सेमल।

ईशावस (सं॰ पु॰) कर्पूर विशेष, किसी क़िस्मका काफ़ूर। यह भेदी, वृष्य, मदापह तथा अति शुभ्र होता है और उन्माद, तृषा, श्रम, कास, क्रमि, क्षय, खेद एवं अङ्गदाहको नाश करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

ईशावास्य (सं॰ क्ली॰) ईशा वास्यं पदं वर्तते, अर्श आद्यच्। ईशा उपनिषत्। उपनिषद् देखो।

ईशितव्य (सं॰ त्रि॰) ईश-तव्य। १ अधीन, मातहत, जो हुक्म मान सकता हो।

ईशिता (सं० स्त्री०) ईशिन् भावे तल्। अणिमादि अष्टके मध्य प्रथम ऐश्वर्य, सब पर दबाव रखनेकी ताकत।

ईशिष्ठ (सं० त्रि०) ईष्टे ईश-इष्ठच्। १ राजा, नवाब २ प्रभु, मालिक।

"तदीशितारं चेदीनां भवांस्तमवमंस्त मा।" (माघ)

ईशित्व (सं० क्ली०) ईशिनो भावः। ऐश्वर्य, सबकत, बड़ापन। यह योगका एक धर्म है, जिससे जङ्गमादि जीवजन्तु सकल वशीभूत हो जाते हैं। ईशिता शक्ति आनेसे जगत् वश्य हो सकता है।

ईशिन् (सं० त्रि०) ईश्-णिनि। १ ईश्वर, खुदा। २ पति, खाविन्द। ३ प्रभु, मालिक। "शंसेद् ग्रामदशेशाय दशेशो विंशतीशिने।" (मनु ७।११६)

ईशिर (सं० पु०) अग्नि, आग।

ईशोपनिषत् (सं० क्ली०) उपनिषत् विशेष।

ईश्वर (सं० त्रि०) ईष्टे ईश-वरच्। स्थेशभासेति। पा ३।२।१७५। १ आढ्य, कर सकने लायक। (पु०) २ शिव। ३ ब्रह्म। ४ कामदेव। ५ नियन्ता, हुक्मरान्। ६ प्रभवादिके मध्य एकादश वत्सर। ७ स्वामी, मालिक। ८ ऐश्वर्यशाली, हैसियतवाला। ९ राजा। १० पारद, पारा। ११ मकरध्वज। १२ पित्तल,पीतल। १३ परमेश्वर।

"ईश एवाहमत्यर्थं न च मामीशते परे।
ददामि च सदैश्वर्यं ईश्वरस्तेन कीर्त्यते॥" (स्कन्दपुराण)

अर्थात् मैं ही सकलका अतिशय नियन्ता हूं। मेरा नियन्ता कोई नहीं। मैं सर्वदा ऐश्वर्य देता हूं। इसीसे लोग मुझे ईश्वर कहते हैं।

यदि ऋक्‌संहिता एवं अपरापर वेदमें इन्द्र तथा उनके मातापिताकी कथा मिले, तो वह वैदिक ऋषिगणकी प्रथम अवस्था मानना पड़ेगी। क्योंकि उसके बाद ही अजर, अमर, असीम इत्यादि विशेषण द्वारा विशेषित होनेसे इन्द्रका ईश्वरत्व प्रतिपादित है। कौषातकी ब्राह्मणोपनिषत् (३।२)में इन्द्रकी उक्ति है,—इन्द्रही प्राण और वही प्रत्यज्ञात्मा हैं। उन्हीं प्रत्यज्ञात्माका ध्यान करनेसे अक्षय और अमर स्वर्ग प्राप्त होता है। (तैत्तिरीयसंहिता ३।१।१)

जगत्‌की प्रथम अवस्थामें मानव जिसे अपने चारो ओर देखता, जिसे देख प्रफुल्लित होता, जिसके द्वारा उसका उपकार होता और जिससे डरता, उसे ही भक्तिपूर्वक मानता और पूजता था। कालवश जितना ही ज्ञानोन्मेष होता गया उतना ही वह सोचने-समझने भी लगा,—जिससे मैं डरता हूं, जिसे मैं मानता और पूजता हूं, वह कहांसे उपजता है? उसके पिताका पिता कौन है? उसे किसने बनाया है? जो तरु-गुल्म-लता देख पड़ती है, वह क्या स्वभावसे ही उपजी है? जिस अग्निने द्रव्यको जलाया हैं, उसने दाहिकाशक्तिको कहांसे पाया है? आकाशमें जो चन्द्र सूर्य तारा सकल निकलते हैं, जिनके रूपसे जगत् मुग्ध होता है और जिनसे कितना ही उपकार होता है; उन सबका स्रष्टा कौन है? जिस शक्तिसे चन्द्रसूर्य निकलकर चमकते हैं, उसका आदि कारण कहां है? इसी प्रकार चिन्ता जबसे मानवके मनमें उठी, तबसे उसे एक अज्ञात पुरुष रहनेकी बात सूझने लगी और उस अज्ञात पुरुषको ढूंढ़नेकी इच्छासे दौड़ भी लगाना पड़ी। यही ईश्वरतत्त्वका प्रथम सोपान है। हमारी चिराराध्य वेदसंहितामें उक्त महातत्त्वका आभास मिलता है। प्रथम भारतवासी इन्द्र, अग्नि, मित्र, वरुण, सूर्य, सोम, वनस्पति प्रभृतिकी आराधना करते थे। उसी समयसे ऋषियोंके मनमें ईश्वरचिन्ता चढ़ी और यह भावना बढ़ी,—

"अचिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र कवीन् पृच्छामि विद्मने न विद्वान्।
वि यस्तस्तम्भ षलिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्विदेकम्॥"

(ऋक् १।१६४।६)

हम ज्ञानहीन हैं। कुछ न समझकर हम ज्ञानियोंसे पूछना चाहते है,—जो ये छः लोक हैं, वे क्या एक अज रूपसे रहते हैं? भारतीय ऋषियोंने ठहराया, कि उन्हीं असीम अनन्तमय दीप्यिताने सकल जगत् उपजाया है। इसीसे वे मुक्तकण्ठ हो पुकारने लगे,—

"अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षं अदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वे देवा अदितिः पञ्च जनाः अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥"

(ऋक् १।८९।१०)

अदिति आकाश, अदिति अन्तरीक्ष, अदिति माता

पिता तथा पुत्र, अदिति सकल देव, अदिति पञ्च श्रेणीलोक और अदिति ही जन्म एवं मरणके कारण हैं।

सामसंहितामें ईश्वरतत्त्वका और अधिकतर परिचय मिलता है, ऋषियोंने कहा है,—

२१।२। ३२ २१। २। ३१
"यद्द्याव इन्द्र ते शत शं शत भूमी रुतस्युः।
नत्वा वज्रिन् सहस्र शं सूर्या अनु न जात मष्ट रोदसी॥"

(साम १।३।२।४।६)

हे इन्द्र! आपके परिमाणार्थ यदि समस्त द्युलोक शत संख्यक एवं समस्त पृथिवी भी शत संख्यक हो जाय, तो भी वे आपको छोड़ निकल नहीं सकते। हे वज्रिन्! आपको सहस्र-सहस्र सूर्य भी अनुभव कर नहीं सकते। अधिक क्या—द्यावापृथिवी भी आपको व्याप निकल नहीं सकती।

उसी प्राचीन कालमें ही ऋषियोंने ठहराया, कि वह ईश्वरही मनुष्यको ज्ञान सिखलाता है,—

२३ १२३ १२ ३२ ३२३ १२
"इन्द्र क्रतुन्न आभर पिता पुत्रेभ्यो यथा।
२३ ३ १ २ ३ १ २ २।
"शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योति रशीमहि॥

(साम १।६।२।२।७)

हे इन्द्र! सर्वभूत-प्रकाशक परमात्मन्! पिता पुत्रोंको जैसे विद्या एवं धन प्रदान करता है, वैसे ही आप भी हमलोगोंको आत्मविषयक ज्ञानधन दीजिये। हे पुरुहूत! जिससे हम जीव सकलके पानेयोग्य परब्रह्ममें विलीन हो परंज्योतिःकी सेवा करें।

अथर्वसंहितामें काल ही ईश्वर-स्वरूप निर्दिष्ट हुआ है,—

"कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा॥१
कालो भूमिमसृजत काले तपति सूर्यः।
काले ह विश्वा भूतानि काले चक्षुर्वि पश्यति॥६
काले मनः काले प्राणः काले नामसमाहितम्।
कालेन सर्वा नन्दन्त्यागतेन प्रजा इमाः॥७॥ (अथर्वसंहिता १९।५६ सू०)

इसप्रकार सर्वज्ञ ऋषिगणने वेदके संहिताभागमें ईश्वरके अस्तित्वका आभास मात्र दिया है। किन्तु संहितामें जो बीज फूटा है, वेदके ब्राह्मण और आरण्यक अंशमें वही मानो खिल गया है। संहिता, ब्राह्मण और आरण्यकके प्रथमांशमें कर्मकाण्ड द्वारा ईश्वरकी आराधना निश्चित हुई है। किन्तु वैदिक ऋषियोंने विचारा—केवल कर्मकाण्ड द्वारा ईश्वरकी पूजाकर महाप्रभु प्रीत हो सकते हैं और हम भी यथेष्ट इहसुख मिल सकता है सही, किन्तु उस ईश्वरप्राप्तिके उपाय क्या हैं? किस प्रकार आचरण करनेसे मानव अनन्त सुख पायेगा और ईश्वरमें समाजायेगा? उस समय सकल ही ज्ञानके लिये लालायित हुये थे। ज्ञानकाण्डमें ईश्वरकी पूजा करने, ज्ञानतत्त्वमें ईश्वरको पहचानने और ज्ञानयोगमें परब्रह्मरूपी ईश्वरमें विलीन होनेका पथ लोग ढूंढ़ने लगे। ज्ञानमय ईश्वरके लिये सकल घबड़ा गये थे। इसलिये समय समझकर वैदिक ऋषियोंने ज्ञानकाण्डका प्रचार किया। इससे पहले ही वेदमें बता दिया था—ईश्वर सर्वव्यापी है और इन्द्र तथा सोम प्रभृति देवता उसके नाम मात्र हैं।

"सुपर्णं विप्राः कवयो वचोभिरेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति।"

(ऋक् १०।११४।५

उपनिषत्में यह परमतत्त्व अच्छी तरह बताया गया है। ज्ञानपिपासु समझ सके थे,—

"महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् पुरुषः परः।
पुरुषान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा सा परा गतिः॥"

(कठवल्ली ३।११)

महत्तत्त्वसे पृथिवीका आदिवीज और पृथिवीके आदिवीजसे परमात्मा सूक्ष्म है, किन्तु उस पुरुषकी अपेक्षा कुछ भी सूक्ष्म नहीं है।

"न जायते म्रियते वा विपश्चित् नायं कुतश्चित् न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥"

(कठ २।१८)

उस परम पुरुषका जन्म नहीं, मरण नहीं; वह ज्ञानस्वरूप है। किसी कारणसे उसकी उत्पत्ति नहीं होती। वह आप भी अपना कारण नहीं है। वह अज, नित्य, शाश्वत और पुराण है। शरीर विनष्ट होनेसे वह विनष्ट नहीं होता।

"एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च।
खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी॥"

(मुण्डकोपनिषत् २।१।३)

इसी पुरुषसे प्राण, मन, इन्द्रिय सकल, आकाश, वायु, ज्योतिः, जल और विश्वको धारण करनेवाली पृथिवीने जन्म लिया है।

"अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः।
वायुः प्राणो हृदयं विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्येष स रात्मा॥"
(मुण्डकोपनिषत् २।१।४)

अग्नि मस्तक, चन्द्रसूर्य दोनों चक्षु, दिक् सकल कर्ण, वेद प्रसिद्ध वाक्य, वायु प्राण, ये विश्व हृदय और पृथिवी ईश्वरका पद हैं। और वही सर्वभूतका अन्तरात्मा है।

इसप्रकार ज्ञानतत्त्व द्वारा ईश्वरका स्वरूप निरूपित हुआ कि आत्माही ईश्वर है। परन्तु इस ईश्वरको कौन देख सकता है?

"एष सर्वेषु भूतेषु गूढ़ात्मा न प्रकाशते।
दृश्यते त्वग्रया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः॥" (कठोपनिषत् ३।१२)

आत्मा सर्वव्यापी होकर भी अविद्याकी मायासे ढका रहता है और अज्ञानीके हृदयमें प्रकाशित नहीं होता। सूक्ष्मदर्शीकी सूक्ष्म बुद्धिसे ही उसका दर्शन मिलता है। परमात्मा शब्दमें विशेष विवरण देखो। उस समय ऋषिगणने मानवको सिखाया था,—

"यस्तु विज्ञानवान् भवति समनस्कः सदा शुचिः।
स तु तत् पदमाप्नोति यस्माद्भूयो न जायते॥" (कठ ३।८)

जिसका बुद्धिरूप सारथि निपुण होता है, जो मनोरूप रज्जुको निजवशमें रखता है और जो सर्वदा सत्कर्म करता है, वही परमपद ईश्वरको पाता है। वह पद मिल जानेसे फिर जन्म नहीं होता।

उपनिषत्में यह सकल ही निर्णीत हुआ है,—मानव कैसे ईश्वरको पाता, कैसे ईश्वरमें समाता और कैसे इस संसारका दुःखदारिद्र्य तथा माया-मोह छूट जाता है। इसी समय ज्ञानस्रोतमें बहने और कल्पनाके तरङ्गमें डूबनेसे मानवके मनमें ईश्वर-विषयक नानाप्रकारके भाव उठने लगे। नानाभावके साथ-साथ अनेकोंने भिन्न-भिन्न मत निकाले। कोई वेदकी संहिता तथा ब्राह्मणोक्त कर्मकाण्ड द्वारा और कोई आरण्यक एवं उपनिषद्प्रोक्त ज्ञानकाण्ड द्वारा ईश्वरसे मिलनेको यत्नवान् हुआ। इसी मतविभिन्नतासे क्रमशः ऋषियोंमें नानाप्रकार वादानुवाद बढ़ा। कोई ऋषि श्रौतसूत्र बना वनवासी ऋषियोंको यागादि कर्मकाण्डकी ओर कोई गृह्यसूत्र प्रचारकर गार्हस्थ व्यक्तियोंको कर्मकाण्डकी रीति-नीति सिखाने लगा। इसी समय एक ओर जिस तरह कर्मकाण्डका प्राधान्य बढ़ा, दूसरी ओर उसीतरह ऋषिगण दर्शनसूत्र बना ज्ञानबलसे ईश्वरका सूक्ष्मतम सूक्ष्मतत्त्व ढूंढ़नेमें प्रवृत्त हुये। इस सकल दर्शनसूत्रमें भी मतविभिन्नता देख पड़ती है।

सांख्यसूत्रमें कपिलमुनिने स्थिर किया है,—

"ईश्वरासिद्धेः।" (सांख्यसू० १।९२)

ईश्वरका अस्तित्व प्रमाणित नहीं होता।

"नेश्वराधिष्ठिते फलनिष्पत्तिः कर्मणा तत्सिद्धेः।" (५।२)

ईश्वराधिष्ठित कारणमें कर्मद्वारा कर्मफलरूप परिणामकी निष्पत्ति अप्रमाणित है।

"नात्माविद्या नोभयं जगदुपादानकारणं निःसङ्गत्वात्।" (३।६५)

आत्मा और अविद्या उभय जगत्का कारण नहीं हो सकते, क्योंकि आत्मा निःसङ्ग रहता है।

"पुरुषबहुत्वं व्यवस्थातः।" (६।४५)

पुरुषका बहुत्व प्रतिपादित हुआ है।

"प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धिः।" (५।१०)

ऐसा सिद्धान्त हो नहीं सकता, कि नित्येश्वर विद्यमान है। क्योंकि उसके प्रमाणका अभाव है। फिर भी यदि कोई नित्येश्वरका अस्तित्व मानता है, तो—

"स्वोपकारादधिष्ठानं लोकवत्।" (५।३)

सामान्य लोगोंकी तरह अपने स्वार्थपूरणके लिये उसका अधिष्ठान है। (क्योंकि वह कर्मफल भोग करता है)

"लौकिकेश्वरवदितरथा।" (५।४)

(ऐसी अवस्थामें वह निश्चय ही) लौकिक राजा जैसा समझ पड़ता है। (इसलिये वह जगत्का उपादान कारण हो नहीं सकता)

"मूले मूलाभावादमूलं मूलम्।" (१।६७)

मूल (प्रकृति)का मूल नहीं होता, सुतरां मूल (प्रकृति) मूलशून्य रहता है। (अतएव मूलशून्य प्रकृति ही जगत्का उपादान-कारण हो सकती है)

"प्रकृतिवास्तवे च पुरुषस्याध्यासषिद्धिः।" (२।५)

वस्तुतः प्रकृतिमें पुरुषका अध्यास सिद्ध होता है। क्योंकि वेदने ही निर्देश किया है, कि पुरुषसे जगत् निकला है। (आत्मासे नहीं)

ईश्वरवादीने ब्रह्म और हिरण्यगर्भ शब्दसे जैसे ईश्वरको समझा है, वैसे ही कपिलने भी समुदय जीवका आदिबीज एक पुरुषको माना है।

"ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा।" (३।५७)

इस प्रकार (प्रकृतिलीन) जनेश्वर अवश्य मानना पड़ेगा।

"प्रधानसृष्टिः परार्थं स्वतोऽप्यभोक्तृत्वादुष्ट्रकुङ्कुमवहनवत्।"

(उस) प्रधानकी जगत्सृष्टि दूसरेके लिये है। क्योंकि उष्ट्रके कुङ्कुम वहनकी तरह वह स्वयं भोक्ता नहीं होता।

"प्रकृतिपुरुषयोरन्यत् सर्वमनित्यम्।" (५।१२)

प्रकृति और पुरुषको छोड़ कर सभी अनित्य है। (अतएव प्रकृति और पुरुष ही जगत्का उपादान-कारण ठहरता है)

अवशेषमें महर्षि कपिलने धारणा, ध्यान, आसन, विहित कर्मानुष्ठान और वैराग्यको ही मोक्षका द्वार बतलाया है। सांख्यसूत्र ३।३०—३६ देखो।

योगसूत्रमें पतञ्जलि मुनिने प्रकाशित किया है,—

"क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।" (योगसू० १।२४)

क्लेश, कर्म, विपाक एवं आशय जिसे छू नहीं सकता और जो कालत्रयसे पृथक् तथा आत्मासे स्वतन्त्र रहता है, वही ईश्वर है।

"तत्र निरतिशयं सर्वज्ञत्वबीजम्।" (१।२५)

ईश्वर निरतिशय ज्ञान रखनेसे सर्वज्ञ है।

"सपूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।" (१।२६)

वह पूर्वतनों (आदि सृष्टिकर्तावों)का भी गुरु है। वह किसी काल द्वारा अवच्छिन्न नहीं होता।

"तस्य वाचकः प्रणवः।" (१।२७)

प्रणव उसका बोधक है।

"तज्जपस्तदर्थभावनम्।" (१।२८)

उस प्रणवका जप और उसके अर्थका ध्यान करना ही उपासना है।

"ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च।" (१।२९)

(पूर्वोक्त उपासना द्वारा चित्त निर्मल होनेपर) उसके प्रत्यक्चैतन्यका (अर्थात् शरीरान्तर्गत आत्म-सम्बन्धीय) ज्ञान उपजता है। उस समय दूसरा कोई विघ्न नहीं पड़ता। (निर्विघ्न समाधि लग जाता है)

कणाद ऋषिने ईश्वर अथवा पुरुष नामसे किसीका अस्तित्व नहीं माना है। (इसीसे अनेक उन्हें नास्तिक कहा करते हैं) किन्तु उनके भी गौणरूपसे ईश्वर माननेका प्रमाण मिलता है। कणादके मतमें—

"वृक्षाभिसर्पणमित्यदृष्टकारितम्।" (वैशेषिक ५।२।७)

वृक्षसे रस सञ्चार होनेका कारण अदृष्ट ही है।

"अपसर्पणमुपसर्पणमशितपीतसंयोगाः
कार्यान्तरसंयोगाश्चेत्यदृष्टकारितानि।" (५।२।१७)

अपसर्पण, उपसर्पण और भुक्त एवं पीत वस्तुका संयोग अदृष्टसे ही उत्पन्न होता है।

सिवा इसके अन्यान्य स्थलमें अदृष्टको अनेक वस्तुका कारण कहा है। इससे समझ पड़ता है कि कणाद-कथित अदृष्ट ही (अर्थात् जिसका कार्यकारण प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नहीं होता) ईश्वर है। कणादमतमें अदृष्ट कारण-विशेष द्वारा परमाणु समुदायका संयोग होनेसे यह विश्वब्रह्माण्ड बना है। परमाणु देखो।

महर्षि गौतमके मतसे—

"ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्यदर्शनात्।" (न्यायसूत्र ४।१।१९)

ईश्वर ही कारण ठहरता है, क्योंकि मनुष्य-कृत कर्म सर्वदा सफल नहीं होता। न्याय देखो।

गौतमके मतसे परमेश्वरमें नित्य ज्ञान, इच्छा और यत्नादि कतिपय गुण रहते हैं। वह जगत्का केवल निमित्त कारण है, उपादान कारण नहीं। जैमिनि ऋषिके मतमें वैदिक कर्मानुष्ठान द्वारा पुरुषार्थ मिल सकता है। उन्होंने भी ब्रह्मका अस्तित्व स्वीकार किया है,—

"ब्रह्मापीति चेत्।" (पूर्वमीमांसा १२।१।३६)

महर्षि वादरायणने समग्र उपनिषद्का सार निकाल वेदान्तसूत्रमें अच्छीतरह ईश्वरतत्त्वकी मीमांसा लिखी है। उन्होंने कपिल, कणाद, गौतम प्रभृतिका मत काटकर एक अद्वितीय परब्रह्मका स्वरूप देखा दिया है। उनके मतसे—

"जन्माद्यस्य यतः।" (वेदान्तसू० १।१।२)

जिससे जन्मादि (उत्पत्ति, स्थिति, भङ्ग) होते हैं, वही ब्रह्म है।

"आनन्दमयोऽभ्यासात्।" (१।१।१२)

परमात्म विषयमें आनन्द शब्दका बहु उच्चारण सुनते हैं। (इसी हेतु श्रुति-उक्त आनन्दमय परमात्मासे भिन्न नहीं है)

"नेतरोऽनुपपत्तेः।" (२।१।१६)

क्योंकि आनन्दमयमें जीवत्व नहीं है (परमात्मा और जीव भिन्न है)

"गतिसामान्यात्।" (१।१।१०)

समानरूपसे चेतनमें ही जगत्की कारणता प्रतीत होती है।

"श्रुतत्वाच्च।" (१।१।१२)

श्रुतिके मतमें सर्वज्ञ ईश्वर ही जगत्का कारण है।

"अनुपपत्तेस्तु न शारीरः।" (१।२।३)

ब्रह्ममें जीवका धर्म मिल सकता है, किन्तु जीवमें ब्रह्मका धर्म नहीं रहता।

"परात्तु तच्छ्रुतेः।" (२।३।४२)

क्या कर्तृत्व और क्या भोक्तृत्व समस्त ही परमात्माके अधीन हैं। परमात्मा और वेदान्त देखो।

प्रधानके जगत्कर्तृत्वको छोड़, वेदान्तका अपरापर मत अनेकांशमें सांख्यसे मिल जाता है। किन्तु इतने दिनोंसे कर्म एवं ज्ञानकाण्डपर जो झगड़ा था और दर्शनकारोंमें अपने-अपने विभिन्न मतपर जो विवाद बढ़ा था, श्रीकृष्णने जन्म ले उसको साधारणका सन्देह हटाकर मिटा दिया और सर्वशास्त्र-सङ्गत विशुद्ध ईश्वर-तत्त्व देखा दिया। श्रीकृष्ण-प्रोक्त गीता, वेद उपनिषद् और दर्शनशास्त्रके एकत्र मिलनकी परिचायक है। वास्तवमें भगवद्गीताके तुल्य सार्वजनिक उपदेश-शास्त्र आजतक कहीं देख नहीं पड़ता। गीतामें भगवान्ने सांख्यके 'प्रधान', योगके 'ईश्वर', वैशेषिकके 'परमाणु', न्यायके 'कारण' और मीमांसाके 'ब्रह्म'को ईश्वर मान लिया है। उन्होंने लोगोंको समझाया—वेदोक्त कर्मकाण्ड और उपनिषद्प्रोक्त ज्ञानकाण्ड दोनोंसे ईश्वर वा मोक्ष मिला जुला है। उनके मतमें—

"त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित् करोति सः॥ २०
निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥ २१
यदृच्छा लाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते॥ २२
गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥ २३
ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतं।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना॥" २४ (गीता ४ अध्याय)

'जो कर्मफलकी आसक्ति छोड़ चिरतृप्त और सबके आश्रयसे दूर रहता है, वह सम्यक् प्रवृत्त होते भी कोई कर्म नहीं करता। जो कामना और सकल परिग्रह छोड़कर अपने आत्मा तथा मनको विशुद्ध रखता है, वह केवल शरीर द्वारा कर्मानुष्ठान करते भी पापभोगी नहीं बनता। जो यदृच्छा लाभसे सन्तुष्ट, शीतउष्ण एवं सुखदुःखादि द्वन्द्वसहिष्णु, शत्रु विहीन और सिद्धि तथा असिद्धिको समान माननेवाला है, वह कर्म करते भी किसी बन्धनमें नहीं पड़ता। जो कामना छोड़कर, रागादिसे मुक्त हो ज्ञानको चित्तमें अवस्थान देता है उसके यज्ञार्थ कर्मानुष्ठान करनेसे सकल कर्म विलुप्त हो जाते हैं। स्रुक् स्रुवादि सकल पात्र ब्रह्म, हवनीय घृतादि ब्रह्म, अग्नि ब्रह्म और होम करनेवाला भी ब्रह्म ही है। कर्मस्वरूप ब्रह्म जिसका समाधि लगता, उसीको ब्रह्म मिलता है।'

इस प्रकार भगवान्ने कर्मयोगीको ईश्वरतत्त्वका उपदेश दे पीछे प्रकाश किया है,—

"आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते॥" (गीता ६।३)

जो मुनि ज्ञानयोग पर आरोहण करना चाहता है, कर्म ही उसका सहाय बनता है। अनन्तर योगपर आरोहण करनेवालेको कर्मत्यागका सहारा लेना पड़ता है।

इसी प्रकार कर्म और ज्ञानकाण्डका मिलन हुआ है। गीतामें व्यक्त किया है—एकके अभावमें दूसरा हो नहीं सकता।

श्रीकृष्णके मतमें (उपनिषद्‌प्रोक्त) अज, अव्यय और जगत्‌का मूलकारण हो ब्रह्म है। (गीता ८।२) वह जन्मरहित, अनश्वर-स्वभाव और सकलका ईश्वर होते भी मायामें पड़कर जन्मान्तरीण कर्मानुसार प्रलयकाल-विलीन कर्मादि परवश समस्त भूतोंको बनाता है, किन्तु स्वयं उस सकल सृष्टिके आयत्त नहीं होता। माया उसका अधिष्ठान ले इस चराचर विश्वको उपजाती है। ईश्वरके अधिष्ठान निमित्त ही यह जगत् पुनः पुनः उत्पन्न होता है।

"...............विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥ ८
न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥ ९
मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते च चराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥" १० (गीता ९ अध्याय)

मैं स्वीय प्रकृतिका आश्रय पकड़ अविद्या-परवश प्राणिसमूहको बारंबार सृष्टि करता हूं, किन्तु उस सृष्ट कर्मके आयत्त नहीं रहता। मैं सकल ही कर्मसे अनासक्त हो उदासीनकी भांति सर्वदा अवस्थान रखता हूं। प्रकृति मेरा अधिष्ठान पकड़ इस चराचर जगत्‌को बनाती है। मेरे अधिष्ठानके हेतु ही जगत् नियत रूपसे बदलता (पुनः पुनः उत्पन्न होता) रहता है। वह सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है। (गीता ८।९) वह स्वीय प्रकृतिका आश्रय ले समय-समय पर जन्म-ग्रहण किया करता है।

"अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ॥ ६
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ ७
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥" ८ (गीता ४ अध्याय)

यद्यपि मैं जन्मरहित, अव्ययात्मा एवं सर्वभूतका ईश्वर हूं तो भी नित्य प्रकृतिका आश्रय ले जन्मग्रहण करता हूं। जिस जिस समय धर्मका विप्लव और अधर्मका प्रादुर्भाव होता है, उसी उसी समय मैं आत्माकी सृष्टि किया करता हूं। मैं साधुके परित्राण, असाधुके विनाश और धर्मके संस्थापनके लिये युग-युगमें जन्म लेता हूं।

ईश्वरको जो जिस भावसे पुकारता है, वह उसी भावसे उसे पा जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्री सब कोई उस परमपुरुषका आश्रय ले अत्युत्कृष्ट गति पा सकते हैं। (गीता ९ अध्याय)

इसी प्रकार गीतामें सर्ववादिसम्मत ईश्वरतत्त्व स्थापित हुआ है। गीतामें ईश्वरके अवतारकी कथा लिखी है और पुराणमें उसी महापुरुषकी लीला वर्णित हुई है। सकल पुराणके मतमें ईश्वरने अपनी मायासे सगुण बन ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर संज्ञा पायी है।

मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि प्रकृतिके गुणत्रयका नाम ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर पड़ा है। रजोगुण ब्रह्मा, सत्वगुण विष्णु और तमोगुण रुद्रका स्वरूप है।

"सत्वरजस्तमश्चैव गुणत्रयमुदाहृतम्।
साम्यावस्थितिरेतेषां प्रकृतिः परिकीर्तिता ॥१४
केचित् प्रधानमित्याहुरव्यक्तमपरे जगुः।
एतदेष प्रजासृष्टिं करोति विकरोति च ॥१५
गुणेभ्यो चोभ्यमाणेभ्यस्त्रयो देवा विजज्ञिरे।
एका मूर्तिस्त्रयो भागा ब्रह्माविष्णुमहेश्वराः ॥"१६
(मात्स्य ३ अध्याय)

पुराणमें इन तीनो देवतायोंकी उपासना वर्णित है और यही त्रयीमूर्ति सर्वशक्तिमान् ईश्वरभावसे पूजित है। सिवा इसके महामाया, लक्ष्मी प्रभृति देवियों और दूसरे देवतायोंकी उपासना भी देख पड़ती है। किन्तु सकल ही विशुद्ध सत्वोपाधिविशिष्ट परातीत परब्रह्म माने गये हैं। सकल पुराणमें प्रधानतः ईश्वरकी साकार उपासना निरूपित है। पुराणके मतसे इसी उपासना द्वारा ईश्वर मिल सकता है। ऐसे स्थलपर अनेक लोग आश्चर्यमें आकर पूछ बैठेंगे—जिस देशमें ज्ञान-प्रधान उपनिषद् एवं दर्शन द्वारा ईश्वरकी निराकार उपासना ठहरायी, और ईश्वरको सर्वव्यापी सर्व नियन्ता बता सर्वत्र घोषणा की गयी, उसी ज्ञानप्रधान देशमें जगद्‌व्यापी ईश्वरकी रूपकल्पना कैसे अव-धारित हुयी? जिसे निराकार कहा गया, उसके आकारकी कल्पना करनेका क्या प्रयोजन पड़ा?

पुराणकार व्यासदेवने देखा—जैसा समय है,

उसके अनुसार ईश्वरोपासनाका प्रचार करना भी कर्तव्य है। कर्म एवं ज्ञानमार्ग पर अनेक चलना चाहते हैं सही, किन्तु सहज ही उसे समझ नहीं सकते—कैसे उस परमेश्वरकी कल्पना की जाय। कर्म करते हैं सही और ज्ञानालोचना भी चलाते हैं सही, किन्तु उससे मनको तृप्ति दे नहीं सकते। हम संसारी है और संसारबन्धनमें प्राय: जड़ीभूत रहते हैं, जो कुछ समय मिलता है, उसमें मन इतना नहीं लगता—कि उस निराकार अद्वितीय परमेश्वरका ध्यान बंध सके। संसारमें ऐसा निभृत स्थान ढूंढ़ नहीं पाते, जहां रहकर मनको ठहरावें और चित्तवृत्तिको निरोधमें ला सके। जितने समय कर्मकाण्ड एवं ज्ञानकाण्डकी आलोचना चलाते हैं, उसमें मनको शान्त नहीं पाते और न प्राणमें भक्तिका भाव ही बढ़ाते हैं; केवलमात्र संसारके वैराग्यमें ही पड़ जाते हैं। संसारमें रहकर कैसे उस परमपिताको पहंचान सकेंगे? इसलिये संसारियोंको उपासनाका भेद सिखाने और सहज ही ईश्वरका रूप समझानेके लिये भक्तिप्रधान अष्टादश महापुराण एवं उपपुराण बनाये गये। भगवान्ने भी कहा है,—

> "पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
> तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मन:॥" (गीता ९।२६)

जो भक्ति सहकारसे मुझे पत्र, पुष्प, फल और जल देता है, मैं संयमी व्यक्तिका वही द्रव्य खा पी लेता हूं।

इसीसे पुराणमें पत्र, पुष्प, फल और जलसे सहज उपासना प्रचारित हुई है। पुराणकारके ईश्वरकी असंख्य मूर्ति माननेका यह कारण है—कि जिसे जिस रूपकी भक्ति रहे, वह उसी रूपकी पूजा करे।

हमारे शास्त्रमें ईश्वरके शरीरकी जो कथा है वह समस्त ही रूपक है। वेदान्तसूत्रमें स्पष्ट लिखा है—

> "आनुमानिकमप्येकेषामिति चेन्न शरीररूपकविन्यस्तगृहीतेर्दर्शयति च।"
> (ब्रह्मसूत्र १।४।१)

कुछ स्थिर होकर विचारनेसे स्पष्ट ही समझ पड़ता है कि पुराणोक्त ईश्वरके अवतारकी सकल लीला प्रकृत घटना नहीं—समस्त ही रूपक है। भगवान्के कूर्म अवतारमें समुद्रमन्थनका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानके पाठसे यही उपलब्धि होती है—

'देहिमात्र इन्द्रियरूपी असुरगण-कर्तृक परिपीड़ित है। उसका कर्तव्य इन्द्रियगणको वशीभूत बना विवेकादि देवताके साहाय्यसे कैवल्यरूप अमृत उत्पादन करना है। किन्तु यह कोई साधारण बात नहीं है। इन्द्रियरूपी असुरगणका सहजमें वशीभूत होना कठिन है। इसीसे भगवान्ने प्रथम विवेकादि देवतागणसे उनको मिला दिया था। पीछे इन्द्रियादिके अधिपति मोह अर्थात् देहात्मबोधसे विवेकादिने सन्धि की और श्रुतिसमुद्र मथनेके लिये उभय दलने बुद्धिको मन्थनदण्ड बना आशाको रज्जु हाथमें ली। आत्मा कूटस्थ है। इसीसे कूर्म उपाधि विशिष्ट आत्मा मन्दार नामक देहकूटमें था। मन्थनसे प्रथम ही उपसर्गरूप कालकूट निकला। महादेवरूप तमोलयकारी गुरुदेवने उसे पीकर शिष्यगणका व्याघात हटा दिया। (क्योंकि प्रथम गुरुके अशेष कष्ट उठानेसे शिष्यको ज्ञान आता है) फिर निर्विघ्न वेदाभ्यास होने लगा। क्रम-क्रमसे यज्ञरूप सुरभि, ऐश्वर्यरूप उच्चै:श्रवा घोटक, सांख्ययोगरूप ऐरावत नामक हस्ती, अष्टाङ्गयोग-रूप अष्ट दिग्हस्ती, अष्टसिद्धिरूप अष्टहस्तिनी, जीवोपाधिरूप कौस्तुभमणि, आत्मोपाधिक पद्मराग, चित्तोल्लास-जनक आनन्दमय पारिजात वृक्ष, शान्ति एवं करुणा, श्रद्धादि अप्सरागण, चित्शक्तिरूप लक्ष्मी और मिथ्यादृष्टि अर्थात् अविद्यारूपी वारुणीकी उत्पत्ति हुई। परिशेष कैवल्यामृत हाथमें लिये ज्ञानरूप धन्वन्तरि निकले। इन्द्रियादि असुरगण अमृतरूप कैवल्य पानेके अयोग्य था। इसीसे भगवान्ने विद्यारूप मोहिनीके वेशसे उन्हें मोहित कर विवेकादि देववर्गको वह दे चिरजीवी बनाया। इसी समय तम: (राहु)ने गुप्तभावसे अमृत पिया और रज: एवं सत्वरूपी चन्द्रसूर्यने उसका परिचय दिया। अनन्तर अन्तर्यामी भगवान्ने ज्ञानतत्त्वरूप चक्र द्वारा उसका शिरश्छेदन किया।'

पुराणकारने यह भी सबको बारंबार समझाया—

यथार्थमें ईश्वरका रूप एवं वर्ण इत्यादि कुछ भी नहीं है, कल्पनामात्र है। (मार्कण्डेयपुराण ४ अध्याय)

पुराणके मतसे ईश्वर ही पुरुष है। द्विजातिगण उसीको ब्रह्म बताते हैं और लयकालमें वही सङ्कर्षण नाम पाता है,—

"पुराणे पुरुषः प्रोक्तो ब्रह्म प्रोक्तो द्विजातिषु।
क्षये सङ्कर्षणः प्रोक्तस्तमुपास्यमुपास्महे॥" (गरुड़ २ अध्याय)

पुराणमें गीताका वही मूलतत्व कहा गया है,—

"मय्यावेश्यमनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः॥ २
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यञ्च कूटस्थमचलं ध्रुवम्॥ ३
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः॥ ४
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥ ५
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते॥ ६
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।" (गीता १२ अध्याय)

जो मेरे (ईश्वरके) प्रति अत्यन्त अनुरक्त और निविष्टमना हो श्रद्धापूर्वक उपासना करता है, वही प्रधान योगी है। एवं जो जितेन्द्रिय है सबको समान समझता है और अक्षर, अनिर्दिश्य, अव्यक्त, अचिन्त्य, सर्वव्यापी, ह्रास-वृद्धिहीन, कूटस्थ तथा नित्य परब्रह्मकी उपासना करता है, वह भी मेरे ही पास पहुंचता है। देही अतिकष्टसे अव्यक्त गति पा सकता है। जो अव्यक्त ब्रह्ममें आसक्तमना होता है,वह अधिकतर दुःख उठाता है। जो मेरेपर सकल निर्भर कर एकान्त भक्तिपूर्वक मेरा ही ध्यान धरता है और मेरि ही उपासना करता है, उसे मैं मृत्युके आकर इस संसार-सागरसे छुड़ा देता हूं।

इससे संसारी समझ सकता है, कि भक्तिसहकारसे इष्टदेवको सकल समर्पण कर ध्यान-उपासना करने पर मोक्ष मिलता है।

पहले ही लिख दिया है, कि केवल साधककी सुविधाके लिये पुराणमें ईश्वरका नानारूप मान लिया है। वस्तुतः नाना रूपकल्पना रूपक मात्र है। पुराणमें भगवान्‌के मत्स्य, कूर्म, वराहादि नाना देह धारण-पूर्वक अवतार होनेका जो प्रसङ्ग है, उसके विवरण पाठसे समझ पड़ता है, कि वह सर्वनियन्ता सुर, नर, तिर्यगादि यावतीय जीवके आभासरूपमें अव-स्थान करता है। तन्त्रमें ईश्वर आकर्षणशक्तिके नामसे भी निर्दिष्ट है,—

"कालाकर्षणरूपा च हृद्याकर्षण-रूपिणी।
अहङ्काराकर्षिणी च सर्वाकर्षस्वरूपिणी॥
रसाकार्षणरूपा च गन्धाकर्षणरूपिणी।
चित्ताकर्षणरूपा च धैर्याकर्षणरूपिणी॥
वीजाकर्षणरूपा च तथा चाकर्षिणी पुनः।
अमृताकर्षिणी देवी शरीराकर्षिणी तथा॥" (वाराहीतन्त्र ६ पटल)

तन्त्रमें भी यही घोषणा हुई है,—

"चिन्मयस्याप्रमेयस्य निष्कलस्याशरीरिणः।
साधकानां हितार्थाय ब्रह्मणो रूपकल्पना॥"
(कुलार्णवतन्त्र ५ पटल ६ अध्याय)

चिन्मय, अप्रमेय, निष्कल और अशरीरी ब्रह्मकी रूप-कल्पना केवल साधकके हितार्थ है।

इसीप्रकार साकार उपासना चली है। साकार उपासनाके प्रचारका प्रधान कारण यही है, कि मन अदृश्य वस्तुकी धारणा कर नहीं सकता। विशेषतः निराकार अक्षय अव्यक्त इत्यादि विशेषण-युक्त नाम सुननेसे प्रथम उसकी चिन्ता करना दुःसाध्य हो जाता है। सुतरां ऐसी साकार मूर्ति रहना चाहिये, जिससे सहज ही किसी प्रकार धारणा हो सके। आकार अवलम्बन करनेसे ध्यान और अर्चना उभयका काम निकल जाता है। मन नियत ही परिवर्तनशील है और नियत ही नव नव भाव ग्रहण करनेका प्रयासी है। इसीसे साकार-उपासक संसारी नाना मूर्तिमें ईश्वरकी पूजा करते हैं। आज षोड़शोपचारसे दशभुजाकी और दो दिन पीछे भयङ्करा भीषण महा-कालीकी मूर्ति पूजते हैं। किन्तु साधक समझता है, कि दोनोंमें उसी एक महाशक्तिका पूजन होता है; केवल रूप और उपाधिका भेद रहता है।

आजकल शाक्त, शैव, वैष्णव, गाणपत्य प्रभृति विभिन्न मतावलम्बी देख पड़ते हैं। शाक्त इसप्रकार स्तव करते हैं—

"नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥ ७
अतिसौम्यातिरुद्रायै देव्यै कृत्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः॥ ११
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १२
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥"
(मार्कण्डेयपुराण ८५ अध्याय)

"नमो देवि महामाये सृष्टिसंहारकारिणि।
अनादिनिधने चण्डि भुक्तिमुक्तिप्रदे शिवे॥
न ते रूपं विजानामि सगुणं निर्गुणन्तथा।
चरित्राणि कुतो देवि संख्यातीतानि यानि ते॥"
(देवीभागवत १।९।४०—४१)

शव पुकारते हैं,—

"तं प्रपद्ये महादेवः सर्वज्ञमपराजितम्।
विभूतिः सकलं यस्य चराचरमिदं जगत्॥"
(शिवपुराण—वायुसंहिता १।७)

वैष्णवोंकी स्तुति है,—

"अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने।
सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे॥
नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च।
वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे॥"
(विष्णुपुराण १।२।१४)

यद्यपि भिन्न भिन्न सम्प्रदाय भिन्न रूप और भिन्न नामसे अपने उपास्य देवताको पुकारते हैं तो भी यह अनायास ही समझ पड़ता है, कि वे समस्त मतावलम्बी उसी एक अद्वितीय ईश्वरको लक्ष्यकर अपनी-अपनी स्तुति करते हैं।

तन्त्रमें कहा है,—

"निर्गुणा प्रकृतिः सत्यमहमेव च निर्गुणः।
यदैव सगुणा त्वं हि सगुणोऽहं सदाशिवः॥
सत्यं हि सगुणा देवी सत्यं हि निर्गुणः शिवः।
उपासकानां सिद्ध्यर्थं सगुणा सगुणो मतः॥"
(मुण्डमालातन्त्र ७ पटल)

मेरा (ईश्वरका) और प्रकृतिका निर्गुण होना सत्य है। किन्तु आपके सगुण होनेसे मैं भी सगुण (मूर्तिमान्) बन जाता हूं। देवीके सगुण और शिवके निर्गुण रहनेमें कोई सन्देह नहीं। हां, उपासककी कार्यसिद्धिके निमित्त उभय सगुण हो जाते हैं।

यह साकार उपासना आजकल सकल संसारी ईश्वर-तत्त्वानुसन्धायी प्राथम-कल्पिक मात्रको ग्रहण करना उचित है। श्रीमद्भागवतमें लिखा है,—

"अर्चादावर्चयेत् तावदीश्वरं मां स्वकर्मकृत्।
यावन्नवेद स्वहृदि सर्व्वभूतेष्ववस्थितम्॥" (भागवत ३।२०।२५)

मैं ईश्वर हूं। मुझे प्रतिमादिमें पूजना कर्मी लोगोंका तभीतक कर्तव्य है, जबतक उन्हें निज हृदय एवं सर्वभूतमें मेरा अवस्थान समझ नहीं पड़े।

किन्तु जब देही निज हृदय एवं सर्वभूतमें ईश्वरका अवस्थान पाये और प्रकृत ज्ञानमें समा जाये, तब उसे प्रतिमाका पूजन आवश्यक नहीं है। भगवान्ने समझाया है,—

"अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयम्।
अर्चयेद्दानमानाभ्यां मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा॥" (भागवत ३।२९।२७)

अनन्तर मुझे सर्वभूतमें अवस्थित समझ सकनेपर मनुष्य सर्वत्र सकलको दान, मान तथा मैत्रीसे पूजे और अभिन्न दृष्टिसे देखे। (यही मेरी प्रकृत पूजा है)

हमारे प्राचीन शास्त्रोंमें जिस प्रकार ईश्वरका ग्रहण किया गया है उसे हमने अलग-अलग दिखा दिया। अब चार्वाकादि भिन्न सम्प्रदाय जिस प्रकार ईश्वरका अस्तित्व मानते या नहीं मानते उसे भी नीचे दिखाते हैं।

चार्वाकके मतमें ईश्वर कोई वस्तु नहीं। चैतन्य-विशिष्ट देह ही आत्मा है। उसे छोड़ स्वतन्त्र आत्माका रहना असङ्गत है। लोकसिद्ध राजा परमेश्वर और देहका उच्छेद ही मोक्ष है।

जैनमतमें अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य आदि अनेक गुणोंसे विशिष्ट आत्माको ईश्वर माना है। संसारमें जितने आत्मा हैं, वे सब शक्तिकी अपेक्षा ईश्वर हैं, परन्तु ज्ञानावरण आदि आठ कर्मोंसे उनके गुण आवृत हो रहे हैं, इसलिये वे इस समय अल्पज्ञता, अल्पशक्तिता आदि दूषणोंसे दूषित होनेके कारण ईश्वर नहीं हैं। जिस समय यह जीव अपने तप और ध्यानके प्रभावसे कर्मोंको नष्टकर डालता है, उस समय

सर्वज्ञता आदि गुणोंसे विशिष्ट हो जाता है और उसी समयसे ईश्वर कहलाने लगता है। फलतः जितने आत्माओंने मुक्ति (ज्ञानावरणादि कर्मोंसे शून्यता) प्राप्त कर ली है, वे सब ही ईश्वर हैं। जैनलोग ऐसे ही आत्माओंको पूजते हैं, ऐसोंका ही ध्यान करते हैं और ऐसोंको ही ईश्वर नामसे पुकारते हैं। नैयायिक आदि मतावलम्बियोंके समान जैनशास्त्र ईश्वरको सृष्टिका कर्ता नहीं स्वीकार करता। उसके मतमें यह जगत् अनादि-निधन है। इसको न तो किसीने उत्पन्न किया और न कोई इसका सर्वथा नाश ही कर सकता है। जो कुछ हमको इस समय वर्त्तमान मालूम पड़ता है और थोड़ी देर बाद उसीका जो हम नाश देखते हैं, वह और कुछ नहीं केवल पदार्थका पर्याय मात्र बदलना है, ऐसे पर्याय तो सर्वदा बदला करते हैं, परन्तु ऐसा कोई समय न था और न हो सकता है जिस समय कोई पदार्थ न हो वा न रहा हो। क्योंकि सत्का अभाव और असत्को उत्पत्ति प्रमाण-बाधित है।

समन्तभद्रस्वामीने अपने 'रत्नकरण्डश्रावकाचार'में ईश्वरका जो लक्षण बतलाया है, वह यह है—

"आप्ते नोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञे नागमेशिना।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥ ५
क्षुत्पिपासाजरातङ्कजन्मान्तकभयस्मयाः।
न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते॥" ६
परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृतिः।
सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७

अर्थात् जिसके भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह और 'च'से रति अरति, खेद, स्वेद, निद्रा, चिन्ता, आश्चर्य ये अठारह दोष न हों जो सर्वज्ञ हो, समस्त प्राणियोंका हितैषी हो, कर्ममल रहित हो, कृतकृत्य हो, और जो परम पदमें रहनेवाला हो वही आप्त है।

बहुतसे लोगोंका ख्याल है, कि जैनी ईश्वर नहीं मानते वा चौबीस तीर्थंकरोंको ही ईश्वर मानते हैं। परन्तु यह बात ठीक नहीं। जैनशास्त्रमें उपर्युक्त गुणवाला ईश्वर माना गया है। चौबीस तीर्थङ्करोंको जो विशेष रीतिसे जैनी पूजते हैं, उसका कारण यह है कि सामान्य मुक्तात्माओंकी अपेक्षा उन्होंने समय समयपर सदुपदेश द्वारा आत्माके कल्याणका विशेष रीतिसे मार्ग बतलाया है। उन्हींके आविर्भूत मार्गपर चलकर जीवोंने मुक्ति पाई है और सामान्योंने बहुत थोड़ा उपदेश दिया है। तीर्थङ्कर और जैनधर्म शब्द देखो।

बौद्धोंमें प्रधानतः हीनयान और महायान दो सम्प्रदाय हैं। हीनयान गौतमबुद्धका प्रचारित धर्ममत मानते हैं। उनके मतसे देह क्षणभङ्गुर है, ध्यान, धारणा एवं योग द्वारा ज्ञान मिलता है; और उसके पीछे निर्वाण होता है। वे ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। महायान शून्यवाद मानते हैं। उनके शास्त्रमें ईश्वरको बात बिलकुल नहीं लिखी। परवर्तीकालमें उन्होंने हमारे तन्त्रोक्त देवताओंको स्वीकार किया सही, किन्तु एक अद्वितीय ईश्वरको माननेसे मुंह मोड़ लिया। वे आत्माको भोगी, विनाशी और क्षणस्थायी बताते हैं। शून्यता ही नित्य, अक्षय और अव्यय है। शरीरस्थ इन्द्रियगण अवधि अभावविशिष्ट रहता है अर्थात् आत्मदर्शन करनेकी क्षमता नहीं रखता। अतएव अभाव-स्वभाव समक्ष भवार्णव अतिक्रम करना मुमुक्षुका धर्म है। जगत्की उत्पत्तिसे पूर्व केवल शून्य था, इसीसे शून्यके आश्रयका प्रयोजन पड़ा। शून्य व्यतीत सकल पदार्थ मिथ्या हैं। शून्यमें मन लगा समाधिस्थ होनेसे क्रमशः देही निर्वाणपद पाता है। समाधिराज, माध्यमिकसूत्रवृत्ति और अभिधर्मकोष-व्याख्या नामक बौद्धग्रन्थमें यह बात अच्छीतरह लिखी है। बौद्धधर्म देखो।

उक्त जैनों और बौद्धोंको छोड़कर पहले दूसरे भी अनेक सम्प्रदाय थे; जिनमें कोई ईश्वरको मानते, कोई ईश्वरको जड़रूप जानते और कोई ईश्वरको बिलकुल पहचानते न थे। आनन्दगिरि-कृत शङ्कर-दिग्विजयमें उनका विवरण विद्यमान है।

बौद्धों और जैनोंका प्राधान्य बढ़ने पर भारतवर्षसे सनातन ब्राह्मण धर्मके लोप होनेका उपक्रम उठा था। उसी समय भगवान् शङ्कराचार्यने जन्म ग्रहणकर

विधर्मियोंके कराल कवलसे सनातन धर्मको निकाल अद्वैतवाद प्रचार किया। उनके मतसे—

"न तावदयमेकान्तेनाविषयः। अस्मत् प्रत्ययविषयत्वात् अपरोक्षत्वाच्च प्रत्ययात्मप्रसिद्धेः। न चायमस्ति नियमः पुरोऽवस्थित एव विषये विषयान्तर-मध्यसितव्यमिति। अप्रत्यक्षेऽपि ह्याकाशे बालास्तलमलिनताद्यध्यस्यन्ति। एवमविरुद्धः प्रत्यगात्मन्यप्यनात्माध्यासः।" (शारीरिकभाष्य १।१)

यह कथन ठीक नहीं कि आत्मा बिलकुल अविषय है और उसमें किसी प्रकार विषय लगना सम्भव नहीं। इस जीवावस्थामें अस्मद् प्रत्ययको विषयता होती है और अन्तरात्म-रूपसे प्रतीत पड़नेपर अपरोक्षता भी रहती है। आत्मा 'अहं' (मैं) ज्ञानका विषय होनेसे बिलकुल अविषय और अपरोक्ष कहा जा नहीं सकता। अविद्या-कल्पित 'अहं' जबतक रहेगा, तबतक उसे अहं वृत्तिका विषय कौन न कहेगा! आत्मा अप्रत्यक्ष नहीं, पूर्ण प्रत्यक्ष है। क्योंकि जीवमात्र आत्मा अर्थात् अपनेको अहं (मैं) रूपसे देखा करता है। बालक अप्रत्यक्ष आकाशमें मलिनताका दोष लगा देते हैं। अतएव साक्षात् प्रत्यक्ष और इन्द्रियग्राह्य न होते भी आत्माके समझनेमें कोई बाधा नहीं पड़ती।

"यतोत्पत्तिर्ब्रह्मणः कारणात् तत्रैव स्थितिः प्रलयस्य ते गृह्यते। न यथोक्तविशेषणस्य जगतो यथोक्तविशेषणमीश्वरं मुक्त्वान्यतः प्रधानाद-चेतनादणुभ्योवाऽभावाद्वा संसारिणा वा उत्पत्त्यादि सम्भावयितुं शक्यम्।" (शारीरकभाष्य १।१।२)

ब्रह्मसे जगत् उपजता, ब्रह्ममें ठहरता और ब्रह्ममें ही समा जाता है। बस! ईश्वर व्यतीत शून्य, अभाव, जड़प्रकृति, परमाणु किंवा जन्म-मृत्युके अधीन किसी संसारी जीवसे इस प्रकार सृष्टि, स्थिति और लय होना विज्ञ मतमें सम्भावित नहीं होता।

शङ्कराचार्यने भिन्न भिन्न मतको काट इसप्रकार विशुद्ध वेदान्त मत प्रचार किया था,—

"अयं यत् सृजते विश्वं तदन्यथायतुं पुमान्।
न कोपि शक्तस्तेनायं सर्वेश्वर इति स्मृतः।१०७
अशेषप्राणिबुद्धीनां वासनास्तत्र संस्थिताः।
ताभिः क्रोड़ीकृतं सर्वं तेन सर्वज्ञ ईरितः।१०८
विज्ञानमयमुख्येषु कोषेष्वन्यत्र चैव हि।
अन्तस्तिष्ठन् यमयति तेनान्तर्यामितां व्रजेत्।
बुद्धौ तिष्ठन्नान्तरोऽस्याधियानीक्षश्च धीवपुः।
नियमन्तर्यमयतीत्येवं वेदेन घोषितम्॥" १०९

(पञ्चदशी ६ परिच्छेद)

ईश्वरने जो कुछ बनाया, उसे कोई बिगाड़ नहीं सकता; इसीसे वह सर्वेश्वर कहलाता है। कारण, समस्त प्राणीको बुद्धि वासना उसी ईश्वरमें रहती है। बुद्धिवासनासे ही यह ब्रह्माण्ड व्याप्त है। बुद्धि-वासना पराधीन होनेसे ईश्वरको सर्वज्ञ कहते हैं। अन्तर्यामी होनेका कारण यह है, कि विज्ञानमय प्रभृति कोष और अन्यान्य वस्तुसमूहमें रह ईश्वर उसको यथानियम नियुक्त करता है। जो बुद्धिमें रहते भी बुद्धिसे दूर पड़ता है और धीमय होते भी धीका विषय नहीं बनता, वही ईश्वर बुद्धिसे अन्तरस्थ रहते भी बुद्धिको नियुक्त कर देता है।

"नार्थः पुरुषकारेणेत्येवं मा शङ्क्यतां यतः।
ईशः पुरुषकारस्य रूपेणापि विवर्तते॥" ११९

इसप्रकार आशङ्का न कीजिये, कि कुछ भी पुरुषका कृतिसाध्य होना असम्भव है। क्योंकि ईश्वर ही पुरुषरूपमें परिणत होता है।

"रात्रिघस्रौ सुप्तिबोधावुन्मीलननिमीलने।
तूष्णीम्भावमनोराज्ये इव सृष्टिलयाविमौ॥" १२३

जैसे दिवा एवं रात्रि, जाग्रत एवं सुषुप्ति; चक्षुःके उन्मीलन एवं निमीलन और तूष्णीभाव एवं मनोराज्य प्रभृतिमें ज्ञानका, वैसे ही ईश्वरमें जगत्का तिरोभाव तथा आविर्भाव स्पष्ट समझ पड़ता है और प्रलय तथा उत्पत्ति कहा जाता है।

"मायी सृजति विश्वं सन्निरुद्धस्तत्र मायया।
अन्य इत्यपरा ब्रूते श्रुतिस्तेनेश्वरः सृजेत्॥
आनन्दमय ईशोऽयं बहुस्यामित्यवैक्षत।
हिरण्यगर्भरूपोऽभूत् सुप्तिःस्वप्नो यथा भवेत्॥" १३०

मायावी ईश्वर अपनी मायामें बद्ध हो इस समस्त विश्वको सृष्टि करता है। श्रुतिमें ही उसे परब्रह्मसे भिन्न कहा है। सुषुप्तिके अवस्थाभेदसे स्वप्नरूपमें परिणत होनेकी भांति ईश्वरने बहु शरीरमें प्रविष्ट होनेके सङ्कल्प द्वारा हिरण्यगर्भरूप पाया है।

ईश, हिरण्यगर्भ, विराट्, प्रजापति, विष्णु, रुद्र,

इन्द्र, अग्नि, विघ्नभैरव, मेराल, मारिक, यक्ष, राक्षस, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, गो, अश्व, मृग, पक्षी, अश्वत्थ, वट, आम्र, यव, धान्य, तृण, जल, प्रस्तर, मृत्तिका, काष्ठ, एवं कुद्दाल प्रभृति सकल ही उसके अवयव हैं और पूजा पानेसे शुभफल देते है।

"अद्वितीयब्रह्मतत्त्वे स्वप्नोऽयमखिलं जगत्।
ईशजीवादिरूपेण चेतनाचेतनात्मकम्॥
आनन्दमयविज्ञानमयावीश्वरजीवकौ।
मायया कल्पितावेतौ ताभ्यां सर्वं प्रकल्पितम्॥" १३६

ईश्वर, जीव एवं देह प्रभृति चेतन और अचेतनात्मक जगत्समुदाय अद्वितीय ब्रह्मतत्त्वमें माया-कल्पित स्वप्नस्वरूप है। क्योंकि आनन्दमय ईश्वर और विज्ञानमय जीव दोनो माया द्वारा कल्पित हैं। इन्हीं दोनोसे समुदाय विश्व बना है।

"ईक्षणादिप्रवेशान्ता सृष्टिरीशेन कल्पिता।
जाग्रदादि विमोक्षान्तः संसारो जीवकल्पितः॥" १३७ (पञ्चदशी)

सृष्टिविषयक सङ्कल्पसे सर्ववस्तुमें प्रवेश पर्यन्त ईश्वर और जाग्रत अवस्थादिसे मोक्ष पर्यन्त व्यापार समुदाय जीवकल्पित है। ब्रह्म और शङ्कराचार्य देखो।

कुछ पीछे पूज्यपाद रामानुजने प्रचार किया,—ईश्वर सकलका अन्तर्यामी है। जगत्सृष्टिके प्रारम्भमें चित् तथा अचित् सूक्ष्मभावसे उसके अङ्गरूपमें रहता है, किन्तु चित्, अचित् और ईश्वर तीनोंमें परस्पर भेद है। स्थूल रूपमें परिणत होनेसे चित् और अचित्का अन्तर्यामी ईश्वर होता है। जीवसमूह और जड़जगत्के नाना उपकरणमें ईश्वर सर्वदा वर्तमान रहता है।

चैतन्यदेवको रामानन्दने इसप्रकार ईश्वरतत्त्व समझाया था,—

"ईश्वरः परमकृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणः॥" (ब्रह्मसंहिता)

अर्थात् सच्चिदानन्द-मूर्ति, सर्वकारणका कारण, अनादि और आदि गोविन्द ही परमकृष्ण ईश्वर है।

अनन्तर रामानन्दने विष्णुपुराणका वचन उद्धृतकर जो ईश्वर-तत्त्व समझाया, 'चैतन्यचरितामृत' ग्रन्थमें वही विस्तृत भावसे बताया है। हम नीचे उसीका सार संक्षेपमें लिखते हैं,—

'कृष्णका स्वरूप सत्, चित् और आनन्दमय है। अतएव स्वरूप-शक्ति तीनप्रकार होती है। आनन्दांशमें आल्हादिनी, सदंशमें सन्धिनी और चिदंशमें सम्वित् शक्ति रहती है। कृष्णको आल्हाद देनेसे आल्हादिनी नाम पड़ा है। सुखरूप कृष्ण सुखास्वादन करता है। भक्तको सुख देनेका कारण आल्हादिनी ही है। आल्हादिनी जिसका अंश है, उसकी संज्ञा प्रेम है। प्रेम आनन्द और चिन्मय रूप-रसका आख्यान है। प्रेमका परम सार और भाव महाभावरूप श्रीराधा रानीको समझना चाहिये।' गौड़ीय वैष्णवसमाजके ईश्वरतत्त्वका सार यही है।

रामानुजके बाद भारतमें नाना सम्प्रदायों द्वारा वैष्णवधर्म प्रवर्तित हुआ था। मध्वाचार्यसे वल्लभाचार्य पर्यन्त विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तकोंने ज्ञान और कर्मकाण्डका प्राधान्य न मान भक्तिकाण्डको ही ईश्वर वा भगवत् प्राप्तिका प्रशस्त मार्ग बताया। अवशेषमें महाप्रभु चैतन्यदेवने विशुद्ध प्रेम ही ईश्वर वा कृष्ण-प्राप्तिका मुख्य कारण प्रदर्शित किया था। सपार्षद चैतन्यदेव गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तक हैं। उन्होंके प्रभावसे परवर्तिकाल व्रजमण्डलमें नाना वैष्णव सम्प्रदायका प्रकाश हुआ। उसमें कोई श्रीकृष्ण, कोई राधा और कोई राधाकृष्णकी युगल मूर्तिको ईश्वर भावसे पूजते हैं। वैष्णवसम्प्रदाय शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

वङ्गालके परमसाधक रामप्रसादके कथनानुसार शक्ति ही मूलाधार है। उसीके करनेसे सब कुछ होता है। उसके रूपकी कल्पना हम कर नहीं सकते। मन ही उसे पूजता और देखता है। प्रकृति-पुरुषसे विश्व बनता है।

महात्मा राममोहनरायके मतसे ब्रह्मका काली-कृष्णादि रूपधारण केवल मायाका कार्य है। इसीसे भक्त केवल रूप नामसे बद्ध नहीं रहता। जन्मस्थिति भङ्गका कारण समझ तटस्थ लक्षणसे भी ईश्वरको उपासना हो सकती है। वाद्योद्यम, शङ्खघण्टाध्वनि और वेदमन्त्रयुक्त देवोत्सवमें भी आविर्भाव दर्शन-

पूर्वक साधक उसकी पूजा करता है। जिसका मन भगवद्भक्ति और ब्रह्मज्ञानसे परिपूर्ण रहता है, वह ही सकल प्रकार उसे पूज सकता है। वस्तुतः प्रतिमादि अर्चना और व्रतहोमादि कर्म साधकके पक्षमें ईश्वरभक्तिके उद्दीपक होते हैं। परमेश्वर सर्वजीव और सर्वत्र विच्छिन्न व्यष्टि प्रकृतिमें विराजमान है। सर्वत्र दर्शनपूर्वक भगवान्‌के पवित्र आविर्भावको ब्रह्मज्ञ साधु हृदयमें स्पर्श करता है। ईश्वरकी शक्ति बहुत ही विचित्र है। वह भक्तके मङ्गलार्थ अवश्य युग युगमें अवतीर्ण हो सकता है। प्रकृति और जीवमें अवतीर्ण होनेकी भांति ईश्वर स्वेच्छारचित शरीरमें भी अवतार लेता है। इसीलिये शास्त्रमें रामकृष्णादि अवतारों कथा है।

स्वामी दयानन्द सरस्वतीने अपने मतका इस प्रकार प्रचार किया है,—

"यज्ञो वै विष्णुः। (शतपथब्रा० १का० १ अ० १) इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्। (ऋक् १।२२।१७) इति सर्वजगत्कर्तृत्वं विष्णौ परमेश्वर एव घटते नान्यत्र विवेष्टि व्याप्नोति चराचरं जगत् स विष्णुः परमेश्वरः ॥१॥ 'यस्मादृचो'० (अथर्व० १०।७।२०) यस्मात् सर्वशक्तिमतः ऋचः ऋग्वेदः अपातक्षन् उत्पन्नोस्ति यस्मात् परब्रह्मणः यजुर्वेदः अपाकषन् प्रादुर्भूतोस्ति। तथैव यस्मात् सामानि सामवेदः आङ्गिरसः अथर्ववेदश्चोत्पन्नौ स्तः। एवमेव यस्येश्वरस्याङ्गिरसोऽथर्ववेदमुखं मुखवत् मुख्योस्ति। सामानि लोमानीव सन्ति। यजुर्यस्य हृदयमृचः प्राणश्चेति रूपकालङ्कारः। यस्माच्चत्वारो वेदा उत्पन्नाः स कतमः स्विद्देवोस्तितं त्वं ब्रूहीति प्रश्नः। अस्योत्तरं तं स्कंभं सर्वजगद्धारकं परमेश्वरं त्वं जानीहीति तस्मात् स्कंभात् सर्वाधारात् परमेश्वरात् पृथक् कश्चिदप्यन्यो देवो वेदकर्ता नैवास्तीति मन्तव्यम् ॥२"

अर्थात् शतपथब्राह्मण और वेदमन्त्रके प्रमाणसे सिद्ध होता है, कि यज्ञ शब्दसे विष्णु एवं विष्णु शब्दसे सर्वव्यापक परमेश्वर ही लिया जाता है, कारण जगत्‌को उपजाना एक परमेश्वरसे भिन्न अन्य व्यक्ति द्वारा हो नहीं सकता। जिस सर्वशक्तिमान् परमेश्वरसे ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ये वेदचतुष्टय उपजे हैं; उसका अथर्व मुख, साम लोम, यजुः हृदय और ऋग्वेद प्राणस्वरूप है। इस मन्त्रमें रूपकालङ्कार द्वारा ईश्वरने वेदोत्पत्ति दिखायी है। (पुनः वेदशास्त्रमें ईश्वरने प्रश्नोत्तरके बहाने बतलाया है) जिससे चारो वेद निकले, वह कौनसा देव है? उसको आप बतला दीजिये। इस प्रश्नके उत्तरमें भगवान्‌ने कहा—समग्र जगत्‌का धारणकर्ता परमेश्वर ही स्कम्भ है और वही वेद सकलका कर्ता समझा जाता है। उस सर्वाधार परमेश्वरसे भिन्न न तो कोई वेदकर्ता है और न मनुष्यकी उपासनाके योग्य इष्टदेव ही है। इसलिये जो मनुष्य वेदकर्ता परमात्माको छोड़ दूसरेको पूजता हैं, वह हतभाग्य गिना जाता है।

"ईश्वरस्य सकाशाद्वेदानामुत्पत्तौ सत्यां स्वतो नित्यत्वमेव भवति तस्य सर्वसामर्थ्यस्य नित्यत्वात्।"

परमेश्वरका यावतीय सामर्थ्य नित्य है और उसी परमेश्वरसे उत्पन्न होनेके कारण वेद भी स्वतः नित्य स्वरूप है।

"अन्यच्च। तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् ॥१ (ऋग्वेद १।२२।२०) अस्यायमर्थः। यत् विष्णोः व्यापकस्य परमेश्वरस्य परमं प्रकृष्टानन्दस्वरूपं पदं पदनीयं सर्वोत्तमोपायैर्मनुष्यैः प्रापणीयं मोक्षाख्यमस्ति तत् सूरयः विद्वांसः सदा सर्वेषु कालेषु पश्यन्ति कीदृशं तत् आततम् आसमन्तात्ततं विस्तृतं यद्देशकालवस्तुपरिच्छेदरहितमस्ति। अतः सर्वैः सर्वत्र तदुपलभ्यते तस्य ब्रह्मस्वरूपस्य विभुत्वात्। कस्यां किमिव दिवीव चक्षुराततम् दिवि मार्तण्डप्रकाशे नेत्रदृष्टेर्व्याप्तिर्यथा भवति। तथैव तत्पदं ब्रह्मापि वर्तते मोक्षस्य च सर्वस्मादधिकोत्कृष्टत्वात्। तदेव द्रष्टुं प्राप्तुमिच्छन्ति। अतो वेदा विशेषेण तस्यैव प्रतिपादनं कुर्वन्ति एतद्विषयकं वेदान्तसूत्रं व्यासोप्याह। तत्तु समन्वयात्। (१।१।४) अस्यायमर्थः। तदेव ब्रह्म सर्वत्र वेदवाक्येषु समन्वितं प्रतिपादितमस्ति। क्वचित् साक्षात् क्वचित्परम्परया च। अतः परमार्थो वेदानां ब्रह्मैवास्ति। तथा यजुर्वेदे प्रमाणम्। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति य आविवेश भुवनानि विश्वा। प्रजापतिः प्रजया संरराणस्त्रीणि ज्योतींषि सचते स षोडशी। (शुक्लयजुः ८।३६) एतस्यार्थः—यस्मात् नैव परब्रह्मणः सकाशात् परः उत्तमः पदार्थः जातः प्रादुर्भूतः प्रकटः अन्यः भिन्नः कश्चिदप्यस्ति प्रजापतिः प्रजापतिरिति ब्रह्मणो नामास्ति प्रजापालकत्वात् य आविवेश यः परमेश्वरः विश्वा विश्वानि सर्वाणि भुवनानि सर्वलोकान् आविवेश व्याप्तवानस्ति संरराणः सर्वप्राणिभ्योऽत्यन्तं सुखं दत्तवान् सन् त्रीणि ज्योतींषि त्रीण्यग्निसुर्यविद्युदाख्यानि सर्वजगत्प्रकाशकानि प्रजया ज्योतिषोऽन्यया सृष्ट्या सह तानि सचते समवेतानि करोति कृतवानस्ति स अतः स एवेश्वरः षोड़शी येन षोड़शकला जगति रचितास्ता विद्यन्ते यस्मिन् यस्य वा तस्मात् स षोड़शीत्युच्यते। अतोऽयमेव परमोर्थो वेदितव्यः। ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानम्। इदं माण्डुक्योपनिषद्वचनमस्ति। अस्यायमर्थः। ओमित्येतद्यस्य नामास्ति तदक्षरम्। यन्न क्षीयते कदाचिद्यच्चराचरं जगदश्नुते व्याप्नोति तद्ब्रह्मैवास्तीति विज्ञेयम्। अस्यैव सर्ववेदादिभिः शास्त्रैः सकलेन जगता-

वोपगतं व्याख्यानं मुख्यतया क्रियतेऽतोयं प्रधानविषयोस्तीत्यवधार्य्यम्। किं च नैव प्रधानस्याग्रेऽप्रधानस्य ग्रहणं भवितुमर्हति। प्रधानाप्रधानयोः प्रधाने कार्यसम्प्रत्यय इति व्याकरणमहाभाष्यवचनप्रामाण्यात्। एवमेव सर्वेषां वेदानामीश्वरे मुख्यार्थे मुख्यतात् पर्दमस्ति। तत्प्राप्तिप्रयोजनाएव सर्व-उपदेशाः सन्ति। अतस्तदुपदेशपुरःसरेणैव त्रयाणां कर्मोपासनाज्ञान-काण्डानां पारमार्थिकव्यवहारिकफलसिद्धये यथायोग्योपकाराय चानुष्ठानं सर्वैर्मनुष्यैर्यथावत्कर्तव्यमिति।" (ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका)

पुनः इस विषयमें ऋग्वेदका प्रमाण है—विष्णु अर्थात् व्यापक परमेश्वरका जो अत्यन्त आनन्दस्वरूप प्राप्तिके योग्य होता और मुक्ति कहाता है, वह विद्वान्को सर्वदा वा सकल काल देखाता है। (अर्थात् योगी पुरुष सदा उस परमात्माके आनन्दस्वरूपको ज्ञाननेत्रसे देखते या केवल हृदयमें रखते हैं) वही समस्त पदार्थमें व्याप्त है। उसमें देश, काल और वस्तुका भेद नहीं पड़ता अर्थात् ऐसा नहीं—वह अमुक स्थानमें रहता है, इस स्थानमें नहीं; अमुक समय था, इस समय नहीं अथवा अमुक वस्तुमें है, इस वस्तुमें नहीं। सर्व पदार्थमें विराजनेसे वह ब्रह्म सर्व समय सर्वत्र परिपूर्ण रूपसे अधिष्ठित रहता है। सूर्यके प्रकाशसे आवरणरहित आकाश और नेत्र भर जानेकी भांति, परब्रह्मका अवस्थान स्वयंप्रकाश और व्याप्तवान् है। इस परब्रह्मके परमपदकी प्राप्तिसे श्रेष्ठ दूसरी प्राप्ति ब्रह्माण्डमें नहीं, इसीसे चारो वेदमें वह पद-प्राप्ति विशेष प्रतिपादित है। इस विषयमें व्यासदेव-लिखित वेदान्तशास्त्रका प्रमाण भी मिलता है,—'समस्त वेदवाक्यमें उसी ब्रह्मका ही विशेष प्रति-पादन विद्यमान है।' यही ब्रह्म वेदके किसी स्थानमें साक्षात् और किसी स्थानमें परम्पराभावसे प्रतिपादित है। इसीसे परब्रह्म वेदका परम अर्थ वा परम प्रतिपादक पदार्थ बना है। यजुर्वेदमें भी इसका ऐसा ही प्रमाण है—उस परब्रह्मकी अपेक्षा श्रेष्ठ वा उत्कृष्ट द्वितीय पदार्थ अन्य कोई नहीं, वह सर्वत्र समस्त विश्वमें व्याप्त है, समस्त जगत्का पालनकर्ता तथा अध्यक्ष है और अग्नि सूर्य एवं विद्युत् तीन ज्योतिर्मयको अन्यान्य सृष्ट पदार्थसे मिल-नेके कारण षोड़शी अर्थात् षोड़शकला कहाता है। यथा—१ ईक्षण वा यथार्थ विचार, २ समस्त विश्वको धारण करनेवाले प्राण, ३ श्रद्धा वा सत्य विषयके विश्वास, ४ आकाश, ५ वायु, ६ अग्नि, ७ जल, ८ पृथिवी, ९ वाह्येन्द्रिय, १० मन अर्थात् ज्ञान, ११ अन्न, १२ वीर्य अर्थात् बल एवं पराक्रम, १३ तप अर्थात् धर्मानुष्ठान-रूप सदाचार, १४ मन्त्र वा वेदविद्या, १५ कर्म वा चेष्टा और १६ नाम अर्थात् दृष्ट वा एवं अदृष्ट पदार्थकी संज्ञाको षोड़श कला कहते हैं। ईश्वर व्याप्तिमें रहनेसे ही कलाका षोड़शी नाम इन्होंने पाया है। इन षोड़श कलाका प्रतिपादन प्रश्नोपनिषत्के षष्ठ प्रश्नमें लिखा है। इस स्थानमें वेद शब्दका मुख्यार्थ परमेश्वरके स्वरूप का ही प्रतिपादन करना है। परमेश्वरसे पृथक् रूप जगतादि वेद शब्दका गौणार्थ है। इसीसे मुख्य और गौणार्थमें मुख्य ही ग्रहणीय है। पुनः लिखा है,—उस अक्षर वा अविनश्वर परमात्माका नाम ॐ है। जो सर्वत्र व्याप्त और सर्व श्रेष्ठ है, वही ब्रह्म है। इससे हमने यह समझा है कि वेदका मुख्य तात्पर्य परब्रह्मका प्रतिपादन और उससे जीवको किसी प्रकार मिला देना है। परमेश्वरका उपदेशरूप वेद तीन प्रकारके अवयवसे युक्त है—कर्म, उपासना और ज्ञान, इन तीनो काण्डसे इहकाल तथा परकालका व्यवहारिक फल पाने और यथावत् उपकारार्थ सकल मनुष्यके उपरोक्त तीन प्रकार अनुष्ठान विषयमें पुरुषकार लानेको ही देहधारणका फल समझना चाहिये। आर्यसमाज और दयानन्द सरस्वती शब्दमें विस्तृत विवरण देखिये।

महात्मा केशवसेनके मतसे वेदका ईश्वर निश्चेष्ट और पुराणका ईश्वर कर्मशील है। निश्चेष्ट और कर्म-शील दोनो प्रकारका इसतरह सिद्ध होता है कि—ईश्वर मनुष्यकी भांति इधर-उधर नहीं घूमता और न बारबार कोई काम ही करता है। वह हमारे और तुम्हारे मुंहमें प्रकाश्य रूपसे अन्न न डाल समस्त ब्रह्माण्डकी शक्तिके भीतर उसका प्रबन्ध बांधता है। ब्रह्म निष्क्रिय रहते भी गूढ़ नियमसे हमारा समुदाय अभाव मोचन करता है। हम देश, नगर एवं ग्राममें सर्वत्र ब्रह्मको पूजें और उसीको अपने भवनकी लक्ष्मी समझें। विश्वमें निगूढ़ कल्याणके कौशलसे कार्यका स्रोत नियत

बहा करता है। ईश्वर उसी कल्याणके कौशलसे भक्तको सुखी बनाता और सच्चेको जिताता है।

(सेवकका निवेदन १म और २य खण्ड, २०६ पृष्ठ)

केशवका कहना है—जो दुर्गा है, वही काली है। पूजा करनेवालेने दोनोंमें एकही शक्ति पायी। केवल मनके भावने देवीको दो वर्णमें प्रतिफलित किया था। जिस मूर्तिको देख पहले भक्तिभाव बढ़ा और मन मुग्ध पड़ा, उसीका परिवर्तन पा ऐसा भय उपस्थित हुआ! भक्तिपूर्वक एकबार हृदयके मध्य पहुंचने और वहां ही ढूंढ़नेसे यह मूर्ति देखनेको मिलती है। भीतर आलोक न आये और अन्धकार समा जायेगा। अनन्त आकाश काला है। उसी अनन्त आकाशमें यह शक्ति विलीन रहती है। इस स्थानपर अन्धकारमें अन्धकार सना और एक निराकारमें सकल एकाकार बना है। आकाश और अन्धकारमें कुछ भी प्रभेद पड़ नहीं सकता। उसी गहरे काले आकाशमें अन्धकारके भीतर ब्रह्मशक्ति ब्रह्मज्ञान है। बाहर उसीकी कालीमूर्ति बनी है। बाहर देवी और भीतर ब्रह्मज्ञानरूप ब्रह्मशक्ति है।" (सेवकका निवेदन ४र्थ खण्ड १४७-८ पृष्ठ)

परमहंस रामकृष्णने कहा है,—सच्चिदानन्द हरि बहुरूपी है। वह एक है, वह अनन्त है, वह विश्वरूपी भगवान् है। जो उसको नहीं देखता, वह उसका मर्म नहीं समझता और साकार निराकार पर तर्क भी करता है। किन्तु प्रकृत भक्त उसे साकार और निराकार दोनो रूपमें पूजता है। ब्रह्मका अनन्त नाम और अनन्त भाव है। जिसे जो भाव और जो नाम अच्छा लगता है, उसे उसी नाम और उसी भावसे पुकारने पर ईश्वर मिलता है। अहम्भाव छूटनेसे ईश्वर देख पड़ता है। कलिकालमें ईश्वरका नाम ही एकमात्र साधन है। रामकृष्ण और विवेकानन्द देखो।

खृष्टानोंकी बाइबिलके मतसे ईश्वर सृष्टिकर्ता है। सृष्टिके पूर्व एकमात्र वही विद्यमान था। उसीसे यह चराचर जगत् निकला है। ईसाई देखो।

कुरान्के मतसे ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्व श्रेष्ठ और सकलका स्रष्टा है। उसने नूतन रक्तसे मनुष्यको बनाया है। वह सर्वदर्शी, असीम, अमर इत्यादि विशेषणसे संयुक्त है। इस्लाम और मुसलमान् देखो।

वर्तमान समयमें खृष्टानोंका धर्मसम्प्रदाय नाना श्रेणियोंमें विभक्त हो गया है। कोई ईश्वरको सर्वस्रष्टा समझता और कोई ईश्वरसे नहीं—स्वभावसे ही जगत् की उत्पत्ति मानता है। कोई संयोग-वियोग द्वारा पृथिवीकी उत्पत्ति ठहराता है और ईश्वरके अस्तित्वपर विश्वास नहीं लाता। पाश्चात्य दर्शन शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

ईश्वरकवि—एक प्रसिद्ध हिन्दुस्थानी कवि। ये औरंगजेबकी राजसभामें रहते और सरस कविता करते थे।

ईश्वरकृष्ण—एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार। इनकी बनायी सांख्यकारिका हमारे दर्शनशास्त्रमें चिरप्रसिद्ध है। ५५७ से ५८९ ई०के मध्य चनती (परमार्थ)-ने चीना भाषामें उक्त ग्रन्थका अनुवाद किया था। ईश्वरकृष्णको कोई-कोई कालिदास समझते हैं। पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे ये ई०के ६ठें शताब्दमें विद्यमान थे। किन्तु उनका यह मत माना जा नहीं सकता। क्योंकि जो ग्रन्थ ६ठें शताब्दमें चीन देशमें जा कर अनुवादित हुआ, वह उक्त समयसे अन्ततः बहु वर्ष पूर्व अवश्य बना था। बनते ही सांख्यकारिका कुछ चीनदेश पहुंच न गयी होगी। नाना स्थानोंमें विख्यात होनेपर चीन देशके लोग भारतवर्ष आ उसे ले गये होंगे। अनुवाद करनेमें भी कम समय लगा न होगा। अतएव ६ठें शताब्दसे बहुपूर्व ईश्वरकृष्णका विद्यमान रहना समझ पड़ता है। इस देशके कोई पण्डित भगवान् श्रीकृष्णको ही सांख्यकारिकाका रचयिता मानते हैं। कृष्णद्वैपायन प्रभृति अपर कृष्णोंसे भिन्न रखनेके लिये ईश्वरकृष्ण नाम पड़ा है। नारायणने-'सांख्यचन्द्रिका' नाम्नी सांख्यकारिकाकी टीका एवं विज्ञानभिक्षुने 'आर्यभाष्य' नामक सांख्यकारिकाका भाष्य बनाया है।

ईश्वरगीता (सं० स्त्री०) कूर्मपुराणका अंशविशेष।

ईश्वरचन्द्र—वङ्गदेशान्तर्गत कृष्णनगरके एक राजा। ये शिवचन्द्रके पुत्र थे। १७१८ ई०में शिवचन्द्रके मरनेपर इन्हें राजपद मिला था। ईश्वरचन्द्र रूपवान्, बलवान् और सङ्गीतप्रिय थे। १८०२ ई०में ५५

वर्षके वयसमें शारीरिक नियमके लङ्घनवश इनकी मृत्यु हुई। गिरीशचन्द्र नामक इनके एक पुत्र थे। ईश्वरचन्द्रकी सभामें एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् रहते थे। उन्होंने सारदामङ्गल नामक एक सङ्गीत ग्रन्थ बंगलामें बनाया था।

ईश्वरचन्द्र गुप्त—विख्यात बङ्गाली कवि। ये कांचरापाड़ा निवासी हरिनारायण गुप्तके पुत्र थे। इनकी माताका नाम श्रीमती देवी था। १७३२ शकमें फाल्गुन शुक्लपञ्चमी शुक्रवारके दिन ईश्वरचन्द्र गुप्तने जन्म लिया था। बाल्यकालमें ये बड़े ही दुरन्त थे। लिखने-पढ़नेमें इनका विशेष मन न लगता था। किन्तु बाल्यकालसे ही कविता लिखनेका औत्सुक्य था। ग्रामस्थ अपरापर बालक उस समय फ़ारसी पढ़ते थे। ईश्वरचन्द्र उनके मुखसे फ़ारसी कविताका अर्थ सुनते और स्वयं फिर बंगलामें कविता बनाते।

ईश्वरचन्द्र जन्मकवि थे। पाठ्यावस्थामें ये केवल कविताकी चर्चा चलाते थे। मानो कविता ही इनका जीवन और कविता ही इनका प्रधान लक्ष्य था। कवित्वशक्तिकी भांति ईश्वरचन्द्रकी श्रुतिशक्ति भी बहुत चमत्कारिणी थी। १७।१८ वर्षके वयसमें डेढ़ मासके मध्य इन्होंने मुग्धबोध व्याकरण मुखस्थ किया। कलकत्तेकी ठाकुरगोष्ठीसे ईश्वरचन्द्रके मातामह वंशकी कुछ मित्रता थी। इसी सूत्रसे ठाकुरबाड़ी ये सर्वदा आते-जाते थे। क्रम-क्रमसे पथरियाघट्टा-निवासी गोपीमोहन ठाकुरके पौत्र योगेन्द्रमोहनसे ईश्वरचन्द्रका बन्धुत्व बढ़ा। उभय समवयस्क थे। इनके सहवाससे योगेन्द्रमोहनमें भी रचनाशक्ति उपजी थी।

१५ वर्षके वयःक्रमकालमें गुप्तपाड़ा-निवासी गौरहरि मल्लिककी कन्यासे ईश्वरचन्द्रका विवाह हुआ। दुर्गामणि देखनेमें बहुत अच्छी न लगती थी, गूंगी-जैसी समझ पड़ती थीं। इसलिये उनसे इनका मन न भरा और विवाहके बाद ही बोलचाल बन्द हो गयी। दोनो चिरदिन सोच-सोचकर जलने लगी।

१७५१ शकमें योगेन्द्रमोहन ठाकुरके साहाय्यसे ईश्वरचन्द्रने 'संवादप्रभाकर' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकाला था। १७५३ शकमें योगेन्द्रमोहनके मरनेसे संवादप्रभाकर बन्द हुआ। परन्तु इसी वर्ष इनकी कवित्व एवं रचनाशक्ति देख अन्दूलके ज़मीन्दार बाबू जगन्नाथप्रसाद मल्लिकने 'संवादरत्नावली' निकाली थी। ईश्वरचन्द्र इस पत्रिकामें विशेष साहाय्य करते थे।

कुछ दिन पीछे ये श्रीक्षेत्रादिके दर्शन करनेको कटक पहुंचे। यहां ये अपने मौसा श्याममोहन रायके घरपर रह एक दण्डीसे तन्त्रादि सीखते थे। १७५६ शकके वैशाखमासमें ईश्वरचन्द्र कलकत्ते वापस आये। इसी वर्ष श्रावण मासके अन्तिम बुधवारको इन्होंने कन्हाईलाल ठाकुरके साहाय्यसे 'प्रभाकर' निकाला। १७५८ शकका आषाढ़ मास आरम्भ होते ही प्रभाकर प्रात्यहिक रूपसे प्रकाशित होने लगा। देशीय प्रात्यहिक संवादपत्रमें प्रभाकर ही प्रथम था। इसी समय पण्डित और नगर तथा ग्रामके सम्भ्रान्त ज़मीन्दार नानाप्रकारसे ईश्वरचन्द्रको साहाय्य देने लगे।

१७६७ शकके आषाढ़ मास इन्होंने 'पाषण्डपीड़न' नामक दूसरा पत्र निकाला था। इसी समय 'भास्कर'-सम्पादक गौरीशङ्कर तर्कवागीश 'रसराज' नामक एक पत्र प्रकाश कर ईश्वरचन्द्रसे कविता-युद्धमें प्रवृत्त हुये। इन्होंने भी 'पाषण्डपीड़न' पत्रमें 'भास्कर'-सम्पादककी कविताका प्रतिवाद आरम्भ किया था। इसी तरह दोनोमें अनेक दिन कुत्सापूर्ण कविताकी लड़ाई लगी रही। किन्तु कुछ समय बाद दोनों पत्र बन्द हो गये।

पाषण्डपीड़नके उठ जानेसे १७६८ शकके वैशाख मासमें इन्होंने 'साधुरञ्जन' नामक दूसरा पत्र निकाला। इसमें ईश्वरचन्द्रके छात्रोंकी कविता और प्रबन्धावली छपती थी। १७७४ शकके वैशाख माससे यह एक वृहत् कलेवरका प्रभाकर निकालने लगे। यह प्रति मासकी पहली तिथिको निकलता और इनकी स्वीय कवितासे पूर्ण रहता था। उक्त स्वतन्त्र मासिक प्रभाकर निकालनेमें ईश्वरचन्द्रको अतिरिक्त परिश्रम उठाना पड़ा, इसीसे इनका क्रमशः स्वास्थ्यभङ्ग होने लगी। इससमय ईश्वरचन्द्र कलकत्तेमें रह अधिकांश समय किसी बागमें बिताते थे। इन्होंने

पूर्ववङ्गके अनेक प्राचीन स्थानोंका वृत्तान्त एवं वङ्गीय कवियोंका जीवनचरित लिखा और भारतचन्द्रकी लुप्तप्राय कविताको बड़े परिश्रमसे ढूंढ़कर छपा दिया। प्रबोध-प्रभाकर, हितप्रभाकर और बोधेन्दु-विकाश नामक ग्रन्थ भी इन्होंने प्रभाकरमें प्रकाशित किये। पीछे श्रीमद्भागवतका पद्यानुवाद करना ईश्वरचन्द्रने हाथमें लिया था। किन्तु १७८८ शकको माघकृष्ण दशमी को आधीरातके समय इनका स्वर्गवास हो गया। ये वङ्गभाषाके एक असाधारण कवि थे।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर—वङ्गदेशके एक ख्यातनामा पण्डित। १७४२ शक (१८२० ई०) को आश्विन कृष्ण मङ्गलवारके दिन मेदिनीपुर ज़िलेके वीरसिंह नामक ग्राममें इन्होंने जन्म लिया। इनके पिताका नाम ठाकुरदास वन्द्योपाध्याय था। १७२८ ई०की १ली जूनको विद्यासागरने विद्याशिक्षार्थ संस्कृत-कालेजमें प्रवेश किया। गभीर गवेषणा और धीशक्तिके प्रभावसे अल्प दिवसके मध्य ही संस्कृत साहित्य-शास्त्रमें इन्होंने पारदर्शिता पायी थी। विद्यासागरने गङ्गाधर तर्कवागीशसे व्याकरण, जयगोपाल तर्कालङ्कारसे साहित्य, प्रेमचन्द्र तर्कवागीशसे अलङ्कार, शम्भुचन्द्र विद्यावाचस्पतिसे वेदान्त, रामचंद्र विद्यावागीशसे स्मृति और पहले निमाईचन्द्र शिरोमणिसे तथा पीछे जयनारायण तर्कपञ्चाननसे न्याय पढ़ा। संस्कृत कालेजसे इन्हें 'विद्यासागर' उपाधि मिला था।

विद्यासागरके पिताकी आर्थिक अवस्था अच्छी न थी। अतएव बाल्यकालसे पाठावस्था पर्यन्त इन्हें दरिद्रतावश अनेक कष्ट उठाना पड़े।

१८४१ ई०के दिसम्बर मासमें विद्यासागर फोर्ट-विलियम कालेजमें प्रधान पण्डित रूपसे नियुक्त हुये। कार्यकारिता और विचक्षणतादर्शनसे संस्कृत कालेजके कर्तृपक्षने १८४६ ई०के अपरेल मास इन्हें संस्कृत-कालेजमें सहकारी कर्माध्यक्ष (Assistant secretary)का पद सौंप दिया, किन्तु उसके दूसरे वर्ष ही विद्यासागरने उक्त पदसे अवसर ग्रहण कर लिया।

१८४९ ई०के फरवरी मास ये फिर फोर्ट विलियम कालेजमें पहुंचे और 'हेड राइटर' (Head-writer)के कार्यमें नियुक्त हुये। विद्यासागरकी सुख्याति क्रमशः बढ़ने लगी। १८५० ई०के दिसम्बर मासमें इन्हें संस्कृत कालेजके साहित्याध्यापकका पद मिला था। अनेक विषयोंमें पाण्डित्य देख तत्कालीन भारतस्थ संस्कृतज्ञ साहब विद्यासागरके पक्षपाती बने। उन्हींके यत्नसे दूसरे वर्ष ही विद्यासागर संस्कृत कालेजके अध्यक्ष (Principal) हुये। इसी समय इन्होंने संस्कृत कालेजके सम्बन्धमें अनेक सुनियम बनाये थे। १८५५ ई०में कालेजका अध्यक्षता रहते भी गवरनमेण्टने इनपर 'विशेष विद्यालय-परिदर्शक' (Special Inspector of Schools)का भार डाला। उभय कार्यमें इन्होंने सुख्याति पायी थी।

फोर्ट विलियम कालेजमें रहते समय कप्तान मार्शल साहबने विद्यासागरसे अंगरेज़ी पढ़नेको कहा। उसके बाद ही ये अंगरेज़ी सीखनेमें लग गये। उस समय सिविलियनोंको पढ़ानेके लिये हिन्दीभाषाका प्रयोजन पड़ता था। इसी लिये विद्यासागरने हिन्दी-भाषा भी पढ़ ली।

संस्कृत-कालेजकी अध्यापनाके समय तत्कालीन गवरनमेण्ट-सेक्रेटरी हालिडे साहबसे इनका आलाप परिचय हुआ। वे नाना विषयोंका परामर्श करनेके लिये सप्ताह पीछे एकदिन विद्यासागरको अपने घर ले जाते और अनेक समय विद्यासागरका सत्परामर्श ग्रहण करते। उन्हींके यत्नसे ये 'स्कूल-इन्सपेक्टर' हुये। उस समय बङ्गला विभागके चार ज़िलोंमें कुल २० मडेल-स्कूल थे। उन्हीं बीस विद्यालयके परिदर्शनका भार विद्यासागरपर न्यस्त था। इसी समय बेथून साहबके मरनेपर तत्प्रतिष्ठित बालिका-विद्यालय गवरनमेण्टके हाथ आया। ये बेथून स्कूलके तत्त्वावधायक रहे और स्त्रीशिक्षाके सम्बन्धमें विशेष यत्न करते थे। हालिडे साहबके उत्साहवाक्यसे उत्साहित हो बङ्गालमें स्थान-स्थान पर विद्यासागरने ५०।६० बालिका-विद्यालय खोल दिये। किन्तु दुःखका विषय है, गवरनमेण्टने उस वृहत् कार्यमें मन न लगाया। कुछ दिन पीछे इन्होंने समस्त बालिका-विद्यालयोंके खरचाका बिल बनाकर

भेजा, किन्तु गवरनमेण्टने रुपया देना न चाहा। जिनके उत्साहसे सकल विद्यालय खुले, वह हालिडे साहब भी उस समय कुछ उत्तर दे न सके। विद्यासागरने अपने पाससे रुपये दे थोड़े दिन विद्यालय चलाये थे।

उसी समय विद्यासागरके एक बन्धु 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका'में ग्रन्थाध्यक्ष थे। जो विषय तत्त्वबोधिनीके लिये कोई लिखकर भेजता, वह इनके देखनेमें आता और पीछे उक्त पत्रिकामें छपता था। विद्यासागर अपने बन्धुके निकट अंगरेजी आलोचना करने पहुंचते और उन्हीं बन्धुवरके अनुरोधसे तत्त्वबोधिनीके लेखक इनका परिचय पाते। तत्त्वबोधिनी-पत्रिकाके तत्कालीन सम्पादक अक्षयकुमार दत्त स्वयं निकट आ विद्यासागरसे प्रबन्धादि लिखनेका अनुरोध करते और जो ग्रन्थ लिखते, उन्हें संशोधन करा छपनेको भेजते थे। वस्तुत: इन्हींके साहाय्यसे अक्षयकुमारकी रचना-प्रणाली उतनी प्राञ्जल हुई। विद्यासागर कभी कभी तत्त्वबोधिनीमें प्रबन्धादि लिखते थे। इन्होंने सबसे आगे महाभारतका बङ्गला अनुवाद उक्त पत्रिकामें प्रकाशित किया। किन्तु विद्यासागर-विरचित महाभारतका बङ्गला अनुवाद सम्पूर्ण हुआ न था। स्वर्गीय कालीप्रसन्न सिंहने उसे देख इनके परामर्शानुसार पण्डितोंके साहाय्यसे उसे पूरा कराया। तत्त्वबोधिनी-सभावाले सभ्योंके अनुरोधसे विद्यासागर तत्त्वावधायक बने थे। किन्तु कुछ दिन पीछे ही किसी विशेष कारणसे इन्होंने तत्त्वबोधिनीका संस्रव त्याग किया।

१८५३ ई०को विद्यासागरने निज जन्मभूमि वीरसिंह ग्राममें निर्धन बालकबालिकाओंके उपकारार्थ अवैतनिक विद्यालय खोला था।' दरिद्र बालकोंको समस्त दिन अवकाश न मिलनेसे रात्रिकालमें भी शिक्षा देनेके लिये विद्यालय खुलता। विद्यालय खोलनेके बाद निज ग्राममें इन्होंने एक दातव्य-चिकित्सालय भी स्थापन किया था।

इसी समय गवरनमेण्टने संस्कृत शिक्षा निकाल देनेका प्रस्ताव किया। अनेक कृतविद्य साहबों और बङ्गालियोंने इस प्रस्तावका समर्थन किया था। किन्तु विद्यासागर उक्त प्रस्तावको रद करनेके लिये विशेष चेष्टित हुये। इन्होंने उस समय अनेकानेक कृतविद्योंका मत काटा और भारतवर्षमें संस्कृत शिक्षा अधिक फैलानेके लिये गवरनमेण्टके निकट आवेदन किया। विद्यासागरका जय और सरकारसे भारतवर्षके यावतीय विद्यालयोंमें संस्कृत शिक्षाके प्रचारका आदेश हुआ। लोगोंको सहजमें संस्कृत सीखनेके लिये इन्होंने सरल संस्कृत पाठ्य पुस्तक सङ्कलन किये थे।

विद्यासागर केवल स्त्रियों और साधारण निर्धनोंको शिक्षाके लिये ही यत्नवान् न हुये, किन्तु विधवाविवाह चलानेको भी आगे बढ़े। इनके द्वारा विधवाविवाहके विषयमें समस्त स्मृतिशास्त्रोंसे जो व्यवस्था जुड़ी, उससे इनकी शास्त्र-पारदर्शिता विलक्षण मालूम पड़ी थी। इसी समय अपने समाजवाले अनेक कृतविद्य, सम्भ्रान्त और मूर्ख प्रभृति सकल श्रेणियोंके लोग विद्यासागरपर खड्गहस्त हुये। ये देशीय लोगोंकी ग्लानि, कुत्सा और निन्दाका वाद अकातर सहते भी प्रतिवादियोंका मत काट स्वीय गन्तव्य पथमें आगे बढ़े थे। तत्काल तारानाथ तर्कवाचस्पति, भरतचन्द्र शिरोमणि, गिरिशचन्द्र विद्यारत्न, रामगति न्यायरत्न प्रभृति पण्डितोंने विद्यासागरको साहाय्य दिया। इन्हींके यत्न और उद्योगसे सरकारने विधवाविवाह चलानेको १८५६ ई०का ५ वां आईन छपा था। विद्यासागरके यत्नसे कई विधवाविवाह भी शान्तिपूर्वक हो गये। इसी समय इन्होंने समाजके एक विशेष हितकर कार्यमें मन लगाया। इस देशमें बहु विवाहरूप कुप्रथा बहुत दिनोंसे चल रही है। इसके प्रमाण देनेका प्रयोजन नहीं, कि उक्त तामसिक कार्यसे हमारे समाजका कितना अनिष्ट होता है। इस कुप्रथाको रोकनेके लिये विद्यासागरने प्राणपणसे यथासाध्य चेष्टा की। इसी उपलक्षमें बहुविवाह पर विचार करनेके लिये दो ग्रन्थ इन्होंने छपवाये। उन ग्रन्थोंका नाम 'बहुविवाहके उचितरूपसे रोकने या न रोकनेका विचार था।' इन्होंने प्राय: समस्त देशीय

ख्यातविद्य पण्डितों और सम्भ्रान्त व्यक्तियोंको बहु-विवाह रोकनेके लिये उभारा था। इस कार्यमें कृष्ण-नगरके राजा श्रीशचन्द्रने विद्यासागरको यथेष्ट साहाय्य दिया। किन्तु सिपाही-विद्रोह लग जानेसे सरकार बहुविवाह रोकनेका क़ानून् बना न सकी थी।

१८५८ ई०में नाना कारणोंसे विरक्त हो इन्होंने कालेजकी अध्यक्षता और स्कूल-इन्सपेक्टरीको छोड़ दिया। कुछ दिन पीछे विद्यासागरने अपने तत्त्वाव-धानमें निज व्ययसे 'मेट्रोपलिटन' नामक अंगरेजी विद्यालय खोला था। किन्तु विद्यालयके कर्तृपक्ष साहब मिल-जुल कर कहने लगे,—बङ्गाली अंगरेजी कालेज चलानेकी क्षमता नहीं रखते। सिवा अंगरे-जोंके दूसरेसे कालेजका प्रबन्ध होना असम्भव है। इन्होंने उनकी बात न मान निज विद्यालयमें बङ्गालि-योंके मध्य ही सर्वप्रथम कालेज क्लास खोला। इसी कालेजपर छोटेलाट ई० सी० बेलीसे अनेक कथा-वार्ता हुयी थी। ई० सी० बेलीने कहा, "विद्यासागर! किस प्रकार आप निज कालेज चलायेंगे? अंगरेजोंके साहाय्य भिन्न अंगरेज़ी कालेज चल नहीं सकता।" विद्यासागरने उत्तर दिया,—"अपने छात्रोंको अंगरेज़ी पढ़ा न सकते भी उन्हें परीक्षा पास करा देना निश्चित है।" पीछे वही हो गया। आजकल इनके स्थापित एक कालेज और पांच विद्यालयोंमें भली भांति पठन-पाठन होता है।

विद्यासागरसे पूर्व बङ्गलाभाषा सरल, सुगम और इस समय-जैसी परिशुद्ध न थी। ये पाठ्यपुस्तक इस उद्देश्यसे बनाने लगे, जिसमें सब कोई सहज ही बंगला भाषा सीख सके। विद्यासागरके बनाये ग्रन्थ-की तालिका नीचे लिखी है,—

वेतालपञ्चविंशति, बङ्गालका इतिहास, जीवन-चरित, बोधोदय, उपक्रमणिका व्याकरण, ऋजुपाठ (तीन भाग), शकुन्तला, विधवाविवाह, वर्णपरिचय, कथामाला, संस्कृतप्रस्ताव, चरितावली, महाभारतकी उपक्रमणिका, सीताका वनवास, व्याकरणकौमुदी, आख्यानमञ्जरी, भ्रान्तिविलास और बहुविवाह रहित होना उचित है या नहीं।

वर्तमान विशुद्ध बंगला भाषाने जो आकार बनाये, उनके आदि प्रवर्तक विद्यासागर ही हैं। उक्त विषयको विद्वान् मात्र मानते और उसी प्रणाली को पकड़कर अनेक वर्तमान बङ्गाला-लेखक नाना छन्दों और भावोंमें अपनी लेखनी चलाते हैं।

विद्यासागर केवल समाज-संस्कार और बंगला भाषाके उन्नतिकल्पमें ही प्रसिद्ध नहीं। इनकी परोपकारिता और दानशीलताको भी बङ्गदेशके महा-धनवान्से लेकर दीन दरिद्र पर्यन्त सकल ही जानते थे। विद्यासागर देशीय विपन्न, दरिद्र और विधवाओंके लिये प्रति मास अनेक रुपये दे देते। किन्तु इन्होंने प्रकाश्य रूपसे नहीं, गुप्तभावसे ही दानकार्य सम्पन्न किया था। धनाढ्य न होते भी १८६५ ई०के दारुण दुर्भिक्ष समय विद्यासागरने प्रायः छः मास पर्यन्त वीरसिंहमें प्रत्यह सहस्रों व्यक्तियोंको अन्न और वस्त्रहीन दरिद्रोंको प्रायः दो हज़ार रुपयेका वस्त्र दिया। इन्होंने यह दानशीलता और परदुःख-कातरता अपनी मातासे सीखी थी। प्रवादानुसार विद्यासागरकी माता अतिशय दानशीला थीं। किसीका दुःख देख उनका हृदय फट जाता और उसके दूर करनेका प्रयास उठाना पड़ता। उन्हीं सदाशय जननीके नाना गुण इनमें भी आ गये थे। विद्यासागरके कथनानुसार—दरिद्रोंकी पीड़ा कितनोंने देखी और उनके हृदयकी व्यथा कितनोंने सुनी है। वास्तविक दरिद्रका दैन्य और विधवाका दुःख देखनेपर नयन-जलसे इनका वक्षस्थल डूब जाता था। दुःखीका दुःख किसीसे कहते समय भी अश्रु बहने लगते। इस चरित्रको कोई अतिरञ्जित न समझे। यह चाक्षुष-प्रत्यक्ष है। मुक्तकण्ठसे कहनेपर ऐसे हृदयवान् पुरुष बङ्गदेशमें अतिविरल हैं। विद्यासागर सामान्य मेषपालकसे लेकर बहुत बड़े राजातक सकलके ही बन्धु थे। अपनी विपद् बतानेपर ये अर्थ, परिश्रम, परामर्श, दूसरेके साहाय्य अथवा किसी न किसी उपायसे यथासाध्य लोगोंका उपकार कर देते।

वैद्यनाथके निकट कर्माटांड नामक एक स्थान

है। विद्यासागर स्वास्थ्यरक्षाके लिये समय समय पर वहां जाकर रहते और सन्थालोंका बड़ा उपकार करते, वे भी इन्हें देवतातुल्य समझते थे।

विद्यासागरका हृदय भक्तिमय रहा। ये माता-पिताको ईश्वर-जैसा मानते थे। माता-पिता ही इनके आराध्य देवता थे। जब मातापिताकी बात कोई उठाता, तब देखते-देखते पुलक, भक्ति अथवा अदर्शन-निबन्धनके दुःखसे महात्माका हृदय प्रेमाश्रुसे भर जाता। संक्षेपमें कहनेसे विद्यासागर एक शास्त्र-विशारद, समाजसंस्कारक, राजनैतिक और देश-हितैषी महापुरुष थे। अधिक क्या, ये वर्तमान वङ्गसाहित्य-जगत्के पितास्वरूप माने जा सकते हैं। १८९१ ई०के जुलाई मासमें (१२९८ बंगला सन्के १६ श्रावण) महात्मा विद्यासागरका परलोक हुआ।

ईश्वरता, ईशिता देखो।

ईश्वरदास—१ ज्योतिषरायके पुत्र। इन्होंने 'मुहूर्तरत्न' नामक ज्योतिषग्रन्थ लिखा था। २ प्रत्युक्तपदमञ्जरी-कोषके रचयिता। अपर नाम ईश्वरकृष्ण-कालिदास रहा।

ईश्वरदीक्षित—रामायण-व्याख्याके रचयिता।

ईश्वरनिषेध (सं० पु०) १ नास्तिक्य, दहरियत, ईश्वरका न मानना। २ अनिष्टजनक कार्य, जिस कामसे बुराई आये।

ईश्वरनिष्ठ (सं० त्रि०) ईश्वरे निष्ठा दृढ़ता वा भक्ति-र्यस्य, बहुव्री०। ईश्वरपरायण, ईश्वरको माननेवाला।

ईश्वरपरायण (सं० त्रि०) ईश्वर एव परं मुख्यं अयनं आश्रयो यस्य, बहुव्री०। भक्त, सिर्फ ईश्वरका सहारा लेनेवाला।

ईश्वरपुरी—एक साधु। गया धाममें इन्हीं महाप्रभु चैतन्यदेवने दीक्षा ली थी। चैतन्यदेव देखो।

ईश्वरपूजक (सं० त्रि०) ईश्वरकी उपासना करने-वाला, जो ईश्वरको पूजता हो।

ईश्वरपूजा (सं० स्त्री०) भगवान्की आराधना, खुदा-परस्ती।

ईश्वरप्रणिधान (सं० क्ली०) प्रगाढ़ समाधियोग, गहरा मज़हबी तवज्जुह। यह योगके पांच नियमोंमें अन्तिम है। समस्त जगत्को ईश्वरमय देखना और उससे प्रत्येक वस्तुको अभिन्न मानना ईश्वरप्रणिधान कहाता है। इसके अवधारणसे मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है।

ईश्वरप्रसाद (सं० पु०) ईश्वरका अनुग्रह, खुदाकी मेहरबानी।

ईश्वरभाव (सं० पु०) राजदशा, शाहाना हालत।

ईश्वरमल्लिका (सं० स्त्री०) वकवृक्ष, अगस्तका पेड़।

ईश्वरमिश्र—१ रूपतरङ्गिणी-व्याकरणके रचयिता। २ लघुजातकके टीकाकार।

ईश्वरमूलक (सं० पु०-क्ली०) तरुभेद, एक पेड़।

ईश्वरमोठे—स्मृतिकल्पद्रुम-रचयिता।

ईश्वरविभूति (सं० स्त्री०) ईश्वरका ऐश्वर्य, खुदाकी शान्। यह संसारमें सर्वत्र विराजती है। आत्मज्ञानमें ईश्वरकी विभूतिका प्रत्यक्ष प्रमाण विद्यमान है।

ईश्वरशर्मा—व्यवस्थासेतु नामक स्मृतिग्रन्थके रचयिता।

ईश्वरसख, ईशसख देखो।

ईश्वरसद्म (सं० क्ली०) १ मन्दिर, मसजिद। २ त्रिभु-वन, जहान्।

ईश्वरसभ (सं० क्ली०) राजपरिषत्, शाही मजलिस।

ईश्वरसाक्षिन् (सं० पु०) ईश्वर एव साक्षी, कर्मधा०। वेदान्तिक मतसिद्ध मायावृत चैतन्य विशेष। माया द्वारा आच्छादित चैतन्यको ईश्वरसाक्षी कहते हैं। क्योंकि ईश्वरका उपाधि नामान्तर-स्वरूप है, माया और तादृश चैतन्यमें कोई भेद नहीं।

ईश्वरसाधन (सं० क्ली०) भगवत्पूजा, खुदाकी परस्तिश।

ईश्वरसुमति—पार्वतीपरिणय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

ईश्वरसेवा (सं० स्त्री०) ईश्वरकी उपासना, खुदाकी परस्तिश।

ईश्वरा (सं० स्त्री०) ईश्वरस्य स्त्री, ईश्वर-टाप्। ईश्वरकी स्त्री दुर्गा। "विन्यस्तमङ्गलमहौषधिरीश्वराया स्रस्तो रण-प्रतिसरेण करेण पाणिः।" (भारवि)

ईश्वराधीन (सं० त्रि०) भगवान्के वशीभूत, जो मालिकके मातहत हो।

ईश्वराधीनता (सं० स्त्री०) ईश्वरतन्त्रता, मालिककी मातहती।

ईश्वराधीनत्व (सं० क्ली०) ईश्वराधीनता देखो।

ईश्वरानन्द (सं० पु०) १ ईश्वरका आमोद, खुदाकी खुशी। २ महाभाष्यप्रदीप-विवरणके रचयिता।

ईश्वरी (सं० स्त्री०) अश्-वरट, चकारात् उपधाया ईत्वं टिलात् ङीप्। अश्नोतेराशुकर्मणि वरट् च। उण् ५।५७। १ दुर्गा। २ लक्ष्मी। ३ सरस्वती। ४ सकल प्रकार शक्ति। ५ लिङ्गिनीवृक्ष। ६ वन्ध्याककौटकी लता, कड़वी ककड़ी। ७ नागदमनी, नागदेवना। ८ नाकुलीकन्द, बांदा। ९ रुद्रजटा। १० ऐश्वर्यान्वित स्त्री, शानदार औरत।

ईश्वरीदत्त—शब्दबोधतरङ्गिणी-व्याकरणके रचयिता।

ईश्वरीनारायण सिंह (महाराज)—काशीके एक विद्योत्साही नृपति और महाराज उदितनारायण सिंहके भ्रातुष्पुत्र। उदितनारायणके मरने बाद १८३५ ई०में ये वाराणसीके राजपदपर अभिषिक्त हुए थे। ईश्वरीनारायण सुकवि और शिल्पी रहे। इनका रचित सुन्दर गान और स्वहस्त-निर्मित विविध हस्तिदन्तका कारुकार्य रामनगरके राजभवनमें विद्यमान है। ईश्वरीनारायण बहुतसे कवियोंके आश्रयदाता थे। देव, हरिजन एवं उनके पुत्र सरदार, गणेश, वन्दन पाठक प्रभृति बहुतसे हिन्दुस्थानी कवि इनके आश्रय और साहाय्यसे कितनी ही कविता बना गये हैं। १८८९ ई०के ज्येष्ठमास महाराज ईश्वरीनारायणके परलोक पधारनेपर उनके पुत्र महाराज प्रभुनारायणको राजपद मिला।

ईश्वरीप्रसाद—शब्दकौस्तुभ-व्याकरणके रचयिता।

ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी—सीतापुर जिलेके पीरनगर ग्राममें रहनेवाले एक हिन्दुस्थानी कवि। १८८३ ई०में यह जीवित रहे। इन्होंने विभिन्न छन्दोंमें वाल्मीकि-रामायणका हिन्दी अनुवाद लिखा, जिसका नाम 'रामविलास' रखा है।

ईश्वरीय (सं० त्रि०) दिव्य, दैव, रब्बानी।

ईश्वरेच्छा (सं० स्त्री०) भगवान्‌की आकाङ्क्षा, खुदाकी मर्जी।

ईश्वरोपासना (सं० स्त्री०) भगवान्‌की पूजा, खुदाकी परस्तिश।

ईष्—तुदा० पर० सक० सेट् धातु। १ उञ्छवृत्ति। भ्वा० आत्म० सक० सेट् धातु। २ इससे दान, दर्शन, गमन और हिंसाका अर्थ निकलता है।

ईष (सं० पु०) ईष्-क। १ तृतीय मनु उत्तमके पुत्र। २ आश्विनमास। ३ शिवके एक भृत्य।

ईषच्छ्वास (सं० त्रि०) अल्पमुखरित, थोड़ा गूंजनेवाला।

ईषज्जल (सं० क्ली०) अल्प नीर, कुछ पानी।

ईषण (सं० त्रि०) सत्वर, त्वरा करनेवाला, जल्दबाज़।

ईषणा (सं० स्त्री०) त्वरा, शिताबी, जल्दी।

ईषणिन्, ईषण देखो।

ईषत् (सं० अव्य०) ईष् बाहुलकात् अति। अल्प, किञ्चित्, खफ़ीफ़, ज़रासा, थोड़ा, कुछ, कम।

ईषत्कर (सं० त्रि०) ईषत्-क्ल-खल्। १ अल्पल्प, बहुत कम। २ अल्पप्रयाससाध्य, आसानीसे होनेवाला। ३ अल्पकारी, थोड़ा काम करनेवाला।

ईषत्कार्य (सं० त्रि०) अल्प चेष्टाविशिष्ट, खफ़ीफ़ कोशिशसे ताल्लुक रखनेवाला।

ईषत्पाण्डु (सं० त्रि०) ईषत् चासौ पाण्डुश्च। १ धूसर, हलका भूरा। (पु०) २ धूसरवर्ण, हलका-भूरा रङ्ग।

ईषत्पान (सं० त्रि०) १ अल्प पीया हुआ, जो ज्यादा पीया न गया हो। (क्ली०) २ सूक्ष्म पानीय, ज़रासा घूंट।

ईषत्प्रलम्भ (सं० त्रि०) अल्पार्थ प्राप्तव्य, थोड़ेसे हासिल किया जानेवाला।

ईषत्स्पृष्ट (सं० त्रि०) अल्प संस्पृष्ट, कुछ छूवा हुआ। यह शब्द अर्धस्वरका विशेषण है।

ईषद्, ईषत् देखो।

ईषदुष्ण (सं० त्रि०) ईषत् च तदुष्णञ्चेति, कर्मधा०। अल्पतप्त, खफ़ीफ़ गर्म। इसके पर्यायमें कोष्ण, कवोष्ण, मन्दोष्ण और कदुष्ण शब्द भी आते हैं।

ईषदून (सं० त्रि०) किञ्चित् न्यून, कुछ कम।

ईषद्गुण (सं० त्रि०) अल्प उत्कर्ष-युक्त, कम-क़दर, जो थोड़ा वस्फ़ रखता हो।

ईषद्दर्शन (सं० क्ली०) कटाक्ष, नज़र, चितवन।

ईषद्दीर्घ (सं० क्ली०) वातामफल, बादाम।

ईषद्धास (सं० पु०) स्मित, मुसकराहट, हलकी हंसी।

ईषद्रक्त (सं० पु०) अल्पल्प रक्तवर्ण, निहायत हलका सुर्खरङ्ग।

ईषद्विवृत (सं० त्रि०) अल्पोद्घाटित, थोड़ा खुला।

ईषद्धोजा (सं० स्त्री०) विष्णोदानिका पेड़।

ईषना (हिं०) एषणा देखो।

ईषन्नाद (सं० त्रि०) अल्प शब्दकर, खफ़ीफ़ अवाज़ निकालनेवाला। यह शब्द आकाङ्क्षारहित मृदु व्यञ्जनवर्णका विशेषण है।

ईषद्विमय (सं० त्रि०) अल्पार्थं परिवर्तित, खफ़ीफ़के लिये बदला हुआ।

ईषल्लाभ, ईषत्प्रलब्ध देखो।

ईषा (सं० स्त्री०) ईष्-क-टाप्। १ लाङ्गलदण्ड, हल या गाड़ीका डण्डा, हरीस।

ईषादण्ड (सं० पु०) लाङ्गलमुष्टि, हलका हत्था।

ईषादन्त (सं० पु०) ईषा इव दन्तोऽस्य, बहुव्री०। दीर्घ-दन्त-गज, लम्बे दांतका हाथी।

ईषाधार (सं० पु०) १ लाङ्गल रथ प्रभृति, हल गाड़ी वग़ैरह। २ एक नागका नाम।

ईषिका (सं० स्त्री०) ईष्-इकन्-आप्। १ गजाक्षि-गोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ तुलिका, मुसव्वरकी कूंची। ३ एकप्रकार अस्त्र, किसी क़िस्मका हथियार। ४ काशतृण, कांस। ५ अक्षिकूट, आंखका ढेला।

ईषिकास्त्र (सं० क्ली०) अस्त्रविशेष, एक हथियार।
"ईषिकास्त्रं ससुतृस्न्य पचच्छेदं वाधादयम्।" (नकुलकृत अश्वचिकित्सा)

ईषिर (सं० पु०) ईष्-किरच्। अग्नि, आग।

ईषीका (सं० स्त्री०) १ वीरणादि शलाका। २ अन्तर प्रविष्ट मूर्ति, अन्दर पहुंची हुयी सूरत। ३ निमज्जन-शलाका, डुबानेकी सीक। इसे तैजसावर्तिनी (कुठाली) में डालकर देखते हैं—धातु गला है या नहीं। ४ चित्रकारकी आघर्षिणी, मुसव्वरकी कूंची।

ईष्म (सं० पु०) ईष्-मक्। इषुयुधीत्यादि। उण् १।१४४। १ कामदेव। २ वसन्त ऋतु, मौसम-बहार।

ईष्व (सं० पु०) आचार्य, उपाध्याय, मज़हबी तालीम देनेवाला उस्ताद।

ईस (हिं० पु०) ईश्वर, खुदा।
"नाम-रूप दुइ ईस उपाधी।" (तुलसी)

ईसबगोल, इसबगोल देखो।

ईसरगोल, इसबगोल देखो।

ईसवी (अ० त्रि०) खृष्ट-सम्बन्धीय, ईसाके मुताल्लिक़। (पु०) २ खृष्टीय संवत्, ईसाका सन्। यह संवत् ईसा मसीहके जन्मसे आरम्भ हुआ है। पहली जनवरीसे इसकी गणना की जाती है। ईसवीमें ३६५ दिन होते हैं। जिस वर्ष यह सन् चार संख्यासे पूर्ण रीतिपर कटता, उस वर्ष मलमास पड़ता अर्थात् फ़रवरीमें एक दिन बढ़ता है।

ईसा (अ० पु०) योशूखृष्ट, ईसा मसीह। (Jesus Christ) ईसाई-धर्म-प्रवर्तक एक साधु। ईसाई धर्मावलम्बी इन्हें जगत्का त्राणकर्ता (Savior), ईश्वरका पुत्र (the Son of God) और त्रित्व (Trinity)का एकाङ्ग मानकर पूजते हैं। बाइबिल ग्रन्थके 'आदिभाग'में विश्वासकारी यहूदी बताते हैं, मसीहा वा 'विश्वत्राता' अवतीर्ण होंगे। किन्तु ईसाका अवतारत्व वे सर्वतोभावसे स्वीकार नहीं करते। इस विषयपर ईसायियों और यहूदियोंमें बड़ा वाद-प्रतिवाद हुआ था। ईसायियोंकी मनीषिमण्डलीने ईसाका देवत्व एवं अवतारत्व अनेक तर्क तथा युक्ति द्वारा प्रमाणित किया। हम बाइबिल ग्रन्थकी इञ्जील या नव संहिता (New Testament)से ईसाई-जगत्में पूज्य इन अद्वितीय महापुरुषकी एक क्षुद्र जीवनी-मात्र सङ्कलन करते हैं,—

राजा हेरोदके राजत्वकालमें युदिया राज्यान्तर्गत बेथलेहेम (Bethlehem) नगरमें ईसाने जन्म लिया था। सेण्ट मथी (Mathew)-लिखित सुसमाचारके १म अध्याय पर इब्राहीम और दाऊद (David)के वंशमें इनके पिता यूसुफ़के जन्म लेनेकी कथा लिखी है। किन्तु सेण्ट लकके ३य अध्यायमें आदमसे यूसुफ़की वंशलता कल्पित है। उक्त दोनो स्थलोंमें दाऊदसे यूसुफ़की वंशावलीका गड़बड़ देखकर धर्मग्रन्थके टीकाकारोंने विभिन्न सिद्धान्त द्वारा उसके निराकरण पर प्रयास उठाया है।

महात्मा मथी ईसाका जन्मवृत्तान्त अत्यन्त रहस्य-पूर्ण बताते हैं। इनकी माता मेरीका विवाह जब यूसुफ़से हुआ, तब उनके गर्भ रहा। उभयका सहवास

होनेपर यूसुफ् समझ गये—मेरी पत्नी मेरी अनूढ़ावस्थासे ही गर्भवती है। सुतरां उन्होंने चुपके स्वीय पत्नीको छोड़ पृथक् रहनेकी ठहरायी। उनके चित्तका भाव परख परम पिताने देवदूत भेजा था। यूसुफ्ने निद्रावस्थामें स्वप्न देखा, मानो देवदूतने उनको लक्ष्य कर कहा—मेरीके गर्भमें भ्रूणरूपसे विद्यमान शिशुको पवित्रात्मा (Holy Ghost)का बालक-जैसा समझो; जितने दिन वह प्रसूत न हो, उतने दिन मेरीसे यह संवाद छिपावो; उन्हें पत्नी-रूपसे ग्रहण करो और जातबालकका नाम ईसा (Jesus) रखो।

यथेच्छाचारी राजा हिरोद ईसाके जन्म-समय अलौकिक और अत्याश्चर्यकर घटना पड़ते देख विस्मयाविष्ट हुये। पूर्वप्रोक्त भविष्यद्वाणी-वर्णित जन्मका वृत्तान्त एवं स्थानादिका ऐक्य गंठ जानेसे वह मन ही मन अपनेको विपद्ग्रस्त समझने और इस भयसे बालकके ध्वंससाधन पर झपटने लगे, कहीं परिणाममें वह परम शत्रु न निकले। तदनुसार ईसाकी मृत्यु अलङ्घनीय बनानेके लिये राजाने बेथलेहेम और तत्पार्श्ववर्ती स्थानवासी दो वर्षवयस्क यावतीय शिशु मार डालनेका आदेश दिया था। इसी दुर्घटनाके समय एक देवदूतने पहुंच निशायोगसे निद्रित मेरी और युसुफ्को स्वप्नमें चेताया,—तुम इस बालकको उठा शीघ्र ही मिशर राज्यमें भाग जायो।

महात्मा मथी इतना ही लिखकर निश्चिन्त हो गये हैं। किन्तु लूक (St Luke)के सुसमाचारमें प्रकाशित है—सूतिकाके शौचान्त मेरी और यूसुफ् पवित्र मन्दिरमें समर्पणार्थ बेथलेहेमसे जातबालक ईसाको उठा जेरूसलम नगर पहुंचे थे। वहां यथाविधि कृत्य सम्पादनके बाद वह पुत्रको क्रोड़में दबा जन्मभूमि (गालिलीके अन्तर्गत) नजरेथ नगरकी ओर चले। इस स्थानपर बालोचित शिक्षाके साथ-साथ ईसाके ज्ञानका विकाश भी बढ़ने लगा। तीक्ष्णबुद्धि और प्रतिभाने ही भविष्यत्में इन्हें जगत्का उच्च पद सौंपा था। कहना दुःसाध्य है—ईसाने विद्यालयमें शिक्षा पायी या नहीं।

इनके ग्रीक, अर्मीय, हिब्रू और लातिन भाषा जाननेका आभास मिलता है। बाइबिल देखनेसे मालूम पड़ता है—ईसाके गृहमें अध्ययन होता था (Deut, vi. 4, Psalms cxiv—cxvii)। धर्मपुस्तककी आलोचना ही इनका मुख्य उद्देश्य रही। ईश्वरप्रसिद्ध ग्रन्थावलीने प्रकृतपक्षमें ईसाका आचार्यपद पाया था। इनके चित्तमें सर्वदा ईश्वरका आदेशवाक्य गूंजते रहता।

द्वादश वर्षके वयःक्रमकाल शिक्षा समापन करनेपर यहूदी-बालक ईसाकी व्युत्पत्ति धर्मशास्त्रमें विशेष बढ़ गयी थी। उस समय लोग इन्हें सर्वत्र 'क़ानूनके बेटे' (Son of law) कहने लगे। मातापिताके प्रति ईसाकी भक्ति और श्रद्धा यथेष्ट रही। यह कभी कभी पिताकी सूत्रधारवृत्ति उठा उनका परिश्रम घटा देते थे। तीस वर्षके वयःक्रम पर्यन्त ईसाने सांसारिक जीवन अतिदीन भावसे बिताया (Mark 6-3)। द्वादश वर्ष शिरोभूषा (Phylacteries) पहना धर्मतत्त्वोपदेशकके पदपर अभिषिक्त करनेके मानस मेरी और यूसुफ्के जेरूसलम नगर लानेसे ईसाकी प्रतिभा प्रवीण यहूदी-पण्डित-समाजमें समा गयी थी। एक दिन मन्दिरमें बैठ ईसाने मनीषियों-(Doctors)से इतना धर्मविषयक प्रश्नोत्तर किया, कि अतिकाल हो जानेका बिलकुल अवधारण न रहा। मातापिताने समझा, पुत्र कहीं खो गया था। वे इतस्ततः अन्वेषणमें व्यापृत हुये। अवशेषमें अबोध बालकको पण्डितमण्डलीकी मीमांसामें पड़ा देख उन्हें बहुत विस्मय लगा था।

द्वादशवर्ष जेरूसलम आने और त्रिंशवर्ष यहूदी पुरोहित-पुत्र जोहन-दी-बाप्तिस्तसे जर्दन नदीतीर दीक्षा लेनेतक अष्टादश वर्षकाल ये गार्हस्थ्य-जीवनमें व्यस्त रहे। दीक्षाके बाद ईसा धर्मप्रचार पर व्रती हुये। इन्होंने स्वीय धर्म फैलाने, ईश्वरकी प्रेरणासे देवकार्य (Divine mission) बनाने और अपना मत चलानेको प्रायः तीन वर्ष नानारूप अलौकिक कर्म देखाया था। ईसाने ईश्वरसे जो पवित्र धर्म पाया, साधारणमें उसी पवित्र वाक्यके प्रचारार्थ द्वादश सच्चरित्र साधु पुरुषको मनोनीत कर अपना साथी

बनाया। साथ रहते-रहते उन्हें इनके धर्मोपदेशमें अभिज्ञता आ गयी थी। धर्मग्रन्थमें उन्हींको द्वादश 'अपोसल' (Apostle=देवानुगृहीत व्यक्ति) माना है। अपनी मृत्युके पीछे यह धर्माभिव्यक्ति धीरे धीरे फैलानेके उद्देश्यसे ईसाने उन द्वादश व्यक्तिको निज मतमें विशेषरूप दीक्षित किया था। उक्त 'अपोसल' अशिक्षित, अज्ञान, निर्धन और मर्यादाहीन रहे। इनको अलोकसामान्य प्रतिभामें ऐसे ज्ञानहीन लोग भी साधारणके चित्तसे बद्धमूल चिरन्तन संस्कार, श्रेष्ठ मनीषियोंको प्रतिपादित धर्मप्रणाली और दृढ़भक्तिपर प्रतिष्ठित नैष्ठिक आचारादि समूल उत्पाटित कर सके थे। अतःपर ईसाने अपने मतावलम्बियोंमें ७० व्यक्तिको शिष्य (Disciple) बना वाञ्छित पथपर दो-दो भेज दिये (Luke x. i.)। इन सप्तति शिष्यके नियोगकी कथा अन्यान्य ईसाचरितकार (Evangelist)-ने नहीं लिखी।

जब ईसा इस प्रकार शिष्यसह धीरे-धीरे अपना धर्म फैलानेको आगे बढ़े, तब पाश्चात्य सभ्य-जगत्में शक्तिशाली रोमक समृद्धिकी शीर्षसीमापर चढ़े थे। जूलियस सीजरके प्रभाव और अगस्तासके कूट शासनसे साम्राज्य उन्नतिके चरम पदपर पहुंचते भी ऐश्वर्य-मदमत्त रोमकोंने दाम्भिकता वश क्रमशः अवनत होते गया। ताइबिरियास्के राजत्वकालसे यह अवनति-चित्र नानावर्णमें ढला। ईसायी युगारम्भसे प्राक्काल रोम-साम्राज्यपर अत्याचार और अनाचारकी घोर छाया पड़ी थी। रोमक नृपतिके गृहविवादपर आत्मीय स्वजनहत्यामें फंसते राज्यमध्य विषादकालिमा लगी और अधीनस्थ परराष्ट्रापहारी निर्दय एवं अत्याचारी इदुमीय वंशीय राजाके हस्त जाते युदियाराज्यकी उत्पीड़न व्यथा उससे भी अधिक जगी। युदियाके अत्याचारप्रिय राजाका अनुष्ठित वीभत्स दृश्यसमूह प्राचीन जगत्में दूसरी जगह कहीं देखनेमें नहीं आया।

साम्राज्यकी ऐसी दारुण उच्छृङ्खल अवस्थामें रोमदेशवासीके हृदयमें क्रमशः प्राचीन धर्मप्रभाव हट रहा था। अनेक ज्ञानवान् व्यक्तिने ष्टोयिकका निर्विकार-वाद (stoicism) माना और लोगोंने प्रायः एक प्रकार नास्तिकता (athiesm) को अपना परम धर्म जाना। जब प्रतीच्य जगत्का पौत्तलिक सम्प्रदाय प्रकृतपक्षसे नास्तिकतामें डूबा और यहूदीय सम्प्रदायका धर्म शास्त्रीय आचारके प्रतिपालनमें कपटता रखने पर हृदयसे छूटा, तब ईसा तारेको तरह मानो आकाशसे टूटा था।

धर्मनैतिक तथा राजनैतिक जगत्में ऐसा विपर्यय पड़ते हो क्या यहूदी क्या जेन्टाइल—सकल ही परित्राणप्रार्थी हो किसी परित्राताके आनेकी राह देखने लगे। पैगम्बर-परम्परासे ईश्वरके अवतारका जो उल्लेख होते आया, सरलचित्त इसराइलोंके हृदय पर भी उसी विश्वासने अपना प्रभाव जमाया। भाजिल, तासितास्, सुयेटोनियास्, जोसेफास् प्रभृतिने लिखा, कि तत्कालके पाश्चात्य सभ्य जगत्ने प्राच्य देशसे ही अपने पवित्रात्माको ढूंढ़ लिया था।

इसी उत्कण्ठा और अवतारागमको आशाके दिन ईसायी-धर्मगुरु बाप्तिस्त जोहन (John) सत्यधर्म फैलाने लगे। उन्होंने कहा था,—मूसाका विधि माननेवाली सत्यमार्गाश्रयी यहूदी जातिमें मसीहा अवतार लेंगे। उनके भाव, भङ्गी, भक्तिगुण और परिच्छदादिको देख लोगोंके मनमें एलिजा प्रभृति पैगम्बरकी कथाका स्मरण आ जाता था। सकल ही उनके वाक्यपर विश्वास लाते। सन्न्यास और निर्जन प्रदेशका योगालय देख लोग उनसे बहुत मिलजुल गये थे। धर्मोपदेश सुनकर साधारणमें इतनी हलचल पड़ी, कि सहस्र-सहस्र लोगोंने जर्दन-नदीतीरपर जाकर जोहनसे दीक्षा ली।

महात्मा ईसाको वनमध्य इतने काल ईश्वरचिन्तामें निमग्न रहते भी ज्ञानलाभकी आशासे निर्जनगृह वास छोड़ देना और ईश्वर-चिन्ताका पथ परिष्कार करनेको प्रत्याशासे ईश्वरवाक्यविघोषक अपने अग्रगामी उन्हीं महापुरुषके पास पहुंच जर्दनपर दीक्षाको लेना पड़ा। उसी समय इनकी निष्कलङ्क सौम्यमूर्ति देख निर्जनवासी निर्भीक प्रचारक जोहनका हृदय हार गया था। उन्होंने पवित्रताकी प्रतिमूर्ति निष्पाप-देह ईसाको दीक्षा देना न चाहा। क्योंकि उन्हें

स्वयं अपने निष्पाप होनेमें सन्देह था। किन्तु निष्पाप ईसाको बारम्बार अनुरोधसे जोहन उसे दीक्षा देनेको बाध्य हुआ। दीक्षाकालमें उन्होंने इनके शरीरमें दिव्यज्योति: देखा था। उसी समय जोहनके प्रति आकाशसे दैववाणी हुई, यही प्रतिश्रुत मसीहा और यही मसीहा ईश्वरके पुत्र हैं।

दीक्षाके बाद ईसाने ईश्वरलाभकी आशासे वन-गमनपूर्वक सन्यास लिया था। द्वादश अपोसल-कथित अभिव्यक्तिसे समझ पड़ता है—ये जेरिका मरुभूमिके कोयावान्सानिया प्रदेशमें योगसिद्ध हो ऐश्वरिक प्रत्यादेशसे वलीयन् बने। योगाभ्यासके समय पाप-सहचर (Powers of Evil)से इन्हें लड़ना पड़ा था।

पापपर जय पा ईसा जर्दन नदीतीर फिर आये। इसी स्थानसे इनका धर्मप्रचार-कार्य आरम्भ हुआ था। ईसायी लोग इस धर्मप्रचार-कालको प्रधानत: आठ भागमें बांटते हैं,—

१ जोहन-विवृत प्राथमिक चित्र अर्थात् गालिलीके साधारण प्रचारारम्भ पर्यन्त।

२ गालिलीका प्रचार—जोहनकी हत्या पर्यन्त।

३ विरोधकाल अर्थात् गालिलीवासी फारासियों और स्क्राइबोंसे ईसाका मतद्वैध।

४ विपद्ग्रस्त हो गालिलीसे चिरप्रस्थान और इनके पलायनकालका वृत्तान्त।

५ उक्त सुदीर्घ प्रवासप्रव्रज्यासे जेरुसलम आगमन और वहांसे गुप्तहत्याके भय इफ्राइम ग्राममें पलायन एवं लुक्कायित भावपर अवस्थान। टेवारनकलके भोजोत्सव दिन ईसा सहसा जेरूसलमके पवित्र मन्दिर में आ पहुंचे थे। 'अन्धोंको चक्षुदान' (Healing of the blind) और Woman taken in adultery नामक घटनाद्वयसे इन्होंने अलौकिक करुणा और ज्ञानशक्तिका जो परिचय दिया, उसने इन्हें उस पवित्र नगरके पदार्पणप्रसङ्गपर चिरस्मरणीय बना लिया है। उसी समय उत्सर्गभोजके दिन जेरूसलम मन्दिरमें यहूदियोंसे ईसाका घोर मतद्वैध उपस्थित हुआ। विवाद इतना बढ़ा, कि उन्होंने एकबार उठकर इन्हें प्रस्तर-निक्षेप द्वारा मार डालनेका भय देखाया था। उसीके अनुसार अपना प्राण बचानेको ये नाना स्थानमें घूमे-फिरे। लाजारासके मृत्यु उपलक्ष्यमें ईसाको बेथनी जाना पड़ा था। वहां स्वीय शक्ति-बलसे मृत लाजारासको पुनर्जीवित करनेपर सानहेद्रिन इतने उभरे, कि कायाफास (Caiaphas)के नेतृत्वमें इनके ध्वंससाधनको खड़े हुये। ईसाने वनप्रान्तस्थित इफ्राइम पहुंच आत्मरक्षा की थी।

६ इफ्राइममें रहनेसे 'पासोवर' (The passover)-के भोजोत्सव पर्यन्त। इस समय कुष्ठरोगमुक्त साइमनके भोजदान उपलक्ष्यपर भक्तिमती मेरीकर्त्तृक उनके अभिषेकमें युदावासी प्रतिहिंसावह्निसे ऐसे जले, कि यहूदी-पुरोहित एकत्र कर ईसाको मारने चले। सदसी, स्क्राइब, हिरोदीय, फारास् और सानहेद्री इनके उपदेशसे क्रमश: विरक्त बने जाते थे। एकदिन प्रकाश्य वक्तृतामें इन्होंने विद्वेषी यहूदियोंसे अभि-सम्पातपूर्वक कह दिया,—'रे धूर्त्त स्क्राइबो और फारासियो तुम उत्सन्न हो'। (Woe unto you, Scribes and Pharisees, hypocrites.) यहूदी ईसाके इस घृणासूचक वाक्यसे इतने बिगड़े, कि अवि-लम्ब इन्हें मार डालनेकी मन्त्रणा करने लगे। अवशेषमें पश्चात् पहुंच उन्होंने इसाको पकड़ बन्दी बना लिया।

७ इसके पीछे शेषभोज (Last supper), ईश्वरप्रेम, अपूर्व निग्रह, विचार (Trial) और क्रुशारोप (Crusi-fixion) पर्यन्त।

८ सर्वशेषमें इनके समाधिसे पुनरभ्युत्थान (Resurrection) और स्वर्गारोहण (Ascension) पर्यन्त।

पूर्वमें लिखा जा चुका है कि इसाने बेथनी भागकर शरण लिया था। उक्त यहूदी एकदिन सन्ध्याको शीतल समीरण लेते-लेते इनके पदानुसरणपूर्वक चलकर बेथनी पहुंचे। ठीक उसी समय युदा-प्रमुख यहूदी ईसाको भटका पकड़नेके लिये पुरो-हितोंसे कुमन्त्रणा करते थे। सम्भवत: ३० ई०को ३१ वीं मार्च शुक्रवारको ये बेथनी आये थे। परवर्ती बुधवार पर्यन्त ईसा यहां सुखसे सोये, किन्तु वृह-स्पतिको प्रात:काल शय्या छोड़ जागने पीछे फिर

सुखसे आंख लगा न सके, दूसरे दिन अनन्त निद्रामें शायित हुये।

वृहस्पतिवारको सन्ध्याकाल ये यूखेरिष्टका पवित्रता-ज्ञापक कैयासो-पासकाल-भोजोत्सव एवं मनाने सशिष्य जेरुसलमनगर गये थे। वहां भोजनपर बैठ ईसाने जोहन और पीटरसे अपने हत्याकारियोंको बात कही। अतःपर ये गेथसेमन (Gethsemane)के जैतून-बागमें जा भक्ति और प्रेमसे विह्वल हो गये थे। उसी समय मशाल लिये युदास और विश्वासघातक पुरोहित वहां जा पहुंचे। उन्होंने छलनापूर्वक ईसाको फुसला पकड़ लिया था। पीटरका निषेध न मान इन्होंने उनके हाथ आत्मसमर्पण किया। शत्रुके हस्त बन्दी होनेबाद ईसाको छोड़ शिष्य भाग गये।

यहूदी ईसाको पकड़ उसी रात विचारार्थ एन्नास नामक कूटनीतिज्ञ पुरोहितके पास लाये। मध्यरात्रिको ही इनका विचार होने लगा। विचारक पुरोहितोंके समक्ष ईसाने आत्मरक्षार्थ कोई बात कही न थी। विचारक मारपीट कर भी जब इनके मुखसे कोई बात निकला न सके, तब हस्त-पद बांध एन्नास-जामाता कायाफास (the de facto high-priest)-के पास ले चले। उस समय भी रात्रि बीती न थी। कायाफासने सानहेद्रिनोंसे विचारसमितिका सङ्गठन किया। यहां ही सद्दुसी पुरोहित आ पहुंचे थे। नानारूप तर्कके बाद उन्होंने ईसासे पूछा,—"तुम मसीहा या ईश्वरके पुत्र हो, या नहीं?" इन्होंने उत्तरमें कहा था,—"हां, मैं ही मसीहा या ईश्वरका पुत्र हूं।" इन्होंने दूसरी बार भी बताया था,—"तुम मृत्युके पीछे मेघमध्य मेरा पुनरागमन देख लोगे।" कायाफास यह बात सुन, क्रोधसे अधीर बन, अपने शरीरका वस्त्र फाड़ और ईसाको देवविद्वेषी बता चिल्ला उठे—सानहेद्रिन-समिति इनके प्रति मृत्युदण्डका आदेश देती है।

द्वितीय विचारके बाद ईसा प्रातःकाल पर्यन्त प्रहरी-परिवेष्टित हो कक्षके मध्य अवरुद्ध रहे। दूसरे दिन सवेरे सानहेद्रिनोंने एकत्र हो फिर विचार आरम्भ किया। इस बार भी ये मृत्युदण्डसे ही दण्डित हुये। इस समय उक्त प्रदेशमें रोमराज्यका प्रभाव विस्तृत था। सुतरां यहूदियोंमें प्राणदण्ड देनेकी शक्ति न रही। उन्होंने अपना दोष छोड़ानेको ईसाके दण्डका भार रोमक शासनकर्ता (Procurator)के मत्थे डाला था। रोमक शासनकर्ता पिलेट (Pilate) विना विचार अपराधीको दण्ड दे न सके। डेरे (Prætorium)में नाना तर्कवितर्कके बाद पिलेटने इन्हें छोड़ा था। उसपर यहूदियोंके तरह तरहका गड़बड़ लगानेसे पिलेटको गालिलीमें ईसाके रहनेकी बात मालूम पड़ी। इसीसे उन्होंने इनको राजा हेरोदके निकट विचारार्थ भेजा था। हेरोदने निर्दोष ईसाको छोड़ फिर पिलेटके पास पहुंचा दिया।

द्वितीय बार विचारमें इनकी निर्दोषिता प्रमाणित होते भी उद्धत यहूदियोंके मनोरञ्जनार्थ पिलेट फिर तृतीय बार विचारमें प्रवृत्त हुए। यहूदियों, सामरियों तथा गालिलियोंके अपने विरुद्ध राजद्रोही बन पीछे राष्ट्रविप्लव उठानेके भय, अपनी स्त्रीको प्रार्थना और दण्डादेशपालनकारीको प्रशान्त-मूर्तिके सन्दर्शनसे करुणार्द्र चित्त हो उन्होंने ईसाका बेंताघात लगा छोड़ देनेकी ठहरायी थी। किन्तु पुरोहितों एवं सानहेद्रिनोंके घोर चीत्कार और उत्तेजित लोगोंके कल्लोलकोलाहलसे वह अपना अभिलाष पूर्ण कर न सके। पिलेट इस भयसे उनके विरुद्ध कोई प्रस्ताव कैसे करते—पीछे कहीं शासनकर्ताके विरुद्ध लोग अस्त्र न उठायें। तत्काल 'पासोवार' उत्सवके भेटको तरह बन्दी छोड़नेकी प्रथा रही। ईसाके विद्वेषियोंने इसी उपलक्ष्यमें उनसे इन्हें अपनेको सौंप देनेकी प्रार्थना की थी। पिलेट इस बातको टाल न सके, किन्तु ईसाको छोड़नेके लिये बार बार उन्हें समझाने लगे। ऐसी चेष्टासे भी वे उत्तेजित यहूदियोंको शान्त कर न सके थे। उन्होंने राजद्रोही तथा हत्याकारी बारह अब्बासोंको छोड़ दिया, किन्तु ईसाको फांसीपर चढ़ानेके लिये उन्मत्त भावसे चीत्कार किया। उसी समय यहूदी ईसाको रक्तवर्णका जीर्णवस्त्र पहना सब समक्ष लाये थे। इनके शिरपर कण्टकमय मुकुट और हस्तमें राजदण्ड-स्वरूप

लठ रहा। लोग ईसाको 'यहूदियोंका राजा' कहकर चिढ़ाते और निर्दय सिपाही 'रोमके वेत्रदण्डकी भांति' दारुण रूपसे आघात लगाते थे। ऐसी अवस्थामें भी पिलेटने फिर एकबार यहूदियोंका चित्त खींचनेको करुण कण्ठसे स्वीय आवेदन ज्ञापन किया। शेषको पुरोहितोंका तर्जन-गर्जन सुन उन्हें साधारणके समक्ष इनके क्रूशारोपका आदेश देना पड़ा।

अनन्तर यहूदी दो दस्यु और ईसाको क्रूशपर चढ़ानेके लिये गोलगोथिकी ओर ले चले। अपने हस्तमें कील ठुंकते समय भी इन्होंने हत्याकारियोंकी मुक्तिके लिये प्रार्थना की थी। ईसाके मृत्युकालकी वाक्यावली ईश्वर-विश्वासकी सुगभीर परिचायक है।

जो विद्वेषी और अत्याचारी यहूदी इनके क्रूशपर चढ़ते समय उपस्थित रहे, वे भी उदारता एवं गाम्भीर्य देख नयनजलमें डूब और 'हा हतोऽस्मि' कहते तथा करसे वक्ष कूटते जेरूसलम नगर लौट गये। सन्ध्याके प्राक्काल सिपाहियोंने क्रूशपर चढ़े दस्युद्वयके पदद्वय तोड़ कर भेज दिये थे। तत्काल उन्होंने मरने या न मरनेकी परीक्षा लेनेको ईसाके मृत वक्षमें अस्त्र भोंका। अनन्तर सन्ध्याके बाद समाधिकार्य-सम्पादनको असम्भव समझ उन्होंने झटपट इन्हें मट्टी दी थी। शासनकर्ताके आदेशक्रमसे निकोदिमास और आरमाथियावासी यूसुफ़ने ईसाके मृतशवको यथारीति क़ब्रमें रखा। शुक्रवारको सन्ध्या समय महात्मा ईसा मसीहका समाधि लगा था। रविवारको अतिप्रत्यूष मेरी इनके समाधिस्थानपर पहुंचीं। रजनीको देवदूतसे ईसाके पुनरभ्युत्थानकी बात सुन वहां गयी थीं।

बाइबिल ग्रन्थके John xx. 17, xxi. 1-24, Matt xxviii. 9-10, Luke xxiv. 13-32, 34, I Cor. xv. 3, 5, 8, प्रभृति स्थलमें ईसाके पुनराविर्भावका उल्लेख मिलता है। प्रथम ईष्टर दिवस (Easter day)से ४० दिन पर्यन्त इन्होंने स्वीय भक्त शिष्यों और अपोसलोंके सम्मुख आविर्भूत हो उनके प्रति धर्मतत्त्व सम्बन्धमें उपदेश दिया था। शेष दिन ईसा भक्तप्राण शिष्योंको बेथनीके अभिमुख ले गये। वहां उनकी मङ्गलकामना कर इन्होंने अपना शेष आदेश माननेको समझाया था। इसी प्रकार आशीर्वाद देते देते ईसा उनके सामने मेघ मध्य समा गये। चालीस दिन पीछे इन्होंने स्वर्गारोहण किया।

स्वर्गारोहणके पचास दिन पीछे ईसाकी शिष्यमण्डली पेण्टेकष्ट भोजोत्सवके समय जेरूसलम नगरमें समवेत हुई थी। इस दिन शिष्योंपर परमात्माका भर हुआ और उन्होंने सकल भाषावोंमें उपदेश दे जनसाधारणको विमोहित किया। इसी दिन इसी मुहूर्तपर उनके भावसे मुग्ध हो प्रायः तीन सहस्र लोग ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए थे। अतःपर ईसा-नियोजित अपोसलों और शिष्योंने पृथिवीके नाना स्थानोंमें जा ईसाईधर्म प्रचार करना आरम्भ किया। सब पहिले मध्य-एसियामें धर्मप्रचार कार्यपर व्रती बने थे। विश्वासघातक युदासके बदले मथियास (Matthias) अपोसल मनोनीत हुये। (ये यहूदीवंश सम्भूत थे पीछे पल नामसे प्रसिद्ध हुये।) दूसरे एक जोहन भी 'अपोसल' बने थे।

मथी, मार्क, लूक और जोहन प्रभृति महात्मावोंने जो लिखा, उससे ईसाकी ऐसी एक पार्थिव जीवनीका चित्र उतारा गया। इनका आध्यात्मिक जीवन वा धर्मतत्त्व (Christianty) जिस सकल उपादानसे गंठा, वह यथास्थान लिखा है। ईसाई देखो।

पाश्चात्य ऐतिहासिकोंने इसका कोई प्रमाण नहीं दिया, पौत्तलिक-प्रधान पाश्चात्य जगत्में किस उद्दीपनासे कौन उपादान उठा ईसाने नूतन धर्मप्रचारमें अग्रगमन किया था। ईसाई भी इसका कोई ठीक प्रमाण बता न सके, अपने अज्ञातवासकाल ईसा किस देशमें रहे। सम्भवतः इनके पिता इन्हें मिशर ले आये थे। बाइबिलके नाना स्थलोंमें जेरूसलमनगरके पूर्वदिक्से मसीहाके आविर्भूत होनेका प्रसङ्गादि विवृत रहने पर स्पष्ट ही समझ पड़ता है, कि यहूदी-प्रधान पालेस्तिनके पूर्वाञ्चल ही ईसाईधर्मका झण्डा उड़ा था।

पूर्वाञ्चलवासियोंपर ईसा और उनके भक्तोंके एतादृश अनुराग रहनेका कारण क्या है? इस बातको प्राच्य वा प्रतीच्य बुधमण्डलीका कोई व्यक्ति इतने दिनतक

जान न सका। जहां आसिरीय, बाबिलोनीय, कालदीय, रोमक प्रभृति प्राचीन राजवंशने बहु पूर्वाब्दसे प्राचीन धर्म पालन किया, उसी जनपद-समूहमें यह नव मत प्रचार क्यों ईसाकी इतनी आकाङ्क्षाका वस्तु बना था? ईसा मसीहके अज्ञात वासकालकी संक्षिप्त जीवनी (Unknown life of Christ) सम्प्रति भोटराज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन मठमें मिली है। यह ग्रन्थ ईसाकी जीवनीका मूलक और पाली भाषामें लिखित है। भारत तथा भोट देश आकर अज्ञातवासमें अवस्थान और जैन एवं बौद्ध साधुवोंके साथ साक्षात् इस ग्रन्थमें आनुपूर्विक वर्णित है। रूस-पर्यटक नोटोविचने (Nicholus Notovitch) तिब्बतके हिमिन नामक स्थानीय मठसे इस ग्रन्थको लाकर फ्रान्सीसी भाषामें अनुवाद किया था। पीछे वही अनुवाद क्रिस्पे कर्त्तृक अंगरेजी भाषामें अनूदित हुआ।*

उक्त ग्रन्थमें ईसाके अज्ञातवासकालकी शिक्षा और बौद्ध धर्मचर्चाकी कथा विवृत है। भारतमें ईसाजन्मके समकाल ईसाइयोंका अभ्युदय देखकर भी समझ पड़ता है, कि धर्मचर्चाके लिये इन्होंने और इनके सम्प्रदाय-वालोंने उसी प्राचीन समय भारतमें पैर रखा था। इसीसे प्राचीन ईसाई सम्प्रदाय और भारतीय धर्म-तत्त्वमें हमें सम्यक् अपने भक्तिभावका आभास मिलता है। बौद्ध धर्मानुसार पवित्रता, निरहङ्कार, अहिंसा, सन्न्यास, भिक्षुवृत्ति, चूड़ाकरण, जपमालाधारण प्रभृति कर्म रोमन कायलिक् ईसाई समाजमें स्पष्ट-रूपसे गृहीत हुये हैं। (Muller's Origin & Growth of Religion, p. 353.) गीतामें भगवान्ने अर्जुनको जो धर्म सिखाया, बाइबिल ग्रन्थमें भी उसका सारांश कुछ कुछ दिखाया है। तदानीन्तन समृद्ध एवं बौद्ध प्रतिभासे उद्भासित भारतराज्यमें ईसाके शुभागमनपर सन्देह करनेका कोई विषय नहीं। ईसा-प्रतिपादित इञ्जील वा नव संहिता (New Testament)-मतके अनुसार जिस प्रकार बौद्धधर्मकी छाया पड़ी, वह तद्ग्रन्थ देखनेसे सम्यक् उपलब्ध हो सकी है। सिवा इसके अगस्तिन (St. Augustine) का बुद्ध और टमास (St. Thomas) का बोधिसत्त्व नामसे ईसाई धर्मप्रचारकोंमें परिचय रहनेसे स्पष्ट बोध होता है—प्राचीन कालमें बौद्धों और ईसाईयोंमें विशेष संस्रव रहा। अलबेरूनी और मसूदीका इति-वृत्त पढ़नेसे समझ सकते हैं, कि बुद्धासफ (बुद्ध) साबि-यान मतके प्रवर्तक थे। जेरोम (St. Jerome) और अचेरी (L. D. Achery) बौद्ध तथा ईसाई धर्मके सामञ्जस्य प्रतिपादनपर चेष्टा कर गये हैं।

जर्ज सिङ्गनासूने स्वीय इतिवृत्तमें लिखा है,—

"This mad man then, Manis (also called Scythianus) was by race a Brachman, and he had for his teacher Budas, formerly called Terebinthus, who having been brought up by Scythianus in the learning of the Greeks, became a follower of the sect of Empedocles (who said there were two first principles opposed to one another), and when he entered Persia, declared that he had been born of a virgin and had been brought up among the hills............and this Budas (also Terebinthus) did perish, crushed by an unclean spirit."

प्रत्नतत्त्वविद् इ, बि, कोवेल महोदयने स्मिथके अभिधानमें ईसा मसीहकी जीवनीके सङ्कलनकालमें कहा है,—"This wonderful jumble, mainly copiedas we see,—from Socrates seems to bring Buddha and Manes together, many of the ide as of Manicheism were but frag-ments of Buddhism."

ईसाई धर्मशास्त्रके साथ प्राच्य दर्शनशास्त्रका सम्बन्ध ठहरा पारस्य-देशवासी धर्ममतप्रवर्तक मनिकी की हुई धर्मतत्त्व अवतारणा और उक्त मतामत विचारनेपर अवान्तर भावसे ईसाके प्राच्य संस्रवका परिचय मिलता है। अध्यापक मोक्षमूलरने बुद्धके महात्मपद (Saint of Church) पानेकी बात मानी है।†

* The Unknown Life of Christ, by Nicholus Notovich, translated from the French by Violet Crispe, 1893.

† Chips from German Workshops, IV, 184. Academy, Sept 1, 1883, p. 146.

मुहम्मदके मतसे ईसा मसीह 'रूह-अल्ला' वा जगदीश्वरके आत्मा, कुमारी मेरीके सन्तान और एक पैगम्बर समझे गये हैं। मुसलमान इनके आगमनसे पौत्तलिकताके स्रोतका कितना ही रुकना और सनातन धर्मका जमना मानते भी इन्हें जगत्‌का परित्राता (Redeemer and Saviour) नहीं समझते। स्वयं मुहम्मदने ईसा मसीहका जन्म, ईश्वर-कर्तृक मृत्तिकारसे उत्पत्ति और मेरीके निकट देवदूतका समागम प्रभृति घटनायें कुरान्‌में लिखी हैं।

ईसाइयोंने इनकी जीवनी नाना प्रकारसे सङ्कलित की है। सकल ही ग्रन्थोंमें ईसाका मत विशदरूपसे मीमांसित और आलोचित है। अनेकोंने ईसा-प्रवर्तित धर्ममतकी विचार विशेष निन्दा भी की है, जिसकी आलोचनाका यहां कोई प्रयोजन नहीं। ईसाइयोंमें जिन सकल महात्माओंने इनकी जीवनी देखकर हृदयमें उन्नत भाव प्राप्त किये, उनमें कई लोगोंके मत यहां लिखे जाते हैं। काण्टने ईसाकी अभिव्यक्तिसे पूर्णज्ञानकी पराकाष्ठा पायी थी। हेगेलने इनमें नर और नारायणका एकत्र समावेश (The union of the human and the divine) देखा था। बहुत बड़े नास्तिक (sceptics) भी ईसाकी सम्मानना कर गये हैं। स्पिनोजाने इन्हें स्वर्गीय ज्ञानकी प्रतिमूर्ति बताया है। वोलतार (Voltaire) ईसा-चरित्र-चित्रके सौन्दर्य और गाम्भीर्यपर मुग्ध हुए थे। जगत्‌के विख्यात वीर नेपोलियनने सेण्टहेलेना द्वीपमें रहते समय कहा था—इनके साथ किसी अपर व्यक्तिका सामञ्जस्य ठहर नहीं सकता। रूसोने ईसाका जन्म और मृत्यु देवताकी भांति माना है। एतद्भिन्न ष्ट्रायास्, रेनान, जनष्टुयार्ट मिल प्रभृतिने इन्हें मनुष्यजीवनका नेता और आदर्शपुरुष लिखा है।

एक ओर जैसे ईसाई ईसाके गुण गाते हैं, दूसरी ओर वैसे ही अनेक ईसाई पुराविद् धराधाममें उक्त अवतारके होनेपर बिलकुल विश्वास नहीं लाते। इनके अवतार होनेपर सन्देह कर नेपोलियनने पहले हार्डीरसे पूछा था,—"ईसा नामक कोई व्यक्ति धरातल-पर रहा या नहीं।" पुराविदोंने उक्त अपने मतकी पोषकतापर अनेक ग्रन्थ भी लिखे हैं। किन्तु ईसाई धर्मपर प्रकृत विश्वास रखनेवाले अयौक्तिक युक्तिको मूर्ख व्यक्तिका प्रलाप कहा करते हैं। उनके कथनानु-सार क्लुइरिनियास्, पिलेट वा टाइबिरियास्‌की राज-तालिकामें लिखा न रहते भी तासितास्‌को लेखनसे उसका प्रमाण मिलता है। तासितास्‌ने लिखा है—टाइबिरियासके राजत्वकालमें शासनकर्ता पान्तयास् पिलेटकी आज्ञासे ईसाईधर्म-प्रवर्तक (Founder of Christianity) मारा गया था। पिलेटने ईसाई मतके अनुसरणसे हीनमति बालकोंको सतर्क करनेके लिये एक राजाज्ञा (Act of Pilate) निकाली थी, और वह ई०के २रे शताब्दतक बलवती रही।

ईसाई (फा० वि०) १ खृष्टीय, नसरानी, मसीही। (पु०) २ खृष्टान, मसीहको माननेवाला।

यह ईसा मसीहका भक्त और तन्मतावलम्बी सम्प्रदाय है। ईसाके भक्त कहा करते हैं,—"उसी असीम अनन्त शक्तिमान् विश्वव्यापी जगदीश्वरने परम प्रीतिसे पवित्रात्मासमूह और इस जगत्‌को बनाया था। पवित्रात्मा ईश्वरका माहात्म्य, प्रेमसम्भोग और कियत् परिमाण उसकी पवित्रता पानेके अधिकारी हुये। पीछे ईश्वरने कामावसायिता (Free Will) उन्हें दे डाली। सुतरां वे इच्छानुसार चलने लगे। स्वेच्छावश क्रमशः उनका मन कलुषित हुआ। उसीसे पापकी उत्पत्ति, धीरे-धीरे पापकी वृद्धि और उसीके साथ दारुण मनस्ताप आया है। शैतानके साथ उसके दूतभी वैसी ही अवस्थामें पड़ गये। उन्होंने सारे पापका भार सरलप्रकृति मानवपर डालना चाहा था। उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण हुई। इसीसे मानवजाति इतनी सन्तप्त, इतनी पीड़ित और इतनी पापग्रस्त है। मानवके पापमोचन, जगत्‌में न्याय एवं सुखराज्यस्थापन और मानवजातिको फिर पवित्रता तथा पूर्वगौरव प्रदान कर-नेके लिये भगवान्‌ने अपना प्रियपुत्र ईसाको धरातल-पर प्रेरण किया था। जो ईसा मसीहका धर्मोपदेश प्रकृतरूपसे समझते हैं, वे जो उनकी इच्छाके अनुकूल

चलते हैं, वे ही उनकी कृपाका लाभ करनेवाले ईसाई कहलाते हैं।"*

३०६ ई०में विख्यातपण्डित लाक्टेन्सियास्‌ने लिखा है,—"जो स्थलपथसे चोरी और जलपथसे डकैती करते हैं, वे ईसाई हो नहीं सकते। स्त्री, पति वा पुत्रघातियों, भ्रूणहत्याकारियों,कन्यागमनकारियों, इन्द्रियकी परितृप्तिके लिये दूसरेसे कामनाकारियों वा भिन्न पुरुषके हस्त देहविक्रयकारियोंमें किसीको ईसाई नहीं कहते। किसी प्रकारका पाप करने और मनसे भी अपरका अनिष्ट चाहनेवाले ईसाई कभी नहीं।"

ईसाई धर्मवेत्ता अरिगेन कहते हैं,—"जो धन-स्पृहा नहीं रखते, जो निज अधिकृत सम्पत्ति अन्यके अन्यायपूर्वक लेलेने भी कुण्ठित नहीं होते और जो सरलता, पवित्रता एवं उदारताको अलङ्कार समझते हैं, वेही प्रकृत ईसाईधर्मको मानते हैं।"†

ठीक तौर पर कह नहीं सकते—ईसा मसीहके भक्तोंने कब किसके द्वारा खृष्टान या ईसाई नाम पाया। किसीके मतसे अन्तियोक नगरमें यह नाम प्रथम निकला था। वहां अपरापर सम्प्रदाय यहूदियोंसे पृथक् करनेके लिये ईसाइयोंको विद्रूपभावसे 'खृष्टान' कहकर पुकारते थे। उसी समयसे यह नाम चला आता है।

प्रधानतः ईसाई सम्प्रदायको इन कई मतोंको मानकर चलना पड़ता है—१ बाइबिल वा ईसाई धर्मपुस्तक ईश्वरका वाक्य होनेसे समस्त ही प्रामाण्य और ग्राह्य है। २ बाइबिल सर्वतोभाव आलोच्य है। ३ ईश्वरके एकत्व, ईश्वर और ईसा तथा दिव्यात्मा (Holy Ghost)का त्रित्व (Trinity) स्वीकार्य है। ४ आदि मानवका पतन ही मानवजातिके पापका कारण है। ५ मानव-त्राणके लिये ईसाका आत्मोत्सर्ग, उनका ईश्वरके प्रियपुत्र तथा अवतार होना और उनका कार्य कलापादि विश्वास्य एवं स्वीकार्य है। ६ भक्ति और एकमात्र विश्वाससे पापोंकी मुक्ति होती है। ७ पापीको परित्राण एवं पवित्रता दिव्यात्मा दे सकता है। ८ आत्मा अविनश्वर है। ईसाका देह नष्ट होकर भी उठा था। महात्मा ईसाके शेषविचारसे दुष्टोंको अनन्त शास्ति और शिष्टोंको अनन्त स्वर्गीय सुखोपलब्धि हुई। ९ ईसाई धर्ममण्डलीका मत ऐश्वरिक समझकर स्वीकार किया जाता है। ईसाई धर्ममें दीक्षित होनेका कर्मकाण्ड चिरदिन प्रतिपाल्य और अवश्यकर्तव्य है। ईसाके क्रुशारोपपर मृत्युसे पूर्वरात्र महिष्य भोज (Lord's Supper)का होना सत्य-जैसे विश्वासका विषय है।

ईसा मसीहसे पूर्व जेरूसलम, अन्तियोक प्रभृति स्थानमें यहूदीयों कुसंस्कारावच्छिन्न और उनके याजकों अर्थलोभी तथा अत्याचारी हो गये थे। कुसंस्कार और अत्याचार हटानेके लिये ईसा नाना स्थानोंमें अपना मत फैलाने घूमे। उन्होंने जो सकल मत फैलाया, उसका अधिकांश यहूदी जातिके प्राचीन धर्मग्रन्थोंमें पाया जाता है। इससे बोध होता है—ईसा-प्रवर्तित ईसाईधर्म यहूदी धर्मका ही संस्कार ठहरहा और प्राचीन यहूदी धर्मसे ही उपजता है।

ईसाने अपने प्रधान बारह शिष्योंको साधारणका कुसंस्कार छुड़ानेके लिये नियुक्त किया। ये बारहो लोग धन, मान वा शिक्षा कुछ भी न रखते थे। तथापि उनकी बात सुन सैकड़ों व्यक्ति ईसाई धर्ममें दीक्षित हुये। सर्वप्रथम जेरूसलम नगरमें ईसाई-समिति स्थापित हुई थी। इसी समय यहूदियोंने ईसाइयोंपर घोरतर अत्याचार किया। अनेक कष्ट एवं अनेक दुःख सहकर ईसाके प्रधान शिष्योंने जेरूसलम, अन्तियोक, इफेसास, स्मिरना, आथेन्स, कोरिन्थ, रोम और अलेकजन्द्रिया नगरमें ईसाई धर्ममन्दिर बनवाया था। सर्वप्रथम जेरूसलम नगरमें ईसाई धर्ममन्दिर स्थापित हुआ। इसीसे ईसाई जेरूसलमको अपनी समाजकी जननी और महापुण्यभूमि समझते हैं।

ईसा और बाइबिल शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

ईसाके प्रधान शिष्योंने जो सकल समाज स्थापन किये,परवर्तीकालमें वेही ईसाई-धर्मावलम्बियोंके महा-

* Rev. Charles Buck's Theological Dictionary, p. 65, 69.

† J, Eadie's Biblical Cyclopaedia.

पुण्यस्थान और भक्तिके पात्र बने। उसी समय पश्चिममें रोमनगर और पूर्वमें अन्तियोक ईसाई समाजका प्रधानस्थान माना गया।

ईसा मसीहका धर्ममत एक ही है। किन्तु उत्तर काल नाना जातिके नाना मत और विश्वास मिल जानेसे अकेले ईसाई धर्मने नाना आकार बना लिये। अब उसके कई समाज हो गये हैं, जैसे—रोमन-काथोलिक, सिरीयक, याकूबी, नेष्टोरी, अर्मनी, ग्रीक, प्रोटेष्टाण्ट, जेसुट इत्यादि।

रोमक-समाज।

विपक्षवादियोंके अत्याचारसे आदि ईसाइयोंने "काथोलिक" अर्थात् सार्वजनिक वा साधारण मतावलम्बीके नामसे अपना परिचय दिया था। उसी समयसे यह नाम पड़ा। अब काथोलिक कहनेसे रोमनकाथोलिक (Roman Catholic) नामक ईसाई समाज समझा जाता है। काथोलिक रोमराज्यके अधिपति पोपको उसे यावतीय ईसाइयोंका धर्मपिता मान अतिशय भक्तिश्रद्धा करते हैं। उनके कथनानुसार मानव मेषपाल थे। पीछे एकताका बन्धन टूटा; इसीसे ईसा मसीहने अपने प्रधान शिष्य सेण्टपीटरको मेषपाल रूपसे नियुक्त किया। रोम नगरमें सेण्टपीटर रहते थे। वहां ठहरकर उन्होंने साम्य और मुक्तिमार्ग लोगोंको देखाया। ईसाका आदेश था—सेण्टपीटरके पीछे उनका उत्तराधिकारी भी 'मेषपालक' होगा। रोमके पोप सेण्टपीटरके स्थलाभिषिक्त और उत्तराधिकारी हैं। सुतरां जिस समय जो पोप होंगे, उस समय वेही 'मेषपालक' रहेंगे।

रोमन काथोलिकोंको धर्मरक्षार्थ सात शपथ मानना पड़ते हैं,—ईसाईधर्मकी दीक्षा, धर्मसम्बन्धीय उपासनादिका क्रियाकलाप, क्रूशारोपके पूर्वरात्र ईसाका सशिष्य भोजपर्व, निग्रहस्वीकार (Penance), मृत्युकालमें तैलका अवलेपन (Extreme unction), धर्माधिकार (Orders) और पाणिग्रहण।

इस समाजके धर्माधिकारमें अनेक पद पड़ते हैं,—प्रथम पोप (Pope) अर्थात् सकलके धर्मपिता, तत्पर कार्डिनाल (Cardinal) अर्थात् ईसाई समाजके राजा प्रभृति महाजन, (जो पोपके निर्वाचनमें अधिकारी होते हैं) उसके पर पेट्रियार्क (Patriarch) अर्थात् प्रधान धर्मगुरु, उनके अधीन आर्क बिशप (Archbishop) अर्थात् धर्माचार्य, उनके नीचे बिशप (Bishop) अर्थात् महापुरोहित, तत्पर पुरोहित (Priest) और सामान्य याजक (Deacon)।

रोमन काथोलिक साकार उपासक हैं। ईश्वर, ईसा और दिव्यात्मा (Holy Ghost) उनके उपास्य देव हैं। सिवा इसके वे मूसा प्रभृति सिद्धपुरुषोंको भी विशेष भक्ति और पूजा करते हैं।

ई० द्वादशसे चतुर्दश शताब्द मध्य रोमाधिपति पोपके प्रबल प्रतापसे समस्त युरोपमें काथोलिक धर्म फैला था। उक्त महादेशमें प्रबल पराक्रान्त राजाधिराजसे कुटीरवासी दीन दरिद्र पर्यन्त सकल ही पोपके पदावनत हुए। पोप अथवा तन्नियुक्त धर्माधिकारियोंके विना आदेश कोई धर्मकर्म कर न सकता था। उस समय अनेकोंने समझा—पोप ही सम्भवतः देवता और ईश्वरका अंश हैं! उनके भयसे कोई एक बात भी मुंह खोलकर कह न सकता था। उस समय पोपने ईसाई धर्मासन पर बैठ जा अत्याचार किया, उसे सुननेसे किसे हृत्कम्प नहीं हुआ! जो ईसाई पोपका नियम लांघता, वह यथाकाल उनके उपचार प्रदानसे विमुख जाता अथवा जो घुणाक्षरसे भी किसी विधर्मीका संसर्ग करलेता किंवा जो विधर्मी पोपका आदेश न मानता, उसका निस्तार हो न होता था। इसी प्रकार सैकड़ों व्यक्तियोंने अकालमें कालका आतिथ्य स्वीकार किया और हजारों लोगोंने कारायन्त्रणाका दुःख अपने ऊपर लिया। आबालवृद्धवनिता हजारों व्यक्तियोंने असीम मनोकष्ट पाया था। युरोपमें ऐसा कोई प्रदेश नहीं, जो पोपके उस दारुण दण्डविधि (Inquisition) से अव्याहति पाता। सर्व जीवोंपर प्रेम रखना जिस धर्मका मूलमन्त्र है, उसी धर्मके सर्वमय कर्ताका ऐसा कार्य! ईसाई इतिहासपर विषम कलङ्क लगाता है।

काथोलिकसे जेसुट (Jesuit) सम्प्रदायका जन्म हुआ है। जेसुट शब्दसे ईशाके समाजका अर्थ निकलता

है। ई० षोड़श शताब्दमें स्पेनदेशवासी इग्नेसिया लोयोला (Ignatius Loyola) नामक एक व्यक्तिने यह समाज बनाया था। उस समय भी स्पेन प्रभृति देश पोपकी धर्मनीतिके अधीन थे। पोपके आदेश विना किसी नूतन धर्मसमाजको बनानेके लिये किसीको अधिकार न था। सुतरां लोयोलाने पोपको समाचार दिया,—"ईश्वरादेशसे हम यह समाज स्थापन करनेके लिये अग्रसर हुये हैं। अब आपकी अनुमति सापेक्ष है।" पोप और उनके सदस्योंने लोयोलाका आवेदन सुना न था। लोयोलाने सोचा—यह कार्य पोपके हाथमें रखना चाहिये, नहीं तो सिद्धि मिलना कठिन है। उन्होंने फिर इसतरह आवेदन दिया,—"यह समाज पोपके सम्पूर्ण अधीन है। इसके लोग विशुद्धचरित्र, धर्माश्रमभक्त, पोपकी आज्ञाके अधीन और अति दीन दरिद्र हैं। इसके सन्तानोंको जो कुछ मिलेगा, उसीपर धर्मपिताका अधिकार रहेगा। जो जाति इस समाजमें आयेगी, ईसाई धर्मकी प्रजा ठहरेगी और पोपको धर्मपिता-जैसा मानेगी।" इतना प्रलोभन देख महामति पोप किसी बातपर आपत्ति लगा न सके; आवेदन ग्राह्य होनेपर जेसुट अपने कार्यक्षेत्रमें अग्रसर हुये।

पूर्वतन ईसाई याजकों और यतियोंने नियम रखा था—हम किसी सांसारिक कर्ममें लिप्त न होंगे, निर्जनमें निभृत स्थानपर बैठ केवल ईश्वरकी चिन्ता करेंगे और मानवको ज्ञानालोक देंगे। किन्तु जेसुट-समाजने इस सकल बन्धनको तोड़ डाला। नियम निकला था—अपर ईसाई याजक, यति और प्रधान धर्मोपदेष्टा जो सकल कार्य करेंगे, इस समाजके साथ हम उनका कोई संस्रव न रखेंगे। इस समाजके लोग देश, काल, अवस्था और पात्रके भेदसे कभी उन्मुक्त असिके हस्त, तथा कभी दीन दरिद्र वेशसे कभी राजाके प्रासाद एवं कभी कृषकके शस्यक्षेत्रमें पहुंच भयके प्रदर्शन, उद्दीपन अथवा प्रलोभन द्वारा स्व-स्व कार्य उद्धार करेंगे। जैसे बने, ईसाई धर्म चलाना ही इस समाजका मुख्य उद्देश्य है।

जेसुटोंको पोपने सनद दी थी। उसी सनदके बल वे पोपकी धर्मनीतिसे अधीन युरोपके सकल कार्थोलिक राज्यमें फैल पड़े और सर्वत्र बालक बालिका आदिको धर्मकी शिक्षा देने लगे। राह घाट जङ्गल पहाड़ नाना स्थानमें जेसुटोंकी गतिमतिसे वक्तृताका स्रोत फूट पड़ा था। सभ्य असभ्य उच्च नीच सैकड़ों व्यक्तियोंने जेसुटका मत मान लिया। जेसुट कितने ही राजावों और राजपरिवारोंके धर्मगुरु एवं दीक्षागुरु बन बैठे। वे केवल धर्मको ही चला शान्त न हुये, पोपकी सनदके बल भारत और अमेरिका आ वाणिज्यव्यवसायभी चलाने लगे। युरोपके नानास्थानोंमें उनके वाणिज्यालय खुला गये। वाणिज्यके ही लोभसे वे देश-विदेश पहुंच उपनिवेश करने लगे। इसी प्रकार वणिक्के वेशसे जेसुट दक्षिण अमेरिकामें शस्यशाली पारागुया राज्यके अधीश्वर बन बैठे। उन्होंने उक्त स्थानके आदिम अधिवासियोंको ईसाई धर्मकी दीक्षा दी। असभ्योंको जेसुटोंने सभ्य बनाया। देश रीतिके अनुसार उन्होंने यह प्रबन्ध भी किया,—स्थानीय आदिम अधिवासी युरोपकी किसी अपर जातिके साथ मिलने-जुलने न पायें। वैदेशिक आक्रमणसे राज्यकी रक्षा करना पड़ती है। इसीसे जेसुटोंने इन अधिवासीयोंको तोप, बन्दूक और तलवार चलाना सिखाया था। अब जेसुट दीन-हीन धर्मप्रचारक नहीं, पराक्रान्त वणिक् और अधिपति देख पड़ते हैं।

ई०के १३वें और १५वें शताब्दसे रोमन कार्थोलिक भारतमें बहुत आने लगे। उनमें अधिकांश ही पोर्तुगीज़ रहे। किन्तु तत्काल पोर्तगीज़ सिपाहियों और देशीय राजावोंके दारुण उत्पीड़नसे पोर्तगीज़ ईसाई यति कुछ भी कर न सके। उस समय भारतवासियोंने ईसाई यतियोंके साथ घोर अत्याचार एवं दुर्व्यवहार किया। ईसाई यतियोंके साथ सैकड़ों अपर व्यक्तियोंका रक्त बहा था। उस समय केवल पोर्तुगीजोंके अधिकृत गोया प्रभृति स्थानोंमें निर्विवाद ईसाई धर्म चला।

पोर्तुगालके राजा एमानुएल (१४९५—१५२१ ई०) और उनके पुत्र जोहनने (१५२१—५७ ई०) भारत-

वासियोंको ईसाई-धर्मकी दीक्षा देनेके लिये बड़ा उद्योग किया था। उन्हींके यत्नसे दुआर्ति-नुनेज (Duarte Nunez a Dominican) नामक एक व्यक्ति (१५१४—१७ ई०) सर्वप्रथम विशप (Bishop) बन भारत आये। वे जन-डि-आलबुकार्क (John de Albuquerque) गोया-नगरके सर्वप्रथम विशप हुये। किन्तु उस समय भी काथोलिक समाज भारतमें अपना अभीष्ट बना न सका था।

१५४२ ई०में सेण्ट जे़वियर नामक एक जेसुट भारत आये। मलबार, मदुरा तथा दक्षिण मन्द्राजके अनेक असभ्यों और तेनिवल्ली जिलेके परवर नामक केवर्तोंने सेण्टजे़वियरसे दीक्षा ली थी। दाक्षिणात्यके वे लोग आज भी सेण्टजे़वियर पर अतिशय भक्तिश्रद्धा रखते और अपनेको 'जे़वियरके सन्तान' कहते हैं।—जेसुट समाजमें सेण्टजे़वियर अतिशय सम्मानित हैं। उन्होंने भारतवर्ष व्यतीत भारत-महासागरके द्वीपपुञ्ज और जापानमें भी ईसाई धर्म चलाया था। अल्पसमय चीन-राज्यमें धर्म चलानेके लिये गये और वहां जा अनाहार अनिद्रासे १५५२ ई०की २२वीं दिसम्बरको नाङ्किन नगरमें कालके ग्रास पतित हुये। १५५४ ई०की १५ वीं मार्चको उनका अस्थि मंगाकर गोया नगरके रौप्याधारमें रखा गया।—१५४९ ई०को उक्त तेनिवल्ली जिलेमें एण्टानिओ-क्रिमिनेल नामक एक विख्यात जेसुट किसी भारतवासीके हाथों निहत हुआ था। उसके पर वर्ष भी अनेक संभ्रान्त जेसुटोंने धर्म चलाने आ विषम शास्ति उठायी। १५५० ई०को बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत थाने नगरमें जेसुटोंका एक धर्मालय बना। इस स्थानमें विस्तर असभ्योंको ईसाई धर्मकी दीक्षा मिली। थाना देखो।

१६०६ ई०में राबर्ट डि नोबिली नामक एक सम्भ्रान्त जेसुट इटलीसे मन्द्राजके उपकूल आये। उन्होंने जिस प्रकार यहां आकर ईसाई धर्म चलाया, वह बहुत ही अद्भुत और कौतूहलोद्दीपक था। उन्होंने सोचा,—'भारतवासी हिन्दू युरोपीयोंसे म्लेच्छकी तरह अतिशय घृणा करते हैं, सुतरां कोई उच्च हिन्दू सहजमें युरोपीयोंके मुखसे धर्मकी बात नहीं सुनते। विशेषतः बहुदिनसे वे जिस धर्म और विश्वासपर चलते हैं, उसे भी एककाल सामान्य मानव हटा नहीं सकते।' इसीसे उन्होंने प्रथम भारतका आचार-व्यवहार समझा। वे अपनेको नाम तथा जन्मस्थान छिपा 'रोमक ब्राह्मण' बताया करते थे। फिर उन्होंने अनेक कष्ट उठा सन्यासीके वेशमें ब्राह्मण पण्डितोंसे संस्कृत और तामिल भाषा सीखी। कुछ दिन बाद नोबिलीका नाम 'तत्त्वबोधस्वामी' पड़ गया। द्राविड़के ब्राह्मणोंने तत्त्वबोधको 'रोमक ब्राह्मण' मान लिया था। जेसुट सन्यासी उन लोगोंके आश्रयसे घूमफिर स्वकार्य बनाने लगे। प्रथम उन्होंने तामिल भाषामें 'आत्मनिर्णयविवेक' और 'पुनर्जन्म आक्षेप' नामक दो ग्रन्थ लिखे। उनमें उन्होंने वेदान्तके मतसे सिद्ध आत्मतत्त्व एवं परलोकका विषय और पुनर्जन्मके सम्बन्धमें पुराणका मत काट डाला। हिन्दू दार्शनिकोंमें बहुतसे उनके ग्रन्थ पढ़कर चिढ़ गये और उनकी बात शास्त्रके विरुद्ध समझ उपहास करने लगे। इसपर उन्होंने निज मतको समर्थन करनेके लिये कल्पित वेद और उपवेद लिखना आरम्भ किया। उनके रचित एक कल्पित उपवेदमें लिखा है,—

"ब्रह्मा न ईश्वरो नित्य नावतारश्च निश्चयः।
न स्रष्टिः तस्य जगतः केवलं नररूपकः॥
यथा त्वञ्च तथा स हि विशेषो नास्ति किञ्चन।
सृष्टिं नाशं पालनन्तु करोति स स्वयम्भुः।
तस्यावतारो नास्त्येव गुणादि स्पर्शनं तथा॥"

ब्रह्मा न तो नित्य ईश्वर, न ईश्वरके अवतार और न जगत्के स्रष्टा ही हैं। वे सामान्य मानवमात्र ठहरते हैं। स्वयम्भू ईश्वर ही सृष्टि, नाश और पालन करता है। उसमें अवतार किंवा स्पर्शादि गुण नहीं होता।

इसीप्रकार गुप्त भावसे जेसुट सन्यासीने हिन्दुओंके धर्मपर आक्रमण किया। अनेक अल्पबुद्धि ब्राह्मणोंने उनके कल्पित वेदपर विश्वासकर और उसे वैदिक धर्म समझ ईसाई धर्म मान लिया था। (ऐसे ही कल्पित वेदका एक पुस्तक श्रीरङ्गके प्रधान देवमन्दिरमें मिला है।)*

* Asiatic Researches, Vol. XIV. p. 2.

अच्छन्नभावसे उनके मध्य हिन्दुओंके धर्ममें ईसाई धर्म मिल गया। इसीप्रकार नोबिलीने ४५वर्ष नङ्गेपैरों सन्न्यासीके वेशमें रह और मुखपर भस्म लगा सैकड़ों निर्बोध हिन्दुओंको ईसाई धर्मकी दीक्षा दी थी। आज भी मन्द्राजके निकटवर्ती अनेक देशी ईसाई नोबिलीको 'तत्त्वबोधस्वामी' और 'सिद्धपुरुष' समझते हैं। ईसाई धर्मप्रचारकोंने लिखा है,—ईसाके अन्यतम शिष्य सेण्ट टोमस और उनके बहुत पीछे सेण्ट जे.वियर जो कर न सके, जेसुट सन्न्यासी रबर्ट-डि-नोबिली उससे शत गुण कार्य करके देखा गये। ईसाई-पण्डित मसीमने अपने रचित ईसाई-याजकोंके इतिहासमें कहा है,—"भारतमें जेसुट अपनेको ब्राह्मण बताते थे। मनमें आता है, कि जेसुट-याजकोंने असम्भव और भयङ्कर कार्य बनाया था। किन्तु वास्तविक वैसा नहीं हुआ। वे देखनेमें सन्न्यासी रहे, किन्तु इधर गुप्त भावसे मद्य पीते, मांस खाते और रमणीकी सेवा करते थे।"*

१६५६ ई०में जेसुट-सन्न्यासी रबर्टके मरनेपर जेसुटोंने उनके अनुवर्ती बन कुछ दिन ईसाई धर्मको चलाया। उनके प्रलोभनसे मदुरा, त्रिशिरापल्ली, तञ्जोर, तेनिवल्ली, सलेम प्रभृति स्थानोंके अनेक नीच लोग ईसाई धर्ममें दीक्षित हुये।

इधर गोया नगरमें ईसाई-धर्माचार्य प्रतिष्ठित होनेपर पोर्तुगीज ईसाई एक ओर भारतमें राज्य और दूसरी ओर असिके बलसे ईसाई धर्म चलाने आगे बढ़े। पोपने युरोपमें जो दारुण दण्डविधि (Inquisition) चलाया, पोर्तगीजोंके अधिकृत भारतमें भी उसीका नियम निकल पड़ा। पोर्तुगीजोंका अत्याचार भारतमय राष्ट्र बना और इसी दोषके कारण भारतसे पोर्तुगीज पराक्रम चिर दिनके लिये खर्व हुआ। पोर्तुगीज देखो।

ई० १६वें शताब्दके शेष भागमें युरोपके प्रधान-प्रधान ईसाई जेसुटोंकी धर्मप्रणालीका तीव्र प्रतिवाद करने लगे थे। सकलने ही कहना आरम्भ किया,—"जेसुटोंको प्रकृत धर्मप्रचारक समझ नहीं सकते। वे यहूदियोंसे यहूदियोंके मनोमत बात करते, मुसलमानोंमें मुहम्मदकी दोहाई देते और हिन्दुओंसे अपनेको ब्राह्मण बताते हैं। ऐसे प्रतारक और स्वार्थपर समाजसे ईसाई समाजका प्रकृत हितसाधन नहीं बन सकता।"

जेसुट अपने धर्मकी नीतिका निगूढ़ रहस्य अपरिचित किंवा खदलस्थ किसी व्यक्तिको कभी बताते न थे। प्रोटेष्टाण्टोंके अभ्युदयसे पोपकी असाधारण क्षमता घटी और युरोपके प्रधान प्रधान ईसाई-पण्डितोंसे उनकी अधीनता छूटी। उस विलुप्त गौरवके उद्धार करनेके लिये ही जेसुट निःस्वार्थ बन न सके। क्योंकि उनकी धर्मनीतिसे पोप और जेसुट समाजका स्वार्थ लगा था। जेसुटोंमें असाधारण पण्डित और अनेक महापुरुष उपजते भी केवल स्वार्थके कारण ही उनका अधःपतन हुआ। १६०४ ई०में इङ्गलेण्डसे जेसुट निकाले गये। पीछे वे अपर राज्यसे भी ताड़ित हुये। १७७३ ई०में क्लेमेण्ट नामक पोपने साधारणके प्रतिवादसे बहुत ही विरक्त हो जेसुट समाज बिलकुल तोड़ डाला था। अनन्तर जेसुट रोमन काथोलिक कहलाने लगे।

जातिभेदका अस्वीकार और सार्वजनिक भ्रातृभावका स्थापन ईसाई धर्मका प्रधान अङ्ग है। आदि ईसाई इसीसे साधारणकी भक्ति एवं श्रद्धाके पात्र बने और इसीसे समग्र युरोपके लोग उनका मत मानने लगे। किन्तु रोमक-समाजके प्रादुर्भाव कालमें यह नियम न रहा। दाक्षिणात्यके अनेक लोगोंको ईसाई धर्ममें दीक्षित करते भी वे जातिभेदकी प्रथा रोक न सके। गिर्जामें भी उपासनाके समय उच्चजातिके आगे और नीच जातिके लोग पीछे बैठते, निम्न श्रेणीवाले बैठनेको आसन पाते न थे। दाक्षिणात्यमें जो उच्च श्रेणीके लोग दीक्षित हुये, वे नीच जातिवालों पर कर्तृत्व और याजकता रखते; किन्तु नीच जातिवाले उच्च श्रेणीवालोंका कोई कार्य कभी कर न सकते। वस्तुतः दाक्षिणात्यमें जो ईसाई हुये, वे नाममात्रके ही ईसाई रहे। उस जातिका प्रधान अङ्ग वर्णभेदकी प्रथा चली जाती थी। आज भी दाक्षिणात्यमें उन्हीं सकल देशी ईसाइयोंके वंशधरोंने

* Mosheim's Ecclesiastical History.

प्राय: कितना ही पूर्वभाव बनाया है। किन्तु अब ईसाईधर्मका प्रबल स्रोत वह निकला है इसलिये किसी बातका ठिकाना नहीं लगता। इसी भारतवर्षमें देशी और विदेशी मिलाकर चौदह लाखसे ऊपर काथोलिक ईसाई रहते हैं। अंगरेजोंके राजत्वसे प्राय: सकल युरोपीय देशोंके धर्मप्रचारक भारतमें आ टिके हैं। अधिकांश काथोलिक गिर्जा और ईसाई-याजक गोया-वाले धर्माचार्यके अधीन हैं।

सिरीयक-समाज।

सिरीयक ईसाई समाज अतिप्राचीन और अन्ति-योक तथा जेरूसलमवाले प्रधान धर्मगुरुके (Patriarch) अधीन है। पूर्वकालमें यह समाज अतिशय समृद्धिशाली हो गया था। ई०के ४थे शताब्दमें इस समाजके अधीन ११८ बिशप (Bishop) और प्राय: दश लाखसे अधिक ईसाई रहे। आजकल यह समाज मेरोनाइट, याकूबी, असली सिरीयक और मेलकाइट (ग्रीक) चार संप्रदयोंमें विभक्त हो गया है। ई०के पञ्चम शताब्दमें ईसा मसीहके अवतार सम्बन्धपर इस समाजमें एक झगड़ा पड़ा। ४४४ ई०को यूटिकेस (Eutyches) नामक एक पादरीने कनस्तान्तिनोपलमें प्रचार किया—'अवतार होनेसे पूर्व ईसा मसीहका आत्मा ईश्वरसे मिला था; अवतार होनेसे पीछे भी वह पूर्वभाव नहीं गया। ईसाके देव और मानव दोनो प्रकृति रहते भी मानवप्रकृति देवप्रकृतिसे जा मिली थी।' इसी मतभेदपर सिरीयक-समाजमें विषम तर्क वितर्क खड़ा हुआ। कनस्तान्तिनोपलके प्रधान धर्मगुरु (Patriarch) फ्लूरियान्ने एक महासमिति आह्वान की। इस महासमितिने उक्त मत न माना। किन्तु ४४९ ई०को जोफिसासकी महासभामें मिश्र-वाले ईसाई उदासीनके प्रबल आन्दोलनसे यूटिकेसका मत फिर सादर मान लिया गया। फ्लूरियान् और उनके सहचरका पद घटा था। उस समय सिरीयकसमाजमें उपरोक्त मत ईसाई धर्मके मूलतत्त्वकी तरह चल पड़ा; किन्तु अधिक दिन न ठहरा। कालसिडनकी महासभामें ६५० बिशप लोगोंके विचारसे माना गया था,—'पूर्वमत अत्यन्त असङ्गत और ईसाई धर्मके विरुद्ध रहनेसे अग्राह्य है। ईसा मसीहकी देव और मानव प्रकृति एकत्र निबद्ध है। वस्तु गतिसे कोई प्रभेद नहीं।' यूटिकेसके मतको मानकर उस समय कई समाज बन गये थे। उनके मरनेपर भी उक्त मत सैकड़ोंवर्ष चला। इस समाजके लोगोंमें परवर्तीकाल कोई कोई फिर मोनोफिसाइट (Monophysites) अर्थात् ईसाके एक-प्रकृतिवादी नामसे विख्यात हुये। वही एकप्रकृतिवाद आज भी याकूबी (Jacobites) समाजमें चलता है।

यूफ्राइटोंके मत-वैषम्यसे सिरीयक समाजका पूर्व गौरव घटने लगा। शेषमें इसलाम धर्मके अभ्युदयसे अत्यन्त अवनति हुई। ई०के ७म शताब्दमें इस समाज-पर अधिक विपद् पड़ी थी। ई०के ८म शताब्दमें मेरो-नाइटोंने मुसलमानोंके अत्याचारसे लेबेनन पर्वतपर रह स्व-धर्म बचाया। ये मेरोनाइट ही आदि सिरीयक ईसाईवंशसे उत्पन्न हैं। किसीके मतानु-सार ६३० ई०को सम्राट् हेराक्लियस्के समय सिरीयक समाजमें मोनोथेलाइट (Monothelite) अर्थात् ईसाके एकेच्छावादी नामसे निकलने और ६८० ई०को षष्ठ महासमितिमें ईसाई धर्मका विरुद्धवादी माना जानेसे उठनेवाले सम्प्रदायके हो ये मेरोनाइट सन्तान हैं। ई०के ५म शताब्दको मेरोण-आश्रममें मेरो नामक एक धर्मगुरु रहते थे। उन्हींको इस सम्प्रदायके अपना प्रधान-जैसा माननेसे 'मेरोनाइट' (Meronite) नाम निकला। मुसलमानोंके आधिपत्यकाल सिरी-यक समाजमें केवल मेरोनाइट ही धर्म और स्वाधीनता बचा सके थे। ई०के १२श शताब्दको जेरूसलममें रोमक समाज जमनेसे इन्होंने एकेच्छावाद छोड़ रोमक समाजकी अधीनता मान ली। १५८४ ई०को मेरो-नाइट याजककी अध्यापनाके लिये रोममें एक विश्व-विद्यालय खुला था। रोमक समाजकी अधीनता मानते भी इस सम्प्रदायके ईसाई जातीय क्रियाकलाप और आचार-व्यवहारमें सम्पूर्ण अधिकार रखते हैं। सिरीयक-भाषामें उपासनादि कर्म होता है। याज-कता करनेसे पूर्व विवाहित होनेपर याजक पत्नीके साथ रह सकता है, किन्तु याजकता पाने पर विवाह

करनेका अधिकार नहीं रखता। इस समाजको प्रति दशम वर्ष पोपसे धर्मराज्यको आभ्यन्तरिक अवस्था बताना पड़ती है।

याकूबी या जाकोबाइट (Jacobite) सम्प्रदायके लोग पहले आदि-सिरीयक समाजका मत मानकर चलते थे। याकूब-बरदाई (Jacobus Baradaeus) नामक एक सिरीयक यति इस सम्प्रदायके थे। उन्हींके नामपर यह सम्प्रदाय याकूबी कहाया है। इसका पूर्वनाम मोनोफिसाइट (Monophysite) अर्थात् एकप्रकृतिवादी है। मोनोफिसाइटोंके मतसे ईसाकी प्रकृति एक ही रही, मानवप्रकृति ही क्रमसे दैवी प्रकृति बन गयी। नेष्टोरियासके मत विरुद्ध प्रथम यह मत निकला था। यूटिकेस्का मत उठनेपर कालसिडनकी सभासे ही मोनोफिसाइट नाम चल पड़ा। इस सभामें स्थिर हुआ था,—'ईसामें एकाधार दो प्रकृति विद्यमान हैं। उनका परिवर्तन वा विभाग कोई समझ नहीं सकता।' किन्तु साधारण सिरीयक ईसाइयोंका मन इस बातसे बिगड़ गया था। तर्क-वितर्क, वाद-प्रतिवाद, विरुद्धवादियोंमें परस्पर लड़ाई झगड़ा लातजूता और शेषमें लाठी-सोटा चलने लगा। ई०के ६ठे शताब्दको मोनोफिसाइट सम्प्रदाय आदि सिरीयक समाजसे पृथक् हुआ। उसके पीछे सम्राट् जष्टिन् और जष्टिनियान्के इस सम्प्रदायको छोड़ रोमक-समाजमें जा मिलनेसे इन लोगोंपर बड़ा गड़बड़ पड़ा था। इनमें परस्पर एकता न रही। फिर इस समाजसे कितने ही नूतन दल निकले थे। उनमें एक दलका नाम 'अकेफोलोई' (Akepholoi) पड़ा। ५१८ ई०को विषम तर्क उठा था—ईसाका शरीर भ्रष्ट है या नहीं। अन्तियोकके सेवेरास् नामक पदच्युत बिशपके शिष्योंने (Seberians) प्रचार किया, ईसाका शरीर भ्रष्ट है। उधर गजनास् नामक बिशपके शिष्य (Gajanites) कहते फिरे,—ईसाका शरीर कभी भ्रष्ट नहीं। इसीप्रकार प्रथम दल 'फर्तोलोट्रिष्ट' (Phthartolotrist) अर्थात् भ्रष्टोपासक और द्वितीय दल 'अफर्तादोसिटी' (Aphthartadocetæ) अर्थात् पूतदेह-पूजक वा शिक्षक कहाया। द्वितीय दलने फिर तर्क उठाया था,—ईसाका देह सृष्ट है या नहीं? 'अकतिस्तेतोई' (Aktistetoi) अर्थात् असृष्टिवादीने कहा—सृष्ट नहीं। 'किष्टोलट्रिष्ट' (Kistolatrist) अर्थात् सृष्टिवादीने प्रमाण करके देखा दिया—हां सृष्ट है।

इन लोगोंमें फिर 'अग्नितोई' (Agnœtoi) नामक तीसरा दल निकला था। उसने प्रचार किया,—ईसा मानव नहीं, सर्वशक्तिमान् थे। ५६० ई०को एकप्रकृतिवादीमें अस्कुनगेश (Askunages) नामक एक व्यक्ति और उनके पीछे फिलोपोनस् (Philoponus) नामक किसी पण्डितने घोषणा की,—ईश्वर, ईसा और दिव्यात्मा तीनो अलग-अलग स्वतन्त्र हैं। किन्तु इस मतको एकप्रकृतिवादीने ईसाई धर्मके विरुद्ध समझ माना न था। मिशर, सिरीया और मेसोपोटेमिया प्रभृति स्थानोंमें उक्त मतावलम्बी बहुत दिनतक प्रबल रहे। ये अलेकजन्द्रिया और अन्तियोकके धर्मगुरुका धर्मानुशासन स्वीकार करते थे। ई०के ६ठें शताब्दमें याकुब-बर्दाइयोंके अभ्युदयसे उन्होंने स्वाधीन समाज बना लिया। उनमें कोई-कोई आर्मेनी समाजसे जा मिला था।

आदि-सिरीयक ईसाई पोपका प्राधान्य नहीं मानते। उनकी बाइबिल सिरीयक भाषामें लिखी है। उसीके द्वारा उपासनादि कर्म होता है। दूसरा धर्मकाण्ड ग्रीक-समाज-जैसा है। उनके पुरोहित याजक होनेसे पूर्व विवाह कर सकते हैं, किन्तु पीछे नहीं। उन्हें द्वितीय दारपरिग्रह करनेका भी अधिकार प्राप्त नहीं। बिशपोंको एकबारगी ही विवाह करना मना है। वे सिद्धपुरुषका चित्र रखते और उसका स्तव करते हैं। रमणी बहुत धर्मशीला होती हैं। स्त्री-पुरुष उभय उपवासादि किया करते हैं, किन्तु उनकी संख्या अति अल्प है।

नेष्टोरियान (Nestorians)

ई०के ५वें शताब्द सिरीयक-समाजमें नेष्टोरियास् नामक एक महात्माने जन्म लिया था। उनके वाक्पटुता और सदुपदेशसे देशीय सकल लोग मुग्ध हुये। ४२८ ई०को वह कनस्तान्तिनोपलके धर्मगुरु

(Patriarch) बने थे। उक्त उच्चासन मिलनेसे अल्पकाल पीछे ही ईसाके देव और मानव प्रकृति-सम्बन्धपर घोरतर तर्क चला। अनाष्टेसिया नामक एक पुरोहित नेष्टोरियाके साथ कनस्तान्तिनोपल पहुंचे थे। एक दिन उन्होंने उपदेश देते समय कहा,—कुमारी मेरी ईश्वर वा देवपुरुषकी माता हो नहीं सकती, वह मानव ईसाकी माता हैं। इस बातको सुनकर अनेकोंने समझा, कि वह नेष्टोरियाका मत था। नेष्टोरियाने अपनी बात समर्थन करनेके लिये घोषणा की—'ईसाकी दोनो प्रकृतिमें भेद है। उनका देह मानवप्रकृतिसे बना, किन्तु उनका उपदेश देवप्रकृतिसे छना है।' उस समय ईसाई-जगत्‌में इस बातपर तुमुल आन्दोलन उठा था। अलेकजन्द्रियाके धर्माचार्य सेण्ट-साइरिल उनसे बिगड़ पड़े। फिर रोमसे बिशप सिलेष्टाइनने नेष्टोरियासे कहला भेजा,—यदि तुम अपना मङ्गल चाहो, तो शीघ्र ही इस दुष्ट मतको छोड़ो। किन्तु नेष्टोरियाने किसी बातसे महासभामें पदच्युत होते भी अपना मत न छोड़ा। इसलिये कनस्तान्तिनोपलके एक धर्माश्रममें चार वर्षतक वह कैद रहे थे। किन्तु उससे भी उनका विश्वास किसी प्रकार न घटा। अतःपर वह मिश्रकी महामरुभूमिमें निर्वासित किये गये।

नेष्टोरियाके मत माननेवाले व्यक्तिको ही नेष्टोरियान् (Nestorian) कहते हैं। आजकल नेष्टोरियान् एक पृथक् समाज समझा जाता है। इफेसासकी सभासे पदच्युत होनेपर भी नेष्टोरियाका मत आसीरिया, पारस्य प्रभृति नाना स्थानोंमें बढ गया था। अल्प दिनमें रोमके शासनाधीन सकल स्थानोंसे उठ जाते भी ईरान, अरब, भारतवर्ष प्रभृति नाना स्थानमें नेष्टोरियान् समाज स्थापित हुआ। सिरीय भाषामें लिखित एक शिलालिपि द्वारा मालूम पड़ा है,—ई०के ७वें शताब्दमें नेष्टोरियान् ईसाई चीन राज्यमें धर्मप्रचार करने गये थे। तुर्कस्थानमें खलीफावों और मध्य एसियामें मुग़ल-बादशाहोंने नेष्टोरियानोंको आश्रय दिया। प्रसिद्ध चङ्गेज़ खान्‌की पत्नी एक नेष्टोरियान्-कन्या थीं। सुनते हैं—मध्य एसियाके नेष्टोरियान् धर्मग्रहण करनेवाले मुग़ल बादशाहोंमें काराकोरमके अधिपति अवङ्कखान् प्रधान थे। चङ्गेज़ खान्‌से हारनेपर उन्होंने अपनेको प्रेष्टर-जोआनो (Prester John) अर्थात् जोहन (नामक) याजक बताया था।

ई०के १६वें शताब्दको नेष्टोरियान् समाजमें कुछ गड़बड़ पड़ा था। उस समय कितने ही लोगोंने बाध्य हो पोपकी अधीनता स्वीकार की। आजकल उन्हें कालदी ईसाई कहते हैं। वे सकल ही प्राचीन मत मानते हैं। कुर्दिस्थानके पार्वतीय राज्यमें इस समय प्रधानतः नेष्टोरियान् रहा करते हैं। किन्तु वे दरिद्र और मूर्ख हो गये हैं। उनके पुरोहित और निम्नश्रेणीके याजक विवाह कर सकते हैं। विवाहादिमें धर्माचार्यका मत लेना पड़ता है। वह मृतकी मूर्तिके उद्देशसे स्तवपाठ करते और सिवा क्रूशके ईसाकी दूसरी मूर्ति नहीं पूजते।

भारतवर्षमें भी बहु दिनसे नेष्टोरियान् देखाते और वे दक्षिणापथके मलबारमें सिरीयक ईसाई कहाते हैं। त्रिवाङ्कुड़में सिरीयक ईसायियोंके सन्तान आजकल 'नसरानी मापिल्ला' नामसे अभिहित हैं। इसके सम्बन्धमें कुछ मतभेद है—किस समय भारतमें सर्वप्रथम ईसाई आये। किसी-किसी मतसे ईसा मसीहके अन्यतम शिष्य सेण्ट टोमस अरब, ईरान् आदि स्थानोंमें धर्मप्रचार कर ६५ ई०को भारत पहुंचे थे। उन्हींसे यहां सिरीयक ईसायियोंकी उत्पत्ति है।

दाक्षिणात्यके 'नसरानी मापिल्ला' और नीच-जातीय ईसायियोंमें अनेक सेण्ट टोमसको धर्मपिता एवं खास ईसा मसीह समझते हैं। बहुतसे लोगोंको विश्वास है—६८ ई०को २१ वीं दिसम्बरको सेण्ट टोमस ही मन्द्राजके पार्श्ववर्ती माइलापुर नामक स्थानमें ब्राह्मणोंकी उत्तेजनासे हिन्दू अधिवासोकर्तृक निहत हुये थे। कोई कोई कहता है—पारस्यवासी मनिके शिष्य टोमस-मनिकीयने (Thomas the Manichœan) ई०के ३रे शताब्दमें भारत पहुंच अभिनव ईसाई धर्म चलाया था। दाक्षिणात्यवासी टोमस उन्हींके शिष्य हैं।

एक दूसरा प्रवाद है—'ई०के ८वें शताब्दमें टोमस-काना नामक एक अर्मेनी बणिक् मलबार उपकूलपर वाणिज्य करने आये थे। उन्होंने दो सुन्दर केरल-रमणीसे विवाह किया। देशी राजगणसे सद्भाव रहा। उन्होंने देखा—पूर्व मलबार उपकूलपर जो ईसाई थे, वे हिन्दुओंके अत्याचारसे एककाल ही विलुप्त हो गये हैं। अति अल्प संख्यक देशीय ईसाई वनमें पर्वत-पर गुप्त जीवन बिताते हैं। उनके मनमें ईसाई धर्म चलानेकी आयी। देशीय राजगणसे उन्होंने अनुमति ले ली—ईसाई स्व-स्व धर्मकी प्रथासे जो कार्य करेंगे, उसमें देशी लोग कोई बाधा डाल न सकेंगे। राजगणकी अनुमतिपर उन्होंने वन पर्वतसे ईसाइयों-को फिर ला मलबारमें बैठा दिया। टोमस स्वयं उनके प्रधान धर्माचार्य बने थे। उसी समयसे यहांके ईसाई अपनेको टोमस के शिष्य बताने लगे।

उपरोक्त तीनों टोमसोंपर ही झगड़ा है। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि शेषोक्त टोमससे भी पूर्व-भारतमें ईसाई धर्म आ घुसा था। ई०के ३रे शताब्दमें हिपोलिटस्ने (Hippolytus, Bishop of Portus) लिखा है,—ईसाके बारह प्रधान शिष्योंमें सेण्ट बार्थलमेउ (St. Bartholomew) ईसाई धर्म चलाने भारत गये थे। फिर सेण्ट टोमस पारस्य और मध्य-एसियामें ईसाई धर्म चला शेषको भारतके 'कालमिना' नगर पहुंच मरे।

५४७ ई०को कोसमोस् इण्डिकोप्लुष्टेस्ने (Cosmos Indico-pleustes) भी लिखा है—मलबारके बिशप पारस्यसे नियुक्त हुये। किन्तु उन्होंने सेण्ट टोमसका नाम नहीं लिया। यदि ईसाके शिष्य सेण्ट टोमससे मलबारवासी ईसाइयोंका कोई संस्रव रहता, तो अवश्य ही उन्होंने लिख दिया होता। इससे समझ पड़ता है—ईसाके शिष्य सेण्ट टोमस मलबार उपकूलमें अपना धर्म चलाने आये न थे। फिर भी उत्तर भारतके किसी स्थानमें वे मरे होंगे।

मन्द्राजके पार्श्वपर सेण्ट टोमस नामक एक पर्वत है। यहां प्राचीन पह्लवी भाषामें क्रूशपर खुदी एक लिपि निकली है। साधारणका विश्वास है—इसी पर्वतके पास सेण्ट टोमस मारे गये थे। किन्तु उक्त खुदी पह्लवी लिपि द्वारा अनायास ही मालूम पड़ता है—पारस्यवासी मनिके* शिष्य सेण्ट टोमसने ही

---

* कारबिकास् नामक एक साधारण मनुष्य थे। जब उनका वयस सात वत्सर हुआ, तब बाबिलनकी किसी विधवा रमणीने उन्हें मोल ले अपने घर रखा। विधवा मरने पर क्रीतदास कारबिकास् उसकी सम्पत्तिके उत्तराधिकारी बने। अतुल ऐश्वर्य पाकर उन्होंने अपना पहला नाम बदला और नये मनि नामसे परिचय दिया। फिर वे पारस्य-राज्यमें आकर रहने लगे। अपनी प्रतिपालिकाके साहाय्यसे मनिको विशेष शिक्षा मिली थी। पारस्यमें रह मनिने इञ्जील (New Testament) और अपरापर ईसाई धर्मके ग्रन्थोंको पढ़ा, तथा ईसाई धर्मके संमिश्रणसे पारसीक एवं बौद्ध धर्मका कितना ही मतामत जुटा एक अभिनव ईसाई सम्प्रदाय स्थापन करनेका उद्योग लगाया। यह उद्देश्य साधन-करनेके लिये उन्होंने अपनेको ईसाका प्रेरित शिष्य वा दूत (Apostle) बताया था। इससे भी सन्तुष्ट न हो उन्होंने कहा,—'मैं वही पाराक्लिट हूं, जिसे ईसा मसीहने भविष्यत्में भेजनेकी प्रतिज्ञा की थी। मेरे देहमें दिव्यात्मा स्वाधीन भावसे रहता है।'

क्षमता देखकर पारस्य-राजने उन्हें निज पुत्रकी चिकित्सामें लगाया था। किन्तु राजपुत्रको आरोग्य कर न सकनेसे पारस्यराजने उन्हें कारागारमें डाल दिया। कारागारसे मनि कौशलपूर्वक भागे, किन्तु फिर पकड़ लिये गये। २७७ ई०को जोनदिशापुरमें पारस्यराजके आदेशसे मनिका वध हुआ। शरीरका चर्म घातकने खींच उधेड़ डाला था। अद्दास, टोमस, हरमूज प्रभृति कई शिष्य उनका निकाला मिश्रित ईसाई धर्म चलाते रहे। उनके प्रवर्तित ईसाई सम्प्रदायका नाम मनिकीय (Manichaean) है।

यह सम्प्रदाय वर्तमान ईसाई समाजसे अनेक विभिन्न है। मनिने प्रचार किया था,—इस दृश्यमान और अदृश्यमान जगत्के केवल दो मूल कारण हैं, एक सत् वा आलोक (सूक्ष्मप्रकृति Good or light) और दूसरा तमः (जड़प्रकृति Evil or Darkness)। मनिकीय उसी बातको मानते हैं। मनिकीयोंके मतमें आत्मा सूक्ष्मप्रकृति और शरीर जड़प्रकृतिसे उपजा है। यह शक्तिद्वय अनन्तव्यापी सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरका अंशमात्र है। एकमात्र ईश्वरसे ही सत्शक्तिका (Light) मूलकारण निरूपित होता है। तामसिक शक्ति (Darkness)-का राज्य एकमात्र प्रेत वा शैतान् (Demon) द्वारा परिचालित है। परस्पर विरोध बढ़नेपर ईश्वरने प्रेतको स्वर्गराज्यसे निकाल दिया था। प्रेतने तमोराज्यसे आदि मानव (Adam and Eve)को बनाया। प्रेत द्वारा बनाये जानेसे ही मनुष्यके शरीरमें पाप और आत्मामें पुण्यने आश्रय लिया। आत्मा भी क्रमशः पापके संस्रवसे कलुषित हो गया। कलुषित मानवके लिये ईश्वरने पहले पृथिवी और पीछे देहपिञ्जरसे आत्मा निकालने तथा

दाक्षिणात्यमें सर्वप्रथम ईसाई धर्म चलाया था। दाक्षिणात्यवासी देशी ईसाई उन्हींको अपना धर्मपिता और ई०के १४वें शताब्दसे पूर्वावधि स्वयं ईसा मसीह जैसा समझते थे। वे पारस्यसे आये नेष्टोरियान बिशप-की आज्ञाके अधीन थे। ई०के ७वें शताब्दमें पारस्यके ईसाई समाजने अपनेको टोमस ईसाईके नामसे अभिहित किया, जिसके अनुसार मलवारस्थ अन्य ईसाइयोंने भी अपना नाम 'टोमस ईसाई' रख लिया। मलवारस्थ ईसाइयोंकी संख्या अधिक रहते भी देशी लोगोंके उत्पीड़नसे अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी। ६६० ई०को धर्माचार्य जेसजाबुसने (Jesajabus) पारस्यके प्रधान ईसाई याजकको एक पत्र लिखा। उसके पढ़नेसे समझ पड़ता है—ऐसा कोई आदमी न था, जो मलबार उपकूलके देशी ईसायियोंको भलीभांति उपदेश देता। ई०के ८वें शताब्दमें अर्नना टोमसने लिखा था,—मलबारके ईसाई वन्यपशुको तरह वन और गिरि-गह्वरमें रहते हैं। ई०के १४वें शताब्दमें जोर्दनास्‌ने (Friar Jordanus) देखा था—वे नाममात्रके ईसाई हैं, उनमें दीक्षा (Baptism) नहीं। आज भी कनाड़ाप्रदेशके अनेक असभ्य हिन्दुओंमें ईसाई धर्मके चिह्न मिलते हैं। इससे बोध होता है—'वे सकल असभ्य अनेक दिन ईसाई रहे होंगे। उन्होंने हिन्दुओंका भय अथवा अपनी शोचनीय अवस्था देख और हिन्दुओंके समाजमें समानेका कोई उपाय न पा क्रम-क्रमसे हिन्दूधर्म पकड़ा होगा।' वास्को-डि-गामाके आनेसे पहले मलबारी ईसाई स्थानीय नृपतिके अधीन सैनिक विभागमें घुस सके। उस समय धर्मकर्म चलानेको नेष्टोरियान्‌ बिशप, याजक, पुरोहित प्रभृति लगे थे। पोर्तुगीज़ नौसेनापति भारतमें जहां प्रथम उतरे, वहीं ईसाई उनसे जा मिले। पोर्तुगीजोंके साथ जो सकल याजक रहे, वह उक्त ईसाइयोंको काथोलिक समाजमें मिलानेकी चेष्टा करने लगे। उनको उत्तेजनासे १५६० ई०को भारतमें पोर्तुगीजोंके अधिकृत स्थानपर विधर्मियोंका विचारालय खुला था। अनेक तर्कवितर्क पर इतना विसम्वाद बढ़ा, कि बहुतोंको स्वमत रक्षार्थ रक्त बहाना पड़ा।

१५९९ ई०को कोचीनके निकटवर्ती उदयम्पूर नगरमें गोयाके प्रधान धर्माचार्यने (Arch-bishop) एक महासभा लगायी थी। वहां विस्तर आलोचनाके बाद सिरीयक ईसाई रोमक-समाजमें मिल गये।* इसी प्रकार भारतसे नेष्टोरियान्‌ समाज उखड़ा था। सिरीयक ईसायियोंने रोमक-समाजकी अधीनता

पापसे उक्त स्वर्गीय पदार्थ बचानेके लिये ईसा मसीह एवं दिव्यात्माको बनाया था। पवित्रात्मा (Intelligences)-के मध्य ईसा मसीह भी एक जन हैं। वे सूर्यलोकमें रहते थे। फिर मानवका पाप छोड़ाने और आत्माकी मुक्ति बनानेको यहूदियोंमें मनुष्यके शरीरपर ईसा अवतीर्ण हुये। यहूदियोंने तमोसे अन्धे बन उन्हें क्रूशपर चढ़ाया था। किन्तु उनका मरण न हुआ, उन्होंने मानवका पाप निज रक्तसे धो डाला। पृथिवीके सकल कार्य शेष कर पुनरुत्थानपूर्वक ईसा निज राज्य सूर्य-लोकको चले गये। उन्होंने जाते समय निज धर्म चलाने और निज शिष्यको सान्त्वना पहुंचानेके लिये दूतस्वरूपसे पाराक्लिट भेजनेकी बात कही थी। मनि ही ईसाके प्रेरित वे सान्त्वनाकारी दूतरूप पाराक्लिट रहे।

मनिके मतानुसार आत्मा चन्द्रलोक और सूर्यलोकसे पाप छोड़ाने पर परमपुरुषमें समाता है। मनिकीय ईसाके देहका पुनरुत्थान नहीं मानते। उनके मतसे पापी आत्मा स्वर्गलोकको जा नहीं सकता, किसी पशुदेहमें पहुंच जीवरूपसे जन्म लेता है। बाइबिलका मूसा-कृत धर्मशास्त्र ईश्वर-प्रणोदित नहीं, एकमात्र प्रेत ही उसका प्रणयनकर्ता है। इसीसे कोई बाइबिलके आदिशास्त्रको नहीं मानता। धर्मपरायण मनिकीयोंको मांस खाना मना है। उन्हें वानप्रस्थ ले चिरदिन ब्रह्मचारी की तरह रहना पड़ता है।

मनिकीयोंमें धर्मनिष्ठ और अल्पधी दो प्रकारके ईसाई होते हैं। धर्मनिष्ठ ईसाई मांस, डिम्ब, दुग्ध, मत्स्य, मद्य एवं अपरापर मादक द्रव्य नहीं खाते और रोटी, दाल, तरकारी तथा फलमूलादिसे अति कष्टके साथ अपना काम चलाते हैं। कामक्रोधादि षड्‌रिपुको मारना ही उनका मुख्य उद्देश्य है। अल्पधी दुर्बल ईसाई स्त्री-पुत्रके साथ सकल-प्रकार सुख उठा सकते हैं। उनके धर्मसमाजका कार्य देखनेको एक सभापति (ईसा मसीहके प्रतिनिधिस्वरूप), बारह प्रधान (ईसाके दूत-स्वरूप) और बारह बिशप रहते हैं। उनके नीचे अन्यान्य याजक हैं। वे ईसाई सम्प्रदायकी दीक्षा और शेषभोजपर्व (Eucharist) को मानते हैं। मनीकीय रविवार, ईसाके पुनरुत्थान (Easter) और यहूदियोंके पेण्टिकष्ट (Pentecost) पर्वादिमें उपवास करते हैं।

* उसी समय पोर्तुगीज राजप्रतिनिधियोंने भारतके सब बन्दरोंमें इसलिये प्रहरी बैठाये, जिसमें पारस्यसे किसीप्रकार नेष्टोरियान्‌ बिशप आने न पाये।

मानते भी अपना कर्मकाण्ड न छोड़ा। वे आज भी सिरीयक भाषामें ही उपासना किया करते हैं।

१६६५ ई०को अन्तियोकके धर्माचार्यने अनाथ सिरीयक समाजकी रक्षा करनेके लिये मार-ग्रेगरी नामक एक विशपको भारत भेजा था। मलबारमें पहुंचनेपर अनेक सिरीयक ईसाइयोंने मार-ग्रेगरीका मत पकड़ लिया। उस समय सिरीयक ईसाई दो भागमें बंट गये थे। उनमें एक दलका नाम 'पजईइया कुत्तकार' अर्थात् प्राचीन समाज है। उदयम्पुरकी महासभासे ही 'पजईइया कुत्तकार' की उत्पत्ति है। इस समाजके सिरीयक ईसाई पोपका प्राधान्य मानते हैं। फिर मार-ग्रेगरीसे 'पुत्तेन कुत्तकार' अर्थात् नूतन समाज निकला है। नूतन समाज याकूबी धर्ममतपर चलता है। इस दलके सिरीयक ईसाई रोमके विशप और नेष्टोरियास् पर अनेक दोष लगाते हैं। उनके मतसे क्रूशारोपके पूर्वरात्र ईसाके सशिष्य भोजोपलक्षपर ईसाई समाजमें होनेवाले पर्वके दिन जो रोटी और शराब बंटती है, वही ईसाका प्रकृत शरीर तथा रक्त ठहरती है। भारतके सिरीयक ईसाई अधिकांश धीवर और नौकाजीवी हैं।

ग्रीक-समाज।

ईसाई सम्प्रदायमें ग्रीक समाजका कर्मकाण्ड और मतामत स्वतन्त्र है। ईसाइयोंमें इस स्वतन्त्र समाजके जमनेका कारण यह है—ग्रीक ईसाइयोंने रोमके एकमात्र पोप और उनके बनाये नियमसे विरुद्ध नाना तर्कयुक्ति लगा अपनेको विभिन्न बना लिया है। आजकल ग्रीस, ग्रीसीय द्वीपपुञ्ज, वालेसिया, मोलदाविया, मिशर, आबिसीनिया, न्यूबिया, लिबिया, अरब, मेसोपटेमिया, सिरीया, साइलिसिया, पालेस्तिन, रूस-साम्राज्य, अष्ट्राकान, कासान, जर्जिया प्रभृति स्थानवासी अधिकांश व्यक्ति इस समाजमें आ मिले हैं। यह समाज तीन शाखामें बटा है। उनमें १म कनस्तान्तिनोपलके धर्मगुरु, २य ग्रीकराज और ३य शाखा रूसी जारके अधीन है।*

* सम्प्रति रूसियोंने जारको बन्दी बना अपने देशमें साधारणतन्त्र चलाया है।

किन्तु पोपकी धर्मप्रणालीपर गड़बड़ पड़ा था। ई० ९वें शताब्दके मध्य भागमें (८६२ ई०) पोप निकोलास्ने जेरूसलमके धर्मगुरु फोटिउस्को (Photius) अपने समाजसे निकाल दिया। फोटिउस्ने उसी कारण एक साधारण धर्मसभा लगायी। इस सभामें रोमक-समाजके प्रवर्तित कई मतपर विचारकार्य आरम्भ हुआ था—

१म—रोमक-समाजके मतमें ईश्वर और तत्पुत्र ईसासे दिव्यात्माने अवतरण किया है। किन्तु ग्रीक-समाज इस बातको नहीं मानता। इसके मतानुसार दिव्यात्मा एकमात्र ईश्वरसे ही अवतीर्ण होता और तत्पुत्र कहाता है अथवा ईश्वरके पुत्र ईसामें ही दिव्यात्मा देखाता है।

२य—याजक विवाहादि सांसारिक धर्म चला न सकेंगे, केवलमात्र ब्रह्मचर्यको पकड़े रहेंगे।

३य—पुरोहित दीक्षाके बाद किसी व्यक्तिका धर्मसंस्कार कर न सकेंगे।

इसी प्रकार कई मतविरोधसे रोम और कनस्तान्तिनोपलका धर्मसमाज पृथक् हो गया। फिर ८६९ ई०में सम्राट् बेसिल्ने एक सभा लगा उभय सम्प्रदायके मध्य शान्ति और एकताको स्थापन किया था। सर्व समाजका शीर्षस्थान रोम रहने और कनस्तान्तिनोपल अधीन बननेसे पोपके किये कार्यकलापपर हस्तक्षेप करनेको विशेष असुविधा पड़ने लगी। पोपके गर्व और औद्धत्यसे धीरे धीरे ग्रीक ईसायियोंका मन श्रद्धाहीन हो गया था। शेषका १०५४ ई०में कनस्तान्तिनोपलके धर्मगुरु माइकेल केरुलेरियास्ने (Michael Cerularius) ईसाको मृत्यु स्मरण रखनेके लिये शेष भोजपर्वको (Eucharist) खालिस रोटीके (Unleavened bread) व्यवहार, रविवारको क्रियाकलापके अनुष्ठान, शनिवारको उपवासके शुभकार्य और यहूदियोंके साथ एकत्र वासकी बात उठा विवाद बढ़ाया। इसी समय पोप ९म लिओने केरुलेरियास्को धर्मच्युत किया और समस्त ग्रीक धर्मप्रणालीको मिथ्या कह दिया। परिशेषपर उन्होंने निज दूत द्वारा साण्टा-साफियाके

धर्मगुरुको पदच्युत किया। इसमें ग्रीक विद्वेषानलसे जलने लगे थे। बस! चिरकालके लिये रोमक-समाजसे ग्रीक-समाज स्वतन्त्र हुआ।

ग्रीक समाजके लिये ईसायियोंको निम्नलिखित व्यवस्थाके वशीभूत हो चलना पड़ता है,—

१, पोपका प्राधान्य कोई न मानेगा। ग्रीक ईसाई रोमकसमाजको यथार्थ काथोलिक समाज न समझेंगे।

२, तीन वत्सरसे न्यून वयस रहते पुत्रादिको दीक्षा देना नियमविरुद्ध है। फिर अठारह वत्सर तक दीक्षा दे सकते हैं। तीन बार जर्दन नदीका जल मस्तेपर छिड़क देनेसे ही दीक्षा हो जाती है।

३, ईसाके सशिष्य भोजपर्वमें (Lord's Supper) रोटी और शराब रहना चाहिये। दीक्षाके पीछे ही पवित्र भोज-सम्बन्धीय द्रव्य पुत्रादिको देना पड़ता है।

४, रोमक समाजको भांति पापका प्रायश्चित्त करनेको कोई मुद्रा निर्धारित नहीं।

५, रोमन काथोलिकोंके मतसे देह छोड़नेपर पाप-चालनके लिये जो स्थान होता, उसे ग्रीक समाज नहीं मानता; तथा मृतके शेष विचारसे कल्याण होनेकी भावनापर ईश्वरको उपासना करता है।

६, ईश्वर और मनुष्यके मध्यस्थ समझ ग्रीक ईसाई पुण्यात्मा साधु (Saint) लोगोंको पूजते हैं।

७, रोमक समाजका धर्मसंस्कार (Confirmation), विपद्जनक रोगमें पवित्र तैलम्रक्षण (Extreme unction) और विवाहबन्धन (Matrimony) छोड़ा गया है।

८, चुपके चुपके पाप मान लेनेको ईश्वर आदेश नहीं देता।

९, ईसाको मृत्युसे पूर्वका भोजपर्व (Eucharist) धर्मकाण्डमें गिना नहीं जाता।

१०, रोगी एवं बलिष्ठ व्यक्ति उभय भोजके अंशका अधिकार रखते हैं। किन्तु जो पुरोहितके (Confessor) निकट पापको स्वीकार करता है, उसे उक्त अंश बांटकर देना नहीं पड़ता। क्योंकि धर्मविश्वासी व्यक्ति मात्र इस भोजका अंश पानेके उपयुक्त होते हैं।

११, केवल एकमात्र ईश्वरसे ही दिव्यात्मा आविर्भूत होते हैं।

१२, अदृष्टवाद पर विश्वास रखना चाहिये।

१३, गिर्जामें ताम्र एवं रौप्यके फलकपर मेरी और उनके पुत्र ईसाको प्रतिमूर्ति खोदाकर रखना ग्रीक समाजका मुख्य कर्तव्य है।

१४, धर्मालयमें नियुक्त होनेसे पूर्व पुरोहित विवाह कर सकते हैं। किन्तु विधवा-विवाह करनेपर कोई याजक बन नहीं सकता।

१५, कितने ही पर्वके दिन उपवास करना चाहिये।

१६, मृत्युके पूर्वभोज (Lord's Supper) की-रोटी और शराब ईसाके मांस एवं रक्तका रूपान्तर समझी जाती है।

१७, गिर्जामें किसी प्रकारका वाद्ययन्त्र आवश्यक नहीं। केवल गानसे ही उपासना होती है।

१८, यहूदियोंके पेण्टेकोष्ट (Pentecost) पर्वपर घुटने टेक भजना और अपर सकल ही समय खड़े होकर उपासना करना पड़ती है।

१९, सभी को क्रूश पहनना चाहिये।

२०, स्त्री-पुरुष उभय ब्रह्मचर्य अवलम्बन कर सकते हैं।

तुर्कराज्यके अधीन ग्रीसराज्य जानेपर यह धर्म-समाज अतिशय विशृङ्खल हो गया था। उस समय कनस्तान्तिनोपलके धर्माचार्य ही ग्रीक और रूसी समाजके दलपति बने थे। पीछे पीटर दी ग्रेटने (Peter the Great) यह प्रथा उठा डाली। फिर जार द्वारा निर्वाचित धर्मसमितिने रूस राज्यके धर्मसमाज-का कार्य चलाया। १८२९ ई०को स्वाधीन होनेपर ग्रीसके सभापति कापोदिस्त्रियस्‌ने नूतन राज्यको भांति समाजको भी पृथक् कर लिया था। आज-कल समग्र ग्रीस राज्यका धर्मकार्य सिर्फ दश विशप चलाते हैं।

धर्मविषयमें पोपका एकाधिपत्य मान और अपने अपने समाजका कार्यकलापादि पालकर जो सम्प्रदाय रोमक समाजका प्राधान्य स्वीकार करता है, उसका नाम 'दी युनाइटेड ग्रीक चर्च' (The United Greek Church) पड़ता है।

अर्मनी समाज।

ई०के २रे शताब्दको अर्मनिया राज्यमें ईसाई धर्म पहले घुसा था। उस समय मेरुजनेश नामक एक व्यक्ति विशप रहे। किन्तु लोग ईसाई धर्मको अधिक मानते न थे। २७६ ई०के समय सेण्ट ग्रेगरीने आकर अर्मनीराज तिरिदतिशको ईसाई धर्मकी दीक्षा दी। उसी समयसे अर्मनीमें ईसाई धर्म प्रबल पड़ा है। ई०के ७वें शताब्दको अर्मनी भाषामें बाइबिलका अनुवाद हुआ। ईसा मसीहकी दो प्रकृति पर गड़बड़ पड़नेसे अर्मनियोंने कालसिडन-महासभाका आदेश न सुन एक प्रकृतिवादीका पक्ष पकड़ा था। फिर अर्मनी-समाज पृथक् हुआ और ग्रेगोरीके कारण प्रथम नाम ग्रेगोरीय (Gregorian) पड़ा। कुछ कालतक इस समाजमें ज्ञानतत्त्वपर घोरतर आन्दोलन रहा। ई०के १२वें शताब्दको अर्मनी ईसाइयोंमें 'क्ला' (Klah) नामक एक महाज्ञानीने जन्म लिया था। उनके सकल आध्यात्मिक ग्रन्थोंको अर्मनी अति समादरकी दृष्टिसे देखते हैं। इस समाजके लोग हमेशा रोमक-समाजसे घृणा करते हैं। जब इसलाम धर्मकी रणभेरी अर्मनीमें बजी, तब अर्मनी समाजने युरोपके राजगणसे सहायता देनेको कहो। उसी समय पर पोपने कई बार (११४५, १३४१, १४४० ई०) अर्मनियोंको रोमके शासनाधीन बनानेकी चेष्टा की थी। अर्मनीके कितने ही सम्भ्रान्त व्यक्ति सम्मत भी हो गये। किन्तु जनसाधारणका मनोभाव किसी प्रकार न बदला। इसपर पोप (१२श) बेनिडिक्टने अर्मनी-समाजकी तीव्र समालोचना कर ११७ दोष देखाये थे। उसी समय कितने ही अर्मनी रोमक समाजमें मिल गये। इसीसे उन्हें संयुक्त अर्मनी (United Armenians) कहते हैं। इस मिलित समाजके लोग आजकल पारस्य, रूस, मार्सायेल, इटली, पोलेण्ड प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। ई०के १७वें शताब्दमें मुसलमानोंके प्रबल आक्रमणसे बहुतसे लोगोंने वाध्य हो इसलाम धर्म पकड़ा था। फिर भी अधिकांश अर्मनी आजतक पूर्वमत और विश्वासको बचाते चले आते हैं।

अर्मनी समाज ईसापर एक ही प्रकृतिका आरोप करता है। उसके मतमें केवल ईश्वरसे ही दिव्यात्मा-(Holy Ghost)ने अवतरण किया। दीक्षाके समय मत्थेपर तीन बार जल छिड़कना पड़ता है। ईसाके सशिष्य भोजोद्देशक पर्वपर सबको खालिस शराब और पावरोटी देनेसे पहले शराबमें पावरोटी डुबोयी जाती है। याजक, पुरोहित प्रभृति धर्माध्यापक ही मरनेपर तैल लगानेका अधिकार रखते हैं, दूसरे नहीं। ईसाई महापुरुष भी अर्मनी ईसाई समाजके उपास्य हैं। ये लोग अधिक धर्मोत्सव नहीं मनाते, फिर भी ग्रीक समाजकी अपेक्षा अधिक उपवास करते हैं। पुरोहित एकबार विवाह कर सकते हैं। रूसाधिकृत अर्मनी एरिवान नगरके निकट एसमियादजिम नामक आश्रममें प्रधान धर्माचार्य रहते हैं। यह स्थान अर्मनी समाजका महातीर्थ है। प्रत्येक अर्मनी ईसाईको जीवनमें एकबार इस महातीर्थका दर्शन करना पड़ता है।

प्रोटेष्टाण्ट सम्प्रदाय।

ई०के १६वें शताब्दमें यह सम्प्रदाय उपजा है। इस सम्प्रदायके अभ्युदयसे पूर्व पोपने अपनेको समस्त ईसाई जगत्का अधिपति बताया था। जहां ईसाई न रहते, वहां पोपके मतसे जन-मानवशून्य वन थे। वह ईसाई समाजके शीर्षस्थानपर बैठ बाइबिल और ईसाई मतके विरुद्ध अनेक अन्याय-कार्य करने लगे। इसपर धार्मिक ईसाई मात्र उनसे मन ही मन अत्यन्त विरक्त हो गये। किन्तु प्रबल पराक्रान्त पोपके विरुद्ध बात कहनेका साहस किसीको न था। अनेक लोग पोपका अत्याचार सह और मुख बन्दकर रह न सके।

१५१७ ई०में महात्मा मार्टिन-लूथरने समाजके संस्कार करने पर कमर कसी। वे जर्मनीके अन्तर्गत विटेम्बर्ग नगरमें पुस्तकके प्रधान अध्यापक हो गये। उसी समय तेजेल नामक एक ईसाई उदासीन विटेम्बर्गमें जा पहुंचे। ये साधारणको पोपका मुक्तिपत्र दे कर ठग रहे थे। धर्मवीर लूथरको वह अच्छा न लगा। उन्होंने अपने ९५ प्रधान शिष्योंको तेजेलकी गति रोकने पर रखा। तेजलने

पीठ दिखायी। पोपने लूथरके विरुद्ध वृषभाङ्कित दण्डनियोग-पत्र भेजा था। किन्तु लूथरने पोपको न मान १५२० ई०को १६वीं दिसम्बरको विटेम्बर्गके तोरणद्वार पर सबके समक्ष दण्डनियोगका पत्र जला दिया।

इसी समय पर स्विजरलेण्डमें कई अनुचर पोपका मुक्तिपत्र (Indulgences) बांटते थे। हिन्दुओंमें जैसे पापका प्रायश्चित्त करनेको अर्थ देकर ब्राह्मण-पण्डितसे व्यवस्थाको लेना पड़ता, वैसेही रोमक-समाजमें उक्त मुक्तिपत्रका व्यवहार चलता है। उस कालमें अनेक ईसाइयोंको विश्वास था,—इस मुक्तिपत्रको* खरीदनेसे हमारे पापका प्रायश्चित्त होगा और पापका दुःख उठाना न पड़ेगा। उस समय स्विजरलेण्डमें जुइङ्गली नामक एक महापण्डित थे। वे मुक्तिपत्रके घोरतर विरोधी बने। लूथरकी तरह वे भी पोपके समाजका बन्धन एककाल ही तोड़नेकी चेष्टामें लगे थे। जूरिच, बरन, बेसिल प्रभृति स्थानके लोगोंने उनका मत मान लिया।

इधर लूथरने जर्मनीके उच्चपदस्थ व्यक्तिको सम्बोधन कर कहा,—"भ्रातृगण! रोमके विपक्षमें खड़े हो जायो। यही प्रकृत समय है। घर घर क्रूश-युद्धकी बातका ध्यान रहना चाहिये। भयङ्कर रोमक तुर्कने सभीको खा डाला है। जगत्के धनसे रोमक-भाण्डार भर गया है।" लूथरने रोमक-समाजके सात अङ्ग माने न थे। उनके मतसे धर्मकी दीक्षा, ईसाका सशिष्य भोजपर्व और निग्रह स्वीकार, तीन ही ईसाई धर्मके प्रधान अङ्ग हैं।

१५२१ ई०को ५म चार्लस् जर्मनीमें रहे। पोप-पर वे कुछ भक्तिश्रद्धा रखते थे। रोमक-समाजके कर्तृपक्षगणने लूथरका दोष देखा सम्राट्को भड़काया। सम्राट् समाजसंस्कारके विरोधी बन गये। उन्होंने लूथरके पुस्तकादि ध्वंस करनेको आदेश दिया था। किन्तु राज्यके प्रधान प्रधान सचिव उससे असम्मत हुये। उनके परामर्शसे वारमस् नगरमें एक महासभा लगी। इस सभामें जर्मनीके सकल राजा और अध्यापक आ पहुंचे। संस्कारके विरुद्ध कितनी ही बातें निकली थीं। लूथर भी इस सभामें आये। सभाने लूथरसे कहा,—'तुमने रोमक-समाजके विरुद्ध जो आपत्ति उठायी, वह बहुत ठीक है। इस सुयोगमें परिवर्तन करो। तुम्हारा मङ्गल होगा।' लूथरने निर्भीक चित्तसे उत्तर दिया,—'सच बात कहूंगा। प्राण जानेमें कोई क्षति नहीं। मैं ईश्वरके आदेशसे बंधा हूं। मेरे हृदयका बलवान् विश्वास जबतक भ्रान्त प्रमाणित न होगा, तबतक रोमक समाजका गौरव कैसे समझ पड़ेगा!' उनकी यह बात जर्मनीमें सर्वत्र चल पड़ी। विपक्षने लूथरके प्राण लेनेका बीड़ा उठाया था। किन्तु साक्सनी-राज फ्रेडरिकके सत्परामर्शसे लूथर कुछ दिन छिपे रहे। उसी समयपर साक्सनीमें सर्वत्र उनका मत सादर माना गया। इङ्गलेण्ड* और डेनमार्कके अधिपति तथा प्रजावर्ग भी समाज-संस्कारके पक्षपाती हुये थे। डेनमार्कके राजा लूथरका एक शिष्य बुला निज राज्यमें यह नया मत चलाने लगे।

१५२२ ई०को लूथरने मेलङ्कथन (Melancthon)के साथ बाइबिलके शेषभाग इञ्जील (New Testament)-को अनुवाद कर छपाया था। अनुवाद देखकर लोग चकराये। उन्होंने समझ लिया—'पोपके नियमसे ईसा मसीहका मत सम्पूर्ण विभिन्न है। लूथर जो मत चलाते, उसीको यथार्थ ईसाका मत मानते हैं।' फिर जर्मनीके सत्व्यक्तिने प्रकाश्यरूपसे रोमका धर्मानुशासन छोड़ा था। जर्मनीके कृषकने धर्मके लिये अस्त्र उठाये। जर्मन राज्यमें सर्वत्र घोरतर युद्ध चलने लगा।

१५२३ ई०में फ्रान्स्-राज फ्रांन्सिस्की भगिनी मार्गारिटने नूतन मतका पक्ष लिया और फ्रान्स-राज्यके नाना स्थानोंमें बहुतसे लोगोंने इस मतको ग्रहण किया। फ्रान्सराज प्रथम संस्कारके पक्षपाती

* इस देशमें जैसे अल्प एवं अधिक पापके अनुसार अर्थ लगाकर प्रायश्चित्त करना, वैसेही पोपका मुक्तिपत्र खरीदनेमें विभिन्न मूल्य देना पड़ता था।

* कितने ही लोगोंके मतानुसार १३६१ ई०को धर्मप्रचारक विक्लिफ (Wicliffe)से इङ्गलेण्डमें समाजसंस्कारका सूत्रपात हुआ।

रहे, किन्तु शेषको घोर विरोधी बन गये। नूतन मतावलम्बीके प्रति वे घोर अत्याचार करने लगे थे! उस समय अनेक व्यक्तियोंने स्विज़रलैण्ड भाग अपने प्राण बचाये। उधर रोमक-समाजमें पूर्व गौरव उद्धार करनेके विशेष यत्न चला और रोमाधिपतिने संस्कारक मतावलम्बियोंको दबानेके लिये युद्धका डङ्का बजाया।

१५२६ ई०को स्पायार नगरमें राजनैतिक महासभा लगी। वहां जर्मन्-सम्राट्के दूत लूथरके कार्यका प्रतिवाद चला संस्कारकको उत्सन्न करनेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु उनकी सकल चेष्टा निष्फल गयी। सभाके अधिकांश सभ्योंने संस्कारका पक्ष पकड़ा, किन्तु जर्मन-सम्राट्का मन न भरा, और फिर सभाको आहूत किया। पहले जर्मनीके राजाको उन्होंने धर्मका जो अधिकार दिया, वह छीन लिया। सभामें स्थिर हुआ था—ईसाई समाजको पूर्वतन रीति नीति एवं पूजापद्धतिके विरुद्ध कोई कुछ कह और किसी प्रकारका संशोधन कर न सकेगा। सम्राट्के इस दारुण आदेशसे जर्मनीके समस्त सम्भ्रान्त व्यक्ति अत्यन्त विरक्त हुये। लूथरके सकल मतावलम्बी मिलकर तीव्र प्रतिवाद करने लगे थे। उस समयपर जो लोग रोमक समाजसे निकल पड़े, वेही "प्रोटेष्टाण्ट" (Protestant) अर्थात् 'प्रतिवादी' नामसे ख्यात हुये।

उक्त प्रतिवादके समय पोपभक्त जर्मन्-सम्राट् इटलीमें रहे। जर्मनीके राजन्यवर्गने दूत द्वारा उनसे अनेक दुःखकी बात कहला भेजी थी। किन्तु सम्राट्ने उसपर भ्रूक्षेप न किया। पोपने भी सम्राट्को यह कह कर भड़काया था,—'वास्तविक आप ही इस समय ईसाई समाजके रक्षक हैं। सुतरां अपने मतके विरुद्ध उभरनेवालोंको बिलकुल दबा देना चाहिये।' सम्राट् जर्मनी पहुंचे। अगसबर्गमें राजनैतिक सभा लगी थी। सभामें लूथरके सहचर मेलङ्कथनने धीर-गम्भीर भावसे अपना मत और विश्वास प्रकाश किया। पीछे रोमके धर्माध्यापकगण उसके प्रतिवादका यत्न करने लगे। उभय पक्षपर विवाद बढ़ा। सम्राट्ने उसके मिटानेके लिये अनेक यत्न किया, किन्तु कोई फल न हुआ था। पोपके भक्तको सम्राट्का साहाय्य मिला। १९वीं नवम्बरको सम्राट्के अधीनस्थ धर्माध्यापकगणके कहनेसे जो आदेश निकला, वह संस्कारकके पक्षपर विशेष अनिष्टकर पड़ा था। संस्कारक दल स्मालकल्द नामक स्थानमें एकत्र हुआ। सकल प्रोटेष्टाण्ट मिल गये। उन्होंने इङ्गलैण्ड और फ्रान्सके भूपतिद्वयसे साहाय्य मांगा।

जर्मन सम्राट्ने सब सुना था। उन्होंने सोचा—अब अस्त्रबलसे सुविधा न रहेगी। १५४२ ई०के समय राटिसबरनकी सभामें सम्राट्ने संस्कारकको शान्ति दी थी। सभामें ठहर गया—शीघ्र ही एक सभा लगा सकल विषयका पुङ्खानुपुङ्ख रूपसे विचार किया जायेगा। इतने दिनमें प्रोटेष्टाण्ट समाजकी क्षमता दृढ़ हो गई थी।

१५४२ ई०को सभाकी प्रतिज्ञासे पोपने इटलीके ट्रेण्ट नगरमें विराट् सभा लगानेका अभिप्राय खोला। रोमक-समाजके प्रधानने अनुमोदन किया था। किन्तु प्रोटेष्टाण्टोंने कहा—पोपके अधिकारभुक्त स्थानमें यह सभा हो नहीं सकती।

पोपने प्रोटेष्टाण्टोंसे कहला भेजा,—समाजके संस्कारमें मेरा कुछ भी अमत नहीं, मैं रोमक समाजके संस्कारका विशेषतः अभिलाषी हूं। संस्कारक उससे थोड़ा शान्त पड़े। पोपने समाजके संस्कारका भार चार कार्डिनालोंपर डाला था। किन्तु उनका देखाया हुआ सकल संस्कारविधि अत्यन्त अयौक्तिक और पोप तथा कार्डिनालगणके स्वार्थसे जड़ित था।

उधर जर्मन-सम्राट्ने प्रोटेष्टाण्टोंको ट्रेण्टकी सभामें पहुंचनेके लिये अनेक प्रलोभन दिया, किन्तु किसीने कुछ कान न किया। फिर वह असिके बलसे विवादकी मीमांसा करने चले थे। प्रोटेष्टाण्ट समाजके नेतागणने भी आसन्न विपद्से अपने बचावको अस्त्र उठाया। इसी समय (१५४६ ई०) महात्मा लूथरने आइसेलबेन नगरमें शान्ति भावसे इहलोक छोड़ा था।

इधर लूथरके मृत्युका संवाद, उधर रणभेरीके वाद्यका घोर निनाद! जर्मन-सम्राट् और पोप एकत्र

हो विपक्षवादीगणके ध्वंसमें लगे। साकसनीराज (Elector of Saxony) और हेसके सामन्तराजने (Landgrave of Hesse) ससैन्य बावेरियामें पहुंच सम्राट्का शिविर मारा था। नरके रक्तसे रणक्षेत्र डूबा। उधर साकसनीके डाक मरिस विश्वासघातकतासे खुल्लतातका राज्य दबा बैठे थे। इसीसे साकसनीराजको स्वराज्यके अभिमुख घूमना पड़ा। राहमें मरिससे हारनेपर वे पकड़े गये थे। दुर्वृत्त मरिस् साकसनीके अधिपति (Elector of Saxony) बने। उनके चातुरीजालमें पड़ हेसके सामन्तराज भी बंधे थे। इस प्रकार शठकी छलनासे प्रोटेष्टाण्ट समाजके दो अधिनेता निगृहीत हुये। फिर अगस्बर्गमें सभा लगी थी। सम्राट्ने आदेश सुनाया—प्रोटेष्टाण्टोंको आगामी ट्रेण्टकी महासभापर निर्भर होना पड़ेगा। उस समय सभाकी चारो ओर सम्राट्के सिपाही खड़े थे। अनेक संभ्रान्त प्रोटेष्टाण्टोंने अपमान और अत्याचारके भयसे सम्राट्का आदेश मान लिया। किन्तु थोड़े ही दिन पीछे जर्मन राज्यमें महामारी फैल गई। इसीसे सम्राट्का आदेश कार्यकर न हुआ।

१५५१ ई०में फिर सभा लगी! सम्राट्ने बलपूर्वक जर्मनराजगणको ट्रेण्टकी सभामें जानेके लिये कहा। सभामें मरिस्ने प्रस्ताव किया था,—ट्रेण्टकी महासभामें पोप स्वयं किंवा अपने प्रतिनिधिरूपसे आ न सकेंगे। समाजसंस्कारकी पहली निष्पत्ति प्रोटेष्टाण्ट धर्माध्यापकगणके सामने फिर देखी जायेगी। सभा उखड़ने पर प्रोटेष्टाण्ट आत्मरक्षाके लिये कमर कसने लगे। मैलङ्कथन प्रभृति प्रोटेष्टाण्टपण्डित स्व स्व धर्मनैतिक मत और विश्वास लिखनेपर सन्नद्ध हुये।

साक्सनीराज मरिस्ने सुना था,—जर्मन-सम्राट् जर्मनीके राजन्यवर्गकी स्वाधीनता छीननेकी चेष्टा कर रहे हैं। उन्होंने इसके प्रतिविधान पर गुप्तभावसे दूत भेज राजगणको उभारा। फ्रान्सके राजाने भी साथ दिया था। १५५२ ई०को मिलित सैन्यदलने अकस्मात् इन्सब्रुक नगरमें प्रबल वेगसे सम्राट्पर आक्रमण मारा। सम्राट्को पूर्वसे विन्दुविसर्ग विदित न रहा, सुतरां अकस्मात् आक्रमणपर हतबुद्धि हो सन्धि करना पड़ी। सम्राट्ने प्रतिज्ञा की थी—रोमक और प्रोटेष्टाण्ट-समाज हमारे प्रासादमें समभावसे गृहीत होंगे। अतःपर ब्राडेनबर्गके सामन्त-राजकुमार आलबर्टने रोमक-समाजसे युद्धकी ठानी। उनके अत्याचारसे जर्मन राज्यमें हाहाकार उठा था। सैकड़ों रोमन काथोलिकोंका प्राण निकला।

ऐसा नहीं, कि केवल उस समय जर्मन राज्यमेंही रक्तका स्रोत बहा था। किन्तु इङ्गलेण्ड प्रदेशमें उधर प्रोटेष्टाण्टों पर भी अभावनीय अत्याचार हुआ। उस समय पोपभक्त स्पेनियार्ड इङ्गलेण्डके अधिपति रहे। सुनते हैं,—उनके कठोर निर्यातनसे लक्षाधिक प्रोटेष्टाण्टोंने अकाल ही कालके कवलमें जीवन विसर्जन दिया। असह्य यन्त्रणासे घबरा इङ्गलेण्डवासी युद्धमें डट गये। उससे इङ्गलेण्डके अनेक स्थान फिर स्वाधीन हुये थे।

१५५५ ई०के सितम्बर मासकी २५वीं तारीखको जर्मन-सम्राट्ने राज्योंपर शान्ति रखनेलिये अक्सबर्गमें फिर महासभा लगायी। सभामें स्थिर हुआ था—'प्रजावर्गमें जिसे जिसपर विश्वास रहे, वह उसी समाजसे मिल सकेगा। प्रोटेष्टाण्टोंके साथ रोमक काथोलिकोंका कोई संस्रव न रहेगा। आजसे पोपके कर्मचारी प्रोटेष्टाण्टोंसे कोई बात कह न सकेंगे।' इतने दिन पीछे निर्विवाद जर्मन-राज्यमें लूथरका संस्कार (Reformation) चल पड़ा। इसी समय इङ्गलेण्डमें भी संस्कारक पर दारुण अत्याचार होता था। रोमकसमाजके किये विषम अत्याचारोंकी कथा सुन अश्रु निकल पड़ते हैं। बहुत काल पहले विक्लिफने प्राणत्याग किया था। मृत्युके ४४ वर्ष पीछे क़बरसे उन्हीं प्रथम संस्कारककी कई अस्थियां उठाकर गोमयकुण्डमें जलाई गईं।

८म हेनरीके राजत्वकालमें भी कई प्रोटेष्टाण्ट-पण्डित हुताशनमें दग्ध हुये थे। फिर मेरीके इङ्गलेण्डकी अधीश्वरी बननेसे भी प्रोटेष्टाण्टोंका उत्पीड़न कुछ कम न हुआ! १५६५ ई०को इङ्गलेण्डेश्वरीके आदेशसे प्रायः शताधिक प्रोटेष्टाण्ट अनलमें जल मरे, बालक और रमणीगण भी बचाये न बचे। नील साहबने अपने इतिहासमें लिखा है,—'इसवर्षके अत्याचारकी कथा अधिक क्या लिखें! कई शत अबला

रमणीने अन्यायरूप निर्यातन उठाया है। एक पूर्णगर्भा युवती ज्वलन्त- अनलमें डाल दी गयी थीं। अग्निमें उनका गर्भ फटनेसे एक नरकुमार निकल पड़ा। एक निकटस्थ व्यक्तिने अग्निसे उस सद्योजात शिशुको उठा लिया, किन्तु निर्दय मजिष्ट्रेटने सद्योजात शिशुको फिर ज्वलन्त अग्निमें जलानेका आदेश दिया था। इस तरह गर्भस्थ शिशुतक धर्मकुहकमें भस्मीभूत हुआ। अहो! मानवकी प्रकृति कैसी जघन्य है।" बस! उस समय पोपके विरुद्ध जो बोल देता, अनिवार्य मृत्युको वही मोल लेता।

१५५८ ई०को पोपभक्त इङ्गलेण्डेश्वरीने काण्टरबरीके प्रधान धर्माचार्य (Archbishop of Canterbury)को संस्कारका पक्षपाती समझ मरवा डाला। उन्होंने इङ्गलेण्डकी तरह आयरलेण्डके प्रोटेष्टाण्टको दबानेके लिये भी डाक्टर कोलको पहुंचाया, किन्तु भगवान्‌ने उन्हें अद्भुत उपायसे बचाया था। रानीका मुहर लगा आज्ञापत्र ले यात्राकालमें नगरपाल डाक्टरसे मिलने गये। बात करते करते डाक्टरने अपना छोटा खरीता देखाकर कहा था,—'इसमें आदेशपत्र रखा है। उससे आयर्लेण्डके (प्रोटेष्टाण्ट नामक) विधर्मी मारे जायेंगे।' इस बातको एक प्रोटेष्टाण्ट रमणीने सुन लिया। उसके भ्राता आयर्लेण्डमें ही रहे। जब नगरपाल यथारीति आलापके पीछे चले, तब डाक्टर भी उनकी सम्मानरक्षाके लिये अपने मकान्‌से नीचे उतरे थे। किन्तु जिस खरीतेमें आज्ञापत्र रहा, वह ऊपरवाले कमरेमें छूट गया। डाक्टर वापस आ खरीता उठा चले थे। १५५८ ई०के अक्तोबर मासकी ७वीं तारीखको डबलिन नगरमें वे जा पहुंचे। प्रधान प्रधान राजकर्मचारी उन्हें अभ्यर्थनापूर्वक दुर्गमें ले गये। वहां राज्यके सब बड़े आदमी उपस्थित रहे। डाक्टरने उच्चःस्वरसे वक्तृता दे अपने आनेका कारण कहा और रानीकी अनुमतिका पत्र सबको देखाया। उन्होंने रानीके सहकारी प्रतिनिधिको खरीता दिया था। प्रतिनिधिने अपने कार्याध्यक्षसे रानीका अनुमतिपत्र निकाल पढ़नेको कहा। खरीता खुला; किन्तु उसमें रानीका वह पत्र न निकला, ताश और सलाईका ढेर लगा था। विषम समस्या! डाक्टर महाशयका दमाग चकरा गया। सभी अवाक्! फिर डाक्टर अनुमति लेने गये। किन्तु इङ्गलेण्डमें अनुमति मिलनेके पीछे ही रानी मरीं। इसप्रकार आयर्लेण्डके प्रोटेष्टाण्टोंने अव्याहति पायी थी।

प्रोटेष्टाण्ट कहनेसे प्रधानतः लूथरके मतावलम्बी समझ पड़ते हैं सही, किन्तु सकल स्थानके प्रोटेष्टाण्ट उनका मत नहीं मानते। जेनिवा नगरमें कलविन नामक एक विख्यात ईसाई अध्यापकने पोपके विरुद्ध जो मत चलाया; स्विजरलेण्ड, फ्रान्स, स्काटलेण्ड प्रभृति स्थानके अनेक प्रोटेष्टाण्टोंने उसीको अपनाया था। उन्हें कलविन नामसे भी पुकारते हैं। १५६० ई०को इस मतके माननेवाले लोग फ्रान्समें बढ़े। फ्रान्स देशके रोमन काथोलिक विद्रूप बनाकर उन्हें ह्युगोनट (Huguenot) कहते थे। इसीसे उनका नाम ह्युगोनट पड़ गया। स्काटलेण्डके कलविनी ईसाइयोंने भी रानी मेरीके उत्पातसे जो कष्ट पाया, उसे बिलकुल लिख कर किसने देखाया था। १५६१ ई०को इङ्गलेण्डेश्वरी एलिजाबेथने अंगरेजी फौज भेज पोपभक्त ईसाइयोंके अत्याचारसे प्रोटेष्टाण्टोंको छुड़ा दिया।

उस समय इङ्गलेण्ड, स्काटलेण्ड, आयर्लेण्ड, डेनमार्क, स्विडेन, स्विजरलेण्ड, जर्मनी और रोमराज्यके किसी किसी स्थानमें समाजका संस्कार हुआ सही, किन्तु फ्रान्समें बड़ा गड़बड़ पड़ा था। इसकी इयत्ता नहीं—फ्रान्सीसी राजगणके उत्पीड़नसे कितने धर्मात्मा प्रोटेष्टाण्ट मरे। शेषमें १५७२ ई०के अगस्त मासकी २४वीं तारीख आयी। ईसाई जगत्‌का कैसा भयानक दुर्दिन था! भारतके समग्र सिपाहीविद्रोहका इतिहास पढ़कर भी ईसाइयोंका जो हृदय न डिगेगा, वह इस सकल दिनके वृत्तान्तको सुनते ही थर थर कांप उठेगा। एक दिनके इतिहाससे ही यह अति स्पष्ट खिंचा—मानव कैसा पिशाच, धर्मोन्माद और भयङ्कर, जगत्‌में साम्प्रदायिक पक्षपात कैसा अनिष्टकर होता है! पाश्चात्य सभ्यजगत्‌के आदर्श फ्रान्सकी राजधानीमें एक ही दिन सत्तर हजार प्रोटेष्टाण्ट ईसाई अति निष्ठुर अत्याचारसे मारे

गये थे। उस समय ६म चार्लस् फ्रान्सके अधिपति थे। उनकी भगिनीसे नेभारके राजाका विवाह होनेवाला था। सैकड़ों प्रोटेष्टाण्ट ईसाई पारिस नगरमें उपस्थित थे। घर-घर आमोदका स्रोत वह रहा था। किन्तु यह क्या आ पड़ा! एक मुहूर्तमें हाहाकार उठा। प्रोटेष्टाण्टोंकी अनुरागिणी फ्रान्स-राज-भगिनीने विष खाकर प्राण त्याग दिये। दुष्ट रोमन काथोलिकोंने फ्रान्सराजके आदेशसे अकस्मात् घरमें घुस अति नीच भावसे वीरपुरुष नौसेनापति कोलिग्नको मार डाला। शत्रुओंने उनके पूत देहको खण्ड-विखण्ड कर सबके सामने वातायनसे राजपथपर फेंका। उनका मुण्ड राजमाता और राजाके निकट भेजा गया। हत्याकारियोंने प्रकृत पिशाचका रूप बनाया था। नरके रक्तसे उनका सर्वशरीर रंगा। घर-घरसे आर्तनाद और मर्मभेदी रोदन-निनाद निकला! उच्चपदस्थ शत शत सामन्त और सम्भ्रान्त व्यक्ति हत्याकारीगणके भीषण आघातसे मरने लगे। ऐसा कोई वीर न था, जो अनाथ प्रोटेष्टाण्टोंको बचा लेता। पारिस नगरीके प्रत्येक राजपथमें प्रकृत ही रक्तकी नदी बही थी। बालक-बालिका, युवक-युवती और वृद्ध वर्षीयसी किसीको निस्तार न मिला। यह भयङ्कर दृश्य अपनी आंखों देख किसी भुक्तभोगी ईसाईने लिखा है,—'अति भीषण दृश्य देख पड़ा था। परमेश्वर! उस नरकका रूप फिर न देखाये। दुर्बल हृदय यह धारण करनेकी क्षमता भी नहीं रखता, कि मानव इतना निष्ठुर रक्तपिशाच होता है। हत्याकारीके तीव्र आघातसे पिता मृत्युकी शय्यापर सोता और पति विपक्षके बन्धनमें पड़ रोता था। उसी पिता और पतिके सामने अबला रमणीको पकड़कर दुर्वृत्तने अत्याचार किया। आंखोंसे देखते माताके हृदयका एकमात्र धन स्तन्यपायी शिशु मारा जाता था। दुर्वृत्तोंने स्तनको काट,उलङ्ग कर और पद पकड़ सुन्दरी रमणियोंको राजपथपर घसीटा। उनके पदाघातसे अनेक गर्भवती नारियोंका गर्भ गिरा था। किसीने आसन्न मृत्युकालमें जो एक घूंट जल मांगा; तो उसी समय किसी निर्दय व्यक्तिने जाकर उसके मुखमें मूत मारा। किसीका हाथ-पैर और किसीका नाककान काटा था। इसप्रकार निग्रहीत शत शत व्यक्तिका आर्तनाद उठा। सभ्य बननेवालोंको धिक्कार! क्या यही सभ्यताका चिह्न है!'*

अति अल्प समयमें ही यह संवाद पोपको मिल गया! इसे सुन पोपके आनन्दकी सीमा न रही! रोम नगरी उज्ज्वल आलोकमालासे सजी। घर घर नृत्यगीत होने लगा। महामति पोपने घोषणा की—'आज महोत्सवका दिन है! हमारे विपक्षवादी विधर्मी (प्रोटेष्टाण्ट) मारे गये हैं! इसकी अपेक्षा अधिक सुखका संवाद दूसरा कौन हो सकता है! हमारे अधीन जहां जो रहे, इस उत्सवमें आमोद प्रमोद मनानेसे न चूके!' पोपके महाभिषेकका उत्सव हुआ था। ईसाइयोंमें यह दिन 'सेण्ट बार्थलम्य'ज् डे' (St. Bartholomew's day) कहाता है। जर्मनोंने इसका नाम 'ब्लुथोजीट' (Bluthoziet) रखा है।

पारिस नगरीकी तरह फ्रान्समें सर्वत्र अनेक दिन तक प्रोटेष्टाण्ट ईसाइयोंपर ऐसा ही अत्याचार रहा था। शेषको फ्रान्सराज १४श लुईके राजत्वकालमें उसने अधिकतर भीषण आकार बनाया। उत्पीड़नकी कथा लिखनेसे व्यक्त नहीं होती।† सैकड़ों प्रोटेष्टाण्ट गुप्तभावसे देश छोड़ भिन्न राज्यमें रहकर प्राण बचा सके थे। १७०५ ई०को देनमार्क-राजके साहाय्यसे जिगेनबलग (Ziegenbalg) और प्लुचु (Plutschaw) नामक लूथरके मतावलम्बी दो ईसाई भारतमें प्रोटेष्टाण्ट-मत चलाने आये। दोनो ही महापण्डित थे। जिगेनबलग तामिल भाषामें बाइबिलका अनुवाद बनवाने लगे। भारतकी जितनी भाषामें बाइबिलका अनुवाद मिलता, उसमें यही सर्वप्रथम है। जिगेनबलगके अन्यतम सहचर सुल्ज़ने (Schultze) १७२५ ई०को हिन्दी भाषामें बाइबिल निकाली थी। उनके यत्नसे मन्द्राज, कडेलूर, तञ्जोर प्रभृति नाना

* Comber's History of the Parisian Massacre of St. Bartholomew; Clark's Looking Glass for Persecution प्रभृति ग्रन्थ द्रष्टव्य हैं।

† Lewis de Enarolle's Memoirs of the Persecutions of the Protestants in France द्रष्टव्य है।

स्थानोंमें लूथरका मत चला। अनेक नीचजातिको उन्होंने ईसाई धर्मको दीक्षा दे दी। किन्तु हिन्दुस्थानमें ईसाई धर्मका आदर बढ़ा न था। क्योंकि नवाबोंके भयसे ईसाई पास न फटके। राज्य कम्पनीके हाथ जाते भी पहले कोई ईसाईधर्म-प्रचारक इस देशमें घुसने पाया न था। राजत्वका नियम रहा—कोई युरोपीय कम्पनीके अधिकारमें धर्मप्रचार कर न सकेगा! क्योंकि उससे देशीयगणके धर्मपर आघात पड़ेगा और सकल अधिवासीके बिगड़नेसे राज्यमें विस्तर उत्पात उठेगा।

१८१३ ई०को अंगरेज-सरकार ईसाई धर्मप्रचारक पर सदय हुई। मिसनरियोंको हिन्दुस्थानमें धर्म-प्रचारकरनेका अधिकार मिल गया। उनके अध्यवसायसे अल्प दिनमें ही नीच श्रेणीके अनेक हिन्दुस्थानियोंने ईसाई धर्म पकड़ा। शेषको ईसाई-महिला शिक्षाके पीछे अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तिके घरमें घुस ईसाई आलोक डालने लगीं। अनेक हिन्दुस्थानियोंने अपनी प्रकृत जातीयता खो दी। धीरे-धीरे उच्च शिक्षाका स्रोत फूटा। बालफोर साहबने लिखा है—इस उच्च शिक्षाको पाकर फिर कोई ईसाई होना नहीं चाहता। ईसाई भाव रखते भी बहुतसे लोग धर्ममें नास्तिक रहते हैं।

१७९४ ई०को बंगला मुद्रायन्त्रके प्रवर्तक केरी साहब इस देशमें धर्मप्रचार करने आये थे। उन्होंने असाधारण अध्यवसाय एवं सहिष्णुताके गुणसे अनेक विपद् आपद् सह और सुन्दरवनमें रह असभ्यलोगोंको गुप्त भावसे दीक्षा दी। किन्तु प्रकाश्य भावसे कम्पनीके राज्यमें उन्हें आश्रय न मिला था। शेषको हलेण्ड-वासिगणके अधिकृत श्रीरामपुरमें ठिकाना लगा। श्रीरामपुरमें ही मार्समान और वार्ड नामक दो विख्यात पण्डित भारतकी नाना भाषाओंके जाननेवाले केरी साहबसे मिल गये। इसी स्थानपर उक्त बापटिष्ट प्रोटेष्टाण्टोंके उत्साहसे प्रथम बंगला मुद्रायन्त्र जमा था। १८०० ई०के मार्च मासकी १८वीं तारीखको वार्ड साहबने अपने हाथसे प्रथम बंगला अक्षर संवारे। मुद्रायन्त्र, ईसा और पाश्चात्य दर्शन देखो।

ईह्—भ्वादि० आत्म० अक० सेट् धातु। यह चेष्टा और यत्न अर्थमें आता है। सं पूर्वक रहनेसे ईह् सकर्मक है।

ईह (सं० त्रि०) सञ्चारक, कोशिशकरनेवाला। (पु०) २ चेष्टा, तदबीर।

ईहग (हिं० पु०) इच्छानुसार चलनेवाला, कवि, शायर।

ईहमान (सं० त्रि०) चेष्टित, तदबीर लड़ानेवाला।

ईहा (सं० स्त्री०) ईह् भावे अ-टाप्। १ उद्यम, कारबार। २ वाञ्छा, ख्वाहिश। ३ चेष्टा, तदबीर।

"इच्छया जायते काम ईहयार्थो विवर्धते।" (रामायण)

ईहात: (सं० अव्य०) परिश्रमपूर्वक, जोरसे।

ईहामृग (सं० पु०) १ कोक, भेड़िया। पर्यायमें इसे कोक, वृक, अरण्यश्वा और वनकुक्कुर भी कहते हैं। ईहामृगकी आकृति बिलकुल कुत्ते-जैसी होतीहै। वर्ण पीत और नील अर्थात् पिङ्गल रहता है। यह हरिण प्रभृतिको मार सकता है। २ रूपक नाटक विशेष। मृगकी भांति नायकके नायिकाको ढूंढ़ लेनेसे यह नाम पड़ा है। ईहामृग नाटक चार अङ्कसे विशिष्ट होता है। इसमें प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध उभय इतिवृत्त देखाये जाते हैं। ईहामृगमें मनुष्य अथवा देवता नायक और प्रतिनायक दोनो हो सकते हैं। नायक गूढ़भावसे नायिकाको ढूंढ़ता है। नायकको मनुष्य और नायिकाको देवता समझते हैं। नायक उद्धत गुणयुक्त और नायिका क्रद्धभाव संयुक्त रहती है। बलात्कार वा छलना द्वारा भी नायिकासंग्रह लगता है। थोड़ा बहुत शृङ्गाररस होना आवश्यक है। प्रतिनायकको जो क्रोध उपजता, उसे किसी कार्य-च्छलसे निवृत्त करता है। महात्माका वध वर्णनीय है। एक अङ्कमें देवविषय रहता है। दिव्यहेतु युद्ध वर्णन करते हैं। सिवा इसके अन्य दो नायक भी रहते हैं।

ईहार्थिन् (सं० त्रि०) किसी वस्तुकी चेष्टा रखनेवाला, जो दौलत ढूंढ़ता हो।

ईहावृक, ईहामृग देखो।

ईहित (सं० त्रि०) ईह्-क्त। १ चेष्टित, कोशिश किया गया। २ अपेक्षित, चाहा गया। (क्लो०) ३ उद्योग, तदबीर। ४ चरित, चाल।

उ

उ—(ह्रस्व उकार)—१ स्वरके मध्य पञ्चमवर्ण। इसके उच्चारणका स्थान ओष्ठ है। ओष्ठजावुपु। (शिक्षा) ह्रस्व स्वरोंमें उकार तीसरा है। ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित् भेदसे यह नौ प्रकारका होता है। फिर प्रत्येक अनुनासिक और अननुनासिक रहनेसे इसके अट्ठारह भेद होते हैं। यह स्वयं कुण्डलनी है। उकारका वर्ण चम्पेके फल-जैसा होता है। इसमें पञ्चदेव और पञ्चप्राण रहते हैं। उकार चतुर्वर्गका फल देनेवाला है। (कामधेनुतन्त्र)

लिखनेका नियम—ऊर्ध्व, अधः और मध्यस्थानमें वामदिग्गामी तीन ऋजुरेखा खींचनेसे यह बनता है। इन रेखावोंमें अग्नि, वायु और इन्द्र रहते हैं। मात्रामें शक्तिका वास है। (वर्णोद्धारतन्त्र) मातृकान्याससे इसका स्थान दक्षिण कर्ण पड़ता है। उकारको शङ्कर, वर्तुलाक्षी, भूत, कल्याण, अमरेश, दक्षकर्ण, षड्वक्त्र, मोहन, शिव, उग्र, प्रभु, धृति, विष्णु, विश्वकर्मा, महेश्वर, शत्रुघ्न, चटिका, पुष्टि, पञ्चमी, वह्निवासिनी, कामघ्न, कामना, ईश, मोहिनी, विघ्नहृत्, मही, उढस्, कुटिला, श्रोत्र, पारद्वीपी, वृष और हर भी कहते हैं। २ भ्वादि० आत्म० अक० अनिट् धातु। यह शब्द करनेके अर्थमें आता है। (अव्य०) उ-क्विप् तुगभावः। ३ हे! ए! सुनिये! ४ कोपप्रकाश! देखेंगे! ५ अनुकम्पा! रहम! बचावो! ६ नियोग, राय! कहिये! ७ पदपूरण! जुमलेका पुराव! ८ कोपयुक्त कथा! गुस्सेकी बात! ९ अङ्गीकार! मञ्जूरी! हां! ठीक! १० प्रश्न! सवाल! क्या! क्यों! ११ वितर्क! बहस! १२ विमर्श, अफ़सोस! हाय! १३ विकल्प, शक! शायद! १४ सम्भावना! इमकान! हो सकता है! "स्त्रियः सतीस्तां उ मे पुंस आहुः।" (ऋक् १।१६४।१६) "उमेति माता तपसो निषिद्धा।" (कुमार) (पु०) अत्-डु। १५ शिव। १६ ताम्र। १७ ब्रह्मा।

उं (हिं० अव्य०) १ क्या! क्यों! २ नहीं! ३ अरे! कारणवश मुख न खुलनेपर वह अव्यय आता है।

उंकन (हिं०) उकुण देखो।

उंकौत (हिं० पु०) रोग विशेष, एक बीमारी। इसमें प्रायः वर्षाकालपर पदकी अङ्गुलि पिडिका पड़नेसे सड़ने लगती हैं।

उंखारी (हिं० स्त्री०) इक्षुक्षेत्र, ऊखका खेत।

उंगनी (हिं० स्त्री०) गाड़ी ओंगनेका काम, पहिएमें तेलकी दिवाई। इससे पहिया खूब घूमता है और बैलोंको गाड़ी खींचनेमें ज्यादा जोर नहीं लगाना पड़ता। उंगनी न होनेसे पहिया बिगड़ जाता है। गाड़ीवान् जोतनेसे पहले उंगनी कर लिया करते हैं। इसमें प्रायः रेंड़ीका तेल लगता है।

उंगलाई (हिं० स्त्री०) अङ्गुलि नियोजन, उंगली चलानेका काम।

उंगलाना (हिं० क्रि०) अङ्गुलि चलाना, उंगली करना, उंगलीसे इशारा लगाना।

उंगली (हिं०) अङ्गुलि, अङ्गुष्ठ। अङ्गुलि देखो।

"पांचो उंगलियां बराबर नहीं।" (लोकोक्ति)

तर्जनीको कलमकी उंगली, मध्यमाको डाइन, अनामिकाको पूजाउंगली और कनिष्ठाको कानकी उंगली, छुंगलिया या चिठली उंगली कहते हैं।

उंगलीकी नोक (हिं० स्त्री०) अङ्गुलिकी शिखा, अङ्गुष्ठका छोर।

उंघाई (हिं० स्त्री०) निद्रा, सुस्ती, झपकी।

उंचन (हिं० पु०) १ उदञ्चन, ऊपरी खिंचाव। २ अदवान। यह रस्सी खाटमें नीचेकी ओर रिक्त स्थानमें लगती है और बुनावटको पायतानेसे मिला खींच देती है। इससे खाटका ढीलापन निकल जाता है।

उंचना (हिं० क्रि०) उदञ्चन करना, ऊपर उठाकर खींचना, अदवान तानना।

उंचनाव (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह एक प्रकारका चारखाना होता है।

उंचाई (हिं० स्त्री०) १ उच्चता, बुलन्दी। २ विशिष्टता, बड़ाई।

उंचान (पु०) उंचाई देखो।

उंचाना (हिं० क्रि०) उच्च बनाना, बुलन्दी बख्शना, ऊंचा करना।

उंचाव (पु०) उंचाई देखो।

उंचास, उंचाई और उनचास देखो।

उंचौनी (हिं० स्त्री०) १ भावी, होनेदार। २ प्रहार, मार।

उंदरी (हिं० स्त्री०) गञ्ज, बालखोरा।

उंदरु (हिं०) कुन्दुरु देखो।

उंह (हिं० अव्य०) १ नहीं! दूर हो! २ दुःख! अफसोस! हाय!

उअना (हिं०) उदय होना, निकलना।

उआई (हिं० स्त्री०) उदय, निकाल।

उआना (हिं० क्रि०) १ उदय करना, जगाना। २ प्रहरार्थ उद्यत होना, मारनेको उठना।

उऋण (हिं० वि०) ऋण न रखनेवाला, जो कर्ज़ दे चुका हो। "नतु एहि काटि कुठार कठोरे। गुरुहिं उऋण होतेउं श्रम थोरे॥" (तुलसी)

उकचन (हिं० पु०) मुचुकुन्द पुष्प, मुचकुन्दका फूल।

उकचना (हिं० क्रि०) १ निकल जाना, छूटना। २ उचर पड़ना, पर्त छोड़ना। ३ भागना, दूर होना।

उकटना (हिं० क्रि०) १ उखाड़ना, तोड़ डालना। २ भेद लेना, पूछना। ३ अन्वेषण करना, ढूंढ़ना। ४ स्मरण दिलाना, याद कराना। ५ अपमान करना, गाली देना। ६ लुण्ठन करना, डाका डालना, लूटना।

उकटा (हिं० वि०) १ कृतका पुनः पुनः स्मरण दिलानेवाला, जो दूसरेको किसी एहसान्की याद कराता हो। "नकटेकी खाये, उकटेकी न खाये।" (लोकोक्ति)

२ तुच्छ, कमीना, हलका। विगत विषयका पुनः पुनः सविस्तर प्रकाश उकटा-पुराण या उकटा-पैंची कहाता है।

उकठना (हिं० क्रि०) शुष्क होना, सूखना।

उकठा (हिं० क्रि०) शुष्क, सूखा, जो लगा न हो।

उकठापन (हिं० पु०) शुष्क हो जानेका भाव, सूखनेकी हालत।

उकड़ं (हिं० पु०) मुद्रा विशेष, एक बैठक। इसमें घुटने मुड़कर तलके भूमिपर जम और चूतड़ एड़ियोंसे लग जाते हैं।

उकड़ं बैठना (हिं० क्रि०) घुटने ऊपर उठाकर एड़ियोंके बल बैठना।

"काला डालूं लाल निकालूं उकड़ूं बैठ पटापट मारूं।" (कूटप्रश्न)

उकत (हिं०) उक्ति देखो।

उकताना (हिं० क्रि०) १ घृणा करना, थक जाना, जब उठना। २ सन्तुष्ट होना, आसूदगी आना, छक जाना। ३ विह्वल होना, घबरा जाना।

उकताव (हिं० पु०) घृणा, तृप्ति, विह्वलता, नफ़रत, असूदगी, घबराहट।

उकति (हिं०) उक्ति देखो।

उकनाह (सं० पु०) पीत-रक्त-वर्ण घोटक, पीला-लाल घोड़ा।

उकलचैत—बदायं जिलेके अन्तर्गत सोरोंका एक प्राचीन नगर।

उकलना (हिं० क्रि०) पृथक् पड़ना, अलग होना, तह छोड़ना, उधेड़में आना।

उकलवाना (हिं० क्रि०) पृथक् कराना, तह छुड़वाना, उधड़वाना।

उकलाई (हिं० स्त्री०) वमन, कै, मिचलाई।

उकलाना (हिं० क्रि०) १ उकताना, घबराना। २ श्रान्त होना, थकना। ३ अशान्त पड़ना, बेचैन होना। ४ रोगग्रस्त बोध होना, बीमार मालूम पड़ना। ५ वमन करना, ओकना।

उकलेसरी (हिं० वि०) उकलेसरसे सम्बन्ध रखनेवाला, उकलेसरका बना हुआ। उकलेसर दक्षिणमें विद्यमान है। जो कागज़ उक्त स्थानपर बनता है, वह भी उकलेसरी ही बजता है।

उकलैद (Euclid)—ई०से पहले तृतीय शताब्दके एक यूनानी गणितज्ञ। इनके जन्म-मृत्यु, मातापिता,

शिष्यक और आदिनिवासका विषय अज्ञात है। कोई-कोई इन्हें भूलसे सोक्रतिस्‌के शिष्य मेगारेन्सिस समझते हैं। मिस्रके राजा १म टलेमीके समय (ई०से प्रायः ढाई तीन सौ वर्ष पहले) ये विद्यमान थे। उकलैदने अलेकजन्द्रियाकी सुप्रसिद्ध गणितपाठशाला खोली थी। ये मृदुस्वभाव, निश्छल और गणितके प्रकृत विद्यार्थियोंपर कृपालु रहते थे। ज्यामिति देखो।

उकवथ (हिं०) उंकौत देखो।

उकवां (हिं० क्रि० वि०) अनुमानसे, अन्दाज़न्, मोटे हिसाबमें।

उकसना (हिं० क्रि०) १ बाहर निकलनेकी चेष्टा करना, झगड़ना। २ फूलना, उछलना, फूटना, निकल पड़ना। ३ उत्तेजित होना, जोशमें आना, उभरना। ४ उधड़ आना, टूटने लगना।

उकसनि (हिं० स्त्री०) उत्तेजना, उभार, घबराहट, उधेड़, टूट।

उकसवाना (हिं० क्रि०) बाहर निकालनेकी चेष्टा कराना, झगड़ाना, निकलवा देना।

उकसाई (हिं० स्त्री०) निकलवा देनेका काम, उभराई, निकसाई, हटाई।

"दमड़ीका बुलबुल टका उकसाई।" (लोकोक्ति)

उकसाना (हिं० क्रि०) १ उठाना, चढ़ाना, ऊंचा करना। २ आगे बढ़ाना, सुलगाना, भड़काना। ३ हांकना, चलाना। ४ प्रलोभन दिखाना, बरगलाना, हिम्मत देना। ५ हटाना, दूर करना। ६ उत्तेजित करना, उभारना। ७ छेड़ना, जलाना।

उकसौंहां (हिं० वि०) उठता हुआ, जो उभर रहा हो।

उक़ाब (अ० पु०) गरुड़, गृध्र, गोध। इसकी दृष्टि बहुत तीव्र होती है। सुनते हैं—उकाब या शार्दूलकी छाया पड़नेसे दीनदरिद्र भी राजा बन जाता है।

उकारान्त (सं० त्रि०) उकारको अन्तमें रखनेवाला, जिसके अखीरमें उ हर्फ़ रहे।

उकालना, उकेलना देखो।

उकासना, उकसाना देखो।

उकासी (हिं० स्त्री०) १ उद्घाटित होनेकी स्थिति, खुल जानेकी हालत। २ उत्सव, छुट्टी, फ़ुरसत।

उकिड़ना, उकलना देखो।

उकिलना, उकलना देखो।

उकिलवाना, उकलवाना देखो।

उकिसना, उकसना देखो।

उकीरना (हिं० क्रि०) १ खनन करना, खोदना। २ उखाड़ डालना, नोच लेना, ढकेल देना।

उकुण (सं० पु०) १ शिरःकीट, जूं, चिल्लड़। २ मत्कुण, खटमल।

उकुति (हिं०) उक्ति देखो।

उकुति-जुगुति (हिं०) उक्तियुक्ति देखो।

उकुरू, उकड़ूं देखो।

उकुसना, उकसना देखो।

उकेलना (हिं० क्रि०) निकाना, उधेड़ बुन करना, उचाड़ डालना, बकला निकालना।

उकेला (हिं० वि०) १ उधेड़ा, उचाड़ा, निकाया। (पु०) २ कम्बलका बाना।

उकौथ (हिं०) उंकौत देखिये।

उकौथा (हिं०) उंकौथ देखिये।

उक्त (सं० वि०) १ कथित, कहा हुआ। (क्ली०) २ शब्द, वाक्य, लफ़्ज़, जुमला।

उक्तत्व (सं० क्ली०) कथनका भाव, कहे जानेकी हालत।

उक्तनिर्वाह (सं० पु०) कथनका पालन, बातका निबाह।

उक्तपुंस्क (सं० क्ली०) शब्दविशेष, एक लफ़्ज़। जिस स्त्रीलिङ्ग शब्दका पुंलिङ्ग भी रहता है, वही इस नामसे पुकारा जाता है। ऐसे शब्दोंके अर्थमें सिवा स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्गके दूसरा भेद नहीं पड़ता। जैसे शोभना शब्द उक्तपुंस्क है, किन्तु गङ्गा शब्द नहीं।

उक्तप्रत्युक्त (सं० क्ली०) वाक्य एवं उत्तर, वार्तालाप, सवालजवाब, गुफ़्तगू, कहासुनी, बातचीत।

उक्तवत् (सं० त्रि०) कथन कर चुकनेवाला, जो बोला हो।

उक्तवर्ज (सं० अव्य०) कथित विषय भिन्न, कही हुई बातोंको छोड़कर।

उक्तवाक्य (सं० त्रि०) १ सम्मति दे चुकनेवाला, जो राय बता चुका हो। (क्ली०) २ आदेश, हुक्म, कानून।

उक्तानुक्त (सं० त्रि०) कथित एवं अकथित, कहा और न कहा।

उक्ति (सं० स्त्री०) वाक्य, निर्देश, जुमला, इज़हार, बयान्।

उक्तोपसंहार (सं० पु०) संक्षिप्त वर्णन, मुख्तसर बयान्, थोड़ेमें कही हुई बात।

उक्त्वा (सं० अव्य०) कथन करके, कहकर।

उक्थ (सं० क्ली०) १ वाक्य, जुमला, कहावत। २ क्रियासंस्कारमें एक प्रकारका पठन वा उच्चारित पाठ। उक्थ शास्त्रका एक अवयव है। यह प्रायः परिपाटी निर्माण करता और साम तथा यजुःके प्रतिकूल चलता है। महद् वा बृहद्-उक्थ तीन श्रेणियोंमें पठनकी परिपाटी ढालता है। उक्त तीनो श्रेणियोंमें अस्सी ऋक् रहता, जो अग्निचयनके पीछे मन्त्रपाठमें कही जाती हैं। ४ सामवेदका एक नाम। (पु०) ५ अग्निका एक रूप।

उक्थपत्र (वै० त्रि०) श्लोकोंको पत्रकी भांति रखनेवाला।

उक्थपात्र (सं० क्ली०) उक्थ पढ़ते समय चढ़ाया जानेवाला पात्र वा तर्पणोदक।

उक्थभृत् (वै० त्रि०) उक्थको समर्पण करने वा चढ़ानेवाला।

उक्थवत् (वै० त्रि०) उक्थसे मिला हुआ।

उक्थवर्धन (वै० त्रि०) प्रशंसासे प्रसन्न हो अपना बल बढ़ानेवाला।

उक्थवाहस् (वै० त्रि०) १ श्लोक समर्पण करनेवाला। २ श्लोकका समर्पण पानेवाला।

उक्थशंसिन् (वै० त्रि०) १ प्रशंसा करनेवाला। २ उक्थ पढ़नेवाला।

उक्थशस् (पु०) उक्थशस देखो।

उक्थशस (वै० त्रि०) श्लोक कहनेवाला, जो प्रशंसा करता हो।

उक्थशास् (स्त्री०) उक्थशस देखो।

उक्थशुष्म (वै० त्रि०) उच्च स्वरसे श्लोक पढ़नेवाला।

उक्थामद (वै० क्ली०) प्रशंसा एवं प्रसन्नता।

उक्थार्क (वै० क्ली०) उद्गार एवं भजन।

उक्थावी (वै० त्रि०) श्लोकका प्रेमी।

उक्थाशास्त्र (वै० क्ली०) पठन एवं प्रशंसा।

उक्थिन् (वै० त्रि०) १ श्लोक पढ़नेवाला। २ जिसके साथ प्रशंसा आ जाये वा (क्रियासंस्कारमें) उक्थ रहे।

उक्थ्य (वै० त्रि०) १ श्लोक वा प्रशंसा सुनानेवाला, जो प्रशंसा करनेमें निपुण हो। (पु०) २ प्रातःकाल और मध्याह्नके यज्ञका तर्पणोदक। ३ एक सोमयज्ञ। ४ प्रार्थना मार्गका एक संस्कार। यह ज्योतिष्टोमका एक भाग है।

उक्लेद (सं० पु०) वमि, कै।

उक्ष—भ्वादि० पर० सक० सेट्। यह निम्नलिखित अर्थोंमें आता है—१ आर्द्र करना, २ बिन्दु डालना, ३ बिखेरना, ४ परिष्कार करना, ५ अङ्कुरित होना, ६ अपना बल बढ़ाना और ७ बलवान् बनना।

उक्ष (सं० त्रि०) १ बृहत्, बड़ा। २ शुद्ध, साफ़। इस अर्थमें यह शब्द किसी-किसी यौगिक पदके पीछे लगता है।

उक्षण (सं० क्ली०) उक्ष् भावे ल्युट्। सेचन, प्रोक्षण, छिड़काव। "वशिष्ठमन्त्रोक्षणजात् प्रभावात्।" (रघु ५।२७)

उक्षणायन (वै० पु०) उक्षण्य का गोत्रापत्य।

उक्षण्यु (वै० त्रि०) उक्षन्की भांति व्यवहार वा कार्य करनेवाला, धनकी वर्षा करनेवालेका अभिलाषी।

उक्षतर (सं० पु०) उक्ष् इति ष्टरच्। वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे। पा ५।३।९१। १ छोटा वृष, नन्हां बैल। २ महावृष, बड़ा बैल।

उक्षतरी (सं० स्त्री०) उक्षतर-ङीप्। १ छोटी गाय, बछिया। २ वृद्ध गवी, बड़ी गाय।

उक्षन्, उक्षा देखो।

उक्षवश (वै० पु०) वत्स, बछड़ा, बच्छा।

उक्षवेहत् (वै० पु०) नपुंसक षण्ड, बधिया बैल।

उक्षा (सं० पु०) उक्ष्-स्वन्-कनिन्। श्वन् उक्षन्नित्यादि। उण् १।१५८। १ वृष, बैल, सांड़। २ ऋषभ नामक ओषधि। (त्रि०) ३ सेचक, सींचनेवाला। "उक्षा समुद्रो अरुषः सुपर्णः।" (ऋक् ५।४७।३)

उच्चान्न (वै० त्रि०) वृषभचक्र, बैलका गोश्त-खानेवाला।

उच्चाल (सं० त्रि०) १ त्वरित, फुर्तीला। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ कराल, कड़ा। ४ उत्कट, डरावना। (पु०) ५ वानर, बन्दर।

उच्चित (सं० त्रि०) उच्च्-क्त। १ सिक्त, सिंचा या धुला हुआ। २ लिप्त, लगा हुआ। ३ शक्तिशाली, ताक़तवर। ४ वृद्ध, पुराना।

उख्—भ्वादि० पर० सक० सेट् धातु। यह गमन अर्थमें आता है।

उख (सं० त्रि०) उख्-क। १ गमनकारी, चलने-वाला। उत्-खन्-ड निपातनात् तल्लोपः। २ ऊर्ध्व दिक् खनन करनेवाला। (वै० पु०) ३ पात्र, बरतन। ४ तित्तिरिके एक शिष्यका नाम।

उखच्छिद् (वै० त्रि०) पात्र तोड़नेवाला।

उखटना (हिं० क्रि०) १ इतस्ततः पद पड़ना, अच्छी तरह चल न सकना, ठोकर खाना, लड़खड़ा जाना। २ थिरकना, धीरे-धीरे चलना। ३ खुटकना, तोड़ लेना।

उखड़ना (हिं० क्रि०) १ निर्मूल होना, उपटना, जड़से टूट जाना। २ निकल पड़ना, अलग होना। ३ टूटना, कटना। ४ छूटना। ५ स्थानच्युत होना, जगह छोड़ना। ६ उद्घाटित होना, खुलना। ७ पतित होना, गिरना। ८ बिगड़ना। ९ बन्द होना। १० बेतान गाना। ११ सम्मान खोना, इज्जत गंवाना। १२ बेपरवा होना, फिक्र न करना। १३ अप्रसन्न होना, बिगड़ पड़ना। १४ हताश होना, दिल टूटना। १५ बदलना। १६ बिखरना। १७ हटना। १८ मिटना। १९ डरना। २० बाहर होना। २१ राह पकड़ना। २२ भागना। २३ सरकना। २४ लोप हो जाना। २५ खुदना। २६ गमन करना। २७ फूट पड़ना। २८ लड़खड़ाना। २९ हारना। ३० हांपना। ३१ रुकना। तीव्र भाषाको उखड़ी-उखड़ी बातें, मुंह फेर लेनेको उखेड़की लेना और दण्ड देनेको काम उखाड़ना कहते हैं।

उखड़वाना (हिं० क्रि०) उखाड़नेको आदेश देना, अन्यके द्वारा उखाड़नेका कार्य कराना।

उखड़ाई (हिं० स्त्री०) उखाड़नेका काम।

उखभोज (हिं० पु०) इक्षुवपनोत्सवका विशिष्टान्न-सम्भार, ऊख बोनेकी ज़ियाफ़त। कृषक इक्षु बोनेके प्रथम दिवस यह भोज देते हैं।

उखम (हिं० पु०) उष्म, ताप, गरमी, हरारत। (स्त्री०) उखमा।

उखमज (हिं० वि०) १ उष्मज, गर्मीसे पैदा। (पु०) २ उष्मज जीव, गरमीसे पैदा होनेवाला कीड़ा।

उखर (सं० क्ली०) १ क्षारभूमि, रेतीली ज़मीन्। २ क्षारमृत्तिका, शोरा। इसे उषर भी लिखते हैं। (हिं०) ३ लाङ्गलपूजन, हलकी पूजा। यह ऊख बोनेके बाद होता है।

उखरज (सं० क्ली०) १ पांशुलवण, शोरा। २ अय-स्कान्त भेद, एक लोहा। ३ लवण, नमक।

उखरना, उखड़ना देखो।

उखराज, उखभोज देखो।

उखर्वल (सं० पु०) तृणविशेष, एक घास। यह बलद, रुचिजनक और पशुके लिये सदा हितकर होता है। (राजनिघण्टु)

उखल, उखर्वल देखो।

उखलना (हिं० क्रि०) खौलना, गर्म होना।

उखली (हिं० स्त्री०) उलूखल, हावन, कूंड़ी। बङ्गालमें यह पात्र काष्ठमय होता है। मध्यस्थलमें एक हस्तके प्रमाण गड्ढा रखते हैं। इसी गड्ढेमें अन्न डाल और मुषलसे मार तुष छुड़ाते हैं। किन्तु हिन्दुस्थानि-योंके घरमें यह पत्थरकी होती, और ज़मीन्में गड़ी रहती है। "उखलीमें मूंड़ डाल चोटसे क्या डरना।" (लोकोक्ति)

उखहाई (हिं० स्त्री०) ऊखकी चुसाई या खवाई।

उखा (सं० स्त्री०) १ रन्धनस्थाली, देग, बटलोई। २ चूल्हा। ३ शरीरका अवयव, जिस्मका एक हिस्सा। (हिं०) उषा देखो।

उखाड़ (हिं० पु०) १ उच्छेद, बेखकनी, उखाड़ने का काम। २ मल्लयुद्धका हस्तलाघव, कुश्तीका एक दांव। अपने साथ लड़नेवालेको कमर पकड़ कर ऊपर उठा भूमिपर पटक देनेका नाम उखाड़ है। पिशुनता और निन्दाको उखाड़-पछाड़ कहते हैं।

उखाड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ निर्मूल करना, उपाड़ना। २ छिन्नभिन्न करना, तोड़ना। ३ निकालना। ४ स्थानच्युत करना, हटाना। ५ अलग करना। ६ असन्तुष्ट करना, विष बोना। ७ परिष्कार करना, हांक देना। ८ उलटाना। १० भगाना, बिखेरना।

उखाड़ू (हिं॰ क्रि॰) निर्मूल करनेवाला, जो उखाड़ डालता हो।

उखारना, उखाड़ना देखो।

उखारी (हिं॰ स्त्री॰) इक्षुक्षेत्र, ऊखका खेत।

उखाल (हिं॰ पु॰) वमिक्रिया, कै करनेका काम। विशूचिका अथवा वमिक्रियाको उखाल-पुखाल कहते हैं।

उखालिया (हिं॰ पु॰) उषःकालका खाद्य, नाश्ता, सवेरेका खाना।

उखुली (सं॰ स्त्री॰) देवीविशेष, किसी देवताका नाम।

उखेड़, उखाड़ देखो।

उखेड़ना, उखाड़ना देखो।

उखेरना, उखाड़ना देखो।

उखेलना (हिं॰ क्रि॰) उल्लेखन करना, तस्वीर उतारना।

उख्य (वै॰ त्रि॰) उखायां संस्कृतम्, उखा-यत्। स्थालीपक्व, देगमें पका हुआ। यह शब्द मांसादिका विशेषण है। "उख्यान् हस्तेषु बिभ्रतः।" (अथर्व ४।१४।२)

उगजोवा (हिं॰ पु॰) एक किस्मकी रंगाई।

उगटना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्‌घाटन करना, कह देना। २ उपहास करना, हंसी उड़ाना।

उगण (वै॰ पु॰) प्रशस्त दलयुक्त, जिसमें बहुत सिपाही रहें।

उगदना (हिं॰ क्रि॰) बताना, बोलना, कहना। यह क्रिया दलाली बोलीमें चलती है।

उगना (हिं॰ क्रि॰) उद्‌गमन करना, निकलना, देख पड़ना।

> "प्राची दिशि शशि उयेउ सुहावा।
> सिय-मुख सरिस निरखि सुख पावा॥" (तुलसी)

उगमन (हिं॰ पु॰) पूर्व, मशरक।

उगलना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्‌गिलन करना, मेदेसे बाहर निकालना, थूक देना। २ निराकरण करना, निकालना, फेंकना। ३ प्रत्यर्पण करना, वापस देना, फेरना। ईर्ष्या प्रकाश करनेको जहर उगलना कहते हैं।

उगलवाना, उगलाना देखो।

उगलाना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्‌गिलन कराना, मेदे या मुंहसे बाहर निकलवाना। २ प्रत्यर्पण कराना, वापस दिलाना।

उगवाना (हिं॰ क्रि॰) उगाना, पैदा कराना, पलाना-पोषाना।

उगसाना, उकसाना देखो।

उगसारना (हिं॰ क्रि॰) वर्णन करना, कहना, सुनाना।

उगहना, उगाहना देखो।

उगाना (हिं॰ क्रि॰) १ उपजाना, पैदा करना, निकालना। २ उठाना, देखाना। ३ प्रहारार्थ किसी द्रव्यको तानना, उवाना।

उगार (हिं॰ पु॰) १ निष्ठीवन, थूक। २ जल, पानी। जो जल क्रमशः निचुड़कर एकत्र होता, वही उगार कहाता है। ३ निचुड़ा हुआ रङ्ग। ४ कूपसे जल निकाले जानेका काम। जब कूपमें जल कम हो, तब उसे बढ़ानेके लिये उगार किया जाता है।

उगाल (हिं॰ पु॰) १ उद्‌गार, खखार। २ जीर्ण वस्त्र, पुराना कपड़ा। यह ठगोंकी बोली है।

उगालदान् (हिं॰ पु॰) निष्ठीवनपात्र, पीकदान, थूकनेका बरतन।

उगाला (हिं॰ पु॰) १ कीटविशेष, एक कीड़ा। यह खड़ी फ़सलको मारता है। (स्त्री॰) २ आर्द्र भूमि, तर ज़मीन्।

उगाहना (हिं॰ क्रि॰) उद्‌ग्रहण करना, वसूल करना।

उगाही (हिं॰ क्रि॰) १ उद्‌ग्रहण, वसूल, पवाई। २ उद्‌गृहीत धन, वसूल किया हुआ रुपया। ३ भूमि-कर, ज़मीन्‌का लगान। ४ एक प्रकारका आदान-प्रदान, किसी किस्मका लेन-देन। इसमें महाजनको समय-समय पर अपना दिया हुआ रुपया वसूल करना पड़ता है।

उगिलना, उगलना देखो।

उगिलवाना, उगलवाना देखो।

उगिलाना, उगलाना देखो।

उग्गाहा (हिं॰ पु॰) उद्गाथा, गीति, एक प्रकारका आर्या छन्द। इसके विषममें द्वादश और सम चरणमें अष्टादश मात्रा होती हैं। जगणका प्रयोग अग्राह्य है।

उग्र (सं॰ पु॰) उच्यति क्रोधेन सम्बध्यते, उच्-रक् गश्चान्तादेशः। ऋज्रे न्द्राग्रवज्रविप्रकुब्रचुब्रक्षुरखुरभद्रोग्रभेरभेलशुक्लशुक्ल गौरवज्रे रामालाः। उण् २।२८। १ शिव, महादेवकी वायु-मूर्ति। २ क्षत्रियके वीर्य और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न जातिविशेष। यथा—

"क्षत्रियात् शूद्रकन्यायां क्रूराचार-विहारवान्।
क्षत्रशूद्रवपुर्जन्तुरुग्रो नाम प्रजायते॥" (मनु १०।९)

इस जातिके लोगोंका कार्य गर्तस्थित गोहको मारना और पकड़ना है। ३ पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, मघा और भरणी नक्षत्र। ४ शोभाञ्जन वृक्ष, सहजन। ५ केरलदेश, मलबार। ६ स्वनामख्यात दानवविशेष। 'वेगवान् केतुमानुग्रः सोमव्यग्रो महासुरः।' (हरिवंश आदि ३६३ अ॰) ७ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत आदि ११७ अ॰) ८ नरेन्द्रादित्य नामक काश्मीर-राजके गुरु। ९ विष्णु। (भारत अनु॰ १४९ अ॰) (त्रि॰) १० उत्कट, गर्म। ११ यष्टि प्रभृति धारण करनेवाला, जो लकड़ी रखता हो। १२ अतिशय दारुण कर्म करनेवाला, जो खूंखार काम करता हो।

"चिकित्सकस्य मृगयो क्रूरस्योच्छिष्टभोजिनः।
उग्रान्नं सूतिकान्नञ्च पर्याचान्तमनिर्दशम्॥" (मनु ४।२१२)

(क्ली॰) १३ वत्सनाभ नामक विष, बच्छनाग। १४ शैवसम्प्रदाय विशेष। इस सम्प्रदायके लोग बाहु पर डमरु पहनते हैं। १५ तीर्थविशेष। "उग्रं कनखलञ्चैव केदारं भैरवं तथा।" (रेवाखण्ड २ अ॰) १६ क्रोध, गुस्सा।

उग्रक (सं॰ पु॰) नागविशेष।

उग्रकर्मन् (सं॰ त्रि॰) उग्रं कर्म यस्य बहुव्री॰। हिंस्रस्वभाव, बेरहम, कड़ा काम करनेवाला। २ प्राणिहिंसाकारी, मार डालनेवाला। ३ खल, बद-माश।

उग्रकाण्ड (सं॰ पु॰) उग्रं काण्डो यस्य, बहुव्री॰। १ कारवेल्लक, करेला। २ काण्डवल्ली, करेलेकी बेल।

उग्रगन्ध (सं॰ क्ली॰) उग्रो गन्धो यस्य, बहुव्री॰। १ हिङ्गु, हींग। (पु॰) २ शुक्लरसोन, लहसुन। ३ कट्फलवृक्ष, कायफल। ३ रक्तरसोन, प्याज। ४ अर्जक वृक्ष, बबई। ५ चम्पक, चम्पा। (त्रि॰) ६ उत्कट गन्धयुक्त, कड़ी खुशबूवाला।

उग्रगन्धा (सं॰ स्त्री॰) उग्रगन्ध स्त्रियां टाप्। १ वन यवानी, अजवायन। २ अजमोदा, अजमोद। ३ बचा, बच। ४ महाभरीवचा, कुलींजन। ५ छिक्किका, नक-छिकनी।

उग्रगन्धिका, उग्रगन्धा देखो।

उग्रगन्धिन् (सं॰ त्रि॰) उत्कट गन्धविशिष्ट, तीखो खुशबूवाला।

उग्रगन्धी, उग्रगन्धा देखो।

उग्रचण्डा (सं॰ स्त्री॰) उग्रा चण्डा कोपना स्त्री, कर्मधा॰। १ भगवतीकी एक मूर्ति। आश्विन मासकी कृष्ण-नवमीको कोटि योगिनीके साथ यह अष्टादशभुजा मूर्ति आविर्भूत होती है। यथा,—

"उग्रचण्डा तु या मूर्तिरष्टादशभुजाऽभवत्।
सा नवम्यां पुरा कृष्णपक्ष कन्यां गते रवौ।
प्रादुर्भूता महाभागा योगिनी कोटिभिः सह।" (कालिकापु॰ ५९-६० अ॰)

इसी मूर्तिने दक्षका यज्ञ भङ्ग किया था। आषाढ़ मासकी पूर्णिमा तिथिको दक्ष द्वादश वर्षमें निष्पन्न होनेवाला यज्ञ करने लगे थे। इस यज्ञमें सकल ही देवता बुलाये गये। किन्तु दक्षने कपाल-मालाधारी समझ शिवको और कपालीकी पत्नी होनेसे निज कन्या सतीको भी निमन्त्रण दिया न था। इसीसे सतीने अतिशय क्रोधमें आकर प्राण छोड़ा। देहत्यागके अनन्तर सतीने अपना रूप बदल कोटि योगिनीके साथ उग्रचण्डा मूर्ति बनायी और शिव तथा उनके अनुचरको ले यज्ञमें धूलि उड़ायी थी। (कालिकापुराण)
२ दुर्गाका एक आवरण।

उग्रचय (सं॰ पु॰) उत्कट अभिलाष, जोरकी ख्वाहिश, बड़ी चाह।

उग्रचारिणी (सं॰ स्त्री॰) दुर्गा देवीका एक नाम।

उग्रजाति (सं० त्रि०) नीचवंशसम्भूत, कमीने खान्दानसे पैदा। उग्र देखो।

उग्रजित् (वै० स्त्री०) एक अप्सरा। (अथर्व ६।११।८।१)

उग्रता (सं० स्त्री०) उग्रस्य भावः कर्म वा तल्। १ उग्रभाव, सख्ती, तेजी। २ उग्रकर्म, कड़ा काम। ३ कटुता, कड़वापन। ४ अलङ्कार शास्त्रका कहा हुआ व्यभिचारी गुणविशेष। अपराधादिके कारण चित्तमें रुखापन आनेको उग्रता कहते हैं। यह उग्रता घर्म, शिरःकम्पन, तर्जन, ताड़ना प्रभृति द्वारा झलकती है। यथा,—

"शौर्यापराधादिभवः भवेच्चण्डत्वमुग्रता।
तत्र स्वेदशिरःकम्पः तर्जनाताडनादयः॥"
(साहित्यदर्पण ३ परिच्छेद)

उग्रतारा (सं० स्त्री०) उग्र-तृ-णिच्-अच्-टाप्। भगवतीकी एक मूर्ति। ये उग्र भयसे भक्तोंको त्राण देती हैं। उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है—

किसी समय शुम्भ और निशुम्भ देवके यज्ञका भाग चुरा स्वयं दिक्पाल बन गये थे। इस पर समस्त देवता इन्द्रके साथ इकट्ठे हो हिमालय पहुंचे। वहां सबने गङ्गावतारके निकट ठहर महामाया भगवतीका स्तव किया। भगवती देवोंके स्तवसे सन्तुष्ट हुईं और मतङ्गका स्त्री रूप बना पूछने लगीं,—देव! तुम इस स्थान पर किस स्त्रीको स्तव सुनाते और इस मतङ्गके आश्रमपर क्यों आते हो? ऐसे कहते ही समय उनके शरीरकोषसे एक देवी निकल कर बोलीं,—'ये देव हमारा ही स्तव करते हैं। शुम्भ और निशुम्भ नामक दो दानव इन्हें बाधा देते हैं। इसीसे देव उनके वध निमित्त यहां आये हैं।' शरीरसे इन देवीके निकलने बाद ही हिमालयमें रहनेवाली वह गौरवर्णा मातङ्गी अतिशय कृष्णवर्णा बन गयीं। ऋषि इन्हींको उग्रतारा कहते हैं। यह मूर्ति चतुर्भुजा, कृष्णवर्णा और मुण्डमालाधारिणी है। दक्षिणके ऊपरी हस्तमें खड्ग तथा नीचेके हस्तमें चामर और वामके ऊपरी हस्तमें करपालिका तथा नीचेके हस्तमें खर्पर है। मस्तक पर आकाशभेदी एक जटा लगी और गलेमें मुण्डमाला पड़ी है। छातीपर सांपका हार लिपटा है। चक्षु रक्त जैसे लाल हैं। उग्रतारा कृष्णवर्ण वस्त्र पहने हैं। कटिदेशमें व्याघ्रचर्म भूषित है। वामपद शवकी छाती और दक्षिण पद सिंहकी पीठपर रखा है। ये देवी स्वयं शवके शरीरको चाटती हैं।

उग्रतेजस् (सं० त्रि०) १ उत्कट शक्तिशाली, खूंखार ताकृत रखनेवाला।

उग्रतेजा (सं० पु०) १ नागविशेष। २ किसी बुद्धका नाम। ३ एक देवता।

उग्रदंष्ट्र (सं० त्रि०) उत्कट दन्तयुक्त, तीखे दांतोंवाला।

उग्रदण्ड (सं० त्रि०) १ उत्कट दण्डधारी, मोटा सोंटा बांधनेवाला। २ निर्दय, बेरहम, कड़ी सज़ा देनेवाला।

उग्रदर्शन (सं० त्रि०) भयानक, खौफनाक, जिसे देखते डर लगे।

उग्रदुहितृ (सं० स्त्री०) उत्कट पुरुषकी कन्या, खूंखार आदमीकी बेटी।

उग्रधन्वन् (सं० पु०) उग्रं धनुर्यस्य, अनङ् समा०। १ शिव। २ इन्द्र। ३ मगधराज नन्दके कनिष्ठ पुत्र। शकटाल द्वारा ये मगधके राजा हुये। चन्द्रगुप्तने नेपालराज पर्वतेश्वरके साहाय्यसे उग्रधन्वाके राज्य छीननेकी चेष्टा की थी। उससे इन्होंने क्रुद्ध हो चन्द्रगुप्तके भ्रातृगणको मार डाला। पीछे पर्वतेश्वरसे लड़ते उग्रधन्वाने प्राण छोड़ा। (वै० त्रि०) ४ असह्य धनुर्विशिष्ट, कड़ी कमान् वाला, जिसके धनुस्की मार दुश्मन सह न सके।

"वाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता।" (ऋक् १०।१०३।३)

उग्रनासिक (सं० त्रि०) दीर्घनासिक, नक्कू, बड़ी नाकवाला।

उग्रपत्रक (सं० पु०) महानीला, काला भौंरा।

उग्रपुत्र (सं० पु०) उग्रस्य शूरस्य पुत्रः। १ शूरका पुत्र, बहादुर का लड़का। "उग्रपुत्रः शूरान्वयः।" (शतपथ-ब्राह्मणभाष्य १४।६।८।२) २ शिवके पुत्र कार्तिकेय। ३ गभीर जलाशय, गहरा तालाब। "आ उग्रपुत्रे जिघांसतः।" (ऋक् ८।१७।११) 'उग्रपुत्रे उग्राः उद्गूर्णाः पुत्रा यस्मिन् तस्मिन्नुदके' (सायण)

(त्रि॰) ४ उत्कट पुत्रविशिष्ट, जिसके ताक़तवर लड़का रहे।

उग्रबाहु (सं॰ त्रि॰) उत्कट बाहुविशिष्ट, ज़ोरदार बाज़ू रखनेवाला।

उग्रभा (सं॰ स्त्री॰) गोणसवल्ली, एक बेल।

उग्रम्पश्य (सं॰ त्रि॰) उग्र-दृश्-खश् मुम्। उग्र-दृष्टि-युक्त, कड़ी नजरवाला, जो सख़्तीसे देखता हो। वन्य जन्तु व्याघ्रादि उग्रम्पश्य होते हैं।

"उग्रम्पश्याकुलोऽरण्ये।" (भट्टि)

उग्रम्पश्या (सं॰ स्त्री॰) अप्सरा विशेष, एक परी। (अथर्वसंहिता ६।११८।१)

उग्ररेताः (सं॰ पु॰) रुद्र विशेष। (भागवत)

उग्रवीर (सं॰ त्रि॰) शक्तिशाली वीरविशिष्ट, ताकतवर सिपाही रखनेवाला।

उग्रवीर्या (सं॰ स्त्री॰) १ हिङ्गु, हींग। (त्रि॰) २ उत्कट वीर्यविशिष्ट, सख़्त ताक़त रखनेवाला।

उग्रव्यग्र (सं॰ पु॰) एक दानवका नाम।

उग्रशक्ति (सं॰ पु॰) एक राजा। ये राजा अमरशक्तिके पुत्र थे।

उग्रशासन (सं॰ त्रि॰) आज्ञा देनेमें उत्कट, जो कड़ा हुकम निकालता हो।

उग्रशेखरा (सं॰ स्त्री॰) उग्रशेखरः अच्-टाप्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। महादेवके मस्तक पर रहनेवाली गङ्गा। वाध्वगागोम्बिनी गङ्गा हैमवत्युग्रशेखरा। (त्रिकाण्डशे॰ २।२।३९)

उग्रशोक (सं॰ त्रि॰) उत्कट शोकयुक्त, बड़े अफ़सोसमें पड़ा हुआ।

उग्र-श्रवण-दर्शन (सं॰ त्रि॰) उत्कट श्रवण एवं दर्शनविशिष्ट, जो देखने-सुननेमें खौफ़नाक हो।

उग्रश्रवस् (सं॰ पु॰) १ सौरि, कर्ण राजा। २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

उग्रसेन (सं॰ पु॰) १ परीक्षितके एक पुत्र और जनमेजयके भ्राता। (शतपथब्राह्मण १३।५।४।३) २ मथुरा देशके एक राजा। ये आहुकके पुत्र और कंसके पिता थे। इनको पत्नीका नाम कर्णी था। उग्रसेनको राज्यच्युत कर कंस स्वयं सिंहासन पर बैठा था। पीछे कृष्णने कंसको मारकर राज्य उग्रसेनके अधीन कर दिया। (भागवत)

उग्रसेनज (सं॰ पु॰) उग्रसेनसे उत्पन्न कंस। कंस देखो।

उग्रसेना (सं॰ स्त्री॰) अक्रूरकी स्त्री। (हरिवंश)

उग्रा (सं॰ स्त्री॰) १ धन्याक, धनिया। २ यमानी, अजवायन। ३ संविदा मञ्जरी, गांजा। ४ वचा, बच। ५ छिक्किका, नक छिकनी। ६ तीव्रवीर्य वस्तु, कड़ी या सख़्त चीज़।

उग्रादित्य आचार्य (सं॰ पु॰) जैनग्रन्थ कल्याणकारक मेदुके रचयिता।

उग्रादेव (वै॰ पु॰) एक वैदिक ऋषि। (ऋक् १।३६।१८)

उग्रायुध (सं॰ त्रि॰) १ उत्कट आयुधविशिष्ट, सख़्त हथियार रखनेवाला। (पु॰) २ एक प्राचीन पौरव राजा। इनके पिताका नाम क्षत और पुत्रका नाम क्षेम्य रहा। इन्होंने निज बाहुबलसे नीपवंश और अन्यान्य नृपतिको मार डाला था। कुरुवीर भीष्मके पितृवियोगसे कातर होनेपर उग्रायुधने दूत द्वारा कहला भेजा,—'भीष्म! तुम्हारी जननी गन्धकाली स्त्रीगणके मध्य रत्नस्वरूप हैं। उन्हें हमको दे डालो। हम तुम्हें अतुल ऐश्वर्यशाली बना देंगे।' किन्तु भीष्म उस समय कुछ न बोले। पिताका अशौच काल बीतने पर उन्होंने घोरतर युद्ध कर उग्रायुधको मार डाला था। (महाभारत)

उग्रेश (सं॰ पु॰) उग्राणां ईशः। १ शिव। २ उग्रका बनवाया एक मन्दिर।

उघटना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्घाटन करना, खोलना। २ उत्कथन करना, कह देना। ३ ताल लगाना, सम देखाना। ४ विगत विषय बताना, गड़े मुर्दे उखाड़ना। ५ उपहास्य करना, हंसी उड़ाना। ६ निन्दावाद करना, भली-बुरी सुनाना।

उघटवाना, उघटाना देखो।

उघटा (हिं॰ वि॰) उद्घाटन करनेवाला, जो खोल देता हो।

उघटाई (हिं॰ स्त्री॰) १ उद्घाटन, खोलाई। २ उत्कथन, कहाई।

उघटाना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन कराना, खोलाना। २ उत्क्षथन कराना, कहाना।

उघड़ना (हिं० क्रि०) उद्घाटित होना, खुलना, नङ्गा हो जाना।

उघड़वाना उघटाना देखो।

उघड़ाना, उघटाना देखो।

उघवी (हिं० स्त्री०) कुञ्चिका, किलीद, चाबी, कुञ्जी।

उघरना, उघडना देखो।

उघरारा (हिं० पु०) १ उद्घाटित स्थान, खुला मदान। (वि०) २ उद्घाटित, खुला।

उघाड़ना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन करना, खोलना, कपड़ उतार कर फेंक देना।

"अपनी टांग उघाडे और आप ही लाजों मरे।" (लोकोक्ति)

२ प्रकट करना, बता देना।

उघाड़ी (हिं० वि०) १ नग्न, बरहना, खुली।

"जाके कारण पहनी साड़ी वो ही टांग रही उघाड़ी।" (लोकोक्ति)

२ प्रकट, ज़ाहिर।

उघाना (हिं० क्रि०) १ संग्रह करना, इकट्ठा करना, जमा करना। २ कर लगाना, महसूल बांधना। ३ मांगना, वसूल करना।

उघाई (हिं० स्त्री०) १ संग्रह, महसूलका वसूल। २ संग्रह किया जानेवाला धन, पावना।

उघारना, उघाड़ना देखो।

उघेलना, उघाड़ना देखो।

उङ्कार (सं० पु०) विष्णुके एक सहचरका नाम।

उङ्कुण (सं० पु०) उत्कुण, खटमल।

उङ्कोश (सं० पु०) नूतन नूतन आलाप, आभास, नयी नयी बात, झलक।

उङ्गल (हिं०) अङ्गुल देखो।

उच्—दिवा० पर० सक० सेट्। यह समवाय और मिश्रण अर्थमें आता है।

उचकन (हिं० पु०) अवष्टम्भ, उठगन, अटकनी, थाड़, टेक। इसे नीचे रखनेसे बरतन उलटने नहीं पाता।

उचकना (हिं० क्रि०) १ आच्छेद करना, छीन लेना। २ दबाना, जेबमें डालना। ३ ले भागना। ४ पूर्वास्वादन करना, पहले ही मज़ा लेना। ५ उद्ग्रहण करना, उठाना। ६ अधिक मूल देना, ज्यादा क़ीमत लगाना। ७ वल्गन करना, कूदना, उछलना, फांदना। ८ पदाग्रपर उठना, पञ्जोंके बल खड़ा होना। ९ पलायन करना, भाग जाना। १० सम्भोग करना, नखाग्रक्षत लगाना, डौला बनाना। ११ विस्मित होना, चकराना। १२ लालायित होना, ललचाना।

उचकवाना (हिं० क्रि०) उचकनेको आदेश देना, दूसरेसे उचकनेका काम लेना।

उचकाना (हिं० क्रि०) पदाग्रपर उठाना, पञ्जोंके बल खड़ा करना, भगाना, खेल बनवाना, चकरवाना।

उचकैया, उचकौना देखो।

उचकौना (हिं० वि०) १ आच्छेदक, छीननेवाला। २ पदाग्रपर उठनेवाला, जो पञ्जोंके बल खड़ा रहता हो।

उचक्का (हिं० पु०) वञ्चक, धूर्त, ऐयार, अण्डीमार।

उचक्कापन (हिं० पु०) हस्तलाघव, छल, नज़रबन्दी, दग़ाबाज़ी, नोचाखसोटी।

उचक्कापना, उचक्कापन देखो।

उचटना (हिं० क्रि०) १ पृथक् पड़ना, गिरना। २ उत्पतन करना, पलटना, फिरना। ३ वल्गन करना, कूदना। ४ विसर्पण करना, सरकना। ५ अप्रसन्न होना, थक जाना। ६ दुखना, नाखुश होना।

उचटवाना (हिं० क्रि०) उचाटनेको आज्ञा देना, उचाटनेका काम दूसरेसे लेना।

उचटाई (हिं० स्त्री०) उचाटनेका कार्य या काम।

उचटाना (हिं० क्रि०) १ वितरण करना, बांटना, अलग करना। २ उत्पतन कराना, पलटाना। ३ विसर्पण करना, सरकाना। ४ घुमाना, फेराना। ५ हताश करना, दिल तोड़ना।

उचड़ना, उचटना देखो।

उचड़वाना, उचटवाना देखो।

उचड़ाई, उचटाई देखो।

उचड़ाना, उचटाना देखो।

उचथ (वै० क्ली०) प्रशंसा, तारीफ़। (ऋक् १।७३।१०)

उचथ्य (वै० वि०) १ प्रशंसनीय, तारीफ़के क़ाबिल। (पु०) २ अङ्गिराका एक नाम। (ऋक् ८।४६।२८)

उचना (हिं० क्रि०) १ उच्च पड़ना, ऊंचा जाना, ऊपरको उठना। २ उच्च करना, ऊपरको उठाना।

उचनि (हिं स्त्री०) उच्च होनेकी दशा, उठान, उभार, उचकाई।

उचरंग (हिं० पु०) पतङ्ग, परवाना, कपड़ेका कीड़ा।

उचरना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण करना, ज़बानसे निकालना, बोलना। २ शब्द आना, आवाज़ देना, मुंहसे निकलना। ३ उचड़ना, छूटना।

उचरवाना, उचराना देखो।

उचराई (हिं० स्त्री०) १ उच्चारण करनेकी दशा, कहाई। २ उचड़ाई।

उचराना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण कराना, कहलाना। २ उचड़वाना।

उचलना, उचरना देखो।

उचाट (हिं० वि०) पृथक् किया हुआ, जो टूट गया हो। २ विरक्त, नाखुश, नाराज़। ३ श्रान्त, थकामांदा। ४ खिन्न, बेचैन। ५ हताश, दिलगीर। (स्त्री०) ६ घृणा, नफ़रत, अलग होनेकी सख्त ख़ाहिश।

उचाटन (हिं०) उच्चाटन देखो।

उचाटना (हिं० क्रि०) उच्चाटन करना, उठा देना, भगाना।

उचाटी (हिं० स्त्री०) उच्चाटन, उचाट, हटाव।

उचाटू (हिं० वि०) उच्चाटन करनेवाला, जो हटा देता हो।

उचाड़, उचाट देखो।

उचाड़ना, उचठाना देखो।

उचाना (हिं० क्रि०) उच्च करना, उठा देना।

उचापत (हिं० स्त्री०) १ विश्वास, एतबार, मानता। "बनियेकी उचापत और घोड़े की दौड़ बराबर।"(लोकोक्ति) २ प्रतारणा, फ़रेब, धोकाधड़ी। ३ विश्वास पर आनेवाली चीज़।

उचापती (हिं० वि०) १ उचापतसे सम्बन्ध रखने वाला, जो उधार लाता हो। (पु०) २ ऋणी वा उत्तमर्ण, क़र्ज़दार या क़र्ज़दिहन्दा, देनदार या लेनदार।

उचापती लेखा (हिं० पु०) २ आपणपत्र, दुकानका परचा, चलता हिसाब।

उचायी, उचाई देखो।

उचार (हिं०) उच्चार देखो

उचारक (हिं०) उच्चारक देखो।

उचारन (हिं०) उच्चारण देखो।

उचारना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण करना, कहना। २ उच्चाटन करना, उखाड़ देना।

उचाल, उचाट देखो।

उचालना, उचाटना देखो।

उचावा (हिं० पु०) स्वप्नप्रलाप, ख़्वाबकी बकझक।

उचित (सं० त्रि०) १ योग्य, कर्तव्य, वाजिब, करनेके क़ाबिल। २ परिचित, अभ्यस्त, जाना-बूझा, जो समझ में आ गया हो। ३ सुखमय, खुशगवार, अच्छा लगनेवाला। ४ साधारण, मामूली। ५ मान्य, मानने लायक़। ६ निक्षिप्त, न्यस्त, रखा हुआ। ७ व्यवस्थित, दुरुस्त, ठीक।

उचेड़ना, उचाटना देखो।

उचेलना, उचाटना देखो।

उचौंहा (हिं० वि०) उठा हुआ, उभरा हुआ, जो ऊंचा पड़ गया हो।

उच्च (सं० त्रि०) उच्चिनोतीति, उत्-चि-ड टिलोपः। १ उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। २ तुङ्ग, लम्बा। ३ गभीर, गहरा। ४ महास्वन, पुरशोर, जोरसे बोला जानेवाला। ५ प्रचण्ड, प्रदीप्त, तुन्द। ६ अंश, भाग, हिस्सा। (पु०) ७ राशिभेद, सैयारेके दायरेकी नोक।

"मेषो वृषो मृगः कन्या कर्कमीनतुलाधराः।
भास्करादिर्भवन्त्युच्चा राशयः क्रमशस्त्विमे॥
स्वोच्चाच्च सप्तमं नीचं प्राग्वद्भागैर्विनिर्दिशेत्।
उच्चान्तः सप्तसंज्ञः स्यात् नीचान्ते तु सुनीचकः॥" (ज्योतिस्तत्त्व)

ज्योतिष शास्त्रके अनुसार मेषका सूर्य, वृषका चन्द्र, मृगका मङ्गल, कन्याका बुध, कर्कटका वृहस्पति, मीनका शुक्र और तुलाका शनि उच्च होता है। अपने उच्चस्थानसे सप्तम पहुंचनेपर प्रत्येक ग्रह नीचे निकलता

है। अर्थात् तुलाका सूर्य, वृश्चिकका चन्द्र, कर्कटका मङ्गल, मीनका बुध, मकरका वृहस्पति, कन्याका शुक्र और मेषका शनि नीच है। ८ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़। ९ सरल देवदारु।

उच्चकैः (सं० अव्य०) उच्चैस्-अकच्। अतिशय उच्च, उन्नत, निहायत बुलन्द। (माघ १।१२)

उच्चक्षु (सं० त्रि०) उत्क्षिप्तमुत्पाटि वा चक्षुर्यस्य, प्रादि० बहुव्री०। ऊपरकी ओरको चक्षु रखनेवाला, जो आंख उठाये हो।

उच्चध्वज (सं० क्ली०) हृदयमें रहने और मुखपर न आनेवाला हास्य, अन्दरूनी क़हक़हा, जो हंसी चेहरेसे नहीं—दिलसे निकलती हो।

उच्चङ्गम (सं० पु०) उच्चगामी पक्षी, विहङ्ग, जो चिड़िया ऊंचे उड़ सकती हो। (दिव्यावदान)

उच्चट (सं० पु०) वङ्ग, सीस।

उच्चटन (सं० क्ली०) उन्मूलन, बरबादी, उजाड़। २ पलायन, दौड़, मन्त्र द्वारा किसी व्यक्तिको उसकी वृत्तिसे भगा देनेका काम।

उच्चटनीय (सं० वि०) भगाया जानेवाला, जो निकाल देनेके लायक़ हो।

उच्चटा (सं० स्त्री०) उत्-चट्-अच्-टाप्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ भूम्यामलकी, भुयिं आंवला। ३ एक प्रकार लशुन, किसी क़िस्मका लहसन। ४ नागरमुस्ता, नागरमोथा। ५ रक्त गुञ्जा, लाल घुंघची। ६ तृण विशेष, एक घास (Cyperus Compressus)। इसे निर्विषी, चुडाला, चक्रला, अम्बुपत्रा, जटिला, शुक्रजा और उत्तानक भी कहते हैं। वैद्यकके मतसे उच्चटा स्निग्ध, शीतल, कषाय और अम्ल होती है। इससे पित्त, प्रमेह, दाह, तृष्णा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, उन्माद, अपस्मार, रक्तपित्त और वातरक्तकी व्यथा मिट जाती है। उच्चटा छोटे नागपुर, आसाम, लखनऊ और सिंहलके ग्रीष्मप्रधान स्थानोंमें उपजती है। ७ दम्भ, ग़रूर, घमण्ड। ८ चर्चा, तज़किरा, बातचीत। ९ स्वभाव, आदत।

उच्चटापत्र (सं० पु०) क्षुद्र तालीशपत्र, छोटे पनिहा आंवलेका पत्ता। (क्ली०) २ चिञ्चोटक पत्र।

उच्चटाफल (सं० क्ली०) रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

उच्चटामूल (सं० क्ली०) चिञ्चोटक मूल, चचेंड़ेकी जड़।

उच्चण्ड (सं० त्रि०) उत्-चण्ड-अच्। १ त्वरान्वित, जल्दबाज, फुरतीला। २ तीव्र, तुन्दख़ू, झल्ला।

उच्चतम (सं० त्रि०) अत्यन्त उन्नत, निहायत ऊंचा। (पु०) सप्तक विशेष। सङ्गीतमें यह तारसे भी ऊंचा पड़ता और केवल बजानेमें लगता है।

उच्चतर (सं० त्रि०) अपेक्षाकृत उन्नत, ज्यादा ऊंचा।

उच्चतरु (सं० पु०) उच्च उन्नतस्तरुः। १ नारिकेल वृक्ष, नारियलका पेड़। २ वट वृक्ष, बरगदका पेड़।

उच्चता (सं० स्त्री०) उन्नतावस्था, उचाई।

उच्चताल (सं० क्ली०) भोजके समयका नृत्य एवं गीत, ज़्याफ़तमें होनेवाला नाच और गाना।

उच्चत्व (सं० क्ली०) उच्चता देखो।

उच्चदेव (सं० पु०) उच्चः प्रधानो देवः। विष्णु, प्रधान देव श्रीकृष्ण।

उच्चदेवता (सं० स्त्री०) काल, यमराज।

उच्चध्वज (सं० क्ली०) तुषित नामक स्वर्गस्थ बुद्धका नाम।

उच्चनीच (सं० त्रि०) १ उत्कृष्ट निकृष्ट, उन्नत-अवनत, भला-बुरा, ऊंचा नीचा। "दृष्टारसुच्चनीचानां कर्मभिर्देहिनां गतिम्।" (भारत अश्वमेध) (पु०) २ ग्रहगणका उच्च और नीच स्थान। ३ स्वरके आघातका परिवर्तन, आवाज़का उतार-चढ़ाव।

उच्चन्द्र (सं० पु०) उत् स्वल्प अवशिष्टश्चन्द्रो यत्र, प्रादि० बहुव्री०। निशाका चतुर्थ प्रहर, रात्रिशेष, रातका आख़िरी वक़्त। रात्रिको जब चन्द्र डूबने लगता, तब यह समय पड़ता है।

उच्चपद (सं० क्ली०) सम्मानका पद, उन्नतावस्था, ऊंचा दरजा।

उच्चभाषण (सं० क्ली०) उन्नत कथन, बुलन्द बात, ऊंचा बोल।

उच्चभाषिन् (सं० त्रि०) उच्चः स्वरसे बोलनेवाला, जो ज़ोरसे बात करता हो।

उच्चय (सं० पु०) उत्-चि-अच्। १ चयन, इकट्ठा करनेका काम। २ परिधान-वस्त्र-ग्रन्थि, पहननेके

कपड़े की गांठ, इजारबन्द। ३ रचना, बनावट।
"वाक्यं स्यादयोग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।" (साहित्यदर्पण)
४ संयोजना, मिलाव। ५ समूह, ढेर। ६ त्रिकोणका सम्मुखस्थ पार्श्व, मुसल्लसके सामनेका बाजू।

उच्चयापचय (सं० पु०) वृद्धि और ह्रास, घटती बढ़ती, चढ़ा उतरी।

उच्चरण (सं० क्ली०) १ ऊपर या बाहर जानेका काम। २ कथन, तलफ़्फ़ुज़। यह कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ और नासिकादिके प्रयत्नसे होता है।

उच्चरना (हिं० क्रि०) उच्चारण करना, मुंहसे निकालना, बोलना।

उच्चरित (सं० त्रि०) उत्-चट्-कर्मणि क्त। १ कीर्तित, कहा या निकाला हुआ। २ उत्थित, उठा या निकला हुआ। (क्ली०) ३ विष्ठा, मलमूत्र, बराज़, मैला।

उच्चल (सं० क्ली०) उत्-चल-अच्। मन, दिल।

उच्चलन (सं० क्ली०) गमन, रवानगी, सरक जानेका काम।

उच्चललाटा (सं० स्त्री०) उच्चललाटविशिष्ट स्त्री, ऊंचे मत्थेकी औरत।

उच्चललाटिका, उच्चललाटा देखो।

उच्चलित (सं० त्रि०) ऊपर या बाहर पहुंचा हुआ, जा फटकारा गया हो।

उच्चा (वै० अव्य०) उपरि, ऊपर, ऊंचे।

उच्चाचक्र (वै० त्रि०) उपरि चक्र युक्त, जिसके उपर घेरा रहे। यह शब्द कूपका विशेषण है।

उच्चाट, उच्चाटन देखो।

उच्चाटन ((सं० क्ली०) उत्-चट्-णिच्-ल्युट्। १ उत्पाटन, स्थापित वा संयोजित वस्तुका पृथक् करण, उखाड़, नोच-खसोट। २ चञ्चल करण, डावांडोल बनानेका काम। ३ षट्कर्मान्तर्गत अभिचार विशेष, एक जादू। इस कार्यकी देवता दुर्गा और तिथि कृष्णाष्टमी वा चतुर्दशी है। शनिवारको साधुके बालोंमें पिरोयी हुई घोड़ेके दांतोंकी मालासे जप करते हैं। (शारदातिलक) इन्द्रजाल देखो। ४ उत्कण्ठा, फ़िक्र। ५ विवाद, झगड़ा। ६ उत्खातन, अफ़सुर्दा बनानेका काम।

उच्चाटनीय (सं० त्रि०) उत्पाटनयोग्य, उखाड़ डालनेके क़ाबिल।

उच्चाटित (सं० त्रि०) उत्पाटित, उखाड़ा हुआ, जो निकाला गया हो।

उच्चाबुध्न (वै० त्रि०) उपरि तलयुक्त, जिसके पेंदा ऊपर रहे।

उच्चार (सं० पु०) १ विष्ठा, बराज, मैला। स्मृतिमें लिखा है,—उच्चार, मैथुन, प्रस्राव, दन्तधावन, स्नान और भोजन छः कार्य करते समय बोलना न चाहिये।

"उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने।
स्नाने भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत्॥" (स्मृति)

२ त्याग, बरख़ास्तगी। ३ उच्चारण, कथन, तलफ़्फ़ुज़।

उच्चारक (सं० त्रि०) उच्चार स्वार्थे कन्। उच्चारणकारी, तलफ़्फ़ुज़ करनेवाला, जो उच्चारण करता हो।

उच्चारण (सं० क्ली०) उत्-चर्-णिच्-ल्युट्। कथन, शब्दप्रयोग, तलफ़्फ़ुज़, बोलनेका काम। २ स्फुटनकार्य, मुमकिन्-उल्-समा बनानेका काम, जिससे समझमें आ जाये।

उच्चारणज्ञ (सं० पु०) शब्दव्युत्पन्न, ज़बान्दान्, जो तलफ़्फ़ुज़ करनेमें होशियार हो।

उच्चारणस्थान (सं० क्ली०) गलांशविशेष, गलेका एक हिस्सा। इसीसे शब्द निकलता है। कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका, जिह्वामूल और उपध्मा आठ उच्चारणके स्थान होते हैं।

उच्चारणार्थ (सं० त्रि०) १ उच्चारणके लिये उपयोगी, तलफ़्फ़ुज़में लगनेवाला, जो बोलनेके लिये मुफ़ीद हो। २ उच्चारणके लिये आवश्यक, तलफ़्फ़ुज़ करनेमें जिसकी ज़रूरत पड़े। कभी-कभी अतिरिक्त अक्षर लगा लेनेसे उच्चारणमें सरलता आ जाती है।

उच्चारणीय (सं० त्रि०) उच्चारण किया जानेवाला, जो तलफ़्फ़ुज़ किये जाने क़ाबिल हो।

उच्चारना (हिं० क्रि०) उच्चारण करना, तलफ़्फ़ुज़ निकालना, बोलना।

उच्चारित (सं० त्रि०) उच्चार-इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। १ उत्थित, शब्दायित, तलफ़्फ़ुज़

किया या कहा हुआ, जो बोला गया हो। २ मूलमूत्र-युक्त, बराज़से भरा हुआ।

उच्चार्य (सं० त्रि०) उत्-चर्-णिच्-ण्यत्। १ उच्चारण-योग्य, तलफ़्फ़ुज़के क़ाबिल। (अव्य०) २ उच्चारण करके, कहकर।

उच्चार्यमाण (सं० त्रि०) उच्चारण किया जानेवाला, जो कहा जा रहा हो।

उच्चावच (सं० त्रि०) उदक् उत्कृष्टश्च अवाक् निकृष्टश्च, निपातनात् साधुः। मयूरव्यंसकादयश्च। पा २।१।७२। १ विविध, नानाप्रकार, मुख़्तलिफ़। २ असमान, नाहमवार, जो बराबर न हो। ३ उच्चनीच, भलाबुरा।

उच्चिङ्ग्ट (सं० पु०) १ ढणगड़-मत्स्य, किसी क़िस्मका केकड़ा। २ कोपनस्वभाव, गुस्सावर आदमी। ३ पतङ्ग-विशेष, किसी क़िस्मका झुरझुरा, एक झींगर।

उच्चिटिङ्ग (सं० पु०) उच्चिटङ्ग, एक झींगर। यह कीड़ा तीन चार प्रकारका होता है। एक जातीय (Acheta domestica), नगर, विशेषतः पल्लि-ग्राममें ही अधिक रहता है। देखनेमें कोमल है। इसे उष्णस्थानमें रहना अच्छा लगता है। उच्चिटिङ्ग ग्रीष्मकालमें निकलता है। शीत पड़ते ही यह निज आवासका आश्रय लेता है। उष्णता न मिलनेसे उच्चिटिङ्ग मृतवत् पड़ा रहता है। यह निशाचर होनेसे सन्ध्याके बाद आहार ढूंढ़ने निकलता है। किन्तु ग्राम्य उच्चिटिङ्गकी अपेक्षा वन्य अथवा क्षेत्रज (Acheta campestris) बहुत बड़ा और देखनेमें काली रीग्रनायी-जैसा होता है। यह सात-आठ हाथ नीचे मट्टीमें गर्त बनाता है। रात्रिकालको गर्तके मुखपर बैठ प्रथम अल्प अल्प और पश्चात् प्रणयिनीके आकर मिल जानेसे साथ-साथ उल्लासमें प्राण भर बोलता है। इसका स्वर दूरसे मन लगाकर सुनने पर अति मिष्ट लगता और सङ्गीतकी नाना प्रकार ध्वनिका भाव जताता है। एक-एक स्त्री प्रायः दो सौ डिम्ब देती है। डिम्ब फूटनेपर बच्चेका आकार प्रायः मध्यमवयस्क उच्चिटिङ्गकी तरह रहता है, केवल पच्छी नहीं निकलते।

एक जातीय दूसरा उच्चिटिङ्गभी है। यह उक्त उभय जातिसे बड़ा होता है। हिन्दुस्थानमें इसे झुरझुरा या झींगर कहते हैं। झींगर देखो।

महर्षि सुश्रुतके मतमें यह विषाक्त कीट है। इसके दंशनसे वायुजन्य रोग उपजता है। (सुश्रुत कल्पस्थान)

उच्चूड़ (सं० पु०) उन्नता चूड़ा यस्य, इस्य लत्वम्। १ ध्वजोर्ध्वमुख कूर्च, ध्वजके उपरिभागका वस्त्रखण्ड, झण्डेके ऊपरी हिस्सेका फहरानेवाला कपड़ा। २ ध्वजके उपरि भागपर बांधा जानेवाला एक अलङ्कार, झण्डेके ऊपरी हिस्सेका एक गहना।

उच्चूल, उच्चूड़ देखो।

उच्चैः (सं० अव्य०) १ उन्नत-रूपसे, ऊंचे। २ अत्यन्त, निहायत, बहुत। ३ उच्च स्वरपूर्वक, बुलन्द आवाजमें।

उच्चैःकर (सं० त्रि०) तीक्ष्ण-स्वरित बनानेवाला, जो लहजको ज़ोरसे अदा करता हो।

उच्चैःकुल (सं० क्ली०) १ उन्नत वंश, ऊंचा खान्दान्। (त्रि०) २ उन्नत वंश-सम्भूत, ऊंचे ख़ान्दान्‌वाला।

उच्चैःशिरस् (सं० त्रि०) उच्चैरुन्नतं शिरोऽस्य। उन्नत-मस्तक, महत्तर, ऊंचे दरजेवाला।

उच्चैःश्रवस् (सं० पु०) १ इन्द्रका घोटक या घोड़ा। समुद्रमन्थनसे इसकी उत्पत्ति है। इसका कान खड़ा और बोल बड़ा होता है। वर्ण श्वेत है। मुखकी संख्या सात बताते हैं। (त्रि०) २ बधिर, बहरा, जो कम सुनता हो।

उच्चैःश्रवस, उच्चैःश्रवस् देखो।

उच्चैश्रवा, उच्चैःश्रवस् देखो।

उच्चैःस्थान (सं० क्ली०) १ उन्नत स्थान, ऊंची जगह। (त्रि०) २ उन्नत पदाधिकारी, ऊंचे दरजे या खान-दान्‌वाला।

उच्चैःस्थेय (सं० क्ली०) दृढ़ता, मज़बूती (चाल चलनकी)।

उच्चैःस्वर (सं० पु०) उन्नत शब्द बुलन्द आवाज़। (त्रि०) २ उन्नत शब्द निकालनेवाला, जो बुलन्द आवाज़ लगाता हो।

उच्चैर्घुष्ट (सं० क्ली०) उच्चैस्-घुष् भावे क्त। महारव, शोर, गुलगपाड़ा।

उच्चैर्घोष (वै० त्रि०) उन्नत स्वरकी घोषणावाला।

"यदुच्चैर्घोषस्तनयन्नववाक्कुर्वैन्निव दहति।" (ऐतरेयब्राह्मण ३।४)

उच्चैर्भुजतरु (सं० त्रि०) वृक्षको विस्तारित बाहुकी भांति रखनेवाला, जो फैले पेड़ोंको बाजूकी तरह रखता हो।

उच्चैस्, उच्चैः देखो।

उच्चैस्तम (सं० त्रि०) १ अत्यन्त उन्नत, निहायत बुलन्द, बहुत ऊंचा। २ अत्यन्त उन्नत स्वरविशिष्ट, बहुत ऊंची आवाज़वाला।

उच्चैस्तमाम् (सं० अव्य) १ अत्यन्त उन्नत रूपसे, बहुत ऊंचे। २ उन्नत स्थानपर, बुलन्दीके ऊपर। ३ उन्नत स्वरसे, बुलन्द आवाज़के साथ।

उच्चैस्तर (सं० त्रि०) १ अपेक्षाकृत उन्नत, ज्यादा ऊंचा। २ अधिक स्वराघातयुक्त, जो ज्यादा ऊंची आवाज़से बोला जाता हो।

उच्चैस्तरत्व (सं० क्लो०) अधिक उन्नत होनेकी स्थिति, ज्यादा ऊंचा होनेकी हालत।

उच्चैस्त्व (सं० क्लो०) उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई।

उच्छ्—१ तुदा० इदित्० पर० सक० सेट्। यह धान्यकणा ग्रहणका अर्थ रखता है। २ तुदा० पर० सक० सेट्। इससे बन्ध, समागम, अतिक्रम और त्यागका अर्थ निकलता है।

उच्छन्न (सं० त्रि०) उत्-छद्-क्त। नष्ट, बरबाद, उजड़ा।

उच्छन्नसन्धि (सं० स्त्री०) सन्धि विशेष, एक सुलह। उत्तम राज्य लेनेके बाद किसी राजाके साथ होनेवाली सन्धिको उच्छन्नसन्धि कहते हैं।

उच्छय (सं० क्लो०) त्रिकोणका पश्चात् पद, मुसल्लसके पीछेका क़दम।

उच्छरना, उछलना देखो।

उच्छल (सं० त्रि०) उत्-शल्-अच्। आधार अतिक्रमकर ऊर्ध्वको प्लावित होनेवाला, जो अपनी जगह छोड़ ऊपरको उड़ता हो।

उच्छलत् (सं० त्रि०) १ ऊपर या दूर उड़नेवाला। २ सामना करनेवाला।

उच्छलन (सं० क्लो०) ऊपरका उड़ना, उछाल।

उच्छलना, उछलना देखो।

उच्छलित (सं० त्रि०) उत्-शल्-क्त। उत्क्षिप्त, उत्थित, उछला हुआ, जो ऊपर उड़ गया हो।

उच्छव (हिं०) उत्सव देखो।

उच्छादन (सं० क्लो०) उच्छाद्यते मलोऽनेन, उत्-छद्-णिच्-ल्युट्। १ गन्धद्रव्य द्वारा शरीर मार्जन, खुशबूदार चीज़से जिस्मकी सफाई। २ आच्छादन, छिपाव, ढंकाई।

उच्छाद्य (सं० अव्य०) उतारकर, कपड़े खोलकर।

उच्छाल—एक प्राचीन जनपद, गौड़के मध्य अवस्थित।

उच्छास (हिं०) उच्छ्वास देखो।

उच्छास्त्र (सं० त्रि०) उत् उत्क्रान्तं शास्त्रम्। शास्त्रविरुद्ध, जो शास्त्रसे मिलता न हो।

उच्छास्त्रवर्तिन् (सं० त्रि०) शास्त्रोल्लङ्घनकारी, शास्त्रकी मर्यादाको उल्लङ्घन करनेवाला।

"न राज्ञः प्रतिगृह्णीयाल्लुब्धस्योच्छास्त्रवर्तिनः॥" (याज्ञवल्क्य ११४०)

उच्छाह (हिं०) उत्साह देखो।

उच्छिख (सं० त्रि०) उन्नता शिखा यस्य, प्रादि० बहुव्री०। उन्नत-शिखा, चोटी ऊपरको उठाये हुआ। २ ज्वाला ऊपरको लगाये हुआ, जो लपटको नोक ऊपरको निकाले हो। ३ ज्वलन्त, भभकनेवाला। ३ द्युतिमान्, चमकीला। "माङ्गल्योर्णावलयिनि पुरः पावकस्योच्छिखस्य।" (रघु १७।१७) (पु०) ४ उन्नत शिखाविशिष्ट एक नाग। (भारत आदि)

उच्छिङ्घन (सं० क्लो०) नस्यकी भांति नासिका द्वारा किसी वस्तुको श्वासके साथ खींचनेका कार्य, खर्राटे मारनेकी हालत। इसे उच्चिङ्घन भी लिखते हैं।

"विध्यते योऽस्य पार्श्वं ऽच्छासं रुध्वा नासिकापुटम्।
उच्छिङ्घनेन हर्तव्यो दृष्टिमण्डलजः कफः॥" (सुश्रुत उत्तर १७अ०)

उच्छित (सं० त्रि०) उत्-श्रि-क्त। रुद्ध, रुका या घिरा हुआ।

उच्छिति (सं० स्त्री०) उत्-छिद् भावे क्तिन्। उच्छेद, विनाश, बरबादी।

उच्छिद्य (सं० अव्य०) विनाश करके, काट या मारकर।

उच्छिन्न (सं० त्रि०) उत्-छिद्-क्त। १ समूल उत्पाटित, तोड़ा या उखाड़ा हुआ। २ नीच, कमीना।

(पु०) २ बहुमूल्य भूमिके देनेसे प्राप्त हुई सन्धि, जो सुलह बेशकीमत ज़मीन् देनेसे मिली हो।

उच्छिरस् (सं० त्रि०) उन्नतं शिरोऽस्य। १ उन्नत शिर:विशिष्ट, महिमान्वित, जो मत्थेको ऊपर उठाये हो। (पु०) २ बौद्धशास्त्रोक्त उरुमुण्ड पर्वत।

उच्छिलीन्ध्र, उच्छिलीन्ध्र देखो।

उच्छिलीन्ध्र (सं० क्ली०) उद्गतं शिलीन्ध्रम्। गोमयच्छत्राक, कुलाह-बारान्, कुकरमुत्ता, सांपकी टोपी। वर्षामें यह भूमिको विदारण कर प्रकट होता है।

उच्छिष्ट (सं० त्रि०) उत् शिष्यते यत्, उत्‌-शिष्-क्त। १ भुक्तावशिष्ट, जूठा, जो खाते-खाते बचा हो। शास्त्रमें उच्छिष्ट द्रव्य खानेको मना कहा है—

"नोच्छिष्टं कस्यचिद्दद्यान्नाद्याच्चैव तथान्तरा।
न चैवात्यशनं कुर्यान्नचोच्छिष्टः क्वचिद् व्रजेत्॥" (मनु २।५६)

उच्छिष्ट किसीको देना, सायं एवं प्रातर्भोजन कालके मध्य फिर खाना, अतिशय आहार करना और उच्छिष्ट मुखसे कहीं जाना न चाहिये।

भिन्न-भिन्न जातिका उच्छिष्ट छूने अथवा खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है—

"अज्ञानाद् यस्तु भुञ्जीत शूद्रोच्छिष्टं द्विजोत्तमः।
त्रिरात्रोपषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति॥" (आपस्तम्ब)

जो ब्राह्मण अज्ञानसे शूद्रका उच्छिष्ट खाता है, वह तीन रात्रि उपवास करने बाद पञ्चगव्यसे शुद्धि पाता है।

"अन्नानां भुक्तशेषस्तु भक्षितो यैर्द्विजातिभिः।
चान्द्रं कृच्छ्रं तदर्धं च क्रमात्तेषां विशोधनम्॥" (प्रायश्चित्तविपाक)

द्विजाति अन्नका उच्छिष्ट खानेसे क्रमान्वयमें चान्द्रायण और तप्तकृच्छ्र अथवा उसका अर्ध प्रायश्चित्त करनेपर शुद्ध होते हैं।

"चण्डालपतितादीनामुच्छिष्टान्नस्य भक्षणे।
द्विजः शुद्ध्येत् पराकेण शूद्रः कृच्छ्रेण शुद्ध्यति॥" (अङ्गिरा)

चण्डाल, पतित प्रभृतिका उच्छिष्ट अन्न खानेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य पराक् तथा शूद्र कृच्छ्र द्वारा शुद्ध होता है। जान बूझकर उच्छिष्ट खानेसे दुना प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

"शूद्रोच्छिष्टाशने मासं पक्षमेकं तथा विशः।
क्षत्रियस्य तु सप्ताहं ब्राह्मणस्य तथा दिनम्॥" (शङ्ख १७।४२)

शूद्रका एक मास, वैश्यका एक पक्ष, क्षत्रियका एक सप्ताह और ब्राह्मणका उच्छिष्ट खानेसे एक दिन व्रत करना पड़ता है।

"श्वशूकरान्त्यचण्डालमद्यभाण्डरजस्वला।
यद्युच्छिष्टैः स्पृशेत्तत्र कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत्॥" (काश्यप)

कुक्कुर, शूकर, शूद्र, चण्डाल, मद्यभाण्ड और रजस्वलाका उच्छिष्ट छूनेसे कृच्छ्र और सान्तपन द्वारा शुद्ध होना चाहिये।

चिकित्साशास्त्रमें भी उच्छिष्ट भोजन निषिद्ध कहा है। क्योंकि जो व्यक्ति प्रथम खाके उच्छिष्ट छोड़ता है, उसका संक्रामक रोग उच्छिष्ट खानेवालेको भी दबा सकता है। अतएव उच्छिष्ट भोजन न करना ही अच्छा है। २ त्यक्त, छूटा हुआ, जो छोड़ दिया गया हो। ३ अपवित्र, नापाक, जिसके मुंह या हाथपर जूठा खाना लगा रहे। (पु०) ४ मधु, शहद। (क्ली०) ५ दत्तावशिष्ट, बचत, जो देनेसे बचा हो।

"असंस्कृतप्रमीतानां योगिनां कुलयोषिताम्।
उच्छिष्टं भागधेयं स्यात् दर्भेषु विकिरश्च यः॥" (ब्रह्मपुराण)

उच्छिष्टकल्पना (सं० क्ली०) १ निःसार आविष्कार, बेमज़ा ईजाद, बासी बनावट।

उच्छिष्टगणपति (सं० पु०) १ उच्छिष्ट व्यक्ति द्वारा पूजित गणेश। जूठे मुंह रहनेवाले लोग इन्हें पूजते हैं। २ हेरम्ब सम्प्रदाय। इसके मतसे स्त्री और पुरुष उभय होते हैं। उनके संयोग वियोगमें पाप नहीं लगता। यह शब्द शुद्धगणपतिके विरोधमें आता है।

उच्छिष्टगणेश (सं० पु०) तन्त्रोक्त गणेशकी मूर्तिका एक भेद। गणेश देखो।

उच्छिष्टचाण्डालिनी (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त मातङ्गी देवीकी एक मूर्ति। मातङ्गी देखो।

उच्छिष्टता (सं० स्त्री०) १ शेष रहजानेकी दशा, जिस हालतसे कुछ छूट जाये। २ अपवित्रता, नापाकी, जूठन।

उच्छिष्टभोक्तृ, उच्छिष्टभोजिन् देखो।

उच्छिष्टभोजन (सं० पु०) १ देव-नैवेद्य-वलिभोजन-कर्ता, जो देवता पर चढ़ा प्रसाद खाता हो। २ अपरके

उच्छिष्टका खानेवाला, जो दूसरेका जूठा खाता हो। (क्ली) ३ अपरके उच्छिष्टका अशन, दूसरेका जूठा खाना।

उच्छिष्टभोजिन् (सं० त्रि०) नीच व्यक्तिका भुक्तावशिष्ट खानेवाला, जो दूसरेका जूठा खाता हो।

उच्छिष्टमोदन (सं० क्ली०) उच्छिष्टं मधु तेन मोद्यते। सिक्थ, मोम। मोम देखो।

उच्छीर्षक (सं० त्रि०) उत् ऊर्ध्वस्तं शीर्षं येन, कन्, बहुव्री०। १ उन्नत शिरःयुक्त, ऊंचा सर रखनेवाला। (क्ली०) २ उपाधान, तकिया। इससे शिर उठा रहता है। ३ मस्तक, शिरःस्थान, खोपड़ा।

"उच्छीर्षके श्रियै कुर्यात् भद्रकाल्यै च पादतः।
ब्रह्मवास्तोः पतिभ्यान्तु वास्तुमध्ये वलिं हरेत्॥" (मनु ३।८९)

(पु०) ४ शय्यादोष विशेष, विस्तरका एक ऐब।
"उच्छीर्षके ससुन्नाहं वस्तिः कुर्याच्च मेहनम्।" (सुश्रुत)

उच्छुष्क (सं० त्रि०) १ उपरिभागमें शुष्क, मुरझाया हुआ। "उच्छुष्कमांसरुधिरत्वचस्नायुनद्धः।" (ललितविस्तर) २ सन्तप्त, गर्मागर्म।

उच्छुष (सं० क्ली०) सम्भ्रम, मोह, घबराहट।

उच्छुषन्, उच्छुष देखो।

उच्छू (हिं० स्त्री०) उच्छ्वास विकार, एक खांसी, धांस। खाते-पीते समय किसी द्रव्यके मुंहमें उलट आने या पेटमें पहुंचनेसे रुक जानेपर इसका वेग बढ़ता है। उच्छू लगनेसे आंखोंमें आंसू भर आते हैं। प्रायः खाने-पीनेमें त्वरा करने और मनको एकाग्र न रखनेसे इसकी उत्पत्ति है।

उच्छूड़ा (सं० स्त्री०) उच्चूड़ देखो।

उच्छून (सं० त्रि०) उत्-श्वि-क्त। १ स्फीत, सूजा या फूला हुआ। २ उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। ३ उच्छ्वसित, मुखके आन्तरिक श्वाससे दबा हुआ। ४ स्थूल, जसीम, मोटा।

उच्छृङ्खल (सं० त्रि०) उद्गतं शृङ्खलं यस्य, बहुव्री०। १ अबाध, खुद-इख्तियार, जो किसीको कैदमें न हो। २ नियमरहित, बेकायदा।

उच्छेतव्य (सं० त्रि०) उच्छेद-योग्य, उखड़ने लायक, जिसे कोई बरबाद कर सके।

उच्छेत्तृ (सं० त्रि०) उत्-छिद्-तृच्। उच्छेदकारक, नाशक, उखाड़ डालनेवाला, जो बरबाद कर देता हो।

उच्छेद (सं० पु०) उत्-छिद् भावे घञ्। १ उत्पाटन, उन्मूलन, उखाड़, नोचखसोट। २ विनाश, ध्वंस, बरबादी। "सत्यं भवोच्छेदकरः पिता ते।" (रघु)

उच्छेदन (सं० क्ली०) उच्छेद देखो।

उच्छेदनीय (सं० त्रि०) उत्पाटनयोग्य, उखाड़ने काबिल, जिसे कोई बरबाद कर सके।

उच्छेदिन् (सं० त्रि०) उन्मूलनकर, उखाड़ डालनेवाला, जो बरबाद कर देता हो।

उच्छेद्य, उच्छेदनीय देखो।

उच्छेष (सं० पु०) उत्-शिष्-घञ्। अवशेष, बचत।

उच्छेषण (सं० क्ली०) उत्-शिष्-कर्मणि ल्युट्। उच्छिष्ट, बची हुई चीज।

उच्छेष्य (सं० त्रि०) उत्-शिष् निपातनात् सिद्धम्। अवशेषणीय, बचा रखने काबिल, जो बच सकता हो।

"उच्छेषणं भूमिगतमजिह्मस्याशठस्य च।
दासवर्गस्य तत्पित्रे भागधेयं प्रचक्षते॥" (मनु ३।२४६)

उच्छोचन (सं० त्रि०) उत्-शुच्-ल्युट्। ज्वलन्त, भभकता हुआ, जो जल रहा हो।

उच्छोषण (सं० त्रि०) उत्-शुष्-णिच्-ल्युट्। १ सन्तापक, हरारत पैदा करनेवाला। २ ऊर्ध्वशोषक, सुखा डालनेवाला। "न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद् यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्।" (गीता २।८)

(क्ली०) भावे ल्युट्। ३ सम्यक् शोषण, पूरी युवुसत, खासी सुखावट।

"उच्छोषणं समुद्रस्य पतनं चन्द्रसूर्ययोः।" (रामायण ३।२६।२१)

उच्छोषुक (सं० त्रि०) उत्-शुष् बाहुलकात् उकञ्। ऊर्ध्वशोषयुक्त, मुरझाया हुआ। २ ऊर्ध्वशोषक, सुखा डालनेवाला।

उच्छ्रय (सं० पु०) उत्-श्रि-अच्। १ उच्चता, उंचाई। २ उन्नति, तरक्की, बढ़ती। ३ उच्च संख्या, ऊंची अदद। "उच्छ्रयेण गुणितं चितेः फलम्।" (लीलावती) ४ उद्गमन, उठान। ५ वृक्ष पर्वतादिका उत्सेध, दरख्त पहाड़ वगैरहका उरूज। ६ ग्रहादिका

उदय, सितारे वगैरहका नमूद। ७ त्रिकोणका उच्छ्रित पार्श्व, मुसल्लसका खड़ा बाज़ू।

उच्छ्रयण (सं० क्लो०) उत्-श्रि करणे ल्युट्। १ उन्नति, तरक्की, उठान। (त्रि०) उत्-श्रि कर्तरि ल्यु। २ उत्कृष्ट, उम्दा, बढ़िया।

"उच्छ्रयणानि उत्कृष्टानि।" (आश्वलायनगृह्यसूत्रवृत्ति ४।९)

उच्छ्रयोपेत (सं० त्रि०) उच्च, बुलन्द, ऊंचा।

उच्छ्राय (सं० पु०) उत्-श्रि-घञ्। उदिश्रयतियौति-पूद्रुवः पा ३।३।४९। १ उच्चता, बलन्दी, ऊंचाई। २ उन्नति, तरक्की, बढ़ती।

उच्छ्रायिन् (सं० त्रि०) उन्नत, ऊंचा, उभरा हुआ।

उच्छ्रायी (सं० स्त्री०) फलक, तख्ता, पटरा।

उच्छ्रित (सं० त्रि०) उत्-श्रि-क्त। १ उन्नत, उठा हुआ। २ सञ्जात, पैदा। ३ प्रवृद्ध, बढ़ा हुआ। ४ त्यक्त, छोड़ा हुआ। (पु०) ५ सरल देवदारुका वृक्ष।

उच्छ्रितपाणि (सं० त्रि०) उत्थित हस्तयुक्त, हाथ उठाये हुआ।

उच्छ्रिति (सं० स्त्री०) उत्-श्रि बाहुलकात् करणे घञ्। १ उच्छ्राय, उठान। २ उत्कर्ष, बड़प्पन।

"यज्ञार्थं निधनं प्राप्ता प्राप्नुवन्त्युच्छ्रितीः पुनः।" (मनु ५।४०)

३ उच्च संख्या, ऊंची अदद। (लीलावती) ४ त्रिकोणका दण्डवान् पार्श्व, मुसल्लसका खड़ा बाज़ू।

उच्छ्रेय (सं० त्रि०) उन्नत, बुलन्द, ऊंचा।

उच्छ्लक (वै० पु० हि०) मानवके शरीरका एक अवयव। (अथर्व० १०।२।१)

उच्छ्ङ्ख (वै० पु०) जृम्भण, फाजा, जमदाई। (शतपथब्रा० ५।४।१।९)

उच्छ्वसत् (सं० त्रि०) स्थूल निश्वास-विशिष्ट, हांफता हुआ, जो मुशकिलसे सांस लेता हो।

उच्छ्वसन (सं० त्रि०) १ निश्वास लेता हुआ, जो आह भर रहा हो। २ स्थूल निश्वास-विशिष्ट, जो गहरी सांस खींचता हो।

उच्छ्वसित (सं० त्रि०) उत्-श्वस्-क्त। १ विकसित, शिगुफ्ता, खिला हुआ। २ स्फीत, फूला या सूजा हुआ। ३ जीवित, ज़िन्दा। ४ उच्छ्वासयुक्त, हांफता हुआ। ५ कम्पित, कांपता हुआ। ६ आश्वासयुक्त, भरोसा रखनेवाला। (क्लो०) ७ उच्छ्वास, हंफी। ८ कम्पन, कंपकंपी। ९ स्फुरण, शिगुफ्ती।

उच्छ्वास (सं० पु०) उत्-श्वस्-घञ्। १ अन्तर्मुख-श्वास, अन्दरको खींची हुई दम। २ आश्वास, भरोसा। ३ विश्लेष, छुटकारा। ४ विकाश, शिगुफ्तगी। ५ स्फीति, सूजन। ६ आकाङ्क्षा, खाहिश। ७ छिद्र, सूराक। ८ प्राणन, ज़िन्दगी। ९ अध्याय, बाब।

उच्छ्वासित (सं० त्रि०) १ प्राणहीन, बेदम, जो सांस न लेता हो। २ अधिक, ज्यादा। ३ मुक्त, छूटा हुआ। ४ विभक्त, बंटा हुआ। ५ असंयुक्त, जो मिला न हो।

उच्छ्वासिन् (सं० त्रि०) उत्-श्वस्-णिनि। १ ऊर्ध्व-श्वासयुक्त, हांफनेवाला। २ उद्गत, उठा हुआ। ३ श्वास लेनेवाला, जो दम खींच रहा हो। ४ मरता हुआ, जो दम छोड़ रहा हो। ५ गम्यमान, जानेवाला।

उछ्—तुदा० इदित् पर० सक० सेट्। २ तुदा० पर० सक० सेट्। यह बन्ध, समापन और विराम अर्थमें लगता है।

उछ—पञ्जाबके भावलपुर राज्यका एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० २९° १३´ उ० तथा द्राघि० ७१° ९´ पू०पर पञ्चनदके पूर्व किनारे मूलतानसे ७० मील दूर अव-स्थित है। कहते—उछ वही नगर ठहरा, जो सिकन्दर बादशाहके आदेशसे पञ्जाबमें नदीयोंके सङ्गमपर बना था। रशीद्-उद्-दीन्ने इसे सिन्धके चार प्रधान प्रान्तमें एककी राजधानी बताया है। पीछे उछ मूलतानके स्वतन्त्र राज्यमें मिल गया। कितने ही आवर्तन-परिवर्तनके बाद अकबरने इसे अपने मुग़ल-साम्राज्यमें जोड़ दिया था। अबुलफ़ज़लने इसे मूलतान् सूबेका पृथक् ज़िला लिखा है। आजकल उछ ध्वंसावशेषका सञ्चय मात्र है। मुसलमानी इति-हासमें इसका विशेष वर्णन भरा है। मुसलमानोंके अधिक आदर देखानेसे इसकी प्राचीनता प्रकट होती है। पारसिकोंके जन्द-अवस्था ग्रन्थमें लिखा—किसी समय जेह या सीस्तानसे हरवद माहयार बन्दीदादको प्रति उछ ले गये थे।

उछंग (हिं०) उत्सङ्ग देखो।

उछकना (हिं० क्रि०) विस्मित होना, उभकना, चौंकना, भौचक रह जाना।

उछटना, उचटना देखो।

उछड़ (उचाड़)—गुजरातमें दायमा राजपूतोंका एक राज्य। यह मेन नदीके परपार गौरीसे दक्षिण अवस्थित और वीरपुर, रेगन, विक्रमपुर तथा उचाड़ चार प्रान्तमें विभक्त है। भूमिपरिमाण २६ वर्गमील है। १८वें ई०के शताब्दारम्भ पर स्थानीय नृपति आगर और राजपिपलीने वीरपुरके राजा बाजो दायमाको राज्यकी श्रीवृद्धिमें बड़ा साहाय्य दिया था। इसकी भूमि हलकी और नदी-नालेसे कटी फटी है। ज्वार बहुत उपजती, किन्तु कुछ-कुछ रुई, तेलहन और नदी किनारे तम्बाकू की उपज भी हाथ लग जाती है। राजपिपली ग्राम पार्वत्य और वृक्षादिसे व्याप्त हैं। उनमें अल्प तथा कठोर फसल होती है। महुवा खूब आते हैं। क्षेत्रफल साढ़े १२ वर्गमील है। प्रति वर्ष कोई दश हजार रुपयेकी आमदनी आती है। ३५६) रु० गायकवाड़को कर की भांति दिया जाता है। रेगन उचाड़से पश्चिम अकेला ग्राम है। सामने नर्मदा बहती है। अंशभागी तीन हैं। भूमिका परिमाण प्राय: ४ वर्गमील है। वार्षिक आय ५००) रु० होता, जिससे ४६१) रु० गायकवाड़को करकी तरह दिया जाता है। प्रभु प्राय: रिक्तहस्त ही रहते हैं। स्थानीय भूमि, फसल और जाति उचाड़से मिलती है। ज़मींदार साधारण कृषकसे अधिक क्षमता नहीं रखते। भूमि कुछ-कुछ हलकी और काली है। ज्वार और चावलको बहुत बोते हैं। भीलोंका निवास अधिक है। उपरोक्त विभाग लग जानेसे उचाड़की भूमिका परिमाण साढ़े ८ वर्गमील है। बारह ग्राम बसते हैं। वार्षिक आय ८०००) रु० है। ८८३) रु० गायकवाड़को करस्वरूप देना पड़ता है। अधिवासी कोल हैं। मोटी फसल उपजती है।

उछड़ना, उछलना देखो।

उछरना, उछलना देखो।

उछलकूद (हिं० स्त्री०) १ प्लुतगति, क्रीड़ाकौतुक, दौड़धूप, नाच-तमाशा, हंसी दिल्लगी।

उछलना (हिं० क्रि०) १ वल्गित होना, फलांग मारना, कूदना, फांदना, एक बारगी ही ऊपरको उड़कर नीचे आ जाना। २ सवेग निःसरण करना, फूट निकलना, उबलना, जोरके साथ बाहर आना। ३ आनन्द करना, खुश होना, उछंग लेना। "आये कनागत फूला कांस। बामन उछलें नौ नौ बांस।" (लोकोक्ति) ४ क्रोधसे उत्तेजित होना, गुस्से में खूंखार बनना, तड़पना। ५ सम्भोग करना, चढ़ बैठना।

उछलवाना, उछलाना देखो।

उछलाना (हिं० क्रि०) उछालनेका कार्य कराना, उछलवाना।

उछलिया—बम्बई प्रान्तकी एक जाति। इस जातिके लोगोंको भामता या गांठचोर भी कहते हैं। पूनाके उछलियोंका वीज तैलगुप्रान्तसे आया समझ पड़ता है। यह टूटी फूटी तेलगु बोलते और अपने नाम दक्षिणी या पूर्वी ढङ्गके रखते हैं। दक्षिणसे बरार, गुजरात और पश्चिम भारतमें उछलिये फैल पड़े हैं। इन्हें मालूम नहीं अपना घर कब छोड़ा था। कुछ लोग कहते, कि वह चार पांच पीढ़ीसे पूनेके आसपास ग्राममें रहते हैं। भामते कहाते भी पूनेके उछलिये भामते नहीं। क्योंकि प्रकृत भामते पूर्व अथवा दक्षिण-पूर्वसे नहीं—उत्तरसे आये थे। यह राजपूतोंके सन्तान हैं। रूप सुन्दर और प्रसन्नतायुक्त रहता है। चर्म कोमल है। अङ्ग सुडौल और दृढ़ होते हैं। यह कितने ही रूप बना लेते हैं। अपने ही ग्राममें कोई मारवाड़ी बनिया, कोई गुजराती श्रावक वा जैन, कोई ब्राह्मण और कोई राजपूतके वस्त्र पहनता है। यह किसी वेशमें वर्षों बने रहते और उस प्रकारके लोगोंको सैकड़ों कोस घूम ठगा करते हैं। कभी कभी यह अपना झूठा नाम धाम बता उसी जातिके व्यवसायीकी सेवामें लग जाते हैं। कुछ दिन विश्वासपूर्वक कार्य चला अवसर पाकर बहुत सा द्रव्य उठा भागते हैं। बड़े बड़े मेलोंमें दो-तीन भामते पहुंचते और स्नानके घाटपर जा बैठते हैं। उनमें कोई ब्राह्मण

कोई यात्रीका रूप बनाता है। फिर मन्त्रपाठ करते करते वह यात्रियोंके अलङ्कारादिपर दृष्टि रखते और अवसर पाकर भीगा वस्त्र सुखानेको फैला देते हैं। दृष्टि बचा भामते अलङ्कारादिको अंगूठीसे दबा रेतमें कुछ दूर पर गाड़ आते हैं। साथी इधर-उधर घूम टहल जाते हैं। यात्रीके रोनेधोने पर वह सहानुभूति देखाते हैं। फिर कहने लगते— 'हमने चोरोंको उधर घूमते देखा है। आप को अन्वेषण करना चाहिये।' लोगोंके उधर जाते ही भामता अलङ्कारादि उखाड़ कर चम्पत होता है। ऐसे मेलोंमें प्रायः स्त्रियां अपने अलङ्कार गठरीमें बांध-कर रख देतीं और उसीके पास बैठ भोजन करती हैं। उस समय दो भामते उनके पास पहुंच जाते हैं। एक स्त्रियोंके निकट रहता और दूसरा थोड़ी दूरपर विश्राम लेनेको बैठता है। स्त्रियोंके दूसरी ओर घूमते ही वह गठरी चोरा रेतमें गाड़ देता है। पकड़े जानेपर भामतेके पास कुछ नहीं निकलता और अदालतसे साफ़ छूट जाता है।

पूना नगरमें उछलिये अथवा दक्षिणी भामते भरे पड़े हैं। नगरकी चारो ओर प्रधानतः बादगांव, भाटगांव, करजा, फुगियाबाड़ी, पावल, बोपुड़ी, कनेरसर, कोंड़वे, सुनढव, तलेगांव और धमारीमें इनका अड्डा है। कुछ सर्वदा पर्यटनपर रहते हैं। इनके गायकवाड़ और जादव दो विभाग हैं। केवल नीच जातिके मांगों, मारों, चमारों, ढोड़ों, बरूदों और तेलियोंको छोड़ उछलिये सब हिन्दू मुसलमान अङ्गीकार करते हैं। इसीसे कितने ही ब्राह्मण, बनिये और सोनार उनमें जा मिले हैं। अन्य जातिवालोंको उछलिया बननेके लिये २०।२५ रुपये देना पड़ता है। याचकके मुखमें हरिद्रा तथा शर्करा डालनेसे ही संस्कार बन जाता है। फिर दो एक बड़े बड़े उछलिये साधारण भोजमें बैठ उसके साथ खाते-पीते हैं। बाजा बजता और अतर-पान बंटता है।

पूनाके उछलिये काले और तैलगु वा द्राविड़ जैसे होते हैं। कितना ही मारते-पीटते भी उनके चक्षुसे अश्रु नहीं निकलता। पुरुष शिखा, श्मश्रु, गण्डलोम और अलक रखते हैं। दाढ़ीसे सबको घृणा है। तैलगु और मरहठी मिली बोली चलती है। यह सूवर पालते हैं, गोहत्या कभी नहीं करते। विवाहके समय मालपूवा पकता है। उछलिये सेंध फोड़ने या डाका डालनेसे दूर रहते हैं। क्योंकि ऐसा काम करनेसे ये जातिसे निकाल दिये जाते हैं। प्रातः-कालसे सन्ध्यातक धोकेधड़ीमें माल मारना ही इनका प्रधान उद्देश्य है। उछलिये अपने मुखिये पटेलसे पूछ माल मारने जाते और लौटकर रुपयेमें दो आने उसको भेंट चढ़ाते हैं। चुगली करनेसे पञ्चायत कठोर दण्ड देती है।

पुरुष और स्त्री दोनो अलग या मिल-जुलकर माल मारते; किन्तु किसीकी सब चीज़ नहीं चुराते, एक ही आधसे सन्तुष्ट हो जाते हैं।

सन्तान उत्पन्न होनेपर सट्वाई देवीको पूजते हैं। चौल कर्ममें भोज देनेका विधान है। विवाहके समय वरका १०।२० और कन्याका वयस ६।७ वत्सर रहता है। वरपक्षसे कन्यापक्षको २००।२५० रुपया दिया जाता है। विवाहके समय रातभर गोंधले नाचते गाते हैं। उछलिये विधवा विवाह और स्त्रीत्याग भी करते हैं।

इनमें मृतक जलानेकी प्रथा है। तीसरे दिन श्मशानमें भोज होता है। १३वें दिन मुण्डन और पिण्ड तथा बलिदान करते हैं।

उछहरा (उचहरा) नागौड़ देखो।

उछाटना (हिं॰ क्रि॰) उच्चाटन करना, हटाना, भगाना।

उछाड़, उछाल देखो।

उछार, उछाल देखो।

उछाल (हिं॰ स्त्री॰) १ प्लुति, फलांग, कूद-फांद। २ सवेग निःसरण, ज़ोरका निकास, उबाल। ३ आनन्द, खुशी, उछंग। ४ उत्तेजना, गुस्सा, तड़प। ५ सम्भोग, चुड्डी। ६ क़, वमन, छांट। ७ फेंकफांक। ८ अप-मान, बेइज़्ज़ती। ९ युद्ध, लड़ाई।

उछाल छक्का (हिं॰ स्त्री॰) विलासवती स्त्री, फ़ाहिशा, छिनाल। यह अपनी छाती देखाती है।

उछालना (हिं॰ क्रि॰) १ उत्क्षेपण करना, फेंकना। "सोना उछालते चले जावो।" (लोकोक्ति) २ वमन या क़

करना, डालना, छोड़ना। ३ अपमान करना, आबरू उतारना, नामको बट्टा लगाना। ४ युद्ध करना, लड़ना।

उछाला (हिं० पु०) उछाल देखो।

उछाव (हिं० पु०) उत्साह।

उछास (हिं०) उच्छ्वास देखो।

उछाह (हिं० पु०) उत्साह।

उछाही (हिं० वि०) उत्साही।

उछिन्न (हिं०) उच्छिन्न देखो।

उछिष्ट (हिं०) उच्छिष्ट देखो।

उछीड़ (हिं० स्त्री०) अल्पता, कमी, ओछापन।

उछीनना (हिं० क्रि०) उच्छिन्न करना, नोच डालना, उखाड़ना।

उछेद (हिं०) उच्छेद देखो।

उछेल, उछाल देखो।

उछोर (हिं० क्रि० वि०) उस ओर, उस तर्फ़।

उजक—प्राचीन स्वर्णमुद्रा विशेष। मुसलमानी समयमें इसका चलन था।

उजका (हिं० पु०) सन्त्रासन, भुचकाग, चिड़ियोंके उड़ानेका पुतला, काली हण्डी, धोका, डड़ावा। यह तृणपत्रादिसे बनाया और शस्यक्षेत्रमें लगाया जाता है। भीषण आकार देखते ही पक्षी भागते हैं। इससे किसी की कुदृष्टि भी क्षेत्रपर नहीं पड़ती।

उजट (हिं० पु०) उटज, साधु या मुनिका आश्रम, झोपड़ा। यह घासफूससे बनता है।

उजड़ (हिं० वि०) उजड्ड।

उजड़ना (हिं० क्रि०) १ समूल नष्ट होना, जड़से उखड़ना, सूख जाना, नोच खसोटमें पड़ना। २ पतन होना, गिरना, बरबादीमें पड़ना, मट्टी हो जाना। ३ अपहृत होना, लुटना। ४ जनशून्य होना, खाली पड़ना। ५ अपव्यय होना, खर्चमें लगना, खो जाना। ६ तमोवृत होना, अच्छा न लगना, उदास पड़ना। ७ अत्यन्त उत्सन्न होना, बह जाना, किसी कामका न रहना। ८ शून्य लगना, नाचीज होना, तुच्छ देख पड़ना। ९ भवन छूटना, घरसे बाहर होना, देख न पड़ना। १० विनष्ट होना, मरना। ११ अपमानित होना, इज्ज़त खोना। १२ पति वा स्त्री छूटना, रांड़ या रंडुवा होना। १३ पतनको प्राप्त होना, गिर पड़ना।

उजड़वाना (हिं० क्रि०) विनष्ट कराना, बरबादीमें डलवाना, उजड़ाना।

उजड़वायी (हिं० स्त्री०) विनष्ट करानेकी क्रिया, बरबादीमें डलानेका काम।

उजड़ा (हिं० वि०) १ विनष्ट, शून्य, बरबाद, खाली, जो खराब बन गया हो। "उजड़े घरका बलैंडा।" (लोकोक्ति) (पु०) २ नाशक, बरबाद करनेवाला, बदमाश। ३ अधम व्यक्ति, कमीना शख्स।

उजड़ा पुजड़ा (हिं० वि०) नष्ट भ्रष्ट, खराबखस्ता, उखड़ा-पुखड़ा, गया गुजरा, टूटा-फूटा, कटा फटा।

उजड़ाई, उजड़वायी देखो।

उजड़ाना, उजड़वाना देखो।

उजड्ड (हिं० वि०) १ नितान्तमूर्ख, बिलकुल बेवकूफ, जिसे ज़रा भी समझ न रहे। २ नीचवंशोद्भूत, कमीने खान्दान्से पैदा, जो तौर तरीका जानता न हो। ३ तुच्छ, कठोर, सख्त, गंवारू। (पु०) ४ महामूर्ख व्यक्ति, जो शख्स निहायत बेवकूफ हो। ५ निर्दय मनुष्य, बेरहम शख्स।

उजड्डपन (हिं० पु०) १ मूर्खता, बेवकूफी। २ तुच्छता, कठोरता, सख्ती।

उज़बक (तु० वि०) १ मूर्ख, बेवकूफ, गंवार। (पु०) २ तातारियोंकी एक जाति। उज़बेग देखो।

उज़बेग—अफगान-तुर्किस्तानकी एक शासक जाति। तुर्किस्तान देखो।

उजमन (हिं० पु०) भोजके समय अपनेसे वृद्ध स्त्रियोंको दी जानेवाली भेंट।

उजरत (अ० पु०) १ पारिश्रमिक, मजदूरी, कामका दाम। २ शुल्क, किराया।

उजरन (हिं० स्त्री०) ध्वंसावशेष, जो चीज़ उजड़नेसे बची हो।

उजरना, उजड़ना देखो।

उजरा, उजड़ा और उजला देखो।

उजराई (हिं० स्त्री०) १ शुक्लता, सफेदी, गोराई। २ निर्मलता, सफाई।

उजराना (हिं० क्रि०) १ विनष्ट कराना, बरबादीमें डलाना। २ श्वेत कराना, सफेदी दिलाना।

उजलत (अ० स्त्री०) शीघ्रता, फुरती, जल्दी।

उजलवाना (हिं० क्रि०) उज्ज्वल कराना, चमकवाना।

उजला (हिं० वि०) १ उज्ज्वल, चमकीला। २ निर्मल, शफ़्फ़ाफ़, शीशे-जैसा। ३ श्वेत, सफेद। ४ पवित्र, पाक, अच्छा। ५ दीप्तिमान्, रौशन, होशियार।

उजला आदमी (हिं० पु०) १ श्वेत परिच्छद पहननेवाला मनुष्य, जो आदमी सफ़ेद कपड़े पहने हो। २ सम्मानित व्यक्ति, इज्जतदार शख़्स। ३ साधारण मनुष्य, मामूली शख़्स। इसी प्रकार श्वेतवस्त्रको 'उजला-कपड़ा' और स्वच्छ भवनको 'उजलाघर' कहते हैं।

उजला कद्दू (हिं० पु०) अलाबु, गोलकद्दू, लौकी।

उजला कनेर (हिं० पु०) श्वेतकरवीर, सफ़ेद कनेर।

उजला चन्दन (हिं० पु०) श्वेतचन्दन, सफ़ेद चन्दन।

उजला जामुन (हिं० पु०) सफ़ेद जामुन।

उजलाधतूरा (हिं० पु०) सफ़ेद धतूरा।

उजलाभंगरा (हिं० पु०) सफ़ेद भंगरा।

उजली (हिं० स्त्री०) रजकस्त्री, धोबन।

उजलीका आज़ार (हिं० पु०) श्वेतप्रदर, सफ़ेदा।

उजली काचकूरी (हिं० स्त्री०) सफ़ेद कौंच।

उजली तुलसी (हिं० स्त्री०) सफ़ेद तुलसी।

उजलीवरण—गुजरातकी एक जाति। इस जातिके लोग कालीव्रजवालोंसे पृथक् हैं। किन्तु कोलियोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध कर लेते हैं। इनमें कुनबी आदि कृषक एवं ब्राह्मण, बनिये, राजपूत, कारीगर और भाट मिलते हैं, जो प्रायः नागरिक रहते हैं। ये स्मृतिशास्त्रके अनुसार प्राचीन वर्णविभागके पक्षपाती हैं। देवदेवियोंकी पूजा करते हैं। इनमें विधवा विवाह कोई नहीं करता।

उजले पानकी जड़ (हिं० स्त्री०) श्वेत ताम्बूलका मूल, सफ़ेद पानकी जड़।

उजवाना (हिं० क्रि०) ढलाना, डलाना, छोड़ाना, खाली करवाना।

उजवास (हिं० पु०) युक्ति, तदबीर, चाल, चौकसी।

उजहानी—युक्तप्रदेशके बदायूं जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° ३०′ २५″ उ० और द्राघि० ७९° २′ २०″ पू०पर अवस्थित है। यहां हिन्दू, जैन, मुसलमान् और ईसाई रहते हैं। नगरमें पक्की इमारत और सड़क बनी है। गुड़से चीनी बहुत तैयार की जाती है। नीलका काम भी चलता है। सप्ताहमें दो बार मङ्गल और शनिवारको बाज़ार लगता है। थाना, डांकघर, स्कूल और मुसाफिरख़ाना मौजूद है। कितनी ही सुन्दर मसजिदें खड़ी हैं।

उजागर (हिं० वि०) १ दीप्तिमान, चमकीला। २ प्रसिद्ध, मशहूर। ३ प्रकाशित, साफ़, ज़ाहिर।

उजाड़ (हिं० पु०) १ विनाश, बरबादी। २ शून्य स्थान, खाली जगह। (वि०) ३ विनष्ट, बरबाद, जो बिगड़ गया हो।

उजाड़मुंह (हिं० पु०) हतभाग्य मुख, कमबख़्त चेहरा। 'सर झाड़ मुंह उजाड़' (लोकोक्ति) इसी प्रकार अलङ्कार-रहित स्त्रीको भी 'उजाड़ सूरत' कहते हैं।

उजाड़ना (हिं० क्रि०) १ उत्पाटन करना, उखाड़ना, जोत डालना। २ खण्ड करना, तोड़ना, टुकड़े उड़ाना। ३ विनाश करना, खींच लेना, मट्टीमें मिलाना। ४ निष्कासन करना, निकालना। ५ लुण्ठन करना, लूटना, ले भागना। ६ दरिद्र बनाना, तबाह करना। ७ निर्जन करना, बबा फैलाना। ८ आघात करना, चोट मारना।

उजाड़ू (हिं० वि०) १ मुक्तहस्त, शाहख़र्च, खानेउड़ानेवाला। २ नाशक, बरबाद करनेवाला, जो लूट लेता या बिगाड़ देता हो।

उजान (हिं० क्रि० वि०) धाराके प्रतिकूल, दरयाकी ऊपरी ओरको।

उजार, उजाड़ देखो।

उजारा, उजला और उजाला देखो।

उजारी (हिं० स्त्री०) चैत्रका किञ्चित् शस्य, अगले खेतका कुछ अनाज। यह देवताके अर्थ प्रथम तोड़ कर अलग रख दी जाती है। उजाली देखो।

उजालना (हिं० क्रि०) १ प्रकाशित करना, जलाना।

२ प्रकाशित कराना, चमकाना। ३ परिष्कार करना, सफाई लाना, रगड़ना, मांजना।

उजाला (हिं० पु०) १ दिन, धूप, चमक। २ दीप्ति, रौशनी। ३ महिमा, नाम, गहना। ४ एकमात्र पुत्र, एक लौता बेटा।

उजाली (हिं० स्त्री०) चन्द्रज्योत्स्ना, चांदनी।

उजालेका तारा (हिं० पु०) शुक्र, सवेरेका नक्षत्र।

उजास, उजाला देखो।

उजियर, उजला देखो।

उजियरिया, उजाला देखो।

उजियार, उजला और उजाला देखो।

उजियारना, उजालना देखो।

उजियारा, उजाला और उजला देखो।

उजियारी, उजाली देखो।

उजियाला, उजाला देखो।

उजीता, उजाला और उजला देखो।

उजीर (हिं० पु०) वजीर, मन्त्री।

उजूवा (हिं०) अजूबा देखो।

उजेनी (हिं० स्त्री०) उज्जैन। उज्जयिनी देखो।

उजेर, उजाला देखो।

उजेरा (हिं० पु०) १ नूतन वृषभ, नया बैल। जब-तक बैल गाड़ी वग़ रहमें जोता नहीं जाता, तब-तक उजेरा कहलाता है। २ उजाला, प्रकाश। (वि०) ३ उजला, साफ़।

उजेला, उजला और उजाला देखो।

उज्झन (सं० क्ली०) स्थूल वा बलिष्ठ पड़नेका भाव, जिस हालतमें मोटे या ताक़तवर रहें।

उज्जयनी (सं० स्त्री०) अवन्ती। उज्जयिनी देखो।

उज्जयन्त—काठियावाड़के अन्तर्गत एक पवित्र पहाड़। इसका वर्तमान नाम गिरनार है। यह जूनागढ़से प्रायः ५ कोस पूर्व पड़ता और अक्षा० २१° ३१´ ३०´´ तथा द्राघि० ७०° ४२´ पू०पर अवस्थित है। अतिप्राचीन कालसे यह पर्वत हिन्दुवों और जैनोंका पुण्य-तीर्थ माना जाता है। महाभारतमें लिखा है—

"प्रभासञ्चोदधौ तीर्थं त्रिदशानां युधिष्ठिर।
तत्र पिण्डारकं नाम तापसाचरितं शिवम्।
उज्जयन्तश्च शिखरी क्षिप्रं सिद्धिकरो महान्॥ २१
पुण्ये गिरौ सुराष्ट्रे तु मृगपक्षिनिषेविते।
उज्जयन्ते स्म तप्ताङ्गो नाकपृष्ठे महीयते॥" २३ (वन ८८ अ०)

समुद्रतीर सुराष्ट्रके निकट देवगणका प्रभासतीर्थ है। यहां पिण्डारक तीर्थ और आशु सिद्धिदायक उज्जयन्त पर्वत परिलक्षित है। मृग और पक्षियोंसे समाकुल सुराष्ट्रदेशके पवित्र उज्जयन्त पर्वतपर तपस्या कर मनुष्य स्वर्गलोकमें पहुंचता है। स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें कहा है—

"सोमनाथस्य सान्निध्ये उज्जयन्तो गिरिर्महान्।
तस्य पश्चिमभागे तु रैवतक इति स्मृतः।
उज्जयन्ते पदं गत्वा ततः स्वर्गं निरामयः।
ऐरावतपदाक्रान्तो उज्जयन्तो महागिरिः।
सुस्राव तीर्थं बहुधा गजपादोद्भवं शुचि।
उज्जयन्तं गिरिवरं मैनाकस्य सहोदरम्।
सुराष्ट्रदेशे विख्यातं युगादौ प्रथमस्थितम्।"

उक्त वचनसे उज्जयन्त गिरिका माहात्म्य सूचित होता है। पर्वतके पास ही सुपवित्र वस्त्रापथक्षेत्र है। इस स्थानको भी आजकल गिरनार कहते हैं।

स्कन्दपुराणमें लिखा है—भारतवर्षके सकल तीर्थोंमें प्रभास श्रेष्ठ है। प्रभासतीर्थकी अपेक्षा वस्त्रापथको समधिक पुण्यप्रद बताया है।

"परं देव त्वया पूर्वं प्रभासं कथितं मम।
तस्मादप्यधिकं प्रोक्तं क्षेत्रं वस्त्रापथं त्वया॥" (प्रभासखण्ड)

वस्त्रापथ-क्षेत्रकी सीमा इस प्रकार निर्दिष्ट है—

"उत्तरे तु नदी भद्रा पूर्वस्यां योजनद्वयम्।
दक्षिणे च बलिस्थानमुज्जयन्ती नदीमनु।
अपरस्यां परं नद्योः सङ्गमं वामनात् पुरात्।
एतद्वस्त्रापथं क्षेत्रं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्।
क्षेत्रस्य विस्तरो ज्ञेयो योजनानां चतुष्टयम्।" (प्रभासखण्ड)

उत्तर भद्रानदी, पूर्व एवं दक्षिण दो योजन अवधि विस्तृत बलिस्थान, उसीके पश्चात् उज्जयन्ती नदी और पश्चिम वामनपुरसे उभय नदीके सङ्गम पर्यन्त स्थानमें भुक्तिमुक्तिप्रद वस्त्रापथ-क्षेत्र है। इसका विस्तार चार योजन है। प्रभासखण्डमें वस्त्रापथकी उत्पत्तिका इसप्रकार उपाख्यान है—

एक दिन कैलासमें शिव और पार्वती दोनों बैठे थे। पार्वतीने शिवसे पूछा,—प्रभो! मुझे दयापूर्वक

बतलाइये, किस प्रकारके कार्यसे मानव आपको पूजता और कैसे आचरण तथा कैसी उपासनासे सन्तुष्ट करता है। शिवने कहा,—जो जीव नहीं मारता, सर्वदा सत्य वचन बोलता, कभी कुकर्ममें नहीं जाता और युद्धक्षेत्रमें अकातर आगे पद बढ़ाता, वही मुझे रिझाता है। इसी प्रकार कथावार्ता होते समय ब्रह्मादि देव कैलासमें आ पहुंचे। उनमें विष्णुने शिवको लक्ष्य कर कहा,—'आप सर्वदा ही दैत्यादिको वर देते हैं, जिसके प्रभावसे वे नियत मनुष्य पर अनिष्टाचरण करते और मेरे पालन कार्यमें व्याघात डालते हैं। पृथिवीको अब मैं पाल नहीं सकता। मेरा पद कौन लेगा!' शिवने उत्तर दिया,—'मैं आशुतोष हूं। अल्प सेवासे ही सन्तुष्ट हो जाता हूं। मेरा यह स्वभाव छूट नहीं सकता। आपको बुरा लगता है। इसीसे मैं चल देता हूं।' यह कहकर शिव कैलाससे अन्तर्धान हुये। उस समय पार्वती बोलीं—'मैं शिवके व्यतीत एक क्षण भी नहीं ठहर सकती।' पीछे देवता पार्वतीके साथ शिवको ढूंढने निकले। उधर शिव वस्त्रापथमें अपने वस्त्र छोड़ अदृश्य भावसे रहने लगे। पार्वती और देवता सब मिलकर ढूंढते ढूंढते वस्त्रापथमें आ पहुंचे थे। विष्णु गरुड़से उतर रैवतक पर्वतपर टिके। पार्वतीने उज्जयन्त गिरिकी चूडापर विश्राम लिया। इसी समय नागराज और गङ्गादि नदीसमूह पातालसे यहीं आये। देवगण भी निज निज मनोनीत स्थानमें बैठ गये। पार्वती उज्जयन्त-गिरिके शृङ्गसे शिव-स्तोत्र गाने लगी थीं। आशुतोष फिर छिप न सके, पार्वतीके स्तवसे सन्तुष्ट हो सर्वके समक्ष देख पड़े। देवगणने उनसे कैलास चलनेका अनुरोध किया। शिवने कहा,—'मैं कैलास जा सकता हूं। आप और पार्वतीको इसी वस्त्रापथमें रहना पड़ेगा।' देवगणने वैसा ही किया था। शिव अपना अंश छोड़ कैलासको चल दिये। उसी समयसे विष्णु रैवतक और पार्वती अम्बा नामसे उज्जयन्त गिरिके शृङ्गपर अवस्थित हैं।

वस्त्रापथमाहात्म्यका उपाख्यान इस प्रकार है—भोज नामक एक राजा रहे। वे वृद्ध वयसमें पुत्रपर राज्यभार डाल स्त्रीके साथ गङ्गातीर पहुंचे। कुछ दिन पीछे भद्र नामक एक मुनि कतिपय ऋषि साथ ले उसी नदी तीर गये। पूतनीरा गङ्गामें नहा मुनिवरने ध्यान लगाया था। उसी समय राजा भोजने उन्हें देख लिया। दर्शन मात्रसे ही भोज राजाके हृदयमें भक्ति टपक पड़ी। उन्होंने निकट पहुंच निज आश्रम चलनेके लिये मुनिको मनाया था। वे भद्र राजाके वाक्यसे सम्मत हो उनके आश्रम गये। भोजने स्त्रीके साथ मुनिवरकी परिचर्या कर पूछा—'मुनिवर! मानव संसारके प्रलोभनसे भूल जन्म और मरणके चक्रमें घूमता फिरता है। भगवन्! आप क्या दयापूर्वक बता सकते हैं—कैसे मानव नित्य शान्ति का लाभ उठाता है?' मुनिने उत्तर दिया—'पृथिवीपर गङ्गा प्रभृति अनेक पुण्यतोया नदी और विष्णु एवं शिवके तीर्थ हैं। निर्दिष्ट समयपर नदीमें स्नान और तीर्थमें देवदर्शन तथा दान करनेसे अशेष पुण्य मिलता है। किन्तु वस्त्रापथतीर्थ यात्रीको नित्य अनन्त सुखमय स्वर्ग देता है। एकदा मैं वस्त्रापथके दर्शनको गया था। वहां विष्णु रहते हैं। उन्होंने मुझसे कहा था—सकल तीर्थ दर्शनके निमित्त वृथा परिश्रमसे क्या प्रयोजन है। वस्त्रापथमें दामोदर देवका दर्शन और दामोदरकुण्डमें स्नान करनेसे ही सर्व तीर्थोंका फल मिलजाता है। विष्णुके आदेशानुसार मैं उसी तीर्थका दर्शन करने जाता हूं।' अनन्तर राजाने पूछा—भगवन्! वस्त्रापथ-क्षेत्र कहां है? वहां कौन कौन पर्वत, कौन कौन नदी और कौन कौन वन हैं। मुनिने बताया—उस क्षेत्रकी चारो दिक् समुद्र है। अनेक नगर बने हैं। भवनाथके निकट उज्जयन्त पर्वत है। उसके पश्चिम रैवतक विद्यमान है। इसी पर्वतके शृङ्गसे स्वर्णरेखा नदी निकली है। पातालसे स्वर्णरेखाकी उत्पत्ति है। शाम्ब, प्रद्युम्न प्रभृति यादव सस्त्रीक इस क्षेत्रमें रहते हैं। दामोदरके निकट रैवतक-कुण्ड है; उसे रैवतीने बनवाया था। इसी स्थानपर ब्रह्मकुण्ड नामक दूसरा भी कुण्ड है। दामोदर इस कुण्डमें नहाने आते हैं। इस क्षेत्रमें जो

व्यक्ति पञ्च प्रस्तरका मन्दिर बनाता है, वह पञ्च सहस्र वर्ष निरामय स्वर्गका वास पाता है। रैवतकके सन्निकट दो कोस विस्तृत अन्तर्गृह क्षेत्र है।* यह क्षेत्र अधिकतर पुण्यप्रद है। इसके जलमें प्राणीका अस्थि गिरनेपर उसी क्षण विलीन होनेसे इसका नाम विलीयक पड़ा है। यहां अनेक संसारमुक्त सन्न्यासी रहते हैं।" भद्र ऐसा कह कर चलते बने। पीछे राजा और रानी वस्त्रापथको गये। वे कार्तिक मासकी पूर्णिमाको यहां पहुंचे थे। नहाकर राजाने भवनाथ और दामोदरका दर्शन किया। उसी समय स्वर्गसे रथ आकर उनके लिये वहां लग गया। राजा और रानी दोनों स्वजनसह उसपर बैठ निरामय स्वर्गको चले गये।"

प्रभासखण्डमें वस्त्रापथके देखने योग्य स्थान भी वर्णित हैं—वस्त्रापथसे पश्चिम जम्बविष्क गिरि है। इस स्थानपर भीमने उत्तक नामक असुरको मारा था। अनेक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। तीर्थयात्रीको इस स्थानका कार्य चुका मङ्गलगिरिसे पश्चिम प्रवाहित गङ्गाके स्रोतमें नहाना चाहिये। फिर गङ्गेश्वरकी पूज श्राद्धादि करना उचित है। उसके पीछे बारी बारी सिद्धेश्वरसे पश्चिम स्थित इन्द्रेश्वर, और मङ्गल गिरिसे पश्चिम यक्षवनस्थ यक्षेश्वरीको दर्शन कर पूजने का विधान है। पीछे रैवतक पहुंचना चाहिये। यहां रैवती और भीमकुण्डमें नहा दामोदरका दर्शन करना उचित है। दामोदरके दर्शनान्त भवनाथ आते हैं। वहां मृगी प्रभृतिमें नहा उज्जयन्त गिरिपर चढ़ना चाहिये। पीछे अम्बा देवी, हस्तिपद, रसकूपिका, तप्तकुण्ड, गोमुख, गङ्गा, प्रद्युम्न प्रभृतिके दर्शन बाद तीर्थयात्रीका कर्तव्य पुण्यकर्मादि होना उचित है।

जैन भी उज्जयन्तको अपना अतिपवित्र तीर्थ मानते हैं। प्रति वर्ष हजारों जैन यहां तीर्थ करने आते हैं। तीर्थङ्करोंके अनेक मन्दिर बने हैं। उनमें नेमिनाथका मन्दिर अति प्राचीन है। स्थानीय शिलालिपिसे समझ पड़ता है—१२७८ ई०को इस मन्दिरका संस्कार हुआ था। दूसरा भी एक अति वृहत् प्राचीन मन्दिर है। उसे वस्तुपाल और तेजोपाल उभय भ्राताने बनवाया था। जैनशास्त्रके मतमें इस तीर्थका दर्शन करनेसे अक्षय स्वर्ग मिलता है। गिरनार देखो।

पूर्व समय इस उज्जयन्तमें बौद्ध भी तीर्थ करने आते थे। बौद्धराज अशोककी शिलालिपि इस गिरिपर उत्कीर्ण थी। अनुशासनके पत्र पर ग्रीक और बाल्हिक राजगणका नाम मिलता है। ई० के ७ वें शताब्दमें चीन-परिव्राजक युएन-चुयङ्ग इस गिरिको देखने आये थे। उन्होंने इसके विषयमें लिखा है—'उज्जयन्त (जूह-चेन-तो) गिरिपर (बौद्धोंका) सङ्घाराम है। स्थानीय आम्रमादि पर्वतका पार्श्व खोदकर बनाये गये हैं। पर्वत वनसे परिपूर्ण है। कई नदी इसके शिखरसे निकली हैं। सिद्ध आते जाते हैं। आत्मज्ञानी ऋषि एकत्र रहते हैं।' किन्तु उक्त परिव्राजकका वर्णित सङ्घाराम अब देख नहीं पड़ता। कहते हैं—७२४ ई०में अरबोंने भारतके भीतर घुस उज्जैनको जीता था। यह सम्भवतः उज्जयन्त या गिरनारका जूनागढ़वाला पर्वत होगा। किन्तु चचनामेमें लिखा है—उमैयद अल्वलीदके समय (७०५-७१५ ई०) कासिमके पुत्र मुहम्मदने जयपुर और उदयपुर विजय किया। इससे मालूम होता है—कदाचित् अरब मध्यभारतमें उज्जैनतक बढ़ आये थे। क्योंकि राजस्थानमें करनल टडने उज्जैनको चित्तौरका एक सूबा बताया है।

उज्जयिनी—मध्य भारतान्तर्गत मालवप्रान्तको प्राचीन राजधानी। यह शिप्रा नदीके दक्षिणकूल अक्षा० २३° ११′ १०″ उ० और द्राघि० ७५° ५′ ४५″ पू० पर अवस्थित है। हिन्दीमें लोग उज्जैन कहते हैं। आजकल उज्जयिनी ग्वालियर राज्यके अधीन है। यहांसे बहुत अफीम बाहर भेजी जाती।

यह एक अति प्राचीन नगरी और अवन्तिराज्यकी विख्यात राजधानी है। महाभारतके समय यह प्रदर

* अन्तर्गृह क्षेत्र कर्णकुलसे पूर्व स्वर्णरेखा नदीसे उज्जयन्त गिरि पर्यन्त विस्तृत है। यहां दामोदर, भवनाथ, विष्णु, स्वर्णरेखा, ब्रह्मकुण्ड, ब्रह्मेश्वर, गङ्गेश्वर, कालमेघ, इन्द्रेश्वर, रैवतक, उज्जयन्त, रैवतीकुण्ड, कुम्भीश्वर, भीमकुण्ड और भीमेश्वर-तीर्थ है। (प्रभासखण्ड)

'अवन्ती' कहलाता था। (भारत भीष्म) किन्तु पुराण-में उज्जयिनी नाम लिखा है। इसे विशाला और पुष्पकरण्डिनी भी लिखते हैं। अवन्ती देखिये। पाश्चात्य प्राचीन ऐतिहासिक टलेमी और पेरिप्लस्ने इस शहरका ओजिनि (Ozene) नाम लिखा है। टलेमीका लेख है—उज्जैन तियास्तनकी राजधानी है। (Ptolemy, Geog. Bk. vii. c. I. 53) 'तियास्तन' 'चष्टन' शब्दकी अपलिपि है। प्राचीन मुद्रा और शिलालिपिद्वारा समझ पड़ा है—पहले चष्टन नामक एक राजा मालव और धारके निकटस्थ प्रदेशपर राज्य करते थे। शकराजवंश देखो।

पेरिप्लस्ने भी लिखा है (भड़ोंच) बारिगजके पूर्व उज्जैन है। इस नगरमें राजा रहते थे। उज्जैनसे साधारणके व्यवहारको अकीक, वर्तन, उत्कृष्ट मलमल, रूईका बढ़िया कपड़ा और नानाप्रकार उपादेय द्रव्य आता था।

प्राचीन कालमें अनेक राजचक्रवर्ती यहां सिंहासन पर बैठ राजत्व कर गये हैं। किन्तु दुःखका विषय है उनका प्राचीन इतिहास अतिअल्पही मिलता है। सिंहलियोंके महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—चन्द्रगुप्तके पौत्र अशोकने अपने पिताके राजप्रतिनिधि-रूपसे कुछ कालतक उज्जैनमें राजत्व किया था। अशोकके पिता पाटलिपुत्रके राजा थे (ईसाके ३रा शताब्द पूर्व)। उसके प्रायः शताब्द बीतनेपर (ई० से १५७ वर्ष पूर्व) एक बौद्ध यति प्रायः ४०००० शिष्योंके समभिव्याहारमें उज्जयिनीस्थ दक्षिण गिरिमठसे सिंहल द्वीपको गये थे।

बहुकाल पीछे राजा विक्रमादित्यको इस नगरीका अधिकार मिला। उनके राजत्व कालमें कालिदास प्रभृति नवरत्नने उज्जयिनीको चमकाया था। पूर्व-कालीन इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर प्रभृति प्राचीन नगरोंकी भांति वि[illegible] शासन चलाते समय इसकी भी समृद्धि रही। ई०के ७वें शताब्दमें चीना परिव्राजक युअन्-चुअङ्ग उज्जयिनी (उ-जे-जेन्-न) देखने आये थे। उस समय भी यह नगरी बहुतसे लोगोंकी वासभूमि रही। हिन्दु नृपतिके अधीन हीनयान और महायान उभय सम्प्रदायके बौद्ध बसते थे। युअन्-चुयङ्गने उज्जयिनीके निकट ही अशोकराजनिर्मित एक स्तूप देखा था। किन्तु अब वह समृद्धि कहां! सबको सब कालके गालमें चली गयी! प्राचीन उज्जयिनी पर्यन्त भूगर्भमें गाढ़ी है। विशाला अपने समस्त रत्न खो दुःखमें लज्जासे अपना मुख देखा न सकी। इसीसे समझ पड़ता है—वसुन्धराकी गोदमें अन्तर्हित हो गई है। आजकल वह प्राचीन अवन्ती नगरी नहीं। उसीके उत्तर पार्श्वपर बसी एक नूतन नगरीको उज्जयिनी कहते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—प्राचीन अवन्तीको भूमिके मध्य निहित हुये कितना काल बीता। निहित भूमिसात् होनेका क्या कारण है? इसके सम्बन्धमें नाना मतभेद देख पड़ते हैं। वर्तमान उज्जयिनीसे दक्षिण वनमें प्राचीन अवन्ती विलुप्त हुयी है। मट्टी खोदते खोदते प्रायः १०।१२ हाथ नीचे आज भी प्राचीन नगरका चिन्ह मिलता है। भूगर्भमें प्रस्तरका बहुत अभङ्ग स्तम्भ गाढ़ा है।

इसका भी प्रमाण नहीं मिलता—वर्तमान नगर किसने बसाया था। अलाउद्दीन् खिलजीके समय उज्जयिनी मुसलमानोंके हाथ लगी। १२९५ से १३८८ ई० तक इसके शासनका भार एक राज-प्रतिनिधि पर रहा। पीछे वे स्वाधीन हो गये थे। १५३१ ई० तक स्वाधीन भावसे राजकार्य चला। उसके बाद गुजरातके नवाब बहादुर शाहने उज्जयिनीपर अधिकार किया था। १५७१ ई०को फिर अकबर बादशाहने इसे जीता। १६५८ ई०को उज्जयिनीके निकट ही औरंगजेब और दारा दोनों भाईयोंमें घोर-तर युद्ध हुआ था। १७९२ ई०को होलकरने इसे ले अनेक स्थान जला दिये। उसके बाद उज्जयिनी सेंधियाके हाथ गयी थी और उन्होंने परम सुखसे उसका राजत्व भोग किया।

उज्जयिनी एक पवित्र तीर्थस्थान है। इसे हिन्दू, बौद्ध, जैन प्रभृति भिन्न-भिन्न सम्प्रदायने अपना पुण्य-क्षेत्र माना है। स्कन्दपुराणके अवन्तिखण्डमें उज्ज-यिनी तीर्थका विस्तृत विवरण लिखा है।

यहां महाकाल नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है।

स्कन्द, मत्स्य, नारसिंह प्रभृति पुराणोंमें महाकाल-शिवलिङ्गका उल्लेख मिलता है। इसी शिवलिङ्गके कारण उज्जयिनीको पीठस्थान कहते हैं। महाकाल-के मन्दिरमें दिनरात घृतका प्रदीप जलता है। प्रति सोमवारको मन्दिरके सेवक पञ्चमुखी मुकुट उठा महा समारोहसे कुण्डाभिमुख जाते हैं। उस समय मन्त्र पाठ, वाद्यरव और साधारण कर्तृक जयजयकार हुआ करता है। दोनों पार्श्वसे पण्डे मयूरपुच्छका चमर ढालते चलते हैं। कुण्डपर पहुंचनेसे प्रधान पुरोहित मन्त्रपाठपूर्वक मुकुट धोते हैं। फिर महासमारोहसे मन्दिरमें उसे लाके महाकालको पहना देते हैं। उस समय महाकाल कौषेय वस्त्र और मणिमाणिक्यादिसे सज भक्तोंकी पूजा लेते हैं। महाकाल-मन्दिरके समस्त कार्यका भार तैलङ्गी ब्राह्मणों और बाहोरी नामके लोगोंपर न्यस्त है। इस लिङ्गका दूसरा नाम अनन्त-कल्पेश्वर है।

महाकाल शिवका मन्दिर अतिवृहत् है। इस सुन्दर मन्दिरको देखनेसे प्राचीन हिन्दू शिल्पिगणके नैपुण्यका कितना ही परिचय मिलता है। देवालयकी रक्षा और महाकालकी सेवाकेलिये अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने वृत्ति बांध दी है। उसमें सेंधिया प्रायः ३००), देवासके राजा ५०) या ६०), गायकवाड़ १२०) और होलकर ६०) रु० मासिक देते हैं।

महाकालका मन्दिर बने तीन शत वत्सर हुये। फिरिस्ता नामक मुसलमानी इतिहासमें लिखा है—यह मन्दिर सोमनाथके समतुल्य है। इसके वृहत् स्वर्णस्तम्भ मणिमाणिक्यसे खचित थे। गर्भगृहके मध्य एक सामान्य आलोक जला देनेसे असामान्य हीरकमें प्रतिफलित होता है और समस्त मन्दिर मानो सूर्यालोककी भांति चमकने लगता है। असंख्य रत्न-राजिपूर्ण मन्दिरकी अनुपम शोभा अब पूर्वमत देख नहीं पड़ती। अलतमास बादशाह समस्त मणिमाणिक्य रत्नादि लूट मन्दिरको विस्तर क्षति पहुंचा गये हैं। उस समय पण्डोंने अशेष यत्नसे लिङ्गमूर्तिको गुप्त भावमें दूसरी जगह हटाकर बचाया था। प्रायः शत वत्सर हुये रामचन्द्र बापू नामक एक व्यक्तिने मन्दिरको पुनः बनवाया था। आज भी इस मन्दिरका स्वर्णकलस दूरसे यात्रियोंके नयनोंको खींच लेता है।

उज्जयिनीमें केदारेश्वर नामक शिवका एक अपर क्षुद्र मन्दिर है। अवन्तिखण्डके मतमें इस शिवलिङ्गका दर्शन करनेसे महापुण्य मिलता है। लिङ्गकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें एक उपाख्यान भी है,—'किसी समय हिमशृङ्गवासी देवगणने महादेवसे जाकर कहा था—देवदेव! दारुण हिमने हमें बहुत घबरा दिया है। हम चिरदिन उसे सह नहीं सकते। आप वही उपाय करें, जिसमें हम इस दुःखसे दूर रहें।' उस पर महादेवने हिमालय पुछवा भेजा,—'चिरकाल ऐसा दारुण हिम पड़नेका कारण क्या है?' हिमा-लयने प्रार्थनापूर्वक कहा—'हमारे ऊपर आप आकर रहिये। हम हमेशा आपकी पूजा करेंगे। आठ मास हिमका प्रभाव भी कम पड़ जायेगा।' महादेव गिरिशृङ्गपर एक उष्ण कुण्डके निकट जाकर टिके। वहां योगिऋषि केदारेश्वर नामसे उन्हें पूजने लगे। काल पाकर पृथिवी मानवके पापसे कलुषित हुई। इसलिये देवादिदेव महादेव भी अन्तर्हित हुये। एकदिन कतिपय ऋषि केदारेश्वर दर्शन करने गये थे। किन्तु केदारेश्वरको वहां न देख वे घबराये और रो रो कर आंसू बहाने लगे—'हाय! हमें वे हृदयेश्वर कहां देख पड़ेंगे! क्या दयापूर्वक वे हमें दर्शन न देंगे? परमदयालुके व्यतीत हमें कौन शान्ति प्रदान करेगा?' उसी समय देववाणी हुई—'महाकाल वनमें जावो। वहां शिप्रा नदीपर तुम्हें केदारेश्वरका दर्शन मिलेगा।' अनन्तर ऋषि उल्लासपूर्ण हृदयसे उज्ज-यिनीको आये थे। वे शिप्रा नदीके तीरपर पहुंच प्रेमभरसे देवादिदेवका स्तव करने लगे। उस समय स्रोतस्वतीके वक्षपर एक शिला उतरा उठी थी। ऋषिगणने उसीको केदारेश्वरका लिङ्ग समझ सादर ले लिया। अनन्तर कुरुपाण्डवके युद्धमें उज्जयिनी पर भी पापने हाथ मारा। केदारेश्वर पुनः छिप गये। भीमने एक ऋषिसे परामर्श लिया था—अब केदारेश्वर किसप्रकार मिलेंगे। ऋषिने भीमसे पैर फैलाकर खड़े रहने और राज्यके समस्त वृष उनके

नीचेसे निकालनेका आदेश दिया। भीमने वैसाही किया था। समस्त वृष बारी बारी निकल गये। शेषमें एक वृष किसीप्रकार आगे न बढ़ा। भीम उसे जैसे ही पकड़नेको चले, वैसे ही वृषरूपी केदारेश्वर भूके मध्य जा छिपे। कुछदिन पीछे वे हिमालय-पर आविर्भूत हुये। उनका मस्तक हिमालय पर पहुंचा, किन्तु देह उज्जयिनीमें ही रहा।

इस नगरमें असंख्य भैरवकी मूर्तियां और भैरवके मन्दिर विद्यमान हैं। शिप्रा नदीके दक्षिण कूलपर भैरवगढ़ है। आकार अश्वके खुर-जैसा बना है। शिप्राके किनारे-किनारे अर्धक्रोश विस्तृत गढ़के प्राचीर और बड़े बड़े द्वार खड़े हैं। पश्चिम द्वारसे भैरवगढ़में घुसनेपर वामदिक् एक वृहत् देवालय देख पड़ता है। इसी देवालयमें कालभैरवकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। मूर्ति बहुत प्राचीन और अपरको अपेक्षा श्रेष्ठ है। यहांके लोग कहते हैं—कालभैरव ही उज्जयिनीकी रक्षा रखते हैं। माधवजी सेंधियाने कालभैरवका मन्दिर बनवा दिया है।

उज्जयिनीमें दशाश्वमेध घाटके निकट 'अङ्कपात' नामक एक तीर्थ है। यह स्थान वैष्णवगणको अति प्रिय है। वैष्णव कहते हैं—यहां कृष्ण और बलराम सान्दीपनी मुनिके पास पढ़ने आये थे। जिस स्थानपर उन्होंने प्रथम अङ्कपात लिखना आरम्भ किया, उसीका नाम लोगोंने 'अङ्कपात' रख लिया। अङ्कपातमें विष्णुकी विश्वरूप मूर्ति विद्यमान है। मल्हार राव—किसीके मतसे रङ्गराव अप्पाने अङ्कपातका वर्तमान मन्दिर बनवाया था। अहल्या बाईकी निर्दिष्ट वृत्तिसे यहां प्रत्यह १० ब्राह्मण भोजन करते हैं। यहांसे थोड़ी दूर दामोदर, गोमती, विष्णुसागर प्रभृति कुण्ड विद्यमान हैं।

उपरोक्त मन्दिरादि व्यतीत मङ्गलेश्वर, सहस्रधनुकेश्वर, दत्तात्रेय, चामुण्डा, सरस्वती प्रभृति देवस्थान भी प्रसिद्ध हैं। अवन्तिखण्डमें २४ माता और ३० देवकी पूजाका उल्लेख है। आजकल केवल लक्ष्मी, सरस्वती और अन्नपूर्णा मूर्तिकी अर्चना होती है।

(नारदीयपुराण उत्तरखण्ड ७८ अ० देखिये)

सरस्वती देवीका मन्दिर अति प्राचीन है। इसमें अनेक मृत्तिकाकी मूर्तियां हैं। विक्रमादित्य यहां आकर देवीको पूजते थे।

उज्जयिनीकी कालियदी देखनेकी चीज़ है। वृन्दावनके कालियदहमें जैसे श्रीकृष्णका मन्दिर, इस कालियदीमें भी वैसे ही देवस्थल दृष्टिगोचर होता है। कालियदीके मध्यस्थलमें द्वीपाकार भूमिखण्डपर जलप्रासाद विद्यमान है। पहिले इस स्थानपर भी विष्णु-मन्दिर था। 'मीरात सिकन्दरी' नामक मुसलमानी इतिहासके मतसे इस जलप्रासादको नसीरुद्दीन्ने बनवाया था। किन्तु देखनेसे सहजमें ही समझ पड़ता है—यह प्रसाद अधिक प्राचीन है। कालिदासने 'जलयन्त्रमन्दिर'का उल्लेख किया है—

"निशाः शशाङ्कक्षतनीलराजयः क्वचिद्विचित्रं जलयन्त्रमन्दिरम्।"

(ऋतुसंहार १।२)

अनुमानसे कालिदासका जलयन्त्रमन्दिर उक्त जलप्रासाद ही है। ऐसा ठहरनेसे मानना पड़ेगा—विक्रमादित्यके समय भी यह जलप्रासाद था। सम्भवतः राजा विक्रमादित्य ग्रीष्मकालपर जाकर जलप्रासादमें निवास लेते थे। वहीं कालिदासने स्व चक्षुसे देख ऋतुसंहारमें लिखा है। आजकल न होते भी मानते हैं, कि पश्चात् जलप्रासादके चारो ओर कितने ही फौवारे छूटते थे। निर्माणकी प्रणाली अति अद्भुत है। जिस द्रव्यादिसे प्रासाद बना है, वह सर्वांशमें उत्कृष्ट है। क्योंकि जलके स्रोतसे उसका चिह्न भी नहीं बिगड़ता। प्राचीरमें सर्वोपरि श्रीकृष्णकी मूर्ति खुदी है। उनके चारो ओर गोपी हस्त जोड़े दण्डायमान हैं। दूरसे दृश्य बहुत ही सुन्दर देख पड़ता है।

जलप्रासादमें यातायातके लिये पुल बंधा है। पूर्व इस स्थानपर (अवन्तिखण्डोक्त) ब्रह्मकुण्ड था। मालूम पड़ता है—ब्रह्मकुण्डका ही नाम कालियदी पड़ा है। क्योंकि यह नाम अवन्तिखण्डमें नहीं मिलता। किन्तु अबुलफज़ल प्रभृति मुसलमान ऐतिहासिकने कालियदीधी लिखा है। सर टोमस रो जहांगीर बादशाहके साथ यहां आये थे।

उज्जयिनीके सिद्धनाथका घाट अति मनोरम स्थान

है। स्थानीय सरोवरमें अनेक आश्चर्य घटना लगी रहती है। सुनते—सरोवरपर नागकन्या मध्य मध्य पहुंचती और उपरिभाग नारी तथा निम्नभाग मत्स्यकी मूर्ति-जैसा रखती हैं।*

यहां जैनोंके भी अनेक मन्दिर देख पड़ते, जिनमें १० श्वेताम्बरी और ८ दिगम्बरी हैं। कितने ही जैनमठ आजकल हिन्दुवोंके अधीन हैं। उनमें जवरेश्वर और जैनभञ्जनीश्वर ही प्रधान हैं।

यहां गुजराती ब्राह्मण अधिक रहते हैं। रामसनेही, दादू, कबीरपन्थी, रामात्, रामानुज प्रभृति सम्प्रदायके लोग भी विद्यमान हैं। प्राय: प्रति वृक्षके तलपर सतीस्तम्भ खड़ा है। इस प्रस्तरखण्ड देखनेसे ही पहचानते—सतीको कितना मानते कितना जानते हैं। ब्राह्मणक्षत्रियादिके वर्णक्रमसे प्रस्तरपर स्त्री पुरुषकी मूर्ति बनती है। ब्राह्मणके गो और क्षत्रियके परिचयके लिये अश्व प्रभृति अङ्कित होता है। स्थानीय धार्मिक रमणियों सतीस्तम्भको पूजा करती हैं।

नगरसे दक्षिण पूर्व दिक् जोग-शहीद नामक एक पर्वत है। लोग कहते—इसीके नीचे राजा विक्रमादित्यके बत्तीस सिंहासन प्रोथित हैं। पर्वत पर चढ़नेसे नगरकी प्राकृतिक शोभा देख पड़ती है। राजा विक्रमादित्यके समय उज्जयिनीमें मानयन्त्र रहा। भारतके प्राचीन भौगोलिक उक्त यन्त्र द्वारा उज्जयिनीसे ही प्रथम याम्योत्तरवृत्त खींचते थे। अकबरके पितामह बाबरने इस यन्त्रकी बात लिखी है। किन्तु आजकल इस यन्त्रका वृत्तान्त कोई बता नहीं सकता। समझ पड़ता—प्राचीन उज्जयिनीके साथ यह भी लुप्त हो गया। फिर आज भी यहां जयसिंहका मानमन्दिर विद्यमान है, किन्तु अवस्था अच्छी नहीं। कौन उसको उद्धार करेगा! जयसिंह देखो।

प्रत्नतत्त्ववित्के देखने योग्य भी अनेक वस्तु हैं। यहां ग्रीक, वाह्लिक, शक और देशीय नरपतिगणके समयकी प्रचलित प्राचीन मुद्रा मिली हैं। आज भी प्राचीन उज्जयिनीकी वनस्थली ढूंढ़ते ढूंढते हीरा, अकीक, स्वर्ण तथा रौप्यमय मुद्रा और स्त्रीगणका अलङ्कार मध्य मध्य हाथ लग जाते हैं। हम समझते—इसीसे लोग उज्जयिनीको 'रोज़गारका सदाव्रत' कहते हैं।

नगरके पार्श्वपर राजा भर्तृहरिकी गुहा है। उन्होंने संसारत्यागके पश्चात् इसीका आकर आश्रय पकड़ा था। कोई कोई कहता—इसी स्थानपर भर्तृहरिका प्रासाद था। किन्तु यह सम्भव नहीं। गुहामें सीधे खड़े होनेपर छतसे शिर टकराता है। तीन दिक् स्तम्भ लगे हैं। उनपर अस्पष्ट मूर्ति खुदी हैं। स्थान स्थान पर शिवलिङ्ग पड़े, जिनमें केदारेश्वर सबसे बड़े हैं। केवल उन्हींकी पूजा होती है। वामदिक् अन्तर्गुहामें असितप्रस्तरकी दो मूर्तियां हैं। एक कुछ ऊपर और दूसरी उसीके नीचे लगी है। यहां लोग कहते ऊपर गोरखनाथ और नीचे उनके शिष्य भर्तृहरि हैं।

उज्जर (हिं०) उज्ज्वल देखो।

उज्जानक—काश्मीरके उत्तरस्थित एक जनपद। आजकल इसे स्वात कहते हैं। महाभारतके मतसे उज्जानक एक पवित्र तीर्थ है।

"उज्जानक उपस्पृश्य आर्ष्टिसेनस्य चाश्रमे।
पिङ्गायाश्चाश्रमे स्नात्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥" (अनुशासन ५।५०)

पूर्वकाल यह जनपद वितस्ता नदीके पश्चिम तटतक विस्तृत था। मार्कण्डेयपुराणमें इसका नाम उज्जिहान लिखा है—

"वेदमन्त्रा विमाण्डव्याः शाल्वनीपास्तथा शकाः।
उज्जिहानस्तथा वत्सा घोषसंख्यास्तथा खशाः॥" (५८।६)

महाभारतमें कहा है—कार्तिकेय और वशिष्ठने इस स्थानपर शान्ति पायी थी। इसके पीछे कुशवान् नामक ह्रद है। उसमें प्रचुर कुशेशय उपजता है। (वन १३० अ०)

पूर्व समय इस स्थानपर बौद्ध धर्म भी बहुत प्रबल रहा। फाहियान, हुइयून्, यूअन् चुयङ्ग प्रभृति चीना परिव्राजकोंने देखकर इस स्थानको बौद्धधर्म-सम्पर्कीय सकल कथा लिखी है। हुङ्यूनने कहा—यह देश उत्तरमें सुंलिं पर्वत और दक्षिणमें भारतसे मिलित है। जलवायु उष्ण और मनोरम है। राज्य प्रायः शत क्रोश विस्तृत है। अधिवासी और उपादेय

* Journal As. Soc Bengal, Vol. vi. p. 820.

द्रव्य बहुत हैं। भूमि अतिशय उर्वरा है। इसी जगह पेलो (विश्वम्भर) राजाने अपने पुत्रको भिक्षा-स्वरूप दे डाला था। फिर बोधिसत्त्वने निज देह व्याघ्रोको खानेके लिये सौंपा। राजा शाकान्नभोजी परम धार्मिक और सायं व प्रातः काल बुद्धदेवकी अर्चना करनेवाले हैं। पूजाके समय नौबत बजती है। मध्याह्न कालमें वे राजकार्य देखते हैं। स्थानीय लोग यथाकाल नदीमें वाण आनेको नहीं रोकते। इससे भूमिकी उर्वरा शक्ति बढ़ती है। सन्ध्यासमय सकल मठमें वाद्य बजने और श्रमण-वर्ग बुद्ध देवकी पूजा करने लगते हैं। उज्जानक पहुंचने पर बुद्धदेव प्रथम नागराजके मठ गये थे। किन्तु नागराज उनसे क्रुद्ध हो पानी बरसाने लगे। वृष्टिसे बुद्धकी सङ्घाटी भीज गयी थी। पानी बन्द होनेसे वे एक पत्थर पर बैठे। इसी जगह उन्होंने अपना काषाय वसन सुखाया था। वह शुष्क काषाय आज भी उस प्रस्तरके निकट पड़ा और बहु काल बीतते भी वैसा ही बना है। बुद्धके उपवेशन-स्थानपर स्मरणार्थ एक मठ उठा है। राजधानीसे प्रायः पौन कोस उत्तर पर्वतपर बुद्धकी पादुकाका चिह्न अङ्कित है। यहां भी मठ उठ गया है। नगरसे उत्तर ताराका मन्दिर है। यह मन्दिर अतिवृहत् और उच्च है। इसमें बौद्ध देवदेवी और उपासकगणकी मूर्तियां हैं। राजधानीसे दक्षिणपूर्वको आठ दिन चलने पर एक पार्वतीय प्रदेश मिलता है। यहां बुद्ध तपस्या करते थे। इसी स्थानपर उन्होंने क्षुधार्त व्याघ्रीको अपने देहका मांस खिलाया था। इस स्थानमें कल्पतरु उपजता है। राजधानीसे प्रायः ८।९ कोस दूर एक तीर्थ है। इसी जगह बुद्धने लिखनेके लिये अपने देहका चर्म उतार लिया। इस पवित्र स्थानको रक्षाके लिये राजा अशोकने एक वृहत् मन्दिर बनवा दिया था।

यूअन्-चुयङ्गके मतमें हिन्दूकुशके दक्षिणस्थ समस्त पार्वतीय प्रदेश और चित्रालयसे सिन्धु नदी पर्यन्त दरद राज्य उज्जानक देश कहाता था। यहराज्य दैर्घ्य प्रस्थमें ५००० लि (प्रायः २१७ क्रोश) परिमित और गिरिपुञ्ज तथा उपत्यकासे मिलित है। उच्च समतल भूमिपर उपत्यका और जलाशय है। यहां नानाप्रकार बीज पड़ता, किन्तु यथेष्ट शस्य नहीं उपजता। अङ्गूर और गन्ना विस्तर होता हैं। भूमिसे लौह और स्वर्ण निकलता है। चित्र हलदी लगानेके लिये अति प्रशस्त हैं। शीत ग्रीष्म समान रहता है। वर्षा यथाकाल पड़ती है। अधिवासी मृदुभाषी, लाजुक और चतुर हैं। वे विद्यानुरागी होते भी कार्यतः विद्यासे अलग रहते हैं। सकल हो प्रायः इन्द्रजाल सीखते हैं। अनेक व्यक्ति महायान सम्प्रदाय-भुक्त हैं। हीनयान सम्प्रदाय पांच प्रकारका है—सर्वास्तिवादी, धर्मगुप्त, महीशासक, काश्यपीय और महासाङ्घिक। भाषा अधिकांश भारतवर्ष जैसी है। लिखन-प्रणाली भी वैसी ही है। यहां ४।५ प्रधान नगर हैं। राजा मङ्गली नगरीमें रहते हैं। यह राजा शाक्य-वंशीय हैं। स्थानीय सुवास्तु (स्वात) नदीके उभय तीरपर प्रायः १४०० सङ्घाराम बने हैं। मङ्गली-नगरीको चारो दिक् असंख्य बौद्ध कीर्तियां देख पड़ती हैं। हिन्दुवोंके भी १० देवमन्दिर बने हैं।

इस प्रदेशमें मैत्रेयबुद्धकी अति प्रकाण्ड मूर्ति रही। फाहियानने लिखा है—यह मूर्ति बुद्धके निर्वाणसे ३८० वर्ष पीछे (अशोकराजके समय) बनी थी। युअन् चुयङ्गने यही मूर्ति १०० फीट ऊंची पायी।

फाहियान तथा सुंयून 'उचङ्ग' और युअन् चुअङ्ग-ने इस स्थानका नाम 'उचङ्ग-न' लिखा है। जुले, कनिंहाम् प्रभृति युरोपीयोंने चीना परिव्राजकोक्त उक्त शब्दका संस्कृत नाम 'उद्यान' ठहराया है। किन्तु यह मत भ्रमपूर्ण समझ पड़ता है। क्योंकि उक्त नामका संस्कृत 'उद्यान' नहीं—'उज्जानक' होना ही अधिक सम्भव है। विशेषतः महाभारत पुराणादि और चीना परिव्राजकके निरूपित स्थानपर उभयमें समधिक ऐक्य रहनेसे सहज ही मानना पड़ता—इनमें कोई भेद नहीं, भिन्न देशमें उच्चारण तथा लिखन-प्रणालीके भेदसे भिन्न आकार बन गया है।

स्थानीय पांचकोरा, बिजावर, स्वात और बुनेर प्रदेश प्राचीन उज्जानक राज्यके अन्तर्गत रहा। स्वात देखो।

२ महर्षि उतङ्कके आश्रमको निकटवर्ती एक सु-

विस्तीर्ण बालुकापूर्ण समतल मरुभूमि। (हरिवंश ११ अ०) इस मरुस्थलके मध्यसे नलिनी नदी बहती है। (मत्स्यपु० १२३ अ०)

उज्जालक, उज्जानक देखो।

उज्जासन (सं० क्लो०) उत्-जस्-णिच्-ल्युट्। मारण, वध, क़त्ल, जानका लेना।

उज्जिघ्र (सं० त्रि०) उत्-घ्रा-श। आघ्राणकर्ता, सूंघनेवाला।

उज्जिति (सं० स्त्री०) उत्-जि-क्तिन्। १ उत्कृष्ट जय, गहरी फ़तेह। २ वाजसनेयसंहिताका मन्त्रविशेष।

'उज्जितिमनुपहतविघ्ने न हविः स्वीकरणरूपमुत्कृष्टजयम्।' (वेददीपे महीधर)

उज्जिहान, उज्जानक देखो।

उज्जिहाना (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नगरी। भरत राजगृहसे अयोध्या जाते समय इस नगरीमें पहुंचे थे। उस समय उज्जिहाना प्रियक वृक्षके उपवनसे शोभित रही।

"तत्र रम्ये वने वासं कृत्वासौ प्राङ्मुखो ययौ।
उद्यानमुज्जिहानायाः प्रियका यत्र पादपाः॥" (रामायण २।७१।१२)

उज्जिहीर्षा (सं० स्त्री०) ग्रहण करनेकी इच्छा, पकड़ लेनेकी ख़ाहिश।

उज्जीविन् (सं० त्रि०) उत्-जीव-णिनि। १ पुनर्वार जी उठनेवाला, जो दोबारा ज़िन्दा हो गया हो। (पु०) २ काकराज मेघवर्णके सभासद।

उज्जृम्भ (सं० त्रि०) उत्-जृम्भि-घञ्। १ प्रफुल्ल, प्रस्फुटित, फूला या खिला हुआ। २ उद्घाटित, खुला।

उज्जृम्भण (सं० क्लो०) उत्-जृम्भ भावे ल्युट्। मुखविकाश, जमहाई।

उज्जृम्भित (सं० त्रि०) उत्-जृम्भि-क्त। १ विकसित, शिगुफ़्ता, खिला हुआ। २ वेष्टित, घिरा हुआ। (क्लो०) ३ चेष्टा, कोशिश। ४ उज्जृम्भण, जमहाई।

उज्जेय (सं० पु०) उत्-जिष् भावे घञ्। १ उन्नति, तरक्की, बढ़ती। (त्रि०) भावे अच्। २ उत्कृष्ट जययुक्त, जो ख़ूब जीता हो।

उज्जेषिन् (सं० त्रि०) उत्-जिष्-णिनि। उत्कृष्ट जयशील, ख़ूब फतेह करनेवाला।

उज्जैन—उज्जयिनी देखो।

उज्ज्य (सं० त्रि०) आरोपित-ज्या, कमान् ढीली कर देनेवाला। 'उज्ज्यधन्वा आरोपितज्यधनुष्काः।' (कात्यायन-श्रौतसूत्रभाष्ये कर्काचार्य)

उज्ज्वल (सं० त्रि०) उत्-ज्वल्-अच्। १ दीप्तिमान, चमकीला। २ विमल, साफ़। ३ विकाशी, खिला हुआ। ४ ज्वलन्त, जलता हुआ। ५ सुन्दर, ख़ूबसूरत। (पु०) ६ शृङ्गाररस, मुहब्बत, प्यार। (क्लो०) ७ स्वर्ण, सोना। ८ धान्यभेद, एक अनाज।

उज्ज्वलता (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक। २ सुन्दरता, ख़ूबसूरती।

उज्ज्वलत्व (सं० क्लो०) उज्ज्वलता देखो।

उज्ज्वलदत्त (सं० पु०) एक विख्यात पण्डित। इन्होंने उणादिसूत्रकी वृत्ति बनायी थी। वृत्तिमें प्राचीन कोष और स्थान-स्थानपर प्रमाणरूप प्राचीन काव्य उद्धृत हैं। कह नहीं सकते—उज्ज्वलदत्त किस समय विद्यमान रहे। किन्तु ११११ ई०को महेश्वरने जो कोष रचा, उसे इन्होंने अपनी वृत्तिमें प्रमाणस्वरूप रखा है। फिर १४३१ ई०को रायमुकुटने अपनी-अमरकोषकी टीकामें उज्ज्वलदत्तका नाम लिखा। ऐसा होनेसे समझ पड़ता—सम्भवतः वे ई०के १२वें वा १३वें शताब्द विद्यमान रहे।

उज्ज्वलन (सं० क्लो०) उत्-ज्वल् भावे ल्युट्। १ उद्दीप्ति, चमक। २ निर्मलता, सफ़ाई।

उज्ज्वला (सं० क्लो०) १ दीप्ति, चमक। २ जगतीछन्दःका एक भेद। यह बारह अक्षरकी रहती, और दो नगण, एक भगण तथा एक रगण रखती है। २ कुमरिच, लालमिर्च।

उज्ज्वलित (सं० त्रि०) दीप्तिमान्, रौशन, चमकनेवाला, जो झलकाया गया हो।

उज्झ्—तुदा० पर० सक० सेट्। यह त्याग और विराग अर्थमें लगता है।

उज्झ (सं० पु०) उज्-झ-अच्। त्याग, विसर्जन, छूट, भूल। (मनु ११।५६)

उज्झक (सं० पु०) १ मेघ, बादल। २ तापस, फ़क़ीर।

उज्झटा (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुईं आंवला।

उज्झड़ (हिं० वि०) अत्यन्त जड़, बेवक़ूफ़, जिसे ज़रासी भी समझ न रहे।

उज्झन (सं० क्लो०) उज्‌-झ-ल्युट्। विसर्जन, छोड़ाई। (मिताक्षरा)

उज्झित (सं० त्रि०) उज्‌-झ-क्त। १ त्यक्त, वर्जित, छोड़ा हुआ। २ उपशमित, दबाया हुआ, जो रोक दिया गया हो।

उज्यारा, उजाला देखो।

उज्यारी, उजाली देखो।

उज्यास, उजास देखो।

उज़्र (अ० पु०) १ आपत्ति, बहस। २ छल, बहाना। "नुकरको उज्र है, चाकरको उज्र नहीं।" (लोकोक्ति) ३ विनय, प्रार्थना, आरज़ू, मिन्नत।

उज्रक़वी (अ० स्त्री०) प्रबल आपत्ति, ज़ोरदार बहस।

उज्रक़ानूनी (अ० स्त्री०) न्यायरूप आपत्ति, क़ानूनका उज्र।

उज्रख़्वाही (अ० स्त्री०) १ अन्त्येष्टि क्रियामें उपस्थित हो न सकनेकी प्रार्थना। २ अनुशोचन, सम्परिवेदन, मातमपुरसी।

उज्रग़लती (अ० स्त्री०) भ्रमकी आपत्ति, भूलकी बहस।

उज्रज़बानी (अ० स्त्री०) वाचिक आपत्ति, बातोंकी बहस।

उज्रतमहीदी (अ० स्त्री०) प्राथमिक आपत्ति, शुरूकी बहस।

उज्रदार (अ० पु०) आपत्ति उठानेवाला, जो बहस करता हो।

उज्रदारी (अ० स्त्री०) १ आपत्तिका उल्लेख, बहसका बयान्। २ प्राकसूचन, निषेध, उमानात तजवीज, मुक़द्दमकी मुरादका एलान्।

उज्रफ़रेब (अ० स्त्री०) छलकी आपत्ति, धोकेकी बहस।

उज्रमाक़ूल (अ० स्त्री०) प्रबल आपत्ति, जो बहस माक़ूल हो।

उज्रमाज़रत (अ० स्त्री०) विनय, प्रार्थना, मिन्नत।

उज्रमुद्दालेह (अ० स्त्री०) प्रतिवादीकी आपत्ति, बचावकी बहस।

उज्रविरासत (अ० स्त्री०) अंशदायकी आपत्ति, बपौतीकी बहस।

उझकना (हिं० क्रि०) १ देखनेके लिये पदाग्रपर खड़े होना, उचककर झांकना। २ अकस्मात् गिर पड़ना, एकायेक ऊपरसे नीचे आना। ३ लम्फन करना, कूदना-फांदना। ४ उन्नत होना, ऊंचा पड़ना। ५ चमत होना, चौंक उठना।

उझकुन, उचकन देखो।

उझलना (हिं० क्रि०) १ एक पात्रसे दूसरेमें उड़ेलना, बहाना, धार बांधके डालना, ढालना। २ उन्नत होना, बढ़ना, उमड़ उठना।

उझांकना (हिं० क्रि०) झांकना, उचक उचकके देखना।

उझारी—युक्तप्रान्तके मुरादाबाद जिलेका एक गांव। यह अक्षा० २८° ३९′ ३०″ उ० और द्राघि० ७८° २३′ ५५″ पू०पर अवस्थित है। उझारी हंसपुर तहसीलमें लगती, जो साढ़े ७ मील दक्षिणपूर्व पड़ती है।

पांच मसजिदोंमें मुसलमान-साधु शाह दाऊदका मकबरा भी है। सप्ताहमें एक बार बाज़ार लगता है।

उझालना, उझलना देखो।

उझिलना, उझलना देखो।

उझिला (हिं० स्त्री०) १ अङ्गप्रलेपार्थ पक्व सर्षप, जो सरसों उबटनके लिये उबाली गयी हो। २ खेतके उच्च स्थानकी खोदी हुयी मृत्तिका, जो मट्टी खेतकी ऊंची जगहसे खोदकर निकाली गई हो। इससे पासके गड्ढे भरे जाते हैं। ३ भोजन विशेष, एक खाना। जुवा महुवा और पोस्तका दाना मिलकर उबालनेसे उझिला बनता है।

उझौना (हिं० पु०) अहरा, कौड़ा, जलानेके लिये सुधार कर रखा हुआ कण्डोंका ढेर।

उञ्चास, उनचास देखो।

उञ्छ (सं० पु० क्लो०) उछि-घञ्। १ ऋत, शिल्प, धान्यकणाग्रहण, खोशाचीनी, सिल्लेकी बिनाई।

"शिलोञ्छमप्याददीत विप्रोऽजीवन् यतस्ततः।
प्रतिग्रहाच्छिलः श्रेयांस्ततोऽप्युञ्छः प्रशस्यते॥" (मनु १०।११२)

जीविका चला न सकनेपर ब्राह्मणको शिलोञ्छ

वृत्तिसे निर्वाह करना चाहिये। क्योंकि असत् प्रतिग्रहसे शिल श्रेष्ठ होता और उसकी अपेक्षा भी उञ्छवृत्तिका पद अधिक प्रशस्त है।

"कुशूलकुम्भीधान्यो वा त्र्याहिकोऽश्वस्तनोऽपि वा।
जीवेद्वापि शिलोञ्छेन श्रेयानेषां परः परः॥" (याज्ञवल्क्य १।१२८)
'एकैकधान्यादि गुड़कोच्चयनमुञ्छः।' (कुल्लूक)

२ उञ्छशील, सीला बीननेवाला।

उञ्छन (सं० क्लो०) उछि-ल्युट्। संग्रहकरण, खेतमें सीले या बाज़ारमें दानेका बीनना।

उञ्छवृत्ति (सं० स्त्री०) धान्यकणाके संग्रहसे निर्वाह, सीला बीननेका रोजगार।

उञ्छशिल (सं० क्लो०) उञ्छश्च शिलश्चेत्येकवद्भावः। उञ्छवृत्ति, सिल्ला बीननेका रोज़गार।

"ऋतमुञ्छशिलं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम्।" (मनु ४।५)

उञ्छशील (सं० त्रि०) धान्यकणाके संग्रहसे निर्वाह करनेवाला, जो सीला बीनकर काम चलाता हो।

उट (सं० पु०) शुष्क तृण, सूखी घास, फूस। यह झोपड़े और छप्पर बनानेमें लगता है।

उटकना (हिं० क्रि०) १ प्लव लगाना, कुदकना, उछलना, कूदना। २ अनुमान बांधना, अन्दाज़ लगाना।

उटकनाटक (हिं० वि०) अद्भुत, अनोखा।

उटक्करलैस (हिं० वि०) इच्छानुसारी, मनमाना, ऐसा-वैसा।

उटङ्ग (हिं० वि०) १ सङ्कुचित, ऊंचा हो रहनेवाला, जो नीचे न पहुंचता हो। १ कुनिर्मित, जो अच्छी तरह कटा छटा न हो।

उटङ्गन (हिं पु०) तृणविशेष, एक घास। यह शीतल स्थान और नदीके कछारमें उपजती है। लोनका रूप रहते भी चार पत्तियां लगती हैं। लोग शाक बनाकर खाते हैं। हिन्दीमें प्रायः गुठवा कहते हैं। उटङ्गन शीतल, लघु और कषाय होता है। इससे मल रुकता और सन्निपात, ज्वर, प्रमेह तथा श्वासविकार घटता है।

उटज (सं० पु०) उटाः तृणपर्णादयस्तेभ्यो जायते। जन-ड। १ पर्णशाला, घासफूससे बना झोपड़ा।

"मृगैर्वर्तितरोमन्थमुटजाङ्गनभूमिषु।" (रघु १।५२) २ ग्रहमात्र, एक मकान्।

उटड़पा (हिं० पु०) उटहड़ा, उटड़ा, गाड़ी खड़ी करनेका डण्डा। यह गाड़ीके आगे लगता और अग्रभागको उठाये रहता है।

उटड़ा, उटड़पा देखो।

उटारी (हिं० स्त्री०) पहुंटा, चारा काटनेकी लकड़ी।

उटेव (हिं० पु०) काष्ठखण्ड विशेष, लकड़ीके दो टुकड़े। यह छाजनकी धरनमें लगते हैं। इनपर एक गड़ारी रखकर धरन जमाते हैं।

उट्टा (हिं० पु०) घोटनी।

उठ्—भ्वा० पर० सक० सेट्। इससे आघात उपघात करने या मारने-गिरानेका अर्थ निकलती है।

उठंगन (हिं० पु०) १ अवष्टम्भ, पाया, आड़, टेकनी, थूनी।

उठंगना (हिं० क्रि०) १ अवष्टम्भ पकड़ना, टेक लेना, तकिया लगाना। २ आश्रयमें पड़ जाना, भरोसे रहना।

उठंगल (हिं० वि०) मन्द, कुन्द, गावदी। मूर्ख व्यक्तिको 'उठंगल आदमी' और कुशासित राज्यको 'उठंगल मुल्क' कहते हैं।

उठंगवाना (हिं० क्रि०) उठंगनेको आज्ञा देना, उठंगानेका काम दूसरेसे लेना।

उठंगाना (हिं० क्रि०) अवष्टम्भ देना, टेक पहुंचाना। २ आश्रयमें डालना, भरोसे रखना। कपाट देनेको 'किवाड़ उठंगाना' कहते हैं।

उठक (हिं० स्त्री०) उत्थान, उठान। यह शब्द प्रायः यौगिक पदमें लगता है, जैसे—बैठक-उठक।

उठगन, उठंगन देखो।

उठतक (हिं० पु०) १ उड़तक, जीन् या काठीके बीचकी गद्दी। इसे रखनेपर पिठलगी घोड़ेकी सवारी देते या माल लादते कष्ट नहीं पड़ता। २ अवष्टम्भ, पाया, टेक।

उठत-बैठत, उठते बैठते देखो।

उठती (हिं० वि०) १ उद्गमनशील, चढ़ती, बढ़ती। २ परिणति-शील, झुकती, उतरती।

उठती कोपल (हिं० स्त्री०) १ नवीन पल्लव, नई शाख, हाली किल्ला। २ यौवनावस्था, शबाब, जोबन।

उठती जवानी (हिं० स्त्री०) नव यौवन, जवानीका आग़ाज़, छाती भर आनेकी हालत।

उठती पैंठ (हिं० स्त्री०) परिणतिशील हट्ट, गिरता बाज़ार। "उठती पैंठ आठवें दिन।" (लोकोक्ति)

उठती शहवत (हिं० स्त्री०) उन्नतिशील इन्द्रिया-सक्ति, चढ़ती मस्ती।

उठते-बैठते (हिं० क्रि० वि०) १ क्रम क्रम, थोड़ा-थोड़ा, कुछ-कुछ, जब-तब, सोते-जागते। २ अबेरे-सबेरे, जैसे-तैसे, चल-फिर में। ३ झटपट, आनन-फानन, बात चीतमें। ४ सदा सर्वदा, बार बार।

उठना (हिं० क्रि०) १ आरम्भ होना, वजूद पकड़ना, निकलना। २ प्रस्थान करना, रवाना होना, चल पड़ना। ३ उद्भिन्न होना, उगना, उपजना, जमना। ४ वर्धित होना, ज्यादा पड़ना, बढ़ना। ५ फल देना, अन्जामका पहुंचना, फलना। ६ डिम्बसे निकलना, अण्डेसे खुटके जाना। ७ प्रादुर्भूत होना, फूटना, फट पड़ना। ८ निष्क्रमण करना, उभर आना। ९ उत्थित होना, बुलन्द पड़ना, चढ़ना। १० उपस्थित होना, चले आना, बढ़ना। ११ समुत्थित होना, ऊंचा पड़ना। "उठते लात बैठते घूंसा।" (लोकोक्ति) १२ गमन करना, जाना। १३ जागरण करना, जागना। १४ दण्डायमान होना, दण्डवत् अवस्थान करना, खड़ा होना। १५ उत्कर्ष पाना, उकसना। १६ निर्मित होना, बनना। १७ स्फीत होना, तुग़यानीपर आना, फूल जाना। १८ उष्ण पड़ना, गरमाना। "आया कातिक उठती कुतिया।" (लोकोक्ति) १९ यौवनावस्थाको प्राप्त होना, जवानीमें आना। २० उत्सेक लगना, उबलना, जोश आना, सड़ना। २१ वहन किया या ढोया जाना। २२ दृष्टिगोचर होना, नज़रमें आना, देख पड़ना। २३ उड्डयन करना, उड़ना। २४ व्यथित होना, लगना। २५ रहित होना, मन्सूख़ किया जाना। २६ विस्तृत होना, फैलना। २७ मिर्याण करना, शिकार मारनेको बाहर आना। २८ अङ्कित होना, उतरना, खिंचना। २९ पाठ किया जाना, पढ़नेमें आना। ३० छेदन किया जाना, कटना। ३१ घर्षण किया जाना, रगड़ खाना। ३२ आचूषण किया जाना, जज़्ब होना, सूखना। ३३ निरूपित मूल्यपर दिया जाना, किराये चलना। ३४ प्राप्त होना, हाथ लगना। ३५ शिक्षित होना, सिखाया जाना। ३६ आरोग्य होना, आराम पाना। ३७ पाक किया जाना, पकना, मज़ेपर आना। ३८ प्रस्तुत होना, कमर कसना। ३९ प्रदर्शित किया जाना, नमूदार होना। ४० संक्षोभमें आना, हिलना। ४१ स्थित न रहना, उखड़ना, लम्बे पड़ना। ४२ स्थापित होना, जारी किया जाना, खुलना। ४३ ऋण किया जाना, क़र्ज़ होना। ४४ पूर्ण होना, ठीक बैठना। ४५ सह्य होना, सहा जाना। ४६ समाप्त होना, खातिमेपर आना। ४७ नष्ट होना, मट्टीमें मिलना। ४८ त्याग करना, छोड़ना। ४९ सिद्ध होना, वहस पहुंचना, मिलना। ५० स्फुरित होना, भड़कना।

एकाएक उठनेको उठ खड़ा होना, बलपूर्वक उठनेको उठ जाना और धीरे-धीरे काम करने, मिलने-जुलने, साथ रहने, अपनी जगह बार बार छोड़ने, घबरा जाने तथा उंगलियोंपर नाचनेको उठना-बैठना कहते हैं। उठ बैठ, उठा बैठी और उठक-बैठकका अर्थ चुपके न बैठना; बार बार अपनी जगह छोड़नेका, खड़े हो होकर बैठना, बैठकी करनेका, कान पकड़के उठना बैठना तथा घबरा जाना है।

उठल्लू (हिं० वि०) १ निर्धारित स्थान न रखनेवाला, जो नापायदार और बे एतबार हो। निष्प्रयोजन इतस्ततः भ्रमण करनेवालेको उठल्लूका चूल्हा या उठल्लू चूल्हा कहते हैं।

उठवाई (हिं० स्त्री०) उठने या उठानेका काम।

उठवाना (हिं० क्रि०) उठानेका काम अन्यसे लेना, दूसरेको उठानेकी आज्ञा देना।

उठवैया (हिं० वि०) १ भार उठानेमें साहाय्य करनेवाला, जो बोझ लादनेमें मदद देता हो। २ अमितव्ययी, फ़ज़ूलखर्च, जो बेफ़ायदा रुपया बिगाड़ता हो। पर्यायमें उठाऊ और उठानेवाला शब्द भी आता है।

उठाईगीरा (हिं॰ पु॰) चोर, मोषक, उचक्का, गिरी हुई चीज़को उठा लेनेवाला। परिहाससे भिक्षुकको भी उठाईगीरा कह सकते हैं।

उठाऊ, उठल्लू देखो।

उठान (हिं॰ पु॰-स्त्री॰) १ समुत्थान, उभार, चढ़ाव। २ उच्चता, बुलन्दी, उंचाई। ३ वृद्धि, बढ़ती। ४ रूप, आकार, सूरत, शक्ल, बनावट। ५ यौवनावस्था, जोबन। ६ कामानल, शहवत, मस्ती। ७ अभिमान, फ़ख्र, घमण्ड। ८ व्यय, खर्च। आकस्मिक उन्नतिको नया उठान कहते हैं।

उठाना (हिं॰ क्रि॰) १ उच्च करना, बुलन्दी पर लाना, उचकाना। २ स्थापन करना, जमाना। ३ खड़ा कराना। ४ निर्माण करना, बनाना।

"कङ्कड़ चुन चुन महल उठाया लोग कहैं घर मेरा रे।
ना घर मेरा ना घर तेरा चिड़िया रैन बसेरा रे॥" (कबीर)।

५ चयन करना, चुनना। ६ आकर्षण करना, खींचना। ७ वैकुण्ठ ले जाना, बिहिश्त पहुंचाना। ८ उड़ाना, ढीलना, खोलना। १० उआना, मारनेको तानना। ११ करना, भरना, किसी काममें लगा रहना। १२ दायी बनना, अपने ऊपर लेना। १३ आरम्भ करना, निकालना। १४ बांधना, कसना। १५ प्रबन्ध करना, देखना भालना। १६ प्रस्तुत करना, तैयारी पर लाना। १७ प्राप्त करना, पाना। १८ सहन करना, सहना। १९ लगाना, करना। २० व्यय करना, खर्चमें लाना। २१ काममें लाना, खर्च कर डालना। २२ कर लेना, पड़ जाना। २३ ऋण करना, क़र्ज लेना। २४ धन देना, चन्दा मुहैया करना। २५ दान करना, दे डालना। २६ मिटाना, रगड़ना। २७ अलग रखना, निकालना। २८ बन्द करना, छोड़ना। २९ फेंकना, हटाना। ३० रहित करना, मनसूखीमें लाना। ३१ रख देना, दूर करना। ३२ पृथक् करना, लगा देना। ३३ ले जाना, ढोना। ३४ लुण्ठन करना, चोराना। ३५ स्थानान्तरित करना, एक जगहसे हटा कर दूसरी जगह रखना। ३६ दूर करना, निकाल डालना। ३७ निर्जन कराना, उजाड़ना। ३८ जागरित करना, जगाना। ३९ आविष्कार करना, ईजादमें लाना। ४० उत्तेजित करना, भड़काना। ४१ छेड़ना, सताना। ४२ तेज करना, बढ़ाना। ४३ उत्सवमें प्रदर्शित करना, जलसेमें लाना। ४४ उपजाना, पैदा करना। ४५ शिक्षा करना, सिखाना। ४६ भक्षण करना, खा लेना। ४७ शस्य संग्रह करना, फसल काटना। ४८ झाड़ना, पछोड़ना। ४९ हाथमें लेना, पकड़ना।

उठाव, उठान देखो।

उठावना (हिं॰ पु॰) उठावनी देखो।

उठावनी (हिं॰ स्त्री॰) १ उत्थानकर्म, उठानेका काम। २ पारिश्रमिक, उठानेकी मज़दूरी। ३ अग्रिममूल्य, पेशगी दिया जानेवाला दाम। ४ ऋणका आदान-प्रदान, क़र्ज़का लेनदेन। ५ अग्रिम दक्षिणा, पुरहत। यह विवाहादिका मुहूर्त बताते ही पण्डितको मिलती है। ६ विवाहसे पूर्व दिया जानेवाला रुपया, बरिच्छा। ७ उठावना, देवतापर चढ़ानेको रखी हुई चीज़। ८ संस्कारविशेष, एक चाल। वैश्यके घर किसीके मरनेसे दशवें दिन स्वजातीय पहुंचते और घरके पुरुषोंको कुछ रुपया पकड़ा पगड़ी बांध देते हैं। ९ अन्य संस्कारविशेष। मृत व्यक्तिके अस्थिसञ्चय करनेको यह तीसरे दिन होती है। १० काष्ठविशेष, एक लकड़ी। इसमें कोरी पाईकी लूगदी लगाते हैं। ११ सूक्ष्म कर्षण, हलकी जोत, गाहना। यह धान्यके खेतमें दूर-दूर दो प्रकारसे होती है। एक बिदहनी और दूसरीका नाम धुरदहनी है। भरेकी बिदहनी और सूखे खेतकी धुरदहनी कहाती है। १२ प्रसूता स्त्रीकी सेवा, ज़च्चाकी टहल।

उठौनी, उठावनी देखो।

उठौवा, उठल्लू देखो।

उड्—पर॰ सक॰ सेट्। यह संहति अर्थमें लगता है।

उड़ (हिं॰ पु॰) उडु, नक्षत्र, सितारा।

उड़क्कु (हिं॰ वि॰) १ उड़ान भरनेवाला, जो खूब उड़ता हो। २ शीघ्र शीघ्र कार्यकारी, जो दौड़ दौड़-कर काम करता हो।

उड़चक (हिं॰ पु॰) चोर, उचक्का, माल उड़ाकर ले जानेवाला।

उड़ चलना (हिं० क्रि०) अभिमान रखना, गुस्ताख़ होना।

उड़तक, उठतक देखो।

उड़त कांवरो (हिं० स्त्री०) पादनेका शब्द, गोज़, फुसकी।

उड़ती चिड़िया पहचानना (हिं० स्त्री०) चिह्न लगाना, निशान देना।

उड़ती-पुड़ती खबर (हिं० स्त्री०) किंवदन्ती, अफ़वाह, बाज़ारू बात।

उड़ती बैठक (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। इसमें दोनो पद समेट कर रखते और उठने बैठनेके साथ ही आगे बढ़ते या पीछे हटते हैं। यह साधारण बैठकका एक भेद है। इसे प्रायः उड़ानकी बैठक कहते हैं।

उड़ती मछली (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Exocetus) यह मछली समय समयपर जलकी छोड़ २०।२५ हस्त ऊर्ध्व उड़ सकती है, इसीसे इसे उड़ती मछली कहते हैं। यह बट्टो-जैसी देख पड़ती है। देह दीर्घाकार है, किन्तु स्थूल नहीं। चक्षु अति हृहत् होते हैं। उभय पार्श्वके पक्ष अधिक विस्तृत हैं। कोई कोई कहता—उड़ती मछली अपने लम्बे चौड़े बाजुवोंके सहारे ही उड़ती है। किन्तु यह बात ठीक नहीं बैठती। प्राणितत्त्वविद्गणने अनेक अनुसन्धानके बाद ठहराया—यह मत्स्य दैहिक
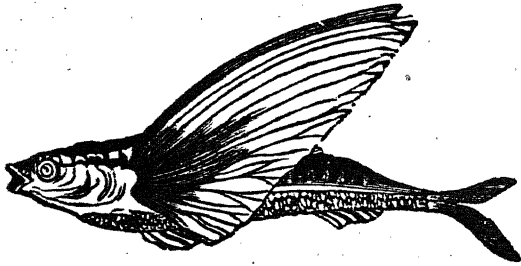
चित्र

पेशीकी अधिकतर शक्ति लगानेसे ऊर्ध्व चल सकता, वस्तुतः पक्षीकी भांति ऊर्ध्व उड़ता नहीं। जब डलफिन नामक समुद्र मत्स्य मारता, तब यह प्राणके भय वश जलसे १५।२० हस्त उछल दूर भागता है; किन्तु एक मिनटसे अधिक कालतक शून्यमें अवस्थित अथवा जलसे पृथक् रह नहीं सकता। भूमध्यसागर, अतलान्तिक महासागर और अमेरिकाके अनेक स्थानमें इस जातीय विविध प्रकार मत्स्य मिलता है।

उड़द (हिं० पु०) माष, एक दाल। (Phaseolus Radiatus) माष देखो।

उड़न (हिं० स्त्री०) उड्डयन, उड़ान, उड़नेका काम।

उड़न अनार (हिं० पु०) अग्निक्रीड़ाविशेष, एक आतशबाज़ी। यह छूटते ही बाणकी भांति आकाशको उड़ता है।

उड़न खटोला (हिं० पु०) १ वायुयान, विमान, उड़नेवाला पलंग। यह परियोंके पास रहता था। २ शिशुके सोनेकी अलङ्कृत शय्या, बच्चोंके लेटनेकी खूबसूरत पलंगड़ी। ३ शवयान, जनाज़ा। इसपर हिन्दू मृतकको जलाने ले जाते हैं।

उड़नगोला (हिं० पु०) १ उड़नेवाला गोला, जो गोला छूटते ही आसमान्‌को उड़ जाता हो। २ बन्दूक़की नुमायशी आवाज़। उत्सवादिके समय आकाशको ओर ताकके जो बन्दूक़ छोड़ी जाती, वही उड़नगोला कहाती है।

उड़नछू (हिं० वि०) लुप्त, गायब, देख न पड़नेवाला।

उड़नझाई (हिं० स्त्री०) छल, धोका, चकमा।

उड़नफल (हिं० पु०) फल विशेष, एक मेवा। कहते है—इसके खानेसे लोग उड़ने लगते थे।

उड़नफाख्ता (हिं० स्त्री०) उड्डीन-कपोतिका, उड़नेवाली मैना। यह शब्द मूर्खका उपाधि है।

उड़नबीमारी (हिं० स्त्री०) महामारी, मुताह्दी मर्ज़, छूवा छूतका रोग।

उड़ना (हिं० क्रि०) १ उड्डयन करना, परवाज़ लगाना, उड़ान भरना, आकाशमें पक्षके आश्रयसे चलना। "उड़ बीमारी सावन आया।" (लोकोक्ति) २ अति शीघ्र गमन करना, जल्द-जल्द दौड़ना। ३ पलायन करना, भागना, बचना। ४ उल्लङ्घन करना, फ़ादना। ५ अग्रगामी होना, आगे आगे चलना। ६ कार्यमें लग जाना, खाली न रहना। ७ नष्ट होना, मिटना। ८ समाप्त होना, खर्चमें पड़ना, उठ जाना। ९ चोरा

जाना, लुटना, मारे पड़ना। १० मरना, जिन्दा न रहना, मट्टीमें मिलना। ११ वाष्पभाव धारण करना, भाप बनना, सूखना। १२ विकीर्ण होना, फैल पड़ना, चला जाना। १३ विदलित होना, भड़कना, फटना। १४ विवर्ण बनना, कुम्हलाना, धुंधला पड़ना। १५ विस्तृत होना, फैलना। १६ वशमें न रहना, हाथसे बेहाथ होना। १७ रूप बनाना, शान-शौकत देखाना। १८ प्राप्त होना, मिलना। १९ आरोहण करना, चढ़ बैठना। २० विकसित होना, खिलना। २१ छल करना, बहाना बताना। २२ गाल बजाना।

उड़नागन (हिं॰स्त्री॰) १ सपक्ष पन्नगी, उड़नेवाली सांपन। २ उत्तेजित स्त्री, जोशमें आई हुई औरत।

उड़प (हिं॰ पु॰) १ नृत्यभेद, नाचकी एक चाल। २ उडुप, चांद। ३ तरण्ड, बेड़ा, चौघड़ा।

उड़पति (हिं॰ पु॰) उडुपति, चांद।

उड़राज (हिं॰ पु॰) उडुराज, चांद।

उड़री (हिं॰ स्त्री॰) उड़दी, छोटा उड़द।

उड़व (हिं॰ पु॰) १ रागभेद। जिस रागमें सात स्वरसे दो छूट जाते, उसे सङ्गीतज्ञ उड़व बताते हैं। जैसे—हिण्डोल, मालकोस, भूपाली इत्यादि। २ मृदङ्गका एक प्रबन्ध।

उड़वाना (हिं॰ क्रि॰) उड़ानेका कार्य दूसरेसे कराना, किसीको उड़ानेमें लगाना।

उड़वाला (हिं॰ पु॰) प्रस्तर, पत्थर। यह ठगोंकी बोली है।

उड़सना (हिं॰ क्रि॰) १ खोंसना, रखना। २ घुसेड़ना, डाल देना। ३ ठूंसना, भरना। ४ तह करना, समेटना।

उड़ा (हिं॰ पु॰) यन्त्र विशेष, एक औजार। इससे कीटसूत्रको खोलते हैं। उड़ा एक प्रकारका कलाबा होता, जो चार परे और छः तीखी रखता है। तीखी मन्थान सदृश रहती है। तीखियोंके मध्यवर्ती छिद्रमें गजको चलाते हैं।

उड़ांक, उड़ङ्क देखो।

उड़ाऊ (हिं॰ वि॰) १ उड्डयनशील, उड़नेवाला। २ अधिक व्यय करनेवाला, शाहखर्च, जो रुपया बरबाद करता हो।

उड़ाक (हिं॰ वि॰) सपक्ष, परदार, उड़नेवाला।

उड़ाकू, उड़ाक देखो।

उड़ान (हिं॰ पु॰ स्त्री॰) १ उड्डयन, परवाज़, उड़नेकी हालत। २ पलायन, फ़रार, भगगी। ३ आरोहण, सऊद, चढ़ाव। ४ वल्गन, कूद, फांद। ५ मणिबन्ध, कलाई, पहुंचा। ६ मालखम्भकी एक कसरत।

उड़ान घाई (हिं॰ स्त्री॰) १ कपट, धोका। २ उपाय, तदबीर। ३ सञ्चालन, टालमटोल।

उड़ानघाई बताना (हिं॰ क्रि॰) १ सत्पथसे भ्रष्ट करना, बेराह ले जाना। २ छल करना, धोका देना।

उड़ाना (हिं॰ क्रि॰) विद्राव देना, परवाज़ पर लाना, छोड़ना। २ छन्तन करना, काटना, गिराना। ३ गोपन करना, छिपाना। ४ ले भागना। ५ अपव्यय करना, खर्च डालना। ६ भोजन करना, खाना। ७ क्रीड़ा करना, खेलना। ८ मारना। ९ बहलाना। १० प्राप्त करना, पाना।

उड़ायक (हिं॰ वि॰) उड़वैया, उड़ानेवाला।

उड़ाल (हिं॰ स्त्री॰) काञ्चनकी त्वक्, कचनारका बकला। २ काञ्चनकी त्वक्से निर्मित रज्जु, कचनारके बकलेकी रस्सी।

उड़ास (हिं॰ स्त्री॰) वासस्थान, रहनेकी जगह।

उड़ासना (हिं॰ क्रि॰) लपेटना, उठाना, समेटना।

उड़िका, उटिका देखो।

उड़िया (हिं॰ वि॰) उत्कल देशका अधिवासी, उड़ीसा मुल्कका रहनेवाला। उत्कल देखो।

उड़ियाना (हिं॰ पु॰) छन्दोविशेष। इसमें २२ मात्रा रहती हैं। १० और १२ मात्रापर विश्राम पड़ता है। अन्तिम मात्रा गुरु लगती है।

उड़िल (हिं॰ पु॰) केशयुक्त मेष, बालदार भेड़।

उड़ी (हिं॰ स्त्री॰) व्यायाम विशेष, मालखम्भकी एक कसरत। यह सशस्त्र, सचक्र और साधारण तीन प्रकारकी होती है।

उड़ीश (हिं॰ पु॰) लता विशेष, एक बेल। यह गठरी बांधने और झूलेका सेतु तथा टोकरी बनानेमें लगता है।

उड़ीसा—उत्कल देश। उत्कल देखो।

उड़ु (सं० स्त्री०) उ-डी-डु। नक्षत्र, तारा। "इन्दुप्रकाशान्तरितोडुतुल्याः।" (रघु) (क्ली०) २ जल, पानी।

उड़ुचक्र (सं० क्ली०) नक्षत्र मण्डल।

उड़ुप (सं० क्ली०) उडुनि जले पाति रक्षति, उडु-पा-क। १ प्लव, बरक्का, चौवड़ा। इसके पर्यायवाची प्लव, कोलि, भेलक, तरण, तारण और तारक आदि शब्द हैं। (पु०) २ चन्द्र, चांद। "अपक्षवदनं तस्य रश्मिवन्तमिवोडुपम्।" (भारत) ३ चर्मका पानपात्र, चमड़ेसे बना हुआ पीनेका बरतन।

उड़ुपति (सं० पु०) उडूनां पतिः। १ चन्द्र, चांद। २ समुद्र, बहर। ३ वरुण। ४ सोमलताभेद।

उड़ुपप्रिया (सं० स्त्री०) कमलिनी, बघोला।

उड़ुपथ (सं० पु०) आकाश, तारोंके चलनेकी राह, आसमान।

उड़ुम्बर (सं० क्ली०) उडु वृणातीति उडु-वृ-अच्। १ ताम्र, तांबा। २ देश विशेष, एक मुल्क। पाश्चात्य ऐतिहासिकोंने Odambarai नाम लिखा है। पञ्जाबमें यह जनपद था। ३ कर्ष, दो तोलेका परिमाण। ४ उदुम्बरका फल, गूलर। (पु०) ५ उदुम्बरका वृक्ष, गूलरका पेड़। उदुम्बर देखो। ६ कुष्ठरोगविशेष, किसी किस्मका कोढ़। इसका आभास उदुम्बरके फल-जैसा पड़ता है। (माधव निदान) ७ देहली, दहलीज़, ड्योढ़ी। ८ नपुंसक, नामर्द। ९ कृमि विशेष, एक कीड़ा। कहते हैं—यह रक्तमें उत्पन्न होता और कुष्ठरोगका बीज बोता है।

उड़ुम्बरदला, उदुम्बरपर्णी देखो।

उड़ुम्बरपर्णी (सं० स्त्री०) उडुम्बरस्य पर्णमिव पर्णमस्याः, गौरादित्वात् ङीष्। दन्ती वृक्ष, दांती।

उड़ुराज (सं० पु०) चन्द्र, सितारोंका मालिक चांद।

उड़ुलोमा (सं० पु०) प्रवर ऋषिभेद। (प्रवराध्याय)

उड़ुस (हिं० पु०) उद्दंश, खटमल।

उड़ूप, उडुप देखो।

उड़ेड़ण (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। इसमें नीचे छाती झुकाते समय दोनों पैर ऊपरको उछालते हैं। दूसरा नाम उड़ानकी डण्ड है।

उड़ेरना, उड़ेलना देखो।

उड़ेलना (हिं० क्रि०) १ एकसे दूसरे पात्रमें धारा बांधके डालना, ढालना, नाना। २ त्याग करना, छोड़ देना।

उड़ैनी (हिं० स्त्री०) खद्योत, किर्म-शब-ताब, पटबीजना, जुगनु।

उड़ौहां, उड़ैया देखो।

उड्डयन (सं० क्ली०) उत्-डी-ल्युट्। आकाश-विहार, शून्य गमन, परवाज़, उड़ान।

उड्डामर (सं० त्रि०) १ उद्भट, श्रेष्ठ, बढ़िया, उम्दा, जो ऊंचे दरजे या नतीजेका हो। डामर देखो।

उड्डामररस (सं० पु०) पित्तके गुल्माधिकारका एक रस। शुद्धपारा एक, गन्धक एक एवं मृतताम्र चौथाई भाग ले शिरीष तथा नागकेशरका रस मर्दनीय द्रव्यसे पञ्चमांश डाले और दो दिन घोंट गजपुटसे भूधरयन्त्रमें पकाये। फिर दिनको पीस इस रसको शीतल करना चाहिये। उड्डामर समभागपर जयपालचूर्णके साथ मिला और तीन रत्ती घीमें सानकर खाते ही पित्तका गुल्म शान्त पड़ने लगता है। (रसरत्नाकर)

उड्डीन (सं० क्ली०) उत्-डी-क्त। १ नभोगति, उड़ान्। (त्रि०) २ ऊर्ध्वगामी, उड़ाक।

उड्डीयन (सं० क्ली०) उड्ड: स इवाचरति, क्वङ्, उड्डीय भावे ल्युट्। उड्डयन, उड़ान। यह हठयोगका कार्य है। योगी उड्डीयन-क्रियासे आकाशमें उड़ जाते हैं। सुषुम्ना नाड़ीमें प्राणको जमाने और उदरको पृष्ठसे मिलाने पर उड्डीयन बनता है।

उड्डीयमान (सं० त्रि०) उत्-डी-शानच्। उड़ता हुआ, जो उड़ रहा हो।

उड्डीश (सं० पु०) १ शिव। २ तन्त्रशास्त्रभेद। इसमें गारुड़ और अभिचार भरा है। तन्त्र देखो।

उड्डू उड्डू होना (हिं० क्रि०) अपमानित होना, बेइज़्ज़त बनना।

उड्डो (हिं० स्त्री०) परिभ्रमणशीलस्त्री, आवारा औरत।

उड्र (सं० पु०) १ उत्कल देशवासी पुरुष, उड़ीसेका आदमी। उत्कल देखो। २ जवापुष्पवृक्ष, गुड़हरका पेड़। ३ जवापुष्प, गुड़हरका फूल, चीना गुलाब।

उड्रपुष्प (सं० क्ली) जवापुष्प, गुड़हरका फूल।

उढ़ (हिं० पु०) सन्नासन, विजूखा, घास-पात या काले लत्तेका पुतला। इसे खेतमें चिड़ियोंके डराने या लोगोंकी बुरी नज़र बचानेको गाड़ते हैं।

उढ़कन (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, आड़। २ आश्रय, सहारा। ३ उपधानादि, तकिया वग़ैरह।

उढ़कना (हिं० क्रि०) १ रुकना, आगे बढ़ न सकना। २ टकराना, किसीपर जाके पड़ना। ३ आश्रित होना, सहारा पकड़ना।

उढ़काना (हिं० क्रि०) किसीके आश्रयपर रखना, टेकसे ठहराना।

उढ़रना (हिं० क्रि०) उढ़री बनना, अपने विवाहित पतिको छोड़ परपुरुषके साथ निकल पड़ना।

उढ़री (हिं० स्त्री०) उपपत्नी, रखनी, चोर-महल।

उढ़ाना (हिं० क्रि०) ओढ़ाना, ढांकना।

उढ़ारना (हिं० क्रि०) उढ़री बनाना, किसीकी स्त्रीको बिगाड़ना।

उढ़ावनी (हिं० स्त्री०) उत्तरच्छद, चादर, छोटी पिछौरी।

उढ़ौकन, उठंगन देखो।

उड्र (सं० पु० क्ली०) १ जवापुष्पवृक्ष, गुड़हरका पेड़। २ जवापुष्प, गुड़हरका फूल।

उणक (सं० त्रि०) ओण अपसारणे ण्वुल्, निपातनात् ह्रस्वः ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। अपसारक, हटाने या दूर करनेवाला।

उणादि (सं० पु०) अपने आदिमें उण् प्रत्यय रखनेवाला। यह शाकटायन और पाणिनि-उक्त उण् प्रत्ययका समुदाय है। उज्ज्वलदत्तने उणादिसूत्रकी वृत्ति बनायी है।

उण्डुक (सं० पु०) १ देहस्थ कोष्ठभेद, मलाशय, पेड़का परदा।

"स्थानान्यामग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च।
हृदुण्डुकः फुस्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते॥" (सुश्रुत)

आशय सात हैं—आमाशय, पक्वाशय, मूत्राशय, रक्ताशय, हृदय, उण्डुक और फुस्फुस।

"शोणितफेनजः फुस्फुसः शोणितकिट्टप्रभव उण्डुकः।" (सुश्रुत)

फुस्फुस रक्तके फेन और उण्डुक उसीके किट्टसे उत्पन्न होता है। २ विन्यास,पाशबन्ध, बनावट, जाल।

उण्डेरक (सं० पु०) पिष्टकादि, रोटी वग़ैरह।

"मूलकं पूरिकापूपांस्तथैवोण्डेरकस्रजः।" (याज्ञवल्क्य १।२८)

उण्डेरकस्रज् (सं० स्त्री०) पिष्टकादिकी तन्वी, रोटी वग़ैरहकी लड़ी।

उत् (सं० अव्य०) उ-क्विप्। १ प्रश्न—कैसे, क्यों, क्या। २ वितर्क—अथवा, किंवा, वा, आया, या। ३ समुच्चय—अखिल, समस्त, कुल, तमाम, सब। ४ अधिक, ज़्यादा। ५ सन्देह—कदाचित्, शायद।

उत (सं० अव्य०) उ-क्त। १ अत्यर्थ, अत्यन्त, बहुत, ज़्यादा। २ विकल्प, कदाचित्, शायद। ३ समुच्चय, समस्त, कुल, तमाम, सब। ४ वितर्क, यदि, अगर। ५ प्रश्न—क्या, क्यों। ६ अच्छा, ख़ूब, ठीक।

यह सन्देह, वितर्क अथवा अवधारण अर्थमें प्रायः वाक्यके अन्तपर इति शब्दके पीछे लगता है। जैसे—'सर्व भूतान्वितं पार्थं सदा परिभवन्ति उत' अर्थात् हे पार्थ! सर्वभूत उसे अवश्य सदा घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। प्रश्नार्थमें उत द्वितीय अनुयोगके पीछे पड़ता है। जैसे—'कथं निर्णीयते किं स्वान्निकारणो बन्धुरुत विश्वासघातकः' अर्थात् कैसे समझें आया वह निश्छल मित्र या विश्वासघातक है। इस अर्थमें उतके साथ 'अहो' आनेसे वाक्य प्रबल हो जाता है। जैसे—'कच्चित्त्वमसि मानुषी उताहो सुराङ्गना' अर्थात् तुम साधारण स्त्री अथवा अप्सरा हो। कभी कभी इसके साथ 'अहोस्वित्' भी लग जाता है। जैसे—'शालिहोत्रः किंतु स्यादुताहोस्विद्राजा नलः' अर्थात् यह शालिहोत्र या राजा नल हैं।

"नमः पुरा ते वरुणोत नूनम्" (ऋक् २।२८।८)

२ ग्रथित, गूंथा हुआ।

(हिं० क्रि० वि०) ३ तब, वहां, उसतरफ़, उधर।

"इत उत चितय पूछि मालीगन।
लगे लेन दल फूल मुदित मन॥" (तुलसी)

उतकामन्द—मन्द्राज प्रान्तके नीलगिरि ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ११°२४´ उ० और द्राघि० ७६° ४४´ पू० पर अवस्थित है। उतकामन्दमें म्युनिसिपलिटी और शासन सम्बन्धीय हेडक्वार्टर विद्यमान है।

यह नगर मन्द्राज प्रान्तका प्रधान स्वास्थ्यप्रद स्थान है। मेत्तूपलायमका रेलवे ष्टेशन निकट पड़ता है।

१८१८ ई०में मन्द्राजके दो सुल्की हाकिमोंने तम्बाकूके महसूल चोरोंको खदेरते खदेरते उतकामन्द-की उपत्यका ढूंढ़ी थी। १८२१ ई०में पहले स्थानीय कलेक्टरने यहां एक घर बनाया, कुछ दिन पीछे नगर ही निकल आया। इसको चारो ओर ऊंचे पर्वत हैं। पास ही डेढ़ मील लम्बी झील खुदी है। दोदा-बेटाको चोटी समुद्रतलसे ८७६० फीट ऊंची है। झीलको चारो ओर पक्की सड़क खिंची है। समस्थली-पर रहनेसे इस नगरने ग्रिमले जैसे हिमालयके स्थान लोगोंकी दृष्टिसे गिरा दिये हैं। हरी हरी घास हृदयको लहरा देती है।

१८६६ ई०में यहां म्युनिसिपलिटी पड़ी थी। किन्तु मकान् पर्वत पर दूर-दूर बने हैं। ज़िलेके कलक्टर, डेपुटी कलक्टर और सब जज यहां रहते हैं। गिर्जाघरों, होटलों, स्कूलों, अस्पतालों और दुकानोंकी कोई कमी नहीं। १८५८ में पुस्तकालय और १८५८ ई०में लारेन्स आश्रम खुला था।

उतङ्क—१ वेद नामक मुनिके शिष्य। ये जितेन्द्रिय, धर्मपरायण और बड़े गुरुभक्त थे। महाभारतमें कहा है—जनमेजय और पौष्य नामक राजद्वयने वेदको अपने उपाध्याय रूपसे वरण किया था। किसी समय वेद उतङ्कको गृहमें छोड़ और सकल भार सौंप प्रवासपर चल गये। एक दिन वेदपत्नीने उतङ्कको बोला कहा था—'उतङ्क! तुम्हारे गुरु घरमें नहीं। मैं ऋतुमती हूं। अब वह करो, जिसमें मेरी ऋतु निष्फल न हो।' गुरुपत्नीके समझाते भी इन्होंने वैसा कुकर्म न किया। गुरुने घरमें आकर उतङ्कके विशुद्ध चरित्रको बात सुनी। उन्होंने इन्हें आशीर्वाद देकर कहा था—'तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। चले जावो।' उतङ्कने गुरु दक्षिणा-देना चाही। गुरु बोल उठे—'वत्स उपमन्यु! गुरुदक्षिणा देनेसे क्या है! फिर भी यदि नितान्त तुम्हारी इच्छा हो, तो अपनी गुरुपत्नीसे पूछो। वह जो मांगेगी, वही चीज़ लाना पड़ेगी।' गुरुपत्नीने उतङ्कसे कहा—पौष्यराजकी धर्मपत्नीके कुण्डल मैं पहनना चाहती हूं।

उतङ्कने पौष्यराजके निकट जाकर कहा—'महा-राज! गुरुदक्षिणा देनेके लिये आपसे कुण्डलद्वय मांगने आया हूं। कृपाकर दे दीजिये।' राजा बोले—'कुण्डल मैं देता हूं। किन्तु आप अति साव-धानतासे ले जाइयेगा। क्योंकि इस कुण्डलद्वयपर नागराज तक्षककी दृष्टि सर्वदा रहती है।'

उतङ्क कुण्डलद्वय लिये आते थे। राहमें एक उलङ्ग क्षपणक मिल गया। वह मध्य मध्य छिप जाता था। ये कुण्डलद्वयको भूतलपर रख स्नान तर्पणादिके लिये सरोवर पहुंचे। इसी बीच क्षपणक-रूपी तक्षक उन्हें उठा नागलोकमें घुस गये। उतङ्कने स्नानके अन्तमें आकर कुण्डल न पाये थे। पौष्य-राजकी बात स्मरण आयी। ये बड़े कष्टपूर्वक इन्द्रलोकसे वज्र और उसके सहारे नागलोकसे जा कुण्डल लाये। फिर कुण्डल गुरुपत्नीको उतङ्कने जाकर दिये थे। इन्होंने नागलोकमें जो देखा, गुरुसे कह सुनाया। गुरु बोले—'वत्स! तुमने वहां जो स्त्रीके दो रूप देखे, वे परमात्मा और जीवात्मा हैं। द्वादश अवयवयुक्त चक्र संवत्सर, शुक्ल एवं कृष्णवर्ण सकल वस्तु दिवा तथा रात्रि, छः कुमार छहो ऋतु, पुरुष पर्जन्य, अश्व अग्नि, पथिमध्य वृषभ नागराज, ऐरावत और अश्वोपरि नृपति इन्द्र हैं। तुमने इस स्थानसे जाते समय वृषभका जो पुरीष खाया, वह अमृत है। अमृतके प्रभावसे ही तुम नागलोक जा और यह कुण्डल ला सके। उतङ्क गुरुसे विदाय हो राजा जनमेजयके निकट गये थे। वहां तक्षक मारनेके लिये उनसे सर्पयज्ञ कराया। (भारत आदि ३अ०)

२ गौतम मुनिके एक शिष्य। ये महर्षि थे। इनकी जीवनी भी पूर्वोक्त उतङ्ककी तरह है। इन्होंने भी गुरुपत्नी अहल्याके कहनेसे सौदास राज-पत्नीके कुण्डल लाकर गुरुदक्षिणा दी थी। ये घोरतर तपस्यामें आसक्त और गुरुभक्ति-परायण रहे। गौतम भी सकल शिष्यकी अपेक्षा उतङ्कको ही अधिक चाहते थे। यथा समय अपरापर शिष्यके पाठ पढ़ घर जाते

भी उन्होंने स्नेहप्रयुक्त उतङ्कको न छोड़ा। ये भी गुरुभक्तिमें गृहको कथा भूल गये थे। प्रायः शत वत्सर इसीतरह बीते। एकदिन उतङ्क दूर वनसे काष्ठ भार उठा लानेपर क्लान्त हो गये; इसलिये शीघ्र शीघ्र आश्रमके निकट पहुंच जैसे ही फेंकने लगे, वैसे ही उसके साथ साथ कुछ केश भी टूट पड़े। उतङ्क टूटे केश देख रोने लगे थे। गौतमने आकर रोनेका कारण पूछा। इन्होंने आंसू बहाते बहाते कहा—'मेरे बाल पक गये हैं। मैं यहीं वृद्ध बना हूं। तथापि आपने मुझे घर जाने न दिया।' गौतम बोले—'तुम्हें मैं बहुत चाहता और तुम्हारी शुश्रूषासे अत्यन्त सुख पाता हूं। इसीसे तुम्हें छोड़ नहीं सकता। अब मैं आह्लादसे गृह जानेकी आज्ञा देता हूं।' फिर गौतमने अपनी कन्याके साथ उतङ्कको व्याहा था। (भारत आश्वमेधिक)

(हिं० वि०) २ उन्नत, ऊंचा।

उतङ्कमेघ (सं० पु०) मेघ विशेष, किसी किस्मका बादल।

उतङ्ग (हिं० वि०) १ उत्तुङ्ग, बुलन्द, ऊंचा। २ उच्च, ऊंचे दरजावाला, बड़ा।

उतथ्य (सं० पु०) मुनि विशेष। महर्षि अङ्गिराके औरस और उनकी पत्नी श्रद्धाके गर्भसे इनका जन्म है। ये वृहस्पतिके ज्येष्ठभ्राता लगते हैं। इन्होंने ममतासे विवाह किया था। उनके गर्भसे दीर्घतमा नामक एक पुत्र हुआ। दीर्घतमा देखो।

उतथ्यतनय (सं० पु०) उतथ्यके पुत्र गौतम।

उतथ्यानुज (सं० पु०) उतथ्यके कनिष्ठ भ्राता वृहस्पति।

उतथ्यानुजन्मन्, उतथ्यानुज देखो।

उतन (हिं० क्रि० वि०) तत्र, वहां, उस तर्फ, उधर।

उतना (हिं० वि०) १ तत्परिमाणविशिष्ट, उस मिक़्दारवाला, उसकी बराबर। (क्रि० वि०) २ उस परिमाणपर, उस मिक़्दारमें।

उतन्ना (हिं० पु०) कर्णिकाविशेष, कानमें पहनी जानेवाली एक बाली। यह कर्णके उपरि भागपर रहता है।

उतपन्न (हिं० वि०) उत्पन्न, पैदा।

उतपात (हिं० पु०) उत्पात, झगड़ा।

उतपानना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, उपजाना। २ उत्पन्न होना, उपजना।

उतमङ्ग (हिं० पु०) उत्तमाङ्ग, मस्तक, मुख, मत्था, मुंह।

उतरंग (हिं० पु०) उत्तरङ्ग, दरवाज़ेके ढांचेपर रखी जानेवाली लकड़ीकी मेहराब।

उतर (हिं० पु०) उत्तर, जवाब।

"उतर देत छाड़ौं विनु मारे।
केवल कौशिक शील तुम्हारे॥" (तुलसी)

उतरन (हिं० स्त्री०) १ जर्जरीभूत वस्त्र, जो कपड़ा पहनते-पहनते बिगड़ गया हो। २ उत्तरङ्ग, उतरंग। ३ गुल्म विशेष, एक झाड़। इसे बङ्गालमें चगुलपती और सिंहलमें कानकुम्बल कहते हैं। उतरनमें सूत्र बहुत रहता है। आकार दीर्घ है। दक्षिणापथके कोङ्कणसे दक्षिण त्रिवाङ्कोड़ और सिंहलमें उतरन उपजती तथा कहीं कहीं बङ्गालमें भी देख पड़ती है। सिंहलवासी इसके पत्रका शाक बनाकर खाते हैं। इसका दुग्धवत् रस सान्द्र होता है।

उतरन-पुतरन (हिं० स्त्री०) जर्जरीभूत वस्त्र, फटा-पुराना कपड़ा।

उतरन होना (हिं० क्रि०) ऋण अथवा उपकारसे मुक्तिपाना, क़र्ज़ या एहसान्से छूटना।

उतरना (हिं० क्रि०) १ अवतरण करना, नाज़िल होना, नीचे आना। "आसमानसे उतरा खजूरमें अटका।" (लोकोक्ति) २ निगलित होना, निगला जाना। "उतरा घाटी हुआ माटी।" (लोकोक्ति) ३ उत्पन्न होना, उपजना।

"जितनी लेकर उतरा था उतना ही जिया।" (लोकोक्ति)

४ प्रवेश करना, घुसना। ५ पार होना, लांघना। ६ निःसृत होना, निकलना, आना। ७ न्यून पड़ना, घटना। ८ घिस जाना, बिगड़ना। ९ वृद्ध होना, बढ़ाना। १० मलिन पड़ना, कुम्हलाना। ११ समाप्त होना, खातिमे पर पहुंचना। १२ स्थानच्युत होना, जगह छोड़ना। १३ अपमानित होना, बेइज्जत बनना।

"उतर गयी लोई तो क्या करेगा कोई।" (लोकोक्ति)

१४ मृत्युको प्राप्त होना, मरना। १५ तुलना, वज़नमें बैठना। १६ परिपक्व होना, पकना।

उतरवाना (हिं० क्रि०) उतारनेका कार्य अन्यसे लेना, उतारनेको हुकम देना।

उतरहा (हिं० वि०) उत्तर दिक् सम्बन्धीय, शिमाली, उत्तरी।

उतरा (हिं० वि०) अधोगत, अवनत, घटा हुआ, जो बेजगह पड़ा हो।

उतराई (हिं० स्त्री०) १ अधोगमन, नीचेको जानेका काम। २ नदीके परपार पहुंचनेका शुल्क, दरया पार होनेका महसूल।

उतराना (हिं० क्रि०) १ उत्तरण करना, नीचेसे ऊपर आना। २ उतरवाना, उतारनेका काम दूसरेसे कराना।

उतरायल, उतरा देखो।

उतरारी (हिं० स्त्री०) उत्तरवायु, शिमालसे चलनेवाली हवा।

उतराव (हिं० पु०) उतराई देखो।

उतरावना (हिं० क्रि०) उतारना, ऊपरसे नीचे लाना।

उतरास (हिं० स्त्री०) उतरनेकी इच्छा, नीचे आनेकी ख्वाहिश।

उतरिन, उऋण देखो।

उतरौला—१ युक्त-प्रदेशके गोंडा जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६° २३´ एवं २७°२५´ उ० और द्राघि० ८२°८´ तथा ८२° ३८´ पू० के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १४४८ वर्गमील है। उसमें ८८७ वर्गमील पर कृषिकार्य चलता है। लोकसंख्यामें हिन्दू अधिक हैं। उतरौलेमें सात परगने लगते हैं—उतरौला, शाहदुल्ला नगर, बूढ़ापाड़ा, बहरीपुर, मानिकपुर, बलरामपुर और तुलसीपुर।

२ गोंड़ा जिलेका एक परगना। इससे उत्तर रापती नदी, पूर्व बसती जिला, दक्षिण कुवाना नदी और पश्चिम बलरामपुर परगना है। उतरौले परगनेके मध्य सुभावन नदी बहती है। सुभावन और कुवाना नदीके बीचका स्थान 'उपरहार' कहलाता है। रबी और खरीफ़ दोनो फसलें अच्छी तरह पैदा होती हैं। सुभावन नदीका तीर कंकरीला है। अधिवासियोंमें अहीर, कुर्मी, कोरी प्रभृति नीच जातीय हिन्दू अधिक मिलते हैं। यहां अनेक प्राचीन दुर्गोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। मुसलमानोंके आनेसे पहले हिन्दू राजगणने उक्त दुर्ग बनवाये थे। वर्तमान नवाबके आदिपुरुष अलीखान् नामक एक पठानने यह स्थान किसी रजपूतसे जीता। उस समय भारतमें मुगल बादशाह प्रबल हो गये थे। किन्तु स्थानीय पठान नवाबने उनकी अधीनता स्वीकार करना न चाही। अवशेषको अलीखान्ने अकबरके वशीभूत हो अपने पितापर अस्त्र उठाये थे। पिता-पुत्रमें युद्ध ठना। अलीखान्ने अपने पिताका मस्तक द्विखण्ड कर जयचिह्नस्वरूप दिल्ली भेजवाया और पितृमूर्तिके स्मरणार्थ एक सुन्दर समाधिस्तम्भ बनवाया। बीस वत्सर राजत्वके बाद उनके पुत्र दाऊद-खान्को पितृपद मिला था। किन्तु उनके राजत्व-कालपर उतरौलेमें बहरीपुरके राजगणका अधिकार जम गया। १६२८ ई० को पूर्वराजवंशीय सलीम-खान् नामक एक व्यक्तिने फिर यह स्थान ले लिया था। किन्तु उनके राजत्व कालपर दारुण गृहविवाद उठा। सलीमने विवाद बन्द करनेके लिये राजत्वको पांच अंशमें बांटा था। उन्होंने फतेहखान्, पहाड़खान्, रह-मतखान् और मुबारक चार पुत्रको एक-एक अंश दिया तथा एक अंश खास अपने लिये रख लिया। सलीम खान्के प्रपौत्र महावत (दिलावरखान)-ने गोंड़ेके राजा दत्तसिंहको मिल बानसीके राजासे अनेक बार युद्ध किया था। बानसीराज सम्पूर्ण रूपसे हारे। पहाड़ खान्के वंशधर क्रमान्वयसे उतरौले पर राजत्व करते चले आते हैं।

३ गोंडा जिलेका एक नगर या शहर। उतरौला अपने परगनेमें प्रधान स्थान है। यह अक्षा० २७° १९´ उ० और द्राघि० ८२° २७´ २५´´ पू० के मध्य अवस्थित है। राजपूतोंने यह नगर बसाया था। निदर्शन मिला—उनके समय उतरौला परिखासे परिवेष्टित सुन्दर दुर्ग रहा। यह नगर आम्रके उपवनसे समाकीर्ण है। विद्यालय, न्यायालय और दातव्य-चिकित्सालय बने हैं।

उतलाना (हिं॰ क्रि॰) आतुर होना, जल्दी मचाना, हलचल डालना।

उतला (हिं॰ वि॰) आतुर, जल्दबाज़, जो जल्दी करता हो।

उतवंग (हिं॰ पु॰) उतमाङ्ग, मस्तक, खोपड़ा।

उतसव (हिं॰ पु॰) उत्सव, जलसा।

उतसाह (हिं॰) उत्साह देखो।

उतान (हिं॰ वि॰) १ व्युत्क्रान्त, मक़लूब, औंधा, उलटा, जो अपनी पीठ ज़मीनसे लगाये हो।

उतान—बम्बईप्रान्तके थाना जिलेका बन्दर। यह अक्षा॰ १९° १८´ उ॰ तथा द्राघि॰ ७२° ४९´ पू॰ पर थाने नगरसे १७ मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। यहां एक पोर्तुगीज़ गिर्जा है। कितना ही माल आया-जाया करता है।

उतार (हिं॰ पु॰) १ अवतरण, ढलाव, ऊपरसे नीचे आनेका काम। २ निर्लज्ज स्त्री, बेशर्म औरत। ३ प्रतिलेख, अनुकरण, मुसन्ना, नकल। ४ घाट, नदी पार होनेका महसूल। ५ दरीके करघेका एक बांसा यह जुलाहेसे अलग और पश्चात् दिक् चढ़ावके बराबर पड़ता है। ६ न्योछावर, सदक़ा। ७ विषको मारनेवाला पदार्थ, जिस चीज़से ज़हर उतरे। ८ अभिचार विशेष, एक टोटका। इसे कृषक अपने मङ्गलकी कामनाके किये करते और एक दिन ग्रामसे बाहर बसते हैं। ९ भाटा, लहरका ढलाव। १० विनाश, बरबादी। ११ मूल्यका पतन, भावका गिराव। १२ शुल्कका अपचय, आमदनीकी कमी।

उतार-चढ़ाव (हिं॰ पु॰) आरोहण एवं अवतरण, चढ़ा-उतरी, ऊंच नीच, घटती-बढ़ती, भलाई-बुराई।

उतारन (हिं॰ पु॰) १ परित्यक्त वस्त्र, पुराना कपड़ा। २ न्योछावर, सदक़ा, किसीके ऊपर उतार कर दी जानेवाली चीज़। ३ निकृष्ट द्रव्य, खराब चीज़। ४ दुष्ट मनुष्य, बदमाश आदमी।

उतारना (हिं॰ क्रि॰) १ अवतारण करना, ऊपरसे नीचे लाना। २ लिखना, खींचना, घसीटना। ३ पृथक् करना, छोड़ाना, काटना। ४ अवस्थित करना, रखना, ठहराना। ५ चतुर्दिक् घुमाना, इज्जत देखाना। ६ परिशोध करना, दे डालना। ७ उगाहना, ले आना। ८ उपजाना, पैदा करना। ९ निर्माण करना, बनाना। १० न्यून करना, घटाना। ११ तुलना करना, तौलना। १२ नदी पार ले जाना। १३ प्रविष्ट करना, घुसेड़ना। १४ निःसरण करना, निकालना। १५ पान करना, पीना। १६ निगल जाना। १७ त्याग करना, छोड़ना। "यारका गुस्सा भतारपर उतारती हो।" (लोकोक्ति) १८ स्थानच्युत करना, हटाना। १९ खराब करना, बिगाड़ना। "जब अपनी उतार ली तो दूसरेको उतारते क्या देर।" (लोकोक्ति) २० रगड़ना, घिसना। २१ लुण्ठन करना, लूटना। २२ एकत्र करना, चुनना बिनना। २३ ढालना, भरना। २४ विभाग करना, बांटना। २५ दान करना, देना। २६ प्रेरण करना, भेजना। २७ देशनिर्वासन एवं स्वास्थ्यविनाशन करनेको समुद्रपार और मार उतारना कहते हैं।

उतार-सुतार (हिं॰ पु॰) १ उपशम, आराम। २ शोधन, अदा, चुकती।

उतारा (हिं॰ पु॰) १ उत्सर्ग, तफ़रीक़, कमी। २ पात्रस्थित परिपक्व अन्नादि, किसी बरतनमें रखा भात वग़ैरह। इसे कई बार रोगीकी चारो ओर आरतीकी तरह घुमाकर उतारते हैं। लोगोंको विश्वास है, रोगीको प्रेत बाधा उतारे पर उतर आती है। ३ सामग्री विशेष, किसी क़िस्मका सामान्। यह उतारेमें लगता है। ४ संस्थान, पड़ाव, उतरनेको जगह। ५ तरणस्थान, घाट, नदी पार करनेकी जगह। ६ प्रतिलेख, नक़ल। ७ उत्तर, जवाब। ८ गृहशुल्क, घाटकी उतराई। ९ मन्दिरको प्रदत्त भूमि, जो ज़मीन् मन्दिरको मिली हो। १० निष्कर भूमि, माफ़ीकी ज़मीन्। इसे सरकार अपने कर्तव्य पालनेवाले सेवकको देती है। (वि॰) ११ उतारा हुआ, जो उतार डाला गया हो। पश्चाधानस्थ और अल्प मूल्य द्वारा क्रीत द्रव्यको उतारेका माल कहते हैं।

उतारू (हिं॰ वि॰) १ उन्मुख, आरास्ता, राज़ी, उतर पड़नेवाला। (पु॰) २ यात्री, मुसाफ़िर।

उताल (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ सत्वर, जल्द, चट! (स्त्री॰) २ त्वरा, शिताबी, जल्दी।

उताल (विजापुर)—मध्यप्रान्तके सम्बलपुर जिलेकी एक जमींन्दारी। यह बड़गढ़ तहसीलमें लगती और सम्बलपुर नगरसे ३८ मील दक्षिणपूर्व पड़ती है। भूमिका परिमाण ८० वर्गमील है। चावल, दाल, ऊख, रुई और तेलहनकी उपज अधिक है। उताल या विजापुरग्राममें एक सुन्दर तड़ाग और विद्यालय बना है। इसके प्रभु प्रकृत गोंड़ हैं। १८२० ई० पर अंगरेज सरकारसे पूछ सम्बलपुरको राजा महाराज साहीने स्थानीय नरेश गोपी कुलताको उताल उपाधि दिया था। उन्हींके वंशज आज भी जमींन्दारी अपने हाथ रखते हैं।

उताली, उताल देखो।

उतावल (हिं० स्त्री०) १ व्यग्रता, अस्वास्थ्य, बेचैनी। २ साहस, हिम्मत। ३ शीघ्रता, शिताबी। (क्रि० वि०) ४ सत्वर, फ़ौरन्। (वि०) ५ आशुकारी, जल्दबाज़, तेज़ी देखानेवाला।

उतावला (हिं० पु०) धैर्यरहित पुरुष, बेसब्र आदमी।
"उतावला सो बावला धीरा सो गम्भीरा।" (लोकोक्ति)

उतावली (हिं० स्त्री०) १ त्वरा, जल्दी। २ चापल्य, बेचैनी।

उताहल (हिं क्रि० वि०) शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द, तेज़ीके साथ।

उताहिल, उताहल देखो।

उताहो (सं० अव्य०) १ विकल्प—अथवा, या इत्यादि। २ प्रश्न—क्या, क्यों वग़ैरह। ३ विचार—अवश्य, हां प्रभृति।

उताहोस्वित् (सं० अ०) अथवा, आया, या।

उतूल (सं० पु०) जातिविशेष, किसी कौमके लोग।

उतृण, उत्तृण देखो।

उतै (हिं० क्रि० वि०) उस पार्श्व, उधर, वहां, उत।

उतैला (हिं० पु०) १ माष, उड़द। (क्रि० वि०) २ शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द।

उत्क (सं० त्रि०) उत्-क निपातनात्। १ उत्सुक, ख़ाहां। २ वस्तु विशेषकी प्राप्तिका अभिलाषी, जो किसी ख़ास चीज़के पानेका ख़ाहां हो। ३ पश्चात्तापकारी, अफ़सुर्दा, उदास। ४ अनुपस्थित, ग़ैरहाज़िर, जो दूसरी बात विचारता हो। (पु०) ५ अभिलाष, ख़ाहिश। ६ अवसर, मौक़ा।

उत्कच (सं० त्रि०) उद्गतः उन्नतो कचोऽस्य। १ केशशून्य, बेबाल। २ उन्नतकेश, खड़े बालवाला। ३ पुराणवर्णित भारतके पूर्वप्रान्तवासी दुर्धर्ष जातिविशेष। घटोत्कच देखो।

उत्कच्छा (सं० स्त्री०) छन्दो विशेष। इसमें छः पाद रहते हैं। प्रत्येक पादमें ग्यारह एकाक्षरमात्रा लगती हैं।

उत्कञ्चुक (सं० त्रि०) कूर्पासकविहीन, जो चोली या मिर्ज़ई न पहने हो।

उत्कट (सं० त्रि०) उत्-कट्-अच्। तीव्र, तेज़, मामूली हिसाबसे ज्यादा। २ मत्त, मतवाला। ३ व्याप्त, भरा हुआ। ४ अधिक, ज्यादा। ५ श्रेष्ठ, बड़ा, घमण्डी। ६ विषम, नाहमवार, जो बराबर न हो। ७ कठिन, मुशकिल। (पु०) ८ मत्त गज, मतवाला हाथी। ९ मत्तगजके गण्डस्थलसे टपकनेवाला द्रवपदार्थ, हाथीके मत्थेसे झड़नेवाला मद। १० शरकाण्ड, रामशर। ११ क्षुद्र क्षुपविशेष, एक छोटा झाड़। १२ इक्षु, ऊख। १३ रक्तेक्षु, लाल ऊख। १४ मद, नशा। (क्ली०) १५ वृक्षभेद, एक पेड़। १६ लताविशेष, सालसा। १७ गुड़त्वक्, दालचीनी। १८ तेजपत्र, तेजपात।

उत्कटा (सं० स्त्री) सैंहलीलता, ऊटकटारा, सफ़ेद घुंघची। सैंहली (उत्कटा) कटु, उष्ण, क्रमिघ्न, दीपन एवं कोष्ठशोधन होती और कफ, श्वास तथा वायुजनित रोगको शमन करती है। (राजनिघण्टु) उत्कटा उष्ण, तिक्त, वृष्य और रुचिकर है। यह मूत्रकृच्छ्र, पित्त, वात, मेह, तृष्णा, हृद्रोग और विस्फोटकको मारती है। इसका बीज शीतल, वृष्य, तृप्तिकर और मधुर प्रकीर्तित है। (वैद्यकनिघण्टु)

उत्कटासन, उत्कटुकासन देखो।

उत्कटुकासन (सं० क्ली०) कठिनासन, नशिस्तचारज़ान, चौखूंट बैठक, पालती मारकर बैठनेकी हालत।

उत्कणिका (सं० स्त्री०) उत्क्षिप्त क्षुद्रांश, उठाया हुआ रेज़ा या टुकड़ा।

उत्कण्टक (सं० क्ली०) वृक्षभेद, दवादूब।

उत्कण्ठ (सं० पु०) उन्नतः कण्ठो यस्य। १ आसन, नशिस्त, बैठक। यह शृङ्गारके षोड़श बन्धमें त्रयोदश है।

"नारीपादौ च हस्तेन धारयेच्चलके पुनः।
स्तनार्पितकरः कामी बन्धश्चोत्कण्ठसंज्ञकः॥" (रतिमञ्जरी)

२ प्रिय व्यक्ति वा वस्तुके लिये अभिलाष, प्यारेके वास्ते लालच। ३ पश्चात्ताप, किसी आदमी या चीज़के लिये पछतावा। (त्रि०) ४ उदग्रीव, गर्दन उठाये हुआ।

उत्कण्ठा (सं० स्त्री०) उद्-कठि-अ-टाप्। औत्सुक्य, शौक़, ख़ाहिश। इष्टलाभमें कालक्षेपकी असहिष्णुताको उत्कण्ठा कहते हैं। यह एक सञ्चारी भाव है।

"चली अग्र करि सखी सयानी।
सिय हिय अति उत्कण्ठा जानी॥" (तुलसी)

उत्कण्ठित (सं० त्रि०) उत्कण्ठा जाताऽस्य, उत्कण्ठा-इतच्। उद्विग्न, उत्सुक, बेचैन, अफ़सोसमें पड़ा हुआ।

उत्कण्ठिता (सं० स्त्री०) नायिकाभेद, किसी क़िस्मकी औरत।

"सङ्केतस्थलं प्रति भर्तुरागमनकारणं चिन्तयति या।" (रसमञ्जरी)

सङ्केत स्थानपर नायकागमनके लिये दुःखित होनेवाली स्त्रीको उत्कण्ठिता कहते हैं। इसके अरति, सन्ताप, जृम्भा, अङ्गाकर्षण एवं कम्पन, रोदन और शब्दयुक्त दीर्घ निश्वास सकल लक्षण देख पड़ते हैं। दूसरे— "आगन्तुं कृतचित्तोऽपि दैवान्नायाति यत्प्रियः।
तदागमनदुःखार्ता विरहोत्कण्ठिता तु सा॥" (साहित्यदर्पण)

आगमनको निश्चय करते भी यदि प्रिय दैवात् नहीं आता, तो उस नायिकाका नाम विरहोत्कण्ठिता रखा जाता है। क्योंकि वह उसके न आनेपर दुःखित होती है।

उत्कता (सं० स्त्री०) उत्क-तल्। १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल। २ उत्कण्ठा, चाव।

उत्कन्दक (सं० पु०) रोगविशेष, एक बीमारी।

उत्कन्धर (सं० त्रि०) उन्नतः कन्धरोऽस्य, प्रादि० बहुव्री०। १ उन्नतग्रीव, गर्दनको पीछे उठाये हुआ। (क्ली०) २ ग्रीवाका पश्चात् दिक् नमन, गर्दनका पीछेकी ओर झुकाव।

उत्कम्प (सं० पु०) १ कामादिजनित कम्पन, लरज़िश, थरथराहट। "सोत्कम्पानिप्रियसहचरीसम्भ्रमालिङ्गितानि।" (माघ) (त्रि०) उत्-कम्प-अच्। २ उत्कम्पान्वित, लरज़ां, थरथरानेवाला।

उत्कम्पन (सं० क्ली०) विलोड़न, जुम्बिश, झकोर।

उत्कम्पिन् (सं० त्रि०) कम्पान्वित, लरज़ां, जो हिलडुल या झकोर रहा हो।

उत्कर (सं० पु०) उत्-कृ-अप्। १ राशि, ढेर। २ प्रसारण, फैलाव। ३ विक्षेप, फेंकफांक। कर्मणि अच्। ४ विक्षिप्त धूल्यादि, कूड़ाकर्कट। ५ रक्तेक्षु, लाल ऊख। ६ उत्कारिका, पुलटिस। (त्रि०) ७ राशिमय, ढेर हो जानेवाला, जो जमा हो।

उत्करादि—पाणिनि-कथित एक गण। इसमें निम्न लिखित शब्द पड़ते हैं—उत्कर, सम्फल, शफर, पिप्पल, पिप्पलीमूल, अश्मन्, सुवर्ण, खलाजिन, तिक, कितव, अणक, त्रैवण, पिचुक, अश्वत्थ, काश, क्षुद्र, भस्त्रा, शाल, जन्या, अजिर, चर्मन्, उत्क्रोश, शान्त, खदिर, शूर्पणाय, श्यावनाय, नैवाकव, तृण, वृक्ष, शाक, पलाश, विजिगीषा, अनेक, आतप, फल, सम्पर, अर्क, गर्त, अग्नि, वैराणक, इड़ा, अरण्य, निशान्त, पर्ण, नीचायक, शङ्कर, अवरोहित, क्षार, विशाल, वेत्र, अरीहण, खण्ड, वातागर, मन्त्रणार्ह, इन्द्रवृक्ष, नितान्तावृक्ष और आर्द्रवृक्ष।

उत्करिका (सं० स्त्री०) मोदक विशेष, एक मिठाई। यह दुग्ध, गुड़ और घृतसे बनती है।

उत्करीय (सं० त्रि०) उत्कर-सम्बन्धीय, ढेरसे निसबत रखनेवाला।

उत्कर्कर (सं० पु०) वाद्ययन्त्र विशेष, एक बाजा।

उत्कर्ण (सं० त्रि०) उन्नतः कर्णौ यस्मिन् यस्य वा। १ उन्नतकर्णयुक्त, जो कान खड़े किये हो। (पु०) २ उन्नतकर्ण, खड़ा कान। ३ वायुजन्य अश्वरोग, घोड़ेकी वातसे पैदा होनेवाली एक बीमारी। इसमें घोड़ेका कर्ण, पुच्छ और गात्र स्तब्ध हो जाता है। (जयदत्त)

उत्कर्तन (सं० क्ली०) उत्-कृत-ल्युट्। १ छेदन, छेदाई। २ उत्पाटन, कांट-छांट। ३ सुश्रुतोक्त

मूढ़गर्भकी चिकित्साका एक उपाय, हमलकी बीमारी का नुसखा। मूढ़गर्भ देखो।

उत्कर्ष (सं॰ पु॰) उत्-कृष-घञ्। १ अतिसार, दस्तकी बीमारी। २ श्रेष्ठता, अजमत, बड़ाई। "उत्कर्षं योषितः प्राप्ताः स्वैः स्वैर्भर्तृगुणैः शुभैः।" (मनु ६।२४) ३ वृद्धि, बढ़ती। ४ आकर्षण, कशिश, खैंचतान। ५ सौभाग्य, इक़बालमन्दी, लहर-बहर। ६ आधिक्य, ज़्यादती। ७ अहङ्कार, फख़्र, घमण्ड। ८ अभिमान, शेख़ी। ९ आनन्द, ख़ुशी। (वि॰) १० उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। ११ अधिक, ज़्यादा, बहुत। १२ अभिमानी, शेख़ीबाज़। १३ आकर्षक, खींच लेनेवाला।

उत्कर्षक (सं॰ त्रि॰) उत्-कृष-णिच्-ण्वुल्। १ उन्नतिकारक, बुलन्द बनानेवाला, जो ऊपरको खींच देता हो। २ उत्पाटनकारी, उखाड़ डालनेवाला। ३ कर्षणकारी, खींच लेनेवाला।

उत्कर्षण (सं॰ क्ली॰) उत्-कृष-ल्युट्। ऊर्ध्व आकर्षण, ऊपरकी ओरको खिंचाव। यह सुश्रुतोक्त मूढ़गर्भकी चिकित्साका एक उपाय है।

उत्कर्षता (सं॰ स्त्री॰) १ उन्नति, तरक़्क़ी, बढ़ती। २ आधिक्य, ज़्यादती। ३ अभिमान, शेख़ी। ४ आकर्षण, खिंचाव। ५ सौभाग्य, इक़बालमन्दी।

उत्कर्षित (सं॰ त्रि॰) आकर्षित, खिंचा हुआ।

उत्कर्षिन् (सं॰ त्रि॰) उत-कृष-णिनि। १ ऊर्ध्वाकर, उठा देनेवाला। २ उत्कर्षान्वित, ऊपरको उठा हुआ।

उत्कल (उड़ीसा)—भारतका एक प्रान्त। यह अक्षा॰ १९° २८′ एवं २२° ३४′ १५″ और द्राघि॰ ८३° ३६′ ३०″ तथा ८७° ३१′ ३०″ पूर्वके बीच अवस्थित है। विहार और उड़ीसाके गवरनर इसका शासन करते हैं। उड़ीसामें कितने ही मित्र राज्य भी संमिलित हैं। इससे उत्तर तथा उत्तरपूर्व छोटा नागपुर एवं बङ्गालदेश, पूर्व तथा दक्षिणपूर्व बङ्गालकी खाड़ी, दक्षिण मन्द्राज प्रदेशका गञ्जाम जिला और पश्चिम मध्यप्रदेश पड़ता है। मुख्य उड़ीसा ९०५३ और मित्र राज्यका क्षेत्रफल १५११८ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः पचास लाख होगी।

उड़ीसेकी भूमि दो प्रकारकी है। मोगलबन्दी या अंगेरेज़ी—कटक, बालेश्वर और पुरी ज़िला समान एवं उर्वर तथा गड़जात वा करद राज्य पार्वत्य भूभाग हैं। समस्थली महानदी, ब्राह्मणी तथा वैतरणीकी मट्टीसे बनी है। महानदी तथा ब्राह्मणी मध्यभारत और वैतरणी मयूरभञ्ज एवं केंउझर करद राज्यके पर्वतसे निकलती है। ये तीनों नदी समुद्रतटकी ओर धीरे धीरे मिलनेको बढ़ती और उड़ीसा समस्थली पर अपना संगृहीत जल ३० मीलके अन्तरसे छोड़ती हैं। किन्तु ग्रीष्ममें कहीं कहीं पानी सूख जाता है। सालनदी और सुवर्णरेखा छोटी नदी हैं। वर्षामें बड़ी बाढ़ आती और नदी फूली नहीं समाती। इसीलिये आधा जल नदीकी राह समुद्र पहुंचता और आधा किनारे तोड़ फोड़ देशको ही सींचता है। महानदीमें ४५००० हज़ार वर्ग मील भूमिका जल आता है। पहले यह पर्वतके नीचे नीचे बहती और दोनों किनारेसे आनेवाली अनेक शाखा प्रशाखाओंमें रहती है। किन्तु समस्थलीसे मिलते ही रूप बदल जाता है। यह अपने ही रखे रेतपर चढ़ने लगती है। दोनो किनारे ऊंचे पड़ जाते हैं। इससे शाखा प्रशाखा निकलती हैं। फिर अधिक वेग नहीं रहता और जल समुद्रतक जा पहुंचता है। इसी प्रकार चारो ओर रेतका ढेर लगनेसे उड़ीसा समस्थली तैयार होती है।

उड़ीसा प्रान्त धीरे धीरे नदी किनारेसे नीचेको ढलता है। इसीसे बाढ़ आनेपर पानी लौटकर नदी पहुंच नहीं सकता। पक्के खेत डूब जाते हैं। जबतक नदी अच्छी तरह नहीं उतरती, तबतक अधिकांश भूमि जलमें मग्न हो रहती है। गन्दे दलदलोंकी वायु बिगड़नेसे मलेरिया फूट पड़ता है।

उड़ीसामें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, यहूदी तथा दूसरे मतावलम्बी भी रहते हैं। वकली या महिमा-धर्म्मी वहांका एक प्रच्छन्न बौद्ध-सम्प्रदाय है। महिमाधर्म्मी देखो। किन्तु हिन्दू धर्मका चमत्कार अधिक है। वैतरणी पार होते ही पुण्यभूमि मिलती है। वैतरणीके दक्षिण तटपर अनेक शिवालय बने हैं। याजपुरमें पार्वतीका स्थान है। वह कौनसा राजकीय विभाग है, जहां स्मारक पर स्मारक नहीं

जना। प्रत्येक ग्राममें ब्राह्मणशासन विद्यमान है। नगर, ग्राम यहां तक कि घर घर मन्दिर बने हैं। अति पूर्व कालसे जगन्नाथकी पूजा होती है। जगन्नाथ देखो।

ब्राह्मणमें शैवका प्राधान्य रहते भी वैष्णवमार्गी लोगोंको अधिक प्यारा है। उड़ीसेके ब्राह्मण वैदिक और लौकिक दो प्रकारके होते हैं। कहते हैं—प्राय ई०के १२ वें शताब्दसे कन्नौज और बङ्गालके ब्राह्मण पुरी ज़िलेमें आकर बसते हैं। उन्हींका नाम वैदिक है। इससे कोई सौ वर्ष पहले वे उड़ीसाकी प्राचीन राजधानी याजपुरमें आ टिके थे। किन्तु ११७५ और १२०२ ई० के बीच जगन्नाथ मन्दिरको पुन: बनवानेवाले राजा अनङ्गभीमदेवने उनके लिये पुरी जिलेमें ४५० उपनिवेश स्थापित किये। वैदिक ब्राह्मण कुलीन और श्रोत्रिय दो श्रेणीमें विभक्त हैं। कुलीन ब्राह्मणके वाच, नन्द और गौड़ीय तीन पद्धति होती हैं। जीविका राजाकी दी हुई माफ़ भूमि, बालकोंकी शिक्षा और पूजा अर्चनासे चलती है। श्रोत्रिय-कन्याका विवाह अपने पुत्रके साथ करनेपर वैदिक ब्राह्मण बड़ा दहेज लेते हैं। श्रोत्रिय ब्राह्मणके भट्ट, धर, उपाध्याय, मिश्र, रथ, ओत, तियारी, दास, पति और शतपथी नव पद्धति हैं। लौकिक ब्राह्मण सबसे छोटे और उड़ीसेके आदि अधिवासी हैं। इनमें छः पद्धति हैं—पण्डा, सेनापति, परही, बसतिया, पानि और साहु। कृषि, वाणिज्य, शाकविक्रय, रुपयेका लेनदेन और तीर्थयात्रियोंको पथप्रदर्शन इनके धनोपार्जनका प्रधान द्वार है।

क्षत्रिय तीन प्रकारके हैं—देव, लाल और राय। राजा, जागीरदार और महाजन इनमें मिलित हैं। संख्या न्यून रहते भी आर्थिक दशा अच्छी है। द्वितीय श्रेणी सिंह और चन्द्र राजपूतोंकी है। यह छोटे मोटे जमीन्दार होते या फौज, पुलिस, दरबानी और चिट्ठी रसाईका काम करते हैं। लोगोंके शूद्र कहते भी खण्डायत अपनेको क्षत्रिय बताते हैं। पूर्व समय स्थानीय नृपति इनको निष्कर भूमि दे युद्धका काम लेते थे। आज कल इनकी संख्या बहुत अधिक है। कुछ ज़मीन्दार और माफीदार होते भी अधिकांश खण्डायत कृषि कार्य करते हैं।

करण अपनेको भारतके प्राचीन क्षत्रिय बताते हैं। कितने ही करण जमीन्दारी करते और व्याज पर रुपया तथा चावल ऋण देते हैं। किन्तु अधिकांश मुनीम, हिसाबदार और छोटे अफसर हैं। इनकी आर्थिक दशा साधारणत: अच्छी है।

शूद्रोंमें चासा (प्रधान कृषक), ग्वाला, पान, तेली, बाउरी (मज़दूर) तांती (जुलाहे), केवट, नापित, धोबी, कुम्हार, बढ़ई, कन्दू (हलवाई), लोहार, चमार, माली, हड्डी (मेहतर), मोदक (मोदी), डोम, जुगी (कोरी), सुनरी (कलवार) प्रभृति प्रधान हैं। पान पूर्व समयमें नरबलिके अर्थ मानवको पकड़ ले जाते थे।

यहां मुसलमान भी बहुत रहते हैं। किन्तु वे दरिद्र, अभिमानी और असन्तुष्ट हैं। कितने ही अफगानोंके वंश प्रतिष्ठित हैं। किन्तु वास्तविक ये मुसलमानी फौजके साथ आये सिपाहियोंके सन्तान हैं।

आदिम अधिवासियोंमें गोंड, सन्थाल, भुंइया, भूमिज, खरवार और कोल अधिक हैं। इनमें कुछ हिन्दू धर्मको मानते और कुछ अपने स्वतन्त्र मतपर चलते हैं।

ईसाइयोंमें युरोपीय, यूरेशीय, देशीय और एसियाके लोग मिलते हैं। देशी ईसाई बाप्तिस्त मिशनसे सम्बन्ध रखते हैं।

प्राचीन कालमें इस देशमें जैनों तथा बौद्धोंका प्राबल्य अधिक रहा। किन्तु सन् ई०के ४थे शताब्दमें बौद्धधर्मका प्रभाव घटा था। फिर शैवका प्राधान्य बढ़ा। भुवनेश्वर नगरमें सन् ई०के ७वें शताब्दसे सैकड़ों शिवमन्दिर बन गये हैं। वैष्णव महाभारत और रामायणको मानते हैं। किन्तु शिव और विष्णु दोनो सच्चिदानन्दस्वरूप परब्रह्मके एक अंश समझे जाते हैं। कलिङ्ग, भुवनेश्वर और जगन्नाथ देखो।

प्रति वर्ष उड़ीसेमें चौबीस धार्मिक महोत्सव होते हैं। उनमें विष्णुका ही पूजन अधिक रहता है। वैशाख मासमें चन्दनयात्रा तीन सप्ताह चलती है।

नौकापर विष्णु और शिव दोनो जलविहार करते हैं। स्नानयात्राके समय गणेश भगवान् तड़ागमें नहाने जाते हैं। रामलीला, कालीयदमन और जगन्नाथके जन्मका उत्सव भी बड़ा है। रथयात्रा जैसी धूमधाम दूसरे समय नहीं होती।

कृषिमें चावल अधिक चलता है। सूखे टीलों और गहरे दलदलोंमें हर जगह उसे बो देते हैं। चावल कई प्रकारका होता है। दिसम्बर जनवरीका मार्च-अपरेल, मईजूनका जुलाई-अगस्त और वर्षाके आरम्भका बोया दिसम्बरमें कटता है। सिवा चावलके गेहूं, अड़हर, उड़द, मूंग, मसूर, मटर, सरसों, सन, तम्बाकू, रूई, ऊख, पान, आलू और अनेक प्रकारका शाकादि भी उपजता है।

बालेश्वर, कटक, पुरी और चांदबाली बड़े बन्दर हैं। चावल और कपड़ेका व्यवसाय अधिक होता है। कलकत्तेसे घनिष्ट सम्बन्ध है। कितना ही माल आता और कितना ही जाता है। प्रधानत: विलायती एवं देशी सूत, कपड़ा, बोरा, लोहालक्कड़, तेल, मसाला, तम्बाकू और सोना-चांदी बाहरसे मंगाते हैं। चावल, चमड़ा, लकड़ी और लाह चालान करते हैं। बालेश्वरसे चावलका निकाश अधिक होता है। जहाज बराबर कलकत्त आया-जाया करते हैं। बङ्गाल नागपुर रेलवे उड़ीसाके प्रधान प्रधान नगरोंको पहुंचती है। पुरीमें नमक बहुत बनता है। कटकके सोनेका काम प्रसिद्ध है।

यहां रेल और सड़ककी कमी है। कलकत्तेसे मन्द्राज जानेवाली ग्राण्डट्रङ्क रोड (Grand Trunk Road) कच्छार-जैसे प्रान्तके बीचसे निकली है। इसीकी एक शाखा कटकसे पुरीको फटी है। सम्बलपुरको भी कटक और मेदिनीपुरसे सड़क लगी है। बन्दर बड़े जहाजोंके लिये उपयुक्त नहीं। पहले माल जहाज़से पानीमें ही नावपर उतरता, फिर कहीं किनारे पहुंचता है। नावें भी बहुत कम मिलती हैं। बरसातमें माल चढ़ाते-उतारते बड़ा कष्ट पड़ता है। उड़ीसेकी नहर भद्रखसे आगे नहीं बढ़ती। केंद्रापाड़ाकी नहरमें कटकसे मारसाघाई तक ही नावें चल सकती हैं। तालदण्डेकी ५२ और मछगांवकी नहर ५३ मील लम्बी है। इनसे प्राय: सिंचाई होती है।

उड़ीसेमें प्रतिवर्ष प्राय: साढ़े बासठ इञ्च वृष्टि होती है। फिर भी जलके रुक न सकनेसे दुर्भिक्ष पड़ते देर नहीं लगती। १८३३-३४, ३६-३७, ३९-४० और ४०-४१ ई०को बड़ा सूखा पड़ा और ज्वर बढ़ा था। फिर १८६६, १८१५ई०को बाढ़ आनेसे करोड़ों रुपयोंकी हानि हुई। चौथाई लोग मर मिटे थे। समुद्र किनारे भी तूफानी पानी चढ़ आता है। उसके नदीकी बाढ़से मिलनेपर जङ्गल और बस्ती दोनो डूब जाते हैं। १८८५ ई०को ऐसी ही दशापर कटकमें कितने ही सरकारी अफसर और उनके बालबच्चे मर गये थे। पशु और सम्पत्तिकी अमित हानि हुई। तूफानी लहरने घण्टोंमें पचासों कोसों तक घर गिरा दिये थे।

किन्तु १८६६ ई०को जो दुर्भिक्ष पड़ा, उसका दृश्य इतिहासके वक्ष:पर सबसे ऊंचा है। चावल न मिलनेसे बाज़ार बन्द हो गये थे। रुपयेमें साढ़े चारसेर चावल बिकनेसे ग़रीब आदमी भूंकों मरे। लोगोंने घास चबा चबाके दिन काटे थे।

उड़ीसेका जलवायु दक्षिण-बङ्गालसे मिलता जुलता है। मार्चसे मध्य जूनतक ग्रीष्म, मध्य जूनसे अक्तोबर तक वर्षा और नवम्बरके आरम्भसे फरवरी मास तक शीत ऋतु रहती है। जून, जुलाई और अगस्त मास हैज़ा हुआ करता है। चेचक जनवरीसे मध्य अपरेल तक चलती है। नीच उड़िये छुवाछूतका विचार नहीं रखते और न टीका ही लगवाना चाहते हैं।

इतिहास

उत्कलका प्राचीन नाम कलिङ्ग है। महाभारतके समय वैतरणी नदी-प्रवाहित कलिङ्ग वा उत्कलांश यज्ञीय देश समझा जाता था। उस समय यहां अनेक मुनि ऋषिके आश्रम रहनेका सन्धान लगा है। बुद्धदेवके समय भी यहां समृद्धि बहुत बढ़ी थी।

अशोकके पितामह चन्द्रगुप्तके समयसे कलिङ्ग मौर्यवंशके अधीन रहा। सम्राट् अशोकसे कलिङ्ग-

वासी दीर्घकालतक लड़ते रहे। युद्धमें असंख्य कलिङ्ग-वासी मारे गये थे। ऐसी उत्कट नरहिंसा देख अशोकका हृदय करुणासे पिघल उठा था।

अशोकप्रियदर्शी देखो।

मौर्यवंशका प्रभाव घटने पर जैनराजवंशने प्रबल हो कलिङ्ग जीता था। खण्डगिरिकी हाथीगुफासे उत्कीर्ण सुवृहत् शिलालिपिमें पराक्रान्त भीखुराज खारवेलका परिचय मिलता है। खारवेलने मगध पर्यन्त देश जीत शुङ्गवंशको मथुरा भगा दिया था।

जैनवंशके बाद कलिङ्गमें गुहवंशका अभ्युदय हुआ था। सिंहलके 'दाथावंश' नामक पालीग्रन्थमें कलिङ्गाधिप गुहशिव वा शिवगुहका नाम मिलता है। इस प्राचीन ग्रन्थको पढ़नेसे समझ सकते हैं—शाकबुद्धके निर्वाण पर क्षेम नामा उनके एक शिष्यने चितासे बुद्धदेवका पवित्र दन्त उठा कलिङ्गाधिप ब्रह्मदत्तको जाकर दिया था। उन्होंने अपनी राजधानी पर मणिमाणिक्यखचित एक सुवर्ण-मन्दिर बना उसमें पवित्र दन्तको रखा। इसी दन्तके कारण कलिङ्गकी राजधानीने दन्तपुर नाम पाया था। ३७० से ३९० ई०के बीच उत्तराधिकार-सूत्रसे शिवगुह दन्तपुरके सिंहासन पर बैठे। पहले वे ब्राह्मणके अत्यन्त भक्त रहे। उन्होंने ब्राह्मणवर्गके परामर्शसे अपने पूर्वतन राजावोंके समान दन्तका पूजना छोड़ दिया था। किन्तु किसी नैसर्गिक घटनासे डिग पीछे वे भी दन्तके कट्टर भक्त बने। ब्राह्मणवर्गने इससे बिगड़ पाटलिपुत्राधिपके निकट कलिङ्ग-नरेशपर अभियाग लगाया था। उन्होंने बुद्धदन्तके साथ गुहशिवको पकड़ लानेके लिये चित्तयान नामक एक सामन्तराज भेजे। गुहशिव उनकी गति रोक न सके और दन्तके साथ पाटलिपुत्र नगरको जानेपर वाध्य हुये थे पाटलिपुत्रमें दन्त आनेसे बहु अभूतपूर्व काण्ड उठने लगे, जिससे पाटलिपुत्राधिप भी उसके भक्त बन गये। उनके मरने बाद गुहशिव फिर उक्त दन्तको अपनी राजधानी ले आये थे। किन्तु वे निश्चिन्त बैठ न सके। अल्प दिन पीछे ही चीरधार नामक किसी पार्श्ववर्ती नृपतिने उनके राज्य पर आक्रमण मारा था। चीरधारके हारते और मारे जाते भी उनके भ्रातुष्पुत्र बहुसैन्य सामन्त बढा दन्तपुरीको दौड़ पड़े। गुहशिव कहीं निस्तार न देख अपने प्रिय जामाता उज्जयिनीके राजकुमार दन्तकुमारसे कह गये—हमारे न रहते पवित्र बुद्धदन्तको सिंहल पहुंचा दीजियेगा। गुहशिवके युद्धमें मारे जाने पर दन्तकुमार राजकन्याके साथ छद्मवेशमें पवित्र दन्त उठा सिंहलको चलते बने। उसी समयसे बुद्धका दन्त सिंहलमें रखा और पूजा गया। सम्भवत: उक्त शिवगुहके वंशने दन्तपुरीको खो उत्कलके गड़जातका आश्रय लिया और क्रम क्रमसे उसमें अपना प्रभुत्व फैला दिया। गौड़कविने उनके वंशधरको 'नानारत्नकूट-कुट्टिमविकटकोटाटवीकण्ठीरवो दक्षिणसिंहासनचक्रवर्ती' कहा है।

मगधमें गुप्तसाम्राज्यकी प्रतिष्ठाके साथ उत्कल भी उसीमें मिल गया। गुप्त-साम्राज्यके पतनपर यह प्रदेश सोमवंशीय राजगणके अधिकारभुक्त हुआ था।

गुप्तराजवंश और सोमवंशी शब्द देखो।

सोमवंशीय राजगण मादलापुञ्जीमें केशरिवंशीय भी कहाते थे। इसी केशरिवंशके समय उत्कलमें नाना स्थानोंपर बहु शिवमन्दिर बने। उनका भग्नावशेष आज भी विद्यमान है। गङ्ग वा गाङ्गेय-वंशके अभ्युदयसे सोमवंशीय राजगणका प्रभाव घट गया था।

शक ९९९में गाङ्गेय वंशतिलक चोड़गङ्गका अभ्युदय हुआ। इस विषयके कितने ही शिलालेख और ताम्रफलक मिले हैं, जिन्हें देखनेसे हम निम्नलिखित वृत्तान्त समझ सके हैं—

शक ९९९के कई वर्षबाद महाराज चोड़गङ्ग उत्कलके सिंहासन पर बैठे। इनके पिता प्राच्य गङ्गवंशके २य राजराज रहे। माताका नाम राजसुन्दरी था। इनकी कई रानियोंका नाम—कस्तूरिकामोदिनी, इन्दिरा, चन्द्रलेखा, सोमला, महादेवी, लक्ष्मीदेवी, और पृथिवी महादेवी रहा। कामार्णव, राघव, राजराज, अनियङ्कभीम और उभावल्लभ पुत्र थे। इन्हें लोग अनन्तवर्मा, चालुक्यगङ्ग, गाङ्गेयपर और विक्रमगङ्ग उपाधिसे सम्बोधन करते थे। ये अत्यन्त

प्रसिद्ध और शक्तिशाली थे। इन्होंने उत्कलका राज्य दबा बङ्गदेशको भी जीत लिया। सदुर्ग अनमया नगर छीन चोड़गङ्गने मन्दार-नरेशको मार भगाया था। सम्भवतः आईन-अकबरीमें जिस स्थानका नाम 'सरकार मन्दारन' लिखा है, वही मन्दार प्रान्त रहा। आज कल इसे भीतरगढ़ या भीटागढ़ कहते हैं। चोड़गङ्गने अपना राज्य गङ्गाके उत्तरसे गोदावरीके दक्षिण तक बढ़ा लिया था। किन्तु चेदी-शिलालेखके अनुसार रत्नदेव राजाने इन्हें नीचा दिखाया। ये बड़े धार्मिक थे। इन्हींकी आज्ञासे पुरीमें जगन्नाथ देवका मन्दिर बना। चोड़गङ्गके समय विज्ञान और साहित्यकी भी अच्छी उन्नति हुई। संस्कृत और तैलगु भाषाका प्रचार अधिक था। शक १०२१ में शतानन्दने भास्वती नामक ज्योतिष-सम्बन्धीय ग्रन्थ लिखा। कोई ९० वर्षके वयसमें इन्होंने ७२ वत्सर राज्यकर इहलोक छोड़ा था। आज भी चोड़गङ्गके नामका परिचय पुरीके चुडङ्गसाही महल्ले, कटक नगरसे दक्षिणपश्चिम तीन कोस चुड़ङ्गपुखरी तालाब, सारङ्गगढ किले और कटक जिलेके याजपुर नगरमें मिल सकता है।

शक १०६९में कामार्णवने सिंहासन पर बैठ १०७८ तक राजत्व किया। ये चोड़गङ्गके औरस और कस्तूरिकामोदिनीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उपाधिरूपसे कामार्णवको लोग कामार्णव देव, अनन्त-मधु-कामार्णवदेव और अनन्तदेव भी कहते रहे।

शक १०७८ से १०८४ तक राघव राजा बने। इन्होंने चोडगङ्गके औरस और रविकुलकी इन्दिराके गर्भसे जन्म लिया था।

शक १०९२ को २य राजराज राजा हुये। ये चोड़गङ्गके औरस और चन्द्रलेखाके गर्भसे उपजे थे। इनका औपाधिक नाम अनन्तवर्मदेव रहा। शक १११२ में उनका शासन समाप्त हो गया।

शक १११२ से ११२० पर्यन्त २य अनियङ्क-भीम वा अनङ्गभीमदेवने राज्य किया था। ये चोड़-गङ्गके पुत्र और २य राजराजके भ्राता रहे। गोविन्द नामक इनके एक महाबल ब्राह्मण मन्त्री थे। २य राजराजके श्यालक स्वप्नेश्वरदेवने मङ्केश्वरका मन्दिर बनवाया था।

शक ११२० में ३य राजराज उत्कलके नरेश हुये। ये अनियङ्कभीमदेवके औरस और रानी बावल्ला देवीके गर्भसे उपजे थे। इनका उपाधि नाम राजेन्द्र था। राजराजके सिंहासनारूढ़ होते ही मुहम्मद बख्तियारके दो सेनापति मुहम्मद शेरान् और अहमद शेरान् उड़ीसे पर चढ़े, किन्तु अपने प्रभुके वधका समाचार पा लौट पड़े। ३य राजराजने शक ११३३ तक राज्यका सुख उठाया था।

शक ११३३ से ११६० तक ३य अनङ्गभीमदेवने शासन चलाया। वे ३य राजराजके औरस और चालुक्यवंशीया सद्गुणा वा मङ्कणा देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। त्रिकलिङ्गनाथ उपाधि रहा। उनके ब्राह्मण-मन्त्री विष्णु तुम्माणो पृथिवीपति और यवनोंसे लड़े थे। शक ११६० को १म नृसिंहदेवने राज्य पाया। ये अनङ्गभीमदेवके औरस और कस्तूरादेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १म नृसिंह देवने राढ़ और वारेन्द्र पर आक्रमण कर यवनोंको हराया। कोणार्कका बड़ा मन्दिर उन्हींके आदेशसे बना था। फिर कोणाकोण वा कोणार्कवाले सूर्यालयके भी वेही निर्माता रहे। १म नृसिंह देवकी सभामें रहनेवाले पण्डित विद्याधरने एकावली नामक अलङ्कारका एक ग्रन्थ लिखा था। शक ११८६में उनके शासनका अन्त हुआ।

११८६ से १२००-१ तक १म भानुदेवने राजत्व किया। वे १म नृसिंहदेवके औरस और मालचन्द्रकी कन्या सीतादेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १म भानुदेवने श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको भूमि तथा गृह समर्पण कर सैकड़ों दानपत्र लिखे थे।

शक १२००-१ से १२२७-२८ तक २य नृसिंह देव उत्कलके सिंहासन पर सुशोभित हुये। वे १म भानुदेवके औरस और चालक्य-वंशीय जाकल्ला देवीके गर्भसे सम्भूत थे। उपाधि वीरनृसिंहदेव, वीरश्री अथवा श्रीवीरनृसिंह देव, प्रतापवीर श्रीनृसिंहदेव, वीरश्री वा श्रीवीरनरनारसिंहदेव और अनन्तवर्म

प्रतापवीर नरनारसिंह देव रहा। कलिङ्गके शासक नरहरितीर्थने कामेश्वरके सम्मुख योगानन्द-नृसिंहका मन्दिर बनवाया था।

१२२७-८से १२४९-५० तक २य भानुदेवका राज्य रहा। वे २य नृसिंहदेवके औरस और चोड़ा-देवीके गर्भसे उपजे थे। पूर्ण उपाधि श्रीवीरादिवीर-श्रीभानुदेव रहा। इनके साथ गयासुद्दीन तुगलकका तुमुल युद्ध चला था।

१२४९-५०से १२७४-५ तक ३य नृसिंहदेव राजाके पद पर बैठे। वे भानुदेवके औरस और रानी लक्ष्मीदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उनके महिषी कमला देवीके गर्भसे सीतादेवी नामक कन्या हुयी।

१२७४-५से १३००-१ तक ३य भानुदेवका अधि-कार रहा। वह ३य नृसिंहदेवके औरस और कमला देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये। उपाधि श्रीवीर अथवा वीरश्री भानुदेव और प्रतापवीर भानुदेव रहा। बङ्गालके शासक काजी इलयासने ३य भानुदेवके मरनेसे उत्कल पर आक्रमण किया था।

१३००-१से १३२४ तक ४र्थ नृसिंहदेव राज्य करते रहे। वे ३य भानुदेवके औरस और चालुक्य कुलकी रानी हीरादेवीके गर्भसे उपजे थे। औपा-धिक नाम वीरनृसिंहदेव, वीर-श्रीनरसिंह देव और वीरश्रीनृसिंहदेव रहा। उनके समय जौनपुरके शरकी खानदानवाले खाजा जहान्ने लक्ष्मणावती और जाजनगरको कर देनेपर वाध्य किया था। फिर बहमानी वंशके सुलतान् फीरोज़ जाजनगरमें पहुंच कितने ही हाथी लूट ले गये। मालवेके नवाब हुसे-नुद्दीन् होशङ्गने भी जाजनगर पर आक्रमण मारा था।

इसके पीछेका वृत्तान्त किसी दानपत्र वा शिला लेखमें नहीं मिलता। मादलापंजी अथवा जगन्नाथ मन्दिरके वृत्तविवरणसे समझते हैं, गाङ्गेयवंशके अन्तिम नृपति भानुदेव रहे। उनका शासन शक १३५६-से लगा था। उन्हें अकटा अबटा या मत्त भी कहते थे। उनके मरने पर कपिलेन्द्र वा कपिलेश्वरदेव मन्त्रीने सिंहासन हड़प कर सूर्यवंशकी प्रतिष्ठा की थी।

१३७४ शक (१४५२ ई०)में इस गङ्गवंशका लोप होनेपर कपिल नामक एक सूर्यवंशी पुरुष कपिलेन्द्रदेव उपाधि धारण कर उड़ीसेके राजा बने। उन्होंने सेतुबन्ध रामेश्वर तक अधिकार फैलाया था। इसी वंशमें प्रतापरुद्रने जन्म लिया। प्रतापरुद्रके राजत्वकाल पर श्रीचैतन्यदेव श्रीक्षेत्रके दर्शनको गये थे। प्रतापरुद्रके पौत्र कखारुया देवके राजत्व बाद कपिलवंश मिटा। १५५२ ई०में मुकुन्ददेव राजा हुये थे। उनके राजत्वके अन्तिमकाल पर देवद्वेषी कालापहाड़ यहां आ पहुंचा था। मुकुन्दके पुत्र गौडिया गोविन्द जब राजा रहे, तब कालापहाड़ पुरी लटने गये। गोविन्द जगन्नाथ देवको मूर्ति उठा गढ़पारकूदकर भागे थे। फिर १८ वत्सर अराजकता चली। अनन्तर भूआं-वंशीय रामचन्द्रदेव नामक एक व्यक्ति राजा हुये। उन्होंने जगन्नाथ देवको अवशिष्ट मूर्ति फिर पुरीमें स्थापन करायी थी।

१५१० ई० को मुसलमानोंमें इसमाइल गाज़ीने सर्वप्रथम उड़ीसेपर आक्रमण मारा था। किन्तु आधिपत्य जम न सका। उस समय भी हिन्दूराज-गणका प्रबल प्रताप था। कालापहाड़के आनेसे स्थानीय राजा नानाप्रकार हीनबल हो गये और अव-सर देख बङ्गालके नवाब सुलेमान कररानीने अनेक स्थान जीत लिये।

१५७४ ई०को अकबरके सेनापति मुनाइम् खान् और टोडरमल उड़ीसेपर झपट पड़े थे। बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके नवाब दाऊदसे जलेश्वर निकट मुगलमारीमें युद्ध चला, जिसमें दाऊदके हारते बङ्गाल एवं बिहार अकबरके हाथ लगा। वे केवलमात्र उड़ीसेके नवाब रह गये। दाऊद देखो। मध्यमें दाऊ-दकी प्ररोचनासे अफ़गानोंने फिर मुगलों पर अस्त्र उठाये थे। नाना स्थानपर मुगल और पठान लड़ मरे। १५७८ ई०के समय अकबरने मासूमखान् काबुलीको उड़ीसेका शासनकर्ता बनाकर भेजा था। किन्तु कुछ दिन पीछे उन्होंने पठानोंसे मिल मुगलोंको उड़ीसेसे भगा दिया। फिर कुतलखान् नामक एक पठानने उड़ीसेका सिंहासन पाया था। अकबरने कुतल-खान्के विरुद्ध मुगल सेना भेजी। सलीमाबादमें कुतल

खान्‌ने समग्रामके शासनकर्ता नजातको हराया था।

कत्लुखान्‌ देखो।

१५९० ई०में राजा मानसिंह बङ्गाल और विहारके शासनकर्ता बने। वे वर्षाकाल पर वर्धमानके दक्षिण-पश्चिमदिक्‌स्थ गढ़-मन्दारनमें ठहर उड़ीसा जीतने चले थे। धरपुरमें कत्‌लखान्‌से युद्ध छिड़ा। मुगल-सिपाही हारे और मानसिंहके पुत्र जगत्‌सिंह बन्दी बने। कत्लुखानने विष्णुपुर जीत लिया था। अल्प दिन बाद ही कत्‌लखान्‌ सहसा मर गये। उनके प्रधान वज़ीर ईसा खान्‌ने मानसिंहसे सन्धि कर ली। जगत्‌सिंहको मुक्ति मिली और पुरी अकबरके अधिकारमें आ गई।

१५९२ ई०में सुलेमान्‌ और उसमान्‌ नामक कत्‌न खान्‌के पुत्रोंने सन्धिको तोड़ पुरी पर आक्रमण मारा था। राजा मानसिंह द्वितीय बार उड़ीसे आये। बनापुरमें मुगल और पठान भिड़ गये थे। पठान हारे। सुलेमान्‌ और उसमानने फिर अवशिष्ट पठान सेना जोड़ सारनगढ़में लड़नेको अस्त्र उठाया। किन्तु वे मुगलोंका तेज सह न सके थे। शेष युद्ध हो गया। सुलेमान्‌ और उसमान मानसिंहसे झुके थे। उड़ीसा राज्य अकबरको मिला। राजा मानसिंह बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके राजप्रतिनिधि बने थे। उसी समय स्थानीय देशी राजा रामचन्द्र देवको अकबरने बहुत माना। अकबरके अधिकारमें पहुंचने पर उड़ीसा (बङ्गाल और विहारके साथ) एक शासनकर्ताके अधीन रहा।

१६०७ ई०को उड़ीसा स्वतन्त्र हुआ। हाशिमखान्‌ नामक एक व्यक्ति शासनकर्ता बने थे।

१६११ ई०में राजा कल्याणमल उड़ीसेके शासनकर्ता हुये। उसी समय उसमान फिर लुप्त स्वाधीनता बचानेको दौड़े। उन्होंने पठानोंसे मिल शेष चेष्टा लगायी। किन्तु इसबार उन्हें घूमना न पड़ा, सुवर्णरेखाके तीर रणकी शय्या पर प्राण छूट गया।

खुरदा और राजमहेन्द्रीको छोड़ उड़ीसेके सकल स्थानोंपर अकबरका अधिकार जमा। १६१८ ई०में मुकरमखान्‌ नामक तत्‌कालीन शासनकर्ताने राजाको हरा खुरदा भी दिल्ली-सम्राट्‌के अधीन कर दिया था। किन्तु राजमहेन्द्री स्वाधीन ही रही।

१६२१ ई० पर शाहजहान्‌ने विद्रोह लगाया था। उन्होंने अपने पिता जहांगीरके रखे तत्‌कालीन शासनकर्ता अहमद बेको हरा उड़ीसा जीत लिया था। युद्धमें पठान-सामन्त उनसे मिल गये थे।

१६२४ ई०में शाहजहान्‌ने अंगरेजोंको वङ्गदेशमें जहाजके सहारे वाणिज्य करनेका आदेश दिया। किन्तु बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके तत्‌कालीन शासनकर्ता आज़िम खान बोल उठे—अंगरेज बालेश्वरके निकटवर्ती केवल पिपली नामक स्थानमें ही जहाज़ लगा सकेंगे।

१७०६ ई० को बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके नवाब मुर्शिदकुलीखान्‌ने उड़ीसेसे मेदिनीपुरका ज़िला स्वतन्त्र कर दिया था। पहले वह उड़ीसेके ही अन्तर्गत रहा।

१७७५ ई०में मुहम्मद तकीखान्‌ उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बनकर आये थे। उसी समय खुरदाके देशी राजा रामचन्द्रदेवने मुसलमानों पर अस्त्र उठाये। अनेक युद्धके बाद वे कटकमें कैद हुये थे। मुसलमानोंके भयसे पण्डे जगन्नाथ-देवकी मूर्ति दाबकर भाग गये।

१७३४ ई०में सुरशिद कुलीखान्‌ उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बने। उन्होंने आकर देखा—पूर्व समयकी भांति आमदनी वसूल न होती इसका प्रधान कारण जगन्नाथदेवकी मूर्तिका पुरीमें न रहना है। दूर देशान्तरसे यात्रिगणका आना बन्द हो गया। पहले यात्रिगणका गमनागमन लगा रहनेसे आमदनीका परिमाण क्रमशः बढ़ते ही जाता था। फिर उन्होंने पण्डावोंसे मूर्ति लाकर फिर मन्दिरमें रखनेको विशेष समझाया। जगन्नाथकी मूर्ति वापस आयी और आमदनी भी अधिक परिमाणसे बढ़ गयी।

१७३९ ई०में शरफ़राज खान्‌ विहार और उड़ीसेके शासनकर्ता बने। किन्तु तत्पर ही अलीवर्दीखान्‌ने उन्हें हरा सिंहासन ले लिया।

१७४१-४२ ई०में मराठोंका उत्पात उठा।

मुर्शिदकुलीके दीवान् मीर-हबीबने चुपके मराठोंको उड़ीसे बुलाया था। अलीवर्दी उन्हें भगानेके लिये अनेक बार लड़े, किन्तु सफलमनोरथ न हो सके। १७४५ ई०में रघुजी भोंसले बङ्गालपर चढे थे। उन्होंने उड़ीसेको हस्तगत किया। मीर हबीबको प्रतिनिधि बना रघुजी स्वराज्यको चल दिये। १७४७ ई०में मीरजाफ़र मराठोंको कटकसे निकालनेके लिये भेजे गये थे। किन्तु उनसे भी कुछ न बन सका। मराठे अफ़गानोंसे मिल गये थे।

१७५१ ई०में अलीवर्दी मराठोंको उड़ीसेसे भगानेके लिये ससैन्य कटक पहुंचे। मराठे हार तो गये, किन्तु किसीप्रकार उन्होंने देश न छोड़ा। इसलिये अलीवर्दीने प्रति वर्ष १२ लाख रुपया कर ठहराकर उन्हें उड़ीसा फिर सौंप दिया।

मराठोंमें शिवभट शास्त्री प्रथम शासनकर्ता हुये थे। १७५६में १८०३ ई० तक उन्होंने उड़ीसे पर शासन चलाया। इसी समय मराठोंके पीड़नसे घबरा अनेक प्रजाने जन्मभूमि छोड़ी। उसमें किसी किसीने अंगरेजोंसे साहाय्य भी मांगा।

१८०३ ई० को १४ वीं अक्तोबरको अंगरेजोंने कटकका दुर्भेद्य दुर्ग जीता था। एक ही दिनके यत्सामान्य युद्धमें उन्होंने मराठोंके हस्तसे उड़ीसेका शासनभार निकाल लिया। उनका प्रबल प्रताप उसी दिन उड़ीसे राज्यसे अन्तर्धान हुआ। किन्तु अधिकार मिलते भी राज्यकी सामग्रीका अभाव था। आमदनी देनेवाले जमीन्दार और फ़सल तैयार करनेवाले किसान न रहे। अंगरेजोंने देखा—'सकड़ों ग्राम मानवशून्य हैं। उनमें शृगाल वास करते हैं। कुक्कुर प्रहरी हैं।' उन्होंने घोषणा निकाली—'अब प्रजाको कोई भय नहीं। जो जहां रहे, आकर निज निज भूमि ले ले।' पहले लोग अधिक घुम न सके थे। किन्तु क्रम क्रमसे प्रजा आयी। पूर्वमें जैसी समृद्धि रही, फिर भी वैसी ही बढ गयी।

अंगरेजोंके हाथ उड़ीसा आनेपर प्रधानतः तीन नियम चले थे। प्रथम—खन्द नामक असभ्य जाति पर किसी प्रकारका कर वा नियम न बंधना और अंगरेज-कर्माध्यक्षोंका सर्वदा देखते रहना कि, वे परस्पर विवाद बढ़ा रक्त न बहायें। द्वितीय—करदराजगणपर सन्धिके अनुसार कर लगाना, किन्तु उनपर भी गवरनमेण्टका कर न बढाना। तृतीय—कटक, पुरी और बालेश्वर तीन खास सरकारी स्थान रहना और उनका उपस्वत्व गवरनमेण्टको ही मिलना।

उत्कल (सं० पु०) १ उड़ीसा प्रान्तके अधिवासी। २ ब्राह्मणश्रेणिविशेष। ३ सुद्युम्नके एक पुत्र, तन्नामसे उत्कल प्रान्तका नाम चला है। ४ शाकुनिक, बहेलिया, चिड़ीमार। (त्रि) ५ भारवाहक, बोझ ढोनेवाला।

उत्कलाप (सं० त्रि०) उन्नत एवं विस्तारित पुच्छयुक्त, खड़ी और फैली पूछवाला। "तीरस्थली बर्हिभिरुत्कलापैः।" (रघु १६।६४)

उत्कलि (सं० पु०) देवविशेष।

उत्कलिका (सं० स्त्री०) उत्-कल-वुन्-टाप्। १ उत्कण्ठा, गहरी चाह। २ ऊर्मि, लहर। ३ पुष्पकलिका, फूलकी कली। ४ क्रीड़ा, नखरावाजी।

उत्कलिकाप्राय (सं० क्ली०) समासयुक्त गद्यभेद, जिस इबारतमें मिले हुये अलफ़ाज़ ज्यादा रहें। "भवेदुत्कलिकाप्रायं समासाढ्यं दृढाक्षरम्।" (छन्दोमञ्जरी)

उत्कर्षण (सं० क्ली०) उत्-कर्ष-ल्युट्। कर्षण, जोताई।

उत्कलित (सं० त्रि०) उत्-कल-क्त। १ उत्कण्ठित, खाहां, गहरी चाह रखनेवाला। २ बुद्धिमान्, अक्लमन्द।

उत्का (सं० स्त्री०) उत्-कन्-टाप्। उत्कण्ठिता नायिका।

उत्काका (सं० स्त्री०) उत्क-अक-अच्-टाप्। प्रतिवर्षप्रसूता गवी, हरसाल व्यानेवाली गाय।

उत्काकुत् (सं० त्रि०) उन्नतं काकुदमस्य। उद्विभ्यां काकुदस्य। पा ५।४।१४८। उन्नत तालुयुक्त, ऊंचे तालूवाला, जिसका तालू उठा रहे।

उत्कार (सं० पु०) उत्-कृ-घञ्। कृ धान्ये। पा ३।३।३०। १ धान्योत्क्षेपण, गल्लेकी झड़ाई, अनाजकी झाड़ पछोड़। २ धान्यका राशीकरण, गल्लेका इकट्ठा किया जाना।

उत्कारिका (सं० स्त्री०) उत्-कृ-ण्वुल्। १ सुश्रुतोक्त शोफादि-निवारक पाचन, लुपड़ी, भुरता, पुलटिस। यथा—

"निवर्तते न यः शोफो विरेकान्तैरुपक्रमैः॥
तस्य संपाचनं कुर्यात् समाहृत्यौषधानि तु।
दधितक्रसुराशुक्तधान्याम्लैर्योजितानि तु॥
स्निग्धानि लवणीकृत्य पचेदुत्कारिकां शुभां।
दैरण्डपत्रया शोफं नाशयेदुषया तया॥" (सुश्रुत)

उपवाससे विरेचन पर्यन्त प्रक्रिया द्वारा यदि शोफ अच्छा न हो; तो दधि, तक्र, सुरा, शुक्त, काञ्जिक, घृत एवं लवण मिला उत्कारिका पकावो और उष्ण रहते-रहते एरण्डपत्रके सहयोगसे शोफपर बांध दो।

२ रोटिका, रोटी, बाटी। ३ गुटिका, बड़ी। ४ लप्सिका, हलवा, लपसी।

उत्काशन (सं० क्ली०) शासनकार्य, हुकूमत।

उत्कास (सं० पु०) उत्क्रमस्यति, अस-अण्। कासरोग विशेष, किसी क़िस्मकी खांसी, खखार। यह ऊर्ध्वगत श्लेष्माका उत्क्षेपक रोग है।

उत्कासन (सं० क्ली०) उत्कास देखो।

उत्किर (सं० त्रि०) उत्-कृ कर्तरि श। उत्क्षेपक, फेंकनेवाला।

उत्कीर्ण (सं० त्रि०) उत्-कृ-क्त। १ उत्क्षिप्त, डाला या लगाया हुआ। २ उल्लिखित, लिखा हुआ। ३ क्षत, विद्ध, चुभोया हुआ। ४ खोदित, खोदा हुआ।

उत्कीर्तन (सं० क्ली०) १ घोषण, प्रचार, पुकार, फैलाव। २ प्रशंसा, तारीफ़।

उत्कीर्तित (सं० त्रि०) १ विघोषित, मुश्तहर, ढंढोरा पीटा हुआ।

उत्कुञ्चिका (सं० स्त्री०) १ स्थूल कृष्णजीरक, मोटा काला जीरा। कालाजीरा देखो। २ कुलिञ्जनवृक्ष, कुलींजनका पेड़।

उत्कुञ्चिता, उत्कुञ्चिका देखो।

उत्कुट (सं० क्ली०) उन्नतं कुटो यत्र। उत्तानशयन, चित पड़नेकी हालत।

उत्कुटक (सं० त्रि०) उत्तान, चित, पीठको ज़मीन्से लगाये और चेहरेको ऊपर उठाये हुआ।

उत्कुटकप्रहान (सं० क्ली०) उत्कुटस्थितिका वर्जन, चित पड़नेसे परहेज़।

उत्कुटकासन, उत्कुट देखो।

उत्कुण (सं० पु०) उत्-कुण-हिंसने अद० चुरा० कर्मणि अच्। १ केशकीट, जूं। २ मत्कुण, खटमल।

इसे संस्कृतमें मत्कुण, उद्दंश और किटिभ भी कहते हैं। (Anoplura) यह कीड़ा प्रायः ५०० प्रकारका होता, जिसमें मनुष्यके देहपर दो ही तरहका देख पड़ता है—एक (Pediculus capitis) मस्तक और दूसरा (Pediculus vestimenti) शरीरमें। किसी किसी स्थलपर पीड़ित व्यक्तिके चर्ममें तीसरा (P. tabescentium) भी उत्पन्न हो जाता है, जो बहुत भयानक होता है। उसके उपजनेसे प्रायः रोगीके जीवनमें संशय रहता है। साधारणतः उत्कुण पशुपक्षीके शरीरमें अधिक रहता है। इसके देहका आयतन चपटा है। ११।१२ खण्ड वा दल बन सकते हैं। उनमें शुण्डके अंश तीन हैं। प्रत्येकके दो पाद और स्पर्शेन्द्रियमें पांच ग्रन्थि रहते हैं। मस्तकके दोनों किनारे एक या दो के हिसाबसे क्षुद्र चक्षु देख पड़ते हैं। दंश दो होते हैं। एक दंशके द्वारा पशुपक्षीके केश वा पालकमें उत्कुण घूमता फिरता है। समय समय पर इसी दंशको घुसेड़ अपने कण्ठसे पशु पक्षीका रक्त चूस लेता है। शिशुके मस्तक पर प्रायः उत्कुण उत्पन्न हो जाता है। यह केशपर विन्दु-विन्दु डिम्ब देता, जो आठ दिनके बाद फट पड़ता है। फिर एक मासके मध्य ही वह बढ़ जाता है। शरीरमें जो उत्कुण उत्पन्न होता, उसका स्त्रीकीट प्रति सप्ताह प्रायः ६।७ शत डिम्ब देकर बच्चे निकालता है।

चक्षुके पलकपर भी एक जातीय उत्कुण उपजता है—जो कभी मस्तकके केशमें देख नहीं पड़ता। वह भी बहुत अनिष्टकर होता है। बन्दरके लोममें जो उत्कुण रहता, वह स्वतन्त्र जातिका होता है। कभी-कभी यह सिन्धु-घोटकमें भी देख पड़ता है।

उत्कुल (सं० त्रि०) परिभ्रष्ट, नाख़लफ़, कपूत, अपने ख़ान्दानकी इज़्ज़त बिगाड़नेवाला।

उत्कूज (सं० पु०) कोकिलका शब्द, कोयलका गाना।

उत्कूट (सं० पु०) छत्र, छाता, आफ़ताबी।

उत्कूर्दन (सं० क्ली०) वल्गन, उछलकूद।

उत्कूल (वै० त्रि०) १ पर्वतपर चढ़नेवाला, जो ऊंचेपर हो। (अव्य०) २ पर्वतपर, पहाड़के ऊपर।

उत्कूलित (सं० त्रि०) सागर वा नदीके तटपर आनीत, जो किनारे लगा हो।

उत्कृति (सं० स्त्री०) २६ अक्षरका छन्दोविशेष। इसमें चार पद होते हैं।

उत्कृत्त (सं० त्रि०) उत्-कृत्-क्त। १ छिन्न, कटा हुआ। २ उत्खात, खुदा हुआ।

उत्कृत्य (सं० अव्य०) छिन्न करके, काटकर।

उत्कृत्यमान (सं० त्रि०) छिन्न किया जानेवाला, जो कट रहा हो।

उत्कृष्ट (सं० त्रि०) उत्-कृष्-क्त। १ प्रशस्त, बढ़ा हुआ, जो खिंचकर ऊपर या बाहर निकल गया हो। २ उत्तम, श्रेष्ठ, उम्दा, बढ़िया। ३ उत्कर्षान्वित, ऊंचे दरजेवाला। ४ कर्षणवत्, खिंचा हुआ। ५ सर्वोत्तम, सबसे अच्छा। ६ आकर्षित, खिंचा हुआ।

उत्कृष्टता (सं० स्त्री०) श्रेष्ठता, उम्दगी, बड़ाई।

उत्कृष्टत्व (सं० क्ली०) उत्कृष्टता देखो।

उत्कृष्टभूम (सं० पु०) श्रेष्ठभूमि, बढ़िया ज़मीन्।

उत्कृष्टवेदन (सं० क्ली०) श्रेष्ठकुलके साथ विवाह-कार्यका समापन, ऊंचे खान्दानवाले आदमीसे शादीका करना।

उत्कृष्टोपाधिता (सं० स्त्री०) प्रबल मायाकी स्थिति, बड़े धोकेकी हालत।

उत्केन्द्रकशक्ति (सं० स्त्री०) बलविशेष, एक ताकृत। वेगसे आवर्तमान वस्तुमें इसका उद्भव होता है। यह उक्त वस्तुके अंश विशेष अथवा तदुपरिस्थित अन्य द्रव्यको केन्द्रसे पृथक् फेंक देती है। उत्केन्द्रकशक्ति ही चक्रका कर्दम निकाल इधर उधर छिटकाती रहती है।

उत्कोच (सं० पु०) उत्-कुच सङ्कोचे क। उपायन, रिशवत, घूंस।

उत्कोचक (सं० त्रि०) उत्कोच-कन्। १ उपायन दान करनेवाला, जो रिशवत देता हो। २ उपायन ग्रहण करनेवाला, रिशवतखोर। (पु०) ३ धौम्याश्रमके निकटस्थ तीर्थविशेष। (भारत आदि १८३ अ०)

उत्कोठ (सं० पु०) कोठरोगभेद, किसी क़िस्मका जुज़ाम, एक कोढ़। इस रोगमें उदीर्ण पित्त, श्लेष्म और अनिलके ग्रहसे असम्यक् वमन होता और सकण्डू, रागवान् तथा सानुबन्ध बहु मण्डल पड़ता है। (भावप्रकाश)

उत्क्रम (सं० पु०) उत्-क्रम-अच्। १ व्यतिक्रम, वैपरीत्य, इनहिराफ़, भड़काव। २ उपरि वा बहिर्गमन, ऊपरी या बाहरी चाल। ३ उन्नति, तरक्की।

उत्क्रमण (सं० क्ली०) उत्-क्रम-ल्युट्। १ अपसरण, उड़ान, निकास। २ वैपरीत्य, इनहिराफ़, भटकाव।

उत्क्रमणीय (सं० त्रि०) त्यागने योग्य, जो छोड़ देनेके क़ाबिल हो।

उत्क्रान्त (सं० त्रि०) उत्-क्रम-क्त। १ उद्गत, उभरा हुआ, जो आगे निकल गया हो। २ उल्लङ्घित, लांघा हुआ, जो पीछे रह गया हो।

उत्क्रान्ति (सं० स्त्री०) उत्-क्रम-क्तिन्। उद्गमन, उल्लङ्घन, सबक़त, उभार, निकास, आगे बढ़ जानेकी हालत। "प्रियमाणस्योत्क्रान्तिप्रकारः।" (मधुसूदनसरस्वती)

उत्क्रान्तिन् (सं० त्रि०) उद्गमनकरनेवाला, जो आगे निकल गया हो।

उत्क्राम (सं० पु०) १ उद्गमन, उल्लङ्घन, सबक़त, आगे बढ़ जानेकी हालत। २ वैपरीत्य, इनहिराफ़, उलट-पुलट।

उत्क्रामत् (सं० त्रि०) उद्गमनकारी, सबक़त ले जानेवाला, जो आगे बढ़ रहा हो।

उत्क्रुष्ट (सं० त्रि०) १ उच्चैः स्वरसे कथन करता हुआ, जो ज़ोरसे बोल रहा हो। (क्ली०) २ सशब्द कथन, पुरशोर गुफ़्तगू, चेंचें।

उत्क्रोद (वै० पु०) परमाह्लाद, उल्लास, खुशी।

उत्क्रोश (सं० पु०) उत्-क्रुश-अच्। १ जलचर पक्षिविशेष, एक दरयायी परिन्द। यह मत्स्यघाती होता है। इसका मांस रक्तपित्तघ्न, शीतल, स्निग्ध,

वृष्य, वातकर और रस एवं पाकमें मधुर है। (सुश्रुत) २ पेचक, उल्लू। ३ कुररपक्षी, किसी किस्मका उकाब। ४ चीत्कार, शोर, हल्ला।

उत्क्लिष्टवर्त्म (सं॰ क्ली॰) क्लिष्टवर्त्म नाम रोगविशेष, आंसू पैदा करनेवाले मवादकी बढ़ती। क्लिष्टवर्त्म देखो।

उत्क्लेद (सं॰ पु॰) १ आर्द्रभाव, तरी, भीगनेकी हालत।

उत्क्लेदन (सं॰ क्ली॰) उत्क्लेद देखो।

उत्क्लेदिन् (सं॰ त्रि॰) आर्द्र, तर पड़नेवाला, जो भीग रहा हो।

उत्क्लेश (सं॰ पु॰) १ उत्तेजना, अशान्ति, हलचल, झगड़ा। २ वमनेच्छा, बलग़मका बिगाड़। ३ रोग, बीमारी।

उत्क्लेशक (सं॰ पु॰) विषमय कीट विशेष, एक ज़हरीला कीड़ा। यह अग्निप्रकृति होता है। इसके काट खानेसे पित्तजन्य रोग लग जाते हैं।

उत्क्लेशन (सं॰ त्रि॰) उत्तेजना देनेवाला, जो उभारता या बेतरतीबी पैदा करता हो।

उत्क्लेशिन्, उत्क्लेशन देखो।

उत्क्लेशन-वस्ति (सं॰ पु॰ स्त्री॰) वस्तिभेद, पिचकारीकी एक दवा। यह पहले एरण्डबीजादि कल्कसे उत्क्लेशनके लिये लगायी जाती है। उक्त कल्कमें एरण्डबीज, मधुक, पिप्पली, सैन्धव, वचा और हबुषाफल डालते हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

उत्क्षिप्त (सं॰ त्रि॰) उत्-क्षिप-क्त। १ ऊर्ध्वक्षिप्त, उछाला या उठाया हुआ, जो ऊपर चढ़ा दिया गया हो। २ निराकृत, हटाया हुआ, जो फेंका गया हो। ३ दूरीकृत, खारिज किया हुआ। (पु॰) ४ धुस्तूरफल, धतूरेका समर।

उत्क्षिप्तकम्पन (सं॰ क्ली॰) भूमिकम्पविशेष, किसी किस्मका ज़लज़ला, एक भूडोल। इस प्रकारसे कम्प आनेपर भूमि मानो उछल पड़ती है।

उत्क्षिप्तिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-क्षिप-क्तिन्-कन् टाप्। कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक गहना। यह अर्धचन्द्राकार रहती और कर्णके उपरि भागमें पहनी जाती है।

उत्क्षेप (सं॰ पु॰) उत्-क्षिप-घञ्। १ ऊर्ध्वक्षेपण, उछाल। २ दूरीकरण, फेंकफांक। ३ प्रेरण, चालान। ४ वमनकार्य, छांट, उलटी। ५ मन्दिरके ऊपरका स्थान। (त्रि॰) ६ उत्क्षेपकारक, फेंकनेवाला।

उत्क्षेपक (सं॰ त्रि॰) १ ऊर्ध्व निक्षेपकारी, उछालनेवाला। २ आज्ञा देनेवाला, जो हुक्म लगाता है। (पु॰) ३ वस्त्रको अपहरण करनेवाला, जो कपड़ेको उछालकर चुरा लेता हो।

"उत्क्षेपकग्रन्थिभेदौ करसन्दंशहीनकौ।" (याज्ञवल्क्य २।२७७)

उत्क्षेपण (सं॰ क्ली॰) उत्-क्षिप-ल्युट्। १ ऊर्ध्वक्षेपण, उछाल। २ प्रेरण, चालान। ३ वमनकार्य, छांट, उलटी। ४ उदञ्चन, सूप। ५ व्यजन, पङ्खा। ६ षोड़शपण, सोलह, पणकी एक नाप। ७ न्यायमतसे पञ्चकर्मान्तर्गत कर्मविशेष।

"उत्क्षेपणं ततोऽवक्षेपणमाकुञ्चनं तथा।
प्रसारणञ्च गमनं कर्माण्येतानि पञ्च च॥" (भाषापरिच्छेद ६)

उत्खचित (सं॰ त्रि॰) मिश्रित, मखलूत, मिला हुआ।

उत्खरिन् (सं॰ पु॰) देव विशेष।

उत्खला (सं॰ स्त्री॰) उत्-खल-अच्-टाप्। मुरा नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़। मुरा देखो।

उत्खात (सं॰ त्रि॰) उत्-खन-क्त। १ उन्मूलित, उखाड़ा हुआ। २ उत्पाटित, गिराया हुआ। ३ विनाशित, मारा हुआ। ४ खनित, खोदा हुआ। "रथेनोत्खातस्तिमितगतिना।" (शकुन्तला) (क्ली॰) ५ उत्खनन, गड्ढा।

उत्खातकेलि (सं॰ पु॰) क्रीड़ा विशेष, एक खेल। इसमें शृङ्गादि द्वारा वृष एवं गजकी भांति मृत्तिका खोदते हैं।

उत्खाता, उत्खातिन् देखो।

उत्खातिन् (सं॰ त्रि॰) १ नाशक, बरबाद करनेवाला, जो खोद डालता हो। २ उत्खननयुक्त, जिसमें गड्ढे रहें।

उत्खेद (सं॰ पु॰) उत्-खिद भावे घञ्। छेदन, काटछांट।

उत्त (सं॰ त्रि॰) उन्द क्लेदने क्त, नुदविदेति पक्षे नत्वाभावः। आर्द्र, तर, भीगा। (हिं॰) उत और उत देखो।

उत्तंस (सं॰ पु॰) उत्-तसि-अच् हलश्चेति घञ् वा।

१ कर्णभूषण, बाली, कानका गहना। २ शिरोभूषण, कलंगी।

उत्तंसिक (सं० पु०) नागविशेष।

उत्तंसित (सं० त्रि०) १ कर्णभूषणविशिष्ट, बाली पहने हुआ। २ शिरोभूषणयुक्त, कलंगी लगाये हुआ।

उत्तङ्कराई—१ मन्द्राजप्रान्तके सलेम् जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४६´ तथा १२° २४´ उ० और द्राघि० ७८° १५´ एवं ७८° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८०८ वर्गमील है। इसमें कोई ४३६ ग्राम लगते और प्राय ११०००० मनुष्य बसते हैं। हिन्दुवोंकी ही संख्या सबसे अधिक है। कुछ मुसलमान और ईसाई भी हैं। दक्षिण, पूर्व और थोड़े बहुत पश्चिम भी पहाड़ खड़े हैं। उत्तरको ओर तिरुपातूर उपत्यका है। भूमि प्रधानतः लाल और रेतीली है।

२ अपने तालुकका प्रधान नगर। यह दक्षिण-पश्चिम मन्द्राजरेलवेके जोलारपेट जङ्कशन-ष्टेशनसे कोई २४ मील दूर है।

उत्तङ्क (सं० पु०) महादेवके एक अनुचरका नाम। (हिं०) उतङ्क देखो।

उत्तट (सं० त्रि०) स्वीय तटको उत्सिक्त करनेवाला, जो अपने किनारेको सींचता हो।

उत्तप्त (सं० क्ली०) उत्-तप-क्त। १ शुष्कमांस, सूखा गोश्त। २ सन्ताप, उबाल, गर्मी। (त्रि०) ३ तप्त, तपा हुआ, गर्म। ४ सन्तप्त, जो जल गया हो। ५ परिप्लुत, तरबतर, नहाया-धोया। ६ चिन्तित, फिक्रमन्द।

उत्तभित (सं० त्रि०) उन्नमित, झुका हुआ।

उत्तम (सं० त्रि०) उत्-तमप्। १ उत्कृष्ट, श्रेष्ठ, उमदा, बढ़िया। "उत्तम मध्यम नीच लघु निज निज थल अनुहारि।" (तुलसी) २ अन्त्य, आखिरी। "उत्तमशब्दोऽन्त्यार्थः।" (सिद्धान्तकौमुदी) ३ प्रधान, खास, सबसे बड़ा। ४ प्रथम, औवल। (अव्य०) ५ अत्यन्त, निहायत, बहुत। (पु०) ६ विष्णु। ७ व्याकरणानुसार—अन्त्य पुरुष, आखिरी सीग़ा। युरोपीय इसे आदिपुरुष कहते हैं। ८ सुरुचिके गर्भजात उत्तानपादके एक पुत्र। यह ध्रुवके सौतेले भाई और प्रियव्रतके भतीजे रहे। कुवेरने इन्हें मार डाला था। ९ प्रियव्रतके पुत्र तृतीय मनु। १० छब्बीसवें व्यास। ११ जनपद विशेष। (भारत भीष्म ९अ०) यह विन्ध्यप्रदेशमें अवस्थित था। पुराणान्तरमें उत्तमर्ण और उत्तामार्ण पाठ लक्षित है। १२ अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा। यह बड़ा वीर होता है। युद्धमें उत्तम आघात खाते भी अपने सादिनको नहीं छोड़ता। (जयदत्त)

विशेषणके रूपमें समास लगनेपर उत्तम शब्द प्रायः संज्ञासे पीछे आता है, जैसे—द्विजोत्तम, सर्वोत्तम और नरोत्तम।

उत्तमगन्धा (सं० स्त्री०) मल्लिका, चमेली।

उत्तमगन्धाढ्य (सं० त्रि०) मधुर-सौरभ-विशिष्ट, मीठी खुशबूवाला।

उत्तमता (सं० स्त्री०) १ श्रेष्ठता, खूबी, बड़ाई। २ साधुशीलता, नेकचलनी, भलाई।

उत्तमताई (हिं०) उत्तमता।

उत्तमपद (सं० पु०) उच्चस्थान, ऊंचा ओहदा।

उत्तमपालैयम्—मन्द्राजप्रान्तीय मदुरा जिलेके पेरियाकुलम् तालुकका एक नगर। यह अक्षा० ९° ४८´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७७° २२´ २०´´ पू०में चिन्नामनूरसे ५ मील दक्षिण अवस्थित है। पहले उत्तमपालैयम् मदुराके एक प्राचीन पालैयम् राज्यका प्रधान स्थान था।

उत्तमपुरुष (सं० पु०) १ श्रेष्ठ मनुष्य, अच्छा आदमी। २ शाब्दिक गणका उत्तम व्यक्ति, फेलके गरदानका आदना सीगा। (First person) हिन्दीमें 'मैं' शब्द उत्तमपुरुषका द्योतक है। कर्ता कारकमें सकर्मक क्रियाके साथ प्रयोग पड़नेपर 'ने' आगम होता है। जैसे—मैंने पत्र पढ़ा था। किन्तु अकर्मक और वर्तमान तथा भविष्यत् कालकी सकर्मक क्रियाके साथ 'ने'का आगमनका निषेध है। जैसे—मैं पत्र पढ़ता हूं, मैं पत्र पढ़ूंगा, मैं आता हूं, मैं आया था और मैं आऊंगा। 'मैं'का बहुवचन 'हम' है। 'मैं'के साथ वर्तमानकालको क्रियापर 'हूं'का आगम पड़ता है, जैसे—मैं बोलता हूं। कर्मकारकमें 'मैं' का 'मुझे' आदेश हो जाता है, जो अव्यय लगनेसे अपने

अन्तका एकार खो देता है,जैसे—मुझको, मुझसे,मुझपर और मुझमें। मैंका सम्बन्धकारक 'मेरा' और 'हम'का' हमारा' है। कोई कोई समझते हैं कि—उत्तम पुरुषमें संस्कृत और अंगरेजी व्याकरण नहीं मिलता। किन्तु यह बात झूठ है। क्योंकि उत्तमका अर्थ प्रथम (First) ही है।

३ जैनशास्त्रानुसार संसारमें सबसे उत्कृष्ट ऐश्वर्यवाले पुरुष। परिवर्त्तनशील कालके एक अपेक्षासे जैनशास्त्रमें दो विभाग किये हैं—उत्सर्पिणी, और अवसर्पिणी। इन दोनों कालोंमेंसे हर एकमें तिरेसठ तिरेसठ उत्तमपुरुष हुआ करते हैं। वे इसप्रकार हैं—चक्रवर्ती १२, तीर्थंकर २४, नारायण ९, प्रतिनारायण ९, और बलभद्र ९। शलाका और चक्रवर्ती आदि शब्द देखो।

उत्तमफलिनी (सं स्त्री०) उत्तम-फल-णिनि-ङीप्। दुग्धिका, दूधी।

उत्तमभद्र—बम्बईप्रान्तके एक क्षत्रिय राजा। नासिकको एक गुफामें जो शिलालिपि मिली, उसपर यह बात लिखी है—मलयके लोगोंने एक बार स्थानीय क्षत्रियनृपति उत्तमभद्रपर चढ़ाई की थी। क्षहरात नहपान नृपतिके जामाता और दीनीक उषवदातके पुत्र इनके साहाय्यको सैन्य लेकर आगे बढ़े, जिससे शत्रु पीछे हटे और उत्तमभद्रके अधीन हुये थे।

उत्तमर्ण (सं० पु०) उत्तम-ऋणमस्य। ऋणदाता, क़र्ज़ दिहन्दा, महाजन, साहु।

उत्तमर्णिक (सं० पु०) उत्तमं देयत्वेनास्त्यस्य, ठन्। उत्तमर्ण, क़र्ज़ दिहिन्दा, मालिक।

"राज्ञाधमर्णिको दाप्यः साधिताद्दशकं शतम्।
पञ्च पञ्च शतं दाप्यः प्राप्तार्थोंह्युत्तमर्णिकः॥" (याज्ञवल्क्य २।४३)

उत्तमर्णिन्, उत्तमर्ण देखो।

उत्तमलाभ (सं० पु०) विपुल कलान्तर, बड़ा फ़ायदा।

उत्तमवारि (सं० क्ली०) १ तण्डुलोदक, चावलका पानी। २ उत्कृष्ट जल, उमदा पानी।

उत्तमवेश (सं० पु०) शिव, महादेव।

उत्तमवैद्य (सं० पु०) कृतसाङ्ग-वेदाध्ययन वैद्य, उमदा तबीब, बढ़िया डाक्टर।

उत्तमसंग्रह (सं० पु०) १ सम्यक् संग्रहण, उमदा गिरफ़्त। २ निर्जनमें पर पत्नीके साथ परस्पर आलिङ्गन उपवेशनादिरूप प्रेमालाप, दूसरेकी औरतके साथ अकेले मिलना-जुलना और हंसना बोलना।

उत्तमसाहस (सं पु०) १ मृत्युक्त दण्ड विशेष। इसमें १०००, ८००० वा १८०००० पण जुर्माना देना पड़ता है। "परस्य पतनीयाक्षेपे कृते तूत्तमसाहसम्।" (याज्ञवल्क्य) २ उत्कट दण्ड, कड़ी सज़ा—जैसे सर्वस्व हरण, अङ्गकर्तन और व्यापादन।

उत्तमा (सं० स्त्री०) उत्-तमप्-टाप्। १ उत्कृष्ट स्त्री, उमदा औरत। २ स्त्रीयादि नायिकाभेद। यह मन्दकारिणी होते भी प्रियतमके प्रति हितकारिणी रहती है। ३ दुग्धिका, दूधी। ४ मनःशिला। ५ भूम्यामलकी,भुयिं आंवला। ५ त्रिफला; आंवला, हर और बहेरा। ६ मुस्ता, मोथा। ७ शूकदोषविशेष, ज़कर बढ़ानेकी दवा लगानेसे पैदा हुई एक बीमारी। इसमें शूक और अजीर्णसे लिङ्गपर मुद्गमाषके समान रक्तपित्तकी रक्तपिड़का पड़ जाती हैं। (सुश्रुत)

उत्तमाङ्ग (सं० क्ली) उत्तमं प्रशस्तमङ्गम्, कर्मधा०। १ मस्तक, सर। मस्तक देखो। २ मुख, दहन।
"उत्तमाङ्गोद्भवाज्ज्यैष्ठ्याद्ब्रह्मणश्चैव धारणात्।" (मनु १।९३)

उत्तमाधम (सं० त्रि०) उच्च नीच, भला-बुरा, बढ़िया-घटिया, छोटा-बड़ा।

उत्तमाधममध्यम (सं० त्रि०) उच्च, नीच और मध्य, ऊंचे, नीचे और औसत दरजेवाला।

उत्तमाम्भस (सं० क्ली०) तुष्टि विशेष, एक आसूदगी। सांख्य मतानुसार यह हिंसा छोड़नेसे मिलती है। योगमें इसका नाम सार्वभौम-महाव्रत है।

उत्तमाय्य (वै० त्रि०) उठाया या देखाया जानेवाला, जो मनाया जानेवाला हो।

उत्तमारणी (सं० स्त्री०) १ इन्दीवरा। २ इन्द्रवारुणी। ३ इन्द्रचिर्भिटी। ४ योधामल्लिका, जूही।

उत्तमार्ध (सं० पु०) १ अन्तिम अर्ध वा भाग, आख़िरी अद्धा या हिस्सा। २ उत्कृष्ट अर्ध, निहायत उमदा अद्धा।

उत्तमार्ध्य (सं० त्रि०) अन्तिम वा उत्कृष्ट अर्ध सम्बन्धीय, आखिरी या उम्दा अद्धेसे ताल्लुक रखनेवाला।

उत्तमाह (सं० पु०) अन्तिम दिवस, आखिरी या उम्दा दिन।

उत्तमीय (सं० त्रि०) प्रधान, उत्कृष्ट, उम्दा, सबसे ऊंचा।

उत्तमोत्तम (सं० त्रि०) उत्कृष्टसे उत्कृष्ट, उम्दासे उम्दा, जो सबसे अच्छा हो।

उत्तमोपपद (सं० त्रि०) सर्वोत्तम, उत्कृष्ट, जिसके लिये सबसे अच्छी बात कही जा सके।

उत्तमौजस् (सं० पु०) १ दशम मनुपुत्रभेद। २ एकजन महावीर। इन्होंने कुरुक्षेत्रमें पाण्डवोंके पक्षमें रह युद्ध किया था। (भारत)

उत्तम्भ (सं० पु०) उत्-स्तम्भ-घञ्। १ स्तम्भीभाव, रोक रखनेकी हालत। २ निवृत्ति, छुट्टी। ३ अवलम्ब, सहारा।

उत्तम्भन (सं० क्ली०) उत्त-स्तम्भ-ल्युट्। १ अवलम्बन, गिरफ्त, पकड़, टेक। २ मेख, खूंटा।

उत्तम्भित (सं० त्रि०) १ सधा या टिका हुआ। २ रोका या पकड़ा गया। ३ उत्तान, खड़ा, सीधा।

उत्तम्भितव्य (सं० त्रि०) पकड़ा या रोका जानेवाला।

उत्तर (सं० क्ली०) उत्-तॄ-अप्, उत्-तरप् वा। १ प्रतिवाक्य, जवाब। "प्रश्नशेषोयदि या पृच्छा तस्य खण्डनमुत्तरम्।" (याज्ञवल्क्य) २ दोषभञ्जन वाक्य, ऐब मिटानेवाली बात। ३ जिज्ञासित विषयमें अपने मतका प्रकाश, पूछी जानेवाली बातपर अपने खयालका इज़हार। ४ किसीके आह्वान करनेपर तत् श्रवणसूचक वाक्य, किसीके पुकारने पर उसके सुन लेनेकी बात। ५ उपरि तलका आवरण, ऊपरी सतह या ढक्कन। ६ दिक् विशेष, दक्षिणके सामनेकी दिशा। ७ निम्न संख्या, मिली हुई चीज़का आखिरी हिस्सा। ८ व्यवस्थाके अनुसार प्रतिवचन, कानूनमें हद जवाब। ९ मीमांसानुसार अधिकरणका चतुर्थ अंश, हालतका चौथा टुकड़ा। १० उत्कृष्टता, अज़मत, बड़ाई। ११ फल, नतीजा, गणितमें शेष, बाकी फर्क। १२ गीत विशेष, एक गाना। (पु०) १३ शिव। १४ विराटराजके पुत्र। कौरवगणने जब विराटराजकी गो चुराये, तब ये अर्जुनको सारथी बना लड़नेको आये थे। १५ नागराज विशेष। १६ पर्वतविशेष, एक पहाड़। (त्रि०) १७ ऊर्ध्व, ऊंचा, बड़ा। १८ उत्तरीय, शिमाली। १९ प्रधान, श्रेष्ठ, खास, बढ़िया। २० वाम, बायां। २१ निम्नग, नीचे पड़नेवाला। २२ अधिक उत्तम, ज्यादा अच्छा। २३ अनन्तर पिछला। (अव्य०) २४ फलतः, आखीरको।

उत्तरकाण्ड (सं० क्ली०) १ पुस्तकका शेषांश, आखिरी किताब। २ रामायणका अन्तिम काण्ड वा पुस्तक।

उत्तरकाय (सं० पु०) शरीरका ऊर्ध्व भाग, जिस्मका ऊपरी हिस्सा।

उत्तरकाल (सं० पु०) १ भविष्यत् काल, आनेवाला वक्त। २ गौणकाल, छोटा ज़माना।

उत्तरकाशी (सं० स्त्री०) पुण्यस्थान विशेष, एक जगह। यह हरिद्वारसे उत्तर लगती और बदरीनारायणकी राहमें पड़ती है।

उत्तरकुरु (सं० पु०) जम्बूद्वीपका वर्षविशेष, कुरुवर्ष। उत्तरकुरुके सम्बन्धमें अनेक मतभेद है। अध्यापक लासेनके कथनानुसार यह जनपद तिब्बतमें ब्रह्मपुत्र नदके उभय तीर रहा। (Kart von Alt Indien) विलफोर्ड हिमालयके सानुदेशमें इसे तिब्बतका एक नगर समझते हैं। (Asiatic Researches, Vol. ix, p. 63. 67, xiv. 387) भौगोलिक सेण्टमार्टिन उत्तरकुरुका अस्तित्व नहीं मानते। उनके मतसे यह एक कल्पित स्वर्ग है। (E'tude sur la Geographie Grecque et Latine de'l Inde, 413-414) किन्तु निम्नलिखित प्रमाण देखनेसे सहजमें ही समझ पड़ता है—एतन्नामक स्थान पूर्वकालमें रहा,—

"ये के च परेण हिमवन्तं जनपदा उत्तरकुरव उत्तरमद्रा इति।" (ऐतरेयब्राह्मण ८।१४)

"उत्तरांश्च कुरून् पश्यन् पश्यंश्चैव नगोत्तमान्।
देवदानवयक्षैश्च सेवितं ह्यमृताथिभिः॥" (रामायण अरण्य ३५।१८)

महाभारतके अनुसार सुमेरुसे उत्तर नीलपर्वतके दक्षिण पार्श्व पर उत्तरकुरु अवस्थित है। (भीष्म ७।२०)

जैनोंके अरिष्टनेमिपुराणान्तर्गत हरिवंशमें लिखा है—

"नीलमन्दरमध्यस्था उत्तराः कुरवो मताः।" (५।१६६)

नील और मन्दर पर्वतके बीच उत्तरकुरु है। (विष्णुपुराण २।२।१३) अब देखना चाहिये—प्राचीन शास्त्रके अनुसार वर्तमानमें किस स्थानपर कितनी दूरतक उत्तरकुरु निरूपित है।

"ततोऽर्वं समुत्तीर्य कुरुणाप्युत्तरान् वयम्।
क्षणेन समतिक्रान्ता गन्धमादनमेव च॥" (हरिवंश १७०।१३)

'समुद्रके बाद उत्तरकुरु उतर हमने क्षणकालमें गन्धमादनको भी लांघा था।' उक्त श्लोकसे अनुमान होता है—समुद्रतीरसे गन्धमादन पर्वत पर्यन्त समुदाय भूखण्ड पूर्वकालमें उत्तरकुरु वा कुरुवर्ष कहाता था।

राजतरङ्गिणीमें लिखा है—काश्मीरराज ललितादित्यके काम्बोज, भूःखार*, दरद, स्त्रीराज्य प्रभृति जीत लेनेपर उत्तरकुरुवासियोंने भयसे पर्वतप्रदेशका आश्रय लिया।

"भूःखाराः शिखरश्रेणी यन्ति: सन्त्यज्य वाजिनः।
कुरुभावं तदुत्कण्ठां निर्युद्धृत्य हयाननाम्॥
चिन्ता न दृष्ट्वा मोहानां वक्ते प्रकृतिपाण्डुरे।
तस्य प्रतापी दरदां न सेहेऽनारतं मधु॥
स्त्रीराज्यदेवास्तस्याग्रे वीचरा कम्पादिविक्रियाम्।
उत्तराकुरवोऽविचं स्त्रवाज्जन्मपादपान्॥" (४।१६७-७५)

उक्त श्लोकद्वारा स्त्रीराज्यके बाद ही उत्तरकुरु निर्दिष्ट है। स्त्रीराज्य गन्धमादनसे उत्तरपश्चिम लगता है, जिसका वर्तमान स्थान तिब्बतका पश्चिमांश है।

टलेमिने उत्तरकोर्हे (Ottarokorrha) नामक एक जनपदकी बात कही है। वह संस्कृत उत्तरकुरु शब्दका रूपान्तरमात्र है। उनके मतसे उक्त स्थान सेरिका (चीन)का कियदंश है। (Ptolemy, Geog. vi. 16)

रामायणके किष्किन्ध्याकाण्डमें लिखा है—

"तं तु देशमतिक्रम्य शैलोदा नाम निम्नगा।
उभयोस्तीरयोस्तस्य कीचका नाम वेणवः॥
ते नयन्ति परं तीरं सिद्धान् प्रत्यानयन्ति च।
उत्तराः कुरवस्तत्र कृतपुण्यप्रतिश्रयाः॥" (४३।३७-३८)

उस स्थानको लांघते शैलोदा नाम्नी नदी मिलती है। उसके उभय तीरपर कीचक नामक वेणु है। सिद्ध उसी वेणु द्वारा नदीके पूर्व और परपार आते-जाते हैं। उत्तरकुरु उसी नदीके निकट है। वहां पुण्यवान् व्यक्ति रहते हैं।

रामायणोक्त शैलोदा नदीका नाम महाभारतमें किसी किसी स्थानपर शिला लिखा है। प्राचीन ग्रीकों और रोमकोंने सिलिस् (Silis) नामकी एक नदी लिखी है। उसके साथ महाभारतकी शिला नदीका विशेष सादृश्य आता है। आजकल सिलिस् नदीको जक्षर्तेश वा सरीकुल कहते हैं। (Ukert Geographie der Griechen und Romer, Vol. iii. 2, p. 238) सरीकुल नदी आरल ह्रदमें गिरी है। युरोपीय भूवेत्ता कहते हैं—पूर्वकालमें आरल और कास्पियसागर एकत्र मिले थे। पाश्चात्य पुरातत्त्ववित् ष्ट्राबोके मतसे वर्तमान कास्पियसागर पूर्वकालमें उत्तरमहासागर तक विस्तृत रहा। रामायणमें लिखा है—उत्तरकुरुके बाद उत्तर-समुद्र है।

"तमतिक्रम्य शैलेन्द्रमुत्तरः पयसांनिधिः।" (किष्किन्ध्या ४३।५४)

ब्रह्माण्डपुराणके मतमें भी इस स्थानसे उत्तर ऊर्मि-समाकुल समुद्र है—

"उत्तराणां कुरूणान्तु पार्श्वे ज्ञेयस्तदुत्तरः।
समुद्रः सोर्मिमालीक्य नागासुरनिषेवितान्॥" (५० अ०)

उक्त प्रमाणसमूह द्वारा स्पष्ट ही समझ पड़ता है—पूर्वकालमें उत्तरकुरु कास्पिय-सागरके दक्षिण तीरसे गन्धमादन पर्वतके उत्तरांश तक विस्तृत था।

रामायण और महाभारतके मतमें यह स्थान मणिमय और काञ्चनकी बालुकासे सम्पन्न है। स्थान स्थानमें हीरक, वैदूर्य और पद्मरागके तुल्य रमणीय भूमिखण्ड हैं। यहां कामफलप्रद वृक्ष सकलके मनोरथ पूर्ण करते हैं। क्षीरी नामक वृक्षसे क्षीर टपकता और फलके गर्भमें वस्त्र तथा आभरण उपजता है। यहां पुष्करिणी सकल पङ्कसे शून्य और मनोरम है। इसीसे वह सर्वदा सुखस्पर्श रहती है। स्त्री-पुरुष प्रियदर्शन और शुक्लवंशसंभूत हैं। स्त्री अप्सरा-सदृश देख पड़ती हैं। सब लोग क्षीरी वृक्षका अमृत-

* भूःखारका वर्तमान नाम बोखारा है। यह तातारराज्यके अन्तर्गत है।

सदृश क्षीर पीते हैं। चक्रवाक और चक्रवाकीकी तरह दम्पती एक कालमें जन्म ले समभावसे बढ़ते हैं। वे एकादश सहस्र वत्सर जीते और एक दूसरेको कभी नहीं छोड़ते। मरनेपर भारुण्ड पक्षी उन्हें उठा गिरिदरीमें फेंक देते हैं।* (महाभारत भीष्म ७अ०, रामायण किष्किन्धा ४३ सर्ग)

उत्तरकोशल—प्राचीन जनपदविशेष, एक पुराणा मुल्क। वर्तमान अयोध्याप्रदेशके उत्तरांशका पहले यही नाम था।

उत्तरकोशला (सं० स्त्री०) उत्तरकोशलकी राजधानी अयोध्या नगरी।

उत्तरकेन्द्र (सं० पु०) पृथिवीका उत्तर प्रान्त, ज़मीन्का शिमाली मुल्क।

उत्तरक्रिया (सं० स्त्री०) १ उत्तरकालका कर्तव्य कर्म, पिछले वक्तका काम। २ सांवत्सरिक श्राद्धादि।

उत्तरखण्ड (सं० क्ली०) १ अन्तिम अध्याय, आखिरी बाब। २ पद्म, गरुड़ और शिवपुराणका अन्तिम भाग।

उत्तरखण्डन (सं० क्ली०) प्रतिक्षेप, प्रत्याख्यान, तरद्दीद, काट, झुठलाव।

उत्तरगुण (सं० पु०) जैनशास्त्रके अनुसार मुनिके मूल गुणको बचानेवाला गुण।

उत्तरङ्ग (सं० क्ली०) उत्तरमङ्गम्, कर्म० शकन्धा०। १ द्वारोर्ध्वस्थ दारु, दरवाजेके ठाठपर लगनेवाली लकड़ीकी मेहराब। (त्रि०) २ उद्गत तरङ्ग, लहर लेनेवाला। "अपामिवाधारमनुत्तरङ्गम्।" (कुमार ३।४८)

उत्तरच्छद (सं० पु०) शय्याके उपरि आस्तरणका वस्त्र, बिछौनेके ऊपरकी चादर।

उत्तरज (सं० त्रि०) पश्चाज्जात, जो पीछे पैदा हो।

उत्तरज्या (सं० स्त्री०) वृत्तखण्डका सुप्रतिष्ठित ज्यापिण्ड, कौसका माहिर जैब ज़ाविया। सुप्रतिष्ठित ज्यापिण्ड द्वारा अर्धीकृत गुणके द्वितीय अर्धांशकी भी यही संज्ञा है।

उत्तरज्योतिष (सं० पु०) भारतका पश्चिमोत्तरप्रान्तीय जनपद विशेष। "कृत्स्नं पञ्चनदञ्चैव तथैवामरपर्वतम्। उत्तरज्योतिषञ्चैव तथा दिव्यकटं पुरम्॥" (भारत, सभा, ३१ अ०)

* प्लिनिने अत्तकोरस् नामक एक जनपद लिखा है। उसके साथ संस्कृत उत्तरकुरुका कितना ही सादृश्य लक्षित है।

उत्तरण (सं० क्ली०) उत्-तॄ-ल्युट्। १ नद्यादिके पारको जाना, उतराई। २ किसी स्थानमें उपस्थित होना, पहुंच।

उत्तरणस्थान (सं० क्ली०) सराय, अड्डा, पड़ाव, मुक़ाम, उतरनेकी जगह।

उत्तरतन्त्र (सं० क्ली०) सुश्रुतके वैद्यक ग्रन्थका अन्तिम भाग।

उत्तरतर (सं० त्रि०) अधिक उच्च दूर वा व्यवच्छिन्न, ज्यादा ऊंचा, जो बहुत हटा हो।

उत्तरतस् (सं० अव्य०) १ उत्तरके प्रति, बाईं ओर ऊपर। २ पश्चात्, पीछे।

उत्तरतापनीय (सं० पु०) नृसिंहतापनीयोपनिषद्का शेष भाग।

उत्तरत्र (सं० अव्य०) पश्चात्, पीछे, अखीरको।

उत्तरदाढ (सं० पु०) उत्तर देनेकी क्षमता रखनेवाला, जवाबदिह, जिम्मेवार, जिसे भलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदायक (सं० त्रि०) उत्तरं ददाति, उत्तर-दा-ण्वुल्। १ प्रत्युत्तरदाता, सवालका जवाब लगानेवाला। २ प्रभुके समक्ष उत्तर प्रदानसे निज दोषके गोपनकी चेष्टा करनेवाला, जो मालिकके सामने जवाब लगा अपना ऐब छिपानेकी कोशिश करता हो।

"परपुंसि रता नारी भृत्यश्चोत्तरदायकः।
ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः॥" (हितोपदेश)

उत्तरदायित्व (सं० क्ली०) उत्तर देनेका अधिकार, जवाबदिही, जिम्मेवारी।

उत्तरदायी (सं० त्रि०) उत्तर देनेका अधिकार रखनेवाला, जवाबदिह, जिम्मेवार, जिसे भलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदिक् (सं० स्त्री०) दिक् विशेष, उदीची, शिमाल।

उत्तरदिक्काल (सं० पु०) रविवारका उत्तरदिग्वर्ती काल।

उत्तरदिक्पाश (सं० पु०) वृहस्पतिवारको दिन उत्तरदिक्में यात्रा युद्धादिके निषेधका ज्ञापक पाशचक्र।

उत्तरदिक्‌स्थ (सं० त्रि०) उत्तर दिक्‌पर अवस्थित, उत्तरीय, शिमाली, जो उत्तरकी ओर हो।

उत्तरदिगीश (सं० पु०) १ कुबेर। २ बुद्ध। यह दोनों देवता उत्तरदिक्‌के अधिपति हैं।

उत्तरदिग्बली (सं० पु०) उत्तरस्यां दिशि बली। १ गुरु। २ चन्द्र। ये दोनों ग्रह उत्तरकी ओर बलवान् होते हैं।

उत्तरदिश्, उत्तरदिक् देखो।

उत्तरदेश (सं० पु०) उत्तरकी ओरका देश, मुल्क शिमाली, ऊंचा देश।

उत्तरधेय (सं० त्रि०) पश्चात् किया जानेवाला, जो पीछे बन सके।

उत्तरनाभि (सं० पु० स्त्री०) यज्ञके उत्तरका कुण्ड, जो कुण्ड यज्ञमें उत्तरकी ओर बना हो।

उत्तरपक्ष (सं० पु०) १ विचारपक्ष, प्रत्याख्यान, तरदीद, काट, झुठलाव। यह पूर्वपक्षके सिद्धान्तको काट डालता है। २ उत्तर विकल्प, पहली बहसका जवाब। ३ कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख। ४ उत्तरीय वा वाम पार्श्व, शिमाली या बाईं ओर।

उत्तरपक्षता (सं० स्त्री०) फल, आशय, नतीजा, मतलब।

उत्तरपक्षत्व (सं० क्लो०) उत्तरपक्षता देखो।

उत्तरपट (सं० पु०) उपरिस्थ वस्त्र, ऊपरका कपड़ा। उपरना, ओढ़नी, चादर वग़ैरहको उत्तरपट कहते हैं।

उत्तरपथ (सं० पु०) उत्तरीय मार्ग, देवयान, शिमाली राह, जो गली उत्तरको निकल गई हो।

उत्तरपथिक (सं० त्रि०) उत्तरः तद्देशभवः पन्थानम्, कन्। पथः कन्। पा ५।१।७५। उत्तरदेशवासी, शिमालका रहनेवाला।

उत्तरपद (सं० क्लो०) १ समासका शेष पद, मिले हुये लफ़्ज़का आख़िरी हिस्सा। २ समासयोग्य पद।

उत्तरपदिक (सं० त्रि०) समासके अन्तिम पदसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो मिले हुये लफ़्ज़के आख़िरी टुकड़ेसे ताल्लुक़ रखता हो।

उत्तरपदकीय, उत्तरपदिक देखो।

उत्तरपर्वत (सं० पु०) उत्तरदिक्‌स्थ पर्वत, शिमाली पहाड़।

उत्तरपश्चार्ध (सं० पु०) उत्तर और पश्चिमका अर्ध, शिमाली और मग़रबी अद्धा।

उत्तरपश्चिम (सं० त्रि०) उत्तर एवं पश्चिम दिक्‌स्थ, शिमाली और मग़रबी।

उत्तरपाड़ा—बङ्गाल प्रान्तके हुगली ज़िलेका एक नगर। यह बालीसे उत्तर हुगली नदीपर अवस्थित है। म्युनिसपलिटी बड़ी है। यहां गवरनमेण्ट स्कूल चलता है। जयकृष्ण मुखोपाध्याय नामक एक बड़े ज़मींदारने यहां सर्व साधारणके पढ़नेका एक विराट् पुस्तकालय स्थापित कराया है। उसमें प्रान्तीय स्थानवर्णनके अच्छे अच्छे ग्रन्थ रखे हैं। सरकारी चिकित्सालय भी विद्यमान है।

उत्तरपाद (सं० पु०) चतुष्पाद व्यवहारके अन्तर्गत द्वितीय पाद, अदालती कार्यवाईका एक हिस्सा यह जवाब या बचावसे सम्बन्ध रखता है। प्रत्येक अभियोगमें चार विभाग पड़ते हैं।

"पूर्वपक्षः स्मृतः पादो द्वितीयश्चोत्तरः स्मृतः।" (वृहस्पति)

उत्तरपुरस्तात् (सं० अव्य०) उत्तर-पश्चिमाभिमुख, शिमाल और मग़रिबकी ओर।

उत्तरपूर्व (सं० त्रि०) उत्तर एवं पूर्व दिक्‌स्थ, शिमाली और शरक़ी। २ उत्तरको पूर्व समझनेवाला, जो शिमालको मशरिक़ ख़याल करता हो। (पु०) ३ ईशान कोण।

उत्तरप्रच्छद (सं० पु०) तूलिकासंस्तर, रज़ाई, गुदड़ी।

उत्तरप्रत्युत्तर (सं० क्लो०) १ विवाद, झगड़ा, बहस। २ अभियोगका हेतु उत्तरवाद, क़ानूनी बहस, जवाबपर जवाब।

उत्तरप्रोष्ठपदयुग (सं० क्लो०) युग-वत्सरभेद। इसमें नन्दन, विजय, जय, मन्मथ और दुर्मुख वत्सर पड़ता है।

उत्तरप्रोष्ठपदा (सं० स्त्री०) उत्तरभाद्रपद देखो।

उत्तरफल्गुनी (सं० स्त्री) उत्तरा फलति, फल-उनन्-गुक्, गौरादित्वात् ङीष् फल्गुन शब्दात् स्वार्थे

अण्। द्वादश नक्षत्र, बारहवां मसकन् कमरी। (B. Leonis) इसका रूप दक्षिणोत्तर मिलित पर्यङ्काकृति तारकाद्वय होता है। अर्यमा अधिष्ठात्री देवता है। उत्तरफल्गुनी नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दाता, दयालु, सुशील, कीर्तिमान्, सुमति, श्रेष्ठ, धीर और अत्यन्त मृदुस्वभाव होता है। इसके प्रथममें सिंह और उत्तर पादत्रयमें कन्या राशि पड़ता है।

उत्तरफाल्गुनी, उत्तरफल्गुनी देखो।

उत्तरभाद्रपद (सं० पु०) षड्विंश नक्षत्र, छब्बीसवां मसकन् कमरी (a Andromedœ)। इसका पर्याय प्रोष्ठपदा और देवता अहिर्बुध्न है। यह पर्यङ्करूप अष्टतारात्मक होता है। इस नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य धनी, कुलीन, कार्यकुशल, राजमान्य, बलवान्, महातेजस्वी, सत्कर्मकारी और बन्धुभक्त निकलता है। (स्त्री०) टाप्। उत्तरभाद्रपदा।

उत्तरमन्द्र (सं० पु०) उच्च:स्वरसे मन्द मन्द गानेकी रीति, ज़ोरसे धीरे-धीरे गानेका तरीका। यह षड्ज-ग्रामकी मूर्छना है। इसमें स रि ग म प ध नि स्वर क्रमश: आगेको बढ़ते जाते हैं। (स्त्री०) उत्तरमन्द्रा।

उत्तरमात्र (सं० क्ली०) केवल उत्तर, सिर्फ जवाब।

उत्तरमानस (सं० क्ली०) मानसके उत्तरस्थ तीर्थ विशेष।

"कालोदकं नन्दिकुण्डं तथा चोत्तरमानसम्।
अभ्येत्य योजनशतादश्रूयहा विप्रमुच्यते॥" (भारत अनु० २५ अ०)

उत्तरमीमांसा (सं० स्त्री०) उत्तरस्य वेदान्तभागस्य उपनिषद्रूपस्य मीमांसा। वेदान्त, वेदके द्वितीय भाग ज्ञानकाण्डका विचारमूलक ग्रन्थ, ब्रह्मसूत्र। वेदान्त देखो।

उत्तररहित (सं० त्रि०) उत्तरसे शून्य, ला जवाब, जो जवाब न रखता हो।

उत्तरराढ़—राढ़देशका उत्तरांश। वर्तमान बङ्गाल-प्रान्तका वर्द्धमान, मुर्शिदाबाद और वीरभूम ज़िला पूर्वकालमें उत्तरराढ़ नामसे ख्यात था। राढ़ देखो।

उत्तरराढ़ी—उत्तरराढ़वासी। १ बङ्गदेशीय कायस्थोंकी एक श्रेणी। जो कायस्थ राढ़के उत्तर अंशमें रहे, वेही इस नामसे विख्यात हुये। २ चौबीस-परगनेके लोहारोंकी एक श्रेणी। ३ खेती करनेवाले धोबियों और नाइयोंकी एक श्रेणी। ४ बङ्गदेशीय हालिक कैवर्तोंकी एक श्रेणी। ५ मोचियोंकी एक श्रेणी।

उत्तरलक्षण (सं० क्ली०) प्रकृत उत्तरका प्रकाश, असली जवाबकी झलक। (त्रि०) २ वाम दिक् चिह्नित, बाईं ओर निशान् रखनेवाला।

उत्तरलोमन् (सं० त्रि०) ऊपरी या बाहरी ओर घुमावदार बाल रखनेवाला, जिसके बाल ऊपर या बाहरको घूमे रहें।

उत्तरवयस् (सं० क्ली) जोवनके पश्चाद् वर्ष, जिन्दगीके पिछले साल।

उत्तरवल्ली (सं० स्त्री०) दो अध्यायमें विभक्त कठोपनिषद्का द्वितीय भाग।

उत्तरवस्ति (सं० पु०) मूत्राशयमें स्नेह पहुंचानेका सुश्रुतोक्त एक यन्त्र। सुश्रुतने कहा है—यह यन्त्र रोगीकी चतुर्दश अङ्गुलि परिमित दीर्घ, और अग्र भागमें मालतीपुष्पके वृन्त समान तथा क्षुद्र छिद्रयुक्त होगा। इसमें स्नेहका परिमाण रहेगा। रोगीका वयस पचीस वत्सरसे कम ठहरने पर विचारसङ्गत स्नेहकी मात्रा रखना चाहिये। स्त्रीके अपत्य पथसे चार अङ्गुलि अन्तर पर मूत्रनाली लगी है। उसके मुद्ग तुल्य छिद्रका परिमाण दश अङ्गुलि दीर्घ है। उत्तरवस्ति लगानेको अपत्यपथमें चार और मूत्र-नालीमें दो अङ्गुल पिचकारी देना चाहिये। अल्प वयस्का कन्याके एक ही अङ्गुल यथेष्ट है। ऐसे स्थलमें मेषके वा शूकरका वस्ति व्यवहार्य हैं। अभावमें पक्षीके गलदेशका चर्म चलता है। वह भी न मिलनेपर हरिणके पद या अन्य किसी प्रकारका कोमल चर्म वस्ति बनानेमें लगता है। प्रथम रोगीको स्निग्ध और स्वेद प्रयोग कर घृतदुग्धसह यथाशक्ति यवागू पिलाना चाहिये। फिर जानु परिमित स्थान-पर पृष्ठ टेक (उपविष्ट भावसे) और वस्ति तथा मूर्धि देशमें उष्ण तैल लेप मेढ्रनलको दृढ़ और ऋजु करे। उसके बाद मेढ्रमें शलाका द्वारा अन्वेषणकर छ: अङ्गुलि परिमाणसे अल्प अल्प चलाये। वस्ति लगा नल फिर धीरे धीरे निकालना चाहिये। स्नेह

टपक पड़नेसे अपराह्नको दुग्ध,यूष वा मांसरसका परिमित मात्रामें भोजन कराये। इसी नियमसे तीन या चार वस्ति लगाये। दूषित शुक्र वा शोणित, मूत्राघात, मूत्रदोष, योनिदोष, शुक्रदोष, शर्कराश्मरी, वस्तिशूल, वङ्क्षणशूल, मेढ्रशूल, समस्त मेहरोग और अन्यान्य उत्कट वस्तिजात रोग उत्तरवस्तिसे आरोग्य हो जाते हैं।

उत्तरवस्त्र (सं॰ क्ली॰) उत्तरीय, चादर।

उत्तरवादिन् (सं॰ त्रि॰) उत्तर-वद-णिनि। १ प्रतिवाद्य, मुद्दालह।

"साक्षिषूभयतः सत्सु भवन्ति पूर्ववादिकः।
पूर्वपक्षे ऽधरीभूते भवन्त्युत्तरवादिनः॥" (याज्ञवल्क्य २।१७)

२ प्रतिवादी, जवाब देनेवाला। ३ अन्यसे पश्चात्स्वत्व रखनेवाला, जो दूसरेसे पीछे हक रखता हो।

उत्तरवायु (सं॰ पु॰) उत्तरदिग्भव मारुत, शिमाली हवा, उतराही। यह शीत, स्निग्ध, दोष प्रकोपकर, क्लेदन, प्रकृतिस्थको बलद, मृदु और क्षतक्षीण विषार्तके लिये अधिक गुणकर होता है। (मदनपाल)

उत्तरवारुणी (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रवारुणी, इन्द्रायन।

उत्तरवारेन्द्र (सं॰ पु॰) १ वङ्गदेशका उत्तरांश अर्थात् दिनाजपुर और रङ्गपुर ज़िला। २ वङ्गदेशके वारेन्द्र ब्राह्मणोंकी एक शाखा।

उत्तरवेदि (सं॰ स्त्री॰) १ वेदोक्त वेदीका एक भेद। "द्वे वेदी द्यावपृथ्वी भवतः। न उत्तरस्यामेव वेद्यां उत्तरवेदिं उपकिरति न दक्षिणस्याम्।" (शतपथब्राह्मण ३।५।१।६)

२ कुरुक्षेत्रके समन्तपञ्चक तीर्थका अपर नाम।

"तरन्तुकारन्तुकयोर्यदन्तरं रामह्रदानाञ्च मचक्रुकस्य च।
एतत् कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकं पितामहस्योत्तरवेदिरुच्यते॥"
(भारत वन ८३ अ॰)

तरन्तुक, अरन्तुक, रामह्रद और मचक्रुकका मध्यवर्ती स्थान कुरुक्षेत्र-समन्तपञ्चक कहाता है, जो पितामहकी उत्तरवेदि समझा जाता है।

उत्तरसक्थ (सं॰ क्ली॰) सक्थिका उत्तर भाग, बाईं रान।

उत्तरसाक्षिन् (सं॰ त्रि॰) १ प्रतिवादीका साक्षी, मुद्दालहका गवाह।

"साक्षिनामपि यः साक्ष्यं स्वपक्षं परिभाषताम्।
श्रवणाच्छ्रावणाद्वापि स साक्ष्युत्तरसंज्ञकः॥" (नारद)

२ अन्यके कथन पर साक्ष्य देनेवाला, जो दूसरेकी बात सुनकर गवाही देता हो।

उत्तरसाधक (सं॰ त्रि॰) १ शेष भागको सम्पूर्ण करनेवाला, जो बचे हुये कामको पूरा करता हो। २ सहायक, मददगार। ३ उत्तरको प्रतिष्ठित करनेवाला, जो जवाब लगाता हो।

उत्तरहनु (वै॰ पु॰) हनुका उपरि भाग, जबड़ेका ऊपरी हिस्सा। (अथर्व ६।७।२)

उत्तरा (सं॰ स्त्री॰) १ विराट्राजकी कन्या। अभिमन्युके साथ इसका विवाह हुआ था। अभिमन्यु देखो। (अव्य॰) २ उत्तरकी ओर, शिमालकी तर्फ़।

उत्तराखण्ड (सं॰ क्ली॰) उत्तरीय विभाग, शिमाली हिस्सा। यह भारतमें हिमालयके समीप है।

उत्तरात् (सं॰ अव्य॰) वाम ओरसे, बाईं तर्फ़ पर।

उत्तरात्तात् (वै॰ अव्य॰) उत्तरसे, शिमालकी तर्फ़।

उत्तराधर (सं॰ त्रि॰) १ उच्चनीच, ऊंचा-नीचा, बड़ा छोटा। "उत्तराधरा इव भवन्तो यन्ति।" (शतपथब्राह्मण ५।३।४।२१) (क्ली॰) २ ऊर्ध्व एवं निम्न ओष्ठ, नीचे ऊपरका होंठ।

उत्तराधिकार (सं॰ पु॰) सम्पत्तिका क्रमिक स्वत्व, मालकी सिलसिलेवार वरासत, बपौती।

उत्तराधिकारिता (सं॰ स्त्री॰) उत्तराधिकारिका स्वत्व, सिलसिलेवार वरासत।

उत्तराधिकारित्व (सं॰ क्ली॰) उत्तराधिकारिता देखो।

उत्तराधिकारिन् (सं॰ त्रि॰) पूर्वस्वामीके अभावमें धनादिके अधिकारी पुत्र प्रभृति, वारिस। इस देशमें स्मृतिके मतसे किसी व्यक्तिके मरने पर प्रथम पुत्र, उसके अभावमें पौत्र और उसके भी अभावमें प्रपौत्र पुत्रकी भांति समान अधिकारी होता है। प्रपौत्र पर्यन्त न रहनेसे पत्नी, उसके अभावमें स्वामिकुल और उसके भी अभावमें पितृकुल अधिकार पाता है। इस धनको स्त्री जीते भी भोगेगी, किन्तु निज स्त्रीधनकी भांति दे-ले न सकेगी। उसके अभावमें उसकी कुमारी, उसके अभावमें वाग्दत्ता और उसके भी अभावमें विवाहिता (पुत्रवती)को उत्तराधिकार मिलता है।

(कन्या, पुत्रहीना और विधवा अधिकारिणी नहीं होती।) विवाहिता दुहिताके अभावमें दौहित्र अधिकारी होता अभावमें उसके पिताका स्वत्व है। पिताके न रहनेसे माता और उसके भी अभावमें भ्राता उत्तराधिकारी है। प्रथम सोदर, सोदर न होनेसे वैमात्रेयको अधिकार दिया जाता है। सोदरके मरनेसे उसका पुत्र, उसके अभावमें वैमात्रेय-भ्रातृपुत्र उत्तराधिकारी होता है। सोदरके मातृविषयमें प्रथम अपने सोदर, उसके अभावमें वैमात्रेयका ग्रहण है। इसीप्रकार विमाताके विषयमें प्रथम विमातृपुत्र, उसके अभावमें उसका असंसृष्ट पुत्र लिया जाता है। भ्राताके अभावमें भ्रातृपुत्र और उसके भी अभावमें वैमात्रेय-भ्रातृपुत्र अधिकार पा सकता है। भ्रातृपुत्रके अभावमें भ्रातृपौत्र है। उसके अभावमें पितृदौहित्र अर्थात् निज भगिनीपुत्र वा वैमात्रेय भगिनीपुत्र, उसके अभावमें पितामह, उसके अभावमें पितामही. उसके अभावमें पिताका सहोदरभ्राता, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय-भ्राता, उसके अभावमें पिताका सहोदरपुत्र, उसके अभावमें पिताका सहोदर-पौत्र, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय-पुत्र, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय पौत्र इत्यादि अधिकारी होता है। पिताके कुलमें कोई न रहनेसे पितामहदौहित्र, उसके अभावमें प्रपितामह-दौहित्र, उसके अभावमें प्रपितामह और उसके भी अभावमें प्रपितामहीको उत्तराधिकार मिलता है। प्रपितामहीके अभावमें पितामहका सहोदर वा वैमात्रेय-भ्राता पुत्रपौत्रादि क्रमसे अधिकारी हैं। इसीप्रकार पिण्डदगणके अभावमें मातामह, मातुल और मातुलपुत्र क्रमान्वयसे उत्तराधिकार पाता है। मातुल-पुत्रके अभावमें अधस्तन सगोत्रीय, आहारदाता प्रभृति एक दूसरेके अभावमें उत्तराधिकारी होते हैं। उनके अभावमें ऊर्ध्वतन सगोत्रीय धनी, दत्त अन्न-भुक्, वृद्धप्रपितामहादि पुत्रपौत्रादि क्रमसे अधिकार पाते हैं। उनके अभावमें चतुर्दश पुरुषके ज्ञातिसम्पर्कीय अधिकारी हैं। उभयकुलमें कोई न रहनेसे धनीका उत्तराधिकार गुरु, उसके अभावमें शिष्य, उसके अभावमें सतीर्थ और उसके भी अभावमें एकग्राम-भुक्त अधिवासीको मिलता है। ऐसा कोई न रहनेसे राजा उत्तराधिकारी है। (दायभाग)

उत्तरान्वित (सं० त्रि०) उत्तराको साथ लिये हुआ।

उत्तरापथ (सं० पु०) उत्तरा उत्तरस्यां पन्थाः, अच्। भारतवर्षका उत्तरस्थित देश, आर्यावर्त्तका उत्तरांश।

"उत्तरापथदेशस्य रचितारो महीचितः।" (हरिवंश)

उत्तराफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी देखो।

उत्तराभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद देखो।

उत्तराभास (सं० पु०) दुष्ट उत्तर, खराब जवाब, जो उत्तर ठीक न हो। स्मृतिने इसे ग्यारह प्रकारका लिखा है। यथा—१ सन्दिग्ध, शङ्कित; जैसे कोई अभियोग आनेपर कहे—मुझे स्मरण नहीं, मैंने सौ रुपये लिये या पैसे पैसे। २ प्रकृतसे अन्यत्, असलीसे दूसरा—जैसे मैंने सौ रुपये नहीं सौ पैसे लिये हैं। ३ अत्यल्प, निहायत कम—जैसे मैंने सौ नहीं, पांच रुपये लिये हैं। ४ अति भूरि, बहुत ज्यादा—जैसे मैंने सौ नहीं, दो सौ रुपये लिये हैं। ५ पक्षैकदेशव्यापी—जैसे मैंने सुवर्ण और वस्त्र दोनों नहीं, केवल सुवर्ण लिया है। ६ व्यस्तपद, जैसे मैंने सुवर्ण नहीं लिया, उलटा मारा गया हूं। ७ अव्यापी, बेसिर पैर। ८ निगूढ़, मैंने नहीं—किसी दूसरेने इनसे ऋण लिया होगा। ९ आकुल—जैसे मैंने रुपये लिये तो थे, किन्तु अब देने नहीं। १० व्याख्यागम्य, समझानेकी जरूरत रखनेवाला। ११ असार, जैसे मैंने व्याज देते भी रुपया नहीं लिया।

उत्तराभासता (सं० स्त्री०) उत्तरकी अपर्याप्तता, जवाबकी कमी।

उत्तराभासत्व (सं० क्ली०) उत्तराभासता देखो।

उत्तरायण (सं० क्ली०) उत्तरा उत्तरस्यां अयनं सूर्यादेः, णत्व्। पूर्वपदात् संज्ञायामगः। पा ८।४।३। सूर्यका उत्तर दिग् गमनकाल, मकरसंक्रान्तिसे छः मास।

"भानोर्मकरसंक्रान्तेः षण्मासा उत्तरायणम्।" (सूर्यसिद्धान्त)

"शिशिरश्च वसन्तोऽपि ग्रीष्मः स्यादुत्तरायणे।" (हारीत १।४ अ०)

उत्तरायणमें शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म ऋतु पड़ता है।

उत्तरायणान्तवृत्त (सं० क्ली०) सूर्यके उत्तरवाली गतिकी

सीमानिर्णायक रेखा, जो सतर आफ़तावके शिमाल जानेकी चाल ठहराती हो। (Tropic of Cancer)

उत्तरायणी (सं० स्त्री०) सङ्गीतकी मूर्च्छनाका एक भेद।

उत्तरारणी (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व अरणि। इसीको काटनेसे यज्ञीय प्रमन्थ बनता है।

उत्तरार्थ (सं० त्रि०) निम्नलिखित विषयके अर्थ, तफ़सील जैलके लिये।

उत्तरार्ध (सं० क्ली०) उत्कृष्टमर्धम्। १ देहका उपरिभाग, जिस्मका ऊपरी हिस्सा। २ शेषार्ध, आखिरी अद्धा। "मध्ये नैवोत्तरार्धे नान्यमवेक्षते।" (शतपथ-ब्राह्मण १।२।१।१३) ३ दूरतर अन्त, ज़्यादा दूरका सिरा। ४ उत्तरका अर्ध, बायां अद्धा।

उत्तरार्ध्य (वै० त्रि०) उत्तरदिक्स्थ, शिमालकी ओर पड़नेवाला।

उत्तरावत् (वै० त्रि०) विजयी, फ़तेहमन्द, जीतनेवाला।

उत्तराशा (सं० स्त्री०) उत्तर दिक्, शिमाल।

उत्तराशाधिपति (सं० पु०) उत्तर दिक्के स्वामी, कुवेर।

उत्तराशापति, उत्तराशाधिपति देखो।

उत्तराश्मन् (सं० पु०) १ पार्वतीय देश विशेष, एक पहाड़ी मुल्क। २ पार्वतीय नद विशेष, एक पहाड़ी दरया। (राजतरङ्गिणी ४।१५७)

उत्तराषाढ़ा (सं० स्त्री०) उत्तरा-आषाढ़ा। एकविंश नक्षत्र। इसका रूप सूर्यके समान होता है। यह दो तारा युक्त है। अधिदेवता विश्व हैं। किसीके मतमें यह आठ तारका रखता और गजके दन्तवत् लगता है। इस नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दाता, दयावान्, विजयी, विनीत, सत्कर्मी, धनशाली, स्त्री-पुत्रयुक्त और अत्यन्त सुखी निकलता है।

उत्तरासङ्ग (सं० पु०) ऊर्ध्वे आसज्यते, उत्तर-आ-सञ्ज-घञ्। उत्तरीयक, ओढ़नी, चादर, पिछौरी, ऊपरी या बाहरी कपड़ा।

उत्तराह (सं० पु०) उत्तर-अहः-टच्। परदिन, आगे आनेवाला रोज़, कल।

उत्तराहि (सं० अव्य०) उत्तरसे, शिमालसे।

उत्तरिका (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया। भरतने राजगृहसे अयोध्या आते समय समतीर्थ नामक ग्राममें इस नदीको पार किया था। उत्तरगा पाठान्तर भी लक्षित है। (रामायण अयोध्या ७१।१४)

उत्तरिणी (सं० स्त्री०) उत्तम अरणी, बढ़िया पाकर। यह कटुक, शीत, चक्षुहितकर, लघु, उष्ण, स्निग्ध, सारक, तुवर, व्रणरोपण एवं सुखप्रसवकर होती और कास, व्रण, क्रमि, श्वास, ज्वर, पित्त, प्रमेह, कफ, कुष्ठ, प्रलाप, वात, तन्द्रा, दद्रु, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, योनिरोग तथा शोथको खोती है। इसका शाक उष्णवीर्य एवं तिक्त रहता और क्रमि, अर्श, कुष्ठ, कफ तथा वातको हरता है। फल रोगमुक्त, तिक्त, उष्ण, कटुक, लघु, अग्निप्रदीपक, पित्तकोपकर, कल्याणप्रद और विषनाशक है। (वैद्यकनिघण्ट)

उत्तरिन् (सं० त्रि०) श्रेष्ठ, बड़ा।

उत्तरीय (सं० क्ली०) उत्तरस्मिन् देहभागे, छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। उत्तरीयकवस्त्र, उपरना, ओढ़नी, चद्दर। (त्रि०) २ ऊर्ध्वस्थित, ऊपरी। ३ उत्तरदिक्स्थ, शिमाली।

उत्तरीयक, उत्तरीय देखो।

उत्तरेतरा (सं० स्त्री०) दक्षिण विभाग, जनूबी तरफ़।

उत्तरेद्युस् (सं० अव्य०) पर दिन, आगामी दिवस, कल।

उत्तरोत्तर (सं० त्रि०) उत्तरस्मादुत्तरः। १ अधिकाधिक, ज़्यादा ज़्यादा। (अव्य०) २ क्रम-क्रम, धीरे-धीरे, बराबर। (क्ली०) ३ उत्तर पर उत्तर, जवाबका जवाब। ४ वार्तालाप, गुफ़्तगू। ५ प्रतिवचन, रद्द जवाब। ६ आधिक्य, ज़्यादती। ७ अनुक्रम, सिलसिला। ८ अवतरण, उतार।

उत्तरोत्तरिन् (सं० त्रि०) १ सर्वदा वृद्धिशाली, हमेशा बढ़नेवाला। २ अन्यके पीछे आनेवाला, जो दूसरेके बाद पड़ता हो।

उत्तरोष्ठ (सं० पु०) ऊपरिस्थ ओष्ठ, ऊपरका ओठ।

उत्तरौष्ठ, उत्तरोष्ठ देखो।

उत्तर्जन (सं० क्ली०) उच्चैस्तर्जनम्, प्रादि० समा०। उच्चैः स्वरकी भर्त्सना, ज़ोरकी झाड़-फटकार।

उत्तलित (सं॰ त्रि॰) उत्-तल-क्त। उत्क्षिप्त, उछाला हुआ।

उत्ता, उतना देखो।

उत्तान (सं॰ त्रि॰) उद्गतस्तानो विस्तारो यस्मात्। १ ऊर्ध्वमुखशायित, मुंह ऊपरको उठाये पड़ा हुआ, चित। २ अगभीर, उथला। ३ उच्छ्रित, खड़ा, सीधा। ४ पुटाकार, खोकला। ५ ऊर्ध्वतल, सतह पर फैला हुआ। ६ उद्घाटित, खुला। (क्ली॰) ७ जल, पानी।

उत्तानक (सं॰ पु॰) उत्-तन-ण्वुल्। १ उच्चटावृक्ष, उटङ्गनका पेड़। २ मुस्ताभेद, नागरमोथा।

उत्तानकूर्मक (सं॰ क्ली॰) कूर्मासन विशेष। आसन देखो।

उत्तानपत्र, उत्तानपत्रक देखो।

उत्तानपत्रक (सं॰ पु॰) १ रक्तैरण्ड, लाल रेंड़ीका पेड़। २ श्वेतैरण्ड, सफ़ेद रेंड़ीका पेड़।

उत्तानपद् (वै॰ स्त्री॰) १ वृक्ष, पेड़। २ शक्ति, ताक़त। उत्तानपदसे दिक् और पृथिवी उपजती है। (ऋक् १०।७२।३-४)

उत्तानपर्ण (वै॰ त्रि॰) विस्तृत पत्रयुक्त, बढ़ी हुई पत्ती रखनेवाला।

उत्तानपाद (सं॰ पु॰) स्वायम्भुव मनुके पुत्र और ध्रुवके पिता। इन राजाके सुनीति और सुरुचि दो पत्नी रहीं। सुनीतिके गर्भसे ध्रुव, कीर्तिमान्, आयुष्मान् एवं वसु और सुरुचिके गर्भसे उत्तमने जन्म लिया था। (हरिवंश, विष्णुपुराण, भागवत)

उत्तानपादज (सं॰ पु॰) उत्तानपादके पुत्र ध्रुव। ध्रुव देखो।

उत्तानशय (सं॰ त्रि॰) उत्तानः ऊर्ध्वमुखः शेते, शी-अच्। १ ऊर्ध्वमुख शयन करनेवाला, जो चित लेटा हो। (पु॰) स्तन्यपायिशिशु, शीर ख्वारा बच्चा, जो लड़का बहुत छोटा और माका दूध पीता हो।

उत्तानशीवन् (वै॰ त्रि॰) उत्तानस्थित, इस्तादा, खड़ा, रुका हुआ। (अथर्व २।२१।१०)

उत्तानहस्त (वै॰ त्रि॰) विस्तारित हस्तयुक्त, हाथ फैलाये हुआ।

उत्ताप (सं॰ पु॰) उत्-तप-घञ्। १ उष्णता, गर्मी। २ ताप, धूप। ३ दुःख, तकलीफ़। ४ चिन्ता, फ़िक्र। ५ उत्तेजना, जोश। ६ चेष्टा, कोशिश।

उत्तापन (सं॰ क्ली॰) उष्णताकरण, गर्म करनेका काम।

उत्तापित (सं॰ त्रि॰) १ तापयुक्त, तपा हुआ, जो गर्म किया गया हो। २ दुःखित, तकलीफ़ उठाये हुआ।

उत्तार (सं॰ पु॰) उत्-तॄ-णिच्-घञ्। १ वमन, क़ै, उलटी। २ उल्लङ्घन, लंघाई। ३ पारगमन, उतारा। ४ रक्षा, बचाव। ५ दूरीकरण, अलगाव। (त्रि॰) ६ अत्यन्त उच्च, निहायत ऊंचा।

उत्तारक (सं॰ त्रि॰) उत्-तॄ-णिच्-ण्वुल्। १ पार हो जानेवाला, जो उतर गया हो। (पु॰) २ पार लगानेवाले महादेव।

उत्तारण (सं॰ क्ली॰) उत्-तॄ-णिच्-ल्युट्। १ पारको गमन, उतारा। (पु॰) कर्तरि ल्यु। २ विष्णु भगवान्। (त्रि॰) ३ पारको गमन करनेवाला, जो उतर रहा हो।

उत्तारलोचन (सं॰ त्रि॰) घूर्णित नेत्रयुक्त, घूमी हुई आंखोंवाला।

उत्तारिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-तॄ-णिनि। १ पार लगानेवाला, जो उतारता हो। २ चपल, चुलबुला।

उत्तार्य (सं॰ त्रि॰) पार किया जानेवाला, जो उतारनेके क़ाबिल हो।

उत्ताल (सं॰ त्रि॰) उत्-चुरादित्वात् तल-घञ्। १ श्रेष्ठ, बड़ा। २ उत्कट, भारी। ३ कठिन, मुश्किल। ४ तीव्र, तेज़। ५ उच्च, ऊंचा। (पु॰) ६ मर्कट, बन्दर। (क्ली॰) ७ संख्या विशेष, कोई ख़ास अदद।

उत्तिर (हिं॰ पु॰) खम्भेमें गलेके ऊपर और कम्पके नीचे रहनेवाली पट्टी।

उत्तिरनमेरूर (उत्रामलोर)—मन्द्राज प्रान्तीय चेङ्गलपट जिलेके मधुरान्तकम् तालुकका एक नगर। यह अक्षा॰ १२° ३६´ ५५´´ उ॰ और द्राघि॰ ७९° ४८´ पू॰ पर अवस्थित है। चेङ्गलपटसे उत्तरनमेरूर १६ मील पड़ता है। प्रायः साढ़े ७ हजार मनुष्य बसते हैं। हिन्दुवों और मुसलमानोंके शासन-समयमें यह एक प्रधान स्थान था।

सन् ई० के १८ वें शताब्दमें अनेक बार अंगरेजी और फ्रान्सीसी सैन्यने इसपर अधिकार किया। आजकल सब मजिष्ट्रेटकी अदालत बैठती है। यहां पांच शिव और दो विष्णुके भग्न मन्दिर विद्यमान हैं। शिव-मन्दिरका कारुकार्य सुन्दर और प्रशंसाजनक है। पड़ोसमें अनेक तेलगु रोमन-काथलिक रहते हैं।

उत्तिष्ठहोम (सं० पु०) होम विशेष। यह होम खड़े खड़े करना पड़ता है।

उत्तिष्ठमान (सं० त्रि०) उत्-स्था-शानच्। १ उत्थानशील, उठ खड़ा होनेवाला। २ वृद्धिशील, बढ़ चलने वाला।

उत्तीर (सं० अव्य०) तट पर, किनारे, भूमिपर।

उत्तीर्ण (सं० त्रि०) उत्-तॄ कर्तरि क्त। १ पारगत, उतरा हुआ। २ जलसे उत्थित, पानीसे उठा हुआ। ३ निर्गत, निकला हुआ। ४ अतिक्रान्त, लांघा हुआ। ५ उपस्थित, पहुंचा हुआ। ६ कृतकार्य, कामयाब। ७ मुक्त, छूटा हुआ।

उत्तीर्य (सं० अव्य०) पार होकर, उतरके।

उत्तीर्षु (सं० त्रि०) पार होनेका अभिलाषी, जो उतरना चाहता हो।

उत्तुङ्ग (सं० त्रि०) उत् अतिशयेन तुङ्गः। उच्च, ऊंचा, जो खूब चढ़ा हो।

उत्तुङ्गता (सं० स्त्री०) उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई, चढ़ाई।

उत्तुङ्गभुज—बम्बई प्रान्तीय कनाड़ा जिलेके एक प्राचीन नृपति। काकतीय उपाख्यानमें कहा है—ये हिन्दुस्थानसे आकर गोदावरीके दक्षिण बसे थे। इनके पुत्र नन्दने चालुक्य गिरिपर नन्दगिरिदुर्ग नामक एक किला बनाया था।

उत्तुण्डकी (सं० स्त्री०) करञ्जक, करोंदा।

उत्तुण्डित (सं० क्ली०) १ कण्टकाग्र, कांटेकी नोक। (त्रि०) २ निर्गत, निकला हुआ।

उत्तुद (वै० पु०) चालना करनेवाला पुरुष, जो आदमी हविःको चलाता हो।

उत्तुर (ओतूर)—बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका एक नगर। यह पूना नगरसे उत्तर-पश्चिम ५० मील अक्षा० १९° १७ उ० और द्राघि० ७४° ३' ३०" पू० पर अवस्थित है। मराठा शासनके अन्त समय इस नगरके चारो ओर राहमें खानदेशके भील लूट मार करते थे। इसीसे धन धान्यकी रक्षाके लिये एक उच्च दुर्ग बनाया गया। पड़ोसमें दो मन्दिर बने हैं—एक सुप्रसिद्ध साधु तुकारामके गुरु केशवचैतन्य और दूसरा महादेवका। महादेवके मन्दिरमें प्रति वर्ष मेला लगता है।

उत्तुष (सं० पु०) उद्गतः तुषोऽस्मात्। लाजा, लाई।

उत्तू (हिं० पु०) १ वेणीकरण, सङ्कोच, चुन्नट, चीन, चौरस। २ वस्त्रका सङ्कोच, कपड़ेकी चुन्नट। ३ सङ्कोचास्त्र, चुन्नट डालने या बेलबूटा काढ़नेका औजार।

उत्तूकश, उत्तूगर देखो।

उत्तूगर (हिं० पु०) वस्त्रपर सङ्कोच डालनेवाला, जो कपड़ेपर चुन्नट चढ़ाता हो।

उत्तेजक (सं० त्रि०) प्रोत्साहक, प्रेरक, उकसाने, भड़काने, उभारने या उठानेवाला।

उत्तेजन (सं० क्ली०) उत्तेजना देखो।

उत्तेजना (सं० स्त्री०) उत्-तिज-णिच्-युच्। १ शाणादि द्वारा तीक्ष्णीकरण, शान रखनेका काम, पैनाव। २ प्रेरणा, तरगीब, पहुंचाव। ३ प्रवर्तन, लगाव। ४ भर्त्सना, धमकी, कहा-सुनी। ५ उद्दीपन, भड़काव। ६ उत्साहदान, बढ़ावा। ७ सजीवकरण, ज़िन्दा करनेका काम। ८ उत्पीड़न, तकलीफ़दिही।

उत्तेजित (सं० त्रि०) उत्-तिज-णिच्-क्त। १ उद्दीपित, उसकाया हुआ, जो भड़का हो। २ प्रेरित, भेजा या पहुंचाया हुआ। ३ शाणित, पैनाया हुआ। ४ विरक्त, जो अलग हो। ५ प्रवर्तित, लगाया हुआ। (क्ली०) ६ अश्वगति विशेष, घोड़ेकी कदम चाल। ७ उद्दीपन, तरगीब, भड़काव।

उत्तोरण (सं० क्ली०) उन्नतं तोरणमत्र। उच्चपुरद्वारयुक्त नगरादि, ऊंचे दरवाजेवाले शहर वगैरह। (त्रि०) २ उन्नततोरणयुक्त, ऊंची मेहराबवाला।

उत्तोरित (सं० क्ली०) उत्-तॄ भावे इतच्। अश्वके मध्यम वेगकी गति, दुलकी, घोड़ेकी मामूली दौड़वाली चाल।

उत्तोलन (सं॰ क्लो॰) उत्-तुल भावे ल्युट्। उत्थापन, उत्क्षेपण, उठाव, चढ़ाव।

उत्तोलित (सं॰ त्रि॰) उत् चुरादित्वात् तुल-क्त। उत्क्षिप्त, उत्थापित, उठाया या चढ़ाया हुआ।

उत्त्यक्त (सं॰ त्रि॰) उत्-त्यज-क्त। १ परित्यक्त, छोड़ा हुआ। २ विरक्त, मुहब्बत या शौक न रखनेवाला। ३ ऊर्ध्वक्षिप्त, फेंका या उछाला हुआ।

उत्त्याग (सं॰ पु॰) १ उत्सर्ग, तर्क, छोड़ाव। २ उदुत्क्षेपण, फेंकफांक। ३ विरक्ति, दुनियावी मुहब्बतकी जुदाई।

उत्त्रस्त (सं॰ त्रि॰) अतिशय भयभीत, बहुत डरा हुआ।

उत्त्रास (सं॰ पु॰) उत्-त्रस-घञ्। अतिभय, बड़ा खौफ़ या डर।

उत्त्रिपद (सं॰ क्लो॰) उन्नत त्रिपदी, ऊंची तिपाई।

उत्थ (सं॰ त्रि॰) उत्-स्था-क। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उन्नत, ऊंचा। ३ उद्गत, निकला हुआ। ४ उत्पन्न, पैदा। (पु॰) ५ उत्पत्ति, उपज, निकास।

उत्थवना (हिं॰ क्रि॰) उत्थापन करना, उठाना, लगाना।

उत्थाता (वै॰ पु॰) १ उत्थापन करनेवाला, जो उठ रहा हो। २ अध्यवसायी, पक्का इरादा रखनेवाला।

उत्थान (सं॰ क्लो॰) उत्-स्था-ल्युट्। १ ऊर्ध्वपतन, ऊंचा पड़नेकी हालत। २ उद्यम, कोशिश। ३ उदय, निकास। ४ उन्नति, तरक्की। ५ उठाव, उठान। ६ तन्त्र। ७ पौरुष, ज़ोर। ८ पुस्तक, किताब। ९ युद्ध, लड़ाई। १० पुनरुज्जीवन, हर्ष। ११ त्याग, तर्क, छोड़ बैठनेकी हालत। १२ मूल, जड़, निकास। १३ मलोत्सर्ग। १४ मलरोग, दस्तकी बीमारी। १५ हर्ष, खुशी। १६ सैन्य, फौज। १७ अहाता। १८ वलिदानकी शाला। १९ सीमा, हद। २० गृहकार्य, घरका काम। २१ विचार, खयाल। २२ रोगका सन्निकृष्ट कारण, बीमारीका नज़दीकी सबब। (त्रि॰) २३ उठवाने या निकलवानेवाला।

उत्थानवत् (सं॰ त्रि॰) कार्यार्थ तत्पर, कामके लिये तैयार।

उत्थानैकादशी (सं॰ स्त्री॰) चान्द्र कार्तिक मासकी शुक्ल एकादशी, देव उठनी एकादशी। जबतक यह एकादशी नहीं पड़ती, तबतक धार्मिक हिन्दुवोंके भोजनमें ऊख, भंटा, सिंघाड़ा प्रभृति चीज नहीं चलती। लोग घरको अच्छी तरह लीप पोत विष्णुभगवान्‌की पूजा करते हैं। एकादशी देखो।

उत्थापक (सं॰ त्रि॰) १ उत्थापन करनेवाला, जो उठाता हो। २ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उत्थापन (सं॰ क्लो॰) उत्-स्था-णिच्-ल्युट्। १ उत्तोलन, उठाव। २ प्रेरण, पहुंचाव। ३ प्रबोधन, जगाव। ४ उपस्थितकरण, लगाव। ५ चोभन, भड़काव। ६ छोड़ाव। ७ गणितमें प्रश्नका उत्तर निकालना, सवालका जवाब।

उत्थापित (सं॰ त्रि॰) उत्-स्था-णिच्-क्त। १ उत्तोलित, उठाया हुआ। २ प्रेरित, भेजा हुआ। ३ प्रबोधित, जगाया हुआ। ४ चोभित, भड़काया हुआ।

उत्थाप्य (सं॰ अव्य॰) १ उत्तोलन करके, उठाके। २ चोभन करके, भड़का कर। (त्रि॰) ३ उठाया जानेवाला, जो जगाने क़ाबिल हो। (वै॰) ४ प्रेरण किया जानेवाला, जो भेजे जानेके क़ाबिल हो।

उत्थाय (सं॰ अव्य॰) १ उठकर। २ आगे बढ़कर।

उत्थायिन् (सं॰ त्रि॰) उत्थान करनेवाला, जो उठ या निकल रहा हो।

उत्थित (सं॰ त्रि॰) उत्-स्था-क्त। १ उत्पन्न, उपजा हुआ। २ उद्गत, निकला हुआ। ३ उद्यत, मुस्तैद। ४ वर्धित, बढ़ा हुआ। ५ लगा हुआ, जो पड़ गया हो। ६ उच्च, ऊंचा, बड़ा। ७ विस्तृत, फैला हुआ। (पु॰) ८ सरल वृक्ष, सीधा पेड़। ९ दश पादका एक प्रगाथ।

उत्थितता (सं॰ स्त्री॰) अन्यकी सेवा करनेका उद्यम, दूसरोंकी खिदमतके लिये मुस्तैदी।

उत्थिताङ्गुलि (सं॰ पु॰) १ विस्तृताङ्गुलि, फैली हुई उंगली। २ करतल, हथेली। ३ चपट, थप्पड़।

उत्थिति (सं॰ स्त्री॰) उत्थान, बुलन्दी, उठान, उंचाई।

उत्पक्ष्मण (सं॰ त्रि॰) उत्थित नेत्रच्छदयुक्त, पपोटे ऊपरको उठाये हुआ।

उत्पक्ष्मन्, उत्पक्ष्म देखो।

उत्पचिष्णु (सं० त्रि०) पाक करनेके योग्य, जो पकानेके काबिल हो।

उत्पट (सं० पु०) उत्-पट-अच्। १ वृक्षादिकी त्वक्को भेदकर उद्गत होनेवाला निर्यास, पेड़की छालको फोड़कर निकलने वाला गोंद।

"त्वच एवास्य रुधिरं प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः।"
(शतपथब्राह्मण १४।६।८।३१) 'उत्पटः त्वचनिर्यासः' (भाष्य)

२ उपरिच्छद, उपरना, दुपट्टा, ऊपरी कपड़ा।

उत्पत (सं० पु०) उत् पतति ऊर्ध्वं गच्छति, उत्-पत-अच्। १ पक्षी, चिड़िया। २ ऊर्ध्वगमन, ऊपरको जवाई, उड़ान।

उत्पतत् (सं त्रि) ऊर्ध्व अथवा अधः उड्डयन करनेवाला, जो ऊपर या नीचे उड़ रहा हो।

उत्पतन (सं० क्ली०) उत्-पत-ल्युट्। १ ऊर्ध्व-गमन, उड़ान, चढ़ाव। २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ उदय, निकास। ४ उत्थान, उठान। ५ उत्प्लवन, भगाई।

उत्पतनिपता (सं० स्त्री०) उत्पतनिपत इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्। ऊर्ध्व एवं अधः उड्डयन, ऊपर और नीचेको उड़ान।

उत्पताक (सं० त्रि०) उत्तोलिता पताका यस्मिन्। उत्तोलित पताकायुक्त, जिसमें झण्डे उड़ें।

"उत्पताकध्वजच्छत्रशोभियुग्यार्पितासनम्।" (राजतरङ्गिणी)

उत्पताकध्वज (सं० त्रि०) उत्तोलित पताका एवं ध्वजायुक्त, जिसमें झण्डे और निशान उड़ते रहें।

उत्पतित (सं० त्रि०) उत्-पत-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उद्गत, निकला हुआ।

उत्पतितव्य (सं० त्रि०) ऊर्ध्व उड़ाया जानेवाला, जो ऊपर उड़ाये जानेके काबिल हो।

उत्पतितृ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वगमनकारी, ऊपर चढ़नेवाला, जो कूद पड़ता हो।

उत्पतिष्णु (सं० त्रि०) उत्-पत-इष्णुच्। उत्पतन-शील, उड़ने या उछल पड़नेवाला।

उत्पत्ति (सं० स्त्री०) उत्-पत-क्तिन्। १ उद्भव, जन्म, पैदायश, उपज। २ आविर्भाव, देखाव। ३ ऊर्ध्व-पतन, उड़ान। ४ प्रलय, क़यामत। ५ लाभ, फ़ायदा। फलकी भांति उद्गम, नतीजे जैसी पैदायश।

उत्पत्तिकालीन (सं० त्रि०) उद्भवके समय होने-वाला, जो पैदायशके वक़्त हो।

उत्पत्तिक्रम (सं० पु०) जगत्की उत्पत्तिका पारि-पाट्य, दुनियाकी पैदायशका तरीका। उपनिषद्के मतमें आत्मासे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधि, ओषधिसे अन्न, अन्नसे रेतः और रेतःसे पुरुषकी उत्पत्ति है।

उत्पत्तिप्रयोग (सं० पु०) १ कारण और कार्यके संयुक्त रूपसे उद्भव, सबब और समरेकी मिली हुई हरकतसे पैदायश। २ अर्थ, मानी, मतलब।

उत्पत्तिमत् (सं० त्रि०) उत्पन्न, पैदा, उपजा हुआ।

उत्पत्तिव्यञ्जक (सं० पु०) १ उद्भवका आदर्श, पैदा-यशकी सूरत। २ दो बार उत्पन्न होनेका चिह्न, दुबारा उपजनेका निशान्।

उत्पत्तिव्युत्क्रम (सं० पु०) विपरीत भावसे उत्पत्ति, उलटी चालकी पैदायश।

उत्पथ (सं० पु०) १ असत्पथ, बुरी राह। (अव्य०) २ शास्त्रके विरुद्ध, अण्ड-बण्ड।

उत्पथप्रतिपन्न, उत्पथप्रवृत्त देखो।

उत्पथप्रवृत्त (सं० त्रि०) असत्, मन्द, बुरा, खराब, बुरी राह या चाल पकड़नेवाला।

उत्पद्यमान (सं० त्रि०) उत्-पद-यच्-शानच्। जायमान, पैदा हो जानेवाला।

उत्पन्न (सं० त्रि०) उत्-पद-क्त। १ जात, पैदा, उपजा। २ उत्थित, उठा। ३ अकस्मात् उद्भूत, एकाएक निकला। ४ प्राप्त, हासिल किया, पाया। ५ हुआ, पड़ा। ६ समाप्त, बना। ७ परिचित, समझा-बूझा।

उत्पन्नतन्तु (सं० त्रि०) सन्तानकी श्रेणी रखने-वाला, जिसके औलादका सिलसिला रहे।

उत्पन्नभचिन् (सं० त्रि०) प्राप्त द्रव्यको खा डालने वाला, जो हासिल किया हुआ माल उड़ा देता हो।

उत्पन्नविनाशिन् (सं॰ त्रि॰) उद्भूत होते ही मृत्यु पानेवाला, जिसे पैदा होते ही मौत पकड़े।

उत्पन्ना (सं॰ स्त्री॰) मार्गशीर्षके कृष्णपक्षकी एकादशी।

उत्पल (सं॰ क्ली॰) १ जलजात लताविशेष, पानीकी एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—पद्म, नल, नलिन, अम्भोज, अम्बुजन्म, अम्बुज, श्री, अम्बुरुह, अम्बुपद्म, सुजल, अम्भोरुह, सारस, पङ्कज, सरसीरुह, कुटप, पाथोरुह, पुष्कर, वार्ज, तामरस, कुशेशय, कञ्ज, कज, अरविन्द, शतपत्र, शतदल, विसकुसुम, सहस्रपत्र, महोत्पल, वारिरुह, सरसिज, सलिलज, पङ्केरुह, राजीव और कमल है। उत्पलको हिन्दीमें कंवल, मराठीमें कनवल और तामिलमें अम्बल कहते हैं। (Nelumbium speciosum) बहु कालसे भारतवासी इसके पुष्पको अति पवित्र समझते आये हैं। वेदमें भी "कमलाय स्वाहा" (तैत्तिरीयसंहिता ७।३।१८।१) मन्त्र मिलता है।

महाभारतके अनुसार भगवान्‌की नाभिसे उत्पल और उत्पलसे ब्रह्माका उद्भव हुआ है।

"प्रधानसमकालन्तु प्रजाहेतोः सनातनः।
ध्यानमात्रे तु भगवन्नाभ्यां पद्मः समुत्थितः।
ततश्चतुर्मुखो ब्रह्मा नाभिपद्माद्विनिःसृतः।"
(महाभारत वन २७१।४१-४२)

पाश्चात्य-पण्डित थिओफ्रेष्टसने Kuamus Aigyptios (इजिप्तकी सेम) और नीलोफर नाम लिखा है। यह लता अमेरिका, कास्पीय सागरके तटस्थ प्रदेश, भारतवर्ष, पारस्य, चीन और मिशरमें उपजती है। श्वेत और रक्त उत्पल भारतवर्षके अनेक स्थान, पारस्य, तिब्बत, चीन और जापानमें मिलता है। किन्तु नील उत्पल केवल काश्मीरके उत्तरांश, तिब्बतके अन्तर्गत गन्धमादन और चीनके किसी किसी स्थानमें देख पड़ता है।

पृथिवीके मध्य चीन देशमें ही यह अधिक होता है। चीना इसका मूल बड़े प्रेमसे खाते हैं।

उत्पल तीन प्रकारका है—श्वेत, रक्त और नील। श्वेत उत्पलको शतपत्र, महापद्म, पुण्डरीक, सिताम्बुज, नल, सरोज, नलिन, अरविन्द और महोत्पल कहते हैं। वैद्यक शास्त्रके मतसे यह शीतल, मधुर और कफ तथा पित्तका नाशक है।

रक्त उत्पलका नाम कोकनद, हल्लक, रक्तसन्धिक, रक्तोपल, रक्तसरोरुह, रक्ताम्भ, अरुण, कमल, शोणपद्म, अरविन्द, रविप्रिय और रक्तवारिज है। वैद्यकके मतसे यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, सन्तर्पण एवं हृष्य और पित्त, कफ तथा रक्तके दोषका नाशक होता है। किन्तु श्वेतकी अपेक्षा रक्तमें गुण कम है।

नील उत्पल इन्दीवर, नीलोत्पल, मृदूत्पल, कुवलय, नीलाब्ज, नीलमुत्पल और भद्र कहाता है। इसमें रक्तोत्पलसे भी गुण अल्प है।

उत्पलके बीजकोषका कर्णिकर, मधुका मकरन्द, केशरका किञ्जल्क और नालका नाम मृणाल है।

यूनानी वैद्योंके मतमें यह तिक्त और शैत्यकारक है।

पारस्य देशसे नानास्थानोंको उत्पलका बीज भेजा जाता है। उत्पल पुष्प भारतवर्षीय नाना स्थानोंके देवमन्दिर और भोटानमें पूजाके लिये व्यवहृत होता है। पूर्वकालमें मिशरके अधिवासी भी उत्पलको पवित्र पुष्प समझ पूजामें व्यवहार करते थे।

२ कुमुदादि, बघोला वर्ग रह। ३ कुष्ठोषधि, एक बूटी। ४ एक जन विख्यात ज्योतिर्वित्। भट्टोत्पल देखो। ५ बौद्ध शास्त्रोक्त नरक। (दिव्यावदान ६७।२३)

उत्पलक (सं॰ पु॰) १ चित्रकरीष, खेतका कूड़ा कर्कट। २ नीलोत्पल, नीला कमल। ३ नागराज विशेष।

उत्पलकन्द (सं॰ पु॰) शालूक, कसेरू।

उत्पलकुष्ठक (सं॰ पु॰) कुष्ठौषध, एक बूटी।

उत्पलकेसर (सं॰ क्ली॰) पद्मकेशर, कमलकी धूलि।

उत्पलगन्धि (सं॰ क्ली॰) गोशीर्ष, एक प्रकारका चन्दन। यह पीतल जैसा और बहुत खुशबूदार होता है।

उत्पलगन्धिक, उत्पलगन्धि देखो।

उत्पलगोपा (सं० स्त्री०) श्वेत शारिवा, सफ़ेद अनन्तमूल।

उत्पलचक्षुस् (सं० त्रि०) उत्पल सदृश नेत्रयुक्त, नीलोफ़र जैसी आंखोंवाला, जिसके निहायत उमदा आंख रहे।

उत्पलदल (सं० क्ली०) तन्नामक अस्त्र विशेष, इसी नामका एक नश्तर। यह चीरफाड़में काम आता है। (अत्रिसंहिता)

उत्पलपत्र (सं० क्ली०) १ कुवलयदल, कमलका पत्ता। २ स्त्रीके स्तनका नखक्षत। ३ तिलकभेद, एक प्रकारका टीका। इसे हिन्दू चन्दनसे मस्तकपर लगाते हैं। ४ छेदन एवं भेदनका वैद्यकास्त्रविशेष, चीर फाड़का एक नश्तर। यह छः अङ्गुल रहता है। (सुश्रुत)

उत्पलपत्रक (सं० क्ली०) चिकित्सास्त्रविशेष, एक नश्तर। पूर्व समय यही अस्त्र चीरफाड़में चलता

था। इसका फलड़ा चौड़ा रहता है।

उत्पलपुर (सं० क्ली०) काश्मीरका एक प्राचीन नगर। उत्पल नृपतिने इसे बसाया था। (राजतरङ्गिणी)

उत्पलभेद्यक (सं० पु०) कर्णबन्धाकृतिभेद, किसी किस्मकी पट्टी।

"इत्यायतसमोभयपालिरुत्पलभेद्यकः।" (सुश्रुत)

उत्पलमृत् (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमृत्तिका, काबिस।

उत्पलशाक (सं० पु०) शाक विशेष, एक सबज़ी।

उत्पलशारिवा (सं० स्त्री०) १ श्यामालता, दूधी। २ अनन्तमूल।

उत्पलषट्क (सं० क्ली०) ज्वरातिसार रोगका एक औषध, बुखारके दस्तोंकी एक दवा। उत्पल, धान्यक, शुण्ठी, पृश्निपर्णी और बालबिल्वको अति उष्ण गायके तक्रमें पीसे और उसके लाजसे मण्ड बना शीतल करके रोगीको पिलाये। यह औषध ज्वरातिसारको दबाता और जठराग्निका बल बढ़ाता है। (चक्रसंहिता)

उत्पलाक्ष (सं० पु०) काश्मीरके एक प्राचीन राजा। ये सिद्धके पुत्र थे। इन्होंने ५३ वत्सर राजत्व किया। राज्यकी प्राप्तिका काल २१७८ कलाब्द था। (राजतरङ्गिणी १।२८६)

उत्पलादि (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, एक दवा। रक्तपद्म, रक्तकर्पास एवं करवीका मूल, गन्धमाता, जीरक तथा रक्तचन्दन समुदयको सम-भागमें चूर्णकर एकत्र मिलाये और चावलके धुले हुये पानीसे खिलाये। इसके सेवनसे रक्तमूत्र, योनि, कटि एवं कुक्षिका शूल और प्रदर शीघ्र नष्ट होता है।

उत्पलापीड़ (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। यह अजितापीड़के पुत्र रहे और ३१ वत्सर राजत्वके बाद सिंहासनसे च्युत हुये। इनके बाद अवन्तिवर्मा राजा बने थे। (राजतरङ्गिणी ४।७०८-१५)

उत्पलाभ (सं० त्रि०) पद्मसदृश, नीलोफ़र-जैसा, जो कमलसे मिलता जुलता हो।

उत्पलावन (सं० क्ली०) पञ्चालस्थ एक अति प्राचीन तीर्थ। (भारत अनुशासन २५।३३)

"पाञ्चालेषु च कौरव्य कथयन्त्युत्पलावनम्।" (भारत बन ८७।१४)

यहां नारदरूपी लिङ्गमूर्ति विद्यमान है।

"वशिष्ठस्य विदाभूम्यां नारदश्चोत्पलावने।" (प्रभासखण्ड ८० अ०)

उत्पलिन् (सं० त्रि०) उत्पलसे परिपूर्ण, नीलोफ़रसे भरा हुआ।

उत्पलिनी (सं० स्त्री०) १ जलज पुष्पविशेष, छोटा कमल। संस्कृत पर्याय कैरविणी, कुमुद्वती, कुमुदिनी, चन्द्रेष्टा, कुवलयिनी, इन्दीवरिणी और नीलोत्पलिनी है। हिन्दीमें इसे बघोला कहते हैं। वैद्यकके मतसे यह शीतल एवं तिक्त होती और तृष्णा, भ्रम, वमि, कास, क्षय, यक्ष्मा, कफ, वात, पित्त, आम-रक्त, रक्तातिसार, अर्श और ग्रहणी प्रभृति रोगोंको खोती है। इसका बीज स्वादु, रूक्ष, शीतल और गुरु है।

२ छन्दोवृत्तिभेद, एक प्रकारका जगती छन्द। ३ नदी विशेष, एक दरया। ४ कोषग्रन्थविशेष, लुगातकी एक किताब। ५ उत्पलपुष्पसमूह, नीलोफ़रके फूलका ढेर।

उत्पली (सं॰ स्त्री॰) तुषचर्पटी, भूसीकी चपाती या रोटी।

उत्पलेश्वर (सं॰ पु॰) महानदीका तीरवर्ती एक प्राचीन तीर्थ। महानदी देखो।

उत्पवन (सं॰ क्ली॰) १ प्लावन, सैलाब, बूड़ा।
"प्लावनमुत्पवनमाहः।" (मनुभाष्ये मेधातिथि ५।११५)

२ यज्ञीय पात्रादिके संस्कारभेद।
(आश्वलायनगृह्यसूत्र १।३।२।३)

३ कुशादि द्वारा जलका उत्क्षेपण।

उत्पवितृ (सं॰ त्रि॰) १ पावन, पाक। २ पावन करनेवाला, जो पाक साफ बनाता हो।

उत्पश्य (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वमुख, ऊपरको ओर देखनेवाला।

उत्पाट (सं॰ पु॰) उत्-पट-घञ्। १ उत्पात, उखाड़। २ कर्णरोग विशेष, कानकी एक बीमारी।

उत्पाटक (सं॰ पु॰) कर्णपालीगत रोग, कानकी नोकमें होनेवाली एक बीमारी। गुरु आभरणके संयोग, ताड़न एवं अति घर्षणसे कर्णकी पालीमें जो शोथ, दाह और पाकका रोग लगता है उसे उत्पाटक कहते हैं। (माधव निदान) इसमें कान चटचटाया करता है। (सुश्रुत)

उत्पाटन (सं॰ क्ली॰) उत्-पट-णिच् भावे ल्युट्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ वायुजन्य व्रणकी एक वेदना, वातसे पैदा होनेवाला दर्द।

उत्पाटिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-पट-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्। १ वृक्षकी शुष्क छाल, पेड़का सूखा बकला। २ उत्पाटनकर्त्री, उखाड़ डालनेवाली।

उत्पाटित (सं॰ त्रि॰) उत्-पट-णिच्-क्त। उन्मूलित, उखाड़ा हुआ।

उत्पाटिन् (सं॰ त्रि॰) उन्मूलन करनेवाला, जो उखाड़ डालता हो।

उत्पाट्य (सं॰ अव्य॰) उन्मूलन करके, उखाड़कर। (त्रि॰) २ उखाड़ डालनेके योग्य।

उत्पात (सं॰ पु॰) उत्-पत भावे घञ्। १ ऊर्ध्वपतन, उड़ान, उछाल। २ सङ्कट, आफत। ३ अशुभ सूचक अकस्मात् दैवघटना, आस्मानी ग़ज़ब। यह दिव्य, आन्तरीक्ष और भौम भेदसे तीन प्रकारका होता है। सूर्यग्रासादि दिव्य, उल्कापातादि आन्तरीक्ष और भूमिकम्पादि भौम है।

उत्पातक (सं॰ पु॰) उत्-पत-णिच्-ण्वुल्। १ ऊर्ध्वपतनशील जन्तु विशेष, उछल उछल कर चलनेवाला एक जानवर। इसके अष्ट पाद होते हैं।
"दंशोत्पातकभल्लूकमचिकामशकाहतम्।" (भारत स्वर्गा॰ २ अ॰)

२ तीर्थविशेष। (भारत अनु॰) (त्रि॰) उत्-पत-ण्वुल्। ३ ऊर्ध्व-पतनशील, उड़ने या उछलने वाला।

उत्पातकेतु (सं॰ पु॰) अमङ्गल चिह्न, बुरा निशान्। उल्कापात, भूमिकम्प और उपद्रवके पातका निमित्तक उदित धूमकेतु प्रभृति उत्पातकेतु कहाते हैं।

उत्पाती (सं॰ त्रि॰) उपद्रव उठानेवाला, जो आफ़त डालता हो।

उत्पाद (सं॰ पु॰) उत्-पद भावे घञ्। उत्पत्ति, पैदायश, उपज।

उत्पादक (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वस्थिताः पादा अस्य, उत्-पद-णिच्-ण्वुल्। १ पशु विशेष, एक जानवर। अष्टपादयुक्त गजाराति शरभका नाम उत्पादक है। फारसीमें इसे हुमा कहते हैं। (क्ली॰) २ कारण, सबब। (त्रि॰) ३ उत्पत्तिकारक, पैदा करनेवाला।

उत्पादन (सं॰ क्ली॰) उत्-पद-णिच्-ल्युट्। १ उत्पत्तिकारण, पैदा करनेका काम। (त्रि॰) २ उत्पादक, पैदा करनेवाला।

उत्पादपूर्व (सं॰ क्ली॰) जैन-शास्त्रोक्त १४ पूर्वमें प्रथम पूर्व। पूर्ववाद और जैनशास्त्र देखो।

उत्पादशयन (सं॰ पु॰) टिट्टिभ पक्षी, टिटिहरी।

उत्पादिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-पद-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्। १ देहिका नामक कीट, दीमक। २ हिलमोचिका, हरहुच। ३ पूतिका, पोय।

उत्पादित (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न किया हुआ, जो पैदा किया गया हो।

उत्पादिन् (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न करनेवाला, जो पैदा करता हो। समासान्तमें इस शब्दका अर्थ 'उत्पन्न किया हुआ' लगता है।

उत्पाद्य (सं० त्रि०) १ जननीय, पैदा किये जानेके क़ाबिल। (अव्य०) २ उत्पन्न या पैदा करके। ३ उत्तेजना देकर, भड़काके।

उत्पाद्यमान (सं० त्रि०) उत्पन्न किया जानेवाला, जो निकाला जा रहा हो।

उत्पार (सं० पु०) शुद्ध घृत, साफ़ घी।

उत्पारण (वै० क्ली०) उत्तरण, कूदकर पार होनेका काम। (अथर्व ५।३०।२२)

उत्पाली (सं० स्त्री०) उत्पल-घञ्-ङीप्। आरोग्य, तनदुरुस्ती।

उत्पाव (सं० पु०) शुद्धिकारक घृत, साफ़ करनेवाला घी।

उत्पिञ्जर (सं० त्रि०) पिञ्जरसे छूटा हुआ, जो पिंजड़ेमें बन्द न हो।

उत्पिञ्जल (सं० त्रि०) १ अतिशय व्याकुल, निहायत बेचैन। २ पिङ्गलवर्ण, ज़र्द, पीला।

उत्पित्सु (सं० त्रि०) उत्पतन, उड्डयन वा उद्गमनका अभिलाषी, जो उठना, उड़ना या आगे बढ़ना चाहता हो।

उत्पिष्ट (सं० त्रि०) उत्-पिष-क्त। १ उन्मथित, रगड़ा या पीसा हुआ। (क्ली०) २ सुश्रुतोक्त सन्धि मुक्तरूप अस्थिभङ्ग विशेष, जोड़की हड्डियोंके चरमरा जानेका एक आज़ार। सन्धिके उत्पिष्ट होनेसे उभय पार्श्वपर शोफ और दुःख उठता है। विशेषतः रात्रिको नानाप्रकार वेदना उपजती है। (सुश्रुत निदान १५ अ०)

उत्पिष्टसन्धि, २ उत्पिष्ट देखो।

उत्पीड़ (सं० पु०) १ सुरामण्ड, शराबका जोश। २ फेन, फेना। ३ बाधा, तकलीफ़। ४ सङ्घर्षण, रगड़। ५ उन्मथन, मथाई।

"आकाङ्क्षन्तीं नयनसलिलोत्पीडरुद्धावकाशाम्।" (मेघदूत)

उत्पीड़न (सं० क्ली०) उत्-पीड़-ल्युट्। १ उत्तेजन, भड़काव। २ ठंसाठंसी। ३ प्रवर्तन, तरग़ीब। ४ आधिक्य, ज़्यादती, बढ़ती। ५ उपद्रव, तकलीफ़दिही।

उत्पुटक (सं० पु०) उत्-पुट-कन्। कर्णपालीगत रोग विशेष, कानकी लोलकमें होनेवाली एक बीमारी। यह रोग उपजनेसे अपलतास, सजने और कटकलेजेकी छाल, गोहरेकी वसा, वन्य शूकर, गो एवं हरिणका पित्त तथा घृत सकल द्रव्य का प्रलेप अथवा तेल पका लगाना चाहिये। (सुश्रुत सूत्र० १६ अ०)

उत्पुलक (सं० त्रि०) आनन्दित, खुश।

उत्प्रभ (सं० त्रि०) १ प्रभान्वित, चमकीला। (पु०) २ अग्नि, आग।

उत्प्रसव (सं० पु०) गर्भस्राव, इसकात-हमल।

उत्प्राण (सं० पु०) श्वास, सांस।

उत्प्रास (सं० पु०) उत्-प्र-अस दीप्त्यादौ घञ्। १ उपहास, हंसी। २ आधिक्य, ज़्यादती। ३ दूर उत्क्षेपण, फेंक फांक। ४ उत्कट हास्य, कहकहा, खिलखिलाहट।

उत्प्रासन (सं० क्ली०) उत्प्रास देखो।

उत्प्रेक्षण (सं० क्ली०) उत्-प्र-ईक्ष भावे ल्युट्। १ उद्भावन, ख़याल। २ सम्भावना, होनहार। ३ ऊर्ध्व-दृष्टि, गहरी नज़र।

उत्प्रेक्षा (सं० स्त्री०) उत्-प्र-ईक्ष-अ-टाप्। १ अनवधान, उपेक्षा, बेपरवाई। २ वितर्क उलटा ख़याल। ३ काव्यालङ्कार विशेष। प्रकृत वस्तुमें अन्यप्रकार सम्भावना उत्प्रेक्षा कहाती है।

"सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्।" (काव्यप्रकाश)

यह अलङ्कार प्रधानतः दो प्रकारका होता है—वाच्य और प्रतीयमान। जिसमें 'जैसे' 'सदृश' और 'तरह' प्रभृति शब्द रहते हैं, वह वाच्य और जिसमें उक्त शब्द न पड़ भावसे अर्थ लगता है, वह प्रतीयमान है। जाति, गुण, क्रिया और द्रव्यके विचारसे उक्त दोनो प्रकारके चार चार भेद होते हैं। फिर भाव एवं अभावके अभिमान और गुण तथा क्रियाके स्वरूपसे उत्प्रेक्षा बत्तीस प्रकारकी होती है।

उत्प्रेक्षित (सं० त्रि०) सदृशीकृत, मिलाया हुआ।

उत्प्रेक्षोपमा (सं० स्त्री०) काव्यालङ्कार विशेष। उत्प्रेक्षा देखो।

उत्प्रेक्ष्य (सं० त्रि०) सदृश बनाया जानेवाला, जो किसी चीज़के बराबर ठहराया जाता हो।

उत्प्लव (सं० पु०) वल्गन, उछाल, कूदफांद।

उत्प्लवन (सं० क्लो०) उत्-प्लु-ल्युट्। १ उल्लम्फन, उछलकूद। २ अभिमन्त्रित कुशादियुक्त वारि द्वारा द्रव्यकी शुद्धि।

उत्प्लवा (सं० स्त्री०) उत्-प्लु-अच्-टाप्। नौका, नाव।

उत्प्लुत (सं० त्रि०) वल्गित, उछला हुआ, जो एकाएक फांद पड़ा हो।

उत्प्लुत्य (सं० अव्य०) वल्गन करके, ऊपर उछलकर।

उत्फल (सं० क्लो०) उत्तम फल, उमदा मेवा।

उत्फाल (सं० पु०) उत्-फल-घञ्। लम्फ, उछाल।

उत्फुल्ल (सं० त्रि०) उत्-फल-क्त, उत् फुल्लसंफुल्लयो-रुपसंख्यानमिति निष्ठा, तस्य लः। १ प्रफुल्ल, खिला, फला। २ स्फीत, सूजा या बढ़ा। ३ उत्तान-शय, चित लेटनेवाला। (क्लो०) ४ स्त्रीन्द्रिय।

उत्रौला—उतरौला देखो।

उत्स (वै० पु०) उनत्ति जलेन, उन्द्-स-कित्। उन्दिगुधिकुषिभ्यश्च। उण् ३।६८। १ प्रस्रवण, चश्मा, झरना २ खात, कुवां। (निघण्टु ३।२३) ३ उत्सरण, सरकाव। (निरुक्त १०।९)

उत्सक्थ (वै० त्रि०) ऊर्ध्वसक्थियुक्त।

'उत् ऊर्ध्वे सक्थिनी ऊरू यस्या सा उत्सक्थी'

(शुक्लयजुर्भाष्ये महीधर २३।२१)

उत्सङ्ग (सं० पु०) उत्-सञ्ज-घञ्। १ क्रोड़, गोद। २ पर्वतका शिखरदेश, पहाड़की चोटी। (रघु ६।३) ३ अट्टालिकाका उपरि भाग, छत। (मेघदूत २९) ४ अभ्यन्तर भाग, बगल। (कुमार १।१०) ५ ऊर्ध्वतल, ऊपरी मञ्जिल। ६ बहिर्भाग, बाहरी हिस्सा। (रघु ८।७५) ७ सङ्गम, मिलाप। ८ आलिङ्गन, हमा-गोशी। ९ एकशत संख्या=विवाह। (व्युत्पत्ति १८५) १० व्रणका भीतरी भाग, ज़ख़्मका अन्दरूनी हिस्सा। (सुश्रुत, सूत्र०) ११ गर्भ, हमल। (भारत अश्व ८६।१८)

उत्सङ्गपिड़का (सं० स्त्री०) नेत्रवर्त्मगत रोगविशेष, आंखके नीचे पपोटेकी फुन्सी। यह स्थूल और कण्डुमत् होती है। मुखवर्त्मके अभ्यन्तर पड़ता है। वर्ण ताम्र-जैसा होता है। (माधव निदान)

उत्सङ्गित (सं० त्रि०) उत्सङ्गयुक्त, मिलनेवाला।

उत्सङ्गिनी, उत्सङ्गपिड़का देखो।

उत्सङ्गी (सं० पु०) नाड़ीव्रणविशेष, फोड़ा, गहरा ज़ख़्म।

उत्सञ्जन (सं० क्लो०) उत्-सनज-णिच्-ल्युट्। ऊर्ध्व संयोजन, उत्क्षेपण, ऊपरको रहनुमाई।

उत्सत्ति (सं० स्त्री०) उत्-सद्-क्तिन्। उच्छेद, उखाड़, नोचखसोट।

उत्सधि (वै० पु०) उत्सो धीयते अत्र, उत्स-धा, कि। जलप्रवाहशील कूप, जिस कुवेंसे पानी बहा करे। (ऋक् १।८८।४)

उत्सन्न (सं० त्रि०) उत्-सद्-क्त। १ उच्छिन्न, उखड़ा हुआ। २ नष्ट, बरबाद। ३ अनायाससाध्य, आसानीसे बन जानेवाला। ४ अव्यवहृत, नाकाम। ५ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उत्सन्नधर्म, उत्सन्नयज्ञ देखो।

उत्सन्नयज्ञ (सं० पु०) अवलम्बित यज्ञ, जो यज्ञ रुक गया हो।

उत्सर (सं० पु०) छन्दोविशेष। इसमें पन्द्रह पन्द्रह अक्षरके चार पाद होते हैं। उत्सर अतिशक्करीका एक भेद है।

उत्सर्ग (सं० पु०) उत्-सृज-घञ्। १ त्याग, तर्क। २ दान, बख़्शिश। ३ सामान्यविधि, मामूली क़ायदा। ४ न्याय, क़ानून्। ५ सात्त्विक कर्तव्य क्रियाविशेष। स्नान, सन्ध्या एवं आचमनादिके बाद प्रथम नारायण, नवग्रह तथा गुरुको पूजा प्रदान करनी पड़ती है। द्रव्यको वाम हस्तमें रखना चाहिये। दक्षिण हस्तसे तीन बार पूज कर तत्तद्द्रव्याधिपति देवताको सम्प्र-दान करे, फिर कर कुश, तिल एवं जलत्यागपूर्वक दान दे। इसी क्रियाको वैधोत्सर्ग कहते हैं। ६ मल-मूत्रादिके त्यागकी क्रिया। (मनु १२।१२१)

उत्सर्गतः (सं० अव्य०) साधारणतः, मामूली तौरपर।

उत्सर्गिन् (सं० त्रि०) त्यागी, तर्क कर देनेवाला।

उत्सर्जन (सं० क्लो०) उत्-सृज-ल्युट्। १ दान, बख़्शिश। २ वेदोत्सर्गरूप छः मास कर्तव्य वैदिककी

एक क्रिया। पूर्वकालपर वेदशिक्षार्थी यह क्रिया करते थे—

"श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां वाप्युपाकृत्य यथाविधि।
युक्तश्छन्दांस्यधीयीत मासान् विप्रोऽर्धपञ्चमान्॥
पुष्ये तु छन्दसां कुर्याद्बहिरुत्सर्जनं द्विजः।
माघशुक्लस्य वा प्राप्ते पूर्वाह्णे प्रथमेऽहनि॥
यथाशास्त्रन्तु कृत्वैवमुत्सर्गं छन्दसां बहिः।
विरमेत् पक्षिणीं रात्रिं तदेवैकमहर्निशम्॥
अत ऊर्ध्वन्तु छन्दांसि शुक्लेषु नियतः पठेत्।
वेदाङ्गानि च सर्वाणि कृष्णपक्षेषु संपठेत्॥" (मनु ४।९५-९८)

श्रावण अथवा भाद्र मासकी पूर्णिमासे लगा गृह्यके अनुसार उपाकर्म समापनानन्तर साढ़े चार मास वेद पढ़ना चाहिये। फिर पौष मासके पुष्य नक्षत्रको ग्रामसे बहिर्भागमें पहुंच उत्सर्गक्रिया (विसर्जन होमादि) लगाये। अथवा माघ मासवाले शुक्लपक्षके प्रथम दिनको पूर्वाह्णमें यह उत्सर्ग कर्म करे। जो व्यक्ति माघ मासकी पूर्णिमाको उपाकर्म करता है, वही माघकी शुक्ल प्रतिपद्को उत्सर्ग लगाता है। ग्रामके बहिर्भागमें इसी प्रकार यथाशास्त्र देवका उत्सर्ग कर एक पक्ष अहोरात्र वेदाध्ययनमें विरत रहना चाहिये। इस उत्सर्ग-क्रियाके पीछे प्रति शुक्लपक्षमें संयतभावसे वेद पढ़ते हैं। फिर कृष्णपक्षमें समुदाय वेदाङ्गका पाठ करना चाहिये।

उत्सर्जनी (सं० स्त्री०) गुदका द्वितीय वलि, मिक्‌दके चमड़ेकी दूसरी तह।

उत्सर्प (सं० पु०) १ गमन वा निस्यन्दन, सरकाव। २ स्फाति, सूजन, चढ़ाव।

उत्सर्पण (सं० क्ली०) उत्-सृप भावे ल्युट्। १ उल्लङ्घन, लंघाई। २ ऊर्ध्वगमन, चढ़ाव। ३ त्याग, तर्क।

उत्सर्पिणी (सं० स्त्री०) १ जैनोंके कालका विभाग। जैनशास्त्रमें व्यवहारकालके अनेक अपेक्षाओंसे अनेक भेद कहे गये हैं। उनमें एक अपेक्षासे दो भेद होते हैं—उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। जिस कालमें भरत और ऐरावतक्षेत्रके जीवोंकी आयु शरीर संपत्ति सुख आदिकी वृद्धि होती चली जाय उसे उत्सर्पिणी काल कहते हैं और जिसमें उत्तरोत्तर हानिही होती जाय वह अवसर्पिणी है। "भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्यां" तत्त्वार्थसूत्र ३ अ०। फिर इन दोनो कालोंके भी प्रत्येकके छह छह भेद हैं। सुषमा सुषमा, सुषमा, सुषमा दुःषमा, दुःषमा सुषमा, दुःषमा, दुःषमा दुःषमा ये छह भेद तो अवसर्पिणीके हैं और दुःषमा दुःषमा, दुषमा आदि उलटे येही छह भेद उत्सर्पिणीके हैं। सुषमा सुषमाका परिमाण चार कोड़ाकोड़ी सागरोपमकाल। सागरोपमकाल देखो। सुषमाका तीन कोड़ाकोड़ी, सुषमा दुःषमाका दो कोड़ाकोड़ी, दुःषमा सुषमाका व्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागर, दुषमाका इक्कीस हजार वर्ष और दुःषमा दुःषमाका भी इक्कीस हजार वर्ष है। आजकल जो इस भरतक्षेत्रमें काल चल रहा है वह अवसर्पिणीका पांचवां दुःषमा है। (जैन हरिवंश ७ सर्ग ५५-६२ श्लोक)

२ ऊर्ध्वगमनशील, चढ़नेवाली।

उत्सर्पित (सं० त्रि०) १ निस्यन्दित, सरका हुआ। २ ऊर्ध्वगमनशील, चढा हुआ।

उत्सर्पिन् (सं० त्रि०) उत्-सर्पति, णिनि। १ ऊर्ध्वगामी, चढनेवाला। २ उल्लङ्घनकारी, लांघनेवाला।

उत्सर्या (सं० स्त्री०) उत्-सृ-यत्-टाप्। ऋतुमती अथवा गर्भयोग्यावस्थावाली गवी, गाभन होनेके काबिल गाय। (जटाधर)

उत्सव (सं० पु०) उ-सु-अच्। १ आरम्भ, आगाज, शुरू। (ऋक् १।१००।८) २ आनन्दजनक व्यापार, जलसा, खुशीका काम। ३ आनन्द, खुशी। ४ उत्सेक, गर्मी। ५ इच्छाप्रसव, ख्वाहिशका उभार। ६ कोप, गुस्सा। ७ उन्नति, तरक्की। ८ अभ्युदय, उरूज, बढ़ती। ९ अध्याय, बाब, किताबका एक हिस्सा।

उत्सवसङ्केत (सं० पु०) १ पुष्करारण्यवासी जाति विशेष, पुष्करके जङ्गलमें रहनेवाले लोग। (भारत सभा ३१ अ०) २ म्लेच्छ जाति विशेष। ये लोग सात प्रकारके होते हैं। भारतके उत्तर पार्वत्य प्रदेशमें इनका वास था। इनके जनपदको भी उत्सवसङ्केत कहते हैं। (भारत सभा २६ और भीष्म ९ अ०)

उत्साद (वै० पु०) यज्ञीय पशुका छेदनप्रदेश।

उत्सादक (सं० त्रि०) नष्ट करनेवाला, जो बरबाद कर देता हो।

उत्सादन (सं० क्लो०) उत्-सद-णिच्-ल्युट्। १ उत्सारण, सरकाव। २ स्थानान्तरकरण, दूसरी जगह हटा देनेका काम। (कात्यायन-श्रौतसूत्र १४।१।१०) ३ उद्दर्तन, उठाव। तैलादि द्वारा परिशोधनको उत्सादन कहते हैं। ४ विनाशन, बरबादी। ५ उन्मूलन, उखाड़। (भारत, वन १०२ अ०) ६ महावीरादि परित्यक्त देश, बहादुरोंका छोड़ा हुआ मुल्क। ७ उत्सव, जलसा। ८ समुल्लेखन, खिंचाव। ९ निम्न व्रणका उन्नतीकरण, नीचे ज़ख्मको उभारनेका काम। १० चेत्रका सम्यक् कर्षण, खेतकी खासी जोताई। ११ तैलाभ्यङ्ग द्वारा शुद्धीकरण, तेल लगा सफाई करनेका काम।

उत्सादनीय (सं० त्रि०) १ नष्ट किया जानेवाला, जो बरबाद किये जानेके क़ाबिल हो। २ पूर्ण करने योग्य, अञ्जाम देने लायक़। ३ चढ़ा जाने योग्य। (क्लो०) ४ व्रणौषध विशेष, ज़ख्मपर लगानेकी एक दवा। इससे घाव भर आता है।

उत्सादि (सं० पु०) उत्स-आदि। उत्सादिभ्योऽञ्। पा ४।१।८६। पाणिनिका कहा एक गण। इसमें निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उत्स, उदपान, विकर, विनद, महानद, महानस, महाप्राण, तरुण, तलुन, पृथिवी, धेनु, पंक्ति, जगती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, जनपद, भरत, उशीनर, ग्रीष्म, पीलुकुण, पृषदंश, भल्लकीय, रथन्तर, मध्यन्दिन, बृहत्, महत्, सत्वत्, कुरु, पञ्चाल, इन्द्रावसान, उष्णिह, ककुभ, सुवर्ण, देव।

उत्सादित (सं० त्रि०) उत्-सद-णिच्-क्त। १ उन्मूलित, उखाड़ा हुआ। २ उद्दर्तित, ऊपरको उठाया हुआ। ३ परिष्कृत, साफ़ किया हुआ।

उत्सादितव्य (सं० त्रि०) नष्ट किये जाने योग्य, जो बरबाद किये जानेके क़ाबिल हो।

उत्सारक (सं० पु०) उत्-सृ-णिच्-ण्वुल्। १ द्वारपाल, दरवान्। २ प्रहरी, चौकीदार। (त्रि०) ३ अपसारक, हटानेवाला।

उत्सारण (सं० क्लो०) उत्-सृ-णिच्-ल्युट्। १ दूरीकरण, हटा देनेका काम। २ अतिथिका स्वागत, मेहमान्की पेशवाई।

उत्सारित (सं० त्रि०) उत्-सृ-णिच्-क्त। १ दूरीकृत, हटाया हुआ। २ चालित, सरकाया हुआ। ३ स्थानान्तरित, दूसरी जगह पहुंचाया हुआ।

उत्साह (सं० पु०) उत्-सह-घञ्। १ उद्यम, कोशिश। २ अध्यवसाय, इस्तक़लाल। ३ स्थिरयत्न, पक्की तदबीर। ४ वीररसका स्थायी भाव, हिम्मत, हौसला। "उत्तमप्रकृतिर्वीर उत्साहः स्थायिभावकः।" (साहित्यदर्पण) ५ राजाका गुणविशेष, बादशाहका एक वस्फ़। "चारेणोत्साहयोगेन क्रिययैव च कर्मणाम्।" (मनु ९।२९८) ६ कल्याण, भला। ७ सूत्र, धागा। ८ हर्ष, खुशी। ९ संरम्भ, शुरू। १० सङ्गीतशास्त्रोक्त ध्रुवक विशेष। इसका लक्षण हास्यरस, केन्दुकताल और वंशवृद्धिकर त्रयोदशाक्षर पाद है।

उत्साहयुक्त (सं० पु०) शरभ, हुमा।

उत्साहवत् (सं० त्रि०) उद्यमी, दृढ़, हौसलेमन्द।

उत्साहवर्धन (सं० क्लो०) उत्साह-वृध्-ल्युट्। १ उद्यमवृद्धि, हौसलेमन्दी। २ वीरत्व, बहादुरी।

उत्साहसम्पन्न (सं० त्रि०) कार्यरत, हौसलेमन्द, काममें लगा रहनेवाला।

उत्साहन (सं० क्लो०) चेष्टा, दृढ़ता, कोशिश, सब्र।

उत्साहिन् (सं० त्रि०) उत्साह रखनेवाला, हौसलेमन्द।

उत्साही (सं० पु०) भक्तरोगी, खानेका बीमार।

उत्सिंहन (सं० क्लो०) नासा द्वारा ऊर्ध्व श्वासका धारण, नाकसे ऊपरी सांसकी रोक।

उत्सिक्त (सं० त्रि०) उत्-सिच्-क्त। १ गर्वित, मग़रूर, घमण्डी। २ वर्धित, बढ़ा हुआ। ३ उद्रिक्त, फेंका या खाली किया हुआ। ४ उन्नत, चढ़ा या उठा हुआ। ५ प्लावित, डूबा हुआ।

उत्सिच्यमान (सं० त्रि०) १ जलकी झड़ी लगानेवाला, जो पानी बरसाता हो। २ वृद्धिशील, बढ़नेवाला।

उत्सिसृक्षु (सं० त्रि०) उत्पन्न करनेका अभिलाषी, जो बनाना चाहता हो।

उत्सुक (सं० त्रि०) उत्-सु-क्विप्-कन्। १ इच्छुक, ख़ाहिशमन्द, चाहनेवाला। २ उत्कण्ठित, जिसे

जानसे लगी। ३ पश्चात्तापकारी, पछतानेवाला। ४ व्याकुल, बेचैन। (पु०) ५ उत्कण्ठा, ख्वाहिश, चाह।
उत्सुकता (सं० स्त्री०) १ व्याकुलता, बेचैनी। २ प्रेम, प्यार। ३ पश्चात्ताप, पछतावा, तकलीफ़।
उत्सूत्र (सं० त्रि०) उत्क्रान्तः सूत्रम्, अत्या० समा०। १ सूत्रसे बहिर्भूत, धागेसे अलग, जो लड़ीमें न हो। २ अनियमित, बेक़ायदा, ढीला।
उत्सूर (सं० पु०) अतिक्रान्तं सूरं सूर्यम्। दिनावसान, विकाल, शाम, सूरज डूबनेका समय।
उत्सृजन (सं० क्ली०) उत्-सृज-ल्युट्। १ त्याग, तर्क। २ समर्पण, सौंप देनेका काम।
उत्सृज्य (सं० अव्य०) त्याग करके, छोड़के।
उत्सृष्ट (सं० त्रि०) उत्-सृज-क्त। १ त्यक्त, छोड़ा हुआ। २ दत्त, दिया हुआ। ३ स्रावित, उंडेला हुआ, जो फेंक दिया गया हो।
उत्सृष्टपशु (सं० पु०) त्यक्तवृषभ, छोड़ा हुआ सांड। यह किसीके मरनेपर छोड़ा जाता है।
उत्सृष्टवत् (सं० त्रि०) त्याग करनेवाला, जो छोड़ देता हो।
उत्सृष्टवृत्ति (सं० स्त्री०) त्यक्तवस्तु द्वारा निर्वाह।
उत्सृष्टि (सं० स्त्री०) त्याग, तर्क।
उत्सृष्टुकाम (सं० त्रि०) त्याग करनेका अभिलाषी, जो छोड़ना चाहता हो।
उत्सेक (सं० पु०) उत्-सिच्-घञ्। १ गर्व, अहङ्कार, घमण्ड। २ उद्रेक, उंडेल। ३ उपरिसेक, उफान। ४ वृद्धि, बाढ़।
उत्सेकिन् (सं० त्रि०) १ वृद्धिशील, उमडनेवाला। २ अहङ्कारी, घमण्डी।
उत्सेचन (सं० क्ली०) उत्-सिच्-ल्युट्। ऊर्ध्वसेचन, उबाल, उफान, बहाव, बढाव।
उत्सेध (सं० त्रि०) उत-सिध-घञ्। १ उच्च, ऊंचा। (पु०) २ पर्वत वृक्षादिका दैर्घ्य, पहाड़ पेड़ वगैरहकी उंचाई। ३ उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा। ४ स्थूलता, मोटापन। ५ शोथ, सूजन। ६ आधिक्य, बढ़ती। ७ देह, जिस्म। (क्ली०) ८ वध, क़तल।
उत्सेधांगुल—एक परिमाण। जैनशास्त्रानुसार यह आठ यवके बराबर होता है और इससे जीवोंके शरीरकी ऊंचाई तथा छोटी वस्तुओंका परिमाण होता है। (जैन हरिवंश ७४१)
उत्स्मय (सं० पु०) मन्दहास्य, मुसकुराहट।
उत्स्मयत (सं० त्रि०) मन्दहास्ययुक्त, मुसकुरानेवाला।
उत्स्य (वै० त्रि०) कूप वा निर्झरसे आनेवाला, जो कुवें या भरनेसे निकलता हो।
उथपना (हिं० क्रि०) उत्थान करना, निकालना, हटाना।
उथल (हिं० वि०) १ अगभीर, जो गहरा न हो। २ तुच्छ, छिछोरा। ३ भेदको गुप्त रख न सकनेवाला, पेटका हलका।
उथलना (हिं० क्रि०) चञ्चल बनना, पाबन्द न रहना।
उथलपुथल (हिं० वि०) १ परिवर्तित, औंधा, उलटा-पुलटा। (क्रि० वि०) २ परिवर्तित रूपसे, उलट-पुलटकर।
उथला, उथल देखो।
उथलाना (हिं० क्रि०) १ परिवर्तित करना, इधरका उधर लगाना। २ अव्यवस्थित बनाना, गड़बड़ डालना। ३ स्थानच्युत करना, असली जगहसे हटा देना।
उद् (सं० अव्य०) उ-क्विप्-तुक्। १ प्रकाशमें, देखते-देखते, खुला-खुली। २ विभागसे, बांटकर। ३ लाभपर, फ़ायदेसे। ४ उत्कर्षमें, बढ़कर। ५ ऊर्ध्वपर, ऊपर-ऊपर। ६ प्राबल्यमें, जबरन्। ७ आश्चर्यसे, ताज्जुबके साथ। ८ शक्तिमें, जोर देकर। ९ प्राधान्यपर, दबावसे। १० बन्धनमें, पकड़कर। ११ भावपर, हालतके मुवाफ़िक़। १२ मोचनसे, छोड़ते हुये। १३ ब्रह्मपर, परमेश्वरके नामसे। १४ अस्वास्थ्यपर, नातनदुरुस्तीसे। यह शब्द संज्ञा और क्रियाके पहले आता है।
उद (सं० क्ली०) उन्द-अच निपातनात्। १ जल, पानी। "सहस्रशावीरुदवासतत्परा।" (कुमार ५।१६) (पु०) २ करिशृङ्खला, हाथीकी जञ्जीर।
उदक् (सं० अव्य०) १ उत्तरदिक्, शिमालकी तर्फ़। २ उपरि, ऊपर। ३ अन्ततः, आखिरश। (त्रि०)

४ ऊर्ध्वगमनशील, ऊपरको घूमा हुआ। ५ उपरिस्थ, ऊपरवाला। ६ उत्तरस्थ, शिमाली। ७ अन्त्य, आखिरी।

उदक (सं॰ क्लो॰) उन्दो क्लेदने उन्द क्वुन्। उदकश्च। उण् २।३९। १ जल, पानी। जल देखो। २ करि-शृङ्खल, हाथी बांधनेको जञ्जीर।

उदककार्य (सं॰ क्ली॰) १ जल द्वारा किया जाने-वाला एक धार्मिक कार्य। २ देहशुद्धि, जिस्मकी सफ़ाई। ३ मृतके अर्थ हवन।

उदककुम्भ (सं॰ पु॰) जलघट, पानीका घड़ा।

उदकक्रिया (सं॰ स्त्री॰) शास्त्रविहित जलादि द्वारा तर्पण। तर्पण देखो।

उदकक्रीड़न (सं॰ क्ली॰) जलविहार, पानीका खेल।

उदककृच्छ्र (सं॰ पु॰) व्रत विशेष। इसमें एक मास पर्यन्त केवल यवका सक्तु खाते और जल पीते हैं।

उदकगाह (सं॰ पु॰) जल प्रवेश, पानीमें दख़ल।

उदकगिरि (सं॰ पु॰) जलप्रवाहयुक्त पर्वत, नदी नालेसे भरा हुआ पहाड़।

उदकद (सं॰ त्रि॰) १ जल प्रदान करनेवाला, जो पानी देता हो। (पु॰) २ उत्तराधिकारी, वारिश, जो पितरको पानी दे सकता हो।

उदकदाढ़, उदकद देखो।

उदकदान (सं॰ क्ली॰) उदकक्रिया देखो।

उदकदानिक (सं॰ त्रि॰) तर्पण सम्बन्धीय।

उदकधर (सं॰ पु॰) जलधर, बादल।

उदकना (हिं॰ क्रि॰) ऊपर उठ आना, निकल जाना।

उदकपरीक्षा (सं॰ स्त्री॰) विवाहादिके समयपर लौकिक प्रमाण न मिलते जलमज्जनादि द्वारा शपथका कराना।

उदकपर्वत, उदकगिरि देखो।

उदकपूर्वक (सं॰ अव्य॰) सङ्कल्पपूर्वक, दान वा वचन लेनेके लिये हाथपर पानीको डालकर।

उदकप्रक्षेपण (सं॰ क्ली॰) जलके शीतीकरणका उपाय, पानी ठण्डा करनेकी तदबीर।

उदकप्रतीकाश (सं॰ त्रि॰) जलप्रभ, पानी-जैसा।

उदकप्रमेह, उदकमेह देखो।

उदकभार (सं॰ पु॰) जलका युग, पानी ले जानेकी कड़ी।

उदकभूम (सं॰ पु॰) आर्द्रस्थली, तर ज़मीन्।

उदकमक्षिका (सं॰ स्त्री॰) जलके प्रसाधनार्थ एक आधार, पानी रखनेका अड्डा।

उदकमञ्जरीरस (सं॰ पु॰) निरामज्वरका एक रस, पके हुये बुखारकी एक दवा। एक एक भाग पारा, गन्धक, सोहागेकी फूली और मरिच तथा चार भाग शर्कराको २४ प्रहर बार बार भावना देनेसे यह रस बनता है। फिर शर्कराके स्थानमें मनःशिला डालनेसे चन्द्रशेखररस निकलता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदकमण्डल, उदककुम्भ देखो।

उदकमन्थ (सं॰ पु॰) निस्त्वचीभूत शस्य विशेष, एक अनाज। इसका छिलका उतरा रहता है।

उदकमेह (सं॰ क्ली॰) कफोत्थ मेह विशेष, बल-गमसे पैदा हुआ जिरियान्। इसमें अच्छ, बलुसित, शीत, निर्गन्ध, उदकोपम और किञ्चित् आविल पिच्छल मेह बहता है। (माधव निदान)

उदकमेहिन् (सं॰ त्रि॰) उदकमेहका रोगी, जिसके बलगमका जिरियान् रहे।

उदकवज्र (सं॰ पु॰) गर्जित वृष्टि, कड़कड़ाहटकी बारिश।

उदकल, उदकवत् देखो।

उदकवत् (सं॰ त्रि॰) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदकविन्दु (सं॰ पु॰) जलका लव, पानीका बूंद।

उदकवहस्रोत (सं॰ क्ली॰) जलवह नाड़ी, पानी चलनेकी नस। ये दो होते हैं। मूल तालु और अपर क्लोममें हैं। (सुश्रुत शारीरस्थान)

उदकवहा (सं॰ स्त्री॰), उदकवहस्रोत देखो।

उदकवीवध, उदकभार देखो।

उदकशाक (सं॰ क्ली॰) जलशाक, पानीमें पैदा होनेवाली सब्ज़ी।

उदकशान्ति (सं॰ स्त्री॰) जलद्वारा ज्वरका निवारण, पानीसे बुखार छुड़ानेका काम। इसमें विनियोजित जल रोगीपर छिड़कते हैं।

उदकषट्पलघृत (सं० क्ली०) अर्शोरोगका घृत-विशेष, बवासीरकी बीमारीका एक घी। यवक्षार, पिप्पलीमूल, चव्य एवं चित्रक एक एक पल ले कल्क बनाये और ४ शरावक तिलका तैल तथा १२ शरावक दुग्ध डाल ४ सेर घृत पकाये। इस घृतसे ज्वर, अर्श, प्लीहा और कासका रोग नष्ट होता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

उदकसक्तु (सं० पु०) आर्द्रीकृत पिष्टशालि, पानीसे तर किया हुआ सत्तू।

उदकस्पर्श (सं० त्रि०) १ जलसे शरीरके विभिन्न अङ्गस्पर्श करनेवाला। २ प्रतिज्ञाकी मूर्तिके लिये जलको छूनेवाला।

उदकहार (सं० पु०) जलवाहक, पानी ले जानेवाला।

उदकान्त (सं० क्ली०) जलका तट, पानी या दरयाका किनारा।

उदकार्थिन् (सं० त्रि०) तृषित, प्यासा, पानी मांगनेवाला।

उदकाहार (सं० पु०) जलका आकर्षण, पानी खींचनेका काम।

उदकिका (सं० स्त्री०) बलानाम क्षुप, बरियारी, गुलशकरी।

उदकिल, उदकवत् देखो।

उदकी (सं० स्त्री०) पाठा, पारी, हरज्योरी।

उदकीर्य (सं० पु०) महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। यह पानीमें होता है।

उदकीय, उदकीर्य देखो।

उदकीर्या (सं० स्त्री०) पूतीकरञ्ज, करञ्ज।

उदकुम्भ, उदककुम्भ देखो।

उदकेचर (सं० त्रि०) जलचर, पानीमें रहने या चलने-फिरनेवाला।

उदकेविशीर्ण (सं० त्रि०) जलमें शुष्कीभूत, पानीमें सूखा हुआ। यह शब्द उपमाकी भांति असम्भव विषयके लिये आता है।

उदकोदञ्चन, उदककुम्भ देखो।

उदकोदर (सं० पु०) जलोदरनाम रोग। उदर देखो।

उदकौदन (सं० पु०) जलके साथ पक्वशालि, पानीमें उबाला हुआ चावल।

उदक्त (सं० त्रि०) उद-अन्‌ज-क्त। १ कूपसे उत्तोलित, कुवेंसे निकाला हुआ। २ उत्थित, उठा या चढ़ा हुआ। ३ प्रेरित, पहुंचाया हुआ। ४ कथित, कहा हुआ।

उदक्तात् (वै० अव्य०) उत्तरकी ओर, शिमालकी तर्फ।

उदक्पथ (सं० पु०) उत्तरीय देश, शिमाली मुल्क।

उदक्प्रवण (सं० त्रि०) १ क्रमशः दक्षिणसे उत्तरको निम्न, सिलसिलेवार जनूबसे शिमालको ढला हुआ। (कात्यायनश्रौतसूत्र २१।३।१६) २ उत्तरमार्गगामी, शिमालीराहसे जानेवाला।

"उदक्प्रवणो यज्ञो यदैवम्वद ब्रह्मा भवति।" (छान्दोग्य उप० ४।१७।९)
'उदक्प्रवणः उत्तरमार्गं प्रति हेतुरित्यर्थः।' (भाष्य)

उदक्य (सं० त्रि०) उदकमर्हति, उदक-य। दण्डादिभ्यो यः। पा ५।१।६६। १ जलमें होनेवाला। २ जलस्नानार्ह, पानीमें धोया जानेवाला। (पु०) ३ जलयोग्य व्रीहि प्रभृति, पानीमें उपजनेवाला अनाज वगैरह।

उदक्या (सं० स्त्री०) उदक संज्ञाया यत्-टाप्। दिगादिभ्यो यत्। पा ४।३।५४। रजस्वला, जो औरत कपड़ोंसे हो। "नोदक्ययाभिभाषेत् यज्ञं गच्छेन्नचावृतः।" (मनु)

उदगद्रि (सं० पु०) १ उत्तरीय पर्वत, शिमाली पहाड़। २ हिमालय।

उदगयन (सं० क्ली०) उत्तरायण, सूर्यके दक्षिणसे उत्तरको ओर झुकनेका समय।

उदगरना (हिं० क्रि०) १ उद्गारण होना, भीतरसे बाहर निकलना। २ प्रकाश पाना, खुल जाना। ३ उत्तेजित होना, तेज पड़ना।

उदगर्गल (सं० पु०) पृथिवीके स्थानविशेषमें जलका अनुसन्धान, पानीका पता। यह एक ज्योतिषसम्बन्धीय विद्या है। इससे समझ सकते हैं—किस स्थानपर कितना गहरा खोदनेसे पानी निकलेगा।

उदगारना (हिं० क्रि०) उद्गार करना, निकाल डालना।

उदग्ग (हिं०) उदग्र देखो।

उदग्दश (सं० क्ली०) उदक उत्तरा दशा यस्य। १ उत्तराग्रवस्त्र, कपड़का जो किनारा शिमालकी तर्फ झुका रहे।

उदग्भूम (सं॰ पु॰) उदक् उन्नता प्रशस्ता वा भूमिर्यत्र, उदक्-भूमि-अच्। "कृष्योदकपाण्डुसंख्या पूर्वाया भूमेरजिष्यते।" (पा ५।४।७५ सूत्रे सिद्धान्तकौमुदी) उत्कृष्ट भूमि, बढ़िया ज़मीन्।

उदग्र (सं॰ त्रि॰) उत-अग्र। १ उच्च, ऊंचा। २ वृद्ध, बुड्ढा। ३ उद्धत, अक्खड़। ४ दीर्घ, बड़ा। ५ विशाल, आलीशान्। ६ महत्, अज़ीम।

उदग्रदत् (सं॰ पु॰) उद-अग्र-दह। अग्रान्तशुद्धशुभ्रवृष-वराहेभ्यश्च। पा ५।४।१४५। १ उच्चदन्तहस्ती, बड़े दांतोंका हाथी। (त्रि॰) २ उच्चदन्तयुक्त, ऊंचे दांतोंवाला।

उदग्राभ (वै॰ पु॰) उदकग्राही मेघ, पानी रखनेवाला बादल। "मदायोदग्राभस्य नमयन्नधस्त्वं:।" (ऋक् ८।६७।१५)

'उदकग्राभमुदकग्राहिणं मेघम्।' (सायण)

(त्रि॰) २ जलग्राही, पानी रखनेवाला।

उदघटना (हिं॰ क्रि॰) निकलना, खुलना।

उदघाटना (हिं॰ क्रि॰) उद्घाटन करना, खोल देना।

उदङ्क (सं॰ पु॰) उत्-अनच-घञ्। १ चर्ममय घृतादि पात्र, कुप्पा, घी तेल वग़ैरह रखनेको चमड़ेका बरतन। २ सन्दंश, चिमटा या सन्सी। "ह्रदयोदङ्कसंस्थानं कृतान्तानामसन्निभम्।" (भट्टि) ३ एकजन ऋषि। (शतपथब्राह्मण १४।६।१०।२)

उदङ्मुख (सं॰ त्रि॰) उदक् उत्तरस्यां मुखमस्य। उत्तरमुख, जो मुंहको शिमालकी तरफ़ झुकाये हो।

उदङ्मृत्तिक, उदङ्भूम देखो।

उदचमस (वै॰ पु॰) उदकस्थापनयोग्य चमसाकार एक पात्र।

उदचव्वा—एक देवी। बम्बई प्रान्तीय धारवाड़ जिलेके अदरङ्गुची ताल्लुकमें होरेहणडी ग्रामसे खोटीग नृपतिकी जो शिलालिपि निकली, उसके पृष्ठपर इन देवीकी मूर्ति बनी है।

उदज (सं॰ पु॰) उत्-अज पशुविषयके धात्वर्थे अप्। समुदोरजः पशुषु। पा ३।३।६९। १ पशुप्रेरण, मवेशियोंकी हंकाई। (त्रि॰) २ जलजात, पानीसे पैदा।

उदजन—Hydrogen हाइड्रोजन देखो।

उदञ्च (सं॰ त्रि॰) १ ऊपरि गमनकारी, ऊपरको घूमा हुआ। २ उपरिस्थ, ऊपरवाला। ३ उत्तरको ओर घूमा हुआ, शिमाली। ४ पश्चात्, पिछला।

उदञ्चन (सं॰ क्लो॰) उत्-अञ्च भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्वक्षेपण, ऊपरको फेंकफांक। २ उद्गमन, चढ़ाई, उठान। ३ आच्छादन, ढकन। ४ घटीयन्त्र, डोल। (त्रि॰) कर्तरि ल्यु। ५ उत्क्षेपक, ऊपर फेंकनेवाला।

उदञ्चित (सं॰ त्रि॰) उत्-अञ्च-क्त। १ उत्क्षिप्त, फेंका या ऊपर उठाया हुआ। २ पूजित, पूजा हुआ। ३ ऊर्ध्वगत, चढ़ा हुआ।

उदञ्जलि (सं॰ त्रि॰) हथेलियोंकी गहराकर हाथ उठानेवाला।

उदण्ड (हिं॰) उद्दण्ड देखो।

उदण्डपाल (सं॰ पु॰) १ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह अण्डेसे निकलते ही भागती है। २ सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप।

उदण्डपुर (सं॰ क्लो॰) १ मगध। २ विहारनगर। यह नाम प्राचीन शिलालिपिमें मिला है।

उदथ (हिं॰ पु॰) सूर्य, आफ़ताब।

उददान (सं॰ त्रि॰) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदद्या (सं॰ स्त्री॰) उत्-अद बाहुलकात् यत्। तैलपायिका, तिलचट्टा।

उदधि (सं॰ पु॰) उदकानि धीयन्तेऽस्मिन्, उद-धा-कि। पेष वासवाहनधिषु च। पा ६।३।५८। १ समुद्र, बहर। २ तट, किनारा। ३ मेघ, बादल। ४ सूर्य, आफ़ताब। "स सूर्येण दिद्युतदुदधिर्निधिः।" (वाजसनेयसंहिता ३८।२२) ५ घट, घड़ा। ६ जलाशय, तालाब। ७ ह्रद, झील। (वै॰ त्रि॰) ८ जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदधिकफ (सं॰ पु॰) समुद्रफेन, बहरका बलगम।

उदधिकुमार (सं॰ पु॰) जैन-शास्त्रानुसार देवोंके जो व्यंतर, ज्योतिषी, भवनवासी और वैमानिक ये चार भेद बतलाये हैं, उनमेंसे भवनवासियोंका एक भेद। उदधिकुमार देव अधोलोकको रत्नप्रभा नामक पृथ्वीके खर भागमें रहते हैं। वहां इनके भवनोंकी संख्या छहत्तर लाख है। उत्कृष्ट आयुकाल डेढ पल्य है। पल्य देखो। स्वाभाविक शरीरकी लंबाई दश धनुष है।

इनके मानसिक भाव कुमारोंकेसे होते हैं इसलिये कुमार नाम पड़ा है।

उदधिक्रम, उदधिक्रा देखो।

उदधिक्रा (वै० पु०) उदधि-क्रम-विट्। समुद्राक्रमण-कर्ता, बहर पर सफर करनेवाला।

उदधिमेखला (सं० स्त्री०) चारो दिक् सागरसे वेष्टित पृथिवी, बहरसे घिरी हुई ज़मीन्।

उदधिराज (सं० पु०) नदीका राजा समुद्र।

उदधिलवण (सं० क्ली०) सामुद्र लवण, बहरी नमक।

उदधिवस्त्रा, उदधिमेखला देखो।

उदधिशुक्ति (सं० स्त्री) मुक्तास्फोट, बहरी सीप।

उदधिसम्भव, उदधिलवण देखो।

उदधिसुत (सं० पु०) उदधिके पुत्र। चन्द्र, अमृत, शङ्ख और कमल उदधिके पुत्र हैं।

उदधिसुता (सं० स्त्री०) समुद्रकी कन्या। लक्ष्मी और द्वारकाको उदधिसुता कहते हैं।

उदधीय (सं० त्रि०) सामुद्र, समुद्रजात, बहरी।

उदन् (सं० क्ली०) पद्दन्नोमास् हृन्निशसन्यूषन्दोषन्यकञ्छकन्नुदन्नासञ्छस प्रभृतिषु। पा ६।१।६३। इति सूत्रे उदकस्य उदनादेशः। उदक, पानी।

उदनिमत् (वै० त्रि०) तरङ्गमय, जिसमें लहरें उठें।

उदन्त (सं० पु०) १ वार्ता, बात। २ समाचार, खबर। ३ साधु, पाकसाफ आदमी। ४ वृत्तियाजन, रोजगारसे काम चलानेवाला। (त्रि०) ५ किसी वस्तुके अन्त तक पहुंचनेवाला। (हिं० वि०) ६ दन्तहीन, बेदांत, जिसके दांत न निकले। यह शब्द पशुके लिये आता है।

उदन्तक (सं०पु०) उदन्त स्वार्थे कन्। संवाद, खबर।

उदन्तिका (सं० स्त्री०) उदन्त-णिच्-ण्वुल्-टाप्। तृप्ति, आसूदगी, छकाहट।

उदन्त्य (सं० त्रि०) सीमाके परे रहनेवाला, जो हदके उस तर्फ रहता हो।

उदन्य (वै० त्रि०) जलमय, पानीसे भरा हुआ।

उदन्यज (वै० त्रि०) जलमें उपजने या रहनेवाला।

उदन्या (सं० स्त्री०) उदन्यति उदकमिच्छति, अशनायोदन्यधनायाबुभुक्षापिपासागर्धेषु। पा ७।४।३४। इति क्यच् प्रत्यये परे आत्वं निपात्यते। १ पिपासा, प्यास। वेदे वाहुलकात् क्यच्। २ जलानयन, पानीका लाना। ३ जलसम्बन्धिनी, पानीसे सरोकार रखनेवाली।

उदन्यु (वै० त्रि०) उदन्य-उण्। जलेच्छु, पिपासु, पानी ढूंढनेवाला। "इरि मवन्त्ये ऽवता उदन्युव:।"(ऋक् ८।९८।२७) 'उदन्यव: उदकेच्छावन्त:।' (सायण)

उदन्वत, उदन्वान् देखो।

उदन्वान् (वै० पु०) उदकानि सन्त्यत्र, उदक-मतुप्, मस्य वः। उदन्वानुदधौ च। पा ८।२।१३। १ समुद्र, बहर। "ते च प्रापुरुदन्वन्तं बुबुधे चादिपूरुषः।" (रघु) २ ऋषिविशेष। (त्रि०) ३ उदकयुक्त, पानी रखनेवाला। (ऋक् ५।८३।७)

उदप (सं० त्रि०) पानीको पार करनेवाला।

उदपर्णी (सं० पु०) कुधान्यविशेष, एक खराब अनाज।

उदपात्र (सं० क्ली०) जलपूर्ण पात्र, लोटा।

"भिक्षामप्युदपात्रं वा सत्कृत्य विधिपूर्वकम्।" (मनु ३।९६)

उदपान (सं० पु०-क्ली०) उदकं पीयतेऽत्रेति, उदक-पा अधिकरणे ल्युट्। १ कूप, कूवां।

"यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥" (गीता २।४६)

२ कमण्डलु।

उदपानमण्डूक (सं० पु०) कूएका मण्डूक, कूवेंका मेंडक। यह शब्द उस व्यक्तिके लिये आता है, जो अनुभवशून्य होता और नैकट्य भिन्न अन्य विषय नहीं समझता।

उदपू (वै० त्रि०) जलसे अपनी शुद्धि करनेवाला, जो पानीसे पाकसाफ बना हो।

उदपेष (सं० क्ली०) १ जलपेष, खमीर, लेही, गारा। (अव्य०) २ जलमें पीस कर, पानीसे रगड़के।

उदप्रुत् (वै० त्रि०) जलमें सन्तरण करनेवाला, जो पानीमें तैरता हो।

उदप्लुत, उदप्रुत् देखो।

उदवस (हिं० वि०) १ शून्य, सूना। २ स्थानान्तरित, किसी जगहसे हटाया हुआ, जो मारा मारा फिरता हो।

उदवसना (हिं० क्रि०) १ स्थानान्तरित करना, किसी जगहसे निकाल देना। २ शून्यकरना, सूना बनाना।

उदभर (हिं॰) उद्गर देखो।

उदभव (हिं॰) उद्भव देखो।

उदभार (सं॰ पु॰) मेघ, बादल।

उदभीत (हिं॰ पु॰) आश्चर्य, ताज्जुब, अनोखी बात।

उदमन्थ (सं॰ पु॰) १ उदकप्रधान मन्थ, पानीकी मथानी। २ जलालोड़ित सघृत शक्तु, घी और पानीका सत्तू। इसे ग्रीष्ममें सेवन करना चाहिये। (भावप्रकाश)

उदमदना (हिं॰ क्रि॰) उन्मत्त होना, पागल बनना।

उदमन्थ (सं॰ पु॰) यवका जल, जौका पानी।

उदमाद (हिं॰) उन्माद देखो।

उदमादी (हिं॰ वि॰) उन्मत्त, मतवाला।

उदमान (सं॰ पु॰) १ वारिके मानका आढ़क। यह ४०८६ माशेका होता है। (हिं॰ वि॰) २ उन्मत्त, मतवाला।

उदमानना (हिं॰ क्रि॰) उन्मत्त होना, पागल बनना।

उदमेघ (सं॰ पु॰) १ जलयुक्त मेघ, पानीसे भरा हुआ बादल। २ जलवृष्टि, पानीकी झड़।

उदम्बर (सं॰ पु॰) १ शरीरज क्रमिका एक भेद, जिसमें पैदा होनेवाला एक कीड़ा। कृमि देखो। २ ताम्र, तांबा।

उदय (सं॰ पु॰) उदयन्ति चन्द्रसूर्यादयो ग्रहा यस्मात्, उत्-इ-अच्। १ पूर्वपर्वत, उदयाचल।

"उदित उदयगिरि मञ्चपर रघुवर बालपतङ्ग।
विकसे सन्त सरोज वन हरखे लोचन भृङ्ग॥" (तुलसी)

२ समुन्नति, उरूज, उठान।

"उदय तासु त्रिभुवनमय भागा।" (तुलसी)

३ मङ्गल, भलाई। ४ दीप्ति, चमक। ५ आविर्भाव, निकास। ६ वृद्धि, बढ़ती। ७ लाभ, फायदा। ८ फलसिद्धि, कामयाबी। ९ लग्न, ग्रहगणका प्रकाश। सूर्यादि शब्दमें ग्रहके उदयका विवरण देखो। १० भावी उत्सर्पिणीके सप्तम अर्हत्, उदयाश्व। यह याज्ञिकके पुत्र और शाक्यमुनिके शिष्य थे। (त्रि॰) ११ व्याकरणमें—पश्चाद्गामी, पीछे पड़नेवाला।

उदयगढ़ (हिं॰ पु॰) उदयाचल।

उदयगिर—दाक्षिणात्यका एक ग्राम। यह अहमदनगरसे १६० मील दूर है। १७६० ई॰को मराठोंने यहां निज़ामकी फौजपर आक्रमण मारा था। निज़ामके हारनेपर सन्धि हुई। दौलताबाद, सिवर, असीरगढ़, तथा विजापुरका क़िला, अहमदनगर और विजापुर विदर एवं औरङ्गाबाद प्रान्तका अधिक भाग मराठोंके हाथ लगा। वर्तमान अहमदनगरके समग्र प्रान्त और नासिकके कुछ भागपर भी उनका अधिकार हो गया था। पेशवाके सेनापति सदाशिव रावने बड़ी वीरता दिखाई थी।

उदयगिरि—उड़ीसा प्रान्तके पुरी ज़िलेका एक पर्वत। यह सामान्य वनपथमें खण्डगिरिसे स्वतन्त्र है। अति पूर्वकालसे (प्रायः ३०० ई॰के पहले) उदयगिरि अपनी पवित्र गुहाओंके लिये प्रसिद्ध है।

रानीहंसपुर, गणेश, स्वर्गपुरी, भजन, जया, विजया, अनन्त, हस्ति, पवन और व्याघ्र-गुफा ही प्रधान हैं। सकल गुहाओंमें पर्वत तोड़ गृहादि बने हैं। आजकल यद्यपि इनकी अवस्था नितान्त मन्द हो गई, अनेकांशमें गृहादि बिगड़ गये और सकल स्थानोंमें व्याघ्र-भल्लूक रहते, तो भी बोध होता है—पूर्वकालपर इन सकल गुहाओंमें बौद्धधर्मावलम्बी यति तथा सन्यासी रहा करते थे। अनेक गुहा सङ्घाराम नामसे विख्यात थीं। इन्हें देखनेके लिये पहले कितने ही बौद्धयात्री यहां आते थे। ई॰के ७म शताब्दमें चीनपरिव्राजक युअन्चुयङ्ग यहां पहुंचे थे। उन्होंने पुष्पगिरि नामक सङ्घारामकी बात लिखी है। अनुमान है—यह सङ्घाराम उदयगिरिके ऊपर या पास ही रहा होगा।

२ अन्य एक पर्वत। यह वेशनगरसे एक कोस दक्षिण-पश्चिम और सांचीसे ढाई कोस दूर अवस्थित है। उदयगिरि एक मील विस्तृत है। इसमें अनेक मूर्ति खुदी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी मूर्ति वृहत् हैं। एक स्थानमें स्वर्गसे गङ्गा और यमुनाके अवतरणका दृश्य है। दृश्यका कारुकार्य अति चमत्कारी है। जहां गङ्गायमुनाकी धार पृथिवीपर स्वर्गसे पड़ी, वहां उभय देवीकी मकरवाहना और कूर्मवाहना मूर्ति बनी है। स्वधर्मनिष्ठ हिन्दू तीर्थदर्शनको आते हैं। इस पर्वतमें चन्द्रगुप्त (२य) राजाके १०६ गुप्तकालका

एक अनुशासन मिला है। वेशनगर निकटस्थ गृहादिके प्राचीर इसी पर्वतके प्रस्तरसे बने हैं।

३ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गञ्जाम जिलेका एक तालुक। इसमें खन्द और शबर जातिके लोक अधिक रहते हैं।

४ मन्द्राज प्रान्तके अन्तर्गत नेल्लूर जिलेकी एक तहसील। भूमिका परिमाण ८५० वर्गमील है। लोकसंख्या प्राय: एक लक्षसे कम है।

उदयचन्द्र—१ बम्बईप्रान्तीय कनाड़ा जिलेवाले प्राचीन पल्लव-नृपति नन्दीवर्माके एक सेनापति। ये पुचानवंश-सम्भूत और वेगवती नदीतीरस्थ विल्लनगरके अधिपति थे। मन्द्राजप्रान्तीय उत्तर-अरकाट जिलेके प्राचीन नरेश उदयेन्दिरमका जो ताम्रफलक निकला, उसमें लिखा है—२य परमेश्वरवर्मा-नृपतिके अनुयायी द्रामिल राजावोंने नन्दीपुरमें नन्दीवर्माको घेर लिया था। किन्तु उदयचन्द्रने वहां पहुंच अपने हाथसे पल्लवराज चित्रमयको मारा और स्वामीको कष्टसे उबारा। इन्होंने निम्बवन, चूतवन, शङ्करग्राम, नेल्लूर, नेलवेली, सुरावलन्टूर तथा अन्य स्थानोंके भी रणक्षेत्रमें कई बार शत्रुको हराया और नन्दीवर्माका राज्य बचाया था। नेलवेलीमें उदयचन्द्रने शबरराज उदयनको भी वधकर मोरपुच्छ लगा शीशेका छत्र छीन लिया। उत्तरीय प्रान्तमें इन्होंने अश्वमेधयज्ञ करनेवाले पृथिवीव्याघ्र नृपतिके सेनापति निषादको विष्णुराजके राज्यसे भगाया और नन्दीवर्माको उसका अधिपति बनाया था। मणाईकुड़ीमें उदयचन्द्रने कालीदुर्ग नामक किला तोड़ पाण्ड्योंका सैन्य हराया। नन्दीवर्माने अपने राज्यके २१ वें वर्षमें इनके कहनेसे १०८ ब्राह्मणोंको वेल्लातूरका कुमारमङ्गल नामक ग्राम उत्सर्ग किया और उसका नाम बदल कर उदयचन्द्र-मङ्गल रख दिया। आज उसे उदयेन्दिरम् कहते हैं।

२ बम्बई प्रान्तस्थ गुजरातवाले प्राचीन चालुक्य नृपति (११४३ से ११७४) कुमारपालकी सभाके एक जैन पण्डित। पाटनमें भद्रकाली-मन्दिरके निकट जो शिलालिपि निकली, उसमें यह बात लिखी है।

उदयत् (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वगामी, ऊपर चढ़नेवाला, जो निकल रहा हो।

उदयन (सं॰ पु॰) १ अगस्त्य। २ शतानीकके पुत्र। पत्नीका वासवदत्ता और पुत्रका नाम नरवाहन था। (नृसिंहपुराण २३।१२) मतान्तरसे यह शतानीकके पौत्र रहे। अपर पत्नीका नाम रत्नावली था। कौशाम्बी नगरी इनकी राजधानी थी। कोई कोई बुद्धदेवका इनका धर्मशिक्षक बताते है। ३ वृषभराज। ४ वत्सराज। कथासरित्सागरमें इनका उपाख्यान आया है। ५ शुद्धोदनके एक पुरोहित। (क्ली॰) भावे ल्युट्। ६ उत्थान, निकास, उठान। ७ फल, नतीजा। ८ अन्त, अखीर।

उदयनाथ त्रिवेदी कवीन्द्र—दुवाबके अन्तर्गत अमेठीके एक प्रधान कवि। प्रथम ये अमेठीके राजा हिम्मतसिंहकी सभामें रह कविता बनाते थे। इनका विरचित 'रसचन्द्रोदय' वा 'रतिविनोद' नामक हिन्दी ग्रन्थ पढ़ राजा अतिशय सन्तुष्ट हुये। उन्होंने उदयनाथको 'कवीन्द्र' उपाधि दिया था। उक्त पुस्तक १८०४ विक्रमाब्दमें लिखा गया। पीछे इन्होंने अमेठीके गुरुदत्तसिंह एवं भगवन्तराय खीची, अजमेरके गजसिंह और बूंदीके बुद्धराय प्रभृति राजाकी सभामें महासम्मान पाया था। इनके पुत्रका नाम दूलह त्रिवेदी था। वे भी एक अच्छे कवि थे। उनका रचा 'कवि-कुल-कण्ठाभरण' नामक हिन्दीग्रन्थ युक्त-प्रदेशमें समादृत है।

उदयनाचार्य (सं॰ पु॰) कुसुमाञ्जलि नामक संस्कृत दर्शनग्रन्थ प्रणेता। भक्ति-माहात्म्य ग्रन्थके मतसे—

"भगवानपि तत्रैव मिथिलायां जनार्दनः।
श्रीमदुदयनाचार्यरूपेणावततारह॥" (२७।२३)
"बौद्धसिद्धान्तमुग्धानामुखाय हितकारिणीम्।
व्यतेने विदुषां प्रीत्यै विमलां किरणावलीम्॥" (३१।३)
"अद्यापि मिथिलायान्तु तद्वंशभवा द्विजाः।
विद्वांसः शास्त्रसम्पन्नाः पाठयन्ति गृहे गृहे॥" (३१।८१)

अर्थात् भगवान् जनार्दन मिथिलापर उदयनाचार्यके रूपमें उतरे हैं। उन्होंने बौद्ध सिद्धान्तमुग्ध लोगोंके सुखविधान और पण्डित-मण्डलीके प्रीति-

सम्पादनको मङ्गलमयी किरणावली बनायी। आज भी उनके वंशधर शास्त्रविद् विद्वान् द्विज मिथिलामें घर घर पढ़ाया करते हैं।

फिर 'भादुड़ी-वंशावली' नामक वारेन्द्रब्राह्मणोंके कुलग्रन्थमें लिखा है—

"बृहस्पतिसुतः श्रीमान् भुवि विख्यातमङ्गलः।
धर्मसंस्थापनार्थाय बौद्धविध्वंसहेतवे॥
ख्यात उदयनाचार्यं बभूव शङ्करो यथा।
ब्रह्मतत्त्वप्रकाशाय चकार कुसुमाञ्जलिम्॥
स एवोदयनाचार्यो बौद्धविध्वंसकौतुकी।
कुल्लूकं भट्टमाश्रित्य भट्टाख्यं मयूरं तथा॥"

इससे समझ पड़ता है—उदयनाचार्य कुल्लूक और मयूरभट्टके समसामयिक रहे। उन्होंने बौद्धोंके विध्वंसको जन्म लिया था और कुसुमाञ्जलि नामक ग्रन्थ लिखा था।

वारेन्द्र-समाजके पण्डितोंका विश्वास है—वारेन्द्र-कुलमें परिवर्त-मर्यादाके प्रतिष्ठाता और कुसुमाञ्जलि-कार उदयनाचार्य भादुड़ी अभिन्न व्यक्ति हैं। वारेन्द्र कुलाचार्यके ग्रन्थमें भी ऐसा ही कहा है। 'सम्बन्ध-निर्णय' नामक ग्रन्थको देखते राजशाहीके अन्तर्गत निसिन्दा ग्राममें पर उदयन रहते थे। किन्तु खड़ीके भट्टाचार्य बताते हैं—माणिकगञ्जके अन्तर्गत बालीयाटी ग्राममें उदयनार्य भादुड़ी बसते थे। आज भी इस ग्रामके एक उच्च स्थानको लोग 'भादुड़ी-भिटा' कहते हैं।

"सएवोदयनाचार्यस्विकाय कुसुमाञ्जलिम्।
तीर्थपर्यटने लब्धं तस्मादगौड़े प्रचारितम्॥" (लघुभारत)

लघुभारत-रचयिताके मतसे इन्होंने तीर्थपर्यटन कालमें कुसुमाञ्जलि ग्रन्थ पाया और गौड़ देशमें लाकर चलाया था।

इस स्थलपर कुछ गड़बड़ पड़ती है। भक्ति-माहात्म्य मिथिलामें इनका जन्मस्थान ठहराता है, उधर सम्बन्धनिर्णय निसिन्दा ग्राममें निवास बताता है। फिर कोई कोई उदयनाचार्यको बङ्गदेशवासी भी समझते हैं। (बङ्गदर्शन ३य खण्ड ४८८ पृष्ठ)

किन्तु अधिक विश्वासजनक मत है—उदयनाचार्यने मिथिलामें जन्म लिया और गौड़में आया था। कुसुमाञ्जलि कारिकाकार रामभद्र सार्वभौमने भी इन्हें मिथिलादेशीय लिखा है।

ठीक ठीक बता नहीं सकते—उदयनाचार्य किस समय हुये थे। 'न्यायसारविजय' नामक ग्रन्थके रचयिता भट्टराघवने इनके श्लोक उद्धृत किये हैं। यह ग्रन्थ १२५२ ई० में बना था। फिर देखते हैं—८९८ शक (९७६ ई०)में वाचस्पति मिश्रने "न्यायसूचीनिबन्ध" रचा था। उदयनाचार्यने इन्हीं वाचस्पतिमिश्र-विरचित न्यायवार्तिक-तात्पर्यको 'तात्पर्यपरिशुद्धि' नाम्नी एक टीका लिखी है। इससे मानना पड़ता है—यह ९७१ और १२५२ ई०के बीच अवस्थित थे। इधर वारेन्द्र उदयनाचार्य्य भादुड़ी ई०के १४ शतकमें गौड़पति गणेशके समय विद्यमान थे। सुतरां दोनो विभिन्न व्यक्ति ठहरते हैं।

भक्तिमाहात्म्यके मतसे उदयनाचार्य जगन्नाथ देवका दर्शन लेने श्रीक्षेत्र पहुंचे थे। वहां पुरीके पण्डोंने माल्यचन्दनादि द्वारा इन्हें पूजा। वाराणसी में इनके जीवकी लीला साङ्ग हो गयी।

मैथिल उदयनाचार्य-विरचित कुसुमाञ्जलि न्यायका उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें वैदान्तिक, सांख्य, मीमांसक और बौद्धमत काट ईश्वरका तत्त्व निरूपित है। अपने बनाये किरणावली नामक ग्रन्थमें कणादसूत्रके प्रशस्त-पाद भाष्यटीकासे उदयनाचार्यने जैसा भाव विस्तृत मङ्गलाचरण लिखा, वैसा किसी टीकाके ग्रन्थमें देखनेको नहीं मिलता। मैथिल तथा वङ्गदेशके दार्शनिक पण्डित मात्र उभय ग्रन्थका विशेष आदर करते हैं। एतद्भिन्न बौद्धमतको सम्पूर्ण काट 'आत्म-तत्त्वविवेक' नामक एक उत्कृष्ट तत्त्वग्रन्थ भी इन्होंने बनाया है।

उदयनीय (सं० त्रि०) अन्त वा फलसे सम्बन्ध रखने-वाला, जो पूरा करता है।

उदयपर्वत (सं० पु०) उदयाचल।

उदयपुर वा मेवाड़—राजपूतानेके अन्तर्गत और देशीय राजाके अधिकार-भुक्त एक करद राज्य। इसके उत्तर ब्रटिशशासनाधीन अजमेर; दक्षिण बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़; पूर्व बूंदी, कोटा, जावरा, टोंक; पश्चिम

अरावली पर्वत और दक्षिण-पश्चिम मह्नीकांटा है। यह अक्षा० २३° ४८´ एवं २५° ५४´ उ० और द्राघि० ७३° ७´ तथा ७५° ५१´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १२६६७ वर्गमील है। लोकसंख्या लगभग डेढ़ लाख है। हिन्दू और जैन अधिक रहते हैं। स्थानीय पर्वतमें महेट, भील और मीना तीन प्रकारकी असभ्य जाति रहती है।

इतिहास—बहुकालसे यहां सूर्यवंशीय राजा शासन चलाते, जो महाराणा कहाते और अपनेको रामचन्द्रके अधस्तन पुरुष बताते हैं। किन्तु प्राचीन शिला-लिपिसे प्रमाणित हुआ है वे पहले ब्राह्मण थे, पीछे क्षत्रिय हो गये है।

राजपूत राजगणमें उदयपुरके राणा ही श्रेष्ठ और सर्वापेक्षा माननीय हैं। मुसलमान् बादशाहोंके आधिपत्यकालमें राजपूतानेके प्रधान प्रधान प्राय: सकल ही राजा किसी न किसी दिल्लीसम्राट्से दब गये थे। अनेकोंने कन्यादान भी दिया था। किन्तु प्रबल प्रतापशाली उदयपुरके राणाने मुसल-मानोंकी अधीनता न मान अथवा अपनी कन्या उन्हें न सौंप जातीय गौरव बचाया था। उदय-पुरके राणा राजपूत जातीय गहलोत श्रेणीकी शिशो-दीय शाखाके हैं।

७२८ ई०में इस वंशके बप्प रावलने सर्वप्रथम मेवाड़में राज्य जमाया था। १२०१ ई०में चित्तौरराज समरसिंहके मरनेपर उनके ज्येष्ठपुत्रने राज्यसे भाग डुंगरपुरवाले जङ्गलमें जाकर राजधानी बसायी थी। पहले उदयपुरके राजाका रावल (राव) उपाधि रहा। किन्तु राहुपने राजा होकर रावलके परिवर्तमें राणा उपाधि लिखा था।

१२७५से १२९० ई० तक लक्ष्मणसिंहने राजत्व किया। उसी समयपर अलाउद्दीन चित्तौरपर चढ़े थे। १३०१ ई०में वीरकेशरी हमीर राजा बने। वे महमूदके विरुद्ध खड़े हुये थे। दिल्लीके सम्राट्को कैदकर उन्होंने यवन-कवलित मेवाड़का राज्य फिर छुड़ाया। जिससे कि जयपुर, बूंदी और ग्वालियरके राजगणने हमीरको यथाविहित सम्मानित किया था।

राजपूत-वीर संग्रामसिंह या साङ्गाजीके समय अक-बरके पितामह बाबरने चित्तौर घेरा। उन्होंने फतेहपुर-सीकरीके निकट आगे बढ़ मुगल सैन्यकी गति रोकी थी। किन्तु युद्धमें असाधारण वीरत्व देखाते भी अव-शेषको वे हार गये। उसी दिनसे साङ्गाराणा फिर देशको न लौटे, पर्वत पर्वत घूम केवल युद्धका आयो-जन करते रहे। उनके मनमें था—जबतक हम युद्धमें मुगल बादशाहको न हरायेंगे,तबतक अपने देशको भी वापस न जायेंगे। मनकी आशा मनमें ही रही, अल्प दिनमें ही मृत्यु उन्हें खा गयी। १५३० ई०को साङ्गा-जीके पुत्र रत्नसिंह राणा बने थे। उन्होंनेभी बूंदीराज-के साथ सम्मुख समरमें प्राण दे दिया। फिर रत्नके भ्राता विक्रमादित्यको राज्य मिला था। उस समय गुजरातके मुसलमान बहादुर चित्तौर पर चढ़े। युद्ध चलनेपर चित्तौरके दुर्भेद्य दुर्गमें यावतीय मान्यगण्य राजपूत-नारीने आश्रय लिया था। जब देखा, कि दुर्ग बचाया न जा सकेगा और शीघ्र ही मुसलमानोंके मुखमें पड़ेगा, तब प्राय: दो सहस्र राजपूतबालाने अमूल्य सतीत्वरत्न रखनेके लिये चितानलमें जीवन छोड़ा। दुर्गस्थित राज-पूत वीरोंने जब देखा—चिराराध्य जननी, प्राणप्रतिमा दयिता और स्नेह एवं आदरके रत्न कन्यागणने अकातर जीवन छोड़ राजपूत-कुलका गौरव बढ़ाया है। तो फिर वे तेजस्वी वीरगण भी दुर्गका द्वार खोल मुसलमानोंके सैन्यसागरमें कूद पड़े। एक-एक जन मुसलमानोंको मारते मारते रणकी शय्यापर सो गया। और चित्तौर मुसलमानोंके हाथ लगा।

हुमायूंके प्रतापसे बहादुर गुजरात लौट गये। चित्तौर फिर विक्रमादित्यको मिला था। किन्तु अल्प दिनके मध्य ही सरदारोंने उन्हें राज्यसे हटा मार डाला। रणवीर नामक एक व्यक्ति राणा बने थे। अल्प दिनके बाद साङ्गाराणाके कनिष्ठ पुत्र उदयसिंहने फिर मेवाड़का राजसिंहासन अधिकारमें किया।

उदयसिंहके राजत्वकालमें अकबर शाहने चित्तौर जीता था। उदयने चित्तौर खो अरावली पर्वतपर गिर्वा उपत्यकामें उदयपुर नामक नगर बसाया। यही स्थान उस समयसे मेवाड़की राजधानी बना है।

१५७२ ई०में उदयसिंहके मरनेपर प्रतापसिंहने पितृ-सिंहासन पाया था। उनके जैसे उच्चहृदय, स्वदेश-प्रेमिक और कष्टसहिष्णु वीरपुरुष अति अल्प ही भारतवर्षमें उपजे हैं। वे स्वदेश और स्वजातिके लिये बार बार अकबर बादशाहसे लड़े। सकल युद्धमें हारते भी उन्होंने मुगलोंकी अधीनता मानी न थी। प्रतापने स्वाधीनता बचानेको अपना राज्य-धन गंवाया, पर्वत-पर्वत एवं वन वन चक्कर लगाया और गुहादिमें डेरा जमाया। ऐसा भी सम्बल न था, जिससे कायको क्लेश मिलते ही दिन कटता। बहु कष्टके बाद विधाता उनपर प्रसन्न हुये। उसी समय भामशाह नामक एक मन्त्रीने धन द्वारा उनका साहाय्य पहुंचाया था। प्रताप फिर राजपूतोंको जोड़ देवार नामक रणक्षेत्रपर उतर पड़े। उनके साहाय्य और राणाकी दक्षतासे मुगल फ़ौज हार गयी। प्रतापने अल्प दिनके मध्य ही समस्त मेवाड़ छोड़ाया लिया। फिर उन्होंने समस्त मेवाड़का एकेश्वर बन स्वाधीन भावसे जीवनका अवशिष्ट काल बिताया। प्रतापके मरनेपर तत्पुत्र अमरसिंह राजा हुये थे। प्रतापसिंह देखो।

दिल्लीके सम्राट् बननेपर जहांगीरने मेवाड़का राज्य अपने वशमें लानेके लिये अनेक बार यत्न लगाया, किन्तु किसी प्रकार कुछ कर न पाया। वह अमर-सिंहसे दो बार सम्पूर्णरूपमें हारा था। अवशेषपर जहांगीरने प्रतापसिंहके भ्राता शक्तिसिंहको मिलाया और तदीय भ्रातुष्पुत्र अमरके विपक्ष लड़ाया। सात वर्ष बाद शक्तिसिंह जातीय विद्वेषके लिये मन ही मन शरमाये थे। फिर उन्होंने मेवाड़की प्राचीन राजधानी चित्तौर अमरको सौंप दी थी। इस संवादसे जहांगीरको असीम क्रोध आया था। उन्होंने अपने पुत्र परवीज़को ससैन्य अमरके विपक्ष भेजा। परवीज़ भी हार गये थे। फिर मुग़ल-सेनानायक महब्बत खान् बड़ी भारी सेना ले मेवाड़के अभिमुख चले। शाहजहान् प्रकृत अधिनायक बने थे। इतःपूर्व बहुबार लड़ राजपूतोंका सैन्य क्रमशः घट रहा था। फिर असंख्य मुग़ल सैन्यके सम्मुख अस्त्र चलानेको पड़ी। राजपूत वीरगणने देखा—अब रक्षा नहीं। उसपर भी एक बार प्राण पर्यन्त लगा जातीय गौरव बचानेको सकलने अस्त्र उठाया था। घोरतर युद्धके बाद राजपूत हारे। राणा अमरने लाचारीमें दिल्लीश्वरका आनुगत्य माना था। किन्तु जहांगीरने उन्हें यथेष्ट सम्मानित किया। फिर भी राणा प्रतापसिंहके पुत्र अमर मुसलमानको अधीनता सह न सके थे। उन्हें समझ पड़ा—मुसलमानके अधीन रहनेसे राजपद छोड़नेमें ही सुख है। अमरने अपने पुत्र करणसिंहको मेवाड़का राज्य सौंप वानप्रस्थ पकड़ा था। १६२८ ई०को करणसिंहके मरनेपर तत्पुत्र जगत्सिंह राणा बने। वे १६५४ ई०को मेवाड़के सिंहासनपर बैठे थे। उन्हींके राजत्वकालपर औरङ्ग-ज़ेबने जिजिया कर लगाया। यह कर मेवाड़पर बांधनेके लिये मुग़ल सैन्य भेजा गया था। राजपूतोंमें किसीने जिजिया कर देना न चाहा। उसीसे युद्ध हुआ था। राजसिंहने बार बार मुग़ल सैन्यको हराया। १६८१ ई०में औरङ्गज़ेबने जजिया कर उठा डाला। इसी वर्ष राजसिंह मरे थे। उनके पुत्र अमर (२य) राणा बने। इन्हीं राणाके समयपर मारवाड़, मेवाड़ और जयपुरके राजगणने मिलकर मुग़ल राज्य मेटनेको चेष्टा लगायी थी। मुसलमानोंने जहां जहां देवदेवीके मन्दिर तोड़ मसजिद बनायी, १७१२ ई०में एकत्र हो राजपूत राजगणने वहीं वहीं ध्वंसकी धारा बहायी। किन्तु यह शुभदायक जातीय मिलन बहु दिन टिका न था। भारतका अदृष्ट बहुत ही अशुभ निकला। शुभ मिलनमें विच्छेद पड़ा था और मारवाड़के राजा जगत्सिंहने सन्धि कर अपनी कन्याका विवाह सम्राट्से कर दिया। कुछदिन बाद राणा अमर भी दिल्लीश्वरके साथ सन्धिसूत्रमें बंध गये थे। १७१३ ई०को अमरके मरनेपर तत्पुत्र संग्रामसिंहको पितृराज्य मिला। इस समय मुग़ल सम्राट्की अवस्था क्रमशः बिगड़ रही थी। मराठे मुग़ल बादशाहोंसे चौथ लेने लगे। १७६३ ई०में पेशवाने बाजीरावसे सन्धि जमायी थी। इस सन्धिके पत्रानुसार राणा मराठोंको १६०६००) रु० चौथमें देनेके लिये सम्मत हुये।

जिन राजपूतोंने मुसलमानोंको कन्या दी, उनसे उदयपुरके राणावंशीयने विवाहसूत्रमें बंधनेकी इच्छा न की। इसीसे उदयपुरके राणावोंका गौरव बहुत बढ़ा था। किन्तु अपर राजपूत राजगणके चक्षुमें वह खटक गया। उन्होंने उदयपुरके राजगणसे वैवाहिक सूत्रमें बंधनेकी अनेक चेष्टा लगायी थी। अवशेषमें उदयपुरसे राणावोंने कन्या देनेपर सम्मत होने भी नियम रखा—राणा-वंशीय कन्यासे जो पुत्र जन्म लेगा, वही राज्यका उत्तराधिकारी बनेगा। अपरापर राजपूत राजा राजो हो आदान-प्रदान करने लगे थे।

१७४३ ई०में जयपुरके राजा सवायी जयसिंह मर गये। ज्येष्ठपुत्र ईश्वरीसिंह राजा बने थे। किन्तु राणाकी भगिनीके गर्भसे जयसिंहका मधुसिंह नामक एक कनिष्ठ पुत्र हुआ था। इन्हीं मधुसिंहको राजा बनानेके लिये अनेक लोगोंने यत्न लगाया। राणा ईश्वरीसिंहके विरुद्ध सैन्य चला था। किन्तु सेंधियाके साहाय्यसे ईश्वरीने राणाको हरा दिया। फिर राणाने ईश्वरीको राज्यसे निकालनेके लिये होलकरका साहाय्य लिया था। विषप्रयोगसे ईश्वरी मारे गये। मधुसिंहको राज्य मिला।

१७५२ ई०में राणा जगत्‌सिंहके मरनेपर तत्पुत्र प्रतापसिंह राणा हुये। इसी समयसे मेवाड़राज्यमें मराठोंका उपद्रव उठने लगा। प्रतापसिंहके बाद तत्पुत्र राजसिंहने कुछकाल राजत्व रखा था। फिर उनके पितृव्य अरिसिंह राणा बने। सरदार उनसे बिगड़ राजसिंहके बालकपुत्र रत्नसिंहको मेवाड़का सिंहासन सौंपनेपर तत्पर हुये। मेवाड़में दो दल बंधे थे। एकने अरिसिंह और अपर दलने रत्नसिंहका पक्ष पकड़ा था। उभय दलने मराठोंसे साहाय्य मांगा। सेंधिया अरिसिंहके विपक्षमें लड़े थे। उज्जयिनीके निकट कई बार युद्ध हुआ। राणा हारे थे। सेंधिया उदयपुर घेरनेको बढ़े। किन्तु राणाके दीवान् अमरचन्द्रने अपने बुद्धिकौशलसे सब गड़बड़ मिटा दिया था। सेंधिया ६३५००००) रु० लेनेपर स्वीकृत हुये। इसमें ३३००००) रु० नकद और अवशिष्ट रुपयेके लिये जवदजिरम, नीमच और मरवून् जिला रेहन रहा।

राणा अरिसिंह आखेटखेलते समय बूंदीके युवराजद्वारा मारे गये। उनके बालकपुत्र हमीर राजा हुये थे। १७७८ ई०में हमीरके मरनेपर तदीय भ्राता भीमसिंहने सिंहासन पाया। उनकी कन्या कृष्णकुमारी परम रूपवती रहीं। रूपकी प्रशंसा सुन जयपुरके राजाने उनसे विवाह करना चाहा था। भीमसिंह भी इस शुभकार्यपर सम्मत हो गये। किन्तु मारवाड़के राजा मानसिंहने कहला भेजा था—'उदयपुरके पूर्वतन राजगणने मारवाड़के राजाको कन्या देनेकी पहिलेसे ही प्रतिज्ञा कर रखी है। अतएव उसी अङ्गीकारके अनुसार अब उन्होंको कन्या देना उचित है।' भीमसिंह विषम समस्यामें पड़ गये। किसको कन्या दी जाय? जयपुरके राजाको कन्या न देनेसे बात कटती है और मानसिंहसे मुंह मोड़नेपर पितृपुरुषकी ख्याति घटती थी। उस समय जयपुरके राजमन्त्रीने समझाया—'ऐसे स्थलपर कन्याको मार डालना श्रेय है। इससे सकल दिक् रक्षा रहती है।' भीमसिंहने मन्त्रीके कथनानुसार वैसाही कार्य किया था। विषप्रयोगसे कृष्णकुमारीके जीवन गत कर दिया। इसी समयसे १८१७ ई०तक मराठे समय-समयपर पहुंचकर मेवाड़का राज्य लूटते रहे। उसके बाद अंगरेजोंका शासन चलनेसे उत्पात मिटा था।

१८२८ ई०में भीमसिंहके मरनेपर तत्पुत्र जवानसिंहने राज्य पाया था। जब वे भी मरे, तब पुत्रादि न रहनेसे ज्ञातिसम्पर्कीय सरदारसिंह महाराणा बने। १८४२ ई०में वे भी मर गये। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता स्वरूपसिंहको मेवाड़का राज्य मिला। १८६१ ई०में स्वरूपसिंहके दत्तकपुत्र शम्भुसिंह महाराणा बने थे। १८७४ ई०में फिर उन्होंने अपने ज्येष्ठ भ्रातुष्पुत्र सज्जनसिंहपर राज्यका भार डाल इहलोक छोड़ दिया। १८८४ ई०को २३वीं दिसम्बरको सज्जनसिंह मरे थे। उनके बाद फतेहसिंह उदयपुरके महाराणा हुये। १८८६ ई०में महाराणा साहबको जि, सि, एस, आई, (G. C. S. I.) की पदवी मिली। कविराज श्यामलदासजी जो महाराणा सज्जनसिंहके समयमें प्रधान मन्त्री थे, अंगरेजी सर-

कारसे 'महामहोपाध्याय'का उपाधि मिला है। महाराणा सज्जनसिंहके आज्ञानुसार कविराजजीने "वीर-विनोद" नामक राजस्थानका एक बहुत बड़ा इतिहास रचा है। दिल्ली-दरबारमें महाराणा फतेसिंहजीको भारतीय हिन्दू राजन्यवर्गमें सर्व प्रधान सम्मान मिला था। मेवाड़ देखो।

उदयपुरके महाराणा अंगरेज सरकारसे १९ तोपोंकी सलामी पाते हैं। महाराणाके अधीन १३३८ गोलन्दाज, ६२४० सवार और १३,१०० पैदल रहते हैं।

उत्पन्न द्रव्य—उदयपुर राज्यमें जुवार, बाजरा, धान, यव, चना, गेहूं, ऊख, अफीम, कपास, तम्बाकू प्रभृति द्रव्य उपजते हैं।

२ उदयपुरके राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २४° ३५´ १९´´ उ० और द्राघि० ७३° ४३´ २३´´ पू०पर अवस्थित है। अकबर बादशाहके चित्तौर पर चढ़नेसे उदयसिंहने यहां आकर नूतन नगर बनवाया था। उन्हींके नामानुसार लोग इसे उदयपुर कहने लगे।

यह नगर पर्वतपर प्रतिष्ठित और वनराजी द्वारा परिवेष्टित है। सम्मुख एक विस्तीर्ण ह्रद बह रहा
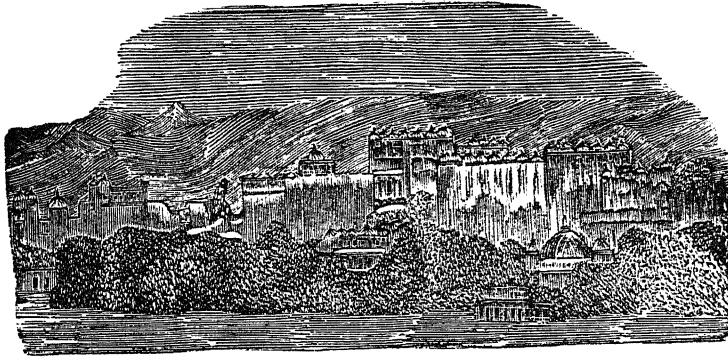
उदयपुरके महाराणाका प्रासाद

है। प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त सुन्दर और परम मनोरम है! महाराणाका प्रासाद नानावर्णके प्रस्तरोंसे निर्मित, ह्रदतीरसे कुछ ऊर्ध्व भागपर अवस्थित और पर्वतके मध्य प्रतिष्ठित है। दूरसे इसकी शोभा दर्शकका मन मोह लेती है। भवन चारो दिक् ५० फीट उच्च प्राचीर द्वारा वेष्टित है। राजभवनके सिवा युवराजका गृह, सरदारका भवन और जगन्नाथ देवका मन्दिर भी दर्शनीय है। पचोला ह्रदके बीचों बीच यज्ञमन्दिर और जनवास नामक दो जलप्रासाद हैं। ई०के १७वें शताब्दमें जगत्सिंहजीने इन्हें बनवाया था।

नगरके निकट ही आहर नामक एक ग्राम है। उसमें स्थान-स्थानपर अट्टालिकादिका भग्नावशेष देखनेसे समझ पड़ता—यहां पहले कोई शहर था। आहरमें महासती-स्तम्भ खड़ा है। जिन प्रधान प्रधान सामन्तगणके मरनेसे उनकी पत्नीने भी चितापर चढ़ अपना प्राण कुछ न गिना, उन्हींके स्मरणार्थ महासती-स्तम्भ बना है। महाराणा अमरसिंहका स्तम्भ सर्वापेक्षा वृहत् है।

उदयपुरके दक्षिण पार्श्वपर एकलिङ्गगढ़ है। उसके दक्षिण गोवर्धनविलास विद्यमान है।

इस नगरसे छः कोष उत्तर सङ्कीर्ण पर्वतके मध्य एकलिङ्ग महादेवका मन्दिर बना है। एकलिङ्ग देखो।

३ मालव-राज्यके अन्तर्गत पथरीसे ५ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित एक क्षुद्र नगर। वर्तमान उदयपुर प्राचीन नगरके भग्नावशेषपर बना है। स्थानीय चंदोलीद्वार अति पुरातन है। नगरकी दक्षिण दिशामें अनेक सतीस्तम्भ खड़े हैं। मध्यस्थलमें तीन प्राचीन मन्दिर हैं। उनमें बड़ा मन्दिर अतिप्राचीन बताया जाता है। संवत् १११६ में राजा उदयाजित्ने उसे बनवाया था। लोग कहते—दिल्लीके बादशाह औरङ्गजेब दक्षिणापथको जीत इस स्थानपर आये थे। उन्होंने इस मन्दिरका चमत्कार और सौन्दर्य देख

अविलम्ब खोदनेके लिये आदेश दिया। किन्तु दूसरे ही दिन औरङ्गजेब अकस्मात् पीड़ित हुये थे। इसलिये उनको भय लगा—सम्भवतः मन्दिरस्थ महादेवके आक्रोशसे मेरी दशा इसप्रकार बिगड़ी है। फिर उन्होंने मन्दिर खोदनेकी मनाई कर दी थी। उन्हींके आदेशसे पार्श्वपर एक मसजिद बनी। औरङ्गजेबकी आज्ञा थी—कोई मुसलमान् जबतक नङ्गे पैरों महादेवकी मूर्तिके दर्शन करने मन्दिरमें न जायेगा, तबतक इस मसजिदमें भी न घुसने पायेगा।

४ बङ्गालप्रदेशके अन्तर्गत पार्वतीय त्रिपुराराज्यका एक विभाग। ५ पार्वतीय त्रिपुरा राज्यके मध्यका एक ग्राम। यह गोमती नदीके तीर अक्षा० २३° ३१´ २५´´ उ० और द्राघि० ९१° ३१´ १०´´ पू० पर अवस्थित है। त्रिपुरेश्वरीका मन्दिर रहनेसे यह स्थान एक तीर्थ समझा जाता है। त्रिपुरेश्वरी देवीसे ही देशका नाम त्रिपुरा पड़ा है। प्रति वर्ष इस तीर्थके दर्शनको नाना स्थानसे सहस्र सहस्र यात्री आते हैं। कपास, तख़्ता और लठ बहुत बिकता है।

६ प्राचीन पार्वतीय त्रिपुराराजके मध्यस्थित एक प्राचीन नगर। आजकल यह ध्वंसप्राय है। ई० के १६ वें शताब्दमें उदयपुर राजा उदयमाणिक्यकी राजधानी रहा। एक शिवमन्दिर विद्यमान है। मन्दिरमें महादेवके दर्शनार्थ समय समय बहु यात्री आया करते हैं।

७ छोटे नागपुरमें देशीय राजाके शासनाधीनस्थ एक करद राज्य। यह अक्षा० २२° ३´ ३०´´ तथा २२° ४७´ उ० और द्राघि० ८३° ४´ ३०´´ एवं ८३° ४९´ ३०´´ पू० के मध्य अवस्थित है। उत्तर सरगुजा, पूर्व रायपुर ज़िला तथा यशपुर राज्य, दक्षिण रायगढ़ और पश्चिम सीमापर विलासपुर ज़िला विद्यमान है। भूमिका परिमाण १०५५ वर्गमील है।

१८१८ ई० में अप्पा साहबसे अंगरेजोंकी जो सन्धि हुयी, उसीके अनुसार उदयपुर पर उनके शासनकी अधीनता पड़ी। १८५७ ई० को सिपाही युद्धके समय स्थानीय सरदार और उनके भाईने अंगरेजों पर अस्त्र उठाया और इस स्थानको जीत कुछ दिन तक राजत्व चलाया था। १८५८ ई० में अंगरेजोंने फिर उदयपुर लिया और सरदार उत्तराधिकारीको आन्दामान द्वीप यावज्जीवन निकाल कर भेज दिया। बलवेमें सरगुजाके राजाने अंगरेजोंको साहाय्य पहुंचाया था। इसी महत्कार्यके लिये १८६० ई० में ब्रटिश गवरनमेण्टने यह राज्य उनको सौंपा।

राजधानी रावकोब मांद नदीके तीरपर अवस्थित है। उत्पन्न द्रव्यके मध्य लालमिर्च प्रचुर परिमाणसे होता है। एतद्भिन्न कार्पास, निर्यास, नानाप्रकार तैलवीज, धान्य, लोह और अल्प स्वर्ण भी मिल जाता है। कायलेकी एक विस्तृत खानि खुदी है।

उदयप्रभसूरि—एक विख्यात श्वेताम्बर जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्रवचन-सारोद्धार-विषमपद-व्याख्या और धर्मशर्माभ्युदय काव्य वा सङ्घपतिचरित नामक दो संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। शेषोक्त ग्रन्थ आबू पर्वतवाले प्रसिद्ध जैन-मन्दिरनिर्माता राजमन्त्री वस्तुपालके सम्मानार्थ लिखा गया। उदयप्रभसूरि श्रीविजयसेन सूरिके शिष्य और नरचन्द्र सूरिके समसामयिक रहे।

उदयप्रस्थ (सं० पु०) उदयाचलको समस्थली।

उदयभद्र—एक बौद्धराजा। इन्होंने छः वर्ष राजत्व किया था। बौद्धोंके प्रधान विनयाचार्य उपालि विद्यमान रहे। अशोकके अनुशासनमें लिखा है—बुद्धनिर्वाणके साठ वत्सर बाद उदयप्रभकी मृत्यु हुई थी।

उदयभास्करकर्पूर (सं० पु०) स्वनामख्यात कर्पूर, किसी क़िस्मका बनाया हुआ काफ़ूर। यह पक्व और सदल एवं निर्दल भेदसे दो प्रकारका है। उदयभास्कर पीत, सर, स्वच्छ, कठिन, कटु, समुदित, अग्निदीपक, लघु, श्वेद एवं पित्तकर होता और कफ, क्रमि, विष तथा वातको खोता है। इससे नासा तथा श्रुतिका रोग, लालास्राव, गलग्रह और जिह्वाका जड़त्व भी छूट जाता है। (वैद्यक निघण्टु)

उदयभास्कररस (सं० पु०) १ कुष्ठाधिकारका एक रस, कोढ़की एक दवा। केवल गन्धकसे मृत ताम्र दश, उषण (त्र्यूषण) पांच और विष (सींगिया) दो भाग डाल जलमें पीसे और रत्ती रत्तीकी वटिका बना कुष्ठीको खिलाये। (रसेन्द्रसारसंग्रह) मतान्तरसे

पिप्पलीमूल वा त्रिकटु पांच भाग पड़ता है। २ हिक्का और श्वासका एक रस, हिचकी और दमेकी एक दवा। अभ्र एवं गन्धकको बराबर-बराबर श्वेत अपामार्गके द्रवसे पीस पातालयन्त्रमें पकाते ऊर्ध्व भागपर जो वस्तु उड़कर लग जाता, वही उदयभास्कररस कहलाता है। यह दो गुञ्जाके अनुमान रोगीको खिलानेसे पञ्चविध श्वास अच्छा होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदयमती—बम्बई प्रान्तस्थ गुजरातके चालुक्यराज (१०२२ से १०६० ई०) १म भीमकी एक पत्नी। इनके पुत्रका नाम कर्ण रहा। द्वाश्रयकाव्यमें लिखा है—एक दिन किसी चित्रकारने कर्णको चन्द्रपुरके कदम्बराज जयकेशीकी कन्याका चित्र देखाया, जिसने उनसे विवाह करनेका शपथ उठाया था। चित्रकारने कहा—राजकन्याने आपको भेंटके लिये एक हाथी भेजा है। कर्ण जब हाथी लेने गये, तब उसपर उक्त राजकन्याको देख विस्मित हुये। किन्तु उन्होंने उसे कुरूप पाकर विवाह करना अस्वीकार किया। उस-पर राजकन्याने अपनी आठ सहेलियोंके साथ चितापर चढ़ भस्म हो जानेकी ठानी थी। उदयमतीने कर्णसे कहा—आपके विवाह न करनेसे मैं भी प्राण दे दूंगी। यह दशा देख कर्णने विवाह किया, किन्तु राजकन्या मियाणल्ल देवीको पत्नी स्वरूपमें न लिया। उधर मुञ्जाल मन्त्रीको किसी लौंड़ीसे समाचार मिला—कर्ण एक बांदीको बहुत चाहते हैं। उन्होंने मिया-णल्लदेवीको उक्त बांदी बना राजासे मिला दिया। कर्णकी वृद्धावस्थामें मियाणल्लदेवीके सुप्रसिद्ध सिद्ध-राज सिंह नामक पुत्र उत्पन्न हुये। कहते हैं—तीन वर्षकी अवस्थामें ही सिद्धराज सिंहासनपर एक दिन चढकर बैठ गये। यह देख कर्णने ज्योतिषियोंसे पूछ उन्हीको राजा बना दिया था।

उदयमाणिक्य—त्रिपुराके एकजन राजा। कोई सवा तीन सौ वर्ष पहले यह त्रिपुराके राजा रहे। इन्हींके राजत्वकालमें प्राचीन उदयपुर नगर बसा था। त्रिपुरा देखो।

उदयराज—सैयदाबादके एक जन राजा। युक्तप्रदेशमें किम्वदन्ती है—उदय शालिवाहनके पुत्र और रसालुके प्रबल शत्रु रहे। एक समय रसालु अपनी राजधानीमें उपस्थित न थे। अवसर पाकर उदय उनकी प्रधान पत्नी कोकिलकुमारी पर आसक्त हुये। रानीने भी उदयके प्रेमसे मुग्ध हो आत्मसमर्पण कर दिया था। किन्तु उनके पास एक पालतू मैना थी। वह पर-पुरुषके साथ रहनेपर कोकिलकुमारीको विस्तर भर्त्सना बताने लगी। अवशेषको रानीने उसके पिंजड़ेकी खिड़की खोल दी। वह उड़कर जुलना-कम्मन नामक स्थानपर पहुंची। रसालु निद्रित रहे। मैना उनके शयन-गृहमें घुस 'चोर चोर' चिल्लाने लगी। रसालुकी निद्रा टूट गई। उसने राजासे एक एक बात कह दी। पीछे रसालु अपनी राजधानीको आये थे। उन्होंने सम्मुख युद्धमें उदयको मार डाला। उदयको कोई उदी और कोई हुदी कहता है। पुरातत्त्वविद् समझते हैं—इन्हीं उदयसे तोचरी या यूची और रसालुसे शक या शु जाति उपजी है। अति प्राचीन कालसे इन उभय जातियोंमें विवाद होता आया है।

उदयवत् (सं० त्रि०) उत्थित, उठा या निकला हुआ, जो चढ़ आया हो।

उदयवराह—बम्बई प्रान्तीय गुजरातके कर्णावती नगरका एक जैन-मन्दिर। चालुक्यराज कर्ण (१०६४-१०८४ ई०)के उदा मन्त्रीने इसे बनवाया था। इसमें ७२ तीर्थङ्करोंकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। जिनमें २४ भूत, २४ वर्तमान और २४ भविष्यत् तीर्थङ्कर हैं।

उदयसिंह—१ मेवाड़वाले राणा साङ्गाजीके कनिष्ठ पुत्र। अल्पकालस्थायी वनवीरके राजत्वके बाद ये मेवाड़के सिंहासनपर बैठे थे। इन्होंके समय चित्तौरकी राजलक्ष्मी चलती बनी। १५६८ ई०में वीरभोग्य चित्तौर नगर अकबरने ले लिया था। फिर राणा उदयसिंहने चित्तौर छोड़ राजपिप्पली वनमें गोहिलोंके निकट आश्रय ढूंढा। कुछदिन बाद ये अरावली गिरिमालाके मध्यस्थ गिरवा नामक स्थानपर पहुंचे थे। उदयसिंहने उपत्यकाके पुरोभागमें उदय-सागर नामक एक विस्तृत सरोवर खोदाया। इसी उदयसागर-पार्श्वस्थित कई गिरिशृङ्गके शिरोदेशमें

'नचौकी' नामक एक प्रकाण्ड प्रासाद भी बन गया। इसी राजप्रासादमें उदयसिंह रहने लगे। क्रमशः प्रासादको चतुर्दिक् सौधवासगृह बननेपर उदयपुर नगर निकला था। ४२ वत्सरके वयःक्रम कालपर इन्होंने गोकुण्डा नामक स्थानमें प्राण छोड़ा। मृत्युकाल पर २४ पुत्र जीवित थे। किन्तु उनमें राणा प्रतापसिंहका नाम ही भारतमें विख्यात है। प्रतापसिंह देखो।

२ जोधपुरके एकजन राजा। ये अकबर बादशाहके एक प्रधान सभासद् थे। १५८६ ई०में इन्होंने सुलतान् सलीमसे अपनी कन्या बालमतीको विवाह दिया। इन्हीं बालमतीके गर्भसे शाहजहान् उत्पन्न हुये थे। अकबरने जोधपुरका राज्य उदयसिंहको जागीरमें दे डाला। १५९४ ई०में ये मरे थे। साथ ही इनकी चार पत्नी भी चितापर चढ़ीं। फिर उदयसिंहके पुत्र सूर्यसिंहको सिंहासन मिला था। इनके पौत्र गजसिंह और प्रपौत्र यशोवन्तसिंह रहे।

उदयसिंहदेव—बम्बईप्रान्तस्थ भिनमालके एक चौहान राजा। एक प्राचीन शिलालिपिसे विदित हुआ है—ये महारावल समरसिंह देवके पुत्र रहे। इन्होंने स्वयं भिनमाल पर अधिकार किया था। १२४९ ई०तक जीवित रह उदयसिंह देवने कमसे कम ४३ वर्षतक राजत्व चलाया। प्रजा सम्पत्तिशाली रही। बहादुर सिंह पुत्रका नाम था। किन्तु वह इन्हींके सम्मुख मर गये।

उदयाचल, उदयपर्वत देखो।

उदयातिथि (सं० स्त्री०) सूर्योदयकी तिथि, जिस तिथिमें सूर्य भगवान् निकलें। शास्त्रानुसार स्नानदानादि इसी तिथिमें होता है।

उदयादित्य—चालुक्यराज भुवनैकमल्लके सेनापति। कुछ दिन सेनाकी देखरेख रखने बाद ये वनवासी नामक स्थानके राजा बन गये। १०६९ और १०७६ ई०के मध्य उदयादित्य विद्यमान रहे। वनवासी देखो।

उदयाश्व—मगधराज अजातशत्रुके पौत्र। इन्होंने पाटलीपुत्र बसाया था। (विष्णु) बौद्ध ग्रन्थोंमें इनका नाम उदयभद्र लिखा है।

उदयिन् (सं० त्रि०) उदय होनेवाला, जो निकल रहा हो।

उदयिभद्र—अजातशत्रुके पुत्र। उदयभद्र देखो।

उदर (सं० क्ली०) उत्-दृ विदारणे अच्। उदिद्दणातेरलचौ पूर्वपदान्त्यलोपश्च। उण् ५।१९। १ जठर, कुक्षि, मेदा, शिकम, पेट। सुश्रुतादि प्राचीन वैद्यगणके मतसे उदर एक अङ्ग लगता है। इसमें पेशी, गुद, वस्ति एवं नाभि मर्म, चौबीस शिरा, तीस धमनी, सात आशय (वाताशय, पित्ताशय, श्लेष्माशय, रक्ताशय, आमाशय, पक्वाशय, और पक्वाशय) तथा स्त्रीके देहका एक अतिरिक्त गर्भाशय, वलय नामक अस्थि और अन्त्र है। नाभि, कोष्ठ और गर्भ शब्द देखो।

पाश्चात्य चिकित्सकोंके मतानुसार ऊर्ध्व वक्ष एवं उदर विच्छेदक स्नायु (Diaphragm) और अधोदेश पर वस्तिकोटरका अस्थिसमूह रहता, जिसके मध्य उदरगह्वर है। इस गह्वरमें पक्वाशय, अन्त्र, प्लीहा, यकृत्, वृक्क और पानक्रियस (Pancreas) हैं। उदरका समस्त स्थान पतला रहता, जिसपर घन एवं दृढ़ सूक्ष्म झिल्लीका आवरक चढ़ता है। इसे अन्त्रावरक (Peritoneum) कहते हैं। २ युद्ध, लड़ाई।

(पु०) उदरं आश्रयत्वात्, अर्श आदिभ्योऽच् इति अच्। ३ उदररोग विशेष, पेटकी एक बीमारी। भीतर ही भीतर जिनके उपजनेसे पेट बढ़ता, उनमें कितने ही बड़े बड़े रोगका उदर नाम पड़ता है। वैद्यशास्त्रमें इसे उदररोग भी लिखते हैं।

प्राचीन आयुर्वेदाचार्यके इस नामकरणमें बड़ा गड़बड़ है। उन्होंने आठ प्रकारके उदर रोगका जो लक्षण किया, उससे किसी विशेष पीड़ाका परिचय नहीं दिया है। वह अन्य अन्य नानाप्रकार पीड़ासे ही सम्बन्ध रखता है।

आलोपाथीका आसाइटिस (Ascites) अर्थात् जलोदर नाम भी ठीक नहीं बैठता। क्योंकि पेटमें जलका सञ्चय प्राय कोई विशेष पीड़ा नहीं, अन्य अन्य नानाप्रकार रोगकी चरमदशाका एक उत्कट उपसर्ग मात्र है।

चरकसंहिताके संग्रहकार कहते हैं—कोष्ठ-शुद्धि

न होना ही सकल प्रकार उदररोगका प्रधान कारण है। लिखते हैं—

"अग्निदोषान्मनुष्याणां रोगसङ्घाः पृथग्विधाः।
मलवृद्ध्या प्रवर्त्तन्ते विशेषेणोदराणि तु॥" (चरक)

मनुष्यके अग्निदोषसे पृथक् पृथक् नाना प्रकारको पीड़ा उपजती है। विशेषतः उसके कारण मल बंधनेपर अनेक उदर रोग फूट पड़ते हैं।

किन्तु यह मत माननेसे वर्तमान चिकित्साशास्त्रके साथ सामञ्जस्य पड़ना दुर्घट है। उदरके लक्षण विचारनेसे स्पष्ट ही समझ सकते, कि उसमें अनेक प्रकारके रोग लगते हैं। पाकस्थलीको विवृद्धि (Dilatation of the stomach), पाकस्थली और अन्त्रके भीतरका उपपदार्थ (Foreign bodies in the stomach and intestines), पाकस्थली, अन्त्रावरक झिल्ली प्रभृति स्थानका कर्कटरोग (Cancer of the stomach, peritoneum etc.), पाकस्थली, अन्त्र प्रभृति यन्त्रका छिद्र (Perforation of the stomach and intestines), प्लीहाको पुरातन विवृद्धि (Cronic enlargement of the spleen, ague-cake; leucocythœmia), प्लीहाका तरुणप्रदाह (Acute splenitis), यकृत्का प्रदाह (Suppurative pepatitis), यकृत्का स्फोटक (Abscess of the liver), यकृत्की विशुष्कता (Cirrhosis) ; यकृत्के हाइटेडिड नामक कीटाणुका कोषार्बुद (Hytadid cysts of the liver), अन्त्रके स्थानविशेषका स्फोटक, अन्त्रावरक झिल्लीका प्रदाह (Peritonitis), अन्त्रावरक झिल्ली तथा उदरके अन्य अन्य स्थानका टुवरकुलर नामक विचर्चिका-सञ्चय (Tubercular deposits in peritoneum, intestines etc.), अन्त्रावरोध (Obstruction of the bowels), स्त्रीके जरायुका प्रदाह (Metritis), अण्डाधारका जलसञ्चय (Ovarian dropsy), वृक्ककी पीड़ा (Diseases of the kidneys) प्रभृति व्याधि उदररोगसे भिन्न नहीं।

आयुर्वेदके मतसे उदररोग आठ प्रकारका होता है—१ वातजनित, २ पित्तजनित, ३ कफजनित, ४ त्रिदोषजनित, ५ प्लीहोदर, ६ बद्धगुद, ७ आगन्तुक, और ८ दकोदर।

"पृथक् समस्तैरपि चेह दोषैः प्लीहोदरं बद्धगुदं तथैव।
आगन्तुकं सप्तममष्टमञ्च दकोदरञ्चेति वदन्ति तानि॥" (सुश्रुत)

चरकमें लिखा है—अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त लवणमिश्रित, क्षार, दाहजनक, उग्र एवं अत्यन्त अम्ल द्रव्य खाने,—वमन विरेचनादिके संशोधन बाद अनियमित भोजन पाने,—रूक्ष, विरुद्ध तथा अविशुद्ध द्रव्य पेटमें पहुंचाने,—प्लीहा, अर्श, ग्रहणी प्रभृति व्याधिके अतिशय वृद्धिपर आने,—वमनादि क्रियाके विभ्रममें जाने,—किसी किसी पीड़ाका यथासमय प्रतीकार न लगाने,—रूक्षता, वेगरोध, स्रोत सकलको दोषजनक क्रिया करने,—आमदोष, संक्षोभ समाने,—अतिभोजन पचाने, अर्श, वायु और मलका रोध देखाने, अन्त्रका स्फुटन एवं भेद पड़ जाने, दोषका अतिशय सञ्चय बढ़ आने, पापकर्म उठाने और मन्दाग्निका दोष हो जानेसे उदररोग उपजता है। सुश्रुतमें भी संक्षेपसे ठीक ऐसे ही कारण कहे हैं—

"दुर्बलाग्ने रहिताशनस्य संशुष्कपूत्यन्ननिषेवनाद्वा।
स्नेहादिमिथ्याचरणाच्च जन्तोर्वृद्धिं गताः कोष्ठमभिप्रपन्नाः॥
गुल्माकृतिव्यञ्जितलक्षणानि कुर्वन्ति घोराण्युदराणि दोषाः॥"

जिसके अग्निका तेज अच्छा नहीं, उस व्यक्तिके कुत्सित वा अतिभोजन पाने, किंवा सर्वदा खाने अथवा स्नेहादिको अधिक व्यवहारमें लानेसे कोष्ठाश्रित दोष बढ़ते और उनसे गुल्म व्याधि-जैसे उदर रोग निकलते हैं। सामान्य लक्षण यह है—

"कुक्षेराध्मानमाटोपः शोथः पादकरस्य च।
मन्दोऽग्निः श्लक्ष्णगण्डत्वं कार्श्यञ्चोदरलक्षणम्॥" (चरक)

कुक्षिमें आध्मान वा आटोप उठना, पाद और कर पर शोथ चढ़ना, अग्निमान्द्य लगना, श्लक्ष्णगण्डत्व पड़ना और कृशता बढ़ना उदररोगका लक्षण है। शोथको सकल प्रकार उदररोगका सामान्य लक्षण माननेपर पित्तोदर प्रभृतिके निदानमें विरोध पड़ता है।

उदररोग उपजनेसे पूर्व ये लक्षण झलकने लगते हैं—भली भांति क्षुधा न लगना, सुस्वादु, स्निग्ध एवं गुरु अन्न बड़ा विलम्ब लगने अथवा कोई दुःख

खाने पर पेट गर्म पड़नेसे पचना, भुक्त द्रव्यका पचना न पचना रोगीको अच्छे प्रकार समझ न पड़ना, भोजनसे रुचि वा तृप्ति न मिलना, पाद कुछ कुछ फूल उठना, अल्प श्रमसे ही दुर्बलता रहना, शीघ्र शीघ्र श्वास प्रश्वास चलना, मल बंध जानेसे श्वास बढ़ना, उदावर्तजनित यन्त्रणा चढ़ना, वस्तिशूल तथा सन्धिके स्थानमें वेदना भरना, अल्प भोजनसे ही पेट उचकना और दुखना, पेटपर रेखा देख पड़ते भी फूलनेपर त्रिवली न बिगड़ना। (चरक)

सुश्रुतने भी प्राय: इसी प्रकार पूर्वरूप लिखा है—

"तत्पूर्वरूपं बलवर्णकाङ्क्षावलीविनाशो जठरे हि राज्य:।
जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो वस्तौ रुज: पादगतस्य शोफ:॥"

यह अनेक प्रकार पीड़ाका पूर्वरूप है। विशेषत: आलोपाथीमें जिसे डिस्पेपसिया अर्थात् अग्निमान्द्य रोग कहते, उसीके इसमें लक्षण अधिक रहते हैं। चरक और सुश्रुतमें लिखा है—पैर पर अल्प शोथ आ जाता है। किन्तु वैसा होनेपर उक्त लक्षण-को किसी व्याधिका पूर्वरूप मान नहीं सकते। कारण—यकृत्, हृत्पिण्ड, वृक्क वा अन्त्रावरक झिल्ली प्रभृति स्थानमें प्रथम कोई रोग कुछ कालतक सञ्चित रहता है। पीछे कदाचित् देहके स्थान विशेष वा सर्वाङ्गमें भले प्रकार रक्त चलफिर किंवा श्लैष्मिक झिल्ली तथा ग्रन्थि प्रभृतिसे नि:सृत रस उपयुक्त भांति शुष्क पड़ अथवा स्वेद-मूत्र प्रयोजनानुरूप निकल न सकनेसे शरीर पर शोथ चढ़ता है।

ऊपर जो समस्त लक्षण लिखे, यकृत्‌की विशुष्क-ताका रोग कुछ काल तक रहनेपर हो जाते हैं।

चरकमें वातजनित उदररोगका लक्षण इस प्रकार लिखा है—कुक्षि, हस्त, पाद एवं अण्डकोषपर शोथ आता है। पेटमें सूचके चुभने-जैसी वेदना उठती है। कभी शरीर बढ़ और कभी घट जाता है। कुक्षि तथा पार्श्वमें शूल होता है। उदावर्त, अङ्गमर्द, पर्वभेद, शुष्ककास, कृशता, दौर्बल्य और अरुचिका वेग बढ़ता है। शरीरके अधोभागमें गुरुता रहती है। वायु तथा मलमूत्र बंध जाता है। नख, चक्षु, चर्म एवं मलमूत्र कृष्ण तथा पीतवर्णमिश्रित और रक्तवर्ण बन जाता है। पेटपर सूक्ष्म एवं रक्तवर्ण रेखा तथा शिरा देख पड़ती है। पेट पर आघात लगानेसे वायुपूर्ण मशककी तरह शब्द निकलता है। वायु ऊर्ध्व, अध: और पार्श्वदिक् वेदना बढ़ाते फिरता है।

माधवकरने भी कहा है—वातोदरमें हस्त, पाद, नाभि और कुक्षिपर शोथ आ जाता है। सुश्रुतमें वातोदरका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

"संरुक्षपार्श्वोदरपृष्ठनाभीर्यद्वर्धते कृष्णशिरावनद्धम्।
सशूलमानाहवदुग्रशब्दं सतोदभेदं पवनात्मकं तम्॥"

इस जगहपर बड़ा गड़बड़ है। किसी पीड़ाके साथ उक्त लक्षणका सामञ्जस्य आ सकता है। नाभि और कुक्षिमें शोथ कहनेसे कभी नाभि तथा कुक्षिपर शोथका चढ़ना सम्भव नहीं। इससे पेटके भीतर अन्त्रावरकझिल्लीमें ही जलका सञ्चय प्रमाणित है। अन्त्रावरक झिल्लीमें जल भर जानेसे नाभि और कुक्षि-पर पृथक् पृथक् शोथ नहीं चढ़ता। एक ही शोथ सकल स्थानमें पहुंच रहता है। केवल रोगीके भिन्न भिन्न प्रकार पार्श्व बदलने पर अपने ही गुरुत्वसे जल निम्न दिक् गिर पड़ता है। जल अधिक होनेसे समस्त उदर भर जाता है। फिर जल अल्प रहनेसे रोगीके उठकर खड़े होने पर नाभिकी निम्न दिक् ढलता है। रोगीके वाम पार्श्व लेटनेसे वाम कुक्षि, दक्षिण पार्श्व सोनेसे दक्षिण कुक्षि और दोनो हस्त तथा दोनों पादपर भर दे चतुष्पद जन्तुकी तरह खड़े होनेसे नाभिके मध्यस्थलमें जल लुढ़क आता है। फिर भूमिपर मस्तक टेक ऊर्ध्व दिक् पाद उठा देनेसे जल वक्षकी ओर सरकता है। इसीसे नाभि और कुक्षिपर पृथक् पृथक् शोथ चढ़ नहीं सकता।

दूसरी बात—यदि वातरोगसे भी पेटमें जल जमता, तो उदकोदरसे उसका प्रभेद क्या पड़ता है। इस विषयकी मीमांसा मिलना कठिन है। कारण उक्त लक्षण जब सङ्कलित हुये, तब आयुर्वेदके आचार्य शोथको अन्यरूप पीड़ा समझते थे।

वातोदरका जो लक्षण लिखा, उससे विशेष किसी यान्त्रिक रोगका सामञ्जस्य लाना दुष्कर है। फिर भी उदर मध्यके कर्कटादि रोगपर हस्तपादमें

शोथ, जलोदरी और उससे आध्मान हो सकता है। पाकस्थलीके विवृद्धि रोगमें भी ऐसा लक्षण रहनेकी सम्भावना है। किन्तु इस रोगका प्रधान उपसर्ग वमन ही है।

किसी व्यक्तिको यकृत्‌की विशुष्कताका रोग लगा था। प्रथम अग्निमान्द्य हुआ, अपराह्णको अल्प-अल्प ज्वरका वेग बढ़ा, उसके बाद पादपर शोथ चढ़ा और सबसे पीछे वृषण एवं हस्त फूला, तथा पेट जलसे भर गया। इसी अवस्थामें किसी प्रसिद्ध कविराजने उसे देख वातोदरका रोग बताया था। किन्तु रोगीके पेटसे अन्यून पन्द्रह सेर जल निकाला गया। किसी रोगीके प्रस्रावकी पीड़ासे हस्त, पाद और मुख पर शोथ चढ़ा था। पीछे एक दिन वंशी बजाते बजाते उसके वायुशूल (Flatulent colic) होने लगा। किन्तु अनेक प्रथितनामा वैद्यने रोगको वातोदर ठहराया था। अतएव जो स्वदेशीय एवं विदेशीय उभय प्रकारकी चिकित्साके शास्त्रका अनुशीलन करते, ऐसे स्थलपर वे बड़े गड़बड़में पड़ते हैं।

पित्तोदरका लक्षण भी ठीक नहीं बैठता। चरकसंहितामें लिखा—पित्तोदर रोगमें रोगीको दाह, ज्वर, तृष्णा, मूर्छा, अतीसार और भ्रमका वेग दहलता है। मुखमें कटु आस्वाद आ जाता है। नख, चक्षु, मुख, त्वक् एवं मलमूत्रका वर्ण हरा और पीला देख पड़ता है। पेट पर नील, पीत, हरित एवं ताम्रवर्ण रेखा तथा शिरा झलकती है। फिर दाह एवं तापके उद्गारसे धूम निकलने पर पेट उष्ण रहता, घर्म तथा क्लेद छोड़ता, दबानेसे कोमल लगता और शीघ्र पकता है।

सुश्रुत नहीं कहता—पित्तोदरमें पेटका कौन स्थान पकता है। उसमें संक्षेपसे यह लक्षण मिलता—पित्तोदर होनेपर मुखशोष, तृष्णा, ज्वर एवं दाहका वेग बढ़ता है। शरीर पीत पड़ जाता है। समस्त शिरा, चक्षु, नख, मुख और मलमूत्रका वर्ण भी पीत ही रहता है। यह रोग अल्प अल्प बहुत दिनोंमें बढ़ता है।

"यच्चोषतृड्ज्वरदाहयुक्तं पीतं शिरा यत्र भवन्ति पीताः।
पीताक्षिविण्मूत्रनखाननस्य पित्तोदरं तच्च चिराभिवृद्धि॥"

यकृत्‌की सच्छिद्र पीड़ासे उदर पक जानेपर ये सकल लक्षण झलक सकते हैं।

चरकमें श्लेष्मजनित उदररोगका यह लक्षण लिखा—रोगीको शरीर भारी मालूम पड़ता है। भोजनसे अरुचि रहती है। अपाक और अङ्गमर्द होता है। देहका अधिक ध्यान नहीं पड़ता। हस्त, पाद और मुख सूज जाता है। वमन करनेकी इच्छा बनी रहती है। सर्वदा निद्रालस्य, कास और श्वास चलता है। नख, चक्षु, मुख, मलमूत्र और त्वक्‌का वर्ण श्वेत पड़ जाता है। पेट पर शुक्लवर्ण रेखा और शिरा झलकती है। उदर गुरु, स्तिमित, स्थिर और कठिन हो जाता है।

सुश्रुतने भी कहा है—

"यच्छीतलं शुक्लशिरावनद्धं गुर्व्वां स्थिरं शुक्लनखाननस्य।
स्निग्धं महच्छोफयुतं ससादं कफोदरं तच्च चिराभिवृद्धि॥"

कफोदरमें पेट शीतल, शुक्लवर्ण शिरासे व्याप्त, चिक्कण और स्थिर हो जाता है। नख और मुख शुक्ल वर्ण रहते हैं। पेट स्निग्ध और महाशोथयुक्त बनता है। देहमें अवसन्नता आ जाती है। यह उदररोग अनेक दिनोंमें बढ़ता है। किन्तु नाना प्रकारके मूत्ररोग और हृद्रोगमें भी उक्त लक्षण लग सकता है। त्रिदोष-जनित उदररोगमें वातोदर, पित्तोदर और कफोदर तीनो उदररोगका लक्षण रहता है।

प्लीहोदरके सम्बन्धमें कहा है—

"अशितस्यातिसंक्षोभाद्यानयानातिचेष्टितैः।
अतिव्यवायभाराध्ववमनव्याधिकर्षणैः॥
वामपार्श्वस्थितः प्लीहाच्युतिः स्थानात् प्रवर्धते।
शोणितं वा रसादिभ्यो विवृद्धं तं विवर्धयेत्।

इति तस्य प्लीहा कठिनोऽष्ठिलेवादौ वर्धमानकच्छपसंस्थान उपलभ्यते। स चोपेक्षितः क्रमेण कुक्षिं जठरमग्न्यधिष्ठानञ्च परिक्षिपन्नुदरमभिनिवर्तयति।" (चरक)

भोजनके बाद अङ्गादि अधिक चलाने, यानपर जाने, यानपर शरीर अधिक हिलाने, अतिरिक्त स्त्री संसर्ग लगाने, क्षमतासे अधिक भार उठाने, पथपर अधिक श्रम पाने और वमन तथा व्याधि द्वारा शरीर अधिक खिंचानेसे पञ्जरको वामपार्श्वस्थित प्लीहा स्वस्थानको छोड़ बढ़ती किंवा रसादि द्वारा रक्त

अतिशय उपजनेसे वही वर्धमान प्लीहा अधिक स्थूल पड़ती है। प्लीहोदरका लक्षण तथा प्लीहावल्लसे उठ सकनेवाली समस्त पीड़ाका विवरण प्लीहा और यकृत् उदरका लक्षण यकृत् शब्दमें देखो।

चरकमें बद्धोदरका लक्षण एवं निदान इसप्रकार लिखा है—खाद्य द्रव्यके साथ चक्षुका लोम पेटमें पहुंचने और उदावर्त, अर्श एवं अन्त्र सम्मूर्छन प्रभृति कोई रोग रहनेसे मलका द्वार रुक जाता है। फिर अपान वायु अपना पथ बन्द होनेपर बिगड़ कर धातु, अग्नि, मल, पित्त एवं वेगको रोक देता है। इसीसे बद्धोदर रोग होता है। इससे तृष्णा, दाह, ज्वर एवं मुख तथा तालुशोषका वेग बढ़ता और उरु अवसन्न पड़ता है। श्वास, कास, दौर्बल्य, अरुचि, अपाक, मलमूत्र बन्ध, आध्मान, वमि, कम्प, शिरःपीड़ा, हृदयवेदना, नाभिशूल और उदरवेदनाका आगमन लगता है। इस पीड़ामें उदर स्थिर रहता है। पेटपर रक्त एवं नील वर्ण रेखा तथा शिरा देख पड़ती हैं। किंवा रेखासमूह नाभि पर गोपुच्छ-जैसा आकार बना बढ़ा करता है। इसे बद्धोदर वा बद्धगुदोदर कहते हैं।

डाक्टरोंके मतसे यह अन्त्रावरोधकी पीड़ा (obstruction of the bowels) है। पाकस्थली आदि स्थानोंमें कर्कटरोग, पुरातन रक्तामाशय प्रभृति अनेक कारणोंसे अन्त्रका पथ रुक सकता है।

अन्नादिके साथ कङ्कड़, तृण, काष्ठ, अस्थि, कण्टक प्रभृति खा लेनेसे हिचकी आने लगती है। फिर अति भोजन द्वारा ही अन्त्रमें छिद्र पड़ जाता है। उस समय अन्नव्यञ्जनादि भुक्त द्रव्य सकल छिद्रसे बाहर निकल मलद्वार और अन्त्रको पूर देता है। क्रमशः वही रस नाभिसे नीचे जम उदकोदर एवं वातादि जिस दोषका आधिक्य पाता, उसीका लक्षण सकल देखाता है। इस प्रकारके उदरशोथमें नील, पीत, पिच्छिल, दुर्गन्ध एवं अपक्व मल निकलता और हिक्का, श्वास, काश, तृष्णा, प्रमेह, अरुचि, अपरिपाक तथा दौर्बल्यादिका लक्षण झलकता है। (चरक) यही उदर-रोग डाक्टरोंके हिसाबसे (Perforation of the bowels and stomach) है।

अज्ञान शिशु अनेक प्रकार द्रव्य मुखमें डाल खा जाते हैं। पागल भी बाल, रस्सी और कङ्कड़ निगलते हैं। डाक्टर पोनकने एक उन्मत्त बालिकाकी बात लिखी है। उसका वयःक्रम १८ वत्सर रहा। उसके पेटपर आम-जैसा क्या न क्या उभर आया था। भोजनोपरान्त वमन करती थी। यही उसका उपसर्ग था। कुछ दिन बाद बालिका मर गयी। डाक्टरोंने पेट फाड़ कर देखा, कि पाकस्थलीका अधिकांश स्थान बाल और रस्सीके लच्छेसे भरा था। कितना ही पाकस्थलीके दक्षिण मुखमें फंसा, कुछ द्वादशाङ्गुल यन्त्रके मध्य धंसा और थोड़ा लच्छा शून्यान्त्रके ऊपर ठंसा था।

बर्फानिलने किसी अपस्मारके रोगिणीकी कथा कही है। २२ वत्सर वयःक्रमपर अन्त्रवेष्टझिल्लीके प्रदाहसे वह मर गयी। पाकस्थलीके स्वल्प चक्रांश (lesser curvature)में अठन्नी परिमित एक छेद हुआ था। छिद्रकी चारो दिक् कृष्णवर्ण क्षत रहा। पाकस्थली चीरनेपर भीतरसे सात सेर आटा, सूत और नारियलका छिलका निकल पड़ा।

ईमानने लिखा है—एक शिशु मुख खोले सो रहा था। हठात् एक चुहिया दौड़कर उसके मुखमें घुस गयी। किन्तु परिशेषको पचते-पचते मलद्वारसे वह नीचे गिरी थी। उससे कोई उपसर्ग न उठा।

सोनि-ये-मोरेने एक स्त्रीका विवरण बतलाया है। वह ग्यारह कांटे और छोटे छोटे कांसेके टुकड़े निकल गयी थी। जान मार्शलने लिखा है—एकस्त्रीकी पाकस्थलीमें प्रायः पांच छटांक सूत रहा। एतद्भिन्न द्वादशाङ्गुल अन्त्रमें अनेक सूच भी मिले थे।

पोलण्डने किसी रोगीका हाल कहा है। उसके द्वादशाङ्गुल अन्त्रमें सम्मुख दिक् छिद्र पड़ा था। पाकस्थली एवं अन्त्रमें सवा सेर लोहा-लक्कड़ और कङ्कड़-पत्थर रहा।

इन सकल कारणोंके सिवा दूसरे भी अनेक कारणोंसे पाकस्थली और अन्त्रमें छिद्र पड़ सकता है। अपने अथवा यकृत् तथा प्लीहाके फोड़ेसे भी पाकस्थलीमें छिद्र हो जाता है। फिर कर्कट, पुरातन रक्तातिसार एवं अन्त्रज्वर प्रभृति रोगसे फोड़ा उभरता है।

यकृत्से बड़ी पथरी खिसक अन्त्रके किसी स्थानमें पड़ जानेसे भी क्षत और छिद्र हो सकता है।

अन्त्रमें छिद्र पड़ते समय हठात् रोगीकी अवस्था बदल जाती है। पेटमें दुःसह वेदना उठती है। किसीको अधिक और किसीको अल्प हिक्का आने लगती है। फिर किसी किसी रोगीको कुछ भी हिक्का नहीं आती। ज़ोर ज़ोरसे वमन होता है। कपालपर विन्दु विन्दु पसीना निकल आता और किसीका सर्वाङ्ग पसीनेसे भर जाता है। रोगी पैर समेट सुस्थिर भावमें पड़ा रहता, किन्तु हिलना डुलना या बात करना नहीं बनता। निश्वास छोड़नेमें भी कष्ट लगता है। नाड़ी क्षीण, चञ्चल और शब्दहीन हो जाती है। मुखकी श्री कुम्हलाती और जिह्वा सुखाती है। अतिशय तृष्णा लगती है। पेटको अल्प दबानेसे ही कष्ट मालूम पड़ता है। ऐसी अवस्थामें रोगी अवसन्न हो शीघ्र प्राण खो देता है। किसीकी अवस्था कुछ दिनको थोड़ी बहुत सुधर जाती परन्तु परिशेषमें उसे मृत्यु धर दबाती है। अन्त्रमें छिद्र पड़नेसे किसी किसी रोगीको अन्त्रवेष्ट झिल्लीपर प्रदाह उठता है।

उदकोदर, दकोदर वा जलोदरका लक्षण चरकमें इस प्रकार बतलाया है—जो व्यक्ति अधिक खाता किंवा अग्निका तेजः गंवाता तथा अपनेको क्षीण एवं कृश बनाता, वह अधिक परिमाणमें जल पीनेसे क्षुधा-मान्द्य रोग बढ़ाता है। उस समय वायु क्लोम स्थानमें ठहर जाता है। क्रमशः सकल स्रोतका पथ रुकता और पीत जलसे कफ बढ़ता है। परिशेषमें उभय स्वस्थानसे पीत जल बढ़ा उदर रोग उत्पन्न करते हैं। इस उदररोगमें भोजनकी इच्छा नहीं रहती। तृष्णा बहुत लगती है। गुदस्राव, शूल, श्वास, काश और दौर्बल्य हुआ करता है। पेटपर नाना वर्णकी रेखा तथा शिरा देख पड़ती और आघात लगानेसे जलपूर्ण मशककी तरह कंपकंपी उठती है।

किन्तु डाक्टरीके हिसाबसे यह आसाइटिस (Ascites) रोग है। दकोदर स्वयं कोई विशेष व्याधि नहीं—अन्य अन्य रोगकी शेष अवस्थाका एक लक्षण-मात्र है। यकृत्की विशुष्कता, पुरातन प्लीहा, पुरातन अन्त्रवेष्टप्रदाह, पुरातन रक्तातिसार प्रभृति नाना प्रकार रोगकी शेष दशामें दकोदर हो सकता है। फिर किसी व्यक्तिको शैत्य देकर भी यह रोग पकड़ लेता, परन्तु ऐसा दकोदर सुसाध्य है।

किसी सञ्चित पीड़ापर शिरासमूहमें रक्त न पहुंचने किंवा आण्डलालिक पदार्थ स्वल्प पड़नेसे प्रथम उदरमें नहीं—अन्त्रवेष्ट झिल्लीमें जल जमता है। पूर्व हस्तपाद पर शोथ चढ़ आता, पश्चात् उदरमें जल भर जाता है। किन्तु यकृत्की पीड़ामें हस्तपादपर शोथ न चढ़ते भी दकोदर हो सकता है।

किसी किसी रोगीके पेटमें अल्प परिमित जल रहता और दूसरोंके उदरमें आधे मनसे भी ज्यादा जल मिलता है। एक दकोदरवाले रोगीके पेटमें जलके साथ छः बड़े बड़े कीड़े भी थे। पुरातन सड़ेगले सहींजनके पेड़में ईषत् हरिद्रावर्ण बड़े मोटे मोटे कीड़ों-जैसे वे रहे। मस्तक, मुख तथा मल-द्वार कृष्णवर्ण और पृष्ठ ग्रन्थियुक्त था। लम्बाई तीन और चौड़ाई डेढ अङ्गुल बैठी, मुखमें कतरनी-जैसी तीक्ष्ण दंष्ट्रा थी। सकल ही कीट जीवित थे। जल और खाद्य द्रव्यके साथ अनेक कीट उदरमें पहुंचते हैं। पेटमें उनके न मर मिटनेसे नानाप्रकार पीड़ा उठती है। फिर क्षुद्रावस्था पर अन्त्रको काट वह अन्त्रवेष्ट झिल्लीमें घुसते हैं। परणामको उन्हींकी उग्रतासे दकोदर रोग लग जाता है। इस रोगमें रोगी प्रायः दश वत्सर जीता है।

दकोदरका जल अनेक स्थानोंपर अधिक परिष्कृत रहता और किसीके मैला और किसीके पेटमें पीला भी पड़ता है। इस जलका सन्ताप गात्रके सन्तापसे मिलता है। हां, इसमें लवणका अंश, आण्डलालिक पदार्थ और फेब्रिन होता है। पेटमें अधिक जल सञ्चित होनेसे यकृत्, प्लीहा और वृक्क तीनो छोटे पड़ जाते हैं। हृदय और उदरमध्यवेष्ट (Diaphragm) ऊपरको उड़ने लगता है।

दकोदर होनेसे प्रथम पेटमें भार मालूम पड़ता है। क्षुधा कम लगती है। कोष्ठकी शुद्धि नहीं

होती। प्रस्राव भली भांति परिष्कृत नहीं पड़ता। क्रममें जलका परिमाण बढ़नेसे श्वासकृच्छ्र हो जाता है। फिर अधिक फूलनेसे उदर, अण्डकोष एवं पुरुषाङ्ग पर सूजन आ जाती एवं उदर पर शिरा देखाती है। आघात लगानेसे पेट ढलका करता है।

उदररोगकी चिकित्साका एक सामान्य विधि होता है। इसमें विशेष कुछ करने धरनेकी बात नहीं। कारण पहले ही कह चुके हैं,—उदररोग स्वयं कोई स्वतन्त्र पीड़ा नहीं। अतएव मूल पीड़ाकी ही निश्चित रूपसे चिकित्सा होना चाहिये।

चरकमें असाध्य उदररोगके लक्षण बहुत अच्छी तरह लिखे हैं। यथा—"तदातुरमुपद्रवाः स्पृशन्ति छर्द्यतेऽतीसार-तमकः तृष्णा-श्वास-काश-हिक्कादौर्बल्यपार्श्वशूलारुचिस्वरभेदमूत्रसङ्गादयस्तथा-विधमचिकित्स्यं विद्यादिति।"

वमन, अतिसार, तमक, पिपासा, श्वास, काश, हिक्का, दौर्बल्य, पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरभेद, मूत्ररोध प्रभृति-जैसे उपसर्ग उठनेसे रोगीको अचिकित्स्य समझते हैं।

"पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं यथा।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रान्त्रं चोदरं नृणाम्॥"

बद्ध गुदोदर, सकल प्रकार जलोदर और छिद्रान्त्रोदर रोग होनेसे प्रायः एक पक्षके बाद मनुष्य मर जाता है।

"शूनाक्षं कुटिलोपस्थमपक्लिन्नतनुत्वचम्।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणञ्च सन्त्यजेत्॥
श्वयथुः सर्वमर्मोत्थः श्वासो हिक्कारुचिः सतृट्।
मूर्च्छाछर्द्यतिसारश्च निहन्त्युदरिणं नरम्॥"

चक्षु पर सूज न चढ़ने, पुरुषाङ्ग झुकने, चर्म क्लेदयुक्त तथा पतला पड़ने और बल, रक्त, मांस एवं क्षुधा घटनेसे उदररोगीको छोड़ देना चाहिये।

सकल मर्मस्थानपर शोथ बढ़ने और श्वास, हिक्का, अरुचि, तृष्णा, मूर्च्छा, वमन, अतिसार प्रभृति उपसर्ग उठनेसे दकोदरका रोगी मरता है।

उदररोगमें विरेचक औषध खिलाना, पिचकारी लगाना और स्वेद कराना ही वैद्यशास्त्रकी प्रधान चिकित्सा है। तद्भिन्न अन्य अन्य प्रकार भी औषधकी व्यवस्था बंध सकती है।

इस रोगपर जलोदरादिरस देनेका विधान है—

"पिप्पली मरिचं ताम्रं रजनीचूर्णसंयुतम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जैपालबीजकम्॥
निष्कं खादेद्विरेकं स्यात् सद्योहन्ति जलोदरम्।
रेचनानाञ्च सर्वेषां दध्यन्नं स्तम्भने हितम्॥
दिनान्ते च प्रदातव्यमन्नं वा मुद्गयूषकम्।" (रसेन्द्रसारसंग्रह)

पिप्पली, मरिच, (मारित) ताम्र, धनिया और हरिद्रा सकल द्रव्यका एक-एक भाग रस एक दिवस सहींजनके दुग्धमें घोंटे, फिर जयपालवीजका चूर्ण एक भाग मिला दो रत्ती प्रमाण वटिका बांध डाले। इस औषधको खानेसे जलोदर रोग सद्य ही मिट जाता है। सकल प्रकार विरेचनको दधियुक्त अन्न ही रोकता है। अतएव इस औषधके सेवनपर दिनान्तको दधि अथवा मुद्गयूषयुक्त अन्नका पथ्य देना चाहिये। उदररोगके अधिकारका इच्छाभेदीरस यह है—

"शुण्ठी मरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम्।
जैपाली द्विगुणः प्रोक्तः सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत्।
पिबेत् चुल्लकान् यावत् तावद्वारान् विरेचयेत्॥"

शुण्ठी, मरिच, (शोधित) पारद, गन्धक और सोहागा समुदाय द्रव्य एक एक भाग और जयपालका वीज दो भाग ले पीस डाले। इस औषधको दो रत्ती प्रमाण चीनीके साथ खाना चाहिये। इसे इच्छाभेदी रस कहते हैं। यह औषध खाकर जितने गण्डूष जल पीते, उतने ही बार वमन करते हैं।

वर्तमान डाक्टरोंकी तरह पेटमें जल जमनेसे प्राचीन आयुर्वेदाचार्य भी उसे निकाल डालते थे। उन्होंने लिखा है—

"तस्मान्नाभेर्वामभागे वर्जयित्वाङ्गुलद्वयम्।
जलनाडीधातुमन्य कुशपत्रेण वेध्येत्॥
एरण्डजलनालञ्च तत्र सञ्चारयेद्बुधः।
अन्तर्गतजलं स्राव्यं ततः सन्धारयेद्द्रुतम्॥
यदा न धरते तच्च तदा दाहः प्रशस्यते।
कणाकल्कं परिस्राव्य घृतं देयं चतुर्गुणम्॥
ग्रन्थिविषा समं पाच्यं पानमाक्षेपनं हितम्।
शस्त्रकर्म भिषक्श्रेष्ठो विज्ञातेनैव कारयेत्॥
दुष्करं शस्त्रकर्मैव न कुर्यादयत्र तत्र तु।

अक्रियायां ध्रुवो मृत्युः क्रियायां संशयो भवेत्।
तस्मादवश्यकर्तव्यमीश्वरः साचिकारिणा ॥"

इसी हेतु नाभिके वलिको दिक् दो अङ्गुलि छोड़ जल नाड़ीको सुधार कुशपत्रसे लपेट दे और एरण्डके पत्रका नल उसमें चला अन्तर्गत जल निकाल ले। तदनन्तर सत्वर उसे बन्द करना चाहिये। यदि जलका निर्गम न हो सके,तो दाह लगानेको ही प्रशस्त समझे। जलको निकाल जीरकका कल्क चतुर्गुण घीमें मिला समभाग शुण्ठी एवं विषाके साथ पका पीने और चुपड़नेसे उपकार पहुंचता है। दूसरी बात यह है, कि अतिशय निपुण और अभिज्ञ व्यक्तिसे अस्त्रका कार्य ले। अस्त्रकर्म अत्यन्त दुष्कर है। यत्र तत्र उसे न करे। इस रोगमें अस्त्र न लगानेसे निश्चय मृत्यु आती है। किन्तु अस्त्रकर्म कर देनेसे उसमें संशय पड़ जाता है। अतएव ईश्वरको साक्षी ठहरा अवश्य जलोदरमें अस्त्रकर्म करना चाहिये। जल निकाल डालनेसे अनेक स्थलोंमें रोगी आरोग्य नहीं पाता, केवल यन्त्रणाका वेग घट जाता है। क्योंकि निकाल डालते भी अल्प दिन बाद पुनर्वार जल पेटमें भरता और शीघ्र रोगी मरता है। किन्तु भीतर कोई विशेष यान्त्रिक पीड़ा न रहने पर इस प्रक्रियासे आरोग्य लाभ होता है।

धड़ शब्दमें उदरसंस्थानका चित्र देखो।

उदरक (सं० त्रि०) उदरसम्बन्धीय, पेटके मुताल्लिक़।

उदरग्रन्थि (सं० पु०) उदरस्य ग्रन्थिरिव। १ अश्मरी-रोग, हबस्-उल्-बौल, चिनक। २ गुल्मरोग, तिल्ली, पिलही।

उदरज्वाला (सं० स्त्री०) १ जठराग्नि, खाना हज़म करनेवाली हरारत। २ बुभुक्षा, भूंख।

उदरत्राण (सं० क्ली०) उदरस्य त्राणो यस्मात्। १ कवच, बख्तर। २ वरत्रा, कमरबन्द।

उदरथि (सं० पु०) उत्-ऋ-अथिन्-चित्। उदर्तेश्चित्। उण् ४।८८। १ समुद्र। २ सूर्य।

उदरना (हिं० क्रि०) खण्ड खण्ड होना, टुकड़े उड़ना।

उदरनाड़ी (सं० स्त्री०) अन्त्रनाड़ी, आंत।

उदरपरता (सं० स्त्री०) रोगविशेष, एक बीमारी। इसमें बहुत खानेको मन चला करता है।

उदरपरायण (सं० त्रि०) उदरं उदरपूरणमेव परं अयनं प्रधानाश्रयो यस्य, यद्वा उदरे विषये परायण आसक्तः। पेटुक, पेटू, सिर्फ़ पेट भरनेकी फ़िक्र रखनेवाला।

उदरपरीक्षा (सं० स्त्री०) जठर-परीक्षा, मेदेकी जांच।

उदरपिशाच (सं० त्रि०) उदराय तत्पूरणाय पिशाच इव। १ यथेच्छाहारी, मनमानी चीज़ खानेवाला। (पु०) २ सर्वान्नभक्षक, बड़पेटा।

उदरपीड़ा (सं० स्त्री०) उदरामय, पेटका दर्द।

उदरपुर (सं० अव्य०) उदरपूर्तिपर्यन्त, पेट भर जाने तलक।

उदरपोषण (सं० क्ली०) कुक्षिपालन, पेटका भराव।

उदरभङ्ग (सं० पु०) उदरस्य भङ्गः। अतीसाररोग, दस्तकी बीमारी।

उदरभरणमात्रकेवलेच्छु (सं० त्रि०) केवल उदर पोषणका अभिलाषी, जो सिर्फ़ पेट भरनेकी ख़ाहिश रखता हो।

उदरम्भरि (सं० त्रि०) उदरं बिभर्ति, उदर-डृञ्-मुम् च। "आत्मनोसुमागम इन्प्रत्ययश्च। अनुक्तसमुच्चयार्थश्चकार।" (सिद्धान्तकौमुदी) आत्मम्भरि, पेटू, बड़ा खानेवाला।

उदररस (सं० पु०) उदरका पाचक रस, जो अर्क पेटका खाना हज़म करता हो।

उदररेखा (सं० स्त्री०) उदरकी रेखा, पेटका बल।

उदररोग (सं० पु०) कुक्षिकी पीड़ा, पेटकी बीमारी।
उदर देखो।

उदरवत् (सं० त्रि०) दीर्घ उदरयुक्त, बड़े पेटवाला।

उदरवृद्धि (सं० स्त्री०) उदरस्फीति, पेटकी बढ़ाई।

उदरव्याधि (सं० पु०) उदरामय, पेटकी एक बीमारी।

उदरशय (सं० त्रि०) उदरको भूमिसे लगा शयन करनेवाला, जो पेटके बल लेटता हो।

उदरशाण्डिल्य (सं० पु०) ऋषिविशेष। (भारत, सभा ४अ०)

उदरसर्वस्व (सं० पु०) भोजनचञ्चु, शिकमपरस्त, चटोरा।

उदरस्फुटा (सं॰ स्त्री॰) नागवल्ली, पान।

उदराग्नि (सं॰ पु॰) जठराग्नि, सफरा, पेटमें खाना हज़म करनेवाली हरारत।

उदराध्मान (सं॰ क्ली॰) उदरस्य आध्मानम्। उदरकी वायुफुल्लता, पेटका फूलना।

उदरानलपत्रक (सं॰ पु॰) लघुतालीशपत्र।

उदरामय (सं॰ पु॰) उदरस्य आमयः। अतीसार रोग, आंवके दस्त लगनेकी बीमारी। अतिसार देखो।

उदरामयकुम्भकेशरी (सं॰ पु॰) प्लीहाधिकारका एक रस, तिल्लीकी एक दवा। पारा, गन्धक, ताम्र, त्रिकटु, यवक्षार, टङ्कण, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, पञ्चलवण, यमानी एवं हिङ्गु प्रत्येक समभाग ले नीबूके रसमें घोंटे। एक माषा परिमित वटिका खिलानेसे उदरामय रोग अच्छा हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदरामयिन् (सं॰ त्रि॰) उदरामययुक्त, जिसके आंवकी बीमारी रहे।

उदरारिरस (सं॰ पु॰) उदराधिकारका रस, पेटकी एक दवा। पारद, शुक्तितुल्य, जैपाल और पिप्पली बराबर बराबर डाल वज्रीक्षीरमें घोंटे। माषामात्र वटी खानेसे स्त्रीका जलोदर आरोग्य होता है। दधि और ओदनका पथ्य देना योग्य है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदरावर्त (सं॰ पु॰) उदरस्य आवर्त इव। नाभि, नाफ़, सूंड़ी।

उदरावेष्ट (सं॰ पु॰) शरीर क्रिमिभेद, पेटका केंचुवा।

उदरिक, उदरिन् देखो।

उदरिणी (सं॰ स्त्री॰) उदर-इनि-ङीप्। गर्भवती, हामिला, जिसके पेटमें लड़का रहे।

उदरिन् (सं॰ त्रि॰) १ उदरिक, बड़े पेटवाला। २ कुक्षिसम्बन्धीय, शिकमी, जो पेटसे सरोकार रखता हो। ३ उदरसर्वस्व।

उदरिल (सं॰ त्रि॰) उदर-इलच्। तुन्दादिभ्य इलच्। पा ५।२।११७। उदरी, तोंदल, सुरसुरोंका थैला।

उदर्क (सं॰ पु॰) उत्-ऋच-घञ्। १ उत्तरकाल, आयिन्दा ज़माना। २ भाविफल, कामका आगे आनेवाला नतीजा। ३ मदनकण्टक, मैनफल। ४ धुस्तूर वृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ उत्कर्ष, सबक़त, आगे निकल जानेका काम। ६ अन्त, सिरा। ७ भवनकी उच्चता, इमारतकी बुलन्दी। ८ उपहार, इनाम।

उदर्चिस् (सं॰ पु॰) उन्नतमर्चिः शिरा यस्य। १ अग्नि, आग। २ शिव। ३ कामदेव। (त्रि॰) उन्नतं प्रभा यस्मात्। ४ प्रज्वलित, भभकता हुआ।

उदर्द (सं॰ पु॰) उत्-अर्द-अच्। दद्रु, हुमरा, ददोरा। वरटीके दष्टसंस्थान पर शोथ चढ़ने, कण्डू उठने, व्यथा बढ़ने, सड़न पड़ने और छर्दि, ज्वर एवं विदाह लगनेसे यह रोग उपजता है। (माधवनिदान)

उदर्दप्रशमनवर्ग (सं॰ पु॰) उदर्दके शमनका एक योग, ददोरा मिटानेवाली चीजोंका ज़खीरा। तिन्दुक, पियाल, वदर, खदिर, कदर, सप्तपर्ण, अश्वकर्ण, अर्जुन, पीतशाल और विट्खदिर मिलनेसे यह वर्ग बनता है। (चरक)

उदर्ध (सं॰ पु॰) शोणज्वर, सुर्ख बुखार।

उदर्य (सं॰ त्रि॰) १ उदरी, पेटवाला। (वै॰ क्ली॰) २ उदरपूरक, पेटका माद्दा।

उदलगुरी—आसाम प्रान्तके दरङ्ग जिलेका एक ग्राम। यह भूटानकी सीमाके समीप है। निकटवर्ती पहाड़ी लोगोंके साथ व्यापार करनेको प्रति वर्ष यहां मेला लगता, जो प्रायः एक मास चलता है। भूटानके राजा भेंटकी चीजें खरीदने आया करते हैं। भूटिये हजारों रुपयेका टट्टू, कम्बल, नमक तथा मोम बेचते और चावल, रुई, कपड़ा एवं पीतलका बरतन खरीदते हैं।

उदलावणिक (सं॰ त्रि॰) उदलवण-ठक्। लवणोदकसिद्ध, नमक और पानीसे पकाया हुआ।

उदवग्रह (सं॰ पु॰) स्वरित आघात विशेष। यह उदात्तपर निर्भर रहता, जो अवग्रहमें उठता है।

उदवना (हिं॰ क्रि॰) उदय होना, निकलना, देख पड़ना।

उदवसानीय (वै॰ त्रि॰) अन्तिम, अखीर।

उदवसित (सं॰ क्ली॰) उदूर्ध्वमवसीयते स्म, उद्-अव-षिञ् बहुवचने वा क्त। भवन, मकान, रहनेकी जगह।

उदवास (सं॰ पु॰) उदके व्रतार्थवासः, उदादेशः।

पेयं वासवाहनधिषु च। पा ६।३।५८। व्रतके पालनार्थं जलमें वास।

उदवाह (वै० पु०) जलवाहक, पानी ढोनेवाला। (ऋक् ५।४८।३) (हिं०) उद्वाह देखो।

उदवेग (हिं०) उद्वेग देखो।

उदशराव (वै० पु०) जलपूर्ण शराव, पानीसे भरा प्याला। (छान्दोग्य उपनिषत् ८।८।१)

उदश्रु (सं० त्रि०) उद्गतमश्रु यस्य, प्रादि० बहुव्री०। निर्गताश्रु, आंसू बहानेवाला।

उदश्वित् (सं० क्ली०) उदके नश्वयति वर्धते, उद-श्वि-क्विप्-तुक्। अर्धजल तक्र, आधा पानी और आधा मठा। यह तृष्णा, दाह तथा मुखके शोष और चुपड़नेसे कुष्ठको दूर करता है। (राजवल्लभ)

उदसन (सं० क्ली०) उत्क्षेपण, फेंक फांक, उठाव।

उदसना (हिं० क्रि०) उठ जाना, उखड़ना, बरबाद होना।

उदस्त (सं० त्रि०) उत्-अस-क्त। १ उत्क्षिप्त, फेंका हुआ। २ बहिष्कृत, निकाला हुआ।

उदस्य (सं० अव्य०) १ उदसन करके, फेंक कर। २ बहिष्कार करके, निकालकर। ३ चेष्टा करके, कोशिश लगाकर।

उदहरण (सं० पु०) उदकं ह्रियते अनेन, उत्-हृ करणे ल्युट्। कुम्भ, घड़ा।

उदहार (सं० त्रि०) उदकं हरति, हृ-अण् उदादेशः। १ जलहारक, पानी लानेवाला। (पु०) भावे घञ्। २ जलहरण, पानी लानेका काम।

उदाज (सं० पु०) उद-अज-घञ्, कवर्गादेशो न स्यात्। अजिव्रज्योश्च। पा ७।३।६०। "उदाजः क्षत्रियाणाम् (प्रेरणम्)।" (सिद्धान्तकौमुदी) प्रेरण, पहुंचाने या भेजनेका काम।

उदाजी चौहान—दाक्षिणात्यवाले रामचन्द्रपन्तके एक सैनिक। इन्होंने शाहूराजके समय पूनाको वारना उपत्यकामें बत्तीस शिरालका किला जीत लिया था। किन्तु शाहूने इन्हें शिराल और कराड़का चौथ दे अपना मित्र बनाया था।

उदाजी पवांर—दाक्षिणात्यवाले शाहु नृपतिके एक अश्वारोही सेनापति। पहले इनके पिताको रामचन्द्रपन्त अमात्यने गिञ्जीके घेरे जानेपर शासक बनाया था। ये शाहुके सैन्यमें भरती हो कितनेही अश्वारोहियोंके अधिनायक रहे। इन्होंने गुजरात और मालवेपर आक्रमण मारा था। लूनावाड़ तक गुजरात लूटा गया, किन्तु गिरधर बहादुर मालवेके रक्षक बनने पर इन्हें धारका किला छोड़ पीछे हटना पड़ा। १६९६ ई० को उदाजी पंवारने मांड़ूका किला छीना था। १७३१ ई० को १ ली अपरैलको बड़ोदेके निकट भीलापुरमें जो युद्ध हुआ, उसमें इन्होंने निज़ाम् उल्-मुल्कको फौजके हाथ आत्मसमर्पण किया।

उदात्त (सं० पु०) उत्-आ-दा-क्त। उच्चैरुदात्तः। पा १।२।२९। "ताल्वादिषु सभागेषु स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽजुदात्तः।" (सिद्धांतकौमुदी) १ मुखमें तालु प्रभृति ऊर्ध्व भागसे उच्चारित होनेवाली स्वर, तेज़ लहज, तीखा सुर। अनुदात्त देखो। २ वाद्य विशेष, एक बाजा। ३ दान, बख्शिश। ४ काव्यालङ्कार विशेष। ५ सुदीर्घ भेरी, बड़ा ढोल। ६ कार्य, काम। (क्ली०) ७ आभूषण-विशेष, एक गहना। (त्रि०) कर्तरि क्त। ८ महत्, बड़ा। ९ समर्थ, क़ाबिल। १० दाता, देनेवाला। ११ उच्च, ऊंचा। १२ उच्च स्वरयुक्त, तीखे स्वरवाला। १३ सुन्दर, खूबसूरत। १४ प्रिय, प्यारा।

उदात्तमय (सं० त्रि०) उदात्तसदृश, तीखे स्वरसे मिलता-जुलता।

उदात्तवत् (सं० त्रि०) उदात्तस्वरसे उच्चारण किया जानेवाला, जो तीखी आवाज़से बोला जाता हो।

उदात्तश्रुति, उदात्तवत् देखो।

उदात्तश्रुतिता (सं० स्त्री०) उदात्त स्वरसे उच्चारण करनेका भाव, जिस हालतमें तीखी आवाज़से बोलें।

उदातूह (सं० पु०) जलकाक, पानीकी एक चिड़िया।

उदाद्यन्त (सं० त्रि०) अन्तमें उदात्त स्वर रखनेवाला, जिसके पीछे तीखी आवाज़ लगे।

उदान (सं० पु०) उदूर्ध्वेन आनिति अनेन, उत्-आ-अन्-घञ्। कण्ठवायुविशेष, गलेसे निकलने और सरपे चढ़नेवाली हवा। "उदानः ? कण्ठस्थानीयः ऊर्ध्वगमनवानुत्क्रमणवायुः।" (वेदान्तसार) वेदान्तके मतसे यह ऊर्ध्वगमनशील कण्ठस्थायी उत्क्रमण वायु है।

"उदानो नाम यस्तूर्ध्वमुपैति पवनोत्तमः।
ऊर्ध्वजत्रुगतान् रोगान् करोति च विशेषतः।" (सुश्रुत)

महर्षि सुश्रुतके कथनानुसार ऊर्ध्व दिक् सञ्चरण करनेवाले वायुका नाम उदान है। इसके कुपित होनेसे स्कन्धसन्धिसे उपरिस्थित सकल रोग उपजते हैं।

योगार्णवमें इसका क्रियास्थान आदि इसप्रकार निरूपित है—

"स्पन्दयत्यधरं वक्त्रं गात्रनेत्रप्रकोपनः।
उद्वेजयति मर्माणि उदानो नाम मारुतः॥
विद्युत्पावकवर्णः स्यादुत्थानासनकारकः।
पादयोर्हस्तयोश्चापि सर्वसन्धिषु वर्तते॥"

उदानवायु अधर और मुखको फड़काता है। यह चक्षु एवं शरीरको प्रकोपकारी और मर्मको उत्तेजक है। वर्ण विद्युत् एवं पावक जैसा होता है। इसीके सहारे लोग उठते बैठते हैं। हस्त एवं पाद सकल सन्धिमें यह विद्यमान है।

वैद्यकके मतानुसार उदानवायु ऊपरको चढ़ता है। इसीके सहारे गाना और बात करना होता है। विशेषतः यह ऊर्ध्व-जत्रु-गत रोग बढ़ाता है। (सुश्रुत)

२ उदरावर्त, ढोंढी। ३ सर्प, सांप। ४ पक्ष्म, पलक। ५ बौद्ध शास्त्रभेद। इस शास्त्रमें बुद्धदेवका चरित्र लिखा है।

उदापि (सं० पु०) सहदेवके पुत्र और मगधराज जरासन्धके पौत्र। (हरिवंश)

उदापेक्षी (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्र। (भारत)

उदाप्य (वै० अव्य०) धाराके ऊपर, दरयाके सामने।

उदाम (हिं०) उद्दाम देखो।

उदायन (हिं०) उद्यान देखो।

उदायुध (सं० त्रि०) उदूर्ध्वं आयुधो यस्य। उद्गतास्त्र, हथियार उठाये हुआ। (रघु १२।४४)

उदार (सं० त्रि०) उत् उत्कृष्टं आ समन्तात् राति ददाति, उत्-आ-रा-आतश्चेति क। १ दाता, देनेवाला। २ महात्मा, साधु। (गीता ७।१८) ३ सरल, सीधा। ४ उत्कृष्ट, बढ़िया। ५ गम्भीर, गहरा। ६ महोच्च, बहुत ऊंचा। ७ वदान्य, रहीम। ८ सारवान्, असली। ९ रम्य, उमदा। १० न्याय्य, वाजिब। ११ शिष्ट, शरीफ। १२ असाधारण, अनोखा। (पु०) १३ दीर्घशालि, लम्बा चावल। (अव्य०) १४ ऊंचे स्वरसे, बुलन्द आवाज़में। (वै० त्रि०) १५ उत्तेजक, उठाने या भड़कानेवाला। (पु०) १६ उत्थानशील बाष्प, उठनेवाली भाप। १७ काव्यालङ्कार विशेष। इससे निर्जीव पदार्थमें शिष्टता प्रदर्शित करते हैं।

उदारा—सङ्गीतशास्त्रका सप्तक विशेष। सा ऋ ग म प ध और नि सात स्वरको एकत्र करनेसे सप्तक संज्ञा होती है। मनुष्यके देहमें स्वाभाविक तीन सप्तकसे अधिक नहीं निकलते। इसीसे भारतीय सङ्गीतशास्त्रमें उदारा, मुदारा और तारा तीन सप्तकका उल्लेख है। नाभिसे जो सप्तक उठता, उसे सङ्गीतज्ञ उदारा कहता है। वेदान्तके मतसे यह अनुदात्त है।

उदाराशय (सं० त्रि०) उत्कृष्ट आशयविशिष्ट, ऊंचा मतलब रखनेवाला, बड़ा।

उदावत्सर (सं० पु०) वर्ष विशेष। इस वर्ष रौप्य देनेसे महाफल मिलता है। इदावत्सर देखो।

उदावर्त (सं० पु०) उत्-आ-वृत्-घञ्। रोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसके होनेसे न तो मल गिरता, न मूत्र उतरता और न वायु ही चलता है।

"वातविण्मूत्रजृम्भाश्रुक्षवोद्गारवमीन्द्रियैः।
व्याहन्यमानरुदितैरुदावर्तो निरुच्यते॥" (सुश्रुत)

वायु, मल, मूत्र, जृम्भा, अश्रु, काश, हिक्का, उद्गार, वमि, शुक्र प्रभृतिका वेग रोकनेपर वायु ऊर्ध्वजानेसे यह रोग उत्पन्न होता है। इसी कारण उदावर्त नाम पड़ा है।

"क्षुत्तृष्णाश्वासनिद्राणामुदावर्तो विधारणात्।
वायुःकोष्ठानुगो रूक्षैः कषायकटुतिक्तकैः।
भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्तं करोति हि॥" (सुश्रुत)

क्षुधा, तृष्णा, निद्रा और श्वासका वेग रोकनेसे भी यह रोग हो जाता है। फिर रूक्ष, कषाय, कटु और तिक्त भोजन कोष्ठमें पहुंचनेसे वायु भड़कना इसकी उत्पत्तिका दूसरा कारण है।

"तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरभिद्रुतम्।
शकृद्वमन्तं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत्॥"

सुश्रुतने कहा—उदावर्त रोगमें तृष्णार्त, अत्यन्त

क्लान्त, क्षीण, शूलार्त और शीघ्र शीघ्र पुरीष एवं वमि करनेवाले रोगीको छोड़ देना चाहिये।

वायुके विपथ गमनपर उत्पन्न होनेसे सकल ही अवस्थामें वायुको स्वाभाविक पथपर पहुंचाना ही इस रोग-प्रतीकारका प्रधान उपाय है।

वायुसे उत्पन्न होनेवाले उदावर्त रोगमें स्नेह और स्वेद डाल आस्थापन लगाना चाहिये। मलरोधसे होनेवालेकी चिकित्सा आनाह रोगकी तरह चलती है। मूत्ररोधके उदावर्तपर एला वा दुग्ध मिला कर मदिरा तीन दिन अथवा जल डालकर तीन दिन आमलकीका रस पिलाते हैं। अश्रुधारणसे होनेपर इस रोगमें स्नेह और स्वेद लगा अश्रुमोचण करायें। उद्गारसे जो उदावर्त उभरता, उसमें रोगी बिजौरा नीबूका रस मिला सुरापान करता है। वमनसे उदावर्त उठनेपर क्षार वा लवणके साथ अभ्यङ्ग प्रयोग किया जाता है। शुक्ररोधवालेमें स्त्रीका सहवास आवश्यक है। अनिद्रासे उपजनेपर उदावर्त रोगमें सुरापान करना और निद्रा लानेका ध्यान रखना चाहिये। कोष्ठगत वायु बिगड़ने उदावर्त उपजनेपर हृदय एवं वस्तिदेशमें शूल उठता, देह पर गौरव चढ़ता, अरुचि, तृष्णा तथा हिक्काका वेग बढ़ता, कष्टसे वायु, मूत्र एवं मल ढलता, श्वास लगता, काश काढ़ता, प्रतिश्याय पड़ता, दाह दहता, मोह मढ़ता, वमन चलता, शिरोरोग चलता और मन एवं श्रवणेन्द्रियका विभ्रम रहता है। इसी प्रकार वायुके प्रकोपसे अनेक विकार उठ खड़े होते हैं। सुश्रुतके मतमें ऐसे स्थल पर तैल एवं लवण मलाये और स्वेद तथा निरूहका वस्ति लगाये। मदनफल, अलाबुवीज, पिप्पली और कण्टकारीका चूर्ण पिचकारीसे मलद्वारमें पहुंचाना चाहिये। इससे शीघ्र ही उदावर्त रोग अच्छा हो जाता है।

उदावर्ता (सं० स्त्री०) वायुजन्य स्त्रीयोनिरोगविशेष, औरतोंकी एक बीमारी। इसमें कष्टके साथ सफेनिल रज निकलता है। (भावप्रकाश)

उदावर्तिन् (सं० त्रि०) उदावर्तरोगविशिष्ट, जिसके कांच निकल आनेकी बीमारी रहे।

उदावसु (सं० पु०) निमिके पौत्र और जनकके पिता। यह राजर्षि जनकसे भिन्न रहे। जनक देखो।

उदास (सं० पु०) १ विराग, मसला-जन्न। २ उपेक्षा, बेपरवाई। ३ उच्चता, ऊंचाई। ४ उत्क्षेपण, उछाल। (त्रि०) ५ उदासीन, जन्निया मज़हबका मोतकि़द। ६ विरक्त, बेपरवा। ७ दुःखी, रञ्जीदा।

उदासना (हिं० क्रि०) १ उद्वासन करना, मट्टीमें मिलाना। २ उठाना, समेटना, लपेट डालना।

उदासित (सं० त्रि०) विरक्त, बेपरवा, किसीसे सरोकार न रखनेवाला।

उदासिन् (सं० त्रि०) विरक्त, बेपरवा। उदासी देखो।

उदासित, उदासित देखो।

उदासी (सं० पु०) १ दर्शनप्त, मुहक्कि़क़। २ विरक्त पुरुष, बेपरवा आदमी। ३ सन्यासी, एक मज़हबी फिरक़ेका पाबन्द। यह नानकके धर्मपर चलते और मठमें बसते हैं। उदासी अपने हाथसे भोजन नहीं बनाते, दूसरेका ही बनाया खाते हैं। नानकका 'ग्रन्थ' नामक धर्मग्रन्थ ही उपास्य है। सकल जातिके लोग उदासी सम्प्रदायभुक्त हो जाते हैं। इनके शिखा नहीं रहती। मस्तक मुंडवा डालते हैं। लंगोट सभी चढ़ाते हैं। (हिं० स्त्री०) ३ दुःख, अफ़सोस।

४ बम्बई प्रान्तस्थ सूरत जिलेवाले बारडोलीके उदा कुनबियोंका एक सम्प्रदाय। कोई सवा तीन सौ वर्ष हुये, गोपालदास नामक एक व्यक्तिने यह सम्प्रदाय चलाया था। उन्होंने वैदिक मत अस्वीकार कर केवल एक परमेश्वरपर विश्वास करनेके लिये अपने अनुयायियोंको उपदेश दिया। यह सम्प्रदाय ईश्वरके ध्यानसे मुक्तिकी प्राप्ति और पुनर्जन्मको मानता है। पांच लोग मिलकर महन्तको निर्वाचन करते हैं। महन्तको शिष्यके गलेमें सेली पहनाने, विवाह एवं अन्त्येष्टिक्रियाका समय ठहराने और आज्ञाभङ्ग करनेवालेको सम्प्रदायसे निकालनेका अधिकार है। उदा-कुनबी उदासी प्रातःकाल नहाते, काली तुलसीपर जल चढ़ाते और अपने पवित्र धर्मग्रन्थसे ध्यान लगाते हैं। सन्ध्या समय वह धर्मग्रन्थके पीठोपाधानको नमस्कार करते हैं! फिर उसकी आरती उतारी और स्तुति

सुनाई जाती है। विवाहके समय महन्त अगुवा रहते हैं। और्ध्वदैहिक कर्म कोई नहीं करता। किन्तु यह अखाड़ेमें रहनेवाले नानकपन्थी उदासियोंसे अलग हैं।

उदासीन (सं० त्रि०) उत्-आस-शानच्-ईदास इति इत्वम्। १ वैरागी, बेपरवा। २ मध्यस्थ, बीचवाला। ३ स्वतन्त्र, आज़ाद, झगड़ेमें न पड़नेवाला। ४ सम्पर्क-रहित, निराला। ५ तटस्थ, नज़दीकी। ६ अपरिचित, जिससे जान-पहचान न रहे। (पु०) ७ अपरिचित व्यक्ति, अजनबी, जो दोस्त या दुश्मन न हो।

उदासीनता (सं० स्त्री०) विराग, बेपरवाई।

उदासी बाजा (हिं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह भोंपे-जैसा रहता और फूंकनेसे बजता है।

उदास्थित (सं० पु०) उत्-आ-स्था-क्त। १ अध्यक्ष, मालिक। २ द्वारपाल, दरबान्। ३ चर, एलची। ४ नष्टसन्न्यास। ५ प्रव्रज्यावसित।

उदाहट (हिं० स्त्री०) ज़र्द रङ्गकी झलक, नीले रङ्गमें सुर्ख़ीकी चमक।

उदाहरण (सं० क्ली०) उत्-आ-हृ भावे ल्युट्। दृष्टान्त, मिसाल। कोई विषय सप्रमाण करनेको अन्य विषयका उल्लेख उदाहरण कहाता है—

"साध्यसाधर्म्यात्तद्धर्मभावी दृष्टान्त उदाहरणम्।"

साध्यसाधर्म्यसे उसके धर्मादि प्रकाशक दृष्टान्तको उदाहरण कहते हैं। न्यायमतसे अन्वयी और व्यतिरेकी दो प्रकारका उदाहरण होता है। साधनकी तरह अप्रयुक्त एवं साध्यवत्ताका अनुभावक अवयव अन्वयी और साध्यसाधनसे व्यतिरेक तथा व्याप्तिके प्रदर्शन द्वारा प्रकाशित दृष्टान्त व्यतिरेकी है।

२ निदर्शन, झलक। ३ उल्लेख, लिखाई। ४ वर्णन, बयान्। ५ सन्दर्भ, जाड़तोड़। ६ कथाप्रसङ्ग, बातचीत। ७ नाट्यशास्त्रोक्त गर्भाङ्ग-विशेष।

उदाहार (सं० पु०) उत्-आ-हृ-घञ्। १ उदाहरण, मिसाल। युक्ति और व्याप्ति द्वारा दिया जानेवाला दृष्टान्त उदाहार कहाता है। २ वक्तृताका आरम्भ, बातका शुरू।

उदाहार्य (सं० त्रि०) उदाहरणमें दिये जाने योग्य, जो मिशालमें आने क़ाबिल हो।

उदाहृत (सं० त्रि०) उत्-आ-हृ-क्त। १ उल्लिखित, लिखा हुआ। २ कथित, कहा हुआ। ३ उच्चारित, निकाला हुआ। ४ वर्णित, बताया हुआ। ५ उपन्यस्त, रखा हुआ।

उदाहृति (सं० स्त्री०) उदाहरण देखो।

उदित (सं० त्रि०) उत्-इन्-क्त। १ उन्नत, चढ़ा हुआ। २ उचित, वाजिब। ३ उन्नत, उठा हुआ। ४ उत्पन्न, निकला हुआ। ५ प्रादुर्भूत, चमका हुआ। ६ कथित, कहा हुआ। (क्ली०) उत्-इन् भावे क्त। ७ राशिका उदय, लग्न। "उदित उदयगिरि मञ्चपर।" (तुलसी) (पु०) ८ नीवार, किसी क़िस्मका चावल।

उदितयौवना (सं० स्त्री०) मुग्धा नायिकाका एक भेद। इसमें तीन भाग यौवन और एक भाग बाल्यकाल रहता है।

उदितहोमिन् (वै० त्रि०) सूर्योदयके पश्चात् यज्ञ करनेवाला।

उदिति (सं० स्त्री०) उत्-इ-क्तिन्। १ उदय, उठान। २ वाक्य, बात। ३ अस्त, गुरूब।

उदितोदित (सं० त्रि०) उदिते कथिते शास्त्रे अभ्युदितः। शास्त्रोक्त, जो शास्त्रमें कहा गया हो।

उदीक्षण (सं० क्ली०) सन्दर्शन, देखभाल।

उदीक्ष्य (सं० अव्य०) सन्दर्शन करके, देखभालकर।

उदीची (सं० स्त्री०) उत्क्रान्तं दृष्टिपथं अञ्चति, उत्-अञ्च ऋत्विगादिना क्विन् उगितश्चेति ङीप्। उत्तर दिक्, शिमाल।

उदीचीन (सं० त्रि०) उदीची-ख। उत्तरदिक्-सम्बन्धीय, शिमाली।

उदीच्य (सं० त्रि०) उदीची भावार्थे यत्। १ उत्तर देशीय, शिमालमें होने या रहनेवाला। (पु०) २ सरस्वती नदीके उत्तरपश्चिमस्थ देश। ३ उदीच्य देशका अधिवासी। (क्ली०) ४ ह्रीवेर, एक खुशबूदार चीज़।

उदीच्यकाष्ठ (सं० क्ली०) चोपचीनी।

उदीच्यवृत्त (सं० क्ली०) उदीच्यवृत्ति देखो।

उदीच्यवृत्ति (सं० स्त्री०) वैतालीय छन्दका एक भेद।

"षड्विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समात्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥ १२
उदीच्यवृत्तिर्द्वितीयलः सक्तोऽयं च भवेदयुग्मयोः।" १६ (वृत्तरत्नाकर)

उदीच्यवृत्तिके विषम चरणकी द्वितीय और तृतीय मात्रा संयुक्त होकर गुरुवर्ण बन जाती हैं।

उदीप (सं० त्रि०) उद्गता आपो यतः, अच् समा० ईत्वम्। १ उन्नतजल, पानीसे डूबा या भरा हुआ। (पु०) २ जलप्लावन, पानीकी बाढ़।

उदीपन, उदीपित (हिं०) उद्दीपन और उद्दीपित देखो।

उदीपी—१मन्द्राज प्रान्तके दक्षिण कनाड़ा ज़िलेका एक तालुक। भूमिका परिमाण ७८७ वर्गमील है। प्राय: ढाई लाख मनुष्य बसते हैं। हिन्दू और ईसाई अधिक हैं।

२ अपने तालुकका नगर और हेडक्वार्टर। यह अक्षा० १३° २०′ ३०″ उ० और द्राघि० ७४° ४७′ पू० पर अवस्थित है। कनाड़ा प्रान्तमें यह स्थान हिन्दुवोंका पवित्र तीर्थ है। महिसुरसे प्रतिवर्ष यात्री आया करते हैं। मन्दिर बहुत पुराना है। हिन्दुवोंके आठ मठाधीश दो-दो वर्षके हिसाबसे उसका प्रबन्ध करते हैं। निकटवर्ती कल्याणपुर सम्भवत: कोसमस इनडिकोप्लुसटेस (५४५ ई०) का काल्लियेना है।

उदीरण (सं० क्ली०) उत्-ईर्-ल्युट्। १ उच्चारण, बोलचाल। २ कथन, कहाई। ३ उद्दीपन, भड़काव। ४ प्रेरण, पहुंचाने या भेजनेका काम। ५ विजृम्भण, जमहाई। ६ उत्पत्ति, पैदायश। ७ उल्लेख, लिखाई। ८ उत्क्षेपण, उछाल।

उदीरित (सं० त्रि०) उत्-ईर्-क्त। १ कथित, कहा हुआ। २ उद्रिक्त, बढ़ाया या समझाया हुआ। ३ प्रेरित, भेजा हुआ।

उदीरितधी (सं० त्रि०) कुशाग्रबुद्धि, तेज़फ़हम, समझदार।

उदीर्ण (सं० क्ली०) उत्-ऋ-क्त। १ उदित, उठा या चढ़ा हुआ। २ प्रबल, ज़ोरदार। (पु०) ३ विष्णु।

उदीर्णदीधिति (सं० त्रि०) अतिशय प्रभान्वित, बहुत चमकीला।

उदीर्णवेग (सं० त्रि०) अतिशय वेगशील, निहायत ज़ोरदार।

उदीर्य (सं० त्रि०) १ उच्चारणके योग्य, जो कहे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) २ कहकर, बोलके।

उदीर्यमाण (सं० त्रि०) १ चलाया या हटाया जानेवाला, जो फेंका या अलग किया जा रहा हो।

उदीषित (सं० त्रि०) उन्नत, ऊंचा, जो बढ़ गया हो।

उदुआ (हिं० पु०) धान्य विशेष, एक चावल। यह वर्षाके अन्त समय कटता है।

उदुखल, उदूखल देखो।

उदुम्बर (सं० पु०) १ उडूम्बर, गूलर। (Ficus glomerata) पर्याय है—जन्तुफल, यज्ञाङ्ग, क्रिमिफल, शीतवल्कल, यज्ञाङ्ग, विषवृक्ष, हेमपुष्प, क्षीरवृक्ष, जन्तुवृक्ष, सदाफल, हेमदुग्धक, कालस्कन्द, यज्ञयज्ञ, सुप्रतिष्ठित, पुष्पशून्य, पवित्रक, सौम्य। वैद्यकके मतसे यह शीतल, रूक्ष, गुरु, मधुर, कषाय, वर्णकारी, व्रणशोधक एवं व्रणपूरक होता और प्रदर, पित्त, कफ तथा रुधिर रोगको खोता है। उदुम्बरका पक्व फल मधुर, शीतल एवं क्रिमिकर और रक्तपित्त, तृष्णा, मूर्छा, दाह, पित्त, श्रम, शोष, अपस्मार तथा उन्माद-रोगनाशक है। कच्चा गूलर कषाय, अग्निदीपक, रूक्ष, मांसवर्धक और रक्तविकारनाशक ठहरता है। वल्कल शीतल, कषाय, गर्भरक्षक एवं स्तनदुग्धकर होता और व्रण, क्षत, कुष्ठ तथा चर्मरोगको खोता है।

२ कुष्ठ विशेष, किसी क़िस्मका कोढ़। ३ देहली, चौखट। ४ पण्डक, नामर्द। (क्ली०) ५ ताम्र, तांबा। ६ कर्ष, दो तोलेकी एक तौल। ७ मेढ्र।

उदुम्बरच्छदा, उदुम्बरदला देखो।

उदुम्बरदला (सं० स्त्री०) उदुम्बरस्य दलमिव दलमस्याः। क्षुद्रदन्तीवृक्ष, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरपर्णी (सं० स्त्री०) १ दन्तीवृक्ष, दांतीका पेड़। २ लघुदन्तीवृक्ष, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरमशक (सं० पु०) मूषिक, चूहा।

उदुम्बरावती (सं० स्त्री०) हरिवंशोक्त नदीविशेष।

उदुम्बरी (सं० स्त्री०) काकोदुम्बरिका, कठगूलर, गोवला।

उदुम्बल (वै० त्रि०) विस्तारित शक्तिसम्पन्न, बड़ी ताक़त रखनेवाला। (सायण) (सं० पु०) २ उदुम्बर, गूलर।

उदुम्बल, उदुम्बर देखो।

उदुष्टमुख (वै० त्रि०) अश्वसदृश रक्तवर्ण मुखयुक्त, घोड़ेकी तरह लाल मुंह रखनेवाला।

उदूखल (सं० क्ली०) १ तण्डुलादि कण्डनार्थ काष्ठपात्र, चावल वगैरह कूटनेको लकड़ीका बरतन, ओखली, इमामदस्ता। २ गुग्गुल, गूगल।

उदूखलसन्धि (सं० पु०) उदूखलाकारग्रीवोर्धगत-सन्धि, ओखली-जैसा गर्दनके ऊपरका जोड़।

उदूढ़ (सं० त्रि०) उत्-वह-क्त। १ विवाहित, व्याहा। २ स्थूल, मोटा। ३ धृत, वाहित, असली। ४ उन्नत, ऊंचा।

उदूल (अ० पु०) शासनभङ्ग, नाफ़रमानी, हुक्म न माननेकी बात।

उदूलहुक्म (अ० वि०) आज्ञाभङ्गकारी, नाफरमान्, जो हुक्म् मानता न हो।

उदूलहुक्मी, उदूल देखो।

उद्वेग (हिं०) उद्वेग देखो।

उद्वेजय (सं० त्रि०) उत्-एज-णिच्-खश्। १ उद्वेगकारक, घबरा देनेवाला। २ भयप्रद, खौफ़नाक। ३ उत्कम्पजनक, कंपा देनेवाला।

उदेपुर—बम्बईप्रान्तस्थ रेवाकांठे जिलेके छोटे-उदेपुर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° २०´ उ० और द्राघि० ७४° १´ पू० पर, समतल भूमिमें अवस्थित है। इसके निकट ही ओड़सङ्ग नद उत्तरपश्चिम घूम पड़ा है। नगरकी दक्षिण ओर उक्त नद और पूर्व ओर विचित्र ह्रद पड़ता, जिसके किनारे घना जङ्गल मिलता है। १८५८ ई०के दिसम्बर मास ब्रिगेडियर पार्कने ह्रदकी ओर सुन्दर आम्रवन एवं नदीके मध्य तांतिया तोपीकी फौजको भगाया था। ह्रदके पार्श्वपर एक मनोरम देवमन्दिर बना है। राजप्रासाद बहुत ऊंचा है। शहरपनाह पूरी नहीं, अधूरी खड़ी है। नगरमें कोई वाणिज्य-व्यवसाय नहीं होता। लोग राज्यपर ही अपने जीवनके निर्वाहार्थ निर्भर हैं। ई०का १८ वां शताब्द लगते अलीमोहनसे राजधानी उठकर यहां आयी थी। पहले राजा गायकवाड़को कर देते रहे। किन्तु १८२२ ई०में उनके १०५००) रु० अंगरेज सरकारको देनेपर राजी होनेसे गायकवाड़ने यह राज्य अंगरेजोंके अधीन बनाया। राजाको बदलेमें सम्मानार्थ सरोपा और गायकवाड़के ग्रामोंसे कुछ रुपया मिला करता है।

उदै (हिं०) उदय देखो।

उदो (हिं०) उदय देखो।

उदोजस् (वै० त्रि०) अतिशय प्रचण्ड, निहायत ताक़तवर।

उदोत (हिं०) उद्योत देखो।

उदोतकर (हिं० वि०) प्रकाशक, रौशनी बख्शनेवाला।

उदोती, उद्योतकर देखो।

उदौ (हिं०)

उदौदन (सं० पु०) जलसे सिद्ध अन्न, पानीमें पकाया हुआ चावल।

उद्‌गत (सं० त्रि०) उत्-गम-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उत्पन्न, पैदा। ३ उदित, निकला हुआ। ३ विगत, गया हुआ। ४ त्यक्त, फेंका हुआ।

उद्‌गतशृङ्ग (सं० त्रि०) नूतन शृङ्गयुक्त, निकलते सींगोंवाला।

उद्‌गता (सं० स्त्री०) विषमवृत्तिछन्दका एक भेद। इसमें चार पाद पड़ते हैं। पहले तीनमें दश दश और पिछले चौथे पादमें तेरह अक्षर लगते हैं।

"सजसादिमे सलघुकौ च नसजगुरुकैरथोद्गता।
त्र्यङ्घ्रिगतभनजलगा युताः सजसा जगौ च चरणमेकतः पठेत्॥"
(वृत्तरत्नाकर)

उद्‌गतासु (सं० त्रि०) मृत, मुर्दा, मरा हुआ।

उद्‌गति (सं० स्त्री०) उत्-गम-क्तिन्। १ ऊर्ध्वगति, चढ़ाव। २ उदय, निकास। ३ उत्पत्ति, उपज।

उद्‌गन्धि (सं० त्रि०) उत्कृष्ट गन्धयुक्त, खुशबूदार।

उद्‌गम (सं० पु०) १ उत्थान, उठान। २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ उदय, निकास। ४ ऊर्ध्वगति, चढ़ाई। ५ वान्ति, कै, उलटी।

उद्‌गमन (सं० क्ली०) उद्गम देखो।

उद्‌गमनीय (सं० क्ली०) उत्-गम-अनीयर्। १ धौत-वस्त्रद्वय, धोया जोड़ा। (त्रि०) २ ऊर्ध्वगमनके योग्य, चढ़े जाने क़ाबिल।

उद्गाढ़ (सं॰ त्रि॰) अतिशय अधिक, बहुत ज्यादा।

उद्गाता, उद्गातृ देखो।

उद्गातुकाम (सं॰ त्रि॰) गान करनेको अभिलाषी, जो गाना चाहता हो।

उद्गातृ (सं॰ पु॰) उत्-गै-तृच्। १ सामवेद-गायक। २ ऋत्विग्भेद।

उद्गाथा (सं॰ स्त्री॰) आर्याछन्दोभेद। यह गीति सदृश रहती और अपने चार पादमें क्रमशः बारह तथा अट्ठारह मात्रा रखती है।

उद्गार (सं॰ पु॰) उत्-गॄ-घञ्। उन्न्योर्ग्रः। पा ३।३।२९। १ वमन, कै, उलटी। २ मुखसे वायुका निर्गम, डकार। ३ निःसरण, टपकाव, चुवाव। ४ उच्चारण, कहाई। ५ निष्ठीवन, थूक। ६ आधिक्य, बढ़ती। ८ गर्जन, फुफकार।

उद्गारकमणि (सं॰ पु॰) प्रवाल, मूंगा।

उद्गारशुद्धि (सं॰ स्त्री॰) उद्गारका अनवरोध, सधम अम्लोद्गारका भाव।

उद्गारशोधन (सं॰ पु॰) उद्गारं शोधयति, शुध-णिच्-ल्यु। श्वेतजीरक, कृष्णजीरक, काला या सफेद जीरा।

उद्गारशोधनी (सं॰ स्त्री॰) जीरक, जीरा।

उद्गारिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-गॄ-णिनि। उद्गार-युक्त, उगलनेवाला।

उद्गिरण (सं॰ क्ली॰) उत्-गॄ-ल्युट्। निपातनात् इत्वम्। १ उद्गार, डकार। २ वमन, कै, उलटी। ३ कण्ठस्वरभेद, गलेकी घरघराहट।

उद्गीत (सं॰ त्रि॰) उत्-गै-क्त। उच्चैःस्वरमें गीत, बुलन्द आवाज़से गाया हुआ।

उद्गीति (सं॰ स्त्री॰) उत्-गै भावे क्तिन्। १ उच्चैः स्वरसे गान, ऊंची आवाज़का गाना। कर्मणि क्तिन्। २ मात्रावृत्त भेद। इसके प्रथम एवं तृतीयमें पन्द्रह, द्वितीयमें बारह और चतुर्थ पादमें अट्ठारह मात्रा लगती हैं।

"आर्याशकलद्वितयं व्यत्ययरचितं भवेद्यस्याः।
सोद्गीतिः किल गदिता तद्वत्यत्यंशभेदसंयुक्ता॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्गीथ (सं॰ पु॰) उत्-गै-थक्। गश्थोदि। उण् २।१०। १ सामगानका अवयवभेद। सामके पञ्च वा सप्त अवयव होते हैं—१ प्रस्ताव, २ उद्गीथ, ३ प्रतिहार, ४ उपद्रव, ५ निधन, ६ हिङ्कार और ७ प्रणव। उद्गाता जो साम गाता, वही उद्गीथ कहाता है। साम देखो। वर्षाकालको उद्गीथ गाया जाता है। उपनिषत्‌के मतसे पशुमें अश्व, पञ्चप्राणमें चक्षु और सप्तविध वाक्यमें उद्भूत शब्द ही उद्गीथ है। छान्दोग्यके कथनानुसार—"उद्गीथ ही साम है। जो उद्गीथ (ॐ) गाता, उसका निश्वास-प्रश्वास नहीं आता-जाता। 'उत्' प्राण है। क्योंकि इसी प्राणवायुसे लोग ऊपर चढ़ते हैं। 'गी' वाक् और 'थ' अन्न है। कारण अन्य द्वारा सकलकी स्थिति होती है। 'उत्' स्वर्ग, 'गी' आकाश और 'थ' पृथिवी है। 'उत्' सूर्य, 'गी' वायु और 'थ' अग्नि है। 'उत्' सामवेद 'गी' यजुर्वेद और 'थ' ऋग्वेद है। लोगोंको उद्गीथका ध्यान करना चाहिये।" (छान्दोग्यउ॰ १ प्र॰ ३ ख॰) २ सामवेदका द्वितीय अंश। ३ ओङ्कार। ४ भवपुत्र। (विष्णुपुराण २।१।३८) ५ वेदके एक टीकाकार।

उद्गीरण, उद्गिरण देखो।

उद्गीर्ण (सं॰ त्रि॰) उत्-गॄ-क्त। १ वमित, कै किया हुआ। २ उच्चारित, कहा हुआ। ३ उद्गत, उठा हुआ। ४ अनुरञ्जित, खुश किया हुआ। ५ निर्गत, निकला हुआ। ६ प्रतिविम्बित, झलका हुआ।

उद्गूर्ण (सं॰ त्रि॰) उत्-गुर्-क्त। उत्तोलित, उछाला हुआ। २ उद्यत, मुस्तैद, तैयार।

उद्ग्रथित (सं॰ त्रि॰) उत्-ग्रन्थ-क्त। १ उपरि भागमें बद्ध, ऊपरी हिस्से पर बंधा हुआ। २ मुक्त, खुला हुआ।

उद्ग्रन्थ (सं॰ त्रि॰) उन्मुक्त, खुला हुआ। (पु॰) उत्-ग्रन्थ-घञ्। २ उन्मोचन, छोड़ाई। ३ अध्याय, भाग, बाब, हिस्सा।

उद्ग्रभण (वै॰ क्ली॰) उत्-ग्रह-ल्युट् वेदे हस्य भः। १ ग्रहण, पकड़, ऊपर पकड़के दान। (कात्या॰श्रौ॰१५।५।११)

उद्ग्रह (सं॰ पु॰) १ ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव। २ धर्म द्वारा किया जानेवाला कार्य।

उद्ग्रहण (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव, चढ़ाव।

उद्ग्राभ (वै॰ पु॰) उत्-ग्रह-घञ्। वेदे हस्य

भः। १ ग्रहण, पकड़। २ तत्निर्बन्ध, पकड़की बन्दिश। ३ दान, बख्शिश।

"वाजस्य माप्रसव उद्ग्राभेणोदग्रभीत्।" (वाजसनेयस० १३।३८)

"उद्ग्राभेण ऊर्ध्वं विगृह्य दीयते उद्ग्राभणं दानम्।" (महीधर)

उद्ग्राह (सं० पु०) उत्-ग्रह-घञ्। १ दान, बख्शिश। २ वाममेद, विद्या विचार। यह प्रातिशाख्यकी सन्धिका एक नियम है। इससे विसर्ग, इकार और ओकारके स्थानमें स्वर आगे रहनेपर अकार आदेश होता है। ३ तर्कका उत्तर, बहसका जवाब। ४ आपत्ति, उज्र। ५ उद्गार, डकार।

उद्ग्राहणिका (सं० स्त्री०) तर्कका उत्तर, बहसका जवाब।

उद्ग्राहिणी (सं० स्त्री०) उत्-ग्रह-णिनि-ङीप्। पाशरज्जु, जालकी रस्सी।

उद्ग्राहित (सं० त्रि०) उत्-ग्रह-णिच्-क्त। उपरि नीत, चढ़ाया हुआ। २ बद्ध, बांधा हुआ। ३ उदीर्ण, निकाला हुआ। ४ अन्तःकरणसे अर्पित, सौंपा हुआ। ५ आक्रान्त, सताया हुआ। ६ उन्नमित, उचकाया हुआ। ७ ग्राहित, पकड़ा हुआ। ८ स्मरण किया हुआ, जो सोचा गया हो।

उद्ग्रीव (सं० त्रि०) ग्रीवाको उठानेवाला, जो गर्दन ऊंची करता हो।

उद्ग्रीविन्, उद्ग्रीव देखो।

उद्घ (सं० पु०) उत्-हन-ड। १ अग्नि, आग। २ प्रशंसा, तारीफ़। ३ देहवायु, जिस्मकी हवा। ४ करपुट, अंजुरी। ५ उत्कर्ष, उम्दगी। ६ आदर्श, नमूना।

उद्घट (सं० क्ली०) वार्ताकुपुष्प, भांटेका फल।

उद्घट्टक (सं० पु०) उद्घट्ट-कन्। ताल।

उद्घट्टन (सं० क्ली०) उत्-घट्ट-ल्युट्। १ आघात, रगड़। २ उन्मोचन, खोलाव।

उद्घट्टित (सं० त्रि०) उन्मुक्त, खुला हुआ।

उद्घन (सं० पु०) ऊर्ध्वं स्थाप्य हन्यतेऽत्र, उत्-हन आधारे अप् निपातनात्। काष्ठमय आधार, लकड़ीका तख्ता। तक्षक इसी आधार पर काष्ठको रख परिष्कार करता है।

उद्घर्षण (सं० क्ली०) उत्-घृष-ल्युट्। १ उपरि घर्षण, रगड़। २ इष्टकादि द्वारा गात्रादि मार्जन, ईंट या पत्थरसे जिस्मकी रगड़ाई। ३ लगुड़, लठ।

"सिरामुखविविक्तत्वं त्वक्स्थस्याग्नेश्च तेजनम्।
उद्घर्षणोत्सादनाभ्यां जायेयातामसंशयम्॥" (सुश्रुत)

उद्घस (सं० क्ली०) उत्-अद-अप् घसादेशः। १ मांस, गोश्त। २ भक्ष्यवस्तु, खाने लायक चीज़।

उद्घाट (सं० पु०) उत्-घट-घञ्। १ उद्घाटन, खोलाई। २ पण्यादि द्रव्य देखानेको खोलनेका स्थान, वेचनेकी चीज़ खोलकर देखानेकी जगह। ३ राजस्वके ग्रहणका स्थान, चुङ्गीघर। ४ हनन, मारकाट। ५ क्षत, ज़ख्म। ६ स्खलन, सरकाव। ७ उन्नति, उठान। ८ आरम्भ, शुरू। ९ प्राणायाम। १० गदा, सोंटा। ११ अध्याय, बाब। १२ प्रहरी रहनेका स्थान, चौकी।

उद्घाटक (सं० पु० क्ली०) उत्-घट-णिच्-ण्वुल्। १ घटीयन्त्र, लोटाडोर। २ कुञ्चिका, चाबी। ३ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटन (सं० क्ली०) उत्-घट भावे ल्युट्। १ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटन (सं० क्ली०) उत्-घट भावे ल्युट्। १ उन्मोचन, खोलाई। २ उल्लेख, लिखाई। ३ प्रकाशकरण, ज़ाहिर करनेका काम। ४ घटीयन्त्र, लोटाडोर। ५ कुञ्चिका, चाबी। ६ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटनीय (सं० त्रि०) उन्मोचनयोग्य, खोला जानेवाला।

उद्घाटित (सं० त्रि०) उत्-घट-णिच्-क्त। १ प्रकाशित, ज़ाहिर, खुला हुआ। २ कृतारम्भ, शुरू किया हुआ। ३ उत्तोलित, उठाया हुआ। ४ कृतोद्योग, कोशिशके साथ किया हुआ।

उद्घाटितज्ञ (सं० त्रि०) चतुर, होशियार।

उद्घाटिताङ्ग (सं० त्रि०) १ नग्न, नङ्गा। २ चतुर, होशियार।

उद्घाटिन् (सं० त्रि०) उन्मोचनकारी, खोलने या शुरू करनेवाला।

उद्घात (सं० पु०) उत्-हन-घञ्। १ प्रतिघात, ठोकर। २ बाधा, आफ़त। ३ आरम्भ, शुरू। ४ पादस्खलन, पैरकी फिसलाहट। ५ कुम्भक। ६ सूचना, दीबाचा। ७ मुद्गर। ८ अरघट्ट, कुवेंसे पानी निकालनेकी कल। ९ निदर्शन, देखाव।

उद्घातक (सं० त्रि०) १ प्रतिघात लगानेवाला, जो ठोकर मारता हो। (पु०) २ नाटककी एक प्रस्तावना। इसमें कोई पात्र सूत्रधार वा नटीका कथन श्रवण कर अन्य अर्थ जोड़ता है।

उद्घाती (सं० त्रि०) १ प्रतिघात करनेवाला, जो ठोकर लगाता हो। २ उच्चनीच, चढ़ा-उतार।

उद्घुष्ट (सं० त्रि०) १ शब्दायमान, पुरशोर। २ विघोषित, कहा हुआ। (क्ली०) ३ शब्द, आवाज़।

उद्घृष्ट (सं० क्ली०) उच्चारणका दोषविशेष, तलफ़्फ़ुज़का एक ऐब।

उद्घोष (सं० पु०) उत्-घुष-घञ्। १ उच्च शब्दकरण, बुलन्द आवाज़में कहनेकी बात। २ साधारण कथन, मामूली बात।

उद्दंश (सं० पु०) उत्-दन्श-अच्। १ मशक, मच्छड़। २ मत्कुण, खटमल। ३ केशकीट, जूं।

उद्दण्ड (सं० त्रि०) १ प्रचण्ड, बखेड़िया। २ उन्नतदण्डयुक्त, ऊंची डालवाला। ३ दण्डोपरि उत्तोलित, बांसपर चढ़ाया हुआ। (पु०) ४ उन्नत दण्ड, ऊंचा सोंटा।

उद्दण्डपाल (सं० पु०) १ उन्नत दण्डाकार सर्पविशेष, ऊंचे डण्डे-जैसा एक सांप। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। ३ दण्ड देनेवाला राजा वा शासनाधिकारी, जो हाकिम सज़ा देता हो।

उद्दन्तुर (सं० त्रि०) अतिशयेन दन्तुरः। १ उत्तुङ्ग, ऊंचा। २ कराल, खौफ़नाक। ३ उत्कटदन्त, बड़े दांतोंवाला।

उद्दम (सं० पु०) वशीकरण, दमन, मग़लूबी, दबाव।

उद्दान (सं० क्ली०) उत्-दो भावे ल्युट्। १ बन्धन, बंधाई। २ उद्यम, कोशिश। ३ चुल्ली, चूल्हा। ४ बड़वाग्नि, दरयाके भीतरकी आग। ५ मध्य, दरमियान्। ६ लग्न। ७ पालन, पलाई।

उद्दानक (सं० पु०) १ शिरीषवृक्ष, कलसीसका पेड़। २ चुल्ली, चूल्हा।

उद्दान्त (सं० त्रि०) उत्-दम-क्त। अतिदमित, शान्त, ठण्डा, जो बहुत दबा हो।

उद्दाम (सं० त्रि०) उद्गतं दाम्नः। १ उच्छृङ्खल, खुला हुआ। २ स्वतन्त्र, आज़ाद। ३ उत्कट, गुस्ताख़। ४ असीम, बेहद। ५ दीर्घ, बड़ा। (पु०) ६ यम। ७ वरुण। (अव्य०) ८ उच्छृङ्खल रूपसे, खुले मैदान।

उद्दामन् (सं० त्रि०) उत्-दामन् बन्धनम्। १ बन्धनरहित, खुला। २ उत्कट, झगड़ालू। ३ अतिशय, बहुत, ज़्यादा।

उद्दारदा (सं० स्त्री०) शाकतरु, साखूका पेड़।

उद्दारा (सं० स्त्री०) गुड़ूची, गुर्च।

उद्दारी, उद्दारा देखो।

उद्दाल (सं० पु०) उत्-दल-णिच्-अच्। १ बहुवारवृक्ष, लसोड़ेका पेड़। २ वनकोद्रव, कोदो। ३ कुष्ठ, कोढ़। ४ धान्यविशेष, एक अनाज।

उद्दालक (सं० पु०) १ ऋषिविशेष। इनके पुत्रका नाम श्वेतकेतु था। उद्दालक याज्ञवल्क्यके गुरु रहे। आरुणि देखो। २ बहुवार वृक्ष, लसोड़ेका पेड़। ३ आरण्यकोद्रव, कोदो।

उद्दालकपुष्पभञ्जिका (सं० स्त्री०) क्रीड़ाविशेष, एक खेल। यह 'आती मार छाती'की तरह खेला जाता है।

उद्दालकव्रत (सं० क्ली०) व्रतविशेष। षोड़श वत्सरके वयस पर्यन्त गायत्रीकी दीक्षा न मिलनेसे द्विजातिको यह व्रत करना पड़ता है। दो मास यव, एकमास दधि, दुग्ध तथा शर्कराका शर्बत, अष्ट रात्रि घृत, षड़ रात्रि अयाचित रूपसे प्राप्त द्रव्य, त्रिरात्रि केवल जल और एक दिन उपवास पर निर्वाह करते हैं।

उद्दालकायन (सं० पु०) उद्दालकस्य गोत्रापत्यम्, फक्। ऋषिभेद, श्वेतकेतु।

उद्दित (सं० त्रि०) उत्-दो-क्त। बद्ध, बंधा हुआ। (हिं०) उदयत, उदित और उद्धत देखो।

उद्दिधीर्षा (सं० स्त्री०) स्थानान्तरित करनेकी इच्छा, हटा देनेकी ख्वाहिश।

उद्दिन (सं० क्ली०) मध्याह्नकाल, दोपहर।

उद्दिम (हिं०) उद्यम देखो।

उद्दिश् (सं० स्त्री०) दिक्‌विशेष।

उद्दिश्य (सं० अव्य०) १ प्रकाश वा वर्णन करके, देखाकर। २ निर्देश करके, मांगकर। ३ प्रति, तर्फ़।

उद्दिष्ट (सं० त्रि०) उत्-दिश-क्त। १ उपदिष्ट, समझाया हुआ। २ अभिप्रेत, देखाया हुआ। ३ कृतानुसन्धान, ढूंढ़ा हुआ। (पु०) ४ बदरवृक्ष, बेरका पेड़। ५ उपायभेद, छन्दके मात्रा-प्रस्तारवाले भेदका वर्णन।

"उद्दिष्टं द्विगुणानाद्यादुपर्यङ्कान् समालिखेत्।
लघुस्था ये तु तत्राङ्कास्तैः सैकैर्मिश्रितैर्भवेत्॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्दीप (सं० पु०) १ प्रकाशन, चमकाहट। २ प्रकाशक, चमकानेवाला। ३ प्रोत्साहन, हौसला बढ़ानेका काम। (क्ली०) ४ गुग्गुलु, गूगुर।

उद्दीपक (सं० त्रि०) उत्-दीप-णिच्-ण्वुल्। १ उद्भासक, रोशनी देनेवाला। २ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उद्दीपन (सं० क्ली०) उत्-दीप-णिच्-ल्युट्। १ प्रकाश, रोशनी। २ उत्तेजन, भड़काव। ३ वर्धितकरण, बढ़ावा। ४ कामक्रोधादि-प्रबल करनेका काम, खाहिश गुस्सा वगैरहका उभाड़ना। ५ अलङ्कारोक्त विभाव विशेष, शृङ्गार रसको बढ़ानेवाली चीज़।

"रत्याद्युद्बोधका लोके विभावाः काव्यनाट्ययोः।
आलम्बनोद्दीपनाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ॥
आलम्बनस्य चेष्टाद्या देशकालादयस्तथा।" (साहित्यदर्पण)

उद्दीपमान (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकनेवाला, जो रौशन हो।

उद्दीप्त (सं० त्रि०) उत्-दीप-क्त। १ प्रकाशान्वित, रोशन। २ प्रज्वलित, जलनेवाला। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उद्दीप्र (सं० पु०) उत्-दीप-रण्। १ गुग्गुलु, गूगुर। (त्रि०) २ उद्दीप्त, चमकता हुआ।

उद्दृप्त (सं० त्रि०) उत्-दृप-क्त। उद्धत, गुस्ताख, घमण्डी।

उद्देश (सं० पु०) उत्-दिश-घञ्। १ अनुसन्धान, खोज। २ लक्ष्य, इशारा। ३ अभिलाष, खाहिश। ४ उपदेश, नसीहत। ५ वार्ता, बातचीत। ६ उल्लेख, लिखाई। ७ नामकथन, इस्म बतानेका काम। ८ प्रदेश, मुल्क। "उद्देशमनतिक्रम्य यथोद्देशम्। उद्देश उपदेशदेशः। अधिकरणसाधनश्चायम्। यत्र देशे उपदिश्यते तद्देशः।" (नागेश) ९ संक्षेप, मुख्तसर। १० तन्त्राधिकरणभेद। ११ उत्कृष्ट देश, बढ़िया मुल्क। १२ गिरिगण्डकूप, पहाड़की चोटी। १३ उदाहरण, मिसाल।

उद्देशक (सं० पु०) उत्-दिश-ण्वुल्। १ उपदेशक, नसीहत देनेवाला। २ उदाहरणवाक्य, मिसालका जुमला। ३ प्रच्छक, सवाल करनेवाला। "उद्देशकालापवदिष्टराशिः।" (लीलावती) ४ प्रश्न, सवाल। (त्रि०) ५ दार्ष्टान्तिक, मिसाल देनेवाला, जो समझाता हो।

उद्देशतः (सं० अव्य०) वर्णन करके, मिसाल देकर।

उद्देश्य (सं० त्रि०) उत्-दिश-ण्यत्। १ लक्ष्य, बताने काबिल। २ अभिप्रेत, मतलबवाला। ३ अनुवाद्य, कह देने लायक़। (क्ली०) ३ तात्पर्य, मतलब। विशेषण और विशेष्यके सम्बन्धको 'उद्देश्य-विधेयभाव' कहते हैं।

उद्देश्यसिद्धि (सं० स्त्री०) अभिप्रेत सिद्धि, मतलबकी कामयाबी।

उद्देष्ट (सं० त्रि०) १ सङ्केत करनेवाला, जो इशारा देता हो। २ अभिप्रायसे कार्य करनेवाला, जो मतलबसे चलता हो।

उद्देहिक (सं० पु०) १ विदेह देश, एक मुल्क।

उद्देहिका (सं० स्त्री०) १ उत्पादिका, पैदा करनेवाली। २ कीट विशेष, दीमक।

उद्दोत (हिं०) उद्द्योत देखो।

उद्द्योत (सं० पु०) उत्-द्युत-घञ्, वा दलोपः। १ प्रकाश, रौशनी। २ उद्घाटन, खोलाई। (त्रि०) ३ प्रकाशमान, चमकीला।

उद्द्योतकर—मेघदूतकी टीकाके रचयिता। कल्याणमल्लने इनका वचन उद्धृत किया है।

उद्द्योतकराचार्य (सं० पु०) भरद्वाजगोत्रके एक जन प्रसिद्ध नैयायिक। इनके बनाये 'न्यायवार्तिक' और 'न्यायसूत्रवार्तिक' नामक दो ग्रन्थ विद्यमान हैं। वाचस्पतिमिश्रने 'न्यायवार्तिक' की टीका बनायी है।

उद्द्योतकृत्—१ एक अलङ्कारग्रन्थ-रचयिता। रत्न-

कण्ठने इनका वचन उद्धृत किया है। २ काव्य-प्रकाशके एक नवीन टीकाकार।

उद्द्योतित (सं० स्त्री०) प्रकाशित, रौशन, जो जलाया या चमकाया गया हो।

उद्द्राव (सं० पु०) उत्-द्रु-वञ्। १ प्रस्थान, द्रुत पदसे पलायन, भागाभागी। (त्रि०) २ उत्कृष्ट गतियुक्त, भाग खड़ा होनेवाला, जो दौड़ते जा रहा हो।

उद्द्रुत (सं० त्रि०) १ पलायित, भागा हुआ, जो दौड़ पड़ा हो। २ उन्नत, चढ़ा हुआ।

उद्ध (हिं० क्रि० वि०) ऊर्ध्व, ऊपर।

उद्धत (सं० पु०) उत्-हन्-क्त। १ राजमल्ल, शाही पहलवान्। (त्रि०) २ अविनीत, अक्खड़। ३ उत्थित, उठा हुआ। ३ उत्क्षिप्त, उछला हुआ। ४ आहत। ५ चालित, भड़काया हुआ। ६ घोर, बड़ा। ७ उत्कट, कड़ा।

उद्धतमन (सं० क्ली०) १ अभिमान, घमण्ड। (त्रि०) २ अभिमानी, घमण्डी।

उद्धतमनस्क (सं० त्रि०) अभिमानी, घमण्डी।

उद्धतार्णवनिस्वन (सं० त्रि०) समुद्रकी भांति कोलाहल करनेवाला, जो समुन्दरकी तरह गरजता हो।

उद्धति (सं० स्त्री०) उत्-हन गतौ क्तिन्। १ उद्गति, ऊंचाई, चढ़ाव। २ उन्नति, तरक्की। ३ उत्पतन, ठोकर, चपेट। ४ औद्धत्य, अक्खड़पन। ५ धृष्टता, शरारत। ६ गर्व, घमण्ड।

उद्धनपुर (उद्धरणपुर)—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेका एक ग्राम। यह भागीरथी किनारे अक्षा० २३° ४१′ १०″ उ० और द्राघि० ८८° ११′ पू० पर अवस्थित है। नदीपारकरनेको नाव चला करती है। यहां रोज बाज़ार और पौषसंक्रान्तिको प्रति वर्ष मेला लगता है।

उद्धना (हिं० क्रि०) उद्गमन करना, उड़ना, फैल पड़ना।

उद्धम (सं० त्रि०) उत्-ध्मा-श, धमादेशः। १ कृत-शब्द, जो बोला हो। (पु०) २ कष्टश्वास, हंफी। ३ शब्दकरण, आवाज़ निकालनेका काम।

उद्धमान (सं० क्ली०) चुल्ली, चूल्हा।

उद्धमाय (सं० अव्य०) कष्टश्वास ग्रहणकर, हांफके।

उद्धय (सं० त्रि०) पान करनेवाला, जो पीता हो।

उद्धर (सं० त्रि०) उत्-धेट-श। १ उठाकर पान करनेवाला, जो उठाकर पीता हो। (पु०) २ राक्षस विशेष।

उद्धरण (सं० क्ली०) उत्-हृ-ल्युट्। १ उद्धार, छुटकारा। २ ऋणशोध, क़र्ज़की चुकती। ३ उन्मूलन, उखाड़। ४ उत्तोलन, उठाव। ५ वमन, कै, उलटी। ६ निराकरण, अलगाव। ७ व्यसनादिसे विमोचन, बुरी आदत वग़ैरहसे बरतर्फ़ी। ८ परिवेषण, घिराव। ९ उत्पाटन, नोचखसोट। १० पठित पाठका पुनः पठन, आमोख़्ता। १२ गार्हपत्य अग्निका ग्रहण। (पु०) १३ शान्तनु नरेशके पिता। इन्होंने मार्कण्डेय पुराणके कुछ अंशकी टीका बनायी थी।

उद्धरणी (हिं० स्त्री०) पठित पाठका पुनः पठन, आमोख़्ता।

उद्धरणीय (सं० त्रि०) ऊपर चढ़ानेके योग्य, जो निकाल लेनेके क़ाबिल हो।

उद्धरना (हिं० क्रि०) १ उद्धार करना, बचाना। २ उद्धार पाना, उबरना।

उद्धर्तव्य, उद्धरणीय देखो।

उद्धर्त (सं० त्रि०) उत्-हृ-तृच्। १ उद्धारकारक, उबारनेवाला। २ उन्मूलक, उखाड़नेवाला। ३ तारण-कारक, पार लगानेवाला। "विरातमर्तुं खु पथि चौरोद्धर्तु-रवीतके।" (याज्ञवल्क्य) ४ अंश लेनेवाला, हिस्सेदार। सम्पत्तिको पुनः प्राप्त करनेवाला, जो जायदाद फिरसे लेता हो।

उद्धर्ष (सं० पु०) उद्गतो हर्षो यस्मिन्। १ उत्सव, जलसा। प्रधानतः धार्मिक उत्सवको उद्धर्ष कहते हैं। २ अतिशय हर्ष, बड़ी खुशी। ३ कार्य करनेका उत्साह, काम बनानेका हौसला। (त्रि०) ४ उत्कृष्ट, बढ़िया। ५ जातहर्ष, खुश।

उद्धर्षण (सं० क्ली०) उत्-हृष-ल्युट्। १ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। २ प्रोत्साहन, हौसलेका बढ़ाव। ३ हर्षयुक्त करना, खुश बनानेका काम। (त्रि०) ४ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उद्धर्षिणी (सं० स्त्री०) वसन्ततिलक नामक वर्ण वृत्तका भेद। इसमें चार पाद पड़ते और प्रत्येकमें चौदह-चौदह अक्षर लगते हैं—

"उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः। सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकश्यपेन।
उद्धर्षिणीयमुदिता मुनिसैतवेन॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्धर्षिन् (सं० त्रि०) उत्-हृष-णिच्-णिनि। १ उद्धर्ष-कारक, खुश करनेवाला। २ पुलकित, खड़े रोंगटे रखनेवाला।

उद्धव (सं० पु०) उत्-धूङ्-अच्। १ यज्ञाग्नि। २ उत्सव, जलसा। ३ कृष्णमातुल एक यादव। ये सत्यकके पुत्र और बृहस्पतिके शिष्य रहे। दूसरा नाम देवश्रवाः था। उद्धव अन्तिमदशाको बदरिका-श्रममें रहते थे। श्रीकृष्णने इन्हें ज्ञानका उपदेश दिया। (भागवत ११ स्कन्द)

उद्धवमिश्र—वैद्यप्रदीप नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

उद्धस्त (सं० त्रि०) उत्क्षिप्तो हस्तो येन, प्रादि० बहुव्री०। उत्क्षिप्त हस्त, हाथ उठाये हुआ।

उद्धान (सं० क्ली०) उद्धयतेऽस्मिन्नग्निः, उत्-धा-ल्युट्। १ चुल्ली, चूल्हा। २ वमन, कै। (त्रि०) ३ उद्गत, उठा या चढ़ा हुआ। ४ वमित, उगला हुआ। ५ स्थूल, मोटा, सूजा हुआ।

उद्धान्त (सं० पु०) उत्-धन-णिच्-क्त। १ मद-शून्य हस्ती, जिस हाथीके मस्तकसे मद न बहे। (त्रि०) २ वमित, उगला हुआ।

उद्धार (सं० पु०) उद्ध्रियते, उत्-हृ भावे घञ्। १ मुक्ति, नजात, छुटकारा। २ पतित वा समाजच्युत व्यक्तिका ग्रहण, गिरे या जातसे खारिज शख्सको फिर मिला लेनेका काम। ३ ऋणशोध, अदाकर्ज। ४ नष्टवस्तुका पुनरधिकार, खोयी हुयी चीज़पर फिरसे क़बजा करनेकी बात। ५ अंशभेद। मनुने उद्धारका नियम इसप्रकार रखा है—

"ज्येष्ठस्य विंश उद्धारः सर्वद्रव्याच्च यद्वरम्।
ततोऽर्द्धं मध्यमस्य स्यात् तुरीयन्तु यवीयसः॥
ज्येष्ठश्चैव कनिष्ठश्च संहरेतां यथोदितम्।
येऽन्ये ज्येष्ठकनिष्ठाभ्यां तेषां स्यान्मध्यमं धनम्॥
सर्वेषां धनजातानामाददीताग्र्यमग्रजः।
यच्च सातिशयं किञ्चिद्दशतश्चाप्नुयाद्वरम्॥
उद्धारो न दशस्वस्ति सम्पन्नानां स्वकर्मसु।
यत्किञ्चिदेव देयन्तु ज्यायसे मानवर्द्धनम्॥
एवं समुद्धृतोद्धारे समानंशान् प्रकल्पयेत्।
उद्धारेऽनुद्धृते त्वेषामियं स्यादंशकल्पना॥
एवं वृषभमुद्धारं संहरेत स पूर्वजः।
ततोऽपरेऽज्येष्ठवृषास्तदूनानां स्वमातृतः॥" (९ अ० ११२-१२३ श्लो०)

पैतृक धनके विभाग कालपर विंश ज्येष्ठ, चत्वा-रिंशद् मध्यम और अशीति भाग कनिष्ठको मिलना चाहिये। फिर अवशिष्टांश सकलको बराबर बराबर प्राप्य है। ज्येष्ठ और कनिष्ठके मध्यगत सकल भ्राता चत्वारिंशद् भागके अधिकारी होते हैं। ज्येष्ठ यदि गुणवान् रहे, तो द्रव्य सामग्रीके मध्य उत्कृष्ट वस्तु सकल और १० गाभीमें श्रेष्ठ गाभी उसको मिले। सकल भ्राता समान गुणसम्पन्न होनेसे ज्येष्ठको दशम पदार्थ प्राप्य नहीं। फिर भी सम्मानकी रक्षाके लिये यत्-किञ्चित् उसे अधिक देना उचित है। अवशिष्ट सकल धन भ्राता बराबर बांट लें। पैतृक धन बंटते समय ज्येष्ठको दूना, मध्यमको डेढ़ा और तद्भिन्न सकलको एक एक अंश मिलेगा। प्रथम विवाहितासे कनिष्ठ और पश्चात् परिणीता पत्नीसे ज्येष्ठ सन्तान रहनेपर प्रथम स्त्रीगर्भजात, कनिष्ठ पड़ते भी एक श्रेष्ठ वृष उद्धाररूप पाता है। फिर अपर पत्नीगर्भज सन्तानको माताके कनिष्ठानुसार अपकृष्ट वृष मिलेगा।

उद्धारक (सं० त्रि०) उद्धार करनेवाला, जो उठाता या निकालता हो।

उद्धारण (सं० क्ली०) उत्-धृ-णिच्-ल्युट्। १ उत्थापन, उठाव। उत्-हृ-णिच्-ल्युट्। २ उद्धारसाधन, उबार, बचाव। ३ भागकरण, बंटवारा।

उद्धारणदत्त (सं० पु०) महाप्रभु चैतन्यदेवके एक प्रसिद्ध भक्त। १४०३ शकको त्रिवेणीतीरवर्ती सप्तग्राममें इन्होंने जन्म लिया था। पिताका श्रीकरदत्त और माताका नाम भद्रावती रहा। गोत्र शाण्डिल्य था। ये घरमें अपने पुत्र श्रीनिवासको छोड़ और वाणिज्यका कार्य सौंप विवेकाचारी बने। नीलाचलमें उद्धारण-दत्त प्रभुसे मिलने प्रायः जाते और प्रसाद मांगकर खाते थे।

उद्धारना (हिं० क्रि०) उद्धार करना, छोड़ाना।

उद्धारपल्य—जैन-शास्त्रानुसार एक योजन लंबे एक योजन चौड़े और एक योजन गहरे खुदे हुये गड्ढेमें एक दिनसे लेकर सात दिनके भीतर २ पैदा हुये मेषोंके बच्चोंके बाल मुंह तक ऐसे काट २ कर भरे जिनके फिर टुकड़े न हो सकें तो ऐसे गड्ढेका नाम व्यवहारपल्य है। और उन अविभागी बालोंके टुकड़ोंमेंसे हर एक टुकड़ेके-जितने असंख्यात करोड़ वर्षोंके समय होते हैं उतने ही कल्पनासे टुकड़े किये जाय और उनसे पूर्वोक्त परिमाणवाला गढा भरा जाय तो उस भरे हुये गढेका नाम उद्धारपल्य है।

उद्धारपल्योपमकाल—जैनशास्त्रानुसार उद्धारपल्यमें भरे हुये कल्पित बालोंके टुकड़ोंमेंसे एक एक टुकड़ा यदि एक एक समयमें निकाला जाय तो जितने कालमें वह गढा खाली हो जायगा उतने ही कालका नाम उद्धारपल्योपमकाल है।

उद्धारविभाग (सं० पु०) अंशका विभाग, तकसीम-हिस्सा।

उद्धारसागर—जैनशास्त्रानुसार दश कोड़ाकोडी उद्धारपल्योंका यह होता है।

उद्धारसागरोपमकाल—जैनशास्त्रानुसार दश कोडाकोडी उद्धारपल्योपमकालोंका यह होता है।

उद्धारा (सं० स्त्री०) गुड़ूची, गुर्च।

उद्धारित (सं० त्रि०) क्षतोद्धार, छोड़ाया हुआ, जो बचा लिया गया हो।

उद्धि (सं० पु०) ऊर्ध्वको धारण, ऊपरको उठाव। २ अच्चाग्रस्थित शकटभाग, धुरीपर टिकनेवाला गाड़ीका हिस्सा। ३ उखास्थापनका मृण्मय उपष्टम्भ।

उद्धित (सं० त्रि०) स्थापित, दण्डायमान, रखा या खड़ा हुआ।

उद्धुर (सं० त्रि०) उत्-धुर्-क, प्रादि बहुव्री०। १ भारशून्य, बेबार, जिसपे बोझ या जुवा न रहे। २ दृढ़, मज़बूत। ३ उच्च, ऊंचा। ४ बन्द हो जानेवाला, जो निकल पड़ता हो। ५ प्रसन्न, खुश, जो रोकमें न हो।

उद्धूत (सं० त्रि०) उत्-धू क्त। उत्कम्पित, हिलाडुला, जो छूट पड़ा हो। २ उत्पाटित, नोचा हुआ। ३ निरस्त, निकाला हुआ। ४ उत्क्षिप्त, उछाला हुआ। ५ क्षतोच्च, बढ़ाया हुआ। ६ उच्च, ऊंचा।

उद्धूतपाप (सं० त्रि०) पापको छोड़ाये हुआ, जो गुनाहको अलग कर चुका हो।

उद्धूनन (सं० क्ली०) उत्-धू-णिच्-नुक् भावे ल्युट्। १ कम्पन, कंपकंपी। २ उत्क्षेपण, उछाल।

उद्धूपन (सं० क्ली०) उत्-धूप्-भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्व सञ्चालन, ऊपरको उठाव। २ वासनकार्य, सोंधाव। करणे ल्युट्। ३ धूप। ४ धूना।

उद्धूलन (सं० क्ली०) १ चूर्णकरण, पिसाई। २ सतैल-लवङ्ग-कर्पूर-कस्तूरी-मरिच-त्वक्चूर्ण, मसालेकी बुकनी। (पाकशास्त्र)

उद्धूषण (सं० क्ली०) उत्-धूष्-ल्युट्। १ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। (त्रि०) २ रोमाञ्चित, खड़े रोंगटे रखनेवाला।

उद्धृत (सं० त्रि०) रोमाञ्चित, जो खड़े रोंगटे रखता हो।

उद्धृषित (सं० त्रि०) उत्-हृ-क्त। १ पृथक्कृत, अलग किया हुआ। २ मोचित, छोड़ाया हुआ। ३ उच्छेदित, तोड़ा हुआ। ४ समाजमें गृहीत, महफ़िलमें शामिल किया हुआ। ५ उद्वृत्त, बचाया हुआ। ६ उत्क्षिप्त, उठाया, चढ़ाया या बढ़ाया हुआ। ७ विभक्त, बांटा हुआ। ८ उद्घाटित, खोला हुआ। ९ वमित, उगला हुआ। १० अविकल गृहीत, नक़ल किया हुआ।

उद्धृतपाणि (सं० त्रि०) उन्मुक्त हस्त, हाथ समेटे हुआ।

उद्धृतस्नेह (सं० त्रि०) हृतफेन, झाग, फेन या मलाई उतारा हुआ।

उद्धृतारि (सं० त्रि०) रिपुसूदन, दुश्मनको हटा देनेवाला।

उद्धृति (सं० स्त्री०) उत्-हृ क्तिन्। १ उत्क्षेपण, उछाल। २ उत्तोलन, उठाव। ३ आकर्षण, खिंचाव। ४ रक्षा, बचाव।

उद्धृतोद्धार (सं० त्रि०) १ निज अंशप्राप्त, अपना हिस्सा

पाये हुआ। २ निज भागदाता, किसीका हिस्सा दे देनेवाला।

उद्धृत्य (सं० अव्य०) उत्तोलन वा आकर्षण करके, उठा या खींच कर।

उद्ध्मान (सं० क्ली०) उत्-ध्मा-ल्युट्। चुल्ली, चूल्हा।

उद्ध्माय (सं० अव्य०) निश्वास या सांस छोड़कर।

उद्ध्य (सं० पु०) उज्झत्युदमिति क्यप्, निपातनात् साधुः। भिद्योद्ध्यौनदे। पा ३।१।११५। १ नद, दरया। (क्ली०) २ जलोत्क्षेपण, पानीका उछाल।

उद्ध्वंस (सं० पु०) भङ्ग, फटाव, खरखराहट।

उद्बद्ध (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्वबद्ध, ऊपर बंधा हुआ, जो टंगा हो। २ बन्धनभ्रष्ट, जो खुल गया हो।

उद्बन्ध (सं० पु०) उद्बन्धन देखो।

उद्बन्धक (सं० पु०) वर्णसङ्कर जातिविशेष।

उद्बन्धन (सं० क्ली०) उत्-बन्ध भावे ल्युट्। १ कण्ठमें रज्जु डाल ऊर्ध्व बन्धन, गलेमें फांसी लगाकर टंग जानेका काम। २ मृत्युके अर्थ कण्ठमें रज्जुवेष्टन, मरनेके लिये गलेमें रस्सीकी लपेट। ३ बन्धनच्युति, बंधाईका खोलाव। ४ बन्धन, बंधाई, टंगाई।

उद्बन्धुक (वै० त्रि०) उद्बन्धन करनेवाला, जो टांगता या लटकाता हो।

उद्बल (सं० त्रि०) शक्तिशाली, ज़ोरदार।

उद्वाड़—बम्बईके गुजरात प्रान्तका एक ग्राम। यह बलसारसे १५ मील दूर है। १७४२ ई० की २८ वीं अक्तोबरको सञ्जान पारसियोंने यहां आ अपना अग्नि प्रतिष्ठित किया था। उस समयसे बराबर इस स्थान-पर सञ्जान अग्नि जल रहा है।

उद्बाहु (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्वबाहु, हाथ उठाये हुआ। २ प्रसारित बाहु, हाथ फैलाये हुआ। ३ शुण्ड उठाये हुआ, जो सूंड़ खड़ी किये हो।

उद्बिल (सं० त्रि०) बिलसे बहिर्गत, मांदको छोड़े हुआ।

उद्बुद्ध (सं० त्रि०) उत् बुध-क्त। १ प्रस्फुटित, खिला हुआ। २ उद्दीपित, रौशन किया हुआ। ३ प्रबुद्ध, जगाया हुआ। ४ उदित, उठा हुआ। ५ अनुस्मृत, जो याद आ गया हो।

उद्बुद्धसंस्कार (सं० पु०) वासनासंसर्ग, इत्तिफ़ाक़-मनसूबा, किसी बातकी यादगारी।

उद्बुद्धा (सं० स्त्री०) परकीया नायिका भेद। यह निज इच्छानुरूप परपुरुषसे स्नेह बढ़ाती है।

उद्बोध (सं० पु०) उत्-बुध-घञ्। १ किञ्चित् ज्ञान, हलकी समझ। २ न्यायादि मतसे—पूर्वज संस्कारका उद्दीपन। ३ अनुस्मरण, यादगारी, भूली हुई बातका कोई सबब पड़नेसे फिर याद आ जाना।

उद्बोधक (सं० त्रि०) उत्-बुध-णिच्-ण्वुल्। १ प्रकाशक, देखाने या बतानेवाला। २ उद्दीपक, रौशन करनेवाला। ३ उद्बोध उत्पन्न करनेवाला, जो याद दिला देता हो। जैसे—किसी व्यक्तिने काशीमें विश्वेश्वरके निकट एक श्मश्रुल पुरुषको देखा था। फिर वह प्रदेशान्तरस्थित स्वीय ग्रामको आया। वहां अन्य श्मश्रुल पुरुषको देख उसे काशीके विश्वे-श्वरका स्मरण हुआ। इसमें श्मश्रुल पुरुष उसके विश्वे-श्वर स्मरणका उद्बोधक बन गया। ४ जाग्रत करने-वाला, जो जगाता हो। (पु०) ५ सूर्य।

उद्बोधन (सं० क्ली०) उत्-बुध-णिच्-ल्युट्। १ ज्ञापन, जगाई। २ स्मरणोत्पादन, याद दिलानेका काम। (त्रि०) ३ ज्ञानोत्पादक, समझाने, देखाने या जगाने वाला।

उद्बोधिता (सं० स्त्री०) परकीया नायिकाका एक भेद। जब परपुरुष कौशलसे स्नेह देखाता, जब इसका हृदय उसपर मुग्ध हो जाता है।

उद्भट (सं० त्रि०) उत्-भट-अप्। १ महाशय। २ उदार, सखी। ३ श्रेष्ठ, बड़ा। (पु०) ४ ग्रन्थ बहिर्भूत। ५ कच्छप, कछुवा। ६ पूर्व, मशरिक़। ७ शूर्प, सूप। ८ सूर्य, आफ़ताब। ९ जयापीड़के अधीनस्थ सभापति। इन्होंने एक अलङ्कारका ग्रन्थ बनाया था। इन्दुराजने उसकी टीका की। (राजतरङ्गिणी ४।४९४) आनन्दवर्धन और अभिनव गुप्तने इनका वचन उद्धृत किया है।

उद्भव (सं० पु०) उत्-भू भावे अप्। १ उत्पत्ति, पैदायश।

"स्थलजौदकशाकानि पुष्पमूलफलानि च।
मेधाह्यचोद्भवान्यद्यात् स्नेहांश्च फलसम्भवान्॥" (मनु ६।१३)

२ विष्णु। (त्रि०) कर्त्तरि अच्। ३ उत्पत्तिमान्, उपजनेवाला। ४ संसारातीत, दुनियासे निराला।

उद्भवकर (सं० त्रि०) उत्पन्न करनेवाला, जो उपजाता हो।

उद्भाव (सं० पु०) १ उत्पत्ति, पैदायश। २ चित्तौदार्य, सखावत। ३ उष्मा, उमस।

उद्भावन (सं० क्लो०) उत्-भू-णिच्-ल्युट्। १ कल्पन, अन्दाज़। २ उत्पादन, पैदा करनेका काम। ३ चिन्तन, खयाल। ४ उत्क्षेपण, उछाल। ५ अज्ञात विषय प्रकाश, न समझी बातका खोलाव। (त्रि०) ६ प्रकाशक, ज़ाहिर या रौशन करनेवाला। ७ चिन्ताकारक, फिक्रमन्द।

उद्भावना (सं० स्त्री०) १ कल्पना, अन्दाज़। २ उत्पत्ति, पैदायश।

उद्भावयितृ (सं० त्रि०) उन्नतिकारक, ऊपर उठा देनेवाला।

उद्भावित (सं० त्रि०) १ उपेक्षाकृत, खयालमें न लाया हुआ। २ कथित, कहा हुआ।

उद्भास (सं० पु०) उत्-भास् भावे घञ्। प्रकाश, चमक। २ शोभा, खूबसूरती।

उद्भासन (सं० क्लो०) उत्-भास्-ल्युट्। १ उद्दीपन, चमकाहट। २ उज्ज्वलकरण, उजलाहट। (त्रि०) ३ प्रकाशक, चमकानेवाला।

उद्भासयत् (सं० त्रि०) प्रकाशक, जो रौशन कर रहा हो।

उद्भासवत् (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकदार।

उद्भासित (सं० त्रि०) उत्-भास्-क्त। १ दीप्त, चमकाया हुआ। २ शोभित, सजाया हुआ।

उद्भासिन् (सं० त्रि०) देदीप्यमान, चमकदार।

उद्भिज, उद्भिज्ज देखो।

उद्भिज्ज (सं० त्रि०) उद्भिनत्ति क्विप् उद्भित् तथा सन् जायते जन-ड। भूमिको भेदकर जन्म लेनेवाला, जो ज़मीनको फोड़कर निकलता हो।

उद्भिज्जविद्या, उद्भिद्विद्या देखो।

उद्भित् (सं० पु०) १ तरु गुल्मादि, पेड़ झाड़ वगैरह। २ निर्भर, झरना। ३ यागभेद। (त्रि०) उद्भिद देखो।

उद्भिद् (सं० त्रि०) उत्-भिद-क्विप्। १ उद्भिज्ज, उगने वाला। २ भेदक, तोड़ डालनेवाला।

उद्भिद (सं० पु०) उत्-भिद-क। १ वृक्षादि, पेड़ वगैरह। (क्लो०) २ पांशुलवण, मतबखी नमक। (त्रि०) ३ भूमिको भेदकर उत्पन्न होनेवाला, जो ज़मीन् फोड़ कर निकलता हो।

उद्भिदजल (सं० क्लो०) वृक्षजल विशेष, पेड़का पानी। मरुभूमिमें पान्थपादप नामक एक प्रकारका वृक्ष उपजता है। उसका कोई स्थान काटनेसे स्निग्ध और शीतल जल निकलता है। उत्तप्त वालुकामय मरुभूमिमें चलते समय पथिक उक्त जल पोकर हो जीते-जागते हैं। उसी जलका नाम उद्भिदजल है।

उद्भिद्विद्या (सं० स्त्री०) जिस शास्त्र द्वारा उद्भिद्के विषयका सकल तत्त्व समझते, उसे उद्भिद्विद्या (Botany) कहते हैं। यह विज्ञानशास्त्रको एक शाखा है। उद्देश्य—उद्भिद् सकलकी रीति और प्रकृतिका अनुसन्धान लगाना है।

उद्भिद् सजीव एवं वर्धिष्णु होता और प्राणिगणको भांति जन्म लेता, फिर समय पाकर मृत्युके मुखमें गिर पड़ता है। मस्तिष्क न रहते भी यह अनुभवकी शक्ति रखता है। सूर्यास्तके पीछे कोई कोई उद्भिद् पत्रको लपेट सो जाता है। वह समझ भी सकता, चतुष्पार्श्व कैसा गुज़रता है। हमारे देहमें जैसे रक्त, उसके देहमें वैसे ही रस कार्य किया करता है। फिर जाति सम्पर्कीयता भी देख पड़ती है। उद्भिद् मामा माई लता प्रभृति एवं अनेक मित्र और शत्रु रखता है।

प्रथम वह वीज रूप पर रहता, जिसके भूमिमें पड़नेसे अङ्कुरित होता है। उस समय उत्ताप, जल और वायुके यथोचित साहाय्यका प्रयोजन है। क्योंकि ताप, जल और वायु न मिलनेसे वीजस्थ अङ्कुर (काण्डस्थ भ्रूण) फिर कैसे पनपेगा!

अङ्कुरोत्पत्तिकी प्रथमावस्था पर भ्रूणके स्वकार्य

साधनमें लगनेसे वीजान्तर्गत सञ्चित खाद्य द्वारा उद्भिद् पुष्ट हुआ करता है। भ्रूणके एक पार्श्वसे किसी प्रकारका कोमल पदार्थ वीजके अधिकांश अङ्गमें भर जाता, जो श्वेतसार वा धातुविशेष (Albumen) कहाता है। अङ्कुरोत्पत्तिके समय स्वाभाविक नियमानुसार उक्त श्वेतसार शर्कराका आकार बनाता है। शर्कराको जलमें घुलनेसे बालोद्भिद् सहज ही चाट लेता है। फिर अङ्कुरकी उत्पत्तिके कालपर उद्भिद्को भिन्न भिन्न श्रेणीमें बांट देते हैं। एक वीजपत्र निकालनेवालेका एकपर्णिक (Monocotyledon) और दो वीजपत्र निकालनेवालेका द्विपर्णिक (Dicotyledon) नाम है।

एकपर्णिक उद्भिद् जबतक जीता, तबतक मेरुदण्डके अन्तिम भागसे नहीं—मध्यभागसे कितनी ही पत्ती फूट पनपा करता है। किन्तु द्विपर्णिकका उक्त भाग दीर्घ होकर भूमिमें शाखा-प्रशाखा डालता है। अधिकांश एकपर्णिकमें शाखा नहीं—केवल मस्तककी दिक् कितनी ही पत्ती पड़ती है। ताल खर्जूरादि एकपर्णिक वा एकपत्रोत्पत्तिक हैं। फिर आम्र जम्बु आदि द्विपर्णिक वा द्विपत्रोत्पत्तिक होते हैं।

पत्र सकलको साधारणत: किसलय, वृन्त और वृन्तकोष तीन भागमें बांटते हैं। वीजपत्रका वृन्त और वृन्तकोष अधिक पनपनेसे मेरुदण्ड निकल आता है। वीजपर अङ्कुरोत्पादक शक्तिका प्रभाव पड़नेसे उद्भिदमें मूल लगता है।

वीजसे प्रथम जो इन्द्रिय निकलता, वही मूल ठहरता है। एकपर्णिकके अन्तिम भागमें फैल जो मूल चलता, वह गौण रहता है। फिर द्विपर्णिकमें अन्तिम भागके स्वयं बढ़नेसे उपजनेवाला मूल मुख्य है। मूल प्रधानत: मिश्र वा शाखान्वित और तान्तविक वा तन्तुवत् बहु शाखायुक्त, दो प्रकारका होता है। वह अधोगामी है। उसमें अन्त्यभागके रसाकर्षणकी शक्ति रहती है। फिर प्रत्येक ही मूलका अन्त्य भाग वर्धिष्णु और रसाकर्षी है।

मूल तीन प्रकारका होता है—मृण्मूल, जलीय मूल और वायव मूल। जो मूल मृत्तिकामें रहता, उसे सब कोई मृण्मूल कहता है। इस श्रेणीके उद्भिद् पृथिवीके मध्य अधिक हैं। केवल जलमें रहने और अङ्कुर उत्पन्न करनेवाले उद्भिद्का मूल भूमिको न भेद जलपर ही उतराता है। इसीका नाम जलीय मूल है। जैसे—काई प्रभृति। कोई कोई उद्भिद् न तो मृत्तिकामें घुसता और न जलमें बसता, आलोक एवं वायु लेनेके लिये बल्कल वा पर्वत-विवरमें धंसता है। इसका मूल हरा और काण्ड-जैसा होता है। एतद्भिन्न दूसरे प्रकारका भी मूल है। उसे परभृत मूल कहते हैं। क्योंकि वह अन्य तरुकी त्वक् फाड़ जहां पुष्टिकर रस पाता, वहीं पहुंच जाता है। वट प्रभृति वृक्षके काण्डमें ईषत् पीतवर्ण मूल लटकते देख पड़ता है। वह साधारण नहीं। उद्भिद्के तत्त्वज्ञ उसे असाधारण वा अनियत मूल कहते हैं।

प्रथमावस्थामें काण्डका नाम मुकुल (Plumule) है। उसके अन्त्य भागमें एक कलिका आती, जो अन्त्य कलिका या मांझ कहाती है। उसी कलिकापर काण्डकी वृद्धि निर्भर है। उससे वीजपत्र निकलते हैं। काण्ड कई प्रकारका होता है,—१ भूपृष्ठशायी, २ ऊर्ध्वग, ३ लतायुक्त, ४ लम्बमान और ५ आरोही। प्रत्येक शब्दमें तत्तत् विवरण देखो। मूलमें नहीं—पत्र, बल्कल वा अन्य उपकरण काण्डमें रहता है। काण्डकी जिस जिस गांठसे पत्ती आती, वह पर्वसन्धि (Node) कहाती है। सन्धिद्वयके मध्यस्थित भागका नाम अन्त:पर्व (Inter-node) है। काण्डका एक अंश मट्टीमें रहता है। मूलको कलिका-विकाशकी क्षमता नहीं। मृणमध्यस्थ काण्डसे किसी किसी पेड़की कोंपल निकल आती है। जैसे—केलेसे। अनेक व्यक्ति भ्रान्तिक्रमसे मट्टीके मध्यस्थ काण्डको मूल-जैसा समझते हैं। वस्तुत: जो कदलीकाण्ड कहाता, वह अत्यन्त विस्तृत पत्रवृन्तसमूहका कठिन काण्डाकार होनेके सिवा दूसरा कोई द्रव्य नहीं। उसका नाम मूलाकार काण्ड (Rhizoma) है। चक्षु:संयुक्त मृणमध्यस्थ काण्डको स्फीतकाण्ड (Tuber) कहते हैं। जैसे—आलू। कभी कभी काण्डके पत्र सम्पूर्ण खिल एक वा ततोधिक कठिन वस्तु उत्पन्न करते हैं।

उसीका नाम कन्द (Balb) है। वह अधिकतर मूलाकार काण्ड सदृश होता है। जैसे घुइया। काण्ड दो प्रकारका है—दारुमय और रसाल। उद्भिद्‌के शरीरमें जो गोलाकार वस्तु पाते है,उसे बुद्‌बुद (Shell) कहते हैं। बुद्‌बुद्‌ अति सूक्ष्म चर्मसे निर्मित क्षुद्र क्षुद्र दाने होते हैं। उनमें कोई न कोई कठिन वा द्रव पदार्थ रहता है। उद्भिद्‌ और प्राणीका देहका एकत्र दृढ़बद्ध बुद्‌बुद्‌के स्तरद्वारा निर्मित है। वास्तविक किसी जीवित पदार्थकी पहिचान करनेके लिये प्रथम बुद्‌बुद्‌की चिन्ता रखना पड़ती है। नारङ्गीका गूदा देखनेसे बुद्‌बुद्‌का दृष्टान्त मिलता है। बुद्‌बुद्‌का परिमाण अङ्गुलके चार सौ भागमें एकसे तीनतक बैठता है। और किसी किसी उद्भिद्‌में स्क्रु जैसी पेचदार नली (Spiral vessel) रहती है। ऐसे आकारविशिष्ट एवं सञ्चित पदार्थयुक्त और गोल बुद्‌-बुद्‌के संयोगसे (Anular vessel) मण्डलाकार नली निकलती है। बुद्‌बुद्‌ अपने मध्यस्थ सञ्चित पदार्थके कठिन पड़नेसे नालाकार बन जातेहै,जिन्हें कोष्ठ कहते हैं। कोष्ठके वहिःस्थित व्यावर्तक स्तरको त्वक्‌को और बुद्‌बुद्‌विशिष्ट मध्यस्तम्भका नाम मज्जा है। एक-पर्णिक उद्भिद्‌ दारुमय काष्ठविशिष्ट होनेसे नारियल और द्विपर्णिक आमके पेड़ जैसा देख पड़ता है।

मज्जा और वल्कलके अव्यवहित निम्नभागमें अणु-वीक्षणयन्त्र लगानेसे काष्ठका स्तर दृष्टिगोचर होता है। वही त्वक्‌ और काष्ठकी वृद्धिका प्रधान स्थान है। वहां बुद्‌बुद्‌ अतिसूक्ष्म प्राचीरविशिष्ट और अपने उप-रिस्थ सञ्चित पदार्थसे विहीन रहते हैं। नूतन काष्ठ-स्तरमें निर्माता बुद्‌बुद्‌ केवल दीर्घ एवं पदार्थके सञ्चयसे परिमाणमें कठिन तथा जलद्वारा अभेद्य हो सकते हैं। अन्तरस्थ कठिन काष्ठके स्तरको सार वा आन्तरिक काष्ठ (Heart-wood) कहते हैं। वह नाना वर्णयुक्त हो सकता है। सर्वापेक्षा अन्तरस्थ स्तरका नाम तन्तूत्पादक प्रदेश (Liber) है। क्योंकि कागज बननेसे पहले वृक्षका उक्त भाग निकाल लोग लिखा-पढ़ी करते थे। तन्तूत्पादक प्रदेशसे बाहर एक स्वतन्त्र हरित्‌ एवं प्रस्फुट बुद्‌बुद्‌ होता है। उसको हरित्‌स्तर कहते हैं। हरित्‌स्तरसे बाहर चोप पैदा करनेवाला स्तर (Cortical lair) है। सर्ववहिःस्थित स्तरका नाम चर्म (Epidermis) है। यह स्तर अधिकांश देख पड़ता है। नारियल या वैसे ही वृक्षके बीच जब पत्र फूटते, तब काण्डके नववर्धिष्णु अंशवाले अग्रभागसे निकटस्थ कितने ही बुद्‌बुद्‌ सञ्चित पदार्थ द्वारा कठिन पड़ नली-जैसे बन जाते हैं। फिर वही नली एक बुद्‌बुद्‌के स्तरसे रचित रहती है। उक्त नली और कठिन बुद्‌बुद्‌ सकल एकत्र स्तवक स्तवक पर मिल काण्डमें चञ्चु वा तन्तु उत्पादन करते हैं।

किसी काण्डकी समस्त कलिकायें एककालमें ही व्यक्त हो डाल नहीं बनतीं। उनमें अनेक गुप्त रहतीं और वर्धिष्णुके अनिष्ट होने पर देख पड़ती हैं। कितनी ही परिवर्तित कलिकाओंके कठिन और सूच्यग्रवत्‌ बननेसे कण्टक निकलता है।

शरीफ़े और पीपलके पेड़में प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे एक-एक पत्र निकलता है। इसको एकोत्तरक्रम कहते हैं। मदार और सेंहुड़ प्रभृति कितने ही पेड़ोंमें प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे दो पत्र फूटते हैं। इसका नाम प्रतीपस्थ है।

काण्ड आदिम अवस्था पर कलिकामें रहता है। तन्मध्यस्थित स्तरविशिष्ट और घन सन्निविष्ट पत्र यथा-काल प्रस्फुटित हो सौन्दर्य, वर्णोत्कर्ष एवं सद्‌गन्ध द्वारा प्रकृतिको मतवाला बना देते हैं।

इन पत्रोंका निगूढ़ तत्त्व ढूंढ़नेसे नहीं मिलता। जितना ही इनकी उत्पत्तिका विषय जांचते है, उतना ही प्राणोंमें अभूतपूर्व आनन्दका सञ्चार हो निकलता है। इसलिये कहना पड़ता है—सिवा उस विश्वविधाता जगदीश्वरके कौन इसप्रकार कार्यको सुसम्पन्न कर सकता है! हम जैसे रक्तके शोधनार्थ श्वास लेते है, वैसे ही पत्र भी वायुग्रहणसे जीवगणके श्वासयन्त्रका कार्य चलाते हैं। वे वायुके ग्रहण और रेचनके सिवा अधिक परिमाणसे जलका भी निषेक करते हैं। वृष्टिका जल प्रथम गिरकर मट्टीमें घुसता है, जिसे उद्भिद्‌का मूल चूसता है। प्रत्येक वृक्षमें सहस्र सहस्र

पत्र होते और प्रत्येक पत्र एक-एक विन्दु जल देता है। इसीप्रकार असंख्य वृक्षोंसे अधिक परिमाणमें जल गिरता है। जल यदि पत्रसे निकल वायुमण्डलमें पुनः न पहुंचता, तो अत्यन्त ग्रीष्मके समय वह सूखकर नितान्त ही उष्णभाव धारण करता।

पत्रदल अर्थात् अन्तकिसलयकी भूमि अग्रविन्दु और द्वितल है। एक आकाश और अपर तल भूमिकी ओर रहता है। दलके प्रान्तभागको धार कहते हैं। क्योंकि वह वृन्त वा दण्डपत्रके तलको धारण करता है। उक्त दण्ड काण्डके साथ संयोग-स्थलपर फैलकर वृन्तकोष निकलता है। सवृन्तक पत्रमें एक बहुत स्पष्ट रेखा दलके मध्य पड़ती है। उसका नाम मध्यरेखा है। वृन्तका दण्ड स्वयं दलके मध्य न फैल प्रायः प्रवेशकालमें दो वा अधिक शिरामें बंट जाता है। इन रेखाओंका दैर्घ्य प्रायः समान और उत्पत्तिस्थानसे सर्वत्र प्रसारित अथवा दलके मध्य किञ्चित् सरल वा वक्र रहता है। प्रधान रेखा वा शिरासे बहु शाखा ये निकलती है और पीछे वृद्धिगत हो पत्रदलकी सकल दिशाओंमें केशाकार सूक्ष्म सूक्ष्म प्रशाखा छोड़ती हैं। उनके परस्पर संयोगसे एक जाल बनता है। जिन उद्भिद्के पत्र इस प्रकार जालविशिष्ट रहते, उनमें दो एकको छोड़ प्रायः सकल ही द्विपर्णिक होते हैं। फिर उक्त जालविहीन और पत्रदलके मध्य समानान्तर शिरा-विशिष्ट पत्र एकपर्णिक हैं। जटिल शिरायुक्तको जालाकृति (Reticulate) और अपर पत्रको अजालाकृति (Non-reticulate) कहते हैं। उनमें अश्वत्थ, कटहल जालाकृति और बांस, अदरक, सर्वजया प्रभृति अजालाकृति हैं। वृन्तका दण्ड स्वयं पत्रके दलमें फैलता है। वह दलको दो भागमें बांट दक्षिण और वाम पार्श्वपर्यन्त शाखा छोड़ता है। उसकी मध्यरेखा परके मध्यांश जैसी और पक्षाकार (Pinate) नाम पानेवाली होती है। फिर वृन्तका दण्ड जलके पत्रमें घुसते ही घटकर दो वा अधिक शिरा निकालता है। उनमें कोई छत्रकी कमानीकी तरह प्रसारिताकार (Radiate), कोई कराकार (Palmate), कोई वक्रशिरायुक्त (Curve-nerved) और कोई दलकी मध्यरेखा समान्तर शिरायुक्त (Parallel-veined) होती है। पत्र दो प्रकारके होते हैं—सरल और यौगिक। जिस पत्रमें एकसे अधिक ग्रन्थि पड़े, वह यौगिक है। अवृन्तक पत्रकी कर्णाकार (Auriculate) आकृति लक्षित होती है। सवृन्तक पत्रकी भूमि नानाप्रकार है। कहीं पानके पत्ते जैसी (Corvate), कहीं तीक्ष्ण एवं शुण्डाकृति, कहीं ढालू किनारेदार, कहीं दन्तुर, कहीं क्रकचाकृति (Lorate) किंवा एक-एक बड़ी मेहराबके अन्तर्गत छोटी छोटी मेहराबके आकारमें खण्डित (Crenate) भूमि रहती है। पत्रकी पशुका वा शिरा अपने छिन्न किनारासे जो सम्बन्ध रखती, उसकी बात सहज ही समझ नहीं पड़ती। छिद्रका परिणाम अधिक रहनेसे पत्र कई खण्डमें बंट जाता है। उससमय देखने में आता है—पत्रका आकार पर्शुका वा शिरापर निर्भर है। खण्डके पत्रकी संख्या यदि हस्ताङ्गुलिसे न्यून होती है, तो द्विखण्डित त्रिखण्डित इत्यादि उसके नाम पड़ते हैं। जिसमें दल इस प्रकार कट जाता है, वह व्यवच्छिन्न (Dissected) पत्र कहलाता—जैसे जमींकन्दका पत्ता। यौगिक पत्रका दल सहजमें ही वृन्तदण्डसे पृथक् हो जाता है। किन्तु सूख जाने पर भी सकल पत्रके दण्डका वृन्तदण्डसे छूटना कठिन है।

पत्र, मुकुल और पुष्पविशिष्ट काण्ड श्वासके ग्रहण और पुनरुत्पादनका कार्य करता है। पुष्प ही पुनरुत्पादनका साधन है। पुष्पकी कलिका प्रधान प्रधान विषयोंमें पत्रकलिका ही जैसी रहती है। जिस पत्रके कक्षमें पुष्पकी कलिका निकलती है, उसकी संज्ञा पुष्पोत्पादक पत्र (Bract) है। पुष्पोत्पादक पत्र प्रायः हरा और अपर पत्र जैसा होता है। कभी कभी वाह्य सौन्दर्य देखनेसे उसीके पुष्प होनेका भ्रम हो जाता है। पत्रकी कलिकाके कक्षसे अन्य पत्र कलिका, फिर उसी स्थानसे अपरापर कलिका भी पर्यायक्रमसे निकल सकती हैं। किन्तु पुष्पकी कलिकासे केवल एक पुष्प किंवा पुष्पस्तवकयुक्त शिखाका उत्पादन होता है। प्रस्फुटित पत्रकी कलिकाके मेरु-दण्डको शाखा कहते हैं। फिर पुष्पकी कलिकामें

शाखाका मुख्यवृन्त (Pidancle) और गौण प्रशाखाका गौणवृन्त (Pedicele) नाम है। कलिका तथा पुष्पका यथास्थान और यथा क्रमपर सन्निवेश पुष्पविन्यास (Inflorescence) कहलाता है। वृक्षादिका फलोत्पादक अंश ही पुष्प है। वह चार स्तवक और परिवर्तित पत्रों द्वारा बनता है। सबसे बाहिरके दो स्तवक अन्य दो स्तवकोंके चारो तरफ रक्षावरणकी तरह लगते हैं। मध्यस्थित दो स्तवक स्त्रीपुं-जातिका भेदकरानेवाले उद्‌भिद्‌के इन्द्रिय हैं। उद्‌भिद्‌का तत्त्व समझनेवाले इन्हीं दोनोंको प्रधान इन्द्रिय बताते हैं। पुष्पके उपरोक्त चार स्तवकमें वहिःस्थको वहिरावरण (Calyx) और अन्तःस्थको अन्तरावरण (Corolla) कहते हैं। अन्तरावरणके निकट पुंस्तवक वा पुंकेशर (Stamen) और उससे दूर वृन्तदण्डके अन्त्य भाग पर स्त्रीस्तवक वा गर्भकेशर (Pistil) रहता है। वहिरावरण कितने ही परिवर्तित पत्रोंसे बनता है, जिनका नाम वहिश्छद (Sepal) है। वह अन्तरावरणके खण्ड वा दलकी अपेक्षा अधिकतर वृहत्‌ और सुरक्षित होता है। अन्तरावरण भी कितने ही पत्र वा पत्रके खण्डोंसे बनता है। उन्हें पुष्पदल (Petal) कहते हैं। अन्तरावरण वहिरावरणसे मनोरम लगते भी स्थायी नहीं होता। पुंकेशर अन्तरावरणके मध्य एवं प्रायः सर्वदा पुष्पदलके साथ एकोत्तर क्रममें रहनेसे वहिश्छदके सम्मुख हो पड़ता है। पुष्पदल और वहिश्छदके साथ पत्रका जैसा सादृश्य है, पुंकेशरके साथ वैसा देख नहीं पड़ता। स्त्रीस्तवक वा गर्भकेशर पुष्पमें मेरुदण्डके अन्त्यभागपर रहता है। उसके खण्ड वा पत्रका नाम किञ्जल्क (Capel) है।

शिखामें विन्यस्त और वृन्तहीन पुष्पको मञ्जरी कहते हैं। समस्त पुष्प केवल पुं वा स्त्री जातीय रहनेसे मञ्जरी एक जातीय (Catkin) कहलाती है—जैसे शहतूत। यदि वह एक बड़े पुष्पोत्पादक पत्रके मध्यमें लिपट जाती है, तो उसे विजातीय (Spadix) कहते हैं जैसे घुइया। विजातीयके निम्नस्थ पुष्प स्त्री जाति, मध्यस्थ पुंजाति और उपरिस्थ क्लीव अर्थात्‌ उत्पादक गुणसे रहित होते हैं। मुख्य वृन्तका दैर्घ्य असमान रहनेसे शिखायुक्त रूपको समतालिक (Corymb) कहते हैं। पुष्पोत्पादक पत्रके कक्षमें रहनेवाली अनिर्दिष्ट कलिकासे किसी किसी स्थलपर पुष्प नहीं—गौण शिखाका सकल निकलता है। फिर इस सकल शिखामें जो पुष्पोत्पादक पत्र लगता है, उससे फल पैदा होता है। ऐसे स्थलपर शिखायुक्त मञ्जरी और समतालिक रूप दोनों सरल न हो यौगिक बन जाते हैं। फूलकोबी समतालिक रूपका उदाहरण है।

कहीं कहीं छत्राकार (Umbel), मस्तकाकार (Capitulum) प्रभृति शिखाके अव्यक्त रूप देख पड़ते हैं। किसी साधारण मस्तकाकार पर स्थित कितने ही पुष्प एक-जैसे लगने पर यौगिक कहलाते हैं। फिर उनमें एक-एकको पुष्पक कहते हैं। छत्राकार वा मस्तकाकार प्रभृति व्यावर्तक पुष्पके उत्पादक पत्र स्तवकका नाम पत्राच्छादन (Involucre) है। जबतक फलकी कली अनिर्दिष्ट पत्रकलिकाके समान पुष्प प्रसव नहीं करती और अपने वृन्तके अन्त्य भागमें केवल एक फूल रखती है, तबतक उसकी संज्ञा अनिर्दिष्ट-पुष्प-विन्यास है। किन्तु यदि पार्श्विक कुसुम लग और उसके भीतरी फूलके फूटने पर नीचे फिर पार्श्विक कुसुम निकले और पुनः पुनः अन्त्य भागकी वृद्धि रुककर पार्श्व भागकी होती रहे, तो अनिर्दिष्ट पुष्पविन्यास सदृश उसकी भी संज्ञा बहु-शिखान्वित पुष्पविन्यास पड़ती है। मंदारके पेड़की पुष्पित शिखा बिलकुल पत्रके कक्षमें न रहकर—दो वृन्तके मध्यमें रहती है। इस प्रकारके पुष्पविन्यासको कक्षान्तिक कहते हैं। प्रधानतः आदर्श पुष्पपत्रकी कक्षासे निकलता है। यह पत्र पुष्पोत्पादक पत्र है। जब पुष्पके बाहर एकसे अधिक पुष्पोत्पादक पत्र स्तवकाकारमें वर्तमान रहते है, तब उसका एक अतिरिक्त वहिरावरण वा उपकरण (Epicalyx) देख पड़ता है। जैसे जवाकुसुममें पुष्पोत्पादक पत्रसे दक्षिण और वाम पार्श्वस्थ दलके सम्मुख दो दो वहिश्छद रहते हैं। आदर्शपुष्पमें सबसे नीचे वहिरावण,उसके ऊपर अन्त-

रावरण, फिर पुंकेशर और सर्वोपरि गर्भकेशर होता है। गर्भकेशरके साथ पुंकेशरका जो सम्बन्ध रहता है उसके अनुसार पुष्पका समूह तीन श्रेणीमें बंटता है। १म को अवजात (Hypogynous) अर्थात् आदर्श-रूपविशिष्ट कहते हैं। यह पुंकेशर पुष्पाधारके ऊपर और गर्भकेशरके नीचे रहता है। चम्पेका फूल नोच डालनेपर इसका उदाहरण मिलेगा। द्वितीय पारिजात (Perigynous) है। इसमें तीन वहिःस्तवकके जुड़कर पुष्पाधारपर पहुंचनेसे पूर्व एक नल निकलता है—जैसे गुलाब, इमली प्रभृतिमें। तृतीय का नाम उज्जात (Eypigynous) है। इसमें उक्त नल गर्भकेशरसे लिपटता और पुंकेशर गर्भकेशर पर चढ़ा—जैसा देख पड़ता है—जैसे अमरूद और जामुनका फल। जो केशर युक्तदलान्वित अन्तरावरण पर रहते, उन्हें दलोज्जात (Epipetalous) कहते हैं। केशरके स्थानानुसार द्विपर्णिक उद्भिद् प्रधानतः तीन श्रेणीमें विभक्त हैं। १म का अवजात और पुष्पावरणसे वियुक्त होनेपर चतुर्विमुक्तस्तवकी (Thalamiflorae); २य का वहिरावरण, अन्तरावरण तथा केशर एकत्र मिल नलाकार रहने एवं केशर उज्जात वा परिजात पड़नेसे वियुक्त वहिःस्तवकी (Caliciflorae) और ३य का दलोज्जात केशर गर्भकेशरके ऊपर वा चार पार्श्व चढ़ने तथा अन्तरावरणयुक्त दल लगनेसे द्वियुक्तान्तःस्तवकी (Corolliflorae) नाम है।

पुष्पके चार स्तवक रहनेसे सम्पूर्ण समझा जाता है। प्रथम असम्पूर्ण पुष्पमें वहिरावरण एवं अन्तरावरण नहीं पड़ता, द्वितीय अन्तरावरणका अभाव रहता और तृतीय एक जाति केशरविशिष्ट अथवा उभय केशरका भी कहीं ठिकाना नहीं लगता। केवल पुंकेशरविशिष्टको केशरी और केवल गर्भकेशर विशिष्ट पुष्पको स्त्रीकेशरी कहते हैं। समस्त पुष्प पुंकेशरी किंवा स्त्रीकेशरी होनेसे वृक्षका नाम एकलिङ्गभाक् (Diæcious) है—जैसे ककड़ी और शहतूत।

वहिरावरणके अंश अर्थात् वहिश्छद प्रायः अनुज्ञक होते हैं। स्वतन्त्र स्वतन्त्र रहनेसे बहुच्छद (Polysepalous) और सम्पूर्ण वा असम्पूर्ण रूप मिलकर वहिश्छद नलाकार बननेसे वहिरावरणको युक्तच्छदक (Gamo-sepalous) कहते हैं। नलके मुखाग्रसे वियुक्त अंश अङ्ग (Limb) कहाते हैं। पुष्प विनाशके बाद वहिरावरण गिर पड़ता (जैसे अफीमके फूलमें) अथवा जितने दिन किसलय चलता, उतने दिन या कुछ अधिक भी बना रहता है। अन्तरावरण ही पुष्पकी रक्षा रखनेका अन्तःस्तवक है। उसके पत्राकार इन्द्रियको दल कहते हैं। अन्तरावरणके दल परस्पर मिलनेसे युक्तदलक (Mono-petalous) और वियुक्त रहनेसे बहुदलक (Poly-petalous) नाम पड़ता है। अन्तरावरणका नियत रूप पांच प्रकार है—१ नलाकार (Tabulary) २ सुरङ्गाकार (Hypocrateriform) ३ चक्राकार (Rotate) ४ घण्टाकार (Campanulate) और ५ धुस्तूराकार (Infundibuliform) फिर अन्तावरणका अनियत रूप तीन प्रकार है—१ ओष्ठाकार (Labiate), २ छद्माकार (Personate) और ३ जिह्वाकार (Lingulate)। यदि अन्तरावरण वहिरावरणकी अपेक्षा दीर्घकालस्थायी रहता, तो किसी स्थलपर सत्वर गिर पड़ता है। धुस्तूर पुष्पके पुंकेशरका कार्य शेष होनेपर अन्तरावरण और वहिरावरण तिरछा तिरछा पृथक् पड़ छूट जाता है। अन्तरावरण और वहिरावरण एक वर्णका रहनेसे समवेश (Perianth) कहाता है। एकपर्णिक उद्भिद् प्रायः ऐसा ही होता है।

रक्षक वा प्रधान इन्द्रियविहीन पुष्पको लग्न कहते हैं। फिर समुदय केशरका पुंस्तवक (Androcœum) और समस्त गर्भकेशरका स्त्रीस्तवक (Gynœcium) नाम है। केशर दल और गर्भमें रहनेपर दो अंशसे विशिष्ट हो जाते हैं। प्रथम अंश वृन्तके दण्ड जैसा एक नाल है। उसे सूक्ष्म वृन्त वा तन्तु (Filament) कहते हैं। फिर अति अल्प विस्तृत उसीका अन्तभाग रेणुकोष वा परागकोष (Anther) कहाता है। पत्रदलके वृन्त दण्डकी भांति अनेक स्थलपर

तन्तु भी परागकोषमें फैल जाता है। पत्रके मध्य पिंजड़े-जैसे इस अंशको योजक (Connective) कहते हैं। पराग नामसे ख्यात रेणूत्पादक परिवर्तित पुष्पके पत्रका नाम केशर है। रेणु परागकोषके अभ्यन्तरसे निकलता है। जब परागके कोषमें गर्त पड़ता, तब मध्यगत पृथक् बुद्बुद् ग्रन्थन बदल कर रेणु बनता है। पराग नामक रेणु निकालना ही केशरका कार्य है। कारण—गर्भकेशरका मध्यगत वीज वा अण्ड भरनेके लिये पराग प्रयोजनीय है। अतएव पकने पर पराग कोषके फटनेसे रेणु निकलता है। परागकोषके फटनेको प्रस्फोटन (Dehiscence) कहते हैं। संख्यामें दो बड़े तथा दो छोटे चार रहनेसे द्विदन्वक (Didynamous) और चार बड़े एवं दो छोटे छः होनेसे केशर त्रिदन्वक (Tetra dynamous) कहलाते हैं। सिवा इसके एकत्र एक राशिमें मिल जानेसे केशरका नाम एकगुच्छ (Monodelphous) पड़ता—जैसे जवाकुसुम रहता है। इसीप्रकार अधिक राशिमें केशर युक्त रहते द्विगुच्छ (Di-adelphous), त्रिगुच्छ (Triadelphous), बहुगुच्छ (polyadelphous) इत्यादि नाम पाते हैं—जैसे एरण्डके पुष्प।

पूर्व ही बता चुके—गर्भकेशरके पृथक् पृथक् खण्डको किञ्जल्क कहते हैं। किञ्जलके नीचे एक गर्त रहता है। उसका नाम अण्डाधार वा डिम्बकोष अथवा वीजकोष (Ovary) है। उसमें नवडिम्ब (Ovule) वा आदिवीज छिपा रहता है। अण्डाधार पर आयसदण्ड (Style) नामक एक लम्बा सूक्ष्म नल लगा होता है। आयसदण्डके शेष भागपर स्थित चपटे गोलाकार अथवा दीर्घाकार वस्तुको आशय (Stigma) कहते हैं। किञ्जल्क कभी वियुक्त हो जाते हैं—जैसे चम्पेके फूलमें। फिर कभी गर्भकेशरके स्थानपर एक ही किञ्जल्क रहता है। वह निभृत वा विविक्त (Solitary) कहलाता है—जैसे इमलीका फूल।

किञ्जल्कके समुदय दैर्घ्यसे मध्य पर्शुका तक विपरीत दिक्में विभक्त (बंटा हुआ) एवं संलग्न धार द्वारा गठित जो कुछ कठिन कांटे रहते, उन्हें उद्भिद्तत्त्ववेत्ता नाड़ी (Placenta) कहते हैं। वही नव कलिकाके समान छोटे बुद्बुद्विशिष्ट सकल वस्तुओंको पुष्ट और प्रकाशित करते हैं। अण्डाधारके मध्य नाड़ीपर डिम्ब नामक बुद्बुद्विशिष्ट उन्नत वस्तु उत्पन्न होता है। बुद्बुद् बढ़नेपर सामान्यतः गोल पड़ जाते हैं। फिर क्रमशः एक वृन्त उन्हें पकड़ लेता है। वृन्तका नाम कौशिकवृन्त (Funiculus) है। गोल एवं वृन्तयुक्त होते समय बुद्बुद् अन्तरावरण तथा बहिरावरण द्वारा वेष्टित रहते हैं। यह आवरणद्वय अल्पांशको छोड़ सर्वांश ढांक लेते हैं। अल्प स्थान ही कौशिकवृन्तसे डिम्बके विपरीत शेषभागमें नल स्वरूप लगता है। इस नल वा द्वारको कौशिकनली (Micropyle) कहते हैं। वृद्धिकालपर डिम्बका एक मध्यस्थ बुद्बुद् बहुत बढ़ जाता है। फिर उसका मध्यगत पदार्थ विभक्त हो अनेक क्षुद्र क्षुद्र बुद्बुद् उत्पन्न करता है। अभ्यन्तरके इस बुद्बुद्विशिष्ट कठिन वस्तुका नाम भ्रूणस्थली है। इसमें परागरेणु आने और डिम्बसे मिल जानेपर उद्भिद् भ्रूण (Embryo) उपजता है। परागरेणुकी शक्तिसे भ्रूणस्थलीमें भ्रूण निकलनेको वीजोत्पादन (Fertilization) कहते हैं। भ्रूण निकल आनेपर डिम्ब फल (Fruit) और गर्भकेशर वीज (Seed) कहलाता है।

परागका रेणु पक जानेपर पूर्ववर्णित किसी एक रीतिके अनुसार परागकोष फटनेसे बाहर निकलता है। किसी फूलमें पुंकेशर द्वारा उसी पुष्पस्थ स्त्रीकेशरका संयोग प्रायः नहीं लगता; यदि लग जाता है, तो अच्छा वीज नहीं उपजता। उद्भिद्तत्त्वज्ञका यह स्थिर सिद्धान्त है—अधिकांश स्थानमें किसी फूलमें पुंकेशरद्वारा उसीके गर्भकेशरको ससत्त्वा करना उद्भिद्गणका अभिप्रेत वा स्वभावसिद्ध कार्य नहीं। एक पुष्पके परागका रेणु अन्य पुष्पके गर्भकेशरमें पहुंचनेसे गर्भाधानका कार्य हो जाता है। यहां प्रश्न उठता—एक पुष्पका रेणु अपर पुष्पमें कैसे पहुंच सकता है? इसका उत्तर यही है—वास्तविक पतङ्ग एवं वायु उभय दूतोका कार्य चलाते

हैं। वह एक पुष्पके पुंकेशरका परागरेणु अपरके गर्भकेशरमें पहुंचाते और रेणुसे गर्भकेशरको मिलाते हैं। यदि पतङ्ग प्रथम स्त्रीपुष्पपर बैठ कर पीछे पुंपुष्पपर पहुंचता, तो कोई कार्य नहीं निकलता। प्रथम पुंपुष्पपर बैठ पराग आच्छादित होनेसे पीछे स्त्री-पुष्पपर जानेसे पतङ्ग आनीत पराग आशयमें डालता है। पराग आशयमें पड़नेसे ही वीज उत्पन्न होता है। अनेक स्त्रीपुष्प नहीं फलते अर्थात् पकते पकते बाल्यावस्थामें ही झड़ पड़ते हैं। इसका कारण उन्हें पुंकेशरसे पराग न मिलना है। एक एक पतङ्ग एक एक उद्भिद्का भक्त होता है। वह अपने प्रिय पुष्पके पास पहुंच या ऊपर बैठ स्वीय पुरस्कारस्वरूप एक विन्दु मधु ले लेता है। इसी प्रकार प्रफुल्लचित्त पुष्पसे पुष्पान्तरपर घूमते घूमते पतङ्ग परागके रेणुको दूसरे स्थान पहुंचाता और वीज उपजाता है। पुन: पुन: मिलनेकेलिये पुष्प सकल सुरञ्जित एवं सुगन्धित होकर अपने मधुके उपहारसे उसे बहलाते रहते हैं। प्राणी-तत्त्वविद् डारुइनके मतसे पतङ्गके लिये ही पुष्पका विविध वर्ण बनता है। वस्तुत: पुष्प न मिलने पर भी वह अन्य किसी उपायसे जी सकता है। किन्तु पतङ्गका साहाय्य न पानेसे उद्भिद्का वीजोत्पादन करना असम्भव है। कहीं कहीं सङ्कर वा मिश्रजातीय वृक्ष देख पड़ते हैं। उससे जान पड़ता—पतङ्ग कर्तृक सम्पर्कीय वा समधर्मी उद्भिद्रेणु न आने और भिन्न जातीय परागरेणु गर्भकेशरमें लग जानेसे सङ्कर वृक्ष उपजता है। वह वीजके द्वारा अपना वंश स्थायी रखनेकी चेष्टा नहीं करता, क्योंकि उसका वीज वन्ध्या होता है। अथवा यदि वीज वन्ध्या नहीं निकलता, तो तद्द्वारा उद्भूत वृक्ष क्रमश: आदि उद्भिद्द्वयके एकका आकार पकड़ता है।

फलके आवरण तीन हैं—अन्तरावर्तक (Endocarp) वा आभ्यन्तरीण, मध्यावर्तक (Mesocarp) वा मध्य और बहिरावर्तक (Epidermis) स्तर। उद्भिद्के विचारसे इन तीनोंमें आद्य तथा अन्त्यको किञ्जल्क पत्रका चर्म (pericarp) और मध्य स्तरको बुद्बुद्-ग्रन्थन कहते हैं।

सकल फलोंकी श्रेणीबद्ध करनेका उपाय नहीं, क्योंकि पृथिवीपर नाना जातीय फल विद्यमान हैं। अभीतक लोग उसका तत्त्व अच्छीतरह ठहरा नहीं सके हैं। फिर भी साधारणत: फलकी श्रेणी पांच रख ली गयी हैं—१ कठिन (Nut), २ नीरस (Capsule), ३ शिम्ब (Pod), ४ निरस्थिक (Berry) और ५ सास्थिक (Drupe) फल।

नाड़ीसे अलग बुद्बुद् व्यक्त होनेपर गूदा (Hesperidium) पड़ता है।

अनेक स्थलमें खूब पक जानेपर फलकी चतुर्दिक्में एक अतिरिक्त वा तृतीय स्तर लगता है। उसे उपस्तर (Aril) कहते हैं। वह वीजके नालसे आरम्भ हो कौशिकनली पर्यन्त फैलनेपर उपस्तर (Arilus) और कौशिकनलीसे वृन्तकी दिक् बढ़नेपर उपस्तरनल (Arilode) कहलाता है।

अब देखना चाहिये—उद्भिद् भोजन, पान और श्वासग्रहण करते हैं या नहीं और यदि करते हैं, तो कैसे। मूल ही उद्भिद्का प्रधान आकर्षकेन्द्रिय है। वही मृत्तिकामें घुस उद्भिद्गणके खाद्यका अधिकांश संग्रह करता है। मूल रसको खींच काण्ड और पत्रमें पहुंचाता है। उद्भिद् श्वास लिया करते हैं। ये दिनको अकसिजन और रात्रिको कारबोनिक छोड़ते हैं। फिर भी एक प्रभेद है—सूर्यालोकमें हरित् उद्भिद् निज शक्ति द्वारा वायु मण्डलस्थ कारबोनिकका उपादान हटा कारबन रखते हुये अकसिजन निकालते हैं। दिनको जो कारबोनिक निकलता है, वह समझ नहीं पड़ता। इससे देख पाते—उद्भिद् वायुमण्डलको स्वास्थ्य कर अवस्थापर लाते और हमें विशेष उपकार पहुंचाते हैं। क्योंकि वायुमें अधिक परिमाण कारबोनिक रहनेसे हमारे जीवनमें संशय था। उद्भिद् श्वास द्वारा वायु लेते और किञ्चित् अक्सिजन रोक कारबोनिक निकाल देते हैं। रात्रिमें यह क्रिया होती है। इसीसे शयनागारमें अनेक उद्भिद् रहनेपर स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। संस्कृत-शास्त्रमें भी उल्लिखित है—'रात्रौ च वृक्षमूलानि दूरत: परिवर्जयेत्।' अर्थात् रात्रिको वृक्षमूलसे

दूर ही रहना चाहिये। उद्भिद्के मूल द्वारा पीतको आम और निम्नगको जीर्ण रस कहते हैं। पीत रसके द्वारा उद्भिद् पुष्ट होता है। अक्सिजन, नाइट्रोजन, कारबन और जल व्यतीत उद्भिद्गणको जिस जिस वस्तुका प्रयोजन पड़ता, उसका मृत्तिकामें रहना आवश्यक है। जब किसी उद्भिद्का विशेष प्रयोजनीय वस्तु क्षेत्रमें नहीं रहता, तब उसको खेतीका करना अनुचित लगता है, क्योंकि कोई फल नहीं मिलता। सकल उद्भिद् मृत्तिकासे एक ही पदार्थ नहीं लेते। प्रत्येक उद्भिद्को स्व-स्व उपयोगी मृत्तिका होती है।

कोई कोई जातीय उद्भिद् केवल रससे नहीं तृप्त होते, कीटादि जीवको भी पकड़ और रगड़ खा डालते हैं। विहार अञ्चलमें मैदान और पहाड़की ढालू जगह पर एक प्रकारका क्षुद्र पेड़ होता है। उसके पत्र क्षुद्र, गोल, ईषद्रक्त, सुन्दर और लम्बित वृन्त द्वारा धृत रहते हैं। जब इन पत्रोंपर कीटादि बैठते, तब एकघण्टे वा अल्पकालके मध्यमें ही सूक्ष्म वस्तु द्वारा स्पृष्ट होने बाद उनके केश केन्द्राभिमुख भीतरी दिक्को झुक पड़ते हैं। अमेरिका देशके भी पेड़ बड़े अनोखे हैं। उनमें कीड़े पकड़ कर खानेका अति सुन्दर कौशल होता है। प्रति पत्रका उपरिभाग एक ग्रन्थि द्वारा पृथक्कृत और किनारा तीक्ष्ण कण्टक द्वारा वेष्टित रहता है। तलपर कितने ही छोटे छोटे कांटे नानादिक् मुड़ जाते हैं। कीड़े पकड़नेके लिये मध्यकी रेखा रक्तवर्ण होती है। यह मनोहर पत्र कीड़ेको बठते ही बन्द होकर मार डालता है। हमारे देशकी पुष्करिणीमें जो झांझ पड़ती, वह भी एक जातीय मांसाशी वा पतङ्गघातक उद्भिद् ठहरती है। उपास नामक एक प्रकारका विषवृक्ष होता है। सुन पड़ता—वह पशुपक्षी और मानवको भी मार सकता है।

उपास देखो।

किसी किसी उद्भिद्में अनुभवकी शक्ति भी अधिक रहती,—जैसे लज्जावती लता, सोला, कमरख प्रभृति है।

उद्भिद्में जो नानाप्रकार वर्ण देख पड़ता, उसका उत्पादक सूर्य है। सूर्यांशु रक्त, पीत और नील तीन अंशसे विशिष्ट है। ये तीनों एकत्र हो इन्द्रधनुषकी तरह नानाप्रकार वर्ण बनाते हैं। उद्भिद्का भी रक्त एवं पीत पिच्छिल, पीत तथा नील हरित् और नील एवं रक्तके सहयोगसे बैंगनी वर्ण होता है। दो एक जातीय उद्भिद् आलोकाभावसे वर्ण विशिष्ट रहते भी संख्यामें अति अल्प हैं। प्रकृत रूपसे सूर्य ही उद्भिद् पर रङ्ग चढ़ाता है।

जगत्में नानाप्रकार उद्भिद् विद्यमान हैं। प्रत्येकसे किसी न किसी विषयमें हमें उपकार पहुंचता है। किन्तु इस स्थलपर उसका परिचय देना अनावश्यक है।

उक्त मत वर्तमान युरोपीय उद्भिद्वेत्तागणका है। अब देखना चाहिये—हमारे इस भारतवर्षमें उद्भिद् विद्याकी चर्चा रही या नहीं? पूर्वतन ऋषि उद्भिद् विद्याको किस प्रकार समझते थे?

प्राचीन कालसे मुनि उद्भिद्को स्थावर जीव जैसा मानते आये हैं।

छान्दोग्योपनिषद्में कहा है—"तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं जीवजमुद्भिज्जमिति।" (६।३।१)

सकल भूतके मध्य तीन प्रकारका बीज है—अण्डज, जीवज और उद्भिज्ज।*

महाभारतमें बताया है—

"भित्त्वा तु पृथिवीं यानि जायन्ते कालपर्ययात्।
उद्भिज्जानि च तान्याहुर्भूतानि द्विजसत्तमाः॥"

कालके पर्यायसे जो पृथिवी भेदकर निकलता, उसका नाम उद्भिज्ज भूत पड़ता है। स्मृतिशास्त्रने उद्भिद् जातिको ओषधि, वनस्पति, गुच्छ, गुल्म, तृण, प्रतान और वल्ली कई श्रेणीमें विभक्त किया है,—

"उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः।
ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः॥
अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः।
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तूभयतः स्मृताः॥
गुच्छगुल्मन्तु विविधं तथैव तृणजातयः।
बीजकाण्डरुहाण्येव प्रताना वल्ल्य एव च॥

* ऐतरेय उपनिषद्के मतसे बीज चार प्रकारका होता है—"बीजानीतराणि चेतराणि चाण्डजानि च जारुजानि च स्वेदजानि चोद्भिज्जानि।" (५।३)

तमसा बहुरूपेण वेष्टिता कर्महेतुना।
अन्तःसंज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः॥" (मनु १।४६-४९)

समुदय उद्‌भिद् ही स्थावर (जीव) हैं। उनमें कितने ही वीज़ और कितने ही रोपित काण्डसे उपजते हैं। जो बहु पुष्पयुक्त रहते और फल पकनेसे मरते, उनका नाम ओषधि रखते हैं (जैसे धान यव प्रभृति)। जो फूल न देते ही फल जाते, वे वनस्पति कहलाते हैं। फूलने या फलनेवाले दोनोका नाम वृक्ष है। गुच्छ (मल्लिकादि) और गुल्म (इंशादि) नानाप्रकारके होते हैं। तृणजाति भी विविध हैं। प्रतान (लौकी, कुम्हड़ा वगैरह) और वल्ली (गुड़ूच्यादि) नानाविध हैं। यह बहुरूप कर्मके फलपर तमोगुणसे आच्छन्न हैं। इनके अन्तर चैतन्य रहता है। इन्हें सुख और दुःख भी समझ पड़ता है।

शार्ङ्गधरने इसप्रकार उद्‌भिद्‌विद्याका परिचय दिया है—

"वनस्पतिद्रुमलतागुल्माः पादपजातयः।
वीजात् काण्डात्तथा कन्दात् तज्जन्म त्रिविधं विदुः॥
तृणान्योषधयश्चैव पृथक् जातिः प्रदिश्यते।
जन्मादिभेदात्तेषां वै पार्थक्यमनुमीयते॥

*   *   *   *

ते वनस्पतयः प्रोक्ता विना पुष्पैः फलन्ति ये।
द्रुमास्तान्ये निगदिताः पुष्पैः सह फलन्ति ये॥
प्रसरन्ति प्रतानैर्यास्ता लताः परिकीर्तिताः।
बहुस्तम्बाऽविटपिनो ये ते गुल्माः प्रकीर्तिताः॥
जम्बु चम्पकपुन्नागनागकेशरचिञ्चिनी।
कपित्थवदरीविल्वकुम्भकारी प्रियङ्गवः॥
पनसाम्रमधुकाद्याः करमर्दाश्च वीजजाः।
ताम्बूली सिन्धुवाराश्च तगराद्याश्च काण्डजाः॥
पाटला दाड़िमी प्लक्षकरवीरवटादयः।
मल्लिकोदुम्बरौ कुन्दो वीजकाण्डोद्भवा मताः॥
कुङ्कुमाद्ररसो नालूकाद्याः कन्दसमुद्भवाः।
एलापत्रोत्पलादिनी वीजकन्दोद्भवानि हि॥"

(वृहत्शार्ङ्गधरकृत पादपविवक्षा-प्रकरण)

पादपजाति* चार प्रकार है—१ वनस्पति, २ द्रुम, ३ लता और ४ गुल्म। कुछ वीज, कुछ काण्ड और कुछ कन्दसे जन्म लेते हैं। तृण और ओषधि नामक तृणान्तर सकल पृथक् जाति जैसे देखाये गये हैं। क्योंकि पादप जातिके साथ उनका जन्म मरणादि नहीं मिलता। जिनमें पुष्प नहीं खिलता अथच फल लगता, उनका नाम वनस्पति है। पुष्प और फल उभय देनेवाले द्रुम हैं। प्रसारित और प्रतानित लता कहलाती हैं। जो स्तम्बयुक्त रहते अर्थात् बड़ी बड़ी शाखा नहीं रखते, उन्हें गुल्म कहते हैं। जम्बु, चम्पक, पुन्नाग, नागकेशर, चिञ्चिनी, कपित्थ, बदरी, विल्व, कुलथी, प्रियङ्गु, पनस, आम्र, मधुक और करमर्द प्रभृति वीजज हैं। पान, सिन्धुवार और तगर प्रभृति काण्डज होते हैं। पाटला, दाड़िम, प्लक्ष, करवीर, वट, मल्लिका, उदुम्बर तथा कुन्द प्रभृति उभयज अर्थात् वीज और काण्ड दोनोसे उत्पन्न हैं। कुङ्कुम, आद्र, रसोन और आलू प्रभृति कन्दज हैं। एलापत्र और उत्पलादि वीज एवं कन्द उभयसे जन्म लेते हैं।

कृषिशास्त्रके अनुसार उद्भिद् इन कई श्रेणीमें बंटे हैं—१ अग्रवीज अर्थात् अग्रभाग कलमकर लगाये जानेवाले (अपर नाम काण्डज भी रख सकते हैं), २ मूलज अर्थात् मूल गाड़नेसे उपजनेवाले (कन्दज), ३ पूर्वयोनि अर्थात् ग्रन्थि गाड़नेसे जन्म लेनेवाले (यह काण्डज जातिके अन्तर्गत हैं), ४ स्कन्धज अर्थात् अन्य वृक्षके तनेसे निकलनेवाले, ५ वीजरुह अर्थात् वीज डालनेसे पनपनेवाले और ६ सम्मूर्छज अर्थात् क्षिति, जल, वायु एवं तेजःके परस्पर समवहित आने और मृत्तिका पकानेसे प्रकाशित होनेवाले।

भारतवर्षीय ऋषिगणने उद्भिद्की जाति, श्रेणी, संज्ञा और लक्षण उक्त संक्षिप्त शब्द द्वारा ही कही है। उन्हें वीज, अङ्कुर, मूलादिकी उत्पत्तिका विषय

* "कुरण्टाद्या अग्रवीजा मूलजास्तूत्पलादयः।
पर्वयोनय इक्ष्वाद्याः स्कन्धजास्सल्लकीमुखाः॥
शाल्यादयो वीजरुहाः सम्मूर्च्छजास्तृणादयः।
स्युर्वनस्पतिकायस्य षडेता मूलजातयः॥" (हेम ४।२६६-२६७)

अङ्कुर—'अधिकेन व्यवदेशा भवन्ति। तथाहि लोके क्षितिजलपवनसमवधानजन्माप्यङ्कुरः क्षित्यङ्कुर इत्युच्यते।' (वाचस्पतिमिश्र)

वर्तमान वैज्ञानिकोंकी तरह अवगत था। आयुर्वेदोक्त द्रव्यगुण देखनेसे सविशेष जान सकते—किसी किसी विषयमें पाश्चात्य तत्त्वविदोंकी अपेक्षा वे समधिक समझते थे।

"तत्र सिक्ता जलैर्भूमिरन्तरूष्मविपाचिता।
वायुना व्यूह्यमाना तु बीजत्वं प्रतिपाद्यते॥
तथा व्यक्तानि बीजानि संसिक्तान्यम्भसा पुनः।
उच्छूनत्वं मृदुत्वञ्च मूलभावं प्रयाति च॥
तन्मूलादङ्कुरोत्पत्तिरङ्कुरात् पर्णसम्भवः।
पर्णात्मकं ततः काण्डं काण्डाच्च प्रसवं पुनः॥" (राघवभट्ट)

जलसिक्त भूमि अभ्यन्तरस्थ उष्मा द्वारा पच्यमान होती है। फिर परिपाकजनित विकारविशेष जब वायुद्वारा पकड़ा या रगड़ा, तब वह उद्भिद्के जन्मका बीज अर्थात् उपादन-कारण समझा जाता है। इसी अव्यक्त बीजसे प्ररोह निकलता है। कभी कभी प्ररोहसे व्यक्त बीज फूट पड़ता है। व्यक्त बीज सकल जलसे आर्द्र होनेपर प्रथम फूलने और मृदु तथा कोमल होने लगता है। क्रमसे वही भविष्यद् अङ्कुरका मूलस्वरूप बन जाता है। मूलसे अङ्कुर, अङ्कुरसे पत्रका अवयव, पत्रके अवयवसे आत्मा वा देहभाग (काण्ड) और देहभागसे प्रसव (पुष्पफलादि) उत्पन्न होता है।

सिवा इसके प्राचीन शास्त्रमें त्वक्सार, अन्तःसार, निःसार प्रभृति शब्दोंका उल्लेख रहनेसे सहज ही मानना पड़ता—ऋषिगणको उद्भिद्का तत्त्व अवश्य अवगत था। कृषिपराशर, द्रव्यगुण प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें उद्भिद्विद्याका सूक्ष्मतत्त्व विद्यमान है।

निम्नलिखित वचनसे भी उद्भिद्विद्याका प्राचीन तत्त्व प्रदर्शित होता है—

"मूलत्वक्सारनिर्यासनालस्वरसपल्लवाः।
क्षीराः क्षीरं फलं पुष्पं भस्म तैलानि कण्टकाः॥
पत्राणि शुङ्गाः कन्दाश्च प्ररोहश्चौद्भिदो गणः॥" (चरक)

उद्भिन्न (सं॰ त्रि॰) उत्-भिद्-क्त। १ उत्पन्न, पैदा। २ दलित, तोड़ा हुआ। ३ उत्थित, निकला हुआ।

उद्भू (सं॰ त्रि॰) स्थायी, पायदार।

उद्भूत (सं॰ त्रि॰) १ उत्पन्न, पैदा। २ उच्च, ऊंचा। ३ दृश्य, देख पड़नेवाला।

उद्भूतरूप (सं॰ क्ली॰) दृश्य आकार, देख पड़नेवाली सूरत।

"उद्भूतरूपं नयनस्य गोचरं द्रव्याणि तद्वन्ति पृथक्त्वसंख्ये।
विभागसंयोगपरापरत्वं स्नेहद्रवत्वं परिमाणयुक्तम्॥
क्रियाजातीयोग्यवृत्ती समवायञ्च तादृशम्।
गृह्णाति चक्षुःसम्बन्धादालोकोद्भूतरूपयोः॥" (भाषापरिच्छेद)

उद्भूति (सं॰ स्त्री॰) उत्-भू-क्तिन्। १ उत्पत्ति, पैदायश। २ उत्तम विभूति, अच्छी हैसियत। ३ उन्नति, तरक्की, ऊंचाई।

उद्भेद (सं॰ पु॰) उत्-भिद्-घञ्। १ भेदके साथ प्रकाश, फोड़कर निकास।

"पुष्पोद्भेदं सह किसलयैर्भूषणानां विशेषात्।" (मेघदूत)

२ उदय, उठान। ३ स्फूर्ति, शिगुफ्तगी। ४ आविष्कार, ईजाद। ५ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। ६ मिलन, मिलाप।

"गङ्गोद्भेदं समासाद्य त्रिरात्रोपोषितो नरः।" (भारत-वन ८४ अ॰)

७ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें चातुर्यके साथ गुप्त किये हुये विषयका किसी कारण वश प्रकाशित होना देखाते हैं। ८ अङ्कुर, किल्ला।

उद्भेदन (सं॰ क्ली॰) उत्-भिद् भावे ल्युट्। १ प्रकाशन, खोलाई। २ निर्झर, झरना।

उद्भ्यस (वै॰ त्रि॰) जो ऊंचा कर रहा हो।

"चतुर्दंष्ट्रां छ्यावदतः कुम्भमुष्कां असृङ्मुखान्। स्वभ्यसा ये चोद्भ्यसाः।" (अथर्व ११।९।१७)

उद्भ्रम (सं॰ पु॰) उत्-भ्रम करणे घञ्, नोदात्तोपदेशेति न वृद्धिः। १ उद्वेग, उभार। २ बुद्धिलोप, बेहोशी। ३ व्याकुलता, बेचैनी। ४ ऊर्ध्वभ्रमण, चक्कर। ५ शिवगण विशेष।

उद्भ्रमण (सं॰ क्ली॰) इतस्ततः गमन, चलफिर।

उद्भ्रान्त (सं॰ त्रि॰) उत्-भ्रम-क्त। १ व्याकुल, बेचैन। २ भ्रान्तियुक्त, भूलाभटका। ३ हतबुद्धि, भौचका। ४ आघूर्णित, चक्कर लगाता हुआ। ५ व्यस्त, लगा हुआ। ६ उच्छृङ्खल, बेक़ायदा। (पु॰) ७ खड्गादिका सञ्चालन, पटेबाजी, तलवारकी फटकार। इसमें हस्त ऊपरको उठा खड्ग घुमाते और शत्रुके आघातको बचाते हैं।

उद्भ्रान्तक (सं॰ क्ली॰) वायुमें उत्थान, हवामें उठान।

उद्मन् (सं० क्लो०) महोर्मि, बहाव।

उद्य (सं० त्रि०) वद-क्यप्। १ कथनीय, कहे जाने काबिल। (पु०) २ नद, दरया।

उद्यत् (सं० त्रि०) उत्-इन्-शतृ। १ गमनशील, चलनेवाला। २ उदयशील, निकलने या उठनेवाला। (पु०) ३ नक्षत्र। ४ किसी पर्वतका नाम।

उद्यत (सं० त्रि०) उत्-यम-क्त। १ उद्गूर्ण, उठाया हुआ। २ उत्तोलित, उछाला हुआ। ३ उद्यमित, काम करनेवाला। ४ तत्पर, मुस्तैद। ५ प्रवृत्त, लगा हुआ। (क्लो०) भावे क्त। ६ उद्यम, काम। ७ अध्याय, बाब। ८ तालभेद।

उद्यतकार्मुक (सं० त्रि०) उत्तोलित धनुःयुक्त, कमान् खींचे हुआ।

उद्यतगद (सं० त्रि०) उद्गर्ण गदयुक्त, गुर्ज ताने हुआ।

उद्यतशूल (सं० त्रि०) उत्थापित शूलयुक्त, भाला उठाये हुआ।

उद्यतस्रुक् (सं० त्रि०) उदकदान करनेको दर्वी उठानेवाला।

उद्यतायुध (सं० त्रि०) अस्त्र उठाये हुआ, जो हथियार ताने हो।

उद्यति (सं० स्त्री०) उत्-यम भावे क्तिन्। १ उद्यम, कोशिश। २ उत्थापन, उठाव।

उद्यन्तृ (सं० त्रि०) उन्नायक, उठाने या तरक्की पहुंचानेवाला।

उद्यम (सं० पु०) उत्-यम-घञ्, न वृद्धिः। १ प्रयास, कोशिश। २ उद्योग, काम। ३ उत्तोलन, उठाव। ४ उत्साह, हौसला।

उद्यमन (सं० क्लो०) उत्-यम-णिच्-ल्युट्। १ उत्क्षेपण, उछाल। २ उत्तोलन, चढ़ाव।

उद्यमभङ्ग (सं० पु०) १ प्रयासका नाश, कोशिशका बिगाड़। २ विराम, ठहराव।

उद्यमभृत् (सं० त्रि०) उद्यम करनेवाला, जो कोशिश लगा रहा हो।

उद्यमित (सं० त्रि०) उत्-यम-णिच्-क्त। १ उत्तोलित, उठाया हुआ। २ यत्नसे प्रेरित, तदबीरसे लगाया हुआ।

उद्यमिन् (सं० त्रि०) तत्पर, मुस्तैद, जो कोशिश कर रहा हो।

उद्यान (सं० पु० क्लो०) उत्-या आधारे ल्युट्। अर्धर्चाः पुंसि च। पा २।४।३१। १ आक्रीड़, बाग। २ निःसरण, निकास। ३ प्रयोजन, मतलब। ४ उद्यम, रोजगार, कामकाज।

उद्यानक (सं० क्लो०) आराम, बाग।

उद्यानपाल (सं० पु०) १ उद्यानरक्षक, माली, बागका मुहाफ़िज़। २ उद्यानस्वामी, बागका मालिक।

उद्यानपालक, उद्यानपाल देखो।

उद्यानरक्षक, उद्यानपाल देखो।

उद्यापन (सं० पु० क्लो०) उत्-या-णिच्-ल्युट्। १ आरम्भ, शुरू। २ व्रतसमापन, व्रत पूरा करनेका काम।

उद्यापित (सं० त्रि०) पूर्णीकृत, पूरा किया हुआ।

उद्याम (सं० पु०) उद्यम्यतेऽनेन, उत्-यम करणे घञ् वा वृद्धिः। १ उत्तोलन, सीधा खड़ा करनेका काम। २ रज्जु, रस्सी।

उद्याव (सं० पु०) उत्-यु उपपदे घञ्। उदिश्रयति-यौतिपूद्रुवः। पा ३।३।४९। ऊर्ध्व मिश्रण, मिलावट, जोड़जाड़।

उद्यास (वै० पु०) उत्-यस-घञ्। १ उद्यमकर्ता, कोशिश करनेवाला। संज्ञायां घञ्। २ देवताभेद। (वाजसनेयसंहिता ३९।११)

उद्युक्त (सं० त्रि०) तत्पर, मुस्तैद, ज़ोरसे काम करनेवाला।

उद्योग (सं० पु०-क्लो०) उत्-युज-घञ्। १ चेष्टा, कोशिश। "जातिरूपवयोवृत्तिविद्यादिभिरहङ्कृतः। शब्दादि विषयोद्योगं कर्मणा मनसा गिरा॥" (याज्ञवल्क्य ३।१५१.) २ आयोजन, तैयारी। ३ महाभारतका एक पर्व।

उद्योगसमर्थ (सं० त्रि०) चेष्टा करने योग्य, जो कोशिश लगा सकता हो।

उद्योगिन् (सं० त्रि०) उत्-युज्-घिणुन्। १ उद्योगयुक्त, कोशिश करनेवाला। २ उत्साही, हौसलेमन्द।

उद्योजक (सं० त्रि०) उत्-युज्-ण्वुल्। प्रवर्तक, काममें लगा देनेवाला।

उद्योत, उदद्योत देखो।

उद्र (सं० पु०) उन्द क्लेदने रक्। १ जलचर, पानीमें रहनेवाला जानवर। २ उदबिलाव, जदबिलाव।

उद्रङ्ग, उद्रङ्ग देखो।

उद्रङ्ग (सं० पु०) १ नगर प्रतिमार्ग, शहर जानेकी राह। २ हरिश्चन्द्रपुर। (त्रिकाण्डशेष १।२।२४)

उद्रथ (सं० पु०) उद्गतो रथो यस्मात्। १ रथकील, गाड़ीकी कील। २ ताम्रचूड़ पक्षी, मुर्गा। ३ वृक्षविशेष, कुकुरमुत्ता।

उद्रपारक (सं० पु०) नागविशेष। (भारत-आदि ५७ अ०)

उद्राव (सं० पु०) उत्-रु-घञ्। १ उच्चध्वनि, बुलन्द शोर। २ पलायन, भागाभागी।

उद्राह्व (सं० पु०) रक्तचित्रक, लाल चीत।

उद्रिक्त (सं० त्रि०) उत्-रिच-क्त। १ स्फुट, फटा हुआ। २ स्पष्ट, साफ़। ३ चिह्नित, निशानदार।

उद्रिक्तचित्तता (सं० स्त्री०) १ पानात्ययरोग, शराबखोरीकी बीमारी। २ मत्तता, मदहोशी।

उद्रिन् (सं० त्रि०) जलयुक्त, पानीसे भरा।

उद्रुज (सं० त्रि०) भङ्ग, तोड़ ताड़। २ उन्मूलन, उखाड़।

उद्रेक (सं० पु०) उत्-रिच-घञ्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ अतिशय, ज़ियादती। ३ उपक्रम, शुरू। ४ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें कई वस्तु एकके सम्मुख तुच्छ देखाये जाते हैं। ५ रजोगुण। ६ महानिम्ब।

उद्रेकभङ्ग (सं० पु०) आदिमें ही किसी द्रव्यका विषमीकरण, शुरूसे ही किसी चीज़का रङ्ग मार देना।

उद्रेका (सं० स्त्री०) महानिम्ब।

उद्रेकिन् (सं० त्रि०) अधिक, ज्यादा, भरा हुआ।

उद्रोधन (सं० क्ली०) उदय, उत्पत्ति, निकास, पैदायश।

उद्वंशीय (सं० क्ली०) साममेद। (ताण्ड्यमहाब्राह्मण)

उद्वत् (सं० स्त्री०) उच्चता, पर्वत, ऊंचाई, पहाड़।

उद्वत्सर (सं० पु०) १ वत्सर, साल। २ उदावत्सर।

उद्वपन (सं० क्ली०) उत्-वप्-ल्युट्। १ दान, बख्शिश। २ उत्तोलन, उठाव। ३ उत्पाटन, उखाड़।

उद्वमत् (सं० त्रि०) वमन करते हुआ, जो उगल रहा हो।

उद्वमन (सं० क्ली०) उत्-वम्-ल्युट्। उद्गिरण, वान्ति, उलटी, कै।

उद्वयस् (वै० त्रि०) उद्गतं वयो यस्मात्, प्रादि बहुव्री०। अन्नोत्पादक, बलवर्धक, अनाज या ताक़त पैदा करनेवाला। 'उद्गतं वयोऽन्नं यस्मात् वायोः स उद्वयाः वायुः वायुनैव हि धान्यानि निष्पाद्यन्ते।' (वाजसनेयभाष्ये महीधर)

उद्वर्त (सं० पु०) उत्-वृत-घञ्। १ अतिरिक्त द्रव्य, बची हुई चीज़। २ आधिक्य, बढ़ती। (त्रि०) ३ अधिक, ज्यादा। ४ उद्वृत्त, बचा हुआ।

उद्वर्तक (सं० त्रि०) १ उत्थान-कारक, बढ़ानेवाला। २ शरीर शुद्ध करनेवाला, जो जिस्मको मलता या धोता हो। (पु०) ३ गणिताङ्क विशेष, हिसाबकी एक अदद। जो अङ्क क्रियाके अर्थ रखा, वही उद्वर्तक कहा जाता है।

उद्वर्तन (सं० क्ली०) उत्-वृत-णिच् करणे ल्युट्। १ उत्पतन, चढ़ाव। २ घर्षण, मलाई। ३ विलेपन, चुपड़ाई। उद्वर्तन वात, कफ, मेद एवं अनिलको हटाकर अङ्गको ठहराता और त्वक्को प्रसाद पहुंचाता है। हरिद्रादिसे उद्वर्तन करने पर कण्डू, वैवर्ण्य और रौक्ष्य दूर होता है। इसी प्रकार तिल द्वारा उद्वर्तन कण्डू, रौक्ष्य और त्वक्के दोषका नाशन है। (राजनिघण्टु) ५ शरीर निर्मलीकरण गन्ध द्रव्यादि, जिस्म साफ करनेवाली खुशबूदार चीज़, उबटन। ६ द्रव्य द्वारा स्नेहादि अपहारक कार्य, चीज़से तेल वग़ैरह छोड़ानेका काम।

"यवाश्वगन्धायष्ट्याह्वैस्तिलैश्चोद्वर्तनं हितम्।
शतावर्यश्वगन्धाभ्यां पयस्यैरण्डजीवनैः॥" (सुश्रुत)

७ उल्लुण्ठन, बातका बनाव। ८ सेवन, इस्तेमाल। ९ अङ्कुरोत्पत्ति, किल्लोंका फूटना। १० धातुका आकर्षण, तारकशी। ११ पेषण, कुटाई-पिसाई। १२ असद्वृत्त, बुरा चालचलन।

उद्वर्तनीय (सं० त्रि०) उद्वर्तन-छ। मार्जनीय, लगाने लायक।

उद्वर्तित (सं० त्रि०) १ उन्नत, ऊंचा किया हुआ। २ उत्पन्न, आकर्षित, जो निकला या खिंचा हो। ३ सुगन्धीकृत, सुवत्तर किया हुआ, जो महकाया गया हो।

उद्वर्धन (सं० क्लो०) उत्-वृध्-ल्युट्। १ अन्तर्हास, भीतरी हंसी। (त्रिकाण्डशेष २।२।८७) २ वृद्धतासाधन, बढ़तीका काम। (त्रि०) ३ वृद्धतासाधक, बढ़ा देनेवाला।

उद्वर्हण (सं० क्लो०) उत्-वर्ह-ल्युट्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ उत्पाटन, नोचखसोट। ३ उद्धरण, उठाव, बचाव।

उद्वर्हित (सं० पु०) उत्-वर्ह-क्त। उद्धृत, उठाया हुआ।

उद्वह (सं० पु०) उदूर्ध्वं वहति नयति, उत्-वह-अच्। १ पुत्र, बेटा। २ सप्तविध वायुके अन्तर्गत वायुविशेष। यह प्रवहवायु पर रहता है—

"आवहः प्रवहश्चैव विवहश्च समीरणः।
परावहः संवहश्च उद्वहश्च महाबलः॥
तथा परिवहः श्रीमानुत्पातभयशंसिनः।
इत्येते क्षुभिताः सप्त मारुता गगनेचराः॥" (हरिवंश २६६ अ०)

आवह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उद्वह और परिवह सात उत्पातसूचक क्षुभितवायु हैं। ३ उदानवायु, गिज़ा पहुंचानेवाली हवा। ४ विहार, खेलकूद। ५ वर, दूल्हा। ६ गायक, गानेवाला। (त्रि०) ७ अंशकारक, हिस्सा करनेवाला। ८ प्रधान, खास। ९ वहन करनेवाला, जो ले जाता हो।

उद्वहत् (सं० त्रि०) १ आश्रयदाता, जो सहारा लगा रहा हो। २ सम्पन्न, रखनेवाला।

उद्वहन (सं० क्लो०) उत्-वह-ल्युट्। १ स्कन्धके सहारे वहन, कन्धेपर बोझका ढोना। २ विवाह, शादी। ३ आनयन, लवाई। ४ आकर्षण, खिंचाव। ५ आरोहण, चढ़ाई। ६ अधिकार, क़ब्ज़ेदारी।

उद्वहा (सं० स्त्री०) उत्-वह-अच्-टाप्। कन्या, बेटी।

उद्वाचन (सं० क्लो०) नाद, चीख, पुकार।

उद्वादन (वै० क्लो०) उत्-वद-णिच्-ल्युट्। १ ऊंचे स्वरसे आवेदन, बुलन्द आवाज़में फरियाद। "अथैक उद्वदति दीक्षितोऽयं ब्राह्मणो दीक्षितोऽयं ब्राह्मण इति निवेदितमेवैनमेतत् सन्तं देवेभ्यो निवेदयत्ययं महावीर्यो यो यज्ञं प्रापदित्ययं युष्माकैकोऽभूत्तं गोपायतेत्येवैतदाह त्रिष्कृत्वाह।" (शतपथब्राह्मण ३।२।१।३९) २ उच्चवाद्यकरण, ज़ोरसे बाजेका बजाना।

उद्वान् (वै० त्रि०) १ उत्कर्षयुक्त, शानदार। २ उन्नत, ऊंचा। "उद्वत्स्वस्मा अकृणोतना।" (ऋक् १।१६१।११)
'उद्वत्सून्नतेषु।' (सायण)

उद्वान (सं० पु०) उत्-वन संभक्तौ घञ्। १ उद्यम, रोज़गार। २ चुल्ली, चूल्हा। ३ उद्वमन, उगाल, छांट। (त्रि०) ४ उद्वमित, उगला हुआ।

उद्वान्त (सं० त्रि०) उत्-वम-क्त। १ उद्वमित, उगला हुआ। (पु०) उद्गतं वान्तं मदो यस्मात्। २ निर्मदगज, जो हाथी मतवाला न हो।

उद्वाप (सं० पु०) उत्-वप भावे घञ्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ उद्धरण, निकास। ३ मुण्डन, मुड़ाई।

उद्वाय (सं० पु०) उत्-वा-घञ्। १ उद्वासन, निकास। २ उपशम, दबाव।

"उद्वायति उद्वासनं प्राप्नोत्युपशाम्यति।" (छान्दोग्यभाष्ये शङ्कराचार्य)

उद्वाष्प (सं० त्रि०) अश्रु बहानेवाला, जो रो रहा हो।

उद्वास (सं० पु०) उत्-वस-घञ्। १ स्वस्थानको अतिक्रम कर अस्त होनेका काम, अपनी जगहको लांघ कर गुरूब होनेकी बात। (त्रि०) २ वस्त्र उतारे हुआ, जो कपड़े खोल चुका हो।

उद्वासन (सं० क्लो०) उत्-वस-णिच्-ल्युट्। १ संस्कारभेद। इसमें यज्ञसे पूर्व आसन बिछाया, यज्ञपात्र सजाया और घृतादि भराया जाता है। २ मारण, क़त्ल। ३ विसर्जन, छोड़ाई। ४ निष्कासन, निकलाई।

उद्वास्य (सं० अव्य०) १ विसर्जन करके, छोड़कर। (त्रि०) उत्-वस-णिच्-ण्यत्। २ उद्धरणीय, उठाने क़ाबिल। ३ उत्तोलनयोग्य, चढ़ाने लायक़। ४ यज्ञीय पशुके वधसे सम्बन्ध रखनेवाला।

उद्वाह (सं० पु०) उत्-वह-घञ्। विवाह, शादी।
विवाह देखो।

उद्वाहकर्मन् (सं० त्रि०) विवाहसंस्कार, शादीका काम।

उद्वाहन (सं० क्लो०) उत्-वह-णिच्-ल्युट्। १ विवाह, शादी। २ द्विवारकर्षितक्षेत्र, दो मरतबा जोता हुआ खेत। ३ उद्वर्तन, उठाव। ४ उद्धारसाधन, छोड़ानेका काम। ५ चिन्ता, फिक्र।

उद्वाहनी (सं० स्त्री०) उद्वाहन-ङीप्। १ वराटक, कौड़ी। २ रज्जु, रस्सी।

उद्दाहिक (सं० त्रि०) उद्दाहः प्रयोजनमस्य, ठक्। विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताल्लिक।

"नोद्दाहिकेषु मन्त्रेषु विधवावेदनं क्वचित्।" (मनु ८।६५)

उद्दाहित (सं० त्रि०) उत्-वह-णिच्-क्त। १ विवाहित, शादी किये हुआ। आगमके मतसे कलिकालमें आगमको छोड़ अपर शास्त्रके अनुसार उद्दाहित होनेवाली नारी गर्हित है। २ उत्तोलित, उखाड़ा हुआ।

उद्दाहिन् (सं० त्रि०) १ उत्तोलन करनेवाला, जो उठाता हो। २ विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताल्लिक।

उद्दाहिनी (सं० त्रि०) उद्दाह-इनि-ङीप्। रज्जु, रस्सी।

उद्दाहु (सं० त्रि०) ऊर्ध्ववाहु, हाथ उठाये हुआ।

उद्दाहुलक, उद्दाहु देखो।

उद्विग्न (सं० त्रि०) उत्-विज्-क्त, श्वादित इति नेट्। १ चिन्तित, फ़िक्रमन्द।

"नोद्विग्नश्चरते धर्मं नोद्विग्नश्चरते क्रियाम्।" (भारत आदि)

२ व्याकुलित, बेचैन। ३ क्षुभित, भौचक्का।

उद्विग्नचित्त (सं० त्रि०) दुःखित, अफ़सुर्दा।

उद्विजमान (सं० त्रि०) भयभीत, घबराया हुआ।

उद्बिड़ाल (सं० पु०) भूचर और जलचर जन्तुविशेष, ज़मीन और पानीमें रहनेवाला एक जानवर। (Lutra) संस्कृत ग्रन्थकारोंने इसके जलविड़ाल, जलमार्जार, जलनकुल इत्यादि नाम लिखे हैं।

वैदिक कालमें इस जन्तुको 'उद्र' कहते थे। शुक्ल यजुर्वेदमें लिखा है—

"सुपर्णस्तो गन्धर्वाणामपामुद्रोमानाङ्ग्दषो।" (२४।३७)

भिन्न भिन्न देशके शब्दोंसे इस जन्तुवाचक 'उद्र' नामका समधिक ऐक्य लक्षित है। यथा—वैदिक 'उद्र', हिन्दी 'ऊद', डेन्स 'उद्दर' वा 'ओद्दर', ओलन्दाज एवं स्विस तथा जर्मन 'ओत्तर', अंगरेजी 'ओट्टर', फ्रान्सीसी 'लुटर', इटलीय 'लोद्र' और स्पेनीय, लाटिन प्रभृति भाषाओंमें 'लुट्रा' कहते हैं।*

उद्बिड़ाल पृथिवीके प्रायः अधिकांश देशोंमें रहता है। तन्मध्य भारतवर्षीय उत्तर हिमगिरिसे दक्षिण कुमारी अन्तरीप पर्यन्त सर्वस्थानके नद, उपनद और ह्रदमें इसको देखते हैं। इसको देहका सङ्गठन सकल जन्तुओंसे भिन्न है। इसका अङ्ग चपटा और अलग अलग रहता है। प्रत्यङ्ग सुदृढ़ होते भी क्षुद्र होते हैं। पैरकी एड़ी अनाच्छादित और तलभाग जालाकारसे संयत है। गात्रको लोमावली निविड़ और क्षुद्र होती है। तन्मध्य उपरिभागके लोम कोमल और निम्नभागके अति चिक्कण रहते हैं। चक्षुके पपोटे किञ्चित् सूक्ष्म त्वक्‌से निर्मित और अधिकतर पक्षीजातिजैसे देख पड़ते हैं। दन्त दृढ़ एवं तीक्ष्ण होते हैं।

भारतवर्षमें तीन-चार प्रकारका उद्बिड़ाल मिलता है। परन्तु उन सबमें 'ऊद' प्राय अधिक देख पड़ता है।

ऊदविलावके बाल बादामी या धूसर होते हैं। फिर किसीके श्वेत और किसीके पीत वर्णका धब्बा भी पड़ा रहता है। नीचेकी ओर लोम पीताभ अथवा रक्ताभ श्वेत लगते हैं। मुख कितना ही साफ़ होता है। किसीके कर्णदेशमें नारङ्गीके रङ्गजैसी आभा झलकती है। फिर किसीका समस्त देह पांशुवर्ण रहता है। यह पुच्छ समेत प्रायः तीन साढ़े तीन हाथ तक लम्बा बैठता है। वासस्थान अत्युच्च पार्वत्य निर्झरके निकट प्रस्तर अथवा नदनदीतीर १०।१२ हस्त मृत्तिकाके नीचे गर्तमें होता है। यह प्रधानतः मत्स्य खाकर जीता; मछली न मिलनेपर कीड़े, मकोड़े या छोटे चिड़े के पकड़नेसे भी काम चला लेता है। ऊदविलाव पालनेसे हिल जाता है। कितने ही धीवर इसे पालते हैं। जब वे जाल लगाते, तब ऊदविलाव आगे पहुंचकर मछलियोंको उसके पास खदेर लाते हैं। इससे मछली पकड़नेमें सुभीता पड़ता है। सुननेमें आया—किसी आदमीने एक ऊदविलाव पाला था। वह कुत्तेकी तरह प्रभुकी आज्ञा मानता और जलाशयके निकट इङ्गित करते ही मछली पकड़ लाता। वयस बढ़ने पर जब कुछ उसका पराक्रम बढ़ा, तब ग्रामके मध्य किसी घरमें बहुत मछली देखने पर निकालनेका अभ्यास पड़ा। काट खानेके भयसे गृहस्थ कुछ बोल न सकते थे। इस वर्त्तावसे प्रभु क्रमशः अत्यन्त विरक्त हो एकदिन

* मरहठे जलमाञ्जार, तैलङ्गी नीरकुक्क अर्थात् पानीका कुत्ता, कनाड़ी नीरनाइ और हिन्दुस्तानी ऊदविलाव कहते हैं।

उसे झीलोंमें डाल ग्रामसे प्राय: १०।१२ कोस दूर छोड़ आये। परन्तु अपने घर वापस पहुंचनेके कुछ काल बाद ही उन्होंने देखा—प्रभुभक्त उद्बिड़ाल सामने खड़े पूछ हिला रहा है।

भूटान और आसामके उत्तर पार्वतीय प्रदेशोंमें एक प्रकारका उद्बिडाल रहता है। उसका देह मटमैला और मुख, मस्तक तथा कण्ठदेश सादा होता है। बीच बीच हरित् वा हरिताभ पिङ्गल वर्णके विन्दु पड़े रहते हैं। शावकका ईषत् पिङ्गल और वयस्था स्त्री जातिका निम्न भाग प्राय: स्वच्छ रहता है। देहका पौने दो और लाङ्गुलका आयतन एक हाथसे अधिक बैठता है। इस जातिके दो-एक उद्बिड़ाल कभी कभी वङ्गदेशमें भी देख पड़ते हैं।

हिमालयके हिमप्रधान स्थानोंमें अन्य जातीय उद्बिड़ाल होता है। इसके लोम वृहत्, अपरिष्कार और पिङ्गलाभ कृष्णवर्ण लगते हैं। निम्न भाग लाङ्गुलके अन्तप्रदेश पर्यन्त श्वेत रहता, जिसमें धूसर और पिङ्गलाभ-मिश्रित वर्ण झलकता है। देहका दो और लाङ्गुलका आयतन प्राय: डेढ़ हाथ पड़ता है।

युरोपमें लुट्रा वलगेरिस (Lutra vulgaris) जातीय उद्बिडाल होता है। किन्तु अमेरिकाका उद्बिड़ाल उपरोक्त सकलसे वृहत् और देखनेमें अनेकांश विवर सदृश होता है। लोम अधिक मूल्यवान् रहते और भिन्न भिन्न ऋतुमें रङ्ग बदलते हैं—ग्रीष्म कालमें क्षुद्र एवं कृष्ण तथा शीतकालमें मनोहर रक्ताभ पिङ्गल वर्ण लगते हैं। फिर भी वह विवरके लोम सदृश वृहत् नहीं। प्रतिवर्ष हज़ारों इस जातिके उद्बिड़ाल अमेरिकासे इङ्गलेण्डको भेजे जाते हैं।

प्रशान्त महासागरके उत्तरांश एवं उत्तर अमेरिकाके निकटस्थ सागरसमूहमें 'सामुद्रिक उद्बिड़ाल' मिलता है। लोम अपर सकल जातिकी अपेक्षा समधिक चिक्कण और अधिक मूल्यवान् हैं। सागरके मत्स्यपर जीवन चलता है। प्राय: सवा दो सौ वर्ष पहले रूसी उसे पकड़ते और बहुमूल्य लोम बेचते थे। उसमें उनको अधिक लाभ होता था। जब युरोपीयोंको इसका संवाद मिला, तब उन्होंने भी चारो दिक् जहाज़ छोड़ उद्बिड़ाल पकड़नेका उद्योग किया। भिन्न भिन्न जातियोंका इस व्यवसाय पर आग्रह आ जानेसे लोमका मूल्य अधिक घट गया। ईष्ट इण्डिया कम्पनीके लोग इस लोमको काण्टन नगर भेजते थे। पूर्वमें इस देशके असभ्य व्यक्ति उद्बिड़ाल खाते थे। रोमन काथलिकोंके धर्मग्रन्थोंमें भिन्न भिन्नके भक्षणका निषेध पड़ते भी इसका मांस नहीं छूटा। वे आग्रहके साथ इसे खाते थे। इसका मांस उग्र और मत्स्यवत् स्वादु होता है।

उद्विवर्हण (सं० क्लो०) उत्-वि-वृह-ल्युट्। उद्धारकरण, कुड़ा देनेका काम।

उद्वीक्षण (सं० क्लो०) उत्-वि-ईक्ष भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्व दृष्टि, उठी हुई नज़र। करणे ल्युट्। २ दर्शन, नेत्र, नज़ारा, आंख।

उद्वीक्ष्य (सं० अव्य०) १ ऊर्ध्व दृष्टि डालके, ऊपर देखकर। (त्रि०) २ देखनेके योग्य।

उद्वीत (सं० त्रि०) उत्-वि-उ-क्त। १ उन्नत, उठा हुआ। २ प्लावित, डबा हुआ। २ उच्छ्लित, उछला हुआ।

उद्वृंहण (सं० क्लो०) आधिक्य, बढ़ती।

उद्वृत्त (सं० त्रि०) उत्-वृत्-क्त। १ उत्क्षिप्त, ऊपर फेंका हुआ। २ उत्तोलित, उठाया हुआ। ३ जात, पैदा। ४ क्षुभित, घबराया हुआ। ५ अतिरिक्त, छोड़ा हुआ। ६ उद्वान्त, उगला हुआ। ७ भुक्तवर्जित, खानेसे बचा हुआ। ८ दुर्वृत्त, बदचलन।

उद्वेग (सं० पु०) उत्-विज् भावे घञ्। १ चिन्ता, फ़िक्र, चाह। २ भय, डर। ३ उद्भ्रम, ताज्जुब। ४ चमत्कार, रौनक़। ५ विरहजन्य दुःख, जुदाईकी तकलीफ़। ६ उद्गमन, उभार। (क्लो०) ७ गुवाकफल, सुपारी। (त्रि०) ८ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। ९ स्थायी, क़ायम। १० उद्गमनशील, उभरनेवाला। ११ ऊर्ध्ववाहु, हाथ उठाये हुआ।

उद्वेगिन् (सं० त्रि०) १ चिन्ताकारक, फ़िक्र बढ़ानेवाला। २ चिन्तित, फ़िक्रमन्द।

उद्वेजक (सं० त्रि०) दुःखदायी, तकलीफ़ देनेवाला।

उद्वेजन (सं० क्लो०) उत्-विज् भावे ल्युट्। १ उद्वेग, क्षोभ। (मनु ८।३५१) २ भय, डर। ३ कम्पन, कंपकंपी।

४ कष्ट, तकलीफ़। ५ पश्चात्ताप, पछताव। (त्रि०) ६ भयप्रदर्शक, डरावना।

"स्थानप्राप्तिविहीना हि गीतवत् कुलकन्यका।
उद्वेजनो परस्यापि श्रूयमाणैव कर्णयोः॥" (कथासरित्सागर २४।२५)

उद्वेजनीय (सं० त्रि०) भयप्रदर्शक, कंपा देनेवाला।

उद्वेजित (सं० त्रि०) उत्-विज्-णिच्-क्त। १ क्लेशित, अफ़सुर्दा। २ भयाकुल, घबराया हुआ।

उद्वेदि (सं० त्रि०) उन्नता वेदि यत्र। उन्नत वेदियुक्त, ऊंची वेदीवाला।

उद्वेय (सं० त्रि०) वायुके साथ मिश्रणयोग, जो हवामें मिलाया जा सकता हो।

उद्वेल (सं० त्रि०) उत्क्रान्तो वेलायाम्, अत्या० समा०। १ अपने तीरको प्लावित करनेवाला, जो अपना किनारा डुबा रहा हो। २ सीमातिक्रान्त, हदको लांघ जानेवाला। ३ कुलातिक्रान्त, अपने खान्दानकी हद छोड़ देनेवाला। "असमयोद्वेलजलराशिजलैः।" (कथासरित्०)

उद्वेलित, उद्वेल देखो।

उद्वेष्ट (सं० पु०) १ चतुर्दिक् वेष्टन, घेराई। २ नगर-वेष्टन, शहरको घेर लेनेका काम।

उद्वेष्टन (सं० क्ली०) उत्-वेष्ट-ल्युट्। १ हस्तपादका आवेष्टन, हाथपैरकी बंधाई। २ उन्मोचन, खोलाई। ३ आलिङ्गन, हमागोशी, लिपटाई।

"हृदयोद्वेष्टनं तन्द्रा लालास्रुतिररोचकः।" (सुश्रुत)

उद्वेष्टनीय (सं० त्रि०) उन्मोचनयोग्य, खोल देनेके क़ाबिल।

उद्वेष्टित (सं० त्रि०) चतुर्दिक् आवृत, चारो ओरसे घिरा हुआ।

उद्वोढ़ (सं० पु०) उत्-वह्-तृच्। वर, शौहर, दूल्हा।

"उद्वोढ़ापि भवेत् पापी संसर्गात् कुलनायिके।
विश्यागमनजं पापं तस्य पुंसो दिने दिने॥" (महानिर्वाणतन्त्र)

उधः (सं० क्ली०) वह प्रापणे उन्द क्लेदने वा असुन्। आपीन, स्तन, बाख, आयन।

उधड़ना (हिं० क्रि०) १ अपावृत होना, उचड़ जाना। २ उद्घाटित, होना, खुलना। ३ निस्त्वचीतभूत होना, खाल खिंचना। ४ ताड़ित होना, बेत पड़ना। ५ उन्मुक्त होना, छूट जाना। ६ नष्ट होना, बरबादीमें पड़ना।

उधम, ऊधम देखो।

उधर (हिं० क्रि०-वि०) तत्र, वहां, उस ओर।

उधरना (हिं० क्रि०) १ उद्धार होना, छूटना। २ उद्धार करना, छोड़ाना। ३ उधड़ना, अलग-अलग हो जाना।

उधरसे (हिं० क्रि० वि०) १ उस ओर या तर्फ़से।

उधराना (हिं० क्रि०) १ वायुसे इतस्ततः होना, हवामें उड़कर बिखर जाना। २ मदोन्मत्त होना, झगड़ा लगाना।

उधलना (हिं० क्रि०) १ कामातुर होना, मस्त पड़ना। "धी न बेटी उधल गई सनधेटी।" (लोकोक्ति)

२ अन्य पुरुषके साथ पलायमान होना, दूसरे मर्दको लेकर भागना। ३ नष्ट होना, बिगड़ना।

उधली (हिं० स्त्री०) कामासक्त, छिनाल, बिगड़ी औरत। "उधली बहू बलेंडे सांप दिखाये।" (लोकोक्ति)

उधाड़ (हिं० पु०) उखाड़, कुश्तीका एक पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरेको लंगोटा पकड़ कर उठाता और भूमिपर गिराता है।

उधार (हिं० पु०) १ ऋण, क़र्ज़। "नौ नक़द न तेरह उधार।" (लोकोक्ति) २ देन, मंगनी। ३ उद्धार, नजात।

उधारक (हिं०) उद्धारक देखो।

उधारना (हिं० क्रि०) उद्धार करना, छोड़ाना।

उधारी (हिं० वि०) उद्धार करनेवाला, जो निजात देता हो।

उधुनाला—बङ्गाल प्रान्तके सन्तालपरगनेका एक पुराना नाला और गांव। यह राजमहलसे दक्षिण ६ मील अक्षा० २४° ४९´ ३०´´ उ० और द्राघि० ८७° ५३´ १५´´ पू०पर अवस्थित है। १७६३ ई०में मेजर अदमसने यहां नवाब मीरक़ासिमकी फ़ौज हरायी थी। गड़खाइयोंका ध्वंसावशेष आज भी विद्यमान है। मुगलोंने नालेपर जो बढ़िया पुल बनाया, उसे गङ्गाकी धारने आगे बढ़कर बहाया है।

उधेड़ना (हिं० क्रि०) १ पृथक् पृथक् करना, खोलना। २ अपावृत करना, उचाड़ना। ३ ग्रथित करना, उलझाना। ४ तोड़ना। ५ विजय करना, जीतना। ६ इतस्ततः फेंकना, बिखराना। ७ निर्धन करना,

ग़रीब बनाना। ८ ठगना। ९ अपमानित करना, गाली देना। १० दांत लगाना। ११ लज्जित करना, शर्म देना। १२ काटना। १३ निर्वाह करना, खाना।

उधेड़बुन (हिं० स्त्री०) १ चिन्ता, फ़िक्र। २ उपाय, तदबीर। ३ व्याकुलता, बेचैनी। ४ दुःख, तकलीफ़।

उधेरना, उधेड़ना देखो।

उध्मान (सं० क्लो०) चुल्ली, चूल्हा।

उध्मार, उध्मान देखो।

उन (हिं सर्व०) १ 'उस'का बहुवचन।

उनइस, उन्नीस देखो।

उनका (अ० पु०) १ पक्षिविशेष, एक अनदेखा पखेरू। (वि०) २ विरल, ग़ैरमामूली, अनोखा।

उनगुलत—बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि ज़िलेके पशुकी एक श्रेणी। आजकल इस श्रेणीमें केवल जङ्गली सूवर ही देख पड़ता है। यह सह्याद्रि पर्वत और सागर तटके समीप रहता है। ग्रीष्म ऋतुमें सूवर दल-दलोंके पास आते और घण्टों लेट लगाते हैं।

उनचकोटरा—बम्बईके काठियावाड़ प्रदेशका एक ग्राम। यह एक बड़ी चटान पर अरबसागरके किनारे बसा है। सोमनाथ-पाटन और उनासे निकाले जाने-पर उनचकोटरा वाजोंकी प्रसिद्ध राजधानी रही। यहांके खीमजी वाज एक प्रसिद्ध वीर थे। यह ग्राम झांझमेरसे दक्षिण-पश्चिम सात और भावनगरसे प्राय छियालीस मील दूर है। उनच-कोटरेसे एक मील उत्तर नीचकोठरेमें एक कूप है। उसमें एक ही साथ ३२ पुर चल सकते हैं!

उनचया—काठियावाड़ प्रान्तके जूनागढ़की एक तह-सील। धांकरा उपजातिके बाबरिये ताल्लुक़दार हैं। पहले उनचया एक पृथक् करद राज्य था। यह जाफ़राबादसे उत्तर-पूर्व दश और धन्तरवाड़ी नदीसे पूर्व एक मील पड़ता है। मेराईका बन्दर सिर्फ़ ३ मील उत्तर है।

उनचास (हिं० वि०) एकोनपञ्चाशत्, चार दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ४९।

उनछली—बम्बई प्रान्तके उत्तर कनाड़ा ज़िलेका एक ग्राम। यह सिद्दपुरसे उत्तर-पश्चिम १२ मील दूर और अपने सुन्दर जलप्रपात (Lushington falls)के लिये मशहूर है।

उनजा—गुजरात प्रान्तके बड़ोदा राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २३° ४८′ १०″ उ० तथा द्राघि० ७२° २७′ पू० पर अवस्थित है। यहां राजपूताना-मालवा-रेल-वेका ष्टेशन बना है। उनजा अहमदाबादसे उत्तर ५६ और सिद्धपुरसे दक्षिण ८ मील पड़ता है। कड़वा कुरमियोंका यह प्रधान स्थान है।

उनतदिया—बड़ोदा राज्यका एक तीर्थस्थान। यह कड़ीके निकट अवस्थित है। शैव यहां महादेवका दर्शन करने आते हैं।

उनतरी—काठियावाड़ प्रान्तके झालावाड़ विभागका एक देशीय राज्य। भूमिका परिमाण ६ वर्गमील है।

उनतीस (हिं० वि०) एकोनत्रिंशत, दो दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, २९।

उनदा (हिं०) उन्निद्र देखो।

उन देलवार—काठियावाड़का एक प्राचीन स्थान। इसका प्राचीन नाम उन्नत नगर है। उन्नतनगर देखो।

उनमाथना (हिं क्रि०) उन्मथन करना, मथ डालना।

उनमान (हिं० वि०) १ सदृश, बराबर। २ अनु-मान, अन्दाज़।

उनमानना (हिं० क्रि०) अनुमान करना, अन्दाज़ लगाना।

उनमूलना (हिं० क्रि०) उन्मूलन करना, उखाड़ना।

उनमेख, उन्मेष देखो।

उनमेद (हिं० पु०) फन विशेष, किसी क़िस्मका झाग। यह प्रथम वृष्टिसे उपजता है। इससे मत्स्य मृत्युको प्राप्त होते हैं।

उनरना (हिं० क्रि०) १ उद्गत होना, उठना, चढ़ना। २ प्लवके साथ गमन करना, कूद-कूद चलना।

उनवना (हिं० क्रि०) १ उन्नमन करना, झुक या लटक पड़ना। २ आच्छादित होना, छा जाना। ३ अकस्मात् आ पड़ना, लग जाना।

उनवर (हिं० वि०) अल्प, ख़फ़ीफ़, जो ज़्यादा न हो।

उनवान (हिं०) अनुमान देखो।

उनसठ (हिं० वि०) एकोनषष्टि, पांच दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ५९।

उनसरी—बलखके एक अधिवासी और सुलतान् महमूद गज़नवीकी सभाके पण्डित। इन्हें प्राय अबुल क़ासिम उनसरी कहते हैं। यह अबुलफ़रह सनजरीके शिष्य और असजदी तथा फ़रुखी कविके गुरु थे। ये अपने समयके एक श्रेष्ठ विद्वान् थे। उनसरी कवि होनेके सिवा विज्ञान और अनेक भाषाओंके भी जाननेवाले थे। गज़नी विश्वविद्यालयके समग्र विद्यार्थी और चार सौ कवि तथा विद्वान् इन्हें अपना गुरु मानते थे। सुलतान् महमूदकी वीरता पर इन्होंने एक ग्रन्थ बनाया था। एकबार सुलतान् अपने सेवक अय्याज़की अलकावली कटा कर पश्चात्तापमें पड़े थे। किन्तु इन्होंने उस समय ऐसी कविता बनाकर सुनायी, कि सुलतान्‌ने प्रसन्न हो इनका मुख तीन बार अमूल्य रत्नोंसे भरनेकी सेवकोंको आज्ञा दी। १०४० या १०४८ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

उनसी—एक मुसलमान कवि। इनका मुख्य नाम मुहम्मद शाह था। १५६५ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

उनहत्तर (हिं० वि०) एकोनसप्तति, छः दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ६९।

उनहार (हिं० वि०) समान, बराबर, कम-ज्यादा न होनेवाला।

उनहारि (हिं० स्त्री०) सादृश्य, बराबरी।

उना—पञ्जाबके होशियारपुर ज़िलेसे उत्तरपूर्व एक तहसील। इसका कितना ही अंश शिवालिक गिरिमाला और हिमालयके मध्य पड़ता है। उनाके चारो ओर प्राय: सोहन नदी बहती है। उपत्यकाके प्रदेशको यशवनदुन कहते हैं। गेहूं, धान, चना, कपास, नील, ज्वार, ऊख, तम्बाकू और सबज़ीकी उपज यहां अधिक है। इसका क्षेत्रफल ८६७ वर्गमील है। २ अपनी तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३१° ३२´ उ० और द्राघि० ७६° २८´ पू० पर अवस्थित है। सिखोंके गुरु नानकके वेदी नामक वंशधर उनामें ही रहते हैं। रणजित्‌सिंहके अधिकार-कालमें वेदी उपाधिधारी विक्रमसिंह नामक एक व्यक्तिको सिखराजसे इसकी और अनेक निकटस्थ स्थानोंकी जागीरी सनद मिली थी। उना पर्वतपर सोहन नदीके किनारे स्थित है। यहां बाज़ार लगा करता है। लोकसंख्या प्राय साढ़े चार हज़ार है।

उनाना (हिं० क्रि०) १ अवनमित करना, झुका देना। २ तत्पर करना, कमर बंधाना। ३ श्रवण करना, कान देना। ४ आज्ञापालन करना, कहेपर चलना।

उनाव—१ युक्त प्रदेशका एक ज़िला। यह अक्षा० २६° ८´ एवं २७° २´ उ० और द्राघि० ८०° ६´ तथा ८१° ५´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १७४७ वर्गमील है। इसके उत्तर हरदोई, पूर्व लखनऊ, दक्षिण रायबरेली और दक्षिण-पश्चिम फ़तेहपुर तथा कानपुर ज़िला पड़ता है। लोकसंख्या प्राय: नौ लाख है। उनाव लखनऊ विभागके अन्तर्गत और युक्तप्रदेशके छोटे लाटके शासनाधीन है।

यह कृषिप्रधान स्थान है। इसमें उनाव, पुरवा, मौरावां, सफ़ीपुर, बांगरमऊ, मोहान, नवलगञ्ज, हसनगञ्ज, महाराजगञ्ज और हरहा ये प्रधान नगर हैं।

इतिहास—पूर्व कालमें यह ज़िला वनादिसे भरा था। स्थानीय मनुष्योंको विश्वास है—पहले मौरावें, पुरवे और हरदेमें भर जातिका वास था। अवशिष्ट स्थानमें लोध, अहीर, ठठेरे प्रभृति जातिके लोग रहते थे।

मुहम्मद गोरीके समयसे राजपूत निज जन्मभूमिका स्नेह छोड़ उनावमें आकर बसने लगे। १२०० से १४५० ई० के बीच चौहान, दीक्षित, बैकवार, जनवार और गौतम यहां आये थे। पीछे परिहार, गेहलोत, गौड़ और शिंगर भी पहुंच गये।

मुसलमानोंके आक्रमणसे पहले विष्णुराज राजत्व करते थे। सैयद अला-उद्दीन्‌के पुत्र बहाउद्दीन्‌ने उन्हें जीता। क्योंकि उस समय ईरानी और काबुली सिपाही तो उनके साथ थे। और राजपुत्रका विवाह था। इस लिये मुसलमानोंको सुयोग मिला। उन्होंने धार्मिक राजाको संवाद दिया कि—'इस शादीसे हम खुश हैं। अतएव हम अपनी औरतोंको आपकी औरतोंसे मिलनेके लिये भेजना चाहते हैं।' राजा सम्मत हो गये। इसलिये कामिनियोंके बदले सशस्त्र वीर पालकी पर बैठ अबाध दुर्गमें घुसगये। राजपुरुष उत्सवसे मत्त हो

अधिक नशा पीये थे। उधर मुसलमानोंने दुर्गमें पहुंचते ही असि खींची और अविलम्ब ही राजदुर्ग अपने हाथमें कर लिया। राजपरिवारके निरस्त्र लोग पशुके समान मारे गये। दुर्घटनाके समय राजपुत्र शिकार खेलने गये थे। अकस्मात् यह दारुण संवाद पा वे मानिकपुरको अपने सम्पर्कीय एकजनके आश्रयसे भगे। उसस्थानके नरेशने राजपुत्रके साहाय्यार्थ मुसलमानों पर अपना सैन्य भेजा। किन्तु दोवार पराजय हुआ। युद्धमें मुसलमानोंकी फौज भी बहुत मरी। उधर बैस-राज तिलकचन्द्र अयोध्या प्रदेशके दक्षिण भागमें स्वाधीन भावसे राजत्व चलाते थे। मुसलमानोंने उनाव ले उनके परितोषार्थ कितना ही उपढौकन पहुंचाया और साथ ही यह भी कहलाया—'हमारे बुज़ुर्ग बहाउद्दीन् शहाबुद्दीन्से मिलकर कन्नौज लड़ने जाते थे। लेकिन विष्णुराजने उन्हें बेइन्साफ़ीसे मार डाला। इसीसे हमने उनाव ले लिया है।' तिलकचन्द्रने सोचा—मुसलमानोंको चिढ़ाना अच्छा नहीं, क्योंकि उससे हमपर भी विपद् पड़ सकती है। इसप्रकार अग्रपश्चात् देख उन्होंने उपहार ग्रहण किया और वचन दिया—'हम आपसे विवाद बढ़ाना नहीं चाहते। हमारे अधिकारका कोई राजपूत आप लोगोंपर अस्त्र न उठायेगा।' फिर दिल्लोके सम्राट्ने सन्तुष्ट हो सैयदोंको 'जमींन्दारी'की सनद बख्शी थी। सिपाही-विद्रोहके समय उनावके कितने ही लोग अंगरेजोंसे लड़े। जनवारके राजा यशोसिंह फ़तेहगढ़में ठहर पलातक अंगरेजोंको नाना साहबके पास पकड़ भेजते थे। अंगरेजी-सेनापति हावलकने उनके विरुद्ध सैन्य भेजा। युद्धमें यशोसिंह आहत हुये, जिससे उनके प्राण निकल गये। बलवा मिटनेपर अंगरेजोंने स्थानीय राजपुत्रको फांसीपर चढ़ाया और राज्यको छीन खीय कर लगाया। उस समयसे आजतक उनाव वृटिश शासनमें ही विद्यमान है।

अधिवासियोंमें राजपूतोंकी संख्या अधिक है। फिर ब्राह्मण, गोसाईं, कायस्थ, बनिया, अहीर, लोध, पासी, काछी, कोरी, चमार, नाई, तेली, तंबोली, बरई, कुरमी, धोबी, कहार, कुम्हार, लोहार, भुरजी, माली, कलवार, धानुक, भङ्गी, सोनार और मल्ल प्रभृति उच्च-नीच सभी हिन्दू रहते हैं। मुसलमानोंमें पठान, शेख, और सैयद ज्यादा हैं। वे प्राय: सकल ही सुन्नी सम्प्रदायभुक्त हैं।

ज़मीन् दोरसा, मटियार, बलुई और ऊसर कई भागोंमें विभक्त है। कई वर्षके अन्तरसे गेहूं उपजता है। जिस वर्ष गेहूं नहीं होता, उस वर्ष क्षषक यव, उड़द, मूंग, ज्वार प्रभृति बोते हैं। ऊख, नील, सन, कपास, अफ़ीम, तम्बाकू, सरसों और तरह तरहकी सब्ज़ीकी खेती भी होती है।

२ अपने ज़िलेकी तहसील। यह अक्षा० २६° १७´ तथा २६° ४० उ० और द्राघि० ८०° २१´ एवं ८०° ४४´ पू० के मध्य अवस्थित है। चार परगने लगते हैं—उनाव, परियर, सिकन्दरपुर और हरहा। भूमिका परिमाण ३८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्राय: दो लाख है।

३ अपने ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ३२´ २५´´ उ० और द्राघि० ८०° २´ पू० पर कान-पुरसे साढ़े ४ कोस उत्तरपूर्व अवस्थित है। कोई १५ देवदेवीके मन्दिर तथा १० मसजिद हैं। इस नगरकी प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें एक प्रवाद सुनते हैं—पूर्वकालमें उनाव नगर वनसे भरा था। कोई सवा हज़ार वर्ष पहले वङ्कराजके अधीनस्थ गजसिंह नामक चौहान सिपाहीने इस स्थानको परिष्कार करा 'सराय-गड़ा' नामक एक नगर बसाया। किन्तु अल्प दिन बाद ही वे इसे छोड़ गये थे। फिर कान्यकुब्जराज अजयपालने उनाव नगर पर अपना अधिकार जमाया। उन्होंने खांडेसिंहको इस स्थानका शासन कर्ता बनाकर भेजा था। कुछ दिन बाद उनवन्त सिंह नामक कोई विसेन जातीय खांडेसिंहको मार इस स्थानके स्वाधीन राजा बने। उन्होंने अपने नामानुसार 'सरायगड़ा'के बदले उनाव नाम रखा था। १४५० ई०में तद्वंशीय राजा अमरावत सिंहके समय सैयदोंने छलकर कौशलसे इस नगरको अपने हाथ लिया।

१८५७ ई० को २८ वीं जुलाईको उनावमें सेना-

पति हावलकके साथ विद्रोहियोंका प्रधान युद्ध हुआ था। यहां चोनी बनानेका एक पुतलोघर खुला है। उनावके पेड़े अधिक प्रसिद्ध हैं।

उनाला (हिं॰ पु॰) ग्रीष्मऋतु, गर्मीका मौसम।

उनासी, उन्नासी देखो।

उनींदा (हिं॰) उन्निद्र देखो।

उनेवाल—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। इस श्रेणीके ब्राह्मण दुर्भिक्षसे पीड़ित हो अपना देश राजपूताना छोड़ गुजरातमें जा बसे थे। ये प्रायः बड़ोदे और काठियावाड़में रहते हैं। उना ग्रामके नामपर उनेवाल कहे जाते हैं। उक्त ग्राम वेजा और वाघल राजपूतोंके नेता वेजोने इनसे छोन लिया था। प्रायः कृषिकार्य और भिक्षा पर जोविका निर्वाह करते हैं।

उन्द—काठियावाड़ प्रान्तकी एक छोटो नदी। यह लोधिकासे निकल उत्तरकी ओर बहती हुयी जोदियाके पास कच्छकी खाडीमें जा गिरती है।

उन्दक (सं॰ पु॰) धवल यावनाल, सफेद मकई।

उन्दन (सं॰ क्लो॰) क्लेदन, खिंचाई।

उन्दर, इन्दुर देखो।

उन्दरन—बम्बई प्रान्तकी एक पर्वतश्रेणी। इसके आधारपर धोलका और झालावाड़ नगर बसा है।

उन्दसरवैया—काठियावाड़का एक प्राचोन उपविभाग। आज काल यह गोहिलवाड़में मिल गया है। क्षेत्रफल १६० वर्गमोल है। पूर्वको ओर खम्भातको खाड़ी है। शतरुञ्जी नदोके दक्षिण तट तक उन्दसरवैया विस्तृत है।

उन्दिरखेड़ा—बम्बई प्रान्तके खानदेश जिलेका एक गांव। बोरी नदीके एक द्वोपमें सोनागेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। कहा जाता है—त्र्यम्बकराव माम पेठेने उक्त मन्दिर निर्माण कराया था। यह गांव त्र्यम्बक रावको पेशवाने कोई १६३ वर्ष हुये उत्सर्ग किया था। चारो ओर ७५ फीट ऊंचा प्राचीर है। नदीमें जानेके लिये सोपान लगे हैं और सुन्दर आलोकस्तम्भ खड़ा है। मन्दिर ४५ फीट लम्बा और २५ फीट चौड़ा है। द्वारप्रकोष्ठमें नन्दोकी मूर्ति है। प्रस्तर सुन्दर कारुकार्यसे खचित है।

उन्दिरमारी (सं॰ स्त्री॰) मूषिकारी, एक बूटो। मूषिकारी कटक तथा नेत्रको लाभ पहुंचाने, आखुका विष मारने, और व्रणदोष एवं नेत्रके रोगको मिटानेवाली है। (राजनिघण्ट)

उन्दी—वृक्ष विशेष, एक पेड़। यह बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि जिलेमें समुद्र किनारे साधारणतः उपजता है। इसके वीजका कटु-तैल मूल्यवान् है। तनेसे छोटो नौका बनती है।

उन्दीकवाटिका—बम्बई प्रान्तके कनाड़ा जिलेका एक ग्राम। मालखेड़ाधिप राष्ट्रकूट-नृपति भविष्यके पुत्र अभिमन्युने इसे एक ब्राह्मणको पेठपङ्गरकवाले दक्षिण-शिवकी सेवाके लिये उत्सर्ग किया था। ताम्रफलकपर उक्त विवरण लिखा है।

उन्दीवनकोष्ठक—तोण्डकराष्ट्रका एक उपविभाग। आज कल इसे उरक्ककाड़ू कहते हैं। यह काञ्चीपुरम्के समीप अवस्थित है। जो प्राचोन ताम्रफलक मिला, उसमें लिखा है कि—अपने मुख्यमन्त्री ब्रह्मश्रीराज वा ब्रह्म-युवराजके कहनेसे नन्दीवरम् नृपतिने अपने राज्यके २२वें वर्षमें किसी ब्राह्मणको कोडूकोल्ली नामक इस प्रान्तका एक ग्राम उत्सर्ग किया था।

उन्दुर, इन्दुर देखो।

उन्दुरकर्णी (सं॰ स्त्री॰) उन्दुरस्य कर्णइव, गौरादित्वात् ङीष्। आखुपर्णी, मूसाकानी।

उन्दुरु, इन्दुर देखो।

उन्दुरुक इन्दुर देखो।

उन्दुरुकर्णा (सं॰ स्त्री॰) १ आखुपर्णी लता, चूहाकानी। २ दन्तीभेद, किसो किस्मको दांती।

उन्दुरुकर्णिका, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दुरुकर्णी, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दुरुपर्णी, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दूरु (सं॰ पु॰) उन्द-उरु। इन्दुर, चूहा। संस्कृत पर्याय—मुषिक, आखु, गिरिक, बालमूषिका, मूष, मूषक, मूषिक, खनक, वभ्रु, वृष, आखनिक, वृश, दोना, मूषोका, विलेशय और शुषिर है। क्षुद्र इन्दुरको चिक, वेश्मनकुल, चिक्का, हालाहला और अञ्जनिका कहते हैं। इन्दुर देखो।

उन्दूवर (सं॰ क्लो॰) ताम्र, तांबा।

उन्देरी—बम्बई प्रान्तके कोलावा सागरतटका एक द्वीप। १६८० ई॰में सीदीने यहां खाई बना अपनी रक्षा की थी। महाराष्ट्रोंने उन्हें भगानेकी निष्फल चेष्टा की। १७३३ ई॰में अंगरेजोंने अपनी सेना भेज इस द्वीपके दुर्गको महाराष्ट्रोंके हाथ पड़नेसे बचाया। किन्तु १७५९ ई॰में राघवजी अङ्गरियेने उन्देरीका दुर्ग मुसलमानोंसे छीन लिया था। फिर १८४० ई॰को यह द्वीप अंगरेजोंके हाथ लगा।

उन्द्र (सं॰ पु॰) कूलचर पशुभेद, ऊदबिलाव।

उन्न (सं॰ त्रि॰) उन्द-क्त। १ क्लिन्न, सिक्त, आलूदा, भरा हुआ। २ आर्द्र, भीगा। ३ सुरत, मेहरबान्।

उन्नइस, उन्नीस देखो।

उन्नत (सं॰ त्रि॰) उत्-नम-क्त। १ उच्च, ऊंचा। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ। ४ गौरवान्वित, इज्जतदार। ५ उत्थापित, उठाया हुआ। ६ पूर्ण, भरा हुआ। (पु॰) ७ अजगर। ८ बुद्धविशेष। (क्लो॰) ९ उच्चता, ऊंचाई। १० दिन परिमाण-ज्ञापक उपाय।

"दिवसस्य यद्गतं यच्च शेषं तयोर्यदल्पं तदुन्नतसंज्ञम्।"

"उदग्देशं याति यथा यथा नरस्तथा तथा स्यान्नतमृक्षमण्डलम्।

उदग्दिशं पश्यति चोन्नतं क्षितेस्तदन्तरे योजनजाः पलांशकाः॥"

(सिद्धान्त-शिरोमणि)

उन्नतकाल (सं॰ पु॰) उन्नतकी छाया द्वारा काल-निरूपक प्रक्रिया विशेष।

'पलश्रुतिघ्नस्त्रिगुणस्य वर्गोद्युज्ये ष्टकर्णाहतिहृद्विवेदा।

दृष्टान्त्यका तद्रहितान्त्यका या भवन्ति या उत्क्रमचापलिप्ताः॥

नतासवस्ते सुरहृद्दलं द्विवीकृतं चोन्नतकाल एवम्।" (सिद्धान्तशिरोमणि)

"नतकालो दिनार्धवत् पतित उन्नतकालः स्यादित्युपपन्नम्।' (मिताक्षरा)

उन्नतचरण (सं॰ त्रि॰) उत्क्षिप्त पादयुक्त, पैर उठाये हुआ।

उन्नतत्व (सं॰ क्लो॰) उच्चता, ऊंचाई।

उन्नतनगर (सं॰ क्लो॰) एक अति प्राचीन नगर।

"यत्र चोन्नामितं लिङ्गं ऋषितोयातटे शुभे।

उन्नतं नाम यं लोके विख्यातं सुरसुन्दरि॥" (प्रभासखण्ड २१६ अ॰)

वर्तमान नाम उन दिलवर* है। काठियावाड़ प्रान्तके जूनागढ़ राज्यका यह प्राचीन नगर अक्षा॰ २०° ४९´ उ॰ और द्राघि॰ ७१° ५´ पू॰ पर अवस्थित है। प्राचीन उन्नतनगर वर्तमान उननगरके पार्श्वमें ही था। इसी प्राचीन नगरको पीछे लोग दिलवर कहने लगे। दोनो स्थान पास ही पास रहनेसे उनदिलवर कहलाते हैं।

* हण्टर साहबने प्राचीन नगरका नाम 'उन्नतदुर्ग' लिखा है। किन्तु हमारी समझमें उन्नतनगर ही अधिक प्रामाण्य है। इस प्राचीन नगरका विवरण स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें इस प्रकार कहा है—

"ततो गच्छेन्महादेवि! उन्नतस्थानमुत्तमम्।

तस्यैवोत्तरदिग्भागे ऋषितोयातटे शुभे॥

एतत् स्थानं शुभं देवि! विप्रेभ्यः प्रददौ बलात्।

सर्वसीमासमायुक्तं चण्डीगणसुरक्षितम्॥

देव्युवाच।

कथमुन्नतनामास्य बभूव सुरसत्तम!

कथं त्वया बलाद्दत्तं कियत्सीमासमन्वितम्॥

एतत् सर्वं समाचक्ष्व संक्षेपान्नातिविस्तरात्।

ईश्वर उवाच।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि कथां पापप्रणाशिनीम्।

यां श्रुत्वा मानवो देवि! मुच्यते सर्वपापकात्॥

एतत् पूर्वं पुरा प्रोक्तं स्थानं सङ्केतकारणम्।

तृतीये ब्राह्मणे खण्डे सृष्टिसंक्षेपसूचके॥

तथापि ते प्रवक्ष्यामि संक्षेपाच्छृणु पार्वति

उन्नामितं पुनस्तत्र यत्र लिङ्गं महोदयम्॥

षष्टिवर्षसहस्राणि तपस्तेपु र्महर्षयः।

ध्यायमाना महेशानमनादिनिधनं परम्॥

तेषु वै तप्यमानेषु कोटिसङ्ख्येषु पार्वति!

ऋषितोयातटे रम्ये पवित्रे पापनाशने॥

भिक्षुर्भूत्वा गतश्चाहं पूतस्तत्रैव भामिनि!

त्रिकालदर्शिभिस्तत्र रोषरागविवर्जितैः॥

तपस्विभिस्तदा सर्वैर्लक्षितोऽहं वरानने!

दृष्टमात्रस्तदा विप्रैर्विरराम महेश्वरः॥

क्व यासि विदितो देव इत्युक्त्वानुययुर्द्विजाः।

यावदायान्ति मुनयः ईशेशेति प्रभाषकाः॥

धावमानाश्च तापसा द्योतयन्तो दिशो दश॥

लिङ्गमेव प्रपश्यन्ति नापश्यन्ति महेश्वरम्।

ये ये च ददृशुर्लिङ्गं मूलचण्डीशमन्तिके॥

तदा ते मुनयः सर्वे शरीरैः स्वर्गमाययुः।

तदा त्रिविष्टपं व्याप्तं दृष्टं वै शतयज्वना॥

अयाचन्त तथैवान्ये मुनयस्तपसोज्ज्वलाः।

एतदन्तरमासाद्य समागत्य महीतले॥

पूर्वकालमें यह प्राचीन नगर अति पवित्र स्थान समझा जाता था। स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें वर्णित है—देवादिदेव महादेवके आदेशसे विश्वकर्माने ऋषितोया नदीके तटपर यह नगर बनाया था। यह ब्राह्मणोंके वासके लियेही निर्मित हुआ था। उस समय यहां स्थलकेश्वर नामक एक जाग्रत शिवलिङ्ग था।

मुसलमानोंके आनेसे पूर्व उन्-दिलवरमें उनेवाल नामक ब्राह्मण-सम्प्रदाय रहता था। किसी समय ब्राह्मणोंने वेजलावाजी नामक किसी सामन्तको

लिङ्गमासादयामास वत्से णैव शतक्रतुः।
अष्टादशसहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्॥
स्थित्वा तदनुपश्यन्ति लिङ्गमेतदनुत्तमम्।
शक्रस्तु सहसा हृष्टो वत्से णैव समन्वितः॥
यावद्ददाति शापं ते तावन्नष्टः पुरन्दरः।
दृष्ट्वा चोत्कोपसंयुक्तान् भगवांस्त्रिपुरान्तकः॥
उवाच शान्तया देवो वाचा मधुरया मुनीन्।
कथं खिन्ना द्विजश्रेष्ठाः सदा शान्तिपरायणाः॥
प्रसन्नवदना भूत्वा श्रूयतां वचनं मम।
भवद्भिर्ज्ञानसंयुक्तैः स्वर्गो विमुच्यते कथम्॥
यत्रैके वसवः प्रोक्ता आदित्याश्च तथापरे।
रुद्रसंघास्तथा चैके अश्विनावपि चापरौ॥
एतेषामधिपः कश्चिद्देव इन्द्रः प्रकीर्तितः।
स्वपुण्यस्य क्षये प्राप्ते यस्माद्वै भ्रश्यते नरैः॥
एवं दुःखसमायुक्तः स्वर्गो नवोज्झते बुधैः।
एतस्मात् कारणाद्विप्राः कुरुध्वं वचनं मम॥
गृह्णीध्वं नगरं रम्यं निवासाय महाप्रभम्।
हूयन्तामग्निहोत्राणि देवताः सर्वदा द्विजाः॥
इज्यतां विविधैर्यागैः क्रियतां पितृपूजनम्।
आतिथ्यं क्रियतां नित्यं वेदाभ्यासस्तथैव च॥
एवं वै कुर्वतां नित्यं विज्ञानस्य च सञ्चयैः।
प्रसादान्मम विप्रेन्द्राश्चान्ते मुक्तिर्भविष्यति॥

ऋषय ऊचुः।
असमर्था परित्राणे जिताः सर्वे तपोधनाः।
नगरेणेह किं कुर्मस्तव भक्तिमभीप्सिता॥

ईश्वर उवाच।
भविष्यति तदा भक्तिर्युष्माकं परमेश्वरे।
गृह्णीध्वं नगरं रम्यं कुरुध्वं वचनं मम॥
इत्युक्त्वा भगवान् देव ईषन्मीलितलोचनः।
सस्मार विश्वकर्माणं सर्वशिल्पविदाम्बरम्॥
स्मृतमात्रो विश्वकर्मा प्राञ्जलिश्चाग्रतः स्थितः।
आज्ञापयतु मां देवो वचनं करवाणि ते॥

ईश्वर उवाच।
नगरं क्रियतां त्वष्टः विप्रार्थं सुन्दरं शुभम्।
इत्युक्तो विश्वकर्मा तां भूमिं वीक्ष्य समन्ततः॥
उवाच प्रणतो भूत्वा शङ्करं लोकशङ्करम्।
परीक्षिता मया भूमिर्न युक्तं नगरं त्विह॥
अत्र देवकुलस्ये शलिङ्गस्य पतनं तथा।
यतिभिश्चात्र वस्तव्यं न युक्तं गृहमेधिनाम्॥
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा सप्तरात्रं महेश्वर!
पक्षं मासमृतुञ्चापि अयनं गृहमेधिभिः॥
पुत्रदारयुतैस्तीर्थे वस्तव्यं गृहमेधिभिः।
वसतूर्ध्वन्तु षण्मासाद् यदा तीर्थे गृहाधिपः॥
अवज्ञा जायते तस्य मनस्याप्यल्पकं भवेत्॥
तदा धर्मा विनश्यन्ति सकला गृहमेधिनः॥
इत्युक्तः स तदा देवस्तेन वै विश्वकर्मणा।
पुनः प्रोवाच तं तस्य निशाम्य वचनं शिवः।
रोचते मे न वासोऽयं विप्राणां गृहमेधिनां॥
यत्र चोन्नामितं लिङ्गं ऋषितोयातटे शुभे।
तत्र निर्मापय त्वष्टर्नगरं शिल्पिनां वर॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा विश्वकर्मा त्वरान्वितः।
गत्वा चकार नगरं शिल्पिकोटिभिरावृतम्॥
उन्नतं नाम यं लोके विख्यातं सुरसुन्दरि!
ततो हृष्टमना भूत्वा विलोक्य नगरं शिवः॥
आहूय ब्राह्मणान् सर्वानुवाच नतकन्धरः।
इदं स्थानं वरं रम्यं निर्मितं विश्वकर्मणा॥
ग्रामाणाञ्च सहस्रेस्तु प्रोतं सर्वाङ्गसुन्दरम्।
नगरात् सर्वतः पुण्यो देशो नग्नहरः स्मृतः॥
अष्टयोजनविस्तीर्ण आयामव्यासतस्तथा।
नग्नो भूत्वा हरो यत्र देशो भ्रान्तो यदृच्छया॥
तं नग्नहरमित्याहु र्देशं पुण्यतमं जनः।
पूर्वे तु शङ्खयाष्यां च पश्चिमे नाङ्कुमत्यपि॥
उत्तरे कनकादाच दक्षिणे सागरावधिः।
एतदन्तरमासाद्य देशो नग्नहरः स्मृतः॥
अष्टयोजनमानेन आयामव्यासतस्तथा।
प्रोक्तोऽयं सकलो देश उन्नतेन समं मया॥
गृह्यतां च नरश्रेष्ठाः प्रसीदध्वं द्विजोत्तमाः।
अत्र भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः॥
इत्युक्त्वास्ते तदा सर्वे विप्रा ऊचुर्महेश्वरम्।
ईश्वराज्ञा वृथा कर्तुं न शक्या परमात्मनः॥

नवपरिणीत भार्याको भलाबुरा कहा। उससे बेजल बाजीने क्रुद्ध हो उन्नतनगर पर आक्रमण मारा था। उन्होंने बहु संख्यक अधिवासियोंका मस्तक द्विखण्डित कर अपना दारुण क्रोध मिटाया। उन्नतनगरमें ब्रह्महत्या हुयी और पुण्यभूमि पापमयी समझी गयी। ब्राह्मण मात्र यह स्थान छोड़ दिलवर नगरमें जाकर रहे। उसी समयसे यह स्थान उन कहलाने लगा। उन मुसलमानोंके हाथमें जानेसे उससे डेढ़कोस दक्षिण दिलवर नामक नगर बसा। गुजरातवाले सुलतानोंके राजत्वकालमें यह एक प्रसिद्ध स्थान हो गया था।

उन्नतनाभि (सं॰ त्रि॰) उन्नतो नाभिर्यस्य। उच्च-नाभियुक्त, निकले हुये तोंदवाला, तोंदल।

उन्नतशिरः (सं॰ त्रि॰) शिर उठाये हुआ, जो सर ऊपरको खड़ा किये हो।

उन्नतांश (सं॰ पु॰) उत्तुङ्ग भाग, ऊंचा हिस्सा। ज्योतिषमें चन्द्रमाके दक्षिण वा वाम उन्नत अंशको देखते हैं।

उन्नतानत (सं॰ त्रि॰) उन्नत आनत। उच्चनीच, ऊंचा-नीचा।

उन्नति (सं॰ त्रि॰) उत्-नम-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उदय, उठान। ३ समृद्धि, खुशहाली। ४ उद्गम, उभार। ५ गरुड़पत्नी। ६ गौरव, इज्जत। ७ सौ-भाग्य, नेकबख्ती। ८ उच्चता, उचाई। ९ यमको भार्या। ये दक्षको एक कन्या थीं।

नक्षत्रादिके उदयको शृङ्गोन्नति कहते हैं—

"मासान्तपादे प्रथमेऽथ वेन्दोः शृङ्गोन्नतिर्यद्दिवसेऽवगम्या।
तदोदयेऽस्ते निशि वा प्रसाध्यः शङ्कुर्विधाः स्वादितनाड़िकाद्यैः॥"
(सिद्धान्तशिरोमणि)

उन्नतिमत् (सं॰ त्रि॰) १ उच्छ्रित, उठा या निकला हुआ। २ उत्तुङ्ग, ऊंचा।

उन्नतीश (सं॰ पु॰) उन्नतिके स्वामी, गरुड़।

उन्नतोदर (सं॰ पु॰) वृत्तखण्डका ऊर्ध्व पीठ, दाय-रेके कतकी ऊपरी सतह।

उन्नद्ध (सं॰ त्रि॰) उत्-नह-क्त। १ उद्बद्ध, टंगा या लटका हुआ। २ उत्कट, उभरा हुआ। ३ स्फीत, सूजा या फूला हुआ। ४ उन्मुक्त, खुला हुआ।

तपोऽग्निहोत्रनिष्ठानां वेदाध्ययनशालिनाम्।
अस्माकं रचिता कोऽस्ति कलिकाले च दारुणे॥
को दाताऽरोग्यदः कश्चित् को वै मुक्तिं प्रदास्यति॥

ईश्वर उवाच।

महाकालस्वरूपेण निधीनां धनदः प्रति।
युष्मभ्यो दास्यति द्रव्यं समग्रगाराधितोऽपि सः॥
आरोग्यदायको नित्यं दुर्गादित्यो भविष्यति।
महोदयं महानन्ददायकं यो भविष्यति॥
सभ्यागाराधितो ब्रह्मा सर्वकार्येषु सर्वदा।
सर्वान् कामांस्तथा मोक्षं स्वभक्तिञ्च प्रदास्यति॥

विप्रा ऊचुः।

यदि तीर्थानि तिष्ठन्ति सर्वाणि सुरसत्तम।
सङ्गालेश्वरतीर्थेषु तथा देवकुले शुभे॥
कलावपि महारौद्र अस्माकं यजनाय वै।
स्थानकं तर्हि गृह्णीमो नान्यथा च महेश्वर॥
स तथेति प्रतिज्ञाय ददौ तेभ्यः पुरं शुभम्॥
सप्तभौमैः शशाङ्काभैः प्रासादैः परिशोभितम्।
नानायानसमायुक्तं सर्वतः शोभयान्वितम्।
एवं तेभ्यो हि नगरं दत्त्वा देवो महेश्वरः॥
ददर्श विश्वकर्माणं प्राञ्जलिं पुरतः स्थितम्॥

विश्वकर्मोवाच।

विलोक्यतां महादेव नगरं नगरोत्तमम्।
सौवर्णं स्थलमारुह्य निर्मितं त्वत्प्रसादतः॥
विश्वकर्मवचः श्रुत्वा भगवांस्त्रिपुरान्तकः।
तमारुरोह स्थलकं देवैः सर्वमहर्षिभिः॥
नगरं लोकयामास रम्यं प्राकारमण्डितम्।
ऋषयस्तुष्टुवुः सर्वे तत्रस्थं त्रिपुरान्तकम्॥
तानुवाच महादेवो वृणुध्वं वरमुत्तमम्॥

ऋषय ऊचुः।

यदि तुष्टो महादेव स्थलकेश्वरनामभृत्।
अवलोकयन्नगरं सदा तिष्ठ स्थले हर॥
तथेत्युक्त्वा तदा देवाः स्थलकेऽस्मिन् सदा स्थितः।
कृते रत्नमयं देवि त्रेतायाञ्च हिरण्मयम्॥
रौप्यञ्च द्वापरे प्रोक्तं स्थलमश्ममयं कलौ।
फलं तव स्थितो देवः स्थलकेश्वरनामतः॥
सदा पूज्यो महादेव उन्नतस्थानवासिभिः।
माघे मासि चतुर्द्दश्यां विशेषस्तत्र जागरे॥
इति ते कथितं देवि उन्नतस्य महोदयम्।
श्रुतं पापहरं नृणां सर्वकामफलप्रदम्॥" (प्रभासखण्ड २१६ अ॰)

उन्नमन (सं० क्लो०) उत्-नम-ल्युट्। १ उन्नति, तरक्की। २ उत्तोलन, उठाव। ३ सुश्रुतोक्त यन्त्र द्वारा व्रणरुधिर स्रावसाधक चिकित्सा कर्मविशेष, नश्तरसे ज़ख्मके लहू निकालनेका इलाज।

उन्नमित (सं० त्रि०) उत्-नम-णिच्-क्त। १ उत्तालित, उठाया या चढ़ाया हुआ। २ ऊर्ध्वीकृत, ऊंचा किया हुआ। "अथ प्रयत्नोन्नमितानमत्फणैः।" (माघ १।१३।)

उन्नम्र (सं० त्रि०) उत्-नम्र-रन्। उन्नत, ऊंचा, खड़ा हुआ।

उन्नय (सं० पु०) उत्-नी क्वचिदपवादविषये अच्। १ उत्तोलन, खिंचाव। २ उत्थान, उठान। ३ सादृश्य, बराबरी।

उन्नयन (सं० क्लो०) उत्-नी-ल्युट्। कृत्यल्युटो बहुलम्। पा ३।३।११३। १ उत्तोलन, खिंचाव। २ परामर्श, मशविरा। ३ अनुमान, अन्दाज़। ४ उन्नति, तरक्की, उठान। ५ उद्भावन, ग़फ़लत। ६ न्यायशास्त्र, इल्म-मन्तिक्। ७ पूतभृत्पात्र, अर्क रखनेका बरतन। "उन्नयने च।" (कात्यायनश्रौतसू० १५।१२।१४) 'उन्नयत्यस्मादित्युन्नयनं पूतभृदुच्यते।' (कर्क) (त्रि०) उन्नमितं नयनं येन। ८ उन्नमितचक्षुः, आंख उठाये हुआ।

उन्नविष्क—काठियावाड़के गिरनार पर्वतके निकटस्थ एक प्राचीन ग्राम। भीमने इसी स्थानपर उन्नक नामक असुरको मारा था। आजकल इसे 'ओसम' कहते हैं।

"ततो गच्छेन्महादेवि उन्नविष्केति विश्रुतम्।
योजनस्यान्तरे देवि पश्चिमे मङ्गला स्थिति:॥
उन्नको यत्र भीमेन हत्वा त्यक्तस्तथा प्रिये।" (प्रभासखण्ड २८८।२,४-५)

उन्नस (सं० त्रि०) उन्नता नासिका यस्य, बहुव्रीहेः समासान्तोऽच् स्यात्। उपसर्गाच्च। पा ५।४।११९। १ उच्च नासायुक्त, ऊंची नाकवाला।

उन्नाद (सं० पु०) उत्-नद-घञ्। उच्च शब्द, ऊंची आवाज़। (भारत वन १५८ अ०)

उन्नाब (अ० पु०) बदरीफल, बेर। यह अफ़गानस्थानसे शुष्क आता और औषधमें डाला जाता है।

उन्नाबी (अ० वि०) बदरी फलवत् रक्तवर्ण, बेर-जैसा लाल।

उन्नाभ (सं० पु०) रघुवंशीय राजविशेष। (रघु १८।१९)

उन्नाय (सं० पु०) उत्-नी उपपदे घञ्। अवोदनियः। पा ३।३।२६। १ उत्तोलन, उठाव, खिंचाव। २ परामर्श, मशविरा।

उन्नायक (सं० त्रि०) १ उत्तोलन करनेवाला, जो उठाता हो। २ प्रमाण देनेवाला, जो हवाला देता हो।

उन्नायकत्व (सं० क्लो०) १ ज्ञापकत्व, समझाने या बतलानेका काम। २ जनकज्ञानविषयत्व (न्यायकौमुदी)

उन्नासी (हिं० वि०) ऊनाशीति, सात दहाई और नौ एकाई रखनेवाला।

उन्नाह (सं० पु०) उत्-नह-घञ्। काञ्जिक, कांजी। यह तण्डुलके मण्डसे बनता है।

उन्निद्र (सं० त्रि०) उद्गता निद्रा स्वप्नः दुःखादिकं वा यस्मात्। १ प्रफुल्ल, फूला हुआ। २ विकसित, खिला हुआ। ३ निद्रारहित, जागता हुआ, जिसे नींद न लगे। ४ सतर्क, ख़बरदार। ५ उद्दीप्त, चमकीला। ६ निद्रा न लेनेवाला, जो सोता न हो।

उन्निद्रता (सं० स्त्री०) निद्राराहित्य, बेदारी, नींद न लगनेकी हालत।

उन्नी (सं० त्रि०) उत्तोलन करनेवाला, जो ऊपरको खींचता हो।

उन्नीत (सं० त्रि०) उत्-नी-क्त। १ ऊर्ध्वनीत, ऊपर उठाया हुआ। २ विकसित, खिला हुआ।

उन्नीस (हिं० वि०) १ एकोनविंशति, एक दहाई और नौ एकाई रखनेवाला। २ किञ्चित् न्यून, कुछ कम।

उन्नीसवां (हिं० वि०) उन्नीस संख्या रखनेवाला।

उन्नेतृ (सं० त्रि०) उत्-नी-तृच्। १ ऊर्ध्वनेता, ऊपर ले जानेवाला। २ उद्भावक, तरक्की देनेवाला। (पु०) ३ सोलह ऋत्विक्के अन्तर्गत एक ऋत्विक्। इसके द्वारा सोमरसको भाण्डसे पात्रमें छोड़ाते हैं।

उन्नेत्र (सं० क्लो०) १ उन्नेता ऋत्विक्का कार्य। (कात्यायनश्रौतसू० २४।४।४६) (त्रि०) २ ऊर्ध्वनेत्र, आंख ऊपरको उठाये हुआ।

उन्नेय (सं० त्रि०) उत्-नी-यत्। १ ऊर्ध्व ले जाने योग्य, जो ऊपर चढ़ाने क़ाबिल हो। २ उद्भावनीय, ख़्यालमें न लाये जाने क़ाबिल।

उन्नेयत्व (सं० क्लो०) १ ज्ञापनयोग्यत्व, समझाये जाने काबिल हालत। २ जन्य ज्ञानविषयत्व। (न्यायकौमुदी)

उन्मज्जक (सं० पु०) उत्-मस्ज-ण्वुल्। १ तपस्वी-भेद। उन्मज्जक तपस्वी गले बराबर जलमें खड़े हो तपस्या किया करते हैं।

"कण्ठदघ्ने जले स्थित्वा तपः कुर्वन् प्रवर्तते।
उन्मज्जकः स विज्ञेयस्तापसो लोकपूजितः॥" (योगसार)

(त्रि०) २ जलमें डूबनेवाला।

उन्मज्जन (सं० क्लो०) उत्-मस्ज-ल्युट्। १ प्लवन, तैरने या पानीमें कूदनेका काम। २ शिवके किसी गणका नाम।

उन्मण्डल (सं० क्लो०) ज्योतिषोक्त दिनरात्रिकी क्षय-वृद्धिका ज्ञापक मण्डल विशेष।

"पूर्वापरक्षितिजसङ्गमयोर्विलग्नं याम्ये ध्रुवे पललवैः क्षितिजादधःस्थे।
सौम्ये कुजादुपरि चाचलवेध्रुवेतदुन्मण्डलं दिननिशोः क्षयवृद्धिकारि॥"
(सिद्धान्तशिरोमणि)

उन्मण्डलकर्ण (सं० पु०) ज्योतिषोक्त उन्मण्डलस्थ सूर्यकी छायाका कर्ण।

"द्युतारनांशार्कहृद्धभुजज्यया खरामतिथ्यस्तभुवो (१० १५ ३०) हृताः परः।
पलश्रुतिघ्नः पलभा विभाजितः परोऽथ वोदृक्तगते रवौ श्रुतिः॥"
(सिद्धान्तशिरोमणि)

उन्मण्डलनृ (सं० पु०) ज्योतिषोक्त अक्षक्षेत्रके प्रदर्शनार्थ उन्मण्डलका शङ्कु।

उन्मत्त (सं० त्रि०) उत्-मद-क्त। १ उन्मादग्रस्त, पागल। २ वाह्यज्ञानशून्य, बेखबर। ३ मतवाला। (पु०) करणे क्त। ४ धुस्तूर, धतूरेका पेड़। ५ श्वेतधुस्तूर, सफेद धतूरा। ६ मुचकुन्दवृक्ष। ७ राक्षसविशेष।

उन्मत्तक (सं० त्रि०) उन्मत्त इव, कन्। १ मत-वाला, जो नशेमें हो। २ उन्मादग्रस्त, पागल।

"क्लीवोऽथ पतितस्तज्जः पङ्गुरुन्मत्तको जड़ः।" (याज्ञवल्क्य २।१४३)

उन्मत्तकारिणी (सं० स्त्री०) दुग्धिका, दूधी।

उन्मत्तगङ्ग (सं० क्लो०) देशविशेष। (सिद्धान्तकौमुदी)

उन्मत्तगीत (सं० त्रि०) प्रलापसे कहा हुआ, जो पागलपनसे गाया गया हो।

उन्मत्तता (सं० स्त्री०) उन्मादग्रस्त होनेकी बात, पागलपन।

उन्मत्तदर्शन (सं० त्रि०) उन्मादग्रस्त, जो पागल-जैसा देख पड़ता हो।

उन्मत्तप्रलपित (सं० त्रि०) उन्मादकी अवस्थामें कहा हुआ, जो पागलपनसे कहा गया हो।

उन्मत्तरस (सं० पु०) शीताङ्ग सन्निपातपर दिया जानेवाला एक औषध। रस एवं गन्धकको तुल्यांश ले धुस्तूरफलके द्रवमें एक दिन घोंटे और फिर सबके बराबर त्रिकटुका चूर्ण छोड़े। इस औषधके सेवनसे शीताङ्ग सन्निपात दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मत्तरूप, उन्मत्तदर्शन देखो।

उन्मत्तलिङ्गिन् (सं० त्रि०) उन्मत्त बनता हुआ, जो झूठमूठ पागलपन देखाता हो।

उन्मत्तवत् (सं० अव्य०) उन्मत्त व्यक्तिकी भांति, पागलकी तरह।

उन्मत्तवेश (सं० पु०) शिव, महादेव।

उन्मत्ता, उन्मत्तकारिणी देखो।

उन्मत्तावन्ति—काश्मीरके एक राजा। चन्द्रवर्माके मारे जानेपर शर्वट और अपरापर मन्त्रिगणने पार्थपुत्र उन्मत्तावन्तिको काश्मीरका राजासन सौंपा था। किन्तु इनके राजत्वकालमें अत्याचार और व्यभिचार वृद्धिगत होने लगा। राजा विज्ञ मन्त्रिगणकी बात न मान दुष्ट लोगोंके तोषामोदमें भूले और अत्यन्त गर्हित आचरणसे फूले थे। भयसे पिता पार्थने राजधानी छोड़ जयेन्द्रविहारमें जा सपरिवार वास किया। वहांके भिक्षुक जा कुछ उन्हें आहारीय देते, वे उसीपर जीते थे। किन्तु इनसे वह भी सहा न गया। उन्मत्तावन्तिने दुर्वृत्त लोग लगा अपने पूजनीय पिता और ज्ञाति-वर्गको मरवा डाला था। राजा इतने निष्ठुर थे, कि गर्भवतीका पेट फड़ा गर्भस्थ भ्रूणको देखते और उसमें आनन्द मानते। अवशेषमें राजयक्ष्मा रोगसे आक्रान्त हो इन्होंने (८३८ ई०) प्राण छोड़ा। काश्मीर देखो।

उन्मथ (सं० पु०) उत्-मथ-अप्। वध, क़त्ल।

उन्मथन (सं० क्लो०) उत्-मथ भावे ल्युट्। १ उन्म-र्दन, धक्का-मुक्की। २ हिंसा, मारकाट। (रघु ४।९) ३ सुश्रुतोक्त यन्त्रके कर्मका एक भेद। (त्रि०) कर्तरि ल्यु। ४ मर्दन-कारक, मल डालनेवाला।

उन्मथित (सं० त्रि०) उत्-मथ-क्त। १ मर्दित, रगड़ा हुआ। २ विनष्ट, कुचला हुआ।

उन्मद (सं० त्रि०) उद्गतो मदो यस्य। १ उन्माद-युक्त, मतवाला। (माघ ६।२९) २ उन्मत्त, नशा पिये हुआ। (पु०) ३ उन्माद, पागलपन।

उन्मदन (सं० त्रि०) प्रीतिसे उत्पन्न, दग्धकसे जला हुआ।

उन्मदिष्णु (सं० त्रि०) उत्-मद-इष्णुच्। अलंकृञ्निराकृञ्-प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृतु-इधु सहचर इष्णुच्। पा ३।२।१३६। उन्मत्त, मतवाला।

उन्मनस् (सं० त्रि०) उत्कण्ठितं मनो यस्य। १ उद्विग्न, बेचैन। २ विमना, दूसरी तर्फ दिल लगाये हुआ। "पयोधरेणोरसि काचिदुन्मनाः।" (भारवि ८।१९)

उन्मनस्क, उन्मनस् देखो।

उन्मनायित (सं० क्लो०) उन्माद, पागलपन।

उन्मनी (सं० स्त्री०) उन्मनस् पृषोदरादित्वात् ङीष्। योगीकी एक अवस्था। यह हठयोगको एक मुद्रा है। दृष्टिको नासाके अग्रभागपर लगाने और भ्रुकुटिको ऊपर चढ़ानेसे उन्मनी मुद्रा बनती है।

उन्मन्थ (सं० पु०) १ हिंसा, मारकाट। २ कर्णपालीगत रोगविशेष, कानकी लौमें होनेवाली एक बीमारी।

> "बलादवर्धयत कर्णं पाल्यां वायुः प्रकुप्यति।
> गृहीत्वा सकफं कुर्याच्छोफं तद्दर्णवेदनम्॥
> उन्मन्थकः सकण्डूको विकारः कफवातजः।" (सुश्रुत)

बलसे कर्णपालि बढ़ानेपर कर्णके प्रान्तभागमें वायु बिगड़ जाता है। फिर कफयुक्त हो वातश्लेष्माका वर्ण और वेदनाविशिष्ट शोथ उठता है। यह रोग कफवातसे उपजता और कण्डुविशिष्ट रहता है।

उन्मन्थक (सं० पु०) १ कर्णपालीगत रोग विशेष, कानकी लवका एक आजार। उन्मन्थ देखो। (त्रि०) २ कम्पित करनेवाला, जो हिला डालता हो। ३ आघातकारी, मारनेवाला।

उन्मन्थन (सं० क्लो०) उत्-मन्थ-ल्युट्। १ मथन, मथाई। २ हनन, मारकाट।

उन्मथित (सं० त्रि०) मथा हुआ, जो हिलाया डुलाया या सताया गया हो।

उन्मयूख (सं० त्रि०) उद्दीप्त, चमकीला, जो चमक रहा हो। जिसकी किरणें फैल रही हों।

उन्मर्दन (सं० क्लो०) उत्-मृद-ल्युट्। १ उद्घर्षण, रगड़। २ वायु वा शूल प्रभृतिके निवारणार्थ क्रिया विशेष, मालिश। (सुश्रुत) करणे ल्युट्। ३ मर्दनयोग्य द्रव्यादि, मालिशकी चीज़।

> "उन्मर्दनमभिषेकेऽवनीयैके।" (कात्यायनश्रौतसू० १८।४।१८)
> 'उन्मर्दनचन्दनादि।' (कर्क)

उन्मा (वै० स्त्री०) ऊर्ध्वमान, एक नाप। (शुक्लयजु १५।६५)

उन्माथ (सं० पु०) उन्मथ्यतेऽनेन, उत्-मथ करणे घञ्। १ मृगवधयोग्य यन्त्र, फन्दा, जाल। भावे घञ्। २ मारण, मारकाट। (त्रि०) ३ घातक, चोट करनेवाला।

उन्माथिन् (सं० त्रि०) व्याकुल करनेवाला, जो घबरा देता हो।

उन्माद (सं० त्रि०) उत्-मद-घञ्। १ उन्मत्त, पागल। (पु०) २ उत्-मद आधारे घञ्। मत्तता रोग विशेष, पागलपनकी बीमारी। नाना कारणोंसे मनोविकार होने पर यह रोग उपजता है। सुश्रुतके मतमें—

> "मदयन्त्युद्धता दोषा यस्मादुन्मार्गमाश्रिताः।
> मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्तितः॥"

जिस रोगमें उद्धत दोष सकल ऊर्ध्वगत शिराके पथका आश्रय ले मनकी मत्तता उपजाते हैं, उसको उन्माद कहते हैं।*

महर्षि चरकके कथनानुसार—जो अति भय खाता, जो सत्त्वगुणसे दूर रहता, जो अखाद्य भोजन द्वारा एक प्रकारसे अधःपात लाता, जो मानसिक एवं शारीरिक स्वाभाविक क्रियायोंके विरुद्ध इन्द्रियादि चलाता, जो शरीरको नितान्त क्षीण बनाता, जो रोगकी असह्य यन्त्रणासे घबराता, जो काम क्रोध

* "रुक्षान्नशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोऽतिवृद्धः।
चिन्तादिदुष्टं हृदयं प्रदूष्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहन्ति शीघ्रम्॥" (चरक)
रूखा या बासी भात, विरेक, धातुक्षय, उपवास आदि कारणोंसे बहुत बढ़ा हुआ वायु चिन्ता द्वारा हृदयको अत्यन्त बिगाड़ता है और शीघ्र ही बुद्धि एवं स्मृतिको नष्टकर देता है।

लोभ हर्ष भय शोक चिन्ता प्रभृतिके वशवर्ती हो चित्तको दोष लगाता और जो बुद्धिकी चञ्चलतासे दोषसमूहके प्रबल वेगसे तपकर हृदयस्थानको जाने तथा मनकी गति सकल घेरमें आनेपर मन, बुद्धि, संज्ञा, ज्ञान, स्मृति, भक्ति, स्वभाव, चेष्टा तथा आहार आदिका विभ्रम पाता, उसीको उन्माद रोग दबाता है।

उन्माद रोग लगनेके पूर्व यह लक्षण देख पड़ता है—मस्तकका शून्य भाव, चक्षुद्वयका चाञ्चल्य, कर्णमें ध्वनि, निश्वास प्रश्वासका आधिक्य, मुखसे लारकी टपक, भोजनमें अनिच्छा, अरुचि, हृदयमें वेदना, अकारण चिन्ता, अविपाक, परिश्रमका बोध, मोह, मदका उद्वेग, लोमका हर्षण, ज्वर, मुखभ्रूकुटि द्वारा चक्षु तथा मुखकी वक्रता, सोते समय भ्रम एवं चित्र-विचित्र प्रदर्शन, चक्षुका आवर्तन और प्रबल नदीकी धारामें कूद पड़नेकी इच्छा।

चरकके मतमें उन्माद रोग पांच प्रकारका होता है—१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ आगन्तुक।*

पित्तोन्मादका लक्षण यह है—क्रोध, गर्व, असहिष्णुता, जहां तहां ढील, काष्ठ वा अस्त्रादि फेंकना, घूसा मारना, अपनी वा दूसरेकी छाया देखना, ठण्डा जल और वासी भात खानेकी इच्छा, सर्वदा सन्तापक बोध, चक्षु तमतमाना, हरा या पीला पड़ना, सर्वदा चक्षु घूमते जैसे रहना।†

कफोन्मादमें ये देखते हैं—वमन, अग्निमान्द्य, अङ्गकी अवसन्नता, अरुचि, कास, स्त्रीसंसर्गका अभिलाष, अल्प निद्रा, कभी खानेकी अनिच्छा, निर्जन एवं उष्ण रहनेकी उत्कण्ठा, बीभत्सभाव, मुखपर शोथ, सादे चक्षु, स्थिर तथा आंखका मलमें ढाका और कफके हितजनकसे विपरीत द्रव्य खानेसे अपकारका बोध होता है।

वायुके प्रकोपसे जो उन्माद उठता है, उसमें देहकी रूक्षता, कर्कशता, श्वास, दुर्बलता, अङ्गकी सन्धिका स्फुरण, आस्फालन, नृत्य, गीत, रोदन, भ्रमण प्रभृति लक्षण रहते हैं।

सन्निपातसे उन्माद आनेपर तीनो दोषोंका लक्षण मिलता है। किसीके मतमें सन्निपात-जन्य उन्माद आरोग्य हो जाता है। किन्तु सम्पूर्ण लक्षण देख पड़ने पर रोग असाध्य ठहरता है।

चोर, राजपुरुष वा शत्रु द्वारा अत्यन्त भय पाने वा अत्यन्त क्षोभ आने अथवा अतिशय स्त्रीका संसर्ग उठानेसे मनका उत्कट विकार बढ़ता है।

विषजन्य उन्मादमें रोगी मूढ़ भावसे गाता हंसता या रोता है। चक्षु रक्तवर्ण पड़ जाते हैं। बल और इन्द्रियोंका तेज घट जाता है। दीनभाव बढ़ने लगता है। मुख कपिशवर्ण देखाई देता है। संज्ञाकी हीनता आती है।

महर्षि चरकने कहा है—वात, पित्त एवं कफज उन्मादमें जो कारण है, उन्हींसे अति भयङ्कर त्रिदोषका उन्माद उपजता है। उसमें तीनो दोषोंका कारण लक्षण देखाई देता है। सुश्रुतने त्रिदोषजनितको सन्निपात-जन्य उन्माद लिखा है।

युरोपके प्रधान प्रधान चिकित्सक उन्माद रोगको (Insanity) छः भागमें बांटते हैं—१म मतिविभ्रम (Delirium), २य उन्मत्तता (Mania or Hyperphrenic), ३य उत्कण्ठारोग वा विषण्णता (Melancholia), ४र्थ विषाद (Hypochondriasis), ५म बुद्धिविपर्यय (Dementia) और ६ष्ठ जड़ता वा निर्बुद्धिता (Idiotcy)। मतिमें विभ्रम पड़नेसे अभिप्राय ठीक नहीं उतरता। कभी भली और

---

* "एकैकशः समस्तैश्च दोषैरत्यर्थमूर्च्छितैः।
मानसेन च दुःखेन स पञ्चविध उच्यते॥
विषाद्भवति षष्ठश्च यथास्वन्तत्र भेषजम्।" (सुश्रुत)

त्रिदोष भिन्न भिन्न वा अनन्य भावमें बिगड़ने अथवा मानसिक दुःख लगनेसे पांच प्रकारका उन्माद उपजता । सिवा इसके षष्ठ उन्माद विषसे आता है। इसीसे स्व स्व कारण समझ कर उनकी चिकित्सा चलाना चाहिये।

† सुश्रुतने पित्तोन्मादका लक्षण कुछ विशेष लिखा है—
"तृट्स्वेददाहबहुलो बहुभुग्विनिद्रश्छायाहिमानिलजलान्तविहारसेवी।
तीक्ष्णो हिमाम्बुनिचयेऽपि स वह्निशङ्की पित्ताद्दिवा नभसि पश्यति तारकाश्च।"
तृष्णा, स्वेद, दाह, अतिभोजन, निद्राकी हीनता, छाया, वायु एवं जलके विहारमें अभिलाष, तीक्ष्ण-हिम-जल प्रभृतिसे भय, दिनके समय आकाशमें तारका दर्शन।

कभी बुरी राह चलनेको जी चाहता है। मेधाकी शक्ति घट जाती है। मन डावांडोल रहता अथवा वस्तुका अनुभव और मोह लगता है। उन्मत्तता होनेसे मस्तिष्क विगड़ता अथवा मस्तिष्क की क्रियाका क्रमश: अवसान होने लगता है। मनकी गति, इच्छा एवं प्रकृति उलट पलट जाती है। इस उन्मादमें प्रधानत: दो प्रकार होते हैं। कभी रोगी स्थिरभाव पकड़ता है और कभी भीषण मूर्ति बना अनर्थ साधन करता है। उत्कण्ठा रोगमें शोक अथवा दु:ख, मनका भाव एवं मस्तिष्कका कर्म बढ़ता है। कभी कभी एक विषयकी चिन्तामें मन अस्थिर होनेसे यह रोग लग जाता है। ऐसी अवस्थाको ऐकान्तिक उन्माद कहते हैं। बुद्धिके विपर्ययमें मानसिकक्रिया घट जाती है और मनपर अधिक दुर्बलता आ जानेसे मानसिकशक्ति अकर्मण्य हो जाती है। रोगका कोई अनुमान नहीं लगा सकता। निर्बुद्धिता वा जड़ताका रोग लगनेसे एककाल हो बुद्धिकी शक्ति लुप्त हो जाती है। किसी किसी स्थलमें अति सामान्य बुद्धिका परिचय मिलता है। यह रोग प्राय: शैशव वा बालककालमें होता है। जन्मकालीन अथवा किसी विशेष कारणसे बुद्धिकी वृत्तिका पथ रुकनेसे जड़ता बढ़ती है।

महर्षि चरकका कथन है—"यस्तु दोषानिमित्तेभ्यो उन्मादेभ्य: समुत्थानपूर्वरूपलिङ्गविशेषसमन्वितो भवत्युन्मादस्तमागन्तुमाचचते।" अर्थात् जो उन्माद पूर्वोक्त दोषनिमित्तक उन्मादसे विशेष निदान, पूर्वरूप एवं रूपविशेष रखता है, उसका नाम आगन्तुक उन्माद है। किसीके मतमें पूर्व जन्मके अशुभ कर्मसे आगन्तुक उन्माद उठता है। इसमें देवताके समान बलवीर्यादि देख पड़ते है। प्राचीन वैद्योंके विचारसे देवतादिके डर करनेसे उपजनेवाला रोग ही आगन्तुक उन्माद है। चरकने स्पष्ट कहा है—देवतागणकी दृष्टि, गुरु वृद्ध सिद्ध या ऋषिगणके अभिशाप, पितृलोकको अवज्ञा, गन्धर्वगणके स्पर्श, शरीरमें यक्ष तथा राक्षस प्रभृतिके प्रवेश और पिशाचगणके आरोहणसे उन्माद उपजता है।

पूर्वोक्त देवतादिके द्वारा उन्मादकी उत्पत्ति पूर्वकृत पापके परिणाम, एकाकी शून्य गृहके वास, चतुष्पथपर, सन्ध्याकाल अथवा अशुचि अवस्थामें पर्वसन्धिके मैथुन, रजस्वला स्त्रीके अभिगमन, अध्ययन बलि मङ्गल-होमादि कार्यके अवैध आचरण, तुमुल युद्ध, देश कुल वा नगरादिके विनाश, स्त्रीके सन्तानोत्पादन, नाना-प्रकारके भूत और अशुचि स्पर्श, वमन तथा रक्तस्रावके अशौच, अशुचि रहते चैत्य एवं देवालय वा नगर एवं जनपदमें रात्रिकालको चतुष्पथ अथवा वायुमुख वा श्मशानके अभिमुख गमन, मांस मधु तिल गुड़ मद्य प्रभृतिके सेवनको उच्छिष्टावस्था, द्विज गुरु देवता रागो आदिकी अवमानना, धर्माख्यानके व्यतिक्रम और पापकर्म अथवा अप्रशस्त कालमें किसी मङ्गलकर कार्यके आरम्भसे होती है।

भारतीय वैद्य कहते हैं—मोह आने, मनमें उद्वेग, कर्णमें शब्द और हृदयमें अतिशय उत्साह समाने, देह दुबलाने, अन्नपर अरुचि आने, स्वप्नमें कलुषित द्रव्य खाने और वायु द्वारा उन्मथन एवं भ्रमपाने आदि लक्षण देखानेसे उन्मादरोग शीघ्र आरोग्य होता है।*

चिकित्सा—देवता अथवा ग्रहादि द्वारा उन्माद उठनेपर शान्ति और पौष्टिक आभिचारिक प्रभृति क्रियासे दब जाता है। साधारण औषधसे कोई फल नहीं निकलता। फिर भी यथार्थ शारीरिक और मानसिक कारण लगनेपर भिन्न भिन्न उपायसे चिकित्सा चलाना चाहिये।

> "उन्मादे वातिके पूर्वं स्नेहपानं विरेचनम्।
> पित्तजे कफजे वान्तिः पयोवस्त्यादिकक्रम:॥" (चक्रपाणि)

वातिक उन्मादमें स्नेहपान एवं विरेचन और पित्तज एवं कफजमें वमन कराने बाद स्नेहपान, वस्ति शोधन तथा विरेचनके क्रमसे चिकित्सा होती है।

प्राचीन वैद्यगणके मतसे अपस्मार रोगको तरह उन्मादको चिकित्सा करनेसे भी निर्वाह हो जाता

---

* "मोहोद्वेगौ स्वन: श्रोत्रे गात्राणामपकर्षणम्॥
अत्युत्साहोऽरुचिश्चान्ने स्वप्ने कलुषभोजनम्।
वायुनोन्मथनञ्चापि भ्रमश्च क्रमतस्तथा।
यस्य स्यादचिरेणैवमुन्मादं सोऽधिगच्छति॥" (सुश्रुत)

है। क्योंकि इन दोनोंमें दूष्य एवं दोषकी तुल्यता विद्यमान है।

सुश्रुत कहते हैं—सकलप्रकारके उन्मादमें चित्तको आल्हादित रखना प्रधान कर्तव्य है। मद रोग अर्थात् उन्मादकी प्रथमावस्थापर मृदु क्रिया किया करते हैं। विषजन्य रोग लगते भी विषक्रियाके साथ साथ मृदु क्रिया कही है।*

ब्राह्मणयष्टि, पुरातन कुष्माण्ड, शङ्खपुष्पी एवं तुलसी पृथक् पृथक् इन्द्रयव तथा मधु मिलाकर खिलानेसे उन्माद रोग मिट जाता है।

हिङ्ग, सैन्धव लवण, मरिच, पिप्पली और शुण्ठी प्रत्येकका दो पल कल्क छः सेर घृत और चतुर्गुण गोमूत्रमें पकाकर देनेसे उन्माद निश्चय आरोग्य होता है।

सद्वैद्य इस रोगमें लशुणाद्य-वटिका और कल्याणक, क्षीरकल्याण, चैतस, महापैशाचिक, हिङ्ग्वाद्य तथा लशुनाद्य प्रभृति घृत खिलाते हैं।

समुदायके मध्य जिसमें रोगी क्रोध और आक्रोशसे हस्त उठा निष्क्रिय भावसे अपने या अन्यके शरीर पर छोड़ देता है, वही उन्माद रोग असाध्य होता है। फिर जिस उन्मादमें चक्षुसे अश्रु चलता, मेढ्रसे रक्त बहता, जिह्वापर क्षत पड़ता और नासिकासे जल गिरता, वह भी असाध्य-जैसा ही होता है। अथवा रोगीके ताली बजाने, सर्वदा चिल्लाने, अपने मर्मस्थानपर चोट लगाने, दुर्वर्ण देखाने, तृष्णासे घबराने और दुर्गन्ध एवं हिंस्रक बन जानेसे उन्माद अच्छा नहीं होता।†

प्रथम रोगीको शान्त रखना चाहिये। किन्तु पित्तजनित उन्मादमें विशेषतः वमन करा देते हैं। वमन एवं विरेचनादिसे कोष्ठ, हृदय, इन्द्रिय तथा मस्तक शुद्ध होनेपर रोगी प्रसन्नता, स्मृति और संज्ञा पाता है। किन्तु शुद्ध हो जाते भी यदि उसके आचरण अयोग्य देखाते है, तो नस्य सुंघाते और अञ्जन लगाते हैं। ऐसे स्थलपर ताड़न और मनः बुद्धि तथा देहके प्रति उद्वेग प्रापण अतिशय हितकर है। फिर अतिशय शक्तिसम्पन्न होनेपर कड़े कपड़ेसे बांध और अंधेरे घरमें डाल रोगी दबाया जाता है। घरमें लक्कड़ पत्थर बिलकुल रहना न चाहिये।

उन्मादके रोगीको सुधारनेका उपाय—

"तर्जनं त्रासनं दानं सान्त्वनं हर्षणं भयम्।
विस्मयो विस्मृते हेतुर्नयन्ति प्रकृतिं मनः॥" (चरक)

तर्जन, त्रासन, दान, सान्त्वना, हर्ष, भय एवं विस्मय मनको भटका कर प्रकृति पर पहुंचा देता है।

डाक्टरीके मतसे रोगीका परिधेय वस्त्र सर्वदा उष्ण रखा जाता, भीगने या शीतल पड़ने नहीं पाता। देहके मध्यभागपर फ्लानेल लिपटा रहना अच्छा है। रोगी रोयेंकी बनी या मुलायम चटाईपर नर्म तकियाके सहारे लिटाया जाता है। शयन कालमें देहके अपर अङ्ग प्रत्यङ्गकी अपेक्षा मस्तक कुछ उन्नत और अनावृत रहना चाहिये। मूर्छा आनेसे उसे भूमिपर लेटाते और आहारादि अवस्थामें देख भालकर खिलाते हैं।

आलोपाथीके मतमें उन्मादके रोगीको प्रथमावस्थामें ठण्ढा रखनेकी सविशेष चेष्टा करना चाहिये। इसपर नाइट्रेट अव पोटास, स्पिरिट अव अमोनिया, सिलुशन एसिटेट अव अमोनिया मिश्र, स्पिरिट अव नाइट्रिक ईथर, टार्टाराइस अञ्जन और कपूरका जुलाब देनेसे विशेष उपकार पहुंचता है। कपूर, कालोमेल और विनिगार प्रभृति भी विशेष लाभदायक हैं। फिर रोगीकी अवस्थाके अनुसार नानाप्रकार औषध दिया जाया करता है।

उन्मादक (सं० त्रि०) उत्-मद-णिच्-ण्वुल्। उन्मादजनक, नशा लाने या पागल बनानेवाला।

उन्मादन (सं० पु०) उत्-मद-णिच्-ल्यु। १ कामदेवके पञ्चवाणान्तर्गत वाण विशेष।

---

* "उन्मादेषु च सर्वेषु कुर्य्याच्चित्तप्रसादनम्।
मृदुपूर्वं मदेऽप्येवं क्रियां विद्वान् प्रयोजयेत्।
विषजे मृदुपूर्वाश्च विषघ्नीं कारयेत् क्रियाम्॥"
(सुश्रुत उत्तरतन्त्र ६२ अ०)

† "सर्वेष्वपि तु खल्वेष यो हस्तावुद्यम्य रोषसंरम्भान्निःसंज्ञोऽन्येष्वात्मनि वा पातयेत् सोऽसाध्यो ज्ञेयस्तथा साश्रुनेत्रो मेढ्रप्रवृत्तरक्तः क्षतजिह्वः प्रस्रुतनासिकश्छिद्यमानमर्मा प्रतिहन्यमानपाणिः सततं विकूजनं दुर्वर्णस्तृषार्तः पूतिगन्धश्च हिंसार्थी उन्मत्तो ज्ञेयस्तं परिवर्जयेत्।" (चरक)

"सम्मोहनोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा।
स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्चवाणाः प्रकीर्तिताः।"
(त्रिकाण्डशेष: १।१।४०)

उन्मादगजाङ्कुश (सं० पु०) उन्मादाधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। कितना ही पारा ले धतूरे, ब्रह्मयष्टि और कुचिलेके रससे ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसमें बराबर गन्धक मिला बन्धनार्थ ताम्रचक्रिकामें रख अल्प पुट देना चाहिये। फिर उसको समभाग धुस्तूरबीज, अभ्र, गन्धक एवं विषसे मिला तीन दिन घोंटनेपर यह रस बनता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) (त्रि०) २ चित्तमें विभ्रम उत्पन्न करनेवाला, जो पागल बना देता हो।

उन्मादपर्पटरस (सं० पु०) उन्मादके अधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। कालेधतूरेके पांच बीज मिलाकर तेत्रपर्पटीरस खिलानेसे उन्माद रोग दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादभञ्जनरस (सं० पु०) उन्मादके अधिकारका एक रस। त्रिकटु, त्रिफला, गजपिप्पली, विड़ङ्ग, देवदारु, किरात, कटुकी, कण्टकारी, यष्टि, इन्द्रयव, चित्रक, बला, पिप्पली एवं वीरणका मूल, शोभाञ्जनका वीज, त्रिवृता, इन्द्रवारुणी, वङ्ग, रूप्य, अभ्रक तथा प्रवालको समभाग मिलाने और सबके बराबर लौह डालकर जलमें घोंटनेसे यह रस तैयार होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादभञ्जिनी (सं० स्त्री०) उन्मादके अधिकारका एक रस। शुद्ध मनःशिलाका चूर्ण, सैन्धव, कटुकी, वचा, शिरीषबीज, हिङ्गु, श्वेतसर्षप, करञ्जबीज, त्रिकटु और पारावतका मल बराबर बराबर कूटपीस गोमूत्रमें कुटजबीज जैसी वटिका बना छायामें सुखा ले। इसे सवेरे, शाम और रातको रगड़कर आंखमें लगानेसे उन्मादरोग दूर होता है। इस रसको मधुरादिके रस और जलमें रगड़ना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादवत् (सं० त्रि) उन्माद-मतुप् मस्य वः। उन्मत्त, मतवाला, पागल।

उन्मादाङ्कुशरस (सं० पु०) औषधविशेष। तीन दिन धुस्तूरबीजके द्राव, जलपिप्पलीके रस और कुचेलकके द्रावसे सूतका ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसके बराबर कनकबीज, अभ्रक, गन्धक एवं विष डाल सबको तीन दिन घोटे। इस रसका वल्लमात्रा प्रयोग करना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

उन्मादिन् (सं० त्रि०) उन्मत्त, मतवाला, नशेबाज़।

उन्मादिनी (सं० स्त्री०) विजया, भांग।

उन्मादुक (वै० त्रि०) मादक द्रव्यका प्रेमी, जिसे नशा पीनेका शौक हो।

उन्मान (सं० क्ली०) उत्-मा भावे ल्युट्। १ परिमाण, वज़न।

"ऊर्ध्वमानं किलोन्मानं परिमाणन्तु सर्वतः।
आयामस्तु प्रमाणं स्यात् संख्या वाह्या तु सर्वतः॥" (वार्तिककारिका)

करणे ल्युट्। २ द्रोण परिमाण, ३२ सेरकी एक पुरानी तौल। ३ मूल्य, कीमत।

उन्मार्ग (सं० त्रि०) उत्क्रान्तो मार्गात्। १ कुपथगामी, बुरी राह जानेवाला। २ बुरी राह। ३ गर्हित आचरण, खराब चलन।

उन्मार्गगमन (सं० क्ली०) असत् पथावलम्बन, बुरी राहका जाना।

उन्मार्गगामिन् (सं० त्रि०) उन्मार्ग-गम-णिनि। असदाचारी, बदचलन, जो बुरा काम करता हो।

उन्मार्गजलवाहिन् (सं० त्रि०) अपना पानी बेराह ले जानेवाला।

उन्मार्गवर्तिन्, उन्मार्गगामिन् देखो।

उन्मार्गिन्, (सं० त्रि०) कुपथ पकड़नेवाला, जो बेराह जाता हो।

उन्मार्गी (सं० पु०) पञ्चविधमें अन्यतम भगन्दर रोग। यह बवासीरके साथ होता है।

उन्मार्जन (सं० क्ली०) घर्षण, रगड़।

उन्मित (सं० त्रि०) परिमित, नापा-जोखा।

उन्मिति (सं० स्त्री०) उत्-मद-क्तिन्। परिमाण, नाप-जोख।

उन्मिष (सं० पु०) उत्-मिष-क। १ प्रकाश, जहूर, चमक। २ विकाश, खुलना।

उन्मिषत् (सं० त्रि०) चक्षु उद्घाटन करता हुआ, जो आंख खोल रहा हो।

उन्मिषित (सं० त्रि०) उत्-मिष-क्त। १ प्रफुल्ल, खिला हुआ। २ उच्छ्रण, खुला।

उन्मील (सं० पु०) चक्षुका उद्घाटन, आंखका खोलना।

उन्मीलन (सं० क्ली०) उत्-मील-ल्युट्। १ विकाश, शिगुफ़तगी। २ उन्मेष, आंखका खुलना। ३ दृश्य भाव, देख पड़नेकी हालत।

उन्मालना (हिं० क्रि०) चक्षु उद्घाटित करना, आंख खोलना।

उन्मीलित (सं० त्रि०) उत्-मील-क्त। १ विकसित, खिला हुआ। (कुमार १।३२) २ प्रकाशित, ज़ाहिर। ३ उद्घाटित, खुला हुआ। ४ चक्षु उद्घाटित करनेवाला, जो आंख खोले हो।

"अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥"

(क्ली०) ५ काव्यालङ्कार विशेष, इसमें किसी वस्तुका प्रकाश रूपसे वर्णन किया जाता है।

उन्मुक्त (सं० त्रि०) उत्-मुच-क्त। बन्धनरहित, जो बंधा न हो।

उन्मुख (सं० त्रि०) उदूर्ध्वं मुखं यस्य। १ ऊर्ध्वमुख, मुंह उठाये हुआ। २ उद्यत, लगा हुआ। ३ उत्सुक, शौकीन। ४ यत्नवान्, तदबीरी। ५ उद्युक्त।

"तस्मिन् संयमिनामाद्ये जाते परिणयोन्मुखे।" (कुमार)

(पु०) ६ मृगविशेष। पूर्वजन्ममें यह व्याध और ब्राह्मण रहा। (हरिवंश)

उन्मुखता (सं० स्त्री०) १ ऊर्ध्वमुख-रहनेका भाव, जिस हालतमें मुंह उठा रहे। २ आशान्वित दशा, जिस हालतमें राह देखें।

उन्मुखर (सं० त्रि०) उच्चशब्द करनेवाला, पुरशोर।

उन्मुद्र (सं० त्रि०) उद्गता मुद्रा यस्मात्। १ विकसित, खिला हुआ। २ मुद्रारहित, जिसपे मुहर न रहे।

उन्मूल (सं० त्रि०) उद्गतमूल, जो जड़ निकाल चुका हो। २ नष्टमूल, जड़से उखाड़ा हुआ। ३ निर्मूल, बेजड़।

उन्मूलक (सं० त्रि०) निर्मूल कर डालनेवाला, जो जड़से उखाड़ देता हो।

उन्मूलन (सं० क्ली०) उत्-मूल-णिच्-ल्युट्। १ उत्पाटन, उखाड़। २ निर्मूलनकरण, जड़से नोच डालनेका काम। ३ विनाशन, बरबाद करनेकी हालत।

उन्मूलित (सं० त्रि०) उत्-मूलि-नामधातु क्त। १ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ। २ विनष्ट, बरबाद किया हुआ।

उन्मृजावमृजा (सं० स्त्री०) उन्मृज अवमृज इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं० समा०। उन्माजन, मालिश, दलाई-मलाई।

उन्मृश्य (सं० त्रि०) उत्-मृश-क्यप्। हस्त उठा स्पर्श करनेके योग्य, जो हाथ उठाकर छूवा जा सकता हो।

उन्मेदा (सं० स्त्री०) स्थूलता, मोटापन।

उन्मेय (सं० त्रि०) उत्-मा-यत्। परिमेय, नापने-जोखने काबिल।

उन्मेष (सं० पु०) उत्-मिष-घञ्। १ प्रकाश, चमक। २ चक्षुका उन्मीलन, आंखकी खोलाई।

उन्मेषण (सं० क्ली०) जाग्रतभाव, जगाई, देख पड़नेकी हालत।

उन्मोचन (सं० क्ली०) उत्-मुच-ल्युट्। मोचन, खोलाई।

उन्हाँलागम (हिं० पु०) उष्णकालका आगम, गर्मीकी आमद।

उन्हानि (हिं० स्त्री०) सादृश्य, बराबरी

उप (सं० अव्य०) बीसमें एक उपसर्ग। उप पराधे हरेर्गुणाः। पा १।४।८७ काशिका। यह संज्ञा और क्रियामें लगनेसे निम्नलिखित अर्थोंको प्रकाशित करता है,—१ आधिक्य, २ हीनता, ३ सामीप्य, ४ आसन्नता, ५ अनुगति, ६ पश्चाद्भाव, ७ अनुकम्पा, ८ सादृश्य, ९ आरम्भ, १० सामर्थ्य, ११ व्याप्ति, १२ शक्ति, १३ पूजा, १४ दान, १५ दोषाख्यान, १६ आश्चर्यकरण, १७ निदर्शन, १८ मारण, १९ लिप्सा, २० उपालम्भन, २१ उद्योग और २२ भूषण।

उपकक्ष (सं० त्रि०) स्कन्धपर्यन्त पहुंचनेवाला, जो कन्धातक हो।

उपकण्ठ (सं० त्रि०) उपगतं कण्ठम्। १ निकट, नजदीकी। (क्ली०) २ ग्रामान्त, गांवका छोर। ३ अश्वकी पञ्चमगति, घोड़ेकी पांचवींचाल, कदम। ४ सामीप्य, पड़ोस।

उपकथा (सं० स्त्री०) आख्यायिका, कहानी।

उपकनिष्ठिका (सं० स्त्री०) उपगता कनिष्ठिकाम्। अनामिका, सबसे छोटीके पासकी उंगली।

उपकन्या (सं० स्त्री०) उपगता कन्याम्। कन्याकी सखी, बेटीकी सहेली।

उपकन्यापुर (सं० अव्य०) स्त्रीभवनके समीप, औरतोंके घरके पास।

उपकरण (सं० क्ली०) उप-कृ-ल्युट्। १ सामग्री,सामान्। २ राजाका छत्रचामरादि चिह्न। ३ उपकार, भलाई।

उपकरणवत् (सं० त्रि०) सामग्रीयुक्त, सामान्से भरा हुआ।

उपकरना (हिं० क्रि०) उपकार करना, फ़ायदा पहुंचना।

उपकर्ण (सं० अव्य०) कर्ण वा कर्णस्य समीपे, विभक्त्यर्थे सामीप्ये वा अव्ययीभावः। कर्णमें, कानके पास।

उपकर्णिका (सं० स्त्री०) १ मूषकर्णिका, चूहाकानी। २ किंवदन्ती, अफ़वाह, कानाफूसी।

उपकर्तृ (सं० त्रि०) उप-कृ-तृच। उपकारक, फ़ायदा पहुंचानेवाला।

उपकलाप (सं० अव्य०) कलापमें, कलापके निकट।

उपकल्प (सं० त्रि०) उपगतः कल्पम्। कल्पोपगत, कल्पसे मिला हुआ।

उपकल्पन (सं० क्ली०) उप-क्लृप-णिच्-ल्युट्। १ सम्पादन, बनवाई। २ आयोजन, तैयारी।

उपकल्पित (सं० त्रि०) १ आयोजित, तैयार किया हुआ। २ सम्पादित, बनाया हुआ।

उपकादि—पाणिनिका कहा हुआ एक गण। इसमें निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उपक, लमक, भ्रष्टक, कपिष्ठल, कृष्णाजिन, कृष्णसुन्दर, चूड़ारक, आड़ारक, षड्क, उदङ्क, सुधायुक, अबन्धक, पिङ्गलक, पिष्ट, सुपिष्ट, मयूरकर्ण, खरीजङ्घ, शलाखल, पतञ्जल, पदञ्जल, कठेरणि, कुषीतक, काशकृत्स्न, निदाघ, कलशीकण्ठ, दामकण्ठ, कृष्णपिङ्गल, कर्णक, पर्णक, जटिलक, वधिरक, जन्तुक, अनुलोम, अनुपद, प्रतिलोम, अल्पजग्ध, प्रतान, अनभिहित, कमक, वटारक, लेखाभ्र, कमन्दक, पिञ्जूलक, वर्णक, मसूरकर्ण, मदाघ, कवन्तक, कमन्तक, कदामत्त, दामकण्ठ। उपकादिभ्योऽन्यतरस्यामद्वन्द्वे। पा २।४।६९।

उपकान्त (सं० अव्य०) कान्तके समीप, दास्तके पास।

उपकार (सं० पु०) उप-कृ भावे घञ्। १ साहाय्य, मदद। २ अनुग्रह, मिहरबानी। ३ उपकरण, सामान्। ४ विकीर्ण कुसुमादि, लटकाये हुये फूल वग़ैरह।

उपकारक (सं० त्रि०) उप-कृ-ण्वुल्। उपकारकर्ता, भलाई करनेवाला।

उपकारकत्व (सं० क्ली०) साहाय्य, मदद, भलाई।

उपकारपर (सं० त्रि०) उपकारक, भलाई करनेमें मिहनत उठानेवाला।

उपकारापकार (सं० पु०) साहाय्य तथा आपद्, भलाई-बुराई।

उपकारिका (सं० स्त्री०) उप-कृ-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ उपकारकर्त्री, भलाई करनेवाली। २ पिष्टकभेद, किसी क़िस्मकी रोटी या पूड़ी। ३ कुशूल, कोठला। ४ राजभवन, शाही महल।

उपकारिता (सं० स्त्री०) साहाय्य, मदद।

उपकारिन् (सं० त्रि०) उपकार करनेवाला, जो फ़ायदा पहुंचाता हो।

उपकार्य (सं० त्रि०) उप-कृ-ण्यत्। १ उपकार किये जाने योग्य, जो भलाई किये जानेके क़ाबिल हो।

उपकार्या (सं० स्त्री०) १ राजभवन, शाही महल। २ कुशूल, अन्न रखनेका घेरा।

उपकाल (सं० पु०) एक नागराज।

उपकालिका (सं० स्त्री०) १ जीरकभेद, किसी क़िस्मका जीरा। २ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ३ कृष्णजीरक, काला जीरा। ४ कलोञ्जीजीरक, कुलोंजन। ५ पिप्पली, पीपल।

उपकीचक (सं० पु०) विराट् राजाके श्यालक, कीचकके अनुज।

उपकीर्ण (सं० त्रि०) सिक्त, छिड़का हुआ, जो भरा हो।

उपकुञ्च (सं० पु०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

उपकुञ्चक, उपकुञ्च देखो।

उपकुञ्चि (सं० स्त्री०) उप-कुञ्च-कि। कलोञ्जी-जीरक, कुलौंजन। २ वृहज्जीरक, बड़ा जीरा। ३ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ४ कृष्णजीरक, काला जीरा। ५ स्वल्प जीरक, छोटा जीरा। यह कटु, उष्ण, दीपन, वृष्य, अजीर्ण-शमन, एवं गर्भाशय-विशोधक होता है और आध्मान, वातगुल्म, रक्तपित्त, क्रमि, कफ, पित्त, आमदोष, वात तथा शूलको खोता है। (वैद्यकनिघण्टु)

उपकुञ्चिका, उपकुञ्चि देखो।

उपकुञ्ची, उपकुञ्चि देखो।

उपकुम्भ (सं० त्रि०) १ समीप, निकट, नज़दीकी। २ एकाकी, अकेला। (अव्य०) ३ कुम्भके समीप, घड़ेके पास।

उपकुम्भा (सं० स्त्री०) दन्तीवृक्ष, दांतीका पेड़।

उपकुर्वाण (सं० पु०) उपकुरुते, उप-कृ-शानच्। ब्रह्मचारी। जो द्विज ब्रह्मचर्यको समाप्त कर गृहस्थाश्रममें जाता वह उपकुर्वाण कहलाता है।

उपकुल्यका, उपकुल्या देखो।

उपकुल्या (सं० स्त्री०) उप-कुल अघ्न्यादि निपातनात्। पिप्पली, पीपल। २ प्रणाली, नहर।

उपकुश (सं० पु०) १ सुश्रुतोक्त दन्तमूलगत पित्त-रक्तज रोग विशेष, मसूड़ेका फोड़ा। दन्तमूल जलने, और पकनेसे दन्त हिला करते हैं। अल्प रगड़ने परही उनसे रक्त गिरने लगता है। रक्तस्रावके बाद सूजन चढ़ने और मुखमें दुर्गन्ध उठनेसे उपकुश रोग समझा जाता है। इस रोगमें वमन, विरेचन, और शिरो-विरेचनका प्रयोग कर काकडुम्बुरके पत्र पर शोणित टपकाना चाहिये। फिर लवण और त्रिकटु मधुके साथ लगाते हैं। पिप्पली, सरिषा, शुण्ठी और निचुलके फलको जलमें पका अल्प उष्ण रहते कुल्ला करना चाहिये। यह उपकुश रोगपर बहुत हितकारी है। २ अश्वमुख-रोग, घोड़ेके मुंहकी एक बीमारी। इसमें दन्तके मांससे रुधिर गिरता और दन्तचलन पड़ता है। (जयदत्त)

उपकूजित (सं० त्रि०) शब्दायमान किया हुआ, जो गुंजाया गया हो।

उपकूप (सं० क्ली०) १ कूपसमीप, कुवेंकी बगल। (पु०) २ कूपसमीपस्थ जलाशय, कुयेंके पासका तालाब। (अव्य०) ३ कूपके निकट, कुवेंके पास।

उपकूपजलाशय (सं० पु०) कूपके समीपकी द्रोणी, कुवेंके पासका हौज़। इसमें पशु पानी पीते हैं।

उपकूल (सं० क्ली०) कूलस्य समीपम्। १ समुद्र और नदी आदिके भूमिका प्रान्तभाग, समुन्दर और दरया वगैरहकी ज़मीन्‌का अगला हिस्सा। (अव्य०) २ तटपर, किनारे।

उपकृत (सं० त्रि०) उप-कृ-क्त। १ उपकारप्राप्त, एहसान उठाये हुआ। २ उपकारको माननेवाला, एहसानमन्द। (क्ली०) भावे क्त। २ उपकार, एहसान।

उपकृति (सं० स्त्री०) उप-कृ-क्तिन्। उपकार, एहसान, भला।

उपकृतिन् (सं० त्रि०) उपकार करनेवाला, जो एहसान करता हो।

उपकृष्ण (सं० त्रि०) उपगतः कृष्णम्। कृष्णके निकट रहनेवाला। (अव्य०) २ कृष्णके समीप।

उपक्लृप्त (सं० त्रि०) उठा-क्लृप-क्त। १ नियत, ठीक किया हुआ। २ विन्यस्त, तैयार किया हुआ। ३ उपभोगसमर्थ, जो मज़ा उठा सकता हो।

उपकेश (सं० क्ली०) कल्पित केश, बनावटी बाल।

उपकेशगच्छ—जैनसम्प्रदायकी एक शाखा।

उपकोलिका (सं० स्त्री०) कृष्णजीरक, कालाजीरा।

उपकोशा (सं० स्त्री०) उपवर्षकी कन्या और वररुचिकी भार्या। वररुचि देखो।

उपकोशल (सं० पु०) कामलापत्य ऋषिके एक पुत्र। अपर नाम कामलायन। (छान्दोग्य उप० ४।१०।१)

उपक्रन्तृ (सं० त्रि०) आरम्भ करनेवाला, मुबतदी, जो कोई काम हाथमें लेता हो।

उपक्रम (सं० पु०) उप-क्रम-घञ्, न वृद्धिः। १ आरम्भ, शुरू। २ उपाय, तदबीर। ३ हेतुभेद, कोई सबब। करणे घञ्। ४ समाधि। ५ उपधा। ६ गमन, चाल। ७ पलायन, भागाभागी। ८ विक्रम, ज़ोर। ९ चिकित्सा, इलाज। १० उद्यम, रोज़गार।

११ उपस्थिति, पहुंच। १२ वेदारम्भ करनेका संस्कार विशेष। १३ मित्र या सभासद्के आनुकूल्यकी परीक्षा।

उपक्रमण (सं० क्लो०) उप-क्रम भावे ल्युट्। १ आरम्भ करण, शुरू। २ चिकित्सा, इलाज।

उपक्रमणिका (सं० स्त्री०) भूमिका, तमहीद। किसी बाहुल्य विषयके लिखनेसे पूर्व संक्षेपमें जो परिचय दिया जाता, वह उपक्रमणिका कहलाता है।

उपक्रमणीय (सं० स्त्री०) उप-क्रम-अनीयर्। शुरू किये जानेके काबिल। २ चिकित्सा-सम्बन्धीय, इलाजसे सरोकार रखनेवाला।

उपक्रमितव्य (सं० त्रि०) आरम्भणीय, शुरू किये जाने काबिल।

उपक्रमितृ (सं० त्रि०) आरम्भ करनेवाला, जो शुरू करता हो।

उपक्रान्त (सं० त्रि०) उप-क्रम-क्त। १ आरब्ध, शुरू किया हुआ। २ विस्तृत, फैला हुआ।

उपक्राम्य (सं० त्रि०) चिकित्सनीय, इलाज किये जाने काबिल।

उपक्रिया (सं० स्त्री०) उप-क्र भावे श। १ उपकार, एहसान, भलाई। २ कार्य, काम, नौकरी।

उपक्रीड़ा (सं० स्त्री०) क्रीड़ाभूमि, खेलकी जगह।

उपक्रुश्य (सं० अव्य०) निन्दावाद करके, झिड़ककर।

उपक्रोश (सं० पु०) उप-क्रुश-घञ्। १ निन्दा, हिकारत, बदनामी। (त्रि०) २ आसन्नक्रोश, कोसा हुआ।

उपक्रोशक (सं० त्रि०) १ निन्दाकारक, हिकारत करनेवाला। (पु०) २ गर्दभ, गधा।

उपक्रोशन (सं० क्लो०) निन्दावाद, बदनामी करनेका काम।

उपक्रोष्टृ (सं० पु०) उप-क्रुश-तृच्। १ गर्दभ, गधा। २ निन्दक, हिकारत करनेवाला।

उपक्लेश (सं० पु०) उप-क्लिश-घञ्। मदादि, नशा वगैरह।

उपक्वण (सं० पु०) उप-क्वण-अप्। क्वणो वीणायाञ्च। पा ३।३।६५। वीणानिनाद, तम्बूर या बरबतकी आवाज़।

उपक्वस (सं० पु०) कीटविशेष, एक कीड़ा।

उपक्षय (सं० पु०) उप-क्षि-अच्। १ अपचय, नुकसान्। २ निवाससमीपादि। (त्रि०) क्षयमुपगतः। ३ क्षयप्राप्त, बिगड़ा हुआ।

उपक्षित् (सं० त्रि०) उप-क्षि-क्विप्। १ अधिवासी, पड़ोसी, नज़दीक रहनेवाला। २ संलग्न, चिपटा हुआ।

उपक्षीण (सं० त्रि०) उप-क्षि-क्त, तस्य नः दीर्घश्च। हानिग्रस्त, सड़ा-गला।

उपक्षेतृ (वै० त्रि०) अधिवासी, पड़ोसी, पास आनेवाला। (सायण)

उपक्षेप (सं० पु०) उप-क्षिप भावे घञ्। १ आक्षेप, उक्ष। २ निकट-निक्षेप, पास फेंकनेका काम। ३ काव्यालङ्कार विशेष।

उपक्षेपण (सं० क्लो०) उप-क्षिप-ल्युट्। १ निक्षेप, फेंकफांक। २ शूद्रस्वामिक अन्न विप्रके घर पाक करनेको समर्पण।

उपखात (सं० अव्य०) खातके समीप, खाड़ीमें।

उपखान (हिं०) उपाख्यान देखो।

उपग (सं० त्रि०) उप-गम-ड। १ उपगत, पास आया हुआ।

"ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः।" (मनु १।४६)

२ उपगन्ता, पास जानेवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।

उपगत (सं० त्रि०) उप-गम-क्त। १ स्वीकृत, मञ्जूर किया हुआ। २ उपस्थित, हाज़िर। ३ ज्ञात, समझा हुआ। ४ प्राप्त, पहुंचा या मिला हुआ। ५ अशक्त, थका हुआ। ६ कृतमैथुन, सुहबत किये हुआ। ७ सन्निहित। ८ मृत, गुज़रा हुआ। (क्लो०) ९ प्राप्ति, पहुंच। १० प्राप्तिसूचक पत्र, रसीद।

उपगतवत् (सं० त्रि०) १ गमन करनेवाला, जो पहुंच गया हो। २ अधिकारी, कब्ज़ा रखनेवाला। ३ भोक्ता, मालूम करनेवाला। ४ स्वीकार करनेवाला, होनहार।

उपगति (सं० स्त्री०) उप-गम-क्तिन्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ ज्ञान, समझ। ३ स्वीकार, मञ्जूरी। ४ आसक्ति, लगाव।

उपगन्तृ (सं० त्रि०) उप-गम-तृच्। १ स्वीकारकारी,

मञ्जूर करनेवाला। २ प्राप्त करनेवाला, जो पा गया हो। ३ ज्ञाता, समझ जानेवाला।

उपगम (सं० पु०) उप-गम-अप्। १ अङ्गीकार, मञ्जूरी। २ निकटगमन, पहुंच। ३ ज्ञान, समझ। ४ आसक्ति, लगाव। ५ प्राप्ति, याफ़्त।

उपगमन (सं० क्ली०) उप-गम भावे ल्युट्। उपगम देखो।

उपगम्य (सं० त्रि०) १ निकट जाने योग्य, मिलने क़ाबिल। (अव्य०) २ निकट जाकर, पहुंचके।

उपगहन (सं० पु०) ऋषिभेद। (भारत आदि ४ अ०)

उपगा (सं० पु०) उप-गै-क्विप्। १ यज्ञमें गानेवाला एक ऋत्विग्। (स्त्री०) भावे घञ्। २ उपगान।

उपगातृ (सं० पु०) उप-गै-तृच्। यज्ञस्थलमें उद्गाताके समीप गानेवाला एक ऋत्विग्।

"बृहस्पतिरुद्गाता विश्वे देवा उपगातारः।" (कृष्णयजु: ३।३।२।१)

उपगामिन् (सं० त्रि०) निकट उपस्थित होनेवाला, जो पास आ रहा हो।

उपगिर (सं० अव्य०) पर्वतपर, पहाड़के ऊपर।

उपगिरि (सं० अव्य०) गिरेः समीपस्थ। १ पर्वत समीप, पहाड़के पास। (पु०) २ देश विशेष, एक पहाड़ी मुल्क।

"तत्रैवोपगिरिश्चैव विजिग्ये पुरुषर्षभः।" (भारत सभा २६० अ०)

उपगीत (सं० त्रि०) कवियों द्वारा गाया हुआ, जो गाया-बजाया गया हो।

उपगीति (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक प्रकारका आर्या छन्द। इसमें चार पाद होते हैं। सममें बारह और विषम पादमें पन्द्रह मात्रा लगती हैं।

"आर्या द्वितीयकार्धे यद्गदितं लक्षणं तत् स्यात्।
यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते।" (वृत्तरत्नाकर)

उपगीय (सं० अव्य०) गान करके, गा-बजाकर।

उपगीयमान (सं० त्रि०) गान किया जानेवाला, जो गाया-बजाया जाता हो।

उपगु (सं० पु०) १ राजविशेष। ये सत्यरथिके पुत्र थे। (विष्णुपु० ४।५।१३) (अव्य०) २ गोके समीप, गायके पास। (त्रि०) ३ प्राप्तकिरणादि।

उपगुप्त (सं० त्रि०) १ गुप्त, पोशीदा, जो छिप गया हो। (पु०) २ एक बौद्ध सिद्ध पुरुष। बौद्ध इन्हें 'अलक्षणक बुद्ध' कहते थे। ये जातिके शूद्र रहे। सप्तदश वर्षके वयःक्रम कालपर इन्होंने सन्न्यास लिया और योगबलसे कामको विजय तथा समाधिकालमें बुद्धदेवका दर्शन किया था। बुद्धनिर्वाणके एक शतवर्ष बाद कालाशोकके समय ये विद्यमान रहे। बौद्धोंका प्रथम महासाङ्घिक सम्प्रदाय उपगुप्तके ही समय चला। इन्होंने मथुरामें एक स्तूप बनवाया था। बोधिसत्त्वावदानकल्पलताके मतसे इन्होंने मथुराके प्राय १८ लक्ष लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया। (उपगुप्तावदान)

उपगुप्तवित्त (सं० त्रि०) गुप्त विभवयुक्त, छिपी दौलत रखनेवाला।

उपगुरु (सं० पु०) १ सहायक गुरु, मददगार उस्ताद। २ राजविशेष।

उपगूढ़ (सं० त्रि०) उप-गुह-क्त। १ आलिङ्गित, लिपटाया हुआ। २ गुप्त, पोशीदा। ३ नियन्त्रित, दबाया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ४ आलिङ्गन, हमागोशी। "विश्रामार्थं सुपगूढमनयम्।" (माघ)

उपगूढ़वत् (सं० त्रि०) आलिङ्गन करनेवाला, जो छातीसे लगा चुका हो।

उपगूहन (सं० क्ली०) उप-गूह-ल्युट्। आलिङ्गन, हमागोशी।

उपगेय (सं० त्रि०) गान करने योग्य, गाने-बजाने या मनानेके क़ाबिल।

उपगोह्य (सं० त्रि०) उप-गुह-ण्यत्। १ आलिङ्गनयोग्य, लिपटानेके क़ाबिल। २ ग्राह्य, लेने लायक़।

उपग्रन्थि (सं० पु०) अङ्गके किसी ग्रन्थिपर निकलनेवाली गांठ।

उपग्रह (सं० पु०) उप-ग्रह-अप्। १ बन्दी, क़ैदी। २ बन्धन, क़ैद। ३ उपयोग, इस्तैमाल। ४ अनुग्रह, मेहरबानी। ५ सन्धि विशेष, किसी किस्मकी सुलह। यह कुछ देकर की जाती है। ६ कुशसमूह। ७ ज्योतिषोक्त ग्रहके तुल्य भ्रमण करनेवाला ज्योतिः पदार्थ, राहु केतु प्रभृति।

"सूर्यभात् पञ्चमं धिष्ण्यं ज्ञेयं विद्युन्मुखाभिधम्।
शूलमष्टमगं प्रोक्तं सन्निपातं चतुर्दशम्॥

केतुरष्टादशं प्रोक्तमुल्का स्यादेकविंशतिः।
द्वाविंशतितमं कम्पस्त्रयोविंशश्च वज्रकम्॥
निर्घातश्च चतुर्विंशमुक्ता अष्टाउपग्रहाः।" (ज्योतिस्तत्त्व)

सूर्याक्रान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युन्मुख, अष्टम शूल्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंशति उल्का, द्वाविंशति कल्प, त्रयोविंश वज्र और चतुर्विंश निघात नामक नक्षत्र—सब आठ उपग्रह होते हैं।

कर्मणि घञ्। ८ कारारुद्ध, क़ैदमें पड़ा हुआ।

उपग्रहण (सं० क्लो०) उप-ग्रह-ल्युट्। निकटसे ग्रहण, नज़दीकको लेवायी। २ स्वीकार, मञ्ज़ूरी। ३ संस्कारपूर्वक वेदका ग्रहण वा अध्ययन। ४ यज्ञादि साधक आधारकरण।

'न सब्येन वेदोपग्रहः।' (कर्काचार्य)
"दक्षिणहस्तस्य साजास्यैकद्रव्यस्य हस्तकम्पादिना स्कन्दनावर-रणार्थं सव्यहस्तगृहीतवेदिनाधारकरणमुपगृहणमुच्यते।"
(कातीय श्रौतसूत्रभाष्ये कर्काचार्य १।१०।६)

उपग्राह (सं० पु०) उप-ग्रह-णिच्-अच्। १ उपढौकन, भेंट। कर्मणि घञ्। २ उपहारस्वरूप दिया जानेवाला वस्तु, जो चीज़ नज़र को जाती हो।

"उच्चावचानुपग्राह्यान् राजभिः प्रापितान् बहून्।" (भारत-सभा ५१ अ०)
'उपग्राह्यान् उपहारान्।' (नीलकण्ठ)

उपग्राह्य (सं० त्रि०) उप-ग्रह-णिच्-यत्। १ समीप लाकर रखने योग्य, जो नज़र किये जाने क़ाबिल हो। (पु०) २ उपढौकन, भेंट।

उपघात (सं० पु०) उपहन्यते अनेन, उप-हन करणे घञ्। १ रोग, बीमारी। २ विनाश, बरबादी। ३ कर्मको अयोग्यताका सम्पादन।

"काकेभ्यो रक्ष्यतामन्नमिति बालोऽपि देशितः।
उपघातप्रधानत्वात् न श्वादिभ्योऽपि रक्षति॥" (मीमांसाकारिका)

४ अपकार, बुराई। (मनु ११।७९) ५ इन्द्रियगणके निज कार्य उत्पादनको अक्षमता, नाताक़ती, कमज़ोरी। ६ पापसमूह। ७ होमभेद।

"चरौ तु बहुदैवत्यो होमः स्यादुपघातवत्।" (छन्दोगपरिशिष्ट)

उपघातक (सं० त्रि०) उप-हन-ण्वुल्। १ नाशक, बरबाद करनेवाला। २ पीड़क, तकलीफ़ देनेवाला। ३ अनिष्टकारक, बुराई करनेवाला।

"कथं शत्रून् न गृह्णीयामि भूत्वा धर्मोपघातकः।" (भारत-आश्व ९ अ०)

(पु०) ४ आरगवध वृक्ष, लटजीरा।

उपघाती, उपघातक देखो।

उपघुष्ट (सं० त्रि०) शब्दायमान, गूंजता हुआ।

उपघोषण (सं० क्लो०) घोषणा, ढिंढोरा, ज़ाहिर करनेको बात।

उपघ्न (सं० पु०) उप-हन बज्रर्थक। उपघ्न आश्रये। पा ३।३।८५। १ निकटाश्रय, पासका सहारा।

"छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ।" (रघु)

२ समीपस्थ विश्रामागार, जो ठहरनेकी जगह पास हो। ३ आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़े हो।

उपघ्र (सं० त्रि०) उप-घ्रा-ड। सम्बन्धीय, सरोकार रखनेवाला।

उपङ्क (हिं०) उपाङ्क देखो।

उपच (सं० त्रि०) उपचिनोति, उप-चि-ड। अल्पमाषपिष्टक मिश्रित, जिसमें उड़दका आटा थोड़ा मिला हो। (शतपथब्रा० १।१।१।१०)

उपचक्र (सं० पु०) चक्रवाक पक्षिविशेष, चकोर। चक्रवाक देखो। इसका मांस लघु, हृद्य, उष्णवीर्य, पाकमें कटु और बल तथा अग्नि बढ़ानेवाला होता है। (राजनिघण्टु)

उपचक्षुः (सं० क्लो०) १ दिव्यचक्षु, चश्मा। (अव्य०) २ चक्षुके समीप, आंखके पास।

उपचतुर (सं० त्रि०) प्रायः चार, क़रीब चार।

उपचय (सं० पु०) उप-चि-अच्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उन्नति, तरक़्क़ी। (माघ २।५५) ३ आधिक्य, ज़्यादती। ४ पुष्टि, मज़बूती। ५ समूह, झुण्ड। ६ संग्रह, चुनाव। ७ ज्योतिषोक्त लग्नसे तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश स्थान।

उपचयभवन (सं० क्लो०) दण्डकवृत्तभेद, एक छन्द।

उपचयापचय (सं० पु०) वृद्धि और ह्रास, बढ़ती-घटती, नफ़ा-नुक़सान्।

उपचर (सं० पु०) उप-चर-अच्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ उपचार, हाज़िरी। उपचार देखो। (क्लो०) चरस्य समीपम्। ३ दूतका सामीप्य, एलचीका पड़ोस। (अव्य०) ४ दूतके समीप, एलचीके पास।

उपचरण (सं० क्ली०) निकटमें गमन, नज़दीकका जाना।

उपचरित (सं० त्रि०) उप-चर-क्त। १ आराधित, मनाया या हाज़िरी बजाया हुआ। २ लक्षण द्वारा बोधित, आसारसे समझा हुआ।

उपचर्म (सं० अव्य०) उप-चर-मन् अव्ययीभावात् टच्। नपुंसकादन्यतरस्याम्। पा ५।४।१०९) १ चर्मके समीप, चमड़ेके पास। (त्रि०) २ चर्मोपगत, चमड़ेमें लगा हुआ।

उपचर्य (सं० त्रि०) उप-चर कर्मणि यत्। १ सेवनीय, खिदमत किये जाने क़ाबिल।

"उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत् पतिः।" (मनु ५।१५४)

(अव्य०) २ उपस्थित हो या पहुंचकर। ३ चोड़ोंको टलमलके।

उपचर्या (सं० स्त्री०) उप-चर-क्यप्-टाप्। १ चिकित्सा, इलाज। २ परिचर्या, खिदमत।

उपचायिन् (सं० त्रि०) उपचिनोति, उप-चि-णिनि। वृद्धिकारक, बढ़ानेवाला, जो अच्छी हालतमें हो।

उपचाय्य (सं० पु०) उप-चीयतेऽग्निरत्र, उप-चि-निपातने ण्यत्। अग्नौ परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः। पा ३।१।१३१। १ यज्ञाग्नि। २ वेदी।

उपचार (सं० पु०) उप-चर-घञ्। १ चिकित्सा, इलाज। २ सेवा, खिदमत। ३ व्यवहार, चालचलन। ४ उत्कोच, रिशवत। ५ परको तुष्टिके लिये मिथ्या कथन, दूसरेको राज़ी रखनेके लिये झूठ बोलना।

"उपचारपदं न चेदिदं त्वामनङ्गः कथमक्षता रतिः।" (कुमार ४।९)

६ धर्मानुष्ठान, मज़हबी काम। ७ पूजाके उपयोगी द्रव्यका भेद। यह अठारह प्रकारका होता है—१ आसन, २ स्वागतप्रश्न, ३ पाद्य, ४ अर्घ्य, ५ आचमनीय, ६ स्नान, ७ वस्त्र एवं उपवीत, ८ भूषणादि, ९ गन्ध, १० पुष्प, ११ धूप, १२ दीप, १३ अन्न, १४ तर्पण, १५ माला, १६ अनुलेपन, १७ नमस्कार और १८ विसर्जन। तन्त्रसारके मतसे ६४ प्रकारका उपचार ठहरता है।

८ न्याय मतसे—सहचरणादिके निमित्त उसी भावमें वैसा ही अभिधान। (वात्स्या० १।२।५५) ९ ज्ञान, समझ। (गौतमवृत्ति २।१२४) १० लक्षण द्वारा अर्थबोध, आसार देखकर मतलबका समझना। ११ छल, धोका। १२ सम्मान, इज़्ज़त। १३ सज्जा, सजावट। १४ व्याकरणानुसार—विसर्गके स्थानमें सकार वा रकारका आदेश। १५ सामवेदका परिशिष्ट विशेष।

उपचारक, उपचारपर देखो।

उपचारकरण (सं० क्ली०) १ उपढौकनदान, भेंटका चढ़ाव। यह प्रधानतः गन्धपुष्पादि द्वारा किया जाता है। २ ध्यान, खयाल।

उपचारकर्मन्, उपचारकरण देखो।

उपचारक्रिया (सं० स्त्री०) उपचारकरण देखो।

उपचारच्छल (सं० क्ली०) न्यायमतमें—अयथार्थ प्रयोगसे अर्थका निराकरण, गलत इस्तेमालसे मानीका न मानना।

"धर्मविकल्पनिर्देशेऽर्थसद्भावप्रतिषेधः उपचारच्छलम्।"(गौतमसू० १।५५)

उपचारना (हिं० क्रि०) उपचार करना, बरतना।

उपचारपर (सं० त्रि०) दृढ़ सेवक, पूरी खिदमत करनेवाला।

उपचारपरिभ्रष्ट (सं० त्रि०) कठोर, बेरहम, जो सभ्य या शायस्ता न हो।

उपचारिन् (सं० त्रि०) सेवक, खिदमतगार।

उपचार्य (सं० पु०) उप-चर भावे ण्यत्। १ चिकित्सा, इलाज। २ सेवा, खिदमत। (त्रि०) ३ सेवनीय, खिदमत किये जाने लायक़। २ चिकित्सनीय, जो इलाज किये जाने क़ाबिल हो।

उपचिकीर्षा (सं० स्त्री०) उप-कृ-सन्-अ। धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा। ३।१।७। अप्रत्ययात्। पा ३।३।१०२। उपकार करनेको इच्छा, दूसरेको तकलीफ़ मिटानेकी ख़ाहिश।

उपचित् (वै० स्त्री०) देहवर्धकरोग विशेष, सूजन।

'उपचितः श्वयथु गडूनीपदादयः।' (वाजसनेयभाष्ये महीधर १२।९७)

उपचित (सं० त्रि०) उप-चि-क्त। १ समृद्ध, बढ़ा हुआ। २ लिप्त, लगा हुआ। ३ लेपनादि द्वारा वर्धित, जो लेपन वग़ैरहसे बढ़ गया हो। ४ समाहित, इकट्ठा किया हुआ। ५ सञ्चित, जोड़ा हुआ। ६ रचित, बनाया हुआ। ७ दग्ध, जला हुआ।

उपचितरस (सं० त्रि०) रागमें वृद्धिप्राप्त, जोशमें बढ़ा हुआ।

उपचिति (सं० स्त्री०) उप-चि-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उन्नति, तरक्की। ३ संग्रह, ढेर।

उपचित्तचिन्त (सं० पु०) पापीयःके एक पुत्रका नाम।

उपचित्र (सं० क्ली०) १ समवृत्तवर्ण छन्दोवृत्तभेद। "उपचित्रमिदं ससस्ताल्गौ।"(वृत्तरत्ना०) २ अर्ध-समवर्णवृत्तभेद। "विषमे यदि सौसलगा दले भौ युजि भाद्गरकावुपचित्रम्।" (वृत्तरत्ना०) ३ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। ४ पृश्निपर्णीवृक्ष, चकौड़िया। ५ दन्तीवृक्ष, दांती। ६ आखुकर्णी, चूहाकानी। ७ वृहद्दन्ती, बड़ी दांती।

उपचित्रका (सं० स्त्री०) क्षुद्रदन्ती, छोटी दांती।

उपचित्रा (सं० स्त्री०) १ मूषिकपर्णी, चूहाकानी। २ स्वाति। ३ हस्तानक्षत्र। ४ दन्तिवृक्ष, दांती। ५ षोड़शमात्रात्मक मात्रावृत्तभेद। "द्विगुणितवसुलघुरचलधृतिरिह वाणाष्टवसु यदि लश्चिवा उपचित्रा नवमे परयुक्ते।" (वृत्तरत्नाकर)

उपचिल्ली (सं० स्त्री०) श्वेत चिल्ली शाक।

उपचीयमान (सं० त्रि०) संग्रह किया जानेवाला।

उपचूलन (सं० क्ली०) तापन, गर्म करनेका काम।

उपचेय (सं० त्रि०) उप-चि कर्मणि यत्। चयनीय, इकट्ठा किये जाने काबिल।

उपच्छन्दन (सं० क्ली०) उप-छदि-णिच् भावे ल्युट्। १ प्रार्थना, अर्ज़। २ उपमन्त्रण, फुसलाहट। ३ अनुरोध, कहना।

उपच्छन्न (सं० त्रि०) गुप्त, पोशीदा, ढंका हुआ।

उपच्यव (सं० पु०) उप-च्युङ् भावे अच्। गृहसे निर्गत, घरसे निकला हुआ।

उपज (सं० त्रि०) १ वर्धिष्णु, बढ़नेवाला। (पु०) २ देवविशेष। (हिं० स्त्री०) ३ उत्पत्ति, पैदायश। ४ हृदयमें दौड़ा हुआ विषय, जो बात दिलमें आयी हो। ५ मनमानी तान।

उपजगती (सं० त्रि०) छन्दोविशेष। यह त्रिष्टुभ्का एक भेद है। इसमें तीन पादपर ग्यारहकी जगह बारह-बारह अक्षर पड़ते हैं।

उपजन (सं० क्ली०) उप-जायते, जन-अच्। १ देह, जिस्म। 'स्त्रीपुंसयोरन्योन्योपगमने जायते इत्युपजनम्।' (छान्दोग्यभाष्ये शङ्कराचार्य) (पु०) २ स्तोमादि वृद्धि। (आश्व० श्रौत० ८।१।१५) ३ उत्पत्ति, पैदायश। ४ अक्षर, हर्फ़।

उपजना (हिं० क्रि०) उत्पन्न होना, निकलना।

उपजप्य (सं० त्रि०) उप-जप कर्मणि अर्हार्थे यत्। भेदार्ह, काना-फूसी करने लायक़, जो चुपके कहनेसे अपनी ओर आ सकता हो।

"उपजप्यानुजपेद्बुध्येतैव च तत्कृतम्।" (मनु ७।१९७)

उपजरस (सं० अव्य०) वृद्धावस्थामें, बुढ़ापेके वक्त।

उपजला (सं० स्त्री०) यमुनापार्श्वस्थ एक नदी। (भारत-वन १३ अ०)

उपजल्पित (सं० क्ली०) वार्ता, बातचीत।

उपजल्पिन् (सं० त्रि०) उप-जल्प-णिनि। उपदेशक, समझानेवाला। (भारत-आदि०)

उपजा (सं० स्त्री०) दूरस्थ वंश, जो खान्दान् नज़दीकी न हो।

उपजाऊ (हिं० वि०) उर्वर, ज़रखेज़, जिससे ज़्यादा उपजे।

उपजात (सं० त्रि०) उत्पन्न किया हुआ, जो उपजाया गया हो।

उपजातकोप, उपजातक्रोध देखो।

उपजातक्रोध (सं० त्रि०) क्रुद्ध किया हुआ, जो छेड़ा गया हो।

उपजातविश्वास (सं० त्रि०) विश्वास करनेवाला, जिसे एतबार रहे।

उपजाति (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। यह इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा और वंशस्थ एवं इन्द्रवंशाके योगसे चौदह-चौदह प्रकारकी होती है। इउउउ। उइउउ। इइउउ। उउइउ। इउइउ। उइइउ। इइइउ। उउउइ। इउउइ। उइउइ। इइउइ। उउइइ। इउइइ। उइइइ। अन्यान्य मिश्रित जातिमें भी इसी प्रकार १४ भेद पड़ते हैं।

उपजाना (हिं० क्रि०) उत्पन्न करना, निकालना।

उपजाप (सं० पु०) उप-जप-घञ्। १ भेद, कानाफूसी। २ कुचक्र, साज़िश। ३ विच्छेद, अलगाव। ४ उपांशु जप।

उपजापक (सं॰ त्रि॰) उप-जप-ण्वुल्। १ भेदक, कानाफूसी करनेवाला। २ प्रोत्साहक, उभारनेवाला।

"घातयोद्विविधैर्दण्डैररीणाञ्चोपजापकान्।" (मनु ९।२७)

उपजाय (सं॰ अव्य॰) जायाके निकट, औरतके पास।

उपजिगमिषु (सं॰ त्रि॰) निकट उपस्थित होनेका अभिलाषी, जो नज़दीक पहुंचना चाहता हो।

उपजिज्ञास्य (सं॰ त्रि॰) निगूढ़, छिपा हुआ।

उपजिहीर्षा (सं॰ स्त्री॰) उप-हृ-सन्-अ। धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा। पा ३।१।७। अप्रत्ययात्। पा ३।३।१०२। अपरके द्रव्यादिको हरण करनेकी इच्छा, दूसरेकी चीज़ चोरानेकी ख्वाहिश।

उपजिह्वा (सं॰ स्त्री॰) १ कीटविशेष, किसी किस्मकी चीटी। २ मूल जिह्वा, हलकका कव्वा। ३ अश्वके मुखका एक रोग, घोड़ेके मुंहमें होनेवाली एक बीमारी। इसमें जिह्वाके नीचे सूजन आ जाती है। (जयदत्त) ४ जिह्वागत मुखरोग, जीभमें होनेवाली मुंहकी बीमारी।

"जिह्वाग्ररूढ़ः श्वयथुर्हि जिह्वामुन्नम्यजातः कफरक्तयोनिः।
प्रसेककण्डूपरिदाहयुक्ता प्रकथ्यतेऽसावुपजिह्विकेति।"
( )

दूषित कफ एवं रक्तसे अग्रभागकी तरह अधोभागमें जिह्वाग्र फूल उठता, जिससे लालास्राव, कण्डू और दाह उपजता है। इसी रोगको उपजिह्वा कहते हैं। वैद्यक मतसे इस रोगमें जिह्वाग्र कर्कश पत्र द्वारा रगड़ यवक्षारसे प्रतिसारण करना चाहिये। त्रिकटु, यवक्षार, हरीतकी और चिता सकल समभागमें मिला रगड़ने अथवा उक्त सकल द्रव्यके कल्क तथा चतुर्गुण जल द्वारा तैल पका चुपड़नेसे यह रोग सत्वर ही आरोग्य होता है।

उपजिह्विका, उपजिह्वा देखो

उपजीक (सं॰ पु॰) जल देवता।

उपजीव (सं॰ त्रि॰) उपगतो जीवम्। जीवनोपगत, जीने-जागनेवाला।

उपजीवक (सं॰ त्रि॰) उपजीव-ण्वुल्। १ जीविका चलानेवाला, जो जिन्दगी बसर करता हो। २ आश्रय वा अवलम्बनकारक, सहारा या टेक लेनेवाला। (क्ली॰) ३ जीविकानिर्वाह, बसर-जिन्दगी।

उपजीवकत्व (सं॰ क्ली॰) न्यायके मतसे—१ कार्यत्व, काररवाई। २ प्रयोज्यत्व, इस्तेमाल।

उपजीवन (सं॰ क्ली॰) उप-जीव करणे ल्युट्। जीविका, रोज़ी।

उपजीवनीय (सं॰ त्रि॰) उपजीवन करने योग्य, जो रोज़ी चलाता हो।

उपजीविका (सं॰ स्त्री॰) उपजीव्यतेऽनया, उप-जीव संज्ञायां कन् क्वुन् वा। उपजीवन, रोज़ी, रोज़गार।

उपजीविन् (सं॰ त्रि॰) उपजीव-णिनि। १ आश्रित, जो सहारा पकड़े हो। २ वेतनभोगी, तनख्वाहपर बसर करनेवाला।

उपजीव्य (सं॰ क्ली॰) उप-जीव-ण्यत्। १ आश्रय, सहारा। "उपजीव्यद्रुमाणाञ्च विंशतिर्द्विगुणो दमः।" (याज्ञवल्क्य)

उपजोष (सं॰ पु॰) उप-जुष-घञ्। १ प्रीति, मज़ा। (अव्य॰) उप-जुष-अम्। २ प्रीतिसे, मज़ेमें।

उपजोषण (सं॰ क्ली॰) आस्वादन, मज़ेदारी।

उपज्ञा (सं॰ स्त्री॰) उप-ज्ञा कर्मणि घञ्। १ आद्यज्ञान, असली समझ। जो ज्ञान विना उपदेश आता, वही उपज्ञा कहाता है। भावे अङ्। २ आदि कथन, पहली बात।

उपज्ञात (सं॰ त्रि॰) उप-ज्ञा-क्त। विना उपदेशज्ञात, वे सिखाये समझा हुआ।

उपज्मन् (सं॰ पु॰) पादार्पण करते हुआ, जो चढ़ रहा हो।

उपज्योतिष (सं॰ क्ली॰) १ ज्योतिष शास्त्रानुगत गणितादि, नजूमका हिसाब। २ देशविशेष। (वराहमिहिर)

उपज्वलित (सं॰ त्रि॰) प्रकाशमान, जो जल रहा हो।

उपटन (हिं॰ पु॰) १ चिह्न, दाग, उभार। २ उबटन।

उपटना (हिं॰ क्रि॰) १ बनना, उभर आना। २ स्थानान्तरित होना, हटना। ३ नष्ट होना, मिट जाना, किसी काममें न लगना।

"भूत बीया उपट गया।" (लोकोक्ति)

उपटा (हिं० वि०) १ नष्टभ्रष्ट, बरबाद। (पु०) १ जलप्लावन, पानीका बूड़ा। २ चपेट, ठोकर, धक्का।

उपटाना (हिं० क्रि०) स्थानान्तरित करनेको आदेश देना, उखड़वाना, हटवाना।

उपटारना (हिं० क्रि०) स्थानान्तरित करना, हटा देना।

उपड़ना, उपटना देखो।

उपढौकन (सं० क्लो०) उप-ढौक भावे ल्युट। १ उपहार, नज़्र, भेंट। २ उत्कोच, रिशवत।

उपतक्ष (सं० पु०) नाग वा गन्धर्व विशेष।

उपतट (सं० अव्य०) १ तटके निकट, किनारेपर। (पु०) २ प्रान्त, बगल।

उपतन्त्र (सं० क्लो०) उपगतं तन्त्रम्। शिवोक्त तन्त्र जैसा ऋषिकृत तन्त्र। वाराहीतन्त्रके मतसे—कपिल, जैमिनि, वशिष्ठ, नारद, गर्ग, पुलस्त्य, भार्गव, याज्ञवल्क्य, भृगु, शुक्र, बृहस्पति प्रभृति मुनिकृत तन्त्र उपतन्त्र है।

उपतपत् (सं० पु०) आन्तरिक ताप, भीतरी गर्मी।

उपतप्त (सं० त्रि०) उप-तप-क्त। १ सन्तप्त, गर्म, जलाभुना। २ पीड़ित, तकलीफ़में पड़ा हुआ। ३ कातर, डरपोक।

उपतप्तृ (सं० पु०) उप-तप-तृच्। १ उपतापक, तपा डालनेवाला। २ उपताप, बिगड़ी गर्मी। ३ रोग, बीमारी।

उपतप्यमान (सं० त्रि०) पीड़ित, जो तकलीफ़ उठा रहा हो।

उपताप (सं० पु०) उप आधिक्ये तप आधारे घञ्। १ त्वरा, जल्दी। २ उत्ताप, सरगर्मी। ३ रोग, बीमारी। ४ अशुभ, खराबी। ५ पीड़न, तकलीफदिही। ६ दुःख, रञ्ज।

उपतापक (सं० त्रि०) उप-तप-णिच्-ण्वुल्। १ सन्तापजनक, गर्मी पैदा करनेवाला। २ कष्टदायक, तकलीफ़ देनेवाला।

उपतापन (सं० त्रि०) उप-तप-णिच्-ल्यु। १ सन्तापक, जला डालनेवाला। (क्लो०) २ सन्ताप, जलन।

उपतापिन् (सं० त्रि०) उप-तप-णिनि। १ सन्तापी, जाला झलनेवाला। २ रोगी, बीमार।

"गुर्वर्थं पितृमात्रर्थं स्वाध्यायाद्युपतापिनः।" (मनु १।११)

उपतारक (सं० त्रि०) उप-तॄ-णिच्-ण्वुल्। सन्तारक, उमड़ उठनेवाला, जो बह चला हो।

"यत्रै तदुपतारकाः शङ्कन्ते।" (कौशिकसू०)

उपतिष्य (सं० क्लो०) उपगतं तिष्यम्, अत्या० समा०। १ पुनर्वसु। २ अश्लेषा। ३ बौद्ध-शास्त्रोक्त सिद्धभेद। धर्मपति नामक किसी ब्राह्मणके औरस और सारीके गर्भसे इनका जन्म हुआ। बुद्धने इन्हें अपने धर्मकी दीक्षा दी। अपर नाम सारीपुत्र था। (महावग्गदान)

उपतीर (सं० अव्य०) सामीप्यादौ अव्ययीभावः। तीरसमीप, किनारे पर।

उपतुला (सं० स्त्री०) स्तम्भके नव समान अंशमें तृतीय। यह वास्तुविद्यामें वर्णित है।

उपतूल (सं० अव्य०) तूलोपरि, रुईके ऊपर।

उपतृण्य (सं० पु०) सर्प, सांप। तृणमें छिपकर बैठनेसे सर्पका यह नाम पड़ा है।

उपतैल (सं० क्लो०) अभ्यक्त तैल, लगाया हुआ तेल।

उपत्यका (सं० स्त्री०) उपसमीपे आसन्ना भूमिः, उप-त्यकन्। उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढ़योः। पा ५।२।३४। १ पर्वतकी निकटस्थ भूमि, पहाड़के नीचेकी ज़मीन्। २ पर्वतके आधारका वन, पहाड़की जड़का जङ्गल। ३ अधित्यका, घाटी।

"उपत्यका पर्वतस्यासन्नं स्थलम्।" (सिद्धान्तकौमुदी)

उपदंश (सं० पु०) उप-दंश कर्मणि घञ्। मेढ्-रोग विशेष, आतशक, आतश, गरमी, लिङ्गकी एक बीमारी। भावमिश्रने कहा—हस्त नख वा दन्तका आघात पड़ने, प्रक्षालन न मिलनेसे अपरिष्कार बनने, अतिरिक्त स्त्रीसंसर्ग रहने, दूषित योनिमें चलने और अन्यान्य नाना कारण लगनेसे शिश्न देशमें उपदंश रोग उत्पन्न होता है। यह पांच प्रकार है—वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक और रक्तज।*

सुश्रुतने कहा—अतिमैथुन, संसर्गके अभाव,

* "हस्ताभिघातान्नखदन्तघातादधावनादत्युपसेवनाद्वा।
योनिप्रदोषाच्च भवन्ति शिश्ने पञ्चोपदंशा विविधोपचारैः॥"
(भावप्रकाश मध्य ४र्थ भाग)

ब्रह्मचारिणी, संसर्गरहिता, रजःस्वला, दीर्घ कर्कश सङ्कीर्ण गूढ़ रोमयुक्ता, अतिक्षुद्र अथवा अति वृहत् द्वारविशिष्टा, दूषित जलके प्रक्षालन, शुक्र मूत्रके वेगधारण और मैथुनान्तके अप्रक्षालन इत्यादि किसी कारणसे पथमें दोष लगते और क्षत पड़ते या न पड़ते जननेन्द्रियका फट जाना ही उपदंश है।

युरोपीय चिकित्साके कोई तत्त्वज्ञ डाक्टर कहते—यह पीड़ा संस्रवके भिन्न नहीं उपजती। किन्तु संस्रवका प्रथम स्थान खोजनेसे मानना पड़ेगा—किसी विशेष कारणसे इसकी उत्पत्ति हुई। फिर तो ठहर ही जायेगा—वैसा कारण लगनेसे, विना संस्रवके भी उपदंश रोग निकल सकता है। अब कारण देखना चाहिये। अश्वके ग्लाण्डस-जैसे रोग (Glandus) और कुक्कुरके एक प्रकार क्षतसे उपदंश उठता है। स्त्रीसंसर्गकालीन लसिका वा पूय श्लैष्मिक सूक्ष्म चर्ममें चिपटनेसे इसकी उत्पत्ति है। परस्पर संसर्गसे उपदंश स्त्री और पुरुष उभयको लग जाता है। परस्पर संसर्गपर स्त्रीमें होते पुरुष और पुरुषमें रहते स्त्रीको यह रोग पकड़ता अर्थात् एकजनमें उपजनेसे अन्यको निस्तार नहीं मिलता।

युरोपीयोंने उपदंश रोगको नाना श्रेणीमें बांटा है। प्रधान यह हैं—

१ प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis)।
२ द्वितीय अवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis)
३ तृतीय अवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis)
४ सार्वाङ्गिक उपदंश (Constitutional Syphilis)
५ कौलिक उपदंश (Hereditary Syphilis)।

सचराचर जननेन्द्रियकी वाह्य एवं आभ्यन्तरिक त्वक्, लिङ्गके मुण्ड अथवा त्वक् एवं ग्रन्थिके मध्यस्थान ग्रन्थिके अधोभागमें क्षुद्र वटिकाकार एक पूय निकलता है। फिर वही फटकर विशेष लक्षणाक्रान्त क्षत बन जाता है। मैथुनकालसे पांच-छः दिनके मध्य यह क्षत पड़ा करता है। इसीका नाम उपदंश या आतशक है। युरोपीयोंने इसे प्राथमिक उपदंश लिखा है। यह रोग नानाप्रकार होता है। तन्मध्य चार प्रकारका उपदंश सचराचर देख पड़ता है, यथा—सहज उपदंश (Simple chancre), कठिन उपदंश (Indurated or Hunteran chancre), क्षयकारी उपदंश (Phagedenic chancre) एवं गलित उपदंश (Sloughing chancre)।

वैद्यक ग्रन्थसे पांच प्रकारका जो उपदंश बताया, उसमें भी प्रत्येकका लक्षण स्वतन्त्र लगाया है।

पुरुषके वातिक उपदंशमें मेढ्रदेशपर सूच चुभनेजैसी व्यथा उठती, भेदनवत् वेदना बढ़ती और कम्पन सहित काली फुन्सी पड़ती है। स्त्रीको जननेन्द्रियका काठिन्य लगता, त्वक्का भेद पड़ता, स्तब्धभाव रहता और वायुजन्य नानाप्रकार क्लेश बढ़ता है।*

पैत्तिक उपदंशमें पुरुषके मेढ्रपर दाह उठता और बहुक्लेदयुक्त पीतवर्ण फोड़ा पड़ता है। फिर स्त्रीको ज्वर हो जाता, शोथ सताता, तीव्र दाह देखाता, क्षिप्र पाक पाता, पित्तका दुःख सताता और पक्व डुम्बुर-जैसा वर्ण निकल आता है।†

श्लैष्मिक उपदंशमें पुरुषके मेढ्रदेशपर श्वेतवर्ण कठिन अथच गाढ़ स्रावयुक्त और स्त्रीके कठिन, अल्प वेदनायुक्त, शोथ एवं कण्डू विशिष्ट चिक्कण वर्ण वृहत् स्फोटक उठता है।‡ पुरुषके मेढ्रदेशपर रक्तज उपदंशमें ताम्र वा कृष्णवर्ण स्फोटक उठता, अधिक रक्त पड़ता, पैत्तिककी भांति सकल लक्षण लगता, ज्वर चढ़ता, दाह रहता एवं शोथ बढ़ता है। स्त्रीके रक्तज उपदंशका लक्षण पुरुष ही जैसा रहता, फिर भी अनेक स्थलमें रोग नहीं मिटता और यावज्जीवन क्लेश उठाना पड़ता है।१

---

* "सतोदभेदस्फुरणैः सकृष्णैः स्फोटैर्व्यवस्येत् पवनोपदंशम्।" (भावप्रकाश)

"वा   के पारुष्यं त्वक्परिपुटनं स्तब्धमेढ्रता विविधाश्च वातवेदनाः।" (सुश्रुत)

† "पीतैर्बहुक्लेदयुतैः सदाहैः पित्तेन रक्तैः पिशिताभभासैः।" (भावप्रकाश)

"पैत्तिके ज्वरः श्वयथुः पक्वोडुम्बुरसङ्काशस्तीव्रदाहः क्षिप्रपाकः पित्तवेदनाश्च।" (सुश्रुत)

‡ "सकण्डुरैः शोथयुतैर्महद्भिः शुक्लैर्घनैः स्रावयुतैः कफेन।" (भावप्र०)

१ "रक्तजे कृष्णस्फोटप्रादुर्भावोऽसृपथर्मसृक्प्रवृत्तिः पित्तलिङ्गान्यत्यर्थं ज्वरदाहौ शोषश्च याप्यश्चैव कदाचित्।" (सुश्रुत)

पुरुषके सान्निपातिक उपदंशमें नाना प्रकारका स्राव और नानाप्रकारका क्लेश लगा रहता है। यह असाध्य है। स्त्रीको होते भी उक्त सकल प्रकारके लक्षण मिलते हैं, जननेन्द्रियपर उपजनेवाले शोथमेंसे फट कर कृमि निकलते और प्रायः मरण हो जाता है।

इस रोगमें जिसके मेढ़का मांस विशीर्ण और कृमियों द्वारा भक्षित अथवा समस्त विशीर्ण रूपसे अण्डकोष मात्रमें अवशिष्ट रहता है, चिकित्सकको वह रोगी उसी समय छोड़देना पड़ता है।*

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे १म सहज उपदंश (Simple chancre)में गोल, अगभीर एवं सूक्ष्म रक्ताभ रेखाविेष्टित धूसर वर्ण देख पड़ता है। मैथुनसे ४।५ दिन पीछे पुरुषको खांजमें एक या दो तीन फुन्सी निकल आती हैं। फिर उसके फूटनेसे उपरोक्त क्षत होता है। कभी इससे अतिप्रदाह उठ लिङ्ग फूलता और रक्तवर्ण बनता, और कभी पीपि जैसा हो अत्यन्त पूय छोड़ता है।

२य कठिन उपदंश (Indurated chancre) लिङ्गके मुण्ड और ऊपरी चर्मपर हुआ करता है। इसका प्रान्त कठिन, मध्य गभीर गोलाकार, निम्न भाग धूसराभ और पार्श्व उन्नत रहता है।

३य क्षयकारी उपदंश (Phagedonic chancre) शीघ्र ही बढ़ता और वेदनायुक्त होता है। इसका प्रान्त भिन्न भिन्न और आकार असमान होता है। क्षत रक्तवर्ण एवं दुर्गन्धमय रहता और तरल क्लेद बहता है। कभी कभी इसके गभीर पड़नेसे मेढ़ क्रमशः गल जाता है। इसमें वैद्यकोक्त वातिक, पैत्तिक और श्लैष्मिक तीनोंका लक्षण मिलता है।

४र्थ गलित उपदंश (Sloughing chancre) प्रायः लिङ्गके मुण्ड और परिवेष्ट चर्मपर उठता है, एवं प्रथमतः कृष्णवर्ण पड़ता, पश्चात् गलने लगता है। कभी गलितांश गिरते समय लिङ्गकी प्रधान शिरा (Dorsal artery)से रक्त टपकता है। प्रान्त भाग कटा-जैसा देखाई देता है। इसमें ज्वरका प्रदाह बहुत बढ़ जाता है। उपदंशका क्षत निकलने या सूखनेके १५।२० दिन बीच गिलटी पड़नेसे अत्यन्त वेदना बढ़ती है। इसका नाम बद है। कठिन उपदंशके बाद बद होनेसे प्रायः बैठ, परन्तु साधारण बद सचराचर पक जाती है।

उपदंशका क्षत उठनेसे बद निकलने तक इस रोगको मुख्य वा प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis) कहते हैं। यह विष एकबार देहमें पहुंचनेसे सहज ही दूर नहीं होता। क्योंकि कभी दो वर्ष, कभी दश वर्ष, कभी आजीवन इसका फल लगा रहता है। इसे गौण वा द्वितीय अवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis) कहते हैं। उपदंशमें प्रथमतः रक्त बिगड़नेसे यह अवस्था आया करती है कि गात्रमें ताम्रवर्णकी फुंसियां उठ खड़ी होती हैं, क्षत गल जाता है, चक्षु जलते हैं, एवं सन्धि और अस्थिमें वेदना बढ़ती है।

कभी कभी उक्त प्रकारका उपदंश अधिकतर दुरवस्थाको पहुंच जाता है, जिसे तृतीय अवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis) कहना पड़ता है। इसमें मुख, कण्ठ और चर्म प्रसारित तथा क्षत एवं अस्थिवेष्ट हो जाता है। हृत्पिण्ड, यकृत्, चक्षु, अण्डकोष और अस्थिमें अर्बुदादि उठते हैं। स्त्रीको यह रोग लगनेसे गर्भ गिर पड़ता, यकृत् स्थान जलता और प्लीहाका आकार बढ़ने लग जाता है। कभी कभी मूत्रमें अधिक परिमाणसे श्वेतसार (Albumen) आता है। फिर कभी उपदंश-जनित फुस्फुस्की पीड़ा चलती है। यही रोग सर्वाङ्गमें जानेसे सार्वाङ्गिक उपदंश (Constitutional Syphilis)का नाम पाता है। इस अवस्थामें यह प्रथमतः त्वक्, तालु तथा कण्ठके श्लैष्मिक सूक्ष्म चर्मपर, पश्चात् अस्थि और अस्थिवेष्टनी पर देख पड़ता है। उस समय प्रदाहयुक्तके समान अल्प अल्प ज्वर चढ़ने लग जाता है। सकलप्रकारकी शक्ति घटकर शरीरपर दुर्बलता आ जाती है। गौणरूपसे यह हृत्पिण्ड, कण्ठकी नली, प्लीहा, यकृत्, वृक्क् एवं अन्य प्रभृति स्थानोंपर भी आक्रमण करता है। फिर कभी मस्तिष्क, स्नायु, शिरा, धमनी और अस्थि आदि पर्यन्त भी इसका वेग

* "नानाविधस्रावरुजोपपन्नमसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम्।
प्रशीर्णमांसं कृमिभिः प्रजग्धं मुष्कावशेषं परिवर्जनीयम्॥" (भावप्रकाश)

पहुंचा करता है। इस अवस्थासे शरीरके सकल हो यन्त्रोंपर समय समय नाना रोगोंका उपसर्ग हुआ करता है।

माता पितासे सन्तानादिको जो उपदंश लगता है, उसका नाम कौलिक उपदंश (Hereditary Syphilis) है। कौलिक उपदंश होनेके फल श्लेष्मा, स्वरभङ्ग, नाना स्थानमें चत, चय, गण्डमाला, वधिरता, चक्षुरोग प्रभृति हैं।

चिकित्सा—उपदंश रोग सांघातिक होता है। इसको आदिसे ही यथासाध्य चिकित्सा करनी चाहिये। कितने ही लोग लज्जाके भयसे सहजमें इसे नहीं खोलना चाहते, किसी अनाड़ी या अताईसे दवादारू करा बचनेकी राह खोजते हैं। किन्तु उससे भलाई न निकल अनेक स्थलमें विषम फल मिला करता है। इस रोगमें प्रथम ही सुचिकित्सकसे परामर्श लेना चाहिये। वैद्यक मतसे इस रोगपर स्निग्ध स्वेद द्वारा लिङ्गमें शिराका वेध होना अच्छा है। जोंक लगा रक्तमोचण और ऊर्ध्व तथा अधःशोधन करते हैं। वही प्रक्रिया यत्नपूर्वक चलाना अत्यन्त आवश्यक हैं, जिससे उपदंश मर जाय। वातिक उपदंशमें यष्टिमधु, रास्ना, इन्द्रयव, पुण्डरीक, सरलकाष्ठ, पुनर्णवा, अगुरु एवं मुस्तक इन सकल द्रव्यको पीस प्रलेप और इन्हींके क्वाथका सेचन लगाना चाहिये। पैत्तिक उपदंशमें गैरिक, रसाञ्जन, मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु, वेणाका मूल, पद्मकाष्ठ, रक्तचन्दन और उत्पल सकल द्रव्य पीसकर घृतके साथ लिङ्गपर लगाया करते हैं। श्लैष्मिक उपदंशमें निम्ब, अर्जुन, अश्वत्थ, कदम्ब, जम्बु, वट, यज्ञडम्बुर एवं वेतस इन सकल वृक्षोंके वल्कलका क्वाथ बनाकर लिङ्ग धोना चाहिये। फिर उक्त द्रव्य समुदायके चूर्णका लेप भी लगा लेना ठीक है।

वदरी, आकनादी एवं अपामार्गके मूलकी त्वक्, ब्राह्मणयष्टि और हिङ्गुल प्रत्येक बराबर बराबर रख माड़ लेना चाहिये। इस समुदायके द्वारा धूप देनेपर उपदंशका चत सूखता है। वैद्य इस रोगपर भूनिम्बाद्य एवं करञ्जाद्य घृत, आगारधूमाद्यतैल प्रभृतिका प्रयोग करते हैं। शृगालकण्टककी जड़ तम्बाकूमें डाल पीने, या अमलतासकी जड़ पानके और छिपकलीकी पूंछ केलेके साथ खानेसे भी उपदंश अच्छा हो जाता है।

आलोपाथीक मतसे सहज उपदंशमें नाइट्रिक अव सिलवर एवं नाइट्रिकएसिड भी लगाते हैं। उक्त औषधके प्रयोगसे जो क्लेद आता, वह उष्ण जलसे परिष्कार किया जाता है। सहज उपदंशमें मुदाका लक्षण रहनेसे लेड लोशन अथवा स्पिरिट व्यवहार करें। स्त्रीके भी उक्त औषध लगता है। अधिक प्रदाह उठनेपर गोलार्ड लोशन और कभी कभी जिङ्क-लोशन व्यवहार करते हैं। देशी डाक्तर यह मरहम भी देते हैं—मोम २ ड्राम, नारियलका तेल १ औन्स, बकरेकी चर्बी आध औन्स, कज्जली १ ड्राम और कपूर १ ड्राम एक साथ थोड़ा तपा मरहम बनायें। यह उपदंशके लिये विशेष उपकारी है। बलकर पथ्य देना चाहिये।

कठिन उपदंश पर ष्ट्रङ्ग-नाइट्रिक एसिड लगा ब्लाक वास या येलो वास (Wash) व्यवहार करते हैं। दांतमें अधिक पीड़ा उठनेसे स्पिरिट लोशन द्वारा ड्रेस चढ़ा दें। इस उपदंशपर अनेक लोग पारदसे कार्य लेते हैं। चयकारी उपदंश पर प्रथमतः पुलटिस और अफीम चढ़ाना अच्छा है। स्थानिक उत्तेजना घटनेसे ष्ट्रङ्ग नाइट्रिक एसिड व्यवहार करें। रोगीको ३ ग्रेन कुनैन और १ ग्रेन अफीम खिलाते हैं। गलित उपदंश पर चारकोल पुलटिस और ओपियम लोशन ३ बार दिनमें चढ़ाते तथा नाइट्रिक एसिड लगाते हैं। प्रथम कापर लोशन प्रभृति द्वारा ड्रेस देना चाहिये। गलितांश निकलनेसे चत मिटानेके लिये कारबोलिक आयल लगाते हैं। ज्वर रहनेसे प्रथम कोष्ठ परिष्कार करा पहले १ औन्स काष्टर आयेल और पीछे ५ ग्रेन कुनैन दिनमें तीन बार खिलाना चाहिये। रोगीको दुबलानेसे सबल बनानेके लिये पोर्ट वाइन, ब्राण्डी, आरारोट, मांसका शोरवा, रोटी और दूध दिया जाता है।

द्वितीय अवस्थाके उपदंशपर पारदका भफारा विशेष उपकारी है। इस रोगके सम्पूर्ण प्रकाशित होने पर अनेक इस औषधका प्रयोग करते हैं—

होइड्रजिराई परक्लोराइडम्	...	१ ग्रेन
नसोदर ...	...	५ ,,
पोटास आयोडाइड	...	४० ,,
जल ...	...	२ ड्राम
एक्सट्राक्ट सार्जी लिक्विडियम	...	१ औन्स
डिकक्सन सालसा ...	...	३२ ,,

सब औषध मिलाकर १ औन्स मात्रासे दिवसमें ३ बार सेव्य है। सार्वाङ्गिक उपदंश निकलते समय किञ्चित् ज्वर आ जाता है। इसीसे मृदुविरेचक फीवर मिक्सचर, सेलाइन मिक्सचर, और प्रदाह-नाशक औषध व्यवहार करे। लक्षणादि सम्पर्ण रहनेसे किसी-किसी स्थलपर रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है। ऐसे स्थलपर बलकर आहार खिलाना चाहिये। बार्क कुनैन, सालसापरिल्ला, लौहघटित औषध प्रभृति प्रयोग करते हैं। कौलिक उपदंशमें अनन्तमूलका क्वाथ (डिकक्शन) दिनमें ३ बार पिलाये। शरीरपर क्षत पड़नेसे केलोमेल आयण्टमेण्ट और सेटिन आयेण्टमेण्ट लगाते हैं।

होमिओपाथोंके मतसे पारदके व्यवहारमें कोई क्षति आनेकी आशङ्का नहीं। उससे सत्वर और निर्विघ्न अनेक लोग अच्छे हो गये हैं। प्राथमिक अवस्थाके उपदंशमें मार्कसल, मार्क-कर और सिनावार द्वारा ही उपकार पहुंचता है। किसी प्रकार पहले पारद ले लेनेसे नाइट्रिक एसिड या हिपार सलफर व्यवहार करना चाहिये। क्षतपर क्लोरेट हाइड्रेड और क्लोरेट अव पोटासका चूर्ण लगाते हैं। द्वितीय अवस्थामें एसिड नाइट्रिक मार्क, काली क्लोरिकम, काली हाइड्रोआयोडिकम, हिपार और सार्जा चलता है। तृतीय अवस्थामें अरम म्यरोटिकम्, एसिड फसफरस, एसाफेटिडा, कालकेरिया, काली हाइड्रो, फस और चायना कार्बो उपयोगी है। कौलिक उपदंशपर उपरोक्त औषधमें लक्षणानुसार कोई एक खिलानेसे विशेष उपकार देख पड़ता है।

हकोमी मतसे आतशककी बीमारी होनेपर पहले यह दवा दी जाती है—गोपालफूल ३ मासे, मुनक्का सात, सौंफ ६ मासे, सोनामुखीका पत्ता २ मासे और सूखी बढ़न्ता ६ मासे एकत्र मिला भुनाये। एकबार फूट जानेसे नीचे उतार लेते और एक तोले गुलकन्द मिला देते हैं। यह औषध ३ दिन खिलाना चाहिये। पथ्य मिसरी है। हींग, माजूफल, अकरकरहा, नागोड़ी, असगंध, सफेद और काली मूसल तथा छोटी गुखुरीकी बुकनी, जङ्गली बेरकी लकड़ीसे जलाकर हफ्तेभर जख्मोंपर धूवां देना चाहिये। इससे उपदंशका मूलतक नष्ट हो जाता है। उपदंश पुरातन होनेसे शिरीष, बबूल और नीमकी छाल सवा-सवा सेर यानि छः सेर जलमें पका चार सेर जल रहनेपर उतार ले। प्रत्यह आध पाव मात्रासे सेवन करनेपर पुरातन उपदंश निश्चय ही आरोग्य होता है।

उपदंशक्षम (सं० पु०) शिशुवृक्ष, एक पेड़।

उपदंशिन् (सं० त्रि०) उपदंशका रोगी, आतशकका बीमार।

उपदग्ध (सं० त्रि०) ईषद्दग्ध, थोड़ा जला हुआ।

उपदधि (सं० त्रि०) ऊपर रखनेवाला, जो रख देता हो।

उपदन्त (सं० पु०) कुसुम्बुरु, हरी धनिया।

उपदर्शक (सं० पु०) उप-दृश्-णिच्-ण्वुल्। १ द्वारपाल, दरवान। (त्रि०) २ दर्शक, देखनेवाले। ३ साक्षी, गवाह।

उपदल (सं० क्ली०) पुष्पदल, फूलकी पत्ती।

उपदश (सं० त्रि०) प्रायः दश, कोई दस।

उपदा (वै० स्त्री०) उप-दा-अङ्। १ उत्कोच, रिशवत। २ उपढौकन; भेंट।

"प्रत्यर्घ्य पूजामुपदाच्छलेन।" (रघु ४

(त्रि०) ३ उपढौकन देनेवाला, जो भेंट देता हो।

'उपदी उपग्रहदातारम्।' (शुक्लयजुर्भाष्ये महीधर)

उपदान, उपदानक देखो।

उपदानक (सं० क्ली०) उपदान स्वार्थे कन्। १ उत्कोच, रिशवत। २ उपढौकन, भेंट।

उपदानवी (सं० स्त्री०) वृषपर्वा और पुलोमाकी कन्या। इनके गर्भसे दुष्मन्त, सुष्मन्त, प्रवीर और अनघने जन्म लिया था। (हरिवंश ३ और ३२ अ०)

उपदिक् (सं० स्त्री०) १ उपदिशा, दो दिशाके बीचकी दिशा। (अव्य०) २ उपदिशामें।

उपदिका (सं० स्त्री०) उप-दो-ङीप् स्वार्थे कन्-

टाप्। उपजिह्वा, एक चींटी। इससे दुर्गन्ध निकलता है।

उपदिग्ध (सं॰ त्रि॰) १ लिप्त, आलूदा, भरा हुआ। २ बिन्दुलाञ्छित, धब्बेदार।

उपदिश्, उपदिक् देखो।

उपदिश (सं॰ पु॰) वसुदेवके एक पुत्र।

उपदिशा, उपदिक् देखो।

उपदिश्य (सं॰ अव्य॰) उपदेश करके, नसीहत देकर।

उपदिश्यमान (सं॰ त्रि॰) उप-दिश कर्मणि शानच्। १ उपदेश-सम्बन्धीय, नसीहतसे सरोकार रखनेवाला। २ उपदेश पानेवाला, जिसको नसीहत दी जाती हो।

उपदिष्ट (सं॰ त्रि॰) उप-दिश कर्मणि क्त। १ उपदेशप्राप्त, नसीहत किया हुआ। २ कथित, कहा हुआ। ३ ज्ञापित, बताया हुआ। ४ आदिष्ट, हुकम दिया हुआ। ५ प्रदर्शित, देखाया हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। ६ उपदेश, नसीहत।

उपदी (सं॰ स्त्री॰) उपेत्य दीयते खराज्यते, उप-दी-क-ङीष्। बन्दाक, बांदा।

उपदीका, उपदिका देखो।

उपदीक्षिन् (सं॰ त्रि॰) उपगतो दीक्षिणं सामीप्येन। १ यज्ञस्थलमें दीक्षितके निकटस्थ। २ दीक्षाप्राप्त।

उपद्दक् (वै॰ त्रि॰) उप-दृश-क्विन्। १ ऊर्ध्वस्थित हो दर्शन करनेवाला, जो ऊंचे बैठकर देखता हो। (स्त्री॰) २ दर्शन, नज़ारा।

"भद्रा सूर्य इवोपदृक्।" (ऋक् ८।९१।१५) 'सर्वस्य लोकस्योपद्रष्टा तत्तत्कर्मणामुपदृगुपद्रष्टा।' (सायण)

उपदृश्, उपदृक् देखो।

उपदृषद् (सं॰ अव्य॰) सीमा-प्रस्तरके समीप, हदके पत्थरके पास।

उपदृष्टि (सं॰ स्त्री॰) दर्शन, नज़ारा।

उपदेव (सं॰ पु॰) उपगतो देवं सादृश्येन, अत्यादि समा॰। १ अक्रूरपुत्र। (विष्णुपु॰ ४।१४।२) २ देवकराजके पुत्र। (हरिवंश ३८ अ॰) ३ भूत प्रेतादि।

उपदेवता (सं॰ स्त्री॰) यक्षभूतादि।

उपदेवी (सं॰ स्त्री॰) १ वसुदेवकी षष्ठ स्त्री। २ देवकराजकी कन्या। ३ विद्याधरी प्रभृति।

उपदेश (सं॰ पु॰) उप-दिश-घञ्। १ परामर्श, नसीहत। २ शिक्षादान, तालीमका देना। ३ हित-कथन, भली बात। ४ आदेश, हुक्म। ५ मन्त्रकथन। ६ दीक्षा।

"चन्द्रसूर्यग्रहे तीर्थे सिद्धक्षेत्रे शिवालये।
मन्त्रमात्रप्रकथनमुपदेशः स उच्यते।" (रामार्चनचन्द्रिका)

चन्द्र एवं सूर्यग्रहण, तीर्थस्थान, सिद्धपीठ और शिवमन्दिरमें मन्त्रकथनका नाम उपदेश है।

मनु प्रभृति प्राचीन संहिताकारोंने ब्राह्मणादि विज्ञ लोगोंको ही उपदेश देनेकी आज्ञा दी है। मनुने एक स्थानपर कहा है—

"धर्मोपदेशं दर्पेण विप्राणामस्य कुर्वतः।
तप्तमासेचयेत् तैलं वक्त्रे श्रोत्रे च पार्थिवः॥" (८।२७)

दर्पसे यदि शूद्र ब्राह्मणको धर्मोपदेश सुनाये, तो राजा उसके मुख और कर्णमें तप्त तैल डालनेकी आज्ञा दे। मन्त्र और दीक्षा देखो।

७ न्यायमतसे—शब्द, आवाज़। ८ मुस्तक, मोथा।

उपदेशक (सं॰ त्रि॰) उप-दिश-ण्वुल्। १ उपदेश-कर्ता, नसीहत देनेवाला। २ सत्परामर्शदाता, भली सलाह देनेवाला। ३ शिक्षक, सिखानेवाला।

उपदेशता (सं॰ स्त्री॰) १ उपदेश होनेकी स्थिति, नसीहत रहनेकी हालत। २ शासन, हुक्म। ३ शिक्षाकी रीति, तरीक-तालीम। ४ मत, अक़ीदा।

उपदेशन (सं॰ क्ली॰) परामर्शका देना, नसीहतका करना।

उपदेशना (सं॰ स्त्री॰) मत, अक़ीदा।

उपदेशनीय, उपदेष्टव्य देखो।

उपदेशार्थवाक्य (सं॰ क्ली॰) दृष्टान्त, मिसाल।

उपदेशिन् (सं॰ त्रि॰) उपदिशति, उप-दिश्-णिनि। उपदेष्टा, नसीहत देनेवाला।

उपदेश्य (सं॰ त्रि॰) शिक्षा दिये जानेके योग्य, जो सिखानेके क़ाबिल हो।

उपदेष्टव्य (सं॰ त्रि॰) शिक्षा दिये जानेके योग्य, सीखनेक़ाबिल।

उपदेष्टृ (सं॰ त्रि॰) उप-दृश-तृच्। उपदेशकर्ता, नसीहत देनेवाला।

उपदेस (हिं०) उपदेश देखो।

उपदेह (सं० पु०) उपदिह्यते अनेन, उप-दिह-घञ्। १ देहादिकी वृद्धि, जिस्म वगैरहको तरक्की। गण्ड-माला, अर्बुद प्रभृतिको उपदेह कहते हैं। (सुश्रुत) २ उपलेप, मरहम।

उपदेहिका, उपदिका देखो।

उपदोह (सं० पु०) उप-दुह आधारे घञ्। १ दोहन-पात्र, दूध दूहनेका बरतन।

"गाः कांस्योपदोहाश्च कन्याश्च वस्त्रलङ्कृताः।" (हरिवंश)

२ गोके स्तनका मुख, गायके आयनकी टिभनी।

उपद्रव (सं० पु०) उप-द्रु भावे घञ्। १ उत्पात, हलचल। २ अत्याचार, ज़ुल्म। ३ आपद्, आफ़त। ४ उपसर्ग, अलामत। प्राचीन वैद्यक हारीतके मतसे—

"यो व्याधिस्तस्य यो हेतुर्दोषस्तस्य प्रकोपतः।
योऽन्यो विकारो भवति स उपद्रव उच्यते॥
व्याधेरुपरि यो व्याधिः उपद्रव उदाहृतः।
सोपद्रवा न जीवन्ति जीवन्ति निरुपद्रवाः॥"

जो व्याधि उठकर शरीरमें पूर्वस्थित किसी रोगको बढ़ा फिर निकालता या कोई विकार डालता, वही उपद्रव है। उपद्रवयुक्त रोगी प्रायः नहीं जीता। निरुपद्रव बच जाता है।

उपद्रविन् (सं० त्रि०) १ आक्रामक, हमला मारने-वाला। २ अत्याचारी, ज़ालिम।

उपद्रष्टृ (सं० त्रि०) उप-दृश्-तृच् बाहुलकात्। साक्षी, देखनेवाला। "उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः। परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः॥" (गीता १३।२२)
'अतिशयेन सामीप्येन द्रष्टत्वादुपद्रष्टा।' (शङ्कराचार्य)

उपद्रुत (सं० त्रि०) उप-द्रु-क्त। जातोपद्रव, आफ़त-ज़दा, जो सताया गया हो। २ व्याकुल, बेचैन। ३ उत्पातग्रस्त, बदशिगून। (क्लो०) ४ सन्धिविशेष, किसी क़िस्मकी सुलह।

उपद्वीप (सं० पु०) १ क्षुद्रद्वीप, छोटा टापू। २ प्रायो-द्वीप (Peninsula)की तरह तीन अथवा चारो ओर प्रायः जलसे घिरी हुई भूमि।

उपधरना (हिं० क्रि०) उपधारण करना, बचाना।

उपधर्म (सं० पु०) उप हीनो धर्मः, प्रादि० समा०। १ अप्रधान धर्म, छोटा फ़र्ज़। मनुके मतसे—

"विप्रे तेष्विति कृत्यं हि पुरुषस्य समाप्यते।
एष धर्मः परः साक्षादुपधर्मोऽन्य उच्यते॥" (२।२३७)

पिता माता और गुरु तीनोके प्रिय कार्यका साधन तथा उनकी सेवा शुश्रूषा साक्षात् परम धर्म है। सिवा इसके अग्निहोत्रादि सकल पुण्यकार्य उपधर्म कह-लाते हैं। "वेदमेवाभ्यसेन्नित्यं तथा कालमतन्द्रितः।
तं ह्यस्याहुः परं धर्ममुपधर्मोऽन्य उच्यते॥" (४।१४७)

समय पाते ही आलस्यको छोड़ नित्य वेदाभ्यास करना चाहिये। द्विजगणके लिये यही परम धर्म है। दूसरे सभी धर्मोंको उपधर्म कहते हैं।

उपधा (सं० स्त्री०) उप-धा-अङ्। 'आतश्चोपसर्गे'। पा ३।३।१०६। १ धर्मका भय दिखा राजा द्वारा अमात्य सचिवगणकी परीक्षा।

"धर्मोपधाभिर्विप्रांस्तु सर्वाभिः सचिवान् पुनः।"
(कालिकापु० ८५ अ०)

२ छल, धोका। ३ उपधानपर स्थापन। ४ व्याकर-णानुसार अन्त्यवर्णसे पूर्वका वर्ण। ५ उपाय, तदबीर।

उपधातु (सं० पु०) १ आठ प्रधान धातुओंके समान अन्य धातु। उपधातु सात प्रकारका है—स्वर्णमाक्षिक, तारामाक्षिक, तूतिया, कांसा, पित्तल, सिन्दूर और शिलाजतु। यह यथाक्रम स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, रांगा, जस्ता, सीसा और लौहके उपधातु हैं। धातुमें जो गुण रहता, उपधातुमें भी वह मिलता; किन्तु अपेक्षाकृत कितना ही अल्प पड़ता है। कारण—उपधातुमें मूल धातुका अंश अतिअल्प ही होता है। माक्षिक प्रभृति शब्दोंमें सकल उपधातु बनानेकी प्रणाली देखो।

युरोपीयोंके मतसे जर्मन सिलवर, जर्मन गोल्ड प्रभृति नानाप्रकारके उपधातु होते हैं। नीचे उनकी संज्ञा और बनानेकी प्रणाली लिखी जाती है—

जर्मन रौप्य—ताम्र २ भाग, जस्ता १ भाग और निकल १ भाग सकल मिलानेसे उत्तम जर्मन सिलवर (रौप्य) बनता है। इससे घड़ी, कटोरी, चमची प्रभृति नानाविध द्रव्य निर्माण किये जाते हैं।

जर्मन स्वर्ण—प्लाटिनम् २६ भाग, ताम्र ७ भाग और जस्ता १ भाग एकत्र मृत्तिकाकी घरियामें रख अग्निका उत्ताप देनेसे बिलकुल स्वर्ण-जैसा उज्ज्वल और भारी एक प्रकारका उपधातु प्रस्तुत हो जाता

है। प्रकृत स्वर्णसे इसको सहज ही पहचान नहीं पाते। इससे विविध अलङ्कारादि बनाये जा सकते हैं।

सोहासा वा मानहिम स्वर्ण—ताम्र ढाई भाग और जस्ता आधा भाग एकत्र मृत्तिकाकी घरियामें गलानेसे यह प्रस्तुत होता है। द्रव रहते रहते यह जैसे सांचेमें ढलेगा, वैसा ही द्रव्य बनकर निकलेगा।

मोसेक स्वर्ण—किसी पात्रमें विशुद्ध रांगा १२ भाग अग्निके उत्तापसे गला पारद ३ भाग मिला दीजिये। फिर शीतल पड़नेपर निशादल ६ भाग और गन्धक ७ भाग डालकर अग्निके उत्तापमें गलानेसे यह बनता है। पारद एवं निशादल बाष्प बनकर उड़ जाता और उज्ज्वल मोसेक स्वर्ण निकल आता है।

प्यूटर—टीन डेढ़ सेर, सीसा एक पाव, तांबा डेढ़ छटांक और जस्ता आध छटांक एकत्र अग्निके उत्तापसे मृत्तिकाकी घरियामें गला जालनेपर बिलकुल चांदी-जैसा एक प्रकारका उपधातु प्रस्तुत होता है। इसके नानाप्रकार द्रव्य बननेपर चांदी ही जैसे चमका करते हैं।

पिञ्चबेक—यह सोहासा नामक उपधातुकी तरह ही प्रस्तुत होता है। केवल तांबे और जस्तेके भागपर ही मतान्तर है।

२ शरीरस्थ धातुसदृश द्रव्य। वैद्यक-मतसे यही सात शरीरके उपधातु हैं—

"स्तन्यं रजश्च नारीणां काले भवति गच्छति।
शुद्धमांसभवस्स्नेहः सा वसा परिकीर्तिता॥
स्वेदो दन्तास्तथा केशास्तथैवौजश्च सप्तमम्।
इति धातुभवा ज्ञेया एते सप्तोपधातवः॥" (शार्ङ्गधर)

(रससे) स्तनदुग्ध और (रक्तसे) स्त्रीरजः काल पाकर बनता-बिगड़ता है। शुद्ध मांससे निकले स्नेहका नाम वसा है। मेदसे घर्म, अस्थिसे दन्त, मज्जासे केश और शुक्रसे ओजः निकलता है। बस—स्तनदुग्ध, स्त्रीरजः, वसा, घर्म, दन्त, केश और ओजः को धातुभव उपधातु समझना चाहिये।

उपधान (सं॰ क्लो॰) उप-धा अधिकरणे ल्युट्। १ शिरोधान, तकिया। २ विशेषत्व, खुसूसियत। ३ प्रणय, मुहब्बत। ४ व्रत। ५ विष, जहर। ६ समीपस्थापन। ७ उत्कर्ष, बड़ाई। (त्रि॰) ८ रख लेनेमें लगाया हुआ, जो रखनेके काम आया हो।

उपधानीय (सं॰ क्लो॰) उपधीयते यस्मिन्, उप-धा कर्मणि अनीयर्। १ उपधान, तकिया। (त्रि॰) समीपस्थापनके योग्य, जो पास रखे जानेके क़ाबिल हो।

उपधाभृत (सं॰ पु॰) करविशेष, एक महसूल। २ अधर्मसे अभियुक्त सेवक, जो नौकर बेईमानीका मुजरिम हो।

उपधाय (सं॰ अव्य॰) रखकर, डालके।

उपधायिन् (सं॰ त्रि॰) नीचे रखनेवाला, जो लगा लेता हो।

उपधारण (सं॰ क्लो॰) उप-धृ-णिच्-ल्युट्। १ अङ्कुश द्वारा आकर्षण, लग्गीसे खिंचाव। २ सम्यक् चिन्तन, सोचविचार।

उपधार्य (सं॰ अव्य॰) ले या पकड़के।

उपधावन (सं॰ क्लो॰) उप-धाव-ल्युट्। १ उत्सरण, हटाव। २ अनुचिन्तन, फ़िक्रमन्दी। (पु॰) ३ पीछे पीछे चलनेवाला, जो पीछा करता हो।

उपधाशुचि (सं॰ त्रि॰) परीक्षित, जांचा हुआ।

उपधि (सं॰ पु॰) उपधीयते आरोप्यतेऽनेन, उप-धा-कि। १ कपट, चालाकी। २ भय, डर। आधारे कि। ३ रथचक्र, गाड़ीका पहिया।

उपधिक (सं॰ पु॰) १ छली, धोकेबाज़।

उपधीयमान (हिं॰ वि॰) पुरःसर युक्त, जिसके पहले कुछ रहे।

उपधूपित (सं॰ त्रि॰) उप-धूप-क्त। १ आसन्नमरण, मर जानेवाला। २ सुगन्धीकृत, महकाया हुआ। ३ अत्यन्त पीड़ित, बड़ी तकलीफमें पड़ा हुआ।

उपधूमित (सं॰ त्रि॰) उप-धूम्र जातोऽस्य। जातधूम, धुवां दिया हुआ।

उपधूमिता (सं॰ स्त्री॰) ज्योतिषोक्त यात्रादि वर्जनीय सूर्यगन्तव्य दिक्।

"दग्धा दिगैन्द्री ज्वलिता दिगैशी धूमिता चानलदिक् प्रभाते।
अत्यैकमेकं प्रहराष्टकेन क्रमाद्दिशोऽष्टौ सविता क्रमेत॥" (वसन्तराज)

उपधृति (सं० स्त्री०) उप-धृ-क्तिन्। १ ज्योतिः, किरण। २ सन्धारण, संभाल।

उपधेय (सं० त्रि०) उप-धा-यत्। मन्त्र द्वारा स्थापनीय, रखा जानेवाला।

उपध्मा (सं० स्त्री०) १ श्वास ग्रहण, सांस लेनेकी बात। २ उपध्मानीय शब्द उत्पन्न करनेवाली वाक्की चेष्टा।

उपध्मान (सं० क्ली०) उप-ध्मा-करणे ल्युट्। १ ओष्ठ, होंठ। २ श्वासग्रहण, सांस खींचनेका काम।

उपध्मानिन् (सं० त्रि०) श्वास ग्रहण करनेवाला, जो सांस लेता हो।

उपध्मानीय (सं० पु०) प और फ के बाद विसर्ग स्थानमें लेखनीय गजकुम्भाकृति वर्ण विशेष।

"उपूपध्मानीयानामोष्ठौ।" (सिद्धान्तकौमुदी)

उपध्वस्त (सं० त्रि०) उप-ध्वन्स-क्त। १ नष्ट, बरबाद। २ अधःपतित, गिरा हुआ। ३ मिश्रित, मिला हुआ।

"सौम्याः उपध्वस्ताः साविवा वत्सतर्यः" (यजुः २४।१४) 'उपध्व' सनमधःपतनम्।' (महीधर)

उपनक्षत्र (सं० क्ली०) राशिचक्रस्थ तारकाभेद, छोटा सितारा। अश्विनी प्रभृति २७ नक्षत्रमें प्रत्येकके अनुगत सत्ताईस-सत्ताईस तारका हैं। इन्हींका नाम उपनक्षत्र है। ज्योतिषशास्त्रके मतसे ७२९ उपनक्षत्र होते हैं। तारा देखो।

उपनख (सं० क्ली०) सुश्रुतोक्त चिप्प नामक क्षुद्र-रोग विशेष, उङ्गल-बड़ा।

"नखमांसमधिष्ठाय पित्तं वातश्च वेदनाम्।
करोति दाहपाकौ च तं व्याधिं चिप्पमादिशेत्॥
तदेव क्षतरोगाख्यं तथोपनखमित्यपि॥" (निदान १३ अ०)

पित्त एवं वायु नखके मांसको पकड़ जो रोग बढ़ाता, वही चिप्प वा उपनख कहाता है। यह पककर वेदना तथा दाह उत्पन्न करता है। इसे क्षत रोग भी कहते हैं। चक्रदत्तके मतसे—

"चिप्पमुष्णाम्बुना खिन्नमुत्कृत्याभ्यज्य तं व्रणम्।" (५५।१८)

चिप्परोगमें उष्ण जलसे स्वेद लगा छेदनेसे तैलाभ्यङ्ग करनेपर व्रणको प्रतीकार पहुंचता है। वैद्यकके मतसे—इसमें धूनेका चूर्ण बांध व्रणरोगके क्षतकी चिकित्सा करना चाहिये। इस रोगमें सोहागा और आस्फोतका मूल एकत्र पीस प्रलेप चढ़ानेसे नख निकल आता है।

उपनगर (सं० क्ली०) शाखानगर, शहरके आस पासका गांव।

उपनत (सं० त्रि०) उप-नम-क्त। १ नम्र, झुका हुआ। "शौरिं प्रतापोपनतैरितस्ततः।" (माघ १२।३३)
२ शरणागत, पनाहमें पड़ा हुआ। ३ उपस्थित, हाजिर। ४ उपगत, पहुंचा हुआ। ५ प्राप्त, पाया हुआ।

उपनति (सं० स्त्री०) उप-नम भावे क्तिन्। १ नमन, झुकाव। २ उपगम, पहुंच। ३ उपस्थिति, हाज़िरी।

उपनद (सं० अव्य०) नदीके समीप, दरयाके पास।

उपनद्ध (सं० त्रि०) १ बद्ध, बंधा। २ सन्नद्ध, लगा।

उपनना, उपजना देखो।

उपनन्द (सं० पु०) १ वसुदेवके पुत्र। यह मदिराके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। (विष्णुपु० ४।१५।११)
२ गोपपति नन्दके कनिष्ठ भ्राता। ३ बौद्धशास्त्रोक्त नागराज विशेष। (स्वयम्भूपुराण ५ अ०) ४ काश्मीरराज ब्रह्मदत्तके पुत्र। इन्होंने राजपुरोहितके कनिष्ठ भ्राता कुहनकी सहकारितासे युवराज नन्दको मार डालनेका यत्न किया था। (बोधिसत्त्वावदानकल्पलता ८५)

उपनन्दक (सं० पु०) उप-नन्द-णिच्-ण्वुल्। १ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत-आदि ६७ अ०) (त्रि०) २ आनन्दजनक, खुशी पैदा करनेवाला।

उपनय (सं० पु०) उप-नी-करणे अच्। १ उपनयन, नज़दीक पहुंचानेका काम। २ संस्कार कर्म विशेष, जनेऊ। ३ न्यायावयवभेद, मन्तिककी एक बात। इसमें उदाहरणापेक्ष साध्यका उपसंहार रहता है। जैसे—धूमवान् वस्तु ही वह्निमान् होती है। गौतमसूत्रमें लिखा—"उदाहरणापेक्षस्तथेत्युपसंहारो न तथेति वा साध्यस्योपनयः॥" (१।१।३८)

उपनय दो प्रकारका होता है—अन्वयी उपनय और व्यतिरेकी उपनय। (गौतमवृत्ति) ४ न्यायके मतसे सिद्ध और ज्ञानका लक्षण—जैसे अलौकिक प्रत्यक्ष साधनके सन्निकर्षका भेद। इसमें सन्निकर्ष रूपके द्वारा

पूर्वज्ञात वस्तु अलौकिक जैसा देख पड़ता है। ५ ज्ञान, समझ। (गादाधरी)

उपनयन (सं० क्ली०) उप-नी-ल्युट्। १ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके यज्ञसूत्रादि पहननेका प्रधान संस्कार।

"गृहीतकर्मा यैन समीपं नीयते गुरोः।
बालो वेदाय तद्योगाद्बालस्योपनयं विदुः॥"

यह संस्कार तीन प्रकारका है—नित्य, काम्य और नैमित्तिक। अष्टम वर्ष पर्यन्त नित्य, पञ्चम वर्ष पर्यन्त काम्य और पापादिके अपनोदनार्थ पुनः संस्कार नैमित्तिक कहाता है।

"गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥
ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे॥"

गर्भके समयसे अष्टम वर्षमें ब्राह्मण, एकादश वर्षमें क्षत्रिय और द्वादश वर्षमें वैश्यका नित्य उपनयन संस्कार करना चाहिये। ब्रह्मतेजःकामी ब्राह्मणका पञ्चम, बलार्थी क्षत्रियका षष्ठ और धनकामी वैश्यका अष्टम वर्षमें काम्य उपनयन होता है।

उक्त समय उपनयनका मुख्य और उससे अतिरिक्त समय उपनयनका गौण काल कहलाता है। गौणकाल दो प्रकार है—मध्यम और अधम। ब्राह्मणका द्वादश, क्षत्रियका षोड़श और वैश्यका विंशति वर्ष पर्यन्त मध्यम काल होता है। इससे अतीत समयको अधम काल कहते हैं।

पैठिनसीने लिखा है—

"द्वादशषोड़शविंशतिश्चे दतीता अवरुद्धकाला भवन्ति।"

मनुका वचन है—"आषोडशाद्ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः॥
अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः॥" (मनु २।३८०)

ब्राह्मणका गर्भसे सोलह, क्षत्रियका बीस और वैश्यका चौबीस वर्ष तक उपनयन काल उत्तीर्ण नहीं होता। उक्त काल पर्यन्त संस्कृत न बननेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यका बालक उपनयनसे भ्रष्ट हो साधु समाजमें निन्दनीय समझा और व्रात्य कहा जाता है।

"तस्य प्राप्तव्रतस्यायं कालः स्याद्द्विगुणाधिकः।
वेदव्रतच्युतो व्रात्यः स व्रात्यस्तोममर्हति॥ २०॥
द्विजन्मनो द्विजातीनां मातुः स्यात् प्रथमं तयोः।
द्वितीयं छन्दसां मातुर्ग्रहणाद्विधिवद्गुरोः॥ २१॥
एवं द्विजातिमापन्नो विमुक्तो वाच्यदोषतः।
श्रुतिस्मृतिपुराणानां भवेदध्ययनक्षमः॥ २२॥"
(व्याससंहिता १अ०)

जो ब्राह्मण गर्भसे १५ वर्ष २ मास, क्षत्रिय २३ वर्ष २ मास और वैश्य ३० वर्ष २ मास बीतने पर वेदपाठ एवं उपनयन संस्काररहित रहता, उसे शास्त्र व्रात्य कहता है। ऐसा व्यक्ति व्रात्यस्तोमके योग्य अर्थात् व्रात्यस्तोम करनेसे फिर गायत्रीका अधिकारी होता है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीन जातिके दो जन्म हैं। प्रथम जन्म माताके गर्भ और द्वितीय जन्म गुरुसे यथाविधि गायत्रीके ग्रहण द्वारा होता है। इसीप्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य द्विजत्व पाते और अन्य दोषसे छूट जाते हैं। फिर वे श्रुति, स्मृति, पुराणादि अध्ययनके उपयुक्त होते हैं।

महर्षि नारदके मतसे—

"ऋतौ वसन्ते विप्राणां ग्रीष्मे राज्ञां शरद्यथो।
विशां मुख्यञ्च सर्वेषां द्विजानाञ्चोपनायनम्॥"

द्विजातिके मध्य ब्राह्मणका वसन्त, क्षत्रियका ग्रीष्म, और वैश्यका शरद् ऋतुमें उपनयनकाल प्रशस्त है।

सुरेश्वरके कथनानुसार—माघमें गुणवान् एवं धनशाली, फाल्गुनमें बुद्धिमान् तथा मेधावी, चैत्रमें वेदवित्, वैशाखमें सौभाग्यशाली एवं विचक्षण, ज्यैष्ठमें श्रेष्ठ तथा विज्ञ, और आषाढ़ मासमें उपनयन करनेसे द्विजातिका बालक ख्यातनामा एवं महापण्डित होता है। यह नियम ब्राह्मण और क्षत्रियके लिये रखा है। वैश्यके पक्षमें शरत्काल ही प्रशस्त है।

लल्लाचार्य जन्मके लग्न, नक्षत्र, मास और राशिमें होनेवाले उपनयनको ही प्रशस्त समझते हैं। किन्तु गर्गमुनिने इस विषयमें कुछ विशेष कहा है—

"विवाहे मेखलाबन्धे जन्ममासं विवर्जयेत्।
विशेषाज्जन्मपक्षन्तु वशिष्ठाद्यैरुदाहृतम्॥"

विवाह और जनेऊमें जन्मका मास, विशेषतः

वशिष्ठादिके मतसे जन्मका पक्ष अवश्य छोड़ देना चाहिये।

इस स्थानपर लल्लवाक्यसे गर्गका विरोध देख स्मार्त लोगोंने स्थिर किया है—गर्गका वचन क्षत्रिय और वैश्यके लिये है, ब्राह्मणके लिये नहीं।

वृद्ध गर्गके मतसे अनध्यायका दिन, सप्तमी, त्रयोदशी और माघ मासकी दोनों द्वितीया छोड़ उपनयन करना चाहिये। ऋग्वेदीका वृहस्पति, यजुर्वेदीका शुक्र, सामवेदीका मङ्गल और अथर्ववेदीका सोमवारको उपनयन विधेय है।

गृह्यसूत्रादि और मनुके मतसे—ब्राह्मणको कृष्णसारका, क्षत्रियको रुरु नामक मृगका और वैश्य ब्रह्मचारीको छागके चर्मका उत्तरीय लेना चाहिये। ब्राह्मणको शण, क्षत्रियको क्षौम और वैश्यको मेषके लोमका अधोवसन परिधेय है। ब्राह्मणको मृदुस्पर्श तीन पूले मुञ्जातृणसे, क्षत्रियको धनुसकी तांत-जैसी मूर्वा वृक्षसे और वैश्यको त्रिगुणित शणके तन्तुसे मेखला बनाना पड़ती है। मुञ्जादि न मिलने पर यथाक्रम कुश, अश्मान्तक और वल्वज तृणसे मेखला प्रस्तुत करना उचित है। उसे एक, तीन अथवा पांच ग्रन्थिसे बांध रखना चाहिये। ब्राह्मणका कार्पास, क्षत्रियका शण और वैश्यका मेषके सूतसे उपवीत प्रस्तुत होता है। नीचे-ऊपर तीन ग्रन्थि सूत ही जनेऊ है। ब्राह्मणको विल्व अथवा पलाशका, क्षत्रियको वट वा खदिरका और वैश्य ब्रह्मचारीको पीलु अथवा यज्ञडुमुरका दण्ड लेना चाहिये। ब्राह्मणके केश, क्षत्रियके ललाट और वैश्यके दण्डका परिमाण नासाग्र पर्यन्त है। उपनयनका दण्ड सरल, परिष्कार, छिद्रहीन, अदग्ध त्वक्युक्त, देखनेमें सुश्री और मनोमत होना चाहिये। इस मनोमत दण्डको ले सूर्यकी उपासना और तीन वार अग्निकी प्रदक्षिणा दे यथाविधि भिक्षा करना उचित है। प्रथम ब्रह्मचारीको माता, भगिनी, माताकी सहोदरा भगिनी और दयाशील स्त्रीके आगे भिक्षा मांगना कहा है। उपनीत ब्राह्मण 'भवति भिक्षां देहि', क्षत्रिय 'भिक्षां भवति देहि' और वैश्य ब्रह्मचारी 'भिक्षां देहि भवति' कह कर भिक्षा मांगे। भिक्षा संगृहीत होनेपर ब्रह्मचारी अकपट मनसे गुरुको निवेदन कर, हाथ-पैर धो और पूर्वमुख शुचि हो आहार करे। मनुने कहा है—

"आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः।
श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते ह्युदङ्मुखः॥"

आयुष्कामीको पूर्व, यशस्कामीको दक्षिण, धनार्थीको पश्चिम और सत्यकामीको उत्तरमुख बैठकर खाना चाहिये। यज्ञोपवीत शब्दमें विस्तारित विवरण देखिये।

२ आयुर्वेदके शिक्षार्थीका एक संस्कार। आयुर्वेद सीखनेसे पहले यह उपनयन करना पड़ता है। महर्षि सुश्रुतने ऐसी व्यवस्था दी है—

ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य तीन जातिमें जो व्यक्ति शुद्ध वंशजात, षोड़शवर्ष वयस्क, वीरभावापन्न, शुद्धाचार, विनीत, बलवान्, शक्तिसम्पन्न, मेधावी, धृतिमान्, यशः अभिलाषी, सर्वदा प्रसन्न रहनेवाला, कभी अनिष्ट न करनेवाला, क्लेशसहिष्णु हो, जिसके ओष्ठ एवं जिह्वा दानों पतले, दन्तका अग्रभाग सूक्ष्म तथा चक्षु एवं मुख सुन्दर हो, उसे गुरु आयुर्वेदका उपदेश देनेके लिये शिष्य भावसे उपनयन करे। शुभ क्षणको प्रशस्त दिशामें पवित्र एवं समतल भूमिपर चार कोणयुक्त और चार हस्त-परिमित एक वेदी बनाना चाहिये। वेदीपर गोमूत्र द्वारा लेपन कर कुश बिछाते हैं। फिर उपनयनकर्ताको पुष्प, लाजा, अन्न एवं रत्न द्वारा देवतागणकी पूजा और भिषक्को अभिषिक्त देना उचित है। उस समय कुशनिर्मित ब्राह्मणको अपने दक्षिण और अग्निको सम्मुख स्थापन करे। अनन्तर खदिर, पलाश, देवदारु, विल्व अथवा वट, यज्ञडुम्बुर, अश्वत्थ तथा मधुक चार प्रकारके काष्ठसे दधि, मधु और घृत लगा कर अग्नि जलाना चाहिये। उसी अग्निसे आचार्य प्रणव एवं व्याहृति मन्त्र द्वारा देवता तथा ऋषिका आह्वान करे और शिष्यको भी वैसे ही करनेकी आज्ञा दे। फिर आचार्य तीन वार शिष्यको अग्निस्पर्श करावे और अग्निसाक्ष्य कर सुनावे—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, अहङ्कार, ईर्ष्या, कर्कशता, खलस्वभाव, असत्य, आलस्य एवं निन्दनीय कार्य छोड़ दो। यह समस्त परित्याग कर अल्प नख एवं

अल्परोम रखना, सर्वदा शुचि रहना, रक्ताम्बर पहनना, स्त्रीसंगादि तजना और गुरु लोगोंसे अभिवादन पूर्वक मिलना आदि सकल आचरण अवश्य पालना पड़ेगा। हमारे आदेशके अनुसार तुम्हें गमन, शयन, उपवेशन, भोजन एवं अध्ययन करना और हमारे प्रियकार्यमें तत्पर रहना चाहिये। इससे अन्यथा चलनेपर तुम्हें घोर अधर्म लगेगा और विद्याका भी कोई फल न मिलेगा। हमारे मतानुसार कार्य करते भी तुमसे यदि हम अन्यथाचरण करेंगे, तो हम पापभागी बनेंगे और अपनी विद्याका फल न पावेंगे। ब्राह्मण सकल जातिको, क्षत्रिय अपनी और वैश्य तथा वैश्य केवल शूद्र जातिको उपनयन कर सकता है। (सुश्रुत सू० २अ०)

उपनहन (सं० क्ली०) उप-नह बन्धने ल्युट्। १ बन्धनकरण, बंधाई। करणे ल्युट्। २ बन्धनके योग्य वस्त्रादि। "ग्रीष्यति च सीमोपनहनमाहर।" (कात्यायन-श्रौ० सू० ७.७।१)

उपनागरिका (सं० स्त्री०) वृत्यनुप्रासके छन्दका एक भेद। "माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णैरुपनागरिकेष्यते।" (वृत्तरत्नाकर)

उपनामन् (सं० क्ली०) उपाधि, आधा नाम, प्यारका नाम।

उपनाय (सं० पु०) उपनीयते आचार्यसमीपमनेन, उप-नी-घञ्। उपनयन, जनेऊका काम। उपनयन देखो।

उपनायक (सं० पु०) अभिनयके नायकका मित्र।

उपनायन (सं० पु०) उप-नी स्वार्थे णिच्-ल्युट् करणे कर्तृत्वविवक्षायां कर्तरि ल्यु। नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः। पा ३।१।३४। उपनयन, जनेऊका काम। उपनयन देखो।

उपनायिक (सं० त्रि०) पथप्रदर्शक, ले जानेवाला।

उपनाह (सं० पु०) उप-नह-घञ्। १ बन्धन, गिरफ्त। २ निबन्धन, गांठ। वीणादिके निम्न भागमें तन्त्री बांधनेका स्थान उपनाह कहलाता है। ३ प्रलेप, लेपन। ४ स्वेदविशेष, किसी क़िस्मका सेंक या भपारा। वचा, किरात, शताह्वा, देवदारु आदिसे लिये जानेवाले स्वेदको उपनाह कहते हैं। (वाग्भटटीका) ५ नेत्रसन्धिरोग, बिलनी, आंखकी गांठका आज़ार।

"शोफयोरुपनाहं कुर्यादामविदग्धयोः।" (सुश्रुत)

उपनाहन (सं० क्ली०) उपनह स्वार्थे णिच् भावे ल्युट्। प्रलेपादि बन्धन, मरहम वग़ैरहका चढ़ाव। "वेशवारैः सकृशरैः स्निग्धैः स्यादुपनाहनम्।" (सुश्रुत)

उपनाहस्वेद (सं० पु०) उपनाह जन्य घर्म, सेंक या भपारेके लेनेसे निकला हुआ पसीना।

उपनासिक (सं० त्रि०) नासाके समीप रहनेवाला, जो नाकके पासका हो।

उपनिक्षेप (सं० पु०) उप-नि-क्षिप कर्मणि घञ्। संख्या और नामादि वर्णन पूर्वक स्थापित गच्छित द्रव्य, जो धरोहर गिनगूंथकर रखी जाती हो।

"आधिसीमोपनिःक्षेपजड़बालधनैर्विना।" (याज्ञवल्क्य २।२५)

'उपनिक्षेपो नामरूपसंख्याप्रदर्शनेन रक्षणार्थं निहितम्।' (मिताक्षरा)

विंशति वर्ष व्यतीत होनेपर भी इस गच्छित द्रव्यसे स्वामीका स्वत्व नहीं हटता।

उपनिधातृ (सं० त्रि०) उप-नी-धा-तृच्। १ उपनिधि-रूपसे अन्यके निकट निज द्रव्य स्थापनकारी, धरोहरकी तौरपर दूसरेके पास अपनी दौलत रखनेवाला। २ स्थापक, जो रखता हो।

उपनिधान (सं० क्ली०) उप-नि-धा भावे ल्युट्। १ गच्छित रखनेका काम, धरोहरका रखना। २ स्थापन, रखाई।

उपनिधि (सं० पु०) उप-नि-धा-कि, कित्वादाकारलोपः। उपसर्गे घोः किः। पा ३।३।९२। १ उपन्यस्त द्रव्य, धरोहर। क़ानूनसे जो चीज़ मोहर लगाकर रखी जाती, वही उपनिधि कहाती है।

"आधिः सीमा बालधनं निक्षेपोपनिधिः स्त्रि ;
राजस्वं श्रोत्रियस्वञ्च न भोगेन प्रणश्यति॥" (मनु ८।१४९)

बन्धक, क्षेत्रादिकी सीमा, बालकका धन, अज्ञात एवं ज्ञात गच्छित द्रव्य, दासी प्रभृति स्त्री, राजस्व और श्रोत्रियका धन भोगसे नष्ट नहीं होता अर्थात् २० वर्षसे अधिक भोगपर भी स्वामीका स्वत्व नहीं छूटता।

नारदके मतसे—"असंख्यातमविज्ञातं समुद्रं यन्निधीयते।
तज्जानीयादुपनिधिं निक्षेपं गणितं विदुः॥"

२ वसुदेवके एक पुत्र। इन्होंने भद्राके गर्भसे जन्म लिया था। (विष्णुपु० ४।१५।१२।)

उपनिपात (सं० पु०) उप-नि-पत-घञ्। १ समीपागमन, पासका आना। "हततापोपनिपातको शब्दः"

(किरात) २ हठात् आगमन, एकाएक आ पहुंचनेकी हालत। ३ वध, क़त्ल। "तत्र काकागमनं देवदत्तागमनस्योपमानं तालपतनं दस्युपनिपातस्य।" (कैयट)

उपनिपातिन् (सं॰ त्रि॰) १ आ पड़नेवाला, जो टट पड़ता हो। २ हठात् आक्रमण करनेवाला, जो एकाएक हमला मारता हो।

उपनिबन्धन (सं॰ क्लो॰) उप-नि-बन्ध-ल्युट्। १ सम्पादन, बनावट। २ ग्रन्थन, गूंथगांथ।

उपनिमन्त्रण (सं॰ क्लो॰) उप-नि-मन्त्र-ल्युट्। नियोग-करण, ज़रूरी काममें लगानेकी बात।

उपनिवपन (सं॰ क्लो॰) उप-नि-वप-ल्युट्। १ अग्नि-प्रणयन कर्माङ्गभूत अग्न्याधानादि व्यापार। २ निक्षेप, फैलाव।

उपनिविष्ट (सं॰ त्रि॰) उपनिवेशमें आकर बसा हुआ, जो नौ-आबादीमें आकर रहा हो।

उपनिवेश (सं॰ क्लो॰) उप-नि-विश-घञ्। १ उपनगर, बड़े शहरके पासका छोटा शहर।

२ कृषिवाणिज्यादि करनेको किसी दूर देशमें सब लोगोंके साथ रहना। ३ स्वदेश छोड़ अपर स्थानमें वास स्थापन। 'उपनिवेश' शब्द सुनते ही कितनी ही बात हमारे मनमें उठती है। कौन भारतीय जानना नहीं चाहता—स्वदेशीय प्राचीन महर्षिने भारत व्यतीत किस किस स्थानमें पहुंच वास और राजकीय कार्यके अनुसार, वाणिज्यके अभिप्राय, धर्मप्रचारके उद्देश्य एवं राजदण्डके भय किंवा राजकलंक निर्वासनसे उपनिवेश स्थापन किया था।

अपने प्राचीन शास्त्रसे भूरि भूरि प्रमाण पाते, कि परकालको भारतवर्षीय वीर पृथिवीके नाना स्थान घूम आते थे। इस स्थलपर यही प्रथम विवेच्य आया,—विदेश जानेसे पहले जम्बुद्वीपवासीने किस स्थानमें वास लगाया और अपने आदिपुरुषगणकी कही जा सकनेवाली वासभूमिसे क्रमशः किस अपर देशविदेशमें उपनिवेश चलाया। हम पहलेसे ही कहते, कि, वैदिक लोग आदिमें सरस्वती प्रभृति सप्त नदीकी उत्पत्तिके स्थानपर रहते थे। आर्य शब्द देखो। किन्तु अपरापर नाना अनुसन्धान द्वारा अब उनके गणनातीत कालके वासका स्थान वर्तमान कुरुक्षेत्रसे उत्तर विन्दुसर (सरीकुल ह्रद) और पश्चिम खोरासनके प्रान्त तक समझा गया है। इसी विस्तीर्ण भूमिखण्डको हम भारतीय आर्यकी आदि वासभूमि मानते हैं। फिर वह दक्षिण पूर्व कीकट (मगध) एवं अङ्ग और उत्तर वाह्लिक (बलख़) देशको गये। अथर्ववेद देखो। उसी समयसे उन्होंने नाना देशमें उपनिवेश जमानेको आशापर पैर बढ़ाया था। क्रमसे वह भारतवर्षके प्रायः समस्त उत्तर भागमें फैल पड़े और इसी कारण लोग इस देशको आर्यावर्त कह चले। आर्यावर्त देखो। यह बहुकालकी कथा है, समयके निर्णयका कोई उपाय नहीं।

रामायण और महाभारतके पाठसे हम समझ सके—सनातन धर्मावलम्बी आर्य विन्ध्य पर्वत लांघ दक्षिणापथ, अनन्तर भारतवर्ष छोड़ सिंहल प्रभृति भारत महासागरके द्वीपसमूहको कार्यके अनुरोधसे गये, जिनमें किसी-किसीने उपनिवेश स्थापन किये, कोई कुछ काल दूर देशमें ही रह फिर स्वदेशको चलते बने।

रामायणके पाठसे आर्यगणमें प्रथम मुनिवर अगस्त्यका दक्षिणापथको गमन जान पड़ता है। सम्भवतः इन्हीं महात्माने विन्ध्यगिरिके दक्षिण प्रदेशमें आर्यसभ्यता कथञ्चित् फैलायी थी। क्योंकि दाक्षिणात्यके सर्वस्थानमें अपरापर देवगणकी अपेक्षा अगस्त्यका ही माहात्म्य समधिक लक्षित है। फिर दाक्षिणात्यके इतिहास और अपरापर शास्त्रमें अगस्त्य देशकी विविध भाषाके संशोधनकारी और वैयाकरण प्रसिद्ध हैं। केरलोत्पत्ति नामक ग्रन्थ देखते परशुराम ब्राह्मणगणको उत्तर देशसे दाक्षिणात्य ले गये थे। इसके द्वारा भी कितना ही समझ पाते, कि पहले ब्राह्मण दक्षिणापथको जाते न थे। परशुरामके समयसे गमनागमन होने लगा और दाक्षिणात्यमें सनातन धर्मावलम्बी ब्राह्मणगणका उपनिवेश पड़ा।

रामायणके वचनानुसार उस समय भारतीय दक्षिणसमुद्रस्थ द्वीपादिका विषय समझते थे। किन्तु कोई उल्लेख नहीं—आर्य कहां कहां आते-जाते थे। सुतरां मानना पड़ा—राजा रामचन्द्रके समयसे सनातनधर्मा-

वलम्बी आर्य्यगणका गमनागमन लङ्का प्रभृति समुद्र-स्थित सुदूर द्वीपसमूहको होने लगा। किन्तु सुदूर द्वीपसमूहमें उनके उपनिवेश स्थापनका प्रमाण क्या है? ऐसी आपत्ति मिटानेको प्रबन्धके अधिकारमें न पड़ते भी प्रसङ्गक्रमसे दो-एक बात कहते हैं।

रामायणके निर्देशानुसार क्षत्रियप्रवर रामचन्द्र और लक्ष्मण सीताको छोड़ाने बहुदूरवर्ती दुर्गम लङ्का गये थे। किन्तु लङ्का कहां है? वर्तमान देशीय और विदेशीय भौगोलिक एक वाक्यसे सिंहल या सीलोन कहलाने वाले द्वीपका ही प्राचीन नाम लङ्का बताते हैं। किन्तु यह सिद्धान्त सङ्गत समझ नहीं पड़ता। अति पूर्व कालसे ही हमारे शास्त्रकार लङ्का और सिंहलको स्वतन्त्र द्वीप मानते आये हैं। निम्न-लिखित श्लोक देखते ही सबका सन्देह मिट जायेगा।

"सिंहलान् वर्वरान् म्लेच्छान् ये च लङ्कानिवासिनः।"
(महाभारत, वन ५१। २२)

"लङ्का कालाजिनाश्चैव शैलिका निष्कुटालया ॥ २० ॥
ऋषभाः सिंहलाश्चैव तथा काञ्चीनिवासिनः ॥ २७ ॥"
(मार्कण्डेयपु० ५८ अ०)

सिवा इसके भागवत (५।१९।३०) एवं बृहत्-संहिता प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें लङ्का और सिंहल दोनों स्वतन्त्र द्वीप जैसे उल्लिखित है।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है, कि लङ्कापुरी मलय-द्वीपके अन्तर्गत है।* आजकल पूर्व उपद्वीपके अन्त-र्गत श्याम देश दक्षिणस्थित विस्तीर्ण भूमिखण्डको मलय-प्रायोद्वीप कहते हैं। वह यवद्वीपसे पश्चिम अवस्थित है। वर्तमान मलय जातिका प्राचीन इति-हास पढ़नेसे समझते, कि मलयवासी पहले सुमात्रा द्वीपके मेनङ्काबू नामक स्थानमें रहते थे। वही उनके आदिवासका स्थान था। उसीको वे मलय भी कहते थे।* इस मलय जातिकी भाषा आज भी सुमात्रा प्रभृति द्वीपसे अष्ट्रेलिया और पश्चिम माडागास्कर पर्यन्त प्रचलित है।† भारत महासागरके इस द्वीपसमूहमें प्राय एक भाषा चलनेसे सहज ही समझ सकते—ये मलयभाषी भिन्न देशीय विभिन्न जातिवाले पहले एक जातिके थे। कोई असभ्य अवस्थामें रहते भी कालके क्रमसे सभ्य हुये और कोई सभ्य होते भी फिर अवस्थाके भेदसे नितान्त असभ्य बन गये।

मलयवासी जातिके लोग रक्षः वा राक्षस नामसे रामायणमें कहे गये हैं। आजकल यवद्वीपके निकटवर्ती फ्लोरिस द्वीपमें एकप्रकार कदाकार भीषण कृष्णवर्ण असभ्य जातिके लोग रहते हैं। उनमें सभीको रक‡ कहते हैं। उनका स्वभाव भी राक्षस-की तरह ही है। इसी द्वीपमें लरान्तक नामक एक नगर है। यह नाम भी संस्कृत नरान्तक§ शब्दका अपभ्रंश-जैसा समझ पड़ता है। इस द्वीपके निकट ही आज भी राम, लक्ष्मण, नील और नल प्रभृति रामायणोक्त वीरगणके नामानुसार कितने ही क्षुद्र क्षुद्र द्वीप विद्यमान हैं।

उक्त प्रमाणसे समझ पड़ा, कि रावणके राजत्व-कालमें लङ्काका राज्य वर्तमान सुमात्रा प्रभृति द्वीप-पुञ्जसे लेकर माडागास्कर पर्यन्त विस्तृत था।**

* "यवद्वीपमिति प्रोक्तं नानारत्नाकरान्वितम्।
तत्रापि द्युतिमान्नाम पर्वतो धातुमण्डितः ॥ १९
तथैव मलयद्वीपमेवमेव सुसंवृतम्।
मणिरत्नाकरं स्फीतमाकरं कनकस्य च ॥ २०
तथा त्रिकूटनिलये नानाधातुविभूषिते।
अनेकयोजनोत्सेधे चित्रसानुदरीगृहे ॥ २६
तस्य कूटतटे रम्ये हेमप्राकारतोरणा।
निर्यूहवलभीचित्रा हर्म्यप्रासादमालिनी ॥ २७
शतयोजनविस्तीर्णा त्रिंशदायामयोजना।
नित्यप्रमुदिता-स्फीता लङ्कानाम महापुरी ॥ २८
सा कामरूपिणां स्थानं राक्षसानां महात्मनाम्।" (५० अः)

* Crawfurd's Indian Archipelago, Vol. II, p. 371-2. ग्रीसदेशीय प्राचीन भौगोलिक इसी मलयको Chersonesus Area अर्थात् स्वर्णद्वीप कहते थे।

† English Cyclopaedia, Vol. xi, p. 656.

‡ English Cyclopaedia (Geography), Vol. II, p. 1045, Vol. III, p. 704. यह संस्कृतके रक्षः शब्दका प्राकृत रूप है।

§ नरान्तक शब्दका अर्थ भी राक्षस ही है।

** इसीसे समझ पड़ा, कि भारतवर्षके भौगोलिकगणने लङ्का-द्वीपको उज्जयिनीकी समरेखापर रखा है।

अथवा प्राचीन मलयजाति सुदूरवर्ती मादागास्कर प्रभृति सकल द्वीपोंमें उपनिवेश करती रही होगी। मलयशब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

अन्तत: ब्रह्माण्डपुराणके मतानुसार यह बात माननी पड़ी—मलयमें ही लङ्कापुरी रही। रामायणके अनुसार इसी मलयका नाम सुवर्णद्वीप था। आजकल इसे सुमात्रा कहते हैं।

वर्तमान मानचित्रमें सुमात्रा द्वीपके उत्तर पूर्वांशसे पर्वतके सानुदेशपर समुद्रके निकट 'सोनी लङ्कषा' नामक एक नगर है। यह "स्वर्णलङ्का" शब्दका अपभ्रंश-जैसा ही समझ पड़ता है। फिर इसी द्वीपके अन्तर्वर्ती हीरक अन्तरीप (Diamond Pt.)के निकटस्थ एक बन्दरको आज भी 'लङ्कात' कहते हैं। इस समय भी इस द्वीपके उत्तर पश्चिमांशमें काञ्चनगिरि (Golden Mt.) विद्यमान है। *

उक्त प्रमाणसे रामायणोक्त 'लङ्कापुरी' अथवा 'सुवर्णद्वीप'से वर्तमान सुमात्रा द्वीपको प्रचीन लङ्काका बोध होता है। सुमात्राद्वीप, यवद्वीप और फ्लोरिस द्वीपसे दक्षिण-पश्चिम प्रवाहित समुद्रको आज भी स्थानीय बुगी जातिवाले 'लङ्काई' सागर कहा करते हैं। इसके द्वारा भी लङ्काके स्थानका निर्णय हो सकता है।

सुमात्रा द्वीपमें हिन्दूजातिका लेश मात्र न रहते, हिन्दू-निर्मित मन्दिरादिका ध्वंसावशेष तक देख न पड़ते और इतिहासमें कुछ न लिखते भी ऐसे अनेक प्रमाण मिलते, जिनके द्वारा हम मुक्तकण्ठसे मान सकते, कि श्रीरामचन्द्रके आगमन बाद भारतवासी स्वर्णके लाभकी आशासे उस स्थानपर जा पहुंचते थे। † इस द्वीपमें आज भी मङ्गल, इन्द्रगिरि, इन्द्रपुर आदि हिन्दू-प्रदत्त संस्कृत नामके नगर तथा नदी नद विद्यमान हैं। मलयजातिवाले जिस स्थानको अपनी आदि जन्मभूमि समझ गौरव बढ़ाते और पृथिवीके अपर सकल स्थानकी अपेक्षा जहां समधिक सुवर्ण पाते हैं, उसी स्वर्णमय भूमिके निकट आज भी इन्द्रगिरि नामक नद प्रवाहित है। उक्त नामसे स्पष्ट ही हृदयङ्गम हुआ, कि एक समय हिन्दुवोंने सुमात्रा द्वीपमें जा उपनिवेश किया था। सुमात्रा देखो।

उसके बाद ही यवद्वीप है। इसका बहुतसा प्रमाण मिला, कि उक्त स्थानमें किसी समय भारतवासियोंने उपनिवेश किया और अपने धर्मको विशेष प्रबल बना दिया था। अद्यापि यवद्वीपके प्रम्बनन नामक स्थानमें बहुसंख्यक देवमन्दिर देख पड़ते हैं। उक्त मन्दिरसमूहमें इस समय भी शिव, दुर्गा, गणेश, विष्णु, सूर्य प्रभृति देवताओंकी पाषाणमयी और पित्तलमयी मूर्तियां विराजमान हैं। हिन्दूधर्मावलम्बी राजगणने बहुकाल पर्यन्त इस स्थानमें राज्य किया। बौद्धधर्म बढ़ने पर यहांके धर्मनिष्ठ भारतवासी बालिद्वीपमें जाकर रहे थे। यवद्वीप देखो।

बालिद्वीपमें आज भी हिन्दू धर्म प्रबल है। अद्यापि वहांके राजा शैवमतावलम्बी देख पड़ते हैं। वहां पूर्वकालीन भारतीय राजनीतिके अनुसार ब्राह्मण विचारकका कार्य किया करते हैं। पतिके मरनेपर सती उसकी सहगामिनी बनती है। बालि देखो। फिर भी इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—कितने दिनसे वहां भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ है।

बालि द्वीपके बाद ही लम्बक द्वीप है। यह भी इस समय हिन्दू राजाके अधीन है। यहां हमारी प्राचीन स्मृतिके अनुसार राजकार्य और विवाहादि निर्वाह हुआ करते हैं। किसी किसीने कहा, कि बालि द्वीपके हिन्दुवोंने वहां पहुंच उपनिवेश किया था। लम्बक देखो।

ब्रह्माण्डपुराणके मतसे मलयद्वीपके पूर्व शङ्खद्वीप

---

* ब्रह्माण्डपुराण इसीको 'काञ्चनपाद' नामसे मलयद्वीपके मध्य बताता है। "तथा काञ्चनपादस्य मलयस्यापरस्य हि।" (ब्रह्माण्डपु० ४८अ०)

† स्कन्दपुराणके निम्नलिखित वचनसे इसका कितना ही प्रमाण पाते, कि रामके बाद इस लङ्काद्वीपमें बहुतसे लोग स्वर्ण लाभकी आशासे आते जाते थे।—

"भविष्यन्ति कलौ काले दरिद्रा नृपमानवा:।
तेऽत्र स्वर्णस्य लोभेन देवता-दर्शनाय च ॥ ४०
नित्यं चैवागमिष्यन्ति त्यक्त्वा रक्ष:कृतं भयम् ।४१॥" (नागरखण्ड ९४ अ०)

स्कन्दपुराणमें यह भी लिखा, कि रामके स्वर्गारोहण करनेपर उनके पुत्र कुशका गमन लङ्कामें हुआ था। (नागरखण्ड १८८ अ० ९०-९२ श्लो०)

इस सुमात्राके पार्श्वका 'रूपत' नामक द्वीप रामायणोक्त रूपकद्वीप ही समझ पड़ता है।

है। उसमें गोकर्ण नामक महादेवकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। विष्णुपुराणमें इसी द्वीपका नाम सौम्य लिखा है। इसको वर्तमानमें सुम्बव द्वीपपुञ्ज समझते हैं। गोकर्ण नामक देवताके नामसे ही मालूम पड़ता, कि पूर्वकालमें वहां भी हिन्दूवोंका गमन रहता था। इसी द्वीपके बाद वरणीय द्वीप है। विष्णुपुराणमें इसका नाम वारुण कहा है। पूर्वकालमें यह द्वीप अन्नम्वाले (आनाम) राजाके अधिकारमें था। उस समय अन्नमको अङ्गद्वीप कहते थे। पुराणमें अङ्गद्वीपका विवरण मिलता है—

"अङ्गद्वीपं निबोध त्वं नाना जनपदाकुलम्।
नानाम्लेच्छगणाकीर्णं तद्द्वीपं बहुविस्तरम्॥
हिमद्रुमसुसम्पूर्णं नानारत्नाकरं हि तत्।
नदीशैलवनैश्चित्रं सन्निभं लवणाम्भसा॥" (ब्रह्माण्डपु० ५२ अ०)

इसका कितना ही प्रमाण मिला, कि परकालको उस द्वीपमें हिन्दुवोंने उपनिवेश स्थापित किया था।

यहांके प्राचीन राजा दक्षिणांशको चम्पा कहते थे। इस समय भी इस स्थानमें शिव, पार्वती, हरिहर प्रभृति देवदेवीकी मूर्ति पूजी जाती है। यहां अनेक अनुशासन और शिलालेख मिले हैं। उनके पाठसे समझ सके, किसी समय उस स्थानपर अनेक हिन्दू राजाओंने राजत्व और अपने-अपने नामके अनुसार 'जयहरिलिङ्गेश्वर', 'श्रीजयहरिवर्मलिङ्गेश्वर', 'श्रीइन्द्रवर्मशिवलिङ्गेश्वर' प्रभृति शिवलिङ्ग स्थापन किये। यहां जो समस्त शिलालेख मिले, वे अधिकांश संस्कृत और चम (चम्पा) भाषामें लिखे हैं। उनमें जो संस्कृत भाषामें लिखे, वही अति प्राचीन हैं। (Journal Asiatique, Paris, 1882, 83-84)

सुतरां यह समझ पड़ा, कि रामचन्द्रके तिरोधान बाद भारत महासागरीय द्वीपपुञ्जमें आर्य जातिका उपनिवेश लगा था।

चीनके पुरातत्त्वकी आलोचनासे निकला कि, ई० के पहले ८मसे १म शताब्दी पर्यन्त भारतीय आर्य वणिक्गणने चीन देशके बहुतसे स्थानोंमें प्रभाव फैला दिया था। उनका उपनिवेश भी बहुतसे स्थानोंमें प्रतिष्ठित रहा। यहां तक, कि ६८० ई० पूर्वाब्दमें कियाचाउ उपसागरके चतुष्पार्श्वपर समुद्रयात्री भारतीय आर्य वणिकोंने व्यवसायके उपलक्ष्यसे जा आधिपत्य फैलाया था। उक्त उपसागरके उत्तरकूल पर चीमोये वा चीमो नामक स्थानमें उनके वाणिज्य बन्दर और टङ्कशालाकी स्थापना रही। उन्होंने ही ६७५ से ६७० ई० पूर्वाब्दके मध्य स्व स्व वाणिज्यकी सुविधाके लिये चीन देशमें सबसे पहले धातुकी मुद्रा चलायी थी। ५८० से ५५० ई० पूर्वाब्दको विभिन्न प्रदेशके चीना राजगण और उक्त वणिक् सम्प्रदायने मिलकर एक मुद्रासङ्घ बनाया। उनकी चलायी एक पृष्ठपर चीन और अपर पृष्ठपर भारतीय वणिक्गणके चिन्हाङ्क युक्त बहुसंख्यक मुद्रा आविष्कृत हुई है। चीना और भारतीय लिपियुक्त मुद्रा देखनेसे सन्देह नहीं रहा, कि, उसी सुदूर अतीत कालमें भारतीय वणिक्गणने चीनके भीतर-बाहर नाना स्थानोंमें उपनिवेश स्थापन किये थे। चीनावोंपर भारतीय लोगोंका यथेष्ट प्रभाव फैल गया। नहीं तो, चीनवासी सहज ही भारतीय वणिक्मुद्राका अनुकरण कैसे करने लगते? चीनके पुरावृत्तसे हम फिर समझ सकते, कि ४७२ ई० पूर्वाब्दमें उक्त भारतीय उपनिवेश चीनपतिके अधिकारभुक्त होते भी परवर्ती बहुकाल पर्यन्त उपनिवेशी हिन्दू वणिक् चीनपतिके वाणिज्यशुल्क देनेको सुविधाके लिये कितने ही अर्णवपोत और नौसेना सौंप उनका साहाय्य करते थे। रणपोतमें हिन्दू वणिक् सिपाही ही चीनके उपकूलमें चीनपतिके पक्षसे वाणिज्यादिका तत्त्वावधान करते थे। उन्होंके हाथमें चीनका वाणिज्य संन्यस्त था। यहांतक कि ई० पूर्व २य शताब्दीके पहले तक चीन-साम्राज्यके प्रायः सकल बन्दरोंमें उनका स्थान रहा। हसू और काटीगरा बन्दरसे वे भेषज, मयर और प्रवालादि बहुविध पण्य द्रव्य मंगाते थे। इसी समय उन्होंने चीन उपकूलके हाइनान द्वीपमें सिंहलकी तरह मुक्ताके सङ्ग्रहका उपाय ढूंढा। ई० पूर्व २य शताब्दीमें अरब समुद्रसे उनका एक प्रतिद्वन्द्वी दल पहुंचने पर क्रमसे उसकी और चीना वणिक्गणकी प्रतियोगितासे भारतीयोंका प्रभाव

धीरे-धीरे लुप्त होने लगा। प्राय: ५३ ई० पूर्वाब्दमें वणिक्‌पति कुन्तिएन (कुण्डिन?) सदल चीनबन्दरमें जा उतरे। इन्हीं महात्माने चीन-समुद्रके कूलपर कम्बोज वा वर्तमान कम्बोडिया नामक स्थानमें हिन्दू राजवंश प्रतिष्ठित किया था। कम्बोज देखो।

कम्बोजमें हिन्दू राजवंशकी प्रतिष्ठाके साथ चीनवासियों द्वारा उत्पन्न आर्य वणिक् दलदलमें कम्बोज आये। इसीसे अत:पर चीना इतिहासमें भारतीय वणिक्‌गणका कोई सन्धान नहीं मिलता। कम्बोज जातिवाले कहते—'रोम देशके अन्तर्गत तक्षशिला नामक स्थानसे अतिनिकट एक धार्मिक राजा राजत्व करते थे। उनके पुत्र युवराज 'फ्रथोङ्ग' किसी दुष्कर्म पर राज्यसे निर्वासित हुये। उन्होंने नाना स्थान घमफिर इस स्थानमें पहुंच नूतन राज्य स्थापन किया।' *

अतएव उक्त प्रवादसे समझ पड़ा, प्राचीन हिन्दूवोंका तक्षशिलाके निकटवर्ती जिस स्थानसे उक्त स्थानको गमन हुआ, उसका नाम भी कम्बोज रखा। वे इस दूरदेशमें आकर भी जन्मभूमिको भूल न सके थे। इसीसे स्वदेश और स्वजातिके नामपर ही उन्होंने इस स्थानका नाम कम्बोज रखा। इस स्थानसे निकली शिलालिपिसे ५१६ ई० तक कालका उल्लेख मिला है। इससे अनुमान हुआ, कि कम्बोजनिवासी हिन्दुवोंने ई० पहले पञ्चम शताब्दीसे बहु पूर्व उस स्थानपर उपनिवेश-स्थापन किया था।† इस समय यहां हिन्दुवोंके न रहते अथवा उनके भिन्न धर्मको अवलम्बन करते भी आज असंख्य शिव, विष्णु, हरिहर, पार्वती, ब्रह्मा और शेषनागके प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें ओङ्करथोमके चतुर्मुख ब्रह्माका मन्दिर अति चमत्कृत है।

कम्बोजके निकट ही श्यामदेश है। यहांके सभी लोग बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। किन्तु मन्दिर और चैत्यमें इसका बहुतसा निदर्शन मिला, कि एक-काल वहां भी हिन्दुवोंने जा वास किया था। आज भी बौद्ध मन्दिरोंमें रामलीला अङ्कित है। श्यामदेशकी राजधानीके बीच प्रसिद्ध गौतमबुद्धवाले मन्दिरके पार्श्वमें तीन हिन्दुवोंके देवालय देख पड़ते हैं। इन तीनों मन्दिरोंमें हरपार्वती, लक्ष्मी, विष्णु, ब्रह्मा प्रभृति देवगणकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। एक मन्दिरमें प्रकाण्ड शिवमूर्ति है। वह छ: हाथसे भी ज्यादा ऊंची है।* एक मन्दिरमें केवल गणेशकी ही पूजा होती है। यहांका वटनाक नागमन्दिर भी अतिप्रसिद्ध है। इस मन्दिरमें कभी-कभी दो-एक हिन्दू पण्डे देख पड़ते, जो सकल ही शैव ब्राह्मण हैं। वे किसी निकटस्थ ग्राममें रहते हैं। वे बताते—हमारे पूर्वपुरुष रामेश्वरसे यहां आये थे। श्याम देशकी राजसभामें दो-एक दैवज्ञ हिन्दू अवस्थान करते हैं। उनके पूर्वपुरुष १४०६ ई०में भारतवर्षसे श्याम गये थे।

इसका कितना ही प्रमाण मिला, कि पूर्व-उपद्वीपको छोड़ भारतमहासागरीय द्वीपपुञ्ज—यहांतक, कि सेलिविश द्वीपमें भी हिन्दुवोंका उपनिवेश हो गया था।†

इस स्थलपर सिंहल द्वीपमें हिन्दुवोंके उपनिवेश सम्बन्धकी दो-एक बात कहना आवश्यक है।

महाभारतके समय यहां सिंहल नामक असभ्य जातिके लोग रहते थे। उसी प्राचीन कालमें इस द्वीपसे मणिमुक्ता भारतवर्षको भेजे गये। (महाभारत सभा ५१ अ०) उसके परवर्तिकालमें इस स्थानपर भारतवासियोंके आते-जाते भी कोई सविशेष प्रमाण नहीं मिला, कि उन्होंने वहां उपनिवेश स्थापन किया। महावंश नामक पालिग्रन्थमें लिखते—वङ्गदेशके लाड़ (राढ़) राज्यमें सिंहबाहु नामक एक प्रजावत्सल राजा रहते थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र विजय किसी गुरुतर अपराधपर स्वदेशसे चिरदिनके लिये निर्वासित हुये। वङ्गराजकुमारने कतिपय बन्धु

* Die Volker der Oesrtrichen Asien, Von Dr. A. Bastian, p. 393.

† Journ. Anthropological Society of Bombay, Vol. I, p. 516

* Crawfurd's Embassy to the Courts of Siam and Cochin China, p. 119.

† Crawfurd's History of Celebes, Vol. II. p. 882.

साथ ले समुद्रके पथसे यात्रा की। जलमें घूमते-घूमते वे सागरतीरवर्ती शूर्पारक नामक बन्दरमें जा पहुंचे थे। किन्तु इस भयसे वे फिर अकूल समुद्रमें चलने लगे,—यहां रहनेसे कोई दूसरा अनिष्ट न पड़े। अकस्मात् प्रबल तूफानसे विजयका जलयान टूट गया था। विजय और उनके सहचरोंने समुद्रतरङ्गमें डूबते-उछलते एक स्थानपर किनारेकी भूमि पायी। इस स्थानका नाम ताम्रपर्ण (वा सिंहल) था। उस समय उक्त स्थानमें यक्षोंका वास रहा। विजयने कुवेणी नाम्नी एक यक्षिणीके साहाय्यसे इस स्थानको जीता था। उस समय जो जो व्यक्ति राजकुमारके साथ आये, उनमें कितनों होने स्व-स्व नामके अनुसार उक्त द्वीपमें नगर बसाये—जैसे अनुराधपुर, विजितनगर प्रभृति। इसीप्रकार ई० से ५४३ वर्ष पहले सिंहल द्वीपमें सबसे आगे बङ्गाली उपनिवेश संस्थापित हुआ था। (महावंश ६ष्ठ और ७म परिच्छेद) समागत वङ्गवासी सकल ही सनातन हिन्दू धर्मावलम्बी थे। किन्तु राजा अशोकके समय कितनों होने बौद्धधर्म ग्रहण किया। सिंहल देखो।

अब देखना चाहिये—प्राचीन कालमें हिन्दू भारतवर्ष छोड़ उत्तर और पश्चिम कितनी दूर तक गये थे।

इधर सुदूर एशिया-माइनर प्रदेशके बोघस्कुई नामक स्थानमें विंक्लर नामक जर्मन पुराविद्के प्रयत्नपर भूगर्भसे जो सकल प्राचीन निदर्शन निकले, उनके पढ़नेसे हम मालूम कर सके—ईसा जन्मके १६०० वर्ष पहले इस प्रदेशमें वैदिक आर्य सभ्यता फैल गयी थी। काश्य (Kassite) नामक आर्योंने उस सुदूर प्रदेशमें आधिपत्य जमाया। वे भारतीय वैदिकोंकी तरह इन्द्र, वरुण, नासत्य आदि देवतावोंके उपासक रहे। बाबिलनके सुप्राचीन इतिहाससे हमें समझ पड़ा—ईसाके १८५० वर्ष पहले काश्य नामक जातिसे बाबिरुकी सभामें प्रथम अश्व परिचित हुआ था। पाश्चात्य पुराविदोंके मतानुसार काश्य जातिकी किसी शाखाने ही अधिक सुदूर पश्चिमको अग्रसर हो क्रमसे युरोपमें आर्य सभ्यता फैलायी होगी। आर्य क्षत्रियोंकी चेष्टासे युरोप खण्डमें आर्यसभ्यता क्रमशः फैली।

चीना परिव्राजकोंकी वर्णनासे समझ पड़ा, कि ई० तृतीयसे पञ्चम शताब्दी पर्यन्त काश्यीय सागरके तीरपर हिन्दू धर्मका कुछ कुछ निदर्शन रहा, उस समय कश्यप प्रभृति मुनियोंका आश्रम विद्यमान था। कह नहीं सकते—इस समय वहां हिन्दू रहते हैं या नहीं। यह भी हो सकता, कि विधर्मियोंके प्रभावसे सभोंने भिन्न भिन्न धर्मको अवलम्बन किया हो। पुराणपुरी नामक एक ऊर्ध्वबाहु हिन्दू सन्नयासीकी वर्णनासे समझे, कि वे काश्यीय सागरके तीरपर ज्वालामुखी नामक तीर्थको गये थे। उस समय अष्ट्राकान और पारस्यके दक्षिणस्थ खरेक नामक द्वीपमें भी हिन्दू रहे। यहांतक, कि तुरस्क राजाके बसरा नामक नगरमें अनेक हिन्दू वास करते थे। वहां कल्याणराय और गोविन्दराय नामक देवताओंकी मूर्तियां विद्यमान थीं। (Asiatic Researches, Vol. V, p. 41—52.)

उक्त पुराणपुरीकी वर्णनासे फिर समझ पड़ा, कि उस समय युरोपीय रूसराज्यके मस्को नगरमें इन्होंने हिन्दुवोंसे साक्षात् किया था। इस वर्णनाके अमूलक न ठहरते मानना पड़ेगा, कि एक समय हिन्दुवोंने युरोपीय रूसराज्यमें पहुंच उपनिवेश लगाया। निम्नलिखित इतिहास पढ़नेसे स्पष्ट जैसा समझ पड़ता है, कि अतिप्राचीन कालमें हिन्दुवोंने युरोपमें जा उपनिवेश किया था—

जेनोबिया नामक एक सैरीय ईसाईने ई० तृतीय शताब्दीको अरमनी भाषामें एक इतिहास लिखा था। इस ग्रन्थमें वर्णित है—"देमेतर और किसानी दो हिन्दू राजकुमारोंने राजाके विपक्षमें साजिश की थी। राजाने उन्हें पकड़नेके लिये सैन्य भेजा। उभयने राजदण्डके भयसे स्वदेश छोड़ वलर्शकेश नामक राजाका आश्रय लिया था। उस राजाने दोनोको ओरोन नामक राज्य दे दिया। यहां हिन्दू राजकुमारद्वयने विसर्प (विसाप) नामक एक नगर बसाया था। उसके बाद आष्टिषट् नामक स्थानमें पहुंच वे भारतवर्षीय देवमूर्ति सकल स्थापन करने लगे। इसी प्रकार १५ वत्सरके मध्य हिन्दू उपनिवेश स्थायी होनेपर उभय भ्राताने परलोकको गमन किया।

फिर उस देशके राजाने भ्रातृद्वयके तीन पुत्रोंको वह राज्य बांट दिया था। तीनो पुत्रोंका नाम कुमार, मेघती और हरिण था। उन्होंने स्व-स्व नामके अनुसार ग्राम पत्तन बसाये। कुछ दिन बाद तीनो भाई स्व-स्व वासस्थान छोड़ एक सुखसेव्य पर्वतपर पहुंचे। उसी जगह उन्होंने अपने पितृदेवके स्मरणार्थ देमेतर और केशानी नामक दो बृहत् देवालय प्रतिष्ठित किये थे। उन दोनोकी मूर्ति मुकुट और पीताम्बर पहने हैं।* इस समय अरमेनियाके अनेक राजपुत्र उसी देवोपासक सम्प्रदायमें मिल गये। किन्तु यह धर्म वहां अधिक दिन न टिका। कुछ काल बाद ईसाई धर्म चलानेके लिये सेण्ट ग्रेगरी इस प्रदेशमें पहुंचे थे। इसी समय अरमेनिया-वासी हिन्दुवोंके साथ ईसाइयोंका घोरतर युद्ध हुआ। अनेक बार युद्ध होनेकेबाद प्रायः चार-पांच सहस्र देवोपासक निहत और हिन्दुवोंके नाना स्थानीय देवमन्दिर विध्वस्त एवं चूर्णीकृत हुये। फिर प्राणके भयसे किसी-किसीने ईसाई धर्म अवलम्बन किया था।"

प्रकाशानन्द नामक एक प्रसिद्ध ब्रह्मचारी काशीमें रहते थे। उन्हींके मुंहसे किसी-किसीने सुना, कि समुद्रपथसे अरबके मस्कट नामक नगर पर्यन्त उन्होंने गमन किया था। वे कहते कि मस्कट नगरमें स्थान-स्थानपर दो-एक हिन्दू रहते थे। किसी-किसीके कथनानुसार अफरीकाके पूर्वांशपर जोआर (सुखतर द्वीप) नामक द्वीपमें काम्बोज हिन्दूवोंका वास था।

इधर इसका भी प्रमाण मिला, कि सुदूरवर्ती अमेरिका खण्डमें किसी समय हिन्दुवोंने जा उपनिवेश किया। जिस समय कोलम्बसका जन्म नहीं हुआ,जिस समय प्राचीन अरबवासियोंको अमेरिकाका सन्धान पर्यन्त न लगा,उस समयसे भी बहुत पहले हिन्दुवोंका अमेरिकामें आना जाना रहा। मध्य अमेरिकामें जिन प्राचीन मन्दिरादिका भग्नावशेष पड़ा है, उनके गठनकी प्रणाली सर्वांशमें दक्षिण-भारत एवं भारत सागरीय द्वीपस्थित हिन्दू मन्दिरकी तरह है। भारतकी तरह मेक्सिकोके सितल नामक स्थानमें पर्वत खोदकर बने मन्दिरादि देखनेसे सहज ही माना कि हिन्दुवोंने वहां जा उस सकल शिल्प-कार्यको सुसम्पन्न किया था। वहां प्रस्तर-खोदित अनेक देवमूर्ति भी देख पड़ती हैं। वे अनेकांशमें इस देशको हिन्दू देवदेवीके सदृश हैं। दक्षिण-अमेरिकाके टिटिकाका ह्रदके तीरपर भी भारतवर्षीय शिल्प-चातुर्य प्रकटित है। मेक्सिकोवासी गणेशका चित्र खींचते हैं। जिस देशमें पहले हस्ती मिलता न था, उस देशमें इस मूर्तिका कल्पित होना भी सम्भव नहीं। आनामसे आविष्कृत बहुतर शिलाफलकमें सूर्यवंशीय 'इन्द्र' उपाधिधारी राजगणका नाम लिखा है। सम्भवतः अङ्कके सूर्यवंशको कोई-कोई राजकीय शाखा अमेरिका जा 'इङ्क' नामसे परिचित हुई। वह अमेरिकामें 'रामसीतोआ' नामक महोत्सव करती थी। यह भारतीय प्रसिद्ध उत्सव रामलीलाका अनुकरण जैसा समझ पड़ता है।

फिर इसके प्रमाणका कोई अभाव नहीं, कि उत्तमाशा अन्तरीप लांघ तुषारावृत उत्तर महासागरसे भारतीय वणिक् दो सहस्र वत्सरसे भी बहुपूर्व ग्रेट ब्रुटेन और जर्मनीमें जाकर वाणिज्य चलाते थे। सुप्रसिद्ध रोमक ऐतिहासिक तासीतासके वर्णित उत्तर देशका इतिहास उद्धार कर—उनके बन्धुवर प्लिनीने लिखा है—ई० पूर्व ६० अब्दको कितने ही भारतवासी वाणिज्यके उपलक्ष्यमें समुद्रपथसे तूफान द्वारा विताड़ित हो जर्मन उपकूलपर जा पड़े थे। सुयेवियराजने उन्हें उपहारस्वरूप गलके प्रधान शासनकर्ता मेटेलास्के पास भेज दिया।

अब देखना चाहिये—प्राचीन युरोपीयोंने किस तरह और किस लिये अपनी जन्मभूमि छोड़ भिन्न भिन्न देशमें जा उपनिवेश स्थापन किया।

जो जाति पूर्व कालको युरोपमें फनिक वा फिनिसीय नामसे प्रसिद्ध रहीं, वही जाति भारतवर्षमें वैदिक युगपर पणि कही गयी। भारतमें आर्य-वैदिक प्रतिष्ठासे पहले पणि जातिने बहु स्थानपर अधिकार जमा लिया था। प्राच्य भारतसे उक्त जातिने

* वह सहज ही कथा बेलराम जैसी समझ पड़ती हैं।

सुदूर एशिया माइनरमें जा उपनिवेश स्थापन किया। उसीके नामानुसार उपनिवेश भी फिनिसिया कहलाया है। पणि शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

जितनी ही फिनिसियामें उसकी संख्या बढ़ने लगी, उतनी ही अपना देश छोड़ जलके पथसे नूतन आवास-भूमि ढूंढनेकी धूम पड़ी। क्रमसे उन्हें नूतन-नूतन जनपद देखनेको मिले थे। अपने वाणिज्यमें सुविधा लानेके लिये जो जो स्थान अच्छा लगा, उसी उसी स्थानमें लोगोंका एक-एक दल रह गया। इसी प्रकार उन्होंने समुद्रपथसे टायर, हिपो, हद्रुमत, टटिका, तूनिस और अफरीकामें बहुत दूरतक अपना उपनिवेश जमाया था। जिस जिस स्थानमें उन्होंने अधिकार वा उपनिवेश जमाया, वही वही स्थान उनके स्वदेशीय राजगणके शासनाधीन कहाया। फिर काल पाकर अनेक स्वाधीन बन बैठे। जो व्यक्ति जिस देशमें वाणिज्यके बलसे विलक्षण प्रभावशाली निकला, वही व्यक्ति उस देशमें अपनेको एक स्वाधीन राजा बताने लगा। क्रमसे फिनिसीय वाणिज्यके दर्पमें चूर हो बड़े अत्याचारी बन गये थे। क्रीटके राजा माइनसने उन्हें अपने देशसे एककाल ही भगा दिया। युरोपीय ऐतिहासिकोंके कथनानुसार फिनिसीय जातिने सर्व-प्रथम सरदिनियामें उपनिवेश किया था।

उसी समय कार्थजके निवासी भिन्न प्रणालीसे उपनिवेश स्थापन करनेको अग्रसर हुये। वे वाणिज्य फैलाना चाहते न थे। नानादेश जीत जन्मभूमिके पदानत बनाना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा। इसी अभिप्रायसे उन्होंने अफरीका, सिसिली, स्पेन प्रभृति स्थानोंमें पहुंच उपनिवेश लगाया। यूनानियोंके उप-निवेशकी प्रणाली फिनिसियोंसे मिलती है। उन्होंने गृहके विवाद, कृषिके कर्मकी सुविधा, वाणिज्य व्यव-सायके अनुरोध या राज्यके उद्देश्यसे भिन्न भिन्न स्थानोंमें पहुंच उपनिवेश किया था। यूनानियोंका उपनिवेश ट्रय युद्धके पीछे आरम्भ हुआ। उन्होंने अति प्राचीन कालसे ही इटली, सिसिली प्रभृति स्थानोंमें उपनिवेशकी नीव डाल दी थी।

आथेन्सके राजा कद्रुके मरनेपर योन (Ionian= यवन) जातिवालोंने आटिकासे जा एसिया-माइनरके पश्चिमकूलपर उपनिवेश किया। उस समय वही स्थान योन जातिवालोंके नामानुसार 'योनिया' (Ionia) कहलाने लगा। वहां उपनिवेश करनेके पीछे योन जातिवाले सम्पत्ति और समृद्धिसे फूल गये। अति पूर्वकालको रोममें साधारणतन्त्र प्रबल रहा। उस समय रोमक जो स्थान जीत लेते, उन्हीं स्थानोंमें स्वदेशीयोंको उपनिवेश करने भेज देते थे। फिर जहां विजित जातिको बहुत ही दुर्दम्य एवं देशकी अवस्था भी अधिक रम्य न देखते अथवा जहां नग-रादि कुछ न रहते, वहां औपनिवेशिक अच्छी जगह ढूंढ नगरादि बसाते और सर्वदा देशकी रक्षाके लिये शस्त्र उठाते थे। इसी प्रणालीसे उन्होंने गल (फ्रान्स), जर्मनी, रूस प्रभृति स्थानोंमें उपनिवेश किया। रोमक, औपनिवेशिकोंके मध्ये स्थान-स्थानके शासनादिका भार डाल राजकार्य चलाते थे।

अमेरिका आविष्कृत होनेपर युरोपकी सब प्रधान प्रधान जातियोंके लोग एक प्रकार पागल जैसे बन गये। उनमें अंगरेजोंको उपनिवेश अधिक फलप्रद हुआ। अमेरिका देखो।

ई० पञ्चदश शताब्दको पोर्तुगीजोंने अफरीका और भारतमें पहुंच उपनिवेश जमाया था।

पोर्तगीजोंके पीछे ही हालेण्डवासियोंने वाणिज्य फैलानेके लिये नाना स्थानोंमें जा उपनिवेश किया। उनमें उत्तमाशा अन्तरीप, मलक्का और यवद्वीप प्रधान है। फ्रान्सीसियोंने कनाडा जा उपनिवेश लगाया। किन्तु यह उपनिवेश अधिक सुविधाजनक न निकला। क्योंकि पूर्व अधिवासियोंसे उनकी बिलकुल न बनी। सुतरां सुदृढ़ दुर्ग, परिखा और सेनादिको सर्वत्र सर्वदा सज्जित रखना पड़ता था।

नीचे तालिका लगाते, कि भिन्न भिन्न देशके युरोपीय किस किस स्थानमें उपनिवेशसे बाद रह-ठहकर आ जाते थे—

इङ्गलैण्डका उपनिवेश—ब्रटिश उत्तर अमेरिका, ब्रटिश वेष्ट इण्डिया-द्वीपपुञ्ज, दक्षिण अमेरिकाका ब्रटिश गुयेना, साइरा-लियोन, उत्तमाशा अन्तरीप, सेण्टहेलना,

मरिचद्वीप, सिंहल, प्रिन्स अव वेल्स द्वीप, सिङ्गापुर, मलका, अष्ट्रेलिया और तास्मानियाका कोई कोई स्थान, वानडाइमनस्लेण्ड, जिब्रालटर, मालटा और हेलिगोलेण्ड। भारतवर्ष अधिकांश अधिकारभुक्त होते भी अंगरेजोंका उपनिवेश समझा नहीं जाता।

फ्रान्सका उपनिवेश—सेण्टपायर, मिगुलन और फ्रान्सीसी गुयाडिलोप द्वीपपुञ्ज, अमेरिकाका फ्रान्सीसी गिनी राज्य, अफरीकाके उपकूलका सेनिगाल तथा पौरी, बुर्बन द्वीप, भारतवर्षका पण्डिचेरी, करिकाल एवं चन्दननगर, मार्केससद्वीप, नव कालिदोनिया और आलजिरीया।

स्पेनका उपनिवेश—अमेरिकाका कूबा, पोर्टोरिको तथा भार्जिन द्वीप, एशियाका फिलिपाइन द्वीपपुञ्ज और अफरीकाका ग्रेसिडिवो एवं गिनी द्वीपपुञ्ज। मेक्सिको तथा दक्षिण-अमेरिकामें भी पहले स्पेन-वासियोंका उपनिवेश रहा, किन्तु पीछे उठ गया।

हालेण्डका उपनिवेश—कुराशवो द्वीप, अमेरिकाके गुये-नाका मध्यवर्ती युष्टेक एवं सुरिनम नामक स्थान और एशियाके मध्य यवद्वीपकी राजधानी बटेविया, बरनिउ द्वीपका कितना ही स्थान, सुमात्रा, शिलि-बिस, तिमर और मलका द्वीपपुञ्ज।

डेनमार्कका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके बीचका सेण्ट क्रुज, सेण्ट जोहन एवं सेण्ट टमास और गिनीके उपकूलका खृष्टानवर्ग।

स्विजरलेण्डका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके मध्यका सेण्ट बार्थलम्यु द्वीप।

उपनिवेशित (सं० त्रि०) उप-नि-विश-णिच्-क्त। लोगोंको उपनिवेशमें बसानेके लिये ले जानेवाला।

उपनिवेशिन् (सं० त्रि०) लग्न, पैदायशी, लगा हुआ।

उपनिषत् (सं० स्त्री०) उपनिषीदति, उप-नि-सद्-क्विप् अथवा सद्-णिच्-क्विप्। १ समीपसदन, पासका मकान्। २ रहस्य, रम्ज़। ३ निर्जन स्थान, सूनी जगह। ४ धर्म। ५ द्विजाति-कर्तव्य व्रत विशेष। ६ वेदका शिरोभाग। उपनिषद्को ऋषिमुनियोंने वेदका शिरोभाग वा वेदान्त बताया है। क्योंकि वेदके इस अंशमें ब्रह्मविद्या कीर्तित है। वेदके अन्य अंशमें कर्मकाण्ड द्वारा पुण्यलाभका उपदेश है। किन्तु उपनिषद्में ज्ञानकाण्डके द्वारा उसीका उपदेश सुनाते, जिससे नित्य आत्मतत्त्व पाते हैं। शास्त्रकारोंने उपनिषद्के अर्थको इसप्रकार व्युत्पत्ति लगायी है—"वेदान्तो नाम उपनिषत्प्रमाणम्।" (वेदान्तसार)

'उपनिच्छब्दो ब्रह्मात्मैक्यसाक्षात्कारविषयः। उपनिपूर्वकस्य क्विप्-प्रत्ययान्तस्य तद्लृ विशरणगत्यवसादनेष्वित्यस्य धातोरुपनिषदिति रूपं। तत्रोपशब्दः सामीप्यमाचष्टे तच्च सङ्कोचकाभावात् सर्वान्तरे प्रत्यगात्मनि पर्यवस्यति। निशब्दो निश्चयवचनः सोऽपि तत्त्वमेव निश्चिनोति तत्त्वं कत्व-वाच्युपशब्दसामानाधिकरण्यात्। तस्मात् ब्रह्मविद्यास्वसंशीलिनां संसार-सारतामतिं सादयति विषादयति शिथिलयतीति वा परमश्रेयोरूपं प्रत्यगा-त्मानं सादयति गमयतीति वा दुःखजन्मप्रवृत्त्यादिमूलाज्ञानं सादयत्युन्म-लयतीति वोपनिषत्पदवाच्या दैवप्रमोणं तस्याः प्रमाणरूपायाः कारणभूतः सर्वशाखासूत्तरभागेषूत्पद्यमानो ग्रन्थराशिरप्युपचारात् प्रमाणमित्युच्यते।'

(विद्वन्मनोरञ्जिनीटीका)

उपनिषद् शब्द ब्रह्मात्मके ऐक्यसाक्षात्कारका विषय है। उप और नि-पूर्वक वध, गति और अवसाद-नार्थक सद धातुके उत्तर क्विप् प्रत्यय लगानेसे यह निष्पन्न हुआ है। उपशब्द सामीप्यका बोधक है। सङ्कोचकके अभावसे इसका अर्थ सर्वान्तर पदब्रह्मरूप प्रत्यगात्मामें वर्तित हो जाता है। नि शब्दसे निश्चय निकलता है। उप शब्दके समानाधिकरण्यसे तत्त्व-निश्चयरूप अर्थ प्रकाशित होता है। अतएव ब्रह्मविद्यामें संयुक्तचित्त न रहनेवालोंको 'संसार-सार' बुद्धिको नष्ट वा शिथिल कर देनेसे इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। अथवा इसके द्वारा परम श्रेयःस्वरूप प्रत्यगात्मा अर्थात् परमात्मा परमेश्वर मिल और दुःखजन्मप्रवृत्ति प्रभृति मूल अज्ञान मिट जानेसे इसको उपनिषद् कहते हैं। यही ईश्वरको सिद्धिके विषयमें प्रमाण और प्रमाण-स्वरूप है। इसका कारणभूत समस्त शाखारूप उत्तर-भागमें उत्पद्यमान ग्रन्थराशि उपचारसे प्रमाण बताया जाता है।

"अत चोपनिषच्छब्दो ब्रह्मविद्यैकगोचरः।
तच्छब्दावयवार्थस्य विद्यायामेव सम्भवात्॥
उपोपसर्गः सामीप्ये तत्प्रतीचि समाप्यते।
सामीप्यतारतम्यस्य विश्रान्तेः स्वात्मनीक्षणात्॥

विविधस्य सदर्थस्य निशब्दोऽपि विशेषणम् ।
उपनीय तमात्मानं ब्रह्मरूपाद्वयं यत: ॥
निहन्त्यविद्यां तज्जञ्च तस्मादुपनिषद्भवेत् ।
प्रवृत्तिहेतुन्नि:शेषांस्तन्मूलोच्छेदकत्वत: ॥
यतोऽवसादयेद्विद्या तस्मादुपनिषद्भवेत् ।
यथोक्तविद्याहेतुत्वाद्ग्रन्थोऽपि तदभेदत: ॥
भवेदुपनिषन्नामा सलिलं जीवनं यथा ।"

उपनिषद् शब्द एकमात्र ब्रह्मविद्यारूप अर्थ प्रकाश करता है। इसके अवयव अर्थकी विद्यामें ही संगति होती है। उप उपसर्गका अर्थ सामीप्य है। तारतम्यको विश्रान्तिके स्वीय आत्मापर ईक्षण हेतु यह प्रत्यगात्मामें पर्यवसित है। फिर यह नि-शब्द एवं सद धातुके नाश, गमन और अवसादन त्रिविध अर्थका विशेषण है। जीवात्मरूप चैतन्यको परमात्म-चैतन्यके निकट पहुंचा ब्रह्मके साथ उसका अद्वयत्व भावनिष्पादन एवं अविद्या तथा अविद्याका कार्य नाश करनेसे इसे उपनिषद् कहते हैं। अथवा उपनिषद् विद्याको प्रवृत्तिके हेतु समस्त नि:शेषको विनाश करनेसे इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। समस्त अभेद विद्याका हेतु होनेसे जलादि जैसे जीवन कहाता, वैसे ही उपचार वश यह ग्रन्थ भी उपनिषद् नाम पाता है।

तैत्तिरीय उपनिषद्के भाष्यमें शङ्कराचार्यने भी लिखा है—'परं श्रेयोऽस्यां निषसम्।' उपनिषद्में मोक्षके लाभका परम मङ्गल निहित है।

वस्तुत: उपनिषद्को सनातन भारतीय धर्मका मूलस्वरूप कहनेसे भी अत्युक्ति नहीं होती। सनातन धर्मके आजतक अक्षुस रहनेका मूल कारण उपनिषद् ही है। उपनिषद्में हमारे धर्मका मूलतत्त्व रक्षित है। उपनिषद्के पाठसे ही हमने जान लिया, कि वर्तमान कालकी अपेक्षा पूर्वतन ऋषिगणने ज्ञानके बल कितना निगूढ़ उच्च तत्त्व आविष्कार किया था।

हमारा सनातन धर्म प्रधानत: दो भागोंमें विभक्त है—प्रवृत्ति धर्म और निवृत्ति धर्म। जो धर्मानुयायी पुण्यकर्मादि करनेसे हम इहलोक एवं परलोकमें परम स्वर्गसुख तथा अशेष पुण्य पा सकते है, उसे प्रवृत्ति-धर्म कहते हैं। यह धर्म वेदके संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक एवं सूत्र भागमें वर्णित है। ऐसे धर्माचरणको कर्मकाण्ड कहते हैं।

दूसरे जिस धर्मके अनुसार हम नित्य शान्ति, अक्षय मोक्षपद पाते, जिस धर्मोपदेशके गुणसे असार संसारके मायामोहादि सहज ही छूट जाते, जिस धर्मके अनुसरणसे परमात्मामें जीवात्माका लय लाते और जिस धर्मके उद्यापनसे जन्म-जरा-मरण रूप संसारमें फिर नहीं आते, उसका नाम निवृत्ति-धर्म बताते हैं। उपनिषद् नामक वेदके शिरोभागमें यही निवृत्ति-धर्म वर्णित है। उपनिषद्के अनुयायी आचरणको ज्ञानकाण्ड कहते हैं। इसका अपर नाम ज्ञानयोग भी है।

"यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरम्।"
(छान्दोग्योपनिषद्)

'उपनिषदा योगेन युक्तस्येत्यर्थ:। (शाङ्करभाष्य)

विद्यारण्य स्वामीने बनाये 'सर्वोपनिषदर्थानुभूतिप्रकाश' नामक ग्रन्थमें इन्हें प्रधान उपनिषद् माना है—

१।	ऐतरेय उपनिषत्	(ऋग्वेदीय)।
२।	तैत्तिरीय उपनिषत्	(कृष्णयजुर्वेदीय)।
३।	छान्दोग्य उपनिषत्	(सामवेदीय)।
४।	मुण्डक उपनिषत्।	(अथर्व्ववेदीय)।
५।	प्रश्न उपनिषत्।	(अथर्व्ववेदीय)।
	कौषितकी उपनिषत्।	(ऋग्वेदीय)।
७।	मैत्रायणीय उपनिषत्।	(शुक्लयजुर्व्वेदीय)।
८।	कठवल्ली उपनिषत्।	(कृष्णयजुर्व्वेदीय)।
९।	श्वेताश्वतर उपनिषत्।	(कृष्णयजुर्व्वेदीय)।
१०।	वृहदारण्यक उपनिषत्।	(शुक्लयजुर्व्वेदीय)।
११।	तलवकार उपनिषत्।	(सामवेदीय)।
१२।	नृसिंहोत्तरतापनीय उपनिषत्।	(अथर्व्ववेदीय)।

मुक्तिकोनिषद्में १०८ उपनिषद्का नाम लिखा है। यथा—

१ ईश, २ केन, ३ कठ, ४ प्रश्न, ५ मुण्ड, ६ माण्डूक्य, ७ तैत्तिरीय, ८ ऐतरेय, ९ छान्दोग्य, १० वृहदारण्यक, ११ ब्रह्म, १२ कैवल्य, १३ जावाल, १४ श्वेताश्वतर, १५ हंस, १६ आरुणि, १७ गर्भ, १८ नारायण, १९ परमहंस, २० अमृतविन्दु, २१ अमृतनाद, २२ अथर्व्वशिर:, २३ अथर्व्वशिखा, २४ मैत्रायणी, २५ कौषितकी, २६ वृहज्जावाल, २७ तापनी, २८ कालाग्निरुद्र, २९ मैत्रेयी, ३० सुवाल, ३१ क्षुरिक, ३२ मन्त्रिक, ३३ सर्व्वसार, ३४ निरालम्ब, ३५ रहस्य, ३६ वज्रसूचि, ३७ तेजोविन्दु,

३८ नादविन्दु, ३९ ध्यानविन्दु, ४० विद्या, ४१ योगतत्त्व, ४२ आत्मबोध, ४३ परिव्राज, ४४ त्रिशिखा, ४५ सीता, ४६ चूड़ा, ४७ निर्व्वाण, ४८ मण्डल, ४९ दक्षिणामूर्त्ति, ५० शरभ, ५१ स्कान्द, ५२ महानारायण, ५३ अद्वय, ५४ रामरहस्य, ५५ रामतापन, ५६ वासुदेव, ५७ मुद्गल, ५८ शाण्डिल्य, ५९ पैङ्गल, ६० भिक्षु, ६१ महत्, ६२ शारीर, ६३ योगशिखा, ६४ तुरीयातीत, ६५ सन्न्यास, ६६ परमहंसपरिव्राजक, ६७ अक्षमालिका, ६८ अव्यक्त, ६९ एकाक्षर, ७० अन्नपूर्णा, ७१ सूर्य, ७२ अक्ष, ७३ अध्यात्म, ७४ कुण्डिका, ७५ सावित्री, ७६ आत्मा, ७७ पाशुपत, ७८ परब्रह्म, ७९ अवधूत, ८० त्रिपुरातापन, ८१ देवी, ८२ त्रिपुरा, ८३ कठरुद्र, ८४ भावना, ८५ हृदय, ८६ योगकुण्डली, ८७ भस्मजावाल, ८८ रुद्राक्ष, ८९ गणपति, ९० जालदर्शन, ९१ तारसार, ९२ महावाक्य, ९३ पञ्चब्रह्म, ९४ प्राणाग्निहोत्र, ९५ गोपालतापनी, ९६ कृष्ण, ९७ याज्ञवल्क्य, ९८ वराह, ९९ शाट्यायनी, १०० हयग्रीव, १०१ दत्तात्रेय, १०२ गारुड, १०३ कलिसन्तरण, १०४ जावालि, १०५ सौभाग्य, १०६ सरस्वतीरहस्य, १०७ बृच, १०८ मुक्तिका।

आजकल प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंके अनुसन्धानसे प्रायः २३५ उपनिषद् निकले हैं। इन नवाविष्कृत उपनिषदोंमें अनेक अप्राचीन हैं। उनमें अल्ल नामक उपनिषद् नितान्त आधुनिक है। शब्दकल्पद्रुममें 'अल्ल' शब्दमें अल्लोपनिषद् आथर्वणसूक्तके नामसे उद्धृत है। किन्तु वह सम्पूर्ण भ्रम है। अथर्व देखो।

अल्लोपनिषद् नामक ग्रन्थ उपनिषद् अथवा आथर्वण सूक्त वाच्य हो नहीं सकता। मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे अनायास ही समझ पड़ता है, कि आधुनिक समयमें ही उस ग्रन्थको किसी इसलामधर्मावलम्बीने लिखा है। इस अपूर्व नव्य ग्रन्थको देखकर ही सम्भवतः अनेक लोग अथर्ववेदसे अश्रद्धा करते हैं। कोई कोई कहते हैं कि अथर्ववेदमें कुरान्के अल्लाका हाल मिलता है। इस अल्लोपनिषद्के पढ़नेसे ही कदाचित् यह संस्कार उत्पन्न हुआ है। इस संस्कारको दूर करना भी अवश्य कर्तव्य है क्योंकि—

अल्लोपनिषद्के अन्तभागमें लिखा है—

"इल्लाकवर इल्लाकवर इल्लल्लेति इल्लाल्ला: इल्ला इल्लाल्ला अनादिस्वरूपा अथर्वणी शाखां ह्रां ह्रीं जनान् पशून् सिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट।"

ये जो ऊपर कई एक शब्द लिखे गये हैं, वे संस्कृत-भाषामें बिलकुल देख नहीं पड़ते। इल्ला और अकबर दोनो प्रकृत अरबी शब्द हैं। अथर्ववेदको छोड़ दीजिये, किसी वैदिक वा लौकिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें भी इनका कहीं प्रयोग नहीं मिलता। विशेषतः इसके बाद ही 'रसुर महमद' इत्यादि लिखा है। उसे भी लोग मुसलमानी कुरान्के कहे 'रसूल मुहम्मद' शब्दका उल्लेख मानते हैं। फिर भी न जाने क्यों देशीय पण्डितोंने आथर्वण-सूक्त जैसा इसे समझ लिया है? इसी ग्रन्थमें किसी जगह लिखा है—

"आदल्लाबुकमेककं। अल्लां बुकम्। निखातकम्।"

उक्त छत्रके साथ अथर्वसंहिताके दो मन्त्रोंका कितना ही आभास मिलता है—

"आदलाबुकमेककम्। १।

अलाबुकं निखातकम्। २।" (अथर्वसंहिता २०।१३२।)

मालम होता है, इन दोनो मन्त्रोंमें कितना ही सौसादृश्य रहनेसे ही किसी-किसीने अल्लोपनिषद्को आथर्वण-सूक्त जैसा मान लिया है। किन्तु इसे भी उन लोगोंका भ्रम ही कहना पड़ेगा। अल्लोपनिषदोक्त अल्लाबुक शब्द अथर्ववेद अथवा अपर किसी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें नहीं आया। अथर्वप्रातिशाख्यके मतानुसार अथर्वसंहितोक्त अलाबुक शब्द 'अल्लाबुक' हो नहीं सकता। फिर अल्लाबुक शब्दका अर्थ भी संस्कृत भाषाके अनुसार निश्चय करना कठिन है। अतएव इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी संस्कृतज्ञ मुसलमानने ही यह दारुण कार्य सम्पादन किया है। उक्त ग्रन्थके पाठसे इतना तो अनुमान लगता है कि वह अकबर बादशाहके समयमें ही सङ्कलित हुआ था। किन्तु किस व्यक्तिने वैसा कार्य किया अब यह अनुसन्धान करना है।

मुन्तखबुत् तवारीख नामक ईरानी ग्रन्थमें बदाउनीने लिखा है—"इसी वत्सर (९८३ हिजरी या १५७५ ई०) दक्षिण देशसे शेख भावन नामक एक शिक्षित ब्राह्मण आ गया था। वह इसलामधर्ममें दीक्षित हुआ। उसीसमय सम्राट्ने हमें अथर्वण अनुवाद करनेका आदेश दिया। इस्लामके धर्मशास्त्रसे इस ग्रन्थके कितने ही धर्मोपदेशका ऐक्य है। अनुवादके समय अनेक कठिन स्थल देख पड़े, जिनका भाव शेख भावन तक प्रकाश न कर सके। हमने यह विषय सम्राट्को

बताया था। उन्होंने फैज़ी और हाजी इब्राहीमको* अनुवाद करनेके लिये अनुमति दी। इस ग्रन्थका एक स्थान हमारा (कुरानके कहे) 'ला इल्लाह इल्लाल्लाह्' (वचन-जैसा) है। अथर्वके इस अंशसे शेख भावनने ब्राह्मणोंको तर्कमें परास्त किया था। और इसी मन्त्रके बलसे कितने ही लोगोंने इसलाम धर्मको पकड़ लिया।" (मुन्तखवुत तवारीख २ भा० २१३ पृ०)

बदाउनीके उक्त विवरणमें कुछ गूढ़ रहस्य भरा जैसा मालूम पड़ता है। वे जातिके मुसलमान रहे, फिर ऐसे विशेष संस्कृतज्ञ न थे, कि अथर्ववेद-जैसा वैदिक ग्रन्थ पारस्य भाषामें अनुवाद कर सकते। कदाचित् अनुवादके समय दक्षिण देशवासी शेख भावन ही उनका दाहना हाथ बने होंगे। वे जो कह देते, बदाउनी उसीको पारस्य भाषामें लिख लेते थे। सम्भवतः भावनने ही उनसे कहा होगा—अथर्ववेदके किसी अंशमें कुरान्का वाक्य पड़ा है।

पीछे अपनी बात रखनेके लिये भावनने ही अल्लोपनिषत् वा अल्लशब्द परिचायक अथर्वणसूक्तको बना अथर्वसंहितामें डाल दिया होगा। कैसा भयङ्कर कार्य है! विधर्मी द्वारा दलित हो अथर्ववेदकी क्या दुर्दशा हुई! उसी दिनसे सरल भारतवासी अथर्वसंहिताको कुरान्का अंश समझ बुरा कहने लगे। भावनके चातुर्यमें पड़ कितनों होने इसलामधर्म ग्रहण किया था। उसी समय उपनिषद् ग्रन्थमें अकबरका नाम घोषित हुआ! हा! कालविपर्ययसे सनातन आर्यशास्त्रका ऐसा परिणाम हो गया। वेद शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उपनिषादिन् (वै० त्रि०) उप-नि-सद-णिनि। निकटस्थायी, नज़दीक रहनेवाला। (शतपथब्रा० ८।४।३।३)

उपनिष्कर (सं० क्ली०) उप-निस्-कृ-घ, विसर्जनीयस्य सः। इदुपधस्य चाप्रत्ययस्य। पा ८।३।४१। पुरपथ, शाही राह।

उपनिष्क्रमण (सं० क्ली०) उप-निस्-क्रम करणे ल्युट्, विसर्जनीयस्य सः। १ राजपथ, शाही राह। २ निष्क्रमण नामक संस्कार। निष्क्रमण देखो। ३ चल देनेका काम।

उपनिहित (सं० त्रि०) उप-नि-धा-क्त (धा=हि) १ गच्छित, अमानत रखा हुआ। २ स्थापित, रखा हुआ। ३ समर्पित, नज़र किया हुआ।

उपनीत (सं० त्रि०) उप-नी-क्त। १ कृतोपनयन, जनेऊ पाये हुआ। (रघु ३।२९) २ ज्ञानकी लक्षणाके सन्निकर्ष द्वारा ज्ञात, अक्लके ज़ोरसे समझा हुआ। ३ निकट प्रापित, नज़दीक लाया हुआ। ४ आगत, पहुंचा हुआ। ५ उपस्थापित, जो रख दिया गया हो। ६ आनीत, लाया हुआ। ७ प्राप्त, मिला हुआ। (पु०) ८ कृतोपनयन बालक, जिस लड़केको जनेऊ दिया जा चुका हो।

उपनीतभान (सं० क्ली०) न्यायके मतसे—१ उपनीत तत्त्वादिका विषयकत्व। २ लौकिक और अलौकिक उभयके सन्निकर्षसे उपजा ज्ञान। (न्याय० कौ०)

उपनीता (सं० स्त्री०) पत्नी, अपनी औरत।

उपनीय (सं० अव्य०) १समीप ले जा कर। २ जनेऊ देके।

उपनीयमान (सं० त्रि०) निकट उपस्थित किया जानेवाला, जिसको जनेऊ दिलाने गुरुके पास ले जाते हों।

उपनुन्न (सं० त्रि०) १ प्रेरित, भेजा हुआ। २ ताड़ित, हटाया हुआ।

उपनृत्य (सं० क्ली०) नृत्यशाला, नाचघर।

उपनेतव्य (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित किये जानेके योग्य, जो नज़दीक पहुंचानेके काबिल हो। २ नियुक्त करने योग्य, लगानेके काबिल।

उपनेतृ (सं० पु०) १ उपनयनकर्ता गुरु, जनेऊ देनेवाला। (त्रि०) २ उपढौकनकारी, भेंट चढ़ानेवाला। ३ प्रापक, ले जानेवाला।

उपनेत्र (सं० क्ली०) उपगतं नेत्रम्, अत्या० समा०। आंखमें लगनेवाला चशमा।

उपन्ना, उपरना देखो।

उपन्यस्त (सं० त्रि०) उप-नि-अस्-क्त। १ विन्यस्त, ऊपर या पास रखा हुआ। २ गच्छित, सौंपा हुआ। ३ आरब्ध, शुरू किया हुआ। ४ दत्त, दिया हुआ। ५ उल्लिखित, लिखा हुआ।

* सरहिन्दवासी हाजी इब्राहीमने पारस्यभाषामें अथर्ववेदको अनुवाद किया था।

"अकस्मात् आपतितं किमिदमुपन्यस्तम्।" (शकुन्तला)

उपन्यस्य (सं० अव्य०) देकर, सौंपके।

उपन्यास (सं० पु०) उप-नि-अस्-घञ्। १ वाक्योपक्रम, बातका शुरू होना। २ वाक्यका प्रयोग। ३ विचार। "विस्रजन्निमं पुत्त्रमुपन्यासं निबोधत।" (मनु ८।३१) ४ उपनिधि, धरोहर। ५ प्रस्ताव। ६ दान, बखशिश। ७ उपकथा, सुनने और पढ़नेवालेका दिल खुश करनेकेलिये बनाकर लिखा हुआ किस्सा।

उपन्यास्य (सं० त्रि०) वर्णन किया जानेवाला, जो बताये जानेके काबिल हो।

उपपक्ष (सं० पु०) १ स्कन्ध, कन्धा। (त्रि०) २ निकटस्थ, कन्धेके पास पड़नेवाला।

उपपति (सं० पु०) उपमितः पत्या अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे इति समासः। भिन्न पति, यार। अपना पति रहते भी जिस पुरुषसे कोई नारी आसक्त होती, उसको उपपति संज्ञा पड़ती है।

"सन्धये जारं गेहायोपपतिम्।" (शुक्लयजुः ३०।९)

उपपत्ति (सं० स्त्री०) उप-पद-क्तिन्। १ युक्ति, तदबीर। २ सङ्गति, साथ। ३ निर्वृति, खातिमा। ४ हेतु, सबब। ५ उत्पत्ति, पैदायश। ६ उपाय, ढङ्ग। "अपेचितान्योन्यवलोपपत्तिभिः।" (माघ) ७ प्राप्ति, हासिल। ८ सिद्धि, करामात। "असंशयं प्राक तनयोपपत्तेः।" (रघु) ९ न्यायके मतसे—ज्ञान, समझ। (गौतमवृत्ति १।१।२३) १० गणित शास्त्रके मतसे—प्रमाण करण, सुबूत देनेकी बात।

उपपत्तिमत् (सं० त्रि०) १ उचित, वाजिब, ठीक। २ मिलित, [illegible] लगा हुआ।

उपपत्तियुक्त, उपपत्तिमत् देखो।

उपपत्नी (सं० स्त्री०) उपस्त्री, किसीसे फंसी हुई दूसरेकी औरत।

उपपथ (सं० अव्य०) मार्गके निकट, सड़कपर।

उपपद (सं० क्ली०) उपोच्चारितं पदम्। १ लेग, लगाव। २ समीपोच्चारणीय पद, पास बोला जानेवाला जुमला। "फलन्ति कल्पोपपदास्तदेव।" (माघ) ३ उपाधि, खिताब। ४ व्याकरणके प्रत्ययादि विधायक सूत्र। ५ सप्तम्यन्त पदके साथ निर्दिश्यमान पद। ६ समभिव्याहृत स्वार्थपोषक पद।

उपपन्न (सं० त्रि०) उप-पद्-क्त। १ युक्तियुक्त, वाजिब। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ उत्पन्न, पैदा। ४ उचित, मुनासिब। ५ सम्पन्न, रखनेवाला। ६ आगत, आया हुआ। ७ मिलित, लगा हुआ। ८ सिद्धान्त, जांचा हुआ। ९ सम्भावित, होनहार। १० सद्गुणान्तर आधानरूप संस्कारयुक्त। (वाचस्पति)

उपपरीक्षण (सं० क्ली०) उपपरीक्षा देखो।

उपपरीक्षा (सं० स्त्री०) उपपरीक्षण, इमतेहान, जांच, पूछताछ।

उपपर्चन (वै० त्रि०) १ संयुक्त कर देनेवाला, जो मिला देता हो। २ संलग्न, लगा हुआ। (क्ली०) ३ गर्भाधान। (सायण)

उपपर्शुका (सं० स्त्री०) कृत्रिम पञ्जर, झूठी पसलियां।

उपपात (सं० पु०) उप-पत-घञ्। १ हठात् आगमन, एकाएक आनेका काम। २ फलोन्मुख, बाकिया। ३ नाश, बरबादी।

"कर्मोपपाते प्रायश्चित्तं तत्कालम्।" (कात्यायनश्रौ०)

'उपपातो विनाशः।' (कर्काचार्य)

उपपातक (सं० क्ली०) उपपातयति नरके, उप-पत-णिच्-ण्वुल्। पाप विशेष, छोटा गुनाह। शास्त्रमें इन सकल कार्योंको उपपातक बताया गया है—

"गोवधोऽयाज्यसंयाज्यपारदार्यात्मविक्रयाः
गुरुमातृपितृत्यागः स्वाध्यायाग्न्योः सुतस्य च ॥
परिवित्तितानुजेऽनूढ़े परिवेदनमेव च।
तयोर्दानञ्च कन्यायास्तयोरेव च याजनम् ॥
कन्याया दूषणञ्चैव वार्धुष्यं व्रतलोपनम्।
तड़ागारामदाराणामपत्यस्य च विक्रयः ॥
व्रात्यता वान्धवत्यागो भृत्याध्यापनमेव च।
भृताच्चाध्ययनादानमपण्यानाञ्च विक्रयः ॥
सर्वाकरेष्वधीकारो महायन्त्रप्रवर्तनम्।
हिंसौषधीनां स्त्र्याजीवोऽभिचारो मूलकर्म च ॥
इन्धनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामवपातनम्।
आत्मार्थञ्च क्रियारम्भो निन्दितान्नादनं तथा ॥
अनाहिताग्निता स्तेयमृणानामनपक्रिया।
असच्छास्त्राधिगमनं कौशीलव्यस्य च क्रिया ॥
धान्यकुप्यपशुस्तेयं मद्यपस्त्रीनिषेवणम्।
स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधो नास्तिक्यञ्चोपपातकम् ॥" (मनु ११।६०-६७)

गोवध, अयाज्यका याजन, परस्त्रीगमन, आत्मविक्रय,

पिता, माता, गुरु, स्वाध्याय, अग्नि एवं पुत्रका आलस्य द्वारा त्याग अर्थात् पुत्रका जातकर्म संस्कार न करना, ज्येष्ठ अविवाहित रहते कनिष्ठका विवाह, ज्येष्ठ वा कनिष्ठको कन्यादान, अथवा ऐसे ही विवाहमें पौरोहित्य पालना, अङ्गुलसे कुमारी कन्याकी योनिका विदारण, वृद्धिकी जीविका, स्त्रीसम्भोगादि द्वारा ब्रह्मचर्य व्रतकी च्युति, तड़ाग उद्यान और स्त्रीपुत्रादिका विक्रय, १६ वर्ष बीतनेपर भी उपनयन न होना, पितृव्य प्रभृति बान्धवोंका त्याग, वेतनसे वेदका अध्यापन, वेतनग्राही अध्यापकसे वेदका अध्ययन, अविधेय वस्तुका विक्रय, राजाज्ञासे सुवर्णादिकी खनि तथा सेतु प्रभृतिका कार्य, ओषधिका विनाश, भार्यादिका उपपति द्वारा जीविका-निर्वाह, श्येनादि आभिचारिक योग वा मन्त्र द्वारा निरपराधीका अनिष्टकरण, जलानेके लिये अशुष्क वृक्षच्छेदन, देवपित्रादिके उद्देश्यसे व्यतिरेक अपने लिये पाकयज्ञादिका अनुष्ठान, लशुनादि निन्दित खाद्यका भोजन, अग्न्याधान न करना, असत् शास्त्रकी आलोचना, गान एवं वाद्यकी आसक्ति, धान्य ताम्र लौहादि धातु तथा पशुकी चोरी, मद्यपायिनी स्त्रीके पास जाना, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा स्त्रीहत्या और नास्तिकता, इन सकलमें प्रत्येकको उपपातक कहते हैं।

प्रायश्चित्त देखो।

उपपातकिन् (सं० त्रि०) १ उपपातक करनेवाला, जो छोटा गुनाह करता हो। २ सिवा प्रथम श्रेणीके अन्य किसी श्रेणीका पाप करनेवाला।

उपपातिन् (सं० त्रि०) उप-पत-णिनि स्त्रियां ङीप्। १ हठात् आगत, एकाएक आनेवाला। २ अतर्कित भावसे उपस्थित, पहुंचा हुआ।

"रन्ध्रोपपातिनोऽनर्थाः।" (शकुन्तला)

उपपाद (सं० पु०) उप-पद-घञ्। १ उपपत्ति, ठहराव। (त्रि०) २ पादोपगत, पैरमें पड़ा हुआ।

उपपादक (सं० त्रि०) उपपादयति, उप-पद-णिच्-ण्वुल्। १ उपपत्तिकारक, ठहरानेवाला। २ सम्पादक, करनेवाला। ३ उपपत्ति-युक्त, ठहरा हुआ।

उपपादन (सं० क्ली०) उप-पद-णिच्-ल्युट्। १ सम्पादन, बनाव। २ सम्यक् प्रतिपादन, खासा सबूत। ३ युक्ति द्वारा समर्थन। ४ मीमांसाकरण, तजवीज़सानी।

उपपादनीय, उपपाद्य देखो।

उपपादित (सं० त्रि०) उप-पद-णिच्-क्त। १ युक्ति द्वारा समर्थित, तरकीबके साथ ठहराया हुआ। २ सम्पादित, बनाया हुआ।

उपपादुक (सं० त्रि०) १ निज द्वारा उत्पन्न किया हुआ, जो अपने करनेसे निकला हो। २ जूते पहने हुआ, नाल बंधा। (पु०) ३ देवता, फरिश्ता। ४ नरक, दोज़ख़।

उपपाद्य (सं० त्रि०) उप-पद-णिच्-यत्। १ युक्ति द्वारा समर्थनके योग्य, तरकीबके साथ ठहराया जा सकने वाला। २ उद्देश्य, जो पैदा किया जा रहा हो।

उपपाप, उपपातक देखो।

उपपार्श्व (सं० पु० क्ली०) १ स्कन्ध, कन्धा। २ कक्ष, कोख। ३ क्षुद्रतर अन्न, छोटी पसलियां। ४ सम्मुखस्थ पार्श्व, सामनेकी तर्फ़।

उपपालित (सं० त्रि०) रक्षित, पाला हुआ।

उपपीड़न (सं० क्ली०) १ भार, दबाव। २ पीडनकार्य, तकलीफ़दिही। ३ पीड़ा, दर्द, सतानेका काम।

उपपीड़ित (सं० त्रि०) १ विनष्ट, बरबाद किया हुआ। २ पीड़ित, सताया हुआ।

उपपुर (सं० क्ली०) उपसमीपे पुरम्, प्रादि समा०। नगरका निकटवर्ती शाखा नगर, शहरके पासका छोटा कसबा।

उपपुराण (सं० क्ली०) व्यासके सिवा अन्य ऋषियों द्वारा कृत क्षुद्रपुराण। यथा—

१ सनत्कुमारोक्त आदि, २ नारसिंह, ३ कुमार-भाषित वायवीय, ४ नन्दीशोक्त शिवधर्म, ५ दुर्वाससोक्त दुर्वासाः, ६ नारदीय, ७ नन्दिकेश्वर, ८ उशनाः, ९ कापिल, १० वारुण, ११ शाम्ब, १२ कालिका, १३ माहेश्वर, १४ पाद्म, १५ देवी, १६ पराशर, १७ मारीच और १८ भास्कर।

कूर्मपुराणके मतसे इन्हें उपपुराण कहते हैं—

"आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतः परम्।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं कुमारेण तु भाषितम्॥

चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम्।
दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदीयमतः परम्॥
कापिलं वामनञ्चैव तथैवोशनसेरितम्।
ब्रह्माण्डं वारुणञ्चैव कालिकाह्वयमेव च॥
माहेश्वरं तथा शाम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्।
पराशरोक्तं मारीचं तथैव भार्गवाह्वयम्॥" (कूर्म १अ० १७-२०श्लो०)

१ सनत्कुमारोक्त आद्य, २ नारसिंह, ३ कुमारोक्त स्कन्द, ४ नन्दीशप्रोक्त शिवधर्म, ५ दुर्वासाः, ६ नारदीय, ७ कापिल, ८ वामन, ९ उशनाः, १० ब्रह्माण्ड, ११ वारुण, १२ कालिका, १३ माहेश्वर, १४ शाम्ब, १५ सर्वार्थसञ्चायक सौर, १६ पराशरोक्त, १७ मारीच और १८ भार्गव।

सचराचर भागवत दो प्रकारका मिलता है—एक विष्णु-भागवत और एक देवी-भागवत। हेमाद्रि प्रभृति शास्त्रविद्गणके मतसे प्रकाशित है—

"इदं यत् कालिकाख्यन्तु मूलं भागवतन्तु तत्।"

कालिका उपपुराणका मूल पुराण भागवत है। प्रधानतः कालिकापुराणमें देवीका माहात्म्य ही वर्णित है। इसलिये देवी-भागवतको ही मूलपुराण वा महापुराण बताते हैं।

(देवीभागवतपर नीलकण्ठ-कृत टीकोपक्रमणिका)

कोई कोई विष्णु-भागवतको ही महापुराण कहते हैं। असलमें इस विषयपर बहुत कुछ सन्देह उठता है—कौन उपपुराण और कौन महापुराण है। सन्देहकी बात भी है। क्योंकि दोनों ही भागवत द्वादश स्कन्धमें विभक्त और अष्टादश सहस्र श्लोकात्मक हैं। पुराणशब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उपरोक्त पुराणोंको छोड़ धर्मपुराण, बृहद्धर्मपुराण, बृहन्नन्दिकेश्वर-पुराण प्रभृति दूसरे भी कई उपपुराण हैं।

पुराण और उपपुराणका लक्षण श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार लिखा है—

"सर्गोऽस्याथ विसर्गश्च वृत्तिरक्षान्तराणि च।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः॥
दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः।
केचित् पञ्चविधं ब्रह्मन् महदल्पव्यवस्थया॥
अव्याकृतगुणक्षोभान्महतस्त्रिवृतोऽहमः।
भूतसूक्ष्मेन्द्रियार्थानां सम्भवः सर्ग उच्यते॥
पुरुषानुगृहीतानामेतेषां वासनामयः।
विसर्गोऽयं समाहारो वीजाद्वीजं चराचरम्॥
वृत्तिर्भूतानि भूतानां चराणामचराणि च।
कृता स्वेन नृणां तत्र कामाच्चोदनयापि वा॥
रक्षाच्युतावतारेहा विश्वस्यानु युगे युगे।
तिर्य्यङ्मर्त्यर्षिदेवेषु हन्यन्ते यैस्त्रयीद्विषः॥
मन्वन्तरं मनुर्देवा मनुपुत्राः सुरेश्वराः।
ऋषयोऽंशावताराश्च हरेः षड्विधमुच्यते॥
राज्ञां ब्रह्मप्रसूतानां वंशस्त्रैकालिकोऽन्वयः।
वंशानुचरितं तेषां वृत्तं वंशधराश्च ये॥
नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः।
संस्थेति कविभिः प्रोक्तश्चतुर्धास्य स्वभावतः॥
हेतुर्जीवोऽस्य सर्गादेरविद्याकर्मकारकः।
य चानुशायिनं प्राहुरव्याकृतमुतापरे॥
व्यतिरेकान्वयो यस्य जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु।
मायामयेषु तद्ब्रह्म जीववृत्तिष्वपाश्रयः॥
पदार्थेषु यथा द्रव्यं सन्मात्रं रूपनामसु।
वीजादिपञ्चतान्तासु ह्यवस्थासु युतायुतम्॥"

(१२ स्क० ७ अ० ९—२० श्लो०)

१ सर्ग, २ विसर्ग, ३ वृत्ति, ४ रक्षा, ५ अन्तर, ६ अंश, ७ वंशानुचरित, ८ संस्था, ९ हेतु और १० अपाश्रय लक्षणाक्रान्त पुराण होता है। अधिक और अल्प व्यवस्थाके अनुसार कोई कोई पुराणविद् पञ्च लक्षणयुक्त ग्रन्थको भी पुराण कहते हैं।

१म सर्ग—प्रकृतिके गुणत्रयसे महान्, उससे त्रिगुणात्मक अहङ्कार और अहङ्कारसे सूक्ष्म इन्द्रियसमूह, स्थूल पदार्थसकल एवं तत्तत् अधिष्ठात्री देवताकी उत्पत्ति होनेका नाम सर्ग है।

२य विसर्ग—जीवके पूर्व कर्म-सम्बन्धीय वासनाजात तथा ईश्वरानुगृहीत सकल वीजसे वीजोत्पत्तिकी तरह समाहार-रूप चराचरको उत्पत्ति होनेको विसर्ग वा अवान्तर सृष्टि कहते हैं।

३य वृत्ति—इस संसारमें चराचर प्राणिसमूहकी वासनाके हेतु एवं मनुष्यादिके स्वभाव, काम वा विधिके अर्थ किया जानेवाला जीवनोपाय वृत्ति वा स्थिति है।

४र्थ रक्षा—युग-युगमें वेदके विद्वेषी दैत्योंसे देव,

तिर्यक्, मनुष्य और ऋषिगणके कार्यनाशका उपक्रम लगने पर नारायणके विशेष विशेष अवतारका होना रक्षा कहलाता है।

५म अन्तर—मनु, देवतासकल, मनुपुत्रगण, सुरेश्वरगण, ऋषिगण और नारायणके अंशावतार जिसमें अपने अधिकारपर वर्तमान रहते हैं, उसीको छः प्रकारका अन्तर वा मन्वन्तर कहते हैं।

६ष्ठ वंश—ब्रह्मासे उत्पन्न शुद्धवंशीय राजाओंके भूत, भविष्यत् और वर्तमान तीनो कालोंकी पुरुषपरम्पराके वर्णनका नाम वंश है।

७म वंशानुचरित—उक्त सकल राजावों और उनके वंशधरोंके चरित्रका वर्णन वंशानुचरित कहलाता है।

८म संस्था—स्वभावसे या ईश्वरकी मायासे विश्वमें पड़नेवाला नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित्य और आत्यन्तिक चार प्रकारका विकार ही संस्था वा लय है।

९म हेतु—अज्ञानवशत: कर्मकारी जीव इस विश्वकी सृष्टिके आदिका हेतु है। यही अनुशयी रहता हो, इसे कोई कोई अव्याकृत भी कहते हैं।

१० अपाश्रय—जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति तीनो अवस्था और जीव-रूपसे वर्तमान रहनेवाले, मायामय एवं सकलके साक्षिस्वरूप और समाधि प्रभृतिसे सम्बन्ध भाव रखनेवाले ब्रह्मका नाम अपाश्रय है। घटादि पदार्थसमूहमें मृत्तिकादि द्रव्य एवं रूप और सामान्यादिमें सत्तामात्रकी तरह जो गर्भाधानसे मृत्युपर्यन्त सकल अवस्थापर युक्त तथा अयुक्त रहता है, उसे ही पुराणविद् अपाश्रय कहते हैं।

उक्त लक्षण पुराणका ही लक्षण बताया गया है। किन्तु परवर्ती श्लोकमें 'प्राहुः क्षुल्लकानि महान्ति च' वचनसे वह उपपुराणका ही लक्षण जैसा समझ पड़ता है। विशेषत: पुराण पञ्चलक्षणात्मक ही सकल पुराणोंमें प्रसिद्ध है। पुराण देखो।

उपपुष्पिका (सं० स्त्री०) उपगता पुष्पिकाम्, संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम्। जृम्भा, जमहाई।

उपपौर्णमास (सं० अव्य०) पूर्णिमाको, पूरनमासीके दिन।

उपपौर्णमासो, उपपौर्णमास देखो।

उपप्रदर्शन (सं० क्ली०) सूचना, निर्देश, इज़हार, देखाव।

उपप्रदान (सं० क्ली०) उप-प्र-दा-ल्युट्। १ उत्कोच, रिशवत। २ सन्धिके निमित्त भूमि आदिका दान, सुलहके लिये जमीन् वग़ैरहकी बख़्शिश।

"साम चोपप्रदानञ्च भेदो दण्डश्च तत्त्वत:।" (रामायण)

३ द्रव्यदान, दौलतकी बख़्शिश। ४ दानकार्य, देनेकी बात।

उपप्रलोभन (सं० क्ली०) उप-प्र-लुभ-णिच्-ल्युट्। १ सम्यक् प्रलोभन, खासा लालच। करणे ल्युट्। २ सम्यक् प्रलोभन-योग्य द्रव्य, जो चीज़ देखनेसे खूब लालच लगता हो।

"उच्चावचानुपप्रलोभनानि।" (दशकुमार०)

उपप्लव (सं० पु०) उप-प्लु-अप्। १ आकाशसे उल्कापातादिका उपद्रव, आसमान्से तारे वग़ैरह टूटनेकी बात। २ राहु ग्रह। ३ विप्लव, हङ्गामा। ४ भय, खौफ। ५ अशुभ, बुराई। ६ विपत्ति, आफ़त। ७ राजविप्लव, शाही झगड़ा। ८ चन्द्रादि ग्रहण। ९ उपरिवेष्टन, लटकाव। १० औपसर्गिक नरक-पीड़न। ११ विकल्प। १२ प्रतिबन्ध। १३ शिव।

उपप्लविन् (सं० त्रि०) उप-प्लु-णिनि। १ भययुक्त, खौफ़ज़दा, डरा हुआ।

"नृपा इवोपप्लविन: परेभ्य:।" (रघु १३।७)

'उपप्लविनो भयवन्त:।' (मल्लिनाथ)

उपप्लव्य (सं० क्ली०) उप-प्लु आधारे बाहुलकात् यत्। विराटके देशकी राजधानी। (महाभारत, आदि २।२१२, उद्योग २३।१, सौप्तिक ११।५, शल्य ६२।२४)

उपप्लुत (सं० त्रि०) उप-प्लु-क्त। १ उपद्रवयुक्त, गड़बड़में पड़ा हुआ।

"उपप्लुतं पातुमदो मदोद्धतै:।" (माघ)

२ राहुग्रस्त, राहुसे घिरा हुआ। ३ भीत, खौफ़ज़दा। ४ पीड़ित, तकलीफ़ज़दा। ५ विपद्ग्रस्त, मुसीबत झेलनेवाला।

उपप्लुता (सं० स्त्री०) योनिरोग, रेहमका फासिद इदराक। गर्भिणीके श्लेष्मप्रकृतिके अभ्याससे और छर्दि एवं श्वास विनिग्रहसे वायु क्रुद्ध होकर कफको योनिमें

ला बिगाड़ देता है। फिर पाण्डु, तीव्रवेदना, वा श्वेत कफ टपकता है। योनिकी उपप्लुता कफ, वात और आमयसे व्याप्त रहती है। (चरक)

उपवड (सं० त्रि०) संलग्न, लगा हुआ।

उपबन्ध (सं० पु०) उप-बन्ध-घञ्। १ वस्त्वन्तर बन्धन, दूसरी चोज़की गिरफ़्त। २ पद्मासन। ३ सांख्य विशेषके द्वारा सम्बन्धका प्रतिपादन।

उपबर्ह (सं० पु०) उपबर्ह्यते आस्तीर्यते, उप-बर्ह कर्मणि घञ् न वृद्धिः। १ उपधान, तकिया। बर्ह हिंसायां भावे घञ् न वृद्धिः। २ उपपीड़न, छेड़छाड़।

उपबर्हण (सं० क्लो०) उपबर्ह्यते कर्मणि ल्युट्। उपबर्ह देखो।

उपबहु (सं० त्रि०) कुछ, थोड़े।

उपबाधा (सं० स्त्री०) उप-बाध-अ-टाप्। सम्पीड़न, खूब तकलीफ़ देनेकी बात।

उपबाहु (सं० पु०) उपगतो बाहुम्। १ बाहु समीपवर्ती अङ्गका भेद। पहुंसे कोहनीतक हाथका हिस्सा उपबाहु कहलाता है। (अव्य०) २ बाहुके निकट, बाज़ूके पास।

उपबृंहिन् (सं० त्रि०) अतिरिक्त, ज़ायद।

उपब्द (वै० पु०) उपगतः शब्दः, प्रादि समा०। अभिषव शब्द। "ग्रावाणो घ्नन्तु रक्षस उपब्दैः।" (ऋक् ७।१०४।१७) 'उपब्दैः अभिषवशब्दैः' (सायण)

उपब्दि (वै० पु०) १ वाक्, शब्द। (निघण्टु) २ श्रवणार्ह। "भरतां श्रृण्व आयतामुपब्दिः।" (ऋक् १।११६।१७) 'उपब्दिः श्रवणार्हः।' (सायण)

उपब्दिमत् (सं० त्रि०) शब्दयुक्त, पुरशोर।

उपभङ्ग (सं० पु०) उप-भन्ज-घञ् कुत्वम्। पृष्ठप्रदर्शन, लड़ाईसे भागाभागी।

उपभाषा (सं० स्त्री०) गौण भाषा, दूसरे दरजेकी ज़बान्।

उपभुक्त (सं० त्रि०) उप-भुज-क्त। १ व्यवहृत, इस्तेमाल किया हुआ। २ भक्षित, खाया हुआ।

उपभुक्तधन (सं० त्रि०) अपने धनका उपभोग करनेवाला, जो अपनी दौलतसे काम लेता हो।

उपभुक्ति (सं० स्त्री०) उप-भुज-क्तिन्। उपभोग, इस्तेमाल।

उपभुञ्जान (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो मज़ा ले रहा हो।

उपभूती (सं० स्त्री०) महानीली।

उपभूषण (सं० क्लो०) उपमितं भूषणेन। घण्टा चामरादि उपकरण, बाजे गाजे और असावल्लम वग़ैरह साजसामान्।

"घण्टाचामरकुम्भादिपालीपकरणादिकम्।
तद्भूषणान्तरे दद्याद् यस्मात्तदुपभूषणम्॥" (कालिकापु० ६८ अ०)

उपभृत् (वै० स्त्री०) उप-भृ-क्विप्। १ काष्ठनिर्मित यज्ञपात्र। २ चक्राकार पात्र। यह वटकाष्ठसे निर्मित और यज्ञमें व्यवहृत होता है।

उपभोक्तव्य, उपभोग्य देखो।

उपभोक्तृ (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो मज़ा लेता हो।

उपभोग (सं० पु०) उप-भुज-घञ्। १ निर्वेश, मज़ेदारी। "प्रियोपभोगचिह्नेषु पौरो भाग्यमिवाचरन्।" (रघु १२।२२) २ व्यवहार, इस्तेमाल। ३ भक्षण, खवाई।

उपभोगिन् (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो मज़ा ले रहा हो।

उपभोग्य (सं० त्रि०) उप-भुज-ण्यत् अन्नार्थत्वे कुत्वम्। १ उपभोगयोग्य, मज़ा लिये जाने लायक़। (क्लो०) २ उपभोगका द्रव्य, मज़ेकी चीज़।

उपभोजनीय, उपभोज्य देखो।

उपभोजिन् (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो मज़ा लेता हो।

उपभोज्य (सं० त्रि०) भोजनमें व्यवहार किया जानेवाला, जो खानेमें लगता हो।

उपम (वै० त्रि०) उपमीयते, उप-मा-क। १ उपमेय, मिसाल दिये जानेके क़ाबिल। (ऋक् ४।३१।३) उप-मीयते समीपे क्षिप्यते, मि बाहुलकात् ड। २ अन्तिक, नज़दीक। (निघण्टु) "उतोपमानां प्रथमो निषीदसि।" (ऋक् ८।५०।२) ३ अन्तिकस्थित, पास पड़नेवाला।

"उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम्।" (बालखिल्य ५।१)

(पु०) ४ साखूका पेड़।

उपमद्गु (सं० पु०) श्वफल्कके पुत्र और अक्रूरके कनिष्ठ भ्राता।

उपमन्त्रण (सं० क्ली०) उप-मन्त्र-ल्युट्। भासनोपसम्भाषा-ज्ञानयत्नविमत्युपमन्त्रणेषु वदः। पा १।३।४७) 'उपमन्त्रणं रहस्युपच्छन्दनम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) १ आमन्त्रण, तरग़ीबदिही, न्योता। २ प्रार्थनापूर्वक प्रवर्तनारूप व्यापार, खुशामद।

उपमन्त्रिन् (सं० त्रि०) उप-मन्त्र-णिनि। १ आमन्त्रण देनेवाला, जोतरग़ीब देता हो। "हसनोमुपमन्त्रिणः।" (ऋक् ८।११२।४) 'उपमन्त्रिणः उपमन्त्रणवन्तो नर्मसचिवो हसनामुपहासयुक्तां वाचमिच्छन्ति।' (सायण) २ सहायक-मन्त्री, छोटा वज़ीर।

उपमन्थनी (सं० स्त्री०) उपमथ्यतेऽनया, उप-मन्थ करणे ल्युट् ङीप्। अग्निमन्थनके साधनका द्रव्य। (शतपथब्रा० १४।८।३।२१)

उपमन्थित (सं० त्रि०) अग्निमन्थन करनेवाला।

उपमन्यु (सं० पु०) आयोदधौम्य मुनिके एक जन शिष्य। ये अति गुरुभक्त रहे। गुरुके आदेशसे उपमन्यु गोचारण करते थे। भिक्षाके अन्नसे जीविकाका निर्वाह होता था। प्रतिदिन सायाह्नको गोष्ठसे लौट गुरुके निकट यह खड़े रहते थे। किसी दिन आयोदधौम्यने इन्हें स्थूलकाय होनेसे पूछा—'उपमन्यु! तुम बहुत हृष्टपुष्ट देख पड़ते हो। तुम्हारी खुराक क्या है?' उपमन्युने गुरुसे अपनी भिक्षावृत्तिकी बात बता दी। तब आयोदधौम्यने कहा—देखो! हमसे न बता भिक्षायोग्य द्रव्यादि उपभोग करना तुम्हें उचित नहीं। तदवधि यह जो भिक्षा मांग लाते, उसे ही गुरुपर चढ़ा जाते। फिर भी शरीर कुछ घटते न देख आयोदधौम्यने इन्हें बिलकुल आहार न देनेका उपाय किया था। एक दिन गोचारणके समय उपमन्यु क्षुधासे अत्यन्त कातर हुये। अपर कुछ न मिलनेसे इन्होंने अर्कपत्र खाया था। उस पत्रके गुणसे उपमन्यु अन्ध हो गये और इतस्ततः घूमते-घूमते एक कूपमें जा पड़े। इधर आयोदधौम्य इनको न देख नानास्थानोंमें ढूंढते-ढूंढते उसी कूपके निकट पहुंच पुकारने लगे। कूपके मध्यसे उपमन्युने अपनी अवस्था गुरुदेवको बता दी। आयोदधौम्यने इनसे अश्विनीकुमार-द्वयका स्तव करनेको कहा। उपमन्युने वही किया था। अश्विनीकुमार-युगल इनके स्तवसे तुष्ट हो निकल पड़े। उन्होंने उपमन्युको एक पिष्टक दे खा जानेके लिये कहा। किन्तु गुरुभक्त उपमन्यु गुरुको निवेदन न कर कुछ भी खानेपर सम्मत न हुये। गुरुभक्तिसे सन्तुष्ट हो अश्विनीकुमारने इन्हें चक्षुरत्न और यह वर दिया था—सकल वेद और सकल धर्मशास्त्र सकल समय तुम्हारी स्मृतिके पथपर चढ़ रहेगा।

(महाभारत, आदि ३अ०)

उपमर्द (सं० पु०) उप-मृद-घञ्। १ आलोड़न, दलामली। २ हिंसन, मारकाट। ३ निष्पीड़न, निचोड़ानिचोड़ी। ४ धान्यादिकार निष्फलीकरण, अनाजकी मंड़ाई।

उपमर्दक (सं० त्रि०) उप-मृद कर्तरि ण्वुल्। उपमर्दकारी, मांड़नेवाला।

उपमश्रवस् (वै० त्रि०) १ अत्युच्च प्रसिद्धियुक्त, निहायत ऊंची शोहरतवाला। (पु०) २ मित्रातिथिके एक पौत्र और कुरुश्रवणके पुत्र। (ऋक् १०।३३।६)

उपमा (सं० स्त्री०) उपमीयते, उप-मा-अङ्-टाप्। १ तुल्यता, बराबरी। २ अर्थालङ्कारका एक भेद, मिसाल। इसमें साधारण धर्म विशिष्ट भिन्न-जातीय दो वस्तुकी तुलना देखायी जाती है। यथा—

"उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः।
हंसीव भूपतेः कीर्तिं स्वर्नदीमवगाहते॥" (साहित्यद०)

राजाकी कीर्ति हंसीकी तरह स्वर्गनदीका अवगाहन करती है। इस स्थलपर हंसीकी उपमासे राजकीर्ति वर्णित है।

उपमाके चार अङ्ग होते हैं,—उपमान, उपमेय, सामान्य धर्म और उपमासूचक शब्द। जिसमें चारो अङ्ग रहते हैं, उसे पूर्ण और एक, दो या तीनके अभावसे लुप्त उपमा कहते हैं।

उपमाक—मन्द्राज प्रान्तके विशाखपत्तन जिलेकी सर्वसिद्धि तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० १७° २५′ उ० और द्राघि० ८२° ८६′ पू० पर अवस्थित है। यहां एक अति प्राचीन देवमन्दिर बना है। उसमें ईश्वरकी आकाशमूर्ति है। इसीसे किसीको उसका दर्शन नहीं मिलता। फाल्गुन मासमें देवताके विवाहोप-

लक्षमें महोत्सव होता है। कितने ही लोग यहां विवाह करने आते हैं। प्रवाद है—उपमाकमें विवाह करनेसे स्त्री पतिव्रता और सौभाग्यशालिनी होती है।

उपमाता, उपमातृ देखो।

उपमाति (सं० स्त्री०) १ आमन्त्रण, पुकार। २ उपमा, मुशाबहत। (सायण) (पु०) ३ मित्रवत् आगमन, दोस्तकी तरह आनेकी बात। ४ अनुगृहीतावस्था, एहसानमन्दी। ५ अग्नि। ६ धन प्रदान, दौलत देनेका काम। (सायण)

उपमातिवनि (सं० त्रि०) १ मित्रवत् प्रार्थना सुननेवाला, जो दोस्तकी तरह पुकार पर कान लगाता हो। २ शत्रुनाशक, दुश्मन्को बरबाद करनेवाला। (सायण)

उपमातृ (सं० स्त्री०) उपमिता माता। १ धात्री, दाई। २ मातृतुल्या स्त्री, माकी बराबर दूसरी औरत, जैसे—मौसी, चाची इत्यादि। (पु०) ३ चित्रकार, मुसव्वर; तस्वीर बनानेवाला शख्स। (त्रि०) उप-मा-तृच्। उपमा देनेवाला, जो मुशाबहत लगाता हो।

उपमाद (वै० त्रि०) उपमादयति, उप-मा भावे ल्युट्। उपमादक, हर्षजनक।

"उपनादमुपमादनं यज्ञम्।" (ऋग्भाष्ये सायण ३।५।५)

उपमाद्रव्य (सं० क्ली०) उपमामें व्यवहृत होनेवाला वस्तु, जो चीज़ मुशाबहतमें काम आती हो।

उपमान (सं० क्ली०) उप-मीयतेऽनेन, उप-मा भावे ल्युट्। १ प्रमाणविशेष, एक सुबूत। २ सादृश्य, बराबरी। उप-मा करणे लुट्। यह तीन प्रकारका होता है—सादृश्यविशिष्ट, असाधारण धर्मविशिष्ट और वैधर्मविशिष्ट पिण्डज्ञान। (सिद्धान्तचन्द्रोदय) ३ सादृश्यके ज्ञानका साधन, बराबरीकी समझका सामान्। जिसके साथ उपमा देते हैं, उसे उपमान कहते हैं।

उपमानोपमेयभाव (सं० पु०) उपमान और उपमेयका सम्बन्ध, जो ताल्लुक मुशाबहतको छोटी और बड़ी चीज़में हो।

उपमारण (वै० क्ली०) उप-मृ-णिच्-लुट्। यज्ञमें अवभृथोदक, निकटसे हृतमें जलका निक्षेप।

(शतपथब्रा० २।५।५।४६)

उपमारूपक (सं० क्ली०) उपमा अलङ्कारका उपचार, मुशाबहतकी सूरत।

उपमालिनी (सं० स्त्री०) अति-शक्वरी छन्दका एक भेद।

उपमास्य (वै० क्ली०) उपमासं प्रतिमासभवं यत्। पितृवर्गकी तृप्तिके लिये प्रतिमास करणीय श्राद्ध। (अथर्ववेद ८।१०।१९)

उपमित् (वै० त्रि०) उप समीपं मीयते क्षिप्यते, उप-मि-क्विप्। १ उपनिखात। २उपस्थापयिता। ३ उपमाकारी। (स्त्री०) ४ स्थूणा।

'उपमित् स्थूणा।' (ऋग्भाष्ये सायण ४।५।१)

उपमित (सं० त्रि०) उप-मा-क्त। सदृश, बराबर, जो मिलाया गया हो।

उपमिति (सं० स्त्री०) उप-मा-क्तिन्। १ उपमालङ्कार, मुशाबहत। २ नैयायिकके मतसे—अनुभवसिद्ध जातिविशेष। (नीलकण्ठी) संज्ञा एवं संज्ञीके सम्बन्धका ज्ञान। (तर्कसंग्रह) सादृश्यके ज्ञानकरणका ज्ञान। (न्यायमञ्जरी)

उपमीमांसा (सं० स्त्री०) अन्वेषण, खोज।

उपमूल (सं० अव्य०) मूलपर, जड़में।

उपमेत (सं० पु०) उपमां इतः। शालवृक्ष, साखूका पेड़।

उपमेय (सं० त्रि०) १ उपमीयतेऽसौ, उप-मा-यत्। सादृश्य-योग्य, मुशाबहतके काबिल, जो किसीसे मिलाया जा सकता हो। "नवेन्दुना तन्नभसोपमेयम्।" (रघु०) (क्ली०) २ उपमाका विषय, मुशाबहतकी चीज़। जब दो वस्तुमें उपमा लगाते है, तब बड़ेको उपमान और छोटेको उपमेय कहते हैं। जैसे—'भूपतिकी कीर्ति हंसोकी तरह स्वर्गनदीका अवगाहन करती है' इस वाक्यमें हंसी उपमान और कीर्ति उपमेय है।

उपमेयोपमा (सं० स्त्री०) अर्थालङ्कार विशेष। इसमें उपमानको उपमेय और उपमेयको उपमानसे उपमा दी जाती है।

उपयज् (वै० स्त्री०) उप-यज् उपपदे छन्दसि विच्। विजुपे छन्दसि। पा ३।२।७३। पशुयागाङ्ग यज्ञविशेष।

(शतपथब्रा० ३।८।४।४)

उपयन्ता, पयन्तृ देखो।

उपयन्तृ (सं॰ पु॰) उप-यम-तृच्। १ पति, खाविन्द। (त्रि॰) २ संयमनकर्ता, अपनेपर क़ाबू रखनेवाला।

उपयन्त्र (सं॰ क्ली॰) उपगतं यन्त्रम्। शल्योद्धरणार्थ यन्त्रविशेष, जिसमें चुभे कांटे वग़ैरहके निकालनेका एक औज़ार। यह २५ प्रकार होता है—१ रज्जु, २ वेणिका, ३ पट्ट, ४ चर्म, ५ अन्तर्वल्कल, ६ लता, ७ वस्त्र, ८ अष्ठील, ९ अश्म, १० मुद्गर, ११ पाणि, १२ पादतल, १३ अङ्गुलि, १४ जिह्वा, १५ दन्त, १६ नख, १७ मुख, १८ केश, १९ अश्वकटक, २० शाखा, २१ ष्ठीवन, २२ प्रवाहणहर्ष, २३ अयस्कान्त, २४ क्षार और २५ अग्नि। देह, देहके प्रत्यङ्ग, सन्धिस्थान, कोष्ठ और धमनीमें जहां जिसका प्रयोजन पड़े, वहां उसीको व्यवहार करे। (सुश्रुत सूत्रस्थान ७ अ॰)

उपयम (सं॰ पु॰) उप-यम-अप्। यमः समुपनिविषु च। पा ३।३।६३। विवाह, शादी, मंगनी। विवाह देखो।

उपयमन (सं॰ क्ली॰) उप-यम-ल्युट्। निल' हस्ते पाणावुपयमने। पा ४।४।७७। १ विवाह, शादी। २ संयमन, रोक। ३ अग्निका अधःस्थापन। करणे ल्युट्। ४ बन्धनसाधक कुशादि।

उपयमनी (सं॰ स्त्री॰) उपयम्यते, कर्मणि ल्युट्-ङीप्। १ अग्न्याधानाङ्ग सिकतादि, जलानेकी लकड़ी रखनेका पत्थर, मट्टी, कङ्कड़ वग़ैरहकी टेक। "योपयमनी ते अग्निकपाले। (ऐतरेयब्रा॰ १।२२) २ संयमनी, अपनेपर क़ाबू रखनेवाली औरत।

उपयष्टृ (वै॰ पु॰) उप-यज-तृच्। षोड़श प्रकारके मध्य प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विग् विशेष। (शतपथब्रा॰ ३।८।३।५)

उपयाचक (सं॰ त्रि॰) उप-याच्-ण्वुल्। स्वयं याचक, नज़दीक जाकर मांगनेवाला।

उपयाचन (सं॰ क्ली॰) उप-याच्-ल्युट्। देवतादिके निकट अभीष्टादिकी प्रार्थना, किसीके पास पहुंचकर अपनी मुरादकी दरखास्त।

उपयाचिका (सं॰ स्त्री॰) परपुरुषके निकट पहुंच सम्भोगको प्रार्थना करनेवाली स्त्री, जो औरत दूसरे मर्दसे सहबतके लिये दरखास्त करती हो।

उपयाचित (सं॰ त्रि॰) उपयाच्यतेऽनेन, उप-याच्-क्त। १ प्रार्थित, मांगा हुआ। २ समर्पित, दिया हुआ। (क्ली॰) ३ प्रार्थना, अर्ज़।

उपयाचितक (सं॰ त्रि॰) उप-याचित-कन्। १ अभीष्टकी सिद्धिके लिये देवतादिको देय। २ प्रार्थित, मांगा हुआ। (क्ली॰) ३ देवदेय वस्तु, देवता पर चढ़ायी जानेवाली चीज़।

उपयाज (सं॰ पु॰) उप-यज-घञ्, यज्ञाङ्गत्वात् न कुत्वम्। १ यज्ञाङ्ग यागविशेष। यह ११ प्रकारका होता है। "एकादश प्रयाजा एकादशानुयाजा एकादशोपयाजा एतेह सोमपाः पशुभाजनाः।" (ऐतरेयब्रा॰ २।१८) २ काश्यपगोत्रके ऋषिविशेष। इनके ज्येष्ठभ्राताका नाम याज था। (भारत आदि १६९ अ॰)

उपयात (सं॰ त्रि॰) उप-या कर्तरि क्त। १ आचार्यके समीप आगत, आया हुआ।

"उपयातायार्घ्यमिति कौहलीया।" (गोभिल)

२ प्राप्त, पहुंचा हुआ।

उपयान (सं॰ क्ली॰) उप-या-ल्युट्। निकटमें गमन, पास जवाई। "उपयानापयाने च स्थानं प्रत्यपसर्पणम्।" (रामायण)

उपयाम (वै॰ पु॰) उप-यम विकल्पे घञ्। यमः समुपनिविषु च। पा ३।३।६३। १ विवाह, शादी। उपयम-णिच्-अच्। २ यज्ञाङ्गपात्रविशेष, चम्मच, डोई। (शुक्लयजुः ७।४) ३ यज्ञाङ्गके पात्रविशेष द्वारा ग्रहण। ४ वेदमन्त्रविशेष। यह यज्ञाङ्गके पात्र विशेष द्वारा सोमरस निकालते समय पढ़ा जाता है।

उपयिचारिक (सं॰ पु॰) विहारके रक्षणार्थ नियुक्त पुरुष।

उपयुक्त (सं॰ त्रि॰) उप-युज-क्त। १ योग्य, वाजिब। २ भुक्त, लिया हुआ, जो खाया गया हो। ३ रचित, बनाया हुआ।

उपयुक्तता (सं॰ स्त्री॰) योग्यता, मुनासिबत।

उपयुञ्जात (सं॰ त्रि॰) उपयुक्त करता हुआ, जो ठीक-ठाक लगा रहा हो।

उपयुयुत्सु (सं॰ त्रि॰) नियुक्त करनेवाला, जो लगानेके करीब हो।

उपयोक्तव्य (सं॰ त्रि॰) नियुक्त किये जानेके योग्य, जो लगाया जा सकता हो।

उपयोग (सं॰ पु॰) उप युज्यते, युज्-घञ्। १ आच-

रण, चालचलन। २ भोजन, खवाई। "पर्य्यागते मदनफल-मज्जवदुपयोग:।" (सुश्रुत) ३ साहाय्य, मददका काम। "अनङ्गलेखक्रिययोपयोगम्।" (कुमार) ४ इष्टसिद्धिके लिये धर्मकार्य। ५ आवश्यकता, ज़रूरत। ६ भोग, इस्तेमाल। ७ औषधक्रिया, दवाका काम। ८ औषध-सेवन, दवाका इस्तेमाल।

उपयोगवाद (सं० पु०) सिद्धान्त विशेष, एक मक़ूला। उपयोगवादियोंके कथनानुसार मनुष्य ऐसा कोई कार्य न करे, जिससे किसी जीवको दुःख हो।

उपयोगिता (सं० स्त्री०) उपयोगिन्-तल्। १ आवश्य-कता, ज़रूरत। २ कार्यकारिता, काबिलियत। ३ साहाय्य, मदद। ४ उपयुक्तता, मुनासबत।

उपयोगिन् (सं० त्रि०) उप-युज-घिणुन्। युजाक्रीड़विवि-चत्यजरजभजातिचरापचरामुषाभ्योऽनस्य। पा ३।२।१४२। १ उपयुक्त, मुवाफ़िक़। २ उपकारी, फ़ायदेमन्द। ३ अनुकूल, मिला हुआ। ४ योग्य, ठीक। ५ कार्यकारक, कारामद।

उपयोजन (सं० क्ली०) १ अश्वसज्जीकरण, घोड़ा जोतनेका काम। २ जोत, जोड़ी।

उपयोज्य (सं० त्रि०) उपयोगमें लाने योग्य, जो काम आ सकता हो।

उपयोष (सं० अव्य०) आनन्द। खुशी खुशी।

उपर (वै० त्रि०) वप-करण। १ स्थापित, रखा हुआ। "उपह्वरे यदुपरा: अपिन्वन्।" (ऋक् १।६२।५) 'उपरा उप्ता: स्थापिता:।' (सायण) २ उपरत, बन्द। 'उपरा उपरता:।' (ऋग्भाष्ये सायण ५।२८।५) ३ उपरि कालोत्पन्न, पिछले वक्त पैदा हुआ। 'उपवास: यजमान जन्मन उपर्युत्पन्ना:।' (सायण) (पु०) ४ निम्नप्रस्तर, नीचेका पत्थर। इसपर सोमको रख कर दूसरे पत्थरसे पीसते हैं। ५ यज्ञके स्थानका निम्न भाग। ६ मेघ, बादल।

उपरक्त (सं० पु०) उप-रन्ज-क्त। १ राहु, पुच्छल तारा। २ राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य, पुच्छल तारेसे दबा हुआ चांद या आफ़ताब। (त्रि०) ३ व्यसना-सक्त, बुरी आदतमें पड़ा हुआ। ४ रञ्जित, रंगा हुआ। ५ पीड़ा-युक्त, तकलीफ़ज़दा।

उपरक्षक (सं० त्रि०) उप-रक्ष-ण्वुल्। सैन्यके समी-पका रक्षक, फ़ौजके पास पहरा देनेवाला।

उपरक्षण (सं० क्ली०) उप-रक्ष-ल्युट्। १ रक्ष-णार्थ सैन्य स्थापन, रखवालीके लिये फ़ौजका क़याम। २ रक्षाकरण, रखवाली। ३ चौकी, पहरा देनेवाले सिपाहियोंके रहनेकी जगह।

उपरचित (सं० त्रि०) निर्मित, बनाया हुआ, जो तैयार कर लिया गया हो।

उपरञ्जक (सं० त्रि०) उप-रञ्ज-ण्वुल्। उपराग कारक, रंग चढ़ा देनेवाला।

उपरञ्जन (सं० क्ली०) उपरागकरण, रंगसाज़ी।

उपरञ्जनीय, उपरञ्ज्य देखो।

उपरञ्ज्य (सं० त्रि०) उपराग योग्य, रंग चढ़ाने लायक़।

उपरत (त्रि) उप-रम-क्त। १ हटा हुआ, निकला हुआ। २ निवृत्त, छुटकारा पाये हुआ। ३ मृत, गया-गुज़रा।

"पितर्युपरते पुत्रा विभजेयुर्धनं पितु:।" (दायभाग)

४ उपरतियुक्त, मुहब्बतसे अलग रहनेवाला।

उपरतरास (सं० त्रि०) नृत्य तथा क्रीड़ासे निवृत्त, जो नाचकूद बन्द कर रहा हो।

उपरतविषयाभिलाष (सं० त्रि०) सांसारिक सुखकी इच्छासे निवृत्त, जो दुनियावी आराम चाहता न हो।

उपरतस्पृह (सं० त्रि०) इच्छाशून्य, लालच छोड़े हुआ।

उपरतात् (सं० अव्य०) मण्डलके मध्य, घेरेमें।

उपरताति (वै० स्त्री०) उपरतताय कर्मणि क्तिन्, वेदे लस्य र:। १ युद्ध। 'उपरैरुपलै: पाषाणतुल्यै:, शरैस्तायते विस्तीर्यते उपरताति युद्धम्।' (सायण) २ मेघकरका द्वारा आच्छाद्य अन्तरीक्ष। "तरन्ति ता उपरताति।" (ऋक् १०।५१।५)

उपरतारि (सं० त्रि०) शत्रुशून्य, सबसे दोस्ती रखनेवाला।

उपरति (सं० स्त्री०) उप-रम-क्तिन्। १ विरति, बन्दी। २ वासनात्याग, आराम छोड़नेका काम। ३ वैराग्य, दुनियासे मुहब्बत न रखनेकी बात। ४ सन्यास।

"बाह्यानालम्बनं वृत्तेरेषोपरतिरुत्तमा।" (विवेकचूड़ामणि)

जो वृत्ति किसी प्रकार बहिर्विषयका अवलम्बन

नहीं रखती, वही उपरति है। ५ निवारण, हटा देनेका काम। ६ बुद्धि, अक्ल। ७ मृत्यु, मौत।

उपरत्न (सं० क्लो०) उपमितं रत्नमेव। गौणरत्न, दूसरे दरजेका जवाहिर।

"उपरत्नानि काचश्च कर्पूरोऽश्मा तथैव च।
मुक्ता शुक्तिस्तथा शङ्ख इत्यादीनि बहून्यपि॥
गुणा यथैव रत्नानामुपरत्नेषु ते तथा।
किन्तु किञ्चित्ततो हीना विशेषोऽयमुदाहृतः॥" (भावप्रकाश)

काच, कपूर, प्रस्तर, मुक्ता, शुक्ति, शङ्ख इत्यादि उपरत्न हैं। उपरत्नमें रत्नकी तरह गुण होते भी वे कुछ कम रहते है। काच प्रभृति देखो।

उपरना (हिं० पु०) १ ऊपरी वस्त्र, दुपट्टा चद्दर। (क्रि०) २ उत्पाटित होना, उखड़ पड़ना।

उपरन्ध्र (सं० क्लो०) अश्वके उदरगह्वरका उपरि भाग, घोड़ेके पेटवाले गड्ढेका ऊपरी हिस्सा।

उपरफट (हिं० वि०) अनावश्यक, बेमतलब, जो कारामद न हो।

उपरफट्टू, उपरफट देखो।

उपरम (सं० पु०) उप-रम-घञ् निपातनात् न वृद्धिः। १ निवृत्ति, बन्दी। २ निवारण, परहेज्गारी। ३ मृत्यु, मौत।

उपरमण (सं० क्लो०) १ वैराग्य, दुनयावी चीजोंसे तबीयत हट जानेकी बात। २ निवृत्ति। ३ बन्दी।

उपरव (सं० पु०) उप-रु आधारे घञ्। गर्ताकार प्रदेश, आवाज्का गड्डा। यह सोमके अभिषवका एक अङ्ग है। (शतपथब्रा० ३।५।४।१—१३)

उपरवार (हिं० स्त्री०) उच्चभूमि, बांगर ज़मीन्।

उपरस (सं० पु०) उपमितो रसेन। गौणरस, उपधातु, दूसरे दरजेकी कानी शै। राजनिघण्टुके मतसे पारद, अञ्जन, कङ्कुष्ठ, सिन्दूर, गैरिक, चितिज और शैलेयको उपरस कहते हैं। भावप्रकाश कङ्कुष्ठ, गैरिक, शङ्ख, कासीस, सोहागा, नीलाञ्जन, शुक्ति और वराटकको उपरस बताता है। प्रत्येक शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

उपरहित (हिं०) पुरोहित देखो।

उपरहिती (हिं० स्त्री०) पौरोहित्य देखो।

उपरांठा (हिं० पु०) परांठा, घी लगा लगाकर सिर्फ् तवेपर सेकी हुई रोटी।

उपरा (हिं० पु०) वृत्ताकार उत्पल, गोल गोल कण्डा।

उपराग (सं० पु०) उप-रन्ज-घञ्। १ राहुग्रस्त चन्द्र। २ राहुग्रस्त सूर्य। ३ राहु। ४ विगान, कोटा राग। ५ दुर्णय, बदचलनी। ६ परीवाद, बदनामी। ७ ग्रहकल्लोल, सितारोंकी लहर। ८ व्यसन, आदत। ९ सम्बन्ध, ताल्लुक्। १० निन्दा, हिक़ारत। ११ प्रवृत्ति, तरग़ीब। १२ गौणरूप, झाईं।

उपराचढ़ी (हिं० स्त्री०) अहमहमिका, चढ़ा-बढ़ी, ले-दे। जब कुछ मनुष्य कोई काम करने चलते और उनमें सबके सब उत्कर्ष पानेके लिये हाथ मलते है, तब उस अवस्थाको उपराचढ़ी कहते हैं।

उपराज (सं० पु०) १ राजाके अधीनस्थ राजतुल्य माननीय व्यक्ति, राजप्रतिनिधि, नायब-उल्-सलनत, वायसराय। (अव्य०) २ राजाके निकट, बादशाहके पास। (वि०) ३ राजतुल्य, बादशाह जैसा।

उपराजना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, जनमाना। २ निर्माण करना, बनाना। ३ उपार्जन करना, कमाना।

उपराना (हिं० क्रि०) १ उन्नमन करना, ऊपर चढ़ना। २ प्रकट होना, देख पड़ना। ३ सन्तरण करना, उतराना।

उपरान्त (सं० अव्य०) अनन्तर, बाद, पीछे।

उपराम (सं० पु०) उप-रम-घञ् वा वृद्धिः। १ उपरति, परहेज। २ मृत्यु, मौत। ३ विवृत्ति, छुटकारा। ४ सन्न्यास। (अव्य०) ५ रामसमीप, रामके पास।

उपराला (हिं० पु०) साहाय्य, मदद।

उपरावटा (हिं० वि०) अभिमानी, अकड़बाज, घमण्डसे सर उठाये हुआ।

उपराही (हिं० वि०) १ उपरिस्थ, ऊपरवाला। (क्रि० वि०) २ ऊपर।

उपरि (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-रिल उपादेशश्च।

"ऊर्ध्वस्य उपभावो रिल्रिष्टातिलौ च।" (पा ३।३।३२ सूत्रे वार्तिक)

१ ऊर्ध्व, ऊपर। २ अनन्तर, बाद।

उपरिचर (सं० पु०) पुरुवंशके एक राजा। दूसरा नाम वसु भी है। ये सर्वदा मृगयासक्त रहते थे। इन्द्रके उपदेश-क्रमसे इन्होंने चेदि राज्यपर अधिकार किया। इन्द्रने इन्हें स्फटिकके बने विमान और वैजयन्तीकी मालाका उपहार दिया था।

उपरिचर इन्द्रध्वज पूजाके प्रवर्तक हैं। विमानपर चढ़ आकाशपथमें चलने और ऊपर घूमनेसे उपरिचर नाम पड़ा है। इनके महाबलपराक्रान्त १म बृहद्रथ अथवा महारथ, २य प्रत्यग्रह, ३य कुशाम्ब वा मणिवाहन, ४र्थ मावेल्ल और ५म यदु पांच पुत्र हुये थे। इनमें जो जिस देशमें अभिषिक्त हुआ, वह देश उसीके नामसे पुकारा गया।

उपरिचरकी राजधानीके निकट शुक्तिमती नदी बहती थी। इन्होंने कोलाहल नामक एक पर्वत तोड़ डाला। शुक्तिमती नदी पर्वतके उसी विदीर्ण पथसे निकली थी। उसी पर्वतमें एक पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। शुक्तिमतीने पुत्रकन्याको उठा राजाके हाथपर रखा था। पुत्र सेनानीके कार्यमें लगा। यथाकालपर गिरिबाला गिरिकाने ऋतुस्नाता और शुचि हो अपनी अवस्था राजासे कही। उसी दिन राजाको पितृलोकगणने मृगया करनेके लिये आदेश दिया। राजा उनकी आज्ञाके क्रमसे मृगयार्थ निकले, किन्तु अलोकसामान्या रूपलावण्यवती गिरिकाको भूल न सके और उसी रमणीय वसन्त कालपर वनमें घुसे। मृगयाकी बात मनसे उतर गयी थी। गिरिकाके विरहसे नितान्त अधीर हो राजा इतस्ततः घूमते-घूमते किसी तरुमूल पर जा बैठे। उसी स्थानमें इनका रेतस्खलन हुआ। राजाने यत्नपूर्वक अपना रेतः शोधनकर एक श्येनपक्षीको देते कहा—तुम इसे लेकर हमारी महिषीको सौंप आवो। श्येनपक्षी रेतः ले आकाशके पथसे उड़ा और उसी समय किसी अपर श्येनने चञ्चुस्थित रेतःको मांस समझ आक्रमण किया। उभयके विवादमें रेतः चञ्चुसे छूट यमुनाके जलमें गिर गया। मत्स्यरूपा अद्रिकाने वह रेतः खा लिया। दशमास बाद किसी धीवरने उसी मत्स्यीको पकड़ा था। मत्स्यीके उदरसे एक कन्या और एक पुत्र दो बच्चे निकले। मत्स्यजीवी यह अद्भुत व्यापार देख चमत्कृत हुये। उन्होंने कन्या और पुत्र दोनोंको उठा उपरिचरके सम्मुख जा रखा। राजाने उक्त कन्या और पुत्र दोनोंको ग्रहण किया था। पुत्रका मत्स्यराज और कन्याका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा। यह मत्स्यगन्धा व्यासदेवकी जननी थीं। (भारत आदि ६२ अ०)

उपरिचित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर संगृहीत, ऊपर जमा किया हुआ।

उपरिज (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर उत्पन्न होनेवाला, ऊंचा, जो ऊपर निकल गया हो।

उपरितन (सं० त्रि०) ऊर्ध्वस्थित, ऊपरवाला।

उपरिनिहित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वः-स्थापित, ऊपर रखा हुआ।

उपरिपुरुष (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर पुरुषयुक्त, जिसके ऊपर मर्द रहे।

उपरिप्रुत् (सं० त्रि०) ऊर्ध्वसे आगमन करनेवाला, जो ऊपरसे आ रहा हो।

उपरिबुध्न (सं० त्रि०) भूमिपर उठाया हुआ, जो जमीन् पर खड़ा किया गया हो।

उपरिभाग (सं० पु०) ऊर्ध्व पार्श्व, ऊपरी हिस्सा।

उपरिभाव (सं० पु०) ऊर्ध्व अवस्थान, ऊपर रहनेकी हालत।

उपरिभूमि (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व भूमि, ऊपरी जमीन्।

उपरिमर्त्य (सं० पु०) मानवके ऊर्ध्वपर स्थित, जो आदमीके ऊपर हो।

उपरिमेखला (सं० पु०) गोत्रके प्रवर्तक एक ऋषि।

उपरिबृहती (सं० स्त्री०) वैदिक बृहतीच्छन्दोविशेष। बृहती देखो।

उपरिशयन (सं० क्ली०) विश्रामस्थान, आरामगाह।

उपरिश्रेणिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहनेवाला, जो ऊपरी कतारमें हो।

उपरिष्ट (सं० क्ली०) परांठा, घी लगा लगाकर तवेपर सेंकी हुई रोटी।

उपरिष्टाज्ज्योतिष्मती (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोवृत्तिका एक भेद। ज्योतिष्मती देखो।

उपरिष्टाज्ज्योतिस् (सं० स्त्री०) त्रिष्टुभ् छन्दका एक भेद। इसके अन्तिम पादमें आठ अक्षर रहते हैं।

उपरिष्टात् (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-नि० रिष्टातिल्। उपर्युपरिष्टात्। पा ५।३।३१। १ उपरि, ऊपर। २ पश्चात्, पीछे।

उपरिष्टाद्बृहती (सं० त्रि०) वैदिक छन्दोविशेष। इसमें चार पाद पड़ते, जिनसे प्रथममें बारह और अवशिष्ट तीनोंमें केवल आठ आठ अक्षर रहते हैं।

उपरिसद् (सं० त्रि०) उपरि सीदति, सद-क्विप्। १ ऊर्ध्वपर उपवेशन करनेवाला, जो ऊपर रहता हो। (पु०) २ राजसूययज्ञके एक सोमनेत्रक दुवस्वन् नामक देवता। "ये देव सोमनेत्रा उपरिसदो दुवस्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा" (शुक्लयजुः ९।३५)

उपरिसद्य (सं० क्ली०) उपरि-सद भावे बाहुलकात् यत्। ऊर्ध्वपर उपवेशन करनेका भाव, ऊंची बैठक। 'उपरिसद्य अन्तरिक्षसद्यमाकाशे उपवेशनम्।' (शतपथब्राह्मणभाष्य हरिस्वामी ५।२।१।२२)

उपरिस्थ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर रहनेवाला, ऊपरी, जो ऊपर ठहरता हो।

उपरिस्थापन (सं० क्ली०) ऊर्ध्वपर स्थापित किये जानेका भाव, ऊपर रखे जानेकी हालत।

उपरिस्थित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर दण्डायमान, जो ऊपर हो।

उपरिसृप्त (सं० त्रि०) उन्नत किया हुआ, जो चढ़ाया गया हो।

उपरी (हिं० स्त्री०) १ छोटी गोल कण्डी। (वि०) २ ऊपरी।

उपरी-उपरा, उपराचढ़ी देखो।

उपरीतक (सं० पु०) शृङ्गारबन्धन विशेष, सहवासदारी एक बैठक।

"एकपादमुरौ कृत्वा द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम्।
नारी कामयते कामी बन्धः स्यादुपरीतकः॥" (रतिमञ्जरी)

उपरुद्ध (सं० त्रि०) उप-रुध-क्त। १ आवृत, घिरा हुआ। २ प्रतिरुद्ध, रुका हुआ। ३ उत्पीड़ित, सताया हुआ। ४ अनुरुद्ध, समझाया हुआ। ५ रक्षित, हिफाजत किया हुआ।

उपरुध्य (सं० अव्य०) प्रतिरुद्ध करके, रोककर।

उपरुध्यमान (सं० त्रि०) आवृत, जो घेरा जा रहा हो।

उपरुह्य (सं० अव्य०) अवरोहण करके, चढ़कर।

उपरूपक (सं० क्ली०) उपमितं रूपकेन। नाटक विशेष। यह अष्टादश प्रकारका होता है, यथा— १ नाटिका, २ त्रोटक, ३ गोष्ठी, ४ सट्टक, ५ नाट्यरासक, ६ प्रस्थान, ७ लाप्य, ८ काव्य, ९ प्रेङ्खण, १० रासक, ११ संलापक, १२ श्रीगदित, १३ शिल्पक, १४ विलासिका, १५ दुर्मल्लिका १६ प्रकरणी, १७ हल्लीश, १८ भाण।

उपरैना (हिं० पु०) उपरना, चद्दर।

उपरैनी (हिं० स्त्री०) ओढ़नी, पिछौरी।

उपरोक्त (हिं० वि०) उपर्युक्त, जो पहले कहा जा चुका हो।

उपरोध (सं० पु०) उप-रुध-घञ्। १ आवरण, ढकन। २ प्रतिबन्ध, रोक। ३ अनुरोध, समझानेकी बात। ४ पीड़न, तकलीफदिही।

"भृत्यानामुपरोधेन यत् करोत्यौर्ध्वदेहिकम्।
तद्भवत्यसुखोदर्कं जीवतस्य मृतस्य च॥" (मनु ११।१८)
'उपरोधो भक्तवस्त्रादिना यथोपयोगमाहरणम्।' (मेधातिथि)

उपरोधक (सं० क्ली०) उप-रुध-ण्वुल्। १ गर्भागार, तहखाना। २ वासगृह, रहनेका भीतरी कमरा। ३ रस। (त्रि०) ४ उपरोधकर्ता, घेरनेवाला। ५ आवरक, ढांकनेवाला। ६ प्रतिबन्धक, रोकनेवाला। ७ अनुरोधकारी, तरग़ीब देनेवाला।

उपरोधन (सं० क्ली०) प्रतिबन्धन, रोक।

उपरोधिन् (सं० त्रि०) १ प्रतिबन्धन करनेवाला, जो रोकता हो। २ प्रतिबद्ध, रुका हुआ।

उपरोहित (हिं०) पुरोहित देखो।

उपरोहिती (हिं० स्त्री०) पौरोहित्य देखो।

उपरौंछा (हिं० क्रि-वि०) उपरिस्तात्, ऊपरको ओर।

उपरौटा (हिं० पु०) उपरितन भाग, ऊपरी पल्ला।

उपरौठा (हिं० वि०) उपरितन, ऊपरी।

उपरौना, उपरना देखो।

उपर्यासन (सं० क्ली०) जङ्घाके बलस्थिति, जांघके सहारेकी बैठक।

उपयुक्त (सं॰ त्रि॰) उपरिकथित, ऊपर कहा हुआ।

उपल (सं॰ पु॰) उपलाति, उप-ला-क अथवा उ-पल-अच्। १ पाषाण, पत्थर।

"रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्।" (मेघदूत)

२ रत्न, जवाहिर।

उपलक (सं॰ पु॰) पाषाण, पत्थर।

उपलक्ष (सं॰ पु॰) उपलक्षण देखो।

उपलक्षक (सं॰ त्रि॰) उप-लक्ष-ण्वुल्। १ उद्भावक, अन्दाज़ लगानेवाला। २ उपादानके लक्षणसे इतर-बोधक, ज़ाती आसारसे दूसरेको बतानेवाला। ३ दर्शक, देखनेवाला।

उपलक्षण (सं॰ क्ली॰) उप-लक्ष करणे ल्युट्। १ अजहत्स्वार्थालक्षणा, शाब्दिक शक्तिविशेष। अपने जैसे दूसरे वस्तुको भी बता देना उपलक्षण कहलाता है। अजहत्स्वार्था देखो। २ अन्यका उद्बोधक लक्षण, निशान्। ३ विशेषण, सिफ़त। ४ दर्शन, देख-भाल। ५ ध्यान, ख़याल।

उपलक्षणत्व (सं॰ क्ली॰) चिह्न रहनेका भाव, निशान् पड़ जानेकी हालत।

उपलक्षयितव्य (सं॰ त्रि॰) चिह्नसे समझा जानेवाला, जो आसारसे देख पड़ता हो।

उपलक्षित (सं॰ त्रि॰) चिह्नसे प्रकाशित, निशान्से समझा हुआ।

उपलक्ष्य (सं॰ पु॰) १ अवलम्बन, टेक। २ प्रयोजन, मतलब। ३ उद्देश्य, असली बात। ४ प्रमाण, सुबूत, हवाला। (त्रि॰) ५ प्रमाण दिये जाने योग्य, जो हवाला दिये जानेके लायक़ हो।

उपलधिप्रिय (सं॰ पु॰) उपलधिः प्रियो यस्य। चमर नामक जन्तु। चमर देखो।

उपलब्ध (सं॰ त्रि॰) उप-लभ-क्त। १ प्राप्त, मिला हुआ। २ ज्ञात, समझा हुआ। ३ विचारा हुआ, जो ख़याल करनेके क़ाबिल हो।

उपलब्धसुख (सं॰ त्रि॰) सुख उठाये हुआ, जो आराम उठाये हो।

उपलब्धार्थ (सं॰ त्रि॰) अर्थ समझा हुआ, जो मतलब पा चुका हो।

उपलब्धार्था (सं॰ स्त्री॰) उपलब्धः अर्थो यस्याः। आख्यायिका, सच्ची कहानी।

उपलब्धि (सं॰ स्त्री॰) उप-लभ-क्तिन्। १ ज्ञान, समझ। २ मति, अक़्ल। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ अनुमान, अन्दाज़।

उपलब्धिमत् (सं॰ त्रि॰) समझ पड़ने योग्य, जो ख़यालमें आ सकता हो।

उपलभित् (सं॰ पु॰) पाषाणभेदक, पथरचटा।

उपलभेद, उपलभेदिन् देखो।

उपलभेदिन् (सं॰ पु॰) पाषाणभेदी वृक्ष, पथरचटा। (Plectranthus aromaticus) वैद्यकशास्त्रके मतसे इसका पर्यायशब्द—श्वेता, पलभित्, शिलगर्भज, अश्मभेदी, शिलाभेद, नगभिन्नक, भेदक, अश्मघ्न, गिरिभित्, भिन्नयोजिनी और पाषाणभेद है। यह शीतल, तिक्त, तीक्ष्ण, कषाय, वस्तिशोधक एवं भेदक होता और अर्श, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, हृद्रोग, पथरी, योनिरोग, प्रमेह, प्लीहा, शूल, व्रण तथा वातादिको नाश करता है। उपलभेदी वृक्ष भारतके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है।

उपलभ्य (सं॰ त्रि॰) उप-लभ कर्मणि यत्। १ प्राप्य, मिलनेवाला। (रघु ७।२८) २ ज्ञेय, समझा जाने लायक़। (अव्य॰) ३ ज्ञानके साथ, समझकर।

उपलभ्यमान (सं॰ त्रि॰) समझा जानेवाला, जो मालूम किया जा रहा हो।

उपलम्भ (सं॰ पु॰) उप-लभ-घञ्-नुम्। लभेश्च। पा ७।१।६४। १ अनुभव, समझ। "सोऽहमविघ्नक्रियोपलम्भाय धर्मारण्यमिदमायातः।" (शकुन्तला) २ लाभ, फ़ायदा।

उपलम्भक (सं॰ त्रि॰) उप-लभ-घञ्-नुम्-कन्। अनुभावक, ख़याल करनेवाला।

उपलम्भन (सं॰ क्ली॰) अनुभव, ख़याल।

उपलम्भ्य (सं॰ त्रि॰) उप-लभ-ण्यत्-नुम्। उपात् प्रशंसायाम्। पा ७।१।६६। १ स्तव्य, तारीफ़के क़ाबिल। २ प्राप्य, मिल सकनेवाला।

उपलवीरुत् (सं॰ स्त्री॰) गुल्मिनी, खूब फैलनेवाली बेल।

उपला (सं॰ स्त्री॰) उप-ला-क-टाप्। १ शर्करा,

चीनी। २ बालुका, बालू। ३ प्रस्तरमय भूमि, पथरीली ज़मीन्।

उपलाख्यक (सं॰ पु॰) दद्रुघ्नवृक्ष, चकौड़िया।

उपलालिका (सं॰ स्त्री॰) तृष्णा, प्यास।

उपलासिता (सं॰ स्त्री॰) खटीशर्करा, खड़ियामट्टी।

उपलिङ्ग (सं॰ क्ली॰) उप-लिन्ग-घञ्। उपसर्ग, बदशिगूनी।

उपलिप्त (सं॰ त्रि॰) लेपनयुक्त, चुपड़ा हुआ।

उपली (हिं॰ स्त्री॰) छोटी गोल कण्डी।

उपलेप (सं॰ पु॰) उप-लिप-घञ्। १ गोमयादि द्वारा लेपन, लिपाई। २ प्रतिबन्धन, रोक। ३ सकल इन्द्रियोंका अवसादन, सुस्त पड़ जानेकी हालत।

उपलेपन (सं॰ क्ली॰) १ गोमयादि लेपन, लीपने-पोतनेकी चीज़। २ लेपनकार्य, लिपाई।

उपलेपिन् (सं॰ त्रि॰) १ लेपनका कार्य देनेवाला, जो चुपड़नेके काम आता हो। २ लेपन करनेवाला, जो लीपता हो।

उपलोह (सं॰ क्ली॰) स्वर्णादि धातु विशेष, सोना वगैरह कानी शै। स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, नाग, रस, कान्त, तीक्ष्णक, मुण्डान्त, अष्टधा लौह, कांस्यार और घोषकको उपलोह कहते हैं। (वैद्यकरत्नसंग्रह)

उपवक्तृ (वै॰ पु॰) उपवक्ति उपदिशति, उप-वच-तृच्। १ यज्ञका पर्यावेक्षक ऋत्विग् विशेष। यह यज्ञके तत्त्वका अवधान करता है। २ सदस्य।

'उपवक्ताऽध्वर्युप्रभृतीनां सर्वेषां कर्मणामुक्तार्थमिदं प्रणयेत्यादि-रूपस्य वाक्यस्य वक्ता सन् ब्रह्मासि सर्वेषां कर्मणामवेक्ष्यार्थमुपद्रष्टा सदस्यो वासि।' (वेदार्थप्रकाशे सायण)

उपवङ्ग (सं॰ पु॰) उपगतो वङ्गम्। वङ्गदेशके समीपस्थ एक जनपद। (वृहज्जातक १४.८)

उपवट (सं॰ पु॰) १ प्रियालवृक्ष, प्याजका पेड़। २ चारवृक्ष, तोखिका पेड़।

उपवन (सं॰ क्ली॰) उपमितं वनेन। १ लघुवन, छोटा जङ्गल। २ उद्यान, बाग। आराम देखो। (अव्य॰) ३ वन समीप, जङ्गलके पास।

उपवनस्थ (सं॰ पु॰) १ तुरुष्क। (त्रि) २ उद्यान-स्थित।

उपवना (हिं॰ क्रि॰) अदृश्य होना, गुम पड़ना, पड़ चलना।

उपवर्ण (सं॰ पु॰) सूक्ष्मकथन, कैफियत।

उपवर्णन (सं॰ क्ली॰) उप-वर्ण-ल्युट्। सम्यक् कीर्तन, खासा बयान्।

उपवर्णित (सं॰ त्रि॰) सम्यक् कथित, खूब बयान् किया हुआ।

उपवर्ण्य (सं॰ त्रि॰) १ वर्णनके योग्य, बयान किये जाने लायक्। (क्ली॰) २ उपमान।

उपवर्त (सं॰ पु॰) उच्चसंख्या विशेष, एक बहुत बड़ी अदद।

उपवर्तन (सं॰ क्ली॰) उपागत्य वर्तते अत्र, उप-वृत-ल्युट्। १ जनपद, कसरतकी जगह। २ विभाग, ज़िला या परगना। ३ राज्य, सलतनत।

उपवर्ष (सं॰ पु॰) एकजन प्राचीन आचार्य। ये शङ्करस्वामीके पुत्र और वर्षके कनिष्ठ भ्राता थे। मीमांसाशास्त्रपर इन्होंने कई ग्रन्थ लिखे हैं। प्राचीन प्रवादके अनुसार पाणिनि, कात्यायन और व्याडि प्रभृति वैयाकरणोंके उपवर्ष ही अध्यापक थे।

उपवर्ह (सं॰ पु॰) उप-वृह करणे घञ्। उपधान, तकिया।

उपवर्हण (सं॰ क्ली॰) उपवर्ह देखो।

उपवल्गितनयन (सं॰ त्रि॰) अश्रु द्वारा अन्धीकृत, जो फूट-फूट कर रोया हो।

उपवल्लिका (सं॰ स्त्री॰) अमृतस्रवा लता, अमरबेल।

उपवल्ह (सं॰ पु॰) ईर्ष्या, हसद, डाह।

उपवसथ (वै॰ पु॰) उपगत्य वसन्ति अत्र, उप-वस-अथ। याऽथघञ्क्ताऽजहवितकाणाम्। पा ६।२।१४४। १ ग्राम, गांव। "तेऽस्य विश्वे देवा गृहे नागच्छन्ति तेऽस्य गृहेषूपवसन्ति स उपवसथः।" (शतपथब्रा॰ १।१।१।७) २ सोमयागका पूर्वदिवस। इसमें लोग उपवास करते हैं।

उपवसथीय, उपवसथ्य देखो।

उपवसथ्य (वै॰ त्रि॰) उपवसथके अर्थ व्यावृत्त, जो सोमयज्ञके लिये तैयार किया गया हो।

उपवस्त (सं॰ क्ली॰) उप-वस्तु स्तम्भे उपसृष्टत्वाद-भोजने क्त। उपवास, फाका।

उपवस्ति (सं० स्त्री) उप-वस्त स्तम्भे भावे क्तिन्। स्तम्भ, खम्भा।

उपवस्तृ (सं० त्रि०) उपवास करनेवाला, जो फाकेसे हो।

उपवा (सं० स्त्री०) आध्मान, फूंकफांक।

उपवाक (वै० पु०) उप-वच-घञ् कुत्वम्। १ परस्पर आलाप, बात चीत। "नमस्यन्त इदसुपवाकमीषुः।" (ऋक् १।१६४।१) 'उपवाकमुपेत्य वचनं परस्परवचनम्।' (सायण) उप-वा भावे क्विप् तस्यै कं जलं यत्र। २ यव। 'उपवाकाः यवाः।' (वेददीपे महीधर १९।९०)

उपवाकी (वै० स्त्री०) उपवाक स्त्रियां ङीप्। इन्द्रयव। "वदरैरुपवाकीभिर्भेषजं तोक्मभिः।" (शुक्लयजुः २१।३०)

उपवाक्य (वै० त्रि०) उप-वच कर्मणि यत् कुत्वम्। १ सम्भाषणीय, बात किये जानेके काबिल। (ऋक् १०।६९।१२) २ प्रशस्य, वन्दगी किये जानेके लायक।

उपवाच्य, उपवाक्य देखो।

उपवाजन (सं० क्ली०) वीजन, पङ्खा।

उपवाद (वै० पु०) उप-वद-घञ्। निन्दा, बदनामी।

उपवादिन् (वै० त्रि०) उप-वद-णिनि। निन्दुक, बदनाम करनेवाला। "येऽल्पाः कलहिनः पिशुना उपवादिनः।" छान्दोग्य उ०)

उपवास (सं० पु०) उप-वस-घञ्। भोजनाभाव, फाका, उपास। "उपावृत्तस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह। उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः॥" (भविष्यपु०)

सर्वभोग छोड़ पापकी निवृत्तिके लिये दया, क्षान्ति, धैर्यादि नियमसे रहना उपवास कहलाता है।

उपवास दो प्रकारका होता है, वैध और अवैध। व्रतादिके लिये विधिपूर्वक किया जानेवाला उपवास वैध है। वह चार प्रकारका कहा है—

"सायमाद्यन्तयोरह्नोः सायं प्रातश्च मध्यमे।
उपवासफलं प्रेप्सोर्वर्ज्यं भक्तचतुष्टयम्॥"

उपवासके दिन अञ्जन, गोरोचना, गन्ध, पुष्प, माला, अलङ्कार, दण्डधारण, गात्र वा मस्तकमें तैल प्रोक्षण, ताम्बूल, दिवानिद्रा, अक्षक्रीड़ा, मैथुन और स्त्रीस्पर्शको परित्याग करना चाहिये। पुत्रके अभावमें पुत्रोत्पत्ति पर्यन्त ऋतुकालको स्त्रीगमनसे दोष नहीं लगता। उपवासके पूर्व और पर दिन कांसेके पात्रमें भोजन, मांसभक्षण, सुरापान, मधुसेवन, लोभ, मिथ्याकथा, व्यायाम, स्त्रीसङ्ग, दिवानिद्रा, अञ्जन, मांस, शिलापिष्ट एवं मसूरका भक्षण, पुनरशन, पथभ्रमण, यान, परिश्रम, द्यूतक्रीड़ा, तैलमर्दन, पराम्न, तैल, चणक, कोद्रव-धान्य, शाक, अधिक घृत और अधिक जलपान निषिद्ध है।

उपवासमें असमर्थ होनेसे प्रतिनिधि देना पड़ता है। पुत्र, भगिनी, भ्राता और भार्याके अभावमें ब्राह्मण प्रतिनिधि बनता है। ब्रह्मवैवर्तके मतसे उपवासमें अत्यन्त असमर्थ पड़ने पर एक ब्राह्मणको भोजन करा देना चाहिये।

उपवासक (सं० त्रि०) उप-वास-ण्वुल्। अनाहारी, फाकाकश।

उपवासन (वै० क्ली०) उपवास उपसेवायां भावे ल्युट्। १ उपसेवन, इस्तेमाल। "यदा सन्धासुपधाने यद्वोपवासने कृतम्।" (अथर्व १४।२।२६) २ परिच्छद, पोशाक।

उपवासिन् (सं० त्रि०) उप-वस-णिनि। अनाहारी, फाका करनेवाला।

उपवाहन (सं० क्ली०) उप-वह-णिच् भावे ल्युट्। १ समीपगमन, पासको जवाई। २ ले आने या वापस लानेका काम।

उपवाहिन् (सं त्रि०) किसीकी ओर जानेवाला, जो बहते चला जाता हो।

उपवाह्य (सं० पु०) उप-वह-ण्यत्। १ राजवाहक हस्ती, बादशाहकी सवारी। (क्ली०) २ राजपथ, सरकारी सड़क। (त्रि०) ३ निकट पहुंचाया जानेवाला।

उपविद् (वै० स्त्री०) उपविन्दति, विद्-क्विप्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ ज्ञान, समझ। "उपविदा उपवेदने नैते हवींषि देवार्थं न प्रयच्छन्तीत्येतत् ज्ञानेन" (सायण) ३ अन्वेषण, तलाश। (त्रि०) ४ प्राप्त होनेवाला, जो पहुंच जाता हो। ५ ज्ञाता, समझदार।

उपविद्या (सं० स्त्री०) गौण विद्या, दूसरे दरजेका इल्म।

उपविपाश (सं० अव्य०) विपाशा नदीके समीप।

उपविरस (सं० अव्य०) उपवेशन करके, बैठकर।
उपविष (सं० क्ली०) उपमितं विषेण। १ कृत्रिम विष, बनावटी ज़हर। २ गर, नशीला ज़हर।

"अर्कसेहुण्डधुस्तूरा लाङ्गलीकरवीरकः।
गुञ्जाहिफेनमित्येताः सप्तोपविषजातयः॥" (शार्ङ्गधर)

अर्क, सेहुण्ड, धुस्तुर, लाङ्गली, करवीरक, गुञ्जा और अहिफेन साती उपविष हैं।
उपविषपञ्चक (सं० क्ली०) पांच उपविष, पांच तरहका नशीला ज़हर। स्नुही, अर्क, करवीर, लाङ्गली और कुचेलकको उपविषपञ्चक कहते हैं।
उपविषा (सं० स्त्री०) १ रक्तातिविषा, लाल अतीस। २ अतिविषा, अतीस।
उपविष्ट (सं० त्रि०) उप-विश कर्तरि क्त। आसीन, बैठा हुआ।
उपवीत (सं० क्ली०) उप-वि-इ-क्त। वाम स्कन्धपर स्थापित यज्ञसूत्र, जनेऊ।

"यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौते स्मार्ते च कर्मणि।
तृतीयमुत्तरीयार्थं वस्त्राभावेऽतिदिश्यते॥" (आह्निकतत्त्व)

श्रौत और स्मार्त कार्यमें यज्ञोपवीतका प्रयोजन पड़ता है। वस्त्रके अभावमें यज्ञोपवीतसे उत्तरीयका कार्य चलता है। वर्णके भेदसे उपवीतमें भी भेद रहता है।

"कार्पाससमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्।
शणसूत्रमयं राज्ञो वैश्यस्याविकसौत्रिकम्॥" (मनु २।४४)

ब्राह्मणका ऊर्ध्वभावसे त्रिगुणित कार्पासके, क्षत्रियका शणके सूत्र और वैश्यका यज्ञोपवीत मेषके लोमसे बनता है। यज्ञोपवीत शब्दमें विस्तृत विवरण देखिये।
उपवीर (सं० पु०) दानवविशेष।
उपबृंहण (सं० क्ली०) वृद्धि, बढ़ती।
उपबृंहित (सं० त्रि०) उप-बृन्ह-णिच् कर्मणि क्त। १ उच्छ्वलित, उछला हुआ। २ वर्धित, बढ़ा हुआ।
उपवृत्ति (सं० स्त्री०) उपसर्पण, हरकत, हालन-डोलन।
उपवेणा (सं० स्त्री०) नदीविशेष। यह दक्षिणा-पथस्थ कृष्णा नदीकी एक शाखा समझ पड़ती है।

"वेणोपवेणा भीमा च बड़वा चैव भारत।" (भारत, वन २२१ अ०)

उपवेद (सं० पु०) उपमितः वेदेन। वेदसदृश आयु-र्वेदादि, छोटा वेद। "सर्वेषामेव वेदानामुपवेदा भवन्ति। ऋग्वेदस्यायुर्वेदः यजुर्वेदस्य धनुर्वेद उपवेदः सामवेदस्य गान्धर्ववेद उपवेदः अथर्ववेदस्य शस्त्रशास्त्राणि भवन्ति।" (चरणव्यूह)

सकल ही वेदके उपवेद होते हैं। ऋग्वेदका आयुर्वेद, यजुर्वेदका धनुर्वेद, सामवेदका गान्धर्ववेद और अथर्ववेदका उपवेद शल्यशास्त्र है।

"ऋग्वेदस्यायुर्वेदो यजुषश्च धनुस्तथा।
सामवेदस्य गान्धर्वमन्त्रशास्त्राण्यथर्वणः॥" (देवीपुराण)

धन्वन्तरिने आयुर्वेद, विश्वामित्रने धनुर्वेद, भरत-मुनिने गान्धर्ववेद और विश्वकर्माने शल्यशास्त्र निकाला है। किन्तु सुश्रुतके मतसे आयुर्वेद अथर्ववेदका उपाङ्ग वा उपवेद है। आयुर्वेद देखो।
उपवेश (सं० पु०) उप-विश भावे घञ्। १ स्थिति, बैठक। उपमितो वेशेन। २ देश, मुल्क। ३ ध्यान, लगाव। ४ पुरीषोत्सर्ग द्वारा शून्यीकरण, झाड़े बैठनेकी बात।
उपवेशन (सं० क्ली०) उप-विश भावे ल्युट्। १ आसन, बैठक। यह मेदको चढ़ाता और श्लेष्मा, सौकुमार्य तथा सुखको बढ़ाता है। (राजनिघण्टु)

"ब्रह्मोपवेशने विनियोगः।" (भवदेव)

२ स्थापन, बैठानेकी बात। ३ ध्यान, लगाव। ४ पुरीषोत्सर्ग द्वारा शून्यीकरण, झाड़े बैठनेकी हालत।
उपवेशि (सं० पु०) उप-विश-इन्। यजुर्वेद-सम्प्रदायके प्रवर्तक एक ऋषि।

"अरुणादरुण उपवेशि उपवेशेरुपवेशिः।" (शतपथब्रा० १४।९।४।३३)

उपवेशित (सं० त्रि०) १ स्थित, बैठा हुआ। २ स्थापित, जो बैठा दिया गया हो।
उपवेशिन् (सं० त्रि०) उप-विश-णिनि। उपवेशन-कारी, बैठनेवाला।
उपवेष (वै० पु०) उप-विष करणे घञ्। अरत्नि वा प्रादेशमात्र अङ्गार भाग तोड़नेका काष्ठ।

'अङ्गारविभजनार्थं काष्ठविशेष उपवेषः।' (हरिस्वामी)

उपवैणव (सं० क्ली०) उपवेणु-अण्। त्रिसन्ध्या—प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल।

उपव्याख्यान (सं० क्लो०) उप-वि-आ-ख्या-ल्युट्। माहात्म्य और उपासनादि कथन, तारीफ़की बात।

"ओमित्येतदचरं सर्वं तस्योपव्याख्यानम्।" (माण्डुक्य उप० १)

उपव्याघ्र (सं० पु०) उपमितो व्याघ्रेन। १ चित्रक, चीता। (अव्य०) २ व्याघ्रके समीप, शेरके पास।

उपव्युषस् (सं० अव्य०) उषःकाल बीतनेपर, तड़केके बाद। 'उषसि विगच्छन्त्याम्।' (कर्काचार्य)

उपशम (सं० पु०) उप-शम-अच्। १ इन्द्रियनिग्रह, इन्द्रियोंकी रोक। २ तृष्णानाश, लालच न रहनेकी बात। ३ रोगोपद्रवशान्ति, बीमारीके बखेड़ेका दबाव। ४ निवृत्ति, छुटकारा।

"जगत्युपशमं जाति नष्ट यज्ञोत्सवाकुले।" (भारत, वन २०अ०)

उपशमक (सं० त्रि०) शान्ति देनेवाला, जो ठण्डा कर देता हो।

उपशमक्रम (सं० पु०) साधारणौषध, मामूली दवा।

उपशमन (सं० क्लो०) उप-शम भावे ल्युट्। १ उपशम, दबाव। णिच्-ल्युट् न वृद्धिः। २ निवारण, हटाव।

उपशमनीय (सं० त्रि०) शान्त किया जानेवाला, जो दबनेके क़ाबिल हो।

उपशमशील (सं० त्रि०) शान्त, ठण्डा, जो भड़कता न हो।

उपशय (सं० पु०) उप-शीङ् अपर्याये अच्। १ समीपशयन, पासका सोना। 'उपशयः समीपशयनम्।' (सिद्धान्तकौ०)

२ व्याधि-ज्ञान-हेतु, बीमारीकी पहचानका सबब। यह खाद्य वा औषध विशेषके उपयोगसे देखा जाता है।

"हेतुव्याधिविपर्यासविपर्यस्तार्थकारिणाम्।
औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम्॥
विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमिति स्मृतिः।" (माधवनिदान)

३ खाद्यादिके द्वारा व्याधिका दूरीकरण, खाना वग़ैरहके ज़रिये बीमारीका छोड़ाव।

उपशरद् (सं० अव्य०) शरद् ऋतुके समय।

उपशल्य (सं० क्लो०) उपगतं शल्यम्। ग्रामके प्रान्तका भाग, गांवके किनारेकी ज़मीन्। (रघु १५।६०)

उपशाखा (सं० स्त्री) गौणशाखा, छोटी डाल।

उपशान्त (सं० त्रि०) १ शान्त किया हुआ, जो दब गया हो। २ शान्त, ठण्डा। ३ ह्रासप्राप्त, घटा हुआ।

उपशान्तात्मन् (सं० त्रि०) शान्तहृदय, ठण्डे दिलवाला।

उपशान्ति (सं० स्त्री०) उप-शम-क्तिन्। १ निवृत्ति, छुटकारा। "वनान्तभयोपशान्तये।" (रघु ८।३१) २ आरोग्य, सेहत। ३ निवारण, हटाव। ४ ह्रास, कमी।

उपशान्तिन् (सं० त्रि०) १ शान्ति रखनेवाला, जो भड़क न उठता हो। (पु०) २ शिचित हस्ती, पालू हाथी।

उपशान्त्वन (सं० क्लो०) शान्त करनेका भाव, जिस हालतमें ठण्डा रखें।

उपशाय (सं० पु०) उप-शी-घञ्। व्यपयोः शेते पर्याये। पा ३।३।३९। विशाय, सो रहनेकी बारी।

उपशायिता (सं० स्त्री०) १ रोगकी मुक्तिके साधनका पथ्य, जो चीज़ खानेसे बीमारी छूट जाती हो। २ शान्त करनेका भाव, ठण्डे पड़नेकी हालत।

उपशायिन् (सं० त्रि०) समीप शयन करनेवाला, जो पास हो लेटता हो। २ शयनशील, सोनेवाला। ३ शयनके लिये प्रस्थान करनेवाला, जो सोने जा रहा हो। ४ शान्त कर देनेवाला, जो दबाता हो। ५ निद्राजनन, नींद लानेवाला।

उपशाल (सं० क्लो०) १ गृहके समीपकी भूमि, मकान्का अहाता। (अव्य०) २ गृहके समीप, घरके पास।

उपशास्त्र (सं० क्लो०) गौणशास्त्र, मामूली इल्म।

उपशिक्षमाण (सं० त्रि०) शिक्षा पानेवाला, जो सिखाया जाता हो।

उपशिक्षा (सं० स्त्री०) शिक्षाभिलाष, सीखनेकी ख़ाहिश।

उपशिक्षित (सं० त्रि०) शिक्षाप्राप्त, सीखा हुआ।

उपशिङ्घन (सं० क्लो०) उप-शिघि-आघ्राणे ल्युट्। १ आघ्राण, सुंघाई। २ आघ्राणौषध, सूंघनेकी दवा।

उपशिष्य (सं० पु०) शिष्यका शिष्य, जो चेलेका चेला हो।

उपशीर्षक (सं० पु०) १ बालरोग, बच्चोंकी बीमारी। २ कपालरोग, मत्थेकी बीमारी, चाईं चुईं।

उपशुन (सं० अव्य०) कुक्कुरके समीप, कुत्तेके पास।

उपशोभ (सं० क्लो०) उपगता शोभां सादृश्येन,

अत्या० समा०। १ आरोपित शोभा, बनावटी खूबसूरती। सजने-बजने और ओढ़ने-पहननेको उपशोभ कहते हैं। "विहितोपशोभमुपयाति माधवे।" (माघ)

उपशोभन, उपशोभ देखो।

उपशोभित (सं० त्रि०) उप-शुभ-क्त। १ शोभा-युक्त, खूबसूरत। २ अलङ्कृत, बना-ठना, जो गहना-कपड़ा खूब पहने ओढ़े हो।

उपशोषण (सं० त्रि०) शुष्क कर देनेवाला, जो सुखा डालता हो।

उपश्री (सं० स्त्री०) आच्छादन, ढकन। जो वस्तु किसी वस्तुपर शोभा बढ़ानेके लिये ढांप दिया जाता हो।

उपश्रुत् (वै० पु०) श्रूयते, उप-श्रु-क्विप्; उपगता श्रुद् यस्मिन्। यज्ञ। 'उपश्रुति यज्ञे।' (ऋगभाष्ये सायण)

उपश्रुत (सं० त्रि०) १ श्रवण कर लिया हुआ, जो सुननेमें आ गया हो। २ अङ्गीकृत, माना हुआ।

उपश्रुति (सं० स्त्री०) उप-श्रु-क्तिन्। १ समीप श्रवण, पाससे सुननेकी बात। "यथा न इन्द्र सोमपा गिरामुपश्रुतिं चर।" (ऋक् १।१०।३) २ दैवप्रश्न, आवाज़ ग़ैब।

'नक्तं निर्गत्य यत् किञ्चिच्छुभाशुभकरं वचः।
श्रूयते तद्विदुर्धीरा दैवप्रश्नमुपश्रुतिम्॥' (हारावली २२)

रात्रिको वहिर्गमनके समय जो शुभाशुभ वाक्य सुन पड़ता है, वही दैवप्रश्न उपश्रुति है। ३ भविष्यत् कथन, पेशीनगोई। ४ अङ्गीकार, मञ्जूरी।

उपश्रुत्य (सं० अव्य०) श्रवण करके, सुन सान कर।

उपश्रोतृ (सं० त्रि०) श्रवण कर लेनेवाला, जो कान लगा कर सुनता हो।

उपश्लिष्ट (सं० त्रि०) निकट स्थापित, लगा हुआ।

उपश्लेष (सं० पु०) उप-श्लिष-घञ्। आधार, आधेयके एक देशका सम्बन्ध, नज़दीकी, आमना-सामना।

उपश्लेषण (सं० क्ली०) उप-श्लिष-ल्युट्। आधान, आधार और आधेयका एकदेश, जमाव, लगाव।

उपश्वस (सं० त्रि०) शब्दयुक्त, पुरशोर, जो आवाज़ दे रहा हो।

उपष्टम्भ (सं० पु०) उप-स्तम्भ-घञ्। १ पतनका प्रतिरोध, गिर पड़नेकी रोक, थूनी। २ उपक्रम, आगाज़। ३ स्तम्भन, रोक। ४ आलम्बन, टेक। ५ आडम्बर, बखेड़ा। ६ उपलक्ष, गरज़।

उपष्टम्भक (सं० त्रि०) उपस्तभ्नाति, तन्भ-ण्वुल्। पतन-विरोधक, गिरने न देनेवाला।

'उपष्टम्भकः गृहस्येव स्तम्भादिलक्षणः।' (ऋगभाष्ये सायण)

उपष्टुत् (सं० अव्य०) आज्ञापर, हुकमसे।

उपसंयम (सं० पु०) उप-सम्-यम-अप्। १ उपसंहार, खातमा। २ सम्यक् नियम, अच्छा कायदा। ३ बन्धन, फांस।

उपसंयोग (सं० पु०) सामीप्येन संयोगः। निकट सम्बन्ध, नज़दीकी रिश्ता।

उपसंरोह (सं० पु०) उपगतः संरोहः, प्रादि-समा०। निकट प्ररोह, मिली-जुली बढ़ती।

उपसंवाद (सं० पु०) उपेत्य अङ्गीकृत्य संवादः। पणबन्ध द्वारा अङ्गीकारपूर्वक कथन, कौलकरार। 'उपसंवादः पणबन्धः।' (सिद्धान्तकौ०)

उपसंव्यान (सं० क्ली०) उप-सम्-व्येञ् करणे ल्युट्। 'अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः।' पा १।१।३६। परिधानवस्त्र, नीचे पहननेका कपड़ा।

उपसंस्कृत (सं० त्रि०) पाक किया हुआ, जो पका लिया गया हो

उपसंहरण (सं० क्ली०) १ निवर्तन, निकास। २ परित्याग, छोड़ाई। ३ अङ्गीकरणका अभाव, इनकार। ४ आक्रमण, हमला।

उपसंहरत् (सं० त्रि०) १ निवर्तनकारी, अलग कर लेनेवाला। २ अङ्गीकार न करनेवाला, जो मञ्जूर फरमाता न हो। ३ आक्रमणशील, हमला मारता हुआ।

उपसंहार (सं० पु०) उप-सम्-हृ-घञ्। १ समाप्ति, खातमा। २ संग्रह, ढेर, चुनाव। ३ सम्यक् हरण, खासी चोरी। ४ नाश, मौत। ५ आरब्ध वा प्रस्तावित विषयका शेष, चलाये या उठाये कामका खातमा। ६ आक्रमण, हमला। ७ निवर्तन, निकास। ८ सङ्कोच, पशोपेश, सिकुड़ जानेकी हालत।

उपसंहारिन् (सं० त्रि०) १ परिग्रह करनेवाला, जो ले लेता हो।

उपसंहित (सं० त्रि०) १ सम्बद्ध, मिला-जुला। २ संलग्न, लगा हुआ।

उपसंहृत (सं० त्रि०) उप-सम्-हृ-क्त। १ समापित, खतम। २ अङ्गीकार न किया हुआ, जो माना गया न हो। ३ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ४ मृत, मरा हुआ।

उपसंहृति (सं० स्त्री०) उप-सम्-हृ-क्तिन्। २ विनाश, बरबादी। २ सङ्कोच, सिकोड़।

उपस (हिं० स्त्री०) दुर्गन्ध, बदबू, गन्दी हवा।

उपसंक्लृप्त (सं० त्रि०) उपरिस्थापित, ऊपर बनाया हुआ।

उपसंक्रमण (सं० क्ली०) उप-सम्-क्रम भावे ल्युट्। १ सन्निवेश, जमाव। २ उपगमन, पहुंच।

उपसङ्क्षेप (सं० पु०) १ सार, निचोड़। २ सङ्ग्रह, चुनाव।

उपसङ्ख्यान (सं० क्ली०) उप-सम्-ख्या करणे ल्युट्। १ गणना, शुमार। २ सङ्ग्रह, चुनाव। ३ विशेषण, सिफत। ४ व्याकरणसूत्रके अनुक्त वाक्यार्थका वार्तिकादि द्वारा कथन।

"विभाषाकरणे तीयस्य ङित्सूपसङ्ख्यानम्।" (पा १।१।३६। वार्तिक)

उपसङ्गृह्य (सं० अव्य०) ग्रहण करके, पकड़कर।

उपसङ्ग्रह (सं० पु०) उपसङ्गृह्यते, उप-सम्-ग्रह-अप्। १ पादग्रहण, इज्जतके साथ पैरोंकी पकड़। २ उपकरण, फरमाबरदारी। ३ सम्यक्ग्रहण, जोड़ जाड़।

"यदुच्यते द्विजातीनां शूद्राद्दारोपसङ्ग्रहः।" (याज्ञवल्क्य १।५६)

उपसङ्ग्रहण (सं० क्ली०) उप-सम्-ग्रह आधारे ल्युट्। १ पादग्रहणपूर्वक प्रणाम, पैर पकड़ बन्दगी करनेकी बात। २ सम्यक्सङ्ग्रह, जोड़-जाड़।

उपसङ्ग्राह्य (सं० त्रि०) पादग्रहणपूर्वक अभिवादन किये जानेके योग्य, जिसे पैर छूकर बन्दगी बजाना पड़े।

उपसञ्चार (सं० पु०) कपटोपाय, चालाकी।

उपसत् (सं० स्त्री०) आक्रमण, चढ़ाई। २ सङ्ग्रह, जोड़ जाड़। ३ सेवा, खिदमत। ४ संस्कारविशेष। यह कितने ही दिन चलती और ज्योतिष्टोम यज्ञका अंश लगती है।

उपसत्ता, उपसत् देखो।

उपसत्ति (सं० स्त्री०) उप-सद्-क्तिन्। १ सङ्ग, साथ, मेल-जोल। २ सेवा, खिदमत। ३ निकटगमन, पहुंच। ४ प्रतिपादन, साबित करनेकी बात। ५ अनुरक्ति, ख्वाहिश।

उपसन्न (सं० त्रि०) उप-सद्-क्त्। १ आसन्न, या पहुंचा हुआ। २ अनुगत, रहनेवाला। ३ सेवक, नौकरी करनेवाला। 'उपसन्ना सेवकः।' (वेददीपे महीधर २७।२)

उपसद् (सं० पु०) उप-सद्-क्विप्। १ अग्नि विशेष। यह गार्हपत्यादि मुख्य तीन अग्निके सिवा अपर है। (त्रि०) २ समीपस्थ, नज़दीकी।

उपसद (वै० पु०) उपसीदत्यस्मिन् उप-सद वेदे घञर्थे क। १ उपसद् यागका दिन। इस दिन यज्ञकारीको अल्पाहार मिलता है। (छान्दोग्य० उप० १।३।१७।२)

'अल्पभोजनीयानि चाहानि आसन्नमीति प्रश्नासोऽशनादीनामुपसदाच सामान्यम्।' (शाङ्करभाष्य)

२ दान, बख्शिश। ३ समीपगमन, पहुंच। (त्रि०) ४ समीप गमन करनेवाला, जो पास जा रहा हो।

उपसदन (सं० क्ली०) उप-सद-ल्युट्। १ उपस्थिति, हाज़िरी, पहुंच। २ उपसेवन, खिदमत। ३ गृहसमीप, पड़ोस। (अव्य०) ४ गृहके समीप, मकानके पास।

उपसदी (वै० स्त्री०) उप-सद् घञर्थे क-ङीप्। सन्तति, धारा, हाज़िरबाश। उपसदी दो प्रकारकी होती है—कालिक और देशिक। समान एककालिक कार्यमात्रके धर्मोंको कालिक और विभिन्न कालीन घटपटादि कार्य मात्रके वृत्तिधर्मोंको देशिक कहते हैं।

'यजमानस्य उपसद्यां सन्ततौ।' (शतपथब्रा० भाष्य १४।८।४।२४)

उपसद्य (सं० त्रि०) उप-सद् कर्मणि यत्। पूजाके योग्य, जो परस्तिश किये जानेके काबिल हो। निकट गमन किये जाने योग्य, जिसके पास पहुंचा जाय।

उपसद्वन् (वै० त्रि०) उप-सद्-वनिप् वश्वान्तादेशः। १ पूजित, जो पूजा जाता हो। २ सेवक, खिदमतगार। (ऋक् ७।१५।१)

उपसद्व्रत (सं० क्ली०) उपसद्विहित जलव्रत। केवल जलके पानसे यह व्रत करना पड़ता है।

उपसद्व्रतिन् (सं० त्रि०) उपसद्का व्रत करनेवाला। इसमें यजमानको परिमित दुग्ध पान, अनावृत भूमिपर शयन और ब्रह्मचर्य तथा मौनावलम्बन करना पड़ता है।

उपसना (हिं० क्रि०) १ दुर्गन्धि होना, बदबू देना। २ गलित होना, सड़ जाना। (पु०) ३ उपवास, फ़ाका।

उपसन्तान (सं० पु०) १ निकट सम्बन्ध, नज़दीकी रिश्ता। २ सन्तति, औलाद।

उपसन्ध्य (सं० अव्य०) सन्ध्याके समय, शामके वक्त।

उपसन्न (सं० त्रि०) उप-सद-क्त। १ उपस्थित, पहुंचा हुआ। २ निकटागत, पास आया हुआ। ३ उपसेवक, नौकर-चाकर। ४ पूजित, पूजा हुआ।

उपसन्नता (सं० स्त्री०) नैकट्य, पहुंच, पड़ोस।

उपसन्नवर्तन (सं० क्ली०) दुष्ट व्रणविशेष, ख़राब जख़्म।

उपसन्न्यास (सं० पु०) त्याग, परहेज़, बरतरफ़ी।

उपसमाधान (सं० क्ली०) उप-सम-आ-धा-ल्युट्। १ राशीकरण, ढेर लगानेका काम। 'उपसमाधानं राशीकरणम्।' (सिद्धान्तकौ०) २ समिध् निक्षेपपूर्वक जलानेका काम। 'उपसमाधाय समिधः प्रक्षिप्य प्रज्वाल्य।'

(आश्वलायन गृह्यभाष्ये नारायण १।८।९)

उपसमाहार्य (सं० त्रि०) एकत्र किये जाने योग्य, जो तरतीब दिये जानेके क़ाबिल हो।

उपसमिध् (सं० अव्य०) अग्निकाष्ठके समीप, जलानेकी लकड़ीके पास।

उपसम्पत्ति (सं० स्त्री०) उप-सम्-पद-क्तिन्। अभिनव सम्पत्ति, पहुंच, किसी हालतपर आ जानेकी बात।

'उपसंपत्तौ अभिनवत्वे।' (सिद्धान्तकौ०)

उपसम्पन्न (सं० त्रि०) उप-सम्-पद-क्त। १ प्राप्त, पाया हुआ। २ मृत, मरा हुआ। ३ यज्ञार्थ मृत (पशु), यज्ञके लिये मरा हुआ।

"श्रोत्रिये तूपसम्पन्ने त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्।" (मनु ५।८१)

उपसम्प्राप्य (सं० अव्य०) प्राप्त होकर, पहुंचके।

उपसम्भाषा (सं० स्त्री०) उप-सम्-भाष भावे अटाप्। सान्त्वना, बातचीत, दोस्ताना तरगीब।

'उपसम्भाषा उपसान्त्वनम्।' (सिद्धान्तकौमुदी)

उपसर (सं० पु०) उप-सृ-अप्। १ निर्गमन, पहुंच। २ गो प्रभृतिके गर्भाधानार्थ वृषादिका मैथुनाभियोग, गाय वग़ैरहका पहला हमल। (त्रि०) ३ प्राप्त होनेवाला, जो आ पहुंचा हो।

उपसरण (सं० क्ली०) उप-सृ-ल्युट्। १ निर्गमन, बहाव। २ शरणके अर्थ निर्गमका स्थान, पनाह लेनेको जा पहुंचनेकी जगह।

उपसर्ग (सं० पु०) उप-सृज-घञ्। उपसर्गाः क्रियायोगे। पा १।४।५९। १ भूकम्पादि उत्पात, भूडोल वग़ैरहका बखेड़ा। २ अनिष्ट, बुराई। ३ रोगविकार, बीमारीका ऐब। ४ व्याकरणोक्त प्रपरादि अव्यय शब्द। यथा—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि और उप। ५ योग, जोड़। ६ दुःख, तकलीफ़। ७ अपशकुन। ८ पिशाचादिकी बाधा। ९ मृत्युका चिह्न, मौतका निशान्।

उपसर्गवृत्ति (सं० त्रि०) उपसर्गका आचरण रखनेवाला, जो उपसर्गकी तरह चलता हो।

उपसर्जन (सं० त्रि०) उप-सृज-ल्युट्। १ दैवादि उत्पात, बदशिगूनीकी बात। २ अप्रधान, मातहत शख़्स।

"उपसर्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते।
पिता प्रधानं प्रजने तस्माद्धर्मेण तद्भजेत्॥" (मनु ११।२९)

३ व्याकरणानुसार—समासका प्रथमान्तनिर्दिष्ट वा एक विभक्तियुक्त पद। ४ पाणिनिसूत्रोक्त शब्दभेद। (त्रि०) ५ सन्मार्गसाधक, भली राह देखानेवाला।

उपसर्तव्य (सं० त्रि०) साहाय्यार्थ समीपगन्तव्य, मददको पास पहुंचा जानेके क़ाबिल।

उपसर्प (सं० पु०) प्राप्ति, पहुंच।

उपसर्पण (सं० क्ली०) उप-सृप भावे ल्युट्। समीप गमन, पास पहुंचनेकी बात।

"न तावदयमुपसर्पणकालः।" (विक्रमोर्वशी)

उपसर्पिन् (सं० त्रि०) उप-सृप गतौ णिनि। समीपगन्ता, पास पहुंचने वाला।

उपसर्प्य (सं० अव्य०) समीप जाकर, पास पहुंचके।

उपसर्या (सं० स्त्री०) उपस्त्रियतेऽसौ सृ कर्मणि यत्-टाप्। गर्भयोग्य ऋतुमती गाय, जो गाय उठी हो।

उपसागर (सं० पु०) सागरांश विशेष, बहरका एक हिस्सा। इसके प्रायः चारो ओर स्थल वेष्टित रहता है।

उपसाना (हिं० क्रि०) बासी बनाना, सड़ा डालना।

उपसार्य (सं० त्रि०) उप सृ अप्रजनार्थे ख्यत्। प्रापणीय, पहुंचा जाने क़ाबिल।

उपसि (सं० अव्य०) क्रोड़में, गोदपर।

उपसुन्द (सं० पु०) निकुम्भ नामक दैत्यका पुत्र। यह सुन्दका कनिष्ठ भ्राता था। तिलोत्तमाके रूपपर मुग्ध हो उसे पानेके लिये दोनों भ्राता परस्पर लड़े और मृत्युके मुखमें जा पड़े। तिलोत्तमा देखो। २ नरकासुरका सेनापति। इसे कृष्णने मारा था।

उपसूर्यक (सं० क्लो०) सूर्यमुपगतम्, स्वार्थे कन्। सूर्यके समीप मण्डलाकार परिधि, आफ़ताबका कुर्स।

उपसृष्ट (सं० क्लो०) उप-सृज-क्त। १ मैथुन, डौला। (त्रिकाण्डशे० २।७।३२) (त्रि०) २ उपसर्गग्रस्त, झगड़ेमें पड़ा हुआ। ३ विसृष्ट, बना हुआ। ४ कामुक, चाहनेवाला। ५ व्याप्त, मामूर। ७ युक्त, लगा हुआ।

उपसेक (सं० पु०) उप-सिच भावे घञ्। १ जलादि सेचनद्वारा मृदुकरण, पानी वगैरह ढालकर मुलायम बनानेका काम। २ व्यञ्जन।

उपसेक्तृ (सं० पु०) एक द्रव्यपर दूसरा द्रव्य ढालनेवाला पुरुष, जो आदमी कोई चीज़ किसी चीज़ पर उंडेलता हो।

उपसेचन (सं० क्लो०) उप-सिच्-ल्युट्। १ जलसेक, सिंचाई। २ रस, अर्क। (त्रि०) ३ उपसेककर्ता, सींचनेवाला।

"वयः कोशास उपसेचनासः।" (ऋक् ७।१०१।९)

उपसेन (सं० पु०) बुद्धदेवके एक शिष्य। बुद्धने इन्हें अपने धर्मकी दीक्षा दी थी। (भद्रकल्पावदान ९ अ०)

उपसेवक (सं० त्रि०) उप-सेव-ण्वुल्। १ उपभोगकारी, मज़ा उड़ानेवाला। २ परस्त्रीपर आसक्त, जो दूसरेकी औरतसे फंसा हो।

"अदत्तादाननिरतः परदारोपसेवकः।" (याज्ञवल्क्य ३।१३६)

उपसेवन (सं० क्लो०) उप-सेव भावे ल्युट्। १ परस्त्रीपर आसक्ति, दूसरेकी औरतसे फंस जानेकी बात। २ निकट रह सेवा करनेकी बात, जो ख़िदमत नज़दीकसे की जाती हो।

उपसेवा (सं० स्त्री०) मान, पूजा, परस्तिश, इज़्ज़त।

उपसेविन् (सं० त्रि०) उप-सेव-णिनि। १ सेवा करनेवाला, ख़िदमतगार।

"हृष्टात्मा पुलिनवनान्तरोपसेवी।" (सुश्रुत)

उपस्कर (सं० पु०) उप-कृ-अप् समवाये चेति सुट्। १ उपकरण, सहारेकी चीज़। "पञ्चसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः।" (मनु ३।६८) 'उपस्करा गृहोपयोगिभाण्डं कुण्डकटाहादि।' (मेधातिथि) २ वेसवार, मसाला। ३ असम्पूर्ण वाक्यबोधक शब्दका अध्याहार। ४ गृहसंस्कार, घरकी मरम्मत। ५ गुणान्तराधान, दूसरे वस्फ़का लगाव। ६ यत्न, तदबीर।

उपस्करण (सं० क्लो०) उप-कृ भावे ल्युट्-सुट्। १ भूषण, साज़। २ उपकरण, सामान। ३ सङ्घात, मारकाट। ४ गुणान्तराधानरूप संस्कार, दूसरा वस्फ़ लानेका काम। ५ विकार, ऐब। ६ वाक्याधार, जुमलेका टेका। ७ हिंसन, क़त्ल।

उपस्कार (सं० पु०) उप-कृ भावे घञ् भूषणादौ सुट्। १ भूषण, साज़। २ सङ्घात, मार। ३ प्रतियत्नरूप संस्कार, तदबीरका काम। ४ विकार, फ़र्क़। ५ अध्याहार, छिपाव।

उपस्कीर्ण (सं० त्रि०) उप-कृ-क्त हिंसने सुट्। हिंसित, जो मारा गया हो।

उपस्कृत (सं० त्रि०) उप-कृ-क्त भूषणादौ सुट्। १ भूषित, सजा हुआ। २ संहत, दबा हुआ। ३ संस्कृत, बना हुआ। ४ विकृत, बिगड़ा हुआ। ५ अध्याहृत, छिपा हुआ।

उपस्कृति (सं० त्रि०) भूषण, साज।

उपस्तम्भ (सं० पु०) उप-स्तन्भ-घञ्। अवलम्ब, पकड़, टेक।

उपस्तम्भक (सं० त्रि०) अवलम्ब लगानेवाला, जो सहारा देता हो।

उपस्तम्भन (वै० क्ली०) उप-स्तन्भ-ल्युट्। अवलम्बन, सहारेकी लकड़ी।

'उपस्तभ्नाति प्रतिबध्नाति इत्युपस्तम्भनम्।' (शतपथब्राह्मणभाष्ये सायण)

उपस्तरण (सं० क्ली०) उप-स्तृ-ल्युट्। १ आस्तरण, विस्तर। २ भूमिपर समीकरण। 'स्तरणमाच्छादनमुपस्तरणं भूमेः समीकरणम्।' (आश्वलायनगृह्यसूत्रे नारायण)

उपस्ति (वै० पु०) उप-स्त्यै-डुन् निपातनात् साधुः। १ वृक्ष, पेड़। (शुक्लयजुः १२।१९) १ अनुचर, हाज़िरबाश।

उपस्तीर्ण (सं० त्रि०) विस्तीर्ण, फैला हुआ।

उपस्तुत (सं० त्रि०) १ प्रशंसित, तारीफ़ किया हुआ। (पु०) २ एक ऋषि।

उपस्तुति (वै० स्त्री०) उप-स्तु-क्तिन्। समीपस्तव, सुनने लायक़ तारीफ़की बात। (ऋक् ४।५६।५)

उपस्तुत्य (सं० त्रि०) उपस्तुतिके योग्य, जो तारीफ़ किये जानेके क़ाबिल हो।

उपस्त्री (सं० स्त्री०) उपमिता स्त्रियाम्। उपपत्नी, रखड़ी।

उपस्थ (सं० पु०) उप-स्था-क। १ मेढ़्र, पुंलिङ्ग। "स्नानं मौनोपवासेज्या स्वाध्यायोपस्थनिग्रहाः।" (याज्ञवल्क्य ३।३१४) २ योनि, स्त्रीलिङ्ग। "दक्षिणेन पाणिना उपस्थमभिमृशेत्।" (गोभिल) शिश्न और योनि उभय इन्द्रियका नाम उपस्थ है। स्मृतिके मतसे आनन्दव्यापारकारक कर्मेन्द्रियको उपस्थ कहते हैं। ३ पायु, मलद्वार। ४ अङ्क, गोद। ५ अन्तराल, पेड़। "आत्मन्नुपस्थे न वृकस्य लोम।" (शुक्लयजुः १९।९२) ६ स्थिति, बैठक। (त्रि०) ७ समीपस्थित, पास बैठा हुआ।

उपस्थदघ्न (सं० त्रि०) अङ्कपर्यन्त प्राप्त होनेवाला, जो गोदतक पहुंचता हो।

उपस्थनिग्रह (सं० पु०) १ विषयके अभिलाषका अवरोध, शहवतकी ख़ाहिशका दबाव।

उपस्थपत्र (सं० पु०) उपस्थवत् योनिवत् पत्रमस्य। अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़।

उपस्थल (सं० क्ली०) १ नितम्ब, चूतड़। २ ककुद, कूल्हा। ३ अन्तराल, पेड़ू।

उपस्थली (स्त्री०) उपस्थल देखो।

उपस्थसद् (सं० त्रि०) क्रोड़में उपविष्ट, जो गोदमें बैठा हो।

उपस्था (सं० त्रि०) दण्डायमान, खड़ा हुआ।

उपस्थाता (सं० त्रि०) समीपे तिष्ठतीति, उप-स्था-तृच्। १ भृत्य, नौकर। २ उपासक, परस्तिश करनेवाला। ३ उपनत, झुका हुआ। ४ यथोक्त कालपर उपगत, मौक़ेपर पहुंचा हुआ। (पु०) ५ ऋत्विक्-विशेष। (चरकसूत्र ९ अ०)

उपस्थान (सं० क्ली०) उप-स्था-ल्युट्। १ उपस्थिति, हाज़िरी। २ आगमन, आमद। ३ अनुसन्धान, तलाश। (याज्ञवल्क्य ३।१९०) ४ उपासना, परस्तिश। (कात्यायनश्रौ० सू० ५।१२।२) ५ उपसर्पण, सरकाव। 'उपस्थानं प्रसर्पणम्।' (आश्वलायनश्रौ० सूत्रे नारायणवृत्ति ५।१२।२) ५ परदेशनिवास, ग़ैर मुल्ककी रहास। ६ सभा, मजलिस। ७ तीर्थस्थान, मठ। ८ प्राप्ति, याफ़्त।

उपस्थानशाला (सं० स्त्री०) बौद्ध मठकी सभाका भवन।

उपस्थानीय (सं० स्त्री०) उप-स्था-अनीयर्। भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयजन्याप्लाव्यापात्या वा। पा ३।४।६८। १ उपासक, परस्तिश करनेवाला। 'उपस्थानीयः शिष्येण गुरुः।' (सिद्धान्तकौमुदी) कर्मणि अनीयर्। २ उपास्य, जो परस्तिश किये जानेके क़ाबिल हो।

उपस्थापक (सं० त्रि०) उप-स्था-णिच्-ण्वुल्। १ प्रस्तावक, बयान् करनेवाला। २ स्मारक, तजरबेसे दिलमें खोज लगानेवाला। ३ समीप लानेवाला, जो पास लाता हो।

उपस्थापन (सं० क्ली०) उप-स्था-णिच् भावे ल्युट्। १ उपस्थितकरण, पहुंचानेका काम। २ प्रस्ताव, बयान्। ३ आनयन, लवाई।

उपस्थापनीय (सं० त्रि०) समीप उपस्थित किये जानेके योग्य, जो नज़दीक लाये जानेके क़ाबिल हो।

उपस्थापयितव्य, उपस्थापनीय देखो।

उपस्थापित (सं० त्रि०) निकटस्थित, नज़दीक रखा हुआ।

उपस्थाप्य (सं० त्रि०) निकट स्थापन किये जाने योग्य, जो निकाला या देखाया जाता हो।

उपस्थाय (सं० अव्य०) निकट उपस्थित होकर, पास पहुंचके।

उपस्थायक (सं० पु०) १ भृत्य, नौकर। २ बौद्ध मतके अनुसार बुद्धका अनुचर, जो बुद्धका साथी हो।

उपस्थायिन् (सं० त्रि०) उपस्थित होनेवाला, जो पास खड़ा हो।

उपस्थावर (दे० पु०) उप-स्था बाहुलकात् वरच्। १ पुरुषमेध यज्ञके एक उपास्य देवता। (शुक्लयजुः ३०।१६) (त्रि०) २ स्थित रहनेवाला, जो सरकता न हो।

उपस्थित (सं० त्रि०) उप-स्था-क्त। अनु तवदुपस्थिते। पा ६।१।१२९। १ समीपस्थित, जो नज़दीक हो। २ समीपागत, पास पहुंचा हुआ। "हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।" (रघु १।४५) ३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ वर्तमान, हाज़िर। ५ प्रक्रान्त, बढ़ा हुआ। ६ वेदार्थयुक्त, अनार्ष। 'उपस्थितोऽनार्षः।' (सिद्धान्तकौमुदी) ७ स्मृत, याद किया हुआ। ८ सेवित, खिदमत किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ९ सेवन, खिदमत।

उपस्थितप्रकुपित (सं० क्ली०) छन्दोविशेष। इसमें चार पाद और इक्यावन अक्षर होते हैं।

उपस्थितवक्तृ (सं० पु०) निपुणवाग्मी, खुशगुफ्तार आदमी, बड़ा बोलनेवाला।

उपस्थितसम्प्रहार (सं० त्रि०) युद्धमें प्रवृत्त होनेके लिये सन्नद्ध, जो लड़ाईमें पड़नेके क़रीब हो।

उपस्थिता (सं० स्त्री०) १ दशाक्षर-पादक छन्दोविशेष, दश दश अक्षरके चार पादका छन्द। २ एकादशाक्षर पादक छन्दोविशेष, ग्यारह ग्यारह अक्षरके चार पादका एक छन्द।

"तौ जौ गुरुणेयमुपस्थिता।" (छन्दोमञ्जरी)

उपस्थिति (सं० स्त्री०) उप-स्था-क्तिन्। १ उपस्थान, पहुंच। २ वर्तमानता, मौजूदगी। ३ उपासना, परस्तिश। ४ स्मृति, याददाश्त। ५ उत्तरण, बक़ाया।

उपस्थेय (सं० त्रि०) उप-स्था सेवार्थत्वात् कर्मणि यत्। उपसेव्य, पूजने लायक़।

"यदीदृशैरहं विप्रैरुपस्थेयैरुपस्थिता।" (रामायण ३।४।१९)

उपस्नुत (सं० त्रि०) उप-स्नु-क्त। चरित, सड़ागला।

उपस्नेह (सं० पु०) उप-स्निह-घञ्। १ क्लेद, तरी। २ उपलेप, लीप-पोत। ३ स्नेहयुक्तान्नरस, चिकनाई मिला हुआ अनाजका अर्क।

"मूत्रयुक्त उपस्नेहात् प्रविश्य कुरुतेऽश्मरीम्।" (सुश्रुत)

उपस्पर्श (सं० पु०) उप-स्पृश-घञ्। १ स्पर्श, लम्स। २ स्नान, नहान। ३ आचमन।

उपस्पर्शन (सं० क्ली०) उपस्पर्श भावे ल्युट्। उपस्पर्श देखो।

उपस्पर्शिन् (सं० त्रि०) स्पर्श कर लेनेवाला, जो छू लेता हो।

उपस्पृश्, उपस्पर्शिन् देखो।

उपस्पृश्य (सं० अव्य०) आचमन करके।

उपस्पृष्ट (सं० त्रि०) स्पर्श कर लिया गया।

उपस्मृति (सं० स्त्री०) व्यवस्थासम्बन्धीय गौण पुस्तक, क़ानूनकी छोटी किताब। उपस्मृति अष्टादश कही गयी हैं। स्मृति देखो।

उपस्रवण (सं० क्ली०) उप-स्रु भावे ल्युट्। सम्यक्-क्षरण, बहाव, औरतका मुक़र्ररी इदरार।

उपस्वत्व (सं० क्ली०) उपगतं स्वत्वम्। आय, फ़ायदा, ज़मीन् वग़ैरहकी जायदादसे हासिल होनेवाली आमदनी।

उपस्वावत् (सं० पु०) सभाजित्के तृतीय पुत्र। (हरिवंश ६८ अ०)

उपस्वेद (सं० पु०) उप-स्विद् करणे घञ्। १ अग्न्यादिके निकटका ताप, औसन। भावे घञ्। २ उपताप, गर्मी। ३ क्लेद, तरी।

उपहत (सं० त्रि०) उप-हन-क्त। १ आहत, चोट खाये हुआ। २ उत्पातग्रस्त, तकलीफ़में पड़ा हुआ। ३ तिरस्कृत, झिड़का हुआ। "करोत्यवज्ञोपहतं पृथग्जनम्" (किरात) ४ अशुद्ध, नापाक। ५ अभिभूत, दबा हुआ। ६ दूषित, बिगड़ा हुआ। ७ विनाशित, बरबाद किया हुआ। ८ प्रतिबद्ध, रुका हुआ। ९ विघटित, पड़ा हुआ।

उपहतक (सं० त्रि०) हतभाग्य, बदबख़्त।

उपहतदृक् (सं० त्रि०) अन्धीकृत, चकाचौंधमें पड़ा हुआ।

उपहतधी (सं० त्रि०) नष्टज्ञान, दीवाना, बेवक़ूफ़।

उपहतात्मा (सं० त्रि०) विचलित-हृदय, जो दिलमें घबरा गया हो।

उपहति (सं० स्त्री०) उप-हन-क्तिन्। १ उपघात, मारकाट। २ कार्यमें असामर्थ्य, काम कर न सकनेकी हालत। ३ प्रतिहनन, धक्कामुक्की।

उपहत्नु (वै० त्रि०) आक्रामक, हमला मारनेवाला। (ऋक् २।३३।१९)

उपहत्या (सं० त्रि०) नेत्रप्रतिघात, चकाचौंध।

उपहन्तव्य (सं० त्रि०) वधके योग्य, जानसे मारे जानेके काबिल।

उपहन्तृ (सं० त्रि०) उप-हन्-तृच्। विचलित कर देनेवाला, जो घबरा देता हो।

उपहरण (सं० क्ली०) उप-हृ-ल्युट्। १ परिवेशन, बड़ोंको भेंट। २ समीपमें आनयन, नज़दीक लानेकी बात।

उपहरणीय (सं० त्रि०) परिवेशनीय, भेंट किये जाने लायक़।

उपहर्तव्य, उपहरणीय देखो।

उपहर्तृ (सं० त्रि०) उप-हृ-तृच्। परिवेषक, भेंट चढ़ानेवाला।

"संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः।" (मनु ५।५१)

'उपहर्ता परिवेषकः।' (मेधातिथि)

उपहव (सं० पु०) उप-ह्वे-अप्। ह्वे सम्प्रसारणं च न्यभ्युपविषु। पा ३।३।१२। आह्वान, पुकार। "वीक्षासुपसरं दृष्ट्वा तेऽन्योन्योपहवा गुहाम्।" (भट्टि) २ यज्ञीय समिध्। पञ्चयज्ञके मध्य यज्ञविशेष। (अथर्व ११।७।११)

उपहव्य (सं० पु०) उपह्वयतेऽत्र। उप-ह्व बाहुलकात् यत्। समदश स्तोमात्मक।

उपहसित (सं० क्ली०) उप-हस भावे क्त। १ उपहास, हंसी-ठट्ठा। निन्दापूर्वक हास्यको उपहसित कहते हैं। इसमें नाक फुलाते, आंख चढ़ाते और गर्दन हिलाते जाते हैं। (त्रि०) कर्मणि क्त। २ उपहास किया हुआ, जो उल्लू बनाया गया हो।

उपहस्त (सं० पु०) प्रतिग्रह, हस्त द्वारा ग्रहण, हाथसे ले लेनेकी बात।

उपहस्तिका (सं० स्त्री०) उपगता हस्तम् उप-हस्त संज्ञायां कन्-टाप्, अत इत्वम्। ताम्बूलाधार, पान-सुपारीकी छोटी डब्बी या थैली।

उपहार (सं० पु०) उप-हृ-घञ्। १ उपढौकन, भेंट। २ उपढौकनका द्रव्य, नज़रानेकी चीज़। ३ हव्य, आहुति। ४ सम्मान, इज़्ज़त। ५ कर, सुलहकी भेंट। ६ अतिथिको दिया जानेवाला भोजन, जो खाना मेहमानोंको बंटता हो। ७ परमाह्लाद, बड़ी खुशी। इसे शैव अपनी उपासनामें देखाते हैं। अट्टहास, नृत्य, गीत, वृषभवत् गर्जन, नमन और भजन उपहारका अङ्ग है। (त्रि०) उपगतः हारम्। ८ हारोपशोभक, गजरेकी खूबसूरती बढ़ानेवाला। (अव्य०) ९ हारसमीप, गजरेके पास।

उपहारक (सं० पु०) हव्य, आहुति।

उपहारी (सं० त्रि०) १ उपढौकन समर्पण करनेवाला, जो नज़राना देता हो। २ आहुति देनेवाला, जो यज्ञ करता हो।

उपहालक (सं० पु०) कुन्तल देश, दाक्षिणात्यके कर्णाटकका एक हिस्सा।

उपहास (सं० पु०) उप-हस भावे घञ्। निन्दासूचक हास, हंसी ठट्ठा। (रघु १२।३७)

उपहासक (सं० त्रि०) १ परिहासशील, दूसरोंकी हंसी उड़ानेवाला। (पु०) २ चाटुपटु भाड़।

उपहासास्पद (सं० क्ली०) हासपात्र, मसखरा।

उपहासी (हिं०) उपहास देखो।

"सब नृप भये योग उपहासी।
जैसे बिनु विराग सन्यासी॥" (तुलसी)

उपहास्य (सं० त्रि०) उप-हस कर्मणि ण्यत्। उपहासके योग्य, जो हंसा जानेके काबिल हो।

उपहित (सं० त्रि०) उप-धा-क्त। १ निहित, लगा हुआ। २ अर्पित, दिया हुआ। ३ समीप स्थापित, नज़दीक रखा हुआ। ४ आरोपित, ऊपर चढ़ाया हुआ। "पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यात्।" (कुमार) ५ उपाधिसङ्गत, उपलक्षित। ६ दत्त, दिया हुआ। ७ गृहीत, लिया हुआ।

उपहितभर (सं० त्रि०) भारका परिमाण ले जानेवाला, जो बोझ ढो रहा हो।

उपह्री (हिं॰ पु॰) अन्यदेशीय पुरुष, गैर मुल्कका आदमी।

उपहूत (सं॰ त्रि॰) उप-ह्वे-क्त सम्प्रसारणे दीर्घः। समाहूत, बुलाया हुआ।

समाहूति (सं॰ स्त्री॰) उप-ह्वे सम्प्रसारणे क्तिन्। आह्वान, पुकार।

उपहृत (सं॰ त्रि॰) उप-हृ-क्त। १ उपहारस्वरूप-दत्त, नज़रानेके तौरपर दिया हुआ। २ आनीत, लाया हुआ। ३ आहृत, इकट्ठा किया हुआ। ४ उत्सृष्ट, चढ़ाया हुआ।

उपहोम (सं॰ पु॰) प्रधान यज्ञके समीप अग्नि-सोमादि दश देवताओंमें प्रत्येकके उद्देश्यसे देय दशाहुति और दश दक्षिणायुक्त होमविशेष। (शतपथब्रा॰ ११।४।३।८-१७)

उपह्वर (वै॰ क्ली॰) उप-ह्वृ आधारे घ। १ निर्जन स्थान, पोशीदा जगह।

"चरन्तमुपह्वरे नद्यः।" (ऋक् ८।९६।१५)

'उपह्वरे अत्यन्तगुह्यस्थाने।' (सायण)

२ सामीप्य, पड़ोस। (पु॰) ३ रथ, गाड़ी। ४ वक्रता, टेढ़ापन। ५ अवसर्पिणी भूमि, उतार। ६ सोमपात्रकी वक्राकृति।

उपह्वान (सं॰ क्ली॰) उप-ह्वे-ल्युट्। १ आह्वान-कार्य, पुकार। २ मन्त्रोच्चारणपूर्वक आह्वान। (कात्यायन-श्रौ॰ ३।४।१९)

उपांशु (सं॰ पु॰) उपगता अंशवो यत्र। १ जप विशेष।

"शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्ठौ प्रचालयेत्।
किञ्चिच्छब्दस्वरं विद्यादुपांशुः स जपः स्मृतः॥" (नारसिंहपुराण)

ईषद् ओष्ठ हिला धीरे-धीरे मन्त्रोच्चारणपूर्वक जो जप किया जाता, वह उपांशु कहलाता है। जप देखो। २ सोमाहुति विशेष। (अव्य॰) ३ निर्जन, चुपके-चुपके। ४ अप्रकाश, छिपकर। ५ अनुच्चारण, बे-बोले। ६ मौन, मन ही मन। (त्रि॰) ७ निगूढ़, छिपा हुआ।

उपांशुक्रीड़ित (सं॰ त्रि॰) निर्जनमें क्रीड़ा किया हुआ, जो तखलियेमें खेला गया हो।

उपांशुयाज (वै॰ पु॰) उपांशु अनुष्ठेयो याजः। यज्ञविशेष। (शतपथब्रा॰ १।६।३।२३)

उपांशुवध (सं॰ पु॰) निर्जनवध, पोशीदगीमें किया हुआ कत्ल

उपाइ, उपाउ (हिं॰) उपाय देखो।

उपाक (वै॰ त्रि॰) १ परस्पर सन्निहित, जुड़ा हुआ। 'उपाके परस्पर समीपगते।' ग्रुक्लयजुर्भाष्ये महीधर २०।३१) २ निकट, पासवाला। (निघण्टु २।१६)

उपाकचक्षस् (वै॰ त्रि॰) चक्षुके सन्मुख वर्तमान रूपसे दृश्यमान, जो आंखके सामने हाज़िर खड़ा हो।

उपाकरण (सं॰ क्ली॰) उप-आ-कृ-ल्युट्। १ संस्कार पूर्वक श्रुतिग्रहण। २ संस्कारपूर्वक पशुवध। ३ आरम्भ, शुरू। ४ समीपानयन, नज़दीक लानेका काम।

उपाकर्म (सं॰ क्ली॰ उप-आ-कृ-मनिन्। १ उपा-करण, संस्कारपूर्वक वेदग्रहण। (मनु ४।११९) उत्सर्ग देखो। २ आरम्भ, शुरू।

उपाकृत (सं॰ त्रि॰) उप-आ-कृ-क्त। १ यज्ञमें हननके अर्थ कृत संस्कार, देवोद्देश्यसे वध्य। २ आरब्ध, शुरू किया हुआ। ३ स्तवस्तुति द्वारा प्रेरित। ४ उपद्रुत, आफ़त ढानेवाला। (क्ली॰) भावे क्त। ५ उपाकरण। ६ यज्ञीय पशुका संस्कार। ७ आरम्भ, शुरू। (पु॰) ८ देवोद्देश्यसे वध्य पशु। ९ दुर्भाग्य, बदकिस्मती। १० अशुभसूचक, व्यापार, बादशिगूनी।

उपाक्ष (सं॰ क्ली॰) १ उपनेत्र, चश्मा। (अव्य॰) चक्षुःसमीप, आंखके सामने।

उपाख्य (सं॰ त्रि॰) चक्षुके द्वारा प्रेक्षणीय, जो आंखसे देखा जा सकता हो।

उपाख्या (सं॰ स्त्री॰) उप-आ-ख्या भावे अ-टाप्। १ प्रत्यक्ष, देख पड़नेवाला। २ शब्दादि द्वारा निर्वाचन।

उपाख्यान (सं॰ क्ली॰) उप-आ-ख्या-ल्युट्। १ पूर्व वृत्तान्त कथन, गुज़रे हालका बयान। २ विशेष कथन, बड़ा बयान।

"चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावत् भारतं प्रोच्यते बुधैः॥" (भारत आदि १।१०१)

३ उपन्यास, झूठा किस्सा।

उपाख्यानक (सं० क्ली०) क्षुद्र उपन्यास, छोटी कहानी।

उपागत (सं० त्रि०) उप-आ-गम-क्त। १ स्वयं उपस्थित, खुद आकर पहुंचा हुआ। २ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ३ स्वीकृत, मञ्जूर किया हुआ। ४ घटित, पड़ा हुआ।

उपागम (सं० पु०) उप-आ-गम-अप्। ग्रहवृहनिश्चिगमश्च। पा ३।३।५८। १ स्वीकार, मञ्जूरी। २ निकट गमन, नज़दीक पहुंचनेका काम। ३ विघटन, वाक़िया। ४ अनुभव, तजरबा।

उपाग्नि (सं० अव्य०) अग्निसमीप, आगके पास।

उपाग्र (सं० क्ली०) १ शिखाके समीप भाग, जो हिस्सा सिरेसे लगा हो। २ द्वितीय श्रेणीका अवयव, दूसरे दरजेका हिस्सा।

उपाग्रहण (सं० क्ली०) उप-आ-ग्रह-ल्युट्। संस्कार पूर्वक वेदारम्भ, उपाकर्म।

उपाग्रहायण (सं० अव्य०) अग्रहायण मासमें पूर्णिमासीके दिन।

उपाङ्ग (सं० क्ली०) उपमितं अङ्गेन। १ तिलक, टीका। २ प्रत्यङ्ग, अङ्गका अङ्ग। महर्षि सुश्रुतके मतसे मस्तक, उदर, पृष्ठ, नाभि, ललाट, नासिका, चिबुक, वस्ति एवं ग्रीवा एक-एक, कर्ण, नासा, भ्रू, शङ्ख, स्कन्ध, गण्ड, कक्ष, स्तन, मुष्क, पार्श्व नितम्ब, जानु, बाहु तथा जरू दो-दो, अङ्गुलि बीस, त्वक् सात, कला सात, वक्ष दो, कोष दो, हृदय, प्लीहा, फुसफुस, यकृत्, क्लोम, आशय सात, अन्त्र, द्वार नौ, प्रधान शिरा सोलह, जाल बारह, कूर्च छह, रज्जु चार, सेवनी सात, अस्थिमिलनके स्थान पन्द्रह, सीमान्त अठारह, अस्थि तीन सौ, अस्थिसन्धि दो सौ दश, स्नायु नौ सौ, पेशी पांच सौ, मर्मस्थान एक सौ सात, सिरा सात सौ, धमनी चौबीस, और योगवहा नाड़ी समस्त उपाङ्ग हैं। ३ विद्याका गौण भाग, इल्मका मामूली हिस्सा। हमारे शास्त्रके अनुसार उपाङ्ग चार हैं—पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र।

"पुराण-न्याय-मीमांसा-धर्मशास्त्राणि चेति चत्वार्युपाङ्गानि।" (प्रस्थानभेद)

४ श्वेताम्बर जैन धर्मशास्त्र विशेष। श्वेताम्बर जैन १२ उपाङ्ग मानते हैं—उपवायी सूत्र, रायपसेनी सूत्र, जीवाभिगम सूत्र, पन्नवणासूत्र, जम्बुद्वीपपन्नत्ति सूत्र, चन्दपन्नत्ति सूत्र, सूर्यपन्नत्ति सूत्र, निरियावली-सूत्र, कप्पियासूत्र, कप्पवडिंसयासूत्र, पुप्फियासूत्र और पुप्फचुलियासूत्र। ५ गौण विभाग, छोटा हिस्सा। ६ गौण कर्म, छोटा काम। (पु०) ७ चित्रक, चीत।

उपाङ्गचिकित्सा (सं० स्त्री०) छिन्नादि प्रतीकार, ज़ख्मका इलाज। छिन्न, भिन्न, भग्न, क्षत और अस्थि-भङ्गके दग्धप्रतीकारको उपाङ्ग-चिकित्सा कहते हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

उपाचरित (सं० त्रि०) १ किसीकी सेवामें लगा हुआ, फ़रमान्बरदार। (क्ली०) २ व्याकरणानुसारसन्धिका एक नियम। इससे ककार और पकारके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाचार (सं० पु०) १ स्थान, जगह। २ क्रम, क़ायदा। ३ सन्धिविशेष। इससे ककार और पकारके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाचार्य (सं० पु०) आचार्यका सहकारी।

उपाञ्जन (सं० क्ली०) उप-अञ्ज-ल्युट्। १ लेपन, लिपाई। "मार्जनोपाञ्जनैर्वेश्म पुनः पाकेन मृण्मयम्।" (मनु ५।१२२) २ गोमयादि द्वारा अनुलेपन, गोबर वगैरहसे लीपनेका काम। ३ अञ्जनाधार इत्यादि।

उपाटना, उपाड़ना, उखाड़ना देखो।

उपात्त (सं० त्रि०) उप-आ-दा-क्त। १ गृहीत, लिया हुआ। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ गुणागुण-विवेचित, पसंद किया हुआ। ४ संगृहीत, इकट्ठा किया हुआ। ५ निर्मित, बनाया हुआ। ६ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ७ अन्तर्भूत, शामिल किया हुआ। ८ व्यवहृत, काममें लाया हुआ। ९ आरब्ध किया हुआ, जो शुरू हो। १० यथाक्रम-निर्दिष्ट, सिलसिलेवार गिना हुआ। ११ अनुमोदित, माना हुआ। (पु०) १२ अमदगज, जो हाथी मतवाला न हो।

उपात्तरंहस (सं० त्रि०) शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

उपात्तशस्त्र (सं॰ त्रि॰) शस्त्र ग्रहण करता हुआ, हथियार बन्द।

उपात्यय (सं॰ पु॰) उप-अति-इन्-अच्। १ लोकाचार अतिक्रम, राह-रस्मसे वेपरवाई। २ व्यतिक्रम, बेहूदा काम। ३ नाश, बरबादी।

उपादान (सं॰ क्ली॰) उप-आ-दा-ल्युट्। १ ग्रहण, इस्तेमाल। २ न्यायके मतसे समवायि-कारण, नज़दीकी सबब। जो पदार्थ अवस्थान्तरको प्राप्त हो अपर वस्तु उपजाता अथवा जिससे कुछ बनाया जाता, वही उपादान कारण कहलाता है। जैसे—घटका उपादान मृत्तिका और अलङ्कारका उपादान स्वर्ण है। ३ सांख्यके मतमें कार्यसे अभिन्न कारण, कामसे मिला हुआ सबब। ४ सांख्यके मतसे सिद्ध आध्यात्मिक तत्त्वविशेष।

"आध्यात्मिकाश्च प्रकृत्युपादानकारभाग्याख्याः। वाह्यविषयो परमात् पञ्च नव तुष्टयोभिमताम्।"

५ वर्णन, शुमार,। ६ कथन, गुफ्तार। ७ सम्मिलन, शामिल होनेकी बात। ८ इन्द्रियनिग्रह। ९ अभिप्राय, मतलब। १० दूना अर्थ, दुचन्दमागी। ११ बौद्ध मतानुसार शरीर वा वाणीकी चेष्टा, जिस्म या ज़ुबानकी कोशिश।

उपादान कारण (सं॰ क्ली॰) समवायी कारण, नज़दीकी सबब।

उपादानलक्षण (सं॰ स्त्री॰) अजहत्स्वार्थारूप लक्षणाविशेष।

"मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये।
स्यादात्मानोऽप्युपादानादेषोपादानलक्षणा।" (साहित्यदर्पण)

उपादिक (सं॰ पु॰) उप-अद्-इन् संज्ञायां कन्। कीट भेद, किसी क़िस्मका कीड़ा।

उपादेय (सं॰ त्रि॰) उप-आ-दा कर्मणि यत्। १ ग्राह्य, लेने लायक़। २ उत्तम, अच्छा। ३ उत्कृष्ट, बढ़िया। (शान्तिशतक १।१२) ४ विधेय, किये जानेके क़ाबिल।

उपाधान (सं॰ क्ली॰) उपधान, तकिया।

उपाधि (सं॰ पु॰) उपाधीयन्ते गुणादयोऽनेनेति, उप-आ-धा-कि। उपसर्गे घोः किः पा ३।३।९२। १ धर्मचिन्ता, फ़र्ज़की फ़िक्र। २ विशेषण, सिफ़त। ३ कुटुम्बव्याहृत, लोगोंका असली चलन। ४ जाति वंश प्रभृति परिचायक शब्द। ५ छल, धोका। ६ आधार, टेक। ७ कारण, मामूली नतीजेके लिये कोई ख़ास सबब। ८ समृद्धि, बढ़ती। ९ न्यायके मतमें जातिसे भिन्न धर्म, जो सिफ़त क़ौमसे अलग हो। यह दो प्रकारका होता है—सखण्ड और अखण्ड। आकाशत्वादि सखण्ड और प्रतियोगित्वादि अखण्ड है। (सिद्धान्तचन्द्रोदय) १ व्यभिचारज्ञानद्वारा व्याप्तिज्ञानका प्रतिबन्धक। जैसे—

"धूमवान् वह्नेरित्यादावार्द्रेन्धनमुपाधिः।" (न्यायसिद्धान्तमञ्जरी)

धूमवान् वह्नि कहनेसे आर्द्रकाष्ठ उसका उपाधि हो जाता है। यह चार प्रकारका होता है—केवल साध्यव्यापक, पक्षधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक, साधनावच्छिन्नसाध्यव्यापक और उदासीनधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक। (तर्कदीपिका) ११ अलङ्कार मतसे जाति गुण क्रियाका यदृच्छास्वरूप। १२ सम्मानसूचक शब्द, ख़िताब।

उपाधिक (सं॰ त्रि॰) अधिक, ज़्यादा, ऊपरी।

उपाधेय (सं॰ त्रि॰) उप-आ-धा कर्मणि यत्। १ अभिनिवेशनीय, जमाने लायक़। २ आरोपयोग्य लगानेक़ाबिल। ३ उपाधिके योग्य, ख़िताबके लायक़।

उपाधी (सं॰ त्रि॰) उत्पाती, ऊधम उठानेवाला।

उपाध्या (हिं॰) उपाध्याय देखो।

उपाध्याय (सं॰ पु॰) उपेत्य अधीयतेऽस्मात्, उप-अधि-इ-घञ्। १ अध्यापक, उस्ताद। २ वेदके एक देशका अध्यापक।

"एकदेशन्तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः।
योऽध्यापयति वृत्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते॥" (मनु २।१४१)

जो व्यक्ति अपनी जीविकाके निर्वाहके लिये वेदका कोई अंश वा वेदाङ्ग पढ़ाता, वह उपाध्याय कहलाता है। उपाध्याय आचार्यसे छोटा होता है। क्योंकि कल्प एवं उपनिषद्के साथ सम्पूर्ण वेद पढ़ाना आचार्यका काम है।

३ कान्यकुब्ज प्रभृति ब्राह्मण जातिका एक उपाधि। ४ भुकसा नामक पंवार राजपूतोंका एक उपाधि।

उपाध्याया (सं० स्त्री०) उपाध्याय-स्त्रियां टाप् । अध्यापिका, पढ़ानेवाली औरत ।

उपाध्यायानी (सं० स्त्री०) उपाध्याय-ङीष्-आनुक् । ततः इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणामानुक् । पा ४।१।४९। उपाध्यायपत्नी, उस्तादकी औरत ।

उपाध्यायी, उपाध्यायानी देखो।

उपान (हिं० स्त्री०) १ भवनका संस्थान, मकान्की कुरसी । २ स्तम्भाधार, खम्भेकी चौकी ।

उपानः (वै० त्रि०) १ शकटसदृश, गाड़ी-जैसा । २ पितृसदृश, बाप-जैसा ।

उपानत् (सं० स्त्री०) उपनह्यते पादौ अनया, उप-नह्-क्विप् पूर्वपदस्य दीर्घः । नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ । पा ६।३।११६ चर्मपादुका, चमड़ेकी जूती । "कार्ष्णी उपानहा उपमुञ्चते ।" (तैत्तिरीयसं० ५।४।४।४

उपानद—हिण्डोल रागका एक भेद ।

उपानद्धारण (सं० क्ली०) चर्मादिकी पादुका धारण, चमड़े वग़ैरहकी जूतीका पहनाव। यह नेत्रको सुख देनेवाला, आयुष्य बढ़ानेवाला, पादका रोग मिटानेवाला,सुख देखानेवाला, ओज चढ़ानेवाला, और बलवीर्य लानेवाला होता है। क्योंकि नङ्गे पांव सदा घूमनेसे मनुष्य रोगी, आयुष्यसे हीन, हतइन्द्रिय और अन्ध हो जाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

उपाना (हिं० क्रि०) उत्पन्न करना, बनाना ।

उपानुवाक्य (सं० त्रि०) उप-अनु-वच्-ण्यत् । १ पश्चात् कथनयोग्य, पीछे कहे जानेके काबिल। यह शब्द अग्निका विशेषण है । (क्ली०) २ वेदोक्त वाक्य भेद, तैत्तिरीय-संहिताका एक अंश ।

उपान्त (सं० त्रि०) उपगतमन्तेन। १ निकट, समीप, नज़दीक। (क्ली०) २ प्रान्तभाग, लगा हुआ हिस्सा। "उपान्तभागेषु च रोचनाङ्कः ।" (कुमार) ३ तीर, किनारा । ४ चक्षुका कोण, आंखका कोना। ५ एक व्यतिरेक अन्तिम अक्षर, सिवा एकके आख़िरी हर्फ़ ।

उपान्त्यवर्ण (सं० पु०) अन्त्यवर्णका पूर्व-वर्ण, आख़िरी हर्फ़के पहलेका हर्फ़ । जैसे यशस् शब्दमें दन्त्य सकारके पहले तालव्य शकारका परवर्ती वर्ण अकार उपान्त्यवर्ण है ।

उपान्तसर्पी (सं० त्रि०) समीप आगमन करनेवाला, जो पास आ रहा हो ।

उपान्तिक (सं० क्ली०) उप आधिक्ये अन्तिकम्, प्रादिसमा०। १ निकट, नज़दीक । (त्रि०) २ समीपस्थ, पड़ोसी, पास पड़नेवाला ।

उपान्त्य (सं० त्रि०) उप-अन्त-यत् । निकटवर्ती, पास पड़नेवाला । (पु०) २ चक्षुका कोण, आंखका कोना । (क्ली०) ३ नैकट्य, पड़ोस ।

उपाप्ति (सं० स्त्री०) उप-आप-क्तिन् । प्राप्ति, हासिल, पहुंच ।

उपाभृति (वै० स्त्री०) उप-आ-भृ-क्विप्-तुक् । ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्। पा ६।१।७१। उपाहरण, नज़दीक लानेका काम । (ऋक् १।१२८।९) 'उपाभृति उपाहरणे।' (सायण)

उपाय (सं० पु०) उप-अय-भावे घञ् । १ उपगम, नज़दीक पहुंचनेकी बात । २ राजादिके शत्रु वशी-भूत करनेका हेतु, दुश्मनपर फ़तेह पानेका ज़रिया । यह चार प्रकारका होता है—साम, दान, भेद और दण्ड। किसीके मतमें उपाय सात प्रकारका है—साम, दान, भेद, दण्ड, माया, उपेक्षा और इन्द्रजाल । शेषोक्त तीन उपाय सामान्य समझे जाते हैं। एतद्भिन्न आलङ्कारिक दो प्रकारके दूसरे भी उपाय बताते हैं ।

३ साधन, सबब। यह दो प्रकारका है—लौकिक और अलौकिक । घटादि निर्माणके लिये चक्रादि लौकिक और स्वर्गगमनके पक्षमें याग-यज्ञादि अलौकिक उपाय है। ४ उपार्जन, दौलत हासिल करनेका ज़रिया। ५ छल, धोका। ६ प्रति-कारका पथ, रोकको राह। ७ उपक्रम, सिलसिला।

उपायचतुष्टय (सं० क्ली०) शत्रुको पराभूत करनेके लिये साम, दाम, दण्ड और भेदरूप चार प्रकारका उपाय ।

उपायचिन्ता (सं० स्त्री०) साधनका विचार, तदबीरकी फ़िक्र ।

उपायज्ञ (सं० त्रि०) उपायको समझनेवाला, जो तदबीर निकाल लेता हो ।

उपायतुरीय (सं० पु०) दण्डरूप चतुर्थ उपाय, चौथी तदबीर सज़ा ।

उपायत्व (सं० क्लो०) साधन प्राप्त होनेकी स्थिति, तदबीर निकल आनेकी हालत।

उपायन (सं० क्लो०) उप-इन् वा अय-ल्युट्। १ उपढौकन, भेंट। २ निकट गमन, पहुंच। ३ उपगमन, पास जानेकी हालत। (ऋक् १।१८८।१) 'उपायने उपगमने।' (सायण) कर्मणि ल्युट्। ४ उपढौकनीय द्रव्यादि, भेंटकी चीज़। ५ व्रतादि प्रतिष्ठा।

उपाययोग (सं० पु०) साधनका नियोग, तदबीरके काममें लगाये जानेकी बात।

उपायान्तर (सं० क्लो०) प्रतीकार, इलाज।

उपायिक (सं० त्रि०) आवश्यकर, मायल, रुजू।

उपायिन् (सं० त्रि०) उप-अय-इनि। १ साधन युक्त, तदबीरी। २ उपगन्ता, डौला लगा लेनेवाला। (कात्यायनश्रौतसू० ३।५।१६)

उपायु (वैं० त्रि०) उप-आ-इन-उन्। उपगन्ता, पास पहुंच जानेवाला। (शुक्लयजुः १।१)

उपार (वै० पु०) उप-ऋ-घञ्। समीप, पड़ोस। (ऋक् ७।८६।६) २ प्रमाद, ग़लती।

उपार—बम्बईप्रान्तीय कोल्हापुर राज्यके सङ्गतराश। यह दश बारह हज़ारसे कुछ अधिक ग्रामों तथा नगरोंमें बसते हैं। देखनेमें उपार कुनबियों या मालियोंसे मिलते-जुलते हैं। यह देवताको अपने वशमें रखनेका दावा करते हैं। कभी-कभी उपार नदीके किनारे बैठ माल फेरते और अवसर पा स्नान करनेवालोंका माल-असबाब ले भागते हैं। ये यहांसे नमक भी बनाते हैं। इनमें विधवा-विवाह होता है। किसीके मरनेपर दश दिन अशौच रहता है। पञ्चायतसे जातिका झगड़ा मिटाया जाता है। इनमें पढ़े-लिखे और अमीर आदमी कम हैं।

उपारण (सं० क्लो०) उप-आ-ऋ-ल्युट्। अनुपयुक्त स्थान, ख़राब जगह।

उपारत (सं० त्रि०) उप-आ-रम-क्त। १ प्रत्यावृत्त, आने-जानेवाला। २ प्रसन्न, खुश। ३ संलग्न, मशगूल।

उपारना, उखाड़ना देखो।

उपारम (सं० पु०) नियोग, लगाव।

उपारम्भ (सं० पु०) उप-आ-रभ-घञ्-नुम्। रभेरश लिटोः। पा ७।१।६३। आरम्भ, शुरू।

उपारूढ़ (सं० त्रि०) वर्धित, बढ़ा हुआ।

उपारूढ़स्नेह (सं० त्रि०) वर्धित प्रीति रखनेवाला, जो अपनी मुहब्बत बढ़ा चुका हो।

उपार्जक (सं० त्रि०) अर्जन कर लेनेवाला, जो कमा खाता हो।

उपार्जन (सं० क्लो०) उप-अर्ज-ल्युट्। १ अर्जनकर लेनेका कार्य, कमाई। २ सेवा, खिदमत। ३ कृषि, खेती। ४ वाणिज्यादिका धनलाभ, रोज़गार वगैरहका फायदा।

उपार्जनीय (सं० त्रि०) अर्जन किये जाने योग्य, जो कमालेनेके क़ाबिल हो।

उपार्जित (सं० त्रि०) प्राप्त, कमाया हुआ।

उपार्थ (सं० त्रि०) अल्प अर्थवाला, नाकाम, जिससे कोई काम न निकले।

उपालब्ध (सं० त्रि०) उप-आ-लभ-क्त। तिरस्कारपूर्वक निन्दित, जो झिड़का और बुरा कहा गया हो।

उपालभ्य (सं० त्रि०) निन्दनीय, जो झिड़काने जानेके क़ाबिल हो।

उपालम्भ (सं० पु०) उप-आ-लभ-घञ्-नुम्। उपसर्गात् खल् घञोः। पा ७।१।६७। १ निन्दापूर्वक तिरस्कार, गालीगलेज, आड़फटकार। २ विलम्ब, देर।

उपालम्भन (सं० क्लो०) उपालम्भ देखो।

उपालभ्य (सं० त्रि०) अतिरिक्तरूपसे ग्रहण किया जानेवाला, जो ज्यादतीमें लिया जाता हो।

उपालि—बुद्धदेवके एक प्रिय शिष्य। जातिके नापित होते भी ये बुद्धकी कृपासे शाक्यभिक्षुवोंमें प्रधान बन गये थे। बौद्ध विनयको इन्होंने नियमित किया। (महावस्त्ववदान)

उपाव (हिं०) उपाय देखो।

उपावर्तन (सं० क्लो०) उप-आ-वृत-ल्युट्। १ पुनर्वार आगमन, वापसी। २ भूमिपर लुण्ठन, ज़मीनपर लोटने-पोटनेका काम। ३ प्राप्ति, पहुंच। ४ समाप्ति, बन्दी।

उपावसायिन् (सं० त्रि०) अधीनस्थ, मातहत।

उपावसु (सं॰ त्रि॰) धनप्रदान करनेवाला, जो दौलत बख्शता हो।

उपावहरण (सं॰ क्ली॰) निम्न आनयन, नीचे लानेका काम।

उपावासी (सं॰ पु॰) उप-आ-वस-णिनि। उपकारी, फ़ायदा पहुंचानेवाला।

उपावृत् (वै॰ स्त्री॰) उप-आ-वृत-क्त। १ घूर्णित, घूम पड़नेवाला। २ प्रतिनिवृत्त, छूटाहुआ। ३ क्लान्ति-निवारणके अर्थ भूमिपर लुण्ठित, थकाहट निकालनेके लिये जो ज़मीन्पर लोट गया हो। ४ आगत, पहुंचा हुआ। ५ योग्य, लायक। (पु॰) ६ भूमिपर लुण्ठित् अश्व, ज़मीन्पर लोटाहुआ घोड़ा।

उपाशंसनीय (सं॰ त्रि॰) भविष्यत्में आशा किया जानेवाला, जो आयिन्दाके लिये परखा जाता हो।

उपाश्रय (सं॰ पु॰) उप-आ-श्रि-अच्। १ स्थान, जगह। २ मत्तहस्ती, मतवाला हाथी। ३ साहाय्य, सहारा। ४ विश्वास, भरोसा। (त्रि॰) ५ आश्रयका स्थल, पनाहकी जगह।

उपाश्रित (सं॰ त्रि॰) उप-आश्रि-क्त। आश्रय ग्रहण किये हुआ, जो सहारा पकड़ चुका हो। २ रक्षक, मुहाफ़िज।

उपास—१ एकप्रकारका विषवृक्ष। यह यवद्वीप और उसके निकटस्थ स्थानोंमें उपजता है। इसे ओडार

वा 'उपास' कहते हैं। दैर्घ्य ८०।९० फीट होता है। इसकी सर्वोच्च शाखामें स्त्रीपुष्प और अधः—शाखामें पुंपुष्प फूटता है। त्वक् अत्यन्त स्थूल होती हैं। उसमें अस्त्राघात लगानेसे निर्यास निकलता है। यह निर्यास अतिशय विषाक्त है। कणामात्र जीवदेहके शरीरमें छिद्र जानेसे तत्क्षणात् सर्वशरीरमें विष फैल प्राणविनाश करता है। यवद्वीपके अधिवासी अपने शरके अग्रभागपर यह निर्यास लगा उसे शत्रुके प्रति फेंकते हैं। जिसके वह शर लगता, उसे अवश्य मरना पड़ता है। (हिं॰) २ उपवास, फ़ाक़ा, खाना-पीना छूट जानेकी हालत।

उपासक (सं॰ त्रि॰) उप-आस-ण्वुल्। १ सेवक, ख़िदमतगार। २ उपासनाकारक, परस्तिश करनेवाला। यथा—"चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिणः।

उपासकानां सिद्ध्यर्थं ब्रह्मणो रूपकल्पना॥"

उपासकोंकी सिद्धिके अर्थ उस चिन्मय, अद्वितीय और निर्गुण परब्रह्मकी नानाविध मूर्ति कल्पित हुआ करती है। जो सद्गति पाने वा पुरुषार्थ लानेके लिये सगुण अथवा निर्गुण ब्रह्मकी उपासना करते हैं, उन्हें उपासक कहते हैं।

भारतवर्षमें नानाप्रकारके उपासक विद्यमान हैं। उनमें वैष्णव, शाक्त, शैव, और गाणपत्य पांच प्रकारके उपासक ही प्रधान समझे जाते हैं।

"शैवानि गाणपत्यानि शाक्तानि वैष्णवानि च।
साधनानि च सौराणि चान्यानि यानि कानि च॥
श्रुतानि तानि देवेश त्वद्वक्त्रान्निःसृतानि च॥" (तन्त्रसार ३य परि॰)

विष्णुके उपासक वैष्णव, शक्तिके उपासक शाक्त, शिवके उपासक शैव, सूर्यके उपासक सौर और गणेशके उपासक गाणपत्य कहलाते हैं।

उक्त उपासक वैदिक और तान्त्रिक भेदसे दो प्रकारके होते हैं। फिर पांचो प्रकारके उपासक नाना शाखा-प्रशाखाओंमें विभक्त हैं। उनमें कतिपय नाम उद्धृत करते हैं—

वैष्णवसम्प्रदाय—रामानुज, श्रीवैष्णव, आचार, रामानन्दी, संयोगी, कबीरपन्थी, खाकी, मूलकदासी, दादूपन्थी, रैदासी, सेनपन्थी, रामसनेही, मध्वाचारी, वल्लभाचारी, मीरा, निमात, विठ्ठल, चैतन्य, स्पष्टदायक, कर्ताभजा, रामवल्लभी, साहबधनी, बाउल, न्याड़ा,

दरवेश, सांई, आउल, साध्विनी, सहजी, खुशीविश्वासी, गौरवादी, बलरामी, हजरती, गोबराई, पागलनाथी, तिलकदासी, दर्पनारायणी, अतिबड़ी, राधावल्लभी, सखीभावक, चरणदासी, हरिश्चन्द्री, सधपन्थी, माधवी, चुहड़पन्थी, कूड़ापन्थी, वैरागी, नागा, विन्दुधारी, कविराजी, सतकुली, अनन्तकुली, योगिवैष्णव, गिरिवैष्णव, गुरुवासी वैष्णव, नाना जातीय, उत्कलवैष्णव, विरक्त, निरङ्ग, अभ्यागत, कालिन्दी, चामार, हरिव्यासी, रामप्रसादी, बड़गल, तिङ्गल,लश्करी, चतुर्भुजी, फलहरी, वाणशायी, पञ्चधुनी, मौनव्रती, दुराधारी, ठाड़ेश्वरी, वैष्णवदण्डी, वैष्णवब्रह्मचारी,वैष्णवपरमहंस, मार्गी, पलटूदासी, आपापन्थी, सत्‌नामी, दरियादासी, बुनियाददासी, निरञ्जनी, मानभाव, किशोरीभजनी, अनहड़पन्थी, बीजमार्गी, महापुरुषीय, रातभिखारी, ओयारिकरी, टहलिया और कुजोगाईन।

शाक्तसम्प्रदाय—करारी, भैरव, भैरवी चोलियापन्थी, पश्वाचारी, वीराचारी, शीतलापण्डित, योगिनी, शाक्ती।

शैवसम्प्रदाय—दण्डी, सन्यासी, नागा, घरबारी दण्डी, घरबारीसन्यासी, त्यागसन्यासी, अलखिया, दङ्गली, अघोरपन्थी, ऊर्ध्वबाहु, आकाशमुखी, नखी, ठाड़ेश्वरी, ऊर्ध्वमुखी, पञ्चधुनी, मौनव्रती, जलशय्यी, जलधारातपस्वी, कड़ालिङ्गी, फसरी, दूधाधारी, अलोना, अघोघड़, गूदड़, सूखड़, रूखड़, भुक्खड़, कुक्कड़, उक्खड़, अवधूतानी, ठीकरनाथ, स्वभङ्गी, आतुरसन्यासी, ब्रह्मचारी, योगी, कनफटयोगी, अघोरपन्थीयोगी, योगिनी, संयोगी, महेन्द्री, शारङ्गीहार, डुरिहार भर्टहरि, कानिपायोगी, दशनामीभाट, चन्द्रभाट, लिङ्गायत और तोरशैव वा जङ्गम।

सिवा इनके नरेशपन्थी, पाङ्गुल, केउरदास, फकीर, कुम्भपटिया, खोजा और ब्राह्म प्रभृति कतिपय आधुनिक धर्म सम्प्रदाय भी विद्यमान हैं। प्रत्येक शब्दमें उन उनका विवरण देखो।

उपासङ्ग (सं० पु०) उपासज्यन्तेऽत्र शरा अत्र, उप-आ-सन्‌ज-घञ्। १ वाणाधार, तरकश। "समन्तात् कलधौताग्रा उपासङ्गे हिरण्मये।" (भारत विराट् ४२ अ०) भावे घञ्। २ आसक्ति, लगाव।

उपासन (सं० क्ली०) उपास्यन्ते क्षिप्यते शरा अत्र, उप-अस-ल्युट्। १ वाणके निक्षेपका अभ्यास, तीर चलानेका महावरा। २ आघात करण, मारकाट। भावे ल्युट्। ३ चिन्ता, फिक्र। ४ सेवा, खिदमत। ५ उपकार, भलाई।

उपासना (सं० स्त्री०) उप-आस-युच् स्त्रियां टाप्। १ पूजा, परस्तिश। २ परिचर्या, खिदमत, टहल। ३ ध्यानादि द्वारा इष्ट देवताका चिन्तनादि।

"न्यायचर्चेयमीशस्य मननव्यपदेशभाक्।
उपासनैव क्रियते श्रवणान्तरागता॥" (कुसुमाञ्जलिवृत्ति १।)

अधिकारीके भेदसे उपासना दो प्रकारकी होती है। दुर्बल अधिकारीको सगुण ब्रह्म अर्थात् मूर्ति प्रभृति और प्रबल अधिकारीको निर्गुण परमात्माकी उपासना करना चाहिये। कर्मनिष्ठ व्यक्ति ब्रह्मनिष्ठाके उपयुक्त नहीं होता।

"अनन्यचित्तता ब्रह्मनिष्ठाऽसौ कर्मठे कथम्।
कर्मत्यागी ततो ब्रह्मनिष्ठामर्हति नेतरः॥" (अधिकरणमाला ३।४)

समस्त विषय छोड़ एकाग्र भावसे परब्रह्ममें चित्तवृत्तिका समाधान करना ब्रह्मनिष्ठा कहलाता है। वह कर्मपरायण व्यक्तिसे बन नहीं सकता। अतएव जो कर्मानुष्ठान छोड़ता, वही ब्रह्मनिष्ठाको जोड़ता है; अन्य व्यक्ति ब्रह्मनिष्ठ नहीं बन सकता। इसके अधिकारियोंका मुक्ति लाभ ही लक्ष्य है। तत्त्वज्ञान द्वारा परमात्माके साक्षात् करनेके सिवा मुक्तिलाभका दूसरा कोई उपाय नहीं। फिर योगके विना तत्त्व ज्ञान कैसे आ सकता है! वेदमें परमात्म-साक्षात् करनेके तीन उपाय कहे हैं। यथा,—१ श्रवण, २ मनन और ३ निदिध्यासन। श्रुतिमें लिखा है—

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।"

परमात्म-साक्षात् करनेके लिये श्रवण, मनन और निदिध्यासन करना चाहिये। उसीसे परमात्माका साक्षात् कार हो सकता है।

"श्रवणं नाम षड्‌विधलिङ्गैरशेषवेदान्तानामद्वितीये ब्रह्मणि तात्पर्यावधारणम्। लिङ्गानि तु उपक्रमोपसंहाराभ्यासापूर्वताफलार्थवादोपपत्त्याख्यानि।"

श्रवण—उपक्रम एवं उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता,

फल, अर्थवाद और उपपत्ति—छह प्रकारके लिङ्ग द्वारा समस्त वेदान्तका तात्पर्य ब्रह्ममें अवधारण करना श्रवण कहलाता है।

"तत्र प्रकरणप्रतिपाद्यस्यार्थस्य तदाद्यन्तयोरुपादानं उपक्रमोपसंहारौ। यथा छान्दोग्यषष्ठप्रपाठके प्रतिपाद्याद्वितीयवस्तुनः एकमेवाद्वितीयमित्यादौ ऐतदात्म्यमिदं सर्वमित्यन्ते च प्रतिपादनम्।"

उपक्रम और उपसंहार—जिस प्रकरणमें जो विषय प्रतिपादन करते, उस प्रकरणके आदि और अन्तमें उसी विषयके कीर्तनको यथाक्रम उपसंहार कहते हैं। जैसे छान्दोग्य उपनिषद्‌के षष्ठ प्रपाठकमें प्रथमतः "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" और पश्चात् "ऐतदात्म्यमिदं सर्वं" कहा है। अर्थात् आदिमें ब्रह्मको एक एवं अद्वितीय और अन्तमें विश्वको ब्रह्मात्मक बता उपक्रमके साथ उपसंहार लगाया है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यस्य वस्तुनः तन्मध्ये पौनःपुन्येन प्रतिपादनं अभ्यासः। यथा तत्रैवाद्वितीयवस्तुनो मध्ये 'तत्त्वमसि' इति नवकृत्वः प्रतिपादनम्।"

अभ्यास—प्रकरणके मध्य प्रतिपाद्य वस्तुका पुनः पुनः कीर्तन अभ्यास है। यथा उक्त प्रपाठकमें 'तत्त्वमसि' अर्थात् 'वह परमात्मा तुम्ही हो' नौ बार प्रतिपादित है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यस्य वस्तुनः तत्त्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामीत्यादिना उपनिषन्मात्रवेद्यत्वप्रतिपादनात् मानान्तराविषयीकरणम्।"

अपूर्वता—प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तुके मानान्तरका अविषयीकरण अपूर्वता कहलाता है। जैसे उक्त प्रपाठकमें अर्थात् 'उसी उपनिषद्‌के प्रतिपाद्य पुरुषका विषय पूछताहूं' कहकर प्रकरण-प्रतिपाद्य परब्रह्मको वेदान्तरिक्त प्रमाण द्वारा असम्प्राप्ति दिखाना ही अपूर्वता है।

"फलन्तु प्रकरणप्रतिपाद्यात्मज्ञानस्य तत्र तत्र श्रूयमाणं प्रयोजनम्। यथा तत्रैव आचार्यवान् पुरुषो वेद तस्य तावदेव चिरं यावद् विमोचे अथ सम्पत्स्ये तत्प्राप्तिप्रयोजनं श्रूयते।"

फल—प्रकरण-प्रतिपाद्य अनुष्ठानके फलकी स्तुति अथवा श्रूयमाण प्रयोजनका नाम फल है। जैसे उसी प्रपाठकमें "आचार्यवान् पुरुषः" अर्थात् 'पुरुष आचार्यवान् है' इत्यादि सन्दर्भ द्वारा परब्रह्ममें ज्ञानानुष्ठानको ब्रह्मप्राप्ति-रूप फलश्रुति सुनायी है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्र तत्र प्रशंसनमर्थवादः। यथा तत्रैव उततमादेशमप्राक्ष्यो येन श्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातं इत्यद्वितीयवस्तु प्रशंसनम्।"

अर्थवाद—प्रकरणप्रतिपाद्य वस्तुको स्थान-स्थानपर होनेवाली प्रशंसा अर्थवाद कहलाती है। जैसे उसी प्रपाठकमें "उततमादेशमप्राक्ष्यो" अर्थात् 'तुमने वही पूछा जिसको श्रुत होनेसे कुछ अश्रुत नहीं रहता' इत्यादि और "अविज्ञातं विज्ञातम्" अर्थात् 'जिसके जाननेसे अज्ञात वस्तु भी विज्ञात हो जाता है' शेष सन्दर्भ द्वारा प्रतिपाद्य परब्रह्मको प्रशंसा की गयी है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसाधने तत्र तत्र श्रूयमाणा युक्तिरुपपत्तिः। यथा तत्रैव यथा सौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृण्मयं विज्ञातं स्यात् वाचारम्भणं विकारो नामधेयः मृत्तिकेत्येव सत्यमित्यादावद्वितीयवस्तु साधने विकारस्य वाचारम्भणमात्रत्वे युक्तिः श्रूयते।"

उपपत्ति—प्रकरण-प्रतिपाद्य अर्थको सम्भवता ठहरानेके लिये जो युक्ति दी जाती है, वही उपपत्ति है। जैसे उसी प्रपाठकमें "यथा सौम्यैकेन" अर्थात् 'एक मृत्पिण्डसे' इत्यादि और "मृत्तिकेत्येव सत्यम्" अर्थात् 'मृण्मय पात्रादि भी समझ पड़ते हैं। विकार और नाम केवल वाक्य मात्र है। मृत्तिका ही यथार्थ है' शेष सन्दर्भ द्वारा अद्वितीय वस्तुके प्रतिपादनमें विकार अर्थात् जड़ जगत्‌को वाक्यमात्रस्वरूप युक्ति प्रदर्शित है।

"मननन्तु श्रुतस्याद्वितीयवस्तुनो वेदान्तार्थानुगुणयुक्तिभिरनवरतमनुचिन्तनम्।"

मनन—वेदान्तकी अविरोधिनी युक्तिसे श्रुत अद्वितीय परब्रह्म वस्तुकी निरन्तर चिन्ताका नाम मनन है।

"विजातीयदेहादिप्रत्ययविरहिताद्वितीयवस्तुसजातीयप्रवाहो निदिध्यासनम्।"

निदिध्यासन—जड़ पदार्थके विरोधी ज्ञानको छोड़ अद्वितीय ब्रह्मवस्तुका जो अविरोध विज्ञान बहता है, उसीको शास्त्रमें निदिध्यासन कहा है। बस—श्रवण, मनन और निदिध्यासनकी उपासनासे योगसिद्धि होनेपर परम पदार्थ परब्रह्म मिल सकता है।

योगसे उक्त श्रवण, मनन और निदिध्यासन सिद्ध होता है। जीवात्मा और परमात्माके संयोगको योग कहते हैं। योगके आठ अङ्ग हैं। अब अष्टाङ्ग योग और उसका विशेष विवरण बतलाते हैं।

"ज्ञानं योगात्मकं विद्धि योगश्चाष्टाङ्गसंयुतम् ।
संयोगी योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः ॥" (योगियाज्ञवल्क्य)

ज्ञान योगात्मक है अर्थात् योग ही ज्ञान बनता है। और परमात्माके साथ जीवात्माका संयोग योग कहलाता है। योगके आठ अंग है।

"यमश्च नियमश्चैव आसनञ्च तथैव च ।
प्राणायामस्तथा गार्गि प्रत्याहारश्च धारणा ॥
ध्यानं समाधिरेतानि योगाङ्गानि वरानने ॥"

हे वरानने गार्गि ! यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि आठ योगके अङ्ग होते हैं।

सकल अष्टाङ्गके प्रकारका भेद यह है—

"यमश्च नियमश्चैव दशधा सुप्रकीर्तितः ।
आसनान्युत्तमान्यष्टौ त्रयं तेषूत्तमोत्तमम् ॥
प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः प्रत्याहारश्च पञ्चधा ।
धारणं पञ्चधा प्रोक्ता ध्यानं षोढा प्रकीर्तितम् ॥
त्रयन्तेषूत्तमाः प्रोक्ता समाधेस्त्वेकरूपता ।
बहुधा केचिदिच्छन्ति विस्तरेण पृथक् शृणु ॥"

यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय (अचौर्य), ब्रह्मचर्य, दया, आर्जव (सारल्य), क्षमा, धृति, परिमिताहार और शौच इन दश प्रकारका यम होता है। इसमें भी

"सत्यं भूतहितं प्रोक्तं न यथार्थाभिभाषणम् ।"

सत्य—प्राणियोंका हितकर वाक्य ही सत्य है। केवलमात्र यथार्थ भाषणको सत्य नहीं कहते।

—काया, मन और वाक्यसे परद्रव्यके प्रति जो निस्पृहा रहती है, उसीको विद्वन्मण्डलीने अस्तेय कहा है।

ब्रह्मचर्य—सर्वत्र, सर्वथा तथा सर्वावस्थामें काया, मन और वाक्यसे मैथुन छोड़नेका नाम ब्रह्मचर्य है।

—काया, मन और वाक्यसे समस्त प्राणियों पर अनुग्रह रखनेकी इच्छाका नाम दया है।

आर्जव—प्रवृत्ति और निवृत्तिमें जो समभाव रहता है, उसीको योगी आर्जव कहते हैं।

क्षमा—प्राणियोंके प्रिय और अप्रिय सकल विषयोंमें रहनेवाले समभावको क्षमा कहते हैं।

धृति—अर्थकी हानि, बन्धुका वियोग प्रभृति सकल शोचनीय विषय पुनः पुनः पड़ते भी चित्तमें जो स्थिरता रहती, उसे विद्वन्मण्डली धृति कहती है।

मिताहार—मुनियोंको आठ, अरण्यवासियोंको सोलह गृहस्थोंको बत्तीस और ब्रह्मचारियोंको मनमाने ग्रास ग्रहण करनेका विधान है। इसी विहित ग्रासके भोजनको मिताहार कहते हैं।

शौच—शौच दो प्रकारका होता है—बाह्य और आभ्यन्तर। मृत्तिका तथा जलादि द्वारा गात्रादिके शौचको बाह्य शौच और धर्मानुशीलन एवं अध्यात्मविद्या द्वारा मनः-शौचको आभ्यन्तर शौच कहते हैं।

नियम—तपस्या, सन्तोष, आस्तिक्य, दान, ईश्वरपूजा, सिद्धान्तश्रवण, लज्जा, मति, जप और व्रत दश प्रकारका नियम होता है।

आसन—स्वस्तिक, गोमुख, पद्म, वीर, सिंह, भद्र, मुक्त, मयूर प्रभृति कई आसन कहे हैं। आसनसे देह और मनका स्थैर्य सम्पादित होता है।

प्राणायाम—प्राण और वायुके संयोगका नाम प्राणायाम है। प्राणायामके समय रेचक, पूरक और कुम्भक तीन प्रक्रियां करना पड़ती हैं। प्राणायामके द्वारा प्राणवायुको जीत सकते हैं।

प्रत्याहार—सकल इन्द्रिय स्वभावसे ही विषय-सम्भोगके लिये धावमान हैं। उन्हें बलपूर्वक अपने-अपने विषयसे हटाकर रखना प्रत्याहार कहलाता है।

धारणा—यम-नियमादि गुणयुक्त हो मनका आत्मामें अवस्थान धारणा है।

ध्यान—मनोमध्य परमात्माके स्वरूप-चिन्तनको ध्यान कहते हैं।

समाधि—जीवात्मा और परमात्माकी समतावस्थाका नाम समाधि है। कोई कोई कहते हैं, कि समाधिमें सविकल्पक और निर्विकल्पक दो भेद रहते हैं।

ऐसे समस्त उपायों द्वारा परमात्मा परमेश्वरकी उपासना करनेसे अवश्य मोक्ष मिल सकता है।

अन्यान्य उपासनाओंका विषय पूजा शब्दमें देखो।

उपासनार्थ (सं० वि०) उपस्थितिके योग्य, जो हाज़िरीके क़ाबिल हो।

उपासनीय (सं० त्रि०) उपासना किये जाने योग्य, जो परस्तिशके काबिल हो।

उपासा (सं० स्त्री०) उप-आस भावे अ-टाप्। १ उपासना, मज़हबी खयाल। २ सेवा, खिदमत। (हिं० पु०) ३ अन्न-जल ग्रहण न करनेवाला, जो फाकेसे हो।

उपासादित (सं० त्रि०) उप-आ-सद-णिच्-क्त। १ प्राप्त, हासिल किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ प्राप्ति, हासिल।

उपासित (सं० त्रि०) उप-आस-क्त। १ पूजित, परस्तिश किया हुआ। २ उपासना करनेवाला, जो परस्तिश करता हो।

उपासितव्य (सं० त्रि०) उपासना किया जानेवाला, जो परस्तिश किये जानेके काबिल हो। २ पूर्ण किया जानेवाला, जिसे पूरा करना पड़े। ३ चिन्तनीय, खयाल किया जानेवाला।

उपासितृ (सं० त्रि०) उपासना करनेवाला, जो पूजता हो।

उपासी, उपासित देखो।

उपासीन (सं० त्रि०) निकट बैठा हुआ, जो दखल जमाये हो।

उपास्तमन (सं० क्ली०) सूर्यास्त, गुरूब-आफ़ताब, सूरजका डूबना।

उपास्तमय (सं० अव्य०) सूर्यास्तके समय, आफ़ताब गुरूब होनेके वक्त।

उपास्ति (सं० स्त्री०) उप-आस-क्तिन्। १ उपासना, परस्तिश। "यदुपास्तिमसावत्र परमात्मा निरूप्यते॥" (कुसुमाञ्जलि २) २ सेवा, खिदमत।

उपास्त्र (सं० क्ली०) उपगतमस्त्रम्। अस्त्रोपकरण, दूसरे दरजेका या छोटा हथियार। तूनादिको उपास्त्र कहते हैं।

उपास्थि (सं० क्ली०) शरीरके अन्तरस्थ अस्थि जैसा एक पदार्थ, कुररी, चबनी या मुरमुरी हड्डी। (Cartilage) उपास्थि वा कोमलास्थि प्रायः तीन प्रकारका होता है—क्षणिक, स्थायी और आकस्मिक। जीवके देहकी प्रथम अवस्थामें जो अस्थिके बदले देख पड़ता, वही क्षणिक है। सन्धि अथवा अस्थिके संयोग-स्थानमें उत्पन्न होनेवाला उपास्थि स्थायी कहलाता है। समूहरूपसे निकलनेवाले उपास्थिक समावेशका नाम आकस्मिक है।

उपास्थिक (सं० पु०) मत्स्यकी एक श्रेणी, किसी किस्मकी मछली। जिस मत्स्यके कङ्कालमें कण्टक नहीं रहते, उसे उपास्थिक कहते हैं।

उपास्य (सं० त्रि०) उप-आस कर्मणि ण्यत्। १ सेव्य, खिदमत किये जानेके काबिल। २ चिन्तनीय, खयाल किये जानेके काबिल। (भारत, अनु ८ अ०) ३ माननीय, इज्जत किये जानेके लायक। (अव्य०) ४ सेवा करके, खिदमत बजाकर।

उपास्यमान (सं० त्रि०) उपासना किया जानेवाला, जो परस्तिश पा रहा हो।

उपाहार (सं० पु०) लवाहार, हलका नाश्ता। इसमें केवल फल और मिष्टान्नादि खाते हैं।

उपाहित (सं० त्रि०) उप-आ-धा-क्त। १ आरोपित, लगाया हुआ। (क्ली०) २ अग्न्युत्पात, आगका झगड़ा।

उपाहृत (सं० त्रि०) उप-आ-हृ-क्त। १ गृहीत, पकड़ा हुआ। २ समर्पित, नजर किया हुआ, जो दे डाला गया हो।

उपेक्ष (सं० पु०) श्वफल्कके पुत्र और अक्रूरके भ्राता। (हरिवंश ३५ अ०)

उपेक्षक (सं० त्रि०) उप-ईक्ष-ण्वुल्। १ उपेक्षाकारक, लापरवा। २ धैर्ययुक्त, सब्र करनेवाला।

"उपेक्षकोऽसङ्कुसुको मुनिर्भावसमाहितः।" (मनु ६।४३)

'उपेक्षकः शरीरस्य व्याध्युत्पादे तत् प्रतीकाररहितः।' (कुल्लूक)

उपेक्षण (सं० क्ली०) उप-ईक्ष भावे ल्युट्। १ अनादर, औदासीन्य, लापरवाई। २ त्याग, तर्क, छोड़ बैठनेका काम। ३ राजावोंका एक उपाय। उपाय देखो।

उपेक्षणीय (सं० त्रि०) उप-ईक्ष-अनीयर्। १ त्याज्य, छोड़ दिये जाने काबिल। २ प्रतीकारकी चेष्टाके अयोग्य, जिसपे रोककी कोशिश चल न सके।

"नश्यत्पुरस्तादनुपेक्षणीयम्।" (रघु)

उपेक्षा (सं० स्त्री०) उप-ईक्ष-अ-टाप्। १ त्याग,

तर्क, छोड़ बैठनेकी बात। २ औदासीन्य, लापरवाई। ३ अङ्गीकार, मञ्जूरी। ४ सामान्य उपाय, मामूली तदबीर। ५ अनादर, बेइज्जती।

"कुर्यामुपेक्षां हतजीवितेऽस्मिन्।" (रघु १४ ५४)

उपेक्षित (सं० त्रि०) उप-ईक्ष-क्त। १ अनाहृत, खयाल न किया हुआ। २ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ३ अवज्ञात, न सुना हुआ। ४ अस्वीकृत, जो मञ्जूर किया न गया हो।

उपेक्षितव्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेक्ष्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेत (सं० त्रि०) उप-इन-क्त। १ उपागत, नज़दीक आया हुआ। २ समीप गत, पास पहुंचा हुआ। ३ प्राप्त, पहुंचा या मिला हुआ। ४ उपनीत, जनेऊ किया हुआ। ५ गर्भाधानके लिये स्त्रीके पास गयाहुआ।

"गर्भाधानमुपेतो ब्रह्मगर्भं सन्दधाति।" (हारीत)

उपेति (सं० स्त्री०) प्राप्ति, पहुंच।

उपेतृ (सं० त्रि०) १ समीपगन्ता, पास पहुंचनेवाला। २ आक्रामक, हमला मारनेकी गरज़से चढ़ा हुआ।

उपेनित (सं० त्रि०) अन्तर्गत किया हुआ, जो भीतर लाया गया हो।

उपेन्द्र (सं० पु०) इन्द्रमुपगतः। १ विष्णु, छोटे इन्द्र। वामनावतारमें काश्यपके औरस और अदितिके गर्भसे इन्द्रके पीछे जन्म लेनेके कारण विष्णुका एक नाम उपेन्द्र भी है।

"ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं स्थापितो गोभिरीश्वरः।
उपेन्द्र इति कृष्ण त्वां गास्यन्ति दिवि देवताः॥" (हरिवंश ७५।४६)
वामन देखो।

२ नागराज विशेष।

उपेन्द्रभञ्ज—उत्कल देशस्थ गुमसरके एक राजा। उत्कल देशीय कवियोंमें यही सर्वप्रधान रहे। प्रायः सवा तीन सौ वर्ष पहले उपेन्द्रभञ्ज विद्यमान थे।

उपेन्द्रवज्रा (सं० स्त्री०) ग्यारह ग्यारह अक्षरोंके चार एक पादका एक छन्द।

"उपेन्द्रवज्रा जभजास्ततो गौ।" (वृत्तरत्नाकर)

उपेप्सा (सं० स्त्री०) प्राप्तिकी इच्छा, पानेकी ख़ाहिश।

उपेय (सं० त्रि०) उप इन्-यत्। १ उपायसाध्य, तदबीरसे हो सकनेवाला। २ प्राप्तव्य, मिल सकनेवाला। (मनु ७।२१५) ३ गम्य, जाने लायक़।

उपेयत् (सं० त्रि०) उपगत, पास पहुंचा हुआ।

उपेला (हिं० वि०) नग्न, उघाड़ा, जो ढका न हो।

उपोढ़ (सं० त्रि०) उप-वह-क्त। १ निकटस्थ, पासवाला। २ विवाहित, व्याहा हुआ। ३ उपगत, नज़दीक लाया हुआ। ४ सुसज्जित, ठीक किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ५ व्यूह, बंटाव।

उपोती (सं० स्त्री०) उप-वे-क्त-ङीप्। पूतिका, पोय। (Basella rubra or lucida) यह गुरु, सार और मदघ्न होती है (वाग्भट)। उपोती कषाय, उष्ण, कटुक, मधुर, रुच्य और निद्रा, आलस्य, विष्टम्भ एवं श्लेष्मकर है। उपोती तीन प्रकारकी होती है,—सामान्य, क्षुद्रपत्र और वनज। रस और वीर्यके विपाकमें दूसरी पहली ही जैसी रहती है। तीसरी तिक्त, कटु और रोचन है। (राजनिघण्टु) यह स्वादु, पाकरस, वृष्य, सर, स्निग्ध, बल्य, श्लेष्मकर, हिम और वात, पित्त तथा मदको दूर करनेवाली है। (सुश्रुत)

उपोत्तम (सं० पु०) १ अन्तिमसे मिला हुआ, जो आखिरीके पास हो। (क्ली०) २ अन्तिम स्वरसे संलग्न स्वर, जो हर्फ़-इल्लत आखिरी हर्फ़-इल्लतसे मिला हो।

उपोत्थित (सं० त्रि०) ऊपरको उठा हुआ, जो उठ बैठा हो।

उपोदक (सं० त्रि०) उपगतमुदकम्। १ उदकसमीपस्थ, पानीके पास पड़नेवाला। (शुक्लयजुः २५।६) (अव्य०) २ उदकके समीप, पानीके पास।

उपोदका, उपोती देखो।

उपोदकी (सं० स्त्री०) उपगतमुदकम्, ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। पूतिका, पोय।

उपोदय (सं० अव्य०) सूर्योदयके समय, आफ़ताब निकलते वक्त, तड़के।

उपोदिका (सं० स्त्री०) उपाधिकमुदकमस्याम्, उत्तरपदस्य चेत्युत्तरपदस्योदादेशः, कप् ततः टाप्। उपोदकी, पुदीना। पूतिका देखो।

उपोदिकातैल (सं० क्लो०) क्षुद्ररोगका एक तैल। पोय, सरसों, नीमकी छाल, मोच, कुन्हड़ेकी बेल और फूटकी बेल इन सबको जला कर की हुई भस्म पानीके साथ तैलमें पकाने और सम्चव लवण मिलानेसे यह औषध बनता और पाददारीपर लगता है।

उपोदीका, उपोदिका देखो।

उपोद्ग्रह (सं० पु०) उप-उद्-ग्रह-अप्। ज्ञान, समझ।

उपोद्घात (सं० पु०) उप समीपे उद्धननम्, उप-उत्-हन्-घञ्। १ उदाहरण, मिसाल। २ आरम्भ, शुरू। ३ उपक्रम, दीबाचा।

उपोद्बलक (सं० त्रि०) दृढ़ करनेवाला, जो मज़-बूत बनाता हो।

उपोद्बलन (सं० क्लो०) उप-उत्-बल-ल्युट्। उत्ते-जन, उद्दीपन, इसतेहकाम, उभार।

उपोष (सं० पु०) उप-उष-घञ्। उपवास, फ़ाक़ा, दिन-रात कुछ न खानेकी हालत। उपवास देखो।

उपोषण (सं० क्लो०) उप-उष-ल्युट्। उपोष देखो।

"उपोषणं नवम्याञ्च दशम्यामेव पारणम्।" (तिथितत्त्व)

उपोषध (सं० पु०) बौद्ध शास्त्रोक्त उपवास व्रत। इसका अपर नाम पोषध है। शाक्यसिंहने यह व्रत चलाया था। प्रकृत बौद्ध धर्मावलम्बी मात्र इस व्रतको पालन करते थे। यह उपवासकारीकी इच्छाके अनुसार होता है।

उपोषित (सं० त्रि०) उप-उष कर्तरि क्त। १ कृतो-पवास, फ़ाक़ा किये हुआ। (क्लो०) २ उपवास, फ़ाक़ा। (मनु ५।१५५)

उपोष्य (सं० त्रि०) उप-वस अकर्मक धातुयोगे कर्मसंज्ञा विधानात् कर्मणि बाहुलकात् क्यप्। १ उपोष करके रहने योग्य, जो फ़ाक़ा करके रहने लायक़ हो।

"त्रिसन्ध्याव्यापिनी या तु सैवोपोष्या सदा तिथिः।" (कालमाधव)

(अव्य०) २ उपवास करके, फ़ाक़े के साथ।

उपोसथ (हिं०) उपवसथ देखो।

उपोह (सं० पु०) सङ्ग्रह कार्य, जोड़ाई, जमा कराई।

उपोह्यमान (सं० त्रि०) आरम्भ किया जानेवाला, जो शुरू किया जा रहा हो।

उप्त (सं० त्रि०) उप्यते स्म क्षेत्रादिषु, वप-क्त। १ कृतवपन, बोया हुआ। २ मुण्डित, मूंड़ा हुआ। ३ परिष्कृत, साफ़ किया हुआ। ४ निक्षिप्त, डाला हुआ।

उप्तकृष्ट (सं० त्रि०) बीजके वपन बाद कर्षित, बोकर जोता हुआ।

उप्ति (सं० स्त्री०) वप-क्तिन्। वपन, बोवाई।

उप्तिविद् (सं० पु०) उप्ति-विद्-क्विप्। वपन विधिज्ञ, बोनेका क़ायदा समझनेवाला।

"बीजानामुप्तिविच्च स्यात् क्षेत्रे दोषगुणस्य च।
मानयोगञ्च जानीयात् तुलायोगांश्च सर्वशः॥" (मनु ९।३३०)

उप्त्रिम (सं० त्रि०) वप-क्त्रि-मप्। ड्वितः क्त्रिः। पा ३।३।८८। वपनजात, बोनेसे निकला हुआ।

उप्पम (हिं० पु०) कार्पास विशेष, किसी किस्मकी कपास। यह मन्द्राज प्रान्तके तिनेवेली और कोय-म्बातूर जिलेमें होता है।

उप्य (सं० त्रि०) वप् बाहुलकात् क्यप्। वप-नीय, बोया जानेके क़ाबिल।

उप्यमान (सं० त्रि०) वपन किया जानेवाला, जो बोया जा रहा हो।

उप्राय—बरार प्रान्तस्थ एलिचपुर जिलेकी दरयापुर तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० २१° उ० तथा द्राघि० ७७° ३८′ ३०″ पू० पर अवस्थित और शाह-धवल मन्दिरके लिये प्रसिद्ध है। हिन्दू और मुसलमान् दोनो उक्त मन्दिरमें अर्चना करने जाते हैं।

उम्लेता—काठियावाड़के गोंडाल राज्यका एक बन्दर। यह अक्षा० १२° ४४′ उ० तथा द्राघि० ७०° २० पू० पर जूनागढ़से ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उफ़ (अ० अव्य०) १ हा! हैफ़! आह! २ धिक्! फिश! छी! छी!!

"मर जाये पर उफ़ न करे।" (लोकोक्ति)

उफ़क़ (अ० पु०) क्षितिज, देखनेमें आसमानसे लगा मालूम होनेवाला ज़मीनका किनारा।

उफ़ज़ां-खेज़ां (फा० क्रि० वि०) गिरते-पड़ते।

उफड़ना, उफनना देखो।

उफतादा (फा० वि०) खिल, गैरमजरूवा, पड़ी।

उफनना (हिं० क्रि०) १ फेन देना, झगयाना, फेनाना। २ विवाद करनेपर उद्यत होना, झगड़ा करनेके लिये कमर कसना।

उफनाना, उफनना देखो।

उफान (हिं० पु०) फेन, झाग, उबाल।

उबकना (हिं० क्रि०) १ वमन करना, ओकना। २ उद्गार छोड़ना, उगल देना।

उबका (हिं० पु०) चल ग्रन्थि, सरकनेवाली गांठ का फन्दा। यह डोरीके किनारे लगता है। उबके को सरकाके लोटा फांसते और फिर कसकर कूएमें पानी भरनेको डालते हैं।

उबकाई (हिं० स्त्री०) वमनका उद्गार, कै का उभार।

उबछना (हिं० क्रि०) ऊपरको जल फेंकना, उलीचना।

उबट (हिं० पु०) कुमार्ग, बुरी राह।

उबटन (हिं० पु०) अङ्गराग, सोंधा। यह चने या गेहूंके आटेमें हलदी, तेल आदि मसाला डालनेसे बनता है। इससे चमड़ा साफ और मुलायम पड़ जाता है। विवाह होनेसे पहले कई दिन दूल्हा और दूल्हनके उबटन लगता है। चिरौंजीका उबटन बहुत अच्छा होता है।

उबटना (हिं० क्रि०) अङ्गराग लगाना, उबटन मलना।

उबडुब करना (हिं० क्रि०) १ पानीमें डूबना उछलना, गोते खाना। २ आसन्न-मरण होना, मरने लगना।

उबना (हिं० क्रि०) अङ्कुरित होना, जमना।

उबरना (हिं० क्रि०) मुक्ति पाना, बच जाना।

उबराज (हिं० पु०) तल, सतह।

उबरा-सुबरा (हिं० वि०) उच्छिष्ट, बचा-बचाया।

उबलना (हिं० क्रि०) उफनना, ऊपरको उठना।

"सेरकी हण्डीमें सवा सेर पड़ा और उबला।" (लोकोक्ति)

उबसन (हिं० पु०) उद्दसन, जूना, बरतन मांजनेका खर।

उबसना (हिं० क्रि०) १ चिक्कण पड़ना, चिपचिपाने लगना। २ मलिन होना, भुस जाना। ३ शिथिल पड़ना, थकना। ४ पात्र परिष्कार करना, बरतन मलना।

उबहन (हिं० स्त्री०) मोटी डोरी, पानी खींचनेका रस्सा।

उबहना (हिं० क्रि०) १ शस्त्र निकालना, हथियार उठाना। २ जल निक्षेप करना, उलीचना। ३ कर्षण करना, जोतना। (वि०) ४ अनावृत, जूतेसे खाली, नङ्गा।

उबांत (हिं० स्त्री०) वमन, कै।

उबाई (हिं० स्त्री०) ऊब जानेका भाव, जिस हालतमें ऊबने लगें।

उबाना (हिं० क्रि०) १ वपन करना, बोना। २ उगाना, बढ़ाना। (पु०) ३ सूत्रविशेष, किसी किस्मका धागा। यह वस्त्र बुनते समय रांछके बाहर रह जाता है। (वि०) ४ अनावृत, नङ्गा।

उबार (हिं० पु०) १ मोक्ष, उद्धार, बचाव। २ झूल, ओहार।

उबारना (हिं० क्रि०) मुक्तिदान करना, छोड़ाना।

उबारा (हिं० पु०) पशुके पानी पीनेका कुण्ड।

उबाल (हिं० पु०) १ उफान, फेनके साथ ऊपरको उठाव। २ उद्वेग, जोश।

उबालना (हिं० क्रि०) उष्ण करना, तपाना, खौलाना।

उबासी (हिं० स्त्री०) जृम्भा, जमहाई।

उबाहना, उबहना देखो।

उबिठना (हिं० क्रि०) १ सुखकर बोध न होना, बुरा लगना। अधिक व्यवहारसे प्रायः वस्तु उबिठ जाता है। २ विरक्त होना, घबरा जाना।

उबीठना, उबिठना देखो।

उबीधना (हिं० क्रि०) १ फंस जाना, उलझ पड़ना। २ लगना, छिदना।

उबीधा (हिं० वि०) १ संलग्न, फंसा हुआ, जो गड़ गया हो। २ कण्टकावृत, कंटीला।

उबेना (हिं० वि०) अनावृत, नङ्गा, जूते न पहने हुआ।

उबेरना, उबारना देखो।

उबौना (हिं॰ वि॰) उबा डालनेवाला।

उबौवा (हिं॰ वि॰) जब उठनेवाला।

उब्ज्—तुदा॰ पर॰ सक॰ सेट्। यह धातु ऋजु करने और अधीन रखने अर्थमें व्यवहृत होता है। (ऋक् १।२२।५)

उब्जक (सं॰ त्रि॰) उब्ज्-खुल्। ऋजुतायुक्त, सीधा।

उब्जित (सं॰ त्रि॰) ऋजु किया हुआ, सीधा बनाया हुआ, जो दबा दिया गया हो।

उभड़ (हिं॰) उभर देखो।

उभड़ना, उभरना देखो।

उभय (सं॰ त्रि॰) उभ-अयच्। उभादुदात्तो नित्यम्। पा ५।२।४४। द्वित्वविशिष्ट, हर दो, दोनों। यह शब्द द्वित्वबोधक होते भी केवल एकवचन और बहुवचनमें आता है, द्विवचनमें कभी रखा नहीं जाता।

उभयकण्टका (सं॰ स्त्री॰) बदरवृक्ष, बेरी।

उभयगुण (सं॰ त्रि॰) दोनों गुण रखनेवाला, जिसमें हर दो सिफ़तें रहें।

उभयङ्कर (सं॰ त्रि॰) दोनों कार्य सम्पादन करने वाला, जो हर दो कामोंको करता हो।

उभयचर (सं॰ त्रि॰) स्थलजलचर, दो-उनसरी, ज़मीन् और पानी दोनों जगह रहनेवाला।

उभयतः (सं॰ अव्य॰) उभय-तसिल्। १ दोनो दिक्से, हर दो तर्फ़। २ दोनों अवस्थामें, हरदो हालत।

उभयतःक्ष्णुत् (सं॰ त्रि॰) उभय-कोटिमत्, हर दो किनारे रखने वाला, दुधारा।

उभयतोदत् (सं॰ त्रि॰) उभयदन्तश्रेणीविशिष्ट, जिसके दांतोंकी दो क़तार रहे।

उभयतोमुख (सं॰ त्रि॰) उभयतो मुखे यस्य। द्विमुख, दो मुंह रखनेवाला।

उभयतोह्रस्व (सं॰ त्रि॰) दोनों ओर ह्रस्व स्वरयुक्त, जिसके पहले दो छोटा स्वर रहे।

उभयत्र (सं॰ अव्य॰) उभय समीपस्थाने त्र। दोनो दिक्, हर दो तर्फ़।

उभयत्रोदात्त (सं॰ त्रि॰) १ दोनो दिक् उदात्त स्वरयुक्त। २ दो उदात्त स्वरके मिश्रणसे निकला हुआ।

उभयथा (सं॰ अव्य॰) उभय-थाच्। १ दोनों प्रकारसे, हरदो तरह। २ दोनों अवस्थामें, हरदो हालत।

उभयद्युः (सं॰ अव्य॰) १ दोनों दिनों, हरदो गुज़रे रोज़। २ अतीत एवं भविष्यत् दिवस, गये-आये दिन।

उभयभागहर (सं॰ त्रि॰) १ दो कार्यमें लग सकने योग्य, जो दो हिस्से लेता हो। (क्ली॰) २ ऊर्ध्व एवं अधोभागहर औषध, जो दवा दस्त और कै दोनों लाती हो।

उभयलिङ्गिनी (सं॰ स्त्री॰) लिङ्गिनी, एक पौदा।

उभयवत् (सं॰ त्रि॰) उभयविशिष्ट, जिसमें दोनों रहें।

उभयवादी (सं॰ त्रि॰) स्वर तथा ताल उभय प्रकाशित करनेवाला। यह शब्द वादित्र प्रभृतिका विशेषण है।

उभयविद्या (सं॰ स्त्री॰) द्विगुण विद्या, दुचन्द इल्म, धार्मिक और आर्थिक विज्ञान।

उभयविध (सं॰ त्रि॰) दो आकारमें प्रकाशित होनेवाला, जो दो सूरतें रखता हो।

उभयविपुला (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष।

उभयवेतन (सं॰ पु॰) दूतविशेष। जो पूर्वस्वामी कर्तृक नियोजित हो उसके शत्रुके निकट प्रच्छन्न भावसे दासकार्य चलाता और दोनोंके निकट वेतन पाता, वही उभयवेतन कहलाता है।

> "अज्ञातदोषैर्दोषज्ञैरुदूष्योभयवेतनैः।
> भेद्याः शत्रोरभिव्यक्तशासनैः सामवायिकाः॥" (माघ)

उभयव्यञ्जन (सं॰ त्रि॰) दोनों लिङ्गके चिन्ह रखने वाला, जो हरदो जिन्सकी अलामत रखता हो।

उभयसम्भव (सं॰ पु॰) विकल्प, वहम।

उभयसुगन्धगण (सं॰ क्ली॰) सुगन्धि द्रव्य विशेष, खास खुशबूदार चीजें। यह द्रव्य जलानेसे भी सौरभ छोड़ते हैं। चन्दन, कर्पूर, कस्तूरी प्रभृति इसी गणमें सम्मिलित हैं।

उभया (सं॰ अव्य॰) दोनों प्रकारसे, हरदो राह।

उभयात्मक (सं॰ त्रि॰) उभय सम्बन्धीय, दोनोंके मुताल्लिक़।

उभयादत्, उभयतोदत् देखो।

उभयानुमत (सं॰ त्रि॰) उभयतः स्वीकृत, दोनों तर्फ़से माना हुआ।

उभयार्थ (सं० अव्य०) दोनों प्रयोजनोंके लिये, हरदो मतलबके वास्ते।
उभयाविन् (सं० त्रि०) उभय और वर्तमान रहनेवाला, जो दानोंका हिस्सा लेता हो।
उभयाहस्ति (सं० त्रि०) उभय हस्तसे ग्रहण किया जा सकनेवाला, जो दोनों हाथसे लिया जा सकता हो।
उभयाहस्त्य (सं० त्रि०) उभय हस्त पूर्ण करनेवाला, जो दोनों हाथ भर देता हो।
उभयीय, उभयात्मक देखो।
उभयेद्युः, उभयद्युः देखो।
उभरना (हिं० क्रि०) १ उत्थित होना, उठना। २ उन्नत होना, बढ़ना। ३ युवावस्थापर आना, जवानी पर चढ़ना। "मर्दका हाथ फिरा और औरत उभरी" (लोकोक्ति) ४ उद्गमन करना, उछलना। ५ उत्तेजित होना, जोश पर आना। ६ पुनर्वार उठना, फिर निकलना। ७ उद्वार पाना, किसी आफ़तसे छूट जाना। ८ फूलना, फबकना। ९ पलायन करना, भागना। १० "छुड़का हुआ चोर उभरा।" (लोकोक्ति) ११ गमन करना, चला देना। १२ प्रकाशित होना, खुलना। "पाप उभरे पर उभरे।" (लोकोक्ति) १३ उतरना, खाली किया जाना।
उभाड़, उभार देखो।
उभाड़ना, उभारना देखो।
उभाड़दार, उभारदार देखो।
उभाना (हिं० क्रि०) मस्तक हस्तपादादि अङ्ग वेगसे चलाना, सर हिलाते हुये हाथ-पा-फटकारना।
उभार (हिं० पु०) १ उत्कर्ष सूजन। २ प्रस्फुटन, शिगुफ़्तगी, खिलाई। ३ स्त्रियोंकी छातीका भराव। (त्रि०) ४ कूर्मपृष्ठाकार, माहीपुश्त, उभरवां।
उभारना (हिं० क्रि०) १ उठाना, उचकाना। २ खोलना, उधेड़ना। ३ निकालना, उतारना। ४ उड़ाना, चोराना। ५ भगा ले जाना। ६ बचाना, छोड़ाना। ७ मिला लेना, गांठना। ८ आग्रह करना, पीछे पड़ना। ९ पुनर्वार कर्षण करना, दो बारा जोतना।
उभारदार (हिं० वि०) उन्नत, ऊंचा, जो उठा या निकला हो।

उभिटना (हिं० क्रि०) ठहरना, रुकना, ठोकर लगना।
उभै (हिं) उभय देखो।
उम् (सं० अव्य०) उम-ङुम्। १ रोष! गुस्सा! २ अङ्गीकार! मञ्जूर! ३ प्रश्न! सवाल!
उमंग (हिं० स्त्री०) १ आल्हाद, मजा। २ इच्छा, ख़ाहिश। ३ लहर, मौज।
उमंगना (हिं० क्रि०) १ वर्धित होना, बढ़ना, भरना। २ आल्हादित होना, फूले न समाना।
उमंगा (हिं० वि०) १ आल्हादित, बाग बाग। २ इच्छुक, ख़ाहिशमन्द।
उमड (हिं० स्त्री०) उत्थान, उठान, चढ़ाव।
उमडना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, चढ़ना, उमंगना, बह चलना। २ आच्छादित होना, दबा लेना। ३ एकत्र होना, गोल बांधना। ४ स्पृष्ट होना, छू जाना, भरना।
उम (सं० पु०) १ नगर, शहर, कसबा। १ बन्दरगाह, जहाजसे माल उतरनेको जगह।
उमकना (हिं० क्रि०) १ ऊपरको आना, जड़ छोड़ देना, उखड़ना। २ उमंगना, उमडना।
उमग, उमंग देखो।
उमगन, उमंग देखो।
उमगना, उमंगना देखो।
उमगा, उमंगा देखो।
उमचना (हिं० क्रि०) १ पादतलसे उठ-उठके भार डालना, दबाना, हुमचना। २ चकित होना, चौंकना।
उमड, उमंड देखो।
उमडना, उमंडना देखो।
उमदगो (फ़ा० स्त्री०) १ उत्कर्ष, बड़ाई। २ गुण, भलाई।
उमदना (हिं० क्रि०) १ उन्मादमें आना, मस्त बन जाना। २ उत्तेजित पड़ना, उठ खड़ा होना।
उमदा (अ० वि०) १ उत्कृष्ट, बढ़िया। २ उत्तम, अच्छा। (पु०) ३ अमीर आदमी।
उमदाई (हिं० स्त्री०) १ उन्मत्तावस्था, पागलपन। २ मनोवेग, दिलका उबाल। ३ उत्तमता, अच्छाई।

उमदाना, उमदना देखो।

उमर, ९म देखो।

उमर-अल् मकसूम—खलीफा २य मुवावियाके प्यारे गुरु। उन्होंने अपने पिताके मरनेपर इनसे पूछा था—हम खिलाफत लें या नहीं। इन्होंने कहा—यदि आप मुसलमानों पर न्यायपूर्वक शासन कर सकें, तो खिलाफत ले लें और यदि न कर सकें, तो छोड़ दें। उक्त खलीफने छः सप्ताह राज्य चलाने बाद अपनेको अयोग्य पाया और राज्यभार छोड़नेका विचार कर लिया। उन्होंने राज्य परित्याग करते ही एकान्त कोठरीमें आसन लगाया और प्लेगके आक्रमण वा विषके प्रयोगसे प्राण गंवाया था। उमय्य वंशके लोग इससे उमर-अल्-मकसूमपर बहुत चिढ़े। ये जीवित ही भूमिमें गाड़े गये थे। लोगोंने समझा—इन्हींके कहनेसे मुवावियेने राज्य छोड़ा है। ६४३ ई० को यह घटना हुई थी।

उमरखान् खिलजी—सुलतान् अला-उद्दीन् खिलजीके कनिष्ठ पुत्र। १३१६ ई० के दिसम्बर मासमें अला-उद्दीन्के मरनेसे मालिक काफूर ख़ाजाने इन्हें दिल्लीके सिंहासनपर बैठाया था। किन्तु ३५ दिन बाद ही मालिक काफूर मारे और उमरखान् सिंहासनसे उतारे गये। १३१७ ई० के जनवरी मासमें इनके भाई मुबारक खान् बादशाह बने।

उमर ख़य्याम—एक ईरानी कवि। वस्तुतः यह खेमान् बनाते, इसीसे इनकी ख़य्याम उपाधि पड़ गई थी। इनकी कविता अपने धार्मिक मतके लिये अद्वितीय समझी जाती है। उमर ख़य्यामको पाषण्डसे बड़ी घृणा थी। इसीसे कपटी साधु इनसे बहुत बिगड़े। उमर ख़य्यामने नेशपूरमें जन्म लिया और ज्योतिष पढ़नेमें बहुत श्रम किया था। इतना पढ़ते-लिखते भी अन्तको यह नास्तिक हो गये। उमरखान्की कविताका भाव नीचे दोहोंमें देखाते हैं—

> जो चाहत हो अन्तमें पावनको विश्राम।
> प्यार पड़ोसीको करो छोड़ द्वेषको नाम॥
> नहीं सतावो काहुको क्रोध हृदयमें लाय।
> केलि कष्ट आनन्दसों पहुंचो सुरपुर जाय॥

उमर चेयम—एक ईरानी ज्योतिषी। ईरान् सुलतान् जलालुद्दीनने (१०७४-१०९२ ई०) इनसे एक पञ्चाङ्ग बनवाया था।

उमरती (हिं स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा।

उमरद—बम्बईके काठियावाड़ प्रान्तका एक ग्राम। यह बिलगङ्गा नदीके दक्षिण किनारे अवस्थित तथा धारङ्गधारासे दक्षिण १९ कोस और मूलीसे दक्षिण-पश्चिम साढ़े ३ कोस दूर है। इसके प्रतिष्ठाताका पता नहीं लगता। किन्तु उमरदको बसे कोई २०० वत्सर बीते हैं। यहां उदुम्बरके वृक्ष बहुत थे। इसीसे लोगोंने ग्रामका नाम उमरद रख लिया था। राजा साहिब यशोवन्तसिंहजीके समय सरधार काठी इस ग्रामके पशु उड़ा ले गये थे। किन्तु बदलेमें राजा साहिबने जब उनकी भूमिपर आक्रमण किया, तब काठियोंने उपद्रव उठाना छोड़ दिया। यहां अधिकांश कृषक कबीरपन्थी कुनबी हैं।

उमर-बिन्-अबदुल अजीज़—प्रथम मरवान्के पौत्र। उमय्य वंशके ये ८म खलीफ थे, ७१७ ई०के सितम्बर या अक्तोबर मासमें सुलेमान्के उत्तराधिकारी बन दामस्कसमें सिंहासनपर बैठे और ७२० ई०के फरवरी मासमें मर गये थे। इनके स्वार्थत्याग और मिताहारको लोग बड़ी प्रशंसा करते हैं।

उमर-बिन्-ख़त्ताब—मुहम्मदके एक प्रिय सहचर और श्वशुर। ६३४ ई०के अगस्त मासमें ये अबू-बकर सादिक्का उत्तराधिकार पा मुहम्मदके पीछे २य खलीफ बने थे। इन्होंने सीरिया और फिनिसियापर अपना विजयका डंका बजाया और ६३७ ई० में जेरूसलमको दबाया था। इनके सेनापतियोंने ईरान और मिसरमें धावा मार इसलाम धर्मको उत्तेजना दी थी। अलगजन्द्रियाके पतनसे सुप्रसिद्ध पुस्तकालय विध्वस्त हुआ था। किन्तु इन्होंने नाइल और लाल-सागरके बीच नहर फिर खोलायी थी। इनके समय मुसलमानोंने ३६००० नगर जीते, ४००० ईसाई गिरजे तोड़े और १४०० मसजिदें बनवाईं थीं। सर्वप्रथम इन्हींको 'अमीरुल मोमिनीन्' उपाधि मिला। इनका सात बार विवाह हुवा था। उनमें अलीकी सुता उम्म कुलसूम भी एक पत्नी

थीं। ६४४ ई०की ३री नवम्बरको बुधवारके दिन सवेरे किसी मसजिदमें नमाज़ पढ़ते समय एक ईरानी गुलामने इनके तलवार भोंक दी। तीन दिन पीछे ६३ वर्षकी अवस्थामें मृत्यु हुई। इन्होंने १० वर्ष ६ मास और ८ दिन राज्य किया था। अफ़फ़ान्के पुत्र उसमानको इनकी खिलाफ़तका उत्तराधिकार मिला था। किसी अंगरेज़ने लिखा है—'१८०२ को मैं शीराज़में था। उसी समय शोया ईरानियोंने उमर खलीफ़की मृत्युका उत्सव मनाया। उन्होंने एक लम्बा-चौड़ा चबूतरा बनाया और उसपर यथासम्भव अङ्ग-भङ्ग कुरूप एक प्रतिमाको जमाया और फिर उसके सम्मुख हो लोग कहने लगे—मुहम्मदके समान उत्तराधिकारी अलीको तूने खलीफ़ न बनने दिया, तुझे कोटि कोटि धिक्कार है। अन्तको जब गाली-गलौजकी थैली खाली हो गयी,तब एकायक प्रतिमापर पत्थर और लाठीकी मार पड़ने लगी, अन्तको वह चूर चूर हो गयी। प्रतिमाके भीतर शून्य स्थानमें मिष्टान्न भरा था। समवेत दर्शकोंने उसे लूट लूट खा डाला।'

उमर महरामी—एक मुसलमान ग्रन्थकार। १६४५ ई०में इन्होंने 'हुज्जतुल हिन्द' नामक पुस्तक लिखी थी।

उमरमिर्ज़ा—अमीर तैमूरके पौत्र और मीरान्शाहके पुत्र। शाहरुख मिर्ज़ासे लड़कर ये हार गये और ज़ख्मी हुये थे। कुछ दिन बाद १४०७ ई०के मई मासमें इन्होंने इस दुनियासे कूच किया था।

उमर शेख मिरज़ा—१ अमीर तैमूरके २य पुत्र। अपने पिताके जीते समय यह ईरानके शासक रहे और १३९४ ई० को ४० वत्सरके वयस पर लड़ाईमें मारे गये। उत्तराधिकारी बाक़रमिर्ज़ा इनके एक पुत्र हुए। २ सुलतान् अबूसईद मिरज़ाके ग्यारहमें एक पुत्र, सुलतान् मुहम्मदके पौत्र और अमीर तैमूरके लड़के मीरान्शाहके प्रपौत्र। दिल्लीके बादशाह बाबर शाह इनके पुत्र रहे। इनका जन्म १४५६ ई०को समरकन्दमें हुआ था। इन्होंने अपने पिताके जीते अन्दिजान् और फरग़ान संयुक्त राज्यका शासन किया था। १४५९ ई०में पिताके मरनेपर भी यह उक्त राज्यका प्रबन्ध करते रहे। १४९४ ई० की ९वीं जूनके सोमवारको ३९ वत्सरके वयसमें २६ वर्ष २ मास राज्य करनेके बाद ये चल बसे। ये मञ्च पर खड़े होकर अपने कबूतर उड़ते देखते थे। उसीसमय मञ्च टूटा और इनका प्राण छूटा। इनके पुत्र बाबर ग्यारह वर्षके वयसमें सिंहासन पर बैठाये गये। 'उन्होंने जहीरुद्दीन' अपना उपनाम रखा था।"

उमर इब्लान सावजी—एक मुसलमान ग्रन्थकार। इन्होंने 'बसाविर नसीरी' नामक एक न्याय और तत्त्वज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ लिख सुलतान् सञ्जरके वज़ीर नसीरुद्दीन्मह्मूदके नाम उत्सर्ग किया था।

उमरा (अ० पु०) बहुतसे अमीर, कितने ही धनवान्। उमराई अमीरी, बड़प्पन।

उमरा (अमर)—उदयपुरवाले राणा प्रतापसिंहके पुत्र। अपने पिताके स्वर्ग जानेपर ये मेवाड़के राणा बने। अकबरके जीते कोई झगड़ा लगा न था। किन्तु उनके उत्तराधिकारी जहांगीरने मेवाड़को पूर्ण रीतिसे अधीन करना चाहा। इसलिये युद्ध होनेपर उमरा राणाने उन्हें दो बार हराया था। फिर जहांगीरने प्रतापके भाई सुगराको उमरासे लड़ानेको ठहरायो। सात वर्ष बाद वह स्वयं दूसरेके धर्मका आश्रय लेनेपर शरमाये और उमराको राजधानीका स्वामी बना बाजे बजवाये। इससे चिढ़ जहांगीरने राणापर बहुत बड़ी फौज भेजी। किन्तु वह खामनोरकी घाटीमें फंस हार गयी। फिर जहांगीरने अपने प्रधान सेनापति महाबत खान्को भेजा। जब वह भी सफलमनोरथ न हुये, तब सैनिक पीछे अजमेरको हटे। १६१३ ई०में लड़ते लड़ते राणा उमराने जहांगीरकी अधीनता स्वीकार कर ली। जहांगीरने बड़ा सम्मान किया और युवराज कर्णसिंहके साथ इन्हें उपाधि तथा उपहार दिया। किन्तु इन्हें अधीनता 'अच्छी न लगी। इन्होंने अपने पुत्र कर्णसिंहको राज्य सौंप मेवाड़की गद्दी छोड़ी थी। इनके पुत्रका नाम जगत्सिंह रहा। १६२८ ई०में अपने पिता कर्णके स्वर्ग जानेपर उन्हें राज्यका उत्तराधिकार मिला था। जगत्सिंहके पुत्र राजसिंह १६५४ ई०में गद्दीपर बैठे।

२ राणा राजसिंहके पौत्र और जयसिंहके पुत्र। १६८१ ई० को राणा राजसिंहके स्वर्ग जानेपर जयसिंह राणा बने थे। उन्होंने २० वर्ष शान्तिपूर्वक राज्य किया। फिर उत्तराधिकार जयसिंहके पुत्र उमराको मिला था। औरङ्गजेबके लड़कोंमें जो झगड़ा चलता, उसमें इनका हाथ फंसा रहता था। १८१३ ई० को मारवाड़, मेवाड़ और जयपुरके राजपूतोंने साज़िश कर मुसलमानी राज्य मिटाना चाहा। मुग़ल अफसर निकाले गये थे। मन्दिरोंके स्थानोंमें बनीं मसजिदें लोगोंने तोड़ डालीं। किन्तु यह साज़िश थोड़े ही दिन चली। मारवाड़के राजा अजितने अपनी कन्या व्याह बादशाहसे अलग सन्धि की थी। राणा उमरा बादशाहकी अधीनता स्वीकार करते भी दूसरी बातमें न दबे। १७१६ ई० को इनके स्वर्ग जानेपर सङ्ग्रामसिंह गद्दीपर बैठे थे।

उमराय (हिं० पु०) उमरा, अमीर लोग।

उमराव, उमराय देखो।

उमराव पाटकर—बम्बई प्रान्तकी काठी जातिके एक पूर्वज। कहते हैं, १५०० ई०के समय यह कुछ काठियोंके साथ धांकमें घुसे थे। उमरावकी कन्या उमरा बाई बहुत सुन्दर थी। धाकके राजा उसे चाहने लगे। जब उन्होंने विवाह होनेका प्रस्ताव किया, तब उमरावने कह दिया—यदि आप साथ भोजन करेंगे, तो हम उमा बाईको व्याह देंगे। धान राजा उसपर राजी हुये। किन्तु बन्धुबान्धवोंने उन्हें पतित समझ निकाल दिया। फिर धन राजा उमरावके साथ काठियोंके नेता बने रहे।

उमरावसिंह—१ युक्तप्रान्तस्थ फरुखाबाद जिलेके अमेठीवाले एक राजा। यह विद्याके बड़े रसिक थे। उनाव जिलेके बिजापुरवाले सुवंश शुक्लने इनकी सभामें रह 'अमरकोश,' 'रसतरङ्गिणी' और 'रसमञ्जरी'का हिन्दीमें अनुवाद किया, जिनका जन्म १७७७ ई० को हुआ।

२ सीतापुर जिलेके सैदपुरवाले एक पंवार कवि। यह १८८३ ई० में जीवित थे।

उमरूल फारूक—गुजरातमें रहनेवाले शेखोंके एक गोत्र प्रवर्तक। इनके वंशज फारूकीशेख कहलाते हैं।

उमरी—१ मध्य-भारतके ग्वालियरके बीचका एक राज्य। यह अक्षा० २४° ४५´ उ० तथा द्राघि० ७७° २२´ पू० पर है। स्थानीय राजा अपना प्रबन्ध आप चलाते हैं, ग्वालियरके महाराज किसी विषयमें हस्तक्षेप नहीं करते। १८०३ ई० को उमरीके राजाने कुछ राजपूत दबानेमें जनरल जोहन बपतिस्तेको साहाय्य दिया था। इसीसे उनका राज्य सेंधियाको अधीनतामें न रहा। उमरी ही राज्यका प्रधान नगर भी है।

२ मध्यप्रदेशके भण्डारा जिलेकी एक जमीन्दारी। यह अक्षा० २०° ४६´ उ० तथा द्राघि० ८०° ४६´ पू० पर अवस्थित और नौगांवके बड़े हृदसे २ कोस पश्चिम दूर है। क्षेत्रफल १७ वर्गमील है। यह जमीन्दारी हलवा वंशके पूर्वजोंको राजसेवाके उपलक्ष्यमें मिली थी।

३ युक्त प्रान्तके मुरादाबाद जिलेकी अमरोहा तहसीलका एक गांव। यह अक्षा० २८° २´ १५´´ उ० तथा द्राघि० ७८° ३६´ ३०´´ पू० में मुरादाबादसे बिजनौर जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। प्रति सप्ताह बाज़ार लगता है। कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें एक तेवारी 'उमरी' के होते हैं।

(हिं० स्त्री०) ४ वृक्षविशेष, एक पौदा, मचोल। इसकी लकड़ी जलाकर सज्जीखार तैयार करते हैं। मन्द्राज, बम्बई और बंङ्गाल तीनों प्रान्तोंमें इसे पाते हैं। ५ ग्रामविशेष। कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें एक तेवारी उमरीके होते हैं।

उमरेर—१ मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेकी दक्षिण-पूर्व तहसील। क्षेत्रफल १०२५ वर्गमील है। उसमें १३४ वर्गमील भूमि निष्कर है।

२ उक्त तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २०° १८´ उ० तथा द्राघि० ७८° २१´ पू० पर नागपुरसे १४ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है। उमरेर नगर अम्बनदीके उत्तर तीर हलकी रेतपर बसा और पूर्वकी ओर आमके बाग़का हाशिया लगा है। ई० १७ वीं शताब्दीके अन्तकी चिमूरके मूनाजी पण्डितने इसे प्रतिष्ठित किया था। बख्तबुलन्दने उन्हें यह

स्थान दे डाला था। उस समय यहां सिवा जङ्गल दूसरा कुछ भी न रहा। वर्तमान ज़मीन्दार उन्हीं पण्डितके सन्तान हैं। उन्हें आज भी लोग 'देश-पाण्डे' कहते हैं। १७७५ ई० को माधोजी भोंसले उमरेरमें रहे थे। उन्होंने किला बनवाया। पहले किला ३०० गज़ लम्बा और ८० गज चौड़ा था। ईंटकी दीवारे १२ फीट मोटी और ३५ फीट उठी रहीं। पीछे बुर्ज बने थे। अब केवल दो पार्श्व अवशेष हैं। किलेमें कितने ही कूयें बने हैं। एक प्राचीन मन्दिरका भी ध्वंसावशेष पड़ा है। उमरेर वस्त्रव्यवसायके लिये प्रसिद्ध है। माधोजीके समयसे यहां वस्त्र बनते आते हैं। उमरेरकी धोतियां बहुत बढ़िया होती हैं। उन रेशमका छोटा और बड़ा दोनों तरहका किनारा चढ़ता है। पूना, नासिक, पण्ढरपुर और बम्बई तक धोतियां बिकने जाती हैं। यहां कितने ही महाजन और व्यवसायी बणिक् बसते हैं। नगरकी दोनों ओर तालाव है। स्कूल और अस्पताल अच्छा बना है।

उमस (हिं० स्त्री०) आन्तरिक उत्ताप, अन्दरूनी गरमी। प्रायः वृष्टि होनेसे पहले उमस पड़ती है।

उमसना (हिं० क्रि०) आन्तरिक उत्ताप उठना, अन्दरूनी गरमी लगना।

उमदना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, बह चलना। २ उत्तेजित पड़ना, जोश खाना। ३ आच्छादन करना, छा जाना।

उमा (सं० स्त्री०) ओर्हरस्य मा लक्ष्मीरिव उं शिवं माति मिमीते वा, उ-मा-क अजादित्वात् टाप्। १ शिवपत्नी, पार्वती। इन्होंने हिमवान्‌के औरस और मेनकाके गर्भसे जन्म लिया था।

"उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम।" (कुमार)

माता मेनकाके 'उ: मा अधिक तपस्या न करो' कहनेसे उमा नाम पड़ा है। इन्हें दुर्गा भी कहते हैं। २ हरिद्रा, हलदी। ३ अतसी, अलसी। ४ कीर्ति, नामवरी। ५ क्रान्ति, चमक। ६ शान्ति, अमन। ७ रात्रि, रात। ८ ब्रह्मविद्या।

केन उपनिषदमें उमाका नाम मिलता है। एकबार ब्रह्माने देवतावोंपर विजय पाया था। किन्तु देवता उनसे परिचित न थे। उन्होंने अग्नि और वायुको ब्रह्माका भेद लेनेके लिये भेजा। ब्रह्माने कहा—तुम कौन हो। एकने अपनेको जलाने और दूसरेने उड़ानेवाला देव बतलाया। ब्रह्माने दोनोंसे घासका एक तिनका जलाने और उड़ानेका आदेश दिया। किन्तु वायु और अग्नि वह काम न कर सके। इस-लिये वह ब्रह्माका भेद बेपाये ही लौट आये। फिर देवोंने इन्द्रसे कहा—ब्रह्माका भेद पूछो। ब्रह्मा इन्द्रको देखते ही अन्तर्हित हुये।* उसी समय आकाशमें उमा हैमवती चमक उठीं। इन्द्रने पूछा—यक्ष आत्मा किसका है। उमाने उसे ब्रह्म बतलाया था।†

ब्रह्मा और देवतावोंकी मध्यस्थ उमाको शङ्करा-चार्यने विद्या माना है। भाष्यकारने कहा है‡—हिमवान्‌की सुता गौरी देवी विद्याकी प्रतिमूर्ति हैं। फिर उमाका अर्थ गौरी ही है। इसीसे उमा अनन्त विज्ञानकी बोधक हैं। परमेश्वरकी सोम अर्थात् उमा वा विद्याका साथी कहते हैं। उमा परमा विद्या हैं। ईश्वर उन्हींके साथ रहता है। तैत्तिरीय-आरण्यक जगन्माता अम्बिकाको उमा अर्थात् दैवी विद्याका रूप बतलाता है।

उमाकट (सं० पु०) उमाया रजः, उमा-कटच्।

अलावूतिलोत्तमाभङ्गाभ्योरस्य पर्यु्ल्यानम्। (काशिका ५।२।२९)

अतसीकी धूलि, अलसीका ज़रा।

उमाकना (हिं० क्रि०) उत्पाटन करना, जड़ छोड़ाना, उखाड़ना।

---

* "स तस्मिन्नेव आकाशे स्त्रिय माजगाम बहुशोभमाना सुमां हैमवतीं। तां होवाच किमेतद् यचमिति।" (केन ३।१२)

† "सा ब्रह्मे ति होवाच ब्रह्मणो वै एतद्‌विजये महीयध्वमिति। ततोह एव विद्याञ्चकार ब्रह्मे ति।" (केन ४।१।२)

‡ 'तस्य इन्द्रस्य यचे भक्तिम्बुद्दा विद्या उमारूपिणी प्रादुरभूत् स्त्रीरूपा। स इन्द्रस्तां सुमां बहुशोभमानां सर्वेषां हि शोभमानानां शोभनतमां विद्यां तदा बहुशोभमाना इति विशेषणं उपपन्नं भवति। हैमवतीं हैमकृताभरण-वतीमिव बहुशोभमानामित्यर्थः। अथवा उमैव हिमवतो दुहिता हैमवती नित्यमेव सर्वज्ञेन ईश्वरेण सह वर्तते इति ज्ञातुं समर्था इति कृत्वा तामुप-जगाम इन्द्रस्तां ह उमां किल उवाच पप्रच्छ किमेतद् दर्शयित्वा तिरोभूतं यचम्।' (भाष्य)

उमाकिनी (हिं० वि०) उत्पाटन करनेवाली, जो उखाड़ देती हो।

उमागुरु (सं० पु०) उमाया गुरुः पिता। हिमालय, पार्वतीके गुरुस्वरूप पिता।

उमागुरुनदी (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया।

उमाचतुर्थी (सं० स्त्री०) ज्यैष्ठ मासकी शुक्लचतुर्थी, जेठ महीनेके उजियारे पाखकी चौथ।

"ज्यैष्ठशुक्लचतुर्थ्यान्तु जाता पूर्वमुमा सती।
तस्मात् सा तत्र सम्पूज्या स्त्रीभिः सौभाग्यवर्द्धये॥" (भविष्योत्तर०)

ज्यैष्ठ मासकी शुक्ल चतुर्थीको पहले उमा सतीने जन्म लिया था। इसलिये उक्त दिवसपर स्त्रियोंको सौभाग्यकी वृद्धिके लिये पार्वतीका पूजन भलीभांति करना चाहिये।

उमाचना (हिं० क्रि०) उत्पाटन करना, निकाल डालना, उखाड़ना।

उमाजी नायक—बम्बईप्रान्तस्थ थाने जिलेके एक डाकू। १८२७ ई०में पूनेके पुरन्दर पर्वतसे इन्होंने ३०० आदमी और घोड़े लेसह्याद्रि पार किया और पनवेलसे पूर्व ६ कोस परवल पर्वतके नीचे डेरा डाल दिया। वहांसे इन्होंने घोषणा की—गवरनमेण्टके बदले हमको सब कोई भूमिकर दे। उमाजीने कोयले, घास और लकड़ीके गट्ठे बांध सङ्केत किया था—हमें कर न मिलनेसे लोगोंका घरबार फुंकेगा। १० वीं दिसम्बरको २०० डाकुवोंने सुरबाड़के सरकारी खजानेका १२।१३ हज़ार रुपया लूटा और रक्षकसैन्यको मारापीटा। १८२८ और १८२९ को अधिकतर उपद्रव उठा था। किन्तु कपतान माकिन्टशने अति परिश्रमकर १८३४ ई०में यह अशान्ति मिटा दी थी।

उमात्तुर—महिसुर राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा० १२° ४′ १०″ और द्राघि० ७६° ५६′ ४०″ पू०पर अवस्थित है। पहले यहां विजयनगरके राजावोंकी राजधानी थी। १६१३ ई०में महिसुरके अधिपतिने उन्हें हरा इसे अपने अधिकारमें कर लिया। इस स्थानका आय चामराजनगरके देवमन्दिरको सेवामें लगता है।

उमाद (हिं०) उन्माद देखो।

उमाद—गुजराती बंनियोंकी एक श्रेणी।

उमादि—गुजरातप्रान्तके महीकांठेका एक क्षुद्र राज्य। आय प्रायः १०००) रु० वार्षिक है। चौहान कोली वंशके लोग राज्य करते हैं। वयोज्येष्ठताके हिसाबसे राजा अधिकार पाते हैं, गोद किसीको नहीं बैठाते।

उमाधव (सं० पु०) उमापति, शङ्कर।

उमान—ईरानकी खाड़ीका एक प्रान्त। अलबिलादुरीने लिखा है, कि खत्ताबके पुत्र २य खलीफ़ा उमरने अल् आसीके लड़के उसमान्‌को (६३६ ई०में) इस प्रान्तका शासक बनाया था। उसमान्‌ने पहले पहल बम्बईप्रान्तके थाने जिले इसलामियाको अभियान भेजा। अभियानके लौटनेपर अपने शासकके पत्रोत्तरमें खलीफ़ा उमरने लिखा था—अहे थकीफ़के भाई! तूने कीड़ेको जङ्गलमें छोड़ दिया है। यदि कुछभी आदमी मारे जायगे, तो हम तेरी जातिके भी उतनेही आदमी कटा डालेंगे। फिर भी बेहरीनका शासनाधिकार मिलनेपर उसमानके भाई हाकमने बारूज (भड़ोंच) को फौज भेजी। किन्तु वह देवल पर बड़े वेगसे चढ़े थे। अपने चाचा अल हज्जाजके मरनेपर सिन्धुके विजेता मुहम्मदने सुराट या काठियावाड़के अधिवासियोंसे सन्धि कर ली।

उमानन्द (सं० पु०) १ शिव, पार्वतीपति।

२ एक प्रस्तरमय क्षुद्र द्वीप। यह आसामके कामरूप जिलेमें गौहाटी नगरके सामने ब्रह्मपुत्र नदपर अवस्थित है। इसी नामका इस जगह एक प्रस्तरमय शिवमन्दिर भी बना है। यह एक पवित्र तीर्थस्थान हैं। कितने ही यात्री आया-जाया करते हैं। सुननेमें आता है—महादेवने जो भस्म अपने मस्तकमें लगाया था, उसीसे यह द्वीप बनाया गया है। उमानन्दके मन्दिरकी सेवाके लिये ३४५६ एकर निष्कर और १९५७ एकर आधे करकी भूमि लगी है।

उमापति (सं० पु०) १ शिव, पार्वतीके पति। २ मिथिलाके एक प्रसिद्ध कवि। यह विद्यापतिके समसामयिक और राजा शिवसिंहके सभासद थे। ई० चतुर्दश शताब्दीमें उमापति विद्यमान थे।

उमापति—१ पाकयज्ञनिर्णयग्रन्थके रचयिता। यह धर्मदेवके पुत्र और चन्द्रचूड़के पिता थे। २ दीपप्रकाशटिप्पन नामक ग्रन्थ-रचयिता। पिताका नाम प्रेमनिधि था। ३ पथ्यापथ्यविनिश्चय ग्रन्थके रचयिता। यह तपनके पिता, नरसिंहसेनके पितामह और विश्वनाथ सेनके प्रपितामह रहे। ४ करुणाकल्पलता भक्तिग्रन्थके रचयिता। ५ प्रतिष्ठाविवेक और शुद्धिनिर्णयग्रन्थके रचयिता। ६ रत्नमालाटीकाके रचयिता। ७ वृत्तवार्तिक नामक ग्रन्थके रचयिता। ८ हठप्रदीपिकाटिप्पण ग्रन्थके रचयिता।

उमापति उपाध्याय—प्रदार्थोयदिव्यचक्षुः ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका रत्नपति और माताका नाम रत्नावती था।

उमापति त्रिपाठी—एक विख्यात पश्चिमभारतीय पण्डित। इन्होंने बाल्यकालमें काशीमें रह विद्या पढ़ी थी। पीछे अयोध्यामें जाकर त्रिपाठी वास करने लगे थे। संस्कृत और हिन्दी भाषाके इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये थे। दोहावली और रत्नावली प्रभृति पुस्तक प्रसिद्ध हैं। १८७४ ई॰में इनका स्वर्गवास हुआ।

उमापति दत्त—एक संस्कृत वैयाकरण। यह जुमरनन्दीके समसामयिक थे। गोयीचन्द्र और सुषेणने इनका वचन उद्धृत किया है।

उमापति दलपति—केशवपण्डितके आश्रयदाता। उक्त पण्डितने प्रह्लादचम्पू लिखा था और उसे दलपतिके नामपर उत्सर्ग किया।

उमापतिधर उपाध्याय—संस्कृत और मैथिल भाषामें 'पारिजातहरण' नामक नाटक ग्रन्थके रचयिता। यह दरभङ्गा-जिलेवाले और परगनेके कोइलख ग्राममें रहते थे। हिन्दूपति हरिदेव वा हरिहरदेवको राजसभामें इनका बड़ा सम्मान था। उमापतिधरने लिखा है—हिन्दूपतिकी तलवार यवनोंके जङ्गलको काट कर भयानक अग्निकी तरह जला डालती है।*

उमापतिधर मिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह गौड़ाधिप विजयसेनको सभाके एक रत्न रहे और विजयसेनके प्रशस्ति रचा था। विजयसेनके पुत्र वल्लालसेनने ही बङ्गालके ब्राह्मणों और कायस्थोंमें कुलमर्य्यादा डाली थी। वल्लालसेनके पुत्रका नाम लक्ष्मणसेन था। उनके प्रासादके फाटकपर लिखा था—

> "गोवर्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
> कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च॥" (कविराजप्रतिष्ठा)

जयदेवने गीतगोविन्दके चौथे श्लोकमें इनका उल्लेख किया है।

उमा बाई—गायकवाड़के खांडेराव सेनापतिकी विधवा पत्नी। पीलाजी गायकवाड़के वधका समाचार सुन इन्होंने बदला लेनेको ठहरायी थी। कुछ फौज जोड और पीलाजीके पुत्र कांताजी कदम तथा दामाजी गायकवाड़को साथ ले यह अहमदाबाद पर चढ़ीं। किन्तु सिवा जीवराज नामक राजपूत-नेताको मारनेके मराठे कुछ न कर सके और राजी हो गये। ८० हज़ार रुपया अहमदाबादके खज़ानेसे न मिलने पर जीवन मर्द खान्‌का बन्दी रखनेको बात ठहरी। मराठोंने रसूलाबाद लूट एक अच्छा पुस्तकालय बिगाड़ डाला था। फिर उमा-बाई बड़ादेको बढ़ीं। किन्तु शासक शेरखान् बाबी लड़नेको तैयार हुये। उस पर इन्होंने उन्हें लिखा—हमने अभी महाराजसे सन्धि की है, हमें बेरोक टोक निकलनेका अधिकार है।

बाजीरावने स्वर्गीय त्र्यम्बकरावके नाबालिग लड़के यशोवन्तरावको सेनापतिका उपाधि प्रदान किया था। उस समय उमाबाई उनकी रक्षक बनीं। पीलाजी गायकवाड़ गुजरातके शासक हुये थे। उन्हें सेनापतिकी ओरसे मालवे तथा गुजरातमें पेशवाके स्वत्वोंकी रक्षा रखना और अपने शासनाधीन राज्यका आधा

---

* इनकी कविताका उदाहरण नीचे देखिये—

> "सहस्र पूर्णशशि रचइ गगन बसि निशि वासर देवी नन्दा।
> भरि वरिसइ विस बहइ दिवा मलय समीरण मन्दा॥
> साजन आव जिवनकिय काजे।
> पइ नोहि दिन कइ अपयश जग भरु सहयन पारिय लाजे॥ (ध्रुव)
> कोकिल अलिकुल कलरव आकुल करइ दहइ दुइ काने।
> शिशिर सुरभि जत देह दहइ ततहिनइ मदन पंचबाने॥
> सुकवि उमापति हृदि होय परसन मान होवत समधाने।
> सकल नृपतिपति हिन्दूपति जिउ महेसरि देइ विरमाने॥ २१॥"

कर मन्त्रीके हाथों राजकीय कोषमें जमा कराना पड़ता था। १७३६ ई० पर उमा-बाईने पीलाजीके स्थानमें दामाजीको गुजरातमें अपना प्रतिनिधि माना। किन्तु वह रंगोजीको अपनी जगह छोड़ दक्षिण गये थे। फिर रंगोजी और कांताजो कदममें विवाद होनेपर उन्हें वापस आना पड़ा। किन्तु दामाजी कांताजीके लिये चौथका प्रबन्ध बांध दक्षिणको लौट गये। वहां उमा-बाई पेशवाके विरुद्ध साजिश करती थीं। इन्होंने खांडेराव गायकवाड़को अपनी सहायताके लिये बुलाया। रंगोजीको उमाबाईने अपना सहकारी बना लिया था। १७४७ ई०में उमा बाई स्वर्ग गयीं।

उमा-महेश्वर—बम्बई प्रान्तके नासिक नगरका एक मन्दिर। यह सुन्दर-नारायणके मन्दिरसे दक्षिण-पूर्व ७० गज दूर बना है। यह पत्थरकी एक दीवारसे घिरा छिपा है। सामने दो मकान् खड़े हैं। मन्दिरके सामने काठका एक बड़ा कमरा बना है जिसकी छतपर बहुत अच्छा काम खुदा है। भीतर कृष्णप्रस्तरकी तीन मूर्तियां कोई दो फीट ऊंची प्रतिष्ठित हैं। बीचमें महेश्वर वा शिव, दाहने गङ्गा और बायें उमा या पार्वती हैं। हम सुन पाते हैं, कि कर्णाटकसे मराठे वह मूर्तियां लूट लाये थे। १७५८ ई०को ४र्थ पेशवा माधवरावके चाचा त्र्यम्बकराव अमृतेश्वरने २लाख रुपये लगा मन्दिर बनवाया था। गवरनमेण्ट वार्षिक प्रायः २००) रुपये मन्दिरको देती है। मन्दिरका प्रबन्ध आचार्य काशीकरके वंशज करते हैं। बाढ़के समय मन्दिरकी चटान पानीसे घिर जाती है। मन्दिरके सामने नदीमें उतरनेको सिढ़ियां बनी हैं।

उमावन (सं० स्त्री०) शोणितपुर, देवीकोट, एक शहर।

उमासहाय (सं० पु०) शङ्कर, पार्वतीके साथी महादेव।

उमासुत (सं० पु०) उमाया सुतः। कार्तिक।

उमास्वातिवाचक (सं० पु०) एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्रशमरतिप्रकरण और तत्त्वार्थसूत्र नामक दो ग्रन्थ बनाये हैं। किसी किसी हस्तलिपिमें उमास्वामी भट्टारक नाम लिखा है। बहुतोंका मत है कि ये ईशवीय सन्से पहिले जीवित थे।

उमाह (हिं० पु०) औत्सुक्य, दिलका उभार, उमंग।

उमाहना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, बह चलना। २ उत्सुक होना, छटपटाना।

उमाहल, उमंगा देखो।

उमीचन्द (अमीरचन्द)—एक प्रसिद्ध वणिक्। ई० १७ शताब्दीके शेषभागमें अमीरचन्द और गोपालचन्द नामक दो सिख वणिक् बङ्गालमें आकर बसे। लोग समझ न पाये, वही बङ्गालके प्रथम अधिवासी कहाये या उनके पूर्वपुरुष भी किसी समय यहां आये थे।

उस समय वैष्णवदास और मानिकचन्द सेठ नामक दो वणिकोंने बङ्गालमें बहुविस्तृत व्यवसायसे प्रचुर धनसम्पत्ति कमा विशेष प्रतिपत्ति पायी थी। अमीरचन्द आते ही उनके पास वाणिज्य-विषयक कर्ममें लग गये और कार्यकी कुशलता तथा दक्षताके गुणसे क्रमशः यावतीय व्यवसायके अध्यक्ष बन गये।

काम करते करते इन्होंने भी अपनी सम्पत्ति बढ़ायी और अन्तको अपनी दुकान खोल दी। थोड़े ही दिनोंमें बङ्गाल और विहार दोनों जगह इनके वाणिज्य व्यवसायकी धूम पड़ गयी थी।

उधर बङ्गालमें अंगरेजोंका भी वाणिज्य चलता था। कलकत्तेमें उस समय अंगरेजी कौन्सिलका अधिकार रहा, अंगरेजोंके साथ कामकर अमीरचन्दने कलकत्तेमें बहुत बड़ा मकान् बनवाया। अस्त्रधारी पुरुषोंका एकदल सर्वदा उपस्थित रहता था।

अंगरेजोंको पण्यद्रव्य अधिकांश अमीरचन्द ही पहुंचाते और मुर्शिदाबादके नवाबसे भी अपना काम बनाते थे। नवाब साहबके निकट इनका बड़ा मान रहा।

कम्पनीको रसद देनेसे अमीरचन्द बहुत धनी होते हुए भी लोभवश अन्यान्य उपायोंसे लाभकी चेष्टा करने लगे। अंगरेजोंने अच्छा माल न पा और मराठोंके उत्पातसे घबरा इनसे रसद लेना रोक दिया। इससे विशेष क्षति पड़ते भी अमीरचन्दने नवाबके साथ अपना कारबार बढ़ाया।

उसी समय अलीवर्दी पीड़ासे शय्यागत हुये। उनके जीनेकी आशा न रही। लोगोंने समझा—नवाबके

दौहित्र शिराजुद्दौला बङ्गालकी गद्दीपर बैठेंगे। किन्तु ढाकेके नवाब नवाजिस मुहम्मदने शिराजके कनिष्ठ भ्राता सुजादुद्दौलाके पुत्रको गोद ले लिया था। इसलिये उनकी विधवापत्नीने अपने पोष्यपुत्रको बङ्गालके सिंहासन पर बिठानेके लिये प्रधान मन्त्री राजा राजवल्लभके साथ मुर्शिदाबादके निकट शिविर लगाया। उस समय अमीरचन्द भी मुरशिदाबादमें ही रहे। राजा राजवल्लभने इनसे और कासिमबाजारके प्रधान वाटस् साहबसे बन्धुता बढ़ायी। पीछे स्थिर हुआ—कुमारकृष्णदास सपरिवार धनरत्न लेकर कलकत्ते जायेंगे और अंगरेज तथा अमीरचन्द दोनों वहां उन्हें टिकायेंगे। कलकत्ते पहुंचते ही उनको अमीरचन्दने उपयुक्त वासस्थान दिया था।

१७५६ ई०की ६वीं अपरेलको अलीवर्दीके मरते ही शिराजुद्दौला सिंहासनपर बैठे। दो-चार दिन बाद ही उन्होंने कलकत्तेके अंगरेज अध्यक्षको लिखा कि—आप शीघ्र कृष्णदासको समस्त धनरत्नके साथ मुर्शिदाबाद भेज दीजिये। चर-विभागाध्यक्ष रामरामसिंहके भ्राता स्वयं आदेशका पत्र ले कलकत्ते आये। अमीरचन्द उन्हें जानते थे। कौन्सिलमें बात जानेपर स्थिर हुआ—'कासिमबाजारसे जो पत्र मिला है, उसके अनुसार नवाजिश मुहम्मदके पोष्यपुत्र और शिराजुद्दौलाके सिंहासन पानेका झगड़ा अभी नहीं मिटपाया है। इसलिये आजकल ऐसा आदेश कैसे चल सकता है! यह समस्त अमीरचन्दकी कल्पना है। उन्होंने हमें डराने और अपना प्रभाव जमानेके लिये मिथ्या आदेशपत्र तथा दूत भिजवाया है।' दूतसे खाली हाथ जानेकेलिये कहा गया।

नवाबने जब इस व्यवहारसे अप्रसन्न हो कलकत्ते पर आक्रमण मारनेका उद्योग किया, तब रामरामसिंहने अपनी सम्पत्तिकी रक्षा रखनेकेलिये अमीरचन्दको पत्र लिख दिया था। ये उक्त पत्र १३ वीं जूनको पाते ही उस काममें लग गये। अंगरेजोंको सन्देह हुआ। उन्होंने अमीरचन्दको अपना शत्रु समझ किलेमें कैद कर लिया था। मकान् पर फौजका डेरा पड़ा। अमीरचन्दके साले हजूरीमल समस्त विषयका तत्त्वावधान रखते थे। वह भयसे अन्तःपुरमें छिप बैठे। दूसरे दिन उन्हें निकालनेके लिये जब अंगरेजी फौज मकान्में घुसी, तब अमीरचन्दके ३०० शस्त्रधारी सिपाहियोंने तलवार उठायी। युद्धमें दोनो ओरके आदमी हताहत हुये। जमादारोंके सरदारने सोचा—अंगरेज मेरे प्रभुके परिवारका अपमान करेंगे। इसीसे उसने अन्तःपुरमें आग लगादी, १३ स्त्रियोंकी गर्दन उड़ादी और अपनी छातीमें भी तलवार भोंक ली। इसी बीचमें अंगरेजोंके कुछ सिपाही कृष्णदासको किलेसे पकड़ ले गये। चार लाखकी लूट हुई थी।

नवाबकी फौज कलकत्तेके उत्तर आ पहुंची थी। अमीरचन्दके जमादारने सेनापतिसे जाकर कहा—'उत्तरांशकी अपेक्षा पूर्वदिक्से आक्रमण करनेमें सुविधा है। क्योंकि उधर कोई रक्षक नहीं है।' जमादारके कहने पर पूर्वदिक्से नगर आक्रान्त हुआ। फोर्टविलियमसे पाव कोस उत्तर-पूर्व बड़े-बाजारमें नवाबकी फौजने आग लगा दी। दुर्गसे बाहर जो अंगरेजी सिपाही रहे, वह चार दिनतक किसी प्रकार लड़े-भिड़े; शेषको सब भाग खड़े हुये।

२० वीं जूनको सवेरे नवाबकी फौजने दूने उत्साहसे दुर्गपर आक्रमण किया था। जो अंगरेज दुर्गके मध्य रहे, वह हालवेलोंको सेनापति बना और बाहर आ दृढ़तर बाधा डालने लगे। फिर उन्होंने हालवेल साहबसे अमीरचन्दको अनुरोध करा राजा मानिकचन्दके नाम एक पत्र लिखवाया और सूर्योदय होते ही दुर्गके प्राकारसे शत्रुके मध्य फेंकाया। राजा मानिकचन्द हुगलीके शासनकर्ता और नवाबकी एक बड़ी फौजके अधिनायक रहे। अमीरचन्दने अंगरेजोंके प्राण और दुर्गकी रक्षाकेलिये उनसे अनुरोध किया था। पत्र उठा तो लिया गया, किन्तु युद्ध न रुक सका। दो बजेके समय फिर नवाबकी फौज आगे बढ़ी। हालवेल साहबने अमीरचन्दसे दूसरा पत्र लिखाकर फेंका। इसमें भी वही अनुरोध था।

अपराह्णके समय नवाबने दुर्गमें प्रवेश कर अमीरचन्द और कृष्णदासको बुलाया। यथा समय आने-

पर नवाबने दोनोंसे भद्र व्यवहार किया था। फौज नगर लूटने लगी। अमीरचन्दके मकान्से ४ लाख रुपया, कितना ही हीरा-मोती और सौदागरोंका सामान निकल गया था।

२री जुलाईको नवाबने अमीरचन्दके साथ मुर्शिदाबादको प्रत्यागमन किया। एक दिन पहले उन्होंने बन्दी अंगरेजोंको कैदसे छोड़ अपने-अपने आवास जाने कहा था। अमीरचन्द होने मध्यस्थ बन और नवाबसे कह सुन यह काम कराया था। उधर अंगरेजोंका भी सर्वस्व लुटा और खानेको कच्चा पैसा तक न बचा था। अमीरचन्दने दयाके परवश हो अपनी क्षति पर दृक्‌पात न किया और अंगरेजोंको अल्प-विस्तर साहाय्य दिया।

इस घटनाके बाद अंगरेज सेनापतिने शराबके नशेमें किसी मुसलमानको मार डाला था। नवाबने संवाद पाते ही आदेश निकाला—जिस अंगरेजको देखो, उसीको पकड़ कर, कैद करो। अंगरेज फ्रान्स और डेनमार्कको कोठियोंको भागे और वहां भी सुभीता न देख फलतेको चलते बने। किसीके पास कौड़ी न थी, सुतरां महा विपद् पड़ी। अन्तको जब नवाबकी फौज अंगरेजोंका माल असबाब लूट और नवाब अलीवर्दी खांकी स्त्रीके अनुरोधसे कासिमबाजारकी कोठीके वाटस साहबको छोड़ लौट आयी, तब इस देशके लोगोंने साहस पा सकल पलातक अंगरेजोंको आहारादि देनेको ठहरायी थी।

इस समस्त विपद्का मूलकारण अमीरचन्द मान प्रेसिडेन्सीके अंगरेजोंने उनको ही शास्तिका विधान किया।

इधर जिन्होंने फलतेमें जाकर आश्रय लिया था, उन्होंने महा विपदमें पड़ मिष्टर मानिकरामको सैन्याध्यक्षके समभिव्याहारसे मन्द्राज भेज दिया। इन्होंने मन्द्राजकी कौन्सिलमें पहुंच अंगरेजोंकी दुरवस्था बतलायी। वहांसे आडमिरल गोफक, वाटसन और करनल क्लाइव बङ्गालकी तरफ चले। १५ वीं अक्तोबरको क्लाइबका जहाज फलते पहुंच गया। मन्द्राजसे जो सकल पत्र लाये, क्लाइबने वह कलकत्ते भेजवाये थे। उन्होंने फिर वाटसन साहबसे मिल अमीरचन्दको एक स्वतन्त्र पत्र भी लिखा। क्लाइबके ऊपर आदेश था—यदि नवाब इन सकल विषयोंका कोई प्रतीकार न करे, तो आप मुरशिदाबाद और चन्दननगरपर आक्रमण करनेको चढें। अमीरचन्द यह सकल पत्र नवाबके पास भेजनेमें डरे। अवशेष पर २री जनवरीको कप्तान कूटने मानिकचन्दकी फौज भगा कलकत्तेका दुर्ग अपने अधिकारमें कर लिया था। दूसरे दिन वाटसन साहब भी कलकत्ते आये और मिष्टर ड्रेक गवरनर बनाये गये।

१०वी जनवरीको (१८५७ ई०) अमीरचन्द मुरशिदाबादसे कलकत्ते लौट मिष्टर ड्रेकसे मिले। यह साथमें अपने दत्तक पुत्र दयालचन्दको भी ले गये थे। मिष्टर डेक, करनल क्लाइब, आडमिरल वाटसन प्रभृति सकल ही कौन्सिलके गृहमें बैठे। अमीरचन्द सबसे मिल भेंट बात चीत करने लगे।

उस समय युरोपमें फ्रान्सीसियों और अंगरेजोंसे युद्ध हो जानेकी सम्भावना थी। क्लाइबने सोचा—इस समय नवाबसे लड़ना अच्छा नहीं किन्तु नवाब कलकत्तेके जयका संवाद सुन बहुत बिगड़े थे। सुतरां अंगरेजोंने सेठोंको मध्यस्थ बनाया। उन्होंने अपने विश्वस्त कर्मचारी रणजित् रायको नवाब और क्लाइबके बीच बात चीत चलानेके लिये नियुक्त कर दिया।

नवाब जब कलकत्ता जीत मुरशिदाबाद वापस गये, तब साथमें अमीरचन्द भी रहे। वहां इन्होंने नवाबके निकट प्रियपात्र मन्नूलालसे मिल अपना विशेष विश्वास जमा लिया था। इधर कलकत्तेमें भी अमीरचन्दकी बहुत कोठियां रहीं। इसलिये यह अंगरेजोंके साथ नवाबका सद्भाव बढ़ानेके लिये मुरशिदाबादको गये थे।

उधर ३० वीं जनवरीको नवाबकी फौज गङ्गापार हो हुगलीकी ओर बढ़ी और ग्रामोंसे अंगरेजोंकी रसद रोकनेका प्रबन्ध करने लगी। लोगोंको आदेश हुआ—कोई ग्रामवासी किसी प्रकारका खाद्यादि शहरमें बेच न सकेगा, अंगरेजी फौजका काम कोई कर

न सकेगा और बोझ ढोनेके लिये कोई घोड़ा या बैल दे न सकेगा।

क्लाइवने यह हाल देख रणजित् रायसे परामर्श लिया। उन्होंने नवाबको पत्र लिखनेके लिये कहा। सुहृद्भावसे पत्रका उत्तर देते भी उनकी फौज कलकत्ते पर झपटनेसे न रुकी। फिर २री फरवरीको सन्ध्याकाल नवाब अंगरेजोंके प्रतिनिधिसे बात चीत करनेपर स्वीकृत हुये। किन्तु उक्त समय पर आदेशका कोई पत्र पहुंचा न था। दूसरे दिन सबेरे देखा गया—नवाब नगरके उत्तरांशमें लोगोंका द्रव्यादि लूट रहे हैं।

मराठा-खाईकी उत्तर सीमापर अमीरचन्दके बागमें नवाबकी फौजने आश्रय लिया था। मिष्टर वाटसन और क्राफटन अंगरेजोंकी ओरसे नवाबके साथ मिलने गये। पहले उन्होंने राय-दुर्लभसे मुलाकात की। उन्होंने अंगरेजोंसे अस्त्र रख देनेको कहा। किन्तु अंगरेजोंके राजी न होनेपर वह भरे दरबारमें नवाबके पास ले गये। अल्प-विस्तर कथा वार्ताके बाद अंगरेज लौटने लगे कि अमीरचन्दने इङ्गितसे बताया—तुम्हारे पकड़ लेनेका परामर्श आया है। इससे उन्होंने नवाबकी अनुमति न ली और चुपके चुपके छावनीकी राह पकड़ी।

परिशेषमें अमीरचन्द और रणजित्‌रायकी मध्यस्थतासे ९वीं फरवरीको एक सन्धि हुई। नवाबने सन्तोषके चिह्नकी तरह आडमिरल वाटसन और करनल क्लाइवको वस्त्रादिका उपहार पहुंचाया। उसी दिन अमीरचन्दने अंगरेजोंका सही किया हुआ पत्र नवाबको सौंपा, किन्तु क्लाइवने इनसे कहा था,—नवाबसे अनुरोध कर हमें चन्दननगर पर चढ़नेकी अनुमति दिला दीजिये। फिर नवाबका कोई निषेध पत्र न मिलनेसे १६ वीं फरवरीको क्लाइव फ्रान्सीसियोंके विपक्षमें चले गये। किन्तु फ्रान्सीसियोंने ठीक उसी समय पर तारतम्य लगा नवाबका निषेधपत्र पहुंचाया।

अमीरचन्दके शेष व्यवहारसे सन्तुष्ट हो अंगरेजोंने उन्हें वाटसन साहबकी सहकारितामें लगाया। नवाबने ससैन्य आते समय अग्रद्वीपमें सुना—अंगरेज चन्दननगरपर चढ़नेका उद्योग कर रहे हैं। उन्होंने फ्रान्सीसियोंके साहाय्यार्थ रुपया और एक दल सैन्य भेजा। फिर अमीरचन्दसे नवाबने पुछवाया—अंगरेज सन्धिके नियमादि माननेको प्रस्तुत हैं या नहीं। अमीरचन्दने उत्तर दिया—अंगरेज किसी प्रकार सन्धि न तोड़ेंगे।

सिराजने इनकी बातपर आश्वस्त हो कहला भेजा हमने पहले जो फौज भेजी वह फ्रान्सीसियोंके साहाय्यार्थ नहीं। अंगरेजोंने भी उत्तर दिया—हम नवाबकी सम्मति बिना फ्रान्सीसियोंसे न लड़ेंगे।

किन्तु क्लाइवने सोचा—चन्दननगर पर आक्रमण मारना एकान्त आवश्यक है। इसलिये नवाबका निषेध रहते भी उन्होंने फ्रान्सीसियोंके विरुद्ध फौज बढ़ायी। उस समय अमीरचन्दने अंगरेजोंका विशेष स्वार्थ साधन किया था। इन्होंने नवाबके हिन्दू सेनापतियोंसे कह दिया था—आप अंगरेजोंसे न लड़ियेगा। २४ वीं मार्चको अंगरेजोंने चन्दननगर पर आक्रमण किया। फिर नवाबने उसी समय सुना—हमें राज्यच्युत करनेके लिये पठानोंकी फौज आती है। उनके भयकी परिसीमा न रही। उन्होंने क्लाइव और वाटसनको समाचार दिया—चिर दिन आपसे मैत्री रखनेकी हमारी एकान्त इच्छा है।

अल्प दिनके मध्य ही अंगरेजोंने सुना—प्रधान सेनापति मीरजाफर नवाबके आचरणसे बहुत विरक्त हो गये हैं। क्लाइवने वाटसन साहबको कहला भेजा, कि उस सुयोगमें मीरजाफरके साथ उन्हें बन्धुत्व बढाना आवश्यक है।

इधर कितने ही हिन्दू सभासद नवाबको राजच्युत करनेके लिये चुपके चुपके साजिश चलाते थे। अमीरचन्द भी उन्हींमें रहे और वाटसन साहबको कच्चा-पक्का समाचार देते गये।

२२ वीं अपरैलको इन्होंने नवाबके लत्ती नामक एक सेनापतिको अपने दलमें मिलते देखा था। उसने बतलाया—'नवाबने बङ्गालसे अंगरेजोंको निकालनेके लिये कल्पना की है। किन्तु अनेक प्रधान-प्रधान

कर्मचारी उनसे लड़नेको तैयार हैं। इसलिये नवाबके पटने जाने पर अंगरेज मुरशिदाबाद ले सकेंगे। हम भी अंगरेजोंको यथोचित साहाय्य देनेपर प्रस्तुत हैं। किन्तु मुरशिदाबाद जीतनेपर उन्हें, हमीको नवाब बनाना पड़ेगा।' अमीरचन्दने सेनापतिकी यह बात कलकत्तेके अंगरेज हाकिमोंसे कही। क्लाइव इस प्रस्तावपर सम्मत हुये। उधर वाटस साहबने मीरजाफरको भी मिला लिया। अन्तको स्थिर हुआ—मुरशिदाबाद जीतने पर मीरजाफर ही नवाब बनेंगे। फिर मीरजाफरने वाटस साहबको कहला भेजा—'इस साज़िशकी बात अमीरचन्दके कानमें न पड़े। क्योंकि सुननेसे वह विभ्राट खड़ा कर सकते हैं। वाटस साहब मीरजाफरकी बात मानते भी अमीरचन्दसे उक्त विषय बताने पर वाध्य हुये। इन्होंने सोचा—'हमारा अदृष्ट अच्छा नहीं। मीरजाफरके नवाब बननेसे वाटस साहबका ही भाग्य जगेगा। अमीरचन्दने अंगरेजोंसे कहला भेजा,—'नवाबके खजानेमें जितना रुपया हो, उसमें सैकड़े पीछे पांच रुपया और जितना जवाहरात हो, उसका चतुर्थांश हमें देना पड़ेगा। यदि आप यह बात न मानेंगे, तो हम साज़िशको नवाबके सामने खोल देंगे।'

अमीरचन्दकी अभिसन्धि व्यक्त होते ही वाटस साहब वगैरह अतिशय चिन्तामें पड़े। उन्होंने कलकत्तेकी कौन्सिलको लिख भेजा—'अमीरचन्द बड़े खराब आदमी हैं। उनकी दो चालाकियां मालूम हुई हैं। एकबार उन्होंने रायदुर्लभके साहाय्यसे नवाबके खजानेका कितना ही रुपया मीरजाफरको सौंपनेकी चेष्टा की थी। फिर नवाबने जब अंगरेज सेनाध्यक्षोंको पारितोषिक देनेके लिये विस्तर अर्थ दिया, तब उन्होंने रणजित् रायसे मिल उसे आत्मसात् कर लिया। दोनोंके हेलमेलसे यह काम होते भी अमीरचन्दने रणजित्रायको कौड़ी न देखायी। उन्हें आशङ्का हुयी—कहीं अंगरेजोंको खबर न लग जाये। इसीसे रणजित् रायका संस्रव तोड़नेके लिये उन्होंने नवाबसे आदेश भी निकलवाया था।'

फिर अपरापर कार्यों से वाटस साहब और मीरजाफरने एक सन्धिपत्र बनाया। उसमें लिखा था—अंगरेज एक करोड़, हिन्दू ३० लाख, अरमेनियन १० लाख और अमीरचन्द ३० लाख रुपया पायेंगे। किन्तु अंगरेज हाकिमोंने इस पत्रमें काट छांट लगा अपने लिये ३० लाख रुपया बढ़ा दिया। हिन्दुवोंकी तीसकी जगह २० लाख अरमनियोंकी दसकी जगह ७ लाख, सिपाहियोंको साढ़े २२ लाख और दूसरे नौकरोंको भी इसी हिसाबसे रुपया मिलना ठहरा। केवल अमीरचन्दके नाम ही शून्य पड़ा। क्लाइव प्रभृति सबने परामर्श किया—'अमीरचन्द बड़े धूर्त हैं। उनके साथ भी वैसी ही चालाकी न करनेसे काम न बनेगा। वह हमें डरा रुपया लेना चाहते हैं। इस दोषकेलिये उन्हें होशियारीसे धोका देना चाहिये।'

फिर दो पत्र लिखे गये—एक सफेद और एक लाल। सफेदमें मीरजाफरकी सन्धिका हाल था। उसपर अडमिरल वाटसन और कमिटीके सभ्यगणने हस्ताक्षर किये। लाल कागज़ अमीरचन्दको देनेके लिये रहा। किन्तु इसपर वाटसन साहब और कमिटीके सभ्यगणने अपनी सही न दी थी। केवल क्लाइवने ही हस्ताक्षर किये। फिर क्लाइवने सोचा—शायद अमीरचन्द वाटसन साहबकी सही न देख यह पत्र लेनेसे हिचकेंगे। इसीसे उन्होंने लुसिङ्गटन नामक किसी कर्मचारीसे वाटसन साहबके हस्ताक्षर बनवा दिये। हतभाग्य अमीरचन्दने वाटसन साहब और क्लाइवकी सही देख लाल पत्र ले लिया।

उधर घोरतर साज़िश होने लगी। नवाबको भी उसका आभास मिल गया। अंगरेजोंने नवाबको सन्तुष्ट रखनेके लिये स्क्राफटन नामक एक व्यक्तिको नियुक्त किया। उनसे नवाबको मालूम हुआ था—अंगरेज चिरकाल हमारे मित्र बने रहेंगे और कोई अनिष्ट न करेंगे।

ऐसे सङ्कटके समय अमीरचन्द भी घबरा गये। इन्होंने अच्छीतरह समझ लिया था—'अंगरेजोंको हमारा विश्वास नहीं, वह अनायास ही धोका दे देंगे।' अमीरचन्दने कौशलके साथ नवाबको सुझाया—फ्रान्सीसी और अंगरेज मिलकर शीघ्र ही आपसे

लड़ेंगे। यह भय देखा इन्होंने अपना प्राप्य ४ लाख (जो रुपया कलकत्तेसे उनका घर लूट नवाबकी फौज ले गयी थी) और वर्धमानके महाराजको ऋण दिया हुआ साढ़े ४ लाख रुपया पानेके लिये नवाबसे आदेश निकलवाया।

इसीसमय वाट्स् साहब अमीरचन्दके लिये बहुत चिन्तित हुये—वह कब क्या उपद्रव खड़ा कर दें। वाट्स् और स्क्राफटन दोनोंने परामर्शसे ठहराया—अमीरचन्दको मुरशिदाबादसे इस समय हटा देना ही आवश्यक है। स्क्राफटनने इनसे आकर कहा—'इस समय आपको मुरशिदाबाद छोड़ देना चाहिये। क्योंकि यहां गड़बड़ पड़नेसे वाट्स् साहब तो घोड़ेपर चढ़ अनायास ही भाग जायेंगे, किन्तु आप वृद्ध होनेसे जल्द जल्द निकल न पायेंगे। इसलिये अविलम्ब आपको कलकत्ते जाना पड़ेगा। किन्तु उससमय भी यह नवाबके खज़ानेसे अपना रुपया पा न सके थे। इन्होंने स्क्राफटनसे भी यह बात बता दी। स्क्राफटनने अमीरचन्दसे कहा—'यह रुपया न मिलनेसे आपका कोई नुकसान् न होगा। नया बन्दोबस्त होते ही आप प्रधान कोषाध्यक्ष बनाये जायेंगे।' इसीप्रकार नाना प्रलोभन देखा यह कलकत्ते पहुंचाये गये।

यथासमय पलासीके समरक्षेत्रमें शिराज़के सौभाग्य-का सूर्य चिरदिनके लिये अस्तमित हुआ। अंगरेज बङ्गालके सर्वमय कर्ता बने। अमीरचन्दने भी समझा, उनका भाग्य खुल गया। शीघ्र ही ३० लाख रुपया मिलना क्या कम खुशीकी बात थी! अमीरचन्द क्लाइवके साथ मुरशिदाबाद गये। मीरजाफर बङ्गाल-के नवाब बने। उस समय क्लाइवने 'प्रकृत' सन्धि-पत्रके अनुसार सकल विषय निष्पत्ति करनेको बात उठायी। मीरजाफरके भवनमें सभा भरी। क्लाइव, वाट्स्, स्क्राफटन, मीरन, रायदुर्लभ और अमीर-चन्द उपस्थित हुए। सब लोग यथास्थान बैठे, किन्तु अमीरचन्द कुछ दूर रखे गये।

सफेद कागज़की सन्धिके अनुसार एक-एक कर सकल विषय पूरे किये गये। अब अमीरचन्दकी बारी आयी। ये कितने ही सुखस्वप्न देख रहे थे। सब लोग सोचने लगे कि इस समय कैसे अमीरचन्दको अंगरेज धोका देंगे। इतनेमें ही चतुर-प्रकृति स्क्राफ-टन साहब झटपट हंसते हंसते हिन्दीभाषामें बोल उठे—'अमीरचन्द! लालकागज जाली है। आपको कुछ न मिलेगा।' इस बातसे अमीरचन्दपर मानो वज्र टूट पड़ा। लालकागज़की जाली सुनते ही और अपने लाभकी आशा न रहते ही यह निस्पन्द हो गये। समस्त शरीर कांपने और मत्था घूमने लगा था। यदि उस समय कर्मचारी पकड़ न लेते, तो अमीरचन्द निश्चय भूमिपर गिर संज्ञा खो देते। नौकरोंने बड़े कष्टके साथ इन्हें पालकी पर बैठा कर घर पहुंचाया। फिर कोई एक घण्टे निस्पन्द रहनेके बाद उन्मादका लक्षण देख पड़ा। उस समयसे अमीरचन्दका मन बहुत बिगड़ गया था। आजीवन यह आक्षेप न मिटा—'जिसके लिये धन, जन, सहाय, सम्पत्ति सब कुछ गंवाया, उसीने हमारी ओर दृष्टिको न उठाया और धोकेमें भी फंसाया।' फिर जब यह क्लाइवसे मिले, तब साहब अम्लानवदन हो कहने लगे—'अमीरचन्द! तुम्हारा मन बिगड़ गया है। अब तुम तीर्थयात्रामें भ्रमण करो।' अमीरचन्द क्लाइवके कहनेपर तीर्थयात्रा करने निकले। राहमें कभी यह रोते और कभी गाते थे। इस घटनाके डेढ़ वर्ष बाद १७५८ ई०को ५वीं दिसम्बरको इन्होंने इहलोक छोड़ दिया।

उमीदी मौलाना—अपने समयके एक बहुत अच्छे कवि। रेई प्रान्तके तहरान् नगरमें इन्होंने जन्म लिया था। शाह इसमाइल सुफीके कितने ही सभ्योंसे इनकी घनिष्ठ मित्रता थी। किन्तु इनसे शाह कवामुद्दीन नूरबख्शी जलते थे। १५१९ ई०को किसी रातके समय उन्होंने इन्हें मार डाला था।

उमेठन (हिं० स्त्री०) उद्वेष्टन, ऐंठ।

उमेठना (हि० क्रि०) उद्वेष्टन करना, ऐंठना।

उमेठवां (हिं० वि०) उमेठा-जैसा, ऐंठा, मरोड़दार।

उमेड़ना, उमेठना देखो।

उमेत—गुजरात प्रान्तके रेवाकांठा जिलेका एक छोटा राज्य। क्षेत्रफल साड़े २६ वर्ग मील है। प्रतिवर्ष

अंगरेज सरकार और गायकवाड़को कर देना पड़ता है। उमेत दो भागोंमें विभक्त है। उससे ५ ग्रामोंका एक भाग अंगरेजी राज्यके खेड़ा और दूसरा ग्रामोंका भाग रेवाकांठे जिलेमें पड़ता है।

उमेद कवि—एक पश्चिमभारतके कवि। इनके 'नखसिख' की लोग बड़ी प्रशंसा करते हैं। यह शाहजहांपुरके पास किसी गांवमें रहते थे।

उमेलना (हिं॰ क्रि॰) उन्मीलन करना, खोलना, बताना।

उमेश (सं॰ पु॰) उमाके पति, शिव।

उम्दतुल उमरा—कर्णाटकके नवाब मुहम्मद अली खानके ज्येष्ठ पुत्र। १७८५ ई॰में इन्हें अपने पिताका राज्य मिला था। किन्तु १८०१ ई॰को १५वीं जुलाई-को यह चल बसे। इनकी मृत्युके बाद कर्णाटकका शासनभार लेनेको अंगरेजोंने चेष्टा लगायी थी। किन्तु इनके उत्तराधिकारी अलीहुसेन अंगरेजोंके प्रस्तावपर सम्मत न हुये। उम्दत्के भ्रातुष्पुत्र अज़ी-मुद्दौलाको राज़ी होनेपर अंगरेजोंने नवाब बना दिया।

उम्दतुलमुल्क—नवाब अमीर खान्का एक खिताब।

उम्पा, उम्पिका देखो।

उम्पिका (सं॰ स्त्री॰) शालिधान्य विशेष, किसी क़िस्मका चावल। यह मधुर, स्निग्ध, सुगन्ध, कषाय, रूक्ष और वात, पित्त तथा कफको नाश करनेवाली है। (राजनिघण्ट)

उम्बर (सं॰ पु॰) उम्-वृ-अच्। १ देहली, चौखट। २ एक गन्धर्व। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़।

उम्बर गांव—बम्बई प्रदेशके थाने ज़िलेका एक बन्दर। यह अक्षा॰ २०° ११′ ५५″ उ॰ और द्राघि॰ ७२° ४१′ ४०″ पू॰ पर अवस्थित है। बम्बई प्रदेशके नाना स्थानोंसे यहां माल आया-जाया करता है।

उम्बर गांव—बम्बई प्रान्तके थाने ज़िलेका एक ग्राम। यह दहानु तहसीलमें लगता और बेवजी रेलवेष्टेशनसे २ कोस पड़ता है। उम्बरगांवसे बेवजी तक पक्की सड़क बनी है। यहां कचहरी, पुलिस, डाक और समुन्दरी चुङ्गीका दफ्तर है। यात्रियोंके टिकनेका बंगला और लड़कोंके पढ़नेका स्कूल भी वर्तमान है। दक्षिण किनारे पोर्तगीज बुर्ज खड़ा है। १८१८ ई॰में वह बहुत अच्छी इमारत रही। जो तोपोंके चढ़ानेका ऊपर स्थान था। एक कोस दक्षिण धेरी गांव है। वहां १८५६ ई॰में नवाजबाई नाम्नी एक पारसी रमणीने अग्निमन्दिर बनवाया था। फिर १८३९ ई॰को पारसी लोगोंने चन्दा करके एक शान्तिभवन भी खोला था। पारसियोंकी पञ्चायत एक स्कूल चलाती है, जिसमें जन्द अवस्थाकी शिक्षा दी जाती है।

उम्बरा—बम्बई प्रान्तका एक ग्राम। आजकल इसे उमरा कहते हैं। ९१४ ई॰में राष्ट्रकूट-नृपति इन्द्र नित्यवर्षने इसे उत्सर्ग किया है। उक्त विषय नवसारीके ताम्रफलकोंमें लिखा है।

उम्बिका, उम्बी देखो।

उम्बी (सं॰ स्त्री॰) उम्-बा-क गौरादित्वात् ङीष्। १ यमानी, अजवायन। २ अर्धपक्व एवं तृणके अनलसे संभृष्ट यव तथा गोधूमकी मञ्जरी, गादा।

उम्मजमील—हर्बकी सुता, अबू सुफियांकी भगिनी और अबूलहबकी पत्नी। इनके पति मुहम्मदसे घृणा रखते थे। इन्होंने उसी घृणाको उत्तेजित किया। इसीसे कुरान्में पति और पत्नी दोनोंके विरुद्ध एक आपत्ति आयी है।

उम्म मक़री—एक प्रधान मुसलमान साधु। इन्होंने ग़ज़्नीमें जन्म लिया था। यह अपने तपोबलसे बहुत प्रसिद्ध हुये। सुलतान् मुहम्मद प्रायः इनसे परामर्श लेने जाते और सम्मानार्थ कभी सामने आसन न लगाते थे। १००० ई॰के समय यह विद्यमान रहे।

उम्म सलमा—अबू उमय्यकी कन्या और मुहम्मदकी पत्नी। यह मुहम्मदकी सब पत्नीयोंसे पीछे ६७९ ई॰में मरी थीं।

उम्मट (हिं॰ पु॰) देशविशेष, एक मुल्क। यह मालवेमें पड़ता है।

उम्मत (अ॰ स्त्री॰) धार्मिक सम्प्रदाय विशेष, एक मज़हबी फ़िरक़ा।

उम्मती (अ॰ वि॰) धार्मिक सम्प्रदायभुक्त, किसी मज़हबी फ़िरकेमें मिला हुआ। अविश्वासी या नास्तिकको 'लाउम्मती' कहते हैं।

उम्मर (हिं॰) उम्र देखो।

उम्भी (हिं०) उम्बी देखो।

उम्मेद (फा० स्त्री०) आशा, विश्वास, तमन्ना, भरोसा। "एक दम हजार उम्मेद।" (लोकोक्ति)

उम्मेद खान्—बङ्गालवाले शासक शायस्ता खान्के पुत्र। १६६०-६५ ई०को शायस्ता खान्ने इन्हें पैदल फौजका नायक बना चट्टग्राम जीतने भेजा था। इन्होंने आराकानियोंका कितने ही स्थानोंपर हरा चट्टग्रामपर एकाएक अधिकार कर लिया।

उम्मेदवार (फा० पु०) १ आकाङ्क्षी, मुतवक्का, आस तकनेवाला। २ अवलम्बी, मातहत। (वि०) ३ आशाविष्ट, जिसे उम्मेद रहे।

उम्मेदवारी (फा० स्त्री०) स्पृहालुता, आरजुमन्दी, चाहना।

उम्मेद सिंह—१ राजपूतानाप्रान्तस्थ कोटा राज्यके महाराव। यह १८४६ ई०में गद्दीपर बैठे थे। अजमेरके 'मेयो कालेज'में इनकी शिक्षाका कार्य सम्पादित हुआ।

२ राजपूताना प्रान्तस्थ कोटा राज्यके एक राजा। इनके पिताका नाम गुमानसिंह था। उन्होंने देवलोक चलते समय इन्हें प्रधान मन्त्री जालिमसिंह झालाको सौंपा। उस समय इनका वयस केवल दश वत्सर ही रहा। १८२७ ई०में राज्याधिकार मिला था। जालिमसिंहने मराठोंका उत्पात अपनी प्रजापर पड़ने न दिया। १८६० ई०में करनल मानसन होलकरसे हार कोटे पीछे फिरे थे। किन्तु नानाप्रकार साहाय्य पाते भी वह नगरसे दूर ही रखे गये। कारण उनके वहां पहुंचनेसे होलकर चिढ़ सकते थे। १८७४ ई०में अंगरेज गवरनमेण्टने होलकरके चार परगने जालिमसिंहको दिये, जो पहले उनके ठेकेमें थे। कारण उन्होंने अंगरेजोंको पूर्ण साहाय्य दिया और सङ्कटके समय मित्रवत् व्यवहार किया था। किन्तु प्रभुभक्त जालिमसिंहने उनकी सनद गवरनर जनरल लार्ड हेष्टिङ्गससे कह महाराज उम्मेदसिंहके ही नाम लिखायी। १८७५ ई०को अन्यान्य राज्योंके साथ कोटा भी अंगरेज गवरनमेण्टके अधीन हुआ था। सन्धिपत्रमें अन्यान्य विषयोंके साथ यह भी लिखा गया—कोटाके प्रधान मन्त्रीका पद जालिमसिंहके सन्तानको छोड़ दूसरा पा न सकेगा।

३ राजपूताना प्रान्तस्थ बूंदी राज्यके एक महाराज। १८०० ई०में अपने पिता महाराज बुधसिंहके परलोक पहुंचनेसे इन्होंने बन्धुबान्धव जोड़ बूंदीपर अधिकार जमाया था। बुधसिंह देखो। किन्तु आंबेरके महाराज ईश्वरी सिंहने आक्रमण कर इन्हें मार भगाया। उम्मेद सिंहने होलकरके साहाय्यसे १८०६ ई०में ईश्वरी सिंहको हराया और बूंदी धर दबाया था। इसके उपलक्षमें पाटनका परगना होलकरको भेंट मिला। फिर जयपुरके महाराज सवायी माधवसिंह बूंदीपर चढ़े थे। किन्तु उन्होंने जो वार्षिक कर ठहराया, वह अधिक दिन न चल पाया। १८१३ ई०में यह अपने पुत्र अजित्सिंहको राज्य सौंप तीर्थसेवनार्थ चलते बने।

उम्य (सं० क्ली०) उमाया अतस्या, उमा-यत्। विभाषातिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः। पा ५।२।४। औमीन, अतसा वा हरिद्राका क्षेत्र, अलसी या हलदीका खेत।

उम्र (अ० स्त्री०) वयस्, सिन। युवकको 'कम उम्र' या 'नौ उम्र', आजीवन क्लेशको 'उम्र भरका पैमाना', वृद्धको 'उम्ररसीदा', दीर्घजीवनको 'उम्रतुह', जीवनयात्राको 'उम्रका प्याला', आजीवन बन्दीको उम्रकैदी और आजीवन बन्धनको उम्रकैद कहते हैं।

उम्रचन्द्र बरवार—उदयपुरके एक दीवान। १७६८ ई०में उज्जैनके पास राजपूतों और मराठोंका युद्ध होनेपर राणा उरसी हारे थे। उदयपुरको सेंधियाके घेरनेपर इन्होंने बड़े बुद्धिबल और पराक्रमसे बचाया।

उर्—पर० सक० सेट् सौत्रधातु। यह गमन करने या चलने-फिरनेके अर्थमें व्यवहृत होता है।

उर (सं० पु०) उर्-क। १ मेष, मेढ़ा, भेड़। २ एक ऋषि। इन्हें लोग वातवंशीय कहते हैं।

उरः (सं० क्ली०) ऋ-असुन्-किच्च। १ वक्षः, हृदय, दिल, छाती। "स्वयं दास उरो भ सावधि।" (ऋक् १।१५८।५) (वि०) २ उत्तम, बढ़िया, अच्छा।

उरःक्षत (सं० क्ली०) १ उरोव्रण, सीका जख्म, छातीका घाव। २ क्षयरोग, तपेदिक।

उरःक्षतकास (सं० पु०) क्षयकासरोग, तपेदिककी खांसी।

"अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजनिग्रहैः।
रुक्षस्योरःक्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत्॥" (निदान)

उरःसूत्रिका (सं० स्त्री०) उरसः सूत्रमिव, कन्, टाप् अत इत्वम्। मुक्ताहार, छातीपर लटकनेवाले मोतियोंकी माला।

उरःस्थल (सं० क्ली०) वक्षः, हृदय, दिल, छाती।

उरई (हिं० स्त्री०) १ उशीर, खस। २ युक्तप्रान्तके जालौन जिलेकी एक तहसील और नगरी। यह अक्षा० २५° ५९′ ५″ उ० तथा द्राघि० ७९° २९′ २५″ पू०में कालपीसे झांसी जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। पहले उरई छोटीसी बसती थी। किन्तु १८३९ ई०में जालौन जिलेका हेडक्वार्टर बननेपर यह बहुत शीघ्र बढ़ गयी। यहां एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष पड़ा है। कपड़ेका बुनाई अधिक होती है। पृथ्वीराजके समय माहिल राजा थे। उरईका मैदान मशहूर है।

उरक (सं० पु०) शिवका एक परिचर।

उरकना (हिं० क्रि०) ठिटकना, ठहरना, रुक रहना।

उरग (सं० पु०) उरसा गच्छतीति, उरस-गम-ड सलोपः। "उरसो लोपश्च।" (पा ३।२।४८ वार्तिक) १ सर्प, सांप। २ शीषक, सीसा। ३ अश्लेषानक्षत्र। "उरग विधिशताख्यामर्दनीनायवारे।" (ज्योतिस्तत्त्व) ४ नागकेशरवृक्ष।

उरगगृह (सं० क्ली०) सर्पगृह, सांपका बिल।

उरगड्डी (हिं० स्त्री०) भारयष्टिविशेष, एक खूंटी। इसके द्वारा जुलाहे भूमिमें ताना लगानेके लिये छिद्र बनाते हैं।

उरगप्रतिसर (सं० त्रि०) ववाहिक अङ्गुरीयकके स्थानमें सर्प रखनेवाला, जो शादीकी अंगूठीके बदले सांप लपेटे हो।

उरगभूषण (सं० पु०) उरगको आभूषणकी भांति धारण करनेवाले महादेव।

उरगराज (सं० पु०) उरगोंके राजा शेष वा वासुकि।

उरगलता (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पानकी बेल।

उरगसारचन्दन (सं० पु०-क्ली०) चन्दनविशेष, किसी किस्मका सन्दल।

उरगस्थान (सं० क्ली०) उरगाणां सर्पाणां स्थानम्। पाताल।

उरगादि, उरगाशन देखो।

उरगाय (हिं०) उरुगाय देखो।

उरगारि, उरगाशन देखो।

उरगाशन (सं० पु०) उरगान् सर्पान् अश्नाति, उरग-अश-ल्यु। १ सर्पभक्षक गरुड़। २ मयूर।

उरगास्य (सं० क्ली०) अवदारणविशेष, किसी किस्मका फावड़ा।

उरगिनी (हिं०) उरगी देखो।

उरगी (सं० स्त्री०) नागिनी, सांपन।

उरगेन्द्र, उरगराज देखो।

उरगेन्द्रसुमन (सं० क्लीं०) नागकेशर।

उरङ्ग (सं० पु०) उरसा गच्छति, उरस्-गम-ड निपातनात् साधुः। सर्प, सांप।

उरङ्गम (सं० पु०) उरस्-गम-खच्। सर्प, सांप।

उरच्छ (सं० पु०) गुन्द्र, रामशर।

उरज (हिं०) उरोज देखो।

उरजात (हिं०) उरोज देखो।

उरझना (हिं० क्रि०) फंसना, गांठ डालना।

उरण (सं० पु०) ऋ-क्यच् धातो-रुक्च रपरः। "ऋतः क्युच्।" उण् ५।१७) १ मेष, भेड़ा, मेढ़ा। (ऋक् ८।१।४।४) २ मेघ, बादल। ३ एक वेदोक्त असुर। इसे इन्द्रने मारा था। (हरिवंश २६।२९) ४ दद्रुघ्नवृक्ष, चकौड़िया। (क्ली०) ५ रौप्य, चांदी। ६ बम्बईप्रदेशके थाने जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १८° ५२′ ४″ उ० यथा द्राघि० ७२° ५९′ पू०-पर बम्बई नगरसे प्रायः ४ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां अनेक धनवान् रहते हैं। चिकित्सालय, पाठशाला, डाकघर, मन्दिर, गिरजा और मसजिद विद्यमान हैं।

उरणक (सं० पु०) १ मेष, भेड़ा। २ मेघ, बादल।

उरणा (सं० स्त्री०) उरणी, मेषी, भेड़ी।

उरणाक्ष (सं० पु०) उरणस्य मेषस्याक्षीव पुष्पं यस्य। १ दद्रुघ्नवृक्ष, चकौड़िया। २ आरग्वधवृक्ष, लटजीरा।

उरणाचक, उरणाच देखो।

उरणाख्य, उरणाच देखो।

उरणाख्यक, उरणाच देखो।

उरद (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक अनाज। माष देखो।

उरदी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र माषविशेष, छोटा उड़द। इसे आषाढ़ मासमें बोते हैं। आश्विन वा कार्तिकमें यह तैयार हो जाता है। बीज कृष्णवर्ण रहता है। एक तरहकी उरदी तीन पक्षमें ही कटती है। २ पात्रचिह्नविशेष, थालीके बीचका निशान्। ३ यन्त्रविशेष, एक ठप्पा। ४ पुलिस, पलटन या दूसरे महकमेके सिपाहियोंकी पोषाक। ५ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह पशुवोंके प्रायः चिपट जाता है।

उरध (हिं०) ऊर्ध्व देखो।

उरधारना (हिं० वि०) छिटकाना, लटकाना, छोड़ देना।

उरना (हिं०) उरण देखो।

उर-तरप (हिं०) उड़प देखो।

उरप्यजी—गुजरातके सैयद मुसलमानोंकी एक शाखा। यह लोग सैयदबुध याकूबके वंशधर हैं। सैयद बुध उन सुप्रसिद्ध अश्वारोही वीरके भतीजे थे, जिनके कारण अजमेरके तारागढ़ दुर्गपर सबसे पहले (११६५ ई०) इसलामका झण्डा उड़ा। सैयद बुध गुजरातके सुलतान अहमदके समय (१४११—१४४३ ई०) जीवित थे।

उरफ, उर्फ़ देखो।

उरवसी, उर्वशी देखो।

उरवी, उर्वी देखो।

उरभ्र (सं० पु०) उरु उत्कटं भ्रमति, भ्रम-ड। १ मेष, भेड़ा। २ विषधर कीटविशेष, एक ज़हरीला कीड़ा। (सुश्रुत)

उरभ्रसारिका (सं० स्त्री०) वातप्रकृति कीटविशेष, एक ज़हरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वातज रोग उठ खड़े होते हैं। (सुश्रुत)

उरमना (हिं० क्रि०) झूमना, लटकना।

उरमाना (हिं० क्रि०) डालना, लटकाना।

उरमाल (हिं० पु०) रूमाल, अंगोछा।

उररी (सं० अव्य०) उर बाहुलकात् अरीक्। १ अङ्गीकार! स्वीकार! मञ्जूर! अच्छा! हां। २ विस्तार! बढ़ावा! चलने दो! बढ़ो!

उररीकार (सं० पु०) उररी-कृ-घञ्। १ अङ्गीकार, मञ्जूरी, वादा। २ प्रवेश, दखल, पंहुच।

उररीकृत (सं० त्रि०) अङ्गीकृत, मञ्जूरशुदा। २ विस्तारित, बढ़ाया हुआ।

उरल (सं० त्रि०) उर बाहुलकात् कलच्। १ गतियुक्त, चलनेवाला। (हिं० पु०) २ मेषविशेष, एक भेड़। इसके दाढ़ी लटकती है।

उरला (हिं० वि०) १ पिछला, जो आगे न हो। २ अद्भुत, निराला।

उरल्य (सं० त्रि०) उरल-यः। बलादिभ्यो यः। १ उरल-सन्निहित, उरलोंसे भरा हुआ (देशादि)। (पु०) २ एक असभ्य जाति। मन्द्राज प्रदेशके मध्यवर्ती खोधवल्य गिरिमें इस जातिके लोग रहते हैं। यह एक स्थानमें ठहर नहीं सकते। पहाड़ोंमें घूम-घूम कर इन्हें शिकार मारना बहुत अच्छा लगता है। साथमें कुक्कुर और हाथमें धनुर्बाण रहता है। यह महिषसे बड़ी घृणा रखते और देखते ही दूर भागते हैं। यदि कोई उसे छू लेता है, तो अपनी जातिसे उसे हाथ धोना पड़ता है और नियमित दण्डके अनुसार अपने कियेको रोता है। महिष छूनेवाली दूसरी जातिको यह अत्यन्त हेय समझते हैं। पिता और माताके हाथमें सब काम करनेका भार रहता है। उनका आदेश सन्तानको प्राण खोते भी पालन करना पड़ता है। यह सम्भवतः नाजुक और नम्रप्रकृति होते हैं। दूसरी जातिमें यह किसी प्रकार मिलना नहीं चाहते।

उरविज (हिं० पु०) मङ्गल, मिरीख।

उरश (सं० पु०) एक अति प्राचीन जनपद। पाणिनिने तिकादि, भर्गादि और वरुणादि गणमें इस स्थानका उल्लेख किया है। मत्स्य (१२०।४६) और ब्रह्माण्ड (१३।४१) पुराणमें इस जनपद और इसके निवासिगणका नाम 'औरस' कहा है। वामनपुराणमें उर्वश (१३।४१) और मार्कण्डेय तथा वायुपुराणमें औषध, औपग, वा औतंश आदि नाम मिलता है।

यह स्थान अनुमानसे महाभारतोक्त 'उरग' देश

समझ पड़ता है। अभिसार देश जानेपर तन्निकटस्थ उरगके राजाने अर्जुनसे आकर युद्ध किया था।
(भारत, सभा २६ अ०)

पाश्चात्य प्राचीन भूवेत्ता टलेमिने इस स्थानको वर्श (Warsa Regio) बताया है। (Ptolemy, Geog. VII I, 45) चीना इसे उ-ल-शी कहते थे। चीना परिव्राजक युअन् चुयङ्ग यहां आये थे। उनके समय यह राज्य २०० लि (प्रायः साढ़े तीन सौ मील) विस्तृत था। प्रधान नगर एक मीलसे अधिक था। उरश उस समयपर काश्मीर राज्यके अधीन रहा। युअन् चुयङ्गने राजधानीसे प्रायः आध कोस दूर अशोकनिर्मित एक बौद्ध स्तूप देखा था। उसके निकट महायान मतावलम्बी कई बौद्ध रहते थे। इस जनपदका नाम आजकल 'रश' चलता, जो मुजफ्फराबादसे पश्चिम पड़ता है। इस प्रदेशका प्रधान नगर मानसर, नौशहर और कृष्णगञ्ज वा हरिपुर है।

इसके अधिवासी अतिशय बलशाली और दुर्दान्त होते हैं। जलवायु मनोरम है।

उरश्छद (सं० पु०) उरो छाद्यते अनेन, उरस्-छद-णिच्-घ। कवच, बख्तर।

उरस्, उरः देखो।

उरस (सं० वि०) १ दृढ़ एवं प्रशस्त वक्षःयुक्त, मजबूत और चौड़े सीनेवाला। (हिं० वि०) २ नीरस, फीका, जो स्वादु न हो। ३ वक्षस्थल, सीना।

४ मरनेके दिनका मेला। यह अजमेरमें प्रति वर्ष ख्वाजा मुईनुद्दीन् चिश्तीके मरणदिवस पर लगता है। यहां गुजरात और बम्बईके मोमिन अधिक आते हैं। कितनी ही भेंट चढ़ती है। रातको दरगाहमें बहुमूल्य वस्त्र बिछा रोशनी की जाती है। गाना होता और चङ्ग बजता है। लोग गोल बांधकर अपने शरीरको तलवारों तथा कटारोंसे पीटते और दरगाहको चारो ओर नाचते घूमते हैं। किन्तु मृत साधुके प्रतापसे उनको चोट नहीं लगती। बम्बई प्रान्तके थाना नगरमें भी इमाम शाह अलीकी दरगाहका उरस प्रसिद्ध है। वैशाख मासमें कोई एक हजार मोमिन यह मेला देखने आते हैं।

उरसना (हिं० क्रि) चञ्चल होना, हिलना-डुलना।

उरसाना (हिं० क्रि०) उद्वेग बढ़ाना, वहम बढ़ाना।

उरसिज (सं० पु०) उरसि वक्षःस्थले जायते, उरस्-जन-ड। स्तन, औरतोंकी छाती।

उरसिरुह, उरसिज देखो।

उरसिल (सं० त्रि०) उरस्-इलच्। लोमादि-पामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। प्रशस्त वक्षः स्थलवाला, जिसकी भरी या चौड़ी छाती हो।

उरसिलोमा (सं० त्रि०) वक्षःस्थलपर रोम रखनेवाला, जिसके छातीपर बाल रहें।

उरसो (अरिसिंह)—उदयपुरके एक राणा। १७६२ ई०में यह अपने पिता राणा राजसिंहके स्वर्गवास होनेसे गद्दीपर बैठे थे। किन्तु सरदार लोग इनसे चिढ़ गये। उन्होंने इन्हें राजच्युत कर स्वर्गीय राणाके मृत्यूत्तर-जात रत्नसिंह नामक पुत्रको गद्दीपर बैठाना चाहा। फिर गृहयुद्ध होने लगा। दोनों दलोंने मराठोंसे साहाय्य मांगा। उज्जैनके निकट युद्धमें राणा हार गये। अमचन्द बरवा देखो।

उरस्कट (सं० पु०) उरः कत्यते आक्रियते अनेन, उरस्-कट-क। बालकका यज्ञोपवीत विशेष, जो जनेऊ लड़कोंको किसी त्योहार पर मालाकी तरह पहनाया जाता हो।

उरस्तः (सं० अव्य०) उरसैकादिक्-तसि। उरसो यच। पा ४।३।११४। वक्षःस्थलसे, छातीकी तर्फ।

उरस्त्राण (सं० क्ली०) उरस्त्रायते, त्रै करणे ल्युट्। वक्षःस्थलको बचानेवाला कवच, छातीका तवा, बख्तर।

उरस्य (सं० त्रि०) उरसा निर्मितः, उरस्-यत्। १ हृदयजात, सिदरिया, छातीसे निकला हुआ। उरस्-अण्। २ वक्षःस्थलमें सन्निहित, सीनेमें लगा हुआ। उरस्-य। शाखादिभ्यो यः। पा ४।३।१०३। ३ हृदययोग्य, छातीका जोर चाहनेवाला। ४ धर्मज, असील। ५ उत्तम, बढ़िया।

उरस्वत् (सं० त्रि०) उरस्-मतुप्, मस्य वः। उरसिल, भरी-पूरी छातीवाला।

उरहना (हिं० पु०) अवलम्बन, शिकवा, किसी खराब कामकी शिकायत।

उरा (सं॰ स्त्री॰) उरणी, भेड़ी।

उराउ, उराव देखो।

उराट (हिं॰) उर देखो।

उरान (उरन्)—१ बम्बई प्रान्तके थाने जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ १८° ५२′ ४″ उ॰ तथा द्राघि॰ ७२° ५८′ पू॰ पर थाना नगरसे दक्षिण-पश्चिम ११ कोस दूर करञ्ज द्वीपमें अवस्थित है। इससे उत्तर डेढ़ कोस मोरे बन्दरमें एक बड़ी चुङ्गी और शराबका गुदाम है। वहांसे कितनी ही शराब थाने तथा कुलावे जिले और बम्बई शहरको भेजी जाती है। नगरमें डाकघर, औषधालय, स्कूल, गिरजा, मन्दिर और मसजिद आदि हैं। २ बम्बई प्रान्तके थाने जिलेकी चुङ्गीका विभाग। इसमें मोरा, करञ्ज और शवा लगता है। समुद्रकी राह लाखों रुपयेका व्यापार होता है। ३ बम्बई प्रान्तके थाने जिलेकी पनवेल तहसीलका एक द्वीप।

उराप—बम्बई प्रान्तस्थ सालसीट और बेसीन जिलेके किसान। इन्हें कोई उराप और कोई वराप कहते हैं। यह पहले ईसाई थे। १८२० और १८२८ ई॰ को पालशे ब्राह्मण रामचन्द्र बाबा जोशी तथा विट्ठल हरिनायक वैद्यने इन्हें फिर हिन्दू बनाया। कोई 'उराप' शब्द फ़ारसीके 'उर्फ़' और कोई अंगरेजीके 'युरोप' शब्दका अपभ्रंश बतलाते हैं। किन्तु दो में एक बात भी ठीक नहीं। सम्भवत: यह शब्द मराठीके 'ओरपने' या 'वरपने' से निकला है। अर्थ तप्त लोहेसे दागना है। क्योंकि जब यह हिन्दू बने, तब गर्म लोहेसे दगे थे। उरापोंको नये मराठा कहते हैं। यह शूद्र वा दास आगरियोंसे भी नीच हैं। उरापोंके पुरोहित और नेता स्वतन्त्र रहते हैं। यह दूसरे आगरियोंकी तरह हिन्दू देवदेवी पूजते हैं। इनके गोमस, सोज, फरनम, फुताद, मिनेज प्रभृति उपाधिसे ईसाईपन झलकता है। हिन्दू होते समय इन्हें कितना ही रुपया दण्डस्वरूप देना पड़ा था।

उरामथि (सं॰ त्रि॰) उरणी मारनेवाला, जो भेड़ी कत्ल करता हो।

उराय, उराव देखो।

उराव (हिं॰ पु॰) हृदयोद्गार, अभिलाष, हिम्मत, चाहना।

उरावन—छोटे नागपुर और पश्चिम बङ्गालके सन्थाल धांगड़। यह गांगपुर राज्यमें अधिक मिलते हैं। करनल डाल्टनके कथनानुसार यह गुजरात या कोङ्कनसे आकर यहां बसे हैं। ओरांगोन् देखो।

उराह (हिं॰ वि॰) दीर्घ, बड़ा।

उराह (सं॰ पु॰) ईषत् पाण्डुवर्ण कृष्णजङ्घाविशिष्ट अश्व, जो हलके पीले रङ्गका घोड़ा काले पैर रखता हो।

उराहना, उरहना देखो।

उरिण, उऋण देखो।

उरिन उऋण देखो।

उरिष्ट (हिं॰ पु॰) अरिष्ट, रीठा।

उरी (सं॰ अव्य॰) उर गतौ बाहुलकात् ईक्। १ अङ्गीकार! मञ्जूर! अच्छा! २ विस्तार, फैलाव! बढ़ावढ़ी।

उरीकार, उररीकार देखो।

उरीकृत, उररीकृत देखो।

उरीहा (सं॰ स्त्री॰) कारवेल्लक, करेली।

उरु (सं॰ त्रि॰) ऊर्णु-कु, णुलोपश्च-ह्रस्वः। ऊर्णोतेर्णुलोपश्च। उण्१।३१। महति ह्रस्वश्च। पा ४।१।३२। १ महान्, बड़ा। २ विस्तीर्ण, फैला हुआ। ३ अधिक, ज्यादा। ४ मूल्यवान्, कीमती, बढ़िया। (हिं॰) ऊरु देखो।

उरुकाल (सं॰ पु॰) उरुर्महान् कालः कृष्णवर्णः परिणामोऽस्य। महाकाललता, लाल इन्द्रायण।

उरुकालक, उरुकाल देखो।

उरुकृत् (सं॰ त्रि॰) स्थान प्रदान करनेवाला, जो जगह देता हो।

उरुक्रम (वे॰ त्रि॰) १ पादविक्षेपयुक्त, लम्बे पैरों चलनेवाला। २ उच्च पदान्वित, ऊंचे दरजेवाला।

"शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः।" (ऋक् १।९०।९)
'यस्य विष्णोरुरुषु विस्तीर्णेषु विसंख्येषु भूतजातान्याश्रित्य निवसन्ति स विष्णुः स्तूयते।' (१।१५४।२ ऋग्भाष्ये सायण)

२ ऋषभदेव।

"अष्टमे मरुदेव्यान्तु नाभेर्जात उरुक्रमः।" (भागवत १।३।१२)

उरुक्षय (सं॰ पु॰) १ भरद्वाज वंशीय महावीर्य राजपुत्र। (विष्णु पु॰ ४।१९।१०) २ प्रशस्त भवन, लम्बा-

चौड़ा मकान्। (त्रि०) ३ प्रशस्त स्थानमें रहनेवाला, जो लम्बी चौड़ी जगहमें रहता हो।

उरुचिति (सं० स्त्री०) प्रशस्त वा सुखद भवन, कुशादा या आराम देनेवाला मकान्।

उरुक्षेप (सं० पु०) इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा। यह बृहत्क्षयके पुत्र थे।

उरुगव्यूति (सं० त्रि०) प्रशस्त राज्य रखनेवाला, जिसके खूब लम्बी चौड़ी सलतनत रहे।

उरुगाय (वै० त्रि०) उरु-गै कर्मणि घञ्। १ सर्वत्र गेय, सब जगह तारीफ पानेवाला। "तीक्ष्णेक उरुगायो विचक्र।" (ऋक् ८।२९।७) 'उरुभिर्बहुभिर्गातव्यः बहुषु देशेषु गन्ता बहुकीर्तिर्वा।' (सायण) २ दूरगन्ता, दूर पहुंचनेवाला। ३ गमनादिके अर्थ विस्तृत स्थान प्रदान करनेवाला। (पु०) ४ विष्णु। (भागवत २।३।२०) (क्ली०) ५ प्रशस्त स्थान, कुशादा जगह।

उरुगायवान् (सं० त्रि०) विस्तृत स्थान प्रदान करनेवाला, जो खूब लम्बी चौड़ी जगह देता हो।

उरुगूला (वै० स्त्री) सर्प विशेष, एक सांप। (अथर्व ५।१३।८)

उरुचक्र (सं० त्रि०) प्रशस्त चक्रविशिष्ट, लम्बा चौड़ा पहिया रखनेवाला।

उरुचक्रि (वै० त्रि०) अप्रतिहत गति प्रदान करनेवाला, जो लम्बी-चौड़ी चलफिर करने देता हो। २ अधिक साहाय्य होनेवाला, जो बड़ी मदद करता हो। (सायण)

उरुचक्षु (वै० त्रि०) १ महादर्शन, बड़ी सूरतवाला। (ऋक् ८।१०१।२) (पु०) २ सूर्य। ३ मित्र। ४ वरुण।

उरुजना, उलझना देखो।

उरुज्मन् (वै० त्रि०) बहु भूमियुक्त, बहुत जमीन् रखनेवाला। (अथर्व ६।४।३)

उरुज्रय (वै० त्रि०) उरु-ज्रि करणे असुन्। बहु वेगयुक्त, बहुत झपटनेवाला।

"उरुज्रय समिन्दुभिः।" (ऋक ८।६।२७)

उरुज्रि (वै० त्रि०) बहु वेगवान्, ज्यादा जोर भरनेवाला।

'उरुज्रय प्रभूतगमनाः।' (सायण)

उरुञ्जिरा (सं० स्त्री०) विपाशा नदीका प्राचीन नाम। (यास्क निरुक्त ९।२३)

उरुण्ड (वै० पु०) १ वेदोक्त उपद्रवकारी एक असुर। (अथर्व ८।६।१५) २ गोत्रप्रवर्तक एक ऋषि। (प्रवराध्याय)

उरुतम (सं० त्रि०) अत्यन्त प्रशस्त, निहायत वसीय।

उरुतर (सं० त्रि०) अपेक्षाकृत अधिक प्रशस्त, ज्यादा लम्बा-चौड़ा।

उरुता (सं० स्त्री०) १ बहुता, ज्यादती, बहुतायत। २ विस्तार, फैलाव।

उरुताप (सं० पु०) अधिक उष्णता, बड़ी गरमी।

उरुधार (वै० त्रि०) बहुवेगसे निःसृत, बड़े जोरसे बहनेवाला। (शाङ्खायनगृह्य० ४।११।१)

उरुप्रथ (सं० त्रि०) अधिक विस्तृत, खूब फैला हुआ।

उरुबिल (वै० त्रि०) उरु बृहत् बिलमस्य। बृहच्छिद्रयुक्त, बड़े छेदवाला।

उरुब्ज (वै० त्रि०) १ बहुजलजनक, खूब पानी उपजानेवाला। २ उत्तम, बढ़िया। (सायण)

उरुमार्ग (सं० पु०) दूर पथ, लम्बी राह।

उरुमाल (सं० पु०) फलशाक विशेष, फलकी एक तरकारी। यह फल बृंहण, गुरु, शीतल, स्वादु, पाकरस, स्निग्ध, विष्टम्भि और कफ तथा शुक्र बढ़ानेवाला है। (वागभट)

उरुमुण्ड (सं० पु०) मथुरा प्रदेशका एक पर्वत। (बोधिसत्त्वावदानकल्पलता)

उरुयुग (सं० त्रि०) लम्बाचौड़ा हल रखनेवाला।

उरुलोक (वै क्ली०) १ अन्तरिक्ष, आसमान। "समान्तरिक्षमुरुलोकमस्तु।" (ऋक् १०।१२८।२) २ श्रेष्ठ लोक, अच्छी दुनिया।

उरुवा (हिं० पु०) उलूक, उल्लू।

उरुविक्रम (सं० त्रि०) शक्तिशाली, बहादुर।

उरुविल्वा (सं० स्त्री०) नैरञ्जन नदी तीरका एक अतिप्राचीन ग्राम। बुद्धदेव संसार छोड़नेबाद इसी स्थानपर प्रथम आस्फानक ध्यान लगाकर बैठे थे। वर्तमान नाम बोध-गया है।

उरुवु (सं० पु०) एरण्ड वृक्ष, रेंड़ीका पेड़।

उरुवुक (सं० पु०) उरु वायति, उक। उलूकादयश्च उक्। १ एरण्ड वृक्ष, रेंड़का पेड़। २ श्वेत एरण्ड, सफेद रेंड़। ३ रक्त एरण्ड, लाल रेंड़। ४ उदरवृद्धि, पेटका बढ़ाव।

उरुवूक, उरुवुक देखो।

उरुव्यचाः (वै० पु०) उरु-व्यच-असु। १ राक्षस। (त्रि०) २ अतिव्यापक, खूब भरा या फैला हुआ। (ऋक् ३।५०।१) 'व्यचे कुटादित्वमनसि। अनसीति किम्। उरुव्यच।' (काशिका १।२।१)

उरुव्यच् (वै० त्रि०) १ अतिदूर पर्यन्त गमनशील, बहुत दूरतक पहुंचनेवाला। २ विस्तृत स्थानयुक्त, लम्बी चौड़ी जगह रखनेवाला।

उरुव्रज (सं० त्रि०) विस्तृत राज्ययुक्त, जिसके लम्बी चौड़ी सलतनत रहे।

उरुशंस (वै० त्रि०) १ उच्चैः स्वरसे प्रशंसा करनेवाला। २ अनेक व्यक्तियों द्वारा प्रशंसित। (सायण)

उरुशर्मा (वै० त्रि०) संसारमें प्रत्येक स्थानपर शरण पानेवाला।

उरुषा (वै० त्रि०) उरु-सन्-विट्-ङा वेदे षत्वम्। महादाता, बहुदानकारी। (ऋक् ५।४४।६)

उरुष्या (वै० स्त्री०) रक्षणेच्छा, पनाह देनेकी ख़ाहिश। (ऋग्भाष्ये सायण ६।४४।७)

उरुष्यु (व० त्रि०) दूर स्थानको गमन करनेवाला, जो बचानेकी खाहिश रखता हो। (सायण)

उरुसत्त्व (सं० त्रि०) उदारात्मा, सख़ी, उमदा।

उरुस्तम्भा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

उरुस्वन (सं० त्रि०) अत्युच्च, बहुत ऊंचा।

उरुहार (सं० पु०) बहु मूल्य माला, बेबहा सेहरा।

उरूक (सं० पु०) उलूक, उल्लू।

उरूची (वै० स्त्री०) अतिव्यापिका स्त्री, दूरतक फैली हुई चीज़। (ऋग्वेद)

उरूज (अ० पु०) १ उन्नति, उठान। २ शिरोविन्दु, सिमतुरराम।

उरूज़ (अ० पु०) पिङ्गल, क़ाफ़ियाबन्दी, कविता बनानेका ढंग।

उरूणस (वै० त्रि०) दीर्घनासायुक्त, लम्बी नाकवाला। (ऋक् १०।१४।१२)

उरूल (सं० त्रि०) १ स्थानसे प्रीति रखनेवाला, जो जगहको पसन्द करता हो। २ वृद्धिका इच्छुक, जो बढ़ना चाहता हो। ३ स्वतन्त्र, आज़ाद।

उरूसी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह जापानमें उत्पन्न होता है। इससे जो गोंद निकालते, उसे रंग और वारनिशमें डालते हैं।

उरे (हिं० क्रि० वि०) १ उस ओर, आगे। २ दूर, फ़ासले पर।

उरेखना, अवरेखना देखो।

उरेह (हिं० पु०) उल्लेख, चित्रण, नक़्क़ाशी।

उरेहना (हिं० क्रि०) १ उल्लेखन करना, क़लमसे खींचना। २ रञ्जित करना, रंग भरना।

उरोग्रह (सं० पु०) १ हृदयरोगविशेष, दिलकी एक बीमारी। अति अभिष्यन्दि, गुरु तथा अम्लशुष्क आमिष खानेसे अन्नके साथ यकृत् एवं प्लीहाका मांस सद्य ही बढ़ जाता है। फिर यह रोग कफ और मारुतको कुक्षिमें पहुंचाता है। उरोग्रह वाम पार्श्व और दक्षिणांशमें नहीं, बुक्कके मध्य बढ़ता है: जिसका शिरातुल्य वुक्कके आगे रहता, उस रोगको ही सद्वैद्य उरोग्रह कहता है। इसमें दौर्बल्य बढ़ता, अग्नि मन्द पड़ता, कार्श्य लगता, मांसका अभिकाङ्क्षित चलता और कृष्णवर्णत्व एवं पीतक भी उपजता है। कोई द्विजिह्व-सदृश और कोई कच्छपसन्निभ रहता है। फिर ज्वर, अरुचि, पिपासा और शोथका वेग भी बहुत बढ़ जाता है। (निघण्टु) २ हृदय वेदना, सीनेका दर्द।

उरोघात, उरोग्रह देखो।

उरोज (सं० पु०) उरस्-जन-ड। स्तन, पयोधर, औरतकी छाती। स्तन देखो।

उरोभूषण (सं० क्ली०) उरो भूष्यते अनेन, भूष-ल्युट्। हार, छातीका गहना।

उरोवृहती (वै० स्त्री०) वैदिक छन्दोविशेष। यास्कके मतसे यह द्वितीय चरणमें जागतात्मक होता है।

उरोहस्त (सं० क्ली०) बाहुयुद्ध विशेष, हाथकी एक लड़ाई। बाहुयुद्ध देखो।

"उरोहस्तं ततश्चक्रे पूर्णकुम्भौ प्रपञ्च तौ।" (भारत, सभा २२ अ०)

उर्जित (सं० त्रि०) त्यक्त, छोड़ा हुआ।

उर्णनाभ (सं० पु०) ऊर्णेव सूत्रं नाभौ गर्भे यस्य, समासे ह्रस्वः। ऊर्णनाभ, मकड़ा। ऊर्णनाभ देखो।

उर्णा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ण-ड ततः टाप् ह्रस्वः। १ मेषादिका लोम, भेड़ वगैरहका रूयां। २ ललाटका लोमसमूहात्मक चिह्न विशेष। ऊर्णा देखो।

उर्णायु, ऊर्णायु देखो

उर्द्—१ सकर्मक धातु। यह दान और आस्वाद करनेके अर्थमें आता है। २ अक॰ भ्वादि॰ आत्म॰ सेट्। यह क्रीड़ा करनेके अर्थमें व्यवहृत होता है।

उर्द, उरद देखो।

उर्दपर्णी (हिं॰ स्त्री॰) माषपर्णी, जङ्गली उड़द।

उर्दू (हि॰ स्त्री॰) १ सेना, फौजी बाज़ार। २ भाषा विशेष, फ़ारसी और अरबी मिली हुई हिन्दुस्थानी ज़बान्। तुर्की भाषामें इस शब्दका प्रकृत अर्थ शिविर है। किन्तु शाहजहान्के राजत्वकालमें उर्दू एक भाषाका नाम पड़ा। कारण बादशाही फौजके सिपाही फारसी, अरबी, तुर्की और हिन्दुस्थानी थे। वह हिन्दीमें अपनी अपनी भाषाके शब्द प्रयोग करते थे। यह भाषा मुसलमानोंके राजत्व कालमें दिल्लीसे निकली। युक्त-प्रदेश और पञ्जाबमें इसका व्यवहार अधिक है। यह पहले दिल्लीके बादशाहों और लखनऊके नवाबोंकी सभामें चलती थी। आज भी युक्तप्रदेशादिकी अदालतोंमें उर्दूका ही उद्भव देख पड़ता है। भारतवर्षके मुसलमान इसीका अधिक व्यवहार करते हैं।

बहुत संस्कृत शब्दोंके अपभ्रंशसे ही उर्दू निकली है। समग्र क्रियावाचक शब्द संस्कृतके धातु बिगाड़ कर बनाये गये हैं। जैसे—करना, चरना, डरना, भरना, मरना, लिखना, पढ़ना, उठना, बैठना, चलना, फिरना, हिलना, डुलना, जाना, आना, गाना, बजाना, बताना, सुनाना इत्यादि। इसीप्रकार उपसर्ग भी संस्कृत शब्दोंसे मिलते हैं। जैसे—ने, को, से, में, पर प्रभृति।

विचारनेसे हिन्दी और उर्दूमें विशेष भेद नहीं पड़ता। केवल उर्दू फ़ारसी और हिन्दी संस्कृतके अक्षरोंमें लिखी जाती है। हां, मुसलमान अपना भाव प्रकट करनेको विशेष्य एवं विशेषण फारसीके रखते हैं और हिन्दू संस्कृतके शब्दोंकी भरमार करते हैं। किन्तु क्रिया दोनों भाषाओंकी एक ही है। 'करना' लिखनेके लिये दूसरा कोई शब्द नहीं।

जिस समय यह भाषा निकली, उस समय मुसलमानोंका राज्य था। सब लोग इसी भाषाको भारतवर्षके इस छोरसे उस छोरतक लिखते थे। हिन्दी बहुत कम लिखी जाती थी। इसीसे उर्दूकी प्रधानता बढ़ी और इसने बड़ी उन्नति कर ली।

लखनऊकी उर्दू प्रसिद्ध है। ऐसा माधुर्य अन्य प्रदेशकी उर्दूमें देख नहीं पड़ता। इसका मुख्य कारण लखनऊकी उर्दूमें संस्कृतके बिगड़े शब्दोंका अधिक परिमाणसे समावेश है।

अब थोड़े दिनोंसे भारतवासी हिन्दी लिखने पढ़ने लगे हैं। इसीसे उर्दूका दबदबा घट गया है। हिन्दीने अपनी अपूर्व मोहिनी मूर्ति सबको देखा दी है। लोगोंने समझ लिया है,—उर्दू कभी हिन्दीको पा नहीं सकती। कारण हिन्दी और उरदू दोनोंकी क्रिया एक ही है। फिर वह क्रिया संस्कृतके धातु बिगड़नेसे बनी है। इसलिये उसके साथ संस्कृतके विशेष्य विशेषणादि शब्द बहुत अच्छे लगते हैं, फारसी और अरबीके शब्द ठीक नहीं पड़ते।

उर्दूबाज़ार (हिं॰ पु॰) १ सैन्य-हट्ट, फौजी हाट, जो बाज़ार छावनीमें लगता हो। २ प्रधान हट्ट, बड़ा बाज़ार।

उर्दूमुवल्ला (तु॰ स्त्री॰) १ राजभाषा, आदालती ज़बान्। २ दिल्लीका वाग्व्यवहार, जो मुहावरा दिल्लीमें चलता हो।

उर्द्र (सं॰ पु॰) उर्द-रक्। जलविड़ाल, जदबिलाव। वहिड़ाल देखो।

उर्ध (हिं॰) ऊर्ध्व देखो।

उर्फ़ (अ॰ पु॰) उपनाम, प्यारका नाम।

उर्मि (हिं॰) ऊर्मि देखो।

उर्मिला (हिं॰) ऊर्मिला देखो।

उर्मीकफ (सं॰ पु॰) समुद्रफेन, समुन्दरका झाग।

उर्व्—भ्वादि॰ पर॰ सक॰ सेट्। यह धातु हिंसा करनेके अर्थमें आता है।

उर्वङ्ग (सं॰ पु॰) १ पर्वत, पहाड़। २ समुद्र, बहर।

उर्वज्ज (सं॰ पु॰) विस्तृत क्षेत्र, बड़ा खेत।

उर्वट (सं॰ पु॰) उरु-अट्-अच्। वत्सर, साल।

उर्वरा (सं॰स्त्री॰) ऋ-अच्-टाप् वा उर्व-रा-क्विप्। १ शस्यशालिभूमि, उपजाऊ ज़मीन्। २ भूमिमात्र, कोई ज़मीन्। ३ तन्तु, ऊर्णा प्रभृतिका संयुक्त समुदाय, रेशे और ऊन वग़ैरहकी मिली हुई लच्छी। ४ एक अप्सरा या परी। ५ कुटिल केश, घूंघरवाले बाल। (त्रि॰) ६ अधिक, ज़्यादा।

उर्वराजित् (सं॰ त्रि॰) क्षेत्र अधिकार करनेवाला, जो खेत लेता हो।

उर्वरापति (सं॰ पु॰) बीज वपन किये हुये खेतोंका स्वामी, बोये खेतोंका मालिक।

उर्वरासा (वै॰ त्रि॰) उर्वरां भूमिं सनोति, सन्-विट् डा। भूमिविभागकारी (पुत्रादि), ज़मीन् बांटनेवाले (लड़के वग़ैरह)।

उर्वरी (सं॰ स्त्री॰) शणसूत्र, पटसन।

उर्वर्य (वै॰ त्रि॰) उर्वरायां भवः यत्। शस्यशालि भूमि-जात, बोये खेतसे पैदा।

उर्वशी (सं॰ स्त्री॰) उरून् महतोऽपि अश्नुते व्याप्नोति वशीकरोति, उरु-अश-क, स्त्रियां ङीष्। स्वनामख्यात स्वर्वेश्या, इसी नामसे मशहूर बिहश्तकी एक परी। नारायणका ऊरु भेदकर निकलनेसे इस अप्सराका नाम उर्वशी पड़ा है।

"उर्वशी तु हरेः सव्यमूरुं भित्वा विनिर्गता।" (व्याडि)

श्रीमद्भागवतमें लिखा है—नरनारायण बदरिकाश्रममें तपोनिरत रहे। इससे इन्द्र समझे कि उन्हींका पद लेनेके लिये नर और नारायण वैसी घोरतर तपस्यामें लगे हैं। फिर उन्होंने तपोविघ्नके लिये कामदेव और अप्सरोगणको भेजा। बदरिकाश्रममें पहुंचते ही कार्यकलापपर दृष्टि न डाल नरनारायणने आदरके साथ उन्हें अतिथिरूपसे ग्रहण किया। काम प्रभृति समागत देव अलौकिक गुणसे मोहित हो उनका स्तव करने लगे। नरनारायणने उन्हें अद्भुतदर्शन समलङ्कृत रमणी मूर्ति दिखायी थी। उसके रूपसौन्दर्यसे देव श्रीहीन हो गये। नरनारायणने तब उन रमणियोंमेंसे एक लेनेको कहा। आदेशानुसार देवोंने उर्वशीको लिया और उन्हें प्रणामपूर्वक स्वर्गको गमन किया।

वेदके मतमें उर्वशीसे वशिष्ठका जन्म हुआ था।

बृहद्देवताके मतानुसार यज्ञस्थलमें उर्वशीको देखते ही वासतीवर पर मित्रावरुणका रेतः गिरा, जिससे अगस्त्य और वशिष्ठने जन्म लिया।

पद्मपुराणमें पढ़ते हैं—किसी समय विष्णुने धर्मके पुत्र बन गन्धमादन पर्वत पर घोरतर तपस्या की थी। इन्द्रने घबराकर तपस्यामें विघ्न डालनेके लिये अप्सरोगणके साथ काम और वसन्तको भेजा। किन्तु अप्सरायें विष्णुका ध्यान तोड़ न सकीं। तब कामदेवने अपने ऊरुसे उर्वशीको निकाला। उर्वशी ही केवल उनका ध्यान तोड़ सकी थीं। इससे इन्द्र उर्वशी पर अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और ग्रहण करनेको चाहने लगे। फिर मित्र और वरुण उर्वशी पर ललचाये। किन्तु उर्वशीने उन्हें प्रत्याख्यान किया। मित्र और वरुणने इससे असन्तुष्ट हो उर्वशीको अभिशाप दिया था। उसी शापसे वह मनुष्यभोग्य बन गयीं।

हरिवंशका वचन है—उर्वशी ब्रह्माके शापसे मनुष्य जन्मको प्राप्त हुईं। उन्होंने महाराज पुरूरवाके निकट जा पत्नीत्व स्वीकार किया और कह दिया था, 'जितने दिन नग्न देख न पड़ेंगे, जितने दिन अकामा पत्नीसे रत न रहेंगे, जितने दिन आप एक सन्ध्या घृतमात्र भोजन करेंगे और जितने दिन दो मेष हमारी शय्याके समीप बंधेंगे, उतने दिन भार्या भावसे हमारे दिन इस घरमें कटेंगे; इससे अन्यथा होनेपर शाप छूट जायेगा और फिर हमारा कोई पता न पायेगा। राजा वही स्वीकार कर उर्वशीके साथ परम सुखसे रहने लगे। इसीप्रकार ८५ वत्सर बीते। उधर गन्धर्व उर्वशीके लिये चिन्तान्वित थे। वह शाप छोड़ाने और उर्वशीको स्वर्गमें फिर लानेका उपाय लड़ाने लगे। उर्वशी अपने दोनों मेष पुत्रवत् पालती थीं। एकदिन विश्वावसु नामक गन्धर्व प्रयाग जा रात्रिकालमें उर्वशीके पालित दोनों मेष ले भागे। उवर्शीने अपने दोनो मेष जाते देख राजासे कहा। उस समय राजा नग्न पड़े थे। उर्वशीके बार बार मेषोंकी बात कहनेसे वह नग्न ही गन्धर्वपर झपटे। उर्वशी

राजाको नग्न देखते ही अन्तर्हित हो गई। फिर गन्धर्व मेषोंको छोड़ चलते बने। राजा दोनों मेषोंको ले घर वापस आये, किन्तु उर्वशीके दर्शन न पाये थे। पीछे समझे, कि वह अपने ही दोषसे उर्वशीको खो बैठे हैं। पुरुरवाके औरस और उर्वशीके गर्भसे आयु, अमावसु, विश्वायु, श्रुतायु, दृढ़ायु, एवं शतायु सात पुत्र हुये।

ऋग्वेदमें (१०।९५) उर्वशी और पुरुरवाका परिचय मिलता है। कालिदासने उर्वशी और पुरुरवाके उपाख्यानभागपर 'विक्रमोर्वशी' नामक एक नाटक लिखा है।

उर्वशीतीर्थ (सं० क्ली०) सोमाश्रम तीर्थ। (भारत,वन ८४ अ०)

उर्वशीरमण (सं० पु०) उर्वशीं रमयते, रम-ल्यु, ६-तत्। चन्द्रवंश-सम्भूत बुधपुत्र पुरुरवा। उर्वशी देखो।

उर्वशीवल्लभ, उर्वशीरमण देखो।

उर्वशीसहाय, उर्वशीरमण देखो।

उर्वा (सं० स्त्री०) शीषक, सीसा।

उर्वारु (सं० पु०) उरु-ऋ-उण्। इर्वारु, ककड़ी।

उर्वारुक (सं० क्ली०) इर्वारुफल, खानेकी ककड़ी।

उर्वारु (सं० स्त्री०) उर्वारु देखो।

उर्विजा, उर्वीजा देखो।

उर्विया (सं० अव्य०) दूर, फ़ासले पर।

उर्वी (सं० स्त्री०) ऊर्णु-कु नल्लोपो ह्रस्वश्च गुणवचनादिति ङीष्। महति ह्रस्वश्च। उण् १।३२। १ पृथिवी, ज़मीन्। "अनन्यशासनामुर्वीं शशासैकपुरीमिव।" (रघु १।३०) २ स्थान, जगह। इसमें आकाशके चारो विभाग और नीचे ऊपरका स्थान सम्मिलित है। ३ एक नदी। ४ जलके मध्यका देश, रानोंके बीचकी जगह। ५ वैकल्यकार मर्मोंके अन्यतम दो मर्म।

उर्वीजा (सं० स्त्री०) सीता। पृथिवीसे उत्पन्न होनेके कारण सीताका यह नाम पड़ा है।

उर्वीधर (सं० पु०) उर्वीं धरति, धृ-अच्। १ पर्वत, पहाड़। २ शेषनाग।

उर्वीभृत् (सं० पु०) उर्वी-भृ-क्विप्-तुक्। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा, बादशाह।

उर्वीरुह (सं० पु०) उर्व्यां रोहति, रुह-क, ७-तत्। वृक्ष, पेड़।

उर्वीश (सं० पु०) राजा, बादशाह।

उर्व्यूति (वै० त्रि०) प्रकाण्ड शरण देनेवाला, जो बड़ी हिफ़ाज़त रखता हो। (सायण)

उर्स (अ० पु०) १ मुसलमानी पीरोंके मृत्यु दिवसका उत्सव। २ मुसलमानी पीरोंके मरनेका दिन।

उल् (सौत्र धातु) पर० सक० सेट्। इसका अर्थ दाह करना है।

उल (वै० पु०) उल् कर्मणि घञर्थे क। १ मृगविशेष, कोई जङ्गली जानवर। २ एक व्यक्तिका नाम।

उलंग (हिं० वि०) १ नग्न, नङ्गा। २ आवरणहीन, जो ढका न हो।

उलंगना, उलंघना देखो।

उलंघन (हिं०) उल्लङ्घन देखो।

उलंघना (हिं० क्रि०) १ उल्लङ्घन करना, लांघना, पार जाना। २ स्वीकार न करना, टाल देना।

उलका (हिं०) उल्का देखो।

उलगट (हिं० स्त्री०) उल्लङ्घन, फंदाई।

उलगना (हिं० क्रि०) उछलना, कूदना।

उलगाना (हिं० क्रि०) कुदाना, पार कराना।

उलचना, उलीचना देखो।

उलछना (हिं० क्रि०) १ इतस्ततः निक्षेप करना, हाथसे फैला देना।

उलछा (हिं० पु०) हस्त द्वारा खेतमें बीज डालनेका नियम।

उलछारना, उछालना देखो।

उलझन हिं० स्त्री०) उलझाव देखो।

उलझना (हिं० क्रि०) १ ग्रथित होना, फंसना। २ कठिनतामें पड़ना, घबरा उठना। ३ विवाद करना, झगड़ना। ४ इतस्ततः निक्षिप्त होना, गड़बड़ पड़ना। "उलझना आसान् सुलझना मुश्किल।" (लोकोक्ति)

५ बन्दी बनना, कैदमें फंसना। ६ विवाह होना, शादी लगना। ७ प्रेममें पड़ना, आशिक् होना। ८ अयोग्य सम्बन्ध बढ़ना, नाजायज़ ताल्लुक़ पड़ना। ९ मोहित होना, भौचक रह जाना। १० विलम्ब

करना, पीछे रहना। ११ जमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, नुक्ताचीनी करना।

उलझाना (हिं० क्रि०) १ ग्रन्थि डालना, फंसाना। २ विशृङ्खला लगाना, गड़बड़ मचाना। ३ कठिनतामें लाना, मुश्किल करना। ४ भ्रमित करना, घुमाना। ५ विवाद लगाना, लड़ाना। ६ बन्धनमें डालना, बांधना। ७ सीना, टांके मारना। ८ फंदेमें फंसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, कैद करना। १० विवाह या शादी करा देना। ११ लोभ देखाना, लालच देना। १२ मोहित करना, फ़रेफ्ता बनाना। १३ विलम्ब डालना, देर लगाना। १४ थोड़ी देरके लिये पहनना। १५ रखना, जमा करना। १६ चित्त हटाना, दिल घुमाना। १७ विपथ पहुंचाना, गुमराह करना। १८ कुभाव लाना, ठीक न बताना। १९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलभाव (हिं० पु०) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ जटिलत्व, फंसाव। ३ चिन्ता, फ़िक्र। ४ उत्पात, गड़बड़। ५ मिथ्यासम्भावन, नाफ़हमी, बेसमझ। ६ कलह, झगड़ा। ७ कठिनता, मुश्किल।

उलझेड़ा, उलझाव देखो

उलझौहां (हिं० वि०) उलझा लेनेवाला, जो फंसा रखता हो।

उलट (हिं० पु०) १ विपरीतता, इनकिलाब, पुलट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षकी आर्द्र भूमिमें उत्पन्न होता है। वल्कल श्वेतवर्ण और तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानीमें भिगो या वैसे ही उतार लेते हैं। वल्कलके लिये प्रति वर्ष दो-तीन बार ६ या ७ फीट की शाखा कटती है। उससे रज्जु तैयार होती है। मूलकी त्वक् प्रदर रोग पर सेवन कराते हैं।

उलटकटेरी (हिं० स्त्री०) ऊंटकटेरा।

उलटना (हिं० क्रि०) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ नीचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, चित करना। ४ वमन करना, ओकना। ५ कर्षण करना, जोतना। ६ अर्थ बदलना, दूसरा मानी लगाना। ७ उंडेलना, डाल देना। ८ पान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदोन्मत्त करना, मतवाला बनाना। ११ निर्बल बनाना, कमज़ोर करना। १२ विनाश करना, बरबादीमें डालना। १३ निर्धन करना, ग़रीब बना देना। १४ उद्धरण करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका बहाना करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परिवर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, झूठा खयाल करना। २१ अस्वीकार करना, न मानना। २२ आज्ञाभङ्ग करना, बात टालना। २३ काटना, मन्सूख करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ नीचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ खुदना, जुतना। २९ लौट आना। ३० बदल जाना। ३१ उन्मत्त होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन आना, वख्त बिगड़ना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ मोटाना। ३६ उमंडना।

उलट-पुलट (हिं० पु०) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा (हिं० वि०) विपरीत, खिलाफ़, नीचे ऊपर। "उलटा चोर कोतवालको डांटे।" (लोकोक्ति) काले आदमीको 'उलटातवा' कहते हैं।

उलटाना (हिं० क्रि०) नीचे ऊपर करना।

उलटा मांच (हिं० पु०) नौकाका पश्चाद्गमन, जहाज़की पीछेको हटाई।

उलटाव, उलट देखो।

उलटी (स्त्री०) उलटा देखो।

"उलटी खोपड़ी औंधा ज्ञान।" (लोकोक्ति)

उलटी-कांगसी (हिं० स्त्री०) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मलखंभमें पंजा उलट, उंगलियां फंसानेका यह नाम है।

उलटी-खड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। मालखंभमें दोनों पैर आगेसे उठा पीठपर पहुंचानेको उलटी खड़ी कहते हैं।

उलटी-चीन (हिं० स्त्री०) डुक्का रंग।

उलटी-बगली (हिं० स्त्री०) मुगदल भांजनेकी एक

कसरत। पृष्ठसे वक्षःपर मुद्गर आते भी इसमें मुट्ठी नीचे नहीं पड़ती।

उलटी-रुमाली (हिं॰ स्त्री॰) मुगदलकी एक कसरत। इसमें मुगदल आगे को झोंक मारते हैं।

उलटी सरसों (हिं॰ स्त्री॰) टेरो, नीचेको मुंहवाली कलियोंको सरसों। इसे अभिचारमें व्यवहार करते हैं।

उलटी-सवाई (हिं॰ स्त्री॰) नौ-शृङ्खलाविशेष, जहाज़की एक ज़ञ्जीर। अनीके नीचे सवदरा इसीसे बंधता है।

उलटे (हिं॰ क्रि॰-वि॰) व्युत्क्रमसे, खिलाफ तौरपर।

उलड़ना, उलटना देखो।

उलथना, उलटना देखो।

उलथा (हिं॰ पु॰) १ अनुवाद, तर्जुमा। २ नृत्यविशेष, किसी किस्मका नाच। इसमें तालपर उछलते जाते हैं।

उलथाना, उलटना देखो।

उलद (हिं॰ स्त्री॰) उंडेल, गिराव।

उलदना (हिं॰ क्रि॰) डालना, गिराना।

उलप (सं॰ पु॰) वलते, वल-कपः सम्प्रसारणात्। १ विस्तीर्ण लता, फैलनेवाली बेल। २ कोमल तृण, मुलायम घास। ३ गुल्म, झाड़। ४ वत्ती। ५ शर। ६ कलापीके एक शिष्य।

उलप्य (वै॰ पु॰) रुद्र विशेष। (शुक्ल यजुः १६।४५) (त्रि॰) २ उलप-सम्बन्धीय,झाड़से सरोकार रखनेवाला।

उलफ़त (अ॰ स्त्री॰) १ मैत्री, दोस्ती। २ प्रेम, प्यार।

उलमना (हिं॰ क्रि॰) अवलम्बन लेना, झुक पड़ना, लटक जाना।

उलरना (हिं॰ क्रि॰) कूदना, फांदना, झपटना।

उलरुवा (हिं॰ पु॰) गाड़ीको उलरने न देनेवाली एक लकड़ी। यह पीछेकी ओर लगता है।

उललना (हिं॰ क्रि॰) १ गिरना, पड़ना, ढलना। २ उलट पड़ना, पलटा खाना।

उलवी (हिं॰ स्त्री॰) १ मत्स्यविशेष, एक मछली। इसके पचसे सरेस निकलता, जिसका व्यापार चलता है। (अ॰ वि॰) २ स्वर्गीय, बिहिश्ती।

उलसना (हिं॰ क्रि॰) उल्लसित होना, चमकना।

उलहना (हिं॰ क्रि॰) १ अङ्कुरित होना, फूटना, निकलना। २ प्रफुल्लित होना फूल जाना। (पु॰) ३ निन्दावाद, शिकायत।

उला—बङ्गालके नदिया जिलेका एक गण्डग्राम वा नगर। कहते हैं—उलू वनसे आकीर्ण विस्तृत भूमि आवाद होनेसे ही उला नाम पड़ा है। यहां पहले अनेक कुलीन ब्राह्मण और कायस्थ रहते थे। जलवायु बहुत अच्छा था, परन्तु पीछे बिगड़ गया। कोई पचहत्तर वर्ष बीते मलेरियाने पदार्पण कर इस नगरको श्मशानतुल्य कर दिया था। यह एक प्राचीन स्थान है। उलाको चण्डी देवी प्रसिद्ध हैं। प्रतिवर्ष वैशाखी पूर्णिमाको बड़े समारोहसे उनकी पूजा होती है। कितने ही बंगला पुस्तकोंमें इस नगरका उल्लेख है। चण्डीमण्डपका सूक्ष्म शिल्पकार्य देखनेसे बङ्गालके प्राचीन शिल्पनैपुण्यका परिचय मिलता है। इसे वीरनगर भी कहते हैं। कारण—प्रायः सत्तर वर्ष हुए एक बार रातको कितने ही अस्त्रधारी दस्यु किस धनीके घर घुसे थे। किन्तु यहांके लोगोंने वीरत्वप्रकाशपूर्वक उनमें कितनोंहीको हताहत किया। इसीसे तत्कालीन जिला-मजिष्ट्रेट एलियट साहबने 'वीरनगर' नाम रखा था। आजकल यहांके मुखोपाध्याय बाबू बड़े सात्विक क्रियावान् हैं। प्रतिवर्ष रथयात्रा, स्नानयात्रा, जगद्धात्रिपूजा प्रभृति उत्सव होते हैं।

(हिं॰ स्त्री॰) २ मेमना, भेड़का बच्चा।

उलाकांदी—बङ्गाल प्रान्तके मैमनसिंह ज़िलेका एक नगर। यह मेघना नदीके तीरपर अवस्थित है। लवण और शणका व्यवसाय अधिक होता है।

उलाटना, उलटना देखो।

उलार (हिं॰ वि॰) पश्चात् दिक्में भारग्रस्त, पीछेकी ओर दबी हुई। यह शब्द गाड़ीका विशेषण है।

उलारना (हिं॰ क्रि॰) उत्क्षेपण करना, ऊपरको फेंकना।

उलारा (हिं॰ पु॰) पदविशेष। इसे चौतालके अन्तमें गाते हैं।

उलाहना (हिं॰ पु॰) उपालम्भन, शिकवा, शिकायत।

उलिचना, उलीचना देखो।

उलिन्द (सं॰ पु॰) वल-किन्दः सम्प्रसारणम्। १ कुलिन्द देश। २ शिव।

उलोचना (हिं॰ क्रि॰) जलनिक्षेप करना, हाथ या किसी दूसरी चीज़से पानी फेंकना।

उलुप (सं॰ पु॰) १ शाखापत्रयुक्त लता, डाल और पत्तीवाली बेल। २ कोमलतृण, मुलायम घास।

उलुपी (सं॰ पु॰) शिशुक, सूस।

उलुबेड़िया—१ बङ्गाल प्रान्तके हवड़ा जिलेकी एक तहसील। इसमें उलुबेड़िया, आमता, बागनान और श्यामपुर चार थाने लगते हैं।

२ हवड़ा जिलेका एक नगर। यह हुगली नदीके किनारे अक्षा॰ २२° २८´ उ॰ तथा द्राघि॰ ८८° ८´ १५´´ पू॰पर अवस्थित है। उलूबेड़िया मेदिनीपुरकी राहमें पड़ता है। १६८६ ई॰ पर्यन्त यह स्थान उड़ीसामें मिला था।

उलुम्बा (सं॰ स्त्री॰) यमानी, अजवायन।

उलुलि (सं॰ पु॰) उल-उलि: वृद्धिसूचक शब्द (वाद्य), गुरराहट।

उलूक (सं॰ पु॰) वल-उक् सम्प्रसारणञ्च। उलूकादयश्च। उण् ४।४१। १ इन्द्र। २ पेचक, उल्लू। ३ उलूखल, ओखली। ४ दुर्योधनका एक दूत। ५ विश्वामित्रके एक पुत्र। ६ एक जनपद। (मार्कं॰पु॰ ५८।४०) यह स्थान भारतके उत्तरांशमें अवस्थित है। अर्जुन दिग्विजयके समय यहां आये थे। उस समय वृहन्त इस देशके राजा रहे। (महा॰ सभा २६ अ॰) कहीं इसे उलूत (महा॰ भीष्म ८।५३) और कहीं कुलूत (वामनपु॰ १३।४२) भी कहा है। आजकल इसे कुउ कहते हैं। ज्वालामुखी तीर्थके उत्तर विपाशी तटसे यह जनपद लगता है। इसकी प्राचीन राजधानी नगरकोट थी। वर्तमान राजधानी सुलतानपुर है। ७ चट्टग्रामका एक प्राचीन नगर। (भविष्य, ब्रह्मखण्ड १५।२०)

८ जन्तुविशेष। यह लाङ्गुलहीन एकजातीय वानर है। इसका सर्व शरीर काला रहता, केवल चक्षुका भ्रू सफेद पड़ता है। कर्ण अधिकांश मनुष्यकी तरह होते हैं। उलूक सीधा चलता और उमा करता है। यह 'उलक, उलक' बोलनेसे श्रीहट्ट, आसाम प्रभृति अञ्चलोंमें उलूक कहलाता है। बैठनेसे यह एक फीट ऊंचा देख पड़ता है। चींटी और मकड़ी वगैरह इसके खानेकी चीजें हैं। फिर वृक्षका पत्र और उपादेय फल भी इसे अच्छा लगता है। यह शीघ्र फंदेमें नहीं पड़ता। ग्रीष्मकालमें ही यह पकड़ा जाता, क्योंकि उस समय वृक्ष छोड़ भूमिपर सोनेको उतर आता है। वृक्षपर पकड़ा जानेसे आहार-जल छोड़ता और इहसंसारसे मुंह मोड़ता है। किन्तु बच्चे शीघ्र ही हिल जाते हैं।

उलूकपाद (सं॰ पु॰) अश्वपादरोग विशेष, घोड़ेके पैरकी एक बीमारी। कूर्चको आवर्तन कर जङ्घामें उत्पन्न होनेवाला शोथ उलूकपाद कहलाता है।

उलूकयातु (वै॰ पु॰) वेदोक्त असुर विशेष। यह असुर उल्लूकी सूरतमें रहता है। (ऋक् ७।१०४।२२)

उलकाश्रम (सं॰ पु॰) इन्द्रका भवन, इन्द्रके रहनेकी जगह।

उलूखल (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं खमुलूखं पृषोदरादित्वात् ला-क। १ धान कूटनेका काष्ठ वा पाषाणमय पात्र, खल। २ गुग्गुलु, गूगुल।

उलूखलक, उलूखल देखो।

उलूखलसन्धि (सं॰ पु॰) कक्षावङ्क्षण दशनसन्धि।

उलूखलसुत (वै॰ पु॰) उलूखल द्वारा अभिषुत सोमरस। (ऋक् १।२८।१)

उलूखलिक (सं॰ लि॰) उलूखलमें कूटा हुआ, जो खलमें साफ़ किया गया हो।

उलूट (सं॰ पु॰) जातिविशेष।

उलूत (सं॰ पु॰) उलति हिनस्ति यः, उल् बाहुलकात् उतच्। १ अजगर सर्प, बहुत मोटा और बड़ा सांप। २ जनपद विशेष, एक बसती।

उलूप उलुप देखो।

उलूपी (सं॰ पु॰) १ शिशुकमत्स्य, सूस। (स्त्री॰) २ ऐरावत कुलके कौरव्य नामक नागराजकी कन्या। पाण्डुनन्दन अर्जुन वनवासके समय गङ्गाद्वारके निकट इन नागकन्या द्वारा आकर्षित

हो नागलोक पहुंचे थे। वहां उलूपीकी प्रार्थनाके अनुसार उन्होंने विवाह किया। उलूपीने अपनी मनस्कामना सिद्ध होने पर अर्जुनको वर दिया था—तुम समस्त जलचरोंको जीत सकोगे। (भारत, आदि २१४ अ०) उसी समय मणिपुरपति अर्जुनपुत्र वभ्रुवाहन पिताके आगमनकी वार्ता सुन अभ्यर्थना देने गये। अर्जुनने अपने पुत्रको विना युद्धकी सज्जा आते देख अत्यन्त विरक्त हो विस्तर भर्त्सना बतायी थी। वभ्रुवाहन उससे दुःखित न हुये। किन्तु उलूपीने पास जा उन्हें पितासे लड़नेको भड़काया था। उलूपीकी मायासे वभ्रुवाहनने अर्जुनको मार डाला। फिर उलूपीके दिये दिव्य मणिके प्रभावसे हो वह जिये थे। (आश्वमेधिक ७९-८०) कुमिल्ला और त्रिपुराके राजा अपनेका उलूपी और अर्जुनके वंशीय बताते हैं।

उलेटना, उलटना देखो।

उलेटा, उलटा देखो।

उलेड़ना (हिं० क्रि०) उंडेलना, ढालना।

उलेल (हिं० स्त्री०) १ आल्हाद, खुशी। २ उन्नति, वृद्धि, बाढ़। (त्रि०) ३ अविघ्न, वेसमझ।

उलेंड़ना, उलेड़ना देखो।

उल्का (सं० स्त्री०) ओषति, उष प्रकारस्य लत्वं क ततः टाप्। शकवल्कोल्का:। उणाद् ३।४२। १ तेजःपुञ्ज, ज्वाला, श्वाला, लपट। "उल्का ज्वालाविभावसीः।" (सुभूति) २ आकाशसे पतित अग्नि, आसमानसे गिरी आग।

कितने ही लोग समझते, आकाशसे जो उल्का-काण्ड पड़ते, उन्हें टूटा तारा कहते हैं। गणनातीत कालसे इस आकाशमें उत्पात होते आये हैं। फिर अति प्राचीन कालसे इस अभावनीय नैसर्गिक घटनाको देख लोग नानप्रकार कल्पना भी लगाते रहे हैं।

वैदिक ऋषि उल्काको अग्निका अंश जानते (ऋक् १०।६८।४) और उल्काकी उत्पत्ति भी सूर्यसे मानते थे। "अवक्षिपन्न उल्कामिव द्योः।" (ऋक् १०।६८।४)

देशके प्राचीन ज्योतिर्विदोंने इसे अष्ट उपग्रहके मध्य गिना है। उपग्रह देखो। उनका मत इस प्रस्तावके उपसंहारकालमें विवृत होगा।

युरोपीय वैज्ञानिक ज्योतिर्विद् बहुत दिनसे उल्का का निगूढ़ तत्त्व समझनेके लिये विस्तर यत्न लगा रहे हैं। किन्तु वस्तुतः वह आज भी उल्काका निगूढ़ तत्त्व विशेष रूपसे ढूंढ नहीं सके। जो नाना मत चलते, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे लिखते हैं—

किसीकी समझमें टूटनेवाले नक्षत्र (Shooting stars), अग्निके गोलक (Fire-bello) उपनक्षत्र (Astervids) प्रभृति दीप्तिमान् वस्तु हो उल्का हैं। पृथिवीके निकट आनेसे वह हमें देख पड़ते हैं। युरोपके प्राचीन ज्योतिर्विद् कहते, कि वायुमण्डलके ऊर्ध्वभागमें नक्षत्र जैसे कितने हो दीप्तिमान् वस्तु समय समय पर देख पड़ते और गगनमार्गमें द्रुत वेगसे चलते; फिर शीघ्र अन्धकारमें छिपते हैं। कभी कभी कतिपय वृहदाकार वस्तु भी दृष्टिगोचर हो जाते हैं। वायुकी गतिसे उनमें विपर्यय पड़ता है। कोई अल्प-परिसर पथमें फिरते फिरते उज्ज्वल आलोक एवं धूम छोड़ता, कोई दो-तीन खण्डमें टूटता और कोई गभीर गर्जनके साथ फट कर भूमितलपर गिरता है।

उल्का पृथिवीपर नानाप्रकारके आकारमें गिरते देख पड़ी है। कभी बिलकुल मेघ न रहते गभीर
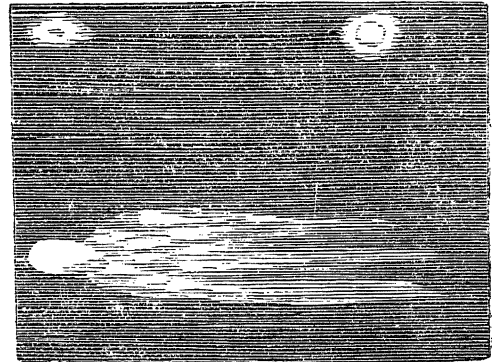
आकाशमें उल्का।

गर्जनसे उल्कापात हुआ है। कभी निर्मल आकाश पर अल्प समयके मध्य मेघका अन्धकार चढ़ा और भीषण शब्दके साथ प्रस्तर पड़ा है। कभी आकाशमें सहस्र सहस्र सर्पाकारसे झलक गभीर गर्जनके साथ उल्का गिरी है। उल्कामें जो प्रस्तर वा लौह रहता है, वह पार्थिव प्रस्तर वा लौहसे नहीं मिलता! किसी उल्काके लौहमें सैकड़े पीछे ८६ भाग द्रवणीय लौह होता है। कहीं कहीं धातव लौहका अभाव भी रहता है। लौह देखो।

उल्काका प्रस्तर कभी क्षुद्राकार कभी वृहदाकार होता है। मङ्गोलीयोंके विश्वासानुसार चीन देशके पश्चिमांशमें पीत नदी किनारे जो ४० फीट उच्च पर्वत खड़ा, वह आकाशसे ही टूटकर पड़ा है।

उक्त नाना आकारोंमें गिरनेसे युरोपीयोंने प्रथम उल्का सम्बन्धपर चार प्रकारका अनुमान बांधा था।

१म—तरल पदार्थसे जैसे धूम उठता, वैसे ही उल्का-सम्बन्धीय द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकारमें पृथिवीसे वायुमण्डलके उच्चस्थ मेघपर जा जुटता और रासायनिक क्रियासे मिलकर अपने गुरुत्वके अनुसार नीचे गिरता है।

२य—उल्काके सकल प्रस्तर पहले आग्नेय गिरिसे निकल अपनी गतिके अनुसार आकाशमण्डल पर बहु दूर पर्यन्त चढ़ते और अवशेषमें फिर प्रवल वेगसे पृथिवीपर गिर पड़ते हैं।

३य—किसी किसी समय पर चन्द्रमण्डलके आग्नेय गिरिसे इतने वेगमें धातु निकलता, कि पृथिवीके निकट आ लगता और पृथिवीकी शक्तिसे खिंचकर नीचे गिर पड़ता है।

४र्थ—सकल उल्का उपग्रह हैं। यह सूर्यके चारो ओर अपने अपने कक्षमें घूमती हैं। सकल कक्ष पृथिवीके वार्षिक गतिके पथमें वक्र भावसे उत्तीर्ण होते हैं। कभी पृथिवी इन कक्षोंके समान पड़ जाती है। उस समय कक्षके उल्का नामक उपग्रह पृथिवी पर गिरते अथवा पृथिवीके वायुमण्डलमें घुस आकर्षणकी शक्तिके प्रभावसे अवशेषमें भूमिपर आ पहुंचते हैं।

उक्त चारो मतोंपर बहुत दिन तक वादविवाद चला था! अन्तको प्रसिद्ध युरोपीय ज्योतिर्विद् हरशेल साहबने स्थिर किया—सकल तारकावोंके चारो ओर दृष्टिवहिर्भूत अति क्षुद्र क्षुद्र नीहारिका तारा (Nebulæ)की तरह सूर्यके इधर-उधर भी नीहारिकावत् पदार्थ (Nebulous matter) की राशि घिरी है। उल्काप्रस्तर (Nebuloric stone) और तारापात (Shooting stars) नामसे होनेवाला नैसर्गिक काण्ड नीहारिकावत् पदार्थका विकाश मात्र है।

जब घटनाके क्रमसे भूमण्डल उक्त पदार्थ-राशिके पास पहुंचता, तब वह पृथिवीके चारो ओर घूर्णनशील चन्द्रवत् (Sattelite) समझ पड़ता और पृथिवीके साथ चन्द्रवत् सूर्यके चारो ओर घूम सकता है। वह सुवृहत् होते भी चन्द्रवत् सूर्यको आलोकसे झलक देखनेमें आ जाता है। अनेक उल्का अतिशय क्षुद्र, कतिपय वृहदाकार हैं। पृथिवी ऐसे अनेक सहचरों या चन्द्रोंसे घिरी है। इनमें एक एक इतना वृहत् और कठिन रहता, कि सुस्पष्ट सूर्यका आलोक झलकता है। यह जब पृथिवीके अतिनिकट आता, तब अल्प समयके लिये चर्मचक्षुसे देखा जाता, फिर पृथिवीकी छाया पड़नेसे सम्पूर्ण ग्रहण हो अपना मुंह छिपाता है।

उसके बाद पेटिट साहबने गणनासे ठहराया—उल्कावोंमें एक वृहदाकार प्रस्तर है। वह द्वितीय चन्द्रवत् पृथिवीके साथ घूमता है। उसका कक्ष भूमध्यसे ५००० मील और भूके मध्यभागसे ८००० मील दूर अथवा चन्द्रसे २४ मील समीप है। वह पृथिवीकी चारो ओर ३० घण्टे २० मिनटमें एकवार घूमता, अतः प्रतिदिन सात वार पृथिवीकी परिक्रमा देता है।

अपने देशके प्राचीन ज्योतिर्विद् श्रीपतिने कहा है।

"यासां गतिर्दिवि भवेद्द गणितेन गम्या तास्तारकाः सकलखेचरतोऽति दूरे।
तिष्ठन्ति या अनियतोद्गतयश्च ताराश्चन्द्रादधो हि निवसन्ति तदन्वितास्ताः॥
शीतांशुवज्ज्वलमयास्तपनात् स्फुरन्ति ताश्चावहप्रवहमारुतसन्धिसंस्थाः।
पूर्वानिलैः स्तिमितभावमुपागतोऽस्मिं स्ताराः पतन्ति क्कचिद्द गुरुतावशेन॥"

जिनकी आकाशगति गणितशास्त्रसे समझ पड़ती और जिनकी अवस्थिति समस्त गगनचारी ज्योतिष्कोंसे अति दूर लगती, उन्हें विहन्मण्डली तारका कहती है। फिर जिनकी गतिका नियम नहीं रहता, उन्हें ज्योतिर्विद् तारा कहता है। वह पीछे पीछे चल चन्द्रके अधोभागमें ठहरती हैं। उनमें चन्द्रकी तरह जल भरा है। वह सूर्यके किरणसे चमक स्फुरित होती हैं। उनका संस्थान आवह और प्रवह दो मारुतोंके सन्धिस्थलमें है। फिर स्तिमित भाव प्राप्त होते ही वह गुरुत्वके कारण पूर्व पवनसे भूमिके किसी स्थलपर गिर पड़ती हैं।

वराहमिहिरके मतानुसार—स्वर्गसे शुभफल भोग जो गिर पड़ते, उन्हींके रूपका नाम उल्का रखते हैं। धिष्णा, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा पांच भेद हैं। उल्का तथा धिष्णाका पन्द्रह, अशनिका पैंतालीस और विद्युत् एवं ताराका फल छह दिनमें मिलता है। ताराका चतुर्थांश, धिष्णाका अर्धांश और विद्युत्, उल्का एवं अशनिका सम्पूर्ण फल है। अशनिकी आकृति चक्राकार है। वह गभीर शब्दके साथ मनुष्य, हस्ती, अश्व, गृह, वृक्ष और जन्तु प्रभृति पर गिरती है। विद्युत् कुटिलाकार एवं विस्तृत रहती और सहसा कड़कड़ाहटके साथ गिर जीवोंका विनाश करती है। धिष्णा कृश, अल्पपुच्छविशिष्ट, प्रज्वलित अङ्गार-तुल्य और हस्तद्वय परिमित है। तारा एक हस्त प्रमाण, दीर्घाकृति, एवं शुक्ल अथवा ताम्रवर्ण लगती और आकाशमें ऊर्ध्व-अधः वा वक्र-भावसे चलती है। उल्काका शिरोभाग अधिक विस्तृत रहता और गिरनेसे बढ़ चलता है। पुच्छ कृश एवं आकार दीर्घ है। यह उल्का नानाप्रकारकी होती है। (वृहत्संहिता ३३ अ०)

कलकत्तेके अजायब घर (Museum)-में अनेक उल्काप्रस्तर रखे हैं। उनके मध्य एक १८६१ ई०की १२ वीं मईको गोरखपुरमें मिला था। उसका वज़न दो मनसे अधिक है। सिवा इसके यशोहर, बांकुड़ा, प्रभृति ज़िलोंसे भी वृहत् वृहत् उल्काके प्रस्तर संग्रह किये गये हैं।

उल्काके लौहमें अपर धातु मिलानेसे नानाप्रकारके यन्त्रादि बन सकते हैं। सुनते—ईरान्‌के बादशाह और तिब्बतके लामा उल्काके लोहेसे बनी तलवार रखते हैं।

उल्काग्नि (सं० पु०) उल्केवाग्निः। उल्का, आसमान्‌से टूटनेवाला तारा।

उल्काचक्र (सं० क्लो०) १ [illegible]मन्त्रका शुभाशुभज्ञापक चक्रविशेष। "उल्काचक्रं सर्वसारं मन्त्रदोषादिनिर्णयम्।" (रुद्रयामल) २ विघ्न, गड़बड़। ३ उपद्रव, हलचल।

उल्काजिह्व (सं० पु०) उल्केव जिह्वा यस्य। रामायणोक्त प्रसिद्ध राक्षसविशेष।

उल्काधारी (सं० त्रि०) मशालची, फ़लीतेवाला।

उल्कापात (सं० पु०) उल्कानां पातः। १ तामस उत्पात विशेष, आसमान्‌से तारोंका टूटना। २ विघ्न, बुराई।

उल्कामत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, सूस।

उल्कामाली (सं० पु०) शिवके एक भृत्य।

उल्कामुख (सं० पु०) उल्केव मुखं यस्य। १ प्रेतविशेष। "वान्ताश्युल्कामुखः प्रेतो विप्रो धर्मात् स्वकाच्च्युतः।" (मनु १२।७१) २ इक्ष्वाकुके एक वंशज।

उल्कामुखी (सं० स्त्री०) शृगाली विशेष, लोमड़ी। इसका पर्याय शृगालिका, लोमालिका, दीप्तजिह्वा और किखि है।

उल्कुषी (सं० स्त्री०) उला दाहेन कुशति, कुष-क-ङीष्। १ उल्का, तारेका टूटना। "अशनिरिव प्रथमोऽनुयाजः क्रादुनिर्द्वितीय उल्कुषी तृतीयः।" (शतपथब्रा० ११।२।७।२१) 'उल्कुषी उल्का।' (सायण) २ मशाल, फ़लीता।

उल्कुषीमान् (वै० पु०) उल्काविशिष्ट, तारेके टूटनेसे सरोकार रखनेवाला। "यव प्रापादि शश उल्कुषीमान्।" (अथर्ववेद ५।१७।४)

उल्टा, उलटा देखो।

उल्था, उलथा देखो।

उल्ब (सं० क्लो०) उत्-लीङ् श्लेषण इति साधुः। उल्बादयश्च। उण् ४।९५। १ जरायु। २ गर्भवेष्टनचर्म। ३ गर्भ, हमल।

"जातमात्रं विशोध्योल्बाद्यानं सैन्धवसर्पिषा।" (वाग्भट, उत्तरस्थान १अ०)
"गर्भो जरायुणावृतः उल्वं जहाति जन्मनः।" (शुक्लयजुः १९।७६)

उल्वण (सं० त्रि०) उत्-वण्-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ प्रबल, ज़ोरावर। २ उद्भट, अक्खड़। ३ व्याप्त, भरा हुआ। ४ स्फुट, खिला हुआ। "हेतुर्लक्षणसंसर्गाद्विद्यादन्‌द्वोल्वणानि च।" (माधवनिदान) ५ तीक्ष्ण, तेज़। ६ प्रकाशित, ज़ाहिर। ७ निर्बाध, बेखटका। "तस्यासीदुल्वणो मार्गः पादपैरिव दन्तिनः।" (रघु ४।३३) (क्लो०) ८ शरीरस्थित वात अथवा पित्तके प्रकोपका रोग। (पु०) ९ वशिष्ठके एक पुत्र।

उल्व्य (सं० क्लो०) १ शरीरस्थित वातपित्त वा कफका आधिक्य। २ विपद्, आफ़त।

उल्मुक (सं० क्ली०) ओषतीति, उषदाहे उल्मुकदर्वीति निपातनात् यस्य लः मुक् प्रत्ययश्च। १ ज्वलदङ्गार, जलती हुई लकड़ी या कोयला। "अन्वाहार्य्यं पचनादुल्मुकमादाय।" (शतपथब्रा० ६।२।७) २ वृष्णिवंशीय एक राजा। भारत, सभा ३८।१६) ३ बलरामके एक पुत्र।

उल्मुक्य (सं० पु०) उल्मुके भवं यत्। १ अग्नि, आग। "अथ हैक उल्मुक्येम दहन्ति।" (शतपथब्रा० १२।५।१-१६) (त्रि०) २ अङ्गार-सम्बन्धीय, जलती लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

उल्लकसन (सं० क्ली०) रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना।

उल्लग्न (सं० पु०) किसी स्थानविशेषका लग्न।

उल्लङ्घन (सं० क्ली०) उत्-लघि-ल्युट्। अतिक्रमण, लंघाई, पार जवाई।

उल्लङ्घना, उलंघना देखो।

उल्लङ्घनीय (सं० त्रि०) अतिक्रमणयोग्य, जो लांघा जानेके काबिल हो।

उल्लङ्घित (सं० त्रि०) अतिक्रमण किया हुआ, जो लांघा गया हो।

उल्लङ्घितशासन (सं० त्रि०) आज्ञा न माननेवाला, नाफ़रमांबरदार, बलवाई।

उल्लङ्घिताध्वन् (सं० त्रि०) मार्गके ऊपरसे गुज़रा हुआ, जो राह पार कर चुका हो।

उल्लङ्घ्य (सं० त्रि०) उत्-लघि-यत्। उल्लङ्घनके योग्य, लांघने लायक़।

उल्लम्फन (सं० क्ली०) उत्-रन्फ-ल्युट्। कूद-फांद, उछाल।

उल्लम्बित (सं० त्रि०) दण्डायमान, सीधा, खड़ा।

उल्लल (सं० त्रि०) उत्-लल्-अच्। १ बहुलोमयुक्त, मोटे बालोंसे ढका हुआ। २ कम्पायमान, हिलता हुआ, जो कंप रहा हो।

उल्ललत् (सं० त्रि०) १ कम्पायमान, हिलता हुआ। २ अनियमित रूपसे चलायमान, जो बेक़ायदे सरक रहा हो।

उल्ललित (सं० त्रि०) उत्-लल-क्त। १ उच्चलित, जो चल चुका हो। २ तरलित, बहता हुआ। ३ कम्पित, कंपनेवाला।

उल्लस (सं० त्रि०) १ प्रकाशमान, चमकीला। २ प्रसन्न, खुश। २ बहिर्गमन करनेवाला, जो निकल रहा हो।

उल्लसत् (सं० त्रि०) १ क्रीड़ा-वा नृत्य करनेवाला, जो नाचकूद रहा हो। २ दीप्त, चमकीला। ३ स्वेच्छाचारी, मनमौजी।

उल्लसता (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक। २ प्रसन्नता, खुशी।

उल्लसन (सं० क्ली०) उत्-लस-ल्युट्। १ हर्षजनक व्यापार, खुशी पैदा करनेवाला काम। २ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना।

उल्लसनक, उल्लसन देखो।

उल्लसित (सं० त्रि०) उत्-लस्-क्त। १ स्फुरित, फड़कनेवाला। २ उद्गत, उठा हुआ। ३ आनन्दित, खुश।

उल्लसित-हरिण-केतन (सं० त्रि०) जिसके हरिणका झण्डा फहराये।

उल्लाघ (सं० त्रि०) उत्-लाघ-क्त निपातनात्। १ नीरोग, जिसके कोई बीमारी न रहे। २ दक्ष, होशियार। ३ शुचि, पाक-साफ़। ४ हृष्ट, मज़बूत। (पु०) ५ मरिच, मिर्च।

उल्लाप (सं० पु०) उत्-लप्-घञ्। १ शोक, अफ़सोस। "खलोल्लापाः सोढाः कथमपि तदाराधनपरैः।" (भर्तृहरि ३।६) २ उच्चैःस्वरके साथ आह्वान, ज़ोरकी पुकार।

उल्लापक, उल्लापिक देखो।

उल्लापन (सं० क्ली०) उत्-लप्-णिच्-ल्युट्। १ वृत्ति प्रभृति द्वारा शास्त्रकी प्रकृत व्याख्याका करना, समझा समझा कर कहना। २ खुशामदी बातें, ठकुरसोहाती।

उल्लापिक (सं० त्रि०) वर्णन करनेवाला, जो खुशामदकी बातें कहता हो।

उल्लापिन् (सं० त्रि०) आह्वान करनेवाला, जो ज़ोरसे पुकार रहा हो।

उल्लाप्य (सं० क्ली०) उत्-लप्-णिच्-यत्। प्रेम एवं हास्यविषयक नाटकविशेष। यह स्वर्गीय घटनापर बनता है। सङ्ग्रामका ही वर्णन अधिकांश होता है। हास्य, करुणा प्रभृति रस और सङ्गीतसे उल्लाप्य भरा रहता है। नायक उदात्त गुणविशिष्ट होता है।

किन्तु अङ्क एक ही लगता है। किसी-किसीके कथनानुसार उल्लाप्यमें तीन अङ्क और इक्कीस शिल्पकाङ्ग पड़ते हैं। उल्लाप्यके मध्य 'देवीमहादेव' नामक संस्कृत ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

उल्लाल (सं० पु०) छन्दोविशेष। इसके प्रथम एवं तृतीयमें पन्द्रह और द्वितीय तथा चतुर्थ पादमें तेरह मात्रा लगती हैं।

उल्लाला (हिं० पु०) छन्दोविशेष। इसके हरएक चरणमें केवल तेरह मात्रा लगती हैं।

उल्लास (सं० पु०) उत्-लस्-घञ्। १ ग्रन्थ विशेषका परिच्छेद, किसी किताबका बाब। २ आल्हाद, खुशी। ३ प्रकाश, रोशनी।

"सौहित्यवचनोल्लाससहासप्रतिभादिकृत्।" (साहित्यदर्पण)

४ उद्गमन, उठान।

"नभोविलङ्घिभिः सैनारचोराशिभिरुद्धतैः।
सपचभूभृदुल्लासशङ्कां कुर्वन् शतक्रतोः॥" (कथासरित् १४।१८)

५ उज्ज्वलता, सफेदी। ६ वृद्धि, बढ़ती। ७ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें उपमा वा उपरोधसे किसी विषयको प्रधान बनाते हैं।

उल्लासक (सं० त्रि०) आल्हादकारी, जो मजा करता हो।

उल्लासन (सं० क्ली०) १ नचाने या कुदानेका काम। २ दीप्ति, चमक।

उल्लासित (सं० त्रि०) आल्हादित, खुश, जो फूला न समाया हो।

उल्लासी (सं० त्रि०) उत्-लस्-णिनि। १ उल्लासयुक्त, खुशी मनानेवाला। २ प्रभाविशिष्ट, चमकदार। ३ आल्हादित, खुश।

उल्लिखत् (सं० त्रि०) १ उत्कीर्ण करनेवाला, जो खींच या घसीट रहा हो। २ रेखा खींचनेवाला, जो लकीर निकाल रहा हो। ३ चित्रकारी करनेवाला, जो मुसव्वरी कर रहा हो। ४ वहन करनेवाला, जो उठा रहा हो।

उल्लिखित (सं० त्रि०) उत्-लिख-क्त। १ उत्कीर्ण, खुदा हुआ। २ तनुकृत, बारीक किया हुआ।

"लक्ष्ये व यन्त्रोल्लिखितो विभाति।" (रघु १८।३२)

३ चित्रित, रंगा हुआ। ४ उत्क्षिप्त, उठाया हुआ। ५ पूर्व कहा हुआ, जो पहले बताया जा चुका हो।

उल्लिङ्गित (सं० त्रि०) परिचित, पहचाना हुआ, जो समझा जा चुका हो।

उल्ली (सं० स्त्री०) पलाण्डु, प्याज।

उल्लु (सं० त्रि०) उत्-लु-क्विप्। उत्पाटनकारी, उखाड़ डालनेवाला।

उल्लुञ्चन (सं० क्ली०) उत्-लुचि-ल्युट्। १ केशोत्पाटन, बालोंकी नोच खसोट। २ उन्मूलन, उखाड़।

"पादकेशांशुककरोल्लुञ्चने च पणान् दश।" (याज्ञवल्क्य २।२१७)

३ केशकर्तन, बालकी कटाई।

उल्लुण्ठन (सं० क्ली०) उत्-लुठि-ल्युट्। निज अभिप्राय छिपा अन्य प्रकारसे मनोभावका प्रकाश, अपना मतलब छिपा दूसरी तरहसे दिलकी हालतका इज़्हार।

उल्लुण्ठा (सं० स्त्री०) व्याजस्तुति, बोली-ठोली।

उल्लू (सं० त्रि०) १ कर्तन करनेवाला, जो काट डालता हो। (हिं० पु०) २ उलूक, घुग्घू। यह पक्षी दिनमें अंधा रहता है। वर्ण धूसर है। शिर वर्तुल तथा चक्षु प्रदीप्त रहता है। उल्लू कई तरहका होता है। किसीके शिर पर शिखा उठी रहती है। फिर किसीके पक्ष पदको अङ्गुलितक पहुंचते हैं। उच्चता ५ इञ्चसे २ फीट पर्यन्त है। चञ्चु कुटिल रहती है। किसीके पक्ष कर्णके समीप ऊपर चढ़ जाते हैं। पक्ष मृदु, किन्तु पद कठोर होते हैं। उल्लू दिनको गुप्त रहता और रात्रिको देख पड़ता है। यह मांसाशी पक्षी है। कीटपतङ्गादिसे अपना जीवन निर्वाह करता है। शब्द बड़ा भयानक है। उल्लू प्रायः निर्जन स्थानमें निवास करता है। भारतमें इसका शब्द तथा ग्राममें वास अशुभ माना गया है। मांससे उच्चाटनादि प्रयोग किया करते हैं। पृथिवी पर किसी जातिके लोग इसे भक्ष्य नहीं बताते। इसका मांस पित्तल, भ्रान्तिकारक और वातप्रकोपन होता है। ३ मूर्ख, बेसमझ।

उल्लेख (सं० पु०) उत्-लिख-घञ्। १ कथन, कहाई। २ खनन, खोदाई। ३ अलङ्कारविशेष।

"क्वचिद् भेदाद्ग्रहीतृणां विषयाणां तथा क्वचित्।
एकस्यानेकधोल्लेखो यः स उल्लेख उच्यते।" (साहित्यदर्पण १०म परि०)

अनुभावक और विषयके भेदानुसार एक वस्तुका बहुप्रकार वर्णन आनेसे उल्लेखालङ्कार होता है। ४ वर्णन, बयान्।

उल्लेखन (सं० क्ली०) १ वमन, कै। २ खनन, खोदाई।

"सम्मार्जनोपाञ्जनेन सेकेनोल्लेखनेन च।
गवाञ्च परिवासेन भूमिः शुद्ध्यति पञ्चभिः॥" (मनु ५।१२४)

३ उच्चारण, तलफ़्फ़ुज़्।

"मासपक्षतिथीनाञ्च निमित्तानाञ्च सर्वशः।
उल्लेखनमकुर्वाणो न तस्य फलभाग् भवेत्॥" (तिथ्यादितत्त्व)

४ कीर्तन, गवाई। ५ निर्देश, देखाई। ६ चित्रकारी, मुसव्वरी।

उल्लेखनीय, (सं० त्रि०) उल्लेख्य देखो।

उल्लेख्य (सं० त्रि०) उत्-लिख-यत्। उल्लेखके योग्य, लिखने लायक्।

"तदेतत् सिद्धये मन्त्रं द्वारोल्लेख्यं ददामि ते।" (कथासरित्)

उल्लोच (सं० पु०) ऊर्ध्वं लोच्यते, अथवा ऊर्ध्वं लोचति, उत्-लोच-घञ्। चन्द्रातप, तम्बू, चंदोवा।

उल्लोप्य (सं० क्ली०) उत्-लुप-यत्। गीतविशेष, एक गाना।

उल्लोल (सं० पु०) उल्लोडोति, उत्-लोड-णिच्-अच्। वृहत्तरङ्ग, बड़ी लहर।

उल्व, उल्ब देखो।

उल्वण, उल्बण देखो।

उवट—प्रसिद्ध वेदभाष्यकार। इन्होंने शुक्लयजुर्वेदको काण्वशाखाका भाष्य और ऋग्वेदीय 'शौनकप्रातिशाख्यभाष्य' नामक ग्रन्थ बनाया है। यजुर्वेदमन्त्रभाष्य पढ़नेसे समझते हैं कि उवट वज्रटके पुत्र और आनन्दपुरके अधिवासी थे। यथा—

"आनन्दपुरवास्तव्यवज्रटाख्यस्य सूनुना।
मन्त्रभाष्यमिदं कृत्स्नं पदवाक्यैः सुनिश्चितैः॥"

किसीके मतानुसार ई० एकादश शताब्दीमें भोजराजके समय यह अवन्तिनगरमें विद्यमान रहे। भविष्यभक्तिमाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखते हैं कि उवट काश्मीर देशमें रहते और मम्मट तथा कैयटके समसामयिक थे।

"उवटो मम्मटश्चैव कैयटश्चेति ते त्रयः।
कैयटो भाष्यटीकाकृदुवटो वेदभाष्यकृत्॥" (भक्तिमा० ३१८ पृ०)

सुननेमें आया है कि ऋग्वेदीय शौनकप्रातिशाख्यभाष्य लिखने बाद उवटने ऋग्भाष्य बनाया था।

उवना (हिं० क्रि०) उदित होना, निकल आना।

उवनि (हिं० स्त्री०) उदय, उठान, निकास।

उशङ्गव (सं० पु०) नृपतिविशेष, एक राजा।

उशत् (सं० त्रि०) वश-शतृ। आकाङ्क्षाकारी, ख़ाहिशमन्द, चाहनेवाला।

उशती (सं० स्त्री०) वश-शतृ-ङीप् सम्प्रसारणम्। १ आकाङ्क्षिणी, चाहनेवाली। २ अमङ्गलवाक्य, बुरी बात।

उशधक (वै० त्रि०) अभिलाष रखने और दहन करने वाला। (सायण)

उशना (वै० अव्य०) अभिलाषसे, ख़ुशीमें, जल्द।

उशनाः (सं० पु०) वश कान्तौ कनसि ग्रहादित्वात् सम्प्रसारणम्। वशेः कनसिः। उण् ४।१३७। दैत्यगुरु शुक्राचार्य।

"ख्याताश्चोशनसः पुत्राश्चत्वारोऽसुरयाजकाः।" (भारत, आदि)

शुक्र देखो।

उशवा (अ० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका मूल रक्तशोधक है। खून् बिगड़नेसे प्रायः लोग उशवा पीते हैं।

उशाना (वै० स्त्री०) वश-चानश्। ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्। पा ३।२।१२९। पर्वतजात यज्ञीय ओषधिविशेष, होममें लगनेवाली एक पहाड़ी बूटी। "तदेयोशाना नामौषधिर्जायते।" (शतपथब्रा० ३।४।३।१३)

उशिक् (सं० त्रि०) उश्यते, वश-इजिः-कित्। वशः कित्। उण् २।७१। १ कमनीय, चाहा जाने क़ाबिल, उम्दा। २ मेधावी, होशियार। (निघण्टु ३।१५) (पु०) ३ अग्नि, आग। ४ घृत, घी। (स्त्री०) ५ कक्षिवान्की माता।

उशित (सं० त्रि०) अभिलषित, चाहा हुआ।

उशी (सं० स्त्री०) वश-ई सम्प्रसारणम्। अभिलाष, ख़ाहिश।

उशीक्, उशिक् देखो।

उशीनर (सं॰ पु॰) उशीप्रदो वाञ्छाप्रदो नरो यत्र। १ गन्धार देश। २ गन्धार जनपदवासी क्षत्रिय।

"द्राविडाश्च कलिङ्गाश्च पुलिन्दाश्चाप्युशीनराः।
कौलिसर्पामाहिषकास्तास्ताः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं परिगता ब्राह्मणानामदर्शनात्।" (भारत, अनु ३३।२२)

३ चन्द्रवंशीय एक राजा। यह शिवि राजाके पिता और महामनाके पुत्र थे। इनके चरित सम्बन्ध में कहा है—

'एक समय इन्द्र और अग्निने उशीनरका धर्मबल देखनेके लिये श्येन एवं कपोतकी मूर्ति बनाई। और श्येनके भयसे कपोतने राजाके उरु देशमें जाकर आश्रय लिया। तब श्येन कहने लगा—अपने भक्ष्य कपोतके आपका आश्रय पकड़नेसे मैं भोजनाभावसे अत्यन्त कातर हो रहा हूं; अतएव उसे देकर अपना धर्म बचाइये। राजाने उत्तर दिया—इस कपोतने तुम्हारे भयसे घबड़ाकर ही हमारा आश्रय लिया है, इसको छोड़ना हमारा धर्म नहीं, क्योंकि शरणागतका त्याग विप्र, गो और मातृहत्याके तुल्य पातक है। श्येन बोला—आहारके लिये ही सब प्राणी बने और आदरसे ही सब जीव पले हैं; अन्यान्य सकल विषय छोड़ चिरकाल जी सकते हैं, किन्तु आहार न मिलनेसेही लोग मरते हैं—आहार न पानेसे मेरा प्राण कैसे बचेगा और मेरे मरनेसे स्त्रीपुत्रोंका ठिकाना कहां लगेगा। इसलिये एक कपोतकी रक्षासे बहु प्राणी नष्ट होते हैं। अपर धर्मसे विरोध रखनेवाला धर्म कुधर्म है। इन दोनोंके मध्य गुरु लघु देख उचित कर्तव्य निर्धारण कीजिये। राजाने कहा—पक्षिन्! अपनी बातसे धर्मज्ञ समझ पड़ते भी तुम क्यों अधार्मिककी तरह ऐसा अनुरोध कराते हो? क्षुधा मिटानेके लिये कपोतको छोड़ अपर जो चाहो, कहते ही पावोगे। इसपर श्येनने कपोतकी बराबर राजाका मांस मागा था। राजाने अविचलित चित्तसे वही मात्र कपोत परिमित मांस देते देते क्रमसे सब शरीर काट डाला। (भारत वन १३१ अ॰)

उशीर (सं॰ पु॰ क्ली॰) वश-ईरन्-कित्। वशः कित्। उण् ४।३१। सुगन्धिमूलक, खस।

संस्कृत पर्याय—अभय, नलद, सेव्य, अमृणाल, जलाशय, लामज्जक, लघु, लय, अवदाह, इष्टकापथ, उशीर, मृणाल, लघु, लय, अवदान, इष्टकापथ, इन्द्रगुप्त, जलवास, हरिप्रिय, वीर, वीरण, समगन्धिक, रणप्रिय, वीरतरु, शिशिर, शीतमूलक, वितानमूलक, जलमेद, सुगन्धिक, सुगन्धिमूलक और कम्बु है।

खसका क्षुप ५।६ फीट पर्यन्त बढ़ता है। मूल पीताभ पांशुवर्ण, गन्ध तीव्र और आस्वाद कटु है। यह भारत और ब्रह्मदेशमें उत्पन्न होता है। इसकी जड़को पङ्खे और टट्टीमें लगाते हैं। आजकल इसे युरोपमें कितनेही लोग सुगन्धि द्रव्यकी तरह व्यवहार करते हैं। सबको जलके साथ बांटकर मत्थेपर लगानेसे तरावट आती है। वैद्यकके मतसे उशीर घर्म, दौर्गन्ध्य, दाह, रक्तपित्तका रोग, मोह, भ्रम, ज्वर तथा पित्तको दबाता और सुगन्ध बढ़ाता है। यह शीतल, लघु, तिक्त एवं पाचक है।

उशीरक (सं॰ क्ली॰) उशीर स्वार्थे कन्। उशीर देखो।

उशीरगिरि (सं॰ पु॰) पर्वत विशेष, मैनाक पहाड़।

उशीरबीज (सं॰ पु॰) १ उशीरका बीज, खसका तुख्म। २ मैनाक पर्वत, हिमालयके उत्तर एक पहाड़।

उशीरस्तम्ब (सं॰ पु॰) खसका गट्ठा।

उशीरादिचूर्ण (सं॰ क्ली॰) चूर्ण विशेष, एक बुकनी। उशीर, तगरपादुका, शुण्ठी, काकला, श्वेतचन्दन, रक्तचन्दन, लवङ्ग, पिप्पलीमूल, पिप्पली, एला, नागेश्वर, मुस्तक, यष्टिमधु, कर्पूर, वंशलोचन और तेजःपत्र सबको बराबर ले कूटे-पीसे। फिर समुदाय चूर्णके समान कृष्ण अगुरुका चूर्ण डाल अष्ट गुण शर्करा मिलानेसे यह प्रस्तुत होता है। उशीरादि चूर्ण आधा तोला लेनेसे रक्त वमन, पिपासा और गात्रदाहका वेग मिट जाता है। इस औषधके सेवन बाद दो तोले गूलरका रस डेढ तोला चीनी मिलाकर पीना चाहिये।

उशीरादि पाचन (सं॰ क्ली॰) पाचन विशेष, एक काढ़ा। उशीर, वाला, मुस्तक, धान्यक, शुण्ठी, वराक्रान्ता, लोध्र एवं बेलशुण्ठी चार-चार आनेभर ले आध सेर जलमें पकाये। आध पाव जल जलते-जलते बचने पर उतार कर पाचनको छान लेना चाहिये। इसे

पीनेसे अरुचि, अतिशय वेदनायुक्त विवद्ध वर्म्म, ज्वरातिसार और रक्तातिसार प्रभृति रोग प्रशमित होते हैं।

उशीरासव (सं० क्ली०) आसव विशेष, एक दवा। उशीर, वाला, पद्ममूल, गाम्भारीत्वक्, नीलोत्पल, प्रियङ्गु, पद्मकाष्ठ, लोध्र, कुड़, मञ्जिष्ठा, दुरालभा, अर्क, चिरायता, उदुम्बरत्वक्, राठी, क्षेत्र-पापड़ा, पटोलपत्र, काञ्चनत्वक्, अमरूदकी छाल, तथा मोचरस आठ-आठ तोले, द्राक्षा १६० तोले, धायके फूल १२८ तोले, चीनी ढाई सेर, मधु सवा छह सेर और जल आठ सेर किसी नूतन पात्रमें डाल मुंह बांध कर एक महीने रख छोड़े। फिर इस आसवको उपयुक्त मात्रामें सेवन करनेसे रक्तपित्त प्रमेह प्रभृति अनेक रोग विनष्ट होते हैं। इस आसवको रखनेका पात्र प्रथमतः जटामांसी और मरिच चूर्ण द्वारा धूपित कर लेना चाहिये।

उशीरिक (सं पु०) उशीर-ठन्। किसरादिभ्यः ष्ठन्। पा ४।४।५३। १ उशीरका व्यवसायी, खसका रोजगार करनेवाला। (त्रि०) २ उशीर सम्बन्धीय, खसका बना हुआ।

उशीरी (सं० स्त्री०) उशीर स्वल्पार्थे ङीष्। छोटे केशे। इसका संस्कृत पर्याय मिषि, गुण्ड्रा, अश्वाल, नीरज और शर है। यह मधुर एवं शीतल और पित्त, दाह तथा क्षयरोगनाशक है। (राजनिघण्टु)

उशेन्य (सं० त्रि०) वश-केन्य। कृत्यार्थे तवैकेन केन्यकेन्यत्वनः। पा ३।४।१४। कमनीय, खूब सूरत, चाहाजाने काबिल।
"आ ये मातोरुशेन्यो जनिष्ट।" (ऋक् ८।३।१९)

उष् (धातु) सक० भ्वा० पर० सेट्। इसका अर्थ दहन और वध करना है।

उष (सं० पु०) उष-क। १ क्षारमृत्तिका, खारी मट्टी। २ प्रभात, सवेरा। ३ रात्रिका शेष समय रातका आखिरी वक्त। ४ कामी, शहवतपरस्त। ५ गुग्गुल, गूगुर। (क्ली०) ६ पांशुज लवण।

उषङ्गु (सं० पु०) संहारकर्ता महेश्वर।

उषण (सं० क्ली०) उष बाहुलकात् क्युन् वा। १ मरिच, मिर्च। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ चविक। ४ पिप्पलीमूल, पिपलमूल।

उषणा (सं० स्त्री०) उषण-टाप्। १ पिप्पली, पीपर। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ चविका।

उषणादिचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णादिविशेष, एक बुकनी। मरिच, पिप्पलीमूल, मूस्तक, अतिविषा, वासकत्वक्, गोक्षुर, बृहती, कण्टकारी, यष्टिमधु, मूर्वामूल, ब्राह्मणयष्टिका, मोचा, वंशलोचन और यवक्षार बराबर एक साथ कूट-पीस कपड़ छान करनेसे यह चूर्ण बनता है। उषणादिचूर्ण एक मासा जलके साथ खानेसे लोहितज्वर, विस्फोटक, रोमान्तिका, जीर्णज्वर, और मसूरिका रोग अच्छा हो जाता है।

उषत् (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। इनके पिताका नाम सुयज्ञ और पुत्रका शिनेयु था।

उषती (सं० स्त्री०) उष-शतृ-ङीष् आगमविधेरनित्यत्वात् नुमभावः। अमङ्गलवाक्य, नागवार जुबान्, जिस बातसे दूसरेका दिल दुखे। "ययास्य वाचा पर उद्विजेत न तां वदेदुषतीं पापलोक्याम्।" (भारत, आदि ११८७.८)

उषद्गु (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। यह स्वाहि राजाके पुत्र थे।

उषद्रथ (सं० पु०) पुरुवंशीय एक राजा। यह तितिक्षुके पुत्र और उशीनरके भ्राता थे। (हरिवंश ३१ अ०)

उषप (सं० पु०) ओषतीति, उष दाहे कपन्। उषिकुटिदलिकचिखजिभ्यः कपन्। उण् ३।१४२। १ अग्नि, आग। २ सूर्य। ३ चितावृक्ष, चीतका पेड़।

उषर्बुध् (सं० त्र०) प्रत्यूषमें उठनेवाला, जो तड़के जागता हो।

उषर्बुध (सं० पु०) उषसि बुध्यते, उषस्-बुध-क। १ अग्नि, आग। "सूर्यस्य रोचनाद्विश्वान् देवा उषर्बुधः। (ऋक् १।१४।९) २ रक्तचिता, लालचीत। ३ बालक, बच्चा।

उषस् (सं० क्ली०) ओषति छिनत्त्यन्धकारमिति, उष-असिप्रत्ययः स च कित्। उषः कित्। उण् ४।२३३। प्रत्यूषकाल, सवेरा, तड़का। "आसीदासन्ननिर्वाणः प्रदीपार्चिरिवोषसि।" (रघु १२।१)

उषसी (सं स्त्री०) उषं दिवसं स्यति विनाशयति, उषसो-क-ङीप्। सन्ध्याकाल, शाम।

उषसुत (सं० पु०) पांशुज लवण, लोनी मट्टीका नमक।

उषस्त (सं० पु०) चाक्रायण ऋषि। "ततो होषस्तश्चाक्रायण उपरराम।" (शतपथब्रा० १४।६।५।१)

उषस्ति, उषस्त देखो।

उषस्य (सं० त्रि०) उषस्-यत्। पाष्वृतुपिक्रषसो यत्। पा ४।२।३१। प्राभातिक, सवेरेवाला।

उषा (सं० स्त्री०) उष स्त्रियां टाप्। १ वेदोक्त देवता, वेदको एक देवी। ऋक् और सामसंहिताके अनेक मन्त्रोंमें इन देवीकी स्तुति की गयी है।

ऋक्संहिताके मतसे—यह आकाशकी कन्या (ऋक् १।४८।१९) भग एवं वरुणकी भगिनी (ऋक् १।१२३।५) और रात्रिकी बड़ी सहोदर (ऋक् १।१२४।८) हैं। रात्रि और उषा दोनों कई जगह साथ साथ भगिनी कही गयी हैं—"नक्तोषसा, उषसानक्ता"। यह सूर्यकी प्रणयिनी हैं। उषा मनुष्योंका आयु दिन-दिन घटा प्रकाशित होती हैं।

वेदसंहितामें जिस भावसे इनको बताया है, उसका उदाहरण नीचे दिया जाता है—

"उषा उच्छन्ती समिधाने अग्ना उद्यन्त् सूर्य उर्विया ज्योतिरश्रेत्।
अमिनती दैव्यानि व्रतानि प्रमिणती मनुष्या युगानि।
ईयुषीणामुपमा शश्वतीनामायतीनां प्रथमोषा व्यद्यौत्॥२
एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात्।
ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति॥३
उपो अदर्शि शुन्ध्युवो न वक्षो नोधा इवाविरकृत प्रियाणि।
अद्मसन्न ससतो बोधयन्ती शश्वत्तमागात् पुनरेयुषीणाम्॥४
पूर्वे अर्द्धे रजसो अप्त्यस्य गवां जनित्र्यकृत प्रकेतुम्।
व्यु प्रथते वितरं वरीय ओभा पृणन्ती पित्रोरुपस्था॥५"
(ऋक् १ मं०, १२४ सू०)

अग्निके समिध् द्वारा जल उठनेसे उषा अन्धकारकी आड़में सूर्योदयको तरह बहुल ज्योति प्रकाश करती हैं। वह देवव्रतकी अविघ्नकारिणी और मनुष्यको आयुःक्षयकारिणी हैं। अतीत तथा नित्य उषा सकलके समान और आगामी उषा सकलके प्रथम रहती हैं। उषाने द्युतिलाभ किया है। उषा स्वर्गकी दुहिता हैं। ज्योतिःद्वारा घिर पूर्व दिक्में क्रमसे वह देख पड़ती हैं। मानो सूर्यका अभिप्राय समझ कर ही वह उनके पथमें घूमती हैं। वह कभी दिशावोंको हिंसा नहीं करतीं। सूर्यकी तरह वह अपना वक्षः देखाती रहती हैं। नोधा ऋषिके समान अपना प्रियवस्तु ढूंढ़नेके लिये उषाने भी अपनेको आविष्कार किया है। ऋहिणी की तरह उठकर उषा जगत्में सबको जगाती हैं। वह अभिचारिकावोंमें सबसे आगे आती हैं। वह आकाशके पूर्व भागसे निकल दिशावोंको चैतन्य करती हैं। वह जनकस्थानीय स्वर्ग और पृथिवीके अङ्कमें बैठ दोनोंको भरपूर फैलाती हैं।

"सदृशीरद्य सदृशीरिदु श्वो दीर्घं सचन्ते वरुणस्य धाम:।
अनवद्यास्त्रिंशतं योजनान्येकैका क्रतुं परियन्ति सद्यः॥" (ऋक् १।१२३।८)

जैसी हो आज वैसी हो कल भी वह अनवद्य हैं। प्रतिदिन उषा वरुण एवं सूर्यकी अवस्थितिके स्थानसे ३० योजन आगे रहती हैं। एक एक उषा उदयकाल पर ही गमनागमनरूप कर्म निर्वाह किया करती हैं।*

इन्द्रने ही उषाको उत्पन्न किया है—"यः सूर्यं य उषसं जजान।" (ऋक् २।१२।७) फिर इन्द्रही उषाको विनष्ट भी करते हैं (ऋक् ४।३०।८-११)।

निघण्टुमें उषाके यह नाम लिखे हैं—विभावरी, सूनरी, भास्वती, ओदती, चित्रामघा, अर्जुनी, वाजिनी, वाजिनीवती, सुम्नावरी, अहना, द्योतना, श्वेत्या, अरुषी, सूनृता, सुनृतावता, सूनृतावरी। (नि घ० १।८)

पूर्वकालमें ग्रीक और रोमक उषा देवीकी पूजा करते थे। ग्रीक उषादेवीको एओस (Eos) और रोमक अरोरा (Aurora) कहते थे। वह हाइपेरियन एवं थियरकी कन्या, हिलियन तथा सिलिसकी भगिनी और टिटान अस्त्रियसकी पत्नी थीं। होमरने उषाको दिवादेवी लिखा है।

२ प्रत्यूष, सवेरा। ३ वाण राजाकी कन्या और अनिरुद्धकी पत्नी। अनिरुद्ध शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उषाकल (सं० पु०) उषायां कलः शब्दो यस्य, बहुव्री। कुक्कुट, मुर्गा।

---

* सायणाचार्यके मतसे सूर्य प्रत्यह ५०५९ योजन अर्थात् एक दण्डमें ७९ योजन चलते हैं। ३० योजन आगे चलते सूर्यसे साढ़े बाईस पल पहले उषाका उदय होता है।

उषापति (सं॰ पु॰) उषायाः पतिः स्वामी, ६-तत्। अनिरुद्ध। यह कृष्णके पौत्र और प्रद्युम्नके पुत्र थे। उषा और अनिरुद्ध शब्द देखो।

उषासानक्ता (सं॰ स्त्री॰) प्रत्यूष एवं रात्रि, सवेरा और अंधेरा।

उषित (सं॰ त्रि॰) वस वा उष-क्त। १ पर्युषित, रात बिताये हुआ। २ दग्ध, जला हुआ। ३ निविष्ट, पहुंचा हुआ। ४ त्वरित, जल्द।

उषितङ्गवीन (सं॰ त्रि॰) उषिता अवस्थिता गावो यत्र। गोगणसे खाया हुआ, जहां गावोंने खाया हो।

उषीर (सं॰ पु॰ क्लो॰) उष-कीरच्। उशीर देखो।

उषेश (सं॰ पु॰) उषाया ईशः पतिः, ६-तत्। उषाके ईश अनिरुद्ध।

उषोदेवत्य (सं॰ त्रि॰) प्रत्यूषकालको देवता मानने वाला।

उष्ट्र (सं॰ पु॰) उष-ष्ट्रन्-कित्। उषिखनिभ्यां कित्। उण् ४।१६१। पशुविशेष, ऊंट। संस्कृत पर्याय—क्रमेल, क्रमेलक, मय,महाङ्ग, दीर्घगति, वल्गी, करभ, दासेरक, धूसर, लम्बोष्ठ, वरण, महाजङ्घ, जवी, जाङ्घिक, दीर्घ, शृङ्खलक, महान्, महाग्रीव, महानाद, महाध्वग, महापृष्ठ, वलिष्ठ, दीर्घजङ्घ, ग्रीवी, धम्नक, शरभ, कण्टकाशन,भोलि, बहुकर, अध्वग, मरुद्वीप, वक्रग्रीव, वासन्त, कुलनाश, कुशनाभा, मरुप्रिय, द्विककुत्, दुर्लङ्घन, भूतघ्न, दासेर, दीर्घग्रीव और केलिकीर्ण है। संस्कृत क्रमेल भिन्न भिन्न भाषावोंके शब्दोंसे मिलता है—जैसे संस्कृत 'क्रमेल', हिब्रू 'गमिल,' ग्रीक 'कामिलस्', रोमक 'कमेलस्,' इटलीय'कम्मेलो,' स्पेनीय 'कमेलो,' जर्मन 'कमोलु,' फ्रान्सीसी 'कमु,' (Chameau) अंगरेजी 'कैमेल् (Camel) अरबी 'जमेल'। इसके सिवा फारसीका शुतर शब्द धूसर जैसा मालूम पड़ता है।

यह अरब, ईरान्, दक्षिण तुर्कस्थान, उत्तर-पश्चिम भारत, इजिप्तसे मरितानियातक अफ्रीका, भूमध्य सागर तथा सिनिगल नदी तीरके मध्यवर्ती प्रदेश और कनारी द्वीपमें वास करता है।

उष्ट्र तीन जातिके होते हैं—हिगुइन, वेकेती और इलहैरी। हिगुइन सबसे बड़ा होता और १५ मन तक भार ढोता है। वेकेती हिगुइनसे छोटा पड़ता है। पृष्ठमें ककुदाकृति दो कुब रहते हैं। उनके बीच द्रव्यादि रखनेसे किसी दिक् गिर नहीं सकते। ८। ९ मन भार लादता है।

इलहैरी अपर जातीय उष्ट्रसे खर्व पड़ते भी भारके वहनमें सबकी अपेक्षा पटु है। ऐसा बहुकालव्यापी द्रुतगामी पशु कहीं नहीं। हम जिस परदार घोड़ेका गल्प सुनते, उसे द्रुतगति अनुध्यान करनेसे इलहैरी ही समझते हैं। अरबी कवियोंने इसकी जीभर प्रशंसा की है। इलहैरी आठ दिनमें प्रायः ४५० कोस अफरीकाका दुर्गम मरुपथ तय करता है।

उष्ट्र—रोमन्थक कहलाता अर्थात् भुक्त वस्तु उद्गीरणपूर्वक फिर चबाता है। किन्तु दन्तकी संख्याके अनुसार अपर रोमन्थक पशुओंसे इसका लक्षण भिन्न है। अपर रोमन्थक पशुके केवल नीचेकी दंष्ट्रमें छेदन-दन्त जमते, उसके ऊपरी अग्रभागमें नहीं निकलते। परन्तु उष्ट्रके नीचे ऊपर दोनों दंष्ट्र वह रहा करते हैं। सोलह ऊपर और अट्ठारह नीचे कुल ३४ दांत होते हैं। ऊपरी दंष्ट्रमें २ सूक्ष्म, २ तीक्ष्ण एवं १२ पेषण-दन्त और नीचे ६ सूक्ष्म, ८ तीक्ष्ण तथा १० पेषणदन्त होते हैं। ऊपरके सूक्ष्म अधिकांश तीक्ष्ण दन्त-जैसे ही रहते हैं।

अपर रोमन्थक पशुवोंसे उष्ट्रका दूसरा लक्षण भी भिन्न है। घन और नौकाकार गुल्फके अस्थि (Tarsus) अलग अलग रहते हैं। फिर अपर रोमन्थकोंकी तरह खुर विलक्षित नहीं जुड़े होते हैं। ओष्ठ शशककी तरह छिदे होते हैं। चक्षुके गोलक अति वृहत् पड़ते और कोटरके उपयुक्त नहीं ऊंचते। नासिका वक्र और सङ्कोचनके योग्य लगती है। मस्तक वृहत् होता है। ग्रीवा क्षीण और दीर्घ रहती है। पृष्ठदेश कुब्ज होता है। ऊरु तथा जङ्घाका दैर्घ्य अपरिमित रहता है। पद स्थूल और दो मात्र नखविशिष्ट होते हैं। पदका तल प्रशस्त रहनेसे मरुके मध्य चलते समय बालुकामें नहीं धंसता। ऊपरका होंठ शशककी तरह होनेसे उष्ट्र वालुकायुक्त अरण्यस्थित कण्टकमय गुल्मादि खा सकता है। नासिका वक्र और सङ्कोचन योग्य रहनेसे यह मरुभूमिमें 'सिमुम'

नामक साक्षात् कालान्तक बालुकाका प्रवाह बचा जाता है। यात्राके कालपर जब 'सिमुम' नामक वायु चलने लगता, तब उष्ट्रसे नीचे उतर मट्टीमें मुंह घुसेड़ रखने पर अति कष्टसे आरोहियोंका प्राण बचता है किन्तु इसका काम सामान्य नासिका सिकोड़नेसे ही बन जाता है।
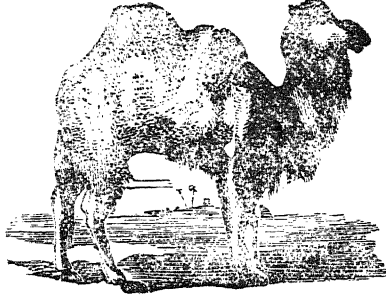
उष्ट्र।

उष्ट्रकी पाकस्थलीमें बड़ा चमत्कार है। वह अपर सकल जन्तुकी पाकस्थली से भिन्न होती है। पहले वह एक ओखली जैसी समझ पड़ती है। पश्चात् दिक् दो घर रहते हैं। वह मध्यमें एक कठिन पंक्ति द्वारा विभक्त हैं। यह अंश अन्ननालीवाले छिद्रपथके दक्षिण पार्श्वसे ढलते गया है। इस ओखलीमें जलका पोसरा रहता और आवश्यकता पड़नेसे उष्ट्र फिर जल पी सकता है। किसी किसी अरबी ऐतिहासिकने यहांतक कह दिया है कि जब मुहम्मदने टावक नगरको यूनानियोंके विपक्षमें गमन किया, तब सैन्यके सामन्तोंने आहार एवं पानीयके अभावसे अत्यन्त विपद्में पड़ अपने अपने ऊंटको मार पाकस्थलीका जल पिया था। (Salis Koran, p. 164.) किन्तु युरोपके वर्तमान प्राणितत्त्वविद् उक्त घटना नहीं मानते।

इसे वनका कण्टकतृण खाना अच्छा लगता है। पक्षाधिक आहार न मिलते भी उष्ट्र कातर अथवा भार वहनमें अक्षम नहीं पड़ता। अधिक दिन उपयुक्त आहार न मिलने पर पृष्ठस्थित ककुदके रक्त मांससे प्रतिपालन कार्य सम्पादित होता है।

अति पूर्वकालसे उष्ट्र मानवके व्यवहारमें लगता है। अनेक प्रमाण मिलते हैं कि वैदिक समयके आर्य ऊंटपर चढ़ते थे। (ऋक् ८।४६।२८-३१) वह अश्वकी तरह युद्धमें भी इसका व्यवहार करते थे—

"यथा मध उष्ट्रो न पीपरोऽमृध:।" (ऋक् १।१३८।२)

वैदिक समयसे ही (ऋक् ८।५।३७, ८।४६।३१) राजा अश्व गो एवं धनादिकी तरह उष्ट्रदान (भारत, सभा) करते आये हैं।

अश्वयान और गोयानकी तरह पूर्वकालमें उष्ट्रयानका भी व्यवहार रहा (मनु २।२०४)। उस समय ब्राह्मण उष्ट्रयानपर चढ़ न सकते थे। कारण—उष्ट्रयानपर चढ़नेसे ब्राह्मणको पाप लगता है—

"उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानन्तु कामत:।
स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासा: प्राणायामेन शुद्ध्यति॥" (मनु ११।२०२)

ब्राह्मण यदि अपनी इच्छासे उष्ट्रयान अथवा गर्दभ यानपर चढ़ता, तो विवस्त्र नहा प्राणायाम करनेसे शुद्ध होता है।

शास्त्रमें उष्ट्रके मांसका भक्षण निषिद्ध है—

"गोधे वक्ष्वरोष्ट्रञ्च सर्वं पञ्चनखं तथा।
क्रव्यादं कुक्कुटं ग्राम्यं कुर्यात् संवत्सरं व्रतम्॥" (शङ्खसंहिता १७।२१)

गोह, हाथी, ऊंट, पांचनखका पशु और मांसाशी गांवका मुर्गा खानेसे संवत्सर व्रतकरना चाहिये।

बाइबिलमें भी उष्ट्रका मांस अभक्ष्य-जैसा निर्दिष्ट है—"Because he cheweth the cud, but divideth not the hoop; he is unclean unto you." (Leviticus, xi. 4.)

उष्ट्र तुम्हारे पक्षमें अशुचि है। क्योंकि जुगाली चलते भी इसके खुर फटे नहीं होते।

अरब देशके कवियोंने इस पशुको 'अरण्यपोत' जैसा वर्णन किया है। उष्ट्र उन्हें प्राणसे अधिक प्रिय है। वह इसके मांस और दुग्धसे जीवन धारण करते हैं। लोमसे वस्त्र बनता और शिविरके प्रस्तुतकरणका उपादान मिलता है। यह वस्त्र उत्तरपश्चिम अञ्चलमें किसी किसी स्थानपर बिकता है। विलायतमें उष्ट्रके लोमसे कलम तैयार होता है। उष्ट्रका मल अरब देशमें जलानेके काम आता और धूमसे निशादल बन जाता है।

वैद्यक मतसे उष्ट्रीका दुग्ध लघु, स्वादु, लवणस्वाद

एवं दीपन होता और क्रमि, कुष्ठ, आनाह, शोथ तथा उदररोगको दूर करता है।

उष्ट्रीका घृत दीपन और वातश्लेष्मनाशक है। यह पुराना हो जानेसे कटु हो जाता है। इसको पीनेसे शोथ, विष, कुष्ठ, क्रमि, गुल्म और उदररोग नष्ट होता है।

उष्ट्रका मूत्र श्वास, कास और अर्शोरोगको मिटानेवाला है।

उष्ट्रकण्टकभोजनन्याय (सं० पु०) उष्ट्रके कण्टक भोजनका न्याय, ऊंटके कांटा खानेकी चाल। क्षतसे बहु दुःख सहते भी उष्ट्र जैसे सामान्य भोजनकी तृप्तिके सुखको श्रमी कण्टक खा जाता, वैसेही मनुष्य भी यत्सामान्य सुखके आशयसे बहुतसा सांसारिक दुःख उठाता है। क्षणभङ्गुर सुखके लिये भावी अनन्त दुःखका ध्यान न रखना उष्ट्रकण्टकभोजनन्याय कहलाता है।

उष्ट्रकर्ण (सं० पु०) जनपदविशेष। यह सिन्धुनदसे उत्तरस्थित एक म्लेच्छ देश है। यूनानी ऐतिहासिकोंने इसे अष्टकणि (Astaceni) कहा है।

उष्ट्रकर्णिक (सं० पु०) १ दक्षिणदिकस्थ यवन देश। २ उक्त देशके लोग। सहदेवके दिग्विजयवर्णनपर कहा है—

"कर्मांस्तालवर्णांश्चैव कलिङ्गानुष्ट्रकर्णिकान्।" (भारत, सभा)

उष्ट्रकाण्डी (सं० स्त्री०) उष्ट्र इव काण्डोऽस्य, जातित्वात् ङीष्। पुष्पविशेष, ऊंटकटारी। इसका संस्कृत पर्याय—रक्तपुष्पी, करभकाण्डिका, रक्ता, लोहितपुष्पी, और कर्णपुष्पी है। उष्ट्रकाण्डी तिक्तरस, उष्णवीर्य, रुचिकारक एवं हृद्रोगनाशक होती है। वीज मधुर है। शीतल रस उष्ण करनेसे गुणकारी, वीर्यवर्धक और सन्तर्पणजनक ठहरता है। (राजनिघण्ट)

उष्ट्रक्रोशी (सं० त्रि०) उष्ट्रकी भांति शब्द निकालनेवाला, जो ऊंटकी तरह बोलता हो।

उष्ट्रगोयुग (सं० क्ली०) उष्ट्रद्वय, ऊंटका जोड़ा।

उष्ट्रग्रीव (सं० पु०) भगन्दररोग विशेष। प्रकोपित पित्त द्वारा वायु अधःप्रेरित होता है। वहां उसके ठहरनेसे रक्तवर्ण, सूक्ष्म, उन्नत उष्ट्रग्रीवाकार पिड़का पड़ जाती है। उसमें तपकनेकी तरह वेदना उठती है। फिर प्रतिक्रियासे वह पक जाती है। (सुश्रुत) माधवनिदानमें इसका नाम 'उष्ट्रशिरोधर' लिखा है। भगन्दर देखो।

उष्ट्रधूसरपुच्छिका (सं० स्त्री०) उष्ट्रस्य धूसरः पुच्छ इव पुच्छः मञ्जरी यस्याः। कच्छिकाली, विषुवा।

उष्ट्रपक्षी (सं० पु०) द्रुतगामी एक भूचर पक्षी, शुतुरमुर्ग। (Struthio camelus) इसकी चोंच संभोली, फैली और भीतरको गोल होती है। मत्था छोटा और गला लम्बा पड़ता है। दोनो पैर अधिक वृहत् और बलिष्ठ रहते हैं। पैरमें दो-दो तलवे होते हैं। उनमें एक भीतर और एक बाहर लगता है। भीतरी ज्यादा बड़ा और खपड़े जैसा होता है। बाजूसे यह उड़ नहीं सकता। किन्तु दौड़नेमें बड़ी सुविधा होती है। बाजू और पूंछमें मुलायम पर रहते हैं।

शुतुरमुर्ग अपर सकल पक्षियोंकी अपेक्षा बड़ा ठहरता है। इसलिये 'पक्षिराज' कह सकते हैं। यह चारसे छह हाथतक ऊंचा निकलता है। स्त्रीजाति एककाल प्रायः १० अण्डे देती है। फिर एक-एक अण्डा मुरगीके २४ अण्डोंको बराबर बैठता है।

अधेड़ नरका काला और चिकना तथा मादे या बच्चेका पालक काला अथव कबरा—बीच-बीच सफ़ेद रहता है। बाजू और पूंछके बड़े-बड़े पर सफ़ेद होते हैं। बीच बीचमें काले धब्बे देख पड़ते हैं। चक्षु अतिशय तीक्ष्ण और उज्ज्वल रहते हैं। इसे अधिक दूरके द्रव्यादि सहजमें ही देखायी देते हैं। यह बहुत बलवान् होता है। घटनाक्रमसे आक्रमण पड़नेपर यह पदके आघातसे व्याघ्रादि शत्रुवोंको डरा सकता है। प्रति घण्टे शुतुरमुर्ग २० कोससे अधिक जानेकी शक्ति रखता है। अतिशय झपटनेसे यह सहज ही हाथ नहीं लगता। दक्षिण अफ़रीकाके लोग शुतुरमुर्गका ही चमड़ा पहन शुतुरमुर्गके आगे पहुंचते हैं। यह उन्हें भी शुतुरमुर्ग समझ नज़दीक आनेसे नहीं रोकता। इसी उपायसे वह निकट जा और विषाक्त तीर चला इसे मार डालते हैं।

शुतुरमुर्ग अरब और अफ़रीकाकी मरुभूमिमें रहता है। इसे शीघ्र तृष्णा नहीं लगती। दो-चार दिन

बाद जब तृष्णार्त देखायी देता, तब मरुभूमिके मध्यसे निकाल यह कलौंदे या खरबूजेका जल पी लेता है। क्षुधा लगने पर जैसे छोटा पक्षी बालका दाना तोड़ तोड़ चुगता, वैसेही शुतुरमुर्ग बड़े बड़े पत्थर, लोहेके टुकड़े, कङ्कड़, कांचके बरतन, तांबेके सिक्के और टूटे जूते निगलने लगता है। अफ्रीकाके लोग इसके अण्डे खाते हैं। प्राचीन कालसे विलायतमें इसके परका बड़ा आदर है। पालनेसे शुतुरमुर्ग हिल जाता है। किन्तु अपरिचित व्यक्तिको निकट आते देख यह प्रायः आक्रमण करता है। बाइबिलमें शुतुरमुर्गका मांस निषिद्ध ठहरा है। (Leviticus ,xi. 16.)

उष्ट्रपादिका (सं॰ स्त्री॰) मदनमालिनी, चमेली।

उष्ट्रयान (सं॰ क्ली॰) उष्ट्र द्वारा वहन किया जानेवाला यान, ऊंटगाड़ी।

उष्ट्रशिरोधर (सं॰ क्ली॰) भगन्दर रोगविशेष।

उष्ट्रस्थान (सं॰ क्ली॰) उष्ट्रस्य स्थानम्, ६-तत्। उष्ट्रके आवासका स्थान, ऊंटके रहनेकी जगह।

उष्ट्रासिका (सं॰ स्त्री॰) उष्ट्रस्येव आसिका आसनम्। उष्ट्रासन, ऊंटकी तरह बैठनेकी हालत।

उष्ट्रिका (सं॰ स्त्री॰) उष्ट्रस्य आकृतिरिव आकृतिर्यस्याः। १ मृन्मय सुरापात्र विशेष, शराब रखनेको एक मट्टीका बरतन। उष्ट्रस्य स्त्री, उष्ट्र-कन्-टाप् अत इत्वम्। २ उष्ट्र, ऊंटनी।

"धुर्भङ्गविक्षिप्तविदारितोष्ट्रिका।" (माघ १२।१६)

उष्ट्री (सं॰ स्त्री॰) उष-ष्ट्रन्-ङीष्। उष्ट्रिका देखो।

उष्ण (सं॰ पु॰ क्ली॰) उष-नक्। इन्धिभिदिदीङ्भ्यविभ्यो नक्। उण् ३।२। १ ग्रीष्म, गरमीका मौसम। २ आतप, धूप। ३ पलाण्डु, प्याज। ४ उष्मा, जलन। ५ अग्नि, आग। ६ सूर्य, आफ़ताब। ७ नरकविशेष। ८ पित्त, सफ़रा। ९ कौञ्चद्वीपस्थ वर्षविशेष। (त्रि॰) १० अशीतल, गर्म। ११ तीव्र तेज़। १२ अनलस, फुरतीला।

वैद्यक मतसे उष्ण वीर्य द्रव्य पित्तप्रकोपकारी, लघु एवं वातश्लेष्मनाशक होता है।

उष्णक (सं॰ त्रि॰) उष्णं कार्यं यस्य, उष्ण-कन्। १ क्षिप्रकारी, फुरतीला।

उष्णकटिबन्ध (सं॰ पु॰) कर्कट क्रान्ति और मकरक्रान्तिके मध्यका स्थान, मिन्तक्-हारा, गर्म खण्ड। यह ४७° प्रशस्त है। उष्णकटिबन्धमें सूर्यकी किरणें सीधी पड़नेसे उष्णता अधिक रहती है।

उष्णकर (सं॰ पु॰) उष्णः करः किरणो यस्य, अथवा उष्णं करोति, उष्ण-कृ-अच्। १ सूर्य, आफ़ताब। (त्रि॰) २ उष्णकारी, गर्म करनेवाला, जो गरमी लाता हो।

उष्णकाल (सं॰ पु॰) उष्णश्चासौ कालश्च, कर्मधा॰। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

"तक्रं नैव क्षते दद्यात् नोष्णकाले न दुर्बले।" (सुश्रुत)

उष्णग (सं॰ पु॰) ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

"चित्तं रहसि मे सौम्या नदीकूलमिवोष्णगः।" (रामायण ५।३१।३६)

उष्णगु (सं॰ पु॰) उष्णाः गौः किरणो यस्य, ओकारस्य ह्रस्वत्वम्। सूर्य, आफ़ताब।

उष्णङ्करण (सं॰ त्रि॰) उष्ण करनेवाला, जो गर्म करता हो।

उष्णता (सं॰ स्त्री॰) आतप, गरमी।

उष्णत्व (सं॰ क्ली॰) उष्णता, गरमी।

उष्णदीधिति (सं॰ पु॰) उष्णा दीधितयः किरणा यस्य। सूर्य, आफ़ताब।

उष्णनदी (सं॰ स्त्री॰) उष्णा चासौ नदी चेति, नित्यकर्मधारयः। वैतरणी नदी।

उष्णप्रस्रवण (सं॰ क्ली॰) तप्तकुण्ड, गर्म पानीका झरना। जिस प्रस्रवणसे उष्ण जल निकलता अथवा जिस स्थानका जल सर्वदा उष्ण रह बहता, उसका नाम उष्णप्रस्रवण पड़ता है।

पृथिवीके नाना स्थानोंमें उष्णप्रस्रवण विद्यमान हैं। भारतवर्षमें जो स्थान उष्णप्रस्रवण रहनेसे तीर्थ समझे जाते, उनके नाम नीचे दिये जाते हैं—

वीरभूममें वक्रेश्वर नामक पवित्र तीर्थस्थान है। इस पुण्य भूमिमें न्यूनाधिक ८ प्रस्रवण चलते हैं। उनमें सूर्यकुण्ड नामक प्रस्रवण प्रधान है। उष्ण होते भी सूर्यकुण्डके जलसे लतायें उपजा करती हैं। जलके ऊर्ध्व भागमें उपजनेवाली प्रायः हरी और अधोभागमें होनेवाली अधिक तापके कारण पीली पड़

जाता है। उभयको तापमानयन्त्रसे देखने पर १६४° से ८०° पर्यन्त ताप मिलता है।

थाना जिलेके भिवन्दी तालुकमें प्रायः १५० उष्ण कुण्ड हैं। उनमें कितने ही थाना जिलेकी वैतरणी नदीके निकट पड़ते हैं। उक्त कुण्ड अतिप्राचीन कालसे तीर्थकी तरह प्रसिद्ध हैं। पिण्डी पर्वतके पास अर्जुनकुण्ड है। उसमें १३° ताप रहता है। कितने ही क्षुद्र क्षुद्र भी उष्णप्रस्रवण हैं। उनके कर्दमसे धूम उठता है। सिन्धु प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्रवण हैं। उनमें मञ्च ह्रदके निकट भीलगिरिके शिखर देशपर एक अतिशय उत्तम प्रस्रवण है। उसके जलमें हाथ डाल नहीं सकते। सिन्धु प्रदेशके लच्छी नामक ग्राममें तप्त गन्धकके कई प्रस्रवण हैं।

पञ्जाबके उत्तरांशमें हिमालय पर्वतके पास पार्वती नदी किनारे मणिकर्ण नामक तीर्थ है। इस पर्वतमय प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्रवण देख पड़ते हैं। हम समझते हैं, कि वे सकल पवित्र प्रस्रवण ही पूर्वकालमें उष्णोगङ्ग नामसे प्रसिद्ध थे।

"अपां ह्रदं च पुण्याख्यं भृगुतुङ्गं च पर्वतम्।
उष्णीगङ्गं च कौन्तेय सामात्यः समुपस्पृश॥" (भारत,वन १३५ अ०)

मणिकर्णके लोग उष्ण प्रस्रवणके तापसे रन्धनकार्य चलाते हैं। उन्हें जलानेके लिये काष्ठका प्रयोजन नहीं पड़ता।

काश्मीरके उत्तर लाधक प्रदेशमें अनेक क्षुद्र उष्ण-प्रस्रवण हैं। चट्टग्राममें चन्द्रनाथ गिरिपर सीताकुण्ड नामक एक पवित्र प्रस्रवण है। पूर्वकालसे यह कुण्ड हिन्दुवों और बौद्धोंके पवित्र तीर्थस्थानकी तरह प्रसिद्ध है। इस कुण्डसे धूम निकलता है।

उष्णरश्मि (सं० पु०) उष्णा रश्मयोऽस्य, बहुव्री०। १ सूर्य, आफताब। २ अर्कवृक्ष, अकौड़ेका पेड़।

उष्णरुचि, उष्णरश्मि देखो।

उष्णवारण (सं० पु०-क्ली०) उष्णं आतपं वारयति, उष्ण-वृ-णिच्-ल्यु। छत्र, छाता।

"यदर्थमम्भोजमिवोष्णवारणम्।" (कुमार ५।५२)

उष्णवाष्प (सं० पु०) १ तप्तवाष्प, गर्म भाप। २ अश्रु, आंसू।

उष्णवीर्य (सं० पु०) उष्णं वीर्यं यस्य, १ शिशुमार, सङ्कमाही, सूस। (त्रि०) २ तीक्ष्णवीर्य, गर्म तासीर रखनेवाला। ३ बलवान्, ताकतवर।

उष्णवेताली (सं० स्त्री०) एक देवी।

उष्णा (सं० स्त्री०) उष्यते वध्यते यया, उष वधे नक्-टाप्। १ क्षयरोग, तपेदिक्। २ सन्ताप, गरमी। ३ पित्त, सफ़रा।

उष्णांशु (सं० पु०) उष्णा अंशवो यस्य, बहुव्री०। सूर्य, आफ़ताब।

उष्णागम (सं० पु०) उष्णः आगमो यत्र। ग्रीष्म-काल, गरमीका मौसम।

उष्णाभिगम, उष्णागम देखो।

उष्णालु (सं० त्रि०) उष्ण-आलुच्।

१ उत्ताप सह्य करनेके लिये असमर्थ,जो गरमी बरदाश्त कर न सकता हो। २ आतपक्लान्त, गरमीसे घबराया हुआ। ३ शीतलप्रिय, जिसे ठण्डक अच्छी लगे।

"उष्णालुः शिशिरे निषीदति तरोर्मूलालवाले शिखी।" (विक्रमोर्वशी)

उष्णासह (सं० पु०) उष्ण आतप आसह्यते यत्र, उष्ण-आ-सह-अच्। १ हेमन्तकाल, जाड़ेका मौसम। (त्रि०) २ उत्ताप सह न सकनेवाला, जो गरमी बरदाश्त कर न सकता हो।

उष्णिक् (सं० स्त्री०) उत्-स्निह-क्विप्। सप्ताक्षर छन्दो-विशेष, सात अक्षरका एक छन्द। "गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्च।" (छन्दोमञ्जरी) यह छन्द तीन प्रकारका होता है— मधुमती, कुमारललिता और मदलेखा।

उष्णिका (सं० स्त्री०) अल्पमन्नमस्याम्, अन्न अल्पार्थे निपातनात् अन्नशब्दस्य उष्णादेशः, टाप् अत-इत्। यवागु, मड़ैरो।

उष्णिमा (सं० पु०) उत्ताप, गरमी।

उष्णोगङ्ग (सं० क्ली०) उष्णीभूता गङ्गा यत्र। भृगु-पर्वतस्थ तीर्थविशेष। (भारत, वन १३५ अ०) उष्णप्रस्रवण देखो।

उष्णीष (सं० पु०-क्ली०) उष्णं ईषते हिनस्ति, उष्ण-ईष-क। १ शिरोवेष्टन, पगड़ी, साफ़ा। वैद्यकके मतसे उष्णीषका धारण कान्तिजनक, केशवर्धक, आयुवर्धक, धूलि-शीत-उष्ण-निवारक, प्रतिश्याय तथा शिरःशूलप्रशमक और वर्ण-तेज-बल-वर्धक है। २ मुकुट, ताज। ३ चिह्नविशेष।

उष्णीषधारी (सं० पु०) उष्णीषं धरति, उष्णीष-धृ-णिनि। उष्णीष धारण करनेवाला,जो पगड़ी या साफा बांधता हो।

उष्णीषी (सं० त्रि०) उष्णीषं अस्त्यस्य, उष्णीष-इनि। १ उष्णीषधारी, पगड़ी या साफा बांधनेवाला। (पु०) २ महादेव।

"उष्णीषीव सुवक्त्रश्च उदग्रो विनतस्तथा।" (भारत, अनु १७अ०)

उष्णोदक (सं० क्लो०) उष्णञ्च तत् उदकञ्चेति,कर्मधा०। उष्णजल, गर्मपानी। यह अर्धावशेष, त्रिपादावशेष, चतुर्थांशावशेष भेदसे अनेक प्रकारका होता है। साधारणतः कुछ काल तपा कर भी उदक व्यवहार किया जाता है। वैद्यकोक्त साधारण उष्णोदक शीत-हितकर, कास, ज्वर, विरुद्ध कफ, वात एवं आमका प्रशमक, मेदविनाशी, अग्न्युद्दीपक और वस्तिपरिशोधक है। ग्रीष्ममें अर्धावशेष, शरत्कालमें एकांशावशेष, हेमन्त, शीत एवं वसन्तकालमें अर्धावशेष और वर्षा-कालमें अष्टमांशावशेष उष्णोदक पीना चाहिये। पादावशेष पित्तविनाशक, अर्धावशेष वातप्रशमक और त्रिपादावशेष उष्णोदक कफनाशक है। (भावप्रकाश)

दिनको जो तपाया जाता, वह जल रातको गुरु हो जाता है। इसलिये दिनका उष्ण जल रातको व्यवहार नहीं करते। रातको नया जल उष्ण कर काममें लाना चाहिये। उष्ण जलका स्नान भी विशेष उपकार साधक है। किन्तु मस्तकपर उष्णोदक छोड़ना न चाहिये। उससे केश और चक्षुको अपकार पहुंचता है।

उष्णोपगम (सं० पु०) उष्ण उपगम्यते अत्र, उष्ण-उप-गम-अप्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्म (सं० पु०) उष-मक्। १ ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम। २ उत्ताप, धूप। ३ तीव्रता, तेज़ी। ४ क्रोध, गुस्सा। ५ श, ष, स और ह चार वर्ण।

उष्मक (सं० पु०) उष्म-कन्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मज (सं० त्रि०) उष्मज, गरमीसे पैदा होनेवाला। (पु०) २ क्षुद्रकीटादि, गरमीसे पैदा होनेवाला कीड़ा। जैसे—मच्छर, खटमल वगैरह।

उष्मता (सं० क्लो०) उष्मस्य भावः, उष्म-तल्। उष्णता, गरमी।

उष्मपा (सं० पु०) उष्माणं पिबति, उष्म-पा-क्विप्। १ पितृलोक विशेष। २ उष्मपानकारी तपस्विविशेष।

"सुकालिनो वर्हिषद उष्मपा आज्यपास्तथा।" (श्रुति)

उष्मभास् (सं० पु०) सूर्य, आफ़ताब।

उष्मवत् (सं० त्रि०) उष्म-मतुप्, मस्य वः। उष्मविशिष्ट, गर्म। "ज्वरदाहोष्मवतीं हृदिम्।" (सुश्रुत)

उष्मस्वेद (सं० पु०) उष्मश्चासौ स्वेदश्चेति, कर्मधा०। उष्मस्वेद, गर्म पसीना। स्वेद देखो।

उष्मा (सं० पु०) उष-मनिन्। १ ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम। २ उत्ताप, गरमी। उष्म देखो।

उष्मागम (सं० पु०) उष्मा आगम्यते यत्र, आ-गम-अप्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मान्वित (सं० त्रि०) उत्तेजित, भड़का हुआ।

उष्माय (नामधातु) उष्माणमुद्वमति, उष्मन्-क्यङ्। इसका अर्थ उष्मा उद्वमन करना या आग उगलना है।

उष्मायण (सं० पु०) ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मोपगम, उष्मायण देखो।

उष्यल (सं० क्लो०) चारपाईका ढांचा।

उस (हिं० सर्व०) तत्, वह। यह शब्द 'वह' का रूपान्तर है। विभक्ति लगनेसे 'वह' के स्थानमें 'उस' आदेश होता है। जैसे—उसने, उसको, उससे, उसका, उसमें, उसपर। 'उस' अन्य पुरुषके एकवचनका रूप है। बहुवचन 'उन' है।

उसकन (हिं० पु०) १ उबसन, जूना, बरतन मांजनेका बान या पयाल वगैरहका मुट्ठा। २ उभार, उठाव।

उसकना, उकसना देखो।

उसकाना, उसकारना, उकसाना देखो।

उसगन (हिं०) अपशकुन देखो।

उसनना (हिं० क्रि०) १ उबालना। २ मांडना, पानी डालकर गूंधना।

उसना (हिं० वि०) उबाला हुआ, गर्म किया हुआ। जिस चावलको पानीमें डाल उबालते और भूसी निकालते, उसे उसना नामसे पुकारते हैं।

उसनाना (हिं॰ क्रि॰) १ उबलवाना, गर्म करवाना। २ मंडवाना, पानी डलाकर गुंधवाना।

उसनीस (हिं॰) उष्णीष देखो।

उसबा (हिं॰) उषबा देखो।

उसबुपल्ली—बम्बई प्रान्तके प्राचीन पुष्पराष्ट्र प्रदेशका एक ग्राम। महाराज सिंहवर्माके राज्य पानेसे ११ वत्सर बाद इस ग्रामके अधिवासियोंको एक शासन-पत्र सुनाया गया था। उक्त महाराज सम्भवतः विष्णु-गोप वर्माके बड़े भाई रहे। विष्णुगोप वर्माने ही उक्त संस्कृत शासनपत्र निकाल यह ग्राम विष्णुहार मन्दिर पर उत्सर्ग किया। वह परमभागवत थे। सेनापति विष्णुवर्माने कण्डकूट ग्राममें विष्णुहारका मन्दिर बनवाया था।

उसमा (हिं॰ पु॰) वसमा, उबटन।

उसमान (अ॰ पु॰) मुहम्मदके एक सखा या साथी।

उसरना (हिं॰ क्रि॰) सरकना, अलग होना।

उसरु—युक्तप्रदेशस्थ राज्यविशेष।

उसरौड़ी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षि विशेष, एक चिड़िया

उसलना, उसरना और उछलना देखो।

उसवदात—बम्बई प्रान्तके एक प्राचीन शक नृपति। यह अपने श्वशुर नहपानके (१०० ई॰) कोंकन और दाक्षिणात्यमें प्रतिनिधि रहे। इनके कारल और नासिकवाले ताम्रफलकोंमें सोमनाथ पत्तन, भडोच, सोपारे और गोवर्धनके उत्सर्गकी बात लिखी है। दाहनुकापर इन्होंने एक घाट बनवाया था। सूर्पर-कमें उषवदात द्वारा निर्माण कराये विश्रामालय और भोजनालय थे। नासिकके १० म, १२ श और १४ श शिलालिपिमें लिखा है, कि उषवदातका विवाह चहरात क्षत्रप नहपानकी दक्षमित्रा नाम्नी कन्यासे हुआ था। इनके पिताका नाम दिनीक रहा। यह जातिके शक थे। संस्कृत ऋषभदत्तका अपभ्रंश उषवदात है। इन्होंने तीन सहस्र गोदान किये थे। उत्तर गुजरातमें आबू स्थानके निकट बनालमें सोनेका सोपान उषवदातने दिया। १६ ग्राम ब्राह्मणोंको भेंट चढ़ाये थे। यह प्रति वर्ष लाखों ब्राह्मण खिलानेवाले थे। दक्षिण काठियावाड़के प्रभासक्षेत्रमें इन्होंने आठ स्त्रियां ब्राह्मणोंको ब्याही थीं। ३२ सहस्र नारियलके पेड़ उषवदातने पुरोहितोंको सङ्कल्पमें दिये। पुष्कर तीर्थमें जाकर इन्होंने तीन सहस्र गो और एक ग्राम दान किया था। थानेके पास चीवनमें उषवदातने ब्राह्मणोंको कितना ही दान दिया था। थानेके दहानू ग्राममें इन्होंने ७० सहस्र कार्षापण वा २ सहस्र सुवर्ण ब्राह्मणोंको बांटे थे। उषवदात निर्मित अम्बिका, पार, दमनगङ्गा, ताप्ती, कावेरी, दाहानु नदियोंके घाटोंपर यात्रियोंको उतराई देना पड़ती न थी। नदियोंके दोनों किनारे विश्राम स्थान और सोपान भी इन्होंने बनवाये। उषवदातने बौद्धोंको भी दान दिया था। उत्तर भारतमें सम्भवतः इन्होंने बौद्ध धर्मका अवलम्बन किया। उषवदत्तके कितने ही शिलाफलक निकले हैं। यह अपने समयके एक कर्ण रहे।

उससना (हिं॰ क्रि॰) १ उसरना, सरकना। २ श्वास ग्रहण करना, सांस निकालना।

उसांस, उसास देखो।

उसाना (हिं॰ क्रि॰) पछोरना, फटकारके साथ भूसी अलग करना।

उसारना (हिं॰ क्रि॰) १ विनाश करना, मिटाना। २ समापन करना, पूरे उतारना।

उसारा (हिं॰ पु॰) तृणाच्छादित द्वारप्रकोष्ठ, बरामदा, छत्ता। "नौकरको चाकर चाकर मांडोको उसारा।" (लोकोक्ति)

उसालना, उसारना देखो।

उसास (हिं॰ स्त्री॰) १ उच्छ्वास, आह। २ श्वास, सांस।

उसासना (हिं॰ क्रि॰) १ श्वास ग्रहण करना, सांस लेना। २ उच्छ्वास छोड़ना, आह भरना।

उसासी (हिं॰ स्त्री॰) श्वास ग्रहण करनेका समय, दम लेनेका वक्त।

उसिनना, उसनना देखो।

उसीजना (हिं॰ क्रि॰) मन्द-मन्द तप्त होना, धीरे-धीरे चुरना।

उसीला (हिं॰) वसीला देखो।

उसीसा (हिं॰ पु॰) १ शीर्षस्थान, सिरहाना। २ उपधान, तकिया।

उसुवाना (हिं॰ क्रि॰) सूजना, फूलना।

उसूल (अ० पु०) १ मूलतत्त्व, जड़। २ मत, अक़ीदा। यह शब्द 'अस्ल'का बहुवचन है।

उसेना (हिं० क्रि०) पानीमें डाल और आगपर चढ़ा किसी चीज़को मिल न जानेतक पकाना, उबालना।

उसेय (हिं० पु०) वेणु विशेष, किसी क़िस्मका बांस। यह खसिया तथा जयंतियाके पर्वत पर उपजता है। उच्चता ५०-६० फ़ीट रहती है। इसके चोंगे बनते, जो अनेक वस्तु रखनेके काममें लगते हैं।

उसेर करना (हिं० क्रि०) १ स्मरण रखना, याद न भूलना। २ प्रतीक्षा करना, राह देखना। ३ अप्रसन्न होना, नाराज़ पड़ना।

उस्तरा (फ़ा० पु०) क्षुर, छुरा। काले बाल बनानेको उस्तरा लेना और किसीका माल मारनेको कोरे या उलटे उस्तरेसे मूंडना कहते हैं।

उस्ता (हिं० पु०) खलीफ़ा, होशियार नाई।

उस्ताद (फ़ा० पु०) १ अध्यापक, माष्टर। २ ज्ञानवृद्ध, बड़ी अक़्लका आदमी। "जाय उस्ताद खाली है।" (लोकोक्ति) ३ धूर्त, चालाक, बदमाश। ४ गायक, वेश्याका गुरु। (त्रि०) ५ कृतविद्य, जानकार।

उस्तादी (फ़ा० स्त्री०) १ कला कौशल, होशियारी, हुनर। २ चातुर्य, चालाकी। ३ अध्यापकका कार्य, माष्टरी।

उस्तानी (फ़ा० स्त्री०) १ गुरुपत्नी, उस्तादकी औरत। २ अध्यापिका, पढ़ानेवाली औरत। ३ धूर्त स्त्री, चालाक औरत।

उस्र (सं० पु०) वस-रक् सम्प्रसारणम्। स्फायितञ्चिवञ्चिशकीति। उण् २।१३। १ वृष, बैल। २ रश्मि, किरण। ३ सूर्य, आफ़ताब। ४ अश्विनीकुमारद्वय। ५ देव। (त्रि०) ६ उषासम्बन्धीय, सवेरे देख पड़नेवाला। ७ दीप्त, चमकदार। ८ स्वच्छ, साफ़। ९ उद्गमनकारी, ऊंचा चढ़नेवाला।

उस्रधन्वन् (सं० त्रि०) दीप्त धनुर्युक्त, चमकीली कमान् वाला।

उस्रयामन् (सं० त्रि०) प्रातः कालके समय बाहर निकलने वाला।

उस्रा (सं० स्त्री०) उस्र-टाप्। १ गाभी, गाय। २ इन्दुरकर्णी लता, एक बेल। ३ पृथिवी, ज़मीन्।

उस्रि (सं० स्त्री०) वस-क्रि। भ्रमणकारिणी, चलनेवाली।

उस्रिक (वै० पु०) उस्र-ठन्। जीर्ण वृष, बुड्ढा बैल।

"ये त्वादेवोस्रिकं मन्यमानाः पापा भद्रमुपजो वञ्चाः।" (ऋक् १।१०।१५)

उस्रिका (सं० स्त्री०) उस्रिक-टाप्। अल्पदुग्धवती गाभी, थोड़ा दूध देनेवाली गाय।

उस्रिय (वै० पु०) उस्र अल्पार्थे घ। जीर्णवृष, बुड्ढा बैल।

"वृहस्पतिरुस्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद्वावशती रुदाजत्।" (ऋक् ४।५०।५)

उस्रिया (वै० स्त्री०) उस्रिय-टाप्। गवी, गाय।

"आयातुमिव क्रतुभिः कल्पमानः संवेशयन् पृथिवीमुस्रियाभिः।" (अथर्व ३।८।१)

उह् (धातु) भ्वादि पर० सक० सेट्। इसका अर्थ पीड़ित करना है।

उह (सं० अव्य०) १ सम्बोधन वाचक ए! अरे! ओ! २ निश्चयार्थवाची—ठीक। दुरुस्त। ख़ूब।

उहदा, ओहदा देखो।

उहदेदार, ओहदेदार देखो।

उहवां, उहां, वहां देखो।

उहान (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क।

उहार, ओहार देखो।

उहि, वह देखो।

उही, वही देखो।

उहु (वै० अव्य०) उह-कु। १ खेदसूचक शब्द विशेष, ओह, अरे, हाय। (त्रि०) २ वाहक, ले जानेवाला। "इंसाम उहुव उक्थं धः।" (ऋक् ४।४५।४)

उह्यमान (सं० त्रि०) वह-शानच् कर्मणि। वहन किया जानेवाला, जो उठाया जाता हो।

"ययोह्यमानं खलु भोगभोजिना।" (नैषध)

उक्षु (सं० पु०) वह-रक् सम्प्रसारणम्। वृष, बैल।

ऊ

ऊ (दीर्घ) संस्कृत तथा हिन्दी स्वरवर्णका षष्ठ अक्षर। इसका उच्चारणस्थान ओष्ठ है। वर्णोद्धार तन्त्रमें लिखा है—ऊकारका रूप ह्रस्व उकारसे प्रायः मिला है। और विशेषता यही है, कि ऊकारके नीचे एक दूसरी वक्र रेखा नीचेकी तरफ अधिक जातीहै। समस्त रेखामें यम, अग्नि और वरुण अवस्थित हैं। ऊर्ध्वगत मात्राको लक्ष्मी वा सरस्वती कहते हैं। इसका तन्त्रोक्त नाम—ऊ, कण्टक, रति, शान्ति, क्रोधन, मधुसूदन, कामराज, कुजेश, महेश, वामकर्णक, अर्थीश, भैरव, सूक्ष्म, दीर्घघोणा, सरस्वती, विलासिनी, विघ्नकर्ता, लक्ष्मण, रूपकर्षिणी, महाविद्येश्वरी, यष्ठा, षण्डोभू, और कान्यकुब्जक है। २ धातुका अनुबन्ध विशेष। "ऊदनिट्कः।" (कैवि० टू) (अव्य०) वेञ्-क्विप्। १ सम्बोधन—ए! ओ! अरे! २ वाक्यारम्भ—हाँ! कहिये! ३ दया—रहम—राम राम! ४ रक्षा हिफाजत—त्राहि त्राहि! (पु०) अवति रक्षति, अव-क्विप्-ऊट्। ज्वरत्वरस्त्रिव्यविमवामुपधायाश्च। पा ६।४।२०। ५ महादेव। ६ चन्द्र। ७ रक्षक, मुहाफिज।

ऊअना (हिं० क्रि०) उदय होना। निकलना।

ऊआबाई (हिं० वि०) निरर्थक, बेफायदा।

ऊख, इक्षु और ईख देखो।

ऊंग ऊंघ देखो।

ऊंगना (हिं० पु०) पशुरोग विशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। इस रोगमें पशु कुछ नहीं खाता-पीता। शरीर शीतल लगता और कान बह चलता है।

ऊंगा (हिं० पु०) अपामार्ग, लट जीरा।

ऊंगी (स्त्री०) ऊंगा देखो।

ऊंघ (हिं० स्त्री०) १ निद्रावेश, नींदका दौरा, झपकी। २ शण सूतकी बनी एक गेंडुरी। यह पहियेकी धुरीमें लगती है। इससे पहिया सटा रहता और धुरकी कीलकी रगड़से कटा नहीं करता।

ऊंघन (हिं० स्त्री०) निद्रागम, झपकी।

ऊंघना (हिं० क्रि०) निद्रागम होना, आंख झपकाना।

ऊंच, ऊंचा, (हिं०) उच्च देखो।

ऊंचाई, उच्चता देखो।

ऊंचे (हिं०) उच्चैः देखो।

ऊंछ (हिं० पु०) राग विशेष।

ऊंछना (हिं० क्रि०) बाल झाड़ना, कंघी करना।

ऊंट (हिं०) उष्ट्र देखो।

ऊंट कटारा (हिं० पु०) उष्ट्रकण्टक क्षुप, एक पौदा। इस झाड़ीमें कांटे होते हैं। पत्र भी दीर्घ एवं कण्टकाकार हैं। शाखा चुभनेवाले तन्तुओंसे युक्त रहती हैं। यह प्रस्तरमय तथा अनुर्वरा भूमिमें उपजता है। उष्ट्रका यह प्रिय खाद्य है। इसका मूल जलमें रगड़ कर देनेसे गर्भिणीको सुखप्रसव होता है। किसी-किसीके मतानुसार ऊंटकटारा बलवर्धक भी ठहरता है।

ऊंटकटीरा, ऊंटकटारा देखो।

ऊंटगाड़ी (हिं० स्त्री०) ऊंटके सहारे चलनेवाली गाड़ी। इसमें प्रायः दो खण्ड होते हैं। रात दिनमें ऊंट गाड़ी ३० कोससे कम नहीं चलती।

ऊंटवान् (हिं० पु०) उष्ट्रसञ्चालक, ऊंटको हांकनेवाला।

ऊंड़ा (हिं० पु०) १ पात्र विशेष, एक बरतन। इसमें रुपया पैसा और गहना-गोंठ भर भूमिके मध्य गाड़ते हैं। २ तहखाना, चहबच्चा। (वि०) ३ गभीर, गहरा।

ऊंदर, इन्दुर देखो।

ऊंधा, औंधा देखो।

जंहूं (हिं० अव्य०) नेव, नहीं, कभी नहीं, हो नहीं सकता।

जक (हिं० पु०) १ उल्का, शहाब-साक़िब, टूटता तारा। २ अग्नि, आग। (स्त्री०) ३ चक, किसी बात या कामका भूल जाना।

जकना (हिं० क्रि०) १ चूकना, भूलना, भ्रममें पड़ना। २ ताप देना, जलाना।

जख (हिं० स्त्री०) इक्षु, ईख। इक्षु देखो।

जखम (हिं०) जख्म देखो।

जखल (हिं० पु०) उदूखल, कांड़ी, हावन। यह काष्ठ वा प्रस्तरनिर्मित एक गभीर पात्र है। इसमें डाल-कर धान आदिको भूसी मूसलके सहारे निकालते हैं।

जगना (हिं० क्रि०) जमना, जड़ पकड़ना, अंकुरा फूटना।

जगरा (हिं० पु०) उच्छ खाद्य, उबला हुआ खाना।

जगू—युक्तप्रदेशके उनाव ज़िलेका एक नगर। यह समान भूमिपर उनावसे ग्यारह और फ़तेहपुर-चौरासी-से ढाई कोस दूर अवस्थित है। कनौजके पंवार राजपूत उग्रसेनने इसे बसाया था। ई० १५ वीं शताब्दी तक उनके वंशज जगूमें राज्य करते रहे। पीछे जौनपुरके इब्राहीम शरकीने उन्हें एक युद्धमें पछाड़ा था। राजपूतोंका प्रभाव घटने पर कुनबियोंने इसे अपने हाथ किया। जगूमें कई मन्दिर बने हैं। राजप्रासाद और न्यायालयका ध्वंसावशेष भी देख पड़ता है। वर्षमें एक बार मेला और सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है।

कहते है—राजपूतोंके समय एक कवि जगू गये थे। किन्तु उनका उचित सत्कार न हुआ। उन्होंने उससे अप्रसन्न हो शाप दिया था—

"जगूके आसपास दारिदकी डौंडी फिरें टोरव चकौड़ी फिरें चौकी सरकारकी।"

जज (हिं० पु०) उत्पात, बखेड़ा।

जजड़ (हिं० वि०) जनशून्य, खाली, जो बसा न हो।

जजर (हिं० वि०) १ उजला, साफ़, जो मैला न हो। २ उजड़, वीरान।

जजरा, जजर देखो।

जटना (हिं० क्रि०) १ अभिमान करना, मन बढ़ना। २ विचारना, सोचना, ख़यालमें लाना।

जटपटांग (हिं० वि०) अंडबंड, वाहियात, खराब।

जड़ा (हिं० पु०) १ न्यूनता, घटी। २ विनाश, बरबादी।

जड़ी (हिं० स्त्री०) यन्त्र विशेष, दुतकला। यह जुलाहोंके सेठेमें सटी रहती है। इसपर वह लिपटे सूतको पट्टीमें फिर-फिर लगाते जाते हैं। २ यन्त्र विशेष, एक चरखी। इसपर रेशमके लच्छे डाले और एक तरहो परेतोमें निकाले जाते हैं। ३ डुबकी, गोता। ४ पनडुब्बी।

जढ़ (सं० त्रि०) वह-क्त। १ विवाहित, व्याहा। २ वहन किया हुआ, जो उठाया गया हो। ३ धृत, पकड़ा हुआ। ४ अङ्गीकृत, माना हुआ।

"भार्यौढं वमवश्राय तस्थे सौमित्रयेऽसकौ।" (भट्टि)

जढ़कङ्कट (सं० त्रि०) जढ़ो धृतः कङ्कटो येन। वर्मयुक्त, सूजा या फूला हुआ।

जढ़ना (हिं० क्रि०) चिन्तन करना, सोचना, अनु-मान लगाना।

जढ़भार्य (सं० पु०) जढ़ा भार्या येन, बहुव्री०। विवाहित, व्याहा।

जढ़वयस् (सं० पु०) युवापुरुष, नौजवान् मर्द।

जढ़ा (सं० स्त्री०) जढ़-टाप्। १ भार्या, जोड़ू। २ विवाहिता कन्या, व्याही लड़की। ३ नायिका-भेद। जो व्याही स्त्री निज पतिको छोड़ अन्य पुरुषसे आसक्त रहती, उसे जनता जढ़ा नायिका कहती है।

जढ़ि (सं० स्त्री०) वह-क्तिन्। १ वहन, ढोवाई। २ विवाह, शादी।

जणीतेजस् (सं० पु०) एक बुद्ध।

जत (सं० त्रि०) वे-क्त अथवा जयी तन्तुसन्ताने, ज-क्त। १ कृतवयन, बुना हुआ। २ ग्रथित, गूंथा हुआ। ३ स्यूत, सीया हुआ। ४ रक्षित, हिफ़ाजत किया हुआ। ५ विख्यात, मशहूर। (हिं० वि०) ६ पुत्रहीन, जिसके लड़का न रहे। ७ मूर्ख, गंवार। (पु०) ८ भूत प्रेतात्मा।

जतर (हिं०) उत्तर देखो।

जतला (हिं० वि०) उतावला, जल्दबाज़

ऊताताई (हिं॰ वि॰) बे समझ, उजड्ड, ऊटपटांग काम करनेवाला।

ऊति (सं॰ स्त्री॰) अव-क्तिन् ऊट, वे-क्तिन्। १ रक्षा, हिफ़ाजत। २ वयन, बुनावट। ३ सिलाई, सीनेका काम। ४ लीला, तमाशा। ५ चरणा, चुवाई। कर्त्तरि क्तिच्। ६ रक्षाकर्त्री, रखवाली करनेवाली। ७ पुराणोंके दशविध लक्षण में कर्मकी वासना।

"मन्वन्तराणि सद्धर्म ऊतयः कर्मवासनाः।" (भागवत २।१०।४)

ऊतिम (हिं॰) उत्तम देखो।

ऊद (अ॰ पु॰) १ अगुरु वृक्ष, अगरका दरख्त। २ अगुरुकाष्ठ, अगरकी लकड़ी। ३ वादित्र विशेष, बरबत बाजा। (हिं॰) ४ उद्बिडाल, ऊद बिलाव।

ऊदन, ऊदल देखो।

ऊदबत्ती (हिं॰ स्त्री॰) धूपबत्ती। यह अगुरुका-ष्ठसे दाक्षिणात्यमें प्रस्तुत की जाती है। पूजापाठके समय धूप देने और सुगन्ध लेनेको इसे सुलगाते हैं।

ऊदविलाव (हिं॰) उद्बिडाल देखो।

ऊदल (हिं॰ पु॰) १ वृक्ष-विशेष, गुलबादल। यह वृक्ष, दाक्षिणात्य और हिमालयके नीचे वनमें अधिक उपजता है। इसका तन्तु बहुत दृढ़ होता है। उससे बहुत मोटी रज्जु बनती है। २ उदयसिंह। यह आल्हाके छोटे भाई थे। जटल महोबेवाले नृपति परमालके मुख्य सामन्तोंमें एक थे। बाल्य कालमें ही इन्होंने माड़व पर चढ़ अपने बापका दांव लिया। पृथ्वीराजसे भी इन्होंने कई बार युद्ध किया था। अन्तको वेलाके गौनेमें पृथ्वीराजके अन्यतम वीर चौड़ाने इन्हें मार डाला। ऊदलकी वीरता भारतप्रसिद्ध है।

ऊदा (हिं॰ वि॰) १ रक्तवर्ण मिश्रित कृष्णवर्ण, सुरखी-आमेज काला बैंगनी। (पु॰) अश्वविशेष, एक घोड़ा। यह रक्तवर्ण मिश्रित कृष्णवर्णका होता है।

ऊदी-सेम (हिं॰ स्त्री॰) केवांच।

ऊधन् (वै॰ क्ली॰) ऊधस् पृषोदरत्वात् सस्य नः। पशुका स्तन, चौपायेका थन।

"उताह नक्रमुतसोम ते दिवा सख्याय वभ्र ऊधनि।" (ऋक् ८।१०।४।२०)

ऊधन्य (सं॰ क्ली॰) ऊधनि भवम्, ऊधन्-यत्। दुग्ध, दूध।

ऊधम (हिं॰ पु॰) उत्पात, बखेड़ा, झगड़ा।

ऊधमी (हिं॰ वि॰) उपद्रवी, झगड़ालू, बखेड़िया।

ऊधर् (वै॰ क्ली॰) ऊधस् पृषोदरादित्वात् सस्य रः। पशुस्तन, चौपायोंका थन। "ऊधर्नलग्ना जरन्ते।" (ऋक् ८।२।१२)

ऊधव (हिं॰) उद्धव देखो।

ऊधस् (वै॰ क्ली॰) ऊन्द-असुन्, ऊन्दस्य ऊधादेशः। पशुस्तन, चौपायेका थन। (शतपथब्रा॰ २।५।१।५)

ऊधस्य (सं॰ क्ली॰) ऊधसि भवम्, ऊधस्-यत्। १ दुग्ध, दूध। (त्रि॰) २ दुग्धकर, दूध पैदा करनेवाला।

ऊधस्वती (सं॰ स्त्री॰) ऊधस्-मतुप्, मस्य वः स्त्रियां ङीप्। अपने स्तनमें अधिक दुग्ध रखनेवाली गौ, जो गाय अपने थनमें ज्यादा दूध रखती हो।

"पिपिवुःश्चं व्रजान् गावः पयसोधस्वतीर्मुदा।" (भागवत १।१०।५)

ऊधो (हिं॰) उद्धव देखो।

ऊन् (धातु) अदा॰ चुरा॰ पर॰ सक॰ सेट्। "ऊनत्व परिहाने।" (कवि॰ द्रु) न्यून बनाना, कम करना, घटाना।

ऊन (सं॰ त्रि॰) ऊनन्-अच् अथवा अव-नक्-ऊट्। इणषिञ्जिदीङ्ष्यविभ्यो नक्। उण् ३।२। ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामिति। पा ६।४।२०। १ हीन, छोटा। २ न्यून, कम। ३ असंपूर्ण, नातमाम। "ऊनं न सत्वेष्वधिको बबाधे।" (रघु २।१४) (हिं॰) ४ ऊर्णा, चौपायोंका गर्म रोयां। भारतमें हिमालयके मेषका रोयां उत्तम होता है। काश्मीर तथा तिब्बत ऊर्णाके लिये विख्यात है। अफ़गानिस्तानकी भेड़ भी अच्छा ऊन देती है। ऊर्णाका तन्तु बहुत सूक्ष्म, दीर्घ, दृढ़, कोमल और दीप्त निकलता है।

ऊनक (सं॰ त्रि॰) ऊन स्वार्थे कन्। हीन, छोटा।

ऊनचत्वारिंश (सं॰ त्रि॰) ऊनचत्वारिंशतः पूरणः, डट्। चत्वारिंशसे एक संख्या न्यून, उंचालीस, एक कम चालीस, ३९।

ऊनता (हिं॰ स्त्री॰) न्यूनता, कमी।

ऊनत्रिंशत् (सं॰ त्रि॰) उनतीस, २९।

ऊनविंशति (सं॰ त्रि॰) उन्नीस, १९।

ऊना (हिं॰ वि॰) न्यून, कम, छोटा।

ऊनित (सं॰ त्रि॰) घटाया या कम किया हुआ।

ऊनी (हिं॰ वि॰) १ ऊर्णनिर्मित, ऊनका बना

हुआ। (स्त्री॰) २ न्यून, थोड़ी। ३ न्यूनता, घटी, कमी। ४ थोड़ी, छोटी।

ऊनोदरतातप (सं॰ पु॰) जैनव्रतविशेष। इसमें प्रत्यह एक-एक ग्रास भोजन कम करते हैं।

ऊप (हिं॰ पु॰) अन्नव्याज, अनाजका सूद। कृषक बोनेके लिये महाजनसे अन्न उधार लेते और खेत कटनेपर मन पीछे ३।४ सेर अधिक दे देते हैं। डेवढ़ा या सवाया ऊप भी उठता है।

ऊपना (हिं॰ क्रि॰) व्याजपर अन्न ऋण देना, सूदपर अनाज उठाना।

ऊपर (हिं॰ उप॰) १ उपरि, बर, पर। (क्रि॰ वि॰) २ ऊर्ध्व, आगे। ३ अधिक, ज़्यादा। "जितना ऊपर उतना ही नीचे।" (लोकोक्ति) ४ पश्चात्, पीछे। ५ प्रतिकूल, खिलाफ़।

ऊपरसे (हिं॰ क्रि॰ वि॰) ऊर्ध्वसे, सरपर।
"तेलीके तीनो नरें ऊपरसे टूटे लाड।" (लोकोक्ति)

ऊपरी (हिं॰ वि॰) १ बहिरङ्ग, बाहरी। २ अगभीर, उथला। ३ कृत्रिम, बनावटी। ४ अन्यसम्बन्धीय, पराया। ५ अपरिचित, अजनबी। ६ विदेशीय, जो अपने मुल्कका न हो। ७ शिथिल, ढीला। ८ अयोग्य, नाक़ाबिल।

ऊब (सं॰ स्त्री॰) १ उद्वेग, घबराहट। २ अरुचि, नफ़रत। ३ उत्साह, हौसला।

ऊबट (हिं॰ पु॰) गौणमार्ग, बड़ी राहके पासकी गली।

ऊबड़खाबड़ (हिं॰ वि॰) उच्च-नीच, नाहमवार, ऊंचा-नीचा।

ऊबना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्विग्न होना, घबरा जाना, उकताना। २ घृणा या नफ़रत करना।

ऊभरना, उभरना देखो।

ऊभ (हिं॰ वि॰) १ उच्च, ऊंचा। (स्त्री॰) २ व्याकुलता, घबराहट। ३ घृणा, नफ़रत। ४ उष्मा, गरमी। ५ उत्साह, हौसला। ६ श्वासरोग, दमेकी बीमारी।

ऊभना (हिं॰ क्रि॰) १ दण्डायमान होना, उठना। २ उद्विग्न होना, घबराना। ३ शीघ्र शीघ्र निश्वास छोड़ना, हांफना।

ऊभा (हिं॰ पु॰) गत, गड्ढा।

ऊभासांसी (हिं॰ स्त्री॰) उद्वेग, घबराहट।

ऊम् (सं॰ अव्य॰) ऊय-मुक्। १ क्रोधोक्ति, मारो! २ जिज्ञासा, क्या! क्यों! कैसे! ३ निन्दा, छी! छी! ४ स्पर्धा, इतना! ऐसा!

ऊम (सं॰ क्ली॰) अवतीति, अव-कित्-मन्। १ नगर, शहर। २ देशविशेष, एक मुल्क। (सिद्धान्तकौमुदी) ३ रक्षक, रखवाला।

ऊमक (हिं॰ स्त्री॰) उत्साह, बाढ़, उभार, झपट।

ऊमट (हिं॰ वि॰) क्षत्रियोंकी एक जाति, मालवेके ठाकुर।

ऊमना (हिं॰ क्रि॰) उठना, बढ़ना, उभरना।

ऊमर (हिं॰ पु॰) १ उदुम्बर, गूलर। २ वणिक् जातिका एक भेद।

ऊमरकोट—१ सिन्धु प्रदेशके थर और पारकर जिलेकी एक तहसील। चाचर तहसीलको लेते भूमिका परिमाण ११०५ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ८० हज़ार होगी। २ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षा॰ २५° २१′ उ॰ तथा द्राघि॰ ६९° ४६′ पू॰पर अवस्थित है। पूर्व मरुभूमिके टीले इधर उधर खड़े हैं। नहर नगरमें आयी है। ऊमरकोटसे हैदराबादको सड़क लगी है। नगरमें कचहरी, अदालत, थाना, डाकखाना, अस्पताल, स्कूल, तारघर, धर्मशाला और पिंजरापोल सभी हैं। ५०० वर्गफीटका एक किला बना है। तालपुरवाले मीरोंके समय उसमें ४०० सिपाही रहते थे। आजकल सरकारी इमारतें किलेमें ही हैं। घी, ऊंट, गाय, बैल, तम्बाकू, रूई, धातु, रंग, सूखेफल, तेल, कपड़े और ऊनका व्यवसाय चलता है। जुलाहे ऊंटकी झूलें और मोटे कपड़े बुनते हैं। १५४२ ई॰को ऊमरकोटमें ही अकबर बादशाहने जन्म लिया था। पहले यहां राजपूतोंका राज्य रहा। किन्तु १८१३ ई॰में तलपुरके मीरोंने इसपर अधिकार किया था। फिर १८४३ ई॰में ऊमरकोट अंगरेजोंके हाथ लगा।

ऊमरखेड़—बरार प्रान्तके बासिम जिलेकी पूसर तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ १९° ३६′ उ॰

एवं द्राघि० ७७° ४५´ पू०पर अवस्थित है। १८१८ ई०को यहां होलकर सरदार और निज़ामकी सेनामें युद्ध हुआ। १७८५ ई०में निज़ामने ऊमरखेड़ परगना १७६४ ई०का युद्ध समाप्त होनेपर पेशवाको दे डाला था। पूनामें हारनेपर पेशवा १८१८ ई०को पूर्वकी ओर भागते यहां ठहर गये। ब्राह्मण साधु महाराजकी चिताके स्थानपर एक अच्छासा मन्दिर बना है। सुप्रसिद्ध गोमुख स्वामीका भी यहां मठ था। वह प्रतिवर्ष एक चेलेके साथ इधर-उधर दौरेपर जाते और प्रायः २ लाख रुपया मांग लाते, जिसे पुण्य-कार्यमें लगाते थे। उन्होंने अनेक मन्दिर तथा कूप बनवाये। दूर-दूरसे लोग यहां मानता करने आते हैं। १८८१ ई०में गोदावरी किनारे महात्माने इहलोक छोड़ा था। मठमें स्वामीका समाधि प्रतिष्ठित है।

ऊमरगढ़—युक्तप्रान्तके एटा ज़िलेकी जलेसर तहसीलका एक नगर। यह जलेसर नगरसे साढ़े चार कोस दक्षिण-पूर्व सेंगरनदीके वामतटपर अवस्थित है। पहले यहां यदुवंशियोंकी राजधानी रही। एक पुराना क़िला खड़ा है। उसमें उक्त वंशके प्रतिनिधि रहते हैं। क़िलेके चारो ओर एक गहरी खाई खुदी थी। आजकल वह पूर गयी है। मकान् भी टूटे फूटे हैं। ठाकुर बहादुरसिंहके समय मराठोंने सेंधियाके अधीन ऊमरगढ़ लूटा था। नीलकी दो कोठियां चलती हैं। उनमें एक यदुवंशियों और एक युरोपीयोंके अधीन है। क़िलेकी दीवारोंके आसपास आमके उमदा बाग़ लगे हैं।

ऊमरपुर—विहार प्रान्तके भागलपुर जिलेकी बंका तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° २´ २३´´ उ० तथा द्राघि० ८६° ५७´ पू०पर अवस्थित है। यहां जिलेके दक्षिणांशमें उत्पन्न शालि प्रभृति धान्य एकत्र किये और मुंगेर एवं सुलतानगंजकी राह पूर्वको भेज दिये जाते हैं। एक बड़े तालाबपर शाह-शुजाकी मसजिद बनी है। डुमरांव कोई आध कोस उत्तर पड़ता है।

ऊमस, उमस देखो।

ऊमहना, उमहना देखो।

ऊमा (हिं० स्त्री०) यव वा गोधूमकी हरित् मञ्जरी, गेहूं वगैरहकी ताज़ी बाल।

ऊय् (धातु) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "ऊयीङ् ईवने।" (कविकल्पद्रुम) सीना, टांकना।

ऊर (सं० पु०) धान्यवपन नियमविशेष, धान बोनेकी एक चाल। जड़हन लगानेका नाम ऊर है। बेंगन एक महीने बाद उखाड़ कर जब जलसे भरे खेतमें बोया जाता, तब ऊर कहलाता है।

ऊरज (हिं०) ऊर्ज देखो।

ऊरध (हिं०) ऊर्ध्व देखो।

ऊररी (सं० अव्य०) ऊय् बाहुलकात् ररीक्। १ विस्तारसे, बढ़कर। २ अङ्गीकार, हां, ठीक है।

ऊररीकृत (सं० त्रि०) स्वीकृत, माना हुआ।

ऊरव्य (सं० पु०) ऊरोर्जातः ऊरु-यत्। ब्रह्माका ऊरुजात, वैश्य, बनिया।

ऊरी (सं० अव्य०) ऊरु बाहुलकात् रीक्। १ विस्तारसे, फैलाकर। २ स्वीकार, मञ्जूर, हां। (हिं० स्त्री०) ३ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। जुलाहे इसे दुतकला या सलाका भी कहते हैं।

ऊरीकृत (सं० त्रि०) ऊरी-कृ-क्त। १ अङ्गीकृत, माना हुआ। २ विस्तृत, फैला हुआ।

ऊरु (सं० पु०) ऊर्णुयते आच्छाद्यते, कुः नुलोपश्च। ऊर्णोतेर्णुलोपश्च। उण् १।३१। जानुका उपरिभाग, टांगका ऊपरी हिस्सा, रान।

ऊरुग्राह (सं० पु०) ऊरुं गृह्णाति स्तभ्नाति, ऊरु-ग्रह-अण्। ऊरुस्तम्भरोग। ऊरुस्तम्भ देखो।

ऊरुग्लानि (सं० स्त्री०) ऊरुकी निर्बलता, रानकी कमज़ोरी।

ऊरुज (सं० पु०) ऊरोर्जातः, ऊरु-जन-डः। १ वैश्य, बनिया। २ भृगुवंशीय और्व नामक मुनि।

"रजसा तमसा चैव समुद्रिक्तास्तथोरुजाः।" (विष्णुपु० १।६।४)

ऊरुजन्मा, ऊरुज देखो।

ऊरुदघ्न (वै० त्रि०) ऊरु-दघ्नच्। ऊरुपरिमित, रानके बराबर।

"ऊरुदघ्नो द्वितीयो जानुदघ्नस्तृतीयः।" (शतपथब्रा० १२।५।१।३)

ऊरुद्वयस, ऊरुदघ्न देखो।

ऊरुपर्वा (सं० पु०) ऊर्वोः पर्वेव, ५-तत्। जानु, घुटना।

ऊरुफलक (सं० क्ली०) ऊर्वोः फलकमिव, ६-तत्। नितम्बदेश, सुरीन्, पुट्ठा।

ऊरुभिन्न (सं० त्रि०) ऊरुमें छिद्र रखनेवाला, जिसके फटी रान् रहे।

ऊरुरी (सं० अव्य०) ऊर-उरीक। ऊररी देखो।

ऊरुसम्भव (सं० पु०) ऊरोः सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री०। १ वैश्य, बनिया। (त्रि०) २ ऊरुसे उत्पन्न होनेवाला, जो रान्से निकलता हो।

ऊरुस्तम्भ (सं० पु०) ऊरू स्तभ्नाति, ऊरु-स्तन्भ, अण्। ऊरुरोगविशेष, रान्की एक बीमारी। वैद्यकके मतमें शीतल, उष्ण, द्रव, शुष्क, गुरु तथा स्निग्धकर वस्तु अतिरिक्त बरतने, अधिक परिश्रम करने, विशेष चलने फिरने, दिनको सो रहने और रातको जगने प्रभृति कारणोंसे सञ्चित वात, श्लेष्मा, मेद एवं पित्त भड़क उठता है। उस समय अस्थि श्लेष्मपूर्ण रहनेसे दोनो ऊरु स्तब्ध, शीतल, अचेतन, स्थानान्तर गमन वा पदस्थापनके लिये अशक्त और अतिशय व्यथित हो जाते हैं। उसीसे मोह, अङ्गमर्द, आर्द्रवस्त्रके अवलुण्ठन जैसे अनुभव, तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरका वेग बढ़ता है। अतिनिद्रा, अतिमुग्धता, अलसता, ज्वर, लोमहर्ष, अरुचि, वमन और जङ्घा एवं ऊरुद्वयकी अवसन्नता इस रोगका पूर्वरूप है। जिसके ऊरुस्तम्भमें दाह उठता, वेदना एवं सूचिवेधवत् पीड़ाका वेग बढ़ता और सब शरीर कंपता, उसका मृत्यु आ पहुंचता है। उक्त उपद्रवशून्य और स्वल्पदिनोत्पन्न ऊरुस्तम्भकी चिकित्सा करना चाहिये। कोई कोई इसे आढ्यवात भी कहते हैं। (माधवनिदान)

ऊरुस्तम्भमें स्नेहक्रिया, रक्तस्राव, वमन, विरेचन और वस्तिकर्म सम्पूर्ण निषिद्ध हैं। इस रोगमें वही चिकित्सा चलाये, जो श्लेष्माको हटाये और वायु न भड़काये। पहले रूक्ष क्रियासे कफको शान्त कर देते, पीछे वायुके प्रशमका कार्य हाथमें लेते हैं। व्यायाम, उच्च स्थानको लम्फ प्रदान, स्रोतके प्रतिकूल सन्तरण प्रभृति कार्य बन सकनेसे कफक्षयके लिये उपकारी हैं।

चिकित्सा—सर्षप और दीमककी मट्टी मधुके साथ पीस प्रलेप लगाना चाहिये। त्रिफला, चव्य, सोंठ एवं पिपरामूल अथवा आंवला, हर, बहेड़ा, सोंठ, पीपल और मिर्चका चूर्ण बराबर मधुके साथ चाटनेसे ऊरुस्तम्भ रोग दबता है। इस रोगपर 'अष्टकट्वरतैल' विशेष उपकारी है। उसको इसप्रकार तैयार करते हैं—मूर्च्छित सर्षपतैल ४ सेर, तक्र पौने ३ सेर, दधि ४ सेर, पिपरामूल २ पल और सोंठ २ पल एक साथ पका तेल अवशेष रहते छान लेते हैं। यह अष्टकट्वर तैल ऊरुस्तम्भको जड़से उखाड़ डालता है।

ऊरुस्तम्भा (सं० स्त्री०) ऊरोरिव स्तम्भाकृतिर्यस्याः। कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

ऊरुद्भव (सं० त्रि०) ऊरुसे उत्पन्न, जो रान्से निकला हो।

ऊर्ज् (धातु) चुरा० पर० अक० सेट्०। १ जीवित होना, जिन्दगी पाना, जी उठना। २ बलिष्ठ होना, ताकत हासिल करना। "यो ह्यो वाव्रमत्ति स प्राणिति तमूर्जयति।" (शतपथब्रा० ७।५।१।१८) (स्त्री०) ऊर्ज्-क्विप्। ३ बल, ताकत। ४ अमृतरस नामक अन्नका सारभूत रस। (क्ली०) ५ अन्न।

"तमः समूहाकृतिमप्यशेषादूर्जां जयन्तं प्रथितप्रकाशान्।" (भट्टि)

ऊर्ज (सं० पु०) ऊर्जयति उत्साहयति यत्नन्, ऊर्ज-णिच्-अच्। १ कार्तिक मास, कातिकका महीना। २ उत्साह, हौसला। ३ बल, ज़ोर। ४ द्वितीय मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें एक ऋषि। ५ निश्वास, दम। ६ जीवन, जिन्दगी। ७ वीर्य।

"पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जञ्च यच्छति।" (मनु २।५५)

(क्ली०) ऊर्ज्यते अनेन, ऊर्ज-घञ्। ८ जल, आब।

"नमः ऊर्ज इषे त्रय्याः पतये यज्ञरेतसे।
तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने॥" (भागवत ४।२४।३८)

९ काव्यालङ्कार विशेष।

ऊर्जयत् (सं० त्रि०) १ बली, ताकतवर। २ बलदायक, ताकत देनेवाला।

ऊर्जयोमि (सं० पु०) ऋषिविशेष। (भारत, अनु० ४अ०)

ऊर्जवाह (सं० पु०) शुचिके एक पुत्र।

ऊर्जव्य (सं० पु०) ऋग्वेदोक्त एक राजा। (ऋक् ५।४१।२०)

ऊर्जस् (सं° क्लो°) ऊर्ज-असुन्। १ बल, जोर। २ अन्नरस विशेष। (भारत, अनु० ११२ अ०)

ऊर्जरानि (सं° पु°) बलदायक, ताकत देनेवाला।

ऊर्जस्तम्भ (सं° पु°) द्वितीय मन्वन्तरके सप्तर्षिमें एक ऋषि।

ऊर्जस्वत् (सं° त्रि°) शक्तिशाली, ताकतवर।

ऊर्जस्वती (सं° स्त्री°) १ दक्षकन्या तथा धर्मपत्नी। २ प्रियव्रतकी कन्या और उशनाकी पत्नी। ३ प्राणकी पत्नी।

ऊर्जस्वी (सं° क्ली°) ऊर्जस्-विन्। १ अलङ्कार-विशेष। जिससे अतिशय अहङ्कार झलकता, उसे कवि ऊर्जस्वी अलङ्कार कहते हैं। (त्रि°) अतिशयितं ऊर्जो बलमस्यास्ति। २ अतिशय बलवान्, बड़ा जोरावर। ३ तेजस्वी।

ऊर्जा (सं° स्त्री°) ऊर्ज भावे अ-टाप्। १ बल, जोरावरी। २ उत्साह, मौज। ३ वृद्धि, उठान। ४ अन्नरसकी विकृति विशेष।

ऊर्जानी, ऊर्जा देखो।

ऊर्जावान् (सं° त्रि°) ऊर्जा अस्यास्ति, ऊर्जा-मतुप् मस्य वः। १ बलवान्, ताकतवर। २ वृद्धियुक्त, बढा हुआ। स्त्रियां ङीप्। ऊर्जावती।

"ऊर्जावतीं महापुण्यां मधुमतीं विवर्णगाम्।" (भारत, अनु० २६ अ०)

ऊर्जित (सं° त्रि°) ऊर्ज-क्त। १ बलशाली, ताकतवर। २ वृद्धियुक्त, उभरा हुआ। ३ विख्यात, मशहूर। ४ तेजस्वी। ५ उत्साहित, हौसलेमन्द।

"उपपत्तिमदूर्जिताश्रयम्।" (किरात)

ऊर्जिताश्रय (सं° पु°) श्रेष्ठ, बड़ा, दिलदार।

ऊर्जी (सं° त्रि°) खाद्यविशिष्ट, जिसके पास खूब खाना रहे।

ऊर्ण (सं° त्रि°) ऊर्णा अस्यास्ति, ऊर्णा अर्श आदित्वात् अच्। मेषलोमनिर्मित, ऊनी, ऊनका बना हुआ।

ऊर्णदेश—एक प्राचीन जनपद। (भारत, सभा ५१।१८) यह जनपद कैलास और हिमालयके मध्य अवस्थित है। इससे पूर्व रावण-ह्रद और उत्तरपश्चिम लाधक प्रदेश है। नीतिघाट नामक एक पथ द्वारा यह स्थान तिब्बतसे स्वतन्त्र हुआ है। उक्त पथ प्रायः अर्ध मील विस्तृत है। उद्भिदादि अधिक नहीं उपजते। स्थान-स्थान पर केवल स्तूपाकार प्रस्तर पड़े हैं।

शतद्रु नदी पार करनेपर देव नामक स्थानमें कुछ उत्तर पहुंचने पर कई क्षुद्र ग्राम लक्षित होते हैं। वह नाना वर्ण और नाना भावसे स्थापित हैं। पहले देव नामक राजा ग्रीष्मकालमें यहीं आकर रहते थे। ऊर्णदेशमें यही स्थान अति मनोरम है। थोड़ी दूर आगे गिरिमालासे सुवर्ण निकलता है। क्षुद्र क्षुद्र पर्वत ग्रेनाइट प्रस्तरके बने हैं। उसके बीच-बीच अकीक-जैसे पत्थरके टुकड़े भी देखनेमें आते हैं। यहांके लोग स्रोतके जलसे धो स्वर्णकणाको आहरण करते हैं।

ऊर्णदेशमें शशक बहुत हैं। उनके पिछले पैर और लोम बड़े होते हैं। गो, अश्व और गर्दभ प्रायः देख पड़ते हैं। हरण-जैसा एक जन्तु होता है। वह इन्दुर जैसा लगता है। दोनों कान बहुत बड़े होते हैं। किन्तु पूछका पता नहीं चलता। जिस छागके लोमसे शाल बनता, वह यहां देखनेको मिलता है।

पहले यह जनपद सूर्यवंशीय क्षत्रियोंके अधिकारमें था। एक बार लाधकके उग्र प्रकृति तातारोंने यहांके राजाको मार डाला था। राजवंशीयोंने चीन-सम्राट्से साहाय्य-मांगा। कुछ काल यह चीन-सम्राट्को रक्षणावेक्षणमें पड़ा था, पीछे तिब्बतवाले दलई लामाके हाथ लगा।

यहांके अधिवासियोंको ऊनिया कहते हैं।

ऊर्णनाभ (सं° पु°) ऊर्णेव तन्तुर्नाभौ यस्य, नाभे-रुपसङ्ख्यानमित्यच् ह्रस्वः। (वापोः संज्ञाछन्दसोर्बहुलम्। पा६।३।६३) कीटविशेष, मकड़ा। अपर नाम लूता, तन्तुवाय और मर्कटक है। यह नाना जातीय रहता और नाना श्रेणीमें विभक्त पड़ता है। पृथिवीके प्रायः सकल देशोंमें ऊर्णनाभ मिलता है। किन्तु क्रान्तिमण्डल-पर ही इसका रहना अधिक है। विशेषतः कर्कट क्रान्तिका ऊर्णनाभ वृहदाकार होता है। वह केवल क्षुद्र क्षुद्र कीट खाकर ही सन्तुष्ट नहीं रहता, समय पाकर छोटे छोटे पक्षियों पर भी आक्रमण करता है।

मस्तक और उदरवाले उपरिभागके व्यवधानमें बादाम-जैसा एक कठिन फलक निकलता है। उदर उसमें मिला रहता है। फिर उदर पोला और ज्यादा नर्म भी होता है। पैर आठ रहते हैं। हरएक पैरमें सात गांठें पड़ती हैं। आखिरी पैरमें कंघीकी तरहके दो कांटे निकले होते हैं। सम्मुखका जबड़ा पतङ्ग-जैसा नहीं होता। वह सकल दिक्को झुक सकता है। जबड़ेके अन्तमें तीक्ष्ण कांटा लगता है। निकट ही एक अति क्षुद्र छिद्र पड़ता है। उसी छिद्रसे विषाक्त तरल पदार्थ निकलता है। दोनों जबड़ोंके मध्य जिह्वा होती है। वह मुखके वहिरिन्द्रिय-जैसी देखायी देती है।

सचराचर इसके ८ चक्षु होते हैं। किसी किसीके छह और अति अल्प संख्यकके दो चक्षु रहते हैं। उदरके उपरिभाग पर इधर उधर दाग पड़ जाते हैं। फिर किसीके उसी स्थानपर अति परिच्छन्न अनावृत चर्म चढ़ा होता है।

ऊर्णनाभके फेफड़ेमें दो अथवा चार छिद्र रहते, जो उदरके तल भागपर पड़ते हैं। मलद्वारके निकट तन्तूत्पादक यन्त्र रहता है। उसपर भी सूक्ष्म सूक्ष्म छिद्र होते हैं। उनके बीचसे अति सूक्ष्माकार तन्तु निकलते हैं वही सूक्ष्मतन्तु एकत्र हो जालमें सूतके लच्छे-जैसे देख पड़ते हैं। तन्तूत्पादक यन्त्रसे प्रथम एक प्रकारका चिपचिपा पदार्थ छूटता है। वही पदार्थ वायुके स्पर्शसे तन्तुके आकारमें परिणत हो जाता है।
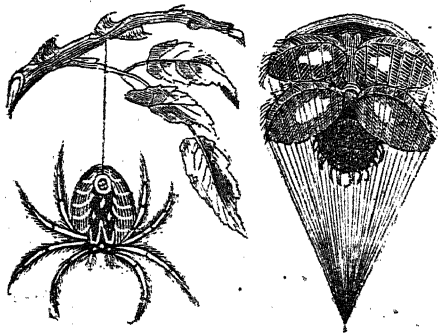
ऊर्णनाभ

तन्तुमें निकलनेपर यह नाना कारणोंसे जाल बनाता है। कोई जालमें रहता, कोई जालसे कीट पतङ्ग पकड़ जीविका निर्वाह और कोई जाल बना अपर कीटादिके आखेटकी सुविधा करता है। किसी-किसी ऊर्णनाभको लोगोंने गर्तमें रहते देखा है।

प्रायः सभी मकड़े गेंद-जैसे कोयेके बीच अपना अण्डा रखते और अण्डा परिपुष्ट पड़नेपर कोयेको काटा करते हैं। जबतक फूटनेका समय नहीं आता, तबतक कोई उस डिम्बाधारको अपने पृष्ठपर डाल चक्कर लगाता, कोई छातीपर चढ़ाता और कोई उदरपर अति यत्नसे रख विघ्नबाधा बचाता है। एक-एक गोलेमें प्रायः २००० अंडे होते हैं। गोलेसे बाहर निकलने पर बच्चे पहले अपनी माताके समस्त शरीरमें क्षुद्राकार चिपट जाते हैं।

मकड़ियां (ऊर्णनाभकी स्त्रियां) नाना प्रकारकी होती हैं और प्रायः सभी पुरुषकी अपेक्षा बड़ी निकलती हैं। स्त्री-पुरुषका सहवास बड़ा भयानक होता है। यदि पुरुष स्त्रीका मन नहीं रिझाता, तो वह उसके हाथों मारा जाता है।

सकल ही देशोंमें मकड़े नाना आकार और नाना प्रकारके देख पड़ते हैं। फिर सभी मकड़े पतङ्ग अथवा क्षुद्र जीवको पकड़ मार डालते हैं। गङ्गातीरस्थ मुङ्गेर नगरके निकट कभी कभी एक बड़ा, काला और लाल मकड़ा मिलता है। उसका जाल देखनेमें उज्ज्वल हरित्वर्ण रहता और छहसे बारह हाथतक लम्बा होता है।

हिमालयके निकट सफेद-लाल रङ्गके बड़े-बड़े मकड़े होते हैं। कहते हैं, उनके जालमें पक्षी तक फंस रहते हैं। जालमें आ जानेसे बहुसंख्यक ऊर्णनाभ मिल जुल उसे खा डालते हैं।

सिंहल द्वीपमें एक जातिका मकड़ा देख पड़ता, जिसका पैर अति कठिन होता है। छिपकली पर्यन्त उसी पदमें फंस जाती है।

किसी स्थानपर चत पड़नेसे मकड़ेको लगाने पर रक्तस्राव रुकता है। विलायतमें मकड़ेका जाल ज्योतिष-शास्त्रीय दूरवीक्षणयन्त्रके तारकी तरह व्यवहृत होता है।

ऊर्णनाभि, ऊर्णनाभ देखो।

ऊर्णपट (सं॰ पु॰) लूता, मकड़ा।

ऊर्णम्रद (सं॰ त्रि॰) ऊर्णमिव म्रदीयः, ऊर्ण-म्रदीयस् निपातनात्। कम्बलादिके समान कोमल, कम्बलकी तरह मुलायम।

"ऊर्णम्रदं प्रथख।" (कौशिकसू॰ २३।१२७)

ऊर्णवाभि, ऊर्णनाभ देखो।

ऊर्णा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्णु-ड-टाप्। ऊर्णोति ड:। उण् ५।४७। १ मेषादिका लोम, पश्म, ऊन। पश्म देखो। २ भ्रूद्वयके मध्यवर्ती मृणालसूत्रके समान सूक्ष्म रोमराजीका चिह्न विशेष। यह चिह्न होनेसे मनुष्य चक्रवर्ती राजा वा महायोगी होता है। ३ चित्ररथ गन्धर्वकी पत्नी।

ऊर्णापिण्ड (सं॰ पु॰) ऊनका गोला।

ऊर्णामय (सं॰ क्ली॰) ऊर्णा विकारार्थे मयट्। मेष-लोमनिर्मित सूत्रादि, ऊनी धागा वगैरह।

"ऊर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम्।" (कुमार)

ऊर्णायु (सं॰ पु॰) ऊर्णा अस्त्यस्य, ऊर्णा-युस् सिद्धात् आतो न लोपः। १ मेषलोम-निर्मित कम्बलादि, ऊनी कम्बल वगैरह। २ मेष, भेड़। ३ ऊर्णनाभ, मकड़ा। ४ चणभङ्ग। ५ किसी गन्धर्वका नाम।

ऊर्णावत् (सं॰ त्रि॰) ऊर्णानिर्मित, ऊनी।

ऊर्णावन (वै॰ त्रि॰) ऊर्णा अस्यास्ति, ऊर्णा वनच्। १ ऊर्णायुक्त, ऊनसे भराहुआ। २ मेषादिलोमनिर्मित, ऊनी। "ऊर्णावनमित्येतत् वरुणस्य नाभिम्।" (शतपथब्रा॰ ७।३।२।३५)

ऊर्णावल (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायुक्त, ऊनी।

ऊर्णासूत्र (वै॰ क्ली॰) ऊर्णा एव सूत्रम्। मेषादि लोम, ऊन। "ऊर्णासूत्रेण कवयो वयति।" (शुक्लयजुः १९।८४)

ऊर्णास्तुक (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायुक्त, ऊनी, भेड़ वगैरहके बालका बना हुआ।

ऊर्णास्तुका (सं॰ स्त्री॰) ऊर्णास्तवक, ऊनकी लच्छी।

ऊर्णु (धातु) अदा॰ उभ॰ सक॰ सेट्। "ऊर्णुञ् आच्छादने" (कविकल्पद्रुम) आच्छादन करना ढांकना। "ऊर्णुनाव स शस्त्रौघै नराणामनीकिनीम्।" (भट्टि १४।१०३)

ऊर्णुत (सं॰ त्रि॰) आच्छादित, ढका हुआ।

ऊर्णुवान् (सं॰ त्रि॰) आच्छादन करनेवाला, जो ढांकता हो।

ऊर्द (सं॰ त्रि॰) ऊर्द-अच्। क्रीडायुक्त, खेलाड़ी।

ऊर्दर (सं॰ पु॰) ऊर्जेन दृणाति विदारयति, ऊर्ज-अल् अच् वा। ऊर्जि दृणातेरचौ पूर्वपदान्त्यलोपश्च। उण् ५।३०। १ वीर, बहादुर। २ राक्षस। ३ धान्यादि रखनेका एक पात्र, कुशूल।

ऊर्ध्व (सं॰ त्रि॰) उत्-ह्वाङ्-डः पृषोदरादित्वादूरा-देशः। १ उच्च, ऊंचा। २ उत्कृष्ट, उमदा। ३ उप-रिस्थ, ऊपरी। ४ अनन्तर, पिछला। ५ परित्यक्त, छूटा। ६ उत्पाटित, उखड़ा। (क्ली॰) ७ उच्चता, ऊंचापन। ८ ऊर्ध्वदेश, ऊपरी मुल्क। ९ मृदङ्ग विशेष, किसी किस्मका ढोल या तबला।

ऊर्ध्वक (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वः सन् कायति शब्दायते, ऊर्ध्व-कै-क। मृदङ्गविशेष, किसी किस्मका ढोल या तबला।

ऊर्ध्वकच (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वा उत्पाटिताः कचा यस्य, बहुव्री॰। ऊर्ध्वगत केश रखनेवाला, जो बाल नोचा या उखाड़ा जा चुका हो।

ऊर्ध्वकण्टा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ध्वकण्टः कण्टको यस्याः, बहुव्री॰। महाशतावरी, बड़ा सतावर।

ऊर्ध्वकण्ठ (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वः कण्ठो यस्य, बहुव्री॰। ग्रीवादेश उन्नत किये हुआ, जो गर्दन उठाये हो।

ऊर्ध्वकर्ण (सं॰ त्रि॰) कान खड़े किये हुआ।

ऊर्ध्वकर्म (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वदेशप्राप्त्यर्थं कर्म। मृतव्यक्तिके उद्देश्यसे किया जानेवाला सकल श्राद्धादि।

ऊर्ध्वकाय (सं॰ पु॰-क्ली॰) कायस्य ऊर्ध्वम्। १ कटि-देशसे उपरिस्थ अवयव, कमरसे ऊपरका जिस्म। ऊर्ध्व उन्नतः कायो यस्य, बहुव्री॰। उन्नत देहवाला, जो ऊंचा पूरा जिस्म रखता हो।

ऊर्ध्वक्शन (सं॰ त्रि॰) फेनाता हुआ, जो झाग छोड़ रहा हो। यह सोमका विशेषण है।

ऊर्ध्वकेतु (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्व उन्नत केतुर्यस्य यत्र वा। उत्थित ध्वजावाला, जिसके झण्डा खड़ा रहे। २ उड़ती ध्वजावाला, जिसमें झण्डा फहराता देखें। (पु॰) ३ जनकवंशीय एक राजा।

"ऊर्ध्वकेतु सनद्वाजादजोऽथ पुरजित् सुतः।" (भागवत ९।१३।१३)

ऊर्ध्वकेश (सं॰ पु॰) ऊर्ध्व उन्नतः केशो यस्य, बहुव्री॰।

१ स्मृतिशास्त्रोक्त कुशमय ब्राह्मण। (त्रि०) २ उन्नत केश रखनेवाला, जिसके खड़ा बाल रहे।

ऊर्ध्वक्रिया (सं० स्त्री०) ऊर्ध्वकर्म देखो।

ऊर्ध्वग (सं० त्रि०) ऊर्ध्व गच्छति, ऊर्ध्व-गम-ड। १ ऊर्ध्वगामी, ऊंचा जानेवाला। २ स्वर्गगामी। ३ सत्पथावलम्बी, ऊंची चाल पकड़नेवाला। (पु०) ४ शिरोरोग, सरकी बीमारी।

ऊर्ध्वगत (सं० त्रि०) ऊपर गया हुआ।

ऊर्ध्वगति (सं० स्त्री०) १ उच्चगति, ऊंची चाल। २ उन्नत स्थानपर आरोहण, ऊंची जगहकी चढ़ाई। ३ स्वर्गारोहण। (त्रि०) ४ उच्चगतिप्राप्त, ऊपर पहुंचा हुआ। ५ मुक्त।

ऊर्ध्वगपुर (सं० क्ली०) १ आकाशस्थ गृह, आसमानी मकान्। २ पुर नामक असुरका घर। ३ हरिश्चन्द्र राजाकी पुरी।

ऊर्ध्वगम (सं० पु०) ऊर्ध्वगति देखो।

ऊर्ध्वगमन (सं० क्ली०) ऊर्ध्वगति देखो।

ऊर्ध्वगामी (सं० त्रि०) ऊर्ध्व-गम-णिनि। ऊर्ध्वगमन करनेवाला, जो ऊंचा जाता हो।

ऊर्ध्वचरण (वै० पु०) सोमलताको दबानेके लिये प्रस्तर उठानेवाला।

ऊर्ध्वचरण (सं० त्रि०) ऊर्ध्वश्चरणो यस्य। १ ऊर्ध्वगत चरणवाला, पैर उठाये हुआ। (पु०) २ अष्टचरण शरभ। इस सिंहके चार चरण उठे होते हैं। ३ उन्नत पदसे तपस्या करनेवाले साधु। यह भूमिपर मस्तक जमा हाथोंके सहारे उठते हैं।

ऊर्ध्वचित् (सं० त्रि०) संग्रह करता हुआ, जो ढेर लगा रहा हो।

ऊर्ध्वजानु (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, बहुव्री०। उन्नतजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

ऊर्ध्वज्ञ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, निपातनात् साधुः। ऊर्ध्वजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

ऊर्ध्वज्ञु (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, पक्षे जानुनोर्ज्ञुः। कर्माद्विभाषा। पा ५।४।१३०) ऊर्ध्वजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

"स्वयमसमनुस्य स्वर्ध्वंमूर्ध्वज्ञुरेव।" (माघ)

ऊर्ध्वतन (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे उत्पन्नः, ऊर्ध्व-तन। उपरिस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वता (सं० स्त्री०) उच्चता, ऊंचाई।

ऊर्ध्वताल (सं० स्त्री०) तालविशेष, ऊंचा ताल।

ऊर्ध्वतिक्त (सं० पु०) चिरायता।

ऊर्ध्वतिलकी (सं० त्रि०) ऊर्ध्वमुन्नतं तिलकं अस्यास्ति, ऊर्ध्व-तिलक-इनि। उन्नततिलकविशिष्ट, खड़ा टीका लगाये हुआ।

ऊर्ध्वथा (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-थाल्। १ ऊर्ध्व प्रकारसे, ऊंचे तौरपर। २ ऊर्ध्वमें, ऊपर-ऊपर।

ऊर्ध्वदंष्ट्रकेश (सं० पु०) ऊर्ध्वदंष्ट्रकानां ईशः पतिः, ६-तत्। महादेव।

"नमोर्ध्वदंष्ट्रकेशाय शुक्लायावततायच।" (भारत, शान्ति)

ऊर्ध्वदृष्टि (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे दृष्टिर्यस्य, बहुव्री०। १ ऊर्ध्वदेशपर दृष्टि निक्षेपकारी, जो ऊंची जगहपर नज़र डालता हो। २ ऊर्ध्वनेत्र, ऊंची आंखवाला। (स्त्री०) ३ भ्रूद्वयकी मध्यवर्ती दृष्टि, भौहोंके बीचकी नज़र। ४ उत्क्षिप्त दृष्टि, उठी या चढ़ी निगाह। ५ मृत्युकालीन दृष्टि, मरते वक्तकी नज़र। ६ योग-विशेष।

ऊर्ध्वदेव (सं० पु०) ऊर्ध्व उत्कृष्टश्चासौ देवश्चेति, कर्मधा०। १ परमेश्वर। २ विष्णु।

ऊर्ध्वदेश (सं० पु०) ऊर्ध्वश्चासौ देशश्चेति, कर्मधा०। उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा।

ऊर्ध्वदेह (सं० पु०) ऊर्ध्व उत्तरकालीनश्चासौ देहश्चेति, कर्मधा०। मरणान्तर प्राप्त होनेवाला शरीर, जो जिस्म मरनेके बाद मिलता हो।

ऊर्ध्वद्वार (सं० पु०) १ उन्नत द्वार, ऊंचा दरवाज़ा। २ ब्रह्मरन्ध्र।

ऊर्ध्वनभा (सं० पु०) ऊर्ध्वं नभो यस्य, बहुव्री०। आकाशका मध्यदेशस्थ वायु, आसमान्के बीचकी हवा।

ऊर्ध्वनयन (सं० पु०) शरभ।

ऊर्ध्वन्दम (सं० त्रि०) ऊर्ध्वन्-दम्-खच्। ऊर्ध्वस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वपथ (सं० पु०) आकाश, आसमान्, ऊपरी राह।

ऊर्ध्वपातन (सं० क्ली०) चढ़वाई।

ऊर्ध्वपात्र (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं नेतव्यं पात्रम्, मध्यपदलोपी समा॰। उदूखल प्रभृति यज्ञपात्र।

ऊर्ध्वपाद् (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वाः पादा यस्य, बहुव्री॰। १ शरभ नामक मृगविशेष। शरभ देखो। (त्रि॰) २ ऊर्ध्वदेशमें पाद रखनेवाला, जिसके ऊपरी हिस्सेमें पैर रहे।

ऊर्ध्वपुण्ड्र (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं उन्नतः पुण्ड्र इक्षुयष्टिरिव। चन्दन आदिसे ललाटपर लगाया हुआ लम्बा तिलक। ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है—ब्राह्मणको ऊर्ध्वपुण्ड्र, क्षत्रियको त्रिपुण्ड्र, वैश्यको अर्धचन्द्राकार एवं शूद्रको वर्तुलाकार तिलक लगाना और जल, मृत्तिका, भस्म तथा चन्दनसे ऊर्ध्वपुण्ड्र बनाना चाहिये। देवीभागवतमें नारायणने कहा है कि वैदिक अर्थात् वेदनिष्ठ ब्राह्मणको ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिशूल, वर्तुल, चतुष्कोण वा अर्धचन्द्राकार प्रभृति कोई तिलक लगाना मना है। फिर ब्रह्माण्डपुराणके मतसे अशुचि, अनाचारी एवं पापचिन्ताकारी व्यक्ति भी ऊर्ध्वपुण्ड्र लगानेसे शुद्धता पाता और चण्डालतुल्य अनाचारी ब्राह्मण ऊर्ध्वपुण्ड्राङ्कित अवस्थामें मरनेसे स्वर्ग चला जाता है। अनेक पुराणोंको देखते जप, होम, दान, वेदाध्ययन और पितृकार्यमें ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण निषिद्ध है। किन्तु कुलाचारमें ऐसा नहीं होता। इसलिये व्यासोक्त वचनके अवलम्बनसे निश्चित होता है कि—श्राद्धादिके समय गन्ध वस्तुद्वारा ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाना मना है, अपरापर वस्तुसे लगानेमें कोई बाधा नहीं।

ऊर्ध्वपुण्ड्रक, ऊर्ध्वपुण्ड्र देखो।

ऊर्ध्वपुर (सं॰ अव्य॰) किनारे तक भरकर।

ऊर्ध्वपृश्नि (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वाः पृश्नयो विन्दवो यस्य, बहुव्री॰। पशु विशेष, एक चौपाया।

ऊर्ध्वबर्हि (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वं प्रागग्रं बर्हिर्येषाम्, बहुव्री॰। पितृलोक।

ऊर्ध्ववाल (सं॰ त्रि॰) खड़े बालोंवाला।

ऊर्ध्वबाहु (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वगतश्चासौ बाहुश्चेति कर्मधा॰। १ उत्तोलित हस्त, उठा हुआ हाथ। २ पञ्चम मन्वन्तरके सात ऋषियोंमें एक ऋषि। ३ संन्यासी सम्प्रदाय विशेष। जो साधु एक वा उभय बाहु ऊर्ध्वदिक् उठाये रहते, उन्हें ऊर्ध्वबाहु कहते हैं। भिक्षाके द्वारा जीविकानिर्वाह करते हैं। कोई दिगम्बर वेश रखता और कोई केवलमात्र गैरिक वस्त्र पहनता है। ५ वशिष्ठके एक पुत्र। (विष्णुपु॰ १।१०।१३) (त्रि॰) ६ बाहु उत्तोलन किये हुआ, जो हाथ उठाये हो।

ऊर्ध्वबुध्न (वै॰ त्रि॰) ऊर्ध्व-बन्धन, ऊर्ध्वबोधन।

ऊर्ध्वबृहती (वै॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष।

ऊर्ध्वभाक् (सं॰ त्रि॰) १ ऊर्ध्वभाग लेनेवाला, जो ऊपरी हिस्सा पाता हो। (पु॰) २ बड़वानल।

ऊर्ध्वभाग (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं उपरिस्थो भागः, एकदेशः कर्मधा॰। उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा।

ऊर्ध्वम् (सं॰ अव्य॰) उत्-ह्वे डसु, ऊरादेशः। उपरि, ऊपर। "ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनःस्थविर आयति।" (मनु)

ऊर्ध्वमनु (सं॰ पु॰) पुराणोक्त जनपदविशेष। (ब्रह्माण्डपु॰ ४७।४७, मत्स्यपु॰ १२०।४८)

ऊर्ध्वमन्थी (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं उत्तराश्रमं मथ्नाति, मन्थ-णिनि। नैष्ठिक ब्रह्मचारी, स्त्रीप्रसङ्गसे बिलकुल अलग रहनेवाला।

ऊर्ध्वमान (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वमारोप्य मीयते अनेन, ऊर्ध्व-मा-ल्युट्। १ प्रस्तर वा लौहनिर्मित तौलनेका बांट। २ ऊपरी परिमाण।

ऊर्ध्वमायु (सं॰ त्रि॰) उच्चशब्दकारी, जो ऊंची आवाज़ देता हो।

ऊर्ध्वमारुत (सं॰ क्ली॰) देहस्थ वायुका ऊपरी दबाव।

ऊर्ध्वमुख (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वं मुखं यस्य, बहुव्री॰। १ ऊपरको मुख रखनेवाला।

"प्रबोधयत्यूर्ध्वमुखैर्मयूखैः।" (कुमार)

(पु॰) २ अग्नि। (क्ली॰) ३ मुखका ऊर्ध्वभाग, मुंहका ऊपरी हिस्सा। ४ उन्नतमुख, ऊंचा मुंह।

ऊर्ध्वमुखी (सं॰ पु॰) संन्यासियोंका एक सम्प्रदाय। यह अपना मुख ऊपरको हो रखते हैं।

ऊर्ध्वमूल (सं॰ क्ली॰) जगत्, दुनिया।

ऊर्ध्वमौहूर्तिक (सं॰ त्रि॰) कुछ कालके बाद होनेवाला, जो थोड़ी देरके बाद आ पड़ता हो।

ऊर्ध्वरेखा (सं॰ स्त्री॰) चरणचिह्नविशेष। यह ४८

चिह्नोंमें एक है। अङ्गुष्ठ तथा उसके निकटकी अङ्गुलिके मध्यसे यह रेखा एडीतक पहुंचती है। इसके होनेसे मनुष्य अंशावतारी समझा जाता है। राम, कृष्ण प्रभृति विष्णुके अवतार इस रेखासे युक्त थे।

ऊर्ध्वरेता (सं० पु०) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वगं रेतो यस्य, बहुव्री०। १ महादेव। २ सनकादि मुनि। ३ तपस्वी विशेष। ४ भीष्म। ५ हनुमान्। (त्रि०) ६ रेतःस्खलनरहित, जो कभी वीर्य गिराता न हो।

ऊर्ध्वरोमा (सं० पु०) ऊर्ध्वानि रोमाणि यस्य, बहुव्री०। १ यमदूत प्रभृति। २ कुशद्वीपस्थ पर्वतविशेष। (त्रि०) ३ उन्नत रोमवाला, जिसके खड़ा रोंगटा रहे।

ऊर्ध्वलिङ्ग (सं० पु०) ऊर्ध्वं लिङ्गं यस्य, बहुव्री०। महादेव।

ऊर्ध्वलिङ्गी, ऊर्ध्वलिङ्ग देखो।

ऊर्ध्वलोक (सं० पु०) ऊर्ध्वश्चासौ लोकश्चेति, कर्मधा०। १ स्वर्ग, बिहिश्त। २ आकाश, आसमान्।

ऊर्ध्ववात (सं० पु०) ऊर्ध्वो वातः, कर्मधा०। ऊर्ध्वगत वायु, ऊपर चढ़ी हुई हवा।

ऊर्ध्ववायु, ऊर्ध्ववात देखो।

ऊर्ध्ववृत (सं० क्ली०) ऊर्ध्ववेष्टनेन वृतः, ३-तत्। ऊर्ध्व दिक् आवर्तित यज्ञोपवीत, ऊपरको घूमा हुआ जनेऊ। "कार्पासमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्।" (मनु २।४४)

ऊर्ध्ववृहती (वै० स्त्री०) छन्दोविशेष।

ऊर्ध्वशान (सं० त्रि०) ऊपर उठनेवाला।

ऊर्ध्वशायी (सं० त्रि०) ऊर्ध्व-शी-णिनि। १ उत्तानशायी, चित लेटनेवाला। (पु०) २ महादेव।

ऊर्ध्वशोधन (सं० क्ली०) वमन, कै।

ऊर्ध्वशोष (सं० अव्य०) ऊर्ध्वः सन् शुष्यति, ऊर्ध्व-णमुल्। उपरिस्थ शोषण द्वारा, ऊपर ही सूख जानेसे।

ऊर्ध्वश्वास (सं० पु०) ऊर्ध्वश्चासौ श्वासश्चेति, कर्मधा०। १ दीर्घश्वास, लम्बी सांस। २ मृत्युकालीन श्वास, मरते वक्तकी सांस।

ऊर्ध्वसानु (सं० पु०-क्ली०) ऊर्ध्वंच तत् सानु चेति, कर्मधा०। पर्वतादिका उपरिस्थ समतल प्रदेश, पहाड़ वगैरहके ऊपरका हमवार हिस्सा।

ऊर्ध्वस्थ (सं० त्रि०) श्रेष्ठ, ऊपरवाला।

ऊर्ध्वस्थित (सं० त्रि०) ऊपर रहनेवाला।

ऊर्ध्वस्थिति (सं० स्त्री०) ऊर्ध्वा स्थितिर्यत्र, बहुव्रीही। १ अश्वका पृष्ठदेश, घोड़ेकी पीठ। (त्रि०) २ ऊर्ध्वस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वस्रोता (सं० पु०) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वगतं स्रोतो यस्य, बहुव्री०। १ ऊर्ध्वरेता मुनि। २ वृक्षादि, पेड़ वगैरह।

ऊर्ध्वाङ्ग (सं० पु०) मस्तक, सर।

ऊर्ध्वाङ्गुलि (सं० अव्य०) उंगली उठाकर।

ऊर्ध्वाकर्षण (सं० क्ली०) ऊर्ध्वको आकर्षण, ऊपरी कशिश।

ऊर्ध्वाम्नाय (सं० पु०) ऊर्ध्व आम्नायते, ऊर्ध्व-आ-म्ना कर्मणि घञ्। वेदमार्गसे अतिरिक्त बोधक एक तन्त्र। इसमें गुरुभक्ति, विष्णुके दशावतार, गौराङ्ग-माहात्म्यकीर्तन, श्रीकृष्ण-पूजाविधि, नारायणस्तव एवं गया माहात्म्य प्रभृतिका वर्णन है। नारद ऊर्ध्वाम्नायके वक्ता तथा व्यासदेव श्रोता हैं।

ऊर्ध्वायन (सं० त्रि०) ऊर्ध्व अयनं गमनं यस्य, बहुव्री०। १ ऊर्ध्वगत, ऊपर जानेवाला। (पु०) २ प्लक्षद्वीपस्थ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (क्ली०) ३ ऊर्ध्वगति, ऊपरी चाल।

ऊर्ध्वावर्त (सं० पु०) ऊर्ध्वं आवर्तते अत्र, ऊर्ध्व-आ-वृत-घञ्। १ अश्वपृष्ठ, घोड़ेकी पीठ। २ आवर्तविशेष, एक घेरा।

ऊर्ध्वासित (सं० पु०) ऊर्ध्व उपरिभागे असितं यस्य, बहुव्री०। १ कारवेल्ल, करेला। (त्रि०) ऊर्ध्व मासितं येन। २ ऊर्ध्वपविष्ट, ऊपर बैठा हुआ।

ऊह (सं० पु०) ऊर्ध्वगति, ऊपरी हरकत।

ऊर्मि (सं० पु०-स्त्री०) ऋच्छतीति, ऋ-मि ऊरादेशश्च। अर्तेरुच्च। उण् ४।४। १ तरङ्ग, लहर, उभार। २ प्रकाश, रोशनी। ३ वेग, झपट। ४ भङ्ग, टूट। ५ पीड़ा, तकलीफ। ६ वेदना, दर्द। ७ उत्कण्ठा, ख्वाहिश। ८ शोक, मोह, जरा, मृत्यु, क्षुत् और पिपासा। ९ अश्वकी एक गति, घोड़की लहरिया चाल। १० भ्रान्ति, भूल। सङ्ग, साथ। ११ समूह, जखीरा। १२ शीघ्रता, जलदी। १३ अङ्गरीय, अंगुश्तरी। १४ कपड़ेका चुनाव। १५ शिकन, बल।

ऊर्मिका (सं° स्त्री°) ऊर्मि स्वार्थे कन्-टाप्, ऊर्मिरिव कायति, ऊर्मि-कै-टाप्। १ अङ्गुरीयक, अंगूठी। २ भ्रमर गुञ्जन, भौंरेकी गूंजन।

ऊर्मिन् (सं° त्रि°) ऊर्मिरस्यास्ति, ऊर्मि-इनि। ऊर्मियुक्त, लहरदार, लहरी।

ऊर्मिमत्ता (सं° स्त्री°) १ भङ्गुरता, टूटापन। २ वक्रता, टेढ़ापन।

ऊर्मिमान् (सं° त्रि°) ऊर्मिरस्त्यस्ति, ऊर्मि-मतुप्। १ तरङ्गयुक्त, लहरदार। २ वक्र, मेहराबदार।

ऊर्मिमाली (सं° पु°) ऊर्मीणां माला विद्यते यस्य, ऊर्मि माला-इनि। समुद्र, बहर-आजम।

"चन्द्रं प्रवृद्धोर्मिरिवोर्मिमाली।" (रघु ५।६१)

ऊर्मिला (सं° स्त्री°) लक्ष्मणकी पत्नी। यह जनककी औरस कन्या थीं।

ऊर्म्य (सं° त्रि°) ऊर्मौ भवः, ऊर्मि-यत्। १ तरङ्गोत्पन्न, लहरसे निकला हुआ। (पु°) २ रुद्र विशेष।

ऊर्म्या (वै° स्त्री°) रात्रि, रात।

"तिरस्तमो ददर्श ऊर्म्यासु।" (ऋक् ६।४८।६।)

'ऊर्म्यासु रात्रिषु।' (सायण)

ऊर्व (सं° पु°) १ जलपात्र, हौज़। २ मेघ, बादल। ३ आवृत स्थान, घिरी जगह। ४ कारागृह, कैदखाना। ५ और्वके पिता। ६ बड़वानल।

ऊर्वरा, उर्वरा देखो।

ऊर्वशर (सं° पु°) भरतवंशीय महावीर्यके पुत्र।

ऊर्वशी, उर्वशी देखो।

ऊर्वष्ठीव (सं° क्ली°) ऊरू च अष्ठीवन्तौ च, समाहारद्वन्द्व। ऊरु एवं जानु, रान और घुटना।

ऊर्वशी (सं° स्त्री°) ऊरौ उषिता, पृषोदरादित्वात् साधुः। उर्वशी देखो।

ऊर्वस्थ (सं° क्ली°) ऊरोरस्थि, ६-तत्। ऊरुदेशका हाड़, रानकी हड्डी।

ऊर्वी (सं° स्त्री°) ऊरुदेशका मध्यस्थ।

"ऊरुमध्ये ऊर्वी नाम तत्र शोणितक्षयात् सक्थिशोषः।"

(सुश्रुत शारीर)

ऊर्व्य (सं° पु°) ऊर्वे भवः, ऊर्व-यत्। बड़वानलाधिष्ठात्री देवता, इन्द्र।

ऊर्व्यङ्ग (सं° क्ली°) ऊर्व्याः पृथिव्या अङ्गमिव। गोमयछत्रिका। इसका संस्कृत पर्याय—दिलीर, शिलीन्ध्रक, वशारोह और गोमास है। (हारावली)

ऊर्षा (सं° स्त्री°) देवताड़क तृण।

ऊल—युक्तप्रदेशकी एक नदी। यह शाहजहांपुर ज़िलेमें अक्षा° २८° २१´ उ° तथा द्राघि° ८०° २७´ पू°से निकलती और दक्षिणमें पूर्व ७ मील बह कर अक्षा° २८° २२´ उ° एवं द्राघि° ८०° २८´ पू°पर खेरी ज़िलेमें जा पहुंचती है। फिर सीतापुर ज़िलेमें ऊल अक्षा° २७° ४२´ उ° तथा द्राघि° ८१° १३´ पू°पर चौकासे मिलती है। पूरी लम्बाई ५५ कोस है। इसमें बाढ़ आनेका बड़ा डर रहता है। कहीं कहीं ऊल बिलकुल सूख जाती है। अलीगंज एवं गोले और लखीमपुर तथा सिंघोंके बीच इसपर पुल बंधा है। यह नाव चलाने या खेतमें पानी पहुंचानेके काम नहीं आती।

ऊलंग (हिं° स्त्री°) एक चाय।

ऊलजलूल (हिं° वि°) १ ऊटपटांग, वाहियात। २ मूर्ख, गड़बड़िया। ३ असभ्य, गंवार।

ऊलर (हिं° स्त्री°) काश्मीरस्थ ह्रद विशेष, काश्मीरकी एक झील। यह खूब लम्बी चौड़ी है।

ऊलुपी (सं° पु°) १ जलजन्तु विशेष। एक पानीका जानवर। २ मत्स्य विशेष, एक मछली। उलूपी देखो।

ऊलूक (सं° पु°) उलूक, उल्लू।

ऊवट, उवट देखो।

ऊवध्य (सं° क्ली°) पशुके उदरका नपचा हुआ तृण।

ऊष् (धातु) भ्वादि° पर° सक° सेट्। "ऊष रोगे।" (कविकल्पद्रुम) पीड़ा देना, तकलीफ़ पहुंचाना।

ऊष (सं° पु°) ऊष-क। १ क्षारमृत्तिका, खारी मट्टी। २ कर्णरन्ध्र, कानका छेद। ३ मलय पर्वत, चन्दनाद्रि। (क्ली°) ४ प्रत्यूषकाल, तड़का। ५ शुक्र, वीर्य।

ऊषक (सं° क्ली°) ऊष स्वार्थे कन्। प्रत्यूष समय, सवेरा।

ऊषण (सं° क्ली°) ऊष-ल्युट्। १ मरिच, मिर्च। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ पिपरामूल। ४ चीत।

ऊषणा (सं° स्त्री°) ऊषण-टाप्। १ पिप्पली, पीपल। २ चविका।

ऊषपुट (सं० क्ली०) कागज़में लिपटा नमकका दाना।

ऊषर (सं० त्रि०) ऊषं चारमृत्तिकां राति ददाति, ऊष-र अथवा ऊष-रा-क। नोना स्थान, रेहकी जगह।

"तत विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे।" (मनु २।११२)

ऊषरज (सं० क्ली०) ऊषरात् जायते, ऊषर-जन-ड। १ पांशुलवण। २ रोमक नामक अयस्कान्त विशेष।

ऊषवान् (सं० त्रि०) ऊषो विद्यतेऽस्य, ऊष-मतुप् मस्य वः। नोना स्थान, रेहकी जगह।

ऊषा, उषा देखो।

ऊष, उष देखो।

ऊष्मण (सं० त्रि०) ऊष्मोऽस्त्यस्य, ऊष्म-न। ऊष्म-युक्त, गर्म।

ऊष्मण्य (सं० त्रि०) ऊष्म निवारणीयत्वेन अस्यास्ति, ऊष्मन्-यत्। ऊष्मनिवारक, गर्मी दूर करनेवाला, ठण्ढा।

ऊष्मन् (सं० पु०) ऊष-मनिन्। १ ग्रीष्म, गरमी। २ ताप, धूप

ऊष्मप (सं० त्रि०) गर्म भोजनका वाष्प खींच लेनेवाला।

ऊष्मपूर्व (सं० त्रि०) ऊष्मन्के पहले पड़नेवाला।

ऊष्मप्रकृति (सं० त्रि०) ऊष्मन्से निकला हुआ।

ऊष्मवत् (सं० त्रि०) तप्त, गर्म।

ऊष्मान्त (सं० त्रि०) ऊष्मन्में समाप्त होनेवाला।

ऊष्मान्तःस्थ (सं० पु०) अर्धस्वर, जो पूरा स्वर न हो।

ऊष्मोपगम (सं० पु०) उत्तापका आगम, गर्मीकी आमद।

ऊसन (हिं० पु०) वृक्षविशेष, तरमिरा, जीवा। इसे सर्षपकी भांति यव तथा गोधूमके साथ बोते हैं। ऊसनका तेल जलाते और खली गायों तथा भैंसोंको खिलाते हैं।

ऊसर (हिं०) ऊषर देखो।

ऊह् (धातु) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "ऊह वितर्के।" (कविकल्पद्रुम) सन्देहसे तर्क करना, शुबहसे बहस छेड़ना।

ऊह (सं० पु०) ऊह-घञ्। १ वितर्क, बहस। २ अध्याहार, छिपाव। ३ परीक्षा, जांच। ४ अनन्वित विभक्ति लिङ्गको छोड़ अन्वययोग्य विभक्त्यादिकी कल्पना। ५ आरोप, लगाव। ६ सिद्धिविशेष। ७ अनुमान, फ़र्ज़।

ऊहगान (सं० क्ली०) सामगानका एक ग्रन्थ। साम देखो।

ऊहन (सं० क्ली०) वितर्क, बहस।

ऊहनी (सं० स्त्री०) ऊह-ल्युट् ङीप्। सम्मार्जनी।

ऊहनीय (सं० त्रि०) तर्क्य, बहसके क़ाबिल।

ऊहा (सं० स्त्री०) ऊह-टाप्। ऊह देखो।

ऊहापोह (सं० त्रि०) ऊहस्तर्कः अपोहः अपगतो यत्र, बहुव्री०। १ तर्कशून्य, बेबहस। २ तर्कद्वारा संशय मिटाये हुआ, जो बहससे शक मिटा चुका हो। ३ अध्ययनादिमें संशयहीन, सबकमें शक न रखनेवाला। ४ सुहृदादि प्राप्तिविषयमें कृतनिश्चय, दोस्त वगैरहकी मुलाकात ठहराये हुआ। ५ दानादिमें द्विधा मतशून्य, बेधड़क देनेवाला।

ऊहित (सं० त्रि०) ऊह-क्त। १ तर्कित, बहस किया हुआ। २ अध्याहृत, छिपा हुआ। ३ अनुमित, फ़र्ज किया हुआ। ४ सम्भावित, मुमकिन।

ऊह्य (सं० त्रि०) ऊह-ण्यत्। १ तर्कणीय, बहसके क़ाबिल। २ व्यवहार्य, लगनेवाला। (क्ली०) ३ मीमांसा-शास्त्रोक्त ऊह विशेष।

ऊह्यगान, ऊहगान देखो।

ऋ

ऋ (सं॰ पु॰) १ स्वरवर्णका सप्तम अक्षर। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत भेदसे यह तीन प्रकारका होता है। उच्चारणस्थान मूर्धा है। लिखनकी प्रणालीमें ऊर्ध्व देशपर एक वक्र रेखा दक्षिण जायेगी और वामदिक्से आरम्भ कर एक त्रिकोणाकृति बनानेमें आयेगी। फिर दक्षिण दिक्को अधोगामी रेखा पड़ेगी। मात्रा पराशक्ति-जैसी विख्यात है। उसमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं। ऋकारका तन्त्रोक्त नाम पूर्, दीर्घमुखी, रुद्र, देवमाता, त्रिविक्रम, भारभूति, क्रिया, क्रूरा, रोचिका, नासिका, धृत, एकपादशिरः, माला, मण्डला, शान्तिनी, जल, कर्ण, कामलता, मेधः, निवृत्ति, गणनायक, रोहिणी, शिवदूती, पूर्ण-गिरि और सप्तमी है। (वर्णोद्धारतन्त्र) २ धातुका अनुबन्ध-विशेष। "ऋचङ्ग्रह्रस्व।" (कविकल्पद्रुम) ३ स्वर्ग, बिहिश्त। ४ तपन। (स्त्री॰) ५ देवमाता अदिति। (अव्य॰) ६ हास्य परिहास, बोली ठोली। ७ निन्दा, छी-छी। ८ वाक्य, बात। ९ प्राप्ति, हासिल। १० वाक्यविकृति। (धातु) भ्वा॰ पर॰ सक॰ अनिट्। ११ गमन करना, जाना। १२ प्राप्त होना, पहुंचना। "ऋ गतौ प्रापणे च।" (कविकल्पद्रुम) स्वादि॰ पर॰ सक॰ अनिट्। १३ गमन करना, चलना। "ऋ इरख गत्याम्।" (कविकल्पद्रुम) जुहो॰ पर॰ सक॰ अनिट्। १४ गमन करना, चल पड़ना। "ऋ रलि गत्याम्।" (कविकल्पद्रुम) स्वा॰ पर॰ सक॰ अनिट्। १५ हिंसा करना, मारना। "ऋ रन हिंसने।" (कविकल्पद्रुम)

ऋक् (सं॰ स्त्री॰) ऋचन्ते स्तूयन्ते अनया देवाः, ऋच्-क्विप्। १ ऋग्वेद। इसकी शाखा एकविंशति हैं। २ ऋग्वेदोक्त मन्त्र। ३ स्तुति, तारीफ़। ४ पूजा, परस्तिश। (त्रि॰) ५ तप्त, गर्म।

ऋकृत्स् (सं॰ अव्य॰) ऋकारस्। अक्।

ऋक्ण (सं॰ त्रि॰) व्रश्च-क्त, पृषोदरादित्वात् वलोपः। छिन्न, कटा हुआ।

ऋक्थ (सं॰ क्ली॰) ऋच् स्तुतौ थक्। पातॄतुदिवचिरिचिसिचिभ्यस्थक्। उण् २।७ १ धन, दौलत। २ स्वर्ण, ज़र। ३ उत्तराधिकारसूत्रसे मिलनेवाली ज्ञाति प्रभृतिकी सम्पत्ति, जो जायदाद वरासतसे हासिल हो।

ऋक्थहर (सं॰ त्रि॰) ऋक्थं हरति, ऋक्थ-हृ-अच्। अंशभागी, हिस्सेदार, वरासतसे माल पानेवाला।

ऋक्ष (सं॰ पु॰ क्ली॰) ऋष्-स-कित्। वृतृवदिहनिकमिकषिभ्यः सः। उण् ३।६६। १ नक्षत्र, सितारा।

"जौद्रा गःखे श्वेऽहा रोषाचिन्म्ूषाः सुमाधानः।
रेवृषाश्चापोऽजः कृष्यज्येष्ठा इत्यृक्षाणिलिङ्गैः।" (ज्योतिष वेदाङ्ग-१८)

२ राशि। (रघु १२।१५)

युरोपके ज्योतिष शास्त्रमें ऋक्ष नामक स्वतन्त्र राशि है। नाम उर्सा मेजर (Ursa major) रखते हैं। यह उत्तर राशियोंमें एक समझा जाता है। इस राशिमें सात तारा रहते हैं। विशेषता यह पड़ती—इसमें कितनी ही सितारा और नीहारिका लगती है।

ऋक्ष-अच्। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। यह सप्त कुलाचलके मध्य पड़ता है। कुलाचल देखो। इस पर्वतके मध्य नर्मदा नदी प्रवाहित है।

"ऋक्षवन्तं गिरिश्रेष्ठमध्यास्ते नर्मदां पिबन्।
सर्वर्क्षाणामधिपतिर्धूम्रो नामैष यूथपः।" (रामायण ६।२७।१०)

इसी ऋक्षवान् पर्वतको प्राचीन पाश्चात्य ऐतिहासिक टलेमिने 'औक्षेटन' (Ouxeuton) लिखा है। वर्तमान विन्ध्य पर्वतका दक्षिण-पूर्वांश पहले 'ऋक्ष', 'ऋक्षवान्' इत्यादि नामसे पुकारा जाता था।

"नर्मदाकूलमेकाकी नगरीं स्वस्तिकावतीम्।
ऋक्षवन्तं गिरिं जित्वा शुक्तिमत्यामुवास ह।" (हरिवंश ३६।१५)

उन्होंने नर्मदाके कूलपर पहुंच मृत्तिकावती नगरीपर अधिकार किया और ऋक्षवान् पर्वतको जीत शुक्तिमतीमें डेरा डाल दिया।

मृत्तिकावती और शुक्तिमती देखो।

२ भल्लूक, भालू, रीछ। ३ श्योणाक वृक्ष, एक पेड़। ४ पुरुवंशीय अजमीढ़ राजाके पुत्र। ५ पौरव विदूरथके पुत्र। ६ पुरुवंशीय अरिह राजाके पुत्र। ७ मेरुके निकटस्थ एक पर्वत। (त्रि०) ८ क्षतविक्षत, मारा हुआ।

ऋक्षगन्धा (सं० स्त्री०) ऋक्षस्येव गन्धो यस्याः, बहुव्री०। वृद्धदारक वृक्ष, एक पेड़। दूसरा नाम छागलान्त्री, आवेगी, वृद्धदारक, जुङ्ग, युगाक्षिगन्धा, छगला, महाश्यामा, जाङ्गली, जीर्णवल्कल, कोटरपुष्पी, ऋक्षगन्धा, छागलांघ्री, अन्त्री, जुङ्गा, छगली, जुङ्गक, श्यामा, छागलान्त्रिका, दीर्घवालुका, वृद्धा, और अजान्त्री (Argyreia speciosa, sweet) है।

वैद्यक मतसे यह रसायन, वायुनाशक, बलकर तथा पिच्छिल रहता और शोथ, आमवात, कास, श्वास एवं ज्वररोगपर चलता है। बीजादि ग्रहण करना चाहिये। मात्रा दो माशा है। यह वृक्ष भारतवर्षके पश्चिमांशमें बहुत होता है। २ ऋषिजाङ्गलवृक्ष। ३ क्षीरविदारी वृक्ष।

ऋक्षगन्धिका (सं० स्त्री०) ऋक्षगन्धा स्वार्थे कन्-टाप्, अत इत्वञ्च। कृष्णभूमिकुष्माण्ड, काला बिलारी कन्द। संस्कृत पर्याय क्षीरविदारी, महाश्वेता और क्षीरिका है।

ऋक्षगिरि (सं० पु०) ऋक्षश्चायं गिरिश्चेति, कर्मधा०। सप्तकुलाचलके मध्यका एक पर्वत। यह पहाड़ गण्डोयाना देशमें पड़ता और रैवतक पर्वतसे निकलता है। ऋक्ष देखो।

ऋक्षग्रीव (सं० पु०) एक पिशाच।

ऋक्षचक्र (सं० क्ली०) ऋक्षाणां चक्रम्, ६-तत्। राशिचक्र।

ऋक्षजिह्व (सं० पु०) कुष्ठरोग विशेष, किसी किस्मका कोढ़। इसमें वेदना बहुत बढ़ती है। इधर-उधर रक्त और मध्यमें पीत मिश्रित कृष्ण वर्ण रहता है। स्पर्श करनेसे यह कठोर लगता है। आकृति ऋक्षकी जिह्वा-जैसी होती है।

ऋक्षनाथ (सं० पु०) ऋक्षाणां नाथः, ६-तत्। १ नक्षत्रेश्वर चन्द्र, चांद। २ जाम्बवान्। यह कृष्णपत्नी जाम्बवतीके पिता थे।

ऋक्षनेमि (सं० पु०) विष्णु।

ऋक्षपति, ऋक्षनाथ देखो।

ऋक्षर (सं० पु०) ऋष्-क्सरन्। तन्यृषिभ्यां क्सरन्। उण् ३।७५। ऋत्विक् ब्राह्मण।

ऋक्षराज (सं० पु०) ऋक्षाणां राजा, ऋक्ष-राजन्-टच्। राजाहःसखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। १ चन्द्र, चांद। २ जाम्बवान्। (हरिवंश ३१४८)

ऋक्षला (सं० स्त्री०) ऋक्ष्-सलच् गुणाभावः। गुल्फाधःस्थित नाड़ी।

ऋक्षवन्त (सं० क्ली०) शम्बरासुरकी राजधानी।

"तमृक्षावन्तं नगरे निहत्यासुरसत्तमम्।" (हरिवंश १६ अ०)

ऋक्षवान् (सं० पु०) ऋक्ष मतुप् मस्य वः। ऋक्षगिरि देखो।

ऋक्षविभावन (सं० क्ली०) नक्षत्रोंकी गणना।

ऋक्षबिल (सं० पु०) दक्षिणी महेन्द्र पर्वतका एक बृहत् गह्वर। हनूमानादि वानर सीताको ढूंढते ढूंढते यहीं आकर पथ भूले थे। (रामायण) आज कल सिंहलद्वीपमें आदमशृङ्ग पर्वतके निकट इसके रहनेका अनुमान लगाते हैं।

ऋक्षहरीश्वर (सं० त्रि०) ऋक्षों और कपियोंके प्रभु।

ऋक्षीक (सं० त्रि०) ऋक्ष इव, ऋक्ष इवार्थे। भल्लूकके समान हिंस्र जन्तु, जो जानवर रीछ-जैसा खूंखार हो।

ऋक्षेश (सं० पु०) ऋक्षाणां ईशः, ६-तत्। चन्द्र, चांद।

ऋक्षेष्टि (सं० स्त्री०) ऋक्षविशेषमाश्रित्य इष्टिः, मध्यपदलोपो। नक्षत्रविशेषके उद्देश्यसे किया जानेवाला एक यज्ञ।

ऋक्षोद (सं० पु०) पर्वत विशेष, एक पहाड़।

ऋक्‌संशित (सं० त्रि०) ऋक् द्वारा उत्तेजित किया हुआ।

ऋक्‌संहिता (सं० स्त्री०) ऋचां संहिता, ६-तत्। ऋग्वेद।

ऋक्‌सम (सं० क्ली०) ऋचा समम्, ३-तत्। सामविशेष।

ऋक्साम (सं॰ क्ली॰) ऋक्च साम च इयोः समाहारः, समाहारद्वन्द्व। ऋक् और सामका मिलन।

ऋक्सामश्रृङ्ग (सं॰ पु॰) विष्णु।

ऋगयन (सं॰ क्ली॰) ऋचामयनं यत्र, बहुव्री॰। ऋक्-पारायण ग्रन्थ विशेष।

ऋगयनादि (सं॰ पु॰) पाणिनि कथित एक गण। इसके अन्तर्गत व्याख्यान, छन्दोगान, छन्दोभाषा, छन्दोविचिति, न्याय, पुनरुक्त, निरुक्त, व्याकरण, निगम, वास्तुविद्या, चत्रविद्या, अङ्गविद्या, विद्या, उत्पात, उत्पाद, उद्याव, सम्वत्सर, मुहूर्त, उपनिषद्, निमित्त, शिक्षा और भिक्षा है।

ऋगावान (सं॰ क्ली॰) ऋचां आवानं ग्रथनम्, ६-तत्। वेद पढते समय अर्ध ऋच् प्रभृति पूर्व परके साथ सम्मिलन।

ऋग्गाथा (सं॰ स्त्री॰) ऋचामिव गाथा, उप॰। लौकिक गीतिवेद।

ऋग्भाक् (सं॰ त्रि॰) ऋक्का भाग लेनेवाला।

ऋग्मत् (सं॰ त्रि॰) ऋक् अस्त्यस्य, ऋक्-मतुप्। १ स्तावक, तारीफ़ करनेवाला। २ पूज्य, परस्तिशके क़ाबिल।

ऋग्मिन् (सं॰ त्रि॰) ऋक् अस्यास्ति, ऋक्-मिनि। स्तोता, तारीफ़ करनेवाला।

"निर्धिनद्दग्मिणो यदुः।" (ऋक् ८।८६।४६)
'ऋग्मिणः स्तोतारः।' (सायण)

ऋग्यजुःसामवेदी (सं॰ त्रि॰) ऋक्, यजुः और सामवेद जाननेवाला।

ऋग्विधान (सं॰ क्ली॰) ऋग्वेदोक्त मन्त्र द्वारा व्रतविशेषका विधान। इसमें यही वर्णन चलता, ऋग्वेदका कौन मन्त्र जपनेसे क्या फल मिलता है। फिर ऋग्विधान पढ़नेसे जानते, जगत्के आदिग्रन्थ और महाधर्मग्रन्थ ऋग्वेदवाले मन्वादि प्राचीन ऋषि किस प्रकार सम्मान एवं पुण्यफलप्रद मानते थे।

अग्निपुराणमें इसतरह ऋग्विधान लिखा है—

जलके मध्य अथवा होमके समय प्राणायामपूर्वक गायत्री जपनेसे अभीष्टसिद्धि होती है। जो निशाभोजी हो दशसहस्र गायत्री जप करता, उसका सकल पाप छूट पड़ता है। हविष्यान्न खा लक्ष गायत्री मन्त्र जपनेवाला मोक्ष लाभका अधिकारी है।

ओङ्कार परब्रह्म है। प्रणवके जपनेसे सर्व पाप छूटता है। जो नाभिमात्र जलमें ठहर शतवार ओङ्कार जपता, उसको देखते ही पाप कंपता है।

तीन मात्रा, तीन वेद, सप्त महाव्याहृति और सप्तलोक उल्लेखपूर्वक होम करनेसे सकल जन्मका पाप छूटता है। जलके मध्य महाव्याहृति और परमा गायत्री जपनेको अघमर्षण कहते हैं। जो वह्निदैवत "अग्निमीळे पुरोहितम्" (१।१।१) सूक्त यथाविहित एक वत्सर जपता, उसे सकल इष्ट मिलता है। मेधाकामी 'सदसस्पतिम्', मृत्युनिवारणेच्छु 'शुनःशेपमृषिम्', शत्रु एवं विघ्न दमनाभिलाषी 'हिरण्यस्तूपम्', आरोग्यकामी अथवा रोगी 'प्रस्कण्वमोत्तमम्', आसनकी सिद्धिका इच्छुक मध्याह्नकालको 'उत्तमस्तस्य', अर्ध ऋक् तथा 'उदयन्नायु रचाय्य' तेजः' पूर्ण ऋक्, सूर्यास्त होनेपर शत्रुसे परित्राणेच्छु 'नवयस्य', मोक्षकामी 'आध्यात्मिकीः कः', वस्त्रकामी 'त्वं सोम' और पुण्यकामी मध्यवेलामें 'आपनः शोशुचीत्' इत्यादि कामनानुयायी ऋक् यथाविहित जपनेसे सर्वप्रकार सिद्धिलाभ करता है। प्रसवके समय 'प्रमन्दिन' सूक्त जपनेपर गर्भवेदना अनुभव न कर गर्भिणी सुखसे प्रसव कर सकती है। कर्षणकाल, वपनकाल एवं छेदनकालपर सूक्त द्वारा इन्द्रादि देवगणको उपासना करनेसे सकल कर्म अमोघ पड़ता और कृषिके कार्यमें उत्कर्ष बढ़ता है। 'विजिगीषु वंनस्पति' सूक्त जपनेसे मूढ़गर्भा स्त्रीका गर्भ अनायास निकल आता है। (अग्निपु॰ २।८ अ॰)

ऋग्वेद (सं॰ पु॰) ऋगेव वेदः। प्रथम वेद। यह संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और सूत्रभेदसे चार प्रकारका है।

ऋक्संहिताकी नाना शाखा हैं। महापुराणादिमें उल्लेख किया—कृष्णद्वैपायन वेदव्यासने वेद भागकर पैलको ऋग्वेद दिया था।

"ऋविदः प्रथमं विप्र पैल ऋग्वेदपादपम्।
इन्द्रप्रमतये प्रादाद वास्कलाय च संहिते॥ १६
चतुर्द्धा स विभेदाथ वास्कलि द्विज संहिताम्।
बौध्यादिभ्यो ददौ तास्तु शिष्येभ्यः स महामुनिः॥ १७

बोधाग्निमाठरौ तद्वद्याज्ञवल्क्यपराशरौ ।
प्रतिशाखास्तु शाखायास्तस्यास्ते जगृहुर्मुने ॥ १८
इन्द्रप्रमतिरेकां तु संहितां स्वसुतं ततः
माण्डुकेयं महात्मानं मैत्रेयाध्यापयत् तदा ॥ १९
तस्य शिष्यप्रशिष्येभ्यः पुत्रशिष्यान् क्रमाद् ययौ ।
वेदमित्रस्तु शाकल्यः संहितां तामधीतवान् ॥ २०
चकार संहिताः पञ्च शिष्येभ्यः प्रददौ च ताः ।
तस्य शिष्यास्तु ये पञ्च तेषां नामानि मे शृणु ॥ २१
मुद्गलो गालवश्चैव वात्स्यः शालीय एव च ।
शिशिरः पञ्चमश्चासीन्मैत्रेय सुमहामुनिः ॥ २२
संहितात्रितयञ्चक्रे शाकपूर्णिरथेतरम् ।" (विष्णुपुराण ३।४ अ:)

प्रथम पैलने ऋग्वेदरूप वृक्ष दो भागमें बांट इन्द्रप्रमति और वास्कलि नामक शिष्यद्वयको दो संहिता कर दिया था। फिर वास्कलिने उसे चार भागमें बांट बोध आदि शिष्योंको सौंपा। बोध, अग्निमाठर, याज्ञवल्क्य और पराशर चारोंने उक्त शाखाकी प्रतिशाखा पढ़ीं। हे मैत्रेय! इन्द्रप्रमतिने अपनी पढ़ी संहिताका एकांश माण्डुकेयको पढ़ाया। उनके शिष्यप्रशिष्यकी परम्परासे क्रमशः यह शाखा फैल पुत्र और शिष्य-समूहमें चल पड़ीं। वेदमित्र और साकल्यने उक्त संहिता अध्ययन की थी। उन्होंने फिर इस शाखासे पांच संहिता बना पांच शिष्यको पढ़ाईं। इन पांचो शिष्यके नाम मुद्गल, गालव, वात्स्य, शालीय और शिशिर थे।

इन्द्रप्रमतिके द्वितीय शिष्यने अपनी अधीत ऋक्को बांट तीन संहिता बनायीं। वास्कलिने भी अपर तीन संहिता की थीं। उन्होंने कालायनि, गार्ग और कथाजव नामक तीन शिष्यको तीनों संहिता पढ़ा दीं।

ऋग्वेदमें १० मण्डल हैं। प्रथममें २४ अनुवाक, १९१ सूक्त; द्वितीयमें ४ अनुवाक, ४३ सूक्त; तृतीयमें ५ अनुवाक, ६२ सूक्त; चतुर्थमें ५ अनुवाक, ५८ सूक्त; पञ्चममें ६ अनुवाक, ८७ सूक्त; षष्ठमें ६ अनुवाक, ७५ सूक्त; सप्तमें ६ अनुवाक, १०४ सूक्त; अष्टममें १० अनुवाक, १०३ सूक्त; नवममें ७ अनुवाक, ११४ सूक्त और दशम मण्डलमें १२ अनुवाक, १९१ सूक्त विद्यमान हैं। इस प्रकार सूक्तसमष्टि १०२८ है। किन्तु चरण-व्यूहमें लिखा है—

"तत्र ऋग्वेदस्याष्टभेदा भवन्ति चर्चा श्रावकश्चर्चकः श्रवणीयपारः क्रमपारः क्रमजटाः क्रमरथः क्रमशकटः क्रमदण्डश्चेति चतुष्पारायणमेतेषां। शाखाः पञ्च भवन्ति, आश्वलायनी, सांख्यायनी, शाकला, वास्कला माण्डुकाश्चेति तेषामध्ययनम्। अध्यायानां चतुःषष्टिर्मण्डलानि दशैव तु। वर्गाणां परिसंख्यातं द्वे सहस्रे षडुत्तरे॥ सहस्रमेकं सूक्तानां निविशङ्कं विकल्पितम्। दशसप्त च पद्यन्ते संख्यातं वै पदक्रमात्॥ एकशतसहस्रं वा द्विपञ्चाशत् सहस्राणेतानि। चतुर्दशवासिष्ठानामितरेषां पञ्चाशीतिः। ऋचां दशसहस्राणि ऋचां पञ्चशतानि च। ऋचामशीतिपादश्च पारायणं प्रकीर्त्तितम्। एकर्चं एकवर्गश्च नवकश्च तथा स्मृतः। द्वौ वर्गौ द्विऋचौ ज्ञेयौ ऋक्त्रयश्च शतं स्मृतम्। चतुर्ऋचां पञ्चसप्तत्यधिकञ्च शतं तथा। पञ्चऋचां तु द्विशतं सहस्रं रुद्रसंयुतम्। पञ्चचत्वार्यधिकं तु षड्ऋचास्तु शतत्रयम्। सप्तऋचां शतत्रयं विंशतिश्चाधिकाः स्मृताः। अष्ट ऋचां तु पञ्चाशत् पञ्चाधिकास्तथैव च। दशाधिकद्विसहस्राः पञ्चशाखासु निश्चिताः। वर्गसंज्ञा न सूक्तस्य चत्वारश्चाव कीर्त्तिताः।"

ऋग्वेदके आठ भेद वा स्थान हैं—चर्चा, श्रावकचर्चक, श्रवणीयपार, क्रमपार, क्रमजटा, क्रमरथ, क्रमशकट और क्रमदण्ड। इनके चार पारायण होते हैं। आश्वलायन, सांख्यायन, शाकल, वास्कल और माण्डुक भेदसे पांच शाखा हैं। अध्याय ६४, मण्डल १०, वर्ग २००६, सूक्त १०१७ वाशिष्ठके पदक्रम १५२५१४ और दूसरेके पदक्रम ८५ पड़ते हैं। ऋक्के १०५८० पादको पारायण कहते हैं। प्रथममें एक वर्ग, १ ऋक्, द्वितीयमें दो वर्ग, २ ऋक्, तृतीयमें १०० ऋक्, चतुर्थमें १७५ ऋक्, पञ्चममें १२४५ ऋक्, षष्ठमें ३०० ऋक्, सप्तममें १२० ऋक् और अष्टम अष्टकमें ५५ ऋक् हैं। पञ्चशाखामें २०१० ऋक् विद्यमान हैं। पूर्व कथित चार वर्ग सूक्तको नहीं।

वास्कल शाखाके अनुसार ऋक्संहिताके संख्यादि इस प्रकार निर्दिष्ट हैं—

"चतुर्थं च समाख्यातं षट्सप्तत्युत्तरं शतम्।
पञ्चर्चं द्वादशशतान्यष्टाविंशोत्तराणि च॥
शतत्रयं षड्चञ्च सप्तपञ्चाशदुत्तरम्।
सप्तर्चमेकोनविंशदुत्तरं शतमेककम्॥
अष्टर्चाः पञ्चपञ्चाशद्वर्गा सुनोधिकोत्तराः

शाकलकी १५३७८२ तथा बालखिल्यकी पदसंख्या १२०७ एवं वर्गसंख्या १८, फिर आश्वलायन शाखाकी पदसंख्या इसी प्रकार है। सांख्यायन शाखाकी

१५३७३४ तथा बालखिल्यकी पदसंख्या १८८६ एवं वर्गसंख्या १७ है।

"ऋग्वेदस्य तु शाखा: स्युरेकविंशतिसंख्यका:।"

कोई कोई ऋग्वेदकी शाखा २१ बताता है, किन्तु वास्तविक यह नहीं। प्रधानत: पांच ही शाखा हैं। जो लोग २१ बताते, वह प्रशाखा भी मिलाते हैं।

ऋक्संहिताका पारायण दो प्रकार होता है— प्रकृतिरूप और विकृतिरूप। फिर प्रकृति रूप भी रूढ़ और योगभेदसे दो प्रकारका पड़ता है। जैसे 'अग्निमीळे पुरोहितम्' इत्यादि रूढ़ और 'अग्निं ईळे पुरोहितम्' इत्यादि योग है।

विकृतिरूप आठ प्रकारका है। यथा—

"जटा माला शिखा लेखा ध्वजो दण्डो रथो घन:।
अष्टौ विकृतय: प्रोक्ता: क्रमपूर्वा महर्षिभि:॥"

जटा, माला, शिखा, लेखा, ध्वज, दण्ड, रथ और घन आठ प्रकारका विकृतिक्रम महर्षिगणने कहा है।

जटा प्रभृति प्रत्येक शब्द देखो।

ऋक्संहितामें जिस-जिस देवताका नाम लिया अथवा जिस जिस देवता और ऋषिका देवता रूपसे स्तव किया, उसका नाम नीचे दिया है—

अक्षकितव। अक्षा। अग्नायी। अग्नि, (आह्वनीय, जातवेदा, निमर्थ्य, रक्षोहा, वैश्वानर और शौचिक)। अङ्गिरस अत्रि। अदिति। अधिषवण चर्म वा हरिश्चन्द्र। अध्येता। अन्तरिक्ष। अन्न। अपांनपात्। अप्पा। अज्ञा अहि। अभिशाप। अरण्यानी। अर्य्यमा। अलक्ष्मीनाश। अश्वा। अश्विद्वय। असमाति। अहिर्बुध्न। असुनीति। अहोरात्र। आत्मा। आदित्यगण। आप, (अपांनपात्, गाव, सोम)। आप्र। आप्रिय। आत्री। आशी:। आसङ्ग। इध्म। इन्दु। इन्द्र (कपोञ्जल-रूपी, वैकुण्ठ)। इन्द्राणी। इन्द्राश्व। इला। इषुगण। इषुधि। इज्या। उपमश्रवा। मित्रातिथि पुत्र। उपाध्याय। उर्वशी। उलूखल। उशना। उषा (वा सूर्यप्रभा)। ऋच। ऋतु। ऋत्विक्। ऋभुगण। ओषधि। क। कवच। कशसैद्य। काल सम्वत्सरात्मा। कुत्स। कुरङ्ग। कुरुश्रवण त्रासदस्यु। कृषि। केशी। कौरयाण। क्षेत्रपति। गङ्गा। गर्भार्थाशी। गो। गुङ्गु। ग्रावण। चन्द्रमा:। चित्र। ज्ञान। ज्या। तनूनपात्। तार्क्ष्य। तिरिन्दिर। पारशव्य। त्रसदस्यु। त्वष्टा। दक्षिणा। दधिक्रा। दम्पति। दाल्भ। दिक्। दु:स्वप्ननाशन। दुन्दुभि। द्यावा पृथिवी। द्यावाभूमि। द्यौ:। द्रविणोद-द्रुवण। द्वारदेवी। धाता। नक्षा। नदीगण। नराशंस। निर्ऋति। पणि। पथ्यास्वस्ति। परमात्मा। पर्जन्य। पर्वत। पवमान। पितृगण। पितृमेध:। पुरीष्या। पुरुमीढ़ वैददश्वा। पुरुष। पुरूरव्य: ऐल। पूषा। पृथिवी। पृश्नि। प्रजापति। प्रतोद। प्रस्कण्व। बर्हि:। बृबुस्तक्षा। बृहस्पति। ब्रह्मा। ब्रह्मणस्पति। भग। भारती। भावयव्य। भाववृत्त। भूमि। मण्डूक। मन्यु। मरुद्गण। मित्र। मृत्यु। मृत्युविमोचनी। यक्ष्मनाशन। यथानिपात। यम। यमी। यूप। रति। रथ। रथगोपा। रश्मि। राका। रात्रि। रुद्र। रोदसी। रोमशा। लिङ्गोक्त-देवता। वनस्पति। वरुण। वसिष्ठ। वसिष्ठपुत्रगण। वसुक्र। वाक्। वागाम्भृणी। वामदेव। वायु। वास्तोष्पति। विश्वकर्मा। विश्वामित्र। विश्वावसु। विश्वदेव। विष्णु। वृषाकपि। वेण। वृश्चिनी। शची पौलोमी। शाकधूम। शुक्र। शुन। शुनासिर। श्येन। श्रद्धा। स्थानु। सदसस्पति। समित्। सरण्यु। सरमा। सरस्वती। साध्यगण। साहदेव्य सोमक। सिनीवाली। सिन्धु। सुबन्धु। सूर्य। सूर्या। सोम (पवमान वा पूषा)। स्वाहाकृति। हरि। हरिश्चन्द्र प्रजापति। हविर्धान। हस्त। होता।

ऋकसंहितामें कहीं ३३ देवता और कहीं ३३३८ देवका उल्लेख है।

ऋकसंहिताके ऋषिगणका नाम—अंहोमुच् वामदेव्य, अकृष्टा माषा, अगस्त्य, अगस्त्यको स्वसा, अग्नि, अग्निचाक्षुष। अग्नितापस, अग्नि-पावक, अग्नियविष्ठसहके पुत्र, अग्निवैश्वानर, अग्निशौचीक, अग्निवुत स्थौर, अघमर्षण मधुच्छन्द:, अङ्ग औरव, अजमीढ़ सौहात्र, अत्रि गण, अत्रि भौम, अत्रि सांख्य, अदिति, अदिति दाक्षायणी, अनागत-पारुच्छेपि, अनिल वातायन, अभितपा श्रावाश्वि, अपाला आत्रेयी, अप्रतिरथ ऐन्द्र, अभितपा सौर:,

अभीवर्त्त आङ्गिरस, अमहीयु आङ्गिरस, अम्बरीष वार्षागिर, अयास्य आङ्गिरस, अरिष्टनेमि तार्च्य, अरुण वैतहव्य, अर्चन् हैरण्यस्तूप, अर्चनाना आत्रेय, अर्वुद काद्रवेय, अवत्सार काश्यप, अवस्यु आत्रेय, अश्वमेध भारत, अश्वसूक्ति काण्वायन, अष्टक वैश्वामित्र, अष्टादंष्ट्र वैरूप, असित काश्यप, आत्मा, आयुःकाण्व, आसङ्गप्लायोगि, इत भार्गव, इध्मवाह दार्ढच्युत, इन्द्र, इन्द्र मुष्कवान्, इन्द्र वैकुण्ठ, इन्द्रप्रमति वासिष्ठ, इन्द्र-मातृ देवजामि, इन्द्रस्नुषा, इन्द्राणी, इरिम्बिठि, काण्व, इष आत्रेय, उचथ्य आङ्गिरस, उत्कील कात्य, उपमन्यु वासिष्ठ, उपस्तुत वार्ष्टिहव्य, उरुक्षय आमहीयव, उरुचक्रि आत्रेय, उर्वशी, उलवातायन, उशना काव्य, ऊरु आङ्गिरस, ऊर्ध्वकृशन यामायन, ऊर्ध्वग्रावा आर्बुदि, ऊर्ध्वनाभा ब्राह्म, ऊर्ध्वसद्मा आङ्गिरस, ऋजिश्वा भारद्वाज, ऋज्राश्व वार्षागिर, ऋणञ्चय ऋषभ, वैराज वा शाक्वर, ऋषभ वैश्वामित्र, ऋषि दृष्टिलिङ्ग, ऋष्यशृङ्ग वातरशन, एकदू नौधस, एतश वातरशन, एवयामरु-दात्रेय, कक्षिवान् दीर्घतमाः (औशिज), कण्व घौर, कत वैश्वामित्र, कपोत नैर्ऋत, करिक्रत वातरशन, कर्णश्रुद्वासिष्ठ, कलिप्रागाथ, कवष ऐलूष, कवि भार्गव, कश्यप मारीच, कुत्स आङ्गिरस, कुमार आग्नेय, कुमार आत्रेय, कुमार यामायन, कुरुसुति काण्व, कुल्मलवर्हिष शैलूषि, कुशिक ऐषीरथि, कुशिक सौभर, कुसीदी काण्व, कूर्म गार्त्समद, कृतयशाः आङ्गिरस, कृतु भार्गव, कृश काण्व, कृष्ण आङ्गिरस, केतु आग्नेय, गय आत्रेय, गय प्लात, गर्ग भारद्वाज, गविष्ठिर आत्रेय, गातु आत्रेय, गाथी कौशिक, गृत्समद आङ्गिरस शौनहोत्र, गोतम राहूगण, गोधा, गोपवन आत्रेय, गोषूक्ति काण्वायन, गौरीवीति शाक्त्य, घर्म सौर, घर्म तापस, घोर आङ्गिरस, घोषा काक्षीवती, चक्षु मानव, चक्षुः सौर, चित्रमहा वासिष्ठ, च्यवन भार्गव, जमदग्नि भार्गव, जय ऐन्द्र, जरत्कर्ण सर्प ऐरावत, जरिता शार्ङ्ग, जामदग्न्य, जुहू ब्रह्मणस्पति, जूती वातरशन, जेता माधुच्छन्दः, तपुर्मूर्द्धा बार्हस्पत्य, तान्व पार्थ्य, तिरश्चीर आङ्गिरस, त्रसदस्यु पौरुकुत्स, त्रित आप्त्य, त्रिशिराः त्वाष्ट्र, त्रिशोक काण्व, त्र्यरुण त्रैवृष्ण, त्वष्टा गर्भकर्त्ता, दक्षिणा प्राजापत्या, दमन यामायन, दिव्य आङ्गिरस, दीर्घतमाः औचथ्य, दुर्मित्र कौत्स, दुवस्यु वान्दन, दृढच्युत आगस्त्य, देवमुनि ऐरम्मद, देवरात वैश्वामित्र, देवल काश्यप, देवरात भारत, देवश्रवाः भारत, देवश्रवाः यामायन, देवातिथि काण्व, देवापि आर्ष्टिषेण, द्युतान मारुति, द्युम्नविश्वचर्षणि आत्रेय, द्युम्नीक वासिष्ठ, द्रोणशार्ङ्ग, द्वित आप्त्य, धरुण आङ्गिरस, ध्रुव आङ्गिरस, नभः प्रभेदन वैरूप, नर भारद्वाज, नहुष मानव, नाभाक काण्व, नाभानेदिष्ट मानव, नारद काण्व, नारायण, निध्रुवि काश्यप, नीपातिथि काण्व, नृमेध आङ्गिरस, नेम भार्गव, नोधा गौतम, पणि नामक असुरगण, पतङ्ग प्राजापत्य पराशर शाक्त्य, परुच्छेप दैवोदासि, पर्वत काण्व, पवित्र आङ्गिरस, पायु भारद्वाज, पुनर्वत्स काण्व, पुरुमीढ आङ्गिरस, पुरुमीढ सौहोत्र, पुरुमेध आङ्गिरस, पुरुहन्मा आङ्गिरस, पुरूरवाः ऐल, पुष्टिगु काण्व, पूतदक्ष आङ्गिरस, पूरण वैश्वामित्र, पुरु आत्रेय, पृथु वैन्य, पृश्नि अजगण, पृषध्र काण्व, पौर आत्रेय, प्रगाथ काण्व, प्रचेताः आङ्गिरस, प्रजापति, प्रजापति परमेष्ठी, प्रजापति वाच्य, प्रजापति वैश्वामित्र, प्रजावान् प्राजा-पत्य, प्रतर्द्दन काशिराज दैवोदासि, प्रतिक्षत्र आत्रेय, प्रतिप्रभ आत्रेय, प्रतिभानु आत्रेय, प्रतिरथ आत्रेय, प्रथ वासिष्ठ, प्रभुवसु आङ्गिरस, प्रयस्वन्त आत्रेय, प्रयोग भार्गव, प्रस्कण्व काण्व, प्रियमेध आङ्गिरस, बन्धु गौपायन वा लौपायन, बभ्रु आत्रेय, बाहुवृक्त आत्रेय, बुध आत्रेय, बुध सौम्य, बृहदुक्थ वामदेव्य, बृहद्दिव आथर्व्वण, बृहन्मति आङ्गिरस, बृहस्पति आङ्गिरस, बृहस्पति लौक्य, ब्रह्मातिथि काण्व, भयमान वार्षागिर, भरद्वाज बार्हस्पत्य, भर्ग प्रागाथ, भावयव्य, भिक्षु आङ्गिरस, भिषगाथर्वण, भुवन आप्त्य, भूतांश काश्यप, भृगु वारुणि, मत्स्य साम्मद, मथित यामायन, मधुच्छन्दा वैश्वामित्र, मनु आप्सव, मनु वैवस्वत, मनु साम्वरण, मन्यु तापस, मन्यु वासिष्ठ, मातरिश्वा काण्व, मान्धाता यौवनाश्व, मान्य मैत्रावरुणि, मुद्गल भार्म्यश्व, मूर्धन्वान आङ्गिरस, मृळीक वासिष्ठ, मेधातिथि काण्व, मेध्य काण्व, मेधा-

तिथि काण्व, यक्ष्मनाशन प्राजापत्य, यजत आत्रेय, यज्ञ प्राजापत्य, यम वैवस्वत, यमी, यमी वैवस्वती, ययाति नाहुष, रक्षोहा ब्राह्म, राहुगण आङ्गिरस, रातहव्य आत्रेय, रात्रि भारद्वाजी, राम जामदग्न्य, रेणु वैश्वामित्र, रेभ काश्यप, रोमशा:, लव ऐन्द्र, लुश धानाक, लोपामुद्रा, वत्स आग्नेय, वत्स काण्व, वत्सप्रि भालन्दन, वम्र वैखानस, वरु आङ्गिरस, वरुण, वव्रि आत्रेय, वश अश्व्य, वसिष्ठ मैत्रावरुणि, वशिष्ठ पुत्रगण, वसु भारद्वाज, वसुकर्ण वासुक्र, वसुक्रिद् वासुक्र, वसुक्र ऐन्द्र, वसुक्र वासिष्ठ, वसुक्रपत्नी, वसुमना रौहिदश्व, वसुश्रुत आत्रेय, वसुयव आत्रेय, वाग् आम्भृणी, वातजूति वातरशन, वामदेव गौतम, विन्दु आङ्गिरस, विप्रजूति वातरशन, विप्रबन्धु गौपायन वा लौपायन, विभ्राट् सौर्य, विमद ऐन्द्र, विरूप आङ्गिरस, विवस्वान् आदित्य, विवृहा काश्यप, विश्वक कार्ष्णि, विश्वकर्म्मा भौवन, विश्वमना वैयश्व, विश्ववारा आत्रेयी, विश्वसामा आत्रेयी, विश्वामित्र गाथिन, विश्वावसु देवगन्धर्व, विष्णु प्राजापत्य, विहव्य आङ्गिरस, वीतहव्य आङ्गिरस, वृशजान, वृषगण वासिष्ठ, वृषाकपि ऐन्द्र, वृषाक्स वातरशन, वेण भार्गव, वैखानस (शत), व्यश्व आङ्गिरस, व्याघ्रपाद वासिष्ठ, शंयु वार्हस्पत्य, शकपूत नार्मेध, शक्ति-वासिष्ठ, शङ्ख यामायन, शची पौलोमी, शतप्रभेदन वैरूप, शबर काक्षीवान्, शशकर्ण काण्व, शश्वत्याङ्गिरस, शार्यात मानव, शास भारद्वाज, शिखण्डिनी, शिवि औशीनर, शिरिम्बिठ भारद्वाज, शिशु आङ्गिरस, शुनःशेप आजिगर्ति, शुनहोत्र भारद्वाज, श्यावाश्व आत्रेय, श्येन आग्नेय, श्रद्धा कामायनी, श्रुतकक्ष आङ्गिरस, श्रुतबन्धु गौपायन वा लौपायन, श्रुतिविद् आत्रेय, श्रुष्टिगु काण्व, संवनन आङ्गिरस, संवरण प्राजापत्य, सम्वर्त आङ्गिरस, सङ्कुसुक यामायन, सत्यधृति वारुणि, सत्यश्रवा आत्रेय, सदापृण आत्रेय, सध्रि वैरूप, सध्वंस काण्व, सप्तर्षि, सप्तगु आङ्गिरस, सप्तवध्रि आत्रेय, सप्ति वाजम्भर, सप्रथ भारद्वाज, सरमा देवशुनी, सर्वहरि ऐन्द्र, सव्य आङ्गिरस, सस आत्रेय, सहदेव वार्षागिर, साधन भौवन, सार्पराज्ञी, सारिसृक्क शार्ङ्ग, सिकता निवावरी, सिन्धुक्षित् प्रैयमेध, सिन्धुद्वीप आम्बरीष, सुकक्ष आङ्गिरस, सुकीर्त्ति काक्षीवान्, सुतम्भर आत्रेय, सुदास् पैजवन, सुदीति आङ्गिरस, सुपर्ण काण्व, सुपर्ण तार्क्ष्यपुत्र, सुबन्धु गौपायन, सुमित्र कौत्स, सुमित्र वाध्र्यश्व, सुराधा वार्षागिर, सुवेदा शैरीषि, सुहस्त्य घौषेय, सुहोत्र भारद्वाज, सूनु आर्भव, सूर्या सावित्री, सोभरि काण्व, सोम, सोमाहुति भार्गव, स्तम्बमित्र शार्ङ्ग, स्यूमरश्मि भार्गव, स्वस्त्यात्रेय, हरिमन्त आङ्गिरस, हर्यत प्रागाथ, हविर्धान आङ्गिरस, हिरण्यगर्भ प्राजापत्य, हिरण्यस्तूप आङ्गिरस।

ऋक्संहिता पढ़नेसे आर्यजातिका आदिम इतिहास, प्राचीन आचार-व्यवहार, धर्म मत एवं विश्वास प्रभृति सकल अवश्य ज्ञातव्य विषय समझ पड़ता है।

आर्य शब्द देखो।

निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं, ऋक्संहिता किस समय संगृहीत हुई थी। सम्भवतः जिस समय आर्य सभ्यता चारो ओर फैलने और सुसभ्य आर्यमण्डली अग्निपूजा प्रचार करनेके लिये नाना देश घुमने लगी, उसी प्राचीन काल द्वापरके शेषभागपर कृष्णद्वैपायनके हाथ प्रथम वेदकी संहिताके संग्रहकी नोव पड़ी। मोक्षमूलर प्रभृति युरोपीय पण्डितोंके कथनानुसार ऋग्वेदका छन्दस् भाग ईसाकी उत्पत्तिके १००० वत्सरसे पूर्व बना था। उन्होंने भी मुक्त कण्ठसे ऋक्संहिताको समग्र सभ्य-जगत्का आदि ग्रन्थ माना है। वेद शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

"One thing is certain : there is nothing more ancient and primitive, not only in India, but in the whole Aryan world, than the hymns of the Rig-veda." (Max Müller's Origin and growth of Religion, p. 152)

किसी समय ऋग्वेदको प्रतिशाखाके ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्रादि प्रचलित थे। किन्तु अब केवल ऐतरेय ब्राह्मण, शाङ्खायन गृह्य एवं श्रौतसूत्र, आश्वलायन श्रौत और गृह्य सूत्र ही मिलते हैं।

ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषत्, श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र प्रभृति शब्द देखो।

ऋघा (सं॰ स्त्री॰) ऋह-घन्, गुणाभावः। हिंसा, मारने-काटनेकी तबीयत।

ऋघावान् (वै० त्रि०) ऋघा अस्त्यस्य, ऋघा-मतुप्, मस्य वः। हिंसक, खूंखार। "कवीशस्तु ऋघावान्।" (ऋक् १।१५२।२) 'ऋघावान् हिंसकः।' (सायण)

ऋच् (धातु०) तुदा० पर० सक० सेट्। "ऋच स्तुत्याम्।" (कविकल्पद्रुम) स्तुति करना, तारीफ़ बताना।

ऋच (सं० पु०) एक राजा। यह सुनीकके पुत्र थे।

ऋचस (सं० त्रि०) ऋच्-कसुन्। स्तोता, तारीफ़ करनेवाला।

ऋचसे (सं० अव्य०) ऋच्-कसेन्। स्तुति करनेके लिये, तारीफ़ बतानेके वास्ते।

ऋचा, ऋक् देखो।

ऋचीक (सं० पु०) ऋच्-ईकक्। १ सविताविशेष। यह दिवके पुत्र थे। २ जमदग्निके पिता भृगु-मुनि। ३ देशविशेष, एक मुल्क।

ऋचीष (सं० क्ली०) १ भ्राष्ट, तवा। (पु०) २ नरक विशेष।

ऋचीषम (सं० पु०) ऋचा स्तुत्या समः, निपातनात् ईत्वं षत्वञ्च। १ इन्द्र। (त्रि०) २ ऋग्विशेषके समान गुणविशिष्ट।

ऋचेयु (सं० पु०) पुरुवंशीय राजा रौद्राश्वके पुत्र।

ऋच्छ् (धातु) तुदा० पर० सक० अकर्म० सेट्। १ गमन करना, चलना। २ मुग्ध होना, फ़रेफ़्ता बनना। ३ कठिन होना, मुश्किल पड़ना। कोई कोई मोहित होनेके स्थानमें विलीन पड़नेका अर्थ लगाते हैं।

ऋच्छ (हिं०) ऋच देखो।

ऋच्छका (सं० स्त्री०) अभिलाष, ख्वाहिश।

ऋच्छरा (सं० स्त्री०) ऋच्छति प्राप्नोति परपुरुषम्, ऋच्छ्-अर् स्त्रियां टाप्। ऋच्छेररः। उण् ३।१३१। १ वेश्या, रण्डी। २ बन्धन, बेड़ी।

ऋज् (धातु) भ्वादि० आत्म० सक० अकर्म० सेट्। १ स्थिर रहना, ठहरना। २ जीना। ३ बलवान् होना। ४ कमाना। भ्वादि० आत्म० सक० सेट्। "ऋजिङ् भर्जि।" (कविकल्पद्रुम) ५ भूंजना।

ऋजिप्य (सं० त्रि०) ऋजु आप्नोति गच्छति, आप्-यत् पृषोदरादित्वात् साधुः। सरलगामी, सीधा चलनेवाला।

ऋजिश्वा (वै० पु०) ऋग्वेदोक्त एक राजा।

ऋजीक (सं० त्रि०) ऋज्-ईकन्-कित्। ऋजेश्च। उण् ४।२२। १ रञ्जित, रंगा हुआ। २ मिश्रित, मिला हुआ। ३ उपहत, बिगड़ा हुआ। (पु०) ४ इन्द्र। ५ धूम, धूवां। ६ साधन, तदबीर। ७ पर्वतविशेष, एक पहाड़।

ऋजीति (सं० पु०) ऋजु गच्छति, ऋजु-इ-क्तिच्, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ ऋजुगामी बाण, सीधा जानेवाला तीर। (त्रि०) २ प्रज्वलित, जलता हुआ।

ऋजीष (सं० पु०) अर्ज्यते रसोऽस्मात्, अर्ज्-ईषन् ऋजादेशश्च। अर्जेर्ऋज च। उण् ४।२८। १ भ्राष्ट, तवा। २ नरकविशेष। ३ नीरस सोमलताका चूर्ण। ४ धन। ५ सोमलता-निःसृत रस।

ऋजीषिन् (सं० त्रि०) १ झपटने या पकड़नेवाला। २ नीरस सोमलताके चूर्णसे बना हुआ।

ऋजु (सं० त्रि०) अर्जयति गुणान्, साधुः। अर्जिदृशि कम्यमोति। उण् १।२८। १ अवक्र, सीधा। संस्कृत पर्याय अजिह्म, प्रगुण, प्राञ्जल और सरल है। २ अनुकूल, मुवाफ़िक़। ३ सुन्दर, खूबसूरत। (पु०) ४ वसु-देवके एक पुत्र। "ऋजुं सम्मर्दनं भद्रं सङ्कर्षणमहीश्वरम्।" (भागवत ९।२४।५४)

ऋजुकाय (सं० त्रि०) ऋजुः कायो यस्य, बहुव्री०। १ अवक्रदेह, सीधे जिस्मवाला। (पु०) २ कश्यपमुनि।

ऋजुक्रतु (वै० त्रि०) उचित कार्य करनेवाला, जो ईमान्दारीसे चलता हो। (सायण)

ऋजुग (सं० त्रि०) ऋजु यथा स्यात् तथा गच्छति, ऋजु-गम-ड। १ सरल व्यवहारी, सीधा बरताव करनेवाला। २ सरलगामी, सीधा चलनेवाला। (पु०) ३ बाण, तीर।

ऋजुगाथ (सं० त्रि०) शुद्ध गान करनेवाला, जो ठीक गाता हो।

ऋजुता (सं० स्त्री०) ऋजोर्भावः। १ सरलता, सीधा-पन। अवक्रता, खड़ाखड़ी। २ अकापट्य, ईमान्दारी।

ऋजुदास (सं० पु०) वसुदेवके एक पुत्र।

ऋजुधा (सं० अव्य०) अवक्र भावसे, सीधे, ठीक तौरपर।

ऋजुनीति (सं० स्त्री०) सरल व्यवहार, सीधी चाल।

ऋजुमुश्क (वै० त्रि०) सुदृढ़ एवं बलवान्, मज़बूत और ताक़त वर, हट्टाकट्टा। (सायण)

ऋजुरश्मि (सं० त्रि०) सरल रज्जुविशिष्टयुक्त, जो रस्सीके सीधे निशान् रखता हो।

ऋजुरेख (सं० स्त्री०) ऋजुश्चासौ रेखा चेति। सरल रेखा, सीधा कत।

ऋजुरोहित (सं० क्ली०) सरल इन्द्रधनु।

ऋजुवनि (वै० त्रि०) अनुकूलहस्त, जो अच्छी चीज़ देता हो। (ऋक् ४।४१।१५)

ऋजुशंस (सं० त्रि०) ऋजु यथा तथा शंसति कथयति, ऋजु-शंस-अच्। सरलभाषी, सीधा बोलनेवाला।

ऋजुश्रेणी (सं० स्त्री०) मूर्वा, किसी किस्मका पटसन।

ऋजुसर्प (सं० पु०) ऋजुश्चासौ सर्पश्चेति, निपातनात् कर्मधा०। १ सर्प विशेष, किसी किस्मका सांप। २ दर्वीकर सर्प, बड़े फनका सांप।

ऋजुसूत्र (सं० क्ली०) जैन वृत्तिविशेष। यह सप्रमाण तथा निर्धारित अर्थको लेता है। भूत एवं भविष्यत् इसके भावमें कुछ भी नहीं। ऋजुसूत्र केवल प्रत्यक्ष विषयपर विश्वास रखता है।

ऋजुहस्त (सं० त्रि०) विस्तारितपाणि, हाथ फैलाये हुआ।

ऋजूक (सं० पु०) ऋज-ऊकङ्। १ देशविशेष, एक मुल्क। २ पर्वत विशेष, एक पहाड़। इसी देश या पर्वतसे विपाशा नदी निकली है।

ऋजूकरण (सं० क्ली०) अनृजु ऋजु क्रियते, ऋजु-अभूत तद्भावे च्वि-कृ-ल्युट्, पूर्वदीर्घः। १ सरल बनानेका कार्य, सीधा करनेकी हालत। २ सुश्रुतोक्त यन्त्रकर्म विशेष।

ऋजूकृत (सं० त्रि०) सरल किया हुआ, जो सीधा बनाया गया हो।

ऋजूयत् (सं० त्रि०) ऋजु गच्छति, अथवा ऋजू गच्छति, ऋजु-क्यच्, ऋजुय-शतृ। ऋजुगामी, सीधा जानेवाला।

ऋजूया, ऋजुरेखा देखो।

ऋजूयु (सं० त्रि०) १ धार्मिक, ईमान्दार। २ सरल, सीधा।

ऋज्र (सं० पु०) ऋज-रन्। ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रेत्यादिना निपातनात् रन् गुणाभावः। उण् २।२८। १ नायक, रहनुमान्। (त्रि०) २ सरलगामी, सीधा चलनेवाला। ३ रक्ताभ, स्याहीमायल सुर्ख़, लालभूरा।

ऋज्वी (सं० स्त्री०) ऋजु-ङीष्। १ सरलतामयी स्त्री, सीधी औरत। २ ग्रहगणकी एक गति।

ऋञ्जसान (सं० पु०) ऋज असानच्-कित्। ऋञ्जिवृधिमन्दिसहिभ्यः कित्। उण् २।८७। १ मेघ, बादल। (त्रि०) २ धावमान, दौड़ता हुआ।

ऋण (धातु) तना० उभ० सक० सेट। "ऋणुङ्ज गतौ।" (कविकल्पद्रुम) गमन करना, जाना।

ऋण (सं० क्ली०) ऋ-क्त णत्वञ्च। ऋणमाधमर्ण्ये। पा ८।२।६०। १ उधार, क़र्ज़, देना।

"जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणी भवति ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः।" (मिताक्षरा)

ब्राह्मण ऋषिऋण, देव ऋण और पितृ ऋण त्रिविध ऋण लेकर जन्म लेता है। ब्रह्मचर्यसे ऋषिऋण, यज्ञकर्मसे देवऋण और पुत्रोत्पादनसे पितृऋण छूटता है। २ दुर्गम भूमि, बीहड़ ज़मीन्। ३ पाप, इज़ाब। ४ दुर्ग, किला। ५ जल, पानी। ६ क्षयराशि, बाक़ी। (पु०) ७ व्यास मुनि। (त्रि०) ८ अङ्कशास्त्रोक्त संख्याविशिष्ट, जो किसी घटायी हुयी अदतसे मिला हो। ९ पापी, बुरा काम करनेवाला। १० गमनकारी, जानेवाला।

ऋणकर्ता (सं० त्रि०) ऋण लेनेवाला, क़र्ज़दार, जो उधार लेता हो। "ऋणकर्ता पिता शत्रुः।" (चाणक्य)

ऋणकाति (वै० त्रि०) ऋणवत् फलप्रदा कातिः स्तुतिर्यस्य, बहुव्री०। अवश्यफलदायक स्तुतिशाली, जो तारीफ़की क़र्ज़की तरह मञ्जूर कर फ़ायदा बख़्शता हो।

ऋणग्रस्त (सं० त्रि०) ऋणेन ग्रस्तः, ३-तत्। बहुऋणयुक्त, क़र्ज़से लदा हुआ।

ऋणग्रह (सं० पु०) १ ऋण लेनेका काम, क़र्ज़दारी। २ ऋण लेनेवाला, जो क़र्ज़ करता हो।

ऋणग्राहक (सं० त्रि०) ऋणं गृह्णाति, ऋण-ग्रह-ण्वुल्। अधमर्ण, ऋणकारक, क़र्ज़ लेनेवाला।

ऋणग्राही, ऋणग्राहक देखो।

ऋणचित् (वै० त्रि०) ऋणमिव चिनोति, चि-क्विप् तुगागमश्च। १ पापका दण्ड देनेवाला, जो इज़ाबको दबाता हो। २ परिशोधके लिये स्तुतिको ऋणकी तरह ग्रहण करनेवाला, जो अदा करनेके लिये तारीफ़को क़र्ज़की तरह लेता हो।

ऋणच्युत् (सं० त्रि०) ऋण वा पापसे छुटकारा देनेवाला, जो क़र्ज़ या इज़ाबको छोड़ाता हो।

ऋणञ्चय (सं० पु०) १ ऋग्वेदोक्त एक राजा। २ ऋषि विशेष।

ऋणद (सं० त्रि०) ऋण परिशोध करनेवाला, जो क़र्ज़ चुकाता हो।

ऋणदाता, ऋणद देखो।

ऋणदान (सं० क्ली०) ऋणस्य दानम्, ६-तत्। ऋणपरिशोध, अदा-क़र्ज़, उधारकी चुकती।

ऋणदायक (सं० त्रि०) ऋणं ददाति, ऋण-दा-ण्वुल्। ऋणदाता, क़र्ज़ देनेवाला।

ऋणदायी, ऋणद देखो।

ऋणदास (सं० त्रि०) दासविशेष, एक नौकर। ऋणके लिये दासत्व स्वीकार करनेवाला ऋणदास कहलाता है।

ऋणमत्कुण (सं० पु०) ऋणे मत्कुण इव, ७-तत्, ऋणं परकृतं ममैव इति कुणति वदति, ऋण-अस्मत्-कुण-क। प्रतिभू, लग्नक, ज़ामिन्।

ऋणमार्गण (सं० पु०) ऋणं मार्गयति परार्थं स्वगतत्वेन प्रार्थयते, ऋण-मार्ग-ल्यु। प्रतिभू, ज़ामिन्, अपनी ज़िम्मेवारी पर दूसरेको रुपया उधार दिलानेवाला।

ऋणमुक्त (सं० त्रि०) ऋणात् मुक्तः, ५-तत्। ऋण परिशोध किये हुआ, जो क़र्ज़ अदा कर चुका हो।

ऋणमुक्ति (सं० स्त्री०) ऋणात् ऋणस्य वा मुक्तिर्भवत्यस्मात्। ऋण-मुच्-क्ति। ऋणपरिशोध, अदा-क़र्ज़।

ऋणमोक्ष (सं० पु०) ऋणात् मोक्षः ५-तत्। ऋणपरिशोध, अदा-क़र्ज़।

ऋणमोचन (सं० क्ली०) ऋणात् मोचयति, ऋण-मुच्-णिच्-ल्यु। काशीस्थ तीर्थविशेष। (काशीखण्ड)

ऋणया (सं० त्रि०) १ पापका दण्ड देनेवाला, जो इज़ाबको दबाता हो। २ पाप वा ऋण दूर रखनेवाला, जो इज़ाब या क़र्ज़को अलग रखता हो।

ऋणयावन्, ऋणया देखो।

ऋणलेख्य (सं० क्ली०) ऋणग्रहणका उपयोगी पत्र, तमस्सुक। तमस्सुक देखो।

ऋणवत्, ऋणवान् देखो।

ऋणवान् (सं० त्रि०) ऋण रखनेवाला, क़र्ज़दार।

ऋणशुद्धि (सं० स्त्री०) ऋणशोधन देखो।

ऋणशोधन (सं० क्ली०) ऋणका परिशोध, क़र्ज़की चुकती।

ऋणादान (सं० क्ली०) ऋणस्य आदानम्, ६-तत्। १ अधमर्णसे उत्तमर्णके धनकी प्राप्ति, क़र्ज़दारसे महाजनके रुपयेकी चुकती। २ स्मृतिशास्त्रोक्त अष्टादश विवादोंके अन्तर्गत एक व्यवहार। व्यवहार देखो।

ऋणान्तक (सं० पु०) ऋणहर्ता मङ्गल ग्रह।

ऋणापकरण (सं० क्ली०) ऋणस्य अपकरणं अपनोदनम्, ६-तत्, अप्-कृ-ल्युट्। ऋणपरिशोध, क़र्ज़की चुकती।

ऋणापनोदन (सं० क्ली०) ऋणस्य अपनोदनम्, ६-तत्, अप-नुद्-ल्युट्। ऋणशोध, क़र्ज़से छुटकारा।

ऋणापाकरण, ऋणापकरण देखो।

ऋणार्ण (सं० क्ली०) ऋणपर ऋण, सूददरसूद।

ऋणिक (सं० त्रि०) ऋणमस्यास्ति, ऋण-ठन्। ऋणी, क़र्ज़दार।

"द्विगुणं प्रतिदातव्यं ऋणिकैस्तस्य तद्धनम्।" (याज्ञवल्क्य)

ऋणिधनिचक्र (सं० क्ली०) तन्त्रोक्त ग्राह्यमन्त्रका शुभाशुभ-प्रकाशक चक्रविशेष। रुद्रयामलमें लिखा है—

"कोष्ठान्येकादशान्येव वेदैन पूरितानि च।
अकारादि हकारान्तं लिखेत् कोष्ठेषु तन्त्रवित्।
प्रथमं पञ्चकोष्ठेषु ह्रस्वदीर्घक्रमेण तु॥
ह ड द्वयं लिखेत् तत्र विचारे खलु साधकः।
शेषेष्वेकैकशो वर्णान् क्रमतस्तु लिखेत् सुधीः॥
षट्कालकालवियदग्निसमुद्रवेद-
खाकाशशून्यदहनाः खलु साध्यवर्णाः।
युग्मद्विपञ्चवियदम्बरयुक्शशाङ्क-
व्योमाब्धिवेदशशिनः खलु साधकार्णाः॥
नामाज्झलादकठवादगजभूक्तशेषं
ज्ञात्वोभयोरधिकशेषमृणं धनं स्यात्॥"

पहले एकादश कोष्ठ बना चार भागसे पूरण करना चाहिये। उन्हीं कोष्ठोंमें अकारादि क्रमसे हकार तक लिखते हैं। प्रथम पांच कोष्ठोंमें ह्रस्व और दीर्घ क्रमसे दो-दो वर्ण बना फिर क्रमान्वयसे एक एक वर्ण खींचा जाता है। उसके बाद सब कोष्ठोंके ऊपर सिलसिलेवार ६, ६, ६, ०, ३, ४, ४, ०, ०, ०, ३ और नीचे २, २, ५, ०, ०, २, १, ०, ४, ४, १ अक्षर लगाना चाहिये। साध्य वर्णसमूह अर्थात् स्वरव्यञ्जन रूपसे पृथक्कृत वर्ण तथा ६ प्रभृति वर्णसमूहके साथ मिलित अङ्क एवं साधकका नामाक्षरसमूह स्वरव्यञ्जन-रूपसे पृथक् कर २ प्रभृति अङ्कसे मिलानेपर दोनों अर्थात् साध्य और साधकके अङ्कराशिद्वयको ८से बांटते हैं। दोनोंमें साध्यका अङ्क अधिक आनेसे ऋण और साधकका अङ्क अधिक आनेसे धन होता है।

६	६	६	०	३	४	४	०	०	०	३
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
२		५	०	०	२	१	०	४	४	१

मान लीजिये—साध्यमन्त्र ह्रीं और साधकका नाम हरि है। मन्त्रका अङ्क ६ और साधकका अङ्क (ह+अ का अङ्क १+२ और र+इ का अङ्क ०+२) ५ होता है। अतएव साध्य अङ्क ६ और साधकके अङ्क ५ दोनोंमें ८ से भाग नहीं लगता। इसमें साधककी अपेक्षा साध्यका एक अङ्क अधिक रहनेसे ऋण पड़ता है। विपरीत होनेसे धन समझा जाता।

मन्त्र 'ऋणयुक्त' रहनेसे शुभप्रद और धनयुक्त रहनेसे अशुभप्रद होता है। साध्य अर्थात् मन्त्रवर्ण अधिक पड़नेसे जप करना चाहिये—

> "मन्त्रो यद्यधिकाङ्कः स्यात् तदा मन्त्रं जपेत् सुधीः।
> समेऽपि च जपं मन्त्रं न जपेत्तु ऋणाधिके॥
> शून्ये मृत्युं विजानीयात् तस्माच्छून्यं विवर्जयेत्॥"

मन्त्रका वर्ण अधिक वा सम रहनेसे जपना योग्य है, किन्तु ऋण अधिक पड़नेसे जप करना निषिद्ध है। शून्यमें मृत्यु होता है।

ऋणिया (हिं०) ऋणी देखो।

ऋणी (सं० त्रि०) ऋणमस्त्यस्य, ऋण-इनि। ऋणग्रस्त, कर्ज़दार।

ऋणोद्ग्राहण (सं० क्लो०) ऋणस्य उद्ग्राहणं ६-तत्। प्राप्य ऋणको प्रार्थना करते भी यदि अधमर्ण नहीं चुकाता, तो उसके साथ मनुका कहा व्यवहार चलाया जाता है—"धर्म, व्यवहार, छल, आचरित और बल-प्रयोगके उत्तरोत्तर किसी उपायसे प्राप्य अर्थका उद्धार करना चाहिये। अधमर्णके आत्मीय सुहृद्गणसे प्रिय वाक्यमें अर्थ प्रार्थन और अनुगमन करनेको धर्म कहते हैं। चुकते समय पर्यन्त अधमर्णको साक्षी दिव्यादिके मध्य आवद्ध करके रखनेका नाम व्यवहार है। कौशल क्रममें संग्रह कर ऋणिककी धनसम्पत्तिसे ऋण वसूल करना छल कहलाता है। स्त्री, पुत्र, पशु प्रभृतिको रोक अथवा अधमर्णके द्वारदेशपर बैठकर ऋणको चुकती आचरित है। अपने मकान् पर ला अधमर्णको मारना-पीटना बलप्रयोग समझा जाता है।"

कात्यायनने कहा है—राजा, प्रभु एवं विप्रसे मीठे बोल, ज्ञाति तथा शत्रुसे धोका दे, वणिक्, कृषक तथा शिष्यसे कड़ी बात कह और दुष्ट व्यक्तिसे मार-मार कर ऋणग्रहण करना चाहिये।

ऋत् (धातु) भ्वा० पर०, (इयङपक्षे) आत्म० (गत्यर्थे) सक; (अन्यार्थे) अक० सेट्। १ गमन करना, जाना। २ स्पर्धा करना, बराबरी मिलाना। ३ घृणा करना, नफ़रत रखना। ४ दया करना, रहम लाना। ५ ऐश्वर्य रखना, ताक़तवर होना।

ऋत (सं० क्लो०) ऋ-क्त। १ उञ्छवृत्ति, सिल्ला बीन-कर गुज़र करनेका रोज़गार।

> "ऋतमुञ्छशीलं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम्।
> मृतन्तु याचितं भैक्षं प्रमृतं कर्षणं स्मृतम्॥" (मनु ४।५)

२ जल, पानी। ३ सत्य, सचाई। ४ व्यवस्था, का-नून्। ५ धर्मनीति, पाकीज़ रस्म। (पु०) ६ विष्णु।

> "सहिसत्यमृतञ्चैव पवित्रं पुण्यमेव च।" (भारत १।१।२५३)

७ सूर्य, आफ़ताब। ८ परब्रह्म। ९ रुद्र। १० देवताविशेष। ११ यज्ञ। १२ दक्षकन्याके गर्भजात धर्मपुत्र। १३ मिथिलेश्वर विजयके पुत्र। इनके पुत्रका नाम शुनक था। (त्रि०) १४ दीप्त, चमकीला। १५ पूजित, इज़्ज़तदार। १६ उचित, ठीक। १७ धार्मिक, ईमान्दार। १८ सत्य, सच्चा। १९ गत, गया हुआ।

ऋतचित् (वै० त्रि०) यज्ञ वा जलको समझनेवाला। (सायण)

ऋतजात (सं० त्रि०) उचित समयपर होनेवाला, जो ठीक वक़्तपर पड़ा हो।

ऋतजातसत्य (वै० त्रि०) धार्मिक व्यवस्थाके अनुसार मुख्य विषय समझनेवाला, यज्ञके निमित्त जन्म लेने और उचित फल पानेवाला। (सायण)

ऋतजित् (वै० पु०) ऋतं जयति, ऋत-जि-क्विप् तुगागमश्च। १ यज्ञविशेष। (त्रि०) २ यज्ञजेता, हक़ हासिल करनेवाला।

ऋतजुर् (वै० त्रि०) अतिशय वार्धक्यप्राप्त, जो धार्मिक अर्चनमें बुड्ढा पड़ गया हो। (सायण)

ऋतज्ञा (वै० त्रि०) सम्यक् अवगत, धर्मनीति समझनेवाला, जो यज्ञको जानता हो। (सायण)

ऋतज्य (वै० त्रि०) उत्तम ज्यायुक्त, जो सचाईका रोदा रखता हो। (सायण)

ऋतद्युम्न (सं० त्रि०) ऋतं द्युम्नं कीर्तिर्यस्य, बहुव्री०। सत्यको ही अपनी कीर्ति बनानेवाला, जो सचाईके लिये मशहूर हो।

ऋतधामा (सं० पु०) ऋतं धाम अस्य, बहुव्री०। १ विष्णु। २ परमेश्वर। ३ इन्द्रविशेष। यही त्रयोदश मन्वन्तरके मनु होंगे। (त्रि०) ४ शुद्ध प्रकृतिवाला, जो सच्ची क़ुदरतका हो।

ऋतधीति (वै० त्रि०) प्रकृत स्वभाववाला, जो सच्ची तारीफ़ पाता हो। (सायण)

ऋतध्वज (सं० पु०) १ ब्रह्मविशेष। २ रुद्रविशेष। ३ राजा शत्रुजित्के पुत्र। ४ वैदिश नगरके एक राजा। ५ प्रत्यर्दनका नामान्तर।

ऋतनि (वै० पु०) ऋतं जलं नयति, ऋत-नी-क्विप्, ह्रस्वश्च निपातनात्। १ सूर्य, आफ़ताब। (त्रि०) २ सत्यका नेता, सचाईका रहनुमा। (सायण)

ऋतपर्ण (सं० पु०) सूर्यवंशीय एक राजा। यह अयुताश्वके पुत्र थे। नल राजाने इनके निकट सारथि बन कलिकोपका शेषकाल बिताया था। अक्षक्रीड़ा और गणना विषयमें इन्हें विशेष पारदर्शिता रही। कलिभयनाशक नामावलीमें यह भी कीर्तित हैं—

"कर्कोटकस्य नागस्य दमयन्त्या नलस्य च।
ऋतुपर्णस्य राजर्षे: कीर्तनं कलिनाशनम्॥"

ऋतपा (वै० त्रि०) सत्यको न छोड़नेवाला, जो सचाईपर रहता हो। (सायण)

ऋतपेय (सं० पु०) ऋतं स्वर्गफलं पेयं भोग्यमस्मात्, बहुव्री०। यज्ञविशेष। यह यज्ञ क्षुद्र पाप दूर करनेका है।

ऋतपेशा (वै० पु०) ऋतं जलं पेशो रूपं यस्य, बहुव्री०। वरुण।

"वरुणाय ऋतपेशसे दधीत।" (ऋक् ५।६६।१)

ऋतप्रजात (वै० त्रि०) १ उचित समय पर होनेवाला, सच्ची प्रकृति रखनेवाला। २ जो सत्य समझता हो। ३ जलसे उत्पन्न। (सायण)

ऋतप्रवीत (वै० त्रि०) उचित रूपसे विचारा हुआ, यज्ञ, सत्य वा जलसे भरा हुआ। (सायण)

ऋतप्सु (वै० पु०) १ यज्ञीय हविर्भोजी देवताविशेष। २ सत्यस्वरूप देवता। (त्रि०) ३ पूर्णाकृतियुक्त, पूरी सूरत-शकल वाला। ४ सत्यरूपी या यज्ञीय हवि: खानेवाला। (सायण)

ऋतम् (सं० अव्य०) ऋत-क्मि। सत्य, ठीक।

ऋतम्भर (सं० पु०) ऋतं बिभर्ति, ऋतम्, भृ-खच्। १ सत्यपालक, सचाई रखनेवाला। २ परमेश्वर। (त्रि०) ३ अपनेमें सचाई रखनेवाला।

ऋतम्भरा (सं० स्त्री०) १ बुद्धि, अक़्ल। २ प्लक्षद्वीपान्तर्गत नदीविशेष।

ऋतयुक्ति (वै० स्त्री०) १ सत्यसंयोग, सच्चा मेल। २ ऋक्का उचित उपयोग, भजनका ठीक लगाव। (सायण)

ऋतयुज् (वै० त्रि०) १ सम्यक् सज्जित, ख़ूब सजा हुआ। २ यज्ञको जानेवाला। (सायण)

ऋतवत् (वै० त्रि०) उचितवक्ता, जो सच कहता हो।

ऋतवाक् (वै० पु०) सत्य भाषण, रास्तगोई।

ऋतवादी (वै० त्रि०) ऋतं सत्यं वदति, ऋत-वद-णिनि। सत्यवादी, सच बोलनेवाला।

ऋतव्रत (सं० पु०) शाकद्वीपस्थ एक उपासक।

ऋतसद् (वै० पु०) ऋते यज्ञे सीदति, ऋत-सद-क्विप्। १ अग्नि। (त्रि०) २ सत्यमें प्रतिष्ठित, सचाईमें रहनेवाला। ३ यज्ञस्थानीय। (सायण)

ऋतसदन (वै० क्लो०) ऋताय यज्ञाय सीदत्यस्मिन्, ऋत-सद-ल्युट्। यज्ञार्थ उपवेशन-स्थान, ठीक या मामूली बैठक।

ऋतसाप् (वै० त्रि०) १ यज्ञ प्रदान करनेवाला, जो पत्र देता हो।

"ये चिद्धिपूर्वे ऋतसाप आसन्।" (ऋक् १।१७९।२)

"ऋतसाप ऋतस्य यज्ञस्यापरितारः।" (सायण)

२ धार्मिक कार्य करनेवाला। ३ धार्मिक विश्वासमें दृढ़।

ऋतस्तुभ् (वै० पु०) उचित रूपसे स्तुति करनेवाले एक वैदिक ऋषि।

ऋतस्था (वै० त्रि०) उचित रूपसे दण्डायमान, सीधा खड़ा होनेवाला।

ऋतस्पति (सं० पु०) ऋतस्य यज्ञस्य पतिः, ६-तत्। १ यज्ञपति। २ वायु।

ऋतस्पृक् (वै० त्रि०) १ सत्यसे प्रेम रखनेवाला, जो सचको चाहता हो। २ जलको स्पर्श करनेवाला, जो पानीको छूता हो।

ऋतानृत (सं० क्लो०) सत्य और असत्य, झूठ-सच।

ऋतायु (वै० त्रि०) १ धार्मिक व्यवस्थापर चलनेवाला। २ यज्ञाभिलाषी, जो यज्ञ करना चाहता हो। (सायण)

ऋतायी, ऋतायु देखो।

ऋतावन् (वै० त्रि०) ऋतमस्यास्ति, ऋत-वनिप् दीर्घश्च। १ यज्ञविशिष्ट। २ प्रकृत व्यवहारयुक्त, सच्चे चाल-चलनवाला। ३ पवित्र, पाक, माननेवाला। ४ खाद्य उधार मांगनेवाला।

ऋतावृध् (वै० त्रि०) ऋतं यज्ञं वर्धयति, ऋत-वृध-क्विप् दीर्घश्च। १ यज्ञवर्धक। २ सत्य एवं प्रेमसे प्रसन्न रहनेवाला।

ऋताषह्, ऋताषात् देखो।

ऋताषात् (वै० पु०) धार्मिक व्यवस्थाको प्रतिपालन करनेवाला।

ऋति (सं० स्त्री०) ऋ-क्तिन्। १ कल्याण, भलाई। २ पथ, राह। ३ निन्दा, हिकारत। ४ स्पर्धा, हसद। ५ गमन, चाल। ६ अमङ्गल, बुराई। ७ नरमेध यज्ञस्थ देवताविशेष। ८ आक्रमण, हमला। ९ रीति, चलन। १० सम्पद्, खुशहाली। ११ सत्य, रास्ती। १२ स्मरण, याद। १३ शरण, पनाह। १४ दुर्भाग्य, बदबख्ती।

ऋतिङ्कर (सं० त्रि०) ऋतिं करोति, ऋति-कृ-खच्-मुम्। १ शुभकारक, भलाई करनेवाला। २ अमङ्गल-कारक, बुराई करनेवाला।

ऋतीया (सं० स्त्री०) ऋत-ईयङ् टाप्। १ घृणा, नफ़रत। २ जुगुप्सा, हिकारत। ३ लज्जा, शर्म।

ऋतीषह् (वै० त्रि०) ऋतिं पीडां शत्रुं वा सहते, ऋति-सह-क्विप्, दीर्घः षत्वञ्च। १ पीड़ा सहन करने-वाला, जो तकलीफ़ उठाता हो। २ शत्रुको वशीभूत करनेवाला, जो दुश्मनको दबाता हो।

ऋतीषात्, ऋतीषह् देखो।

ऋतु (सं० पु०) ऋ-तुः-कित्। अर्तेश्च तुः। उण् १।७२।

१ काल विशेष, मौसम, गरमी, बरसात और जाड़ेका समय। हिम, शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा और शरत् छह ऋतु होते हैं। वेदमें पांच और पाश्चात्य शास्त्रमें चार ऋतु कहे हैं। साधारण लोग तीन ही ऋतु मानते हैं।

पहले सोचना चाहिये—ऋतु पड़नेका कारण क्या है? आदिवेद ऋक्संहिताके मतसे सूर्य ही ऋतुके विभागकारी हैं—

"उत्संहायास्थाद्व्यृतूंरदर्धररमतिः सविता देव आगात्।" (ऋक् २।३८।४)

विरामहीन और ऋतुविभागकारी ज्योतिष्मान् सूर्य जब फिर निकलते, तब मानव शय्या छोड़ चलते हैं।

ऋक्संहिताके मतसे ऋतु पांच हैं। कोई-कोई छह भी बताता है।

"पञ्चपादं पितरं द्वादशाकृतिं दिव आहुः परे अर्धे पुरीषिणं। अथे मे अन्य उपरे विचक्षणं सप्तचक्रे षडर आहुरर्पितं।" (ऋक् १।१६४।१२)

पञ्चपाद और द्वादश आकृतिविशिष्ट आदित्य स्वर्गके परम अर्धपर रहते, जिन्हें कुछ लोग पुरीषी कहते हैं। जब अपर अर्धपर आते, तब वह किसी किसीके मुंह छह अरयुक्त सप्त चक्रविशिष्ट रथमें अर्पित कहे जाते हैं।

यहां पञ्चपादका अर्थ पञ्चऋतु है। सायणके मतसे हेमन्त और शिशिरको एक ही मान पञ्च ऋतु कहे हैं।

ऋक्संहितामें इसका भी आभास मिलता, कि पृथिवीकक्षकी गतिके अनुसार ऋतु बदलता है।

"पञ्चारे चक्रे परिवर्तमाने तस्मिन्ना तस्थुर्भुवनानि विश्वा।
तस्य नाक्षस्तप्यते भूरिभारः सनादेव न शीर्यते सनाभिः॥"
(ऋक् १।१६४।१३)

परिवर्तनशील पञ्च अरयुक्त चक्रमें निखिल भुवन लीन है। उसका अक्ष अधिकतर भार वहनसे भी क्लान्त नहीं होता। उसकी नाभि चिरकाल समान रहती और कभी शीर्ण नहीं पड़ती।

सुश्रुतने लिखा है—

"संवत्सरात्मनो भगवानादित्यो गतिविशेषेणाक्षिनिमेषकाष्ठाकला-मुहूर्ताहोरात्रपक्षमासर्त्वयनसंवत्सरयुगप्रविभागं करोति।" (सूत्र० ३अ०)

भगवान् सूर्य गतिविशेष द्वारा कालके देहको अक्षि, निमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर और युग अंशमें बांटते हैं।

सुश्रुतके मतसे—शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरत् और हेमन्त छह ऋतु होते हैं। द्वादश मासके मध्य माघ-फाल्गुन शिशिर, चैत्र-वैशाख वसन्त, ज्येष्ठ-आषाढ़ ग्रीष्म, श्रावण-भाद्र वर्षा, आश्विन-कार्तिक शरत् और अग्रहायण-पौष हेमन्त है। शीत, उष्ण और वर्षा आदि ऋतुका लक्षण है। काल चन्द्रसूर्य द्वारा विभक्त होनेसे दो अयन पड़ते हैं, दक्षिणायन और उत्तरायण। दक्षिणायनमें वर्षा, शरत् और हेमन्त तीन ऋतु लगते हैं। कारण चन्द्र तेजःपुञ्ज हो जाते हैं। इसीसे अम्ल, लवण और मधुर तीन रसोंको ओषधि विशेष रूपसे उत्पन्न होती हैं। प्राणीमात्र क्रमशः बलवान् बनने लगते हैं। उत्तरायण कालमें शिशिर, वसन्त और ग्रीष्मका आगमन होता है। कारण सूर्य तेजःपुञ्ज रहा करते हैं। इसीसे कटु, कषाय और तिक्त तीन रसोंका बल बढ़ता और प्राणियोंका पराक्रम क्रमशः घटता है।

आयुर्वेदके मतान्तरसे—वर्षा, शरत्, हेमन्त, वसन्त, ग्रीष्म और प्रावृट् छह ऋतु हैं। भाद्र-आश्विन वर्षा, कार्तिक-अग्रहायण शरत्, पौष-माघ हेमन्त, फाल्गुन-चैत्र-वसन्त, वैशाख-ज्येष्ठ ग्रीष्म और आषाढ़-श्रावण प्रावृट्का समय होता है।

छह ऋतुके मध्य वर्षाकालमें नूतन ओषधि उपजती, इसीसे अल्पवीर्य, जल क्लेदयुक्त और मृत्तिका-मलपूर्ण रहती हैं। इस ऋतुमें आकाश मेघाच्छन्न होता है। भूमि और प्राणिगणका देह दोनों जलसे आर्द्र पड़ जाते हैं। आर्द्र देहमें शीतल वायुके संयोगसे अग्निमान्द्य आता है। सुतरां नूतन अल्पवीर्य ओषधि खाने या अपरिष्कृत जल पीने पर परिपाकके समय अम्लरस बढ़ता और गला जलने लगता है। पित्तका सञ्चय होनेसे विदाह अजीर्ण घेर लेता है। शरत्कालमें आकाश मेघशून्य रहने और कर्दम शुष्क पड़नेसे सञ्चित पित्त सूर्यकिरण द्वारा समस्त शरीरमें फैल पैत्तिक व्याधि उपजाता है। हेमन्त-कालमें ओषधि परिपक्व और बलवान् होती हैं। जल निश्चल रहता है। सूर्यका तेज क्रमशः घटने लगता है। इसीसे हिम और शीतल वायु द्वारा प्राणिगणका देह जड़ीभूत पड़ जाता है। फिर स्निग्ध, शीतल, गुरुपाक एवं पिच्छिल ओषधि समूह और जल द्वारा शरीरमें श्लेष्माका सञ्चय होता है।

वसन्तकालमें जीवका शरीर अल्प जड़ीभूत रहता है। पूर्वसञ्चित श्लेष्मा सूर्यकिरण द्वारा सर्वशरीरमें फैल जानेसे अपना रोग बढ़ा देता है।

ग्रीष्मकालमें जल लघु पड़ जाता है। ओषधि नीरस, रूक्ष और लघु लगती है। सूर्यके किरणसे प्राणिगणका शरीर भी शुष्कप्राय देख पड़ता है। ऐसे ओषधिभक्षण और जलपानपर नीरस, रूक्षता तथा

लघुतासे प्राणीके शरीरमें वायुका सञ्चार होता है। प्राव्ट्‌ कालमें भूमि और प्राणीका देह दोनों आर्द्र पड़ जाते हैं। सञ्चित वायु शरीरमें व्याप्त रहता है। इसीसे वातिक व्याधि उठ खड़ा होता है। फिर वायु पित्त और कफके त्रिदोषका सञ्चय भी, प्रकोपका कारण बनता है। वर्षा, हेमन्त, ग्रीष्म, शरत्‌, वसन्त और प्राव्टमें पित्त, श्लेष्मा तथा वातका जो दोष बढ़ता, उसका प्रतीकार करना पड़ता है।

किसी-किसी दिन प्रातःकाल वसन्त, मध्याह्न ग्रीष्म, अपराह्न प्राव्ट, सन्ध्या वर्षा, अर्धरात्र शरत्‌ और रात्रिके अवसान पर हेमन्तका लक्षण झलकता है। दिवारात्रिके मध्य ऐसा होनेसे वात, पित्त तथा श्लेष्माका सञ्चय, प्रकोप एवं प्रतीकार पड़ने लगता है। ऋतुमें व्यतिक्रम आने अर्थात्‌ उचित समय ऋतुका लक्षण न देखानेसे ओषधि एवं जलकी अवस्था बिगड़ती और मानवगणको नानाप्रकार अनिष्टकर पीड़ा पकड़ती है। यथाकाल ऋतु होनेसे ओषधि और जल दोनों स्वाभाविक अवस्थापर रहते हैं। उनके व्यवहारसे जीवगणका आयु, बल और वीर्य्य बढ़ता है। साधारणतः ऋतु अन्यथा नहीं होते। फिर भी समय समयपर ग्रहनक्षत्रकी किसी किसी गतिसे ऐसा देखनेमें आ जाता है।

हेमन्त ऋतुमें उत्तर दिक्‌से शीतल वायु चला करता है। उसमें दिक्‌ धूम तथा धूलि और भूमि हिमसे आवृत रहती है। ऐसे समय हस्ती प्रभृति उद्भिद्‌भोजी प्राणी बलवान्‌ पड़ जाते हैं। शिशिरकालमें अतिशय शीत होता है। प्रबल वायु बहता और और हेमन्तकालका सकल लक्षण झलकने लगता है। वसन्त कालमें दक्षिण दिक्‌से वायु चलता है। पृथिवी नानाप्रकार उपादेय फलपुष्पसे परिशोभित होती है। कोकिल प्रभृति पक्षिगणके सङ्गीतसे पृथिवी मनोहर वेश बनाती है। ग्रीष्मकालमें नैऋत कोणसे असुखकर वायु आता है। सूर्यका किरण तीक्ष्ण पड़ जाता है। भूमि उत्तप्त और दिक्‌ प्रज्वलित प्राय देखाई देती है। वृक्ष पर्णशून्य और जीवजन्तु तृष्णातुर रहते हैं। प्राव्ट्‌कालमें पश्चिमका वायु बहता है। पश्चिम दिक्‌से वायुसे मेघ आकृष्ट होकर आकाशमण्डलको घेरते हैं। विद्युत्‌ और गभीर गर्जनके साथ पानी बरसता है। वर्षाकाल सकल नदी जलसे भर जाती हैं। पृथिवी बहु शस्यसे परिशोभित होती है। मेघ अल्प गर्जनके साथ बरसता है। शरत्‌कालमें सूर्यके किरण खरतर बनते हैं। श्वेतवर्ण मेघ रहनेसे आकाश निर्मल देख पड़ता है। सकल भूमि सूख जाती है। सरोवरमें पद्मकुमुदादि खिलते हैं।

वसन्त कालपर यष्टिक, यव, शीत, मुद्‌ग, नीवार, कोद्रव प्रभृति शस्य; लाव, विष्किर (कपोत) प्रभृतिका मांस; यूष, पटोल, निम्ब, वार्ताकु प्रभृतिका व्यञ्जन; तीक्ष्ण, रुक्ष, कटु, क्षार, कषाय, शुष्क एवं उष्ण द्रव्य, और स्नान, मैथुन, बलप्रयोग तथा विहार प्रभृति उपकारी होता है। मधुर रस, स्निग्ध और गुरु द्रव्य छोड़ देना चाहिये। ग्रीष्म ऋतुको यव, यष्टिक, गोधूम, पुरातन तण्डुल, उष्णोष्ण मांस रस और गुरु, बलकर एवं कफकर द्रव्यका व्यवहार अच्छा है। नदीका जल, उष्ण एवं रुक्ष द्रव्य, अल्प जलयुक्त सक्तु, रौद्र, व्यायाम, दिवा निद्रा, मैथुन और मद्य सेवन करनेसे हानि होती है। जो प्रत्येक ऋतुमें इसीप्रकार व्यवहार करता, उसके ऋतुका रोग नहीं लगता।

युरोपीय ज्योतिर्विद्‌गणके मतमें पृथिवीकी आह्निक स्थितिसे कक्षके सम्बन्ध पर सकल ऋतु उदित होते हैं। सूर्यके दक्षिण अयनान्तविन्दुसे महाविषुवरेखाको जाते मध्यका समय शीत, महाविषुवसे उत्तरायणान्त विन्दुको जाते मध्यका समय वसन्त, उत्तरायणान्त विन्दुसे तुलाराशिको जाते मध्यका समय ग्रीष्म और तुलाराशिसे दक्षिण अयनान्तविन्दुको जाते शरत्‌ काल कहाता है। सूर्यके द्वारा ऋतुका उक्त परिवर्तन पृथिवीकी ही गतिसे पड़ता है।

२ स्त्रीरजः। ऋतुमती देखो। ३ दीप्ति, रौशनी, चमक। ४ मास, महीना। ५ सुवीर।

ऋतुकर (सं० पु०) महादेव, शङ्कर।

ऋतुकाल (सं० पु०) ऋतोः कालः, ६-तत्‌। १ ऋतुका

समय, मौसमका मौका। २ स्त्रीके रजोदर्शनकी प्रथम रात्रिसे षोड़श रात्रि पर्यन्त, औरतोंके महीनेकी सोलह रात। ऋतुमती देखो।

ऋतुकालीन (सं० त्रि०) ऋतुकालस्य इदम्, ईन्। ऋतुकालसम्बन्धीय, मौसमके मौके से सरोकार रखनेवाला।

ऋतुगण (सं० पु०) ऋतुसमूह, मौसमोंका जखीरा।

ऋतुगमन (सं० क्ली०) ऋतुके समयका स्त्रीसम्भोग, महीना आनेसे औरतके पास जानेका काम।

ऋतुगामी (सं० त्रि०) ऋतौ गच्छति, ऋतु-गम-णिनि। ऋतुकालपर सङ्गत होनेवाला, जो महीना होनेसे औरतके पास जाता हो।

ऋतुग्रह (सं० पु०) ऋतूनां ग्रहो यत्र, बहुव्री०। यज्ञविशेष, ऋतुकी शुद्धिके लिये किया जानेवाला यज्ञ।

ऋतुचर्या (सं० त्रि०) ऋतुका आचरण, मौसमका काम। ऋतुकालीन कर्मको ऋतुचर्या कहते हैं। जैसे वसन्तमें भ्रमण, ग्रीष्ममें दिवाशयन, वर्षामें अङ्गरागमर्दन, शरत्‌में विदेशगमन, और हेमन्त तथा शिशिरमें अग्नितपन प्रशस्त है।

ऋतुजित् (सं० पु०) मिथिलाराजवंशीय जनक राजा। यह कुशध्वजके परवर्ती सप्तम पुरुष थे।

ऋतुथा (सं० अव्य०) १ उचित वा नियत समयपर, मुनासिब या मुकर्रर वक्तसे। (सायण) २ समय-समयपर, कभी-कभी। (विष्णुपु० ५।१३) ३ क्रमशः, ठीक तौरपर। ४ भिन्नप्रकारसे, अलग-अलग।

ऋतुदान (सं० क्ली०) ऋतुकालका स्त्रीप्रसङ्ग, महीनेपर औरतकी सोहबत। यह पुत्रोत्पत्तिके लिये किया जाता है।

ऋतुधर्म (सं० पु०) ऋतूनां धर्मः, ६-तत्। ऋतुगणकी अवस्था, मौसमकी हालत।

ऋतुधामा (सं० पु०) १ द्वादश मनुकालीन इन्द्र।

> "रुद्रपुत्रस्तु सावर्णी भविता द्वादशो मनुः।
> ऋतुधामा च तत्रेन्द्रो भविता शृणु मे सुरान्॥" (विष्णुपु० ३।२२)

२ विष्णु।

ऋतुपति (सं० पु०) ऋतूनां पतिः श्रेष्ठः, ६-तत्। १ वसन्त ऋतु, मौसम-बहार। २ अग्नि, आग।

ऋतुपरिवर्त (सं० पु०) ऋतूनां परिवर्तः, ६-तत्। एक ऋतुके बाद दूसरे ऋतुका आगमन, मौसमका अदलबदल।

ऋतुपरीक्षा (सं० स्त्री०) आर्तव परीक्षा, मौसमी जांच। ऋतुके समय योनिका कण्डुयन, अङ्गकी वेदना आदिलक्षण वद्यको देखलेना चाहिये। (अत्रिसंहिता)

ऋतुपर्ण (सं० पु०) एक राजा। ऋतपर्ण देखो।

ऋतुपर्याय ऋतुपरिवर्त देखो।

ऋतुपा (वै० पु०) ऋतून् पाति रक्षति ऋतुषु सोमं पिबति ऋतुभिः देवैः सह सोमं पिबतीति वा, ऋतु-पा-क्विप्। १ वर्षपालक इन्द्र। (त्रि०) २ नियत समयपर सोम पीनेवाले।

ऋतुपात्र (वै० क्ली०) अश्वत्थ प्रभृति काष्ठनिर्मित यज्ञीय पात्रविशेष, ऋतुवोंके तर्पण करनेका पात्र।

> "तस्मादश्वत्थे ऋतुपात्रे स्यातां काश्मर्यमयेत्वे व भवतः।"
> (शतपथब्रा० ४।३।३।४)

ऋतुप्राप्त (सं० त्रि०) ऋतु तद्योग्यः पुष्पानि प्राप्तोऽनेन। १ फलपुष्पादि उत्पन्न, फूला-फला। २ फलमात्रके भोजनसे जीविकानिर्वाह करनेवाला, जो सिर्फ फल खाकर काम चलाता हो।

ऋतुमत् (सं० त्रि०) ऋतु-मतुप्। ऋतुयोग्य-फलपुष्पविशिष्ट, जो मौसमी फलफूल रखता हो। १ नियत समयपर उपस्थित होनेवाला, जो बंधे वक्त पर आता हो। (क्ली०) २ वरुणका उद्यान या बाग।

ऋतुमती (सं० स्त्री०) ऋतुरस्या अस्तीति, ऋतु-मतुप्-ङीष्। ऋतयुक्ता स्त्री, जो औरत हैज़से हो। संस्कृत पर्याय—रजस्वला, स्त्रीधर्मिणी, अवी, आत्रयी, मालिनी, पुष्पवती और उदक्या है। (अमर) वैद्यकोक्त लक्षणके अनुसार ऋतुमतीका मुख किञ्चित् स्फीत एवं प्रसन्न रहता, और मुखके मध्य तथा दन्तमें अधिक क्लेद जमता है। कुक्षिदेश, चक्षुर्द्वय और केशपाश शिथिल पड़ जाता है। बाहु, स्तन, नितम्ब, नाभि, ऊरु, जघन और कटिदेश फड़कता है। यह सङ्गमेच्छु, प्रियभाषिणी और हर्ष तथा औत्सुक्यशालिनी देखाई देती है। (चरक) महर्षि सुश्रुतने कहा है—

"नियतं दिवसेऽतीते सङ्कुचत्यम्बुजं यथा।
ऋतौ व्यतीते नार्यास्तु योनिः संव्रियते तथा॥
मासे नोपचितं काले धमनीभ्यां तदार्तवम्।
ईषत् कृष्णं विगन्धञ्च वायुर्योनिमुखं नयेत्॥
तद्वर्षाद्द्वादशात् काले वर्तमानमसृक् पुनः।
जरापक्वशरीराणां याति पञ्चाशतः क्षयम्॥" (सुश्रुत शारीर)

दिवावसानको पद्मकी भांति ऋतुकाल बीतनेसे नारीकी योनि भी सिकुड़ जाती है। आर्तव शोणित एक मासमें जमता और ईषत् कृष्णवर्ण एवं दुर्गन्ध-विशिष्ट हो वायु तथा धमनीके सहारे योनिमुखपर जा पहुंचता है। स्त्रीका ऋतु द्वादश वर्षसे लगा शरीर जरा जीर्ण पड़ते पञ्चाशत् वर्ष वयस तक चलता है। भावमिश्रका मत भी ऐसा ही है—

"द्वादशाब्दात् वत्सरादूर्ध्वमापञ्चाशत् समाः स्त्रियः।
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्रवेत्॥
आर्तवस्रावदिवसात् ऋतुः षोड़शरात्रयः।
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः॥"
(भावप्रकाश पूर्वख० १म भाग)

बारह वत्सरसे लगा पचास वत्सर पर्यन्त स्त्रियोंके भगद्वारसे स्वभावतः मास-मास आर्तव निकलता है। आर्तव निःसरणके प्रथम दिवससे षोड़श रात्रि पर्यन्त ऋतु रहता, वही गर्भ ग्रहणके योग्य काल ठहरता है।

वैद्यकग्रन्थ हारीतमें लिखा है—

"रजः सप्तदिनं यावत् ऋतुश्च भिषजां वर।"

हे भिषक्श्रेष्ठ! सप्तदिन पर्यन्त यावत् रजः रहता, उसीको सब कोई ऋतु कहता है।

वाग्भटने बताया है—

"ऋतुस्तु द्वादशनिशाः पूर्वास्तिस्रश्च निन्दिताः।" (शारीरस्थान १अ०)

प्रथम दिवससे द्वादश रात्रि पर्यन्त ऋतुकाल रहता है। इसके प्रथम तीन दिन निन्दित हैं।

भगवान् मनुका मत है—

"ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोड़श स्मृताः।
चतुर्भिरितरैः सार्धमहोभिः सद्विगर्हितैः॥" (मनु ३।४५)

शिष्टनिन्दित प्रथम चार दिन रखनेसे स्त्रीका ऋतु-काल स्वाभाविक अवस्थामें षोड़श रात्रि रहता है।

संहिताकार दो प्रकारका ऋतु बताते हैं—प्रकाशित और अप्रकाशित। साधारणतः द्वादश वर्षसे रजोदर्शन होनेपर प्रकाशित और द्वादश वर्षके बाद रजः न निकलनेसे अप्रकाशित वा अन्तःपुष्प कहाता है। यथा—

"वर्षाद्द्वादशकादूर्ध्वं यदि पुष्पं बहिर्न हि।
अन्तःपुष्पं भवत्येव पनसोडुम्बरादिवत्॥" (कश्यप)

बारह वर्षके बाद भी प्रकाशित न होनेसे पुष्पको पनस उडुम्बरादिकी भांति अन्तःपुष्प कहते हैं।

ज्योतिषशास्त्रमें निर्दिष्ट है, किस तिथिको आद्य ऋतु होनेसे क्या फल मिलेगा। यथा—

प्रतिपद्को विधवा, द्वितीयाको पुत्रवर्धिनी, तृतीयाको सौभाग्यवती, चतुर्थीको सुखनाशिनी, पञ्चमीको सुभगा, षष्ठीको सम्पत्ति तथा सप्तमीको धननाशिनी, अष्टमीको सुख-पुत्र-दायिनी, नवमीको क्लेशभागिनी, दशमीको सुखिनी, एकादशीको अर्थ-नाशिनी, द्वादशीको रतिवर्धिनी, त्रयोदशीको मङ्गल-कारिणी, चतुर्दशीको दुर्भगा और पूर्णिमा एवं अमावस्याको आद्य ऋतु आनेसे स्त्री दुःखरोगवर्धिनी होती है। फिर चैत्रमें विधवा, वैशाखमें बहुपुत्रवती, ज्येष्ठमें रुग्णा, आषाढ़में मृत्युदायिनी, श्रावणमें धन-हारिणी, भाद्रमें दुर्भगा एवं क्लीवा, आश्विनमें तपस्विनी, कार्तिकमें धनहीना, अग्रहायणमें बहुपुत्रवती, पौषमें व्यभिचारिणी, माघमें पुत्रसुखान्विता, और फाल्गुनमें महीना पड़नेसे स्त्रीको सर्वसमृद्धि-सम्पन्ना बनना पड़ता है। आद्य ऋतुमें स्त्रीके लिये अश्विनी सुखप्रद, भरणी, कामवर्धक, कृत्तिका दैन्यकारक, रोहिणी सुखद, मृगशिरा कामभोगकर, आर्द्रा सुखद, पुनर्वसु सुखकर, पुष्या सुखवर्धक, अश्लेषा अशुभकारक, मघा शोकप्रद, पूर्वफल्गुनी तथा उत्तरफल्गुनी वैधव्य-दायक, हस्ता पुत्रवर्धक, चित्रा अङ्ग-सौन्दर्य्यकारक, स्वाति शुभविधायक, विशाखा सुखनाशक, अनुराधा अर्थभोगकारक, ज्येष्ठा पतिवियोगवर्धक, मूला अशुभ-कारक, पूर्वाषाढ़ा अर्थनाशक, उत्तराषाढ़ा सुखदायक, श्रवणा सुखवर्धक और धनिष्ठा शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा एवं रेवती नक्षत्र सुखप्रद है।

ऋतुमती स्त्रीको प्रथम दिनसे ब्रह्मचर्य पकड़ना पड़ता है। दिवानिद्रा, अञ्जन, अश्रुपात, स्नान,

अनुलेपन, तैलादिमर्दन, नखच्छेदन, धावन, अतिशय हास्य वा उच्चैःस्वरकथन, उच्चशब्द-श्रवण, अवलेखन, वायुसेवन और परिश्रम छोड़ देना चाहिये। क्योंकि गर्भका सन्तान दिवानिद्रासे निद्राशील, अञ्जनके व्यवहारसे अन्ध, अश्रुपातसे विकृतदृष्टि, स्नान एवं अनुलेपनसे दुःखित, तैलादिके मर्दनसे कुष्ठयुक्त, नखच्छेदनसे कुनखी, धावनसे चञ्चल, अतिशय कथनसे प्रलापी, उच्चशब्दके श्रवणसे वधिर, अवलेखनसे चञ्चल, वायुसेवन तथा परिश्रमसे उन्मत्त और अतिशय हास्यसे दन्त, ओष्ठ, तालु एवं जिह्वामें कपिशवर्ण बन जाता है।

महर्षि सुश्रुतके मतसे स्त्रीको ऋतुमती होनेपर तीन दिनतक कुशासनपर शयन, शराव वा पत्रपर हविष्यान्नका भोजन और स्वामीका सहवास न करना चाहिये। चतुर्थ दिवस स्नान करके वस्त्रालङ्कार परिधान एवं स्वस्तिवाचनपूर्वक पहले पतिको देखना विधेय है। क्योंकि ऋतुस्नानके बाद चक्षुमें जैसा पुरुष पड़ता, वैसा ही सन्तान उपजता है। गर्भाधान देखो।

पतिको एक मास ब्रह्मचर्य रख भार्या ऋतुकालके चतुर्थ दिवस घृत और दुग्धके योगसे शालितण्डुलका अन्न खाना चाहिये। पत्नी भी एक मास ब्रह्मचर्य पालन और उसदिन तैलमर्दन एवं अधिक परिमाणसे मासंसंयुक्त अन्न भोजन करती है। फिर पति वेदादि धर्मशास्त्रपर विश्वास जमा और पुत्रकामना लगा, उसी छठीं, आठवीं, दशवीं या बारहवीं रातको पत्नीपर पहुंचता है। चतुर्थसे द्वादश दिवसके मध्य जितना ही सहवास चलता, सन्तान उतना ही हृष्टपुष्ट, बलिष्ठ और ऐश्वर्यशाली निकलता है। त्रयोदश दिवससे फिर समागम करना न चाहिये।

ऋतुके प्रथम दिवस आयुहीन, द्वितीय दिवस सूतिकागृहमें ही नष्ट और तृतीय दिवसको गमन करनेसे सन्तान असम्पूर्ण-अङ्ग वा अल्पायु होता है। एतएव ऋतुके तीन दिन गमन करना न चाहिये। द्वादश दिवस बीतनेपर फिर एकमास पर्यन्त ब्रह्मचर्य रखते हैं। गर्भ देखो।

आद्य ऋतुमें मङ्गलाचार किया जाता है—

"प्रथमर्तौ तु पुष्पिण्याः पतिपुत्रवती स्त्रियाः।
अक्षतैरासनं कुर्यात्तस्मिं स्तामुपवेशयेत्॥
हरिद्रागन्धपुष्पादीन् दद्यात्ताम्बूलकस्रजः।
आशिषो वाचयेयुस्ताः पतिपुत्रवती भव॥
दीपैर्नीराजनं कुर्यात् सदीपे वासयेद्गृहे।
ताः सर्वाः पूजयेत् पश्चात् गन्धपुष्पाक्षतादिभिः॥
लवणापूपमुद्गादि दद्यात्ताभ्यः स्वशक्तितः॥" (प्रयोगपारिजात)

ऋतुमती स्त्रीको प्रथम ऋतुमें ही पड़ोसकी पति-पुत्रवती नारी अक्षतका आसन बनाकर बैठाती हैं। फिर हरिद्रा, गन्धपुष्प, ताम्बूल एवं माल्यादि दे और 'तुम पुत्रवती हो पतिके साथ सुखसे समय बितावो' कह वह उसको आशीर्वाद करती हैं। पीछे प्रदीप-विशिष्ट गृहमें ले जाकर उसकी आरती उतारी जाती है। अन्तको ऋतुमतीके घरकी स्त्री मङ्गलाचार करनेवाली नारियोंको गन्ध, पुष्प और अक्षतादि द्वारा पूज अपनी शक्तिके अनुसार लवण, पिष्टक एवं मुद्गादि देती हैं।

ऋतुमय (सं० त्रि०) ऋतुविशिष्ट, मौसमी।

ऋतुमुख (सं० क्लो०) ऋतुनां सुखम्, ६-तत्। पौर्ण चान्द्रमासका प्रथम दिन, मौसमका शुरू।

ऋतुयाज (सं० पु०) १ ऋतुका यज्ञ। २ प्रातःसवनका एक यज्ञ। यह आज्य शस्त्रसे पहले होता है।

ऋतुराज (सं० पु०) ऋतुनां राजा, ऋतु-राजन्-टच्, ६-तत्। राजाहः सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। वसन्त काल, मौसम-बहार।

ऋतुलिङ्ग (सं० क्लो०) ऋतूनां लिङ्गं चिन्हम्, ६-तत्। १ ऋतुपर्यायका वसन्तादि चिह्न, मौसमके आसार। २ ऋतुमती होनेका लक्षण, औरतको महीना होनेके आसार।

ऋतुवती, ऋतुमती देखो।

ऋतुविपर्यय (सं० पु०) ऋतुके क्रमका भङ्ग, मौसमका बिगाड़। वसन्तादिके स्थानमें शरदादिकी धर्म-प्रवृत्ति ऋतुविपर्यय कहलाती है।

ऋतुवृत्ति (सं० पु०) ऋतुषु वृत्तिर्यस्य, बहुव्री०। वत्सर, वर्ष, साल।

ऋतुवेला (सं० स्त्री०) ऋतूनां वेला कालः, ६-तत्। ऋतुकाल, महीनेका वक्त।

ऋतुवैषम्य (सं० क्लो०) ऋतुचर्याका विपरीताचरण, मौसमके खिलाफ़ काम।

ऋतुश:, ऋतुथा देखो।

ऋतुशूल (सं० क्लो०) ऋतुकाल पर रजोरोधसे उत्पन्न शूलरोग, महीने पर हैज़ बन्द होनेसे पैदा हुआ दर्द। पुष्पके वातादिसे मारे जाने पर यह शूल उठता है। शोणित पिच्छिल, घन एवं स्निग्ध रहता और बहुत गिरता है। योनि और नाभिमें परम दारुण वेदना होने लगती है। (रसरत्नाकर)

ऋतुषट्क (सं० क्लो०) हिम-शिशिर-वसन्त-ग्रीष्म-शरत्, छहो मौसम।

ऋतुष्ठा, ऋतुस्था देखो।

ऋतुसन्धि (सं० पु०) ऋतोः सन्धिः, ६-तत्। ऋतुद्वयका मिलनकाल, दो मौसमोंके मिलनेका वक्त। वर्तमान ऋतुके सात अन्तिम और आगामी ऋतुके सात प्राथमिक दिवस ऋतुसन्धि कहलाते हैं।

"ऋत्वोरन्त्यादि सप्ताहावृतुसन्धिरिति स्मृत:।" (वाग्भट)

ऋतुसमय, ऋतुकाल देखो।

ऋतुसम्मिता (सं० स्त्रो०) सुनिखर्जुरिका, बढ़िया पिण्ड खजूर।

ऋतुसात्म्य (सं० क्लो०) ऋतुके अनुकूल भोजनादि, मौसमके मुवाफ़िक़ खाना वग़ैरह।

ऋतुसेव्य (सं० त्रि०) ऋतुषु सेव्यः। ऋतुके भेदानुसार व्यवहार करने योग्य, जो मौसमके मुवाफ़िक़ काममें लाने लायक़ हो। सुश्रुतके मतानुसार वर्षाकालको प्राणीका शरीर क्लिन्न एवं अग्नि मन्द पड़ जाने और वातादि सकल दोष उठ खड़े होनेसे क्लेदविशोधक तथा दोष-संहारक कषाय, तिक्त एवं कटुविशिष्ट, घन, अधिक स्निग्ध वा अधिक रूक्ष न होनेवाला पदार्थ और उष्ण एवं अग्नि-उद्दीपक भोज्य आहार करना चाहिये। ऐसे समय वृष्टिका ही जल पीना सर्वोत्कृष्ट रहता, नतुवा उष्णजल मधु मिलाकर लेना पड़ता है। भूमध्यस्थ वाष्प बचानेके लिये खाट या तख्त पर लेटना उचित है। अतिरिक्त जलपान, हिमसेवा, मैथुन, आतप, व्यायाम, दिवानिद्रा और अजीर्णकर भोजन छोड़ देते हैं। शरत्-कालको कषाय, मधुर एवं तिक्तरस, दुग्ध, मिष्टान्न, मधु, सर्वप्रकार तण्डुलादि, जाङ्गलमांस और नदी-तड़ाग-पुष्करिणी प्रभृतिका जल हितकारी है। एतद्भिन्न पित्तप्रशमनकारक सकल ही द्रव्य व्यवहार करना चाहिये। तीक्ष्णवीर्य-अम्ल-उष्ण-क्षार द्रव्य, दिवानिद्रा, रौद्र, रात्रिजागरण और मैथुनसे हानि होती है। हेमन्त एवं शिशिरकालको लवण, क्षार-तिक्त-अम्ल, तथा कटु रस, तैल, घृत, उष्ण अन्न, तीक्ष्णपान, माष, शाक, दधि, मिष्टान्न, नूतन तण्डुल, सकल-प्रकार मांस, मद्य और मैथुन प्रभृतिके व्यवहारसे कोई अनिष्ट नहीं आता। नहानेके लिये उष्ण जल ही कहा है।

ऋतुस्तोम (सं० पु०) एक दिवस साध्य यज्ञविशेष।

ऋतुस्थला (सं० स्त्रो०) अप्सरोविशेष, एक परी।

ऋतुस्था (वै० त्रि०) उचित ऋतुपर नियत, जो मुनासिब मौसम पर बंधा हो।

ऋतुस्नाता (सं० स्त्रो०) ऋतौ ऋतुकाल-विहित-चतुर्थदिवसे स्नाता, ७-तत्। ऋतुके चतुर्थ दिवस शुद्धिके लिये स्नान करनेवाली स्त्री।

"पूर्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमङ्गना।" (सुश्रुत)

ऋतुस्नाता स्त्री पहले जैसा पुरुष देखती, वैसा ही पुत्र उत्पन्न करती है।

ऋतुस्नान (सं० क्लो०) ऋतौ ऋतुकालविहितदिने स्नानम्, ७-तत्। ऋतुकालीन चतुर्थ दिवसका स्नान, महीनेके बाद चौथे दिनका नहान।

ऋतुहरीतकी (सं० स्त्रो०) ऋतुके भेदसे द्रव्यविशेषके साथ मिश्रित हरीतकी, मौसमी हर। भावप्रकाशमें लिखा—वर्षामें सैन्धव, शरत्में शर्करा, हेमन्तमें शुण्ठीचूर्ण, शिशिरमें जीरकचूर्ण, वसन्तमें मधु और ग्रीष्मकालमें गुड़के साथ हरीतकी खानेसे उत्कृष्ट रसायन होता है।

ऋते (सं० अव्य०) १ पृथक्-पृथक्, अलग-अलग। २ विना, वग़ैरह।

"अवेहि मां प्रीतमृते तुरङ्गमात्।" (रघु ३।६३)

ऋतेकर्म (वै० अव्य०) १ त्यागकर, छोड़ के। २ विना, बग़ैर।

ऋतेजा (वै० त्रि०) ऋते जायते, ऋते-जन्-विट्। यज्ञके लिये उत्पन्न, जो व्यवस्थाके लिये सच्चा हो।

ऋतेयु (सं० पु०) १ ऋषिविशेष। यह वरुणके पुरोहित थे। २ एक राजा। (महाभारत)

ऋतोक्ति (सं० त्रि०) सत्यभाषण, रास्तगोई।

ऋतोद्य (वै० क्ली०) ऋत-वद-क्यप्। सत्यवाक्य, सच बात।

ऋत्वन्त (सं० पु०) ऋतुकालकी समाप्ति, महीनेका अखीर।

ऋत्विक् (सं० पु०) ऋतौ यजति, ऋतु-यज्-क्विन्, निपातनात् साधुः। १ पुरोहित, वेदके मन्त्रोंसे यज्ञमें कर्मकाण्ड करानेवाला। संस्कृत पर्याय याजक, भरत, कुरु, वाग्यत, वृक्तवर्ही, यतस्रुक, मरुत्, सबाध और देवयव है। चार ऋत्विक् प्रधान होते हैं, होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा। फिर बड़े यज्ञोंमें कहीं आठ और कहीं सोलहतक ऋत्विक् रहते हैं। यथा—ब्राह्मणाच्छंसी, प्रस्तोता, मैत्रावरुण, प्रतिप्रस्थाता, पोता, प्रतिहर्ता, अच्छावाक, नेष्टा, अग्नीध, सुब्रह्मण्य, ग्रावस्तुत् और उन्नेता। २ काव्योक्त नायकका धर्मसहायविशेष। "ऋत्विक् पुरोधसः स्युर्ब्रह्मविदस्तापसास्तथा धर्मे।" (साहित्यद० ३।५१)

ऋत्विय (वै० त्रि०) ऋतु-घस्। छन्दसि घस्। पा ५।१।१०६। १ ऋतुकालोपस्थित, मौसमपर पहुंचा हुआ। २ ऋतुकालोत्पन्न, मौसममें पैदा हुआ। ३ ऋतुकालका कर्तव्य, जो मौसममें किये जानेके काबिल हो। ४ नियमित, पाबन्द। (क्ली०) ५ ऋतुकाल, औरतके महीनेका वक्त।

ऋत्वियावत् (वै० त्रि०) ऋत्वियमस्यास्तीति, ऋत्विय-मतुप्, मस्य वः दीर्घश्च। १ पुत्रोत्पादनकर्मयुक्त, जो लड़का पैदा करनेमें लगा हो। २ व्यवस्थानुरूप, कानूनी।

ऋत्व्य (वै० त्रि०) ऋतुरस्य प्राप्तः तत्र भवः वा, ऋतु-यत्, संज्ञापूर्वक-विधेरनित्यत्वात् गुणाभावः अजवच्च। ऋत्विय देखो।

ऋदूदर (वै० पु०) मृदु उदरं यस्य, पृषोदरादित्वात् मस्य लोपः। १ सोम। (त्रि०) २ मृदु-उदरविशिष्ट, मुलायम पेटवाला, भला।

ऋदूपा (वै० पु०) १ अर्दनपाती। २ गमनपाती। ३ दूरपाती। ४ मर्मवेधी, जोड़ फोड़नेवाला। ५ गमनवेधी। ६ दूरभेदी। (निरुक्त ६।३३)

ऋदूवृध, ऋदूपा देखो।

ऋद्ध (सं० क्ली०) ऋध-क्त। १ मंडा धान्य, जो अनाज भूसीसे अलग कर दिया गया हो। २ सिद्धान्त, कौल। ३ वृद्ध, दुर्ग। ४ समृद्ध, दौलतमन्द। ५ सम्पन्न, खुश।

ऋद्धि (सं० स्त्री०) ऋध-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ सम्पत्ति, दौलत। ३ सिद्धि, करामात। ४ पार्वती। ५ लक्ष्मी। ६ देवताविशेष। ७ वैद्यकोक्त अष्टवर्गके अन्तर्गत ओषधि विशेष। इसे लोग प्रायः ऋद्धि-वृद्धि कहते हैं। यह लताजात, सग्रन्थिक और श्वेत लोमान्वित होती है। ऋद्धि देखनेमें तूलग्रन्थिके समान लगती और वामावर्तसे फलती है। (राजनिघण्टु) गुणमें यह वृद्धिके तुल्य है। ऋद्धि बल्य, त्रिदोषघ्न, शुक्रल, मधुर, गुरु एवं ऐश्वर्यकर रहती और मूर्छा तथा रक्तपित्तको दूर करती है। (भावप्रकाश) ८ महाश्रावणी, गोरखमुण्डी। ९ कुबेरपत्नी।

ऋद्धिकाम (सं० त्रि०) सम्पत्ति वा अभ्युदयका अभिलाषी, जो अपनी बढ़ती चाहता हो।

ऋद्धिजा (सं० स्त्री०) १ सर्पगन्धा, नागदेवना। २ गन्धरास्ना, खुशबूदार गिलोय।

ऋद्धिमत् (सं० त्रि०) ऋद्धिरस्यास्तीति, ऋद्धि-मतुप्। १ वृद्धियुक्त, बढ़ा हुआ। २ सम्पत्तिशाली, दौलतमन्द। ३ सिद्धियुक्त, करामाती।

ऋद्धिसाक्षात्क्रिया (सं० स्त्री०) अलौकिक शक्तिका प्रदर्शन, अनोखी ताकतका काम।

ऋद्धिसिद्धि (सं० स्त्री०) सुखसम्पत्ति, ठाटबाट, धूमधाम, अमन-चैन।

ऋध् (धातु) दिवा० स्वादि० पर० अक० सेट् उदित् इरित्‌च। "ऋध्युनिर् वृद्धौ।" (कविकल्पद्रुम) वृद्धि पाना, बढ़ना।

ऋधक् (सं० अव्य०) १ सत्य, सच, बेशक। २ वियोगसे, अलग-अलग। ३ शीघ्र, जल्द, फौरन्। ४ निकट, पास, करीब। ५ लाघवपर, झटकार।

ऋधत् (सं० त्रि०) ऋध-शतृ। वर्धित होनेवाला, जो बढ़ रहा हो।

ऋधवार (वै० त्रि०) १ अपना ऐश्वर्य बढ़ानेवाला, जो अपना माल बढ़ा रहा हो। २ यथाभिलषित सम्पत्तिशाली, मनमानी दौलत रखनेवाला। (सायण)

ऋधुक् (सं० त्रि०) न्यून, कम, छोटा।

ऋनिया, ऋनी (हिं०) ऋणी देखो।

ऋफ् (धातु) तुदा० पर० सक० सेट्। "ऋफ श दाने स्राघ हिंसानिन्दाजौ।" (कविकल्पद्रुम) १ दान करना, देना। २ प्रशंसा करना, तारीफ बताना। ३ हिंसा करना, मारना। ४ निन्दा करना, बुराई बताना। ५ युद्ध करना, लड़ना।

ऋबीस (वै० क्लो०) ऋ-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ पृथिवीस्थ अग्नि, ज़मीन् की आग। ३ सन्धि, दराज़।

ऋभु (सं० पु०) अरि देवमातरि अदितौ भवति, ऋ-भू-डु। १ देवता। २ मेधावी, आक़िल। ३ यज्ञ-देवता। ४ देवगण विशेष। यह वैवस्वत मन्वन्तरके देवता हैं। ५ सुधन्वाके पुत्र। ऋक् संहितामें ऋभु शब्द इन्द्र, अग्नि और आदित्यके नामान्तर रूपसे व्यवहृत हुआ है। पुराणमतसे ऋभु ब्रह्माके पुत्र हैं। इन्होंने तपोबलसे विशुद्ध ज्ञान लाभ किया था। पुलस्त्यपुत्र निदाघ इनके शिष्य रहे। पौराणिक मतसे यह चार कुमारोंमें एक थे। आङ्गिरसगोत्रीय सुधन्वाके तीन पुत्र रहे। यह तीनों वेदमें 'ऋभवः' अर्थात् ऋभुगण कहे गये हैं। प्रत्येकका पृथक् नाम १म ऋभुक्षा (ऋभु), २य विभु और ३य वाज था। भाष्यकार सायणाचार्यके मतसे ऋभुगण सूर्यमण्डलमें रहते और सूर्यके रश्मिरूपसे चमकते हैं। ऋक्-संहिताको देखते ऋभुगण अतिशय कार्य कुशल रहे। इन्होंने इन्द्रके रथ और अश्वगणको शोभान्वित किया था। उससे सन्तुष्ट हो इन्द्रने इनके पितामाताको पुनर्यौवन दिया। मोक्षमूलर साहबने वेदिक ऋभु और प्राचीन यूनानी देवता अर्फियस (Orpheus) में सादृश्य स्थापन करनेकी चेष्टा लगायी है। ६ एक मुनि। ७ एक निकृष्ट जाति। ८ सैन्यभेद।

ऋभुक्ष (सं० पु०) ऋभवः क्षियन्ति वसन्ति यत्र, ऋभु-क्षि-ड। १ स्वर्ग, बिहिश्त। २ वज्र। ३ इन्द्र।

ऋभुक्षा (सं० पु०) ऋभुक्षः स्वर्गः वज्रं वा अस्त्यस्य, ऋभुक्ष-इनि-'आ' आदेशः। पथिमथ्यृभुक्षामात्। पा ७।१।८५। १ इन्द्र। २ मरुत्। ३ ऋभु। ४ तीन ऋभुओंमें पहले ऋभु।

ऋभुक्षी (सं० पु०) ऋभुक्षः स्वर्गः वज्रं वा अस्यास्ति, ऋभुक्ष-इनि। इन्द्र।

ऋभुक्षीन् (सं० त्रि०) ऋभुक्षीव आचरति, ऋभुक्षिन्-क्विप्-दीर्घः। अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति। पा ६।४।१५। इन्द्रके न्याय आचारविशिष्ट, जो इन्द्रकी तरह काम-काज करता हो।

ऋभुमत् (वै० त्रि०) १ चतुर, होशियार। २ ऋभु-सम्बन्धीय। ३ अतिशय दीप्त, दूर दूर तक चमकनेवाला। (सायण)

ऋभ्व (वै० त्रि०) उरुभूरस्य, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ उरुसे उत्पन्न, रानसे निकला हुआ। २ आक्रामक, हमलावर। ३ व्याप्त, भरा या दूरतक फैला हुआ। ४ चतुर, होशियार।

ऋभ्वन् (वै० त्रि०) १ आक्रामक, हमलावर। २ अतिशय प्रदीप्त, दूरदूर तक चमकनेवाला। (सायण)

ऋभ्वस्, ऋभ्वन् देखो।

ऋम्फ् (धातु) तुदा० पर० सक० सेट् मुचादि। वध करना, मार डालना।

ऋलक (सं० पु०) वादित्र विशेष बजानेवाला, एक बाजेवाला।

ऋलरी (सं० स्त्री०) वादित्र विशेष, एक बाजा।

ऋश् (धातु) सौत्र० पर० स० सेट्। १ गमन करना, जाना। २ स्मृति करना, सोचना।

ऋश्य (सं० पु०) ऋश्-क्यप्। १ मृगविशेष, एक हिरन। यह चित्रित वा श्वेतवर्ण पदविशिष्ट होता है। मांस कषाय, मधुर, वातघ्न, पित्तघ्न, हृद्य, तीक्ष्ण और वस्तिशोधन है। (सुश्रुत)

ऋश्यक (सं० क्लो०) ऋश्य-कः। वुञ्छण् कठेति। पा ४।२।८०। मृगसन्निकृष्ट देशादि, जिस देशमें चित्रित मृग रहे। २ हिंसा, शिकार।

ऋश्यकेतु (सं० पु०) विश्वकेतु, अनिरुद्ध।

ऋश्यद (सं० पु०) ऋश्यं हिंसां ददाति, ऋश्य-दा-क। कूप, गड्ढा। इसमें हिरनको फांसकर पकड़ते हैं।

ऋष्यपद् (सं॰ त्रि॰) मृगचरणविशिष्ट, जिसके हिरनका पैर रहे।

ऋश्यादि (सं॰ पु॰) पाणिनिका कहा हुआ एक गण। इसमें ऋश्य, न्यग्रोध, शर, निलीन, विनाश, निवात, निधान, निवन्ध, विवद्ध, परिगूढ़, उपगूढ़, अशनि, सित, मत, वेश्मन्, उत्तराश्मन्, अश्मन्, स्थूल, बाहु, खदिर, शर्करा, अनडुह, अरभु, परिवंश, वेणु, वरिण, खण्ड, दण्ड, परिहृत्त, कर्दम और अंश शब्द पड़ता है।

ऋष् (धातु) तुदा॰ पर॰ सक॰ सेट्। "ऋषीश गतौ।" (कविकल्पद्रुम) १ गमन करना, जाना। २ वध करना, मारना।

ऋषद्गु (सं॰ पु॰) यदुवंशीय एक राजा। यह वृजिनीवत्के पुत्र और चित्ररथके पिता थे। (भारत, अनु॰ १४७ अ॰)

ऋषभ (सं॰ पु॰) ऋष्-अभच्-कित्। ऋषिवृषिभ्यां कित्। उण् ३।१२३। यह अन्य शब्दके पीछे लगनेसे श्रेष्ठताबोधक होता है। १ वृष, बैल। २ कर्णरन्ध्र, कानका सूराक। ३ कुम्भीरपुच्छ, मगरकी पूंछ। ४ ओषधि विशेष, एक जड़ी। यह वृषके शृङ्ग जैसा होता है। ऋषभ बलकारक, शीतल, शुक्र एवं कफजनक, मधुर और पित्त, दाह, कास, वायु तथा क्षयरोगनाशक है। हिमालय-शिखर इसकी उत्पत्तिका स्थान है। संस्कृत पर्याय—वृष, ऋषभक, वीर, गोपति, धीर, विषाणी, दुर्धर, ककुद्मान्, पुङ्गव, वोढा, शृङ्गी, धूर्य, भूपति, कामी, रुक्षप्रिय, उक्षा, लाङ्गुली, गो, बन्धुर, गोरक्ष और वनवासी है। (भावप्रकाश)

५ सप्तस्वरके अन्तर्गत द्वितीय स्वर। यह बैलके स्वर-जैसा होता है। फिर कोई इसे चातकके स्वर-जैसा भी बताता है। नाभि मूलसे उठ यह अनायास ही ऋषभके स्वरकी तरह निकला करता है। ऋग्वेदसे ऋषभ स्वरकी उत्पत्ति है। दयावती, रञ्जनी और रतिका तीन इसकी श्रुति हैं। श्रुति जाति भी करुण मध्य और मृदु भेदसे तीन प्रकार हैं। वंश ऋषि, जाति क्षत्रिय, वर्ण पिञ्जर, उत्पत्ति-स्थान शाकद्वीप, ऋषि, एवं देवता ब्रह्मा और छन्द गायत्री है। (सङ्गीतरत्नाकर)

७ पर्वत विशेष, एक पहाड़। ८ वराहपुच्छ, सूवरकी पूंछ। ९ कोई मुनि। १० भगवान्के एक अवतार। भागवतोक्त २२ अवतारमें ऋषभ अष्टम हैं। इन्होंने भारतवर्षाधिपति नाभिराजाके औरस और मरुदेवीके गर्भसे जन्मग्रहण किया था।

भागवतमें लिखते, कि जन्म लेते ही ऋषभदेवके अङ्गमें सकल भगवत् लक्षण झलकते थे। सर्वत्र समता, उपशम, वैराग्य, ऐश्वर्य और महैश्वर्यके साथ उनका प्रभाव दिन दिन बढने लगा। वह स्वयं तेजः प्रभाव, शक्ति, उत्साह, कान्ति और यशः प्रभृति गुणसे सर्वप्रधान बन गये। कुछ दिन पीछे नाभिराजाने अपने पुत्र ऋषभको राज्य सौंप मरुदेवीके साथ बदरिकाश्रमको पन्था पकड़ी थी। नाभि देखो। ऋषभदेवको राज्यपर अभिषिक्त होनेसे इन्द्रने जयन्ती नाम्नी कन्या दी। उस पत्नीके गर्भसे एकशत पुत्र उत्पन्न हुये। भरत ज्येष्ठ थे। कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इन्द्रस्पृश, विदर्भ और कीकट उनके अनुगत रहे। दूसरे नौ पुत्र कवि, हविः, अन्तरीक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस और करभाजन भागवत धर्मप्रदर्शक थे। अवशिष्ट ८१ पुत्र विनीत वेदज्ञ और और यज्ञशील ब्राह्मण बन गये।

ऋषभदेवने अपने ज्येष्ठपुत्र भरतको राज्य सौंप परमहंसधर्म सीखनेके लिये संसार त्याग किया था। उसी समय उन्होंने उन्मत्तके न्याय दिगम्बर वेशमें आलुलायित केश ही ब्रह्मावर्तसे पैर बढाया। ऋषभदेवने मौनव्रत पकड़ा था। एकाकी घूमते देख कितने ही लोग उनसे आलाप करने पहुंचे। किन्तु वह जड़, मूक, अन्ध, बधिर, पिशाच वा उन्मत्तके न्याय दण्डायमान रह कोई बात कहते न थे। उस अवस्था पर दुष्ट लोगोंने गात्र पर मल, मूत्र, धूलि एवं प्रस्तर फेंक, ताड़ना दे, अथवा भय देखा नाना प्रकारसे उन्हें विचलित करनेका चेष्टा लगायी। किन्तु वह किसीसे विचलित न हुये। क्योंकि उनका मनोविकार निकल गया था। संसारके लोगोंको अपने प्रतिपक्ष पर देख उन्होंने अजगरव्रत पकड़ा था। ऋषभदेव एक ही स्थानपर रह खाने-पीने, सोने-बैठने और हगने-मूतने

लगी। उनका सुन्दर देह मलमूत्रसे आच्छन्न हुआ था। किन्तु आश्चर्यका विषय यह ठहरा, कि विष्ठामें दुर्गन्धका नाम भी न रहा। इसीप्रकार वह नाना स्थान घूमने लगे। कुछ काल घूम-फिर ऋषभदेवने देह छोड़ना चाहा था। उस समय वह कोङ्कण, वेङ्कट, कुटक और दक्षिण कर्णाटक देश जा पहुंचे। वहां कुटकाचल उपवनके निकट कितनी ही क्षुद्र शिला उठा उन्होंने मुखमें डाली थीं। फिर ऋषभदेव उन्मत्तके न्याय घूमने लगे। दैवात् वनमें दावानल भड़का था। उसी अनलमें वह जल गये।

भागवतमें ऋषभदेवका धर्ममत इसप्रकार कहा है।

मानव देह पा मनुष्यको समुचित आचरण करना चाहिये। जो सकलका सुहृद्, प्रशान्त, क्रोधहीन एवं सदाचार रहता और सब पर समान दृष्टि रखता, वही महत् ठहरता है। जो धनपर स्पृहा तथा पुत्र कलत्रादि पर प्रीति नहीं रखता और ईश्वरपर निर्भर कर चलता, वही मनुष्योंमें बड़ा निकलता है। इन्द्रियकी तृप्ति ही पाप है। कर्मस्वभाव मन ही शरीरके बन्धका कारण बन जाता है। स्त्री-पुरुष मिलनेसे परस्परके प्रति एक प्रकार प्रेमाकर्षण होता है। उसी आकर्षणसे महामोहका जन्म है। किन्तु उस आकर्षणके टलने और मनके निवृत्ति-पथपर चलनेसे संसारका अहङ्कार जाता तथा मानव परमपद पाता है।

भागवतमें लिखते, कि ऋषभदेव स्वयं भगवान् और कैवल्यपति ठहरते हैं। योगचर्या उनका आचरण और आनन्द उनका स्वरूप है। (भागवत ५।४,५,६ अ०)

जैनोंने इन्हीं ऋषभदेवको अपना तीर्थङ्कर वा आदिनाथ माना है। जैनधर्मशास्त्रके मतानुसार— ऋषभदेवने सर्वार्थसिद्धि नामक विमानसे उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें धनुराशिपर चैत्रमासकी कृष्णाष्टमी तिथिको इक्ष्वाकुवंशीय नाभिके औरस और मरुदेवीके गर्भसे विनीता नगरीमें जन्म लिया था। यह नौ मास चार दिन गर्भमें रहे। शरीरका परिमाण ५०० धनुः रहा। अङ्गकी कान्ति सुवर्णप्राय थी। ऋषभदेव इक्षुरस पीकर श्रेयांसके निकट ४००० साधुवोंके साथ चैत्राष्टमीको दीक्षित हुये थे। फिर एक वर्षतक नाना स्थान घूम पुरिमतल नामक स्थानपर यह पहुंचे। यहां फाल्गुन मासके कृष्णपक्षको तीन दिन उपवासके पीछे इन्होंने ज्ञानलाभ किया था। इनके ८० गणधर, ८४००० साधु, ३००००० साध्वी, ९००० अवधिज्ञानी, १०००० केवली, ३५०००० श्रावक, ५५४००० श्राविका, ४७५० चतुर्दशपूर्वी और १२७५० मनपर्याय थे। प्रथम गणधरका पुण्डरीक और प्रथम आर्याका नाम ब्राह्मी था। आयुःका परिमाण ८४ लक्ष पूर्व कहते हैं। ऋषभदेवको अष्टपद नामक स्थानपर चैत्रमासकी कृष्णात्रयोदशीके दिन पद्मासनमें मोक्षपद मिला था।

(जैनहरिवंश ८ सर्ग, आदिनाथपुराण एवं जैनतत्त्वादर्श १९-२० पृ०)

ऋषभक (सं० पु०) वैद्यकोक्त अष्टवर्गान्तर्गत औषध-विशेष, एक जड़ी। ऋषभ देखो।

ऋषभकूट (सं० पु०) हेमकूट पर्वत, एक पहाड़।

ऋषभगजविलसित (सं० क्ली०) षोड़शाक्षर छन्दो-विशेष, सोलह सोलह अक्षरोंके चार पादोंका एक छन्द।

"भविनगैः स्वरात् स्वरऋषभगजविलसितम्।" (वृत्तरत्नाकर)

ऋषभतर (सं० पु०) भारवहनासमर्थ वृष, जो बैल बोझ ढो न सकता हो।

ऋषभदायी (सं० त्रि०) वृषप्रदान करनेवाला, जो बैल देता हो।

ऋषभदेव (सं० पु०) भगवान्के एक अवतार। ऋषभ देखो।

ऋषभद्वीप (सं० पु०-क्ली०) ऋषभइव श्वेतः द्वीपः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। श्वेतद्वीप, किसी मुल्कका नाम।

ऋषभध्वज (सं० पु०) ऋषभो ध्वजश्चिह्नमस्य ध्वजे अस्य वा, बहुव्री०। १ महादेव, अपने झण्डेमें बैलका निशान् रखनेवाले शङ्कर। २ एक बौद्धसंन्यासी।

ऋषभी (सं० स्त्री०) ऋषभ जातौ ङीष्। १ नराकृति स्त्री, मर्दकी सूरत-शकल रखनेवाली औरत। २ कपिकच्छुलता, कोंच। ३ विधवा, बेवा। ४ शिराला।

ऋषि (सं० पु०) ऋषति गच्छति संसारपारम्, ऋष्-इन्-कित्। इगुपधात् कित्। उण् ४।११९। १ ज्ञानके द्वारा संसारपारगत वशिष्ठादि। २ शास्त्रप्रणेता। संस्कृत पर्याय सत्यव्रत और शापास्त्र है। ऋषि सातप्रकारके

होते हैं—महर्षि, परमर्षि, देवर्षि, ब्रह्मर्षि, श्रुतर्षि, राजर्षि और काण्डर्षि। प्रत्येक मन्वन्तरके सप्तर्षि-गणका नाम इसप्रकार है—स्वायम्भुव मन्वन्तरमें मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ; स्वारोचिष मन्वन्तरमें ऊर्ज, स्तम्भ, प्राण, दत्तोलि, ऋषभ, निश्चर तथा चार्वीवीर; उत्तम मन्वन्तरमें वशिष्ठके प्रमदादि सप्तपुत्र; तामस मन्वन्तरमें ज्योतिर्धामा, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, वलक एवं पीवर; रैवत मन्वन्तरमें हिरण्यरोमा, वेदश्री, ऊर्ध्वबाहु, वेदबाहु, भूधामा, पर्जन्य तथा वशिष्ठ; चाक्षुष मन्वन्तरमें सुमेधा, विरजा, हविष्मान्, उन्नत, मधु, अतिनामा और सहिष्णु; वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तरमें अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज एवं कश्यप; सावर्णिक मन्वन्तरमें गालव, दीप्तिमान्, परशुराम, अश्वत्थामा, कृप, ऋष्यशृङ्ग तथा व्यास; दक्षसावर्णिक मन्वन्तरमें मेधातिथि, वसु, सत्य, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, सबल एवं हव्यवाहन; ब्रह्मसावर्णिक मन्वन्तरमें आप, भूति, हविष्मान्, सुकृती, सत्य, नाभाग और वशिष्ठके पुत्र अप्रतिम; धर्मसावर्णिक मन्वन्तरमें हविष्मान्, वरिष्ठ, ऋष्टि, आरुणि, निश्चर, अनघ एवं विष्टि; रुद्रसावर्णिक मन्वन्तरमें द्युति, तपस्वी, सुतपा, तपोमूर्ति, तपोरति तथा तपोधृति; देवसावर्णिक मन्वन्तरमें धृतिमान्, अव्यय, तत्त्वदर्शी, निरुत्सुक, निर्मोह, सुतपा एवं निष्प्रकम्प; इन्द्रसावर्णिक मन्वन्तरमें अग्नीध्र, अग्निबाहु, शुचि, मुक्त, माधव, शुक्र और अजित।

मार्कण्डेयपुराणके मतसे इन्द्रसावर्णिक मन्वन्तरका नाम 'भौत्य' है। पुराणान्तरमें उक्त सप्तर्षियोंके नामपर भी मतभेद पड़ता है।

ज्योतिषशास्त्रको देखते वशिष्ठकी पत्नी अरुन्धतीके साथ वर्तमान मन्वन्तरके सप्तर्षि मघा नक्षत्रपर अवस्थान किया और मघाके उदयमें उदित हुआ करते हैं। काशीखण्ड शनिलोकके ऊर्ध्व और ध्रुवलोकके अधोदेशमें इनकी अवस्थिति बताता है।

३ वेद। ४ किरण। ५ भृगु प्रभृति महर्षि सन्तान।

ऋषिक (सं० पु०) ऋषेः पुत्रः, ऋषि संज्ञायां कन्, पृषोदरादित्वात् दीर्घः। १ ऋषिपुत्र, ऋषिके लड़के। २ ऋषियोंके राजा। (क्ली०) ३ लताविशेष, एक बेल।

ऋषिका (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया।

ऋषिकुल्या (सं० स्त्री०) ऋषीणां कुल्या कृत्रिमाल्पसरित् इव। १ गङ्गा। २ ऋषियोंका कृत्रिम जलाशय। ३ तीर्थविशेष। ४ सरस्वती। ५ भारतवर्षकी एक नदी। "स एष देशप्रवर उत्कलाख्यो द्विजोत्तमाः।

ऋषिकुल्यां समासाद्य दक्षिणोदधिगामिनीम्॥" (उत्कलखण्ड ६अ०)

यह नदी उत्कलके गुमसर और गञ्जामप्रदेशमें प्रवाहित है। आजकल इसे ऋषिकुलिया कहते हैं। ६ भूमाकी पत्नी और उद्गीथकी जननी।

ऋषिकृत् (सं० त्रि०) १ उत्तेजना देनेवाला, जो भड़काता हो। २ उपस्थित होनेवाला, जो अपनी शकल देखाता हो। (सायण)

ऋषिगण (सं० पु०) ऋषिसमूह, ऋषियोंका झुण्ड।

ऋषिगिरि (सं० पु०) मगधदेशीय पर्वतविशेष, विहारका एक पहाड़। यह पर्वत शुद्र और राजगृहके निकट अवस्थित है।

"एष पार्थ महान् भाति पशुमान्नित्यमम्बुमान्।
निरामयः सुवेश्माढ्यो निवेशो मागधः शुभः॥
वैभारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा।
तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यकपञ्चमाः॥" (भारत, सभा २०अ०)

ऋषिगुप्त (सं० पु०) बौद्धविशेष।

ऋषिग्राम (सं० क्ली०) वीरभूमके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह मानसेपी नदीके तटपर अवस्थित है।

"मानसेपी नदीपार्श्वे गङ्गायाश्चोत्तरेऽपि च।
ऋषिसंज्ञकं ग्रामञ्च स्थापयिष्यति यवनः॥" (भ० ब्रह्मखण्ड ५७।१०२)

ऋषिचोदन (वै० त्रि०) ऋषिको उत्तेजित करनेवाला, जो गानेवालेका हौसला बढ़ाता हो।

ऋषिजाङ्गल (सं० पु०) ऋक्षगन्धा देखो।

ऋषिजाङ्गलक (सं० पु०) ऋक्षगन्धा देखो।

ऋषिजाङ्गलकी, ऋक्षगन्धा देखो।

ऋषिजाङ्गला, ऋक्षगन्धा देखो।

ऋषिजाङ्गलिका, ऋक्षगन्धा देखो।

ऋषितर्पण (सं० क्ली०) ऋषीणां तर्पणम्, ६-तत्। ऋषियोंके उद्देश्यसे दी जानेवाली जलाञ्जलि।

ऋषितीर्थ (सं० पु०) काठियावाड़का एक तीर्थ। (प्रभासखण्ड २२८।२।११)

ऋषितोया (सं० स्त्री०) जूनागढ़के निकट बहनेवाली एक क्षुद्र नदी। इसी नदीके उपकूलपर प्रभासखण्डोक्त उन्नतनगर है। उन्नतनगर देखो।

ऋषित्व (सं० क्लो०) ऋषिकी अवस्था वा नियमावली।

ऋषिदेव (सं० त्रि०) किसी बुद्धका नाम।

ऋषिद्विष् (वै० त्रि०) उत्तेजित कविसे द्वेष रखनेवाला।

ऋषिपञ्चमी (सं० स्त्री०) ऋषीणां सप्तर्षीणां पञ्चमी, ६-तत्। व्रतविशेष। यह व्रत भाद्र शुक्लपञ्चमीको होता है। सप्तर्षियोंकी प्रतिमा बनाकर पूजी जाती है। पूजाके बाद अकृष्टभूमिजात शाकमात्र खानेका विधान है। इसी प्रकार सात वत्सर पर्यन्त यह व्रत किया जाता है। फिर अष्टम वर्ष सप्त कलसस्थित प्रतिमामें सप्तर्षियोंकी पूज यथाविध मन्त्रद्वारा १०८ तिलोंका होम करना पड़ता है। अन्तको ब्राह्मण भोजन देना चाहिये।

ऋषिपट्टन (सं० क्लो०) वाराणसीस्थित बौद्धोंका एक पवित्र स्थान। (अवदानशतक ७६) सारनाथ देखो।

ऋषिपुत्रक (सं० पु०) दमनवृक्ष, देवनेका पेड़।

ऋषिप्रशिष्ट (सं० त्रि०) ऋषियोंकी शिक्षा पाये हुआ।

ऋषिप्रोक्ता (सं० स्त्री०) ऋषिभिः प्रोक्ता भेषज्याय इति शेषः, ३-तत्। माषपर्णी वृक्ष। माषपर्णी देखो।

ऋषिबन्धु (सं० पु०) ऋषिः बन्धुरस्य, बहुव्री०। १ शरभ नामक ऋषि। २ ऋषिमित्र। (त्रि०) ३ ऋषिवंशीय।

ऋषिमना (वै० पु०) ऋषेर्मन-इव मनोऽस्य, मध्यपदलोपी०। ऋषिके न्याय सर्वार्थदर्शी, जो ऋषिकी तरह सब मतलब समझता हो।

ऋषिमुख (सं० क्लो०) किसी ऋषिके बनाये मण्डलका आरम्भ।

ऋषियज्ञ (सं० पु०) ऋष्युद्देशको यज्ञः, मध्यपदलो०। गृहस्थके कर्तव्य पञ्चयज्ञके मध्य एक यज्ञ। अध्ययन मात्र ही इस यज्ञमें करना चाहिये। मनुके मतसे यह पञ्चयज्ञ गृहस्थगणको अवश्य पालनीय हैं—

"ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञञ्च सर्वदा।
नृयज्ञं पितृयज्ञञ्च यथाशक्ति न हापयेत्॥" (मनु ४।२०)

ऋषिलोक (सं० पु०) ऋषीणां लोकः, ६-तत्। सप्तर्षिगणकी अवस्थितिका स्थान, ऋषियोंकी दुनिया। काशीखण्डके मतमें यह स्थान शनिलोकसे ऊर्ध्व और ध्रुवलोकसे अधः अवस्थित है।

ऋषिवदन, ऋषिपट्टन देखो।

ऋषिवह (सं० त्रि०) ऋषिको वहन करने या ले जानेवाला।

ऋषिवानर—एक संस्कृतज्ञ पण्डित। इन्होंने 'बन्धहेतूदयविभङ्गटीका' बनायी थी।

ऋषिश्राद्ध (सं० क्लो०) ऋषिभिः कर्तव्यं श्राद्धम्, मध्यपदलो०। ऋषियोंका कर्तव्य श्राद्ध। इसमें कार्यकी अपेक्षा आडम्बर अधिक रहता है।

"अजायुद्धे ऋषिश्राद्धे प्रभाते मेघडम्बरे।
दम्पत्योः कलहे चैव बह्वारम्भे लघुक्रिया॥" (उद्भट)

ऋषिश्रेष्ठ (सं० पु०) १ पुण्डरीक वृक्ष, कमलका पेड़। २ ऋद्धि।

ऋषिश्रेष्ठा (सं० स्त्री०) १ ऋद्धि। २ वृद्धि। यह एक ओषधि है।

ऋषिषह् (वै० त्रि०) ऋषिको उत्तेजित करनेवाला। यह शब्द सोमका विशेषण है।

ऋषिषाण (वै० त्रि०) १ ऋषिद्वारा आकर्षित। २ ऋषिद्वारा पूजित। (सायण)

ऋषिषात्, ऋषिषह् देखो।

ऋषिषेण (सं० पु०) पुराणोक्त एक राजा।

ऋषिष्टुत (सं० त्रि०) ऋषिभिः स्तुतः, आर्षत्वात् षत्वम्। १ ऋषिगण द्वारा स्तव किया हुआ। (पु०) २ अग्नि, आग।

ऋषिसत्तम (सं० पु०) सबसे उत्तम ऋषि, जो सबसे अच्छा ऋषि हो।

ऋषिसर्ग (सं० पु०) ऋषीणां सर्गः, ६-तत्। ब्रह्माके आदेशानुसार ऋषियोंकी सृष्टि।

ऋषिसृष्टा (सं० स्त्री०) ऋद्धि, एक जड़ी।

ऋषिस्तोम (सं० पु०) एक दिवस-साध्य यज्ञ विशेष। इसमें ऋषियोंका स्तव होता है।

ऋषिस्वर (वै० पु०) ऋषिभिः सूर्यते स्तूयते, ऋषि-

स्तृ-अप्। ऋषिगणका स्तुतिपात्र, जो ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया गया हो।

ऋषी (सं० स्त्री०) ऋषि-ङीप्। ऋषिपत्नी।

ऋषीक (सं० पु०) १ ऋषिपुत्र। २ काशतृण, कास।

ऋषीतत (सं० त्रि०) ऋषियों द्वारा प्रसिद्ध किया हुआ, जिसको ऋषियोंने मशहूर किया हो।

ऋषीवत् (सं० त्रि०) ऋषि: स्तोतृत्वेन अस्यास्ति, ऋषि-मतुप्, मस्य व: दीर्घश्च। छन्दसीरः। पा ८।२।१५। १ ऋषिस्तुत, ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया हुआ। २ ऋषिस्तोता, ऋषियोंकी प्रशंसा करनेवाला।

ऋषीवन् (वै० त्रि०) १ ऋषितुल्य, जो ऋषियोंके बराबर हो। २ जिसके साथ ऋषि रहे।

ऋषीवह (सं० त्रि०) ऋषीन् वहति, ऋषि-वह, पचाद्यच् दीर्घश्च। ऋषिवाहक, ऋषियोंको ले जानेवाला।

ऋषु (वै० पु०) ऋष्-कु। १ अनवरत गति, कभी बन्द न होनेवाली चाल। २ सूर्यरश्मि, आफ़ताबकी रोशनी। ३ अङ्गार, अंगारा।

ऋष्टि (सं० स्त्री०) ऋष् हिंसायां क्तिन्। १ खड्ग, तलवार। २ साधारण अस्त्रमात्र, कोई मामूली हथियार। ३ दीप्ति, चमक। (त्रि०) ४ गमनागमनशील, आने-जानेवाला। (पु०) ५ धर्मसावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि। ६ ग्रहदोष। ७ अशुभ, बुराई।

ऋष्टिक (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। यह दाक्षिणात्यमें अवस्थित है। (वाल्मीकीय रामायण)

ऋष्टिमत् (वै० त्रि०) खड्गयुक्त, तलवार या भाला बांधे हुआ।

ऋष्टिविद्युत् (वै० त्रि०) १ विद्युत्‌के न्याय खड्ग चलानेवाला, जो बिजलीकी तरह बरछी मारता हो। २ अस्त्र द्वारा प्रकाशमान्, जो हथियारोंसे चमकता हो। (सायण)

ऋष्य (सं० पु०) ऋष्-यत् निपातनात् सिद्धम्। मृगविशेष, एक हिरन। इसका वर्ण नील और मांस मधुर, बलकारक, स्निग्ध, उष्ण एवं कफपित्तजनक होता है। (भावप्रकाश)

२ कुरुवंशीय देवातिथिके एक पुत्र। (क्ली०) ३ श्वेत कुष्ठ, सफ़ेद कोढ़।

ऋष्यक (सं० पु०) मृगविशेष। ऋष्य देखो।

ऋष्यकेतन, ऋष्यकेतु देखो।

ऋष्यकेतु (सं० पु०) ऋष्य: केतौ यस्य, बहुव्री०। अनिरुद्ध।

ऋष्यगता (सं० स्त्री०) ऋष्य वा ऋषिसमूहेन गता ज्ञाता, ३-तत्। १ शतमूली, सतावर। २ माषपर्णी। ३ अतिबला।

ऋष्यगन्धा (सं० स्त्री०) ऋष्यस्य मृगस्य गन्ध इव गन्धो यस्या:, बहुव्री०। १ ऋषिजाङ्गला। २ अतिबला। ३ क्षीरविदारी। ४ श्वेतशर्करकन्द, सफ़ेद शकरकन्द। ५ रक्तशर्करकन्द, लाल शकरकन्द।

ऋष्यगन्धिका, ऋष्यगन्धा देखो।

ऋष्यजिह्व (सं० क्ली०) महाकुष्ठ रोग, बड़ा कोढ़। यह पैत्तिक, मृगकी जिह्वाके न्याय खरस्पर्श और आभ्यन्तरिक उष्माविशिष्ट होता है। अल्पदिनके मध्य ही ऋष्यजिह्व पककर फट जाता है। फिर इसमें क्रमि पड़ते भी देर नहीं लगती। (सुश्रुत)

ऋष्यजिह्वक, ऋष्यजिह्व देखो।

ऋष्यपुष्पी (सं० स्त्री०) अतिबला, करियारी।

ऋष्यप्रोक्ता (सं० स्त्री०) १ श्वेतवाटयालक, सफ़ेद बरियारी। २ शतमूली, सतावर। ३ महाशतावरी, बड़ी सतावर। ४ महाबला, बड़ी बरियारी। ५ कपिकच्छुलता, केवांच। ६ पीतवाटयालक, पीली बरियारी। ७ माषपर्णी।

ऋष्यमूक (सं० पु०) एक पर्वत। रामायणमें लिखा, कि रावणके सीताहरण करने पर नाना स्थान घूम-फिर रामचन्द्रका एक पर्वतपर जाना हुआ था। वहीं कबन्ध नामक दानवने उनसे कहा—'पम्पा नदीके तीर ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव रहते हैं। वह आपको सीताका संवाद बता सकेंगे।' (अरण्य ७३ सर्ग) तुलसीदासने भी रामचन्द्रके ऋष्यमूक पर्वतको जानेका उल्लेख किया है—

"आगे चले बहुरि रघुराई। ऋष्यमूक पर्वत नियराई॥"

प्रथमत: समझना चाहिये—पम्पानदी कहां है। पम्पा नदीकी वर्तमान अवस्थिति ठहरा सकनेपर ऋष्यमूक पर्वतका पता अनायास ही लग जायेगा।

अध्यापक विलसन साहबके मतानुसार पम्पा नदी ऋष्यमूक पर्वतसे निकल अनागुण्डीके निकट तुङ्गभद्रामें जा मिली है। (Wilson's Mackenzie-Collection, p. 138.)

वेगलर साहब पम्पाकी अवस्थिति मध्यप्रदेशमें बताते हैं। उसका वर्तमान नाम राम्प है। (Archaeological Survey of India, Reports, Vol. XIII. p. 57)

उक्त दोनों ही मत अयौक्तिक समझ पड़ते हैं। रामायणमें कहा है—

"एष राम शिर: पन्था यर्वन्ते पुष्पिता द्रुमा:।
प्रतीचीं दिशमाश्रित्य प्रकाशन्ते मनोरमा:॥२
जम्बु प्रियालपनसान्यग्रोधप्लक्षतिन्दुका:।
अश्वत्था: कर्णिकाराश्च चूताश्चान्ये च पादपा:॥३
धन्वना नागवृक्षाश्च तिलका नक्तमालका:।
नीलाशोका: कदम्बाश्च करवीराश्च पुष्पिता:॥४
अग्निमुख्या अशोकाश्च सुरक्ता: पारिभद्रका:।
* * * *
चंक्रमन्तौ वरान् शैलान् शैलाच्छैलं वनाद्वनम्॥१०
तत: पुष्करिणीं वीरौ पम्पां नाम गमिष्यथ:।
अशर्करामविभ्रंशां समतीर्थामशैवलाम्॥११
राम सञ्जातवालूकां कमलोत्पलशोभिताम्।
तत्र हंसा: प्लवा: क्रौञ्चा: कुरराश्चैव राघव॥१२
वल्गुस्वरानि कूजन्ति पम्पासलिलगोचरा:।" (अरण्य ७३ सर्ग)

हे राम! (पम्पाके) पश्चिम दिग्वर्ती प्रदेश जानेको यही पथ मङ्गलकर है। इसकी चारो ओर पुष्पयुक्त मनोहर जम्बु, पियाल, पनस, वट, प्लक्ष, तिन्दुक अश्वत्थ, कर्णिकार, आम्र, धव, नागकेशर, करञ्ज, तिलक, नील, अशोक, कदम्ब, करवीर, रक्तचन्दन, रक्त अशोक, पारिजात और अन्यान्य वृक्ष प्रकाशित हो रहे हैं। हे वीरद्वय! आप एक पर्वतसे दूसरा पर्वत और एक वनसे दूसरा वन—अनेक पर्वत एवं अनेक बन लांघ पद्मसमूहसे समाकीर्ण पम्पा नदी पर पहुंचेंगे। उसमें कांकड़ और सेवारका कहीं नाम नहीं, वालुका भरी तथा श्वेत एवं नील पद्मिनी खिली है। हंस, मण्डूक, क्रौञ्च और कुरर पक्षी मनोहर स्वरसे बोला करते हैं।

अपरस्थानमें लिखते हैं—

"ऋष्यमूकस्तु पम्पाया: पुरस्तात् पुष्पितद्रुम:।
सुदु:खारोहणश्चैव शिशुनागाभिरक्षित:॥३२
उदारो ब्रह्मणा चैव पूर्वकालेऽभिनिर्मित:॥" ३३

दुरारोहण, नागशिशु-समाकुल, पूर्वकालपर ब्रह्मा द्वारा निर्मित और पुष्पित-वृक्ष-शोभित ऋष्यमूक पर्वत उसी पम्पा नदीके सम्मुख है।

"अस्यास्तीरे तु पूर्वोक्त: पर्वतो धातुमण्डित:॥१५
ऋष्यमूक इति ख्यातश्चित्रपुष्पितपादप:।" (अरण्यकाण्ड ७५ सर्ग)

इसी नदीके तीरपर विविध धातुमण्डित एवं पुष्पित वृक्षसमूहसे समाकीर्ण पूर्वोक्त ऋष्यमूक पर्वत है।

रामचन्द्रके समय ऋष्यमूक पर्वत पर यह उद्भिद् उपजते थे—

"सौमित्र पश्य पम्पाया दक्षिणे गिरिसानुषु।
पुष्पितां कर्णिकारस्य यष्टिं परमशोभिताम्॥७३॥
अधिकं शैलराजोऽयं धातुभिस्तु विभूषित:।
विचित्रं सृजते रेणुं वायुवेगविघट्टितम्॥७४॥
गिरिप्रस्थास्तु सौमित्रे: सर्वत: सम्प्रपुष्पितै:।
निष्पत्रै: सर्वतो रम्यै: प्रदीप्ता इव किंशुकै:॥७५॥
मुचुकुन्दार्जुनाश्चैव दृश्यन्ते गिरिसानुषु।
केतक्युद्दालकाश्चैव शिरीष: शिंशपा धवा:॥८१॥
शाल्मल्य: किंशुकाश्चैव रक्ता: कुरुवकास्तथा।
तिनिशा नक्तमालाश्च चन्दना: स्यन्दनास्तथा॥८२॥
हिन्तालास्तिलकाश्चैव नागवृक्षाश्च पुष्पिता:।
पुष्पितान् पुष्पिताग्राभिर्लताभि: परिवेष्टितान्॥८३॥"
(किष्किन्ध्या १ सर्ग)

हे सुमित्रानन्दन! पम्पाके दक्षिण भागपर गिरिसानुमें परम शोभित सुपुष्पित कर्णिकाके वृक्ष देखिये। यह शैलराज गैरिकादि धातुसमूहसे विभूषित हो वायुवेगमें विघूर्णित रेणु उत्पन्न करते हैं। गिरिसानुकी चारो ओर पुष्पित पत्रहीन किंशुक चमक रहे हैं। मुचकुन्द, अर्जुन, केतक, उद्दालक, शिरीष, शिंशपा, धव, शाल्मली, किंशुक, रक्तकुरुवक, तिनिश, करञ्ज, चन्दन, स्यन्दन, हिन्ताल, पुन्नाग और तिलक प्रभृति पुष्पित वृक्ष कैसे सुहावने लगते हैं।

फिर रामायणको देखते ऋष्यमूक और मलय उभय पर्वत निकटस्थ हैं। ऋष्यमूक मलयका एकदेशवर्ती पर्वत है।

"ऋष्यमूकात् हनुमान् गत्वा तं मलयं गिरिम्।
आचचक्षे तदा वीरौ कपिराजाय राघवौ ॥ १ ॥"
(किष्किन्धा ५ सर्ग)

हनूमान्‌ने ऋष्यमूकसे मलयगिरिपर पहुंच कपिराज सुग्रीवसे रघुवीरद्वयका वृत्तान्त बताया था।

वर्तमान मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत त्रिवाङ्कोड़ नामक राज्यमें एक 'पम्बे' नदी पड़ती है। जिस पर्वतसे यह नदी निकलती, उसकी संज्ञा पश्चिमघाट या अनमलय है। यही नदी रामायणोक्त 'पम्पा' मानी जाती है। इसीकी उत्पत्तिका स्थान ऋष्यमूक है। आजकल अनमलय वा हस्तिगिरि कहते हैं।

रामायणमें ऋष्यमूक पर्वतके उद्भिदादिका जो विषय पड़ता, उसका अधिकांश अद्यापि इस अनमलय गिरिपर मिलता है। वास्तविक ऐसी उर्वरा स्थली दक्षिणापथ पर प्रायः देखनेमें नहीं आती।

हण्टर साहबने इस गिरिके सम्बन्धमें लिखा है—"The soil supports a flora of extraordinary variety and beauty; while the climate equals in salubrity that of any sanitarium, and……any plantation of Southern India." (Hunter's Imp. Gaz. India, 2nd Ed. Vol. I, p. 269.)

अतएव हमारे मतमें अनमलय पर्वत ही ऋष्यमूक ठहरता है।

ऋष्यशृङ्ग (सं० पु०) ऋष्यस्य मृगस्य शृङ्गमिव शृङ्गमस्य, बहुव्री०। १ कोई मुनि। रामायण और महाभारतमें इनका वृत्तान्त इसप्रकार कहा है—विभाण्डक नामक एक महातेजा काश्यपवंशीय ऋषि रहे। किसी समय अप्सरा उर्वशीको देखनेसे जलके मध्य उनका रेतः गिर गया था। एक मृगी वह जलमिश्र रेतः पीकर गर्भिणी हुई। यह मृगी भी शापभ्रष्टा कोई देवकन्या थी। यथाकाल मृगीने एक पुत्र प्रसव किया। मृगीके गर्भसे उत्पन्न होनेपर उसके एक शृङ्ग निकला था। इसीसे लोग उसे ऋष्यशृङ्ग कहने लगे। पिता भिन्न अपर व्यक्ति कभी देख न पड़नेसे उसका मन सिवा ब्रह्मचर्यके अन्य विषय पर चलता न था।

इसी समय दशरथके बन्धु अङ्गेश्वर लोमपादको किसी अपराध वश ब्राह्मणोंने छोड़ रखा था। उनका यज्ञकार्यादि बिगड़ा और इन्द्रके असन्तुष्ट रहनेसे राज्यपर जल भी न पड़ा। फिर लोमपादने विव्रत हो किसी प्रकार ब्राह्मणोंको परितुष्ट कर इस विपद्‌से बचनेका उपाय पूछा था। उन्होंने ऋष्यशृङ्गको लानेकी बात कही। उसीके अनुसार राजाने इस दुष्कर कार्यपर कितनी ही वेश्याओंको लगा दिया। जलपथसे लानेका परामर्श कर नौकायोगमें तपोवनके समीप वह पहुंची और दूर ही नौका खड़ी रख ऋष्यशृङ्गके निकट गयी थीं। नानारूप भावभङ्गी देखा, विचित्र माल्य एवं विविध वस्त्रादि पहना और नानाप्रकार सुस्वादु पेयादि पिला उन्होंने ऋष्यशृङ्गको क्रमशः कामोन्मत्त किया, फिर नौकाका पथ लिया। पीछे विभाण्डकने वहां पहुंच और ऐसी अवस्था देख पुत्रको नाना प्रकार सान्त्वना दी थी। किन्तु तपस्यार्थ उनके पुनर्वार गमन करते ही वेश्यायें आ और ऋष्यशृङ्गको नौकापर बैठा अतिसत्वर लोमपादके पास उपस्थित हुईं। लोमपादने सन्तुष्टचित्तसे उन्हें अन्तःपुरमें रखा था। उनके आते ही समस्त राज्यमें प्रभूत वर्षण पड़ा। फिर लोमपादने कृतकृतार्थ हो विभाण्डकके अभिशापसे बचनेके लिये मित्र दशरथकी शान्ता नाम्नी कन्या ऋष्यशृङ्गको सौंप दी। इधर विभाण्डकने आश्रममें पहुंच और पुत्रके अदर्शनमें ध्यानस्थ हो समुदाय देख लिया था। वह क्रोधसे प्रज्वलित हो लोमपादके राज्यमें आये। उनके आगमनसे सब लोग भय खा ऋष्यशृङ्गका राज्य बताने लगे। फिर विभाण्डकने कोपको छोड़ दिया और पुत्र तथा पुत्रवधूको आदर प्रदर्शनपूर्वक आश्रमके प्रति प्रत्यागमन किया था। ऋष्यशृङ्ग पत्नीके साथ उसी राज्यमें रहने लगे।

इन्हीं ऋष्यशृङ्गने दशरथ राजाका पुत्रेष्टियज्ञ किया, जिसके फलसे रामादि भ्रातृचतुष्टयने जन्म लिया था। यह अतिशय प्रतापशाली एवं यज्ञनिष्ठ रहे। २ सावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि।

ऋष्याङ्क (सं० पु०) प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्ध। अनिरुद्ध देखो।

ऋष्यादि (सं० पु०) ऋषिरादिरस्य, बहुव्री०। वैदिक मन्त्रके अवश्य ज्ञातव्य ऋषि प्रभृति पांच विषय। पांचो

विषयोंके नाम यह है—आर्ष, छन्द, देवत्व, विनियोग और ब्राह्मण। (योगिया०)

ऋष्यादिन्यास (सं० पु०) ऋष्यादीनां न्यासः, ६-तत्। तन्त्रोक्त न्याससमूह। मस्तकमें ऋषिन्यास, मुखमें छन्दोन्यास, हृदयमें देवतान्यास, गुह्यदेशमें वीजन्यास, पादद्वयमें शक्तिन्यास और सर्वाङ्गमें कीलकन्यास करना चाहिये। (तन्त्र)

ऋष्व (सं० त्रि०) ऋष्-व निपातनात् साधुः। १ वृहत्, वड़ा। २ महत्नाम, मशहूर।

ऋष्ववीर (सं० त्रि०) वृहत् जीवों द्वारा वसा हुआ।

ऋष्वौजस् (वै० त्रि०) महद्बलविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऋह्त् (सं० त्रि०) रह-शत पृषोदरादित्वात् साधुः। खर्वाकृति, छोटा, कमज़ोर।

ॠ

ॠ—१ हिन्दी और संस्कृतके स्वरवर्णका अष्टम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान मूर्धा है। उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे ॠ वर्ण तीन और अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो प्रकारका होता है। इसके लिखनकी प्रणाली प्रायः ह्रस्व ऋकारके न्याय रहती है। केवल ह्रस्व ऋकारके नीचे एक रेखा दक्षिण दिक्से आरम्भ हो वक्रभावमें वाम दिक् पहुंच कुञ्चित पड़ती, फिर दक्षिण दिक्को चलती है। (वर्णोद्धारतन्त्र) इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम क्रोध, अतिथीश, वाणी, वामनी, गो, श्री, धृति, ऊर्ध्वमुखी, निशानाथ, पद्ममाला, विनष्टधी, शशिनी, मोचिका, श्रेष्ठा, दैत्यमाता, प्रतिष्ठाता, एकदण्डाह्वय, माता, हरिता, मिथुनोदया, कोमला, श्यामला, मेधी, प्रतिष्ठा, पति, अष्टमी, पावक और गन्धकर्षिणी है।

२ नासिका, नाक। ३ धातुका एक अनुबन्ध।

"ऋचल्पद्दोऽयक्त्वर्वा।" (कविकल्पद्रुम)

(धातु) प्रादि० क्रादि० पर० सक० सेट्। ४ वाक्यारम्भ करना, बोलने लगना। ५ रक्षा करना, बचाना। ६ निन्दा करना,बुरा बताना। ७ भय देखना, खौफ दिलाना। ८ गमन करना, जाना। (क्ली०) ॠ-क्विप्। ९ वक्षः, छाती। (स्त्री०) १० दानवमाता। ११ देवमाता। १२ स्मृति, याद। १३ गमन, चाल। (पु०) १४ दनुज। १५ भैरव, महादेव।

"ॠनन्ददाविः प्रमथेशसङ्गे" (उद्भट)

ऌ

ऌ—१ स्वरवर्णका नवम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान दन्त है। यह वर्ण ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत भेदसे तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो और उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे फिर तीन प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें लिखा, कि ऌकार कुण्डलाकृति और श्रेष्ठ देवता है। यह पञ्चगुण और चतुर्ज्ञानमय रहता है। ऌकारमें ब्रह्मादि देव सर्वदा वास करते हैं। इसका प्राण पांच, गुण तीन, विन्दु तीन और वर्ण पीत विद्युल्लता जैसा होता है। लिखनप्रणाली पर अधोदेशको कुण्डलाकृति रेखा वक्रभावमें दक्षिणसे वामदिक् जाती है। ऌकारमें अग्नि, महादेव और वायु रहा करते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रोक्त नाम स्थाणु, श्रीधर, शुद्ध, मेधा, धूम्रावक, वियत्, देवयोनि, दक्षगण्ड, महेश, कौन्त, रुद्रक, विश्वेश्वर, दीर्घजिह्वा, महेन्द्र, लाङ्गलि, परा, चन्द्रिका, पार्थिव, धूम्रा, द्विदन्त, कामवर्धन, शुचिस्मिता, नवमी, कान्ति, आम्रातकेश्वर, चित्ताकर्षिणी, काश और तृतीयकुलसुन्दरी है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। यह अनुबन्ध पड़नेसे धातुके उत्तर लुङ् विभक्ति पर अङ् लगता है।

"ऌरङ्वान्।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ देवमाता। ४ भूमि। ५ पर्वत।

ॡ—१ स्वरवर्णका दशम अक्षर। इसका उच्चारणस्थान दन्त है। यह वर्ण दीर्घ एवं प्लुत तथा अनु-

नासिक और निरनुनासिक भेदसे द्विविध, फिर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। कामधेनुतन्त्रके मतसे लृकार पूर्णचन्द्रतुल्य, पञ्चदेव एवं प्राणात्मक, तीन गुण तथा तीन विन्दु विशिष्ट, चतुर्वर्गप्रद और परम कुण्डली है। इसकी लिखनप्रणालीमें रेखा ह्रस्व लृकारके क्रोड़ तुल्य लगती है। इस रेखाको वैष्णवी कहते हैं। फिर इस रेखामें दुर्गा, वाणी और सरस्वती रहती हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र) तन्त्रशास्त्रोक्त नाम कमला, हर्षा, हृषीकेश, मधुव्रत, सूक्ष्मा, कान्ति, वामगण्ड, रुद्र, कामोदरी, सुरा, शान्तिकृत्, स्वस्तिका, शक्र, मायावी, लोलुप, वियत्, कुशमी, सुस्थिर, माता, नीलपीत, गजानन, कामिनी, विश्वपा, काल, नित्या, शुद्ध, शुचि, कृती, सूर्य, धैर्योत्कर्षिणी, एकाकी और दनुजप्रसू है।

पाणिनि लृकारका दीर्घत्व नहीं मानते। किन्तु वार्तिक सूत्रके अनुसार आवश्यक स्थलपर लृकारके स्थानमें लृकार लगा लेना पड़ता है। "लृ ति लृ वा।" (वार्तिक) इसलिये तन्त्र और मुग्धबोध-व्याकरणमें स्वीकृत लृकार विरुद्ध नहीं ठहरता।

(अव्य०) २ देवनारी। ३ नार्यात्मा। ४ माता। (स्त्री०) ५ दैत्यस्त्री। ६ दनुजमाता। ७ कामधेनुमाता। (पु०) ८ सर्व। ९ महादेव।

ए

ए—१ स्वरवर्णका एकादश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान कण्ठ और तालु है। एकार दीर्घ एवं प्लुत तथा अनुनासिक एवं निरनुनासिक भेदसे द्विविध और उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध होता है। कामधेनुतन्त्रके मतसे यह परम, दिव्य, ब्रह्मविष्णु-शिवात्मक, रञ्जिनी-कुसुमतुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणात्मक, विन्दुत्रयविशिष्ट, चतुर्वर्गप्रद और परम कुण्डली है। लिखनकी प्रणालीमें वामदिक्से एक कुञ्चित रेखा दक्षिण दिक्को जा अधोगत पड़ती, फिर वहांसे वाम दिक्को चलती है। इस रेखामें अग्नि, महादेव और वायु रहते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र) एकारका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम वास्तव, शक्ति, झिण्टा, ओष्ठ, भग, मरुत्, सूक्ष्मा, भूत, अर्धकेशी, ज्योत्स्ना, श्रद्धा, प्रमर्दन, भय, ज्ञान, कृशा, धीरा, जङ्घा, सर्वसमुद्भव, वह्नि, विष्णु, भगवती, कुण्डली, मोहिनी, वस, योषित्, आधारशक्ति, त्रिकोणा, ईश, सन्धि, एकादशी, भद्रा, पद्मनाभ और कुलाचल है। वीजवर्णाभिधानमें वामगण्डान्त, मोक्षवीज, विजया और ओष्ठ कई नाम अधिक लिखे हैं। शिक्षाके अनुसार यह सन्धिका अक्षर लगता और अकार तथा इकार मिलनेसे बनता है।

२ धातुका अनुबन्ध विशेष। "एः सिचि अवृद्धः।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ स्मृति, याद। ४ असूया, नाखुशी। ५ अनुग्रह, मेहरबानी। ४ आमन्त्रण, न्योता, बुलावा। ५ आह्वान, पुकार।

(पु०) एति प्राप्नोति सर्वं विश्वम्, इण्-अच्। ६ विष्णु।

(हिं० सर्व०) ७ यह।

एंच (हिं० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ विलम्ब, देर। ३ जमीन्दारोंके आमदनी देनेका महाजनी नियम।

एंचना (हिं० क्रि०) १ रेखा निर्माण करना, सतर खींचना। २ लिखना, खींच देना। ३ निकालना। ४ फांसी देना। ५ शुष्क करना, सुखाना। ६ लेना। ७ रखना। ८ लगाना।

एंचपेंच (हिं० पु०) १ आवर्त, हेरफेर। २ वक्रगति, टेढ़ी चाल।

एंचाताना (हिं० वि०) वक्रदृष्टि, तिरछा देखनेवाला। "सौपर फुल्ला हजार पर काना सवा लाखपर एंचाताना।" (लोकोक्ति)

एंचातानी (हिं० स्त्री०) १ युद्ध, लड़ाई। २ कठिनता, मुश्किल। ३ खींचखांच, धर-पकड़।

एंड, एड देखो।

एंडाबेंड़ा (हिं० वि०) उचनीच, उलटपुलट।

एंडी (हिं० स्त्री०) कीट विशेष, एक कीड़ा। यह रेशमका कीड़ा एरण्डके पत्र भक्षण करता है। पूर्ववङ्ग तथा आसाम इसका निवासस्थान है। नव-

ब्बर,फरवरी और मई में एंड़ी अच्छा रेशम देती है। किन्तु एंड़ीकी अपेक्षा मूंगेका रेशम बढ़िया होता है। २ अंडी, एंड़ीका रेशम। इस रेशमकी बनी चद्दरको भी अंडी ही कहते हैं।

एंडुवा (हिं० पु०) बोझके नीचे रखनेकी तकिया, गेंडुरी। मजदूर बोझ शिरपर लादते समय इसे नीचे रख लेते हैं। एंडुवा शिरकी रक्षा करता है। इससे बोझ हलका मालूम पड़ता और शिर कम दुखता है।

एक (सं० त्रि०-सर्व०) एतीति, इण-कन्। इणभीका-पाशल्यतिमर्चिभ्यः कन्। उण् ३।४३। १ प्रधान, खास, बड़ा। २ अन्य, दूसरा। ३ केवल, अकेला। ४ आदि, औवल। ५ अद्वितीय, निराला। ६ सत्य, सच्चा। ७ समान, बराबर। ८ अल्प, थोड़ा। ९ प्रथम, पहला। १० कोई। ११ एकसंख्याविशिष्ट, जो एक ही अदद-का हो।

"एक अण्डा वह भी गन्दा।"
एक पन्थ दो काज।"
"एक ही थैलीके चट्टे बट्टे।" (लोकोक्ति)

(पु०) १२ परमेश्वर। १३ विष्णु। १४ ऐल-वंशीय एक राजा। (भागवत ९।१५।२) १५ अग्नि। १६ सूर्य। १७ देवराज। १८ यम।

परमात्मा, विधु, क्षिति, गणेशदन्त और शुक्रचक्षु एकसंख्यार्थबोधक शब्द है।

एकंग (हिं० वि०) एकाकी, अकेला।

एकंगा (हिं० वि०) एक दिकस्थ, जो एक ही ओर हो।

एकंगी (हिं० स्त्री०) यष्टिका विशेष, एक लाठी। यह लट्टूदार होती है। लम्बाई ४।५ हाथ रहती है। पकड़नेके लिये मुठिया लगा दी जाती है। एकंगीसे लकड़ी खेलते हैं। यह मार और बचाव दोनों काम आती है। एकंगी एक प्रकारका बड़ा गदका है।

एकंडिया (हिं० वि०) १ एक अण्डयुक्त, जो एक ही गांठका हो। (पु०) २ एक अण्डकोषयुक्त अश्व वा वृषभ, जिस बैल या घोड़ेके एक ही फोता रहे। ३ एक गांठका लहसुन।

एकंत (हिं०) एकान्त देखो।

एकक (सं० त्रि०) एक-कन्। असहाय, अकेला, जिसके साथी न रहे।

"विधिरेककचक्रचारिणम्।" (नैषध २।३६)

एककन्द (सं० पु०) पानीयालुक, कन्दशाक।

एककपाल (सं० त्रि०) एक ही पात्रमें रहनेवाला, जो एक ही बरतनमें हो।

एककर (सं० त्रि०) एकं करोतीति, एक-कृ-ट। दिवाविभानिशेति। पा ३।२।२१। एकमात्रकारक, अकेला करनेवाला।

एककर्ण—भारतवर्षके अन्तर्गत जनपदविशेष। उत्तर-पश्चिम सीमान्तमें अवस्थित है। (मत्स्य ११०।२५,मार्क० ५८।३७)

एककर्मकारक, एककर्मकारी देखो।

एककर्मकारी (सं० त्रि०) एकं कर्म करोतीति, एक कर्म-कृ-णिनि। एक कार्यकारक, हमपेशा, एक ही काम करनेवाला।

एककार्य (सं० त्रि०) एकं समानं कार्यं यस्य, बहुव्री०। १ समानकार्यकारक, वही काम करनेवाला। (क्ली०) २ प्रधान कर्म, वही काम।

एककाल (सं० पु०) एकश्चासौ कालश्च, कर्मधा०। १ एक समय, समकाल, वही वक्त। (अव्य०) २ एक ही समय पर, एकबारगी।

एककालभोजन (सं० क्ली०) किसी नियत समय एक ही बारका भोजन, जो खाना किसी मुकर्रर वक्तपर एक ही मरतबा खाया जाता हो।

एककालीक (सं० त्रि०) १ केवल एक बार होने-वाला, जो सिर्फ एक ही मरतबा पड़ता हो। २ दिनमें एक बार होनेवाला, जो रोज एक मरतबा गुजर जाता हो।

एककालीन (सं० त्रि०) एककाल-खञ। १ सम-कालीन, हम्-असर। २ एक ही समय उत्पन्न होने-वाला, जो उसी वक्त पैदा हो।

एककालीनता (सं० स्त्री०) एककालीन-तल्। सम-कालीन भाव वा धर्म, हम-असरी।

एककुण्डल (सं० पु०) एकं कुण्डलं यस्य, बहुव्री०। १ बलराम। २ कुवेर। ३ शेषनाग।

एककुष्ठ (सं० क्ली०) क्षुद्रकुष्ठभेद, एक मामूली कोढ़।

इससे शरीर कृष्ण और अरुण पड़ जाता है। एककुष्ठ असाध्य होता है। (सुश्रुत)

एककोष्ठि (सं० त्रि०) एककोष्ठ चूर्णमय आधार पर अवस्थान करनेवाला, जो एक ही कोठेमें रहता हो। शिरःपदी, कटल मत्स्य, अर्गोनट, वेलेम, नाइट, अक्टोपस प्रभृति प्राणी एककोष्ठि हैं।

एकक्षीर (सं० क्ली०) एक ही धात्रीका दुग्ध, उसी अन्ना वर्ग रहका दूध।

एकगम्य (सं० त्रि०) एकत्वेन गम्यः, एक-गम-यत्। एकमात्र लभ्य, अकेला मिलनेवाला। २ एकमात्र निर्विकल्पक ज्ञान द्वारा प्राप्त होनेवाला।

एकगाछी (हिं० स्त्री०) केवल एक वृक्षद्वारा निर्मित नौका, जो नाव एक ही पेड़से बनी हो।

एकगुरु (सं० पु०) एको गुरुर्यस्य, बहुव्री०। सतीर्थ, एक ही उस्तादका शागिर्द।

एकगुरुक, एकगुरु देखो।

एकग्राम (सं० पु०) एकश्चासौ ग्रामश्चेति, कर्मधा०। अभिन्न ग्राम, वही गांव।

एकग्रामीण (सं० त्रि०) एकस्मिन् ग्रामे भवन्, एक-ग्राम-खञ्। एक ही ग्रामका अधिवासी, जो उसी गांवमें रहता हो।

एकग्रामीय (सं० त्रि०) एक-ग्राम-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। एकग्रामवासी, उसी गांवका बाशिन्दा।

एकचक्र (सं० क्ली०) एकं चक्रं यस्य, बहुव्री०। १ हरिगृह वा शुम्भपुरी नामक एक पुरी।

"एकचक्रं हरिगृहं शुम्भपुर्यथ वर्त्तनि।" (त्रिकाण्डशेष २।१।१२)

यहां हरिगृह और शुम्भ एकचक्रका पर्याय-जैसा गृहीत हुआ है।

अध्यापक विलसन प्रभृति कुछ पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे शुम्भ (एकचक्रा)-का वर्तमान नाम सम्बलपुर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। वर्तमान सम्बल-पुर महाभारतको एकचक्रा नगरी कैसे हो सकता है!

एकचक्रा देखो।

(त्रि०) २ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेले घूमता हो। ३ एकमात्र राजविशिष्ट, जो उसी सल्तनतमें हो। (पु०) ४ सूर्य देवका रथ। ५ एक असुर। महाभारतमें इस असुरका नाम प्रतिविन्ध्य लिखा है। (भारत, सभा ६७।२२)

एकचक्रवर्तिता (सं० स्त्री०) एक चक्रवर्तिनो भावः, एक-चक्रवर्तिन्-तल्। समग्र पृथिवीका शासनकर्तृत्व, कुल ज़मीन् की सलतनत। भूमण्डलके एकचक्रको तरह राजत्व करनेका भाव वा धर्म एकचक्रवर्तिता कहाता है।

एकचक्रवर्ती (सं० पु०) समग्र पृथिवीका शासन-कर्ता, तमाम मुल्कका बादशाह।

एकचक्रा (सं० स्त्री०) महाभारतोक्त एक प्राचीन नगर। जतुगृहदाहके बाद पञ्च पाण्डव कुन्तीको ले गुप्त भावसे गङ्गा तीर गये थे। वहांसे नौकापर बैठ वह गङ्गा पार हुये और क्रमागत दक्षिणाभिमुख चलने लगे। फिर वह एक गभीर अरण्यमें पहुंचे थे। इसी वनमें भीमने हिड़िम्ब नामक राक्षसको मारा। उसके बाद नाना स्थान अतिक्रम कर पञ्चपाण्डव व्यासदेवकी आज्ञासे एकचक्रा नगरीमें राक्षसके घर जा बसे। (भारत, आदि १४९—१५७ अ०)

अब देखना चाहिये—एकचक्रा कहां है। एक-चक्रा नगरी पर बहुत दिनसे गड़बड़ उठ रहा है। कुछ बङ्गाली कहते—एकचक्रा मेदिनीपुर जिलेमें गढ़बेता ग्रामके निकट रही, जहां आज भी वक राक्षसकी हड्डी पड़ी है। फिर पश्चिमाञ्चलके लोग इस नगरीकी अवस्थिति शाहाबाद जिलेमें बताते हैं। मीमांसा करना आवश्यक आता, किसका मत प्रकृत देखाता है।

चीना परिव्राजक युअन् चुयङ्गने अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें लिखा, कि गाज़ीपुर (चेन चु) से महासार (मो-हो-स लो) नामक ग्रामको उनका जाना हुआ था। इस ग्रामके आगे पहुंच कर उन्होंने सुना—यहां पहले एक नरभोजी राक्षस रहा, जिसके उत्पातसे सबको विपद्ग्रस्त होना पड़ा; बुद्धदेवने फिर उसे शासन किया।

उक्त महासार ग्रामका वर्तमान नाम मासार है। वह शाहाबाद जिलेमें आरा नगरके निकट अवस्थित है। अतएव सहज ही अनुमान करते, कि चीना परिव्राजक महासार ग्रामसे आरा नगर पहुंचे थे।

आजकल आरामें लोग कहते, कि पञ्चपाण्डव जननी कुन्तीके साथ उसी स्थानमें जा कर रहे। वहां वक राक्षसका वास था, जिसे भीमने मार डाला। सुतरां इस स्थानको महाभारतोक्त एकचक्रा नगरी-जैसा समझ सकते हैं। यह प्रवाद बहुकालसे सुनते—विशेषत: पहले यहां नरमांसभक्षक राक्षस रहते थे। चीना परिव्राजककी वर्णना पढ़नेसे यह बात समझ पड़ती है।

वर्तमान आराका दूसरा प्राचीन नाम चक्रपुर है। इसके पार्श्वपर ही बकरी नामक एक क्षुद्र ग्राम पड़ता है। यहांके लोगोंको विश्वास है—इसी बकरी ग्राममें वक राक्षस रहता था। महाभारतमें भी लिखा—एकचक्राके निकट वक राक्षसका वास रहा।

"समीपे नगरस्यास्य वको वसति राक्षस:।" (आदिपर्व १६०।२)

यहां ब्राह्मण कहा करते—भीम मङ्गलवारके दिन वक राक्षसको मार चक्रपुर लाये थे। इसीसे चक्रपुरका नाम आरा* पड़ गया।

महाभारतके पाठसे समझा गया, कि एकचक्रा नगरीसे अनतिदूर वेत्रकीयगृह नामक एक नगर रहा—

"वेत्रकीयगृहे राजा नायं नयमिहास्थित:।
उपायं तं न कुरुते यत्नादपि स मन्दधी:॥
अनामयं जनस्यास्य येन स्यादद्य शाश्वतम्।
ए दह वयं नूनं बसामो दुर्बलस्य ये॥
विषये नित्यमुद्विग्ना: कुराजानामुपाश्रिता:।
ब्राह्मणा: कस्य वास्तव्या: कस्य वा छन्दचारिण:॥"

(आदि १६२।९-११)

इस नगरसे अनतिदूर वेत्रकीयगृहमें एक राजा रहते हैं। वह नहीं समझते—न्याय किसको कहते हैं। वह नितान्त अबोध हैं। इस नगरपर उनका कुछ भी यत्न नहीं। वह ऐसी कोई चेष्टा भी नहीं करते, जिससे हमारा भला हो। हम अनामयके पात्र हैं। किन्तु अकर्मण्य दुर्बल राजाके राजत्वमें पड़ हम सर्वदा ही उद्विग्न रहते हैं। नतुवा ब्राह्मणोंको क्या किसीकी बात सुनना और किसीके इच्छाधीन बन चलना पड़ता है?

* आर शब्द मङ्गलग्रहका एक नाम है।

उक्त वर्णना पढ़नेसे समझते—महाभारतके समय एकचक्रा नगरी वेत्रकीयगृहवाले राजाके अधिकारमें रही, पीछे वक राक्षस उसे दबा बैठा।

वर्तमान आरा नगरसे दक्षिण-पूर्व ५।७ कोस दूर 'बिता' या 'बेता' नामक एक अतिप्राचीन क्षुद्र ग्राम है। यह ग्राम भगवानगञ्जके ठीक उत्तर पार्श्वपर पुनपुन नदी किनारे अवस्थित है। यहां प्राचीन बौद्ध स्तूपका निदर्शन मिलता है। (Archæological Survey of India, Rept. Vol. VIII p. 19.) बोध होता—बौद्धोंके अभ्युत्थानसे पहले यहां हिन्दू राजावोंका राजत्व रहा। यह 'बिता' या 'बेता' ग्राम ही महाभारतोक्त वेत्रकीयगृह-जैसा समझ पड़ता है। इससे थोड़ी दूर पुनपुन नदी है। अपर पारपर आराके निकट दूसरा बिता ग्राम है। इससे अनुमान लगता—प्राचीन वेत्रकीय राज्य पुनपुन नदीके पूर्वपारसे वर्तमान आरा नगर तक विस्तृत था।

एकचत्वारिंश (सं॰ वि॰) इकतालीसवां, जो इकतालीस की जगह पड़ता हो।

एकचत्वारिंशत् (सं॰ वि॰) इकतालीस, चार दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ४१।

एकचर (सं॰ पु॰) एक: सन् चरति, एक-चर पचाद्यच्। १ गण्डक, गैंड़ा। २ सर्पादि हिंस्रक जन्तु, सांप वगैरह खूंखार जानवर। (वि॰) ३ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला घूमता हो। ४ एक ही अनुचर रखनेवाला, जिसके दूसरा साथी न रहे। ५ साथ-साथ चलनेवाला। ६ यूथचारी, गोलमें रहनेवाला।

एकचरण (सं॰ पु॰) एकश्चरणो यस्य, बहुव्री॰। १ एकपदविशिष्ट मनुष्य, एक पैरका आदमी। २ जनपदविशेष, एक बसती। (वि॰) ३ एकपदविशिष्ट, एक पैरवाला।

एकचर्या (सं॰ स्त्री॰) एकस्य चर्या, चर भावे क्यप् टाप्। एकाकी गमनकी अवस्था, अकेले चलनेकी हालत।

एकचारी (सं॰ वि॰) एक: सन् चरति, एक-चर-णिनि। १ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला

घूमता हो। (पु०) २ बुद्धदेवके एक सहचर। ३ प्रत्येकबुद्ध।

एकचारिणी (सं० स्त्री०) सती, साध्वी, पतिव्रता, नेकबख़्त बीबी।

एकचित (हिं०) एकचित्त देखो।

एकचित्त (सं० त्रि०) एकमेकविषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री०। १ अनन्यचित्त, अलाहिदा ख़याल न रखनेवाला। २ अभिन्नचेता, एक ही बात सोचनेवाला। (क्लो०) ३ किसी विषयके ध्यानकी दृढ़ता, ख़यालकी पाबन्दी।

एकचित्तता (सं० स्त्री०) ध्यानकी दृढ़ता, ख़यालकी जमावट।

एकचिन्तन (सं० त्रि०) एक ही विषयकी चिन्ता रखनेवाला, जिसे दूसरी बातका ख़याल न रहे।

एकचूर्णि (सं० पु०) एक मुनि। यह तैत्तिरीय यजुर्वेदके भाष्यकर्ता थे। सायणाचार्यने अपने बनाये वेदके भाष्यमें एकचूर्णिका नाम लिखा है।

एकचेतः (सं० त्रि०) अभिन्नहृदय, एकदिल।

एकचोदन (सं० क्लो०) एक वचनका वर्णन, अकेलेकी बात। (त्रि०) २ एक नियमपर आश्रित, जो एक ही क़ायदे पर टिका हो।

एकचोबा (हिं० पु०) एक ही चोबका ख़ीमा, जो डेरा एक ही खंभेके सहारे खड़ा हो।

एकच्छाय (सं० त्रि०) एका अविच्छिन्ना छाया आच्छादनं यत्र, बहुव्री०। एक आच्छादनविशिष्ट, सिर्फ़ साया रखनेवाला, जो बिलकुल धुंधला हो।

एकच्छाया (सं० स्त्री०) अधमर्णका सादृश्य, क़र्ज़दारकी बराबरी।

"एकच्छाया प्रविष्टानां दापो यस्तत्र दृश्यते।" (कात्यायन)

एकछत्र (सं० त्रि०) १ एक ही छत्र रखनेवाला, जिसके दूसरा मालिक न रहे। (अव्य०) २ अभिन्न शासनसे, अकेली हुकूमत पर। (पु०) ३ अनन्य शासन, पूरी हुकूमत।

एकज (सं० त्रि०) एकस्मात् जायते, एक-जन-ड। १ एक होसे उत्पन्न, जो एक होसे पैदा हो। २ अकेला उत्पन्न होनेवाला, जो दूसरेके साथ पैदा न हो। ३ एकाकी बढ़नेवाला, जो अकेला ही जगता हो। ४ अपने प्रकारका अकेला, जो अपनी क़िस्ममें निराला हो। ५ एकप्रकार, जो दूसरी क़िस्मका न हो। (पु०) ६ शूद्र। ७ राजा।

एकजटा (सं० स्त्री०) एका एकसंख्यका मुख्या वा जटा यस्याः, बहुव्री०। १ उग्रतारा। ध्यानमें इनकी मूर्ति चतुर्भुज और कृष्णवर्ण वर्णित है। मुण्डमाला ही आभूषण है। दक्षिण हस्तद्वयके मध्य ऊर्ध्व हस्तमें खड्ग और अधोहस्तमें इन्दीवर विद्यमान है। वामहस्तद्वयमें कर्त्री एवं खर्पर है। मस्तक पर गगनस्पर्शी एक जटा खड़ी है। मस्तक एवं गलदेशमें मुण्डकी माला पड़ी है। वक्षःदेशपर सर्पका हार है। नयन आरक्त हैं। कटिदेशपर व्याघ्रचर्म और कृष्णवस्त्र पहने हैं। वामपद शवके हृदय और दक्षिण पद सिंहके पृष्ठपर विन्यस्त है। यह अट्टहास किया करती हैं। गर्जन भीषण और मूर्ति भयङ्कर है। इनकी अष्ट योगिनियोंके नाम यह हैं—महाकाली, रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, महारात्रि और भैरवी। (कालिकापु० ६१ अ०)

नेपालके बौद्ध इन्हीं देवीको एकजटा-आर्यतारा-देवीके नामसे पूजते हैं। बौद्ध ग्रन्थमें यह बात लिखी, कि अवलोकितेश्वरने वज्रपाणि बोधिसत्वसे एकजटा देवीकी पूजा कही थी। (ताराष्टोत्तरशतनामस्तोत्र) २ रावण द्वारा नियुक्त एक विकटाकार राक्षसी। (रामायण ४।२३।५)

एकजटा कामदेव (सं० पु०) उत्कल देशके गङ्गवंशीय एक राजा। यह गङ्गेश्वरके पुत्र और गङ्गवंशीय प्रथम राजा चोड़गङ्गके पौत्र रहे। गङ्गेश्वर किसी कार्यसे महापापमें लिप्त हुये थे। इसीसे उनकी पत्नीने उन्हें मार एकजटा कामदेवको सिंहासन पर बैठाया। इन्होंने राज्य मिलने पर अनेक सत्कार्य किये थे। एकजटा कामदेव पुरीका प्राचीन मन्दिर तोड़ा उसी स्थानपर नूतन मन्दिर बनवाने लगे, किन्तु निर्माणकार्य अधूरा रहते ही अकाल कालके कवलमें जा पड़े। उत्कल और गाङ्गेय शब्द देखो। इनके पुत्रका नाम मदनमहादेव था। उड़ीसेके किसी प्राचीन

इतिवृत्तमें एकजटा कामदेवका एकजटा महादेव और किसी ग्रन्थमें कामदेव नाम लिखा है।

एकजन्मा (सं० पु०) एकं मुख्यमद्वितीयं वा जन्म यस्य, बहुव्रो०। १ राजा, बादशाह। २ शूद्र। उपनयन संस्कार न होनेसे शूद्र द्विजोंकी श्रेणीसे विभिन्न रहता है।

एकजात (सं० त्रि०) एकस्मात् जातः, ५-तत्। १ सहोदर, एक ही मा बापसे पैदा। २ एक वस्तुसे उत्पन्न, जो दूसरी चीज़से पैदा न हो।

एकजाति (सं० पु०) एका जातिर्जन्म यस्य, बहुव्रो०। १ शूद्र।

"ब्राह्मणः चत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः।
चतुर्थ एकजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पञ्चमः॥" (मनु १०।४)

(त्रि०) २ सामान जाति, एक ही क़ौमवाला। ३ एक बार उत्पन्न होनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातिप्रतिबद्ध (सं० त्रि०) केवल एक जन्मसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातीय (सं० त्रि०) एकः प्रकारः, एक-जातीयर्। प्रकारवचने जातीयर्। पा ५।३।६९। १ एकप्रकार, एक-जैसा। २ एक ही जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी क़ौमसे सरोकार रखता न हो।

एकज़ीक्यूटिव (अं० वि०=Executive) कार्य-निर्वाहक, कारगुज़ार। कार्यक्षम शासनको एकज़ीक्यूटिव आथारिटी, विधायक अधिकारीको एकज़ीक्यूटिव आफ़िसर, निष्पादक समितिको एकज़ीक्यूटिव कमिटी और अनुष्ठान-नियुक्त सभाको एकज़ीक्यूटिव काउंसिल कहते हैं।

एकजीववाद (सं० पु०) वेदान्त दर्शनका एक वाद। इसमें जीव एक-जैसा माना गया है।

एकज्या (सं०स्त्री०) १ चापकी ज्या, कमान् की डोर। २ व्यासार्धका चिह्न, निस्फ़ क़ुतरका निशान्।

एकज्योतिः (सं० पु०) एकं प्रधानं सर्वाभिभवकरं ज्योतिरस्य, बहुव्रो०। शिव।

एकज्वर (सं० पु०) ज्वररोग विशेष, किसी किस्म का बुखार। ज्वर देखो।

एकट (अं० पु०=Act) व्यवस्था, विधि, क़ानून।

एकटंगा (हिं० वि०) एकपदविशिष्ट, लंगड़ा, जिसके एक ही पैर रहे।

एकटकी (हिं० स्त्री०) निश्चल दृष्टि, टकटकी, जमी हुई निगाह।

एकट्ठा (हिं० वि०) एकत्र, जमा हुआ।

एकठा (हिं० स्त्री०) नौका विशेष, किसी क़िस्मकी नाव। यह एक ही काठ या लकड़ी खोदकर बनायी जाती है।

एकड़ (अं० पु०=Acre) भूमि नापनेकी एक परिमाण। यह १ बीघे १२ बिस्वे पड़ता है।

एकडाल (हिं० वि०) १ अभिन्न, एक जैसा। (पु०) २ अस्त्र विशेष, किसी क़िस्मका छुरा। जिस छुरेमें फल और बेंट एक ही लोहेके टुकड़ेका रहता, उसे सब कोई एकडाल कहता है।

एकत (सं० पु०) १ देवविशेष। २ मुनिविशेष। (हिं० वि०) ३ एकत्र, जो अलग न हो।

एकतः (सं० अव्य०) एक-तसिल्। १ प्रथमतः, पहले। २ एक पार्श्वपर, एक तरफ़। ३ एकसे। ४ एक पक्षमें, एक ओरसे। ५ एक दिक्, एक सिम्त। ६ अकेले, एक-एक।

"यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीना-
माविष्कृतारुणपुरःसर एकतोऽर्कः।" (शकुन्तला)

एकतत्त्वी (सं० त्रि०) एकतत्त्वमस्यास्तीति, एक-तत्त्व-इनि। समानकर्म, बराबरका काम करनेवाला।

एकतम (सं० त्रि०) एक-डतमच्। एकाच्च प्राचाम्। पा ५।३।९४। १ बहुके मध्य एक, बहुतोंमें अकेला। २ दोमें एक। ३ एक।

"अस्थापि वा शरीरं वा ब्रह्मन् कतमं ब्रुवः।" (भारत)

एकतर (सं० त्रि०) एक-डतरच्। १ दोमें एक। २ बहुतोंमें एक।

एकतरफ़ा (फ़ा० वि०) १ एकपक्षसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी ओरका न हो। २ पक्षपातयुक्त, तरफ़दारीवाला। ३ पार्श्वस्थ, बग़ली।

एकतरा (हिं० पु०) एक दिनके अन्तरसे चढ़नेवाला ज्वर, जो बुखार एक दिन ठहर कर आता हो।

एकता (सं० स्त्री०) एकस्य भावः, एक-तल् टाप्। १ ऐक्य, वहदत, मेलजोल। २ अभिन्नता, बराबरी। ३ मुक्तिविशेष। (फ़ा० वि०) ४ अद्वितीय, अनोखा।

एकतान (सं० त्रि०) एकेन भावरसेन तन्यते, तन-अण्। १ एकाग्र, एक ही काममें लगा हुआ। २ एक स्वर तथा एक तालविशिष्ट, जो दूसरा स्वर या ताल रखता न हो। (पु०) ३ एक ही विषयपर नियोजित ध्यान, जो खयाल एक ही बातपर लगा हो। ४ स्वर एवं ताल की एकता, गाने-बजानेका मेल।

एकतार (सं० त्रि०) एका तारा यत्र, बहुव्री० ह्रस्वः। केवल एक ताराविशिष्ट, सिर्फ एक ही सितारा रखनेवाला। नभको एकतार देखनेपर नारद मुनिका स्मरण करना चाहिये।

एकतारा (हिं० पु०) एक तारवाला सितार-जैसा लम्बा बाजा। कद्दूकी तोंबीका मुंह चमड़ेसे मढ़ा बांसका एक डण्डा लगा देते हैं। डण्डेके ऊपरी हिस्सेपर एक खूंटी रहती है। खूंटीसे मढ़े चमड़े पर लगी घोड़ियाके नीचे तक एक लोहे या पीतलका तार चढ़ता है। अनेक भिक्षुक एकतारा बजा बजा भीख मांगते घूमते हैं।

एकताल (सं० पु०) एकः समानस्तालो यत्र, बहुव्री०। १ तालविशिष्ट, तालसे मिला हुआ। (पु०) २ तालविशिष्ट गीतवाद्यादि, सुरीला गाना। ३ एकमात्र तालवृक्षका पर्वत।

"एकताल इवोत्पातपवनप्रेरितो गिरिः।" (रघु १५।२३)

एकताला (हिं० पु०) एकतालका गीतवाद्यादि, दूसरे तालकी जरूरत न रखनेवाला गाना-बजाना। इसमें १२ मात्रा और ३ आघात हैं। खाली ताल नहीं पड़ता। तबले या ढोलकसे निकलता है—

धिन् धिन् धा, धा दिन्ता, तादेत् धागे तेरे केटे धिन्ता धा।

हिन्दुस्थानी गाने-बजानेवाले प्रायः अन्तको दादरे एकतालेमें गाया करते हैं।

एकतालिका (सं० स्त्री०) एक रागिणी।

एकताली (सं० स्त्री०) एक तालका बाजा।

एकतालीस (हिं० वि०) एकचत्वारिंशत्, चालीस और एक, चार दहाई और एक एकाईसे बना हुआ, ४१।

एकतीर्थी (सं० वि०) एकं समं तीर्थं आश्रमोऽस्त्यस्य, इनि। १ सतीर्थ, उसी ठिकानेवाला। (पु०) २ एक ही गुरुका शिष्य, उसी उस्तादका शागिर्द।

एकतीस (हिं० वि०) एकत्रिंशत्, तीस और एक, तीन दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ३१।

एकतेजन (सं० त्रि०) एकमात्र काण्डविशिष्ट, एक ही डण्डा रखनेवाला।

एकतेश्वर—बंगाल प्रान्तके बांकुड़ा जिलेका एक प्राचीन ग्राम। यह बांकुड़ा नगरसे दक्षिण-पूर्व १ कोस द्वारिकेश्वर नदीके तीर अवस्थित है। एकतेश्वर नामक शिवमन्दिर देखने योग्य है। मन्दिरमें महादेवके लिङ्गकी एक मूर्ति है। लिङ्गको एकतेश्वर कहते हैं। मन्दिरकी बनावट बहुत अच्छी है। ऐसी दृढ़ भित्ति इस अञ्चलमें कहीं देख नहीं पड़ती। मन्दिर अतिप्राचीन है। लाल बिल्लौरी पत्थर जड़ा है। बीचमें दो तीन बार संस्कार हुआ है।

एकतोदत् (सं० त्रि०) एकतो दन्ता यस्य, बहुव्री० दत् आदेशः। एकपाटी दन्तयुक्त, जो एक ही ओर दांत रखता हो।

एकत्र (सं० अव्य०) एक-त्रल्। सप्तम्यास्त्रल्। पा ५।३।१०। १ एक ही स्थानमें, उसी जगहपर। २ एकसङ्ग, एक साथ, मिल-जुलकर।

एकत्रा (हिं० पु०) निरवशेष, जमा, जोड़।

एकत्रिंश (सं० त्रि०) एकत्रिंशत् संख्याविशिष्ट, एकतीसवां।

एकत्रिंशत् (सं० त्रि०) एकतीस, तीन दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ३१।

एकत्रिक (सं० पु०) यज्ञविशेष।

एकत्रित (सं० त्रि०) एकत्रप्राप्त, इकट्ठा, जमाया हुआ।

एकत्व (सं० क्ली०) एकस्य भावः, एक-त्व। १ एकता, तौहीद, एकाई। २ अभेद, मेल। ३ साम्य, बराबरी। ४ मुक्तिविशेष। व्याकरणमें एकवचनको एकत्व कहते हैं।

एकत्वभावना (सं० स्त्री०) एक की चिन्ता, एक का खयाल। जैन आत्माके एकत्वपर ध्यान लड़ानेका

यह नाम रखते हैं। उनके मतानुसार एकाकी जीवका साथी केवल कर्म है।

एकदंडा (हिं॰ पु॰) कुश्तीका एक पेच।

एकदंता (हिं॰ पु॰) १ एकदन्तविशिष्ट हस्ति, एक दांतका हाथी। २ एक दांतवाला।

एकदंष्ट्र (सं॰ पु॰) एका दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री॰ ह्रस्वः। गणेश।

एकदण्डी (सं॰ पु॰) एकः केवलो दण्डोऽस्यास्तीति, एक-दण्ड-इनि। सन्न्यासविशेष। जब हृदयमें सनातन ब्रह्ममात्रका निश्चय जमता, तब सन्न्यासी एकमात्र दण्ड पकड़ता है। चतुर्विध सन्न्यासियोंमें हंसश्रेणीवालोंके ही दण्डधारणको व्यवस्था है। सन्न्यासी देखो।

एकदन्त (सं॰ पु॰) गणेश। किसी समय गणेशको द्वारपाल बना शिवसे दुर्गा कथोपकथन करती थीं। उसी समय परशुरामने शिवके दर्शनको आ गणेशसे द्वार छोड़नेको कहा। इनके अस्वीकार करनेपर दोनोंमें तुमुल युद्ध होने लगा। परशुरामके कुठाराघातसे गणेशका एक दन्त टूटा था। उसी समयसे इनका नाम एकदन्त पड़ गया। (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

एकदरा (हिं॰ पु॰) एक दरवाला, जो दालान एक ही दरवाज़ा रखता हो।

एकदस्ती (फ़ा॰ स्त्री॰) कुश्तीका एक पेच। इसमें लड़नेवालेका बायां हाथ अपने बायें हाथसे घुमा कर पकड़ते और दाहनेसे खींच पीछे निकल जाते हैं। यह पेच कुश्ती लड़नेमें सबसे पहले सिखाया जाता है।

एकदा (सं॰ अव्य॰) एकस्मिन् काले, एक-दा। सर्वैकान्यकिं यत्तदः काले दा। पा ५।३।१५। १ एक ही समयपर, फ़ौरन्। २ एकबार, एक मरतबा, कभी-कभी। ३ किसी दिनको। ४ एक समय पर।

एकदिक् (सं॰ स्त्री॰) १ एक स्थान, वही जगह। २ एकपार्श्व, एक बगल। जैन शास्त्रमें दिक्सम्बन्धीय निर्धारित नियम लांघनेका एकदिशा—परिमाणातिक्रमण कहते हैं। श्रावकको प्रतिदिन चारो दिशाकी दूरी ठहरा चलना पड़ता है। उक्त नियम तोड़नेपर यह अतिचार लगता है।

एकदुःखसुख (सं॰ वि॰) सहानुभूति रखनेवाला, हमदर्द, जो दूसरेके दुःखमें दुःखी और सुखमें सुखी रहता हो।

एकदृक् (सं॰ पु॰) एकमभिन्नं पश्यतीति, एक-दृश्-क्विप्। १ महादेव। २ तत्त्वज्ञानी। ३ ब्रह्मज्ञानी। ४ काक, कौवा। राम बाणसे कौवेकी एक आंख फूट गयी थी। (वि॰) ५ काना। ६ एकपक्षाश्रयी, तरफ़दार।

एकदृश्य (सं॰ वि॰) अकेला देखने योग्य, जो तनहा देखे जानेके क़ाबिल हो।

एकदृष्टि (सं॰ स्त्री॰) एका एकविषयिणी दृष्टिः, कर्मधा॰। एकमात्र विषयपर दृष्टि, जो नज़र सिर्फ़ एक ही बातपर लड़ी हो। (पु॰) एका दृष्टिर्यस्य, बहुव्री॰। २ काक, कौवा। (वि॰) ३ काना।

एकदेव (सं॰ पु॰) एकः प्रधानो देवः, कर्मधा॰। परमेश्वर।

एकदैवत (सं॰ वि॰) एका देवता यस्य, बहुव्री॰। एक ही देवताको दिया हुआ, जो एक ही देवताको चढ़ाया गया हो।

एकदैवत्य (सं॰ वि॰) एकां श्रेष्ठां देवतामर्हतीति, एकदेवता-यत्। श्रेष्ठ देवतापूजक, जो एक ही देवताको मानता हो।

एकदेश (सं॰ पु॰) एकश्चासौ देशश्चेति, कर्मधा॰। १ एक स्थान, वही जगह। २ अंश, हिस्सा। (वि॰) ३ एक स्थानका अधिकारी, जो एक ही जगह रखता हो। (अव्य॰) ४ कुछ कुछ।

एकदेशविभावितन्याय (सं॰ पु॰) एकदेशः साध्यस्य विभावितो येन स चासौ न्यायश्चेति, कर्मधा॰। तर्कविशेष, किसी क़िस्मकी दलील। इसमें प्रमाणादिसे साध्यका एकदेश अङ्गीकृत होता है।

एकदेशस्थ (सं॰ वि॰) एक ही प्रान्तपर अवस्थित, जो उसी जगह पर हो।

एकदेशी (सं॰ वि॰) एकोऽभिन्नो देशो वासस्थानत्वेनास्यास्तीति, इनि। १ एक देशवासी, उसी मुल्कका रहनेवाला। २ अंशोंमें विभक्त, जो हिस्सोंमें बंटा हो।

एकदेशीय, एकदेशी देखो।

एकदेह (सं॰ पु॰) एको मुख्यो देहो यस्य, बहुव्री॰। १ बुधग्रह, दवीर-फलक। एकः तुल्यो देहो यस्य। २ वंश, खान्दान्। ३ दम्पती, स्त्रीपुरुष। (त्रि॰) ४ एकशरीर, सिर्फ एक जिस्म रखनेवाला।

एकद्यु: (सं॰ पु॰) एकेन परमात्मना दिव्यति, दिव-क्विप्-उट्। केवल परमात्मचिन्तक आत्माराम नामक एक ऋषि। यह नोधःके पुत्र थे।

एकद्वार (सं॰ पु॰) गुजरात प्रदेशके मध्यस्थित वट-तीर्थके निकटस्थ एक प्राचीन तीर्थ। (प्रभासख॰)

एकधन (सं॰ क्लो॰) एकमेव धनम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ एक मात्र धन, अकेली दौलत। एक-मयुग्मं धनं धोरमानमुदकं यत्र, बहुव्री॰। २ अयुग्म संख्यक कलस, अकेला घड़ा। ३ श्रेष्ठधन, बड़ी दौलत। (त्रि॰) ४ एकमात्र धनशाली, अकेला दौलतमन्द।

एकधनवित् (सं॰ त्रि॰) १ एकधन नामक कलस प्राप्त करनेवाला। २ उत्तम वलि पानेवाला।

एकधर्मी (सं॰ त्रि॰) एकःतुल्यो धर्मोऽस्यास्तीति, एक-धर्म-इनि। समान धर्म विशिष्ट, हम मज़हब।

एकधा (सं॰ अव्य॰) एक-धा। संख्याया विधार्थे धा। पा ५।३।४२। १ एक प्रकार, साथ-साथ। २ साधारणतः, अकेले। ३ एक बार, फौरन्।

एकधुर् (सं॰ स्त्री॰) यानविशेष, एक गाड़ी।

एकधुर (सं॰ त्रि॰) एका धूरस्य, एक-धुर्-अ। ऋक्पूरब्धूःपथामानचे। पा ५।४।७४। १ केवल एक प्रकार भार वा धुरके योग्य, जो सिर्फ एक किस्मके बोझ या जुवेके क़ाबिल हो। २ भारविशेषवाही, कोई बोझ ढोनेवाला।

एकधुरा (सं॰ स्त्री॰) एका न द्वितीया धूः, कर्मधा॰। एक भार, वही बोझ।

एकधुरावह (सं॰ त्रि॰) एक धुरायाः वहः, ६-तत्। एक भारवाहक, वही बोझ ढोनेवाला।

एकधुरीण (सं॰ त्रि॰) एकधुरां वहति यः, एक-धुर-ख। एकधुराल्लुक् च। पा ४।४।७९। एक भारवाहक, सिर्फ एक बोझ ढोनेवाला।

एकनक्षत्र (सं॰ क्लो॰) एकं नक्षत्रं यत्र, बहुव्री॰। १ एक ताराविशिष्ट नक्षत्र। आर्द्रा, चित्रा और स्वाति नक्षत्र एकतारामय है। २ अमावस्या। ३ एक नक्षत्र, अकेला सितारा।

एकनट (सं॰ पु॰) एको मुख्यो नटः, कर्मधा॰। प्रधान नाट्यप्रवर्तक, कथाप्राण, खास खेलाड़ी। यह प्रस्तावना सुनाता है।

एकनयन (सं॰ त्रि॰) एकं नयनं यस्य, बहुव्री॰। १ काना। (पु॰) २ काक, कौवा। ३ कुवेर।

एकनवत (सं॰ त्रि॰) इक्यानवेवां।

एकनवति (सं॰ स्त्री॰) एकेन अधिका नवतिः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। इक्यानवे, नौ दहाई और एक एकाईकी संख्या, ९१।

एकनवतितम, एकनवत देखो।

एकनाथ (सं॰ पु॰) एकः प्रधानं नाथः, कर्मधा॰। १ प्रधान राजा, खास मालिक। (त्रि॰) २ एक प्रभु युक्त, जिसके एक ही मालिक रहे।

एकनाथ भट्ट (सं॰ पु॰) एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार। दाक्षिणात्यके प्रतिष्ठान (पैठान) नगरमें इनका जन्म हुआ था। इन्होंने अन्वयार्थप्रकाशिका नाम्नो एक चण्डीकी टीका बनायी है।

एकनायक (सं॰ पु॰) एकः प्रधानं नायकः, कर्मधा॰। महादेव।

एकनायकराज्यतन्त्र (सं॰ क्लो॰) एक ही राजाके मतानुसार निर्वाहित राज्यशासनका कार्य, जो हुक्म सलतनतमें एक ही बादशाहके कहने पर चलता हो।

एकनिश्चय (सं॰ पु॰) १ साधारण स्वीकृति वा फल, मामूली मञ्जूरी या नतीजा। (त्रि॰) २ एक ही प्रस्ताव को प्राप्त, जो वही मतलब रखता हो।

एकनिष्ठ (सं॰ त्रि॰) एका एकविषयिणी निष्ठा यस्य, बहुव्री॰। एकासक्त, एक ही से लगा हुआ

एकनीड़ (सं॰ त्रि॰) १ केवल एक स्थान रखने वाला, जिसके एक ही बैठक रहे। २ साधारण गृह रखनेवाला, जो मामूली मकान् रखता हो।

एकनीत (सं॰ क्लो॰) रथ, गाड़ी। (भागवत ४।२६।२)

एकनेत्र, एकदृक् देखो।

एकनेमि (सं॰ त्रि॰) एक मण्डलविशिष्ट, एक ही दायरा रखनेवाला।

एकपक्ष (सं० त्रि०) एकः पक्षो यस्य, बहुव्री०। १ उसी पक्षवाला, जो उसी ओरका हो। २ पक्षपाती, तरफ़दार। (पु०) ३ एक पक्ष, वही ओर।

एकपक्षीय (सं० त्रि०) एक ही पक्षवाला, एकतरफा।

एकपञ्चाश (सं० त्रि०) एकपञ्चाशत पूरणार्थे डट्। इक्यावनवां।

एकपञ्चाशत् (सं० त्रि०) एकेन अधिका पञ्चाशत्। इक्यावन, पांच दहाई और एक इकाईसे बना, ५१।

एकपञ्चाशत्तम, एकपञ्चाश देखो।

एकपटा (हिं० वि०) एक ही पाट रखनेवाला, जो चौड़ाईमें जुड़ा न हो।

एकपट्टा (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेंच। लड़नेवालेकी एक जांघ हाथसे उठा दूसरे पैरमें अपने पैरसे चपरास मारते और ज़मीन् पर चित फटकारते हैं।

एकपतिका (सं० स्त्री०) एकः समानः पतिर्यस्याः, क-टाप्, बहुव्री०। सपत्नी, एक ही पतिकी स्त्री।

"सर्वासामेकपत्नीनामेका चेत् पुत्रिणी भवेत्।
सर्वास्तास्तेन पुत्रेण प्राह पुत्रवतीर्मनुः॥" (मनु ९।१८३)

एकपत्नी (सं० स्त्री०) एको अद्वितीयः पतिर्यस्याः, बहुव्री०। १ पतिव्रता।

"ताञ्चावश्यं दिवसगणना तत्परामेकपत्नीम्।" (मेघ ४१०)

२ सपत्नी।

एकपत्र (सं० पु०) १ चण्डाल कन्द। २ श्वेत तुलसी।

एकपत्रक, एकपत्र देखो।

एकपत्रा, एकपत्रिका देखो।

एकपत्रिका (सं० स्त्री०) एकं गन्धवत्त्वात् श्रेष्ठं पत्रं यस्याः, बहुव्री० क-टाप् अत इः। १ गन्धपत्र-वृक्ष। २ पाण्डुर-तुलसी वृक्ष।

एकपत्री (सं० स्त्री०) नागवल्ली लता, पान।

एकपत्रोत्पत्तिक (सं० त्रि०) अङ्कुरके समय एकमात्र पत्र निकालनेवाला, जो कोपल फूटते वक़्त सिर्फ़ एक ही पत्ती देता हो।

एकपद् (सं० त्रि०) एकपाद विशिष्ट, एक ही पैर रखनेवाला।

एकपद (सं० क्ली०) एकं पदं पदमात्रोच्चारण-कालो यत्र, बहुव्री०। १ एकमात्र पाद, सिर्फ़ एक क़दम। २ साधारण शब्द, मामूली लफ़्ज़। ३ वर्तमान समय, हालका वक़्त। ४ वैकुण्ठ। ५ विभक्त्यन्त पद। ६ एकस्थान, वही जगह। ७ वास्तुमण्डलस्थ एककोष्ठरूप स्थान। (पु०) ८ शृङ्गारबन्ध विशेष। ९ वास्तुयागाराध्य देवता। १० एकपदविशिष्ट मृग-विशेष। (त्रि०) ११ एक पदवाच्य। १२ एकपद-विशिष्ट, एक पैरवाला।

एकपदवान् (सं० त्रि०) एकपद-मतुप्, मस्य वः। एकपदविशिष्ट, एक पैरवाला।

एकपदस्थ (सं० त्रि०) एकस्मिन् तुल्ये पदे अधिकारे तिष्ठति, एक पद-स्था-क। १ समानकार्यकारी, बराबरीका काम करनेवाला। २ तुल्यसम्भ्रमशाली, बराबरीवाला।

एकपदा (सं० स्त्री०) एक पादात्मक छन्दोविशेष।

एकपदि (सं० अव्य०) एकपद-इच्, निपातनात् साधुः। द्विदण्ड्यादिभ्यश्च। पा ५।४।१२८। एकपादपर, एक पैरसे

एकपदी (सं० स्त्री०) एकः पादो यस्याः, एकपाद-ङीप् ङीष् वा, पादस्य पदादेशः। १ पथ, पगडण्डी। २ एकपदविशिष्टा, एक पैरवाली। ३ छन्दके चतुर्थांशसे विशिष्ट श्लोक।

एकपदे (सं० अव्य०) १ अकस्मात्, एकाएक। २ एकबारगी, फ़ौरन्। ३ एक ही चेष्टामें, अकेली कोशिशसे।

एकपर (सं० त्रि०) एक चिह्नसे निर्णय करनेवाला। यह शब्द पाशेका विशेषण है।

एकपरि (सं० अव्य०) एक ऊपर-नीचे, एक घट बढ़ कर।

एकपर्णा (सं० स्त्री०) एकमेव पर्णं आहारो यस्याः। १ मेनकाके गर्भसे सम्भूत हिमालयकी तीन कन्यावोंमें एक कन्या। यह असित देवलकी पत्नी थीं। (हरि १८ अ०) २ दुर्गा।

एकपर्णिका (सं० स्त्री०) एकपर्ण-कन्-टाप् अत इत्वम्। पार्वती। इन्होंने तपस्याके समय केवल एक पत्र खा जीवन धारण किया था।

एकपर्णी, एकपर्णिका देखो।

एकपर्वतक (सं० पु०) पर्वत विशेष, वर्तमान रोहेलखण्डकी दक्षिणस्थित गिरिमाला। (भारत, सभा १९ अ०)

एकपलाश (सं० पु०) एकः पलाशो तस्य, बहुव्री०। एकमात्रपत्रविशिष्टवृक्ष, एक ही पत्तीका पेड़।

एकपलिया (हिं० पु०) गृह विशेष, किसी किस्मका घर। इसमें ड्डंबड़ेर नहीं पड़ती। दीवारों पर लम्बाई के आमने-सामने कड़ी रख छप्पर डाल देते हैं। छप्पर ढालू रखनेको एक ओर दीवार ज़रा ऊंची कर लेते हैं।

एकपाटला (सं० स्त्री०) एकं पाटलं पुष्पं आहारो यस्याः। १ हिमालयको एक कन्या। यह पार्वतीकी भगिनी रहीं। इन्होंने एकमात्र पुष्प खा तपस्या की थी। २ दुर्गा।

एकपाण (सं० पु०) एकमात्रपण, अकेली बाजी।

एकपात् (सं० पु०) एकः पादो यस्य, पाद शब्दस्यान्तलोपः। संख्यासु पूर्वस्य। पा ५।४।१४। १ शिव। २ विष्णु। (त्रि०) ३ एक पाद रखनेवाला, लंगड़ा।

एकपात (सं० त्रि०) अकस्मात् आ पड़ने वाला, जो एकाएक गुज़र जाता हो।

एकपातिन् (सं० त्रि०) एकः सन् पतति, एकपत-णिनि। एकाकी खड़ा रहने वाला, आज़ाद।

एकपातिनी (सं० स्त्री०) स्वतन्त्र छन्दो विशेष।

एकपाद (सं० पु०) एकश्चासौ पादश्च, कर्मधा०। १ एक पद, अकेला पैर। २ परमेश्वर। ३ एक असुर। ४ जनपदविशेष, एक बसती। ५ एकपादवासी, एकपाद मुल्कका बाशिन्दा। महाभारतमें लिखा, कि एकपाद जनपद दाक्षिणात्यके मध्य अवस्थित है। (सभा ३० अ०) यूनानी ऐतिहासिक मेगेस्थिनिसने एकपाद जातिको ओक्पेदिस् (Okupedes) एवं टिसियास् मनोपोदिस (Monopodes) कहा है। यह लोग किरातजाति समझ पड़ते हैं। किरात देखो।

एकपादिका (सं० स्त्री०) १ एकपदके अवलम्बनसे पक्षियोंका एक अवस्थान। "अथावलम्ब्य क्षणमेकपादिकाम्।" (नैषध १म स०) २ शतपथ ब्राह्मणका द्वितीय पुस्तक।

एकपादुक (सं० त्रि०) एका पादुका यस्य, बहुव्री०। १ एकपाद, एक पैरवाला। २ जातिविशेष, एक कौम। कहते, एकपादुक एक ही पैरमें जूता पहनते हैं।

एकपिङ्ग (सं० पु०) एकं पिङ्गं नेत्रं यस्य बहुव्री०। कुवेर। कुवेरके एकनेत्र पर काशीखण्डमें लिखा—कुवेरने अति कठोर तपस्यासे महादेवको रिझा लिया था। उन्होंने शङ्करके समीपस्थ हो देखा—गौरी महादेवके वामपार्श्वपर बैठी थीं। कुवेरने सोचा, वह सर्वाङ्गसुन्दरी रमणी कौन रहीं। जैसी उनकी सौभाग्यश्री थी, उससे अपनी अपेक्षा भी तपस्याकी शक्ति अधिक समझ पड़ी। इसीप्रकार सोचते-सोचते उन्होंने क्रूरभावसे दृष्टि डाली थी। बस, उनका वाम चक्षु फूट गया। फिर देवीने महादेवसे कुवेरका परिचय पूछा था। उन्होंने कहा—यह अतिभक्त और तुम्हारे पुत्रके तुल्य हैं। इसीप्रकार नानारूप परिचय दे महादेवने कुवेरसे गौरीके पदतलपर गिरनेको कहा। कुवेरको देवीने वैसा ही करनेपर आशीर्वाद दिया था—तुम स्फुटित वामनेत्र द्वारा 'एकपिङ्ग' विख्यात होगे।

एकपिङ्गल (सं० पु०) एकं पिङ्गलं नेत्रं यस्य, बहुव्री०। कुवेर। एकपिङ्ग देखो।

एकपिण्ड (सं० त्रि०) एकः समानः पिण्डः आहारः पिण्डः देहो वा यस्य, बहुव्री०। सपिण्ड, रिश्तेदार।

एकपिण्डता (सं० स्त्री०) सपिण्डी-भाव, रिश्तेदारी।

एकपितृक (सं० त्रि०) एकः समानः पिता यस्य, बहुव्री० कः। एक पिताके औरससे उत्पन्न, एक ही बापसे पैदा।

एकपुत्र (सं० पु०) एक ही पुत्र रखनेवाला, जिस आदमीके एक ही बेटा रहे।

एकपुत्रता (सं० स्त्री०) एकमात्र पुत्रकी अवस्थिति, एक ही लड़का रहनेकी हालत।

एकपुरुष (सं० पु०) एकः श्रेष्ठः पुरुषः, कर्मधा०। १ परमेश्वर। २ प्रधान पुरुष, बड़ा आदमी। (त्रि०) एकः पुरुषो यस्मिन्, बहुव्री०। ३ एकमात्र पक्षयुक्त,

सिर्फ एक मर्द रखनेवाला। एकः पुरुषो भोक्ता यत्र। ४ एकपुरुषभोग्य, एक मर्दके काममें आने लायक।

एकपुष्कल (सं० पु०) एकं पुष्कलं मुखं यस्य, बहुव्री०। काहल नामक वाद्यविशेष, एक बाजा।

एकपुष्पा (सं० स्त्री०) एकं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। वृक्षविशेष, एक पेड़। इसमें एकमात्र पुष्प आता है।

एकपृथक्त्व (सं० क्ली०) भेदाभेद, लगाव और अलगाव।

एकपेचा (फ़ा० वि०) १ एक ही पेच रखनेवाला, जो एक ही बलका हो। (पु०) २ किसी क़िस्मकी पतली पगड़ी।

एकप्रकार (सं० त्रि०) अभिन्नरूप, वैसा ही।

एकप्रख्य (सं० त्रि०) अत्यन्त तुल्य, बिलकुल बराबर।

एकप्रभुत्व (सं० क्ली०) साम्राज्य, सलतनत।

एकप्रयत्न (सं० पु०) शब्दकी एकमात्र चेष्टा, आवाज़की अकेली कोशिश।

एकप्रस्थ (सं० पु०) परिमाणविशेष, एक तौल। यह ३२ पल या २ सेरका होता है।

एकप्राणयोग (सं० पु०) एक श्वासका संयोग, एक ही सांसका मेल।

एकफर्दा (फ़ा० वि०) एक ही फ़सलवाला, जो एक ही बार फलता या फल देता हो।

एकफल (सं० त्रि०) केवल एक अभिप्राय रखनेवाला जिसके एक ही नतीजा या मतलब रहे।

एकफला (सं० स्त्री०) एकं फलमस्याः, बहुव्री० टाप्। ओषधि विशेष, एक बूटी।

एकफली (सं० स्त्री०) एकं फलमस्याः, ङीष्। ओषधिविशेष, एक बूटी।

एकफ़सला, एकफर्दा देखो

एकबही (हिं० स्त्री०) दो आंकड़े वाला लंगर। इससे नाव रोकी जाती है। (त्रि०) २ एक रज्जु विशिष्ट, जो एक ही रस्सीका हो।

एकबारगी (फ़ा० क्रि० वि०) १ एक ही बारमें, साथ-साथ। २ अकस्मात् एकाएक। ३ सम्पूर्ण रूपसे, बिलकुल।

एकबाल (अ० पु०) १ भाग्य, क़िस्मत। २ अङ्गीकार, मंजूरी। राज़ीनामेको एकबाल-दावा कहते हैं।

एकबुद्धि (सं० त्रि०) १ एक ही ध्यान रखनेवाला, जो उसी ख़यालका हो। (पु०) २ मण्डूक विशेष, एक मेंढ़क। पञ्चतन्त्रमें इसकी कथा लिखी है।

एकभक्त (सं० क्ली०) एकं भक्तं भोजनं यत्र, बहुव्री०। १ व्रतविशेष। इस व्रतमें रात्रिका आहार छोड़ दिवसको दोपहरके समय केवल एकबार भोजन करते हैं। जो व्यक्ति विष्णुका भक्त रहता, सर्व जीवोंपर अहिंसा रखता, एकबार भोजन करता और प्रत्यह 'वासुदेवाय नमः' मन्त्र ८ सौ बार जपता,उसे अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है। ऐसे ही नियम से जो संवत्सर काल अतिवाहित करता, वह पौण्डरीक यज्ञके फलका अधिकारी बनता और दश सहस्र वर्ष स्वर्ग भोग पुण्यक्षय होनेपर फिर मर्त्यका आते भी माहात्म्यसे रहता है। (विष्णुधर्मोत्तर) (त्रि०) एकमेव भजते। २ एकमात्र व्यक्तिका अनुरक्त, जो एक ही आदमीकी खिदमत करता हो। ३ एकमात्र परमेश्वरका भक्त। ४ प्रधान भक्त।

एकभक्तव्रत (सं० क्ली०) एकभक्त देखो।

एकभक्ति (सं० स्त्री०) एका अनन्यविषया भक्तिः, कर्मधा०। १ एकमात्र विषयमें भक्ति, एक ही बातकी मुहब्बत। २ केवल एक बारका भोजन। (त्रि०) एका अनन्यविषया भक्तिर्यस्य, बहुव्री०। २ नितान्त भक्त, निहायतताबेदार।

एकभङ्गीनय (सं० पु०) एकामेकरूपी भङ्गीमधिकृत्य नयः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। न्याय विशेष, एक दलील। एकरूप बहु विषयोंके मध्य किसी स्थलमें एक की प्रवृत्ति पड़ने पर इस न्यायबलसे वैसे ही अन्य विषयोंकी भी प्रवृत्ति लग सकती है।

एकभार्य (सं० पु०) एका भार्या यस्य, बहुव्री० ह्रस्वः। १ एक पत्नीवाला पुरुष, जिस मर्दके दूसरी औरत न रहे। (त्रि०) एकेन भार्यः। २ एक जन द्वारा प्रतिपाल्य, जो एक ही शख्सकी परवरिश पानेके क़ाबिल हो।

एकभार्या (सं० स्त्री०) एकस्यैव भार्या, ६-तत्। साध्वी, पतिव्रता, नेकबख्त बीबी।

एकभाव (सं० पु०) एकश्चासौ भावश्चेति, कर्मधा०। १ एक स्वभाव। २ एक अभिप्राय। ३ अभेद, तौहीद। ४ समभाव, बराबरी। ५ एक विषयमें अनुराग, एक ही बातकी चाह। ६ एकका अभिप्राय। ७ एक रूप। (त्रि०) ८ एक प्रकृतिवाला, जिसके दूसरी बात न रहे।

एकभुक्त (सं० त्रि०) १ एक बार भोजन करनेवाला, जो एक ही मरतबा खाता हो। २ एक साथ भोजन करनेवाला, जो अलग खाता न हो।

एकभूत (सं० त्रि०) १ अविभक्त, मिला हुआ, जो टा न हो। २ एक विषयासक्त, एक ही काममें लगा हुआ।

एकभूम (सं० पु०) एकाभूमिर्यत्र, बहुव्री०। एकतला गृह, एक मंजिला मकान्।

एकभोजन (सं० क्लो०) १ केवल एक बारका आहार, सिर्फ एक मरतबा खाना। २ एक साथका भोजन।

एकमत (सं० त्रि०) एक मात्र मत विशिष्ट, हमराय।

एकमति (सं० स्त्री०) एका अनन्यविषया मतिः, कर्मधा०। १ एकविषयासक्त मन, एक ही बातमें लगा हुआ दिल। (त्रि०) एकस्मिन् विषये मतिर्यस्य, बहुव्री०। २ एक विषयमें चिन्ताशील, एक ही बात सोचनेवाला।

एकमनाः (सं० त्रि०) एकस्मिन् विषये मनोऽस्य, बहुव्री०। एकाग्रचित्तसे चिन्ताकारी, दिल लगाकर सोचनेवाला।

एकमय (सं० त्रि०) एकसे युक्त, जो एक रखता हो।

एकमात्र (सं० त्रि०) एका मात्रा यस्य, बहुव्री०। एक मात्राविशिष्ट, जो दूसरी मात्रा रखता न हो।

एकमात्रिक, एकमात्र देखो।

एकमुंहा (हिं० वि०) एकमात्र मुखविशिष्ट, सिर्फ एक मुंह रखनेवाला। एकमुंहा दहरिया एक गहना होता है। यह फूल या कांसेसे बनता और नीच जातिकी स्त्रियोंके पहननेमें लगता है।

एकमुख (सं० त्रि०) एकं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ एक द्वारविशिष्ट, एक दरवाजेवाला। २ एक ही स्थानकी ओर मुख झुकाये हुआ, जो किसी एक जगहको मुंह फेरे हो। ३ एकमात्र प्रधान रखनेवाला, जिसके एक ही अफसर रहे।

एकमुखी, एकमुख देखो। एकमुखी रुद्राक्षमें फांककी रेखा एक ही रहती है।

एकमूर्धा, एकमुख देखो।

एकमूल (सं० पु०) पुण्डरीकवृक्ष, सफेद कमलका पेड़।

एकमूला (सं० स्त्री०) एकं मूलं यस्याः, बहुव्री०। १ शालपर्णी। २ अतसी, अलसी।

एकम्बा—बङ्गाल प्रान्तके पुरनिया जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २५° ५८′ उ० और द्राघि० ८७° ३६′ ३०″ पू० पर अवस्थित है। एकम्बा अपने जिलेके व्यवसायका एक प्रधान स्थान है। अन्न, गन्धद्रव्य, वस्त्र, चर्म प्रभृतिका काम होता है। बाज़ार बराबर लगा रहता है।

एकयष्टि (सं० स्त्री०) मुक्ताकी एकमात्र यष्टि, मोतियोंकी अकेली लड़ी।

एकयष्टिका (सं० स्त्री०) एका यष्टिरिव, उपमि०। फूलों या मोतियोंकी अकेली लड़ी।

एकयोनि (सं० त्रि०) एका समा योनिर्जातिर्यस्य, बहुव्री०। १ एकजाति, हमकौम। २ एक स्थानसे उत्पन्न, जो एक ही जगहसे पैदा हो।

एकरंग (हिं० वि०) १ तुल्य, बराबर। २ निश्छल, दूसरी बात न रखनेवाला।

एकरज (सं० पु०) एको मुख्यो रजः रञ्जनद्रव्यम्, कर्मधा०। भृङ्गराज। भृङ्गराज देखो।

एकरदन, एकदन्त देखो।

एकरन्ध्र (सं० पु०) नदीवट।

एकरस (सं० पु०) एकोऽन्यविषयको रसः, कर्मधा०। १ एकाभिप्राय, अकेला मतलब। २ एक विषयमें अनुराग, एक बातकी चाह। (त्रि०) एको रसो यत्र। ३ अभिन्न स्वभाव, उसी मिजाजवाला। एकरस नाटकादिमें शृङ्गारादिके अन्तर्भूत कोई एकमात्र रस अङ्ग और अन्यान्य रस अङ्गीभूत रहता है।

एकरसिक (सं० त्रि०) एकमात्रविषयमें अनुरक्त, जो एक ही बातसे खुश रहता हो।

एकराज (सं० पु०) १ प्रधान राजा। २ एकोजो। एकोजी देखो।

एकराट् (सं० पु०) एक-राजन्-टच्। राजाहः सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। १ प्रधान राजा, बड़ा बादशाह। (त्रि०) २ एकाकी प्रकाशमान, जो अकेले ही रौशन हो।

एकरात्र (सं० क्ली०) १ एकमात्र रात्रि, एक रात। २ उत्सव विशेष। यह एक ही रात रहता है।

एकरात्रिक (सं० त्रि०) एकरात्रिके अर्थ पर्याप्त, जो एक रातके लिये काफी हो।

एकरार (अ० पु०) १ अङ्गीकार, मंजूरी। २ वचन, कौल। प्रतिज्ञापत्रको एकरारनामा कहते हैं।

एकराशि (सं० पु०) एकश्चासौ राशिश्च, कर्मधा०। १ मेषादिके मध्य एकराशि। २ किसी वस्तुका एक स्तूप, ढेर। ३ आधिक्य, बढ़ती।

एकराशिभूत (सं०त्रि०) एकत्र, इकट्ठा।

एकरिक्थी (सं० पु०) एकस्य पितुः रिक्थमस्त्यस्य, एकरिक्थ-इनि। १ पिताकी सम्पत्तिका एक अंश पानेवाला, जो अपने बापकी जायदादका वारिश हो। २ तुल्यधनी, बराबरका दौलतमन्द।

एकरूप (सं० त्रि०) एकं समानं रूपं अस्य, बहुव्री०। १ समानरूप, हमशक्ल। "एकरूप तुम भ्राता दोऊ।" (तुलसी) (पु०) २ एकमात्र रूप, एक सूरत, एक किस्म।

एकरूपतः (सं० अव्य०) एकमात्र रूपमें, बगैर तबदीली।

एकरूपता (सं० स्त्री०) १ तुल्यता, बराबरी। २ सायुज्यमुक्ति।

एकरूपी (सं० त्रि०) समान रूप रखनेवाला, हमशक्ल।

एकरूप्य (सं० त्रि०) एकस्मात् आगतः, एक-रूप्य। हेतुमनुष्येभ्योऽन्यतरस्यां रूप्यः। पा ४।३।८१। १ एक स्थानसे आगत, उसी जगहसे आया हुआ। २ एकमात्र रौप्यविशिष्ट।

एकरोन (Ekron)—फिलिसटाइनका एक राजनगर। यह रामलेहसे ५ मील दूर फिलिसिया और शारोंके मैदानको पृथक् करनेवाली उच्च भूमिके दक्षिण ढालू भागपर अवस्थित है। कारवारी राहसे एकरोन अलग है। सम्रूएलके समय सम्भवतः यह स्वतन्त्र रहा। असीरियाके शिलालेखोंसे विदित हुआ, एकरोनके राजा पाही पहले हेजकियावाले जुदाके अधीन रहे। किन्तु सेना चेरिबका जुदापर दबाव पड़नेसे उन्होंने स्वाधीनता पायी थी। सन् ७० ई०को इसमें यहूदी आकर बसे। मकान् मट्टीके बने हैं। प्राचीनताका कोई लक्षण नहीं मिलता। आसपासकी भूमि उर्वरा है।

एकर्च (सं० पु०) एका ऋक्, कर्मधा०। १ एकऋक्। (क्लो०) २ एक ऋकयुक्त सूक्त। (त्रि०) ३ एक ऋक् आराध्य।

एकल (सं० त्रि०) एक-ला-क। एकाकी, अकेला।

एकलंगा (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेंच। एकलंगाडंड, एक प्रकारकी कसरतका नाम है।

एकलत्तीकपाई (हिं० स्त्री०) कुश्तीमें ऊपरसे चित करनेका एक पेंच।

एकलव्य (सं० पु०) एका अङ्गुलिर्लव्या गुरुदक्षिणात्वेन छेद्या यस्य। निषादराज हिरण्यधनुके पुत्र। हरिवंशके मतसे इनके पिताका नाम श्रुतदेव था। किन्तु निषाद द्वारा प्रतिपालित होनेसे यह निषादके पुत्र-जैसे परिचित रहे। असाधारण गुरुभक्ति देखा एकलव्य अपनी कीर्ति स्थापनकर गये हैं। महाभारतमें लिखते, कि एकलव्य अस्त्रशिक्षाको द्रोणाचार्यके पास पहुंचे थे। किन्तु द्रोणाचार्यने उन्हें निषादका पुत्र समझ शिष्य न बनाया। फिर एकलव्यने किसी अरण्यमें जा द्रोणाचार्यकी एक काष्ठमय प्रतिमूर्ति प्रस्तुत की थी। वह अनन्यमनसे उसकी आराधना कर योगके बल अस्त्रशिक्षा करने लगे। योगबल अथवा गुरुभक्तिसे बाणप्रयोगमें एकलव्यको लघुहस्तता उत्पन्न हुई। कौरव और पाण्डव अपने गुरु द्रोणके साथ उसी वनमें मृगया मारने गये थे। उनका एक कुत्ता हठात् एकलव्यका मलिन देह, कृष्णाजिन और जटापाश देख भूंकने लगा। एकलव्यने अति लघुहस्तसे उस कुत्तेके मुखमें सात शब्दभेदी बाण मारे थे। वह शरपूर्ण वदन लिये पाण्डवोंके निकट जा पहुंचा। वीर बाणक्षेपकारीकी भूयसी प्रशंसा करने लगे और

अपनी अपेक्षा उसकी शिक्षाका उत्कर्ष देख लज्जित हुये। फिर ढूंढते-ढूंढते निकट पहुंच उन्होंने एकलव्यसे परिचय पूछा था। उन्होंने कहा—मैं हिरण्यधनुका पुत्र और द्रोणाचार्यका शिष्य हूं। कौरवों और पाण्डवोंने यथासमय लौट आचार्यसे सब बता दिया। फिर निर्जनमें मिल अर्जुनने द्रोणाचार्यसे कहा—आपने मुझे अपना सबसे अच्छा शिष्य बताया था; किन्तु निषादकुमार ऐसे कैसे निकले? द्रोण यह प्रश्न क्षणकाल सोच अर्जुनको ले एकलव्यके निकट गये। एकलव्य भी निरतिशय भक्ति-सहकारसे उनका अर्चनादि सम्पादन कर बोले—मैं आपका शिष्य हूं। गुरुने उत्तर दिया—यदि तुम प्रकृत रूपसे हमारे शिष्य हो, दो हमारी दक्षिणा दे डालो। एकलव्यने कहा—गुरो! बतलाइये क्या दक्षिणा दूं, कोई भी वस्तु अदेय नहीं। एकलव्यकी यह बात सुन द्रोणाचार्यने कहा—यदि तुम दक्षिणा देना आवश्यक समझो, तो अपने दक्षिण हस्तका अङ्गुष्ठ उतार दो। एकलव्यने गुरुकी ऐसी आज्ञा पर भी अविचलित चित्तसे हंसी-खुशी अपना अङ्गुष्ठ काट दिया था। उससे उनका वाणप्रयोग एकबारगी ही न रुका सही, किन्तु वह लघुहस्तता जाती रही। (भारत, आदि १३४ अ०)

एकला (हिं० वि०) एकाकी, अकेला।

एकलिङ्ग (सं० क्लो०) एकं लिङ्गं यत्र, बहुव्री०। १ सिद्धिके साधनका स्थान। पांच कोसके बीच जहां अन्य लिङ्ग नहीं रहता, उसे ही सब कोई एकलिङ्ग कहता है। ऐसा स्थान अतिशय सिद्धिप्रद है। (पु०) एकं लिङ्गं पुंस्त्वादि यस्य। २ एकलिङ्गक शब्द, अजहल्लिङ्ग। अन्यलिङ्गक शब्दका विशेषण बनते भी इसका लिङ्ग नहीं बदलता। एकं पिङ्गलनेत्ररूपं चिह्नं यस्य। ३ कुवेर। एकपिङ्ग देखो।

४ मेवाड़वाले राजपूतोंके प्रधान उपास्य देव। उदयपुर राजधानीसे ४ कोस उत्तर गिरिपथमें एकलिङ्ग देवका मन्दिर बना है। चारो पार्श्वपर गगनस्पर्शी गिरिशृङ्ग हैं। उनसे अनेक सुनिर्मल निर्झर अविराम गतिमें प्रवाहित हैं। इस गिरिमालाके सकल वृक्ष एकलिङ्ग देवके नामपर उत्सर्गीकृत हैं। इनका मन्दिर साधारण शिवके मन्दिर-जैसा है। निम्नतल श्वेत मरमर पत्थरसे अलङ्कृत है। मन्दिरका अभ्यन्तर भाग स्तम्भके समूहसे शोभमान है। मध्यमें संहाररूपी महादेवकी मूर्ति है। वही एकलिङ्ग नामपर बहु कालसे विख्यात हैं। लिङ्गके सम्मुख सुबृहत् नन्दीकी मूर्ति है। एकलिङ्ग देववाले मन्दिरके प्राङ्गणकी चारो ओर अन्यान्य देवतावोंके भी मन्दिर बने हैं।

एकलिङ्गभाक् (सं० त्रि०) एक जातीय केशर विशिष्ट पुष्पयुक्त, जो एक ही जैसे फूल रखता हो।

एकलु (सं० पु०) एकं लुनाति, लू-क्विप्। ऋषिविशेष।

एकलो (हिं० पु०) तासका एक्का।

एकलौता (हिं० वि०) एकाकी, अकेला। यह शब्द 'पुत्र' का विशेषण है।

एकवक्त्र (सं० पु०) एकं भीषणत्वेन मुख्यतमं वक्त्रं यस्य, बहुव्री०। १ असुर विशेष। (क्लो०) २ एक मुखी रुद्राक्ष।

एकवचन (सं० क्लो०) एकमेलकं उच्यते अनेन, वच् करणे ल्युट्। व्याकरणोक्त एकत्ववाचक विभक्ति, वाहिद। सु, अम्, टा, ङे, ङसि, ङस् और ङि सात विभक्ति एकवचन बोधक हैं। हिन्दीमें भी जिससे एक पदार्थका बोध होता, वही एक वचन है। किन्तु अनेक स्थलोंपर एकवचन और बहुवचनके रूपमें भेद नहीं पड़ता, जैसे—एक मनुष्य आया, बीस मनुष्य आये। प्रायः हिन्दीके विद्वान संस्कृत शब्द न बिगाड़ एकवचन और बहुवचन दोनोंमें समान रूपसे रखते हैं।

एकवत् (सं० त्रि०) एकोऽस्यास्ति, एक-मतुप्, मस्य वः। १ एकसंख्याविशिष्ट, अकेली अदद रखनेवाला। (अव्य०) एकस्येव, एक-वति। २ एकके न्याय, एककी तरह।

एकवद्भाव (सं० पु०) एकेन तुल्यो भावः भवनम्, ३-तत्। शब्दनिष्ठ एकवचनान्तरूप कार्य, बहुतोंका मजमूवा।

एकवर्ण (सं० त्रि०) एको वर्णो यत्र, बहुव्री०।

१ एकमात्रवर्णविशिष्ट, सिर्फ एक हर्फ रखनेवाला। २ ब्राह्मणादि जातिभेद शून्य, जो ब्राह्मणादि जातिका भेद रखता न हो। यह कलिकालकी शेष अवस्थाका बोधक है। ३ एकस्वरूप, हमशक्ल। (पु०) एक एव वर्णः। ४ शुक्लादिके मध्य एक वर्ण, एक रंग। ५ श्रेष्ठवर्ण, बढ़िया रंग। ६ ब्राह्मणादिके मध्य एक जाति। ७ एक अक्षर। ८ श्रेष्ठ जाति। ९ वीज-गणितोक्त तुल्य वर्णविशिष्ट सजातीय द्रव्य विशेष।

एकवर्णवत् (सं० अव्य०) एक वर्णके न्याय, एक हर्फके मुताबिक।

एकवर्णसमीकरण (सं० क्ली०) एको वर्णः तुल्यरूपो समो क्रियते अनेन, कृ-ल्युट्। वीजगणितोक्त वीज चतुष्टयके मध्यका एक वीज।

एकवर्णिक (सं० त्रि०) एकः वर्णं अर्हति, एकवर्ण-ठक्। असाधारण, एक ही रंग या कौमवाला।

एकवर्णी (सं० स्त्री०) एकमेव शब्दं वर्णयतीति, एकवर्ण-अच्, गौरादित्वात् ङीष्। वाद्यविशेष, करताल।

एकवर्षिका (सं० स्त्री०) एको वर्षो यस्याः, एक वर्ष-कन्-टाप्, अत इत्वञ्च। एक वत्सर वयसकी बछिया।

एकवसन (सं० त्रि०) एकं वसनं यस्य, बहुव्री०। १ उत्तरीय-वस्त्र शून्य, सिर्फ एक धोती रखनेवाला। (क्ली०) एकञ्च तत् वसनञ्चेति, कर्मधा०। २ केवल मात्र परिधेय वस्त्र, सिर्फ पहननेका कपड़ा। ३ एक वस्त्र, कोई कपड़ा। ४ एक जातीय वस्त्र, किसी किस्मका कपड़ा।

एकवस्त्र, एकवसन देखो।

एकवस्त्रता (सं० स्त्री०) एक मात्र वस्त्र रखनेकी स्थिति, जिस हालत पे एक ही कपड़ा रहे।

एकवस्त्रसंवीत (सं० त्रि०) एक वस्त्र धारण किये हुआ, जो सिर्फ एक ही कपड़ा पहने हो।

एकवस्त्रार्धसंवीत (सं० त्रि०) आधा वस्त्र पहने हुआ, जो निस्फ पोशाक पहने हो।

एकवांज (हिं० स्त्री०) काकवन्ध्या, एक ही बच्चा देनेवाली औरत।

एकवाक्य (सं० क्ली०) एकं एकार्थं वाक्यम्, कर्मधा०। १ एक अर्थबोधक वाक्य, जिस बातसे दूसरा मानी न निकले। २ अविसम्वादी वाक्य, रायकी बात। (त्रि०) एकं अविसम्वादि वाक्यं यस्य, बहुव्री०। ३ एकमतानुसारी वाक्ययुक्त, एक-जैसी बात कहनेवाला।

एकवाक्यता (सं० स्त्री०) एकवाक्य-तल्-टाप्। वाक्यका ऐक्य, बातका मेल।

एकवाद (सं० पु०) एकोऽभिन्नस्वरो वादः वाद्यम्, कर्मधा०। डिण्डिम नामक वाद्य विशेष, किसी-किस्मका ढोल।

एकवाद्य (सं० क्ली०) एकमभिन्नस्वरं वाद्यम्। डिण्डिम, किसी किस्मका ढोल।

एकवाद्या (सं० स्त्री०) चुड़ैल, डाइन।

एकवार (सं० अव्य०) एकबारगी ही, एकाएक, फौरन्।

एकवास (सं० त्रि०) एकमात्र गृहयुक्त, जिसके एक ही मकान् रहे।

एकवासस् (सं० पु०) एकं वासोऽस्य, बहुव्री०। एकमात्र वसनयुक्त, जिसके एक ही पोशाक रहे।

एकविंश (सं० त्रि०) एकविंशतेः पूरणम्, एक विंशत्-डट्। तस्य पूरणे डट्। पा ५।२।४८। १ एक विंशतिका पूरण, इक्कीसको भरनेवाला। २ इक्कीसवां। ३ एकविंश-स्तोम सम्बन्धीय। (पु०) ४ एकविंशस्तोम। ५ छह पृष्ठ स्तोममें एक स्तोम।

एकविंशक (सं० त्रि०) इक्कीसवां, जो इक्कीस रखता हो।

एकविंशत्, एकविंशति देखो।

एकविंशति (सं० स्त्री०) एकेन अधिका विंशतिः, मध्यपदलो०। इक्कीस, बीस और एककी संख्या, २१।

एकविंशतिगुग्गुल (सं० पु०) कुष्ठरोग नाशक गुग्गुल विशेष। चित्रक, त्रिफला, त्रिकुट, जीरा, काला जीरा, बच, सैन्धव, अतीस, कुष्ठ, चव्य, इलायची, यवक्षार, विडङ्ग, अजवायन, अजमोद, मोथा तथा देवदारु बराबर बराबर ले सबके सम भाग गुग्गुल डाले और घीमें घोट गोली बनाये। यह औषध प्रातः काल भोजनके समय खाना चाहिये।

एकविंशतितम (सं० त्रि०) एक-विंशति तमट्। विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम्। पा ५।२।५६। इक्कीसवां।

एकविंशतिधा (सं० अव्य०) एक विंशति प्रकारार्थे धा। संख्यायां विधार्थे धा। पा ५।३।४२। एक विंशति प्रकार, इक्कीस गुना।

एकविंशवत् (सं० त्रि०) एक विंशस्तोम-सम्बन्धीय।

एकविंशस्तोम (सं० पु०) एकविंशश्चासौ स्तोमश्च, कर्मधा०। एकविंशति मन्त्र परिमित सामवेदोक्त पृष्ठ्यादि नामक एक स्तव।

एकविध (सं० त्रि०) एक विधा प्रकारोऽस्य, बहुव्रो० ह्रस्वः। एकप्रकार, साधारण, मामूली।

एकविलोचन (सं० त्रि०) एकं विलोचनं चक्षुर्यस्य, बहुव्रो०। १ काना। (पु०) २ जनपद विशेष, एक बसती। ३ कुवेर। एकपिङ्ग देखो। ४ काक। (क्लो०) ५ एक आंख।

एकविषयी (सं० त्रि०) एको विषयोऽस्यास्तीति, इनि। १ एकमात्र विषयमें आसक्त, जो सिर्फ एक ही बात पकड़े हो। २ एकमात्र विषयविशिष्ट, जो सिर्फ एक ही बातका हो।

एकवीजपत्रिक (सं० त्रि०) अङ्कुरोत्पत्तिके समय केवल एक पत्र देनेवाला, जो कोपल फूटते वक्त सिर्फ एक ही पत्ती देता हो। अंगरेजीमें इसे 'मनोकटिलिडन' (Mono-cotyledon) कहते हैं।

एकवीर (सं० पु०) १ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय महावीर, सक्तवीर और सुवीरक है। यह मदकारक, अतिशय उष्ण एवं कटु होता और वेदना, वात, कटिपृष्ठाश्रित वातव्याधि तथा पक्षाघातको नाश करता है। (राजनिघण्टु)

एकवीरा (सं० स्त्री०) वन्ध्याककोंटी, कड़वी ककड़ी। यह तिक्त, अति उष्ण एवं वातघ्न होती और पक्षाघात तथा पृष्ठकटी शूलको दूर करती है। (वैद्यक निघण्टु)

एकवीराकल्प (सं० पु०) तन्त्रविशेष। इसमें वीराचारकी आराध्य देवताका रहस्य उक्त है।

एकवृक्ष (सं० पु०) एको वृक्षोऽत्र बहुव्रो०। १ स्थानविशेष, एक जगह। चार कोसके बीच जहां दूसरा वृक्ष नहीं रहता, उस स्थानको सब कोई एकवृक्ष कहता है। २ एकमात्र वृक्ष, अकेला पेड़।

एकवृत् (सं० स्त्री०) एकधैव वर्तते, वृत कर्तरि क्विप्, तुगागमः। १ एकरूप वर्तमान, एकजैसा हाल। एकधा वर्तते अत्र, आधारे क्विप्। २ स्वर्गलोक। एकधैव वर्तते, भावे क्विप्। ३ एकरूप आवर्तन, एकजैसा घुमाव।

एकवृन्द (सं० पु०) सुश्रुतोक्त कण्ठगत मुखरोग विशेष, गलेकी एक बीमारी। कण्ठके मध्य गोलाकार, उन्नत एवं दाह तथा कण्डू विशिष्ट जो शोथ उठता, उसका नाम एकवृन्द पड़ता है। यह कठिन-स्पर्श, गुरु और अपाकी होता है। इस रोगमें प्रथमतः किसी उपायसे रक्त मोक्षण कराना चाहिये। फिर दारु हरिद्रा, नीम तथा शालवृक्षकी छाल और इन्द्रयव आध आध तोला आध सेर जलमें पका आधपाव रहनेसे क्वाथको सेवन कराते हैं। अथवा कुटकी, अतीस, देवदारु, निर्विषी, मोथा तथा इन्द्रयव चार-चार आने आधसेर गोमूत्रमें पका आध पाव रहनेसे पिलाते हैं। (क्लो०) २ एकराशि।

एकवृष (सं० पु०) एकोऽद्वितीयो वृषः, कर्मधा०। एक वृष, अनोखा बैल। (त्रि०) एको वृषो यस्य, बहुव्रो०। २ एकमात्र वृष रखनेवाला, जिसके एक ही बैल रहे।

एकवेणि, एकवेणी देखो।

एकवेणी (सं० स्त्री०) एकीभूता संस्काराभावेन जटावत् संहतिप्राप्ता वेणीः, कर्मधा०। १ प्रोषितभर्तृकाकी वेणी, वियोगिनीकी लट। २ प्रोषितभर्तृका, अपना खाविन्द गैरमुल्कमें रखनेवाली औरत।

एकवेश्म (सं० क्लो०) एकेनैवाधिष्ठितं वेश्म गृहम्, कर्मधा०। एकमात्र प्राणीके रहनेका गृह, जिस घरमें एकसे ज्यदा आदमी न रहें।

एकव्यवसायी (सं० पु०) एकमात्र व्यवसाय करनेवाला पुरुष, जो शख्स वही रोजगार करता हो।

एकव्रात्य (सं० पु०) प्रधान वा मुख्य व्रात्य।

एकशः (सं० अव्य०) एक-एक, अकेले।

एकशत (सं॰ क्ली॰) १ एक सौ एक, १०१। (त्रि॰) २ एकशत संख्यायुक्त, एक सौ एकवां।

एकशतक (सं॰ त्रि॰) एकशतं परिमाणमस्य, एकशत कन्। १ एकशत परिमाणविशिष्ट, सौ रखनेवाला। (क्ली॰) स्वार्थे कन्। २ एकशत, सौ, १००।

एकशततम (सं॰ त्रि॰) एकाधिकशत संख्याविशिष्ट, एक सौ एक रखनेवाला।

एकशतधा (सं॰ अव्य॰) एकशत-धा। १ एकशत-प्रकार, एक सौ एक तरहसे। २ एक सौ एक गुना।

एकशफ (सं॰ पु॰-क्ली॰) एकः शफः खुरो यस्य, बहुव्री॰। १ अश्व, घोड़ा। २ एक खुर जन्तुमात्र, फटे खुर न रखनेवाला कोई जानवर। खर, अश्व, अश्वतर, गौर, शरभ और चमरीको एकशफ कहते हैं। (भावप्रकाश)

एकशफक्षीर (सं॰ क्ली॰) अद्विभागखुर पशुका दुग्ध, फटे खुर न रखनेवाले जानवरका दूध। यह उष्ण, लघु, वातहर, साम्ल, ईषत् लवण और जड़ताकर होता है। (वाभटटीका हेमाद्रि)

एकशरण (सं॰ क्ली॰) एकमात्र आशा, अकेली पनाह। यह शब्द प्रधानतः देवताके लिये प्रयुक्त होता है।

एकशरीर (सं॰ त्रि॰) एकमात्र शरीर वा रक्तसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो उसी खूनका हो।

एकशरीरान्वय (सं॰ पु॰) सगोत्रता, सपिण्डता, क़रावत, बिरादरी।

एकशरीरारम्भ (सं॰ पु॰) पिता और माताके संयोगसे सगोत्रताका प्रारम्भ, मा बापके मेलसे क़राबतका शुरू।

एकशरीरावयव (सं॰ पु॰) सगोत्र, सम्बन्धी, क़राबती, रिश्तेदार।

एकशरीरावयवत्व (सं॰ क्ली॰) सगोत्र सम्बन्ध, क़राबती रिश्ता।

एकशाख (सं॰ पु॰) एका शाखा यस्य, बहुव्री॰ कृत्सः। १ वेदकी तुल्य शाखावाले ब्राह्मण। २ एक शाखा-विशिष्ट वृक्षादि, एक डालका पेड़ वगैरह।

एकशाल (सं॰ पु॰) ग्रामविशेष, एक गांव। भरत राजगृहसे अयोध्या आते समय इस ग्राममें पहुंचे थे। यह स्थान स्थाणुमती नदी किनारे अवस्थित है।

"एकशाले स्थाणुमतीं विनते गोमतीं नदीम्।" (रामायण २।७१।१६)

एकशिखा (सं॰ स्त्री॰) पाठा, निरबिसी।

एकशितिपाद् (सं॰ पु॰) एकः शितिः कृष्णः पादो-ऽस्य, बहुव्री॰। अश्वविशेष, एक घोड़ा। इसका एक पैर सफेद रहता है। इसे अश्वमेध यज्ञमें वरुण देवताके उद्देशसे चढ़ाते हैं।

एकशीर्ष (सं॰ त्रि॰) एक ही स्थानको ओर मुख घुमाये हुआ, जो उसी जगहको तर्फ मुंह फेरे हो।

एकशीलसमाचार (सं॰ त्रि॰) एक ही प्रकारसे जीवन अतिवाहित करनेवाला, जो वही चाल-चलन रखता हो।

एकशुङ्ग (सं॰ त्रि॰) एकमात्र कोशयुक्त, सिर्फ एक खोल रखनेवाला।

एकशृङ्ग (सं॰ पु॰) एकं शृङ्गं यस्य, बहुव्री॰। १ विष्णु। स्वायम्भुव मन्वन्तरमें अकालप्रलय आनेसे विष्णुने एकशृङ्गविशिष्ट मत्स्यका रूप धारण किया था। (कालिकापुराण ३२ अ॰) २ गण्डक, गैंड़ा। ३ एक शृङ्गका पशु, जिस जानवरके एक ही सींग रहे। ३ पितृगण विशेष।

एकशृङ्गा (सं॰ स्त्री॰) पितृगणकी एक कन्या। यह मस्तिष्कसे उत्पन्न हुई थीं।

एकशृङ्गी—बौद्धशास्त्रोक्त एक ऋषिकुमार। काश्यपके वीर्य और हरिणीके गर्भसे ऋष्यशृङ्गकी तरह इनका भी जन्म हुआ था। मस्तकपर एक शृङ्ग रहनेसे यह नाम पड़ा। काश्यपराजकी कन्यासे एकशृङ्गका विवाह हुआ। बोधिसत्त्वावदान कल्पलताके मतसे यही बुद्ध थे। (नलिनी अवदान)

एकशेष (सं॰ पु॰) एकः शेषोऽवशिष्टो यस्य, बहुव्री॰। १ द्वन्द्वसमास विशेष। इस समासमें दो या दो से अधिक शब्दोंमें केवल एक रहता और द्विवचन वा बहुवचन लगता है, जैसे—माता च पिता च पितरौ। एकः शेषः मूलमस्य। २ एक मूलयुक्त वृक्षविशेष, जिस पेड़के एक ही जड़ रहे।

एकशैल (सं॰ क्ली॰) बरङ्गलका प्राचीन नाम।

एकश्रुत (सं॰ त्रि॰) एकवार श्रवण किया हुआ, जो एक ही मरतबा सुना गया हो।

एकश्रुतधर (सं॰ त्रि॰) एकवार श्रवण किया हुआ विषय स्मरण रखनेवाला, जो एक मरतबा सुनी बात भूलता न हो।

एकश्रुतधरत्व (सं॰ क्लो॰) एकवार श्रवण किया हुआ विषय स्मरण रखनेकी स्थिति, जिस हालतमें एक ही मरतबा सुनी बात याद रखें।

एकश्रुति (सं॰ त्रि॰) एका श्रुतिर्यस्य, बहुव्री॰। १ उदात्त, अनुदात्त और स्वरित—त्रिविध स्वर मिश्रित, जो ऊंची, नीची और बराबरकी आवाज़में हो। (स्त्री॰) २ एकमात्र स्वरकी श्रुति। ३ एक वेद। ४ एककर्णविशिष्ट, जिसके एक ही कान रहे।

एकश्रुष्टि एकमात्र आज्ञा पालन करनेवाला, जो एक ही हुक्म मानता हो।

एकषष्ट (सं॰ त्रि॰) एकषष्ट्याः पूरणम्, एकषष्टि-डट्। एकषष्टि संख्या पूरण करनेवाला, इकसठवां।

एकषष्टि (सं॰ स्त्री॰) एकेन अधिका षष्टिः, मध्य-पदलो॰। साठकी अपेक्षा एक संख्या अधिक, एकसठ, ६१।

एकषष्टितम, एकषष्ट देखो।

एकसठ (हिं॰ पु॰) एकषष्टि, छह दहाई और एक एकाई, ६१।

एकसत्तावाद (सं॰ पु॰) वादविशेष, एक दलील। इसमें सत्ता ही मुख्य मानी गयी है। असत् कुछ भी नहीं। युरोपमें परमेडीज़ने यह मत फैलाया था।

एकसप्तत (सं॰ त्रि॰) एकसप्ततियुक्त, एकहत्तरवां।

एकसप्तति (सं॰ स्त्री॰) एकाधिका सप्ततिः। सत्तर और एक, एकहत्तर, ७१।

एकसप्ततितम, एकसप्तत देखो।

एकसभ (सं॰ पु॰) एका सभा यस्य। १ जगदीश्वर। (त्रि॰) २ एकसभाविशिष्ट, एक मजलिसवाला।

एकसर (हिं॰ वि॰) १ एकाकी, साथमें दूसरा न रखनेवाला। २ एकहरा, जो दोहरा न हो। (फ़ा॰ वि॰) ३ सम्पूर्ण, पूरा।

एकसर्ग (सं॰ वि॰) एकस्मिन् विषये सर्गो निश्चयो यस्य। एकाग्रचित्त, एक ही बातपर झुका हुआ।

एकसहस्र (सं॰ त्रि॰) एकसहस्रं एकाधिक सहस्रं वा परिमाणमस्य। १ एक सहस्र परिमाणविशिष्ट, हज़ारवां। (क्लो॰) २ एक हज़ार, १०००। ३ एक हज़ार एक, १००१।

एकसा (फ़ा॰ वि॰) १ तुल्य, बराबर। २ सम, हमवार, जो नीचा-ऊंचा न हो।

एकसाक्षिक (सं॰ त्रि॰) एकमात्र साक्षी रखनेवाला, अकेलेका देखा हुआ, जो दूसरा गवाह रखता न हो।

एकसार्थं (सं॰ अव्य॰) साथ-साथ, मिल-जुलकर।

एकसूत्र (सं॰ पु॰) एकं सूत्रं यस्य, बहुव्री॰। डमरु-वाद्य, डमरू। यह एक सूत्रसे बजाया जाता है।

एकसूनु (सं॰ त्रि॰) एकोऽद्वितीयः सूनुर्यस्य, बहुव्री॰। १ एकमात्र पुत्र रखनेवाला, जिसके एक ही लड़का रहे। (पु॰) कर्मधा॰। २ एकमात्र पुत्र, एकलौता बेटा।

एकस्तोम (सं॰ पु॰) सोमयज्ञविशेष। इसमें एक ही स्तोम होता है।

एकस्थ (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन् तिष्ठति, स्था-क। एकस्थानमें स्थित, इकट्ठा, साथ ही खड़ा हुआ।

एकस्थान (सं॰ क्लो॰) एकमात्र स्थान, वही जगह।

एकहंस (सं॰ क्लो॰) एकः श्रेष्ठो हंसो यत्र, बहुव्री॰। १ तीर्थविशेष, एक सरोवर।

"एकहंसे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्।" (भारत, वन ८३ अ॰)

(पु॰) २ जीवात्मा, रूह। ३ एक हंस।

एकहत्तर (हिं॰ वि॰) एकसप्तति, सत्तर और एक, ७१।

एकहत्थी (हिं॰ स्त्री॰) मालखम्भकी एक कसरत। एक हाथको उलटा कमरपर रखते और दूसरे हाथसे पकड़ मालखंभपर उड़ते हैं।

एकहत्थी छूट (हिं॰ स्त्री॰) मालखंभकी एक कसरत। इसमें एक ही हाथकी थापसे उड़ान भरते हैं।

एकहत्थी पीठकी उड़ान (हिं॰ स्त्री॰) मालखम्भकी एक कसरत। इसमें पीठके सहारे उड़ते हैं।

एकहत्थी हुलूक (हिं॰ पु॰) कुश्तीका एक पेंच।

एक पहलवान् दूसरेको गर्दन हाथसे लपेट दूसरे हाथसे तान लेता और टांग लगा चित फेंक देता है।

एकहरा (हिं॰ वि॰) एकमात्र स्तरयुक्त, एकपरता, जो दोहरा न हो।

एकहरी (हिं॰ स्त्री॰) कुश्तीका एक पेच। इसमें एक पहलवान् दूसरेको हाथ पकड़ अपनी दक्षिण ओर झटकारता, फिर दोनों हाथोंसे रानको खींच पटक मारता है।

एकहस्ती (सं॰ स्त्री॰) अश्वकी शोभन वल्गाका एक भेद, घोड़ेकी एक लगाम।

एकहास्य (सं॰ पु॰) नृत्यविशेष, किसी क़िस्मका नाच।

एकहायन (सं॰ पु॰) एको हायनो वयोमानं यस्य, बहुव्री॰। एक वत्सरका वत्स, एक सालका बछड़ा। (क्लो॰) २ एक वत्सरका समय, एक सालका अरसा। (त्रि॰) एक वत्सरवाला, एक-साला।

एकहायनी (सं॰ स्त्री॰) एकहायन-ङीष्। दामहायनान्ताच्च। पा ४।१।२७। १ एकवर्षीय गाभी, एक सालकी बछिया। २ उद्भिद्विशेष, एक पेड़। जो पेड़ एक ही वर्षमें उपज और फल-फूल झड़ या मर जाता, वह एकहायनी कहाता है।

एकहृदय (सं॰ त्रि॰) एकमभिन्नं हृदयं यस्य, बहुव्री॰। १ अभिन्नहृदय, एकदिल। २ एकाग्रचित्त, दिलको एक ही जगहपर लगाये हुआ।

एका (सं॰ स्त्री॰) एक-टाप्। १ दुर्गा। जैसे स्फटिक विविध वर्णको प्रभा प्राप्त होनेसे विविध समझ पड़ता, वैसे ही एकमात्र देवीका रूप भी गुणके वश अनेक प्रकार झलकता है। (देवीपुराण ४५ अ॰) २ अद्वितीया, अनोखी। ३ एकाकिनी, अकेली। (हिं॰ पु॰) ४ ऐक्य, मेल।

एकाई (हिं॰ स्त्री॰) एकत्व, वहदत, एककी जगह या हालत। २ नियमित मान विशेष, कोई नाप-जोख—जैसे रुपया, पैसा, सेर, छटांक, गज़, फुट इत्यादि। गणनाके प्रथम स्थान या अङ्कको भी एकाई कहते हैं।

एकाएक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से।

एकाएकी, एकाएक देखो।

एकांश (सं॰ पु॰) एक एव अंशः, कर्मधा॰। एक भाग, एक हिस्सा।

एकाकार (सं॰ त्रि॰) एकस्तुल्य आकारो यस्य, बहुव्री॰। १ समान आकारविशिष्ट, हमसूरत, वही शक्ल रखनेवाला। २ मिश्रित, मिला हुआ।

एकाकी (सं॰ त्रि॰) एक-आकिनच्। एकादाकिनिच्चासहाये। पा ५।३।५२। असहाय, तनहा, अकेला।

एकाक्ष (सं॰ पु॰) एकमक्षि यस्य, एक-अक्षि-षच्। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३। १ काक, कौवा। वनगमनके बाद चित्रकूट पर्वतपर रहते समय एकदा राम सीताके क्रोड़में लेटे थे। उसी समय किसी कामुक काकने सीताके कुचदेशमें तोक्ष्ण नख मार दिया। रामने दुष्ट काकपर ऐसे आचरणसे क्रुद्ध हो ब्रह्मास्त्र फेंका था। काकने प्राणके भयसे नाना स्थानोंपर अनेक देवतावोंसे आश्रय मांगा। किन्तु अपने प्राणनाशकी आशङ्कासे कोई उसे आश्रय दे न सका। फिर काकने विधाताका आश्रय ढूंढ़ा था। विधाताने स्वयं आश्रय देनेमें असमर्थ हो उसे रामके शरणमें ही जानेको सिखाया। उसी उपदेशके अनुसार काक प्राणके भयसे विपन्न अवस्थामें रामके निकट जा पड़ा। सीताने दुर्वस्थाके दर्शनमें घबरा रामसे उसका जीवन बचानेको अनुरोध किया। रामने भी करुणासे आर्द्र हो एक चक्षु मात्र बाण-भोग्य बना उसे छोड़ दिया। २ शिव। ३ एक दानव। (त्रि॰) ४ एकनेत्रविशिष्ट, काना। ५ सुन्दर नेत्रविशिष्ट, उमदा आंख रखनेवाला। ६ एकमात्र अक्षाग्रविशिष्ट, जो एक ही धुरा या गोलंडा रखता हो।

एकाक्षपिङ्गल (सं॰ त्रि॰) कुवेर।

एकाक्षर (सं॰ क्लो॰) एकमद्वितीयमक्षरम्, कर्मधा॰। १ एक स्वरवर्ण। २ ओंकार। (त्रि॰) एकमक्षरं यत्र, बहुव्री॰। ३ एक अक्षरविशिष्ट, जो एक ही हर्फ़ रखता हो।

एकाक्षरकोष (सं॰ पु॰) अभिधानविशेष, कोषका एक ग्रन्थ। इसके रचयिता पुरुषोत्तम देव थे। अकारादि क्रमसे एक-एक अक्षरको पकड़ यह अभिधान लिखा गया है।

एकाक्षरी (सं॰ त्रि॰) एक अक्षरवाला, जो एक ही हर्फ़ रखता हो।

एकाक्षरीभाव (सं॰ पु॰) एकमात्र अक्षरका उत्पादन, संक्षेपण, इजफ़, समेट।

एकाग्र (सं॰ त्रि॰) एकं अग्रं पुरोगतं ज्ञेयमस्य, बहुव्री॰। १ अनन्यचित्त, एक ही बातपर लगा हुआ। २ अनाकुल, जो घबराया न हो। ३ प्रसिद्ध, मशहूर। ३ एकमात्र विन्दुयुक्त, जो एक ही नोक रखता हो। (पु॰) ४ विभक्त प्रतिकृतिके विस्तृत बाहुका सम्पूर्ण भाग।

एकाग्रचित्त (सं॰ त्रि॰) एकाग्रं एकविषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री॰। एकमनाः, एक ही बातपर दिल लगाये हुआ।

एकाग्रतः (सं॰ अव्य॰) अविभक्त चित्तसे, पूरे तौरपर दिल लगाकर।

एकाग्रता (सं॰ स्त्री॰) एकाग्रस्य भावः, एकाग्र-तल-टाप्। १ एक विषयमें आसक्ति, एक ही बातपर झुकाव। २ त्रिगुणात्मक चित्तमें सत्वगुणका उद्रेक और रजः एवं तमोगुणका विक्षेप। तन्द्रादिका अभाव पड़नेपर विषयान्तरके अवलम्बनरूप संसर्गसे शून्य चित्तका धर्मविशेष एकाग्रता कहाता है।

एकाग्रत्व (सं॰ क्ली॰) एकाग्र-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। एकाग्रता, दिलदिही।

एकाग्रदृष्टि (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्नेव अग्रे पुरोगते दृष्टिरस्य, बहुव्री॰। १ एकमात्र विषयपर दृष्टि डालनेवाला, जो एक ही ओर नज़र लड़ाये हो। (स्त्री॰) कर्मधा॰। २ एक विषयमें दृष्टि, एक ही चीज़पर पड़नेवाली नज़र।

एकाग्रमनाः (सं॰ त्रि॰) एकाग्रं एकविषयासक्तं मनो यस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्रचित्त, दिलको एक ही ओर लगाये हुआ। (क्ली॰) २. स्थिरचित्त, बंधा हुआ ध्यान।

एकाग्र्य (सं॰ त्रि॰) एकं अग्रं यस्य, बहुव्री॰। एकाग्र, एक ही ओर लगा हुआ। इसका संस्कृत पर्याय एकतान, अनन्यवृत्ति, एकायन, एकसर्ग, एकाग्र और एकायनगत है।

एकाग्नी (सं॰ स्त्री॰) वाणविशेष, एक तीर। इससे एक ही वीर मरता है। महाभारतमें लिखा—इन्द्रने कर्णको अपने कवचके साथ अर्जुनके मारनेको यह वाण सौंपा था। किन्तु भीषण समरमें कर्णने इसे घटोत्कच पर ही छोड़ दिया।

एकाङ्ग (सं॰ पु॰) एकं सुन्दरत्वेन मुख्यं अङ्गमस्य, बहुव्री॰। १ बुधग्रह। (क्ली॰) २ चन्दन, संदल। ३ एक अङ्ग, अकेला अज़ो। ४ मस्तक, दमाग़।

एकाङ्गवात (सं॰ पु॰) १ पक्षवध रोग, आधे जिस्ममें होनेवाला लकवा। २ अश्वका एक वातव्याधि रोग। इसमें एक कर्ण बढ़ता, अर्ध शरीर शुष्क पड़ता और अश्व शून रहता है। (जयदत्त)

एकाङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) चन्दनसे बननेवाली एक सामग्री।

एकाङ्गी (सं॰ स्त्री॰) १ मुरामांसी, एक खुशबूदार चीज़। यह कटु एवं कषाय लगती और भ्रम, मूर्च्छा, तृष्णा, विष तथा दाहको दूर करती है। (राजनिघण्टु) (त्रि॰) २ एक अङ्ग-सम्बन्धीय, एकतरफ़ा।

एकाण्ड (सं॰ पु॰) एकमण्डमस्य, बहुव्री॰। एक वृषणविशिष्ट अश्व, एक फोतेका घोड़ा। जिस घोड़ेका एक मुष्क बढ़ जाता, वह एकाण्ड कहाता है।

एकातपत्र (सं॰ त्रि॰) एकच्छत्र, चक्रवर्ती।

एकात्मता (सं॰ स्त्री॰) एकात्माका भाव, दुनियामें एक रूह रहनेका मकूला।

एकात्मवादी (सं॰ त्रि॰) एक एव आत्मेति वक्तुं शीलमस्य, बहुव्री॰। वेदान्तके मतका अवलम्बी। वेदान्तमें ब्रह्म अद्वितीय माना गया है।

एकात्मा (सं॰ पु॰) एकोऽभिन्न आत्मा, कर्मधा॰। १ अद्वितीय आत्मा, एक रूह। (त्रि॰) २ अभिन्नहृदय, एकदिल। ३ एकरूप, हमशक्ल। ४ सहायशून्य, तनहा।

एकादश (सं॰ त्रि॰) एकेन अधिका दश, मध्यपदलो॰। १ दशसे एक संख्या अधिक, ग्यारह, ११। २ एकादशको पूर्ण करनेवाला, ग्यारहवां।

एकादशक (सं॰ त्रि॰) एकादश परिमाणमस्य। १ एकादश परिमाणविशिष्ट, ग्यारहवां। २ एकादश, ग्यारह, ११।

एकादशकृत्व: (सं॰ अव्य॰) एकादशन्-कृत्वसुच्। संख्याया: क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्। पा ५।४।१७। एकादशवार, ग्यारह मरतबा।

एकादशतनु (सं॰ पु॰) एकादश तनवो यस्य, बहुव्री॰। महादेव। एकादश वार भिन्न भिन्न मूर्तिके परिग्रहसे शिवको एकादशतनु वा एकादश रुद्र कहते हैं। एकादश नाम यह हैं—अज, एकपात् अहिव्रध्न, पिणाकी, अपराजित, त्र्यम्बक, महेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हरण और ईश्वर।

एकादशतम (सं॰ त्रि॰) एकादशक, ग्यारहवां।

एकादशद्वार (सं॰ क्ली॰) एकादश द्वाराणि रन्ध्राणस्य, बहुव्री॰। शरीर, जिस्म। शरीरके मध्य दो चक्षु, दो कर्ण, दो नासारन्ध्र, मुख, ब्रह्मरन्ध्र, नाभि, गुह्य और मेढ्र सब मिलाकर एकादश छिद्र होते हैं। साधारणत: ब्रह्मरन्ध्र और नाभिको छोड़ लोग नवद्वार ही मानते हैं।

एकादशशतिक महाप्रसारिणी तैल (सं॰ क्ली॰) वात व्याधिका एक तैल। क्वाथार्थ समूलपत्रशाख गन्धभद्रा साढ़े ३२ शरावक; भिण्टी, गुड़ूची एवं एरण्डमूल प्रत्येक २५ शरावक; रास्ना, शिरीषत्वक्, देवदारु तथा केतकीका मूल प्रत्येक ६।० शरावक ले ६४००शरावक जलमें पकाये और ६४ शरावक शेष रहनेसे उतारे। कांजी ६४ शरावक, दधिमण्ड १६ शरावक, शुक्त १६ शरावक, छागमांस ८ शरावक एवं जल ६४ शरावक डाल उबाले और १६ शरावक शेष रहनेपर उतारे। इक्षुरस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और पिण्डिङ्गफल, कर्कटशृङ्गी, जीवनीय दशक वा अष्टवर्ग, काकोली, मञ्जिष्ठा, चीरकाकोली, कौंचकी जड़, छोटी इलायची, कपूर, लुबान, सरलकाष्ठ, कुङ्कुम, जटामांसी, नखी, कृष्णागुरु, नीलोत्पल, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा, कङ्कोल, नागेश्वर, खसकी जड़, गुड़त्वक्, सुपारी, जायफल, लताकस्तुरी, शतमूली, श्रीवासा, देवदारु, श्वेतचन्दन, वच, शैलज, सैन्धव, शिलारस, मुस्तक, गन्धभद्राका मूल, पुनर्नवा, नालुका, गन्धशटी, मृगनाभि, दशमूल, मैनफल, प्रियङ्गु, शाल, केतकी, तगरमूल, अश्वगन्धा, वाला, रेणुका, रसाञ्जन, सेमरका मुसरा, कटफल, अगुरु, श्यामालता वा अनन्तमूल, कुष्ठभल्लातककी मुष्टि, त्रिफला, शुलफा, पद्मनागेश्वर, लवङ्ग और त्रिकटु प्रत्येक ३ पल छोड़नेसे यह औषध बनता है। (प्रयोगामृत)

एकादशायस (सं॰ पु॰) अन्नवृद्धिके अधिकारका एक औषध, बदकी एक दवा। जारित लौह, पारद, गन्धक, ताम्र, स्वर्णमाक्षिक, अभ्र, हिङ्गुल, कुङ्कुम, पोखुराजमणि, शीष, पित्तल, विड़ङ्ग, त्रिफला, हिङ्गु, यमानी, जीरक, कृष्णजीरक, पियालफल, वचा, ककटशृङ्गी, मरिच, पिप्पली, राजपिप्पली, चवी, दुरालभा और चित्रकमूल बराबर-बराबर आर्द्रकके रसमें भावना देनेसे यह औषध बनता है।

एकादशाह (सं॰ पु॰) एकादशानां अह्नां समाहार:, एकादश-अहन्-टच्। एकादश दिनका समाहार, ग्यारह रोज़का अरसा। २ एकादश दिवस साध्य यज्ञ। ३ ब्राह्मणोंका एकादश दिवसमें कर्तव्य श्राद्ध। इस दिन मृतकके अर्थ वृषोत्सर्ग, महाब्राह्मणभोजन और शय्यादानादि होता है।

एकादशिन् (सं॰ त्रि॰) एकादश संख्या परिमाणमस्यास्तीति, एकादश-डिनि। एकादश संख्या परिमित, ग्यारह अददवाला।

एकादशी (सं॰ स्त्री॰) एकादशानां पूरणी, एकादशन्-डट्-ङीप्। १ तिथि विशेष। इस तिथिको शुक्लपक्षपर सूर्यमण्डलसे चन्द्रमण्डलकी एकादश निर्गत और कृष्णपक्षपर सूर्यमण्डलमें चन्द्रमण्डलकी एकादश कला प्रविष्ट होती हैं। इसका स्मृतिशास्त्रोक्त नामान्तर हरिदिन और हरिवासर है।

तन्त्रकी व्यवस्थासे वैष्णव, सपुत्त्रक, गृही, विशेषत: ब्राह्मणको कृष्णा एकादशी पर उपवासका नित्य अधिकार है। वैष्णव और उनके जैसे अन्यान्य व्यक्ति हरिशयनके मध्यवर्ती समयमें कृष्णा एकादशीका व्रत बराबर कर सकते हैं। अपुत्रक गृहीको सकल एकादशीके समय उपवास कर्तव्य है। काम्य उपवासमें

सभी समान अधिकार रखते हैं। नित्य उपवासमें रवि शुक्रादिका दोष मानना आवश्यक नहीं। अष्टम वर्षसे अशीति वत्सर पर्यन्त मानव इस उपवासका अधिकारी है। विधवा समुदय एकादशी पर नित्य अधिकार रखती हैं। उनके लिये मलमासादि कोई दोष वाधा नहीं देता।

एकादशीके उपवासका विधि—पारणके दिन द्वादशी मिलनेसे पूर्णा छोड़ खण्डा एकादशीमें गृहीको उपवास करना चाहिये। किन्तु वसा न होनेसे गृही पूर्णाके एवं दूसरे और विधवा आनेवाले दिन उपवास करें। जो एकादशी उदयके दो दण्ड पहले लगती, उसीको पूर्णा संज्ञा पड़ती है। पूर्व दिन दशमी और पर दिन द्वादशी युक्त रहनेसे परदिनको ही उपवास कर्तव्य है। अरुणोदय कालपर दशमी होनेसे विद्धा एकादशी कहाती है। विद्धा एकादशीको उपवास करना न चाहिये। ऐसी अवस्थामें द्वादशीको उपवास रख त्रयोदशीको पारण करना उचित है।

हरिभक्तिविलासके मतसे उपवासकी व्यवस्था—वैष्णवको उपवासके पूर्वदिन प्रातःस्नान कर धौतवस्त्र परिधान प्रभृति सुवेश करना चाहिये। उसके बाद—

"दशमीदिनमारभ्य करिष्येऽहं व्रतं तव।
त्रिदिनं देवदेवेश निर्विघ्नं कुरु केशव॥"

हे देवदेवेश केशव! मैं दशमीसे तुम्हारा व्रत करूंगा। इन तीन दिनों मुझे निर्विघ्न रखो।

उक्त मन्त्रको पढ़ महोत्सवके सहकारसे सङ्कल्प करना चाहिये। हरिदिनको चारलवण छोड़ एकवार मात्र हविष्यान्न खाते, मृत्तिकाशयनपर सो जाते और स्त्रीसङ्गसे दूर रह पुरुषोत्तमका स्मरण करते अवस्थान लगाते हैं।

स्कन्दपुराणमें दशमीको कांस्यपात्र, मांस, मसूर, मधु, मिथ्यावाक्य, दो बार भोजन, परिश्रम और पारणके दिन न किया जानेवाला सकल कार्य निषिद्ध कहा है।

देवलोक्त उपवासके दिनका कर्तव्य—उत्तरास्य होने पर जलपूर्ण उडुम्बरपात्र ग्रहणपूर्वक निम्नोक्त मन्त्रपाठ सहकारसे तीन अञ्जलि पुष्पदान एवं मन्त्रपूत जलपान कर उपवास रखना चाहिये। मन्त्र—

"एकादश्यां निराहारो स्थित्वाऽमपरेऽहनि।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत॥"

हे पुण्डरीकाक्ष अच्युत! मैं एकादशीको निराहार रह परदिन भोजन करूंगा। तुम मेरे आश्रय बनो।

दोनों पक्षकी एकादशीको निराहार रह, समाहितचित्त बन, सम्यक् विधानके अनुसार स्नान कर, स्नानके अन्तमें धौत वस्त्र पहन, जितेन्द्रियता पकड़ और पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, बहुविध उपहार, जल, होम, प्रदक्षिण, स्तोत्र, मनोरम नृत्यगीत एवं वाद्यादि सहकारसे यथाविधि विष्णुको पूज रात्रिके समय जागरण रखना चाहिये। स्कन्दपुराणमें भी रात्रिके जागरणकी व्यवस्था इसी प्रकार लिखी है। विशेषतः रात्रिके प्रत्येक प्रहर हरिकी आरति करनेका विधान है।

पारणके दिन कर्तव्य-सम्बन्धमें कात्यायनके मतानुसार प्रातःकाल स्नान और श्रीहरिकी पूजा समापन कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये।

"अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव।
प्रसीद सुमुखो नाथ ज्ञानदृष्टिप्रदो भव॥"

हे नाथ केशव! इस व्रतके द्वारा प्रसन्न हो तुम अज्ञानतिमिरान्धको ज्ञानदृष्टि दो।

यही मन्त्र पढ़ उपवास समर्पण करते हैं। उसके पीछे हरिको स्मरण कर व्रतकी सिद्धिके लिये पारण कर्तव्य है। जो व्यक्ति पारणके दिन द्वादशी अतिक्रम कर त्रयोदशीको खाता, वह शतजन्म पर्यन्त नरकवास पाता है। द्वादशी अल्पक्षण स्थायी रहनेसे अरुणोदयको और अत्यल्प होनेसे निशीथ कालके बाद पारण करना चाहिये। स्कन्दपुराणमें यह सकल द्रव्य द्वादशीको निषिद्ध कहे हैं—मधु, मांस, सुरा, तैल, व्यायाम, क्रोध, मैथुन, परान्न, कांस्यपात्र, ताम्बूल, लोभ, निर्माल्यलङ्घन, मिथ्यावाक्य, प्रवास, दिवास्वप्न, अञ्जन, शिलापिष्ट द्रव्य, मसूर, द्यूतक्रीड़ा, हिंसा, चना, कोरदूषक और औषध।

एकादशीको उपवासमें असमर्थ होनेपर पुत्र अथवा

अपर ब्राह्मणसे उपवास कराना चाहिये। यथाशक्ति ब्राह्मणोंको दान देनेसे भी एकादशी छूटनेका दोष मिट जाता है। (वायुपुराण)

मार्कण्डेयके मतानुसार बालक, वृद्ध और आतुर एकवार आहार अथवा फलमूल खा कर एकादशी रह सकते हैं। किन्तु गरुड़पुराण शयन, उत्थान, पार्श्वपरिवर्तन और फलमूलाहारको एकादशीके व्रतमें कर्तव्य नहीं ठहराता। तत्त्वसागर एकादशीको तरह अपर कोई पुण्यकार्य अलभ्य मानता है। यह स्वर्ग, मोक्ष, राज्य और पुत्र देनेवाली है।

गरुड़पुराणके लेखानुसार भक्तिसहकारसे एकादशी व्रत करनेपर मनुष्यको विष्णुलोक और विष्णुस्वरूप प्राप्त होता है।

नाना पुराणमें एकादशीके षड्विंश नाम कहे हैं, यथा—अग्रहायणकी कृष्णा १ उत्पन्ना, शुक्ला २ मोक्षा, पौषकी कृष्णा ३ सफला, शुक्ला ४ पुत्रदा; माघकी कृष्णा ५ षट्तिला, शुक्ला ६ जया; फाल्गुनकी कृष्णा ७ विजया, शुक्ला ८ आमर्दकी; चैत्रकी कृष्णा ९ पापमोचनी, शुक्ला १० कामदा; वैशाखकी कृष्णा ११ वरूथिनी, शुक्ला १२ मोहिनी; ज्येष्ठकी कृष्णा १३ अपरा, शुक्ला १४ निर्जला; आषाढ़की कृष्णा १५ योगिनी, शुक्ला १६ पद्मा; श्रावणकी कृष्णा १७ कामिका, शुक्ला १८ पुत्रदा; भाद्रकी कृष्णा १९ अजा, शुक्ला २० वामना; आश्विनकी कृष्णा २१ इन्दिरा, शुक्ला २२ पापाङ्कुशा, कार्तिककी कृष्णा २३ रमा, शुक्ला २४ प्रबोधिनी और मलमासकी शुक्ला २५ सुभद्रा तथा कृष्णा एकादशी २६ कमला कहाती है।

स्मृतिशास्त्रमें कृष्णा एकादशीको मातापिताके श्राद्धकी व्यवस्था है। किन्तु हरिभक्तिविलासके मतसे वैष्णवको वह करना न चाहिये। उनकी व्यवस्थामें एकादशी तिथिको श्राद्धका दिन आनेसे उस दिन नहीं—द्वादशीको श्राद्ध किया जाता है। ब्रह्मवैवर्तके मतानुसार एकादशीको श्राद्ध करनेसे दाता, भोक्ता और प्रेतलोक नरकस्थ होता है।

एकादशीको जन्म लेनेसे मनुष्य अत्यन्त क्रोधी, क्लेशसह, सुभाषी, यज्ञकारी, स्वजनप्रतिपालक, महामति, देवता तथा गुरुजनका प्रिय और हृष्टचेता निकलता है। (कोष्ठीप्रदीप) (त्रि॰) २ एकादश संख्याविशिष्ट, गयारह अदद्वाला।

"एकादशी धार्तराष्ट्री कौरवाणां महाचमूः।" (भारत, भीष्म १६ २१)

एकादशीतत्त्व (सं॰ क्ली॰) स्मृतिशास्त्रका एक अंश। इस अंशमें एकादशीका विषय वर्णित है।

एकादशीन (सं॰ त्रि॰) एकादश सम्बन्धीय, गयारहसे सरोकार रखनेवाला।

एकादशीव्रत (सं॰ क्ली॰) एकादशीमधिकृत्य व्रतम्, मध्यपदलो॰। एकादशी तिथिका उपवासादि धर्मकार्य। एकादशी देखो।

एकादशेन्द्रिय (सं॰ त्रि॰) गयारह इन्द्रिय। श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण, वाक्, पाणि, पायु, उपस्थ, पाद और मन गयारहको एकादशेन्द्रिय कहते हैं। इनमें पहले पांच ज्ञानेन्द्रिय और पीछे कर्मेन्द्रिय हैं।

एकादशोत्तम (सं॰ पु॰) शिव। गयारह रुद्रमें प्रधान रहनेसे शिवको एकादशोत्तम कहते हैं।

एकादि (सं॰ त्रि॰) एक आदिर्यस्य, बहुव्री॰। एकसे परार्ध पर्यन्त संख्या-विशिष्ट।

कविकल्पलतामें एकादि संख्यावाचक कितने ही शब्द संगृहीत हैं। यथा—१ एक, ब्रह्म, इन्द्रहस्ती, इन्द्राश्व, गणेशदन्त, शुक्रचक्षु। २ द्वय, पक्ष, नदीकूल, असिधारा, रामनन्दन। ३ त्रय, काल, अग्नि, भुवन, गङ्गामार्ग, ईशदृक्, गुण। ४ चतुर, वेद, ब्रह्मास्य, जाति, समुद्र, हरिबाहु, ऐरावतदन्त, सेनाङ्ग, उपाय, याम, युग, आश्रम। ५ पञ्च, पाण्डव, रुद्रास्य, इन्द्रिय, स्वर्गतरु, व्रत, अग्नि। ६ षट, वज्रकोण, त्रिशिरोनेत्र, तर्काङ्ग, दर्शन, चक्रवर्ती, कार्तिकेयास्य, गुण, रस। ७ सप्त, पाताल, भुवन, मुनि, द्वीप, सूर्याश्व, वार, समुद्र, नृप, राजाङ्ग, व्रीहि, वह्नि, शिखाद्रि। ८ अष्ट, योगाङ्ग, वसु, ईशमूर्ति, दिग्गज, सिद्धि। ९ नव, अङ्क, द्वार, भूखण्ड, छिन्नरावण मस्तक, व्याघ्रीस्तन, सुराकुण्ड, सेवधि, अङ्क, रस, ग्रह। १० दश, हस्ताङ्गुलि, शम्भुबाहु, रावणमौलि, कृष्णावतार, दिक्, विश्वेदेवा, अवस्था, चन्द्राश्व। ११ एकादश, रुद्र, कुरुराजसेन। १२ द्वादश, सूर्य, राशि, संक्रान्ति,

कार्त्तिकेयबाहु, शरीरकोष्ठ, कार्त्तिकेयनेत्र, राजमण्डल। १३ त्रयोदश, ताम्बूल, गुण। १४ चतुर्दश, विद्या, मनु, त्रिदिव, राजा, भुवन, ध्रुवतारका। १५ पञ्चदश, तिथि। १६ षोड़श,चन्द्रकला। १८ अष्टादश, द्वीप, विद्या, पुराण, स्मृति, धान्य। २० विंशति, रावणहस्त, अङ्गुलि। १०० शत, धृतराष्ट्रपुत्र, शतभिषक्तारका, पुरुषायु:, रावणाङ्गुलि, पद्मदल, इन्द्रयज्ञ, समुद्रयोजन। १००० सहस्र, जाह्नवीपथ, अनन्तशीर्ष, पद्मदल, रविवाण, अर्जुनहस्त, वेदशाखा, इन्द्रचक्षु।

एकादिक्रम (सं० त्रि०) एकादिरेकप्रभृति: क्रमो यस्य, बहुव्री०। आनुपूर्विक, सिलसिलेवार।

एकादिवीर (सं० पु०) एकवीर वृक्ष।

एकादेश (सं० पु०) एकश्चासौ आदेशश्च कर्मधा०। १ व्याकरणोक्त उभय शब्द वा स्थान ग्रहणकर एकमात्र आदेश। २ एक आज्ञा, अकेला हुक्म।

एकादनविंशति (सं० त्रि०) एकेन नविंशति:, एक-अदुक् अनुनासिको विकल्प:। एकोनविंशति, उन्नीस, १९।

एकाधिपति (सं० पु०) एक: प्रधानोऽधिपति:। सम्राट्, बादशाह, बड़ा मालिक।

एकाधिपत्य (सं० क्ली०) प्रधान आधिपत्य, बड़ा इख्तियार।

एकानंशा (सं० स्त्री०) एकोन: अंशो यस्या:, बहुव्री०। पार्वती। हरिवंशमें लिखा, कि यशोदाके गर्भसे योगमायाने यही नाम ग्रहणकर जन्म लिया था।

एकानुदिष्ट (सं० त्रि०) एकमनुदिष्टम्। १ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजको छोड़ा हुआ। २ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजका भाग लेनेवाला। (क्ली०) ३ एकके उद्देशसे प्रदत्त श्राद्ध।

एकान्त (सं० क्ली०) एकस्मिन्नेव अन्त: समाप्तिर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र समाप्ति, अकेला निशाना। २ निगूढ़ स्थान, छिपी जगह। ३ एककी भक्ति, सिर्फ एककी परस्तिश। (त्रि०) ४ एक विषयकी ओर चालित, जो एक ही बातपर लगाया गया हो। ५ एक ही सेवा करनेवाला, जो सिर्फ एक ही को मानता हो। ६ अतिशय, बहुत ज्यादा। ७ निर्जन, निराला। (अव्य०) ८ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर। ९ अवश्य, बेशक। १० गुप्तरीतिसे, छिपकर। ११ अत्यन्त, बेहद।

एकान्तकरुण (सं० त्रि०) अतिशय कृपालु, निहायत रहीम।

एकान्तकैवल्य (सं० क्ली०) मुक्तिविशेष।

एकान्तचारी (सं० त्रि०) एकान्त-चर-णिनि। निर्जनमें भ्रमणकारी, निरालेमें घूमनेवाला।

एकान्तत: (सं० अव्य०) १ पूर्णरूपसे, बिलकुल। २ पृथक् रूपसे, अलग।

एकान्तता (सं० स्त्री०) १ आतिशय्य, बहुतायत। २ निर्जनता, तनहाई।

एकान्तत्यागवाद (सं० पु०) बौद्धोंका एक वाद। वस्तुकी एकस्वरूपताके सम्बन्धमें त्याग-प्रतिपादक वादको एकान्तत्यागवाद कहते हैं।

एकान्तदु:षमा (सं० स्त्री०) दुष्टा समा वर्ष: दु:षमा, एकान्तं दु:षमा, २-तत्। बौद्धकल्पित कालविशेष। यह अवसर्पिणीके छठें और उत्सर्पिणीके पहले अरका नाम है।

एकान्तभूत (सं० त्रि०) एकाकी रहनेवाला, जो अकेले पड़ गया हो।

एकान्तमति (सं० त्रि०) एक ही विषयमें लगा हुआ, जो एक ही बात सोचता हो।

एकान्तर (सं० त्रि०) एकमन्तरं व्यवधानं यस्य, बहुव्री०। १ एकान्तरवर्ती, एकके फर्कवाला। २ एक दिन व्यवधानके भोजनसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ एक दिनके व्यवधानसे आनेवाला।

एकान्तराट् (सं० पु०) किसी बोधिसत्त्वका नाम।

एकान्तवास (सं० पु०) निर्जन स्थानका अवस्थान, निरालेकी रहायस।

एकान्तवासी (सं० त्रि०) निर्जनमें निवास करनेवाला, जो अकेला रहता हो।

एकान्तविहारी (सं० त्रि०) एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला घूमता हो।

एकान्तसुषमा (सं० स्त्री०) सुष्ठु समा वर्ष: सुषमा

एकान्तं सुषमा, २-तत्। बौद्ध मतानुयायी कालविशेष। अवसर्पिणीके प्रथम और उत्सर्पिणी कालचक्रके षष्ठ क्षुरको एकान्तसुषमा कहते हैं।

एकान्तस्थित (सं॰ त्रि॰) पृथक् पड़ा हुआ, जो अकेले ठहरा हो।

एकान्तस्वरूप (सं॰ त्रि॰) एकान्तस्थित, अलग रहनेवाला।

एकान्तिक (सं॰ त्रि॰) अन्तिम, फलस्वरूप, आख़िरी, नतीजेवाला।

एकान्तित्व (सं॰ क्ली॰) एकाश्रय, निरालापन।

एकान्ती (सं॰ त्रि॰) एकान्तमस्यास्ति, एकान्त-इनि। १ अतिशययुक्त, बहुत बड़ा। (पु॰) २ विष्णुभक्त विशेष। यह एकान्तमें बैठ विष्णुको भजते हैं।

एकान्न (सं॰ त्रि॰) एकं एककालपक्वं अन्नं यत्र, बहुव्री॰। १ एकवार भोजन करनेवाला, जो दूसरे मरतबा खाता न हो। (क्ली॰) २ एकमात्र भोजन, वही एक खाना। (पु॰) ३ सहजभोजी, साथ-साथ खानेवाला।

एकान्नभुक् (सं॰ पु॰) सहजभोजी, जो वही चीज़ खाता हो।

एकान्नविंशति (सं॰ त्रि॰) एकेन नविंशतिः चादुक् अनुनासिकश्च। एकोनविंशति, उन्नीस, १९।

एकान्नादी (सं॰ त्रि॰) केवल एक व्यक्तिका दिया अन्न खानेवाला, जो एक ही आदमीके लाये खाने-पर बसर करता हो।

एकाब्दा (सं॰ स्त्री॰) एकवर्षकी गाभी, एक सालकी बछिया।

एकाम्बरनाथ सोमयाजी—एक संस्कृत ग्रन्थकार। जाम्बवती-परिणय, वीरभद्रविजय और सत्यपरिणय नामक काव्य इन्होंने लिखा है।

एकाम्र (सं॰ क्ली॰) एक पवित्र तीर्थस्थान। आम्रका एकमात्र वृक्ष रहनेसे यह नाम पड़ा है। वह वृक्ष अतिशय उच्च, सुन्दर शाखाविशिष्ट, और नव नव किशलय तथा पल्लवसे भरा रहा। उसका फल—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष था। उक्त गोपनीय वृक्षको स्वयं मुरारिने लगाया था। यहां भगवान् भुवनेश्वरको लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। भुवनेश्वर देखो।

एकायन (सं॰ त्रि॰) एकमयनमाश्रयो यस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एकही की ओर झुका हुआ। २ एक होके गमन करने योग्य, जिसपे दूसरा चल न सके। (क्ली॰) एकमयनं स्थानम्, कर्मधा॰। ३ एकस्थान, निराली जगह। ४ मिलनस्थान, इकट्ठा होनेका मुक़ाम। ५ विचारयोग, खयालोंका मेल। ६ एकपरायणता, उसीका सहारा। ७ वेदकी एक शाखा।

एकायनगत (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्नयने गतं ज्ञानमस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एक ही बातपर झुका हुआ। २ एकस्थानगत, उसी जगह पहुंचा हुआ।

एकायु (वै॰ त्रि॰) १ सम्पूर्ण जीवोंको एकत्र करनेवाला, जो सब जानवरोंको इकट्ठा करता हो। २ प्रथम जीवधारी, पहले जिन्दा होनेवाला। ३ अत्युत्तम भोजन प्रदान करनेवाला, जो निहायत उमदा खाना देता हो।

एकार (सं॰ पु॰) स्वरवर्णका एकादश अक्षर। ए देखो।

एकार्णव (सं॰ पु॰) जलप्लावनविशेष, एक बूड़ा। इसमें घर-बाहर सब जगह पानी भर जाता है।

एकार्थ (सं॰ पु॰) एकः अद्वितीयः अर्थः, कर्मधा॰। १ एकप्रयोजन, वही मतलब। २ एक अविधेय शब्द, वही लफ़्ज़। ३ एकपदार्थ, वही चीज़। (त्रि॰) एकोर्थो यस्य, बहुव्री॰। ४ एकप्रयोजनयुक्त, वही मतलब रखनेवाला। ५ एक अभिधेय, वही माने रखनेवाला।

एकार्थक, एकार्थ देखो।

एकार्थता (सं॰ स्त्री॰) एकार्थस्य भावः, एकार्थ-तल्-टाप्। अर्थ वा उद्देश्यकी अभिन्नता, माने या मतलबका मेल।

एकार्थसमुपेत (सं॰ त्रि॰) एकार्थेन अभिन्नार्थेन समुपेतं युक्तम्, ३-तत्। १ एक अर्थविशिष्ट, वही माने रखनेवाला। २ एक उद्देश्ययुक्त, वही मतलब रखनेवाला।

एकार्थीभाव (सं॰ पु॰) एक अर्थका धारण, वही माने रखनेकी बात।

एकावम (सं॰ त्रि॰) एक-कम।

एकावयव (सं॰ त्रि॰) एकमभिन्नमवयवं यस्य, बहुव्री॰। १ एकशरीरविशिष्ट, वही जिस्म रखनेवाला। २ तुल्य-शरीर-विशिष्ट, बराबर जिस्म रखनेवाला। (क्ली॰) कर्मधा॰। ३ एकमात्र अङ्ग, अकेला अज़ो।

एकावली (सं॰ स्त्री॰) एका श्रेष्ठा आवली माला, कर्मधा॰। १ एक नरमाला, एकलड़ा हार। २ अलङ्कारविशेष।

"पूर्वं पूर्वं प्रति विशेषणत्वेन परं परम्।
स्थाप्यते ऽपोह्यते वा चेत् स्यात्तदेकावली द्विधा॥" (साहित्यदर्पण)

पूर्व पूर्व पदके प्रति पर पर पदका विशेषणरूपसे स्थापित वा परित्यक्त होना एकावली अलङ्कार कहाता है। ३ एकादश अक्षरकी एक छन्दोवृत्ति।

एकाशीत (सं॰ त्रि॰) इक्यासीवां, जो इक्यासीके स्थानपर हो।

एकाशीति (सं॰ स्त्री॰) एकेनाधिक अशीतिः, मध्य-पदलो॰। इक्यासी, अस्सी और एक, ८१।

एकाशीतितम, एकाशीति देखो।

एकाशीतिपद (सं॰ क्ली॰) एकाशीतिः पदान्यत्र, बहुव्री॰। प्रथम गृहारम्भ वा गृहप्रवेशके समय वास्तुकी पूजाको बनाया जानेवाला मण्डल। इसमें तिर्यक् एवं ऊर्ध्व प्रदेशपर दश रेखाके इक्यासी कोष्ठ खींचे जाते हैं। वास्तुमण्डल देखो।

एकाश्रम (सं॰ पु॰) निर्जन स्थान, निराली जगह।

एकाश्रय (सं॰ त्रि॰) एक आश्रय आधारो अवलम्बनं वा यस्य, बहुव्री॰। १ अनन्यगति, एक ही सहारा पकड़नेवाला। २ एक कार्यावलम्बी, वही काम करनेवाला। (पु॰) कर्मधा॰। ३ एक आधार, अकेला सहारा।

एकाश्रित (सं॰ त्रि॰) एकमाश्रितम्, २-तत्। १ एकके शरणागत, उसीकी पहनाहमें पहुंचा हुआ। २ अनन्य-गति, जो दूसरी चाल चलता न हो।

एकाश्रितगुण (सं॰ पु॰) एकस्मिन् पदार्थे आश्रितो गुणः। एकवृत्तिधर्म। सिद्धान्तमुक्तावलीमें रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, एकत्व, एकपृथक्त्व, परिमाण, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, यत्न, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, अदृष्ट और शब्दको एकवृत्ति-धर्म कहा है।

एकाष्टका (सं॰ स्त्री॰) १ माघ मासकी कृष्णाष्टमी, माह बदी अष्टिमी। २ माघ मासकी कृष्णाष्टमीको किया जानेवाला श्राद्ध। ३ शची। (अथर्ववेद) ४ प्रजापतिकी एक कन्या।

एकाष्ठी (सं॰ स्त्री॰) १ कार्पासी, कपास। २ कार्पास-बीजकोष, कपासकी बोंड़ी।

एकाष्ठीका (सं॰ स्त्री॰) पाठा, निरबिसी, हर-ज्योरी।

एकाष्ठील (सं॰ पु॰) एकमस्थि लाति, ला-क। वकवृक्ष, मौलसिरीका पेड़।

एकाष्ठीला (सं॰ स्त्री॰) १ वकवृक्ष, मौलसिरी। २ पाठा, पारी, हरज्योरी।

एकासनिक (सं॰ त्रि॰) एकासनस्यायम्, एकासन-इकन्। एकासनके उपयुक्त, एक ही बैठक रखनेवाला।

एकाह (सं॰ पु॰) एकमहः, एक अहन्-टच्। उत्तमैकाभ्याञ्च। पा ५।४।९०। १ एक दिन। २ एक दिन साध्य अग्निष्टोमादि यज्ञ। (त्रि॰) ३ एक दिनवाला, जो एक ही दिनमें हो। (अव्य॰) ४ एक दिनमें।

एकाहगम (सं॰ पु॰) एकाहेन गम्यते, गम कर्मणि अच्। एक-दिवस-गम्य स्थान, एक रोज़का सफ़र।

एकाहार (सं॰ पु॰) एकः अद्वितीय आहारः, कर्मधा॰। दिनमें एकबारका भोजन, दिनमें एक मरतबाका खाना। (त्रि॰) २ एकाहारी, दिनमें एक ही मरतबा खानेवाला।

एकाहारी (सं॰ त्रि॰) एकाहारोऽस्यास्ति, एक-आहार-इनि। एकबार ही भोजन करनेवाला, जो एक ही मरतबा खाता हो।

एकाह्निक (सं॰ त्रि॰) एकाह-ठन्। एकदिन-साध्य, एक रोज़में हो जानेवाला।

एकाह्ना (सं॰ स्त्री॰) एकवर्षीय गाभी, एक सालकी बछिया।

एकीकरण (सं॰ क्ली॰) एक-अभूत-तद्भावे च्वि-कृ-ल्युट्। एकत्रीकरण, इकट्ठा करनेका काम।

एकीकृत (सं॰ त्रि॰) मिश्रित, एक किया हुआ।

एकीभवत् (सं॰ त्रि॰) मिश्रित, जो एक बन गया हो।

एकीभाव (सं॰ पु॰) एक-अभूततद्भावे च्वि-भू-घञ्। १ संयोग, मिलान। २ साधारण प्रकृति वा सम्पत्ति, मामूली क़ुदरत या जायदाद।

एकीभावी (सं॰ त्रि॰) स्वरोंके मेलसे सम्बन्ध रखनेवाला।

एकीभूत (सं॰ त्रि॰) एकत्र, इकट्ठा, जो मिल गया हो।

एकीय (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन् तिष्ठतीति, एक-छ। १ एकपक्ष, एकतर्फ़ा। २ एक सम्बन्धीय, एकके मुताल्लिक़। ३ सहाय, साथी।

एकेक्षण (सं॰ पु॰) एकमीक्षणं यस्य, बहुव्री॰। १ काक, कौवा। २ काना। ३ शुक्राचार्य। पुराणमें शुक्राचार्यके एक-नेत्रपर लिखा, बलिराजने जब शुक्राचार्यका निषेध न मान वामनदेवको त्रिपाद भूमि देनेका उद्योग किया, तब उन्होंने जल व्यतिरेक दान असिद्ध ठहरानेके अभिप्रायसे सूक्ष्मरूपमें जलपात्रका मुख रोक लिया था। किन्तु वामनदेव यह चातुरी समझ गये। उन्होंने जलपात्रका छिद्र ढूंढनेके छलमें कुशसे शुक्राचार्यका एक नेत्र फोड़ डाला।

एकेन्द्रिय (सं॰ पु॰) १ इन्द्रियका मनकी ओर निग्रह। इस अवस्थामें इन्द्रियको भली और बुरी दोनों बातोंसे अलग रखते हैं। २ एकमात्र इन्द्रिययुक्त जीव। जैन जलौकादि जीवोंको एकेन्द्रिय मानते हैं। कारण, उनके सिवा त्वक्के दूसरा इन्द्रिय नहीं रहता।

एकेश्वर (सं॰ त्रि॰) एकोऽद्वितीय ईश्वरः। १ प्रधान अधिपति, बड़ा मालिक। २ एकाकी, तनहा, अकेला।

एकैक (सं॰ त्रि॰) १ एकाकी, अकेला। (अव्य॰) २ अकेले, एक-एक।

एकैकतर (सं॰ त्रि॰) एकाकी, अकेला।

एकैकवृत्ति (सं॰ त्रि॰) प्रत्येक एकाकीमें अवस्थान करनेवाला, जो एक-एकमें रहता हो।

एकैकशः (सं॰ अव्य॰) एकैक-शस्। पृथक्-पृथक्, अलग-अलग, एक-एक।

एकैकश्य (सं॰ क्ली॰) १ एकाकी स्थिति, तनहा हालत। (अव्य॰) २ पृथक्-पृथक्, एक-एक।

एकैषिकतैल (सं॰ क्ली॰) तन्नामक तैल, एकैषिक तैल। यह हिम, पित्तघ्न और वात एवं श्लेष्मावढ़ानेवाला होता है। (मदनपाल)

एकैषिका (सं॰ स्त्री॰) १ वकपुष्पवृक्ष, मौलसिरीका पेड़। २ पाना, हरज्योरी। ३ त्रिवृता। इसका तैल मधुर, अति शीत, पित्तकर, वातकोपन और श्लेष्मवर्धन होता है। (सुश्रुत)

एकैषी (सं॰ स्त्री॰) पाना, हरज्योरी।

एकोक्ति (सं॰ स्त्री॰) एकमात्र कथन, अकेला लफ़्ज़।

एकोजी—मन्द्राजस्थ तञ्जोरके प्रथम महाराष्ट्र राजा। यह शाहजीके पुत्र थे। तुका बाईके गर्भसे इनका जन्म हुआ। एकोजी प्रसिद्ध महाराष्ट्रवीर शिवजीके वैमात्रेय रहे। १६३८ ई॰को शाहजी विजयपुर सुलतान्के द्वितीय सेनापति बन कर्णाटकको ओर गये थे। पथमें ज्येष्ठपुत्र शम्भुजी और द्वितीय पत्नी तुकाबाईका साथ रहा। १६५३ ई॰को चन्द्रगिरि दुर्ग जीतने जा शम्भुजी कालके ग्रासमें पड़े। कर्णाटक जीतने पर शाहजीको बंगलूरकी जागीर मिली थी। फिर वहीं उनको स्वर्गवास होनेपर तुकाबाईके यत्नसे एकोजी पितृपदमें अभिषिक्त किये गये। १६७४ ई॰को तत्कालीन तञ्जोरके राजाको भय देखा कौशलपूर्वक एवं विना रक्तपात इन्होंने तञ्जोरदुर्ग अपने हाथमें लिया और समस्त देशको अधिकार किया। तञ्जोर शब्दमें विस्तृत विवरण देखो। इनके १म शाहजी, २य शरभोजी और ३य पुत्र तुकाजी रहे। १६८७ ई॰को एकोजीका मृत्यु होनेसे ज्येष्ठ पुत्र शाहजी राजा बने थे।

एकोतरसौ (हिं॰ वि॰) एकोत्तरशत, एकसौ एक।

एकोतरा (हिं॰ पु॰) १ रुपये सैकड़ेका व्याज। (वि॰) २ एक दिनके अन्तरसे आनेवाला, जो एक रोज़के फ़र्क़से आता हो।

एकोत्तर (सं॰ वि॰) एक संख्या अधिक रखनेवाला, जो एकसे बढ़ता हो।

एकोत्तरिका (सं० स्त्री०) बौद्धोंका चतुर्थ आगम।

एकोदक (सं० पु०) एकं तुल्यमुदकं यस्य, बहुव्री०। एकगोत्रज ऊर्ध्वतन सप्तम पुरुष।

एकोदर (सं० पु०) एकं अभिन्नं उदरं जन्मनत्वं यस्य, बहुव्री०। १ सहोदर, एक ही पेटसे पैदा होनेवाला। (क्ली०) २ तुल्य उदर, बराबर पेट।

एकोदात्त (सं० त्रि०) एकमात्र उदात्त स्वरयुक्त।

एकोद्दिष्ट (सं० क्ली०) एकः प्रेत एव उद्दिष्टो यत्र, बहुव्री०। प्रेतोद्देशसे किया जानेवाला एक श्राद्ध। यह श्राद्ध मृत व्यक्तिके उद्देशसे प्रति वर्ष किया जाता है। इसे मध्याह्नकालपर करना चाहिये। क्योंकि पूर्वाह्नको दैविक, अपराह्नको पार्वण और मध्याह्नको एकोद्दिष्ट श्राद्ध करनेकी व्यवस्था है। यथा—

"पूर्वाह्ने दैविकं श्राद्धमपराह्णेतु पार्वणम्।
एकोद्दिष्टं तु मध्याह्ने प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम्॥" (मनु)

कुतपके प्रथम भाग और आवर्तनके निकटवर्ती कालपर एकोद्दिष्ट आरम्भ करना चाहिये। पश्चिमदिगवस्थित छाया पूर्वदिक् जाते समय आवर्तनकाल होता है। एकोद्दिष्टके समय कोई विघ्न पड़नेसे अन्य मासमें कृष्ण एकादशी तिथिको श्राद्ध किया जा सकता है। पिता और माताके श्राद्धका पुत्रको ही अधिकार है। पुत्रके अभावमें पत्नी और पत्नीके अभावमें सहोदरपर पिण्डजलदान करनेका भार पड़ता है। पुत्र शब्दके द्वारा द्वादश प्रकार पुत्रोंके श्राद्धाधिकारी होनेकी सम्भावना रहते भी कलिमें अन्य पुत्रका निषेध लगनेसे औरस और दत्तक पुत्र ही समझा जायेगा। याज्ञवल्क्यके कथनानुसार पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, दौहित्र, पत्नी, भ्राता, भ्रातुष्पुत्र, पिता, माता, पुत्रवधू, भगिनी, भागिनेय, सपिण्ड तथा सोदकमें पूर्वपूर्वका अभाव आनेसे उत्तरोत्तर व्यक्ति श्राद्धका अधिकारी होगा। किन्तु जहां पिताके बाद पितामह मरता, उस स्थलमें पितामहके दत्तकादि पुत्र न रहनेसे पौत्रको अधिकार मिलता है। दाक्षिणात्य ग्रन्थमें लिखा, कि पत्नी तथा दौहित्र उभय विद्यमान रहते पत्नी, दौहित्र एवं भ्रातुष्पुत्र उभय विद्यमान रहते विभक्तावस्थामें दौहित्र तथा अविभक्तावस्थामें भ्रातुष्पुत्र और भ्राता एवं भ्रातुष्पुत्र उभय विद्यमान रहते कनिष्ठ होनेसे भ्राता तथा ज्येष्ठ होनेसे भ्रातुष्पुत्रको श्राद्ध करना चाहिये।

एकोद्देश (सं० पु०) एकस्य उद्देशः, ६-तत्। एकका उद्देश्य, एक ही बातकी हिदायत।

एकोन (सं० त्रि०) एककम, जिसमें एक कम पड़े। यह शब्द विंशति, त्रिंशत् प्रभृति दशकके आदिमें आता है, जैसे—एकोनविंशति, एकोनत्रिंशत् प्रभृति।

एकोशिका (सं० स्त्री०) एका मुख्या उशिका कर्मनीया, कर्मधा०। पाठा, हरज्योरी।

एकोष (सं० पु०) अविच्छिन्नप्रवाह, बन्द न होनेवाल बहाव।

एकोषिका, एकोशिका देखो।

एकौघभूत (सं० त्रि०) एकमात्र समूहमें इकट्ठा हुआ, जो मिलकर ढेर बन गया हो।

एकौझा (हिं० वि०) एकाकी, तनहा, दूसरेको साथ न रखनेवाला।

एकौतना (हिं० क्रि०) बालका फूटना, दाना पड़ना।

एक्का (हिं० पु०) १ यानविशेष, एक गाड़ी। इसमें एक ही अश्व वा वृषभ जोता जाता है। २ अद्वितीय वीर, अनोखा बहादुर। ३ बड़ा मुदगर। यह दोनों हाथसे उठता है। ४ आभूषणविशेष, एक जेवर। इसमें एक ही नग लगता है। एक्केको लोग बांहपर बांधते हैं। ५ किसी किस्मका शमादान। इसमें एक ही बत्ती जलती है। ६ एक ताश। इसमें एक ही बूटी रहती है। ७ पशुविशेष, अपने झुण्डको छोड़ अलग रहनेवाला जानवर। (त्रि०) ८ एकसम्बन्धीय, जो दूसरेसे सरोकार रखता न हो। ९ एकाकी, अकेला।

एक्कावान (हिं० पु०) एक्का हांकनेवाला पुरुष, जो शख्स एक्का चलाता हो।

एक्कावानी (हिं० स्त्री०) १ एक्का चलानेका काम। २ एक्केकी मजदूरी।

एक्की (हिं० स्त्री०) १ ताशका एक पत्ता। यह अपने रंगमें सबसे बड़ी पड़ती और हरेकको काट सकती है। २ एकमात्र वृषभविशिष्ट शकट, एक बैलकी गाड़ी।

एक्यानवे (हिं॰ वि॰) १ एकनवति, नव्वे और एक, ९१। (पु॰) २ एकनवति संख्या, एक्यानवे अदद।

एक्यावन (हिं॰ वि॰) १ एकपञ्चाशत्, पचास और एक, ५१। (पु॰) एकपञ्चाशत् संख्या, पचास और एक मिलकर बननेवाली अदद।

एक्यासी (हिं॰ वि॰) १ एकाशीति, अस्सी और एक, ८१। २ एकाशीति संख्या, अस्सी और एक मिलकर बननेवाली अदद।

एक्सचेंज (अं॰ पु॰=Exchange) व्यापारस्थान-विशेष, सौदागरोंकी एक जगह। यहां व्यापारी और वणिक् आदान-प्रदान तथा क्रय-विक्रयके लिये जुटते हैं।

एक्सपोज़ (अं॰ पु॰=Expose) १ सम्मुख वा निकट स्थापन, सामने या पास रखनेका काम। जब किसी वस्तुका प्रभाव अन्य द्रव्यपर पहुंचाना चाहते, तब उसे उसके पास एक्सपोज़ करते हैं। फोटो उतारते समय लेंसका मुख उद्घाटित करना भी एक्सपोज़ ही कहाता है।

एखनी (फ़ा॰ स्त्री॰) यूष, शोरवा। एखनी मांसमें ही होती है।

एगानगी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ ऐक्य, हेलमेल। २ सुहृद्-भाव, दोस्ती।

एगाना (फ़ा॰ वि॰) सुहृद्, मेली।

एज् (सं॰ धा॰) भ्वा॰ आत्म॰ अक॰ सेट्। "एजृङ् दीप्तौ।" (कविकल्पद्रुम) १ दीप्ति पाना, चमकना। भ्वा॰ पर॰ सक॰ सेट्। "एजृ कम्पे।" (कविकल्पद्रुम) २ कम्पन देना, कंपाना।

एजक (सं॰ त्रि॰) कम्पित कर देनेवाला, जो कंपा देता हो।

एजत् (सं॰ क्ली॰) चैतन्य वा सजीव वस्तु, चलती-फिरती या जीती-जागती चीज़।

एजत्क (सं॰ त्रि॰) १ कम्पनशील, जो कंप रहा हो। (पु॰) २ कीटविशेष, एक कीड़ा।

एजथु (सं॰ पु॰) एज अथु। कम्प, कंपाई।

एजन (सं॰ क्ली॰) एज् भावे ल्युट्। कम्पन, कंपाई।

एजि (सं॰ त्रि॰) एज-इन्। वातरोगग्रस्त, जिसके गठियेकी बीमारी रहे।

एजित (सं॰ त्रि॰) कम्पित, हिलता हुआ, जो डोल गया हो।

एजितव्य (सं॰ त्रि॰) कम्पित किया जानेवाला, जो हिलाये जानेके क़ाबिल हो।

एजिता (सं॰ त्रि॰) कम्पित करनेवाला, जो हिलाता हो।

एजेंट (अं॰ पु॰-स्त्री॰=Agent) प्रतिहस्त, प्रतिनिधि, गुमाश्ता, कारिन्दा—जैसे पोलिटिकल एजेंट, कामर्शल एजेंट।

एजेन्सी (अं॰ स्त्री॰=Agency) १ प्रतिनिधित्व, मुनीबी, आढ़त, पेशकारी।

एज्य (सं॰ त्रि॰) आ-यज्-क्यप्। सम्यक्रूप यजनीय, अच्छी तरह चढ़ाया जानेवाला।

एटा—१ युक्तप्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ २७° १९´ ४२´´ तथा २८° १´ ३९´´ उ॰ और द्राघि॰ ७८° २७´ २६´´ एवं ७९° १९´ २३´´ पू॰ पर अवस्थित है। दक्षिण सीमापर गङ्गा बहती हैं। क्षेत्रफल १७३८ वर्गमील है। कासगंज नगर व्यवसायका केन्द्र है। कालीनदी गङ्गामें गिरती है। इस ज़िलेमें वृक्ष बहुत कम हैं।

कहते—प्राचीन समयको कालीकी उपत्यकामें बड़े बड़े नगर बसते थे। ५वीं और ७वीं ई॰ शताब्दीके चीना परिव्राजक भी उक्त विषयका वर्णन लिख गये हैं। एटा ज़िलेमें उस समय अनेक मन्दिर और मठ बने थे, जिन्हें देखने स्वयं बुद्ध गये। अतरंजीके नष्टभ्रष्ट मृत्तिकाचयसे उनके जीवनका घनिष्ट सम्बन्ध रहा। सम्भवतः ६ष्ठ शताब्दसे १०म शताब्द पर्यन्त अहीरों और भारोंका राज्य चला, फिर राजपूतोंको अधिकार मिला। १०१७ ई॰को कन्नौज पर चढ़ते समय महमूद गज़नवीने एटेपर ज़रूर हाथ फेरा होगा। फिर दो शताब्द बाद यमुनाकी द्रोणीमें राठौर जयचन्द्रसे लड़ने जाते मुहम्मद ग़ोरीकी फ़ौज इसे ज़िलसे निकली होगी। उसी समयसे एटा मुसलमानोंके अधीन चला आता है। पहले पटियाली प्रधान नगर और डाकुवोंका घर था। १२७० ई॰को

सुलतान बल्बनने उनके अत्याचारकी बात सुनी। उन्होंने स्वयं पटियाली जा और जङ्गलमें बड़ी फौज जमा व्यवसायकी राह खोली थी। १५ वीं शताब्दीको बार बार मुसलमानोंका आक्रमण पड़ते समय एटेकी बड़ी दुर्दशा हुयी और दोनों ओरकी मार सहना पड़ी। अकबरने इसे अपने कन्नौज, कोयल और बदायूंके सरकारोंमें मिलाया तथा मैनपुरीके कट्टर हिन्दुवोंसे लड़नेको अड्डा बनाया था। फिर अन्तको ऐटा पर लखनऊके नवाबका अधिकार रहा। १८०१-२ ई०को उन्होंने अन्य देशके साथ इसे भी अंगरेजोंके हाथ सौंपा। १८४५ ई०को एटेके इधर उधर परगनोंकी अराजकता पर सरकारकी दृष्टि पड़ी थी। इसीसे पटियालीमें एक डिपुटी कलेक्टर और जाइण्ट मजिष्ट्रेट रख गया। फिर १८५६ ई०को हेड क्वार्टर एटा गांवमें उठ आया। इसी एटा गांवके नामपर ज़िला भी एटा कहाया है। १८५७ ई०को अलीगढ़से बलवेका समाचार आते ही यहांकी सारी फौज चुपके चल हुई थी। कासगंजकी रक्षाके लिये बड़ी चेष्टा की गयी, किन्तु सफलता न मिली। उस समय एटाके राजा धामड़ सिंह ज़िलेके दक्षिणांशमें स्वतन्त्र शासक बन बैठे। किन्तु फरुखाबादके नवाबने उन्हें मार भगाया और कुछ मासके लिये अपना अधिकार जमाया था। १५वीं दिसम्बरको जनरल ग्रीथेडकी फौजने विद्रोहियोंपर आक्रमण मार कासगंजका उद्धार किया। १८७८-७९ ई०को रोग और दुर्भिक्षका प्राबल्य रहा। इस ज़िलेमें कितने ही कान्यकुब्ज ब्राह्मण जमीन्दार हैं। सैकड़े पीछे ७० आदमी खेतीके सहारे रहते हैं। मन्दिर और मसजिद बहुत कम हैं। टिड्डी अधिक निकलती है। वर्षामें बाढ़से भी बड़ी हानि होती है। १८६०-६१ ई०को दुर्भिक्षके समय लोगोंने घासपात खाकर प्राण बचाया था। उत्तरांशमें चीनी तैयार होती है। सनकी रस्सी और बोरी बनती है। सोरोंमें प्रतिवर्ष गङ्गा स्नानका मेला लगता है। एटासे शिकोहाबादको पक्की सड़क गई है। कासगंज और डुंडवारगंजसे प्रति वर्ष नाव पर लाद कर माल बाहर भेजा जाता है। जलवायु शुष्क और स्वास्थ्यकर है। किन्तु ग्रीष्म ऋतुमें प्रायः प्रत्यह बालू और धूलिका तूफ़ान आया करता है। ज्वर और शीतलाका प्रकोप रहता और कभी-कभी हैज़ा भी ज़ोर पकड़ता है।

२ युक्तप्रान्तके एटा ज़िलेकी तहसील। यह काली नदीसे पश्चिम पड़ती है। निम्नगङ्गा नहरकी तीन शाखा सींचका काम देती हैं। भूमिका परिमाण ४८१ वर्गमील है।

३ युक्तप्रान्तके एटा ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २७° ३३′ ५०″ उ० तथा द्राघि० ७८° ४२′ २५″ पू० पर काली नदीसे ८ मील पश्चिम अवस्थित है। पहले यह छोटासा गांव था, किन्तु १८५६ ई०को पटियालीसे कचहरी वगैरह उठ आनेपर शहर बन गया। दिलसुख रायका मन्दिर बहुत ऊंचा है। तालाबकी शोभा देखकर जी प्रसन्न हो जाता है। नगरसे उत्तर संग्रामसिंह चौहानका क़िला है। इसे बने कोई ५०० वर्ष बीते। संग्रामसिंहके वंशज पहले राजा कहाते और क़िलेके आस-पास हुकूमत चलाते थे। किन्तु सिपाही विद्रोहके समय राजा धामड़सिंहके अस्त्र उठाने पर सरकारने उनका माल असबाब सब छीन लिया और उन्हें राज्यसे निकाल बाहर किया। नगरमें मट्टीके मकान् बहुत हैं।

एठ् (सं० धा०) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "एठङ् बाधने।" (कविकल्पद्रुम) बाधा डालना, रोकना, छेड़ना।

एड (सं० पु०) इल स्वप्ने अच्, डलयोरैक्यम्, अथवा आ-इड़-घञ्। १ मेषविशेष, किसी किस्मका भेड़ा। (त्रि०) २ वधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। (हिं० स्त्री०) ३ पार्ष्णि, एड़ी।

एड़क (सं० पु०) एड़ स्वार्थे कन्, इल् खुल् वा। १ पृथु-शृङ्ग मेष, भेड़ा। २ वनच्छगल, जंगली बकरा। ३ तृणविशेष, पतेर। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ।

एड़कघृत (सं० क्ली०) एड़ककी नवनीतसे उत्थित घृत, भेड़के मक्खनका घी। यह बुद्धिके पाटव और बलको बढ़ाता है। अति गुरु होनेसे सुकुमारोंको एड़कघृत खाना न चाहिये। (राजनिघण्टु)

एड़का (सं० स्त्री०) एड़कस्य स्त्री, टाप्। मेषी, भेड़।

एड़काख्य, एड़क देखो।

एड़गज (सं० पु०) एड़ो मेष एव गजो यस्य भञ्जकत्वात्। १ चक्रमर्दक, चकवंड़, चकौड़िया। इसका संस्कृत पर्याय चक्रमर्द, प्रपुन्नाट, दद्रुघ्न, मेषलोचन, पद्माट, चक्र और पुन्नाट है। (Cassia Tora) यह कटु पड़ता और वायु, कफ, कुष्ठ, त्वग्दोष, गुल्म, उदररोग एवं अर्शको नाश करता है। चक्रमर्द देखो। २ वन्य एला, जंगली इलायची।

एड़गजा (सं० स्त्री०) एड़गज देखो।

एड़मूक (सं० त्रि०) एड़वत् मूकश्च, कर्मधा०। १ वधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। २ वाक्श्रुतिवर्जित, बहरा और गूंगा, जो कहसुन न सकता हो। ३ शठ, प्रतारक, बदमाश, पाजी।

एड़हस्ती (सं० पु०) चक्रमर्द, चकौड़िया।

एडिटर (अं० पु०=Editor) लेखक, मोहतमिम-तबा, तरमीम करके छापनेवाला।

एडिटरी (हिं० स्त्री०) लेखकका कार्य, मोहतमिम-तबाका ओहदा या काम।

एड़ी (हिं० स्त्री०) पार्ष्णि, एड़।

एडीकांग (अं० पु०=Aid-de-camp) सेनापतिका सहायक, फ़ौजके अफसरका मुसाहिब। यह सेनापतिके आदेशका प्रचार करता है। समय लगनेपर सेनापतिकी ओरसे पत्र व्यवहार और शरीर रक्षकका कार्य भी एडीकांगको ही करना पड़ता है।

एड़ूक (सं० क्ली०) ईड़-ऊक पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। उलूकादयश्च। उण् ४।४१। १ अन्तर्गत अस्थि, भीतरी हड्डी। २ अन्तर्गत कठिन द्रव्य, भीतरकी कड़ी चीज़। ३ अस्थि-जैसे कठिन द्रव्यसे निर्मित भवन, जो मकान् हड्डी जैसी कड़ी चीज़से बना हो। (त्रि०) ४ वधिर, बहरा।

एड़ूक, एड़ूक देखो।

"एड़ूकान् पूजयिष्यन्ति वर्जयिष्यन्ति देवताः।" (भारत, वन १९०।६२)

एडूक, एड़ूक देखो।

एड्रेस (अं० पु०=Address) १ अभिसम्भाषण, सम्बोधन, गुज़ारिश, तक़रीर। २ नैपुण्य, मुस्तैदी। ३ नामधाम, सरनामा, ठिकाना।

एढ़ा (हिं० वि०) आढ्य, बली, ताक़तवर।

एण (सं० पु०) एति द्रुतं गच्छतीति, इ बाहुलकात् ण। १ हिरण, हिरना। २ कृष्णमृगविशेष, करसायल। इसका मांस कषाय, मधुर, हृद्य, बल्य, धारक, रुचिकर और रक्त, पित्त, कफ तथा वातको दूर करनेवाला है। (सुश्रुत, भावप्रकाश) विशेषतः ज्वरमें एणका मांस प्रशस्त रहता है। (चक्रपाणि) यह मृग कृष्णवर्ण होता है। चक्षु सुन्दर और पद खर्व रहते हैं। ज्योतिषमें मकरको एण कहते हैं।

एणक (सं० पु०) एण स्वार्थे कन्। १ हरिण, हिरना। २ कृष्णसार, करसायल।

एणतिलक (सं० पु०) एणो मृगस्तिलकमिव यस्य, बहुव्री०। मृगाङ्क, चांद।

एणदृक् (सं० त्रि०) एणस्य दृगिव दृक् चक्षुर्यस्य, बहुव्री०। १ मृगनेत्र, आहूचश्म। (पु०) २ मकर लग्न।

एणभृत् (सं० पु०) एणं बिभर्ति, एण-भृ-क्विप् तुगागमः। चन्द्र, चांद।

एणाजिन (सं० क्ली०) एणस्य अजिनं चर्म, ६-तत्। मृगचर्म, मृगछाला।

एणीदाह (सं० पु०) एक प्रकारका सन्निपात-ज्वर।

एणीपचन (सं० क्ली०) एणी पच्यते अत्र, पच-ल्युट्। १ देशविशेष, एक मुल्क। २ जातिविशेष, कोई लोग। जो लोग अवध्य स्त्री-पशुको हत्या कर खाते, वह एणीपचन कहाते हैं।

एणीपद (सं० त्रि०) एण्याः पादाविव पादौ अस्य, बहुव्री०। मृगीकी भांति पद रखनेवाला, जो हिरनीकी तरह पैर रखता हो। (पु०) मण्डलि सर्प, कौड़ियाला सांप।

एणीपदी (सं० स्त्री०) असाध्य लूताभेद, किसी-किस्मका ज़हरीला कीड़ा।

एत (सं० त्रि०) आ-इण्-क्त। १ आगत, आया हुआ। २ नानाविध वर्णयुक्त, रंगदार, जिसमें कई तरहके रंग रहें। (पु०) आ सम्यक् एतीति,

आ-इ कर्तरि क्त। ३ मृग, हिरन। ४ मिश्रित वर्ण, मिला हुआ रंग। ५ घोटक, घोड़ा।

एतकाद (अ० पु०) दृढ़ निश्चय, विश्वास, दिलजमई।

एतग्व (सं० पु०) १ विचित्र अश्व, अनोखा घोड़ा। २ साधारण अश्वमात्र, कोई घोड़ा। (त्रि०) ३ विचित्र, अनोखा।

एतज्ज (सं० त्रि०) इससे उत्पन्न, जो इससे निकला हो।

एतत् (सं० त्रि०) इण् अतोऽदिः तुड़ागमश्च। एतेस्तुट् च। उण् १।१३२। यह। एतत् शब्द अग्रवर्तिबोधक सर्वनाम है।

एतत्काल (सं० पु०) वर्तमान समय, ज़माना हाल।

एतत्कालीन (सं० त्रि०) वर्तमान काल-सम्बन्धीय, ज़माना-हालसे सरोकार रखनेवाला।

एतत्क्षणात् (सं० अव्य०) इस क्षणसे, अबसे।

एतत्तुल्य (सं० त्रि०) एतेन तुल्यः, ३-तत्। इसके तुल्य, ऐसा हो।

एतत्प्रथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहले पहल काम करनेवाला।

एतत्सम (सं० त्रि०) एतेन समः तुल्यः, ३-तत्। इसके समान, ऐसा।

एतद्, एतत् देखो।

एतदतिरिक्त (सं० त्रि०) एतस्मादतिरिक्तोऽधिकः, ५-तत्। इसकी अपेक्षा अधिक, जो इससे अलग हो।

एतदनन्तर (सं० अव्य०) एतस्मादनन्तरम्, ५-तत्। इसके अनन्तर, इसके पीछे।

एतदन्त (सं० त्रि०) एषो अन्तः अवसानं यस्य, बहुव्री०। इसमें समाप्त होनेवाला, जो इसतरह खतम हो।

"एतदन्तास्तु गतयो ब्रह्माद्याः समुदाहृताः।" (मनु १।५०)

एतदपेक्षा (सं० अव्य०) इसकी अपेक्षा, इसकी बनिसबत।

एतदर्थ (सं० पु०) १ यह विषय, यह बात। (अव्य०) २ इसके निमित्त, इसलिये।

एतदवधि (सं० अव्य०) एषः अवधिः सीमा यस्य, बहुव्री०। इस पर्यन्त, यहां तक।

एतदवस्थ (सं० त्रि०) एषा अवस्था यस्य, बहुव्री० कप्। ऐसी अवस्थाको प्राप्त, इस हालतवाला।

एतदात्म्य (सं० त्रि०) एष आत्मा स्वभावो यस्य तस्य भावः, भावार्थे ष्यञ्। एतद्रूपता, ऐसी हालत।

एतदादि (सं० त्रि०) एष आदिर्यस्य, बहुव्री०। इससे आरम्भ होनेवाला, जो इसतरह शुरू हो।

एतदाल (अ० पु०) १ एतदात्म्य, बराबरी। २ रागविशेष।

एतदितर (सं० त्रि०) एतस्मादितरः, ५-तत्। इससे भिन्न, दूसरा।

एतदीय (सं० त्रि०) एतस्य इदम्, एतद्-छः। एतत्सम्बन्धीय, इससे सरोकार रखनेवाला।

एतदुत्तम (सं० त्रि०) एतस्मादुत्तमः, ५-तत्। इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ, इससे अच्छा।

एतदेव (सं० अव्य०) एतद् एवः। यही, दूसरा नहीं।

एतद्गत (सं० त्रि०) एतस्मिन् गतः प्रविष्टः, ७-तत्। इसका मध्यवर्ती, इसमें पड़नेवाला।

एतद्देशीय (सं० त्रि०) इसी देशवाला, जो दूसरे मुल्कसे सरोकार रखता न हो।

एतद्द्वितीय (सं० त्रि०) इससे भिन्न अन्यवार कार्यकारी, जो इसे छोड़ दूसरे मरतबा कोई काम करता हो।

एतद्धेतुक (सं० त्रि०) एष हेतुर्यस्य, बहुव्री० कप्। इस कारणसे विशिष्ट, जो इस सबबसे लगा हो।

एतद्भिन्न (सं० त्रि०) एतस्मात् भिन्नम्, ५-तत्। पृथक्, दूसरा।

एतद्योनी (सं० त्रि०) इसमें स्थित, इससे निकलनेवाला।

एतद्रूप (सं० त्रि०) एतदेव रूपं स्वरूपं यस्य। इस रूपवाला, ऐसा।

एतद्वत् (सं० त्रि०) एतद्-वतुप्। एतद्विशिष्ट, ऐसा। (अव्य०) २ इस प्रकारसे, ऐसे।

एतन (सं० पु०) आङ्-इ-तन। १ निश्वास, सांसका छोड़ना। २ मत्स्यविशेष, एक मछली।

एतन्मध्य (सं० अव्य०) इसके मध्य, इसके बीच।

एतन्मय (सं० त्रि०) एतद्विशिष्ट, ऐसा, इससे बना हुआ।

एतन्मात्र (सं॰ त्रि॰) एतद्-मात्रच्। प्रमाणे इयसज्दघ्नञ्मात्रच्। पा ५।२।३७। इस परिमाणवाला, इतना।

एतबार (अ॰ पु॰) विश्वास, भरोसा, ठिकाना।

एतराज, (अ॰ पु॰) आपत्ति, झगड़ा, कहा-सुनी।

एतर्हि (सं॰ अव्य॰) इदम्-र्हिल् एतादेशश्च। इदमोर्हिल्। पा ५।३।१६। एते तौ रथोः। पा ५।३।४। सम्प्रति, अब, इस समय पर।

एतवार, इतवार देखो।

एतवारी (हिं॰ वि॰) एतवारवाला, जो इतवारको हो।

एतश (सं॰ पु॰) इण-तशन्। इनस्तशन्तसमुनौ। उण् ३।१४९। ब्राह्मण।

एतशः, एतश देखो।

एतस (सं॰ पु॰) इण् बाहुलकात् तसन्। ब्राह्मण।

एता (सं॰ स्त्री॰) १ हरिणी, हिरनी। (हिं॰ वि॰) २ इस परिमाणवाला, इतना।

एतादृक् (सं॰ त्रि॰) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृश-क्विन्। इस प्रकारवाला, ऐसा।

एतादृक्ष (सं॰ त्रि॰) एतदिव दृश्यते, एतद् दृश-क्स्। इस प्रकारवाला, ऐसा।

एतादृश (सं॰ त्रि॰) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृश-टक्। १ एतद्सदृश, ऐसा। २ इस प्रकार निर्मित, ऐसा ही बना हुआ।

एतावत् (सं॰ त्रि॰) एतद्-वतुप्। यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप्। पा ५।२।३९। १ इस परिमाणवाला, इतना ज़्यादा। (अव्य॰) २ इस प्रकारसे, ऐसे।

एतावन्मात्र (सं॰ त्रि॰) केवल इसी परिमाणवाला, इतना ही।

एतिक (हिं॰ वि॰) इस परिमाणवाली, इतनी। यह शब्द सदा स्त्रीलिङ्गमें ही व्यवहृत होता है।

एदर (ईडर)—गुजरातके माहीकांठे प्रान्तका एक राजपूत-राज्य। इस राज्यसे उत्तर सिरोही तथा उदयपूर, दक्षिण एवं पश्चिम बम्बई प्रान्त और पूर्व डुंगरपुर है। लोकसंख्या ढाई लाखसे अधिक निकलती है। उसमें कोई ११ हज़ार भील हैं।

कोल जातिकी संख्या ही विशेष है। किन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और कुनबी प्रभृतिकी भी कोई कमी नहीं। कहीं कहीं मुसलमान और जैन रहते हैं। दो एक घर पारसियोंके भी हैं।

पूर्वकाल पर यहां कोल जातिका राजत्व रहा। राजाका उपाधि भलशुर कोल पड़ता था। इस वंशके शेष राजाका नाम शम्बला रहा। वह अतिशय लम्पट और पापाचारी थे। उनके मन्त्रीने छलसे सोनग रावको बुलाया। उन्होंने यहां आ शम्बलाको विनाश और ईडर राज्य अधिकार किया था। सोनग-रावसे १२ पुरुष बाद जगन्नाथ राव ईडरके राजा बने। उस समय मुराद बख़्श गुजरातके सूबेदार थे। १६५६ ई॰ को मुरादके दौरात्म्यसे जगन्नाथ राज्य छोड़ भागे। पीछे मुरादने यहां एक देशाई (सहकारी) नियुक्त किया था।

१७२८ ई॰ को योधपुर राज्यके दोनों भाइयों आनन्दसिंह और रायसिंहने कितने ही अश्वारोही सैन्यके साथ स्वल्पायासमें ईडर जय किया था। उसी समयसे ईडरमें राजपूतोंका अधिकार जमा।

ईडर राज्यमें प्रधानतः सात ज़िले हैं—१ ईडर, २ अहमदनगर, ३ मोरासा, ४ बायाड़, ५ हरसोल, ६ परान्तिज और ७ वीजापुर सिवा इसके दूसरे पांच ज़िले ईडरके करद राज्य समझे जाते हैं।

राजपूतोंका अधिकार होनेके कई वर्ष पीछे पूर्वोक्त देशाईने अपना हृतराज्य फिर पानेकी आशासे पेशवाको भड़काया था। उन्होंने बाक़ाजी दूबाजी नामक एक व्यक्ति ईडर जय करनेको भेजा। यथा-समय बाक़ाजी ईडर राज्यमें आ पहुंचे थे। सुयोग देख जगन्नाथ रावके कितने ही राजपूत-कर्मचारी उनके साथ होलिये। युद्धमें आनन्द सिंह मारे गये थे। बाक़ाजीकी जीत हुई। वह कितने ही सैन्य सामन्त छोड़ अहमदाबादको चल दिये। पीछे राय-सिंहने सैन्यसंग्रह कर ईडर राज्य जीता। आनन्द-सिंहके पुत्र शिवसिंह राजा और रायसिंह अभि-भावक बने थे। १७६६ ई॰ को रायसिंह मरे। इसके कुछ दिन पीछे पेशवाने ईडर राज्यके परान्तिज, वीजापुर, मोरासा, बायाड़ और हरसोलका आधा भाग दबा लिया था। अवशिष्ट आधा अंश गायकवाड़के

हाथ लगा। किन्तु उन्होंने एककाल अधिकार न जमा शिवसिंहके साथ करका प्रबन्ध डाला था। प्रति वर्ष ईडरके निमित्त २४०००) और अहमदनगरके निमित्त ८८५०) रु० धार्य हुआ। १७९१ ई० को शिवसिंह मरे थे। उनके पांच पुत्र रहे। ज्येष्ठ भवनसिंह राजा बने थे। किन्तु अल्पदिनके मध्य ही परलोक जानेपर उनके दशवर्षवाले बालक पुत्र गम्भीर राय सिंहासन पर बैठे। उस समय राज्य विशृङ्खल हो गया था। शिवसिंहके दूसरे पुत्रोंमें कोई अहमद-नगर ले स्वाधीन बना और कोई मोरसासुर प्रभृति अधिकार कर कुछ काल तक भोगविलासमें पड़ा। शिवसिंहके द्वितीय पुत्र संग्रामसिंहके मरने पर उनके पुत्र करणसिंहको उत्तराधिकारसूत्रसे अहमदनगर मिला था। १८३५ ई०को इहलोक छोड़नेपर करणसिंहके पुत्र भक्तसिंह उत्तराधिकारी हुये। १८४३ ई०को उन्हें फिर योधपुरका राज्य मिल गया। उस समयसे भक्तसिंह योधपुरमें रहने लगे। किन्तु उन्होंने अहमदनगरका स्वत्व छोड़ा न था। १८४६ ई०को ब्रटिश गवरनमेण्टके प्रबन्धसे अहमदनगर, मोरासा और बायाड़ फिर ईडर राज्यमें सम्मिलित हुआ। उस समय अंगरेज-भक्त महाराज युवानसिंह (K. C. S. I.) ईडरके राजा रहे। १८६८ ई०को वह मर गये। १८८२ ई०को उनके पुत्र केशरीसिंह ईडरके महाराज हुये। यही दण्डमुण्डके कर्ता थे। इनके सम्मानार्थ १५ तोपकी सलामी बंधी। आज भी ईडरके महाराज गायकवाड़को ३०६४०) रु० कर देते हैं।

२ ईडर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३°५०' उ० और द्राघि० ७२°४' पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या छह हजारसे अधिक निकलेगी। ईडरमें डाकघर और औषधालय विद्यमान है।

एदिधिषुःपति (सं० पु०) अविवाहित ज्येष्ठ भगिनीकी कनिष्ठ भगिनीका स्वामी, बेब्याही बड़ी बहनकी छोटी बहनका खाविन्द।

एध् (सं० धा०) भ्वा० आत्म० अक० सेट्। "एधङ् वृद्धौ।" (कविकल्पद्रुम) वृद्धि पाना, बढ़ना।

एध (सं० पु०) इध्यते अनेनाग्निः, इन्ध-घञ् निपातनात् साधुः। हलश्च। पा ३।३।१२१। इन्धन, जलानेकी लकड़ी।

एधतु (सं० पु०) एध-चतुः। एधिवह्योश्चतुः। उण् १।७९। १ पुरुष, मर्द। २ अग्नि, आग। (त्रि०) ३ वृद्धि-युक्त, बढ़ा हुआ।

एधनीय (सं० त्रि०) वृद्धियोग्य, बढ़ाया जानेके क़ाबिल।

एधमान (सं० त्रि०) एध-शानच्। वर्धमान, बढ़नेवाला।

एधमानद्विष (वै० त्रि०) वर्धमान अयोग्य व्यक्तियोंसे द्वेष रखनेवाला, जो बढ़नेवाले बुरे लोगोंसे नफ़रत रखता हो। (सायण)

एधा (सं० स्त्री०) एध-अ-टाप्। समृद्धि, बढ़ती।

एधाहार (सं० पु०) इन्धन एकत्र करनेवाला, जो जलानेकी लकड़ी एकत्र करता हो।

एधितव्य, एधनीय देखो।

एधिता (सं० त्रि०) वर्धमान, बढ़नेवाला।

एनः (सं० क्ली०) एति गच्छति प्रायश्चित्तादिना, इण-असुन् नुडागमश्च। १ पाप, गुनाह। २ अपराध, जुर्म। ३ निन्दा, बदनामी, बुराई। ४ शाप, बद-बख़्ती।

एनस्, एनस देखो।

एनी (सं० स्त्री०) १ नदी, दरया। (हिं० स्त्री०) वृक्ष-विशेष, एक पेड़। यह दाक्षिणात्यके पश्चिमघाटमें उपजती है। काष्ठ दृढ़ तथा पीत मिश्रित धूसर वर्णका रहता और गृह एवं वस्तुके निर्माणमें लगता है।

एवा, अवा देखो।

एम (सं० त्रि०) इण कर्मणि म। १ प्राप्य विषय, मिलने लायक़ चीज़। (पु०) २ मार्ग, राह।

एमन् (सं० क्ली०) इण-मनिन्। १ पथ, राह। २ अवस्थितिस्थान, मुक़ाम। ३ गमन, रवानगी।

एमन (हिं० पु०) रागविशेष। यह श्रीरागका पुत्र समझा और रात्रिके प्रथम प्रहर गाया जाता है। स्वर तीव्र मध्यम रहता है। एमन कल्याण और केदारीके योगसे बना है।

एमनकल्याण (हिं॰ पु॰) रागविशेष। यह एमन और कल्याणके योगसे बना है।

एमनी (सं॰ स्त्री॰) श्रीरागकी स्त्री।

एरंड खरबूज़ा (हिं॰ पु॰) पपीता, रेंड खरबूज़ा।

एरंडसफ़ेद (हिं॰ पु॰) बागबरेंड़ा, मोगली।

एरंडी (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, तुंगा, आमी। यह हिमालय तथा सुलेमान् पर्वतपर उपजती है। वल्कल, पत्र एवं काष्ठ चमड़ा सिझानेमें लगता है।

एरक (सं॰ क्ली॰) १ तृणविशेष, पतवार। २ किसी नागका नाम।

एरका (सं॰ स्त्री॰) तृणविशेष, एक घास। इसका संस्कृत पर्याय—गुन्द्रमूला, शिम्बी, गुन्द्रा और शरी है। एरका शीतल, शुक्रवर्धक, चक्षुके लिये हितकारी, वायुकोपक और मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, दाह तथा रक्तपित्तनाशक है। (राजनिघण्टु) चक्रदत्तके टीकाकारने एरका-का अर्थ पतवार लिखा है।

एरङ्ग (सं॰ पु॰) एरति सम्यक् भ्रमतीति, आ-ईर्-अङ्गच्। मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर, स्निग्ध, विष्टम्भी, खानेसे पेट फुलानेवाला, शीतल और गुरुपाक होता है। (भावप्रकाश)

एरङ्गी (सं॰ स्त्री॰) एरङ्ग देखो।

एरण (एरन)—मध्यप्रान्तके सागर ज़िलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २४° ५′ ३०″ उ॰ और द्राघि॰ ७८° १५′ पू॰पर, सागर नगरसे ४८ मील पश्चिम अवस्थित है। एरन राजा भरतके चैत्यसम्बन्धी कीर्तिस्तम्भके लिये प्रसिद्ध हैं। एरनमें विष्णु भगवान्‌की एक वराहमूर्ति है। उच्चता १० फीट है, शरीरपर अनेक क्षुद्राकृति बनी हैं। उन मूर्तियोंके कुरते छोटे और टोपियां ऊंची हैं। कण्ठके चारो ओर बाजेवालोंकी मूर्तियां खुदी हैं। जिह्वाके अग्रभागपर एक मनुष्य खड़ा है। वक्षःपर शिलालेख है। दाहने दांतसे बाहुके पास एक स्त्री लटक रही है। वराहको एक ओर चतुर्भुज देव खड़े हैं। वह १२ फ़ीट ऊंचे हैं। कटिमें मेखला पड़ी है। शिर पर ऊंची टोपी लगी है। ग्रीवासे पाददेश तक समलङ्कृत माला लटक रही है। इस मूर्तिके सम्मुखीन स्तम्भोंपर यज्ञोपवीत बनाते मनुष्यों, कुटिलाकार सर्पों, हस्तियों, विवस्त्र स्त्रियों, बैठे बुड्ढों, वनदेवतावोंके मुखों और अन्य कल्पना-चातुर्यों के चित्र हैं। दबकर बैठे तीन सिंहोंके चित्र भी देखने योग्य हैं। उनके सम्मुख एक स्तम्भ और एक मन्दिर खड़ा, जो आधा भूमिमें गड़ा है। घंटेकी चोटी, २ फ़ीट ऊंची कुरसीको साधे हैं। कुरसीपर दो मत्स्यवाली चतुर्भुज मूर्ति खड़ी है। इस स्तम्भपर जो शिलालेख मिला, उससे मगधके गुप्तवंशीय राजा बुधगुप्तका पता चला है।

एरण्ड (सं॰ पु॰) एरति वायुम्, आ-ईर् अण्डच्। वृक्षविशेष, रेंड़का पेड़। (Ricinus communis) इसका संस्कृत पर्याय—व्याघ्रपुच्छ, गन्धर्वहस्त, उरुबुक, रुबुक, चित्रक, चञ्चु, पञ्चाङ्गुल, मण्ड, वर्धमान, व्यड़म्बक, रुबुक, बुक, अमण्ड, आमण्ड, व्यड़म्बन, काण्ड, तरुण, शुक्ल, वातारि और दीर्घपत्रक है। (राजनिघण्टु)

एरण्ड श्वेत और लोहित भेदसे द्विविध होता है। आमण्ड, चित्र, गन्धर्वहस्त, पञ्चाङ्गुल, वर्धमान, दीर्घदण्ड, अदण्ड, वातारि, तरुण और रुबुक श्वेत एरण्डके बोधक हैं। उरुबू, रुबू, व्याघ्रपुच्छ, चञ्चु और उत्तानपत्रक शब्द रक्त-एरण्डके वाचक हैं।

भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही एरण्डवृक्ष उत्पन्न होता है। बाजारमें दो प्रकारका एरण्डबीज मिलता है—छोटा और बड़ा। छोटे बीजसे उत्तम तेल निकलता और औषधके व्यवहारमें लगता है। बड़े बीजका तेल भारतवासी प्रदीपमें जलाते हैं।

एरण्डका पत्र वातघ्न, क्रिमि एवं मूत्रकृच्छ्रनाशक और पित्तरक्त-प्रकोपक है। कच्चे पत्तेसे गुल्म, वस्तिशूल, कफ, वात, क्रिमि, और सप्तविध वृद्धिरोग दूर होता है। एरण्डका फल अतिशय उष्ण, कटु, अग्निदीपक और गुल्म, शूल, वायु, यकृत्, प्लीहा, उदर तथा अर्शरोगनाशक है। एरण्डकी मज्जामें भी उक्त सकल गुण मिलते हैं। वह भेदक और वातश्लेष्म जन्य उदररोगनाशक होती है।

एरण्डको अरबीमें 'खिरवा' और फारसीमें 'बेद-अञ्जीर' कहते हैं। हकीमोंमें श्वेत और रक्त एरण्डके मध्य रक्त एरण्ड ही अधिक फलदायक है। १० बीजों

का गूदा मधुके साथ पीसकर खिलानेसे जुलाबका काम निकलता है। सकल प्रकारका वातरोग लगने और स्त्रियोंके स्तन्यपान कराते समय स्तनमें अधिक व्यथा उठनेसे इसके बीजको पीसकर प्रलेप चढ़ानेसे विशेष उपकार होता है। पत्रमें बीजकी भांति गुण रहते भी कुछ अल्प पड़ता है। किसीके अहिफेन अथवा किसी प्रकारका विष खाने एरण्डरसके व्यवहारसे वमन होने पर विषादि निकल जाता है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें एरण्डका बीज कटु और भेदक है। रइल साहब कहते—बाइबिलमें इसे गोर्ड (Gourd) नामसे लिखते हैं। डाक्टर विलियमके कथनानुसार अफरीकाकी स्त्रियां स्तनका दुग्ध बढ़ानेको इसका पत्रव्यवहार करती हैं। (Lancet, Sept. 1850) किन्तु बम्बई अञ्चलमें एरण्डका पत्र स्त्रियोंके स्तनदुग्धका सञ्चय घटानेको व्यवहृत होता है। (Dymock's Materia Medica of Western India, p. 579) युक्तप्रदेशवासी होलीको एरण्डका दण्ड उखाड़ स्तूप होलीकाकी अग्निमें फेंकते हैं। एरण्डतैल देखो।

एरण्डक (सं० पु०) एरण्ड स्वार्थे कन्। एरण्डवृक्ष, रेड़का पेड़।

एरण्डज (सं० त्रि०) एरण्डाज्जायते, एरण्ड-जन-ड। एरण्ड-वृक्षजात, रेड़के पेड़से निकला हुआ। (क्लो०) २ एरण्डतैल, रेंड़ीका तेल।

एरण्डतैल (सं० क्लो०) एरण्डबीजोत्पन्न तैलविशेष, रेड़ीका तेल। (Castor oil) यह तेल तीन प्रकारके उपायोंसे प्रस्तुत होता है—१ निष्कर्षण द्वारा, २ सिद्ध कर और ३ सुरासारके प्रयोगसे। निष्कर्षण करनेसे जो तेल हाथ लगता, वही भली भांति परिष्कार ठहरता है। शिशुवोंके लिये यही अधिक उपकारी है।

एरण्डके तैलमें ७४.०० भाग कारबन, १०.२० भाग हाइड्रोजन और १५.७१ भाग अक्सिजन रहता है।

वैद्यशास्त्रके मतसे एरण्डका तैल तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, पिच्छिल, गुरु, वृष्य, वयःस्थापक, त्वक्-स्वास्थ्यकर, शान्तिजनक, शुक्रदोषनिवारक, ईषत् कषायरस, सूक्ष्म, योनिशोधक, आमगन्धि, स्वादुरस, स्वादुपाक, तिक्त, कटु और भेदक होता है। इसके व्यवहारसे विषम ज्वर, हृद्रोग, पृष्ठशूल, गुह्यशूल, वातोदर, आनाह, गुल्म, अष्ठीला, कटिवेदना, आमवात और वातरक्त प्रभृति रोगोंमें विशेष उपकार पहुंचता है।

हकीमी मतसे पक्षाघात, श्वास, कास, शूल, आध्मान, वात, उदरी और स्त्रियोंके आर्तव रोगपर एरण्डका तेल विशेष उपकारी है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे अजीर्णरोगमें पाकस्थली और अन्त्रकी व्यथा उठनेसे प्रत्यह आध छटांक एरण्डका तेल पीनेपर बड़ा उपकार होता है। कोष्ठबद्ध होनेपर एरण्डके तेलसे जैसा उपकार मिलता, वैसा दूसरे किसी औषधसे नहीं। डाक्टर वायु एवं उदरशूलपर भी एरण्डतैल प्रयोग करते हैं।

एरण्डतैलमूर्च्छा (सं० स्त्री०) मूर्च्छाद्रव्यभेद। इसमें मञ्जिष्ठा, मुस्तक, धान्य, त्रिफला, जयन्तीपत्र, बालक, वनखर्जूरी, वटशृङ्ग, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, नलिका, केतकी, दधि और काञ्जिकको हरिद्रादि पर्यायसे पूर्ववत् मारते हैं।

एरण्डद्वादश, एरण्डद्वादशक देखो।

एरण्डद्वादशक (सं० पु०) शूलरोगका एक औषध। इसमें एरण्डका बीज, एरण्डका मूल, बृहती, कण्टकारी, गोक्षुर, शालपर्णी, चकवंड, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, भेकपर्णी, सिंहीपुच्छी, तथा खगोड़का मूल १२।१३ रत्ती और यवक्षार ४ माशे पड़ता है।

एरण्डपत्रविटपा, एरण्डपत्रिका देखो।

एरण्डपत्रिका (सं० स्त्री०) एरण्डस्य पत्रमिव पत्रमस्याः, कन्-टाप् अत इत्वम्। ह्रस्व दन्तीवृक्ष, छोटी दांती। संस्कृत पर्याय—लघुदन्ती, विशल्या, उदुम्बरपर्णी, एरण्डफला, शीघ्रा, श्येनघण्टा, घुणप्रिया, वाराहाङ्गी, निकुम्भ और मकूलक है।

एरण्डपत्री, एरण्डपत्रिका देखो।

एरण्डफला, एरण्डपत्रिका देखो।

एरण्डमूल (सं० क्लो०) एरण्डशिफा, रेंड़ीकी जड़।

एरण्डबीज (सं० क्लो०) एरण्डफल, रेंड़ीकी गहर।

एरण्डशिफा (सं० स्त्री०) एरण्डमूल देखो।

एरण्डसप्त, एरण्डसप्तक देखो।

एरण्डसप्तक (सं० पु०) शूलरोगका एक औषध।

इसमें एरण्डका मूल, बेलकी छाल, चकवंड, सिंह-पुच्छी, जम्बीरमूल, पथरचटा और गोक्षुर २३।२३ रत्ती, यवक्षार, हिङ्गु, सैन्धव एवं एरण्डतैल १।१ माशे पड़ता है।

एरण्डा (सं॰ स्त्री॰) आ-ईर-अण्डच्-टाप्। १ पिप्पली, पीपल। २ वृहद्दन्तीवृक्ष, बड़ी दांतीका पेड़।

एरण्डादि (सं॰ पु॰) एरण्डादि द्रव्यवर्ग, रेंड वगैरह चीजें। इस औषधमें एरण्डका मूल, अनन्तमूल, किशमिश, शिरीष, प्रसारिणी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, भूमिकुष्माण्ड और केतकीमूल १८।१८ रत्ती डालते हैं। एरण्डादिके सेवनसे वात और पित्तका विकार निकल जाता है। (रसचन्द्रिका)

एरण्डी (सं॰ स्त्री॰) एक शाखा नदी। यह नदी नर्मदामें जाकर गिरी है। एरण्डी अति प्राचीन-कालसे हिन्दुवोंका तीर्थ समझी जाती है। स्कन्द-पुराणको देखते इस तीर्थमें नहानेसे अशेष पुण्य मिलता है। नदीके तीरपर एरण्डीश्वर नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है।

"एरण्डीसङ्गमे स्नाने पुण्यसंख्या न विद्यते।
एरण्डीश्वरलिङ्गस्तु सर्वपापप्रणाशनः।" (रेवाखण्ड ३२।४)

एरनडोल—१ बम्बईप्रान्तके खानदेश जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ४६० वर्गमील है। ताप्तीकी उपत्यका आ जानेसे भूमि उर्वरा है। आमके बाग चारो ओर लगे हैं। कूपकी कोई कमी नहीं। २ बम्बईप्रान्तके खानदेश जिलेकी एरनडोल तहसीलका एक नगर। यह अक्षा॰ २०° ५६′ उ॰ तथा द्राघि॰ ७५° २०′ ३०″ पू॰पर अञ्जनी नदीके किनारे धूलियासे १० मील पूर्व अवस्थित है। धूलिया, महासावर रेलवे ष्टेशन और धरनगांवको पक्की सड़क लगी है। एरनडोल एक प्राचीन स्थान है। पहले यहां मोटा देशी कागज़ बहुत बनता था। रूई, नील और अनाजका व्यवसाय होता है। जलगांवमें बड़ा बाज़ार लगता, जो उत्तरपूर्व १४ मील पड़ता है।

एरनाकोलम्—मन्द्राज प्रान्तके कोचिन राज्यका एक नगर। यह अक्षा॰ ९° ५८′ ५५″ उ॰ एवं द्राघि ७६° १९′ ३१′ पू॰पर, कोचिन नगरसे २ मील दूर अवस्थित है। यहां राज्यके प्रधान कार्याध्यक्ष रहते हैं। अंगरेज़ी रेसिडंटसे मिलनेको दरबारका राजप्रासाद बना है कुछ सड़कें पक्की हैं। अंजीकैमालके पास बड़ा बाज़ार बना है।

एरफेर, हेरफेर देखो।

एराक (अ॰ पु॰) १ सङ्गीतस्थान विशेष, गानेका एक मुकाम। २ अरबके अन्तर्गत एक प्रदेश। एराकका घोड़ा बहुत बढ़िया निकलता है। इराक देखो।

एराकी (अ॰ वि॰) १ एराकदेशीय, एराक मुल्क-वाला। २ अश्वविशेष, एराक मुल्कका घोड़ा। यह बहुत अच्छा होता है।

एराफ़ (हिं॰ पु॰) नौकाका अधस्तल, जहाज़का पेंदा।

एराब, एराफ़ देखो।

एरु (सं॰ त्रि॰) आ-ईर-उण्। गन्ता, गमनशील, चलनेवाला, जो जा रहा हो।

एरोद (एरोड)—१ मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ५९९ वर्गमील है। भूमि प्रधानतः शुष्क है। कहीं कहीं नहरों और तालावोंसे खेत सींचे जाते हैं। कलिंगरायन नहर प्रधान है। सैकड़े पीछे ८३ बीघे भूमि लाल बालुकामय है। हिन्दू अधिक रहते हैं। खेती ही जीविकानिर्वाहका प्रधान उपाय है। सिवा कावेरीके दूसरी जगह ब्राह्मण कम मिलते हैं। एरोद नगरमें गाड़ियां बहुत बनती हैं। प्रधान स्थान एरोद नगर, पेरुन्दूराय, चेन्नीमलय, कोदुमूदी और अरसरूल है। मन्द्राजकी ट्रङ्करोड पेरुन्दूरायसे इस तहसीलमें आ निकली है। मन्द्राज और दक्षिण-भारत रेलवेका सङ्गमस्थल एरोद नगर है। कितनी ही जगह साप्ताहिक बाज़ार लगते हैं। जलवायु उष्ण रहते भी अस्वास्थ्यकर नहीं। पानी कम बरसता है।

२ मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिलेकी एरोद तहसीलका एक नगर। यह अक्षा॰ ११° २०′ २९″ उ॰ तथा द्राघि॰ ७७° ४६′ ३″ पू॰पर कावेरी नदी किनारे अवस्थित है। एरोद अपनी तहसीलका हेड-क्वार्टर है। हैदर-अलीके समय एरोदमें ३००० घर रहे। किन्तु मराठों, महिसुरियों और अंगरेजोंका

आक्रमण होनेसे नगर बिलकुल बिगड़ और उजड़ गया था। शान्ति स्थापित होते ही फिर चमत्कार बढ़ने लगा। १८०७ ई०को किलेसे सेना हटी थी। १८७७ ई०को किला गिराया गया। यहांसे रूई, मिर्च, शोरा और चावल बाहर भेजा जाता है। करूर, पेरुन्टूराय और महिसुरको पक्की सड़क लगी है। नगरसे डेढ़ मील पूर्व कावेरी नदीपर १५३६ फीट लंबा शहतीरोंका पुल बंधा है।

एर्वारु (सं० पु०) आ-ईर-क्विप्, एरं वृणोति वारयति वा, वृञ्-उण्। १ कर्कटीलता, फूट। इसका संस्कृत पर्याय—व्यालपत्री, लोमशा, स्थूला, तोयफला, हस्तिदन्तफला और कर्कटी है। यह स्वादु, शीतल, ईषत् क्षार, कफ एवं वायुकारक, ईषत् पित्तकर, रुचिकारक, अग्न्युद्दीपक, दाहनाशक, गुरुपाक और विष्टम्भी होता है। पक्व एर्वारु दाह, तृष्णा और क्लान्तिको नाश करता है। (हारीत और चरक)

एल (सं० पु०) १ एला, इलायची। २ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। ३ संख्याविशेष, एक अदद। (अं०) ४ अंगरेज़ी गज़। यह ४५ इञ्चका होता और रेशमी कपड़े नापनेका काम देता है।

एलक (सं० पु०) एलति क्षिपति वलिरूपेण आत्मानम्, एल-ण्वुल्। १ मेष, मेढ़ा। (हिं०) २. मैदा चालनेकी चलनी।

एलकेशी (हिं० स्त्री०) बंगालका एक बैंगन।

एलगिन—भारतवर्षके एक गवरनर जनरल और राजप्रतिनिधि। (James Bruce, Earl of Elgin and Kincardine) इन्होंने १८११ ई०को लण्डन नगरमें जन्मग्रहण किया था। १८३२ ई०को विद्याके बलसे एलगिन एम० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। इन्होंने १८४१ ई०को राजकीय कार्यमें प्रवेश किया था। १८४२ ई०के मार्च मासको यह जेमैकाके शासनकर्ता बने। वहां इनकी कार्यदक्षताके गुणसे सब लोग मुग्ध हो गये। अल्प दिन बाद ही सेक्रेटरी अव दी ष्टेटने लार्ड एलगिनको कनाडाका गवरनर-जनरल बनाया था। कनाडामें इन्होंने राजनीति और शासनका जो कौशल दिखाया, वह किसी गवरनरके हाथ होते सुननेमें न आया। शासनसे मुग्ध हो बहुत बड़े शत्रु भी इनके वशीभूत हुये। इन्होंने प्रथम कनाडामें स्वायत्तशासनकी प्रणाली लिपिबद्ध की थी। इन्हींके समयसे ब्रटिश अमेरिकाके साथ यूनाइटेड स्टेटसका वाणिज्य-व्यवहार प्रचलित हुआ। १८५५ ई०को एलगिन कनाडासे वापस गये। उसी समय यह फाइफसायरके लार्ड लेफ्टिनेण्ट नियुक्त हुये। १८५७ ई०को चीन राज्यके काण्टन नगरमें अंगरेजों और चीनावोंमें युद्ध छिड़ा था। लार्ड एलगिन सम्पूर्ण क्षमताप्राप्त दूत (Plenipotentiary Extraordinary) हो ससैन्य काण्टनके अंगरेजोंको साहाय्य करने चले। पथमें इन्हें भारतवर्षके सिपाही विद्रोहका समाचार मिला था। इन्होंने उसी समय लार्ड कानिङ्गके साहाय्यको अपना सैन्यदल भेज दिया। फिर १८५८ ई०को सिपाही विद्रोह मिटनेपर लार्ड एलगिन चीनमें जा पहुंचे। तिनसिन नामक स्थानमें फ्रान्सीसी दूत बेरन-ग्रसके सहयोगसे सन्धि हुई। सन्धिपत्रके अनुसार अंगरेज निर्विवाद और विना व्यय वाणिज्य करने लगे। चीनसे वापस आनेके पहले इन्होंने जापानसे सन्धि की—अंगरेज थोड़े महसूलपर जापानमें वाणिज्य चला सकेंगे। उक्त घटनाके कुछ दिन पीछे लार्ड एलगिनको टकु दुर्गके अंगरेजोंने संवाद दिया—यहांके चीना विश्वासघातकता कर हमारे ऊपर गोला-गोली फेंकने लगे हैं। यह सैन्यके साथ वहां जा पहुंचे। फिर चीनकी राजधानी पेकिनमें सन्धिपत्र स्वाक्षरित हुआ और सब गड़बड़ मिट गया।

इधर लार्ड कानिङ्गका शासनकाल पूरा चला। १८६१ ई०को १२ वीं मार्चको लार्ड एलगिन राजप्रतिनिधि और गवरनर-जनरल बन भारतवर्ष आये। १८६३ ई०को ५वीं फरवरीको इन्होंने कलकत्तेसे युक्तप्रदेशको ओर यात्रा की। आगरेमें दरबार लगा था। युक्तप्रदेशके राजावोंने इनका यथेष्ट सम्मान किया। वहांसे वापस चलते समय यह पीड़ित हुये थे। १८६३ ई०की २० वीं नवम्बरको हिमालयकी एक धर्मशालामें इनका प्राणवायु निकल गया।

एलङ्ग (सं॰ पु॰) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर, वृष्य, ग्राही, कफ-वातघ्न, मेधाग्निपुष्टिकर, शीतल और गुरु होता है। (राजनिघण्ट)

एलची (तु॰ पु॰) राजदूत, सरकारी संदेशा ले जानेवाला।

एलचीगरी (फ़ा॰ स्त्री॰) दूतका काम।

एलड (सं॰ क्ली॰) संख्याविशेष, एक अदद।

एलवाल, एलवालुक देखो।

एलबालु (सं॰ क्ली॰) एलेव वलते, एला-बल-उण्। गन्धद्रव्य विशेष, एक खुशबूदार चीज़।

"सैलबालुपरिपेलव मोचाः।" (वाग्भट)

एलबालुक (सं॰ क्ली॰) एलबालु स्वार्थे कन्। गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज़। इसका संस्कृत पर्याय—ऐलेय, सुगन्धि, हरिवालुक, वालुक, हरिबालूक, आलुक, एल्वबालुक, कपिलत्वक्, गन्धत्वक् और कुष्ठगन्धि है। यह अतिशय उग्र, कषाय, अतिशय रुचिकारक और कफ, वायु, मूर्च्छा, ज्वर, दाह, कफ, व्रण, छर्दि, पिपासा, कास, अरुचि, हृद्रोग, विष, पित्त, रक्त, कुष्ठ, मूत्ररोग एवं क्रमिनाशक होता है। (वैद्यक)

एलविल (सं॰ पु॰) कुवेर।

एला (सं॰ स्त्री॰) इल्-अच्-टाप्। इलायची देखो।

एलाक (सं॰ पु॰) एक मुनि।

एलागन्धिक (सं॰ क्ली॰) एलबालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलादिगण (सं॰ पु॰) गणविशेष, इलायची वर्ग, रह कुछ सुगन्धि चीजें। इसमें एला, तगर, पादुका, कुष्ठ, जटामांसी, गन्धतृण, दालचीनी, तेजपत्र, नागेश्वर, प्रियङ्गु, रेणुक, पद्मनखी, शङ्खिनी, गुंठुवा, सरलकाष्ठ, गुड़त्वक्, चोरपुष्पी, वाला, गुग्गुलु, धूना, शिलारस, कन्दुरुखोटी, अगुरु, गन्धफला, खसकी जड़, देवदारु, कुङ्कुम और पुन्नागपुष्प द्रव्य रहते हैं। यह गण वायु, कफ एवं विषको दवाता, शरीरका वर्ण बढ़ाता और कण्डू, पिड़का तथा कोष्ठरोगको दूर भगाता है।

एलादिगुड़िका (सं॰ स्त्री॰) रक्तपित्तका एक औषध। बड़ी इलायची, तेजपत्र एवं दालचीनी एक एक तोले, पिप्पली आध पल और मिसरी, यष्टिमधु, खजूर तथा द्राक्षा एक-एक पल चूर्ण कर मधुके साथ रगड़ दो दो तोलेकी गोली बनाये। इसके सेवनसे रक्तपित्तादि बहु रोग दूर होते हैं। (सारकौमुदी)

एलादिचूर्ण (सं॰ क्ली॰) छर्दिका एक औषध। इलायचीकी त्वक्, मरिच, शुण्ठी, पिप्पली और नागकेसरका चूर्ण यथोत्तर भागवृद्धिसे चीनी बराबर डालनेपर यह औषध तैयार होता है। (रत्नाकर)

एलादितैल (सं॰ क्ली॰) एक तैल। एला, मुरामांसी, सरलकाष्ठ, शैलज, देवदारु, रेणुक, चोरपुष्पी, शठी, जटामांसी, चम्पकली, नागकेसर, ग्रन्थिपर्ण, गन्धरस, खट्टासी, तेजपत्र, उशीरमूल, चन्दन, कुन्दुरुखोटी, नखी, वालक, गुड़त्वक्, कुष्ठ, कालागुरु, मुस्तक, सामुद्रकर्कट, श्वेतचन्दन, मञ्जिष्ठा, जातीफल, कुङ्कुम, पिड़िङ्गपुष्प, शिलारस एवं अगुरु दो-दो तोले दुग्ध १६ शरावक, दधि १६ शरावक, वाव्यालक क्वाथ १६ शरावक, वाव्यालक साढ़े १२ शरावक, जल ६४ शरावक तथा तिलका तैल ४ शरावक डाल एक हांडीमें तपाये और १६ शरावक शेष रहनेपर आगसे नीचे उतारे। यह तैल लगानेसे वातव्याधि दूर होता है।

एलादिमन्थ (सं॰ पु॰) यक्ष्मा रोगका एक औषध। एला, यमानी, आमलक, हरीतकी, विभीतकी, खदिरसार, निम्ब, पीतशाल, शाल, विड़ङ्ग, भल्लातकास्थि, चित्रकमूल, त्रिकटुक, मुस्तक एवं पङ्कपर्पटी ८।८ पल १५ शरावक जलमें सिद्धकर पौने ४ शरावक शेष रहनेपर वस्त्रसे छान ले। फिर इसको ३२ पल घृतमें पका शर्करा ३० पल, वंशलोचन ६ पल और मधु ३२ पल मिला मथानीसे मथनेपर यह औषध बनता है। (चक्रपाणिदत्त)

एलान (सं॰ क्ली॰) फलविशेष, नारंगी। कच्चा एलान अम्ल, सर, उष्ण, गुरु एवं वातघ्न और पक्का शीतल, बलकृत् तथा वातपित्तघ्न होता है। (राजनिघण्ट)

एलापत्र (सं॰ पु॰) एलापत्रमिव आकारो यस्य, बहुव्री॰। सर्पविशेष, एक सांप। महाभारत एवं पुराणादिमें लिखा, कि कश्यपके औरस और कद्रुके गर्भसे एलापत्रका जन्म हुआ था। बौद्धग्रन्थमें भी एलापत्र नागराज रूपसे अभिहित हुये हैं।

भोटदेशीय बौद्ध ग्रन्थमें लिखते—बुद्धदेव जब तुषित नामक लोकमें रहे, तब उन्होंने दो श्लोक कहे थे। बुद्ध जन्मसे पहले कोई वह श्लोक पढ़ न सकता था। सुवर्णप्रभास नामक एक नागराज वही श्लोक तक्षशिलावासी एलापत्रको दिखाकर बोले—तुम सर्वत्र गमन करो; जो इसका अर्थ लगा सकेगा, उसको एक लाख रुपया मिलेगा। एलापत्र उनकी बातपर नाना स्थान घूम वाराणसीके ऋषिपत्तन नामक एक मनोरम स्थानमें उपस्थित हुये। वहां नलद नामक किसी व्यक्तिने बुद्धके उक्त श्लोकका उन्हींके मुखसे अर्थ श्रवण किया था। पीछे एलापत्रने उनका अर्थ नलदके मुखसे सुना। अर्थ सुनते ही इनके ज्ञानचक्षु उन्मीलित हुये। बुद्धके निर्वाण पीछे बौद्धोंके कई दल अत्याचारसे पीड़ित हो गान्धार राज्यको जाते थे। उसी समय भोट-सैन्यका एक दल भिक्षुकोंके पीछे लग गया। बौद्ध भिक्षुक किसी ह्रदके किनारे पहुंचे थे। उसी जगह नागराज एलापत्र वृद्ध मनुष्यका वेश बना उनके सम्मुख देख पड़े। वह अपना अपना दुःख बता बोले—हम अपनी जीवन रक्षा और जीवन निर्वाहके लिये गान्धार राज्यको जाते हैं। एलापत्रने कहा—इस स्थानसे गान्धार ४५ दिनका पथ है; तुम्हारे पास १५ दिनका पथ्य देख पड़ता, अवशिष्ट दिन कैसे अतिवाहित करोगे। भिक्षुकोंने समझा समूह विपद् है। फिर सब ही आर्तनाद करने लगे। एलापत्र सबको ढाढ़स देकर बोले—तुम मत रोवो, धर्मके लिये हम जीवन दे सकते हैं; इस ह्रदपर हम सेतु बन कर रहेंगे, तुम अनायास अल्प दिनमें ही गान्धार पहुंच जावोगे। फिर एलापत्र वृहदाकार सर्पका वेश बन उसी ह्रदपर सो गये। भिक्षुक अनायास उनकी पीठके सहारे उत्तीर्ण हुये। उसी अवस्थामें एलापत्रने प्राण छोड़ा था। ह्रदके सूख जाने पर उनका देह पर्वतप्रमाण बन गया।

चीन-परिव्राजक फा-हियान और युअन-चुयङ्गने तक्षशिलामें एलापत्रह्रद देखा था। (Fo Kwo Ki, Ch. XXXV; Si-Yu-Ki, Bk. III.) कनिङ्गाम साहबने वर्तमान हसन-अबदलके 'बाबावली' नामक प्रस्रवणको बौद्धोक्त प्राचीन एलापत्र नागका ह्रद स्थिर किया है। (Archæological Survey of India, Vol. II. p. 135.)

एलापर्णी (सं॰ स्त्री॰) १ वृक्षविशेष, एक पेड़। २ रास्ना।

एलापुर—एक प्राचीन गिरि वा गिरिदुर्ग। प्राचीन शिलालिपिके अनुसार इस दुर्ग वा गिरिमें पल्लवराज कृष्ण रहते थे। इसीके निकट स्वयम्भूमन्दिर भी रहा। कनिंहम साहबके मतसे वर्तमान सोमनाथ पत्तनका अपर नाम एलापुर है। (Ancient Geography of India, p. 319) किन्तु पुरातत्त्ववित् फ्लिटके मतसे यह स्थान उत्तर कनाड़ेके अन्तर्गत है। आजकल इसे एल्लापुर कहते हैं। यह अक्षा॰ १४° ५८´ उ॰ और द्राघि॰ ७४° ४७´ पू॰ पर अवस्थित है। (Indian Antiquary, Vol. XI. p. 824)

एलाफल (सं॰ क्ली॰) १ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। २ मधूकवृक्ष, मौलसरीका पेड़।

एलाबालुक, एलबालुक देखो।

एलाबू (सं॰ स्त्री॰) अलाबू, लौकी।

एलायुग्म (सं॰ क्ली॰) सूक्ष्म तथा स्थूल एला, छोटी और बड़ी दोनों इलायची।

एलालु (सं॰ क्ली॰) एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलावती (सं॰ स्त्री॰) एला प्रसवत्वेन अस्त्यस्याः एला-मतुप् मस्य वः। एलालता, एलायचीकी बेल।

एलाह्व (सं॰ क्ली॰) एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलिचपुर—१ बरार प्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा॰ २०° ५०´ ३०´´ तथा २१° ४६´ ३०´´ उ॰ और द्राघि॰ ७६° ४०´ एवं ७७°५४´ पू॰के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २६२३ वर्गमील है। उत्तरार्ध पहाड़ियों और घाटियोंसे भरा है। वैराटका पर्वतशृङ्ग समुद्रतलसे ३८८७ फीट ऊंचा है। दक्षिणांश समतल है। अनेक क्षुद्र नदी वारधा और पूर्णामें जाकर गिरी हैं। एचिलपुर नगरसे अमरावतीको पक्की सड़क गयी है। देशी राहें और पगडंडियां बरसातमें बन्द रहती हैं। पहाड़ोंपर कोमी, मल्हारे और दूलघाटको राह गाड़ी चलती है। इस ज़िलेमें आमके बाग़ बहुत हैं। लोकसंख्या प्रायः सवा तीन लाख है। हिन्दुओंमें शैवोंका

प्राधान्य देख पड़ता है। गेहूं बहुत अच्छा होता है। रूईकी उपज अधिक है। मेलघाटमें चाय भी बोई जाती है। प्रधान नगर एलिचपुर, अंजनगांव, परतवाडा और करजगांव है। सितम्बर और अक्तोबर मास रोगका घर होता है।

२ बरार प्रान्तके एलिचपुर ज़िलेकी तहसील। भूमिका परिमाण ४६९ वर्ग मील है। ३ बरार प्रान्तके एलिचपुर ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २१° १५′ ३०″ उ० और द्राघि० ७७° २९′ ३०″ पू०पर अवस्थित है। किसी समय यह अतिसमृद्ध नगर रहा। ४०००० मकान् बने थे। निज़ामके दिल्लीसे अपना सम्बन्ध तोड़ स्वतन्त्र शासक बननेसे पहले एलिचपुर स्थानीय सरकारकी राजधानी रहा। फिर सूबेदारके हाथ पड़नेसे अवनति होने लगी। नगरमें कितने ही सुन्दर भवन हैं। बीचन नदीके किनारे दुल्ला रहमानकी दरगाह है। प्रायः ४०० वर्ष हुये किसी बाह्मनी राजाने उसे बनवाया था। सलावत खान् और इस्माइल खान्‌का बनवाया बड़ा राजप्रासाद धीरे-धीरे गिर रहा है। कुछ नवाबोंकी क़बरें बहुत उम्दा हैं। सुलतानगढ़ी नामक दुर्ग और ममदेलशाह नामक कूप भी देखने योग्य है। नगरसे २ मील बीचन नदीपर परतवाडा छावनी है।

एलिचपुर इतिहासप्रसिद्ध नगर है। सुननेमें आया—किसी जैन राजाने बडगांवके निकटस्थ खानजाम नगरसे आ १०५८ ई०को एलिचपुर बसाया था। दाक्षिणात्यकी राजधानी रहते समय यहां मुसलमानोंकी बड़ी धूम पड़ी। दिल्लीसे अलग होनेपर निज़ामने एवज़खान्‌को पहल शासक नियुक्त किया था। उन्होंने १७२४से १७२८ तक राजत्व चलाया, फिर शुजायत खान्‌का समय (१७२९-१७४० ई०) आया। उन्होंने मराठे राघवजी भोंसलेसे बैर बढ़ाया और भूगांवके समरमें अपना प्राण गंवाया था। राघवजीने एलिचपुरका खज़ाना लूट लिया। १७४१से १७५२ ई० तक शरीफखान्‌ने शासन चलाया था। किन्तु अपनी बराबरी करते देख निज़ामने उनका पद छीना। पीछे निजामके लड़के अलीजाह बहादुर शासक बने थे। किन्तु उन्होंने अपना काम प्रतिनिधिके द्वारा किया। सलावत खान्‌ने शासकका पद पानेपर इस नगरकी बड़ी उन्नति की थी। उन्होंने राजप्रासादको बढ़ाया, सर्वसाधारणके लिये एक बाग़ लगाया और प्राचीन जलमार्गको ठीक कराया। वह बड़े वीर रहे। निज़ाम और टीपू सुलतानके मध्य युद्ध आरम्भ होते ही उन्हें सेनामें उपस्थित होनेका आदेश मिला था। सलावत खान्‌ने इस युद्धमें बड़ा नाम पाया। सलावत खान्‌का उत्तराधिकार उनके लड़के नामदार खान्‌के हाथ लगा था। पीछे नामदार खान्‌के भतीजे इब्राहीम खान् १८४६ ई० तक शासक रहे। १८५३ ई०को बरार-प्रान्तके साथ एलिचपुर ज़िला भी अंगरेज़ी राज्यमें मिलाया गया।

एलिफण्टा—बम्बई बन्दरका एक द्वीप। यह अक्षा० १८° ५७′ उ० और द्राघि० ७३° पू०पर बम्बई नगरसे ३ कोस दूर अवस्थित है। जिला थाना और तहसील पानवेल है। परिधि चार साढ़े चार मील पड़ता है। दो पर्वतश्रेणीके मध्य सङ्कीर्ण उपत्यका आ गई है। भूमिका परिमाण ज्वार-भाटेके हिसाबसे चारसे छह मील तक लगता है। पोर्तुगीजोंने पहले जहाजसे उतरते समय पत्थरका एक हाथी देख 'एलिफण्टा' नाम रखा था। हाथी १३ फीट २ इञ्च लम्बा और ७ फीट ४ इञ्च ऊंचा रहा। किन्तु १८१४ ई०को शिर और कण्ठ टूटा था। १८६४ ई०को वह उठाकर बम्बईके विक्टोरिया गार्डनमें रखा गया। दोनों पर्वतके सङ्गमपर प्रधान गुहासे दक्षिणपूर्व थोड़ी दूर एक घोड़ेकी भी मूर्ति थी। दूरसे देखनेपर कोई कह न सका, कि वह सजीव न रहा। उक्त मूर्ति अब देखनेमें नहीं आती। नहीं मालूम—उसे कौन उठा ले गया। पर्वत झाड़ीसे ढंके और आम्र, अम्लिका तथा करञ्जके वृक्ष लगे हैं। किनारा बालू और कीचड़से भरा है। सम्भवतः ३यसे १०म शताब्दके मध्य यह द्वीप एक तीर्थस्थान रहा। गुहा देखने योग्य हैं। प्राचीन नगरके ध्वंसावशेषमें कितनी ही टूटी-फूटी चीजें हाथ आई हैं। अनेक दर्शक गुहा देखने आया करते हैं। १८८०-८१के समय यहां ५४०० गुहा थीं। प्रधान

गुहा पश्चिम पर्वतमें समुद्रतलसे २५० फ़ीट ऊंचे अवस्थित है। जहाजसे उतरने पर पौन मील टेढ़ा-मेढ़ा चलना पड़ता है। गुहाका द्वार उत्तरको है। उत्तरसे दक्षिण और पूर्वसे पश्चिम दोनों ओरकी लम्बाई १३० फ़ीट है। पहले २६ स्तम्भ और ६ उपस्तम्भ लगे थे, जिनमें आठ टूट गये। त्रिमूर्तिका कारुकार्य प्रशंसनीय है। शङ्करको ब्रह्मा, विष्णु और शिवके रूपमें देखाया है। उच्चता १७ फ़ीट १० इञ्च है। १८६५ ई०को किसी दुष्टने त्रिमूर्तिके दो मुखको नाकें तोड़ डाली थीं। पीछे भी दूसरी मूर्तियोंपर अत्याचार होनेसे सरकारने कड़ा पहारा बैठा दिया है। त्रिमूर्तिके रक्षक दो द्वारपाल हैं। एक १२ फ़ीट ८ इंच और दूसरा १३ फ़ीट ६ इंच ऊंचा है। किन्तु दोनों प्रतिमाके मुख बिगड़ गये हैं। कितने ही कमरे बहुत उमदा बने हैं। अनेक प्रतिमा अनोखी देख पड़ती हैं। दूसरी गुहाका द्वार उत्तर-पूर्व है। लम्बाई कोई ११० फ़ीट पड़ती है। उत्तर किनारे मन्दिर बना है। किन्तु यह गुहा बिलकुल टूट फूट गयी है। 'सीता बाईको दीवाल' दूसरी पहाड़ीपर है। पहले फाटकपर मरमरको बहुत उम्दा मेहराब बनी थी। गुहाके निर्माणका समय ठहराना कठिन है। कोई पाण्डवों, कोई बाणासुर और कोई सिकन्दरका नाम लेता है। शिलालेख कहीं नहीं। शिवरात्रिको यहां बड़ा मेला लगता है। देशी नाम गाढ़ापुरी है। गाढ़ापुरी देखो।

एलोका (सं० स्त्री०) आ-ईल-ईकन्-टाप्। सूक्ष्म ला, छोटी इलायची।

एलीय (सं० पु०) ऐल-बालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलु (सं० क्लो०) संख्याविशेष, एक अदद।

एलुक (सं० क्लो०) इल-उक। एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलुकाख्या (सं० त्रि०) एलुक देखो।

एलुवा (अं० पु० = Aloes.) कुमारीरसोद्भव बोल, सहा, सिब्र, मुसब्बर।

एलूक, एलुक देखो।

एलेनबरा (Edward Law Ellanborough)—भारतवर्षके एक गवरनर-जनरल। यह प्रथम लार्ड एलेनबराके ज्येष्ठ पुत्र रहे। १७९० ई०को इन्होंने जन्मग्रहण किया था। १८१८ ई०को इन्हें लार्ड उपाधि मिला। फिर ड्यूक अव वेलिङ्गटनके शासनकाल एलेनबरा बोर्ड-अव-कन्ट्रोलरके सभापति हो गये। १८४२ ई०को शासनका भार उठा यह भारत आये थे। जो सुख्याति लार्ड आकलेण्डके भाग्यमें न रही, इन्होंने वही सुख्याति पानेके लिये चेष्टा की। एलेनबरा चाहते थे—निर्विवाद एवं सुखस्वच्छन्दसे कार्य चल जाये, किन्तु इनके भाग्यसे वैसा न हुआ। १५वीं मार्चके दिन एलेनबराने प्रधान सेनापतिको लिखा था—"अंगरेजोंके गौरवकी रक्षा करना होगा। अपनी सामरिक मर्यादा फिर जमाना पड़ेगी। जिनके लिये अंगरेजी सैन्य अकाल कालके कवलमें चला और जिनके हाथों अंगरेजी नरनारियोंको बन्दी बन अपमान तथा दुःख उठाना पड़ा, उन दुर्वृत्त अफ़गानोंको शासन करना है। जलालाबाद, गजनी, खिलतखिलजी और कन्दाहारसे अंगरेजी सैन्य अपना अपना कार्य कर वापस आये। फिर अफ़गानस्थानमें उसके रहनेका कोई प्रयोजन नहीं। जिन राजा (शाहशुजा) को हमने अफ़गानस्थानके सिंहासनपर बैठाया था, वही अब अपने स्वजातियोंके निकट उपयुक्त देख नहीं पड़ते।"

उस समय अफ़गानप्रान्तमें रणका वाद्य बजता था। उत्तरभागमें अंगरेजोंके जयनादसे भूमि थरथर कांप उठी। फिर दक्षिणभागमें अंगरेजोंकी हाहाकार ध्वनिसे समस्त राज्य प्रमाद समझता था। एलेनबराने प्रधान सेनापतिको लिखने पीछे ही सुना, कि सेल और पोलकके समरकौशलसे जलालाबादमें अंगरेजी सैन्यने जय पा लिया। किन्तु दक्षिणमें बड़ी विपद् रही। सेनापति इङ्गलेण्ड पिसीन उपत्यकासे हिलकजई प्रदेशको राह जाते थे। उसी अज्ञातपूर्व स्थानमें वह विपक्षके हाथ हार गये। युद्धमें उनके ५०० सिपाही मरे। वह कुएटामें वापस आ और खाईंबना अपने दलसे आत्मरक्षा करते थे।

एलेनबराका मत बदला। इन्होंने कहला भेजा था—'२५वीं मार्चको इङ्गलेण्डका सेनादल अभावनीय

रूपसे चतिग्रस्त हुआ। अब सेनापति नट ससैन्य वापस हो उनके सेनादलको यथाशीघ्र भारतके संक्षिप्त निरापद स्थानमें पहुंचायें।'

सेनापति पोलक और नट साहब असम साहससे अफ़ग़ानोंको मार रहे थे, गवरनरका आदेशपत्र देख उभय मर्माहत हुये। किन्तु उक्त दोनों वीर भग्नोत्साह होनेवाले लोग न थे। इङ्गलेण्ड प्रभृति अन्य सेनाध्यक्षोंको भी यह समाचार मिला था, किन्तु सिपाहियोंसे किसीने न कहा। कारण सेनापतियोंको विश्वास रहा—सिपाही यदि यह संवाद पायेंगे, तो भाग जानेको जी चलायेंगे और विशृङ्खल हो जायेंगे। विशेषत: यथासमय रसद वगैरह न मिलनेसे सम्भवत: राहपर सबको विपद्में पड़ना होगा। वह जिस लिये अफ़ग़ानस्थानमें रहे, वही कार्य सोच-समझ करते गये। एलेनबराने अपना मत फिर बदला न सही, किन्तु बात समझमें आ गई—यदि अंगरेज़ अफ़ग़ानस्थान छोड़ वापस आयें, बन्दी अंगरेज मुक्ति न पायें और अफ़ग़ान रीतिके अनुसार शासित किये न जायें, तो भारतवर्षके राजनीतिक एवं सामरिक सकल ही व्यक्ति हमें तथा अंगरेज गवरमेण्टको घृणाका पात्र बनायें। फिर भी यह उस समय कहने लगे थे—'भारतवर्ष छोड़ दूर देशमें सैन्यसामन्त बहुत दिन रहनेसे काम न चलेगा। इससे भारतका अनिष्ट होगा और हमारे राज्यकार्यमें भी व्याघात लगेगा। सकल प्रकार अनिष्ट होनेसे पहले भारतवर्षकी रक्षा करना ही हमारा प्रधान कार्य है।'

उधर जिनके लिये अफ़ग़ानस्थानमें युद्ध होता था, उन्हीं शाह शुजाको कई लोगोंने मिलकर मार डाला। पोलक और नट साहब नाना स्थानोंमें जीतने लगे। छठीं जनवरीके दिन एलेनबराने नट साहबको लिखा था—"अफ़ग़ानस्थानकी सामरिक और राजनीतिक अवस्था देख हमने आपसे वापस आनेको कहा था। किन्तु आपके सैन्यसामन्तोंकी स्थिति अच्छी समझ पड़ती है। अब हमारा मत स्वतन्त्र है। आप जो अच्छा समझें, वही करें। यदि आप गज़नी, काबुल और जलालाबाद जाना चाहेंगे, तो यथेष्ट परिमाणसे रसद, शकट और खर्च पायेंगे। हमारी उच्च आशा है—हम यह महाव्रत उद्यापन कर सकें। इससे स्वदेश एवं इस सुदूर एसियाखण्डमें क्या मित्र क्या शत्रु सभीके निकट हम अपना मुख देखा सकेंगे। किन्तु चेष्टा निष्फल जानेसे नि:सन्देह सर्वनाश होगा। इस समय विशेष सावधानतासे कार्य करना पड़ेगा। इसमें लाभसे हानि अधिक है।"

सुविज्ञ एलेनबरा इसीप्रकार दोनों ओर झुके रहे। विफल होनेसे सेनापतियोंका ही दोष ठहरेगा। फिर सफल होनेपर एलेनबराकी मनस्कामना सिद्ध होगी और सुख्याति मिलेगी।

उसी दिनसे सब लोग समझ गये—एलेनबराका मनोभाव बदला है। इन्होंने आदेश प्रचार किया—"यदि आप लोग बाहुबलसे गज़नी और काबुल जीत तथा हिन्दूविद्वेषी सुलतान् मुहम्मदकी क़ब्रसे उनकी यष्टि और सोमनाथ-मन्दिरका सुवर्णद्वार उठा ला सकेंगे, तो समस्त ही भारतवासी समझेंगे—आप लोगोंका वीरत्व असीम और आप लोगोंकी कीर्ति चिरस्मरणीय है।"

शुभ दिनको लार्ड एलेनबरा भारत आये थे। यथार्थ ही उनका भाग्य सुप्रसन्न रहा। जिस रङ्गभूमिमें लार्ड अकलेण्ड निष्फल हो हताश अन्तरसे स्वस्थानको प्रस्थान करनेपर उद्यत हुये, लार्ड एलेनबराने उसी स्थानपर बैठे-बैठे सुना—अफ़ग़ान राज्य जय हुआ, अंगरेजी सैन्य छूट गया और मनका अभिलाष पूरे पड़ा है। चारो ओर जयध्वनि होने लगी। अंगरेजी सैन्य महा समारोहसे लौटा था। लार्ड एलेनबराने सैनिकोंकी अभ्यर्थना कर यथोचित सम्मान प्रदान किया। उन्होंने महमूदकी क़ब्रसे सिंहद्वार ला बड़े लाटको सौंपा था। लोगोंने घोषणा की—सोमनाथका सिंहद्वार फिर भारत लौट आया। साधारणको भी इस बातपर विश्वास हो गया। किन्तु इस विषयपर सन्देह होता—वह द्वार सोमनाथका सिंहद्वार है या नहीं। ऐतिहासिक विभारिज साहबने स्पष्ट लिखा, कि वह द्वार सोमनाथका नहीं।*

* Beveridge's History of India, Vol. III. p. 459.

अफ़्गानस्थानका गड़बड़ मिटते भी लार्ड एलेनबरा स्थिर रह न सके, सिन्धुप्रदेशके ऊपर उनके चक्षु पड़े। पहलेसे ही सिन्धुप्रदेशके अमीर अंगरेजोंके विरुद्धाचरण करते आते थे। मध्यमें लार्ड मिण्टोके साथ सन्धि होनेपर सिन्धुप्रदेशमें एक रेसीडण्ट रखा गया। फिर अमीरोंने विरक्त हो रेसीडण्टके मकान पर आक्रमण मारा था। उनको दबानेके लिये सर चार्लस नेपियर प्रधान सेनापति हो सिन्धुप्रदेश भेजे गये। १८४३ ई०को २४वीं मार्चको अमीर सम्पूर्ण पराजित हुये। सिन्धुप्रदेश अंगरेजोंके अधिकारमें आया।

ठीक उसी समय ग्वालियर राज्यमें गृहविवादका सूत्रपात हुआ था। १८३३ ई०को जनकजी स्वर्गको गये। उनकी त्रयोदश वर्षकी विधवा पत्नीने निकट-सम्पर्कीय भगीरथ राव नामक एक बालकको गोद लिया था। फिर मामा साहब नामक जनकजीके एक पितृव्य रहे। अंगरेज रेसीडण्टके साथ उनको कुछ घनिष्ठता थी। रेसीडण्टके साहाय्यसे वह भगीरथ रावके अभिभावक बन ग्वालियरमें राज्यशासन करते रहे। इधर महारानीने किसी ओर कर्तृत्व कर न सकनेसे उसीकी चेष्टा लगाई, जिससे राज्यमें विशृङ्खला आई। दो पक्ष हो गये। एक महारानी और दूसरा मामा साहेबकी ओर रहा। विवाद थोड़ेमें ही मिटा न था। शेषको राज्यके शत्रुवोंने एकत्र हो युद्धघोषणा की। गृहविवादके साथ ही साथ ग्वालियरके चतुर्दिक्‌स्थ दूसरे राज्योंकी भी शान्ति भङ्ग होने लगी। लार्ड एलेनबराने सोचा—इस अवस्थामें मनोयोगी होना उचित है, नहीं तो भविष्यत्‌में घोर अनिष्ट आनेकी सम्भावना है।

उस समय यह स्वयं ससैन्य ग्वालियरके अभिमुख अग्रसर हुये थे। २३ वीं दिसम्बरको ग्वालियरके निकट महाराजपुर नामक स्थानमें विपक्षियोंने सामना पकड़ा। अंगरेजी और ग्वालियरके सैन्यमें घोरतर युद्ध हुआ। प्रधान सेनापति गफ एवं लिटलार और मेलियाण्ट तथा डेनिस प्रभृति दूसरे अंगरेजी सेनापति उपस्थित थे। विस्तर सैन्यनाशके पीछे अंगरेज जीते। उधर अंगरेज सेनापति ग्रे साहब ग्वालियरकी दक्षिण-पश्चिम सीमा लांघ रहे थे। उसी समय १२००० महाराष्ट्र-सैन्य १४ तोपोंके साथ सुदियार नामक स्थानमें आ पहुंचा। किन्तु ग्रे साहबके सामने उसे भी परास्त होना पड़ा।

पहले अंगरेज ग्वालियरको एक स्वाधीन राज्य समझते थे। किन्तु एलेनबराने उस दिन उसे अपने करतलगत माना। ग्वालियरकी महारानी वृत्तिभोगी बनी थीं। लार्ड एलेनबराके आदेशसे ग्वालियरकी राजकीय क्षमता अंगरेजोंके हाथ आ गई। नाम मात्रको एक बालक सिंहासनपर बैठते थे। इधर एलेनबराका हृदय ग्वालियर राज्यके सम्बन्धपर व्यापृत रहा, उधर विलायतमें कोर्ट-अव-डाइरेक्टरने लाट पदके अनुपयुक्त समझ एलेनबराको भारतवर्षसे हटानेका प्रबन्ध किया। इनके अप्रकृत सोमनाथद्वारकी बात विलायतमें राष्ट्र हुई। उससे सब लोगोंने समझ लिया—एलेनबराकी अभिज्ञता विश्वासयोग्य नहीं। विशेषत: डाइरेक्टरोंने उसे भी अन्याय ही माना, जो इन्होंने सिन्धुप्रदेशके अमीरोंको दोषारोपसे सताया था। सिवा इसके सकल ही विषयोंमें डाइरेक्टरोंसे इनका मतभेद पड़ने लगा।

१८४४ ई०को २१वीं अपरेलको इङ्गलेण्डके प्रधान मन्त्री सर रावर्ट पीलने लिखा था—"गत बुधवारको महारानीने कोर्ट अव डाइरेक्टरका पत्र पाया, कि आईनके अनुसार उन्हें जो क्षमता मिली, उसी क्षमताके बल उन्होंने स्व स्व इच्छासे भारतवर्षके गवर्नर जनरलको वापस आनेका आदेश लगाया है।"

एलेनबराके मस्तकपर वज्राघात जैसा लगा था। इनकी आशा, राजनीति, विश्वास और कौशल सब व्यर्थ गया। समय न बीतते ही इन्होंने म्लानमुख विलायतको यात्रा की। वहां १८४५ ई०को यह जलयुद्ध विभागके प्रधान सचिव (First Lord of the Admiralty) हुये थे। किन्तु १८४६ ई०को एलेनबराने उक्त पद स्वेच्छासे छोड़ दिया। उसके पीछे जितने दिन यह जीये, उतने दिन पार्लियामेण्टको लार्ड सभामें कभी कभी भारतवर्षकी बात उठा

आलोचना करते रहे। १८७१ ई०के दिसम्बर मास लार्ड एलेनबरा मर गये।

एलेनाबाद—पञ्जाबके सिरसा ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° २६′ उ० और द्राघि० ७५° ५४′ पू०पर घाघरा नदी किनारे सिरसा नगरसे २३ मील पश्चिम अवस्थित है। १८६५ ई०को डिपुटी कमिश्नर मिष्टर ओलिवरने एलेनाबाद बसाया। कारण ४० वर्ष पहले बीकानेरके उपनिवेशकोंका प्रतिष्ठित खरियाल नामक ग्राम जलप्लावनसे नष्ट हो गया था। साधारण लोग इसे आज भी खरियाल ही कहते हैं। लोक-संख्या बढ़ती है। बीकानेरके साथ देशज द्रव्य और लवणका व्यवसाय चलता है। मोटा ऊनी कपड़ा बुना जाता है। म्युनिसपलिटी है। थाना और दवाखाना बना है। प्राचीन खरियालका ध्वंसावशेष घाघराके उस पार पड़ा है।

एलोर—१ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी ज़िलेकी एक तह-सील। क्षेत्रफल ७२९ वर्गमील है। इस तहसीलमें मुसलमानोंकी संख्या अधिक है। चारो ओर जंगल खड़ा है। एलोर नगरसे राजमहेन्द्री तक नहरें लगी हैं। २ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १६° ४२′ ३५″ उ० और द्राघि० ८१° ९′ ५″ पू०पर तम्मलेर नदी किनारे अवस्थित है। विजयेश्वरम्‌से निकली नहर एलोरमें बेजवारा नहरसे मिलती और गोदावरी तथा कृष्णाकी धारा एक होकर चलती है। एलोरसे चित्तपेटको गयी नहर ४० मील लंबी है। ऊनी कालीन और शोरा तैयार किया जाता है। पहले यहां उत्तर-सरकारकी राजधानी रही। असलमें एलोर वेंगी राज्यका अंश है। १४८० ई०को मुसलमानोंने इसे अधिकार किया था। विजय-नगर राज्यके उन्नतिकाल एलोर फिर हिन्दुवोंके हाथ पड़ा, किन्तु १६ वें शताब्दके आरम्भमें ही गोल-कुण्डके कुतुबशाहने इसे फिर जीत लिया था। राज-महेन्द्रीके राजपूतों और समीपस्थ देशके रेड्डियों तथा कोइयोंके सकल आक्रमण निष्फल हुये। पीछे देशी राजावों और फ्रान्सीसियोंका यहां राज्य रहा। अन्तको एलोर अंगरेजोंके हाथ आया। नगरके समीप प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष आज भी देख पड़ता है। यह दुर्ग चालुक्य राजधानी वेंगीके सामानसे बना था। इस नगरमें गरमी बहुत होती है।

एल्क (अं० पु०=Elk) हरिणविशेष, बारह सिंहा। यह युरोप और एशियामें रहता है। ग्रीवा छोटी होनेसे इसे भूमिका तृण चरनेमें कष्ट पड़ता है। वृक्षके पत्रादि खा यह जीवन धारण करता है। गमन करते समय इसका पद ठीक नहीं आता। दौड़ने और कूदनेमें बड़ी असुविधा लगती है। शरीर विशाल होता है। यह सूंघकर दूरस्थ पदार्थ समझ लेता है।

एल्व, एलवालुक देखो।

एल्वबालुक, एलवालुक देखो।

एल्ववाल्वालु, एलवालुक देखो।

एव (सं० अव्य०) इण-वन्। इणशीङ्भ्यां वन्। उण् ११५२। १ साम्य, इसीप्रकार, ऐसे। २ सादृश्य, बरा-बर। ३ अङ्गीकार, बेशक, हां। ४ नियोग, लगा-तार। ५ वाक्यपूरण। ६ दूतप्रयोग। ७ विनिग्रह। ८ अनियोग। ९ परिभव। १० ईषदर्थ। ११ अन्य-योग-व्यवच्छेद। १२ अयोगव्यवच्छेद। १३ अत्यन्ता-योग व्यवच्छेद। इसका संस्कृत पर्याय एवं, तु, पुनः और वा है। (त्रि०) १४ गमनकारी, चलनेवाला। (क्ली०) १५ गमन, चाल।

एवं (सं० अव्य०) १ साम्य, बराबर। २ सादृश्य, ऐसे ही। ३ अङ्गीकार, हां। ४ अर्थप्रश्न। ५ पर-कृति। ६ जिज्ञासा। ७ इसी प्रकार, ऐसे ही। ८ अनुप्रश्न। ९ निश्चय, बेशक। १० निर्देश।

एवंरूप (सं० त्रि०) एवं रूपमस्य, बहुव्री०। १ इस प्रकारवाला, जो इसी क़िस्मका हो। (क्ली०) २ ऐसा रूप, ऐसी ही सूरत।

एवंवाद (सं० पु०) इस प्रकारका कथन, ऐसी बात।

एवंवीर्य (सं० त्रि०) ऐसे वीर्यवाला, ऐसी ताक़त रखनेवाला।

एवंवृत्त (सं० त्रि०) ऐसा कार्य करनेवाला, जो ऐसे पेश आता हो।

एवंवृत्ति (सं० त्रि०) ऐसी वृत्तिवाला, ऐसा व्यव-हार करनेवाला, जो ऐसे चलता हो।

एवङ्कार (सं॰ अव्य॰) इस प्रकार, ऐसे ही।

एवङ्काल (सं॰ त्रि॰) ऐसे अक्षरोंके आग्रहवाला, जो ऐसे हर्फोंका जोड़ रखता हो।

एवङ्गत (सं॰ त्रि॰) ऐसी दशामें पड़ा हुआ।

एवङ्गुण (सं॰ त्रि॰) एवंगुणो यस्य, बहुव्री॰। ऐसे ही गुणसे युक्त, जो ऐसा ही वस्फ रखता हो।

एवज़ (अ॰ पु॰) १ परिवर्तन, बदला। २ प्रतिफल। ३ बदली। अन्यके स्थानपर जो किञ्चित्‌काल कार्य चलाता, वह एवज़ कहलाता है।

एवज़ी (फ़ा॰ पु॰) स्थानापन्न, किसीकी जगहपर कुछ वक़्‌तक काम करनेवाला।

एवन्दुःसह (सं॰ त्रि॰) सहन करनेको ऐसा बुरा, जो सहनेमें इसतरह खराब हो।

एवमवस्थ (सं॰ त्रि॰) इसप्रकार अवस्थित, जो ऐसे टिका या जमा हो।

एवमादि (सं॰ त्रि॰) ऐसे आरम्भवाला, जो इसतरह शुरू हो।

एवमाद्य, एवमादि देखो।

एवम्प्रकार (सं॰ त्रि॰) ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्प्राय, एवम्प्रकार देखो।

एवम्प्रभाव (सं॰ त्रि॰) ऐसी शक्ति रखनेवाला, जो ऐसा ज़ोरावर हो।

एवम्बिध (सं॰ त्रि॰) एवं विधा प्रकारो यस्य, बहुव्री॰। ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्भूत (सं॰ त्रि॰) एवं भवतीति, भू कर्तरि क्त। ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्भूतवत् (सं॰ त्रि॰) ऐसे ही पदार्थसे युक्त, जो इसी तरहकी चीज़ रखता हो।

एवम्भूमि (सं॰ स्त्री॰) इस प्रकारका स्थान, ऐसी जगह।

एवया (सं॰ त्रि॰) एव एवं अवनं वा याति, या-क्विप् पृषोदरादित्वात् साधुः। रक्षक, रखवाला।

एवयामरुत् (सं॰ पु॰) एवया रक्षको मरुद् यस्य, बहुव्री॰। एक ऋषि।

[ए]वयावन् (सं॰ पु॰) या-वनिप्, एवस्य एवम्प्रकारस्य यावा। १ रक्षक, रखवाला। २ विष्णु। ३ इसी-प्रकार गमनशील, ऐसे ही चलनेवाला।

एवार (सं॰ पु॰) एव एवम्प्रकृति, ऋ-अण्। सोमविशेष।

एवावद (सं॰ पु॰) एवमेवमावदति, एव-आ-वद-अच्। ऋक्‌विशेष।

एशिया, एसिया देखो।

एशियाई (हिं॰ वि॰) एशियासे सम्बन्ध रखनेवाला, जो एशियाका हो।

एष् (धातु) भ्वादि आत्म॰ सक॰ सेट्। "एषृ गतौ।" (कविकल्पद्रुम) गमन करना, चल देना।

एष (सं॰ पु॰) एष् भावे क्विप्। १ गति, चाल। २ इच्छा, मरज़ी। ३ अग्रवर्ती पुरुष, आगे रहनेवाला शख्स।

एषण (सं॰ पु॰) इष-ल्युट्। १ लौहनिर्मित वाण, लोहेका तीर। २ गमन, चाल। ३ अन्वेषण, खोज। ४ इच्छा, ख्वाहिश। ५ सन्नकी वृत्त।

एषणा (सं॰ स्त्री॰) इष-णिच्-भावे युच्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ प्रेरणा, तरग़ीब।

एषणासमिति (सं॰ स्त्री॰) शुद्ध भोजनका अङ्गीकार, अच्छे खानेका लेना। जैन ४२ पदार्थ दोषरहित मानते और खाते हैं।

एषणिका (सं॰ स्त्री॰) इष्यतेऽनयेति, इष-ल्युट् स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वञ्च। १ कांटा। २ अस्त्रविशेष। एषणी देखो।

एषणिन् (सं॰ त्रि॰) अन्वेषण वा चेष्टा करनेवाला, जो तलाश या कोशिश करता हो।

एषणी (सं॰ स्त्री॰) इष्-ल्युट्-ङीष्। १ स्वर्णादिके परिमाणकी तुला, सोना वग़ैरह तौलनेकी तराज़ू। २ सुश्रुतोक्त अस्त्रविशेष, एक नश्तर। इस अस्त्रको व्रणके मध्य लगा पूयादि स्राव कराते हैं। मुखदेश केंचुवेके मुख-जैसा रहता है। साधारण बोलीमें इसे सलाका कहते हैं।

एषणीय (सं॰ त्रि॰) इष वा एष-अनीयर्। १ गम्य, पहुंचने लायक़। २ विश्राव्य, नश्तर लगाने क़ाबिल। ३ वाञ्छनीय, चाहने लायक़।

एषवीर, एषावीर देखो।

एषा (सं॰ स्त्री॰) इष-अ-टाप्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ अग्रवर्तिनी स्त्री, आगेवाली औरत।

एषावीर (सं० पु०) एषायां प्रतिग्राहेच्छायां वीरः, ७-तत्। स्थानास्थान विवेचनाशून्य प्रतिग्राहक निन्दित ब्राह्मण।

एषिता (सं० वि०) इष-तृच्। अभिलाषयुक्त, चाहनेवाला।

एषिन् (सं० वि०) इष-णिनि। इच्छुक, खाहिशमन्द।

एष्टव्य (सं० वि०) इषु-तव्य। वाञ्छनीय, चाहने लायक।

एष्टा (सं० वि०) अभिलाषयुक्त, खाहिशमन्द।

एष्टि (सं० स्त्री०) आ-यज-इष वा क्तिन्। १ अभियजन। २ अभिकामना, खाहिश।

एष्य (सं० वि०) इष कर्मणि ण्यत्। १ वाञ्छनीय, चाहके काबिल। २ गम्य, पहुंचने काबिल। (क्ली०) भावे ण्यत्। ३ सुश्रुतोक्त अष्टविध शस्त्र कर्ममें एक कर्म। अभ्यन्तरस्थ शस्त्रादिके अन्वेषण करनेको ही एष्य कर्म कहते हैं। यह कर्म घुने काष्ठ, वंश, नल, नाड़ी और सूखी तोंबी प्रभृतिमें सीखना पड़ता है। ४ एषणकार्यसाध्य एक रोग।

एष्यत् (सं वि०) भविष्यत्, आयिन्दा, आनेवाला।

एष्यत्कालीय (सं० वि०) भविष्यत् काल सम्बन्धीय, आयिन्दा ज़मानेसे सरोकार रखनेवाला।

एष्या (सं० स्त्री०) आमलकी वृक्ष, आंवलेका पेड़।

एसिड (अ० पु० = Acid.) अम्ल, तेज़ाब।

एसिया—पृथिवीके चार महाद्वीपोंमें एक महाद्वीप। यह युरोप और उत्तर अफ्रीकाके पूर्वसे प्रशान्त महासागरके उपकूल पर्यन्त विस्तृत है।

अति पूर्वकालको इस महाद्वीपका नाम एसिया न रहा। उस समय इस विस्तीर्ण भूमिखण्डको आर्य ऋषि सुदर्शन अथवा जम्बुद्वीप कहते थे। एसिया नाम यवन-प्रदत्त है। युरोपीय भूगोलवेत्ता बताया करते, कि वर्तमान एसिया-माइनरके एक छोटे ज़िलेको पूर्वकाल 'एसिया' कहते थे। ग्रीस देशके यवन इसी स्थानसे पूर्वकी ओर विजयको अग्रसर हुये। एसिया-माइनरकी पूर्व ओर उन्होंने जो देश या स्थान खोज और जीत पाया, उस समस्त भूभागका नाम 'एसिया' बताया था। काल पाकर यह विस्तीर्ण महाद्वीप एसिया नामसे प्रसिद्ध हो गया। एसिया नाम नितान्त आधुनिक नहीं। ग्रीसके आदिकवि होमरने इस नामका उल्लेख किया है।

किसी-किसी ग्रीक-भाषावित् पण्डितके कथनानुसार होमरने जिस 'एसियास्' शब्दका उल्लेख किया, उसके पाठसे बोध न हुआ—एसिया नामक कोई भूभाग उनका समझा था। उन्होंने 'एसियास्' (Asias) नामसे लिदीय देशके राजाका उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध पर हम वादानुवाद करना नहीं चाहते। सत्य असत्यका विचार युरोपीय पण्डित ही करेंगे। फिर ग्रीसके प्राचीन कवि हिसियदके पुस्तकमें भी एसिया नाम मिलता है। उनके मतसे एसिया किसी अप्सराका नाम है। यह ओसिनस् (Oceanus) एवं टैथिस (Tethys) की कन्या और प्रमिथियस् (प्रमन्थ) की भार्या रहीं। हिरोदोतासने लिखा—ग्रीक लोगोंके मतसे प्रमिथियसकी पत्नीके नामानुसार एसिया खण्डका नाम पड़ा है। किन्तु लिदीयन यह मत नहीं मानते। उनके कथनानुसार कोटिस (Cotys) पुत्र एसियास् (Asias)-से एसिया नाम चला है। अपना मत सप्रमाण करनेको वह सार्दिशको एसियान जातिका उल्लेख किया करते हैं। (Herodotus Melpomene, XLV.) ऐतिहासिक ष्ट्रेबोके मतमें लिदीयाका प्राचीन नाम एसिया है। अनेक अनुसन्धान पीछे भाषाके तत्त्वविदोंने निश्चय किया,—एसिया शब्दका अर्थ सूर्य एवं एसियान शब्दका अर्थ सूर्यलोकवासी अर्थात् पूर्वदिक्वासी है।

देखना चाहिये—प्राचीन ग्रीक और रोमक एसियाका विषय कैसा समझते थे। होमरकी वर्णनासे समझ पड़ता—ट्रय युद्धसे बहुत पहले एसिया और युरोपमें संस्रव था। किन्तु उक्त सम्बन्ध बन्धुभाव नहीं, वीरतर प्रतिद्वन्द्विता और विषम शत्रुभावका आदर्श रहा। प्राचीन ग्रीक एसिया-माइनर तक जानते थे। उसी स्थानमें जा आयोनीय ग्रीक उपनिवेश करते थे। वही प्राचीन हिन्दुवोंके निकट यवन-जैसे परिचित रहे।

ईसा-मसीहके जन्मसे ५५० वर्ष पहले पारस्य-

साम्राज्य स्थापित हुआ था। उस समय पश्चिम भूमध्यसागर, पूर्व बेलुरताघ पर्वत, उत्तर कास्पीय सागर और दक्षिण सिन्धुनदके मध्यवर्ती समुदय स्थानको पारस्य साम्राज्य कहते थे। लिदीया राज्य पारस्यके प्रकोपसे ध्वंस हुआ। निरुपाय एवं असहाय ग्रीक यवनोंने पारस्यकी अधीनता स्वीकार की थी। उस समयसे वह अधीन प्रजाकी भांति आ एसिया खण्डका अनुसन्धान लेने लगे। ग्रीक यवनोंने ही अनेक स्थानोंमें जा उनका विषय समझा था। किसी किसी स्थानका मानचित्र पर्यन्त अङ्कित हुआ। ग्रीक ऐतिहासिक हिरोदोतास्का पुस्तक पाठ करनेसे पारस्य साम्राज्य-सम्बन्धीय भूवृत्तान्त समझ पड़ता है। हिरोदोतास्ने साम्राज्यके वहिर्भूत सकल देशोंका विषय बहुत नहीं लिखा; फिर भी जो कुछ लिखा, वह भ्रमपूर्ण है।

समसामयिक जिनोफनने सम्राट् काइरसके साथ रह पारस्य साम्राज्यका अनेक विवरण संग्रह किया था। उनके बनाये ग्रन्थमें उसका विलक्षण परिचय मिलता है। महावीर सिकन्दरने एसिया खण्डके अनेक देश जीते थे। उन्होंने जिस विस्तीर्ण भूभागके मध्यसे युद्धयात्रा की, डिग्नियाकेस नामक उन्हींके समर-सहचरने एक मानचित्र खींच उसके देश, प्रदेश, नगर, ग्राम, नद प्रभृतिकी वर्णना दी है। उसी समय सिकन्दरने अपने नौ-सेनापति नियार्कासको सिन्धु नदके मोहनेसे इउफ्रेतिस नदीको भेज दिया। उन्हीं नौ-सेनापतिकी जलयात्रामें ग्रीक लोग अनेक स्थानका भूवृत्तान्त जान सके।

फिनिसीय अतिपूर्वकालसे ही एसिया-खण्डके समुद्रतीरस्थ अनेक स्थानोंको वाणिज्यके उद्देश्यपर यातायात करते थे। युरोपकी प्राचीन जातियोंमें फिनिसीयोंको अधिक परिमाणसे एसियाखण्डके नाना देशोंका विषय अवगत था। उसी पूर्वकालको वह जिस जिस देश जाते आते, उसका विवरण मातृभाषामें लिपिबद्ध कर बना लाते। उसी समय टायर नगरमें फिनिसीय वणिकोंका वाणिज्य-भाण्डार था। मकदूनिया-वीरके टायर नगर ध्वंस करनेपर वणिक् अलेक्सन्द्रिया नगरमें जा बसने लगे। उनसे एसिया खण्डके प्रधान बंदरोंका संवाद सुन अनेक ग्रीकवणिक् जलपथसे गमनागमन किया करते थे। क्रमशः इजिप्टके लोग भी जलपथसे मलवार, सिंहल प्रभृति जनपदोंमें पहुंच वाणिज्य चलाने लगे। किन्तु वह सिंहल लांघ वङ्गोपसागरमें घुसनेको साहसी न हुये। सिंहलवासियोंसे उन्हें कलिङ्ग प्रभृति भारतके पूर्व उपकूलस्थ जनपदोंका सन्धान मिला था। उन्हीं वणिकोंने इजिप्टके ग्रीक लोगोंको रत्नप्रसू भारतवर्ष और सिंहल द्वीपका परिचय दिया।

सिकन्दरके पीछे सिरीय अधिपति सलूकस् निकेतर गङ्गा नदीके तीरस्थ सकल जनपद अधिकार करनेको प्रयासी हुये। उन्होंने मेगेस्थिनिस नामक एक व्यक्तिको मगधराज चन्द्रगुप्तकी सभामें दूतकी भांति भेजा था। उस समय भारतवर्षके अधिकांश स्थान चन्द्रगुप्तके अधिकारमें रहे। मेगेस्थिनिस्ने बहुत दिन मगधकी राजसभामें रह भारतवर्षके जनपदादिका विवरण संग्रह कर एक भूवृत्तान्त बनाया। ग्रीक लोग वही पुस्तक पढ़ भारतवर्षका विवरण कुछ-कुछ समझ सके।

ग्रीकोंने एसियामें आ अनेक नगर और जनपदादिका नाम अपनी भाषामें रखा था। फिर रोमक प्रबल हो ग्रीकोंका प्रतिष्ठित सकल राज्य ध्वंस करने लगे। उस समय इउफ्रेतिस और ताइग्रीस नदीके उपकूल-प्रदेशसे अरमेनियाकी पर्वतमाला तक रोमक साम्राज्यभुक्त हुआ था। मिथ्रिदतेससे लड़ते समय रोमक सैन्यदल काकेसस पर्वतपर आ पहुंचा। पहले इस अञ्चलका विषय कोई समझता न था। उन्होंने क्रमागत कास्पीय सागरके तीर आ कर सुना—यहां एक विस्तृत पथ पड़ता, जिस पथसे भारतवर्षके साथ वाणिज्यादि चलता है। वहीं दूसरे पथका भी अनुसन्धान लगा था। उसी पथसे समस्त मध्य एसियाका गतिविधि रहा। वह पथ खग्रवरके निकट अद्यापि विद्यमान है। इसी प्रकार रोमक एसियाखण्डके अनेक स्थान अवगत हुये। पीछे ग्रीक और रोमकने भौगोलिकोंने पूर्व एवं नव-संग्रहीत एसियाका विवरण

एकत्र कर भूगोल प्रचार किया। उनमें अनेकोंके पुस्तक लोप हो गये हैं। केवल ष्ट्रेवो, प्लिनि एवं टलमि प्रभृति लोगोंके ग्रन्थ हमें देखनेको मिलते हैं। टलेमिसे पहले पाश्चात्य प्राचीन भौगोलशास्त्रज्ञ भारत-महासागरके पूर्वांशस्थित द्वीपसमूह एवं पाश्चात्य महासागरके निकटवर्ती किसी द्वीपका विषय जानते न थे। टलेमिके ग्रन्थमें उनसे कई द्वीप उक्त हैं।

उसके परवर्ती कालपर मुसलमान एसियाका भू-वृत्तान्त संग्रह करनेको यत्नवान् हुये। जब मुहम्मद और उनके शिष्यगणके प्रभावसे एसियावाले अनेक स्थानोंके लोगोंने इसलाम धर्म पकड़ा, तब नूतन धर्मसे दीक्षित व्यक्ति मात्रने मक्काके दर्शनको अति पुण्यकर्म समझा था। इसीसे कितने ही लोग दूर देशान्तरसे पथ पर्यटन कर मक्के जाते रहे। गमनकालको अनेक नूतन स्थान उनकी दृष्टिमें पड़ते थे। विचक्षण व्यक्ति उन स्थानोंका विवरण संग्रह कर लेते। आजकल उनके ग्रन्थ भी लुप्तप्राय हैं। फिर जो हैं भी, उनका संग्रह करना दुष्कर देखते हैं। इन सकल ग्रन्थोंमें इब्न हैकल, एद्रिसी, इब्न बतूता प्रभृति कई लोगोंके ग्रन्थ ही हमें पढ़नेको मिलते हैं। विशेषत: इब्न बतूताके भ्रमण-वृत्तान्तमें रूस राज्यके यूराल पर्वतसे दक्षिणको सिंहल द्वीप पर्यन्त अनेक स्थानोंका भूवृत्तान्त लिखा है। भिनिस-देशीय प्रसिद्ध भ्रमणकारी मार्को-पोलो ई० १३श शताब्दको मुगल-सम्राट् कुबलाई खान्की राजसभामें बहुत दिन रहे। वह उक्त सम्राट् द्वारा दूतरूपसे एसियाके नाना स्थानोंको भेजे गये थे। उन्होंने तातार, मङ्गोलिया, चीन, जापान, तिब्बत, पेगू, बङ्गाल, महाचीन, सप्तद्वीपपुञ्ज, सिंहल, मलय-वर, अर्मज, अदन प्रभृति नाना स्थानोंका विवरण लिखा है। वर्तमान युरोपीय भौगोलिक उन्हींको समग्र एसिया महाद्वीपका आविष्कारकर्ता बताया करते हैं। उसके पीछे पोर्तुगीज, दिनेमार, ओलन्दाज, फ्रान्सीसी और अंगरेज क्रमान्वयसे एसियामें आने लगे। उन्होंने नाना स्थान अधिकार किये, नाना स्थानोंमें उपनिवेश बसाये और अनेक स्थानोंके भू-वृत्तान्त लिखे।

सीमा—एसियाके उत्तर उत्तर-महासागर, पूर्व प्रशान्त-महासागर, दक्षिण भारत-महासागर और पश्चिम युरोप, कृष्णसागर, आर्किपेलेगो, भूमध्यसागर एवं लोहितसागर है। उत्तर-पूर्वके प्रान्त-भागपर वेरिङ्ग प्रणाली द्वारा कामस्कटका और उत्तर-अमेरिका स्वतन्त्र हुआ है। इसी प्रकार दक्षिण-पश्चिम सुयज नहर द्वारा एसिया और अफरीकामें प्रभेद पड़ा है। भारत-महासागरीय द्वीप एकत्र कर लेनेसे समस्त एसिया खण्ड प्राय: चतुष्कोण देख पड़ता है। भूमिका परिमाण कोई १६८१८००० वर्गमील और लोकसंख्या ३०२००००००० है।

यह महादेश अपर सकल महाद्वीपोंसे आयतनमें जैसे वृहत्, वैसे ही जलवायु, स्वास्थ्य और उर्वरता प्रभृतिमें भी श्रेष्ठ है। एसियाका प्राकृतिक दृश्य अन्यसे भिन्न लगता है। इसकी आकृति अफरीका, युरोप और अमेरिकासे नहीं मिलती।

मध्यभागकी समतलभूमि समुद्रतलसे अधिक उच्च है। फिर समतल भूमिकी चारो ओर निम्न भूमि और वीच-वीच पर्वतमाला विद्यमान है। पर्वत अति उच्च एवं वृहत् होते भी समतलभूमिके आयतनानुसार छोटे ही समझ पड़ते हैं। एसियाकी अन्तर्निविष्ट समतलभूमि कहीं निम्न और कहीं उच्च है। पूर्वभागमें तिब्बतकी उर्वरा भूमि और गोबीकी मरुभूमि ४०००से १०००० फीट तक ऊंची पड़ती है। पश्चिमांशमें ईरानकी उर्वरा भूमि ४००० फीटसे अधिक उच्च नहीं। उक्त समतलभूमिसे उत्तर-पश्चिम टरस, काकेसस् एवं एलवर्ज पर्वत और कास्पीय-सागरकी ढालू भूमि है। उत्तर साइवेरियाका अलटाई पर्वत और उत्तर-पश्चिम दौरिया नामक पार्वत्य प्रदेश है। पूर्व चीनराज्य-मध्यवर्ती तुषार गिरिमाला तथा दक्षिण हिमालय खड़ा है। पश्चिम बलूचिस्थानकी गिरिमाला और पारस्योपसागरका निकटस्थ जगस पर्वत है। जगस पर्वत क्रमश: उत्तर-पश्चिम मुख जा टरस और आर्मिनस गिरिशृङ्गसे मिला है। इसी स्थानसे ताइग्रीस और यूफ्रेतिस नदी निकली है। समतलभूमिसे दक्षिणस्थ हिमालय गिरि पृथिवीके

सकल पर्वतोंसे उच्च है। यथा—धवलगिरि २७६००, काञ्चनशृङ्ग २८१७८, गोसाईंस्थान २८७००, यमुनोत्तरी २५६६८, नन्दादेवी २५६८३, चमलारि २३८२८, जेमिनि २१६०० और पृथिवीके मध्य उच्चतम शृङ्ग देवडङ्ग २९००२ फीट ऊंचा है।

एसियाके उत्तरांशमें साइबेरिया नामक विस्तीर्ण समतल भूमि है। यह स्थान समस्त युरोपखण्डकी अपेक्षा बड़ा है।

ईरानकी उर्वरा भूमि तीन भागोंमें विभक्त है—ईरान, अरमेनियाका पार्वत्यप्रदेश और एनाटोलियाकी समभूमि। प्रथम भाग अर्थात् ईरान ३०० फीट उच्च है। अधिकांश भूमि कंकड़ और बालूसे भरा लवणक्षेत्र है। चारो ओर गिरिमाला प्राचीर रूपसे वेष्टित है। द्वितीय भागमें अरमेनियाका गिरिराज्य, कुर्दिस्थान और अजरविजान है। इसी भूभागमें प्रसिद्ध आराराट पर्वत पड़ा है। तृतीय भागमें एनाटोलिया है। यह भूभाग कृष्णसागरकी तटस्थ पर्वतमालासे दक्षिण-पश्चिम टरस पर्वततक गिरिशृङ्ग द्वारा सीमाबद्ध है। कृष्णसागरके निकटस्थ कोई कोई स्थान वनादिसे परिवृत देख पड़ता है।

भारतवर्षके दक्षिणापथकी उर्वराभूमि १५००से २००० फीट तक उच्च है। यह पश्चिम मलयवर उपकूलसे पश्चिमघाट पर्वत द्वारा विभक्त है। इसके अतिरिक्त भारतमहासागरीय द्वीपपुञ्जमें भी उर्वराभूमि मिलती है।

एसियामें छह निम्नभूमि प्रधान हैं। १म उत्तरकी साइबेरियाकी निम्नभूमि है। यह अलटाई और यूराल पर्वतके उत्तरांशसे आरम्भ हो उत्तर-महासागरके उपकूल पर्यन्त विस्तृत है। अनेक स्थान शीतप्रधान, अन्धकारमय और ऊषर हैं। २य बुखारकी निम्नभूमि कास्पीय सागर और आराल ह्रदके मध्य है। इस भूभागमें केवल कंकड़ भरा है। ३य सिरीय और अरबी निम्नभूमि है। दक्षिण अंश शुष्क मरुभूमि देख पड़ता, किन्तु उत्तरांशमें यूफ्रेतिस और ताइग्रीस नदीका जल मिलता है। ४र्थ भारतवर्षकी निम्नभूमि है। इसके मध्य ४०० मील विस्तृत मरुस्थली एवं वङ्गदेशका विस्तृत उर्वर क्षेत्र है। ५म काम्बोज, श्याम और ब्रह्मराज्यका इरावती-प्रवाहित भभाग है। ६ष्ठ चीनकी निम्नभूमि प्रायः २१०००० वर्गमील है। यह पेकिन नगरके पूर्वसे आरम्भ हो दक्षिणकी कर्कटक्रान्ति पर्यन्त विस्तृत और अतिशय उर्वरा है। चीना इस स्थानको जगत्‌का उद्यान कहा करते हैं।

एसियाखण्डमें निम्नलिखित देश और तदन्तर्गत प्रधान नगरादि विद्यमान हैं।

तुरुष्क या तुर्की—स्मिरना, आलेपो, दामास्कस, जेरूसलम, वगदाद, मोसल, बसरा, ट्रेविजण्ड।

अरब—(तुरुष्कअधिकृत) मक्का, मदीना, जेद्दा।

„ (स्वाधीन) मस्कट, अदन, मोचा, रियाध, दराया।

अफगानिस्थान—काबुल, कन्दहार, हिरात, बदखशान्।

बलूचस्थान—खिलात।

भारतवर्ष—कलकत्ता, बम्बई, मन्द्राज, मुरशिदाबाद, ढाका, पटना, काशी, अलाहाबाद, कानपुर, लाहोर, सूरत।

ब्रह्म—मन्दालय, आवा, अमरपुर, रङ्गून, मर्तबान, मोलमीन, मारगूई, मलय, सिङ्गापुर।

श्याम—बङ्काक।

काम्बोज—सैगान।

आनाम—ह्वि, केशो।

खेमस—लञ्चन।

चीन—पेकिन, नानकिन, सङ्घाई, निङ्गपो, आमय, काण्टन।

तिब्बत—लासा।

स्वाधीन तातार—बोखारा, खीवा, खशघर, इरकन्द, खुतन।

रूस (साइबेरिया)—तोबलस्क, इर्कटस्क, समरकन्द, खूकन्द, वटम, कारस, आर्दाहान।

जापान—जेडो, योकोहामा, टोकिओ।

फिलिपाइन द्वीपपुञ्ज—मानिल।

यवद्वीप—बटविया।

सुमात्रा—आचीन।

प्रत्येक देशका विस्तारित विवरण अपने अपने शब्दमें देखो।

अन्तरीप—वैरिङ्ग प्रणालीके निकट पूर्व अन्तरीप, साइवेरियाके उत्तर सेवेरो, कामस्काट्काके दक्षिण लोपटका, चीनके पूर्व निङ्गपो, आनामके दक्षिण कम्बोडिया, मलयके दक्षिण रोमानिओ, भारतवर्षके दक्षिण कुमारी, अमर्ज प्रणालीके मध्य मसिन्दम और अरबके पूर्व रसूलहद अन्तरीप है।

द्वीप—साइप्रस, रोड्स, बोरनिओसे पूर्व सेलिबिस, सेलिबिससे पूर्व मलक्कास या स्पाइस द्वीप, बोरनिओसे उत्तरपूर्व मानिल्ला द्वीपपुञ्ज, भारतमहासागरमें बोरनिओ, यव एवं सुमात्रा, भारतवर्षसे दक्षिण सिंहल, बङ्गोपसागरमें आन्दामान तथा निकोबार, भारतवर्षसे दक्षिण-पश्चिम लाक्षा एवं मालद्वीप, चीनसे दक्षिण हेनान तथा हङ्गकङ्ग, चीनसे पूर्व फरमोसा, चुसाम, एवं लुचुद्वीप, चीन तातारसे पूर्व जापान तथा कामस्काटकाके मध्य क्यूराइल और नव-साइवेरिया।

उपद्वीप—एसिया माइनर, अरब, भारतवर्ष, पूर्व-उपद्वीप, मलय प्रायोद्वीप, कोरिया और कमस्काटका।

पर्वत—यूराल, काकेसस, अरमेनियान, टरस, लेबेनन, होरेब, सिनाई, एलवर्ज, हिन्दूकुश, कोहबाबा, हिमालय, काराकोरम, पामीर, चीन-गिरिमाला, तियानसन, अलटाई और यबलोनई।

ह्रद—कास्पीय, आरल, लवनर, बलकस, वैकाल, मरु, वाण, उरमिया और पलटी।

नदी—जक्सर्तेस (साइहूण), ओकसस (आमू), लेना, ओबी, एनिसी, युफ्रेतिस, टाइग्रिस, गङ्गा, सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र नद, इरावती, सेलुएन (थेलुएन), मिनाम, कम्बोडिया, ह्योयाङ्गहो, इयङ्गसिकियङ्ग पिहो, चुकियाङ्ग (कण्टन) और आमूर (सेघेलियन)।

विदेशीय अधिकार—आजकल एसियाके नाना स्थान विदेशियोंने अधिकार किये हैं। भारतवर्ष, ब्रह्म, पिनाङ्ग, मलय, सिङ्गापुर, आण्डामान, निकोबर, सिंहल, लेबुआन द्वीप, अरबका अदन बन्दर, पेरिम द्वीप, हङ्गकङ्ग और साइप्रस द्वीप अंगरेजोंके अधिकारमें हैं। फ्रान्सीसी दक्षिण कम्बोज और भारतवर्षके पण्डिचेरी, माही, तथा चन्दननगरको दबाये हैं। सुमात्राके दक्षिणांश, यव, सेलिबिस और मालाकास द्वीपपर ओलन्दाजोंका अधिकार है। भारतवर्षके गोवा और पञ्जीमपर पोर्तुगीज अधिकार रखते हैं। फिलिपाइन द्वीपपुञ्जको अमेरिकाने स्पेनसे लड़के छीन लिया है।

एसियाखण्डमें नानाप्रकार उद्भिद् और जीवजन्तु देख पड़ते हैं। साइवेरिया, चीन, भारतवर्ष, पारस्य, अरब प्रभृति शब्दमें अपने-अपने देशके उद्भिद और जीवजन्तुका विवरण देखो।

जाति—एसिया खण्डमें नाना जाति यां बसती हैं। युरोपीयोंने इन जातियोंको तीन प्रधान श्रेणियोंमें बांटा है—मोगलीय, आर्य और सेमेतिक।

आर्य, मोगलीय और सेमेतिक शब्द देखो।

फिर इन जातियोंकी भाषाके उच्चारणानुसार दूसरे भी कई विभाग हो गये हैं।

१म तिब्बत, चीन, जापान, कोरिया और पूर्व-उपद्वीपके उत्तरांशमें जो जातियां रहती, वह एकाक्षर भाषा व्यवहार करती हैं। २य मध्य एसिया तथा उत्तरांशमें कुछ दूरतक तुरुष्क, मुग़ल और तुङ्गस जातिका वास है। इनकी भाषामें अरबी अक्षर और अनेक अरबी शब्द चलते हैं। ३य कमस्काटकाकी रहनेवाली सोमाइद जाति एक प्रकारकी स्वतन्त्र भाषा व्यवहार करती है। ४र्थ भारत-महासागरीय मलय एवं पलिनिसीय जातिमें मलय अथवा मलयमिश्रित भाषा चलती है। ५म आर्य जातिकी मूल भाषा संस्कृत है। कोई-कोई पारस्य अथवा अरमनी मिश्रित भाषा बोलती है। ६ष्ठ काकेसस जातिकी भाषाका तत्त्व आज भी भली भांति समझमें नहीं आया। ७म दाक्षिणात्य जाति तामिल, कनाड़ी, तेलङ्ग और सिंहली भाषासे अपना काम निकालती है। ८म सेमेतिक जातिमें यहूदी और अरबी भाषाका व्यवहार है।

धर्म—एसियाखण्डमें जैसे नाना जातिका वास, वैसे ही नाना धर्मका प्रचार भी है। भारतवर्षवासी ब्राह्मणधर्मावलम्बी हैं। चीनके लोग बुद्ध, कनफुची और लाओचीकी उपासना करते हैं। तिब्बतके बौद्ध दलाई लामाके पूजक हैं। अरब, ईरान और भारतवर्षके मुसलमान इसलाम धर्मको मानते हैं। अरमेनिया, सिरीया, कुर्दिस्थान और भारतवर्षके ईसाई

खृष्टीय धर्मावलम्बी हैं। साइबेरियावाले ग्रीक मतको मानते हैं। एसियाके उत्तरप्रान्तवासी जड़ोपासक हैं। हिन्दू, बौद्ध, लामा, मुहम्मद प्रभृति शब्द देखो।

पृथिवीके मध्य एसियाके लोग प्रथम सुसभ्य हुये थे। उनमें आर्योंने ही गणनातीत कालसे समधिक उन्नति और समृद्धि लाभ की है। आर्य देखो।

इतिहास—चीनने एसियाके पूर्वांश और जापानको सभ्यता बनाई है। किन्तु मङ्गोलिया, तिब्बत, श्याम, कम्बोडिया और ब्रह्मदेशपर भारतीय सभ्यताका प्रभाव अधिक पड़ा है। फिर भारतके बौद्ध धर्मने चीनको भी अपने हस्तगत कर लिया है। इसलामका प्रभाव चीनपर अधिक नहीं पड़ा। पहले बाबिलोनिया और सिरीयामें अधिक उन्नति हुई थी। किन्तु ई०से ७०० वर्ष पहले उसका ह्रास हुवा और पारस्य साम्राज्य बन चला। ई० ७म शताब्द तक उक्त साम्राज्य समृद्ध रहा, पीछे मुसलमानोंने अपना उद्भव किया। एसियामाइनरके हिताइत और अलोरोदियोंका हाल मालूम नहीं।

ई०से ४००० वर्ष पहले सेमाइट बाबिलोनियाको आक्रमणकर राजा बने थे। प्राय: ई०से २२८५ वर्ष पहले बाबिलन नगर खम्मूरबीकी राजधानी रहा। ई०से ८०० या ९०० वर्ष पहले असूरीयोंने बाबिलनके अधीन अपनी बड़ी उन्नति की। किन्तु ई०से ६०६ वर्ष पहले ईरानियोंके सम्मुख उन्हें नीचा देखना पड़ा था।

सम्भवत: ई०से ३००० वर्ष पहले चीना पश्चिमसे आ होआङ्ग्‌हो नदी किनारे चीनमें पहुंचे थे। ई०से २२० वर्ष पहले वर्तमान चीन-साम्राज्य सङ्गठित हुआ। फिर तातारोंसे विवाद चलते रहा। बीच-बीच यह साम्राज्य टूट-फूट जाता था। किन्तु हान और सुङ्गवंशने इसे दो बार जोड़-जाड़ ठीक किया। ई०के १३वें शताब्द मुगल कुबलाई खानने चीनको जीता था। १०० वर्षसे कम राज्यकर मुगल वंश मिङ्गोंके अधीन हुआ। फिर १६४४ ई०को मञ्चुवोंने मिङ्गोंको दबा अपना अधिकार जमाया था।

जापानमें पहले ऐन्टू रहते थे। ई०के ६ठ शताब्द वहां चीन-सभ्यता और बौद्ध धर्मका प्रभाव पड़ा। ई०के ७म शताब्द जापानियोंका वैभव बढ़ा था। प्रथमत: फुजीवारा वंश उन्नत हुआ, फिर तैरा और मिनामोतो लोगोंमें विवाद होते रहा। ११९२ ई०को मिकादो नाममात्रको राजा बने, किन्तु मुख्य अधिकारी वीरवर शोगुन थे। जापानपर कभी किसी विदेशीयने आक्रमण नहीं किया। कुबलाई खानका आक्रमण व्यर्थ गया था। २०० वर्ष तक शोगुनके वंशजोंने राज्य किया। उन्होंने कलाकौशलको बड़ी उत्तेजना दी थी। ई०के १६ वें शताब्द पचास वर्ष तक अराजकता की धूम रही। पोर्तुगीज जापानमें जा पहुंचे थे। फिर हिदेयोशी नामक एक जापानी साहसिकने कोरिया विजय किया और चीनके आक्रमण पर भी ध्यान दिया। १६०३से १८६८ ई०तक ईयशूने जापान की धार्मिक और सामाजिक स्थिति सुधारी थी। डचोंके अतिरिक्त सकल विदेशियोंको जापान जानेका निषेध रहा। १८५४ से १८५८ ई० तक यूनाइटेड ष्टेटस और युरोपीय शक्तियोंने जापानमें व्यवसाय करनेको अपना स्वत्व दिखाया था। गृह-विवाद बढ़ने पर मिकाडोको पुनरधिकार मिला। १८९५ ई०को जापानने चीनको परास्त किया और दश वर्ष पीछे रूसको भी हरा दिया। जापानमें रहनेवाले विदेशियोंको जापानी क़ानूनके अनुसार ही चलना पड़ता है। जापान मुसलमानोंके आक्रमणसे अलग रहा है।

कोरियामें भारतीय और चीना दोनों वर्णमालायें चलती हैं। चीन और कोरियाकी भाषा तथा रीति-नीतिमें प्रभेद है। ई०के १६वें शताब्द जापानियोंने कोरिया को अधिकार किया था, किन्तु १८९५ ई०को कोरिया स्वतन्त्र हुआ।

भारतमें असभ्य आदिम अधिवासी कोल एवं सन्थाल, द्राविड़ तमील-कनाड़ी और आर्य तीन प्रकारके लोग रहते हैं। गौतम बुद्धके अभ्युदयसे ब्राह्मणोंका प्रभाव घट गया था, किन्तु शङ्कराचार्यने बौद्ध धर्मको बाहर निकाल उसे फिर अक्षुस किया। ई०से ३२६ वर्ष पहले सिकन्दरने पञ्जाबपर आक्रमण मारा, किन्तु

कोई फल न पाया। अशोकके समय मौर्य साम्राज्य अफगानस्थानसे मन्द्राज तक विस्तृत था। ५० ई० कनिष्कने भारत आक्रमण कर उत्तर भारत और कश्मीरमें राज्य जमाया। गुप्त साम्राज्य ई०के ५म शताब्द उत्तरीय प्रतिवासियोंके आक्रमणसे भङ्ग हुआ था। ६०६ से ६४६ ई०तक उत्तरभारतमें हर्षका राज्य रहा। कन्नौज नगर उनकी राजधानी था। ७१२ ई०के समय अरबियोंने सिन्धु विजय किया। फिर ई०का ११श शताब्द समाप्त होते समग्र उत्तर-भारत मुसलमानोंके अधीन हुआ था। मुसलमानी राजधानियोंके निकट इसलाम धर्म खूब चला, किन्तु राजपूताने और मन्द्राजमें हिन्दू धर्म जैसेका तैसा बना रहा। १५२६ ई०को मुग़लोंने दिल्लीका सिंहासन छीन लिया। अकबर और शाहजहां बादशाह बड़े नामी हो गये हैं। १७०७ ई०को मुग़ल साम्राज्यकी अवनति हुई। मध्य भारतमें मराठोंका प्रभाव बढ़ा था। फिर धीरे-धीरे अंगरेजी राज्य स्थापित हुआ। भारतका प्राचीन इतिहास बहुत कम मिलते भी इसमें कोई सन्देह नहीं, कि भारतीय धर्म, साहित्य और शिल्पने ईरानसे जापान तक समग्र एसिया खण्डपर अपना प्रभाव डाला है। भारतवर्ष देखो।

ईरानियोंकी भाषा और धर्मप्रवृत्ति वैदिक आर्यों से मिलती जुलती है। ई०से बहु शताब्द पहले जरथुस्त्रने ईरानी धर्मको सुधारा था। उसी समय ईरान (पारस्य) असिरीयाकी अधीनतासे भी छूट गया। ई० ६ष्ठ शताब्दसे ईरानी अपने आसपासके राज्य जीत एक साम्राज्य बनाने लगे। बाबिलोनीयोंसे सन्धिकर उन्होंने निनेवेह्‌को विनाश किया था। ५० वर्ष पीछे काइरसने बाबिलन ले लिया। उनके वंशज २०० वर्ष तक राज्य करते रहे। उक्त साम्राज्य पूर्व ओक्सस एवं सिन्धुसे पश्चिम थ्रेस और दक्षिण मिसरतक विस्तृत था। ई०से ३२८ वर्ष पूर्व सिकन्दरने ३य दारयूसको जीता। सलूकी नामक ग्रीक राजवंशने पारस्य शासन किया। बक्ट्रिया स्वतन्त्र हुआ था। ई०से २५० वर्ष पूर्व खुरासानमें असंकेसियोंके अधीन पारथीय साम्राज्य चल पड़ा। पारथीयोंने रोमकोंका सामना सफलतापूर्वक किया और भारतसे सिरीयातक अपना प्रभाव फैला दिया। किन्तु ससानीयोंने उन्हें नीचा देखाया और ४ शताब्दतक राज्य चलाया था। उन्होंने जरथुस्त्रीय धर्म प्रतिपालन और पूर्व रोमक साम्राज्यसे युद्ध सम्पादन किया। ई०के ७वें शताब्द हेरेक्लियस्‌ने उन्हें हराया था। फिर कुछ दिन पीछे ही मुसलमानोंने उनको विनाश किया और ईरानमें इसलाम धर्म चला दिया। अब्बास शाहके समय (१५८५-१६२८ ई०) ईरानमें एकता और समृद्धि बढ़ी थी। किन्तु अफ़गानोंका आक्रमण होनेसे फिर विशृङ्खला पड़ी। १७८८ ई०से तुर्कोमन वंशका राज्य हुआ।

यहूदी अरबियोंसे मिलते जुलते हैं। वह एक जगह न बस इधर-उधर घूमते फिरते थे। फिर मिसरके किनारे यहूदी जा कर कुछ दिन ठहरे। ई०से १३०० वर्ष पूर्व वह मिसरसे उत्तरको भागे थे। सुलेमानके अधीन उन्होंने एक छोटा राज्य स्थापित किया, किन्तु असिरीया और बाबिलनके आक्रमणोंने उसे टिकने न दिया। ई०से ७२० वर्ष पूर्व शालमनेजरने उत्तर राज्य मिटाया और यहूदियोंको वहांसे मार भगाया। फिर यहूदियोंका कहीं पता लगा न था। ई०से ५८८ वर्ष पूर्व नेबूकदनेजर यहूदियोंको बन्दी बना ले गये। किन्तु ई०से ५३८ वर्ष पूर्व ईरानके बाबिलोनिया जीतनेपर उन्हें पलेस्ताइन लौटनेकी आज्ञा मिली। बाबिलोनिया बहुत दिनतक यहूदियोंका केन्द्रस्थल रहा। ७० ई०को टीटसने जेरूसलमका मन्दिर तोड़ा था। धीरे धीरे यहूदी सिरीया, एसिया-माइनर, ग्रीस और इटलीमें बस गये। फिर उनका प्रसार समग्र युरोपमें हुआ। ई०के १५वें शताब्द स्पेनसे निकाले जानेपर यहूदी पूर्वकी ओर बढ़े। आजकल पूर्व युरोपमें सबसे अधिक यहूदी देख पड़ते हैं। एसियावासियोंके साथ अधिक मेलजोल होते भी यहूदी युरोपीयोंके साथ रहना पसन्द करते हैं।

इसलामके अभ्युदयसे पहले अरबियोंका कोई इतिहास नहीं मिलता। उनमें ईरानी, ईसाई और यहूदी सभ्यता आ गई है। मुसलमानोंका अभ्युदय होनेसे अरबी भी चढ़े बढ़े। उन्होंने पूर्वमें भारत एवं

मध्य-एसिया और पश्चिममें स्पेन तथा मोरोको पर सफलतापूर्वक आक्रमण मारा था। पास ही पूर्वमें दामास्कसके उमय्यद और बग़दादके अब्बासी खलीफ़े बड़े बली रहे। किन्तु कोई प्रधान साम्राज्य न था। कुछ लोग स्वाधीन बन बैठे और कुछ तुर्कोंके अधीन हुये। टोर्सके समीप चार्लस मारटेलने स्पेनसे अरबियोंको निकाला था। अरबियोंका धर्म और साहित्य आज भी पश्चिम एशियाके अधांश, उत्तर अफ़रीका और कुछ कुछ पूर्व युरोपमें अपना प्रभाव जमाये है। ई०के पूर्व ६ष्ठ शताब्दको आर्योंने सिंहल-में बौद्धधर्म फैलाया। १४०८ ई०को चीनावोंने उस-पर आक्रमण मारा। फिर १५०५ ई०से युरोपीयोंका धावा होने लगा। पहले पोर्तुगीज़ और पीछे डच राजा बने। १७९६ ई०को अंगरेजोंने डचोंको सिंहलसे निकाल दिया था।

ब्रह्म, श्याम, कम्बोडिया और अनाम आदिको इन्दो-चीन कहते हैं। कम्बोडिया पर्यन्त भारतीय सभ्यता प्रबल है। लोग भारतीय वर्णमाला लिखते और बौद्ध धर्मपर चलते हैं। अनाम और पेगूमें मन-अनामकी भाषा चलती है। अनामवासी फ्रान्सीसियोंका अधिकार होनेसे पहले चीनावोंसे लड़ते भिड़ते रहे। कोचिन-चीनमें पहले चम्पाका राज्य रहा। ब्रह्म-वासियों और तलैङ्गोंसे भी पूर्व घोर युद्ध हुआ था। १७५० ई०को अलोम्परानेे तलैङ्गोंका अधिकार भङ्ग कर जो राज्य बनाया, वह १८८५ ई०को अंगरेजोंके हाथ आया। कम्बोडियावासी मन-अनाम भाषा बोलते हैं। उनका राज्य फ्रान्सीसियोंके अधीन है। श्याम-वाले एकाक्षर चीना भाषा व्यवहार करते हैं। किन्तु वर्णमाला भारतीय है।

मलयवासी मलय-प्रायोद्वीप, यव, सुमात्रा, बोर-निओ, फिलिपाइन, मलय-द्वीपपुञ्जके अन्य द्वीप और मादागास्करमें रहते हैं। फिर न्यूजीलेण्ड, हवाई और दक्षिणसागरके अन्य द्वीपवासी भी मलय-मिश्रित भाषा व्यवहार करते हैं। पहले मलयवासी असभ्य रहे। फिर हिन्दू सभ्यताका विकाश हुआ। ई० १६वें शताब्दसे पहले मुसलमानी प्रभाव पड़ा। आजकल मलयमें अरबी और यव, सुमात्रा प्रभृति द्वीपोंमें भारतीय अक्षर चलते हैं।

तिब्बत पार्वत्य देश है। मुसलमान वहां कभी नहीं पहुंचे। दलाई लामा बौद्ध धर्मके गुरु हैं। तिब्बत चीनके अधीन होते भी स्वतन्त्र है। सभ्यताका ढंग निराला है।

मङ्गोलियावासियोंकी सभ्यता चीना और भारतीय सभ्यतासे मिलकर बनी है। वह लोग नेष्टोरीय धर्मप्रचारकोंकी आनीत लेखनप्रणालीका अनुसरण करते हैं।

साहित्य—इन्दो-चीन, तिब्बत, मङ्गोलिया, कोरिया और मञ्चूरियाका साहित्य भारत तथा चीनके साहित्य-से बना है। चीना, संस्कृत, पाली, अरबी और फार-सीका मौखिक एवं मौलिक साहित्य मिलता है। पालीमें बुद्धकी वार्ता बहुत अच्छी लिखी गयी है। मुसलमानोंका साहित्य अरबी और फारसी है। किन्तु अंगरेजोंके भारत और जर्मनी तथा फ्रान्सीसियों आदिके एसियास्थ अन्य देश अधिकार करनेसे युरो-पीय साहित्यका चमत्कार यहां बढ़ गया है। वर्तमान युरोपीय महासमर समाप्त न होनेसे एसियामें कैसे कहा जा सकता—कहां किसका राज्य रहेगा। कारण जर्मनीका कियाचाउ बन्दर जापानियों और अंगरेजों-ने छीन लिया है। इधर मेसोपोटेमियामें भी अंगरेज आगे बढ़ रहे हैं। फिर रूसकी हार होनेसे तुर्कोंको कुछ पूर्व युरोपमें नया अधिकार प्राप्त हुआ है।

एसिया-माइनर—तुर्क साम्राज्यका एक प्रायोद्वीप। इसके उत्तर कृष्णसागर, पश्चिम ईजियन, दक्षिण भूमध्य सागर और उत्तर-पश्चिम बोस्पोरस तथा दारदेनेलिस है। एसिया-माइनरसे पूर्व ऐसा कोई स्थान नहीं, जो सीमा माना जा सकता हो। यह उत्तर-दक्षिण ७२० मील लंबा और पूर्व-पश्चिम ४२० मील चौड़ा है। यूफ्रेतिस नदीके पूर्व अरमनी तथा कुर्दिस्थानी उच्च भूमिसे निकल तरस पर्वतश्रेणी ईजियन सागरतक चली गई है। लिसियामें शिखर-की उच्चता १०५०० फीट है। बोयस, ईरिस, चेके-रेक इरमक, हेलिस, सङ्गारियस एवं बिल्लेइउस कृष्ण-

सागर और रिनदेकस तथा मासेसतस नदो मारमोरा समुद्रमें गिरती है। ग्रानिकस् और स्कामान्दर त्रोदकी प्रधान नदी हैं। दूसरी नदियोंके नाम हैं—केकास, हरमुस, केष्ट्रस, मेनदेर, इन्दस, स्कान्द्रस, सेष्ट्रस, यूरिमेदन, गेलस, केलिकेनस, सिडनस, सारस और पिरेमस।

एसिया-माइनरके प्रधान ह्रद यह हैं—तुजगूल, बुलदुरगूल, अजीतुजगूल, बांशेहरगूल, इगिरदिरगूल, इसनिकगूल, एबुल्लिओएटगूल और मनियसगूल। इनमें पहले तीन खारी हैं।

यह प्रायोद्वीप अपने उष्ण और आकरज प्रस्रवणोंके लिये प्रसिद्ध है। उनमें प्रधान यह हैं—यलोवो मूसा, चितली, तरजे, एसकीशहर, तुजला, चश्मा, इलिजा, होरापोलिस, अलाशहर, तेरजिली इम्माम, इस्कालिब, वोली और खवसा।

कारादागसे अरगाइस् तक आग्नेयगिरिमाला खड़ी है। किन्तु आजकल उससे अग्नि नहीं निकलता। ऊंचे मैदानमें जाड़ा बहुत दिनतक रहता है। उत्तर प्रान्तपर बरफ अधिक गिरता है। उत्तर तटपर मुसलधार पानी बरसता है। पश्चिम-तटपर जलवायु सम रहता है। ग्रीष्म ऋतुमें उत्तर वायु मध्याह्नसे सायंकाल पर्यन्त चला करता है। एसिया-माइनरमें फिटकरी, सुरमे, संखिये, कोयिले, तांबे, मड़ालू, सोने, लोहे, सोसे, मिकनातीसी लोहे, पारे, नमक, चांदी, गन्धक, जस्ते वगैरहकी खानि है। वृक्षादि जलवायु, भूमि और उच्चताके अनुसार विभिन्न हो गये हैं। उत्तरके पर्वत वृक्षोंसे हरे भरे हैं। अंगूर बहुत उपजता है। सेब, नासपाती, बेर, नीबू, नारंगी, गन्ने, रूई, अफीम, चावल, केसर और तम्बाकूकी कोई कमी नहीं। सिवास विलायतका गेहूं बहुत अच्छा होता है। ब्रूसा और अमासियाके निकट रेशम ढेरका ढेर उपजता है। पशुवोंमें खच्चर अच्छे अच्छे देख पड़ते हैं।

एसिया-माइनरमें कालीन, नमदे, रूई, तम्बाकू, ऊन, रेशम, साबुन, शराब और चमड़ेका काम बनता है। अनाज, रूई, बिनोला, सूखा फल, औषध द्रव्य, सुपारी, अफीम, चावल, कालीन, नारियल, कच्चा-पक्का चमड़ा, ऊन, रेशम, रेशमी कपड़ा, नमदा, मोम, पशु और खनिज पदार्थ बाहर भेजते हैं। कहवा, रूईका कपड़ा, कांचकी चीज़, लोहालंगड़, दीयासलाई, मट्टीका तेल, नमक, चीनी वगैरह बाहरसे मंगाते हैं।

एसिया-माइनरमें पक्की सड़कें बहुत कम हैं। किन्तु मैदानमें हरेक जगह हलकी गाड़ी चल सकती है। हैदरपाशेसे इसमिद, एसकी शहर एवं अंगोरे, मुदनियेसे ब्रूसे और एसकी शहरसे अफ्यूनकरहिसार, कोनिये तथा बुलगुरलीको रेलगाड़ी जाती है। उक्त रेलवे जरमनोंके प्रबन्धसे चलती है। फिर स्मिरनासे एदीन एवं दिनोर, मरसिनासे तारसस तथा आदाने को जो अंगरेजी रेलवे लगी, वह फ्रान्सीसियोंके अधिकारमें पड़ी है। कोई जाति एसिया-माइनरके अधिवासियोंको आक्रमणकर निकाल भगा नहीं सकी। प्रधानतः यहां मुसलमान, ईसाई और यहूदी रहते हैं।

एसिया-माइनर युरोप और एसियाके बीच पुल-जैसा बना है। पूर्व और पश्चिमके लोग यहां प्राचीन समयसे लड़ते आये हैं। पहले आदिम अधिवासी एसिया-माइनरके अधिकारी रहे। उनके धर्म, भाषा-व्यवहार और सामाजिक कार्यमें कोई प्रभेद न था। फिर हित्ताइतोंका राज्य हुआ। बोगज-किउई उनके वैभवका केन्द्रस्थल था। उनके अद्भुत चित्र और शिलालेख स्मिरना और यूफ्रेतसके मध्य कई स्थानोंमें मिले हैं। ई०से पूर्व ११श एवं १०म शताब्दके मध्य युरोपसे आर्योंका दूसरे देशमें जाकर बसना बन्द हो रहा था। फ्राइजियामें आर्योंने एक राज्य संस्थापित किया। उसके चिह्न अनेक शिला-समाधियों, दुर्गों, नगरों और ग्रीक पुराणोंमें मिलते हैं। ई०से पूर्व ८म वा ७म शताब्द सिम्मेरोने फ्राइजीय शक्तिको भङ्ग किया था। फिर सिम्मेरीय बल घटनेपर लीदिया राज्य बना, जिसका केन्द्र सरदिसमें रहा। सिम्मेरोयोंने द्वितीयवार आक्रमण मार सारा लीदिया राज्य विनष्ट किया, किन्तु ई०से ६१७ वर्ष पूर्व अलायतोंने उन्हें एसिया-माइनरसे निकाल दिया। अन्तिम नृपति

क्रोइसस्‌ने लीदियाकी सीमा हेलिस् तक पहुंचाई थी। सागरतटके ग्रीक उपनिवेश उनके अधीन रहे। फिर ई०से ५४६ वर्ष पूर्व काइरस्‌के सरदिस अधिकार करनेपर उक्त ग्रीक उपनिवेश ईरानके हाथ लगे। ईरानियोंके राज्यकाल ग्रीक अपने नगर शासन करते थे। भीतरी प्रान्तको कितनी ही जातियोंके भी अपने अपने राजा रहे। ई०से ५००-४९४ वर्ष पूर्व ग्रीकोंने अपनी स्वाधीनता पानेकी चेष्टा की थी, किन्तु सफलता न मिली। ई०से ३३४ वर्ष पूर्व सिकन्दरने एसिया-माइनर आक्रमण किया। सिकन्दरके मरनेपर यह प्रायोद्वीप सल्यु कस् राजावोंके हाथ लगा था, किन्तु उनमें कोई सम्पूर्ण देश पा न सका। रोड्स्‌में प्रजातन्त्र पड़ा और दक्षिण एवं उत्तर सागरतट तक अधिकांश इजिप्तके टलेमियोंको मिल गया। ई०से २८३ वर्ष पूर्व परगामममें एक स्वाधीन राज्य प्रतिष्ठित हुआ, जो ई०से १३३ वर्ष पूर्व अत्तालसके रोमकोंको अपना उत्तराधिकारी बनानेतक चला। बिथिनिया स्वाधीन-साम्राज्य हो गया और कप्पादोसिया तथा पाफलागोनिया देशी राजावोंके अधीन शासित हुआ। दक्षिण एसिया-माइनरमें सल्यूकियोंने अन्तिओक, अपामिया, अत्तालिया, लावोदीसियस और सल्यूसियस् नगर प्रतिष्ठित किया था। ई०से २७८-२७९ वर्ष पूर्व गालिक लोगोंने बोसपोरस् तथा हेलेस्पन्तको पार कर मध्य एसिया-माइनरमें केलटिक शक्ति जमा दी। ई०से १८९ वर्ष पूर्व मानलियस्‌ने उक्त शक्तिको नीचा देखाया। गालिक परगामम्‌के अधीन हो गये। ई०से १९० वर्ष पूर्व मैगनेसियामें अन्तिओकस्‌के हारनेपर एसिया-माइनर रोमकोंके अधीन हुआ। फिर मिथ्रदेतसोंके सहारे पोनथस्‌की शक्ति बढ़ी थी। किन्तु पाम्पे द्वारा निकाल बाहर किये जानेपर ई०से ६३ वर्ष पूर्व वह मर गये। फिर धीरे धीरे ईसाई धर्म फैला था। ई० ६वें शताब्दान्त एसियामाइनरमें धन और वैभव बढ़ा। ६१६से ६२६ ई० तक ईरानी फौजने विना रोकटोक इस प्रायोद्वीपपर धावा मारा और २य खुशरूने बोस्फोरस् किनारे अपना डेरा डाला। किन्तु हेरेक्लियस्‌के जीतनेपर खुशरूको भागना पड़ा था। फिर ६६८ ई०को अरबियोंने कनस्तान्तिनोपल घेर लिया। किन्तु प्रतिमा भङ्ग करनेवाले सम्राटोंने अरबी आक्रमण व्यर्थ किया था। ई०के १०वें शताब्द अरबी एसिया-माइनरसे निकाल बाहर किये गये। १०६७ ई०को सेलजुक तुर्कोंने कप्पादोसिया और सिलिसियाको उजाड़ा था। १०७१ ई०को उन्होंने रोमानस दीओगीनस सम्राट्‌को बन्दी बनाया और १०८० ई०को निकेइयापर अपना अधिकार जमाया। उनकी एक शाखाने रूमसाम्राज्य प्रतिष्ठित किया और पहले निकेइया तथा पीछे इकोनियममें राजधानीको बसा दिया। १२४३ ई०को मुग़लोंने रूमके सुलतानको हरा उक्त साम्राज्य छीन लिया था। सुलतान बड़े खान्‌के अधीन हुये। सेलजुक सुलतान बड़े विद्याप्रेमी रहे। उनके बनाये भवन बहुत सुन्दर देख पड़ते हैं। लेटिन राजावोंके सिलिसियामें अरमनियोंको साहाय्य देनेसे छोटा अरमनी राज्य बन गया था। किन्तु १३७५ ई०को इजिप्तके सुलतान मामेलूकने ४र्थ लिओको बन्दी बना उक्त राज्यको दबा दिया। १४०० ई०को १म सुलतान वैज़ीदका अधिकार युफ्रेतिस्‌से पश्चिम समग्र एसियामाइनर पर फैल गया, किन्तु १४०२ ई०को तैमूरने उन्हें हरा ईजियन सागरतट तक सम्पूर्ण देश जीत लिया। तैमूरके मरनेपर बहुत लड़ाई झगड़ेके पीछे उसमान अलीका प्रभुत्व फिर प्रतिष्ठित हुआ। २य मुहम्मदने १४५१से १४८१ ई०तक करमनिया ट्रेबिजण्डको अपने राज्यमें मिला लिया था। तुर्की देखो। १८३२-१८३३ ई०को इजिप्तकी फौजने इब्राहीम पाशाके अधीन सिलिसियाको राह कोनिया और कुताइया तक धावा मारा।

एसीवादी (हिं० पु०) देवविशेष। जैन मतानुसार यह वाणव्यन्तर नामक देवोंके अन्तर्गत हैं।

एस्परंटो (अं० स्त्री०) भाषाविशेष, एक ज़बान्। यह नूतन कल्पित भाषा युरोपमें चलती है।

एह (सं त्रि०) आ-ईह-इन्। १ सम्यक् चेष्टायुक्त, खासी कोशिश करनेवाला। (पु०) २ क्रोध, गु.स्सा। (हिं० सर्व०) ३ एष, यह।

एहतमाम (अ० पु०) निरीक्षण, इन्तिज़ाम, देखभाल।

एहतियात (अ० स्त्री०) १ दक्षता, चौकसी। २ पथ्य, परहेज़।

एहसान (अ० पु०) कृतज्ञता, कियेका मानना।

एहसानमन्द (अ० वि०) कृतज्ञ, एहसान माननेवाला।

एहि (सं० स्त्री०) आ-ईह-इन्। १ सम्यक् चेष्टाशील स्त्री, खूब कोशिश करनेवाली औरत। (सर्व०) २ एष, यह।

एहीड़ (सं० क्ली०) 'एहि ईड़े' शब्दोच्चारणके साथ प्रारम्भ होनेवाला कर्म।

एहो (हिं० अव्य०) हे, ए, अरे, ओ।

ऐ

ऐ—१ संस्कृत और हिन्दीकी वर्णमालाका द्वादश अक्षर। इसका उच्चारणस्थान कण्ठ और तालु है। यह दीर्घ और प्लुत भेदसे द्विविध एवं उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। फिर अनुनासिक और निरनुनासिक दो उच्चारण अधिक होते हैं। ऐकार परम, दिव्य, महाकुण्डलिनी, कोटिचन्द्रतुल्य, विन्दुत्रययुक्त और पञ्चप्राण, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र एवं सदाशिवमय वर्ण है। (कामधेनुतन्त्र) एकारके दक्षिण भागमें मध्यदेशसे एक ऊर्ध्वगत वक्ररेखा लगाना पड़ती है। इस समस्त रेखामें चन्द्र, इन्द्र और सूर्य रहते हैं। इसकी मात्रा दुर्गा, वाणी और सरस्वती त्रिविध शक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र) तन्त्रमें ऐकारको लज्जा, भौतिक, कान्त, वायवी, मोहिनी, विभु, दक्षा, दामोदरप्रज्ञ, अधर, विकृतमुखी, चरात्मक, जगद्योनि, पर, परनिबोधकारी, ज्ञान, अमृता, कपर्दिश्री, पीठेश, अग्नि, समाह्वक, त्रिपुरा, लोहिता, राज्ञी, वाग्भव, भौतिकासन, महेश्वर, द्वादशी, विमल, सरस्वती, कामकोट, वामजानु, अंशुमान, विजय और जटा कहते हैं। वीजवर्णाभिधानोक्त नाम दन्तान्त और योनि है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। ऐकार अनुबन्धयुक्त यजादिगणके मध्य पठित है। उसमें ऐ सकल धातुको लिट् प्रभृति विभक्तिपर सम्प्रसारण पाती है। (अव्य०) एतीति, आ-इण्-विच्। ३ आह्वान, पुकार, ए, ओ, अरे। ४ आमन्त्रण, बुलावा, आइये। ५ स्मरण, याद। ६ सम्बोधन। ७ दूरस्थ वस्तुबोधक। (पु०) एति प्राप्नोति सर्वम्। ८ महेश्वर।

ऐं (हिं० अव्य०) १ क्या, सुन न पड़ा, फिर कहो। २ आश्चर्य, ताज्जुब।

ऐंचना (हिं० क्रि०) १ आकर्षण करना, खींचना।

ऐंचाताना (हिं० वि०) फिरी हुई आंखवाला।

ऐंचातानी (हिं० स्त्री०) आकर्षण, खिंचाव, नोचखसोट।

ऐंछना (हिं० क्रि०) केश परिष्कार करना, कंघी देना, झाड़ना।

ऐंठ (हिं० स्त्री०) १ बल, लपेट, मरोड़। २ अभिमान, फ़ख़र। ३ अकड़, ज़ोर। ४ हिंसा, हसद।

ऐंठन, ऐंठ देखो।

ऐंठना (हिं० क्रि०) १ घुमाना, फेरना। २ बलपूर्वक ग्रहण करना, ले लेना। ३ छलसे लेना, ठगना। ४ घूमना, फिर जाना, बल खाना। ५ अभिमान करना, अकड़ना।

ऐंठवाना (हिं० क्रि०) ऐंठनेका काम दूसरेसे लेना, घुमवाना।

ऐंठा (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे रज्जुको आवेष्टन करते हैं। यह एक काष्ठका बनता, जिसके मध्य छिद्र रहता है। छिद्रमें एक लट्टदार दूसरी लकड़ी डालते, जिसके ओरसे छोरतक एक शिथिल रज्जु बांधते हैं। फिर इसके मध्य आवेष्टनको जानेवाली रस्सी लगाते हैं। लकड़ीके किसी किनारे लंगर पड़ता है। छिद्रकी लकड़ी फेरनेसे आवेष्टनकी जानेवाली रज्जु ऐंठ जाती है। २ शङ्ख, घोंघा।

ऐंठाबैंठा, ऐंडबैंड़ देखो।

ऐंठाना, ऐंठवाना देखो।

ऐंठी (हिं० स्त्री०) घूमी या फिरी हुई।

ऐंठू (हिं० पु०) अभिमानी पुरुष, अकड़नेवाला शख्स।

ऐंड़ (हिं० स्त्री०) १ अभिमान, तनाव, अकड़। २ जलका आवर्त, पानीका भंवर। (वि०) ३ आवर्तमान, घूमा हुआ, जो खराब पड़ गया हो।

ऐंड़दार (हिं० वि०) १ अभिमानी, कुटिल, मग़रूर। २ बना हुआ, बांका, नोक-झोंकवाला।

ऐंड़ना (हिं० क्रि०) १ आवेष्टनको प्राप्त होना, घूम जाना, बल खाना। २ देह टूटना, अंगड़ाई आना। ३ अभिमान करना, तिरछे पड़ना। ४ आवेष्टन करना, घुमाना, ऐंठना।

ऐंड़बैंड़ (हिं० वि०) बांका-तिरछा, बल खाये हुआ।

ऐंड़ा (हिं० वि०) १ ऐंठा, घुमावदार। (पु०) २ परिमाण, मान, बांट। ३ सेंध, नकब।

ऐंड़ाना (हिं० क्रि०) १ अङ्गमर्द करना, अंगड़ाई भरना। २ कुटिल पड़ना, बांका-तिरछापन देखाना, नाक-भौं चढ़ाना।

ऐंढ़ा (हिं० पु०) किसी किस्मका गंड़ासा।

ऐंहड़ा (हिं० पु०) सेंध, नकब।

ऐक (सं० त्रि०) एक स्वार्थे अण्। १ एकार्थबोधक, एकका मतलब रखनेवाला। २ एक सम्बन्धीय, एकसे सरोकार रखनेवाला।

ऐकतान (सं० क्लो०) एकतान-अण्। वाद्यविशेष। कितने ही भिन्न भिन्न जातीय वाद्ययन्त्रोंके एक स्वरसे बजाये जानेको ऐकतान कहते हैं।

ऐकतानवादन (सं० क्लो०) कुछ विभिन्न जातीय यन्त्रोंका विभिन्न ग्रामोंके संयोगसे एककाल वादित होना, मुख्तलिफ किस्मके बाजोंका एक साथ अपने अपने स्वरमें बजाया जाना।

शास्त्रमें लेख पाते, कि महादेव चारो हाथसे रुद्रवीणा, डमरु प्रभृति कई यन्त्र युगपत् बजाते थे। सुतरां उसे एक प्रकारका ऐकतानवादन कहना सङ्गत है। रामायणके राम-रावण-युद्ध, महाभारतके कुरुपाण्डव संग्राम और अपरापर पुराण तथा उपपुराणके देवासुर समरमें विविध जातीय युद्धयन्त्रोंका एककाल वादित होना वर्णित है। हम उसे भी एक प्रकारका ऐकतानवादन कह सकते हैं। किन्तु नौबत, रोशनचौकी वगैरह अनेक प्रकारका जो बाजा चलता, उसे विभिन्न ग्रामोंका युगपत् संयोग न रहनेसे कोई ऐकतानवादन बता नहीं सकता।

ऐकतानवादन वहिर्द्वारिक और आभ्यन्तरिक दो प्रकारका होता है। अनावृत स्थानमें बजानेको वृहदाकृति यन्त्रोंसे निःसृत उच्च स्वर आवश्यक है। किन्तु गृहके अभ्यन्तरमें क्षुद्र क्षुद्र यन्त्र अर्थात् वंशी, वीणा, सारंगी, इसरार प्रभृति बजाना ही सुमिष्ट लगता है। विराटपर्वमें विराटराजदुहिता उत्तराकी सङ्गीतशाला आभ्यन्तरिक ऐकतानवादनका अन्यतर दृष्टान्तस्थल है।

हिन्दू राजा अतिप्राचीन कालसे ही ऐकतानवादनका आदर करते आये हैं। प्राचीन संस्कृतशास्त्रके व्यतीत भारतवर्षीय नाना स्थानोंके मन्दिरों और गुहाचैत्योंपर खुदी सकल मूर्तियां देखनेसे इसका भूरि भूरि निदर्शन निकलता है। नाना प्रकारके सङ्गीतयन्त्र उक्त मूर्तियोंमें अङ्कित हैं। यन्त्र, वाद्य, सङ्गीत प्रभृति शब्द देखो।

मुसलमान बादशाहोंके समय अधिकांश हिन्दुवों और अल्पांश यन्त्र ईरानियों, अरबियों प्रभृतिसे ले नूतनरूप ऐकतानवादनकी सृष्टि हुयी। सम्राट् अकबरके नक्कारखानेमें ऐकतानवादनके लिये निम्नलिखित यन्त्र व्यवहृत होते थे—

(१) कमसे कम १८ जोड़े दमामे।

(२) चालीस नक्कारे।

(३) चार ढोल।

(४) कमसे कम चार करनाल। यह यन्त्र स्वर्ण, रौप्य, पित्तल वा अन्य किसी धातव पदार्थसे बनता है।

(५) भारतवर्षीय और पारस्यदेशीय सरनाई। नौ सरनाई एक साथ बजायी जाती थीं।

(६) भारतवर्षीय, पारस्यदेशीय एवं युरोपीय नफीरी।

(७) गोशृङ्गाकृति पित्तलका शृङ्गयन्त्र।

(८) बड़ी करताल।

अकबर बादशाहने ऐकतान-वादनकी उन्नतिके लिये अपने जमाये स्वरमें दो सौसे अधिक गतें तैयार की थीं। उनके सामने अनेक सुविज्ञ सङ्गीतज्ञ व्यक्ति पराजय मान लेते थे। विशेषतः लोग कहते—अकबर नक्कारा बजानेमें सातिशय विचक्षण प्रसिद्ध थे।

आसिरीय और बाबिलोनीय लोगोंके देवपूजन और मङ्गलकार्यमें सङ्गीत विशेष रूपसे व्यवहृत होता था। उन देशोंकी खोदित प्रतिमूर्ति और नेबुकाडनेजारकी प्रतिष्ठित सुवर्ण-निर्मित बल देवताके निकट ससङ्गीत उपासनादिका प्रचुर प्रमाण मिलता है। यथा—

"उस समय किसी राजदूतने उच्चैःस्वरसे कहा—हे मानव! जब तुम वंशी प्रभृति शुषिर, वीणा प्रभृति तत, ढक्का प्रभृति आनद्ध और घण्टा प्रभृति घन यन्त्रका वाद्य सुनोगे, तब महाराज नेबुकाडनेजारद्वारा प्रतिष्ठित स्वर्णमूर्ति बल देवताके निकट सकल प्रणत होगे।"

(Daniel, III. 4, 5)

उक्त दोनों देशोंके राजा राजसभामें भी सङ्गीत चर्चा करते थे। कारण सुननेमें आया है—जब मिदवंशीय राजा दरायुसने भविष्यद्वक्ता दानियालको सिंहगह्वरमें डाल प्रासादको प्रत्यागमन किया, तब अनाहार रह और ऐकतानवादनादि न सुन रात्रिका समय बिता दिया था। (Dan. VI. 18) इससे स्पष्ट प्रतीयमान होता, कि सन्ध्याको उनके सामने ऐकतानिक सकल यन्त्र बजते थे।

आसिरीयों और बाबिलोनीयोंकी भांति जेरुसलमकी राजसभामें भी ऐकतानिक सङ्गीत होता था। दाऊद और सुलेमान दोनों राजावोंके समय यह सविशेष प्रचलित रहा। उनमें दोनोंके मन्दिरस्थ धर्मसम्बन्धीय बहुसंख्यक वादकों तथा गायकोंको छोड़ राजकीय ऐकतान भी था। दाऊदके पुत्र सुलेमान्ने पार्थिव भोगविलासकी असारता और अस्थायितापर अपने ऐकतानका उल्लेख किया,—"हमने नाना प्रकारके सङ्गीतयन्त्रोंकी भांति पुं-गायकों, स्त्री-गायिकावों एवं उत्कृष्ट यन्त्रव्यवसायियों द्वारा नानाप्रकार आनन्द उठा लिया है।" (Eccles. II. 8)

आजकल पारस्य (ईरान) देशमें हार्प (Harp) यन्त्र देख न पड़ता सही, किन्तु प्राचीनकाल वह ऐकतानिक यन्त्रोंमें उच्च श्रेणीका समझा जाता था। सर रबर्ट कर-पोर्टर (Sir Robert Ker-Porter)को कुरबानशाह नगरके निकटस्थ टक्किबोस्तान् पर्वतपर ऐकतान-सम्बन्धीय कितनी ही प्राचीन खोदित मूर्तियां मिली थीं। कहते—वह ई० ६ठ शताब्दके शेषको पारस्य देशीय राजा खु.शरू परवीज़को स्थापित हैं। उनमें कई मूर्तियां दो ऊंची मेहराबों पर बनी हैं। आसिरीयोंकी खोदित प्रतिमूर्तियोंकी भांति दूसरी कई स्त्रियां भी नावपर चढ़ हार्पयन्त्र बजा रही हैं। बण्टिङ्ग साहबने भी पारस्यदेशीय वीणाके ऐकतानवादन (Harp concert) पर बहुत कुछ लिखा है। (Bunting's Historical and Critical Dissertation on the Harps in his "General collection of the Ancient music of Ireland.")

उपर ही कहा, कि ई०के ६ठ शताब्द पारस्य देशमें ऐकतानवादन प्रचलित रहा। एतद्व्यतीत उन मूर्तियोंमें एक व्याग-पाइप बजाते देख पड़ती है। इस यन्त्रका नाम भारतवर्षीय प्राचीन सङ्गीतमें 'नागबद्ध' लिखा है। आसिरीयों, यहूदियों, रोमकों और यूनानियोंको भी उक्त यन्त्र अवगत था।

हिरोदोतस् (ई०से ४८४ वर्ष पूर्व) लिखते—मिसरीयोंके देवोद्देशसे वात्सरिक पर्वाह समूहके मध्य बुवस्तिस नगरमें दायाना देवीकी पूजाके लिये मेला लगता था। मेलामें स्त्रीपुरुष नौकापर चढ़ जलपथ घूमते रहे। फिर उसी समय कुछ पुरुष वंशी और कुछ स्त्री क्षुद्र ढक्का युगपत् बजाती थीं। अवशिष्ट स्त्रीपुरुष करतालिसे आनन्दसूचक भावभङ्गी प्रकाश करते रहे।

प्राचीन मिसरमें वीणा (Harp), तंबूरे और वंशी प्रभृति यन्त्रके सहयोगसे ऐकतानवादनकी प्रथा प्रचलित थी। बरलिन और लिडेन नगरकी चित्रशालामें इसका एक खोदित दृश्य विद्यमान है। लेपसियस् बताते, कि प्राचीन मिसरीय केवल कुछ वंशियोंके द्वारा ही ऐकतानवादन लगाते थे। (Lepsius's Egyptian Antiquities) वंशीके ऐकतानका एक खोदित दृश्य

गिज-पिरामिडके तलस्थित समाधिमें मिला है। लेप्सियासके मतमें उक्त दृश्य ई०से २००० वत्सर पूर्वका होगा।

ऐकध्य (सं० अव्य०) १ एक ही काल, साथ-साथ। (क्ली०) २ समयका संयोग, वक्तका मेल।

ऐकपत्य (सं० क्ली०) एकपतेर्भावः, ष्यञ्। १ चक्रवर्तित्व, पूरी बादशाही। २ एकाधिपत्य, आला इख्तियार।

ऐकपदिक (सं० त्रि०) एकस्मिन् पदे भवः, एकपद-ठन्। १ एकपदज, किसी मामूली लफ्ज़से निकलनेवाला। २ एकस्थानोत्पन्न, उसी जगहसे पैदा। (क्ली०) ३ वाक्यविशेष।

ऐकपद्य (सं० क्ली०) एकपदस्य भावः, एकपद-ष्यञ्। शब्दोंका संयोग, लफ्ज़ोंका मिलान।

ऐकभाव्य (सं० क्ली०) एको भावो यस्य तस्य भावः, एकभाव-ष्यञ्। एकस्वभावता, कुदरतका एकपना।

ऐकमत्य (सं० क्ली०) एकं मतं येषां तेषां भावः, एकमत-ष्यञ्। १ एकरूप अभिप्राय, मक़्लेका मेल। २ समान सम्मति, मिलती-जुलती राय। (त्रि०) एकमत्यमत्रास्ति, अच्। ३ एकमतयुक्त, वही राय देनेवाला।

ऐकराज्य (सं० क्ली०) एकराजस्य भावः, एकराज-ष्यञ्। एकाधिपत्य, बादशाही।

ऐकलव्य (सं० पु०) एकल्वः अपत्यम्, एकलु-ष्यञ्। एकलु नामक ऋषिके पुत्र।

ऐकवाक्य (सं० क्ली०) एकवाक्यस्य भावः, एकवाक्य-अण्। १ एकवाक्यता, वही बोली। २ एक विषयमें बहुजनके मतको एकता, किसी बातपर बहुतसे लोगोंको रायका मिलना।

ऐकशतिक (सं० त्रि०) एकशतमस्यास्ति, एकशत-ठञ्। एकशतसंख्यक वस्तु रखनेवाला, जिसके पास १०१ चीज़ रहे।

ऐकशफ (सं० त्रि०) एकशफस्य इदम्, एकशफ-अण्। १ जुड़े खुरके पशुसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो समूचे खुरवाले जानवरसे सरोकार रखता हो। (क्ली०) २ गर्दभी-घृत, गधीका घी।

ऐकश्रुत्य (सं० क्ली०) एका श्रुतिर्यत्र तस्य भावः, ऐकश्रुत-ष्यञ्। उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित त्रिविध स्वरके सन्निकर्षका शब्द, एक ही जैसी सुन पड़नेवाली आवाज़।

ऐकसहस्रिक (सं० त्रि०) एकसहस्रमस्यास्ति, एकसहस्र-ठञ्। एकसहस्र संख्यक वस्तुयुक्त, १००१ चीज़ें रखनेवाला।

ऐकस्वर्य (सं० क्ली०) स्वरकी एकता, आवाज़का एकपना।

ऐकागारिक (सं० त्रि०) एकसहायमागारं प्रयोजनमस्य, एकागार-इकट् निपातनात् साधुः। ऐकागारिकट् चौरे। पा ५।१।११३। १ एक गृहवासी, उसी घरमें रहनेवाला। (पु०) २ चौर, डाकू।

ऐकाग्र (सं० त्रि०) एकाग्र स्वार्थे अण्। एकाग्रचित्त, जो अपना दिल एक ही बातमें लगाये हो।

ऐकाग्र्य (सं० क्ली०) एकाग्रस्य भावः, एकाग्र-ष्यञ्। एकाग्रचित्तता, दिलका एक ही ओरको झुकाव।

ऐकाङ्ग (सं० क्ली०) एकाङ्गस्य भावः, एकाङ्ग-अण्। १ एकाङ्गता। २ शरीरका सादृश्य, जिस्मकी बराबरी। (पु०) ३ शरीररक्षक सेनाका सिपाही।

ऐकात्म्य (सं० क्ली०) एक आत्मा स्वरूपं यस्य तस्य भावः, एकात्म-ष्यञ्। १ ऐक्य, मेल। २ एकस्वरूपता, हमशक्ली।

ऐकादशिन् (सं० त्रि०) एकादशानां सङ्घम्, एकादश-इनि। एकादशपक्ष-सम्बन्धीय, ग्यारहके ढेरसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

ऐकाधिकरण्य (सं० क्ली०) एकाधिकरणस्य भावः, एकाधिकरण-ष्यञ्। १ समानाधिकरणता, रिश्तेकी तौहीद। २ तुल्य विभक्तियुक्त पदद्वयके अर्थका अभेद-बोधकत्व।

ऐकान्तिक (सं० त्रि०) एकान्तमवश्यम्भावी, एकान्त-ठञ्। १ निश्चिन्त, बेफ़िक्र। २ प्रगाढ़, मोटा, कड़ा। ३ दृढ़, मज़बूत। ४ अत्यन्त, बहुत, ज़्यादा। ५ पूर्ण, पूरा।

ऐकान्यिक (सं० त्रि०) एकमन्यं वृत्तं अध्ययने अस्य, ठक्। कर्माध्ययने वृत्तम्। पा ४।४।६३। अध्ययनके

समय विपरीत उच्चारण करनेवाला, जो पढ़ते वक्त उलटा बोलता हो।

ऐकार्थ्य (सं० क्लो०) एकार्थस्य भावः, एकार्थ-ष्यञ्। अर्थका ऐक्य, मानेकी तौहीद।

ऐकाहिक (सं० त्रि०) एकाहे भवम्, एकाह-ठक्। १ एक दिन साध्य, एक रोज़में होनेवाला। २ एक दिनके अन्तरसे उत्पन्न, जो एक रोज़के फ़र्क़से पैदा हो।

ऐकाहिक ज्वर (सं० पु०) एकाहभवो ठक्, ऐकाहिको ज्वरः, कर्मधा०। एक दिन छोड़के आनेवाला ज्वर, जो बुख़ार एक रोज़ रहकर चढ़ता हो। काकजङ्घा, बला, श्यामा, ब्रह्मदण्डी, कृताञ्जलि, पृश्निपर्णी, अपामार्ग या भृङ्गराजका मूल पुष्यानक्षत्रमें यत्नपूर्वक उखाड़ लाल सूतसे रोगीके गले या हाथमें बांध देनेपर ऐकाहिक ज्वर छूट जाता है।

ऐक्ट, एकट देखो।

ऐक्टर (अं० पु०=Actor) नाटकका पात्र, स्वांगका खेलाड़ी।

ऐक्य (सं० क्लो०) एकस्य भावः, एक-ष्यञ्। १ एकता, तौहीद। २ सादृश्य, बराबरी। ३ मेल। ४ परमात्मा और जीवात्माका संयोग। ५ संयुक्त राशि। ६ खण्डोंके दैर्घ्य और गाम्भीर्यका गुणनफल।

ऐक्षव (सं० त्रि०) इक्षोर्विकारः, इक्षु अण्। १ इक्षुसे उत्पन्न, ऊखसे सरोकार रखनेवाला। (क्लो०) २ इक्षुविकार, गुड़ादि, चीनी वग़ैरह।

ऐक्षव्य (सं० त्रि०) इक्षु-सम्बन्धीय, ऊखसे पैदा।

ऐक्षुक (सं० त्रि०) इक्षौ साधु, इक्षु-ठक् निपातनात् साधुः। १ इक्षुवर्धक, ऊखके लिये अच्छा। २ इक्षु उत्पन्न करनेवाला, जो ऊख उपजाता हो। (पु०) ३ इक्षु वहनकारी, ऊख ले जानेवाला।

ऐक्षुभारिक (सं० त्रि०) इक्षुभारं वहति, इक्षुभार-ठक्। इक्षुवाहक, ऊखका बोझ ढोनेवाला।

ऐक्ष्वाक (सं० पु०) इक्ष्वाकोरपत्यम्, इक्ष्वाकु-अण्। १ इक्ष्वाकुका सन्तान। पुरुकुत्स और दशरथको ऐक्ष्वाक कहते हैं। (त्रि०) २ इक्ष्वाकु-वंशीय, इक्ष्वाकुसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

ऐक्ष्वाकु (सं० पु०) इक्ष्वाकुका सन्तान। त्रिशङ्कु और रामको ऐक्ष्वाकु कहते हैं।

ऐगन (हिं०) अवगुण देखो।

ऐगन—चीन साम्राज्यस्थ उत्तर मंचूरियाके हीलङ्क्षियङ्ग प्रान्तका एक नगर। यह अमूर नदीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। निकटस्थ भूमि उर्वरा है। अनाज, तेल और तम्बाकूका व्यवसाय होता है। १९०० ई०को बाक्सर-युद्धके समय ऐगन सामरिक कार्योंका केन्द्रस्थल था। लोकसंख्या प्रायः २०००० है। सौ दो सौ मुसलमान भी रहते हैं। पहले यह अमूर नदीके वाम तटपर अवस्थित रहा, किन्तु १६८४ ई०को वहांसे हटा दक्षिण तटपर बसाया गया। १८५७ ई०को इस नगरमें चीनावों और रूसियोंमें एक सन्धि हुई थी। उसीसे अमूर नदीका वाम तट रूसियोंके अधीन हुआ।

ऐगाल—बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ा ज़िलेके मन्दिर-परिचारक। यह अकोला तहसीलमें पाये जाते और अपनी उत्पत्ति कश्यप तथा वशिष्ठसे बताते हैं। सम्भवतः ऐगल कोङ्कणसे आ कर बसे हैं। कारवारके कोङ्कणोंमें विवाहादि होता है। तिरुपतीके वेङ्कटरमण इनके कुलदेवता हैं। यह कोङ्कणी और कनाड़ी दोनों भाषायें बोलते हैं। जंगलसे फूल तोड़ मन्दिरोंमें पहुंचान इनका काम है। गोविन्दराजपट्टनस्थ तैलङ्ग रामानुज ब्राह्मण तातयाचारी इनके दीक्षागुरु हैं। इनमें विधवा-विवाहकी प्रथा नहीं। शव जलाया जाता है। सामाजिक विवाद मन्दिरके मुखिया निबटाते हैं। कुछ लोग अपने लड़के स्कूल भेजते, जहां वह कनाड़ी पढ़ते हैं। झाड़ फूंक और जादू टोनेपर इन्हें विश्वास है। गोकर्ण भिन्न दूसरे स्थानीय तीर्थको यह यात्रा नहीं करते। ऐगाल बड़ी सफाईसे रहते हैं।

ऐङ्गुद (सं० क्लो०) इङ्गुद्याः इदम्, इङ्गुदी-अण्। १ इङ्गुदी वृक्षका फल। इस फलसे जो तेल निकलता, वह ऋषियोंके व्यवहारमें चलता था। (पु०) २ इङ्गुदी वृक्ष। (त्रि०) ३ इङ्गुदी वृक्षसे उत्पन्न।

ऐच्छिक (सं० त्रि०) इच्छया निर्वृत्तम्, इच्छा-ठक्। इच्छाधीन, मर्ज़ीसे होनेवाला।

ऐज़न (अ॰ अव्य॰) तथा, वैसा ही। गणना आदिमें किसी विषयको बार-बार न लिख एकही बार लिखते और उसके नीचे ऐज़न रखते हैं। इससे उक्त विषय बार बार लिखा समझा जाता है।

ऐड (सं॰ पु॰) एड़ा अस्त्यत्र, एड़ा-अण्। १ एड़ा शब्दयुक्त अध्याय वा अनुवाक। २ इड़ाके पुत्र पुरूरवा। (वि॰) ३ बलकारक पदार्थयुक्त। ४ इड़ा शब्दयुक्त।

ऐड़क (सं॰ पु॰) एड़क स्वार्थे अण्। १ मेषाकार पशुविशेष, किसी क़िस्मका मेड़ा। (वि॰) २ मेषसम्बन्धीय, एड़क पशुसे उत्पन्न।

ऐडमिरल (अं॰ पु॰=Admiral) नौसेनाका अध्यक्ष, जहाज़ी फ़ौजका बड़ा अफ़सर।

ऐडविड (सं॰ पु॰) १ कुवेर। २ दशरथ राजाके एक पुत्र।

ऐडवोकेट (अं॰ पु॰=Advocate) न्यायालयमें परार्थवक्ता, मुख़्तार, वकील।

ऐडवोकेट-जनरल (अं॰ पु॰=Advocate-general) हाइकोर्टका बड़ा सरकारी वकील।

ऐड़ूक (सं॰ क्लो॰) एड़ूक एव, स्वार्थे अण्। अस्थि एवं तुच्छ द्रव्यकी भित्ति, हड्डी और कूड़ेकी दीवार।

ऐण (सं॰ वि॰) एणस्य इदम्, एण-अण्। १ मृगसम्बन्धीय, काले हिरनसे पैदा।

ऐणिक (सं॰ वि॰) एणं मृगं हन्ति, एण-ठक्। मृगहन्ता, काले हिरनका शिकार करनेवाला।

ऐणीपचन (सं॰ वि॰) एणीपचनदेशभवः, एणीपचन-अण्। एणीपचन देशीय। एणीपचन देखो।

ऐणेय (सं॰ वि॰) एण्या इदम्, एणी-ढञ्। १ कृष्णसार मृगीसे उत्पन्न, काली हिरनीसे पैदा। (पु॰) २ कृष्णसारमृग, काला हिरन। (क्लो॰) ३ रतिबन्धविशेष।

ऐणेयक (सं॰ क्लो॰) एलवालुक।

ऐण्डिनेय (सं॰ पु॰) वेदकी एक शाखा।

ऐतदात्म्य (सं॰ क्लो॰) यह पदार्थ वा प्रधानता रखनेका भाव।

ऐतरेय (वै॰ पु॰) ऋग्वेदकी एक शाखा। भाष्यकारोंके मतसे महिदास ऐतरेय नामक एक ऋषि इस शाखाके प्रवर्तक हैं। छान्दोग्योपनिषद्में लिख दिया, कि महिदास ऐतरेयने पूर्णज्ञान लाभ किया था।

भाष्यकार शङ्कराचार्यके मतसे 'इतराया अपत्यं ऐतरेयः' अर्थात् इतराके अपत्यको ऐतरेय कहते हैं।

सायणाचार्यने ऐतरेय-ब्राह्मणके भाष्यको उपक्रमणिकामें महिदास ऐतरेयका परिचय इस प्रकार दिया है—

"किसी महर्षिके अनेक पत्नियां रहीं। उनमें एकका नाम इतरा था। उनके महिदास नामक एक पुत्र हुआ। 'अरण्यकाण्डमें' उन्हींको 'महिदास ऐतरेय' कहा है। महर्षि अपर पत्नियोंको बहुत चहते, किन्तु महिदाससे दूर रहते थे। किसी यज्ञसभामें उन्होंने महिदासको उपेक्षा कर अपर पुत्र गोद पर बैठा लिये। इतराने अपने पुत्रका म्लानमुख देख कुलदेवता भूमिसे प्रार्थना की थी। उसी समय भूमिदेवता दिव्यमूर्ति धारण कर यज्ञसभामें आविर्भूत हुईं। उन्होंने महिदासको दिव्य सिंहासनपर बैठा वर दिया था—तुम सकल पुत्रोंकी अपेक्षा अधिक पण्डित होगे और ऐतरेय-ब्राह्मण प्रतिभाषण कर दोगे।" आजकल ऐतरेय-शाखाका ऐतरेय-ब्राह्मण, ऐतरेय-आरण्यक और ऐतरेय उपनिषत् पुस्तक मिलता है।

ऐतरेयक, ऐतरेयब्राह्मण देखो।

ऐतरेयब्राह्मण (सं॰ क्लो॰) ऋग्वेदका एक ब्राह्मण। इसमें होताका कार्य निर्दिष्ट है। ऐतरेय ब्राह्मणके ४० अध्याय ८ पञ्चिकामें विभक्त हैं। वेद और ब्राह्मण देखो।

ऐतरेयी (सं॰ पु॰) ऐतरेय-ब्राह्मण पढ़नेवाला।

ऐतरेयोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) ऐतरेय आरण्यककी एक उपनिषत्।

ऐतश (सं॰ पु॰) भृगुवंशीय एक मुनि। इन्होंने ही 'ऐतश प्रलाप' नामक वैदिक ग्रन्थ बनाया था।

ऐतशायन (सं॰ पु॰) ऐतशके सन्तान।

ऐतावाड खुर्द—बम्बई प्रान्तके सतारा ज़िलेका एक ग्राम। यह वालवा तहसीलके प्रधान नगर पेठसे दक्षिण ७ मील पड़ता है। मालखेड़के राष्ट्रकूट नृपतिने ब्राह्मणोंको ६७५ शकको रथाष्टमीपर जो भूमिदान किया, उसमें इसका नाम भी दिया है।

इस विषयका शिलालेख कोल्हापुर राज्यके सामानगढ़में मिला है। उसमें ऐतावाड़-खुर्द उत्सर्ग को हुई भूमि की उत्तर सीमा बताया गया है।

ऐतिकायन (सं० पु०) इतिकस्य ऋषेरपत्यम्, इतिक-फक्। इतिक ऋषिके सन्तान।

ऐतिशायन (सं० पु०) इतिशस्य ऋषेरपत्यम्, इतिश-फक्। इतिश ऋषिके सन्तान। यह एक संस्कृतके प्राचीन विद्वान् थे। मीमांसासूत्रमें इनका नाम आया है।

ऐतिहासिक (सं० त्रि०) इतिहासादागतः, इतिहास-ठक्। १ इतिहास ग्रन्थसे समझ पड़नेवाला, जो तारीखसे मालूम हो। २ इतिहासवेत्ता, तारीखको जाननेवाला। ३ इतिहासपाठक, तारीख पढ़नेवाला।

ऐतिह्य (सं० क्ली०) इतिह स्वार्थे ष्यञ्। अनन्तावसथेतिह-भेषजा ञ्यः। पा ५।४।२३। पारम्पर्य उपदेश, पुरानी नसीहत। जो बात बहुत दिनसे सुननेमें आती, वह ऐतिह्य कहाती है।

"ऐतिह्यं नाम आप्तोपदेशो वेदादिः।" (चरक)

पौराणिकोंके मतमें ऐतिह्य एक प्रमाण है। वटके वृक्षमें यक्षिणी रहनेका परम्परागत उक्त वाक्य ही ऐतिह्य प्रमाण है।

ऐदंयुगीन (सं० त्रि०) अस्मिन् युगे साधुः, इदंयुग-खञ्। इस युगके उपयोगी।

ऐध् (सं० स्त्री०) अग्निशिखा, लपट।

ऐध (सं० पु०) ऐध् देखो।

ऐन (अ० वि०) १ उपयुक्त, दुरुस्त, ठीक। २ पूर्ण, पूरा। (हिं०) अयन और एण देखो।

ऐन-उद्-दीन—बीजापुरके एक शेख। इन्होंने 'मुलहक़ात' और 'किताब-उल्-अनवार' नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं। उक्त दोनों ग्रन्थोंमें भारतके समग्र मुसलमान-साधुवोंका इतिहास है। सुलतान् अला-उद्-दीन हसन बाह्मनीके समय यह विद्यमान रहे।

ऐन-उल्-मुल्क—१ शीराज़के एक अधिवासी। इनका उपाधि हकीम रहा। बादशाह अकबरके समय यह एक उच्च पदपर प्रतिष्ठित थे। इनकी कविता बहुत रसीली होती थी। उपनाम 'वफ़ा' रहा। १५९४ ई०को हकीम साहब इस दुनियासे चलते बने।

२ दिल्लीवाले बादशाह सुलतान् मुहम्मद शाह तुग़लक़ और सुलतान फीरोज़ शाहके एक दरबारी। इनका उपाधि ख्वाजा रहा। इनके बनाये 'तरसील ऐन-उल्-मुल्की' और 'फ़तेहनामा' नामक दो पुस्तक विद्यमान हैं। फ़तेहनामेमें इन्होंने सुलतान अला-उद्-दीन्के विजयका वर्णन किया है।

३ बीजापुर-नवाब आदिल शाहके भाई इस्माइलके एक रिसालदार। १५९२ ई०को बुरहान निज़ाम शाहको हरा आदिलशाहने दक्षिणकी ओर कर्णाटक और मलबार पर आक्रमण मारा था। किन्तु अपने भाई इस्माइलके बलवा करने पर उन्हें पीछे लौटना पड़ा। युद्ध होनेपर मीराजकी फौज इस्माइलसे मिल गई। बेलगांवको भेजी फौज बिना आज्ञाके बीजापुर लौट आयी थी। ऐन्-उल्-मुल्क भी अपनी ३० हजार फौजके साथ उसमें मिले और राजधानी पर आक्रमण मारने को आगे बढ़े। किन्तु यह युद्धमें मारे गये। १५४२ ई०को भी इन्होंने बीजापुर घेर लिया था, किन्तु विजयनगर-नरेशके भाई वेङ्कटाद्रिने इन्हें युद्धमें परास्त किया। यह रातको रण छोड़ अहमदनगर भाग आये थे। बीजापुरमें पूर्व पादशा-पुर-फाटकसे १५०० गज दूर ऐन-उल्-मुल्कको क़ब्र बनी है।

४ गुजरातके एक सूबेदार। इनका उपाधि मूलतानी रहा। उलघ खान्के जानेसे गुजरातमें मुसलमानी हुकूमत हिल गई थी। बलवा दबानेको कमाल्-उद्-दीनके भेजे मुबारक खिलजी लड़ाईमें काम आये। किन्तु १३१८ ई०को ऐन-उल्-मुल्क मूलतानीने बड़ी फौजके साथ पहुंच शान्ति स्थापित की थी। १३०६ ई०के समय यह मालवेके शासक रहे। उसी समय बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ी ज़िलेवाले देवगिरिके रामचन्द्रने उपद्रव उठाया था। अला-उद्-दीन्ने ख्वाजा मलिक काफ़ूरको एक लाख फौजके साथ दाक्षिणात्य दबाने भेजा। राहमें इन्होंने भी अपनी फौज उनकी सहायताके लिये साथ कर दी।

ऐनक (हिं० स्त्री०) उपनेत्र, चश्मा।

ऐनस (सं॰ क्ली॰) एन एव स्वार्थे अण्। पाप, गुनाह।

ऐना (हिं॰) आईना देखो।

ऐनापुर—बम्बई प्रान्तके बेलगांव ज़िलेका एक विशाल ग्राम। यह अथनी-कागवाड सड़कपर अथनीसे कोई १३ मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। ग्रामसे बाहर दक्षिण और एक तालाबके पास मुसलमान-साधु पीर काज़ीकी कब्र है। १६३८ ई॰को फ्रान्सीसी पर्यटक मनडेलसलो (Mandelslo) यहां आये थे। उन्होंने एयनाटौर (Eynatour) नाम लिखा है। १७९१ ई॰को कपतान मूर (Captain Moor) महाराष्ट्रोंके सहायक बन टीपूसे लड़ने पहुंचे। उनकी वर्णनाके अनुसार ऐनापुरमें मुसलमान अधिक रहते और अच्छे-अच्छे मकान् बने थे। १८४२ ई॰को यह ग्राम दूसरे ८ ग्रामोंके साथ अंगरेजोंके हाथ लगा। कारण मीराज पट्टवर्धन शाखाके प्रतिनिधि गोपालरावने किसी उत्तराधिकारीके व्यतीत स्वर्गगमन किया था।

ऐनि—सूर्यके पुत्र। सूर्यवंशको ऐनिवंश भी कहते हैं।

ऐनीता (हिं॰ पु॰) मर्कटको दर्पण देखानेका काम। यह कलन्दरोंकी भाषा है।

ऐनू—जापानकी उत्तर द्वीपवासी एक जाति। पहले यह लोग कूराइलसे येज़ू आये थे। फिर जापानके प्रधान द्वीप पर बसे गड्ढोंमें रहनेवाले कोरोपोक गुरुवोंको इन्होंने मार भगाया। किन्तु जापानियोंके दक्षिण तथा पश्चिमसे आ पहुंचनेपर इन्हें येज़ूमें जाकर रहना पड़ा था। यह शराब बहुत पीते और मैले-कुचैले रहते हैं। जापानियोंसे ऐनू लंबे होते हैं। बाल न बनवानेसे इनकी दाढ़ी-मूछ खूब भरी रहती है। स्त्रियां मुंह, हाथ और मत्थेपर गोदना गोदाती हैं। वल्कलका वस्त्र पहना जाता है। जाड़ेमें मृगचर्म धारणकर शरीररक्षा करते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों बाली पहनते हैं। लिखना-पढ़ना कोई नहीं जानता। इनके विश्वासानुसार पृथिवी एक मत्स्यके पृष्ठपर स्थित है। उसीके हिलनेसे भूकम्प आता है। यह भालूको पूजते हैं। ऐनू भोजन करनेसे पहले देवतावोंको धन्यवाद देते और रोगमें पड़नेसे अग्निका नाम लेते हैं। पहले यह लोग किसी अपराधीको प्राणदण्ड करते न थे। मारना-पीटना ही बड़ी सज़ा रही। कोई किसीका वध करनेसे नाक कान काटे जानेका दण्ड पाता था। यह अपरिचित व्यक्तिका बड़ा आदर-सत्कार करते हैं।

ऐनूर मारिगूदी—महिसुर राज्यका सरकारी जंगल। क्षेत्रफल ३० वर्ग मील है।

ऐन्दव (सं॰ क्ली॰) इन्दु-देवता अस्य, इन्दु-अण्। १ मृगशिरा नक्षत्र। २ चान्द्रायण नामक व्रतविशेष। ३ चान्द्रमास। (त्रि॰) ४ चन्द्र-सम्बन्धीय।

ऐन्दवी (सं॰ स्त्री॰) ऐन्दव-ङीप्। सोमराजी, बाकची, कालीजीरी।

ऐन्द्र (सं॰ क्ली॰) इन्द्रो देवता अस्य, इन्द्र-अण्। १ ज्येष्ठा नक्षत्र। २ मूलविशेष, एक जड़ी। इसे साधारणतः जङ्गली अदरक कहते हैं। संस्कृत पर्याय वनार्द्रका, वनजा और अरण्यजार्द्रका है। यह कटु, अम्ल और रुचि, बल एवं अग्निकारक है। (राजनिघण्ट) (त्रि॰) ३ इन्द्र-सम्बन्धीय। ४ इन्द्रके उद्देश्यसे आहृत। (पु॰) ५ इन्द्रके पुत्र जयन्त, अर्जुन एवं वालि वानर प्रभृति। ६ इन्द्रकृत व्याकरण। ७ वृष्टिका जल। ८ देवसर्षप वृक्ष।

ऐन्द्रजालिक (सं॰ पु॰) इन्द्रजालेन क्रीड़तीति, इन्द्र-जाल-ठक्। १ इन्द्रजालकारक, बाज़ीगर। इसका संस्कृत पर्याय—प्रतीहारक, मायाकारक, कौसुतिक, मायावी, व्यसक, मायी और मायिक है। (त्रि) २ इन्द्रजाल-सम्बन्धीय, बाज़ीगरीसे सरोकार रखनेवाला।

ऐन्द्रतुरीय (सं॰ क्ली॰) उदकादानविशेष। इसका चतुर्थांश इन्द्रको दिया जाता है।

ऐन्द्रद्युम्न (सं॰ क्ली॰) इन्द्रद्युम्नमधिकृत्य कृतमाख्यानम्, इन्द्रद्युम्न-अण्। इन्द्रद्युम्न राजाके वृत्तान्तसे घटित महाभारतका एक आख्यान।

ऐन्द्रयव (सं॰ पु॰) इन्द्रयव, इंदरायन।

ऐन्द्रलुप्तिक (सं॰ त्रि॰) इन्द्रलुप्त-ठक्। इन्द्रलुप्त रोगविशिष्ट, गंजा।

ऐन्द्रवायव (सं॰ त्रि॰) इन्द्रवायु देवते अस्य, इन्द्र-वायु-अण्। इन्द्र-वायुसम्बन्धीय।

ऐन्द्रवारुणी (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रवारुणी लता, ककड़ीकी बेल।

ऐन्द्रशर्मि (सं० पु०) इन्द्रशर्मणो ऽपत्यं पुमान्, इञ्। इन्द्रशर्मा राजाके पुत्र।

ऐन्द्रशिर (सं० पु०) हस्तिविशेष, एक हाथी। (रामायण २।७०।२२)

ऐन्द्रसेनि (सं० पु०) इन्द्रसेनस्य अपत्यं पुमान्, इञ्। इन्द्रसेन नामक नरपतिके पुत्र।

ऐन्द्राग्न (सं० त्रि०) इन्द्राग्नी देवते अस्य, अण्। १ इन्द्राग्नि-सम्बन्धीय। २ इन्द्र एवं अग्निके उद्देश्यसे आहुत।

ऐन्द्रानैर्ऋत (सं० त्रि०) इन्द्र एवं निर्ऋतसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रापौष्ण (सं० त्रि०) इन्द्रापूषाणौ देवते अस्य, अण् उपधा अतो लोपश्च। १ इन्द्र एवं सूर्य-सम्बन्धीय। २ इन्द्र और सूर्यके उद्देश्यसे आहुत हविः प्रभृति।

ऐन्द्राबार्हस्पत्य (सं० त्रि०) इन्द्र और बृहस्पतिसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रामारुत (सं० त्रि०) इन्द्र और मरुतसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रायुध (सं० त्रि०) इन्द्रप्रदत्तं आयुधं यस्य, बहुव्री०। १ इन्द्रप्रदत्त अस्त्रविशिष्ट। २ इन्द्रके धनुर्वाणसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रावरुण (सं० त्रि०) इन्द्र एवं वरुणके निमित्त पवित्र।

ऐन्द्रावैष्णव (सं० त्रि०) इन्द्रविष्णु देवते अस्य, अण्। इन्द्र एवं विष्णु सम्बन्धीय।

ऐन्द्रासौम्य (सं० त्रि०) इन्द्रसोमौ देवते अस्य, ष्यञ्। इन्द्र एवं सोम-सम्बन्धीय।

ऐन्द्रि (सं० पु०) इन्द्रस्यापत्यं पुमान्, इन्द्र-इञ्। १ इन्द्रपुत्र जयन्त। २ अर्जुन। ३ वालि वानर। ४ काक, कौवा।

ऐन्द्रिय (सं० त्रि०) इन्द्रियेण प्रकाश्यते, इन्द्रिय-अण्। १ इन्द्रिय-सम्बन्धीय। २ इन्द्रिय द्वारा ज्ञातव्य, मालूम पड़नेवाला। (क्ली०) ३ इन्द्रियग्राम। ४ आयुर्वेदका अंशविशेष। इसमें इन्द्रियोंका ही विषय वर्णित है।

ऐन्द्रियक (सं० त्रि०) इन्द्रियेण अनुभूयते, इन्द्रिय-वुञ्। १ प्रत्यक्ष, समझ पड़नेवाला। २ इन्द्रियग्राह्य। (पु०) ३ इन्द्रियाश्रित व्याधिविशेष। शब्दादि विषयके मिथ्यायोग, अभियोग वा अयोगसे जो रोग हो जाता, वह ऐन्द्रियक कहलाता है। (चरक)

ऐन्द्रियेधी (सं० त्रि०) केवल इन्द्रियसुखकी चिन्ता रखनेवाला।

ऐन्द्री (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य इयम्, इन्द्र-अण्-ङीप्। १ शची, इन्द्रकी पत्नी। २ दुर्गा। ३ इन्द्रवारुणी, ककड़ी। ४ पूर्वदिक्। ५ एला, इलायची। ६ गोरक्ष-कर्कटी।

ऐन्द्रीफल (सं० क्ली०) इन्द्रवारुणीफल, ककड़ी।

ऐन्द्रीरसायन (सं० क्ली०) रसायनविशेष। यह ऐन्द्री, मत्स्याक्षी, ब्रह्मसुवर्चला तथा शङ्खपुष्पी तीन-तीन यव, स्वर्ण दो यव और विष एक तिल एवं घृत एक पल डालनेसे बनता है। (चरक)

ऐन्धन (सं० त्रि०) इन्धनस्य इदम्, इन्धन-अण्। इन्धन-सम्बन्धीय, जलानेकी लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

ऐन्धायन (सं० पु०) इन्धस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, फक्। इन्ध नामक ऋषिके सन्तान।

ऐन्य (सं० त्रि०) इने सूर्ये स्वामिनि वा भवः, इन-ण्य। १ सूर्यभव। २ स्वामिभव।

३ निम्नश्रेणीकी एक जाति। यह लोग दाक्षिणात्यके कुर्गप्रदेशमें रहते हैं। बढ़ई और लोहारका काम इनके जीविका-निर्वाहका द्वार है। आचार-व्यवहार कोड़गों-जैसा रहता है।

ऐपन (हिं० पु०) चावल और हलदीको एकसाथ पीसकर बनाया हुआ लेपन। यह माङ्गलिक द्रव्य समझा और देवार्चनमें खरचा जाता है। इससे कलस आदिपर थापें लगाते हैं।

ऐब (अ० पु०) १ दोष, बुराई, ख़राबी। २ अवगुण, बुरी आदत। छिद्रान्वेषण करनेवालेको 'ऐबजो' और छिद्रान्वेषणको 'ऐबजोई' कहते हैं।

ऐवारा (हिं० पु०) १ मेषादि रखनेका स्थान, जिस बाड़ेमें भेड़ वग़ैरह रहें। २ गोवाड़, जङ्गलमें जानवरोंके रखनेकी जगह।

ऐबी (अ० वि०) १ दूषणविशिष्ट, जिसके नुक़स रहे। २ दुष्ट, ख़राब। ३ अङ्गहीन, जिसके कोई अज़ो न रहे।

ऐभावत (सं० पु०) इभावतोऽपत्यं पुमान्, अण्। इभावत नामक ऋषिके पुत्र।

ऐभी (सं० स्त्री०) इभ इत्याख्या यस्याः, इभ-अण्-ङीष्। प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८। हस्तिघोषालता, हाथीचिंघार।

ऐमक—अफ़ग़ानस्थानके सुन्नी मुसलमानोंकी एक जाति। हेरातसे उत्तर यह रहते हैं। इनकी संख्या प्रायः पांच लाख है। भाषा कालमुकसे मिलती है। ऐमक वीर एवं वन्य तथा युद्धके लिये प्रसिद्ध हैं।

ऐम्बकुल—दाक्षिणात्यकी एक नीच जाति। इस जातिके लोग कृषिकार्य द्वारा जीविका चलाते हैं। पोशाक कोड़गों-जैसी रहती है। किन्तु यह लोग कोड़गोंके साथ विवाह वा आहारादिका व्यवहार नहीं रखते। कुर्ग प्रदेशमें छः प्रकारके ऐम्बकुल या गोले देख पड़ते हैं।

ऐयत्य (सं० क्ली०) परिमाण, संख्या, मूल्य, मिक़दार, अदद, क़ीमत।

ऐयपदेव—बम्बई प्रान्तस्थ थाना ज़िलेके एक शिलाहार-राजा। १०९४ ई०के ताम्रफलकमें लिखा—अपराजित राजाने ऐयपदेवको डगमगाये साम्राज्यपर जमा दिया था।

ऐयपराज—बम्बई प्रान्तस्थ कोङ्कणके एक शिलाहार-राजा। रत्नगिरि ज़िलेके खारेपाटन नगरमें जो ताम्रपत्र मिला, उसमें इनका नाम लिखा है। इनमें विजेताका गुण भरा रहा। चन्द्रपुर नगरके समीप ऐयपराजका राज्याभिषेक हुआ था।

ऐया—१ नीचजातिविशेष। इस जातिके लोग दाक्षिणात्यवाले मदुरा प्रदेशमें रहते हैं। (हिं० स्त्री०) २ प्रधान वृद्ध स्त्री, इज़्ज़तदार बुड्ढी औरत। ३ श्वसा, सास।

ऐयाम (अ० पु०) समय, दिन, वक़्त, मौक़ा।

ऐयार (अ० पु०) १ धूर्त, छली, उस्ताद, धोकेबाज़। २ मन्द्राजप्रान्तके सलेम ज़िलेकी एक नदी। यह अक्षा० १२° ७´ से १२° ३८´ ४५´´ उ० तथा द्राघि० ७७° ४८´ ४०´´ से ७७° ४८´ १५´´ पू०तक अवस्थित है।

ऐयारी (अ० स्त्री०) धूर्तता, छल, उस्तादी, धोकेबाज़ी।

ऐयावेज—काठियावाड़के उन्द-सरवियाका एक छोटा राज्य और नगर। यह नगर अक्षा० २१° २४´ उ० तथा देशान्तर ७१°४७´ पू० पर अवस्थित है। राजा बड़ोदेके गायकवाड़ और जूनागढ़के नवाब दोनोंको कर देते हैं।

ऐयाश (अ० वि०) १ सुखी, ख़ूब मौज उड़ानेवाला। २ विषयासक्त, रण्डीबाज़।

ऐयाशी (अ० स्त्री०) विषयासक्ति, रण्डीबाज़ी।

ऐर (सं० त्रि०) इरायां भवः, अण्। १ अन्नसे उत्पन्न, अनाजसे पैदा। २ भूमिजात, ज़मीनसे निकला हुआ। ३ जलजात, पानीसे पैदा। (क्ली०) ४ ब्रह्मलोकस्थ सरोवरविशेष। (पु०) ५ एक अति प्राचीन हिन्दू राजा।

ऐरनी—१ बम्बईप्रान्तके धारवाड़ ज़िलेकी एक पहाड़ी। यह उक्त ज़िलेके दक्षिण-पूर्व कोणमें अवस्थित है। ऊंचाई २००से ७०० फ़ीटतक है। उत्तरांश वृक्षशून्य है। किन्तु मध्यभाग और दक्षिणमें झाड़ी लगी है। तुङ्गभद्राके समीप यह डेढ़ मील लम्बी, आध मील चौड़ी और ५००से ७०० फ़ीट तक ऊंची है। चोटी नोकदार है। पार्श्व ढालू हैं। नीचेका मैदान अंजन वृक्षोंसे ढंका है। उत्तरांशमें हरिण एवं वन्य शूकर और दक्षिणांशमें भेड़िये रहते हैं।

२ बम्बईप्रान्तके धारवाड़ ज़िलेका एक बड़ा ग्राम। यह तुङ्गभद्रा नदी किनारे अवस्थित है। रेतमें ख़रबूजे बोये जाते हैं। पहले यहां कंबल बुने जाते थे। किन्तु १८७६-७७ ई०को दुर्भिक्ष पड़नेसे जुलाहोंके भाग जानेपर यह व्यवसाय बन्द हो गया। ऐरानीमें एक किला भी था। १८८० ई०को १२वीं जूनको सवेरे करनल वेलेस्लिने उक्त किलेको अधिकार किया। १८८२ ई०को कपतान बरगोनीने देखभाल इस किलेको ख़ूब मज़बूत बताया था। पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम खाई रही।

ऐरंमद (सं० पु०) देवमुनिके अपत्य। इन्होंने ऋग्वेदके मन्त्र बनाये थे।

ऐरंमदीय (सं० क्लो०) ब्रह्मलोकका एक समुद्र।

ऐरक्य (सं० त्रि०) एरका-ष्य। एरका-जात। एरका देखो।

ऐराक, एराक देखो।

ऐराको, एराकी देखो।

ऐरागैरा (हिं० वि०) १ अपरिचित, जो समझा-बूझा न हो। २ तुच्छ, छोटा।

ऐरापति (हिं०) ऐरावत देखो।

ऐराव (अ० पु०) शतरंजमें किश्त बचानेके लिये बादशाह और किसी दूसरे मोहरेके बीचमें मोहरेका आना। इससे बादशाहपर किश्त नहीं रहती। किन्तु ऐरावका मोहरा उठना नामुमकिन है। घोड़ेकी किश्त पड़नेसे ऐराव नहीं चलता।

ऐरालू (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी विशेष, किसी क़िस्मकी ककड़ी। यह तरबूज़-जैसा रहता और पहाड़पर कुमाऊंसे सिकिमतक उपजता है।

ऐरावण (सं० पु०) इरया जलेन वनति शब्दायते, इरा-वन पचाद्यच्; अथवा इरा सुरा वनमुदकं यस्मिन् तत्र भवः, अण्। १ ऐरावत हस्ती। २ जैनमतानुसार जम्बुद्दीपका सप्तम वर्ष। (जैनहरि० ५।१८)

ऐरावत (सं० पु०) इरा जलानि सन्त्यत्र, मतुप् मस्य वः, इरावान् समुद्रः तत्र भवः अण् अथवा इरावत्या विद्युतोऽयम्। १ इन्द्रहस्ती। ऐरावत शुक्लवर्ण और चतुर्दन्तविशिष्ट है। समुद्रके मन्थनकालपर यह उपजा था। यही पूर्व दिक्का गज है। इसका अपर नाम अभ्रमातङ्ग, ऐरावण, अभ्रमूवल्लभ, श्वेतहस्ती, मल्लनाग, इन्द्रकुञ्जर, हस्तिमल्ल, सदादान, सुदामा, श्वेतकुञ्जर, गजाग्रणी और नागमल्ल है।

> "इत्युक्त्वा प्रययौ विप्रो देवराजोऽपि तं पुनः।
> आरुह्यैरावतं ब्रह्मन् प्रययावमरावतीम्॥" (विष्णुपु० १।९।२५)

२ नागरङ्ग, नारंगी। ३ लकुचवृक्ष, बड़हर। ४ नागविशेष। (क्लो०) ५ इन्द्रधनु। ६ इरावती नदीके तीरका देश।

ऐरावतक (सं० पु०) १ हस्तिशुण्डी, हाथीकी सूंड। २ नागरङ्गवृक्ष, नारंगीका पेड़।

ऐरावतक्षेत्र (सं० क्लो०) कावेरीनदीतीरस्थ एक प्राचीन तीर्थस्थान। ऐरावतक्षेत्रके माहात्म्यमें लिखा है—इन्द्रने वृत्रासुरवधजनित पापसे मुक्ति पानेको इस स्थानमें आ तपस्या और लिङ्गमूर्तिकी स्थापना की थी। शिवकी कृपासे इन्द्रका ऐरावत फिर जी उठा और इस स्थानका नाम ऐरावतक्षेत्र पड़ा।

ऐरावतपदी (सं० स्त्री०) १ काकजङ्घा। २ महा ज्योतिष्मती लता, रतनजोत।

ऐरावती (सं० स्त्री०) इरावत्-इयम्, इरावत्-अण्-ङीप्। १ विद्युत्, बिजली। २ ऐरावतकी स्त्री। ३ वटपत्रीवृक्ष, बड़ा पथरचटा। ४ उत्तरमार्गके एक नक्षत्रका नामान्तर। ५ पञ्चालदेशीय नदीविशेष। आजकल इसे रावी कहते हैं। इसका वेदोक्त नाम परुष्णी है। ६ नागरङ्गवृक्ष, नारंगीका पेड़। ऐरावतीका पकाया हुआ रस अम्ल, उष्ण और सुगन्धित होता है। इससे वात, कास और श्वासका रोग छूट जाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

ऐरिकिन (सं० क्लो०) एरण नगरका प्राचीन नाम। कनिंगहम साहबके मतसे एरणका प्राचीन नाम एरकैन है। एरण देखो।

ऐरिण (सं० क्लो०) इरिणे ऊषरभूमौ भवम्, इरिण-अण्। सैन्धव लवण, पांशुलवण।

ऐरी—मध्यप्रान्तके मंडला ज़िलेका एक सरकारी जंगल। यह अक्षा० २२° २८′ से २२° ४०′ उ० तथा देशा० ८०° ४३′ ४५″ से ८०′ ४६′ ४५″ पू० तक बुढ़नेर और हालों नदीके सङ्गमपर अवस्थित है। ऐरीमें साखू ख़ूब होती है।

ऐरेय (सं० क्लो०) इरा-ढक्। १ मद्य, शराब। २ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। ३ अन्नादि, अनाज वग़ैरह।

ऐर्म्य (सं० क्लो०) इर्माय हितम्, इर्म-ष्यञ्। १ सुश्रुतोक्त अञ्जनविशेष, किसी क़िस्मका काजल या सुरमा। (त्रि०) २ क्षत-पूरणके निमित्त लाभदायक, ज़ख़्मको सुखाने क़ाबिल।

ऐल (सं० पु०) इलाया अपत्यं पुमान्, इला-अण्। १ इलापुत्र। इनका अन्य नाम पुरुरवा है। यह

चन्द्रवंशीय राजा थे। (हिं० पु०) २ जलप्लावन, बाढ़। ३ आधिक्य, बढ़ती। ४ कोलाहल, हल्ला।

ऐलक, एलक देखो।

ऐलब (सं० पु०) कोलाहल, शोर, हल्ला।

ऐलबकार (सं० त्रि०) १ कोलाहलकारी, शोर मचानेवाला। (पु०) २ रुद्रका कुत्ता।

ऐलब्रद (सं० त्रि०) खाद्य लानेवाला, जो खाना लाता हो।

ऐलवालुक (सं० क्ली०) एलवालुक स्वार्थे अण्। एलवालुक, एक अतर। एलवालुक देखो।

ऐलविल (सं० पु०) इलविलाया अपत्यं पुमान्, इलविल-अण्। इलविला-पुत्र, कुवेर।

ऐला (सं० स्त्री०) नदीविशेष। (सह्याद्रिख० वदरीमा० २२अ०)

ऐलाक (सं० त्रि०) ऐलाक्यस्य छात्रः अण, यञ्, लोपः। ऐलाक्यसे विद्या-पढ़नेवाला।

ऐलिक (सं० पु०) इलिन्यां भवः, ठक्। तंसु नामक राजा। यह इलिनीके पुत्र और दुष्मन्तादिके पितामह थे।

ऐलूष (सं० पु०) कवषके अपत्य।

ऐलेय (सं० क्ली०) १ एलवालुक, एक अतर। २ नलुका, नाड़ीका शाक। (पु०) इलाया अपत्यं पुमान्। ३ पुरुरवा। ४ मङ्गल।

ऐल्वालु, एलवालुक देखो।

ऐश (सं० त्रि०) ईशस्य इदम्, अण्। १ ईश-सम्बन्धीय। (अ० पु०) २ सुख, आराम।

ऐश—एक मुसलमान् कवि। यह बादशाह शाह आलमके समय विद्यमान रहे। प्रकृत नाम मुहम्मद असकरी था।

ऐशमूल (सं० क्ली०) लाङ्गलीमूल, एक जड़ी।

ऐशान (सं० त्रि०) १ शिवसम्बन्धीय। (पु०) २ ईशान कोणका वायु। यह कटु और शीतल होता है। (भावप्रकाश)

ऐशानी (सं० स्त्री०) ईशानस्येयम्, ईशान-अण्-ङीप। १ ईशानकोण। २ शक्तिविशेष। ३ दुर्गा।

ऐशिक (सं० त्रि०) ईशस्य अयम्, ईश-ठक्। १ ईश्वर-सम्बन्धीय। २ शिवसम्बन्धीय। ३ राजसम्बन्धीय, बादशाहसे सरोकार रखनेवाला।

ऐशी (सं० स्त्री०) ईशस्य इयम्, अण्-ङीप्। १ ईश्वर-सम्बन्धिनी। २ दुर्गा।

ऐशी—एक मुसलमान कवि। १६७५ ई०को इन्होंने 'इफत-अख्तर' नामक एक मसनवी लिखी थी।

ऐशू (हिं० पु०) पशुरोगविशेष, जानवरोंकी एक बीमारी। इसमें पशु मुख रुक जानेसे जुगाली नहीं करते।

ऐश्वर (सं० त्रि०) १ प्रभु वा ईश्वरसे उत्पन्न। २ शक्तिशाली, आलीशान्। ३ ईश्वर-सम्बन्धीय। ४ सबसे बड़ा। ५ शिव-सम्बन्धीय।

ऐश्वरिक (सं० पु०) आस्तिक, ईश्वरवादी।

ऐश्वरी (सं० स्त्री०) ईश्वरस्य इयम्, अण्-ङीप्। ईश्वरसम्बन्धिनी।

ऐश्वर्य (सं० क्ली०) ईश्वरस्य भावः, ईश्वर-ष्यञ्। १ ईश्वरका धर्म। इसका पर्याय—विभूति और भूति है। ऐश्वर्य अष्टविध होता है—१ अणिमा, २ लघिमा, ३ प्राप्ति, ४ प्राकाम्य, ५ महिमा, ६ ईशित्व, ७ वशित्व और ८ कामावसायिता। २ सम्पत्ति,दौलत। ३ प्रभुत्व, मिलकियत। ४ शासनकर्तृत्व, हुक्मरानी।

ऐश्वर्यकर्मा (सं० पु०) ऐश्वर्यं कर्म यस्य, बहुव्री०। ईश्वर-कर्मयुक्त, बड़े-बड़े काम करनेवाला।

ऐश्वर्यवत् (सं० त्रि०) ऐश्वर्यमस्त्यस्य, ऐश्वर्य-मतुप्, मस्य वः। ऐश्वर्यविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऐषमः (सं० अव्य०) अस्मिन् वत्सरे इति निपातनात् साधुः। सद्यः परुत्परार्यैषम इत्यादि। पा ५।३।२२। वर्तमान वत्सरमें, इमसाल।

ऐषमस्तन (सं० त्रि०) ऐषमो भवः, ऐषमस्-तन। ऐषमोह्यःश्वसो ऽन्यतरस्याम्। पा ४।२।१०५। ऐषमसम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषमस्त्य (सं० त्रि०) एषमो भवः, ऐषमस्-त्यप्। वर्तमान वत्सर-सम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषावीर (सं० त्रि०) दुर्बल, शक्तिहीन, कमजोर।

ऐषिका (सं० स्त्री०) १ पाठा। २ विज्ञता।

ऐषीक (सं० क्ली०) इषीकमेव, स्वार्थे अण्। १ महाभारतोक्त एक पर्वत। २ अस्त्रविशेष। इषीक देखो।

ऐषुकारि (सं॰ पु॰) इषुकारस्य अपत्यम्, इषुकार-इञ्। बाणनिर्माताका पुत्र, तीर बनानेवालेका बेटा।

ऐषुकारिभक्त (सं॰ क्ली॰) ऐषुकारिणां विषयो देशः, ऐषुकारि-भक्तल्। भौरिक्याद्यैषु कार्यादिभ्यो विधलभक्तलौ। पा ४।२।५४। १ ऐषुकारिविषय। २ ऐषुकारि देश, जिस मुल्कमें तीर बनानेवाले रहें।

ऐषुकार्यादि (सं॰ पु॰) पाणिन्युक्त गणविशेष। इसमें ऐषुकारि, सारस्यायन, चान्द्रायण, द्व्याक्षायण, त्र्याक्षायण, औड़ायन, जौलायन, खाड़ायन, दासमित्रि, दासमित्रायण, शौद्रायण, दाक्षायण, शायण्डायन, तार्क्ष्यायण, शौभ्रायण, सौवीर, सौवीरायण, शयण्ड, शौण्ड, शयाण्ड, वैश्वमानव, वैश्वधेनव, नड़, तुण्डदेव, विश्वदेव और सापिण्डि शब्द पड़ता है।

ऐष्टक (सं॰ क्ली॰) याज्ञिक ईंटोंका ढेर।

ऐष्टिक (सं॰ पु॰) इष्टि-ठक्। १ इष्टिके व्याख्यानका ग्रन्थ। २ यज्ञके हितका विषय। ३ अन्तर्वेदिक कर्मविशेष। (त्रि॰) ४ यज्ञके साधनमें समर्थ। ५ यज्ञ-सम्बन्धीय।

ऐष्टिकपौर्तिक (सं॰ त्रि॰) इष्टापूर्त-सम्बन्धीय।

ऐसा (हिं॰ क्रि॰-वि॰) इस प्रकारसे, इस तौरपर।

ऐहलौकिक (सं॰ त्रि॰) इहलोके भवः, इहलोक-ठक्। १ वर्तमान जन्मसम्बन्धीय। २ मर्त्यलोक सम्बन्धीय, इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिक (सं॰ त्रि॰) इह भवम्, इह-ठक्। १ इहलोक-जात, इस दुनियासे पैदा। २ इहलोक-सम्बन्धीय, इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिकदर्शी (सं॰ त्रि॰) इहलोकके कार्य निरीक्षण-करनेवाला, जो इस दुनियाके काम देखता हो।

ऐहोल—बम्बईप्रान्तके बीजापुर ज़िलेका एक ग्राम। यहां जो शिलालेख मिला, उसमें २य पुलकेशीका परिचय पड़ा है।

ओ

ओ—स्वरवर्णका त्रयोदश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान कण्ठ और ओष्ठ है। यह वर्ण दीर्घ एवं प्लुत भेदसे दो प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें कहा, कि ओकार पञ्चदेवमय, रक्तविद्युताकार, त्रिगुणात्मक, ईश्वर, पञ्चप्राणमय, देवमाता और परमकुण्डली है। लिखनेमें यह वाम दिक्से कुण्डली बन दक्षिण दिक् मध्यस्थलमें सिकुड़ेगा, उसके पीछे अधोदेशमें पुनर्वार वामदिक्को चलेगा। इसकी सकल रेखावोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं। इसकी मात्रा ब्रह्मरूपिणी महाशक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र)

तन्त्रशास्त्रोक्त ओकारका नाम—सत्य, पीयूष, पश्चिमास्य, श्रुति, स्थिरा, सद्योजात, वासुदेव, गायत्री, दीर्घजङ्घक, आप्यायनी, ऊर्ध्वदन्त, लक्ष्मी, वाणी, मुखी, द्विज, उड्डेशदर्शक, तीव्र, कैलास, वसुधाधर, प्रणवांश, ब्रह्मसूत्र, अजेश, सर्वमङ्गला, त्रयोदशी, दीर्घनासा, रतिनाथ, दिगम्बरा, त्रैलोक्यविजया, प्रज्ञा और प्रीति-बीजादिकर्षिणी है। मातृकान्यासके अनुसार ऊर्ध्व दन्तको पंक्तिपर न्यास किये जानेसे अभिधानमें ओकारका एक नाम 'ऊर्ध्वदन्तपंक्ति' भी है।

२ धातुका एक अनुबन्ध। "ओनिष्ठा-त नः।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य॰) ३ सम्बोधन। ४ आह्वान। ५ स्मरण। ६ अनुकम्पा। (पु॰) ७ ब्रह्मा।

ओं (सं॰ अव्य॰) १ ओङ्कार, प्रणव। ओम् देखो। २ तथास्तु, आमीन्, बहुत अच्छा।

ओंइछना (हिं॰ क्रि॰) वारना, सदके या न्योछावर करना।

ओंकना, ओकना देखो।

ओंगना (हिं॰ क्रि॰) शकटके अक्षमें तेल देना, गाड़ीके धुरमें तेल लगाना। ओंगनेसे शकटका चक्र बेखटके चलता है।

ओंगा (हिं॰ पु॰) अपामार्ग, लटजीरा।

ओंटना, ओटना देखो।

ओंठ (हिं॰) ओष्ठ देखो।

ओंड़ा (हिं॰ वि॰) १ गभीर, गहरा। (पु॰) २ गर्त, गड्ढा। ३ सेंध।

ओंध (हिं॰ पु॰) रज्जुविशेष, एक रस्सी। इससे छाजन पूरी करनेको लकड़ियां बांधी जाती हैं।

ओआ (हिं॰ पु॰) हस्ती पकड़नेका गर्त, हाथी फांसनेका गड्ढा।

ओआक (सं॰ अव्य॰) १ वमनके वेगका शब्द, कैके

ज़ोरकी आवाज़। २ वकविशेष, किसी क़िस्मका बगला। ३ वकविशेषका अव्यक्त शब्द, किसी बगलेकी बोली।

ओई (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक दरख़्त।

ओक (सं॰ स्त्री॰) उच-क निपातनात् साधुः। १ गृह, घर। २ आश्रय, ठिकाना। (पु॰) ३ पक्षी, चिड़िया। ४ शूद्र, वृषल।

ओकः (सं॰ क्लो॰) उच्यते समवैति अस्मिन्, उच-असुन्। १ आश्रय, ठिकाना। २ गृह, घर। ३ स्थान, मुकाम।

ओक्कान—१ निम्नब्रह्मदेशस्थ पेगू प्रान्तके हन्तावाड़ी ज़िलेकी एक नदी। यह पेगू-योमा पर्वतसे निकल मागोनके समीप हलैंगमें जा गिरती है। ओक्कान नदी बहुत छोटी है। किन्तु वर्षाके समय ओक्कान ग्रामतक इसमें बड़ी-बड़ी नावें चल सकती हैं। साखू और दूसरी लकड़ीके ढूंढ़े इसमें बहाकर हलैंग पहुंचाये जाते हैं। २ निम्न ब्रह्मके हन्तावाड़ी ज़िलेका एक ग्राम। यह हलैंग नदीसे ५ मील पश्चिम अवस्थित है। इसमें दो सराय और दो वर्गाकार निर्मित बौद्ध मन्दिर हैं। सुननेमें आया, प्रायः ३०० वर्ष हुये किसी तेलङ्गने इसे बसाया था।

ओककेतु—बम्बई प्रान्तस्थ मालखेड़वाले राष्ट्रकूट राजावोंके छत्रका चिह्न। सिरूरके शिलालेखमें लिखते, कि अमोघवर्षके तीन राजच्छत्र रहे—शङ्ख, पालिध्वज और ओककेतु।

ओकण (सं॰ पु॰) केशकीट, जूं।

ओकणि (सं॰ पु॰) मत्कुण, खटमल।

ओक्ताई ख़ान्—चङ्गेज़ ख़ान्के बड़े लड़के। १२२७ ई॰को इन्हें अपने पिताके राज्य तातार और उत्तर-चीनका उत्तराधिकार मिला था। १२४२ ई॰को यह अधिक शराब पीनेसे मर गये। ओकताई ख़ान् बड़े सहृदय रहे। यह अपनी प्रजाको निरपेक्ष भाव और न्यायसे शासन करते थे। इनकी वीरता और बुद्धिमत्ता प्रसिद्ध है। ओकताई ख़ान् बड़े दानी थे। राज्यका उत्तराधिकार इनके पुत्र यांकूब ख़ान्को मिला।

ओकना (हिं॰ क्रि॰) १ वमन करना, कै निकालना। २ महिषवत् शब्द करना, भैंसकी तरह बोलना।

ओकनी (सं॰ स्त्री॰) ओकणि देखो।

ओकपति (सं॰ पु॰) सूर्य वा चन्द्र, आफ़ताब या माहताब।

ओकरी (सं॰ स्त्री॰) राजगृहके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। भविष्यब्रह्मखण्डमें लिखा है—

कलियुगके मध्य यहां शस्त्रजीवी कृषक वास करेंगे। कलिकालमें ओकरीका नारीगण वेश्या और द्विजगण वेश्यावृत्तिपरायण होगा। यहांके लोग पापके कारण सर्पाघातसे विनष्ट होंगे। (भ॰ ब्रह्मखण्ड ३७।५०-५२)

ओकाई (हिं॰ स्त्री॰) १ वमन, कै। २ वमनेच्छा, कै करनेकी ख़ाहिश।

ओकार (सं॰ पु॰) 'ओ', ओ अक्षर। ओ देखो।

ओकारान्त (सं॰ त्रि॰) अन्तमें ओकार रखनेवाला, जिसके अख़ीरमें 'ओ' रहे।

ओकिवस् (सं॰ त्रि॰) उच-क्वसु। समवेत, एकत्र, मिला हुआ।

ओकी, ओकाई देखो।

ओकुल (सं॰ पु॰) उच-उलच् निपातनात् साधुः। अर्धगन्ध, अपक्व गोधूम। वैद्यक मतसे यह गुरु, शुक्रवर्धक, मधुर, बलकारक, स्निग्ध, रुचिकारक, मत्ततावर्धक और रक्त एवं वायुनाशक होता है।

ओकोदनी (सं॰ स्त्री॰) ओकः आश्रयस्थानमदनं यस्याः, बहुव्री॰। मत्कुण, खटमल।

ओकोदशानी (सं॰ स्त्री॰) प्राचीर, दीवार।

ओक्कणी (सं॰ स्त्री॰) ओच-कण-अच्-ङीप्। मत्कुण, खटमल।

ओक्य (सं॰ त्रि॰) १ गृहवासीके निमित्त उत्तम, जो घरमें रहनेवालेके मुवाफ़िक़ हो। (क्लो॰) २ प्रसन्नता, ख़ुशी। ३ सुविधाजनक स्थान, आराम देनेवाली जगह। ४ विश्रामागार, मकान्।

ओखद (हिं॰ स्त्री॰) औषध, दवा।

ओखरी, ओखली देखो।

ओखल (हिं॰ पु॰) १ ऊषर, पड़ती ज़मीन्। २ उदूखल, ओखली।

ओखलडांगा—युक्तप्रदेशके कुमायूं जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २९° १४′ २०″ उ०, तथा देशा० ७९° ३९′ पू०पर मुरादाबाद और अल्मोड़ेके मध्यवर्ती पथमें कोशीला नदी किनारे अवस्थित है। इस स्थानमें अति उत्कृष्ट चावल होता है।

ओखली (हिं॰ स्त्री॰) उदूखल, कांड़ी। यह काष्ठ वा प्रस्तरकी होती है। इसमें धान्यको छोड़ और मूसलसे कूट भूसी निकालते हैं। हिन्दुस्थानमें प्रायः भूमिको खोद और पत्थर जोड़ ओखली बना लेते हैं।

ओखा (हिं॰ पु॰) १ व्याज, बहाना। (वि॰) २ शुष्क, सूखा। ३ कुटिल, टेढ़ा, खराब। ४ दूषित, खोटा। ५ विरल, जो गाढ़ा न हो।

ओखामण्डल—काठियावाड़ प्रान्तका एक छोटा जिला। यह अक्षा० २२° एवं २२° २८′ उ० और देशा० ६८° ५९ तथा ६९° १२′ पू०के मध्य अवस्थित है। ओखा-मण्डलसे उत्तर कच्छकी खाड़ी, पश्चिम अरब-समुद्र और पूर्व तथा दक्षिण रान या नाना दलदल पड़ता, जो इसे नवानगर जिलेसे पृथक् करता है। असलमें यह एक द्वीप है। क्षेत्रफल २५० वर्गमील है। कहीं कहीं पहाड़ी देख पड़ती है। थूहरका जंगल बहुत है। यहां गोमती नदी छोटी है। भीमगज झीलसे एक पहाड़ी नाला भी निकला है। बरवाला, बरदिया और पोसितरामें रेतीला पत्थर बहुत होता, जो मकान् बनानेमें काम देता है। मूलवासर, मूलवेल और सामलासरमें बड़े-बड़े तालाब हैं। घर-घर और खेत-खेत कूवें बने हैं। पानी प्रायः खारी है। समुद्र-के किनारे कुछ नहीं उपजता। किन्तु भीतरी भूमि उर्वरा है। दक्षिणांशकी अपेक्षा उत्तरांशमें दूनी चीज़ होती है। वनका अभाव है। कहीं कहीं बबूल और इमलीके वृक्ष लगे हैं। बम्बई, सूरत, कराची और जंजीबारके साथ व्यवसाय होता है। बाजरी, तिल, घी, घास, चूना और नमक बाहर भेज जाता है। चावल, चना, गेहूं, ज्वार, कपासका बीज, चीनी, मसाला, आलू और कपड़ा बाहरसे आता है। रूपन और बेयत बंदर हैं। रूपन द्वारकासे १ मील उत्तर पड़ता है। खाड़ीमें पानीके भीतर छिपे पहाड़ हैं। जहाजोंको खूब सचेत रहना पड़ता है। यहां ब्राह्मण और लोहाने महाजन हैं। पहले यहांके लोग काब, मोद और काल तीन श्रेणीमें विभक्त थे। किन्तु काब और मोद अब देख नहीं पड़ते। काल जातिसे वर्तमान वाघेरोंकी उत्पत्ति है। पहले ओकृष्णने यहां अपना राज्य स्थापित किया था। किन्तु ओखामण्डलके भाट वर्णन करते हैं—ई० २य शताब्दके मध्य काब्ब लोगोंने इसे फिर जीत लिया। सिरोयाके वीर सुकुर बेलिमने भी ओखामण्डल अधिकार किया था। किन्तु द्वारकाके समुद्रमें डूब जानेसे वह अपनी राजधानी गोरिंजाको उठा ले गये। पीछे सिरोयाके दूसरे वीर मैहेम-गुदुकने सुकुर बेलिमको मार अपना राज्य जमाया। अन्तको काल लोगोंने फिर ओखामण्डल जीता था। ई० १४ शताब्दके समय काठियावाड़के चावड़ राजपूतोंने आक्रमण किया और कालों या वाघेरोंको यहांसे निकाल दिया। अक्षयराज राजा बने थे। फिर उनके पुत्र भूवड़राय और भूवड़रायके पुत्र जयसेन सिंहासनारूढ़ हुये। जयसेनने ही चावड़ा-पादर नगर बसाया और एक बड़ा तालाब बनाया था। मूलवासर झीलमें उनके समयका एक पत्थर मिला है। जयसेनका उत्तराधिकार उनके भाई जग-देवने पाया। जगदेवके पुत्र मङ्गलजी अपने पिताके मृत्यु होने बाद कुछ वर्ष जी कर मर गये। उनके लड़के देवलदेव फिर राजा बने। देवलदेवके बाद उनके लड़के जगदेव सिंहासनपर बैठे, जिनके कनक-सेन और अनन्तदेव दो पुत्र रहे। कनकसेनने ही 'कनकपुरी' बसाई, जो पीछे 'बसाई' कहाई। प्राचीन कालपर यह पुरी ओखामण्डलके व्यवसायका केन्द्र-स्थल थी। वर्तमान समय केवल एक ग्राम रह गया है। कनकसेनके बनाये बड़े-बड़े जैन-मन्दिर टूटे-फूटे पड़े हैं। अनन्तदेव द्वारकामें राज्य करते थे। उनके अयोग्य होनेसे परमार या हेरोल राजपूतोंने अपना अधिकार जमा लिया। किन्तु चावड़ों और उनमें युद्ध होने लगा। इधर वेरावलजी और वीजलजी दो राठौर राजपूत जोधपुरसे निकाल दिये गये थे। वह कितनी ही फौजके साथ द्वारका आये।

फिर चावड़ोंसे मिल उन्होंने एकबार हेरोलोंको भोज दिया। सब लोगोंके भोजनपर बैठ जानेसे राठोरोंकी मन्त्रणाके अनुसार चावड़ोंने धोकेसे आ उनमें कितनों होको मार डाला था। फिर राठोरोंने चावड़ोंको भी नीचा देखाया। अपने भीषण कार्यके उपलक्षमें दोनों भाइयोंने 'वाधेत' उपाधि ग्रहण किया था। राठोरोंका राज्य धीरे धीरे बढ़ा। वेरावलजीने कुछ सेना ले काठियावाड़ आक्रमण और सोमनाथपाटन अधिकार किया था। उन्होंने अरामदमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। राज्यका उत्तराधिकार पुत्र विक्रमसीको मिला था। कच्छके राव जियाजीने अपनी कन्या उन्हें व्याह दी। विक्रमसीके बाद नौ राने १२० वर्षतक राज्य करते रहे। १०वें राना सानगनजी अरामदेके राजावोंमें बड़े शक्तिशाली निकले। उन्होंने अपना राज्य खम्भालिया नगरतक बढ़ा लिया था। किन्तु उनके पुत्र भीमजीने राज्य बनने पर मक्का जानेवाले कितने ही जहाज़ लूटे। इससे अप्रसन्न हो अहमदाबादके सुलतान महमूदने उन्हें दबाना चाहा। उसी समय भीमजीने सैयद मुहम्मदका जहाज़ लूटा और उन्हें दो दुधमुंहे लड़कोंके साथ जहाज़में छोड़ा। उनकी स्त्री कैद कर अरामदे भेजी गयी थीं। इसपर सुलतान की फौज बदला लेने आयी। मुसलमानोंने द्वारका लूटी थी। भीमजी भाग गये। किन्तु उन्होंने थोड़े ही दिनों बाद आ मुसलमानोंको मार भगाया था। भीमजी और हमीरजीके वंशज मानकोंमें द्वारकाके अधिकार पर झगड़ा हुआ। मानकोंने वाघेरोंके साहाय्यसे द्वारकाको अधिकार किया। भीमजीने भी अपना पक्ष सबल न देख सन्धि कर ली। १५९२ ई०को अरामदे के वाघल राजा शिव रानाने गुजरातके सुलतान मुज़फ्फ़रको शरण दिया। कारण अहमदाबादके सूबेदार खान्-आज़मसे काठियावाड़में हार वह ओखामण्डल भाग आये थे। किन्तु खान् आज़मकी फौज उनके पीछे रही। वाघेलोंसे युद्ध होनेपर शिवराना मारे गये। शिवरानाके पुत्र सांगनजी काठियावाड़को भागे थे। इधर द्वारकाके सामल मानकने अपने भाई मल्ल मानकसे कहा—

किसी न किसी प्रकार मुसलमानोंको यहांसे निकाल बाहर करना चाहिये। मैं सांगनजीको ढूंढ़ने जाता हूं। तुम मुसलमानोंसे लड़ो और उन्हें शान्तिसे बैठने मत दो। सात वर्ष बाद वह सांगनजीको ले लौटे थे। फिर घोर युद्ध होने लगा। अन्तको मुसलमान हारे और ओखामण्डल छोड़ भागे। सांगनजी अरामदेमें सिंहासनारूढ़ हुये थे। सांगनजीके बाद उनके पुत्र संग्रामजीने राज्यका उत्तराधिकार पाया और कुछ वर्ष राज्यका सुख उठाया। फिर अखेरजी राजा बने थे। उनकी बहनका विवाह नवानगरके जामसे हुआ। १६६४ ई०को अखेरजीके मरनेपर भोजराजजीने उत्तराधिकार पाया था। उनके एक लड़की और सात लड़के थे। लड़कीका विवाह कच्छके रावसे हो गया। ज्येष्ठपुत्र वाजिराजजी अपने भाइयोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। इसीसे उन्हें पोसितरा नगर अलग दे दिया गया। १७१५ और १७१८ ई०को अरामदेके वाघेल राजा द्वारकावाले वाघेरोंके साथ काठियावाड़में कितनी ही वार घुसे। किन्तु नवानगर, गोंडल और पोरबंदरकी फौज उनपर चढ़ी थी। इससे उन्हें बड़ी हानि उठाना पड़ी। एक राजा द्वारका और बसाईमें राज्य करने लगे। १८०४ ई०को डाकुवोंने एक बम्बईका जहाज़ लूट लिया। मल्लाह और मुसाफिर पानीमें फेंके गये। अंगरेज सरकारने जो लड़ाईका जहाज़ शास्ति देनेको भेजा, वह खाली हाथ लौटा था। क्षतिपूरण मांगा जानेपर वाघेर अस्वीकार कर गये। किन्तु १८०७ ई०को करनल वाकर उनसे क्षतिपूरण लेने फौजके साथ द्वारका पहुंचे थे। वाघेल और वाघेर राजा एक लाख दश हज़ार रुपया देनेको सम्मत हुये। किन्तु १८१० ई०को उन्होंने फिर लूट मार मचायी थी। बड़ोदेके रेसीडण्ट कप्तान कारनकने द्वारका कुछ सवार भेज झगड़ा मिटाया। किन्तु डाका पड़ता ही रहा। १८१७ ई०को १८वीं नवम्बरको अंगरेज सरकारने द्वारका और बेयत तीर्थस्थान समझ गायकवाड़के अधीन किये थे। गायकवाड़ने इसके बदले ओखामण्डलके राजावोंका जुर्माना और

अंगरेजी फौजके चढ़नेका खर्च डाल दिया। १८१८ ई०को पद्ममल मानकके अधीन कुछ राजा बिगड़े थे। किन्तु स्थानीय सेनाने उन्हें शीघ्र ही दबा दिया। १८१९ ई०को वाघेरोंने विद्रोह उठा मिष्टर हेण्डलीको पोरबन्दर भगाया था। १८२० ई०को बम्बई सरकारने करनल ष्टानहोपको लड़ने भेजा। उन्होंने अकस्मात् द्वारका अधिकार कर राजावोंको नीचा देखाया था। इस युद्धमें कपतान मोरियट मारे गये। द्वारका-नरेश मूलूमानक और उनके छोटे भाई वरसो मानक भी धराशायी हुये। राणा संग्रामजी पकड़ कर सूरत भेजे गये। किन्तु कच्छके रावने ज़मानत दे उन्हें छोड़ा लिया था। फिर शान्ति स्थापित हुई। १८५७ ई०को वाघेरोंने काठियावाड़ पर आक्रमण मारा था। लेफटिनण्ट बरटनने द्वारका जा इस उपद्रवका कारण पूछा। वह वाघेरोंसे अच्छा चाल-चलन रखनेको जमानत ले बड़ोदे लौट आये। दूसरे वर्ष वसाईके वाघेर राजावोंने खुले मैदान बलवा कर बेयत द्वीप और उनके साथी सिवन्दियोंने दुर्गको अधिकार किया था। मांडवीसे कपतान बेले कुछ सेना ले बेयतमें जा उतरे और दुर्गपर झपट पड़े, किन्तु दुर्ग सुदृढ़ रहनेसे कुछ कर न सके। रातको वाघेर स्वयं दुर्ग छोड़ वसाई भाग गये। फिर बड़ोदेके मन्त्रियोंने सरकार अंगरेजसे अलग रहनेको कह वसाई आक्रमण किया था। वसाईको क़िलेबन्दी मज़बूत रहनेसे कई बार युद्ध हुआ। अन्तको बड़ोदेके गायकवाड़ने वाघेरोंसे सन्धि-कर झगड़ा मिटाया। दूसरे वर्ष फिर उपद्रव उठा था। गायकवाड़ने लड़ने-भिड़नेका सब काम अंगरेजोंको सौंप दिया। वाघेरोंने आक्रमण मार द्वारका और बेयत द्वीप अधिकार किया था। जोधा मानक ओखा-मण्डलके राजा बने। फिर करनल डोनोवन कुछ सेना ले बेयत पहुंचे थे। युद्धमें न हारते भी वाघेर क़िला छोड़ द्वारका भाग गये। कपतान डोनोवनने शीघ्र ही द्वारकाको जा आक्रमण किया और वाघेरोंको जंगलमें खदेर दिया। अन्तको उन्होंने ओखामण्डल छोड़ अभयपुर-पहाड़में खाई खोद डेरा डाला था।

१८५९ ई०के दिसम्बर मास करनल होनरने कितने ही फौजके साथ आक्रमण मार उन्हें वहांसे भी निकाल बाहर किया। कुछ वाघेर राजावोंने गिर पहाड़की राह ली थी। बाकी अपने हथियार रख ओखामण्डल लौटनेको सम्मत हुये। उधर जोधा मानकके मर जानेसे गिर पहाड़के वाघेर भी पकड़े गये। १८६२ ई०को कैद किये वाघेर निकल भगे और ओखामण्डल पहुंच उपद्रव उठाने लगे। काठिया-वाड़में कई वर्ष लूट मार होते रही। १८६७ ई०को मेजर रेनोलडसने उन्हें परास्त किया था। युद्धमें मेजर रेनोलडस् आहत और पोलिटिकल एजण्टके सहकारी कपतान हेबर्ट एवं लाटूश हत हुये। इसपर वाघेर शान्त पड़े और फिर कभी ज़ोरसे न लड़े।

ओग (हिं० पु०) कर, महसूल, लगान।

ओगण (सं० त्रि०) अवगण्यते, अव-गण कर्मणि क सम्प्रसारणञ्च। अवगण्य, नफ़रत किया हुआ।

ओगर—एकप्रकार सन्न्यासी। यह अपनेको अउघड़ योगी भी कहते हैं। हाथमें रस्सीसे लिपटी हुई छड़ी रहती है। ओगर यज्ञोपवीत नहीं पहनते। मरनेपर देह जलाना मना है। शवका देह समाधिस्थ किया जाता है। सिन्धुप्रदेशमें दो-एक ओगर योगी देख पड़ते हैं।

ओगरना (हिं० क्रि०) अवगरण होना, चूना, पसीजना, पनियाना।

ओगल (हिं० पु०) १ ऊषर, पड़ती ज़मीन्। २ कूपविशेष, एक कुवां।

ओगीयस् (सं० त्रि०) उग्र, अत्यन्त तेजस्वी।

ओघ (सं० पु०) उच-घञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ समूह, ढेर। २ नदीवेग, पानीका बहाव, बाढ़। ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ उपदेश, नसीहत। ५ द्रुतनृत्य, फुर्तीला नाच। ६ नदी, दरया।

ओघदेव (सं० पु०) प्राचीन शिलालिपि-वर्णित उच्छकल्पके एक महाराज। इनकी पत्नी कुमारदेवी थीं। (Inscriptionum Indicarum, Vol III. p. 119.)

ओघरथ (सं० पु०) एक राजा। यह ओघवान् नृपतिके पुत्र और ओघवतीके भ्राता थे।

ओघवत् (सं० वि०) ओघ: जलवेगादिरस्त्यस्य, ओघ-मतुप् मस्य व: । १ जलवेगादियुक्त, जोरसे बहनेवाला । (पु०) २ एक राजा । यह ओघरथके पिता थे । (भारत, अनु० २अ०)

ओघवती (सं० स्त्री०) १ महाभारतोक्त ओघवान् राजाकी कन्या । इन्होंने स्वामीके आज्ञानुसार द्विजरूपधारी अतिथि धर्मको अपना शरीरतक दे डाला था। धर्मने परितुष्ट हो उन्हें वर प्रदान किया। उसीसे यह लोकोपकारार्थ अर्ध देहसे नदी बन गयीं। (भारत, अनु० २अ०) २ कुरुक्षेत्रकी एक नदी। (भारत, भीष्म०)

ओङ्कार (सं० पु०) ओम्-कार। १ प्रणव। पहले ओङ्कार उच्चारण कर, पीछे वेद पढ़ते हैं। ब्रह्माके कण्ठको फोड़ प्रथम ओङ्कार और अथ शब्द निकला था। इसीसे यह दोनों शब्द माङ्गलिक समझे जाते हैं। ओम् देखो। २ आरम्भ, शुरू। ३ सप्त समावयवका प्रथम अवयव। ४ एक लिङ्ग। "ओङ्कारं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयन्तु विलोचनम्।" (काशीखण्ड)

ओङ्कारभट्ट—एक प्राचीन संस्कृतग्रन्थकार। भूगोलसार नामक पुस्तक इन्होंने लिखा था।

ओङ्कारमान्धाता (सं० पु०) मध्यप्रदेशमें नीमाड़ जिलेके अन्तर्गत नर्मदा नदीका मध्यवर्ती एक द्वीप। यह अक्षा० २२° १४′ उ० और देशा० ७६° १७′ पू० पर अवस्थित है। चलित नाम मान्धाता है। ओङ्कारमूर्तिधारी महादेवका मन्दिर रहनेसे इस स्थानको ओङ्कारमान्धाता भी कहते हैं। मान्धाताका प्राचीन नाम 'वैदूर्यशैल' था। स्कन्दपुराणके रेवाखण्डमें लिखा है—राजा मान्धाताने ओङ्कारके निकट प्रार्थना की, जिससे सन्तुष्ट हो उन्होंने वैदूर्यशैलके बदले मान्धाता संज्ञा रख दी।*

इस द्वीपका अवस्थान अति सुन्दर है। इससे थोड़ी दूरपर नर्मदाकी कावेरी नाम्नी एक शाखा बहती है। फिर इसी नामकी एक छोटी नदी नर्मदासे अलग रह मान्धाताके निकट कावेरीमें जा मिली है। एक ही स्थानमें दो सङ्गम हैं। ऐसा पवित्र तीर्थ भारतवर्षमें अति विरल है। पुराणादिका तीर्थमाहात्म्य देखते ऐसे तीर्थमें वास वा स्नान करनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है।

यहां नर्मदाके उभय पार्श्वपर हरे रङ्गका पहाड़ देख पड़ेगा। पहाड़के मध्य जहां नदीका प्रवाह चलता, वहां जल गभीर, स्वच्छ और शान्त रहता है। जलमें असंख्य कच्छप और मत्स्य खेलते फिरते हैं। वह इतने निर्भीक और विश्वासी रहते, कि घाट किनारे लाई छोड़ देनेसे निर्भय आ खाया करते हैं। द्वीपका परिमाण प्राय: एक वर्ग मील है।

ओङ्कार लिङ्ग आधुनिक नहीं। स्कान्द, शिव, पद्म प्रभृति पुराणोंमें ओङ्कारका नाम उक्त हुआ है। शिवपुराणमें लिखा है,—"किसी समय महर्षि नारद गोकर्ण तीर्थसे विन्ध्यपर्वतको आये थे। यहां विन्ध्यने बड़े सम्मानसे उनकी पूजा की। पहले नारदको विश्वास रहा—विन्ध्यपर्वतके पास सब कुछ है, किसी वस्तुका अभाव नहीं; इसीसे विन्ध्य अहङ्कार करते—हमारे सब है। अतएव नारदने निश्वास छोड़ा था। विन्ध्यने समझ सकनेपर पूछा,—'भगवन्! मैंने क्या दोष किया, जो आपने निश्वास छोड़ दिया है।' नारदने कहा,—'विन्ध्य तुम्हारे पास सब कुछ है। किन्तु तुम्हारे ऊपर देवता

---

* मान्धातोवाच।
यदि तुष्टोऽसि देवेश वरं दातुं त्वमिच्छसि।
वैदूर्य्यो नाम शैलेन्द्रो मान्धाता ख्यातुमर्हतु॥
देवस्थानसमं ह्येतत् त्वत्प्रसादाद्भविष्यति।
अन्नदानं तप: पूजा तथा प्राणविसर्जनम्॥
ये कुर्व्वन्ति नरास्तेषां शिवलोकनिवासिना॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा मान्धातु: परमेश्वर:।
उवाच वचनं देवो मान्धातारं महीपतिम्॥
सर्व्वमेतन्नृपश्रेष्ठ मत्प्रसादाद्भविष्यति।
यस्मो चोर्य्यं महीपाल दृष्टाद्यत्वयाऽनघ॥
तदा प्रभृति मान्धाता वैदूर्य्यो गीयते गिरि:।
अस्य तीर्थस्य माहात्म्यान्मान्धाटप्रमुखा नृपा:।
सर्व्वकामसमापन्ना लोके क्रीड़न्ति वैष्णवे।
श्रवणात् कीर्त्तनाद्वापि इयमेधफलं लभेत्॥"
(स्कन्दपुराण, रेवाखण्ड ११अ०)

नहीं रहते। मेरु तुम्हारी अपेक्षा उच्च है। उसमें देवता वास करते हैं।' यह कहकर नारद जहांसे आये, वहीं चले गये। पीछे विन्ध्य अपनेको धिक्कार दे परिताप करने लगे और शिवकी पूजनेकी इच्छासे आजकल जहां ओङ्कार विद्यमान है, वहीं आकर पहुंच गये। यहां उन्होंने मृत्तिकाके एक शिव बनाये और एक स्थानमें रह अचल भावसे छह मास शिवके ध्यानमें विताये थे। आशुतोष प्रसन्न हुये और विन्ध्यको सम्बोधन कर कहने लगे,—'अपनी इच्छाके अनुसार वर मांगो।' तब विन्ध्य कातरकण्ठसे बोल उठे,—'हे देवादिदेव! यदि आप प्रसन्न हुये हैं, तो मेरी इच्छाके अनुसार शरीर बढ़ाईये। प्रभो! आपका जो ज्योतिर्मय रूप (ओङ्कार) सकल वेदोंमें वर्णित है, उसी भक्तवाञ्छित रूपसे मुझे दर्शन दीजिये। महादेवने भक्तकी वाञ्छा पूरी की और मनोभाव प्रकाशकर यह बात कह दी,—'क्या करें, अशुभ वरदान अन्यको दुःखजनक होगा सही, तथापि तुम्हारी इच्छा हमने पूर्ण की।' इसी समय देवों और ऋषियोंने शिवका पूजन किया और उनसे वहीं उसी रूपमें रहनेको कहा। महादेव मानवके सुखको वहीं ठहर गये। इसी प्रकार एकमूर्ति ओङ्कार और पार्थिव लिङ्ग दो भागमें विभक्त हुआ। ओङ्कारमूर्तिका सदाशिव और पार्थिव लिङ्गका नाम अमरेश्वर है।"†

आजकल द्वीपके मध्यभागमें ओङ्कारलिङ्गका और नदीके दक्षिण-भागमें अमरेश्वरका मन्दिर है। स्थानीय पूजक ओङ्कारको आदिलिङ्ग कहा करते हैं। रेवाखण्डमें भी ओङ्कारको आदिदेव बताया है।

"ओङ्कारमादिदेवञ्च ये वै ध्यायन्ति नित्यशः।" (२२अ०)

तीर्थयात्री द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग दर्शन करनेकी इच्छासे आ पहले ओङ्कारमान्धाता और पीछे शिवके पार्थिवलिङ्ग अमरेश्वरका दर्शन लेते हैं। पश्चिमके शास्त्रज्ञ पण्डित इसी ओङ्कारमूर्तिको ईश्वरका प्रकृत लिङ्ग मानते हैं।

जिस समय देवद्वेषी सुलतान् महमूदने सोमनाथका मन्दिर तोड़ा, उस समय भी ओङ्कार और अमरेश्वरका भाव भोंड़ा न था। उक्त दोनों मन्दिरोंके अतिरिक्त अनेक लिङ्ग और मन्दिर विद्यमान रहे। उन सकल प्राचीन मन्दिरोंमें विधर्मी मुसलमानोंके उत्पातसे कई एककाल ही नष्ट हुये, कई ध्वंसावशेषमें पड़े और कई अङ्गहीन अवस्थामें खड़े हैं। किसी

† "ओङ्कारश्च यथा ह्यासीत् तथा च श्रूयतां पुनः।
कस्मिंश्चित् समये चात्र नारदो भगवांस्तदा॥ ४२
गोकर्णाख्यं शिवं गत्वा आगतो विन्ध्यकेश्वरम्।
तत्रैव पूजितस्तेन बहुमानपुरःसरम्॥ ४३
मयि सर्वञ्च विद्येत न न्यूनं हि कदाचन।
इति मानं तदा श्रुत्वा नारदो मानहा तदा॥ ४४
निश्वस्य संस्थितस्तत्र श्रुत्वा विन्ध्योऽब्रवीदिदम्।
किं न्यूनञ्च त्वया दृष्टं मयि निश्वासकारणम्॥ ४५
तच्छ्रुत्वा नारदो वाक्यमुवाच श्रूयतां पुनः।
त्वयि तु विद्यते सर्व्वं मेरुरुच्चतरं पुनः॥ ४६
देवेष्वपि विभागोऽस्य न तवास्ति कदाचन।
इत्युक्त्वा नारदस्तत्र जगाम च यथागतम्॥ ४७
विन्ध्यश्च परितप्तो वै धिगेव जीवितादिकम्।
विश्वेश्वरं तथा शम्भुं समाराध्य नपाम्यहम्॥ ४८
इति निश्चित्य तत्रैव ओङ्कारं यत्रकै स्वयम्।
कृत्वा चैव पुनस्तत्र पार्थिवीं शिवमूर्त्तिकाम्॥ ४९
आरराध तदा शम्भुं षण्मासञ्च निरन्तरम्।
न चचाल तदा स्थानाच्छिवध्यानपरायणः॥ ५०
प्रसन्नश्च तदा शम्भुर्ब्रूहि त्वं मनसेप्सितम्।
तस्मै च दर्शयामास दुर्लभं योगिनामपि॥ ५१
रूपं यथोक्तं वेदेषु भक्तानामीप्सितञ्च यत्।
यदि प्रसन्नो देवेश वृद्धिं धेहि यथेप्सितम्॥ ५२
किं करोमि यदा तेन म्रियते दीयते मया।
न युक्तं परदुःखाय वरदानं ममाशुभम्॥ ५३
तथापि दत्तवांस्तत्र यथेप्ससि तथा पुनः।
एवं च समये देवा ऋषयश्च तथाऽमलाः॥ ५४
सम्पूज्य शङ्करं तत्र स्थातव्यमिति चाब्रुवन्।
तथैव कृतवान् देवो लोकानां सुखहेतवे॥ ५५
ओंकारे चैव यन्त्रे वै लिङ्गमेकं तथा पुनः।
पार्थिवे च तथारूपे लिङ्गमेकं तथा पुनः॥ ५६
एवं द्वयं समुत्पन्नं लिङ्गमेकं द्विधा कृतम्।
प्रणवे चोङ्कारस्य नामासीत् स सदाशिवः॥ ५७
पार्थिवे चैव यज्जातं तदासीदमरेश्वरः।"
(शिवपुराण, ज्ञानसंहिता ४६अ०)

स्थानपर गगनस्पर्शी मन्दिरकी चूड़ा टूट गई है। कहीं अलङ्कृत मन्दिरभवन विध्वस्त हो जानेसे कुक्कुर-शृगालकी वासभूमि बना है। कहीं भग्न देवदेवकी मूर्ति भूमिमें गड़ी पड़ी है। उक्त दृश्य धर्मनिष्ठ हिन्दुवोंके प्राण व्यथित कर डालता है। पर्वतके ऊपर सिद्धेश्वर महादेवके सुरम्य मन्दिरका भग्नावशेष देखनेमें आता है। इस मन्दिरकी चारो ओर चार द्वार हैं। प्रत्येक द्वारके सम्मुख १४ फीट उच्च एवं १४ स्तम्भविशिष्ट द्वारप्रकोष्ट खड़ा है। मन्दिरकी भित्तिके प्रस्तरमें पंक्ति-पंक्तिपर हाथी अङ्कित है। आजकल केवल दो हाथी प्रकृत आकारमें देख पड़ते, अपर विकृत हो गये हैं। इस मन्दिरसे थोड़ी दूर गौरी-सोमनाथका मन्दिर है। इसी मन्दिरकी अवस्था अति शोचनीय है। किन्तु मन्दिरमें दर्शन करने कितने ही लोग आते हैं। रेवाखण्डमें लिखा है,—

"सोमनाथं ततो विद्धि कन्यगा तीरमाश्रितम्।
सोमेनाराधितं तीर्थं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥" (८५०)

सोमनाथ नर्मदा नदीके तीर विद्यमान है। चन्द्रने इस तीर्थकी आराधना की थी। यह तीर्थ भोग और मोक्षफलदायक है।

स्थानीय पूजक कहते, पहले सोमनाथ श्वेतवर्ण थे। मुसलमानोंके ध्वंस करने आने पर यह मूर्ति प्रतिबिम्बित हुई। उसी प्रतिबिम्बमें शूकरका बच्चा देख पड़ा था। फिर वही विधर्मी मुसलमान क्रोधसे अधीर हो और सोमनाथको अग्निमें फेंक चल दिये। उसी समयसे सोमनाथ कृष्णवर्ण बन गये हैं।

सोमनाथ मन्दिरके सम्मुख हरे पत्थरकी एक बृहत् नन्दीमूर्ति है। मुसलमानोंने उसका मत्था तोड़ डाला है।

मान्धाता द्वीपमें प्रायः समस्त ही शिवमन्दिर हैं। किन्तु इससे थोड़ी दूर उत्तर नर्मदा किनारे शिव-मन्दिर व्यतीत अनेक विष्णु और जैन देवदेवीके मन्दिर बने हैं। नर्मदा द्विधारा होनेकी जगह मुखपर अनेक बड़े-बड़े मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें २४ चतुर्भुज विष्णुमूर्ति हैं। इसके अतिरिक्त विष्णुके दशावतारकी मूर्ति भी देख पड़ती है। एक मन्दिरमें विष्णुकी वृहदाकार महावराहमूर्ति है। उसी मन्दिरमें १३४६ ई०को एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हुआ था। उससे थोड़ी दूर रावण-नाला है। इस नालेके मध्य साढ़े अट्ठारह फीट उच्च काले पत्थरकी एक मूर्ति है। इस मूर्तिके दश हाथ और एक मुण्ड है। कोई-कोई इसे रावणकी मूर्ति बताया करते हैं। किन्तु वह बात ठीक नहीं। क्योंकि रावणकी मूर्ति रहनेसे सम्भवतः दश मुण्ड और बीस हाथ होते। यह शिवसङ्गिनी महाकालीकी मूर्ति है। वक्षःस्थलपर वृश्चिक, वाम पार्श्वपर इन्दुर और पाददेशपर नग्न शिव पड़े हैं।

नदीसे थोड़ी दूर दूसरे भी कई जैन-मन्दिर विद्यमान हैं। इन सकल मन्दिरोंमें जैन देवदेवीकी कितनी ही मूर्ति देख पड़ती हैं। मन्दिरोंपर जैन धर्मके चक्रादिकी प्रतिकृति खुदी है।

पहले यह स्थान भील राजावोंके अधिकारमें रहा। मान्धाताके एक राजा भारतसिंह नामक चौहान राजपूतको अपना आदिपुरुष बताते हैं। ११६५ ई०को उन्होंने नाथू भीलको हरा मान्धाता अधिकार किया था। उन्होंने नाथू भीलकी कन्यासे फिर विवाह कर लिया। आज भी ओङ्कारसे थोड़ी दूर पहाड़के उत्तर कई प्राचीन मन्दिर नाथूके वंशधरोंके अधीन हैं। नाथू भीलके समय दुर्जयनाथ नामक एक गोसाईं ओङ्कारकी पूजा करते रहे। यहां प्रवाद है—उस समय कालभैरव और महाकाली दोनों नरमांस खाते, उसी भयसे तीर्थ-यात्री यहां आते न थे। यात्रियोंके हितार्थ दुर्जयनाथने तपोबलसे कालीदेवीको रिभा गुहाके मध्य स्थापित किया। किन्तु कालस्वरूप कालभैरव सहजमें तृप्त हुये न थे। दुर्जयनाथने उनके सन्तोषार्थ नरबलिका प्रबन्ध कर दिया। फिर कालभैरव नरबलि लेने आते रहे। अवशेष १८२४ ई०को अंगरेज़ कर्मचारियोंके यत्नसे यह प्रथा बन्द हुई। दुर्जयनाथके शिष्य परम्परासे ओङ्कारकी पूजा करते चले आते हैं। प्रति वर्ष कार्तिक मासमें ओङ्कारजीका महोत्सव होता है।

ओङ्कारा (सं० स्त्री०) बुद्धशक्तिविशेष।

ओङ्कारेश्वर—बम्बई प्रान्तके पूना नगरका एक शिव-

मन्दिर। यह मुथा नदी किनारे सोमवार-महल्लेमें अवस्थित है। १७४० और १७६० ई०के बीच कृष्णाजी-पन्त चितरावने इसको लोगोंसे चन्दा करके बनाया। भाऊ साहब या सदाशिवराव चिमनाजीने मन्दिर बनते समय छह वर्षतक एक हज़ार रुपया मासिक दिया था। द्वार पूर्वाभिमुख है। फाटककी दीवार बहुत मज़बूत बनी है। प्राङ्गणकी चारो ओर साधु-सन्तके विश्रामार्थ कमरे हैं। मन्दिरसे नदीतक सिढ़ियां लगी हैं। प्रतिवर्ष होम होता है। मन्दिरके पास ही श्मशान रहनेसे पूनाके लोग भय खाते हैं। सरकार हज़ार रुपये साल होमके लिये देती है। यहां नन्दीकी मूर्ति अति विशाल है।

ओङ्गोल—१ मन्द्राजप्रान्तके नेल्लूर ज़िलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ९८७ वर्गमील है। इसके लम्बे-चौड़े मैदानकी भूमि बहुत अच्छी है। फ़सल खूब उपजती है। नदीके रथपथमें कूप बने हैं। तालाब बहुत कम हैं। जङ्गल भी कहीं देख नहीं पड़ता।

२ मन्द्राज-प्रान्तके नेल्लूर ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १५° ३०′ २०″ उ० तथा देशा० ८०° ५′ ३०″ पू०में मूसी नदी किनारे अवस्थित है। १८७६-७७ ई०को यहां म्युनिसपलिटी पड़ी थी। वस्तुतः यह नगर मण्डपति-वंशके राजावोंकी राजधानी रहा। वह सदा वेङ्कटगिरिके नरेशोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। मण्डपति नरेशोंने विद्याको बड़ा उत्साह दिया। इसीसे ओङ्गल अपने पण्डितोंके लिये आसपास प्रसिद्ध है। अन्ततः वेङ्कटगिरिके राजाने मण्डपति नरेशोंको दबा दिया था।

ओछना, ऊंछना देखो।

ओछा (हिं० वि०) १ तुच्छ, हकीर, छोटा। २ उथला, छिछला, हलका। ३ शक्तिहीन, कमज़ोर। ४ कम पड़नेवाला, जो लंबा न हो। "जहां बड़ी सेवा तहां ओछा फल।" (लोकोक्ति)

ओछाई (हिं० स्त्री०) तुच्छता, हलकापन, कम पड़नेकी हालत।

ओछापन (हिं० पु०) ओछाई देखो।

ओज (सं० पु०) ओज-अच्। १ मेषादि द्वादश राशिके मध्य अयुग्म राशि। २ अयुग्ममात्र, ताक़, ऊना। (हिं०) ओजः देखो।

ओजः (सं० क्ली०) उब्ज आर्जवे असुन्, बलोपश्च। उब्जेर्बले बलोपश्च। उण् ४।१९१। १ बल, ज़ोर। २ दीप्ति, चमक। ३ अवलम्बन, सहारा। ४ प्रकाश, रोशनी। ५ मेषादि द्वादश राशिके मध्य १म, ३य, ५म, ७म, ९म एवं ११श राशि। ६ समासबाहुल्य एवं पदाडम्बरताका काव्यगुण। इस गुणयुक्त रीतिका नाम गौड़ी है। ७ शस्त्रादिका कौशल, हथियार वग़ैरहका इल्म। ८ ज्ञानेन्द्रियगणकी पटुता। रसादि सप्तधातुके सारभागसे पैदा एक धातु। वैद्यकके मतसे यह सर्वशरीरस्थ, स्निग्ध, शीतल, स्थिर, शुक्लवर्ण, कफात्मक और बलपुष्टिकारक है। भ्रमरके फल-पुष्पसे मधु सञ्चय करनेकी तरह नाना धातुसे ओजः इकट्ठा होता है। अभिघात, क्षय, कोप, शोक, चिन्ता, परिश्रम और क्षुधासे ओजः घट जाता है। ओजः व्यापन्न पड़नेसे स्तब्धगात्रत्व, गात्रका गुरुत्व, वर्णभेद और ग्लानि, तन्द्रा तथा निद्राका वेग बढ़ता है।

ओजत—काठियावाड़की एक छोटी नदी। यह गिर पहाड़के उत्तर प्रावण्यसे निकलती और दक्षिणकी ओर बह चलती है। वनथालीमें नगरके समीप ओजत उवेन नदीसे मिल गयी है।

ओजना (हिं० क्रि०) अवरोध करना, रोकना।

ओजसीन, ओजस्वत् देखो।

ओजस्कर (सं० त्रि०) ओजोधातुवर्धक, हैवानी कु़व्वत बढ़ानेवाला।

ओजस्तर (सं० त्रि०) अधिक ओजोधातुयुक्त, जिसके हैवानी कु़व्वत ज़्यादा रहे।

ओजस्य, ओजस्वत् देखो।

ओजस्वत् (सं० त्रि०) ओजोऽस्यास्ति, ओजः-वतच्। १ तेजस्वी, शानदार। २ बलवान्, ज़ोरावर।

ओजस्विता (सं० स्त्री०) ओजस्विनो भावः, ओजस्-तल्-टाप्। १ बलवत्ता, ज़ोरावरी। २ तेजस्विता, शान-शौकत।

ओजस्वी, ओजस्वत् देखो।

ओजित, ओजस्वत् देखो।

ओजिष्ठ (सं॰ त्रि॰) ओज-इष्ठन्। अतिशायनेतमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। बलवान्, तेजस्वी, दीप्तिशाली, ज़ोरावर, शान्दार, रौशन।

ओजीयस् (सं॰ त्रि॰) ओज-ईयसुन्। द्विवचने विभज्योपपदेतरवीयसुनौ। पा ५।३।५७। तेजस्वी, बलवान्, दीप्त, ताक़तवर, रौशन।

ओजोदा (सं॰ त्रि॰) ओजोधातु प्रदान करनेवाला, जो ज़ोर देता हो।

ओज़ोन (अं॰ पु॰ = Ozone) वायुविशेष, एक लतीफ़् हवा। इसमें कोई रङ्ग नहीं रहता। गन्ध अपने ढङ्गका निराला होता है। १७८५ ई॰को वान-मारम (Van marum)ने इस पदार्थको जांचा था। अधिक शीतल करनेसे यह नीलके पानीकी तरह बहने लगता और बड़े ज़ोरसे भड़क उठता है। आक्सिजनमें इसका अंश पाया जाता है। यह पानीमें बहुत कम मिल सकता है। जलको निष्फल बनानेमें इसे अधिक व्यवहार करते हैं। ग्रामोंके वायुमें इसका जितना अंश रहता, उतना नगरोंके वायुमें नहीं मिलता। ओज़ोनका घनत्व आक्सिजनसे थोड़ा बैठता है। उष्ण होनेसे यह आक्सिजन बन जाता है। इसमें गन्ध मिटानेका गुण विद्यमान है।

ओज़ोन-पेपर (अं॰ पु॰ = Ozone-paper) वायुकी परीक्षा लेनेका एक पत्र, हवाकी जांचका काग़ज़। इससे वायुमें ओज़ोन नामक वायुका रहना न रहना मालूम होता है।

ओज़ोनबकस (अं॰ पु॰ = Ozone-box) सम्पुटविशेष, एक सन्दूक़। इसमें ओज़ोन-पेपरको रख वायुपर ओज़ोनका रहना न रहना देखते हैं। इस सम्पुटकी बनावट अनोखी होती है। वायु भिन्न प्रकाशादि द्रव्य इसमें प्रवेश कर नहीं सकते।

ओजोबला (सं॰ स्त्री॰) बौद्ध मतानुसार बोधिद्रुमकी एक शक्ति।

ओज्मा (सं॰ पु॰) वज-उ-मनिप्। १ प्रेरक, भेजने या पहुंचानेवाला। (पु॰) २ शक्ति, ताक़त। ३ वेग, तेज़ चाल।

ओझ (हिं॰ पु॰) १ उदर, शिकम, पेट। २ अन्त्र, आंत।

ओझड़त (हिं॰ पु॰) मन्त्रसे प्रेतादि बाधा हटानेवाला, जो झाड़-फूंक करता हो।

ओझर (हिं॰ पु॰) १ उदर, पेट। पेटकी थैली, मेदा। इसमें भोजन करनेसे खाद्य द्रव्य जा कर एकत्र होता है।

ओझरतामवत—बम्बई प्रान्तके नासिक ज़िलेकी एक नहर। यह एक पुरानी नहर रही, जो १८७३ ई॰को बढ़ा और सुधारकर खोली गयी। इसमें गोदावरीकी शाखा वाणगङ्गा और पालखेड़ नहरसे पानी आता है। लंबाई दो मील है। इसमें होलकर महाराजका प्रायः ५८३६) और अंगरेज़ सरकार १८२०) रु॰ लगा था। सीमाके परिवर्तनमें होलकरने इसे अंगरेज सरकारको सौंप दिया।

ओझरी (हिं॰ स्त्री॰) ओझर देखो।

ओझल (हिं॰ स्त्री॰) १ छाया, परछाहीं। २ आड़, परदा, ओट। "आंख ओझल पहाड़ ओझल।" (लोकोक्ति) (वि॰) ३ गुप्त, छिपा।

ओझला (हिं॰ पु॰) बच्चेका दूधको पीकर उगलना।

ओझा (हिं॰ पु॰) १ मन्त्रादि द्वारा सर्पदष्ट भूतग्रस्त प्रभृति रोगियोंको आरोग्य करनेवाला, जो झाड़फूंकसे सांपके काटे या भूतके मारे बीमारको अच्छा कर देता हो। २ भूतप्रेत उतारनेवाला। "बाप ओझा मां डायन।" (लोकोक्ति) ३ ऐन्द्रजालिक, बाज़ीगर। ४ मैथिल ब्राह्मणोंका एक उपाधि। यह लोग मध्यप्रदेशके चांदे, रायपुर, हुशङ्गाबाद प्रभृति स्थानोंमें रहते और भाट, गायक अथवा भिक्षुकके वेशमें देख पड़ते हैं।

ओझाई (हिं॰ स्त्री॰) ओझाका कार्य, अभिचार, झाड़फूंक, बाज़ीगरी।

ओझायन (हिं॰ स्त्री॰) ओझाकी पत्नी।

ओझार—१ बम्बई प्रान्तके पूना ज़िलेका एक ग्राम। यह जुन्नारसे ६ मील दक्षिणपूर्व कुकडी नदीके वाम तटपर अवस्थित है। यहां गणपतिका एक अवतार हुआ था। ग्रामसे पश्चिम गणपतिका मन्दिर बना है। फाटककी राह बहुत अच्छी है। दोनों ओर द्वारपालकी सुन्दर मूर्ति हैं। द्वाराग्रकाष्ठकी शोभा

चार गायककी मूर्ति बढ़ाती हैं। सब मूर्तिपर चमकीला रंग चढ़ा है। प्राङ्गणमें दो दीपकस्तम्भ हैं। सात तोरणकी परिक्रमा बनी है। ग्रामका आय मन्दिरमें लगा है। इनामदार प्रबन्ध करते हैं।

२ बम्बई प्रान्तके अहमदनगर ज़िलेकी एक नदी। इस नहरका मुंह सङ्गमनेर नगरसे १० मील नीचे ओझर ग्राममें प्रवरके वाम तटपर अवस्थित है। लंबाई १९ मील है। २७०८८ एकर भूमि इससे सींची जाती है। १८७९ ई०को यह पूरे तौरपर बनकर तैयार हुयी थी। ओझारपर पुल बंधे और पेड़ लगे हैं।

ओझियाल गोंड—मध्यप्रदेशके गोंडोंकी एक शाखा। राजपूतानेके चारणोंकी तरह यह लोग भी वीणा बजा-बजा स्वजातीय वीरपुरुषोंका यश गाते फिरते हैं। हाथमें मोरका पंख रहता है। ओझियाल चकोर और धनेशका चमड़ा बेचते हैं। लोगोंके विश्वासानुसार धनेशका चमड़ा घरमें रहनेसे धन और सौभाग्य बढ़ता है। इसीसे वह बड़े आदरके साथ क्रय किया जाता है। इनकी स्त्रियां दूसरी हिन्दू-रमणियोंके हाथमें गोदना गोद देती हैं। यहांकी हिन्दू स्त्रियोंके विचारानुसार इनसे हाथमें गोदना गोंदानेपर वैधव्यकी दशा भोगना नहीं पड़ती।

दूसरी श्रेणीके ओझियालोंको माना कहते हैं। वह दूसरे गोंडोके साथ बैठकर नहीं खाते, कारण अपनेको बहुत बड़ा लगाते हैं।

ओझैती, ओझाई देखो।

ओट (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक, आड़। "तिनकेकी ओट पहाड़।" (लोकोक्ति) २ छाया, परछाहीं। ३ गुप्तस्थान, छिप कर बैठनेकी जगह। ४ घूंघट। ५ विरोध, बचाव। ६ अवष्टम्भ, सहारा।

ओटन (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेषका दण्ड, चरखीका डंडा। यह दो रहतीं और कपाससे बिनौलेको अलग करती हैं। पहले हिन्दुस्थानमें घर घर ओटनसे काम लिया जाता था। किन्तु अब मिल या पुतलीघर चलनेसे इसका व्यवहार अधिक देख नहीं पड़ता।

ओटना (हिं० क्रि०) १ कापासको चरखीपर लगा बीज छोड़ाना, कपासका बिनौला निकालना। २ बीचमें ही रोक लेना, पकड़ना। ३ दायी बनना, जवाबदेह होना। ४ पुनः पुनः कथन करना, अपनी ही बात नाधना।

ओटनी (हिं० स्त्री०) कापास परिष्कार करनेका एक यन्त्र, कपास साफ़ करनेकी चरखी। इससे कपासका बिनौला निकाल रूई तैयार करते हैं।

ओटल (हिं० स्त्री०) व्यवधान, परदा, आड़।

ओटा (हिं० पु०) १ पार्श्व-भित्ति, बगली दीवार, आड़। "लीपूं ओटा भरे मोटा।" (लोकोक्ति) २ घरके सामनेका चबूतरा। ३ कपास ओटनेकी चरखीपर रखा जानेवाला मट्टीका लोंदा। इससे चरखी अपनी जगह नहीं छोड़ती। ४ चरखी चलानेवाला।

ओटो, ओटनी देखो।

ओठ (हिं०) ओष्ठ देखो।

ओठंगना (हिं० क्रि०) आश्रय पकड़ना, किसीके सहारे बैठना या लेटना।

ओड़ (हिं० स्त्री०) ओट, आड़।

ओड़क, ओड़व देखो।

ओड़चा (हिं० पु०) १ काष्ठपात्रविशेष, काठका एक बरतन। इससे खेतका जल उलीचते हैं। २ बेंड़ी, दौरी। इससे निम्नस्थलका जल खेतमें पहुंचाया जाता है। यह गहरी टोकरी जैसा रहता है। दोनो ओर डोरी लगा दो आदमी इसे चलाते हैं।

ओड़छा, ओर्छा देखो।

ओड़न (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक। २ ढाल, बचावकी चीज़।

ओड़ना (हिं० क्रि०) १ अवरोध लगाना, बीचमें ही रोक रखना। २ विस्तारित करना, फैला देना।

ओड़व (सं० पु०) रागविशेष। इसमें स, ग, म, ध और नि—पांच ही स्वर लगते हैं।

ओड़ा (हिं० पु०) १ टोकरा, खांचा। २ गर्त, गड्ढा। ३ सेंध। (वि०) ४ गभीर, गहरा।

ओडाशङ्कर—एक संस्कृत ग्रन्थकार। यह सुधाकरके पुत्र और शुचिकरके पौत्र थे। ग्रन्थविधानधर्मकुसुम और स्मृतिसुधाकर नामक पुस्तक इनके लिखे हैं।

ओड़िका (सं० स्त्री०) धान्यविशेष, नीवार। यह शोषण, रूक्ष, कफ-वायु-वृद्धिकर और पित्तनाशक होती है। (राजवल्लभ)

ओड़ी, ओड़िका देखो।

ओड़ (सं० पु०) आ-उन्दी-रक्, दस्य डलम्। १ जवाकुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़। यह संग्राही और केशहित होता है। (भावप्रकाश) इसके सेवनसे मल और मूत्र रुकता है। (राजवल्लभ) ओड़ कटु, उष्ण, इन्द्रलुप्तहर, विस्फुर्दिजन्तुजनक और सूर्याराधन है। (राजनिघण्टु) २ उड़ीसा मुल्क। उत्कल देखो। प्रायः उत्कलके उत्तरांशको ओड़ कहते हैं। (त्रि०) ३ उत्कल देशका अधिवासी, उड़िया।

ओड़्काख्या, ओड्राख्या देखो।

ओड्रदेश (सं० पु०) उत्कल, उड़ीसा।

ओड्रपर्याय (सं० पु०) सूर्यकान्तपुष्पक्षुप, गोड़हरका पेड़।

ओड्रपुष्प (सं० क्ली०) ओड्रञ्च तत् पुष्पञ्चेति, कर्मधा०। १ जवाकुसुम, गुड़हरका फूल। २ जवाकुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़।

ओड्रपुष्पा (सं० स्त्री०) जवावृक्ष, गुड़हरका पेड़।

ओड्राख्या (सं० स्त्री०) ओड्रामाख्या यस्य, बहुव्री०। जवापुष्प वृक्ष, गोड़हरका पेड़।

ओढ़ (सं० त्रि०) आ-वह-क्त। सम्यक् रूपसे वहन किया हुआ, जो अच्छी तरह ढोया गया हो।

ओढ़न (हिं० स्त्री०) ओढ़ाई, जिस्मको वस्त्रसे ढांकनेका काम। २ वस्त्र विशेष, ओढ़नेका कपड़ा।

ओढ़ना (हिं० क्रि०) १ लपेटना, वस्त्रसे देह ढांकना। २ ओड़ना, रोक रखना। (पु०) ३ देहाच्छादन-वस्त्र, जिस्म ढांकनेका कपड़ा। ४ विस्तरकी चद्दर।

"सासका ओढ़ना पतोहका बिछौना" (लोकोक्ति)

ओढ़नी (हिं० स्त्री०) छोटी चद्दर या पिछौरी। यह स्त्रियोंके ही काम आती है।

"ओढ़नी की बतास लगी।" (लोकोक्ति)

ओढ़र (हिं० पु०) छल, बहाना, धोका।

ओढ़वाना (हिं० क्रि०) आच्छादित करवाना, ओढ़ानेके कामपर किसी दूसरेको लगाना।

ओढ़ाना (हिं० क्रि०) अन्यको आच्छादित करना, दूसरेको ढांक देना।

ओढ़ापलङ्कषा (सं० स्त्री०) गोरक्षमुण्डी, गोरखमुंडी।

ओणि (सं० त्रि०) ओण-इन्। १ अपनयनकारी, बचा देनेवाला। (पु०-स्त्री०) २ सोमरस प्रस्तुत करनेका एक पात्र। इसके दो भाग होते हैं। ३ स्वर्गमर्त्य, जमीन् आस्मान्। ४ रक्षा करनेवाली शक्ति, जो ताक़त बरक़रार रखती हो। ५ रक्षा, हिफ़ाज़त।

ओणी (सं० स्त्री०) ओणि देखो।

ओत (सं० त्रि०) आ-वेञ्-क्त। १ अन्तर्व्याप्त, भीतर भरा हुआ। २ बुना हुआ। ३ कपड़ेके तानेका सूत। (हिं० स्त्री०) ४ सुख, विश्राम, फ़ुरसत, आराम। ५ आलस्य, सुस्ती। ६ लाभ, फ़ायदा। ७ स्वल्पव्यय, किफायत। ८ अवशिष्टांश, बचत।

ओतपोदरम्—मन्द्राज प्रान्तके तेनिवल्ली ज़िलेकी एक तहसील। इसका परिमाण १०८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः तीन लाख निकलेगी। तूतकूंड़ी नामक प्रसिद्ध बन्दर इसी तहसीलमें लगता है। ओतपोदरम् ही प्रधान नगरका भी नाम है।

इसीमें इत्तियापुरम् की ज़मीन्दारी भी पड़ती है। भूमि काली और बराबर है। कहीं कहीं इमलीके बाग़ लगे हैं। रूई अधिक होती है। समुद्र किनारे श्वेतबालुका भरी है। उसमें ताड़ और बबूल होता है। साउथ इण्डियन रेलवे मदुरासे इस तहसीलमें आती है। मनियाची जङ्क्शन और तूतीकोरिन-टरमिनस है। ओतपोदरम् नगरीमें तहसीलदारी है।

ओतप्रोत (सं० त्रि०) १ परस्पर सङ्गठित, एक दूसरेसे लगा हुआ। (पु०) २ ताना-बाना। ३ विवाह विशेष, किसी किस्मकी शादी। इसमें एक-दूसरेको लड़की लड़का दोनों देते हैं।

ओता (हिं० वि०) उस परिमाणवाला, उतना।

ओतु (सं० पु० स्त्री०) अवति रक्षति गृहमाखुभ्यः, अव-तुन्-ऊट्। सितनिगमिमसिसच्यविधाञ् क्रुशिभ्यस्तुन्। उण् । १।७०। ज्वरत्वरेत्यादि। पा ६।४।२०। १ विड़ाल,

बिलाव। २ वनबिडाल, जङ्गली बिल्ली। ३ प्रति तन्त्र, बाना, भरनी।

ओतूर—बम्बई प्रान्तके पूना ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १९° १३´ उ०, तथा देशा० ७४° ३´ पू०में कुसुमावतीके वामतटपर अवस्थित है। जुन्नरसे ओतूर १० मील उत्तरपूर्व है। बाज़ार बड़ा और भारी है। नगरसे २ मील पश्चिम पर्वत है। रोहो-कड़, नागपुर और जुन्नर तीन फाटक हैं। यहां एक दुर्ग और नदी किनारे दो मन्दिर है। भीलोंके आक्रमणसे नगर बचानेको जुन्नर दरवाज़ेके पास उक्त दुर्ग बनाया गया था। मन्दिरोंमें एक सुप्रसिद्ध तुकारामके गुरु केशवचैतन्यका और दूसरा कपर्दिकेश्वर महादेवका है। श्रावणके अन्तिम सोमवार को मेला लगता है। सरकार मन्दिर को कुछ साहाय्य देती है।

ओती (हिं० वि०) उतना।

ओत्ता (हिं० पु०) १ दरी बुननेकी पटरीका पावा। (वि०) २ उतना।

ओद (सं० पु०) १ अन्न, अनाज। (हिं० पु०) २ आर्द्रभाव, तरी, गीलापन। (वि०) ३ आर्द्र, नम, गीला, जो सूखा न हो।

ओद(ओड)—१ बम्बई प्रान्तके खेड़ा ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° ३७´ उ० और देशा० ७३° १०´ पू०पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े नौ हज़ार है। २ बम्बई प्रान्तके कच्छ ज़िलेकी नोनिया जाति। ओदोंका काम भूमि खोदना है। यह काठियावाड़में भी मिलते हैं। ओद अपनेको सगरसुत भगीरथके वंशसे उत्पन्न होनेवाले क्षत्रिय बताते हैं। रासमालाके वर्णनानुसार सिद्धराजने मालवेसे कुछ ओदोंको सहस्रलिङ्गह्रद खोदने पाटन बोलाया था। किन्तु जस्मानाम्नी एक ओदस्त्रीसे उनका प्रेम बढ़ा और उसको उन्होंने रानी बनाने कहा। उसने इस बातसे असम्मत हो भागनेकी चेष्टा लगायी थी। सिद्धराजने उसका पीछा किया और उसे पकड़ लेनेपर कितने ही ओदोंको जानसे मार दिया। जस्माने आत्महत्या कर शाप दिया था—तुम्हारे ह्रदमें कभी जल न रहेगा। किन्तु मायो नामक एक ढेडको बलि देनेसे शाप छूट गया। ओद इधर-उधर काम ढूंढते घूमा करते हैं।

ओदती (सं० स्त्री०) उषा, सवेरा।

ओदन (सं० पु०-क्ली०) उन्द-युच् नलोपश्च। उन्देर्नलोपश्च। उण् २।७६। १ भक्त, भात। २ भक्ष्य, अनाज।

ओदनपाकी (सं० स्त्री०) ओदनस्य पाक इव पाको यस्याः, बहुव्री०। १ नीलझिण्टी। २ ओषधिविशेष।

ओदना, ओदनिका देखो।

ओदनाह्वया (सं० स्त्री०) ओदनस्य आह्वा इव आह्वा यस्याः, बहुव्री०। १ महासमङ्गा, ककई। २ वाट्या-लक, बरियारी।

ओदनाह्वा, ओदनिका देखो।

ओदनिका (सं० स्त्री०) १ महासमङ्गा, ककई। २ वाट्यालक, बरियारी।

ओदनी (सं० स्त्री०) ओदन इव आचरति, ओदन-क्विप् ङीष्। ओदनिका देखो।

ओदनीय (सं० त्रि०) ओदन-यत्। विभाषाहविरपूपादिभ्यः। पा ५।१।४ भक्ष्य वस्तु, खाने लायक चीज़।

ओदम्बरी (औदम्बर) उत्तर गुजरातके ब्राह्मणोंकी एक शाखा। ७७ई०को प्लिनिने ओदम्बरियोंको कच्छके लोग बताया था। १५० ई०को टलेमिने इनके प्रधान नगरका नाम ओरबादरी (Orbadari) लिखा, जो सिन्धुसे पूर्व रहा। लोग वर्तमान राधनपुरको उक्त नगर समझते हैं।

ओदर (हिं०) उदर देखो।

ओदरना (हिं० क्रि०) चटखना, फटना, बरबाद होना।

ओदा (हिं० वि०) आर्द्र, तर, जो सूखा न हो।

ओदारना (हिं० क्रि०) तोड़ना-फोड़ना, फाड़ डालना, मट्टीमें मिलाना।

ओद्दर—दाक्षिणात्यकी एक असभ्य जाति। ओद्दरोंका दूसरा नाम बुद्दव है। यह अतिशय बलिष्ठ और मांसप्रिय होते हैं। वराह एवं इन्दुरका मांस इन्हें बहुत अच्छा लगता है। शारीरिक परिश्रममें ओद्दर अतिशय पटु होते और जो काम पाते, उसीको कर डालते हैं। किन्तु दूसरी जातिवाले लोगोंके साथ इन्हें कोई काम करना अच्छा नहीं लगता। यह स्वजातिवालोंमें मिलजुल

कृषिकार्य चलाते और पथ-कूप प्रभृतिके निर्माणमें हाथ लगाते हैं। पहले ओहर भूतप्रेत पूजते थे, पीछे वैष्णव बन गये। फिर भी पेल्लाम देवताका भय और प्रेम आज भी कुछ कम नहीं। बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। क्योंकि अधिक स्त्री रहनेसे आय भी बढ़ जाता है। स्त्रियां शारीरिक परिश्रम द्वारा अर्थोपार्जन करती हैं।

ओद्म (सं० पु०) उन्द भावे मन् नलोपः गुणश्च। अवोदैधौद्मप्रश्रथहिमश्रथाः। पा ६।४।२९। क्लेद, तरी, गीलापन। २ प्रवाह, बहाव।

ओद्मन् (सं० क्लो०) उन्द-मनिन् नलोपश्च। ओद्म देखो।

ओधना (हिं० क्रि०) बन्धनमें पड़ना, लग जाना, अटकना।

ओधस् (सं० क्लो०) पशुस्तन, जानवरका बाख या आयन।

ओधे (हिं० पु०) स्वामी, मालिक।

ओनचन (हिं० स्त्री०) अदवायन, खाटके पायताने लगनेवाली रस्सी। इसको कसनेसे चारपाई कड़ी पर जाती है।

ओनचना (हिं० क्रि०) अदवायन कसना, खाटके पायतानेकी रस्सी कड़ी करना।

ओनवना, उनवना देखो।

ओना (हिं० पु०) जलके उद्गमनका पथ, पानी निकलनेकी राह।

ओनाड़ (हिं० वि०) शक्तिशाली, ताकतवर।

ओनाना (हिं० क्रि०) सुनना, कान लगाना।

ओनामासी (हिं० स्त्री०) ओं नमः सिद्धम्, विद्यारम्भके समयका एक मङ्गल वाक्य।

ओन्दन (सं० पु०) १ मङ्गल। २ कनिष्ठ।

ओप (हिं० स्त्री०) १ शोभा, खूबसूरती, चमक। २ रंग, कलई।

ओपची (हिं० पु०) कवच धारण किये हुआ वीर, जो सिपाही बखतर पहने हो।

ओपना (हिं० क्रि०) परिष्कार करना, रंगना, मलना।

ओपनी (हिं० स्त्री०) परिष्कार करनेका वस्तु, सफाईकी चीज। खड्गादि परिष्कार करनेवाली इष्टका-खण्डको ओपनी कहते हैं।

ओपश (सं० पु०) १ शिरोभूषण, जुल्फ। २ शृङ्ग, सींग। (सायण)

ओपशी (सं० स्त्री०) सुन्दर केशयुक्त, जुल्फोंवाला, जो बालोंको बनाये-चुनाये हो।

ओपोस्सम (अं० पु०=Opossum) पशुविशेष, एक चौपाया। यह उत्तर अमेरिकाके संयुक्तराज्य, कालिफोरनिया, टेक्सास और दक्षिण अमेरिकामें मिलता है। इसमें अन्य पशुके अपक्व पोतकपर टूट पड़नेका विशेषत्व विद्यमान है। यह कई प्रकारका होता है। दांत और अंगूठे अनोखे देख पड़ते हैं। कोई चूहे जैसा छोटा और कोई बिल्ली जैसा बड़ा रहता है। स्त्री जाति वसन्त ऋतुमें छहसे सोलह बच्चेतक उत्पन्न करती है। चौदह या सत्रह दिनमें बच्चे होशियार हो जाते हैं। दक्षिण अमेरिकामें बच्चे मांकी पीठपर चढ़े और उसकी पूंछसे अपनी पूंछ कसे रहते हैं।

ओफ (अ० अव्य०) अरे, हाय, बाप रे बाप।

ओबरी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र गृह, छोटा मकान, झोपड़ी।

ओम् (सं० अव्य०) अवति रक्षतीति, अव-मन् टिलोपः ऊट्च। अवतेष्टिलोपश्च। उण् १।१४१। ज्वरत्वरेत्यादि। पा ६।४।२०। प्रणव। योगसूत्रकारने लिखा है—

"तस्य वाचकः प्रणवः।" (१।२७)

ईश्वरका वाचक प्रणव ठहरता अर्थात् ॐ कहनेसे ईश्वर समझ पड़ता है।

अब देखना चाहिये—जिस शब्दके उच्चारणसे ही ईश्वरका सम्बोधन और ईश्वरकी महिमाका प्रकाशन होता, श्रुति तथा स्मृतिमें उसी ॐ शब्दका किस प्रकार भाव पाया जाता है।

शुक्लयजुर्वेदकी माध्यन्दिन-शाखामें सर्वप्रथम 'प्रणव' शब्दका उल्लेख मिलता है—

"प्रणवैः शस्त्राणां रूपम्पयसा सोमऽ आप्यते।" (१९।२५)

"ओम्प्रतिष्ठ।" (२।१३)

फिर कृष्णयजुः प्रभृति शाखाके संहिता-भागमें ॐ

अथवा प्रणव शब्दका उल्लेख है। इससे समझ पड़ता—वेदकी संहिता अर्थात् प्राचीनतम भागके साथ साथ ओमका आविर्भाव हुआ है। उसी गणनातीत कालसे ऋषियोंने ओङ्कारतत्त्व प्रचार करनेको उद्योग लगाया। ऋग्वेदके ऐतरेय-ब्राह्मणमें लिखा है—"ओऽमित्यृचः प्रतिगर एवं तथेति गाथाया ओमिति वै दैवं तथेति मानुषम्।" (७।१८)

सकल वेदोंको प्रायः सकल ही उपनिषदोंमें ओम् पर कुछ न कुछ लिखा और उसके पाठसे कई प्रकार ओमका गूढ़ार्थ प्रतिपादित हुआ है। यथा—

१म—सेतु। अथर्ववेदको संहितामें ओम् 'सेतु' जैसा निर्दिष्ट है। (६।१०,८।४) २य—मन। (छान्दोग्य) ३य—काय। (छान्दोग्य) ४र्थ—रथ। (मैत्री उप० २।६०) ५म—उडुग। (श्वेताश्वतर २।८) ६ष्ठ—उद्गीथ। (छान्दोग्य १।१) ७म—श्वास। (छान्दोग्य ७।२) ८म—अग्नि ९म—तेजः। "तेजो प्रथममोङ्कारात्मकमासीत्। तत्तेजोऽनेनैवोमित्येव तप्त्युध्यति।" (मैत्री उप०) १०—ज्योतिः। "दीप्यतीम् ज्योतिः प्रकाशना-ज्योतिः। प्रणवाख्यप्रणेतारमरूपी वीतनिद्रो विजरो विमृत्यु विशोको भवतीत्येवं ह्याह।" (मैत्रीउप० ६।२५) ११—वाक्य। १२—शब्द। (छान्दोग्य २।२३) १३—रस। (तैत्तिरीय उप० २।७) १४—जल। "आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्।" (मैत्री उप० ६।३५) १५—मिथुन। (छान्दोग्य १।६) १६—ज्ञेय। (योगशास्त्र) १७—यूप। "ओङ्कारो यूपः।" (प्राणाग्निहोत्र उप०) १८—सर्व। "ओमिति ब्रह्म। ओमितीदं सर्वम्।" (तैत्तिरीय उप० १।८)

ऊपरी अर्थोंसे स्पष्ट समझ पड़ता, कि वही विश्वात्मा है।

१९—आरम्भ। २०—स्वीकारवाक्य। २१—अनुमति। २२—अपाकृति। २३—अस्वीकार।

ब्रह्मकी महिमा प्रकाश करनेको 'ओम्' शब्द नाना अर्थोंमें व्यवहृत हुआ है। भिन्न भिन्न उपनिषदोंमें इस विषयका विस्तर प्रमाण मिलता है।

"ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत।
ओमिति ह्युद्गायति तस्योपव्याख्यानम्।" (छान्दोग्य १।१।१)

"ओमित्येतदक्षरमुद्गीथः तद्वा एतन्मिथुनं यद्वाक्च प्राणश्च ऋक् च साम च।" (छान्दोग्य १।१।५)

अक्षरस्वरूप उद्गीथ 'ॐ'को उपासना करना चाहिये। क्योंकि 'ॐ' अक्षरसे ही आरम्भ कर साम प्रभृति गाये जाते हैं। इसलिये ओङ्कार ही उद्गीथ है। ओङ्कारको व्याख्या करना कर्तव्य है। (१।१।१)

वाक्य ही ऋक्, प्राण ही साम और 'ॐ' अक्षर ही उद्गीथ है। वाक्य एवं प्राण ऋक् तथा सामका कारण होनेसे ऋक् और साम शब्द वाच्य मिथुन है। (१।१।५)

"तद्वा एतन्मिथुनमोमित्येतस्मिन्नक्षरे संसृज्यते यदा वै मिथुनौ समागच्छत आपयतो वै तावन्योन्यस्य कामम्।" "आपयिता ह वै कामानां भवति य एतदेवं विद्वानक्षरमुद्गीथमुपास्ते।" (छान्दोग्यउप० १।१।६-७)

जैसे स्त्रीपुरुषके परस्पर मिलनेसे कामवृत्ति कृतार्थ होती, वैसे ही जब वाक्यरूप स्त्री और प्राणरूप पुरुषका मिथुन अर्थात् मिलन गंठता, तब उनको परस्पर काम मिलता है। (१।१।६) जो विद्वान् व्यक्ति इस मतको देख उद्गीथ ओङ्कारको उपासना करता, वह जब जो चाहता, वही फल पा जाता है। (१।१।७)

तैत्तिरीय उपनिषद्में लिखा है—

"ओमिति ब्रह्म। ओमितीदं सर्वम्। ओमित्येतदनुकृतिर्ह स्म वा अप्यो श्रावयेत्याश्रावयन्ति। ओमिति सामानि गायन्ति ओं शोमिति शस्त्राणि शंसन्ति। ओमित्यध्वर्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यग्निहोत्रमनुजानाति। ओमिति ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह। ब्रह्मोपाप्नुवानीति ब्रह्मैवो प्राप्नोति।" (८।१)

ओङ्कार ही ब्रह्म है। इस संसारमें सकल ही ओङ्कार है। सकल कार्योंके आदिमें ओङ्कार प्रयोग करना चाहिये। कोई वैदिक विषय सुनानेमें प्रथम ही ओङ्कार उच्चारण करना पड़ेगा। ओङ्कार प्रयोग पूर्वक सामगान किया जाता है। शास्त्र पढ़नेमें प्रथम 'ॐ शों' वाक्य बोलते हैं। अध्वर्युको मन्त्र पढ़ते समय पहले ॐ उच्चारण कर लेना चाहिये। ब्रह्म कर्मारम्भसे पूर्व 'ॐ' शब्द बोलना पड़ता है। ॐ शब्द उच्चारण कर अग्निहोत्र याग करते हैं। ओङ्कार उच्चारणपूर्वक वेदाध्ययन करनेसे वेदविद्या और ब्रह्मविद्या दोनों मिलती हैं।

"परञ्चापरञ्च ब्रह्म यदोङ्कारस्तस्माद्विद्वानेतेनैवायतनेनैकतरमन्वेति।२। स यद्येकमात्रमभिध्यायीत स तेनैव संवेदितस्तूर्णमेव जगत्यामभिसम्पद्यते। तमृचो मनुष्यलोकमुपनयन्ते स तत्र तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया सम्पन्नो महिमानमनुभवति।३। अथ यदि द्विमात्रेण मनसि सम्पद्यते सोऽन्तरिक्षं यजुर्भिरुन्नीयते। सोम लोकं स सोमलोके विभूतिमनुभूय पुनरावर्तते।४।

य: पुनरेतत् त्रिमात्रेणोमित्येतेनैवाक्षरेण परं पुरुषमभिध्यायीत स तेजसि सूर्ये सम्पन्नः। यथा पादोदरस्त्वचा विनिर्मुच्यते एवं ह वै स पाप्मना विनिर्मुक्तः स सामभिरुन्नीयते ब्रह्मलोकं स एतस्माज्जीवघनात् परात्परं पुरिशयं पुरुषमीक्षते तदेतौ श्लोकौ भवतः। ५। तिस्रो मात्रा मृत्युमत्यः प्रयुक्ता अन्योन्यसक्ता अनविप्रयुक्ताः। क्रियासु बाह्याभ्यन्तरमध्यमासु सम्यक् प्रयुक्तासु न कम्पते ज्ञः। ६। ऋग्भिरेतं यजुर्भिरन्तरिक्षं स सामभिर्यत्तत् कवयो वेदयन्ते। तमोङ्कारेणैवायतनेनान्वेति विद्वान् यत्तच्छान्तमजरममृतमभयं परञ्चेति॥ ७॥ (प्रश्नोपनिषत् ५ प्रश्न)

ओङ्कार ही पर और अपर ब्रह्म है। विद्वान् इस ओङ्कार (ओङ्कारकी उपासना) द्वारा पर और अपर ब्रह्मको प्राप्त होते हैं। २। जो व्यक्ति एकमात्राविशिष्ट ॐकारकी उपासना उठाता, वह अति सत्वर ही पृथिवी पर जन्म पाता है। ओङ्कारकी प्रथम मात्रा ऋग्वेदस्वरूप है। प्रथम मात्रा ही उपासकको मनुष्यलोक पहुंचाती है। (प्रथम मात्राकी उपासना करनेसे मनुष्यलोक मिलता है।) इस मनुष्यलोकमें वह उपासक ब्रह्मचर्य एवं श्रद्धासम्पन्न हो नानाविध महिमा अनुभव करता है। ३। जो व्यक्ति द्विमात्रा विशिष्ट ओङ्कारकी उपासना करेगा, वह यजुर्वेदस्वरूप द्विमात्रा द्वारा अन्तरिक्ष लोक पहुंचेगा; फिर सोमलोकमें नानाविध विभूति अनुभव कर इहलोकको चलेगा। ४। जो व्यक्ति त्रिमात्राविशिष्ट ओङ्कार द्वारा उस परमपुरुषको ध्यान करता, वह सूर्यरूप तेजःसम्पन्न बनता है। जैसे सर्प प्राचीन चर्म छोड़ कष्टसे छूटता, वैसे ही उक्त उपासक भी सामरूप ओङ्कारसे ब्रह्मलोक पहुंचता और जीवसमष्टिरूप हिरण्यगर्भसे उत्कृष्ट सर्व शरीरानुप्रविष्ट परब्रह्मको देख सकता है। उसी ओङ्कारकी मृत्तिमती तीन मात्रा—अकार, उकार और मकार हैं। वह तीनों आत्माके ध्यानको क्रियामें लगा करती हैं। उक्त तीनों मात्राका परस्पर सम्बन्ध विद्यमान है। उनका प्रयोग एकही विषयमें होता है। किसी क्रियामें उनका अप्रयोग नहीं पड़ता, किन्तु समुदाय बाह्य, आभ्यन्तर और मध्यविध क्रियामें प्रयोग चलता है। जो व्यक्ति ओङ्कारका विभाग विशेषरूपसे जानता, वह कभी विचलित नहीं होता। ६। ज्ञानी ऋक्स्वरूप प्रथम मात्राद्वारा इहलोक, यजुःस्वरूप द्वितीय मात्रा द्वारा अन्तरीक्ष एवं सामरूप तृतीय मात्रा द्वारा ब्रह्मलोक और ओङ्काररूप साधन द्वारा जरा-मृत्यु विहीन शान्त परब्रह्मपद पाते हैं। ७।

"ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानं भूतं भवद्भविष्यदिति सर्वमोङ्कार एव। यच्चान्यत्त्रिकालातीतं तदप्योङ्कार एव।" "सर्वं ह्येतद् ब्रह्मायमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा चतुष्पात्।" (माण्डुक्योपनिषत्)

यह समुदय ही ब्रह्म है। हमारा जो जीव आत्मा है, वह भी ब्रह्म है। उसी आत्माका अभिन्न ब्रह्म चार अंशमें विभक्त है।

जैसे रज्जु प्रभृति सर्पके विवर्त और अद्वितीय ब्रह्म विश्वप्रपञ्चका अधिष्ठान ठहरता, वैसे ही ओङ्कार समुदय वाक्प्रपञ्चका एकमात्र आधार पड़ता है। (अर्थात् इस ओङ्कारमें ही समुदय वाक्य परिकल्पित है) वह ओङ्कार ब्रह्मस्वरूप है, क्योंकि ओङ्कार ब्रह्मका अभिधायक है। (अभिधायक शब्द अभिधेयसे भिन्न नहीं) ओङ्कार विवर्त शब्दाभिधेय प्राण और घटादि सकल ही आत्माका धर्म है। किन्तु उक्त प्राणादि अभिधायक वाक्यसे भिन्न नहीं। इसीसे लिखा है—

"वाचारम्भणं विकारो नामधेयम्।"

अर्थात् वाक्य द्वारा आरब्ध वस्तुमात्र नाममात्र हैं। सुतरां अक्षरात्मक ओङ्कार परिदृश्यमान समुदयसे अभिन्न है। 'ओङ्कारको समुदय' मान उपासना करनेसे ब्रह्मप्राप्ति होती है। अर्थात् ओङ्कारकी उपासनासे जब चित्त निर्मल रहेगा, तभी ब्रह्म स्पष्टरूपसे समझ पड़ेगा। फिर ब्रह्मपद मिलनेमें विलम्ब नहीं होता। यह ओङ्कार ब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिका उपाय होनेसे ब्रह्मका निकटवर्ती है। अतीत, भविष्यत् और वर्तमान—हमारा सब ज्ञानगम्य ओङ्कार ही है।

"सोऽयमात्माऽध्यक्षरमोङ्कारोऽधिमात्रं पादामात्रामात्राश्च पादा अकार उकारो मकार इति। ८। जागरितस्थानो वैश्वानरोऽकारः। प्रथमा मात्राप्तेरादिमत्वाद्वाप्नोति ह वै सर्वान् कामानादिश्च भवति यः एवं वेद। ९। स्वप्नस्थानस्तैजस उकारो द्वितीया मात्रोत्कर्षादुभयत्वाद्वोत्कर्षति ह वै ज्ञानसन्ततिं समानश्च भवति नास्या ब्रह्मवित्कुले भवति य एवं वेद। १०। सुषुप्तस्थानः प्राज्ञो मकारस्तृतीया मात्रामितेरपीतेर्वा मिनोति ह वा इदं सर्वमपीतिश्च भवति च एवं वेद। ११। अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्यः प्रपञ्चोपशमः शिवोऽद्वैत एवमोङ्कार आत्मैव संविशत्यात्मनाऽत्मानं य एवं वेद। १२।"

वह आत्मा अक्षरको अधिकार कर अवस्थित है।

फिर आत्माके पादस्वरूप अकार, उकार और मकार-को अधिकारकर अक्षर (ओङ्कार) सर्वदा अवस्थित है। आत्माका पाद ही ओङ्कारकी मात्रा है।८। जिस स्थानसे प्राणी जागरित होते, उसी स्थानको वैश्वानर पदवाच्य अकार बोलते हैं। यह अकार ही ओङ्कारकी प्रथम मात्रा है। जो व्यक्ति व्यापित्व एवं आदिमत्व द्वारा अकार तथा वैश्वानरकी साम्य उपासना उठाता, वह समस्त अभीष्ट फल पाता और समुदायका आदि बन जाता है।९। स्वप्नस्थान तैजस ही ओङ्कारकी द्वितीय मात्रा उकार है। जो व्यक्ति इसकी उत्कर्ष एवं प्राज्ञ विश्वका मध्यस्थ समझ तैजस दृष्टि द्वारा उपासना करता, उसका ज्ञान बढ़ने लगता, शत्रु मित्र उभय उसके पक्षमें समान पड़ता और उसके वंशमें कोई ब्रह्मज्ञानविहीन नहीं रहता।१०। प्राज्ञ नामक सुषुप्त स्थान ही तृतीय मात्रा मकार है। मिति एवं अपीति द्वारा मकार तथा प्राज्ञको साम्य उपासना करनेसे अधिकारी जगत्‌को प्रकृत अवस्था देख पाता और ब्रह्मस्वरूपमें लीन हो जाता है।११। जो तुरीय ब्रह्म है, वह किसी व्यवहारका विषय नहीं। वह प्रपञ्चविहीन और मङ्गलमय है। वही 'एकमेवाद्वितीयं' महावाक्यका लक्ष्य और ओङ्कार-स्वरूप है। वह समुदायमें जीवात्माके भावसे विराज रहा है। जो उसका प्रकृत तत्त्व समझ सकता, वही स्वीय जीवात्मा द्वारा परमात्माके साथ मिलता है।१२।

अथर्वशिराके मतमें—

"हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः।"

जो हृदयमें नित्य रहते, उन्हीं आपको प्रणव अ-उ-म् तीन मात्रा कहते हैं। उन्हीं हृदिस्थित पुरुषका उत्तरभाग ओङ्कार है। ओङ्कार ही सर्वव्यापी, अनन्त, तारक, शुक्ल, सूक्ष्म, विद्युत् और ब्रह्म है। जो ब्रह्म है, वह एक है। वही रुद्र, वही ईशान और वही महेश्वर है।

अनन्तर अथर्वशिरा निर्देश करती है—

"अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणान् ऊर्ध्वमुत्-क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुःसामाथर्वाङ्गिरसः ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः।"

अथर्वशिखोपनिषद्‌में ओङ्कारका स्वरूप विशेष वर्णित है।—

"ओमित्येतदक्षरमादौ प्रयुक्तं ध्यानं ध्यायितव्यम्। ओमित्येतदक्षरस्य पादश्चत्वारो देवश्चत्वारो वेदश्चत्वारः। चतुष्पादेतदक्षरं परं ब्रह्म पूर्वास्य मात्रा पृथिव्यकारः स ऋग्भिरृग्वेदो ब्रह्मा वसवो गायत्री गार्हपत्यः। द्वितीयान्तरिक्षमुकारः स यजुर्भिर्यजुर्वेदो विष्णुरुद्रास्त्रिष्टुप् दक्षिणाग्निः। तृतीयो द्यौर्मकार स सामभिः सामवेदो विष्णुरादित्याजगत्याहवनीयः। यावसानेऽस्य चतुर्थ्यर्धमात्रा सा लुप्तमकारः सोऽथर्वणैर्मन्त्रैरथर्ववेदः संवर्तकोऽग्निर्मरुते विराड़िक ऋषि।" इत्यादि।

प्रथमतः 'ओं' अक्षर लगा ध्यान करना चाहिये। ओं अक्षरके पाद चार हैं। चतुष्पादविशिष्ट पद अक्षर ही परब्रह्म है। इसकी अकारस्वरूप प्रथम मात्रा पृथिवी है। ऋक् मन्त्रद्वारा उपलक्षित होनेसे इसे ऋग्वेद कहते हैं। इसके देवता ब्रह्मा, वसु, गायत्री और गार्हपत्य हैं। द्वितीय पाद उकार अन्त-रिक्ष है। वह यजुर्मन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे यजुर्वेद कहाता है। उसके देवता विष्णु, रुद्र, त्रिष्टुप् और दक्षिणाग्नि हैं। तृतीय पाद—द्यो मकार हैं। साममन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे सामवेद नाम पड़ता है। देवता विष्णु एवं आदित्य हैं। जगती आवहनीय है। ओङ्कारके अन्तमें जो अर्धमात्रा रहती, वही लुप्त मकार है। इसका विराम लोप हो जानेसे स्पष्ट समझ नहीं पड़ता। आथर्वण मन्त्र द्वारा संयोजित होनेसे इसको अथर्ववेद कहते हैं। इसके देवता संवर्तक अग्नि, वायु विराट् और एक ऋषि नामक अग्नि हैं।

ओङ्कारके शिरोभागकी मात्रा अतिरमणीय, दीप्तिमान् और स्वप्रकाश है। ओङ्कारकी प्रथम मात्रा (अकार) रक्तवर्ण है। इसमें सर्वदा ब्रह्मा अवस्थान करते हैं। ब्रह्मा ही इसके अधिष्ठातृ-देवता भी हैं। द्वितीय मात्रा (उकार) शुक्लवर्ण है। इसमें रुद्र रहते हैं। रुद्र ही इसके अधिष्ठातृ-देवता भी हैं। तृतीय मात्रा (मकार) कृष्णवर्ण है। इसमें विष्णु अवस्थान करते हैं। इसके अधिष्ठाता भी विष्णु ही हैं। चतुर्थ मात्रा (लुप्त मकार) सर्व वर्ण-

मय है। इसमें विद्युत् विराजमान है। ईश्वर इसका अधिष्ठातृ-देवता है। इस ओङ्कारके चार पद और चार मुख हैं। नादसंज्ञक लुप्त मकाररूप अर्ध मात्रा इस ओङ्कारकी चतुर्थ मात्रा है। इसको सूक्ष्म मात्रा कहते हैं। स्थूलमात्रा ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत भेदसे तीन प्रकारकी होती है। 'ॐ' एकमात्रा विशिष्ट होनेसे ह्रस्व, द्विमात्राविशिष्ट (ओं ओं) होनेसे दीर्घ और त्रिमात्रा (ओं ओं ओं) विशिष्ट होनेसे प्लुत कहाता है। अनुपमरूप शान्तभावापन्न स्वप्रकाश चतुर्थमात्रा प्लुत प्रयोगमें अभिव्यक्त पड़ती, वह किसी शब्द द्वारा समझपर नहीं चढ़ती। ओङ्कार एकबार मात्र उच्चारित होनेसे मनके साथ सकल प्राणवायुको षट्चक्रभेदपूर्वक सुषुम्ना नाड़ी द्वारा जड़ देश (शिरोदेश)में उत्क्रामित करता है। इसीसे इसको ओङ्कार कहते हैं।

सकल प्राणवायुको नम्रता और कुम्भकादि द्वारा गतिरोध करनेसे ओङ्कारको 'प्रणव' कहते हैं। ओङ्कार चार भागमें अवस्थित होनेसे चार देवता (ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु और ईश्वर) रखता और चार वेद (ऋक्, यजुः, साम और अथर्व)का उत्पत्तिस्थान ठहरता है। अकार, उकार प्रभृति ओङ्कारके जो चार पाद होते, ध्यानके समय उन्हें छोड़ना न चाहिये। किन्तु अकारादि विशिष्ट ओङ्कारको ही ध्यान करना उचित है। वैसा होनेपर अकारादिके (अधिष्ठाता) देवता समुदाय दुःख और भयसे उपासकको अवश्य ही त्राण करेंगे। त्राणकारी होनेसे ही स्वयं विष्णुने ओङ्कार और उसकी मात्राको ध्यान किया था। इसीसे वह असुरोंको जीत सके। इन्द्रिय संयत रख ओङ्कारको ध्यान करनेसे ही पितामह ब्रह्मा (बृहत्) बने अर्थात् ब्रह्मा जगत्सृष्टि करनेमें समर्थ हुये थे।

क्योंकि ईश्वर ही समुदाय सृष्टिका कर्त्ता है। इसीसे विष्णुने ओङ्कारात्मक नादान्त शान्त ब्रह्ममें मन लगा उसी ओङ्कारात्मक जगदीश्वरको ध्यान किया। ओङ्कारात्मक परमेश्वरने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र एवं पञ्चभूतके साथ समुदाय इन्द्रियको बनाया था। वह सकल कारणका सृष्टिकर्त्ता और एकमात्र मङ्गलमय एवं प्रभुशक्तिसम्पन्न है। वही सकल जीवोंके मध्य एक भावसे अवस्थान करता है। फिर उसीने इस अपरिच्छिन्न आकाशको बनाया है। उक्त नादान्त प्रणवके ध्यान कालपर समझना पड़ेगा—इसमें ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और शिव पांचो देवता विद्यमान हैं। अधिक यज्ञ करनेसे अधिक फलप्राप्तिकी भांति पञ्चावयव ओङ्कारको स्थिर चित्तसे क्षणकाल भी ध्यान करनेसे शत शत यज्ञका पुण्य मिलता है। समुदाय ज्ञान, योग और ध्यानमें यह मङ्गलमय ओङ्कार ही एकमात्र अवलम्बन है।

जितने वैदिक याग-यज्ञ कहाते, उन सबको छोड़ ओङ्कार अध्ययन करने पर द्विज निश्चय ही गर्भवाससे छूट जाते हैं; फिर गर्भवास-जनित कष्ट नहीं उठाते।"

"आत्मानमरणिं कृत्वा प्रणवञ्चोत्तरारणिम्।
ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्देवं पश्यन्निगूढ़वत्॥" (ब्रह्मोपनिषद्)

आत्माको अरणि (निर्मन्थ काष्ठ) और प्रणवको उत्तरारणि* बना पुनः पुनः ध्यानरूप निर्मन्थन द्वारा गूढ़वस्तुकी भांति परमात्माको देखना चाहिये।

पहले ही कहा जा चुका—ओङ्कार ही ब्रह्म पहचाननेका एक मात्र उपाय है। इसीसे उपनिषदमें ओङ्कारका स्वरूप विशेष वर्णित है—

"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म यदुक्तं ब्रह्मवादिभिः।
शरीरं तस्य वक्ष्यामि स्थानं कालं लयं तथा॥
तत्र देवास्त्रयः प्रोक्ता लोका वेदास्त्रयोऽग्नयः।
तिस्रो मात्रार्धमात्रा च त्र्यक्षरस्य शिवस्य च॥
ऋग्वेदो गार्हपत्यश्च पृथिवी ब्रह्म एव च।
अकारस्य शरीरन्तु व्याख्यातं ब्रह्मवादिभिः॥
यजुर्वेदोऽन्तरिक्षञ्च दक्षिणाग्निस्तथैव च।
विष्णुश्च भगवान् देव उकारः परिकीर्तितः॥
सामवेदस्तथा द्यौश्चाहवनीयस्तथैव च।
ईश्वरः परमो देवो मकारः परिकीर्तितः॥
सूर्यमण्डलमिवाभात्यकारः शङ्खमध्यगः।
उकारश्चन्द्रसङ्काशस्तस्य मध्ये व्यवस्थितः॥
मकारश्चाग्निसङ्काशो विधूमो विद्युतोपमः।
तिस्रो मात्रास्तथा ज्ञेयाः सोमसूर्याग्नितेजसः॥

* जिन दो काष्ठोंको परस्पर मथन करनेसे अग्नि उपजता, उनमें नीचेवालेका अरणि और ऊपरवालेका उत्तरारणि नाम पड़ता है।

शिखाभा दीपसङ्काशा यस्मिन्न परिवर्तते।
अर्धमात्रा तु सा ज्ञेया प्रणवस्योपरिस्थिता॥
कांस्यघण्टानिनादस्तु यथा लीयति शान्तये।
ओङ्कारस्तु तथा योज्यः शान्तये सर्वमिच्छता॥" (ब्रह्मविद्योपनिषत्)

ब्रह्मवादी जिस 'ॐ' अक्षरको ब्रह्म बताते, उसका शरीर, स्थान, काल और लय सुनाते हैं। इस मङ्गलमय ओङ्कारके तीन देवता, तीन लोक, तीन वेद, तीन अग्नि और साढ़े तीन मात्रा हैं। ऋग्वेद, गार्हपत्याग्नि, पृथिवी और ब्रह्माको ब्रह्मवादियोंने अकारका शरीर कहा है। यजुर्वेद, अन्तरिक्ष, दक्षिणाग्नि और भगवान् विष्णु उकारका शरीर हैं। सामवेद, स्वर्ग, आहवनीय, और ईश्वर मकारका शरीर है। सूर्यमण्डल-सदृश दीप्तिमान् अकार शङ्खके मध्य और चन्द्रसदृश दीप्तिमान उकार उक्त अकारके मध्य विराजता है। धूमरहित अर्थात् अतिशय दीप्तिशाली, अग्निसदृश एवं विद्युद्दाम जैसा शोभमान मकार है। उक्त ओङ्कारकी तीनों मात्रा क्रमसे चन्द्र, सूर्य और अग्निके तुल्य तेजःसम्पन्न हैं। इससे दीपसदृश शिखा और दीप्ति कभी विमुक्त नहीं होती। ओङ्कारके उपरि भागमें रहनेवालीको अर्धमात्रा कहते हैं। कांस्य और घण्टाके शब्दकी तरह ओङ्कारके उच्चारणसे भी चित्तमें शान्ति आती है। इसलिये समुदाय इष्टफल पानेकी इच्छा रखनेवालेको सर्वदा ओङ्कार उच्चारण करना चाहिये।"

लिङ्गपुराणमें ओङ्कारकी उत्पत्ति इस प्रकार वर्णित है—

'किसी समय भगवान् विष्णु प्रलयपयोधिके मध्य शेषकी शय्यापर सोये थे। ब्रह्माने उन्हें निकट जाकर जगा दिया। विष्णुने उठकर हंसते हंसते कहा—'वत्स ब्रह्मन्! तुम्हारा कुशल तो है? वत्स! तुम्हारा मङ्गल तो है?' ब्रह्माने ऐसा सम्बोधन मन ही मन कुछ बुरा समझ विष्णुसे भर्त्सनापूर्वक पूछा था—'बड़ा आश्चर्य है! मैं सृष्टि, स्थिति और प्रलयका कर्ता हूं। आप किस कारण मुझे, वत्स-वत्स कह कर पुकारते हो?' इसी प्रकार अनेक वाक्‌वितण्डा होते होते अन्तको हाथाबाहीं की नौबत आ गयी। घोरतर युद्ध चल हो रहा था, कि दोनोंके सम्मुख एक अद्भुत ज्योतिर्मय लिङ्ग आविर्भूत हुआ। उस समय दोनों युद्ध छोड़ अनुसन्धान करने लगे—यह ज्योतिर्मय लिङ्ग कहांसे आया है। विष्णु वराहमूर्ति धारण कर अधोगामी होते भी उस ज्योतिर्लिङ्गका मूल देख न सके थे। इधर ब्रह्मा हंसका रूप बना महावेगसे ऊपरको उड़, किन्तु लिङ्गके अन्ततक न पहुंचे। पीछे दोनों श्रान्त और क्लान्त हो ज्योतिर्लिङ्गको प्रणाम करते खड़े रह गये। दोनों ही सोचने लगे—यह क्या है, यह क्या है! दूसरे क्षण ही लिङ्गके मध्यसे शब्द निकला था। दोनोंने ओं ओं ओं उच्चारित प्लुत स्वर सुना। ब्रह्मा और विष्णु सोचते सोचते खड़े हो गये थे—यह महाशब्द क्या है, यह महाशब्द क्या है! फिर दोनोंने देखा—लिङ्गके दक्षिण आद्यवर्ण अकार, उत्तर उकार, मध्य मकार और ऊपर नादविन्दु है। उसके ऊपर समुदायका समवायरूप ओङ्कार शोभित है। दक्षिण दिशाका अकार सूर्यमण्डल, उत्तरस्थित उकार अग्नि और मध्यवर्ती मकार चन्द्रमण्डल जैसा तेजोमय है। ऊपर देख पड़नेवाला शुद्ध स्फटिककी भांति तेजःसम्पन्न है। यह तुरीय होनेसे त्रिगुणातीत, अमृतस्वरूप, निष्कल, निरुपद्रव, द्वन्द्वहीन, केवल, शून्य, बाह्याभ्यन्तररहित, भीतर और बाहरका स्वरूप, आदि, मध्य एवं अन्तरहित तथा आनन्दकारण है। अकार, उकार एवं मकार तीन मात्राके तथा नाद अर्धमात्राके रूपसे अवस्थान करता है। यही शब्द ब्रह्म है। ऋक्, यजुः एवं साम तीनों वेद अकार, उकार तथा मकार तीनों मात्राके रूपसे अवस्थान करते हैं। यही शब्दब्रह्म विश्वात्मा है। इसी समयसे अतीन्द्रिय प्रकाशक वेद आविर्भूत हुवे। इसी वेदसे निखिल जगत्‌का मङ्गल बनता है। विष्णु इसी वेदवाक्य द्वारा परमेश्वरको समझ सके थे। फिर यजुर्वेदने कहा—भगवान् रुद्र अचिन्त्य हैं। एकाक्षर प्रणव उन्हींका वाचक है। वह एकाक्षरवाच्य रुद्र ही परमकारण, अमृतस्वरूप, ऋतुस्वरूप, सत्यस्वरूप, आनन्दस्वरूप, और परात्पर परम ब्रह्मस्वरूप हैं। शब्द-ब्रह्मरूप एकाक्षरसे अकार स्वरूप

ब्रह्मा उत्पन्न हुये हैं। इसी एकाक्षरसे उकार-स्वरूप विष्णु और मकारस्वरूप रुद्र निकले हैं। इसके मध्य अकारस्वरूप ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता, उकाररूप विष्णु पालन-कर्त्ता और मकाररूप इन दोनोंके प्रति अनुग्रह-कारी हैं। इसमें अकाररूप ब्रह्मा बीजस्वरूप, उकार-रूप विष्णु योनिस्वरूप और मकाररूप रुद्र निषेककर्त्ता हैं। बीज, योनि, निषेक और शब्द-ब्रह्मरूप चारो प्रणवात्मक हैं। शब्द ब्रह्मरूप निषेक-कर्ता महेश्वरके इच्छानुसार अपनेको पृथक् कर अवस्थान करते हैं। इसी शब्द ब्रह्मस्वरूप ईश्वरके लिङ्गसे अकारस्वरूप बीजकी उत्पत्ति हुयी थी। वह बीज फिर उकाररूप योनिमें पड़ बढ़ने लगा। पीछे उससे सोनेका एक अण्डा निकला था। सहस्र वर्ष बीतने पर महेश्वरकी इच्छाके अनुसार द्विखण्ड होते उससे हिरण्यगर्भ उत्पन्न हुये। उसके ऊर्ध्व-भागसे स्वर्ग और अधोभागसे पाताल निकला। अकार रूप जो ब्रह्मा उपजे, वही सर्वलोकके सृष्टि-कर्ता हैं। उन्होंने सत्व, रज: और तम: गुणत्रयके भेदसे तीन मूर्ति धारण की हैं। (लिङ्गपु० ७म अ०)

भगवान् मनुके मतसे—

"अकारञ्चाप्युकारञ्च मकारञ्च प्रजापतिः।
वेदत्रयात् निरदुहत् भूर्भुवस्वरिति विधा॥" (२।७६)

अकार, उकार एवं मकार और भूः, भुवः, स्वः व्याहृतित्रयको प्रजापति ब्रह्माने यथाक्रम तीनों वेदसे उद्धार किया था।

अक्षर निघण्टुमें लिखा है—

"ओङ्कारो वर्तुलस्तारो विन्दुः शक्तिस्त्रिदैवता
प्रणवो मन्त्रगर्भश्च पञ्चदेवो ध्रुवः शिव॥
मन्त्राद्यं परमं बीजं मूलमाद्यश्च तारकः।
शिवादि व्यापको व्यक्तः परं ज्योतिश्च संविदः॥"

ओङ्कार वर्तुल, तारक, विन्दु, शक्ति, त्रिदेवता, प्रणव, मन्त्रगर्भ, पञ्चदेव, ध्रुव, शिव, आदिमन्त्र, परमबीज, मूल, आद्यतारक, शिवादिव्यापक, व्यक्त, श्रेष्ठ, ज्योतिः और संविद है।

यह ॐ शब्द मन्त्रविशेष है। यह मन्त्र भगवान्‌को अति प्रिय है।

"ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥
तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥
तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपः क्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः॥
सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत् प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥"
(गीता १७अ० २३-२६ श्लो०)

परमात्मा ब्रह्मके तीन नाम हैं—ॐ, तत् और सत्। इसीसे ब्रह्मवादी ओङ्कारके उच्चारणसे यज्ञ, दान और तपस्यादि क्रिया सर्वदा अनुष्ठान करते हैं। मोक्षा-काङ्क्षी 'तत्' शब्दके उच्चारणसे फलाकाङ्क्षारहित तप, यज्ञ और दानादि कार्यका अनुष्ठान किया करते हैं। हे पार्थ! 'सत्' शब्द साधुभाव बतानेको बोला जाता है। इसके अतिरिक्त यज्ञ, तपस्या और दानादि प्रशस्त कार्यमें भी सत् शब्दका प्रयोग होता है। (ॐ-तत्-सत् त्रिविध ब्रह्मका नाम उच्चारण करनेसे ही सकल कार्य सिद्ध हो सकता है)।

योगशास्त्रके मतसे ॐ मन्त्र जप न करनेसे किस प्रकार योगी सिद्ध हो सकता है! यह मन्त्र जप करनेसे परम कारुणिक भगवान् भक्तोंके चित्तको एकाग्रतासाधक शक्ति देते हैं। योगसूत्रकारने कहा है—"तज्जपस्तदर्थभावनम्। ततः प्रत्यक्‌चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च॥"

उस प्रणवका जप तथा अर्थ भावना करनेसे ईश्वरतत्त्व देख पड़ता और व्याधि, अकर्मण्यता, संशय, अनवधानता, आलस्य, इन्द्रियके विषयकी प्रबलता प्रभृति अन्तराय भगता है।

भगवान् मनुने कहा है—

"प्राक्‌कूलान् पर्युपासीनः पवित्रैश्चैव पावितः।
प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत ओङ्कारमर्हति॥" (२।७५)

कुछ कुश पूर्वाभिमुख रख, उनके ऊपर बैठ और दोनों हाथमें कुश ले पवित्र होना चाहिये। फिर पञ्चदश ह्रस्वस्वर उच्चारणके उपयुक्त समयमें तीन बार प्राणायाम द्वारा शुद्ध होनेपर अधिकारी प्रणवोच्चा-रणके योग्य बनता है।

किन्तु योगी जिस भावसे ओङ्कार जप करते, वह

अधिक सहज नहीं। योगी प्रथम केवल अकार जपते हैं। रीतिके अनुसार अभ्यास हो जानेसे पीछे दूसरा अक्षर उच्चारण करना पड़ता है। ओङ्कारके उच्चारणकी प्रणाली ५ २ पृष्ठमें देखो।

ॐ योगियोंका प्रधान अवलम्बन है—

"ओं योगशिखां प्रवक्ष्यामि सर्वभावेषु चोत्तमाम्।
यदा तु ध्यायते मन्त्रं गात्रकम्पोऽभिजायते ॥१
आसनं पद्मकं बध्वा यच्चान्यदपि रोचते।
कुर्यान्नासाग्रदृष्टिञ्च हस्तौ पादौ च संयुतौ ॥२
मनः सर्वत्र संयम्य ओङ्कारं तत्र चिन्तयेत्।
ध्यायते सततं प्राज्ञो हृत्कृत्वा परमेष्ठिनम् ॥३" (योगशिखोपनिषत्)

सर्वश्रेष्ठ योगशिखा कहती—मन्त्रके ध्यानकाल गात्रकम्प उपस्थित होता है। पद्मासन अथवा अन्य कोई अभिलषित आसन लगा और हस्त, पद, एवं मनःसंयमपूर्वक हृदयमें परमेष्ठीको बैठा प्राज्ञ ओङ्कार चिन्ता किया करते हैं।

फिर योगशिखामें देखते हैं—

"त्रयो लोकास्त्रयो वेदास्त्रयः सन्ध्यास्त्रयः सुराः।
त्रयोऽग्नयो गुणास्त्रीणि स्थिताः सर्वे त्रयाक्षरे ॥६
त्रयाणामक्षरे प्राप्ते योऽधीतेऽप्यर्धमक्षरम्।
तेन सर्वमिदं प्राप्तं लब्धं तत् परमं पदम् ॥७
पुष्पमध्ये यथा गन्धः पयोमध्येऽस्ति सर्पिवत्।
तिलमध्ये यथा तैलं पाषाणेष्विव काञ्चनम् ॥८
हृदिस्थाने स्थितं पद्मं तच्च पद्ममधोमुखम्।
ऊर्ध्वनालमधोविन्दुस्तस्य मध्ये स्थितं मनः ॥९
अकारे शोचितं पद्ममुकारेणैव भिद्यते।
मकारे लभते नादमर्धमात्रा तु निश्चला ॥१०
शुद्धस्फटिकसङ्काशं किञ्चित् सूर्यमरीचिवत्।
लभते योगयुक्तात्मा पुरुषोत्तमतत्परः ॥११"

तीन लोक, तीन वेद, तीन सन्ध्या, तीन देवता, तीन अग्नि और तीन गुण—समस्त ही 'ओं'के तीन अक्षरमें सन्निवेशित है। जो व्यक्ति यह तीनों अक्षर पाठकर पीछे अर्ध अक्षर पढ़ता, उसे परम पद मिलता है। पुष्पके मध्य गन्ध, दुग्धके मध्य घृत, तिलके मध्य तैल और पाषाणके मध्य काञ्चनकी भांति हृदयमें अधोमुख ऊर्ध्वनाल पद्म रहता, जिसमें मन बसता है। अकारके द्वारा शोचित और उकारके द्वारा भिन्न हो पद्म मकारमें शब्द लाभ करता है। अर्धमात्रा निश्चल है। ईश्वरतत्पर योगी सूर्यकिरणकी भांति शुद्ध स्फटिक तुल्य कोई पदार्थ पा जाते हैं।

"ओं अकारो दक्षिणः पक्ष उकारस्तूत्तरः स्मृतः।
मकारस्तस्य पुच्छं वा अर्धमात्रा शिरस्तथा ॥१
आग्नेयी प्रथमा मात्रा वायव्येषा तथानुगा ॥६
भानुमण्डलसङ्काशा भवेन्मात्रा तथोत्तरा।
परमा चार्धमात्रा च वारुणीं तां विदुर्बुधाः ॥७
कलात्रयानना वापि तासां मात्रा प्रतिष्ठिता।
एष ओङ्कार आख्यातो धारणाभिर्निबोधत ॥"८(नादविन्दु उपनिषत्)

अकार दक्षिण एवं उकार उत्तर पक्ष, मकार पुच्छ और अर्धमात्रा उसका मस्तक है। प्रथमाको आग्नेयी, द्वितीयाको वायवी, तृतीयाको भानुमण्डल-समा और अर्धमात्राको पण्डित वारुणी कहते हैं। उक्त मात्रावोंके मध्य कलात्रयानना मात्रा प्रतिष्ठित है। इसी समुदायका नाम ओङ्कार है। ओङ्कारका बोध धारणासे होता है।

"भूमिभागे समे रम्ये सर्वदोषविवर्जिते।
कृत्वा मनोमयीं रक्षां जप्त्वा चैवाथ मण्डलम् ॥१७
पद्मकं स्वस्तिकं वापि भद्रासनमथापि वा।
बध्वा योगासनं सम्यगुत्तराभिमुखः स्थितः ॥१८
नासिकापुटमङ्गुल्या पिधायैकेन मारुतम्।
आकृष्य धारयेदग्निं शब्दमेवाभिचिन्तयेत् ॥१९
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म ओमित्येकेन रेचयेत्।
दिव्यमन्त्रेण बहुशः कुर्यादात्ममलच्युतिम् ॥" २० (अमृतविन्दु-उ०)

सर्वदोषशून्य समतल भूमिभागमें मनोमयी रक्षा विधान कर मण्डल रूप बनाये। अनन्तर पद्मक, स्वस्तिक अथवा भद्रासन नामक योगासन लगा उत्तर-मुख उपवेशनपूर्वक एक अङ्गुलि द्वारा नासापुटको आच्छादन कर अपर नासापुटसे वायु आकर्षणपूर्वक अग्नि शब्द चिन्ता करना चाहिये। (उसके पीछे) एकाक्षर ब्रह्मस्वरूप ओम् शब्दसे रेचक निकाल दिव्य-मन्त्रके द्वारा आत्मशुद्धि करे।

"वर्णत्रयात्मिका ह्येते रेचकपूरककुम्भकाः।
स एष प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामश्च तन्मयः ॥" (योगी याज्ञवल्क्य)

रेचक, पूरक और कुम्भक तीन वर्णात्मक होते हैं। फिर उक्त तीनों वर्ण प्रणवात्मक हैं। इसीसे प्राणायाम प्रणवमय रहता है।

"अकारश्च तथोकारो मकारश्चाक्षरत्रयम् ।
एता एव त्रयोमात्राः सात्वराजसतामसाः ॥
निर्गुणा योगिगम्यान्या चार्धमात्रोर्ध्वसंस्थिताः ।
गान्धारीति च विज्ञेया गान्धारस्वरसंश्रया ।
पिपीलिकागतिस्पर्शा प्रयुक्ता मूर्ध्नि लक्ष्यते ॥४
तथा प्रयुक्त ओङ्कारः प्रतिनिर्याति मूर्धनि ।
अथोङ्कारमयो योगी त्वक्षरे त्वक्षरो भवेत् ॥६
प्राणो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म वेध्यमनुत्तमम् ।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत् तन्मयो भवेत् ॥७
ओमित्येतत् त्रयो वेदास्त्रयो लोकास्त्रयोऽग्नयः ।
विष्णुर्ब्रह्मा हरश्चैव ऋक् सामानि यजूंषि च ॥८
मात्राः सार्धाश्च तिस्रश्च विज्ञेयाः परमार्थतः ।
तत्र युक्तास्तु यो योगी स तल्लयमवाप्नुयात् ॥९
अकारस्त्वथ भूर्लोक उकारश्चोच्यते भुवः ।
सव्यञ्जनो मकारश्च स्वर्लोकः परिकल्प्यते ॥१०
व्यक्ता तु प्रथमा मात्रा द्वितीयोऽव्यक्तसंज्ञिता ।
मात्रा तृतीया चिच्छक्तिरर्धमात्रा परं पदम् ॥११
अनेनैव क्रमेण ता विज्ञेया योगभूमयः ।
ओमित्युच्चारणात् सर्वं गृहीतं सदसद्भवेत् ॥१२
ह्रस्वा तु प्रथमा मात्रा द्वितीया दैर्घ्यसंयुता ।
तृतीया च प्लुतार्धाख्या वचसः सा न गोचरा ॥१३
इत्येतदक्षरं ब्रह्म परमोङ्कारसंज्ञितम् ॥" (मार्कण्डेयपु० ४२ अ०)

अकार, उकार एवं मकार तीन अक्षर सात्व, राजस तथा तामस त्रिविध मात्रा हैं। फिर इसमें निर्गुण योगिगम्य अर्धमात्रा भी अवस्थित है। गान्धार स्वरके आश्रयसे उसे गान्धारी कहते हैं। मस्तकपर लगनेसे वह पिपीलिकागतिके स्पर्शकी भांति देख पड़ती है। ओङ्कार उठनेसे उसका स्वरूप जैसे मस्तकके प्रति निकल आता, वैसे ही ओङ्कारमय योगी अक्षरमें अक्षर हो जाता है। प्राण धनुःस्वरूप, आत्मा शरस्वरूप और ब्रह्म वेध्यस्वरूप है। अप्रमत्त रह शरवत् उसे विद्ध कर सकनेसे साधक ब्रह्ममय हो जाता है। ओं शब्द तीनों वेद, तीनों लोक और तीनों अग्नि है। ब्रह्मा, विष्णु एवं हर और ऋक्, साम तथा यजुः ॐ ही है। इसमें साढ़े तीन मात्रा लगती हैं। जो योगी उनमें मिलता, उसका लय ब्रह्ममें जा लगता है। अकार भूर्लोक, उकार भुवर्लोक और सव्यञ्जन मकार स्वर्लोक है। प्रथम व्यक्त, द्वितीय अव्यक्त, तृतीय चित्शक्ति और अर्धमात्रा श्रेष्ठपद जैसी कल्पित है। इसी प्रकार समस्त ओङ्कारको योगकी भूमि समझना चाहिये। ॐ शब्दके उच्चारणसे समुदाय असत् सत् बन जाता है। इसकी प्रथमा ह्रस्व, द्वितीया दीर्घ, तृतीया प्लुत और अर्धमात्रा वाक्यसे अगोचर है। इसी अक्षरमय ब्रह्मका नाम ओङ्कार है।

"इच्छा क्रिया तथा ज्ञानं गौरी ब्राह्मी च वैष्णवी ।
त्रिधा शक्तिः स्थिता लोके तत्परं शक्तिरोमिति ॥" (गोरक्षसंहिता)

आद्याशक्तिस्वरूप प्रणवसे तीन शक्ति समुत्पन्न हुयी थीं—इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति और ज्ञानशक्ति। इच्छाशक्ति गौरी है। (यह तमोगुणके अनुसार महेश्वरके साथ रहती है।) क्रियाशक्ति ब्राह्मी है। (यह रजोगुणके अनुसार ब्रह्माके साथ सृष्टिकार्य करती है।) ज्ञानशक्ति वैष्णवी है। (यह सत्वगुणके अनुसार विष्णुके साथ रह पालन करती है)।

अब सबने समझ लिया होगा—ओङ्कार क्या है। मूल कथा—ओं ही हमारे धर्मशास्त्रकी भित्ति है। जिसने ओङ्कार समझनेकी चेष्टा लगायी, उसीने हमारे धर्मकी कुछ बात देख पायी है।

बौद्धधर्मशास्त्रमें भी ॐ शब्द व्यवहृत हुआ है। भोट देशके बौद्ध 'ओं हन् हु' पवित्र शब्द धर्मकर्मादिमें उच्चारण करते हैं। उक्त देशमें किसी किसी घरकी छतपर यह तीनों शब्द खुदे हैं। लोग इनके 'बुद्ध, धर्म और सङ्घ' तीन अर्थ लगाते हैं। कभी कभी बौद्ध 'ओं मणिपद्मे हुम्' पवित्र नाम उच्चारण करते हैं।

हमारे शास्त्रकारोंने जैसे ओं अर्थात् अ, उ, म—तीन वर्णसे ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर अर्थात् सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता और ईश्वरका अभिप्राय रखते, वैसे ही प्राचीन मिसरके लोग भी 'आमोन्रा' 'आमोन् निउ' और 'सिवेक रा' ईश्वरके परिचायक तीन नाम उच्चारण करते थे। उक्त तीनों मूर्तियां ही प्राचीन ग्रीकों और रोमकोंके जुपिटर, नेपचुन एवं प्लुटो हैं।

ओम (सं० पु०) १ रक्षक, मुहाफ़िज़। २ कृपालु, मेहरबान, भलाई चाहनेवाला। ३ कृपापात्र, जो हिफ़ाज़त पाने क़ाबिल हो।

ओमन्वान् (सं० त्रि०) १ अच्छा लगनेवाला, खुश-

गवार। २ कृपालु, मेहरबान्। ३ सन्तोषदायक, खुश कर देनेवाला।

ओमा (सं० पु०) १ रचा, हिफ़ाजत, मदद। २ कृपा, मेहरबानी। ३ कृपालु पुरुष, मेहरबान् शख्स।

ओमावा (सं० स्त्री०) रचा, साहाय्य, मदद, हिफ़ाजत।

ओम्या (सं० स्त्री०) कृपा, रचा, मेहरबानी; हिफ़ाजत।

ओम्यावान् (सं० वि०) कृपालु, मेहरबान्।

ओयल—युक्तप्रदेशके खेरी ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० २७° ५०´ ३०´´ उ०, तथा देशा० ८०° ४६´ ५५´´ पू० में लखीमपुरसे ८ मील पश्चिम सीतापुरकी सड़क-पर अवस्थित है। चारो ओर चिकनी मट्टीका मैदान है। कृषिकार्य अधिक होता है। वृक्ष बहुत हैं। किन्तु मकान् मट्टीके बने और टूटी फूटी दीवारोंपर छप्पर पड़े हैं। महादेवका मन्दिर अति सुन्दर है। चीनीके कारखाने चला करते हैं।

ओयष्टररीफ—निम्न ब्रह्मस्थ आराकान समुद्रतटके समीप डूबा हुआ एक भयानक शैल-सेतु। १८७६ ई० को इस डूबे हुये शैलसेतुके दक्षिण किनारे एक आलोक-भवन बनाया गया था। स्वच्छ आकाश रहते उक्त भवनका आलोक १५ मीलसे देख पड़ता है। इससे आकायाब बन्दर पहुंचनेमें पश्चिम और उत्तरकी ओर जहाजोंको भय नहीं रहता। आलोक वेलाके तलसे ७७ फोट ऊंचे अवस्थित है।

ओयेलिङ्गटन, वेलिङ्गटन देखो।

ओयेलेस्लि—वेलेस्लि देखो।

ओर (हिं० स्त्री०) दिक्, तरफ़। २ पक्ष, अलंग। (पु०) ३ अन्त, किनारा।

ओरंगोटंग (अं० पु०=Orangoutang) वानर-विशेष, एक बन्दर। इस शब्दका अर्थ जङ्गली आदमी या बनमानुस है। यह भारत-महासागरके बोरनियो और सुमात्रा द्वीपमें रहता है। बोरनियोका ओरं-गोटंग जङ्गली दलदलोंमें पहाड़ोंके नीचे मिलता और मनुष्यके भूमिपर चलनेकी तरह वृक्षोंकी शाखोंपर उछलता फिरता है। फिर यह वृक्षोंपर शयनागार भी बना लेता है। इसकी प्रायः कई जाति होती हैं। पुरुषजातिके ओरंगोटंग कोई दो गज़तक लम्बे देख पड़ते हैं। गाल दोनो ओर लटके रहते हैं। गले और छातीके सामने एक थैली होती है। बाहें बहुत लम्बी रहती हैं। आकार-प्रकार मनुष्यसे मिलता है। वर्ण रक्त रहता है। इसके बाल लालभूरे होते हैं।

ओरछा—१ बुंदेलखण्डका एक देशी राज्य। यह अक्षा० २४° २६´ एवं २५° ३४´ उ०, देशा० ७८° २८´ ३०´´ तथा ७९° २३´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसे टेहरी या टीकमगढ़ भी कहते हैं। ओरछेसे पश्चिम झांसी तथा ललितपुर ज़िला, दक्षिण ललितपुर, पन्ना तथा बिजावर और पूर्व बिजावर, चरखारी तथा गरौली राज्य पड़ता है। क्षेत्रफल प्रायः २००० वर्ग मील है। वन एवं पर्वत अधिक है। भूमि उपजाऊ नहीं। कुछ तालाब बहुत अच्छे हैं। घने जंगलोंमें डाकूवोंको छिपनेका सुभीता है। १८७३-७४ ई० को डाकुवोंने कितने ही ग्रामों और यात्रियोंको लूट लिया था। बुंदेलखण्डके राज्यों में ओरछा सबसे प्राचीन और प्रतिष्ठित है। पेशवा इसे अपने अधीन कर न सके थे। अंगरेजोंके बुंदेलखण्ड पहुंचते समय विक्रमादित्य-महेन्द्र राजा रहे। १८१२ ई०को सरकारने उनसे मित्रता की सन्धि की। वार्षिक आय प्रायः ८ लाख रुपया है। १८५७ ई०को अंगरेज सरकारने राजभक्तिके उपहारमें इस राज्यका कर छोड़ दिया था। १८६५ ई० को राजाने 'महा-राज' उपाधि पाया। फिर १८८२ ई०के समय राजपरिवारको 'स्वामी' का भी उपाधि मिला। महाराज १५ तोपोंकी सलामी पाते हैं। युद्ध-विभागमें २०० सवार, ४४०० पैदल, ६० तोप और १०० तोपची हैं।

२ बुंदेलखण्डके ओरछा राज्यकी प्राचीन राजधानी। यह अक्षा० २५° २१´ उ० तथा देशा० ७८° ४२´ पू०में बेतवा नदीके दोनों किनारे अवस्थित है। एक पत्थरपर शोपा किला बना, जिसमें प्राचीन राजाके रहनेका भवन खड़ा है। जहांगीरके निवासको एक प्रासादभी बनाया गया था। किलेसे नगरतक नदीपर लकड़ीका पुल बंधा है।

ओरना (हिं० पु०) फाली, वाह।

ओरमना (हिं० क्रि०) अवलम्बन पकड़ना, लटक पड़ना।

ओरमा (हिं० स्त्री०) स्यूतिभेद, किसी किस्मकी सिलाई। इससे कोरोंकी जोड़ाई होती है। पहले दो अरजोंको टांक पीछे गोट लगानेको ओरमा कहते हैं।

ओरवना (हिं० क्रि०) स्तनमें दुग्ध उतरना, पेट बढ़ना, व्यानेका वक्त आ पहुंचना। यह शब्द प्रायः पशुके लिये ही व्यवहृत होता है।

ओरहना, उरहना देखो।

ओराना (हिं० क्रि०) चुकना, निबटना।

ओराहना, उरहना देखो।

ओरिया (हिं० स्त्री०) १ ओलती। २ खूटोंके पासकी लकड़ी।

ओरी (हिं० स्त्री०) १ ओलती। २ माता। (अव्य०) ३ सम्बोधन शब्द। इसे प्रायः माताको बोलानेमें व्यवहार करते हैं।

ओरौता (हिं० पु०) अन्त, चुकती।

ओरौती (हिं० स्त्री०) ओलती, छप्परसे बरसातका पानी निकलनेको जगह।

ओर्रा (हिं० पु०) एक प्रकारका बांस। यह बहुत बड़ा होता है। उत्पत्तिका स्थान ब्रह्मदेश तथा आसाम है। लम्बाई ४० और चौड़ाई पौन गज़तक बैठती है। इसे गृह तथा शकटके निर्माणकार्यमें लगाते हैं।

ओल (सं० त्रि०) आङ-उन्द-कः पृषोदरादित्वात्। १ आर्द्र, आला, गीला। (पु०) २ मूलविशेष, जमींकंद। इसका संस्कृत-पर्याय शूरण, कन्द, कन्दल और अर्शोघ्न है। ओल अग्निदीपक, रुच, कषाय, कण्डूकारी, कटु, विष्टम्भी, विशद, रुचिकारक, अर्शोनाशक, लघु और प्लीहगुल्मनाशक होता है। यह अर्शोरोगपर विशेष हितकर और समग्र कन्दशाकके मध्य श्रेष्ठ समझा जाता है। (भावप्रकाश) दद्रु, रक्तपित्त और कुष्ठरोग रहनेसे ओलभक्षण निषिद्ध है। इसे हिन्दीमें जमीनकन्द, तामिलमें करुण और तेलगु भाषामें मुञ्जाकन्द कहते हैं। ओलका पेड़ दोसे चार हाथ तक बढ़ता है। अच्छे खेतमें बोनेसे दश-पन्द्रह सेर तक यह वज़नमें निकलता है। जंगली जमींकंद स्वभावतः किनकिना रहता, किन्तु बोया हुआ वैसा नहीं ठहरता। भारतवर्षमें सर्वत्र ही यह उपजता और भोजनके व्यवहारमें लगता है। सिंहल, ब्रह्म, मालाकास प्रभृति स्थानमें भी ओल होता है। (हिं० स्त्री०) ३ क्रोड़, गोद। ४ व्यवधान, आड़। ५ रक्षा, हिफ़ाज़त। ६ ज़मानत।

ओलन्दाज—युरोप देशान्तर्गत हालेण्ड या नेदरलेण्डके अधिवासी। यह हालेण्डर्स शब्दका अपभ्रंश है। अंगरेज़ीमें डच कहते हैं। डच शब्द जर्मन शब्दके तुल्य अर्थका वाचक है। ओलन्दाज इन्दो-जर्मन वंशसे उत्पन्न हैं। अंगरेजीसे इनकी भाषा बहुत कुछ मिलती है। इन्होंने इस बातकी सार्थकता सम्पादन की है, कि अध्यवसायके आगे कुछ असाध्य नहीं। हालेण्डके अनेक स्थान समुद्र-जलमें निमग्न रहते थे। इन्होंने बांध बना उस उपद्रवसे देशको बचाया और समुद्रको बहुत दूरतक हटाया है। इसी प्रकार वालुकापूर्ण वेलाभूमिको भी क्रम-क्रम ओलन्दाजोंने शस्यशालिनी बना डाला है। इन्होंने अश्वगवादिके लिये तृणपूर्ण गोष्ठ निर्दिष्टकर गार्हस्थ्य पशु जातिकी जैसी उन्नति साधन की, वैसी कहीं देख न पड़ी। कृषि एवं शिल्पविद्यामें यह विशेष पारदर्शी और वस्त्र-वयन तथा नौ-निर्माण प्रभृति कार्यके लिये सर्वत्र प्रसिद्ध हैं।

ओलन्दाज सत्स्वभावापन्न होते हैं। यह वृद्ध पितामाताका विशेष सम्मान करते और इसीसे सारस पक्षीपर भी बड़ा प्रेम रखते हैं। यह मितव्ययी और साहसके लिये अधिक विख्यात न होते भी स्वावलम्बी हैं। विद्याकी चर्चाके लिये यह सुविख्यात हैं। इनके विश्वविद्यालयोंमें धर्मयाजकोंका कोई उपद्रव नहीं। सब लोग इच्छानुरूप शास्त्रको अनुशीलन कर सकते हैं। धर्मयाजक स्व स्व निर्दिष्ट स्थानोंके लोगोंको ही धर्ममतकी शिक्षा देते हैं। ओलन्दाज साधारणतः प्रोटेष्टाण्ट हैं। ईसाई देखो।

ई०के १६वें शताब्द युरोपमें धर्ममतपर तुमुल आन्दोलन उठा था। उसी समय मार्टिन लूथरने धर्मसम्बन्धमें सर्वतोभावसे रोमके पोपोंकी प्रभुताको अस्वीकार किया। ओलन्दाज भी उनके मतमें मिल गये। इसीसे इनपर राजाके कोपकी दृष्टि पड़ी थी। स्पेनराज २य फिलिप हालेण्डके अधीश्वर रहे। वह कट्टर काथलिक थे। इसीसे फिलिप प्रजावर्गको अपने मतका विरुद्धवादी या लूथरके शिष्योंको सताने और "दोषानुसन्धान" नामक विचारालयकी प्रतिष्ठाकर प्रोटेष्टाण्टोंको जीवन्त अवस्थामें ही जलाने लगे। इस कार्यसे सकल ही प्रजा उनपर विरक्त हो गयी। क्रमसे प्रजाविद्रोह भलक उठा। एक ओर युरोपीय तात्कालिक प्रबलपराक्रान्त नरपति, युद्धविद्या-विशारद सेनापति एवं सेनानी और दूसरी ओर दीन, दरिद्र तथा सहायहीन प्रजामण्डली थी। बहुकालतक यह युद्ध चला। एक समय अंगरेजोंने ओलन्दाजोंको कुछ सहाय भेजा था। उससे जुटफ्रेंसका युद्ध और सर फिलिप सिडनीका मृत्यु हुआ। इस तरह कहीं कभी कुछ सहाय मिलते भी ओलन्दाज अध्यवसायके बल ही फिलिपसे प्रतियोगिता कर सके थे। यह शतवार परास्त और पर्युदस्त हुये, किन्तु पीछे न हटे। अन्तको यही जीते थे। फिलिप शत चेष्टा करते भी हालेण्डको वशमें ला न सके। हालेण्डमें साधारणतन्त्रको शासनप्रणाली प्रतिष्ठित हुयी। फिलिप १६वें शताब्दके शेष भाग पोर्तुगालके अधीश्वर बने थे। उस समय केवल पोर्तुगीज ही भारतवर्षमें वाणिज्य करते रहे। ओलन्दाज उनसे द्रव्य ले युरोपके सकल स्थानोंमें बेचते थे। इससे भी इन्हें प्रभूत लाभ होता था। ओलन्दाजोंको दबानेके लिये फिलिपने पोर्तुगीजोंके साथ वाणिज्यका होना रोक दिया। किन्तु यह भग्नोत्साह न हुये। इन्होंने एकादिक्रमसे भारतवर्षके साथ वाणिज्य चलाना मनःस्थ किया। एक वणिक्-समितिने करनेलियस् हुटमानको ४ जहाजोंका अध्यक्ष बना भारतवर्ष भेजा था। करनेलियस्ने मिर्च वगैरह मसाला लाद स्वदेशको प्रत्यावर्तन किया और आकर कह दिया—पोर्तुगीज़ सर्वत्र घृणित और अनादृत हुये हैं। यह बात सुन १५९८ ई०को भान-नेक आठ जहाजोंके साथ भारतवर्ष भेजे गये। आमष्टरडमके वणिकोंने उन्हें यवद्वीपमें एक कोठी खोलनेकी भी अनुज्ञा दी थी। भाननेकके कृतकार्य हो स्वदेश लौटने पर कितने ही लोगोंने ईर्ष्यापरवश भारतवर्षमें वाणिज्य करनेको उद्योग लगाया। उस समय सकल ओलन्दाज वणिकोंके वाणिज्य लोपकी आशङ्का हुयी थी। किन्तु गवरनमेण्टने इस विषयमें हस्तक्षेप कर सकल विवाद मिटा दिया। सकल दलका एकत्र ईष्ट-इण्डिया-कम्पनी नाम रखा था। वणिकोंको पूर्व देशके वाणिज्य स्थानोंमें सब विषयोंकी क्षमता मिली अर्थात् स्वाधिकृत देशके मध्य वह आवश्यकतानुसार कानून् बना और जित देश अधिकारमें रखनेको पूर्व देशके राजावोंसे युद्ध वा सन्धि चला सकते थे। इसी प्रकार ओलन्दाजोंकी ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीका सूत्रपात हुआ। इसमें नूतनत्व यह था—उस समय पोर्तुगीज़ केवल स्वदेशको गवरनमेण्टके आदेशानुसार चलते, किन्तु ओलन्दाज इस देशमें एक साधारणतन्त्रप्रणाली डाल स्थल-रक्षाके लिये हालेण्ड गवरनमेण्टके अधीन होते भी अपने कार्यक्षेत्रमें एक प्रकार स्वाधीन रहते थे।

यत्न और परिश्रमसे ही फललाभ होता है। ओलन्दाजोंने भी शीघ्र शीघ्र यव और मलक्कास प्रभृति द्वीपोंमें यथेष्ट प्रतिपत्ति स्थापन की थी। पोर्तुगीज़ सर्वत्र ही इनसे परास्त होने लगे। एडमिरल ओयारिकने १४ जहाजोंके साथ यवद्वीप पहुंच बटेविया नगरको पत्तन किया। मसालेके कारबारसे १८२२ ई०को पोर्तुगीज़ एकबारगी ही विदूरित हुये थे। ओयारिकने जापान, फिलिपाइन प्रभृति द्वीपोंके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापन किया, बटेविया नगर शीघ्र ही ओलन्दाजोंके यावतीय वाणिज्य-स्थानोंका केन्द्र बन गया। १६७६ ई०से पूर्व ओलन्दाजोंने बंगालके साथ वाणिज्यकार्यमें लिप्त होनेकी चेष्टा की न थी। १६७६ ई०को इन्होंने प्रथम चुंचुडेमें महाजनी कोठी खोली। इससे पहले ही ओलन्दाजोंने सिंहल प्रभृति स्थान पोर्तुगीजोंके हाथसे निकाले और मलयवर उप-

कूलमें कोचिन प्रभृति स्थान भी अधिकारको संभाले थे। उस समय लोग ओलन्दाजोंका सम्मान करते रहे। वह सम्मान केवल इनके साहस वा युद्धको निपुणताके लिये ही न था। यह सत्य और न्यायको इतना देखकर काम करते, कि किसी स्थानके लोगोंसे असन्तुष्ट होने पर वहांसे अपनी कोठी उठा चलते बनते। उधर पोर्तुगीज़ पहलेसे ही भारतवासियोंके प्रति निष्ठुर व्यवहार करते रहे। सुतरां भारतवासी शीघ्र ही ओलन्दाजोंकी भद्रतासे मुग्ध हो गये। किन्तु समयके परिवर्तनने सत्यप्रिय ओलन्दाजोंको भी प्रबल असत्यप्रिय और अत्याचारी बना डाला। अंगरेजोंके अभ्युदयसे शीघ्र ही इनका पात हुआ।

१६१८ ई०को अंगरेजोंके साथ ओलन्दाजोंका सङ्घर्ष लगा। तत्पूर्व ही अंगरेजोंने भारवर्षमें वाणिज्य चलाया, किन्तु इनके साथ प्रतियोगितासे मसालेके काममें विशेष कुछ कर न पाया था। ऐसे ही समय इङ्गलेण्ड और हालेण्डकी गवरनमेण्टने मध्यस्थ बन दोनों कम्पनियोंके लोगोंकी एक सत्वरक्षिणी सभा स्थापित कर दी। उससे शीघ्र ही सब गड़बड़ मिट गया। किन्तु सभामें ओलन्दाज सभ्योंकी संख्या अधिक रही। सुतरां उसके द्वारा यह इच्छामत समस्त कार्य करने लगे। १६२३ ई०को उक्त सभाने इनके विरुद्ध साजिश करनेके अपराध पर दश अंगरेजों और दश अपर व्यक्तियोंको पकड़ा था। विचारसे सबने प्राणदण्ड पाया। इस घटनासे अंगरेज़ अत्यन्त विरक्त हुये। दोनों जातियोंके मध्य भयानक विद्वेषानल जल उठा। अनेक दिन पर्यन्त मनोमालिन्य रहने पीछे १६५४ ई०को अंगरेजोंने इनसे ८५००००) रु० क्षतिपूरण पाया था। किन्तु विवाद न मिटा। १६६७ ई०को अंगरेजोंके साथ ओलन्दाजोंका युद्ध उपस्थित हुआ। इन्होंने अंगरेजोंके वाणिज्यमें विशेष क्षति डाली थी।

अवशेषको फ्रान्सीसी विप्लव आरम्भ होनेसे इनका प्रताप घटा। अंगरेजोंने सिंहल प्रभृति अधिकार कर अन्यान्य स्थानोंमें भी इनकी प्रतिपत्ति बिगाडी थी। उस समयतक ओलन्दाज कियत्परिमाणसे हतश्री हुये।

१६८० ई०को इन्होंने अंगरेजोंको बण्टामसे निकाला और भारतमहासागरीय द्वीपोंमें मसालेका काम अक्षुण्ण बना डाला था। १६८७ ई०को हालेण्डके प्रिन्स विलियम इङ्गलेण्डके राजा हुये। इससे उभय जातिके मध्य सौहार्द्य स्थापित हुआ। किन्तु वाणिज्य विषयमें इन्हींका प्राधान्य बना रहा। ई० १८श शताब्दके शेष भागसे ही ओलन्दाजोंकी क्षमता घटते आयी। १७६० ई० तक युरोपमें जो विद्वेषवह्नि भभका, उससे इनका वाणिज्य विशेष बिगड़ा न था। फिर इन्होंने बंगालसे अंगरेजोंको निकालनेके लिये मीरज़ाफरके अनुरोधपर बटेवियासे सात जंगी जहाज़ भेजे। किन्तु उन्होंने हार कर यह काम छोड़ दिया। अवशेष १७८८ ई०को फ्रान्सीसी राष्ट्र-विप्लव उपस्थित हुआ। फ्रान्सीसी सेनापति पिचेग्रुने हालेण्ड अधिकार किया था। फिर यह फ्रान्सीसियोंके शासनाधीन बने। इधर अंगरेज इनके वाणिज्यस्थान अधिकार करनेको सचेष्ट हुये। सिंहल प्रभृति स्थान उनके हाथ लगे थे। १८०२ ई०को आमिन्स-सन्धि द्वारा अनेक विदेशीय अधिकार पुन: पाते भी इन्हें सिंहल और केप-कोलोनी अंगरेजोंके लिये छोड़ना पड़ा। नेपोलियनके फ्रान्सका सम्राट् बननेपर हालेण्ड प्रथमत: उनके भ्राता लुईके अधीन और पीछे फ्रान्सीसी साम्राज्यके अन्तर्भुक्त हुआ। ऐसे ही समय इन्होंने इङ्गलेण्ड आक्रमणके लिये भी विशेष चेष्टा लगायी और भारत-महासागरमें अंगरेजोंके वाणिज्यको विशेष क्षति पहुंचायी थी।

१८११ ई०को अंगरेजोंने यह उपद्रव निवारण करनेके लिये बटेवियाको आक्रमण मार हस्तगत किया। उसी समयसे यह हतश्री हो गये। १८१५ ई०को पारिसकी सन्धि द्वारा उक्त स्थान पुन: पाते भी यह पूर्ववत् प्रबल बन न सके।

आजकल ओलन्दाजोंकी अवस्था उन्नत नहीं, खितिग्रोल पड़ी है। भारत-महासागरके द्वीपपुञ्जमें आज भी यह मसालेका काम करते हैं। बटेविया

प्रधान स्थान है। वहां एक गवरनरजनरल और मन्त्रि-समाजके कई सदस्य रहते हैं। किन्तु गवरनरजनरल अपनी इच्छापर मन्त्रिसमाजके मतसे विरुद्ध कोई कार्य कर नहीं सकते। द्वीपवासी ओलन्दाज जातीय भावसे कुछ दीन हो गये हैं। विद्याकी चर्चाका अभाव-जैसा है।

ओलंदेजी (हिं० वि०) हालेंड देशीय, हालेंड मुल्कसे सरोकार रखनेवाला।

ओलंबा (हिं० पु०) उपालम्भ, शिकवा, उरहना।

ओलंभा, ओलंबा देखो।

ओलकन्द (सं० पु०) १ शूरण, ज़मींकंद। २ वनौल्ल, जंगली जमींकंद।

ओलचा, ओडचा देखो।

ओलची (हिं० स्त्री०) फलविशेष, आलू बालू, गिलास।

ओलज (सं० धातु) भ्वादि पर० सक० सेट्। क्षेपण करना, फेंकना। "ओलजि क्षेपणे।" (कविकल्पद्रुम)

ओलड (सं० धा०) चुरा० उभ० सक० सेट्। "ओलडिकि उत्क्षेपे।" (कविकल्पद्रुम) उत्क्षेप करना, उठाकर फेंक देना।

ओलती (हिं० स्त्री०) १ छप्परसे पानी बहनेकी जगह। २ जिस जगहपे छप्परसे पानी बहे।

ओलना (हिं० क्रि०) १ गोपन करना, छिपाना। २ व्यवधान डालना, आड़ लगाना। ३ सहन करना, सह लेना। ४ भोंक देना।

ओलमना (हिं० क्रि०) लटकना, झुकना, सहारा लेना।

ओलहना, उरहना देखो।

ओलपाद—बम्बई प्रान्तके सूरत ज़िलेकी एक तहसील। इससे उत्तर कीम नदी, पूर्व बड़ोदेका वसरावी विभाग, दक्षिण ताप्ती और पश्चिम खम्बातकी खाड़ी अवस्थित है। क्षेत्रफल ३२६ वर्गमील है। समुद्र किनारे बालूकी पहाड़ी है। बीचमें मैदान पड़ा है। चरागाहोंमें बबूलके पेड़ पाये जाते हैं। यहां ग्रीष्म ऋतुमें भी शीतल वायु चलता है। कहते—लङ्कासे रावणको जीत रामचन्द्र नासिकके पास पञ्चवटीमें पहुंचे थे। वहांसे वह गुजरातके दक्षिणपेठ गये। सरस ग्रामके समीप सूरतसे १५ मील उत्तर-पश्चिम उन्होंने एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित किया था। उसीको आजकल सिद्धिनाथ कहते हैं। फिर होम हुआ। रामने भूमिमें तीर मार जल निकाला था। जिस स्थानसे जल निकला उसका नाम रामकुण्ड है। उसी समय उन्होंने वहां एक राक्षस मारा। राक्षसके शिर गिरनेका स्थान शिरस और उर गिरनेका स्थान उरपातन या ओलपाट कहाया।

ओला (हिं० पु०) १ करका, वर्षोपल, झाला, पत्थर, असमानसे गिरनेवाला बरफ़का टुकड़ा। २ मिष्ट खाद्यविशेष, एक मिठाई। यह चीनीका गोल-गोल बनाया और गर्मीमें खाया जाता है। ओला पानीमें पड़ते ही घुलने लगता है। ३ व्यवधान, परदा, आड़। ४ भेद, छिपी बात। ५ वृक्षविशेष, एक क़िस्मका बबूल। (वि०) ६ शीतल, ठण्डा। ७ श्वेत, सफ़ेद।

ओलाना (हिं० क्रि०) भूनना, सेकना, अकोरना।

ओलिक (हिं० स्त्री०) व्यवधान, परदा, आड़।

ओली (हिं० स्त्री०) १ क्रोड़, गोद। २ अञ्चल, दामन, पल्ला। ३ झोली।

ओलौना (हिं० पु०) १ उदाहरण, मिसाल। (क्रि०) २ दृष्टान्त देना, मिसाल मिलाना।

ओल्ल (सं० पु०) शूरण, जमींकंद।

ओल्लकन्द, ओलकन्द देखो।

ओवर (अं० = Over) जीता, चढ़ता। क्रिकेटमें पांच बार गेंद फेंकनेपर खेलकी बारी ओवर होती है। फिर इस ओरके खेलाड़ी उस ओर चले जाते हैं।

ओवरकोट (अं० = Overcoat) लबादा, अंगेपर पहना जानेवाला चोगा।

ओवरसियर (अं० = Overseer) अधिकारी, अध्यक्ष, नाज़िर, ऊपरी काम देखनेवाला।

ओवा, औआ देखो।

ओशाम—काठियावाड़ प्रान्तका एक पर्वत। उंचाई १००० फीट है। इस पर्वतमें चटानें बहुत देख

पड़ती हैं। शिखरपर ओसादमाताका मन्दिर एवं प्राचीन दुर्ग दण्डायमान है। ओग्राममें काला और धुंधला काच होता है। लोग उसे कौरव और पाण्डव युद्धके रक्तका चिह्न बताते हैं।

ओशिष्टहन् (सं० पु०) अति शीघ्र प्रहार करनेवाला, जो बहुत जल्द मारता हो।

ओष (सं० पु०) उष दाहे घञ्। १ दाह, जलन। २ पाक, पकनेकी हालत। ३ शीघ्रता, तेज़ी।

ओषण (सं० पु०) उष-ल्युट्। कटुरस, झल, चरपराहट।

ओषणि, ओषण देखो।

ओषणी (सं० स्त्री०) ओषण-ङीष्। पुरातिशाक, एक सब्ज़ी या तरकारी। यह कफ और वायुको नाश करती है। (राजवल्लभ)

ओषध (सं० क्ली०) औषध, दवा।

ओषधि (सं० स्त्री०) ओषोधीयतेऽत्र, ओष-धा-कि। उद्भिद्विशेष, एक पोदा। फल पकते ही जो उद्भिद् सूख जाते, वही ओषधि कहाते हैं। ओषधोपयोगी कतिपय ओषधिका लक्षण लगा सुश्रुतने नामभेद किया है, यथा—

जो ओषधि कपिल वर्ण, विचित्र मण्डलविशिष्ट, सर्पतुल्य, पञ्च पत्रयुक्त और परिमाणमें पञ्च अरत्नि परिमित रहती, उसे विद्वन्मण्डली अजगवी कहती है। १। निष्पत्र, स्वर्णवर्ण, दो अङ्गुल परिमित मूल-विशिष्ट, सर्पाकार और प्रान्तदेशमें रक्तिमायुक्त ओषधिका नाम श्वेतकापोती है। २। दो पत्रमात्र विशिष्ट, मूलमें अरुणवर्ण एवं मण्डलमें कृष्णवर्ण, दो अरत्निपरिमित और गोनासिकाकृति ओषधिको गोनसी कहते हैं। ३। अधिक सारयुक्त, रोमल, मृदु, इक्षुरस-सदृश रसविशिष्ट और इक्षुकी भांति आकृतियुक्त ओषधि कृष्णकापोती कही जाती है। ४। कृष्ण-सर्पाकृति और कन्दसम्भव ओषधिकी संज्ञा वाराही है। ५। एक पत्रयुक्त, महावीर्य और अञ्जनतुल्य कृष्णवर्ण ओषधिका नाम छत्रा पड़ता है। ६। कन्द-सम्भव और रक्षोभयविनाशक ओषधिकी संज्ञा अतिछत्रा रखते हैं। ७। छत्रा एवं अतिछत्रा उभय ओषधि जरामृत्यु निवारक और श्वेतकापोतीकी भांति आकृतिविशिष्ट होती हैं। मनोरम-आकृति, मयूरके पक्षकी भांति पत्रविशिष्ट, कन्दोत्पन्न और स्वर्णवर्ण सारयुक्त ओषधिका नाम कन्या है। ८। अतिशय क्षीरयुक्त, गजाकृति मूलदेशविशिष्ट, हस्तिकर्ण और पलाशके पत्रकी भांति केवल दो पत्रयुक्त ओषधिको करेणु कहते हैं। ९। छागीके स्तनकी भांति मूल-भागयुक्त, अधिक सारविशिष्ट, गुल्मकी भांति आकृति-युक्त और शङ्ख कुन्द प्रभृतिकी तरह पाण्डुवर्ण ओष-धिकी संज्ञा अजा है। १०। श्वेतवर्ण, विचित्रपुष्पयुक्त और काकमाचीकी तरह ओषधिकी संज्ञा चक्रका पड़ती, जो जरामृत्यु दूर करती है। ११। प्रशस्त मूलयुक्त, केवल पञ्च रक्तवर्ण सुकोमल पत्रविशिष्ट और सूर्यके भ्रमणानुसार परिवर्तनशील ओषधि आदित्य-पर्णिनी कही जाती है। १२। स्वर्णवर्ण, सक्षीर और पद्मिनी-तुल्य ओषधि ब्रह्मसुवर्चला कहाती, जो चारो ओर चक्कर लगाती है। १३। अरत्निपरिमित, गुल्मा-कार, दो अङ्गुल परिमित पत्रयुक्त, नीलोत्पलसमपुष्प एवं अञ्जनवर्ण फलविशिष्ट, स्वर्णवर्ण और क्षीरयुक्त ओषधिका नाम श्रावणी पड़ता है। १४। श्रावणीकी भांति अन्यान्य गुणयुक्त और पाण्डुवर्ण ओषधिको महाश्रावणी कहते हैं। १५। लोमयुक्त द्विविध ओषधियोंके नाम गोलोमी और अजलोमी हैं। १६,१७। मूलसमुद्भव और विच्छिन्नपत्रयुक्त ओषधि हंसपादी कहाती है। १८। अपरापर ओषधिकी तरह रूप-युक्त और शङ्खसदृश पुष्पविशिष्ट ओषधिकी संज्ञा शङ्खपुष्पी है। १९। अतिशय वेगयुक्त सर्पनिर्मोकको तरह आकृतिविशिष्ट ओषधि वेगवती कहाती है। २०। सोमसम ओषधिका नाम सोम है। २१। अश्रद्धा-शाली, अलस, कृतघ्न और पापकर्मा व्यक्ति इन ओषधियोंको उखाड़ नहीं सकता। प्रथमोक्त सात प्रकारकी ओषधि उखाड़ने में निम्नोक्त मन्त्र पढ़ना पड़ता है—

"महेन्द्ररामकृष्णानां वारणानां गवामपि।
तपसा तेजसा वापि प्रशाम्यध्वं शिवाय वै॥"

वसन्तकालको आदित्यपर्णी, वर्षाकालको अजगवी

एवं गोनसी, काश्मीरदेशीय क्षुद्रक मानस नामक दिव्य सरोवरमें करेणु, कन्या, छवा, अतिछवा, गोलोमी, अजलोमी, तथा महती श्रावणी, कौशिकी नदीके पूर्वपार वल्मीकव्याप्त योजनत्रय भूमिमें श्वेतकापोती और वल्मीकके शिखरदेश, मलयपर्वत तथा नलसेतुमें वेगवती मिलती है।

ओषधिगण (सं० पु०) रासायनिक ओषधिका गण, कुछ जड़ी-बूटियोंका ज़खीरा।

ओषधिगर्भ (सं० पु०) ओषधीनां गर्भ उत्पत्तिर्यस्मात् बहुव्री०। १ चन्द्र, चांद। २ सूर्य, आफ़ताब।

ओषधिज (सं० त्रि०) ओषधिभ्यो जायते, ओषधि-जन-ड। १ ओषधिगणके मध्य निवास करनेवाला, जो जड़ी-बूटियोंमें रहता हो। २ ओषधिसे उत्पन्न, जो जड़ी-बूटियोंसे निकला हो। (पु०) ३ ओषधिसे उत्पन्न अग्नि।

ओषधिपति (सं० पु०) ओषधीनां पतिः, ६-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर। ३ सोमलता। ४ वैद्य, हकीम।

ओषधिप्रस्थ (सं० पु०) ओषधिबहुलं प्रस्थं सानुर्यत्र बहुव्री०। १ हिमालय। अधिकांश ओषधि उत्पन्न होनेसे हिमालयका यह नाम पड़ा है। २ हिमालयस्थ नगरविशेष, हिमालयका एक शहर।

"यत्र गङ्गानिपातिता पुरा ब्रह्मपुरात् हृता।
ओषधिप्रस्थनगरस्यादूरे सानुरुत्तमः॥" (कालिकापुराण ४१अ:)

ओषधी (सं० स्त्री०) ओषधि-ङीप्। १ ओषधि, जड़ीबूटी। २ लघुवृक्ष, छोटा पेड़।

ओषधीपति (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर।

ओषधीमान् (सं० त्रि०) ओषधि-सम्बन्धीय, जड़ी-बूटियोंसे सरोकार रखनेवाला।

ओषधीश (सं० पु०) ओषधीनां ईशः, ६-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर।

ओषधीसंश्रित (सं० त्रि०) ओषधि द्वारा आयत्त, जड़ी बूटियोंसे तहरीक किया हुआ।

ओषधीसूक्त (सं० क्लो०) सूक्तविशेष, वेदका एक मन्त्र।

ओषम् (सं० अव्य०) उष-णमुल्। शीघ्र-शीघ्र, बारम्बार, जल्द-जल्द, फ़ौरन।

ओषिष्ठ (सं० त्रि०) अयमेषां अतिशयेन ओषी, ओषीन्-इष्ठन्। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। अतिशय दाहकारक, बहुत जलन पैदा करनेवाला।

ओषिष्ठदावा (सं० त्रि०) अति शीघ्र प्रदान करने-वाला, जो बहुत जल्द देता हो।

ओष्टाविन् (सं० त्रि०) उष-क्तन् तदस्यास्तीति विनि। दाहकारी, जलन पैदा करनेवाला।

ओष्ठ (सं० पु०) उष्यते दह्यते, उष स्पर्शने उष-थन्। उषिकुषिगर्तिभ्यस्थन्। उण् २।४। दन्तच्छद, होंठ। इसका संस्कृत पर्याय—रदनच्छद, दशनवास, दन्तवास, दन्त-वस्त्र और रदच्छद है। दोनोंका अर्थ निकल सकते भी ओष्ठ शब्द ऊपरी होंटके लिये व्यवहृत होता है।

ओष्ठक (सं० त्रि०) ओष्ठे प्रसितम्, ओष्ठ-कन्। स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते। पा ५।२।६६। ओष्ठमें व्याप्त, होंठकी खबर रखनेवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।

ओष्ठकर्णक (सं० पु०) जनपद विशेष, कोई जगह। कहते—ओष्ठकर्णकमें निवास करनेवालोंके होंठ और कान पास हो पास रहते हैं।

ओष्ठकोप (सं० पु०) ओष्ठस्य कोपो यत्र, बहुव्री०। ओष्ठरोग देखो।

ओष्ठज (सं० त्रि०) ओष्ठसे उत्पन्न, शफ़्ती, होंठसे निकलनेवाला।

ओष्ठजाह (सं० क्लो०) ओष्ठ-जाहच्। तस्य पाकमूले पील्वादि-कर्णादिभ्य कुणब्जाहचौ। पा ५।२।२४। ओष्ठमूल, होंटकी जड़।

ओष्ठधर (सं० पु०) ओष्ठ, होंट।

ओष्ठपल्लव (सं० क्लो०) ओष्ठ, होंट।

ओष्ठपाक (सं० पु०) ओष्ठव्रण, होंटका जख़्म।

ओष्ठपुट (सं० क्लो०) ओष्ठोद्घाटनजात विवर, जो गड्ढा होंट खोलनेसे पड़ा हो।

ओष्ठपुष्प (सं० पु०) ओष्ठ इव रक्तिमं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। १ बन्धुजीवपुष्पवृक्ष, दुपहरियेके फूलका पेड़। (क्लो०) ओष्ठ इव पुष्पम्। बन्धुकपुष्प, दुप-हरियेका फूल।

ओष्ठप्रकोप (सं॰ पु॰) ओष्ठस्य प्रकोपो यत्र, बहुव्री॰। ओष्ठरोग देखो।

ओष्ठप्रान्त (सं॰ पु॰) सृक्कभाग, मुंहका कोना।

ओष्ठफला (सं॰ स्त्री॰) बिम्बीलता, कुंदरू।

ओष्ठभा, ओष्ठफला देखो।

ओष्ठरोग (सं॰ पु॰) ओष्ठगतो रोगः, मध्यपदलोपी॰। ओष्ठगत रोग, होंठकी बीमारी। वैद्यक मतसे यह रोग आठ प्रकारका होता है—वायुजन्य, पित्तजन्य, कफजन्य, सान्निपातज, रक्तज, मांसज, मेदोज और अभिघातज अर्थात् आगन्तु। वातज ओष्ठरोगमें ओष्ठ कर्कश, कम्पयुक्त, स्तब्ध और वातज वेदनाविशिष्ट रहता है। इस रोगमें ओष्ठ फट जानेसे उत्पाटित होनेकी तरह यातना मालुम पड़ती है। पित्तज ओष्ठ रोगमें ओष्ठ पीतवर्ण, वेदनायुक्त और क्षुद्र क्षुद्र पिड़कासे व्याप्त रहता है। फिर उक्त पिड़का पक जानेसे अत्यन्त दाह उठने लगता है। श्लेष्मज ओष्ठ रोगमें ओष्ठ समवर्ण और वेदनाहीन पिड़का पड़ती है। दोनों होंठ पिच्छिल, शीतलस्पर्श और गुरु लगते हैं। सन्निपातजन्य ओष्ठरोगमें बहुविध पिड़का उठतीं और ओष्ठद्वयके किसी स्थानपर कृष्णवर्ण, किसी स्थानपर पीतवर्ण एवं किसी स्थानपर श्वेतवर्ण देख पड़ती हैं। रक्तज ओष्ठरोगमें खर्जूर-फलवर्ण पिड़का निकलती हैं। उनको दबानेसे रक्त टपकता है। ओष्ठद्वय रक्तवर्ण पड़ जाते हैं। मांसज ओष्ठरोगमें ओष्ठद्वय गुरु, स्थूल और मांसपिण्डकी भांति उन्नत लगते हैं। ओष्ठदेशमें कीट उत्पन्न होते हैं। मेदोज ओष्ठरोगमें ओष्ठद्वय घृतमण्ड-तुल्य, कण्डुविशिष्ट और गुरु हो जाते हैं। फिर उनसे निर्मल स्फटिक-तुल्य स्राव निरन्तर निकला करता है। अभिघातजन्य ओष्ठरोगमें ओष्ठ विदीर्ण अथवा उत्पाटित हो जाता है। यह व्रण आरोग्य लाभ नहीं करता। वायुजन्य ओष्ठरोगमें तारपीनके तेल, लोबान, गुग्गुल, यष्टि-मधु और देवदारुका प्रलेप चढ़ाना चाहिये। पैत्तिकमें सर्वप्रथम विरेचक औषधका प्रयोग आवश्यक है। फिर तिक्त रसपान एवं तिक्त रस उपकरणके साथ भोजनकी व्यवस्था करना चाहिये। इसपर प्रथमतः जलौका द्वारा रक्तमोचण कर शर्करा, खील, मधु एवं अनन्तमूल समभाग अथवा खसकी जड़, रक्तचन्दन और क्षीरकाकोली दुग्धमें रगड़ प्रलेप चढ़ाते हैं। रक्त एवं अभिघात जन्य ओष्ठरोगमें भी पित्तजन्य रोगकी चिकित्सा कर्तव्य है। कफजन्य होनेसे रक्तमोचणकर त्रिकटु, सर्जिक्षार तथा यवक्षार सम-भाग मधुमें मिला प्रलेप लगाना चाहिये। मेदोजन्य ओष्ठरोगमें प्रियङ्गु एवं त्रिफला पीस मधुके साथ प्रलेप देते हैं। केवल त्रिफलाचूर्ण और मधुके साथ प्रलेप करनेपर भी उपकार पहुंचता है। सर्वप्रकार ओष्ठ-व्रण स्फुटित होनेसे लोबान, धतूरेके फल और गेरूके साथ तैल किंवा घृत पका व्यवहार करना चाहिये।

ओष्ठा, ओष्ठी देखो।

ओष्ठागतप्राण (सं॰ त्रि॰) ओष्ठयोरागताः प्राणा यस्य, बहुव्री॰। मृतप्राय, जो मर रहा हो।

ओष्ठाधर (सं॰ पु॰) ओष्ठश्च अधरश्च तौ, द्वन्द्व। ओष्ठद्वय, दोनों होंट।

ओष्ठी (सं॰ स्त्री॰) ओष्ठ इव आचरति, ओष्ठ-क्विप् अच्-ङीप्। बिम्बफल, कुंदरू।

ओष्ठोपमफला (सं॰ स्त्री॰) ओष्ठोपमानि फलानि यस्याः, बहुव्री॰। बिम्बिका, कुंदरू।

ओष्ठोपमफलिका, ओष्ठोपमफला देखो।

ओष्ठ्य (सं॰ त्रि॰) ओष्ठे भवः, ओष्ठ-यत्। ओष्ठसे उत्पन्न होनेवाला, जो होंटसे निकलता हो।

ओष्ठ्ययोनि (सं॰ त्रि॰) ओष्ठ्य शब्दसे उत्पन्न, जो शफ़्ती आवाज़से पैदा हो।

ओष्ठ्यवर्ण (सं॰ पु॰ क्ली॰) ओष्ठ्यश्चासौ वर्णश्चेति, कर्मधा॰। ओष्ठसे उत्पन्न होनेवाला वर्ण, हर्फ़-शफ़्ती, जो हर्फ़ लबसे निकलता हो। उ, ऊ, ओ, औ, प, फ, भ और म अक्षर उच्चारण-स्थान ओष्ठ रहने ओष्ठ्य-वर्ण कहाता है।

ओष्ठ्यस्थान (सं॰ त्रि॰) ओष्ठ द्वारा उच्चारित, जो होंटसे बोला जाता हो।

ओष्ण (सं॰ त्रि॰) आ-उष्णः। ईषत् उष्ण, थोड़ा गर्म।

ओस (हिं॰ स्त्री॰) अवश्याय, शबनम, सीत, रातको

आसमानसे ज़मीनपर धीरे-धीरे गिरनेवाली तरी। यह एक प्रकारका वाष्पीय जल है। रात्रिके समय शीतलतासे भारी पड़ ओस पृथिवीपर गिरती और विन्दु-विन्दु इधर उधर जमी देख पड़ती है। आकाश मेघाच्छन्न रहने और प्रबल वायु चलनेसे ओसका बल घट जाता है। गहरी ओसको ही पाला कहते हैं। इसका प्रभाव घास-फूस पर अधिक पड़ता है।

"ओसके चाटे प्यास नहीं बुझती।" (लोकोक्ति)

जो द्रव्य देखनेमें बहुत अच्छा लगता—किन्तु स्थायी नहीं रहता, उसका नाम 'ओसका मोती' पड़ता है।

ओसनना (हिं० क्रि०) मांड़ना, गूंधना, पानी डालके कचरना। यह शब्द आटेके लिये आता है।

ओसर (हिं० स्त्री०) गर्भधारण करने योग्य गाय या भैंस, जवानीपर आई हुई पड़िया या बछिया। जो गाय या भैंस गाभिन होने लायक़ बन जाती, वह ओसर कहलाती है।

ओसरा (हिं० पु०) १ अवसर, समय, वक़्त।

ओसरिया, ओसर देखो।

ओसरी (हिं० स्त्री०) अवसर, बारी, बदली, दांव।

ओसवाल (हिं० पु०) जैनोंकी एक शाखा। प्रधानत: जैन व्यवसायियों और महाजनोंको ओसवाल कहते हैं।

ओसाई (हिं० स्त्री०) १ ओसानेका काम, मांड़े हुये अनाजकी उड़वाई। माड़े हुये गल्लेको टोकरीमें भर हवा चलते समय धीरे धीरे अपनी बराबर उठा नीचे गिराते हैं। इससे पैरोंके पास दाना जमा हो जाता है। हवासे भूसा उड़ अलग जा लगता है। २ ओसानेका पारिश्रमिक, गल्ला उड़ानेकी मज़दूरी।

ओसान (हिं०) ओसाई और औसान देखो।

ओसाना (हिं० क्रि०) उड़ाना, हवामें फेंकना। यह शब्द मांड़े हुये अनाजको उड़ानेके लिये आता है।

ओसार (हिं० पु०) १ प्रघाण, बरामदा, दालान। २ छप्पर, सायबान।

ओसीला (हिं०) वसीला देखो।

ओसीसा (हिं० पु०) १ सराहना, विस्तर या आरामकी जगहका ऊपरी हिस्सा। २ उपधान, तकिया।

ओसूल (हिं०) वसूल देखो।

ओसेका (हिं०) वसीका देखो।

ओसोरा, ओसरा देखो।

ओसौनो, ओसाई देखो।

ओह (सं० पु०) आ-वह-क सम्प्रसारणञ्च। १ सम्यक् वहन, अच्छी तरह ले जानेका काम। (त्रि०) २ वाहक, ले जानेवाला। ३ प्रापक, पहुंचानेवाला। (हिं० अव्य०) ४ अरे, यह क्या हुआ! ५ दुःख, अफ़सोस, हाय! ६ जाने दो, कोई परवा नहीं!

ओहका (हिं० सर्व०) उसको, उसे।

ओहट (हिं० स्त्री०) व्यवधान, आड़।

ओहते (हिं० सर्व०) उससे।

ओहदा (अ० पु०) आस्पद, स्थान, रुतबा, बड़ी जगह।

ओहदेदार (अ० वि०) स्थानाधिकारी, बड़ी जगहवाला।

ओहदेदारी (अ० स्त्री०) कार्यकर्तृत्व, ओहदेदारीका काम।

ओहब्रह्मा (सं० पु०) ऊह ब्रह्मयुक्त, पूर्ण ब्राह्मण, ज्ञानी ब्राह्मण। (निरुक्त १३।१६)

ओहमा (हिं० सर्व०) उसमें।

ओहर (हिं० अव्य०) उस ओर, उस तर्फ़।

ओहरना (हिं० क्रि०) ऊपरसे नीचे आना, घट जाना।

ओहरी (हिं० स्त्री०) क्लान्तभाव, सुस्ती, थकाहट।

ओहरुवा (हिं० पु०) ओहार, झालर, परदा।

ओहस् (सं० क्ली०) आ-ऊह-असुन्। वहनसाधन स्तोत्रादि, सच्चा ख़याल।

ओहा (हिं० पु०) ऊधस्, गोस्तन, गायका थन।

ओहान (सं० त्रि०) विचारशील, सोचने-समझनेवाला, जो ख़याल कर रहा हो।

ओहाबी (वह्हाबी)—मुसलमानोंका एक धर्मसम्प्रदाय। मुहम्मद इब्न अबदुल वह्हाब इस सम्प्रदायके प्रवर्तक रहे। उन्होंने १६९१ ई०को अरबी नेजद प्रदेशके एल आयना नामक ग्राममें जन्मग्रहण किया था। उन्हींके शिष्य वह्हाबी कहाते हैं।

वह्हाबी कट्टर इसलाम धर्मावलम्बी हैं। यह एक ईश्वर भिन्न किसी दूसरेको नहीं पूजते। इनके मतमें मुहम्मद ईश्वर-प्रेरित मनुष्य थे। वह धर्म-प्रचारके लिये पृथिवीपर आये। अतएव वह साधारण मनुष्य ही ठहरते हैं। उनका मत ग्रहण करना उचित है। किन्तु उन्हें पूज नहीं सकते।

वह्हाबके प्रधान शिष्य बाबा दासने अपनी तलवारके ज़ोरसे समस्त यमन प्रदेशमें यह मत फैलाया था। वह्हाबके मरनेपर उनके पुत्र अब्दुल अज़ोज़ने फिर पिढमतको प्रायः समस्त अरब देशमें प्रचार किया। १८०३ और १८०४ ई०को वह्हाबियोंने मक्का और मदीना नगर जीत समस्त धनसम्पत्ति लूट ली थी। ऐसेही समय नवसंस्कारकोंने उत्तेजित हो सकल प्राचीन गोरस्थान ध्वंस कर डाले। १८१३ ई० पर्यन्त इनका प्रभाव अक्षुस रहा। फिर मुहम्मद अली पाशाने वह्हाबियोंके कवलसे मक्के और मदीनेको उद्धार किया। किन्तु वह इनपर शासन चला न सके। १८१४-१८१५ ई०को उन्होंने इन्हें दबानेके लिये आयोजन किया और कायरोसे अपने पुत्र इब्राहीम पाशाको ससैन्य भेज दिया था। इब्राहीमके आक्रमणसे यह हीनवीर्य हो गये। इनके प्रधान नायक अब्दुल्ला इबन शाउद हारे थे। फिर कितने ही वह्हाबी भारतवर्ष आ अपना मत प्रचार करने लगे। अनेक विज्ञ मुसलमानोंने यह मत ग्रहण किया था।

ई० १८श शताब्दके शेष भाग बहुतसे लोग वह्हाबी सम्प्रदाय-भुक्त हुये। १९ वें शताब्दके मध्यभाग यह पटनेमें जुटे थे। इन्होंने नाना स्थानोंसे अपने लोगोंको संग्रह कर अंगरेजोंके विपक्ष युद्धका डंका बजाया। धर्मरक्षाके लिये युद्ध होते सुन कितने ही मुसलमानोंने इनका साथ दिया था। कोई अर्थ द्वारा और कोई बाहु द्वारा साहाय्य करने लगा। सब लोग पटनेसे सिताना गिरिमुखको अग्रसर हुये। १८३६ ई०को उसी जगह घोर युद्ध चला था। उस युद्धमें अनेक सम्भ्रान्त अंगरेज कर्मचारी और विस्तर अंगरेज सैनिक मारे गये। युद्धके समय पटनेके वह्हाबी मौलवियोंने मुसलमानोंके साहाय्यार्थ कितनी ही अशरफियां और हुंडियां भेजी थीं। कहीं भी धर्मयुद्ध उपस्थित होनेपर यह ग्राम-ग्राम और पल्ली-पल्ली घूम गुप्त भावमें इसलाम धर्मावलम्बी लोगोंसे यथेष्ट साहाय्य ले सकते हैं। इनका परिचय वह्हाबी, फराज़ी, हिदायती, मेहदी और नये मुसलमान शब्दोंसे मिलता है।

ओहार (हिं० पु०) झूल, परदा, ढांकनेका कपड़ा।

ओहे (सं० अव्य०) सम्बोधनसूचक शब्द, अरे, ए। समवयस्क वा लघुगुरुभेद न रखनेवाले व्यक्तिको ही इस शब्दसे सम्बोधन कर सकते हैं।

ओहैला (हिं०) अवहेला देखो।

ओहो (हिं० अव्य०) हंहो, अहो, भो भो, रे रे, आहा। इस शब्दसे विस्मय और आनन्द प्रकट होता है।

औ

औ—स्वरवर्णका चतुर्दश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान ओष्ठ और कण्ठ है। 'औ' दीर्घ एवं प्लुत भेदसे द्विविध और उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध होता है। फिर अनुनासिक और अननुनासिक दो भेद और पड़ते हैं। कामधेनु तन्त्रके मतसे औकार रक्तविद्युल्लताकार, कुण्डली, पञ्चप्राण एवं सदाशिव मय, ईश्वर संयुक्त और चतुर्वर्गफलप्रद है। इस वर्णमें ब्रह्मादि देव सदा अवस्थान करते हैं। इसके लिखनकी प्रणाली—औकारके मध्यस्थलमें दक्षिण-दिक्से एक रेखा ऊर्ध्वगत हो किञ्चित् वामदिक्को झुक जाती है। इन सकल रेखावोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर रहते हैं। मध्यगत रेखा शक्ति है।

(वर्णोद्धारतन्त्र)

औकारका तन्त्रोक्त नाम शक्तिक, नाद, तैजस, वामजङ्घक, मनु, ऊर्ध्वशहेश, शङ्कुकर्ण, सदाशिव, अधोदन्त, कण्ठोष्ठ, सङ्कर्षण, सरस्वती, आज्ञा, ऊर्ध्वमुखी, शान्त, व्यापिनी, प्रकृत, पयः, अनन्ता, ज्वालिनी, व्योमा, चतुर्दशी, रतिप्रिय, नेत्र, आत्मकर्षणी, ज्वाला, मालिनिका और भृगु है। वीजवर्णाभिधानमें शेषदशन

और सत्यान्त दो नाम अधिक लिखे हैं। मातृका-न्यासमें अधोदन्तन्यास करनेको विधान रहनेसे 'अधोदन्त' भी कहते हैं। २ धातुका एक अनुबन्ध। "औरचित्।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ आह्वान, पुकार, अरे, ए। ४ सम्बोधन। ५ विरोध। ६ निर्णय। ७ शूद्रोंका प्रणव।

"चतुर्दशस्वरो योऽसौ सेतुरौकारसंज्ञितः।
स चानुस्वारमादाय्यां शूद्राणां सेतुरुच्यते॥" (कालिकापुराण)

औकार नामक चतुर्दश स्वर अनुस्वार स्वर-विशेषसे शूद्रोंका सेतु कहाता है।

(पु०) ८ अनन्त। ९ निस्वन। (स्त्री०) १० पृथिवी।

औंकात (हिं०) औकात देखो।

औंगको (हिं० पु०) वानरविशेष, किसी किस्मका लंगूर। इसका निवासस्थान सुमात्रा द्वीप है। पीत वर्णमें नील वर्णकी कुछ आभा झलकती है। औंगको अपनी मादाको कभी नहीं छोड़ता। पदकी अङ्गुलि संयुक्त रहती हैं। स्वभाव कोमल और भीरु है। किन्तु इसकी पटुता जगत्प्रसिद्ध है। यह गिब्बन जातिके अन्तर्गत पड़ता है।

औंगना (हिं० क्रि०) ओंगना, तेल देना।

औंगी (हिं० स्त्री०) मौन, ख़मोशी, चुप।

औंघ (हिं० स्त्री०) औंघाई, नींद आनेकी हालत।

औंघना (हिं० क्रि०) औंघाना, निद्राके वशीभूत होना, नींदसे आंखे खोलना-मूंदना।

औंघाना, औंघना देखो।

औंघाई, औंघ देखो।

औंजना (हिं० क्रि०) घबराना, उकताना।

औंटन (हिं० पु०) १ पइंटा, चारा काटनेको लकड़ीका एक टुकड़ा। २ औंटाई, आगपर चढ़ा दूध वगैरह गाढ़ा करनेका काम।

औंटना (हिं० क्रि०) १ उबलना, आगके ज़ोरसे खौलना। २ जलना, क्रोधसे भस्मीभूत होना। ३ उबालना, जलाना, आगपर चढ़ा किसी पतली चीज़को गाढ़ा बनाना।

औंठ (हिं० स्त्री०) मुंडा या चढ़ा हुआ छोर, उठी हुई किनारी।

औंड़ (हिं० पु०) बेलदार, ज़मीन् खोदनेका पेशा करनेवाला।

औंडा (हिं० वि०) गभीर, गहरा, खुदा हुआ।

औंडाई (हिं० स्त्री०) गाम्भीर्य, गहराई।

औंदना (हिं० क्रि०) १ उमदाना, मस्त बन जाना। २ घबराना, होश न आना। ३ खाना, उड़ाना।

औंदाना (हिं० क्रि०) उकताना, घबराना।

औंध—१ बम्बई प्रान्तके सतारा ज़िलेका एक छोटा राज्य। यह अक्षा० १८° ६´ १५´´ एवं १८° ६४´ १५´´ उ० और देशा० ७४° १६´ १५´´ तथा ७४° ५२´ ३०´´ पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४४८ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः ५८ हज़ार है। गेहूं, ज्वार, दाल, रूई, गुड़, घी और तेलकी उपज है। राजा ब्राह्मण हैं। लोग उन्हें पन्त-प्रतिनिधि कहते हैं। उक्त उपाधि शिवाजीके समयसे चला आता है। बम्बई-सरकार औंधके राजाको दक्षिणवाले १म श्रेणीके सरदारों में समझती है। २८० पैदल और सवार रहते हैं। राजाको गोद लेनेका अधिकार है।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर।

औंधना (हिं० क्रि०) १ औंधा होना, मुंहके बल पड़ना। २ औंधा कर देना, मुंहके बल डालना।

औंधा (हिं० वि०) १ विपरीत, उलटा, मुंहके बल पड़ा हुआ। "औंधा नसीब फूटे करम।" (लोकोक्ति) २ अशुद्ध, टेढ़ा। (क्रि० वि०) ३ विपरीत भावमें, उलटकर। (पु०) ४ मूर्ख, बेवकूफ़। ५ बौला, हल्ली, बवेसिया।

औंधाना (हिं० क्रि०) १ उलटाना, मुंहके बल गिराना। २ खाली करना, उंडेलना।

औंधी—मध्य-प्रदेशके चांदा ज़िलेको ब्रह्मपुरी तहसीलका एक राज्य। क्षेत्रफल २१ वर्ग मील है। इसमें कोई २५ गांव बसते हैं। लोकसंख्या १० हज़ारसे अधिक है।

औंना-पौना (हिं० वि०) १ चतुर्थांशरहित, चार आने कम।

औंरा, औंला (हिं०) आमलकी देखो।

औंस, आउन्स देखो।

औंहर (हिं० स्त्री०) अड़चन, बखेड़ा, उलझाव।

औकन, औकात देखो।

औक़ात (अ० पु०) १ समय, वक्त, मौसम। २ शक्ति, हैसियत।

औकान (हिं० पु०) लांक, खेतके कटे हुये अनाजका ढेर।

औकास (हिं०) अवकाश देखो।

औकथिक (सं० त्रि०) उकथं सामावयवभेदं वेत्ति अधीते वा, औकथ-ठक्। उकथ नामक सामवेदके अङ्गका अध्येता। २ उकथ विज्ञाता।

औकथिक्य (सं० क्ली०) उकथ पाठ। सामवेदमें उकथ नामक अङ्गके पढ़नेका नियम।

औक्ष (सं० क्ली०) उक्ष्णां वृषाणां समूहः, अण् टिलोपश्च। वृष-समूह, बैलोंका झुण्ड।

औक्षक (सं० क्ली०) उक्ष्णां समूहः, उक्षन्-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रराजन्येति। पा ४।२।३९। वृषवृन्द, बैलोंका जखीरा।

औक्षगन्धि (सं० स्त्री०) एक अप्सरा।

औक्षण (सं० त्रि०) १ वृषसम्बन्धीय, बैलसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) २ उक्षाके गोत्रापत्य।

औखद (हिं) औषध देखो।

औखल (हिं० पु०) नवाकृष्ट भूमि, जो ज़मीन् नये सरसे जोती गयी हो।

औखा (हिं० पु०) गोचर्म, गायका चरसा या चमड़ा।

औखो (हिं० स्त्री०) असभ्य भाषा, टेढ़ी बात।

औखीय (सं० त्रि०) उखेन प्रोक्तमधीते, अण्। उखलिखित ब्राह्मणाध्यायी, उख ऋषिका बनाया ब्राह्मण पढ़नेवाला।

औख्य (सं० त्रि०) उखायां निष्पन्नम्, उखा-यत् स्वार्थे अञ्। १ स्थलीमें पाक किया हुआ, जो बरतन-में बनाया गया हो। यह शब्द अन्नादिका विशेषण है। (क्ली०) २ नगरी विशेष, एक शहर।

औख्यक (सं० त्रि०) उख्यायां जातम्, उख्या-ढकञ्। वराह्यादिभ्यो ढकञ्। पा ४।२।८५। स्थालीपक्व, बरतनमें पकाया हुआ।

औगढ़ (हिं० वि०) अनोखी रीतिसे गढ़ा हुआ, निराली बनावटवाला।

औगत (हिं० स्त्री०) १ दुर्गति, बुरी हालत। (वि०) २ अवगत, जानकार।

औगल (हिं० स्त्री०) आर्द्रता, नमी, ज़मीन्के नीचेकी तरी।

औगाह (हिं० वि०) गभीर, गहरा।

औगाहना (हिं० क्रि०) मंझाना, घुसना।

औगी (हिं० स्त्री०) १ सात हाथका चाबुक। २ दिल्लीके जूतेकी कारचोबी। ३ हाथी फंसानेका गड्ढा। ४ अगठी। ५ बैलगाड़ी हांकनेकी छड़।

औगुन (हिं०) अवगुण देखो।

"गुन सीखके औगुन सीखो।" (लोकोक्ति)

औगुनी (हिं० वि०) १ गुणरहित, जो कोई वस्फ़ रखता न हो।

औग्रसेनि (सं० पु०) उग्रसेनस्यापत्यं पुमान्, उग्र-सेन-इञ्। उग्रसेनका पुत्र कंस।

औग्रसेन्य, औग्रसेनि देखो।

औग्रसैन्य (सं० पु०) युधांश्रौष्टिका एक उपाधि।

औग्र्य (सं० क्ली०) उग्रभाव, खूंखारी।

औघ (सं० पु०) ओघ स्वार्थे अण्। जलसमूह, बाढ़।

औघट (हिं० वि०) दुस्तर, मुश्किल, ढालू, सुनसान।

"औघट चले न चौपट गिरे।" (लोकोक्ति)

औघड़ (हिं० वि०) १ अदक्ष, अनाड़ी। (पु०) २ अपशकुन, बदशिगूनी। २ अवघड़ देखो।

औघर (हिं० वि०) १ विपरीत, उलटा। २ आश्चर्य-जनक, अजीब।

औचक (हिं० क्रि० वि०) अचानक, धोकेसे।

औचट (हिं० क्रि० वि०) १ अचानक, झटपट। २ धोकेसे। (स्त्री०) ३ सङ्कुचित स्थान, तङ्ग जगह, फंसाव।

औचथ्य (सं० पु०) उतथ्यस्यापत्यं पुमान्, अण् पृषोदरादित्वात् साधुः। उतथ्य ऋषिके पुत्र औतथ्य। इनका नाम दीर्घतमा था।

औचिंत (हिं॰ वि॰) चिन्तारहित, खबर न रखनेवाला।

औचिती (सं॰ स्त्री॰) उचितस्य भावः, उचित-ष्यञ्-ङीष् यलोपः। हलस्तद्धितस्य। पा ६।४।१५०। १ औचित्य, उपयुक्तता, मुनासिबत। २ सत्य, रास्ती, सचाई।

औचित्य (सं॰ क्ली॰) उचितस्य भावः, उचित-ष्यञ्। १ उपयुक्तता, मुनासिबत। २ सत्य, सचाई।

औच्च (सं॰ पु॰) उच्चस्य भावः, उच्च-अण्। उच्चता, बुलंदी, उंचाई।

औच्च्य (सं॰ क्ली॰) उच्च-ष्यञ्। उच्चता, ऊंचापन।

औच्चैःश्रवस (सं॰ पु॰) उच्चैःश्रवस् स्वार्थे अण्। इन्द्रका अश्व। उच्चैश्रवा देखो।

औछ (हिं॰ पु॰) दारुहरिद्राका मूल, दारुहल्दीकी जड़। इससे नारङ्गी रंग निकलता है।

औज (अ॰ पु॰) १ शीर्षविन्दु, सबसे ऊंची जगह। २ पद, स्थान, रुतबा।

औजकमाल (अ॰ पु॰) रागभेद, किसी किस्मका गाना।

औजड़ (हिं॰ वि॰) अदच्च, गंवार।

औजस (सं॰ क्ली॰) ओजस स्वार्थे अण्। स्वर्ण, सोना। ओजः देखो।

औजसिक (सं॰ त्रि॰) ओजसा वर्तते, ओजस्-ठक्। १ तेजस्वी, शानदार। २ बलवान्, जोरावर। (पु॰) ३ शूरवीर, बहादुर।

औजस्य (सं॰ क्ली॰) ओजसो भावः, ओजस्-ष्यञ्। १ तेजस्विता, शानदारी। २ उग्रता, जोरावरी। (त्रि॰) ३ बलकारी, ताकत देनेवाला।

औज़ार (अ॰ पु॰) यन्त्र, हथियार।

औज्जयनक (सं॰ त्रि॰) उज्जयिन्या इदम्, उज्जयिनी-वुञ्। उज्जयिनी सम्बन्धीय, उज्जैनसे सरोकार रखनेवाला।

औज्जागरि—सुन्दरमिश्रके गोत्रापत्य। अभिराममणि नाटकमें इनका वचन उद्धृत है।

औज्जिहानि (सं॰ पु॰) उज्जिहानस्य अपत्यम्, उज्जिहान-इञ्। उज्जिहानके पुत्रादि।

औज्जिहायनक (सं॰ पु॰) व्याकरणका एक पाठशाला।

औज्ज्वल्य (सं॰ क्ली॰) उज्ज्वलस्य भावः, उज्ज्वल-ष्यञ्। १ उज्ज्वलता, सफाई। २ दीप्ति, चमक।

औझक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) एकाएक, एकबारगी, झपसे।

औझड़ (हिं॰ स्त्री॰) १ आघात, प्रहार, झिड़की, धक्का। २ पंजा, लात। (क्रि॰ वि॰) ३ झटकेके साथ, धड़से, उछालकर।

औटन (हिं॰ स्त्री॰) १ गर्म करनेकी हालत, उबाल देनेकी बात। २ तमालपत्र कर्तनकी छुरिका, तम्बाकू काटनेका चाकू।

औटना (हिं॰ क्रि॰) १ उबालना, आगपर चढ़ा गाढ़ा करना। २ उबलना, खौलना, जलना। ३ क्रोधसे भस्मीभूत होना, गुस्सेसे जलने लगना। ४ भ्रमण करना, घूमना-फिरना।

औटनी (हिं॰ स्त्री॰) औटी जानेवाली चीजके चलानेका औज़ार।

औटा (हिं॰ वि॰) खौला, उबला, जो आगपर रखनेसे जलकर गाढ़ा पड़ गया हो।

औटाई (हिं॰ स्त्री॰) औटनेका काम।

औटाना (हिं॰ क्ली॰) औटनेका काम दूसरेसे लेना।

औटावनी (हिं॰ स्त्री॰) दूध उबालनेकी मट्टीका बरतन, दुदहंडी।

औटी (हिं॰ स्त्री॰) १ दुग्धवर्धक औषधविशेष, दूध बढ़ानेवाली एक दवा। यह औटकर बनायी और ब्याने पर गायको खिलायी जाती है। २ उकुष, इक्षुरस विशेष, उबाला हुआ गन्नेका अर्क। इसमें औटते समय पानी मिला देते हैं।

औड़ (सं॰ त्रि॰) उन्द्-क, नलोपः यस्य डः स्वार्थे अण्। आर्द्र, तर, गीला।

औड़म्बर, औडुम्बर देखो।

औड़व (सं॰ पु॰) ओड़व स्वार्थे अण्। पञ्चम स्वरमिश्रित राग। ओड़व देखो।

औड़वि (सं॰ त्रि॰) १ ओड़वमनुयोजयति, ओड़व इञ्। ओड़व रागका अनुयोजनकारी, जो ओड़वको

मातावजाता हो। (पु०) २ क्षत्रियजाति विशेष, एक लड़ाका कौम।

औड़वीय (सं० पु०) औड़वि क्षत्रिय जातिके एक राजा।

औडुपिक (सं० त्रि०) उडुपेन प्लवेन तरति, उडुप-ठक्। १ उडुप द्वारा पार गया हुआ, जो नावसे पार पहुंचा हो। उडुपस्य इदम्। २ उडुप-सम्बन्धीय, नावसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ३ उडुपका यात्री, नावका मुसाफ़िर।

औडुम्बर (सं० क्ली०) १ कुष्ठरोग विशेष, किसी क़िस्मका कोढ़। यह कुष्ठ औदुम्बर जैसा रक्तवर्ण, दाहयुक्त एवं कण्डुविशिष्ट होता है। कुष्ठ शब्दमें इसकी चिकित्सा देखो। २ ताम्र, तांबा। ३ ताम्रप्रान्त, तांबेका बरतन। (पु०) ४ चतुर्दश यमान्तर्गत यम विशेष। ५ एक तपस्वी। ६ पश्चावपार्श्ववर्त्ती एक जनपद। (त्रि०) ७ उडुम्बर काष्ठ-सम्बन्धीय, गूलरकी लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

औडुलोमि (सं० पु० स्त्री०) उडुलोम्नो ऽपत्यम्। उडुलोमाके पुत्रादि।

औड्र (सं० पु०) ओड्रदेशानां राजा, ओड्र-अण्। १ ओड्रदेशके राजा। २ ओड्रदेशवासी।

औड्रपुष्प (सं० क्ली०) जवापुष्प, गुड़हरका फूल।

औड्रलोमी—एक संस्कृत दर्शनज्ञ। ब्रह्मसूत्रमें इनका वचन उद्धृत है।

औढ़व (हिं० वि०) उच्छृङ्खल, बेढब, अटपटांग।

औथक (सं० क्ली०) वैदिक गीतविशेष, वेदका एक गाना।

औतंस (हिं०) अवतंस देखो।

औतङ्क (सं० त्रि०) उतङ्कसम्बन्धीय। उतङ्क देखो।

औतथ्य (सं० पु०) दीर्घतमाका एक उपाधि या नाम।

औतरना (हिं० क्रि०) अवतार लेना, परमेश्वरका पृथिवीपर किसी जीवके आकारमें प्रकट होना।

औतार (हिं० पु०) अवतार, परमेश्वरका जीवरूप धारण। यह शब्द प्रधानतः विष्णु भगवान्के चौबीस अवतारोंका द्योतक है।

औत्कण्ठ्य (सं० क्ली०) उत्कण्ठा स्वार्थे ष्यञ्। उत्कण्ठा, ख्वाहिश, चाह।

औत्कण्ठ्यवान (सं० त्रि०) उत्कण्ठित, ख्वाहिशमन्द।

औत्कर्ष्य (सं० क्ली०) उत्कर्षस्य भावः, उत्कर्ष-ष्यञ्। उत्कर्षता, सबक़त, बड़ाई।

औत्कल—१ एक संस्कृतज्ञ कवि। इनका बनाया पद्यावली नामक ग्रन्थ विद्यमान है। २ उत्कलदेशभव।

औत्तमि (सं० पु०) उत्तमस्यापत्यम्, उत्तम-इञ्। १ उत्तमके पुत्र एक मनु। यह तीसरे मनु थे। (त्रि०) २ उत्तमसम्बन्धीय, उत्तमसे सरोकार रखनेवाला।

औत्तमिक (सं० त्रि०) आकाशके प्रधान देवतावोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

औत्तमेय (सं० पु०) उत्तम-ढक्। औत्तमि देखो।

औत्तर (सं० त्रि०) उत्तरति अस्मात् उत्-तृ-अप् स्वार्थे अण्। १ उत्तीर्णकारी, पार लगानेवाला। २ उत्तरवासी, जो शिमालमें रहता हो।

औत्तरपथिक (सं० त्रि०) उत्तरपथेन गच्छति, उत्तर-पथ-ठक्। उत्तर-पथसे गमनकारी, शिमालको राहसे जानेवाला। उत्तरपथेन आहृतम्। २ उत्तरपथ द्वारा आहृत, जो शिमाली राहसे लाया गया हो। (पु०) ३ उपासक विशेष।

औत्तरपदिक (सं० त्रि०) उत्तर पदं गृह्णाति, उत्तर-पद-ठक्। उत्तरपद-ग्रहण करनेवाला, जो आख़िरी लफ़्ज़ पकड़ता हो।

औत्तरवेदिक (सं० त्रि०) उत्तर वेद्यां भवः, उत्तरवेदी-ठक्। उत्तरवेदीसे उत्पन्न, उत्तरकी वेदीसे सम्बन्ध रखनेवाला।

औत्तराधर्य (सं० क्ली०) उत्तराधरायां भावः, उत्तरा-धर-ष्यञ्। ऊर्ध्वनिम्नता, ऊंचा-नीचापन, ऊंचा-ख़ाली।

औत्तराह (सं० त्रि०) उत्तरस्मिन् भवः, उत्तर-आहञ्। उत्तरादाहञ्। पा ४।२।१०४। (वार्तिक) उत्तर कालादिसे उत्पन्न, जो आगे आनेवाले दिनसे सरोकार रखता हो।

औत्तरेय (सं० पु०) उत्तराया अपत्यं पुमान्, उत्तरा-ढक्। अभिमन्युकी पत्नी उत्तराके पुत्र, परीक्षित्।

औत्तानपाद (सं० पु०) उत्तानपादस्य अपत्यं पुमान्, उत्तानपाद-अण्। १ उत्तानपाद राजाके पुत्र, ध्रुव। ध्रुव देखो।

औत्तानपादि (सं° पु°) उत्तानपाद-इञ्। औत्तानपाद देखो।

औत्पत्तिक (सं° त्रि°) उत्पत्त्या अवियुक्तः, उत्पत्ति-ठक्। १ नित्य, असली। २ स्वाभाविक, जाती, पैदायशी।

औत्पात (सं° त्रि°) उत्पातस्य-इदम्, उत्पात-अण्। १ उत्पात-सम्बन्धीय, नक्षत्रसे सरोकार रखनेवाला। २ उत्पातज्ञापक, बदफ़ाली ज़ाहिर करनेवाला।

औत्पातिक (सं° त्रि°) उत्पाते भवः, उत्पात-ठक्। १ दैवविपत्ति-जन्य, बदफ़ालीसे पैदा। २ उत्पात-सम्पादक, बदफ़ाल, मनहूस। (क्लो°) ३ दैवविपत्ति, बदफ़ाली।

औत्पाद (सं° त्रि°) उत्पादं तदावेकग्रन्थं वा वेत्ति अधीते वा, अण्। १ उत्पादवेत्ता, पैदायशको जाननेवाला। २ उत्पादकज्ञापक ग्रन्थाध्यायी, पैदायश बतानेवाली किताब पढ़नेवाला। ३ उत्पादजन्य, पैदायशी।

औत्पुट (सं° त्रि°) उत्पुटेन निर्वृत्तम्, उत्पुट-अण्। सङ्कलादिभ्यश्च। पा ४।२।७५। प्रफुल्ल, प्रस्फुटित, शिगुफ़्ता, फूला, खिला हुआ।

औत्पुटिक (सं° त्रि°) उत्पुटेन हरति, उत्पुट-ठक्। हरत्युत्सङ्गादिभ्यः। पा ४।४।१५। चञ्चु वा मुख द्वारा हरणकर्ता, चोंच या मुंहसे खींचनेवाला।

औत्र (सं° त्रि°) स्थूल, भद्दा, मोटा।

औत्स (सं° त्रि°) उत्से भवः, उत्स-अण्। १ प्रस्रवणसे उत्पन्न, झरनेसे निकला हुआ। उत्सस्य इदम्। २ उत्स-सम्बन्धीय, झरने या कूवेंसे सरोकार रखनेवाला।

औत्सङ्गिक (सं° त्रि°) उत्सङ्गेन हरति, उत्सङ्ग-ठक्। क्रोड़ द्वारा हरण किया जानेवाला, जो पुट्ठेपर रखा हो।

औत्सर्गिक (सं° त्रि°) उत्सर्गस्य भावः, उत्सर्ग-ठञ्। १ सामान्य विधियोग्य, मामूली क़ायदेमें आनेवाला। २ देवपूजादिके शेषमें उत्सर्ग-सम्बन्धीय। ३ प्राकृतिक, कुदरती।

औत्सर्गिकत्व (सं° क्लो°) विधिकी सामान्यता, क़ायदेकी कुल्लियत या अमूमियत।

औत्सायन (सं° पु°) उत्सस्यापत्यं पुमान्, उत्स-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। उत्स ऋषि-वंशीय, उत्सके बेटे वग़ैरह।

औत्सुक्य (सं° क्लो°) उत्सुकस्य भावः, उत्सुक-ष्यञ्। १ उत्कण्ठा, इश्तियाक़, गहरी चाह। २ चिन्ता, अफ़सोस। ३ अलङ्कार शास्त्रोक्त एक व्यभिचारी भाव।

"इष्टानवाप्तेरौत्सुक्यं कालक्षेपासहिष्णुता।
चित्ततापत्वराखेददीर्घनिश्वसितादिकृत॥" (साहित्यद° ३।१५६)

प्रियजनकी अप्राप्तिसे औत्सुक्य उठता है। इसमें कालक्षेप, अधैर्य, मनस्ताप, व्यस्तत्व, खेदोद्गम और दीर्घनिश्वास प्रभृति प्रकाशित होता है।

औथरा (हिं° वि°) अगभीर, उथला।

औदक (सं° त्रि°) उदकेन पूर्णं तदस्यास्ति उदकस्य इदं वा, अण्। १ जलपूर्ण कुम्भयुक्त, पानीसे भरा घड़ा रखनेवाला। २ जलीय, आबी, पानीसे सरोकार रखनेवाला।

औदकज (सं° त्रि°) जलीय वृक्षोंसे उत्पन्न, जो आबी पौदोंसे पैदा हो।

औदकि (सं° पु°-स्त्री°) उदकस्यापत्यम्, उदक-इञ्। उदक नामक ऋषिके पुत्रादि, उदककी औलाद।

औदङ्कि (सं° पु°-स्त्री°) उदङ्कस्यापत्यम्, उदङ्क-इञ्। १ उदङ्क ऋषिके पुत्रादि, उदङ्ककी औलाद। २ क्षत्रियजाति विशेष।

औदङ्कीय (सं° पु°) औदङ्कि जातिके एक राजा।

औदञ्जायनि (सं° पु°) उदञ्जस्यापत्यम्, उदञ्ज-फिञ्। तिकादिभ्यः फिञ्। पा ४।१।१५४। उदञ्ज ऋषिके पुत्रादि।

औदञ्चन (सं° त्रि°) उदच्यते उत्क्षिप्य ध्रियतेऽस्मिन् इति उदञ्चनो जलाधारस्तस्येदम्, अण्। जलाधार-स्थित, घड़ेमें भरा हुआ।

औदञ्चनक (सं° त्रि°) उदञ्चन-वुञ्। वुञ्छणकठजिलसेनिरढञ्ण्ययफक्फिञिञ्ञ्यकक्ठकोऽरीहणकृशाश्वर्श्यकुमुदकाशतृणप्रेक्षाश्मसखिसङ्काशबलपक्षकर्णसुतङ्गमप्रगदिन्वराहकुमुदादिभ्यः। पा ४।२।८०। जलाधारके निकटस्थ, घड़ेके पास पड़नेवाला।

औदच्चवि (सं° पु°-स्त्री°) उदच्चोरपत्यम्, इञ्। उदच्चु ऋषिके पुत्रादि, उदच्चुकी औलाद।

औदश्वि (सं० पु०-स्त्री०) उदश्वस्यापत्यम्, इञ्। उदश्व ऋषिके पुत्रादि, उदश्वकी औलाद।

औदनिक (सं० त्रि०) ओदनं शिल्पमस्य, ओदन-ठञ्। सूपकार, पाचक, नानबाई, दाल-रोटी बनानेवाला। २ नियत समयपर ओदन प्राप्त करनेवाला, जिसे बंधे वक्त पर दलिया मिले।

औदन्य (सं० पु०) मुण्डिभ ऋषि।

औदन्यि (सं० पु०) औदन्यस्यापत्यं पुमान्, औदन्य-इञ्। औदन्य ऋषिके पुत्र।

औदपान (सं० त्रि०) उदपानादागतः, उदपान-अण्। शुण्डिकादिभ्योऽण्। पा ४।३।७६। १ राजग्राह्य, बादशाहको दिया जानेवाला। २ उदपान ग्रामसम्बन्धीय। ३ जलधरसम्बन्धीय, जो कूवें या झरनेसे निकाला गया हो।

औदमेधीय (सं० त्रि०) उदमेधेरिदम्, उदमेधि-छ। रैवतिकादिभ्यश्छः। पा ४।३।१३१। उदमेधि सम्बन्धीय।

औदयक, औदयिक देखो।

औदयिक (सं० त्रि०) उदये लग्नकाले भवः, उदय-ठञ्। १ लग्नकालोत्पन्न, ग्रहके उदयसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु०) २ हृदयकी एक भावना। पहले किये हुये कर्मोंसे हृदयमें उपजनेवाले सङ्कल्प-विकल्पको जैन 'औदयिक' कहते हैं।

औदरिक (सं० त्रि०) उदरे प्रसितः, उदर-ठक्। १ क्षुधित, भूखा। २ उदरमात्र पोषक, सिर्फ पेटको भरनेवाला, पेटू।

औदर्य (सं० त्रि०) उदरे भवः, यत् ततः स्वार्थे अण्। १ उदरस्थित, जो पेटमें हो। २ अभ्यन्तरप्रविष्ट, भीतर घुसा हुआ। (क्ली०) ३ ताम्र, तांबा। ४ मदनफल, मैनफल। ५ उदुम्बर फल, गूलर।

औदल (सं० पु०) १ ऋषिविशेष। यह चिकितादि छह प्रकारके ऋषियोंमें एक रहे। २ सामविशेष।

औदवापि (सं० पु० स्त्री०) उदवापस्यापत्यम्, उदवाप-इञ्। उदवापके पुत्रादि, उदवापकी औलाद।

औदवापीय (सं० त्रि०) औदवापेरिदम्, छ। औदवापि-सम्बन्धीय।

औदवाहि (सं० पु०) उदवाहस्यापत्यम्, उदवाह-इञ्। १ ऋग्वेदियोंके तर्पणीय एक ऋषि। २ उदवाहके पुत्रादि।

औदश्वित (सं० क्ली०) उद-श्वित्-अण्। उदश्वितोऽन्यतरस्याम्। पा ४।२।१९। १ अर्ध जलयुक्त घोल, आधा पानी मिला मट्ठा। (त्रि०) २ घोल-निर्मित, जो मट्ठेमें बनाया गया हो।

औदश्वित्क (सं० क्ली०) उदश्वित्-ठक्, ठस्य कः। इसुसुक्तान्तात् कः। पा ७।३।५१। अर्ध जलमिश्रित घोल, आधा पानी मिला मट्ठा या छाछ।

औदस (हिं० पु०) अपयश, बदनामी।

औदसा (हिं० स्त्री०) दुर्भाग्य, आफत, तकलीफ।

औदस्थान (सं० त्रि०) उदस्थानं शीलमस्य, ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। जलवासशील, पानीमें रहनेवाला।

औदात (हिं०) अवदात देखो।

औदान (हिं०) अवदान देखो।

औदार्य (सं० क्ली०) उदारस्य भावः, उदार-ष्यञ्। १ उदारता, सखावत, वाजिब खर्चमें हाथ न रुकनेकी हालत। २ वाक्यका एक गुण, बातकी बड़ाई। वाक्यके अर्थ गौरवको औदार्य कहते हैं। ३ सात्विक नायकका एक गुण। शोभा, कान्ति, दीप्ति, माधुर्य, और धैर्य सात गुण नायकके स्वाभाविक हैं। निरन्तर विनीत भावका ही नाम औदार्य है। ४ वेदान्तोक्त एक मनोवृत्ति। मनोवृत्ति शान्त, घोर और मूढ़ त्रिविध होती है। फिर वैराग्य, क्षान्ति और औदार्यको घोर मनोवृत्ति कहते है। (पञ्चदशी)

औदासीन्य (सं० क्ली०) उदासीनस्य भावः, उदासीन-ष्यञ्। १ उदासीनता, लापरवाई। विपद् और सम्पद्से उपेक्षा रखनेका नाम औदासीन्य है। २ अनुरागकी निवृत्ति, शौककी अदममौजूदगी।

औदास्य (सं० क्ली०) उदासस्य भावः, उदास-ष्यञ्। १ वैराग्य, जब्रका मसला। २ अनुरागादि शून्यता, खुशी वगैरहकी अदम-मौजूदगी। ३ अमनोयोग, लापरवाई। ४ उपेक्षा, अदम-तनदेही।

औदीच्य—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। औदीच्य ११ प्रकारके होते हैं—१ सिद्धपुरी, २ सिहोरी, ३ तोलकी, ४ कुनबिया, ५ मोचिया, ६ दरजिया, ७ गन्धर्वी,

८ कोलिया, ९ माड़वारी, १० कच्छी और ११ रागदिया। इनमें अनेक पौरोहित्य करते हैं। जो औदीच्य नीच जातिके पुरोहित होते, उनके हाथका जल पर्यन्त सम्भ्रान्त लोग नहीं पीते। यह कच्छ, गुजरात और खम्बात उपसागरके उपकूलमें रहते हैं। औदीच्य आवश्यकता पड़नेपर सकल प्रकारका कार्य करने लगते हैं। इनमें पहली तीन शाखा ही जातिके अंशमें श्रेष्ठ हैं। क्योंकि वह नीच जातिका यजन नहीं करतीं। औदीच्योंमें शाखाके भेदसे परस्पर विवाहादि अप्रचलित है।

औदुम्बर (सं॰ त्रि॰) उदुम्बर-अञ्। प्राणिरजतादिभ्योऽञ्। पा ४।३।१५४। यज्ञडुम्बुर-सम्बन्धीय, गूलरका बना हुआ। २ ताम्रसम्बन्धीय, जो तांबेका हो। (पु॰) उदुम्बरस्य विकारः, उदुम्बर-अण्। ३ उदुम्बर-पात्र, गूलरका बरतन। ४ उलूखल, ओखली। उदुम्बराः सन्त्यस्मिन् देशे। तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि। पा ४।२।६७। ५ उदुम्बरयुक्त देश, गूलरका मुल्क। (भारत, सभा ५२।१३) वराहमिहिरकी वर्णनासे अनुमान होता, कि औदुम्बर देश पञ्जाबमें था। फिर किसीके मतमें पञ्जाबके कांगड़ा ज़िलेकी नूरपुर तहसीलका प्राचीन नाम दहम्बरी वा औदुम्बर रहा। (Cunningham's Archæological Survey of India, Vol. XIV. p. 116)

पूर्वकालपर भारतवर्षमें औदुम्बर नामका दूसरा भी जनपद था। पाश्चात्य भौगोलिक पेरिप्लास् इस स्थानका नाम मोम्बरस् (Mombaros) लिख गये हैं। इस जनपदका रहना वर्तमान कच्छ देशमें अनुमान किया जाता है। ६ यमकी एक मूर्त्ति। ७ उदुम्बरवृक्षकी शाखा। (क्ली॰) ८ यज्ञडुम्बुरकाष्ठ, गूलरकी लकड़ी। ९ यज्ञडुम्बुरफल, खानेका गूलर। १० एक महाकुष्ठ। कुष्ठ देखो। ११ ताम्र, तांबा।

औदुम्बरक (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्य विषयो देशः, उदुम्बर-वुञ्। १ उदुम्बरविषय देश, उदुम्बरोंके रहनेका मुल्क। (क्ली॰) उदुम्बराणां समूहः। उदुम्बरसमूह।

औदुम्बरच्छद (सं॰ पु॰) दन्तीवृक्ष, दांतीका पेड़।

औदुम्बरर्षि—व्रतनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

औदुम्बरायण (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्य अपत्यं पुमान्, उदुम्बर-फक्। १ उदुम्बरवंशीय। २ किसी वैयाकरणका नाम।

उदुम्बरि (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्यापत्यं पुमान्, उदुम्बर-इञ्। १ उदुम्बरवंशीय। २ उदुम्बरोंके एक राजा।

औदुम्बरी (सं॰ स्त्री॰) उदुम्बर-अञ्-ङीप्। १ उदुम्बर-शाखा, गूलरकी डाल। २ क्रमिभेद, एक कीड़ा।

औद्गात्र (सं॰ क्ली॰) उद्गातुर्धर्म्यम्, उद्गातृ-अञ्। १ उद्गाता नामक ऋत्विक्का कर्म। (त्रि॰) २ उद्गातासम्बन्धीय।

औद्गाहमानि (सं॰ पु॰) उद्गाहमानस्य अपत्यं पुमान्, उद्गाहमान-इञ्। उद्गाहमान-वंशीय।

औद्ग्रभण (सं॰ त्रि॰) उद्ग्रहणाय साधुः, उद्ग्रहण-अण् छान्दसत्वात् हस्य भः। १ ऊर्ध्वग्रहणके उपयुक्त, दीक्षामें ज़ोरसे पढ़नेके योग्य। (क्ली॰) २ दीक्षामें उच्चैःस्वरसे पढ़ा जानेवाला मन्त्र वा वाक्य।

औद्दण्डक (सं॰ त्रि॰) उद्दण्ड-वुञ्। उद्दण्डका निकटवर्ती (देशादि)।

औद्दाल, औद्दालक देखो।

औद्दालक (सं॰ क्ली॰) उद्दालेन सञ्चितम्, उद्दाल-अण् संज्ञायां कन्। १ वल्मीककीटसञ्चित मधु, दीमकका इकट्ठा किया हुआ शहद। वल्मीकमध्यस्थ कपिलवर्ण कीट अल्प कपिलवर्ण जो मधु सञ्चय करते, उसे औद्दालक मधु कहते हैं। यह कषाय, उष्ण, कटु और कुष्ठरोग-विनाशक होता है। (भावप्रकाश)। २ तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेपर सर्वपापसे मुक्तिलाभ होता है।

औद्दालकशर्करा (सं॰ स्त्री॰) औद्दालक-मधुकृत शर्करा, दीमकके शहदकी चीनी। यह कुष्ठादि दोषोंको दूर करती और सर्वसिद्धि देती है। (राजनिघण्टु)

औद्दालकायन (सं॰ पु॰) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्, उद्दालक-फक्। उद्दालक ऋषि-वंशीय।

औद्दालकि (सं॰ पु॰) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्, उद्दालक-फक्। उद्दालकपुत्र, गौतम ऋषि।

औद्देशिक (सं॰ त्रि॰) उद्देशस्य इदम्, उद्देश-ठक्। १ उद्देश-सम्बन्धीय, ज़ाहिर करनेवाला। २ निर्देश करनेवाला, जो हिसाब बताता हो।

औद्धत्य (सं० क्ली०) उद्धतस्य भावः, उद्धत-ष्यञ्। अविनीत भाव, धृष्टता, गुस्ताख़ी, अक्खड़पन।

औद्धारिक (सं० त्रि०) उद्धाराय प्रभवति, उद्धार-ठञ्। १ उद्धारके लिये दिया जानेवाला, मौरूस होनेके क़ाबिल, जो हिस्सेसे सरोकार रखता हो।

"विप्रस्यौद्धारिकं देयमेकांशश्च प्रधानतः।" (मनु ८।१५०)

औद्धित्य (सं० क्ली०) हर्षयुक्त उत्तेजना, खुशीसे भरा हुआ जोश।

औद्धारि (सं० पु०) उद्धारस्य ऋषेरपत्यम्, इञ्। उद्धार ऋषिके पुत्र, खण्डिक।

औद्भिज्ज (सं० क्ली०) उद्-भिद्-जन-ड स्वार्थे अण्। १पांशु-लवण, शोरा। २शाम्भरि लवण, सांभर नोन। औद्भिद देखो।

औद्भिद (सं० क्ली०) उद्भिद स्वार्थे अण्। १ पांशु-लवण, शोरा। २ शाम्भरिलवण, सांभर नमक। यह लवण स्वयं ही भूमिसे उत्पन्न अर्थात् खनिज होता है। औद्भिदलवण लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, वमनकारक, वायुका अनुलोमक, तिक्त, कटु एवं कोष्ठबद्धता, आनाह और शूलनाशक है। ३ जलविशेष, झरनेका पानी। निम्नभूमिसे ऊपरको उत्थित अर्थात् जलाशयस्थ जलको औद्भिद कहते हैं। यह मधुर, पित्तनाशक और अविदाही होता है। सुश्रुतने वर्षाकालमें वृष्टिके जलका अभाव पड़नेसे इसका व्यवहार विहित बताया है। ४ वृक्षादिजात द्रव्य, पेड़ वग़ैरहसे पैदा होने-वाली चीज़। वृक्षादिसे उत्पन्न होनेवाले मूल, वल्कल, काष्ठ, निर्यास, डंठल, रस, पल्लव, चार, चीर, फल, पुष्प, भस्म, तैल, कण्टक, पत्र, कन्द और अङ्कुरका नाम औद्भिद है। वैद्यकमें उक्त सकल द्रव्यके ग्रहणकी विधि विद्यमान है। (चरक)

(त्रि०) ५ निर्गमशील, निकलनेवाला। ६ विजयी, राह निकालनेवाला।

औद्भिदजल (सं० क्ली०) १ उद्भिदजात जल, पेड़से निकलनेवाला पानी। २ प्रस्तरसलिल, पहाड़से झरनेवाला पानी। निम्नभूमिकी फोड़ धारावाहिक रूपसे बहनेवाला जल औद्भिद कहलाता है। यह पित्तघ्न, अविदाही, अतिशीतल, प्रीणन, मधुर, वल्य, ईषतवातकर और लघु होता है। (भावप्रकाश)

औद्भिदद्रव्य (सं० क्ली०) पृथिवीको फोड़ उत्पन्न होनेवाला पदार्थ, जो चीज़ ज़मीन्‌को फोड़ कर पैदा हो। वनस्पति, लता आदिको औद्भिदद्रव्य कहते हैं।

औद्भिद्य (सं० क्ली०) उद्भिदो भावः, उद्भिद-ष्यञ्। १ वृक्षादिकी उत्पत्ति, पेड़ वग़ैरहकी पैदायश। २ जिष्णुता, फ़तेहमन्दी, जीतकी राह निकालनेका काम।

औद्याव (सं० त्रि०) उद्यावस्य व्याख्यानो ग्रन्थः उद्यावे भवो वा, उद्याव-अण्। १ उद्यावकी व्याख्या करनेवाला, जो मेलका बयान करता हो। २ उद्याव-जात, जोड़से पैदा।

औद्योगिक (सं० त्रि०) चेष्टा सम्बन्धीय, कोशिशके मुताल्लिक़, जो उद्योगसे सम्बन्ध रखता हो।

औद्वाहिक (सं० क्ली०) उद्वाहकाले लब्धम्, उद्वाह-ठञ्। १ विवाहमें प्राप्त स्त्रीधन, शादीमें औरतको मिलनेवाली दौलत। इस धनमें ज्ञातिगणका अंश नहीं रहता। पितृधनको चति न पहुंचा जो स्वयं कमाया अथवा मित्रसे या उद्वाहकालमें पाया जाता, उसमें ज्ञातिगणका अंश नहीं आता।

"पितृद्रव्याविनाशेन यदन्यत् स्वयमर्जयेत्।
मैत्रमौद्वाहिकञ्चैव दायादानां न तद्भवेत्॥" (याज्ञवल्क्य)

औध (हिं० पु०) १ अवध, अयोध्याके इधर-उधर वा मुल्क। अवध देखो। (स्त्री०) २ अवधि, बंधा हुआ वक्त।

औधमोहरा (हिं० पु०) मस्तक उन्नतकर गमनशील हस्ती, जो हाथी सर उठा कर चलता हो।

औधस (सं० त्रि०) उधस-इदम्, उधस्-अण्। १ उधस्-सम्बन्धीय, चौपायेके बाखसे सरोकार रखनेवाला। (क्ली०) ३ पशुदुग्ध, चौपायेका दूध।

औधस्य (सं० क्ली०) उधसि भवम्, उधस-ष्यञ्। पशुदुग्ध, चौपायेका दूध।

औधि (हिं०) अवधि देखो।

औधिया (हिं० पु०) तस्कर, चोर।

औनत (हिं०) अवनत और अवनति देखो।

औनापौना (हिं० वि०) १ प्रायः तीन अंशयुक्त, कोई तीन हिस्से रखनेवाला। (क्रि० वि०) २ तीन अंश-पर, तीन हिस्सेमें, कुछ कम, नुक़सान उठाकर।

औनीत (सं॰ क्लो॰) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। गुरुभोजन, अभिष्यन्दि ग्रासग्रहण और अश्वोसेवा-वर्जनसे स्वस्थान-च्युत शुक्र मेहनमें मारा जाता है। उससे मूत्रकृच्छ्र उपजता है। फिर कुपित शोणित मेहनमें शूल उठाता है। मेहन क्लिन्न, पक्व, कण्डूवत् पिड़कायुक्त तथा मक्षिकावृत रहता और अपने स्थानमें प्रवेश नहीं करता। (जयदत्त)

औन्दूवर (सं॰ क्लो॰) ताम्र, तांबा।

औन्नत्य (सं॰ क्लो॰) उन्नतस्य भावः, उन्नत-ष्यञ्। १ उन्नति, तरक्की। २ उच्चता, उंचाई।

औन्नेत्र (सं॰ क्लो॰) उन्नेतुः कर्म भावो वा, उन्नेतृ-अण्। १ उन्नयन, उत्तोलन, उन्नेताका कार्य, उठाव, चढ़ाव। २ उन्नेतृत्व।

औपकर्णिक (सं॰ त्रि॰) उपकर्णे भवः, उपकर्ण-ठक्। कर्णके समीप उत्पन्न, कानके पास रहनेवाला।

औपकलाप्य (सं॰ त्रि॰) उपकलापे भवम्, उपकलाप-ञ्य। कलाप-समीपवर्ती, हलकेके करीब रहनेवाला, जो घेरेके पास हो।

औपकायन (सं॰ पु॰) उपकस्यापत्यं पुमान्, उपक-फक्। उपकवंशीय, उपकका लड़का वगैरह।

औपकार्य (सं॰ क्लो॰) १ गृह, मकान्। २ पट-मण्डप, डेरा, रावटी।

औपकुर्वाणक (सं॰ त्रि॰) उपकुर्वाण-सम्बन्धीय, ब्रह्मचर्याश्रमसे गृहस्थाश्रममें जानेवाले ब्राह्मणके मुताल्लिक।

औपकूलिक (सं॰ त्रि॰) उपकूलस्य इदम्, उपकूल-ठक्। उपकूल-सम्बन्धीय, साहिलके मुताल्लिक, किनारेसे सरोकार रखनेवाला।

औपक्रमिकनिर्जरा (सं॰ स्त्री॰) जैनशास्त्रानुसार निर्जरा-भेद। जैन इसे निर्जरा वा कर्मक्षय मानते हैं। औपक्रमिक निर्जरामें तपस्याके प्रभावसे कर्मको उठा क्षय कराते हैं।

औपगव (सं॰ पु॰) उपगोरपत्यं पुमान् उपगोरिदं वा, उपगु-अण्। १ उपगुका पुत्र, उपगुवंशीय। २ उपगु-सम्बन्धीय, उपगुसे सरोकार रखनेवाला।

उपगु गोप जातिका नामान्तर है। लक्षणाशक्ति द्वारा उसके पुरोहितका भी अर्थ निकलता है। क्यों कि जो जिस वर्णका याजक होता, उसमें उसीका वर्णत्व आ जाता है।

"यं वर्णं याजयेद यस्तु स तद्वर्णत्वमाप्नुयात्।" (हारित)

औपगवक (सं॰ पु॰) उपगवानां समूहः, उपगव-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रेति। पा ४।२।३९। १ औपगव समूह, औपगवोंका मजमा। (त्रि॰) २ औपगव-सम्बन्धीय। ३ औपगव-पूजक।

औपगवि (सं॰ पु॰) उपगवस्य गोष्पतेरपत्यं पुमान्, उपगव-इञ्। १ गोष्पतिपुत्र। २ बृहस्पतिकात्र उद्धव।

औपग्रस्तिक (सं॰ पु॰) उपग्रस्तं ग्रासकालं भूतः, ठञ्। ग्रहण, राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य, कुसूफ़।

औपग्रहिक (सं॰ पु॰) उपग्रह-ठञ्। राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य।

औपचारिक (सं॰ पु॰) १ उपचार, रसाई, पहुंच। (त्रि॰) उपचारस्य इदम्, ठञ्। २ उपचार-सम्बन्धीय, रसाईके मुताल्लिक। ३ सालङ्कार, रंगीन, नकली।

औपच्छन्दसिक (सं॰ त्रि॰) उपच्छन्दसानिर्वृत्तम्, उपच्छन्दस्-ठक्। १ प्रियवाक्य द्वारा निष्पन्न, मीठी बातसे निकला हुआ। (क्लो॰) २ मात्रावृत्तविशेष।

"षड् विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नोनिरन्तराः।
न समात्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥
पर्यन्ते यौ तथैव शेषमौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम्॥" (वृत्तरत्नाकर)

विषम अर्थात् प्रथम एवं तृतीय पादमें ६ मात्रा और सम अर्थात् द्वितीय तथा चतुर्थ पादमें ८ मात्रा रहने और समस्त मात्रा केवल लघु वा केवल दीर्घ न लगने, अथच सम अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ एवं षष्ठ मात्रा तृतीयादि मात्राके आश्रित न पड़ने और परिशेषको रगण (मध्यवर्ण लघु और उसके उभय पार्श्वस्थ दो गुरुवर्णविशिष्ट अक्षरत्रयका नाम रगण है), एक लघु और एक गुरु वर्ण जुड़नेसे वैतालीय छन्द होता है। फिर इस वैतालीयवाले प्रतिपादके शेष भागपर यगण (आद्यक्षर लघु और परवर्ती अक्षरद्वय गुरु होनेसे यगण कहाता है) और रगण रहनेसे

औपच्छन्दसिक वृत्त बनता है। ३ पुष्पिताग्रा नामक छन्द। पुष्पिताग्रा देखो।

"पुष्पिताग्रामिदं केचिदौपच्छन्दसिकं विदुः।" (वृत्तरत्नाकर)

औपजानुक (सं॰ त्रि॰) उपजानु जानुसमीपे भवः, उपजानु-ठक्। जानुका समीपवर्ती, घुटनोंके पास या ऊपर रहनेवाला।

औपतस्विनि (सं॰ पु॰) उपतस्विनस्यापत्यं पुमान्, उपतस्विन-इञ्। उपतस्विनके पुत्र, राम नामक एक ऋषि।

औपदेशिक (सं॰ त्रि॰) उपदेशेन जीवति, उपदेश-ठञ्। वेतनादिभ्यो जीवति। पा ४।४।१२। १ उपदेशोपजीवी, नसीहतसे ज़िन्दगी बसर करनेवाला। २ उपदेशानुसार प्राप्त, नसीहतसे मिला हुआ।

औपद्रविक (सं॰ त्रि॰) उपद्रवमधिकृत्य कृतः, उपद्रव-ठक्। उपद्रव-सम्बन्धीय, आसारसे सरोकार रखनेवाला।

"अथात औपद्रविकमध्यायं व्याख्यास्यामः।" (सुश्रुत)

औपद्रष्टर (सं॰ पु॰) उपद्रष्ट स्वार्थे अञ्। १ पुरुषमेध यज्ञीय देवविशेष। (क्ली॰) २ साक्षी रहनेकी स्थिति, जिस हालतमें गवाह रहें। ३ निरीक्षण, देख-भाल।

औपधर्म्य (सं॰ त्रि॰) उपधर्मस्य इदम्, उपधर्म-ष्यञ्। १ उपधर्म-सम्बन्धीय, इलहाद या कुफ्रके मुताल्लिक। (क्ली॰) स्वार्थे ष्यञ्। २ उपधर्म, इलहाद, कुफ्र। ३ गौण धर्म, हलकी नेकी।

औपधिक (सं॰ त्रि॰) छली, धोकाबाज़।

औपधेनव (सं॰ पु॰) उपधेनोरपत्यं पुमान्, उपधेनु-अण्। धन्वन्तरिके शिष्य एक ऋषि।

औपधेय (सं॰ त्रि) उपधि स्वार्थे ठञ्। कडिरुपधि-वस्तेर्ढञ्। पा ४।१।२३। १ रथका एक अवयव, गाड़ीका पहिया। (त्रि॰) २ रथके अवयव विशेषका कार्य देनेवाला, जो गाड़ीके पहियेमें किसी हिस्से पर लगता हो।

औपनायनिक (सं॰ त्रि॰) उपनयनं प्रयोजनमस्य, उपनयन-ठक् द्विपदवृद्धिश्च अथवा उपनयन-ठक्। १ उपनयनके प्रयोजनीय, जनेऊमें लगनेवाला। उपनयनाय हितम्। २ उपनयनसाधक, जनेऊसे सरोकार रखनेवाला।

औपनासिक (सं॰ त्रि॰) उपनासं भवः, उपनास-ठञ्। नासिकाके समीप उत्पन्न, नाकके पास निकलनेवाला।

औपनिधिक (सं॰ क्ली॰) उपनिधि स्वार्थे ठञ्। १ अपरके निकट अप्रकाशित भावसे रखा जानेवाला द्रव्य, धरोहर। २ भोग करनेको प्रीतिपूर्वक दिया जानेवाला द्रव्य, काममें लानेके लिये प्यारसे दी जानेवाली चीज़। (त्रि॰) ३ उपनिधि-सम्बन्धीय, धरोहरसे सरोकार रखनेवाला।

औपनिषत्क (सं॰ त्रि॰) उपनिषदा जीवति, उपनिषद्-ठक्। उपनिषदुक्त उपदेशके अनुसार जीविका निर्वाह करनेवाला।

औपनिषद (सं॰ पु॰) उपनिषद्-अण्। १ उपनिषद् मात्रका वेद्य परमात्मा। २ उपनिषद्के उपदेशानुसार आचरण करनेवाला। (त्रि) ३ ब्रह्मप्रतिपादक। ४ उपनिषद् द्वारा प्रतिपादित। ५ उपनिषद्की व्याख्या करनेवाला।

औपनिषदिक, औपनिषद देखो।

औपनीविक (सं॰ त्रि॰) उपनीवि नीविसमीपे भवः, उपनीवि-ठक्। नीविका समीपवर्ती, नारेके पास रहनेवाला, जो कमरके नज़दीक पड़ता हो।

औपन्यासिक (सं॰ त्रि॰) १ उपन्यास-सम्बन्धीय, बनावटी क़िस्सेसे सरोकार रखनेवाला। २ उपन्यासके योग्य, जो बनावटी क़िस्सेमें लिखनेके लायक हो। ३ विलक्षण, अनोखा।

औपपक्ष्य (सं॰ त्रि॰) उपपक्षस्य इदम्, उपपक्ष-ष्यञ्। बाहुमूल सम्बन्धीय, बग़ली, जो कांखमें रहता हो।

औपपत्तिक (सं॰ त्रि॰) उपपत्त्या कृतम्, उपपत्ति-ठक्। युक्तियुक्त, हाज़िर, मतलब निकाल देनेवाला। लिङ्गशरीरको औपपत्तिक कहते हैं।

औपपातिक (सं॰ त्रि॰) उपपातेन संसृष्टः उपपात-ठक्। गोवधादि उपपातकमें लिप्त, जो कोई हलका गुनाह कर चुका हो। (क्ली॰) २ किसी जैन उपाङ्गका नाम। जैन देखो।

औपपादुक (सं० त्रि०) उपपादुकस्य इदम्, उपपादुक-ठक्। १ देवदेह-सम्बन्धीय। २ नारकिदेह-सम्बन्धीय। ३ अपने आप उत्पन्न किया हुआ, जो खुद-बखुद निकाला गया हो।

औपबाहवि (सं० पु०) उपबाहोरपत्यं पुमान्, उपबाहु-इञ्। उपबाहु वंशीय, उपबाहुके खान्दानमें पैदा होनेवाला।

औपभृत (सं० त्रि०) उपभृता पात्रेण सञ्चितः, उपभृत्-अण्। १ अश्वत्थ काष्ठके यज्ञपात्रमें सञ्चित, पीपलको लकड़ीके चम्मचमें इकट्ठा किया हुआ। २ उपभृत्-सम्बन्धीय।

औपमन्यव (सं० पु०) उपमन्योरपत्यं पुमान्, उपमन्यु-अञ्। १ उपमन्युके पुत्र। २ महाशाल जाबालका एक नाम। ३ प्राचीन-शाल। ४ एक प्राचीन वैयाकरण। यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है।

औपमिक (सं० त्रि० उपमया निर्दिष्टः, उपमा-ठक्। उपमा द्वारा निर्दिष्ट, मिसालका काम देनेवाला।

औपम्य (सं० क्ली०) उपमा एव, स्वार्थे ष्यञ्। सादृश्य, बराबरी। इसका संस्कृत पर्याय अनुकार, अनुहार, साम्य, तुला, उपमा, कक्ष और उपमान है। एकसे दूसरेके सादृश्यका प्रकाशन औपम्य कहाता है। (चरक)

औपयज (सं० त्रि०) उपयज इदम्, उपयज-अण्। पशुयज्ञ-सम्बन्धीय।

औपयिक (सं० त्रि०) उपायेन जातः, उपाय-ठक् ह्रस्वश्च। १ न्याय्य, वाजिब। २ उपयुक्त, दुरुस्त, ठीक। (क्ली०) स्वार्थे ठक्। ३ उपाय, तदबीर। "शिवमौपयिकं गरीयसीम्।" (भारवि २।३५)

औपयोगिक (सं० त्रि०) उपयोगः प्रयोजनमस्य, उपयोग-ठञ्। उपयोग-सम्बन्धीय, लगानेसे सरोकार रखनेवाला।

औपर (सं० त्रि०) दण्डवंशीय, दण्डके घरानेमें पैदा होनेवाला।

औपराजिक (सं० त्रि०) उपराज-ठञ्। काश्यादिभ्यष्ठञ्ञिठौ। पा ४।२।११६। उपराज-सम्बन्धीय, बादशाहको जगह काम करनेवालेके मुताल्लिक।

औपराधय्य (सं० क्ली०) उपराधस्य कर्म भावो वा, उपराधय-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। उपसेवकता, नौकरी-चाकरी।

औपरिष्ट (सं० त्रि०) उपरिष्टात् भवः उपरिष्ट-अण्। ऊपरसे उत्पन्न, जो ऊपर हो।

औपरिष्टक (सं० क्ली०) कामसूत्रका एक अंश। इस शृङ्गारप्रिय ग्रन्थको वात्स्यायनने लिखा था।

औपरैधिक (सं० पु०) उपरैधः प्रयोजनमस्य, उपरैध-ठक्। पीलुदण्ड, पीलका डंडा।

औपरोधिक (सं० पु०) उपरोधः प्रयोजनमस्य, उपरोध-ठक्। १ पीलुदण्ड, पीलको लकड़ीका सोंटा। (त्रि०) २ उपरोध-सम्बन्धीय, रोक-टोकसे सरोकार रखनेवाला। ३ कृपासे होनेवाला, मेहरबानीके मुताल्लिक।

औपल (सं० त्रि०) उपलादागतः, उपल-अण्। शुण्डिकादिभ्योऽण्। पा ४।३।७६। १ उपलसे आगत, पत्थरसे उभाड़ा या बटोरा हुआ। २ प्रस्तर-सम्बन्धीय, पथरीला।

औपवसथिक (सं० त्रि०) उपवसथे भवः, उपवसथ-ठञ्। १ उपवसथ-सम्बन्धीय, उपवसथमें किया जानेवाला। उपवसथ देखो। (क्ली०) २ सामवेदका परिशिष्टविशेष।

औपवसथ्र (सं० त्रि०) उपवसथे भवः, उपवसथ-ष्यञ्। १ उपवसथमें कर्तव्य। २ उपवसथ-सम्बन्धीय।

औपवस्त (सं० क्ली०) उपवास, लङ्घन, फाका, न खानेकी हालत।

औपवस्त्र (सं० क्ली०) उपवस्त्र-अण्। १ उपवास, फाका। २ उपवासके उपयुक्त खाद्य, फाकेमें खाने लायक चीज।

औपवस्त्रक (सं० क्ली०) उपवासके उपयुक्त आहार, फाकेमें खाने लायक चीज।

औपवास (सं० त्रि०) उपवासे दीयते, उपवास-अण्। व्युष्टादिभ्योऽण्। पा ५।१।९७। १ उपवासके व्रतमें देय, जो फाकेमें देने लायक हो। उपवासस्य इदम्। २ उपवास-सम्बन्धीय, फाकेके मुताल्लिक।

औपवासिक (सं० त्रि०) उपवासे साधुः, उपवास-ठञ्। गुडादिभ्यष्ठञ्। पा ४।४।१०२। उपवासके उपयोगी,

फाकेके लायक। उपवासाय प्रभवति। २ उपवाससमर्थ, फाका कर सकनेवाला।

औपवास्य (सं० क्लो०) उपवास स्वार्थे ष्यञ्। उपवास, फाका। रामायण २।८७ अ:)

औपवाह्य (सं० पु०) उपवाह्य स्वार्थे अण्। १ उपवाहन, रथादि, सवारी, गाड़ी वगैरह। (त्रि०) २ सवारीके लिये खींचा हुआ। ३ सवारीके लिये चलाया हुआ।

औपविन्दवि (सं० पु०) उपविन्दोरपत्यं पुमान्,उपविन्दु-इञ्। उपविन्दुपुत्र, उपविन्दु नामक ऋषिके लड़के।

औपवेशि (सं० त्रि०) अरुणके गोत्रापत्य।

औपवेशिक (सं० त्रि०) उपवेशेन जीवति, उपवेश-ठञ्। वेशके द्वारा जीविका निर्वाह करनेवाला, बहुरूपिया।

औपशमिक (सं० त्रि०) उपशमक, ठण्डा कर देनेवाला।

औपशिवि (सं० पु०) १ उपशिवके गोत्रापत्य।

औपश्लेषिक (सं० त्रि०) उपश्लेषेण निवृत्तः, उपश्लेष-ठक्। उपश्लेष-सम्बन्धीय, लम्सके मुताल्लिक, मेली। सिद्धान्तकौमुदीमें त्रिविध आधार लिखा है,—औपश्लेषिक, वैषयिक और अभिव्यापक।

औपसंक्रमण (सं० त्रि०) उपसंक्रमणे दीयते, उपसंक्रमण-अण्। उपसंक्रमणमें देने या कर लेने योग्य। उपसंक्रमण देखो।

उपसंख्यानिक (सं० त्रि०) उपसंख्यानस्य इदम्, उपसंख्यान-ठक्। १ उपसंख्यान-सम्बन्धीय, एक होमें कहा हुआ। २ परिशिष्ट, तरमीमी।

औपसद (सं० पु०) उपसत् शब्दोऽस्त्यस्मिन् उपसद-अण्। विमुक्तादिभ्योऽण्। पा ५।२।६१। १ उपसद् शब्दयुक्त अध्याय वा अनुवाक। उपसद् समीप स्थानं तत् अस्यास्ति। २ द्वन्द्व, जोड़ा। ३ एकाह यज्ञविशेष।

औपसर्गिक (सं० पु०) उपसर्ग-ठक्। १ सन्निपातज रोग, सरशाम की बीमारी। वैद्यक मतमें कफ अनुलोम वायु और पित्तसे मिल रोगोत्पादन करता है। उस समय रोगीके स्वेद चलता और शीतलताका वेग बढ़ता है। फिर वायु प्रतिलोम पड़नेसे कुछ स्वास्थ्य भी बोध होता है। इसीका नाम औपसर्गिक वा सन्निपातज रोग है। सुश्रुतके कथनानुसार पूर्वोत्पन्न व्याधिके निदानादि द्वारा जो अपर रोग साथमें लग जाता, वही औपसर्गिक कहाता है। यह रोग उपद्रवसे उठता है।

"औपसर्गिकरोगश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्।" (माधवनिदान-टीका)

२ पापरोगादि। ३ भूतादिके आवेशसे उत्पन्न रोग। (त्रि०) ४ उपसर्ग-सम्बन्धीय, मुकद्दम। ५ विपद्का सामना कर सकनेवाला, जो आफ़त झेल सकता हो। ६ परिवर्तन-सम्बन्धीय, तबद्दलके मुताल्लिक। ७ साथ लगा हुआ। ८ अद्भुत, अजीब।

औपसीर्य (सं० त्रि०) उपसीराद्भवः, उपसीर-ञ्य। गम्भीराञ्ञ्यः। पा ४।३।५८। १ लाङ्गलोत्पन्न, हलसे निकला हुआ। २ लाङ्गलके निकटस्थ, हलके पास रहनेवाला।

औपस्थान (सं० त्रि०) उपस्थानं शीलमस्य, उपस्थान-ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। उपस्थानशील, उपासक, हाज़िरबाश, खिदमतगार।

औपस्थानिक (सं० त्रि०) उपस्थानेन जीवति, उपस्थान-ठक्। सेवाव्यवसायी, खिदमतगारीसे ज़िन्दगी बसर करनेवाला।

औपस्थिक (सं० त्रि०) उपस्थेन जीवति, उपस्थ-ठञ्। जारकर्मजीवी, ज़िनासे ज़िन्दगी बसर करनेवाला।

औपस्थिका (सं० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

औपस्थूण (सं० त्रि०) स्थूणाका समीपवर्ती, सितूनके नज़दीक रहनेवाला।

औपस्थ्य (सं० क्ली०) उपस्थाद्भवम्, उपस्थ-ष्यञ्। जननेन्द्रियजन्य सुखादि, ज़िनाकारीका मज़ा।

औपहारिक (सं० त्रि०) उपहाराय साधुः, उपहार-ठक्। १ उपहारके उपयोगी, नज़रके काबिल, जो भेंट करने लायक हो। (क्ली०) २ उपहार, भेंट।

औपाधिक (सं० त्रि०) उपाधि-ठञ्। १ उपाधिकृत, शरती। २ उपाधि-सम्बन्धीय, निसबती।

औपाध्यायक (सं० त्रि०) उपाध्यायादागतः, उपाध्याय-वुञ्। विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यो वुञ्। पा ४।३।७७। उपाध्यायसे लाभ किया जानेवाला, जो उस्तादसे हासिल हो।

औपानह्य (सं० पु०) उपानाह-ष्य। १ मुञ्ज, मूंज। २ चर्म, चमड़ा। (त्रि०) ३ जूता बनानेके काममें लगनेवाला। ४ बांधा जानेवाला।

औपायिक (सं० त्रि०) उपायेन जातः, उपाय-ठक्। १ न्याय्य, वाजिब। २ उपयुक्त, ठीक।

औपावि (सं० पु०) उपावस्यापत्यं पुमान्। १ उपाव ऋषिके पुत्र। २ जानश्रुतेयके वंशज।

औपासन (सं० त्रि०) उपासना विवाहाग्निः तत्र भवः, उपासन-अण्। १ विवाहाग्नि-सम्बन्धीय। २ उपासना-सम्बन्धीय, परस्तिशके मुताल्लिक। ३ विवाहाग्नि। ४ विवाहाग्निमें नैत्यिक कर्तव्य होमादि। यह होम प्रत्यह प्रातः एवं सन्ध्याकालको करना पड़ता है। प्रथम सायंकालको ही आरम्भ करना उचित है। आरम्भ-रात्रिको ८ घटिका अतीत हो जानेसे उस रात्रि को आरम्भ न कर दूसरी रात्रिको आरम्भ करते हैं। होमारम्भसे पहले ही विवाहाग्नि बुझ जानेपर विधानानुसार स्थालीपाक कर आरम्भ करना पड़ता है। प्रातःकालको सूर्योदयसे पूर्व एवं चन्द्र उदित रहते रहते होम कर्तव्य है। अत्रिके वचनानुसार होमका मुख्य काल सवेरे सूर्यमूर्ति भूमिसे एक हाथ उत्थित न मालूम पड़ने और रात्रिको प्रदोषकाल चलने तक रहता है। इस होमके अकरण-सम्बन्धमें गर्गने कहा है—दारपरिग्रह करने बाद क्षणकाल मात्र भी अग्निको छोड़ना न चाहिये। क्योंकि अग्नि विना अवस्थान करनेसे पतित होना पड़ता है। स्नान, सन्ध्या, वेदाध्ययन प्रभृतिको भांति उपासना भी अवश्य कर्तव्य है। जो व्यक्ति विवाहाग्नि छोड़ अपनेको गृहस्थ समझता, उसका अन्न खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

औपीन (सं० क्ली०) उप्यक्षेत्र, बोने लायक खेत।

औपोदिति (सं० पु०) उपोदितस्यापत्यं पुमान्, उपोदित-इञ्। उपोदित ऋषिके पुत्र।

औम् (सं० अव्य०) ओम् देखो।

औम (सं० त्रि०) औमक देखो। (हिं०) अवम देखो।

औमक (सं० क्ली०) उमाया विकारः, उमा-वुञ्। उमोर्णयोर्वा। पा ४।३।१५८। १ शणका विकार, सन की चीज़। (त्रि०) २ क्षौम, सनीला।

औमायन (सं० क्ली०) उमाया निमित्तं संयोगः उत्पातो वा, उमा-फञ्। १ शणका संयोग। २ शणसे उठनेवाला उत्पात।

औमिक, औमक देखो।

औमीन (सं० क्ली०) उमानां भवनं क्षेत्रं वा, उमा-खञ्। विभाषातिलमाषोमेति। पा ५।२।४। १ अतसीपूर्ण गृह, सनसे भरा हुआ घर। २ अतसीक्षेत्र, सनका खेत।

और (हिं० वि०) १ अन्य, दूसरा। २ केवल, सिर्फ। "दुनया है और मतलब।" (लोकोक्ति) ३ अधिक, ज्यादा। "सीतपर सीत और जलाया।" (लोकोक्ति) (पु०) ४ अन्य व्यक्ति, दूसरा शख्स। "मुझे और न तुझे ठौर।" (लोकोक्ति) (अव्य०) ५ वा, औ, अरु, औ। ६ किन्तु, लेकिन, इसपर भी।

औरग (सं० क्ली०) उरगस्य इदम्, उरग-अण्। १ अश्लेषा-नक्षत्र। (त्रि०) सर्पसम्बन्धीय, सांपके मुताल्लिक।

औरंग—बम्बईप्रान्तके सूरत जिलेकी एक नदी। यह धर्मपुर पर्वतसे निकल अम्बिकासे ८ मील दक्षिण समुद्रमें जा गिरती है। समुद्रसे ६ मील तक इस नदीमें ५० टनकी नावें चल सकती हैं। बलसारके पास पुल बंधा है।

औरङ्गजेब—दिल्लीके एक मुसलमान बादशाह। ये शाहजहांके तीसरे पुत्र और जहांगीरके पौत्र थे। इनकी माताका नाम सुलताना कुदसिया था। मुसलमानो १०२८ हिजरीके ११ जेल्काद महीनेमें (१६१८ ई०के अक्तूबर महीनेमें) औरङ्गजेबका जन्म हुआ। पहले इनका नाम मुहम्मद था। लड़कपनमें ही असाधारण वीरत्व प्रकाश करनेके कारण प्रसन्न होकर शाहजहांने इनका नाम औरङ्गजेब अर्थात् सिंहासनका आभरण रख दिया। इसके सिवा इन्होंने स्वयं 'आला-खाकान्' उपाधि ग्रहण किया। इनके और भी दो नाम जनसमाजमें प्रसिद्ध हैं। एक नाम महीउद्दीन् अर्थात् धर्मका उद्धारकर्त्ता और दूसरा आलमगीर अर्थात् विश्व-विजयी है। ये १६५८ ई०को बादशाह हुए।

छियालीस वर्ष राजत्व करनेके बाद ८८ वर्षकी उम्रमें १७०७ ई०के फरवरी मास इन्होंने इहलोक परित्याग किया।

आज भी जिन औरङ्गजेवका नाम सुनकर मुसलमानोंका कलेजा कांप उठता और हिन्दुओंके नेत्रोंसे अश्रु चलने लगता, सैकड़ों वर्ष बीते उनका निस्पन्द प्रेतशरीर इल्लोराकी अधित्यकामें सो रहा है। शाहजहांके दुश्चरित्रके कारण सात वर्षकी उमरसे ही ये, इनके बड़े भाई दारा और शुजा और छोटे भाई मुराद अपने पितामह जहांगीरके पास कैद थे। यदि शाहजहां पुनर्वार अपने पिताके साथ असद्व्यवहार करते, तो इन लोगोंके प्राण कभी न बचते। जहांगीरके मृत्यु अनन्तर दश वर्षकी उम्रमें औरङ्गजेव पिताके निकट आगरे लौट आये।

१६३३ ई०को बुंदेलोंके राजा जगत्सिंह और शाहजहांके साथ विरोध उठ खड़ा हुआ। उस समय औरङ्गजेवकी उम्र चौदह वर्षसे अधिक न थी। जिस खूनकी प्याससे भूखे सिंहकी तरह यह सर्वदा घूमते फिरते रहे, यहां तक, कि अपने भाइयोंको भी नहीं छोड़ा, उस दारुण पशुवृत्तिका सूत्रपात यहीं हुआ। औरङ्गजेव मालवेके सूबेदार नसरतके साथ बुंदेलखण्ड गये। एकादिक्रमसे दो वर्ष युद्ध हुआ। जगत्सिंहने देखा,—अब रक्षा नहीं,दिन दिन सैन्यक्षय हुआ जाता है। अन्तमें घोड़ेपर सवार हो कई अनुचरोंके साथ वे भागकर नर्मदाके उस पार किसी जङ्गलमें जा छिपे।

घोड़ेकी पीठपर वे लोग बहुत दूर निकल आये, न तो कुछ खाने और न सोने पाये थे; इसलिये घोड़ोंको पेड़ोंमें बांध सबके सब धूलमें लेट गये। नींद आ गई, उस वनमें चारो ओर असभ्य आदमी थे। वे झोपड़ेमें रहते, वनमें आखेट करते, पशुचर्म्म पहनते, वनके फल-मूल और मद्य मांस खाते, राजभोग, राजैश्वर्य्य जानते न थे। वनमें घोड़ोंकी हिनहिनाहट सुनकर वे लोग देखने आये। आकर देखा,—पेड़ोंमें कई घोड़े बंधे हैं, उनकी पीठपर बेशकीमती जड़ाऊ जीन पड़े हैं और कई सुपुरुष भूमिपर सो रहे हैं। उनके सर्वाङ्ग भी मणिमाणिक्यसे लदे थे। नीच लोगोंके नीच प्रवृत्ति होती है। मनमें लोभ आया। लोभ ही पाप है। उन लोगोंने निद्रावस्थामें ही जगत्सिंह और उनके अनुचरोंको मार डाला, परन्तु पापका धन भोग न कर सके। औरङ्गजेव और नसरतने जाकर उन डाकुओंको वध किया। जगत्सिंहके खजानेमें सोना, चांदी, हीरा, मोती सब मिलाकर तीस लाख रुपयेकी सम्पत्ति थी। उस सम्पत्तिको ले जाकर औरङ्गजेवने पिताके पादपद्मपर रख दिया।

संसारमें विजयका डङ्का बजा। औरङ्गजेवके युद्धमें पदार्पण करते ही सौभाग्यलक्ष्मी पताका लेकर आगे आगे चलती थीं। उस समय उजबक और ईरानी प्रसिद्ध रण पण्डित थे। संग्राममें औरङ्गजेवने उन लोगोंको भी परास्त किया। पुत्रका असाधारण साहस और रणनैपुण्य देखकर शाहजहांके आह्लादकी सीमा न रही। परन्तु दारा ज्येष्ठपुत्र थे। ज्येष्ठपुत्र ही राज्यका अधिकारी होता है। अतएव औरङ्गजेव यह बात मनही मन समझते थे—सम्राट् दाराको अतिक्रम कर और किसीको राजपदपर अभिषिक्त न कर सकेंगे। इसके सिवा दारापर भी उनका आन्तरिक प्रेम था। इसलिये औरङ्गजेवने यही स्थिर किया, बिना विशेष कौशल किये राजसिंहासन मिलना कठिन है। इसीसे लड़कपनसे ही ये कपट धार्म्मिक बनते रहे। परन्तु दारासे इनका विद्वेष दिन दिन बढ़ने लगा। निकटका रहना चक्षुशूल होता है, इसलिये सामान्य बहाना पाकर ये पिताकी आज्ञासे दाक्षिणात्यके शासनकर्त्ता होकर चले गये। यहां गोलकुण्डा राज्यके सेनानायक मीरजुमला अपने स्वामीको परित्याग कर औरङ्गजेवसे आ मिले। उस समय हैदराबाद गोलकुण्डाके राजाके अधिकारमें था। मीरजुमलाको साथ लेकर औरङ्गजेवने हैदराबाद लूट लिया। शीघ्र ही गोलकुण्डा अधिकार करनेकी भी इच्छा थी, परन्तु इसबार इनकी चिरकालकी दुरभिसन्धिके पूर्ण होनेका अवसर न आया।

शाहजहां बीमार हुए। जीवन संकटापन्न हो गया। पीछे कहीं राज्यमें अनिष्ट न हो, इसलिये दारा सम्राट्का कार्य्य निर्वाह करने लगे।

शुजा बंगालमें थे। उस समय वे बंगालके शासनकर्त्ता थे। बड़े भाईके सम्राट् होनेका समाचार पाते ही क्रोधसे उनका शरीर जल उठा। शीघ्र ही लड़ाईकी तय्यारी करके उन्होंने दिल्लीकी यात्रा कर दी।

औरङ्गजेब अत्यन्त क्रूर थे। लड़कपनसे ही ये कपटधार्म्मिक बने हुए थे। इस गोलमालके समय इन्होंने अपनी शान्ति प्रकृतिसे धीरे धीरे अपनी दुरभिसन्धिके सिद्ध करनेका उपाय स्थिर कर लिया। छोटे भाई मुराद उस समय गुजरातके शासनकर्त्ता थे। औरङ्गजेबने उनके पास लिख भेजा,—"भाई! पिताका तो मृत्युकाल निकट है। हमारे दोनों बड़े भाई अलस, इन्द्रियपरायण और विलासी हैं। इस विशाल राज्यको शासनमें रखनेके योग्य वे नहीं हैं। मेरी बात तुमसे कुछ छिपी नहीं है। क्या करूं, परमगुरु पिताका अनुरोध है, इसीसे कामकाज देखता हूं, नहीं तो संसारमें तिलार्द्ध भी स्पृहा नहीं है। जो हो, इस समय सद्युक्ति यही है, कि तुम्हारे हाथमें राज्यका भार सौंप मैं मक्के चला जाऊं; अतएव आइये, हम दोनों आदमी सेना लेकर आगरे चलें"।

खलोंके कुचक्रमें देवता पड़ जाते हैं, मनुष्योंकी कौन गिनती है। औरङ्गजेबके मायाजालमें मुराद फंस गये। वे आकर नर्मदाके किनारे औरङ्गजेबसे मिले। शाहजहांका जीवन संकटापन्न था, परन्तु इतने दिनोंमें रोगका प्रकोप बहुत कुछ कम पड़ गया। निर्विवाद दाराने पिताका सिंहासन छोड़ दिया। परन्तु शुजा प्रभृतिको इस बातका विश्वास न हुआ। उन लोगोंने समझा—लोग जो आरोग्य होनेका समाचार फैला रहे हैं, वह केवल जनरव है; इसमें भी दाराकी कोई चातुरी है। इसलिये युद्ध करना ही उन लोगोंका दृढ़ संकल्प हुआ।

दोपहरके पहले ही दाराको शुजाकी दुरभिसन्धिका समाचार मिल गया था, इसलिये उन्होंने अपने पुत्र सुलेमान और राजा जयसिंहको प्रयागकी ओर भेज दिया। परन्तु सम्राट्की इच्छा न थी, कि घरमें फूट फैलती। इसलिये शाहजहांने चुपचाप जयसिंहको कहला भेजा,—शुजाको समझा बुझाकर फिर बंगाल भेज दें, विरोधका कोई प्रयोजन नहीं। सुलेमान और जयसिंह काशी पहुंचे। उस पार शाहशुजा थे। सम्राट्की आज्ञानुसार उन्होंने शुजाको बहुत समझाया बुझाया—भाई भाईमें विरोध होनेसे राज्यका अनिष्ट होगा। शुजाने भी इस बातको समझा। वे निर्विवाद बंगाल लौट जाते, परन्तु सुलेमान सहज ही छोड़नेवाले आदमी न थे। बड़े सवेरे ही सेना लेकर वे गङ्गापार गये। शुजा उस समय सो रहे थे। उसी निद्रितावस्थामें सुलेमानने उनकी सेनापर आक्रमण किया। जागकर शाहशुजाने बड़ी देर तक युद्ध किया, परन्तु अन्तमें परास्त होकर मुङ्गेर भाग गये।

उधर उज्जैनमें महाराज यशवन्तसिंह छावनी डाले पड़े थे। वे सम्राट्के पक्षके सेनानायक थे, औरङ्गजेब और मुरादकी गति रोकनेके लिये भेजे गये थे। नर्मदाके उस पार युवराज औरङ्गजेब बैठे हुए मुरादके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनों सेना मिल गईं, घोर युद्ध होने लगा। यशवन्त परास्त हुए। उसके बाद स्वयं दारा छोटे भाइयोंको दण्ड देनेके लिये आये, परन्तु हार मानकर वे भी भाग गये।

ग्लानिसे यशवन्त अपनी राजधानीको चले गये, लौटकर बादशाहके पास जानेका साहस न हुआ। परन्तु इधर घरमें स्त्रियोंका तिरस्कार सहनेसे तो मृत्यु हजार गुना श्रेय था। निकट पहुंचते ही महारानी दरवाजा रोककर धमकीके साथ कहने लगीं,—"हमलोग वीरकन्या हैं, वीरपुरुषको वरण करती हैं; वीरपुरुषको जयमाल पहनाती हैं। कापुरुषके साथ विवाह करना राणाकुल-कन्याओंको अभ्यास नहीं है। राजपूत प्राणकी अपेक्षा मानको गौरव अधिक करते हैं। युद्धमें परास्त होना नई बात नहीं है, परन्तु रणक्षेत्रसे भाग आना राजपूत-वंशमें आज नया देख पड़ता है। मालूम होता है—तुम मेरे वह पति नहीं हो; कोई ठग हो, बहाना करके दरवाजेपर पुकार रहे हो। मेरे जो पति हैं, वे आज समरक्षेत्रमें वीरशय्यापर सोये हैं। दुर्मति! दरवाजा छोड़ दे। मैं चिता जलाकर पतिका अनुगमन करूं।"

राजपूत-वीरमहिलाओंकी इतनी स्पर्द्धा, वीरत्वका इतना आदर! उनकी रग रगमें गर्म्म खून दौड़ा करता था। रणोन्मत्त प्राण-पुतली युद्धका नाम सुनते ही नाच उठती थी। आज कालकी गतिसे सब निर्व्वाण हुआ जाता है।

जो हो, औरङ्गजेबके बड़े भाई एक प्रकार शान्त हुए। जयसिंह प्रभृति जो लोग महावीर दाराके प्रधान सेनापति थे, बारबार चिट्ठी और खत भेज भेज कर औरङ्गजेबने उनका भय तोड़ दिया। सेनापतियोंने भी सोचा, दाराका अब कल्याण नहीं है। शाहजहांके भी दिन पूरे आये हैं। यह विशाल साम्राज्य औरङ्गजेबके ही हाथमें जायगा, इससे सेनापति और सिपाही सब दारासे अवाध्य हो गये।

सम्प्रति सिंहासनके प्रधान कण्टक स्वयं सम्राट् ही हैं। मुराद और एक प्रतियोगी है। इन दोनोंको शान्त कर देनेसे ही मनोरथ सिद्ध हो सकता है। शठके लिये असाध्य कुछ भी नहीं है। औरङ्गजेबने विचार कर देखा, अभी बलप्रयोग करनेका समय नहीं आया। अभीष्ट सिद्ध करनेके लिये कौशल ही एकमात्र उपाय है। इसलिये मुरादको साथ लाकर उन्होंने आगरेके पास छावनी डाल दी। किलेमें सम्राट् थे। औरङ्गजेबने एक विश्वासी दूत द्वारा सम्राट्को यह कहला भेजा,—मैं जमीन छूकर कहता हूं, मैंने जो काम किया है, वह सन्तानके अयोग्य है, किन्तु उसमें मेरा दोष नहीं है, दोष दाराका है। जो हो, आपने कठिन रोगसे छुटकारा पाया है, यही मङ्गल है। अब यदि पुत्र जानकर इस दासको चमा करते, तो हृदय शीतल होता।

चरने जाकर सम्राट्से औरङ्गजेबका संदेशा कहा। वृद्धावस्थामें बुद्धि मारी जाती है, जो हो तो भी पिता रहे। शाहजहां अपने लड़केको अच्छी तरह पहचानते थे। औरङ्गजेबके मनमें यह लालसा लड़कपनसे लगी थी, अवसर पाकर मोगलराज्यका सम्राट् होना होगा। दूसरे लोग चाहे न समझते, परन्तु शाहजहां इस दुरभिसन्धिको बहुत दिनोंसे समझ गये थे। भीतरी बात क्या है, यह खबर लेनेके लिये उन्होंने अपनी कन्या जहांनाराको लड़कोंके खेमेमें भेज दिया।

जहांनारा पहले मुरादके खेमेमें गईं। गत युद्धमें उनका शरीर घावोंसे भर गया था। वे कातर होकर सो रहे थे। उसी समय जहांनारा वहां पहुंचीं। मुराद जानते थे, कि वह मनसे दाराकी ओर रहीं। इसलिये उन्होंने उनका कुछ भी समादर न किया, वरं अनेक कड़ी कड़ी बातें कहकर अपमान किया। इतने जाकर औरङ्गजेबसे इन बातोंको चुपचाप कह दिया।

औरङ्गजेबके सब कामोंका बीजमन्त्र कुचक्र था। क्रोध करके जब जहांनारा चल खड़ी हुईं, तो दौड़कर औरङ्गजेब उनके पास गये। खलके हृदयमें विष और मुंहमें मधुरता भरी रहती है। इन्होंने जहांनाराका हाथ पकड़कर कहा,—"बहिन! यह क्या! मैं क्या तुम्हारा कोई नहीं हूं? जब आ गई हो, तो भाई समझकर एकबार समाचार तो लेना चाहिये। क्या इतने दिन विदेशमें रहनेसे भूल गई हो? पिता इतने बीमार हो गये थे, आदमी भेजकर खबर तो दे देना था।" इस तरह खुशामद करके औरङ्गजेबने जहांनाराको अपने तम्बूमें ले जाकर कहा,—"बहिन! क्या कहूं, लोगोंका रङ्ग ढङ्ग देखकर मेरे मनमें उदासीनता छा गई है, तुम पितासे मेरा यह सानुनय निवेदन करना—मैं एकबार उनके पदसरोजका दर्शन कर इस संसारसे सम्बन्ध तोड़ देना चाहता हूं। अतएव और विलम्बका काम नहीं, परसों उनके दर्शन करनेकी इच्छा है।"

जहांनाराके जाने बाद औरङ्गजेब पिताको कारारुद्ध करनेकी चेष्टा करने लगे। शाहजहां भी समझ गये, कि शठकी इतनी भक्तिमें सुलचण नहीं है। उन्होंने दाराके पास लिख भेजा,—"दो दिनके बाद औरङ्गजेब आकर मेरी शरण लेगा। मुरादसे वह विरक्त हो गया है। जो हो, खलका विश्वास नहीं। तुम सैन्यसामन्त लेकर शीघ्र आगरे आओ। औरङ्गजेबको गिरफ़ार करना होगा।"

दारा उस समय दिल्लीमें थे। आधीरातके समय

सम्राट्ने नसीरुद्दीन नामक किसी विश्वासी नौकरको पत्र सौंप विदा किया। किन्तु उस जगह शायस्ता खांका गुप्तचर उपस्थित था। उसने शायस्ताखांसे जाकर पत्रकी बात कह दी, परन्तु उसमें जो लिखा था, सो बता न सका। इसके पहले बादशाहने शायस्ताखांके प्राणदण्डकी आज्ञा दी थी। उसी क्रोधमें उन्होंने कई घुड़सवार भेज चुपचाप नसीरुद्दीनको पकड़ मंगाया। पत्र पढ़कर देखा गया, तो उसमें औरङ्गजे़बकी बात निकली। शीघ्रही इनके डेरेमें आकर उन्होंने इन्हें खत दे दिया। औरङ्गजे़ब स्थिर चित्तके साथ उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढ़ गये, परन्तु बोले कुछ भी नहीं; केवल नसीरुद्दीनको एक गुप्त स्थानमें छिपा रखा।

भेंट करनेका दिन आया। ससैन्य दारा आ पहुंचते—क्यों वे नहीं आये! औरङ्गजे़ब भी मुलाक़ात करने न गये। इन्होंने सम्राट्को यह पत्र लिखा,—"आप जानते हैं, कि मैं अपराधी हूं। अपराधीके मनमें सदा भय और सन्देह रहता है। इसीसे सहसा आपसे मिलनेमें आशङ्का होती है। अतएव पहले कुछ शरीररक्षकोंके साथ अपने लड़के मुहम्मदको आपके पास भेजूंगा। वहां जाकर जब मुहम्मद मेरे पास यह समाचार भेजेगा, कि किलेमें एक भी हथियारबन्द सिपाही नहीं है, तब मैं आपके पास आनेका साहस कर सकूंगा।"

पत्र पाकर शाहजहां बड़ी देरतक सोचते रहे। सोच विचारकर अन्तमें औरङ्गजे़बके प्रस्तावपर ही सम्मत हुए। परन्तु दुष्ट सन्तानको गिरफ़ार करना उचित था। इसलिये क़िलेमें स्थान स्थानपर कुछ अस्त्रधारी सिपाहियोंको बादशाहने छिपा रखा। इसके सिवा उनके अन्तःपुरमें कई तातारी बांदियां थीं। वे सब वीरमहिला थीं। सम्राट्ने उन्हें भी अस्त्र-शस्त्र दे तय्यार कर रखा।

इधर औरङ्गजे़बने लड़केको सब बात सिखा पढ़ाकर शाहजहांके पास भेज दिया। क़िलेमें जाकर मुहम्मद एकबार चारो ओर देख आये, परन्तु कहीं कोई न देख पड़ा। हरमके पास जाकर देखा, तो वहां बहुतसे अस्त्रधारी सिपाहियोंको छिपा पाया। उन्होंने बादशाहसे साफ़ ही कह दिया,—"इन आदमियोंको देखकर मुझे सन्देह होता है। ये लोग क़िलेमें रहेंगे, तो बाबा न आ सकेंगे।" शाहजहांके शिरपर दुर्मति सवार हुई। उन्होंने उन लोगोंको भी क़िलेसे बाहर कर दिया। मुहम्मदने देखा—चारो ओर साफ़ हो गया है, अब क़िलेमें बादशाहसे हमारे ही आदमी अधिक हैं।

औरङ्गजे़बके पास समाचार गया। शीघ्र ही आदमीने वापस आकर कहा—शाहज़ादा तय्यार हैं, अभी आकर मुलाक़ात करेंगे। सम्राट् उनकी प्रतीक्षामें बैठे रहे। घोड़ेपर सवार होकर औरङ्गजे़ब अपने शरीररक्षकों और पारिषदोंको साथ लिये एकबार क़िलेकी तरफ़ आये; कुछ दूर अकबरकी कब्रकी ओर चले गये। यह सुन शाहजहांने क्रोधके साथ मुहम्मदसे कहा,—"जब तुम्हारे पिता ही यहां न आवेंगे, तो तुम यहां क्या करने आये हो?" इसपर मुहम्मदने विनीतभावसे उत्तर दिया,—"महाशय! मैं क़िलेका भार आपसे लेने आया हूं। मुझे भाण्डारकी चाबी दीजिये।" सम्राट्ने देखा—अपने फन्देमें मैं आप ही फंस गया हूं, अब और कोई उपाय नहीं। लाचार मुहम्मदके हाथमें चाबियोंका गुच्छा फेंक दिया।

पिताको क़ैदकर औरङ्गजे़बने मुरादसे कहा,—"भाई! इतने दिनोंमें मेरा अभिलाष पूर्ण हुआ। आजसे तुम दिल्लीके सम्राट् हुए। अब मेरी यही भिक्षा है, तुम मुझे कुछ धन दो। मक्के जाकर मैं सुखचैनसे दिन बिताऊं।" मुराद इस बातपर राज़ी हो गये।

औरङ्गजे़बके बाहरमें तो ऐसी धर्मनिष्ठा, परन्तु अन्तःकरणमें हलाहल भरा था। यह मन ही मन मुरादके विनाश करनेकी चेष्टा करने लगे। इसी बीचमें समाचार आया—दाराने दिल्लीमें बहुत सी सेना इकट्ठी की है, शीघ्र ही आगरे आकर शाहजहांको मुक्त करेंगे। मुरादको साथ ले औरङ्गजे़ब उसी वक्त दिल्लीकी ओर चले। दोनों आदमी

मथुरा पहुंचे। वहां मुरादके पारिषदोंने कहा,—"आप अब औरङ्गजेबके साथ न रहिये। शठ बड़े कठिन होते हैं। वह आपके प्राणनाश करनेकी चेष्टामें है। हम लोगोंका परामर्श यही है, कि आप पहले ही उसे विनष्ट कर डालिये, नहीं तो और निष्कृति नहीं।"

आखिर यही ठहरा, औरङ्गजे़बको मार डालना चाहिये। मुरादने अपने बड़े भाईको निमन्त्रण किया। पासके तम्बूमें कुछ आदमी छिपा रखे गये, इशारा पाते ही वे औरङ्गजेबका शिर उतार लेते। स्वभावतः, मुराद अकपट उदार पुरुष रहे। शत्रु मित्र सबके साथ वह समान व्यवहार करते थे। इसीसे औरङ्गजे़ब निःशङ्क निमन्त्रण पूर्ण करने गये। दोनों भाई भोजन करने बैठे थे। उसी समय नाज़िरने आकर मुरादके कानमें कुछ कहा। खल-विद्यामें औरङ्गजे़ब इष्टगुरु थे। दोनोंका रङ्गढङ्ग देखकर इनके मनमें सन्देह उठ खड़ा हुआ। इन्होंने कातरताके साथ मुरादसे कहा,—"भाई! आज आमोद न होगा। मेरे पेटमें बहुत दर्द हो रहा है। तुम सब तय्यारी कर रखना, मैं कल फिर आऊंगा।" इतना कह ये झटपट तम्बूसे बाहर निकल अपने शरीर रक्षकोंके पास चले आये।

बहाना करके औरङ्गजे़ब तीन चार दिनतक चारपाईपर पड़े रहे। पेटपीड़ाकी चिकित्सा होने लगी। मुरादका मन सरल था; उन्होंने समझा—सचमुच ही दर्द हुआ है, इसमें कोई चातुरी नहीं है। तीन चार दिनमें दर्द दूर हो गया। औरङ्गजे़बने मुरादको कहला भेजा,—"भाई! उस दिन वैसे उद्योगमें मैंने व्याघात लगा दिया था। इसलिये मेरे मनमें अत्यन्त कष्ट हुआ है। जो हो, आज मेरे यहां तुम्हारा निमन्त्रण है। कई सुन्दर सुन्दर नाचने और गानेवाली आई हैं। उनका रूपयौवन स्वर्गकी विद्याधरीसे भी अधिक है।"

मुरादके पारिषदोंने बहुत समझाया—निमन्त्रणमें जानेसे विपद हाथोंहाथ है। परन्तु मुरादने किसीकी भी न सुनी। शरीररक्षक बाहर रहे, मुराद चार प्रधान प्रधान सरदारोंको साथ ले औरङ्गजे़बके खेमेमें गये। नाच गान होने लगा। परन्तु इन सब आमोदोंका एक प्रधान अङ्ग सुरा है। औरङ्गजे़बने इस आयोजनमें त्रुटि न की थी। तम्बूमें आनन्दकी घटा उमड़ उठी। मुराद हतचैतन्य, उनके पारिषद हतचैतन्य और शरीररक्षक नशेमें मतवाले हो गये। यह सुयोग पा औरङ्गजे़बने अपने भाईको बांधकर आगरे भेज दिया। कहते हैं, आगरा पहुंचनेपर मुरादका शिर काट लिया गया था।

औरङ्गजे़बने देखा—यदि अभी सिंहासन अधिकार नहीं करता, तो फिर लोग पूरे तौरसे मुझे न मानेंगे, अनेक आदमी अनेक प्रकारकी बात कहेंगे। पारिषद भी समझ गये—औरङ्गजेब जो रात दिन धर्मकी दुहाई दिया करते हैं, यह केवल पाखण्ड है; पिता और भ्राताओंको राज्यसे वञ्चित करना ही उनका अभिप्राय है, अतएव मनमानी करनेसे ही वे सन्तुष्ट होंगे। यह सोच सब कोई इनसे यथाविधान राज्यमें अभिषिक्त होनेको अनुरोध करने लगे। पहले

औरङ्गजे़ब बादशाह।

उदासीन भातिकी बहुत कुछ आपत्ति करके पीछे इन्होंने कहा—"देखता हूं, तुम लोग अपने सुख-चैनके लिये मुझे संसार त्याग करने न दोगे। अच्छा, न दो; संन्यासी लोग निर्जन गिरिगुहामें बैठकर जो शान्ति-सुख लाभ करते हैं, ईश्वर करे, इस राजसिंहासन पर बैठ मैं भी वही सुखभोग करूं। यह बात सच है, कि राजकाज देखनेमें ईश्वरकी चिन्ता करनेका अवसर न मिलेगा, परन्तु कामसे काम है।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, कि दिल्लीका अधीश्वर हो मैं बहुत सत्कर्म्म कर सकूंगा। लोगोंको इस तरह समझा बुझा १६५८ ई०को दूसरी अगस्तको दिल्लीके निकटवर्त्ती एक सुन्दर उद्यानमें औरङ्गजेब यथाविधान राजसिंहासनपर अभिषिक्त हुये।

औरङ्गजेब के बादशाह होनेकी खबर बङ्गदेशमें पहुंची। शाहशुजा पुनर्वार समरसज्जाकर प्रयागके पास पहुंच गये। औरङ्गजेब ससैन्य उनकी गति रोकने आये। एक ग्राममें घोर युद्ध हुआ। उस दिनके युद्धमें यदि शाहशुजा थोड़ा और सुस्थिर रह जाते, तो सौभाग्यलक्ष्मी उन्हींपर प्रसन्न होतीं। औरङ्गजेब जिस हाथीपर चढ़कर युद्ध कर रहे थे, अस्त्राघातसे उसका पैर टूट गया। शुजाका हाथी भी घायल हुआ। दोनों आदमी अपने अपने हाथीसे उतरकर दूसरेपर चढ़नेका उपक्रम करने लगे। उसी वक्त मीरजुमलाने औरङ्गजेबसे कहा,—"प्रभो! इस समय हाथीसे उतरनेमें राज्य गया हो समझिये।" औरङ्गजेब न उतरे; परन्तु शुजा हाथीसे उतर घोड़ेपर सवार हुए। सिपाही लोग मालिकको न देख इधर उधर भाग गये।

शुजा बङ्गदेश लौट आये। किन्तु औरङ्गजेबके बड़े लड़के मुहम्मद और वजीर मीरजुमलाने उनके पीछे पड़ बङ्गदेशसे भी उन्हें खदेड़ दिया। भारतमें भागनेका दूसरा कोई स्थान नहीं था। जहां जाते, वहीं औरङ्गजेबकी पताका फहराती हुई पाते। अन्तमें बहुत कुछ सोच विचार कर शुजा अराकान गये। उनके साथ बहुमूल्य रत्न और प्रायः डेढ़ हजार आदमी थे। किन्तु अराकानकी आबहवा बहुत ही खराब होनेसे डेढ़ हजार आदमियोंमें धीरे धीरे प्रायः सभी मर गये। केवल शाहशुजा, उनकी दूसरी स्त्री, दो लड़के, तीन लड़कियां और चालीस नौकर जीते बचे। विधाताके विमुख होनेपर चारो ओरसे विपद् उमड़ आती है। अराकानके राजा एक तो औरङ्गजेबके डरसे सदा शङ्कित रहते थे, दूसरे शुजाकी रूपवती कन्यापर उनकी दृष्टि पड़ी; तीसरे साथमें बहुमूल्य जो हीरा मोती थे, उन्हें भी छीन लेनेका लोभ पैदा हुआ। इसीसे अनेक प्रकारका बहाना बता आश्रित राजकुमारको उन्होंने अपने राज्यसे निकाल दिया। शुजाने अपने परिवार और अनुचरवर्गके साथ पर्वतके एक खड्डमें जाकर आश्रय लिया। वह स्थान अत्यन्त दुर्गम था। दोनों ओर पहाड़ और बगलमें खड्ड था। नीचे वेगवती नदी कल कल करती हुई बह रही थी। उसी दुर्गम स्थानमें अराकानके राजाकी सेना आकर शुजा और उनके साथियोंपर बाणवृष्टि करने लगी। किसी किसीने पहाड़परसे बड़े बड़े पत्थर लुढ़का दिये। शाहशुजाने बहुत देरतक प्राणपणसे युद्ध किया, अन्तमें एक बड़े भारी पत्थरके टुकड़ेकी चोटसे अभिभूत हो गये। राजाके सिपाहियोंने उन्हें और उनके दो अनुचरोंको एक डोंगीपर चढ़ाकर बीच नदीमें छोड़ दिया। प्रबल स्रोतमें वे लोग तैर कर बाहर न जा सके, दो एक बार अङ्ग आस्फालन कर अन्तमें डूब गये।

उसके बाद सिपाही लोग शुजाके अन्यान्य अनुचरोंको विनष्ट कर उनकी स्त्री, तीनों कन्याओं और दोनों पुत्रोंको पकड़ राजाके पास पहुंचाया। राजाने स्त्रियोंको अन्तःपुरमें रखा था। किन्तु हतभाग्य दोनों बालक मारे गये। शुजाकी पत्नी सुलताना प्यारी-बानो परम सुन्दर थीं। वे उस समयके रमणीकुलकी अलङ्कार-स्वरूप थीं। तैमूर-कुलवधू और तैमूर-कुलकन्याके चरित्रमें कलङ्क लगनेसे मृत्यु ही अच्छा था। किन्तु शत्रुको बिना मारे मर जानेमें मरनेकी मर्य्यादा ही क्या! इसलिये प्यारी बानोने अपने कपड़ेमें एक छुरी छिपा रखी। पिशाचवृत्ति राजाके आनेपर उसीसे वह उनका प्राण विनष्ट करना चाहती थीं। परन्तु दासियोंको किसी तरह यह भेद मालूम हो गया। उन्होंने छुरी छीन ली। फिर और कोई उपाय न रहा। इसलिये उन्होंने अपना मुंह नोच डाला। सुखचन्द्रका सौन्दर्य्य कम पड़ गया। उसके बाद एक पत्थरपर शिर पटक पटक कर प्यारी बानोने प्राणत्याग कर दिया। शुजाकी दो लड़कियां विष खाकर मर गईं। बाकी एक लड़की भी अधिक दिन जी न सकी।

शुजाकी दुर्दशाका समाचार पा औरङ्गज़ेब पुलकित हो गये। परन्तु इनके मनमें एक दिनके लिये भी सुख उत्पन्न न हुआ। शाहजहां वृद्धावस्थामें आठ वर्ष क़ैद रहे। इस शङ्कासे यह सर्वदा उद्विग्न रहते थे—पीछे कहीं उनके अनुगत सिपाही उपद्रव न मचावें। फिर दारा भी जीते थे। उनके पुत्र सुलेमानने श्रीनगरमें जाकर आश्रय लिया। अवसर पानेपर वे लोग भी उपद्रव मचा सकते थे। सिवा इसके पिताको काराबद्ध कर राज्यलाभका जो सहज कौशल इन्होंने दिखाया, इनके पुत्रोंके भी वही कौशल सीख लेनेमें विचित्र ही क्या था! राजाओंका मन सर्वदा सन्दिग्ध रहता है। शक्तिमान् मनुष्य उनके चक्षुशूल होते हैं। अपनी ही छाया देखकर राजाओंका मन ईर्षासे जल उठता है। इसलिये सब आशङ्काओंसे निरुद्वेग होनेके लिये इन्होंने अपने बड़े लड़के मुहम्मदको ग्वालियरके क़िलेमें यावज्जीवन आवद्ध कर दिया। मुहम्मदसे एक अपराध भी हो गया था। बङ्ग-युद्धके समय शाहशुजाकी कन्याके रूपलावण्यपर मुग्ध हो उन्होंने उसके साथ विवाह कर लिया। इसलिये पिताका पक्ष छोड़ उन्होंने कुछ श्वशुरका पक्ष पकड़ा था। औरङ्गज़ेबने विशेष कौशल कर उन लोगोंमें विच्छेद डाल दिया।

दाराने लाहोर और अजमेरमें कई वार युद्धका आयोजन किया था, परन्तु औरङ्गज़ेबसे परास्त हो गये। अन्तमें और कोई उपाय न देख उन्होंने सोचा, कि वसे दुःसमयमें ईरान जाकर आश्रय लेना ही अच्छा था। इसीसे अनुचरोंको साथ ले उन्होंने ईरानकी राह पकड़ी। सिन्धुपार तातारके निकट पहुंचने पर उनकी स्त्री नादिरा बानो बहुत बीमार हो गईं। तातारके सरदारका नाम जहान-खां था। पहले दो वार वे ख़ूनी मुक़द्दमेमें फंसे थे। प्रधान विचारपतिके यहां उनका अपराध प्रमाणित हुआ। सम्राट् शाहजहांने उनकी सारी सम्पत्ति कुर्क करके प्राणदण्डकी आज्ञा दी। किन्तु केवल दाराके अनुरोधसे जहान खां दोनों वार छुटकारा पा गये थे। इसीसे दाराने सोचा—ऐसी विपद्के समयमें मेरे उपकृत सुहृद् अवश्य ही दोचार दिनके लिये मुझे आश्रय देंगे। जहानने आश्रय दिया। यहीं सुलताना नादिरा बानोका मृत्यु हुआ।

दारा स्त्रीवियोगसे कातर हो रहे थे। उसी समय उन्होंने सुना, कि औरङ्गज़ेबके सेनानायक खांजहां मुलतानसे उन्हें पकड़ने आ रहे थे। घबराकर दारा जहानसे विदा हुए। वे तातार नगरसे आध ही कोस दूर गये थे, कि देखा—पीछेसे जहान प्रायः एक हज़ार घुड़सवार सेना लिये चले आते हैं। दाराने स्थिर किया—मेरे साथ अधिक आदमी नहीं; जो हैं वे भी रोग और पथश्रमसे कातर हो रहे हैं, इसलिये मुझे ईरानतक पहुंचा देनेके लिये जहान साथ आते हैं।

किन्तु जहानको वैसा अभ्यास न था। गुरुसे यह पाठ लेना जहान भूल गये—उपकार करनेसे कृतज्ञ होना चाहिये। वे अर्थका ही माहात्म्य अधिक समझते थे। लोभमें पड़कर उन्होंने दारा और उनके मंझले लड़केको पकड़कर खांजहांके हवाले किया—इनको गिरफ़तार कर लेनेपर औरङ्गज़ेबसे पुरस्कार मिलेगा।

दाराकी उस समय बड़ी दुर्दशा थी। शरीर पर फटे हुए कपड़े और शिरपर मैली पगड़ी! उनके पुत्रकी भी अवस्था वैसी ही रही। खांजहां उन लोगोंको हाथीपर चढ़ाकर दिल्ली ले गये। दाराकी दुरवस्था देखकर नगरके पशु पक्षी भी रोने लगे। परन्तु औरङ्गज़ेबका मन न पसीजा। बड़े भाई और भतीजेको दुर्दशा प्रजावर्गको दिखलानेके लिये इन्होंने एकबार उन लोगोंको नगरका प्रदक्षिण करा एक निर्जन स्थानमें क़ैद कर दिया। दारा जानते थे—मृत्यु निश्चित है। उन्होंने पहले ही से एक छुरी, एक क़लम, एक दावात और कुछ काग़ज़ अपने कपड़ेमें छिपा रखा। कारागारमें बैठकर क़लम बनाते और दुःखकी कविता लिखते थे। जब शोकका वेग उमड़ उठता, तो लड़केका गला पकड़ कर रोने लगते।

औरङ्गज़ेबका दरबार लगा। दारा बड़े थे. वे चटपट राजा होने चले थे, उन्हें क्या दण्ड देना उचित था? अनेक आदमियोंने कहा—इन्हें यावज्जीवन ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद रखना मुनासिब है। परन्तु औरङ्गज़ेबकी वैसी इच्छा न थी। यही समझकर दो एक सभासद बोले,—"दारा नास्तिक हैं। नास्तिकका प्राणवध न करना मुहम्मदके प्रतिष्ठित धर्मका विरुद्धाचरण है।" अब बात मनके लायक़ हुई। औरङ्गज़ेबने कहा,—"यह बात ठीक है। दाराको जो मेरी हानि करनी हो करें। मैं उसे सह सकता हूं, परन्तु नास्तिकता असह्य है।" अतएव उसी रातको दाराके प्राणविनष्ट करनेका भार नाज़िर और सफ़ी नामक दो अफ़ग़ान सरदारोंको सौंपा गया।

आधीरातका समय था। दाराके कमरेके पास हठात् अस्त्रोंकी झनझनाहट सुनाई दी। बदनसीब शाहज़ादेके दुःखकी कुछ रात जागनेमें बीत गई, कुछ काकनिद्रामें बीतनेवाली रही। आंख लगती जाती थी। उसी समय कानमें अस्त्रोंकी झनझनाहट पड़ी। वे चौंक उठे और समझ गये—आज अन्तिम काल उपस्थित है। लड़का सो रहा था, उसे उन्होंने जगाया। घातकोंने दरवाज़ा खोला। दारा क़लमतराश छुरीको ले एक कोनेमें जा खड़े हुए। दुष्टोंने दाराके लड़केको बग़लवाले एक कमरेमें बांध दिया। पहले उन लोगोंने ख़याल किया—गला घोटकर दाराको मार डालेंगे। किन्तु इसप्रकार प्राणदण्ड पाना राजपुत्रके लिये घृणाकर था। इसलिये असीम विक्रमके साथ दाराने एक घातकके कलेजेमें अपनी छुरी घुसेड़ दी। लाचार अन्तमें उन लोगोंने तलवारसे दाराका शिर काटा। दाराका पुत्र अपने पिताकी लहूसे लथपथ लाशको गोदमें लिये रातभर रोता रहा। नाज़िर कटे हुए शिरको लेकर चले गये।

उस दिन सारी रात औरङ्गज़ेबको नींद न आई। बड़े भाईका मृतमुख देखनेसे उन्हें शान्ति होती। प्रातःकाल होनेके पहले ही नाज़िर दाराका लहूसे भरा, विश्री और विवर्ण शिर लेकर आ पहुंचे। सम्राट् देखकर उसे पहचान न सके। कुछ देरतक जल में भिगाकर अपने हाथके रूमालसे ख़ून पोछ डाला, फिर अच्छी तरह उसे पहचाना। औरङ्गज़ेबने कहा,—"हां, यही मेरा दुरदृष्ट भाई दारा है।" इस तरह कहते कहते पत्थर फटकर दो बूंद आंसू निकल गये। इसके बाद सुलेमान और दाराका मंझला लड़का ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद किया गया। औरङ्गज़ेबके मंझले लड़के मुहम्मद मुअज़्ज़म दक्षिणाञ्चलमें थे। औरङ्गज़ेबने इसलिये उन्हें अपने पास बुला लिया—क्या मालूम पीछे कहीं वह कोई उपद्रव न मचावें।

औरङ्गज़ेबके राज्यलाभका कौशल यही था। किन्तु इसमें निष्ठुरता भिन्न बुद्धिमत्ताका परिचय कुछ भी नहीं है। पितासे पुत्र, भाईसे भाई और प्रभुसे भृत्यको काम पड़ता है। अभी अविश्वास रहता, फिर कुछ रोनेपर तुरत ही स्नेह, ममता और विश्वास आ जाता है। ऐसे स्थलमें जो अधिक पाषण्ड होता, उसीकी जय मिलती है।

कुकर्मी लोग अपना अपना कलङ्क छिपानेके लिये एक एक सत्कर्म करते हैं। औरङ्गज़ेब भी इस कौशलको अच्छी तरह समझते थे। एकबार सारे भारतवर्षमें अकाल पड़ गया। राजकोषसे धन देकर इन्होंने प्रजाकी भलाई की। यत्नपूर्वक विद्या सीखना हमारे देशके राजपुत्रोंके भाग्यमें प्रायः नहीं रहता। उन लोगोंका लड़कपन प्रायः आनन्द सुखमें ही कट जाता है। परन्तु औरङ्गज़ेबने विद्याभ्यासमें कभी आलस न किया था। अरबी और फ़ारसी भाषाके यह अच्छे पण्डित रहे। इसके अतिरिक्त भारतवर्षके अनेक स्थानोंकी भाषाओंमें यह चिट्ठी लिख सकते और उन्हें बोल भी सकते थे। सर्वत्र विद्यालोचनाका उत्कर्ष साधन करनेके निमित्त इन्होंने अनेक पाठशालायें स्थापन कीं। किन्तु केवल विद्यालय रहनेसे ही काम नहीं बनता। तत्त्वावधान न होनेसे विद्यालय स्थापन करना निष्फल है। इसलिये इन्होंने कई चतुर और कृतविद्य तत्वावधायक नियुक्त कर दिये।

मुसलमान सम्राटोंमें प्रायः सभी विलासी और

अपव्ययी रहे। परन्तु औरङ्गजेबमें ऐसे दोष न थे। सचराचर यह सामान्य वस्त्र पहनकर रहते। विवाह आदि उत्सवोंके सिवा अनर्थक नाच तमाशेमें इनका अर्थ नष्ट न होता था। इन्होंने भारतवर्षके नाना स्थानों में पथिकोंके लिये आश्रम बनवा दिये। उन आश्रमोंमें भोजनकी सामग्री भी सञ्चित रहती थी। प्रजामात्र सम्राट्के पास जा सकती थी। विचारालयमें यदि किसीपर अन्याय होता, तो वह स्वयं सम्राट्से जाकर कह देता। इसलिये विचारपति घूस न ले सकते थे।

देखनेमें सम्राट् सुपुरुष न थे, परन्तु अतिशय मिष्टभाषी रहे। नित्य प्रातःकाल उठ यह स्नान आह्निक करते थे। उसके बाद एक प्रहरतक राजकाज संभालते। एक प्रहरके बाद भोजनका समय निर्दिष्ट था। भोजनके बाद औरङ्गजेब हाथी, घोड़ा और बाघ आदिकी लड़ाई देखते। यही इनका आह्लाद-प्रमोद था।

आह्लाद-प्रमोदके बाद दीवान-आममें बैठ यह सभा करते थे। इसी समय अमीर उमरा और विदेशके राजदूत आदि आकर इनसे मिल जाते। शुक्रवारको दरबार बन्द रहता था। ईसाइयोंके लिये जैसे रविवार, मुसलमानोंके लिये वैसे ही शुक्रवार है। इसीसे सम्राट् शुक्रवारके दिन कामकाज न देखते थे। प्रायः सम्राटोंका अन्तःपुर असंख्य रूपवती रमणियोंसे परिपूर्ण रहता है। औरङ्गजेबके अन्तःपुरमें भी अनेक दासियां थीं। परन्तु वे सब केवल राजप्रासादकी शोभाके लिये ही रहीं। फलतः विवाहिता स्त्री भिन्न यह कभी दूसरी स्त्रीका मुंह न देखते थे।

अतएव औरङ्गजेबका गुणराशि दोषके ठीक विपरीत था। एक ओर पूर्णचन्द्रकी हिमधारासनी ज्योत्स्नाके सौन्दर्य्यसे हृदय शीतल रहता, दूसरी ओर अमावस्याका निविड़ अन्धकार—निष्ठुरताका कठिन हस्त देखनेसे प्राण कांप उठता था। जो हो, इनका दुश्चरित्र ही मोगल साम्राज्यके पतनका प्रधान कारण है। प्रजा असन्तुष्ट होनेसे राजा नहीं रहता, इन्द्रका इन्द्रत्व भी डोल उठता—कुटिल राजनीति एवं अस्त्रबल मिथ्या है। औरङ्गजेब अपनी शठता छिपानेके लिये सबको प्यार करते थे। पहले जो लोग इनके विरोधी रहे, उनके साथ भी यह स्नेह रखते थे। परन्तु लोग समझ गये—यह कौशल भिन्न और कुछ नहीं है। इसलिये हिन्दुओंकी कौन कहे, मुसलमान भी मन ही मन इनके शत्रु थे। खलके प्रेममें पड़ना काले सांपके साथ रहनेके समान है, विपद् आ जानेमें देर नहीं लगती।

यह तो हुई साधारण लोगोंकी बात! हिन्दू इनके अत्यन्त विरक्त हो गये थे। यह हिन्दुओंको मुसलमान बनानेके लिये उत्पीड़न करते थे। इसीसे जिन राजपूत वीरोंके बाहुबलसे तैमूरवंशकी इतनी प्रतिपत्ति हुई थी, अन्तमें उन लोगोंने भी सम्राट्को छोड़ दिया। औरङ्गजेबकी वृद्धावस्थामें जब चारो ओर विप्लव उपस्थित हुआ, तो उस दुःसमयमें किसीने इनकी ओर न देखा। उधर महाराष्ट्र देशमें शिवाजी भस्मके भीतर अग्निस्फुलिङ्गकी भांति छिपे थे। क्रमसे प्रधूमित होकर उन्होंने अकाण्डका काण्ड जला दिया, मोगल साम्राज्यका मर्मस्थल कांप उठा। औरङ्गजेबका उतना तेज, उतना उद्यम,—फिर कुछ भी न रहा। वह ज्वलन्त दीपशिखा बुझने लगी। इन्होंने पहले जो दुष्कर्म किये थे, उन्हीं पापोंके कारण हृदयमें सहस्रों विच्छुओंके काटनेकी ज्वाला उठ खड़ी हुई। यह लोगोंके सामने अपना मुंहतक दिखा न सके। क्रमसे अनुतापमें जीर्ण, क्लिष्ट और जरजर हो पापी प्राण पञ्चभूत शरीरसे निकल गये।

अन्तिम अवस्थामें औरङ्गजेब प्रायः दाक्षिणात्य प्रदेशमें ही रहते थे। अहमदनगरमें इनका मृत्यु हुआ। वहां अनेक प्रकारके मसालोंमें इनका मृतदेह रक्षित किया गया। पीछे इलोरा और गोदावरीके सन्निकट रोज़ा नामक स्थानमें यह समाहित हुये। कहते हैं, इन्होंने एक प्रकारकी टोपी बनाई थी। उसीकी बिक्रीसे इनके समाधिका व्यय निर्वाह किया गया।

औरङ्गाबाद—१ दक्षिणात्यके हैदराबाद राज्यका एक नगर। यह अक्षा० १९° ५४´ उ० तथा देशा० ८५° २२´ पू० पर कौम नदी किनारे अवस्थित है। नांदगांव रेलवे ष्टेशन ५६ मील पड़ता है। १६१० ई० को अबीसीनियाके मलिक अम्बर या सीदी अम्बरने इसे बसाया था। अनेक भवनोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। औरंगजे़बका बनाया प्रासाद बिलकुल टूटफूट गया है। नगरको चारो ओर दीवार उठी है। पहले इसका नाम 'किरकी' रहा। औरंगजे़बकी प्यारी बीबीका स्मृति-मन्दिर आगरेके ताजमहलसे मिलता जुलता है। नगरसे २ मील पश्चिम 'हरसूल' ग्रामका ध्वंसावशेष है। राहमें औरंगजेब द्वारा यात्रियोंके लिये बनाया पत्थरका एक मकान् खड़ा है। औरंगाबादसे पूर्व कुछ दूर अरमेनियाके लोगों को ५० कब्रें बनी हैं। शिलालेख यहूदी भाषामें हैं। नगरसे १४ मील दूर रोज़ामें मलिक अम्बरकी कब्र और १ मील पश्चिम छावनी है। फिर २ मील उत्तर ३ गुफा हैं। उनमें दो बौद्ध गुफा समझ पड़ती हैं। पहले यह नगर व्यवसायका केन्द्र रहा, किन्तु हैदराबाद राजधानी होनेसे वह महत्व घट गया। फिर भी गेहूं, रूई, कपड़े और लोहेलंगड़का काम खूब होता है।

२ युक्तप्रदेशके खेरी ज़िलेका एक परगना। क्षेत्रफल ११६ वर्ग मील है। सीतापुरसे शाहजहांपुर जानेवाली पक्की सड़क इसी परगनेमें पड़ी है। पूर्व सीमापर कथना और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है।

३ युक्त प्रदेशके खेरी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° ४८´ उ० तथा देशा० ८३° २८´ पू० पर सीतापुरसे २८ मील दूर अवस्थित है। औरंगजे़बके ही नामपर इसका नामकरण हुआ। नवाब सैयद खु़रमने औरंगाबाद बसाया था। टूटे फूटे महलमें आज भी सैयद खु़रमके वंशज रहते हैं। किला बिलकुल बिगड़ गया है। कहीं कहीं दीवारें खड़ी हैं। पहले पिहानीसे गोगरे तक सैयद राज्य करते थे। किन्तु गौर क्षत्रियोंने उन्हें परास्त कर नीचा देखाया। मुसलमान ही यहां बड़े जमींन्दार हैं।

४ युक्तप्रदेशके सीतापुर ज़िलेका एक परगना। क्षेत्रफल ६० वर्ग मील है। दक्षिण और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है। मुसलमानों की जमींन्दारी बहुत है। औरंगजे़बसे पहले पंवार राजपूतोंका अधिकार रहते भी अब कोई बड़ा राजपूत-जमींन्दार देख नहीं पड़ता।

५ युक्तप्रदेशके सीतापुर ज़िलेका एक नगर। बहादुर बेगको औरंगज़ेबने यहां जागीर दी थी। इसीसे नगरका नाम औरंगाबाद पड़ा। उनके वंशज ताल्लुक़दार कहाते हैं। सप्ताह में दो बार बड़ा बाज़ार लगता है। रूई और नमकका काम होता है। जलवायु स्वास्थ्यकर और भूमि उर्वरा है।

६ विहार प्रान्तके गया ज़िलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २४° २९´ एवं २५° ८´ ३०´´ उ० और देशा० ८४° २´ ३०´´ तथा ८४° ४६´ ३०´´ पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल १२४६ वर्ग मील है। इसमें औरंगाबाद, दाऊदनगर और नबीनगरकी पुलिसका थाना लगता है।

७ विहार प्रान्तके गया ज़िलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २४° ४५´ ६´´ उ० और देशा० ८४° २५´ २ पू० पर अवस्थित है। यहां सरकारी मकान्, स्कूल, औषधालय और कैदखाना बना है। अनाज, तेलहन, चमड़े, शीशे, बत्ती, कपड़े, मसाले, मट्टीके तेल और नमकका काम होता है।

औरङ्गाबाद सैयद—युक्त प्रदेशके बुलन्दशहर ज़िलेका एक नगर। यह बुलन्दशहर नगरसे १० मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। डाकखाना, स्कूल और बाजार मौजूद है। औरंगजे़बकी आज्ञासे सैयद अबदुल अज़ीज़ने उदण्ड जरोलियों का दबा यह नगर बसाया था। इसीसे औरङ्गजे़बके नामपर औरङ्गाबाद कहाया। सैयद अबदुल अजी़ज़के वंशज आज भी यह नगर और १५ दूसरे ग्राम अपने अधिकारमें रखते हैं। सैयद अबदुल को क़ब्रपर हरसाल मेला लगता है। नगरको चारो ओर तालाब भरे हैं।

औरत (अ० स्त्री०) १ स्त्री, लोगाई। "औरतपर हाथ उठाना अच्छा नहीं।" (लोकोक्ति) २ पत्नी, बीबी, जोड़ू।

औरभ्र (सं॰ पु॰) उरभ्रस्य मेषस्य इदम्, उरभ्र-अण्। १ कम्बल, मोटे ऊनकी लोई। संस्कृत पर्याय ऊर्णायु, आविक और खल्लक है। २ धन्वन्तरिके अन्यतम शिष्य। ३ मेष, भेंड़। (क्ली॰) ४ मेष-मांस, भेड़का गोश्त। यह वृंहण, पित्त एवं श्लेष्म-वर्धक और गुरु होता है। ५ मेषदुग्ध, भेड़का दूध। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु, पित्त-कफवर्धक और कासके लिये हितजनक है। ६ ऊर्णावस्त्र, ऊनी कपड़ा। ७ मेषसमूह, भेड़का झुण्ड। (त्रि॰) ८ मेषसम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक।

औरभ्र—एक प्राचीन वैद्यकग्रन्थ रचयिता। सुश्रुत और चन्द्रटने इनका वचन उद्धृत किया है।

औरभ्रक, औरभ्र देखो।

औरभ्रिक (सं॰ त्रि॰) औरभ्रः पण्यमस्य, उरभ्र ठञ्। १ मेषविक्रयोपजीवी, भेड़ बेचकर अपना काम चलानेवाला। २ मेष-सम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक। (पु॰) ३ मेषपालक, गड़रिया।

औरश (सं॰ पु॰) उरशजनपदवासी, उरशका बाशिन्दा। उरश देखो।

औरस (सं॰ पु॰) उरसा उत्पादितः, उरस-अण्। १ समान जातीय विवाहित भार्याके गर्भसे उत्पादित पुत्र, असील लड़का। द्वादश प्रकार पुत्रके मध्य यही पुत्र श्रेष्ठ होता है। (मनु ९।१६६) २ असवर्ण भार्याके गर्भसे उत्पादित पुत्र।

"अजातव्रतं नयापि निहतं पुत्रमौरसम्।" (भारत, भीष्म ९१अ॰)

(त्रि॰) ३ हृदयोत्पन्न, असील।

औरसक (सं॰ त्रि॰) उत्तम, अच्छा।

औरस-चौरस (हिं॰ वि॰) १ समस्थ, हमवार, बराबर। (क्रि॰ वि॰) २ चारो ओर, चौतरफ़।

औरसना (हिं॰ क्रि॰) रस न रखना, बेमज़े पड़ना, बिगड़ना।

औरसिक (सं॰ क्ली॰) उरस स्वार्थे ठक्। वक्ष, छाती।

औरस्य (सं॰ पु॰) उरसो भवः, उरस्-यत् स्वार्थे अण्। १ औरसपुत्र, असील लड़का। (त्रि॰) २ धर्मज, असील। ३ वक्षःस्थलजात, दिली।

औरास—युक्तप्रान्तके उनाव ज़िलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २६° ३४′ उ॰ तथा देशा॰ ८०° ३३′ पू॰में उनावसे संडीला जानेवाली सड़क पर अवस्थित है। सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है। अनाज, तम्बाकू, शाक, और देशी तथा विलायती कपड़ेका काम होता है। मट्टीके बरतन और सोने-चांदीके छल्ले बनते हैं।

औरिण (सं॰ क्ली॰) १ मृत्तिकालवण, मट्टीका नमक। २ यवक्षार, जवाखार।

औरीबौरी (हिं॰ स्त्री॰) आवली-बावली, पगली, बेवक़ूफ़ औरत।

औरुक्षयस (सं॰ पु॰) उरुक्षयःके पुत्र।

औरुबुक (सं॰ क्ली॰) एरण्डतैल, रेंड़ीका तेल।

औरेब (हिं॰ पु॰) १ कुटिल गमन, टेढ़ी चाल। २ वक्र कर्तन, तिरछा तराश। ३ जटिलत्व, फंसाव। ४ जटिल विषय, पेचीदा बात।

औरैया—१ युक्तप्रान्तके इटावा ज़िलेकी एक तहसील। यह यमुना, चम्बल और क्वारी नदीके दोनों किनारे विस्तृत है। कितने ही नाले बहा करते हैं। क्षेत्रफल ३०८ वर्गमील है।

२ युक्तप्रदेशके इटावा ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° २८′ उ॰ तथा देशा॰ ७९° ३३′ १५″ पू॰में इटावे और कालपीकी सड़क पर अवस्थित है। ग्वालियर और झांसीके साथ बड़ा व्यवसाय होता है। तहसीली बहुत अच्छी बनी है। ३ सराय, २ बड़े तालाब, २ उम्दा मसजिद और कितने ही मन्दिर विद्यमान हैं। सुननेमें आया, कि सिपाही विद्रोहके समय कुछ महाजनोंने विद्रोहियोंको उत्कोच-स्वरूप कितना ही धन दे लूट जानेसे अपना प्राण बचाया था।

और्ण (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायाः विकारः, ऊर्णा-अञ्। मेषलोम-जात, ऊनी।

और्णनाभ (सं॰ त्रि॰) ऊर्णनाभस्य इदम्, ऊर्णनाभ-अण्। ऊर्णनाभ-वंशीय, ऊर्णनाभके खान्दानमें पैदा हुआ।

और्णनाभक (सं॰ त्रि॰) ऊर्णनाभोंसे बसा हुआ।

और्णवाध (सं॰ पु॰) १ ऊर्णवाधिके गोत्रापत्य। २ वैयाकरणविशेष।

और्णवाभ—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है।

और्णावत (सं० त्रि०) ऊर्णावतोऽयम्, अण्। ऊर्णावतवंशीय।

और्णिक (सं० त्रि०) ऊर्णाया निमित्तं संयोग उत्पातो वा, ऊर्णा-ठञ्। मेषलोम-जात, ऊनी।

और्ध्वकालिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्वकाले भवः, ऊर्ध्वकाल-ठञ्। १ ऊर्ध्वकालोत्पन्न, पिछले वक्त पैदा हुआ। २ ऊर्ध्वकाल-सम्बन्धीय, पिछले वक्तके मुताल्लिक।

और्ध्वदेह (सं० क्लो०) ऊर्ध्वदेहस्य इदम्, ऊर्ध्वदेह-अण्। अन्त्येष्टिक्रिया, अरथीका काम-काज।

और्ध्वदेहिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्वदेहाय साधुः, ऊर्ध्व-देह-ठञ्। १ मरणान्तर-शास्त्रोक्त कार्यादिसे सम्बन्ध रखनेवाला। मृत्युके दिनसे सपिण्डीकरण पर्यन्त पिण्डदानादि प्रभृति जो कार्य किया जाता, वह और्ध्वदेहिक कहाता है। (क्लो०) २ अन्त्येष्टिक्रिया, अरथीका काम-काज।

और्ध्वदैहिक (सं० त्रि०) मृत्युके बाद प्रेतोद्देशसे किया जानेवाला।

और्ध्वन्दमिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्वन्दमे भवः, ऊर्ध्वन्दम-ठक्। ऊर्ध्वन्दमोत्पन्न, जो ऊपरसे पैदा हो।

और्ध्वसद्मन (सं० क्लो०) सामविशेष।

और्ध्वस्रोतसिक, और्ध्वस्रोतसिक देखो।

और्ध्वस्रोतसिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्वस्रोतसि आसक्तः, ऊर्ध्वस्रोतस्-ठञ्। शैव, शिवका भक्त।

और्व (सं० क्लो०) उर्व्यां भवम्, उर्वी-अण्। १ उद्भिद्-लवण, नबाताती नमक। २ मृत्तिका लवण, मट्टीका नमक। ३ यवक्षार, जवाखार। (त्रि०) ४ भूमिजात, कानी, ज़मीनसे खोदकर निकाला हुआ। (पु०) उर्व-ऋषेरपत्यम्। ५ उर्व ऋषिके पुत्र। ६ वशिष्ठके एक पुत्र। ७ भृगुवंशीय एक ऋषि। ८ बाड़वानल। भारतमें बाड़वानलकी उत्पत्ति-कथा इसप्रकार लिखी है—क्षत्रियोंके हाथों भृगुका अपमान होने बाद उर्व ऋषि गर्भमें रहे। उसी समय क्षत्रिय भृगुकी पत्नीका गर्भ नाश करनेको उद्यत हुये। किन्तु उर्व उरुभेद पूर्वक जन्म ले उसी प्रतिहिंसा-साधनके लिये तपस्या करने लगे। उस उग्र तपस्यामें सर्व प्राणियोंका विनष्ट होना समझ पितृलोकसे पितृपुरुषोंने उनके निकट जा क्रोध छोड़नेको अनुरोध किया था। किन्तु क्षत्रियगणकी उस हिंसाको स्मरण कर उर्व किसी प्रकार क्रोध छोड़नेपर स्वीकृत न हुये। तब पितृगणने कहा था—'जल सर्वलोकमय है। जलमें ही सर्वलोक रहते हैं। सर्वलोकविनाशके लिये उत्पन्न अपना अग्नि जलमें ही छोड़ दो। उससे तुम्हारी प्रतिज्ञा पूर्ण हो जायेगी।' इसप्रकार अनुरुद्ध होनेपर उर्वने समुद्रके ही मध्य वह क्रोधाग्नि डाल दिया। वहां वृहत् अश्वमुखरूपी बन और मुखद्वारा अनल उगल अग्नि जल पीने लगी।

और्व—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

और्वश (सं० त्रि०) उर्वश्या इदम्, उर्वशी-अण्। १ उर्वशी-सम्बन्धीय। (पु०) उर्वश्या अपत्यं पुमान्। २ उर्वशीके पुत्र, पञ्चप्रवरान्तर्गत एक मुनि।

और्वशेय (सं० पु०) उर्वश्या अपत्यम्, उर्वशी-ढक्। अगस्त्य मुनि। अगस्त्य देखो।

और्वानल (सं० पु०) बड़वानल। और्व देखो।

औल (सं० क्लो०) १ श्वेत शूरण, सफ़ेद ज़मींकन्द। (हिं०) २ वन्य ज्वर, जंगली बुखार।

औलपि (सं० पु०) उलपस्य अपत्यम्, उलप-इञ्। उलप-पुत्र, उलपके लड़के।

औलपी (सं० पु०) उलपेन प्रोक्तं छन्दोऽधीते, उलप-णिनि। उलप-लिखित छन्दोग्रन्थका पाठक, उलपकी बनायी किताब पढ़नेवाला।

औलपीय (सं० पु०) औलपि-नरेश, औलपियोंके राजा।

औल-फौल (हिं० पु०) १ निन्दागर्भ भाषा, गाली-गुफ्ता। २ अनर्थवाद, बकझक।

औलाद (अ० स्त्री०) सन्तति, नसल, वेल। यह शब्द 'वल्द' का बहुवचन है।

औलान (सं० क्लो०) अवलम्बन, सहारा, टेक।

औलिया (अ० पु०) सिद्धजन, दरवेश।

औली (हिं० स्त्री०) प्रत्यग्राम, टटकी बाल। सर्व प्रथम खेतसे आनीत हरित् एवं अभिनव भक्ष्यको औली कहते हैं।

औलू (हिं॰ वि॰) १ नवीन, नया, अनोखा। २ असाधारण, ग़ैरमामूली। ३ कठिन, नागवार, भारी। ४ विचलित, बेचैन। (पु॰) ५ नवीनता, नयापन। ६ काठिन्य, भारीपन। ७ वकत्व, बेचैनी।

औलूक (सं॰ क्ली॰) उलूकानां समूहः, उलूक-अञ्। उलूक-समूह, उल्लुवोंका झुंड।

औलूक्य (सं॰ पु॰) उलूकस्य अपत्यं पुमान्, उलूक-यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। १ उलूक ऋषिके पुत्र कणाद। यही वैशेषिक दर्शनके प्रणेता थे। २ वैशेषिक दर्शनज्ञ।

औलूक्यदर्शन (सं॰ क्ली॰) वैशेषिक दर्शन।

औलूखल (सं॰ त्रि॰) उलूखले क्षुण्णम्, उलूखल-अण्। १ उलूखलमें कुट्टित, ओखली में कूटा हुआ। २ उलूखलोत्पन्न, ओखलीसे निकला हुआ।

औले (हिं॰ वि॰) ठगोंका एक शब्द। ठग किसी अपरिचित व्यक्तिसे मिलनेपर इस शब्दको व्यवहार करते और हिन्दूसे 'औले भाई राम राम' तथा मुसलमानसे 'औले खान् सलाम' कहते हैं। इसका तात्पर्य उसके ठग होने या न होने को पूछताछ है। यदि वह ठग होता, तो अपनी बोलीमें उन्हें बता देता है। फिर इस शब्दका प्रकृत अर्थ न समझ सकने पर ठग उसे अपने फंदेमें लाने की चेष्टा लगाते हैं।

औलोकना (हिं॰ क्ली॰) अवलोकन करना, देखना-भालना।

औल्बण्य (सं॰ क्ली॰) आधिक्य, कसरत, बहुतायत।

औवल (अ॰ वि॰) १ प्रथम, पहला। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ अतिशय उच्च, सबसे उमदा। ४ प्रस्तावनारूप, तमहीदी। (क्रि॰ वि॰) ५ प्रथमतः, पहले, शुरूमें। (पु॰) ६ आरम्भ, शुरू।

औवेणक (सं॰ क्ली॰) गीतविशेष, एक गाना। याज्ञवल्क्यने सात प्रकारके गीत कहे हैं—१ अपरान्तक, २ उल्लोप्य, ३ मद्रक, ४ प्रकरी, ५ औवेणक, ६ सरोविन्दु और ७ उत्तर।

औशन, औशनस देखो।

औशनस (सं॰ क्ली॰) उशनसा शुक्रेण प्रोक्तम्, उशनस्-अण्। १ शुक्राचार्य-प्रणीत ग्रन्थ, शुक्राचार्यकी बनाई किताब। २ उपपुराण विशेष। ३ तीर्थविशेष। (त्रि॰) उशनस इदम्। ४ शुक्राचार्य-सम्बन्धीय।

औशनसी (सं॰ स्त्री॰) उशनसः ऽपत्यं स्त्री। शुक्राचार्यकी कन्या, देवयानी। राजा ययातिसे इनका परिणय हुआ था।

औशि (हिं॰) अवश्य देखो।

औशिज (सं॰ पु॰) उशिज् स्वार्थे अण्। प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८। १ इच्छायुक्त, ख़्वाहिशमन्द। (पु॰) २ पञ्च प्रवरान्तर्गत ऋषिविशेष।

औशीनर (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यं पुमान्, उशीनर-अण्। उशीनरके पुत्र शिवि प्रभृति। उशीनरकी पांच भार्यावोंके गर्भसे पांच हो पुत्र हुये थे—नृगाके गर्भसे नृग, क्रमोके गर्भसे क्रमि, नवाके गर्भसे नव, देवाके गर्भसे सुव्रत और दृषद्वतीके गर्भसे शिवि।

औशीनरि (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यम्, उशीनर-इञ्। उशीनरपुत्र, उशीनरके लड़के।

"औशीनरिः पुण्डरीकः शर्य्यातिः शरभः शुचिः।" (भारत, सभा ८ अ॰)

औशीर (सं॰ पु॰-क्ली॰) वश-ईरन् स्वार्थे अण्। १ शय्या, बिस्तर। २ आसन, बैठनेकी चीज़। ३ चामर, मुरछल। ४ चामरदण्ड, मुरछलको डंडा। (त्रि॰) ५ उशीरज, खसका बना हुआ।

औशीरिका (सं॰ स्त्री॰) १ अङ्कुर, कोपल। २ आधार, पात्र, बरतन।

औषण (सं॰ क्ली॰) उषणस्य भावः, उषण-अण्। १ कटुरस, कड़ुवाहट, चरफरापन। २ मरिच, कालो मिर्च।

औषणशौण्डी (सं॰ स्त्री॰) औषणे कटुरसे शौण्डी विख्याता, ७-तत्। शुण्ठी, सोंठ।

औषदश्वि (सं॰ पु॰) औषदश्वस्यापत्यम्, औषदश्व-इञ्। औषदश्व राजाके वसुमान् नामक पुत्र। यह ययातिके दौहित्र थे। (भारत, आदि ९३ अ॰)

औषध (सं॰ क्ली॰) ओषधेरिदं ओषधिरेव वा, ओषधि-अण्। ओषधेरजातौ। पा ५।४।३७। रोगनाशक द्रव्य, दवा। इसका वैद्यकोक्त पर्याय भेषज, भैषज्य, अगद, जायु, जैत्र, आयुर्योग, गदाराति, अमृत और आयुर्द्रव्य है।

वैद्यकमतसे औषध तीन भागमें विभक्त है। कितने ही औषध कुपित दोष दुष्यके प्रशमक, कितने ही उसके शोधक और कितने ही स्वस्थ अवस्थामें उपयोगी होते हैं। पित्तकारोमें देय, विरेचक एवं वमनकारक द्रव्य और दैहिक रोगमें साधारणत: तेल, घृत तथा मधु औषध उपयोगी है। मानस रोगमें बुद्धि, धर्य और आत्मज्ञान ही औषध है।

जिस स्थानपर हल नहीं चलता एवं बृहत् वृक्षादि नहीं रहता और जो स्थान स्निग्ध, मृदु, स्थिर, समतल, कृष्ण, गौर अथवा लोहितवर्ण लगता, उसी स्थानका औषध लेना पड़ता है। वल्मीक, श्मशान, देवमन्दिर और वालुकामय, गर्त वा प्रस्तर विशिष्ट तथा निम्नोन्नत स्थानमें उत्पन्न होनेवाला औषध उपयोगी नहीं। पूर्वोक्त स्थानजात होते भी यदि औषध कीटजुष्ट अथवा अस्त्र, आतप, वायु, अग्नि, जल प्रभृतिके आघातसे मर जाये, तो उसको कभी हाथ न लगाये। फिर सरस, परिपुष्ट और मृत्तिकाको बहुदूर पर्यन्त भेद करनेवाला मूल ही ग्राह्य है।

कोई-कोई कहता—प्रावृट्, वर्षा, शरत्, हेमन्त, वसन्त एवं ग्रीष्मकालको यथाक्रम मूल, पत्र, त्वक्, क्षीर, सार तथा फल लेना पड़ता है। किन्तु सुश्रुतने उसमें दोष लगा कहा—सौम्य ऋतुमें सौम्य और आग्नेय ऋतुमें आग्नेय औषध संग्रह करना उचित है। वीर्यवान् और एक वत्सर अतिक्रम न करनेवाला औषध ही रोगनाशक होता है। केवलमात्र मधु, घृत, गुड़, पिप्पली और विड़ङ्ग द्रव्य पुरातन पड़नेसे उपकारप्रद है। पृथिवी एवं जलगुणाधिक्य स्थानका विरेचक, अग्नि, आकाश तथा वायुगुण-भूयिष्ठ स्थानका वमनविरेचन-कारक और आकाशगुणबहुल स्थानका प्रशामक औषध अधिक गुणशाली होता है।

स्थूल मूलका काष्ठ छोड़ वल्कल और सूक्ष्म मूलका काष्ठ और वल्कल समस्त ही ग्रहण करना चाहिये। वटादिका वल्कल, वीजादिका सार, तालिशादिका पत्र, त्रिफला प्रभृतिका फल, चित्रकका मूल, ओलका कन्द, धातकीका पुष्प, खदिरादिका सार और कण्टकारीका समस्त अंश लेना पड़ता है। वेलका कच्चा और सोनालूका पक्का फल ग्राह्य है। औषधके स्थान विशेषका उल्लेख न रहनेसे मूल ही लेना पड़ता है। योगविशेषमें औषधका परिमाण जो लिखा जाता, कच्चा या गीला औषध डालनेमें उससे द्विगुण देना उचित आता है।

विषय समझ व्यवहार कर सकनेसे अमृत तुल्य फल मिलता—किस प्रकार कौन अवस्थामें क्या औषध चलता है। नहीं तो विष वज्र प्रभृतिकी भांति औषध अपकार साधन करता है। नाम, रूप और गुण—साधारणत: तीन ज्ञातव्य विषय समझ लेनेसे ही औषधका पूरा ज्ञान नहीं होता। उक्त समस्त ज्ञानव्यके साथ औषधके योगकी प्रणाली समझना भी विशेष आवश्यक है। क्योंकि योगविशेषसे विष भी अमृत बन जाता है।

उपवासके पीछे जलपान करने, क्षोभ रहने, अजीर्ण मालूम पड़ने, आहार ले चुकने और पिपासा लगने पर संशोधन प्रभृति कोई औषध सेवन करना न चाहिये। साधारणत: अन्नहीन औषध सेवनकी ही व्यवस्था है। उससे औषधका अधिक वीर्य प्रकाश पाता और नि:सन्देह रोग नष्ट हो जाता है। किन्तु बालक, वृद्ध, युवती और मृदु व्यक्तिके लिये ऐसी व्यवस्था करना न चाहिये। इससे उन्हें अत्यन्त ग्लानि लगती और बलकी हानि पड़ती है।

आहारसे कुछ पहले उन्हें औषध सेवन करना चाहिये। उससे औषध अनावृत होनेपर वारम्बार मुखमें चढ़ नहीं सकता, परिपाक भी शीघ्र पड़ता और बलक्षय नहीं लगता। औषध परिपाक होनेपर वायुका अनुलोम, स्वास्थ्य, क्षुधातृष्णाका प्रकाश, मनमें आनन्द, शरीरका हलकापन, सकल इन्द्रियका शौच और शुद्ध उद्गार होता है। औषध संपूर्ण जीर्ण न पड़ते अथवा आहार सम्यक् परिपाक न होते औषध सेवन करनेसे पीड़ाकी शान्ति न आने पर अन्यान्य रोगकी भी उत्पत्ति होती है। सम्पूर्ण रूप औषध परिपाक न होते क्लान्ति, दाह, अवसन्नता, भ्रम, मूर्च्छा, शिर:पीड़ा, असुखबोध और बलहानिका वेग बढ़ता है।

औषधके सेवनमें मात्राका कोई नियम निर्दिष्ट नहीं। दोष, अग्नि, बल, वयस, व्याधि, द्रव्य और कोष्ठको देख मात्रा ठहराना पड़ता है। औषध-परीक्षा प्रभृति अन्यान्य विषयकी परिभाषा देखो।

२ विष्णुका नामान्तर। (त्रि०) ३ औषधिजात, जड़ीबूटीसे बना हुआ।

औषधकाल (सं० पु०) औषधसेवनका समय, दवा खानेका वक्त। यह दश प्रकारका होता है, निर्भक्त, प्रागभक्त, अधोभक्त, मध्येभक्त, अन्तराभक्त, सभक्त, सामुद्र, मुहुर्मुहुग्रसि और ग्रासान्तर। वे खाये निर्भक्त, खानेसे पहले प्रा भक्त, खानेके बाद अधोभक्त, खानेके बीच मध्येभक्त, दोनो समय खानेके बीच अन्तराभक्त, खानेमें मिलाकर सभक्त, खानेके पहले और पीछे सामुद्र, बेखाये या खाये बारबार मुहुर्मुहुग्रसि और कौरकौर पर लिया जानेवाला औषध ग्रासान्तर कहाता है। निर्भक्त वीर्य बढ़ाता, प्रागभक्त शीघ्र अन्न पचाता, अधोभक्त बहुविध रोग मिटाता, मध्येभक्त मध्य देहके रोग दबाता, अन्तराभक्त हृद्यता लाता और सभक्त सब रोगियोंके लिये पथ्य समझा जाता है।

औषधाजीव (सं० त्रि०) औषधेन आजीवति, औषध-आ-जीव-अच्। औषधविक्रेता, दवाफ़रोश, जो दवा बेचकर अपना काम चलाता हो।

औषधालय (सं० पु०) औषधानां आलयः, ६-तत्। औषधभाण्डार, दवाखाना। जिस स्थानमें नानाविध औषध विक्रयके लिये सर्वदा प्रस्तुत रखते, उसे औषधालय कहते हैं।

औषधि (सं० स्त्री०) आ-ओषधिः। १ सम्यक् ओषधि, अच्छी जड़ी-बूटी। २ गुड़ूची, गुर्च। ३ रास्ना। ४ दूर्वा, दूब। ५ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। ६ हरीतकी, हर। ७ मद्य, शराब। ८ औषध, दवा। ९ फल-पाकान्त वृक्षादि, फल पकते ही मर जानेवाला पौदा।

औषधिगन्ध (सं० पु०) आघ्राणसे ज्वरादिकर औषधिका गन्ध, जिस जड़ी-बूटीको खुशबूसे बुखार वगैरह बीमारी लगे।

औषधिप्रतिनिधि (सं० पु०) न मिलनेवाली औषधिके स्थानमें समगुण द्रव्यान्तरका ग्रहण, हासिल न होनेवाली जड़ी-बूटी की जगह दूसरी चीज़का लिया जाना। मेदाके अभावमें अश्वगन्धा, महामेदाके अभावमें शारिवा, जीवकर्षभकाके अभावमें गुड़ूची, चित्रकके अभावमें दन्ती वा अपामार्गका क्षार, धन्वयासाके अभावमें दुरालभा, तगरके अभावमें कुष्ठ, मुर्वाके अभावमें जिङ्गिनीत्वक्, अहिंसा-लक्षणाके अभावमें मानकमयूरपुच्छ, वकुलके अभावमें कल्हारोत्पलपद्म, नीलोत्पलके अभावमें कुमुद, जातीपुष्पके अभावमें लवङ्ग, अर्कादिक्षीरके अभावमें उसके पत्रका रस और पुष्करमूल एवं लाङ्गलकी ग्रन्थिके अभावमें कुष्ठ डालते हैं। (भावप्रकाश) फिर चविका न मिलनेसे गजपिप्पली, सोमराजी न मिलनेसे चक्रमर्दफल, दार्वी न मिलनेसे हरिद्रा, रसाञ्जन न मिलनेसे दार्वीक्वाथ, सौराष्ट्रमृत् न मिलनेसे फटिकारी, तालीश न मिलनेसे स्वर्णताली, भार्गी न मिलनेसे तालीश वा कण्टकारी-मूल, रुचक न मिलनेसे पांशुलवण, यष्टीमधु न मिलनेसे धातकीपुष्प, अम्लवेतस न मिलनेसे चुक्र, द्राक्षा न मिलनेसे गाम्भारीपुष्प, गाम्भारीपुष्प न मिलनेसे पीतशालपुष्प, नख न मिलनेसे लवङ्ग, कस्तुरी न मिलनेसे काकोली, काकोली न मिलनेसे जातीपुष्प, कर्पूर न मिलनेसे ग्रन्थिपर्णी वा सुगन्धि-मुस्तक, कुङ्कुम न मिलनेसे कुसुम्भ, श्रीखण्डचन्दन न मिलनेसे कर्पूर, श्रीखण्डचन्दन एवं कर्पूर दोनों न मिलनेसे रक्तचन्दन, मधु न मिलनेसे जीर्णगुड़, पुरातन गुड़ न मिलनेसे यामचतुष्टयशुष्क गुड़, क्षौर न मिलनेसे मौद्ग मासुर रस, शर्करा न मिलनेसे खण्ड, शालि न मिलनेसे षष्टिक, दाड़िम न मिलनेसे वृक्षाम्ल, सौराष्ट्रमृत् न मिलनेसे पङ्कपर्पटी, लौह न मिलनेसे लौहका मल, चव्यगजपिप्पली न मिलनेसे पिप्पली-मूल और मुञ्जातिका न मिलनेसे तालमुस्त वा माजुफल ग्राह्य है। (परिभाषाप्रदीप)

औषधिवीर्य (सं० क्ली०) शीतोष्णादिरूप औषधिका वीर्य, जड़ीबूटीको ताकत। यह शीत, उष्ण, रूक्ष, स्निग्ध, तीक्ष्ण, मृदु, पिच्छल, तीव्र और विशद होता

है। औषधि वीर्य बल एवं गुणके उत्कर्षसे रसको दबा अपना काम करता है। (सुश्रुत)

औषधी, औषधि देखो।

औषधीपञ्चामृत (सं० क्लो०) अमृत जैसी पांच औषधी, बहुत उम्दा पांच जड़ी-बूटी। गुड़ूची, गोक्षुर, मुषली, मुण्डी और शतावरी पांचोंको औषधीपञ्चामृत कहते हैं।

औषधीपति (सं० पु०) औषधीका राजा सोम।

औषधीय (सं० त्रि०) शाकलता-सम्बन्धीय, नबाताती, जड़ीबूटीसे सरोकार रखनेवाला।

औषधेनव—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। सुश्रुतने इनका वचन उद्धृत किया है।

औषर (सं० क्लो०) उषरे भवम्, उषर-अण्। १ पांशु-लवण, शोरा। २ मृत्तिकालवण, रेहका नमक। ३ सैन्धवलवण। यह चार, तिक्त, वातकफघ्न, विदाही, पित्तकृत्, ग्राही और मूत्रशोधक होता है। (राजनिघण्टु)

औषरक औषर देखो।

औषस (सं० त्रि०) उषसि भवः, उषस्-अण्। १ उषा-कालोत्पन्न, जो सवेरे पैदा हो। २ उषासम्बन्धीय, सहरी, सिदौसी।

औषसिक (सं० त्रि०) उषसि भवः, उषस्-ठञ्। उषा सम्बन्धीय, सहरी, सदौसी।

औषस्त (सं० त्रि०) उषस्तेरिदम्, उषस्ति-अण्। १ उषस्ति ऋषि-सम्बन्धीय। (क्लो०) २ छान्दोग्य उपनिषत्‌का उषस्ति-चरित नामक ब्राह्मणकाण्ड।

औषस्त्य, औषस्त देखो।

औषिक (सं० त्रि०) उषसि भवः, ठञ्। १ उषा-कालोत्पन्न, सवेरे पैदा होनेवाला। २ उषाकालको भ्रमण करनेवाला, जो सवेरे बाहर निकलकर टहलता हो।

औषिज (सं० त्रि०) इच्छुक, ख्वाहिशमन्द।

औषीज, औषिज देखो।

औष्ट्र (सं० त्रि०) उष्ट्रस्य इदम्, उष्ट्र-अण्। उष्ट्र-सम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला। २ उष्ट्रयुक्त, ऊंटोंसे भरा हुआ। (क्लो०) ३ उष्ट्रप्रकृति, ऊंटको कुदरत या जात।

औष्ट्रक (सं० क्लो०) उष्ट्राणां समूहः, उष्ट्र-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रराजराजन्येति। पा ४।२।३९। १ उष्ट्र-समूह, ऊंटका झुंड। (त्रि०) उष्ट्रस्येदम्। २ उष्ट्रसम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला।

औष्ट्रक्षीर (सं० क्लो०) उष्ट्रीदुग्ध, ऊंटनीका दूध। यह रूक्ष, उष्ण, किञ्चित् लवणरस, स्वादु, लघु और शोथ, गुल्म, उदर, अर्शः, क्रमि, कुष्ठ एवं विषविनाशक है।

औष्ट्रतक्र (सं० क्लो०) उष्ट्री-दुग्ध-जात घोल, ऊंटनीके दूधका मट्ठा। यह विरस, गुरु, हृद्य, दोषघ्न और पीनस, श्वास तथा कासके लिये हितकारक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

औष्ट्रनवनीत (सं० क्लो०) उष्ट्रीदुग्धजात नवनीत, ऊंटनीके दूधका मक्खन। यह लघुपाक, शीतल और व्रण, क्रमि, कफ, रक्तदोष, वात एवं पित्तघ्न है। (राजनिघण्टु)

औष्ट्रमूत्र (सं० क्लो०) उष्ट्रमूत्र, शुतरका पेशाब। यह उन्माद, शोफ, अर्शः, क्रमि, शूल और उदर व्याधि दूर करनेवाला है। (मदनपाल)

औष्ट्ररथ (सं० त्रि०) उष्ट्ररथस्येदम्, उष्ट्ररथ-अञ्। पत्रपूर्वादञ्। पा ४।३।१२२। उष्ट्ररथ सम्बन्धीय, ऊंटगाड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

औष्ट्राचि (सं० पु०) गुरु, उस्ताद, सिखाने-पढ़ानेवाला।

औष्ट्रायण (सं० पु०) उष्ट्रस्यापत्यम्, उष्ट्र-फक्। उष्ट्रवंशीय।

औष्ट्रिक (सं० त्रि०) उष्ट्रे भवः, उष्ट्र-ठक्। उष्ट्रजात, ऊंटसे पैदा।

औष्ठ (सं० त्रि०) ओष्ठवदाकारोऽस्त्यस्य, ओष्ठ-अण्। ओष्ठके आकारसदृश, होंठ-जैसा बना हुआ।

औष्ठ्य (सं० त्रि०) ओष्ठे भवः, ओष्ठ-यत् स्वार्थे अण्। १ ओष्ठजात, होंठसे निकलनेवाला। (क्लो०) २ ओष्ठके द्वारा उच्चार्य वर्ण, होंठसे निकलनेवाला हर्फ। उ, ऊ, ओ, औ, प, फ, ब, भ और म वर्ण औष्ठ्य है।

औष्ण्य (सं० क्लो०) उष्णस्य भावः, उष्ण-अण्। १ उष्णता, गरमी। २ उत्ताप, धूप। ३ सन्ताप बुखार।

औष्णिज (सं० क्लो०) उष्णिज स्वार्थे अण्। १ पगड़ी,

साफा। (त्रि०) २ पगड़ी या साफेसे सरोकार रखनेवाला।

औष्णिह (सं० त्रि०) उष्णिहि भवः, उष्णिह-अञ्। उत्समादिभ्यो ऽञ्। पा ४।१।८६। १ उष्णिक् छन्दोजात। २ उष्णिक् छन्दः सम्बन्धीय। ३ उष्णिक् छन्दोद्वारा स्तव किया जानेवाला।

औष्णीक (सं० त्रि०) उष्णीषे शोभते, उष्णीष-अण्। १ उष्णीषधारी, पगड़ी बांधनेवाला। २ उष्णीषधारी नृपति, पगड़ी बांधनेवाला राजा। ३ उष्णीषधारी देश, जिस मुल्कमें पगड़ी बांधनेवाले लोग रहें।

औष्ण्य (सं० क्लो०) उष्णस्य भावः, उष्ण-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२८। उष्णता, गर्मी। यह तेज और पित्तका स्वाभाविक गुण है।

औष्म्य (सं० क्लो०) उष्मणो भावः, उष्मन्-ष्यञ्। १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णस्पर्श, लमस-गर्म। तेजोगुण-बहुल पदार्थ मात्रमें औष्म्यकी उपलब्धि होती है। पार्थिव शरीरके स्पर्शसे जो औष्म्य मालूम पड़ता, वह शरीरका नहीं ठहरता। क्योंकि मृतशरीरमें रूपादि समस्त गुण रहते भी औष्म्यका होना असम्भव है। इसलिये शारीरिक औष्म्यको शास्त्रने जीवात्माका गुण निर्दिष्ट किया है।

औसक (हिं० स्त्री०) रोग, बीमारी।

औसत (अ० पु०) १ मध्यमावस्था, सरासरी, पड़ता, सबसे बड़े और सबसे छोटेके बीचकी अदत। कई स्थानोंकी संख्याका औसत लगानेमें पहले सबको जोड़ डालते हैं। फिर उस जोड़में जितने स्थान होते, उतनेसे भाग देते हैं। इस क्रियासे जो उपलब्धि आती, वही औसत कहाती है। (वि०) २ गम्य, जाने लायक, बीचवाला।

औसन (हिं० स्त्री०) १ उष्णता, गरमी। २ सड़न। ३ व्याकुलता, घबराहट। ४ पकाव।

औसना (हिं० क्रि०) १ उष्णता आना, गर्मी बढ़ जाना। २ सड़ना। ३ व्याकुल होना, घबराना। ४ पकना।

औसर (हिं०) अवसर देखो।

औसान (हिं० पु०) १ धैर्य, होश, बंधा खयाल। २ अवसान, अखीर।

औसाना (हिं० क्रि०) पाक करना, पकाना, पाल डालना।

औसेर (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, देर। २ चिन्ता, खोज। ३ दुःख, तकलीफ।

औहत (हिं० स्त्री०) अकाल-मृत्यु, दुर्दशा, बुरा हाल।

औहाती (हिं० स्त्री०) सधवा, सौभाग्यवती, जिस औरतके खाविन्द रहे।

औहास (हिं०) अवहास देखो।

अं

अं—१ तन्त्रके मतसे पञ्चदश स्वरवर्ण। इसका नाम अनुस्वार है। इस वर्णका अक्षर समाम्नाय सूत्रमें नहीं लगता। किन्तु षत्वणत्वका कार्य निर्वाह करनेसे पाणिनिके मतमें इसे अयोगवाह कहते हैं। मुग्धबोधके मतसे इसका नाम 'सु' है। आकृति विन्दुमात्र रहती है। इसे अनुन... वर्ण कहते हैं। 'न' और 'म'के स्थानसे इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतसे—अंकार विन्दुयुक्त, पीतवर्ण विद्युत्तुल्य, पञ्चप्राणात्मक, ब्रह्मादि देवमय, सर्वज्ञानमय और विन्दुत्रययुक्त है। 'अं'के लिखनकी प्रणाली—अकारके ऊपर दक्षिण दिक्‌को एक विन्दुमात्र है। रेखाके समूहमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र रहते हैं। विन्दुमयी रेखाका नाम आद्याशक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रोक्त नाम अंकार, चक्षुष, दन्त, घटिका, समगुह्यक, प्रद्युम्न, श्रीमुख, प्रीति, वीजयोनि, वृषध्वज, पर, शशी, प्रमाणीश, सोमविन्दु, कलानिधि, अक्रूर, चेतना, नादपूर्ण, दुःखहर, शिव, मङ्गलमय, शम्भु, नरेश, सुखदुःखप्रवर्तक, पूर्णिमा, रेवती, शुद्ध, कन्याचर, वियद्रवि, अमृतकार्षिणी, शून्य, विचित्रा, व्योमरूपिणी, केदार, रात्रिनाश, कुब्जिका और बुद्बुद है।

(क्लो०) २ परब्रह्म। ३ महेश्वर।

"विन्दुविसर्गःसुमुखः शरः सर्वाश्रयः सहः।" (भारत, अनु० १७।१२६)

अः

अः (:)—१ विसर्ग, दो विन्दुमात्र। तन्त्रके मतसे यह षोड़श स्वरवर्ण है। अकारके उच्चारणसे इसका उच्चारणस्थान भी कण्ठ है। पाणिनिके मतमें यह वर्ण अयोगवाह है। मुग्धबोध इसका नाम 'विः' लिखता है। स् और र्के स्थानसे इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतसे—अःकार परमेश, रक्तवर्ण, विद्युत्तुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणमय, सर्वज्ञानमय, आत्मादितत्त्वसंयुक्त, मूर्तिमान् कुण्डली, विन्दुत्रय-विशिष्ट एवं शक्तित्रययुक्त है। यह सकल शक्ति किशोरवयस्का शिवपत्नी समझ पड़ता है। इसके लिखनकी प्रणाली—अकारकी दिक् ऊर्ध्व और अधः दो विन्दु लगाना है। इसकी सकल रेखावोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश अवस्थान करते हैं। मात्रा शक्ति और विन्दुद्वय-युक्त रेखा आद्याशक्ति है।

(वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम—अः, कण्टक, महासेन, कलापूर्णा, अमृता, हरि, इच्छा, भद्रा, गणेश, रति, विद्यामुखी, मुख, द्विविन्दु, रसना, सोम, अनिरुद्ध, दुःखसूचक, द्विजिह्व, कुण्डल, वक्ष, सर्ग, शक्ति, निशाकर, सुन्दर, सुयशा, अनन्ता, गणनाथ और महेश्वर है।

(पु॰) २ महेश्वर।

क

क—व्यञ्जन वर्णोंका प्रथम अक्षर। इसकी वाम रेखा ब्रह्मा, दक्षिण रेखा विष्णु, अधो रेखा रुद्र, मात्रा सरस्वती अङ्कुशाकार रेखा कुण्डली और मध्यस्थ शून्य स्थान सदाशिव है। (वर्णोद्धारतन्त्र) ककारका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम क्रोधी, ऐश, महाकाली, कामदेव, प्रकाशक, कपाली, तेजस, शान्ति, वासुदेव, जप, अनल, चक्री, प्रजापति, सृष्टि, दक्षिणस्कन्ध, विसाम्पति, अनन्त, पार्थिव, विन्दु, तापिनी, परमात्मक, वर्गाद्य, मुखी, ब्रह्मा, सखाद्य, अभ्रः, शिव, जल, माहेश्वरी, तुला, पुष्पा, मङ्गल, चरण, कर, नित्या, कामेश्वरी, मुख्य, कामरूप, गजेन्द्रक, स्त्रोपुर, रमण और रक्तकुसुमा है।

कामधेनुतन्त्रमें इस प्रकार ककारतत्त्व कहा है,—'ककारकी वामरेखा जवापुष्प एवं अलक्तक वर्ण, दक्षिण रेखा शरच्चन्द्र तुल्य, अधोरेखा मरकत-प्रभ, मात्रा शङ्खकुन्दसदृश एवं साक्षात् सरस्वती, अङ्कुशाकृति कुण्डली कोटिविद्युल्लताकी भांति आकारविशिष्ट और मध्यदेशका शून्यस्थान सदाशिव कोटिचन्द्र समवर्ण है। शून्यके गर्भमें कैवल्यप्रदायिनी काली अवस्थान करती हैं। ककारसे ही समग्र काम, कैवल्य, अर्थ और धर्म उत्पन्न होता है। ककार ही सर्व वर्णकी मूल प्रकृति, कामदा, कामरूपिणी, अव्यया, कामनीया प्रभृति सुन्दरी और सर्व देवगणकी माता है। ककारके ऊर्ध्व कोणमें कामा नाम्नी ब्रह्मशक्ति,वाम कोणमें ज्येष्ठा नाम्नी विष्णुशक्ति और दक्षिण कोणमें विन्दुनाम्नी संहाररूपिणी रौद्रशक्ति रहती है। ककारस्थ देवोंमें ब्रह्मा इच्छाशक्तिमान्, विष्णु ज्ञानशक्तिमान् और रुद्र क्रिया-शक्तिमान् हैं। आत्मविद्या, मङ्गल और मन्त्रका अवस्थान सर्वदा ककारमें देख पड़ता है। जवा, अलक्तक, एवं सिन्दुरसम रक्तवर्णा, चतुर्भुजा, त्रिनेत्रा, कदम्बकोरकाकृति स्तनद्वयविशिष्टा और रत्न, कङ्कण, केयूर, अङ्गद, रत्नहार तथा पुष्पहारादिशोभिता कामिनीका ध्यानकर दशवार ककार जपनेसे इष्टसिद्धि होती है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। 'क' अनुबन्ध रहनेसे धातु चुरादि गणीय समझा जाता है। कथ्रादिः।

(कविकल्पद्रुम) चुरादिगणीय धातुके उत्तर स्वार्थमें णिच् आता है।

३ पाणिनिके व्याकरणका प्रत्ययविशेष। कक्, कन्, कप् प्रभृति प्रत्ययोंका 'क' ही अवशिष्ट रहता है।

(क्लो०) कायति शब्दं करोति, जीवो यस्मिन् सतीति शेषः, कै-ड। अन्येभ्योऽपि दृश्यते। पा ३।२।१०१। ४ मस्तक, मत्था। ५ जल, पानी। ६ सुख, आराम। ७ केश, बाल। (पु०) कचति दीप्यते स्वेन ज्योतिषा, कच्-ड। ८ ब्रह्मा। ९ विष्णु। १० प्रजापति। ११ दक्ष। १२ कन्दर्प। १३ अग्नि। १४ वायु। १५ यम। १६ सूर्य। १७ आत्मा, रूह। १८ राजा, बादशाह। १९ ग्रन्थ, किताब। २० मयूर, मोर। २१ मन, दिल। २२ शरीर, जिस्म। २३ काल, वक्त। २४ धन, दौलत। २५ शब्द, आवाज़। २६ प्रकाश, रौशनी। २७ पक्षी, चिड़िया। २८ रुद्र। २९ परलोक। ३० किरण। (त्रि०) ३१ कौन, क्या।

कइत (हिं० स्त्री०) पार्श्व, किनारा, तरफ़।

कइयां, कइत देखो।

कई (हिं० वि०) अनेक, कितने ही।

कउआ, कौवा देखो।

कउर, कौर देखो।

कएक (हिं० वि०) कई एक, कुछ, थोड़े। यह शब्द बहुवचनमें ही आता है।

कं (हिं०) कम् देखो।

कंउधा (हिं० पु०) १ दूरस्थ विद्युत्‌का प्रकाश, दूरकी बिजलीका-उजाला। कंउधा होना वर्षाका पूर्वलक्षण है।

कंकई—नदी विशेष, एक दरया। यह नेपालके पूर्वांशमें अवस्थित है। सिकिम और नेपालके इसीको दोनों राज्योंके बीचकी सीमा माना है।

कंकड़ (हिं० पु०) कर्कर, चूर्णखण्ड, सङ्गरेज़ा, बजरी। यह माटे चूनेका पत्थर है। भारतमें कई स्थानपर भूमि खोदनेसे कंकड़ निकलता है। युक्तप्रदेश ही इसकी उत्पत्तिका प्रधान स्थान है। यह श्याम, श्वेत, आदि कई रंगका होता है। कोई छोटा-छाटा रहता है। इससे चूना बनाते हैं। सड़क पर भी कंकड़ खूब कूटा जाता है। कितने ही लोग इसका सालन बनाते हैं। पहले अच्छे और मंझोले कंकड़ धो डालते हैं। फिर उन्हें बेसनसे लपेट घी या तेलमें तलते हैं। अच्छी तरह पक जानेसे उन्हें गर्म मसाला छोड़ धीमी आंचमें कुछ देर रख छोड़ते हैं। यह सालन खानेमें बहुत सोंधा लगता है। २ क्षुद्रप्रस्तरखण्ड, रोड़ा। ३ कठोरांश विशेष, एक कड़ा हिस्सा। ४ पीनेकी एक तंबाकू। यह बे तवेके चढ़ती है। ५ रत्न, जवाहिरात। यह क्षुद्र, निर्माणरहित और उच्चनीच रहता है। अट्ठारह कंकड़से होनेवाला लड़कोंका एक खेल 'अठारा कंकड़ा' कहाता है।

कंकड़ी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकर्कर, छोटा कंकड़। २ क्षुद्रांश विशेष, छोटा टुकड़ा।

कंकड़ीला (हिं० वि०) कर्करयुक्त, जिसमें कंकड़ रहें।

कंकन (हिं०) कङ्कण देखो।

कंकर, कंकड़ देखो।

कंकरीट (अं० पु० = Concrete) गृहनिर्माण द्रव्यविशेष, घर बनानेका एक मसाला। इसमें टूटा पत्थर, बालू और चूना रहता है। पानीमें उक्त द्रव्य रासायनिक प्रक्रिया द्वारा मिलानेसे यह तैयार होता है। कंकरीट एक प्रकारका बनावटी पत्थर है। इसमें लोहा भी मिला देते हैं। इसके धुवांकश, लट्ठे और हौज़ बनते हैं। दीवारों और गचोंमें यह बहुत लगता है। लोग इसे कंकड़-पत्थर, ईंट और लकड़ीसे अच्छा समझते हैं।

कंकरीला, कंकड़ीला देखो।

कंकरेत (हिं० वि०) १ कंकरीला, जिसमें कंकड़ रहें। (पु०) २ कंकरीट, नकली या बनावटी कंकड़-पत्थर।

कंकल (हिं०) कङ्कल देखो।

कंकाली (हिं० पु०) जाति विशेष, एक कौम। कंकाली लोग एक प्रकारके नट हैं। यह किंगरी बजाकर भीख मांगते हैं।

कंकेर (हिं० पु०) ताम्बूल-विशेष, किसी किस्मका पान। यह कटु लगता है।

कंखवारी (हिं० स्त्री०) कांखका बड़ा फोड़ा। यह बड़ी तकलीफ़ देती है।

कंखौरी (हिं स्त्री०) १ कांख। २ कंखवारी।

कंग (हिं० पु०) कवच, बख़्तर।

कंगण (हिं० पु०) १ लौहचक्रविशेष, लोहेका एक चक्कर। इसे अकाली सिख अपने शिरपर रखते हैं। २ कङ्कण। कङ्कण देखो।

कंगन (हिं०) कङ्कण देखो।

कंगना (हिं० स्त्री०) १ तृणविशेष, किसी क़िस्मकी घास। यह पर्वतके समतलपर अधिक उत्पन्न होती है। वृषभ कंगनाको बड़ी प्रीतिसे आहार करते हैं। (हिं० पु०) २ कङ्कण। ३ गीतविशेष, एक गाना। इसे विवाहादि उत्सवपर कङ्कण बांधने या खोलनेमें स्त्रियां गाती हैं।

कंगनी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कङ्कण, छोटा कंगना। २ कगर। यह छतके नीचे दीवारमें रहती है। ३ कपड़ेका छल्ला। यह नेचेमें मुंहनालके पास लगायी जाती है। ४ दानेदार घेरा। यह वाद्य सीमापर दन्तयुक्त वा तीक्ष्णाग्र शिखरविशिष्ट होती है। ५ कङ्गु, एक अनाज। भारत, ब्रह्म, चीन, मध्य एशिया और युरोप इसकी उत्पत्तिका स्थान है। छलकी एवं शुष्क भूमिमें कंगनी बहुत पनपती है। यह दो प्रकारकी होती है—रक्त एवं पीत। चीना कंगनीको चैत्र-वैशाखमें बोते और ज्येष्ठ मासमें काट लेते हैं। किन्तु साधारणतः आषाढ़-श्रावण बोने और भाद्र-आश्विन काटनेका समय है। सींचनेकी बार-बार आवश्यकता पड़ती है। कंगनी सांवासे क्षुद्र और वर्तुल रहती है। मञ्जरी क्षुद्र, पीतवर्ण एवं सघन रोमयुक्त होती है। यह पक्षियोंको बहुत दी जाती है। कृषक इसका भात खाते हैं। कंगनीका पुराना चावल रोगीके लिये पथ्य है।

कंगनी-दुमा (हिं० वि०) १ ग्रन्थियुक्त पुच्छ-विशिष्ट, गांठदार पूंछ रखनेवाला। (पु०) २ हस्तिविशेष, किसी क़िस्मका हाथी। इसकी पूंछमें गांठ रहती है। लोग कंगनी-दुमेको अशुभ समझते हैं।

कंगल, कंग देखो।

कंगला, कंगाल देखो।

कंगलापन (हिं० पु०) दैन्यभाव, ग़रीबी, जिस हालतमें कौड़ी कौड़ीको मुहताज रहें।

कंगसी (हिं० स्त्री०) फांस, गंठाव, फंदा। उभय हस्त द्वारा पंजा फांस मालखंभपर उड़नेको 'कंगसी की उड़ान' कहते हैं।

कंगही, कंघी देखो।

कंगारू (अं० पु०=Kangaroo) पशु विशेष, एक जानवर। यह पशु कोई चूहे जैसा छोटा और कोई भेड़ जैसा बड़ा होता है। शरीरकी अपेक्षा शिर क्षुद्र पड़ता है। देहका पश्चाद् भाग वृहत् रहनेसे चारो पैरसे चलते समय कंगारू अच्छा नहीं लगता। यह कूदते चला करता है। पुच्छ दीर्घ एवं दृढ रहता है। दर्शन, श्रवण एवं घ्राणशक्ति तीव्र होती है। अगले पंजोंमें पांच उंगलियां निकलती हैं। नख कुटिल एवं दृढ़ लगते हैं। पिछला पैर अति दीर्घ, सङ्कीर्ण एवं अङ्गुष्ठहीन होता है। दन्त चौंतीस रहते हैं। पाकस्थली विस्तृत होती है। कंगारू घास-पात खाता है। किन्तु क्षुद्र जातिवाले मूल भी व्यवहारमें आ जाते हैं। यह भीरु एवं आक्रमण न करनेवाला होता है। अधिक सताये जानेपर कंगारू अपनी रक्षा करेगा। कभी-कभी यह अगले पंजे पकड़ कुत्तेको मार डालता है। कंगारू अष्ट्रेलिया और तसमानियामें रहता है। यह पशुवोंका रक्षित तृण चर जाता है। लोग इसको मांस खाने और तृण बचानेके लिये मारा करते हैं। न्युगीनिया और निकटस्थ द्वीपोंमें भी कुछ कंगारू होते हैं।

कंगाल (हिं० वि०) दरिद्र, निर्धन, ग़रीब, मुहताज।

कंगाल-बांका (हिं० पु०) कंगालगुंडा, जिस बदमासके पास पैसा न रहे।

कंगाली (हिं० स्त्री०) दरिद्रता, ग़रीबी, मुहताजी।

कंगुरिया (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, सबसे छोटी उंगली।

कंगूरा (हिं० पु०) १ दुर्गकी भित्तिमें ऊपर बना हुआ छोटा द्वार, बुर्ज। २ प्रासादाग्र, महलकी

चोटी। ३ शिखा, चोटी। ४ मुकुटमणि, ताजका जवाहिर।

कंगूरेदार (हिं० वि०) शिखायुक्त, चोटीदार।

कंघा (हिं० पु०) १ कङ्कत, शाना, ककवा। इसमें एक ही ओर दांत रहते हैं। २ यन्त्रविशेष, बौला, एक औज़ार। इससे जुलाहे करघेमें भरनीके तागे कसते हैं।

कंघी (हिं० स्त्री०) १ कङ्कतिका, छोटा शाना, ककई। इसमें दोनो ओर दांत होते हैं। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह बांसकी खपाचोंसे तैयार होती है। दो पतली और गज़-डेढ़-गज़ लंबी खपाचें चारसे आठ अङ्गुलके अन्तरपर आमने-सामने रखते हैं। फिर उनके ऊपर बहुत छोटी, पतली और चिकनी खपाचें मिला मिलाकर बांधते हैं। बीचमें केवल एक तागेके निकलनेकी जगह रहती है। पहले तानेका एक तार इनके बीचसे निकालते हैं। बाना बुननेमें यह राछके पहले रखा जाता है। तानेमें बाना पड़ जानेसे कंघीको जुलाहे अपनी ओर खींच लेते हैं। इससे बाना सीधा तथा बराबर हो और गंस जाता है।

३ वृक्षविशेष, अतिबला, एक पौदा। यह पांच-छह हाथ बढ़ता है। पत्र पान-जैसे और नुकीले होते हैं। किनारे पर दाना रहता है। वर्ण किञ्चित् हरित् एवं धूसर होता है। पुष्प पीतवर्ण लगते हैं। पुष्प पतित होनेपर मुकुटाकार ढंढ निकलते हैं। उनपर कंगनी चढ़ी होती है। पत्र तथा फल दोनों क्षुद्र, घन एवं मृदु रोमसे आच्छादित रहते हैं। फल जब पक जाता, तब एक एक कंगनीमें कितना ही काला दाना निकल आता है। वल्कलका सूत्र दृढ़ होता है। मूल, पत्र और बीज औषधमें पड़ता है। यह बलवर्धक और शीतल है।

कंघी-चोटी (हिं० स्त्री०) केशमण्डन, बालोंका संवार।

कंघेरा (हिं० पु०) कङ्कतनिर्माता, कंघा तयार करनेवाला।

कंचनिया (हिं० पु०) छोटा कचनार। इसके पत्र एवं पुष्प क्षुद्र होते हैं।

कंचनी (हिं० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

"नचे कंचनी तबला उनके लहरा उड़े सरंगिन क्यार।" (आल्हा)

कंचुरि (हिं०)

कंचुवा (हिं० पु०) कुरता, चोलना।

कंचेरा (हिं० पु०) काचपरिष्कारक, कांचका काम करनेवाला। यह एक जाति है। कंचेरे साधारणतः मुसलमान होते हैं। फिर कहीं-कहीं हिन्दू कंचेरे भी देख पड़ते हैं।

कंचेली (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह पंजाबकी ओर उत्पन्न होता है। उच्चता मध्य श्रेणीकी रहती है। काष्ठ श्वेतवर्ण और सुदृढ़ निकलता है। इसे गृहनिर्माणमें लगाते और कृषियन्त्रके व्यवहारमें भी लाते हैं। पशु कंचेलीके पत्र खूब खाते हैं। वर्षा ऋतुमें इसका बीज पड़ता है।

कंछा (हिं० पु०) कोमल शाखा, हलकी डाल, कल्ला।

कंजई (हिं० वि०) १ धूम्रवर्ण, धूयें-जैसा, खाकी। (पु०) २ वर्णविशेष, खाकी रंग। ३ अश्वविशेष, किसी क़िस्मका घोड़ा। इसके चक्षु धूम्रवर्ण रहते हैं।

कंजड़ (हिं० पु०) १ जातिविशेष, एक क़ौम। इस जातिके लोग बुंदेलखण्डमें बहुत देख पड़ते हैं। कंजर सन, रूई और चमड़ेकी रस्सी बनाते, जिससे अपना काम चलाते हैं। यह लोग सिरकी भी तैयार करते हैं। सांप पकड़ पकड़ के खाना इनका काम है। कंजड़ोंके साथ कुत्ते प्रायः रहते हैं। यह गांवोंमें भीख भी मांगा करते हैं। २ मैला और डरपोक आदमी। ३ भड़वा। कंजड़की स्त्रीको कंजड़ी या कंजरिन कहते हैं।

कंजा (हिं० वि०) १ धूम्रवर्ण, कंजई, खाकी। (पु०) २ कंजी आंख रखनेवाला। ३ वृक्षविशेष, एक पौदा।

कंजास (हिं० पु०) मल, कूड़ा।

कंजियाना (हिं० क्रि०) मन्द पड़ने लगना, लुकठाना, झंवा जाना।

कंजुवा (हिं० पु०) शस्यरोगविशेष, अनाजकी बालमें होनेवाली एक बीमारी। इससे दाना सूख जाता है।

कंजूस (हिं० वि०) कृपण, बखील, कम खर्च करनेवाला।

कंजूसी (हिं० स्त्री०) कृपणता, बखीली, कम खर्च करनेकी हालत।

कंटबांस (हिं० पु०) वंशविशेष, किसी क़िस्मका बांस। यह कण्टकाच्छन्न रहता है। भीतर ठोस होनेसे लोग इसका लठ बहुत पसन्द करते हैं।

कंटर (हिं० पु०) काचपात्र, क़राबा, मीना। यह शब्द अंगरेजी डिकाण्टर (Decanter) का अपभ्रंश है।

कंटा (हिं० पु०) काष्ठविशेष, एक लकड़ी। यह पौन हाथ लंबा रहता है। इसमें एक ओर चपरेका टुकड़ा लगा देते हैं। कंटेसे चूड़ी बनानेवाले चूड़ियां रंगा करते हैं।

कंटाइन (हिं० स्त्री०) १ चुड़ैल, डाइन। २ दुष्टा स्त्री, बदमाश औरत।

कंटाप (हिं० पु०) भारयुक्त अग्रभाग, भारी सिरा।

कंटाल (हिं) कण्टालु देखो।

कंटिया (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कीलक, छोटी कील। २ लोहेकी पतली और टेढ़ी अंगुसी। इससे मछली मारते हैं। ३ लोहेकी टेढ़ी और पतली अंगुसियोंका एक गुच्छा। इससे कूवेंमें गिरी चीज़को फांसकर निकालते हैं। ४ अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह शिरपर धारण की जाती है।

कंटीला (हिं० वि०) कण्टकयुक्त, कांटेदार, जिसमें कांटे रहें।

कंटूनमेंट (अं० पु०=Cantonment) सैन्यावास, छावनी, फौजके रहनेकी जगह। सैन्यावासके शासकको कैंटूनमेंट मजिष्टर (Cantonment-magistrate) कहते हैं।

कंटेला (हिं० पु०) कदलीविशेष, किसी क़िस्मका केला। इसके फल बृहत् और रूक्ष रहते हैं। कंटेला भारतमें प्रायः सब जगह होता है। इसे कच-केला या कठकेला भी कहते हैं। कदली देखो।

कंटोप (हिं० पु०) किसी क़िस्मकी टोपी। इससे शिर और कर्ण आच्छादित रहते हैं। कंटोप जाड़ेमें पहना जाता है।

कंट्रैक्ट (अं० पु०=Contract) नियम, पण, ठेका।

कंट्रैक्टर (अं० पु०==Contractor) पणकर्ता, ठेकेदार।

कंठदबाव (हिं० पु०) गलेको दाबसे किया जानेवाला कुश्तीका एक पेच। इसमें पहलवान दूसरेके गलेपर थपकी देता और उसी ओरका पैर अपने दूसरे हाथसे उठा लेता है। फिर भीतरी अड़ानी टांग लगा वह उसे चित मारता है।

कंठला (हिं० पु०) आभूषणविशेष, एक गहना। यह बच्चोंको पहनाया जाता है। इसमें नजर-बट्टू, बाघके नख और तावीज़ सूतमें गुंथे रहते हैं।

कंठहरिया (हिं० स्त्री०) कण्ठी, छोटा कण्ठहार।

कंठा (हिं० पु०) १ कण्ठगत चिह्नविशेष, गलेका एक निशान्। यह शुकादि पक्षियोंके कण्ठको चारो ओर पड़ जाता है। २ कण्ठभूषणविशेष, गलेका एक गहना। इसमें सोने, मोती या रुद्राक्षके बड़े बड़े दाने रहते हैं। ३ पुष्पमाला, फूलोंका हार। ४ कुरते या अंगरखेके गलेपर लगनेवाला ज़री या सादी बेलका घुमावदार काम। ५ पत्थर या ईंटका एक हिस्सा। यह उपान और कारनिसके बीच पड़ता है।

कंठी (हिं० स्त्री०) १ छोटे छोटे दानोंका कण्ठा। २ तुलसी आदिकी माला। इसकी गुरियां छोटी-छोटी होती हैं।

कंड़रा (हिं० पु०) कन्दल, मूली और सरसों वग़ैरहका मोटा डंठल। इसीमें पुष्प लगता है। यह साग और अचारमें व्यवहृत होता है। कितने ही लोग कंडरा कच्चा ही खा जाते हैं।

कंडा (हिं० पु०) १ गोबरका थापा हुआ लंबा टुकड़ा। यह आग जलानेमें काम आता है। छोटे और गोल कंडेको उपरी कहते हैं। जो गोबर जंगलमें पड़े-पड़े सूख जाता, वह 'बिनुवा कंडा' कहाता है। कंडेकी आग बहुत अच्छी होती है। पहले हलवाई भट्ठीमें कंडा ही सुलगाते थे। कण्डेकी आंचसे बना हुआ खाद्य अत्यन्त सुस्वादु होता है। २ अभ्रक, गोटा। ३ काण्ड, सरकंडा। यह चिक, क़लम और मोढ़ा बनानेमें लगता है।

कंडारी (हिं० पु०) १ कर्णधारी, मांझी, नाव चलानेवाला।

कंडाल (हिं० पु०) १ नरसिंहा, तुरही, करनाय। यह बाजा पीतलकी नलीसे बनाया और मुंहसे फूंककर बजाया जाता है। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह कैंची जैसा बनता है। इसमें दो सरकंडे बराबर बराबर एक साथ बांधे जाते हैं। इसके बाद सरकंडेको तिरछा लगा आमने-सामनेके हिस्सोंको पतली डोरीसे तानते हैं। ऊपरी सिरोंपर तागा बांधते और नीचेके सिरोंको भूमिमें गाड़ते हैं। इसीप्रकार कई कंडाल दूर-दूर रहते हैं। जुलाहे इसपर ताना लगा पाई चलाते हैं।

कंडी (हिं० स्त्री०) १ छोटा कंडा, लंबी उपरी। २ शुष्कमल, गोटा। ३ कंठी, छोटा हार। ४ एक टोकरी। यह लंबी और गहरी होती है। पहाड़ी लोग इसे प्रायः व्यवहार करते हैं।

कंडील (हिं० स्त्री०) कन्दील, लालटेन। यह मट्टी, कागज़ या अबरककी बनती है। कंडीलका मुंह ऊपर खुला रहता है। देवतावोंको प्रकाश पहुंचाने लिये इसमें दीपक जलाकर रखते हैं। फिर कंडील एक गड़े बांसपर रस्सीके सहारे चढ़ा दी जाती है। कारीगर इसमें कागज़की घूमती तसवीरें लगा देते हैं। इससे कंडीलकी शोभा दूनी देख पड़ती है।

कंडीलिया (हिं० स्त्री०) प्रकाशगृह, रोशनी करनेका ऊंचा धरहरा। समुद्रमें जहां शिलाखण्ड निहत रहते, वहां इसे प्रतिष्ठित करते हैं। इसका प्रकाश पाकर जहाज़ उक्त शिलाखण्डोंको बचा देते और अपना निष्कण्टक मार्ग पकड़ लेते हैं। कंडालिया न रहनेसे जहाजोंके शिलाखण्डोंपर टकरा चूर-चूर हो जानेका भय रहता है।

कंडुवा, कंजुवा देखो।

कंडेरा (हिं० पु०) ऊर्णामार्जक, धुनिया, बेहना। पहले इस जातिके लोग धनुर्बाण निर्माण करते थे।

कंडौर (हिं० पु०) १ कंजुवा, बालवाले अनाजकी एक बीमारी। २ कंडा पाथनेकी जगह। ३ कंडोंका ढेर। ४ गया-गुज़रा आदमी, जो शख्स किसी कामका न हो।

कंडौरा (हिं० पु०) १ गोहरौर, कंडा पाथनेकी जगह। २ गोठीला, कंडा रखनेका घर। ३ बठिया, कंडोंका ढेर। इसके ऊपर गोबर लपेट देते हैं।

कंत (हिं० पु०) १ पति, शौहर। २ प्रभु, मालक। यह शब्द संस्कृत 'कान्त'का अपभ्रंश है।

कंतित (हिं० पु०) एक प्राचीन राजधानी। इसका ध्वंसावशेष मिर्जापुरमें पश्चिमकी ओर गङ्गा किनारे पड़ा है। वहां इसी नामका एक ग्राम भी विद्यमान है। कंतितमें मिथ्यावासुदेवकी राजधानी रही।

कंथ, कंत देखो।

कंदला (सं० पु०) १ सोने या चांदीका तार। २ सोने या चांदीकी सलाख। ३ कन्दल, किसी क़िस्मका कचनार। सोने-चांदीके तारका कारखाना कंदला-कचहरी और तार खींचनेवाला 'कंदलेकश' कहता है।

कंदा (हिं० पु०) १ गूदेदार और बेरेशा जड़। २ ओल, ज़मींकन्द। ३ शकरकंद। ४ घुइया, अरुई।

कंदीत (हिं० पु०) देवगणविशेष। यह जैन शास्त्रानुसार वाणव्यन्तरके अन्तर्गत हैं।

कंदील (अ० स्त्री०) १ कंडील, बांसके ऊपर जलाकर चढ़ाई जानेवाली लालटेन। २ जहाज़में हगने-मूतने और नहाने-धोनेकी जगह।

कंदुवा, कंजवा देखो।

कंदूरी (फ़ा० पु०) एक खाना। इससे मुसलमानोंमें बीबी फ़ातमा या किसी दूसरे पीरका फातिहा होता है।

कंदेब (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह पुन्नाग-जातीय वृक्ष है। उत्तर एवं पूर्व वङ्गमें कंदेब उपजता है। काष्ठ सुदृढ़ रहता और नौकाके स्तम्भमें लगता है।

कंदेला (हिं० वि०) अपरिष्कार, गंदा, मैला।

कंदोरा (हिं० पु०) कटिवन्धनविशेष, एक करधनी।

कंध (हिं० पु०) १ शाखा, डाल। २ स्कन्ध, कंधा।

कंधनी (हिं० स्त्री०) किङ्किणी, कमरका एक गहना। कंधनी बच्चोंको अधिक पहनायी जाती है। इसमें घुघरू लगे रहते हैं।

कंधा (हिं० पु०) स्कन्ध, शाना, मोढा।

कंधार (हिं० पु०) १ अफगानस्थानका एक प्रदेश। २ अफ़गानस्थानका एक नगर। कन्दाहार देखो। ३ कर्णधार, मलाह।

कंधारी (हिं० वि०) १ गान्धार देशसम्बन्धीय, कंधारसे ताल्लुक रखनेवाला। २ गान्धार देशका अधिवासी, कंधारका रहनेवाला। (पु०) ३ कन्धारका घोड़ा। ४ कर्णधारी, मांझी।

कंधावर (हिं० स्त्री०) १ वृषभके स्कन्धपर पडनेवाला जूयेका भाग। २ चद्दर, कंधेका दुपट्टा। यह विवाहमें पहनी जाती है। वरको भली भांति वस्त्र पहना ऊपरसे एक दुपट्टा डाल देते हैं। इसका एक किनारा बायें कंधेपर रहता और दूसरा किनारा भी पीछेसे घूम और दाहनी बग़लके नीचे जाकर बायें ही कंधेपर पहुंचता है। यही दुपट्टा कंधावर कहाता है। ३ ताशेकी रस्सी। इसीको गलेमें डाल ताशा छातीपर लटकाया और बजाया जाता है।

कंधियाना (हिं० क्रि०) कंधा देना, कंधेपर रखना।

कंधेला (हिं० पु०) स्त्रियोंके कंधेपर रहनेवाला साड़ीका हिस्सा।

कंधेली (हिं० स्त्री०) पर्याण विशेष, किसी क़िस्मका पालान या खोगीर। गाड़ीमें जोतनेके समय यह घोड़ेके गलेमें डाली जाती है। कंधेली अर्धाकार मेखला-जैसी होती है। नीचे एक मुलायम और गुलगुली गद्दी रहती है। इससे घोड़ेका कंधा नहीं लगता।

कंधैया, कन्हैया देखो।

कंपकंपी (हिं० स्त्री०) कम्प, थरथराहट, डोलाव।

कंपना (हिं० क्रि०) कम्पित होना, थरथराना, हिलना-डुलना।

कंपनी (अं० स्त्री० = Company) १ व्यापारियोंका दल, सौदागरोंका गिरोह। २ ईष्ट इण्डिया कंपनी, १६०० ई०को इङ्गलेण्डमें बना हुआ व्यापारियोंका एक वृन्द। रानी एलिजवेथने इसे भारतवर्षमें जा व्यापार करनेकी आज्ञा दी थी। कंपनीने प्रथम भारतवर्षमें विशाल भवन बनाये। फिर इसने कितनी ही भूमि क्रय की। अन्तको कंपनीने कई प्रान्तोंपर अधिकार किया था। भारतमें इसीने अंगरेजी राज्यकी जड़ जमायी है। प्रामिसरी नोटको 'कंपनी कागज़' कहते हैं। ३ सैन्यविशेष, एक फौज। इसमें कपतानके नीचे ६०से १०० तक सिपाही रहते हैं।

कंपा (हिं० पु०) लासेदार बांसकी पतली खपाच या नीमका सींका। इससे पक्षी पकड़ते हैं। किसी पेड़पर पक्षियोंके खानेकी कोई चीज़ रख चारो ओर कंपे लगाते हैं। जैसे ही पक्षी खानेको आता, वैसे ही उसके परमें यह चिपट जाता है। फिर पक्षी नीचे गिर पड़ता और उड़ नहीं सकता। २ बांसकी एक लंबी छड़। इसके भी सिरेपर लासा लगा रहता है। बहेलिये पक्षीको बैठा देख धोकेसे परमें इसे छुवा देते हैं। फिर पक्षी या तो छड़में ही चिपटा रहता या परमें लासा लग जानेसे नीचे गिर पड़ता है।

कंपाई, कंपकंपी देखो।

कंपाना (हिं० क्रि०) १ हिलाना, डोलना, इधर उधर चलाना। २ भयभीत करना, डर दिखाना।

कंपास (अं० स्त्री० = Compass) १ दिङ्निर्णय-यन्त्र, क़ुतुबनुमा। एक छोटी डब्बीमें चुंबककी सूई लगी रहती है। समतलपर रखनेसे सूईका मुंह उत्तरको पड़ता है। इससे लोग उत्तर दिक् पहंचान लेते हैं। फिर दूसरी दिशावोंका पता लगनेमें कोई कठिनता नहीं आती। कंपाससे समुद्रके नाविकों और स्थलके मापकों तथा देशालेख्योंको बड़ा लाभ पहुंचता है। २ परकार। ३ राइटेंगल। इससे पैमायश करनेमें रेखा लगाते समय समकोण ठहराया जाता है।

कंपिल (हिं० पु०) नगरविशेष, एक शहर। द्रौपदीका स्वयम्बर इसी नगरमें हुआ था।

कम्पिल्ल और काम्पिल्य देखो।

कंपू (हिं० पु०) १ सेनावास, छावनी। २ शिविर, डेरा। 'कंपू बनवागन कदम्ब कपतान खरे।' (पद्माकर) ३ युद्ध-

प्रदेशका एक नगर। कानपुर देखो। यह शब्द अंगरेजोके 'कैम्प' (Camp)का अपभ्रंश है।

कंपोज़ (अं० पु०=Compose) अक्षरोंका जोड़, हरफोंका जमाव। मुद्रायन्त्रमें अक्षरोंको यथास्थान रखना कंपोज कहाता है।

कंपोजिंग (अं० पु०=Composing) १ पुस्तकादि छापनेमें धातुके अक्षर यथास्थान उठा-उठाकर रखनेका काम। २ कंपोज करनेकी मजदूरी। अक्षर जमानेके चौखटेको 'कंपोजिंग फ्रेम', अक्षर जोड़नेके घरको 'कंपोजिंग रूल' और अक्षर जोड़नेकी तख्तीको 'कंपोजिंग स्टिक' कहते हैं।

कंपोजिटर (अं० पु० =Compositor) अक्षर मिलाने या जोड़नेवाला, जो छापनेके लिये हरफोंको सिलसिलेवार बैठाता हो।

कंपोजिटरी (हिं० स्त्री०) १ कंपोजिटरका काम, अक्षरकी जोड़ाई।

कंवर (हिं०) कमल देखो।

कंय, कंय्य देखो।

कंयु, कंय्य देखो।

कंय्य (सं० त्रि०) कं सुखमस्यास्ति कम्-यस्। कंश्भ्यां वभयुस्ति तुतयसः। पा ५।२।१३८। सुखी, शाद, खुश।

कंय्यु, कंय्य देखो।

कंवल (हिं०) कमल देखो।

कंवल-ककड़ी (हिं० स्त्री) कमलकन्द, कमलको जड़।

कंवलगट्टा (हिं० पु०) कमलका बीज। कितने ही लोग कमलगट्टेका हलुवा बनाकर खाते हैं।

कंवलबाव (हिं०) कमलवायु देखो।

कंवासा (हिं० पु०) दुहिताके पुत्रका पुत्र, लड़कीके लड़केका लड़का।

कंवूल (सं० क्लो०) नीलकण्ठोक्त वर्षलग्न-कालीन अष्टम ग्रहयोग। अरबीमें इसे 'कबूल' कहते हैं।

कंश (सं० पु०-क्लो०) मद्यादि पानपात्र, शराब वगैरह पानेका बरतन।

कंशहरीतकी (सं० स्त्री०) शोथ रोगका एक औषध, सूजनकी एक दवा। हरीतकी १०० पल एवं दशमूलका प्रत्येक द्रव्य ६ पल ३ तोला १॥ माशे ५१२ पल जलमें डाल पकाये और १२८ पल शेष रहनेसे उतारे। फिर १०० पल गुड़ डाल अवलेह बना ले। अवलेहमें शुण्ठीचूर्ण ८ तोला, मरिचचूर्ण ८ तोला, पिप्पलीचूर्ण ८ तोला, यवक्षार ८ तोला, गुड़त्वक् २ तोला, तेजपत्र २ तोला और एलाचूर्ण २ तोला मिला देते हैं। प्रत्यह १ कंशहरीतकी और पाव तोले उक्त अवलेह सेवन करनेसे शोथ प्रभृति विविध पीड़ा दब जाती है।

कंस (सं० क्लो० पु०) काम्यते कामयति वा अनेन पातुम्, कम्-स। वृतवदिहनिकमिकषिभ्यः सः। उण् ३।६२। १ मद्यादि पान करनेका पात्र, शराब वगैरह पीनेका बरतन। इसका पर्याय पानभाजन, कंश और कांस्य है। २ धातुद्रव्य, कंसमाक्षिक। ३ स्वर्ण रौप्यादि-निर्मित पानपात्र, सोनेचांदीका गिलास या कटोरा। ४ परिमाण विशेष, आढ़क, आठ सेरकी तौल। ५ कांस्यधातु, कांसा। ७ भाग ताम्र और २ भाग वङ्ग मिलानेसे कांसा बनता है। पर्याय कांस्य, कंशास्थि और ताम्रार्ध है। चीन और भारतवर्षमें कांसेके बरतन चलते हैं। बंगालके खगड़ प्रान्तमें बननेवाले कांसेके बरतन चांदीकी तरह चमकते हैं। इस धातुका आपेक्षिक गुरुत्व ८·४३२ है। कांसेकी परीक्षा करनेसे निम्नलिखित धातु निकलते हैं—

तांबा	...	...	४०·४ भाग।
जस्ता	...	...	२५·४ भाग।
रूपाजस्ता	...	...	३१·६ भाग।
लौह	...	...	२·६ भाग।

विलायती लोग इसे एक प्रकारका जर्मनसिलवर-जैसा (German Silver) समझते हैं।

६ गोलाकार यन्त्रपात्रविशेष। ७ असुरविशेष, एक राक्षस। यह मथुराराज उग्रसेनके पुत्र और कृष्णके मातुल रहे। हरिवंशमें कंसकी उत्पत्ति इस प्रकार लिखी है—

किसी समय ऋतुस्नाता उग्रसेन-पत्नी सुयामुन नामक पर्वतका दर्शन करने गयी थीं। वहां

सौभपति द्रुमिल उन्हें देख कामके वश अधीर हुये। फिर कौशलसे परिचय पा और उग्रसेनका रूप बना उन्होंने उनके साथ रमण किया था। किन्तु उग्रसेन-पत्नीको अपने पतिकी अपेक्षा उनका गौरव अधिक देख सन्देह हुआ और उन्होंने 'कस्य त्वम्' कहकर परिचय पूछा। परिचय पाते ही द्रुमिलका वह तिरस्कार करने लगीं। द्रुमिलने कहा—अनेकानेक मानवपत्नीने व्यभिचारसे ही देवसदृश पुत्र उत्पादन किये हैं। सुतरां व्यभिचारसे तुम्हें भी कोई दोष लग नहीं सकता। तुमने हमसे 'कस्य त्वम्' कह कर परिचय पूछा था। इसीसे तुम्हारे कंस नामक शत्रुविजयी पुत्र उत्पन्न होगा। (हरिवंश ८५ अ०) दुराचार कंस वयःप्राप्त होनेपर अपने पिताको कारारुद्ध कर स्वयं राजा बना था। यदुवंशीय वसुदेवके साथ कंसकी भगिनी देवकीका विवाह होते समय आकाशवाणी सुन पड़ी—देवकीके अष्टम गर्भसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र कंसको मारेगा। इसप्रकार देववाणी सुन इस असुरने भगिनी और भगिनीपति वसुदेवको कारारुद्ध किया था। फिर कंसने एक एक कर उनके छह पुत्र मार डाले। दैव-कौशलसे वसुदेव अष्टम पुत्र कृष्णको वृन्दावनमें नन्दघोषके निकट छोड़ आये थे। उन्हीं श्रीकृष्णके हाथ कंस मारा गया। कंस देखो। 'कान जिमि कंसपर।' (भूषण) ८ एक नदी। यह नदी कलिङ्ग देशमें है। इसके तटपर देवीका मठ बना है। उड़ीसा प्रदेशके बालेश्वर जिलेकी कंसवांस नदी ही कंस नदी मालूम पड़ती है। कंसवांस देखो।

कंसक (सं॰ क्लो॰) कंस संज्ञायां कन्। १ पुष्पका शोश, नयनौषध, कसीस। यह लोहेका मल है। इसे आंखमें लगाया करते हैं।

कंसकर—पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह एक क्षुद्र पर्वत है। प्राचीन कामरूपके अन्तर्गत इसकी अवस्थिति है। वरुणकुण्डके निकट कंसकरकी महिमा अपार है। (कालिकापुराण)

कंसकार (सं॰ पु॰) कंसं तन्मयपात्रं करोति, कंस-कृ-अ-अण्। कर्मण्यण्। पा ३।२।१। कंसेरा, घंटा ढालनेवाला। यह एक जाति है। वृहद्धर्मपुराणके मतमें ब्राह्मणके औरस और वैश्याके गर्भसे कंसेरे उत्पन्न हुये हैं। किन्तु ब्रह्मवैवर्तपुराणमें लिखते—विश्वकर्माने शूद्राके गर्भसे मालाकार, कर्मकार, शङ्खकार, कुविन्दक, कुम्भकार और कंसकार—छह शिल्पकर उत्पादन किये थे। उशना कहते हैं—क्षत्रियाके गर्भ और वैश्यके औरससे तन्तुवाय तथा कंसकारकी उत्पत्ति है। सुतरां इस जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धपर बड़ा गड़बड़ है। फिर भी उक्त तीनों मतोंसे यह जाति सङ्कर-जैसी प्रतिपन्न होती है। जो हो, इस जातिकी वणिक् संज्ञा प्रसिद्ध है। ब्राह्मण कंसकारोंका स्पृष्ट जलादि ग्रहण करते हैं।

कंसकृष् (सं॰ पु॰) कंसं कृष्टवान्, कंस-कृष-क्विप्। श्रीकृष्ण, कंसको चोटी पकड़ कर घसीटनेवाले भगवान्।

कंसजित् (सं॰ पु॰) कंसं जितवान्, कंस-जि-क्विप्। श्रीकृष्ण, कंसको जीतनेवाले भगवान्।

कंसताल (सं॰ पु॰) झांझ, मंजीरा।

कंसपात्र (सं॰ पु॰) कांस्यभाजन, कांसेका बरतन। २ मान विशेष, एक नाप। इसमें चार सेर द्रव्य आता है।

कंसवणिक् (सं॰ पु॰) कंसकार, कंसेरा।

कंसमाक्षिक (सं॰ क्लो॰) स्वर्णमाक्षिक, संग-चकमक, किसी किस्मकी सोनामाखी।

कंसयज्ञ (सं॰ पु॰) यज्ञविशेष।

कंसरटीना (अं॰ पु॰=Concertina) वादित्रविशेष, एक बाजा। यह छोटे सन्दूक-जैसा बना होता है। कंसरटीनाको हस्तद्वयसे खींच खींच प्रतिध्वनित करते हैं।

कनसरवेटिव (अं॰ वि॰=Conservative) १ संरक्षक, मुहाफ़िज़, बचाऊ। २ नवविद्वेषी, स्थितिपालक, पुरानी लकीरका फ़कीर। इङ्गलैण्डकी पारलियामेण्टमें प्राचीन राज्यशासनका पालक और नवीन परिवर्तनका विरोधी राजनैतिक दल 'कनसरवेटिव' कहाता है।

कंसर्ट (अं॰ पु॰=Concert) १ सङ्गीत, तायफ़ा,

रहस, मण्डली, चौकी। इसमें कई बाजे एक साथ बजाये और मिलजुलकर गीत गाये जाते हैं।

कंसवती (सं० स्त्री०) कंसकी भगिनी और वसुदेवकी कनिष्ठा पत्नी।

कंसवांस—उड़ीसेके बालेश्वरप्रान्तमें प्रवाहित एक नदी। यह नदी वीरपाड़ेसे दोधार हो और क्रमागत दक्षिणपूर्व पहुंच सागरमें मिल गयी है। लायचनपुर इसीके मुंहानेपर बसा है।

कंसहनन (सं० क्लो०) कंससंहार, कंसका मारा जाना।

कंसहा (सं० पु०) कंसं हतवान्, कंस-हन्-क्विप्। श्रीकृष्ण, कंसको मारनेवाले भगवान्।

कंसा (सं० स्त्री०) कंसकी भगिनी और उग्रसेनकी कन्या। इनका विवाह देवभागके साथ हुआ था।

कंसाराति, कंसारि देखो।

कंसार (सं० क्लो०) कंसवत् आकारमृच्छति, कंस-ऋ-अण्। अस्थि, कांसे जैसी सफेद हड्डी।

कंसाराति (सं० पु०) कंसस्य अरातिः शत्रुः, ६-तत्। कंसशत्रु श्रीकृष्ण।

कंसारि (सं० पु०) कंसस्य अरिः शत्रुः, ६-तत्। श्रीकृष्ण।

कंसासुर (सं० पु०) कंस नामक असुर।

कंसास्थि (सं० क्लो०) कंसमस्थीव, उपमि०। १ कांस्य धातु, कांसा। २ कंसार, कांसे-जैसी सफेद हड्डी।

कंसिक (सं० त्रि०) कंसेन-आढकमानेन आहृतम्, कंस-टिठन्। कंसाट्टिठन्। पा ५।१।२५। १ कांस्यनिर्मित, कांसेसे बना हुआ। २ एक आढ़क द्वारा आहृत, आठ सेरसे लिया हुआ।

कंसीय (सं० त्रि०) १ पानपात्रके उपयुक्त, प्यालेसे सरोकार रखनेवाला। (क्लो०) २ कांस्यधातु, कांसा।

कंसुला (हिं० पु०) कांसेका पांसा, किटकिरा। यह एक चतुष्कोण खण्ड होता है। इसके पार्श्व गोलाकार क्षुद्र गर्तोंसे आच्छादित रहते हैं। स्वर्णकार कंसुलेपर घुंघरू वगैरहके बोरोंकी खोरिया तैयार करते हैं।

कंसुली (हिं० स्त्री०) कांसेका एक पांसा, छोटा कंसुला।

कंसुवा (हिं० पु०) कीटविशेष, एक कीड़ा। यह ऊखमें लगता है। कोमल वृक्ष इसके आक्रमणसे मर जाते हैं।

कंसोद्भवा (सं० स्त्री०) कंसात् धातुविशेषात् उद्भवति, कंस-उत्-भू-अच्-टाप्। सौराष्ट्रमृत्तिका, एक खुशबूदार मट्टी। इसका संस्कृतपर्याय आढ़की, तुवरा, काक्षी, मृदाह्वया, सौराष्ट्री, पार्वती, कालिका, पर्पटी और सती है। वैद्योंने अनेक औषधोंमें इसका व्यवहार करनेको उपदेश दिया है। किन्तु आजकल इस मृत्तिकाका एकान्त अभाव होनेसे परिभाषाके आदेशानुसार इसके बदले पङ्कपर्पटी औषधोंमें डालते हैं।

कक् (धातु) भ्वा० आत्म० अक० सेट्। "कक्किच्छ गर्वचापल्ये।" (कविकल्पद्रुम) १ गर्व करना, मग़रूर होना। २ चपल पड़ना,बेक़रार बनना, बदल चलना। ३ इच्छा होना, ललचाना। भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "ककिङ्‌ व्रजने।" (कविकल्पद्रुम) ४ गमन करना, चलना।

ककई (हिं० स्त्री०) १ कंघी, दोनो ओर दांत रखनेवाला छोटा ककवा। २ छोटी पुरानी ईंट।

ककजाक्षत (सं० त्रि०) क्षतविक्षत, छांटा हुआ।

ककड़ासींगी (हिं०) कर्कटशृङ्गी देखो।

ककड़ी (हिं० स्त्री०) १ लताविशेष, एक बेल। यह भूमिपर बढ़ती है। फाल्गुन-चैत्रको लगी ककड़ी वैशाख-ज्येष्ठ मास फलती है। फल लम्बा और पतला रहता है। कच्ची खानेके अतिरिक्त इसको शाकमें भी व्यवहार करते हैं। लखनऊकी ककड़ियां बहुत नरम, पतली और मीठी होती हैं। गुण शीतल है। इसका बीज ठंढाईमें पड़ता है। फिर बीजको सुखा और छील कर चीनीमें पाग लेते हैं। यह द्रव्य खानेमें बहुत सुस्वादु होता है। (२) फूट। यह बेल ज्वार और मक्केके खेतमें होती है। फल लंबे और बड़े लगते हैं। भाद्र मास यह ककड़ी पककर फूट जाती है। फूट खानेमें फीकी पड़ती है। प्रायः लोग इसे गुड़के साथ व्यवहार करते हैं।

ककना (हिं० पु०) १ कङ्कण, किसी किस्मको सोने-चांदी वगैरहको चूड़ी। २ इमलीका फल। ३ इमारतका एक हिस्सा।

ककनी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकङ्कण, छोटा कंगन। २ इमारतका एक हिस्सा। ३ दानेदार दीवार। ४ एक अनाज। ५ कपड़ेका छल्ला। ६ एक मिठाई। ७ इमलीका छोटा फल।

ककन्द (सं० पु०) कको गर्वादिकं भवत्यस्मात्, कक-अन्दच्। १ स्वर्ण, सोना।

ककर (सं० पु०) कक-अरच्। पक्षिविशेष एक चिड़िया।

ककरघाट (सं० पु०) कं विषं करघाटे यस्य, पृषोदरादित्वात् हस्य घः। मूल विषवृक्षविशेष, ज़हरीली जड़का एक पेड़।

ककराउल—विहार प्रान्तके दरभंगा ज़िलेका एक ग्राम। यह दरभंगा नगरसे प्रायः छह कोस उत्तर अवस्थित है। कपड़ा बहुत अच्छा बुना जाता है। नैपाली इस कपड़ेको बहुत पसन्द करते हैं। कहते, ककराउलमें कपिल मुनि रहते थे। प्रति वर्ष माघ मासमें मेला लगता है।

ककराल—बदाऊं ज़िलेकी दातागंज तहसीलका एक नगर। यहां हिन्दू और मुसलमान दोनों रहते हैं। सिपाही विद्रोहके समय मुसलमान उत्तेजित हुये थे। १८५८ ई०के अपरेल मास जनरल पेनी विद्रोहियोंको शासन करनेके लिये यहां आये। किन्तु विद्रोहियोंने उन्हें मार डाला। उनके सैन्यसामन्तोंने विद्रोहियोंको परास्त किया था। इस नगरमें हिन्दुवोंके मन्दिर और मुसलमानोंकी मसजिदें दोनों हैं। सिपाही विद्रोहसे पहले यहां अच्छे-अच्छे मकान् बने थे। किन्तु विद्रोहियोंने उन्हें फूंक-फांक भस्म कर डाला। आजकल मट्टीके ही घर अधिक हैं। सराय, डाकखाना और थाना विद्यमान है।

ककराली (हिं० स्त्री०) कंखवाली, हाथकी बग़ली गिलटी, कांखका कड़ा फोड़ा।

ककरासींगी (हिं०) कर्कटशृङ्गी देखो।

ककरी ककड़ी देखो।

ककरीमुख (सं० पु०) केश, बाल।

ककर्दु (सं० पु०) हिंसा, दुश्मनोंका मटियामेट।

"ककर्दवे वृषभोयुक्त आसीत्।" (ऋक् १०।१०२।६) 'ककर्दवे वध्रचां हिंसनाय।' (सायण)

ककसिंह (कङ्करशृङ्ग)—एक क्षुद्र पर्वत। यह दक्षिण-पश्चिम भारतके मरवास-सिंहपुर-पथसे प्रायः १२ कोस दूर बरदिये नालेके पश्चिम अवस्थित है। इस क्षुद्र पर्वत पर अनेक शिवमन्दिर भग्नावशेष देख पड़ते हैं। आज भी १२ मन्दिर खड़े हैं। प्रत्येक मन्दिरमें ५।६ फीट ऊंचा शिवलिङ्ग विराज रहा है। मन्दिर देखनेसे ८।९ सौ वर्षके पुरातन मालूम होते हैं।

ककवा (हिं० पु०) १ कङ्कत, कंघा। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे जुलाहे करघेमें भरनीके तागे कसते हैं। कंघी देखो।

ककसा (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली। यह गङ्गा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, सिन्धु आदि नदीमें उत्पन्न होती है। मांस रूक्ष रहता है।

ककहरा (हिं० पु०) वर्णसमूह, हरूफ़-तहज्जी, 'क'से 'ह' तक अक्षर।

ककही (हिं० स्त्री०) १ कार्पासविशेष, एक कपास। इसकी रूई लाल निकलती है। २ चौबगला। ३ कंघी।

ककाहर (कंकाहर) मध्यप्रदेशके नागपुर ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० २०° १५' उ० और देशा० १८°३२' पू०में महानदीके दक्षिणतटपर अवस्थित है। दुर्ग-परिवेष्टित अत्युच्च शैलमालाका व्यवधान पड़ गया है। पहले यह नगर महाराष्ट्रोंके अधीन रहा। किन्तु तत्कालीन राजाको युद्ध उठ खड़ा होनेसे ५०० सिपाही देना पड़ते थे। १८०९ ई०को राजाका अधिकार छूटा। किन्तु अप्पा साहबके पलायनकाल राजाने कुछ विद्रोहियोंसे मिल इस स्थानको फिर दबा लिया। आजकल राजाको प्रति वर्ष ५००) रु० कर देना पड़ता है।

ककाटिका (सं० स्त्री०) ललाटका अस्थि, मत्थेकी हड्डी।

ककारपूर्वद्रव्य (सं० क्ली०) ककारपूर्वक द्रव्य, जिस

चीज़के नाममें पहले 'क' अक्षर रहे। रक्तपित्तमें कटुक, कालशाक, कुष्माण्ड, ककंटी, कर्कन्धु, कर्कोटक, कलिङ्ग, करमर्द, करीर, कतक, कशेरु और काञ्जिक वर्ज्य है। (भावप्रकाश)

ककुझिनी (सं० स्त्री०) ज्योतिष्मतीलता, रतनजोत।

ककुञ्जल (सं० पु०) कं जलं कूजयति याचते, क-कूज-अलच् पृषोदरादित्वात् नम्, ह्रस्वश्च। चातक-पक्षी, पपीहा।

ककुञ्जला (सं० स्त्री०) ककुञ्जल देखो।

ककुणक (सं० पु०-क्ली०) बालरोग विशेष, बच्चोंकी एक बीमारी।

ककुत् (सं० स्त्री०) कं सुखं कारयति प्रापयति, गृहस्थानिति शेषः, क-कु-णिच्-क्विप् तुगागमः ह्रस्वश्च पृषोदरादित्वात्। १ वृषके पृष्ठदेशका अवयव विशेष, बैलके कंधेका कुब्बड़। २ ध्वज, निशान्। ३ छत्र-चामरादि राजचिह्न, बादशाही ठाटबाट। ४ पर्वत-शृङ्ग, पहाड़की चोटी। ५ दर्वीकर सर्पभेद, किसी किस्मका सांप।

ककुत्स्थल (वै० क्ली०) ककुद् नामकं स्थलं अवयव-विशेषः पृषोदरादित्वात् साधुः। १ ककुद् नामक वृषावयव, बैलका कुब्बड़।

ककुत्स्थ (सं० पु०) ककुदि तिष्ठतीति, ककुद-स्थ-क। सूर्यवंशीय पुरञ्जय नामक एक राजा। इनके पिताका नाम शशाद रहा। पुरञ्जयके राज्यशासनकाल स्वर्गमें देवोंने दैत्योंसे हार विष्णुका आश्रय पकड़ा था। विष्णुने उन्हें पुरञ्जयसे साहाय्य लेनेको सिखाया। उसीके अनुसार देवतावोंने इनसे आ-प्रार्थना की थी। यह भी सम्मत हुये और वृषरूपी इन्द्रके ककुद् स्थलपर चढ़ युद्धको चले। इन्होंने उस युद्धमें समग्र दैत्योंको हराया था। इसीसे देव-तावोंने प्रीत हो इनका नाम ककुत्स्थ रख दिया। (भागवत ९।६।११)

ककुद्, ककुत् देखो।

ककुद (सं० पु०-क्ली०) कं सुखं कौति सूचयतीति, क-कु-क्विप्-तुक्। १ वृषका अवयवविशेष, बैलका कुब्बड़। २ प्रधान, मुखिया। ३ राजचिह्न, शाही ठाट-बाट। ४ पर्वताग्रभाग, पहाड़की चोटी। ५ दर्वीकर सर्पभेद, किसी किस्मका सांप।

ककुदकात्यायन (सं० पु०) ब्राह्मणविशेष, किसी ब्राह्मणका नाम। यह शाक्यमुनिके घोर प्रतिद्वन्द्वी थे।

ककुदाक्ष (सं० त्रि०) ककुदं राजचिह्नं अश्नोति। राजचिह्नधारक, शाही निशान् रखनेवाला।

ककुदावर्त (सं० पु०) ककुदि आवर्तः, कर्मधा०। वृषके ककुद्-स्थलका रोमावर्तविशेष, बैलके कुब्बड़की भौंरी।

ककुद्मत् (सं० पु०) ककुदस्त्यस्य, ककुद-मतुप्। १ वृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ ऋषभक नामक वैद्योक्त द्रव्यविशेष, एक जड़ी-बूटी। ४ ऊर्मी, लहर। (त्रि०) ५ उत्तुङ्ग, ऊंचा, चढ़ता हुआ। ६ ककुद-युक्त, कुब्बड़ रखनेवाला।

ककुद्मती (सं० स्त्री०) ककुदिव अभिशयितो मांस-पिण्डोऽस्त्यस्याम्, ककुद्-मतुप्-ङीप्। १ नितम्ब, चूतड़। २ छन्दोविशेष।

ककुद्मान्, ककुद्मत् देखो।

ककुद्मिन् (सं० पु०) ककुदस्त्यास्ति, ककुद्-णिनि। १ वृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ विष्णु। ४ रैवत राजा। इनके पिताका नाम रेवत रहा। बलदेव ककुद्मीके जामाता थे।

ककुद्मिसुता (सं० स्त्री०) ककुद्मिनः रैवतस्य सुता, ६-तत्। रेवती, कृष्णाग्रज बलदेवकी भार्या।

ककुद्वत् (सं० पु०) वृषभ, कुब्बड़वाला बैल या भैंसा।

ककुद्वती (सं० स्त्री०) प्रद्युम्नकी भार्याका नाम।

ककुद्वान्, ककुद्वत् देखो।

ककुन्दर (सं० क्ली०) कस्य शरीरस्य कुं अवयव-विशेषं दृणाति, ककु-दृ-खच्-नुम्। १ नितम्बस्थलके उभयपार्श्वस्थ गर्तद्वय, कूलेके गड्ढे। २ वृक्षविशेष, पेड़। यह कटु, तिक्त, ज्वरघ्न, उष्णकृत् और रक्त एवं कफदाहके दोष मिटानेवाला होता है। ककुन्दरका आर्द्र मूल मुखमें रखनेसे मुखके सब रोग नाश हो जाते हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

ककुम्मत्, ककुद्मत् देखो।

ककुप् (सं० स्त्री०) क-स्कुभ-क्विप्। १ दिक्, ओर,

तरफ़। २ कोई रागिणी। इसका अपर नाम 'कुड़' है। दामोदर मिश्रने कहा है—

ककुभाका अङ्ग सुन्दर, वर्धित और रतिके रससे मण्डित है। मुख चन्द्रके तुल्य झलकता है। चम्पकमाला परिशोभित है। यह रागिणी देखनेमें परम रमणीय, मनोहर, दानशील और कटाक्षयुक्त है।

"सुपोषिताङ्गी रतिमण्डिताङ्गी चन्द्रानना चम्पकदामयुक्ता।
कटाक्षिणी स्यात् परमाविशिष्टा दानेन युक्ता ककुभा मनोज्ञा॥"
(सङ्गीतदर्पण)

"धैवतांशग्रहन्यासा सम्पूर्णा ककुभा मता।
तृतीये मूर्च्छनोत्पन्ना शृङ्गाररसमण्डिता॥"

सम्पूर्ण ककुभा रागिणी धवतके अंश तथा तृतीय मूर्च्छनासे उत्पन्न है। इसे शृङ्गार रसमें गाना चाहिये। यथा—ध नि स रि ग म प ध।

३ दक्षकी एक कन्या। यह धर्मकी पत्नी रहीं। ४ शोभा, खूबसूरती। ५ चम्पकमाला, चंपेका हार। ६ शास्त्र। ७ प्रवेणी, बालोंकी बांकड़ी।

ककुभ्, ककुप् देखो।

ककुभ (सं० पु०) कस्य वायोः कुः स्थानं भाति अस्मात्, क-कु-भा-क पृषोदरादित्वात्; कं वातं स्कुभ्नाति विस्तारयतीति वा, क-स्कुभ-क। १ अर्जुन नामक वृक्ष विशेष, अर्जुनका पेड़। वैद्यकके मतसे यह वृक्ष शीतल होता और भग्न, क्षत, क्षय, विष, रक्तदोष, मेह, मेद, व्रण एवं हृद्रोगको खोता है। अर्जुन देखो। २ वीणाके प्रान्तदेशका वक्र काष्ठ, घरन। इसका अपर संस्कृत नाम प्रसेवक है। ३ वीणाके उपरि देशका अंशविशेष। ४ वीणाकी अलाबु या तांबी। ५ रागविशेष। ६ शिव। ७ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ८ तीर्थविशेष। यहां कश्यपादि वास करते हैं। (लिङ्गपु० ४९।६०) ९ प्रेत, शैतान्। १० पर्वतविशेष, एक पहाड़। (त्रि०) ११ उत्कृष्ट, बढ़िया।

ककुभत्वक् (सं० स्त्री०) अर्जुनवृक्षका वल्कल, अर्जुनकी छाल।

ककुभशाखा (सं० स्त्री०) भार्गी, एक जड़ी-बूटी।

ककभा (सं० स्त्री०) १ दिक्, ओर, तरफ़। २ एक रागिणी। यह मालकोसकी पांचवीं रागिणी है। ककुभा सम्पूर्ण जातिकी होती है। दिनके दूसरे पहर यह गायी जाती है। ककुप् देखो।

ककुभादनी (सं० स्त्री०) नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

ककुभादिचूर्ण (सं० क्ली०) हृद्रोगाधिकारोक्त वैद्यक औषध, छातीकी बीमारीमें दी जानेवाली एक दवा। अर्जुनकी छाल, वच, रास्ना, बला (खरेटी), गोरक्षचक्रकुल्या, हरीतकी, शठी (कचूर), कुष्ठ, पिप्पली और शुण्ठी—प्रत्येकका चूर्ण सम भागमें मिला आध तोले उपयुक्त परिमाणसे घृतके साथ सेवन करनेपर हृद्रोग प्रशमित होता है।

ककुम्मती (वै० स्त्री०) वैदिक छन्दोविशेष।

"एकस्मिन् पञ्चके छन्दः शङ्कुमती षट्के ककुम्मती।" (कात्यायन)

ककुह (सं० त्रि०) कस्य सूर्यस्य कुं स्थानं जिहीते अतिक्रामतीव, क-कु-हा-क। १ अतिशय उन्नत, निहायत ऊंचा। २ महत्, बड़ा। (पु०) ३ रथका एक अङ्ग, गाड़ीका कोई हिस्सा। सम्भवतः गाड़ीवान्‌की बैठकको ककुह कहते हैं।

ककूक, ककूल देखो।

ककूणक (सं० पु० क्ली०) शिशुके नेत्रवर्त्मका एक रोग, बच्चोंके पपोटेकी एक बीमारी। ककूणक क्षीरदोषसे शिशुके नेत्रवर्त्ममें उपजता है। इससे कण्डू स्रवण होता है। फिर शिशु ललाट, अक्षिकूट और नासा घर्षण किया करता है। वह न तो सूर्यकी प्रभा देख और न वर्त्म खोल सकता है। (माधवनिदान)

ककूल (सं० पु०-क्ली०) १ गोशकृदादि चूर्णसन्ताप, गोबर वगैरहके चूरकी आंच। २ अपूपपाचनार्थ मृण्मय पात्र, पूरी पकानेको मट्टीका बरतन।

ककेड़ा (हिं० पु०) कर्कटक, चिचड़ा। इसका फल सांप-जैसा होता है। ककेड़ेका शाक बनाते हैं।

ककेरुक (सं० पु०) एकप्रकार कीट, किसी क़िस्मका कीड़ा। यह कीट पाकस्थलीमें उत्पन्न होता है।

ककैया (हिं० स्त्री०) लखावरी ईंट, लखौरी। यह कंघी-जैसी होती है। कोई सौ वर्ष पहले इस ईंटकी भारतमें बड़ी चाल थी। इसीको चिन-चिन पक्के

मकान् बनते रहे। किन्तु आजकल मोटी ईंटके सामने इसका व्यवहार बिलकुल उठ गया है।

ककोरा—युक्तप्रदेशके बदाऊं जिलेका एक ग्राम। यह बदाऊं नगरसे छह कोस दूर गङ्गानदीके तटपर अवस्थित है। प्रति वर्ष कार्तिक मासको पूर्णिमाको महोत्सव होता है। कानपुर, दिल्ली, फरुखाबाद और राहेलखण्डके नाना स्थानोंसे प्रायः लाखों लोग आते हैं। यात्री पुण्यसलिला गङ्गामें तर्पण और अवगाहनादि कार्य सम्पन्न कर व्यवसायमें लगते हैं। उसी समय बाज़ार भी जमता है। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे चीजें बिकने आया करती हैं। गृहस्थको आवश्यकताके अनुसार सकल ही द्रव्य मिल जाते हैं।

कक (धातु) भ्वा० पर० अक० सेट्। "कक हासे।" (कविकल्पद्रुम) हास्य करना, हंसना।

ककट (सं० पु०) कक-अटन्। मृगविशेष, अश्वमेध यज्ञमें यह मृग आवश्यक आता था।

ककड़ (हिं० पु०) किसी किस्मकी बनी हुई तम्बाकू। तम्बाकूके पत्तेको सेंक चूर करते और उसमें पीनेको तम्बाकू मिला छोटी चिलममें भरते हैं। इसीका नाम ककड़ है। कई लोगोंके बैठकर तम्बाकू पीनेकी जगहको 'ककड़खाना', बहुत तम्बाकू पीनेवालेको 'ककड़बाज़' और पैसा लेकर हुक्का पिलानेवालेको 'ककड़वाला' कहते हैं।

कक्का (हिं० पु०) १ केकय देश, एक मुल्क। यह काश्मीरके अन्तर्गत है। कक्काके अधिवासियोंको 'कक्करवाले' या 'गक्कर' कहते हैं। २ दुन्दुभि, नक्कारा। ३ एक प्रकारके सिख। इन लोगोंमें कच्छ, कड़ा, कढ़ा, कर्द और केस—पांच ककार व्यवहृत हैं। ४ काका, पीती। प्रायः पिताके लघु भ्राताको 'कक्का' कहते हैं।

ककुल (सं० पु०) कक-उलच्। वकुलवृक्ष, मौल सिरीका पेड़।

कक्कोल (सं० पु०) ककते प्रकाशते, कक्-क्विप्; कोलति संस्त्यायति, कुलज्वलादित्वात् ण; कक् चासौ कोलश्चेति, कर्मधा०। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलचीनी। इसका संस्कृत पर्याय कोलक, कोषफल, कृतफल, कटुकफल ढेय, खलमरिच, कक्कोलक, माधवोचित, काल, कटफल और मरिच है। यह लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, तिक्त, हृद्य, रुचिकारक और मुखदुर्गन्ध, हृद्रोग, कफ, वायुजन्य रोग तथा नेत्ररोगनाशक है। (भावप्रकाश) २ गन्धपटी, एक जड़ी-बूटी।

कक्कोलक (सं० क्ली०) कक्कोलस्य फलम्, कक्कोल स्वार्थे कन्। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलचीनी। २ कक्कोल या शीतलचीनीका अतर। ३ शाल्मलिद्वीपके अन्तर्गत सप्तम वर्ष पर्वत। (विष्णुपु० २।४ अ०)

कक्कक्क (सं० पु०) गुणचन्द्रके भ्रातापत्य।

कक्ख् (धातु) भ्वा० पर० अक० सेट्। "कक्ख हासे।" (कविकल्पद्रुम) हास्य करना, हंसना।

कक्खट (सं० त्रि०) कक्खतीति, कक्ख-अटन्। १ हास्ययुक्त, हंसोड़, हंसनेवाला। २ कठिन, कड़ा। (पु०) ३ खटिका, खड़िया मट्टी। ४ वृक्षविशेष, पाटका पेड़।

कक्खटपत्र (सं० पु०) कक्खटानि प्रकाशमानानि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। वृक्षविशेष, पाटका पेड़। (Corchorus olitorius) इससे पाट या सन उपजता है। संस्कृत पर्याय पट्ट, वाजशल, नालि और चिम है।

कक्खटपत्रक, कक्खटपत्र देखो।

कक्खटी (सं० स्त्री०) कक्खति प्रकाशयति धर्षणेन वर्णान्, कक्ख-अटन्-ङीप्। खटिका, खड़िया मट्टी। इसका संस्कृत पर्याय खटिका, वर्णलेखा, काठनी और खटी है। खड़िया देखो।

कक्ष (सं० पु०) कषतीति, कष-स। वृतृवदिहनिकमिकषिभ्यः सः। उण् ३।६२। १ बाहुमूल, बगल, कांख। २ तृण, घास। ३ लता, बेल। ४ शुष्क तृण, सूखी घास। ५ कच्छ, कछार। ६ शुष्क वन, सूखा जंगल। ७ पाप, गुनाह। ८ वन, जंगल। ९ कद्र। १० भित्ति, दीवार। ११ पार्श्व, ओर। १२ प्रकोष्ठ, कमरा, घर। १३ कक्षारोग, कखरवार। १४ कांछ, कांग। १५ अञ्चल, पीठपर पड़नेवाला दुपट्टेका

पक्षा। १६ ग्रहगणके भ्रमणका पथ, सितारोंके घूमनेकी राह। १७ प्रतियोगिता, विरोध, हसद। १८ नौकाका एक अवयव, नावका एक हिस्सा। १९ कमरबन्द, फेंटा। २० राजान्तःपुर, शाही ज़नानख़ाना। २१ महिष, भैंसा। २२ बहेड़ा। २३ जन्तुगणका शब्द, जानवरोंकी बोली। २४ समता, बराबरी। २५ परिमाणविशेष, रत्ती। २६ भारतोक्त जातिविशेष। २७ बृहद् द्वार, फाटक। २८ तुला, तराजका पक्षा। २९ गोट, किनारी। ३० ग्रह, नक्षत्र।

कच्छक (सं॰ पु॰) सर्पविशेष, एक सांप। यह राजा जनमेजयके सर्पयज्ञकालपर दग्ध हुआ था।

कच्छतु (सं॰ पु॰) कच्छ इव तन्यते, कच्छ-तन्-ड्। वृक्षविशेष, एक पेड़।

कक्षधर (सं॰ क्ली॰) कक्षां धारयति, कक्षा-धृ-अच् पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। सुश्रुतोक्त वक्ष और कक्षदेशके मध्यका मर्मस्थान, कंधेका जोड़। यह मर्म विद्ध होनेसे पक्षाघात लगता है।

कच्छप (सं॰ पु॰) कच्छे जलप्रायदेशे पिबति, कच्छ-पा-क। कच्छप, कछुवा।

कच्छरुहा (सं॰ स्त्री॰) कच्छे जलप्राये रोहति, कच्छ-रुह-क। नागरमोथा। यह जलप्राय देशमें ही अधिकांश उत्पन्न होती है।

कक्षशाय (सं॰ पु॰) कक्षे शुष्कतृणे शेते, कक्ष-शी-ण। कुक्कुर, कुत्ता।

कक्षशायिनी (सं॰ स्त्री॰) कक्ष-शी-णी-ङीप्। कुतिया।

कक्षशायु (सं॰ पु॰) कक्षे शेते, कक्ष-शी-उण्। कुक्कुर, कुत्ता।

कक्षसेन (सं॰ पु॰) १ कोई राजा। यह परीक्षितके पुत्र और अविक्षितके पौत्र थे। २ कोई ऋषि। इनके पुत्रका नाम अभिप्रतारी था।

कक्षस्थ (सं॰ त्रि॰) पार्श्वपर अवस्थित, पुट्ठेपर बैठा हुआ।

कक्षा (सं॰ स्त्री॰) कक्ष-टाप्। १ हस्तीके बन्धनकी रज्जु, हाथी बांधनेकी रस्सी। २ चन्द्रहार। ३ प्रकोष्ठ, कोठरी। ४ भित्ति, दीवार। ५ साम्य, बराबरी। ६ रथका एक अङ्ग, गाड़ीका कोई हिस्सा। ७ काछ, लांग। ८ विरोध, झगड़ा। ९ मध्यदेश, दरमियानी जगह। १० राजाका अन्तःपुर, शाही ज़नानख़ाना। ११ अञ्चल, दुपट्टेका पक्षा। १२ रोगविशेष, कांखमें निकलनेवाली गिलटी। सुश्रुतके वचनानुसार वामपार्श्व और बग़लमें वेदनायुक्त जो कृष्णवर्ण स्फोटक निकल आता, वही कक्षा कहलाता है। यह पित्तज रोग है। इसमें पित्तसे उत्पन्न विसर्पकी भांति चिकित्सा करनेका उपदेश दिया गया है। कक्षापर पद्मके मृणालसे संलग्न कर्दम, गुलञ्च और शुक्तिको पीस अथवा पहाड़ी मट्टीमें घी डाल प्रलेप चढ़ाना चाहिये। वटके मूल, मुस्तक, कदलीके मूल और पद्मके मृणालकी ग्रन्थि पीस तथा शतधौत घृतके साथ मिला प्रलेप लगानेसे भी उपकार होता है। (चक्रदत्त)

कक्षान्तर (सं॰ क्ली॰) अन्तःपुर, ज़नानख़ाना, भीतरी या घराऊ कमरा।

कक्षापट (सं॰ पु॰) कक्षाकारः पटः वस्त्रम्। कौपीन, कांछा।

कक्षावान् (सं॰ पु॰) कक्षा साम्यमस्यास्तीति, कक्षा-मतुप् मस्य वः। मुनिविशेष।

कक्षावेक्षक (सं॰ पु॰) कक्षाया अवेक्षकः, ६-तत्। १ अन्तःपुरपालक, कञ्चुकी, ज़नानख़ानेका मुहाफ़िज़। २ उद्यानपालक, बाग़बान्। ३ नाट्यकारक, तमाशा करनेवाला। ४ कवि, शायर। ५ लम्पट, ज़िनाकार। ६ द्वाररक्षक, दरबान्।

कक्षी (सं॰ त्रि॰) कक्षं पापमस्त्यस्य, कक्ष-इनि। पापी, गुनहगार।

कक्षीकृत (सं॰ त्रि॰) कक्ष-च्वि-कृ-क्त। आयत्तीकृत, अधीन, मातहत, दबाया हुआ।

कक्षीवान् (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष। इनके पिताका दीर्घतमा और माताका नाम उशिज् था। इन्हें पज्रिय भी कहते हैं।

कक्षेयु (सं॰ पु॰) रौद्राश्वके पुत्र। दश अप्सराओंके गर्भसे रुद्राश्वके दश पुत्र उत्पन्न हुये थे। उनमें घृताचीके गर्भसे जो पुत्र उपजा, उसका नाम कक्षेयु पड़ा।

कक्षोत्था (सं॰ स्त्री॰) कक्षात् कच्छभूमितः उत्तिष्ठति, कक्ष-उत्-स्था-क-टाप्। भद्रमुस्ता, नागरमोथा

कच्य (सं० क्ली०) कक्षायै साम्याय भवम्, कक्षा-यत्। १ पात्र, प्याला। २ रथाङ्गविशेष, गाड़ीका एक हिस्सा। (पु०) ३ वृद्र। ४ उत्तरीय वस्त्र, चद्दर। ५ प्रकोष्ठ, कोठा। ६ सादृश्य, बराबरी। ७ राजान्तःपुर, शाही ज़नानख़ाना। ८ पार्श्वभाग, बग़ली हिस्सा। (त्रि०) ९ कक्षपूर्णकारक, बग़ल भर देनेवाला। १० कक्षोत्पन्न, बग़लसे निकला हुआ। ११ शुष्क तृणादियुक्त, झाड़ी या सूखी घाससे भरा हुआ। १२ गुप्त, पोशीदा। १३ वध्रीपूर्णकारक, हलकेको पूरा करनेवाला।

कच्यप्र (सं० त्रि०) वध्रीपूर्णकारक, तंगको पूरा करनेवाला। यह शब्द अश्वादिका विशेषण है।

कच्या (सं० स्त्री०) कक्षे भवा, कक्ष-यत्-टाप्। १ चर्मरज्जु, चमड़ेकी रस्सी, नाड़ी। २ हस्तीबन्धनकी चर्मरज्जु, हाथी बांधनेकी चमड़ेकी बद्धी। इसका संस्कृत पर्याय चुषा, वरत्रा, बुषा, दूष्या और कक्षा है। ३ प्रकोष्ठ, आंगन। ४ महल, इमारत। ५ चन्द्रहार। ६ सादृश्य, बराबरी। ७ उद्योग, कोशिश। ८ हहती। ९ उत्तरीय वस्त्र, ओढ़नी, झूल। १० चन्द्रहार बांधनेका धागा। ११ गुञ्जा, रत्ती। १२ अङ्गुलि, उंगली। १३ कमरबन्द। १४ हौदा, अमारी। १५ ओढ़ी। १६ तंग, घोड़ा कसनेकी चमड़ेकी बद्धी।

कच्यावान् (सं० पु०) कक्ष्या अस्त्यस्य, कक्ष्या-मतुप् मस्य वः। १ हस्ती, हाथी। (त्रि०) २ वध्रीयुक्त, तंग रखनेवाला।

कच्यावेक्षक, कक्षावेक्षक देखो।

कखवाली (हिं० स्त्री०) कक्षारोग, ककराली, बग़लमें निकलनेवाला कड़ा फोड़ा। कक्षा देखो।

कखौरी (हिं० स्त्री०) १ कक्षा, कांख। २ कखवाली।

कख्या (सं० स्त्री०) कख-यत्-टाप्। कक्षा देखो।

कगदही (हिं० स्त्री०) काग़ज़ वग़ैरह बांधनेका बस्ता।

कगर (हिं० पु०) १ उच्च तट, ऊंचा किनारा। २ ओंठ, बाट। ३ सीमा, डांड़। ४ कारनिस, छतके नीचे दीवार की उभरी हुई मेंड़। (क्रि० वि०) ५ तट-पर, किनारे। ६ पृथक, अलग।

कगार (हिं० पु०) १ उच्चतट, ऊंचा किनारा। २ नदीका करारा। ३ भूमिका उन्नत भाग, टीला।

कगित्थ (सं० पु०) कपित्थक, कैथा।

कगीड़ो (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र उत्पन्न होती है। इसका काष्ठ गृहनिर्माणकार्यमें नहीं लगता।

कङ्क (सं० पु०) कङ्कते उद्गच्छति, कक्-अच्-नुमच्। १ क्रौञ्चपक्षी, बगला, बूटोमार। इसका संस्कृतपर्याय लोहपुच्छ, सदंशवदन, खर, रणालङ्करण, क्रूर, आमिषप्रिय, अरिष्ट, कालपुष्ट, किंशारु, लोह-पृष्ठक, दीर्घपाद और दीर्घपात् है। कङ्कका मांस हृष्य, वीर्यविवर्धन और कफहर है। (चरिसंहिता) २ यमराज। ३ छद्मवेशी ब्राह्मण, बना हुआ ब्राह्मण। ४ युधिष्ठिर। अज्ञातवासके समय युधिष्ठिर 'कङ्क' नामसे विराटराजके सदस्य बने थे। ५ कंसासुरके भ्राता। ६ क्षत्रिय। ७ शाल्मलीद्वीपके अन्तर्गत पञ्चम वर्ष पर्वत। ८ चूत नामक राजा। ९ सुदेवके कनिष्ठ। १० जनपदविशेष, एक बसती। (मार्कण्डेयपु० ५८।८) महाभारतमें लिखा, कि राजसूययज्ञके समय कङ्कके लोगोंने राजा युधिष्ठिरको उपहार ले जा कर दिया था। अनुमान होता, कि यह जनपद नेपाल अथवा तिब्बतके पूर्वांशमें अवस्थित है। ११ उड़ीसेकी एक छोटी जमीन्दारी। १२ महाराजचूत, किसी किस्मका आम। १३ चन्दन।

कङ्कचित् (सं० त्रि०) समूहमें एकत्र किया हुआ, जो ढेरमें समेटकर लगा दिया गया हो।

कङ्कट (सं० पु०) कं देहं कटति आवृणोति, क-कट-अच, कक्-अटन् वा। अकादिभ्योऽटन्। उण् ४।८१। १ कवच, बख़्तर। २ अङ्कुश, आंकुस। ३ खदिर, खैरका पेड़।

कङ्कटक (सं० पु०) कङ्कट स्वार्थे कन्। कङ्कट देखो।

कङ्कटेरी (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

कङ्कण (सं० क्ली०) कं इति कणति, कम्-कण्-अच्। १ हस्ताभरणविशेष, हाथमें पहननेकी एक चूड़ी। संस्कृत पर्याय करभूषण और कौतुक है। २ हस्तसूत्र, हाथमें बांधा जानेवाला धागा। यह प्रायः हरिद्राके

रंगा जाता है। विवाहमें वर और कन्या दोनों एक दूसरेका कङ्कण छोरते हैं। कङ्कण छोर न सकनेसे मूर्खता प्रमाणित होती है। ३ भूषणमात्र, कोई गहना। ४ शेखर, चोटी। ५ हस्तीके पदका एक भूषण, हाथीके पैरका कड़ा।

कङ्कणपुर (सं॰ क्लो॰) नगरविशेष, एक शहर। कङ्कणवर्षसे कङ्कणपुर नाम पड़ा है।

कङ्कणप्रिय (सं॰ पु॰) शिवके एक अनुचर।

कङ्कणभूषण (सं॰ वि॰) अलङ्कारादिसे विभूषित, चमकदार गहने पहने हुआ।

कङ्कणमणि (सं॰ स्त्री॰) करभूषणका रत्न, चूड़ीका नगीना।

कङ्कणवर्ष (सं॰ पु॰) १ रसज्ञविशेष, एक कीमयागर। २ राजा क्षेमगुप्त।

कङ्कणिन् (सं॰ त्रि॰) कङ्कणसे विभूषित, जो चूड़ी पहने हो।

कङ्कणी (सं स्त्री॰) कङ्के गमने अणति शब्दायते, कङ्क-अण्-अच्-ङीष्; कं इति कणति, कम्-कण् पचाद्यच् ङीष् इति वा। क्षुद्रघण्टा, घुंघुरू।

कङ्कणीका (सं॰ स्त्री॰) पुन: पुन: कणति, कण-यङ् (लुक्)-ईकन् धातो: कङ्कणादेशश्च। १ क्षुद्रघण्टा, घुंघुरू। २ कटिभूषणविशेष, करधनी। इसमें चांदीके छोटे-छोटे घुंघुरू लगे रहते हैं।

कङ्कत (सं॰ क्लो॰) कङ्कते शिरोमलं प्राप्नोति, ककि-अतच्। १ केशमार्जन, कंघा, ककवा। यह धूलि, जन्तु, मल, कण्डू और शिरोरोगको दूर करता है। कंघी कान्ति चढ़ाती, कण्डू मिटाती, मूं रोग हटाती, केश बढ़ाती और रजोजन्य मल छोड़ाती है। (राजवल्लभ) २ वृक्षविशेष, एक पेड़। ३ अल्पविष प्राणिविशेष, एक जहरीला जानवर।

कङ्कतदेही (सं॰ पु-स्त्री॰) प्राणिविशेष, एक जानवर। अंगरेजी भाषामें इसका नाम सिडिप (Cydippe) है। आकृति श्लेष्मपिण्ड-जैसी होती है। फिर उसपर कङ्कतकी भांति रेखायें रहती हैं।

कङ्कतिका (सं॰ स्त्री॰) कङ्कत-ङीष् स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च। १ केशमार्जनी, कंघी। संस्कृत पर्याय प्रसाधनी, कङ्कती, कङ्कत, प्रसाधन, केशमार्जन, फणी, फणिका और फणि है। कङ्कत देखो। २ अतिबला, बरियारी। ३ नागबला।

कङ्कती (सं॰ स्त्री॰) कङ्कत-ङीष्। प्रसाधिनी, कंघी।

कङ्कतीका कङ्कतिका देखो।

कङ्कत्रोट (सं॰ पु॰) कङ्कवत् त्रोटयति, कङ्क-त्रुट-णिच्-अच्, कङ्कात् पक्षिविशेषात् आत्मानं त्रातीति वा, कङ्क-त्रा-अटन् पृषोदरादित्वात्। १ बलव्यक्ष मत्स्य, एक मछली। २ खङ्गिश मत्स्य।

कङ्कत्रोटि (सं॰ पु॰) कङ्कस्य त्रोटिरिव त्रोटिश्चञ्चुर्यस्य, मध्यपदलो॰। कङ्कत्रोट देखो।

कङ्कट (सं॰ क्लो॰) सुवर्ण, सोना।

कङ्कपत्र (सं॰ क्लो॰) कङ्कस्य पत्रम्, ६-तत्। कङ्कपक्षीका पालक, बूटीमारका पर।

कङ्कपत्र (सं॰ पु॰) कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्रमिव पत्रं यस्य। १ वाण, तीर। २ कङ्कपक्षीका पङ्ख, बूटीमारका पर।

कङ्कपत्री (सं॰ पु॰) कङ्कस्य पत्रमस्त्यस्य, कङ्क-पत्र-इनि। वाण, तीर।

कङ्कपर्वा (सं॰ पु॰) कङ्कवत् पर्व यस्य। सर्पविशेष, एक सांप।

कङ्कपुरी (सं॰ स्त्री॰) कं सुखं कायति सूचयति, कर्मधा॰। काशीपुरी, वाराणसी।

कङ्कपुरीष (सं॰ क्लो॰) कङ्कविष्ठा, बूटीमारकी मैंगनी। यह व्रणदारण होता है। (सुश्रुत)

कङ्कभोजन (सं॰ पु॰) अर्जुन वृक्ष।

कङ्कमाला (सं॰ स्त्री॰) कङ्कं करचापल्यं मलते धारयति, कङ्क-मल-अच्-टाप्। करताली।

कङ्कमुख (सं॰ पु॰) कङ्कस्य मुखमिव मुखं यस्य। १ सन्दंश, सनसी। २ अस्थिमें प्रविष्ट शल्यके उद्धारका एक यन्त्र, हड्डीमें लगा तीर वगैरह निकालनेका एक औजार। इस यन्त्रका अग्रभाग कङ्क पक्षीके मुख-जैसा होता है। मयूराकृति कीलक द्वारा कङ्कमुख आबद्ध रहता है। सुश्रुतमें अन्यान्य यन्त्रोंकी अपेक्षा इस यन्त्रका उत्कर्ष वर्णित है—कङ्कमुखयन्त्र सहजमें ही भीतर घुस ग्रहणपूर्वक निकल आता

और सर्वस्थानपर उपयोगी होनेसे सकल यन्त्रोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ समझा जाता है। ३ वाणविशेष, एक तीर।

"व्याघ्रसिंहमुखान् बाणान् काककङ्कमुखानपि।" (रामायण ६।७९ अ०)

कङ्कर (सं० त्रि०) कं सुखं किरति क्षिपति, क-क्ल-अच्। १ कुत्सित, खराब। (क्ली०) कं जलं कीर्यते अत्र, क-क्ल आधारे अप्। २ घोल, मट्ठा। ३ शत नियुत संख्या, दश करोड़। (हिं० पु०) ४ कंकड़, एक खनिज पदार्थ। (Nodular limestone) भारतवर्षमें इन स्थानोंपर कङ्कर मिलता है—अलीगढ़, इलाहाबाद, अमृतशहर, खम्भात, चम्पारन, चंदौसी, सिरोया, गुजरात, हैदराबाद, हरीक, खान्देश, कोयाम्बातूर, ढाका, धौलपुर, इटावा, जयपुर, जालन्धर, जौनपुर, झालावाड़, खेरी, लुधियाना, मुंगेर, मुलतान, मुर्शिदाबाद, मथुरा, मुज़फ्फ़रपुर, हिसुर, नरसिंहपुर, अयोध्या, प्रतापगढ़, पटना, पेशावर, पुरनिया, सहारनपुर, सारन, शाहाबाद, शाहजहांपुर, सियालकोट, सिंहभूम, सीतापुर, सुलतानपुर, तिनेवल्ली, उतरौला, बरधा, बलिया, बांदा, बांकुड़ा, बसती, बिजनौर, बीकानेर, बदाऊं और बुलन्दशहर।

कङ्कराल (सं० पु०) पिस्तेका पेड़।

कङ्कोल (सं० पु०) कङ्क इव लोलश्चञ्चलः, लस्य रः। १ निकोचक वृक्ष, अकोल, ढेर। २ लताविशेष, एक बेल।

कङ्कलोड (सं० क्ली०) कङ्क इव लोड्यते, आलोड्यते, कङ्क-लोड-घञ्। चिञ्चोटकमूल, एक जड़ी। यह गुरु, अजीर्णकारी और शीतल होता है।

कङ्कवाज (सं० पु०) कङ्कस्य वाज इव वाजः पक्षो ऽस्य, मध्यपदलो०। १ कङ्क-पत्र नामक वाणविशेष, एक तीर। २ कङ्कका पक्ष, बगलेका बाज़ू।

कङ्कवाजित (सं० पु०) कङ्कस्य वाजो जातोऽस्य, कङ्कवाज-इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। कङ्कपत्रयुक्त वाण, एक तीर।

कङ्कशत्रु (सं० पु०) कङ्कस्य शत्रुः, ६-तत्। पृश्निपर्णी, ख़सन। प्रयोगानुसार इस उद्भिद द्वारा कङ्कपक्षी विनष्ट होता है।

कङ्कशाय (सं० पु०) कङ्क इव शेते, कङ्क-शी-ण। कुक्कुर, कुत्ता।

कङ्का (सं० स्त्री०) १ उग्रसेनकी कन्या और कंसको भगिनी। २ गोशीर्षचन्दन, किसी क़िस्मका सन्दल। ३ उत्पलगन्धिका।

कङ्काल (सं० पु०) कं शिरं कालयति क्षिपति, कम्-कल-णिच्-अच्। शरीरास्थि, ठठरी। इसका संस्कृत पर्याय करङ्क और अस्थिपञ्जर है। कङ्काल वा अस्थिपञ्जर देहका सार होता है। त्वक्‌मांस विनष्ट होते भी अस्थि नष्ट नहीं होता। इसीसे कहा गया है—

"अभ्यन्तरं गतैः सारैर्यथा तिष्ठन्ति भूरुहाः।
अस्थिसारैस्तथा देहा ध्रियन्ते देहिनां ध्रुवम्॥
तस्माच्चिरविनष्टेषु त्वङ्मांसेषु शरीरिणाम्।
अस्थीनि न विनश्यन्ति साराण्येतानि देहिनाम्॥
मांसान्यत्र निबद्धानि शिराभिः स्नायुभिस्तथा।
अस्थीन्यालम्बनं कृत्वा न शीर्यन्ते पतन्ति वा॥" (सुश्रुत)

वृक्ष जैसे अभ्यन्तरस्थ सारके सहारे डटा रहता, वैसे ही अस्थिसारके सहारे मनुष्य देह धारण करता है। शरीरस्थ त्वक्, मांस प्रभृति नष्ट होते भी अस्थिका विनाश नहीं होता। अस्थि समस्त देहका सार है। उसमें शिरा और स्नायु द्वारा मांस बद्ध रहता है। अस्थिके अवलम्बनसे ही मांस शीर्ण वा पतित नहीं होता। (सुश्रुत)

चरकके मतसे—"त्वङ्मांसादिरहितः स्वस्थानस्थितः शरीरास्थिचयः कङ्कालसंज्ञो भवति। स च कङ्कालः षडङ्गो भवति यथा शाखाश्चतस्रो मध्यं पञ्चमं षष्ठं शिर इति।" (चरक)

त्वक् एवं मांसादि रहित तथा स्वस्थान पर अवस्थित देहका अस्थि समुदय कङ्काल कहाता है। यह छह अंशमें विभक्त है—चार शाखा, पञ्चम मध्याङ्ग और षष्ठ मस्तक। ऊर्ध्व शाखाद्वयको बाहु और अधःशाखा द्वयको सक्थि कहते हैं।

युरोपीय शारीरतत्त्वविदोंने भी कङ्कालको प्रधानतः तीन अङ्गोंमें विभक्त किया है—१ उत्तमाङ्ग वा मस्तक (Head), मध्याङ्ग वा स्कन्ध (Trunk) और शाखा (Extremities)।
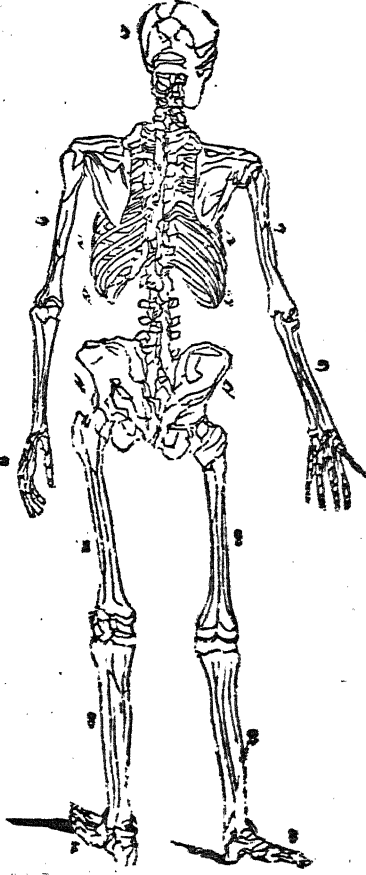
नरकङ्काल।

१ चिह्नित अंश मस्तक, २ मध्य, ३ ऊर्ध्व और ४ अधःशाखा है।

महर्षि सुश्रुतके मतसे अस्थि पांच प्रकारका होता है—कपाल, रुचक, तरुण, वलय और नलकास्थि। जानु, नितम्ब, अंश, गण्ड, तालु, शङ्ख एवं मस्तकका अस्थिखण्ड कपाल कहाता है। दन्तके अस्थिखण्डका नाम रुचक है। नासिका, कर्ण, ग्रीवा तथा चक्षुकोषके अस्थिको तरुण कहते हैं। हस्त, पाद, पार्श्व, पृष्ठ, उदर और वक्षःस्थानका अस्थि वलय है। फिर अवशिष्ट सकल अस्थिकी संज्ञा नलकास्थि है।(१)

महर्षि सुश्रुतके लेखानुसार वेदज्ञ अस्थिकी संख्या ३०६ बताते हैं। किन्तु शल्यतन्त्रके मतमें ३०२ ही अस्थि होते हैं। यथा—

प्रत्येक पादाङ्गुलिमें तीन-तीन ...	१५
पदतल और गुल्फमें	१०
एड़ीमें	१
जङ्घामें	२
जानुमें	१
ऊरुदेशमें	१
इसी प्रकार अपर पादमें ...	३०
दोनों हाथोंमें तीस-तीस ...	६०
कटिदेशमें	१
मलद्वारमें	१
योनिदेशमें	१
दोनों नितम्बोंमें	२
दोनों पार्श्वमें छत्तीस-छत्तीस ...	७२
पृष्ठमें	३०
वक्षमें	८
वृत्ताकार अक्षक नामक	२
ग्रीवादेशमें	९
कण्ठदेशमें	४
दोनों हनुमें	२
दन्तमें	३२
नासिकामें	३
तालुमें	३
गण्ड, कर्ण और स्नायु प्रत्यकमें दो-दो ...	६
मस्तकमें	६
सब मिलाके	३०२

चरकने अस्थिकी संख्या ३६० लिखी है—उलूखल अर्थात् दन्तमूलमें ३२, दन्तमें ३२, नखमें २०, शलाकामें २०, अङ्गुलिमें ६०, पार्ष्णिमें २, कूर्चके नीचे २, हस्तकी मणिमें ४, पदके गुल्फमें ४, अरत्निमें ४, जङ्घामें ४, जानुमें २, कुहनीमें २, ऊरुमें २, बाहुमें २, कण्ठके नीचे २, तालुमें २, नितम्बदेशमें २, योनि वा लिङ्गमें १, त्रिकदेशमें १, गुह्यदेशमें १, पृष्ठमें ३५, ग्रीवामें १५, जत्रुमें २, हनुमें १, हनुके मूलबन्धनमें २, ललाटमें २, चक्षुमें २, गण्डद्वयमें २, नासिकामें ३, उभय पार्श्वके पञ्जरमें चौबीसके हिसाबसे ४८, पञ्जरको गोलाकार स्थालि-

(१) "कपालरुचकतरुणवलयनलकसंज्ञानि। तेषां जानुनितम्बांसगण्डतालुशङ्खशिरःसु कपालानि दशनास्तु रुचकानि घ्राणकर्णग्रीवाक्षिकोषेषु तरुणानि। पाणिपादपार्श्वपृष्ठोदरोरःसु वलयानि शेषाणि नलकसंज्ञानि।" (सुश्रुत)

कामें २४, ललाटमें २, मस्तकमें ४ और वक्षदेशमें १७ अस्थि होते हैं। इसी प्रकार शरीरके सब अस्थि ३६० हैं।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे नरकङ्कालमें सब मिला कर २२३ अस्थि रहते हैं। यथा—कपालमें ८, मुखमण्डलमें १४, कर्णाभ्यन्तरमें ८, कशेरुकामें २३, वक्षमें २६, वस्तिदेशमें ११, ऊर्ध्व शाखा वा बाहुमें ६८ और अधोशाखा वा सक्थिमें ६४ अस्थि हैं।

कशेरु मेरुदण्डस्वरूप है। इसमें २४ अस्थि होते हैं। ऊपर जिसमें ७ अस्थि रहते, उसे ग्रीवा-कशेरुका (Cervical vertibrae) कहते हैं। मध्यमें १२ अस्थि रखनेवालेका नाम पृष्ठकशेरुका (Dorsal vertibrae) है। अधोभागमें ५ अस्थियुक्त देश कटिकशेरुका (Lumbar vertibrae) कहाता है। कशेरु वा मेरुदण्डके तलभावका त्रिकास्थि (Sacrum) ऊपर पड़ता है। त्रिकास्थि वस्तिके अस्थिका अंश कहाते भी प्रकृत रूपसे मेरुदण्डका ही सन्निहित अस्थि माना जाता है। यह अस्थि त्रिकोणाकार देख पड़नेसे त्रिक (Sacrum) कहाता है। यह ५।६ क्षुद्र कशेरुकामें गठित रहता है। नाम त्रिक कशेरुका (Sacral vertibrae) है। मेरुदण्डमें सबसे नीचे अधःकशेरुका (Coccyx) होती है। यह पशु आदिके लाङ्गूलमें अस्थिरूपसे मिलती है। मानवके पक्षमें वैसा नहीं। मानव जातिकी अधः-कशेरुकाके अस्थि क्षुद्र, स्वल्पायतन और चार पांचसे अधिक नहीं होते। वस्तास्थिके उभय पार्श्व और सम्मुख श्रोणिफलकास्थि (Os Innominato) रहता है। फिर यह अस्थि तीन भागमें विभक्त है—कटिका अस्थि (Ilium), कङ्कणका अस्थि (Ischium) और उपस्थका अस्थि (Pubis)।

मेरुदण्डका प्रधान अंश वक्षःस्थल (Chest or Thorax) है। इसके पश्चाद्भागमें पृष्ठकशेरुका, सम्मुखभागमें वुक्कास्थि और उभय पार्श्वमें बारह-बारह पर्शुका तथा उनके उपास्थि हैं। पर्शुका मेरुदण्डसे कुछ पृथक् पृथक् रहती हैं। वह केवल ऊपरी उभय पार्श्वपर सात वुक्कास्थिसे एक-एक कर स्वतन्त्रभावमें मिलित हैं। यह सातो स्वाभाविक पर्शुका और नीचे उभय पार्श्वके ५ अस्थि कृत्रिम पर्शुका हैं। वयोवृद्धका वुक्कास्थि १, युवकका २ और शिशुका अस्थि उससे भी अधिक अंशोंमें गठित है। यौवनकालको जब वुक्कास्थि दो खण्ड रहता, तब उसके ऊपरी खण्डका विद्वान् मुष्टि (Manubrium) कहता है। वयोवृद्धिके समय वुक्कास्थि एक हो जाता है। इसके अधोभागसे उपरिभाग पहले सीधा और फिर मोटा देख पड़ता है। मध्यमें एक-एक कोमलास्थि रहता है। उसे खड्गाकार कोमलास्थि (Ensiform or xiphoid cartilage) कहते हैं। नरकपालकी करोटीमें १ ललाटास्थि (Frontal bone), २ पार्श्व-कपालास्थि (Parietal bone), १ पश्चात् कपालास्थि (Occipital bone), १ कीलकास्थि (Sphenoid), २ शङ्खास्थि (Temporal bone), और १ शौषिरास्थि (Ethmoid) रहता है। मुखमण्डलमें २ नासास्थि (Nasal bone), २ माध्व स्थि (Superior maxillary), २ तास्व स्थि (Palate), २ गण्डास्थि (Malar), २ अश्रुजननास्थि (Lachrymal), २ अधोवेष्टनास्थि (Inferior Turbinated), १ फालास्थि (Vomar) और हन्व स्थ (Inferior Maxillary) पाते हैं।

कपाल और मुख देखो।

कङ्कालको ऊर्ध्व शाखामें अंसफलकास्थि (Scapula), जत्वस्थि (Clavicle), चक्रदण्डास्थि (Radius), प्रकोष्ठास्थि (Ulna), मणिबन्ध (Carpus), करभ वा हस्ततल (Metacarpus) और सकल अङ्गुल्यस्थि होते हैं। इनमें अंसफलकास्थि और जत्वस्थि श्रोणिफलकास्थिसे मिलते हैं। हस्तमें मणिबन्ध, करभ और अङ्गुल्यस्थि रहते हैं। इसके मध्य मणिबन्धमें सब मिलाके ८ अस्थि दो तहपर पड़ते हैं। पहले तहमें चारोंके नाम नवास्थि (Scaphoid), अर्धचन्द्रास्थि (Semi-lunar), कोणास्थि (Cunei-form), और वर्तुलास्थि (Pisiform) हैं। दूसरे तहके चारों समद्विपार्श्वास्थि (Trabezium), चतु-

कोणास्थि (Trapezoid), स्थूलास्थि (Osmagnum) और वड़िशास्थि (Unciform) कहाते हैं।

अङ्गुलिके सकल अस्थिको अङ्गुल्यस्थि (Phalanges) कहते हैं। प्रत्येक अङ्गुष्ठमें दो और अपर अङ्गुलिमें तीन अस्थि रहते हैं। इनमें प्रत्येक अग्र पर्व एवं करतलके अस्थिसे पृथक् पड़ने पर स्वाधीन भावसे बढ़ सकता है।

अधःशाखामें ऊर्वस्थि (Femur), जानुफलकास्थि (Patella), जङ्घास्थि (Tibia), नलकास्थि (Fibula), गुल्फ (Tarsus), प्रपद (Metatarsus) और पदतल (Toes) होता है।

अङ्गके अस्थियोंमें ऊर्वस्थि सबसे बड़ा है। इसका शिरोभाग श्रोणिफलकास्थिसे पृथक् पड़ जाता है। जङ्घास्थि पदके सम्मुख और अन्तर्भागमें रहता है। इसका शिरोभाग अन्य भागसे बड़ा होता है। ऊपर बादामी रंग झलकता है। दो बादामो तहोंपर ऊर्वस्थिकी गांठ (Condylus) पड़ती है। नलकास्थि जङ्घास्थिके ठीक पार्श्व और पदके वहिर्भागपर स्थापित है। यह देखनेमें दीर्घ, क्षीण, अधिकांश तीन पार्श्वयुक्त और शेष दिकको वर्धित रहता है। जानुफलकास्थि (Patella Knee-pan) प्रायः त्रिकोणाकार देख पड़ता है। इसका अधोभाग बहुत ढालू, अग्रभाग कुछ टेढ़ा तथा देखनेमें तन्तु-जैसा और पश्चाद्भाग अधिक कोमल एवं मध्यपर एक आलि द्वारा दो भागमें विभक्त है। गुल्फ ७ अस्थिसे निर्मित है। यथा—१ गुल्फास्थि (Astragalus), २ पार्ष्णास्थि (Os calcis), ३ नावास्थि (Navicular), ४ घनास्थि (Cuboid), ५ अभ्यन्तर-कोणास्थि (Internal Cuneiform), ६ मध्यकोणास्थि (Middle Cuneiform) और ७ वाह्यकोणास्थि (External cuneiform)।

प्रपद एवं पदाङ्गुलिके अस्थिकी गठनप्रणाली प्रायः करभ तथा अङ्गुलिके अस्थि-जैसी ही रहती है। पदाङ्गुलिके अस्थि दीर्घ, वृहत्, क्षय और कराङ्गुलिके अस्थिसे सघन होते हैं। पादके दोनों वृद्धाङ्गुष्ठोंको छोड़ दूसरे छोटे पड़ते हैं।

एतद्भिन्न शरीरमें दूसरे भी अति कोमल उपास्थि वा तरुणास्थि विद्यमान हैं। शरीरके दृढ़ एवं सबल अङ्ग अखस्थि द्वारा निर्मित हैं। मणिबन्ध और गुल्फ प्रभृति स्थानोंमें अखस्थि वा क्षुद्रास्थि होते हैं। समस्त अस्थि अन्तर्भाग और वहिर्भागमें झिल्लीसे वेष्टित हैं। किन्तु इनके सन्धिस्थानोंपर झिल्लीका परदा देख नहीं पड़ता। सन्धिस्थान सूक्ष्म उपास्थिसे वेष्टित रहता है। अस्थिका गर्भ पीतवर्ण स्नेहविशेषसे पूर्ण है। इसीको मज्जा कहते हैं। अस्थि-समूहमें कहीं गर्तवत् खात और कहीं उच्चभाव रहता है।

देहके अस्थिमय गर्त (Acelabulum) कपालास्थि द्वारा निर्मित हैं।

कङ्कालकेतु (सं॰ पु॰) एक दानव।

कङ्कालभैरवतन्त्र (सं॰ क्ली॰) तन्त्रशास्त्रविशेष।

कङ्कालमालिनी (सं॰ स्त्री॰) कङ्कालमालिन्-ङीप्। काली।

कङ्कालमाली (सं॰ पु॰) कङ्कालानां माला अस्त्यस्य, कङ्काल-माला-इनि। व्रीह्यादिभ्यश्च। पा ५।२।११६। महादेव।

कङ्कालय (सं॰ पु॰) कङ्कालं याति, कङ्काल-या-क। देह, शरीर, जिस्म।

कङ्कालशर (सं॰ पु॰) बाणविशेष, हड्डीका तीर।

कङ्कालास्त्र (सं॰ क्ली॰) अस्त्रविशेष, एक हथियार। यह हड्डीका बनता था।

कङ्कालिनी (सं॰ स्त्री॰) १ महाकालीमूर्ति। कङ्काली देखो। २ कर्कशा, झगड़ा करनेवाली।

कङ्काली (सं॰ स्त्री॰) कङ्काल-ङीप्। १ महाकालीमूर्ति। कमर्दा राज्यके अन्तर्गत बारिया ग्रामसे ७ मील उत्तरपश्चिम एक अति प्राचीन दुर्ग अवस्थित है। दुर्गकी अवस्था अति शोचनीय है। चारो दिक् भूमिसात् हैं। यत्सामान्य अंश अवशिष्ट देख पड़ता है। इसी दुर्गमें कङ्काली देवीकी प्रस्तरमूर्ति प्रतिष्ठित है। देवीके १८ हाथ हैं। उनमें नरकपाल धनुर्बाणादि अस्त्र-शस्त्र विराज रहे हैं। देवीके निकट त्रिशूलधारी शिवकी मूर्ति खड़ी है। उन्हींके निकट गणेशमूर्ति है। यह दुर्ग और कङ्काली देवीकी मूर्ति बहु प्राचीन है। दोनों प्रायः ८।९ सौ वर्षके होंगे।

दुर्गसे मकरध्वज (चेदि संवत् ७००), गोपालदेव (चेदि संवत् ८४०) और यशोराज (चेदि संवत् ११११०) प्रभृति कई लोगोंका शिलानुशासन निकला है। (हिं०) २ कर्कशा, लड़ने-झगड़नेवाली। ३ नीच-जातिविशेष, एक कमीना कौम। कङ्काली किंगरी बजा-बजा भीख मांगा करते हैं।

कङ्कावीज (सं० क्ली०) गोशीर्ष-चन्दनका वीज।

कङ्किरात (सं० क्ली०) कुरुण्टक, लाल झाड़।

कङ्कु (सं० पु०) वङ्कते उद्वतं प्राप्नोति, कङ्क-उन्। १ उग्रसेनके पुत्र और कंसके भ्राता। कंसके आठ भ्राता थे—सुनामा, न्यग्रोध, कङ्कु, शङ्कु, सुहु, राष्ट्रपाल, सृष्टि और तुष्टिमान। २ तृणविशेष, एक घास।

कङ्कुष्ठ (सं० क्ली०) कङ्कोः समीपे तिष्ठति, कङ्कु-स्था-क षत्वञ्च। १ पार्वतीय मृत्तिकाविशेष, किसी किस्मकी पहाड़ी मट्टी। इसका संस्कृत पर्याय कालकुष्ठ, विरङ्ग, रङ्गदायक, रेचक, पुलक, शोधक और कालपालक है। भावप्रकाशके मतसे हिमालयके शिखरमें यह मृत्तिका उपजती है। कङ्कुष्ठ द्विविध होता है—नालिक रौप्यवर्ण और रेणुक स्वर्णवर्ण। दोनोंमें रेणुक ही अधिक गुणशाली है। कङ्कुष्ठ गुरु, स्निग्ध, विरेचक, तिक्त, कटु, उष्ण एवं वर्णकारक और शोम, शोथ, उदराध्मान, गुल्म, आनाह तथा कफ नाशक होता है। २ हिमालयके पादशिखरमें उत्पन्न होनेवाला हरताल-जैसा एक पत्थर।

कङ्कूष (सं० पु०) कंकि-ऊषन्। आभ्यन्तर देह, शरीरका आभ्यन्तर प्रदेश, जिस्मका भीतरी हिस्सा।

कङ्केर (सं० पु०) कङ्कते लौल्यं प्राप्नोति भक्षणायेति शेषः, कंकि-एरु। १ काकविशेष, एक कौवा। २ वक पक्षी, बगला।

कङ्केल, कङ्केलि देखो।

कङ्केलि (सं० पु०) कं सुखं तदर्थं केलिर्यत्र, बहुव्री०। अशोक वृक्ष।

कङ्केल्ल (सं० पु०) कंकि-एल्ल। वास्तूक शाक, बथुवा।

कङ्केलि (सं० पु०) कङ्क वाहुलकात् एलि पृषो-दरादित्वात् साधुः। अशोक वृक्ष। अमरने इस शब्दको स्त्रीलिङ्ग माना है।

कङ्कोल (सं० पु०) १ नागराजविशेष। २ 'गणपत्याराधन' नामक ग्रन्थप्रणेता। ३ स्वनामख्यात एक सुगन्ध पण्यद्रव्य, शीतल-चीनी। इसका फल वृहत् और कठिन होता है। कङ्कोल औषध और तैलादिमें पड़ता है। यह कटु, तिक्त, उष्ण, मुखजाड्यहर, दीपन, पाचन, रुच्य और कफवातघ्न है। (राजनिघण्टु)

कङ्कोलक, कङ्कोल देखो।

कङ्कोलकी (सं० स्त्री०) कङ्कोलवृक्ष, शीतलचीनीका पेड़। यह तिक्त, ग्राही, उष्ण, रुचिकर, मलावष्टम्भकर, पित्तल एवं अग्निदीपन होती और कफ, प्रमेह, कुष्ठ तथा जन्तुको विनाश कर देती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कङ्कोलतिक्ता, कङ्कोलकी देखो।

कङ्ख (सं० क्ली०) कं सुखं खलति अनेन, कं-खल वाहुलकात् ड। पापभोग, सजा।

कङ्ग (सं० पु०) क्लोम, फेफड़ा।

कङ्गु (सं० स्त्री०) कं सुखं अङ्गयति, कं-अगि-णिच्-कु। तृणधान्यविशेष, एक अनाज। इसका संस्कृत पर्याय प्रियङ्गु और प्रियङ्ग है। भावप्रकाशके मतसे यह धान्य चार प्रकारका होता है—कृष्ण, रक्त, श्वेत और पीत। पीत कङ्गु सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। यह भग्नसन्धानकारक, वातवर्धक, वृंहण, गुरु, सूक्ष्मश्लेष-नाशक और अश्वके लिये विशेष उपकारक है।

कङ्गुका (सं० स्त्री०) कङ्गु स्वार्थे कन् टाप्। धान्य-विशेष। कङ्गु देखो।

कङ्गुणिका (सं० स्त्री०) १ महाज्योतिष्मती लता, रतनजोत। २ तृणधान्यविशेष, एक जंगली अनाज।

कङ्गुणी, कङ्गुणिका देखो।

कङ्गुणीपत्र (सं० पु०) कङ्गुणीपत्रा देखो।

कङ्गुणीपत्रा (सं० स्त्री०) पण्यन्धा नाम तृणविशेष, एक घास।

कङ्गनी (सं० स्त्री०) कङ्गानीयते कङ्गशब्देन ज्ञायते, कङ्ग-नी वाहुलकात् ड-ङीष्। १ तृणधान्यविशेष, एक अनाजी घास। युक्तप्रदेशमें इसे मालकांगनी कहते हैं। संस्कृत पर्याय ज्योतिष्मती, कटभी, वह्नि, रुचि,

चिणक, ज्योतिका, पारावतपदी, पण्याखता, पीत-तण्डुला, सुकुमारी और कुकुन्दनी है। कङ्गुनी धातुशोषक, पित्तश्लेष्मनाशक, रूच, वायुवर्धक, पुष्टि-कारक, गुरु और भग्नसन्धानकारी होती है। (राजवल्लभ)

कङ्गुनीका (सं० स्त्री०) कङ्गुधीधान्य, एक अनाजी घास।

कङ्गुनीपत्रा (सं० स्त्री०) कङ्गुन्या: पत्रमिव पत्रमस्या:, मध्यपदलो०। पण्यास्या नामक तृणविशेष, एक घास।

कङ्कुल (सं० पु०) कङ्कुं लाति गृह्णाति अनेन, कङ्कु-ला-क। हस्त, हाथ।

कङ्कू, कङ्कु देखो।

कङ्कूर (सं० पु०) कङ्कूं लाति अनेन, कङ्कू-ला-क लस्य र:। हस्त, हाथ।

कच (सं० पु०) कचते शोभते शिरसि, कच पदाद्यच्। १ केश, बाल। २ शुष्क व्रण, सूखा ज़ख़म। ३ मेघ, बादल। ४ बन्ध, पट्टी, लपेट। ५ शोभा, ख़ूबसूरती। ६ बालक, बच्चा। ७ वत्स, बछड़ा। ८ परिच्छदका छोर, पोशाकका किनारा। ९ वृहस्पतिपुत्र। महाभारतमें कचका चरित्र इस प्रकार वर्णित है—

देवासुरयुद्धके समय देवनिहत असुरको दैत्यगुरु शुक्राचार्य सञ्जीवनी विद्याके बलसे फिर जिला देते थे। देवगुरु वृहस्पतिमें यह विद्या न रहनेसे देवगणने अत्यन्त भीत हो गुरुपुत्र कचको शुक्राचार्यसे यह विद्या सीखनेके लिये अनुरोध किया। कच भी देवकार्य साधनके लिये शुक्राचार्यका शिष्यत्व ग्रहण कर निरतिशय भक्तिसे सेवामें लगे थे। क्रूरमति असुरोंने कचको अभिप्राय समझ क्रमश: दो बार मार डाला। शुक्रकन्या देवयानीने स्नेहवश पितासे अनुरोध कर उन्हें दोनों बार जिलाया था। तीसरे बार दैत्योंने कचका देह खण्ड-खण्ड कर मद्यके साथ शुक्राचार्यको खिला दिया। उस समय भी देवयानी उनके जीवनके लिये पितासे अत्यन्त अनुरोध करने लगीं। शुक्राचार्यने कन्याके अनुरोधसे उन्हें जिलानेकी इच्छा कर पूछा था—कच कहां हो। कचने उदरके भीतरसे अपना वृत्तान्त बताया। फिर शुक्राचार्यने निरुपाय हो कहा था—कचको बचानेमें हमें मरना पड़ेगा, नतुवा उदरसे वह कैसे बाहर निकलेगा। देवयानीने उत्तर दिया—दोनोंका विच्छेद मेरे लिये कष्टदायक है; इस लिये वही विधान कीजिये, जिसमें दोनोंका प्राण बचे। फिर शुक्राचार्य बोल उठे—कच! तुम देवयानीका स्नेहलाभ कर सिद्ध बन गये हो; हम तुम्हें सञ्जीवनी विद्या देते हैं, तुम निकलकर हमें जिला देना। इसी प्रकार कचने सञ्जीवनी विद्या लाभ कर उदरसे निर्गमनपूर्वक शुक्रको जिलाया था। अनन्तर देवयानीने उनसे विवाह करना चाहा, किन्तु उन्होंने सम्बन्ध-दोषसे उनका कहा न माना। देव-यानीने उससे व्यथित हो अभिशाप दिया था—तुम्हारी विद्या निष्फल जायेगी। कचने भी देवयानीको 'तुम क्षत्रियपत्नी होगी' अभिशाप दे कहा—तुमने अन्याय अभिशाप दिया है; इसलिये हमारी विद्या निष्फल जाते भी जिसे सिखायेंगे, उसे इस विद्यामें सिद्ध पायेंगे। यही कहकर वह देवपुरीको चल दिये। (भारत, सम्भव० ३६ अ०)

(हिं० वि०) १० कच्चा। यह शब्द समासमें आता है। (पु०) ११ शब्दविशेष, एक आवाज़। जब कोई चीज़ किसी चीज़में चुभती, तब 'कच' की आवाज़ निकलती है। कुचलनेका शब्द भी 'कच' ही कहाता है।

कचक (हिं० स्त्री०) आघातविशेष, एक चोट। दबने या कुचलनेमें 'कचक' होती है।

कचकच (हिं० पु०) वितण्डावाद, बकझक, चिकचिक, बातोंका झगड़ा।

कचकचाना (हिं० क्रि०) १ वाक्युद्ध करना, बातोंका झगड़ा लगाना, कचकच मचाना। २ क्रुद्ध होना, दांत पीसना।

कचकड़ (हिं० पु०) १ कच्छपकपाल, कछुवेकी खोपड़ी। २ कच्छप वा ह्वेल मत्स्यका अस्थि, कछुवे या ह्वेल मछलीकी हड्डी। चीना और जापानी कचकड़के खिलौने बनाते हैं।

कचकड़ा, कचकड़ देखो।

कचकना (हिं० क्रि०) १ किसी भारी चीज़के नीचे पड़ना, दबना, कुचलना। २ आघात लगना, ठोकर बैठना।

कचकाना (हिं॰ क्रि॰) १ चुभाना, लगाना। २ भङ्ग करना, तोड़ देना।

कचकेला (हिं॰ पु॰) कदलीफलविशेष, किसी क़िस्मका केला। इसका फल बृहत् और नीरस रहता है। खानेमें स्वादु न लगनेसे ही इसे कचकेला कहते हैं।

कचकोल (हिं॰ पु॰) १ कशकोल, कपाल, खोपड़ा। २ खप्पर, भीख मांगनेका एक पात्र। यह नारियलका बनता और साधुवोंके हाथमें रहता है।

कचखुल्ला (हिं॰ पु॰) कांच न लगानेवाला, जिसकी ढीली धोती रहे।

कचखुल्ली (हिं॰ स्त्री॰) क्रीड़ाविशेष, एक खेल। इसमें जिस लड़केकी कांच खुल जाती, उसकी दांव देनेकी बारी आती है।

कचग्रह (सं॰ पु॰) कचं मेघं कनति उत्पादयति, धातूनामनेकार्थत्वात् कच-कन्-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। समुद्र, बहर।

कचङ्गन (सं॰ क्ली॰) कचस्य जनरवस्य अङ्गनम्, शकन्ध्वादित्वात् सन्धिः। कररहित विक्रयस्थान, जिस बाज़ारमें चुंगी न लें। इसका संस्कृत पर्याय निसुंट और पण्याजिर है।

कचङ्गल (सं॰ पु॰) कच्यते बध्यते वेलया, कच बाहुल-कात् अङ्ग-लच्, कचस्य मेघस्य-अङ्गं लाति गृह्णाति वा, ला-क। समुद्र, बहर।

कचट (सं॰ क्ली॰) १ कच्चट शाक, एक भाजी। २ तृण, घास। ३ पत्र, पत्ता।

कचड़-पचड़ (हिं॰ पु॰) १ कचपच, भराभरी। २ कचकच, बकझक।

कचड़ा (हिं॰ पु॰) १ करकट, कूड़ा, झाड़न। २ अपक्व स्फुटिफल, कच्चा खरबूजा। ३ ककंटी, ककड़ी। ४ बीजकोषविशेष, सेमलका ढोंड। ५ कार्पासबीज, बिनोला। ६ माष वा चणककी पीठी, उड़द या चनेकी पीसी हुयी दाल। ७ सेवाल, सेवार।

कचदन्धिका (सं॰ स्त्री॰) पलाबु, लौकी।

कचदिला (हिं॰ वि॰) दुर्बल-हृदय, डरपोक, मज़बूत दिल न रखनेवाला।

कचद्रावी (सं॰ पु॰) अम्लवेतस, चूक।

कचनार (हिं॰ पु॰) काञ्चनार, एक पेड़। यह मध्यप्रमाण और पतनशील है। हिमालयके निम्न-प्रदेश पर सिन्धुसे पूर्व भारत और ब्रह्मदेशके समग्र वनमें कचनार मिलता है। ग्रीष्म ऋतुके आरम्भकाल बड़े-बड़े सफेद और बैंजनी फूल खिलते हैं। कचनारसे 'सेम'की गोंद या 'सेमला गोंद' निकलती है। गोंदका रंग भूरा रहता है। उसे पानीमें घुला नहीं सकते। छाल रंगनेके काम आती है। बीजसे एकप्रकार तैल निकलता है। अजीर्ण और अन्लाशानपर मूलका क्वाथ पिलाते हैं। शकराके साथ पुष्प सारक होते हैं। फिर त्वक्, पुष्प वा मूलको मांड़में बांट कर प्रलेप चढ़ानेसे फोड़ा पक जाता है। कचनारकी छाल परिवर्तनकारक, पुष्टिसाधक, सङ्कोचनशील और गण्डमाला, त्वक्के रोग तथा व्रणके लिये लाभ-दायक है। सूखी कली अर्शोरोग और अतिसार पर चलती है। फरवरी या मार्चमें फूल आते, दो मास पीछे बीज पक जाते हैं। लोग कलीका शाक बनाते हैं। काष्ठ अधिक कठोर नहीं होता। केन्द्रस्थलकी लकड़ी अधिक काली और कड़ी पड़ती है। काष्ठ कृषियन्त्रोंके बनानेमें लगता है। बौद्ध प्रतिमावोंमें कचनार प्रायः देख पड़ता है। इसकी शाखा पतली रहती है। कचनार कई जातिका होता है। पत्र वर्तुल और सिरेपर दो खण्डोंमें विभक्त रहता है। कलीका अचार भी डालते हैं। पुष्प सुगन्धि होते हैं।

कचप (सं॰ क्ली॰) कचते शोभते, कच-कपन्। उषि-कुटि-दलि-कचिखजिभ्यः कपन्। उण् ३।१४२। १ तृण, घास। २ शाकपत्र, सब्ज़ी।

कचपच्च (सं॰ पु॰) कचानां केशानां पक्षसमूहः, ६-तत्। केशसमूह, घने या बने बाल।

कचपच (हिं॰ पु॰) १ भीड़भाड़, भराभरी। २ कच-कच, बातका बतंगड़।

कचपचिया, कचपची देखो।

कचपची (हिं॰ स्त्री॰) कृत्तिका नक्षत्र। इसमें अनेक क्षुद्र-क्षुद्र नक्षत्र रहते, जो नभोमण्डलमें गुच्छ-जैसे चमकते हैं।

कचपाश, कचपच देखो।

कचपेंदिया (हिं० वि०) १ अप्रौढ़तल, जिसके कच्चा पेंदा रहे। २ हीनमति, जटपटांग बकनेवाला, जो बातका पक्का न हो।

कचबची (हिं० स्त्री०) सितारा, बुंदी। स्त्रियां इसे अपने मस्तक और कपोलपर दिखानेके लिये लगा लेती हैं। कचबची खूब चमकती है।

कचमाल (सं० पु०) कचं कचवत् कान्तिं मलते धारयति, कच-मल-अण्। धूम, धुवां। कोई कोई 'खतमाल' भी कहता है।

कचरई अमौवा (हिं० पु०) अमौवेका एक रंग। इसमें हरेरी रहती है। कचरई अमौवेको लोग अधिकांश सुगन्धके लिये पसन्द करते हैं। धनी व्यक्ति इसी रंगका भितल्ला रजाईमें लगाया करते हैं। प्रथमत: वस्त्र हरिद्रासे रंगा जाता है। फिर उसे हरके जोशांदेमें डाल देते हैं। अन्तको उसे कशीशमें डुबो अनारके छिलकेके जोशांदेमें रंगनेसे कचरई अमौवा होता है। इसके तीन भेद हैं—संदली, सूफियानी और मलयगिरी।

कचरकचर (हिं० पु०) १ वाक्युद्ध, कचकच। २ अपक्व फल खानेका शब्द, जो आवाज, कच्चा फल खानेसे निकलती हो।

कचरकूट (हिं० स्त्री०) मारपीट, लात-जूता।

कचरघान (सं० पु०) १ बमबखेड़ा, बेजा जमाव। २ सन्तानसन्ततिकी वृद्धि, औलादकी बढ़ती। ३ प्रबलता, ज़ोर। ४ मारकूट, पीटपाट।

कचरना (हिं० क्रि०) १ पददलित करना, दबाना, रौंदना। २ भली भांति भोजन करना, अच्छीतरह खाना, खूब पेट भरना।

कचरपचर (हिं० पु०) १ गिचपिच, भरा और बिगड़ा हुआ। २ कचपच, बतचक्कर। ३ कीचड़, कांदा।

कचरा, कचड़ा देखो।

कचराई (हिं० स्त्री०) दबाई, रौंदाई।

कचरिपुफला (सं० स्त्री०) कचस्य रिपुः फलमस्याः, बहुव्री०। शमीवृक्ष, छिकुर।

कचरी (हिं० स्त्री०) १ सेंधिया, पेहंटा। यह एक बेल है। ककड़ीकी भांति कचरी खेतोंमें फैल जाती है। फल अण्डाकार एवं पीतवर्ण रहता और खानेमें खटमिठा लगता है। कच्ची कचरीका सुखा कर घीमें भूननेसे अच्छी तरकारी बनती है। इसकी सोंठ डालनेसे चटनी भी बहुत अच्छी होती है। इसे युक्तप्रदेशमें कचेलिया कहते हैं। लोग प्रायः इसे सुगन्धके लिये हाथमें रखते और बहुत कम चखते हैं। २ शुष्क कचरीका शाक। ३ रुईका बिनौला। ४ छिलकेदार दाल।

कचलम्पट (हिं० वि०) व्यभिचारी, ज़िनाकार, जो लंगोटेका सच्चा न हो।

कचला (हिं० स्त्री०) १ काली और चिकनी मट्टी। इससे युक्तप्रदेशमें मकानकी कच्ची दीवार उठायी जाती है। यह मट्टी बहुत मज़बूत होती और पानी पड़ते भी अपना गुण नहीं खाती। २ कीचड़, कांदा।

कचलू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह पार्वत्य वृक्ष अनेक प्रकारका होता है। भारतवर्षमें इसके चादह भेद पाये जाते हैं। काठ समान रहते भी पत्रमें भेद पड़ता है। काठ श्वेत, कठोर तथा आवर्तयुक्त निकलता है। यमुनासे पूर्व हिमालयपर ५०००से ८००० फीट ऊंचे तक कचलू मिलता है। यह अति सुन्दर वृक्ष है। शिशिरमें पतझार होता है। नवीन पत्र वसन्तसे पहले ही फूट आते हैं। इसके तख़्ते मकान् और सन्दूक तैयार करनेमें लगते हैं।

कचलोंदा (हिं० पु०) कच्चा लोंदा, कच्चे आटेका पेड़ा।

कचलोन (हिं० पु०) लवणविशेष, किसी क़िस्मको नमक। यह कांचकी मट्टीमें जमे हुये क्षारसे तैयार किया जाता है। कचलोन जलमें जल्द नहीं घुलता।

कचलोहा (हिं० पु०) १ कच्चा लोहा। २ ढीला प्रहार, अधूरा वार, न लगनेवाला हाथ। (स्त्री०) कचलोही।

कचलोह्र (हिं० पु०) व्रणसे छूटनेवाला पानी, जो पनका जख़्मसे पड़ता हो।

कचवांसो (हिं॰ स्त्री॰) खेतकी एक नाप। २० कचवांसोकी एक बिस्वांसी होती है।

कचवाट (हिं॰ स्त्री॰) १ विराग, उचाट। २ घृणा, परहेज़, चिढ़।

कचहरी (हिं॰ स्त्री॰) १ न्यायालय, अदालत। २ कार्यालय, कारखाना। ३ दफ़तर, आफिस। ४ राजसभा, दरबार। ५ गोष्ठी, यारोंकी महफ़िल, जमघट।

कचहस्त (सं॰ पु॰) कचानां हस्तः समूहः, ६-तत्। केशसमूह, बालोंका गुच्छा।

कचा (सं॰ स्त्री॰) कचति बध्यते शृङ्खलादिभिरिति शेषः,कच-अच्-टाप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शोभा, ख़ूबसूरती। ३ सन्धिच्युति, जोड़की छूट। ४ दण्ड, सज़ा। ५ यष्टि, छड़ी। ६ तृणविशेष, एक घास।

कचाई (हिं॰ स्त्री॰) १ कच्चापन, न पकनेकी हालत। २ अनुभव-राहित्य, नातजर्बेकारी।

कचाकचि (सं॰ अव्य॰) कचेषु कचेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम्, कचोहारे इच् पूर्वदीर्घश्च। परस्पर केशाकर्षणपूर्वक युद्ध, लटाझोटी। २ विवाद, झगड़ा।

कचाकु (सं॰ त्रि॰) कच इव अकति वक्रं गच्छति, कच-अक्-उन्। १ दुःशील, बदमिज़ाज। २ असह्य, नाक़ाबिल-बरदाश्त। (पु॰) ३ सर्प, सांप।

कचाचित (सं॰ त्रि॰) कचैः आलुलायितकेशैराचित्य व्याप्तः, ३-तत्। १ असंस्कृत केश द्वारा व्याप्त, जिसमें उलझे बाल रहें।

कचाटुर (सं॰ पु॰) कचवत् मेघ इव अटति शून्ये भ्रमति, कच-अट्-उरच। पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका संस्कृत पर्याय शितिकण्ठ, दात्यूह और काकमद्ग है।

कचाना (हिं॰ क्रि॰) कच्चे पड़ना, हार बैठना, हिम्मत खोना।

कचामोद (सं॰ क्ली॰) कचं आमोदयति सुगन्धिकरोति, कच-आ-मद-णिच्-अच्। वाला नामक गन्धद्रव्य, बालोंमें लगानेकी एक ख़ुशबूदार चीज़।

कचायंध (हिं॰ स्त्री॰) कचाईका गन्ध, कच्चेपनकी बू।

कचायन (हिं॰ स्त्री॰) बकवाद, कहा-सुनी।

कचार (हिं॰ पु॰) तटस्थ जल, किनारेका पानी। कचारमें कीचड़ बहुत रहता और बबूला पड़ता है। इसपर नौका आ नहीं सकती।

कचालू (हिं॰ पु॰) १ घुइया, बंडा। २ खाद्यविशेष, एक चाट। उबाले हुये आलू काट नमक मिर्च मिलाकर खानेसे कचालू कहलाते हैं। अमरूद, ककड़ी, खीरा वग़ैरहके छोटे छोटे टुकड़े नमक-मिर्च और मसालेके साथ बनाकर खानेसे भी कचालू ही कहे जाते हैं।

कचावट (सं॰ स्त्री॰) आमकी एक खटाई। कच्चे आमको कूटपीस अमावटकी भांति जमानेसे यह तैयार होती है।

कचास, कचाई देखो।

कचिया (हिं॰ स्त्री॰) हंसिया, काटनेका एक औज़ार।

कचियाना (हिं॰ क्रि॰) १ हताश होना, हिम्मत छोड़ना, हार मान जाना। २ भयभीत होना, ख़ौफ़ खाना। ३ लज्जा मानना, शर्मिन्दा होना, सकुचना।

कचिरो (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Arum fornicatum) यह कचुजातीय वृक्ष है। पुष्करिणीके तीर कचिरो देख पड़ती है।

कचिरो।

यह वृक्ष वङ्गदेश और चट्टग्राममें उत्पन्न होता है। हन्त प्रकाशित रहता है। पत्र तलदेशके प्रायः

मध्यभागमें वृन्तसे मिल जाते हैं। पर्वाग्र चारो ओर कोणविशिष्ट होता है। कचु फूलकी भांति यह भी विजातीय है। फूलका डंठल ऊपरी भागपर क्रमश: मोटा पड़ते जाता है। फूलका वहिरावरण डंठलकी तरह समान रहता है। इसमें दो-तीन वीज उत्पन्न होते हैं।

कचो (सं० स्त्री०) कुचायिवीज, एक तुख़्म।

कचोचो (हिं० स्त्री०) १ कृत्तिका नक्षत्र, कचपचिया। २ दंष्ट्रा, दाढ़। किचकिचानेको 'कचोचो बटना' और दांत बैठ जानेको 'कचोचो बंधना' कहते हैं।

कचु (सं० स्त्री०) कन्दविशेष, घुइया, अरवी। (Colocasia antiquorum) यह भेदक, गुरु, कटु, पिच्छिल और आम, वायु एवं पित्तकारक होती है। स्मृतिशास्त्रके मतसे दुर्गोत्सवकी नवपत्रिकामें कचु परिगणित है।

कचुमें फूल लगता, किन्तु फल नहीं पड़ता; इसीसे वीजमें अङ्कुरका अभाव रहता है। पुरातन वृक्ष निकाल डालनेपर मट्टीमें जो रेशेदार जड़ बचती, उसीसे अङ्कुरोत्पत्ति चलती है। वृक्ष न निकालते भी अङ्कुर आता, किन्तु अल्प पड़ जाता है। यही अङ्कुर खोदकर लगा देते हैं। वृष्टि होनेसे ही अङ्कुर फूटता है। पुरातन कचुका मुख चार या छह इञ्च परिमाण काट छांट कर लगा सकते हैं। गृहस्थ अपने घरमें इसीप्रकार दो-चार वृक्ष बनाया करते हैं। कटे-छंटे अङ्कुरको कचु बहुत बड़ी होती है। कचुकी कृषि करनेवालोंके लिये मूलका वीज लगाना ही युक्ति-सङ्गत है। खेत गहरा जोतना पड़ता है। क्योंकि मट्टी जितनी ही दूरतक बनी-चुनी रहेगी, कचु उतनी ही बड़ी निकलेगी। हलकी जगह कुदालसे मट्टी खोद लेना अच्छा है। मट्टीको बारीक बना लेना और घास-फूस फेंका देना चाहिये। फिर खेत-पर मई चलायी और दो फीट या डेढ़ हाथके अन्तर अङ्कुरकी कतार लगायी जाती है। प्रत्येक अङ्कुरके मध्य भी दो फीट या डेढ़ हाथका अन्तर रहना आवश्यक है। अङ्कुर अति क्षुद्र होते भी लगाया जा सकता है। खेतको नियत परिष्कार और वृक्षका आधार बीच बीच पृथक् कर देना उचित है। खाकको खाद अच्छी रहती, क्योंकि इससे कचु ख़ूब बढ़ती है। किन्तु पत्थरके कोयेलेकी खाक वृक्षको जला देती है। इससे उसको कचुके खेतमें नहीं डालते। काष्ठ, तृण, लता, पत्र, आवर्जना और गोमय जला खाक बना लेना चाहिये। कच्चा गोबर या दूसरी खाद देनेसे यह अधिक नहीं बढ़ती और खानेमें किन-किनी पड़ती है। इस लिये ऐसी खाद डालनेसे कोई फल नहीं मिलता। नदी किनारे कचु लगानेसे बहुत लंबी होती है। इसीसे पल्लीग्राममें पुष्करिणी या नाले किनारे गृहस्थ इसे लगा देते हैं। घरमें लगानेके लिये एक हाथ गहरा और एक हाथ चौड़ा गड्ढा खोदे। फिर उसमें मट्टी और खाक भर एक अङ्कुर लगा दे। इसी प्रकार कई वृक्ष लगा सकते हैं।

इसे दो वत्सर बाद खोदते हैं। चार पांच वर्ष पीछे खोदनेसे बड़ी कचु नहीं निकलती।

इससे कितने ही व्यञ्जन अति सुन्दर बनते हैं। कचुको उबाल और छाल निकालकर खाते हैं। यह भारत, सिंहल, सुमात्रा और मलयके कितने ही द्वीपमें स्वभावत: उत्पन्न होती है। कचुका रस रक्तस्तम्भन है। उबाली और छीली कचुकी तरकारी बहुत अच्छी बनती है। पत्तियोंको भी उबाल कर खा सकते हैं। किन्तु किनकिनाहट निकालनेके लिये अच्छी तरह उबाल लेना चाहिये। कचु भूनकर भी खायी जाती है।

कचुल्ला (हिं० पु०) चौड़े पेंदेका कटोरा।

कचूमर (हिं० पु०) १ जंगली गूलर। २ कुचला, एक अचार। यह कुचलकर बनाया जाता है। ३ कुचली हुयी चीज़।

कचूर (हिं० पु०) १ कर्चूर। यह हलदीके पौदे-जैसा देख पड़ता, किन्तु मूलमें भेद रहता, जो श्वेत लगता और कपूरकी भांति महकता है। कचर समग्र भारतवर्षमें लगाया और हिमालयकी तराईमें स्वयं पाया जाता है। २ कटोरा।

कचूरक (सं० क्लो०) कचूर, हुरया।

कचेरा (हिं० पु०) कांचका काम बनानेवाला।

कचेरुक (सं० पु०) कशेरु, एक पौदा।

कचेल (सं० क्ली०) कच्यते बध्यते अनेन, कच-एलच्। लिख्यपत्र बांधनेका सूत्र, जिस डोरेसे हाथकी लिखी किताब बांधी जाये।

कचेहरी, कचहरी देखो।

कचोना (हिं० क्रि०) कचसे चुभाना, धंसा देना।

कचोर (सं० पु०) कचूर, कचूर।

कचोरा (सं० स्त्री०) १ शालिधान्यविशेष, किसी किस्मका चावल। यह पित्तको नाश करती है। (अविसंहित) (हिं० पु०) २ कटोरा, प्याला।

कचोरी (हिं० स्त्री०) कटोरी, प्याली।

कचोड़ी, कचौरी देखो।

कचौरी (हिं० स्त्री०) पिष्टकविशेष, दाल-पूड़ी। संस्कृतमें इसे पूरिका कहते हैं। भावप्रकाशके मतसे उड़दको भिगोकर पीसी हुई दालमें लवण, आर्द्रक एवं हिङ्गु मिला और उसे आटेके पेड़े बीच लगा पूड़ीकी तरह बेल लेते हैं। फिर उपरोक्त द्रव्य घृत वा तैलमें अच्छीतरह तलनेसे कचौरी बनती है। छोटी कचौरी दाल भरा आटेका पेड़ा हो घी या तेलमें पकानेसे तैयार हो जाती है। तेलकी कचौरी सुख-रोचक, मधुरस, गुरु, स्निग्ध, बलकारक, रक्तपित्त-जनक, पाकमें उष्ण और वायु तथा चक्षुके तेजको नाश करनेवाली है। किन्तु अनेक मनुष्य इसे खाकर बीमार पड़ जाते हैं। घृतपक्व कचौरी चक्षुके लिये हितकारक, रक्तपित्तनाशक और तैलपक्वकी भांति अन्यान्य गुणविशिष्ट है।

कचट (सं० क्ली०) कु कुत्सितं चटति, कु-टच्-अच् बाहुलकात् कोः कदादेशः। जलपिप्पली, पानीकी पीपल।

कचर (सं० त्रि०) कु कुत्सितं चरति, कु-चर-अच् कोः कदादेशः। १ मलिन, मैला। २ कुत्सित, खराब। (क्ली०) केन जलेन चर्यते व्यवह्रियते। ३ तक्र, मठा। ४ दुर्वृत्त, बदमाश।

कच्चा (हिं० वि०) १ अपक्व, जो पका न हो। गर्भ-पात होनेको 'कच्चा जाना' और मार बैठनेको 'कच्चा खाना' कहते हैं। २ अग्निमें न पका हुआ, जिसको अच्छी आंच लगी न हो। ३ अपरिपुष्ट, जो मज़बूत न पड़ा हो। ४ अप्रस्तुत, जो तैयार न हो। ५ अ-संस्कृत, साफ़ न किया हुआ। ६ अस्थायी, कमज़ोर। ७ अयुक्त, सुबूत न रखनेवाला। ८ न्यून, कम। ९ अपूर्ण, जो काट-छाटकी जगह रखता हो। १० नियम-रहित, बेक़ायदा। ११ आर्द्र मृत्तिका-निर्मित, गीली मट्टीका बना हुआ। १२ अपटु, जो होशियार न हो। १३ अनभ्यस्त, महावरा न रखनेवाला। (पु०) १४ धागा, डोभ, दूर-दूरकी सीवन। १५ खाका, ढांचा। १६ मसविदा। १७ जबड़ोंका जोड़, चौं। १८ दंष्ट्रा, दाढ़। १९ तांबेका एक छोटा सिक्का। २० धेला, आधा पैसा। २१ एक दिनके लिये एक रुपयेका सूद। न घोंटे हुये कागज़ तथा रजिष्टरी न की हुयी दस्तावेज़को 'कच्चा कागज़' झूठे सलमे-सितारेके कामको 'कच्चा काम', खाज एवं गरमीको 'कच्चा कोढ़', झूठे गोटेको 'कच्चा गोटा', आवेमें न पके हुये तथा बेवर घड़ेको 'कच्चा घड़ा', सच्चे वृत्तान्त को 'कच्चा चिट्ठा', पानीमें न बुझे कलीको 'कच्चा चूना', मूर्ख, हठी या पीछे पड़नेवाले आदमीको 'कच्चा जिन', रांगेके जोड़को 'कच्चा जोड़', या 'कच्चा टांका', कते और न बटे तागेको, 'कच्चा तागा' या 'कच्चा धागा', नीलवरीको 'कच्चा नील' (कोठीमें मथने पीछे गोंद मिला हौज़में नील छोड़ते हैं। नील नीचे बैठ जानेपर पानीको हौज़के छेदसे निकाल देते हैं। फिर नीलका जमा हुआ माठ या कीचड़ कपड़ेमें बांध नीचेके गड्ढेमें रातभर लटकाया जाता है। सवेरे उसे राखपर फैला धूपमें सुखानेसे कच्चा-नील बनता है।) न चलनेवाले पैसेको 'कच्चा पैसा', रेशमके न बटे डोरे या कलप न किये हुये रेशमी कपड़ेको 'कच्चा बाना', झूठे गोटे-पट्टेको 'कच्चा माल', धुंधला देख पड़नेको 'कच्चा मोतियाबिंद', उबाली नोनी मट्टीके खारे पानीमें जमनेवालेको 'कच्चा शोरा' और काममें अच्छी तरह न चलनेवालेको 'कच्चा हाथ' कहते हैं।

कच्चित् (सं० अव्य०) काम्यते, कम्-विच्, चीयते

निश्चीयते, चि-क्विप् पृषोदरादित्वात् मस्य दत्वम्; कच्च चिच्च द्वयो: समाहार इति वा। १ प्रश्न, क्या, कौन, क्यों। २ हर्ष, खुशी। ३ मङ्गल, भलाई। ४ स्वीय अभिलाष प्रकाश, अपनी ख्वाहिशका इज़हार।

कच्चिदध्याय (सं० पु०) महाभारतका एक अध्याय। इसमें भङ्गीक्रमसे नारदने राजनीतिका उपदेश दिया है। (भारत, स० ५ अ०)

कच्ची (हिं० स्त्री०) १ न पकी हुयी, जो पकी न हो। २ सखरी, दाल-भात या रोटी दाल। जो रसोई घी या दूधमें पकायी नहीं जाती, वह 'कच्ची' कहलाती है। पूरी-तरकारीका नाम 'पक्की' है। कान्यकुब्जादि ब्राह्मण अपने सम्बन्धियोंके अतिरिक्त दूसरेके हाथकी कच्ची नहीं खाते। अधिक दिन न चलनेवाले कामधामको 'कच्ची असामी', न खुली कली या अप्राप्तयौवना एवं पुरुषसे समागम न करनेवाली स्त्रीको 'कच्ची कली', न पकनेवाली या आधी राह चल चुकनेवाली चौसरकी गोटीको 'कच्ची गोटी', न पकी हुयी मट्टीकी गोलीको 'कच्ची गोली', दिनके ६०वें भाग या २४ मिनटको 'कच्ची घड़ी', खरी चांदीको 'कच्ची चांदी', गलाकर ख़ूब साफ़ न की हुई शकरको 'कच्ची चीनी', ठीक तौरसे न बिके हुये मालके लेन-देनकी बहीको 'कच्चो जाकड़', सरकारी क़ानून्के विरुद्ध घराऊ रीतिसे सादे कागज़पर उतारी हुयी नक़लको 'कच्ची नकल', पहली पेशीको 'कच्ची पेशी', किसी दुकान या कारख़ानेका नादुरस्त हिसाब रखनेवाली बहीको 'कच्ची बही', पक्की मितीसे पहले पड़ने या रुपये मिलने तथा चुकनेवाले दिनको 'कच्ची मिती', केवल जलसे बने भोजनको 'कच्ची रसोयी', प्रतिदिनके आयव्यय लिखे जानेकी बहीको 'कच्ची रोकड़', राबसे जूसी निकालकर बनायी हुयी चीनीको 'कच्ची शकर', कंकड़-पत्थरसे न पिटी हुयी सड़कको 'कच्ची सड़क' और दूर दूर डोभ रखनेवाली सिलाईको 'कच्ची सिलाई' कहते हैं। किताबके सब फरमे एकही साथ सीये जानेका नाम भी कच्ची सलाई ही है।

कच्चू (हिं० स्त्री०) कचु; अरवी, घुइया।

कच्चूर (सं० पु०) कचु नामक कन्दशाक, घुइया, बंडा।

कच्चे-पक्के दिन (हिं० पु०) ऋतुके सन्धिका समय, मौसम तबदील होनेका वक्त। इन दिनों स्वल्प आहार करने और ब्रह्मचारी रहनेसे मनुष्य सुख पाता है।

कच्चे-बच्चे (हिं० पु०) छोटे-छोटे लड़के, बहुतसे बच्चे।

कच्चोर (सं० क्ली०) शठी, कचूर।

कच्छ (सं० पु०) केन जलेन कृणाति दीप्यते छाद्यते वा, क-छो-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ जलका निकटवर्ती स्थान, कछार, पानीके पासकी जगह। २ नदी वा सरोवरका प्रान्तभाग, दरया या तालाबके सामनेका मैदान। ३ नदी पर्वतादिका समीपस्थान, दरया पहाड़ वगैरहका पड़ोस। ४ नौकाका अवयवविशेष, नावका एक हिस्सा। ५ परिधानवस्त्रका अञ्चल, धोतीकी कांछ। ६ तुन्नकद्रुम, तुनका पेड़। ७ नन्दीवृक्ष। ८ जलमय देश वा स्थान, पानीसे भरी हुई जगह। ९ प्राचीन राजधानीविशेष, एक पुराना शहर। १० कच्छपका अवयवविशेष, कछुवेका एक हिस्सा। (त्रि०) केन जलेन छृणाति दीप्यते वा, छृद-ड। ११ जलप्रान्तीय, पानीकी जगहसे सरोकार रखनेवाला।

"नदी कच्छोद्भवं कान्तमुच्छ्रितं ध्वजसन्निभम्।" (भारत, सभा ७०अ०)

(हिं०) १२ छन्दोविशेष, एक छप्पय। इसमें ५३ गुरु, ४६ लघु, ९९ वर्ण और १५२ मात्रा रहती हैं। १३ कच्छप, कछुवा।

१४ भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तका समुद्रतीरवर्ती एक प्रदेश। यह अक्षा० २२°४६' से २४° उ० और देशा० ६८° २२' से ७१°३' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरपूर्व एवं दक्षिणपूर्व रण, दक्षिण कच्छका उपसागर, पश्चिम अरब-सागर और उत्तरपश्चिम कोरी या लखपत नदी है।

रण या जली हुयी ऊपरभूमिमें खड़ियेका द्वीप, पच्छम और बन्नी नामक भूभाग विद्यमान है।

कच्छके प्रधान विभाग यह हैं—१ पावर, २ गरद, पथक; ३ अबडासा, ४ कुणु, ५ कांठा वा कांठी, ६ मियानी एवं ७ बागड़।

पावर विभागमें ही पहले काठी जातिकी राजधानी रही। यह स्थान दैर्घ्यमें ५० एवं प्रस्थमें २० मील विस्तृत और रणके दक्षिण किनारे अवस्थित है। इसकी दक्षिण सीमापर चावड गिरिमाला है। पावरका प्रधान नगर भुज है। १६०५ संवत्‌को खङ्गारने उसे स्थापित किया था।

जाम अवड़ाके नामानुसार अवड़ासा विभागका नाम पड़ा है। यह विभाग चावड़ गिरिमाला और अरबसागरके मध्य अवस्थित है। मियानी विभाग पावरसे पूर्व लगता है। मीना जातिसे इस स्थानका यह नाम पड़ा है।

आजकल जिसे लोग कच्छ उपसागर उसीको पहले कांठी कहते थे, पाश्चात्य भौगोलिक टलेमिने उक्त उपसागरका नाम रखा। (Ptolemy's Geog. Bk. VII. Ch. I.)

पेरिप्लास्‌ने बारक नामसे इस उपसागरका उल्लेख किया है। उनकी वर्णनासे समझ पड़ता, कि कच्छमें बारक नामक एक द्वीप रहा। कोई कोई स्थानीय जखामण्डलको पेरिप्लास्-वर्णित बारक द्वीप मानते हैं। किन्तु हमारी विवेचनामें बारक द्वारका शब्दका अपभ्रंश मात्र है। मागधी भाषामें द्वारकाके स्थानपर बारवा या बरवा शब्द चलता है। आजकल भी जैन वणिक्‌ कहीं कहीं मागधी भाषा बोलते हैं। अतएव बोध होता—पेरिप्लास्‌ने किसी वणिक्‌से सन्धानले बारक नामसे द्वारका उल्लेख किया है।

टलेमि-वर्णित उक्त कांथी या कांठी उपसागरके नामसे ही कच्छ प्रदेशके कांठी विभागका नाम चला है।

इतिहास—कच्छ प्रदेशका प्राचीन विवरण नहीं मिलता। महाभारतमें इस जनपदका नाममात्र लिखा है। (भारत भीष्म ९।५६, जैन हरिवंश ११।६८)

लोगोंमें प्रवाद है—पहले कच्छ प्रदेशका तेज नामक प्राचीन नगर सुराष्ट्र राज्यकी राजधानी रहा। तेजकर्ण नामक एक राजाने उसे बसाया था। (Asiatic Researches, Vol. IX. 231.) विलसन साहबके मतमें ष्ट्राबो वर्णित सिगर्तिन (श्रीगर्त) नामक जनपदका वर्तमान नाम कच्छ है। (Ariana Antique, 2-2) ई॰से ११४ वर्ष पहले मिनान्दरने यह स्थान जीता था।

६४० ई॰में चीना परिव्राजक युअन-चुयङ्ग यहां आकर दशावतारके अनेक मन्दिर देख गये थे। उन्होंने लिखा—यह जनपद मालवराज्यके अन्तर्गत आता और यहां अनेक धनवानोंका वास पाया जाता है।

पूर्वकालको कच्छ देशमें काठी और अहीर जातिका प्राधान्य रहा। उसी समय काठियोंने पावरगढ़में दुर्भेद्य दुर्ग बनाया था। कच्छके दक्षिण भाग पर्यन्त उनका अधिकार रहा। प्रत्नतत्त्वविदोंने काठियोंको शक वा जित्‌ जातिकी एक शाखा ठहराया है। सम्मारोंके बढ़नेपर काठियोंका प्रताप घटा। फिर ई॰के १५श शताब्द जाम अवड़ेने काठियोंको एककालही कच्छ प्रदेशसे भगा दिया।

तारीख़्-उस्-सिन्द नामक मुसलमानी इतिहासमें लिखा है—

खाफीरके मरनेसे देशके सब मान्यगण्य सम्भ्रान्त व्यक्ति अमरके पुत्र एवं पृथुके पौत्र दूदाको सिंहासन देनेपर एकमत बने। अभिषेकका कार्य सम्पन्न हुआ था। किसी दिन सिंहार नामक एक ज़मीन्दार कर देने आये। दूदासे उनका आलाप परिचय हुआ। सिंहारने दूदाको भय देखा कहा था—कच्छ प्रदेशको शम्मा जाति स्थान स्थान पर आक्रमण करनेको आगे बढ़ रही है, अब आपको तैयार हो जाना चाहिये। संवाद मिलते ही दूदा ससैन्य कच्छ प्रदेश पहुंचे। यहांके सब लोगोंने उनकी वश्यता मानी थी। फिर शम्मा जातीय लाखा नामक एक व्यक्ति राजदूतके रूपमें कच्छके घोटकादि उपहार ले दूदाकी राजसभामें उपस्थित हुये। दूदाने धन, रत्न और वस्त्रादि द्वारा राजदूतका सम्मान रखा (ई॰ १२श शताब्द)।

शम्मा या जाड़ेजा राजा अपनेको श्रीकृष्ण और यादवगणके वंशधर बताते हैं। उनकी वंशावली पढ़नेसे समझते—श्रीकृष्णपुत्र नरकासुरके पुत्र बाणासुर और उनके वंशधर शोणितपुर तथा मिसरमें

राजत्व करते थे। इसी वंशके जाम नरपति नामक एक राजकुमार तीन भाइयोंको साथ ले मिसरसे भाग आये। उन्होंने उमीर नामक बन्दरमें लंगर गिराया और सुराष्ट्रके श्रीग्रम् नामक गिरिपर अवस्थान लगाया था। इसी जगह उनके ज्येष्ठभ्राता पशुपति मुसलमान हो गये। कनिष्ठ भ्राता गजपति बहुत दिन सुराष्ट्रमें रहे। आज भी सुराष्ट्रके चूड़ासमा-वंशीय अपनेको गजपतिका वंशधर बताते हैं।

नरपति एक वीरपुरुष रहे। उन्होंने फीरोजशाहको मार खम्बात अधिकार किया था। उन्होंके पुत्र सम्मारहे। यही सम्मावोंके आदिपुरुष हैं। सम्माने मकवानी जातिकी कूलुवा नाम्नी एक सुन्दरीसे विवाह किया था। उन्हींके गर्भसे तेजकरनने जन्म लिया। तेजकरनने प्रमार-रमणीका पाणिग्रहण किया था। इन्हीं रमणीसे उनके जामनेत नामक एक पुत्र उत्पन्न हुये। जामनेत बड़े वीरपुरुष रहे। किसी राठौर कन्यासे उन्होंने अपना विवाह किया, जिनके गर्भसे नौतियारने जन्म लिया। नौतियारके पुत्रका नाम जाम उधरावद था। उधरावदके प्रपौत्र जाम अवडा रहे। इन्होंने कच्छका अवडासा विभाग स्थापन किया। इनके पुत्र जामलाखियार रहे। वह सिन्धु प्रदेशके नगरसामई नामक स्थानमें राजत्व करते थे। लाखियारने एक शोधी-रमणीको रूपसे मुग्ध हो अपनी अङ्कलक्ष्मी बनाया। उनके पुत्र लाखा-घुरारा (घोडार) रहे। लाखाके पुत्रका नाम उनड था। उनडके दो कनिष्ठ भ्राता रहे—मोड़ और मनाई। सम्मा जातीय उक्त कई व्यक्ति सिन्धुप्रदेशमें एक-एक नायक थे। उनडको पिताका राज्य मिला, जो उनके दोनों भाइयोंको अच्छा न लगा। दोनोंने मिलकर उन्हें मार डाला था। किन्तु देशके सब लोग उनसे विरक्त हुये, इसीसे मोड़ और मनाई कच्छ प्रदेशको भगे। उस समय दोनों भाइयोंके कुटुम्बीय वागमचावड़ा कच्छप्रदेशमें राजत्व करते थे। दोनोंने वागम चावड़ेको भी यमालय पहुंचा और सात प्रकारके बघेलोंको अपने वशमें ला कच्छप्रदेश दबा लिया। पांच पुरुषोंके राजत्व बाद इस वंशका लोप हुआ।

उक्त पांच राजावोंमें ४थे लाखा फुलानीका नाम ही कच्छ-प्रदेशमें प्रसिद्ध है। वह ई०के १४श शताब्दको विद्यमान रहे। काठियावाड़के आदकोट नामक स्थानमें लाखा फुलानीको पालिया पड़ी है।

१३०६ विक्रमाब्दको लाखा फुलानी खेड़कोटमें राजत्व करते थे। उन्होंने काठीजातिको हरा काठियावाड़का कियदंश जीत लिया। कोई कहता—आदिकोटमें लाखा फुलानीका मृत्यु हुआ। फिर दूसरोंके कथनानुसार उनके जामाताने ही उन्हें मार डाला था। १४०१ संवत्को फुलानीके भ्रातुष्पुत्र पुवरहानी राजा बने। किन्तु अल्प दिनके राजत्व बाद यवनके हाथसे वह मारे गये। उनको पत्नी राज्ञी विधवा हुईं। राज्ञीने लाखा जामको कच्छदेश बोला भेजा। लाखा जाम बिरजीके पुत्र और जाम जाड़ाके पोष्यपुत्र थे। १४०६ संवत्को उन्हें सिंहासन मिला। फिर सांधके पुत्र जाड़ा राजा हुये। उन्हींसे जाड़ेजा वंशको उत्पत्ति है। प्राय: १४२१ संवत्को लाखाके पुत्र रतरायधन राजा बने। उनके चार पुत्र रहे, जिनमें तृतीय पुत्र गजन कच्छका पश्चिमांशस्थित बारा नामक भूखण्ड शासन करते थे।

१५२५ ई०को भीमजीके पुत्र जाम हमीरजीने शासनका भार उठाया। किन्तु १५३० ई०को वह जाम वारल हालके हाथों मारे गये। वारल हालको भी देश छोड़ भागना पड़ा था। उन्होंने काठियावाड़ जा नवानगरको पत्तन बनाया।

उक्त घटनासे पूर्व ही हमीरजीके पुत्र खंगार जन्मभूमि छोड़ अहमदाबाद भाग गये थे। वहां महमूद शाहके साहाय्यसे १५४८ ई० (१६०५ संवत्)को उन्होंने पितृराज्य उद्धार किया। भुज नगरमें उनको राजधानी स्थापित हुई थी। फिर पांच राजावोंके राजत्व बाद महाराव श्रीप्रागमलजी राजा बने। उन्होंने राज्यलोभसे अपने भ्राता बेरजीका मार डाला था। प्रागमलजीके दूसरे भ्राता नागलजीने कोतारा, कोटरो, नंगर, गोदरा प्रभृति नगर बसाये। अवड़ासेको जाड़ेजा जातिके हलाली इन्हीं नागलजीके वंशधर हैं। जाड़ेजावंशीय नाना शाखावोंमें विभक्त हैं।

कच्छकी जाड़ेजा-राजवंशावली ।
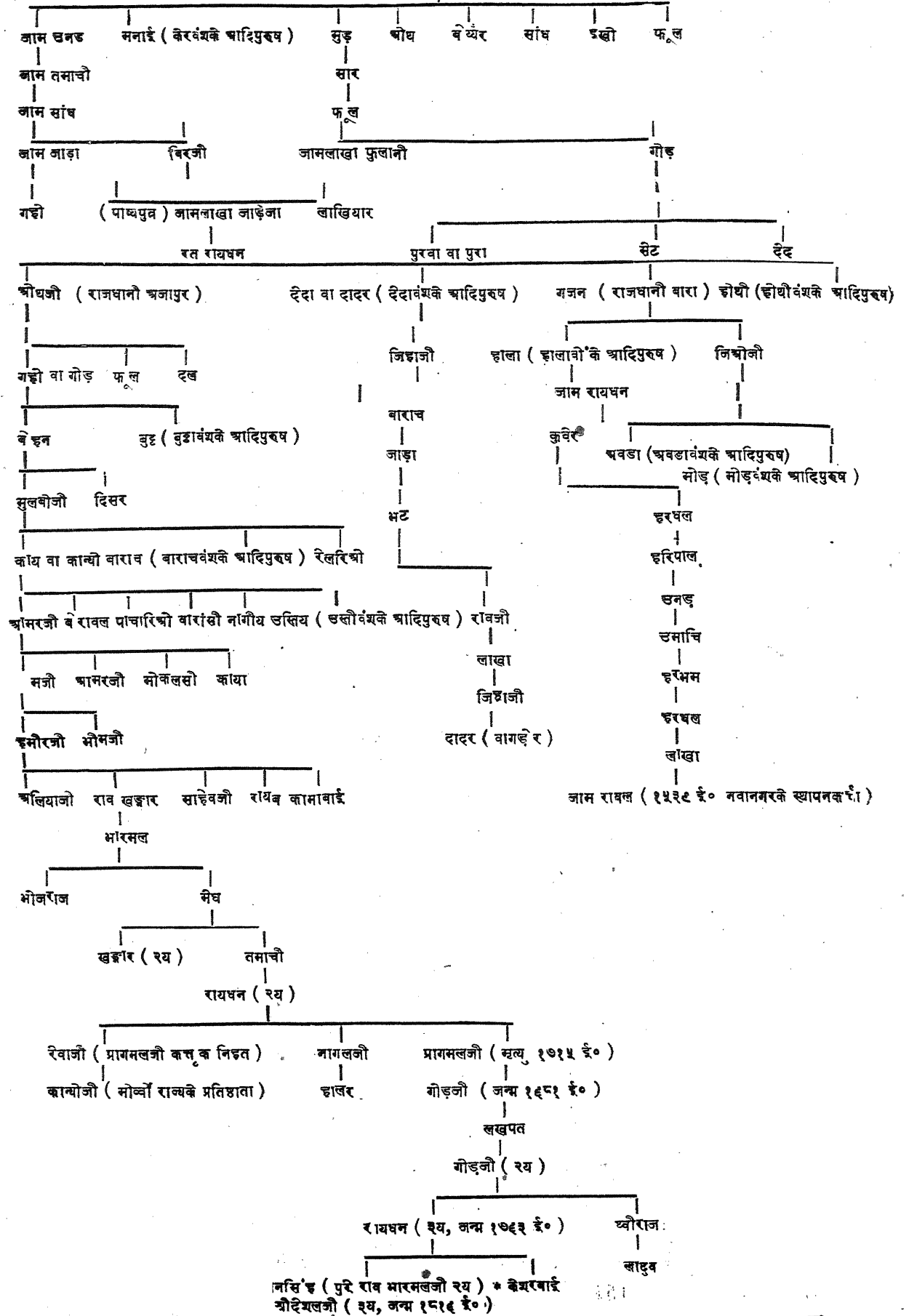
* जूनागढ़के नवावसे इनका विवाह हुआ ।

† जाड़ेजा वंशावलीमें इन्हीं राजाका नाम सबसे पीछे आता है ।

बहुतोंने इसलामधर्म ग्रहण किया है। किन्तु पुरुषानुक्रमसे जो उपाधि चला आया, उसे किसीने नहीं गंवाया। ६१४ पृष्ठमें जाड़े जा-राजवंशावली देखो।

कच्छ प्रदेशमें काठो, अहोर और जाड़ेजा वंशको छोड़ निम्नलिखित जातियां भी रहती हैं—कोली, मीना, चावड़ा, बघेला राजपूत, भंसाली, लोहना या लवाना, संहार, भाटिया, बारड़, भंबिया, छगर, दल, झाला, खांडागरा, मायड़ा, कनडे, पशाया, पैहा, मोकलसी, मोका, रैलडिया, वरंगसी और बरारी राजपूत। ब्राह्मणोंमें औदीच, सारस्वत, पुकरना, नागर, सचोरा, श्रीमाली, गिरनाड़ा, मोड़ और राजगुरु अधिक हैं। मिश्री, कंदोई, मौनी, सुराठिया, मूढ़ और बाइड़ा नामक वैष्णवसम्प्रदाय मिलते हैं। चारण तीन प्रकारके हैं—कच्छेला, मरुना और तुंबेल।

कच्छके अनेक ब्राह्मण और राजपूत मुसलमान हो गये हैं। उनमें नाना श्रेणियां चलती हैं। यथा—मेहमन, बोहरा, आगरिया, आगा, भाण्डारी, भट्टि, दराड़, मंगरिया, वटार, पड़ियार, फूल, राजड़ा, रायमा सेड़ात, वेहन, हालीपुत्रा, नारंगपुत्रा, नोड़, हिंगोरा और हिंगोराजा।

आजकल कच्छप्रदेश अंगरेजोंके अधिकारमें है।

भूतत्त्व—यह प्रदेश गिरि एवं शैलमय है। केवल दक्षिण भागपर सागरप्रान्तमें उर्वरा भूमि पड़ी है। यहांका एक-एक गिरि स्वतन्त्र है। उनमें कोई पूर्वाभिमुख और कोई पश्चिमाभिमुख चला है। रण किनारे कितनी ही दुर्गम गिरिमाला खड़ी हैं। इन पर्वतोंमें बिल्लौरी पत्थर, कोयलेका स्तर, स्लेटकी मट्टी, स्लेट और चूना आदि द्रव्य मिलते हैं।

कच्छके दक्षिण भागमें भी पर्वत हैं। यह पर्वत आग्नेयगिरिके उपादानसे गठित हैं।

इस प्रदेशमें नदी बिलकुल नहीं। नदीके बदले नाले बहते हैं। वर्षाकालको चारो ओर जलमय होनेपर नालोंसे जल निकल समुद्रमें जा गिरता है।

कच्छक (सं० पु०) कच्छ संज्ञायां कन्। तुन्नकद्रुम, तुनका पेड़।

कच्छकाञ्चन (सं० पु०) पश्चत्य वृक्षभेद, पीपलका एक पेड़।

कच्छटिका (सं० स्त्री०) कच्छं कच्छस्थलं अटति प्राप्नोति, कच्छ-अट्-अच् संज्ञायां कन् अत इत्वञ्च। कच्छ, लांग, कांछा। इसका संस्कृत पर्याय कच्छ, कचा, कच्छा, कच्छाटिका और कच्छटिका है।

कच्छदेश (सं० पु०) देशविशेष। कच्छ देखो।

कच्छनाग—एक नागा जाति। यह लोग नागा पर्वतमें रहते हैं। नागा देखो।

कच्छप (सं० पु०) कच्छे अनूपदेशे आत्मानं पाति रक्षति, कच्छं आत्मानो मुखसम्पुटं पातीति वा, कच्छ-पा ड। कूर्म, संगपुश्त, कछुवा। इसका संस्कृत पर्याय कूर्म, कमठ, गूढ़ाङ्ग, धरणीधर, कच्छेष्ट, वल्कलावास, कठिनपृष्ठक, पञ्चसुप्त, क्रोड़ाङ्ग, पञ्चनख, गुह्य, पीवर और जलगुल्म है। वेदमें कच्छपको अकूपार कहते हैं। निरुक्तकार यास्कने लिखा है—

"कच्छपोऽप्यकूपार उच्यते ऽकूपारो न कूपमृच्छतीति। कच्छपः कच्छं पाति कच्छेन पातीति वा कच्छेन पिबतीति वा। कच्छः खच्छः खच्छदः। अयमपीतरो नदीकच्छ एतस्मादेव कमुदकं तेन छाद्यते।" (निरुक्त ४।१८)

अंगरेजीमें स्थलकच्छपको टोर्टोइस (Tortoise) और समुद्रकच्छपको टर्टल (Turtle) कहते हैं। इसका युरोपीय वैज्ञानिक नाम चिलोनिया (Chelonia) है।

पृथिवीके नाना देशोंमें अनेक प्रकारके कच्छप होते हैं। अरिष्टटलने ग्रीक भाषामें तीन प्रकारके कच्छप कहे हैं। यथा—स्थलकच्छप, जलकच्छप और समुद्रकच्छप। फिर युरोपीय प्राणितत्त्वविदोंने कच्छपजातिको पांच श्रेणियोंमें बांटा है। यथा—स्थलकच्छप (Testudo), जलकच्छप (Emys), कठिन आवरणयुक्त कच्छप (Chelydos), समुद्रकच्छप (Chelonia) और कोमल कच्छप (Trionyx)।

फ्रान्सीसी प्राणितत्त्ववित् डुमेरीने कच्छपको इन कई भागोंमें विभक्त किया है; यथा—चारसिशान (Chersites) वा स्थलकच्छप, इलोदियान (Elodites) वा बिलकच्छप, पोटेमियान (Potamites)

वा नदीकच्छप और थालसियान (Thalassites) वा समुद्रकच्छप।

सकल कच्छपोंके मुण्ड सर्पादि सरीसृपकी भांति एक अस्थिसे निर्मित होते हैं। किन्तु करोटि सब जातिकी समान नहीं पड़ती।

स्थलकच्छपका मस्तक अण्डाकार, अग्रभाग विषम और दोनों चक्षुवोंका व्यवधान कुछ अधिक रहता है। नासिकाका छिद्र बड़ा और पश्चात् भागपर चपटा पड़ेगा। चक्षुकोटर गोलाकार और वृहत् होता है। पार्श्वके कपालका अस्थि पश्चात् कशेरुके मध्य झुक जाता है। उभय पार्श्वको दो वृहत् शङ्खास्थि पड़ती हैं। इन्हीं दोनोंके मध्य मस्तकके बड़े स्वरास्थिका गर्त रहता है।

कच्छपके उत्तमाङ्गमें नासाका अस्थि नहीं होता। सजीव अवस्थापर नासिकाके छिद्रमें सूक्ष्म पत्रोंकी भांति सकल अस्थि झलकते हैं। नासिकाका अस्थिमय छिद्र एक ओर दीर्घ रहता और फलास्थि मात्र्यस्थि, हन्वस्थि तथा दो ललाटास्थिसे बनता है।

जलकच्छपका मस्तक चपटा पड़ जाता है। इसका ललाट सम्मुख विस्तृत होते भी अक्षके कोटर पर्यन्त नहीं पहुंचता।

कोमल कच्छपका मुण्ड सामने बैठा और पीछे झुका रहता है। इसके पार्श्वकपालका सूक्ष्मास्थि, ललाटका पश्चाद्भाग है। शङ्खास्थि और गण्डास्थि परस्पर संलग्न है। कोमल कच्छपका मुख अपर कच्छपकी अपेक्षा छोटा, अक्षकोटर कितना ही लंबा और नासिकाका छिद्र अतिसूक्ष्म होता है।

कच्छपके नीचेका मुखकोष कुम्भीरके मुखकोष जैसा लगता है। किसी किसी प्राणितत्त्ववित्‌के मतमें वह पक्षीके मुखकोषसे बिलकुल मिलता है। सकल अस्थि पक्षीके अस्थिकी भांति अविच्छिन्न रहते हैं।

जलकच्छप मानवके विशेष कार्यमें नहीं आता। वङ्गदेशके कुछ नीच लोग इस कच्छपको खाते हैं। किन्तु समुद्रकच्छपसे मानवजातिका अनेक उपकार होता है। कोई उसे खाता और कोई अस्थिसे कड़ा बनाता है।

स्थलकच्छप भी जलमें बहुत प्रसन्न रहते हैं। यह एककालही अधिक जल पी लेते और कीचड़में शरीर डुबोड़ देते हैं। सागरवेष्टित द्वीपसमूहमें स्थलकच्छप अधिक होते हैं। यह बहुसंख्यक एकत्र दल बांध घूमा करते हैं। जहां प्रस्रवण चलता, वही स्थान कच्छपको अच्छा लगता है। यह नाना स्थानोंमें गर्त बना लेते हैं। पथिक पथमें जल न पानेपर उसी गर्तसे जलका सन्धान लगा सकते हैं।

हम महाभारतमें गजकच्छपका युद्ध पढ़ विस्मित हो जाते हैं। किन्तु वर्तमान चाखाम द्वीपके कच्छपका विवरण सुननेसे वह घटना असम्भव समझ नहीं पड़ती। डारुइन साहबने चाखाम द्वीपमें अति वृहदाकार कच्छप देखा था। आर्किपेलिगो द्वीपपुञ्जमें बहुत बड़े-बड़े कच्छप विद्यमान हैं। उनमें एक एक कच्छपका केवलमात्र मांस वज़नमें प्रायः ढ़ाई मन बैठता है। सन्देह करते—एक कच्छपको सात-आठ आदमी उठा सकते हैं या नहीं। स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषका लाङ्गूल भी लंबा पड़ता है। यह कच्छप जब जलशून्य स्थानमें रहते या जल पानकर नहीं सकते, तब वृक्षके पत्रोंका रस पिया करते हैं।

जो स्थलकच्छप उच्च अथवा शीतल स्थानमें रहते, वह तिक्त और कटुरसविशिष्ट वृक्षके पत्र चरते हैं। चाखाम द्वीपवासी कहते—स्थानीय कच्छप तीन-चार दिनतक जलके पास रहते, फिर निम्न भूमिको चल पड़ते हैं। किसी किसी स्थानपर स्थलकच्छपोंको वृष्टिके जल भिन्न अपर समय जल रहनेके लिये नहीं मिलता। फिर भी यह जीते जागते हैं। पथमें पिपासा लगनेपर उक्त द्वीपवासी कच्छप मार खोलसे जल निकाल पी लेते हैं। यह जल अतिपरिष्कार रहता और खानेमें कटु लगता है। वहांका स्थलकच्छप प्रत्यह दो कोस चल सकता है। शरत्कालको कच्छपके मिलनका समय है। इसी समय स्त्री-पुरुष एकत्र होते हैं। पुरुष सुखके आवेशमें मत्त हो प्राण छोड़ चिल्लाया करता है। वह कर्कशध्वनि २०० हाथ दूरसे सुन पड़ती है। फिर द्वीपवासी समझ जाते—अब कच्छपके डिम्ब प्रसवका समय आया है। बालूसे

भरे हुये स्थानमें कच्छपी अण्डे देती, फिर अण्डेपर बालू चढ़ा लेती है। पर्वतपर इधर उधर गर्तमें भी कच्छपी अण्डे दे देती है। अण्डा देखनेमें साफ़ और ८ इञ्चतक बड़ा होता है। एक स्थानमें १८ अण्डे रहते हैं। यह बधिर होते, इसीसे किसीको पश्चात्दिक्से पकड़ने आते देख-सुन नहीं सकते। यह कच्छप प्राय: शताधिक वर्ष जीवित रहता है।

बिलकच्छपका स्वभाव अपर कच्छपजातिसे स्वतन्त्र होता है। यह स्थलकच्छपकी भांति धीरे-धीरे नहीं चलता, किन्तु जल और स्थल दोनोंमें अति शीघ्र यातायात करता है। बिलकच्छप केवल शाकपत्रसे सन्तुष्ट नहीं रहता,सुविधा लगनेसे जीवजन्तु मत्स्यादि पकड़ भी उदर भरता है। इसका अण्डा प्राय: गोलाकार, शम्बुकादिकी भांति चूर्णोत्पादक आवरणसे आच्छादित और वर्णमें स्वच्छ रहता है। बिलकच्छपी मट्टी खोद गर्तमें अण्डा देती है। सचराचर वह बिलके पास ही गर्त करती और विशेष सतर्क रहती—शत्रुकी चोट तो अण्डेपर नहीं पड़ती। यह नाना प्रकार होता है। एसियामें १६, अमेरिकामें १८, युरोपमें २ और अफ़रीक़ामें १ प्रकारका बिलकच्छप मिलता है।

नदीकच्छप सर्वदा ही जलमें रहता, कभी-कभी स्थलपर आ चढ़ता है। यह बहुत बड़ा होता और एक एक वज़नमें पैंतीस साढ़े पैंतीस सेर बैठता है। इसकी खोलका परिमाण:साढ़े तेरह इञ्च है। यह जलमें और जलके ऊपर तैरा करता है। देहका निम्नभाग अल्प श्वेतवर्ण, गुलाबी अथवा नीला जैसा देख पड़ता है। किन्तु उपरिभाग नानाविध रहता है। वह सचराचर पिङ्गल वा पांशुवर्ण लगता, जिस पर छोटा-छोटा धब्बा पड़ता है। रात्रि आनेसे यह अपनेको निरापद समझता और नदीतट, नदीके निकट पतित वृक्षकी शाखा अथवा नदीमें तैरते किसी काष्ठपर चढ़ विश्राम करता है। मानवका स्वर अथवा अपर किसी प्रकारका स्वर सुननेपर नदीकच्छप तत्क्षणात् नदीके गर्भमें डूब जाता है। यह बहुत मांसप्रिय रहता और कुम्भीरका छोटा बच्चा भी पाते ही उदरसात् करता है। आखेट अथवा आक्रमण करते समय नदीकच्छप तीरवत् मस्तक और ग्रीवा चलाता है। यह किसीको काटनेपर शीघ्र नहीं छोड़ता, दंष्ट्रास्थान उखाड़ डालनेसे अलग होता है। इसीसे सब कोई इस जातिके कच्छपसे भय खाता है। भारतवासी कहते हैं—एकबार कच्छप किसीको काटनेके लिये पकड़नेपर विना मेघ गरजे नहीं छोड़ता। इस जातिमें स्त्रियां अधिक होती हैं। पुरुषोंकी संख्या अति अल्प है। स्त्री एकबार ५०।६० अण्डे देती है। फिर स्त्रीके वयसानुर अण्डे भी कम-ज्य़ादा निकलते हैं।

सन्तरणके लिये समुद्र-कच्छपके मत्स्यकी भांति पर होते हैं। ऐसे पर अपर किसी जातीय कच्छपके देख नहीं पड़ते। इसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी सन्तरणोपयोगी हैं। अण्ड देनेका समय छोड़ यह प्राय: तटपर नहीं चढ़ता। कोई कोई कहता—यह रात्रिकालको निर्जन स्थानमें चरते फिरता है।

समुद्रकच्छप कभी कभी अपनी प्यारी घास-पत्ती खानेको उपकूलपर चढ़ अनेक दूर पर्यन्त चला जाता है। यह समुद्रके जलमें निष्पन्दभावसे तैरा करता और देखनेमें मुर्दा मालूम पड़ता है। सन्तरणमें समुद्रकच्छप विशेष पटु होता है। सामुद्रिक उद्भिद् ही इसका प्रधान खाद्य है। फिर भी जिस सामुद्रिक कच्छपके गात्रसे कस्तुरिकाकी भांति गन्ध आता, वह घोंघे पकड़ पकड़ खाता है।

अण्डे देते समय इस जातिकी स्त्री रात्रिकालपर पुरुषके साथ समुद्र छोड़ बहुत दूर किसी द्वीप मध्य बालुकामय स्थानमें उपस्थित होती है। बालूमें वह दो फीट गहरा एक गर्त कर लेती और उसी गर्तमें एककाल १०० अण्डे देती है। इसी प्रकार दो-तीन सप्ताहमें फिर दो बार वह अण्डे दिया करती है। अंडेका आयतन छोटा और गोलाकार रहता है। वह सूर्यके उत्तापसे १५से २८ दिनके मध्य फूट जाता है। अंडा फटनेसे प्रथम कच्छप-शिशुके पृष्ठका आवरण नहीं होता। उस समय यह श्वेतवर्ण देख पड़ता और दारुण विपद्का वेग रहता है। स्थलपर इसे पक्षी मारता और जलमें जा गिरनेसे कुम्भीर एवं सामुद्रिक

मनुष्य खा डालता है। अति अल्पसंख्यक मात्र शिशु जीते जागते हैं। जो बचते, वह समुद्रके गर्भमें बढ़ कालक्रमसे वृहदाकार बनते हैं। उस समय एक-एक समुद्रकच्छप वज़नमें २० मनतक तुलता है। इस जातिका कच्छप मानवजातिके अनेक उपकार करता है। नाना स्थानोंके लोग इसका मांस खाते हैं। विशेषत: जहां कच्छपका बड़ा कोष पाते, वहां लोग उससे नौका, कुटीरके आच्छादन, गवादिको सानी देनेके पात्र और व्यवहारयोग्य कई प्रकारके अपर वस्तु बनाते हैं।

यह जाति प्रधानत: तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। फिर ८।१० भेद पड़ते हैं। इस कच्छपके कोषसे उत्कृष्ट कड़े बनते हैं।

भगवान् मनुके मतसे कच्छप भक्ष्य पञ्चनखोंमें गिना जाता है—

"श्वाविधं शल्यकं गोधा खड्गकूर्मशशांस्तथा
भक्ष्यान् पञ्चनखेष्वाहुरनुष्ट्रांश्च कतोदत: ॥" (मनु ५।१८)

वराहमिहिरने कच्छपजातिका लक्षण इसप्रकार लगाया है—

"स्फटिकरजतवर्णो नीलराजीवचित्र: कलससदृशमूर्त्तिश्चारुवंशश्च कूर्म:।
अरुणसमवपुर्वा सर्षपाकारचित्र: सकलनृपमहत्वं मन्दिरस्थ: करोति॥
अञ्जनभृङ्गश्यामवपुर्वा विन्दुविचित्रोऽव्यङ्गशरीर:।
सर्पशिरा वा स्थूलगलो य: सोऽपि नृपाणां राष्ट्रविवृद्ध्यै॥
वैदूर्यत्विट् स्थूलकण्ठस्त्रिकोणो गूढच्छिद्रश्चारुवंशश्च शस्त:।
क्रीड़ावाप्यां तोयपूर्णे मणौ वा कार्य: कूर्मो मङ्गलार्थं नरेन्द्रै:॥"
(वृहत्संहिता ६४ अ०)

जिस कच्छपका वर्ण स्फटिक एवं रजत-जैसा तथा ऊपर नीलपद्मकी भांति चित्रित, आकार कलससदृश, पृष्ठ मनोहर अथवा देह अरुणवर्ण और सरसों-जैसा चित्रित रहता, वह घरमें रखनेसे राजाका महत्त्व प्रकाश करता है। जिस कच्छपका शरीर अञ्जन एवं भृङ्गकी भांति श्यामवर्ण, सर्वाङ्ग विन्दु-विन्दु चित्रविचित्र अथवा मस्तक सर्प-जैसा या गला स्थूल दिखाता, वह राजाका राष्ट्र बढ़ाता है। जो कच्छप वैदूर्यवर्ण, स्थूलकण्ठ, त्रिकोण, गूढ़छिद्र और मनोहर पृष्ठदण्डविशिष्ट रहता, वह कूप वापी प्रभृति अथवा जलपूर्ण कलसमें मङ्गलार्थ रखनेपर राजाका कल्याण करता है।

*वैद्यकमतमें कच्छपका मांस वायुनाशक, शुक्रवर्धक, चक्षुको हितकर, बलवर्धक, मेधा तथा स्मृतिकारक, स्रोत:संशोधक और शोथ-दोषनाशक है। इसका चर्म पित्तनाशक, पद कफहारक और डिम्ब शुक्रवर्धक एवं मधुर है।

२ अवतारविशेष। कूर्म देखो। ३ नन्दीवृक्ष, तुनका पेड़। ४ कुवेरका एक निधि। ५ मल्लोंके युद्धका एक कौशल, कुश्तीका कोई पेच। ६ विश्वामित्रके एक पुत्र। हरिवंशमें विश्वामित्रके पुत्रोंका नाम लिखा है—देवराज, देवश्रवा, कृति, हिरण्याक्ष, रेणुमान्, साङ्कृति, गालव, मुद्गल, विश्रुत, मधुच्छन्दा, प्रभृति, देवल, अष्टक, कच्छप और पूरित। ७ सर्पविशेष। ८ श्लेष्मजन्य तालुरोगविशेष, तालूकी एक बीमारी। ९ मदिरायन्त्र, शराब उतारनेका एक आला। १० देशविशेष, एक मुल्क। ११ एक प्रकारका दोहा। इसमें ८ गुरु और ३२ लघु लगते हैं।

कच्छपयन्त्र (सं० क्ली०) औषधके पाकका एक यन्त्र, दवा बनानेका एक औज़ार।

कच्छपि (सं० पु०) १ क्षुद्ररोग, छोटी बीमारी। २ तालुरोग, तालूकी बीमारी।

कच्छपिका (सं० स्त्री०) कच्छप स्वार्थे कन् अत इत्वं टाप् च। १ क्षुद्र पिड़काविशेष, छोटी छोटी फुनसियोंकी बीमारी। यह वात और कफसे प्रमेह रोगमें उत्पन्न होती है। सुश्रुतके मतसे कच्छपिका दाहयुक्त एवं कच्छपाकृति रहती और कफ तथा वायुसे उपजती है। भावप्रकाशके लेखानुसार इस रोगमें प्रथमत: स्वेदक्रिया वला हरिद्रा, कुष्ठ, शर्करा, हरिताल और दारुहरिद्रा पीसकर प्रलेप देना चाहिये। पकनेपर व्रणकी भांति चिकित्सा करते हैं। २ विषमुष्टि। ३ महानिम्ब। ४ कृष्णानिर्गुण्डी।

कच्छपी (सं० स्त्री०) कच्छप-ङीष्। जातेरस्त्रीविषयाद-योपधात्। पा ४।१।६३। १ कच्छपस्त्री, कछुई। २ पीड़काविशेष, किसी किस्मकी फुनसी। कच्छपिका देखो।

३ वीणाविशेष। कच्छपके पृष्ठकी भांति तोंबी चपटी रहनेसे ही इसका नाम कच्छपी वा कूर्मी वीणा पड़ा है। स्मिथ साहबके मतमें लायार, टेसटिडो और कच्छपी—तीनों एकजातीय यन्त्र हैं। फिर युरोपीय गीटर यन्त्रके साथ भी इसका अनेक सौसादृश्य देख पड़ता है। युरोपीय गीटर यन्त्रकी आकृति देखने-भालने पर कच्छपीसे ही उसकी सृष्टि मानना होती है। जर्मन गीटरको 'जितार' कहते हैं। वह कच्छपीके अवयवका भेदमात्र है। सितार देखो। ४ सरस्वतीकी वीणा।

कच्छपोलि, कच्छपोलिका देखो।

कच्छपोलिका (सं० स्त्री०) जलवेतस, एक प्रकारका बेंत।

कच्छभू (सं० स्त्री०) जलयुक्त भूमि, दलदल।

कच्छरुहा (सं० स्त्री०) कच्छे रोहति, कच्छ-रुह-क-टाप्। इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः। पा ३।१।१३५। १ दूर्वा, दूब। २ नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कच्छा (सं० स्त्री०) कचं पश्चात् प्रदेशं छादयति, कच-छद-णिच्-ड-टाप्। १ परिधेय वस्त्रका अञ्चल, लांग। २ चीरिका, झींगुर। ३ वाराहीकन्द। ४ भद्रमुस्ता। ५ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छा (हिं० स्त्री०) नौकाविशेष, एक नाव। यह बड़ी होती है। इसके सिरे चपटे और चौड़े रहते हैं।

कच्छाट—एक प्राचीन ग्राम। यह वङ्गदेशके अन्तर्गत वरदके मध्य अवस्थित है। (ब्रह्मखण्ड ३।८५५)

कच्छाटिका (सं० स्त्री०) कच्छ-एव बाहुलकात् अटन् स्वार्थे कन् टाप् च। कच्छ, लांग।

कच्छान्त (सं० पु०) ह्रद वा नदीका तीर, झील या दरयाका किनारा।

कच्छान्तरुहा (सं० स्त्री०) श्वेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छार (सं० पु०) कच्छ, एक देश। यह शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपदके अधिकृत देशोंके अन्तर्गत है। (बृहत्संहिता)

कच्छारुहा (सं० स्त्री०) स्वर्णकेतकी, सुनहला केवड़ा।

कच्छालङ्कारक (सं० पु०) काशतृण, कांस।

कच्छी (हिं० वि०) १ कच्छदेशीय, कच्छसे सरोकार रखनेवाला। २ कच्छदेशजात, कच्छमें पैदा होनेवाला। (पु०) ३ अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा। यह कच्छमें उत्पन्न होता है। इसकी पीठ गहरी रहती है।

कच्छु (सं० स्त्री०) कषति देहम्, कष-ज छान्ता-देशश्च पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। कषेश्छश्च। उण् १।८६। क्षुद्र कुष्ठके अन्तर्गत एक रोग, खाज, खुजली। कण्डू, दाह और स्रावयुक्त सूक्ष्म सूक्ष्म जो बहुसंख्यक पीड़का पड़ती, उसे विद्वन्मण्डली पामा कहती है। फिर दोनों हाथ और हथेली की पीठपर तीव्रदाहयुक्त होनेवाली पामा ही कच्छु कहाती है। (माधवनिदान)

चिकित्सा—१ सोमराजी, कासमर्द, पनवर, हरिद्रा तथा गणिकारिका प्रत्येक समभाग दधिके मस्तु और कांजीके साथ पीस प्रलेप लगाना चाहिये। २ वासकके कच्चे पत्ते और हरिद्रा गोमूत्रमें रगड़ प्रलेप चढ़ाने पर तीन दिवसमें कच्छु रोग विनष्ट होता है। ३ हरिद्राको पीस दो पल गोमूत्रके साथ पीना चाहिये। ४ हरीतकीको गोमूत्रमें पका भक्षण करना उचित है। ५ मदारके पत्तेका रस हरिद्राकल्कके साथ सर्षपतैलमें पका मर्दन करते हैं। ६ चतुर्गुण दूर्वाके रसमें तैल पका सेवन करना चाहिये। (चक्रदत्त)

कच्छुघ्ना, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छुघ्नी (सं० स्त्री०) कच्छु हन्ति, कच्छु-हन्-टक्-ङीप्। अमनुष्यकर्तृके च। पा ३।२।५३। १ पटोल, परवल। २ हबुषाफलक्षुप, एक झाड़ी।

कच्छुमती (सं० स्त्री०) कच्छुः साधनत्वेन अस्त्यस्याम्, कच्छु-मतुप्-टाप्। शुकशिम्बी, खजोहरा।

कच्छुर (सं० त्रि०) कच्छुरस्यास्ति, कच्छु-र ह्रस्वश्च। कच्छ्वा ह्रस्वश्च। पा ५।२।१०७। १ कच्छुरोगयुक्त, खारिश्ती, खुजलीवाला। २ परस्त्रीगामी, रंडीबाज़। ३ पामर, नापाक, कमीना।

कच्छुरा (सं० स्त्री०) कच्छुं कण्डूं राति ददाति, कच्छु-रा-क-टाप्। आतश्चोपसर्गे। पा ३।१।१३६। १ शुकशिम्बी, खजोहरा। २ दुरालभा। ३ शठी। ४ यवास। ५ धाहियी, खिरनी। ६ वेश्या स्त्री।

कच्छुराचसतैल (सं० क्लो०) भावप्रकाशोक्त कच्छुरोग-नाशक तैलविशेष, खुजलीका तेल। सर्षपका तैल ८ सेर, कल्कार्थ मनःशिला, हरिताल, हीराकष, गन्धक, सैन्धव, स्वर्णक्षीरी, पाषाणभेदी, शुण्ठी, कुष्ठ, पिप्पली, विषलाङ्गला, करवीर, चक्रमर्द, विड़ङ्ग, चित्रक, दन्ती एवं निम्बपत्र तोले-तोले, अर्कवृक्ष एवं सिजका सार पल-पल और गोमूत्र १६ सेर मृदु अग्निके उत्तापसे पका गात्रपर मलनेसे दुःसाध्य कच्छ, पामा, कण्डु, अन्यान्य चर्मरोग तथा रक्तदोष आदि व्याधि दूर होते हैं।

कच्छुराल (सं० पु०) शेलुवृक्ष, लसोढ़ेका पेड़।

कच्छुरी (सं० स्त्री०) धातकी, धायका फूल।

कच्छू (सं० स्त्री०) कषति हिनस्ति देहम्, कष-ऊ छान्तादेशश्च। कषेश्छश्च। उण् १।८६। १ कच्छुरोग, खारिश्त। कच्छु देखो। (हिं० पु०) २ कच्छप, कछुवा।

कच्छूघ्ना, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छूघ्नी, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छूमती, कच्छुमती देखो।

कच्छूर, कच्छुर देखो।

कच्छूरा, कच्छुरा देखो।

कच्छेष्ट (सं० पु०) कच्छप, कछुवा।

कच्छेष्टा (सं० स्त्री०) भद्रमुस्ता।

कच्छोटिका (सं० स्त्री०) कच्छो-अटन् बाहुलकात् कन् अत इत्वं टाप् च ओकारादेशः। कच्छो, लांग।

कच्छोत्था (सं० स्त्री०) मुस्ता, मोथा।

कच्छोर (सं० क्लो०) केन शिरसा च्छोय्यते छिद्यते, कच्छूर-घञ्। शठी।

कच्वी (सं० स्त्री०) कचु-ङीप्। कचु-नामक कन्द-विशेष, अरवी, घुइयां।

कछना (हिं० पु०) परिधानवस्त्रविशेष, किसी किस्मकी धोती। यह घुटनेपर चढ़ा पहना जाता है।

कछनी (हिं० स्त्री०) १ परिधानवस्त्र विशेष, किसी किस्मकी धोती। इसे घुटनेपर चढ़ाकर पहनते हैं। २ छोटी धोती। ३ वस्त्रविशेष, एक पहननेका कपड़ा। यह घाघरे-जैसा होता, और रामलीला आदि उत्सवमें काम देता है। ४ पात्रविशेष, एक बरतन। इसमें डालकर कपड़ेको काछते हैं।

कछरा (हिं० पु०) घटविशेष, एक घड़ा। यह मट्टीका बनता और मुंह चौड़ा रहता है। इसमें जल, दुग्ध वा अन्न रखते हैं। कछरेकी आंठ ऊंची और मजबूत होती है। बालकोंको कछरा-बछरा कहते हैं।

कछराली, कखराली देखो।

कछरी (हिं० स्त्री०) छोटा कछरा, गगरी।

कछवारा (हिं० पु०) क्षेत्रविशेष, काछीका खेत। इसमें शाकादि बोते हैं।

कछवाहा (हिं० पु०) क्षत्रियविशेष, राजपूतोंकी एक जाति। कोई कोई कछवाह भी कहता है। राजपुत देखो।

कछवीकेवल (हिं० स्त्री०) मृत्तिकाविशेष, एक मट्टी, भटकी। यह चिखुरनेसे सफ़ेद पड़ जाती है।

कछान (हिं० पु०) घुटनेपर चढ़ा धोतीका पहनावा।

कछार (हिं० पु०) १ कच्छ, दरयाके किनारेकी ज़मीन्। यह आर्द्र और निम्न रहता है। कछार नदीकी मृत्तिकासे पटकर बनता और खूब हरा-भरा देख पड़ता है।

२ आसामप्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा० २४° १२′ एवं २५° ५०′ उ० और देशा० ९२° २८′ तथा ९३° २९′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३७५० वर्गमील लगता है। ज़िलेके प्रबन्धका हेड-क्वार्टर सिलचर नगरमें है।

कछारसे उत्तर कोपिली एवं दियङ्ग नदी, पूर्व मणिपुर राज्य तथा नागापर्वत ज़िला, दक्षिण लुशाई या कुकी जातिके रहनेका पार्वत्यप्रदेश और पश्चिम सिलहट और जयन्ता पर्वत है। १८७५ ई०को दक्षिण सीमाकी ओर एक आभ्यन्तर रेखा खींची गयी थी। गवरमेण्टकी अनुमतिके व्यतिरेक कोई उसको पार कर नहीं सकता।

इतिहास—कितने ही कछारी राजा आसामके अधि-कांशपर आधिपत्य कर गये हैं। १८३० ई०को जब अन्तिम कछारी राजा मारे गये और उनके उत्तराधि-कारी न रहे, तब अंगरेज इस प्रान्तके अधिपति बने।

प्रथमत: ई० १८श शताब्दके आरम्भ कछारी जातिने अपनेको इस प्रान्तमें प्रतिष्ठित किया था। पारम्पर्य-से प्रमाणित होता, किसी समय आसाममें कछारियों-का बड़ा प्राबल्य रहा। किन्तु इसका कोई विश्वस्त लेख नहीं मिलता। कछारियोंका उक्त वैभव लोगोंके कथनानुसार कोचोंसे पहले था। सम्भवत: उस समय कछारी राज्यमें पूर्ववङ्गका कुछ अंश भी सम्मिलित रहा। वस्तुत: कछारी राजा पहले बरेलीसे उत्तर पार्वत्य प्रदेशमें आधिपत्य करते थे। दीमापुर राज-धानी रहा। वहां गहन वनमें पक्के मकानों और तालावोंका ध्वंसावशेष हाथ आया है। अन्तको कछारी राजा माइबोङ्गको हटे थे। माइबोङ्गमें ही किसी कछारी राजाने टिपराके राजाकी कन्यासे विवाह किया, जिसने बराककी उपत्यकाको दहेजमें दिया।

ब्राह्मण बङ्गालसे माइबोङ्ग धर्मप्रचार करने गये थे। ई० १८श शताब्दके आरम्भकाल माइबोङ्गपर जयन्तियाके राजा धावा मारने लगे और कछारी राजा वहांसे हट काशपुरमें आ कर बसे। बराक उपत्यका-में पहुंचनेसे ही कछारियोंने शीघ्र शीघ्र हिन्दूधर्म ग्रहण किया। पहले वह भूतप्रेत पूज नरबलि चढ़ाते थे। १७९० ई०को कछारी राजा अपने भ्राता और उत्तराधिकारीके साथ राजवंशी चत्रिय बने। ब्राह्मणोंने उन्हें एक ताम्रनिर्मित गोके भीतर रख शुद्ध किया। कितने ही लोगोंके हिन्दू हो जाते भी पहाड़ियोंने अपना धर्म न छोड़ा। अन्तिम राजा गोविन्दचन्द्र मणिपुर और ब्रह्मके युद्धमें फंसे थे। ब्रह्म-वासियोंके जीतने पर गोविन्दचन्द्रने अंगरेजी ज़िले सिलहटमें आ आश्रय लिया।

१८२६ ई०को ब्रह्मयुद्धके समय अंगरेज़ी फौजने उन्हें फिर सिंहासनपर बैठाया था। किन्तु कछारी सैन्यके सेनापति तुलारामने विद्रोह उठाया और उत्तर कछारमें अपनेको स्वतन्त्र राजा बनाया। १८३० ई०को गोविन्दचन्द्र मारे गये थे। उनका कोई उत्तराधिकारी न रहा। १८२६ ई०की सन्धिके अनुसार फिर अंग-रेजोंने कछार अधिकार किया। १८५४ ई०को उत्त-राधिकारी भिन्न तुलाराम सेनापतिके मरनेपर उत्तर-कछार भी अंगरेज़ी राज्यमें मिलाया गया।

१८५५ ई०को देखनेमें आया—चाय स्वभावत: कछारमें उत्पन्न होती है। १८५७ ई०को चट्टग्रामसे भाग कर आये विद्रोही सिपाही कछार छोड़ गये। १८७१-७२ ई०को लुशाई अभियान चढ़ा, जिससे दक्षिण सीमापर पहाड़ियोंका आक्रमण करना रुका। किन्तु १८८० ई०को कोनोमासे अङ्गामा नागावोंने उत्तर और उत्तर-कछारके चाय-बागपर आक्रमण कर २२ नौकरोंके साथ युरोपीय रोपक (प्लाण्टर)को मार डाला। इसीसे १८८०-८१ ई०को नागावोंके विरुद्ध सामरिक अभियान बढ़ाया और उनका कुछ स्वतन्त्र देश भी अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया। १८८१ ई०के अन्त किसी पागल कछारीने घोषणा की थी—युद्धमें दैवी शक्ति भरी और मुझे कछारी राज्यके पुन: संस्थापनकी आज्ञा मिली है। उसने कितने ही मूर्ख अपने साथी बनाये। विद्रोहियोंने उत्तर-कछारका राज्य मांगा और गुनजोंग आक्रमण कर तीन आदमियोंको मारा था। गुनजोंग आग लगने-से भस्मीभूत हुआ। फिर विद्रोहियोंने माइबोङ्गमें डिपटी-कमिश्नर और सब-डिविजनल अफसरको आक्रमण किया। ९ आक्रामक गोलीसे मारे गये, बाकी जंगलमें जा छिपे। डिपटी-कमिश्नरने हाथमें तलवारकी गहरी चोट आनेसे इहलोक छोड़ दिया था।

कछार ज़िला बराक उपत्यकाके उपरि-भागमें अव-स्थित है। तीन ओर ऊंची ऊंची पहाड़ियां खड़ी हैं। केवल पश्चिमको सिलहटकी राह खुली है। तंग मैदानमें हरेभरे वृक्ष लगे हैं। नाले और झरने अधिक नहीं। केन्द्रस्थलमें पूर्वसे पश्चिम एक बड़ी नदी बहती है। उत्तर और दक्षिण नदीको दोनों ओर छोटी छोटी पहाड़ियां जलके तट तक लटक आई हैं। इन्हीं पहाड़ियोंपर चायके बाग़ लगे हैं। निम्न भूमिमें चावल बोया जाता है। बांस और फूलके पेड़ लोगोंके झोपड़े छिपाये हैं। पर्वतोंमें प्रधान उत्तर एवं दक्षिण कछारके बीचका बारल और

दक्षिणका बराक, भुवंग, रेंगती, तिलाइन तथा सिद्धेश्वर है। भुवंगकी घाटी बहुत ढालू है। चारो ओर जंगल लगा है। बराक नदी १३० मील बही है। पहट १००से २०० गज़ तक चौड़ा है। साल-भर बराबर नाव चल सकती है। धलेश्वरी, काटा-खाल, घाघरा, सोनाई, जीरी, जातिंगा, मदुरा, बदरी और चीरी नदी बराकको सहायक है। वर्षा ऋतुमें रेंगती तथा तिलाइन पर्वतके बीच चातला प्रान्त १२ मील लम्बा और २ मील चौड़ा ह्रद बन जाता है।

बराक नदीके उत्तर सारे मैदानमें कृषिकार्य होता है। चारो ओर सघन वन और सरोवर रहनेसे कछार-का प्राकृतिक दृश्य अनुपम है। मृत्तिकामें स्निग्धता अधिक देख पड़ती है।

इस ज़िलेमें धातुकी कोई खानि नहीं। किन्तु वनमें धन भरा है। जारुल और नागकेशरके वृक्ष अधिक मूल्यवान् होते हैं। बङ्गालको कछारसे नाव, लट्ठा, बांस, बेंत और फूस भेजते हैं। जंगल काटने-वालोंको लैसन्स लेना और बराक पार करनेवालोंको सियालतेख घाटपर महसूल देना पड़ता है। चायके सन्दूक बनानेको कई कारखाने हैं। गवरनमेंटके अतिरेक दूसरा हाथी पकड़ नहीं सकता। कृषि-कार्यमें भैंसे चलते हैं।

लोकसंख्या तीन लाखसे ऊपर है। यहां कछारी, कूकी, लुसाई, नागा और मिकीर रहते हैं। स्त्रियां मणिपुरी खेस नामक वस्त्र और मसहरी खूब बनाती हैं। पुरुष पीतलके बरतन तैयार करते हैं। प्रधानतः लोग चावल या चायके काममें लगे रहते हैं। सिल-चरमें देशी फौजका हेडक्वाटर है। जनवरी मास यहां एक बड़ा मेला लगता है। सोनाई, सियाल-तेख, बरकल, उधरबन, लक्ष्मीपुर और हैलाकांदी भी व्यवसायका स्थान है।

सब लोग चावल खाते हैं। वर्षमें तीनवार चावल उत्पन्न होता है—आउस, साइल और आमन। जून मास साइलको बागोंमें जमाते, दूसरे मास बागसे उखाड़ मैदानमें लगाते और दिसम्बर या जनवरी मास काट जाते हैं। कुछ कुछ सरसों, तिल, दाल, ऊख, मिर्च और तरकारी भी बो देते हैं। ऊखको छोड़ दूसरी चीज़में खाद नहीं डालते। सिलहटसे प्रत्येक वर्ष ३ लाख मन चावल मंगाया जाता है। चाय बाहर भेजते हैं। किन्तु इस ज़िलेमें व्यवसायका कोई केन्द्रस्थल नहीं। बराक नदीसे चायके बागोंतक सड़कें लगी हैं। कछारमें तीन तहसीलें हैं—सिल-चर, हैलाकांदी और गुनजोंग। जलवायु शीतल और आर्द्र है। कछारमें भूकम्प अधिक आता है। १८६९ ई०को जो भूकम्प आया, उसने सिलचर नगरको ठिकाने लगाया और नदियोंको उलटा बहाया था। रोगोंमें प्रधान ज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी, विसूचिका और शीतला है।

कछियाना (हिं० पु०) कृषकोंके निवासका स्थान, काछियोंका महल्ला।

कछु, कुछ देखो।

कछुआ (हिं०) कच्छप देखो।

कछुई (हिं०) कच्छपी देखो।

कछुक (हिं० वि०) कुछ, थोड़े। 'कछुक बिदारेसि अङ्ग।' (तुलसी)

कछुवा (हिं०) कच्छप देखो।

कछू, कुछ देखो।

कछोटा (हिं० पु०) काछ, कछनी, लांग।

कज (सं० क्ली०) के जले जायते, क-जन-ड। १ कमल, पद्म। २ अमृत। (फा० स्त्री०) ३ वक्रता, टेढ़ापन। ४ दोष, ऐब।

कजक (फ़ा० पु०) हस्तीका अङ्कुश, हाथी हांकने-का आंकुस।

कजकोल (हिं० पु०) कशकोल, भीख मांगनेका खप्पर।

कजनी (हिं० स्त्री०) खुरदनी, बरतन साफ़ करनेका एक औज़ार। इससे तांबे या पीतलके बरतन खुरच खुरच साफ़ किये जाते हैं।

कजपूती, कयपूती देखो।

कजरा (हिं० पु०) १ कज्जल, काजल। कजली देखो। २ वृषभविशेष, एक बैल। इसकी आंखें काली रहती

हैं। (वि०) ३ श्यामवर्ण नेत्रविशिष्ट, जिसकी आंखें काजल या काजल-लगी जैसी रहें।

कजराई (हिं० स्त्री०) श्यामता, कालापन।

कजरारा (हिं० वि०) १ कज्जलयुक्त, काजल लगा हुआ। २ श्यामवर्ण, काला।

कजरी (हिं० स्त्री०) १ रागविशेष, बरसातमें गानेकी एक रागिणी। २ पर्वविशेष, एक त्योहार। कजली देखो। (पु०) ३ धान्यविशेष, काले रंगका एक धान।

कजरौटा (हिं० पु०) १ कज्जलपात्रविशेष, काजल रखनेकी एक डब्बी। यह छिछला रहता और लोहेसे बनता है। कजरौटेकी डंडी पतली होती है। २ पात्रविशेष, एक डब्बी। इसमें गोदना गोदनेकी स्याही रखते हैं।

कजरौटी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कज्जलपात्रविशेष, छोटा कजरौटा।

कजलबाश (तु० पु०) मुगलजातिविशेष, मुगलोंकी एक कौम। यह बड़े लड़ाके होते हैं।

कजला (हिं० पु०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह काला होता है। २ कज्जल, काजल। ३ काली आंखका बैल। (वि०) ४ काली आंखवाला।

कजलाना (हिं० क्रि०) १ श्यामता आना, काला पड़ जाना। २ बुझना, कम पड़ना। ३ कज्जल लगाना, आंजना।

कजली (हिं० स्त्री०) १ श्यामता, कालिख। २ चूर्णविशेष, एक बुकनी। पारा और गन्धक एक साथ पीसनेसे कजली बनती है। ३ इक्षुविशेष, किसी किस्मकी ऊख। यह बर्द्धमानमें होती है। ४ एक गाय। इसकी आंख काली रहती है। ५ किसी किस्मकी सफेद भेड़। इसकी आंखके पास काले बाल होते हैं। ६ पोस्तेकी एक बीमारी। इसमें फूलोंपर काली-काली धूल बैठ जाती, जो फसलको हानि पहुंचाती है। ७ पर्वविशेष, एक त्योहार। यह बुंदेलखंडमें श्रावणी और युक्तप्रदेशमें भाद्रकृष्ण-तृतीयाको होती है। कच्ची मट्टीपर लगे यवके अङ्कुर किसी सरोवरमें फेंके जाते हैं। इसी दिनसे कजली फिर नहीं गाते। ८ यवके नवीन अङ्कुर। यह तालाबमें डाली और सम्बन्धियोंको बांटी जाती है। ९ गीतविशेष, एक बरसाती गाना। इसे हरियाली तीजतक गाते हैं।

कजली-तीज (हिं० स्त्री०) भाद्रकृष्णतृतीया, भादों बदी तीज।

कजलीवन (हिं० पु०) १ कदलीवन, केलेका जंगल। २ आसाम प्रान्तका एक वन। इसमें हाथी बहुत रहते हैं।

कजलौटा, कजरौटा देखो।

कजलौटी, कजरौटी देखो।

कजही (हिं० स्त्री०) कायजा देखो।

कजा (हिं० स्त्री०) १ कांजी, मांड। २ मृत्यु, मौत।

क़ज़ा (अ० स्त्री०) मृत्यु, मौत।

कजाक (हिं०) कज़्ज़ाक देखो।

कजाकी (हिं०) कज़्ज़ाकी देखो।

कजावा (फा० पु०) ऊंटकी एक काठी। इसकी दोनों ओर एक-एक मनुष्यके बैठनेकी जगह और असबाब रखनेकी जाली रहती है।

कजिङ्ग (सं० पु०) महाभारतोक्त भारतका एक प्राचीन जनपद। (भीष्मपर्व) सिंहलियोंके धर्मग्रन्थमें इस स्थानका नाम 'कजङ्गेले नियङ्गमें' लिखा है। चीना परिव्राजक यूएन चुयङ्गने "कि-च-हो-खि-लो" (कजुघीर वा कयङ्गल) नामसे इस जनपदका उल्लेख किया है। उन्होंने कहा,—"यह जनपद प्रायः २००० लि (डेढ़ सौ कोस) विस्तृत है। यहांकी भूमि समतल एवं उर्वरा देख पड़ती और यथारीति जुतती है। शस्य यथेष्ट उपजता है। जलवायु उष्ण है। अधिवासी सरल हैं। वह विद्या और विद्वान्‌का आदर करते हैं। यहां ६।७ बौद्ध सङ्घाराम और दश (हिन्दुओंके) देवमन्दिर बने हैं। बहुतसे लोग देवताके दर्शनको आते हैं। कई सौ वर्ष हुये यहांके राजा मर गये थे। उसके बाद यह जनपद निकटस्थ राजाके अधीन शासित होने लगा। सकल नगर उच्छन्न हो गये हैं। अनेक अधिवासी इधर उधर ग्रामोंमें जा बसे हैं। इस जनपदके दक्षिण

प्रान्तमें अनेक वन्य हस्ती रहते हैं। उत्तर सीमापर गङ्गाके निकट इष्टक और प्रस्तरनिर्मित एक अत्युच्च वृहत् मन्दिर है। यह असामान्य शिल्पके नैपुण्यसे विभूषित है। इसको चारों ओर सिद्धगण, देवगण और बुद्धगणकी मूर्ति बनी है।"

चम्पासे ८२ मील दूर आज भी कजेरी नामक एक ग्राम अवस्थित है। कितने ही लोग इसी अञ्चलमें कजिङ्गके अवस्थान सम्बन्ध पर मत दिया करते हैं।

कज़िया (अ० पु०) विवाद, झगड़ा, टंटा।

कजी (फ़ा० स्त्री०) १ वक्रता, टेढ़ाई। २ ऐब, दोष, कसर।

कज्जल (सं० क्ली०) कु कुत्सितं जलं अस्मात्, कुत्सितं चक्षुःस्थदूषितं जलं दूरीभूतं भवत्यस्मात्, बहुव्री० कोः कदादेशः। १ अञ्जन, काजल। इसका अपर संस्कृत नाम लोचक है। आयुर्वेदके मतसे नेत्ररोग पर उपकारप्रद कतिपय कज्जल चलते हैं। यथा—त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, शुण्ठीका क्वाथ, मधु, घृत, छागमूत्र और गोमूत्र सकल द्रव्यमें ७ बार शीशेको निषिक्त कर अञ्जन लगानेसे चक्षुका ज्योति बढ़ता है।

त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, घृत, विष-कल्क, छागदुग्ध और मधु—समुदायमें प्रत्यह एक खण्ड शीशा उत्तप्त करना चाहिये। इसी प्रकार सात बार करने बाद शीशेकी सलाका बना लेते हैं। प्रातःकाल अञ्जनके साथ उक्त सलाका प्रयोग करनेसे विविध नेत्ररोग प्रशमित होते हैं।

उडुम्बर काष्ठके पात्रमें इमलीकी पत्तीका रस डाल घुंघचीके मूल और सैन्धवको घोटना चाहिये। फिर इस चूर्णके साथ सुरमेकी बुकनी मिला अञ्जन लगानेसे काच, अर्म और अर्जुन प्रभृति नेत्ररोग विनष्ट होते हैं।

मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु और सैन्धवको एकत्र चूर्ण कर चक्षुमें अञ्जन लगानेसे तिमिररोग मिट जाता है।

खसकी जड़का क्वाथ सैन्धव मिला छान कर फिर पकाना चाहिये। घनीभूत होनेपर उतार कर घृत और मधु मिला देते हैं। इसका अञ्जन लगानेसे सर्वप्रकार तिमिररोग नष्ट होता है। अञ्जन देखो।

२ नीलकमल। (पु०) कुत्सितमपि द्रव्यजातं लतागुल्मादिकं जालयति जीवयति वर्षणेन इति शेषः, कु-जल-णिच्-अच् कस्य: कदादेशश्च। ३ मेघ, बादल। ४ कामरूपके अन्तर्गत एक पर्वत। (कालिकापु०) ५ कज्जली, एक मछली। ७ छन्दोविशेष, एक बहर। इसके प्रत्येक पादमें १४ मात्रा रहती हैं। अन्तमें एक गुरु और एक लघु लगता है।

कज्जलध्वज (सं० पु०) कज्जलं ध्वज इव यस्य, बहुव्री०। प्रदीपशिखा, चिराग़।

कज्जलरोचक (सं० पु०-क्ली०) कज्जलं रोचयति, कज्जल-रुच-णिच्-अच् स्वार्थे कन्। दीपाधार, दीवट। इसका संस्कृत पर्याय कौमुदीवृक्ष, दीपवृक्ष, शिखातरु, दीपध्वज और ज्योत्स्नावृक्ष है।

कज्जलतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थविशेष, किसी पवित्र स्थानका नाम।

कज्जला (सं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Cyprinus atratus) इसका संस्कृत पर्याय कज्जली और अनखड़ा है।

कज्जलि, कज्जली देखो।

कज्जलिका, कज्जली देखो।

कज्जलित (सं० त्रि०) कज्जलं जातमस्य, कज्जल-इतच्। तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। कज्जल लगा हुआ, जो आंजा गया हो।

कज्जली (सं० स्त्री०) कज्जलमिवाचरति, कज्जल-क्विप्-अच्-ङीष् च। १ मिश्रित पारद और गन्धक, मिला हुआ पारा और गन्धक। साधारणतः यह समपरिमाण पारद और गन्धक खरलमें डाल घोटनेसे बनती है। पारद और गन्धक मिलते ही काला पड़ जाता है। फिर सुचिक्कण होते ही व्यवहारोपयोगी कज्जली तैयार होती है। औषधविशेषमें द्विभाग गन्धक द्वारा भी इसके प्रस्तुत करनेका उपदेश है। कज्जली वृंहण, वीर्यवर्धन, और नाना अनुपानसे सर्वरोग विनाशन होता है। (वैद्यकनिघण्टु) २ मत्स्य-विशेष, एक मछली। ३ स्याही।

कज्ज़ाक (तु० पु०) १ डाकू, लुटेरा। २ धोकेबाज, चालाक।

कज्ज़ाकी (अ० स्त्री०) १ लुटेरापन, डाकुवोंका काम। २ धोकेबाजी, चालाकी।

कज्ज्वल (सं० क्ली०) कज्जल, अञ्जन, सुरमा।

कञ्चट (सं० क्ली०) कञ्चते दीप्यते, कचि-अट। १ जलज शाकविशेष, चौराई। इसका संस्कृत पर्याय जलभू, लाङ्गली, शारदी, तोयपिप्पली, शकुलादनी और जलतण्डुलीय है। भावप्रकाशके मतसे कञ्चट श्लेष्मकारक, धारक, शीतल, पित्त एवं रक्तनाशक, लघु, तिक्त और वायुप्रशमक होता है। २ गजपिप्पली, बड़ी पीपर।

कञ्चटपत्रक (सं० क्ली०) कञ्चटच्छद, चौराईकी पत्ती।

कञ्चटपल्लव (सं० पु०) कञ्चट, चौराई।

कञ्चटादि (सं० पु०) अतिसार-कषायविशेष, दस्तकी बीमारीका एक काढ़ा। कञ्चटपत्र, दाड़िमपत्र, जम्बूपत्र, शृङ्गाटकपत्र, ह्रीवेर, मुस्तक और शुण्ठी दो-दो तोले आधसेर जलमें उबाल आध पाव रहने-से उतार लेते हैं। फिर यह कञ्चटादि पाचन पीनेसे अतिवेगवान् अतिसार भी रुक जाता है। (चक्रदत्त)

कञ्चटावलेह (सं० पु०) ग्रहणी रोगका एक अवलेह। कञ्चट और तालमूली एक-एक सेर १६ सेर जलमें उबाल १ पाव रहनेसे उतारकर छान लेना चाहिये। फिर इस क्वाथको १ सेर चीनी डाल पकाते हैं। चतुर्थांश अवशिष्ट रहते वराहक्रान्ता, धातकीपुष्प, पाठा, विल्वपेशी, पिप्पली, भांगकी पत्ती, अतिविषा, यवक्षार, सौवर्चलरस, रसाञ्जन और मोचरसका चूर्ण दो-दो तोले छोड़ना चाहिये। शेषको शीतल पड़ने पर इसमें १ पाव मधु मिलाते हैं। दोष, बल एवं काल विवेचनापूर्वक मात्राके अनुसार प्रयोग करनेपर यह अवलेह अतीसार, ग्रहणी, अम्लपित्त, उदररोग, कोष्ठज विकार, शूल और अरुचिको निवारण करता है।

कञ्चड़ (सं० पु०) कञ्चते शोभते, कचि-अड़न् इदित्वा-न्नुम्। कञ्चट विशेष, किसी किस्मकी चौराई। इसका संस्कृत पर्याय—कञ्चट, काच, वक्रसर्द और अम्बुप है।

कञ्चन (सं० पु०) काञ्चनवृक्ष, कचनारका पेड़।

कञ्चार (सं० पु०) कं जलं चारयति रश्मिभिरिति शेषः, क-चर-णिच्-अच्। सूर्य, आफताब।

कञ्चिका (सं० स्त्री०) कञ्चते वेणौ प्रकाशते, कचि-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। १ वेणुशाखा, बांसकी डाल। इसका संस्कृतपर्याय कुञ्चिका, त्वष्टा और क्षुद्रस्फोट है। २ क्षुद्रस्फोट, छोटा फोड़ा, कंजिया।

कञ्ची (सं० स्त्री०) कञ्चते वेणौ प्रकाशते, कचि-अच् इदित्वान्नुम्-ङीप्। वंशशाखा, बांसकी डाल।

कञ्चु, कञ्चुक देखो।

कञ्चुक (सं० पु०) कञ्चते सर्वशरीरे दीप्यते, कचि बाहुलकात् उकन् इदित्वान्नुम्। १ सर्पत्वक्, सांपकी केंचुल। २ वक्षका आवरण, सीनेपर पहना जानेवाला कपड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—चोल, कञ्चुलिका, कुर्पासक और अङ्गिका है। ३ पुत्रादिके जन्मोत्सव उपलक्षमें प्रभुके अङ्गसे बलपूर्वक भृत्य द्वारा ग्रहण किया जानेवाला वस्त्र, जो कपड़ा मालिकके जिस्मसे किसी शादीके वक्त, नौकर चाकर ज़बरन उतार लेता हो। ४ वस्त्रमात्र, कोई कपड़ा। "दैवांश तच्छ्वासमिवा-हतप्रभान्। धूमावरम्बरकञ्चुकानाम्।" (भागवत ८।७।१५) ५ परिच्छद, पोशाक। ६ कवच, ज़िरह। ७ चोली, अंगिया। ८ औषधविशेष, एक दवा। ९ वरमा।

कञ्चुकशाक (सं० पु०) शाकविशेष, एक सब्जी। यह वातल, ग्राही, ऋतुकर और कफपित्तनाशन होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कञ्चुका (सं० स्त्री०) १ अश्वगन्धा, असगंध। २ कञ्चुक-शाक, एक सब्जी।

कञ्चुकालु (सं० पु०) कञ्चुकोऽस्यास्ति, कञ्चुक-आलुच्। सर्प, सांप।

कञ्चुकि (सं० पु०) यव, जौ।

कञ्चुकित (सं० त्रि) कवचयुक्त, बख़्तर पहने हुआ।

कञ्चुकी (सं० पु०) कञ्चुकोऽस्त्यस्य, कञ्चुक-इनि। १ राजाके अन्तःपुरका रक्षक, बादशाहके ज़नान-खानेका मुहाफ़िज़। भरतके मतसे यह विविध गुणशाली होता है—

"अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः।
सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते॥"

सर्वकार्यके कुशल और गुणवान् अन्तःपुरचारी वृद्ध विप्रको कञ्चुकी कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय सौविदल्ल, स्थापत्य और सौविद है। २ यव, जौ। ३ चणकवृक्ष, चनेका पेड़। ४ सर्प, सांप। ५ लम्पट, जिनाकार। ६ जोङ्गक वृक्ष। ७ दोषान्वित घोटकविशेष, एक ऐबी घोड़ा। स्कन्ध, वक्ष, बाहु और अंस देशमें जो बाजी अन्यवर्ण रहता, उसे विद्वान् कञ्चुकी कहता है। (जयदत्त)

(स्त्री०) कञ्चयति रोगादिकमुपशमयति, कञ्चणिच् बाहुलकात् उकन्-ङीष्। ८ औषधविशेष, एक दवा। ९ चोरीशवृक्ष। १० शरपुङ्खा। ११ कञ्चुक शाक। १२ चोली, अंगिया। (त्रि०) १३ आबद्धकवच, बख्तर पहने हुआ।

कञ्चुलिका (सं० स्त्री०) कञ्चते अङ्गानि आवृणोति, कचि-उलच्-ङीष् स्वार्थे कन् ह्रस्वः टाप् च। अङ्गरक्षिणी, चोली।

"त्वं मुग्धाक्षि विनैव कञ्चुलिकया धत्से मनोहारिणीम्।" (अमरुशतक)

कञ्चूल (सं० क्लो०) कचि-उलच्। स्त्रियोंका एक अलङ्कार।

कञ्ज (सं० पु०) के जले शिरसि च जायते, कम्-जन्-ड। १ ब्रह्मा। २ केश, बाल। (क्लो०) ३ पद्म, कमल। ४ अमृत।

कञ्जक (सं० पु०) कञ्जते वाक्यमुच्चारयितुं शक्नोति, कजि-ण्वुल्। पक्षिविशेष, मैना।

कञ्जगिरि (सं० पुं०) कामरूपकी सीमाके अन्तका एक पर्वत।

"उत्तरस्यां कञ्जगिरिः करतोयात्तु पश्चिमे।
तीर्थश्रेष्ठादिक्षुनदी पूर्वस्यां गिरिकन्यके ॥" (योगिनीतन्त्र ११ पटल)

कञ्जज (सं० पु०) कञ्जात् विष्णोर्नाभिपद्मात् जातम्, कञ्ज-जन-ड। ब्रह्मा। भागवतमें नाभिपद्मसे ब्रह्माकी उत्पत्तिपर इस प्रकार वर्णित है—महाप्रलयके समय ब्रह्माण्ड जलमग्न होनेपर विष्णु समुदाय अपनेमें लीन कर जलशायी हो गये। सोते-सोते सहस्र चतुर्युग अतीत होनेपर उन्होंने अपनी इच्छाके अनुसार नाभिसे एक पद्मकोष उत्पादन किया था। उसीसे स्वयम्भू ब्रह्मा आविर्भूत हुये। (भागवत ३।८।१९)

कञ्जन (सं० पु०) कं सुखं जनयति, कम्-जनिअण्। १ कन्दर्प, कामदेव। २ पक्षिविशेष, मैना।

कञ्जनाभ (सं० पु०) कञ्जं पद्मं नाभौ अस्य, कञ्जनाभि संज्ञायां अच्। विष्णु।

"व्यञ्जेदं स्वेन रूपेण कञ्जनाभस्तिरोदधे।" (भागवत ३।८।४४)

कञ्जमूल (सं० क्लो०) कमलकन्द, कमलकी जड़।

कञ्जयोनि (सं० पु०) शालूक, कसेरू।

कञ्जार (सं० पु०) कं जलं जृणाति आकर्षति जारयति वा, कम्-कजि-अरन्। १ सूर्य, आफ्ताब। २ ब्रह्मा। ३ उदर, पेट। ४ हस्ती, हाथी। ५ मयूर, मोर। ६ अगस्त्य मुनि। ७ धातकी, धाय। ८ पाटला, बरसातका धान।

कञ्जल (सं० पु०) कञ्जते पठितुं शक्नोति, कजिकलच्। मदनपक्षी, मैना।

कञ्जलता (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। (Asclepius odoratissima)

कञ्जलिका (सं० स्त्री०) अङ्गरक्षिणी, चोली।

कञ्जार (सं० पु०) कं जलं जारयति, कम्-जॄ-णिच्-अण् आरण् वा। कञ्जिमजिभ्यां चित्। उण् ३।१३७। १ सूर्य, आफ्ताब। २ ब्रह्मा। ३ अगस्त्य मुनि। ४ हस्ती, हाथी। ५ मयूर, मोर। ६ व्यञ्जन, खानेकी उमदा चीज। ७ जठर, पेटकी आग।

कञ्जिक (सं० क्लो०) काञ्जिक, कांजी।

कञ्जिका (सं० स्त्री०) कञ्जते भूमिं भित्वा उत्पद्यते, कजि ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। ब्राह्मणयष्ठिवृक्ष।

कञ्जिया—मध्यप्रदेशवाले सागर जिलेके उत्तरप्रान्तका एक प्राचीन नगर। पहले यह स्थान बुंदेलोंके अधिकारमें रहा। उस समय कञ्जियावाले शासनकर्ताके करपीड़नसे प्रजा विपद्ग्रस्त हुयी थी। आजकल इस स्थानकी अवस्था क्रमशः सुधर रही है।

कञ्जियाके प्रथम बुंदेला शासनकर्ता देवीसिंह रहे। उनके पुत्र शाहजीने नगरके निकट पहाड़पर एक दुर्ग बनवाया था। यह दुर्ग चतुष्कोणाकार है। चारो पार्श्वके चार बुर्ज आजकल भग्नप्राय हो गये हैं।

१७२६ ई०को फुरखाईके नवाब हसन उल्ला खांने शाहजीके वंशधर विक्रमादित्यको कञ्जियासे निकाल

दिया था। विक्रमादित्यने पिपरासी ग्राममें आश्रय लिया। इस ग्राममें उनके वंशधर अमृतसिंह १८७० ई०तक निष्कर पञ्चग्रामकी आयसे जीविका चलाते रहे।

१७५८ ई०को पेशवाके प्रतापसे हसन उल्ला विताड़ित हुये। उन्होंने अपने प्रिय कर्मचारी खांडे-रावको कञ्जिया नगर सौंपा था। १८१८ ई०को खांडेरावके उत्तराधिकारी रामचन्द्र बल्लालने पेशवाको कञ्जिया और मल्हारगढ़ दे बदलेमें इटावा ले लिया। उसी वर्ष ब्रटिश गवरनमेण्टने यह नगर सेंधियाको प्रदान किया। १८७५ ई०को विद्रोहके समय कञ्जियाके बुंदेलोंने भी अमृतसिंहको अपना प्रकृत शासन-कर्ता बताया था। किन्तु अमृतसिंह अल्प दिनके मध्य ही अपमानित हो यह स्थान छोड़ गये। बुंदेले नगर लूटने लगे थे। उसी समय सर ह्यूग-रोज ससैन्य बुंदेलोंके विपक्षपर अग्रसर हुये। अंगरेज सेनापतिके आगमनकी वार्ता सुन बुंदेले भगे थे।

१८६० ई०को यह नगर ब्रटिश गवरनमेण्टके अधीन सागर ज़िलेमें मिलाया गया। कञ्जिया अक्षा० २४° २३′ ३०″ उ० और देशा० ७८° १५′ पू० पर अवस्थित है।

कट (सं० पु०) कटति मदवारि वर्षति, कट-अच्। १ करिगण्डस्थल, हाथीकी कनपटी।

"यहन्तिनः कटकटाहतटं मिमङ्क्षोः।" (शिशुपालवध)

२ कटिदेश, कमर। ३ कटिके पार्श्वका स्थान, कमरकी बग़लका हिस्सा। ४ किलिञ्जक, चटाई, दरमा। ५ तृणविशेष द्वारा निर्मित रज्जु, किसी घासकी रस्सी। ६ तृणादि निर्मित पट, घास वग़ैरहका परदा। ७ शव, मुर्दा। ८ समय, वक़्त। ९ तख़्ता। १० तृण, घासफूस। ११ शर, एक लंबी घास। १२ शवरथ, जनाज़ा। १३ ओषधि-विशेष, एक जड़ीबूटी। १४ श्मशान, मुर्दा जलानेकी जगह। १५ एक राक्षस। १६ आधिक्य, ज़्यादती। १७ पांसे खेलनेका एक उपकरण।

"वे बाहृतसर्वस्वः पावरपतनाच्च शोषितशरीरः।
नर्दितदर्शितमार्गः कटेन विनिपातितो यामि॥" (मृच्छकटिक)

(क्ली०) १८ अश्वकी चालनाके लिये रचित भूमि, घुड़दौड़का मैदान। १९ पराग, फूलकी धूल। इस अर्थमें यह शब्द समासान्तको आता है। (त्रि०) कटयति प्रकाशयति क्रियाम्, कट-णिच्-अच्। २० क्रियाकारक, काम करनेवाला।

कट (हिं० पु०) १ किसी क़िस्मका रंग। यह काला रहता और टीन, लोहचून, हर, बहेड़े, आंवले तथा कसीससे बनता है। २ काट, कटन।

कट (अं० पु० = Cut) काट-छांट, तराश, ब्योंत।

कटक (सं० पु०-क्ली०) कट्यते निर्गम्यते अस्मात् निर्झरिण्यादिभिः, कट्-वुन्। क्रमादिभ्यः संज्ञायां वुन्। उण् ५।३५। १ पर्वतका मध्यदेश, पहाड़के बीचकी जगह। इसका संस्कृत पर्याय नितम्ब और मेखला है। २ वलय, कड़ा, चूड़ी। ३ चक्र। ४ हस्तिदन्तमण्डन, हाथीके दांतका गहना। ५ सैन्धवलवण, समुद्रका नमक। ६ राजधानी, बादशाहके रहनेका शहर। ७ सैन्य, फौज। "तुम्हरे कटक माहिं सनु अहद।" (तुलसी) ८ नगरी, शहर। ९ शिविर, डेरा। १० पर्वतकी समतलभूमि, पहाड़की हमवार ज़मीन्। ११ रज्जु, रस्सी, डोरी।

कटक—१ उड़ीसा प्रान्तके बीचका एक ज़िला। वह अक्षा० २०° १५′ १″ एवं २१° १०′ १०″ उ० और देशा० ८५° ३५′ ४५″ तथा ८७° ३′ ३०″ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ३८५८ वर्गमील पड़ता है। कटक ज़िलेसे उत्तर वैतरणी नदी एवं धामरा नदीका मुहाना, दक्षिण पुरी ज़िला, पूर्व बङ्गोपसागर और पश्चिम उड़ीसेका अर्धस्वाधीन करद राज्य है। यह ज़िला तीन प्रधान भूभागोंमें विभक्त है—

१म भाग—समुद्रके किनारेसे ३० मील तक विस्तृत है। स्थानीय वन सुन्दरवनसे मिलता-जुलता है। किन्तु गङ्गातटके वनकी शोभा यहां अधिक नयन-प्रीतिकर है।

२य भागमें शस्यश्यामल धान्यभूमि है। इसकी एक ओर समुद्रका तट और दूसरी ओर गिरिसमूह लगा है। प्रायः यह २० कोस विस्तृत है। इस भूमिखण्डमें अपर्याप्त धान्य उत्पन्न होता है। खेतके

मध्य मध्य ताल, तमाल, आम्र, खर्जुर प्रभृति वृक्ष भी लग जाते हैं।

३य भाग पार्वतीय है। यह जिलेके पश्चिम प्रान्तमें अवस्थित है। पश्चिम प्रान्तमें अनेक क्षुद्र क्षुद्र पर्वत हैं। इस भूभागमें साखूका तख्ता, लाख, गोंद, रेशमका कीड़ा, शहद और सन वगैरह मिलता है।

कटकके पर्वत छोटे छोटे हैं। सर्वोच्च शिखर २५०० फीटसे अधिक ऊंचा नहीं। किन्तु सभी पर्वत अति प्राचीन कालसे हिन्दुवोंके पवित्र तीर्थस्थान-जैसे प्रसिद्ध हैं। प्रधान प्रधान पर्वत यह हैं—

१ असिया पहाड़ (आलमगीर) अनेक स्थानों-पर जुड़ा है। इसका प्राचीन नाम चतुष्पीठ है। यहां नाना स्थानोंसे हिन्दू तीर्थ करने आते हैं। इसके चार शृङ्ग बड़े हैं। इनमें एक विरूपा नदीको ओर है। आजकल इसे 'आलमगीर' कहते हैं। इस शृङ्गपर एक ऊंची मसजिद खड़ी है। १७१९-२० ई०को उड़ीसेके शासनकर्ता शुजा-उद्-दीन्‌ने उसे बनवाया था। मसजिदके सम्बन्धपर निम्नलिखित उपाख्यान प्रचलित है—

एक रोज़ मुहम्मद व्योममार्गसे जाते थे। साथमें उनका दलबल भी रहा। नमाज़के समय सब नलती गिरिशृङ्गपर उतर पड़े। गिरिका शृङ्ग हिलने लगा और उन्हें धारण कर न सका था। उस समय मुहम्मद नलती गिरिको अभिशाप दे मसजिदके पास ही आकर ठहर गये। मुहम्मदने जहां नमाज़ पढ़ी, वहां आज भी एक पत्थर पर उनके पदकी रेखा बनी है। पहले यहां जल मिलता न था। मुहम्मदके अपनी यष्टि द्वारा आघात लगाते ही स्वच्छ सलिलका प्रस्रवण बह चला। मुसलमान् यात्री मुहम्मदके पदका चिह्न और उक्त प्रस्रवण देखने बराबर आया करते हैं। शुजा-उद्-दीन्‌ने कटक आते समय इराकपुरमें शिविर लगाया था। वहींसे उन्हें गिरिशृङ्गोत्थित नमाज़की ध्वनि सुन पड़ा। उनके अनुचर नमाज़को सुन अधीर हुये और सबके सब गिरिशृङ्गाभिमुख जाने लगे थे। किन्तु शुजाने निषेध कर कहा—यदि हम उपस्थित युद्धमें जीत सकेंगे, तो लौटते समय सब लोग इसी गिरिशृङ्ग पर जा नमाज़ पढ़ेंगे। शुजा-उद्-दीन्‌का जय हुआ था। उन्होंने फिर ससैन्य शृङ्गके ऊपर जा नमाज़ पढ़ी। उन्होंने वहां सुन्दर मसजिद बनवा दी।

हिन्दू उक्त शृङ्गको मण्डप कहते हैं। शृङ्गके नीचे ही मण्डपग्राम है। अतिप्राचीन कालको वहां हिन्दू मण्डपयज्ञ करते थे।

२ उदयगिरि भी असिया गिरिमालाके चार शृङ्गोंमें एक शृङ्ग है। यह असिया गिरिमालाके पूर्वभागमें अवस्थित है। यहां हिन्दुवों और बौद्धोंके देखनेको बहुतसी चीजें मौजूद हैं। शृङ्गके उच्च भागसे पाददेश पर्यन्त परिदर्शन करनेपर असंख्य देवमूर्त्ति देख पड़ती हैं। बौद्धोंके आधिपत्यकाल यहां अनेक सङ्घाराम और बौद्ध चैत्य विद्यमान रहे। वर्तमान समय उनका ध्वंसावशेष पड़ा है।

उदयगिरिके पाददेश पर एक प्रकाण्ड पद्मपाणि बुद्धमूर्ति है। यहां आनेसे दर्शकको पहले मूर्ति देख पड़ती है। मूर्ति प्रायः ८ फीट ऊंची है। एक पत्थर खोदकर यह मूर्ति गढ़ी गयी है। इसका अर्धांश वनसे आच्छन्न और कुछ अंश भूगर्भमें प्रोथित है। पद्मपाणिके वाम हस्तमें पद्म है। नासिका, बाहु और वक्षःस्थलमें अलङ्कार शोभा देता है। दक्षिण हस्त और नासिका दोनों अङ्ग टूट गये हैं।

पद्मपाणिकी मूर्तिके आगे थोड़ी दूर चलनेपर ध्वंसावशेष मिलता है। इसीके निकट पर्वतपर एक कूप बना है। विस्तारमें कूप २३ फीट है। जल निकालनेको २८ फीट लंबी डोरी लगती है। चारो ओर पत्थरका घेरा है। वह साढ़े ८४ फीट लंबा और ३८ फीट ११ इञ्च चौड़ा है। प्रवेशके पथमें दो बड़े बड़े स्तम्भ खड़े, आजकल जिनके मस्तक टूट पड़े हैं।

शृङ्गसे ५० फीट ऊपर वनमें एक चैत्य है। बौद्ध राजावोंके समय यहां बौद्ध यतियोंका समावेश रहता था। बौद्धोंका अवसान होनेपर हिन्दुवोंने यहां अनेक देवदेवी-मूर्ति निर्माण कीं। देवद्वेषी मुसलमानोंने

अनेक मूर्तियोंके मस्तक और बाहु तोड़ डाले हैं। स्थानीय हिन्दू सकल मूर्तियोंको पूजा करते हैं। इसी वनमें एक बड़े तोरणका भग्नावशेष विद्यमान है। तोरणके सम्मुख एक वृहत् बुद्धमूर्ति ध्यान-निमीलित नेत्रसे बैठी है। तोरणका गठन अति चमत्कृत और तीन सुवृहत् प्रस्तरोंसे गठित है। मनोयोगपूर्वक देखनेसे प्राचीन शिल्पके नैपुण्यका बहुतसा परिचय मिलता है। तोरणके सीधे प्रस्तर पांच स्तवकोंमें विभक्त हैं। स्तवक देखनेसे समझते, मानो तोरण बने एक ही दो दिन हुये और उनके भीतर सहस्रों नीलपद्म खिले हैं। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते—कितने यत्नसे पद्म काटे गये हैं। द्वितीय स्तवकमें सशस्त्र नरनारीको कितनो ही मूर्ति हैं। मध्य-स्तवकमें कुसुमकी माला विभूषित है। चतुर्थ स्तवकमें एक दूसरेका हाथ पकड़े पुरुष और रमणीकी मूर्ति दण्डायमान हैं। सभी मूर्तियां फूलकी मालासे आवद्ध हैं। शेष स्तवक देखनेसे नयन और मन दोनों प्रसन्न हो जाते हैं। कुसुमका चित्र कैसा सुन्दर है! सोचनेसे हृदय फूल उठता—इस निर्जन वनमें किसने अभिलाषपूर्वक प्रस्तरको पुष्पकी माला पहनायी है।

तोरणके आगे ११ हाथ चलनेपर एक क्षुद्र गृह देख पड़ता है। गृहको चारो ओर कंटीले पेड़ खड़े हैं। गृहमें ध्यानी बुद्धकी एक प्रकाण्ड मूर्ति है। यह मूर्ति साढ़े ५ फोट ऊंची है। देवद्वेषी यवनोंने नासिका और दक्षिण हस्तको काट डाला है।

अचल-वसन्त भी असिया गिरिका एक शृङ्ग है। इस शृङ्गके नीचे माझीपुर नगरका ध्वंसावशेष पड़ा है। पहले इस नगरमें स्थानीय राजा रहते थे। आज भी तोरण, प्रस्तरके उन्नत प्राङ्गण और सुदृढ़ प्राचीरका भग्नावशेष दृष्टिगोचर होता है।

बड़देही असिया पर्वतका सर्वोच्च शृङ्ग है। इसके पाददेशमें स्थानीय दुर्गाधिपतिका आवास रहा। मुसलमानों और मरहठोंके समय यहां चिरस्थायी बन्दोबस्त चलता था।

नल्तो गिरि भी असियाका एक अंश है। केवल मध्यमें विरूपा नदी द्वारा दो स्वतन्त्र पर्वत हो गये हैं। मातकदनगर परगनेके उत्तर-पश्चिम कोणमें इसकी अवस्थिति है। यहां चन्दन वृक्षके भिन्न दूसरा कोई बड़ा पेड़ नहीं होता। इसके निम्न शृङ्गपर अति प्राचीन गृहादिका ध्वंसावशेष पड़ा है। पूर्वकालको यही बौद्धोंके मन्दिर-रूपसे सुशोभित था। मण्डप बिलकुल नष्ट हो गया है। प्रस्तरके सकल स्तम्भ ७।८ फोट उच्च हैं। उन्हींके निकट देवदेवीको मूर्ति है। इसी ध्वंसावशेषके पास मुसलमानोंका एक टूटा कबरस्तान लक्षित होता है। सम्भवतः बौद्धोंके मन्दिर तोड़ यह कबरस्तान बनाया गया होगा। मन्दिरका मण्डप नहीं, गृह आज भी विद्यमान है। उसको चारो ओर प्राचीर है। मध्यमें अनेक अलङ्कृत बुद्धमूर्ति देख पड़ती हैं। स्थानीय लोग इन सकल मूर्तियोंको अनन्त पुरुषोत्तम कहते हैं।

नल्तो गिरिका उच्चतर शृङ्ग ऊंचाईमें सहस्र फोट है। इस शृङ्गपर प्रस्तर निर्मित एक वृहत् मन्दिर रहा। आजकल उसका चिह्नमात्र देख पड़ता है। इसीके नीचे ५०० फोट पर हाथीखाल नामक एक गुहा है। गुहाको छत टूट गयी है। यहां छह बुद्धमूर्ति विद्यमान हैं। इन्हींके निकट प्राचीन कुटिल अक्षरोंमें खुदी बौद्ध धर्मप्रचारकोंको शिलालिपि मिली है। पास ही दो सिंहोंपर शतदल-आसना सिंहवाहिनी देवीको मूर्ति है।

अमरावती पर्वतको आजकल सब लोग चटिया पहाड़ कहते हैं। पर्वतके पूर्व पाददेशपर प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष देख पड़ता है। यह दुर्ग प्रस्तरसे ऐसा दुर्भेद्य किया गया, कि सातिशय प्रशंसनीय हुवा है। पहले इसकी अवस्था अच्छी रही। मध्यमें सरकारी पूर्तविभागके लोगोंने इस दुर्गके पत्थर खोद राहमें लगा दिये। इस भग्न दुर्गको एक ओर सुसज्जित इन्द्राणीको दो प्रस्तरमूर्ति हैं। अमरावतीपर आधमील लम्बा नीलपुष्कर (नीलपोखर) नामक एक वृहत् जलाशय भरा है।

महाविनायक वारुणीवण्टा गिरिमालाका एक

शृङ्ग है। यह शृङ्ग अति पूर्वकालसे शैवोंका एक पुण्य-प्रद तीर्थस्थान समझा जाता है। आजकल वनसे आच्छन्न होनेपर पूर्वसौन्दर्य चला जाते भी दलके दल शैव-यात्री यहां आते हैं। इस शृङ्गमें एक स्थान पर शुण्डाकार हस्ती देख पड़ता है। इसे लोग महा-विनायक वा गणेशमूर्ति कहते हैं। इसके ऊपर बिनायकका मन्दिर है। पर्वतका दक्षिण मुख शिव और वाममुख गौरीकी भांति पूजा जाता है। इस स्थानसे ३० फीट ऊंचे एक जलप्रपात है। उसीके जलसे देवार्चना होती है। प्रपातके निकट शिवके अष्ट लिङ्ग विद्यमान हैं।

कटक जिलेमें तीन प्रधान नदियां विद्यमान हैं। उत्तरमें कलुषनाशिनी वैतरणी, मध्यस्थलमें ब्राह्मणी और दक्षिणमें महानदी बहती है। वैतरणी नदी महाभारतके समयसे पुण्यसलिला गङ्गाकी भांति पूज-नीय है। पञ्चपाण्डवने इसी नदीमें आ तर्पण और अवगाहन किया। वैतरणी-प्रवाहित भूमिखण्डको पूर्वकाल यज्ञीय देश कहते थे। उत्कल, कलिङ्ग और वैतरणी शब्द देखो। इन्हीं तीन नदियोंके गुणसे कटक जिला शस्यशाली है। नदियां उच्च स्थानसे निम्न भूमिको जातीं अथवा अपर नदीको अर्पनेमें नहीं मिलातीं। वह समतल भूमिपर बहतीं और शाखा प्रशाखा फला कटक जिलेको सुजल एवं सुफल करती हैं। इस जिलेमें जम्बु, बाकुद प्रभृति नाले भी हैं।

कटक जिलेमें कई नगर हैं—१ कटक, २ याज-पुर, ३ केन्द्रापाडा, ४ जगत्‌सिंहपुर।

१ कटक नगर अक्षा० २०° २८′ ४″ उ० और देशा० ८५° ५४′ २८″ पू० पर अवस्थित है। यहां महानदी द्विधा हो द्वीपाकार बन गया है। महा-नदी और काटजुड़ी नदीके मुखपर ही कटक नगर बसा है।

कटक आधुनिक नगर नहीं। मादलापञ्जीके मतसे यह नगर कोई नौ सौ वर्ष पूर्व केशरीवंशीय किसी नृपतिने प्रतिष्ठित किया, जिससे भी बहुत पहले दूसरा कटक संस्थापित हुवा। भवगुप्तके अनुशासन-पत्रमें कटकका उल्लेख मिलता है। भवगुप्तने ई०के ८म शताब्द राजत्व किया था। अतएव उस समय वहां कटक विद्यमान रहा। (Indian Antiquary, Vol. V. 60.) कटक नगरसे डेढ़ कोस पूर्व चौद्वार नामक एक ग्राम है। सब लोग इसे कटक-चौद्वार कहते हैं। किसी समय इस स्थानपर उत्कल राज्यकी राजधानी रही। उत्कलकी पञ्जीके मतमें इस नगर-को सर्पयज्ञके समय राजा जनमेजयने स्थापन किया था। कटक-चौद्वार ही भवगुप्तके अनुशासनका कटक समझ पड़ता है। पूर्वश्री आजकल न रहते भी परिदर्शन करनेसे बोध होता—किसी समय कटक-चौद्वार अधिक समृद्धिशाली रहा। इसी प्राचीन नगरके पार्श्वपर कपालेश्वर नामक एक दुर्ग है। उत्कलराज चोड़गङ्गके समय इस दुर्गमें एक सुविस्तीर्ण जलाशय खोदा गया था। आजकल भी स्थानीय लोग उक्त जलाशयको चोड़गङ्गका पोखरा कहते हैं।

वर्तमान कटक नगरमें बड़वाटी नामक एक दुर्ग खड़ा है। ई०के १२श शताब्द राजा अनङ्गभीमने यह दुर्ग बनवाया था। १७५० ई०को अहमदशाहके शासनकाल इस दुर्गका उत्तर-पश्चिम प्राकार लगा और पूर्व तोरण बना। दुर्ग प्रस्तरके दोहरे प्राचीरसे घिरा है। चारो ओर गहरी खाई है। मध्यमें प्रस्तरका एक उच्च स्तम्भ खड़ा है। उसी पर जयपताका फहराती थी। आईन-अकबरीके मतसे इस दुर्गमें राजा मुकुन्ददेवका नौ-मञ्जिला मकान् रहा। किन्तु आजकल उसका चिह्न भी देख नहीं पड़ता। कटक नगरमें दीवानी आदालत और कमिशनरका प्रधान कार्यालय मौजूद है।

२ याजपुर अति प्राचीन कालसे हिन्दुवोंका पुण्य-स्थान-जैसा प्रसिद्ध है। इसी स्थानपर पुराणोक्त विरजा-क्षेत्र विद्यमान है। इस नगरमें कितनी ही चीजें देखने लायक हैं। आजकल याजपुर याजपुर सब-डिविज़नका प्रधान स्थान है। याजपुर और विरजा शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

३ केन्द्रापाड़ा नगर महानदीकी चित्रोत्पला नाम्नी शाखासे उत्तर कुछ दूर पर अवस्थित है। मरहठोंके

समय यहां एक फौजदार रहे। कुजङ्गके राजा तत्काल नाना स्थानोंमें लूटमार मचाते थे। उक्त राजाको शासन देनेके लिये ही यहां फौजदारने अवस्थान किया।

कटक जिलेमें धान्य अधिक उत्पन्न होता है। बियाली, दोफसली और साखिया धान्य ही प्रधान है। वङ्गदेशके आमनकी भांति यहां 'शारद' धान्य लगता है। फिर आमनकी तरह शारद भी नाना प्रकार रहता है। चने, मूंग, उड़द, अरहर वगैरह दालकी उपज अच्छी है। सरसों, तम्बाकू, हलदी, मेथी, सौंफ, प्याज, लहसुन, अलसी, पान प्रभृति द्रव्य भी उत्पन्न होते हैं।

औषधके वृक्षोंमें आमलकी, आक्रान्ता, अर्जुन, अर्क, अश्वगन्धा, आम्र, बिल्व, भृङ्गराज, ब्राह्मणयष्टिका, वकुल, वच्चमूला, बहेड़ा, वेणा, वासक, भूतारि, भूमिवारुणी, अनन्तमूल, बाकची, चिरायता, चित्रकमूल, रक्तचित्रकमूल, दाड़िम, धतूरा, दारुहरिद्रा, दन्ती, दूधी, गजपिप्पली, घृतकुमारी, गुर्च, गोक्षुर, हस्तीकर्ण, हरीतकी, इन्द्रयव, इन्द्रवारुणी, इसबगोल, जाम, जयित्री, जायफल, कृष्णापर्णी, कण्टककुसुम, कुचिला, कमरख, मोथा, मुद्गया, महानिम्ब, निम्ब, नागेश्वर, ओल, फूट, परवल, पलाश, रक्तचन्दन, इमली, तालमूली, सोमराज, शालपर्णी, सोनामुखी प्रभृति देख पड़ते हैं।

इस जिलेमें हिन्दू, मुसलमान वगैरह नाना श्रेणियोंके लोग रहते हैं। अंगरेजी राज्यसे पूर्व पुनः पुनः विदेशीय आक्रमण पड़नेसे कटक जिला अत्यन्त दरिद्र और हीन अवस्थाको पहुंचा था। आजकल फिर क्रमशः अवस्था सुधर रही है। किन्तु पहले लोग जैसे परिश्रमी थे, आजकल वैसे नहीं। कृषक भी विलासी हुये जाते हैं। यहां क्रमशः विलायती द्रव्योंका आदर बढ़ रहा है। देशी द्रव्यादिसे लोगोंकी श्रद्धा घटते जाती है। बालेश्वर, पुरी प्रभृति शब्द देखो।

कटकई (हिं॰ स्त्री॰) १ सेना, फौज। २ सैन्यसमावेश, फौजका जमाव।

कटकट (सं॰ त्रि॰) कटप्रकारः दिवम्। १ अत्यन्त, बहुत ज्यादा। २ सर्वोत्कृष्ट, सबसे अच्छा। (पु॰) ३ महादेव। ४ अव्यक्त शब्दविशेष, एक आवाज़। दांत बजनेका शब्द कटकट कहाता है।

कटकटना, कटकटाना देखो।

कटकटा (सं॰ अव्य॰) कटकट-डाच्। अव्यक्तानुकरणाद द्व्यजवरार्धादनितौ डाच्। पा ५।४।५७। अनुकरण शब्दविशेष, एक अवाज़।

> "मुष्टिमिव महाघोरैरन्योऽन्यमभिजघ्नतुः।
> ततः कटकटाशब्दो बभूव सुमहात्मनोः॥" (भारत, वन १५७ अ॰)

कटकटाना (हिं॰ क्रि॰) दन्तपेषण करना, दांत पीसना।

कटकटिका (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक बुलबुल। शीतकालको यह पर्वतसे नीचे समतल भूमिपर उतर आती और वृक्ष वा भित्तिके खोखलेमें घोंसला लगाती है।

कट-कबाला (हिं॰ पु॰) मियादी बै, जिस बैमें मुद्दत रहे।

कटकाई, कटकई देखो।

कटकार (सं॰ त्रि॰) कटं करोति, कट-कृ-अण्। १ चटाई बनानेवाला। (पु॰) २ शिल्पकार जातिविशेष, एक कौम। शूद्राके गर्भसे गोपन वैश्यने इस जातिको उत्पन्न किया है। कटकारका व्यवसाय चटाई वगैरह बनाना है।

कटकी (सं॰ पु॰) कटकोऽस्त्यस्य, कटक-इनि। १ पर्वत, पहाड़। २ गज, हाथी। (त्रि॰) ३ कटकयुक्त, फौजदार। ४ कटकका रहनेवाला। (स्त्री॰) ५ लाल मिर्च।

कटकीय (सं॰ त्रि॰) कटकाय हितः, कटक-छ। वलयादि प्रस्तुत करनेमें लगनेवाला, जो कड़े बनानेके काम आता हो। यह शब्द स्वर्णादिका विशेषण है।

कटकुटी (हिं॰ स्त्री॰) पर्णशाला, घास-फूसकी झोपड़ी।

कटकोल (सं॰ पु॰) कटति स्रवति, कट्-अच्, कटस्य कोलो घनीभावो यत्र, बहुव्री॰। निष्ठीवनपात्र, पीकदान, थूकनेका बरतन।

कटखदिर (सं॰ पु॰) १ काक, कौवा। २ शृगाल, गीदड़।

कटखना (हिं० वि०) १ दन्ताघात मारनेवाला, जो दांतसे काट खाता हो। (पु०) २ खेल, काट-छांट, कतर-ब्योंत, हथकंडा, सफ़ाई, चालाकी। कट-खने देखानेको कटखनेबाज़ी कहते हैं।

कटखादक (सं० त्रि०) कटं तृणादिकं सर्वमेव खादति, कट खाद-ण्वुल्। १ सर्वभक्षक, सब खा जानेवाला, जो खानेसे कोई चीज़ छोड़ता न हो। २ शवभक्षक, मुर्दा-खोर। (पु०) ३ काचकलस, शीशेकी सुराही। ४ काक, कौवा। ५ शृगाल, गीदड़। ६ काच-लवण।

कटग्लास (अं० पु०=Cut-glass) सुदृढ़ एवं कारु-कार्य-खचित काच, मज़बूत नक्क़ाशीदार शीशा।

कटघरा (हिं० पु०) १ काष्ठभवन, लकड़ीका बाड़ा। इसमें जंगला या लोहे, लकड़ी वग़ैरहका डंडा लगा रहता है। २ बृहत् पिञ्जर, बड़ा पिंजड़ा।

कटघोष (सं० पु०) कटप्रधानो घोषः, मध्यपदलो०। १ पूर्वदेशीय ग्रामविशेष, भारतके पूर्व प्रान्तका एक ग्राम। २ ग्वालपाड़ा।

कटङ्कट (सं० पु०) कटं शवं कटति ज्वालया आवृणोति, कट् बाहुलकात् खच्। १ अग्नि, आग।

"कटङ्कटाय भावाय नमः पद्मपलाय च।" (अग्निपुराण)

२ स्वर्ण, सोना। ३ दारुहरिद्रा, दारहलदी। ४ गणेश। ५ रुद्र।

कटङ्कटा (सं० स्त्री०) आच्छुक वृक्ष, आलका पेड़।

कटङ्कटी (सं० स्त्री०) दारुहरिद्रा, दारहलदी।

कटङ्कटेरी (सं० स्त्री०) कटङ्कटं वह्निजं सुवर्णतुल्यं वा कान्तिं ईरयति प्रापयति, कटङ्कट-ईट-अण्-ङीप्। १ हरिद्रा, हलदी। २ दारुहरिद्रा, दारहलदी।

कटचुरि (सं० पु०) जाति एवं गोत्रविशेष। नागर-खण्डमें यही शब्द कटच्छुरी नामसे उक्त है। पूर्वकाल-पर कटच्छुरि नामक एक प्रबल जाति भारतके नाना स्थानोंमें राजत्व करती थी। शिलालिपिमें इस जातिका नाम कलचुरि लिखा है। कलचुरि देखो।

कटज़ीरा (हिं० पु०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

कटड़ा (हिं० पु०) भैंसका पंडवा या नर बच्चा।

कटताल (हिं० स्त्री०) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह काठसे बनती है। अपर नाम करताल है।

कटताला, कटताल देखो।

कटती (हिं० स्त्री०) विक्रय, फ़रोख्त, मांग।

कटदान (सं० क्ली०) कटो देहवर्तनं दीयतेऽत्र, कट-दा-ल्युट्। श्रीकृष्णके पार्श्वपरिवर्तनका एक उत्सव। यह उत्सव भाद्र मासकी शुक्ला एकादशीको श्रवणा नक्षत्रके मध्यपाद-योगमें सन्ध्याकाल कर्तव्य है।

कटन (सं० क्ली०) कटेन तृणादिना अन्यते, सम्पद्यते, कट-अन-अच्। गृहाच्छादन, घरका छप्पर।

कटनगर (सं० क्ली०) पूर्वदेशीय नगरविशेष, मग-रकी मुल्कका एक शहर।

कटना (हिं० क्रि०) १ द्विधा होना, दो टुकड़े बनना। अस्त्रशस्त्रकी धार लगनेसे जब कोई चीज़ दो टुकड़े हो जाती, तब उसकी क्रिया कटना कहाती है। २ पिस जाना, बंटना, बारीक पड़ना। ३ प्रवेश करना, घुसना, धंसना। ४ अंशकी हानि होना, हिस्सा अलग पड़ना। ५ युद्धमें आहत हो कर मरना, ज़ख्म खाना। ६ काटा, कतरा या ब्योंता जाना। ७ पृथक् होना, छूटना, कम पड़ना, जाते रहना। ८ व्यतीत होना, गुज़रना, बीतना, चला जाना। ९ समाप्त होना, बाक़ी न रहना। १० छलपूर्वक पृथक् होना, धोकेसे साथ छोड़कर अलग चल देना। ११ लज्जित होना, शरमाना, झेंपना, मुंह लटकाना। १२ ईर्षा करना, डाह मानना, जल जाना। १३ मोहित वा आसक्त होना, भौचक रह जाना, मुंहमें पानी आना। १४ व्यर्थ व्यय पड़ना, फ़ज़ूल खर्च लगना, बिगड़ना। १५ विक्रय होना, खप जाना। १६ मिलना, हाथ लगना, पल्ले पड़ना। १७ नष्ट होना, मिट जाना। १८ बनना, तैयार होना। १९ तराश पड़ना। २० पूरा भाग लगना।

कटनास (हिं० पु०) नीलकण्ठपक्षी, नीलागडांस।

कटनि (हिं० स्त्री०) १ कटाई, तराश, काटछांट। २ प्रीति, मुहब्बत, लगी।

कटनी (हिं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक औज़ार।

काटनेमें काम आनेवाला औज़ार कटनी कहाता है। २ कटाई, काटफांक। ३ तिरछी दौड़।

कटपञ्चक (सं० क्लो०) अश्वचालनाकी पञ्चविध भूमि, घोड़ा फेरनेकी पांच तरहकी ज़मीन्। इसमें पहली मण्डलाकार, दूसरी चतुरस्र, तीसरी गोमूत्राकार, चौथी अर्धचन्द्राकार और पांचवीं नागपाशाकार रहती है। (जयदत्त)

कटपल्लिकुञ्चिका (सं० स्त्री०) तृणशाला, घासकी झोपड़ी।

कटपल्वल (सं० क्लो०) प्राग्देशीय ग्रामविशेष, एक शहरकी जगह।

कटपीस (अं० पु०=Cutpiece) वस्त्रका कटा हुआ टुकड़ा। थान ज़्यादा बड़ा होनेसे जो फ़ुज़ूल कपड़ा फाड़ लिया जाता, वही कटपीस कहाता है।

कटपूतन (सं० पु०) कटस्य शवस्य पूतां तनोति, कटपू-तन-अच्। प्रेतविशेष। क्षत्रिय अपना धर्म छोड़नेपर कटपूतन हो शव भक्षण करता है।

"अमेध्य कुणपाशी च क्षत्रिय: कटपूतन:।" (मनु १२।७१)

कटप्रू (सं० पु०) कटे श्मशाने प्रवते विचरति, कट-प्रु-क्विप् दीर्घश्च। क्विब्वचि-प्रच्छि-श्रिस्रु द्रु-प्रज्वां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च। उण् २।५७। १ महादेव। २ राक्षस। ३ विद्याधर। ४ पाशाक्रीड़क, क़िमारबाज़। ५ कीट, कीड़ा।

कटप्रोथ (सं० पु०-क्लो०) कटस्य कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः, ६-तत्। १ नितम्ब, चूतड़। २ कटि, कमर।

कटफरेश (अं० पु०=Cutfresh) कटा-फटा माल, बिगड़ी हुयी चीज़। समुद्रमें गिर जानेसे दाग़ पड़ा और सन्दूक़ खोलनेसे कटा हुआ नया माल कटफरेश कहलाता है।

कटभङ्ग (सं० पु०) कटानां शस्यानां हस्तेन भङ्गः। १ हस्तसे शस्यका छेद, हाथसे अनाज तोड़नेका काम। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ राजविनाश, सलतनतकी मिसमारी।

कटभि, कटभी देखो।

कटभी (सं० स्त्री०) कटवद् भाति, कट-भा-ड-ङीष। १ लघु ज्योतिष्मती लता, छोटी रनजोत। भावप्रकाशके मतसे यह कटु एवं तिक्तरस, सारक, कफ तथा वायुनाशक, अत्यन्त उष्ण, वमनकारक, तीक्ष्ण, अग्निवर्धक, बुद्धिजनक और स्मृति-शक्तिप्रद है। इसका संस्कृत पर्याय—कटभि, ज्योतिष्क, कङ्गनी, पारावतपदी, पण्यालता और ककुन्दनी है। २ अपराजिता। इसका संस्कृत पर्याय—नाभिक, शौण्डी, पाटली, फिणिही, मधुरेणु, क्षुद्रश्यामा, कैडर्य और श्यामला है। राजनिघण्टके मतमें यह कटु, उष्ण और वायु, कफ एवं अजीर्ण रोगनाशक है। कटभी श्वेत और नील दो प्रकारकी होती है। दोनों ही समगुणविशिष्ट हैं। इसके फलमें भी उक्त सकल गुण रहते हैं। किन्तु वह वायुशुक्रकारी होता है। अपराजिता देखो। ३ कण्टक-शिरीष, कंटीला सरसों। ४ मुषली, मूसर।

कटभीत्वक् (सं० स्त्री०) कटभी-वल्कल, रतनजोतकी छाल।

कटमालिनी (सं० स्त्री०) कटानां किण्वाद्यौषधीनां माला साधनत्वेन अस्याः अस्ति, कटमाला-इनि-ङीप। मदिरा, शराब। किण्वादि औषधसमूहसे यह बनती है।

कटम्ब (सं० पु०) कटति, कट-अम्बच्। ककदिकटिकटिभ्योऽम्बच्। उण् ४।८२। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। कण्यते आश्रियते शत्रुरनेन। २ वाण, तीर।

कटम्बरा (सं० स्त्री०) कटं गुणातिशयं वृणोति धारयति, कट-वृ-अच्-टाप्। १ कटुकी, कुटकी। २ गन्धप्रसारणी। ३ दन्तीवृक्ष, दांती। ४ गोधा, गोह। ५ बधू। ६ श्योणाकवृक्ष। ७ करिणी, हथिनी। ८ कलम्बिका। ९ मूर्वा, सौंफ। १० पुनर्णवा। ११ राजवला। १२ महावला।

कटम्भर (सं० पु०) कटं गुणातिशयं बिभर्ति, कट-भृ-अच्-मुम्। संज्ञायां भृतविजिधारिसहितपिदमः। पा ३।२।४६। १ श्योणाकवृक्ष। २ कटभी वृक्ष।

कटम्भरा (सं० स्त्री०) कटम्भर-टाप्। कटम्बरा देखो।

कटर (हिं० स्त्री०) १ तृणविशेष, पलवान, एक घास। (अं० पु०=Cutter) २ एक मस्तूलका जहाज़। ३ सरौता। ४ काटनेवाला। ५ नौका-

विशेष, एक नाव। इसमें डांड नहीं लगता। कटर तख्‌ तीदार चरखियोंके सहारे आया-जाया करता है।

कटरकटर (हिं० क्रि० वि०) १ उच्चैःस्वरमें, बुलन्द आवाज़के साथ। २ बलपूर्वक, ज़ोरसे।

कटरना (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली।

कटरपटर (हिं० क्रि० वि०) जूतेके ज़ोरसे।

कटरा (हिं० पु०) १ क्षुद्र वर्गाकार पण्यशाला, छोटा चौकोर बाज़ार। २ पंड़वा, भैंसका नर बच्चा।

कटरिया (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी क़िस्मका धान। यह आसाममें अधिक उपजता है।

कटरी (हिं० स्त्री०) १ धान्यरोगविशेष, धानकी एक बीमारी। २ नदीके तटकी निम्नभूमि, दरयाके किनारेकी नीची जगह। इसमें दलदल रहता और नरकट लगता है।

कटरेती (हिं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे लकड़ी रेतते हैं।

कटल्ल (हिं० पु०) १ बूचड़, कसाई। यह शब्द मुसलमानोंको घृणाके साथ सम्बोधन करनेमें भी आता है।

कटवा (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। इसके गलफड़ोंके निकट कण्टक रहते हैं।

कटवां (हिं० वि०) १ कटा हुआ, जो बीचमें रुका न हो।

कटवांसी (हिं० पु०) किसी क़िस्मका बांस। यह पोला नहीं होता। कण्टक भरे रहते हैं। गांठ पास-पास पड़ती है। कटवांसी बांस सीधा नहीं बढ़ता और घना जमता है। इसे ग्रामकी चारो ओर लगा देते हैं।

कटव्रण (सं० पु०) कटः उत्कटः व्रणः युद्धकण्डूरस्य, बहुव्री०। भीमसेन। भीमसेन देखो।

कटशर्करा (सं० स्त्री०) कटः नलः शर्करेव मिष्टरसत्वात् यस्याः, बहुव्री०। १ गाङ्गेष्टी लता, एक बेल। २ टूटी चटाईका एक टुकड़ा।

कटसरैया (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसमें श्वेत, पीत, रक्त और नील कई प्रकारके पुष्प आते हैं। कार्तिक मास इसके फूलनेका समय है। कटसरैया अड़ूसेकी भांति कंटीली होती है।

कटस्थल (सं० क्ली०) १ नितम्ब एवं कटि, चूतड़ और कमर। २ हस्तिकपोल, हाथीकी कनपटी।

कटहर, कटहल देखो।

कटहरा (हिं० पु०) १ कटघरा, काठका घर। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह उत्तर-भारत और आसामकी नदियोंमें मिलता है।

कटसारिका (सं० स्त्री०) कटसरैया, एक झाड़ी।

कटहल (हिं० पु०) पनस, चक्की। (Artocarpus integrifolia) यह एक बृहत् वृक्ष है। उत्तर व्यतिरेक कटहल भारतवर्ष और ब्रह्मदेशमें सब स्थानोंपर लगाया जाता है। पश्चिमघाट पर्वतके वनमें इसके स्वभावतः उत्पन्न होनेका अनुमान बांधते हैं। कटहलका अर्धगोलाकृति शिखर श्यामवर्ण पत्रोंसे मण्डित रहता है। शाखा विकटाकार फलोंके भारसे झुक पड़ती है। सह्याद्रि पर्वतके सदा हरिद्वर्ण वनमें कटहल लगाया और प्रकृत अवस्थामें भी पाया जाता है। पूर्व पर्वतपर यह आपसे आप होता है।

एक गर्त खोदकर गोबरसे भर देते हैं। फिर उसमें जून या जुलाई मास कटहलका बीज डाला जाता है। ७८२ ई०को ऐडमिरल रोडनी इसे जमैका ले गये। ब्राज़िल मारिशास आदि स्थानोंमें भी यह लगाया गया है।

नव पल्लवोंपर क्षुद्र एवं रूक्ष कुन्तल रहते हैं। शाखावोंपर मण्डलाकार उत्थित रेखायें देख पड़ती हैं। पत्र चर्म-सदृश, चिक्कण, ऊपर प्रकाशमान, नीचे रूक्ष और अण्डाकार होते हैं। मध्यपर्शुका नीचे प्रधान रहती है। उसकी दोनों ओर चारसे सात इञ्चतक ७।८ पार्श्वीय शिरायें निकलती हैं। पत्रोंके नीचेका अनुबन्ध बड़ा होता है। उसका चौड़ा आधार पत्रोंसे मिला रहता और गिर पड़ता है। फल बृहत् लगता, क्षुद्र शाखावोंपर लटकता और दीर्घाकार एवं मांसल दिखता है। उसका आकार सान्द्र और गोलाकार होता है। वल्कलपर तीक्ष्ण अणियां उभर आती हैं। बीज वृक्क-सदृश और तैलमय रहता है।

वल्कलसे अत्यन्त श्यामवर्ण निर्यास निकलता, जिसका भेद तिन्दुलिप्त रहता और जलमें घुल सकता है। रस मूल्यवान् लेप और लासेकी भांति व्यवहृत होता है। उससे लचीला, चमड़े-जैसा पानी रोकनेवाला और पेंसिलके चिह्न मिटाने योग्य रबड़ बन सकता है। किन्तु अधिक रबड़ नहीं निकलता।

कटहलका काष्ठ वा चूर्ण उबालनेसे पीला रंग तैयार होता है। उससे ब्रह्मदेशवासी साधुवोंके वस्त्र रंगे जाते हैं। कटहलके रंगकी मांग मन्द्राज, भारतके अन्य प्रान्त और जावासे भी आया करती है। वह फिटकरी डालनेसे पक्का और हलदी छोड़नेसे गहरा पड़ जाता है। नील मिलानेसे कटहलका रंग हरा निकलता है। उसे रेशम रंगनेमें प्रायः व्यवहार करते हैं। बङ्गालमें फल और काष्ठ दोनोंसे रंग बनता है। अवधमें वल्कल और सुमात्रामें कटहलके मूलसे रंग निकालते हैं। बल्कलमें तन्तु होता है। कुमायूंमें तन्तुसे रज्जु बनती है।

वृक्षका रस मांसके शोथ और स्फोटपर सपूयत्वकी वृद्धिके लिये लगाया जाता है। नवीन पत्र, चर्मरोग और मूल अजीर्णपर चलता है। बीजमें जो मण्डवत् द्रव्य रहता, वह उसको सुखाने और कुटाने-पिटानेसे पृथक् हो सकता है। अपक्व फल स्तम्भक और पक्व फल सारक पड़ता, किन्तु अत्यन्त पौष्टिक होते भी कुछ कठिनतासे पचता है।

कटहलके वृहत् फलको फलका सार समझना चाहिये। क्योंकि अनन्नासकी भांति पुष्पसमूहसे उत्पन्न होनेवाले फलोंका वह राशीकरण है। विभिन्न फल प्रायः संस्तर कहलाते हैं। प्रत्येक फलमें एक बीज पड़ता, जो कर्कश गन्धवाले सुस्वादु जालके मांसल पिण्डसे आवृत रहता है। ऊपरका कठोर वल्कल फेंक दिया जाता है। बीजको चारो ओर जो मांसल पिण्ड जमता, वह भारतवासियोंके भोजनमें चलता है। युरोपीय कटहलको बहुधा नहीं खाते। फल साधारणतः १२से १८ इञ्चतक लंबा और ६से ८ इञ्च तक चौड़ा होता है। प्रत्येक फलमें ५०से ८०तक कोये निकलते, जो मृदु, सरस एवं सुमिष्ट द्रव्यसे बनते हैं। उक्त द्रव्य उबालने और टपकानेसे कर्कश गन्ध एवं अद्भुत स्वादविशिष्ट मद्यसारका पेय प्राप्त होता है। बीजको भूनकर खाते हैं। वह पीसनेसे सिंघाड़ेके आटे-जैसा निकलता है। कच्चे फलकी तरकारी बनती है।

भीतरी काष्ठ पीत अथवा पीतप्रभ धूसरवर्ण, निबिड़, समकणविशिष्ट एवं ईषत् कठोर रहता, प्रदर्शनसे तिमिरावृत लगता, सम्यक् परिणत पड़ता और सूक्ष्म परिष्कारको पहुंचता है। दारुकर्ममें वह अधिक व्यवहृत होता है। कटहलके काष्ठकी मञ्जूषा और सज्जा बनती है। कक्षान्तर-कार्य और मार्जनी-पृष्ठके लिये उसे युराप भेजते हैं। बौद्धोंकी मूर्तियोंपर प्रायः कटहल देखनेमें आता है। कारण वह इस वृक्षको पवित्र समझते हैं।

कटहा (हिं० वि०) काट खानेवाला, जो दांतसे चबा डालता हो। (स्त्री०) कटही।

कटा (सं० स्त्री०) १ कट्की, कुटकी। (हिं० स्त्री०) २ वध, क़त्ल, मारकाट। (वि०) ३ विच्छिन्न, टूटाफूटा, जो कट गया हो।

कटाई (हिं० स्त्री०) १ छेद, प्रहार, काटनेका काम। २ शस्यच्छेद, अनाजका काटा जाना। ३ छेदका पारिश्रमिक, काटनेकी उजरत या मज़दूरी। ४ भटकटैया।

कटाऊ (हिं० वि०) काट-छांट किया हुआ, जो काटा गया हो।

कटाकट (हिं० पु०) कटकटका शब्द, एक तरहकी आवाज़।

कटाकटी (हिं० स्त्री०) वध, क़त्ल, मारकाट।

कटाकु (सं० पु०) कटति कृच्छ्रेण जीविकां निर्वाहयति, कट-काकु। कटिकषिभ्यां काकुः। उण् ३।७७। पक्षी, चिड़िया।

कटाक्ष (सं० पु०) कटौ अतिशयितौ अक्षिणी यत्र, कटि-अक्षि-षच्। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३। १ अपाङ्ग दर्शन, नज़ारा। २ अपरके दोषका दर्शन, दूसरेके ऐबका इज़हार।

"इतालं उपजीव्यानां मान्यानां व्याख्यानेषु कटाक्षनिक्षेपेण।"(साहित्यद०)

नाटक आदिमें पात्रोंकी आंखोंपर बाहरी ओर जो छोटी और पतली काली काली रेखायें लगायी जातीं, वह भी कटाक्ष कहलाती है। कटाक्ष हथियों-की आंखोंपर भी बनते हैं।

कटाक्षमुष्ट (सं० त्रि०) अपाङ्ग दर्शन द्वारा गृहीत, जो नज़रिसे ही पकड़ा गया हो।

कटाक्षविशिख (सं० पु०) प्रीतिका वाण-जैसा अपाङ्ग दर्शन, मुहब्बतकी तीर-जैसी तिरछी नज़र।

कटाक्षवीक्षण (सं० स्त्री०) कामुक दृष्टिका निक्षेप, प्यारकी निगाहका इशारा।

कटाग्नि (सं० पु०) कटेन तृणादि वेष्टनेन जातो-ऽग्निः, ३-तत्। तृणादिके वेष्टनसे उत्पन्न किया हुआ अग्नि, जो आग घास फूस डालकर जलायी गयी हो।

"उभावपि तु भावेव ब्राह्मण्या गुप्तया सह।
विप्लुतौ शूद्रवद्दण्ड्यौ दग्धव्यौ वा कटाग्निना॥" (मनु ८।३७७)

कटाछनी (हिं० स्त्री०) १ वध, क़त्ल, मारकाट। २ युद्ध, लड़ाई। ३ तर्क, बहस।

कटाटङ्क (सं० पु०) शिव, महादेव।

कटाना (हिं० क्रि०) १ छेद कराना, काटनेमें लगाना। २ डसाना, दांतोंसे फड़ाना। ३ घूमकर जाना, घुमाना, बचाना।

कटायन (सं० क्ली०) कटस्य आसन-विशेषस्य अयनं उत्पत्तिस्थानम्, ६-तत्। वीरण, खस।

कटार (सं० पु०) कटं कन्दर्पमदं ऋच्छति, कट-ऋ-अण्। १ कामी, शहवतपरस्त। २ लम्पट, छिनाला करनेवाला। (हिं० स्त्री०) ३ अस्त्रविशेष, एक हथियार। यह छोटी और तिकोनी रहती और दोनों ओर धार पड़ती है। कठारको मारते समय पेटमें घुसेड़ देते हैं। ४ वनबिलाव, जंगली बिल्ली।

कटारा (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, बड़ी कटार। २ इमलीका फल। यह कटार-जैसा बना होता है। ३ ऊंटकटारा।

कटारिया (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक रेशमी कपड़ा। इसमें कटार-जैसी रेखायें डाली जाती हैं।

कटारी (हिं० स्त्री०) १ अस्त्रविशेष, कटार। २ एक औज़ार। इससे हुक्क़े बनानेवाले नारियलको खुरच-खुरच चिकनाते हैं। ३ मार्गमें पड़ा हुआ तीक्ष्णाग्र काष्ठ, राहकी नोकदार लकड़ी। पालकी ढोनेवाले कहार राहमें पड़ी नोकदार लकड़ीको कटारी कहते हैं। कारण पैर पड़ जानेसे वह कटारीकी भांति घुस जाती है।

कटाल (सं० त्रि०) कटोऽस्यास्ति, कट-लच्-आलम्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। मन्द गण्डयुक्त, जिसके अच्छी कनपटी न रहे।

कटाली (हिं० स्त्री०) भटकटैया।

कटाव (हिं पु०) १ छेदप्रच्छेद, काट-छांट, कतर-ब्योंत। २ कृत्रिम पत्रपुष्पादि, बनावटी बेलबूटे। यह काटकर बनाये जाते हैं।

कटावदार (हिं० वि०) कृत्रिम पत्रपुष्पविशिष्ट, बना-वटी बेलबूटेवाला। जिस पत्थर या लकड़ीपर बेलबूटे कटते, उसे कटावदार कहते हैं।

कटावन (हिं० पु०) १ कटाव, काटका काम। २ विच्छिन्न खण्ड, कटा हुआ टुकड़ा।

कटास (हिं० पु०) १ कटार, खीखर, किसी क़िस्मकी जंगली बिल्ली। २ पञ्जावप्रदेशकी वितस्ता नदीके तीरका एक तीर्थस्थान। यहां सतघरा मन्दिर बना है। इस तीर्थका दर्शन लेने बहुतसे लोग आया करते हैं। कटासमें ही चीन-परिव्राजक युएन चुयङ्ग वर्णित 'पुण्यप्रस्रवण' था।

कटासी (हिं० स्त्री०) शवके गाड़नेका स्थान, क़बरि-स्तान, जिस जगहमें मुर्दा गड़े।

कटाह (सं० पु०) कटं उत्तापादिकं आहन्ति निवा-रयति, कट-आ-हन्-ड। १ कच्छपका कर्पर, कछुवेका खपड़ा। २ द्वीपविशेष, बड़े मुल्कका एक हिस्सा। ३ तैलपाकपात्र, घी या तेल गर्म करनेका छिछला बर्तन। ४ विषाणाग्रभागविशिष्ट जायमान महिष-शिशु, सींग निकलता पंड़वा। ५ नरकविशेष, जहन्नुम। ६ कर्बूर, कचूर। ७ कूप, कूवां। ८ सूर्य, आफ़ताब। ९ कड़ाह, कड़ाही। १० सूप। ११ ढह, टीला।

कटाहक (सं॰ क्लो॰) कटाह स्वार्थे कन्। भाजन, पात्र, वर्तन, कड़ाह।

कटाह्वय (सं॰ क्लो॰) पद्मकन्द, कमलगट्टा।

कटि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कट्यते वस्त्रादिना सुभ्रियतेऽसौ, कट-इन्। १ शरीरका मध्यदेश, कमर। इसका संस्कृत पर्याय—कट, श्रोणिफलक, श्रोणी, ककुद्मती, श्रोणिफल, कटी, श्रोणि, कलत्र, कटीर, काञ्चीपद, और करभ है। सुश्रुतके मतसे कटिदेशमें पांच अस्थि रहते हैं। उनसे गुह्य, योनि एवं नितम्बदेशमें चार और त्रिक स्थानमें एक अस्थि आता है। अस्थि-सङ्घातक एक है। अस्थिकी सन्धियां तीन बैठती हैं। उनका नाम तुन्नसेवनी है। स्नायु साठ होती हैं। दोनों नितम्बोंमें पांच-पांचके हिसाबसे दश पेशी हैं। कटिदेशस्थ मर्म अस्थिमर्म कहाता है। उसका नाम कटीक है। तरुण अस्थिके पृष्ठवंश अर्थात् मेरुदण्डके उभय पार्श्वपर पनतिनिम्न कुकुन्दर नामक दो मर्म पड़ते हैं। उनसे किसी प्रकार शोणित बहनेपर स्पर्श-ज्ञान और शरीरकी चेष्टा दोनोंका नाश होता है। नितम्बके ऊपरिभागपर पार्श्वान्तरसे प्रतिबद्ध नितम्ब नामक मर्मद्वय हैं। उनसे शोणित गिरनेपर अधः-काय शुष्क एवं दुर्बल पड़ता और मृत्यु पर्यन्त आ पहुंचता है। कटिदेशके अभ्यन्तरस्थ मांस और रक्तविशिष्ट आशयका नाम मूत्राशय वा वस्ति है। अश्मरी रोग व्यतीत अन्य कारणसे उसको दोनों ओर विद्ध होनेपर सद्यः मृत्यु आता है। एक पार्श्वभेद करनेसे मूत्रस्रावी व्रण उत्पन्न होता है। वह भी कष्टसाध्य है। कटिदेशमें आठ शिरायें हैं। उनसे विटपस्थल और कटिकतरुणमें चार-चार रहती हैं।

२ हस्तीका गण्डस्थल, हाथीकी कनपटी। ३ देवालयका द्वार, मन्दिरका दरवाज़ा। ४ कलत्र, बीवी। ५ काञ्ची, घुंघची। ६ कटीर, कूला।

कटिका (सं॰ स्त्री॰) प्रशस्ता कटिरस्याः, कटि-कन्-टाप्। १ अतिसुन्दर कटिदेशयुक्ता स्त्री, जिस औरतकी पतली कमर रहे। २ कटीर, कूला।

कटिकुष्ठ (सं॰ क्लो॰) श्रोणीका कुष्ठरोग, कमरका कोढ़।

कटिकूप (सं॰ क्लो॰) कटिदेशस्थं कूपम्, मध्यपद-लो॰। ककुन्दर, सुल्ब, चूतड़का गड्ढा।

कटिजेव (हिं॰ स्त्री॰) करधनी, कमरकी खूबसूरती बढ़ानेवाला ज़ेवर।

कटितट (सं॰ क्लो॰) कटिरेव तटं स्थानम्। १ कटि-देश, कमर। २ नितम्ब, चूतड़।

कटित्र (सं॰ क्लो॰) कटिं त्रायते, कटि-त्रै-क। १ परिधेय वस्त्र, धोती। २ चन्द्रहार। ३ कटिवर्म, कमरका बख़्तर। ४ चक्राङ्क। ५ कमरबंद। ६ करधनी।

"मृणालगौरं शितिवाससं स्फुरत्।
किरीटकेयूरकटित्रकङ्कणम्॥" (भागवत ६।१६।३०)

कटिदेश (सं॰ क्लो॰) कटिनामकं देशं अवयवम्, मध्यपदलो॰। श्रोणी, कमर।

कटिन् (सं॰ त्रि॰) कटोऽस्त्यस्य, कट-इनि। पुष्करादिभ्य इत्यादि। पा ५।२।१०। कटियुक्त, जिसके कमर रहे।

कटिप्रोथ (सं॰ पु॰) कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः। नितम्ब, चूतड़। इसका संस्कृत पर्याय—स्फिक्, पूलक, कटीप्रोथ, कटि, प्रोथ और पूल है।

कटिबद्ध (सं॰ त्रि॰) तत्पर, तैयार, कमर बांधे हुआ।

कटिबन्ध (सं॰ पु॰) १ कमरबंद। २ पृथ्वीका भाग-विशेष, मिनतक़ा, ज़मीन्‌का एक हिस्सा। यह शीत-लता और उष्णताके अनुसार निर्धारित होता है। विद्वानोंने पृथिवीको पांच कटिबन्धोंमें बांटा है।

कटिभूषण (सं॰ क्लो॰) कटेर्भूषणम्, ६-तत्। कटि-देशका अलङ्कार, कमरका गहना।

कटिमालिका (सं॰ स्त्री॰) कटौ मालेव, कटिमाल-कन् इत्वम्। चन्द्रहार, औरतका कमरबंद।

कटिया (हिं॰ स्त्री॰) १ हक़ाक, नग बनानेवाला। यह नग काट छांट कर सुधारता है। २ पशुखाद्य-विशेष, चौपायोंका एक चारा। यह ज्वार मकई आदिके छब गडांससे टुकड़े-टुकड़े कर बनायी जाती है। कटिया पहुंटेसे कटती है। ३ अलङ्कारविशेष, एक ज़ेवर। इसे स्त्रियां मस्तकपर धारण करती हैं। ४ कंटिया, मछली पकड़नेका एक छोटा कांटा।

कटियाना (हिं० क्रि०) १ पुलकित होना, रोमाञ्च आना। २ (देह) टूटना, अंगड़ाई आना, सुस्ती लगना।

कटियाली (हिं० स्त्री०) भटकटया।

कटिरोहक (सं० पु०) कटिं हस्ति-पश्चाद्भागं रोहति, कटि-रुह-ण्वुल्। हस्तीके पश्चात् भाग पर आरोहण करनेवाला, जो हाथीके पीछे बैठता हो।

कटिल्ल (सं० पु०) कटति लतायां उत्पद्यते, कटि बाहुलकात् ल्ल। कारवेल्ल फल, करैला।

कटिल्लक (सं० पु०) कटिल्ल स्वार्थे कन्। १ कारवेल्लक, करैला। २ रक्तपुनर्णवा, लाल पुनरनवा।

कटिवन्ध (सं० पु०) कटिर्वध्यते येन, कटि-वन्ध-अच्। कमरबंद, जिससे कमर बंधे।

कटिशीर्षक (सं० पु०) कटिः शीर्षमिव, कटिशीर्ष संज्ञायां कन्। कटिदेश, कूला, पुट्ठा।

कटिशूल (सं० पु०) कटिस्थः शूलः शूलरोगः, कर्मधा०। कटिदेशस्थ शूलरोग, कमरका दर्द। कफ और वायुसे कटिदेशमें शूलरोग उत्पन्न होता है। एक भाग कुष्ठ और दो भाग हरीतकीका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कटिशूल मिट जाता है। शूल देखो।

कटिशृङ्खला (सं० स्त्री०) कट्याः शृङ्खला, ६-तत्। करधनी, कमरमें पहननेका एक जेवर। इसमें छोटे छोटे घुंघरू लगे रहते हैं।

कटिसूत्र (सं० क्ली०) कट्यां धार्यं सूत्रम्, मध्यपदलो०। १ नारा, औरतोंका कमरबंद। स्मृतिशास्त्रके मतसे केवल कार्पासका सूत्र बांधना निषिद्ध है। २ चन्द्रहार, करधनी।

कटी (सं० पु०) कटः गण्डस्थलं प्राशस्त्येनास्तीति, कट अस्त्यर्थे इनि। तुन्दवत्कठजिलसेनि इत्यादि। पा ४।२।८०। १ हस्ती, हाथी। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। (स्त्री०) कटि-ङीष्। विद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। ३ पिप्पली, पीपर। ४ श्रोणिदेश, कमर। ५ स्फिक्प्रदेश, चूतड़।

कटीकतरुण (सं० क्ली०) नितम्बके गर्तकी सन्धिका मर्म, चूतड़में गड्ढेके जोड़की नाजुक जगह।

कटीकपाल (सं० क्ली०) कटीफलक, कूला, पुट्ठा।

कटीग्रह (सं० क्ली०) कटीगत वातरोग, कमरकी बाई।

कटीतल (सं० पु०) कट्यां तलमास्पदमस्य। १ वक्र खड्ग, तिरछी तलवार। २ खड्ग, तलवार।

कटीप्रोथ, कटिप्रोथ देखो।

कटीर (सं० पु०) कट्यते आव्रियते ऽसौ कट्यते गम्यते ऽनेन वा, कट-ईरन्। कृशृपृकटिपटिशौटिभ्य ईरन्। उण् ४।३०। १ कन्दर, गुफा। २ जघनदेश, पेड़। ३ नितम्ब, चूतड़। ४ कटि, कमर। (क्ली०) ५ कटिफलक, कूला।

कटीरक (सं० पु०) कटीर स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। १ जघन, पेड़। २ कन्दर, पहाड़की खोह। ३ नितम्बस्थल, चूतड़। (क्ली०) ४ कटि, कमर।

कटीरा (हिं० पु०) कतीरा।

कटील (हिं० स्त्री०) कार्पास विशेष, बंगई, किसी किस्मकी कपास।

कटीला (हिं० वि०) १ तीक्ष्ण, तेज, पैना, जो काट देता हो। २ प्रभावशाली, पुर-असर, जो उमदा समझा जाता हो। ३ हृदयग्राही, दिलकश। ४ कण्टकयुक्त, खारदार। ५ तीक्ष्णाग्र, नोकदार। (पु०) ६ तीक्ष्णाग्र काष्ठविशेष, एक नोकदार लकड़ी। यह दुग्ध प्रदान करनेवाले पशुके बच्चेकी नाक पर बांधा जाता है। इससे वह दूध पी नहीं सकते। कारण मुख लगाते ही कटीला पशुके स्तनमें चुभता, जिससे वह उटक पड़ता है। ७ कतीरा।

कटु (सं० क्ली०) कटति सदाचारमावृणोतीति, कट-उण्। १ असत्कार्य, बुरा काम। २ भूषण, गहना। (स्त्री०) ३ लता, बेल। ४ राजिका, राई। ५ कटुकी, कुटकी। ६ कटुवल्ली, एक बेल। ७ प्रियङ्गु वृक्ष। (पु०) कटति तीक्ष्णतया रसनां मुखं वा आवृणोति यद्वा कटति वर्षति चक्षुर्मुखनासिकादिभ्यो जलं द्रावयतीति। ८ षड्रसान्यतम रस, कड़वाहट, चरपरापन। वाभटके मतमें कटुरससे जिह्वा चरपरा कर हिलती डुलती, मुखसे लार टपकती और गण्डद्वय एवं मुखके मध्य बड़ी जलन उठती है। चरक इसका मुखशोधक, अग्न्युद्दीपक, भुक्त वस्तुका परिशोधक, नासिका एवं चक्षुका स्रावकारक, सकल इन्द्रियका प्रफुल्लजनक, अलसक, शोथ, उदर्द, अभिष्यन्द,

क्लेह, स्वेद, क्लेद तथा मलका नाशक, अन्नकी रुचिका कारक, कण्डू, व्रण एवं कृमिका विनाशक और घनीभूत रसका भिन्नकारक बताते हैं। कटुरस सकल स्रोतको आवरण और श्लेष्माको निवारण करता है।

कटुरस अधिक परिमाणमें व्यवहार करनेसे शुक्र घटता, ग्लानि, तृष्णा, मूर्च्छा, वेदना एवं सूचीवेधवत् पीड़ाका वेग बढ़ता, अवसाद लगता, दौर्बल्य दौड़ता, कण्ठ जलता, शरीरपर ताप चढ़ता, बल क्षीण पड़ता, वायु तथा अग्निके बाहुल्यसे भ्रम, मद, कम्प एवं भेद चलता और बाहुके पार्श्वमें अन्यान्य वायुजन्य विकार उठता है।

९ कटुपटोल, कड़वा परवल। १० चम्पकवृक्ष, चम्पेका पेड़। ११ चीनकर्पूर, चीना कपूर। १२ कटोलता। १३ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। १४ जलतृणविशेष, एक पनिहा घास। १५ वत्सकविष, क्वातिका ज़हर। १६ कुटजतरु, कुटकीका पेड़। १७ राजसर्षप, बड़ा सरसों।

(त्रि०) १८ तिक्त, तीता। १९ कषाय, कसैला। २० विरस, बदज़ायका। २१ परश्रीकातर, हासिद, दूसरेकी शानशौकत देख न सकनेवाला। २२ अप्रिय, नागवार। २३ तीक्ष्ण, तेज़। २४ उष्ण, गर्म। २५ सुरभि, खुशबूदार। २६ दुर्गन्ध, बदबू देनेवाला। २७ कुत्सित, ख़राब। २८ कटुरसविशिष्ट, कड़वा।

कटुआ (हिं० पु०) कीटविशेष, बांका, एक कीड़ा। यह धानके पेड़को काटता है। २ एक सिंचाई। इससे नहरका पानी सीधे खेतमें पहुंचता है। ३ मुसलमान। छिका या साढ़ी उतारे दूधके दहीको 'कटुआ दही' कहते हैं।

कटुक (सं० स्त्री०) कटूनां कटुरसानां त्रयम्, कटु संज्ञायां कन्। १ त्रिकटु। सोंठ, मिर्च और पीपल तीनोंका नाम कटुक है। २ मरिच, मिर्च। ३ कटुकी, कुटकी। (पु०) ४ कटुरस, कड़वापन। ५ पटोल, परवल। ६ सुगन्धितृण, खुशबूदार घास। ७ कुटजवृक्ष, कुटकीका पेड़। ८ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। ९ राजसर्षप, बड़ा सरसों। १० आर्द्रक, अदरक। ११ लशुन, लहसुन। (त्रि०) १२ अप्रिय, नागवार।

"दुर्योधनस्य कर्णस्य कटुकान्यप्रभाषताम्।" (भारत, अनुशा० ७७।१)

१३ तीक्ष्ण, कटु, उष्ण, तेज़, कड़वा, गर्म।

कटुकण्टक (सं० पु०) शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

कटुकत्रय (सं० क्ली०) कटुकानां कटुरसानां त्रयम्, ६-तत्। त्रिकटु, तीनों कड़ुयी चीजें—अर्थात् सोंठ, मिर्च और पीपल।

कटुकत्व (सं० क्ली०) कटुकस्य भावः, कटुक-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। कटुता, चरपराहट, कड़ुवापन।

कटुकन्द (सं० क्ली०) कटुः कन्दो मूलमस्य। १ मूलक, मूली। (पु०) २ शिग्रुवृक्ष, सहोंजनका पेड़। ३ आर्द्रक, अदरक। ४ लशुन, लहसुन।

कटुकन्दरी (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, एक जड़ीबूटी। कोङ्कनमें इसे गोविन्दी कहते हैं। कटुकन्दुरिका उष्ण, तिक्त और वात एवं कफ तथा विसूची आदि मिटानेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कटुकफल (सं० क्ली०) कटुकं फलमस्य, बहुव्री०। कक्कोलक, सीतलचीनी।

कटुकभची (सं० पु०) एक गोत्रप्रवर ऋषि।

कटुकरञ्ज (सं० पु०) करञ्ज।

कटुकरस (सं० पु०) षड्रसोंमें एक अन्यतम रस, चरपराहट, कड़वापन।

कटुकरोहिणी (सं० स्त्री०) कटुका सती रोहति, कटुक-रुह-णिनि। कटुकी, कुटकी।

कटुकवर्ग (सं० पु०) कटुक द्रव्यसमूह, कड़ुयी चीज़ोंका ढेर। शिग्रु, मधुशिग्रु, मूलक, लशुन, सुमुख, (सफेद तुलसी), सित (सौंफ), कुष्ठ, देवदारु, सोमराजीके बीज, शङ्खपुष्पी, गुग्गुलु, मुस्तक, लाङ्गलिका, शुकनासा एवं पीलु, प्रभृति पिप्पल्यादि (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रकमूल, शुण्ठी, मरिच, गजपिप्पली, रेणुक, एला, यमानी, इन्द्रयव, अर्कवृक्ष, जीरक, सर्षप, महानिम्ब, मदनफल, हिङ्गु, ब्राह्मणयष्टिका, मूर्वामूल, अतीस, वचा, विडङ्ग तथा कटुकी), सुरसादि (तुलसी, श्वेततुलसी, गन्धपलाश,

बबई, गन्धतृण, महागन्धतृण, राजिका, जंगली बबई, कासमर्द, वनतुलसी, विड़ङ्ग, कटफल, श्वेत निर्सिन्धु, नील निसिन्धु, कुकुरमुत्ते, इन्दुरकर्णी, पाना, ब्राह्मणयष्टिका, काकजङ्घा, काकाङ्गा, महानिम्ब) और सालसारादिगण (साल, पियासाल, खदिर, श्वेतखदिर, विट्खदिर, सुपारी, भूर्जपत्र, मेषशृङ्गी, तिन्दुक, चन्दन, रक्तचन्दन, शिशु, शिरीष, वक, धव, अर्जुन, ताल, करञ्ज, छोटे करञ्ज, कृष्णागुरु, अगुरु, लताशाल)को कटुकवर्ग कहते हैं।

कटुकवल्ली (सं० स्त्री०) कटुका चासौ वल्ली चेति, कर्मधा०। कटुनाम लताविशेष, कड़वी लौकीको बेल। यह कटु, शीत एवं रुच्य आती और कफ, श्वास, तथा राजयक्ष्माको मिटाती है। (राजनिघण्टु)

कटुकशर्करा (सं० स्त्री०) पित्तश्लेष्म ज्वर पर एक योग। इसमें एक-एक तोले कटुरोहिणी और शर्करा पड़ती है।

कटुकस्नेह (सं० पु०) सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़।

कटुका (सं० स्त्री०) कटु संज्ञायां कन्-टाप्। १ कटुकी, कुटकी। इसका संस्कृत पर्याय—जननी, तिक्ता, रोहिणी, तिक्तरोहिणी, चक्राङ्गी, मत्स्यपित्ता, वकुला, शकुलादनी, सादनी, शतपर्वा, द्विजाङ्गी, मलभेदिनी, अशोकरोहिणी, कृष्णा, कृष्णभेदी, महौषधी, कटी, अञ्जनी, काण्डरुहा, कटु, कटुरोहिणी, कटुकरोहिणी, केदारकटुका, अरिष्टा, पामघ्नी, कटम्भरा, कटुम्भरा और अशोका है। राजवल्लभके मतमें कटुका अति-कटु, तिक्त एवं शीतल और पित्त, रक्त, दाह, कफ, अरुचि, श्वास तथा ज्वरनाशक है। २ ताम्बूली, पान। ३ कुलिकवृक्ष। ४ राजसर्षप, राई। ५ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुकाख्या (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी।

कटुकाद्यलौह (सं० क्लो०) शोथके अधिकारका एक वैद्यकोक्त औषध, सूजनकी एक दवा। यह कटुकी, त्रिकटु, दन्ती, विड़ङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, त्रिवृत् और गजपिप्पली बराबर द्विगुण लौहमें मिलानेसे बनता है। दुग्धके साथ इसे सेवन करनेपर शोथरोग विनष्ट होता है। (रसरत्नाकर)

कटुकाटव्य (सं० क्लो०) कटु च तत् काटव्यश्चेति, कर्मधा०। १ अत्यन्त कर्कश वाक्य, निहायत कड़ी बात। २ गालीगलौज।

कटुकापाली (सं० स्त्री०) कण्टकपाली वृक्ष, एक पेड़।

कटुकारोहिणी (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी।

कटुकालाबु (सं० स्त्री०) कटुकश्चासौ अलाबुश्चेति, कर्मधा०। तिक्ततुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुकी (सं० स्त्री०) कटु स्वार्थे कन्-ङीष्। कटुका, कुटकी।

कटुकीग्राम—विहारप्रान्तके चम्पारन जिलेका एक प्राचीन ग्राम। (भविष्य ब्रह्मखण्ड ४१।८२)

कटुकीट (सं० पु०) कटु तीक्ष्णः दंशनेन दुःखप्रदः कीटः, कर्मधा०। मशक, मच्छड़, डांस।

कटुकीटक (सं० पु०) कटुकीट स्वार्थे कन्। मशक, मसा।

कटुक्वाण (सं० पु०) कटुः कर्कशः क्वाणः शब्दो यस्य, बहुव्री०। टिटिभ पक्षी, टिटिहरी।

कटुग्रन्थि (सं० क्लो०) कटुस्तीव्रो ग्रन्थिमूल यस्य, बहुव्री०। १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ लशुन, लहसुन।

कटुच्छुता (सं० स्त्री०) कटु दूषितं करोति, कटुक्त-ड-लुम् पृषोदरादित्वात् तल्-टाप्। नित्यकर्म एवं आचारकी निष्ठुरता, खराब चाल।

कटुचातुर्जातक (सं० क्लो०) चतुर्भ्यो जातकं स्वार्थे अण्, कटु च तत् चातुर्जातकश्चेति, कर्मधा०। इलायची, तज, तेजपात और मिर्चका इकट्ठा।

कटुच्छद (सं० पु०) कटुच्छदं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ तगरवृक्ष, तगरका पेड़। २ सुगन्धार्जक, खुशबूदार तुलसी।

कटुज (सं० त्रि०) पेय पदार्थकी भांति कड़वे द्रव्योंसे प्रस्तुत किया हुआ, जो अर्कको तरह कड़वी चीज़से बना हो।

कटुजीरक (सं० पु०) जीरक, जीरा।

कटुता (सं० स्त्री०) कटु-तल्-टाप्। १ उग्रता, भड़क। २ तीक्ष्णता, तेजी। ३ अप्रियता, नाराजी। ४ कर्कशता, कड़ापन। ५ कड़वाहट।

कटुतिक्ता, कटुतिक्तक देखो।

कटुतिक्तक (सं० पु०) कटुश्चासौ तिक्तश्चेति, कटु-तिक्त स्वार्थे कन्। १ किराततिक्तक, चिरायता। २ महाशणवृक्ष, पटसन। ३ शणक्षुप, सनका पेड़।

कटुतिक्तका, कटुतिक्तिका देखो।

कटुतिक्ता (सं० स्त्री०) विपाके कटुः स्वादे तिक्ता। १ कटुतुम्बी, कड़ुवी लौकी। २ कटुतुण्डी, कड़वी तरोई।

कटुतिक्तिका (सं० स्त्री०) कटुतिक्त स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। महाशण, पटसन। २ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुतिन्दुक (सं० पु०) कुचेलक, कुचिला।

कटुतुण्डिका (सं० स्त्री०) कटुतुण्ड स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। तिक्त-तुण्डी, कड़वी तरोई। यह कटु, तिक्त तथा कफ, वान्ति, विष, अरोचक एवं रक्तपित्तनाशक और रोचन होती है। (राजनिघण्टु)

कटुतुण्डी (सं० स्त्री०) कटु तीव्रं तुण्डमस्याः। तिक्ततुण्डी, कड़वी तरोई। इसका संस्कृत पर्याय—तिक्ततुण्डी, तिक्ताख्या और कटुका है। कटुतुण्डिका देखो।

कटुतुम्बिका, कटुतुम्बी देखो।

कटुतुम्बिनी (सं० स्त्री०) तिक्तालाबु, कड़वी लौकी।

कटुतुम्बी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ तुम्बी चेति, कर्मधा०। तिक्तालाबु, कड़वी लौकी। इसका संस्कृत पर्याय—इक्ष्वाकु, कटुकालाबु, नृपात्मजा, कटुतिक्तिका, कटुफला, तुम्बिना, कटुतुम्बिनी, बृहत्फला, राजपुत्री, तिक्तबीजा और तुम्बिका है। राजवल्लभके मतसे कटुतुम्बी कटु, तीक्ष्ण, वमनकारक, शोधक, लघुपाक और श्वास, वायु, कास, शोथ, व्रण, शूकविष, पाण्डु, क्रमि एवं कफनाशक होती है। अलाबु देखो।

कटुतैल (सं० क्लो०) कटु तीक्ष्णं तैलम्, कर्मधा०। सार्षप तैल, कड़वा तेल। भावप्रकाशके मतसे यह अग्निदीपक, कटुरस, कटुपाक, लघु, शरीर-क्षयताकारक, लेखन, उष्णस्पर्श, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, रक्तपित्त-दूषितकर और कफ, मेद, वायु, अर्शोरोग, शिरोरोग, कर्णरोग, कण्डु, कुष्ठ, क्रमि, धवल और दुष्टव्रणनाशक है। राई और सफेद सरसोंका तेल भी इसी प्रकार गुणविशिष्ट होता है। विशेषतः उससे मूत्रकृच्छ्र रोग लग जाता है।

सर्षपतैलके द्वारा आयुर्वेद मतमें अनेक रोगनाशक तैल बनते हैं। इनके बननेसे पहले तैलपर मूर्च्छापाक लगाना पड़ता है। कटुतैलमूर्च्छा देखो।

कटुतैलमूर्च्छा (सं० स्त्री०) कड़वे तेलको भुन कराई। अच्छे कड़ाहमें डाल कड़वे तेलको पहले धीमी आंचसे पकाते हैं। फेन मर जानेपर चूल्हेसे उतार उसमें मञ्जिष्ठा, आमलकी, हरिद्रा, मुस्ता, बिल्वत्वक्, दाड़िमत्वक्, नागकेशर, कृष्णजीरक, बालक, नलुका एवं विभीतकको क्रम-क्रम पत्थरपर पीस और पानीसे घोल तेलमें छोड़ देना चाहिये। चार सेर तेल बनानेमें २ पल मञ्जिष्ठा ६ सेर जल और दूसरा द्रव्य दो-दो तोले पड़ता है। मूर्च्छित कटुतैल आमके दोषको दूर करता है।

कटुत्रय (सं० क्लो०) कटूनां कटुरसानां त्रयम्, ६-तत्। त्रिकटु, तीन कड़वी चीजोंका इकट्ठा। सोंठ, मिर्च और पीपल एकमें मिलानेसे कटुत्रय प्रस्तुत होता है। वाभटमें लिखा—कटुत्रयके सेवनसे स्थूलता, अग्निमान्द्य, श्वास, कास, श्लीपद और पीनस रोग नष्ट होता है।

कटुत्रिक, कटुत्रय देखो।

कटुत्व (सं० क्लो०) कड़वाहट, चरपराहट, झाल।

कटुदला (सं० स्त्री०) कटुदलं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। कर्कटी, ककड़ी।

कटुदुग्धिका (सं० स्त्री०) तिक्तालाबु, कड़वी लौकी।

कटुनिष्पाव (सं० पु०) कटुश्चासौ निष्पावश्चेति, कर्मधा०। नदीतीर उत्पन्न एक निष्पाव धान्य, दरया किनारे होने और पानीमें न डूबनेवाला एक अनाज।

कटुनिष्प्राव, कटुनिष्पाव देखो।

कटुपत्र (सं० पु०) कटुः तीव्रं पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ पर्पट, पित्तपापड़ा। २ सितार्जक, सफेद छोटी तुलसी।

कटुपत्रक, कटुपत्र देखो।

कटुपत्रिका (सं० स्त्री०) कटु पत्रं यस्याः, कटुपत्र-

कप्-टाप्-अच् इत्वम्। १ कण्टकारी वृक्ष, भटकटैया। कण्टकारी देखो। २ लघु-चुञ्चुक्षुप, छोटा बिछुवा।

कटुपत्री, कटुपत्रिका देखो।

कटुपर्णिका (सं० स्त्री०) चोरिणी, खिरनी। इसका संस्कृतपर्याय—हैमवती, हैमचोरी, हिमावती, हैमाह्वा और पीतदुग्धा है। कटुपर्णिकाके मूलको चोक कहते हैं। यह रेचन, तिक्त, भेदन एवं उत्क्लेशकारी होती और क्रमि, कण्ड, विष, आनाह, कफ, पित्त, अस्र तथा कुष्ठरोगको खो देती है।

कटुपर्णी, कटुपर्णिका देखो।

कटुपाक (सं० त्रि०) कटुः पाकोऽस्य। १ पाकके समय कटु पड़नेवाला, जो पकाते वक्त कड़वा पड़ जाता हो। २ परिपाक होनेसे कटु लगनेवाला, जो पकनेसे कड़वा लगता हो। तेज, वायु और आकाशका अधिक गुण रखनेवाला द्रव्य कटुपाक होता है। कटुपाक द्रव्य वायुवर्धक है। (भावप्रकाश)

कटुपाकी (सं० त्रि०) कटुः पाकोऽस्त्यस्य, कटुपाक-इनि। कटुपाकयुक्त, हाज़मेमें तलख़ बलग़म पैदा करनेवाला। कटुपाक देखो।

कटुफल (सं० पु०) कटुफलमस्य,बहुव्री०। १ पटोल, परवल। पटोल देखो। २ कक्कोलवृक्ष, कायफल। ३ तिक्तकर्कटिका, कड़वी ककड़ी। ४ कारवेल्लक, करेला। (क्ली०) ५ इन्द्रयव।

कटुफला (सं० स्त्री०) कटुकफलमस्याः, बहुव्री०। १ श्रीवल्लीकण्टकक्षुप, एक कंटीली झाड़ी। २ तिक्ता-लाबु, कड़वी लौकी। ३ वृहती, बरियारी। ४ कण्ट-कारी, भटकटैया। ५ चिञ्चोटक, बिछुवा।

कटुबदरी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, खट्टे बेरका पेड़। २ ग्रामविशेष, एक गांव।

कटुभङ्ग (सं० पु०) कटुः एकैकदेश भङ्गश्च यस्य। शुण्ठी, सोंठ।

कटुभद्र (सं० क्ली०) कटु अति भद्रं हितजनकम्। १ आर्द्रक, अदरक। २ शुण्ठी, सोंठ।

कटुभाषी (सं० त्रि०) कटुः कर्कशं भाषते, कटु-भाष-णिनि। कटु वाक्य कहनेवाला, जो नागवार बात बोलता हो।

कटुमञ्जरिक (सं० पु०) कटुमञ्जरिका देखो।

कटुमञ्जरिका (सं० स्त्री०) कटु स्तोत्र्णामञ्जरी अस्ति अस्याः, कटुमञ्जरी-अच्-ङीष् संज्ञायां कन् पूर्व-ह्रस्वत्वञ्च। अपामार्ग, लटजीरा। अपामार्ग देखो।

कटुमूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कटुमोद (सं० क्ली०) कटुरेव मोदः पचोऽस्य, बहुव्री०। ज्वरादिनाशक एक सुगन्धि द्रव्य, बोखार वगैरह दूर करनेवाली एक खुशबूदार चीज़ या अतर।

कटुम्भरा (सं० स्त्री०) कटुं बिभर्ति, कटु-भृ-खच्-मुम्-टाप्। १ कर्कटी, ककड़ी। २ प्रसारणी, गन्धाली।

कटुर (सं० क्ली०) कटति वर्षति मन्थनेन गुणान्तरं रूपान्तरं वा, कट-उरन्। तक्र, मट्ठा। तक्र देखो।

कटुरव (सं० पु०) कटुः कर्कशो रवो ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। भेष, मेंड़क।

कटुरा (सं० स्त्री०) आर्द्र हरिद्रा, कच्ची हलदी।

कटुरुणा (सं० स्त्री०) त्रिवृता, निसोत।

कटुरोहिणी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ रोहिणी चेति कर्मधा०,कटुः सती रोहति, कटु-रुह-णिनि-ङीप् वा। कटुकी, कुटकी।

कटुलता (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी।

कटुलिङ्ग—गोंड़ जातिकी एक शाखा। इस शाखाके लोग हिन्दुवोंकी भांति आचार-व्यवहार करते हैं।

कटुवर्ग, कटुकवर्ग देखो।

कटुवा (हिं० पु०) १ प्रति दिन किसी विक्रेताके पाससे आनेवाला कोई द्रव्य। जो चीज़ किसी दुकानसे रोज़ रोज़ आती और कीमत पीछे इकट्ठा दी जाती, वह कटुवा कहाती है। २ मुसलमान।

कटुवार्ताकी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ वार्ताकी चेति, कर्मधा०। १ श्वेतकण्टकारी, सफ़ेद कटैया। २ तिक्त-वार्ताकी, कड़वा बैंगन। ३ क्षुद्रवृहती, छोटा बैंगन।

कटुवाष्पिका (सं० स्त्री०) महाराष्ट्री, पानीपीपर।

कटुविपाक (सं० त्रि०) कटुः कटुरसो विपाके यस्य, बहुव्री०। कटुपाक, हाज़मेमें बलग़म लानेवाला। कटु-विपाक द्रव्य लघु, वातल, शुक्रघ्न और कफपित्त-नाशक होता है। (सुश्रुत)

कटवीजा (सं॰ स्त्री॰) पिप्पली, पीपल।

कटुवीरा (सं॰ स्त्री॰) कुमरिच, लाल मिर्च। यह अग्निजनक, दाहक और बलास, अजीर्ण, विशूची, व्रण, क्लेद, तन्द्रा, मोह, प्रलाप, स्वरभङ्ग एवं अरोचक नाशक है। कटवीरा सन्निपात-जड़ीभूत और हतेन्द्रिय मनुष्यको मरने नहीं देती। (अत्रिसंहिता)

कटशृङ्गाट, कटुशृङ्गाल देखो।

कटशृङ्गाल (सं॰ क्लो॰) कट नां शृङ्गाय प्राधान्याय अलति पर्याप्नोति, कटु-शृङ्ग-अल्-अच्। गौरसुवर्ण शाक, एक सब्जी।

कटुस्नेह (सं॰ पु॰) कटुस्तीक्ष्णः स्नेहो यस्य,बहु व्रो॰। १ सर्षप, सरसों। २ श्वेतसर्षप, राई। ३ कटु तेल, कड़वा तेल।

कटुह्वी (सं॰ स्त्री॰) १ कारवेल्ल, करेली। २ कर्कटी, ककड़ी।

कटूक्ति (सं॰ स्त्री॰) अप्रियवार्ता, बुरी लगनेवाली बात।

कटूत्कट (सं॰ क्लो॰) कटषु उत्कटम्, ७-तत्। १ आर्द्रक, अदरक। २ शुण्ठी, सोंठ।

कटूत्कटक (सं॰ क्लो॰) कटूत्कट संज्ञायां कन्। कटूत्कट देखो।

कटूदरी (सं॰ स्त्री॰) ओषधिविशेष। कोंकणमें इसे गोविन्दी कहते हैं।

कटूमर (हिं॰ पु॰) वन्योदम्बर, जंगली गूलर, कट-गूलर।

कटूषण (सं॰ क्लो॰) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ पिप्पली, पीपल।

कटूषणा (सं॰ स्त्री॰) कटूषण देखो।

कटेरी (हिं॰ स्त्री॰) कण्टकारी, भटकटैया।

कटेली (हिं॰ स्त्री॰) कार्पासभेद, किसी क़िस्मकी कपास। यह बङ्गालमें अधिक उत्पन्न होती है।

कटैया (हिं॰ स्त्री॰) १ कण्टकारी, भटकटया। (पु॰) २ छेदन करनेवाला, जो काटता हो।

कटैला (हिं॰ पु॰) मूल्यवान् प्रस्तरविशेष, एक बेशक़ीमत पत्थर।

कटोदक (सं॰ क्लो॰) कटाय प्रेताय देयमुदकम्। प्रेतके उद्देश्यसे होनेवाला तर्पण, जो पानी मुर्देके लिये दिया जाता हो।

कटोर (सं॰ क्लो॰) कट्यते वृष्यते निषिच्यते वा भक्ष्य-द्रव्यं यत्र, कट-ओलच् रस्य लत्वम्। पात्रविशेष, बेला, एक बर्तन।

कटोरक, कटोर देखो।

कटोरा (सं॰ स्त्री॰) कटोर-टाप्। पात्र विशेष, बेला, एक बर्तन। इसका मुंह खुला रहता है। दीवार नीची और पेंदी चौड़ी पड़ती है। हिन्दीमें यह शब्द पुंलिङ्ग माना गया है।

कटोरिया (हिं॰ स्त्री॰) छोटी कटोरी।

कटोरी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्रकटोरक, बेलिया। २ चोली। ३ तलवारकी मूठका ऊपरी हिस्सा। यह गोल होता है।

कटोल (सं॰ पु॰) कटति आवृणोति सदाचारं अन्यरसं वा, कट-ओलच्। कपिगडिगण्डिकटिपटिभ्य ओलच्। उण् १।६७। १ कटुरस, कड़वाहट, चरपराहट, तल्खी, तुर्शी। २ चण्डाल, कमीना। (वि॰) ३ कटु, कड़वा।

कटोलवीणा (सं॰ स्त्री॰) कटोलस्य चण्डालस्य वीणा वाद्यविशेषः। चण्डालोंकी एक वीणा।

कटौवा (हिं॰ वि॰) काटनेवाला, जिसके काट जानेका डर रहे।

कटौती (हिं॰ स्त्री॰) काटकर निकाली जानेवाली चीज़। जैसे—अनाज बेचते या खेतसे घर उठा ले जाते समय उससे जो कुछ काटकर ब्राह्मण, मज़दूर या किसी दूसरेको दिया जाता,वह कटौती कहाता है।

कटौनी (हिं॰ स्त्री॰) कटाई, फ़सल काटनेका काम।

कटौसी (हिं॰ पु॰) वेणुविशेष, एक कंटीला बांस।

कट्टर (हिं॰ वि॰) १ काट खानेवाला, कटहा। २ अपना विश्वास न छोड़नेवाला, जो दूसरेकी बात मानता न हो। ३ हठ करनेवाला, ज़िद्दी, जो दूसरेकी सुनता न हो।

कट्टरतेल (सं॰ क्लो॰) तैलविशेष, एक तेल। ४ शरा-वक मूर्छित तिलतैलमें २४ शरावक तक्र और १ शरावक लवण, शुण्ठी, कुष्ठ, मूर्वामूल, लाचा, हरिद्रा

तथा मञ्जिष्ठाका कल्क डाल यथाविधि पकानेसे यह तैयार होता है। इसको लगानेसे ज्वर और विदाह छूट जाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कट्टहा (हिं॰ पु॰) महाब्राह्मण, महापात्र।

कट्टा (हिं॰ वि॰) १ स्थूल, मोटा। २ कठोर, कड़ा। (पु॰) ३ कीटविशेष, जूं। ४ जबड़ा।

कट्टार (सं॰ पु॰) अस्त्रविशेष, कटार।

कट्ठा (हिं॰ पु॰) १ मानविशेष, ज़मीन्की एक नाप। यह पांच हाथ चार अङ्गुल बैठती है। एक ज़रीबमें बीस कट्ठे लगते हैं। कोई कोई बिस्वांसीको ही कट्ठा कहते हैं। २ दबका, भट्ठी। इसमें धातु गलाते हैं। ३ पात्रविशेष, एक बर्तन। इससे अन्न नापते हैं। एक कट्ठेमें प्रायः पांच सेर अन्न समा जाता है। ४ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका काष्ठ अधिक कठोर होता है।

कट्तृण (सं॰ क्ली॰) १ गन्धतृण, रूसा घास, मिरचिया गन्ध। २ सुगन्धरोहिषतृण, एक खुशबूदार घास।

कट्फल (सं॰ पु॰) कटति कटुतया अन्यरसं आवृणोति, कट्-क्विप्, बहुव्री॰। १ वृक्षविशेष, कायफल। यह कटु, उष्ण, कास-श्वास-ज्वरघ्न, उग्र दाहकर, रुच्य और मुखरोग-शान्तिकर होता है। (राजनिघण्टु) २ वार्ताकिवृक्ष, बैंगनका पेड़। ३ कङ्कोल।

कट्फला (सं॰ स्त्री॰) कट्फलमस्याः, बहुव्री॰। १ गान्धारी वृक्ष, खम्भारी। २ वृहती, कटैया। ३ काकमाची, केवैया। ४ वार्ताकी, बैंगन। ५ देवदाली, सनैया। ६ मृगेर्वारु, सफ़ेद ककड़ी।

कट्फलादि (सं॰ पु॰) कषायविशेष, कासरोगका एक काढ़ा। कायफल, रूसा, भार्गी, मुस्तक, धनिया, बच, हर, शृङ्गी, पित्तपापड़ा, सोंठ और सुराह्वाको पानीमें अच्छी तरह गर्मकर हींग तथा मधु मिला पीना चाहिये। इसमें हिङ्गु और मधु एक एक माषे डालते हैं। (चरक)

कट्फलादिपाचन (सं॰ क्ली॰) पाचनविशेष, एक अर्क। यह दीर्घ कालानुबन्धी ज्वरपर चलता है। इसके पीनेसे त्रिदोष, दाह और तृष्णाका वेग घटता है। इसमें कायफल, त्रिफला, देवदारु, रक्तचन्दन, परूषक-फल (फालसा), कटुकी, पद्मकाष्ठ एवं उशीर १६।१६ रत्तिक तथा वारि २ शरावक पड़ता है। १ शरावक शेष रहनेपर इसे चूल्हेसे उतार व्यवहार करते हैं। (भावप्रकाश)

कट्वङ्ग (सं॰ पु॰) कटु अङ्गमस्य, बहुव्री॰। १ तिन्दुक वृक्ष, गाब, तेंदू। २ श्योणाक वृक्ष, अरलू, श्योना। ३ टुण्टुक फल, अरलूका फल। ४ दिलीप नामक एक सूर्यवंशीय राजा। खट्वाङ्ग देखो।

कट्वम्बरा (सं॰ स्त्री॰) प्रसारणी, गन्धाली।

कट्वर (सं॰ क्ली॰) कटति वर्षति रसान्तरम्, कट्-ष्वरच्। छित्वर-छत्वर-धीवर-पीवर-मीवर-चीवर-तीवर-नीवर-गह्वर-कट्वरसंयद्वराः। उण् ३।१। १ दधिस्नेह, दहीकी चिकनई। २ दधिसर, दहीकी मलाई। ३ तक्र, मट्ठा। ४ व्यञ्जन, मसाला।

कट्वरतैल (सं॰ क्ली॰) ज्वररोगका वैद्यकोक्त एक तैल, बुखारका एक तेल। यह स्वल्प और वृहत् भेदसे द्विविध बनता है। स्वल्पकट्वर तैल तैयार करनेसे ४ सेर तिलतैल, कट्वर (मठा) ४॥ सेर और सचललवण, शुण्ठी, कुष्ठ, मूर्वामूल, लाक्षा, हरिद्रा तथा मञ्जिष्ठा सबका कल्क १सेर कड़ाहमें डाल पकाया जाता है। इस तैलको मलनेसे शीत और दाहयुक्त ज्वर निवारित होता है। वृहत्कट्वरतैल—तिलतैल ४ सेर, शुक्त ४ सेर, काञ्जिक ४ सेर, दधिसर ४ सेर, बिजौरे नीबूका रस ४ सेर और पिप्पली, चित्रक-मूल, वचा, वासकत्वक्, मञ्जिष्ठा, मुस्ता, पिप्पलीमूल, एला, अतीस, रेणुक, शुण्ठी, मरिच, यमानी, द्राक्षा, कण्टकारी, चिरायता, विल्वत्वक्, रक्तचन्दन, ब्राह्मण-यष्टिका, अनन्तमूल, हरीतकी, आमलकी, शालपर्णी, मूर्वामूल, जीरक, सर्षप, हिङ्गु, कटुकी एवं विड़ङ्ग समुदायका १ सेर कल्क किसी बरतनमें यथारीति पकानेसे बनता है। यह तैल लगानेसे विविध विषम ज्वर छूट जाता है।

कट्वार (सं॰ पु॰) अस्त्रविशेष, कटारी।

कट्वी (सं॰ स्त्री॰) कथ्यते कटुरसतया खाद्यते अनुभूयते वा, कट-उन्-ङीप्। १ कटुकी, कुटकी। २ कटुकवल्ली, एक बेल।

कठ (सं॰ पु॰) कठेन प्रोक्तमधीते कठशाखामभिजानाति वा, कठ निर्वे लुक्। कठचरकाल्लुक्। पा ४।३।१०७। १ मुनिविशेष। यह वेदकी कठ-शाखाके प्रवर्तक थे। महाभाष्यके मतसे कठ वैशम्पायनके शिष्य रहे। इनकी प्रवर्तित शाखा 'काठक' नामसे प्रसिद्ध है। आजकल इस शाखाकी वेदसंहिता नहीं मिलती। काठक शाखाध्यायी भी 'कठ' ही कहाते हैं। इनसे सामके कालाप और कौथुमशाखीका संस्तव रहा। रामायणमें कठकालाप एकत्र उक्त हुये हैं।

"पञ्चकाभिश्च सर्वाभिर्गवां दशशतेन च।
ये चेमे कठकालापा बहवो दण्डमानवाः॥" (अयोध्या ३२।१८)

हरदत्तके मतसे कठशाखाका भी ब्राह्मणादि विद्यमान है।

२ कठशाखाध्यायी। ३ ऋक्‌विशेष, एक वैदिक मन्त्र। ४ स्वरविशेष, एक आवाज़। ५ ब्राह्मण। ६ देवता। ७ उपनिषद् विशेष।

"ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डुक्यतित्तिरि।" (मुक्तिकोपनिषत्)

८ दुःख, तकलीफ़। ९ कष्ट, मुसीबत।

(हिं॰ पु॰) १० पुरातन वादित्रविशेष। कोई पुराना बाजा। यह काष्ठसे बनाया और चर्मसे मंढाया जाता है।

कठ शब्द समासादिमें आनेसे काष्ठनिर्मित और निकृष्ट अर्थ रखता है—जैसे कठपुतली, कठकेला।

कटंगर (हिं॰ वि॰) स्थूल, कठोर, मोटा, कड़ा। कठोर और अव्यवहार्य द्रव्यको 'काठकटंगर' कहते हैं।

कठकालापाः (सं॰ पु॰) कठ और कलापीका सम्प्रदाय।

कठकीली (हिं॰ स्त्री॰) काठकी कील, पच्चड़।

कठकेला (हिं॰ पु॰) कदलीविशेष, जंगली केला।

कठकोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) तर्कादिसे पूर्ण एक उपनिषद्।

कठकोला (हिं॰ पु॰) काष्ठकूट, कठफोड़वा।

कठकौथुमाः (सं॰ पु॰) कठ और कुथुमीका सम्प्रदाय।

कठगुलाब (हिं॰ पु॰) पुष्पवृक्षविशेष, जंगली गुलाब। इसमें क्षुद्र क्षुद्र पुष्प लगते हैं।

कठड़ा (हिं॰ पु॰) १ काष्ठगृह, कठघरा। २ पात्रविशेष, कठौता। ३ मञ्जूषा विशेष, लकड़ीका सन्दूक़।

कठताल (हिं॰ स्त्री॰) काष्ठवादित्रविशेष, लकड़ीका एक बाजा। इसे दोनों हाथसे बजाते हैं। हरेक हाथमें एक-एक जोड़ा कठताल रहती है।

कठधूर्त (सं॰ पु॰) यजुर्वेदकी कठशाखाका परिज्ञाता ब्राह्मण।

कठनेरा (हिं॰ पु॰) वैश्यजातिविशेष, किसी क़िस्मका बनिया।

कठपुतली (हिं॰ स्त्री॰) काष्ठमूर्तिविशेष, लकड़ीकी गुड़िया। मुसलमान दो कठपुतलियां ले भीख मांगने निकलते हैं। वह इनको दोनों हाथों नचाते और गाना सुनाते हैं। कुछ लोग तारसे पुतली नचाते और गांव-गांव चक्कर लगाते हैं। दूसरेके कहनेपर चलनेवाला भी उसके हाथकी कठपुतली कहाता है।

कठफुला (हिं॰ पु॰) छत्रक नामक उद्भिद्, कुकुरमुत्ता, छाता। यह लकड़ी पर छाते-जैसा फूलता है।

कठफोड़वा (हिं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (Woodpecker) यह काष्ठको फोड़ फोड़ छेद बनाता, इसीसे कठफोड़वा कहाता है। कठफोड़वा सैकड़ों प्रकारका होता है। परोंका रंग काला, सफ़ेद, भूरा, जैतूनी, हरा, पीला, गुलेनारी और नारंजी मिला रहता है। रंग-रंगकी धारियां, बुंदियां और नोकें इसके शरीरपर होती हैं। यह पृथिवी पर सिवा मादागास्कर, अष्ट्रेलिया, सिलेबेस और फ़ोरेसके सब स्थानोंमें मिलता है। इजिप्तमें कठफोड़वा कभी देख नहीं पड़ा। यह बड़ी लज्जा खाता और इसके स्वभावका पता मनुष्य कठिनतासे पाता है। कठफोड़वा अपना शिकार ढूंढ़नेमें खूब ध्यान लगाता है। यह वृक्षकी सीधी शाखामें अपनी कड़ी और लंबी चोंचसे छेद कर घोंसला बनाता है। घोंसलेका द्वार वृत्ताकार रहता और एक फुट गहरा चलता है। यह कोई छह सफ़ेद चमकीले अंडे देता है। आरम्भके परोंका रंग भद्दा होता है। उनके नीचे कितनी ही धारियां और बुंदियां पड़ी रहती हैं। पेड़के कीड़ोंको चोंचसे छाल छेद छेद

खाना ही इसका सबसे बड़ा काम है। पंजोंके सहारे कठफोड़वा शाखाओंपर घूम-घूम चढ़ता है।

कठफोड़ा, कठफोड़वा देखो।

कठबन्धन (हिं० पु०) काष्ठावेष्टन, लकड़ीकी बेड़ी, अंदुवा। यह हाथीके पैरमें पड़ता है।

कठबाप (हिं० पु०) सौतेला पिता, झूठा बाप। किसी विधवासे विवाह करनेवाला पुरुष उसके पहले लड़कोंका कठबाप कहाता है।

कठबेल (हिं० पु०) कपित्थ, कैथा।

कठमर्द (सं० पु०) कठं कष्टजीवनं मृद्नाति, कठ-मृद-अण्। शिव।

कठमलिया (हिं० पु०) १ काष्ठमालाधारी वैष्णव। २ मिथ्या साधु, झूठा फकीर।

कठमस्त (हिं० वि०) १ हृष्टपुष्ट, तगड़ा, हट्टाकट्टा। २ व्यभिचारी, ज़िनाकार।

कठमस्ता, कठमस्त देखो।

कठमस्ती (हिं० स्त्री०) गुंडई, तगड़ापन।

कठमाटी (हिं० स्त्री०) मृत्तिका विशेष, कीचड़की मट्टी। यह अति शीघ्र शुष्क हो कठोर पड़ने लगती है।

कठर (सं० त्रि०) कठ-अरन्। कठिन, कड़ा।

कठरा, कठड़ा देखो।

कठरी (हिं० स्त्री०) छोटा कठरा।

कठला (हिं० पु०) कण्ठाभरण विशेष, बच्चोंके पहननेकी एक माला। कठलेमें चांदी-सोनेके चतुष्कोण पत्र, व्याघ्रनख, यन्त्र आदि अनेक प्रकारके द्रव्य रहते, जो अधिव्याधिसे बच्चेको रक्षा करते हैं। कठला धारण करनेसे बच्चोंको दृष्टि नहीं लगती।

कठल्ल, कठल्य देखो।

कठल्य (सं० पु०-क्ली०) शिलाखण्ड, कंकड़-पत्थर।

कठवल्ली (सं० स्त्री०) अथर्ववेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष। इसमें तीन-तीन वल्लीके दो अध्याय हैं। प्रथम अध्यायमें कहा है—'नचिकेताके पिता विश्वजित्‌ने यज्ञ किया और अपना सर्वस्व ब्राह्मणोंको दिया था। अन्तको घरकी बुड्ढी गाय देते समय उनके पुत्र नचिकेताने व्यङ्ग्यके साथ तीन बार प्रश्न उठाया—पिता! मुझे किसके हाथ समर्पण करोगे? विश्वजित्‌के मुखसे क्रोध वश निकल गया—तुम्हें यमराजके हाथ सौंपेंगे। बस, नचिकेताको यमलोक जाना पड़ा। वहां यमराजने उन्हें ब्रह्मविद्या पढ़ायी थी।' इस अध्यायमें ब्रह्मविद्याका ही विशेष वर्णन है। द्वितीय अध्यायमें ब्रह्मका लक्षण देखाया है।

कठवल्ल्युपनिषद्, कठवल्ली देखो।

कठशाखा (सं० स्त्री०) कठिन प्रोक्ता शाखा, मध्य-पदलो०। यजुर्वेदान्तर्गत एक कठप्रणीत शाखा।

कठशाठ (सं० पु०) ऋषिविशेष।

कठश्रुति, कठवल्ली देखो।

कठश्रोत्रीय (सं० पु०) कठश्रुतिं वेत्ति अधीते वा, कठश्रुति-छञ्। १ कठश्रुतिज्ञ। २ कठश्रुति अध्ययन करनेवाला।

कठसरैया, कटसरैया देखो।

कठा (सं० स्त्री०) करिणी, हथिनी।

कठाकु (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कठाध्यापक (सं० पु०) यजुर्वेदकी कठशाखा पढ़ानेवाला गुरु।

कठारा (हिं० पु०) सरिता वा सरोवरका तट, दरया या तालाबका किनारा।

कठारी (हिं० स्त्री०) १ काष्ठपात्र, लकड़ीका बरतन। २ कमण्डलु।

कठाहक (सं० पु०) कठं कठिनं आहन्ति, कठ-आ-हन्-ड कठाहः तादृशं कं शिरो यस्य। दात्यूह पक्षी, पनडुब्बा।

कठिका (सं० स्त्री०) कठ वाहुलकात् वुन्। १ तुलसीवृक्ष। २ खटिका, खड़िया, छुही।

कठिञ्जर (सं० पु०) कठिं कठिनं जरयति, कठ-जॄ-णिच्-खच्-मुम् कठ-जॄ-अण् पृषोदरादित्वात् वा। १ पर्णास, काली तुलसीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—पर्णास, कुठेरक, लोणिका, जातुका, पर्णिका, पत्तूर, जीवक, सुवर्चला, कुरुवक, कुन्तलिका, कुरण्टिका, तुलसी, सुरसा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमञ्जरी, अपेतराक्षसी, गौरी, भूतघ्नी और देवदुन्दुभि है। भावप्रकाशके मतमें कठिञ्जर कटु एवं तिक्तरस,

उष्णवीर्य, दाहकारी, पित्तकारक, अग्निदीपक और कुष्ठ, मूत्रकृच्छ्र, रक्तदोष, पार्श्वशूल, कफ तथा वायु-नाशक है। तुलसी शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

२ अर्जकवृक्ष, छोटी तुलसी।

कठिन (सं० त्रि०) कठ-इनच्। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।४९। १ दृढ़, सख्त, कड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—काठर, कक्खट, क्रूर, कठोर, कठोल, जरठ, कर्कर, काठर और कमठायित है। २ निष्ठुर, बेरहम। ३ दुर्बोध, मुश्किलसे समझ पड़नेवाला। ४ तीक्ष्ण, तेज़, पैना। ५ दुःसह, जो मुश्किलसे बरदाश्त हो।

"नितान्तकठिनां रुजं मम न वेद सा मानसीम्।" (विक्रमोर्वशी)

६ शुद्ध, सही, जो गलत न हो। (पु०) ७ निबिड़ारण्य, झाड़ी। (क्लो०) ८ यवान्यजाजीत्रिकटुभूनिम्बादि द्रव्य, अजवायन, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चिरायता वगैरह चीजें। ९ स्थाली, मट्टीकी हंडी।

हिंदीके कवियोंने कठिनताके स्थानमें भी इस शब्दको व्यवहार किया है।

कठिनचित्त (सं० त्रि०) कठिनं चित्तं यस्य, बहुव्री०। निर्दय, बेरहम।

कठिनता (सं० स्त्री०) कठिनस्य भावः, कठिन-तल-टाप्। १ दृढ़ता, सख्ती, कड़ापन। २ निष्ठुरता, बेरहमी। ३ तीक्ष्णता, तेज़ी, पैनापन। ४ दुःसहता, बरदाश्त कर न सकनेकी हालत। ५ दुर्बोधता, समझमें आ न सकनेकी हालत। ६ भयानकता, खौफनाकी।

कठिनताई (हिं०) कठिनता देखो।

कठिनत्व (सं० क्ली०) कठिनता देखो।

कठिनपृष्ठ (सं० पु०) कठिनं पृष्ठमस्य, बहुव्री०। कच्छप, बाखा, कछुवा।

कठिनपृष्ठक (सं० पु०) कठिन-पृष्ठ स्वार्थे संज्ञायां कन्। कच्छप, संगपुश्त, कछुवा।

कठिनफल (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

कठिनहृदय, कठिनचित्त देखो।

कठिना (सं० स्त्री०) कठिन-टाप्। १ शर्करा, शकर, चीनी। २ गुड़शर्करा, गुड़के नीचे पड़नेवाला दाना। ३ काकोदुम्बरिका, गोबला, कठगूलर।

कठिनाई (हिं०) कठिनता देखो।

कठिनान्तःकरण (सं० त्रि०) निष्ठुर, बेरहम, कड़े दिलवाला।

कठिनिका (सं० स्त्री०) कठिन-ङीष् स्वार्थे कन्-टाप् ह्रस्वश्च। १ कठिनी, खड़िया, छूही। २ स्थाली, हंडी।

कठिनी (सं० स्त्री०) कठिन-ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। खटिका, खड़िया, छूही। इसका संस्कृत पर्याय—पाकशुक्ला, अमिला धातु, कक-खटी, खटी, खड़ी, वर्णलेखिका, धातुपल और कठिनिका है। खड़ी देखो।

"गुणिगणगणनारम्भे न पतति कठिनी सम्भ्रमाद्यस्य।
तेनाम्बा यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी भवति॥" (हितोपदेश)

कठिनीक (सं० पु०) खटिका, खड़िया।

कठिनीभूत (सं० त्रि०) अकठिनं कठिनं भूतम्, च्वि। दृढ़ पड़ जानेवाला, जो सख्ती पकड़ लेता हो। जो वस्तु द्रव होते कठिन पड़ जाता, वही कठिनीभूत कहाता है।

कठिनोपल (सं० पु०) कौसुम्भी शालि, किसी किस्मका अनाज।

कठिन्यादिपेया (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त पेयविशेष, एक अर्क। खड़िया ८ तोला, मिसरी ४ तोला, गोंद ४ तोला, सौंफ २ तोला और दालचीनी २ तोला एकत्र कुचल किसी मट्टीके बरतनमें १ सेर जलके साथ रातको भिगो देना चाहिये। फिर छानकर कुछ देर स्थिर भावसे रखने पर ऊपरी अंश निर्मल पड़ जाता है। इसी स्वच्छ जलको पीनेसे ग्रहणी, आमाशय और रक्तपित्त दबता है। पूर्वोक्त द्रव्य-समूहके साथ २ तोला लौंग और २ तोल धनिया भी मिला देनेसे अम्लपित्तके लिये यह पेय उपकारी होता है। फिर कच्चे बेलका चूर्ण २ तोला पूर्वोक्त सकल द्रव्योंके साथ डाल देनेसे रक्तातिसारको लाभ पहुंचता है।

कठिया (हिं० वि०) १ कठिन, सख्त छिलकेवाला। (पु०) २ गोधूमभेद, किसी किस्मका गेहूं। इसका शल्क रक्तवर्ण एवं स्थूल रहता और तुषका आधिक्य

देख पड़ता है। कठिया गेहूंकी रोटी या पूरी बहुत अच्छी लगती है। (स्त्री०) ३ विजयाभेद, किसी क़िस्मकी भांग। यह झेलम नदीके तटपर अधिक उत्पन्न होती है।

कठियाना (हिं० क्रि० कठोर पड़ना, कड़ा होना, सूखना, काठ बन जाना।

कठिल्ल (सं० पु०) कठति भोजने दुःखं उद्वेगं वा जनयति, कठ-बाहुलकात् इल्ल। १ कारवेल्ल, करेला। २ कर्कट, बनकरेला। ३ पुनर्नवा। ४ रक्तपुनर्नवा, लाल पुनर्नवा। ५ तुलसीवृक्ष।

कठिल्लक (सं० पु०) कठिल्ल स्वार्थे कन्। कठिल्ल देखो।

कठिल्लका (सं० स्त्री०) १ कारवेल्लवृक्ष, करेलेकी बेल। २ तुलसी। ३ रक्तपुनर्नवा।

कठिल्लिका, कठल्लका देखो।

कठी (सं० स्त्री०) कठ-ङीष्। १ कठशाखाध्यायीकी पत्नी। २ ब्राह्मणी।

कठीर (हिं० पु०) सिंह, शेर।

कठुला (सं० स्त्री०) १ कठला, बच्चोंके गलेमें पहननेकी माला। २ माला, हार।

कठुवाना (हिं० क्रि०) १ कड़ा पड़ना, सूखना, तरी निकलना। २ स्तब्ध हो जाना, जकड़ना, ठिठरना।

कठेठ (हिं० वि०) १ कठिन, कड़ा, मज़बूत। २ वयस्क, जिसके कड़ा हाथ-पैर रहे।

कठेठा, कठेठ देखो।

कठेठी (हिं० स्त्री०) दृढ़, मज़बूत, कड़ी।

कठेर (सं० पु०) कठति कृच्छ्रेण जीवति, कठ-एरक। पतिकठिकुठिगडिगुडिदंशिभ्य एरक्। उण् १।१९। दरिद्र, ग़रीब, तकलीफ़से काम चलानेवाला।

कठेरणि (सं० पु०) ऋषिविशेष।

कठेरु (सं० पु०) कठ-एरु। कुवेर।

कठेल (हिं० पु०) १ ऊर्णमार्जकका कार्मुक, धुनियेकी कमान। इसीमें धुनकी बांध और लटका कर धुनिया रूई या ऊनको धुनता है। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह काठका बनता और बीचमें एक गड्ढा रहता है। कसेरे कठेलके गड्ढेमें रख धातुके पात्रको गोल कर देते हैं।

कठेला (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, कठौता, लकड़ीका एक बरतन।

कठेली (हिं० स्त्री०) छोटा कठेला, लकड़ीका एक छोटा बरतन।

कठोदर (हिं० पु०) उदररोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसमें पेट फूलकर काष्ठकी भांति कड़ा पड़ जाता है।

कठोर (सं० त्रि०) कठति पारुष्यमाचरति, कठ्-ओरन्। कठिचकिभ्यामोरन्। उण् १।६५। १ कठिन, सख़्त, कड़ा। २ पूर्ण, पूरा, चढ़ "कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः।" (माघ) ३ जरठ, पुराना, गया-बीता। ४ क्रूरकर्मा, बुरा काम करनेवाला। ५ भयानककर्म, ख़ौफ़नाक काम करनेवाला। ६ सूक्ष्मबोध्य, मुश्किलसे समझमें आनेवाला। ७ दारुण, बेरहम। ८ तीक्ष्ण, तेज़, पैना। ९ अवरोधकारी, रोक लगानेवाला।

कठोरगिरि—शैलविशेष, एक पहाड़। यह अरुणाचल और विचनापल्लीके मध्य अवस्थित है। कठोरगिरिपर शिवमन्दिर बना है। यहां नाना स्थानोंसे योगी देवदर्शनके लिये आया करते हैं। ब्रह्माण्डपुराणके एक अंशका नाम 'कठोरगिरिमाहात्म्य' है।

कठोरता (सं० स्त्री०) १ कठिनता, सख़्ती, कड़ापन। २ भयानकता, ख़ौफ़नाकी, शिद्दत, भरमार।

कठोरताई (हिं०) कठोरता देखो।

कठोरपन (हिं० पु०) कठोरता देखो।

कठोल (सं० त्रि०) कठ-ओलच्। कठोर देखो।

कठौती, कठौती देखो।

कठौता (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह बहुत बड़ा होता है। कठौतेकी बाट ऊंची रहती है।

कठौती (हिं० स्त्री०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह कठौतेसे छोटी होती है।

कड़ (सं० त्रि०) कड़ति माद्यति, कड़ पचाद्यच्। १ मूर्ख, बेवकूफ़। २ विक्षिप्त, पागल। ३ कर्कश, कड़ा। ४ मग्न, गुमसुम, अनबोला।

(हिं० पु०) ४ कटि, कमर। ५ कुसुम। ६ कुसुमका बीज।

कड़क (सं० क्ली०) कद्यते अद्यते, कड़-अच् संज्ञायां कन्। १ कड़कच लवण, समुन्दरी नमक। इसका संस्कृत पर्याय—सामुद्र, त्रिकूट, अक्षीव, वशिर, सामुद्रज, सागरज और उदधिसम्भव है। भावप्रकाशके मतसे कड़क मधुर, विपाक, ईषत् तिक्त एवं मधुररसयुक्त, गुरु, न अतिशय शीतल तथा न अतिशय उष्ण, अग्निदीपक, भेदक, क्षारयुक्त, अविदाही, कफकारक, वायुनाशक, तीक्ष्ण और अरुक्ष होता है।

(हिं० स्त्री०) २ कठोर शब्द, कड़ी आवाज़। ३ झपट, तड़प। ४ वज्र, बिजली। ५ अश्वगति-भेद, घोड़ेकी एक चाल। ६ रोगविशेष, एक बीमारी। इसमें मूत्र रुक-रुक उतरता और इन्द्रियमें दाह उठने लगता है। ७ पटेबाज़ीका एक हाथ। इसे खेलाड़ीके दक्षिण पदपर वाम ओर फटकारते हैं। ८ कठोरता, कड़ापन। ९ पीड़ाविशेष, कसक, दर्द। यह रुक-रुक कर हुआ करती है।

कड़कच (सं० क्ली०) सामुद्रलवण, समुन्दरी नमक। यह लवण सफेद और काला दोप्रकार होता है। बङ्गालके वीरभूम ज़िलेमें सिवा सफेदके काला नहीं मिलता। कालेकी अपेक्षा सफेद कुछ कड़ा-जैसा लगता है। कड़कच सैन्धव लवणकी भांति विशुद्ध रहता है। इसीसे स्मृतिशास्त्रमें विधवावोंके भोजनको सैन्धव और सामुद्र दोनों लवणका विधान है।

कड़कड़ (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। दो वस्तुवोंके एक दूसरेसे टक्कर खाने या परस्परके आघातसे टूट-फूट जानेके शब्दका नाम 'कड़-कड़' है।

कड़कड़ाता (हिं० वि०) १ चटखता हुआ, जो कड़कड़ा रहा हो। २ प्रचण्ड, घोर, तेज़, कड़ा।

कड़कड़ाना (हिं० क्रि०) १ कठोर शब्द निकालना, बोलना, ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाना। २ भङ्ग करना, तोड़ डालना। ३ गर्म करना, ताना।

कड़कड़ाहट (हिं० स्त्री०) कठोर शब्द, कड़ी आवाज़।

कड़कना (हिं० क्रि०) १ तड़पना, कड़कड़ाना, कड़ी आवाज़ निकालना। २ चटखना टूटना-फूटना। ३ घोर शब्दके साथ डांट बताना, ज़ोर-ज़ोर बोलना।

कड़कनाल (हिं० स्त्री०) एक तोप। इसका मुंह चौड़ा होता है। यह शत्रुको भयभीत करनेके लिये दागी जाती है। कारण इसका शब्द अत्यन्त कठोर और घोर होता है।

कड़कबांका (हिं० पु०) बलवान् नवयुवक, ताक़तवर नौजवान्। जिसका शब्द सुनकर लोग कांपने लगते, उसी युवकको 'कड़कबांका' कहते हैं।

कड़कबिजली (हिं० स्त्री०) १ स्त्रियोंका एक अलङ्कार, औरतोंका एक गहना। यह कानोंमें पहनी जाती है। इसका दूसरा नाम 'चांदबाला' है। कारण यह चन्द्राकार बनती है।

कड़का (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। कड़ाकेका शब्द 'कड़का' कहाता है।

कड़खा (हिं० पु०) गीतविशेष, एक नग़मा। यह एक प्रकारका युद्धसङ्गीत है। इसमें वीरोंकी प्रशंसा भरी रहती है। कड़खा सुन योद्धा उत्तेजित होते हैं।

कड़खेत (हिं० पु०) १ कड़खा सुनानेवाला, जो कड़खा गाता हो। २ चारण, बन्दी, भाट।

कड़ङ्गर, कडङ्गर देखो।

कड़ङ्ग (सं० पु०) कड़ं मादकताशक्तिं गमयति जनयति, कड़-गम-ड। १ सुराविशेष, एक शराब। २ देशविशेष, एक मुल्क।

कड़ङ्गर (सं० पु०) कड़ात् भक्षणीयशस्यादेः सकाशात् म्रियते क्षिप्यते, कड़-दृ-खच्; कड़ं भक्षणीयशस्यादिकं गिरति आत्मनः सकाशात्, कड़-दृ-अच् वा। तुष, भूसी, पैरा।

कड़ङ्गरीय (सं० वि०) कड़ङ्गरं तुषं अर्हति, कड़ङ्गर-घन्। तुषभक्षक, भूसी खानेवाला।

"नीवारपाकादि कडङ्गरीयैरामृश्यते जानपदैर्न कश्चित्।" (रघु ६।८)

कड़त्र (सं० क्ली०) गद्यते सिच्यते जलादिकम्, गड़-अत्रन् गकारस्य ककारः। गड़ेरादेश्च कः। उण् ६।१०६। पात्रविशेष, एक बरतन।

कड़न्दिका (सं० स्त्री०) विज्ञान, विद्या, इल्म, वाक़फ़ियत, हिकमत।

कड़बड़ा (हिं० वि०) १ कर्बुरित, कबरा। (पु०)

२ कर्वुरित श्मश्रुविशिष्ट पुरुष, कबरी दाढ़ीवाला आदमी।

कड़वा (हिं॰ पु॰) गोलाकार द्रव्यविशेष, एक गोल चीज़। हलके फालपर बांधा जानेवाला अवशेष कड़वा कहाता है। इससे हल भूमिमें अधिक नहीं धंसता।

कड़वी (हिं॰ स्त्री॰) मकई और ज्वारके हरे या सूखे वृक्ष। यह काट काट कर पशुवोंको खिलायी जाती है।

कड़म्ब (सं॰ पु॰) कड्-अम्बच्। ककदिकड़िकठिभ्योऽम्बच्। उण् ४।८२। १ शाकनाड़िका, सब्ज़ीका डण्ठल। २ कलम्बी शाक, नारी। ३ अग्रभाग, अगौरा। ४ कोण, कोना। ५ अङ्कुर, कोपल। ६ कदम्ब। ७ वाण, तीर।

कड़म्बक (सं॰ पु॰) कड़म्ब स्वार्थे कन्। १ शाकनाड़िका, सब्ज़ीका डण्ठल। २ कलम्बिशाक, नाड़ी।

कड़म्बी (सं॰ स्त्री॰) कड़म्बो भूयसा विद्यते ऽस्याः, कड़म्ब-अच्-ङीष्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। कलम्बी-शाक, नाड़ी, कलमीशाक।

कड़वक (सं॰ पु॰) अपभ्रंशके निवन्धका अध्याय, विरामसूचक सर्ग।

"अपभ्रंशनिबन्धोऽस्मिन् सर्गाः कड़विकाभिधाः॥" (साहित्यदर्पण)

कड़वा (हिं) कटु देखो।

कड़वी (हिं) कटु शब्द देखो।

कड़हन (हिं॰ पु॰) वन्यधान्यभेद, काठधान, जङ्गली चावल। यह मोटा होता है।

कड़ा (हिं॰ पु॰) १ चूड़ाभेद, खड़वा। इसे हाथ या पैरमें पहनते हैं। २ छल्ला, कुण्डा। यह लोहे या दूसरे धातुका बनता है। ३ कपोतभेद, किसी किस्मका कबूतर। (वि॰) ४ कठिन, सख़्त, न दबनेवाला। ५ रूक्ष, रूखा। ६ उग्र, तेज़। ७ गाढ़, चुस्त, जो ढीला न हो। ८ नातिसिक्त, जो ज़्यादा तर न हो। ९ सवल, मज़बूत। १० तीक्ष्ण, खरा। ११ सहनशील, बरदाश्त करनेवाला। १२ दुःसाध्य, मुश्किल। १३ तीव्र, तीखा। १४ असह्य, बरदाश्त न होनेवाला।

कड़ाई (हिं॰ स्त्री॰) कठोरता, सख़्ती, कड़ापन।

कड़ाका (हिं॰ पु॰) १ कठोर द्रव्यके भङ्गका शब्द, कड़ी चीजके टूटनेकी आवाज़। २ उपवास, फ़ाका।

कड़ाबीन (हिं॰ स्त्री॰) १ कराबीन, चौड़े मुंहकी बन्दूक। इसमें कितनी ही गोलियां भरकर दागी जाती हैं। २ तपञ्चा, झोंका, छोटी बन्दूक। यह कमरमें बांधी जाती है।

कड़ार (सं॰ पु॰) गड़ सेचने आरन् कड़ादेशश्च। गड़ेः कड़्च्। उण् ३।१३५। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा रङ्ग। २ दास, नौकर। ३ दानमानविधि। (त्रि॰) ४ पिङ्गलवर्णयुक्त, गन्दुमी, भूरा।

कड़ालिङ्गी—एक श्रेणीके संन्यासी। यह उपासक सम्प्रदायके अन्तर्गत हैं। कड़ालिङ्गी सर्वदा नग्न रहते और अपनी जितेन्द्रियताकी रक्षाके लिये लिङ्गपर लोहेका एक कड़ा चढ़ा रखते हैं। यह प्रथा नानकपन्थियोंमें भी चलती है।

कड़ाह (हिं॰ पु॰) १ कटाह, लोहेकी बड़ी कड़ाही। इसमें दोनों ओर पकड़कर उतारने-चढ़ानेके लिये कुण्डे लगाये जाते हैं। बहुत आदमियोंके लिये पूरी, हलवा वगैरह बनानेको इसे व्यवहार करते हैं।

कड़ाहा, कड़ाह देखो।

कड़ाही (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र कटाह, छोटा कड़ाह।

कड़िका (सं॰ स्त्री॰) कलिका, कूंड़ी।

कड़ितुल (सं॰ पु॰) कट्यां तुला तोलनं ग्रहणं यस्य, पृषोदरादित्वात् टस्य डः। खड्ग, तलवार।

कड़ियल (हिं॰ पु॰) मृण्मय पात्रका भग्न खण्ड, मटके या घड़ेका टूटा-फूटा टुकड़ा। इसमें अग्निको स्थापनकर दवा देते हैं।

कड़िया (हिं॰ स्त्री॰) दीर्घकाष्ठ, कांड़ा। दाना झाड़ लेनेसे अरहरका जो सूखा पेड़ बच जाता, वही 'कड़िया' कहलाता है।

कड़ियाली (सं॰ स्त्री॰) अश्वके मुखका रज्जु, लगाम।

कड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ शृङ्खलाके सूत्रका वलय, जञ्जीरको लड़ीका छल्ला। २ क्षुद्र मण्डल, छोटा छल्ला। ३ अन्तरा, गीतमें मुखड़ेके वाद आनेवाला

हिस्सा। ४ धन्नी। ५ अस्थिविशेष, एक हड्डी। पशुओंके वक्षःस्थलके अस्थिको 'कड़ी' कहते हैं। ६ कठिनता, मुश्किल, अड़चन। ७ कठोर, सख्त।

कड़ीदार (हिं० वि०) १ मण्डलविशिष्ट, छल्लेदार, जिसके कड़ी रहे। (पु०) २ किसी क़िस्मका कसीदा। यह शृङ्खलाके सूत्र-जैसा होता है।

कड़ुआ (हिं) कटु देखो।

कड़ुआ तेल (हिं०) कटु तैल देखो।

कड़ुआना (हिं० क्रि०) १ कटु बोध होना, कड़ुवा लगना। २ क्रुद्ध होना, गुस्सा आना, नाक-भौं चढ़ाना। ३ पीड़ा करना, दर्द होना, किरकिराना।

कड़ुआहट (हिं०) कटुता देखो।

कड़ुई (हिं० स्त्री०) कटु, चरपरी। मृतकके घरवालोंको सम्बन्धियों द्वारा भेजा जानेवाला भोजन 'कड़ुई-रोटी' या 'कड़ुई-खिचड़ी' कहाता है।

कड़ुली (सं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक हथियार।

कड़ुच्ची (सं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला, करेली।

कड़ू (हिं०) कटु देखो।

कड़ेरा (हिं० पु०) खरादकर कोई चीज़ बनानेवाला।

कड़ेलोट (हिं० पु०) व्यायामभेद, मालखम्भकी एक कसरत।

कड़ेलोटन, कड़ेलोट देखो।

कड़ोड़ा (हिं० पु०) उच्च पदाधिकारी, करोड़ोंका अफसर।

कड्ढा (हिं० वि०) ऋण ले लेकर अपना काम चलानेवाला, जो क़र्ज़के भरोसे रहता हो।

कड्ढू, कड्ढा देखो।

कढ़ना (हिं० क्रि०) १ बहिर्गत होना, निकलना। २ उदय होना, चढ़ना, देख पड़ना। ३ अग्रसर होना, बढ़ना। ४ घनीभूत होना, गढ़ियाना।

कढ़नी (हिं० स्त्री०) मन्थनरज्जु, नेती, मथानीकी रस्सी।

कढ़लाना (हिं० क्रि०) हाथ या पैर पकड़ कर घसीटना, लथेड़ना।

कढ़वाना, कढ़ाना देखो।

कढ़ाई (हिं० स्त्री०) १ बहिष्करण, काढ़नेका काम, निकलाई। २ बहिष्करणका पारिश्रमिक, निकाल देनेकी उजरत। ३ सूचिकर्म, सूईका काम, कसीदा। ४ सूचिकर्मका पारिश्रमिक, कसीदा काढ़नेकी उजरत। ५ कड़ाही।

कढ़ाना (हिं० क्रि०) बहिर्गत कराना, बाहर निकलाना।

कढ़ाव (हिं० पु०) १ सूचिकर्म, शिल्प, कसीदा, नक्श। २ कड़ाह।

कढ़ावना, कढ़ाना देखो।

कढ़ी (हिं० स्त्री०) व्यञ्जन विशेष, एक सालन। कड़ाहीमें घी या तेल खूब कड़कड़ा हींग, राई और हलदीका चूर्ण छोड़ देते हैं। जब यह चूर्ण खूब पकता और सोंधा सुगन्ध आने लगता, तब मट्ठे या पतले दहीसे घुला हुआ बेसन कड़ाहीमें पड़ता है। पीछे नमक-मिर्च छोड़ इसे धीमी आंचमें पकानेसे कढ़ी बन जाती है। प्रायः कढ़ीमें बेसनकी छोटी छोटी पकौड़ियां भी डाल देते हैं। कढ़ी अत्यन्त स्वादु व्यञ्जन है। जिन त्योहारों पर पूरी नहीं बनती, उनमें कढ़ी अवश्य बनती है। यह भातके साथ खानेसे बहुत अच्छी लगती है। कढ़ी पाचन, दीपन, लघुपाक, रुचिजनक और कफ, वायु तथा बद्धकोष्ठ रोगनाशक है। कढ़ीमें पड़नेवाली पकौड़ी फुलौड़ी कहाती है।

कढ़ुआ, कढ़ुवा देखो।

कढ़ुवा (हिं० पु०) १ गृहीत, लिया हुआ, जो निकाला गया हो। २ रातका रखा भोजन। यह बच्चोंके लिये बचाकर रख लिया जाता है। ३ ऋण, देना। ४ पात्रविशेष, पुरवा, कोरका।

कढ़ेरना (हिं० क्रि०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे धातुके पात्रोंपर शिल्पकार गोलाकार रेखायें खींचते हैं।

कढ़ैया (हिं० पु०) १ निकाल लेनेवाला, जो अलग कर लेता हो। २ उद्धारकर्ता, उबार लेनेवाला, जो बचाता हो। (स्त्री०) ३ कड़ाही।

कढ़ोरना (हिं० क्रि०) घसीटना, लथेड़ना, कढ़लाना।

कण (सं॰ पु॰) कणति अतिसूक्ष्मत्वं गच्छति, कण-पचाद्यच्। १ लेश, दाना। २ धूलिका क्षुद्रांश, खाकका ज़र्रा। ३ हिमलव, बरफ़का तबक। ४ जल-विन्दु, पानीका क़तरा। ५ अग्निस्फुलिङ्ग, आगकी चिनगारी। ६ रत्नमुख, जवाहरका रुख़। ७ शस्य-मञ्जरी, गल्लेकी बाल। ८ परमाणु, ज़र्रा। ९ अतिसूक्ष्म, निहायत बारीक। १० तण्डुल प्रभृतिका क्षुद्र अंश।

"कणान् वा भक्षयेदब्दं पिण्याकं वा सकृन्निशि।" (मनु ११।९२)

१० पिप्पली, पीपल। ११ वनजीरक, जंगली जीरा।

कणकच (हिं॰ पु॰) १ कपिकच्छु, केवांच। २ करञ्ज, करौंदा।

कणगच, कणकच देखो।

कणगज, कणकच देखो।

कणगुग्गुलु (सं॰ पु॰) कणश्चासौ गुग्गुलुश्चेति, कर्मधा॰। १ गुग्गुलुविशेष, एक गूगुल। इसका संस्कृत पर्याय—गन्धराज, स्वर्णकर्ण, सुवर्ण, कनक, वंशपति, सुरभि और पलङ्कष है। राजनिघण्टुके मतसे कणगुग्गुलु कटु, उष्ण, सुगन्धि, रसायन और वायु, शूल, गुल्म, उदराध्मान तथा कफनाशक है।

कणजिह्विका (सं॰ स्त्री॰) १ महासमङ्गा, कगहिया। २ सारिवा, अनन्तमूल। ३ बहुपत्रिका, भुइं आंवला।

कणजीर (सं॰ पु॰) कणश्चासौ जीरश्चेति, नित्य कर्मधा॰। श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणजीरक (सं॰ क्ली॰) कणं क्षुद्रं जीरकम्, कणजीर स्वार्थे कन्। क्षुद्रजीरा, छोटा जीरा। इसका संस्कृत पर्याय—हृद्यगन्धि और सुगन्धि है। भावप्रकाशके मतसे कणजीरक रूक्ष, कटु, उष्णवीर्य, अग्निदीपक, लघु, धारक, पित्तवर्धक, मेधाजनक, गर्भाशयशोधक, पाचक, बलकारक, शुक्रवर्धक, रुचिकारक, कफनाशक, चक्षुका हितजनक और ज्वर, वायु, उदराध्मान, गुल्म, वमि तथा अतिसार रोगनाशक है। जीरक देखो।

कणजीरा (हिं॰) कणजीरक देखो।

कणजीर्ण (सं॰ स्त्री॰) श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणनिर्यास (सं॰ पु॰) गुग्गुलु, गूगुल।

कणप (सं॰ पु॰) कण-पा-क। अस्त्रविशेष, बरछा, भाला।

कणप्रिय (सं॰ पु॰) सूक्ष्मचटक, गौरैया, चिरैया।

कणभ (सं॰ पु॰) कण इव भाति, कण-भा-क। १ अग्निप्रकृति कीटविशेष, एक नेशदार मक्खी। इसके काटनेसे विसर्प, शोथ, शूल, ज्वर, वमि और शरीरकी अवसन्नताका वेग बढ़ता है। (भावप्रकाश) २ पुष्पवृक्ष-विशेष, एक फूलदार पेड़। ३ कीटभेद, एक कीड़ा। इसके काटनेसे पित्तज रोग लगते हैं। ४ अन्यजातीय कीट, किसी किस्मका कीड़ा। यह चार प्रकारका होता है—त्रिकण्टक, कुणी, हस्तिकक्ष और अप-राजित। इसके काटनेसे शरीरमें श्वयथु, अङ्गमर्द तथा गुरुताका बोध आता और दष्ट स्थान काला पड़ जाता है। (सुश्रुत)

कणभक्ष (सं॰ पु॰) कणान् भक्षयति, कण-भक्ष-ण्वुल्। १ ग्रामचटक, एक चिड़िया। २ कणाद। कणाद देखो।

कणभक्षण (सं॰ क्ली॰) शस्यलेश भोजन, नाजके किनकोंका खाना।

कणभुक् (सं॰ पु॰) कणान् भुङ्क्ते, कण-भुज-क्विप्। कणाद-ऋषि।

कणमूल (सं॰ क्ली॰) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ पञ्चतिक्त घृत, पांचकड़वी चीजोंका घी।

कणलाभ (सं॰ पु॰) कणानां लाभो यस्मात्, बहुव्री॰। पेषण करनेका एक यन्त्र, चक्की। २ आवर्त, गिर्दाब, भंवर।

कणशः (सं॰ अव्य॰) कण वीप्सार्थे शस्। अल्प अल्प, कौड़ी-कौड़ी, थोड़ा-थोड़ा।

कणह्वी (सं॰ स्त्री॰) लताशिरीष, वल्लिशिरीष।

कणा (सं॰ स्त्री॰) कण-टाप्। १ जीरक, जीरा। २ पिप्पली, पीपल। ३ कुम्भीरमक्षिका, एक मक्खी। ४ श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा। ४ कृष्णजीरक, काला जीरा। ६ अल्प, थोड़ा।

"कदलीफलमध्यस्थं कणामावमपक्वकम्।" (तिथ्यादितत्त्व)

कणाच (हिं॰ पु॰) केवांच।

कणाजटा (सं॰ स्त्री॰) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कणाटीन (सं॰ पु॰) कणाय अटति, कण-अट्-इनन् पृषोदरादित्वात् दीर्घत्वञ्च। खञ्जनपक्षी, खड़रैचा।

कणाटीर (सं॰ पु॰) कण-अट्-ईरन्। कणाटीन देखो।

कणाटीरक (सं॰ पु॰) कणाटीर स्वार्थे कन्।

कणाटीर देखो।

कणाद (सं॰ पु॰) कणं अत्ति भक्षयति, कण-अद्-अण्। १ मुनिविशेष। यही वैशेषिक दर्शनके प्रणेता रहे। इनका दूसरा नाम औलुक्य, कणभक्ष, कणभुज् और काश्यप है।

महर्षि कणादने 'विशेष' नामक एक अतिरिक्त पदार्थ स्वीकार किया, इसीसे उनके बनाये दर्शनसूत्रका नाम लोगोंने वैशेषिक रख लिया है।

कणादके मतसे छह भाव पदार्थ और एक अभाव पदार्थ अर्थात् सब सात पदार्थ हैं। छह भाव-पदार्थोंके नाम यह हैं—१ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष और ६ समवाय।

द्रव्य प्रथम पदार्थ है। यह नौ प्रकारका होता है। यथा—

"पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालोदिगात्मा मन इति द्रव्याणि।"

(वैशे॰ सू॰ १।१।५)

क्षिति, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मनका नाम द्रव्य है।

जिसमें गन्ध रहता, उसको विद्वान् क्षिति कहता है। हम जलमें भी गन्ध अनुभव करते हैं। किन्तु वह गन्ध जलका नहीं ठहरता, पृथिवीसे जलपर उतरता है—जैसे किसी नूतन मृत्पात्रमें रख थोड़ी देर बाद पीनेपर जलसे सोंधा गन्ध आने लगता है। सुतरां मानना पड़ेगा—आश्रयका गन्ध ही जलमें अनुभूत होता है।

केवलमात्र शुक्लरूप किंवा स्वाभाविक द्रवत्व रखनेवाले द्रव्यका नाम जल है। शुक्ल पीत प्रभृति नानाविध रूप देख पड़ने और स्वभावसिद्ध द्रवत्व न रहनेसे पृथिवीको जल कैसे कह सकते हैं!

स्वाभाविक उष्णता-युक्त द्रव्य तेज कहाता है।

अनुष्ण, अशीतल और किसी प्रकारके पाकसे उत्पन्न न हुये स्पर्शविशिष्ट द्रव्यको वायु कहते हैं।

जिससे शब्द उठता, उसका नाम आकाश पड़ता है। कोई-कोई कहता—वायुसे ही शब्द निकलता, सुतरां आकाशको स्वीकार करना चल नहीं सकता। यह सन्देह दूर करनेके लिये विश्वनाथ न्यायपञ्चाननने लिखा है—

"न च वाय्ववयवेषु सूक्ष्मशब्दक्रमेण वायौ कारणगुणपूर्वकः शब्द उत्पद्यतामिति वाच्यं अयावत् द्रव्यभावित्वेन वायोर्विशेषगुणत्वाभावात्।"

(सिद्धान्तमुक्तावली)

कोई नहीं कहता—प्रथमतः वायुके अवयवमें सूक्ष्म शब्द उठता, फिर उसी शब्दसे स्थूल वायुमें स्थूल शब्द खुलता है। क्योंकि आश्रय नाश जिसके नाशका कारण नहीं, वह वायुका विशेष गुण कैसे हो सकता है! आश्रय विद्यमान रहते भी जब शब्दका विनाश हो जाता, तब आश्रयनाशको शब्दके नाशका कारण कहना किसी मतसे सङ्गत नहीं आता। एकमात्र शब्द ही आकाशकी सिद्धिका हेतु है। इस सम्बन्धपर लिखते हैं—

"परिशेषाल्लिङ्गमाकाशस्य।" (२ अ॰ १ आ॰ २७ सू॰)

अन्य अष्टविध द्रव्योंमें शब्द रहना असम्भव होनेसे शब्द ही आकाशका एकमात्र लिङ्ग (अनुमापक हेतु) है।

ज्येष्ठत्व और कनिष्ठत्व आदि ज्ञानके कारण-पदार्थको दिक् कहते हैं।

जिसमें ज्ञानविज्ञान प्रभृति रहता, उसका नाम आत्मा पड़ता है।

जिस पदार्थके रहनेसे हम सुख, दुःख प्रभृति उठाते और विजातीय ज्ञानकी झलक देख नहीं पाते, उसको संज्ञा मन बताते हैं।

गुण पदार्थ २४ प्रकारका है। यथा—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, वियोग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, शब्द, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, पाप और धर्म।

(वैशे॰ सू॰ १।१।६)

कर्म पांच प्रकारका होता है—उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। (वैशे॰ सू॰ १।१।७)

सामान्य दो प्रकारका है—साधारण धर्म वा जाति विशेष। जिस पदार्थके रहनेसे परमाणुवोंका भेद साधा जाता, वही विशेष कहाता है। (वैशे॰ सू॰ १।२।३)

समवाय नित्य सम्बन्धको कहते हैं। (वैशे॰ सू॰ ७।२।१)

द्रव्यके साथ उसके परमाणुका सम्बन्ध रहता है—जैसे घटके साथ मृत्तिकाका सम्बन्ध इत्यादि।

अभाव चार प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यन्ताभाव। अभाव देखो।

कणादके मतमें अन्धकार कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं। तेजके अभावको ही अन्धकार कहते हैं।

प्रमाण इन्होंने दो ही प्रकारका माना है—प्रत्यक्ष और अनुमान। उपमान अनुमानके अन्तर्भूत है।

महर्षि कणादने ही सर्वप्रथम परमाणुवाद चलाया था। इनके कथनानुसार एकमात्र परमाणु सत्स्वरूप नित्य पदार्थ है। उसका दूसरा कोई कारण नहीं होता।

"सदकारणवन्नित्यम्।" (वैशे० सू० ४।१।१)

हम जो यावतीय जड़पदार्थ प्रत्यक्ष करते, वह समुदाय परमाणुके संयोगसे बनते हैं। विशेष विशेष प्रकारके परमाणुवोंमें विशेष नामक एक पदार्थ रहता है। उसीकी शक्तिसे भिन्न-भिन्न रूप परमाणु भिन्न-जसे देख पड़ते हैं।

कणादके मतमें अदृष्ट कारण विशेष द्वारा परमाणुवोंका संयोग गंठनेसे इस विश्वसंसारकी उत्पत्ति हुयी है।

इन्होंने जड़पदार्थका मूलतत्त्व अपने सूत्रके मध्य क्यों सन्निवेश किया है? वैशेषिक-उपस्कारमें स्पष्ट ही लिख दिया है—

"दृष्टे कारणे सत्यदृष्टकल्पनानवकाशात्।"

क्योंकि दृष्ट कारण रहते अदृष्ट कारणकी कल्पना आवश्यक नहीं।

वास्तविक महर्षि कणाद अपनी चारो ओर जो देख पाते, उसीके ज्ञानानुशीलनमें प्रवृत्त हो जाते थे।

जो परमाणु वा जड़तत्त्व कणादने अपने सूत्रमें प्रचार किया, आजकल भारतवर्षमें विशेष आदर न मिलते भी युरोपीय दार्शनिकोंने उसको यथेष्ट सम्मान दिया है। ई०से ४४० वर्ष पूर्व ग्रीक देशमें डेमक्रिटस्ने परमाणुवाद चलाया था। उसके पीछे एपिक्युरासने इस मतको सविशेष प्रचार किया। उनका सिद्धान्त बिलकुल कणादसे मिलता है। लुक्रेशियाने उनका मत प्रकाश किया। उन्होंने अपने बनाये काव्यदर्शनमें कहा है—

"Nunc age, quo motu genitalia materiai
Corpora res varias gignant, genitasque resolvant
Et qua vi facere id congantur, quaeve sit ollis
Reddita mobilitas magnum per inane meandi Expediam."
(II. 61-64.*)

लुक्रेशियाने स्पष्ट ही स्वीकार किया, कि परमाणुने इस जगत्को जन्म दिया है। वास्तविक लुक्रेशियाका द्वितीय अध्याय पढ़नेसे कणादका मत बहुत कुछ मिलता है।

अब देखना चाहिये—किसने सर्वप्रथम परमाणुवाद चलाया था, महर्षि कणाद या ग्रीसके डेमक्रिटस्ने।

इस बातके समझनेका कोई उपाय नहीं—कणाद किस समयके व्यक्ति रहे। अपना देशीय प्रवाद माननेसे यह ५।६ हजार वर्षके लोग हो सकते हैं। फिर भी भगवद्गीतामें वैशेषिकका मत गृहीत हुआ है। सुतरां गीता बननेसे पहले महर्षि कणाद विद्यमान थे। इससे मानना पड़ेगा—डेमक्रिटस्से बहुत पहले कणादका जन्म हुआ। अतएव समझ सकते—महर्षि कणादने ही सर्वाग्र परमाणुवाद चलाया था। डेमक्रिटस्की जीवनी पढ़नेसे बोध होता—वह संन्यासियोंके साथ भारतवर्ष आये थे। सम्भवतः संन्यासियोंके मुखसे कणादका मत सुन अपने ग्रन्थमें उन्होंने वैशेषिककी बात लिखी है।

---

* Thus the Great World's eternally renewed;
Thus endless atoms are with power endued,
Successive generations to supply;
Some creatures flourishing, while others die.
Like racers, each revolving age, we find,
Retires, and leaves the lamp of life behind.
If you suppose that seeds at rest convey,
Motion to bodies, wide from truth you stay.
Through the Vast Void as those premordials robe,
By foreign force or gravity they move.

कणादने जो अङ्कुर लगाया, उसका सुफल भारतने न पाया। सुदूर युरोपखण्डमें डेलटन साहबने उसका पुनरुद्धार किया। आजकल युरोपमें परमाणु-वाद कौन नहीं मानता! परमाणु शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

बहुतसे लोग कहते—कणाद ईश्वरका अस्तित्व मानते न थे। कारण कणादसूत्रमें किसी स्थानपर ईश्वरका नाम नहीं मिलता। जगत्‌के कारणको निर्धारण करना ही दर्शनशास्त्रका मुख्य उद्देश्य है। यदि कणाद ईश्वरको विश्वका कारण समझते, तो अवश्य ही इस विषयको स्पष्ट स्पष्ट उल्लेख करते।

फिर क्या कणाद नास्तिक रहे· अथवा ईश्वरके सम्बन्धपर कोई सन्देह रखते थे? नहीं, यह बात हो नहीं सकती। इन्होंने वेदको प्रामाण्य माना है—

"तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्।" (वैशे० सू० १।१।३)

इन्होंने आत्मकर्म सम्पन्नको ही मोक्ष बताया और स्वर्ग एवं अपवर्गप्रद धर्मतत्त्वको प्रचार करनेके लिये ही अपना सूत्र बनाया है।* परमतत्त्ववित् माधवाचार्यने कणादके किसी अंशका प्राधान्य मान लिखा है—

"द्वित्वे च पाकजोत्पत्तौ विभागेच विभागजे।
यस्य न स्खलितं बुद्धिस्तं वै वैशेषिकं विदुः॥" (सर्वदर्शनसंग्रह)

द्वित्वोत्पत्ति, पाक द्वारा रूपादिकी उत्पत्ति और विभागज विभागकी उत्पत्तिमें जिसकी बुद्धि नहीं बिगड़ती, उसे विद्वन्मण्डली वैशेषिक समझती है। यह बात भी युक्तिसङ्गत नहीं, कि कणाद ऋषि निरी-श्वरवादी रहे। शङ्करमिश्रने कणाद-सूत्रकी व्याख्या करते स्पष्ट ही लिख दिया है—

"तदित्यनुक्रान्तमपि प्रसिद्धिसिद्धतयेश्वरं परामृशति।"

तत् शब्दका अर्थ 'ईश्वर' प्रसिद्ध है। अतएव पूर्व सूचना न रहते भी यहां यह ईश्वरवाचक निश्चित होता है। ईश्वर शब्दका उल्लेख न उठाते भी कणादने गौणभावसे ईश्वरको स्वीकार किया है। ईश्वर शब्द देखो।

२ स्वर्णकार, सोनार।

* "यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः सधर्मः।" (वैशे० सू० १।२)
जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस अर्थात् स्वर्ग एवं अपवर्ग मिलता, उसीका नाम धर्म पड़ता है।

कणादिगण (सं० पु०) पिप्पल्यादिगण, पीपल वर्गे-रह चीजें। पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, नागर, मरिच, एला, अजमोदा, इन्द्रपाठा, रेणुक, जीरक, भार्गी, महानिम्बफल, हिङ्गु, रोहिणी, सर्षप, विड़ङ्ग, अतिविषा और मूर्वा सबके समवायको कणादिगण कहते हैं। (चक्रपाणिदत्तकृतसंग्रह)

कणादिवटी (सं० स्त्री०) स्रीपदका एक औषध, पीलपाकी एक दवा। पिप्पली, वचा, देवदारु, पुनर्नवा, बेलकी छाल और वृद्धदारकका बीज बराबर बराबर कूटपीस ३ रत्ती कांजीके साथ खानेसे स्रीपद-का उग्रवेग दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कणादीर्घ्य (सं० पु०) श्वेतजीरक, सफेद जीरा।

कणाद्यलौह (सं० क्ली०) अतिसारका एक औषध, दस्तकी कोई दवा। पिप्पली, शुण्ठी, पाठा, आम-लकी, बहेड़ा, हरीतकी, मुस्तक, चित्रक, विड़ङ्ग, रक्त-चन्दन, विल्व एवं ह्रीवेर समभाग और सबके समान लौह डाल जलमें रगड़नेसे यह औषध बनता है। (रसरत्नाकर)

कणान्न (सं० त्रि०) अन्नके कणसे जीविका चलाने-वाला, जो दाना बीन बीन गुज़र करता हो।

कणान्नता (सं० स्त्री०) अन्नके कणसे जीविका निर्वाह करनेकी स्थिति, जिस हालतमें दाने बीन बीन गुज़र करें।

कणामूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कणारक—उड़ीसेका एक तीर्थ। इसका प्रकृत नाम कोणार्क वा कोणारक है। किन्तु कुछ लोग अपभ्रंश बना कणारक उच्चारण करते हैं। कोणार्क देखो।

कणासुफल (सं० क्ली०) अङ्कोल, ढेड़।

कणाह्वा (सं० स्त्री०) श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणिक (सं० पु०) कणैव स्वार्थे कन् अत इत्वम्। १ कणा, पीपल। २ शुष्क गोधूमचूर्ण, सूखे गेहूंका आटा। ३ शत्रु, दुश्मन। ४ आरतिका एक नियम। ५ धृतराष्ट्रके एक मन्त्री।

"कणिकं मन्त्रिणां श्रेष्ठं धृतराष्ट्रोऽब्रवीदचः।" (भारत, सम्भव १४१ अ०)

६ अन्नका कण, चावलका दाना।

कणिका (सं० स्त्री०) कणाः सन्त्यस्याः, कण-ठन्।

अत इति ठनौ। पा ५।२।११५। १ अत्यन्त सूक्ष्मवस्तु, निहायत बारीक चीज़। २ अग्निमन्थ वृक्ष, गनियारी। ३ कणा, जर्रा, किनका। ४ तण्डुलविशेष, एक चावल। ५ जलादिका सूक्ष्मांश, पानी वगैरहका बारीक हिस्सा

"त्वामुत्थाप्य स्वजलकणिका शीतले नानिलेन।" (मेघदूत)

कणित (सं० क्लो०) कण आर्तनादे भावे-क्त। पीड़ित-का यातनासूचक नाद, गमसे भरी आवाज़।

कणिश (सं० क्लो०) कणो विद्यतेऽस्य, कण-इनि, कणिनः शेवते अस्मिन्, कणिन्-शी-ड। शस्यमञ्जरी, अनाजकी बाल।

कणिष्ठ (सं० त्रि०) कण-इष्ठन्। १ अन्य अपेक्षा क्षुद्र, दूसरेकी बनिस्बत छोटा। २ अन्य अपेक्षा हीन, दूसरेसे कम।

कणी (सं० स्त्री०) कण-ईकन्। १ अल्प, थोड़ी। २ क्षयकण्ठलता, एक बेल। ३ कणिका, कनी, टुकड़ा। ४ तण्डुलविशेष, किसी क़िस्मका चावल।

कणीक (सं० त्रि०) अल्प, सूक्ष्म, छोटा, बारीक।

कणीका (सं० स्त्री०) कण-ङीप्। १ कणिका, कनी, छोटा टुकड़ा।

कणीचि (सं० पु०) कण-ईचि। मृकणिभ्यामीचिः। उण् ४।७०। १ पल्लवी, छोटी डाली। २ निनाद, आवाज़। (स्त्री०) ३ पुष्पितालता, फूलदार बेल। ४ गुञ्जा, घुंघची। ५ शकट, गाड़ी।

कणीची (सं० स्त्री०) कणीचि देखो।

कणीयः (सं० त्रि०) कण-ईयसुन्। द्विवचनविभज्योपप-देतरबीयसुनौ। पा ५।३।५७। १ अत्यन्त सूक्ष्म, निहायत बारीक। २ अन्य अपेक्षा क्षुद्र, दूसरेकी बनिस्बत छोटा।

कणीयान् (सं० पु०) कण-ईयसुन्। १ कनिष्ठ, छोटा। २ क्षुद्र, हक़ीर। ३ हीन, कम।

कणीसक (हिं०) कणिश देखो।

कणे (सं० अव्य०) कण्-ए। १ इच्छानुरूप, जीभर। (हिं०) २ निकट, समीप, पास।

कणेर (सं० पु०) कण-एर। कर्णिकारवृक्ष, अमलतासका पेड़।

कणेरा (सं० स्त्री०) कणेर-टाप्। १ वेश्या, रण्डी। २ हस्तिनी, हथिनी।

कणेरु (सं० पु०) कण-एरु। १ कर्णिकार वृक्ष, अमलतासका पेड़। (स्त्री०) २ वेश्या, रण्डी। ३ हस्तिनी, हथिनी।

कण्ट (सं० पु०) कटि-अच्। १ कण्टक, कांटा। २ बकुल वृक्ष, मौलसरीका पेड़।

कण्टक (सं० पु०-क्लो०) कटि-ण्वुल्। १ सूचीका अग्रभाग, सूईकी नोक। २ कांटा, ख़ार। ३ मत्स्या-दिका कोकस, मछलीकी नोकदार हड्डी। ४ नख, नाख़ून। ५ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। ६ क्षुद्रशत्रु, छोटा दुश्मन। ७ तीव्र वेदना, तेज़ दर्द। ८ हानिकारक भाषण, नुक़सान् पहुंचानेवाली बात। ९ दुःखका कारण, तकलीफ़का सबब। १० वाद-विवादका खण्डन, बहसकी तरदीद। ११ विघ्नबाधा, अड़चन। १२ प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम नक्षत्र। १३ शाक्य मुनिका अश्व। १४ किसी अग्रहारका नाम। १५ वेणु, बांस। १६ कर्मस्थान, कारख़ाना। १७ दोष, ऐब। १८ मकर, मगर। यह कामदेवका चिह्न है। १९ केन्द्र, दायरेका मरकज़।

"लग्नाम्बुद्यून कर्माणि केन्द्रमुक्तञ्च कण्टकम्।" (ज्योतिष)

२० गोक्षुरक्षुप, गोखरू। २१ मदनवृक्ष, मैनफल। २२ विल्ववृक्ष, बेलका पेड़। २३ इङ्गुदीवृक्ष, देशी बादाम। २४ वनमुद्ग, जङ्गली मूंग। २५ बबूरकवृक्ष, बबूल। २६ पद्मबीज, कमलगट्टा।

कण्टककरञ्ज (सं० पु०) करञ्जभेद, जङ्गली करौंदा।

कण्टककिंशुक (सं० पु०) कण्टकी पारिजात, कांटेदार मदार।

कण्टकच्छद (सं० पु०) श्वेतकेतकवृक्ष, सफ़ेद केवड़ेका पेड़।

कण्टकत्रय (सं० क्लो०) कण्टकारीत्रय, तीनों कटैया। बृहती, कण्टकारी और गोक्षुर तीनोंका समूह कण्टकत्रय कहाता है। कण्टकत्रय त्रिदोष, भ्रम, ज्वर, पित्त, हिक्का और तन्द्रालापको नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकदला (सं० स्त्री०) केतकी वृक्ष, केवड़ेका पेड़।

कण्टकदेही (सं॰ त्रि॰) कण्टकप्रधानो देहोऽस्यास्ति, कण्टकदेह-इनि। १ कण्टकावृत शरीरविशिष्ट, कांटेदार जिस्म रखनेवाला। (पु॰) २ शल्यक, खारपुश्त, स्याही। ३ मत्स्यविशेष, कंटवा।

कण्टकद्रुम (सं॰ पु॰) कण्टकप्रधानो द्रुमः कण्टकेन आचितो वा द्रुमः, मध्यपदलो॰। १ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ३ कण्टकयुक्त वृक्ष, कांटेदार पेड़। बबूल वगैरह कंटीले पेड़ोंको कण्टकद्रुम कहते हैं।

कण्टकपक्षक (सं॰ त्रि॰) कण्टकं पक्षे यस्य ततः स्वार्थे कन्। पक्षमें कण्टक रखनेवाला, जिसके बाज़ूमें कांटा रहे।

कण्टकपञ्चमूल (सं॰ क्ली॰) स्वल्पमहत्तृणवर्ज्जो कण्टकसंज्ञक पञ्च मूल, पांच कंटीली जड़ें। करमर्द, गोक्षुर, झिण्टी, शतमूली और हिंस्रा पांचोंका मूल मिलानेसे यह औषध बनता है। वैद्यक मतसे कण्टकपञ्चमूल रक्तपित्त, सर्वप्रकार मेह, शुक्रदोष, तीनप्रकारके शोथ और श्लेष्माको नाश करता है।

कण्टकपाली (सं॰ स्त्री॰) स्वनामख्यात वृक्ष, छिजनगरना।

कण्टकप्रावृता (सं॰ स्त्री॰) कण्टकैः प्रावृता व्याप्ता, ३-तत्। घृतकुमारी, घीकुवार।

कण्टकफल (सं॰ पु॰) कण्टकैराचितं फलं यस्य, मध्यपदलो॰। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ गोक्षुर, गोखरू। ३ कण्टकारी, भटकटैया। ४ एरण्डवृक्ष, रेड़का पेड़। ५ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पौदा। ६ देवदाली, मोखल, तलखखारा। ७ कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़। ८ ब्रह्मदण्डीवृक्ष। ९ करमर्द्दवृक्ष, करौंदेका पेड़। जिस वृक्षका फल कांटेदार रहता, उसको संस्कृतज्ञ 'कण्टकफल' कहता है।

कण्टकफला (सं॰ स्त्री॰) कण्टकफल देखो।

कण्टकभुक् (सं॰ पु॰) कण्टकान् भुङ्क्ते, कण्टक-भुज्-क्विप्। उष्ट्र, ऊंट। ऊंटको कंटीला पौदा ही खानेमें सबसे अच्छा लगता है।

कण्टकमर्दन (सं॰ त्रि॰) १ कण्टकोंको कुचलनेवाला, जो कांटोंको रौंदता हो। २ अशान्ति मिटानेवाला, जो झगड़ा-झञ्झट दूर कर देता हो। (क्ली॰) ३ कण्टकोंको कुचलनेका काम, कांटोंकी रौंदाई। ४ अशान्तिनिवारण, झगड़ा झञ्झट मिटानेका काम।

कण्टकयुक्त (सं॰ त्रि॰) कण्टकविशिष्ट, कांटेदार, कंटीला।

कण्टकलता (सं॰ स्त्री॰) १ त्रपुषा, खीरा। २ कर्कटिका, ककड़ी।

कण्टकवृन्ताकी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकैराचिता वृन्ताकी मध्यपदलो॰। वार्ताकु, बैंगन, भंटा।

कण्टकशृङ्ग (सं॰ पु॰) पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह महाभद्रके उत्तर अवस्थित है। (लिङ्गपु॰ ४९।५५)

कण्टकश्रेणी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकानां श्रेणी यस्याम्, बहुव्री॰। १ कण्टकारी, भटकटैया। २ शल्लकीमृग, खारपुश्त, स्याही।

कण्टकस्थल (सं॰ पु॰) भारतका अग्निकोणस्थ जनपदविशेष, एक मुल्क। (मार्कण्डेयपुराण)

कण्टकस्थली (सं॰ स्त्री॰) कण्टकस्थल देखो।

कण्टका (सं॰ स्त्री॰) १ कण्टकारिका, भटकटैया। २ दुरालभा, जवासा। ३ वनमुद्ग, मोट। ४ कर्कटिका, ककड़ी।

कण्टकाख्य (सं॰ पु॰) शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टकागार (सं॰ पु॰) कण्टका आगारो यस्य अथवा कण्टकं आगिरति, कण्टक-आ-गॄ-अच्। १ शरट, गिरगिट। २ शल्लकी, खारपुश्त, स्याही।

कण्टकाढ्य (सं॰ पु॰) कण्टकैराढ्यः, ३-तत्। १ कुब्जकवृक्ष, बेला। २ विल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ३ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़।

कण्टकार (सं॰ पु॰) कण्टकमृच्छति, कण्टक-ऋ-अण्। १ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। २ किसी क़िस्मका बबूल।

कण्टकारिका (सं॰ स्त्री॰) कण्टकान् इयर्ति ऋच्छति वा, कण्टक-ऋ-ण्वुल्-टाप्, इत्वञ्च। कण्टकारी नामक वृक्षविशेष। कण्टकारी देखो।

कण्टकारी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकार-ङीप्। क्षुद्रवृक्ष विशेष, भटकटैया। इसका संस्कृत पर्याय—निदिग्धिका, स्पृशी, व्याघ्री, बृहती, प्रचोदनी, कुली, क्षुद्रा, दुष्पर्शा,

राष्ट्रिका, अनाक्रान्ता, भण्टाकी, सिंही, धावनिका, कण्टकारिका, कण्टकिनी, दुष्प्रधर्षिणी, निदिग्धा, धावनी, क्षुद्रकण्टिका, बहुकण्टा, क्षुद्रफला, कण्टानिका और चित्रफला है। युक्तप्रदेशमें इसे भटकटैया, रिंगनी, कटेरी या छोटी कटाई कहते हैं। श्वेत-कण्टकारीका बङ्गाली नाम क्षुद्रा, हिन्दुस्थानी कटीला, दक्षिणी दौरलिकाफल, तमोली कन्दनपत्री और तैलङ्गी वक्कुदकाया या नीलमुल्लकू है। पाश्चात्य वैज्ञानिक नाम Solanum xanthocarpum है।

भावप्रकाशके मतसे यह सारक, तिक्त एवं कटरस, लघु, रूक्ष, उष्णवीर्य, पाचक और कास, श्वास, ज्वर, श्लेष्मा, वायु, पीनस, पार्श्वशूल, क्रमि तथा हृद्रोग-नाशक है।

कण्टकारी और बृहती दोनों शब्द पर्यायमें आया करते हैं। सुश्रुतके मतमें जो जाति क्षुद्र और क्षुद्र भण्टाकी नामसे प्रसिद्ध रहती, उसीको विदग्धमण्डली बृहती कहती है। बृहती धारक, हृदयग्राही, पाचक, कटुतिक्तरस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, मुख-विरसता,

कण्टकारी वृक्ष।

मल, अरुचि, कुष्ठ, ज्वर, श्वास, शूल, कास एवं अग्निमान्द्यनाशक है।

यह ओषधि अधिक सकण्टक और विस्तृत होती है। भारतवर्षमें पञ्जाब एवं आसामसे सिंहल और मलक्का द्वीप तक कण्टकारी मिलती है। दक्षिण-पूर्व एशिया, मलय, अयनवृत्तमें आनेवाली अष्ट्रेलिया और पोलिनेशियामें भी यह पाई जाती है। शीतकालमें कण्टकारी फलती है। पुष्प रक्तवर्ण लगते हैं।

कण्टकारी श्वेत और नील भेदसे द्विविध होती है। श्वेतकण्टकारीको श्वेता, क्षुद्रा, चन्द्रहासा, लक्ष्मणा, क्षेत्रदूतिका, गर्भदा, चन्द्रभा, चन्द्री, चन्द्रपुष्पी, और प्रियङ्करी कहते हैं। यह विशेषतः गर्भप्रद है। इसका मूल व्यवहार्य है। उसके अभावमें समस्त अंश ले सकते हैं। मात्रा १ माषा रहती है।

कण्टकारीका फल तिक्त, रस एवं पाकमें कषाय, वीर्यनिःसारक, भेदक, तीक्ष्ण, पित्त तथा अग्निवर्धक, लघु और कफ, वात, कण्डु, काश, भेद, क्रमि एवं ज्वररोगनाशक होता है। मतान्तरसे उक्त फल, तीक्ष्ण, लघु, कटु, दीपन, रूक्ष और श्वास, काश, ज्वर तथा कफनाशक है।

क्षुद्र कण्टकारीका फल कटु, तिक्त, रेचक, पित्त-कर, मूत्रकारक और हिक्का, छर्दि, यकृत्, श्वास, काश, कफ, कण्डु, वात, क्रमि एवं ज्वरनाशक होता है।

डाक्टर विलसनने कण्टकारीको कटु और वात-

रेचक कहा है। पदतलमें प्रदाह पड़ने और जलयुक्त पिड़का उठनेसे यह व्यवहार की जाती है। दन्त-मूलमें व्यथा बढ़नेसे कण्टकारीका धूम और उत्ताप विशेष उपकारी है। डाक्टर मोरहेडके कथनानुसार यह विशेषत: कफनि:सारक होती है।

कहीं कहीं लोग कण्टकारीका बीज खाते हैं।

कण्टकारीघृत (सं० क्लो०) कासरोगका एक वैद्यकोक्त औषध, खांसीकी एक दवा। यह अल्प, अपर और बृहत् भेदसे त्रिविध रहता है।

अल्प—कण्टकारी और गुलञ्च तीस-तीस पल ६० सेर जलमें क्वाथ करे। सवा पांच सेर जल अवशिष्ठ रहनेसे उक्त क्वाथको छान लेते हैं। फिर इसी क्वाथमें ४ सेर घृत पकाना चाहिये। यह घृत पीनेसे वाताधिक्य तथा कासरोग छूटता और अग्निका वेग फूटता है।

अपर—कण्टकारीका क्वाथ सवा छह सेर, घृत ४ सेर और रास्ना, वाट्यालक, त्रिकटु तथा गोक्षुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर यथाविधि पका सेवन करनेसे पञ्चविध कासरोग विनष्ट होता है।

बृहत्—मूल, पत्र एवं शाखायुक्त कण्टकारीका क्वाथ सवा छह सेर, घृत ४ सेर और वाट्यालक, त्रिकटु, विडङ्ग, शटी, चित्रक, सचल लवण, यवक्षार, सूखा कच्चा बेल, आमलकी, कुष्ठ, श्वेतपुनर्णवा, अतीस, दुरालभा, आम्ललोनिका, बृहती, हरीतकी, यमानी, दाड़िम, ऋद्धि, द्राक्षा, रक्तपुनर्णवा, कर्कटशृङ्गी, भूम्यामलकी, ब्राह्मणयष्टिका, रास्ना तथा गोक्षुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर अच्छीतरह पका सेवन करनेसे सर्वप्रकार कासरोग एवं कफरोग छूट जाता है।

स्वरभेदरोगके अधिकारपर निम्नलिखित कण्टकारीघृत कहा है—

कण्टकारीको कण्टकारीके ही रससे क्वाथ कर चतुर्थांश बचनेपर वाट्यालक, गोक्षुर एवं त्रिकटुके कल्क और घृत सबको फिर भली भांति पकाते हैं। यह घृत पीनेसे स्वरभङ्ग और पञ्चविध कास विनष्ट होता है। रोगीका बलाबल देख आध तोलेसे घृतकी मात्रा बढ़ाना चाहिये। अनुपान भी रोगीकी अवस्थाके अनुसार उष्णदुग्ध प्रभृति व्यवस्थेय है। कण्टकारीका रस यथेष्ट न मिलनेसे अष्टगुण जल डाल देते हैं।

कण्टकारीत्रय (सं० क्ली०) बृहती, गणिकारी और दुरालभा तीनों द्रव्यका समुदाय। सिद्धयोगमें गणिकारीके स्थानमें गोक्षुर लेते हैं। कण्टकारीत्रय तन्द्रा, प्रलाप, भ्रम, पित्त, ज्वर, और त्रिदोषको नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकारीद्रु (सं० पु०) विकङ्कत वृक्ष, बैंची।

कण्टकारीद्रुम, कण्टकारीद्रु देखो।

कण्टकारीद्वय (सं० क्ली०) बृहती और कण्टकारी उभय द्रव्य, छोटी और बड़ी दोनों कटेरी।

कण्टकारीफल (सं० क्ली०) कण्टकारीका फल, भटकटैयेकी गोली। यह तिक्त, कटुक, दीपन, लघु, रूक्ष, उष्ण और श्वास, कास, ज्वर, अनिल तथा कफरोगनाशक है। (भावप्रकाश)

कण्टकार्य (सं० पु०) कुटजवृक्ष, मकोय।

कण्टकार्या, कण्टकारी देखो।

कण्टकार्यादि (सं० पु०) पित्तश्लेष्मज ज्वरका एक कषाय, सफ़री और बलग़मकी बोखारका एक काढ़ा या जोशांदा। कण्टकारी, अमृता, ब्राह्मणयष्ठि, शुण्ठी, इन्द्रयव, दूरालभा, चिरायता, रक्तचन्दन, मुस्त, पटोल और कटुकी सब २ तोले आधसेर जलमें उबाल आध पाव रहनेसे उतार ले। फिर यह काढ़ा पित्तश्लेष्मज ज्वरके रोगीको छानकर पिलाना चाहिये। कण्टकार्यादि पाचन पीनेसे पित्त, श्लेष्मा, ज्वर, दाह, तृष्णा, अरुचि, वमि, कास और हृदय एवं पार्श्वकी वेदनाका निवारण होता है। (चक्रपाणिदत्तकृतसंग्रह)

कण्टकाल (सं० पु०) कण्टं कण्टकव्याप्तं फलं कालयति उत्पादयति, कण्ट कल-णिच्-अण्, कण्टकैः कण्टकाकीर्णफलैरलयति शोभते, कण्टक-अल-अच् वा। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ मन्दार, मदार।

कण्टकालिका (सं० स्त्री०) कण्टकारी, कटाई।

कण्टकालुक (सं० पु०) कण्टकैरलयति कण्टं काल-

यति वा, कण्टक अल्, कण्ट-कल् वा उकञ्। १ दुरालभा, जवासा। २ पासचुप, लालजवासेका पौदा।

कण्टकाशन (सं॰ पु॰) कण्टकं अश्नाति, कण्टक-अश-ल्यु। उष्ट्र, ऊंट।

कण्टकाष्ठील (सं॰ पु॰) कण्टकः अष्ठीलेव यस्य, बहुव्री॰। मत्स्यविशेष, एक मछली। अपर नाम कुलिश है। इसके हड्डियां बहुत होती हैं।

कण्टकिज (सं॰ त्रि॰) १ मत्स्यसे उत्पन्न, मछलीसे पैदा। २ मदनवृक्षसे उत्पन्न, मैनफलके पेड़से निकला हुआ।

कण्टकित (सं॰ त्रि॰) कण्टको रोमाञ्चो जातोऽस्य, कण्टक-इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। १ रोमाञ्चित, रोंगटे खड़े किये हुआ। २ कण्टकयुक्त, कांटेदार, कंटीला।

कण्टकिन्, कण्टकी देखो।

कण्टकिनी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकाः सन्त्यस्याः, कण्टक-इनि-ङीप्। १ वार्ताकी क्षुप, बैंगनका पौदा। २ कण्टकारिका, कटेरी। ३ रक्तझिण्टी, लाल कटसरैया। ४ मधुखर्जूरीवृक्ष, मीठी खजूरका पेड़।

कण्टकिफल (सं॰ पु॰) कण्टकि कण्टकयुक्तं फलं यस्य, बहुव्री॰। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ समष्ठीलक्षुप, कड़वे जमींकन्दका पौदा। ३ त्रपुषाफल, खीरा।

कण्टकिफला (सं॰ स्त्री॰) कर्कटी, ककड़ी।

कण्टकिल (सं॰ पु॰) कण्टकोऽस्त्यस्य, कण्टक अस्त्यर्थे इलच्। वंशविशेष, कंटीला बांस।

कण्टकिलता (सं॰ स्त्री॰) कण्टकिनी चासौ लता चेति, कर्मधा॰। १ कर्कटी, ककड़ीकी बेल। २ त्रपुषीलता, खीरेकी बेल।

कण्टकिला (सं॰ स्त्री॰) कण्टकिल देखो।

कण्टकी (सं॰ पु॰) कण्टकोऽस्यास्ति, कण्टक-इनि। १ मत्स्य, मछली। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ३ मदनवृक्ष, मैनफलका पेड़। ४ गोक्षुरक्षुप, गोखरूका झाड़। ५ वदरवृक्ष, बेरका पेड़। ६ वंशविशेष, एक कंटीला बांस। ७ विकङ्कतवृक्ष, बैंची। ८ विट्-खदिर। ९ विल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १० पारिभद्र वृक्ष। (स्त्री॰) कण्टक अर्श आदित्वात् अच्-ङीष्। ११ वार्ताकीविशेष, एक कंटीला भांटा। राजवल्लभके मतसे यह कटु, तिक्त, उष्णवीर्य, दोषजनक, रक्त एवं पित्तप्रकोपकर और कण्डु तथा कच्छुनाशक है। १२ शमीवृक्ष, सैमका पौदा। १३ वृहती, कटाई। (त्रि॰) १४ कण्टकयुक्त, कंटीला।

कण्टकीकारी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकोंमें कार्य करनेवाली, जो कांटोंमें काम करती हो।

कण्टकीद्रुम (सं॰ पु॰) कण्टकी चासौ द्रुमश्चेति पृषोदरादित्वात् दीर्घः, कर्मधा॰। १ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। २ वार्ताकीवृक्ष, बैंगनका पौदा।

कण्टकीपारिजात (सं॰ पु॰) पारिभद्रक, पांगरा।

कण्टकीफल, कण्टकिफल देखो।

कण्टकीफला, कण्टकिफला देखो।

कण्टकीलता, कण्टकिलता देखो।

कण्टकीशरपुङ्खा (सं॰ स्त्री॰) शरपुङ्खाभेद, किसी क़िस्मकी सरफोंका। यह कटु, उष्ण, और क्रमि एवं शूलघ्न होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकीशुक (सं॰ पु॰) पारिभद्रवृक्ष, पांगरा।

कण्टकुरण्ट (सं॰ पु॰) कण्टः कण्टकप्रधानः कुरण्टः, मध्यपदलो॰। १ पीतझिण्टी, पीली कटसरैया। २ झिण्टीक्षुप, कटसरैयेका पौदा।

कण्टकोद्धरण (सं॰ क्ली॰) १ कण्टकआदिका निवारण, निराई। २ क्लेशनिवारण, तकलीफ़ दूर करनेका काम। ३ चोर डाकुवोंका निकाला जाना।

कण्टतनु (सं॰ स्त्री॰) कण्टा कण्टकान्विता तनुर्यस्याः, मध्यपदलो॰। १ केतकीपुष्प, केवड़ेका फूल। २ वृहती, कटेरी।

कण्टदला (सं॰ स्त्री॰) कण्टं कण्टकाचितं दलं यस्याः, मध्यपदलो॰। १ केतकीवृक्ष, केवड़ेका पेड़। २ श्वेतकेतकी, सफेद केवड़ा।

कण्टपत्र (सं॰ पु॰) १ विकङ्कत वृक्ष, बैंची। २ शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टपत्रक (सं॰ पु॰) कण्टपत्र स्वार्थे कन्। शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टपत्रफला (सं॰ स्त्री॰) ब्रह्मदण्डी वृक्ष।

कण्टपत्रा, कण्टपत्रफला देखो।

कण्टपत्रिका (सं० स्त्री०) वार्ताकी वृक्ष, भंटेका पौदा।

कण्टपाद (सं० पु०) विकङ्कत वृक्ष, बैंचो।

कण्टपुङ्खा (सं० स्त्री०) कण्टकशरपुङ्खा, कंटीली शरफोंका।

कण्टपुङ्खिका, कण्टपुङ्खा देखो।

कण्टफल (सं० पु०) कण्टं कण्टकान्वितं फलम्, मध्यपदलो०। १ देवताड़, घूंघरबेल, सनैया। २ क्षुद्र गोक्षुरक, छोटी गोखरू। ३ पनस, कटहल। ४ धुस्तूरक, धतूरा। ५ लताकरञ्ज, किसी किस्मका करोंदा। ६ एरण्ड, रेड़। ७ नद्याम्र। ८ कुसुम्भ, कुसुम। ९ ब्रह्मदण्डी। बहुव्रीहि समास करनेसे उक्त फलोंके पेड़का भी बोध होता है।

कण्टफला (सं० स्त्री०) कण्टं कण्टकाचितं फलं यस्याः। १ देवदाली लता। २ लघुकारवेल्ली, छोटा करेला। ३ ब्रह्मदण्डी वृक्ष। ४ कर्कोटी, काकरोल, गुलककरा। ५ वृहती, कटाई।

कण्टल (सं० पु०) कण्टः अस्त्यस्य, कण्ट-अलच्; कण्टेन कण्टकेन अलति पर्याप्नोति, कण्ट-अल-अच् इति वा। वावल वृक्ष, बबूलका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—वावल, स्वर्णपुष्प और सूक्ष्मपुष्प है।

कण्टवल्लरी (सं० स्त्री०) श्रीवल्ली वृक्ष। इसे कोङ्कणमें बाघेंटी कहते हैं।

कण्टवल्ली (सं० स्त्री०) कण्टा कण्टकान्विता वल्ली, मध्यपदलो०। श्रीवल्लीवृक्ष, बाघेंटी।

कण्टवृक्ष (सं० पु०) तेजःफलवृक्ष, कायफलका पेड़।

कण्टसारका (सं० स्त्री०) श्वेतझिण्टीवृक्ष, सफेद कटसरैयेका पेड़।

कण्टाकारी (सं० पु०) १ विकङ्कत वृक्ष, बैंचीका पौदा। (स्त्री०) २ पनसवृक्ष, कटहल।

कण्टाकुष्माड (सं० पु०) कण्टकलताविशेष, एक कंटीली बेल।

कण्टाफल (सं० पु०) कटि भावे अप् कण्टा कण्टकोपलक्षितं फलं यस्य। १ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। २ पनसवृक्ष, कटहलका पौदा। ३ पनसफल, कटहल।

कण्टारवी (सं० स्त्री०) वासा, नीली नरगन्दी।

कण्टारिका (सं० स्त्री०) १ अग्निदीपनी वृक्ष। २ कण्टकारी, कटेरी।

कण्टार्गल (सं० पु०) कण्टार्तगला देखो।

कण्टार्तगला (सं० स्त्री०) नीलझिण्टी, काली कटसरैया।

कण्टार्हलता, कण्टार्तगला देखो।

कण्टाल (सं० पु०) १ मदनवृक्ष, मैनफलका पौदा। २ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

कण्टालिका, कण्टकारी देखो।

कण्टाली, कण्टकारी देखो।

कण्टालु (सं० पु०) कण्टाय कण्टकाय अलति पर्याप्नोति, कण्ट-अल्-उण्। १ वर्वूरक वृक्ष, बबूलका पेड़। २ वृहती, कटाई। ३ वंश, बांस। ४ वार्ताकी वृक्ष, बैंगनका पौदा। ५ कर्कटीभेद, किसी किस्मकी ककड़ी।

कण्टाह्वय (सं० पु०) कण्टं कण्टकं आह्वयते स्पर्धते, कण्ट-आ-ह्वे-क। पद्मकन्द, कमलगट्टा।

कण्टिका (सं० स्त्री०) अतिबला, ककैया, ककई।

कण्टी (सं० पु०) कण्टः कण्टकः अस्यास्ति, कण्ट-इनि। १ श्वेतापामार्ग, सफेद लटजीरा। २ गोक्षुर, गोखरू। ३ क्षुद्रगोक्षुर, छोटी गोखुरू। ४ खदिर, खैर।

कण्ठ (सं० पु०) कण्-ठ। कणेठः। उण् १।१०५। १ गलदेश, ग्रीवाके सम्मुखका भाग, हलक़, नरेटा, टेंटवा। सुश्रुतके मतानुसार कण्ठमें चार तरुणास्थि और मण्डला नामक तीन अस्थिसन्धि हैं। इसकी नाड़ीमें उभय पार्श्वपर चार धमनी रहती हैं। उनमें दोको लीला और दोको मन्या कहते हैं। किसी प्रकारसे उक्त धमनी विद्ध होनेपर मूकता एवं स्वरविकृति आती और रस-ग्रहणकी शक्ति चली जाती है। २ ग्रीवाका समुदाय अंश, गर्दनका सारा हिस्सा। अनेक स्थलमें कण्ठशब्द ग्रीवाके समस्त अंशका भी द्योतक है। कण्ठव्यतीत ग्रीवाके अन्यान्य अंशमें ४ कण्डरा, १ कूर्च, ९ अस्थि, ८ अस्थिसन्धि और ३६ स्नायु हैं। ग्रीवाके उभय पार्श्वमें पड़नेवाली ४ शिरावोंका नाम मातृका है। इन सिरावोंके विद्ध होनेसे सद्यः मृत्यु आता है। (सुश्रुत)

कण्ठदेशमें विशुद्ध नामक षोड़श स्वरयुक्त, धूम्रवर्ण और महाप्रभाविशिष्ट षोड़शदल पद्मका अवस्थान है।

"तदूर्ध्वं तु विशुद्धाख्यं दलषोडशपङ्कजम्।
स्वरैः षोड़शभिर्युक्तं धूम्रवर्णं महाप्रभम्।
विशुद्धपद्ममाख्यातमाकाशाख्यमहाद्भुतम्।" (गौतमतन्त्र)

३ ध्वनि, आवाज़। ४ सन्निधान, क़ुर्ब। ५ मदनवृक्ष, मैनफलका पेड़। ६ गर्भस्फुटन, रेहमकी शिगुफ़्तगी। यह शब्द उपमारूपसे शाखाविशिष्ट कलिकाका द्योतक है। ७ होमकुण्डके बाहर अङ्गलि-परिमित स्थान। ८ मुनि। ९ फेन। १० संस्कृतके एक प्राचीन वैयाकरण। चीरस्वामीने अपनी 'चीरतरङ्गिणी'में इनका वचन उद्धृत किया है।

कण्ठक (सं० पु०) कण्ठ-स्वार्थे कन्। १ कण्ठ, टेंटवा। २ शाक्यमुनिका अश्व।

कण्ठकुब्ज (सं० पु०) सन्निपातज्वरविशेष, एक बोखार। इसमें शिरोर्ति, कण्ठग्रह, दाह, मोह, कम्प, ज्वर, रक्तसमीरणार्ति, हनुग्रह, ताप, विलाप और मूर्छाका वेग बढ़ता है। कण्ठकुब्ज कष्टसाध्य है। (भावप्रकाश)

कण्ठकुब्जक, कण्ठकुब्ज देखो।

कण्ठकुब्जप्रतीकार (सं० पु०) कण्ठकुब्ज नामक सन्निपातज्वरकी चिकित्सा, तीनों माद्दाके बिगाड़से पैदा हुये बुखारकी एक इलाज।

कण्ठकूजन (सं० क्ली०) गलकूजन, गुलूकी गुटरगूं।

कण्ठकूणिका (सं० स्त्री०) कण्ठइव कण्ठध्वनिरिव कूणयति, कण्ठ-कुण-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। वीणा, बीन। कण्ठके स्वरकी भांति इसका स्वर भी अति सुस्पष्ट होता है।

कण्ठग (सं० त्रि०) कण्ठदेश पर्यन्त व्याप्त, गलेतक फैला हुआ।

कण्ठगत (सं० त्रि०) कण्ठे गतः, ७-तत्। १ कण्ठस्थ, गलेमें लगा हुआ। २ कण्ठागत, गलेतक पहुंचा हुआ।

कण्ठग्रह, कण्ठकुब्ज देखो।

कण्ठतः (सं० अव्य०) कण्ठसे, अलाहिदा लफ़्ज़ोंके साथ, साफ़-साफ़।

कण्ठतलासिका (सं० स्त्री०) कण्ठतले अश्वानां कण्ठदेशे आस्ते, कण्ठतल-आस-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। अश्ववन्धनरज्जु, घोड़ा बांधनेकी रस्सी या बन्धी।

कण्ठदघ्न (सं० त्रि०) कण्ठः परिमाणमस्य, कण्ठ-दघ्नच्। प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः। पा ५।२।३७। गलपरिमाण, गलेतक पहुंचनेवाला।

कण्ठधान (सं० पु०) १ जनपदविशेष, कोई मुल्क। २ तज्जनपदवासीय जातिविशेष, एक क़ौम। (वृहत्संहिता १४।२६)

कण्ठनाली (सं० क्ली०) कण्ठगता नाड़ी ह्रस्य लत्वम्, मध्यपदलो०। कण्ठास्थि स्थूल धमनी, गलेकी मोटी नली। भुक्त द्रव्य इसी नाड़ीकी राह नीचे चलता और शब्दादि भी इसी नाड़ीसे निकलता है।

कण्ठनीड़क (सं० पु०) कण्ठे प्रासादवृक्षादीनां शिरोभागे नीडं यस्य, कण्ठनीड़-कप्। चिल्लपक्षी, चील।

कण्ठनीलक (सं० पु०) कण्ठं धारकस्य कण्ठादिकमूर्ध्वदेहं नीलयति स्वशिखाकज्जलेन नीलवर्णं करोति, कण्ठ-नील-णिच्-ण्वुल्। १ उल्का, मसाल। २ चिल्ल पक्षी, चील।

कण्ठपाशक (सं० पु०) कण्ठे पाश इव कार्यात प्रकाशते, कण्ठ-पाश-कै-क। १ करिगलवेष्टनरज्जु, हाथीके गलेमें बंधनेवाली रस्सी। २ कण्ठपाश, अगाड़ी, सरक-फांसी।

कण्ठबन्ध (सं० पु०) कण्ठे बन्धः, ७-तत्। १ करिकण्ठ-बन्धनरज्जु, हाथीके गलेमें बांधी जानेवाली रस्सी। २ गलबन्धन, गलेकी डोर।

कण्ठभूषा (सं० स्त्री०) कण्ठस्य भूषा अलङ्कारः, ६-तत्। गलदेशका अलङ्कार, गलेका ज़ेवर। पट्टे, हलके, तौक़, गण्डे, कण्ठी और हंसलीको कण्ठभूषा कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय ग्रैवेय, ग्रैव, रुचक और निष्क है।

कण्ठमणि (सं० पु०) कण्ठे धार्यो मणिः, मध्यपदलो०। गलदेशमें धारणोपयोगी मणि, गलेमें पहना जानेवाला जवाहर। संस्कृत पर्याय—काकल है।

कण्ठमाला (सं० स्त्री०) कण्ठे धार्या माला हारविशेषः, मध्यपदलो०। कण्ठदेशमें धारणीय रत्न, गलेमें पहना जानेवाला जवाहर।

कण्ठरोग (सं० पु०) कण्ठगतो रोगः, मध्यपदलो०। कण्ठनालीके अभ्यन्तरमें उत्पन्न सकल रोग, गलेकी नलीमें होनेवाली सब बीमारी। महर्षि सुश्रुतके मतसे कण्ठनालीमें अष्टादश प्रकारका रोग उत्पन्न होता है—पांच प्रकारकी रोहिणी, शालुकण्ठक, अधिजिह्व, वलय, वलास, एकवृन्द, शतघ्नी, शिलाघ, गलविद्रधि, गलौघ, स्वरघ्न, मांसतान और विदारी।

रोहिणी—दूषित वायु, पित्त, कफ और रक्त गलदेशस्थ मांसको बिगाड़ मांसाङ्कुर उत्पादन करता है। इससे कण्ठ खुलने नहीं पाता और शीघ्र प्राण छूट जाता है। इसी रोगको रोहिणी कहते हैं। वायुजन्य रोहिणीरोगमें जिह्वाकी चारो ओर अत्यन्त वेदनायुक्त कण्ठरोधक मांसाङ्कुर उत्पन्न हो जाता और रोगी स्तम्भत्व प्रभृति वातजनित उपद्रवसमूहसे दुःख पाता है। पित्तजन्य रोहिणी रोगमें अतिशय दाह एवं पाकयुक्त मांसाङ्कुर शीघ्र ही निकलता है। विशेषतः रोगीको अत्यन्त वेगवान् ज्वर धर दबाता है। कफजन्य रोहिणी रोगमें मांसाङ्कुर गुरु एवं स्थिर रहता और विलम्बसे पकता है। कण्ठका स्रोत रुक जाता है। सान्निपातिक रोहिणी रोगमें उक्त तीनों दोषोंका लक्षण झलकता और मांसका अङ्कुर गम्भीर भावसे पकता है। यह रोग चिकित्सासाध्य नहीं होता। रक्तजन्य रोहिणी रोगमें जिह्वामूल स्फोटक द्वारा व्याप्त हो जाता और पित्तका सकल लक्षण देखनेमें आता है। भावमिश्रके मतानुसार त्रिदोषिक रोहिणी रोगमें रोगीका जीवन सद्य नष्ट होता है। कफज रोहिणी तीन रात्रि, पैत्तिक रोहिणी पांच रात्रि और वातज रोहिणी सात रात्रिके मध्य रोगीका जीवन हरण कर लेती हैं। साध्य रोहिणी रोगमें रक्तमोक्षण, वमन, धूमपान, गण्डूषधारण और नस्य हितकारक है। वातज रोहिणी रोगमें रक्त निकलवा सैन्धव द्वारा प्रतिसारण और ईषत् उष्ण स्नेह द्वारा पुनः पुनः गण्डूषधारण कराना चाहिये। पित्तज एवं रक्तज रोहिणीमें रक्तमोक्षण कर प्रियङ्गुचूर्ण, शर्करा तथा मधु एकमें मिला रगड़ते और द्राक्षा एवं फालसेके क्वाथसे कुल्ला करते हैं। कफज रोहिणीरोगमें बदरीफल, शुण्ठी, पिप्पली और मरिचके चूर्णसे प्रतिसारण करना चाहिये।

कण्ठशालूक—कुपित कफ द्वारा बेरकी गुठलीकी भांति काष्ठवत् वा शूकवत् वेदनाजनक खर एवं स्थिर ग्रन्थि पड़नेसे कण्ठशालूक समझा जाता है। यह रोग शस्त्रसाध्य है। कण्ठशालूकमें रक्तमोक्षण कर तुण्डिकेरी रोगकी भांति चिकित्सा चलाना चाहिये। स्निग्ध यवान्न अल्प परिमाण एकवार खिलाया जाता है।

अधिजिह्व—रक्तमिश्रित कफसे जिह्वापर जिह्वाग्र-जैसा जो शोथ उठता, उसीका नाम अधिजिह्व पड़ता है। शोथ पकनेसे यह रोग असाध्य हो जाता है।

वलय—श्लेष्मासे गलनालीपर जो दीर्घ एवं उन्नत शोथ उठता और जिससे भुक्त द्रव्यका पथ रुकता, उसीका नाम वलय पड़ता है। यह रोग असाध्य है।

वलास—श्लेष्मा और वायु द्वारा गलदेशमें शोथ उठने और मर्मच्छेदी दारुण वेदना पड़नेसे वलास रोग समझा जाता है। यह रोग भी साध्य नहीं।

एकवृन्द—गलदेशका गोल, उन्नत, दाह एवं कण्डु-विशिष्ट और भार तथा कोमल बोध होनेवाला शोथ एकवृन्द कहाता है। इस रोगमें रक्त निकाल विरेचनादि द्वारा शोधन करना चाहिये।

रक्तपित्तजन्य, गोल एवं अतिशय उन्नत शोथ उठनेसे रोगीको अत्यन्त ज्वर आता और दाह सताता है। इसी रोगको वृन्द कहते हैं। फिर यही अत्यन्त वेदनायुक्त रहनेसे वातज समझा जाता है।

शतघ्नी—गलनालीमें मोटी वत्ती-जैसा, कठिन, कण्ठरोधकारी, वातजादि भेदसे नानाप्रकार वेदनायुक्त अथच मांसाङ्कुर द्वारा अधिक व्याप्त जो शोथ उठता और जिसमें नानाप्रकार यातनाका वेग बढ़ता, उसीका नाम त्रिदोषज शतघ्नी पड़ता है। इस रोगमें रोगी प्रायः मर जाता है।

शिलाघ—जिस रोगमें दूषित कफ एवं रक्तसे कण्ठके भीतर आंवलेकी गुठली-जैसा स्थिर तथा अल्प वेदना-युक्त ग्रन्थि उठता और भुक्तद्रव्य संलग्न मालूम पड़ता,

उसीको संस्कृतज्ञ गिलाघ कहता है। यह रोग यत्न-साध्य है। सुश्रुतने इस रोगका नाम 'गिलायु' लिखा है।

गलविद्रधि—समस्त गलदेशका फूलना और उसमें नानाप्रकार यातना होना गलविद्रधि कहाता है। यह रोग यदि मर्मस्थानमें न रहे और अच्छीतरह पक उठे, तो छेदन कर देना चाहिये।

गलौघ—कफ एवं रक्तसे गलदेश अत्यन्त फूल उठनेपर अन्ननाली वा जलप्रवेशका पथ रुकना, वायुकी गतिका बिगड़ना और तीव्र ज्वरका चढ़ना ही गलौघ रोग है।

स्वरघ्न—रोगीको मूर्छा आने, सर्वदा श्वास जाने, स्वरभङ्ग पाने और कण्ठ सुखानेसे स्वरघ्न रोग समझा जाता है। रोगी कुछ पहचान नहीं सकता और श्वासका पथ रुकता है।

मांसतान—गलदेशका शोथ क्रमशः बढ़ते बढ़ते कण्ठनालीको रुंध लेनेसे मांसतान रोग होता है। इस रोगमें शोथ विस्तृत, अति क्लेशदायक और लम्बमान रहता है। इसमें रोगी बच नहीं सकता।

विदारी—पित्तके प्रकोपसे गलदेश एवं मुखमें ताम्र-वर्ण तथा दाह और वेदनायुक्त जो शोथ उठता, उसीका नाम विदारी पड़ता है। विदारीसे सड़ागला मांस गिर जाया करता है। रोगी जिस पार्श्वपर अधिक सोता, उसीमें पार्श्वमें यह रोग होता है।

साधारणतः कण्ठरोगमात्रमें दारुहरिद्रा, निम्बत्वक्, शालत्वक् एवं इन्द्रयव सकल द्रव्योंका क्वाथ अथवा मधु मिला हरीतकीका कषाय पीना चाहिये। १—कटुकी, अतिविषा, देवदारु, आकनादि, मुस्तक और इन्द्रयव सकल द्रव्यका क्वाथ गोमूत्रके साथ पान करते हैं। २—पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, सर्जिक्षार और यवक्षार सकल द्रव्य समभागमें चूर्ण कर व्यवहारमें लाना योग्य है। ३—मनःशिला, यवक्षार, हरिताल, सैन्धव और दारुहरिद्रा सकलका चूर्ण मधु तथा घृतके साथ मुखमें धारण करनेसे मुखरोग एवं गलरोग विनष्ट होता है। ४—यवक्षार, गजपिप्पली, आकनादि, रसाञ्जन, देवदारु, हरिद्रा और पिप्पली सकल द्रव्य कूटपीस मधुके साथ गुड़िका बना डाले। यह गुड़िका मुखमें धारण करनेसे गलरोग छूट जाता है। (चक्रदत्त)

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे कण्ठरोग नाना-प्रकार होता है। उसमें सामान्य कण्ठशोथ (Simple sore throat), क्षतयुक्त कण्ठशोथ (Ulcerated sore-throat), गलग्रन्थिप्रदाह (Quinsy or Tonsilitis), साङ्घातिक कण्ठशोथ (Malignant sore-throat), और सान्निपातिक कण्ठरोग (Diphtheria) प्रधान है।

कण्ठशोथ उठनेसे कण्ठमें प्रदाह, निगलनेमें कष्ट-बोध, श्वास छोड़नेमें दुःख, कण्ठके स्वरका परिवर्तन और ज्वर होता है। प्रथम बाधा न देनेसे यह रोग क्रमशः बढ़ जाता है। जिह्वा फूलती और बिगड़ती है। गलका ग्रन्थि रक्तवर्ण रहता और गलदेशके पीछे छोटा-छोटा पीला फोड़ा पड़ता है। तृष्णा और नाड़ीकी गति बढ़ती है। कभी कभी गाल फूल कर लाल हो जाता है। चक्षु जलने लगते हैं। रोग बढ़नेपर चित्तविभ्रम होता है। रोगवृद्धिके साथ ही साथ गलग्रन्थि भी बढ़ता और उसमें पूय पड़ता है। स्फोटक फूट जानेसे स्वास्थ्यबोध होता है। कभी कभी फूटने पीछे ग्रन्थि फिर पूर्ववत् फूल उठता है। इसकी चिकित्सा साथ ही साथ होना चाहिये। कारण चिकित्सा न करनेसे यह रोग साङ्घातिक पड़ जाता है। ऐसे स्थलमें कठिन ज्वर आता है।

सामान्य कण्ठशोथमें होमिओपाथिक चिकित्सा विशेष उपकारी है। भीजने पीछे शीत लगनेसे जो सामान्य कण्ठशोथ हो जाता, उसका औषध डल-कामरा है। वायुके परिवर्तनसे होनेवाले कण्ठ-शोथपर गेलसेमिनम् चलता है। ज्वरके साथ शीत लगने और कण्ठशोथ उठनेसे एकोनाइट दिया जाता है। कण्ठवेदना, कण्ठशुष्कता एवं शिरःपीड़ा बढ़ने और मुख लाल पड़नेसे बेलोडोना खिलाते हैं। कण्ठ खिंचने, निगलनेमें कष्ट मालूम पड़ने और कफ निकलते रहनेसे माकुरियास उपकारी है। क्षतयुक्त कण्ठशोथमें प्रथम बेलोडोना बताते हैं। लघु, पांशुवर्ण अथच अनिष्टदायक क्षत होनेसे एसिड नाइट्रिक चलता है। दुर्गन्ध और धातुदौर्बल्य

बढ़नेपर बापटेसिया तथा कार्बो-वेजिटेबिलिस दिया जाता है।

गलग्रन्थिप्रदाह (Tonsilitis)—गलदेशमें किसी स्थानपर प्रदाह उठनेसे यह रोग होता है। यह रोग भी नाना प्रकारका है। किन्तु स्तन्यपायी शिशुसन्तानको गलग्रन्थिप्रदाह अधिक नहीं सताता। पांचसे दश वर्ष तक इस रोगका प्राबल्य रहता है। फिर पचास वर्षकी अवस्थामें भी गलग्रन्थि-प्रदाह उठ खड़ा होता है। यह रोग सकल ऋतुमें लगता और शीतकालमें विशेष प्रबल पड़ता है। शीतल वा हिम एवं आर्द्र वा दूषित वायुके सेवन और शीत पैत्तिक प्रभृति दोषके कारण गलग्रन्थिप्रदाह उत्पन्न होता है। यह रोग उसी मनुष्यको प्रायः आक्रमण करता, जो देखनेमें अच्छा लगता है। गण्डमाला रोग अच्छा होने पीछे भी गलग्रन्थिप्रदाह उठा करता है। यह रोग लगनेसे पहले रोगी विशेष स्वस्थ अवस्थामें रहता, कभी कभी उदरमें गड़बड़ पड़ता है। गलग्रन्थिप्रदाहका लक्षण शीतबोध, कम्पन, चर्ममें उत्ताप, उत्तेजित नाड़ी, तृष्णा, शिरःपीड़ा अथवा क्षुधामान्द्य, असुखबोध और प्रत्यङ्गमें व्यथा वा शोथ है। घूंट उतारनेमें कष्ट मालूम देता, मानो गलदेशको कोई दबा लेता है। घण्टे दो घण्टेमें सामान्यसे अति दारुण यन्त्रणा, प्रदाह और निगलनेकी इच्छाका उद्गमन होता है। घूंट उतारनेमें कभी कभी इतना कष्ट पड़ता, कि आक्षेप पर्यन्त आ लगता है। इस रोगमें खांसीका वेग बढ़ता और कफ निकलता है। कण्ठमें दोषका सञ्चार होता है। श्वासप्रश्वास कष्टसे चलता है। कण्ठ घरघराने लगता है। कभी कभी रोग कठिन होनेसे बिलकुल स्वर रुक जाता है। किसी किसी स्थानपर गलेका शोथ अत्यन्त वृद्धिको प्राप्त होता है। निश्वास छोड़ते समय वेदना मालूम पड़ती, कभी कभी सांसतक रुकती है। यह रोग अति पीड़ादायक है। सचराचर गलग्रन्थिप्रदाह सातसे चौदह दिनतक रहता है।

शोथ काट न डालनेसे बात कहते, वमि करते या खांसते समय फट जाता है। सोते समय भी वह फटा करता, किन्तु उस अवस्थामें रोगीको अधिक कष्ट मालूम नहीं पड़ता। नींद टूटनेसे स्वास्थ्य बोध होता है। यह रोग पांच सात दिनमें मिटता है। श्वास रुकनेसे मृत्युका भय रहता, नहीं तो केवल कष्ट पड़ता है।

चिकित्सा—प्रथम अवस्थापर किसी पात्रमें उष्ण जल डाल थोड़ा कपूर और आध छटांक विनिगार छोड़ देते हैं। फिर सांसको एकाएक ऊपर चढ़ा इसका उत्ताप ग्रहण किया जाता है। धूम लगनेसे किसी कारण यदि अधिक खांसी आये, तो शयनकाल मृदु विरेचक और प्रातःकाल भेदक औषध व्यवहारमें लाये। उष्ण जलमें लवण और राजसर्षप मिला रोगीके हाथ-पैर डुबाकर रखना चाहिये। पहले यह रोग होनेसे चिकित्सक फूली काट डालते थे। फिर कोई तेज़ाबसे उसे उड़ा ही देता था। किन्तु उसमें भी अनिष्ट समझ कोई कोई अस्त्रचिकित्सा द्वारा रक्त निःसारण किया करते हैं। दुर्बल, मन्दभोजी एवं अस्वस्थ व्यक्ति यह रोग लगनेसे बहुत दुबला हो जाता है। ऐसी अवस्थामें रक्त निकालना न चाहिये। सहज उपायसे चिकित्सा करना उचित है। २ ड्राम नमकका तेज़ाब २ ड्राम फूके जलमें मिला रुईसे सावधानतापर प्रलेप लगाते हैं। दिनको डिकाक्सन अव सिनकोना, टिञ्चर सिनकोना और एसिटेट अव अमोनिया प्रयोग करना चाहिये। इस औषधको कियत्‌काल कण्ठमें दबा पिछे निगलना कहा है। कोई कोई इस रोगमें पदतल छेद रक्त निकाला करता है।

होमिओपाथिक मतसे इस रोगपर बेलाडोना, मार्कुरियास, हेपार, आर्सेनिक, साइलेसिया प्रभृति प्रयोग करते हैं।

दुग्धपोष्य शिशुवोंके एकप्रकारका जो कण्ठशोथ होता, उसे अंगरेजीमें थ्रश (Thrush) और हिन्दीमें मुंहाना या मुंहावां कहते हैं। इस रोगसे मुंहमें एक प्रकार कुकुरमुत्ता उत्पन्न हो जाता है। मुखमें पहले छोटे-छोटे सफ़ेद दाग़ उठते, जो बांसकी गांठ जैसे देख पड़ते हैं। रोगीको ज्वरबोध होता है। तन्द्रा, उदराध्मान, शूलव्यथा, अजीर्णरोग प्रभृति लक्षण झलकने लगते हैं। शिशु स्तन्यपान करनेमें

अत्यन्त कष्ट पाता है। इस रोगमें मधु पिलाना चाहिये। २ भाग कार्बनेट अव सोडा और १ भाग ग्रे-पाउडर मिला दो ग्रेनसे पांच ग्रेनतक प्रत्यह तीन-बार खिलाते हैं। लाइमवाटर, विस्मथ, चक इत्यादि भी उपकारक है।

होमिओपाथिक मतमें मुलायम रुईसे बोराक्सको बाहर लगाना चाहिये। अधिक परिमाणसे कफ निकलने या क्षत पड़ने पर मारकुरियास्, पीछे सलफर दिन और रातको खिलाते हैं। अधिक दूध गिरने वा अम्ल लगनेसे पलसाटिला या नक्स देना चाहिये। रोग कठिन हो जानेपर छह या बारह घण्टेके अन्तर प्रथम आर्सेनिक, पीछे एसिड नाइट्रिक प्रयोग करना चाहिये।

सांघातिक कण्ठशोथ (विदारी)—यह रोग सचराचर शरत्कालके प्रारम्भमें देख पड़ता और बहुव्यापी एवं संक्रामक ठहरता है। इसका लक्षण शीत, कम्पन, ताप, दौर्बल्य, हृदयमें वेदना, वमन और भेद है। चक्षु जलमय और ज्वालायुक्त हो जाते हैं। ओष्ठ अधिक रक्तवर्ण देख पड़ते हैं। नाड़ी दुर्बल लगती है। जिह्वा श्वेत पड़ जाती है। निगलनेमें अति कष्ट बोध होता है। कण्ठ फूलकर लाल पड़ जाता है। कण्ठपर नाना आकारमें नालीके क्षत उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी यह नाली ऊपर नासिका और नीचे नली पर्यन्त फैल जाती है। पहलेसे शरीर अवसन्न लगता है। रोगी मध्य मध्य अण्डबण्ड बक देता है। निश्वासमें दुष्ट गन्ध आता और रोगीके हृदयमें भी दुर्गन्ध छा जाता है। गलितावस्था उपस्थित होनेपर कम्पन बढ़ता, नाड़ीका वेग दुर्बल पड़ता, मुख नीचेको झुकता, कठिन भेद लगता और नासिका तथा मुखसे रक्त गिरता है। उक्त लक्षण झलकनेसे रोग साङ्घातिक समझा जाता है।

चिकित्सा—इस रोगमें पहले ही अधिक ज्वर चढ़ने पर दो घण्टेके अन्तरसे एकोनाइट देना चाहिये। उसके बाद बेलेडोना चलता है। मुखमें विस्वाद एवं दुर्गन्ध रहने, गाढ़ कफ गिरने, शीत लगने, कम्पन बढ़ने, बीच बीच शरीर उष्ण पड़ने और रात्रिको स्वेद निकलनेसे दो घण्टेके अन्तरसे मार्कुरियास् खिलाते हैं। रोग अत्यन्त कठिन होनेपर रसको व्यवहार करते हैं। सिवा इसके सलफर, साइलिसिया, आर्सेनिक, एसिड नाइट्रिक प्रभृतिको भी प्रयोगमें ला सकते हैं।

त्वक्छादन (Diphtheria)—कण्ठके मध्य श्लेष्माकी झिल्लीपर प्रदाह-जनित कृत्रिम झिल्ली (False membrane) पड़ जाती है। इस कण्ठरोगको डाक्टर डिफ्थिरिया कहते हैं। (अपर नाम Cynanche Maligna वा Angina Maligna है) यह रोग १ वर्षसे ८ वर्ष वयस पर्यन्त प्राय: शिशुवोंको अधिक लग जाता है। बाह्य वायु और शरीरस्थ रक्तके दोषसे यह रोग उत्पन्न होता है। कृत्रिम झिल्ली प्रथम गलग्रन्थि वा तालुमें पड़ती, फिर कभी तालुमूल और कभी श्वासनाली (Larynx and Trachea) पर्यन्त बढ़ चलती है। श्वासनालीमें यह रोग उत्पन्न होनेसे मृत्यु रोके नहीं रुकता।

लक्षण—कण्ठके भीतर श्लैष्मिक झिल्ली लाल और फूली देखाती है। सहज पीड़ामें ज्वर आता, गलेका दु:ख बढ़ जाता, ग्रीवाका ग्रन्थि कुछ सूजा देखाता और घूंट निगलनेमें रोगी कष्ट पाता है। फिर स्वर टूट जाता, नासाके रन्ध्रमें शब्द समाता और अल्प अल्प श्वास भी आता है। हृत्पिण्ड असार रहनेसे सहज ही मृत्यु दौड़ सकता है। कण्ठके स्थानविशेष पर आक्रमण होनेसे रोगका लक्षण भी बदल जाता है।

१ नासात्वक्छादन (Nasal Diphtheria)—किसी किसी चिकित्सकके मतमें यह रोग नासासे निकल गलदेश पर्यन्त फैलता, किन्तु सचराचर गलदेशसे चल नासिकातक पहुंचता है। इस रोगमें श्वासरोधको सम्भावना रहती और प्राय: मृत्युकी दौड़ लगा करती है।

२ त्वक्छादनिक काश (Diphtheric Croup)—इस रोगमें धड़ाधड़ काशका लक्षण झलकता, जो साङ्घातिक निकलता है।

३ वहिस्त्वक्छादन (Cutanedus Diphtheria)—सचराचर कण्ठरोग होनेपर त्वकके जिस स्थानमें क्षत

रहता, उसपर-कृत्रिम झिल्लीका परदा चढ़ते देख पड़ता है। यह रोग सहज होनेपर आठ दिनसे अधिक नहीं चलता, कठिन होनेसे एक पक्ष रहता है। श्वास-प्रश्वासका पथ रुक जानेसे दो दिनमें ही मृत्यु आ पड़ती है।

चिकित्सा—२ ड्राम कास्टिक ६ ड्राम चरित जलमें घोल प्रातः और सायंकाल रुईसे गलेके भीतर लगाना चाहिये। कोई कोई ष्ट्रङ्ग हाइड्रोक्लोरिक एसिड १० गुण जलमें मिला प्रलेप चढ़ानेको कहता है। शिशुको कुल्ला करनेका ज्ञान होनेसे १ ड्राम टिञ्चर फेरिमिउरियस ४ औंस जलमें मिला व्यवहार करना चाहिये। ज्वरके समय १ बूंद टिञ्चर एकोनाइट १ औंस जलमें डाल आध-आध ड्राम दो-दो घण्टे बाद पिलाते हैं।

होमिओपाथी—अधिक ज्वर, अवसन्नता, अङ्गप्रत्यङ्गमें व्यथा और शिरःपीड़ा होनेसे घण्टे या आध घण्टेके अन्तर एकोनाइट दिया जाता है। कण्ठ एवं गलग्रन्थि घोर रक्तवर्ण लगने, ग्रोथको चारो ओर फुनसी पड़ने, गलेमें स्वेद निकलने और गन्धयुक्त कफ बढ़नेसे मार्क्युरियास घण्टे-घण्टे पर चलता है। सिवा इसके आर्सेनिक हाइड्रेस्टिस प्रयोग करते हैं।

कण्ठलग्न (सं० त्रि०) १ कण्ठसे बद्ध, गलेमें बंधा हुआ। २ कण्ठसे लगा हुआ, जो गलेसे चिपटा हो।

कण्ठलता (सं० स्त्री०) १ कण्ठभूषण, गलेका गहना। २ अश्वबन्धन, अगाड़ी, घोड़ा बांधनेको रस्सी।

कण्ठवर्ती (सं० त्रि०) कण्ठगत, गलेको घेरे हुआ।

कण्ठशालुक (सं० पु०) कण्ठगत मुखरोगविशेष, गलेको एक बीमारी। इस रोगमें कफके कोपसे कण्ठमध्य शालुक-कन्दवत् बदराम्थिको आकृति खरस्पर्श एवं कठिन ग्रन्थि पड़ जाता है। इससे कण्टकशूकवत् वेदना बढ़ती है। कण्ठशालुक रोग अस्त्रसाध्य है। (राजनिघण्टु)

कण्ठशुण्डी (सं० स्त्री०) तालुगत मुखरोगविशेष, मुंहके तालूको एक बीमारी। दूषित कफ और रक्त तालुमूलमें दीर्घाकृति अथच वायुपूर्ण भिस्ति-जैसा जो शोथ उठाता, वही रोग कण्ठशुण्डी कहाता है। इस रोगमें पिपासा, कास और श्वासका वेग बढ़ता है। इसका नामान्तर गलशुण्डी और तालुशुण्डी है।

चिकित्सा—१ कण्ठशुण्डी रोगमें शोथको छेदन कर त्रिकटु, वच, मधु एवं सैन्धव अथवा कुष्ठ, मरिच, सैन्धवलवण, पिप्पली, आकनादि तथा गुगगुलु सकल द्रव्य द्वारा घिस देना चाहिये। उक्त औषध घृतके साथ घर्षण और नासिकाके समोपवर्ती स्थानसे रक्त मोचण करते हैं। ३ हरसिंगार वृक्षका मूल चबानेसे कण्ठशुण्डी रोग विनष्ट होता है। अतिविषा, आकनादि, रास्ना, कटुकी और निम्बत्वक् सकल द्रव्यका क्वाथ बना कुल्ला करनेसे कण्ठशुण्डी कट जाती है। (चक्रदत्त)

कण्ठशुद्धि (सं० स्त्री०) गलका कफादिसे अलिप्तत्व, गलेको सफाई।

कण्ठशूक, कण्ठशालुक देखो।

कण्ठशोष (सं० पु०) १ पित्तजन्य रोगविशेष, सफरेसे पैदा होनेवाली एक बीमारी। २ गलको शुष्कता, गलेको खुश्की। ३ निरर्थक प्रत्यादेश, बेफ़ायदा रोक-टाक।

कण्ठसज्जन (सं० क्ली०) कण्ठे सज्जनम्, ७-तत्। कण्ठसे लग्न होकर आलिङ्गन, गलेसे मिलकर चिपटाचिपटी।

कण्ठसूत्र (सं० क्ली०) कण्ठे सूत्र इव, उपमि०। १ माला, हार। २ आलिङ्गन विशेष, किसी क़िस्मको हमागोशी। "यः कुर्वते वचसि वल्लभस्य स्तनाभिघातं निविड़ोपघातात्। परिश्रमार्तः सनकैर्विदग्धास्तत्कण्ठसूत्रं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः॥" (रतिशास्त्र)

कण्ठस्थः (सं० त्रि०) कण्ठे तिष्ठति, कण्ठ-स्था-क। १ मुखस्थ, ज़बानी, जो अच्छीतरह याद किया गया हो। २ कण्ठलग्न, गलेसे लगा हुआ। ३ गलदेश पर रखा हुआ, जो गलेपर हो। ४ कण्ठस्थानीय, गलेसे निकलनेवाला।

कण्ठस्थली (सं० स्त्री०) चन्द्रद्वीपके अन्तर्गत एक प्राचीन महाग्राम। (भविष्य० ब्रह्मखण्ड १३।१६)

कण्ठा, कंठा देखो।

कण्ठागत (सं० त्रि०) कण्ठे आगतः, ७-तत्।

बहिर्गमनोन्मुख, कण्ठमें उपस्थित, बाहर निकल जानेवाला, जो गलमें आकर लग गया हो।

कण्ठाग्नि (सं० पु०) कण्ठे कण्ठाभ्यन्तरे अग्निः पाचकाग्निः यस्य, बहुव्री०। पक्षी, चिड़िया। पक्षीका आहार गलाधःकरणसे ही परिपाक हो जाता है।

कण्ठाभरण (सं० क्ली०) कण्ठे धार्यं आभरणम्, मध्यपदलो०। १ गलदेशका अलङ्कार, गलेका ज़ेवर, हार, माला। २ सरस्वतीकण्ठाभरणका संक्षिप्त नाम।

कण्ठार—स्वर्गभूमिके उत्तरका एक महाग्राम। दुर्गाने दुर्गासुरका मस्तक काट पादके अङ्गुष्ठसे उसका कण्ठ इसी स्थानपर डाल दिया था। दुर्गासुरका कण्ठ यहां गिरनेसे ही इस स्थानका नाम कण्ठार पड़ा। कलिकालमें यहां भूमिहार और राजपूत जाति रहती है। राजपूतोंसे यवनोंका युद्ध होगा। कण्ठारवासी अपने ग्राममें आग लगा पलायन करेंगे।

(भविष्य० ब्रह्मखण्ड ५६।३९-४१)

कण्ठाल (सं० पु०) कठि-आलच्। १ शूरण, जमींकन्द। २ युद्ध, लड़ाई। ३ नौका, नाव। ४ खन्ता, खुरपी। ५ उष्ट्र, ऊंट। ६ गुण, रस्सी। ७ वृक्षविशेष, एक पेड़।

कण्ठालङ्कार (सं० पु०) कास, एक घास।

कण्ठाला (सं० स्त्री०) कण्ठाल-टाप्। १ जालगोणिका, फांसकी रस्सी। २ ब्राह्मणयष्टिका। ३ द्रोणिविशेष, मटकी।

कण्ठालु (सं० स्त्री०) कण्ठ-पुङ्गा, गलफोंका। २ त्रिपर्णी नामक कन्दशाक।

कण्ठावसक्त (सं० त्रि०) कण्ठसे चिपटा हुआ, जो गले लगा रहा हो।

कण्ठिका (सं० स्त्री०) कण्ठो भूष्यतया अस्त्यस्याः, कण्ठ-ठन्-टाप्। कण्ठाभरणविशेष, कण्ठी, गलेमें पहननेकी एकलड़ी छोटी माला।

कण्ठी (सं० स्त्री०) कण्ठ-अल्पार्थे ङीप्। १ गलदेश, गुलू। २ अश्वकण्ठ-वेष्टनरज्जु, अगाड़ी, घोड़ेके गलेमें बंधनेवाली रस्सी। (त्रि०) ३ गलसम्बन्धीय, गलेसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ४ कलाय, मटर।

कण्ठीरव (सं० पु०) कण्ठे रवो यस्य, बहुव्री०। १ सिंह, शेर। २ मत्तहस्ती, मतवाला हाथी। ३ कपोत, कबूतर।

कण्ठीरवी (सं० स्त्री०) कण्ठीरव-ङीष्। वासक वृक्ष, अड़ूसेका पेड़।

कण्ठील (सं० पु०) क्रमेलक, ऊंट।

कण्ठीला (सं० स्त्री०) पात्रविशेष, मटकी, मथनेका बरतन।

कण्ठेकाल (सं० पु०) कण्ठे कालः विषपानजो नीलिमा यस्य, अलुक् समा०। महादेव।

कण्ठेश्वरतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थविशेष, एक पवित्र स्थान।

कण्ठोक्त (सं० क्ली०) अपनी साक्षी, ज़ाती शहादत।

कण्ठ्य (सं० त्रि०) कण्ठे भवः, कण्ठ शरीरावयवत्वात् यत्। यतोऽनावः। पा ६।१।२१३। १ गलदेशजात, हलकसे निकलनेवाला। २ कण्ठोच्चारित, हलकसे बोला जानेवाला। अ, आ, क, ख, ग, घ और ह अक्षर कण्ठसे उच्चारण किया जाता है। ३ कण्ठस्वरके उपकारी, गलेकी आवाज़को फ़ायदा पहुंचानेवाला।

"यवकोलकुलत्थानां यूषः कण्ठ्योऽनिलापहा।" (सुश्रुत)

कण्ठ्यवर्ग (सं० पु०) कण्ठके लिये उपकारी कुछ औषध, हलककी फ़ायदा पहुंचानेवाली जड़ीबूटियोंका ज़खीरा। अनन्तमूल, इक्षुमूल, मधुक, पिप्पली, द्राक्षा, विदारी, कैटर्य, हंसपादी, बृहती और कण्टकारिकाके समुदायको कण्ठ्यवर्ग कहते हैं।

कण्ठ्यवर्ण (सं० पु०) कण्ठ्यश्चासौ वर्णश्चेति, कर्मधा०। कण्ठसे उच्चारण किया जानेवाला वर्ण, जो हर्फ़ हलकसे निकलता हो। कण्ठ्य देखो।

कण्ठ्यस्वर (सं० पु०) कण्ठका स्वर, जो हर्फ़-इल्लत हलकसे निकलता हो। केवल अकार और आकार ही कण्ठ्यस्वर होता है।

कण्डक (सं० पु०) कासामयविशेष, खांसीकी एक बीमारी।

कण्डन (सं० क्ली०) कडि भावे ल्युट् इदित्वात् नुम्। १ निस्तुषीकरण, छराई, कुटाई। २ तुष, भूसी, अनाजका उतरा हुआ छिलका।

"क्रियां कुर्यात् भिषक् पश्चात् शालीतण्डुलकण्डनैः।" (सुश्रुत)

कण्डनी (सं० स्त्री०) कण्ड्यते तुषादिरपनीयते अनया, कडि करणे ल्युट् इदित्वात् नुम्। उदूखल, ओखली।

कण्डरव्रण (सं० पु०) व्रणरोग, खुजली, खाज।

कण्डरा (सं० स्त्री०) कडि-अरन् इदित्वात् नुम् टाप् च। १ महानाड़ी, बड़ी नस। २ महास्नायु, मोटी रग। सर्वाङ्गमें १६ कण्डरा होती हैं। उनसे हस्त, पद, ग्रीवा और पृष्ठदेशमें चार-चार रहती हैं। हस्त एवं पदगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नख, ग्रीवा तथा हृदय बन्धनीकी अधोगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा मेढ्र और पृष्ठनिबद्ध कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नितम्ब, मस्तक, उरु, वक्ष, अक्ष एवं स्तनपिण्ड है। (सुश्रुत) कण्डरावों द्वारा शरीर आकुञ्चन और प्रसारण किया जाता है। (भावप्रकाश) बाहुपृष्ठसे अङ्गुलिपर्यन्त आनेवाली कण्डरावोंके वातसे पोड़ित होनेपर बाहुद्वयका कार्य बिगड़ जाता है। इस रोगका नाम विश्वाची है।

कण्डरीक (सं० पु०) सप्तजातिस्मरके मध्य विप्रविशेष। (हरिवंश)

कण्डवल्ली (सं० स्त्री०) काण्डवल्ली, करेला।

कण्डाग्नि (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया।

कण्डानक (सं० पु०) महादेवके एक अनुचर।

कण्डिका (सं० स्त्री०) कडि-ण्वुल्-टाप्। काण्ड, कण्डिका, वेदका एकदेश। अध्याय प्रपाठक प्रभृतिके अन्तर्गत ब्राह्मणवाक्यसमूहको कण्डिका कहते है।

कण्डोर (सं० पु०) १ लघुकारवेल्ल, छोटा करेला। २ पीतमुद्ग, पीली मोट।

कण्डु (सं० पु०) १ ऋषिविशेष। इनके पिताका नाम कण्ड रहा। विष्णुपुराणमें लिखा है,—'किसी समय कण्डु मुनिने गोमती किनारे उत्कट तपस्या आरम्भ की थी। इन्द्रने उससे भय भीत हो प्रम्लोचा नाम्नी अप्सराको उनका तपोभङ्ग करने भेजा। मुनि भी उसका रूपलावण्य और हावभाव देख मोहित हो गये थे। इन्होंने अपनी तपस्या छोड़ बहुकाल उसके साथ एकत्र अतिवाहित किया। बहुकाल बाद एक दिन सन्ध्याकालको कण्डुने सन्ध्यावन्दना करना चाहा। किन्तु प्रम्लोचाने इनकी बात सुन उपहास किया था। उसीसे इनका मोह छूट गया। इन्होंने फिर पुरुषोत्तममें ऊर्ध्वबाहु हो तपस्या द्वारा मुक्ति पायी'। (स्त्री०) कण्डयति शरीरम्, कण्ड-कु। मृगय्वादयश्च २ वायुजन्य कण्डूयादि, खुजली, खाज। ३ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। ४ शूकशिम्बी, केवांच।

कण्डुक (सं० पु०) कण्डु-कन्। १ कण्टक, कांटा। २ कण्डु, खुजली। ३ किसी नापितका नाम।

कण्डुघ्न, कण्डूघ्न देखो।

कण्डुर (सं० पु०) कण्डुं राति ददाति, कण्डु-रा-क पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। आतोऽनुपसर्गे। पा ३।२।३ १ कारवेल्लता, करेलेकी बेल। २ कुन्दरुलता, कुंदरुकी बेल।

कण्डुरा (सं० स्त्री०) कण्डुर-टाप्। १ शूकशिम्बी, केवांच। २ कर्पूरक, गौरकन्द। ३ अत्यम्लपर्णी, एक बेल। इसकी पत्ती बहुत खट्टी होती है।

कण्डुला (सं० स्त्री०) अत्यम्लपर्णी, बहुत खट्टी पत्तियोंकी एक बेल।

कण्डुली, कण्डुला देखो।

कण्डू (सं० स्त्री०) कण्डय सम्पदादित्वात् क्विप् अलोपो यलोपश्च। १ कण्डु, खुजली। २ क्षुद्र-क्षुद्र पिड़काविशेष, छोटी-छोटी फुनसी। इसका संस्कृत पर्याय—खर्जु, कण्डूया, कण्डूति और कण्डूयन है।

चिकित्सा—दूर्वा एवं हरिद्रा एकत्र पीसकर प्रलेप लगानेसे कण्डू, पामा, दद्रु, शीतपित्त प्रभृति रोग विनष्ट होते हैं। गुञ्जाफल और भृङ्गराजके रसमें तेलको पका मलनेसे कण्डू, दारुण, कुष्ठ और कपाल रोग मिट जाता है। हरिद्राखण्ड प्रभृति औषध भी इस रोगपर विशेष उपकारी है। हरिद्राखण्ड देखो।

कण्डूक (सं० क्ली०) कण्ड स्वार्थे कन्। कण्ड, खुजली, खाज।

कण्डूकरी (सं० स्त्री०) कण्डूं करोति, कण्डू-कृ-टङीप्। शूकशिम्बी, खजोहरा।

कण्डूवा (सं० स्त्री०) काकतुण्डा, घुंघची, रत्ती, चिरमिटी।

कण्डूघ्न (सं० पु०) कण्डूं हन्ति, कण्डू-हन्-टक्। १ आरग्वध, अमलतास। २ गौरसर्षप, सफेद सरसों।

कण्डूघ्नवर्ग (सं० पु०) कण्डूघ्नानां वर्गः समूहः, ६-तत्। कण्डू नाशकरनेवाली ओषधियोंका समूह, खाज मिटानेवाली जड़ीबूटियोंका ज़खीरा। चन्दन, वेणामूल, आरग्वध, करञ्ज, निम्ब, कुटज, सर्षप, मौल, दारुहरिद्रा और मुस्तकके समूहको कण्डूघ्नवर्ग कहते हैं। (चरक)

कण्डूति (सं० स्त्री०) कण्डूय भावे क्तिन् अलोपो यलोपश्च। कण्डूयन, खुजली, खाज।

कण्डूमका (सं० स्त्री०) कीटविशेष, एक कीड़ा। यह कृष्ण, सार, कुहक, हरित, रक्त, यववर्णाभ और भ्रकुटी आठ प्रकारकी होती है। इसके काटनेसे रोगीका अङ्ग पीतवर्ण पड़ और वमन, अतिसार, ज्वर प्रभृतिसे वह मर जाता है। (सुश्रुत)

कण्डूमत् (सं० त्रि०) खुजलाते हुआ, जो खरोंच रहा हो।

कण्डूयत् (सं० त्रि०) खुजलाते हुआ, जो रगड़ रहा हो।

कण्डूयन (सं० क्लो०) कण्डूय भावे ल्युट्। १ कण्डू, खुजली खाज। "यन्मैथुनादि गृहमेधि सुखं हि तुच्छं कण्डूयनेन करयोरिव दुःखदुःखम्।" (भागवत ७।९।४५)

२ कृष्णशृङ्ग, खुजलानेका औज़ार। गात्रमें कण्डू उपस्थित होनेपर दीक्षित इसीसे खुजलाया करते हैं।

कण्डूयनक (सं० त्रि०) कण्डूयन-स्वार्थे कन्। १ खुजलाते हुआ, जो रगड़ रहा हो। (पु०) २ खुजलानेवाला।

कण्डूयना (सं० स्त्री०) कण्डूति, खुजली।

कण्डूयनी (सं० स्त्री०) कृष्णशृङ्ग, खुजलानेकी कूंची।

कण्डूयमान (सं० त्रि०) खुजलानेवाला, जो खरोंच रहा हो।

कण्डूया (सं० स्त्री०) कण्डू-यक्-अ-टाप्। कण्डू, खुजली।

कण्डूयित (सं० क्लो०) कण्डूयन, खुजली।

कण्डूयितृ (सं० त्रि०) खुजलानेवाला।

कण्डूर (सं० पु०) माणक, मानकच्चू।

कण्डूरा (सं० स्त्री०) कण्डूं राति, कण्डू-रा-क-टाप्। शुकशिम्बीलता, खजोहरा।

कण्डूल (सं० पु०) कण्डू अस्त्यर्थे लच्। १ कण्डूकारक ओल प्रभृति, ज़मींकन्द। (त्रि०) २ कण्डू-युक्त, खाजसे भरा हुआ।

कण्डूला (सं० स्त्री०) अत्यम्लपर्णीलता, बेलका जमींकन्द।

कण्डोल (सं० पु०) कडि बाहुलकात् ओलच्। १ वंशादि निर्मित धान्यरक्षक भाण्डार, बांस वगैरहसे बना धान्य रखनेका पात्र। इसका संस्कृत पर्याय—पिट, पिटक और पेटक है। २ उष्ट्र, ऊंट। ३ गोणीभेद, किसी क़िस्मका बोरा। ४ गुजरातके खान ज़िलेका एक पर्वत। यहां अतिप्राचीन देवमन्दिर बना है।

कण्डोलक (सं० पु०) कण्डोल-स्वार्थे कन्। कण्डोल, बांसका बना डोल।

कण्डोलवीणा (सं० स्त्री०) कण्डोलइव वीणा कण्डोलस्या वीणा वा। चण्डालोंकी वीणा, छोटा बीन। इसका संस्कृत पर्याय—चाण्डालिका, चण्डालवल्लकी, चण्डालिका और कटोलवीणा है।

कण्डोली (सं० स्त्री०) कण्डोलस्तद्दाकारोऽस्त्यस्याः, कण्डोल अर्श आदित्वात् अच्-ङीष्। कण्डोलवीणा, छोटा बीन।

कण्डोष (सं० पु०) कोषकार, झांझा, बूटका कीड़ा।

कण्डोघ (सं० पु०) कण्डूनां ओघः समूहो यस्मात्। शूककीट, झांझा।

कण्व (सं० क्लो०) कण्यते अपोह्यते, कण्-वन्। १ पाप, इज़ाब। (पु०) २ भूतयोनिविशेष, किसी क़िस्मका शैतान्। ३ मुनिविशेष। यह घोरके पुत्र और अङ्गिरसगोत्रसम्भूत रहे। ऋक्संहिताका अष्टम अष्टक इनके नामसे प्रसिद्ध है। यह यजुर्वेदीय कण्व शाखाके प्रवर्तक थे।

वेदमें दूसरे भी अनेक कण्वोंका नाम मिलता है—कण्वनार्षद, कण्वश्रीयश और कण्वकाश्यप। यह सभी कण्ववंशीय रहे। मेनका-परित्यक्त शकुन्तलाको सम्भवतः कण्वकाश्यपने प्रतिपालित किया था।

महाभारतके टीकाकार नीलकण्ठने कण्व नामका अर्थ इस प्रकार लगाया है—

'कण्व: सुखमय: तत्त्वविद्याप्रभावात् मत्वर्थे संसारजन्य सुखमय: नहि तत्त्वज्ञानिनां क्वचित् संसारासक्ति: अविद्याधर्माभावात् ।'

कण्वका अर्थ तत्त्वविद्याके प्रभावसे सुखमय रहनेवाला है। तत्त्वज्ञानियोंको अविद्याके अभावसे संसारमें किसी प्रकारकी आसक्ति नहीं रहती। सुतरां वह संसारके सुखसे भी अलग रहते हैं।

४ पुरुवंशीय एक राजा। तपस्याके बलसे यह भी मुनि हो गये थे। ५ एक राजा। यह प्रतिरथके पुत्र और मेधातिथिके पिता रहे। कोई कोई इन्हें अजमीढ़का पुत्र कहता है। ६ धर्मशास्त्रकार मुनिविशेष। ७ तीर्थविशेष। (त्रि०) ८ वधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। ९ विद्याक्रियाकुशल, आलिम। १० मेधावी, अक्लमन्द। ११ स्तुतिकारक, तारीफ़ करनेवाला। १२ स्तवनीय, तारीफ़के क़ाबिल।

कण्वजम्भन (सं० त्रि०) कण्व नामक पिशाचोंको नाश करनेवाला।

कण्वतम (सं० त्रि०) अत्यन्त बुद्धिमान्, निहायत अक्लमन्द।

कण्वमान् (सं० त्रि०) १ कण्वोंकी विधिसे तैयार किया हुआ। २ स्तुतिकारकों द्वारा सङ्गठित।

कण्वरथन्तर (सं० क्ली०) कण्वेन गीतं रथन्तरम्, मध्यपदलो०। सामगानविशेष, सामवेदका एक गाना।

कण्ववत् (सं० अव्य०) कण्वकी भांति।

कण्वसखा (सं० पु०) कण्वोंका मित्र, जो कण्वोंसे दोस्ताना बर्ताव रखता हो।

कण्वसुता (सं० स्त्री०) कण्वस्य प्रतिपालिता सुता। शकुन्तला। एकदा विश्वामित्रको उग्र तपस्यासे डर देवराज इन्द्रने तपोविघ्नके लिये मेनका नाम्नी अप्सराको भेजा था। विश्वामित्र उसका रूपलावण्यादि देख विमोहित हुये। फिर उन्होंने उसके गर्भसे एक कन्या उत्पादन की थी। मेनका उस सद्यप्रसूत कन्याको वनमें फेंक यथास्थानको चली गयी। दैववश कण्व मुनिने उस कन्याको देख लिया था। वह दयार्द्र चित्तसे उसे अपने आश्रममें ला तनयाकी तरह लालन-पालन करने लगे। शकुन्तला देखो।

कण्वहोता (सं० पु०) कण्वको होताके स्थानमें रखनेवाला यजमान, जिसके कण्व होता रहे।

कण्वाश्रम (सं० पु०) कण्वस्य आश्रम:, ६-तत्। कण्व मुनिका आश्रम, कण्वके रहनेकी जगह। यह आश्रम मालिनी नदी किनारे अवस्थित है। कण्वाश्रम आदि धर्मारण्यके नामसे विख्यात है। इस स्थानके प्रवेशमात्रसे समस्त पाप विदूरित होता है। (भारत) कोटा राज्यसे दक्षिण चम्बल नदीके निकट भी एक कण्वाश्रम विद्यमान है। इसी स्थानके समीप मौर्यवंशीय शिवराजोंकी शिलालिपि मिली है।

कण्वस्मृति (सं० स्त्री०) कण्वेन प्रणीता स्मृति:, कर्मधा०। शुक्लयजुर्वेदसे कण्वमुनि द्वारा संगृहीत एक धर्मशास्त्र।

कत् (सं० अव्य०) १ ईषत्, अल्प, थोड़ा। २ कुत्सिता। ३ क्वाथ।

कत (सं० पु०) कं जलं शुद्धं तनोति, क-तन्-ड। १ निर्मलीवृक्ष, निर्मलीका पेड़। कतक देखो। २ मुनिविशेष। यह विश्वामित्रके एकतम पुत्र थे। (हिं० अव्य०) किस कारण, क्यों, किस लिये।

कत (अ० पु०) लेखनीके अग्रभागका तिर्यक् छेदन, क़लमकी नोककी तिरछी तराश।

कतक (सं० पु०) तक् हासे बाहुलकात् घ, कस्य जलस्य तक: हास: प्रकाशोऽस्मात्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—अम्बुप्रसाद, कत, तिक्तफल, रुच्य, छेदनीय, गुच्छफल, कतफल और तिक्तमरिच है। कतकको बंगला और हिन्दीमें निर्मली, उड़ियामें कतोक, तैलङ्गमें कतकमु, इन्दुपुचेट्टु अथवा चिल्ल, तामिलमें तेतमरम् वा तेत्रकोत्ते, दक्षिणीमें चिलबिन्ज, सिंहलीमें इङ्गिनि और वैज्ञानिक अंगरेजीमें ष्ट्रिकनोस पोटेटोरम् (Strychnos potatorum) कहते हैं।

अति पूर्वकालसे यह वृक्ष भारतवर्षमें प्रसिद्ध है। हमारे पूर्वतन ऋषि इसके फलसे जलसंशोधन करते थे। (सुश्रुत) भगवान् मनुने कहा है—

"फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसादकम्।
न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति॥" (६।६७)

यद्यपि कतक वृक्षका फल अम्बुको परिष्कार करता, तथापि उसका नाम लेनेसे ही जल स्वच्छ नहीं पड़ता।

यह वृक्ष भारतवर्षके पार्वत्य प्रदेश, बङ्गाल, दाक्षिणात्य और सिंहलके किसी किसी स्थानमें उत्पन्न होता है। प्रत्येक वृक्षकी उंचाई ३०से ६० फीट तक रहती है। इसकी लकड़ीसे जो तख्ते बनते, वह गृहस्थके अनेक आवश्यक कार्यों में लगते हैं।

कतकका फल बादामी और आध इञ्च मोटा होता, किन्तु पकनेसे काला पड़ जाता है। वल्कल हरिताभ धूसरवर्ण लगता और रेशमकी भांति परिष्कार रूयेंसे आच्छन्न रहता है। कतकका श्वेतसार आस्वादनहीन होता है।

कतक कटु, तिक्त, उष्ण, चक्षुर्हितकर, रुचिकार और कृमिदोषघ्न एवं शूलनाशक है। वीज जलको निर्मल बना देता है। (राजनिघण्टु)

भावप्रकाशके मतसे कतकका फल जलपरिष्कारक, चक्षुर्हितकर, वायु एवं श्लेष्माको नाश करनेवाला, शीतल, मधुर, गुरु और कषाय है। चक्रदत्त बताते, कि चक्षुसे जलका गिरना दबाने और दृष्टिकी शक्ति बढ़ानेको निर्मली मधु तथा कर्पूरके साथ रगड़ कर लगाते हैं। मुसलमान चिकित्सक कतकको शीतल और शुष्क समझते हैं। पेटपर इसे लगानेसे उदरव्यथा दूर होती है। यह चक्षुको लाभ पहुंचाता और सर्पके विषको धर दबाता है। किसी पारस्य ग्रन्थमें लिखा—मेह और मूत्राशय-सम्बन्धीय किसी प्रकारकी पीड़ापर निर्मली विशेष उपकारी है। तामिल वैद्योंके मतसे पक्व फलकी बुकनी वमनकारक होती है। कार्कपाट्रिक साहब कहते—निर्मलीको मूत्रकृच्छ्र रोगके औषधकी भांति व्यवहार करते हैं।

युद्धकी यात्राके काल यह फल सिपाहियोंके पास रहना अच्छा है। क्योंकि पथमें किसी प्रकारका गन्दा जल मिलनेसे निर्मली द्वारा परिष्कार किया जा सकता है। जल परिष्कार करनेका गुण रखनेसे ही अंगरेज लोग इसे क्लियरिङ्ग नट (Clearing nut) कहते है।

२ कासमर्द, कसौंदी। ३ कुचेलक, कुचला। ४ जम्बीरवृक्ष, जंभीरी नीबू।

५ रामायणकी एक प्राचीन टीका। रामानुज प्रभृति रामायणके टीकाकारोंने अपनी-अपनी टीकामें कतकका उल्लेख किया है। डा० बुरनेलके मतसे कतक सम्भवत: ई०के १४वें अथवा १५वें शताब्द विद्यमान रहे। किन्तु अपर टीकाकारोंकी उक्तिके अनुसार कतक-टीकाकार ५म वा ६ष्ठ शताब्दके लोग थे। कतक-टीकाकारने ग्रन्थके आरम्भमें कालहस्तिकका स्तव किया है। इससे अनुमान होता, कि वह दक्षिण देशमें रहते थे।

कतकफल (सं० पु०) १ कतकवृक्ष, रीठेका पेड़। २ तमालवृक्ष, दमपेल। (क्ली०) ३ वारिप्रसादनफल, रीठा।

कतचेता (सं० पु०) किसी मुनिका नाम।

क़तज़न (फ़ा० पु०) क़लमका क़त काटनेके लिये एक दस्ता। यह लकड़ी या हाथीदांतका बनता है।

कतद्रेय (सं० पु०) सिन्धु राज्यके अन्तर्गत एक नगर।

कतना (हिं० क्रि०) १ काता जाना, बनना, तैयार होना। (क्रि० वि०) २ कितना, किस क़दर।

कतनी (हिं० स्त्री०) १ ढेरिया, सूत कातनेकी टेकुरी। २ सूत कातनेका सामान् रखनेकी टोकरी।

कतन्ना (हिं० पु०) बड़ी कैंची, कतरना।

कतन्नी (हिं० स्त्री०) कैंची, कतरनी।

कतफल (सं० पु०) कतं जलप्रसादकं फलमस्य, बहुव्री०। १ निर्मलीवृक्ष, रीठेका पेड़। २ निर्मलीफल, रीठा।

कतम (सं० त्रि०) किम्-डतमच्। बहु पदार्थोंके मध्य कोई एक, कौन, दोमें एक।

कतमाल (सं० पु०) कस्य जलस्य तमाय शोषणाय अलति पर्याप्नोति, क-तम-अल्-अच्। अग्नि, आग। इसका पाठान्तर कचमाल और खचमाल है।

कतर (सं० त्रि०) किम्-डतरप्। दोमें एक, दोमें कौन। "ययेनमंजसितदा कतरोवरसे।" (नैषध)

कतरछांट (हिं० स्त्री०) काटछांट, कतरब्योंत, कतराई और कंटाई।

कतरत: (सं० अव्य०) दोमें किस ओर, कौन तर्फ़।

कतरन (हिं० स्त्री०) काटछांटका टुकड़ा, कटा हुआ रही हिस्सा। कागज़, कपड़े, धातु आदिका कटा हुआ रही टुकड़ा कतरन कहाता है।

कतरना (हिं० क्रि०) १ कैंचीसे काटना, छांटना। २ किसी औज़ारसे काटना, टुकड़े करना। (पु०) ३ बड़ी कैंची। ४ बतकटा, बातको काट डालनेवाला।

कतरनाल (हिं० स्त्री०) किसी क़िस्मकी घिर्नी। इसपर दोहरी गड़ारी रहती है।

कतरनी (हिं० स्त्री०) १ कैंची, मिकराज़, बाल कपड़े वग़ैरह काटनेका एक औज़ार। २ कर्मकारों और स्वर्णकारोंका एक यन्त्र। इससे धातुकी चद्दर, तार वग़ैरह चीज़ें काटी जाती हैं। यह संड़सी-जैसी होती है। ३ तंबोलियोंका एक औज़ार। इससे तंबोली पान कतरते हैं। ४ जुलाहोंका एक औज़ार। इससे कपड़ा कटता है। ५ किसी क़िस्मकी सुतारी। इससे मोची और ज़ीनगर कड़ी जगह पर छोटी सुतारी घुसेड़नेके लिये छेद बनाते हैं। यह चौड़ी और नुकीली रहती है। ६ चब्बी, पत्ती। यह सादे कागज़ या मोमजामेका एक टुकड़ा है। छीपी बेल छापनेमें इसे व्यवहार करते हैं। जिस कोणपर वह पूरी छाप मारना नहीं चाहते, उसपर इसे जमा देते हैं। ७ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मलवारकी नदीयोंमें रहती है।

कतरव्योंत (हिं० पु०) १ काट-छांट, कतराई। २ हेरफेर, उलट-पुलट। ३ सोचविचार। ४ निकास, चोरी। ५ हिसाब-किताब, जोड़तोड़।

कतरवां (हिं० वि०) कटावदार, औरेबी, टेढ़ा, तिरछा।

कतरवाई (हिं० स्त्री०) १ कतरानेका काम। २ कतरानेका पारिश्रमिक, कटाईकी मज़दूरी।

कतरा (हिं० पु०) १ खण्ड, विच्छिन्न अंश, कटा-हुआ टुकड़ा। २ प्रस्तरखण्ड, पत्थरका छोटा टकड़ा। यह गढ़ाईसे निकलता है। ३ नौकाविशेष, एक बड़ी नाव। इसपर खड़े होकर मांझी नावको खेनेमें डांड चलाते हैं। यह पटेलेसे बराबर लम्बी रहती भी कम चौड़ी होती है। कतरेपर पत्थर वग़ैरह लदता है।

क़तरा (अ० पु०) बिन्दु, बूंद।

कतराई (हिं० स्त्री०) १ कतरनेका काम, कतरव्योंत। २ कतरनेका पारिश्रमिक, कटाईकी मज़दूरी।

कतराना (हिं० क्रि०) १ बचाना, बचकर निकल जाना। २ कटाना, कतरवाना।

कतरी (हिं० स्त्री०) १ कातर, कोल्हूका पाट। इसीपर बैठ मनुष्य बैल हांकता है। २ अलङ्कार-विशेष, एक ज़ेवर। यह पीतलकी बनती और ढलवां रहती है। नीच जातिकी स्त्रियां कतरीको हाथोंपर धारण करती हैं। ३ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह लकड़ीकी बनती और कारनिस जमानेमें लगती है। इसकी लम्बाई १ फुट, चौड़ाई ३ इञ्च और मोटाई पाव इञ्च होती है। ४ जमी हुई मिठाईका एक टुकड़ा। ५ कैंची, कतरनी।

क़तल (अ० पु०) वध, हत्या, जानसे मारनेका काम।

क़तलबाज़ (अ० पु०) वधिक, जल्लाद, मार डालनेवाला।

कतला (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह बड़ी नदियोंमें मिलता है। कतला छह फोट तक लम्बा होता है। इसमें बल अधिक रहता है। कभी कभी पकड़ते समय कतला मछुवोंको झपटकर गिरा देता और काट लेता है।

क़तलाम (अ० पु०) सर्वसंहार, अन्धाधुन्ध, मार-काट। क़तलाममें अपराधी और निरपराधी नहीं देखते, एक ओरसे सबको मार देते हैं।

कतवाना (हिं० क्रि०) कताना, कातनेका काम दूसरेसे कराना।

कतवार (हिं० पु०) १ अप्रयोजनीय तृणादि, बेकाम घासफूस। २ कातनेवाला, जो व्यक्ति कातता हो।

कतहुं (हिं० अव्य०) किसी ओर, कहीं।

कतहूं, कतहुं देखो।

क़ता (अ० स्त्री०) १ रूप, शक्ल, सूरत, बनावट। २ प्रकार, तर्ज़, ढङ्ग। ३ काटछांट, सफ़ाई।

कताई (हिं० स्त्री०) १ कातनेका काम। २ कातनेका पारिश्रमिक, कतौनी।

कताना (हिं० क्रि०) कतवाना, कातनेका किसी दूसरेसे निकलाना।

क़तार (अ० स्त्री०) १ पंक्ति, पांति, लैन। २ समूह, ढेर।

कतारा (हिं० पु०) १ इक्षुभेद, किसी क़िस्मकी जख। कतारा लाल और लम्बा होता है। इसका वल्कल स्थूल और सार मृदु रहता है। कतारेके रसको गाढ़ा कर गुड़ बनाते हैं। २ इमलीका फल।

कतारी (हिं० स्त्री०) १ क़तार, पंक्ति। २ छोटा कतारा।

कति (सं० त्रि०) का संख्या परिमाणं येषाम्, किम्-डति। किमः संख्यापरिमाणे डति च। पा ५।२।४१। १ कौन संख्या रखनेवाला, कितना। २ कौन। ३ कितना। ४ बहुतसा। (पु०) ५ विश्वामित्रके एकतम पुत्र। यह एक ऋषि और कात्यायनके पूर्वपुरुष रहे।

कतिक (हिं० वि०) १ कितना, किस परिमाणवाला। २ अल्प, थोड़ा। ३ अधिक, ज्यादा।

कतिचित् (सं० अव्य०) कितना, किस कदर।

कतिथ (सं० त्रि०) कति पूरणे डट् थुक् च। षट्कतिकतिपयचतुरां थुक्। पा ५।२।५१। कहांतक, किस दरजेतक पहुंचा हुआ।

कतिधा (सं० अव्य०) कति विधार्थे धा। १ कहां कहां, कितनी जगह। २ कितने अंशोंमें। ३ कब कब।

कतिपय (सं० त्रि०) कति-अयक् पुक् च। १ कुछ, कितना ही, थोड़ासा। २ इतना।

कतिविध (सं० त्रि०) कतिः विधा प्रकारोऽस्य, बहुव्री०। कितने प्रकारका, कैसा कैसा।

कतिशः (सं० अव्य०) कति वीप्सार्थे शस्। संख्यैक-वचनाच्च वीप्सायाम्। पा ५।४।४३। कितना कितना।

कतीमुष (सं० क्लो०) किसी अग्रहारका नाम।

कतीरा (हिं० पु०) निर्यासविशेष, एक प्रकारका गोंद। यह श्वेत निर्यास गूल वृक्षसे उत्पन्न होता है। जलमें कतीरा नहीं घुलता। यह शीतल एवं रूक्ष रहता और रक्तविकार तथा धातुविकार पर चलता है। पात्रविशेषमें बन्द कर रखनेसे कतीरा सिरकेकी तरह महकने लगता है। प्रसूतिके अनन्तर इसे स्त्रियोंको खिलाते हैं। कहते, कतीरा अधिक सेवन करनेसे पुरुष नपुंसक बन जाता है।

कतेक, कतिक देखो।

कतेहार—रोहिलखण्डके पूर्वांशका प्राचीन नाम।

कत्तर (हिं० पु०) गुणभेद, किसी किस्मका डोरा। इससे स्त्रियां अपनी चोटी बांधती हैं।

कत्तल (हिं० पु०) १ कतरा, टुकड़ा। २ प्रस्तरखण्ड-विशेष, पत्थरका एक टुकड़ा। यह गढ़ाईसे निकल पड़ता है।

कत्ता (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, बांका। इससे बांस वगैरह काटा या चीरा जाता है। २ असिभेद, किसी क़िस्मकी तलवार। यह छोटा और टेढ़ा होता है। ३ पासा।

कत्ताशब्द (सं० पु०) पासोंकी खड़खड़ाहट।

कत्ती (हिं० स्त्री०) १ छुरिका, चाकू, छुरी। २ छोटा कत्ता, किसी क़िस्मकी तलवार। ३ कटारी। ४ किसी क़िस्मकी कैंची। इसे सोनार व्यवहार करते हैं। ५ किसी प्रकारकी पगड़ी। इसे बत्तीकी तरह बटकर बांधते हैं।

कत्तृण (सं० क्लो०) कु कुत्सितं तृणम्, कोः कदादेशः। तृणे च जातौ। पा ६।३।१०३। १ सुगन्धि तृणविशेष, सोंधिया, एक खुशबूदार घास। इसका संस्कृतपर्याय—पौर, सौगन्धिक, ध्याम, देवजग्धक, रोहिष, सुगन्ध, तृण-शीत, सुशीतल, रोहिषतृण, कालतृण, भूति, भूतिक, श्यामक, ध्यामक, पूति, मुद्गल और देवगन्धक है। भावप्रकाशके मतसे कत्तृण कटुपाक, तिक्त एवं कषाय-रस और हृद्रोग, कण्ठरोग, पित्त, रक्त, शूल, कास तथा ज्वरनाशक है। राजनिघण्टु इसे कटु एवं तिक्तरस और कफदोष, शस्त्र वा शल्यदोष तथा बालकोंके ग्रहदोषका निवारक बताता है। २ पृश्निपर्णी, जलकुम्भी।

कत्तोय (सं० स्त्री०) कु कुत्सितं तोयं यत्र, बहुव्री०। १ मद्य, शराब। २ मैरेय, धातकीपुष्प, गुड़, धान्य और अम्लके सन्धानसे प्रस्तुत मद्य, किसी क़िस्मकी शराब।

कत्त्रय (सं० पु०) कुत्सितास्त्रयः। तीन कुत्सित

पदार्थ, तीन ख़राब चीज़े। यह शब्द नित्य ही बहु-वचनान्त है।

कत्रादि (सं० पु०) पाणिनि उक्त जातादि अर्थमें ढकञ् प्रत्ययसे बना हुआ शब्दसमूह। कत्र्यादिगणके अन्तर्भूत कत्रि, उम्भि, पुष्कल, मोदन, कुम्भी, कुण्डिन, नगरी, माहिष्मती, वर्मती, उख्या और ग्राम शब्द है।

कत्थ (हिं० पु०) लोहेकी स्याही, एक रंग। किसी घटमें १५ सेर जल और आध सेर गुड़ या चीनी मिला थोड़ासा लोहचुन डालते हैं। फिर यह घट आतपमें रखा जाता है। कुछ दिन बाद घड़ेका पानी उठता और मुखपर गाज आ जमता है। जलका रूप काला-भूरा होनेपर कत्थ पक्का पड़ता और रंगाईमें लगता है।

कत्थई (हिं० पु०) १ किसी किस्मका रंग। लाल-काले रंगको कत्थई कहते हैं। इसके बनानेमें हर्रा, कसीस, गेरू, कत्था और चूना पड़ता है। कत्थई रंगमें खटाई या फिटकरीका बोर नहीं लगाते। (वि०) २ खैरा, खैरका रंग रखनेवाला।

कत्थक (हिं० पु०) जातिविशेष, एक क़ौम। कत्थक नाचते और गाते-बाजते हैं। भारतवर्षमें जयपुरके कत्थक प्रसिद्ध हैं। कथकता देखो।

कत्थन (सं० क्ली०) १ अहङ्कारोक्ति, लन्तरानी, डींग। (त्रि०) २ आत्मश्लाघापर, डींगिया। ३ शूरमन्य, शेख़ीखोर, लबाड़िया।

कत्था (हिं० पु०) १ खैर, खैरकी लकड़ियोंको उबाल कर निकाला हुआ सत। इसे इकट्ठा कर चौकोर टुकड़े या छोटे छोटे गोले बना लेते हैं। कत्था पानमें खाया, और ज़ख़्मोंपर लगाया जाता है। कत्था और चूना बराबर पड़नेमें ही पानका मज़ा है। खदिर और खैर शब्द देखो।

कत्पय (सं० क्ली०) कत् सुखकरं पयोऽस्य, बहुव्री०। १ सुखकर जलाशय, फ़रहतबख़्श तालाब। २ सुख-कर जल, आराम देनेवाला पानी। (त्रि०) ३ तर-ङ्गित, उमड़ा हुआ, जो चढ़ रहा हो।

कतलखान्—एक लोहाना अफ़ग़ान। इन्हींके समय बङ्गालमें विद्रोह उठा था। उसी सुयोगमें (१५८०ई०) कतल खानने पठान सिपाही संग्रह कर उड़ीसे पर धावा मारा। क्रमशः इनके तत्त्वावधानमें चारो ओरसे पठान सिपाही आ आकर जमा हुये। कतलखान्ने उनके साहाय्यसे सलीमाबादमें सातगांवोके शासन-कर्ता मिर्ज़ा नजातको हराया और मेदनीपुर, वसन्तपुर एवं दामोदर नदीके दक्षिण तीरका अधिकार पाया। उसी समय सम्राट् अकबरने मिर्ज़ा षजीजको बङ्गाल, बिहार और उड़ीसेका शासनकर्ता नियुक्त कर भेजा था। किन्तु वह भी इनसे हार गये। १५८३ ई०को मुगलमारीके निकट दामोदर नदी किनारे मुगलों और पठानोंमें युद्ध हुआ था। उसमें सादिक़ खान् और शाहक़ुली महरमने इन्हें परास्त किया। फिर अकबरके कर्मचारी और कतलखान्के बीच सन्धि हुई। उसके अनुसार उड़ीसा इन्हींके अधिकारमें रहा। किन्तु सम्राट् अकबरने उस सन्धिको माना न था। कतलखान्का शास्ति देने मानसिंह बङ्गाल और विहारके शासनकर्ता बनकर आये। धरपुरके निकट युद्ध चला था। इन्होंने सम्राट्के सिपाहि-योंको हरा विष्णुपुर अधिकार किया और मानसिंहके पुत्र जगत्सिंहको बांध लिया। कुछ दिन पीछे ही कतलखान् मर गये। इनके प्रधान वज़ीर ईसा-खान्ने मानसिंहसे सन्धि कर जगत्सिंहको छोड़ दिया।

कत्सवर (सं० क्ली०) कत्स-वृ-अप्। स्कन्ध, कन्धा।

कथं (सं० अव्य०) केन प्रकारेण, किम् थम्। किमय। पा ५।३।२४। १ किस विधानसे, कौन तरीके पर। २ कुतः, कस्मात्, क्यों, कहांसे।

"कथं मतुः प्रभवति वेदशास्त्रविदां प्रभो।" (मनु ५।२)

कथंरूप (सं० त्रि०) किस आकारका, कौनसी सूरत-शक्ल रखनेवाला।

कथंवीर्य (सं० त्रि०) किस शक्तिका, कौनसी ताक़त रखनेवाला।

कथ, कत्था देखो।

कथक (सं० पु०) कथयतीति, कथ कर्तरि ण्वुल्। १ पौराणिक कथा बांचकर जीविका निर्वाह करने-वाला। २ नाटककी वर्णना करनेवाला, बड़ा नक़्क़ाल।

इसका संस्कृत पर्याय एकनट और कथाप्राण है। ३ वक्ता, बयान् करनेवाला। ४ एक नैयायिक ग्रन्थकर्ता।

कथकता (सं० स्त्री०) कथक-तल्-टाप्। १ वाक्यालाप, बातचीत। २ धर्मविषयक आलोचना, मज़हबी बयान्।

कथकता पाठ (पारायण) से विभिन्न होती है। पाठ और पारायण देखो। पाठकार्य प्रातःकाल-कर्तव्य है। किन्तु कथकता वैकालको हुआ करती है। कथकता शब्दसे भारतमें कथक-कर्तृक पुराणादि धर्मशास्त्रोक्त उपाख्यानोंकी वर्णनाका बोध होता है।

कथकताकी सृष्टि चलनेका कारण क्या है? इस देशके लोग प्रायः सवेरे नाना कार्योंमें व्यस्त रहते हैं। विशेषतः संस्कृतभाषामें होनेवाला पाठ साधारण व्यक्ति समझ नहीं सकते। किन्तु कथकता उससे अलग है। इसमें आड़म्बर, विलक्षण सङ्गीतविद्या और सहज ही लोगोंके मन रिझानेकी क्षमताका होना आवश्यक है। कथकता देशकी सरल भाषामें होनेसे सबको अच्छी लगती है। मीठी बातोंमें लोगोंको धर्मोपदेश देनेके लिये यह एक सहज उपाय है। किसी श्रेणीके व्यक्ति क्यों न रहें, कथकता सभीको प्रिय है। कथक गुणवान् होनेसे लोग सहजमें-ही खिंच जाते हैं। बङ्गालमें प्रायः सौ वर्षसे कथकताका प्रभाव बढ़ गया है।

बङ्गालमें गदाधर और रामधन शिरोमणिने नये ढङ्गमें कथकताको प्रचार किया था। गदाधर शिरोमणि वर्धमान ज़िलेके सोनामुखी ग्राममें रहते थे। राढ़ अञ्चलके प्राय सब कथक उनके शिष्य वा प्रशिष्य थे। उनमें प्रायः सभी उक्त शिरोमणिकी बनायी चर्णीके अनुसार कथकता करते थे।

रामधन गोवरडांगेके निवासी रहे। उनके अनेक ख्यातनामा शिष्य थे। उनके मध्य रामधनके ही भ्रातुष्पुत्र धरणि वङ्गदेशमें प्रसिद्ध हैं। धरणिका कण्ठ जैसा मधुर वैसा ही सङ्गीतविद्यामें ज्ञान भी प्रखर था। इसीसे जिसने एकबार उनकी कथाको सुना, वह उन्हें इहजन्ममें फिर भूल न सका। कलकत्ते और इस नगरके निकटवर्ती लोग रामधनकी चूर्णीको पकड़ कथकता किया करते हैं।

कथकताकी चूर्णीको 'माट' कहते हैं। चर्णीमें मध्य मध्य कथकके कुछ आवश्यकीय सङ्केत रहते, जैसे—भी०-उ० अर्थात् भीष्म उवाच या भीष्म कहते हैं। चर्णीके अतिरिक्त कथकको रात्रिवर्णना, मध्याह्नवर्णना, ग्रीष्मवर्णना, वसन्तवर्णना, देशवर्णना, वेश्यावर्णना प्रभृति मुखस्थ रखना पड़ता है। वर्णनाका स्वतन्त्र पुस्तक भी रहता है। इस वर्णनामें अनुप्रासका आड़म्बर अधिक होता है। कथकताके समय आवश्यक वर्णना प्रयोग की जाती है।

कथकता प्रारम्भ करते वेदीमें शालग्रामशिलाको रख कथक बैठते हैं। पहले मङ्गलाचरणपूर्वक कथाकी सूचना होती है। फिर कथक कथकताका विषय बताते हैं। कथकका एकान्त कर्तव्य लोगोंके मनको मिलाने पर विशेष लक्ष्य रखना है। इस देशमें महाभारत, रामायण और भागवतकी कथकता होती है। जिस ग्रन्थकी वर्णना चलती, प्रति दिन उससे एक-एक विषयकी कथकता निकलती है। इसी कथनीय विषयको कोई कोई 'पाला' भी कहता है, जैसे—वामनभिक्षा, ध्रुवचरित्र, प्रह्लादचरित्र इत्यादि।

७०।८० वर्ष पहले बङ्गालमें कथकताका बड़ा आदर रहा। उस समय अनेक अच्छे अच्छे कथक विद्यमान थे। प्रवीण लोग कथकताके पक्षमें रहे। क्या राजा, क्या मध्यवित्त और क्या दरिद्र—सभीको कथकता सुनना अच्छा लगता था। आजकल कथकताका वैसा समादर देख नहीं पड़ता। दो-एकके अतिरिक्त अच्छे कथक भी अब दुर्लभ हैं।

कथक्कड़ (हिं० पु०) विज्ञ कथक, खूब किस्से कहनेवाला।

कथङ्कथिक (सं० त्रि०) कथं कथमिति पृष्टत्वेनास्त्यस्य, कथम्-कथम् बाहुलकात् ठन्। प्रष्टा, पूछनेवाला, जो हमेशा सवाल किया करता हो।

कथङ्कथिकता (सं० स्त्री०) कथङ्कथिकस्य भावः, कथङ्कथिक-तल्-टाप्। प्रश्न, जिज्ञासा, पूछताछ, सवाल करते रहनेकी हालत।

कथङ्कर्मा (सं० त्रि०) किस प्रकार काय करनेवाला, कैसे काम चलानेवाला।

कथङ्कार (सं० अव्य०) कथम्-कृ-णमुल्। किसप्रकार, किस तौरसे, कैसे करके।

कथञ्चन (सं० अव्य०) कथम्-चन। किसी प्रकार नहीं, किसी तौरसे नहीं।

कथञ्चित् (सं० अव्य०) १ किञ्चित्, कुछ। २ कीसो प्रकार, किसी तौरसे, बमुश्किल।

कथन (सं० क्लो०) कथ भावे ल्युट्। १ कथा, वाक्य, बयान्। (त्रि०) २ कहनेवाला, बड़बड़िया, जो बहुत बात करता हो।

कथना (हिं० क्रि०) १ कथन करना, कहना। २ काव्यरचना करना, शेर बनाना। ३ निन्दा निकालना, हिक़ारत करना।

कथनी (हिं० स्त्री०) १ कथन, बातचीत। २ बकवाद, बड़बड़ाहट।

कथनीय (सं० त्रि०) कथ-अनीयर्। तव्यत्तव्यानीयरः। पा ३।१।९६। वक्तव्य, बयान् करने या कहने लायक। २ सम्बन्धके योग्य, जो नाम रखने काबिल हो। ३ निन्दनीय, ख़राब।

कथन्ता (सं० स्त्री०) जिज्ञासा, पूछताछ।

कथम्, कथं देखो।

कथमपि (सं० अव्य०) कथञ्च अपिच, इन्द्व०। १ किसी प्रकार, किसी भी तौरसे। २ अति यत्नसे, बड़ी मुश्किलमें। ३ अति कष्टसे, बड़ी तकलीफ़में। ४ अति गौरवसे, बड़े बारमें। ५ दृढ़रूपसे, पक्के तौरपर।

कथम्प्रमाण (सं० त्रि०) किस प्रमाणवाला, कौनसी नापका।

कथम्भाव (सं० पु०) कथम्-भू-घञ्। कैसी स्थिति, कौनसी हालत।

कथम्भूत (सं० त्रि०) कथम्-भू-क्त। १ किस रूपवाला, कौनसी सूरत रखनेवाला। २ किसप्रकार उत्पन्न हुआ, किस तौरपर पैदा।

कथयान (सं० त्रि०) कथन करनेवाला, कहते हुआ, जो बोल रहा हो।

कथयितव्य (सं० त्रि०) कथ-णिच्-तव्य। वक्तव्य, कहने लायक, जो कहा जा सकता हो।

कथरी (सं० स्त्री०) १ कन्यारी, नागफनी। (हिं०) २ वस्त्र-विशेष, एक कपड़ा। कथरी पुराने चिथड़ोंको जोड़ जोड़ बनायी और ओढ़ी या बिछायी जाती है। प्रायः दरिद्र इसे व्यवहार करते हैं। किन्तु कुछ वर्ष पहले भारतमें कथरीको बड़ी चाल रही। कथरी बिछाने में मुलायम और ठण्डी रहती है। गरमीके दिनों कथरीपर सोना बहुत अच्छा लगता है।

कथा (सं० स्त्री०) कथ-अङ्-टाप्। चिन्तिपूजिकथिकुम्बि-चर्चश्च। पा ३।३।१०५। १ प्रबन्धकी बहु मिथ्या एवं अल्पसत्यपूर्ण कल्पना, किस्सा, कहानी। २ तर्क, बहस। "तत्त्वनिर्णयविजयान्यतरस्वरूपयोगान्यायानुमतवचनसन्दर्भः कथा।" (गौतमवृत्ति १।४१) पदार्थके यथार्थ निश्चय किंवा प्रतिपक्षके पराजय प्रयोजक वाक्यका ही नाम कथा है। न्यायदर्शनके मतमें कथा त्रिविध होती है—वाद, जल्प और वितण्डा। नैयायिक उन्हीं व्यक्तियोंको कथाका अधिकारी समझते—जो श्रवणेन्द्रिय प्रभृतिमें कोई कोई दोष नहीं रखते, साधारण लोगोंका स्वीकृत वाक्य माननेमें तर्क उठानेसे डरते, अकलहकारी रहते, स्वीय वार्तामें साधारणका विश्वास बढ़ानेको युक्ति आदि कहते और यथार्थ निर्णयमें समर्थ पड़ते अथवा विपक्षके पराजयकी कामना करते हैं। "कथाधिकारिणश्च तत्त्वनिर्णयविजयान्यतरामिलाषिणः सर्वजनसिद्धानुभवापलापिनः श्रवणादि-पटवः अकलहकारिणः कथौपयिकव्यापारसमर्थाः।" (गौतमवृत्ति १।४१)

किसी किसी मतमें वादिप्रतिवादीके पक्ष और प्रतिपक्षका परिग्रह कथा कहाता है।

"वादिप्रतिवादिनां पक्षप्रतिपक्षपरिग्रहः कथा।"

(सर्वदर्शनसंग्रह—अक्षपा० द०)

३ वार्ता, बात। ४ वाक्य, जुमला। ५ विवरण, बयान्, तफ़सील। ६ धर्मालोचना, मज़हबी बयान्। ७ उपन्यास विशेष, किसी किस्मका दास्तान्। इसमें पूर्वपीठिका और उत्तरपीठिका रहती है। पूर्व-पीठिका एक कथक कहता है। अनेक श्रोता उसे उत्साह प्रदान करते हैं। कथक वा वक्ता सब कथा कहता है। कथा समाप्त होनेसे उत्तरपीठिका पड़ती

है। इसमें वक्ता और श्रोता दोनों अपनी-अपनी राह लेते हैं। (अव्य०) ८ कथं, कैसे, कहांसे, क्यों।

कथाक्रम (सं० पु०) कथायाः क्रमः प्रसङ्गः, ६-तत्। कथाप्रसङ्ग, गुफ्तगूका आगाज़।

कथाचल (सं० क्लो०) प्रबन्धकल्पनाका चातुर्य, क़िस्सेकी चाल।

कथादि (सं० पु०) ठक् प्रत्ययके लिये पाणिनिका कहा एक शब्दगण। इसमें कथा, विकथा, विश्व-कथा, सङ्कथा, वितण्डा, कुष्ठविद्, जनवाद, जनेवाद, वृत्तिसंग्रह, गुण, गण और आयुर्वेद शब्द पड़ता है।

कथानक (सं० क्लो०) कथयति अत्र, कथ बाहुलकात् आनक्। १ गल्प, कहानी। २ कथाविशेष, कोई छोटा क़िस्सा। वेतालपचीसी और सिंहासनबत्तीसी आदिकी छोटी छोटी कथाओंका नाम कथानक है।

कथानिका (सं० स्त्री०) उपन्यासभेद, किसी क़िस्मकी कहानी। यह कथासे बिलकुल मिलती-जुलती है। केवल प्रधान विषयको अनेक पात्र कहा करते हैं।

कथानुराग (सं० पु०) ध्यान, तवज्जो, बातचीतमें मन लगनेकी हालत।

कथान्त (सं० पु०) वार्ताकी समाप्ति, बातचीतका अख़ीर।

कथान्तर (सं० क्लो०) कथाया अन्तरं अवकाशः। १ कथावसर, बातचीतका मौक़ा। २ अन्य कथा, दूसरी बात। ३ कलह, झगड़ा।

कथापीठ (सं० पु०) कथायाः पीठमिव, उपमि०। कथाका आधार, क़िस्सेकी जड़। कथासरित्सागरके प्रथम लम्बकको 'कथापीठ' कहते हैं।

कथाप्रबन्ध (सं० पु०) कथायाः प्रबन्धः, ६-तत्। गल्पका उल्लेख, क़िस्सेकी बन्दिश, बनी हुई कहानी।

कथाप्रसङ्ग (सं० पु०) कथायाः प्रसङ्गः, ६-तत्। १ नानाविध कथनोपकथन, तरह-तरहकी बातचीत। २ वार्ता, बात। ३ गोष्ठीवचन, गप।

"मिथः कथाप्रसङ्गेन विवादं किल चक्रतुः।" (कथासरित्सागर)

३ विषवैद्य, ज़हरकी दवा करनेवाला, जो ज़हर-मोहरा बेचता हो। (त्रि०) कथायां प्रसङ्गो यस्य, बहुव्री०। ४ अविश्रान्त गल्पकारक, लगातार क़िस्सा कहनेवाला, बेवक़ूफ़। ५ वातुल, पागल, मतवाला।

कथाप्राण (सं० पु०) कथया प्राणिति जीवति, कथा-प्र-अण्-अच्; कथायां प्राणः जीवनोपाया यस्य इति वा। १ कथक, क़िस्सागो, कहानी कहकर काम चलानेवाला। २ नाटकरचयिता, स्वांगकी किताब बनानेवाला।

कथाभास (सं० पु०) असत् तर्कमूलक वाक्यविशेष, झूठी बहसकी एक बात। न्यायमतसे इसे वादी और प्रतिवादी उठाते हैं।

कथामय (सं० त्रि०) कथा-मयट्। कथापूर्ण, क़िस्सेसे भरा हुआ, जिसमें कहानियां रहें।

कथामुख (सं० क्लो०) कथाया आमुखम्, ६-तत्। कथाग्रन्थकी प्रस्तावना, क़िस्सेकी दीबाचा। कथा-सरित्सागरके दूसरे लम्बकका नाम 'कथामुख' है।

कथायोग (सं० पु०) कथायाः योगः, ६-तत्। कथा-प्रसङ्ग, गुफ़्तगू, बातचीत।

"पटुत्वं सत्यवादित्वं कथायोगेन बुध्यते।" (हितोपदेश)

कथारम्भ (सं० पु०) कथायाः आरम्भः, ६-तत्। कथाका आरम्भ, क़िस्सेका आग़ाज़, कहानीकी कहाई।

कथारम्भकाल (सं० पु०) कथाके आरम्भ होनेका समय, जिस वक़्तमें क़िस्सा कहना शुरू करें।

कथालाप (सं० पु०) कथायाः आलापः, ६-तत्। कथनोपकथन, बातचीत।

कथावशेष, कथाशेष देखो

कथावार्ता (सं० स्त्री०) कथा च वार्ता च, द्वन्द्व०। विविध कथा, तरह तरहकी बात-चीत, क़िस्सा-कहानी।

कथाविरक्त (सं० त्रि०) वार्तालापसे अलग रहने-वाला, जो बातचीत नापसन्द करता हो।

कथाशेष (सं० त्रि०) कथा मात्रं शेषो यस्य, बहुव्री०। १ मृत, मुर्दा, जिसके सिर्फ़ बात बाक़ी रहे। (पु०) २ कथासमाप्ति, क़िस्सेका ख़ातिमा।

कथासंग्रह (सं० पु०) आख्यानोंका समूह, कहा-नियोंकी लड़ी।

कथासरित्सागर (सं० पु०) १ कथाकी नदियोंका समुद्र, कहानियोंके दरयावोंका बहर। २ संस्कृत कथाग्रन्थविशेष, कहानियोंकी किसी किताबका नाम। सोमदेव भट्ट नामक जनैक कविने काश्मी-

राधिपति श्रीहर्षदेवकी महिषीके चित्तविनोदार्थ पैशाची भाषासे संस्कृतमें इसे अनुवाद किया था। इसमें कौशाम्बीराज वत्सराजके पुत्र नरवाहन दत्तका चरित्र वर्णित है। गुणाढ्य, सोमदेव और क्षेमेन्द्र देखो।

कथिक (सं० त्रि०) कथ-ठन्। १ कथक, पुराण-वक्ता, किस्से कहनेका पेशा करनेवाला। (हिं०) २ कत्थक, नाचने-गानेवाला।

कथिका (सं० स्त्री०) तक्रादि-साधित खाद्यद्रव्य-विशेष, कढ़ी, महेरी। कढ़ी देखो। यह पाचन, रुच्य, लघु, वह्निदीपन, कफानिलविबन्धघ्न और किञ्चित् पित्तप्रकोपन है। (वैद्यकनिघण्टु)

कथित (सं० त्रि०) कथ-क्त। १ उक्त, कहा हुआ। २ वर्णित, बयान् किया हुआ। ३ उच्चारित, मुंहसे निकाला हुआ। ४ व्याख्यात, समझाया हुआ। ५ प्रतिपादित, साबित किया हुआ। (क्लो०) ६ कथन, बातचीत। ७ प्रबन्ध विशेष, मृदङ्गका कोई बोल। (पु०) ८ परमेश्वर, विष्णु।

कथितपद (सं० क्लो०) कही हुई बात, दोहराव।

कथितपदता (सं० स्त्री०) पुनरुक्ति, दोबारा कहाई। यह अलङ्कारशास्त्रोक्त एक दोष है। एकार्थवाचक दो शब्द किसी स्थानमें पड़नेसे कथितपदता आती है।

"रतिलीलाश्रमं भिन्ते सलीलमनिलोवहन्।" (साहित्यदर्पण)

उक्त पदमें लीला शब्द निरर्थक है। क्योंकि रति-श्रम कहनेसे ही अर्थ निकल सकता था। फिर अनेक स्थलमें यह दोष गुणकी भांति काम देता है—

"कथितञ्च पदं पुनः।
विहितस्यानुवाद्यत्वे विषादे विस्मये क्रुधि॥
दैन्येऽथ लाटानुप्रासे ऽनुकम्पायां प्रसादने।
अर्थान्तरसंक्रमितवाच्ये हर्षे ऽवधारणे॥" (साहित्यदर्पण)

विहितानुवाद, विषाद, विस्मय, क्रोध, दीनता, लाटानुप्रास, अनुकम्पा, प्रसादन, अर्थान्तरवाच्य, हर्ष और अवधारणमें कथितपदता—दोष नहीं—गुण है।

कथीकृत (सं० त्रि०) अकथा कथा सम्पद्यमाना क्रियतेऽत्र, कथा-च्वि-कृ-क्त। कथामात्रमें अवशिष्टकृत, मृत, मुर्दा। "अवगम्य कथीकृतं वपुः।" (कुमार ४।१३)

कथीर (हिं० पु०) कस्तीर, रांगा।

कथील, कथीर देखो।

कथीला, कथीर देखो।

कथोदय (सं० त्रि०) कथायां उदयः प्रकाशो यस्य, बहुव्री०। १ कथासे उत्पन्न, कहानीसे निकाला हुआ। (पु०) २ कथाका उत्थापन, किस्सेका उठान।

कथोद्घात (सं० पु०) नाटककी एक प्रस्तावना, स्वांगका शुरू।

"सूत्रधारस्य वाक्यं वा समादायार्थमस्य वा।
भवेत् पात्रप्रवेशश्चेत् कथोद्घातः स उच्यते॥" (साहित्यदर्पण)

प्रथम अभिनेता जब सूत्रधारके वाक्य वा वाक्यके किसी अर्थको पकड़ प्रवेश करता, तब कथोद्घात पड़ता है। रत्नावलीमें सूत्रधारके वाक्यको अवलम्बन और वेणीसंहारमें सूत्रधारके वाक्यार्थको ग्रहणकर पात्रका प्रवेश देखाया है।

कथोपकथन (सं० क्लो०) कथायां उपकथनम्, ७-तत्। कथापर कथा, विविध वार्ता, दो चार लोगोंका एकत्र हो किसी विषयपर परामर्श वा आन्दोलन, बातचीत।

कथ्य (सं० त्रि०) कथ-य। कहनेके उपयुक्त, बता देने लायक। "भरतस्य समीपे तेनाहं कथ्यः कथञ्चन।" (रामायण २।२७)

कथ्यमान (सं० त्रि०) कथ कर्मणि शानच्। कहा जानेवाला, जिसे कोई कह रहा हो।

कद् (सं० अव्य०) कहां, किस जगह।

कद (सं० पु०) कं जलं ददाति, क-दा-क। १ मेघ, बादल। (त्रि०) २ जलदाता, पानी देनेवाला। ३ सुखदायक, आराम बख्शनेवाला।

कद (हिं० स्त्री०) १ ईर्षा, नाराजी, अनबन। २ हठ, जिद। (अव्य०) ३ कदा, कब, किस वक्त।

क़द (अ० पु०) डीलडौल, लम्बाई-चौड़ाई।

कदक (सं० पु०) कदः मेघइव कायति प्रकाशते, कद-कै-क। चन्द्रातप, चंदोवा।

कदक्षर (सं० क्लो०) कु कुत्सितं अक्षरम्, कोः कदा-देशः। १ कुत्सित अक्षर, खराब हर्फ, बुरी लिखा-वट। (त्रि०) २ कुत्सित अक्षर लिखनेवाला, बदखत, जो बुरे हर्फ बनाता हो।

कदग्नि (सं० पु०) कुत्सितो अग्निः, कोः कदादेशः।

१ मन्दाग्नि, थोड़ी आग। (त्रि०) २ मन्दाग्नियुक्त, थोड़ी आग रखनेवाला।

कदधव (हिं०) कदध्वा देखो।

कदध्वा (सं० पु०) कुत्सितो ऽध्वा, कोः कदादेशः। निन्दित पथ, बुरी राह। इसका संस्कृत पर्याय—व्यध्व, दुरध्व, विप और कापथ है।

कदन (सं० क्लो०) कद्यते, दुःखं प्राप्यते ऽनेन, कद-णिच्-ल्युट् घटादित्वात् नहृद्धिः। १ पाप, गुनाह। २ मर्द, मलाई, रौंदाई, कुचलाई। ३ युद्ध, लड़ाई। ४ मारण, विनाश, बरबादी।

कदनप्रिय (सं० त्रि०) विनाशका अनुराग रखने-वाला, जिसे मारकाट अच्छी लगे।

कदत्तनाद—मद्राजके मलवार जिलेके मध्यका एक प्राचीन राज्य। यह अक्षा० ११° ३६´ से ११° ४८´ उ० और देशा० ७५° ३६´ से ७५° ५२´ पू०के मध्य अवस्थित है। कदत्तनाद राज्य समुद्रोपकूलसे पश्चिमघाटके पश्चिमपार्श्व पर्यन्त फैल रहा है। इसके समुद्रतीरवर्ती स्थान बहुत उपजाऊ हैं। पूर्व और पार्वत्यप्रदेशमें वन यथेष्ट है। इसमें इलायची अधिक होती है। १५६० ई०को किसी नायक सरदारने यह राज्य स्थापित किया। उक्त व्यक्ति कोलात्री राज्यके राजा तेक्कालङ्कुरके निकटसे आये थे। अन्तमें टीपू सुलतान्ने इस वंशको राज्यसे दूरीभूत किया। फिर १७५२ ई०में अंगरेज सरकारने प्राचीन वंश-धरको राज्यका अधिकार सौंपा। इसकी राजधानी कत्तिपुरम् है।

कदन्न (सं० क्लो०) कुत्सितं अन्नम्, कोः कदादेशः। १ कुत्सितान्न, खराब खाना। २ कदर्यान्न, मोटा अनाज। शास्त्रनिषिद्ध और अपथ्य अन्नको कदन्न कहते हैं। "हविर्विना हरिर्याति विना पीठेन माधवः।

कदन्नैः पुण्डरीकाक्षः प्रहारेण धनञ्जयः॥" (उद्भट)

कदन्नभोजी (सं० त्रि०) कुत्सितं अन्नं भुङ्क्ते, कदन्न-भुज-णिनि कोः कदादेशः। जघन्य अन्न भोजन करनेवाला, जो खराब अनाज खाता हो।

कदपत्य (सं० क्लो०) कुत्सितं अपत्यम्, कोः कदा-देशः। १ कुपुत्र, खराब बेटा, बुरी औलाद। (त्रि०) २ अतिशय मन्द पुत्रवाला, जिसके बहुत खराब बेटा रहे।

कदपा—मन्द्राज प्रान्तका एक ज़िला। इससे उत्तर करनूल-ज़िला, पूर्व नेल्लूर, दक्षिण उत्तर अरकट तथा कोलार ज़िला और पश्चिम बेल्लारी ज़िला है। भूमिपरिमाण ८७४५ वर्ग मील पड़ता है।

इस ज़िलेका पूर्व एवं दक्षिण अंश पार्वतीय है। दक्षिण-पश्चिम भाग समतल लगता है। दक्षिण-पूर्व-भागमें हिन्दुवोंका पुण्य शैल त्रिपती विद्यमान है। पालकोंडा और शेषाचल नामक पहाड़ इस ज़िलेको दो भागोंमें विभक्त करते हैं—निम्न भाग और उच्च भाग। उक्त दोनों पर्वत पेन्नार (पिनाकिनी) नदी पर्यन्त विस्तृत हैं। पालकोंडिका अर्थ 'दुग्धशैल' है। बोध होता—यहां सुन्दर गोचारणक्षेत्र रहनेसे उक्त नाम पड़ा होगा। इस ज़िलेमें पेन्नार नदी ही प्रधान है। इस नदीकी दो शाखा हैं—कुण्डेर और सगलेर। सिवा इनके पापघ्नी, बेरेर और चित्रवती नाम्नी दूसरी भी कई नदी पड़ती हैं। यहां वनकी कोई कमी नहीं। वनमें अच्छी अच्छी लकड़ी मिलती है।

खनिज पदार्थोंमें लोहा, तांबा, चूनेका कङ्कड़, स्लेट और बिल्लौरी पत्थर निकलता है। कदपा नगरसे तीन-चार कोस उत्तर पिनाकिनी नदी किनारे चेण्णूरके पास हीरा मिला है। उद्भिज्जमें चना, कम्बु, धान, गेहूं, तम्बाकू, मिर्चा, नानाप्रकार तेलबीज, इक्षु, नील, केसर, कपास और पाट प्रभृति उपजता है।

इतिहास—पूर्वकालको यह ज़िला चोलराज्यके अन्तर्गत था। यहां श्रीरामचन्द्रके आगमनकी नाना-प्रकार किंवदन्ती प्रचलित है।

कदपामें बहुत दिन हिन्दुवोंका राज्य रहा। स्थानीय पहाड़ोंपर अनेक दुर्भेद्य दुर्ग रहनेसे मुसलमान सहज ही इसे जीत न सके थे। अन्तको अनेक कष्ट उठा उन्होंने कदपा जय किया। १५६५ ई०को तालि-कोटकी दुर्घटनाके पीछे कर्णाटक जीत मुसलमान कदपाके बीचसे आते जाते रहे। उसी समय गोल-कुण्डेके अधीनस्थ प्रधान प्रधान मुसलमान सामन्त नाना स्थान अपने भागयोग बनाने लगे। उनमें

गुरुम्-कुण्डके किसी नवाबने कदपा अधिकार किया। यह नवाब अत्यन्त पराक्रान्त हो गये थे। अन्तको इन्होंने अपने नामसे मुद्रादि भी चला दिये।

चिरदिन कोई विषय समान नहीं रहता। यहांके मुसलमानोंकी चमता क्रमशः घटने लगी। १६४२ ई०को महाराष्ट्र-वीरोंने यह स्थान जीत लिया था। महावीर शिवजीने ब्राह्मणोंको यहांके दुर्गकी रक्षाका भार सौंपा। कुछ दिन बाद मुसलमानोंने इसे फिर जीता था। नबी खान् नामक एक पठान कदपाके स्वाधीन नवाब बने। इसके पीछे क्रमान्वयमें तीन नवाबोंने प्रबल प्रतापसे राज्य शासन किया था। १७३२ ई०को अन्तिम नवाबसे महाराष्ट्रोंका विवाद बढ़ा। उसी समयसे यहांके नवाबोंकी चमता घट चली। १७५० ई०को कदपाके नवाब कर्णाटिकके युद्धकाण्डमें लिप्त थे। दूसरे वर्ष उन्होंने निज़ाम मुज़फ़्फ़र जङ्गके विरुद्ध षड़यन्त्र किया। उसीसे लुकरेड्डीपल्ली नामक गिरिपथपर निज़ाम मारे गये। १७५७ ई०को महाराष्ट्रोंने कदपा नगर जीत लिया था। किन्तु उसी समय निज़ामकी फ़ौज कदपाभिमुख अग्रसर होनेसे महाराष्ट्र कुछ कर न सके।

महिसुरमें हैदर अली प्रबल पड़ गये थे। १७६९ ई०को उन्होंने अंगरेजोंके साथ युद्ध रोक कदपा जीतनेका प्रबन्ध बांधा। किन्तु हैदर अलीने समझा, कि कदपा जीतना बहुत सहज न था। इसीसे उन्होंने गुप्त भावमें निज़ामके साथ सन्धि की। उक्त सन्धिके अनुसार ठहर गया—दोनों मिलकर कर-मण्डल उपकूल जीतें और जयलब्ध जनपदादिके मध्य हैदर अली कदपा ले लें। अनेकवार युद्ध हुआ था। १७८२ ई०को हैदर अली मर गये। कदपा-वाले अन्तिम नवाबके किसी वंशधरने सिंहासन पानेका दावा किया था। कितनी ही अंगरेज़ी फ़ौज उनको साहाय्य देने पर राज़ी हुई। किन्तु उभय दलके सामने आते ही मुसलमानोंने अंगरेज़ी सिपाहियोंको अन्यायरूपसे मार डाला। इसके बाद कदपामें कुछ दिन तक कोई झगड़ा न उठा। १७९० ई०को निज़ामने यह स्थान उद्धार करनेको सविशेष चेष्टा लगायी थी।

१७९२ ई०के सन्धिपत्रानुसार टीपू सुलतानने समस्त कदपा ज़िला निज़ामको सौंप दिया। फिर निज़ामने रेमण्ड साहबको जायगिर प्रदान किया। उसके बाद कई वर्षतक पलिगारोंने कदपा दुर्ग अधिकार करनेको अनेक चेष्टा लगायी थी। १७९९ ई०में निज़ामने अपना देय धन परिशोधके लिये अंगरेज़ोंको कदपा दे डाला। १८०० ई०से यह ज़िला अंगरेजोंके हाथ आया। इसी समय कदपाका पार्वतीय स्थान पलिगारोंके अधिकारमें रहा। वह मध्य मध्य बड़ा उत्पात उठाते थे। दस्युवृत्ति द्वारा उनकी एक प्रकार जीविका चलते रही। प्रथम अंगरेज़ उन्हें दबा न सके थे। किन्तु क्रमशः नाना प्रकार उपाय अवलम्बन करने पर पलिगारोंने वश्यता मानी। उनके वंशधर आज भी कदपाके नाना स्थानोंमें मौरूसी ज़मीन् पाये हैं। १८३२ ई०को किसी मसजिदपर यहांके पठानों और अंगरेजोंसे झगड़ा लग गया था। उससे यहांके समस्त मुसल-मानोंने विद्रोही हो सब-कलक्टर मैकडोनल्डको मार डाला। इस घटनाके चार वर्ष पीछे यहांके किसी पलिगारने गवरनमेण्टसे मनोमत वृत्ति न पानेपर कोई दो हज़ार लोग संग्रह कर अंगरेजोंके साथ युद्ध छेड़ा था। कईवार युद्ध होनेपर विद्रोहियोंमें कोई हत तथा कोई आहत हुआ और कोई भाग गया। उस समयसे कदपामें शान्ति स्थापित हुई।

यहां हिन्दू और मुसलमान रहते हैं। हिन्दुवोंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। प्रायः सकल ब्राह्मण शैव और चात्रिय वैष्णव हैं। सिवा इसके चनदी, येरुकल, चेञ्चुवर और सुगला प्रभृति कई प्रकारकी दूसरी जातियां भी बसती हैं।

कदपा ज़िलेके प्रधान नगर यह हैं—कदपा, बदतोल, प्रोद्दतुर, जम्मलमदगु, कदिरी, दमनपल्ली, पुलिवेन्दल, रायचोट, वेम्पल्ली और वयलपद।

२ कदपा नगर। यह नगर अक्षा० १४° २८´ ४९´´ उ० और देशा० ७८° ५१´ ४७´´ पू०पर अवस्थित है।

कदपा शब्द संस्कृत कृपा शब्दका अपभ्रंश है। कोई कहता—गदप शब्दसे 'कदपा' बना है। तैलङ्ग गदप शब्दका अर्थ 'द्वार' है। तिरुपती जानेका पथ रहनेसे ही गड़प (कड़पा) नाम पड़ा है।

विजयनगरवाले राजावोंके समय कदपाकी अच्छी सुखसमृद्धि रही। उस समयका प्राचीन नगर अब देखनेमें नहीं आता। उसीके पार्श्वपर कदपा नगर स्थापित हुआ है। ई० १८वें शताब्दके प्रारम्भमें कुदपाके नवावने यहां स्वतन्त्र राजधानी डाली थी।

कदब—महिसुर-राज्यके तुमकुर ज़िलेकी एक तहसील। इसकी भूमिका परिमाण ४८६ वर्गमील है। प्रधान नदी शिमशा उत्तरपूर्वसे दक्षिणमुख बहती है। कदव और गन्धि नामक दोनों स्थलोंपर इसी नदीके गर्भमें दो ह्रद विद्यमान हैं। इस जिलेका सदर मुकाम गब्बी है। उसमें अदालत और थाना मौजूद है।

इस जिलेमें दवीघाटेके निकट एक प्रकारका खनिज पदार्थ मिलता है। अंगरेज़ीमें उसे हारन-ब्लेण्ड (Horn-blend) कहते हैं। यह धातु काचकी शलाका-जैसा लम्बा और ढालू रहता है। इसके तीन रङ्ग हैं—कृष्ण, हरित् और श्वेत। अंगरेजीमें कृष्णवर्णको हारनब्लेण्ड (Horn-blend), हरिद्वर्णको आक्टिनोलाइट (Actinolite) और श्वेतवर्णको ट्रिमोलाइट (Tremolite) कहते हैं। इस पदार्थमें मेगनेशिये, चूने और लोहेका अंश विद्यमान है।

इस ज़िलेके कदब ग्राममें श्रीवैष्णव ब्राह्मणोंका एक उपनिवेश है। इसे लोग अनेक दिनोंका प्राचीन ग्राम कहते हैं। ग्राममें एक बृहत् सरोवर विद्यमान है। शिमशा नदीमें बांध डालनेसे ही उक्त सरोवर निकला है। प्रवाद है—रामचन्द्र लङ्का जीतने पीछे प्रत्यावर्तनके समय यह बांध बना गये थे।

कदभ्यास (सं० पु०) कुत्सितोऽभ्यासः, कर्मधा०। मन्द अभ्यास, बुरी आदत।

कदम (हिं० पु०) १ कदम्बवृक्ष, एक पेड़। कदम्ब देखो। २ तृणविशेष, एक घास।

क़दम (अ० पु०) १ पद, पैर। २ फलांग, डग, पैरका फ़ासला। ३ धूलि वा पङ्कपर अङ्कित पदचिह्न, पैरका निशान्। ४ अश्वगतिविशेष, घोड़ेकी एक चाल। इसमें घोड़ा खूब जमकर पैर उठाता और सवार बड़ा आराम पाता है। न तो उसका शरीर हिलता और न काई धक्का ही लगता है। पहले पहल घोड़ेको क़दम ही सिखाते हैं। लगाम कड़ी न रखनेसे यह चल बिगड़ जाती है।

क़दमचा (फ़ा० पु०) १ पदार्पण करनेका स्थान, पैर रखनेकी जगह। २ खुड्डी।

क़दमवाज़ (अ० पु०) क़दम चलनेवाला घोड़ा।

कदमा (हिं० पु०) मिष्ट खाद्यद्रव्यविशेष, एक मिठाई। यह कदम्बके पुष्प-जैसा बनता है। बङ्ग-देशके राढ़ अञ्चलमें कदमाका प्रचुर व्यवहार है।

कदम्ब (सं० पु०) कदि-अम्बच्। कृकदिकडिकटिभ्यो ऽम्बच्। उण् ४।८२। १ वृक्षविशेष, कदमका पेड़। (Anthocephalus Cadamba) इसका संस्कृत पर्याय—नीप, प्रियक, हरिप्रिय, कादम्ब, षट्पदेष्ट, प्रावृषेण्य, हलिप्रिय, वृत्तपुष्प, सुरभि, ललनाप्रिय, कादम्बर्य, सीधुपुष्प, महाढ्य और कर्णपूरक है। इसको हिन्दी एवं बंगलामें कदम, कर्णाटीमें कदवेटु, तामिलमें वेल्लकदम्ब, तैलङ्गमें कोदम्ब, रुद्रथा, कदिमोमा या कदपचेतु कहते हैं।

यह सुन्दर वृक्ष भारतवर्ष, ब्रह्म और सिंहलमें उत्पन्न होता है। उंचाई ७०से ८० फ़ीट तक रहती है। कदम्ब बहुत शीघ्र बढ़ता है। पहले दो-तीन वर्षतक सालमें यह कोई १० फ़ीट ऊंचा पड़ता है। किन्तु १०।१२ वर्ष बाद बाढ़ घटने लगती है। कदम्ब सदाबहार पेड़ है। पत्र महुवेके पत्रोंसे मिलते, किन्तु कुछ क्षुद्र और भासुर लगते हैं। कदम्ब वर्षा ऋतुमें फूलता है। पुष्प गोल और पीतवर्ण होते हैं। किन्तु पीत किरण झड़ जानेसे वही पुष्प गोल एवं हरित्वर्ण फल बन जाते हैं। फल पकनेपर लाल निकलते हैं। लोग उन्हें अचार या चटनीमें व्यवहार करते हैं। फलोंका स्वाद खटमिट्ठा लगता है। कभी-कभी कदम्बकी पत्ती मवेशियोंको खिलायी जाती है। काष्ठ मृदु एवं श्वेतवर्ण रहता, किन्तु

उसमें कुछ कुछ पीतत्व झलकता है। उससे कछार और दारजिलिङ्गमें चायके सन्दूक बनते हैं। कदम्बसे कड़ियों और बरंगोंका भी काम निकलता है। कारण इसका काष्ठ सुलभ और लघु रहता है। फिर कदम्बके काष्ठसे नौका और नानाविध उपयोगी वस्तु बनाते हैं।

भावप्रकाशके मतसे यह मधुर, कषाय एवं लवणरस, गुरु, विरेचक, विष्टम्भकारी, रुच और कफ, स्तन्य तथा वायुवर्धक है।

नीप, महाकदम्ब, धाराकदम्ब, धूलिकदम्ब, कदम्बक प्रभृति कदम्बके विविध भेद हैं।

कदम्ब फल श्रीकृष्णको बहुत प्रिय है। इसीसे झलनेमें कदम्बके पुष्प व्यवहृत होते हैं। कदम्बके वृक्षसे एक प्रकारका मद्य निकलता, जिसका नाम कादम्बरी पड़ता है।

विष्णुपुराणमें लिखा है—बलरामको गोपगोपियोंके साथ घूमते देख वरुणने वारुणी (शराब)से कहा था—हे मदिरे! तुम जिनके अभिलाषका पात्र हो, उन्हीं अनन्तदेवके उपभोगार्थ गमन करो। वरुणकी बात सुन वारुणी वृन्दावनोत्पन्न कदम्ब वृक्षके कोटरमें आ पहुंचीं। बलरामको घूमते-घूमते उत्तम मदिराका गन्ध मिला था। इससे उनका पूर्वानुराग जाग उठा। कदम्ब वृक्षसे विगलित मद्य देख वह परम आनन्दित हुये थे। फिर गोपगोपियोंने गान करना आरम्भ किया। बलरामने उनके साथ साथ मदिरा पी।

कादम्बरी मद्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धपर हरिवंशमें इसप्रकार लिखा है—किसी दिन बलराम एकाकी शैलशिखरपर घूमते-घूमते एक प्रफुल्ल कदम्बतरुकी छायामें बैठ गये। फिर अकस्मात् मदगन्धयुक्त वायु चलने लगा। वायुवश मदगन्ध उनके नासाविवरमें प्रविष्ट होते ही रातको मद्यपान करनेसे प्रभातके समय मुख सूखनेकी भांति मदपिपासाका वेग बढ़ा। वह कदम्ब वृक्षकी ओर देखने लगे। वर्षाका जल उस प्रफुल्ल कदम्बके कोटरमें पड़ मद्य बन गया था। बलराम अत्यन्त तृष्णाकुल हो वह मदवारि पुनः पुनः पान करने लगे। उस वारिपानसे बलराम मत्त हो गये। शरीर विचलित पड़ा था। उनका शारदीय सुखशशी ईषत् चञ्चल लोचनसे घूमने लगा। उस अमृतवत् देवानन्द-विधायिनी वारुणीका नाम कदम्बके कोटरमें उत्पन्न होनेसे ही कादम्बरी पड़ा है।

"कदम्बकोटरे जाता नाम्ना कादम्बरीति सा।" (हरिवंश ९६ अ०)

२ सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़। ३ देवताड़वृक्ष। ४ माक्षिक, शहद। ५ जगत्, दुनिया।

"स एव सौम्य नित्यं राजते मूले विश्वकदम्बस्य परमो वै पुरुष आत्मा।" (श्रुति)

(क्लो०) ६ समूह, झुण्ड।

कदम्ब (कादम्ब)—दाक्षिणात्यकी एक प्राचीन पराक्रान्त जाति। किसी समय इस जातिके लोग दक्षिण-भारतमें अतिशय प्रबल हो गये थे। उस समय तापी नदीके दक्षिणसे गोपराष्ट्र (गोआ) पर्यन्त सकल देश कदम्ब राजावोंके अधिकारमें रहा।

दाक्षिणात्यका इतिहास और शिलालेख पढ़नेसे कदम्बोंका कितना ही वृत्तान्त ज्ञात होता है। किन्तु इस बातका आज भी कोई ठिकाना नहीं—कदम्ब दक्षिण भारतके आदिम निवासी हैं या नहीं, आर्य हैं अथवा अनार्य और किस सम्प्रदायका मानते हैं। किसी-किसी जातितत्त्वविद्के मतसे यह दाक्षिणात्यके आदिमनिवासी हैं। वर्तमान कुडम्बोंके नामसे इनका बड़ा सम्बन्ध लगा है। किन्तु विवेचना करनेसे कुडम्ब स्वतन्त्र अनार्य जातिके लोग समझ पड़ते हैं। इसका कुछ भी निदर्शन वा प्रमाणादि नहीं मिलता—पराक्रान्त कदम्बोंके साथ उनका कोई सम्बन्ध लगता है। फिर कदम्बोंको उत्तर भारतके प्राचीन आर्योंकी शाखा भी कह नहीं सकते। किन्तु किसी समय सभ्यताके बल इन लोगोंका आर्योंमें समान आसन अधिकार करना सच है।

कदम्ब जातिके सकल पूर्वपुरुष शैव रहे, वह अपर देवताका प्राधान्य मानते न थे। इसीसे पुराणकारोंने कदम्बोंको असुर कहा है।

स्कन्दपुराणके तापीखण्डमें किसी कदम्ब राजाका असुर नामसे उल्लेख है। उन असुर-राजका विवरण

यह है—कदम्बासुर अतिशय शिवभक्त रहे। उनके निकट एक शिवलिङ्ग था। उस शिवलिङ्गके कारण देवता भी उनका कुछ कर न सकते। समय-समय देवतावोंको उनसे भय मानना पड़ता था। कृष्णने इन्द्रसे मुनिका रूप बना कदम्बके पास जानेको कहा। इन्द्र मुनिका रूप बना कदम्बके पास पहुंचे थे। इधर कृष्ण सुन्दर रमणीका रूप रख गाते गाते कदम्बासुरको देख पड़े। विजनमें रमणीकी मूर्ति देख कदम्ब विमुग्ध हो गये और मुनिरूपी इन्द्रके निकट शिवलिङ्ग छोड़ अपनी मनोमोहिनीकी ओर दौड़ पड़े। उसी समय सहायहीन देख इन्द्रने वज्र फेंक उन्हें मार डाला था। कदम्ब चिर दिनके लिये भूमिशायी हुये। किन्तु उनका पवित्र आत्मा शिवमय बन गया।

कदम्बोंको असुर बतानेका कारण क्या है? बोध होता—पहले यह लोग तापी नदीतीर असभ्य अवस्थामें रहते और दूसरे हिन्दुवों पर अत्याचार करते थे। इसीसे पुराणकर्तावोंने इन्हें असुर कहा है। ठीक मालूम नहीं पड़ता—किस समय दक्षिणदेशमें सर्वप्रथम कदम्बोंने राजत्व आरम्भ किया था। दक्षिण-देशीय प्रवाद और कर्णाटी ग्रन्थके अनुसार कदम्बोंके प्रथम राजा त्रिनेत्रकदम्ब रहे। दक्षिणदेशके ऐतिहासिक उन्हें १६८ ई०का व्यक्ति बताते हैं।

मयूरवर्मचरित्र प्रभृति कई दक्षिण-देशीय संस्कृत ग्रन्थोंमें कदम्बराजके सम्बन्धपर इस प्रकार लिखा है—

त्रिपुरासुरके निधनकाल महादेवके ललाटसे एक बिन्दु घर्म कदम्बकोटरमें गिर पड़ा था। उसी बिन्दुसे किसी त्रिनेत्र पुरुषने जन्मग्रहण किया। कदम्बके कोटरमें जन्म होनेसे उनका नाम त्रिनेत्र वा त्रिलोचन कदम्ब रखा गया। वही कदम्बवंशके आदिपुरुष रहे। उन्होंने वनवासी* (जयन्तीपुर) नामक जनपदमें अपनी राजधानी स्थापित की।† उनके पुत्र मधुकेश्वर, मधुकेश्वरके पुत्र मल्लिनाथ और मल्लिनाथके पुत्र चन्द्रवर्मा थे। चन्द्रवर्माके दो पुत्र रहे। उनमें एकका २य चन्द्रवर्मा और दूसरेका नाम पुरन्दर था। २य चन्द्रवर्माके दो पत्नी रहीं। एक पत्नीको वह वल्लभीपुरके देवालयमें छोड़ आये थे। उन्हींके गर्भसे मयूरवर्माका जन्म हुआ। चन्द्रवर्मा वनवासमें ही मर गये। पुरन्दरके सन्तान न रहनेसे मयूरवर्मा वनवासीके राजा बने। वही सर्वप्रथम उत्तरभारतसे पश्चिम उपकूलको ब्राह्मण ले गये थे। उसी समयसे ब्राह्मण वनवासीमें रहने लगे। मयूरवर्माके पुत्र २य त्रिनेत्रकदम्ब रहे। उन्होंने चण्डालराजके हस्तसे उद्धार कर गोकर्णतीर्थमें ब्राह्मणोंको बसाया था। उन्हींके राजत्वकाल ब्राह्मणोंने हैव और तुलुवमें जा उपनिवेश डाला।

शिलालिपिकी वर्णनाके अनुसार मयूरवर्मा ही वनवासीके प्रथम राजा रहे। शिव और पृथिवीसे उनका जन्म हुआ था। शिलालिपिमें वनवासीके कदम्ब राजावोंकी वंशकारिका इसप्रकार लिखी है—

मयूरवर्मा (१म)
|
कृष्णवर्मा
|
नागवर्मा (१म)
|
विष्णुवर्मा
|
मृगवर्मा
|
सत्यवर्मा
|
विजयवर्मा
|
जयवर्मा
|
नागवर्मा (२य)
|
शान्तिवर्मा (१म)
|
कीर्तिवर्मा (१म)
|
आदित्यवर्मा
|
चट्ट, चट्टय वा चट्टम
|
जयवर्मा (२य) वा जयसिंह
|

* वनवासी-जनपद पुराणोंमें वनवासक वा वानवासक नामसे अभिहित है।

† किसीके मतमें महादेव और पार्वतीसे त्रिलोचनकदम्बका जन्म हुआ था
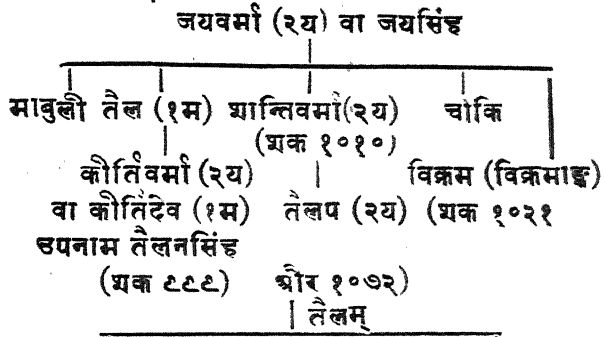
इसके सिवा शिलालेखमें दूसरे भी कई कदम्ब राजावोंका नाम मिला है—

कुण्डमरस वा सत्याश्रय (शक ९४१),—२य मयूर-वर्मा (शक ९५६ और ९६६),—चामुण्डराय (शक ९६७ और ९७०),—हरिकेशरी (शक ९७७),—३य मयूर-वर्मा (शक १०५३)।

शिलालेख कतिपय दूसरे महामण्डलेश्वर कदम्ब राजावोंके उल्लेखसे खाली नहीं। महामण्डलेश्वरोंकी क्षमता राजावोंसे हीन रही। वह भारतवर्षके वर्तमान प्रधान प्रधान सरदारोंकी भांति क्षमताशाली थे। उनके सम्मानार्थ पेमंट्टि नामक वाद्ययन्त्र बजता और हनूमान-चिह्नित ध्वज उड़ता था। वह सिंह-चिह्नित स्वर्णमुद्रा (अशरफी या मोहर) अपने व्यवहारमें लाते रहे।

वर्तमान बेलगांव नामक ज़िलेमें पहले कई कदम्ब राज्य करते थे। उनकी राजधानी पलाशिका (वर्तमान हालसी) रही। यहांके कदम्ब राजावोंमें काकुस्थवर्मा और मृगेशवर्मा ही प्रधान थे। वह आङ्गिरस-गोत्रीय रहे। काकुस्थ सम्भवतः ३६० शकमें विद्यमान थे। शिलालेखमें काकुस्थवर्माके कुछ वंशधरोंका नाम मिलता है—
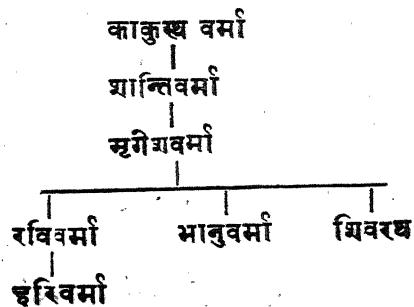
फिर चालुक्य प्रबल हुये। कदम्बवंश नीचे गिर गया था। चालुक्यराज कीर्तिवर्माकी शिलालिपिमें इसका कितना ही परिचय पाते हैं।

वनवासी वा जयन्तीपुरके कदम्बराजवंशका अधः-पतन होते ही गोपकपुर (गोवा)में दूसरे किसी वंशने अनेक दिनों राज्य किया था। यहांके कदम्ब राजा षष्ठदेवके ४६४८ कल्यब्दकी एक शिलालिपि निकली है। इनका अपर नाम शिवचित्त था। इनके समय गोपकपुरमें गोपेश्वरका मन्दिर रहा। (Fleet's Dynas-ties of the Kanarese Districts p. 89)

प्राचीन कदम्ब राजावोंसे भारतके अपरापर नरेशोंका सम्बन्ध था। जयकेशी नामक एक कदम्ब राजकुमार रहे। उन्होंने विक्रमादित्य षाड़वमल्लकी कन्यासे विवाह किया। षाड़वमल्लके साथ उनकी विशेष बन्धुता भी थी। जयकेशीकी कन्या मैनल-देवीके साथ अनहिलवाड़के राजा कर्णका विवाह हुआ। उन्हींके गर्भसे विख्यात जयसिंह सिद्धराजने जन्म लिया था। (कुमारपालचरित ११।६६).

कदम्बक (सं० क्लो०) कदम्ब संज्ञायां कन्। १ समूह, जखीरा, झुण्ड। "कदम्बकं वातमजं मृगाणाम्।" (भट्टि) (पु०) २ देवताड़ वृक्ष। ३ हरिद्रा, हलदीका पेड़। ४ सर्षप वृक्ष, सरसोंका पेड़। ५ दारुहरिद्रा, दारु-हलदी। ६ अश्वके पादका एक रोग, घोड़ेके पैरकी बीमारी। अश्वके खुरतलमें कदम्बके फूल जैसा उठने-वाला मांसाङ्कुर कदम्बक कहाता है। यह श्लेष्मा और शोणितसे निकलता है। (जयदत्त)

कदम्बका (सं० स्त्री०) कलहंसी, राजहंसिनी।

कदम्बकोरकन्याय (सं० पु०) कदम्बके केशरसमूहका न्याय, कदम्बके रेशेकी चाल। कदम्ब पुष्पकी चारो ओर जैसे केशर एक साथ उठता, वैसे ही केवल एक शब्दसे एककाल बहुतसे शब्द निकलनेपर कदम्ब-कोरकन्याय लगता है।

कदम्बगोलकन्याय (सं० पु०) कदम्बके गोलकका न्याय, कदम्बके गोलेकी चाल। कदम्ब गोलाकार होता है। उसके गात्रकी चारो ओर केशरसमूह भी समभावसे बढ़ा करता है। इसलिये क्षुद्र और बृहत्

सकल ही अवस्थामें उसका गोलभाव रहता है। ऐसे ही किसी वस्तु वा विषयका एक भाव बना रहनेसे 'कदम्बगोलकन्याय' समझा जाता है।

कदम्बद (सं॰ पु॰) कदम्बदो वनर्षे क। सर्षप, सरसों।

कदम्बनिर्यास (सं॰ पु॰) कदम्बका वेष्टक, कदम्बका सत।

कदम्बपुष्प (सं॰ पु॰) १ हरिद्रु वृक्ष, दारुहलदीका पेड़। (क्ली॰) २ कदम्बकुसुम, कदमका फूल।

कदम्बपुष्पगन्ध (सं॰ पु॰) कलमशालि, एकप्रकारका धान।

कदम्बपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) कदम्बस्येव पुष्पमस्यास्ति, कदम्बपुष्प अर्श आदित्वात् अच्-टाप्। मुण्डितिका वृक्ष, मुण्डीका पेड़।

कदम्बपुष्पिका, कदम्बपुष्पी देखो।

कदम्बपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) कदम्बपुष्पमिव पुष्पमस्याः, कदम्बपुष्प-ङीप्। महाश्रावणिका, गोरखमुण्डी।

कदम्बवादी (सं॰ पु॰) कदम्ब इति वादः संज्ञा अस्त्यस्य, कदम्बवाद-णिनि। नीप जातीय एक कदम्ब।

"कदम्बवादिनो नीपान् दृष्ट्वा कण्टकितैरिव।
समन्ततो भाजमानं कदम्बककदम्बकैः।" (काशीखण्ड)

कदम्बवायु (सं॰ पु॰) सुगन्धवायु, खुशबूदार हवा।

कदम्बा, कदम्बी देखो।

कदम्बानल, कदम्बवायु देखो।

कदम्बिका (सं॰ स्त्री॰) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कदम्बी (सं॰ स्त्री॰) कदम्ब-ङीष्। देवदाली लता। देवदाली देखो।

कदर (सं॰ क्ली॰) कं जलं दृणाति दारयति नाशयति इत्यर्थः, क-दृ-अच्। १ पायसविशेष, जमा हुआ दूध। २ क्षुद्ररोगविशेष, टांकी, गोखरू। कङ्कर एवं कण्टक प्रभृति द्वारा पदतलमें चत पड़नेपर कुपित वायु पित्त, कफ, मेद तथा रक्तको दूषित बना वेदना और स्रावयुक्त बेरकी गुठली-जैसी जो गांठ उठाता, वही रोग कदर कहाता है।

चिकित्सा—अस्त्र द्वारा कदरको निकाल तप्त तैल तथा अग्निसे उक्त स्थान जला देना चाहिये।

(पु॰) ३ श्वेतखदिर, सफेद खैर। इसका संस्कृत पर्याय—सोमवल्क, ब्रह्मशल्य, खदिरोपम, श्वेतसार, खदिर और सोमवल्कल है। भावप्रकाशके मतसे यह विशद, वर्णके लिये हितकर और मुखरोग, कफ तथा रक्तदोषविनाशक है। ४ बर्बूरक वृक्ष, बबूलका पेड़। ५ क्रकच, आरा। ६ अङ्कुश, आंकुस।

क़दर (अ॰ स्त्री॰) १ परिमाण, मिक़दार। २ सत्कार, इज़्ज़त, बड़ाई। ३ हिन्दीके एक मुसलमान कवि। इन्होंने अच्छी अच्छी ठुमरियां बनायी हैं।

कदरई, कदराई देखो।

कदरज (हिं॰ पु॰) १ पापीविशेष, एक गुनहगार। (वि॰) २ कदर्य, कञ्जूस।

क़दरदान् (फ़ा॰ वि॰) गुणग्राहक, इज़्ज़त करनेवाला, जो बड़ाईको समझता हो।

क़दरदानी (फ़ा॰ स्त्री॰) गुणग्राहकता, क़दर करनेका काम।

कदरमस (हिं॰ स्त्री॰) ताड़नादि, मारपीट, लड़ाई झगड़ा।

कदरा (सं॰ स्त्री॰) कदर देखो।

कदराई (हिं॰ स्त्री॰) भीरुता, कायरी, भाग जानेकी आदत।

कदराना (हिं॰ क्रि॰) भयभीत होना, खौफ खाना, डर जाना।

कदरी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका आकार-प्रकार मैनासे मिलता है।

कदर्थ (सं॰ पु॰) कुत्सितोऽर्थः, काः कदादेशः। १ कुत्सित अर्थ, खराब चीज़। २ पदार्थ, चीज़। (त्रि॰) ३ कुत्सित अर्थकारी, बेमानी, बेफ़ायदा।

कदर्थन (सं॰ क्ली॰) कु-अर्थ-ल्युट्। वेदना, व्यथा, तकलीफ़।

कदर्थना (सं॰ स्त्री॰) कदर्थन-टाप्। विड़म्बना, बुराई।

कदर्थित (सं॰ त्रि॰) कु-अर्थ-णिच्-क्त। १ दूषित, बिगड़ा हुआ। २ विड़म्बित, बुरा बनाया हुआ। ३ घृणित, नफ़रत किया हुआ।

कदर्थीकृत (सं॰ त्रि॰) अकदर्थं कदर्थं करोति,

कदर्थ-चि-क्त-क्त। १ मन्दीकृत, बिगाड़ा हुआ। २ विकलीकृत, बेचैन किया हुआ।

कदर्य (सं॰ त्रि॰) कुत्सितो ऽर्यः स्वामी, कुगतीति समासः। १ क्षुद्र, कमीना, छोटा। २ कृपण, कञ्जूस। स्मृतिशास्त्रके मतसे जो लोभी व्यक्ति आत्मा, धर्मकार्य और स्त्रीपुत्र प्रभृतिको कष्ट दे धनका ढेर लगाता, वही कदर्य कहाता है। ३ अग्राह्य, नागवार, बुरा।

कदर्यता (सं॰ स्त्री॰) १ लोभ, कञ्जूसी। २ क्षुद्रता, कमीनापन। ३ बुराई।

कदर्यभाव (सं॰ पु॰) कदर्यस्य भावः, ६-तत्। १ कुत्सित भाव, बुरी हालत। २ अश्लील भाव, फोहश बातचीत।

कदल (सं॰ पु॰) कद वृषादित्वात् कलच्। १ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़। २ पृश्निपर्णी। ३ शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़। ४ डिम्बिका।

कदलक (सं॰ पु॰) कदल स्वार्थे कन्। कदली वृक्ष, केलेका पेड़।

कदला (सं॰ स्त्री॰) कदल-टाप्। १ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़। २ पृश्निपर्णी।

कदलिका, कदली देखो।

कदली (सं॰ स्त्री॰) कदल गौरादित्वात् ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। ओषधिविशेष, केला। (Musa sapientum) यह उष्णकटिबन्ध प्रदेशमें होनेवाला एकप्रकारका मिष्ट फल है। युक्तप्रदेशकी चलित भाषामें इसे केला कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—वारण-बुसा, रम्भा, मोचा, अंशुमत्फला, कदल, काष्ठल, वारणबुषा, वारबुषा, सुफला, सुकुमार, सुकृत्फला, गुच्छफला, हस्तिविषाणी, गुच्छदन्तिका, निःसारा, राजेष्टा, बालकप्रिया, उरुस्तम्भा, भानुफला, वनलक्ष्मी, कदलक, मोचक, रोचक, लोचक, वारण-वल्लभा और चर्मण्वती है। उक्त सकल नामोंकी सार्थकता यथास्थान विवृत होगी।

भारतवर्ष ही कदलीका आदि वासस्थान है। इसलिये यह इस देशके नाना कार्योंमें व्यवहृत होती है। इसको बराबर आवश्यकीय फल दूसरा नहीं। कदली उत्पन्न भी बहुत होती है। वत्सरके सकल ही काल इसमें फल लगता है। फिर भी कदली ग्रीष्म कालको ही अधिक उपजती और फलमें विशेष कोमलता एवं मधुरता रहती है।

कदलीका उद्भिदतत्त्व—इसको उद्भिद्तत्त्ववेत्ता कोमल-काण्ड वृक्षोंकी श्रेणीमें गिनते हैं। जिसके काण्ड अर्थात् तनेमें काष्ठका भाग अल्प आता, वही वृक्ष कोमलकाण्ड कहाता है। किन्तु वास्तविक कदलीमें कोई काण्ड नहीं रहता। जो काण्ड मान लिया जाता, वह पत्रका शेष भाग अर्थात् काण्ड-कोष देखाता है। हिन्दीमें केलेका बकला कहाने-वाला अंश उसका समष्टिमात्र है। कदलीवृक्षमें पिण्डमूल (roots, stalks) होता है। इसी पिण्ड-मूलसे पत्र निकलते हैं। पिण्डमूलके मध्यस्थलसे एक सरल गोलाकार श्वेतवर्ण मज्जा (Pith) उत्-पन्न होती है। इसीको चारो ओर स्तर-स्तरमें कोष छिप काण्डकी भांति आकार धारण करते हैं। कदलीके कोमलकाण्ड कहानेका यही कारण है। काल आनेसे उक्त मज्जा पुष्पदण्डमें परिणत हो जाती है। जब नूतन पत्र निकलता, तब यह मूलसे उपज और मज्जाके पार्श्वपर लटक ढाल सूंड-जैसा बढ़ने लगता और अन्तको काण्डसे बाहर हो पत्र दिया करता है। कदलीके पत्रका अंश अत्यन्त विस्तृत होता है। एक-एक पत्र ६।८ फोट दीर्घ और २ फीट विस्तृत नपता है। पत्रको मध्य-पर्शुकासे किनारे तक एक लम्बी-लम्बी सरल शिरा पड़ती है। इन सरल शिरावोंके मध्य अश्वत्थ-पत्रके जालकी भांति सूक्ष्म विन्यास नहीं लगता। सुतरां थोड़ा प्रबल वायु लगते ही यह शिरा फट जाती है। कदली वृक्षका पत्र-भाग, वृन्तभाग और काण्डकोष समस्त ही अंशुविशिष्ट रहता है। मज्जा बहुत कोमल होती है। यह केवल पक्की-पक्की कुछ रसाधार शिरावोंका समष्टिमात्र है। मज्जाका दण्ड ही बढ़ कर पुष्पदण्ड बन जाता है। केलेके फूलको मोचा कहते हैं। मोचा आनेसे पहले कदलीके स्कन्धदेशसे एक 'असिफलक' निकलता, जिसका नाम पत्तेका मोचा पड़ता है। पत्तेवाले मोचेके भीतर ही मोचा रहता है। मोचा पुष्ट

होनेपर पत्तेके मोचेका तल फटता और मोचा नीचेकी ओर लटकने लगता है। नारिकेल, ताल, सुपारी, खर्जुर प्रभृति वृक्षोंमें भी पत्तेका मोचा रहता है। मोचा कदली वृक्षके स्कन्धसे ऊर्ध्वमुख निकल शेषको कुछ बढ़नेपर निम्नमुख झुक पड़ता है। यह देखनेमें कोणाकार होता है। लम्बाई प्रायः १ फुट और मध्यस्थलकी चौड़ाई कोई ६ इञ्च रहती है। एक मोचेमें अनेक विभाग होते हैं। प्रति विभागमें दो सार मुकुलपुष्प चर्मवत् पौष्पिक पत्रावर्तसे आवृत रहते हैं। प्रत्येक सारमें ८ या १० पुष्प पाते हैं। प्रत्येक पुष्पमें फल लगता है। पुष्पोंके मध्य पुंपुष्प (Male-flowers) निम्नश्रेणी और स्त्रीपुष्प वा उभयलिङ्ग पुष्प (Female-flowers or Hermaphrodite flowers) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहते हैं। प्रत्येक भागके पुष्प ज्यों-ज्यों बढ़ते, त्यों त्यों उनके आवरकके पौष्पिक पत्रावर्त खसक पड़ते हैं। जड़की ओरसे पुष्प फलमें परिणत होते हैं। प्रत्येक पौष्पिक पत्रावर्तमें ६से १० तक फल लगते हैं। एक एक फलसमूहको हिन्दीमें 'गहर' कहते हैं। पौष्पिक पत्रावर्तमें जितने पुष्प लगते, उतने फल हो नहीं सकते। एक वृक्षमें एक ही समय एकसे अधिक गहर नहीं आती। गहर काट लेनेसे कुछ दिन पीछे कदली वृक्ष सूख जाता है। अत्यन्त पुरातन पड़ने या गहर छोड़ मर मिटनेपर वृक्षके पिण्डमूलमें ६से ८ तक किल्ले फूटते हैं।

कदली अनेक प्रकारकी होती है। सबमें बीज नहीं रहता। जङ्गली और चट्टग्राम प्रदेशकी एक जातीय कदलीमें बीज होता है। इसी बीजसे वृक्ष उपजता है। किसी किसी अन्य जातीय कदलीमें रहते भी बीजसे कोपल नहीं फूटती। पार्वत्य प्रदेशमें कदली वृक्ष अतिअल्प होता है। वहां यह बढ़ नहीं सकती। क्योंकि अन्यान्य वृक्षोंकी प्रतियोगितामें कदली वृक्षको पार्वत्यप्रदेशकी कठिन मृत्तिकासे रस खींच अपनी पुष्टिका साधन करना असम्भव देख पड़ता है। इसीसे इसमें किल्ले नहीं फूटते। किल्ले न फूटनेसे ही पार्वत्य कदलीमें बीज रहता है। फिर बीज भी इतना आता, कि कालपर बिलकुल शस्य नहीं देखाता। बीजोंपर पतली मलाई-की भांति कुछ कोमल चिपचिपा शस्य रहता है। परमेश्वरकी आश्चर्य महिमा है! पक्षी उक्त शस्य खानेके लिये बड़ी दूरसे आ पक्कफल ले जाते हैं। फिर सकल स्थानोंसे इसी उपाय द्वारा बीज लाये जानेपर कदलीका वृक्ष उत्पन्न होता है।

अन्यान्य स्थलोंमें कदली लगायी जाती है। लगी हुई कदलीके फलमें बीज पड़ने नहीं पाता। फलकी उत्तरोत्तर उन्नति होती रहती है। वृक्षमें किल्ला फूटने लगता और उसका उत्पादक बल बढ़ता है। यत्नपूर्वक लगाये जानेसे कदलीके अच्छे अच्छे फलोंमें आजकल बिलकुल बीज नहीं आता। इनकी बीजोत्पादिनी शक्ति सम्पूर्ण रूपसे बिगड़ गयी है। किन्तु किसी किसी स्थानमें जलवायुके प्रभावसे लगाये जाते भी सहज यह शक्तिरहित नहीं होती। दो-एक बार लगाये जानेपर फलमें बीज नहीं आ सकता, किन्तु तीसरी बार निकल पड़ता है। यवद्वीपका जलवायु ऐसा ही है। बङ्गालमें 'कांटाली' केला बहुत दिनसे होता है। किन्तु आज भी उसकी बीजोत्पादिनी शक्ति बिलकुल नहीं बिगड़ी। अति अल्प दिनको ही उसमें बीज पड़ जाता है। इसलिये बङ्गालमें कांठाली केलेका झाड़ अधिक पुरातन होने न देना चाहिये। किल्ले निकाल अन्य स्थानमें लगाना और केलेको उन्नति पर लाना लोगोंका कर्तव्य है। लगाये जाने और अच्छी भूमि पानेसे कांठाली केलेकी उन्नति मात्र होती है। किन्तु उसकी कुछ भी शक्ति नहीं बिगड़ती। चीन देशमें एक प्रकारकी कदली है। वह अति क्षुद्राकार और फल-विहीन रहती है।

कदली अति शीघ्र शीघ्र बढ़ती है। अच्छी भूमिमें इसे लगाने पर यह वृद्धि सहज ही देख पड़ती है। कदलीके कच्चे पत्रको मध्यपत्र कहते हैं। जब वह पककर बढ़ता, तब वृन्तसे पत्राग्र पर्यन्त एक धागा लगा कोई एक घण्टे अपेक्षा करने पर देख पड़ता नापके धागेसे वह प्रायः १ इञ्च दीर्घ है।

प्रबल वायु कदली वृक्षको बड़ी हानि पहुंचाता, विफल रहने पर अति अल्प वायुसे ही यह गिर जाता है। उस समय बांसकी तिकोनी खपाचें लगा वृक्षको बचाते हैं। बङ्गाल देशके केलेमें एकप्रकारका कीड़ा लगा करता है। इस कीड़ेसे भी अनिष्ट ही होता है। कीड़ा लगनेसे वृक्ष मर मिटता है।

कहां कहां कदली मिलती और कैसे विभागकी श्रेणी चलती है? भारतवर्ष इसका आदि वासस्थान है। किन्तु यहां भी यह पाश्चात्य प्रदेशको अपेक्षा पूर्वप्रदेश और दाक्षिणात्यमें ही अधिक होती है। पूर्ववङ्ग और दाक्षिणात्यके मलवर उपकूलमें कदली बहुत लगायी जाती है।

बङ्गालमें रामरम्भा, अनुपान, मालभोग, अपरिमर्त्य, मर्त्यमान, चम्पक, चीनीचम्पा, कन्हाईबांसी, घीया, कालीवज, कांठाली प्रभृति कई जातिके केले सर्वापेक्षा उत्कृष्ट रहते हैं। इनमें पहले चार पहली श्रेणी, दूसरे चार दूसरी श्रेण और तीसरे तीन तीसरी श्रेणीके केले हैं। मर्त्यमानको चाटिम केला भी कहते हैं। इन सबमें बिलकुल वीज नहीं होता। कांठाली जातिके अन्यान्य फलोंमें भी वीज न रहते जिसका नाम शुद्ध कांठाली चलता, उसमें बहु-दिन एक स्थानपर रहनेसे वीज पड़ने लगता है। सिवा इसके मदनी, मदना, तुलसी, मनुवां रङ्गवीर, पोड़ा रङ्गवीर प्रभृति कई जातिके केलोंसे किसी किसीमें अल्प वीज रहता, फिर किसी किसीमें बिलकुल देख नहीं पड़ता। बङ्गालमें वीजू केला नानाविध होते हैं। इनमें यथेष्ट वीज रहते भी मिष्टता बढ़ जाती है। यशोहरमें 'दये' नामक एकप्रकारका वीजू केला होता है। इसका शर्बत बहुत उमदा बनता है। कलकत्तेके निकटवर्ती स्थानोंमें 'डोगरे' नामक जो वीजू केला उपजता, उसका फल खाया जा नहीं सकता, किन्तु मोचा बहुत सुखादु लगता है। मोचेके लिये ही उसे लगाया करते हैं। 'सोया' नामक वीजू केलाके रससे नानारूप चक्षुरोग आरोग्य होता है। 'कांच' केला, 'कच्चा' केला, 'अनाजी' केला प्रभृति केला 'कांच' केलाकी जातिके हैं। इस श्रेणीमें नाना आकारके केले देख पड़ते हैं। यह पकनेपर सुमिष्ट लगता, किन्तु तरकारीमें ही अधिक चलता है। 'कांच' केलाको अंगरेजीमें 'मुसा-पाराडिसिका' (Musa-Paradisica) कहते हैं। 'कांठाली' केलेको कच्चा भी खाते हैं। इसका नाम 'ठूंठा' केला है। फिर 'कांठाली' जातिके केलेको 'ठूंठा' केला कह देते हैं। यह 'कंठाली' जातीय केला एक स्वतन्त्र श्रेणीका भी होता है।

संस्कृतमें भी कदलीके नाना भेद कहे हैं,—

"माणिक्यमर्त्यामृतचम्पकाद्या भेदाः कदल्या बहवोऽपि सन्ति।"

संस्कृतका मर्त्य एवं चम्पक केला ही बंगलामें मर्त्यमान वा चाटिम और चम्पा नामसे विख्यात है। कांठालीजाति कन्हाईबांसी केला कोई १ फुटसे भी ज्यादा लम्बा होता है। फिर 'कालीवज' बहुत मोटा रहता है। घीया कांठालीसे घृतकी भांति सुगन्ध निकलता है। यह उष्ण दुग्धमें डाल देनेसे मक्खनकी तरह घुलता है।

कांठाली केला पकनेपर रङ्ग कुछ पीला पड़ जाता और चाटिम पीताभ आता है। किन्तु चाटिमके ऊपर फुटकी-जैसे दाग उभरते हैं। चम्पा केला पकनेसे घोर पीतवर्ण होता है। कांठाली परिपुष्ट पड़ने पर कुछ चौपहला तथा टेढ़ा, चाटिम गोला एवं सीधा और चम्पा केला गोला तथा मोटा लगता है। लाल केलेको सिंदूरिया या चीना केला कहते हैं। मर्त्यमान और कांठाली केलेका उद्भिज्जशास्त्रोक्त नाम 'मुसा सापीएण्टम' (Musa sapientum) है।

बङ्गालमें कांठाली जातिके केलेका शस्य कुछ कड़ा रहता है। फिर 'मर्त्यमान' जातिवालेका शस्य अधिक श्वेत एवं नवनीतवत् कोमल और 'चम्पक' जातिवालेका ईषत् अम्लरसयुक्त, सुगन्धि तथा फलके मध्य पीताभ वर्ण होता है। 'कांठाली'के फलका छिलका मोटा और चम्पाका पतला पड़ता है। बङ्गाली मर्त्यमान केलेका ही अधिक आदर करते हैं। किन्तु इस देशके युरोपीय प्रवासी 'चम्पा' केलेको अच्छा समझते हैं। कांठाली और कांच केलेका व्यवहार अधिक है।

दाक्षिणात्यवाले डिन्दीगुल प्रदेशके पर्वत और वनमें साधारणत: जो कदली मिलती, उसको संज्ञा अंगरेजोमें मूसा सुपर्बा (Musa Superba) चलती है। बेसिन प्रदेशका केला सुगन्धविशिष्ट होता है। फिर भडोंचमें यह प्रचुर परिमाणसे उपजती है।

नेपालमें होनेवाले केलेको 'नेपाली केला' (Musa nepalensis) कहते हैं।

मन्द्राजमें जितने प्रकारको कदली उपजती, उसमें 'रसखली' सर्वापेक्षा उत्तम रहती है। 'गण्डो' जातीय केलेका शस्य बहुत कड़ा होता है। किन्तु मन्द्राजके लोग इसीको अच्छा समझते और पाल डाल पकने पर बेचा करते हैं। 'पाछा' बहुत लम्बा रहता, किन्तु पुष्ट होते ही झुक पड़ता है। इसका हरित् वर्ण पकने पर भी नहीं बदलता। 'पेवेल्ली' केला मीठा होता, किन्तु रंग खाको देता है। 'सेवेल्ली' केला बहुत बड़ा लगता और लोहित वर्ण देख पड़ता है। सिवा इसके बन्था, बंगला जमेई, पे, सेरबा, जेवेपाक्षियान, पिदोमोथा प्रभृति कई दूसरी श्रेणीके भी केले मिलते हैं।

मर्त्यमान केला चट्टग्राम और तेनासरिम प्रदेशमें बहुल परिमाणसे उत्पन्न होता है। उक्त दोनों प्रदेशके दक्षिण मर्तावान उपसागर है। कितने ही लोगोंके कथनानुसार इसी उपसागरसे प्रथम भारतमें उक्त कदली आनेपर 'मर्त्यमान' नाम पड़ा है। किन्तु हम वैसा नहीं मानते। 'मर्त्य' नामक कदली ही 'मर्त्यमान' केला कहाती है।

बम्बईमें नौ प्रकारको कदली होती है—बसरई, मुखेली, तांबड़ो, रजेली, लोखसडो, सोनकेली, वेसकेली, करखेली और नरसिंही। इनमें तांबड़ी केला लाल रहता है।

ब्रह्मदेशमें पीत एवं स्वर्णवर्ण नानाप्रकार कदली देख पड़ती है।

सिंगापुर, मलय और भारतसागरीय द्वीपपुञ्जमें प्राय: ८० प्रकारका भोजनोपयोगी केला उपजता है। इसमें बहुतसे वृहदाकार और सुगन्धविशिष्ट होते हैं। 'पिस्राटिम्बाना' केला लाल रहता है। इसे वहांके लोग 'तामाटे' या 'कांकड़ा' केला कहते हैं। 'पिस्रां मुलुत बेबेक' जातीय केलेके तलमें कुछ छिलका वक्रभावसे हंसकी चोंच-जैसा निकल पड़ता है। 'पिस्रां राजा' को राजा केला कहते हैं। 'पिस्रां सुसु' दूधिया केला कहाता है। इस प्रकारके दूसरे केलेका नाम सोनाकेला है। शेषोक्त तीनों प्रकारके केले अतिसुन्दर, सुमिष्ट और सुगन्धविशिष्ट होते हैं।

यवद्वीपमें 'पिस्रां टण्डक' नामक एक केला उपजता है। इसको लम्बाई प्राय: २ फ़ोट होती है। हम समझते—बङ्गालमें इसीको कन्हाईबांसी कहते हैं।

यवद्वीपमें दूसरा भी एक केला होता है। उसके एक वृक्षमें एक ही फल लगता है। अन्यान्य वृक्षोंको भांति उक्त फल मोचेके साथ काण्डसे नहीं निकलता। वह काण्डके भीतर ही पका करता है। सम्पूर्ण पक जानेसे काण्ड फट पड़ता है। वह इतना बड़ा रहता, कि एक फलसे ४ लोगोंका पेट भली भांति भर सकता है। उक्त सकल केलावोंको छोड़ यवद्वीपमें जो कांठाली या मर्त्यमान केले उपजते, उनमें बीज पड़ते हैं। इस श्रेणीके केलोंको उस देशमें 'पिस्रां बुट्' कहते हैं।

फिलिपाइन द्वीपके पार्वत्य प्रदेशमें उपजनेवाला केला इतना बड़ा रहता, कि एक मनुष्यको उसे उठाकर ले चलनेमें बोझ मालूम पड़ता है।

मलय द्वीपको साधारण कदलीका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम 'मुसा ग्लौका' (Musa glauca) है।

मारिशस द्वीपमें गुलाबी रंगका मिलनेवाला केला 'मुसा रोसेशिया' (Musa rosacea) कहाता है।

अफ़रीका और पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें कांठाली और मर्त्यमान केला हो लगाया जाता है।

पश्चिम भारतीय द्वीपमें एकप्रकार क्षुद्राकार बेंगनी केला होता है। इसका गन्ध अति मनोहर रहता है। उस देशके बड़े आदमी इसी केलेका समधिक आदर करते हैं। इस जातिके केलेको अंगरेज 'फ़िग बनाना' (Fig banana) कहते हैं। फिर इसी जातिका एकप्रकार क्षुद्राकार केला भी होता है। भिन्न-

श्रेणीके लोग उसका भी अति आदर किया करते हैं। अंगरेजोंमें उसे 'फ़िग सकरीयर' वा 'लेडी फ़िङ्गर' (Fig sucrier or Lady finger) कहते हैं। लेडी फ़िङ्गरका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम 'मुसा ओरियेण्टम' (Musa orientum) और फिग बनानाका 'मुसा मसकुलाटा' (Musa musculata) है।

अमेरिकाके फ्लोरिडा प्रान्तका 'ओरङ्गो' केला अति उत्तम होता है। यह उक्त प्रान्तके सकल ही स्थानोंमें मिलता है। डालका पका होनेपर इसके सद्गन्धसे मनुष्य, पशु और पक्षी पर्यन्त उन्मत्त बन जाता है।

चीनदेशमें उपजनेवाली एक कदली खर्वाकार रहती है। अंगरेज़ इसे ड्वार्फ़ प्लानटेन (Dwarf plantain) अर्थात् बौना केला कहते हैं। यह दो प्रकारका होता है—मुसा ओकसिनिया (Musa occinea) और मुसा नाना (Musa nana)। चीनका एक केला मुसा काविण्डिशी (Musa cavendishi) कहाता है। वहां खर्वाकार दूसरा भी केला लगता है।

आबिसीनियाके अति सुन्दर केलेका नाम मुसा इनसीट (Musa ensete) है।

एतद्भिन्न अन्यान्य स्थानोंमें भी केला मिलता है। प्रधानतः उष्ण-प्रधान स्थानमें ही यह होता है। एशियाके पूर्व चीन एवं भारतीय द्वीपपुञ्ज और पश्चिम तुर्कीके अन्तर्गत यूफ्रेतिस नदीतीर पर्यन्त समस्त देशमें केला मिलता है। अन्यान्य अंशमें जो भूभाग पृथिवीके मध्यभागपर आता, वहां भी यह पाया जाता है। भारतमें हिमालयके शीतल प्रदेश पर केला देख पड़ता है। उक्त पर्वतके पाददेश पर ३०° उत्तर अक्षान्तर पर्यन्त यह अधिक उपजता है। फिर मसूरी, कुमायूं और गढ़वाल प्रदेश भी इसकी उत्पत्तिसे वञ्चित नहीं। किन्तु उक्त प्रदेशके केलेमें बीज-व्यतीत शस्य बहुत कम रहता है। समुद्रसे ७००० फीट ऊर्ध्व स्थान तक यह उपज सकता है। दक्षिण-अमेरिकामें आजकल यथेष्ट केला लगाया जाता है। काराकास, गोयेना, डेमेरेरा, जामेका, त्रिनिदाद प्रभृति स्थानोंमें बराबर कितनी ही भूमिपर इसकी कृषि होती है। चट्टग्राम प्रदेशके वन मध्य केलेका वृक्ष इतना अधिक उपजता, कि उसे देख विस्मित होना पड़ता है। वहां हस्ती और गयाल नामक महिष-जातीय पशु एकप्रकार केलेका वृक्ष खा जीवन धारण कर सकते हैं। साधारणतः पार्वत्यप्रदेशका केला मुसा ओरनाटा (Musa ornata) अर्थात् पहाड़ी और वनका मुसा सुपर्बा (Musa superba) यानी जङ्गली केला कहाता है। चट्टग्राम प्रदेशमें भी यह घासकी तरह अपर्याप्त होता है। अन्यान्य स्थानोंमें खाली मैदान पड़ा रहनेसे जैसे दूर्वा, मुस्तक प्रभृति तृण उपजता, वैसेही चट्टग्रामके खाली मैदानमें पहले घासके साथ केला भी निकल पड़ता था। लगानेमें जितने केले उखाड़ कर फेंक दिये जाते थे, उनकी संख्या करना असम्भव है। आजकल भी नये लगाये जानेवाले केलोंका ऐसा ही हाल होता है।

युरोपके दक्षिण स्पेनमें केला हुआ करता है। किन्तु उसके उत्तर कांचके मकान् या उष्णगृहके व्यतीत खुले क्षेत्रमें यह नहीं उपजता। क्यूबा द्वीपमें कहीं कहीं केला होता है।

भिन्न भाषामें केलेका भिन्न नाम आता है। संस्कृत नाम पहले ही कहे जा चुके हैं। अतिपूर्वकाल इसको भारतमें मोचक कहते थे। मोचकका अर्थ 'मुक्त हुआ' है। अर्थात् प्रथमतः वृक्षके गर्भसे इसका जो फूल निकलता, वह एक आवरणीके मध्य रहता है। उसी आवरणीके फट जानेसे फूल आता है। फिर प्रत्येक फूल गुच्छगात्रमें दूसरे आवरणसे आवृत रहता है। वह आवरण मुक्त होनेपर फल निकलता है। इसीसे फलको मोचक कहते हैं। शिवपूजाके मन्त्रमें हम केलेका मोचा नाम देखते हैं—

"एतत् मोचाफलं नमः शिवाय नमः"।

कोई भी इस स्थलपर कदली, रम्भा वा अन्य नाम व्यवहार नहीं करता। कदलीका अर्थ जलमें ही पुष्टि पाना है। केलेका वृक्ष कुछ जलप्रधान होता है। यह सरस भूमिमें भी अच्छी तरह उपजता है। अंशुमत्फलासे अंशु वा तन्तु रखनेवाले द्रव्यका अर्थ निकलता है। केलेके वृक्षका तन्तु विशेष विख्यात

है। वारणवुषा और वारणवल्लभाका अर्थ हस्तिप्रिया है। सकृत्फला शब्दसे वत्सरमें एक वृक्षके एक ही बार फल देनेका अर्थ निकलता है। भानुफलाका अर्थ सूर्योत्तापप्रिया है। वनलक्ष्मी वनकी शोभा बढ़ानेवाले फलकी द्योतक है। इससे वनमें भी धनागम वा प्राणधारण होता है। हस्तिविषाणी वह फल कहाता, जो हस्तिदन्तकी भांति सुगोल, दीर्घ अथच ईषत् वक्र आता है। चर्मखतीका अर्थ चर्मकी भांति आवरणयुक्ता है। अन्यान्य अर्थ नाम पढ़नेसे समझ पड़ते हैं।

केलेको अरबी भाषामें 'मौज़' कहते हैं। यह संस्कृतके मोचा शब्दसे निकला है। लाटिन भाषाका मिउसा वा मुजा शब्द अरबी मौज़से बना है। अंगरेजीमें बनाना वा प्लानटेन कहते हैं। अंगरेजीका बनाना शब्द ग्रीक अरियाना (Ariana)से उत्पन्न है। ग्रीक अरियानाका अपर पर्याय औराना (Ourana) रहा। ग्रीक अरियाना सम्भवतः तैलङ्गी भाषाके अरटिति शब्दसे निकला है।

कितने ही लोग ग्रीक औराना शब्दको संस्कृतके वारणवुषा शब्दसे उत्पन्न समझते हैं। किन्तु यह बात ठीक नहीं। क्योंकि ग्रीकभाषामें भारतवर्षीय जिन औषधोंका उल्लेख लगा, उनका देशीय नाम अधिकांश दक्षिणदेशीय भाषासे ही संग्रहीत हुआ है। धान्य प्रभृति शब्द देखो।

प्लानटेन शब्द ग्रीक ग्रन्थकार थियोफ्राष्टस वा पिनिके लिखे पल नामक शब्दसे उत्पन्न है। पल वृक्ष और उसके फलकी वर्णना बिलकुल कदलीवृक्ष और कदलीफलसे मिलती है। फिर उन्होंने उसे हमारे ऋषियोंका खाद्य भी बताया है। इसमें कोई सन्देह नहीं—'पल' संस्कृत फल वा तामिल 'बल' शब्दसे निकला है। कदलीको हिन्दीमें केला, बंगला-में कला, महाराष्ट्रीय भाषामें केलि, तामिलमें वल वा बेला, तेलङ्गीमें अरति, सिंहलीमें कहिकाङ्, ब्राह्मीमें नेपियान या अङ्कहेट्, वालिद्वीपीय भाषामें विषु, जापा-नीमें गङ्कु और मलयभाषामें पिस्यां कहते हैं।

कदलीका व्यवहार—भारतवर्षमें कच्चे केले, मोचे और डालकी तरकारी बनती है। पक्का केला सीधा खानेमें आता है। भारतीयोंकी दृष्टिमें यह अति पवित्र द्रव्य है। पूजा, श्राद्ध, विवाह प्रभृति सकल ही कार्यों में केला व्यवहृत होता है। हविष्यान्नमें दूसरा शाक खाना मना है। किन्तु कच्चा केला पकाकर उसमें भी खा सकते हैं। कदलीका पत्र भारतवर्षके सकल ही स्थलोंमें भोजनपात्रका कार्य देता है। अधिक संख्यक लोगोंको खिलानेमें पत्र व्यवहृत होता है। ब्राह्मणादि उच्च वर्णके लोग जिन निम्नश्रेणीवालोंके छूये जलको हाथ नहीं लगाते, उन्हें कदलीके पत्रमें ही खिलाते हैं। मन्द्राज, कनाड़े और मलवर प्रदेशमें इसे पत्रके लिये ही अधिकतर लगाते और सकल श्रेणीके लोग उसीमें खाते हैं। ग्राम्य पाठ-शालामें तालपत्र पर लिखना सीख लेनेपर छात्र कदलीके पत्रपर लिखनेका अभ्यास डालते हैं। कद-लीके पत्रपर हाथ बैठ जानेसे कागज़पर लिखना आरम्भ किया जाता है। इसका कच्चा पत्र (बीचका पत्ता) वेलेस्तारके ज़ख़्मपर ढांक देनेसे ज्वाला मिटती है। बीचका पत्ता काट सीधी ओर माखन लगा ज़ख़्मपर ४।५ दिन बंधा रखनेसे वेलेस्तार अच्छा हो जाता है। पश्चिम भारतमें बीड़ी और चुरुट केलेके सूखे पत्तेमें लपेट प्रस्तुत करते हैं। फिर कोई भी द्रव्य लपेटनेके लिये वहां केलेका सूखा पत्ता व्यवहारमें आता है। चक्षुरोगपर केलेका कच्चा पत्ता बड़ा उपकार करता है। अफ्रीकामें कच्चे पत्तेसे घर छाते हैं। कलकत्तेके तंबोली केलेके कच्चे पत्तेमें लपेट लगी-लगाये पान बेचते हैं। बङ्गालमें ग़रीब लोग केलेका पत्ता फूंक खाकसे कपड़े धोते हैं। बहुमूत्ररोगपर कविराज महाशय कहल्यादि-घृतमें इसको डालका रस डालते हैं। यह घृत वायु और पित्तके दोषको मिटाता है। कोल्हापुर जिलेमें इस वृक्षके रससे रक्तपात निवारण करते हैं। जामेका-में भी इसका रस इसी प्रकार व्यवहृत होता है। वहां वृक्षमें एक खोंचा लगा रस निकाला जाता है। यवद्वीपमें एकप्रकार कदलीवृक्षके पत्रको उलटी ओर मोम-जैसा जो पदार्थ जमता, वह बत्ती बनानेमें लगता

है। कदलीके वृक्षसे भी अनेक कार्य निकलते हैं। जहां एकाएक बाढ़ आती, वहां बड़े बड़े वृक्ष काट और पास-पास बांध घड़नाई बनाई जाती है। इसे केलेका बेड़ा कहते हैं। अफ्रीकाके असभ्य और भारतवर्षीय दाक्षिणात्यके लोग कदलीवृक्षपर लक्ष्य लगा तीर और तलवार चलाना सीखते हैं। बङ्गालमें षष्ठीपूजा, विवाह और अधिवासादि मङ्गल-कार्यपर एक डालका समूचा केला लगता है। युक्त-प्रदेशमें सत्यनारायणकी कथा, जन्माष्टमी और राम-नवमीपर केलेके स्तम्भ खड़े किये जाते हैं। बीचके कोमल पत्तेकी झांकी बनती है। मुसलमान भी पीरोंको शीरीनी चढ़ाते समय केलेसे काम लेते हैं। वासन्ती और दुर्गापूजाके समय नवपत्रिकामें केलेके किल्ले व्यवहृत होते हैं। फिर भारतीयोंके शुभकर्ममें केलेका किल्ला मङ्गलचिह्नकी भांति लगा करता है। उत्सव, पूजा और विवाहादिके समय हिन्दू द्वार तथा पथमें केलेके वृक्ष सजा देते हैं। हिन्दुवोंके विवाहादि संस्कारपर केलेकी भूमि बनती है। इसी स्थानपर संस्कारार्ह व्यक्तिका स्नानकार्य, चौरकर्म, चूड़ाकरण, कर्णवेध, वरण इत्यादि होता है। बम्बईकी पतिरता कामिनियां कदलीवृक्षको धन एवं आयुप्रद समझ पूजती हैं। श्राद्धमें इसका काण्डकोष अत्यन्त आव-श्यक आता है। इसके द्वारा श्राद्धीय नैवेद्य, जल एवं फलप्रदानके लिये एकप्रकार नौका बनती है। पौष-संक्रान्तिको बङ्गालकी सन्तानवती रमणियां कदलीके काण्डकोषकी नौका बनाती और गेंदेके फूलसे सजाती हैं। फिर उसमें प्रदीप जला पुत्र द्वारा नदी वा पुष्करणीके जलपर बहा देती हैं। यह व्रत भगवती भवानीके उद्देश्यसे सन्तानकी मङ्गलकामनाको किया जाता है।

कदलीवृक्षका समस्त अंश गवादिका खाद्य है। दुर्भिक्षके समय कदलीवृक्ष नीचेसे ऊपरतक छोटा-छोटा काट पशुवोंको खिलाया जाता है। यह पशु-वोंके लिये विशेष उपकारक है। जामैकाद्वीपमें गेहूं उत्पन्न होता है। सुतरां कदली ही वहांके निम्न-श्रेणीवाले अधिवासियोंका एकमात्र सुलभ खाद्य है। अमेरिकाके आदिम अधिवासी भी इसे प्रधान खाद्य समझ व्यवहार करते हैं। बम्बई प्रदेशमें आम, कटहल आदि फलोंका कलम लगा पार्श्वपर एक-एक कदलीवृक्ष रोपण कर दिया जाता है। इसके द्वारा मध्यभारतमें खरतर रौद्रके आतपसे हरा-भरा वृक्ष रक्षित रहता है। शेषको १।८ वत्सरके बाद जब अच्छा वृक्ष स्वयं रौद्र सह्य करनेकी क्षमता पाता, तब कदलीवृक्ष काट डाला जाता है। वहां सुपारीके क्षेत्रमें भी कदलीवृक्ष लगता है। कारण, इसकी छायासे सुपारीकी कोपल शीतल रहती है। एक प्रकारके केलेको सुखा डालते हैं। राजेली नामक केलेको पकनेपर एक सन्दूकमें टुकड़े-टुकड़े काट और घास-फूससे ढांक ७।८ दिन रख छोड़ते हैं। फिर उसको छिलका उतार समुद्रतीर मञ्चपर सुखाते हैं। सारे दिन रौद्रमें सुखा, सन्ध्यासमय उठा और घृत लगा रातभर चटाई तथा केलेके पत्तेसे दबा उसे रख देते हैं। इसीप्रकार सात दिन तक सबको बराबर रौद्र देखाया और सन्ध्याको उठा तथा घृत लगा चटाई एवं केलेके पत्तेसे रात भर दबाया करते हैं। ७।८ दिनमें केला खूब सूख जाता है। यह खानेमें बुरा नहीं लगता। सूखा केला अति बल-कारक और शैत्यनिवारक होता है। फिर माल फूल जानेपर भी यह बड़ा उपकार करता है। समुद्रकी यात्रामें सूखा केला विशेष व्यवहार्य है। बम्बईके रहनेवाले घरमें खानेको पक्का केला बांसकी खपाचसे पतला पतला चीर धूपमें सुखाकर रख छोड़ते हैं। इससे जो मुरब्बा बनता, वह खानेमें बहुत अच्छा लगता है। बेसकेली केलेको सुखा कूटपीस कर बम्बईवाले एकप्रकारका खिसांदा बनाते हैं। वह शिशु, रोगी और सद्यप्रसूता कामिनीके लिये अति उपकारक एवं बलकारक खाद्य है। मारिशस, पश्चिम-भारतीय द्वीप और दक्षिण-अमेरिकामें भी ऐसा ही खिसांदा बनता है। मेक्सिको देशमें क्या केला सुखाकर रखा नहीं जाता! इबशी पके केलेको सिद्ध वा मण्डका उपादेय समझ खाते हैं। दक्षिण-अमेरिका, अफ्रीका और पश्चिम-भारतीय द्वीपमें

इसका चर्ण बनता है। फिर दक्षिण-अमेरिकामें उक्त चूर्णसे बिसकुट तैयार होता है। वृटिश गीनियामें कच्चा केला प्रधान खाद्य गिना जाता है। इक्षुके बाद इसीको अधिक लगाते हैं। वृक्षके रससे क्षार वा लवणवत् द्रव्य प्रस्तुत होता है। दक्षिण-अमेरिकामें पक्के केलेसे ताड़ीकी तरह एकप्रकार मद्य बनता, जो तीव्र नहीं पड़ता। फिर पक्के फलका शस्य पत्तेमें लगा सुखाते और छोटे-छोटे टुकड़े काटकर बनाते हैं। प्रयोजनके अनुसार एक टकड़ा तोड़ पानीमें घुलानेसे शर्बत तैयार हो जाता है। यह शर्बत खूब शीतल और श्रमापहारक रहता है। भारतवर्षमें इसके छिलकेसे चमड़ेका काला रङ्ग बनता है।

केलेका गुण—पक्के केलेमें अनेक गुण हैं। यह बलकारक, शीतल, पित्तास्रनाशक, गुरुपाक, अजीर्णरोगमें अपथ्य, सद्य शुक्रादिवर्धक, तृष्णा एवं श्रमहारक, लावण्यवर्धक, कफकर, आमकर, दुर्जय, खानेमें ईषत् कषायसंयुक्त और मधुररसविशिष्ट होता है। दधि, दुग्ध और घोलके साथ कदली खानेसे अतिशय दुष्पाच्य निकलती है। चम्पक वातपित्तको मिटाता और अति शीतलता लाता है।

मोचा—कफ, क्रमि, कुष्ठ, प्लीहा, वातपित्त, एवं ज्वरनाशक, अग्निवृद्धिकर और उदरदोषनिवारक है। काण्ड बलको बढ़ाता और वातपित्तको दबाता है। चम्पक बहुमूत्ररोगमें उपकारप्रद है। मुसलमान् हकीम भी केलेको पित्त, वायु, रक्त और हृद्रोगनाशक मानते हैं। डाक्टर प्ले-फेयरके कथनानुसार यह शुक्रवृद्धिकर और मस्तिष्कदोषनाशक है। किन्तु मोचा दुष्पाच्य होती है। हकीम कदली-भोजन-जनित दोषके लिये मधु, आर्द्रक और निर्यास खानेको बताते हैं। इसके कच्चे पत्तेको आवरणी चक्षुरोगमें उपकार करती है। डालके रससे बहुमूत्र रोगका कदल्याद्यघृत बनता है।

केलेका सूत—कदलीसे फल, काण्ड, मोचा और पत्र-मोचाको छोड़ दूसरा भी एक सुन्दर प्रयोजनीय वस्तु उत्पन्न होता है। इसको केलेके पेड़का सूत कह सकते हैं। पाश्चात्य लोग अपने अध्यवसायसे यह तथ्य आविष्कृत होनेपर बड़ी वीरता देखाते और कितने ही उन्हें इसके लिये वीर भी बताते हैं। किन्तु प्राचीन भारतवासी निश्चय यह विषय समझते और किसी-किसी कर्ममें इसे व्यवहार करते थे। संस्कृत नाम अंशुमत्फला और मालाकरोंका व्यवहार देखनेसे इस एकमात्र कथाका प्रमाण मिलता है। माली आज भी केलेके सूतसे माला पिरोते, फूलोंके पत्ते लपेटते, लता-वृक्षोंके मध्य बांधते और आवश्यकतानुसार दो-तीन धागे एकमें लगा रस्सी बट डालते हैं।

कदलीवृक्षके सूत्रसे कागज, रस्सी, प्रभृति प्रस्तुत होता है। विदेशीय वणिकों द्वारा यह निम्नलिखित उपायसे बनता है। केलेका सूत तैयार करनेको दो उपाय हैं—(१) वृक्षको जलमें सड़ा और (२) कलमें पिसाकर। प्रथम उपायसे सूत निकालनेको वृक्ष काट खेतमें डाल देते और कुछ दिन सुखा लेते हैं। फिर शेषोक्त उपायसे वृक्षको काट कलमें पीसना पड़ता है। पिसाई और सड़ाई हो जानेसे वृक्षको सोडा तथा चूनेको कलईके जलमें पका सूत काड़ा करते हैं। पकाते समय सूतसे अन्यान्य अंश छूट जाता है। ६५ मनके एक बेलरसे एक ही दिनमें २१ मन सूत बन सकता है। सूत्र परिष्कार करनेको पांच बार कदली पकाना पड़ती है। २१ मन सूत तैयार करनेमें १ मन सोडा और १ मन चूनेको कलई डालते हैं। पकानेमें तरह तरहका सूत छांटकर निकालना पड़ता है। फीके रङ्गका सूत ६ घण्टे धोनेसे परिष्कार होता है। किन्तु गहरा रंग रहते १८ घण्टेसे कम समय नहीं लगता। बेलरका सिद्ध सूत्रयन्त्रके सहारे जलके हौजमें धोया जाता है। फिर सूत्रको छायामें सुखाते हैं।

कदलीके काण्ड, विटप, पत्र और सकल ही अंशसे सूत्र निकलता है। काण्डकी अपेक्षा शाखाका सूत्र परिमाणमें अधिक पड़ता और अधिक मूल्यवान् भी ठहरता है। पत्रका सूत्र अति सूक्ष्म रहता और क्षुद्र होनेसे सिवा कागज बनानेके दूसरे काममें नहीं लगता। १८६४ ई०को डाक्टर क्लेने इससे एकप्रकार

चिट्ठी लिखनेका कागज़ बनाया, जो अति सुन्दर आया। १८५१ ई०को डाक्टर हण्टरने महाप्रदर्शनीमें मन्द्राजसे केलेके सूतसे प्रस्तुत रस्सा, कागज़ और कई तरहका नमूना भेजा था। उसमें एक कागज़ चांदीके वर्क-जैसा पतला तथा चिकना और दूसरा पार्चमेण्ट-जैसा कड़ा एवं जलमें भीजनेसे बिगड़नेवाला न रहा। नमूनेका सूत भी नाना वर्णोंमें रञ्जित था। रस्सी और रस्सेके कितने ही अंशमें अलकतरा लगा रहा। डाक्टर लइटडीने परीक्षासे देखकर कहा—केलेके सूतका कागज़ अति उत्कृष्ट होता है। दूसरी कोई चीज़ न मिला केवल केलेके सूतसे पतला और मज़बूत कागज़ बन सकता है। कल घूमते समय इसमें नहीं पड़ती। इच्छानुसार आकार और वर्णका कागज़ तैयार होता है। मोड़नेसे यह कागज़ नहीं फटता और सकल स्थान समान रहता है। कलकत्तेके समीप बालीके कारखानेमें भी इसकी परीक्षा हुई। उसमें बङ्गाल और आन्दामान द्वीपके केलेका सूत लगा था। फल भी सन्तोषप्रद निकला। प्रति वृक्षमें २ सेर सूत हो सकता है।

रस्सी या रस्सा बनानेमें भी देशी केलेका सूत स्वच्छन्द व्यवहृत होता है। किन्तु फिलिपाइन द्वीपके मुसा टेक्सटिलिस (Musa Textilis) नामक कदलीवृक्षका सूत्र ही इस सम्बन्धमें सर्वश्रेष्ठ है। इसे अंगरेजीमें मानिला हेम्प (Manilla hemp) कहते हैं। इसका फल खाया नहीं जाता। बङ्गाल, मन्द्राज और बम्बई प्रान्तके स्थान-स्थान पर आजकल इस जातिकी कदली उपजती है। बम्बईमें इसके काण्डका भीतरी अंश खाते हैं। इसके बीजसे किला टते भी क़लम लगाना ही अच्छा रहता है। यह केला पार्वत्य भूमि और ऐसे स्थलपर अधिक बढ़ता, जहां अन्यान्य वृक्ष सड़ पड़ता है। इस श्रेणीमें फल आनेसे सूत अच्छा नहीं होता। इसका सूखा पत्ता ३ इञ्च चौड़ा चीर और पौस रौद्रमें सुखाते तथा सूत निकालते हैं। इस जातिके सूतसे सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत हो सकता है। इसका सूत सनसे ढाई गुण भारी पड़ता है।

ढाकेमें एकप्रकार कदलीके सूतसे वस्त्र प्रस्तुत होता है। ढाकेके पटकार (जुलाहे) कभी कभी इस वस्त्रपर नाना कारुकार्य कर अपने गुणका उत्कर्ष देखाते, जिसके दर्शनसे लोग मोहित हो जाते हैं। १८८४ ई०को कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें ढाकेके पटकारोंने केवल कदलीके सूतसे एक रूमाल बुन और सच्ची ज़रीका काम कर भेजा था। कलकत्तेके अजायबघरमें यह रूमाल आज भी रखा है। यह बिलकुल टसर-जैसा देख पड़ता, किन्तु उससे कुछ खुरखुरा लगता है। ऐसे ही ३३ इञ्च लम्बे-चौड़े कपड़ेका दाम ५०) रु० नक़द है।

कठिन, नीरस और केवल वालुकामय स्थानको छोड़ अन्य सकल-प्रकार भूमिमें कदली लग सकती है। गीली और तालाबकी निकली मट्टीमें यह बहुत अच्छीतरह उत्पन्न होती है।

खादकी बात—कदलीमें कविला मट्टी और खाक ही खाद दी जाती है।

रोपणका समय—बङ्गालमें वैशाखसे श्रावण मास पर्यन्त कदलीको रोपण करते हैं। खनाने कहा है—(१) फाल्गुन मासमें कदलीको स्थूल मूल काटकर न लगानेसे लोगोंका परिश्रम वृथा जाता है। किन्तु उक्त नियम पालन करनेपर इतना फल आता, कि कृषकका स्कन्ध ढोते-ढाते टूट जाता है। (२) फिर फाल्गुनमें कदली लगानेसे एक ही मासमें फल दिया करती है। (३) आषाढ़ और श्रावण मासमें कदली रोपण करना न चाहिये। कारण रोपण करते भी न तो कोई केला खाये और न उसके नीचे जायेगा। कीड़ा लग जानेसे कदली गिर पड़ेगी। (४) सिंह और मीनके सूर्य छोड़ कदली लगानेसे फल खानेको मिलता है। (५) भाद्र मासमें कदली लगानेसे ही सवंश रावणको मरना पड़ा है।

उक्त नियमोंमें फाल्गुन मासको स्थूल मूल काट कदली लगानेका समय बताता है। ऐसा करनेसे यह अति शीघ्र फलती और काण्ड एवं गुच्छकी प्रकृति बढ़ती है। तृतीय नियम आषाढ़ एवं श्रावण मास कदली लगानेको रोकता है। कारण इससे

कीड़ा पड़ जानेकी सम्भावना है। कीड़ा लगनेसे कदली सूख जायेगी। चतुर्थ नियममें चैत्र एवं आश्विन मास छोड़ कदली लगानेका विधि रखा गया है। फिर पञ्चम नियममें भाद्र मासको भी छोड़ दिया है। किन्तु खनाने ही अपने दूसरे वचनमें आषाढ़ एवं श्रावण मास कदली लगानेकी उपदेश दिया है।

रोपणका नियम—केलेका बाग़ लगानेको प्रथम चेत्रमें ८ हाथके अन्तर एक-एक श्रेणी बनानेके लिये कमसे कम १ हाथ मट्टी उठाना चाहिये। फिर कुदालसे ढोले तोड़ और घेरा जोड़ चेत्रको समतल करते हैं। कलम लगानेको हरेक कलमके साथ एक-एक प्राचीन वृक्ष वा स्थूल मूलका कियदंश रखना आवश्यक है। फिर स्थूल मूल जमानेको उसे ऊर्ध्वाधोभावसे चार या आठ खण्ड कर चेत्रमें गाड़ देते हैं। हरेक कलम या मोटी जड़का टुकड़ा ८ हाथके अन्तर लगाया जाता है। कलमका पेड़ बड़ा होता है। फिर स्थूल मूलका वृक्ष क्षुद्र रहते भी फल अधिक दीर्घ और सुस्वादु निकलता है। बाग़ लगानेकी सुविधा न होनेसे किसी स्थानमें श्रेणी बना कदलीको रोपण कर सकते हैं। श्रेणी बनानेमें अड़चन पड़ने पर किसी भावसे लगाते भी कदली हुआ करती हैं। किन्तु खाद देना आवश्यक है। रोपणके समय खोदी हुई मट्टीमें थोड़ी कचिला मट्टी मिला सकनेसे अच्छा रहता है। उसके बाद बीच बीच पौदेकी जड़में खाक डालते रहनेसे काम चल जाता है। इस सम्बन्धमें खनाके वचन हैं—

(१) सात हाथके अन्तर पर डेढ़ हाथके गड्ढेमें कलमके साथ पुराना पौदा लगाना चाहिये। (२) आठ हाथके अन्तर पर दो हाथ गहरे गड्ढेमें कदली रोपण करनेसे फल खानेको मिलता है। (३) सात हाथके अन्तर पर पौने दो हाथ गहरे गड्ढेमें केला लगानेसे कृषक अपने परिश्रमका फल पाते हैं।

फिर कदली वृक्षके सम्बन्धमें उक्त खनाने दो अति सुन्दर और यथार्थ उपदेश दिये हैं,—

(१) कदलीको लगा कर पत्ते काटना न चाहिये। क्योंकि उसीसे कृषकोंको दाल-रोटी और कपड़े-लत्तेका सुभीता पड़ता है। (२) तीन सौ साठ केलेके झाड़ लगानेसे गृहस्थ घरमें पड़े सोता और कोई दुःख नहीं होता।

पत्र कटते ही कदलीवृक्ष निर्बल पड़ जाता है। सुतरां मोचा निकलनेमें विलम्ब लगता है। नतुवा यथा समय फल आनेसे लाभ होना सम्भव है। ३६० केलेके झाड़ लगानेसे आठ मास बाद सकल फल दिया करते हैं। सुतरां एक ही समय ३६० गहर उतरनेपर अति अल्प पड़ते भी १५०) रु० नक़द आय होगा। पल्लीग्राममें यदि प्रति मास १२) रु० नक़द कोई खर्च करे,तो उक्त आयमें अति सुख और स्वच्छन्द से एक वर्ष उसका काम चले। फिर दो बीघे ज़मीन्‌में ३६० केलेके झाड़ अच्छी तरह हो सकते हैं।

एकबार लगा देनेसे उसी भूमिमें प्रायः ५ वत्सर पर्यन्त कदली फला करती है। किन्तु उसके बाद अन्य भूमिमें इसे लगाना पड़ता है।

बम्बई प्रदेशके लोग रसीली मट्टीमें कदली लगाते हैं। झाड़में कभी एक और कभी दो किल्ले छोड़ बाकी काट डाले जाते हैं। फिर फलका बीज डाल किल्लोंपर छाया रखनेको प्रत्येक बीजके पार्श्वपर एक एक कदली वृक्ष लगा देते हैं। पीछे पौदा बढ़नेपर कुछ वत्सर बाद जब उक्त कदलीवृक्ष उसके रस-सञ्चारमें बाधा पहुंचाता, तब वह काट डाला जाता है। सुपारीके चेत्रमें भी इसी प्रकार वृक्षके मूलपर छाया पहुंचानेको कदली रोपण करते हैं। वहां इसकी कृषिमें लोग बड़ा यत्न लगाते हैं। ऊख और पानकी खेतीके पीछे उसी भूमिमें इसे रोपण करते हैं। प्रथमतः पान काटकर ऊख बोई जाती है। ऊख कटने पीछे ज़मीन् थोड़े दिन खाली पड़ी रहती है। फिर वृष्टिके बाद वैशाख-ज्येष्ठ मास दाक्षिणात्यमें इसी समय पानी बरसता है। हल और मई चला ८ इञ्च गहरे कलम लगाया जाता है। कलम लगाते समय फलोंके छिलके, सड़ी मछली और गोबरको खाद डाल देते हैं। भिन्न भिन्न जातीय कदलीको

देख-भाल कलम लगानेका नियम है। एक एकर परिमित भूमिमें बसरैया केलेके १००० और तांबड़ी केलेके ५०० कलम लगाये जाते हैं। अन्यान्य जातीय प्रत्येक वृक्षके मध्य ७ फीट अन्तर रखते हैं। कलम लगानेके समयसे ४ मासतक खाद पड़ती है—प्रथम तीन मास फलोंके छिलके और ४र्थ मास सड़ी मछली-की। प्रत्येकवार खाद डाल ऊपर पतली मट्टी दबाते हैं। मछलीकी खाद देनेसे बहुत कीड़ा पड़ जाता है। इसीसे यह खाद डालने पीछे ८। १० दिन जल नहीं देते। जल न पानेसे रौद्रमें कीड़ा मर मिटता है। कलम लगाने बाद सप्ताहमें दो बार जल दिया जाता है। पीछे जितने दिन पानी नहीं बरसता, उतने दिन सप्ताहमें कदलीको एकबार सींचना पड़ता है।

मन्द्राजमें दो प्रकार इसकी कृषि होती है। उच्च भूमिमें 'पक्का बलई' और निम्न भूमिमें 'खुरुबलई' लगाया जाता है। वहां कदलीके क्षेत्रमें लाल आलू वग़ैरह बो देते हैं। फिर हल न चला कुदालसे ही कदलीकी भूमि तैयार करते हैं। ५ वत्सर पीछे कदलीको खोदखाद दूसरी चीज़ बोई जाती है।

ब्रह्मदेशवासी इसके लगानेमें कोई यत्न नहीं करते। किन्तु हरेक आदमीके घरमें केलेका पेड़ रहता है। यत्न न करते भी वहां स्वच्छन्द अपर्याप्त उत्तम फ़सल तैयार हो जाती है।

पूर्व-भारतीय द्वीपमें लोग इसकी कृषि बड़े यत्नसे करते हैं। तीन तीन वत्सर पीछे क्षेत्र बदल नया कलम लगाया जाता है। पुरातन स्थूलमूलसे खादका काम लेते हैं। वहां इतना यत्न न करनेसे फलमें बीज पड़ जाता है। फिजी द्वीपमें पुरातन स्थूल-मूलकी खाद डालते हैं सही, किन्तु उसे अच्छा नहीं समझते। उससे भूमि खट्टी पड़ जाती है।

पश्चिम-भारतीय द्वीपमें पुरातन वृक्षको खण्ड खण्ड कर जला डालते हैं। फिर कलम काट उसी पुरातन वृक्षकी खाकमें २ हाथके अन्तर गर्त बना लगा देते हैं। दूसरी कोई चेष्टा की नहीं जाती।

मुसा टेक्सटिलिस (Musa textilis) अर्थात् उत्तम सूत्रकी कदली ६से ८ फीट अन्तर पर लगाना पड़ती है। अन्तको उक्त अन्तरमें भी किल्ला फूटता है। दो वत्सरमें ही सूत्र निकल सकता, किन्तु चार वत्सर बीतनेपर कुछ पक्का पड़ता है। इसमें फल आने नहीं देते। क्योंकि फल लगनेसे सूत बिगड़ जाता है। फलका आना बन्द करनेको केवल दो पत्र छोड़ बाकी सब काट डालते हैं।

कदलीके सम्बन्धमें प्रवाद—बङ्गालियोंमें कदलीके सम्बन्ध-पर अनेक प्रवाद चलते हैं। एक प्रवादके अनुसार कदलीवृक्षपर गिरनेसे फिर वज्र स्वर्गको उठकर जा नहीं सकता। चोर लोग इस वज्रको रात्रिके समय चुपके उठा खिड़कीसे लोहारके घर डाल आते हैं। फिर लोहार उससे चोरीका खन्ता बना उसी खिड़की-में रख देते हैं। चोर भी रात्रिको आ चुपके वह खन्ता उठा ले जाते हैं। इससे कहते हैं—चोर और लोहार कभी नहीं मिलते। दूसरा प्रवाद केलेको षष्ठी देवीका प्रिय खाद्य बताता है। फिर तीसरे प्रवादके अनुसार केला बुड्ढोंको खानेमें बहुत अच्छा लगता है।

'तालिब-शरीफ़' नामक फ़ारसीके चिकित्साग्रन्थमें लिखा—केलेसे कपूर होता है। किन्तु आईन-अक-बरी इस बातको नहीं मानता। इधर हिन्दीके व्रज-चन्द्र नामक किसी कविने भी नायिकाभेदमें जङ्घाका वर्णन करते कहा है—"कपूर खायो कदली।"

अंगरेजोंमें लोग इसे बाइबिलोक्त निषिद्ध फल बताते हैं। लडलफके कथनानुसार बाइबिलोक्त 'डुडो-इम' (Dudoim) फल ही कदली है। फिर कोई कोई इसे निषिद्ध फल न मान स्वर्गोद्यानमें मानवका प्रथम प्रधान खाद्य समझते हैं। अन्तको जो चाहे सो हो, किन्तु स्वर्गोद्यानका संस्रव रहनेसे ही सम्भवतः कदलीका नाम पाराडिसिका (Paradisica) पड़ा है। क्योंकि अंगरेजीमें पाराडाइज़ (Paradise) स्वर्गको कहते हैं।

केलेकी बेल—केलेका एक पौदा किसी जगह लगा-यिये। इस वृक्षके मूलमें जितने दिन किल्ला न निक-लेगा, उतने दिन कुछ करना भी न पड़ेगा। किन्तु किल्लेको बढ़ने न दीजिये, निकलते ही उसे नष्ट

कीजिये। पीछे मूल वृक्षको जड़से १ हाथ छोड़ समस्त काट डालते हैं। फिर प्रत्यह इस वृक्षमें एक घट जल देते जाइये। इससे फिर पौदा पनपेगा। १ हाथ बढ़नेसे पुनः पूर्व-कथित स्थानसे काट प्रत्यह जल डालते रहिये। इसी प्रकार बार-बार काटते काटते जब मोचा निकले, तब फिर न काट मूल वृक्षको मट्टीसे ढांक दे। फिर एक ओर काण्ड और मोचा दोनों बढ़ेंगे, किन्तु इधर-उधर अवलम्बन न पा और ऊर्ध्वको उच्च न जा भूमिपर ही फैल पड़ेंगे। इससे केला लताकी भांति दृष्टिगोचर होगा। इसपर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

चौमोचा—चार जातीय केलोंके चार वृक्ष मोटी जड़के साथ ले आइये। फिर वृक्षोंको काटिये और हरेक जड़से इस प्रकार बारह आने हिस्सा निकालिये, जिसमें चारोंको मिलानेपर एक पूरी जड़ बना डालिये। पीछे चारोंको जोड़ और रस्सीसे अच्छीतरह बांध ऊपर गोबर लसेट दीजिये। जिस स्थानपर इसे लगाते, उस स्थानमें १ हाथ गभीर एक गर्त बनाते हैं। गर्तका अर्धांश सड़ी घाससे भर इस जड़को जमा और ऊपर मट्टी दबा देते हैं। कुछ दिन पीछे किल्ला फटता है। जबतक मोचा नहीं आती, तबतक दूसरी कोई तदबीर भी की नहीं जाती। केवल इतना ध्यान रखना पड़ता, कि वृक्ष बराबर चला चलता है। फिर मोचा आनेका उपक्रम होनेसे वृक्षका अग्रभाग दृढ़ रज्जुसे बांध देते हैं। अन्तको वृक्षसे एक ही काल चारो ओर चार जातीय मोचा निकलेंगी। मोचाकी शाखावोंके नीचे तीन-तीन लकड़ियां लगा देना चाहिये, जिसमें शाखायें मोचाके भारसे टूट न जायें।

केलेका फूल—किसी मर्त्य वा चम्पक कदलीका छोटा कलम एक गमलेके पेंदेमें बड़ा छिद्रकर इस प्रकार लगे, जिसमें कलमके नीचे पेंदेमें बहुत थोड़ी अर्थात् ८।१० अङ्गुलसे अधिक मट्टी न रहे। जितने दिन कलम खूब नहीं पनपता, उतने दिन अल्प अल्प जल देना पड़ता है। जब कलम खूब पनप आता, तब १ हाथ ऊंचे बांसके मञ्चपर उसे चढ़ा जल छोड़ना बन्द कर दिया जाता है। पीछे समस्त पत्र डण्ठलके साथ काट डालते हैं। फिर पत्र आनेसे फिर काटा करते हैं। उधर गमलेके छेदसे डाल लटक पड़ती है। प्रत्यह इस डालपर जल छिड़कते हैं। फिर पत्रमोचा निकलनेसे अग्रभाग काट डालते हैं। अन्तको इससे जो मोचा निकलेगी, वह कदलीवृक्षके मस्तकपर छत्राकार बन फूल-जैसी देख पड़ेगी।

२ कदलीमृग, एक हिरन। इसके चर्मका आसन बनता है। ३ पृश्निपर्णी।

कदलीकन्द (सं॰ पु॰) रम्भामूल, केलेकी जड़। यह शीतल, बल्य, केश्य, अम्लपित्तजित्, वह्निकृत्, मधुर और रुचिकारक होता है। (मदनपाल)

कदलीकुसुम (सं॰ क्ली॰) रम्भापुष्प, केलेका फूल। यह स्निग्ध, मधुर, तुवर, गुरु एवं शीत और वातपित्त, रक्तपित्त तथा क्षयको दूर करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीक्षता (सं॰ स्त्री॰) कर्कटीभेद, किसी किस्मकी ककड़ी।

कदलीजल (सं॰ क्ली॰) कदलीरस, केलेका पानी। यह शीतल एवं ग्राहक रहता और मूत्रकृच्छ्र, मेह, तृष्णा, कर्णरोग, अतिसार, अस्थिस्राव, रक्तपित्त, विस्फोट, योनिदोष तथा दाहको नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीदण्ड (सं॰ पु॰) मोचाके वृक्षगर्भका कोमल दण्ड-जैसा भाग, केलेका भीतरी हिस्सा। यह शीतल, अग्निवर्धन, रुच्य, रक्तपित्तहर, योनिदोषहर और असृग्दरनाशक है।

कदलीनाल, कदलीदण्ड देखो।

कदलीमूल (सं॰ क्ली॰) रम्भाका मूल, केलेकी जड़। यह बल्य, वातपित्तघ्न और गुरु होता है।

कदलीमृग (सं॰ पु॰) शबलमृग, एक हिरन। यह अधिकतर पूर्वदेशमें प्रसिद्ध है। कदलीमृग बृहत्तम विड़ाल-जैसा और बिलेशय होता है। (सुश्रुत)

कदलीवल्कल (सं॰ क्ली॰) कदलीत्वक्, केलेकी छाल। यह तिक्त, कटु, लघु और वातहर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीसार (सं॰ पु॰) कदलीरस, केलेका निचोड़।

कदलीस्कन्ध (सं॰ पु॰) इन्द्रजालविशेष, धोकेकी टट्टी।

कदश्व (सं० पु०) कुत्सिताश्व, खराब घोड़ा।

कदा (सं० अव्य०) किस समय, कब, कौन वक्तपर।

कदाकार (सं० त्रि०) कुरूप, बदसूरत।

कदाख्य (सं० क्ली०) १ कुष्ठौषध, एक दवा। (त्रि०) २ निन्दित, बदनाम।

कदाच, कदाचन देखो।

कदाचन (सं० अव्य०) किसी समय, एक दिन, एक बार।

कदाचार (सं० पु०) कुः कुत्सितः आचारः, कोः कदादेशः। १ कुत्सित आचार, मन्द व्यवहार, बुरा चालचलन। (त्रि०) कुत्सित आचारो यस्य, बहुव्री०। २ कदाचारी, बदचलन, बुरा काम करनेवाला।

कदाचारिणी (सं० स्त्री०) कदाचारिन्-ङीष् पलच्च। अति मन्द व्यवहारवाली स्त्री, जिस औरतके बहुत बुरा चालचलन रहे।

कदाचारी (सं० त्रि०) कुत्सित आचारो ऽस्यास्ति, कदाचार-इनि। मन्द व्यवहारकारी, बुरी चाल चलनेवाला।

कदाचित् (सं० अव्य०) कदा अनिर्धारिते चित्। दूसरे समय, एकबार। इसका संस्कृत पर्याय—जातु और कर्हिचित् है।

"न पादौ धारयेत् कांस्ये कदाचिदपि भाजने।" (मनु ४।६५)

कदान—बम्बईप्रान्तके रेवाकण्ठ ज़िलेका एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २३° १६′ ४″ से २३° ३०′ ३०″ उ० और देशा० ७३° ४३′ से ७३° ५४′ पू०के मध्य अवस्थित है। कदान राज्यसे उत्तर डूंगरपुर तथा मेवाड़ राज्य, दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व ग्रुण्ठ राज्य और पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम लोनावर एवं रेवाकण्ठ राज्य लगता है। भूमिका परिमाण १३० वर्गमील है।

यह प्रदेश बन्धुर (ऊंचा-नीचा) है। पर्वत और वन चारो ओर परिव्याप्त है। राज्यके दक्षिणभागमें महानदी बहती है। इधरकी भूमि उर्वरा है। उत्त-रांशमें नदीके उपकूलपर एक अप्रशस्त भूभागको छोड़ दूसरा समस्त भाग अनुर्वर और पर्वतमय है। ई०के १३श शताब्द लिङ्गदेवजी (लिमदेवजी) ने यह राज्य स्थापित किया था। वह पांचमहलके अन्तर्गत भलोद नगरके स्थापनकर्ता जालिमसिंहके वंशसम्भूत और उन्होंके एक कनिष्ठ भ्राता रहे।

आजकल कदान राज्य भारत-गवरनमेण्टको कर देता है। राजधानी कदान नगर महानदीके पश्चिम तीर पर अवस्थित है।

कदापि (सं० अव्य०) समय-समय पर, कभी-कभी, जब-तब। यह शब्द प्रायः 'न' के साथ आता है।

क़दामत (अ० स्त्री०) १ पुरातनत्व, पुरानापन। २ प्राचीन समय, पुराना ज़माना।

कदामत्त (सं० पु०) कदाचित् मत्तः। ऋषिविशेष।

कदिन्द्रिय (सं० क्ली०) कुत्सितमिन्द्रियम्, कर्मधा०। कुत्सित इन्द्रिय, खराब रुक्न।

कदी (हिं० वि०) कद्दी, हठी, कद रखनेवाला।

क़दीम (अ० वि०) १ प्राचीन, पुराना। (हिं० पु०) २ लौहदण्ड, लोहेको छड़। इससे जहाजोंमें बोझ उठाया जाता है।

कदुष्ट्र (सं० पु०) कुत्सित उष्ट्रः, कोः कदादेशः। कोः कत्तत्पुरुषे ऽचि। पा ६।३।१०१। मन्द उष्ट्र, खराब ऊंट।

कदुष्ण (सं० क्ली०) कु ईषत् उष्णम्, ईषदर्थे कोः कदादेशः। १ ईषत् उष्ण, ज़रासी गर्मी। इसका संस्कृत पर्याय कोष्ण, कवोष्ण और मन्दोष्ण है। (त्रि०) २ ईषत् उष्णविशिष्ट, कुछ गर्म, जो ज्यादा जलता न हो।

"कदुष्णाः सरसः श्रेष्ठः कदुष्णः कर्णपूरणः।" (सुश्रुत)

कदूर—महिसुर राज्यका एक ज़िला। यह अक्षा० १३° १२′ से १३° ५८′ उ० और देशा० ७५° ८′ से ७६° २५′ पू०के मध्य अवस्थित है। कदूर महिसुरके नगरविभागका दक्षिण-पश्चिमांश है। इस ज़िलेसे उत्तर शिमोग ज़िला, दक्षिण हसन ज़िला, पूर्व चितल दुर्ग और पश्चिम पश्चिमघाट पड़ता है। भूमिका परिमाण २९८४ वर्गमील है।

इस ज़िलेके पश्चिम-प्रान्तमें कुदुरेमुख (६२१५ फीट उच्च) एवं मेरुतिगुड़ (५४५१ फीट उच्च) और मध्यभागमें बाबाबुदन (६२१४ फीट उच्च) तथा कालहस्ती (६१५५ फीट उच्च) गिरि खड़ा है। सिवा इनके छोटे-छोटे कितने ही दूसरे पर्वत भी विद्यमान

हैं। यहांका मलनाद नामक स्थान पर्वत और उपत्यकासे समाच्छन्न है।

प्रधान नदी—तुङ्ग और भद्रा नाम्नी दो नदी मिल तुङ्गभद्रा नामसे कृष्णा नदीमें जा गिरी हैं। जिलेके दक्षिणांशमें हेमवती और पूर्वांशमें वेदवती नदी बहती है।

उद्भिज्ज—बाबाबुदन गिरिप्रदेश ही आजकल अत्युत्कृष्ट उर्वरा भूमि है। यहां क़हवेकी खेती होती है। प्रवाद है—बाबा बुदन नामक किसी फ़कीरने मक्केसे क़हवेका पेड़ ला यहां लगाया था।

कदूरके वनमें मूल्यवान् चन्दन, शिशु प्रभृति उत्तम काष्ठ उत्पन्न होता है। फिर १४ प्रकारका धान, गेहूं, रूई, ऊख, सुपारी वग़ैरह चीजें भी उपजती हैं। किन्तु क़हवेकी खेतीका ही आदर अधिक है। क्योंकि उससे आय बहुत आता ह। इस जिलेमें ७८ वर्गमील सरकारी जङ्गल है। जङ्गलमें हस्ती, वन्य महिष, व्याघ्र, तरक्षु, शिवा नामक एकप्रकार भल्लुक, वन्यशूकर, हरिण, शशक (खरगोश) और सजारू देख पड़ता है। स्थानीय नदी एवं जलाशय मत्स्य परिपूर्ण हैं। यहां कम्बल, तैल, खदिर, अतर और लौहका व्यवसाय होता है।

यह जिला पहले वनराजीसे समाच्छन्न रहा। जनप्रवाद है—यहां ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था। स्थानीय तुङ्गनदीके तटस्थ शृङ्गेरीको कितने ही लोग ऋष्यशृङ्ग गिरिका अपभ्रंश मानते हैं। यह स्थान पूज्यपाद शङ्कराचार्यका लीलाक्षेत्र रहा। यहां दाक्षिणात्यवासी स्मार्त ब्राह्मणोंके 'जगद्गुरु' रहते हैं।

यहां रत्नपुरी और शकरारपत्तन स्थानमें प्राचीन नगरादिका चिह्न विद्यमान है। उसके देखनेसे स्थानीय पूर्वसमृद्धिका कुछ आभास मिलता है। उक्त दोनों स्थान पहले बल्लाल राजावोंकी राजधानी रहे। उसी समय दाक्षिणात्यके कितने ही महापुरुष वहां जाकर बसे थे। बल्लाल राजावोंके अभ्युदयसे वह प्राचीन समृद्धि बिलकुल लोप न हुई। किन्तु विजयनगरके मुसलमानोंकी वृद्धिसे प्राचीन नगरोंकी समृद्धि मिट गयी। उन्हींके अभ्युत्थानसे बल्लाल-राजवंश भी बिलकुल बिगड़ा था। कदूर और सकल निकटस्थ जनपद मुसलमानोंने अधिकार किये। कुछ दिन पीछे वदनूरके पलिगारोंने कदूर ज़िलेके अधिकांशपर आक्रमण मारा था। किन्तु जीतते भी अधिक दिन वह राज्यभोग कर न सके। १६९४ ई०को महिसुरके राजाने उन्हें फिर हराया था।

१७६३ ई०को हैदर-अलीने समस्त कदपा जिला अधिकार किया। फिर १७९९ ई०को टीपू सुलतान्के मरनेपर तत्कालीन गवरनर जेनरल वेलेस्लीने स्थानीय मित्र-राजको यह जिला दे डाला। कुछ दिन हिन्दू राजावोंने सुख-स्वच्छन्दसे राज्य चलाया था। मध्यमें किसी राजाने एक ब्राह्मणका अपमान किया। उससे स्थानीय लिङ्गायत और कृषक बिगड़ खड़े हुये। उन्होंने घोषणा की थी—वह हिन्दू राजा राज्यके उपयुक्त नहीं, जो ब्राह्मणका अपमान कर सके। १८२१ ई०को लिङ्गायतोंने विद्रोह उठाया। तरिकेरीके प्राचीन पलिगारवंशका एक व्यक्ति भी उनसे आ मिला था। व्यापार कुछ गुरुतर हो गया। राजद्रोहियोंने अनेक स्थान आक्रमण किये थे। हिन्दू राजावोंने सोचा—अपना सिंहासन बचाना चाहिये। फिर अंगरेजी सैन्यकी आवश्यकता लगी थी। अंगरेजोंने आकर विद्रोह रोका। फिर अंगरेज गवरनमेण्टने समझ लिया—स्थानीय हिन्दू राजा किसी कामके नहीं। उसी समयसे कदूर राज्य खास अंगरेजी बन गया।

१८६३ ई०को चिकमगलूर नामक स्थान इस ज़िलेका सदर मुक़ाम हुआ।

इस ज़िलेमें सब मिलाके कोई १७३ नगर और ग्राम हैं। प्रधान नगरोंके नाम यह हैं—चिकमगलूर, तरिकेरी, कदूर, आदिमपुर, अयनकेरी, बिरूर, हरिहरपुर और होरेमगलूर कलस। यहांका जलवायु सकल स्थानोंमें समान नहीं। मलनादमें प्रतिवर्ष एकप्रकार भयानक वन्य रोग होता है। उसके प्रकोपसे कोई परित्राण नहीं पाता। अपर स्थान अच्छा है। कदूर ज़िलेका प्राचीन नगर कदूर है। यह एक गण्डग्राम समझा जाता है।

प्राचीन शिलालिपि और भग्न स्तूप देखनेसे विदित होता—ई०के १०म शताब्द यहां जैन प्रबल हो गये थे। पहले यहां सदर थाना रहा, जो १८६३ ई०को चिकमगलूर उठ गया। यह नगर अक्षा० १३° ३३´ उ० और देशा० ७६° २५´ पू० पर अवस्थित है।

कद्दूरत (अ० स्त्री०) वैमनस्य, अनबन, मैल, फ़र्क़।

कद्दूहि (सं० पु०) गोत्रप्रवर ऋषिविशेष।

कद्दावर (फ़ा० वि०) प्रशस्त शरीरयुक्त, जसीम, जिसके बड़ा और भारी जिस्म रहे।

कद्दी (अ० वि०) कद्द रखनेवाला, हठी, जो मनमानी करता हो।

कद्दू (फ़ा० पु०) १ कद्दू, लौकी। २ लिङ्ग, घण्टा। गंवार इस शब्दको शेषोक्त अर्थमें व्यवहार करते हैं।

कद्दूकश (फ़ा० पु०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे लौकीका लच्छा उतारा जाता है। यह लोहे या पीतलका बनता और छोटी चौकी-जैसा रहता है। कद्दूकशमें लम्बे-लम्बे छिद्र होते हैं। इनको एक ओर उठा और दूसरी ओर दबा देते हैं। इस यन्त्रपर लौकी रगड़नेसे पतला-पतला लच्छा उतर आता है। यह लच्छा रायता और मिठाई बनानेमें लगता है।

कद्दूदाना (फ़ा० पु०) कृमिभेद, एक कीड़ा। यह श्वेत एवं क्षुद्र रहता और उदरमें पड़ मलके साथ गिरता है।

कद्रथ (सं० पु०) कुत्सितः रथः, कोः कदादेशः। रथवदयोश। पा ६।३।१०२। कुत्सितरथ, खराब गाड़ी।

कद्रु (सं० पु०) कद्-रु। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा या गेहुवां रङ्ग। २ ऋषिविशेष। (त्रि०) पिङ्गलवर्ण-विशिष्ट, गन्दुमी, भूरा। (स्त्री०) ४ नागमाता। यह दक्षकी कन्या एवं कश्यपकी पत्नी थीं। ५ वृक्ष-विशेष, एक पेड़।

कद्रुज, कद्रुपुत्र देखो।

कद्रुण (सं० त्रि०) कद्रुरस्त्यस्य, कद्रु-न। लोमादिपामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। पिङ्गलवर्णयुक्त, गन्दुमी, भूरा।

कद्रुपुत्र (सं० पु०) कद्रोः पुत्रः, ६-तत्। नाग, सर्प, सांप। इसका संस्कृत पर्याय काद्रवेय, कद्रुसुत और कद्रुसुत है।

कद्रुसुत (सं० पु०) कद्रोः सुतः, ६-तत्। सर्प, सांप।

कद्रू (सं० स्त्री०) कद्रु-ऊङ्। कद्रुकमण्डल्वोश्छन्दसि। पा ४।१।७१। सर्पमाता, सांपोंकी मा।

कद्र्यच (सं० त्रि०) कस्मिन्नञ्चति, किम्-अञ्च्-क्विप् अद्र्यादेशः किमः कश्च। १ अनिश्चित देशको गमन करनेवाला, जो किसी नामालूम मुल्कको जाता हो। (क्ली०) २ अनिश्चित देशको गमन, नामालूम मुल्कको सफ़र।

कद्वत् (सं० त्रि०) क अस्त्यस्य, क-मतुप् मस्य वः। कशब्दयुक्त, 'क' लफ़्ज़ रखनेवाला।

कद्वती (सं० स्त्री०) कद्वत्-ङीप्। कशब्दयुक्त मन्त्र प्रभृति।

कद्वद (सं० त्रि०) कुत्सितं वदति, कु-वद्-पचाद्यच् कोः कदादेशश्च। १ कुत्सित वक्ता, खराब बोलनेवाला, जो ठीक कहता न हो। २ कर्कशभाषी, कड़ी बात कहनेवाला। ३ दुःश्रवशब्दयुक्त, सुननेमें अच्छा न लगनेवाला। ४ अति कुत्सित, निहायत खराब।

कद्वर (सं० क्ली०) कं जलमिव आचरति, क-क्विप् शठ कता व्रियते कत-वृ-अप्। १ दधिस्नेहयुक्त तक्र, पानी मिला मट्ठा। २ दूधका पानी, आब-शोर, पच्छा, तोड़।

कधप्रिय (सं० त्रि०) स्कन्धं प्रीणाति, प्री-क्विप् पृषोदरादित्वात्। स्कन्धप्रिय।

कधप्री (वै० त्रि०) कन्धं प्रीणाति, प्री-क्विप् पृषो-दरादित्वात्। स्कन्धप्रिय।

कधी (हिं० क्रि० वि०) कभी, किसी वक्त।

कधी-कधार (हिं० क्रि० वि०) समय-समयपर, कभी-कभी, जब-तब।

कन (हिं० पु०) १ कण, ज़र्रा, बहुत छोटा टुकड़ा। २ अनाजका दाना। ३ अनाजके दानेका एक टुकड़ा। ४ उच्छिष्ट भोजन, जूठन। ५ भिक्षा, मांगा हुआ दाना। ६ विन्दु, क़तरा, बूंद। ७ वालुकाका क्षुद्रांश, बालूका किनका। ८ क्षुद्राङ्कुर, दाना-जैसी कोंपल। ९ शक्ति, ताक़त, ज़ोर। यौगिक शब्दोंमें 'कन'से कर्णका बोध होता है, जैसे—कनफटा, कनटोप, कनगुज, कनसराई।

कनई (हिं० स्त्री०) १ नवशाखा, नई डाल, किल्ला, कोपल। २ आर्द्र मृत्तिका, गीली मट्टी, कीचड़।

कन-उंगली (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, हाथकी सबसे छोटी उंगली, छिंगुनिया। कान खुजलानेमें प्रायः काम आनेसे हाथकी सबसे छोटी उंगली 'कनउंगली' कहलाती है।

कनउड़ (हिं० वि०) कनौड़ा, कृतज्ञ, एहसानमन्द।

कनक (सं० क्ली०) कनति दीप्यते, कन्-वुन्। १ स्वर्ण, सोना। स्वर्ण देखो। (पु०) २ रक्तपलाशवृक्ष, टेसूका पेड़। ३ नागकेशरवृक्ष। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ काञ्चनार वृक्ष, कचनारका पेड़। ६ कालीयवृक्ष, काले अगुरुका पेड़। ७ चम्पकवृक्ष, चम्पेका पेड़। ८ कासमर्दक्षुप, कसौंदीका पेड़। ९ कनकगुग्गुलु। १० लाक्षातरु, लाखका पेड़। ११ जयपालवृक्ष, जमालगोटेका पेड़। १२ कृष्णधुस्तूर, काला धतूरा। १३ महादेव।

"उपकारः प्रियः सर्वः कनकः काञ्चनच्छविः।" (भारत १३।१७।९२)

१४ यदुवंशीय दुर्दम राजाके पुत्र। (हरिवंश ३३।६) १५ एक चोलराजा। (हिं०) १६ गोधूमचूर्ण, गेहूंका आटा, कनिक। १७ गेहूं।

कनककदली (सं० स्त्री०) रम्भाभेद, किसी किस्मका केला।

कनककन्दर्परस (सं० पु०) वाजीकरणका एक औषध, नामर्दीकी एक दवा। पारद एवं गन्धक प्रत्येक सम भाग और कान्तलौह, वैक्रान्त तथा स्वर्ण प्रत्येक पारदसे चतुर्थांश पहले कज्जली करे। फिर ताम्र-पात्रपर गूलरके रस, सरसोंके तेल और धतूरेके रसमें प्रत्येकको तीन दिन चपटाते हैं। सूखनेपर वालुका यन्त्रमें धीमी आंचसे सबको पकाना चाहिये। वालुका तप्त पड़नेसे आग बुझा देते और शीतल होनेपर नीचे उतार औषधको खा लेते हैं। अनुपान घृत, शर्करा और मधु है।

कनककली (हिं० स्त्री०) सोनेकी लौंग। यह एक आभूषण है। इसे कर्णमें धारण करते हैं।

कनककशिपु (सं० पु०) हिरण्यकशिपु, एक दैत्य।

कनककुण्डला (सं० स्त्री०) हरिकेशकी माता।

कनककुशल—एक जैन ग्रन्थकार। यह विजयसेन स्थविरके शिष्य रहे। इन्होंने ज्ञानपञ्चमीमाहात्म्य ग्रन्थ बनाया था।

कनककेशरी—उत्कलके एक राजा। यह अलाबु-केशरीके पुत्र थे।

कनकक्षार (सं० पु०) कनकस्य द्रावणार्थं क्षारः, मध्यपदलो०। टङ्कणक्षार, सोहागा। सोहागा देखो।

कनकक्षीरी (सं० स्त्री०) सुवर्णक्षीरी, किसी किस्मकी खिरनी।

कनकगिरि (सं० पु०) सम्प्रदायविशेषके प्रतिष्ठाता।

कनकगैरिक (सं० क्ली०) अत्यन्त रक्तगैरिक, बहुत लाल गेरू।

कनकचम्पक (सं० पु०) चम्पकविशेष, किसी किस्मका चम्पा। (Pterospermum acerifoleum) यह वृक्ष भारतवर्षके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है। कनकचम्पक बहुत बड़ा वृक्ष है। काष्ठसे सुन्दर और दृढ़ तख्ते बनते हैं। पुष्प सुगन्धविशिष्ट रहता है। हिन्दीमें इसे कनियारी कहते हैं। वल्कल पिङ्गलवर्ण होता है। पत्र वृहदाकार रहते हैं। वसन्त एवं ग्रीष्म ऋतु इसके फूलनेका समय है। आर्द्र भूमिमें यह प्रायः पनपता है।

कनकचम्पा (हिं०) कनकचम्पक देखो।

कनकचूर (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। इसका आकार खर्व, किन्तु मुख अधिक दीर्घ होता है। अन्यान्य आमन धान्यकी अपेक्षा यह विलम्बसे पकता है। अधिक उर्वर और निम्नभूमि न रहनेसे इसकी कृषि करना कठिन है। कनकचूरकी लाईसे मुड़की बनती है।

कनकजीरा (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। यह अति सूक्ष्म होता है। इसको मार्गशीर्ष मासमें काटते हैं। कनकजीरेका तण्डुल बहुत दिन नहीं बिगड़ता।

कनकजोद्भव (सं० पु०) राल, लोबान।

कनकझिङ्गा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Polygonum elegans)

कनकटङ्क (सं० पु०) स्वर्णकुठार, सोनेका तबर।

कनकटा (हिं॰ वि॰) १ कर्णरहित, बूचा, जो कान कटा चुका हो। २ कर्ण काटनेवाला, जो कान काट लेता हो।

कनकतालाभ (सं॰ त्रि॰) स्वर्णके तालवृक्षकी भांति प्रभाविशिष्ट, जो सुनहले ताड़की तरह चमकता हो।

कनकतैल (सं॰ क्ली॰) क्षुद्ररोगाधिकारका एक तैल, छोटी-छोटी बीमारियोंपर चलनेवाला तैल। मधुकके कषायमें एक कुड़व तैल पाक करना चाहिये। फिर उसमें प्रियङ्गु, मञ्जिष्ठा, रक्तचन्दन, नीलोत्पल और नागेश्वर प्रत्येकका चार-चार तोले कल्क डालनेसे यह तैल बनता है। कनकतैल मुखकी कान्ति बढ़ाता और चक्षुःशूल, शिरःशूल प्रभृति रोग मिटाता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

कनकदण्डक (सं॰ क्ली॰) कनकस्य दण्डो यत्र, बहुव्री॰। राजच्छत्र, शाही आफ़ताबी।

कनकध्वज (सं॰ पु॰) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकन (हिं॰ पु॰) शब्द विशेष, एक आवाज़। किसी विषयपर हठपूर्वक बोलते रहने और दूसरेकी बात न सुननेको कनकन कहते हैं।

कन-कना (हिं॰ वि॰) भङ्गुर, नाज़ुक, टूट-फूट जानेवाला।

कनकना (हिं॰ वि॰) १ कनकनानेवाला, जो कनकनाहट लाता हो। २ चुन-चुनाहट लानेवाला, चुनचुना। ३ असह्य, बरदाश्त न होनेवाला, जो खानेमें बुरा लगता हो। ३ असहनशील, चिड़चिड़ा, चिढ़ उठनेवाला।

कनकनाना (हिं॰ क्रि॰) १ कनकनाहट मालूम पड़ना, चुनचुनाहट उठना, मुंहका ज़ायका बिगड़ना। ज़मींकन्द, घुइयां वगैरह चीजें कच्ची खानेसे मुंह कनकनाने लगता है। २ अच्छा न लगना, बुरा मालूम पड़ना। ३ चकित होना, भड़कना, कान खड़े करना। ३ रोमाञ्च आना, सनसनाना।

कनकनाहट (हिं॰ स्त्री॰) कनकनानेकी हालत, कनकनी।

कनकपत्र (सं॰ क्ली॰) कनकनिर्मितं पत्रं पत्राकारं भूषणमित्यर्थः। कर्णालङ्कारविशेष, कानका पात।

कनकपराग (सं॰ पु॰) सुवर्णरेखा, सोनेका बुरादा।

कनकपल (सं॰ पु॰) कनकस्य पलं मानविशेषः। १ स्वर्णादि परिमापक षोड़शमाषक, सोलह मासे सोनेकी तौल। इसका अपर नाम कुबविस्त है। २ मत्स्यविशेष। इसका मांस स्वर्ण-जैसा होता है।

कनकपिङ्गल (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष। (हरिवंश १।१५।८)

कनकपुर—ग्रामविशेष, एक गांव। यह कपिलवस्तुसे १ योजन दूर अवस्थित है। यहां कनकमुनि नामक बुद्धने जन्मग्रहण किया था।

कनकपुरी (सं॰ स्त्री॰) कनकनिर्मिता पुरी, मध्य-पदलो॰। १ स्वर्णपुरी, सोनेका शहर। २ लङ्का।

कनकपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) १ गणिकारिका, छोटी अरनी। २ द्रुमोत्पल, उलट-कम्बल।

कनकपुष्पी, कनकपुष्पिका देखो।

कनकप्रभ (सं॰ पु॰) सोमलताभेद। सोम देखो।

कनकप्रभा (सं॰ स्त्री॰) कनकस्य प्रभेव प्रभा यस्याः, मध्यपदलो॰। १ महाज्योतिष्मतीलता, बड़ी रतन-जोत। २ पीतयूथिका, सोनजुही। ३ ज्वरातिसारका एक रस, बुखारके दस्तोंकी एक दवा। सुवर्णबीज, मरिच, मरालपाद, कणा, टङ्गणक, विष और गन्धक समान भाग ले भांगके रसमें घोंटने और गुञ्जाप्रमाण वटिका बनानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे अतीसार, ग्रहणी और अग्निमान्द्य रोग छूट जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) ४ छन्दोविशेष। इसमें तेरह-तेरह अक्षरके चारपाद रहते हैं।

कनकप्रसवा (सं॰ स्त्री॰) कनकवत् प्रसवः पुष्पं यस्याः, बहुव्री॰। स्वर्णकेतकीवृक्ष, सुनहले केवड़ेका पेड़।

कनकप्रसून (सं॰ पु॰) धूलीकदम्ब, किसी किस्मके कदमका पेड़।

कनकफल (सं॰ क्ली॰) १ धुस्तूरफल, धतूरेका फल। २ जयपाल, जमाल-गोटा।

कनकभङ्ग (सं॰ पु॰) स्वर्णखण्ड, सोनेका टुकड़ा।

कनकमय (सं॰ त्रि॰) कनकस्य विकारः, कनक-मयट्। स्वर्णनिर्मित, सोनेका बना हुआ, सुनहला।

कनकमुनि (सं॰ पु॰) बुद्धविशेष।

कनकमृग (सं॰ पु॰) कनकवर्णो मृगः, मध्यपदलो॰

स्वर्णवर्ण मृग, सुनहले रङ्गका हिरन। सीताहरणके समय मारीच नामक राक्षसने मायाबलसे स्वर्णवर्ण मृगका रूप बना सीताको प्रलोभित किया था।

कनकरम्भा (सं० स्त्री०) कनकवर्णकलिका रम्भा, मध्यपदलो०। सुवर्णकदली, चम्पा-केला।

कनकरस (सं० पु०) कनकवर्णो रसः उपरसः। १ हरिताल। २ गलित स्वर्ण, गला हुआ सोना।

कनकरेखा (सं० स्त्री०) कनकप्रभाकी बेटी।

कनकलोद्भव (सं० पु०) कनति दीप्यते इति कना, कला दीप्ता कला अवयवः तथा उद्भवति, कनकला-उद्-भू-अच्। सर्जरस, लोबान, धूना।

कनकवती (सं० स्त्री०) कनकमस्त्यस्याः, कनक-मतुप् मस्य वः ङीप्। १ स्वर्णभूषित स्त्री, सोनेसे जड़ी औरत। २ कनकवर्ण राजाकी राजधानी।

कनकवतीरस (सं० पु०) अर्शोधिकारका एक रस, बवासीरकी एक दवा। पारा, गन्धक, हरिताल, सैन्धवलवण, लाङ्गली, इन्द्रयव एवं तुम्बी प्रत्येक १ पल और लशुन ४ पल कारवेल्ली (करेली) पत्रके रसमें १ दिन घोंटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। वटी गुञ्जा-प्रमाण बनती है। कनकवती रसकी एक वटी प्रत्यह सेवन करनेसे रक्त, वात एवं कफ तीनोंके विकारसे उत्पन्न होनेवाला अर्शोरोग मिट जाता है। (रसरत्नाकर)

कनकवर्ण (सं० पु०) कनकस्य वर्ण इव वर्णो यस्य, बहुव्री०। १ राजविशेष, एक राजा। नेपालके बौद्ध इन्हें शाक्यसिंहका पूर्व अवतार मानते हैं। (त्रि०) २ स्वर्णकी भांति वर्णविशिष्ट, सुनहला, सोनेकी तरह चमकनेवाला।

कनकवाहिनी (सं० स्त्री०) काश्मीर राज्यकी एक नदी। (राजतरङ्गिणी १।१५०)

कनकविग्रह (सं० पु०) विशालपुरीके एक राजा।

कनकवीज (सं० क्लो०) धुस्तूरवीज, धतूरेका वीजा।

कनकशक्ति (सं० पु०) कनकवर्णा शक्तिर्वाणविशेषो यस्य, बहुव्री०। कार्तिकेय।

कनकशिल (सं० पु०) रामायणोक्त एक पहाड़। (किष्किन्धा ४० स०)

कनकसङ्कोचरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रस, कोढ़की एक दवा। मृत स्वर्ण एवं अभ्र तथा प्रत्येक १।१ भाग, पारा ३ भाग, और गन्धक ३ भाग अम्लके रसमें पीस गोली बनाये। फिर इस गोलीको लौह पात्रमें सर्षपके तेलसे पकाते हैं। जब औषध अच्छी तरह भुन जाता, तब चूल्हेसे नीचे उतार वैद्य उसका चूर्ण बनाता है। अन्तको उक्त चूर्णमें चित्रकमूल, त्रिकटु, गुड़त्वक्, विड़ङ्ग एवं विष १।१ भाग और त्रिफला ३ भाग डाल छागमूत्रसे गुञ्जा-प्रमाण वटी बांध लेते हैं। निष्कपरिमाण वाकुची-तैलके साथ कनकसङ्कोचरसकी एक गोली सेवन करनेसे कुष्ठरोग आरोग्य होता है। (रसरत्नाकर)

कनकसुन्दररस (सं० पु०) ज्वरातिसारके अधिकारका रस, बुखारके दस्तोंकी एक दवा। हिङ्गुल, मरिच, गन्धक, पिप्पली, टङ्कण (सोहागेकी लाई), विष एवं धुस्तूरवीज समस्त द्रव्य समभाग एकत्र भांगके रसमें एक याम घोंट चनेकी बराबर गोली बना लेते हैं। यह औषध अतीसार और ग्रहणीरोगनिवारक है। इसके व्यवहारकाल दधि, अन्न,घोल प्रभृति पथ्य भोजन करना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

कनकसूत्र (सं० क्लो०) कनकनिर्मितं सूत्रम्, मध्य-पदलो०। स्वर्णसूत्र, सोनेका तार।

कनकसेन—एक प्राचीन राजा। इन्होंने मेवाड़के राना-वोंका कुल प्रतिष्ठित किया था। रानावोंके कुलतालिका-ग्रन्थमें लिखा—कनकसेनने भारतवर्षके किसी उत्तर-प्रदेशसे चल सौराष्ट्र प्रायद्वीपमें पदार्पण किया और वहां एक उपनिवेश बसा दिया। उस समय सौराष्ट्र प्रायद्वीपमें परमारवंशीय कोई राजा राजत्व करते थे। कनकसेनने बलपूर्वक उनका राजत्व छीन वीरनगर बसाया। उन्हींके वंशीय राजावोंने विजयनगर, वलभीपुर प्रभृति कई नगरोंकी प्रतिष्ठा की। प्रवाद—कनकसेनने ही वल्लभी संवत् चलाया था।

कनकस्तम्भरुचिर (सं० त्रि०) स्वर्णके स्तम्भोंसे प्रकाश-मान, जिसमें सोनेके खम्भे चमकें।

कनकस्तम्भा (सं० स्त्री०) सुवर्णकदलीवृक्ष, चम्पा-केलेका पेड़।

कनकस्थली (सं॰ स्त्री॰) स्वर्णभूमि, सोनेकी खान।

कनकाङ्गद (सं॰ क्ली॰) कनकमयं अङ्गदम्, मध्यपदलो॰। १ स्वर्णनिर्मित केयूर। (पु॰) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकाङ्गदी (सं॰ पु॰) कनकाङ्गदमस्यास्ति, कनकाङ्गद-इनि। विष्णु।

"महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी।" (विष्णुसह॰)

कनकाचल (सं॰ पु॰) कनकमयो अचलः, मध्यपदलो॰। १ सुमेरु पर्वत। २ धान्यादि दश दानोंमें एक दान। इसका प्रमाण तीन प्रकार है। सहस्र पल स्वर्णदानको उत्तम कनकाचल कहते हैं। इसी प्रकार पांच सौ पलमें मध्यम और ढ़ाई सौ पलमें अधम कनकाचल दान होता है। ऋत्विकोंको ऐसे ही कनकाचल दान देनेसे सब पाप मिटता और ब्रह्मलोक मिलता है। (स्मृति)

कनकाञ्जलि (सं॰ स्त्री॰) कनकपूर्ण अञ्जलिः, मध्यपदलो॰। एक माङ्गलिक दान।

कनकाञ्जली (सं॰ स्त्री॰) कनकाञ्जलि-ङीप्। एक माङ्गलिक दान। किसी देवार्चनाके पीछे प्रतिमा विसर्जनकाल सधवा गृहकर्त्री स्वयं वेशभूषा बना अन्यान्य सधवा स्त्रियोंके साथ प्रतिमा वरणपूर्वक अपना अञ्चल फैला देती हैं। उसी समय गृहस्वामी प्रतिमाके पश्चात्से उक्त अञ्चल पर मुद्रायुक्त तण्डुलपात्र निक्षेप करता है। कर्त्री अञ्चल उठा और मस्तकपर लगा गृहको चली जाती हैं। उस समय उन्हें जलकी धारासे ले जाना पड़ता है। इसीका नाम कनकाञ्जली है। विवाहकी यात्राके समय भी इसीप्रकार कनकाञ्जली दान करनेकी प्रथा है।

कनकाद्रि (सं॰ पु॰) कनकमयो ऽद्रिः, मध्यपदलो॰। सुमेरु पर्वत।

कनकाद्रिखण्ड (सं॰ क्ली॰) स्कन्दपुराणका एक अंश।

कनकाध्यक्ष (सं॰ पु॰) कनकस्य रक्षणे अध्यक्षः, मध्यपदलो॰। स्वर्णरक्षक, सोनेका मुहाफिज्। इसका संस्कृत पर्याय भारिक है।

कनकानी (हिं॰ पु॰) अश्वभेद, किसी किस्मका घोड़ा। यह आकारमें गर्दभसे अधिक बड़ा नहीं होता। कनकानी खूब कदम चलता और हवाकी तरह उड़ता है।

कनकाम्लक, कनकारक देखो।

कनकायु (सं॰ पु॰) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकारक (सं॰ पु॰) कनकमिव सर्वतो ऋच्छति व्याप्नोति दीप्त्येति शेषः, कनक-ऋ-अण् स्वार्थे कन्। कोविदारवृक्ष, सुनहले कचनारका पेड़।

कचनार और कोविदार देखो।

कनकालुका (सं॰ स्त्री॰) कनकनिर्मित आलुः सलिलाद्याधारपात्रविशेषः, कनकालु संज्ञायां कन्-टाप्। सुवर्णभृङ्गार, सोनेकी सुराही।

कनकासव (सं॰ पु॰) हिक्काश्वासका आसव, हिचकी और दमेकी बीमारीका एक अर्क। फल, मूल, पत्र एवं शाखा सहित धुस्तूर ४ पल, वासकके मूलकी छाल ४ पल, पिप्पली, यष्टिमधु, कण्टकारी, नागकेशर, शुण्ठी, भार्गी तथा तालीशपत्रका चूर्ण २।२ पल, द्राक्षा २० पल, जल १२८ शरावक, शर्करा साढ़े १२ शरावक और मधु सवा ६ सेर एकत्र घड़ेमें १ मास भरकर रखनेसे यह आसव प्रस्तुत होता है। कनकासव छानकर पीनेसे हिक्का और श्वासरोग छूट जाता है। (भैषज्यरत्नावली)

कनकाह्व (सं॰ क्ली॰) कनकस्य आह्वा नाम यस्य, बहुव्री॰। १ श्वेत धुस्तूर, सफेद धतूरा। २ तण्डुलीय शाक, चौराई। ३ जयपालवृक्ष, जमालगोटेका पेड़। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ नागकेशरवृक्ष।

कनकाह्वय (सं॰ पु॰) कनकं आह्वयो यस्य, बहुव्री॰। बुद्धदेवका एक नाम। अन्यान्य अर्थके लिये कनकाह्व देखो।

कनकी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्र कण, छोटा टुकड़ा। प्रधानतः तण्डुलके क्षुद्र कणोंको 'कनकी' कहते हैं।

कनकूत (हिं॰ पु॰) कणोंका अनुमान, दानेका आन्दाज्। खेतमें पके अन्नके अनुमान करनेका नाम कनकूत है। ज़मीन्दार स्वयं वा किसी दूसरेसे खड़ी फ़सलमें होनेवाले अनाजका अन्दाज़ लगा कृषकको मूल्य दे देता और अनाज ले लेता है।

कनकेश्वर (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष।

कनकैया (हिं० स्त्री०) छोटा कनकौवा, गुड्डी।

कनकोद्भव (सं० पु०) महासर्जवृक्ष, असनेका पेड़।

कनकौवा (हिं० पु०) बड़ा पतङ्ग, बड़ी गुड्डी। यह पतले कागज़का बनता है। कागज़को गोल-गोल काट बीचमें बांसकी एक कुछ मोटी-जैसी खपाच लेईके सहारे लगाते हैं। इसका नाम ठड्डा है। फिर बांसकी दूसरी पतली खपाच लचाकर कमान-जैसी बनाते और गोल कटे कागज़के सिरेपर रख दोनों कोने लेईसे चपकाते हैं। नीचे दोहरे कागज़का एक पत्ता भी लगा दिया जाता है। ऊपर जहां दोनों खपाचें मिलतीं और नीचे पत्तेके पास दो-दो छेद कर सूतकी पतली डोरसे कन्ना बांधते हैं। ऊपरके छेद ऐसे रहते जिसमें डोर डालनेसे दोनों खपाचें फंस जाती हैं। फिर कन्नेकी डोर बराबर तान नीचेको एक अङ्गुल बढ़ा गांठ लगा देते हैं। इससे कनकौवा हवा लगनेसे खूब बढ़ता और काट चलता है। कन्नेकी गांठके ऊपर दूसरी डोर बांध कनकौवा बढ़ाया जाता है। जिसे अभ्यास रहता, वह हाथोंसे ही कनकौवा बढ़ा सकता है। किन्तु नये खेलाड़ीको ढीली मंगाना पड़ती है। एक आदमी डोरसे बंधे कनकौवेको दूर ले जा और ऊपर उठा कर छोड़ देता है। उसके ऊपर उठाकर छोड़ते ही कनकौवा उड़ानेवाला डोरको तानता है। इसीका नाम ढीली है। इससे कनकौवा बढ़नेमें विलम्ब नहीं लगता। डोर दो प्रकारकी होती है—एक सादी और दूसरी मञ्जेदार। कांचको कूट-पीस और लेईमें सान कोई रङ्ग मिलानेसे मञ्जा बनता है। डोरका एक सिरा किसी चीज़में बांध और दूसरा सिरा बायें हाथमें रख लेईमें सना हुआ कांच रगड़नेसे मञ्जा चढ़ता है। मञ्जा कनकौवा लड़ानेमें काम आता है। इससे दूसरेका कनकौवा काट देते हैं। जिस यन्त्रपर डोर चढ़ाकर रखते, उसे हुचका या लटाई कहते हैं। हुचका बांसकी खपाचोंका बनता है। लटाईमें सिर्फ लकड़ीके पतले-पतले टुकड़े लगते हैं। कनकौवा दो तरहसे लड़ाया जाता है—खींचसे और ढीलसे। खींचवाले नीचे और ढीलवाले ऊपरके पेच लेते हैं। पहले लोग प्रायः ढीलसे ही कनकौवा लड़ाते थे। किन्तु आजकल खींचकी चाल ज़्यादा देख पड़ती है। लखनऊका कनकौवा प्रसिद्ध है। कनकौवा कई तरहका होता है—सफेद, लाल, पीला, नीला, कटारीदार, गिलासदार, अधरङ्गा इत्यादि। दमड़ीका दमड़ची, छदामका छदमची, धेलेका धेलची, पैसेका पैसेहल, टकेका टकेहल और गण्डेका कनकौवा गण्डेहल कहलाता है। ज्यादा बड़े कनकौवेको भररा कहते हैं। ज़ोरदार कनकौवेका नाम तुक्कल है। इसे प्रायः नखसे उड़ाते हैं। सन और रेशम मिलाकर बनायी जानेवाली डोर नख कहाती है। यह बड़ी मुश्किलसे कटती है। पहले लोग सूतकी पतली डोरपर मञ्जा चढ़ाते थे। किन्तु आजकल विदेशी रीलके सामने उसे कोई नहीं पूछता। कनकौवा उड़ानेमें बड़ा डर रहता है। कारण उड़ानेवाले आकाशकी ओर ताका करते और कभी-कभी कोठेसे गिरकर मर मिटते हैं।

कनकक (वै० पु०) विषविशेष, एक ज़हर।

कनखजूरा (हिं० पु०) शतपदी, हज़ार-पा, कनगोजर, कनसलाई (Centipede)। इसकी बाहरी रक्षाकी ऊपरी रगोंमें पश्चात् कोष रहता, जो प्रायः दो अनुबन्धोंसे प्रबल पड़ता है। प्राक्तन कोषपर शिरःफलक होता है। इसीमें चक्षु देख पड़ते हैं। कनखजूरेके कई पैर रहते हैं। इनमें कोई छोटा और कोई बड़ा होता है। इसीसे इसको संस्कृतमें शतपदी (सकड़ों पैरवाला) और फ़ारसीमें हज़ारपा (हज़ारों पैरवाला) कहते हैं। इसका पद प्रायः छह खण्डमें विभक्त है। कनखजूरा अपनी टांगोंसे दूसरेका मार और अपनेको बचा भी सकता है। इसके प्रायः चक्षु नहीं होते। किन्तु जिसके चक्षु रहते, उसके एकसे चालीस तक देख पड़ते हैं। यह काट खाता और चिपक भी जाता है। भारतवासी कनखजूरेको लक्ष्मीपुत्र कहते हैं। जहां यह निकलता, वहां धनराशि रहनेका अनुमान लगता है। कनखजूरेको हिन्दू नहीं मारते।

कनखना (हिं० क्रि०) अप्रसन्न होना, बुरा मानना, रूठना।

कनखल—युक्तप्रदेशके सहारनपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° ५५´ ४५´´ उ० और देशा० ७८° ११´ पू०पर अवस्थित है। कनखल हरिद्वारसे आधकोस दक्षिण गङ्गाके पश्चिमतीर पड़ता है। भूमिका परिमाण ६३ एकर है। नगरके दक्षिण भागमें दक्षेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। इसी मन्दिरके निकट सतीके प्राण छोड़नेपर शिवने दक्षयज्ञ ध्वंस किया था। भारतवासी कनखलको एक पुण्यतीर्थ मानते हैं। यहां स्नान करनेसे सर्वपाप छूट जाते और लोग मुक्ति पाते हैं। (भारत, अनु० २५ अ०)

कूर्म और लिङ्गपुराणके मतसे कनखलमें दक्षयज्ञ हुआ था। (कूर्म १।१८ अ०, लिङ्गपु० १०।१८)

कनखलके मकान् बहुत सुन्दर हैं। अनेक प्राचीरोंमें पौराणिक चित्र खिंचे हैं। यहां गङ्गाके कूलपर मनोहर उद्यान शोभित हैं। गङ्गासे उनका दृश्य बहुत अच्छा लगता है।

कनखलमें अधिकांश ब्राह्मण रहते हैं। वह हरिद्वार-मन्दिरके पुरोहित वा पण्डा हैं। हरिद्वारमें सुविधा न पड़नेसे उन्होंने अपने लिये यहां मकान् बना लिये हैं। जवलपुरी ब्राह्मणोंके साथ उनको कन्याका आदान-प्रदान चलता है। किसी अपर स्थानके ब्राह्मणोंको वह प्राय: अपनी कन्या नहीं देते।

हरिद्वारके अनेक यात्री कनखल दर्शन करने आते हैं। हरिद्वार देखो।

कनखला (सं० स्त्री०) गङ्गा नदीकी एक शाखा। यह नदी खाण्डवीपुरमें प्रवाहित है। (कालिकापु० ८४।३०)

कनखिया (हिं० स्त्री०) कनखी, कटाक्ष, तिरछी नज़र।

कनखियाना (हिं० क्रि०) कनखी मारना, कटाक्ष करना।

कनखी (हिं० स्त्री०) कटाक्ष, आंखका इशारा, तिरछी नज़र।

कनखुरा (हिं० पु०) तृणविशेष, रोंहा, एक घास। यह आसाममें अधिक उत्पन्न होता है।

कनखैया (हिं० स्त्री०) १ कनखी, कटाक्ष, तिरछी नज़र। (वि०) २ कनखी मारनेवाला, कटाक्ष करनेवाला, जो आंखकी पुतली घुमाकर इशारा करता हो।

कनगुज (हिं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी।

कनगुरिया (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, हाथकी सबसे छोटी उंगली।

कनछेदन (हिं०) कर्णवेध देखो।

कनटी (सं० स्त्री०) रक्तवर्ण मन्न, लाल मञ्जिष्ठा।

कनटोप (हिं० पु०) एक बड़ी टोपी। इससे दोनों कान ढंक जाते हैं। इसे प्राय: शीत ऋतुमें व्यवहार करते हैं।

कनदेव (सं० पु०) एक बौद्धमुनि।

कनधार (हिं०) कर्णधार देखो।

कनन (सं० त्रि०) कन-युच्। काण, काना।

कनप, कणप देखो।

कनपट (हिं० पु०) १ कर्ण एवं चक्षुका मध्यस्थल, कान और आंखके बीचकी जगह। २ तमाचा, थप्पड़।

कनपटी (हिं० स्त्री०) कनपट देखो।

कनपेड़ा (हिं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। इसमें कर्णके मूलपर एक चपटी गिलटी पड़ती, जो न बैठनेपर पकती है।

कनफटा (हिं० पु०) एक शैव उपासक सम्प्रदाय। शैव-उपासक सम्प्रदायमें साधारणत: दो श्रेणी देख पड़ती है—सन्न्यासी और योगी। योगी योगकी पकड़ साधनाका पथ अवलम्बन करते हैं। फिर यह योगी-श्रेणी भी नाना श्रेणियोंमें विभक्त है। कनफटा ऐसी ही एक श्रेणीके योगी होते हैं। उभय कर्णोंमें छिद्र रहनेसे ही कनफटा नाम पड़ा है। यह नहीं, कि केवल कनफटा योगियों को ही कान छेदाना होता है। किन्तु सभी श्रेणियोंके योगी कान छेदा लेते हैं। अन्य श्रेणीवालोंसे इनमें कुछ विशेषत्व रहता है। कनफटे अपने कर्णके छिद्रोंमें कुण्डल पहनते हैं। यह कुण्डल पत्थर, बिल्लौर, गैंडेके शृङ्ग, मट्टी या लकड़ीके बनते हैं। दीक्षाके समय इन्हें प्रथम धारण करना पड़ता है। कुण्डल मुद्रा वा दर्शन कहाते हैं। इसीसे कनफटोंका नाम 'दर्शन-योगी' भी है। इन कुण्डलोंको छोड़ यह २।३

अङ्गुलिप्रमाण एक कृष्णवर्ण पदार्थ पशमके डोरेसे बांध अपने गलेमें डाले रहते हैं। उक्त कृष्णवर्ण पदार्थको 'नाद' और पशमके डोरेको 'सेली' कहते हैं। नाद, सेली और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे ही कनफटा मालूम होते हैं। सिवा इसके यह गेरुवा वस्त्र सजाते, जटा बढ़ाते, भस्म चढ़ाते और विभूतिका त्रिपुण्ड्र लगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरक्षनाथको शिवका अवतार मानते हैं। फिर गोरक्षनाथने ही हठयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

सन्यासियोंकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुवोंमें कोई शिष्यको मस्तक मुंड़ाने, कोई कर्णमें मुद्रा लटकाने और कोई ज्योत्-मार्गमें जानेका आदेश देता है। ज्योत्मार्ग देखो।

भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें इस श्रेणीवाले योगी सचराचर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम जमाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकत्र रह भिक्षा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके उद्देशसे देश-देशान्तर घूम-फिर आते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरक्ष-क्षेत्र नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षक्षेत्र द्वारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'सुड़ङ्ग' पड़ता है। यह सुड़ङ्ग और द्वारकाका गोरक्षक्षेत्र कनफटे योगियोंका अति श्रद्धेय तीर्थ हैं। नेपालके पशुपतिनाथ, मेवाड़के एकलिङ्ग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इन्हींके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कलकत्ते के पास दमदमीमें 'गोरक्ष-बांसरी' नामक एक स्थान है। वहां तीन मनुष्यमूर्ति और शिव, काली एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्ष-नाथ और मत्स्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिवेणीसे ४।५ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेश्वर नाम एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेश्वर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेश्वरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान है। ज़मीन्दारी की भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगीराज कहते हैं। योगी राजावोंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिग्रह नहीं करते। योगीराजाके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख आ गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात् महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवतावोंने उस शब्दसे चौंक और वहां पहुंच जटेश्वर लिङ्ग तथा वशिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-माहात्म्यके वर्णनस्थलपर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मीन, गोरक्ष, विरूपाक्ष, विलेशय, मन्थन भैरव, सिद्धबोध, कन्थड़ी, कोरण्टक, सिरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कर्ण-पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, कापालि, बिन्दुनाथ, काकाचण्डीश्वरमय, अक्षय, प्रभुदेव, घोड़ाचुली, टिण्टिणी, भल्लटो, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

युक्तप्रदेशका गोरखपुर कनफटोंका प्रधान स्थान है। पहले वहां इनका एक मन्दिर रहा। अला-उद्दीनने उसे तोड़ फोड़ उसी जगह एक मसजिद बनवा दी। कुछ काल पीछे उसी जगह फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़-फोड़ा मुसलमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अन्तको बुद्धनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और हनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आजकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक आनेसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुंकवा, कनफुंका देखो।

कनफुंका (हिं० वि०) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु०) ३ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुची (Confusius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि-प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अव्यय एवं अचल भावसे समान बलमें चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुवोंकी रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वश्रेणीके लोगोंके लिये उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे बृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी वह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और शृङ्खलाबद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानी उन्नतितत्त्ववित् कहते—उच्च आशाका अनुसरण कर सिद्धिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनावोंको देखनेसे यह विषय नितान्त अमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुचीके शिक्षाबलसे वह उच्च आशाका नाम नहीं जानते। अथच तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, शृङ्खलाबद्ध और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेकी अपेक्षा मानव जीवनकी मनोहारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—"अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आत्मीय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध असमसाहिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिसङ्गत है।" महात्मा कनफुची केवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विचक्षण और नीतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालसे लोगोंको चमत्कृत और भक्तिमुग्ध कर ही पर्यवसित नहीं हुवा। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिकांश अधिवासी-समन्वित राज्यमें अक्षुण्ण भावसे फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक कर्टक समान सम्मानके साथ प्रतिपालित होते आयी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके सकल स्थलमें आज भी उसी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-साम्राज्य वर्तमान विस्तारका एक-षष्ठांश मात्र था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य १३ प्रधान और अन्यान्य अनेक क्षुद्र खण्डोंमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरोपादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्वंश

बहुदिनावधि परिवर्तन न पड़नेसे उद्यम, अध्यवसाय एवं उत्साहशून्य हो गया और इसासे अपने अधीनस्थ सामन्त राजावोंके मध्य शान्तिरक्षा कर न सका। इसी प्रकार क्रमान्वयसे पञ्च शताब्दी बीती थीं। सामन्त राजावों और अधीनस्थ सरदारोंमें चिरविवाद बद्धमूल रहा। सर्वदा युद्ध चलनेसे देशके मध्य दुःख, कष्ट, दुर्भिक्ष और कुशासनकी धूम थी। द्वितीयतः बहुविवाह प्रचलित रहा। स्त्रियां अत्यन्त हेयवत् व्यवहृत होती थीं। उनके ऊपर नानारूप निषेध-विधि प्रवर्तित रहा। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते, उक्त कारणसे कितने षड़यन्त्र, गृहविवाद और राज्य राज्य एवं वंश वंशमें युद्ध-विग्रह चलते थे। प्राचीन युरोपीयोंकी भांति भूत-प्रेत न मानते या किसी प्रकारके धर्ममत परिवर्तनपर देशके मध्य विप्लव न डालते भी चीना पृथिवीसे अतीत दूसरे वस्तुके होने न होनेसे अज्ञात रहे। कार्यतः वैसे वस्तुपर उन्हें विश्वास भी न था। स्वर्ग नरकादिके ज्ञानसे वह दूर रहे। सुतरां उनके सम्बन्धमें उन्हें किसी प्रकारकी कामना वा घृणा भी न थी।

कनफुचोके जन्म-समय चीनराज्यमें चाउ या चु वंश सम्राट-पदपर अधिष्ठित रहा। जिस समयसे चीन राज्यका इतिहास मिलता, उसमें यह राजवंश ही तृतीय पड़ता है। उस समय इस वंशकी उन्नति अपनी पराकाष्ठापर पहुंच गयी थी। शासनका दण्ड दृढ़भावसे इसी वंशके हस्त न्यस्त रहा। पांच श्रेणीके सामन्त-सरदार थे। वह सभी सम्राट्‌को कर और सैन्य द्वारा साहाय्य पहुंचाते रहे।

अध्यवसायसम्पन्न, उत्साही और क्षमतावान् सम्राट् न रहनेसे राज्यमें स्वभावतः विशृङ्खला पड़ जाती है। उस समय चीनकी भी ऐसी ही दशा रही। साधारणतः शासनक्रिया दुर्बल पड़ी और प्रत्येक विभागमें अल्प अल्प विशृङ्खला बढ़ी थी।

किन्तु ऐसे मन्द समय भी चीनदेशमें साहित्य एवं शिल्पचर्चाकी सम्यक् उन्नति होती थी। सम्राट्‌से लेकर सामान्य सामन्तको सभा पर्यन्त गायक और ऐतिहासिक उपस्थित रहे। शिक्षा देनेको विद्यालयोंकी भांति पाठागार भी यथेष्ट थे।

ई०से ५५० या ५५१ वत्सर पूर्व लु* राज्यमें महात्मा कनफुचोने शीतकालको जन्म लिया था। इनका वंशगत उपाधि वा नाम कङ्ग वा कन् रहा। फिर देशके लोग इन्हें कनफुचो अर्थात् दार्शनिक वा शिक्षादाता कहने लगे।

इनके पिताका नाम हेई† रहा। वह अपने समयके एक विख्यात वीर थे। इतिहासमें भी उनका नाम मिलता है। उनके तुल्य साहसी और बलवान् पुरुष अति अल्प ही रहे। ई०से ५८२ वर्ष पूर्व वह पेईइयाङ्ग नगर अवरोध कर लड़ते थे। उसी समय विपक्ष-पक्षीय किसी दलने कौशलपूर्वक नगरका द्वार खोल दिया। लोग अवरोधकारियोंके नगरमें घुसते ही द्वार बन्द कर देना चाहते थे। घटना भी वैसी ही हुयी। समस्त सैन्य नगरमें जानेसे हेई भी घुसे थे। फिर ठीक उसी समय विपक्षीय फाटकका द्वार बन्द करने लगे। हेईने देखा—महाविपद् है। फिर उन्होंने निमिषमात्र विलम्ब न लगा निज भुजबलसे विराट् कपाटको खींचकर पकड़ लिया और स्वपक्षीयोंको नगरसे निकलनेका आदेश दिया।

कनफुचोकी माताका नाम इचेल-सिङ्ग-साई रहा। उन्होंने चीनदेशके 'इयेन' नामक प्राचीन महद्वंशमें जन्म लिया था। हेईने ७० वत्सरके वयःक्रमपर उनसे विवाह किया। इसीसे लोगोंने सोचा था—अब इनके सन्तानादि न होगा। अवशेषको महात्मा

---

* यह लु राज्य वर्तमान शानटङ्ग प्रदेशके अन्तर्गत है। यहां कयाफ नामक नगरमें कनफुचोने जन्मग्रहण किया था। इसी समय युरोपमें भी पण्डितप्रवर पिथागोरासने स्वीय विद्याबुद्धि फैला प्रभूत यश पाया। कनफुचोने बहुत सामान्य वंशमें जन्म लिया न था। पहले कहा जा चुका—इनके जन्मकाल चीनदेशमें चाउ वा चु नामक तृतीय राजवंश राजत्व पर अधिष्ठित था। चु वंशसे पूर्व "सान" नामक द्वितीय राजवंश राजत्व करते रहा। इसी सानवंशके सप्तविंशति सम्राट् तीय नामक राजाके विख्यात कुलीनवंशमें कनफुचोका जन्म हुआ।

† कोई कोई इनके पिताका नाम शालिआङ्ग हेई बताता है। वह चौपइयामें यङ्ग राज्यके किसी प्रधान कर्मपर नियुक्त थे।

कनफुचोके जन्म लेने पर वृद्ध दम्पतोके प्रतिवेशी आनन्दसे फूल उठे।

कनफुचोके जन्मकाल-सम्बन्धीय अनेक गल्प सुन पड़ते हैं। चीन-ग्रन्थकारोंने इस सम्बन्धपर अपने अपने ग्रन्थोंमें विस्तारित वर्णना लिखी है। अन्यान्य प्रवादोंके मध्य निम्नलिखित विषय सकल ही ग्रन्थकार लिपिबद्ध कर गये हैं—कनफुचोके जन्म दिनसे पूर्व-रात्रिको चिङ्गसाईने एक स्वप्न देखा था। इसी स्वप्नके उपदेशानुसार वह किसी पर्वतगुहामें जा उपनीत हुईं। गुहामें उन्हें देवोंने घेर लिया था। उसी जगह देवोंने चिङ्गसाईसे उनके पुत्रकी महिमा, भविष्यत् कीर्ति और सम्मान-कथा कही। फिर अप्सराके हस्त महात्मा कनफुचोने जन्मग्रहण किया।

इनकी बाल्यजीवनीके सम्बन्धमें हम कुछ विशेष समझ नहीं सकते। फिर भी बाल्यकालसे ही देशीय आचार-व्यवहार पर इन्हें आस्था रही। तीन वत्सर वयःक्रम कालमें यह पितृहीन हुये। उस समय भी इनके पितामह जीते थे। शैशवको वयसके साथ साथ इनमें इतिहासपाठका अनुराग भी बढ़ने लगा।

अल्प वयसको ही इनमें महात्माके सकल पूर्व लक्षण झलकते थे। बाल्यकालमें देशप्रचलित धर्मविश्वास और आचार-व्यवहारके प्रति इन्हें दृढ़ आस्था रही। इनके निज प्राणमें भक्तिका बड़ा प्राबल्य था। पूजार्चनापूर्वक इष्टदेवको निज आहार्य निवेदन किये विना यह सिकी प्रकार खाते न रहे।

कनफुचोके पितामह अति धार्मिक एवं परम पण्डित थे। बाल्यकालमें उन्हींके निकट इनकी शिक्षाका विधान हुवा। पितामहके प्रदत्त शिक्षाबलसे कनफुचो विविध शास्त्र पढ़ सदाशयताका अनुकरण करनेको विशेष यत्न लगाते थे। पितामहके मरनेपर यह तत्कालीन चीन-पण्डिताग्रगण्य 'चेङ्गसो' नामक पण्डितके शिष्य बने। स्वीय अपरिमेय बुद्धि एवं मेधाबलसे १५ वत्सर वयःक्रमकालको हीं कनफुचो असाधारण विद्वान् हो गये। फिर इसी वयसमें लिख-पढ़ इन्होंने इयाश्रो और सान नामक सम्राट्द्वय-रचित 'नीतिगर्भ' प्राचीन ग्रन्थ एवं शास्त्र-समूहमें सम्यक् व्युत्पत्ति लाभ की।

१८ वत्सरके वयसमें इन्होंने शानराज्यकी किसी कुमारीसे विवाह किया था। किन्तु स्त्रीके साथ कनफुचो अधिक दिन न रहे। एक पुत्र सन्तान होते ही इन्होंने स्त्रीसङ्ग छोड़ दिया।

विवाहके पीछे इनका गुणराशि झलकने लगा। इसी समय चीनदेशमें साधारणके लिये अन्नका एक भाण्डार रहा। सर्वापेक्षा न्यायपरायण व्यक्तिको ही उक्त भाण्डारका भार मिलता था। कनफुचोको वह पद दिया गया। यह पिताके मरने पर अपनी वंशगत कौलीन्य-मर्यादाको छोड़ दूसरे किसी पैतृक धनके अधिकारी हो न सके। इसीसे अन्नकी चेष्टामें इन्हें उक्त पद स्वीकार करना पड़ा। दूसरे वत्सर इनके पदकी उन्नति हुयी। कनफुचोका साधारण भूमि और क्षेत्रकी अध्यक्षता मिली थी। इसी समय इनके पुत्रका जन्म हुआ। देशके मध्य कनफुचोने इतना सम्मान पाया, कि तत्रत्य प्रधान सामन्तोंने पुत्र होनेका समाचार सुनते ही एक पुष्करिणीका मत्स्य उपहार पहुंचाया था। इसी घटनाके कारण इन्होंने पुत्रका नाम 'लि' या 'पियो' (पुष्करिणीका मत्स्य) रख दिया।

उस समय चीनदेशकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय रही। न्यायपरता देशसे उठ गयी थी। अत्याचार और अविचार सर्वत्र फैल पड़ा। मन्त्री राजाको और पुत्र पिताको मार राज्य छीन लेता था। यह सकल उपद्रव देख कनफुचो कांपने लगे। अवशेषको इन्होंने प्रतिज्ञा की—किसी न किसी प्रकार स्वजातिका चरित्र सुधारेंगे।

अपनी प्रतिज्ञा सफल करनेको यह उपाय ढूंढ़ने लगे, किन्तु स्त्रीको एक विषम अन्तराय समझे। उस समय स्त्री-पुत्रकी मायासे संसारमें फंस जाने पर इन्होंने कोई कार्य बनते न देखा। इसीसे कनफुचो स्त्रीपुत्र एवं राजकार्य छोड़ साधारणको शिक्षा देनेके लिये प्रस्तुत हुये थे। उस समय अपनी माताके जीवित रहनेसे यह कहीं जा न सके, घरमें ही छात्रमण्डलीको

शिक्षा देने लगे। किन्तु कनफुची प्राचीन शास्त्र ही पढ़ाते थे। इन्होंने अपने मनमें सोचा—प्राचीन धर्मकर्मपर प्रथमत: दृढ़ अनुराग बढ़ा और सकल विधिनिषेधादि प्रत्येकके द्वारा प्रतिपालन करा सकनेसे लोगोंका चरित्र क्रमश: सत्कार्यकी ओर चलेगा। इसी समय इन्होंने कार्यका भार छोड़ा था। छात्र पाये हुये यत्सामान्य वेतनके अवलम्बनसे ही दिन बिताने लगे।

२२ वत्सरके वय:क्रमकाल कनफुचीने शिक्षकता-को अवलम्बन किया था। उसी वत्सर (ई०से ५२४ वर्ष पहले) इन्हें माढवियोग देखना पड़ा। इस घटनाके कारण यह समस्त कार्यसे विरत हुये। क्योंकि उस समय चीनमें प्रथा रही—पिता और माता दोमें एकके भी मरनेपर पुत्रको कोई कार्य करनेका अधिकार नहीं। फिर कनफुचीने स्वयं प्राचीन रीति-नीति पुन: चलानेकी प्राणपणसे चेष्टा लगायी। सुतरां ऐसे समय यह उक्त प्राचीन नियमादि पालन करनेसे पश्चात्पद न हुये।

एतद्भिन्न इन्होंने यह भी ठहरा लिया था—निकट-वर्ती किसी पतित भूमिमें माढदेह समाहित न कर रीतिके अनुसार आयोजन और महोत्सवसे अन्त्यष्टि-क्रिया बनायेंगे। प्रबन्ध भी ऐसा ही हुवा। देशके साधारण लोगोंने देखकर समझा था—पण्डितवर कनफचीके अवलम्बन करनेसे यही प्रथा शास्त्रानु-मोदित और हमारा भी अवलम्बनीय कार्य है। इनका भी गूढ़ उद्देश्य वही रहा। कारण इन्होंने देखा—देशके लोगोंकी धारणाशक्ति इतनी घटी, कि केवल उपदेशसे कोई बात बननेकी नहीं। सुतरां कनफुची स्वयं पुङ्खानुपुङ्खरूपसे प्राचीन शास्त्रकी नीति-पर चलते थे। इसी घटनाके पीछे एकान्त हीनावस्थाके लोगोंको छोड़ सकल स्व स्व शक्तिके अनुसार अन्त्येष्टि-क्रियाका उत्सव करने लगे। वही प्रथा आज भी चल रही है।

अवश्य कनफुचीको आड़म्बर अच्छा लगता न था। इन्होंने अन्त्येष्टिक्रियाकी जो प्रथा चलायी, उसमें एक अति सुन्दर व्यवस्था लगायी है। भक्तिश्रद्धा देखानेको समाधिस्थल वा एतद् उद्देश्यसे निर्दिष्ट निज भवनके किसी गृहमें गृहस्थको मृत व्यक्तिके लिये कितना ही कार्य बनाना और गुणादि गाना पड़ता है। इसीसे वर्तमान काल चीन देशमें आपामर साधारणके मध्य मृत व्यक्तिके उद्देशपर वार्षिक उत्सव मनाने और अपने भवनमें 'पितृपुरुषका गृह' बनानेकी प्रथा चल गयी है।

इसी प्रकार स्वीय उद्देश्य कार्यमें परिणत करनेपर सक्षम होते देख यह कुछ आह्लाद एवं आशामें डूब और कार्यजगत्से अशौचके तीन वत्सर अपसृत हो अपने गृहमें ही रहने लगे।

अशौचका काल बीतनेपर कनफुचीने लु राज्यमें ही ठहर इतिहास, साहित्य और सङ्गीतविद्याकी आलोचना चलायी। जो लोग सीखने आते, वह अति यत्नसे उपदेश पाते थे। अधिक वेतन देने पर भी यह किसीका पक्षपात करनेसे दूर रहे। कनफुची सबको समान यत्नसे बराबर उपदेश देते और अपनी निर्मलता तथा शास्त्रप्रियता कार्यमें देखा लोगोंका मनोवेग खींच लेते थे। उस समय देशके मध्य यह सर्वापेक्षा शास्त्रवित्, साधूत्तम और सत्कर्मचारी पण्डित बन गये। सुतरां किसी विषयपर विरोध बढ़नेसे लोगोंको इनके निकट मीमांसा लेने आना पड़ता था। ऐसे सुयोगमें यह यथारीति उपदेश दे अपना उद्देश्य निकालते रहे। इनके उपदेशकी महिमामें मुग्ध हो क्रमश: लोग इच्छा वा अनिच्छासे देशकी प्राचीन रीतिनीतिपर आस्था और श्रद्धा बढ़ाने लगे।

२५ वत्सरके वयस (ई०से ५२१ वर्ष पहले) पर कनफुचीने 'सियाङ्ग' नामक किसी सङ्गीतवेत्तासे सीख सङ्गीतविद्यामें पूर्णक्षमता पायी थी। बाल्यकालसे ही इन्हें सङ्गीतपर बड़ा अनुराग रहा। एकादिक्रमसे १५ वत्सर साधना करने पर इन्हें सङ्गीतमें आशानुरूप सिद्धि मिली।

लु राज्यमें किसी प्रधान मन्त्रीके छोकी और नानकचङ्गश्वी नामक दो पुत्र इनके शिष्य हुये। उनको शिष्य कर कनफुची देशके मध्य महा सम्मान और

श्रद्धाके पात्र बन गये थे। पूर्वापेक्षा लोग इन्हें द्विगुण भक्तिकी दृष्टिसे देखने लगे।

ऐसे ही समय इनके मनमें एक नूतन भाव उठा। पहले ही बता चुके—इस समय प्रत्येक देशके अधिपति नाममात्र सम्राट्के अधीन रहे, किन्तु कार्यतः सभी स्व स्व प्रधान और राज्यनियम चलानेमें स्वतन्त्र थे। यह नियम अविकृत भावसे पालन कर देशके मध्य शृङ्खला बांधनेमें कठिनता पड़ी। अधिपति सर्वदा स्वार्थपर, अर्थलोलुप, अविमृश्यकारी, प्रतारक, यथेच्छाचारी और दुष्टबुद्धि पारिषदोंसे परिवृत हो केवल कुप्रवृत्तिके दास बने थे। कनफुचीने सोचा—जितने दिन राजावोंका चरित्र न सुधरे, उतने दिन प्रजाके मध्य भी प्रकृत परिवर्तन न पड़ेगा। सुतरां इन्होंने ठहरा लिया—किसी राज-दरबारमें घुस उद्देश्यको सिद्धिका पथ ढूंढेंगे। किङ्गसुकी मध्यस्थतासे इनका उद्देश्य सफल हुवा। इन्हें चाउ राज्यके सामन्त राजाकी सभामें स्थान मिला था। वहां यह राजनीति-कुशल न कहाये। कनफुचो सामन्तवंशके प्रतिष्ठाताका उद्देश्य और न्यायव्यवहार देखनेको एक वत्सर उक्त राज्यमें रहे। फिर यह स्वदेश लौट अध्यापनाके कार्यमें लगे थे। इनका यशः चारो ओर फैल गया। छात्र भी प्रायः ३८०० एकत्र हुये।

इसी समय लुके राजाने गुणसे मोहित हो इन्हें राज्यके विचारक पदपर नियुक्त कर दिया। कनफुची सकल समय विचारकके पदपर बैठते न थे। जब यह उक्त पदपर बैठ देशको कुछ न कुछ सुविधा पहुंचा सकते, तभी कार्यका भार अपने ऊपर रखते और जितने दिन अभीष्टसिद्धिके पथमें व्याघात न लगते, उतने दिन पदको परित्याग न करते।

नानारूप चेष्टा चलाते भी कनफुची सम्यक् फल पा न सके थे। लु राज्यमें 'कि', 'सु' और 'मङ्ग' नामक तीन वंशके लोग प्रधान राजपुरुष रहे। वह राजासे सद्भाव रखते न थे। शेषको सबने एकत्र हो राजासे युद्ध किया। युद्धमें हारे लुके राजा अपना राज्य छोड़ सि-राज्यको भागे थे। कनफुचीने भी उनका अनुगमन किया।

कनफुची सि-राज्यको द्वितीय उद्देश्यसे गये। इन्होंने सुना था—सान सम्राट्की पदावली इन दिनों केवल सि-राज्यके गायक ही जानते हैं। उक्त पदावली सीखनेको यह बहु दिवसावधि चेष्टा करते रहे। राजधानीके प्रवेशकाल इन्हें पदावलीका एक गान हठात् सुन पड़ा। उससे यह इतने मोहित हुये, कि गानके उद्देशानुसार तीन मास मांसस्पर्शसे अलग रहे। पदावलीके स्वरसम्बन्धमें कनफुची कहते—सङ्गीतस्वरके इतने सुमिष्ट और सर्वाङ्गसुन्दर होनेकी धारणा हम रखते न थे।

सि-राज्यको जाते समय ताई पर्वतपर एक घटना हुयी। इस स्थानपर उसका विशेष विवरण दिया गया है। इसीसे स्पष्ट समझ लेते—कितने सामान्य सामान्य विषय उठा कनफुची स्वीय छात्रोंको सदुपदेश देते थे। शिष्योंमें अनेक इनका साथ छोड़ते न रहे। सि-राज्य जाते समय भी वह कनफुचीके साथ थे।

सब लोग ताई पर्वत अतिक्रम करते किसी समाधिस्थानके निकट उपस्थित हुये। उसी स्थानपर बैठी एक स्त्री रोती थी। कनफुचीने स्वदलके साथ निकट पहुंच उससे शोकका कारण पूंछा। स्त्रीने उत्तर दिया—इसी स्थानपर हमारे श्वशुरने व्याघ्रके मुखमें प्राण-विसर्जन किया, इसी स्थानपर हमारे पतिको श्वापदने खा लिया और इसी स्थानपर हमारे एकमात्र सन्तानका रक्त किसी व्याघ्रने पिया है। इन्होंने कहा—फिर माता! तुमने ऐसे भयङ्कर स्थलपर क्यों अवस्थान किया है। स्त्री बोल उठी—यहां रहनेमें कोई विशेष कष्ट नहीं, किन्तु प्रजापीड़क अत्याचारी राजाके राज्यमें ठहरना कठिन है। कनफुचीने अपने शिष्योंको बोला कर समझाया था—वत्सो! सुना तो सही, अत्याचारी प्रजापीड़क राजा व्याघ्रको अपेक्षा भी अधिक भयङ्कर होता है।

अपने राज्यमें आते सुन सिके राजाने इनको अभ्यर्थना करनेको लोग भेजे थे। कनफुची राजसभामें आये। सिके राजा इनसे कथनोपकथन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर उन्होंने इन्हें स्वराज्यमें प्रतिष्ठित करनेको 'लिनकिउ' नामक नगर समस्त

श्रायके साथ देना चाहा था। किन्तु पण्डितवर कनफुचो कहने लगे—'विज्ञ लोग उपदेश देते और जबतक उसके अनुसार उपदेश सुननेवाले कार्य नहीं करते, तबतक उनका दान किसीप्रकार नहीं लेते। हमने राजाको उपदेश दिया है सही, किन्तु उन्होंने न तो अभीतक उसके अनुसार कार्य किया और न उसका उद्देश्य ही समझ लिया।' फिर राजासे राजनीतिपर कथनोपकथन होनेपर यह बोले—जिस देशमें राजा राजाका, मन्त्री मन्त्रीका, पिता पिताका और सन्तान सन्तानका कर्तव्य देख कार्य कर सकता, उसी देशको सब कोई यथार्थ सुशासित कहता है। इस राजाने उत्तर दिया—'इस देशमें राजाका राजा, मन्त्रीका मन्त्री और सन्तानका सन्तान न होना सम्भव है। किन्तु प्रजासे प्राप्त करको हम उपभोग क्यों न करेंगे!'

इन्होंने देखा—सि राज्यमें रहना नहीं अच्छा। उधर राजाने कनफुचीको अर्थदानसे वशीभूत कर रखना चाहा था। किन्तु यह उस धातुके लोग न रहे और किसी प्रकार कोई दान लेनेको स्वीकृत न हुये। राजाने नाना उपायोंसे अर्थवृत्ति और भूमिवृत्ति देना चाही थी। किन्तु कनफुचीने यही कथा कह प्रत्याख्यान किया—जबतक राजा हमारे उपदेशके अनुसार न चलेंगे, तब तक हम उनका दिया और द्रव्य कैसे ग्रहण करेंगे! उस समय सिके राजा और प्रजावर्ग अत्यन्त विलासोन्मत्त रहे। कनफुचीके उपदेशानुसार चलना उनके लिये असम्भव था। किसी प्रकार दोनों ओर मनोमिलन होते न देख यह स्वदेश लौट आये। लु राज्य उस समय भी अशान्तिपूर्ण रहा। शासनका भार राज्यके प्रधान पुरुषोंके हाथ पड़ा था।

देश आकर इन्होंने १५ वत्सरकाल कार्यके जगत्से अवसर लिया और केवल शास्त्रकी चर्चा, देशके इतिहास-प्रणयन एवं सङ्गीत-पुस्तककी रचनामें कालयापन किया।

फिर लु राज्यमें (ई०से ५०५ वर्ष पूर्व) शान्ति स्थापित हुयी थी। राज्यके प्रधान प्रधान व्यक्तियोंने इस बार इन्हें देशका दोष सुधारनेको मन्त्रीके पदपर बैठाया। कनफुचीने जिसको चाहमें ध्यान लगाया, उसीको पाया था। राज्यके सम्बन्धमें स्थिर किये हुये नियम और देशके लोगोंका चरित्र सुधारनेको स्थिर किये हुये उपाय कार्यमें परिणत करनेका सुयोग देख यह महा आह्लादित हुये। इस बार इन्होंने बड़े सुनियमसे कार्य चलाया था। कुछ मासोंके मध्य ही क्या राजा, क्या प्रजा, क्या महत् और क्या इतर—सभीका आचार-व्यवहार एवं चरित्र इतना सुधरा, कि राज्यमें नूतन चमत्कार तथा नूतन भाव देख पड़ा। फिर लु राज्यकी कार्यप्रणालीसे लोग अत्यन्त सन्तुष्ट हुये थे। वह निज निज ग्रन्थमें कनफुचीका जयगान लिख हृदयकी अपूर्व कृतज्ञताका परिचय देने लगे।

लु राज्यकी श्री और समृद्धि देख पार्श्ववर्ती भूपाल हिंसासे जल उठे। उन्होंने भी कनफुचीके प्रवर्तित नियम अनायास चला स्व-स्व राज्यकी श्री बढ़ाना चाही थी। किन्तु कार्यतः वैसा न हुवा। पार्श्ववर्ती सि-राजने लु राज्यका सौभाग्य देख कहा था—'यदि कुछ दिन कनफुची मन्त्रित्व करते जायेंगे, तो सामन्त राज्योंके मध्य हम लु राज्यको सर्वप्रधान पायेंगे। फिर सर्वाग्र पार्श्ववर्ती हमारा राज्य ही उसके ग्रासमें पड़ेगा। इस समय लु-राजके राज्य छोड़ शान्ति अवलम्बन की चेष्टामें लगनेसे ही हमारा मङ्गल है।' सि-राजके मन्त्रीकी बुद्धि अति कुटिल रही। उन्होंने राजाको समझाया—किसी गतिमें लुराजके साथ कनफुचीका विवाद लगा सकनेसे आपको यह आशङ्का मिट जायेगी। सि-के राजा इस पर सम्मत हुये थे। फिर मन्त्रीने रूपलावण्यसम्पन्ना पूर्णयौवना चित्ताकर्षिणी मनोहर-नृत्यगीतादि निपुणा, मधुरभाषिणी एवं कोकिलकण्ठी ८० कामिनी और अत्युत्कृष्ट १२० अश्व संग्रहकर लुके राजाको उपढौकन पहुंचाया। पण्डितवर कनफुचीने इस उपढौकनका भावी परिणाम सोच राजासे प्रत्याख्यान करनेको उपदेश दिया था। किन्तु दुरदृष्टवशतः लुके राजाको मतिभ्रम पड़ गया। उन्होंने कनफुचीका परामर्श न मान युवतियोंको अन्तःपुरमें बैठाया था। अन्तको वह युवतियोंके

मोहजालमें फंसे। राजकार्य दिन दिन उत्सन्न होने लगा। राजपुरुष उच्छृङ्खल बने थे। विलासिनियोंके प्रीत्यर्थ राजा नित्य नूतन महोत्सवका अनुष्ठान करने लगे। इसीप्रकार राज्य श्रीहीन हुवा था। राजा विलासियोंमें अग्रगण्य बने। कनफुचीने उनकी मति-गति फिरनेकी यथेष्ट चेष्टा की थी। किन्तु समस्त आयास वृथा गया। कुछदिन पीछे राजा रमणी-कुहक-से अत्यन्त हतबुद्धि हुये। कनफुचीके उपदेश देनेको जानेपर उन्हें क्रोधोद्रेक उठता था। अवशेष राजा कनफुचीको सुपथका कण्टकस्वरूप समझ मारने वा आमरण कारागारमें डालने पर कृतसङ्कल्प हुये।

इतने दिनोंमें इन्होंने स्थिर कर लिया था—लु राज्यमें रहनेसे हमारा या राजाका—दोमें किसीका कल्याण न होगा। इसीसे कनफुचीने वह देश छोड़नेको ठहरायी। यह इस बहाने अपना पद छोड़ चल दिये—'राज्यके मङ्गलार्थ देवोद्देशसे बलि चढ़ता है। किन्तु राजा बहुत दिनसे बलिका मांस राज्यके भिन्न भिन्न प्रदेशोंको भेजनेमें शैथिल्य देखाते हैं।' कनफुचीने मनमें सोचा था—सम्भवतः राजा और मन्त्रीकी मतिगति फिरनेसे हम फिर बोलाये जायेंगे। किन्तु वैसा सुयोग न लगा। यह ५६ वत्सरके वयसमें देश घूमने निकले थे।

शासनप्रणालीके सम्बन्धमें कनफुचीकी धारणा अतीव मनोहर रही। यह कहते—राजाके राजा, मन्त्रीके मन्त्री, पिताके पिता और पुत्रके पुत्र रहते ही राज्यमें अधिक सुख होता है। समाजके सम्बन्धमें भी कनफुचीका मत अति उच्च था। यह समाज बांध वास करनेको ईश्वराभिप्रेत बताते रहे। पांच सम्बन्धोंसे ही समाज बनता है—राजा-प्रजा, पति-पत्नी, पितापुत्र, ज्येष्ठकनिष्ठ और बन्धु। राजा प्रभृति प्रथम चार लोगोंका धर्म कर्तृत्व और प्रजा प्रभृति शेष चारका धर्म वश्यता है। न्यायपरता तथा दयापर कर्तृत्व और न्यायपरता एवं ऐकान्तिकी श्रद्धा-भक्ति-पर वश्यता स्थापित होनेसे समाजमें सुखस्वाच्छन्द्य रहता है। फिर बन्धुभावसे दोनोंमें परस्पर उन्नतिकी चेष्टा करनेसे ही समाजमें कोई गड़बड़ पड़ नहीं सकता। लोगोंके मोहमें फंस उक्त सम्बन्ध बिगाड़नेसे समाजमें इतनी विशृङ्खला आती है। किन्तु मनुष्यमें सत्यके अवलम्बनकी स्पृहा स्वभावतः अधिक है। सुतरां सत्पथके अवलम्बनकी सुविधा मिलने पर वह अपनी इच्छासे कभी मोहमें नहीं पड़ता। कनफुची कहते,—'वायुभरसे दीर्घ दीर्घ तृण झुकनेकी भांति ज्ञानी व्यक्तिके सामने साधारण लोग अवनमित होते हैं। राज्यमें आदर्श राजा रहनेसे प्रजा भी आदर्श प्रजा बन जाती है। हम आदर्श राजा बना और उसका गुण बता सकते हैं। हम यह भी देखा देंगे—प्राचीन काल आदिवंश-स्थापयिता स्याङ्गि-वंशके आदिपुरुष विज्ञतम स्याङ्गि और चीन देशमें प्रथमतः वंशानुक्रमिक राज्यके प्रतिष्ठाता पण्डितवर 'इयार'ने किस प्रकार कार्य किया था। इन सकल आदर्श लोगोंके अनुकरण और हमारे उपदेशानुसार यदि कोई चले, तो वही देशके मध्य प्रधान राजा बने तथा सुखी प्रजाके साथ महासुखसे अपना कालयापन करे। एक वत्सर हमारे उपदेशानुसार राजाके कार्य करनेसे हम राजश्री बदल सकते हैं। फिर तीन वत्सर हमारे वशमें रहनेसे राजा उक्त सकल सुख उपभोग करेगा।'

यह ५६ वत्सरके वयस पर लु राज्यसे निकल सि, शुसि, चु प्रभृति राज्योंमें स्वीय मत फैलाते घूमने लगे। कनफुचीको आशा रही—किसी न किसी राजाको हस्तगत कर स्वीय अभीष्ट बनायेंगे। किन्तु उस आशाके पूर्ण होनेका सुयोग कहीं देख न पड़ा। कनफुचीको धर्मनीति वा राजनीतिका अवलम्बन विलासियोंके लिये दुःसाध्य हो गया। इनके सकल नियमों पर चलना तो दूर रहा, उनके नामसे ही लोगोंको भय और सङ्कोच लगा। राजपुरुष सोचते थे—कहीं इसी समय कनफुची आकर हमारे कार्यका प्रतिवाद न लगायें और इतने दिनके लाभ एवं आमोद-प्रमोद-को हानि पहुंचायें। राजा विचारते रहे—क्या इसी समय कनफुची आ और शासनकार्य वा प्रजापालनका दोष देखा हमें व्यतिव्यस्त तो कर न डालेंगे। साधारण लोग समझते थे—'इतने दिन हम बड़े सुख-

स्वच्छन्दसे रहे हैं। सम्भवतः उसीको बिगाड़नेके लिये यह व्यक्ति इधर-उधर घूमते फिरता है। इसी प्रकार सकल स्थलोंमें राजासे ले सामान्य प्रजा पर्यन्त आपातसुखमें मुग्ध हो कनफुचीका उपदेश अग्राह्य करने लगी। फिर अनेक स्थलोंमें दुष्ट लोगोंने इनके प्राणविनाशकी चेष्टा भी की थी। किन्तु ईश्वरकी इच्छासे कोई क्षतकार्य न हुवा।

कनफुची वृथा घूमते न रहे। प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्राममें इनके दो-चार शिष्य हो जाते थे। कनफुची साधारण लोगोंको नीतिशिक्षा तथा धर्मशिक्षाके लिये इयाओ, सान, इउ, चिङ्गटङ्ग और मेङ्गभाङ्ग प्रभृति चीना मनीषियोंके न्याय एवं दृष्टान्त प्रचार करते रहे। इसीसे ज्ञानी व्यक्ति इन्हें उक्त सकल प्राचीन महात्मावोंका प्रतिनिधि मान आदर देते थे।

क्रमशः इनके शिष्योंकी संख्या तीन हजार हो गयी। वह सकल भ्रमणकालपर गुरुके साथ ही साथ घूमते थे। इन्होंने शिष्योंको शिक्षा देनेकी सुविधाके लिये चार श्रेणियोंमें विभाग किया। सकल विषयोंमें पारदर्शी, बुद्धिवृत्तिकी चालनामें यथेष्ट निर्मलताप्राप्त, विशुद्ध धर्मपथावलम्बी एवं ऐकान्तिक चित्तसे ईश्वरके प्रति भक्तिमान् प्रथम श्रेणीके शिष्य गिने जाते थे। द्वितीय श्रेणीमें वाक्‌पटुता, शास्त्राभ्यास तथा सुतर्कके पारदर्शी रहे। तृतीय श्रेणीके छात्रोंको यह केवल राजनीति अतिविषदरूपसे सिखा मांदारिनों*की शिक्षकताके कार्यमें लगा देते थे। फिर चतुर्थ श्रेणीके शिष्य लोगोंको सिखानेके लिये साधारणकी बोधोपयोगी सरल भाषामें नीति तथा धर्मशास्त्र बनाते रहे। फिर ग्रामों, नगरों और राज्योंमें प्रायः ५०० शिष्य प्रधान प्रधान पदोंपर नियुक्त भी थे। इन चारो श्रेणियोंके शिष्योंमें दश जन प्रधान समझे जाते थे—प्रथम श्रेणीके जेनियेन, मेंचेकन, जेनपिमिउ एवं शुकङ्ग, द्वितीय श्रेणीके चेंगो तथा सुकङ्ग, तृतीय श्रेणीके इयेनेन एवं किलु और चतुर्थ श्रेणीके सिहेन तथा सिहिया। द्वितीय श्रेणीके टिजुल और टिजिकल बड़े अनुसन्धित्सापरवश एवं तार्किक थे। वह सर्वदा गुरुसे सामान्य सामान्य विषयोंपर तर्क उठा सन्देह मिटा लेते रहे। इधर प्रथम श्रेणीके जेनियेन गुरुके अत्यन्त प्रियपात्र थे। कनफुची उन्हें पुत्रकी भांति चाहते रहे। ३१ वत्सरके वयसमें जेनियेनके अकाल प्राण छोड़ने पर शोकदुःख-विजयी ज्ञानीपुरुष ठहरते भी यह प्रियशिष्यकी मायासे अत्यन्त अभिभूत हुये थे। एक दिन कनफुचीने अन्य सकल शिष्योंको बोला कह दिया—देखो! इतिपूर्व हमने नानाविध दुर्गति पायी और दुःसह यन्त्रणा उठायी है सही, किन्तु ऐसी मनोवेदना कभी नहीं पायी। जेनियेनके मरनेपर इयेनङ्ग नामक शिष्यने इनके उस स्नेहका स्थल अधिकार किया था। गुणसे वशीभूत हो यह जेनियेनकी भांति इयेनङ्ग को भी चाहने लगे।

भ्रमणकाल कनफुचीके जीवनमें कई घटनायें हुयीं। वृहत् शिष्यदलके लिये इन्हें बहुत विव्रत बनना पड़ता था। प्रायः सर्वदा आश्रयका अभाव रहता और मध्य मध्य तीन दिन तक खानेको अन्न न मिलता, जिससे दीन हीनकी भांति इनका समय निकलता। एक बार इनका दल विषम अभावमें आ महाक्लेश पा रहा था। उसी कष्टसे अभिभूत हो एक दिन टिजुलू नामक शिष्यने पूछा—गुरु! सर्वश्रेष्ठ और सर्वापेक्षा बुद्धिमान् मनुष्यको भी क्या अभावमें आना पड़ता है। इन्होंने उत्तरमें कहा—'अभावमें आते भी वह व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ और सर्वापेक्षा बुद्धिमान्‌की भांति कार्य करता है। साधारण लोग ऐसे स्थलपर अभिभूत हो अपनी सुधबुध भूल जाते हैं।'

कनफुची अपने क्षतनियमादि अभ्रान्त एवं ईश्वर-प्रेरित समझते और कभी कभी शिष्योंके मध्य यह बात कहते थे। किन्तु अनेक यह बात मानते न रहे। एक दिन कथाके प्रसङ्गमें टिजिकङ्ग नामक शिष्यने कहा—'आपके नियमादि सर्वापेक्षा उत्कृष्ट होते भी किसी राज्यके लोग किसी प्रकार पालन कर न सकेंगे। सुतरां उन्हें कुछ बदल लोगोंके अवलम्बनोपयोगी बना देना अच्छा है।' इन्होंने उत्तर दिया—'कृषक यत्न एवं परिश्रम उठा क्षेत्रको उत्तम-

* मांदारिन शब्दसे चीनके मन्त्रियोंका बोध होता है।

रूपसे जोत-बो सकता है। किन्तु वह अच्छी उपजके लिये दायी नहीं। फिर शिल्पकर सुन्दर कारुकार्य कर द्रव्यादि बना सकते हैं। किन्तु यह ठहराना कठिन है—बाज़ारमें उनको छोड़ दूसरा कोई वस्तु न बिकेगा। इसीप्रकार ज्ञानी व्यक्ति सुनीतिको व्यवस्था बता सकते, किन्तु इसके दायी कैसे ठहरते—लोग उसे ग्रहण कर सकेंगे या नहीं।'

उइ राज्यमें घुसते समय 'पु' नामक स्थानपर कितने ही लोगोंने इनको आक्रमण किया था। सब शिष्योंके मिलकर भी रोक न सकनेपर उन्होंने कनफुचीको पकड़ लिया। यह उनके फन्देमें पड़ शपथ उठानेको बाध्य हुये—फिर कभी हम उइ राज्यकी ओर आगे न बढ़ेंगे। किन्तु मुक्ति मिलते ही कनफुचीने उसी ओर चलनेको सङ्कल्प किया था। जो विश्वस्तता और सत्यताको नोतिका प्रथम पथ बता उपदेश देते रहे, उन्हींको इस प्रकार सत्य छोड़ते देख शिष्य चौंक उठे। फिर टिजिकङ्गने पूछा था—शपथ छोड़ना क्या उचित है। इन्होंने उत्तर दिया—यह शपथ दूसरोंने बलपूर्वक कराया है, हमारे प्राणमें यह शपथ नहीं।

सन्न्यासी पृथिवीके किसी कार्यमें नहीं फंसते। वह चारो ओर पापकी लीला देख कांपने लगते और उससे दूर भगते हैं। फिर वह लोगोंको भी ऐसा ही करनेका उपदेश देते हैं। उस समय सन्न्यासी कनफुचीको स्रोतके विरुद्ध लड़ते देख हंसते और ज्ञानशून्य एवं घृण्य समझते थे। किसी समय यह घूमते घूमते तृष्णार्त हो जलाशय ढूंढ़ते रहे। दूरसे एक सन्न्यासी खेतमें अपना काम करते देख पड़े। इन्होंने टेलिज़ूको उनके निकट जलका संवाद लेने भेजा। सन्न्यासीने टेलिज़ूको देख और कनफुचीका शिष्य समझ कहा था—'विशृङ्खला समुद्रके तरङ्गकी भांति एक राज्यसे दूसरे राज्यमें पहुंच जाती है। कोई उसे रोक नहीं सकता। उचित परामर्श न माननेपर जो व्यक्ति एक राजाके द्वारसे अपर राजाके द्वारपर घूमफिर पहुंचता, उसका अनुसरण करनेसे तुम्हें क्या फल मिलता है। इससे तो उसीको सेवा करना अच्छा ठहरता, जो पुङ्खानुपुङ्खरूपमें देख-भाल और अचल-अटल मान नश्वरतासे पीछे हटता है। ऐसा करनेसे तुम्हें अवश्य फल मिलेगा।' सन्न्यासी यह बात कह अपने कर्ममें लगे। फिर उन्होंने जलका कोई संवाद दिया न था। टेलुज़ूने वापस आ कनफुचीसे सब बात कही। इन्होंने उत्तर दिया—'बात ठीक है। किन्तु पृथिवीसे हट कैसे खड़े होंगे। मनुष्यका समाज छोड़ वनमें कैसे रहेंगे। साथी न होनेसे मनुष्य जी नहीं सकता। फिर वनके पशुपक्षीसे मनुष्यका सम्पर्क क्या है! सुतरां उनके साथ कैसे ठहरेंगे! यदि साथीके पास ही मनुष्यको रहना पड़ता, तो दुर्दशाग्रस्त मनुष्यके निकट अवस्थान करना उचित जंचता है। देशदेशमें विशृङ्खला रहनेसे ही हमारे कार्यकी आवश्यकता है। समस्त देशमें शृङ्खला लगने और नीति चलनेसे हमें एक राजाके द्वारसे अन्यके द्वारपर जाना न पड़ेगा। फिर हमारा कोई विशेष कार्य भी न रहेगा। उसी समय हम यथार्थ विषयविरागी, पृथिवी-परित्यागी और निर्लिप्त वैरागी समझे जायेंगे।' सोन राज्यको जाते समय कोयाङ्ग नगरमें सदल कनफुचीपर बड़ी विपद् पड़ी। उस समय उक्त नगरमें हुयाङ्गहू नामक किसी डाकूने भीषण उपद्रव उठाया था। लोग उसके उत्पातसे अत्यन्त उत्यक्त रहे। किन्तु दुःखसे कहना पड़ता, कि कनफुची और हुयाङ्गहूका शरीर मिलता-जुलता था। इसीसे लोगोंने जिस शहरमें इन्होंने आश्रय लिया, उसे चारो ओरसे घेर दिया। शिष्य बहुत डरे, किन्तु यह निर्भीक चित्तसे कहने लगे—'हमारे सम्बन्धमें सत्य कभी छिपा न रहेगा। परमेश्वर यदि इतना शीघ्र इस सत्कार्यमें बाधा लाता, तो हमें ऐसी अवस्थाको क्यों पहुंचाता। उसकी इच्छासे सत्य खुल जायेगा। कोयाङ्गरके लोग हमारा कुछ बना न सकेंगे।' यही कहकर कनफुचीने अपनी वीणाका स्वर मिलाया था। फिर यह प्राचीन सम्राटोंकी महिमासूचक निज रचित पदावली गाने लगे। घर घेरनेवाले लोग कहते कहते चले गये—यह हुयाङ्गहू नहीं, कोई दूसरा व्यक्ति है।

१३ वत्सर पीछे घटनावशतः कनफ चीको स्वदेश लौटना पड़ा। उस समय ल राज्यमें किकङ्ग नामक एक व्यक्ति राजाके अति प्रियपात्र बन बैठे थे। उन्हींके परामर्शपर राजा सकल कार्य करते रहे। घटना-क्रमसे इयेनइउ नामक कनफ चीके एक शिष्यको किकङ्गके अधीन सैन्यविभागमें कोई कर्म मिला। फिर इयेनइउने सिराज्यके विपक्ष युद्धयात्रा कर अति कौशलसे जय पाया। किकङ्गने उनकी युद्धप्रणाली देखी थी। वह इयेनइउकी नूतन-प्रकार युद्धरीति देख एक दिन पूछने लगे—तुमने इस प्रकार युद्ध करना कहां सीखा था। इयेनइउने उत्तर दिया—कनफुचीने हमको यह युद्धप्रणाली सिखायी है। कनफुचीका नाम सुन उन्होंने कहा था—वह कैसे आदमी हैं। इसपर इयेनइउ बोल उठे—'किसी कर्ममें उन्हें नियुक्त कर लेनेसे आपका यश चारो ओर फल जायेगा। आपके सैन्यसामन्त अकुतोभयसे देवदानवके सम्मुख खड़े हो सकेंगे और किसीसे न डरेंगे। फिर यदि आप स्वयं उनके उपदेशानुसार कार्य चलायें, तो देशीय शत-शत पण्डितोंके परामर्श-पर भी किसीसे कोई कष्ट न पायें।'

उक्त सकल कथा सुन किकङ्गने भविष्यत् सुफलकी आशासे कनफुचीको नियुक्त करनेका ठहरायी थी। किन्तु इयेनइउने उनसे कहा,—यदि उन्हें नियुक्त करना हो चाहते, तो स्मरण रखिये—आप दोनोंके परामर्शमें कोई नीचमना व्यक्ति घुसने न पाये। इसके पीछे ही किकङ्गने कनफ चीको लानेके लिये दूत भेज दिये।

उस समय कनफुची उइ राज्यमें रहे। वहां यह कङ्ग-श-यान नामक उइराजके किसी सेनापतिके व्यव-हारसे विरक्त हो चल देनेकी राह देखते थे। उधर कङ्ग-श-यान सवशास्त्रज्ञताका परिचय पा इनके पास आते और केवल एकमात्र युद्धकी बातपर ही आलो-चना उठाते रहे। किन्तु कनफुचीको युद्धशास्त्रका उपदेश देना अच्छा लगता न था। इसीसे यह अत्यन्त विरक्त रहे। शेषको इन्होंने स्थिर किया—यदि हम यह राज्य न छोड़ेंगे, तो इस विषयसे कैसे मुंह मोड़ेंगे! जिस समय कनफ चीके मनकी अवस्था ऐसी रही, उसी समय किकङ्गकी दूतमण्डली आ पहुंची। इन्होंने द्विरुक्ति न उठा उनका प्रस्ताव ग्राह्य किया और विन्दुमात्र भी विलम्ब न लगा शिष्योंके साथ स्वदेशकी ओर पद फेर दिया।

कनफुचीके राजसभामें पहुंचनेपर राजा ने (गैयङ्ग) शासनकार्यके सम्बन्धपर नानारूप प्रश्न उठाने लगे। इन्होंने यथायथ उत्तर देते देते स्पष्ट ही सङ्केत किया था—यदि हमें किसी कर्ममें लगावोगे, तो राज्यमें यथेष्ट मङ्गल देख पावोगे। फिर कनफुचीने कहा—उपयुक्त मन्त्री निर्वाचन कर सकनेसे ही राज्यमें सुशासन चलता है। किकङ्गके भी पूछनेपर इन्होंने बताया था,—'प्रशस्तमनाको रख लीजिये और नीचमनाको निकाल दीजिये। फिर आप अल्प दिनके मध्य ही देखेंगे—नीचमनाका मन प्रशस्त हो गया है।' किन्तु किकङ्ग ऐसी बातसे समझ न सके—कैसे क्या करना पड़ेगा। उसी समय लु राज्यमें डकैतीका भी प्रादुर्भाव हुआ। किकङ्ग समझ न सकते थे—कैसे इस डकैतीको निवारण करेंगे। इसीसे कनफुचीने कुछ खोलकर कहा—यदि आप स्वयं लोभी न बनें और अपनी प्रजाको पुरस्कार दे प्रलोभित करें, तो यह डाके कैसे पड़ें। इस उत्तरसे इन्होंने स्वयं गैराजपर भी कुछ कटाक्ष किया था। कारण कनफुची समझते रहे—'दो वत्सरसे राजा किकङ्गके अत्यन्त वशीभूत हो गये हैं। जो वह कहते, राजा उसमें द्विरुक्ति नहीं करते।' किन्तु शेषको यह लु-राजकी सभामें ठहर न सके। कारण वैसे लोगोंके वशमें रहनेवाले प्रभुके निकट कनफुची जैसे व्यक्तिका टिकना असाध्य था।

इस बार भी लुराजके निकट मनोभीष्ट सिद्ध न होनेसे कनफुची राजकार्यकी आशा कुछ दबा और अवसर लगा घरमें बैठ रहे। फिर इन्होंने स्व-देशके प्राचीन इतिहास सुकिङ्ग ग्रन्थकी टीका और भूमिका लिखी। केवल इतिहास ही नहीं, कन-फुचीने उस समय दूसरे भी अनेक विषयोंमें हाथ लगाया था।

आजकल कनफ चीके जो पुस्तक मिलते, वह प्रधानतः दो श्रेणीके निकलते हैं। किन्तु प्रथम श्रेणीका आदि पुस्तक सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। हिन्दूवोंके वेदकी भांति चीना भी इस आदिपुस्तकको परम-पूज्य समझते हैं। आदि पुस्तकमें पांच ग्रन्थ विद्यमान हैं—इकिङ्ग, सुकिङ्ग, सिकिङ्ग, लिकिङ्ग और चुङ्किउ। इकिङ्गमें चीनदेशके आमूल परिवर्तनका विषय लिखा है। किन्तु इस पुस्तकका मूल इन्होंने नहीं बनाया। यह उसके टीका एवं भाष्यकार रहे। लोग चीन राज्यके स्थापयिता फोहीको उसका प्रणेता बताते हैं। पुस्तकके प्रसङ्ग प्रहेलिकामें रचित हैं। किन्तु भाषा अति कठिन है। साधारण लोग उसका अर्थ लगा नहीं सकते। भाष्य न रहनेसे जैसे वेद समझमें नहीं आता, वैसे ही कनफुचीका भाष्य बिना देखे इकिङ्ग दुर्बोध माना जाता है। इसके भाष्यकी भूमिकामें स्वयं कनफुचीने ही लिखा है—'यदि हमारे वयसका परिमाण कुछ बढ़ता, तो ५० वत्सर अभी 'इकिङ्ग'का पढ़ना चलता; फिर जो टीका वा भाष्य बनाते, उसमें कोई वृहत् भ्रम देख न पाते।' यह पुस्तक चीना ग्रन्थोंमें सर्वापेक्षा प्राचीन और पवित्र है। ई०से पूर्व द्वादश शताब्दीको मेभाङ्ग नरपतिने एकबार इसके अर्थसंग्रहकी चेष्टा लगायी थी। किन्तु वह किसी प्रकार सफल न हुयी। कनफचीसे पहले दूसरा कोई इसका भार उठा न सका था। आजकल साधारणतः जैसे हिन्दुस्थानी ब्राह्मण वेद नहीं समझते, वैसे ही पहले चीना भी इकिङ्गका अर्थ करनेमें अटकते रहे। यह इकिङ्गको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते थे।

आदि पुस्तकका द्वितीय ग्रन्थ 'सुकिङ्ग' है। यह संग्रहसे बनाया गया है। सुकिङ्ग ही चीनावोंका सर्वोत्कृष्ट प्राचीन इतिहास है। इसमें चीन-राज्यकी स्थापनासे कनफुचीके समय पर्यन्त समस्त इतिहास वर्णित है। हिन्दुवोंके पुराण-शास्त्रकी भांति इसमें धर्मनीतिका उपदेश भी मिलता है। इन्होंने प्राचीन ग्रन्थादिसे संग्रह कर सुकिङ्ग लिखा था।

'सिकिङ्ग'—आदि पुस्तकका तृतीय ग्रन्थ है। इसमें कनफुची-रचित नीतिगर्भ काव्य लिखा, जो सङ्गीतसे भरा है। एतद्भिन्न सिकिङ्गमें प्राचीन कविता, काव्य और सङ्गीत-संग्रह भी है। चीना उक्त गीत और कविता कण्ठस्थ कर लेते हैं। इसमें सङ्गीतका पुनरुद्धार करनेको कनफुचीने कितने ही प्रबन्ध लिखे हैं। चीना इनके गोनादि उत्सवोंपर व्यवहार करते हैं। चीनावोंका न्यायक्रम और आचार-व्यवहार यह पुस्तक पढ़नेसे यथेष्ट समझ पड़ता है।

कनफुचीका 'लिकिङ्ग' नामक चतुर्थ ग्रन्थ सर्वापेक्षा वृहत् है। पूर्वोक्त तीनों पुस्तक एकत्र करनेसे भी इसकी बराबर नहीं होते। यह चीनावोंको स्मृति और व्यवस्थाका ग्रन्थ है। इसमें धर्मकर्मकी रीतिनीतिका विधि वर्णित है। निर्णय करना कठिन है—इसका मूलांश स्वयं कनफुचीने बनाया था या नहीं।

चुङ्किउ नामक पञ्चम ग्रन्थमें कनफुचीकी जन्मभूमि लु राज्यका इतिहास दिया गया है। चुङ्ग शब्दसे वसन्त और किउसे शरत्कालका बोध होता है। वसन्तसे आरम्भ कर शरत्कालका शेष करनेसे ही इन्होंने इसका नाम चुङ्किउ रखा है। यह पुस्तक कनफुचीने वृद्धावस्थामें लिखी थी। इसमें इन-राजके समयसे गेराजके राजत्वकाल (चतुर्दश वत्सर) पर्यन्त इतिहास मिलता है। इस ग्रन्थको स्वयं कनफुचीने ही बनाया था। इनमें एक भी शब्द दूसरेका नहीं। इसीसे इन्होंने इसको बना और शिष्योंको देखा कहा था,—यदि हमारी रचनासे कोई यश चलेगा, तो वह इसी चुङ्किउसे मिलेगा और यदि अपयश आयेगा, तो वह भी इसीसे फैल जायेगा। इस पुस्तकमें कनफुचीने ऐश्वरिक वा आध्यात्मिक तत्त्वपर कोई उपदेश नहीं दिया। अलौकिकी शक्तिकी महिमा बता इन्होंने कुछ विषयोंकी मीमांसा लगायी है। फिर प्रत्येक विषयकी मीमांसामें कनफचीने कार्यकारण देखा दिया है। 'केवल मृत्यु क्या है' प्रश्नके उत्तरमें किसी स्थलपर इन्होंने लिखा—जब हम 'जीवन क्या है' नहीं समझते, तब 'मृत्यु क्या है' कैसे समझ सकते हैं!

ई०के ४४१ पूर्वाब्द इनके एकमात्र पुत्र ली चल बसे थे। कनफुचीकी जीवनीमें उनका विशेष उल्लेख नहीं

मिलता। निम्नलिखित विषय देखानेको केवल एकमात्र घटना लिखो है—कनफुची अपने पुत्रको उपदेश देनेके लिये कौन प्रथा चलाते थे। एकबार किसी शिष्यने लीसे पूंछा—हमें जो सकल उपदेश मिलते, उनको छोड़ आप अपने पितासे दूसरे विषय सिखते हैं या नहीं। लीने उत्तर दिया,—'नहीं। किसी दिन वह एक स्थानपर खड़े थे। मैं उनके निकटसे जल्द जल्द जाता रहा। मुझे देख कर उन्होंने पूंछा—तुमने गीतिपुस्तक पढ़ा है। मेरे इनकार करनेपर उन्होंने कहा—यदि तुम गीतिपुस्तक न पढ़ोगे, तो कथनोपकथनके उपयुक्त पात्र कैसे बनोगे। दूसरे दिन भी उन्होंने पूंछा था—तुमने आचार-व्यवहारके विधिका ग्रन्थ पढ़ा है। मेरे फिर इनकार करनेपर वह कहने लगे—यह ग्रन्थ न पढ़नेसे तुम्हारा चरित्र स्थिर कैसे होगा!'

यह सुनकर शिष्य बोल उठा—हमें भी दोनों उपदेश मिले हैं। किन्तु निम्नलिखित उपदेश अधिक है—विज्ञ मनुष्य अपने पुत्रको शिक्षा देनेके लिये कोई विशेष प्रबन्ध नहीं करते।

पुत्र मरनेके परवत्सर इयेनहिउ नामक कनफुचीके सर्वापेक्षा प्रिय छात्रका भी मृत्यु हुवा। यह संवाद मिलते ही इन्होंने अत्यन्त व्यथित हो कहा था—हाय! ईश्वरने हमें नष्ट कर डाला। इसके एक वत्सर पीछे किकङ्ग शिकार खेलने गये थे। वह एकशृङ्गविशिष्ट कोई अद्भुत जीव पकड़ लाये। कोई कह न सका था—यह कौन प्राणी है। फिर कनफुची बोलाये गये। इन्होंने आते ही कहा था—यह 'किलिन' नामक प्राणी है। प्रवाद है—वह प्राणी कनफुचीके जन्मसे पहले लि पर्वतपर उनकी माताको स्वप्नमें देख पड़ा था। फिर उन्होंने भी स्वप्नमें उसके शृङ्गपर एक फीता बांधा। आश्चर्यका विषय है—मृत प्राणीके शृङ्गपर उस समय भी फीता बंधा था। द्वितीय बार उस प्राणीको देख सब लोग अमङ्गलकी आशङ्का करने लगे। कनफुचीने विज्ञतम होते भी वर्तमान घटनासे घबरा और चीत्कारपूर्वक पशुकी ओर देख बोल उठे—तू किसके लिये आया है। फिर चक्षुमें जल भर इन्होंने कहा—हमारे उपदेश तो चले, किन्तु हम अपरिचित ही रह गये।

इस पर जिकङ्गने पूंछा—आपके अपरिचित रहनेकी बात कैसी।

कनफुचीने उत्तर दिया—हम इसके लिये ईश्वरको दोष नहीं देते। मनुष्य हमारी शिक्षा नहीं मानता। अथच वह सफलता पानेके लिये व्यस्त हो गया है। किन्तु इसके लिये हम उसको भी दोषी नहीं ठहराते। ईश्वर हमें पहंचानता है। किसी महात्माका नाम कभी नहीं मिटता। किन्तु हमारे नियमादिका उपयुक्त प्रचार रुका है। सुतरां हम समझ नहीं सकते—भविष्यत्में लोग हमें किस दृष्टिसे देखेंगे।

किसी दिन प्रातःकाल सुन पड़ा—महात्मा कनफुची उठ और पश्चाद्दिक्से कमरपर हाथ रख अपने गृहके द्वार घूमते हैं। उनके हाथमें लकड़ी है। वह मट्टीमें घिसल रही है। कनफुची चलते और कहते हैं—

> "ऊंची शिखर पहाड़की चूर चूर ह्वै जाय।
> टूटे विटपी ह्व बड़ी गिरे भूमिपर आय॥
> वनके तिनकी भांति ही सूखहिगो नरयाम।
> जितनी जगमें है बड़ी ज्ञानवान् अभिराम॥"

कियत्क्षण पीछे कनफुची घरमें घुस द्वारके सम्मुख बैठ गये। जिकङ्ग इसी समय गुरुके निकट आते थे। वह इनकी बात सुन सोचने लगे,—'यदि गिरिका उच्च शिखर चूर-चूर हो जायेगा, तो मेरे देखनेमें क्या आयेगा। फिर जो विशाल विटपी टूटे अथवा महाज्ञानी मानवका दल वनके तृणकी भांति सूखेगा, तो मेरा विश्वास सबसे छूटेगा।' ऐसे ही सोचते-सोचते जिकङ्ग गुरुके निकट जा खड़े हुये। कनफुचीने उन्हें देखकर कहा था—'जि आज तुम्हें इतना विलम्ब क्यों लगा? इतने दिन पीछे एक सुबुद्धि राजा आ पहुंचा है। वह हमें अपना शिक्षक बनायेगा। हमारा अन्तिम समय उपस्थित है।' यह बात सत्य ठहरी। कनफुची खाटपर जाकर सो गये। फिर सात दिन पीछे इनकी जीवलीला शेष हुयी।

शिष्यों ने महासमारोहसे इन्हें समाहित किया था। कितने ही शिष्य कुटी बना ३८ वत्सर समाधिके निकट रहे। पितृतुल्य गुरुदेवके मृत्युसे शिष्य वास्तविक अभिभूत हुये थे। उस समय कनफुचीके तीन प्रियतम शिष्योंमें एकमात्र जिकङ्ग ही जीवित रहे। वह किसी प्रकार शोकको सम्बरण कर न सके। इसीसे उन्होंने फिर तीन वत्सर समाधिके निकट ही वास किया। मृत्यु हो जानेसे देशके लोगोंको इनका अभाव समझ पड़ा था। इसीसे समग्र देश इनके लिये शोकसन्तप्त हो गया।

किउफो नगरके बहिर्भागमें कङ्गवंशका समाधि-स्थान था। उसी स्थानपर किसी स्वतन्त्र विस्तृत क्षेत्रमें कनफुचीका समाधि लगा, पीछे एक वृहत् एवं उच्च स्तम्भ भी बना। स्तम्भके सम्मुख मरमर पत्थरसे बनी इनकी प्रतिमूर्ति स्थापित हुयी। समस्त

कनफुचीकी मरमर-मूर्ति।

स्थान घेर कुञ्जवाटिकामें परिणत किया गया है। प्रवेश-द्वारसे स्तम्भ पर्यन्त साइप्रेस वृक्षकी श्रेणी शोभित है। प्रवेशके द्वारपर अति सुन्दर कारुकार्य बना है।

मरमरकी मूर्तिके नीचे 'सियाङ्ग' नामक राजवंश प्रदत्त कनफुचीका महाज्ञानीगणाग्रगण्य प्राचीन शिक्षक और सर्वविद्यानिपुण एवं सर्वज्ञ-सम्राट् नामक उपाधि खोदा है।

कनफुचीके समाधि-स्तम्भकी दोनों ओर दूसरे भी दो क्षुद्र स्तम्भ खड़े हैं। उनमें पहला इनके पुत्र और दूसरा पौत्रका समाधिस्थल है। पौत्रके समाधि-स्तम्भकी दाहनी ओर एक मकान् बना है। लोग कहते—ठीक इसी स्थानपर जिकङ्ग कुटीर निर्माणकर और गुरुके शोकसे पागल बन ६ वत्सर काल रहे थे।

समाधि-स्तम्भके सम्मुख जो प्रतिमूर्ति आती, उसको देख कनफुचीकी आकृति स्पष्ट समझी जाती है। यह दीर्घच्छन्द, बलिष्ठ एवं सुगठित पुरुष रहे। मुखमण्डल रक्ताभ एवं पूर्णताप्राप्त और मस्तक वृहत् था। इनके शरीरमें ४८ विशेष चिह्न रहे।

कनफुची अपने प्रभु राजासे जिस भावमें व्यवहार करते, उससे आत्मनिर्भरताके गुण झलकते थे। किन्तु राजाका सम्मान रखते समय इन्हें बड़ा असाच्छन्द्य उठाना पड़ता रहा। जब यह राजसभामें जाते या शून्य सिंहासनके निकट आते, तब मुखके भाव परिवर्तित देखाते थे। उस समय इनके पैर कंपते रहे। कण्ठका स्वर इतना मृदु लगता, मानो बात करनेमें इन्हें कष्ट पड़ता था। घटनाक्रमसे राजचिह्न वहन करते समय कनफुचीका शरीर अवश हो जाता, उसका भार किसी प्रकार सहनेमें न आता रहा। यदि किसी पीड़ाके समय राजा इन्हें आकर देखते, तो असुख शरीर पर भी अपनी पदोचित वेषभूषा लगा यह पूर्वमुख लेटते थे। किसी राज-अतिथिको सादर आह्वान करनेको राजा जब इन्हें बोलाते, तब इनके भाव बदल जाते रहे। उस समय यह उत्साहित हो राजाके अन्यान्य कर्मचारियोंके साथ आगे बढ़ते थे। जब अतिथिको आह्वान करनेके लिये यह स्वयं भेजे जाते, तब सर्वाग्र द्वारके निकट पहुंच क्षिप्र-गतिसे स्वीय अस्त्र-शस्त्रादि देखाते रहे। दुर्भिक्षादिके निवारणार्थ देशमें वार्षिक उत्सव होनेपर कनफुची स्वयं उसका मूलोद्देश्य देख उत्साह देते और पदोचित वस्त्रादि परिधानपूर्वक अपने गृहकी पूर्व ओर खड़े हो उत्सवके मतवाले लोगोंको निकट आनेपर महासमादरसे लेते थे। पानाहारादिके कार्यमें यह अधिक सावधानतासे चलते रहे। कनफुची कभी

स्वास्थ्यभङ्गकर कार्यमें हाथ लगाते न थे। इनका खाद्यादि अत्यन्त परिष्कार कर बनाया और प्रत्येक प्रकारका व्यञ्जन निर्दिष्ट पात्रमें लगाया जाता रहा। यह बहुत ज्यादा खा न सकते थे। भोजनपर बैठ गल्प उड़ाना इन्हें बुरा लगता रहा। फिर कनफुची जो कुछ खाते, उसका कियदंश मन्द होते भी देवताको चढ़ाते थे। विना देवताके नाम उत्सर्ग किये यह कोई चीज कैसे खा सकते रहे! मद्यपानके लिये कोई निर्दिष्ट समय न था। यह जब चाहते, तभी शराब पी लेते रहे। किन्तु अधिक मात्रामें शराब पी कनफुची कभी प्रमत्त बनते न थे। यह बड़े दयालु रहे। सबको कुछ न कुछ कनफुची दे ही देते थे। जब लोगोंके अभाव किसीका सत्कार होते न देखते, तब यह स्वयं शीघ्र शीघ्र काम करने चल देते रहे। किसीको धनाभाव पड़ने पर कनफुची स्वयं यथासाध्य साहाय्य पहुंचानेमें हिचकते न थे।

यह जब गाड़ीपर चढ़कर चलते, तब किसी अपरिचित व्यक्तिको देखते ही अवनत हो नमस्कार करते थे। यह किसीको कभी अभिवादनके लिये अञ्जलि उठाते न रहे। इनके निकट सकल ही समान आदर पाते थे। कनफुचीके मतानुसार श्रेष्ठ और नीच लोगमें वायु एवं तृणका सम्बन्ध रहता है। वायु चलनेसे तृण झुक ही पड़ता है। सदय व्यवहार करनेसे नीच लोग निश्चय वशीभूत हो जाते हैं।

इनकी कार्यावली देखनेसे भी ऐसा ही समझ पड़ता है। इन्होंने केवल उपदेशसे नहीं—स्वयं आदर्श कार्यादिकर लोगोंको सिखाया था।

कनफुची सङ्गीतविद्यामें बड़े पारदर्शी रहे। सङ्गीत भिन्न इनके मतमें सबको शिक्षा अधूरी रहती है। यह कहते थे—'सङ्गीत भिन्न किसी प्रकार मनको जागरित कर नहीं सकते। नीतिके अवलम्बनसे चरित्र तो गठता, किन्तु सङ्गीत भिन्न वह गठन अधूरा ही रहता है।' सङ्गीतकी बात चलनेसे कनफुची एक प्रकार पागल हो जाते थे। किसीके विरोध उठानेपर यह शीघ्र शीघ्र कमर बांध तर्क करने लगते रहे।

कनफुची नीतिकी शिक्षा देते थे। इन्होंने जो उपदेश दिया, उसमें केवल दर्शन-विज्ञानसम्पन्न व्यवहार-नीति, समाजनीति और राजनीतिको छोड़ धर्मकर्म किंवा मत एवं विश्वास-सम्बन्धीय कोई विशेष विषय नहीं लिया। इन्होंने साधारण लोगोंके लिये एक व्यवहार शास्त्र बनाया था। इस शास्त्रका नाम लिकि वा लिकिङ्ग है। मनुष्यके जीवनमें जो कर्तव्य ठहरता, करना पड़ता या किया जा सकता, इस पुस्तकमें उसका बंधा नियम मिलता है। लिकिङ्गमें पितामाता एवं उच्च नीचके व्यवहार और सामान्य जीवनके चरित्रकी शोभावर्धनका जो उपदेश तथा नियम लिखा, वह अति सुन्दर एवं अति सहज अवलम्बनीय समझ पड़ा है। पिताके निकट पुत्रकी वाध्यताको ही कनफचीने समस्त विषयोंका मूल ठहराया है। इनके मतमें एक परिवार किसी जातिका क्षुद्र आदर्श है। परिवारके मध्य पिता जैसे पुत्रपर प्रभुत्व चलाता और पुत्र जैसे पिताको वाध्य पाता, वैसे ही समस्त जातिका व्यवहार राजाके निकट सन्तानवत् उचित खाता तथा राजा भी समग्र प्रजापर पिताका अधिकार पाता है। इसी मूल भित्तिपर इनके समस्त सामाजिक एवं राजनैतिक नीति स्थापन करनेसे चीनमें कभी कोई विशेष विशृङ्खला नहीं पड़ती।

किसी किसीके मतसे कनफुची ईश्वरकी सत्ता मानते न थे। किन्तु अपने दर्शनसम्बन्धीय सकल ग्रन्थोंमें इन्होंने लिखा है—वास्तविक शून्यसे किसी वस्तुका उद्भव कैसे सम्भव है! निश्चय किसी प्रकारका मूलपदार्थ आदि अनन्त कालसे विद्यमान है। कारण वा मूल इन्द्रियग्राह्य वस्तुके साथ समभावमें रहता है। सुतरां कारण भी अनादि अनन्त कालसे चला आता है। यह कारण अनन्त, अक्षय, असीम, सर्वशक्तिमान् और सर्वत्र विराजित है। नील आकाश ही शक्तिका केन्द्रस्थान पाता अर्थात् इसी स्थानसे प्रधानतः कारणके कार्यका आरम्भ हो जाता है। आकाशसे समस्त जगत्के कारणकी शक्ति फैलती है। इसीसे मध्य मध्य विशेषतः उत्तरायण एवं दक्षिणायनके समय जो दो दिन दिवारात्र समान पड़ते,

उनको आकाशके उद्देश्यसे राजा पूजादि प्रदान करते हैं। क्योंकि दोनोंमें एक दिन अन्न वपन किया और दूसरे दिन काट लिया जाता है।

कनफ़ुचीके मतमें मनुष्यका देह दो विषयोंसे बना—पहला सूक्ष्म, अदृश्य एवं ऊर्ध्वगामी और दूसरा स्थूल, इन्द्रियग्राह्य तथा निम्नगामी है। इन दोनों मूल-विषयोंके पृथक् होनेसे सूक्ष्म देह आकाशको उड़ और स्थूल देह पृथिवीमें मिल जाता है। इनके दर्शनमें 'मृत्यु' नामक कोई बात नहीं। स्थूल देह मट्टीसे मिल जगत्‌के अंशमें गण्य होता है। किन्तु सूक्ष्म देह चिरवर्तमान रहता और मध्य मध्य पृथिवी-पर अपने पूर्व वासस्थानको आ पहुंचता है। यह सकल सूक्ष्म देहभूत पूजा पानेपर अपने वंशधरोंका मङ्गलविधान करते हैं। इसीसे चीनावोंके पितृ-मन्दिरमें उत्सवादि मनानेकी व्यवस्था है। चीना इन सकल उत्सवोंपर इतनी भक्ति और चेष्टा देखाते, कि दूसरे लोग आश्चर्यमें आ जाते हैं।

चीनावोंको विश्वास है—यदि हम ऐसा न करेंगे, तो पूर्वपुरुषोंके सूक्ष्म देह पितृमन्दिरमें कैसे घुसेंगे अथवा वंशधरोंका प्रेम एवं यत्न कैसे ग्रहण कर सकेंगे!

कनफ़ुची वा शिष्य ईश्वरकी कोई आकृति किंवा प्रतिमा मानते न थे। यह साधारणत: लोगोंको सिखाते रहे—दूसरेसे जैसे व्यवहारकी प्रत्याशा रखें, दूसरेके साथ व्यवहार करते समय वैसे ही आप भी चलें। कनफ़ुची अदृष्टवाद स्वीकार करते थे।

यह अपने शिष्योंसे कथनोपकथनके समय बहु-मूल्य मन्तव्य प्रकाशित करते रहे। पीछे उन्हीं सबको जोड़ 'दर्शनशास्त्रका कथनोपकथन' नामक ग्रन्थ बना। उक्त मन्तव्य अति सुन्दर एवं बहुमूल्य रहनेसे नीचे उद्धृत करते हैं। उन्हें पढ़नेसे कनफ़ुचीके भूयोदर्शन और सर्व विषयकी विचक्षणताका परिचय मिलेगा।

१। जो किसीमें अशान्ति देख न सके, उसे यदि कोई शाद्य भी न करे, तो उसके पूर्ण धार्मिक होनेमें क्या सन्देह पड़े!

२। चिकनी-चुपड़ी बातोंमें अधिक सत्य नहीं रहता।

३। विश्वास और दृढ़ताको ही जीवनका प्रथम लक्ष्य ठहराना चाहिये।

४। मनुष्यके हमें न पहचाननेसे कोई दुःख नहीं; दुःख इसी बातका है—हम मनुष्यको पहचान न सके।

५। चिन्ताशून्य विद्यामें हुवा ही परिश्रम नष्ट होता है। विद्याशून्य चिन्ता भी सर्वनाशकर है।

६। क्या हम तुमको सिखायेंगे—ज्ञान किसे कहते हैं! ज्ञान वही है, जिसे तुम जानो उसे मानो और जिसे तुम न जानो उसे पहचानो। अर्थात् किसी व्यक्ति-विशेषको ज्ञानी मानने, अपनी अज्ञता जानने और किसीके भ्रमका यथार्थत्व पहचाननेसे ज्ञानका सच्चा स्वरूप देख पड़ता है।

७। दृष्टि पड़नेसे गुणवान् लोगोंमें हमें समता दर्शन करना उचित है। फिर यदि विपरीत स्वभावके लोग देख पड़ें, तो हम अन्तर्दृष्टिसे अपनी आप परीक्षा करें।

८। प्रथम व्यवहारमें लोगोंकी बात सुनना और उनके आचरणकी प्रशंसा करना पड़ती है। फिर उनकी बात सुन उनके आचरणपर लक्ष्य रखना आवश्यक है।

९। जिकिङ्गने कहा—मैं जैसा व्यवहार पाना वैसा ही व्यवहार देखाना भी चाहता हूं। कनफ़ुचीने उत्तर दिया—किन्तु उतनी दूर अग्रसर होनेकी दृढ़ता तुम्हें कहां है!

१०। ज्ञानी लोग बातमें बड़े, किन्तु व्यवहारमें बड़े रहते हैं।

११। इसप्रकार अपने मनमें ठहरा आराधना करना चाहिये—भगवान् हमारे सामने बैठे हुये हैं।

१२। आराधनाके समय यदि अपना मन उसमें न लगे, तो आराधनासे दूर ही रहना उचित है।

१३। 'अन्नके लिये मोटे चावल, पानके लिये सामान्य जल और शयनके लिये तकिया बना अपने हाथसे काम चला सकते हैं। किन्तु खोया हुवा धर्म,

धन और मान मिलते भी हमें शरत्के टूटे-फूटे मेघको भांति देख पड़ता है।

१४। ज्ञानी अपनेमें और अबोध दूसरेमें प्राप्तव्य विषयको ढूंढते हैं।

१५। जो पढ़ो, उसे अपने कार्यमें परिणत करो और प्रतिदिन कुछ कुछ नूतन विषय सीखते रहो। फिर आप शिक्षादाता बन सकेंगे और लोग आपको बात सुनेंगे।

१६। अपने हृदयमें विश्वास और दृढ़ता न रखनेवाला हमारे देखते चक्रहीन शकटके समान है। वह जीवनके पथपर कैसे चलेगा!

१७। तीन प्रकारसे तीन लोगोंके एकत्र होनेपर शिक्षामें सुविधा पड़ती है। शिक्षार्थी सद्व्यक्तिका अनुकरण और असद्व्यक्तिको देख अपना दोष संशोधन कर सकता है।

१८। मनुष्यको बलपूर्वक सत्कार्यमें लगा सकते, किन्तु बलपूर्वक उसमें उसकी प्रवृत्ति पहुंचा नहीं सकते।

१९। स्वभावसे मनुष्य एक ही देखाता, किन्तु व्यवहारसे भिन्न भिन्न बन जाता है।

२०। ईश्वरके निकट अपराधी होनेवाला व्यक्ति किसके पास शरण लेगा!

२१। राजा धार्मिक रहनेसे न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य करेगा और साहसके साथ बात कहेगा; किन्तु अधार्मिक होनेसे सावधान बात कहते भी न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य न करेगा।

२२। ज्ञानी लोग इसी भयसे लज्जित रहते—हम अपने कार्यमें पिछली कथाकी अपेक्षा हीन पड़ते हैं।

सहस्र दोष और सहस्र भ्रम मानते भी कनफुचीके आदर्श पुरुष होनेमें कोई सन्देह नहीं। फिर यह थोड़े विस्मयकी बात कैसे हो सकती है—किसी प्रकार ऐश्वरिक क्षमताकी दोहाई न दे चीना आजतक इनका उपदेश पालन करते आते हैं। सोचनेसे विस्मित होना पड़ता है—चीना इनके प्रति ६७।६८ पुरुष बीतते भी समभावसे सम्मान देखाते हैं। प्रति ग्राम और प्रति नगरमें इनका चित्र एवं मन्दिर स्थापित है। मान्दारन (मन्त्री), देशके विज्ञ एवं राजपुरुष इनकी प्रतिमूर्ति पूजते हैं। कनफुचीके मन्दिरमें धूप, चन्दन-काष्ठ एवं गुग्गुल जलाया और सम्मुख परिष्कार पात्रमें पुष्प, फल तथा मद्य सजाकर लगाया जाता है। उक्त पात्रमें निम्नलिखित कई विषय खोदित रहते हैं—हे कनफुची! हे हमारे सम्मानार्ह शिक्षक! तुम इस स्थानपर आ कर अधिष्ठित हो और भक्तिपूर्वक दी हुई हमारी यह पूजा ग्रहण करो।

इन्होंने किसी दिन भूत भविष्यत् परकाल वा सृष्टि-तत्त्व, मनस्तत्त्व, वस्तुतत्त्व इत्यादि विषयोंपर मीमांसा करनेकी चेष्टा लगायी न थी। कनफुची वर्तमानके सेवक रहे। यह इहजीवनकी उन्नति और अवनति-पर ही उपदेश दे गये हैं। इन्हींके उपदेश-बलपर चीनवासी वर्तमानकी उपासना उठा और इहजीवनकी उन्नतिमें शरीर लगा महासुखपूर्वक उस कालसे आजतक निर्वाह करते चले आते हैं।

कनफुसका (हिं० पु०) १ धीरे-धीरे बोलनेवाला, जो कानसे लगकर बताता हो। २ निन्दक, चुगलखोर।

कनफुसकी (हिं० स्त्री०) १ धीरे-धीरे बोलनेवाली, जो कानसे लगकर बताती है। २ निन्दा करनेवाली, जो बुराई करती हो। ३ कानाफूसी, कानमें धीरे-धीरे कही जानेवाली बात।

कनफूल (हिं० पु०) कर्णभूषणविशेष, करनफूल, तरवन, कानका एक गहना।

कनफेड़ (हिं० पु०) कनपेड़ा, कानके पास पड़नेवाली गिलटी।

कनफोड़ा (हिं० पु०) कर्णस्फोट देखो।

कनबिधा (हिं० पु०) १ कर्णछेदन करनेवाला, जो कान छेदता हो। २ कान छेदाये हुआ।

कनभेंड़ी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह अमेरिकासे भारतमें आयी है। दूसरा नाम 'बन-भेंड़ी' है। बम्बईप्रान्तमें इसकी कृषि अधिक होती है। कनभेंड़ी एक प्रकारका पटसन है। रेशा ८।९ फीट लम्बा बैठता है। किन्तु कनभेंड़ी पटसनसे अच्छी नहीं ठहरती। पत्र, पुष्प एवं फल भिंडीसे मिलते हैं।

कनयून (हिं० पु०) तण्डुलभेद, किसी किस्मका चावल। यह काश्मीरमें उपजता और श्वेतवर्ण रहता है। लोग इसे बहुत अच्छा समझते हैं।

कनरयो (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। इसे गुलू भी कहते हैं। कतीरा कनरयासे ही उत्पन्न होता है।

कनरश्याम (हिं० पु०) रागविशेष, किसी किस्मका गाना। इसमें समस्त स्वर शुद्ध रहते हैं।

कनरस (हिं० पु०) १ सङ्गीतका आनन्द, गाने बजानेका मज़ा। २ सङ्गीत श्रवणका व्यसन, गाना-बजाना सुननेका चसका।

कनरसिया (हिं० पु०) सङ्गीतप्रेमी, गाना-बजाना सुननेका शौक़ रखनेवाला।

कनल (सं० त्रि०) कन्-अलच्। प्रदीप्त, रौशन, चमकीला।

कनवई (हिं० स्त्री०) छटांक, पांच तोले।

कनवक (सं० पु०) शूरपुत्रविशेष, वीरके एक लड़के।

कनवा (हिं० पु०) कनवई, छटांक।

कनवांसा (हिं० पु०) दौहित्रपुत्र, नवासेका बेटा, लड़कीके लड़केका बेटा।

कनवास (अं० पु० = Canvas) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह मोटा रहता, पटसनसे बनता और जूते या नावके पाल तैयार करनेमें लगता है।

कनवो (हिं० स्त्री०) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। यह गुजरातमें अधिक उत्पन्न होती है। कनवोका बिनौला बहुत छोटा रहता है।

कनवोकेशन (अं० पु० = Convocation) विश्वविद्यालयका महोत्सव, युनिवरसिटीका एक जलसा। यह प्रति वर्ष हुआ करता है। इसमें बी० ए० आदिकी परीक्षा पास करनेवालोंको सनद मिलती है।

कनसलाई (हिं० स्त्री०) १ कीटभेद, एक कीड़ा यह छोटे कनखजूरे-जैसी होती है। सोते आदमीके कानमें घुस जानेसे ही इसका नाम कनसलाई पड़ा है। २ कुश्तीका कोई पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरे पहलवान्के अपनी कमर पर रखे हाथोंके नीचे अपना एक हाथ डाल बग़लको राह उसकी गर्दनपर पहुंचाता और अपने शरीरको घुमा टांग खड़ा कर उसे चित्त फटकारता है।

कनसार (हिं० पु०) ताम्रपत्रका लेख खींचनेवाला, जो तांबेके पत्तरपर लिखता हो।

कनसाल (हिं० पु०) चारपाईका टेढ़ा छेद। इसके कारण चारपाई कुछ टेढ़ी पड़ जाती है।

कनसुई (हिं० स्त्री०) खटक, टोह, आहट।

कनसुर (हिं० वि०) १ मन्दस्वरयुक्त, जिसकी अच्छी आवाज़ न रहे। २ अप्रसन्न, नाराज़।

कनस्तर (अं० पु० = Canister) टीनका बकस, टीनका पीपा। यह चतुष्कोण-विशिष्ट रहता और घृत, तैल प्रभृति वस्तु रखनेमें लगता है। मट्टीका तेल इसीमें भरकर आता है।

कनहा (हिं० पु०) फ़सलको उपजका अन्दाज़ लगानेवाला, जो फ़सल कूतता हो।

कनहार (हिं० पु०) कर्णधार, केवट, पतवार थामनेवाला मल्लाह।

कना (सं० स्त्री०) कनिनास धातु-अच्। १ कनिष्ठा, सबसे छोटी उंगली। (वै०) २ कन्या, लड़की।

कना (हिं० पु०) १ कण, दाना। २ कास, सरकण्डा।

कनाई (हिं० स्त्री०) १ कोमल शाखा, पतली डाल। २ नवपल्लव, कल्ला, टहनी। ३ पगड़ीके पेचका एक हिस्सा।

कनाउड़ा (हिं० वि०) उपकृत, एहसानमन्द, कनौड़ा।

कनागत (हिं० पु०) पितृपक्ष, क्वार महीनेका अंधेरा पाख। इसमें भारतवासी मृत पितरोंके उद्देशसे श्राद्ध-तर्पण किया करते हैं।

क़नात (तु० स्त्री०) स्थूलवस्त्रका आवरण विशेष, मोटे कपड़ेका परदा। इसमें थोड़ी थोड़ी दूरपर बांसकी फट्टियां सी सी कर लगायी जाती हैं। उनमें डोरी बंधी रहती है। इसी डोरीके सहारे क़नात खींच कर खड़ी करते हैं। यह प्रायः डेरे या तम्बूमें लगती है।

कनार (हिं० पु०) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। घोड़ेको सर्दी या जुकाम होनेका नाम कनार है।

कनारक—कोणार्क देखो।

कनारी (हिं० स्त्री०) १ किनारी, गोट। २ मन्द्राज प्रान्तके कनाड़ा ज़िलेकी भाषा या बोली। ३ कण्टक, कांटा। (वि०) ४ कनारेका अधिवासी, जो कनारेमें रहता हो।

कनाल (हिं० पु०) चौथाई बीघा, घुमावका ८वां हिस्सा। ज़मीन्‌की यह नाप पञ्जाबमें चलती है।

कनावड़ा (हिं० पु०) उपकृत, एहसानमन्द, दबैल, कनौड़ा।

कनासी (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। कनासी एक प्रकारकी रेती है। इससे नारियलके हुक्केका मुंह बढ़ाते हैं। फिर एक प्रकारकी दूसरी कनारीसे आरेके दांत भी पैनाये जाते हैं।

कनिआरी (हिं० स्त्री०) कर्णिकार, कनकचम्पा।
कर्णिकार देखो।

कनिक (हिं० स्त्री०) गोधूम-चूर्ण, गेहूंका मोटा आटा। गेहूंके मोटे आटेको कनिक और महीनको मैदा कहते हैं। कनिक प्रायः रोटी बनानेमें काम देती है। इसकी पूरी भी अच्छी होती है। किन्तु देखनेमें वह साफ़ नहीं आती।

कनिका (हिं०) कणिका देखो।

कनिक्का (सं० स्त्री०) समिता, मैदा, कनिक।

कनिक्रन्द (वै० वि०) क्रन्द यङ्लुक् अच् तुल्याभावः निगागमश्च। अत्यन्त क्रन्दनशील, फूट-फूट कर रोनेवाला। (ऋक्‌वमु: १।४८)

कनिगर (हिं० पु०) मर्यादारक्षक, स्वीय कीर्ति स्थायी रखनेवाला, जिसे अपनी इज्ज़तका खयाल रहे।

कनिचि (सं० स्त्री०) शूरण, जिमींकन्द।

कनियां (हिं० स्त्री०) क्रोड़, गोद।

कनियागिरि (हिं०) कण्वागिरि देखो।

कनियाना (हिं० क्रि०) १ साथ छोड़ना, अलग होना। २ कतराना, छट जाना, तिरछे पड़ना। ३ कन्नी खाना, एक ओरको झुक जाना। ४ गोद लेना, कनियां उठाना।

कनियार (हिं०) कर्णिकार देखो।

कनिष्क—भारतके एक प्राचीन सम्राट्। पञ्जाबका जालन्धर नगर इनका अधिष्ठान है। अर्हत् सुदर्शन कनिष्कके शिक्षागुरु रहे। इन्होंने अपने भुजबलके प्रभावसे भारतमें नाना स्थान जीते थे। मानिकयाल, काश्मीर, मथुरा, भावलपुर प्रभृति नाना स्थानोंकी शिलालिपिमें कनिष्क राजाका नाम मिलता है। राजतरङ्गिणीके मतसे यह तुरुष्क-जातीय बौद्ध रहे। काश्मीरमें बहुदिन इन्होंने राजत्व किया था। इन्हींके समय काश्मीरमें बौद्धधर्म प्रबल पड़ा। इन्होंने अपने नामपर कनिष्कपुर नगर बसाया था।

पालि बौद्धग्रन्थमें इनका नाम 'चन्दन कनिक' लिखा है।

कनिष्क एक कट्टर बौद्ध रहे। बौद्ध धर्म उद्धार करनेके लिये इन्होंने काश्मीर आ नाना स्थानोंसे अर्हतों और श्रमणोंको बुलाया था। फिर अनुशासन-पत्र चारो ओर भेजा गया। कई देशोंसे बौद्धपण्डित कनिष्ककी सभामें आये थे।

प्रथम इन्होंने राजगृह आ महासभाका अधिवेशन करना चाहा। किन्तु आर्यपार्श्विक प्रभृति अर्हतोंने इनके प्रस्ताव पर असम्मत हो कहा था,—"राजगृहमें इस समय महासभाका अधिवेशन हो नहीं सकता। आजकल वहां विभिन्न मतावलम्बी रहते हैं। अतएव गिरिमेखला-वेष्टित, यक्षराजरक्षित और सिद्धर्षि-सेवित इस काश्मीर राज्यमें ही महासभा होना चाहिये।"

अनेक तर्क-वितर्कके पीछे सब लोगोंने कनिष्कका मत माना। जहां सूत्र, विनय और अभिधर्मके विभाषा-सूत्र करनेको तर्कवितर्क उठा था, वहीं कनिष्कने एक सङ्घाराम बनवाया। उसी समय प्रसिद्ध बौद्ध पण्डित वसुमित्र आ इनसे मिले। असाधारण क्षमता देख सबने उन्हींको सभापति मनोनीत किया था। वसु-मित्रने विभाषासूत्र प्रकाश किया और कनिष्कराजने उसे खोदित ताम्रफलकपर खोदवा प्रस्तरके आधारसे रखा दिया। जहां यह धर्मग्रन्थ रखाया, वहीं कनिष्क-ने एक स्तूप भी बनवाया था।

अभ्यागत बौद्धोंके विश्रामको इन्होंने चीनपति नामक स्थानमें तीन बृहत् सङ्घाराम निर्माण कराये।

एतद्व्यतीत गान्धार राज्यमें एक अति बृहत् देवालय,* और कई सङ्घाराम भी कनिष्कने बनवाये। फाहियान प्रभृति चीनके प्राचीन परिव्राजक उक्त देवल और सङ्घाराम देख गये हैं।

कनिष्कके मरनेपर ब्रात्योंने काश्मीर अधिकार किया था।

आज भी स्थिर कर न सके—कनिष्क किस समय विद्यमान रहे। इस सम्बन्धमें अनेक लोग अनेक बातें कह चुके हैं। चीन-परिव्राजक युङ्ग्युनके मतमें बुद्धनिर्वाणसे ३०० वर्ष पीछे कनिष्क विद्यमान थे। हिउएन सियाङ्ग कहते—बुद्धनिर्वाणसे ४०० वर्ष पीछे कनिष्क गान्धारके राजा बने। किन्तु पञ्जाब प्रान्तीय रावलपिण्डी ज़िलेके अन्तर्गत माणिक्याल नामक एक ग्राममें कनिष्ककी रोमक-मुद्रा मिली है। यह मुद्रा ई०से ३३ वर्ष पहलेकी है। पाश्चात्य पुरातत्त्वविदोंके मतसे यह युइचि (Yuei-chi)के राजा रहे। शिलालिपिमें इन्हें 'कनिष्क कुषाण' वा गुषाण-वंशीय कनिष्क लिखा गया है।

मोक्षमूलरके मतसे कनिष्क शकराजा थे। इन्हींके समय शकाब्द प्रचलित हुआ।

कनिष्कपुर—बाहराज कनिष्क-प्रतिष्ठित काश्मीरका एक नगर। (राजतरङ्गिणी १।१६८)

इस नगरका वर्तमान नाम कामपुर है। यह श्रीनगरसे ५ कोस दक्षिण पीरपञ्जाल गिरिके पथपर अवस्थित है। आजकल कनिष्कपुर एक सामान्य ग्राम गिना जाता है। यहां एक सराय बनी है।

कनिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् अल्पो वा-इष्ठन् कनादेशश्च। युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम्। पा ५।३।६४। १ अतियुवा, निहायत कमसिन, बहुत छोटा। २ अल्प, कम। ३ लघु, छोटा। ४ पश्चात् जात, पीछे पैदा हुआ। ५ वयसमें छोटा, उम्रमें कम। (पु०) ६ अनुज, छोटा भाई। इसका संस्कृत पर्याय यवीयान्, अनुज, अवरज, जघन्यज, कनीयान्, कन्यस और यविष्ठ है। ७ महादेव।

* कनिङ्हामके मतमें वर्तमान पेशावर नगरसे १ मील दक्षिण-पश्चिम इस प्राचीन देवलका ध्वंसावशेष पड़ा है।

"अविशं विशङ्कटम्: कनिष्ठः श्रमिष्ठः।" (भारत १३।१७।१११)

कनिष्ठक (सं० क्ली०) कनिष्ठमिव कायति प्रकाशते, कनिष्ठ-कै-क। १ शूकतृण, सूकड़ी घास। (त्रि०) २ अति अल्प, निहायत कम, सबसे छोटा।

कनिष्ठता (सं० स्त्री०) १ अति युवावस्था, निहायत कमसिनी, छोटाई। २ अल्पता, कमी।

कनिष्ठपद (सं० क्ली०) १ बीजगणितोक्त ज्येष्ठापेक्षा अल्प संख्या-युक्त पदका वर्गमूल। कनिष्ठपदका वर्ग निर्धारित गुणकसे गुणित होने और निर्धारित संयोजक मिलाया या निर्धारित शोधक घटाया जानेपर निश्चित वर्गमूल प्रदान कर सकता है। २ अल्पक वा प्रथम मूल, निहायत छोटी या पहली जड़।

कनिष्ठमूल, कनिष्ठपद देखो।

कनिष्ठा (सं० स्त्री०) कनिष्ठ-टाप्। १ दुर्बल अङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली। २ नायिका विशेष। जो परिणीता नायिका स्वामीका अल्प स्नेह पाती, वही कनिष्ठा कहाती है। यह तीन प्रकारकी होती है—धीरा, अधीरा और धीराधीरा।

धीरा कनिष्ठा—

"हे प्यारी देखी कहा कहो हमारो दोष।
जासों इतनो कर रहीं हमपर विरथा रोष॥
कौन भांति परितोष हो हमको देहु बताय।
नहीं चित्र रविकी कोई अहन बोध देखाय॥
क्रोध कियो अनजानते नहीं कियो उपरोध।
युगलनकी नहिं कामवर राखहु हिरदे बोध॥

अधीरा कनिष्ठा—

बिना दोषसों गारियां देती हो मुंह फार।
माथे मोरे कलङ्ककी इतनो बोझो डार॥
काको मुख देखलावहूं लाज मरनके काज।
कासों कबरो तुम नहीं याको राखो आज॥
स्वामीको गारी नहीं देतीं तिया प्रवीन।
कौन देशकी रीति यह कौन गुरु सिख दीन॥
विनय मानिये है प्रिये तजिये क्रोध अपार।
नहीं तो कहिये कोप दूं अपनो सब घरबार॥

धीराधीरा कनिष्ठा—

एक बातमें रोष है दूजीमें परितोष।
हममें कुछ नहिं आवतो अपनो गुन या दोष॥

कौन भांति झगड़ा मिटे मोहिं बतावो वाम।
तन मन धनसों करहुंगी वही तुम्हारी काम॥
चहत पद्मिनी भ्रमरको फिर भी देत भगाय।
विरहमें व्याकुल जब भयो हाय-हाय चिल्लाय॥
तातें तजिके क्राधको आलिङ्गन करिलेहु।
बीती ताहि बिसारिके मोहिं क्षमा अब देहु॥

कनिष्ठिका (सं० स्त्री०) कनिष्ठा एव, कनिष्ठ स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। दुर्बल अङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली।

कनी (सं० स्त्री०) कन्-अच् गौरादित्वात् ङीष्। कन्या, लड़की।

कनी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकण, छोटा टुकड़ा। २ हीरककण, हीरेका छोटा टुकड़ा। ३ किनकी, चावलका छोटा टुकड़ा। ४ तण्डुलका मध्यभाग, चावलका दरमियानी हिस्सा। यह प्रायः कम गलता है। ५ विन्दु बूंद।

कनीचि (सं० स्त्री०) कन बाहुलकात् ईचि दीर्घश्च पृषोदरादित्वात्। १ गुञ्जालता, घुंघची। सपुष्प लता, फूलदार बेल। ३ शकट, गाड़ी।

कनीन (वै० त्रि०) कन्-ईनन्। कमनीय, मनोहर, खूबसूरत।

"सद्योऽजीवो वृषभः कनीनः।" (ऋक्)
'कनीनः कमनीयः।' (सायण)

कनीनक (सं० पु०) १ चक्षुकी कनीनिका, आंखकी पुतली। २ बालक, लड़का।

कनीनका (सं० स्त्री०) १ कन्या, लड़की। २ कमनीय शालभञ्जिका, गुड़िया, काठपुतली।

कनीनिका (सं० स्त्री०) कनीन संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम्। १ अक्षितारक, आंखकी पुतली। २ कनिष्ठाङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली। ३ अश्वकी नासाके समीपका भाग, घोड़ेकी नाकके पासका मुकाम।

कनीनी (सं० स्त्री०) कन्-इन्-ङीष्। कनीनिका देखो।

कनीयःपञ्चमूल (सं० क्ली०) विकण्टक, संहतीहय, पृथकपर्णी और विदारिगन्धाका मूल, गोखुरू, दोनों कटैया, सरवन और कड़वी तोंबीकी जड़।

कनीयस (सं० क्ली०) कनः सूर्यः तस्येदं कनीयं तद्रूपत्वेन सीयति अवसायति, कनीय-सो घञर्थे क। १ ताम्र, तांबा। ताम्रके अधिष्ठात्र-देवता सूर्य हैं। (त्रि०) २ अल्पतर, ज्यादा छोटा। ३ अपेक्षाकृत अल्पवयस्क, ज्यादा कमसिन।

कनीयान् (सं० त्रि०) अयमनयोरतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन्-अल्प वा ईयसुन् कनादेशः। १ अनुज, पीछे पैदा होनेवाला। २ अतियुवा, निहायत कमसिन। ३ अति अल्प, निहायत कम। ४ वयसमें लघु, उम्रमें कम। ५ लघु, छोटा। (पु०) ६ कनिष्ठ सहोदर, छोटा भाई। ७ सोमलता-भेद।

कनु (हिं० पु०) १ कण, दाना, टुकड़ा। २ शक्ति, बल।

कनूज—कान्यकुब्ज देश।

कने (हिं० क्रि० वि०) १ निकट, करीब, पास। २ ओर, तर्फ। यह शब्द क्रिया-विशेषण होते भी सम्बन्ध कारकमें संज्ञाकी भांति आता है। जैसे— मेरे कने, किसके कने।

कनेखी (हिं० स्त्री०) कटाक्ष, कनखी, आंखका इशारा।

कनेठा (हिं० पु०) १ कान, कातरकी एक लकड़ी। यह पिसते हुये कोल्हूको चारो ओर चक्कर लगाता है। (वि०) २ काण, काना। ३ ऐंचाताना, घूमी आंखवाला।

कनेठी (हिं० स्त्री०) कानकी घुमाई, गोशमाली, कानागाधी।

कनेती (हिं० स्त्री०) धन, रुपया। यह शब्द दलालोंकी बोलीमें चलता है।

कनेर (सं० पु०) कर्णिकार, एक पेड़। यह लम्बा वृक्ष हिमालयके नीचे यमुनासे बङ्गाल, चट्टग्राम और ब्रह्मदेश पर्यन्त मिलता है। कोङ्कनमें भी कनेर पाया जाता है। पत्र १२ अङ्गुल दीर्घ, १ अङ्गुल पर्यन्त प्रशस्त, ताम्राग्र, कठोर, चिक्कण और घोर हरिद्वर्ण होते हैं। फिर शाखसे दो पत्र आमने सामने फूटा करते हैं। शाखसे श्वेत दुग्धनो व हुगत होता है। किसी कनेरमें श्वेत एवं किसीमें रक्तवर्ण पुष्प

बारहो मास फूला करते हैं। यह एक विषवृक्ष है। श्वेतवर्ण पुष्पके कनेरकी जड़ अधिक विषैली होती है। जब पुष्प गिर जाते, तब ८।१० अङ्गुल दीर्घ एवं अस्थूल फल आते हैं। फलोंके अन्तर्गत सूक्ष्म वीज रहते हैं। अश्वके लिये भीषण विष होनेसे ही संस्कृतमें कनेरके नाम—अश्वघ्न, हयमार, तुरङ्गारि प्रभृति पड़े हैं। कनेर कई प्रकारका होता है। किसीमें सफेद, किसीमें लाल, किसीमें गुलाबी और किसीमें काले फूल लगते हैं। एक दूसरा वृक्ष भी इससे मिलता-जुलता है। किन्तु उसके पत्र अधिक अस्थूल, क्षुद्र और भासुर रहते हैं। फिर उसका पुष्प भी अधिक पृथु एवं पीतवर्ण होता है। पुष्प झड़ जानेसे गोलाकार फल आते, जिनमें गोलाकार और समस्त वीज पाये जाते हैं। इन वीजोंको हिन्दीमें गुल्लू कहते हैं। बालक गोलियोंमें 'गुल्लू-टीप' खेला करते हैं। गुलाबी फूलवाला कनेर लाल फूलवालेसे मिलता है। किन्तु काले फूलवाले कनेरका उल्लेख निघण्टरत्नाकर भिन्न दूसरे ग्रन्थमें नहीं। कनेर कटु, तिक्त, लघु, शोधन, तुवर, रक्तन, सुखद और शोथ, रक्तव्रण, कुष्ठ एवं श्लेष्मनाशक है। (राजनिघण्टु) पत्रके कोमल रोमको सिकिमके पहाड़ी लोग ज़ख्मसे रक्त बहना रोकनेमें व्यवहार करते हैं। कोङ्कनमें पत्र एवं वल्कल झुलसा और कमलके साथ मिला चेचक पर लगाया जाता है। बङ्गाल और बम्बई प्रान्तके लोग पत्रोंको तम्बाकू बांधनेमें व्यवहार करते हैं। फिर बङ्गाली विषघ्न समझ पुष्पोंसे कीड़े-मकोड़े दूर रखनेका काम लेते हैं। पत्रोंमें जलको सान्द्र बनानेका भी गुण विद्यमान है। शङ्करपर सिवा कनेरके दूसरा कोई रङ्गदार फूल नहीं चढ़ता। इसका सारकाष्ठ श्वेतवर्ण और छदकाष्ठ मृदु एवं ईषत् कठिन होता है। बङ्गालमें कभी-कभी कनेरकी लकड़ीके तख़्ते तैयार किये जाते हैं। लोग कहते—इसकी लकड़ीपर घोटाईका काम अच्छा चलता और बढ़िया साज़-सामान् बनता है।

कनेरा (सं० स्त्री०) १ हस्तिनी, हथिनी। २ वेश्या, रण्डी।

कनेरिया (हिं० वि०) कर्णिकारके पुष्पकी भांति रक्तवर्ण, लाल, कनेरके फूलका रङ्ग रखनेवाला। कनेरिये लाल रङ्गमें कुछ स्याही रहती है।

कनेव (हिं० पु०) वक्रभाव, टेढ़ापन। प्रायः चारपाईके टेढ़ेपनको ही कनेव कहते हैं। यह पायोंके छेद टेढ़े खुलने और ताना छोटा पड़नेसे चारपाईमें आ जाता है।

कनोज, कन्नौज देखो।

कनौजिया (हिं० वि०) १ कन्नौजका अधिवासी, जो कन्नौज प्रान्तमें रहता हो। (पु०) २ कान्यकुब्ज ब्राह्मण। यह कान्यकुब्ज देशमें रहनेसे ही कनौजिया कहाये हैं। इनमें खाने-पीनेका बड़ा विचार रहता है। अपने आत्मीय एवं सम्बन्धीय व्यतीत कोई किसीके हाथकी बनी पूरी-तरकारी या रोटी-दाल खा नहीं सकता। इसीसे लोग कहा करते हैं—आठ कनौजिया नौ चूल्हा। किन्तु कनौजिया ब्राह्मण अपने घरकी बनी पूरी-तरकारी एक जगहसे दूसरी जगह ले जानेमें फलकी भांति शुद्ध समझते हैं। इसीसे गङ्गा नहानेको राह लोग पूरी-तरकारी गठरीमें बांध लिये चले जाते और अभिमत स्थानपर पहुंच शुद्ध भावसे बैठ हाथ-पैर धो खोलकर खाते हैं। कनौजिये चिलम-तम्बाकू भी नहीं पीते। कारण यह काम बहुत अशुद्ध समझा जाता है। विवाहमें कन्यापक्ष वरपक्षको दहेज़ देता है। दूसरे ब्राह्मणोंकी तरह इनमें कन्यापक्षवाले वरपक्षसे रुपया-पैसा कुछ नहीं लेते। फिर उच्च कुलवाला जब किसी नीचकुलवालेकी कन्या लेता, तब उसका लाखका घर लोक भी कर देता है। बहुतसे कनौजिये इसीमें मर मिटते हैं। कन्याका पिता वरके घरकी न तो कोई चीज़ छूता और न उसके ग्रामका पानीतक पीता है।

कनौजिया ब्राह्मण पांच शाखामें विभक्त हैं—१ कनौजिया, २ सरवरिया, ३ जझौतिया, ४ सनाढ्य और ५ बङ्गाली कनौजिया।

१ कनौजिया—यह युक्तप्रदेशमें उत्तर-पश्चिम—शाह-जहांपुर तथा पीलीभीत, उत्तर—कानपुर एवं फतेहपुर,

पश्चिम—बांदे, दक्षिण—हमीरपुर और दक्षिण-पश्चिम—इटावे जिलेतक रहते हैं। अपनी कुल-कारिकाके मतानुसार कनौजिये षट्कुलमें विभक्त हैं। किन्तु इन्होंने साढ़े छह कुल मान रखे हैं।

गोत्र	उपाधि
गौतम	अवस्थी
शाण्डिल्य	मिश्र, दीक्षित
भारद्वाज	शुक्ल, त्रिवेदी, पाण्डेय
उपमन्यु	पाठक, द्विवेदी
काश्यप	त्रिवेदी, त्रिपाठी
कात्स्तोय	वाजपेयी
गर्ग	चतुर्वेदी

फिर यह अवस्थ्यादि उपाधिधारी कनौजिये कई प्रकारके होते हैं, जैसे प्रभाकरके अवस्थी, खिचरके अवस्थी; रंभागैयांके मिश्र, धोबिहा मिश्र; बालाके शुक्ल, कक्केके शुक्ल; लहुरीके त्रिवेदी, खोरके पाण्डेय, बखनजके वाजपेयी, काशीरामके वाजपेयी, गोवर्धनके त्रिपाठी, दमाके त्रिपाठी, गोपालके त्रिपाठी, इत्यादि इत्यादि।

इनकी मर्यादा २० अंशों या बिस्वोंमें विभक्त है। इसीसे उच्च एवं नीच कुलका विधान होता है। उच्च कुलका कान्यकुब्ज नीच कुलवालेको अपनी कन्या दे नहीं सकता। फिर बराबरवालोंमें ओतप्रोत सम्बन्ध चलता है। अपनी-अपनी मर्यादाके अनुसार दहेज बंधा है। किन्तु जितना ही छोटा कान्यकुब्ज रहता और जितने बड़ेके साथ सम्बन्ध लगानेकी चेष्टा करता, उतना ही उसे अधिक धन दहेजमें देना पड़ता है।

कान्यकुब्जोंमें यज्ञोपवीत संस्कार सम्यक सम्पन्न होनेपर व्यवहारी टिकावन करने आते हैं। संस्कृत बालकके मस्तक पर रोचनाक्षत लगा अपने-अपने व्यवहारके अनुसार सामने रखी थालीमें वह रुपया डालते हैं। इसीका नाम टिकावन है। फिर संस्कृत बालकके तत्त्वावधायक व्यवहारियोंको मिठाई बांटते हैं। संस्कार होते समय भी शर्बत-पान चला करता है। बाजे-गाजे धूम धड़ाकेसे बजते हैं। फिर संस्कृत बालक सात दिन तक खड़ाऊं पर चढ़, जामा पहन और पगड़ी बांध अपने व्यवहारियोंके घर भिक्षा मांगने जाता है। स्त्रियां उसकी झोली मिठाईसे भर दिया करती हैं।

कान्यकुब्जोंमें सबसे बड़ा गुण प्रतिग्रह न लेना है। लोग प्राण जाते भी दान दक्षिणा लेना बुरा समझते हैं। इस बातकी कई बार परीक्षा हो चुकी है। कनौजियोंने दानमें हजारों रुपये लेनेसे इनकार किया है। इसीसे भिक्षुक कान्यकुब्ज देख नहीं पड़ते।

कनौजिये युद्ध करनेसे भी मुंह नहीं मोड़ते। पुरानी बात हम नहीं कहते। आज भी सरकारी फौजमें कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंकी 'गायत्री' नामक पलटन विद्यमान है। यह खूब कसरत (व्यायाम) करते और अखाड़ोंमें लड़ते-भिड़ते हैं। बालक ८।१० वर्षका होते ही लंगोटा बांधने और डण्ड-बैठक मारने लगता है।

विद्यामें कान्यकुब्ज अग्रसर न होते भी अधिक पश्चात्पद नहीं। कितने ही कान्यकुब्ज संस्कृत, अरबी, फारसी, अंगरेजी आदि प्रधान-प्रधान भाषाओंका अच्छा ज्ञान रखते हैं।

२ सरवरिया—यह कनौजसे चल अयोध्यामें जाकर रहे थे। आजकल सरवरिया अयोध्याप्रान्तके बहराइच जिले, नेपालके प्रान्त, काशी एवं प्रयागप्रदेश और दक्षिण बुंदेलखण्डमें वास करते हैं। गोरखपुरमें यह अधिक मिलते और इनमें १८ घर चलते हैं।

अनेक लोग सरवरिया शब्दको 'सरयूपारीण' वा 'सरयूपारिया'का अपभ्रंश बताते हैं। प्रवाद है—राम रावणको मार अयोध्या आये और कान्यकुब्जसे कुछ ब्राह्मण बोलाये थे। वह ब्राह्मण आकर सरयूके परपार रहे। इसीसे उनका नाम सरयूपारीण या सरवरिया पड़ गया। इनमें भी भिन्न गोत्र और भिन्न उपाधि विद्यमान है।

गोत्र	उपाधि
गर्ग	पाण्डेय (इतिय)
गौतम	द्विवेदी (कच्छजिया)
शाण्डिल्य	पाण्डेय (त्रिफला)

शाण्डिल्य	त्रिपाठी (पिण्डी)
भारद्वाज	द्विवेदी (हरद्राम)
वत्स	मिश्र (पियासी)
„	द्विवेदी (समदारी)
काश्यप	मिश्र (राढ़ी)
„	पाण्डेय (माला)
कौशिक	मिश्र (धर्मपुरा)
चन्द्रायन	पाण्डेय (चपला)
सावर्ण्य	पाण्डेय (इतारी)
पराशर	पाण्डेय

एतद्भिन्न पुलस्त्य, भृगु, अत्रि, अङ्गिरा प्रभृति दूसरे गोत्रीय भी सरवरिया होते हैं।

उपरोक्त गोत्रोंके मध्य गर्ग, गौतम और शाण्डिल्य गोत्रीय ही कुलीन समझे जाते हैं।

३ जभौतिया—बुंदेलखण्डमें रहते हैं। उत्तर एवं पश्चिम कनौजियों और पूर्व सरवरियोंसे जभौतिये मिले हैं। इस शाखामें कुरारन्दके चौबे (चतुर्वेद), इरयाके दुबे (द्विवेदी) और हमीरपुर तथा करोमिके मिश्र श्रेष्ठवंश माने जाते हैं।

गोत्र	उपाधि
उपमन्यु	पाठक (रोरा)
„	वाजपेयी (बिनवारी)
काश्यप	पतेरिया (शाहपुर)
„	पस्तोरा (कंगरा)
गौतम	चौबे (रूपनौयाल)
„	गङ्गलो (मराई)
शाण्डिल्य	मिश्र (हमीरपुर)
„	अजेरिया (कोटके)
मौनस	मिश्र (करिया)
भारद्वाज	तेवारी (एजक)
„	दुबे (उठासनी)
वत्स	तेवारी (पठरेली)
एकाविशिष्ट	नायक (पियरी)

४ सनाढ्य—ब्राह्मण बुंदेलखण्डके मध्यप्रदेशसे दुआबके उत्तर एवं मध्यभाग, पीलीभीतसे ग्वालियर, रामपुरके उत्तरपश्चिमांश, रीवा, जहानाबाद तथा नवाबगञ्ज, बरेलीसे रामगङ्गा, सलीमपुर एवं मोरादाबाद, गङ्गाके निम्नतटसे कान्यकुब्ज, कालीनदीके कूलसे अलीपुरपट्टी, भाई-गांव, सोग, इटावे तथा मोरामऊ और दक्षिण यमुनासे चम्बल नदीके सङ्गमस्थान तक रहते हैं।

गोत्र	उपाधि
वशिष्ठ	व्यास
„	गोस्वामी
„	मिश्र
„	पराशर
„	कतारी
„	देवलिया
„	दुबे
„	खेमर्य
„	उपाध्याय
भारद्वाज	वैद्य
„	चौबे
„	दीक्षित
„	त्रिपाठी
„	चतुर्धर
काश्यप	मिश्र
सावर्ण्य	तेवारी
उपमन्यु	दुबे
गौतम	उपाध्याय
शाण्डिल्य	पांडे

एतद्भिन्न कौशिक, विश्वामित्र, जमदग्नि, धनञ्जय, कोयल, सौंगिया, मेवाया प्रभृति गोत्र और पाठक, स्वामी, समाध्याय, मनस्, बिरखारी, चंनपुरी, भाटिया, बरसिया, ओझा, मोदिया, सेंधिया, उदेनिया, चचौंदिया प्रभृति उपाधि भी होते हैं।

५ बङ्गाली कनौजिया—यह चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं—१ वारेन्द्र, २ राढ़ीय, ३ पाश्चात्य और ४ दाक्षिणात्य वैदिक। किन्तु पाश्चात्यों और दाक्षिणात्योंको अनेक लोग कनौजिया ब्राह्मण नहीं मानते।

पहली दोनों श्रेणियोंके ब्राह्मण अर्थात् वारेन्द्रों और राढ़ीयोंने आदिशूरके समय कनौजसे बङ्गाल आ

उपनिवेश किया था। इनके आदिपुरुष चितीश, वीतराग, सुधानिधि, सौभरि और मेधातिथि रहे। उक्त पांचों लोगोंके वंशधर बल्लालसेनके समय १५६ घरोंमें बंट गये। उनसे १५० घर वरेन्द्रभूम और ५६ घर राढ़में रहते हैं।

वारेन्द्र ब्राह्मणोंमें ८ घर श्रेष्ठ वा कुलीन हैं। यथा—१ मैत्र, २ भीम कालि, ३ रुद्रवागची, ४ सञ्जामिनी वा सान्याल, ५ लाहिड़ी, ६ भादुड़ि, ७ साधु वागची और ८ भादड़। फिर वारेन्द्रोंमें ८ घर शुद्धश्रोत्रिय और ६४ घर कष्टश्रोत्रिय भी होते हैं।

राढ़ीयोंमें ६ घर कुलीन रहते हैं—१ मुखुटी वा मुखोपाध्याय, २ गाङ्गुलि (गङ्गोली), ३ काञ्जिलाल, ४ घोषाल, ५ वन्दोघाटी वा वन्द्योपाध्याय और ६ चाटुति वा चट्टोपाध्याय। एतद्व्यतीत १० घर श्रोत्रिय भी हैं। ब्राह्मण, कुलीन, वारेन्द्र, राढ़ीय प्रभृति शब्द देखो।

कनौठा (हिं० पु०) १ कोण, कोना, किनारा। २ कनिष्ठ, छोटा हिस्सेदार।

कनौड़ा, कनउड़ देखो।

कनौती (हिं० स्त्री०) १ पशुवोंके दोनों कान या उनको चलफिर। २ मुरकी, कानकी छोटी और मोटी बाली।

कन्त (सं० त्रि०) कं सुखं अस्यास्ति, कं-त। कंशम्भ्यामबभयुस्तितुतयसः। पा ५।२।१३८। १ सुखी, प्रसन्न, खुश। (हिं० पु०) २ पति, स्वामी, ईश्वर, मालिक।

कन्ति (सं० त्रि०) कं सुखमस्यास्ति, कं-ति। सुखशाली, खुश-खुरम।

कन्तु (सं० पु०) कामयते, कम्-तु। कमिमनिजनि-गाभायाहिभ्यश्च। उण् १।७२। १ कामदेव। २ हृदय, दिल। ३ धान्यागार, खत्ती, खलयान। (त्रि०) कं सुखं अस्यास्ति। ४ सुखी, खुश।

कन्थ (हिं०) कंत देखो।

कन्थक (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषि।

कन्थरी (सं० स्त्री०) कम्-अ-रन्-थुक् पृषोदरादित्वात् ह्रस्व्। वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कन्थारी, कन्था, दुर्धर्षा, तीक्ष्णकण्टका, तीक्ष्णगन्धा और दुष्प्रवेशा है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्त, उष्ण, अग्निदीपक एवं रुचिकारक और कफ, वायु, शोथ, रक्त, ग्रन्थि तथा ज्वरनाशक होती है।

कन्था (सं० स्त्री०) कम् बाहुलकात् थन्-टाप्। १ स्यूतकर्पट, कथरी, गुदड़ी। कितने ही फटे कपड़े इकट्ठा कर यह सी जाती है। दरिद्र भिक्षुक इसे ओढ़ शीत काटते हैं। २ मृत्तिकाका क्षुद्रप्राचीर, मट्टीकी छोटी दीवार। ३ उशीनर राज्यका एक नगर। ४ चीर, ओढ़नी। ५ तूलपूर्ण गात्रवस्त्र, रुईका कपड़ा। ६ वृक्षविशेष, एक पेड़। ७ देश-विशेष, एक मुल्क।

कन्थाधारी (सं० पु०) कन्था-धृ-णिनि। भिक्षुक, फकीर।

कन्थारी (सं० स्त्री०) कम्-अरन्-थुक्। वृक्षविशेष, एक पेड़। कन्थरी देखो।

कन्थेश्वरतीर्थ (सं० क्लो०) एक प्राचीन तीर्थ।

कन्द (सं० पु०-क्लो०) कन्दयति जिह्वाया वैक्लव्यं जनयति, कदि-णिच्-अच्। १ ओल, जिमींकन्द। ओल देखो। २ रक्तमूलक, लाल मूली। ३ काष्ठालुक, रतालू। ४ श्वेतस्वच्छ-बहुपुटक कन्दविशेष, एक सफेद, उमदा और कई तहकी कन्द। लोग इसे सर्पच्छत्रक (सांपका छाता) कहते हैं। ५ हस्ति-कन्द, सफेद बड़ी मूली। ६ शालूक, शलगम। ७ गृञ्जन, गाजर। ८ सुगन्धितृणविशेष, एक खुशबू-दार घास। ९ गुड़। १० शर्करा, शकर। ११ पिण्डा-लुक, गोल आलू। १२ सुखनीति नामक कन्द। १३ शस्यमूल, अनाजकी जड़। १४ फलहीनौषधि-मूल, फल न देनेवाली बूटीकी जड़। १५ मेघ, बादल। १६ छन्दोविशेष। इसमें तेरह-तेरह अक्षरके चार पाद होते हैं। १७ योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशावकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Prolapsus uteri) दिवानिद्रा, अतिरिक्त क्रोध, व्यायाम, अतिमैथुन एवं नख दन्तादिके क्षतसे वायु, पित्त और कफ भड़क योनिदेशमें पूयरक्तवर्ण मन्दारके फल जैसा जो रोग उठ आता, वही कन्द कहाता है। वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक भेदसे

यह रोग वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक—चार प्रकारका होता है। वातिक कन्द रूक्ष और स्फुटित अर्थात् फटा फटा रहता है। पैत्तिक कन्द अधिक रक्तवर्ण लगता और ज्वर तथा दाह उत्पन्न करता है। श्लैष्मिक कन्द तिल-पुष्प तुल्य और कण्डुयुक्त होता है। सान्निपातिक व्यतीत तीनों प्रकारके अन्य कन्द चिकित्सासे आरोग्य हो जाते हैं।

चिकित्सा—गेरू, आमकी गुठली, विड़ङ्ग, हलदी, रसाञ्जन और कट्फल सबका चूर्ण मधुके साथ योनिमें भरने और त्रिफलाके क्वाथमें उक्त सकल द्रव्योंका चूर्ण मधु मिला योनिको प्रक्षालन करनेसे कन्दरोग निवारित होता है। फिर इन्दुरका मांस एवं तैल एकत्र रौद्रमें पका योनिपर मलने और इन्दुरके मांस तथा सैन्धवसे योनिमें स्वेद प्रदान करनेसे भी योन्यर्श अर्थात् कन्दरोग मिट जाता है। (चक्रदत्त)

पारसीमें जमी हुई चीनी या मिसरीको कन्द कहते है।

कन्दक (सं० पु०) कन्द स्वार्थे कन्। १ कन्द। कन्द देखो। २ वितान, तम्बू। ३ सुखालु, शकरकन्द। ४ वनशूरण, जङ्गली जिमींकन्द।

कन्दगुड़ूची (सं० स्त्री०) कन्दोद्भवा गुड़ूची, मध्यपदलो०। गुड़ूची विशेष, किसी क़िस्मकी गुर्च। इसका संस्कृत पर्याय—कन्दोद्भवा, कन्दामृता, बहुच्छिन्ना, बहुग्रहा, पिण्डालु और कन्दरोहिणी है। कन्दगुड़ूची कन्दोद्भव, कटु एवं उष्ण और सन्निपात, विष, ज्वरभूत तथा वलीपलितनाशक है। (राजनिघण्टु)

कन्दग्रन्थि (सं० पु०) १ पिण्डालु नामक कन्दशाक, शकरकन्द। २ श्वेतराजालुक, लहसुन।

कन्दज (सं० त्रि०) कन्दात् जायते, कन्द-जन-ड। कन्दके मूलसे उत्पन्न, जो कन्दकी जड़से निकला हो।

कन्दजविष (सं० क्ली०) कन्दजात विष, कन्दका ज़हर। यह अष्टविध होता है। यथा—शृङ्गक, मुस्तक, कौमर्य, दर्वीक, सर्षप, सैकत, वत्सनाभ और शृङ्गी। इसकी शुद्धिके लिये उक्त द्रव्यके भाग चणकवत् खण्ड बना भाजनमें गोमूत्रके साथ छोड़ दे, फिर अतीव आतपमें पहले रख तीन दिन प्रत्यह नूतन गोमूत्र डाल सुखा ले। यह विष प्रयोगोंमें भागके मानसे पड़ता है।

कन्दट (सं० क्ली०) कदि-अटन्। शुक्लोत्पल, खानेके लायक् सफ़ेद नीलोफर।

कन्दतृण (सं० क्ली०) तृणविशेष, एक घास।

कन्दद (सं० त्रि०) कन्द बनाने या पहुंचानेवाला, जो डला बनाता या पहुंचाता हो।

कन्दनालका (सं० स्त्री०) गोजिह्वा, गोभी।

कन्दपञ्चक (सं० क्ली०) पांच कन्द, पांच डले। तैलकन्द, अहिनिवकन्द, सुकन्द, क्रोड़कन्द और रुदन्तीकन्दके समूहको कन्दपञ्चक कहते हैं। यह ताम्रादिरसमारक, स्निग्ध और सर्वरोगहर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कन्दपत्र (सं० पु०) महातालीशपत्र।

कन्दफला (सं० स्त्री०) कन्दात् कन्दमारभ्य फलं यस्याः, बहुव्री०। १ क्षुद्रकारवेल्लक, करेली। २ विदारी, बिलायीकन्द।

कन्दबहुला (सं० स्त्री०) कन्दादारभ्य कन्देन कन्देषु वा बहुला, ५मी ३या व ७मी तत्पुरुष। त्रिपर्णी, एक डलेदार पौदा।

कन्दमूल (सं० क्ली०) कन्दएव मूलमस्य, बहुव्री०। मूलक, मूली। नेपालकी तराईमें बहुत बड़ी मूली होती है। हिन्दीमें कन्द और मूल दोनोंको 'कन्द-मूल' कहते हैं।

कन्दर (सं० पु० क्ली०) कं गजशिरः दीर्यते ऽनेन, कं दृ करणे अप्। १ अङ्कुश, हाथीका आंकुस। २ गुहा, खो। प्राकृतिक वा निर्मित दोनों प्रकारको गुहा कन्दर कहाती है। इसका संस्कृत पर्याय—दरी, कन्दरा, कन्दरी, दर और गुहा है। ३ आर्द्रक, अदरक। ४ अङ्कुर, किल्ला। ५ ओल, जिमींकन्द। ६ गाजर। ७ घाटी, दो पर्वतोंके मध्यका पथ। ८ श्वेतखदिर, सफ़ेद खैर। ९ शुण्ठी, सोंठ। १० रोगविशेष, एक बीमारी। कदर देखो।

कन्दरवान् (सं० पु०) कन्दरा ऽस्त्यस्य, कन्दर-मतुप् मस्य वः। पर्वत, पहाड़। (त्रि०) २ गुहा-युक्त, जो खो रखता हो।

कन्दरा (सं॰ स्त्री॰) कन्दर-टाप्। गुहा, खो।

कन्दराकर (सं॰ पु॰) कन्दरस्य आकरः, ६-तत्। पर्वत, पहाड़, खोका ख़ज़ाना।

कन्दरान्तर (सं॰ पु॰) कन्दरका भीतरी भाग, खोका अन्दरूनी हिस्सा।

कन्दराल (सं॰ पु॰) कन्दराय अङ्कुराय अलति, कन्दर-अल्-अच्। १ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। २ गर्दभाण्डवृक्ष, गजहन्द, पारस-पीपल। ३ अख-रोटका पेड़।

कन्दरालक (सं॰ पु॰) प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।

कन्दरी (सं॰ स्त्री॰) कन्दर-ङीष्। गुहा, खो।

कन्दरूल (सं॰ पु॰) कटु शूरण, कड़वा जिमींकन्द।

कन्दरोग (सं॰ पु॰) योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। कन्द देखो।

कन्दरोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) कन्दरे उद्भवति, कदर-उत्-भू-अच्-टाप्। १ क्षुद्र पाषाणभेदवृक्ष, छोटा पथरचटा। २ गुड़ूचीविशेष, किसी क़िस्मकी गुर्च। (त्रि॰) ३ कन्दरोत्पन्न, खोसे निकला हुआ।

कन्दरोहिणी (सं॰ स्त्री॰) कन्दगुड़ूची, डलेकी गुर्च।

कन्दर्प (सं॰ पु॰) कं कुत्सितो दर्पो यस्मात्, बहुव्री॰। १ कामदेव। प्रवादानुसार ब्रह्माने काम-देवका यह नाम इसलिये रखा, कि उसने उत्पन्न होते ही कहा था,—मैं किसको मदसे मत्त करूं।

"कं दर्पयामीति मदाज्जातमात्रो जगाद च।
तेन कन्दर्पनामानं तं चकार चतुर्भुजः॥" (कथासरित्सागर)

२ सङ्गीतका ध्रुवविशेष। यह रुद्रतालका एक भेद है।

"त्रयोविंशति वर्णाढ्यो ध्रुवः कन्दर्पसंज्ञकः।
वीरे वा करुणे वा स्यात् खण्डताले विधीयते॥" (सङ्गीतद॰)

कन्दर्पकूप (सं॰ पु॰) कन्दर्पस्य कूप इव, उपमि॰। योनि, मुक़ाम-मख़सूस।

कन्दर्पकेतु (सं॰ पु॰) एक राजा।

कन्दर्पकेलि (सं॰ पु॰) कन्दर्पेण केलिः, ३-तत्। १ कामवशतः होनेवाला एक केलि, प्यारका खेल। मैथुनादिको कन्दर्पकेलि कहते हैं। २ एक प्रहसन, दिल्लगीकी कोई किताब।

कन्दर्पजीव (सं॰ पु॰) कन्दर्पं जीवयति वर्धयति, कन्दर्प-जीव-णिच्-अच। १ कामजवृक्ष, एक पेड़। २ कटहल। ३ कामवृद्धिकारक द्रव्य, ताक़त बढ़ाने-वाली चीज़।

कन्दर्पज्वर (सं॰ पु॰) कन्दर्पविकारजो ज्वरः, मध्य-पदलो॰। १ कामके विकारसे उत्पन्न ज्वर, जो बुख़ार धातुके बिगाड़से आया हो। २ काम, ख़ाहिश, चाह।

कन्दर्पदहन (सं॰ पु॰) कन्दर्पस्य दहनं वर्णितं यत्र। शिवपुराणका एक अंश। दक्षयज्ञमें सतीके देह छोड़नेपर महादेवने योग अवलम्बन किया था। उधर सती भी हिमालय पर जन्म ले महादेवकी परिचर्यामें लग गयीं। उसी समय ताड़कासुरके अत्याचारसे देव अत्यन्त उत्पीड़ित हुये। शिवतेजोजात एक-मात्र कार्तिकेयके व्यतीत उसके दमनका दूसरा उपाय न रहा। इसीसे देवोंने महादेवका योगभङ्ग करने रति, वसन्त और कन्दर्पको भेजा था। देवाज्ञाके अनुसार शरीरपर पुष्पवाण मारते ही महादेवके ललाटसे निकल अग्निशिखाने कन्दर्पको जला डाला। (शिवपुराण)

कन्दर्पनारायण—चन्द्रद्वीपके एक प्रबल बङ्गाली राजा। यह एक बारभुंया रहे। इनके पितामह परमानन्द वसुराय दक्षिण एवं पूर्ववङ्गीय कायस्थ-समाजके समाजपति थे। वह अपनेको कान्यकुब्ज-समाजगत कायस्थ-प्रवर दशरथ वसुके वंशधर बताते रहे। आईन-अकबरीमें भी उनका नाम मिलता है। १५६८ ई॰को कन्दर्पनारायण बाकला चन्द्रद्वीपमें राजत्व करते थे। यह एक महावीर रहे। विशेषतः इन्हें तोप चलाना बहुत अच्छा लगता था। इनके गुणका परिचय तत्कालीन पाश्चात्य भ्रमणकारी भी दे गये हैं। (Hacklyt's Voyages, Vol. II. p. 257)

कन्दर्पनारायणकी पीतलवाली तोप आज भी चन्द्रद्वीपमें रखी है। उस पर कन्दर्पनारायण और निर्माताका नाम खोदा है। तोपकी लम्बाई प्रायः

आठ फीट, घरके जड़की चौड़ाई सवा दो फीट, और मुंह साढ़े उन्नीस इञ्च है।

(Jour. As. Soc. Bengal, Vol. XLIII. p. 207)

कन्दर्पमथन (सं॰ पु॰) कन्दर्पं मथ्नाति, कन्दर्प-मथ-ल्यु। महादेव।

कन्दर्पमूषल (सं॰ पु॰) कन्दर्पस्य मूषल इव, उपमि॰। उपस्थ, लिङ्ग, अज़ व-तनासुल।

कन्दर्परस (सं॰ पु॰) वैद्यकोक्त एक औषध। पारद, गन्धक, प्रवाल, गैरिक, वैक्रान्त, रौप्य, शङ्ख एवं मुक्ता बराबर बराबर ले और वटकी लटके क्वाथसे सात बार भावना दे २ रत्ती प्रमाण वटिका बनाये। इस रसको त्रिफला और कबाबचीनीके क्वाथसे सेवन करनेपर औपसर्गिक मेहरोग सत्वर नाश होता है।

कन्दर्पशर्मा—भट्टिकाव्यटीका 'वैजयन्ती'के रचयिता।

कन्दर्पशृङ्खल (सं॰ पु॰) कन्दर्पीय शृङ्खलः। रतिबन्ध-विशेष, एक डौला।

कन्दर्पसारतैल (सं॰ क्ली॰) कुष्ठाधिकारका वैद्यकोक्त तैलविशेष, कोढ़का एक तेल। सप्तपर्ण, काली, गुड़ूची, पिचुमर्दक, शिरोष, महातिक्ता, जया, तुम्बी, मृगादनी तथा निशा १०।१० पल एक द्रोण जलमें पका १६ सेर रहनेसे उतार ले। फिर जलमें १ प्रस्थ तैल, चार प्रस्थ गोमूत्र, १।१ प्रस्थ आरग्वध, भृङ्गराज, जया, धुस्तर, हरिद्रा, सिद्धि, खर्जूर, गोमय, चित्रक, अर्क एवं सुहीका रस और कल्कार्थ २।२ तोले लाल इन्द्रायण, वचा, ब्राह्मी, तुम्बी, चित्रक, रुद्रपुत्रिका, कुचेला, पटोलपत्र, हरिद्रा, मुस्तक, ग्रन्थिका, ग्रम्याक, अर्कचोर, कासुन्दमूलक, ईश्वरमूलक, आल, मञ्जिष्ठा, महातिक्ता, विशाला, वृश्चिकाली, पूतिका, आस्फोत, मूर्वा, सप्तपर्ण, शिरोष, कुटज, पिचुमर्द, महानिम्ब, गुड़ची, चन्द्ररेखा, सोमराट्, चक्र-मर्दक, तुम्बुरु, भृङ्ग, यष्ट्याह्व, कन्दक, कटुरोहिणी, शटी, दार्वी, त्रिवृत्, ग्रन्थिका, अगुरु, पुष्कर, कर्पूर, कट्फल, मांसी, एला, वासक तथा उशीर डालनेसे यह औषध प्रस्तुत है। इसको मलनेसे अष्टादशविध कुष्ठ, पामा, स्फोटका, क्रमिवृद्धि, दद्रु, रक्तमण्डल, गलगण्डार्बुद, गण्डमाला, भगन्दर आदि रोग आरोग्य हो जाते हैं। (भैषज्यरत्नावली)

कन्दर्पसिद्धान्त—सुपद्म व्याकरणके एक टीकाकार।

कन्दल (सं॰ पु॰-क्ली॰) कदि-कलच्। १ कलध्वनि, धीमी और मुलायम आवाज़। २ उपराग, छोटा राग। ३ गण्डदेश, गाल, कनपटी। ४ कपाल, खोपड़ा। ५ नवाङ्कुर, नया किल्ला। ६ अपवाद, हिकारत। ७ कदलीविशेष, किसी किस्मका केला। ८ स्वर्ण, सोना। ९ वाग्युद्ध, ज़बानी झगड़ा। १० समूह, झुण्ड, ढेर। ११ पृथिवी, ज़मीन्। १२ कृष्णसारमृग, एक हिरन। १३ शिलीन्ध्रपुष्प, छातेका फूल। १४ कमलवीज। १५ कदलीपुष्प, केलेका फूल, छाता। १६ आर्द्रक, अदरक। १७ शूरण, जिमींकन्द। १८ कोमलशाखा, नर्म डाल। १९ अपशकुन, बदफ़ाली।

कन्दलता (सं॰ स्त्री॰) कन्दप्रधाना लता, मध्यपदलो॰। १ मालाकन्द, एक डला। २ क्षुद्रकारवेल्ली, करेली।

कन्दलायन—एक प्राचीन संस्कृत दर्शनज्ञ। 'सर्वदर्शन-संग्रह'में इनका उल्लेख है।

कन्दलित (सं॰ त्रि॰) कन्दलो ऽस्य सञ्जातः, कन्दल-इतच्। १ कन्दलयुक्त, डलेदार। २ प्रस्फुटित, खिला हुआ। ३ निक्षिप्त, निकाला हुआ।

कन्दलिन् (सं॰ त्रि॰) कन्दलो ऽस्त्यस्य, कन्दल-इनि। कन्दलयुक्त, डलेदार।

कन्दली (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कन्दल-ङीष्। १ मृग-विशेष, किसी किस्मका हिरन। २ पक्षीविशेष, एक चिड़िया। ३ गुल्मविशेष, एक पौदा।

"आविर्भूतप्रथममुकुला कन्दलीश्चानुकच्छम्।" (मेघदूत)

४ कदली, केला। ५ पताका, झण्डा। ६ पद्म-वीज, कमलगट्टा। ७ और्व मुनिकी एक कन्या। इन्होंने दुर्वासाके शापसे भस्मीभूत हो कदली वृक्षरूपसे जन्मग्रहण किया था।

कन्दलीकार—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। चित्रभट्ट और अनन्तभट्टने इनका उल्लेख किया है।

कन्दलीकुसुम (सं॰ क्ली॰) कन्दल्या इव कुसुमं यस्य, बहुव्री॰। शिलीन्ध्र, कुकुरमुत्ता, सांपकी टोपी।

कन्दलीभाष्यकार—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। हेमाद्रिने इनका उल्लेख किया है।

कन्दवर्ग (सं० पु०) कन्दजातिमात्र, हरेक किस्मके डलेका ज़खीरा। विदारीकन्द, शतावरी, मृणाल, विस, कशेरु, शृङ्गाट, पिण्डालु, मध्वालु, हस्त्यालु, शङ्खालु, रक्तालुक, इन्दीवर और उत्पल आदि कन्दोंके समूहको 'कन्दवर्ग' कहते हैं। उक्त कन्द रक्तपित्तहर, शीत, मधुर, गुरु, बहुशुक्रकर और स्तन्यवर्धन होते हैं। (सुश्रुत)

कन्दवर्धन (सं० पु०) कन्देन वर्धते, कन्द-वृध-ल्यु। १ शूरण, जिमींकन्द। ओल देखो। २ कटुशूरण, किनकिना ज़िमींकन्द।

कन्दवल्ली (सं० स्त्री०) कन्दाकारा वल्ली, मध्यपदलो०। १ वन्ध्याकर्कोटकी, कड़वी ककड़ी।

कन्दविष (सं० पु०) विषाक्त कन्दका वृक्ष, ज़हरीले डलेका पौदा। कालकूट, वत्सनाभ, सर्षप, पालक, कर्दम, वैराटक, मुस्तक, शृङ्गी, पुण्डरीक, मूलक, हलाहल, महाविष और कर्कटशृङ्ग—तेरह कन्दविष होते हैं। इनमें ४ वत्सनाभ, २ मुस्तक, ६ सर्षप और १ शिष्ट है। सब कन्दजविष उग्रवीर्य, रुक्ष, उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, आशुव्यवायी, विकाशी, विशद, लघु और अपाकी होते हैं। कालकूटसे स्पर्शाज्ञान, वेपथु और स्तम्भ पड़ता है। वत्सनाभ ग्रीवास्तम्भ लगाता और विट्, मूत्र तथा नेत्रमें पीतता लाता है। सर्षपका कन्द वातवैगुण्य, आनाह और ग्रन्थि उत्पन्न करता है। पालकसे ग्रीवादौर्बल्य और वाक्सङ्ग होता है। कर्दमसे प्रसेक, विड्भेद और नेत्रपीतताका वेग बढ़ता है। वैराटक अङ्गदुःख और शिरोरोग लगा देता है। मुस्तकसे गात्रस्तम्भ और वेपथु होता है। शृङ्गीविष अङ्गसाद, दाह और उदरको बढ़ाता है। पुण्डरीकसे चक्षुओंमें रक्तत्व आता और उदर बढ़ जाता है। मूलक वैवर्ण्य, छर्दि, हिक्का, शोफ और मूढ़ता उपजाता है। हलाहलसे मनुष्यकी सांस रुकती है। महाविष हृदयमें ग्रन्थि उपजाता और शूल बढ़ाता है। कर्कटशृङ्गसे मनुष्य चित गिर जाता है। (सुश्रुत)

कन्दशाक (सं० क्लो०) कन्दप्रधानं शाकम्। शाकमें व्यवहृत होनेवाला कन्द, जो डला तरकारीमें लगता हो। कन्दवर्ग देखो। समस्त कन्दशाकमें शूरण श्रेष्ठ होता है। (भावप्रकाश)

कन्दशूरण (सं० पु०) कन्द एव शूरणः। शूरणकन्द, जिमींकन्द। ओल देखो।

कन्दसंज्ञ (सं० क्लो०) योन्यर्श, औरतोंके पेशावकी जगह होनेवाली एक बीमारी। कन्द देखो।

कन्दसम्भव (सं० त्रि०) कन्दसे उत्पन्न होनेवाला, जो डलेसे पैदा हो।

कन्दसार (सं० क्लो०) कन्दानां सारो यत्र, बहुव्री०। १ चन्दनवन। २ ओल प्रभृति कन्दसमूह, जिमींकन्द वगैरह डले। ३ इन्द्रका उद्यान।

कन्दा (सं० स्त्री०) कन्दगुडूची, डलेकी गुर्च।

कन्दाढ्य (सं० पु०) कन्देन आढ्यः। भूमिकुष्माण्ड, भुयिंकुम्हड़ा।

कन्दामृता (सं० स्त्री०) कन्दप्रधाना अमृता, मध्यपदलो०। गुड़चीविशेष, डलेकी गुर्च।

कन्दारा—कर्णाटी ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। कर्णाटब्राह्मण देखो।

कन्दार्ह (सं० पु०) कन्दशूरण, जिमींकन्द।

कन्दालु (सं० पु०) कन्दमय आलुः, मध्यपदलो०। १ काष्ठालु, एक रतालू। २ भूमिकुष्माण्ड, भुयिंकुम्हड़ा। ३ विपर्णिका, एक डला।

कन्दिरी (सं० स्त्री०) कन्द-इरच्-ङीष्। लज्जालुवृक्ष, लाजवन्ती।

कन्दी (सं० पु०) कन्दो ऽस्यास्ति, कन्द-अच्। कटुशूरण, किनकिना जिमींकन्द।

कन्दु (सं० पु०-स्त्री०) स्कन्द-उ सलोपश्च। स्कन्देः सलोपश्च। उण् १।१५। १ स्वेदनपात्र, तवा। इसका अपर संस्कृत नाम स्वेदनी है। २ लौहनिर्मित पाकपात्र, लोहेकी कड़ाही। ३ भर्जनपात्र, भूंजनेका बरतन। ४ सुराकरणपात्र, शराब तैयार करनेका बरतन।

कन्दुक (सं० पु०) कं सुखं ददाति, दा-डु संज्ञायां कन्। १ गेन्दुक, गेंद। (क्लो०) २ गलतकिया। ३ अङ्कुर, कोपल। ४ पूगफल, सुपारी। ५ छन्दोविशेष। यह त्रयोदश अक्षरविशिष्ट होता है।

कन्दुकप्रस्थ (सं॰ पु॰) नगरविशेष, किसी शहरका नाम।

कन्दुकलीला (सं॰ स्त्री॰) कन्दुककी क्रीड़ा, गेंदका खेल।

कन्दुकेश (सं॰ पु॰) एक प्राचीन हिन्दू राजा।

कन्दुकेश्वर (सं॰ पु॰) काशीधामका एक शिवलिङ्ग। किसी समय पार्वती कौतुकवश कन्दुक खेलती थीं। क्रीड़ाके श्रमसे उनका केशपाश शिथिल और नयनद्वय आकुल हो गया। ऐसे भावादि देख उनको हरण करनेके लिये दो दैत्य शाम्बरीमाया अवलम्बनपूर्वक अन्तरीक्षसे उतरे थे। देवतावोंने दोनों दैत्योंके विनाश साधनको भगवतीसे इङ्गित किया। भगवतीने इङ्गित पाते ही हस्तस्थित कन्दुक फटकार उन्हें मार डाला था। फिर वह कन्दुक भूमिपर गिर लिङ्ग बन गया। (काशीखण्ड)

कन्दुपक्व (सं॰ क्ली॰) विना जलके उपसेक केवल पात्रमें अग्निसे भृष्ट तण्डुलादि, बहुरी, भूंगड़ा, भुना हुआ दाना।

"कन्दुपक्वानि तैलानि पायसं दधि शक्तवः।
द्विजैरेतानि भोज्यानि शूद्रगेहकृतान्यपि॥" (कूर्मपुराण)

भुने हुवे द्रव्य, तेल, दुग्ध, दधि और शक्तुको शूद्रके घरमें तैयार होते भी द्विज खा सकते हैं।

कन्दुशाला (सं॰ स्त्री॰) कन्दुपाकार्थं शाला, मध्यपदलो॰। द्रव्यादि भूननेका गृह, भाड़की जगह।

"गोकुले कन्दुशालायां तैलयन्त्रे चुयन्त्रयोः।
अमीमांस्यानि शौचानि स्त्रीषु बालातुरेषु च॥" (स्मृति)

स्त्री, आतुर, बालक, गोकुल, कन्दुशाला, तैलयन्त्र और इक्षुयन्त्रके मध्य शौचको कोई मीमांसा नहीं।

कन्दूक (सं॰ पु॰) कन्दुक, गेंद।

कन्दूरोदय—एक प्रसिद्ध चोल राजा। इन्हींके वंशमें रुद्रदेव प्रभृतिने जन्म लिया था।

कन्देक्षु (सं॰ पु॰) काशभेद, एक लम्बी घास।

कन्दोट (सं॰ पु॰-क्ली॰) कन्दि-ओटन्। १ शुक्लोत्पल, सफेद कमल। २ नीलोत्पल, आसमानी कमल। ३ कुमुद, कोकाबेली, बघोला।

कन्दोत (सं॰ पु॰) कन्दे मूले जातः, कन्द-वेन्-क्त। १ कुमुद, कोकाबेली, बघोला। २ श्वेतपद्म, सफेद कमल।

कन्दोत्थ (सं॰ क्ली॰) नीलोत्पल, आसमानी कमल।

कन्दोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) कन्दात् उद्भवो यस्याः, बहुव्री॰। १ कन्दगुडूची, एक गुर्च। २ क्षुद्रपाषाणभेदी, छोटा पथरचटा।

कन्दौषध (सं॰ क्ली॰) आर्द्रक, अदरक।

कन्ध (सं॰ पु॰) कं जलं दधाति धारयति, कं-धा-क। १ मेघ। २ मुस्तकभेद, किसी किस्मका मोथा।

कन्धजाति—उड़ीसेकी एक असभ्य जाति। अंगरेज ग्रन्थकारोंने इसकी आख्या नानाविध लगायी है। किसीने खन्द, किसीने खांद, किसीने खण्ड, किसीने खोंड और किसीने कन्द नाम लिखा है। किन्तु यह निश्चय करना कुछ विचार-सापेक्ष देखाता, कन्धोंका वास्तविक श्रेणी-परिचारक नाम क्या आता है।

उड़िया इन लोगोंका नाम 'कन्ध' रखते हैं। 'कन्ध' शब्दका अर्थ पहाड़ी है। अनेक लोग समझते—तामिल भाषामें 'कन्दस्' पर्वतको कहते हैं। इसी 'कन्दस्' शब्दसे 'कन्ध' बना है। फिर दूसरोंके कथनानुसार तामिल भाषाके 'कन्द्र' शब्दका अर्थ तीर है। सुतरां इस जातिको समयादिमें धनुर्बाण व्यवहार करते देख 'कन्द्र'से कन्ध कहने लगे हैं। कोई कहता—दशपल्ला, बौद और गुमसर प्रदेशके मध्य एक स्थानका नाम किले-रामपुरके कन्धोंमें 'कन्द्र' चलता और उक्त कन्द्र स्थानके नामसे ही इनका नाम 'कन्ध' पड़ता है।

किले-रामपुरका प्राचीन नाम भी 'कन्द्रखण्डपत' है। कोई कुछ भी कहे, किन्तु यह लोग अपना परिचय 'कन्ध' नामसे नहीं देते। कन्ध अपनेको 'क्वी' जाति बताते हैं। स्वजातीयोंमें जातिके अनुसार किसीका परिचय देनेको 'क्विङ्गा' वा 'कुइङ्गा' नाम चलता है। डाल्टन और हण्टरका पथानुसरण करनेसे इन्हें 'कन्ध' कहना अनुचित है। फिर प्राचीन शास्त्रादिका प्रमाण देखनेसे निश्चय किया जाता—वास्तविक इनका नाम कन्ध ही आता है। पुराणादिमें केशकन्धर*

* एसियाटिक सोसाइटीका हस्तलिखित वामनपुराण, १३ अ॰।

नामसे एक असभ्य जातिका परिचय मिलता है। बोध होता—प्राचीन उड़ियोंने केशकन्धर शब्दसे 'कन्ध' मात्र रख छोड़ा है। पुराणादिका प्रमाण नीचे उद्धृत है—"ब्रह्मोत्तरा प्राविजया मल्लकाकेशकन्धराः।"

उड़ीसेके पार्वत्यप्रदेशमें इनका प्रधान वासस्थान है। एतद्भिन्न उड़ीसेके दक्षिणांश महानदीके उत्तर किनारे ३४०० वर्ग मील भूमिपर यह देख पड़ते और पूर्व चिलका ह्रद, पश्चिम बरार प्रदेश, सम्बल-पुरके खंदोरे वा कलहण्डी प्रदेश और बस्ते जिलेमें भी यह रहते हैं।

अपने देशके मध्य केवल कन्ध ही वास नहीं करते। वहां शबर, कोल, डोम, पान और अन्यान्य असभ्य भी रहते हैं। किन्तु वह कन्धोंको आंखमें अत्यन्त घृण्य लगते और नीच श्रेणीके लोग समझ पड़ते हैं। कन्ध उनसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रखते। फिर वह अति सामान्य हस्त-शिल्प पर जीवन चलाते और अपनी बनायी द्रव्यसामग्रीके विनिमयमें कन्धोंसे शस्यादि पाते हैं।

आजकल कन्ध हिन्दुवोंकी निम्नश्रेणीमें गिने जाते हैं। इस सम्बन्धमें अनुसन्धान करना उचित है—पहले कन्ध कहां थे। इनमें कोई कहता—पहले मध्यभारतमें हमारा दल रहता था, जो ताड़ित होनेपर पूर्वकी ओर उड़ीसेतक भग आया। फिर दूसरोंके कथनानुसार पहले कन्ध उड़ीसेके दक्षिणांशमें ही रहे, विताड़ित होनेपर पश्चिमकी बरार प्रदेश पर्यन्त हट गये। इन दोनों मन्तव्योंसे समझ पड़ा—जब उड़ीसे और मध्यभारतमें आर्यजातिका प्रभुत्व बढ़ा, तब कन्धोंका दल विताड़ित हो मध्यप्रदेशमें जाकर बसा। जो हो, किन्तु प्रायः चार पुरुष गुज़रे बौद प्रदेशको ही इन्होंने अपना प्रधान वासस्थान मान रखा है। बौद प्रदेश आजकल एक हिन्दू राजाके अधीन है। यह राज्य महानदीके दोनों किनारे प्रायः ३५ मील विस्तृत है। स्थानीय राजा महानदीका कर देते हैं। इसी प्रदेशके निकटवर्ती पर्वतोंमें कन्ध रहते हैं। इनके ग्राम क्षुद्र-क्षुद्र पर्वत-शिखर वा वनवनमें परस्पर पृथक् होते हैं। पृथक् पृथक् रहनेसे प्रत्येक ग्रामका शासनकार्य सुशृङ्खलासे चलता है। अन्यान्य असभ्योंकी भांति यह भी दो-चार ग्रामोंको मिला एक विभाग बनाते और उसका एक नायक ठहराते हैं। कन्ध कहते—इसी नियमसे हम एकसाथ समस्त बौद राज्य शासन करते थे।

कोई ८५ वर्ष पहले अंगरेज कन्धजातिके सम्बन्धमें कुछ अधिक जानते न थे। वह केवल इतना ही समझते—समुद्रोपकूलके बौद और गुमसर नामक दोनों हिन्दू राज्योंके पश्चिम यह असभ्य लोग रहते हैं। गोदावरी एवं महानदीके मध्यवर्ती प्रायः ३०० मील दीर्घ और ५०से १०० मील प्रस्थ भूभागमें शबर तथा कन्ध वास करते हैं। यह देश—वन एवं पर्वतमय होनेसे दुर्गम पड़ता है। विदेशीय इस देशमें थोड़े महीने ही ठहर सकते हैं। १८३५ ई०को गुमसरके राजाने बाकी राजस्व देनेके लिये विद्रोही हो कन्धोंका ही आश्रय लिया था। इसी घटनामें अंगरेज कन्धोंसे परिचित हुये और लोगोंको रख इनके आचार, व्यवहार, नियम, न्याय, धर्म, कर्म एवं देशादिका विषय समझे।

अपने आवासकी मध्यस्थ भूमिमें जो कन्ध रहते, वह अधिक दिन एक स्थलपर नहीं ठहरते; इधर उधर देशके नाना स्थानोंमें घूमा करते हैं। यह न तो गवरनमेण्टको कुछ कर देते और न उसके किसी कर्मचारीसे कोई संस्रव रखते हैं। किन्तु अनेक स्थलपर इनमें अर्धकर्ता-प्रधान और अर्ध-सामन्त-प्रधान मिश्रित शासनप्रणाली देख पड़ती है। इस श्रेणीके कन्ध अपने जातीय भावके प्रति एकान्त अनुरागी होते हैं।

हिन्दू राजावोंसे दूरीभूत किये जानेपर कन्ध तीन श्रेणियोंमें बंट गये। इनमें जो सर्वापेक्षा दुर्बल पड़ते, वह हिन्दू राज्यके अधीन अति नीच श्रेणीके लोगोंकी भांति रहते, अपनी भूमि नहीं रखते और दूसरोंके निकट दैनिक रीतिसे परिश्रम उठा, या वनमें काष्ठ जुटा जीवन धारण करते हैं। दूसरी श्रेणीके कन्ध युद्धके समय हिन्दुवोंके निकट सैन्य

पहुंचा लड़नेकी प्रतिज्ञापर जागीर पाते हैं। यही उड़ीसेमें मुसलमानोंके आक्रमण-समय अपने-अपने राजाकी ओरसे लड़े थे। फिर तीसरी श्रेणीके कन्ध पराजित होते भी स्वाधीन भावसे मित्र-सामन्तकी भांति रहा करते हैं। यह भी युद्धके समय अपने-अपने मित्र राज्यको साहाय्य देते, किन्तु उसके लिये कोई वेतन या जागीर नहीं लेते। १म श्रेणीके कन्ध 'भेटिया' कहाते हैं। यह पूर्वघाट-पर्वतकी निम्न-भूमिमें रहते हैं। २य श्रेणीके कन्ध 'बनिया' नामसे ख्यात हैं। यह पर्वतके ऊपर ही रहते हैं। फिर ३य श्रेणीके कन्धोंका कोई स्वतन्त्र नाम नहीं। एतद्भिन्न वासस्थानके भेदसे भी इनका भिन्न-भिन्न नाम रखा जाता है। पर्वतपर रहनेवाले 'मालिया कोइङ्गा', समतल भूमिपर रहनेवाले 'सासी कोइङ्गा' और महानदीके दक्षिण रहनेवाले केवल 'कोइङ्गा' कहाते हैं। तेलङ्गी इन्हें 'कटुलू' या 'कटुवोतुलू' कहते हैं। इस शब्दका अर्थ 'पहाड़ी लोग' है।

कन्धोंकी शासन-प्रणाली—कन्ध आजकल अंगरेजोंके अधीन तो रहते, किन्तु वस्तुतः उनके शासनपर नहीं चलते। यथार्थ इन्होंने शासनकी प्रणाली अपने ही अधीन रखी है। इन लोगोंमें शासनके कार्यकी सुविधाकी एक सुन्दर शृङ्खला है। कन्धोंमें वंशगत जातिविभाग लगा रहता है। फिर प्रत्येक वंशमें शाखाभेद पड़ता और प्रत्येक शाखामें एक एक गृहस्थ-को ले एक एक भाग चलता है। बहुतसे गृहस्थोंको मिलाकर एक ग्राम बनता है। प्रत्येक ग्राममें प्रायः एक ही वंशके लोग रहते हैं। इस वंशको प्रत्येक शाखामें एक अध्यक्ष निर्धारित होता है। फिर अध्यक्षोंमें जो व्यक्ति ज्येष्ठवंश-सम्भूत रहता, वही ग्रामका 'मण्डल' ठहरता है। इन्हीं मण्डलको बौद राज्यमें 'खोंड' चिन्ताकेनेडी प्रदेशमें 'मांजी' और गुमसर राज्यमें 'मुलिको' कहते हैं। इसी प्रकार बहुतसे ग्रामोंका एक नायक होता है। फिर बहुतसे नायकोंपर एक सरदार रहता और कितने ही सरदारोंपर एक राजा-जैसा व्यक्ति अधिकार रखता है। राजाको 'बिसाई' कहते हैं।

कन्धोंका समाज-बन्धन—प्रत्येक गृहस्थके मध्य प्राचीन वा ज्येष्ठ ही कर्ता होता है। पुत्रपौत्रादि सकल ही उसके अनुगत रहते हैं। सभी एकान्नवर्ती होते हैं। पितामही वा माता सबके लिये अन्नपाक करती हैं। पुत्रपौत्रादि पिता वा पितामहको जीवद्दशामें जो कमाते, उसपर पिता वा पितामह ही अधिकार पाते हैं। एक वंशोद्भूत बहुतसे ऐसे ही गृहस्थोंसे शाखा बनती है। गृहस्थोंके कर्तावोंसे कोई व्यक्ति प्रत्येक शाखाका अध्यक्ष निर्वाचित होता है। इसी प्रकार बहुतसे अध्यक्षोंमें एक मण्डल, बहुतसे मण्डलोंमें एक नायक, बहुतसे नायकोंमें एक सरदार और बहुतसे सरदारोंमें एक बिसाई ठहराया जाता है। यह सकल पद वंशानुक्रमिक धारावाहिकरूपसे निर्दिष्ट रहते भी यदि कोई अपने पदके उपयुक्त गुण नहीं रखता, तो उसे तत्क्षणात् निकाल देना पड़ता है। वंशके मध्य ज्येष्ठ पुत्र ही सामान्यतः इन सकल पदोंका अधिकारी होता है। किन्तु उपयुक्त गुण न रहनेसे उसका भ्रातुष्पुत्र उक्त पद पाता है। निर्वाचनके समय सबका मतामत लेना नहीं पड़ता। कार्यको गतिमें सबको अपनेसे अकर्मण्य न देख और उपयुक्त व्यक्तिके अनुगत रह चलना पड़ता है।

इनका समाजबन्धन अति सुन्दर और दृढ़ है। अधिकांश सभ्य जातियोंमें ऐसी दृढ़ता देख नहीं पड़ती। इनमें गुणका जैसा आदर और सम्मान है, वैसा सभ्यताभिमानी अनेकानेक जातियोंमें कहीं नहीं। कन्धजातिके पूर्वोक्त प्रधान व्यक्ति ही अपने अपने अधीनस्थ लोगोंके वंशकर्ता, मजिष्ट्रेट और पुरोहितका कार्य करते हैं। वंश और निर्वाचनकी प्रथाका उद्देश्य एकत्र मिल इन सकल प्रधान पद-वियोंके लोगोंको धार्मिक बना डालता है। कन्ध प्रधान पदोंपर बैठ जो कर्तव्य कर्म करते, उसके लिये कोई वेतन वा विशेष सुविधा नहीं रखते। विचारक, पुरोहित और शासकको केवल कुछ सम्मान मिल जाता है। प्रत्येक गृहस्थके संसारमें कर्ता ही प्रधान रहता है। बाकी लोग समपदवीके गिने जाते

हैं। नायकों और सरदारोंका भी यही हाल है। इनके सम्मान-सूचक कोई आडम्बर नहीं रहता। अन्यान्य लोगोंकी भांति यह भी सामान्यभावसे कालयापन करते हैं। इनके स्वतन्त्र वासस्थान वा दुर्ग, प्रबन्धकारी सैन्य और विषयादि नहीं होता। पैतृक भूमिकी कृषिमें अपने और पुत्रपौत्रादिके परिश्रमसे उत्पन्न अन्न ही कन्धोंका प्रधान आय है। इन्हें कोई किसी प्रकारका साहाय्य वा कर नहीं देता। किसी उत्सव वा क्रियाकाण्डके समय यह पदोचित सम्मानादि पाते और उसीसे परितुष्ट हो जाते हैं। प्रति ग्राममें 'डिगालू' निर्वाचित होते हैं। सरदारोंके समक्ष वही स्व-स्व ग्राम वा जातिका अभाव और अभियोग उपस्थित करते हैं। फिर वही ग्रामीण लोगोंके मुखपात्र भी ठहरते हैं।

सरदार या बिसाई एकान्त आवश्यक न आते अपनी अपनी जातिके किसी विषयमें हस्तक्षेप करनेसे अलग रहते हैं। किसी कार्यमें वह मनमानी चला नहीं सकते। उन्हें अधीनस्थ नायकों और मण्डलोंसे परामर्श ले कर्तव्यावधारण करना होता है। सब सरदार और बिसाई अपनी अधीनस्थ और अपरापर जातिका सम्बन्ध देखते रहते हैं। युद्धादिके विषयमें कर्तव्य ठहराना, किसी हिन्दू राजाको साहाय्य देनेके सम्बन्धमें मीमांसा लगाना, अपनी जातिमें सकल विषयोंके नियम, न्याय, आचार एवं व्यवहारकी शृङ्खला-रक्षाके प्रति दृष्टि दौड़ाना, अपराधीको दुष्कर्म करनेपर विचारपूर्वक दण्ड दिलाना और परस्परका विवाद मिटाना भी उन्हींका काम है।

उक्त सकल विचार एवं मीमांसाकार्यके निर्वाहको वह अपने अधीनस्थ अध्यक्ष एवं नायक एकत्रकर परामर्श लेते हैं। विषयका गुरुत्व देख परामर्शदाताओंकी संख्या घटायी-बढ़ायी जाती है। जातिके सरदार ही अपने संसारका सामान्य कर्तृत्व, अपने ग्रामके मण्डलका कार्य और अपनी शाखाकी अध्यक्षता किया करते हैं।

क्या ग्रामके मण्डल, क्या शाखाके अध्यक्ष और क्या जातिके सरदार—सभी अपने-अपने अधीनस्थ लोगोंको गृहधर्म और वाह्यधर्म बनानेके लिये विशेष चेष्टित रहते हैं। कन्धोंको विश्वास रहता—जिन जातियोंके साथ प्रकाश्य-रूपसे कोई सन्धि-नियम नहीं ठहरता, उनमें स्वच्छन्द युद्ध चल सकता है। यहांतक, कि उसी बिसाई या खोंड़की अधीनस्थ भिन्न जातियोंमें सन्धि न रहते एक-दूसरेके सरदार परस्पर लड़ जाते हैं। सुतरां इनके मध्य परस्पर प्रकाश्य सन्धि न रहनेसे सकल ही युद्ध-विग्रहमें डूब विशृङ्खला डाल सकते हैं। किन्तु सरदारों या अध्यक्षोंका प्रभुत्व अक्षुण्ण रखनेको सर्वदा ऐसा होने नहीं पाता।

शान्तिरक्षाके लिये कन्धोंमें जो नियम-विधि चलता, वह अन्यान्य असभ्य जातियोंसे नहीं मिलता। किसीका हत्या होनेपर अन्य जातिमें जैसे हतव्यक्तिके आत्मीय प्राणके बदले प्राण लेनेपर वाध्य पड़ते, वैसे यह कभी नहीं करते। हत्याके बदले कन्ध अर्थ लेकर भी विवाद मिटा देते हैं। साङ्घातिक आघातादि लगनेपर अपराधीके विषयसे आहतको क्षतिपूरण-स्वरूप अर्थ दिलाया जाता और जबतक वह आरोग्यावस्थामें नहीं आता, तब तक अपराधीके व्ययसे ही अपनी संसारयात्रा चलाता है।

इनमें व्यभिचारके दोषपर किसीप्रकार क्षतिपूरणकी प्रथा नहीं। स्त्री व्यभिचारिणी रहने और पकड़ी जा सकनेसे स्वामी उपपतिको मार डालनेपर वाध्य है। व्यभिचारिणी स्त्री स्वामीके गृहमें स्थान नहीं पाती और बात खुल जानेसे उसी क्षण अपने पिताके घर भेज दी जाती है। विषयादिगत अपराधमें अपराधीके निकटसे हृत वा नष्ट वस्तु उद्धार कर देते ही न तो कोई झगड़ा रहता और अपहृत वस्तु अपहारकसे ले अधिकारीको देनेपर न कोई दावा चल सकता। इससे चोरको प्रश्रय तो मिलता, किन्तु प्रथम अपराधमें ही ऐसा नियम चलता है। कारण द्वितीय बार चोरी करनेसे अपराधी व्यक्तिविशेषके प्रति अत्याचारी वा सामान्य चोर ही समझा नहीं जाता, वरं समस्त समाजके प्रति अत्याचार करनेका अभियोग आता और स्वजातिसे निर्वासन-

कन्ध इतना दृढ़ विश्वास रखते, कि इनका आयोजन देखते ही यथार्थ अपराधी आत्मप्रकाश करने लगते हैं।

उत्तराधिकारित्वके नियमानुसार जो व्यक्ति स्वयं कृषिकार्य वा भूमिरक्षा करनेमें असमर्थ रहता उसे पैत्रक भूमिका अधिकार नहीं मिलता। किसीके मरनेसे पुरुष ही विषयाधिकार पाता और ज्येष्ठ पुत्रके ही अंशमें अधिक भाग आता है। किसी-किसी जातिमें सबको समान भाग भी मिलता है। पुत्र-सन्तान न रहनेसे मृत व्यक्तिके भ्राता अधिकारी होते हैं। कन्यायें अलङ्कारादि, अस्थावर सम्पत्ति और गृहकी सामग्री अंशानुसार बांट लेती हैं। मृत्युके समय किसीकी कन्या अविवाहिता रहनेसे जितने दिन विवाह नहीं ठहरता, उतने दिन उसे पितृगृहमें ही ठहरना पड़ता और भोजन, वस्त्र तथा विवाहका व्यय मिलता है।

इन लोगोंमें सम्भ्रम रक्षार्थ अधिक मानमर्यादा नहीं। इसका कोई नियम कहां पाते—निम्नश्रेणी-वाले उच्च श्रेणीवालोंको देखते ही सम्मानके लिये अपना मस्तक झुकाते हैं। किन्तु पथमें चलते समय स्वश्रेणीके मध्य वयोवृद्धको देख इतना कहना पड़ता है—मैं जाता हूं। वयोवृद्ध भी उत्तर दे देता है—जावो। प्रणाम करते समय कन्ध ऊर्ध्ववाहुकी भांति दक्षिण हस्त ऊपरको उठाते हैं। कभी-कभी यह हिन्दुवोंकी रीतिनीति अवलम्बन करते हैं। पूर्व-पुरुषके प्रति कन्ध विशेष सम्मान देखाते हैं।

कन्धोंके तुल्य कष्ट-सहिष्णु दूसरी जाति नहीं। दुर्भिक्ष वा गृहविवादमें छिन्न-भिन्न पड़ते भी कोई साधारण विपद् आनेपर सब लोग नवोत्साहसे उसके विपक्ष उठ खड़े होते हैं। सुननेसे आश्चर्य आता है—जब अंगरेजोंसे कन्धोंका युद्ध हुआ, तब प्रत्येक सरदारने अपूर्व साहसका परिचय दिया और कैसी बड़ी दृढ़ताके साथ अवशेष कष्ट उठा जीवनके शेष मुहूर्त पर्यन्त युद्ध किया था।

जन्म, मृत्यु और विवाह—तीनों कर्मोंमें कन्धोंके यथेष्ट उत्सवादि होते हैं। आसन्न-प्रसवा कामिनी ग्रामके देवताको पूजादि चढ़ाती हैं। प्रसव होनेमें विलम्ब पड़ने या क्लेश मिलनेसे पुरोहित आकर स्त्रीको दो झरनोंके सङ्गमपर ले जाते, जलकी छींट लगाते और जनन-देवताको पूजादि दिलाते हैं।

नामकरणके लिये इनमें बड़ा उद्वेग उठता है। कन्ध ऐसा-वैसा नाम नहीं रखते। पुरोहित एक पात्रमें जल डाल शिशुके आदिपुरुषसे प्रत्येकका नाम ले जलमें एक-एक धान्य फेंकते हैं। सभी धान्य जलमें डूब जाते हैं। किन्तु जिसके नामका धान्य फेंकते ही तैर आता, वही शिशुका नाम रखा जाता है। इनको विश्वास रहता—उसी व्यक्तिने फिर आकर जन्म लिया है। सप्तम दिवस नव शिशुके कल्याणार्थ ग्रामके लोगों और पुरोहितोंको बोला खिलाते-पिलाते हैं। इस भोजमें कन्ध महुवेकी शराब पीते हैं।

विवाहके विषयमें यह बहुत सतर्क रह सम्बन्धादि जोड़ते हैं। वंशकी गुरुता और वीर्यवत्ता बचानेके लिये कन्ध कभी स्वश्रेणी वा आत्मीय कुटुम्बमें विवाह नहीं करते। किन्तु जिन दो जातियोंमें चिरविवाद रहता, उनके मध्य विवाह सम्बन्ध गंठ सकता है। भयानक युद्ध चल जाते भी विवाहकी सभामें उभय जातिके लोग एकत्र हो पानामोद लगाते हैं। इस बातको कोई नहीं देखता—प्रभात होते ही फिर द्विगुण उत्साहसे युद्ध बढ़ेगा। ऐसी घटना प्रायः पड़ते रहती है। १०।१२ वत्सरके वयसमें पुत्रका विवाह होता है। पुत्रकी अपेक्षा वधूका वयस अधिक होता है। १० वत्सरवाले वालकके साथ अभाव पक्षमें १४ वत्सरकी कन्याका विवाह करना चाहिये। इसकी अपेक्षा अल्पवयस्काका विवाह नहीं होता। फिर भी १५।१६ वत्सरसे अधिक वयस्का कोई कन्या अविवाहिता नहीं रहती। सम्बन्ध स्थिर करनेके दिन वरकर्ता अपना आत्मीय कुटुम्ब ले कन्याकर्ताके घर पहुंचते और कन्याका मूल्य-स्वरूप तण्डुल, मद्य तथा १०।१२ पशु अपने साथ रखते हैं। कन्यापक्षके पुरोहित अपने यजमानके द्वारपर खड़े हो उनकी अभ्यर्थना करते हैं। फिर पुरोहित वरकर्ताका प्रदत्त मद्य पी विवाह-देवताको

मद्यादि चढ़ा देते हैं। अन्तको उभय वैवाहिकोंमें परस्पर हाथ मिलनेपर विवाहका सम्बन्ध स्थिर होता है। रातको सब लोग कन्या-कर्ताके घर ही आहारादि करते हैं। सारी रात नृत्य, गीत, वाद्य और मद्यकी धूम रहती है। शेष रात्रिको पुरोहित वर-कन्याके हाथ हरिद्राक्त सूत्र बांधते और धानसे चावल तैयार होनेवाले घरमें खड़ाकर दोनोंके मुखपर हरिद्राके जलकी छींट मारते हैं। प्रातःकाल होते ही वर एवं कन्याके चचा दोनोंको अपने-अपने स्कन्धपर बैठा महासमारोहसे नाचते-गाते वरके घरकी ओर चलते हैं। कन्यापक्षीय भी साथ साथ जाते हैं। राहमें वर और कन्याका चचा अपना-अपना भार बदल वरके घरको भागता है। इधर कन्यापक्षीय कन्याको न देख वरपक्षसे उसे दिखानेके लिये झगड़ा लगाते हैं। समस्त आमोद उत्सव रुक जाता है। दोनों दल पृथक् पड़ परस्पर युद्धार्थ खड़े होते हैं। युद्धमें लोगोंके मरते-कटते भी कुछ देर बाद पुरोहितोंकी मध्यस्थतासे विवाद मिट जाता है। कन्यापक्षीय वापस चले जाते हैं। यदि पथमें पार करनेको कोई नदी पड़ती, तो निम्नलिखित व्यवस्था चलती है—पुरोहित वरके घर जा वरकन्याको गात्रमें रक्षाबन्धन एवं शान्तिपाठ कर जलदेवताके उपद्रवसे उद्धार कर आते हैं।

विवाहके बाद जितने दिन पुत्र स्त्रीसहवासके उपयुक्त नहीं ठहरता, उतने दिन वरकर्ताके अनुरोधसे पुत्रवधूको गृहका समस्त कर्म करना पड़ता है। पीछे वयःप्राप्त होनेसे पुत्र और पुत्रवधू दोनोंको संसारके मध्य पूर्ण क्षमता मिलती है।

कन्धोंमें स्त्रियां कुछ विशेष सम्मान पाती हैं। जितने दिन स्वामी छोटा रहता, उतने दिन उसपर स्त्रीका प्रभुत्व चलता है। विवाहके समय वर-कर्ता जो द्रव्य वधूका मूल्यस्वरूप कन्याकर्ताको दे आता, वह वापस होते ही विवाहका बन्धन टूट जाता है। स्त्री पतिगृह छोड़ पितृगृहको चल देती है। स्त्रीके गर्भवती रहते भी कोई आपत्ति नहीं उठती। इस प्रकार एक बार विवाहबन्धन छूट जानेसे स्वामीका स्त्रीपर कोई स्वत्व नहीं ठहरता। किन्तु वह स्त्री भी दूसरा विवाह करनेसे वञ्चित रहती है। स्वामी द्वितीय वार विवाह करता है। व्यभिचार दोष लगते ही इस प्रकार विवाह-बन्धन तोड़ देते हैं। किसी अन्य कारणसे ऐसा हो नहीं सकता। एक पत्नी रहते दूसरी ग्रहण करना असम्भव है।

वेश्या रखनेकी प्रथा इन लोगोंमें निन्दाई नहीं। स्त्रीवाला पुरुष वेश्या रखने नहीं पाता। किन्तु स्त्रीकी अनुमति ले वह यह काम कर सकता है। ऐसे स्थलमें वेश्यापुत्रोंको औरस-पिताके विषयका समान भाग मिलता है। रखनेकी प्रथा निन्दित न होते भी कन्धोंमें वेश्याओंकी संख्या कम है। फिर व्यभिचार और बलात्कारकी बात सिवा दो-एक जगहके कहीं सुन नहीं पड़ती।

पतिके वयःप्राप्त होनेपर स्त्रियां बड़ी भक्तिसे सेवा करती हैं। भोजनके समय स्त्री पतिको बैठकर खिलाती और समस्त गृहकर्म अपने हाथ चलाती है। जब स्वामीको क्षेत्रके कर्मसे एकान्त अवसन्न होते देख पाती, तब दुग्ध-पोष्य सन्तानको उपेक्षा कर स्त्री उसकी सहायताके लिये दौड़ आती है। ऐसे समय स्त्रियां कमरमें कपड़ेसे सन्तानको लपेट लेती हैं।

कोई कोई कहता—अविवाहिता अवस्थामें पुत्रवती रहते भी स्त्रीका विवाह होता है। उस स्त्रीकी निन्दा भी सुन नहीं पड़ती। किन्तु ऐसी कन्याका विवाह करनेपर लोग सहज ही स्वीकृत नहीं होते। कन्धोंकी कन्यायें इच्छा करते ही स्वामीका गृह छोड़ पिताके गृहको वापस आ सकती हैं। फिर घर पहुंचते ही उनके पिताको विवाहकालीन प्राप्त द्रव्यादि लौटा देना पड़ता है। इसीसे यह कन्यासन्तानसे बड़ी घृणा रखते हैं। इन्हें स्त्रीपर विश्वास नहीं। लोग कहते हैं—नितान्त शिशु कुठारका आघात लगते भी गोपनीय विषय प्रकाश नहीं करता। किन्तु स्त्रियां—कितनी ही बुद्धिमती क्यों न हों—सामान्य प्रलोभन पाते ही अतिगोपनीय कथा कह देती हैं।

अपनी जातिके मध्य किसी सामान्य व्यक्तिके मरनेपर यह यथासम्भव शीघ्र ही देहको जलाते और

दशम दिवस ग्रामके सब लोगोंको खिलाते हैं। किन्तु सरदार या मण्डलके मरने पर ढोल बजा मृतके अधीनस्थ समस्त ग्रामोंमें मृत्युका संवाद फैलाते और अन्यान्य ग्रामोंके मण्डल तथा जातीय सरदार बोला मिल-जुल शवको श्मशान ले जाते हैं। बहुत बड़ी चिता बना और उसके मध्यस्थलमें ध्वजा एवं जातीय पताका लगा शवको रखते हैं। फिर मृतका पुत्र शवको ओर पीठ फेर चितामें अग्नि देता है। उसी समय मृतके यावतीय वस्त्रादि, तैजस तथा अस्त्रादि ला और चावलको भूसीपर जमा चिताके निकट लगाते हैं। अन्तको जबतक पताकादि पर्यन्त नहीं जलते, तबतक मृतके आत्मीय चिताको चारो ओर नृत्य करते हैं। फिर मृतके अधीनस्थ प्रधान उसकी उक्त सकल सम्पत्ति अपने मध्य मान्यके चिह्नको भांति बांटते और ८ दिन पर्यन्त मध्य मध्य वहां पहुंच तथा मृतके वंशसे मिल चिताभस्मको चारो ओर नाचते एवं शोकसङ्गीत अलापते हैं।

दशम दिन मृतके समग्र अधीनस्थ एवं ग्रामके प्रधान जुटते और एक सरदार मनोनीत करते हैं। मृतका ज्येष्ठ-पुत्र ही प्रायः मनोनीत होता है।

कन्धजातिमें दो प्रधान गुण हैं—विश्वस्तता और साहस। आतिथ्य इन लोगोंमें इतना प्रबल रहता, जो अनुमानसे समझ नहीं पड़ता। कन्ध कहते—धन, मान और जन देकर अतिथिकी सेवा करना चाहिये। सन्तानकी अपेक्षा भी अतिथि यत्नका वस्तु है। अतिथि पर पड़नेसे विपद्को अपने प्राण देकर भी दूर कर देना उचित है। ग्राममें आ पहुंचनेसे किसी विदेशी पथिकको प्रत्येक गृहके कर्ता भोजनके लिये बोलाते हैं। जिसके घर अतिथि आता, उसके आनन्दका पार कोई नहीं पाता। वह जितने दिन चहता, उतने दिन टिकता है। उससे कोई 'जावो' कह नहीं सकता। यह उन लोगोंको भी आश्रय देते, जो युद्ध वा प्राणदण्डके भयसे भाग शरण लेते हैं। फिर अपने पिता, आत्मीय वा सन्तानको मार डालनेवाला यदि कन्धोंके निकट आश्रय मांगने आता, तो कभी विमुख होकर नहीं जाता। किसी-किसी जातिमें दुष्ट व्यक्ति अपने ऐसे ही दुष्कार्यके फलसे परित्राण पानेकी चेष्टा करते हैं। इसीसे कन्धोंने नियम बना रखा है—यदि कोई हत्याकारी आ इसप्रकार आश्रय ले, तो गृहस्थ उसको आश्रय प्रदान कर सपरिवार अपना घर छोड़ चल दे; किन्तु खाद्यादि प्रेरण न करे। आततायी जबतक घरमें रहता, तब तक कोई कुछ नहीं कहता। किन्तु अनाहारपीड़ित हो घरसे निकलते ही गृहस्थ उसे मार प्रतिशोध लेता है। दो-एक जगह हो जाते भी कन्ध इस प्रथाको इतना बुरा समझते, कि नियमानुसार कभी कभी कार्य करते हैं। फिर जो इस नियमसे चलता, वह स्वजातिके मध्य घृणित ठहरता है। आतिथ्यके कारण समय-समयपर पहले इनमें युद्ध होने लगता था। एक बार इसी सूत्रसे एक श्रेणिका दूसरी श्रेणिके साथ युद्ध चला। जो दल हटा, वह अपना ग्राम छोड़ पार्श्ववर्ती ग्राममें जा टिका। ग्रामके अधिवासियोंने अतिथियोंको एक वत्सर आश्रय दिया था। फिर जयलाभ करनेवाले दल शत्रुवोंको आश्रय देनेवालोंसे लड़ने लगे। किन्तु आश्रय देनेवालोंने अपने आश्रितको छोड़ा न था। अवशेषको एक वत्सर बीतनेपर जेतृदलने दयापरवश उनका ग्राम त्याग किया। स्वग्राम वापस आ विजित दलने जेतृदलसे आश्रय मांगा था। फिर क्या शत्रुता रह सकी! देवभावपूर्ण कन्धोंने समस्त शत्रुता भूल विजितोंको अधिकार को हुई भूमि वापस दी और अपने शस्यसे वीज बोनेको सामग्री प्रदान की। इस महानुभव जातिको पदरेणुके योग्य क्या कोई सभ्य वा सभ्यतम जाति हो सकती है!

यह विश्वस्तताके कारण ही आज स्वाधीनता खो बैठे हैं। १८३५ ई०को गुमसर राज्यवालोंने अंगरेजोंसे लड़ इनका आश्रय लिया था। उस समय इन्होंने जिन लोगोंको आश्रय दिया, उन्होंके हाथ निज स्त्रीपुत्र और कन्या सौंप मृत्युके मुखमें पतन किया। अंगरेज गुमसर राज्यके व्यक्ति ढूंढनेको इनके पीछे लगे। पहले इन्होंने समझ न सकनेसे

अंगरेजोंको देशमें घुसने दिया था। पीछे जब अंगरेजी फौजका अभिप्राय पाया, तब आश्रितोंकी रक्षाके लिये अपनी विपद् न देख गुमसरराज्यके परिवारवर्गको इन्होंने गुप्त भावसे पर्वत पर्वत घुमाया। समय-समय पर युद्धमें असंख्य कम्भ मरने लगे, फिर भी आश्रितोंको शत्रुके हाथ सौंप 'अविश्वासी' न बने थे। शेषको कम्भ अपने प्रान्तवासी किसी हिन्दू सरदारकी विश्वासघातकतासे अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण करने पर बाध्य हुये।

कृषि एवं युद्ध ही इनके मध्य सम्मानका कार्य है। कृषि और युद्ध न करनेवाले लोग इनमें घृण्य होते हैं। प्रत्येक कम्भ अपनी खेतीबारीके लिये थोड़ी-बहुत भूमि रखता और उसीसे साम्राज्यका सुख उपभोग करता है। अपनी थोड़ीसी भूमि रक्षा कर फसल कटा सकनेसे यह जितना सन्तोष पाते, उतना किसी विस्तीर्ण साम्राज्यके सम्राट् भी नहीं उठाते। कम्भोंके प्रत्येक ग्राममें कुछ नीच श्रेणीके लोग रहते हैं। वह दूसरेका दासत्व कर अपनी जीविका चलाते हैं।

एतद्भिन्न प्रत्येक कम्भ-ग्राममें कितने ही वंशानुक्रमिक जुलाहे, कर्मकार (लोहार), कुम्भकार (कुंभार), ग्वाले और शौण्डिक (कलवार) भी बसते हैं। वह लोग ग्रामके मध्य रहने नहीं पाते। ग्रामके प्रान्तदेश अथवा किनारे पर किसी स्थानमें पल्ली डाल वास करते हैं। कम्भ न तो उनका अन्न खाते और न व्यवसाय ही चलाते हैं। निम्नश्रेणीवालोंमें तंबोली ही अधिक काम देते हैं। वह ग्राममें पञ्चायत पड़ने या युद्ध चलनेके समय दूतका कार्य करते हैं। उत्सवादिमें बाजे-गाजे लाना उन्हींके हाथ रहता है। ग्रामीण लोगोंके लिये जुलाहे वस्त्र बुनते और दूसरे भी अनेक कार्य करते हैं। पहले इनमें नरबलिकी प्रथा प्रचलित थी। उस समय जुलाहोंमें प्रत्येक वंश वंशानुक्रमसे अपने ग्रामके लिये बलिका पात्र संग्रह करते रहा। वह लोग अपने लिये भूमि जुटा अथवा उच्च जातिका अवलम्बनीय दूसरा कोई कार्य उठा नहीं सकते। इस लिये उच्च जातिके कम्भ भी इनसे कुछ दयाके साथ व्यवहार करते हैं। कोई उत्सवादि आ पड़ने पर सब लोग इन्हें निमन्त्रण देते हैं। फिर हठात् दोषका कोई कार्य कर डालने पर उनसे प्रतिशोध भी लिया नहीं जाता। वह कम्भ जातिसे स्वतन्त्र श्रेणीके लोग समझ पड़ते हैं। उभयजातिमें किसी प्रकारका वर्णसङ्कर दोष न लगनेसे आज भी यह स्वतन्त्रता स्पष्ट प्रतीत होती है। अनेक लोग उन्हींको इस प्रदेशके आदिम अधिवासी अनुमान करते हैं। कम्भोंने पूर्वकाल उनको हरा स्वयं देश ले लिया था। उसी समयसे वह दासकी भांति कम्भोंके अधीन रहते हैं। सकल नीच श्रेणियोंमें कम्भी और उड़िया दोनों भाषायें चलती हैं। कारण वह उभय जातिसे सद्भाव रखते और उभय जातिके वशीभूत रहते हैं।

कम्भ बालककालसे ही कृषिकार्य सीखते हैं। फिर बाल-सुलभ क्रीड़ामें इन्हें युद्धादिकी शिक्षा भी मिलती है। खेत बोने और काटनेके समय यह बड़े तड़के उठ खिचड़ी-जैसा एक आहार बनाते-खाते और जङ्गलको चले जाते हैं। इस आहारमें दाल, चावल और शूकरका मांस डालते हैं। खेतका नौहार सूखते न सूखते हल चलाने लगते और अविश्राम तीन बजेतक कम्भ अपना कार्य किया करते हैं। जब जङ्गल काट नूतन क्षेत्र बनाते, तब दो पहरको कुछ विश्राम लेते समय आहार भी पकाते हैं। अन्य समय यह तीन बजेतक काम चला किसी निकटवर्ती नदीमें नहाते और घर वापस जा आहार खाते हैं। उसी समय इनमें एक प्रकारका रसा बनता, जिसमें तम्बाकूका अर्क पड़ता है।

ग्राम-पत्तनके लिये भूमि निर्णय करनेमें कम्भ बड़ा यत्न लगाते हैं। प्रायः पर्वतके पार्श्व वा बहु वृक्षलताकीर्ण स्थानमें उच्च भूमिपर ग्राम बसाया जाता है। प्रति ग्राममें दो पंक्ति गृह बनते हैं। मध्यस्थलमें ग्राम्यपथ घूमघाम निकलता है। इस पथको दोनों ओर बन्द करनेको काष्ठ-निर्मित दृढ़ कपाट लगते हैं। प्रायः सकल ग्रामोंके मध्यस्थलमें ही प्रधानके रहनेका घर उठता है। ग्रामपत्तनके समय यह मध्यस्थलमें एक कार्पासवृक्ष लगा अधिष्ठात्री देव-

ताके नाम उत्सर्ग करते हैं। उसी वृक्षके नीचे प्रधानके रहनेका घर होता है। उक्त कार्पास वृक्ष इनके निकट देवतुल्य पूजित है। निम्नश्रेणीके लोग पूर्वोक्त पथके दोनों मुखोंके निकट रहते हैं।

तीस वत्सरसे पहले कम्ब मुद्राका व्यवहार जानते न थे। फिर व्यवसाय-वाणिज्य क्या इनमें अधिक रहा! मुद्राके व्यवहारको सर्वप्रथम पन्था कौड़ी भी चलती न थी। इनके क्रय-विक्रयका कार्य विनिमयसे निर्वाह होते रहा। मेष वा गवादि पशु देनेसे ही अधिक परिमाणके मूल्यका आदान-प्रदान चलता था। अन्यान्य स्थलोंमें चावल दाल प्रभृतिके विनिमयसे मूल्य लिया-दिया जाते रहा। इस प्रकारके विनिमयका हिसाब बहुत टेढ़ा है।

युद्धमें इनका साहस अपरिसीम रहता है। समराङ्गणमें अपने अपने सरदारके निकट यह जिसप्रकार बाध्य आते, उससे इनकी विश्वस्तताका चूडान्त परिचय पाते हैं।

कम्ब उच्चतामें हिन्दुवों-जैसे होते हैं। सुगठित शरीर, दृढ़ मांसपेशी, द्रुतपादक्षेप, विस्तृत ललाट और पूर्णायत ओष्ठाधर देखनेसे यह दृढ़प्रतिज्ञ, बलिष्ठ एवं बुद्धिमान् समझ पड़ते हैं। इनकी कथा भी मिष्ट और सरस होती है। सुतरां इनके साथ रहनेसे अधिक आमोद आता है। युद्धमें कम्ब अत्यन्त भयानक बन जाते हैं। इनके युद्ध वा उत्सवको वेशभूषा एक ही प्रकार रहती है। लम्बे बाल समेट मस्तकके दक्षिण पार्श्व अलकको भांति झोटा बांधते हैं। फिर उसपर पक्षीके पालकका मुकुट पहना जाता है। युद्धके पूर्व सरदार कई द्रुतगामी जुलाहे हाथमें वाण दे एक ग्रामसे अपर ग्राम संवाद पहुंचानेको भेजते हैं। दूतके हाथ वाण देख कम्ब अनायास युद्धका संवाद समझ लेते हैं। युद्धमें लगनेसे पहले उभय दल जयलाभकी आशासे पृथिवी देवताके निकट एक-एक मानसिक नरबलि चढ़ाते हैं। एतद्भिन्न युद्धका भी एक देवता रहता है। उसके निकट भी मानता करते—जय मिलनेसे तत्क्षणात् इसी युद्धक्षेत्रमें पापके नाम छागल और पक्षी बलि देंगे। उभय दलोंमें आरम्भ होनेपर जब तक कोई पूर्ण रूपसे हार नहीं खाता, तब तक युद्ध चला जाता है। दूसरे दिन यह फिर नूतन युद्ध आरम्भ करते हैं। युद्ध शेष न होनेपर आगामी दिनकी अपेक्षा कर महा उत्कण्ठासे रात बिताते हैं। प्रथम दिन आरम्भ ही पूरा न पड़ने पर द्वितीय दिन आरम्भ होनेसे पहले युद्धक्षेत्रमें एक रक्ताक्त वस्त्र फेंका उभय दलोंके योद्धावोंको उत्तेजित करते हैं। दोनों दलोंके पीछे अपने अपने पक्षके वृद्ध एवं स्त्रीकन्यादि अस्त्र-शस्त्र तथा खाद्यादि ले प्रस्तुत हो जाते हैं। युद्धकालमें अस्त्रादि टूटने या कम पड़नेसे अथवा योद्धावोंको तृष्णादि लगनेसे वह तत्क्षणात् उपकरणसामग्री पहुंचाते हैं। युद्धमें प्रथम हत होनेवाले व्यक्तिके रक्तमें आग्रह सहकारसे उभयपक्षीय वीर अपना-अपना कुठार डुबो लेते हैं। फिर जो व्यक्ति युद्धमें प्रथम किसीको मार लेता, वह हतयोद्धाका दक्षिण हस्त काट अति शीघ्र अपने दलके पीछे जा पुरोहितको देता है। पुरोहित इस हस्तको युद्ध-देवताका अति प्रियवस्तु बताते हैं। केवल प्रथम हत योद्धाका ही नहीं; युद्धमें मारे जानेवाले प्रत्येक व्यक्तिका दक्षिण हस्त हन्ता काट अपने दलके पुरोहितको प्रदान करता है। इसी प्रकार जितने दिन युद्ध चलता, उतने दिन प्रति सन्ध्याकालको दोनों दलोंके पीछे हत वीरोंके दक्षिण हस्तोंका ढेर लगता है। इनके युद्धास्त्रोंमें वक्राग्र कृपाण, धनुर्वाण और कुठार व्यवहृत होता है। कम्ब किसी प्रकारको ढालसे लड़ना अच्छा नहीं समझते। चापसे वाण निकल और भूमि छूते ऊर्ध्वमुख उठ दृष्टिरेखाके नीचे लक्ष्य मारने पर शिक्षाको श्रेष्ठ मान प्रशंसा की जाती है। युद्धमें जय पा कभी कोई कम्बवीर अपने कौशल वा बलकी प्रशंसा न तो करता और न सुनता है। सब लोग दृढ़ रूपसे विश्वास रखते—युद्धदेवताकी कृपासे जय हुआ है।

सभ्यजातिके लोभजनक इतने सद्गुण रहते भी कम्बोंमें पानदोष बहुत प्रबल है। महुवेकी शराब इनके प्रति उत्सवमें यथेष्ट परिमाणसे चलती है। इनको विश्वास रहता—मद्य भिन्न कामका कोई

उत्सव और व्यक्तिगत संस्कार पूरे नहीं पड़ता। इनकी स्त्रियां शराब नहीं पीतीं, केवल किसी-किसी उत्सवमें अनुरोधवश जिह्वा द्वारा स्पर्श कर लेती हैं। स्त्रियां मद्यपान करनेसे समाजमें निन्दनीय हो जाती हैं। महुवा फूलनेसे कन्ध बड़ी दुर्दशामें आते हैं। नूतन मधुका नूतन मद्य पी गली-कूचे और मैदानमें दलके दल पुरुष अचेतन पड़े रहते हैं। फिर स्त्रियां गृहके संस्कारका कार्य निबटा इनकी शुश्रूषा किया करती हैं।

कन्धोंके चरित्रमें एक ओर ऐकान्तिकी स्वाधीनता-प्रियता, सरदारोंकी वाध्यता, अटल प्रतिज्ञा, साहस, आतिथ्य, अकृत्रिम बन्धुता तथा परिश्रमशीलता गुण और दूसरी ओर मद्यपान एवं प्रतिहिंसा-परायणता दोष देख मुग्ध होना पड़ता है। दो-एक क्षुद्र विभागोंको छोड़ कहीं चौर्य वा दस्युता-जैसा दूसरा कोई अपराध नहीं। फिर सन्देह रहता—व्यभिचारके अभियोग व्यतीत समस्त कन्ध जातिमें कभी किसीके नाम कहीं क्या दूसरा कोई पाप लगता है!

धर्म और देवता—कन्धोंके यावतीय धर्मकर्ममें बलि ही प्रधान है। इनके देवतावोंकी संख्या भी अधिक है। जल, स्थल, अन्तरीक्ष एवं पाताल सकल स्थानोंमें देवतावोंका वास है। फिर सभी देवतावों पर जीवबलि चढ़ता है। इनके देवतावोंकी तीन श्रेणी हैं। प्रथम श्रेणीमें १४ देवता होते हैं—१ बेरापेनू (पृथिवीदेवता), २ लोहापेनू (लौहदेवता वा युद्धदेवता), ३ नादजूपेनू (ग्रामाधिष्ठाता), ४ बेपला पेनू (सूर्य) एवं दानजू पेनू (चन्द्र), ५ सांदे पेनू (सीमा-देवता), ६ जूगा पेनू (वसन्तरोगके देवता, शीतला), ७ सोरूपेनू (पर्वतदेवता), ८ जोरी-पेनू (नदीदेवता), ९ गस्सा पेनू (वनदेवता), १० सुण्डा-पेनू (पुष्करिणीदेवता), ११ मुगू या विदराजू पेनू (निर्झरदेवता), १२ पिदजू पेनू (वृष्टिदेवता), १३ पिलागू पेनू (आखेटदेवता) और १४ गारीपेनू (जन्मदेवता)।

उक्त सकल देवता ही कन्धोंके भाग्यविधाता हैं। किन्तु बेरापेनू, लोहापेनू और नादजूपेनू सर्वापेक्षा प्रधान समझे जाते हैं। उनके पीछे सूर्य, चन्द्र एवं सीमा और नदी, वन, पुष्करणी, निर्झर तथा वृष्टिके देवता गणनीय हैं। फिर आखेट, वसन्तरोग और जन्मके देवता भी पूजना पड़ते हैं।

द्वितीय श्रेणीमें ग्यारह देवता हैं—१ पितावल्दी (आदिपितृदेव), २ बांदरी पेनू, ३ बाहमन पेनू (ब्राह्मण), ४ बहमुण्डी पेनू, ५ डूंगरी पेनू, ६ सींगा पेनू, ७ दमोसिंघानी, ८ पतारघर, ९ पिंजाई, १० कष्टाली और ११ जबींदा सबींदा। पितावल्दी की एकप्रकार प्रतिमा बनती है। हिन्दुवोंके बिल्व, वट वा अश्वत्थके नीचे एकखण्ड प्रस्तरको सिन्दूर चन्दनादि लगा शिव, षष्ठी, धर्म प्रभृतिकी प्रतिमा माननेकी भांति यह भी वनके मध्य किसी वृहत् वृक्षके नीचे एकखण्ड प्रस्तर हरिद्रा लगा रखते और आदिपितृदेवकी प्रतिमा कल्पना करते हैं। वनवासी लोगोंके कथनानुसार यह प्रतिमा स्थापित होनेके स्थानपर पहले उक्त देवता कभी कभी आविर्भूत और भूमध्य अन्तर्हित होते थे। बांदरी पेनूकी भी प्रतिमा है। किन्तु कोई निर्णय कर न सका—उसमें क्या लगा है। काष्ठ, प्रस्तर वा लौहादि कोई धातु उक्त मूर्तिमें मिलना कठिन है। डूंगरी पेनूकी पूजा वत्सरमें केवल एकबार होती है। प्रत्येक वंशके लोग मिल-जुल किसी उच्च पर्वतपर चढ़ते और उक्त देवताके उद्देशसे बलि दे प्रार्थना करते हैं—पितृपुरुषोंके जीवन बितानेकी भांति हमारे सन्तान भी अपना जीवन निर्वाह कर सकें। सींगा पेनू संहार-देवता हैं। व्याघ्र उनकी मूर्ति है। पृथिवीके मध्य वह लौह रूपसे रहते हैं। युद्धमें लौह अस्त्र चलाने और व्याघ्रके मुखमें पड़ अनेक मर जानेसे ही कन्धोंने सम्भवतः दोनोंको संहार-देवताकी मूर्ति ठहराया है। सींगा पेनूकी भी प्रतिमूर्ति होती है। कन्धोंके विश्वासानुसार जिन वृक्षोंके नीचे उनकी प्रतिष्ठा करते, वह अल्प दिन बाद ही मरते हैं। फिर उनकी पूजामें नियमित रूपसे नियुक्त पुरोहित भी बहुत नहीं जीते। इसीसे लोग चार वत्सर उनकी पूजामें अग्रसर होते दिखते

हैं। उनके साथ सादृश्य देख अनेक कन्ध काली-देवीको पूजा करने लगी हैं। इनके जातीय देवता अधिकांश पृथिवी वा पातालमें रहते हैं। इसीसे पुरोहित भूमिमें स्फोटन पड़ते ही यजमानोंको देखा करते हैं—इसी स्फोटनसे देवताका आविर्भाव और तिरोभाव हुवा है। एकमात्र बेरा पेनू या पृथिवी-पूजाके दिन सब लोग एकत्र होते हैं। कारण उनकी पूजामें वलि चढ़ाना ही पड़ता है। कन्धोंमें वह प्रधान देवता, स्वभावोत्पादक वीर्य, सर्वमङ्गलालय और समस्त भुवनके स्रष्टा हैं। उनकी अकेली स्त्रीका नाम तारा देवी है। बेरा पेनू निरीह देवता हैं। वह कभी किसीका कोई अपकार नहीं करते। किन्तु तारा देवी बिलकुल उनसे विपरीत पड़ती हैं। कन्धोंके कथनानुसार तारा देवीके कारण मनुष्य समाजमें यावतीय दोष वा पाप घुसे हैं।

कन्धोंके मतमें सृष्टिका आरम्भ इस प्रकार हुआ है—किसी समय बेरा पेनूने अपनी स्त्रीको अधिक भक्तिमती देखा न था। सुतरां उन्होंने भी उनसे विरक्त हो मनमें ठहरा लिया,—"पृथिवीको उद्भिज्ज-शालिनी बना जीवकी सृष्टि करेंगे। यह जीव हमें सृष्टिकर्ता और आहारदाता समझ भक्तिसे पूजेंगे। ऐसा होनेपर हमारी पत्नी भक्तिभावमें जो त्रुटि करतीं, वह भी जाते रहेगी।" इसके पीछे ही पृथिवीमें प्रथम उद्भिद् उपजा था। फिर जीवकुल निकल पड़ा। मनुष्य निष्पाप और निर्मल रहे। इसीसे उनके साथ बेरा पेनूका साक्षात्कार एवं कथनोपकथन अबाध चलता और आहारके लिये परिश्रम उठाना पड़ता न था। पृथिवी विना चेष्टा और कृषिकार्य स्वयं अपर्याप्त शस्य उत्पन्न करती रहीं। सर्वत्र निरापद् और शान्ति थी। मनुष्य उस समय नग्न फिरते, किन्तु अपना अनावृतत्व समझते न रहे। शेषको तारा देवी उनका सुख देख न सकीं। उन्होंने मनुष्यके मनमें पाप दौड़ा दिया था। जो उस समय तारा देवीके प्रलोभनसे स्वतन्त्र रह सके, वही एकप्रकार द्वितीय श्रेणीके देवता गिने गये। फिर उन्हें पापासक्तोंपर कर्तृत्व करनेका भार भी मिला था। मानव पापाश्रित हो अत्यन्त विषम अवस्थामें पड़ा। पृथिवीने प्रचुर शस्य उत्पन्न करना रोक दिया। पहले मनुष्य मरते न थे। वह आकाशमें पक्षीकी भांति उड़ और जलपर चल सकते रहे। किन्तु पीछे वह क्षमता चल बसी। सब लोग मृत्युके वशीभूत हो गये। यह समस्त घटना होनेपर तारादेवी और बेरा पेनूके मध्य विवाद उठा था। उसी विवादके कारण मनुष्योंमें भी दोनों देवता-वोंके उपासक दो दल बने। बेरा पेनूके उपासक कहते,—"बेरा पेनूने तारा देवीको शाप दिया है—स्त्रियां अति कष्टसे सन्तान धारण और प्रसव करेंगी।" ताराके उपासक बताते—बेरा पेनूमें तारा देवीको हरानेकी क्षमता नहीं। तारादेवीको उपासनासे रिझा सकने पर मनुष्यका दुर्भाग्य दूर हो जाता है। सुतरां वही सर्वाग्र पूज्य हैं।

बेरा पेनू और तारा देवीका यह विवाद बहुत दिन चला न था। दोनोंके मिलनेसे छह पुत्र उत्पन्न हुये। वह भी छह देवता समझे जाते हैं—(१) पिदजू पेनू—वृष्टि वा जल-देवता। उनकी कृपासे क्षेत्रमें वृष्टि होती है। (२) बुरभी पेनू—वसन्त ऋतु-देवता। वह वृक्षमें नूतन पत्र लाते और रस पहुंचाते हैं। (३) पिथोवी पेनू—लाभ वा वृद्धि देवता। (४) कलम्ब या पिलामू पेनू—आखेट-देवता। (५) लोहा पेन—लौह वा युद्ध-देवता। (६) सूंदी या सांदे पेनू—सीमा-देवता। बेरापेनूके डींगा पेनू नामक अपर पुत्र भी हैं। वह हिन्दुवोंके यमकी भांति मृत व्यक्तिका पाप-पुण्य देखते हैं।

एतद्व्यतीत अपर श्रेणीके भी देवता होते हैं। वह मायायुक्त आदि मनुष्य हैं। गृह, वन, नदी, पर्वत, गुहा और उद्यानादिके अधिष्ठातृरूपसे उनकी पूजा होती है।

बेरा और तारा देवीका वासस्थान स्वर्ग है। डिङ्गा समुद्र पार किसी पर्वतपर रहते हैं। कन्धोंके-मतानुसार उसी पर्वतसे सूर्योदय होता है। फिर मरनेपर जीव उसी समुद्र वैतरिणीको पार करता है। कन्ध उसे गपलबी वा लम्फपर्वत कहते हैं। अन्यान्य

देवता पृथिवीपर रहते हैं। किन्तु उनमें कोई मनुष्यको देख नहीं पड़ता। पशु-पक्षी उन्हें देखते हैं। उत्सर्गकी द्रव्यादि खा कन्धोंके देवता अपना काम चलाते हैं। फिर भी समय समय वह स्वयं आहारान्वेषणको पृथिवी पर आते रहते हैं। खेतमें बांभ बाल लगनेसे कृषक सिद्धान्त करते—कोई देवता आकर इसका शस्य ले गये हैं।

कन्ध प्रति पूजामें वलि चढ़ाते हैं। जिस पूजामें वलिकी आवश्यकता नहीं पड़ती, व्यवहारवशत: उसमें भी शूकरहत्या चलती है। शूकर इनके निकट हिमा न नष्ट जाता, प्रत्येक पूजाके उपकरणका अङ्गमात्र कहाता है।

यह सर्वापेक्षा उत्कृष्ट वलि पृथ्वीदेवताको उत्सर्ग करते हैं। पृथ्वी देवताकी दो प्रकार पूजा होती है। समग्र जाति एकत्र हो एक प्रकार पूजा करती, फिर प्रत्येक गृहस्थके घर अपने-अपने स्वार्थके लिये दूसरी पूजा चढ़ती है। नरवलि व्यतीत अन्य वलि भी इन्हें देना पड़ता है। खेत बोने और काटनेके समय वलि देनेका नियम है। किन्तु उसमें सामान्य ही वलि लगता है।

पहले मारीका भय वा दुर्भिक्ष लगने अथवा समग्र जातिके प्रतिनिधिस्वरूप प्रधानके संसारपर अकस्मात् कोई विषम विपद् पड़नेसे नरवलि चढ़ाते थे। फिर साधारण लोग भी अपनी अपनी सांसारिक विषम दुर्घटनाके हस्तसे उद्धार होनेको नरवलि देते रहे। जब किसीको व्याघ्र खा जाता, तब उसके परिवार-वर्गको विश्वास आता था—पृथ्वी देवताको एक नर-वलिका प्रयोजन है। तत्क्षणात् वलिका पात्र सङ्ग्रहीत न होनेसे गृहस्थ किसी छागलका कान काटा और रक्त भूमिपर बहा प्रतिज्ञा करते—एक वत्सरके मध्य हम नरवलि देंगे। कोई कोई निज-पुत्रका कान काट भी ऐसी ही प्रतिज्ञा करता था। यदि एक वत्सरमें वलिका पात्र न मिलता, तो गृहस्थको अपना एक पुत्र चढ़ा देवऋण चुकाना पड़ता।

उक्त समस्त देवतावोंकी पूजा समय-समय वा निर्दिष्ट कालपर हुवा करती है। जो सकल द्रव्य देवतावोंको चढ़ते, उनमें प्रत्येकका स्वतन्त्र स्वतन्त्र मन्त्र पढ़ते हैं।

यह लोग आत्माका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। किन्तु उसके चार भाग हैं। आत्माका प्रथमांश निज-कृत सुकर्मका सुख तथा द्वितीयांश दुष्कर्मका दुःख उठाता, तृतीयांश फिर जन्म पाता और चतुर्थांश मर जाता है।

प्रति ग्राममें इनके पुरोहित रहते हैं। केवल वेरापेन और तारा देवीके पूजाकाल ही पुरोहित आता है। किसी दूसरे कर्म वा अन्यान्य देवताकी पूजामें प्रति गृहस्थके गृहकर्ता ही पुरोहितका कार्य चलाते हैं। पहले ऐसा न रहा। कोई कोई वंश पुत्रपौत्रादिक्रमसे किसी न किसी देवताका पूजक था। किन्तु आजकल वेरा-पेन और तारा देवीकी पूजाको छोड़ पुरोहित नामक स्वतन्त्र व्यक्ति दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। तारा और वेराके पूजक लड़ने-भिड़ने तथा साधारण लोगोंके साथ एकत्र भोजन करनेसे दूर रहते हैं। वह ऐसे-वैसेके हाथका बना खाद्यादि भी खा नहीं सकते। कन्ध सबको पुरोहित बना लेते हैं। किन्तु पुरोहित होनेवालेको अपना पद ग्रहण करनेसे पहले लोगोंके मनमें विश्वास जमाना पड़ता—स्वयं देवताने मुझे स्वप्नमें दर्शन दे अपने पुरोहित पदपर नियुक्त किया है। पुरोहितोंको कोई वृत्ति नहीं होती। उन्हें केवल दक्षिणापर निर्भर कर चलना पड़ता है। किन्तु शान्ति स्वस्त्ययन करा यदि कोई पारितोषिक वा पारिश्रमिक स्वरूप कुछ देनेको लाता, तो ले लिया जाता है। हिन्दू पुरोहित इन लोगोंमें ओझाका काम करते हैं। उपदेवताके आविर्भावमें वह झाड़ते-फूंकते रहते हैं। इनमें एक श्रेणीके लोग दैवज्ञका कार्य भी करते हैं। प्राय: निम्नश्रेणीके उड़िया ही दैवज्ञ बन जाते, किन्तु कर्कपट और झुमका नामक स्थानपर कन्ध-दैवज्ञ भी देखनेमें आते हैं। उड़िया दैवज्ञ (जानी या देसोरी) पञ्चाङ्गको व्यवहारमें लाते, किन्तु कन्ध दैवज्ञ शरीरगत लक्षणालक्षण देख कर ही

शुभाशुभ फल बताते हैं। उड़िया दैवज्ञ कोष्ठी बना देते हैं।

पूर्वकाल पृथ्वीदेवता और युद्धदेवता पर नरबलि चढ़ता था। वेरापेनूके उपासक वेरापेनूको और तारादेवीके उपासक तारादेवीको ही पृथ्वी देवता बताते हैं। फलतः पृथ्वीके उद्देश्यसे उभय दल एकत्र होते भी वेरा-पेनूके उपासक मन ही मन नरबलि चढ़ानेकी प्रथाको बहुत बुरा समझते थे। ताराके उपासक कहते हैं,—'पहले पृथिवी अत्यन्त कठिन और कृषिके लिये अनुपयुक्त थी, कहीं भी उर्वरता न रही। ताराने भक्तोंकी दुर्दशा देख एक क्षेत्रपर अपना रक्त टपका दिया। उसीसे पृथिवीमें उर्वरता आयी। फिर उस दिनसे उनके उद्देश्यपर खेत बोते और काटते समय नरबलि देना चल पड़ा।' कोई कोई कहता—पृथिवीकी कठिनता और अनुर्वरता देख सब लोग पृथ्वीदेवताके निकट जा रोने लगे थे। उन्होंने लोगोंके दुःखसे घबरा कह दिया—प्रत्येक क्षेत्रमें मनुष्यका रक्त छिड़को। सबने लौटकर एक बालकको बलि चढ़ाया और रक्तसे क्षेत्र छिड़काया था। देवताने फिर आदेश लगाया—इस प्रथाको तुम चिरदिन अवलम्बन करोगे। उसी समयसे नरबलि चला है।

नरबलिका नाम मेरिया उत्सव है। मेरिया उड़िया भाषाका शब्द है। उसका अर्थ बलिपात्र लगता है। कन्ध-भाषामें बलिके पात्रको ढोकी वा केदी कहते हैं। पान या पनवोया जातिके लोग ही इस बलिका पात्र संग्रह करते थे। अर्थ दे क्रय करनेका नियम रहते भी अधिक स्थलोंमें वह चोरीसे बलिका पात्र ले आते, किन्तु न मिलनेसे लोभवशतः अपना सन्तान पर्यन्त सौंप जाते थे।

बलिके लिये कन्ध किसी जातीय स्त्री वा पुरुषको निर्वाचित कर सकते रहे। किन्तु अल्पवयस्क बालकबालिका ही जुटाते थे। पान नाना स्थानोंसे बलिके पात्र लाते रहे। समय पाकर एकबारगी ही बहुतसे पकड़ रखते थे। बलिके पात्र जितने दिन ग्राममें ठहरते, उतने दिन सब लोग उनसे सादर व्यवहार करते रहे। लोग स्वयं जो द्रव्य खाते, उससे अच्छा उनको खिलाते थे। वह स्वच्छन्द सर्वत्र घूमते रहे। किन्तु अल्पवयस्क घरसे बाहर निकलने पाते न थे। कभी कभी पान बलिके निमित्त आनीत युवक-युवतीको एकत्र रख सहवास करने देते। उस गर्भसे जो सन्तान निकलते, वह भविष्यत् बलिके लिये रक्षित रहते थे।

बलिसे १०।१२ दिन पूर्व कन्ध निर्वाचित पात्रका मस्तक मुंड़ा डालते। फिर समस्त ग्रामवासी एकत्र हो और नहा-धो उसको पुरोहितके पवित्र आश्रमपर ले जाते थे। पुरोहित उसी समय देवताको सूचना देते—बलि प्रस्तुत होता है। पुरोहितके आश्रममें ३ दिन उत्सव मनाया जाता था। अबाध नृत्य, गीत, मद्यपान और आहारादि चलते रहा। इस उत्सवके पीछे बलि चढ़नेसे पूर्व दिन पात्रको रात्रिमें उपवासी बना और प्रातःकाल भली भांति स्नान करा नव वस्त्र पहनाते, फिर सब मिल-जुल नाचते नाचते पुरोहितके साथ बलिस्थान पर ले जाते थे। किसी पुरातन वनका कियदंश उक्त उद्देश्यसे सुरक्षित रखते और वृक्षादि काट कुठाराघातसे कलङ्कित न करते। लोगोंको विश्वास रहा—यहां उपदेवता वास करते हैं। बलिस्थानके बिलकुल मध्यस्थलमें एक खूंटा गाड़ते थे। खूंटेको दोनों ओर अपने देशका पांकीशार नामक कंटीला पेड़ लगाते। पीछे पुरोहित खूंटेके पास बालकको बैठा भली भांति बांधते थे। फिर उसके हलदी और तेल लगाया जाता। कन्ध उक्त तैल-हरिद्रा वा उस दिनके बलिका अङ्गस्पृष्ट कोई द्रव्य अति पवित्र मानते। सुतरां प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति उससे कुछ न कुछ लेनेके लिये आग्रह देखा बड़ा कोलाहल मचाता। उस दिन बलिको समग्र रात बंधा ही रखते थे। फिर अन्यान्य उपस्थित व्यक्ति खाने-पीने और नाचने-गानेमें लग जाते। परदिन दोपहर तक आमोद चलता था। पीछे सब लोग गड़बड़ बन्द कर केवल गाते-गाते बलि चढ़ानेको प्रस्तुत होते। बलिको बांधकर मारना मना है। इसीसे हाथ-पैर काटा या अफीम खिला उसे

अग्निमें चूरकर डालते थे। फिर पुरोहित देवताके निकट शस्य, पुत्रकन्या एवं गवादि पालित पशु-पक्षीके मङ्गल और सर्पव्याघ्रादिके कवलसे उद्धार होनेको प्रार्थना करते। दर्शक भी उस समय अपने-अपने अभीष्टकी सिद्धिके लिये देवताको मनाते थे। पुरोहित साधारणके मध्य इतिहास सुना बलि चढ़ानेकी आवश्यकता देखा देते। फिर पुरोहित और बलिपात्रके मध्य तर्क उठता था। पुरोहित बलिसे कहते,—'एक व्यक्ति मारनेसे यदि इतने लोगों—नहीं नहीं—समस्त देशको उपकार पहुंचे, तो वह मारा जानेवाला क्या अनुयोग करे! फिर इसी लिये तुम्हें खरीद भी लाये हैं।' बलि उत्तर देता था,—'मुझे छलसे लोग ले आये हैं। मुझसे दास बनानेकी बात कही गयी है। मैंने स्वयं आत्मविक्रय नहीं किया, दूसरेने मुझे कैसे खरीद लिया!—इत्यादि।' शेष पर पुरोहित उसे किसी प्रकार समझा-बुझा देते थे। उसके पीछे पुरोहित किसी प्रधानके साथ वृक्षको एक हरी शाखा काट मध्यभाग पर्यन्त फाड़ते और चिरे हुये दोनों किनारे बलिके गलेमें डाल रस्सीसे कसकर बांधते। अन्तको स्वयं पुरोहित कुठारसे उसका कण्ठ काट डालते थे। कण्ठ काटनेसे पहले सब लोग मिलकर बलिसे कहते—'देवताके प्रीत्यर्थ हम अर्थ लगा तुम्हें खरीद लाये हैं। अतएव तुम्हें मारनेसे हमको पाप नहीं पड़ता।' इसके पीछे दर्शक मस्तक एवं उदर व्यतीत शरीरके प्रत्येक भागका अस्थि-मांस छोड़ा अवशिष्टांश दूसरे दिन जला देते। चिता पर एक मेषका बलि चढ़ाते थे। चिताका भस्म समस्त क्षेत्रपर छोड़ा जाता। उससे धान्यागार और गृहका मध्यभाग लीपते-पोतते। बलिके पिता या संग्रहकारको एक सांड उपहार मिलता था। फिर दूसरे सांडको मार सब लोग महा आनन्दसे खाते। भोजके पीछे उत्सव शेष होता था। एक वत्सर बाद उसी दिन तारा देवीके उद्देश्यसे एक शूकरबलि देते।

किसी किसी जिलेमें बलिको जीते-जी जला डालते। लोगोंमें प्रवाद था—बलिको आंखसे जितना जल पड़ेगा, पृथिवीपर सुवृष्टिका वेग भी उतना ही बढ़ेगा। चेन्नाकेनेडी नामक स्थानपर बलिको खींच अर्धमत्त कन्ध चीत्कार करते करते अस्थिसे मांस छोड़ा शस्यमें मिला देते। इससे सम्भवतः शस्यमें कोड़ा लगता न था। मार्जा प्रान्तमें (बौद और पटनेके बीच) बलि चढ़नेके दिन कन्ध हाथमें धातुनिर्मित बड़े बड़े वलय पहनते। उन्हीं वलयोंसे सब लोग बलिके मस्तक पर आघात लगाते थे। उससे भी मृत्यु न आनेपर वंशखण्डसे श्वास-रोक बलिको मार डालते थे। पीछे प्रत्येक थोड़ा थोड़ा मांस ले अपने अपने क्षेत्रमें वा नदी किनारे खूंटे पर लटकाते। अवशिष्ट अंश भूमिमें गाड़ा जाता। फिर प्रति वत्सर बलिके पात्रका श्राद्ध होता था।

साधारणतः कन्धोंके नियमानुसार बलिका मांस गाड़नेसे क्षेत्रका दोष नष्ट होता है। ताराके उपासक किसी ग्राममें भेरिया उत्सव होनेका संवाद सुन ५०।६० कोस दूर रहते भी डाक लगा बलिका मांस अपने ग्राम पहुंचाते थे। बलि चढ़नेके दिन ही ग्राममें मांस आ जानेसे विशेष उपकार माना जाता।

जयपुर नामक स्थानमें भी पहले मानिकसोरा नामक युद्ध-देवताको बलि चढ़ता था। कड़ी लकड़ीका ६ फीट ऊंचा खूंटा गाड़ पास ही एक अप्रशस्त नाला बनाते। बलिका मस्तक मुंडाया जाता न था। लम्बे लम्बे बाल खूंटेसे इस प्रकार बांधते, जिससे मुण्ड कटते ही निम्नमुख उसी नालेमें जा गिरे। फिर बलिके दक्षिण पार्श्व खड़े हो पुरोहित युद्धके जय-लाभ और राजा तथा कर्मचारी-गणके अत्याचार-निवारणको प्रार्थना करते थे। एक एक प्रार्थना शेष होते एक एक आघात लगाते, पहले ही आघातमें मुण्ड काट न डालते। प्रार्थना शेष होते भी बलि मरता न था। अन्तको सब लोग उसके कानमें लग कह देते—'आज आपका कैसा भाग्य है! मानिकसोरा देवता हमारे सामने आपको

खा डालेंगे। हम आपका श्राद्ध भली भांति करेंगे।' वलिके छटपटानेसे कहा जाता था—'अपराध न लगाइयेगा, हम इसी लिये आपको खरीद लाये हैं।' मस्तक काट शरीरको भूमिमें गाड़ देते। मुण्ड किसी खूंटे पर लटकाया जाता था। गुमसर, बौद, चिन्नाकिमेडी, जयपुर, पटने और कालाहांडी प्रदेशमें इसी प्रकार वलि चढ़ता।

कन्धोंको स्वजातीय स्त्री बड़ी मुश्किलसे मिलती है। अधिक मूल्य लगा खरीदनेसे यह कन्या सन्तानको अति घृणा करते हैं। पहले कन्धमहलके मध्यप्रदेशवाले लोग कन्याको मार अन्यान्य स्थानोंसे पत्नी ले आते थे। लोग कहते—'कन्या सन्तानको मार डालनेसे गृहस्थका मङ्गल होता है। फिर पुत्र सन्तानकी संख्या बढ़ती और विदेशीय स्त्रीसे विवाह करनेपर जातीय बलवीर्यकी कमी नहीं पड़ती।' भुमके, कर्कपङ्क, रायगड़ प्रभृति स्थानोंमें उक्त प्रथा चलती थी। कन्या उत्पन्न होनेसे दैवज्ञ आ भावी शुभाशुभ निर्णय करते। शुभ न निकलनेसे कन्याको भूमिमें गाड़ एक पक्षी वलि देते थे।

१८६३ ई०को गुमसरराजका अधःपतन होनेपर अंगरेज घुस पड़े। लेफटीनेण्ट माकफार्सनने कौशलसे नरवलि और कन्याहत्याकी प्रथा उठायी। प्रथम बौद प्रदेशके राजापर उक्त भार डाला गया। इस सम्बन्धमें आन्दोलन चलता था। शेषको सरदारोंने निज निज ग्रामके सञ्चित वलि अंगरेजों-के हाथ सौंप कहा,—'हम यह प्रथा न छोड़ेंगे। फिर भी नूतन सम्राट्को इन्हें सर्वापेक्षा उत्कृष्ट सामग्रीकी भांति उपहार दिया है।' अंगरेजोंने एक जातिके निकट ऐसा फल पा अपर जातिके साथ भी इसी प्रकार प्रबन्ध बांधा था। अवशेषको उन्होंने यह नियम छोड़ क्रमशः अल्प अल्प वल देखाया और इस प्रथाको उठाया। माकफार्सनने प्रथमतः इन्हें बन्धुभावसे मिला और कौशलसे जातिगत विवाद मिटा समझाया था—'हम अपने लाभके लिये कुछ नहीं करते। केवल यही खोजते हैं—तुम लोगोंका उपकार कैसे होगा।' सरदार और प्रधान इससे उनके वशीभूत हो गये। सुतरां उन्होंने भी सुविधा देख इन्हें किसी प्रकार दोषी ठहराया न था। केवल वलिपात्र संग्रह और विक्रय करने-वालों पर ही कठिन शास्ति चलानेका प्रबन्ध हुवा। इसीसे इस निष्ठुर प्रथाका मूल कटा था।

माकफार्सनने इनके मध्य जातिगत विवाद मिटा परस्पर सद्भाव स्थापन किया। उन्होंने ही अर्थके व्यवहार चलाने, मार्ग बनाने तथा अल्प-अल्प विक्रय-प्रथा फैलानेका नियम निकाला था।

आजकल कन्ध अंगरेजोंके अधीन रहते हैं। यह किसीको कोई कर नहीं देते। अंगरेजोंकी ओरसे एक थानेदार पुलिसके सिपाही साथ रख केवल शान्तिरक्षा करते हैं। प्रत्येक विभागमें इनका पूर्वतन राजवंश ही राजत्व चलाता है। इन राजावोंको सकल प्रकार विचारादि भी करना पड़ता है। यह इस प्रदेशमें करद राजावोंके सुपरिण्टेण्डेण्टके अधीन रहते हैं। कन्ध कुछ कुछ कर दिया करते हैं। किन्तु वह अति सामान्य पड़ता है। १८ राज्योंसे केवल ८५ हजार रुपया सरकारको मिलता है।

कन्धमहल—उड़ीसेके १८ करद राज्योंमें बौदराज्यका दक्षिण-विभाग। इसी स्थानमें कन्धोंकी संख्या अधिक है। कन्धमहलको छोड़ बौद राज्यके अन्य अंश और दशपल्ला, नयागढ़ प्रभृति राज्यमें भी कन्ध रहते हैं। यह बड़े सरल होते हैं। इन्हें शिकार करना बहुत अच्छा लगता है। भली भांति मिल-जुल कर रहनेवालोंसे इनकी खूब पटती है। किसी सामाजिक विषयमें हाथ डालनेसे कन्ध बहुत चिढ़ते हैं।

इस प्रदेशमें कन्ध व्यतीत डोमना नामक दूसरी श्रेणीकी पार्वत्य जाति भी रहती है। साधारणतः वही इनके पुरोहितका कार्य करते हैं। किसी कन्धके व्याघ्र कर्तृक विनष्ट होने पर उसका परिवार जातिसे निकाल दिया जाता है। किन्तु डोमना पुरोहित इच्छा करनेसे समस्त विषयादि ले उन्हें फिर जातिमें मिला सकते हैं।

कन्धमहल केवल बन्धुर उत्कृष्ट भूमि है। क्षुद्र

क्षुद्र पर्वत चारो ओर खड़े हैं। ग्रामोंकी संख्या अति अल्प है। प्रति ग्रामके मध्य पर्वतमाला वा घन वनका व्यवधान पड़ता है। प्रदेशके समस्त भूभागमें कन्धजातिका एकाधिपत्य है। यह कहते हैं—किसी समय समस्त बौदराज्य अपने चतुःपार्श्वस्थ अन्यान्य राज्यादिके साथ हमारे अधीन रहा। कालक्रमसे दूसरोंने वह समस्त जय किया। विजेतावोंके निकट इन्होंने कभी अधीनता नहीं मानी। दूसरोंने ही अन्यायसे इन्हें स्थानच्युत किया है। सुतरां बहुदिन बीतते भी समस्त भूभागपर यह स्वत्वशून्य हो नहीं सकते। फिर यह बताते,—'मङ्गलपुरके अन्तर्गत सवलेइया नामक जनपद ही हमारा आदि वासस्थान रहा। क्रमशः विताड़ित होनेपर हम इतनी दूर आ पहुंचे हैं।'

कन्धमहलने किसी समय बौद राज्यकी वश्यता नहीं मानी। १८३६ ई०को अंगरेजोंने कन्धोंमें नरवलि निवारण करनेके लिये बौदराजको वाध्य किया था। उन्होंने स्वयं सम्यक् कृतकार्य न हो यह प्रदेश अंगरेजोंको सौंप दिया। अंगरेज कन्धमहल हाथमें ले केवल उक्त निष्ठुर प्रथा उठा शान्तिरक्षा करते आये हैं। इस प्रदेशके लोग न तो अंगरेजोंको कोई कर देते और न अंगरेज ही उनसे कोई कर लेते हैं। एक थानेदार नियुक्त हैं। वह एकदल पुलिसके सिपाही रख शान्तिरक्षा करते और किसी प्रकार रक्तपात न होनेपर दृष्टि रखते हैं। बौदके राजा कन्धमहलके किसी विषयमें हाथ नहीं लगाते।

प्रधानतः यहां हरिद्रा उत्पन्न होती है। कन्धमहलकी भांति अच्छी हलदी कहीं देख नहीं पड़ती। व्यवसायी हलदी लेनेको देशके अति अभ्यन्तर पर्यन्त पहुंचने और पर्वतपर चढ़ते हैं।

इस प्रान्तमें आज भी कन्धोंकी प्राचीन रीतिनीति चलती है। जो जाति जितनी भूमि बो सकती, वह उतनी ही भूमि अपने अधीन रखती है। फिर जो गृहस्थ जिस भूमिको सर्वापेक्षा अधिक दिनसे जोतता-बोता, वंशानुक्रमिक उसपर उसीका अधिकार होता है। इसी प्रकार जो भूमिखण्ड जिस गृहस्थके अधीन रहता, उसमें उसीका एकाधिपत्य ठहरता है। कन्धोंमें कोई राजा या जमीन्दार नहीं। भूमि करसे स्वतन्त्र है। प्रत्येक गृहस्थ अपनी अपनी जमीन्का जमीन्दार है। उसके लिये किसी प्रकारका कर देना नहीं पड़ता। प्रत्येक ग्रामके प्रधान वा सरदार भूमिके सर्वप्रकार संस्रवसे पृथक् रहते हैं। वह केवल दूसरे लोगोंके प्रतिनिधि वा मुखपात्रकी भांति पञ्चायतमें पहुंच जाते हैं।

कन्धमहलमें एकस्थानपर कई गृहस्थ मिलजुल घर बना वास करते हैं। इसी प्रकार पल्ली बनता है। कई पल्ली मिलनेसे ग्राम होता है। प्रत्येक ग्रामवासीके देवादि ग्रामकी चारों ओर पड़ते हैं। इस समस्त भूखण्ड पर एक प्रधान रहते हैं।

कन्यका (सं० स्त्री०) कन्या-कन् पूर्वकृत्वम। १ कुमारी, लड़की। स्मृतिशास्त्रमें दशम वर्ष वयस्का कुमारीको कन्यका कहते हैं,—

> "अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा तु रोहिणी।
> दशमे कन्यका प्रोक्ता अत ऊर्ध्वं रजस्वला॥" (मनु)

आठकी गौरी, नौकी रोहिणी, दशकी कन्यका और इससे ऊपरकी कन्या रजस्वला कहाती है। २ एक परकीया नायिका। पित्रादिके अधीन रहनेसे कन्यकाको परकीया कहते हैं। इसका समुदाय चेष्टा गुप्त रहती है। ३ घृतकुमारी, घीकुवार। ४ कन्या, बेटी। ५ दृष्टि, नजर। ६ कन्याराशि।

कन्यकाछल (सं० क्ली०) प्रलोभन, फुसलावा, लड़कीको धोका देनेका काम।

कन्यकाजात (सं० पु०) कन्यकायां अनूढ़ायां जातः। १ अविवाहिता स्त्रीका गर्भजात, बेब्याही औरतके हमलसे पैदा हुवा। २ कर्ण। कुन्तीकी अविवाहितावस्थामें ही इनका जन्म हुवा था। ३ व्यासदेव। व्यास देखो।

कन्यकापति (सं० पु०) कन्यकायाः पतिः, ६-तत्। जामाता, दामाद, बेटीका शौहर।

कन्यकुब्ज (सं० क्ली०) कन्याः कुब्जा यत्र। १ कान्यकुब्ज देश, कनौजियोंके रहनेका मुल्क। २ जनागढ़के

अन्तर्गत एक तीर्थ। प्रभासखण्डके किसी-किसी पुस्तकमें यह कर्णकुञ्ज नामसे उक्त है। कर्णकुञ्ज देखो।

कन्यना (वै० स्त्री०) कन्या माचष्टे, कन्या-णिच् भावे युच्। कन्या, बेटी, लड़की।

कन्यला (वै० स्त्री०) कन्यं कमनीयतां लाति गृह्णाति, कन्या-ला-क-टाप्। कन्या, बेटी, लड़की।

कन्यस (सं० पु०) कन्यत्वेन सीयते अवसीयते, कन्य-सो घञर्थे क। १ कनिष्ठ भ्राता, छोटा भाई।

"रामस्य कन्यसो भ्राता सुमित्रा येन सुप्रजा:।" (रामायण ५।३३।१८)

(त्रि०) २ अधम, कमीना। ३ अङ्गुलिपरिमाण, आंगुरभर।

कन्यसा (सं० स्त्री०) कन्यस-टाप्। १ कनिष्ठा भगिनी, छोटी बहन। २ कनिष्ठाङ्गुलि, सबसे छोटी उंगली।

कन्यसी (सं० स्त्री०) कन्यस-ङीष्। कनिष्ठा भगिनी, छोटी बहन।

"अभिजित् स्पर्धमाना तु रोहिण्या: कन्यसी स्वसा।"

(भारत, वन २३०।१)

कन्या (सं० स्त्री०) कन्-यक्-टाप्। अघ्नादयश्च। उण् ४।१११। १ दशमवर्षीया कुमारी, दश वर्षकी लड़की। २ अविवाहिता स्त्री, बेब्याही औरत। भारतमें भी कन्या शब्दका ऐसा ही अर्थ लगाया है,—"सकलको कामना कर सकनेसे अविवाहिता स्त्रीको कन्या कहते हैं।" तन्त्रमें नवकन्याका प्राधान्य वर्णित है—

"नटी कापालिकी वेश्या रजकी नापिताङ्गना।
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका।
मालाकारस्य कन्या च नवकन्या प्रकीर्तिता:॥"

(गुप्तसाधनतन्त्र १म पटल)

नटी, कापालिकी, वेश्या, रजकी (धोबन), नापितिनी, ब्राह्मणी, शूद्रा, गोपी (ग्वालिनी) और मालाकारकी कन्या नवकन्या नामसे प्रसिद्ध हैं। तन्त्रके मतसे यह कुलाङ्गना होती है। ३ स्त्रीमात्र, कोई औरत। ४ घृतकुमारी, घीकुवार। ५ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ६ वाराही नाम महाकन्दशाक, भुयिं-कुम्हड़ा। ७ वन्ध्याकर्कोटकी, बुसवर। ८ महौषधिविशेष, एक जड़ी-बूटी। सुश्रुत कहते—कन्यामें मयूरके पक्षकी भांति बारह मनोज्ञ पत्र लगते हैं। और स्वर्णवर्ण निकलता है। कन्दसे इसकी उत्पत्ति है। ९ नारीशाक। १० बन्दा, बांदा। ११ कन्दगुड़ूची, एक गुर्च। १२ मेषादि द्वादश राशिके अन्तर्गत षष्ठ राशि। उत्तरफल्गुनीके शेष तीन पाद, हस्ताके सम्पूर्ण पाद और चित्रा नक्षत्रके प्रथम एवं द्वितीय पादपर इस राशिकी अवस्थिति रहती है। इसकी अधिष्ठातृदेवता जलके मध्य नौकारूढ़ा और शस्य एवं अग्निधारिणी हैं। कन्याका अपर नाम पाथेय है। मतान्तरसे इसको शीर्षोदया, दिनबला, पिङ्गलवर्णा, दक्षिणदिक्स्वामिनी, वायुप्रकृति, शीतलस्वभावा, शुद्रभूमिचारिणी, वैश्यवर्णा, रूक्षा, स्त्र्याङ्गी, खटच्छब्दा, अल्पसन्ताना और अल्पपुंसङ्गा कहते हैं। इस राशिमें जन्म लेनेसे मनुष्य वेदशास्त्रमें श्रद्धावान्, यथास्थानके क्रोधपर भी अनुतापकारी, पत्नीके प्रति सर्वदा विरस, नाना शास्त्रविशारद, सर्वाङ्गसुन्दर, सौभाग्यशाली और सुरतप्रिय होता है।

१३ सुता, बेटी। विवाह व्यतीत कन्याके अन्य संस्कारकालको वृद्धि-श्राद्धका निषेध है। इसका नामकरण, अन्नप्राशन एवं चूड़ाकरण कार्य विना मन्त्र निष्पादन करना चाहिये। निष्क्रामण संस्कार एकबारगी ही निषिद्ध है।

१४ तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है।

"ततो गच्छेत धर्मज्ञ कन्यातीर्थमनुत्तमम्।
कन्यातीर्थे नर: स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्॥" (भारत ३।८३।१०४)

१५ चतुरक्षरी छन्दोविशेष। इस छन्दमें ग (एक गुरुवर्ण) और म (तीन गुरुवर्ण) अर्थात् चार गुरुवर्ण ही रहते हैं। "ग्मौचेत् कन्या।" (वृत्तरत्नाकर)

कन्याका (सं० स्त्री०) कन्यैव, कन्या स्वार्थे कन् अनुक्तपुंस्कत्वात् न ह्रस्व:। १ कन्या, बेटी। २ कुमारी, लड़की।

कन्याकाल (सं० पु०) कन्याया: काल:, ६-तत्। अविवाहिता रहनेके नियमका समय, शादी न होनेका वक्त। यह दशम वर्ष पर्यन्त रहता है।

कन्याकुब्ज (सं० पु०) कन्या: कुब्जा यत्र, बहुव्री०। १ कान्यकुब्ज देश, कनौजियोंके रहनेका मुल्क। २ कनौज नगर। यह फरुखाबाद जिलेमें कालो नदीके तटपर अवस्थित है। प्राचीनत्वमें अयोध्यासे कान्याकुब्ज द्वितीय समझा जाता है। अपने कामुक अभिलाषके पूर्ण किये न जानेपर वायुने इस नगरके राजा कुशनाभको सौ कन्यावोंको कुब्ज बना दिया था। ध्वंसावशेषमें वर्तमान लन्दन नगरसे भी अधिक स्थान देख पड़ता है। कनौज और कान्यकुब्ज देखो।

कन्याकुब्जदेश (सं० पु०) कान्यकुब्ज नगरको चारो ओरका प्रान्त, कनौज शहरके इर्द-गिर्दका मुल्क।

कन्याकुमारी (सं० स्त्री०) १ दुर्गा देवी। २ अन्तरीपविशेष, एक रास। यह भारतके दक्षिण रामेश्वरके निकट अवस्थित है। रामेश्वर देखो।

कन्याकूप (सं० पु०) तीर्थविशेष। (भारत, अनु० २५० अ०)

कन्यागत (सं० त्रि०) १ कुमारीसम्बन्धीय, लड़कीसे ताल्लुक रखनेवाला। २ कनागत, कन्याराशिपर पहुंचा हुवा।

कन्यागर्भ (सं० पु०) कन्याया: गर्भ:, ६-तत्। अविवाहिता स्त्रीका गर्भ, क्वारी लड़कीका हमल।

कन्यागिरि—मन्द्राज-प्रान्तके नेल्लूर जिलेकी एक तहसील। इसका क्षेत्रफल ७२६ वर्ग मील है। कन्यागिरि अक्षा० १५° १´ से १५° ३२´ उ० और देशा० ७९° ८´ से ७९° ४४´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें फौजदारी आदालत और थाना मौजूद है।

प्रधान नगरका नाम भी कन्यागिरि ही है। यह नगर अक्षा० १५° १३´ उ० और देशा० ७९° ३२´ पू०पर अवस्थित है। ई०के १०म शताब्द गजपतिवंशीय काकतेय रुद्रदेवके पुत्रने इसे बसाया था। ई०के १६वें शताब्द कृष्णरायने इसको आक्रमण किया। पहले यहां अच्छे-अच्छे भवन बने थे। किन्तु हैदरअलीने उन सबको ध्वंस कर डाला। लोकसंख्या प्राय: ३००० है। अधिकांश हिन्दू देख पड़ते हैं।

कन्याग्रहण (सं० क्ली०) कन्याया ग्रहणम्, ६-तत्। विवाह, शादी।

कन्याट (सं० पु०) कन्या अटति अत्र, कन्या-अट्-आधारे घञ्। १ आभ्यन्तर गृह, जनानखाना। २ लम्पट, लड़कियोंके पीछे-पीछे फिरनेवाला।

कन्यात्व (सं० क्ली०) कन्याया भाव:, कन्या-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। कन्याका भाव, बिक्रारत।

कन्यादाता (सं० पु०) कन्यादान करनेवाला, जो बेटी ब्याह देता हो।

कन्यादान (सं० क्ली०) कन्याया दानं वराय सम्प्रदानम्। पात्रके हस्त कन्याका सम्प्रदान, लड़कीको शादी करनेका काम। अग्निपुराण कन्यादानके फलाफलपर इस प्रकार लिखता—जो व्यक्ति विवाहकाल आनेसे उपयुक्त वरको अलङ्कृता कन्या प्रदान करता, उसे शतयज्ञका फल मिलता है। पितृपितामह कन्यादानकी कथा सुननेपर सर्व पापसे छूट ब्रह्मलोक पहुंचते हैं।

ब्राह्मविवाह द्वारा कन्या देनेपर मनुष्य ब्रह्मादि देव कर्तृक पूजित हो ब्रह्मलोक जाता है। फिर दिव्य विवाहसे कन्या सम्प्रदान करनेपर सूर्यलोकका द्वार भेद स्वर्ग पहुंचते हैं।

गान्धर्व विवाहसे कन्या देनेपर गन्धर्वलोक जा देवताकी भांति चिरदिन क्रीड़ा करते हैं। जो व्यक्ति शुल्कसह कन्या देता, वह अनन्तकाल किन्नरों और गन्धर्वोंके साथ क्रीड़ा करनेका आनन्द लेता है।

ब्राह्मविवाहमें कन्या देनेसे वरके गृह भोजन करना निषिद्ध है। जो मोहवशत: भोजन करता, उसे नरक जाना पड़ता है। फिर भी दौहित्रको उत्पत्ति होनेपर खाने-पीनेमें कोई निषेध नहीं। वन्ध्या कन्याके गृह चिरदिन भोजन करना न चाहिये।

कन्यादूषक (सं० पु०) अविवाहिता बालिकाको बिगाड़नेवाला, जो बेब्याही लड़कीको खराब करता हो।

कन्यादूषण (सं० क्ली०) कन्याया दूषणम्, ६ तत्। अविवाहिता बालिकाका व्यभिचार, बेब्याही-लड़कीका बिगाड़।

कन्यादोष (सं० पु०) कन्यादूषण देखो।

कन्याधन (सं० क्ली०) कन्याकाले लब्धं धनम्, मध्यपदलो०। अविवाहितावस्थाका स्त्रीधन, लड़कीको

दौलत। अधिकारिणीके मरनेपर भाई इस धनको पाते हैं।

कन्यान्तःपुर (सं० क्लो०) कन्याया अन्तःपुरम्, ६-तत्। कन्याका वासस्थल, बेटीके रहनेकी जगह।

"कन्यान्तःपुरबोधनाय यदधिकारान्न दोषानृपम्।" (नैषध ४)

कन्यापति (सं० पु०) कन्यायाः पतिः, ६-तत्। जामाता, दामाद, लड़कीका शौहर।

कन्यापाल (सं० पु०) कन्याप्रधानः पालः, मध्यपदलो०। १ शूद्रजातिविशेष। पाल देखो। २ कन्याका पति, बेटीका शौहर। ३ कन्याका पिता, लड़कीका बाप। ४ अविवाहिता बालिका बेचनेवाला, जो बेब्याही लड़कियां फरोख्त करता हो। (त्रि०) ५ कन्याका प्रतिपालक, लड़कीकी परवरिश करनेवाला।

कन्यापुत्र (सं० पु०) कन्यायाः पुत्रः, ६-तत्। १ कन्याका पुत्र, दौहित्र, नाती, पोता, बेटीका बेटा। २ अविवाहिता स्त्रीका पुत्र, बेब्याही औरतका लड़का।

कन्यापुर (सं० क्लो०) कन्यायाः पुरम्, ६-तत्। कन्याका घर, बेटीका मकान्।

कन्याप्रदान (सं० क्लो०) कन्यायाः प्रदानं वराय सम्प्रदानम्। कन्यादान, बेटीका विवाह।

कन्याभर्ता (सं० पु०) कन्याभिः प्रार्थनीयो भर्ता, मध्यपदलो०। १ कार्तिकेय। अतिशय रूपवान् रहनेसे कन्यामात्र कार्तिकेयकी भांति पतिकामना करती हैं। २ जामाता, दामाद, लड़कीका शौहर।

कन्याभाव (सं० पु०) कन्याया भावः, ६-तत्। कन्यात्व, कन्यावस्था, वकारत।

कन्यामय (सं० त्रि०) कन्या-मयट्। १ कन्यास्वरूप, लड़की-जैसा। २ कन्याविशिष्ट, लड़कियोंसे भरा पूरा।

कन्यारत्न (सं० क्लो०) कन्यारत्नमिव, उपमि०। श्रेष्ठ कन्या, असाधारण रूप वा गुणवती कन्या, अच्छी लड़की।

कन्याराम (सं० पु०) बुद्धविशेष।

कन्याराशि (सं० पु०) कन्याख्यः राशिः, कर्मधा०। राशिविशेष, बुर्ज-सुम्बुला। कन्या देखो।

कन्याराशीय (सं० त्रि०) कन्याराशेरिदम्, कन्याराशि-छ। कन्याराशि-सम्बन्धीय, बुर्ज-सुम्बुलाके मुताल्लिक।

कन्याराशी (हिं० वि०) १ जन्मके समय कन्याराशिमें चन्द्रमा रखनेवाला, जिसके पैदा होते वक्त चांद बुर्ज-सुम्बुलामें रहे। २ निर्बल, कमज़ोर। ३ क्षुद्र, छोटा। ४ नपुंसक, नामर्द।

कन्यालीक (सं० पु०) कन्याके विवाह सम्बन्धमें मृषावाद, लड़कीको शादीके लिये झूठी बात। यह मत जैन स्वीकार करते हैं।

कन्यावेदी (सं० पु०) कन्यां दुहितरं आविन्दति, कन्या-आ-विद्-णिनि। जामाता, दामाद।

कन्याशुल्क (सं० क्लो०) कन्यायाः शुल्कम्, ६-तत्। कन्याका मूल्य, लड़कीका दाम। विवाहके समय वरसे कन्याका पिता जो धन पाता, वही कन्याशुल्क कहाता है। किन्तु भारतके सुसभ्य लोगोंमें यह प्रथा निन्द्य है।

कन्याश्रम (सं० क्लो०) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें संयत हो ब्रह्मचर्य-निष्ठासे त्रिरात्र उपवास करनेपर मनुष्य शत कन्या पाता और अन्तको स्वर्ग जाता है।

"ततः कन्याश्रमं गच्छेत् नियतो ब्रह्मचर्यवान्।
त्रिरात्रोपषितो राजन् नियतो नियताशनः।
लभेत् कन्याशतं दिव्यं स्वर्गलोकञ्च गच्छति॥" (भारत, वन ८३ अ०)

कन्यासंवेद्य (सं० क्लो०) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें नियमानुसार नियताशन होनेसे ब्रह्मलोक मिलता और कन्यार्थ अणु-परिमित भी दान करनेसे द्रव्य अक्षय रहता है।

"कन्यासंवेद्यमासाद्य नियतो नियताशनः।
मनोः प्रजापतेर्लोकानाप्नोति पुरुषर्षभ॥
कन्यार्थं यत् प्रयच्छन्ति दानमण्वपि भारत।
तदक्षयमिति प्राहुर्ऋषयः संशितव्रताः॥" (भारत)

कन्यासमुद्भव (सं० पु०) अविवाहिता स्त्रीका पुत्र, बेब्याही औरतका बेटा।

कन्यासम्प्रदान (सं० क्लो०) कन्यायाः सम्प्रदानम्, ६-तत्। कन्यादान। कन्यादान देखो।

कन्यास्वयम्बर (सं० क्लो०) कन्यया स्वयं व्रियते यत्र, कन्या-स्वयं-वृ-ख। कन्याकर्तृक स्वयं पतिग्रहण, जिस शादीमें लड़की खुद अपना शौहर चुने।

कन्याहरण (सं॰ क्ली॰) कन्याको निकाल ले जानेका कार्य, लड़की ले भागनेका काम।

कन्याह्रद (सं॰ पु॰) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें वास करनेसे देवलोक जाते हैं।

कन्यिका (सं॰ स्त्री॰) कन्या एव, कन्या स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। कन्या, बेब्याही लड़की।

कन्युष (सं॰ क्ली॰) कन-इन्, कन्या कान्ता ओषति इव, उष-क। १ हस्तपुच्छ, कलाईके नीचेका हाथ। २ वन्ध्याकर्कोटकीफल, बांझ खेखसा।

कन्हड़ी (हिं॰) कर्णाटी देखो।

कन्हाई (हिं॰ पु॰) कृष्ण, कन्हैया।

कन्हावर, कंधावर देखो।

कन्हैया (हिं॰ पु॰) १ श्रीकृष्ण, कन्हाई। २ प्रिय व्यक्ति, प्यारा शख्स। ३ सुन्दर बालक, खूबसूरत लड़का। ४ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह एक पार्वत्य वृक्ष है। पूर्वहिमालय पर्वतपर ८००० फीट ऊंचे कन्हैया उत्पन्न होता है। काष्ठ अति सुदृढ़ निकलता है। उसपर रक्त वा हरिद्वर्ण रेखायें रहती हैं। आसाममें कन्हैयेका काष्ठ नौका बनानेमें लगता है। उसके चायके सन्दूक भी तैयार होते हैं। कभी कभी वह गृहके निर्माण कार्यमें लग जाता है।

कप (सं॰ पु॰) कानि जलानि पाति, क-पा-क। १ वरुणदेव। २ एक असुर। (भारत, अनु॰ १५७ अ॰) (त्रि॰) ३ जलपायी, पानी पीनेवाला।

कप (अं॰ पु॰=Cup) १ पात्र, प्याला, कटोरा। २ सिल्ली, खप्पर।

कपट (सं॰ पु॰-क्ली॰) कप्-अटन्, कं सत्यं अज्ञाय-मपि पटति आच्छादयति, क-पट्-अच् वा। १ मिथ्या-व्यवहार, धोका, फरेब। इसका संस्कृत पर्याय—व्याज, दम्भ, उपधि, छद्म, कैतव, कूट, कल्क, छल, मिष, कैरव, व्यपदेश, लक्ष, निभ, माया, शठता, शाठ्य, कुसृति और निकृति है। २ दनुपुत्र, कोई दानव। ३ चीड़ादेवदारु।

कपटचारी (सं॰ त्रि॰) कपट-चर-णिनि। प्रवञ्चक, फरेबी, धोकेबाज़।

कपटचीड़ा (सं॰ स्त्री॰) चीड़ा नामक देवदारु।

कपटता (सं॰ स्त्री॰) कपटस्य भावः, कपट-तल्-टाप्। कपटका भाव, कापट्य, धोकेबाजी।

कपटतापस (सं॰ पु॰) कपटेन तापसः। छलपूर्वक तपस्वी बननेवाला व्यक्ति, जो शख्स धोका देनेको फ़क़ीर बना हो।

कपटधारी (सं॰ त्रि॰) कपटं धारयति, कपट-धृ-णिनि। कपटयुक्त, धोकेबाज़।

कपटना (हिं॰ क्रि॰) १ शिरःछेदन करना, तोड़ना, नोचना। २ पृथक् करना, अलग निकाल रखना।

कपटपटु (सं॰ त्रि॰) कपटे पटुः, ७-तत्। १ प्रतारणा करनेमें निपुण, जो धोका देनेमें होशियार हो। २ इन्द्रजालकारी, बाज़ीगर।

कपटप्रबन्ध (सं॰ पु॰) छल, फरेब, धोकेकी बात।

कपटलेख्य (सं॰ क्ली॰) अनृत पत्र, झूठी दस्तावेज़, बनाया हुवा काग़ज़।

कपटवचन (सं॰ क्ली॰) कपटपूर्णं वचनम्। प्रतारणा-वाक्य, धोकेकी बात।

कपटवेश (सं॰ त्रि॰) कपटो वेशो यस्य, बहुव्री॰। १ छद्मवेशी, शक्ल बनाये हुवा, जो रूप बदले हो। (पु॰) २ छद्मवेश, तलबीस-लिबास।

कपटवेशी (सं॰ त्रि॰) कपटवेशोऽस्त्यस्य, कपटवेश-इनि। छद्मवेशी, शक्ल बनाये हुवा, जो रूप बदलता हो।

कपटा (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रहस्ती, छोटी कटाई।

कपटा (हिं॰ पु॰) कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह कीड़ा धानके पौदोंको कपटता है।

कपटिक (सं॰ त्रि॰) कपटः विद्यते ऽस्य, कपट मत्वर्थे ठन्। कपटविशिष्ट, फरेबी, धोकेबाज़।

कपटिनी (सं॰ स्त्री॰) कपटो ऽस्त्यस्ति, कपट-इनि गौरादित्वात् ङीष्। चीड़ा नामक गन्धद्रव्य वा देवदारु।

कपटी (सं॰ त्रि॰) कपटो ऽस्त्यस्ति, कपट-इनि। १ प्रतारक, वञ्चक, दग़ाबाज़, फरेबी। (स्त्री॰) कप्-अटन्-ङीष्। २ परिमाणविशेष, एक नाप। इसमें दो अञ्जलि-परिमित द्रव्य आता है।

कपटी (हिं॰ स्त्री॰) १ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह धानके पौदेको कपटती है। २ कृमिभेद,

कोढ़ो कीड़ा। यह तम्बाकूके पौदेको खराब करती है।

कपटेश्वर—काश्मीरस्थ जनपदविशेष। इस स्थानमें पापसूदन नाग रहते थे। राजतरङ्गिणी-वर्णित यही पापसूदनतीर्थ है। (राजतरङ्गिणी २१।३२) यह स्थान कोटहार परगनेके अन्तर्गत इसलामाबादसे दूर नहीं।

कपटेश्वरी (सं° स्त्री°) कमिव शुभ्रः पटः वसनं तत्तुल्यं फलं इष्टे, कपट-ईश-क्वण्-ङीप्। १ श्वेत-कण्टकारी, सफेद कटाई। २ क्षुद्रवृहती, छोटी कटाई।

कपड़कोट (हिं° पु°) शिविर, खीमा, डेरा, कपड़ेका क़िला।

कपड़गन्ध (हिं° स्त्री°) वस्त्रका गन्ध, कपड़ेके जलनेकी बदबू।

कपड़छान (हिं° पु°) वस्त्रसे किसी चूर्णकी छनाई, कपड़ेसे पिसी बुकनी छाननेका काम।

कपड़द्वार (हिं° पु°) वस्त्रका भाण्डार, कपड़ा रखनेकी जगह।

कपड़धूलि (हिं° स्त्री°) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रेशमसे बनती और बारीक रहती है। इसे करेब भी कहते हैं।

कपड़मिट्टी (हिं° स्त्री°) कपड़ौटी, किसी द्रव्यको कपड़े और गीली मट्टीमें लपेट फूंकनेका काम।

कपड़विदार (हिं° पु°) १ दरज़ी, कपड़ेको काटने-वाला। २ रफ़ूगर, फटे कपड़ेको धागेसे भर देनेवाला।

कपड़ा (हिं° पु°) १ वस्त्र, पट, आच्छादन। यह रूई, ऊन, रेशम या सनके धागेसे बनता है। २ पोशाक, पहननेका वस्त्र।

कपड़ौटी, कपड़मिट्टी देखो।

कपन (सं° पु°) कप-क्यु। १ कम्पन, कंपकंपी। २ घुणादि कीट, घुन वगैरह कीड़ा।

कपना (वै° स्त्री°) कीट, कीड़ा।

कपरिया (हिं° पु°) नीचजातिविशेष, एक कमीना क़ौम। कपाली देखो।

कपरौटी, कपड़मिट्टी देखो।

कपर्द (सं° पु°) पर्द पूरणे भावे क्विप् वलोपः इति पर् पूर्ति, कस्य गङ्गाजलस्य परा पूरणेन दापयति शुद्धति, क-पर्-दैप-क। रात् लोपः। पा ६।४।२१। १ शिव-जटा। २ कौड़ी। कपर्दक देखो।

कपर्दक (सं° पु°) कपर्द-कन्। १ वराटक, कौड़ी। इसे हिन्दी तथा गुजरातीमें कौड़ी, बंगलामें कड़ि, तामिलमें कपर्दि, तैलङ्गमें गवल्ल, सिंहलीमें पिङ्गो, मलयमें बेया, फारसीमें खरमोहरा, अरबीमें बुदा, अंगरेज़ीमें कौरी (Cowrie), फरासीसीमें कोरिस वा बौगेस (Coris, Cauris or Bouges), ओलन्दाजीमें कौरिस, स्लाङ्गेनहुजेस (Kauris, Slaugenhoofdges), रोमकमें कोरी वा पोर्सेलेङ्क (Cori, Porcellenc) जर्मनमें कौरिस (Kauris), स्पेनिशमें सिक्के वा बुसिओस (Siqueyes, Bucios), पोर्तुगीज़में बुसिओस वा ज़िम्बोस (Zimbos), देनिश, सुइस और रूसीमें कौरिस (Kauris) कहते हैं।

कपर्दक सामुद्रिक जीव है। यह पृथिवीके नाना स्थानोंमें नानाप्रकार देख पड़ता है। किन्तु सकल ही एक जातीय हैं। कौड़ीका वैज्ञानिक अंगरेज़ी नाम साइप्रिडी (Cyprœdœ) है।

यह जीव एकसङ्गी अर्थात् अपने ही सङ्गमसे सन्तानोत्पादन करनेवाले हैं। इनमें स्त्रीपुरुषकी भांति कोई विभिन्नता नहीं होती। कौड़ियोंका मत्था स्वतन्त्र भावसे बाहर रहता है। उसीके साथ दोनों पार्श्वोंपर दो कोणाकार रेखायुक्त स्थान होते हैं। वह स्पर्श और घ्राणेन्द्रियका कार्य करते हैं। फिर उन्हींके बाहर दोनों पार्श्वोंपर दो अति क्षुद्र चक्षु रहते हैं।

कपर्दकको तीन अवस्था होती हैं। प्रथम वा बाल्यावस्थामें वहिरावरण स्वच्छ, पिङ्गलवर्ण और अतिमसृण देख पड़ता है। आवरणपर तीन लम्बी रेखायें खिची रहती हैं। द्वितीय वा यौवनावस्थामें यह कितना ही स्वाभाविक आकार पाता है। उसी समय कपर्दकका वहिरोष्ठ मोटा पड़ता, किन्तु वहिरावरण फिर भी वैसा कठिन नहीं लगता। तृतीय वा पूर्णावस्थामें इसका वहिरावरण

अत्यन्त कठिन हो जाता है। आवरणपर छोटे-छोटे विन्दु देखनेमें आते हैं। श्रेणीके अनुसार वर्ण भी परिस्फुट होता है।

राजनिघण्टुके मतसे कपर्दक पांच प्रकारका है। १—सोनेकी भांति चमकनेवाला कपर्दक सिंही कहाता है। २—धूम्रवर्ण कपर्दकका नाम व्याघ्री है। ३—उपरिभागमें पीत और निम्नभागमें श्वेतवर्ण कपर्दक मृगी है। ४—केवल श्वेतवर्ण कपर्दक हंसी कहा जाता है। ५—अधिक बड़े न होनेवाले कपर्दकको विदण्डा कहते हैं।

पाश्चात्य तत्त्वविदोंके मतसे कपर्दक तीन प्रधान श्रेणियोंमें विभक्त है। प्रथम—जिस श्रेणीके कपर्दकका वहिरावरण अति मसृण और मेरुदण्ड (Columella) अत्यन्त विस्तृत रहता, उसका नाम साइप्रिया (Cypræa) पड़ता है। इस श्रेणीमें अनेकप्रकार कपर्दक होते हैं। इनमें १ गोल कपर्दक (Cypræa mappa), २ गन्धमुखो (C. Talpa), ३ भल्लक (C. Cicercula), ४ खनक (C. Childreni) प्रभृति साइप्रियाके ही अन्तर्गत हैं।

गोल कपर्दक भारत-महासागरमें मिलता है। इसमें कोई गुलाबी, कोई काला और कोई नारङ्गी रङ्गका होता है। मरिचशहरमें एकप्रकार मृगकी भांति वर्णविशिष्ट कपर्दक देख पड़ता, जो अति सुन्दर लगता है। गन्धमुखी कपर्दकका गठन कितना ही छछूंदरकी भांति रहता है। मध्यके दन्त कटे या काले होते हैं।

द्वितीय श्रेणीके कपर्दकको आरिसया (Aricia) कहते हैं। इस देशमें जो कौड़ी बाज़ार या दुकानपर द्रव्यादिके मूल्यस्वरूपसे चलती, वह इसी श्रेणीके अन्तर्गत पड़ती है। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम साइप्रिया मोनेटा (Cypræa moneta) है। यह कपर्दक अति पूर्वकालसे इस देशमें सामान्य मुद्राके बदले चल रहा है। २० गण्डा कौड़ीका एक पैसा होता है। इस समयकी अपेक्षा पहले कौड़ीका बड़ा आदर और अधिक मूल्य था।

भास्कराचार्यने लिखा है—

"वराटकानां दशकद्वयं यत् सा काकिणी ताश्च पणश्चतस्रः।
ते षोडश द्रम्म इहावगम्यो द्रम्मैस्तथा षोडशभिश्च निष्कः॥"

(लीलावती)

२० कौड़ीमें १ काकिणी, ४ काकिणीमें १ पण, १६ पणमें १ द्रम्म और १६ द्रम्ममें एक निष्क गनते हैं।

रघुनन्दनके प्रायश्चित्ततत्त्वमें भी ८० कौड़ीका १ पण कहा है—

"अशीतिभिर्वराटकैः पण इत्यभिधीयते।
तैः षोडशैः पुराणं स्याद्रजतं सप्तभिस्तु तैः॥"

पहले दक्षिणामें कपर्दक दिया जाता था। शुद्धि-तत्त्वमें लिखा है—

"हतमश्रोत्रियं दानं हतो यज्ञस्त्वदक्षिणः।
तस्मात् पणं काकिणीं वा फलं पुष्पमथापि वा।
प्रदद्यात् दक्षिणां यज्ञे तथा स सफलो भवेत्॥"

पहले अफ़रीकामें भी कौड़ी मुद्रारूपसे चलती थी। आजकल कौड़ी क्रमशः सस्ती पड़ती जाती है। १८४० ई०को एक रुपयेमें २४००से अधिक कौड़ियां मिलती न थीं। किन्तु आजकल एक रुपयेमें प्रायः ६००० कौड़ियां आती हैं।

तृतीय श्रेणीके कपर्दकका नाम नेरिया (Naria) है। इस श्रेणीकी कौड़ीका शिरोदण्ड सूक्ष्म, दन्त तीक्ष्ण और वहिरावरण अति चिक्कण होता है। फिर इस श्रेणीमें नाना आकारके कपर्दक देख पड़ते हैं। इनमें अण्डे-जैसी कौड़ी ही ज्यादा बड़ी होती है। मुक्ताकी भांति छोटी छोटी कौड़ी भी इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

चीनदेश और आड्रियाटिक सागरमें लम्बी लम्बी कौड़ियां होती हैं। यहां लोग देखने पर उन्हें कौड़ी कभी कह नहीं सकते। उक्त कपर्दक सपेरेकी बांसुरी-जैसा लगता है।

वैद्यकके मतसे कपर्दक कटु, तिक्त, उष्ण और कर्णशूल, व्रण, गुल्म, शूल एवं नेत्रदोषनाशक है।

(राजनिघण्टु)

२ महादेवकी जटा।

कपर्दकरस (सं० पु०) रक्तपित्त अधिकारका एक रस। कार्पास-पुष्पके रससे एक दिन मर्दित-मूर्छित २ तोले पारद कौड़ीमें भर मुखको बन्द कर दे।

फिर उस कौड़ीको अन्धमूषायन्त्रमें रख पुटपाक बनाना चाहिये। पाक शीतल होनेपर कौड़ी निकाल ४ तोले मरिचके साथ एकत्र पीसनेसे यह रस तैयार होता है। इसको एक रत्ती घृतके साथ चाटनेसे रक्तपित्त रोग मिटता है। (रसरत्नाकर)

कपर्दा (सं० स्त्री०) वराटक, कौड़ी।

कपर्दि (सं० पु०) कपर्दक, कौड़ी।

कपर्दिका (सं० स्त्री०) कपर्दक-टाप् अतइत्वम्। वराटिका, कौड़ी।

"मित्राण्यमित्रतां यान्ति यस्य नस्युः कपर्दिकाः।" (पञ्चतन्त्र)

कपर्दिगिरि—पञ्जाबके अन्तर्गत एक स्थान। इसका वर्तमान नाम शाहबाजगढ़ी है। यहां बौद्धसम्राट् अशोकका अनुशासन-पत्र मिला है।

कपर्दिनी (सं० स्त्री०) कपर्दिन्-ङीप्। जटाधारिणी, दुर्गा, भवानी।

"व्यालव्यालवलया वेणीबन्धकपर्दिनी।
हारानुकारिणी पातु लीलया पार्वती जगत्॥" (साहित्यदर्पण)

कपर्दिस्वामी (सं० पु०) आपस्तम्बीय शुल्वसूत्रके भाष्यकार।

कपर्दी (सं० पु०) कपर्दो जटाजुटोऽस्त्यस्य, कदर्प-इनि। १ शिव। (त्रि०) २ जटायुक्त।

कपर्दीश (सं० पु०) काशीस्थ शिवलिङ्गविशेष।

"काशीश्वरकपर्दीशौ चरणावतिनिर्मलौ।" (काशीख० ३३ अ०)

कपल (वै० क्लो०) १ अर्धांश, आधा हिस्सा। २ वर्धमानका एक ग्राम। (भ० ब्रह्मखण्ड ७।३२)

कपसा (हिं० स्त्री०) १ कपिश, काबिस, एक चिकनी मट्टी। इससे कुम्हार बर्तन रंगते हैं। २ लेई, गारा।

कपसेठा (सं० पु०) कार्पासका शुष्कवृक्ष, कपासका सूखा पेड़। यह ईंधनमें जलता है।

कपसेठी (स्त्री०) कपसेठा देखो।

कपाट (सं० पु०) कं वायुं मस्तकं वा पाटयति, क-पट-णिच्-अण्। द्वारका आवरणकारी काष्ठखण्ड विशेष, किवाड़। इसका संस्कृतपर्याय—अरर, कवाट, कपाटी, कवाटी, अररी, अररि, द्वारकण्टक और प्रसार है। विश्वकर्मप्रकाश नामक वास्तुशास्त्रमें लिखा है—

"यदा रौति कपाटं वै तस्य वंशक्षयो भवेत्।" (७म अ०)

जिसके गृहके कपाट खड़खड़ाया करते, उसके वंशके लोग मरते हैं।

कपाटघ्न (सं० पु०) कपाटं हन्ति, कपाट-हन्-टक्। शक्तौ हन्ति कपाटयोः। पा ३।२।५४। चौर, चोर, डाकू, किवाड़ तोड़ डालनेवाला।

कपाटबन्ध (सं० पु०) छन्दोविशेष, एक काव्य। यह चित्रकाव्यके अन्तर्गत है। इसके अक्षर नियमानुसार जोड़ जोड़कर लिखने पर कपाटका चित्र उतर आता है।

कपाटमङ्गल (सं० क्लो०) कपाट बन्द करनेकी क्रिया, किवाड़ लगानेका काम। वल्लभकुलवाले इस शब्दको सम्मानार्थ प्रयोग करते हैं।

कपाटशयन (सं० क्लो०) उत्तानशयन, चित लेटनेकी हालत।

कपाटसन्धि (सं० पु०) कपाटं सन्धीयते अत्र, कपाट-सम्-धा-कि। १ उभय कपाटोंका मिलित स्थान, दोनों किवाड़ोंका जोड़। २ गुणनका एक नियम, जरबका कोई कायदा। इसमें गुण्यको गुणक संख्याके नीचे किसीप्रकार रखते हैं।

कपाटसन्धिक (सं० पु०) सुश्रुतोक्त कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कर्णरोग देखो। २ पट्टविशेष, किसी किस्मकी पट्टी।

कपाटिका (सं० स्त्री०) कपाट स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। कपाट, किवाड़।

कपाटिनी (सं० स्त्री०) चोड़ा नाम देवदारु भेद, एक खुशबूदार लकड़ी या अतर।

कपाटोद्घाटन (सं० क्लो०) कपाटस्य उद्घाटनम्, ६-तत्। १ कपाटोंका उद्घाटन, किवाड़ खोलनेका काम। २ द्वारकुञ्चिका, दरवाजेकी चाबी।

कपार, कपाल देखो।

कपाल (सं० पु०-क्लो०) कं मस्तकं पालयति, क-पालि-अण् कपि-कालन् वा। तमिविशिबिडिम्रणिकुलिकपि-पलिपञ्चिभ्यः कालन्। उण् १।११७। १ मस्तकका अस्थि, खोपड़ीकी हड्डी। कङ्काल देखो। २ ललाटदेश, मत्था। ३ अदृष्ट, भाग्य, किस्मत। ४ कर्पर, खप्पर।

५ मृत्तिका द्वारा निर्मित घटादिके दो भागोंमें एक, मट्टीसे बने घड़े वग़ैरहके दो टुकड़ोंमें एक। ६ भिक्षा-पात्र, भीख मांगनेका एक बर्तन। ७ मृत्तिकापात्र, खपड़ी। ८ कुष्ठरोगविशेष, किसी क़िस्मका कोढ़। यह कुष्ठ कृष्ण वा अरुणवर्ण, कपालतुल्य, रूक्ष, कर्कश, तनु और पीड़ाकर होता है। इसको विषम समझना चाहिये। (भावप्रकाश) ९ पुरोडाशपात्र, यज्ञीयघृत रखनेका बर्तन। १० समूह, ढेर। ११ अण्डादिका अवयव, अण्डेका छिलका।

"कुक्कुटाण्डकपालानि सुमनोमुकुलानि च।" (सुश्रुत)

१२ आवरण, ढक्कन। १३ खोपड़ी। १४ सन्धि-विशेष, एक सुलह। यह बराबरकी शर्तोंपर होती है। १५ कच्छपका आवरण, कछुवेकी खोल।

कपालक (हिं०) कापालिक देखो।

कपालकुष्ठ (सं० क्ली०) महाकुष्ठभेद, किसी क़िस्मका बड़ा कोढ़। कपाल देखो।

कपालकेतु (सं० पु०) केतुविशेष, एक पुच्छलतारा। इसका पुच्छ धूम्रवर्ण और प्रकाशमान् रहता है। अमावस्या इसके उदयका दिन है। यह आकाशके पूर्वार्धमें अवस्थान करता है। इसके उदय होनेसे दुर्भिक्ष पड़ता और पानी नहीं बरसता। (वृहत्संहिता)

कपालक्रिया (सं० स्त्री०) मृतककृत्यविशेष, मुर्दा जलते वक़्त किया जानेवाला एक काम। इसमें जलते शवका कपाल बांस या किसी दूसरी लम्बी और पतली लकड़ीसे फोड़ा जाता है।

कपालचूर्ण (सं० क्ली०) नृत्यविशेष, एक नाच। इसमें शिरके बल पैर ऊपर उठा घूमा करते हैं।

कपालतीर्थ—तीर्थविशेष। इस स्थानपर वेधनाशन नामक ईश्वरकी मूर्ति विद्यमान है। (प्रभासखण्ड १३०।२४)

कपालनालिका (सं० स्त्री०) कपालस्य सूत्रसङ्गस्य नालिका, ६-तत्। तकुंटी, तकला, तकवा, टूक।

कपालपाणि (सं० त्रि०) कपाले पाणिर्यस्य, बहुव्री०। १ ललाटदेशमें हाथ लगाये हुवा, जो मत्थेपर हाथ रखे हो। २ हाथमें कपाल लिये हुवा, जो भिक्षा लेनेके लिये हाथमें खप्पर रखता हो।

कपालभाती (सं० स्त्री०) तपोविशेष। यह प्राणायाम-का एक भेद है। इसको करनेसे कपाल प्रकाशमान रहता है।

कपालभृत् (सं० पु०) कपालं भिक्षापात्रं ब्रह्मकपालं वा बिभर्ति, कपाल-भृ-क्विप्-तुक् च। शिव, महादेव।

कपालमाली (सं० पु०) कपालानां माला विद्यते ऽस्य, कपाल-माला-इनि। शिव, कपालोंकी माला पहननेवाले महादेव।

कपालमोचन (सं० क्ली०) कपाल-मुच्-ल्युट्। १ काशीस्थ तीर्थविशेष। (काशीखण्ड ३१ अ०) मतान्तरसे रामचन्द्रने दण्डकारण्यमें किसी राक्षसका मस्तक काटा था। किन्तु मस्तकका कपाल महोदर नामक ऋषिके उदरदेशमें जाकर विद्ध हुवा। फिर मुनियोंके उपदेशानुसार जब उन्होंने औशनसतीर्थमें स्नान किया, तब उक्त कपाल वहीं गिर पड़ा। इसीसे उस स्थानका नाम कपालमोचन है। २ अम्बालेके पूर्वस्थित एक पुण्यतीर्थ। इस स्थानके तीर्थजलमें स्नान करनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है। यहां प्राचीन गुप्त राजावोंकी शिलालिपि मिली है।

कपालरोग (सं० पु०) शिरोरोग, सरकी बीमारी।

कपालशिरा (सं० पु०) कपालं शिरसि यस्य, बहुव्री०। १ महादेव। २ कोई मुनि।

कपालसन्धि (सं० पु०) कपालस्य: सन्धि:, मध्य-पदलो०। १ मस्तकके अस्थिका मिलनस्थान, खोपड़ीकी हड्डीका जोड़। २ सन्धिविशेष, एक सुलह। यह सम व्यवहारपर होती है।

कपालस्फोट (सं० पु०) कपालस्य स्फोट:, ६-तत्। १ मस्तकका स्फोट, खोपड़ेका फोड़ा। २ राक्षस-विशेष।

कपालाधिकरण (सं० क्ली०) मीमांसादर्शनोक्त एक अधिकरण। मीमांसासूत्रपर चतुर्थ अध्यायके प्रथम पादमें यह विषय वर्णित है। दर्शपौर्णमासप्रकरणीय श्रुतिमें कहा है—

"कपालेषु पुरोडाशं श्रपयति।"

दर्श एवं पौर्णमास यागके अङ्गीभूत पुरोडाशको कपालमें पकाना चाहिये। फिर उसी प्रकरणकी अन्य श्रुतिमें भी बताया है—

"पुरोडाशकपालेन तुषानुपवपति।"

पुरोडाशार्थकपाल द्वारा तुष परित्याग करना चाहिये।

इन दोनों श्रुतियोंसे संशय उठता—पुरोडाशपाक एवं तुषपरित्याग दोनों कपालके प्रयोजक हैं अथवा केवल पुरोडाशपाक। इस संशयसे तो दोनों ही कपालके प्रयोजक होते हैं। क्योंकि एकका प्रयोजकत्व ठहरानेमें कोई विशेष हेतु देख नहीं पड़ता। इसी पूर्वपक्षका सिद्धान्त करते हैं—

"अर्थाभिधानकर्म च भविष्यतासंयोगस्य तन्निमित्तत्वात्तदर्थोहि विधीयते।" (मीमांसासू० ४।१।२६)

'अर्थाभिधानं प्रयोजनसम्बन्धमभिधानं तस्य यथा पुरोडाशकपालं इति, पुरोडाशार्थं कपालं पुरोडाशकपालम्। कथमेतदवगम्यते? पुरोडाशस्तावत् तस्मिन् काले नास्ति। येन वर्तमानः सम्बन्धः कपालेन स्यात्, तेनैव हेतुना न भूतः, स एव कपालस्य पुरोडाशेन भविष्यता सम्बन्धः, भविष्यता सम्बन्धस्य तन्निमित्तस्य भवति। तस्मात् पुरोडाशेन प्रयुक्तं यत् कपालं तेन तुषा उपवप्तव्याः—इति एवञ्च सति चरौ पुरोडाशाभावे यदा तुषानुपवप्तुं कपालमुपादीयते न तत् पुरोडाशकपालं स्यात्, नचेत्, न तेन तुषा उपवप्तव्या भवन्ति। तस्मात् न तुषोपवापः कपालानां प्रयोजकः प्रयोजकन्तु श्रपनं इति'

"पुरोडाशकपालेन तुषानुपवपति" श्रुति वाक्यमें जो पुरोडाशके कपालका अभिधान बना, वह प्रयोजन-विशिष्ट पुरोडाश ही प्रयोजन ठना है। जिस समय तुष परित्याग किया जाता, उसी समय पुरोडाश निकल नहीं आता। फिर उससे पूर्व भी पुरोडाश कहां हुवा था! किन्तु पीछे पुरोडाश होगा। अतएव भावी पुरोडाशके साथ कपालका सम्बन्ध इस श्रुतिसे मानना पड़ेगा। भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध उसी वस्तुके निमित्त रहता है। (पुरोडाशरूप भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध वर्तमान कपालमें होता है) पुरोडाश-कपाल शब्दका अर्थ पुरोडाशके लिये आनीत कपाल है। सुतरां शब्द द्वारा ही समझ पड़ता—पुरोडाश कपालका प्रयोजक लगता है, तुषपरित्याग कपालका प्रयोजक नहीं ठहरता। मीमांसादर्शनके मतसे जिस कार्यके लिये जो उपादान किया जाता, वही कार्य उसका प्रयोजक कहाता है। इस स्थलमें पाकके लिये उपादान होनेसे कपालका प्रयोजक पुरोडाश होगा। यदि पुरोडाशके कपालका प्रयोजक होनेका सिद्धान्त ठहरे, तो कहना पड़ेगा—पुरोडाशार्थ आहृत कपालद्वारा तुषका परित्याग चलेगा। फिर जिस यागमें पुरोडाश नहीं रहता, उसमें यदि तुषपरित्याग करनेको कपाल आया करता, तो उसे कोई पुरो-डाशका कपाल नहीं कहता। क्योंकि यागमें पुरो-डाशका अभाव होनेसे उसके लिये कपालका लाया जाना ठीक नहीं ठहरता। ऐसेसे स्थलमें तो केवल तुषपरित्यागके लिये कपाल आया करता है। अतएव पुरोडाशके लिये न आनेपर कपालसे यज्ञाङ्ग तुष परित्याग करना मना है। यही इस अधिकरणका स्थिरीकृत सिद्धान्त है।

कपालास्त्र (सं० क्ली०) १ शस्त्रविशेष, एक हथियार। २ चर्म, ढाल।

कपालास्थि (सं० क्ली०) स्वनामख्यात शरीरके मध्यका कर्परसदृश एक अस्थि, जिसके बीचकी एक खपड़े-जैसी हड्डी। जानु, नितम्बमांस, तालु, गण्ड, शङ्ख और शिरके अस्थिकी यह संज्ञा है। (सुश्रुत)

कपालि (सं० पु०) कं ब्रह्म शिवः पालयति, क-पाल-इनि। महादेव।

कपालिक (हिं०) कापालिक देखो।

कपालिका (सं० स्त्री०) कपाल-कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कर्पर, खपड़ा। २ घटादिका उभय मृत्तिकाखण्ड, घड़ेकी मिट्टीका एक हिस्सा। ३ दन्तरोगविशेष, दांतोंकी एक बीमारी।

"दलन्ति दन्तवल्कानि यदा शर्करया सह।
ज्ञेया कपालिका सैव दशनानां विनाशिनी॥" (सुश्रुत)

शर्करा नामक रोगके पीछे दन्तसे सकल शर्करा छूट पड़ते समय वल्क भी दलित हो मिट जाता है। इस रोगका नाम दन्तशर्करा भी है।

चिकित्सादि दन्तरोगमें देखो।

कपालिनी (सं० स्त्री०) कपालिन्-ङीप्। १ दुर्गा। २ नीच जातिकी स्त्री। ब्राह्मणीके गर्भ और धीवरके औरससे उत्पन्न स्त्री कपालिनी कहाती है।

कपाली (सं० पु०) कपालोऽस्यास्ति, कपाल-इनि। १ महादेव। २ जातिविशेष, एक कौम। यह जाति

धीवरके औरस और ब्राह्मण-कन्याके गर्भसे उत्पन्न है। (पराशरपद्धति) हिन्दीमें इसे कपरिया कहते हैं। ३ योगिविशेष।

"कपाली बिन्दुनाथश्च काकचण्डीश्वराह्वयः।" (हठयोगदीपिका)

४ उपासकसम्प्रदायविशेष। कापालिक देखो। (त्रि०) ५ कपालविशिष्ट, खोपड़ीवाला। ६ भाग्यवान्, खुश-बख्त। (स्त्री०) ७ विड़ङ्ग।

कपालेश्वर (सं० पु०) १ शिव। २ उड़ीसे प्रान्तका एक प्राचीन ग्राम। यह महानदीके उत्तरकूल कटकसे थोड़ी दूर अवस्थित है। यहां कपालेश्वर नामक एक पुरातन दुर्ग खड़ा है।

कपास (हिं०) कार्पास देखो।

कपासी (हिं० वि०) १ कार्पासतुल्य वर्णविशिष्ट, कपासका रङ्ग रखनेवाला, जो रङ्गमें कपासकी तरह देख पड़ता हो। (पु०) २ वर्णविशेष, एक रंग। यह रंग कपासके फूलसे मिलता और हलका पीला रहता है। हरिद्रा, पलाशपुष्प एवं शुष्क आम्रफलके संयोगसे इसे बनाते हैं। कहीं कहीं हरसिंगारसे भी यह तैयार होता है। कपासी रंग देखनेमें बहुत सुहावना लगता है।

(स्त्री०) ३ वातामवृक्ष विशेष, बादामका एक पेड़। इसे भोटिया कहते हैं। कपासीका आकार-प्रकार समान रहता है। काष्ठ पाटल निकलता और पीठ तथा फलक बनानेमें लगता है। फल भक्ष्य पदार्थ है। कपासीको प्रायः लोग मोटिया-बादाम कहते हैं।

कपि (सं० पु०) कपि-इ नलोपश्च। कुण्ठिकम्पोर्नलोपश्च। उण् ४।१४३। १ वानर, बन्दर। २ हस्ती, हाथी। ३ करञ्जविशेष, किसी क़िस्मका करोंदा। ४ सिह्लक, शिलारस। यह एक गन्धद्रव्य है। ५ सूर्य, आफ़ताब। ६ मधुसूदन। ७ आम्रातक, आमड़ा। ८ शूक-शिम्बी, केंवाच। ९ वराह। १० पिङ्गलवर्ण। ११ रक्त-चन्दन। १२ आमलकी। (त्रि०) १३ पिङ्गलवर्ण-युक्त, भूरा।

कपिकच्छु (सं० स्त्री०) कपीनामपि कच्छूर्यस्याः, बहुव्री०। शूकशिम्बी, केवांच, कौंछ, करेंच, बानरी, मर्कटी।

कपिकच्छुफल (सं० क्ली०) शूकशिम्बीका बीज, केवांचका तुख़्म।

कपिकच्छुफलोपमा (सं० स्त्री०) कपिकच्छुफलस्य उपमा यत्र, बहुव्री०। जतुकालता, पापड़ी।

कपिकच्छुरा (सं० स्त्री०) कपिभ्योऽपि कच्छुं कण्डूं राति ददाति, कपि-कच्छु-रा-क। शूकशिम्बी, केवांच।

कपिकन्दुक (सं० क्ली०) कपि-कदि-उक अतोलोपः, कस्य शिरसः पिकन्दुकं अस्थि वा। मस्तकका अस्थि, खोपड़ा।

कपिका (सं० स्त्री०) कपिर्वराह इव कायति प्रकाशते कृष्णत्वात्, कपि-कै-क-टाप्। १ नीलसिन्दुवार वृक्ष, नीला संभालू। २ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़।

कपिकेतन (सं० पु०) कपिर्हनुमान् केतने यस्य, बहुव्री०। १ अर्जुन। "शान्तपूर्वमिदं वाक्यमब्रवीत् कपिकेतनः।" (भारत, आश्व० ८२ अ०) २ कपिचिह्नित ध्वज, जिस निशानपै बन्दरकी तसवीर रहे।

कपिकेतु, कपिकेतन देखो।

कपिकोलि (सं० पु०) कपीनां प्रियः कोलिः, मध्य-पदलो०। शृगालकोलिका, किसी क़िस्मका बेर।

कपिचूड़ (सं० पु०) कपिचूड़ा देखो।

कपिचूड़ा (सं० स्त्री०) कपीनां चूड़ाइव, उपमि०। आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिचूत (सं० पु०) कपीनां चूत इव तेषामति-प्रियत्वात्। १ अश्वत्थभेद, किसी क़िस्मका पीपल। २ आम्रातक, आमड़ा।

कपिज (सं० पु०) कपितो जायते, कपि जन्-ड। १ सिह्लक, शिलारस, लोबान। (त्रि०) २ वानर-जात, बन्दरसे पैदा।

कपिजङ्घिका (सं० स्त्री०) कपेः वानरस्य जङ्घा इव जङ्घा यस्याः, संज्ञायां कन्। तैलपिपीलिका, तिलचट्टा।

कपिञ्जल (सं० पु०) कपिरिव जवते वेगेन गच्छति कं श्रुतिसुखदं पिञ्जयति वा पृषोदरादित्वात्। १ चातकपक्षी, पपीहा। इसका मांस शीतल, मधुर और लघु होनेसे रक्तपित्त, रक्तश्लेष्मविकार एवं मन्द-वातविकारमें प्रशस्त है। (चक्रपाणिदत्त) कपिञ्जलका मांस हृद्य, रोचक और चटकके मांससे शीतल होता

है। (राजनिघण्टु) २ तित्तिरिपक्षी, तीतर। इसका मांस सर्वदोषनाशक, धारक, वर्ण-प्रसन्नताकारक और हिक्का, श्वास, तथा वायुरोगनाशक है। गौरतित्तिरि अन्याय तित्तिरिकी अपेक्षा अधिक गुणशाली रहता है। (सुश्रुत) कोई कोई काकातूवाको भी कपिञ्जल कहता है। ३ एक ऋषिकुमार। वाणभट्ट-रचित कादम्बरी उपाख्यानमें यह श्वेतकेतु ऋषिके पुत्र और पुण्डरीकके बन्धुकी भांति वर्णित हैं। ४ शिलारस, लोबान।

कपिञ्जलन्याय (सं० पु०) बहुत्वके त्रित्व संख्यामें पर्यवसित किये जानेका-न्याय, जिस तरीकेमें तीनसे ज्यादा अदद तीन ही अददपर खतम करें। वेदमें एक श्रुति है—

"वसन्ताय कपिञ्जलानालभेत्।"

वसन्त यागके निमित्त बहु कपिञ्जल हनन करे। इस श्रुतिसे प्रथम दृष्टिमें स्पष्ट समझ नहीं पड़ता—कितने कपिञ्जल हननका विधि लगता है। क्योंकि त्रित्वसे परार्धत्व पर्यन्त सकल संख्यापर बहुत्व चलता है। जैमिनिके "प्रथमोपस्थितपरित्यागे प्रमाणाभावात्" सूत्रको देखते इस स्थलपर 'बहुत्व'से वैदिक तात्पर्य 'त्रित्व' निकलता है। फिर ऐसा न समझनेसे वेदपर अप्रामाण्यापत्ति आती है। क्योंकि 'त्रित्व'से 'परार्धत्व' पर्यन्त सकल संख्यामें 'बहुत्व' रहते लोग यह ठहरा न सकनेसे निश्चय वेदपर प्रवृत्तिशून्य हो जायेंगे—'बहु कपिञ्जल'से कितने कपिञ्जल लायेंगे। मीमांसाकारने इस विरोधकी अच्छी मीमांसा देखायी है—

"प्रथमोपस्थितेस्तन्त्रत्वात्।" (मीमांसासू०)

त्रित्वकी उत्पत्ति होनेपर त्रित्वके साथ एकत्वके ज्ञानद्वारा चतुष्ट्व निकलता है। सुतरां चतुष्ट्व प्रभृति संख्या निकलनेसे पहले नियमतः त्रित्वका अस्तित्व मानना पड़ता है। यही कारण है—त्रित्व संख्यामें ही वेदबोध्य बहुत्व पर्यवसन्न है। अर्थात् वेदमें जिस स्थलपर बहुत्व आवेगा, उस स्थलपर प्रथमोपस्थितत्वसे त्रित्व लिया जावेगा। जिनके मतमें त्रित्वविशिष्ट एकत्वज्ञान चतुष्ट्वका कारण नहीं ठहरता, उनके मतसे भी त्रित्वमें ही बहुत्वका पर्यवसान मानना पड़ता है। उक्त मतमें एकत्वत्रय विषयक ज्ञान त्रित्व और एकत्व चतुष्टय विषयक ज्ञान चतुष्ट्वका कारण है। सुतरां त्रित्वके अन्तर्गत कहनेसे बहुत्वके कारण एकत्वका लाघव होगा। यदि चतुष्ट्वादि संख्यामें भी बहुत्व लग जाये, तो एकत्व चतुष्टय ज्ञान चतुष्ट्वका कारण ठहरते गौरव पाये। एकत्व चतुष्टय ज्ञानमें लघुत्व रहता है। इसलिये त्रित्वमें ही वेदबोध्य बहुत्वका पर्यवसान है। फिर ऐसा होनेपर बहुत्व समझना दुःसाध्य न लगेगा। यदि बहुत्वका ज्ञान आ जायेगा, तो बहुकपिञ्जलके हननमें प्रवृत्तिका दूसरा अज्ञाननिबन्धन वाधा न लायेगा। सुतरां वेदके अप्रामाण्यकी शङ्का चल नहीं सकती।

कपिञ्जला (सं० स्त्री०) शालिधान्यविशेष, एक धान। यह श्लेषकरी होती है। (अत्रिसंहिता)

कपितैल (सं० क्लो०) शिलारस, लोबान।

कपित्व (सं० क्लो०) कापेय भाव, रीस, हिर्स।

कपित्थ (सं० पु०) कपिस्तिष्ठति फलप्रियत्वात् यत्र, कपि-स्था-क पृषोदरादित्वात् सलोपः। १ स्वनामख्यात वृक्ष, कैथेका पेड़। यह मधुर, अम्ल, कषाय, तिक्त, शीतल, वृष्य, संग्राही एवं वातल और पित्त, अनिल, तथा व्रणघ्न होता है। फिर आमकपित्थ अम्ल, उष्ण, ग्राही, वातल, जिह्वाजाड्यकर, त्रिदोषवर्धन, रोचक और कफ एवं विषघ्न है। पक्व कपित्थ मधुर, अम्लरस तथा गुरु, और दोषत्रय, श्वास, वमि, श्रम, हिक्कारोग तथा क्लमहर होता है। (राजनिघण्टु)

कपित्थका संस्कृत पर्याय—दधित्थ, ग्राही, मन्मथ, दधिफल, पुष्पफल, दन्तशठ, कपित्थ, मालूर, मङ्गल्य, नीलमल्लिका, ग्राहिफल, चिरपाकी, ग्रन्थिफल, कुचफल, कपोष्ट, गन्धफल, दन्तफल, करभवल्लभ, काठिन्यफल और करञ्जफलक है।

इस वृक्षको हिन्दीमें कैथा, महाराष्ट्रीमें कोवत्, दक्षिणीमें कवित, मलयमें वेलङ्ग, तामिलमें वेलमरम्, विलम् वा विलङ्ग, तैलङ्गमें वेलगाकेतु, कपित्थम् वा पुलि, सिंहलीमें देवल, ब्रह्मीमें ह्मन्, श्यामीमें मा-कयेत्, पोर्तुगीजमें बलभ और अंगरेजीमें उड आपल (Wood apple) कहते हैं। इसका अंग-

रेजीमें वैज्ञानिक नाम फेरोनिया एलिफाण्टम् (Feronia Elephantum) है।

यह भारतवर्षके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है। बम्बईमें इसे लगाया करते हैं। एक एक वृक्ष अतिशय वृहत् होता है। इसका काष्ठ सुदृढ़, स्थायी और देखनेमें सादा रहता है। विशाखपत्तनमें इसके काष्ठसे गृहका निर्माणकार्य चलता है।

भावमिश्र कच्चे कैथेको धारक, कषायरस, लघु और लेखनगुणयुक्त बताते हैं। फिर पक्का कैथा गुरु, अम्लकषायरस, कण्ठशोषक एवं तृष्णा और पिपासा, हिक्का, वायु तथा पित्तनाशक होता है।

कपित्थके पत्रका संस्कृत नाम कपित्थपत्री, फणिज, कुलिजा और जीवपत्रिका है। वैद्यशास्त्रके मतसे यह पत्ती तीक्ष्ण, उष्ण और कफ, मेह एवं विषहर होती है।

हकीम कैथेको शीतल, शुष्क, तेजस्कर, तीक्ष्ण, बलकारक, कफनिःसारक, कण्ठशोथमें हितकर और दन्तमूलदृढ़कारक समझते हैं। इसका शर्बत भूक बढ़ाता और तरह-तरहको बीमारियां हटाता है। पत्र अतिशय तीव्र है। विषाक्त कीटपतङ्गादिके काटनेसे पत्रका कोमलांश वा शस्य दष्ट स्थानमें लगाने पर उपकार पहुंचता है। शस्य न मिलनेसे इसकी छाल कूट-पीस प्रयोग करना चाहिये।

कपित्थसे उत्कृष्ट गोंद निकलता, बम्बई अञ्चलके बाजारोंमें बिकता है। दक्षिणाञ्चलमें सब लोग उसे व्यवहारमें लाते हैं। तामिलके कविराज अन्त्रमें एकाएक वेदना उठनेसे कैथेका गोंद प्रयोग करते हैं।

२ हस्त एवं अङ्गुलिका एक विलक्षण संस्थान, हाथों और उंगलियोंकी एक अनोखी सूरत। यह भाव नृत्यमें अङ्गुष्ठ और तर्जनीका अग्रभाग मिलानेसे आता है। ३ कुशद्वीपवाले राजा ज्योतिष्मान्के पुत्र। (विष्णुपु०, २ अंश, ४ अ०) ४ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। (क्ली०) ५ कपित्थफल, कैथेका फल।

कपित्थक (सं० पु०-क्ली०) १ कपित्थ, कैथा। २ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। ३ अवन्तिका एक स्थान, उज्जैनकी एक जगह।

कपित्थतैल (सं० क्ली०) कपित्थबीजतैल, कैथेके तुख्मका तेल। यह तुवर, स्वादु और वातविषापह होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कपित्थत्वक् (सं० क्ली०) कपित्थस्य त्वगिव त्वक् यस्य, मध्यपदलो०। १ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। २ कैथेकी छाल।

कपित्थपत्रा, कपित्थपर्णी देखो।

कपित्थपर्णी (सं० स्त्री०) कपित्थस्य पर्णमिव पर्णं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। वृक्षविशेष, एक पेड़। महाराष्ट्रमें इसे कंवटपत्री कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—विराजा, सुरभी और विवृत्तिका है। यह तीक्ष्ण, उष्ण, पाकमें कटु, तुवर एवं रसमें तिक्त और क्रमि, कफ, मेद, मेह तथा स्नायुरोगनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

कपित्थानी (सं० स्त्री०) कपित्थपत्रा, गन्धविराजाका पेड़।

कपित्थाम्ल (सं० पु०) आम्रभेद, किसी किस्मका आम।

कपित्थार्जक (सं० पु०) श्वेतार्जक, सफ़ेद बबई। २ तुलसीभेद, किसी किस्मकी तुलसी।

कपित्थाष्टकचूर्ण (सं० क्ली०) अतीसार रोगका एक वैद्यकोक्त औषध, दस्तकी एक दवा। अजवायन, पिपरामूल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, कालीमिर्च, चीत, सुगन्धवाला, कालाजीरा, धनिया तथा सोचर नमक एक-एक भाग एवं इमली, धायके फूल, पीपल, बेलसोंठ, अनार तीन-तीन भाग, चीनी ६ भाग और कैथा ८ भाग एकत्र मिला खानेसे अतीसार, ग्रहणी, क्षयरोग, गुल्म, गलरोग, कास, श्वास, अरुचि तथा हिक्कारोग निवारित होता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

कपित्थास्य (सं० पु०) कपित्थवत् गोलाकारं आस्यं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ वानरविशेष, एक बन्दर। इसका मुंह कैथे-जैसा गोल होता है। २ मृगविशेष, एक चौपाया।

कपित्थिनी (सं० स्त्री०) कपित्थो ऽस्त्यत्र देशे, कपित्थ-इन्-ङीप्। पुष्करादिभ्यो देशे। पा ५।२।१३५। १ कपित्थयुक्त

देश, जिस जगहपे कैथेका पेड़ बहुत रहे। २ कपित्थपर्णी।

कपित्थिल (सं॰ त्रि॰) कपित्थ काशादित्वात् इल्। वुञ्छण्कठजिलसेनिरढञ्ण्ययफक्फिञिञ्ञ्यकक्ठकोऽरीहणकृशाश्वर्श्यकुमुद-काशीति। पा ४।२।८०। कपित्थयुक्त, कैथासे भरा हुवा।

कपिध्वज (सं॰ पु॰) कपिर्हनुमान् ध्वजे यस्य बहुव्री॰। अर्जुन। (भारत, वन १५१ अ॰)

कपिनामक (सं॰ पु॰) कपिनामन् स्वार्थे कन्। शिलारस, लोबान्। (भावप्रकाश)

कपिनामा (सं॰ पु॰) कपेर्नामेव नाम यस्याः बहुव्री॰। शिलारस, लोबान।

कपिपिप्पली (सं॰ स्त्री॰) कपिवर्णा रक्ता पिप्पलीव, उपमि॰। १ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा। २ वानरपिप्पली। ३ सूर्यावर्तक्षुप, सूरजमुखी।

कपिप्रभा (सं॰ स्त्री॰) कपिष्वपि प्रभो निजगुणप्रसारो यस्याः, बहुव्री॰। १ शूकशिम्बी, केवांच। २ अपामार्ग, लटजीरा।

कपिप्रभु (सं॰ पु॰) कपीनां हनुमदादीनां प्रभुर्नियन्ता, ६-तत्। १ रामचन्द्र। २ वालि। ३ सुग्रीव। ४ वानरोंका स्वामी, बन्दरोंका मालिक।

कपिप्रिय (सं॰ पु॰) कपीनां प्रियः, ६-तत्। १ आम्रातकवृक्ष, आमड़ा। २ कपित्थवृक्ष, कैथा।

कपिभक्ष (सं॰ पु॰) कपीनां भक्षः, ६-तत्। १ वानरोंका भक्ष्य द्रव्य, बन्दरोंके खानेकी चीज़। २ कदली, केला। यह वानरोंका अति प्रिय खाद्य है।

कपिभूत (सं॰ पु॰) पारिशाश्वत्थ, किसी किस्मका पीपल।

कपिरक (सं॰ पु॰) कपिल स्वार्थे कन् लस्य रत्वम्। कपिलवर्ण, पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग।

कपिरथ (सं॰ पु॰) कपिर्हनुमान् रथस्थ वाहको यस्य, बहुव्री॰। १ रामचन्द्र। २ अर्जुन।

कपिरस (सं॰ पु॰) शिलारस, लोबान।

कपिरसाढ्य (सं॰ पु॰) आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिरोमफला (सं॰ स्त्री॰) कपीनां रोमइव रोमफले यस्याः, मध्यपदलो॰। कपिकच्छु, केवांच। इसका फल वानरके लोमकी भांति पिङ्गलवर्ण शूकसे आवृत रहता है।

कपिरोमा (सं॰ स्त्री॰) १ कपिकच्छु, केवांच। २ रेणुका, बालू।